

हिन्दी

विष्वकोष

संज्ञा विष्वकोषके मन्वादक
श्रीगणेशाय वसु प्राच्यविद्यामहासंघ,
विद्यापीठ, कलकत्ता, १९०६-०७ ई. ११, १२, १३, १४
तथा हिन्दोके विद्यापीठ द्वारा सहायित ।

हास्य भाग
[द्वितीय-परिभाषण]

THE ENCYCLOPÆDIA INDICA

VOL. XII

COMPILED WITH THE HELP OF HINDI REPORTS

BY

MAHENDRANATH VARU Prachyavidyamaharaja

Shiksha vidyalaya, Sabla-pataliyara Taluk-Litchichik, W. B. N.

Teacher of the Bengal Encyclopedia, the late Editor of Bangiya Sahitya Mahasabha

and Kalyani Prakash; author of Codes & Series of Bengali, Marathi

Words, Archaeological Survey Reports and Modern Pictorial, &c.

Prav. Archaeological Secretary Indian Forward Service

Member of the Philology Committee Assam

Secretary of Bengali & Dr. Dr.

Printed by L. Banerjee at the Vishwavidyalaya Press,

Calcutta.

Maheन्द्रनाथ वरु and विश्वनाथ वरु

9 Theatrical Lane, P. O. Bagh, Calcutta

हिन्दी

श्री परमहंसजीय शान मन्दिर, पयसुप

विषुवकोष

(द्वादश भाग)

निद्रा (स० श्लो०) निश्चयति इति निद्रि कुशाया इति
रम् मलोपय (निम्बेरलोपय । वन २५१०) । अत्र
गौन्द । पर्याय—शयन, स्वाय, मथिय, सुषि शोर शयन ।
आनाम्निहद्रुपत्री सिद्धयोगिनो ई रातको ये योग द्वारा
मोर्षोको पाच्छुच बिदे रहतो ई ।

“आनाम्निहद्रुपत्री च निद्रा वा शिवयोगिनी ।

पर्यलोका समाच्छान्ता मया योगेन शान्तिः ३” (उप
नैयायकोके मतये हम्मनाकोमे मन्मथ योग कोने
से निद्रा होती है । पातञ्जलदर्शनने इसे मनको एक
वृत्ति बतलाया है ।

जिषमें सभी मनोवृत्तियां भीन हो जाती हैं उस
पदानका प्रथमस्वर कर अब मनोवृत्ति उदित रहती है
तब उसे निद्रा वा सुषुप्ति कहते हैं ।

अथवा निद्रा भी एक प्रकारको मनोवृत्ति है । प्रकाश-
प्रमाद मन्मथुर्ष पाच्छुदक तमोगुणको उद्रेक प्रवस्थाको
ही हम कोम निद्रा कहते हैं । तम वा अज्ञान पदार्थ को
निद्रावृत्तिका प्राप्त्यन है । अब तमोमय पर्याप्त अज्ञान
मय निद्रावृत्तिका उदय होता है, तब सब प्रकाशक मन्म-
थुच परिभूत रहता है । सुतां तम समय किसी प्रकार
बरतुका प्रकाश नहीं रहता । यही कारण है, कि सोम
कहते हैं—मि निद्रिन सा, सुमि क्व भो ज्ञान न या ।
यदार्थमें उस समय किसी विषयका ज्ञान नहीं रहता जो
नहीं, उस समय अज्ञान विचलका ज्ञान प्रवृत्त रहता है ।

तमो अज्ञानविषयक ज्ञानसे रहनेके कारण निद्रामन्त्रके
बाद उस समयको अज्ञानवृत्तिका स्मरण बिदा करने
है । निद्राके समय अज्ञानमय वा तमोमय वृत्ति अन्त
भूत रहती है, इस कारण गौद ट टने पर तमका स्मरण
होता है और तमो स्मरण द्वारा निद्राका वृत्तिलय प्राप्ता
जाता है ।

मनको पांच प्रकारकी वृत्तियां हैं, यथा—प्रमाद,
विषयव, विचल्य निद्रा शोर स्थिति । ये पांच प्रकार
को वृत्तियां प्रमाद शोर वैराग्य द्वारा रोधी जाती हैं ।
विशक्तपण्डित निद्राको सुषुप्ति बतलाते हैं । सुषुप्ति रीत्यो ।

मन अब उद्रेक शर शोर तमोगुणमें परिभूत होता है
तब निद्रा आता है । तमोगुणका कार्य अज्ञान है । हम
निद्राकाकर्म अज्ञानात्मक-ज्ञान होता है पर्याप्त तम समय
अज्ञानविषयक ज्ञान हो रहता है शोर कृत्त मो नही ।

निद्राका विषय आनुर्बुद्धिमें इस प्रकार लिया है—
मानवसमुहको आभासतः ही प्रतिदिन चार पन्नि
लायाय रहती है । आहारवेष्टा पानवेष्टा निद्रा शोर
सुरतश्रुद्धा । अब निद्रा पशु पत्ती है तब तमका वेग
रोकनेसे लम्बा, मन्मथ शोर अन्तुका सुदय, यहीमें
बिदना शोर तन्द्रा होती है तथा प्राया कृपा पदार्थ नहीं
पचता ।

दिनको निद्रा शितकर नही है बल्कि अन्तको वृत्ति
होती है । बिन्तु प्रीष्माकाकर्म दिना निद्रा अतना दोषा

वह नहीं' है। ग्रीष्मकालके सिवा अन्य ऋतुओंमें दिवा-निद्रा निषिद्ध है। जिनका प्रतिदिन दिवा-निद्राका अभ्यास है वे यदि उसका परित्याग करें, तो वायु, पित्त और कफ ये त्रिदोष कुपित हो जाते हैं। जो सब मनुष्य व्यायाम वा स्त्री-प्रसंगसे दुर्बल अथवा पथ पर्यटनसे क्लान्त हो गये हों तथा जो अतीसार, शूल, श्वास, पिपासा, हिक्का, वायुरोग, मटाल्यय तथा अजोर्ण आदि रोगोंमें ग्रस्त हों अथवा जो चोण देह, जीण कफ, गिश्त, हृद और रातमें जगी हों उनके लिए दिवा-निद्रा हितकर है जिनको दिवा-निद्रा और रात्रि-जागरणका अभ्यास पढ़ गया हो, उनके रात्रि-जागरण और दिवा-निद्रामें कोई दोष नहीं होता।

भोजन करनेके बाद सोनेके लिए अवश्य जाना चाहिए। इससे वायु और पित्त नष्ट होता है, कफकी वृद्धि तथा शरीरकी पुष्टि होती है और मन प्रफुल्ल रहता है। भोजन करनेके कामसे काम दो दण्ड बाद निद्राको जाना चाहिए। जो खानेके साथ ही सोनेको जाते हैं उनके स्वास्थ्यमें हानि पहुँचती है।

यथासमय निद्रा लेनेसे घातुकी समता और आलस्य विनष्ट होता है, शरीरकी पुष्टि होती है तथा बल, वर्ण, उज्ज्वलता, उत्साह और ऊठरान्नि प्रदीप्त रहती है। सोनेके समय छटा-नीवूके पत्र चूर्णको मधुके साथ मिला कर लेहन करनेसे वायुकी प्रसरताका गुण बन्द हो जाता है, सुतरां वायुके सङ्कोचनके कारण निद्रा आती है।

जब मनुष्योंके मन, कर्मेन्द्रिय और बुद्धोन्द्रिय विश्रान्त-भावका अवलम्बन करते हैं और सभी विषय-कर्मोंको निवृत्ति हो जाती है तभी मनुष्य निद्राभिभूत हो जाते हैं। सूच्छा, भ्रम, तन्द्रा और निद्रा प्रत्येक एक दूसरेसे विभिन्न है। पित्त और तमोगुणकी अधिकतासे सूच्छा; पित्त, वायु और रजोगुणकी अधिकतासे भ्रम; वायु, कफ और तमोगुणकी अधिकतासे तन्द्रा तथा कफ और तमोगुणकी अधिकतासे निद्रा होती है। जिससे इन्द्रिय विषयग्रहणको शक्तिसे रहित हो जाय, और देह की गुरुता, लृम्भन, क्लान्ति-बोध और निद्राकार्षितकी तरह अभिभूत हो, उसे तन्द्रा कहते हैं। निद्रा और तन्द्रामें

फर्क यह है, कि निद्राके बाद जागनेमें क्लान्ति दूर हो जाती है और तन्द्राभिभूत व्यक्तिको जागरणावस्थामें भी क्लान्ति दूर नहीं होती। (भावप्रकाश)

सूक्ष्मतमें इसका विषय इस प्रकार लिखा है,—हृदय चेतनाका स्थान है। जब वह अज्ञानसे आहत हो जाता है, तब प्राणीको निद्रा आती है। निद्रा वैश्वी-शक्ति है। यह सभी प्राणीको अभिभूत करती है। जब संज्ञा-वहा गिराएँ तमःप्रधान श्लेष्मासे आहत होती है, तब तामसो नामक निद्रा पहुँचती है। मृत्युके समय जो निद्रा आती है उसे अनवबोधिनी निद्रा कहते हैं। तमो-गुणविशिष्ट व्यक्तियोंको दिन और रात दोनों समय, रजोगुणविशिष्टको अकारण और सत्त्वगुणविशिष्ट व्यक्तियोंको अर्ध रात्रिमें निद्रा आती है। श्लेष्माका क्षय और वायुकी वृद्धि होनेसे अथवा मन वा शरीरके तापित होनेसे निद्रा नहीं आती। हृदय ही सब प्राणियोंका चेतनाका स्थान है, यह पहले ही कहा जा चुका है। वह हृदय जब तमोगुणसे अभिभूत होता है, तब देहमें निद्रा प्रवेश करती है। तमोगुण ही एकमात्र निद्राका कारण है और सत्त्वगुण बोधका हेतु अथवा स्वभावको ही इनका प्रधान हेतु कह सकते हैं। जाग्रत अवस्थामें जो सब शुभाशुभ विषय अनुभूत होते हैं, निद्राके समय जोवाक्सा रजोगुणविशिष्ट मन द्वारा उन सब विषयोंको ग्रहण करती है। इन्द्रियोंके विफल होनेसे तथा अज्ञानताकी वृद्धि होनेसे जीवात्माके निद्रित नहीं होने पर भी उसे निद्रित-भी कह सकते हैं।

वर्तमान यूरोपीय वैज्ञानिकोंका कहना है कि प्राणिगण जिस स्वाभाविक अचेतन अवस्थाके वशवर्ती हो कर बाह्यज्ञानशून्यावस्थामें कालयापन करते हैं और जिस अवस्थाके बाद हो कार्यकारिणो शक्ति प्रबल वेगसे पहलकी अपेक्षा आनन्द और सामर्थ्य के साथ लगी रहती है उसे अवस्थाका नाम निद्रा है। जिस प्रकार किसी यन्त्र वा कलके लगातार व्यवहार द्वारा क्षय प्राप्त हो जाने पर उसमें जब तक उस कल वा यन्त्रके उपादानका संयोजन नहीं होता, तब तक वह उद्देश्य कर्मका अनुपयोगी रहता है; ठीक उसी प्रकार हस्त पदादिके कार्य द्वारा हम लोगोंके देहाभ्यन्तरस्थ भिन्न भिन्न यन्त्रोंका

संघ होते रहने पर भी जब तक लक्ष्मी की परिपोषक नहीं होता, तब तक वे सब यत्न फलमैयूष हो रहते हैं और उन यत्नों में पानित लीबदेह बहुत लम्ब हो जाया कम हो कर मृत नाम धारण करता है। इसी कारण रामभद्रजी रक्षा के लिये कदवामर परमिधरने मिद्रा को छुटि ली है। कारण लीबगणके आयत्त फलसामें कम करनेसे उनके जिन सब यत्नों और बोर्दीका प्राप्त होता है, मिद्रित होनेसे उन सब यत्नों और बोर्दीके निष्कर्म बलामें रहनेके कारण उनका प्राप्त या प्राप्त होना मन्द हो जाता है। इससे पलावा मिद्राके पूर्वभुक्त पाहार दादा बिलक बोर्दीका पलाव पुष्प हो जाता है। इसी कारण मिद्राका नियम पावक्यक है। पक्षिको जिस प्रकार रात्रि घोर दिवा इन दो पक्षिकाओंके पक्षोम है और जिस प्रकार इन दो पक्षिकाओंके पाममन का भी निर्दिष्ट समय पक्षधारित है उसी प्रकार लोब-देह मिद्रित घोर आयत्त फलसामें पक्षोम है और उन दो पक्षिकाओंके पाममनका भी समय निर्दिष्ट है। मित्रंमता घोर पक्षधारके लिये रात्रि हो मनुष्य घोर पक्ष मांसिको के पक्षमें मिद्राका उपबुक्त समय है। बिन्दु कई जगह रहना बिपरीत देखा जाता है जैसे-प्रजावति मय हिनके समय, इकमय नामक कोट लम्बाके समय घोर मयकोट रात्रिमें कार्य करती हैं। पक्षियोंमें उड़, घोर पक्षाम्य दो एक पक्षियोंके सिवा समो पक्षो दिग्में काम करते हैं घोर रातको सोते हैं। मांघधीको पाम प्रथति कि सख बन्दु दिग्में सोते हैं घोर रातको पाहार भी लक्षायमें विचरक करती हैं।

साधारणतः मिद्राके दो कारण लिये हैं, एक सुष्य घोर घुसरा लक्षका सङ्घोषी। सुष्य कारण यह है, आयत्त फलसामें परिचम करके समो इन्द्रिया ज्ञान हो जातो हैं, सर्वेन्द्रियका ज्ञान मक्षिण है जो विनामके सिवा घोर कोई कार्य नहीं करता है। मिद्रा मित्र मक्षिणका विनाम फलसख है, इसीके लक्ष ज्ञानि द्वारा मिद्राका पामिमाव होता है। बिन्दु पक्षिक समय मानसिक घोर शारीरिक पक्षधिर परिचम मिद्राका विद्राजन होता है। मिद्राके साधारणकारो कारणोंमेंके जो मक्षिणको ज्ञान नहीं करती पक्षका जो मक्षिण

बोधगम्य बासीकी बार बार पावति करती, वे ही मिद्राके पोषक हैं। जैसे, पक्षकार घोर निर्भंगता साधारणतः मिद्राको लक्षोषक है घोर जिनका किमो लक्ष ना महर राष्ट्रके पाव्य बर्षी कोलाहनपुष्प पामिमें रहनेका पक्षाम है वे उन निर्भंग घोर मिद्राके पामिमें कामी भी नहीं हो सकते। पूर्वति दो पक्षाम्य कारणसमूह मनको लक्षके पक्षोपेक्षके पावक्य घोर लक्षको इच्छा मक्षिणी समताको कम कर देती हैं, क्षरा मिद्रादेको का पाममन पक्षिमाय हो जाता है। मिद्रा पानिके कुछ पक्षके ही पावक्य भाव पक्ष हो जाता है घोर मनोयोगका पामव देखनेमें पाता है। इन्द्रियां बाध इय्य पदायिका पक्षिण पक्षक नहीं कर सकते घोर लक्ष समय निर्भंगता तथा निद्राभ्यता पक्षक प्रिय हो जाती है। मिद्रा पानिके समय कम भोगोको पक्षधारित कम हो जाती है, शरीरमें पावक्य पा जाता है, पक्षिके मन्द हो जातो हैं, काम यद्यपि कुछ काम तक मन्दता पक्षिण समन्य सकते हैं पर लक्षका पक्षोपेक्ष लक्षी कर सकते घोर लक्ष मन्द लिये घोर पामिमें हो रहा है एषा पक्षमय करती हैं। लक्षो समय कम भोग घोर मिद्राके पामिभूत हो जाते हैं। मिद्राको प्रथमापक्षामें इन्द्रिय घोर लक्षि मक्षिण लक्षके पक्षके पक्षेत्तन हो जाती है। लक्षना घोर पक्षाम्य कोटो कोटो शक्तिदा बहुत देर तक पक्षेत्तन रहती हैं। मिद्राकक्षामो तीन भागोंमें विभक्त कर सकते हैं। मिद्रा पक्षके पक्षके पक्षक माद, पक्षिके लक्षके कुछ पक्षेत्तन मित्रित घोर लक्षके पक्षमें आयत्त पक्षधरके पागमनको प्रतीक्षामें पक्षेत्तनमाय कारण करती है। साधारणतः मिद्रा घोर पक्षेत्तन मय्यवर्षी एक समय देखा जाता है। लक्ष मय्यमें मिद्राका पक्षिके बहुत कम हो जाता है इसीके लक्ष समय मिद्रित पक्षिको लक्षमें काम सकते हैं। लक्ष, पक्षाम्य मक्षिण घोर लक्षिके पक्षधर मनुष्यकी मिद्राका विधिय तार लक्ष देखा जाता है। लक्ष माय्यममें प्रायः विर मिद्राके पामिभूत रहता है। मूमिह होने पर लक्ष पक्षके कुछ दिनों तक मादो मिद्राके होता है। निद्रियता लक्षकपक्षत मय्यम के लक्ष पानिके समय लक्षी कर पक्षिके समो समय मिद्रित रहतो है। पक्षिके शरीरके

पूर्णत्वके लिये जब तक क्षयकी अपेक्षा पुष्टिका भाग अधिक आवश्यक है, तब तक अधिक निद्राका प्रयोजन पड़ता है। जीवनवास्थामें शरीरमें क्षय और वृद्धि दोनों ही प्रायः समान रहनेसे निद्राका भाग बहुत कम हो जाता है। लेकिन वृद्धकालमें नाधारणनः पोषण-शक्तिके अभावके कारण उसके पूरणके लिये अधिक निद्राको जरूरत पड़ती है। स्त्रियोंकी निद्रा पुरुषोंसे बहुत कम है। नोरोग मनुष्याको ८ घण्टेसे अधिक समय तक नहीं सोना चाहिए।

व्यथार्थमें ऐसा देखा जाता है कि स्थूलकाय मनुष्य लोणकायकी अपेक्षा अत्यन्त निद्राप्रिय है। अभ्यासके अनुसार भी निद्राकी कमी वेशी देखी जाती है। जनरल एलियट २४ घण्टेके मध्य ४ घण्टेसे अधिक नहीं सोते थे। विख्यात आध्यात्मिक शास्त्रवेत्ता डाक्टर रोड एक समयमें दो दिनका भोजन खा लेते और दो दिन तक सोये रहते थे। फिर अभ्यासके वशमें आ कर निर्दिष्ट समयमें निद्रित और जागरित होनेकी कथा सभी स्वीकार करते हैं।

मिस्टर डरहमन एक कुत्तेको खोपड़ी काट कर मस्तिष्क द्वारा यह स्थिर किया है कि—(१) मस्तिष्कको ऊपरी गिरा स्फोट हो कर मस्तिष्क पर दबाव डालतो है इसीसे निद्रा आती है, यह भूल है। कारण निद्राके समयसे सब गिराएँ कुछ भी स्फोट नहीं होता। (२) निद्राके समय मस्तिष्क दूसरे समयकी अपेक्षा अधिक रक्तशून्यावस्थामें रहता है। मस्तिष्कको ऊपरी गिराशामें केवल रक्त का परिमाण घटता है, सो नहीं, रक्तकी गति भी मन्द हो जाती है। (३) निद्रावस्थामें मस्तिष्कमें रक्तकी गति इस प्रकार सम्प्रादित होती है कि उससे मस्तिष्कको भिक्षो पुष्टता लाभ करती है।

यहां पर अत्यधिक निद्रा वा उसका विपरीत भाव जिस अवस्थामें देखा जाता है उसके दो एक उदाहरण नहीं देनेसे वह समझमें नहो' आ सकता। इसीसे यहां पर दो एक उदाहरण उद्धृत करते हैं। भिन्न जातीय पुस्तकके अभ्यास द्वारा निद्रा कई एक समाह वा मास तक किसी व्यक्तिमें स्थायी रहते देखी जाती है। डाक्टर कारपेण्टरने दो रोगियोंका इसी प्रकार उल्लेख किया है। फरामी

डाक्टर ग्लाउचेटने सम्प्रति इसी प्रकारके तीन रोगियोंका उल्लेख कर उनमेंसे एककी विषयमें लिखा है कि यह रोगी स्त्री है। १८ वर्षकी अवस्थामें यह ४० दिन, २० वर्षकी अवस्थामें ५० दिन और २४ वर्षकी अवस्था लगातार एक वर्ष सोती थी। इस समय उसके सामनेका एक दांत उखाड़ कर उसी केद हो कर दूध वा मछली का शिरसा मुखमें दिया जाता था और उसीसे उसकी जीवनरक्षा होती थी। वह उस समय गतिहीन और अज्ञानावस्थामें रहती थी। उसकी नाड़ीकी गति बहुत मन्द थी, निश्वास प्रश्वास दुर्बल था, मलमूत्रादि कुछ भी नहीं होता था और समूचा शरीर लावण्यमय और सुख रहता था। इस निद्राको स्वाभाविक निद्रा नहीं कहते, यह निद्रा कष्टजनक है।

फिर कोई कोई मनुष्य सम्पूर्ण निद्राशून्यावस्थामें अथवा अल्प तन्द्रावस्थामें बहुत दिन तक रहते देखा गया है। सम्पूर्ण निद्राशून्यावस्था भावी पोड़ाघ्रापक है। ऐसी अवस्थामें दोषकालवापी घ्वर, मस्तिष्कका प्रदाह, सस्कोटव्वर इत्यादि पीड़ाएँ उत्पन्न होती हैं। दीर्घकाल अनिद्रावस्थामें रहनेसे बीच बीचमें प्रलाप और अचेतनावस्था भी पहुंच जाते हैं। यदि इस प्रकार जागरित रहनेका कोई विशेष कारण न रहे, तो रोगी शीघ्र ही लकट पीड़ाग्रस्त होता है। साधारणतः पक्षाघात, संन्यास वा उन्मादरोग उन्हें आक्रमण करता है।

स्वल्प-निद्रा इस प्रकार पीडाघ्रापक नहीं है। साधारणतः जो सब मनुष्य कार्यमें लगे रहते हैं, जिनका मस्तिष्क बहुत चालित होता है अथवा जो अर्थकृष्णता-भोग करते हैं वे ही ऐसे स्वल्प-निद्रालु होते हैं। फिर जो बहुत दिनोंसे वात, चर्मरोग, सूत्ररोग, पेटकी पीड़ा और मूर्च्छा रोगसे आक्रान्त है, उनकी भी निद्रा बहुत कम हो जाती है।

इस अनिद्रावस्थाको दूर करनेमें अनिद्राके कारणकी चिकित्सा वारनी होती है। उक्त रोगी जिस घरमें रहे, उस घरमें निर्मल वायुकी आनि जानिका रास्ता रखे। घर यदि अधिक गर्म हो तो उसकी उष्णताको कम कर दे। रोगी जिस शय्या पर सोवे, वह गर्म न हो। उस रोगीको वे सब चिन्ताएँ न आनि दे जाँ उसकी मनकी

अथैव दाम्ना, अथैव भोर विरक्त करतो है। इस समय सुखाव देना उचित है।

पातुर्वेदके मतसे यौधेयपुत्रि सिवा अन्य सभी पुत्रुभिः विवा-निद्रा निविष्ट है। किन्तु बालक, ऋक, ओम सर्वजनित ज्ञान, अतबोध प्रथमा मध्यपानमे सत्यत वाञ्छिते विवे; सुवारो वा पद्यममने आत्त प्रथवा अथा कर्म द्वारा ज्ञान वा पातुर्वेद वाञ्छिते विवे प्रथमा विषया मेद, याम क्व, रस भोर रक्त नीच हो गया जो हमसे विवे प्रथवा अनीच रोगीके विवे दिवा निद्रा निविष्ट नही है, केवल वे दो देखते अथैव समय तत्र न सोये। रातमें जितना समय नक जमी, दिनमें उससे धारै समय तत्र नो सञ्चते है। दिवा निद्रा देखके विचार लक्ष्य प्रकृत ऋदय कर्म है। दिवाभागमें निद्रित वाञ्छिको कभी सुखद्वि नही होती तथा उसे सब दोषोंका प्रबोध भिक्षणा पक्ता है।

दोषका प्रबोध जोनेसे वायु, वायु, प्रतिप्राय मद्यकका भाव, अङ्गमद, अथवि, अथ भोर अन्विमार्थ पादि रोग उत्पन्न होते हैं, इसी कारण रात्रिआयत भोर दिवा-निद्राका त्याग एकमात्र उपाय है। रातमें परिमित रूपसे सो सञ्चते है। परिमित निद्रासे दिव जियेय भोर सफल नही रहती है ज्ञानाच्छडी द्विष्ट होती है, मन प्रकृत रहता है तथा सो नव परमायु होती है। निद्राको कर्ममें कर सेनेसे दिनको वा रातको जमी वा सोये रहनेसे शरीरमें कोई ज्ञान नही पडू चती।

विद्यावाक्य—वास्तु, पित्त, मन्त्रताय, अथ वा अन्वि घातके कारण निद्रा मत्त होती है। इन सब दोषोंके विपरोत क्रिया करनेसे जो वाञ्छ होता है। निद्रानाथ जोनेसे शरीरमें सेल समावे। इस समय मातृविसेपन भोर स काहन विरक्त है। शक्तिव्युत्क, गोधूम पित्राथ, दक्षुरनल तुङ्ग मधुर भोर निद्रावृत्त भोजन, दुग्ध वा मीधससुक्त भोजन, रातमें श्राधा यक्ष'रा वा शुद्धप्रथका भोजन भोर कोमल तथा मनीहर मय्या भोर पासन पादिवा बयनहार करना उचित है। निद्राभी पविष्टता जोनेसे कमल, स शोचन, लङ्गन भोर रक्त मोष्य करे तथा मनको भी चञ्चल करके रहू जिससे ये द न जाने। लक्ष वा मेदविधिष्ट प्रथवा विद्या

अज्ञिर्वेदे विवे रात्रि-आयत भोर कथ्या, भूल, विद्या, प्रवीच भोर अतोधारगेम दिवा निद्रा विरक्त है। इन्द्रियोका विषय अर्थात् अन्तर्जार्थिका ज्ञान न होना, शरीरको सुखा, लक्ष्य ज्ञानि भोर निद्रामें वातरता ये सब तन्द्राके लक्ष्य है। तमोगुणसे वातयेध्यासे वायु मित्तनेसे तन्द्रा भोर दोषाके वायु मित्तनेसे निद्रा होती है। (सुश्रुत कारीरस्वान ३ ५०)

जिस समय देखो पाका तमसे व्याक रहती है उस समय निद्रा पडू चती है। अथैवपुत्रके प्राक्क जनेसे ज्ञान होता है, इस समय अन्तरात्मा विद्याय करतो है, इसी कारण इसे निद्रा कहते है। अन्तरात्मा इस समय नासाई वा दोमो अक्षे मध्यजर्ममें लीन रहती है। निद्रारहित अज्ञि—

“इत्योनिद्रा हरिर्हरन वरद्वेदकरन व । परमातीश्वरकसन वारम्भहरन व ॥”

सुखसुख—
‘सुख लभितव्यवन्वाभ्युत्थसुखसो वर ।
धानकालसु खी मुक्ते नक्ष रातेः कथिः ॥’

(शक-गीतिवारा)

हरिः, पराधीन परदारत क्या कर्मो सुखसे सो नकता है ? जिन्हे किमो प्रथारका अथ नही है, जो अ्याविस्तु है जोवे विधिय स सर्व नही करती भोर अथैव मोहन करते है वे जो सुखसे सोते है ।

कर्म्याथैव मतसे एक प्रकर रात्रिमे बाद मीत्रनादि करके निद्राको चाय भोर बार दृष्ट रात रहते निद्राका परित्याग करे। निर्जन पवित्र ज्ञानमें मनीहर अथ्या पर जोनेसे ली द बन्धन अन्द पातो है। सोनेके पक्षे सिवा जनेमें एक लोटा अथ मरके जन्मविहित वैदिक वा मादङ्क मन्त्रते रचना मङ्गलप्रद है ।

“हृत्पी हैते विधिः सु भोमनेमोःभिक्षे ।
मालुदकथने वैव अन्विसेत्तु वरा सुपः ॥
वाचने पूर्वपुत्र व विर'त्व वे विवापयेत् ।
वेदिके वावेर्मैन्के रक्षा इत्या स्वपेता ॥”

(वाकिपयल)

अपने घरमें पूरकको भोर मद्यक करके सीमा चाडिये। पातुर्वेदकी अज्ञि दक्षिणकी भोर मद्यक रथ

कर सो सकृत् है। प्रवासिव्यक्तिको पश्चिमकी ओर मस्तक रख कर सोना चाहिए। उत्तरकी ओर मस्तक रख कर सोना अतिशय दूषणीय है। पूर्वकी ओर सिराहना करके सोनेसे धन-प्राप्ति, दक्षिणकी ओर आयुवृद्धि, पश्चिमकी ओर प्रबल चिन्ता और उत्तरकी ओर सिराहना करके सोनेसे मृत्यु होती है।

निद्रा जानिके पहने विष्णुको प्रणाम करना अवश्य कर्त्तव्य है। इन सब स्थानोंमें कदापि सोना न चाहिये, शून्यालय, निर्जन घर, श्मशान, एक वृक्ष, चतुःपथ, महादेवगृह, पथरीली जमोनके ऊपर, धान्य, गो, विप्र, देवता और गुरुके ऊपर। इसके अलावा भग्नशयन और अशुचि हो कर अथवा आर्द्र वासमें वा नग्नावस्थामें, खुले गिरसे, खुले मैदानमें तथा चैत्यवृक्षके तले सोना मना है।

(आधिकतत्त्व)

निद्राकर (स० त्रि०) निद्रायाः करः। निद्राकारक, सुलानेवाला।

निद्राकरम् (स० क्लो०) सुनिषेधक शाक, एक प्रकारका साग।

निद्राकर्षण (स० क्लो०) निद्रायाः आकर्षणः। निद्राका आकर्षण, निद्रासुता।

निद्राकारिन् (स० त्रि०) निद्रा-कृ गिनि। निद्राकर, निद्राकारक, सुलानेवाला।

निद्राकाल (स० पु०) निद्रायाः कालः। निद्राका काल, सोनेका समय।

निद्राकुल (स० त्रि०) निद्रायाः आकुलः। निद्रातुर, निद्रापीडित।

निद्राक्षय (स० त्रि०) निद्रया आक्षयः। आगतनिद्रा, जिसे नींद आ गई हो।

निद्राक्रान्त (स० त्रि०) निद्रया आक्रान्तः। निद्राक्षय, निद्रातुर।

निद्रागत (स० त्रि०) निद्रागतः। निद्रित, जो सो गया हो।

निद्रागार (स० पु०) निद्राया आगारः। निद्रागृह, सोनेका कमरा।

निद्रागौरव (स० क्लो०) निद्रावाहुल्य।

निद्राग्रस्त (स० त्रि०) निद्रया अग्रस्तः। निद्राकुल, निद्रातुर।

निद्राजनक (स० त्रि०) निद्राकर, सुलानेवाला।

निद्राण (स० त्रि०) नि-द्रा कृ, तस्य न, ततो णत्वं। निद्रा-गत, जो सो गया हो। पर्याय—निद्रित, शयित।

निद्रादरिद्र (स० पु०) निद्राय, दरिद्रः अभावः। १ निद्राका अभाव, नींदका नहीं होना। २ एक संस्कृतपद्य कवि।

निद्रान्वित (स० त्रि०) निद्रया अन्वितः। निद्रित, निद्रा-गत, सोया हुआ।

निद्राभङ्ग (स० क्लो०) नींद टूटना।

निद्राभाव (स० पु०) निद्राया अभावः। १ निद्राका अभाव, नींद नहीं पहना। २ योगनिद्रा।

निद्रायमान (स० त्रि०) जो नींदमें हो, सोता हुआ।

निद्रायोग (स० पु०) निद्रा और गहरी चिन्ता।

निद्रारि (स० पु०) नेपालनिम्ब, चिरायता।

निद्रालु (स० त्रि०) निद्रातोति निद्रा-भालुष् (सृष्टि श्दोति। पा ३।२।१५८) १ निद्राशील, सोनेवाला। (प्लो०)

निद्रा देयत्वेनास्त्वस्या इति निद्रा वाहुल्यकात् भालु। २ वार्त्ताकु, वैंगन, भंटा। ३ वनवर्षरिका, वनतुलसी।

४ नली नामक गन्धद्रव्य।

निद्रावस्था (स० स्त्री०) निद्राया अवस्था। निद्रित अवस्था।

निद्राविमुह (स० त्रि०) अनिद्रा, जागरूक।

निद्रावृक्ष (स० पु०) निद्राया वृक्ष इव। अन्धकार।

निद्रावेश (स० पु०) निद्राका उपक्रम वा इच्छा।

निद्राशाला (स० स्त्री०) निद्रागृह, सोनेका कमरा।

निद्राशील (स० त्रि०) निद्रालु, सोनेवाला।

निद्रासंजन (स० क्लो०) निद्रा संजनयतीति संजन-षिच्-त्युट्। १ स्थिमा, कफ, कफकी दृष्टिसे निद्रा आती है।

निद्रित (स० त्रि०) निद्राऽस्य सञ्जातः, निद्रा तारकादि-त्वादितच्। निद्रागत, सुप्त, सोया हुआ।

निद्रोत्थित (स० त्रि०) निद्रासे उत्थित, जो सो कर उठा हो।

निघडक (द्वि० क्लि० वि०) १ विना किसी रुकावटके, बेरोक। २ विना सङ्कोचके, विना हिचकके, विना आगा पीछा किये। ३ निःशङ्क, देखटके, विना किसी भय या चिन्ताके।

निघन (वं० पु० स्त्री०) निघा-न्तु । १ मरक । २ नाग ।
 ३ लम्बस्वान्तमे पाठर्थां स्नान । ज्योतिषके मतमें इन
 स्नानके नदीपार, पद्मस्त नैपथ्य, दुर्गं गच्छ, धानु धोर
 चट्टका विचार किया जाता है । यदि लम्बसे चौधे स्नान
 पर सूर्य को धोर पक्ष पर मणिको दृष्टि हो, तो जिन दिन
 निघनस्नान पर घम पक्षको दृष्टि होगी, उसी दिन घम,
 पथ्य होगे ।

निघनस्नान पर सूर्यादि पक्षके रहनेसे निगमलिखित
 फल मिलते हैं—

यदि लम्बके पाठर्थां स्नान पर सूर्य को धोर पक्ष पक्ष
 सूर्यके पक्ष पथवा क्षीय पक्ष हो, तो वह रविपक्ष लम्ब-
 दाता होता है, उच्च ज्ञान न हो कर यदि लम्ब स्नान हो,
 तो माधव्यमी संध्यावन्त है । सूर्य अपनेसे उच्च पथवा
 अपने पक्षमें रह कर जिनके लम्बसे पक्षम स्नानगत होगी
 उसको सुखसे मृत्यु होगी । उच्च दो स्थान छोड़ कर
 पथ्य स्थानमें रहनेसे वृष्ट, यातना वा दुःखने मृत्यु होती
 है । रविके पक्षम स्थानमें रहनेसे बन्धावन्त, सर्व पथवा
 ऊपर इन लोगमेंसे किसी एक द्वारा स्वल्पभूमि पर मृत्यु
 होगी । लम्बके पाठर्थां स्नान पर चन्द्रके रहनेसे उसे
 काम, श्रेय धोर म्वर होता है देहका निगमभाग लय
 हो जाता है तथा उपको जन्ममें मृत्यु होती है । लम्बके
 पाठर्थां स्नान यदि पापपक्षके देवा वाय धोर लम स्थान
 पर चन्द्र रहे, तो वह सोके ही दिनों ४ मध्य यमराजका
 निश्चयान बनता है । फिर वह पक्षम स्थान यदि चन्द्रका
 पथवा पथवा मध्यका वा सुपथा हर हो धोर वर चन्द्र
 यदि पूर्व हो, तो वाय धोर विकारोगकी उत्पत्ति होती
 है । लम्बके पाठर्थां स्नान पर मङ्गलके रहनेसे पथ्य द्वारा
 पथ्य पथवा राजविचारसे धोर पथ्यकाय कृप्य, मय,
 पर्यं वा पक्षकी रत्नमेंसे किसी एक रोममें पाकान्त हो
 कर पक्ष चमते मृत्यु होती है । वाट मरनेके वसे मरक
 होता है । यदि लम्बके पक्षमस्थान पर मङ्गल रहे धोर
 वह मङ्गल दुर्बल पथवा क्षीय भोचरामिदिक हो तो वह
 मनुष्य पक्षमत्त भयानक दुष्ट ब्रह्म, अतिघोर पक्षका टण्ड
 हो कर किसी निन्दित स्थानमें मरता है । लम्बके
 पक्षम रामिके यदि बुध रहे धोर वह यदि घमपक्षका
 सैत्र हो तो अँह-भोचमें सुखसे उसको मृत्यु होती है ।

सीदिक वह पक्षमस्थान यदि पापपक्षका देव हो, तो
 मूल, पाप पथवा उच्च वा उदरके किसी प्रकारके रोमने
 पीड़ित हो कर राजमन्त्रमें उसको मृत्यु होती है । घम-
 बुध यदि पक्षम स्थान पर हो, तो अँह तीर्थ क्लेश पर
 मरक होता है धोर वह बुध यदि पापपक्षके मन्त्र मिले
 हो तथा मन्त्र गृहगत हो, तो मनुष्य वदनकर्मपरोमसे
 मरता है । वृहस्पति अपने घरमें सि वा घमपक्षके
 घरमें रह कर यदि लम्बकी पक्षमरामिमें हो, तो श्रेय
 रहनेके लिये मुख्यतोषमें उसका देहावधान होता
 है धोर यदि वह स्थान वृहस्पतिका क्षीय पक्ष
 वा घमपक्षका पक्ष न हो, तो मो मरते समय
 उसे श्रेय रहता है । लम्बके पक्षमस्थानमें शुक्रके रहने
 से मनुष्य लक्ष्मणावारी, राजबेवज, मांसमिय धोर सुखी
 होता है तथा उसके दोना निव मूल होती है । अन्तिम
 समय किसी सुतोषमें उसको मृत्यु होती है । लम्बके
 पक्षम स्थानमें मणिके रहनेसे मनुष्य मोक्षामिमूल, वदन
 कर्म वा मूलरोगाकान्त हो सिद्धमें पथवा किसी भोच
 कानि द्वारा निघनकी प्राप्त होता है । मणिके पक्षम पक्षमें
 रहनेसे मानव दुःखभोगी हो कर देवाकारवासी होता
 है । या तो धोरमें भोच भोगोंके ज्ञाय वा निवरोमसे
 उसको मृत्यु होती है ।

राहुके पक्षम स्थानमें रहनेसे मन्त्र के घमघमें ही
 उसका मरक होगा है तथा मर श्रेयसे, पापकर्मनिरत,
 गन्धोरमन्त्राव, धोर, जग, वापुश्च धोर धनवान्
 होता है । (अक्षित्परोषिष)

३ तारासिद्ध अथनक्षत्रके मातर्था, लोकद्वय धोर
 सिद्धमर्था लक्ष्य । यह निघन तारा दूयधोय माना मन्त्र
 है । दोपयानिदिके लिये तिन धोर काश्चन दान देना
 चाहिये ।

‘शत्रुतो लक्ष्मं वयाव निघने ठिकडावन्तम् ।’
 (ज्योतिषतन्त्र)

१ विष्णु । २ बुध, पानदान । ३ कृष्णका अधि-
 पति । ४ पक्ष पथ्यका वा पान पथ्यमनुष्य सामका
 अन्तिम लक्ष्य । (वि०) निघतं लम पथ्य । ८ धनहोम,
 तिघन, दरिद्र ।

निघनकाय (ल० स्त्री०) नामभेद ।

निधनक्रिया- (स०, स्त्री०) निधनस्य क्रिया । मृतञ्चक्रि-
का सत्कार, अन्त्येष्टि इयं ।

निधनता (स० स्त्री०) निधनस्य भावः, निधन-तल-
टाप् । दरिद्रता, कांगली ।

निधनपति (स० पु०) प्रलयकर्त्ता, शिव ।

निधनवत् (स० त्रि०) निधनं विद्यते यस्य निधन-
मत्पु, मस्य वः । १ मरणयुक्त । (क्ली०) २ निधना-
वयवयुक्त सामभेद ।

निधनी (द्वि० वि०) निर्वन, धनहीन, दरिद्र ।

निधमन (स० पु०) निम्नवृत्त, नोमका पेड ।

निधा (स० स्त्री०) निवोधयति धार्यति बन्धनेनानया नि-
धा-ञ् । १ पाशसमूह । २ निधान । ३ अर्पण ।

निधातश्च (स० त्रि०) निधा-तश्च । स्थापनीय ।

निधान (स० क्ली०) निधीयतेऽत्र निधा आधारे ल्युट् ।
१ निधि । २ आधार, आश्रय । ३ लयस्थान, जहा सभी
यस्तु लीन हीं । ४ अग्रकाश । ५ स्थापन ।

निधान—एक कवि । ये अली अकबरगुं-महम्मदोके
सभापण्डित थे । कविताशक्तिची विशेष पराकाष्ठा
दिखा कर इन्होंने 'शालिहोत्र' नामक हिन्दी भाषामें
एक अश्वत्थैद्यकग्रन्थकी रचना की । ये १७५१ ई०में
वियमान थे । कवि प्रेमनाथ और पण्डित गुमानजी
सिन्ध इन्हींके समसामयिक थे ।

निधि—एक कवि । ये १६०० ई०में वियमान थे । वारा
णसीके राजपण्डित ठाकुर प्रसाद त्रिपाठोने अपने वनाये
हुए 'शुद्धार-संग्रह' ग्रन्थमें इनका उल्लेख किया है ।

निधि (स० पु०) निधायतेऽचेति निधा-क्ति । १ ननिका
नामक द्रव्यविशेष । २ मसुद्र । ३ जोवकीषधि, जोवक
नामकी दवा । ४ आधार । यथा—गुणनिधि, जलनिधि
इत्यादि । ५ विष्णु ।

जब प्रलयकाल आता है, तब सभी विष्णुमें लीन हो
जाते हैं । विष्णु सभीके आश्रय स्वरूप हैं, इसी कारण
निधिगन्धसे विष्णुका बोध होता है । ६ चिरप्रनष्टस्वामिक
भूजातधनविशेष, गाहा हुआ खजाना । मिताक्षरामें
लिखा है, कि पृथ्वीमें गढ़ा हुआ धन यदि राजाको मिले,
तो उसका आधा ब्राह्मणादिको दे कर आधा उसे ले
लेना चाहिये । विद्वान् ब्राह्मण यदि पावें, तो उसे सब

ले लेना चाहिये । क्योंकि इस प्रकारके ब्राह्मण जगत्के
प्रभु हैं । यदि राजा और विद्वान्को छोड़ कर अपण्डित
ब्राह्मण वा क्षत्रिय आदि पावें, तो राजाको उन्हें छठों
भाग दे कर शेष ले लेना चाहिये । यदि कोई निधि
पा कर राजाको, मंवाट न दे, तो राजाको उसे दण्ड
देना चाहिये और ग़ारा खजाना ले लेना चाहिये ।

(मिताक्षरा)

यदि कोई मनुष्य निधि पावे और वह निधि खास
उसीकी है, ऐसा प्रमाण दिखावे, तो राजाको छठों भाग
या चारहवां भाग ले कर उसे शेष निधि लौटा देनी
चाहिये । ७ कुर्वरके नौ प्रकारके रत्न । पर्याय—
शेवधि, सेवधि ।

“पद्मोऽस्त्रिययां महापद्मः पद्मो मकरकच्छौ ।

सुकुन्दकुन्दनीलाश्च वर्चोऽपि निधयो नव ॥”

(हारावली)

पद्म, महापद्म गङ्ग, मकर, कच्छप, सुकुन्द, कुन्द,
नील और वर्च ये नौ प्रकारकी निधियां हैं । मार्क-
ण्डेयपुराणमें आठ प्रकारकी निधियोंका उल्लेख है ।

यथा—

“पद्मिनी नाम या विद्या लक्ष्मीस्तस्याधिदेवता ।

तदाधाराश्च निधय स्तान्मे निरादतः शृणु ॥”

(मार्कण्डेयपु० ६८ अ०)

पद्मिनी नामकी विद्याकी, अधिष्ठात्री देवी लक्ष्मी
हैं । ये सब निधियां उन्हींकी आश्रित हैं । पद्म, महा-
पद्म, मकर, कच्छप, सुकुन्द, नन्द, नील और गङ्ग ये
आठ प्रकारकी निधिया हैं । जहाँ ऋद्धिका आविर्भाव है
इनका भी आविर्भाव वहीं है और वहाँ बहुत जल्द
सब प्रकारकी सिद्धियां लाभ होती हैं । देवताओंको
प्रसन्नता तथा साधुओंकी सेवा, इन्हीं दो उपायोंसे यह
निधि प्राप्त होती है ।

पद्मनिधि—यही निधि प्रथम निधि और समयको
अधिकृत है । पुत्र और पौत्रादि क्रमसे इस निधिका
भोग होता है । पुरुष यदि इस निधिसे अधिष्ठित हो, तो
वह दाक्षिण्यसार, सत्त्वाधार और परमभोगशाली होता
है । यह निधि सत्त्वगुणमें अधिष्ठित है । इसके प्रभावसे
मनुष्य सुवर्ण, रौप्य और ताम्रादि जितनी धातुएँ हैं

सर्वोच्चा भोग करता और सब विद्वय करता है।

महाप्रतिनिधि—यह भी मनुष्यवर्गको पालन है। इसकी प्रतिष्ठानमें सभी मनुष्य सत्त्वगुणप्रधान होते हैं और सबका पशुपतिगण्डि रत्न प्रकाश और सुखादिवा भोग तथा उन सब सर्वोच्चा ज्ञान विद्वय करती हैं। पुत्र पोषादिप्रकारसे यह निधिवा भोग होता है।

महानिधि—यह तमप्रधान है। जिससे पास यह निधि है वह व्यक्ति सर्वप्रधान होते पर भी तमप्रधान होता है तथा वायु, अन्न, पानि, अग्नि और परम देवता भोग करता है। राजाके साथ भी उसको मित्रता होती है।

अक्षुप्तनिधि—यह निधि भी तम प्रधान है, इसी कारण जिससे पास यह निधि रहती है, उसका समस्त भी तम प्रधान होता है। वह मनुष्य सुखपरम्परासे अन्न भोगप्रसङ्गसे परिक प्रकाशके व्यापारमें प्रवृत्त रहता है। जिससे पर उसका विज्ञान नहीं होता। जिस प्रकार अक्षुप्तधन मारा पक्ष स हरण करता है, उसी प्रकार वह भी पापसचिवा हो कर जनताके कित्तको स हरणपूर्वक आक्रामक द्विपाये रहता है। वह मनुष्य विनाशसे मरने कीई वस्तु किसीकी नहीं देता और पाप भी उसका भोग नहीं करता। यह वस्तु जमीनमें गाड़ रहता है।

सुखनिधि—यह निधि रजोगुणप्रधान है। इस निधिकी दृष्टि होनेसे मनुष्य भनवान् होता है। वह मनुष्य बीबा पेशु, सुदृढ़ आदिवा सभोग करता तथा गावक और नर्तकीको विच देता है। बन्दी, सुख मानक और नाष्टिर्षीकी रातदिन भोग्यवस्तु देता और पाप भी उससे सब भोग करता है। कुठरा तथा छोटी प्रकारके चम्पान्य व्यक्तिसे प्रति उसकी पामक्ति होती है। यह निधि जिसकी भजना करती है वह एकका ही सङ्गी होता है।

मन्दनिधि—यह निधि रज और तमोगुणनिधि है। इसकी दृष्टि होनेसे मनुष्य जनवान् होता तथा वह तरह तरहके लज्जादिवा भोग और ज्ञान निष्कारि करता है। वह मनुष्य अन्न, धान, चम्पामत सबको पाप्य देता है। वह कराधा भी अपमान सह नहीं

करता। कोई उससे पासके विमुक्त चीट नहीं पाता, और सबको यह सुँह माना दान देता है। उन व्यक्तिने पत्नी भी मोन्द्यमानिनी होती है तथा उनके परिक चम्पान होता है। घात पोड़ी तब इस निधिवा भोग होता है। इस निधिसे पविपति दोषको जनकधाम कर सुखसे समय व्यतीत करती हैं।

लोकनिधि—यह निधि सत्त्व और रजप्रधान है। जिससे प्रति इसकी दृष्टि पड़ती है उसका समस्त भी सत्त्व और रजप्रधान होता है। वह मनुष्य तरह तरह के मन्त्र, अध्याय भाष्यादि, फल पुष्प सुखा, विद्वय, मन्त्र और दक्षिणा भोग करता है। इन सब प्रसंगमें लज्जा करा भी अतृप्त्य सत्य नहीं होता। लज्जा पक्षिवाय भजय लङ्काम, देवालय पादि सत्त्वभूमि वीतना है। यह निधि तीन पोड़ी तम रहती है।

महानिधि—यह निधि रज और तमोमय है। जिससे पास यह निधि है उसका समस्त भी रज और तमो मय होता है। यह निधि किन्नर एक पोड़ी तम रहती है। इस निधिवा पविपति निम्नोन्नत करता तथा किन्नर अपनेकी ही पच्छे पच्छे अस्त्रारोने सज्जना पश्य करता है। दूसरी बात तो दूर रहे, अपनेकी और सबकी भी लुब्ध नहीं देता है। जब पद्मिनी देखे इन सब निधिसेके ऊपर अपना भाविपत्त फँसाए हुई है। (मार्कण्डेयपुरा ६८ ब०)

८ पौरव गोत्र गुणनिधि। वे राजा इन्द्रजिह्वसे पुत्र थे। मरुखुरावादिमें से निरासिन्न नामसे प्रसिद्ध हैं। ८ महादेव, निव। १० ऋषिर्षीका अक्षुप्त पाठवुत वेद। निधिनोर देवी। ११ नी की सख्या।

निधिवी (४० पु०) निधिषपोवायवभूतपाठो विद्वत् गोपवक्ति सुपचक। पन्धान वह जो वेद वेदाङ्गमें पार मत हो कर सुदृक्कसे भावा हो।

निधिनाथ (४० पु०) निधीना नाथ। निधिर्षीके सामी, कुबेर। पर्याय—निधीय, निधीष्य, निधिप्रभु। निधिनाथ (४० पु०) एक सस्ततक पण्डित। दक्षीने व्यापारस यह नामक एक पश्य निधा है।

निधिप (४० पु०) निधिपा क। बनेखर, कुबेर। निधिपति (४० पु०) निधीर्षी पति। कुबेर।

निधिपा (स० पु०) यथाधिपति ।

निधिपाल (स० पु०) यन्त्रखर, कुबेर ।

निधिमत् (स० त्रि०) धनयुक्त, जिसके पास धन हो ।

निधिराम कविचन्द्र—एक विख्यात कवि । ये विष्णु-पुरकी राजा गोपालसिंहके सभा-पण्डित थे । इन्होंने बङ्गलाभाषामें संचिह्न रामायण और महाभारत तथा श्रीमहागवतके आधार पर गोविन्दमङ्गल, दाताकण आदि कई एक छोटे बड़े ग्रन्थ लिखे हैं ।

निधिराम गुप्त—एक स्वभावजात बङ्गाली कवि । इनका प्रकृत नाम रामनिधि था । १६६३ शककी वैश्वश्रममें ये उत्पन्न हुए थे । इष्ट इण्डिया-कम्पनीके अधीन ये काम करते थे । १७५६ शक अर्थात् १८३४ ई०में ८४ वर्षकी अवस्थामें इनका देहान्त हुआ ।

निधिराम शर्मा—एक ग्रन्थकार । इन्होंने 'आचारमाना' नामक एक संस्कृत ग्रन्थ बनाया है ।

निधिवास (निवास)—१ अहमदनगरके अन्तर्गत एक महकूमा । इसके उत्तरमें गोदावरी नदी निजामराज्यकी सीमा निर्देश करती है, पूर्वमें शिवगांव, दक्षिणमें नगर और पश्चिममें राहुड़ी है । क्षेत्रफल ४७७१३८ एकड़ है । इसमें १८० ग्राम लगते हैं । १८१८ ई०में यह अंगरेजोंके शासनाधीन हुआ ।

कहते हैं, कि प्राचीन हिन्दू राजाओंके समय निधिवास अत्यन्त समृद्धिशाली था । यहाँ अनेक सुभय मनुष्य रहते थे । १४८० से १६३६ ई० तक यह नगर निजामशाही राजाओंके राज्यभूत था । १६३६ ई०में यह मुगलसम्राट् शाहजहान्के हाथ लगा । १८वीं शताब्दीमें शिवाजीके पौत्र शाहुने योंतुकमें यह स्थान प्राप्त किया । १७५८ ई० तक यह नगर यद्यार्थमें महाराष्ट्रके ही अधीन रहा । अक्षिवासिगण इस नगरकी निवास कहते हैं ।

१८०१-१८०३ ई०में होलकर इसी नगरके मध्य हो कर पूना जाते आते थे जिससे यहाँके लोग विशेष क्षतिग्रस्त हो गये थे । पीछे १८०६ ई० तक दुर्बल भीलजाति इस देशमें लूटमार मचाती रही । उसी साल दुर्भिक्ष भी पड़ गया, इन सब कारणोंसे देश जनशून्य और हतथी हो पड़ा । अन्तमें १८१८ ई०में जब यह अंगरेजोंके हाथ

लगा, तबसे यहाँ चारों ओर शान्ति विराजने लगी ।

किसी किसीका कहना है, कि १६०५ ई०में मानिक प्रस्थरने 'निवास'की दिल्लीके अधीन कर लिया, लेकिन इस विषयमें कोई प्रमाण नहीं मिलता । यहाँ 'विधावनी' नियम प्रचलित था । कुल खजानाको 'तंवा' या 'कमान' और एक ग्राममें जितनी जमीन पड़ती थी, उसके क्षेत्रफलको 'रकवा' कहते थे । ग्यारह ग्रामोंमें 'मुण्डवन्दी' नियमानुसार मालगुजारी वसूल होती थी । निवाससे तरह तरहके कर वसूल किये जाते थे, जिससे लोग बहुत तंग पा गये थे ।

इस प्रदेशमें निवास, गोनाई, चन्दा आदि नारह शहर हैं । यहाँ तथा ग्रामग्रामके शहरोंमें बहुसंख्यक ताँतो रहते हैं । प्रतिवर्ष यहाँमें हाथके बुने हुए कपड़े की रफ्तानी होती है । धांगड़ लोग एक प्रकारका कम्बल तैयार करते हैं ।

अहमदनगरसे औरंगाबादकी रास्ता इसी शहर हो कर गया है । इसके अलावा एक दूरमा रास्ता निवासके सिद्धरकेग होना हुआ पैठानकी चना गया है ।

२ उक्त महकूमेका एक सहर । यह अक्षा० १८ ३४'३०" और देशा० ७५'००"के मध्य अहमदनगरसे ३५ मील उत्तरपूर्वमें अवस्थित है । यह एक दातव्य चिकित्सालय है । यह शहर १८७७ ई०में बनाया गया है । निवासके पश्चिम प्रायः साध पावकी दूरी पर एक प्रस्तर-स्तम्भ देखनेमें आता है जिसका घेरा ४ फुटसे कम नहीं होगा । ऐसा अनुमान किया जाता है, कि यह मन्दिरका भग्नाश है और ध्यानदेवका स्तम्भ कहनाता है । प्रवाद है, कि ध्यानदेवने इसी स्तम्भ पर टेक दे कर भगवद्गीताकी रचना की थी (१२७१-१३०० ई०में) । स्तम्भ एक घरके बीच मट्टीमें गड़ो हुई है । मट्टीके ऊपर इसकी लम्बाई प्रायः ४२ फुट है । इसका विचला भाग चिपटा और ऊपर तथा नीचेका भाग गोल है । जहाँ चिपटा है, वहाँ एक शिलालिपिमें दो संस्कृत पद और ७ श्लोक लिखे हुए हैं । *

१२८० ई०में महाराष्ट्रकवि ध्यानेश्वरने निवासमें



प्रवाद है, कि श्रीराधिकाने हथियोंसे जंत्र मणिसुक्ताके प्रन-
हार मंगे धे, तब वहीने मायायोगसे मणि और सुक्ता-
के हनको सृष्टि की थी। इसी अपरिमिय और प्रमूल्य
निधिके कारण यह निधुवन नामसे मगडहर है। श्रीछाया-
ने मन्त्रन खा कर पेड़में हाथ पोछा था, ऐसा प्रवाद है
और वे श्रीराधिकाका न पुर ले कर एक पेड़ पर छिप रह-
ये, इस कारण कुछ पेड़ोंमें नू पुराकृतिके फल देखे जाते
हैं। यह वन नारायणभट्टसे आधिकृत चोरासी वनके
अन्तर्गत है।

निधृति (मं० पु०) इण्डियुवमेड, इण्डिके एक पुत्रका
नाम।

निधेय (मं० त्रि०) नि धा-यत्। स्थाप्य, स्थापन करने
योग्य।

निधीली—युक्तप्रदेशके एटा जिलेके अन्तर्गत एक ग्राम।
फरुखावादके नवाबके राजस्व-कर्मचारी खुशालसिंहने
यहां एक दुर्ग बनवाया था जिम्का खंडहर आज भी
नजर आता है। यह स्थान नील और रुईके कारखान-
के लिये प्रसिद्ध है।

निध्यान (मं० स्त्री०) नि-न्धी-न्युट। १ दर्शन, देखना।
२ निदर्शन।

निधुव (सं० पु०) गोत्र प्रवर्त्तक ऋषिमेड।

निधुवि (सं० त्रि०) नितरां ध्रुवति ध्रुवत्यर्थे कि। १
स्यै र्यान्वित, स्थिरनायक, जिसमें चञ्चलता न हो। (पु०)
२ एक काश्यप। कात्यायनके ऋग्वेदानुक्रमणिकाके मतसे
ये नवम मण्डलके ६३ सूक्तके ऋषि थे।

निध्वान (सं० पु०) ध्वन शब्दे नि-ध्वन-वञ्। शब्दमात्र।

निनद्ध (मं० त्रि०) नटुमिच्छ्, नग सन्, 'सनागं स-
भिन्नं उट्ट' इति मनन्तादुः, ततो नुम्। नाग कर्त्तृमें
इच्छुक।

निनद (सं० पु०) नि-नद षष्, (नौगदनदपठध्वनः। पा
३।३।६४) १ शब्द, आवाज। २ रघुत्वशब्द, घरघराहट।

निनटु (सं० स्त्री०) मृतवत्सा, मरा हुआ बकड़ा।

निनय (सं० स्त्री०) नम्रता, नीताई, आज्ञा।

निनयन (सं० स्त्री०) नि-नी-न्युट। १ निष्पादन। २
प्रणेतारके जलको कुशसे यज्ञकी धेड़ी पर छिड़कनेका

निनरा (सं० पु०) न्याग, चंनग, जुंदा, दूर।

निनर्तशत्रु (मं० पु०) देवशत्रु उदयके एक पुत्रका नाम।

निनर्द (मं० पु०) नि नर्द भावे-वञ्। वेदशब्दका
उच्चारणमेड।

निनाद (सं० पु०) नि-नद षष् वञ्। शब्दमात्र,
आवाज।

निनादित (मं० त्रि०) निनाद षस्य मञ्जातः तारकादि-
त्वादितष्। शब्दित, ध्वनित।

निनादिन् (सं० त्रि०) नि नद-णिनि। निनादकारी,
शब्द करनेवाला।

निनान (सं० वि०) १ विकुल, एकटम, घोर। २ निकट,
जुरा।

निनार (सं० वि०) निनारा देगो।

निनारा (सं० वि०) १ मित्र, न्यारा जुटा, चंनग। २
दूर, दृष्टा हुआ।

निनावा (सं० पु०) जीम, मसुड़े तथा मुंड़के भीतरके
और भागोंमें निकलनेवाले मशीन महीन नाल दाने
जिनमें छःछाहट और चौड़ा होनी है।

निनावी (सं० स्त्री०) १ वह वस्तु जिसका नाम लेना
अशुभ या बुरा ममका जाता हो। २ चुईल, मुतनी।

निनाइय (सं० पु०) नीचेनाछा भूमि निखननीयः नि-नद
कर्मणि एत्। भूमि पर खननीय माणिक।

निनिस्त (सं० पु०) निन्दिस्तुमिच्छुः, निन्दि-सन्-उ, वेदे
निपातनात् साधुः। निन्दा करनेमें इच्छुक, जो शिक्षा-
यन करना चाहता हो।

निनिभि (Nineveh)—ऐतिहासिक जगत्में एक प्रत्यन्त
प्राचीन नगर। यह ताइग्रोस नदीके पूर्व किनारे और
वर्त्तमान मुसल राजधानीके दूसरे किनारे प्रवन्धित था।
१८वीं शताब्दीके पहले यहां आसिरीय राजासोफी राज-
धानी थी। उस समयके वाणिज्यका उत्कर्ष, गृहदिकों
सौन्दर्य और कारुकार्य देखनेसे मालूम पहता है कि
एक समय यह सृष्टिशाली नगर था। उस समय
इसकी लम्बाई और चौड़ाईका विस्तार आठ मील था।
राजधानी दुर्गसे सुरक्षित थी और बहुसंख्यक वधिष्क,
व्यवसायकी कामनासे यहां रहते थे। जब योनस् इस-
रायलके राजा जीबोगमसे आदिष्ट हो कर यहां आये थे,

संघर्षे नगरं प्रदक्षिण्य करमिर्न तोन दिनं कति पिये ।
 इससे बाद दिनदोरस सिङ्कसस (Diodorus Siculus) जिस समय यहाँ था, उस समय इसको बहुत-सोमा ४० मीन थी और हीमान्तप्रदेश १०० फुट ऊँच प्राचीरसे घिरा था । उस विस्तृत प्राचीरके बीच बीचमें कुछ १५०० बरतें थीं । प्राचीरके प्रकृति विषयमें उनका यह भी कहना है, कि उसके ऊपर तीन बाड़ी एक साथ बन्दूबीये या जा सकते थीं । १५० ई० तक पक्षी पक्षीरिपीय राज सादिनेपलु सुके राजत्वकालमें प्रदत्त पनेक भनुमा मन् विपियां पाई जाती हैं । उन भनुमासमयमें पकि-साय पनी यूरोपकक्षमें विद्यमान हैं ।

१५६ ई० तक पक्षी पाकिस्तान, इजिप्त, सिन्धिया, पर्सिया आदि जगहोंके राजाओंमें मिल कर इस नगर पर आक्रमण किया था । मिलिभिराज पत्तर इजिप्तीने राजप्रानादमें भाग लगा कर सपरिकार जीवन विचरान किया । इसी समयमें मिलिमिके पक्षपतनका संभवपात चारण हुआ, यहाँके पक्षिशाही पत्तर निवो और उनकी महबमिंको धर्मतु मिरोदकको तथा उनकी धरुके जिवात्कचित, इस्तर, मिर्जस, मिलिय, मस, पक्ष और हिय नामक देवताओंकी पूजा करतो थीं । इनके पुस्तकागारमें खोबाकार पक्षीमें लिखित खरी हुई महीने भनुमासमयमें पाई गई है । उस समय इनका धर्म, विद्या, भाषा और लिखन प्रथाकी बादि-सोनियो से थी ।

बहु नगर इतना तबस नरस हो गया कि इसका विषय पक्षीके ही पाहबं ज्ञाना पड़ता है । सिमस का कहने इस स्थानके परिदृशमें कालमें भनुमान किया था, कि यहाँ माबद १०००० यिजानिवियां हो गी । कर्तमान समयमें यतिकान्ठप जोड़ कर और कुछ मी प्राचीन नगरका स्थितिचित्र रच न गया है ।

निमीषा (स० स्त्री०) नेतुमिच्छा नी-सन्-अप टाप । एक स्थानमें दूरके स्थानमें से जानेको इच्छा ।

निमीषु (स० स्त्री०) नेतुमिच्छु, नी सन्-अ । नवनेच्छ, से जानेका पक्षिकापी ।

निमीषा (स० स्त्री०) सुखाणा, नखाना, मोषे करना ।

निमीषा (स० पुं०) नामा वा नामीका घर । बहु स्थान अर्थात् नामानामीका भास हो ।

निम्बक (स० स्त्री०) निम्बति तच्छीब निदि कुसायां तुम् (निदिदिदिदि । पा ३।१।४६) निम्बाकारो, दूनको से दोप या गुर्गाई कहनेकाका ।

‘न माराः पत्नीया मारा न माराः यद्यत्तया ।

निम्बा हि महाभारत मास विष्ठापयत्तयः ॥’

(कर्मभेषर)

पुष्पीके छिप पक्षत वा घससायर मार नहीं है, किन्तु निम्बासजातक वा निम्बक महाभारत है । पुष्पी इनका मार सजन नहीं कर सकते ।

निम्बतल (स० स्त्री०) निम्ब निम्बाई तल इत्यतल कथ्य । निम्बतलइत्य ।

निम्बन (स० स्त्री०) निदि कुसायां मासे क्त्वा । निम्बा, गुर्गाईका नक्षत्र ।

निम्बनीय (स० स्त्री०) निदि-अनियर । १ निम्बा निम्बा करनी बोध्य, गुर्गा कहने काचित । २ गच्छ, गुर्गा ।

निम्बा (स० स्त्री०) निम्बनमिति निदि-अ, (प्रोथ इह । पा ३।१।१०१) १ अपवाद, दुष्प्रति, वहनामो, कुख्याति । पर्वथ—निम्बन, पक्षक, पाकेक निर्बाद परोवाद, अपवाद, उपभोग्य, लुपुष्पा, कुष्ठा, पक्षक विष्कृति ।

जहाँ गुहका परोवाद पक्षका निम्बा होती हो, उस जगह कक्षा नहीं रहना चाहिये, अगर कक्षा रहे मी तो क्षीनो कान कूद को । निम्बा और परोवादमें प्रमेद यह है, कि जो दोप लक्षमें नहीं है, वे सब दोप कस पर समा कर दुरीके सामने कहनीको निम्बा और जो दोप माप्यवर्तमें है उसके कक्षकको परोवाद कहते हैं । कुहकने पंपनी व्याख्यामें कहा है, कि विद्यमान दोपके पक्षिकालको परोवाद और पक्षिकाल दोपके पक्षिकाल को निम्बा कहते हैं ।

देवता और हिक पादिको निम्बा महावापजनक है । इसका विषय ब्रह्मपेक्षापुराणमें इस प्रकार विषा है—

यिष्ये पोर विष्कृषे भान, क्राष्टय, राजा, मित्र गुह, पतिप्रता स्त्री, यति भिक्षु, ब्रह्मचारो पोर दीयता इनको निम्बा नहीं करनी चाहिये । करमिसे बहु तल चन्द्र सूर्य रक्षी, तब तल काकसूत्र नामक नरकका भोग होता है । जहाँ दिवारास दीप्या, मूत्र पोर दुरीय

पर सोना पड़ता है। कोड़े मकोड़े उसके अंग प्रत्यंग खाते हैं और इससे वह बहुत व्याकुल हो कर चीत्कार करता है।

देवादिदेव शिव, दुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती, सीता, तुलसी, गङ्गा, वेद, सभो व्रत, तपस्या, पूजामन्त्र, मन्त्र प्रद गुरु इन सबको जो निन्दा करते हैं, वे विधाताको परमायुके अक्षकाल तक अश्वरूप नरकमें पतित होते हैं और सप्तमनुष्यसे मन्त्रित हो कर घोर शब्द करते हैं।

जो ह्योत्रेशको अन्य देवताओंके साथ समान मानते हैं और राधा तथा तदङ्गजा गोपियों और सद्व्राह्मणोंकी निन्दा करते हैं, वे अथव नामक नरकमें सदाके निवे वास करते हैं। इस नरकमें रह कर उन्हें ज्ञेया, मृत और पुरीष खामा पड़ता है।

परनिन्दा मात्र ही दूषणीय है, इस कारण पर निन्दाका त्याग करना सर्वतोभावसे उत्तम है। केवल अपनी निन्दा करनेसे यश प्राप्त होता है।

(ब्रह्मवैवर्त पुराण श्रीकृष्णजन्म० ४०।४१ अ०)

कीर्त उपपुराणमें लिखा है, कि जो वेद, देव और ब्राह्मणकी निन्दा करते हैं उनका मुख देखनेमें पाप होता है। अपने प्रयत्न, वेदनिन्दा और देवनिन्दाका यत्नपूर्वक परित्याग करना चाहिये।

जहां पर सज्जनोंकी निन्दा होती हो, उस स्थान पर किमो हानतसे ठहरना न चाहिए और यदि ठहर भी जाय तो चुप रहना ही उचित है। साधुनिन्दकके मतानुसार भूल कर भी न चलना चाहिए।

निन्दाकर (स० त्रि०) करोतीति क-अप् निन्दाया करः। अपवादक, निन्दा करनेवाला, दूसरेके दोष या बुराई कहनेवाला।

निन्दान्वित (स० त्रि०) निन्दया अन्वितः। निन्दायुक्त, निन्दित, बुरा।

निन्दावादाय (स० पु०) निन्दारूपोऽयं वादः। मोर्मा-सर्कोऽे मतानुसार अर्थवाद मत।

निन्दाह (स० त्रि०) निन्दनीय, निन्दाके योग्य।

निन्दामुक्ति (स० स्त्री०) निन्दया स्तुतिः। व्याजस्तुति, निन्दाके बहाने स्तुति।

निन्दित (स० त्रि०) निन्दा-अस्य जाता, इति। निन्दायुक्त,

जिसे लोग बुरा कहते हैं। पर्याय—धिककृत, अपथ्यज्ञ, निर्भत्सित।

“मद्यु पश्यति मूढात्मा प्रयातं नैव पश्यति।

करोति निन्दितं-कर्म नरकात्त्र विमेति च ॥”

(देवीभाग० ४।७।४८)

शास्त्र और लोकाचारमें जो विहित नहीं है, उसे निन्दित कहते हैं। ग्रहितभोजन और ब्राह्मण कलक शूद्रका प्रतिग्रह ये सब निन्दित शब्दवाच्य हैं।

निन्दितव्य (स० स्त्री०) निन्द-तव्य। निन्दनीय।

निन्दित (स० त्रि०) निदि, कुत्सार्था लच्। निन्दाकारक, दूसरेके दोष या बुराई कहनेवाला।

निन्दिन् (स० त्रि०) निन्द इनि। निन्दाकारो।

निन्दु (स० स्त्री०) निन्द्यतेऽपजस्त्वैनासो निदि कुत्सार्था औणादिक उ। मृतवन्ना, वह औरत जिसके सन्तान हो कर मर मर जाती हो।

निन्द्य (स० त्रि०) निन्द-यत्। १ निन्दनीय, निन्दा करनेयोग्य। २ दृषित, बुरा।

निन्द्यता (स० स्त्री०) निन्द्यस्य भावः निन्द्य-तच्-टाप्। निन्दनीयता, दूषणीयता।

निन्द्यानवे (हि० वि०) १ नञ्चे और नी, जो संख्यामें एक कम सो हो। (पु०) २ नञ्चे और नोको संख्या, ८८।

निप (स० पु० स्त्री०) नियतं पिबत्यनेन नि पा घञये क। १ कनस। (पु०) नीप पृषोदरादित्वात् साधुः। २ कदम्बवृक्ष।

निपजति (स० स्त्री०) नीचा पक्षतिः। घीड़ोंकी दाहिनी वगलकी तरह हड्डियोंमेंसे दूसरो हड्डी।

निपट (हि० अश्व०) १ निशुद्ध, खाली, निरा। २ नितान्त, एकदम, त्रिक्कुल।

निपटना (हि० क्लि०) निवटना देखो।

निपट निरञ्जनस्वामो—एक कवि। इनका जन्म १५८३ ई०में हुआ था। शिवसिंहके मतसे ये तुलसीदासके जैसे निष्ठावान् धार्मिक थे। ‘शान्त-सरसी’ और ‘निरञ्जन’ नामक दो ग्रन्थोंके सिवा इनके बनावे हुए और भी छोटे छोटे हिन्दीपद्य ग्रन्थ पाये जाते हैं।

निपटाना (हि० क्लि०) निवटाना देखो।

निपटारा (हि० पु०) निवटारा देखो।

निपटादा (हि० पु०) निपटारना देहो ।
 निपटेरा (हि० पु०) निपटैरा देहो ।
 निपठ (स० पु०) निपठनमिति नि-पठ घप् (नी यरवर
 वरुषका । पा ३।१।३३) पाठ, पञ्चसम ।
 निपठिन (स० जि०) नि पठ-ञ्ज । जो पढ़ा गया हो ।
 निपठित्त्वं (स० जि०) नि पठित्तमनेन दृष्टादित्वात्
 कर्त्तरि इति । कृतपाठ, जो पढ़ा गया हो ।
 निपतन (स० क्री०) नि-पत-ञ्जट् । निपात, पच पतन,
 गिराव ।
 निपतित (स० वि०) नि पत-ञ्ज । पतित, गिरा हुआ ।
 निपत्यदोहिषी (स० क्री०) निपत्य रोहिषो रोहितवर्णा
 क्री मवूरव । निपत्यदोहितवर्णा क्री ।
 निपत्या (स० क्री०) निपत्यन्वयामिति, नि पत क्वप्,
 ततश्चाप । (संज्ञां वचनमैरद्विवायेति । पा ३।१।८८)
 १ युद्धभूमि । २ विष्णुभूमि जो सोको विष्णुभूमि अमौन
 देहो भूमि जिह पर पौर किसरी ।
 निपरन (स० क्री०) निपिह परव प्रीतिः नि पु प्रीतो
 भावे ङ्कुट् । प्रीत्यभाव, प्रीतिका यभाव ।
 निपत्ताय (स० जि०) निपतित पत्ताय पञ्ज । निपतित
 पत्त ।
 निपाव (स० पु०) निपत्तेन पचनमिति नि-पच-घम् ।
 पाव ।
 निपात (स० पु०) नि-पत भावे चञ् । १ पतन, पात,
 गिराव । २ मृत्यु चय, नाय । ३ पचनपतन । ४
 विनाश । ५ व्याप्तिर्लोके मतेषु क्व चञ्ज जिसे क्व चनेके
 नियमका पता न चने धर्मात् जो व्याकरणमें दिए
 नियमके अनुसार न बना हो ।
 निपातन (स० क्री०) निपातयतिनेनेति नि पत-ञ्च
 क्त्वि ङ्कुट् । १ मारण, बच करनेका काम । २
 विरामिका काम । ३ पचनपतन । पचाय—पचभाव,
 निपातन । ४ व्याकरणके लक्षण द्वारा अनुसृत्यपदशासन,
 व्याकरणके नियमक प्रतिष्ठित, व्याकरणका पदसिध करने
 के क्रिये सुलोक जो सब नियम हैं, उनका प्रतिष्ठन कर
 पदशासन ।
 जो पच पद व्याकरणके लक्षण द्वारा साहित नही
 होते वे सब पद निपातप्रवृत्त सिध हुए हैं ।

निपातप्रवृत्त पदसिध करनेमें किसी किसी वर्षका
 पचास घोर कहीं वर्षविकार पचका वर्षनाम करना
 होता है ।
 निपातना (हि० जि०) १ गिराना, नीचे गिराना ।
 २ मर कराना, काट कर गिराना । ३ बच कराना, मार
 गिराना मारना ।
 निपातनीय (स० जि०) नि-पत चिच् चमीवर । गिरा
 तनके लक्षण, बच करने योग्य ।
 निपातित (स० जि०) नि पत-चिच्ञत् । पचोनीत,
 जो नीचे कि क दिया गया हो ।
 निपातित्त्वं (स० पु०) निपात पत्याप्ति इति । १ मर-
 देह । ये चमीका निपात धर्मात् नाम करते हैं, इस प्रकार
 चमका बह नाम पढ़ा है । (जि०) २ गिरानेवाका
 कि कनेवाका, चकनेवाका । ३ घातक, मारनेवाका ।
 निपातो (हि० वि०) निपातित्त्वे क्री ।
 निपाद (स० पु०) निपत्तेन चञ्ज सुतो पाहोयञ्ज । निच
 प्रयेय ।
 निपान (स० क्री०) निपोपतिस्त्विति । नि पा
 पाधारे ङ्कुट् । १ कुय के पास दोबार धर कर बनाया
 हुआ कुण्ड या छोटा बूजा गड्ढा । इसमें पचपचो
 पार्थिक पोनेके लिए पानी रक्का रहता है । २ नी-
 दोहन पात्र, बूज दुहनका बरतन । ३ तांबा, पत्रा,
 क्त्वा ।
 "वर्षीय निगनेषु न साधय्य कदाचन ।
 निगनवर्द्धः रताया च दुःखपापेन भिन्दते ॥"
 (मनु ४।१०१)
 'विपिनत्पविनतो वैति निगन कदाप्य'
 (मेवातिनि)
 यहाँ पर निगन मन्त्रका पच कदायय मात्र है ।
 सुदरके निगनमें कदापि हाना नही करना चाहिये,
 करनेसे निगनकर्त्ताको चोराई पाप निजमें चला पाता
 है । नि पा भारिञ्ज । ३ निजीय पात ।
 निपातो—कन्वई प्रदेशके बंशगाम त्रिलोका एक मगर ।
 बच पचा० १६ २३ ल० पौर देमा० ७३ २१ पु० बंश-
 गाम यदरके ६० मोच उत्तरमें पचकित है । कचय क्या
 माय १६।२१ है । यह मचर १८२८ ई०में पचोपति

सुंया। २ निबद्ध, घटर्त्त। ३ विनीत, मन्त्र। ४ एकाग्र
 सुता। ५ गुण, बिया हुआ। ६ निजान, सुता। ७
 अष्टमशामक, अष्ट जोनेके निबद्ध। ८ अन्ध बिया हुआ।
 ९ निबद्ध, विवर, अतुल्य, जोर, शान्त। १० पुष्प,
 भरा हुआ।

निम (स० पु०) मन्थाका, गहू, ।
 निमबी (वि० खी०) १ मोरुका अन्धार। २ बीमें तबी
 दुर्ग मी देकी मोयनदार नमकीन दिविया।

निमबीड़ी (स० खी०) निवडीरी देकी।

निमवार अयोध्याके अन्तर्गत सीतापुर जिलेका एक
 नगर। यह अक्षा० २० २० ३३ उ० पौर दिया० ८०
 ३३ ३० ०० ई० मन्ध सीतापुर शहरमें २० कोष दूर
 गोमती नदीके बाए किनारे अवस्थित है। यह एक पवित्र
 तीर्थ है। यहां अनेक मन्दिर और पुष्करिणी हैं। प्रवाद
 है, कि जब रामचन्द्रजी राजबन्दी मार कर सीताको
 साव क्षिप अयोध्याको भेट रहे थे तब जगदहत्या पापके
 मुक्त होनेके क्षिप अन्तर्गत इसी ज्ञान पर ज्ञान किया जा।

निमखेरा—मध्यभारतमें सुवावरके ठाकुरशामनारायण बा
 भील एमीन्सेके अशोन एक छोटा राज्य। यह बिन्ध्या
 पर्वतके पास अवस्थित है। सर जन मिकमसे बजाय
 बन्दोबस्तके समयके तिरुका ग्रामके मु दया बा प्रधान
 सरदार धाराराजको बाबिक १००) ४० कररकल्प है
 कर म अवरपरामे इस राज्यका भोग कर रहे हैं। धारा
 पौर सुवतानपुरमें यदि कहीं चोरी हो या डाका पड़े
 तो लखे दायो मु दया ही हैं। सु दया भील जातोय
 हरियाणिक यहके प्रविष्ट सरदार थे। कुछ दिन हुए
 जनकी अन्तु हो गई।

निमवाक—भीमानदेके तीरनर्सी एक सुद्व जलपद। यह
 खेड़ाके ६ मोल दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। इस ग्रामके
 उत्तर एक छोटे पहाड़के ऊपर अशोयाका एक मन्दिर
 है। १८वीं शताब्दीके शिव सागमें मोहिन्दराय मायक
 बाहुने यह मन्दिर बनवाया था। चैतमाअको पूर्विमा
 को बज मन्दिरमें एक शिवा शक्तता है जिसमें लगभग
 पांच हजार मनुष्य समायन होते हैं। मन्दिरके अर्धके
 चिन्हे बहुतसी निष्कार अमोन हो गई हैं।

निमय (स० नि०) निरतं मन्त्र नि मस अ-अ । १
 अक्षादिमें मन्त्र, अज्ञा हुआ। २ तन्मय।

निमय—व्याख्यार राष्ट्रसे अन्तर्गत मन्धशोर जिलेका
 एक शहर और जामने। यह अक्षा० २३ २८ उ० पौर
 दिया० ७३ ३३ पु०के मन्ध अवस्थित है। जनप अथा
 लगभग २११८८ है, जिनमेंसे ६१८० मनुष्य शहरमें पौर
 १३१८८ शकनोमें रहते हैं। १८१० ई०के व्याख्यारमें
 प यरेक पौर सिन्धियाके बोच एक अन्धि हुई। अन्धिबी
 शर्तके अनुसार दोस्तराय सिन्धियामे सेनापति का पटना
 ज्ञान पौर कुछ अमीन प्रधान की। दक्षिण बाए एक पौर
 अन्धि हुई जिसमें प यरेकोको पौर मी अर्ध एक ज्ञान
 मिसि। जब अयोध्याग दूर देशमें लड़ने जायने, तब लखे
 परिभारादिने रहनेके निम्ने वहां एक छोटा पुर्ग बनाया
 गया था। अर्त्तमान अमर्त्तमें इसमें अजयखादि रहे
 जाती हैं।

यह ज्ञान मनुष्यरुके १६११ फुट ल था है। अरुबाहु
 बहुत अत्यन्त है। जिसके समय मी यहां न तो अर्धिक
 मरने ही पड़ती पौर न ठंड। यहां एक कारागार,
 शाअर, अशुष पौर चिकित्साअय है।

निमया—अजगान पौर अर्धगिरिपुष्पाकी आतिथि मिकसे
 अत्यन्त एक सहरजाति। ये भीम भारतवर्षके अर्धकस
 पर्वतके दक्षिण ठाकुरे ज्ञान पर रहते हैं। इनको
 प्रथमित मायाके साथ भारतवर्षके भावाकी विविप
 अनिष्ठता है। किन्तु पाचवका विषय है, कि
 सेटिन मायाके साथ मी इनको भाया, बहुत कुछ मिसती
 सुचतो है।

निमझड़ा (वि० पु०) शिवा समर जिसमें कोई काम न
 हो, अवकाश, पुरातन, लुटे।

निमज्ज (स० नि०) समुद्र पादि अज्ञानयोमें लुब्धो
 अज्ञानेकाता गोवि मार कर समुद्र पादिने मोक्षिनी चोजी-
 की निबन्ध कर औबिका अज्ञानेकाता।

निमज्ज (स० पु०) नि मसक अशुष, । १ अयन, सोना।
 २ निमज्ज, रत्नान। ३ निम्ना, मोद।

निमज्ज (स० खी०) निमज्जटीमिनेति, नि-मस अ भारि
 अशुष्ट, । अयनाशन, लूच कर बिया जानिवाला ज्ञान।

निमज्जित (स० वि०) १ मन्त्र, अज्ञा हुआ। २ अज्ञात,
 अज्ञाया हुआ।

निमट्टा (वि० नि०) निवट्टा देकी।

निमटाना (हि० क्रि०) निवटाना देखो ।

निमटाना—खेतमें कितनी फसल हुई है, उसे स्थिर करने-का एक प्रकारका नियम । काण्टेन राबर्टसन ने इसी उपायमें शस्यका परिमाण स्थिर करते थे । किसी एक शस्यपूर्ण क्षेत्रसे तीन तरहके ऐसे पौधे लिए जाते थे जिन्हें एकमें उत्तम दूसरे मध्यम और तीसरेमें सामान्य रकम लगी रहती थी । तोनो पौधोंके अनाजको गिन कर उसका औसत निकाला जाता था । पौधे खेतके पक्षे गिने जाते थे । पौधोंकी संख्या जितनी होती थी, उतने शस्यमंख्यामें गुना करनेमें खेतके शस्यका परिमाण निकल जाता था । राबर्टसन साइडने कहा है कि उत्तर भारतवर्ष, खान्देश और गुजरातमें यह प्रथा प्रचलित थी । गिवाजीके पिता शाहजीके प्रधान कर्मचारी टाटाजी कोण्डदेवने १६४५ ई०में पूनामें जब बन्दोबस्त किया, तब उन्होंने इसी नियमका अवलम्बन किया था ।

निमटेग (हि० पु०) निवटेरा देखो ।

निमतीर—राजपूतानेसे निमद और भालरापाटन जिम राजपथ पर अवस्थित है, उसी राजपथ पर यह छोटा ग्राम भी बना हुआ है । सम्भवतः निमतीर शब्द निम तला या निमतर शब्दका अपभ्रंशमात्र है ।

इस ग्राममें ३ मन्दिर हैं जिनमेंमें एक बहुत प्राचीन कालका है और उसमें ह्यमूर्ति स्थापित है । दूसरे मन्दिरमें प्रकाण्ड शिवलिङ्ग है और उसके चारों ओर मनुष्यके मुख खुदे रहनेके कारण शिवलिङ्गने चतुर्मुख धारण किया है । प्रवाद है, कि यह मन्दिर और ह्य स्वर्गमें अथतोर्ण हो कर पहले नामा स्थानोंमें भ्रमण करते हुए अन्तमें गुजरातमें यहां आए और तभीसे इसी स्थान पर रहने लगे हैं । ह्यकी गति मन्द होनेके कारण मन्दिर कुछ पहले पहुंचा था । यह प्रवाद सुन कर ऐसा अनुमान किया जाता है, कि सबसे पहले मन्दिर बनाया गया और पीछे ह्यमूर्ति स्थापित हुई । मन्दिर भी एक हजार वर्ष पहलेका बना होगा ऐसा प्रतीत होता है ।

निमद (सं० पु०) स्पष्टरूपसे और मन्दभावसे उच्चारण ।

* East-India Paper, iv, 120.

निमटारी—पूना जिलेका एक छोटा ग्राम । यह जुनार से ६ मील दक्षिणमें अवस्थित है । यहां ३ गुकादेवोकी एक बड़ी है । चैत्रमासको पौर्णमासीको वार्षिक मेला लगता है ।

निमन्त्रक (सं० पु०) निमन्त्र खुल । निमन्त्रकारो, वह जो न्योता देता हो ।

निमन्त्रण (सं० क्ली०) निमन्त्राति इति, निमन्त्र-ल्युट् । १ आह्वान, किसी कार्यके लिए नियत समय पर आनेके लिए ऐसा अनुरोध जिसका अकारण पालन न करनेसे दीपका भागी होना पड़ता है । २ भोजन आदिके लिये नियत समय पर आनेका अनुरोध, खानेका बुलावा, न्योता । आदि कार्यके एक दिन पहले बंदेद्र ब्राह्मणको यादमें खानेके लिए आना पड़ता है, इसीको निमन्त्रण कहते हैं । निमन्त्रण और आमन्त्रणमें यह भेद है, कि निमन्त्रणका पालन न करने पर दीपका भागी होना पड़ता है और आमन्त्रणका पालन न भोग किया जाय, तो कोई पाप नहीं है ।

'आप यहा भोजन करें' इस प्रकारके आह्वानका नाम निमन्त्रण और 'आप यहां शयन करें' इसका नाम आमन्त्रण है । सोना वा नहीं सोना अपनी इच्छाके ऊपर निर्भर है, लेकिन निमन्त्रित हो कर यदि निमन्त्रणका पालन न किया जाय, तो पापभागो होना पड़ता है ।

यदि ब्राह्मणको निमन्त्रण दे कर उनका यथाविधि पूजन न किया जाय, तो निमन्त्रणकारी तिर्यक्योनिमें जन्म लेता है । यदि भ्रमप्रमादवशतः निमन्त्रित ब्राह्मणकी पूजा न करे, तो उन्हें यदनपूर्वक प्रसन्न करके भोजन आदि कराना चाहिये ।

'आमंत्र ब्राह्मणं यस्तु यथाभ्यायं न पूजयेत् ।

अतिहृच्छ्यामु घोराहृ तिर्यग्योनिषु जायते ॥' (यम)

यमके मतानुसार ब्राह्मण यदि एक जगह निमन्त्रित हो कर दूसरी जगह खाने चले जाय, तो वे नरकका भोग कर चण्डालयोनिमें जन्म लेते हैं ।

'आमन्त्रितस्तु यो विप्रः भोक्तुमन्यत्र गच्छति ।

नरकाणां भगं गत्वा चांहालेष्वभिजायते ॥' (यम)

इस लोकमें 'आमन्त्रित' ऐसा पद प्रयुक्त हुआ है,

इससे मान्य पड़ता है, कि धामन्वच पौर निम्नवर्द्धका कामी अभी एक ही पर्व होता है। यदि ब्राह्मण एवमि निम्नवर्द्ध हो कर दूधरीका पुनः निम्नवर्द्ध पदक करे प्रथम एक जगह भोजन करके दूधरी जगह भोजन करे, तो उसके सब पुण्य नष्ट होती है।

“पूर्व” निम्नवर्द्धेऽप्येव कर्त्तव्यमिति मन्त्रम्।

मुक्ताहारोऽथ वा मुक्ते सुहृत् पश्यन् वरवति ॥”

(देवक)

यदि निम्नवर्द्ध ब्राह्मण निम्नवर्द्धे धामं, तो वे नरक नामी होती है।

“आमिषतारिणं वैव कूर्वादिभ्यः” वर वन।

देवतायां पितृणां वापुःपत्यै वैव द्विः।

शिरायां सदैव्येही वप्यते वरकामिना ॥”

(आश्विनपु०)

निम्नवर्द्ध पदक कर ब्राह्मणको पञ्चममन, मारवकन, विषा, कच्छ पौर मंडूज कार्य नहीं करना चाहिये। यदि करे, तो पापमायी होता पड़ता है।

अनुकालमें खोजमनकी पञ्चम अर्थात् व्यता रहने पर भी यदि निम्नवर्द्ध पदक किया जा मुक्ता हो, तो मंडूज नहीं कर सकते। विद्यानिम्नवर्द्धे मतानुसार निम्नवर्द्ध होने पर भी अनुकालमें खोजमन विधेय है। पर धर्म, मंडूज निवेध अनुविभिन्न कामको ज्ञानना चाहिये।

निम्नवर्द्धको ये सब विधि पौर निवेध जो करी गये, वे श्रेष्ठ खाद्य विषयमें काम पाते हैं। (विषयविष्णु)

पूर्व समयमें खाद्यकामीन ब्राह्मणको निम्नवर्द्ध है कर कनके धामने पिच्छगणका खाद्यकार्य किया जाता था। सेबिन धमी ब्राह्मणके मुचहीन होनेसे कुशमय ब्राह्मणकी ध्यापना करके खाद्यविज्ञान अनुष्ठान होता है। अनुष्ठानमें भी निम्नवर्द्धका विषय इस प्रकार लिखा है—

ब्राह्मणको निम्नवर्द्ध करके खाद्य करना चाहिये। खाद्य कद्रु गा ऐसा शिखर हो धामि पर एक दिन पहले ब्राह्मणको प्रथम करके निम्नवर्द्ध देना चाहिये। जो ब्राह्मण निम्नवर्द्ध पदक करके उसका पानन नहीं करती वे पापमायी होती है। सेबिन धामन्वचका पानन नहीं करेनेमें पाप नहीं है। निम्नवर्द्ध पौर धामन्वचमें श्रेष्ठ इतना हो कर्त्तव्य है।

पूर्व दिनमें यदि किसी नियम कार्यभय ब्राह्मणको निम्नवर्द्ध न दे सके, तो उस दिन भी निम्नवर्द्ध दे सकते हैं।

पापखाम्पनी निम्नवर्द्ध मन्वका एषा धामं कथामा है—

पागामी दिन में खाद्य कद्रु गा, इससे पाप निम्नवर्द्धीय है, इस प्रकारका प्रथम निवेदन पौर में पापको निम्नवर्द्ध देता है, यह दितोय निवेदन है। इस प्रकारके निवेदनको ही निम्नवर्द्ध करते हैं।

निम्नवर्द्धपदक (स० लो०) पाञ्चानपम, नक्ष पय त्रिषुके द्वारा किसी सुखसे भोजन कच्छक चाहिये सन्निहित होनेके निवेध पत्रोद्य किया गया हो।

निम्नवर्द्ध (स० लि०) निम्नवर्द्ध। पाञ्चत, जिसे श्रोता दिया गया हो।

निम्नवर्द्ध (स० लि०) जोधरहित, जिसे गुम्फा न हो।

निम्नवर्द्ध (स० पु०) निम्नवर्द्धेऽनेनिति निम्नवर्द्ध। (एरव १ वा १।१।१५) निम्नवर्द्ध, बदना।

निम्नवर्द्धा—राजपूतानेके मध्य पञ्चवार राज्यका एक गहर। यह पञ्चा० पदक स० पौर देगा० ०६ २१०० पञ्चवार गहरके ११ मील उत्तर पश्चिममें पञ्चवर्द्ध है। सोल म पञ्चा कगमम २११२ है। १४६० ई०में यह गहर दूधरात्रके बसाया गया है। १८०३ ई०में राजाने महा राजकी अपने यहां आकर दिया था, इस कारण काठ शिकने यह स्थान पञ्चवारके धमीन कर लिया। पीछे १८११ ई०में बहुत पनुनय निम्नवर्द्ध करके काठ इसका कक्ष पग राजाको छोड़ा दिया गया। १८६४ ई०में निम्नवर्द्ध पञ्चवारको जामोर कायम की गई और यह भी शिखर हुआ कि इने वार्षिक ३००० रु० करकायप देने होगी। राज्यको पाय १८००० रु०को है। यहाँ एक नरनिष्पन्नर स्नून पौर एक परपताष्ट है।

निम्नरी (वि० जो०) मध्यभारतमें होनेवाली एक पञ्चवारकी कथाम बरहो, बंसी।

निम्नवर्द्ध—एक प्रसिद्ध पञ्चवर्द्ध राजा। ईसाईके धर्म पञ्च (बाइबल)में लिखा है, कि ये व्यापक, रोक, पांडाट, कामन पौर ऐशिन हे मके पतिव्रति थे। जामे रिमक कद्रु मय है, कि ये बाबिलन हे मके एक मासककर्ता थे। इनके पतिव्रत स्थानका नाम था इरेट जिसे पाञ्चवर्द्ध

उत्तरमें इन्दौर और धारवाण्य, पश्चिममें इन्दौर और प्वाण्ड्य गिजा दक्षिणमें प्वाण्ड्य, पश्चिमराजतो और पकोबा जिजा तथा पूर्वमें होशहाबाद और कौम है।

इस त्रिकोणाकार प्रदेश का नाम मन्दाकोटी कोटो गिरिमाणापीवि प्रोमित रहनेके कारण यहाँ समतल भूमिवा शिबकुल पहाड़ है। इस कारण इस प्रान्तमें खेतीबारी कुछ भी नहीं होती। उत्तर-पूर्वार्धमें बहुत बुरा लक परती जमीन पड़ी हुई है। इससे बिना इस पहाड़ी समी जमीन साधारणतः अनुबंर नहीं है। त्रिकोणे दक्षिणार्धमें तातो नदीकी तीरस्थ भूमि पविषा-कृत चर्करा है, पविषागंधी जमीनमें भी अच्छी फसल लगती है। किन्तु मन्दा नदीकी सर्वांतरण भूमि सर्वोपेक्षा चर्करा कोमि पर भी परती पड़ी हुई है, क्योंकि इस प्रान्तमें मनुष्योंका वास बहुत कम है। मन्दा और तातो नदीकी तीरस्थ भूमि १५ मील विस्तृत एक पहाड़ द्वारा विभक्त है। यह सतपुरा पहाड़ नामसे प्रसिद्ध है। इन पहाड़के चिपार पर समतल भूमिके ८३० फुट ऊपर भागोरगढ़ नामक दुर्ग और एक गिरि पय है। उत्तरभारतके दक्षिणभारतमें पानिके सिन्धे बहुत दिनोंसे यही राष्ट्रा प्रयुक्त गिजा जाता था। सिन्धे-का पविषागंधी स्थान पहाड़ और जङ्गलसे परिपूर्ण है। पविषाकोयथा यहाँ जड़ी भी नहीं मिलता, सिद्धिन्धे चांदमड़ और पुनासाके निकटवर्ती जङ्गलमें लोहेकी खान देखनेमें आती है। निमार जिलेमें जिले जङ्गल हैं जलमेंसे पुनासा नामक जङ्गल यक्षमें प्यके दहनमें है। समी जङ्गलोंमें बहुतसे काष्ठ पाये जाते हैं। चांदमड़ परमनेमें भी विस्तृत चरख है। ये सब चरख अत्यन्त-पाबाध भूमि है, किन्तु ये मनुष्य पर पाषाणक नहीं करती। आसके सिवा यहाँ मालू, पोता, जङ्गली लुपर चादि पनीक प्रकारके सिस्स जन्तु तथा हिरण, खरगोश प्रभृति मांति मांतिके गिरीज जन्तु एक मयुक्तकृष्ट पादि नामा जातीय पची देखनेमें आते हैं।

इतिहास — ईश्वरराजगण पूर्वकालमें मादिपती (बर्तमान महुवर)में रह कर प्रांत निमारका सामन करतें थे। पोके शासकोंमें लङ्के राज्यपाल किया। उन शासकों द्वारा मन्दा नदीसिद्धिन्धे साभ्याता नामक

खानमें शिवपूजा प्रचलित हुई। पीके पमीरगढ़के चौहानराजपूत सोम किन्तु टिकटिकोके लयासक हुए। पोके प्रभार राजपूतों ने पमीरगढ़ पर अपना अधिकार बसाया। इस वकसे ताक नामक एक शासने लगे गताम्हीके से कर १२वीं गताम्ही तक पमीरगढ़का शासन किया। चांदमड़ लङ्के किन्तु और बतना गये हैं। इस समय निमारमें जोतधर्म बढ़ा चढ़ा था। काण्डका और साभ्याताके निकटवर्ती स्थानोंमें पनीक मनोहर जैनधर्ममन्दिर प्राप्त भी विद्यमान हैं। १२८१ ई०में पलाउहोमने जब दक्षिणात्य पर आक्रमण किया था, उस समय चौहानव गीय राजपूत पमीर गढ़के राजा थे। पलाउहोमने लङ्के पराप्त कर एक ब विना और पको की मार कान्ना। इस समय उत्तर निमार भीक आतोय पनाराजाके शासनधीन था। उनको व आबको पात्रकल सो भीमयुद्ध, साभ्याता और सिताकी नामक खानमें देखी जाती है। फिरीष्टा का कहना है कि इस समय दक्षिण निमारमें पाया नामक गोवर्ध गीय एक राजा थे। लङ्केने जो युग प्रस्तुत किया वह लङ्के नामानुसार पमीरगढ़ कह नावा। कहनेका तात्पर्य यह कि जिस समय सुवर्ण मानो ने इस राज्य पर आक्रमण किया उस समय यह राज्य जो चौहान और भीमराजापोके शासनाधीन था इसमें आ भी सम्बद्ध नहीं।

प्रायः १३८० ई०में उत्तरनिमार मानकके आधीन सुवर्णमानराज्यके अन्तर्गत हुआ और माण्डूम राजधानी बसाई गई। १३०० ई०में मानकराज पक्षकी नि दिग्गोके सम्बन्ध से दक्षिण निमार प्राप्त किया। तदनंतर लङ्के युव नवीर पानि पमीरगढ़ अधिकार करके हुशानपुर और अनाबाद नगर बसाया। १३८८ ई०में १५०० ई० तक प्वाण्ड्यके फड़कोव दने कदम ग्यारह पीढ़ी तक हुशानपुरमें राज्य किया। किन्तु मुबरात और मानकबागियाके पाषाणकके हुशानपुर पनीक बार विभक्तप्राय हो गया। १५०० ई०में निजोवर पक्षवरने पमीरगढ़ पर चढ़ाई करके दक्षिणके दके गीय राजा बहादुर आने निमार और प्वाण्ड्य जीत लिया। यह करने उत्तरनिमारको बीजापुर और रण्डिया नामक दो

जिलों में विभक्त करके उसे मानवसूचने अधीन किया। दक्षिण-निमार खान्देशसूचके अन्तर्भूक्त हुआ। राजपुत्र दानियाल जब दक्षिणात्यके शासनकर्त्ता हुए, तब वे बुर्झानपुरमें रह कर राजकार्यकी पर्यालोचना करते थे। अन्तमें १६०५ ई०में इसी स्थान पर उनकी मृत्यु हुई। अकबर और उनकी वंशावलीकी जौगलपुर्ण उन्नत-शासनप्रणालीके शुभमे निमार उन्नतिकी चरम सोमा तक पहुँच गया था। इस समय मसख भूमि सनियमसे जोतो जातो थे। मानव और दक्षिणात्यके मध्यवर्ती स्थानोंमें व्यवसायिगण पण्य द्रव्य ले कर जाते आते थे। १६७० ई०में मराठोंने पहले पहल जो खान्देश पर आक्रमण किया था उसमें बुर्झानपुर तक प्रायः सभी देश लूट गये थे। पीछे प्रति वर्ष फसलके समय मराठे यहाँ आ कर राज्यमें स्थान स्थान पर लूटपाट मचाया करते थे और १६८४ ई०में उन्होंने बुर्झानपुर नगर भी लूटा। १६८० ई०में मराठोंने मसख उत्तर निमारकी लूटपाट द्वारा उन्नतप्राय कर दिया। तब १७१६ ई०में सुगल लोग उन्हें चोथ और मरदेगसुखी देनेकी बाध्य हुए। इसके ४ वर्ष बाद आसफजादके दक्षिणात्यका शासनभार ग्रहण करने पर भी वे बहुत दिनों तक मराठोंको चोथ आदि देते आ रहे थे। किन्तु इस पर भी मराठा लोग सन्तुष्ट न हुए और नाना प्रकारके उन्मात्त मचाने लगे। अन्तमें १७४० ई०की सन्धिके अनुसार पेशवाके उत्तरनिमार प्राप्त किया। पन्द्रह वर्ष पीछे अशोरगढ़ और बुर्झानपुर छोड़ कर समस्त दक्षिण निमार उनके हाथ लगा और १७६० ई०में उन्होंने बुर्झानपुर और अशोरगढ़को भी जीत लिया। १७७८ ई०में फाणपुर और वैरिया परगना छोड़ कर अवशिष्ट निमार जिला सिन्धिया महाराजके राज्यभूक्त हुआ और होलकरने भी अवशिष्ट प्रान्तनिमार द्वारा खराब्यके कलेवरको हर्षि की। १८वीं शताब्दी तक यह राज्य इसी प्रकार शान्ति उपभोग करता आ रहा था। किन्तु उस समयसे ले कर १८१८ ई०तक आक्रमण, लूटपाट आदिसे यह तहस नहस हो गया। १८०३ ई०में आसिदके युद्धमें अंगरेज गवर्नरोंने दक्षिण-निमार प्राप्त किया, किन्तु वह सिन्धियाराजकी दिया

गया। पीछे १५ वर्ष तक होलकरके कर्मचारी, पिण्डारी और सिन्धियाके विपक्ष नायब, गुमास्ता आदि द्वारा यह राज्य नियत आक्रान्त और अतिप्रसन्न होता गया। अन्तमें ग्रेप पेशवा चाचीरावने १८१८ ई०में मर जन मकीमके निकट आत्मसमर्पण किया। इस समय नागपुरके पूर्वतन राजा मय्यासाहबके अशोरगढ़में आश्रय लेनेसे अंगरेजोंने उस गढ़की अधिकारमें कर लिया। १८२४ ई०में सिन्धियाके साथ जो सन्धि हुई उसमें अवशिष्ट समस्त निमार अंगरेज शासनधीन हुआ। १८५४ होसङ्गवाट जिलेके लुद्ध परगने निमार जिलेमें मिला दिये गये और १८६० ई०में सिन्धियाने विनिमय द्वारा जैनावाट, माञ्जरोड परगना और बुर्झानपुरनगर अंगरेजोंने लाभ किया। पीछे उटिगराजने होलकर महाराजकी १८६५ ई०में कस्बादर, धरगाँव, वरशाई और मण्डलेखर प्रदान कर उनसे दक्षिणात्यके कतिपय परगने ग्रहण किये।

निमार जब पहले पहले अंगरेजोंके दखनमें आया, उस समय यह जिला प्राय जनशून्य था। शान्तिस्थापन का सूत्रधान होनेसे ही अनेक कृषिजीवी यहाँ पुनर्लोट कर आने लगे। यहाँ तक कि क्रमान (पीछे सर जेम्स) आउट्रमके यत्नसे यहाँके दुर्भिक्ष भीनोंने भी शान्तभाव धारण किया।

पहले पहल यहाँकी अंगरेज-शासनप्रणाली सफलता लाभ कर न सकी। पीछे १८४५ ई०में करविभागके मसखमें नूतन बन्दोवस्त हो जानेसे निमार जिला पहलेकी तरह उन्नतिपथ पर जाने लगा। १८५७ ई०में सिपाहीविद्रोहके उपस्थित होने पर भी यहाँके लोग प्रभुभक्ति दिखानेमें जरा भी विमुख न हुए थे। इस समय तांतियातोपो बहुसंख्यक सेनाकी साथ से जिलेके मध्य हो कर गुजरे और पीपलोद, खाण्डवा तथा सुगन्धगाँवके पुलिसघर वा थानाकी जला डाला। किन्तु इस जिलेका एक भी मनुष्य उनकी सेनामें न मिला था।

इस जिलेमें २ शहर और ८२२ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या प्रायः ३०८६१५ है। यहाँका उत्पन्न द्रव्य ज्वार, जूहरी, तिल, चना और तिलहन अनाज है। यहाँ अफीम और रुईका विस्तृत व्यवसाय होता है। घेठ-

इतिवनपेनिनमुना रक्षते त्रिदिने मज्ज हो कर गई
 है इम कारक यहाँ बाकिणको विमि सुविधा है।
 १८६४ ई०से निमार प गरिजीने यशेन एक कतम्य
 विमिने कपमें माहित होता पा रहा है। एक डिपुटी
 कमिश्नर, उनसे सहकारी कार्यालयको घोर तहसील-
 हारी द्वारा मामलकार्य मज्ज होता है।

निमारका को पय अनरहित है लपय मका मज्जबायु
 यस्यास्यकर नहो है। बिन्दु नमैदा घोर ताभीको
 लपयका भूमिमें धरिस घोर मई माघमें पवित्र मरमो
 पड़तो है। महामारी घोर अर यहाँका प्रधान रोग है।
 विद्यापिछामें यह बिजा यड़ा बढ़ा है। यहाँ चारै
 खूब, १ इङ्गलिम घोर ४ बनीङ्गलर मिडिल खूब,
 ८४ माहमरी खूब तथा २ माहमरी बाकिका खूब
 है। विद्यानिभागमें बापिक ४२०००) व० वर्ष होत है।

० मज्जमारतसे इन्दोरराज्यसे उत्तरका एक बिजा।
 यह यथा २१ २२से २२ २२' व० घोर देगा ०४
 २० से ०६ १०' पू० नमैदा ननेसे उत्तरमें पवकित
 है। भूपरिमात्र १००१ वर्गमील घोर लोकाय यथा माय
 २६०११० है। इधमें खरयोग, मङ्गियर घोर बहुवाद
 नामके तीन महर घोर १०६४ घाम लपते हैं। जिसेको
 पाव ८ लाख रुपयेसे पवित्रकी है।

निमाल—पञ्जाबमें बहु जिक्रान्तगत म्यानवाकी तहसील
 का नगर। यह लखपवाइकी पूर्वमें पवकित है।
 निमि (स० पु०) १ पत्रिम मोडूत दत्तात्रेयसे एक पुत्र
 का नाम। २ खोरव वीय भाविसुपदेद, खोरव
 व मक्षे मानि राजाका एक नाम। ३ हापरपुपोय
 पपुरांगसुपदेद हापर तुमके एक राजा को पपुरांगमें
 कल्पक हुए थे। ४ सिधिकाव मज्जापविता इच्छाह
 व मीय लपमेई। इनका विवरण विष्णुपुराणादिमें
 इस प्रकार बिधा है,—

राजा इक्ष्वाकुके निमि नामक एक पुत्र था। इन्हींके
 सिधिकाका बिदेहक व यथा। एक बार महाराज
 निमिने सहस्रवार्षिक यज्ञ करानेके लिए मयिठकोको
 बुलाया। मयिठकीने कहा, 'सुम्हि देवराज इन्द्र पइके
 से जी पवगत भाविककर्ममें बरख कर सुके हैं। अतः
 तब तकके लिए पाप प्रतोसा करे। इन्द्रका यज्ञ

कराने में पापका यज्ञ करालेगा।' मयिठको यह बात
 सुन कर निमि हुए हो रहें। मयिठको मी समझ कर
 कि राजाने मीरी बात खोकार कर ली है, इमलिए इन्हीं
 में इन्द्रका यज्ञ पारण्य कर दिया।

मयिठके यज्ञे कामि पर निमिने मोतमादि क्षयिणी
 को बुला कर यज्ञ प्रारम्भ बिधा। इन्द्रका यज्ञ हो जानि
 पर मयिठकी देवलोकाके बहुत निजोसे यज्ञे घोर यज्ञ
 स्वयमें पकूच कर लइनेमें देखा कि निमि मोतमको
 बुला कर यज्ञ कर रहें हैं। इस पर लइनेमें निद्रामत
 राजा निमिको घाप दिधा, 'तू मीरी पवका करके मोतम
 दासा यज्ञ करा रहा है इम कारक तू दीन होगा घोर
 तुम्हारा यह शरीर न रहेगा।'

पेके राजाने मयिठको घाप दिव, 'य पने बिना
 कामि धुने कर्ममें घाप दिवा है। इम कारक पापका
 मी यह शरीर न रहेगा।' इनका कह कर राजाने पवना
 मरोर छोड़ दिवा। निमिसे माग्से मयिठदेवका तब
 मिमायकपके वीजमें प्रविष्ट हो गया। पनकार एक दिन
 तब गोको देव कर मित्रावपका बोव मोक्षे गिर
 पड़ा। उसी बोधमें मयिठने मूररा शरीर धारण
 बिधा।

निमि राजाको बहु मृत देह धनि मरोरक तैम घोर
 गम्भीरकोमें रहने गरें घी, इस कारक करा मो बिहान
 न हुई यो। यज्ञकी समाप्ति कर अब देवतापोने यज्ञमान
 पवक बिधा, तब समय मयिठको ने यज्ञमानको कर देने
 के लिए देवतापो से प्रार्थना की। पनकार देवतापो ने
 अब कर पइक करकेके लिए निमिसे कहा तब ये बोले,
 'सुम्हि इन्से बहु कर घोर लुख मो दुःख नहों है कि,
 शरीर घोर पायाका परअर बिदोव होतो है। इन्से
 कारक में पुन मरोर धारण करकेके इच्छा नहों रखता,
 केवक एक वडो इच्छा है, कि मैं मवकी पांको पर नास
 करूँ।' देवतापोने उनकी प्रार्थना खोकार कर का
 घोर उनको मरुको की पांको को पवक पर बगइ दी।
 राजाके कोई पुत्र न रहनेके कारक सुनियो की डा हुआ
 कि मावद नहों परानवता न लीस जाय इस कारक वे
 लप कतदेहको परपोसे मज्जने लगे। कुछ दिर बाद एक
 पुत्र लपक हुआ जिसका नाम कन्ददेवसे कल्पक होनेके

कारण जनक गवा गया। मयनेसे ये उत्पन्न हुए थे, इस लिए इनका दूसरा नाम मित्रि भी था।

(विश्वसु० ४ अंश ५ ख०)

मनुसंहिताकी टीकामें कुत्रूकने लिखा है, कि निमि अपने अविनयके कारण विनष्ट हुए थे। भागवत और मत्स्यपुराण आदिमें भी इनका विवरण लिखा है। रामायण उत्तरकाण्डके ५५ अध्यायमें लिखा है, कि निमि देवताश्रीके वरने वायुभूत हो कर प्राणिमसृजके नेत्रों पर अवधान भरते हैं, इससे मानवके निमेष हुआ करता है। ५ निमेष, आँखोंका मिचना।

निमित्त (द्वि० पु०) निमित्त देखो।

निमित्त (स० त्रि०) नि-मित्त। समदोषविस्तार परिमाणयुक्त, जिमकी लम्बाई और चौड़ाई समान हो।

निमित्त (स० क्ली०) नि-मित्त-क्त, मंज्राप्रवर्जत्वात् न नत्वम्। १ हेतु, कारण। २ चिह्न, लक्षण। ३ गजुन, सगुण। ४ उद्देश्य, फलकी और लक्ष्य।

निमित्तक (स० क्ली०) निमित्त संज्ञायां कन्। १ निमित्त कारण। २ सुखन। ३ निमित्त, कारण। (त्रि०) ४ जनित, उत्पन्न, किमी हेतुमें हीनेवाला।

निमित्तकारण (स० क्ली०) निमित्त कारणम्। कारणभेद, वज्र जिमकी सहायता वा कर्तृत्वमें कोई वस्तु बने। नैययिकीके मतमें कारण तीन प्रकारका है—समसाधिकारण, असमसाधिकारण और निमित्तकारण। घटोत्पत्तिके प्रति कुलालदण्ड, चक्र, सलिल और सूत्रादि निमित्तकारण है।

निमित्तकाल (स० पु०) विशेष काल।

निमित्तकृत (स० पु०) निमित्त स्वकृतेन शुभाशुभगजुनं करोतीति कृ-कृत्। काक, कीवा। कौविके शब्दमें शुभाशुभ जाना जाता है, इसीमें इसे निमित्तकृत कहते हैं।

निमित्ततस् (स० अव्य०) निमित्त-तस्। कारण व्यतीत, कारण मित्र।

निमित्तत्व (स० क्ली०) निमित्त-त्व। कारणत्व, प्रयोजकत्व।

निमित्तधर्म (स० पु०) निमित्त, प्रायश्चित्त।

निमित्तमात्र (स० क्ली०) निमित्त मात्रव। हेतुमात्र, कारणमात्र।

“ मयैव पूर्व निदता धातुं राट्वाः

निमित्तमाथं भय मद्यसाचिन् । ” (गीता)

निमित्तवध (स० पु०) निमित्तेन रोधादिहेतुना वधः। रोधादि निमित्त गवादिवध। वधो दुर्द्ध अथम्यामं यदि गाय मर जाय, तो बांधनेवालेको प्रायश्चित्त करना होता है।

“ रोधने वनने चापि योजने च गवां रुजः ।

उत्पाद्यप्रणं चापि निमित्ती तत्र लिप्यते ॥ ”

(प्रायश्चित्तनक्षत्र ; प्रायश्चित्त देखो)

निमित्तविट् (स० पु०) निमित्तं शुभाशुभनक्षणम् वेत्तीति विट् क्तिप्। टैवज्र, गणक, व्योतिषो।

निमित्तित् (स० त्रि०) निमित्तमस्त्यप्य इति। १ निमित्तयुक्त कार्य। २ वधकतृभेद। कर्ता, प्रयोजक, अनुमन्ता अनुयायक और निमित्त। ये पाच प्रकारके वधकर्ता हैं। प्रायश्चित्त देखो।

निमित्थर (स० पु०) एक राजपुत्र, एक राजकुमारका नाम।

निमित्त (स० त्रि०) निग्रम द्वारा मित्रित क्रिया हुआ।

निमिष (स० पु०) निमिष घञर्थे क। १ चक्षुर्निमो-लनरूप व्यापार, आँखका मिचना, पलकोंका गिरना। २ तदुपलक्षित कालभेद, उतना काल जितना पलक गिरनेमें लगता है, पलक मारने भरका समय। ३ पर-मेखर। ४ सुश्रुतोक्त नेत्रवर्माश्रित रोगभेद, सुश्रुतके अनुसार एक राग जो पलक पर होता है।

निमिष-चेत् (स० क्ली०) नैमिषारणम्।

निमिषित (स० क्ली०) निमिष-क्त। १ नेत्रस्थापारभेद, आँखका मिचना। (त्रि०) २ निमोन्नित, मिचा हुआ।

निमोलन (स० क्ली०) निमिलव्यनेनेनि नि-मील करणे द्युट्। १ मरण, मौत। २ निमेष, पलक मारना। ३ पलक मारने भरका समय, पल, चण। ४ अविकाश।

निमोला (स० स्त्री०) निमोल भावे स्त्रियां अ। १ नेत्रसुद्वेग, आँखका सूँदना। २ निद्रा, नींद।

निमोलिका (स० स्त्री०) निमोलीयतीति नि-मील णिच्-णुल्, टापि अत इत्वम्। १ वराज, छल। २ निमोन्नन, आँखकी भपक।

निमोलित (स० त्रि०) नि-मील-क्त। १ सुद्विग्न, वंद, टका हुआ। २ मृत, मरा हुआ।

निमीश्वर (स० पु०) त्रिनेश्वरसद ।
 निमु पारक — य गरीज गवर्नर चनत्रियर जव १५०० ई० में
 सूरते बन्धनगरसे य गरीजी पत्रियासको उठा छे
 गवे, उव समय उवमि यहासे वचिक निमु पारकके
 साथ एक सभि की "निमु-पारक पौर ब्राह्मणवच
 पपमि वरसे दृष्टानुमार जमकी सपासना कर सकते
 है, कोई सभसे शिष्ट काङ्ग नहीं का यवता । य गरीज
 पोकन्दान वा अन्य पृथ्वसोमसम्बो यववा कोई सुसल
 मान उनको सतु-सोमाके मन्त्र रव कर प्राचिदम्बा
 यववा सभके कपर बिसो प्रकारका पत्थापार नहीं कर
 सकता, करमेसे उवे यवमे पृथको पोरवे उचित दण्ड
 मिनेग । वे पपनो कातोय प्रबाके पसुधार यवदाह कर
 सकते है पोर बिनाहके समय पूव पूमभामसे वारत
 भी छे का सकते है । यवपूवके कोई ईसाई नहीं
 बनाया जावमा पोर न छे सनयो दृष्ट्याके विवह सिरी
 कायम निवृत्त हो दिवने कायमे ।'
 निमुडां (दि० वि०) त्रिभि बोकाके सु डन हो, न बोकेन
 नामा सुपका ।
 निमुप (स० त्रि०) निरप शोचनीय, जो इमेया शोचने
 के योग्य हो ।
 निमुस (स० त्रि०) निवृत्त मूल यव । १ मुन्नाचित ।
 नि मूल क । २ प्रकाशन ।
 निमुखिय — बन्ध्यापके मन्त्रकर्तो धामविधीय । यह पचा०
 २६ इ १० ०० पोर देया० ८१ ६००के मन्त्र
 पबधित है ।
 निमेष (स० पु०) निमोयते परिमोयते इति भा मामे नि-
 यत् यत्प्रत्यये ईत् । (अथर्व । वा १।।१८०) (ईश्वरि ।
 वा १।।३।१) १ नमैय, सपुषीका बहका । त्रि०)
 २ परिबर्तनीय बहलने दोम्य ।
 निमेष (स० पु०) निमिचते नि मिय भाषि वज् । १ पञ्च-
 षट्पदकाक, पचष मारने भरका समय सतना कक
 जितना पचषकोके उठ कर फिर मिरनेमें बयता है पत ।
 पचाय—निमिय इष्टिनिमीचन ।
 पञ्चपुपचमे निधा है कि पनक मरके मारनेके
 समयको निमेष कहते है । दो निमेषको एक ऋटि
 पोर दो ऋटिका एक नव होता है । २ पनकका निराना,

पाकका भयबना । ३ सुशुतोव रोगविशिय पाकका
 एक रोग जिनमें पाके पड़कतो है । मेवयेग देवी । ४
 क्षनामक्यात यज्जमियेव, एक यज्जका नाम ।
 निमेषक (स० पु०) निमेष-वज् । १ चपुको पतक ।
 २ पुथोत, सुगम् ।
 निमेषकत् (स० षी०) निमेष करोतीति ल क्षिप-
 तुष च निमिप निमियमासकासे क्त्वा स्फुरककायं यवता ।
 विष्णुत्, विजको । निमेषकानके मन्त्र विष्णुत्का स्फुरक
 होता है, इनसे विष्णुत्को निमेषकत् कहते है ।
 निमेषक (स० षी०) नि सिक्-पुट् । चपुहमोचन, निमिप-
 साधन गिरामेद ।
 निमेषक (स० पु०) निमेषिच निमेषकाक व्याप्य
 रोचते दोम्भते इव क्षिप । क्ष्यात, सुगम् ।
 निमेषो (स० षो०) राक्षसविशेव ।
 निमोना (कि० पु०) चने या मटरके पिसे हुए वरे दानाके
 इकठो मसामिके साथ बाने मूल कर बनाया हुआ रवेदार
 म्ब बन ।
 निमीनी (दि० षी०) पच दिन सव ईव पचसे पचष
 काठो जाती ।
 निम्ब (स० त्रि०) निम्बटा म्ना पम्पासः शोचमस वा
 निम्बट् जातीति म्ना-क । १ मोच, मोका पर्याय—
 पमोट, मन्धीर, गमोरक । (पु०) २ चनमित्तपुत्र, चनमित्त-
 के एक पुत्रका नाम । इनके दो पुत्र छे, सत्राजित् पोर
 प्रथिन ।
 निम्नत (स० त्रि०) निम्न-वस क । चबोगामे, मोके
 आनेकाका ।
 निम्नगत (स० त्रि०) निम्न गतः । ओ मोकेको पोर
 गया हो ।
 निम्नमा (स० षी०) निम्ब मन्त्रतीति निम्ब-वस-इ,
 क्षियां टाय । नरी दरया ।
 निम्बदेय (स० पु०) तन्त्रदेय, निम्बनाम निचमा
 द्विस्ता ।
 निम्ब (स० पु०) निवि शिकमि पच, बबयोरे बनात् मः ।
 क्षनामक्यात वस भीम । स क्तत पर्याय—परिष्ट,
 सवतोमत्र विष्णुनिर्पास, मावक पिपुमर्दं पञ्चकत्
 पुयारि कर्दन, पचपाट गृबमानक, कीटक, विवन्,

मन्दिर-निर्मात्रके विषयमें लिख्यदुसरी है, कि जनादकी एक भाग बचा जननेके बादने वो पुत्रको पतको बोले लयो। बहुत तस्याम जगनेके बाद एक दिन इसने देखा कि एक सपनेके विषयमें यादका मूष गिरता है। यह देव जगईने दूसरे दिनके लगे जर्मि की शक्ति रखा, बाहर न होने दिया। बाद रातको लगे फ़रद हुआ कि 'तस फ़रदके विषयके लपर एक मन्दिर बनाओ और लो मास तक उसका चार बन्द रखो।' तदनुसार जगईने लगे ज्ञान पर एक मन्दिर बनावा और लो मास तक दरवाजा बन्द रखा। बाद लो मासके दरवाजा खोलने पर लसने देखा कि एक निम्ब और घीतारामकी मूर्ति परसमाप्त बरुआं बरुआं मास है।

निम्बदीप (न० पु०) १ राजादनीडव, खोरिको, खिरनोका पीड़। २ नोमका बोया।

निम्बाव (स० पु०) खोपकसा कागजी नीवू।

निम्बाविरय—बैश्वजयम्भदावके निमासुमाकाके प्रयत्नक। यह एक विष्णुत पण्डित और छात्र पुत्रव से तथा इन्द्रावनके समोव भूषण पर रहते थे। वहीं पर इनके मिथ्योनि इन्के मरने पर भरो ज्ञापित थी। बैश्वकीका यह एक पवित्र तीर्थ-ज्ञान माता जाता है। इनके पिताका नाम जयवाव था। इसपत्नी जयबावने इनका नाम भास्कराचार्य रखा था। बहुतसे लोग इन्के कुर्यके पशुं लपक मतसाते थे। इसका कारण यह था, कि ये इन्द्रावके बड़े भारी भक्त थे। इनका बृहदा नाम निम्बावन्द मी था। इनके मानकी रक्षा करकेके लिए मारायजने कुर्यदपमें पाविभूत वो लकी भावना पूरी की थी। इस विषयमें एक कि बन्दकी इस प्रकार है,—

किमी समय एक दक्षी (किरीके मतके जैन पशुसो) इनके लसीप पहुँचे। दोनैमें शाकीव विचार होने लगा। सूर्यभूत हो रहा था, निम्बादिम्बने पाचमासत घतितिकी भाति दूर करकेकी इच्छाके कुछ पायां सामने बरुओ की चोर लगे खानेको कहा। किन्तु सूर्यभूतके लपरान्त लनका भोजन करनेका नियम नहीं था। इन पर भास्कराचार्यने सूर्यकी भति रोख रखी और अब तक लनका भक्षणक तथा भोजनचार्य

शेष न हो गया, तब तक सूर्यदेव लनको भावना चोर मन्त्रिमें मोत हो निकटक एक निम्बद्वय पर खिपे रहे। सूर्यदेवने लनकी पाखाका पालन किया था, इस कारण भास्कराचार्य तमोसे निम्बाक वा निम्बादिम्ब नामसे प्रसिद्ध हुए।

सूर्यभूते बाद लनके प्रदान मिथ्य खोनिवासाचार्य लनके बरुआंखिदारी हुए। इनके बनाए हुए इन्द्राव मन्त्रास, सुब्रह्मण्यस, दशग्रीवो वा निम्बावन्त्र, मन्त्र सुब्रह्मण्य वैदासतल्लभोव वैदासपातिजातसोम, विदासनिम्बावपदीप ज्ञानमन्त्रशोध, ऐतिहासतल्लनिम्बाव पादि कई एक ग्रन्थ मिलते हैं।

निम्बाव (स० पु०) १ निम्बादिम्ब। २ निम्बादिम्ब वा जलाया हुआ बैश्वजय जगहाव।

निम्बावमिथ्य—मिथ्यगोता चोर सन्धासपत्रति नामक ग्रन्थके रचयिता।

निम्बू (न० फ़ो०) निवि घवने ल बवसौरिकात् मा। नीवू। सञ्जत पर्याय—निम्बूक, पञ्चत्रयोर, दन्ता घातयोधन, पञ्चसार, बहिने इ, दीव, बहि, दन्तपट, जम्बीरज, पन्ध, रोचन, जम्बीर, योचन दीवक।

विशेष विवरण नीवू लप्ये ईको।

निम्बूक (स० पु०) पञ्चत्रयोरल्लय, कागजी नीवू।

निम्बूकपालकम् (स० फ़ो०) निम्बुरस नीवूका मरवत।

निम्बूकपालक (स० फ़ो०) पानोबनेद। एक मान नीवूके रसमें का भाग चोनीका जब हाल कर लसमें जबहुँ चोर मिथ्यका चूषं मिता देते हैं। इसीको निम्बूकपालक कहते हैं। यह बहुत सुगन्धिय होता है।

भास्कराचार्यके मतमें इसका गुण—पञ्चक, वातनाशक, पम्बिदीपक और इन्ध है तथा समस्त पाशारमें पाचकका काम करता है।

निम्ब—धारवारके ८ मील लनारमें पवञ्जित एक घाम। इस घामसे इन्के मीक दक्षिण जमिमें खोदताकेयका ई टोंका बना हुआ एक मन्दिर है। महाकृते मङ्गल बना दन मरतेमें करीब १०० वर्ष हुए, मन्दिरका निर्माण किया है। इसको ल चारै १० फुटके कम नहीं होती। मन्दिरके मध्य जमोनेके नीचे एक कुंआर है। बारह मोनाचार पञ्च और चार चतुकोबाजति मन्त्र

के ऊपर छत टिकी हुई है। कुठारमें दत्तात्रेय और दश अवतारकी छवि अङ्कित है। आद्यादि कर्मके लिए यह स्थान बहुत प्रसिद्ध है।

निष्पुच्छ (सं० स्त्री०) निष्पुच्छ-क्षिप् । नितरां गमन, लगातार चलती रहना।

निष्पुच्छि (सं० स्त्री०) निष्पुच्छि । अस्तगमन।

निष्पुच्छ (सं० पु०) निष्पुच्छ-वञ्ज । अस्तमय, सूर्य का अस्त होना।

निष्पुच्छनी (सं० स्त्री०) वरुणकी नगरीका नाम जो मानसोत्तर पर्वतके पश्चिम है।

निष्पुच्छा (सं० स्त्री०) एक अप्सराका नाम।

निष्पुच्छि (सं० पु०) सात्वतवंशीय भजमानके एक पुत्र का नाम।

नियत (सं० त्रि०) नि-यम-क्त । १ संयत, कृतसंयम, नियम द्वारा स्थिर, बंधा हुआ। २ स्थिर, ठहराया हुआ, ठीक किया हुआ, सुकररी। ३ नियोजित, स्थापित, प्रतिष्ठित, सुकररी, तैनात। ४ आसक्त। (पु०) ५ महादेव, शिव। ६ गन्धक।

नियतमानस (सं० त्रि०) नियतमानसं येन। संयतन्द्रिय, जितमानस, जिसने इन्द्रियोंकी वशमें कर लिया हो।

नियतश्वहारिककाल—ज्योतिःशास्त्रोक्त पुष्यकालविशेष, ज्योतिषमें पुष्य, दान, व्रत, याज्ञ, यात्रा, विवाह इत्यादिके लिए नियत समय।

कालमान नौ प्रकारके माने गए हैं, सौर, सावन, चान्द्र, नाक्षत्र, पित्त, दिव्य, प्राजापत्य (मन्वन्तर), ब्राह्म (कल्प) और वाहस्यतर। इनमेंसे ऊपर लिखी-वातोंके लिए तीन प्रकारके कालमान लिए जाते हैं—सौर, चान्द्र और सावन (संक्रान्ति, उत्तरायण, दक्षिणायन आदि पुष्यकाल सौर कालके अनुसार नियत किए जाते हैं। तिथि, कारण, विवाह, चौर, व्रत, उपास और यात्रा इत्यादिमें चान्द्र काल लिया जाता है। जन्म, मरण (सूतक), चान्द्रायण आदि प्रायश्चित्त, यज्ञ दिनाधिपति, मासाधिपति, वर्षाधिपति और ग्रहोंकी सवगति आदिका निर्णय सावनकाल द्वारा होता है।

नियतात्मा (सं० त्रि०) नियतः आत्मा येन। संयते-

न्द्रिय, अपने ऊपर प्रतिबन्ध रखनेवाला, अपने आपको वशमें रखनेवाला।

नियताग्नि (सं० स्त्री०) नियता नियता आग्निः। नाटकमें प्रारंभ कार्यकी अवस्थाभेद, नाटकमें अन्य उपायोंकी छोड़ एक ही उपायसे फल प्राप्ति का नियन्त्र।

अप्रायाभावसे निर्धारित जो एकान्त फलप्राप्ति है, उसीको नियताग्नि कहते हैं। उदाहरण—राजाने कहा, देवीके अनुग्रहके बिना और कोई उपाय नहीं देखता हूँ। यहां पर कार्यसिद्धि सम्पूर्ण रूपसे देवसिद्धिके ऊपर निर्भर है। देवके प्रसन्न होने पर नियन्त्र ही फलकी प्राप्ति होगी, इस प्रकारकी फलप्राप्तिको नियताग्नि कहते हैं।

नियताहार (सं० त्रि०) नियत आहार येन। परिमिता-हारी, थोड़ा खानेवाला।

नियति (सं० स्त्री०) नियम्यतेऽनया नियम करणे क्तिन्। १ भाग्य, देव, अष्टक। २ नियम, बन्धुज। ३ स्थिरता, सुकररी, ठहराव। ४ अवश्य होनेवाला बात, बन्धी हुई बात। ५ पूर्वकृत कर्म का परिणाम जिसका होना नियम्य होता है। ६ जड, प्रकृति। ७ चतुर्दशधारिणो देवयोपितॄंको अश्वत्तमा स्त्री।

नियती (सं० स्त्री०) नियम्यते कालो यथा, नियम-क्तिच्, बाहुलभात्, डोप्। दुर्गा, भगवतो।

नियतेन्द्रिय (सं० त्रि०) नियतानि इन्द्रियानि येन। संयतेन्द्रिय, इन्द्रियदमनशील, इन्द्रियकी वशमें रखने वाला।

नियन्त्रव्य (सं० स्त्री०) नि-यम-तश्च। नियमनीय, दमन योग्य, शासन योग्य।

नियन्त्रा (हि० पु०) नियन्त्र देखो।

नियन्त्रण (सं० स्त्री०) नि-यन्त्रि-ल्युट्। प्रतिबन्ध दूरीकरण, एकत्र स्थापनार्थ व्यापारभेद।

नियन्त्रित (सं० त्रि०) नि-यन्त्रि-क्त। १ अवाध, अनगल। २ कृतनियम। ३ प्रतिबन्धादि द्वारा एकत्र स्थापित, नियमसे बंधा हुआ, कायदेका पाबंद।

नियन्त्र (सं० त्रि०) नियच्छति अश्वादेनिति नि-यम-लृच्। १ नियमकारी, नियम बांधनेवाला, कायदा बांधनेवाला। २ विधायक, कार्यका चलानेवाला। (पु०)

३ पञ्चनियमकारी, चौका जेनेबासा, चारदि । ४ विष्णु, भगवान् । ५ शिष्य, नियम पर चलनिबासा शासक ।
 नियम (सं पु०) नियमनमिति निष्पन्न-प्य । १ प्रतिष्ठा, पञ्जेकार । २ विधि या नियमके अनुकूल प्रतिबन्ध, परिमिति, रोक वाच्यते । अथर्ववेदि शोधक अनुषोके परिभाषा बाँधनेको नियम कहा है—केसे प्रथमनियम, द्वितीयनियम, उपानयननियम, ताम्बूलनियम, आहार नियम, वस्त्रनियम, पुष्पनियम, बाह्यनियम सम्बन्धनियम इत्यादि । ३ शान्त, उभाव । ४ परम्परा, नव्या वृत्तान्त, दम्भ । ५ व्यवस्था, पद्धति, विधि वाच्यता मान्य, ज्ञानता । ६ निश्चय । ७ ऐते शान्तानि निर्धारण विषये कोमे पर दूसरो बातका जोगा निर्धारण क्रिया महा हो, शान् । ८ योगाङ्गिणीय । पातञ्जल दशंगमे इसका नियम दस प्रकार लिखा है—

यम नियम, आसन पोर प्राणायाम पादि योगके पाठ पङ्क है । योगाभ्यास करनेमें दूसरे दूसरे तम नियमादिका साधन करना होता है । पहले ब्रह्म, योगे नियम है पर्याप्त यम नामक योगाङ्गके सिद्ध हो जाने पर नियमयोगाङ्गका अनुष्ठान किया जाता है । अग्नि सा, सद्य अप्तोय ब्रह्मचर्य पोर अपरिपद्य इन पाँच प्रकारके कार्योंका नाम यम है । यमयोगाङ्गका अनुष्ठान करके नियमयोगाङ्गका साधन करना पड़ता है । हमें ये संज्ञेयमें यमयोगाङ्गका नियम लिखा जाता है । पहले अग्नि सा अनुष्ठान है जिससे प्राणिक नदी करनेमें हो अग्नि सा-नुष्ठान सिद्ध होता है सो नदी, जिसको उपनयन का जिसो समयमें प्राणियोंको आधिक, अधिक या मात्र सिद्ध किसी प्रकारका बह नहीं देखिये हो अग्नि सा-नुष्ठान सिद्ध होता है । इस अग्नि सानुष्ठानकी पराकाष्ठा प्राप्त करनेमें अथर्व निर्माण रहता है । अग्नि सानुष्ठानके बाद सञ्जातुष्ठान है । सत्यनिष्ठ होनेसे अथर्व शीघ्र ही योगवति लाभ करनेमें योग्य हो जाता है । इसके बाद परीत्य है । इससे साय ब्रह्म-चर्यका करना आवश्यक है । ब्रह्मचर्यका मूल धर्म शीघ्रचर्य है । शरीरमें शुद्धसातु बहि पुष्ट रहने, विहात, स्फूर्ति का विवर्णित न हो, अथर्व, अटन का स्मरणमात्रसे रहने तो हमें सुदीक्षिय पोर मनको

अग्नि बढ़ती है । विसको प्रज्ञायमज्ञिको भी हृदि होती है । ब्रह्मचर्यके साय अपरिपद्यवृत्तिका अथर्वचर्यन करना होता है । जोमपुत्रक प्रत्यक्षरथका नाम परिपद्य है । अथर्व देखनाका निर्वाहके वा शरीररथाके अनुष्ठान प्रत्यक्षीकारके परिपद्य नहीं कहते । हम प्रकार अनुष्ठान करनेका नाम अपरिपद्य है । इस अपरिपद्यसे चित्तमें योगीयबुद्ध तैरायका जोग उत्पन्न होता है । अग्नि सादि पाँच प्रकारके धमजाति दिय पोर आत्मने निश्चिन्त नहीं होती ।

यमयोगाङ्गके डङ्ग को जानिये नियम नामक योगाङ्ग का अनुष्ठान करना होता है ।

शोध, सक्तोय, तपसा आभ्याय पोर ईश्वर प्रविधान इन पाँच प्रकारको अनुष्ठेय जि गणोंका नाम नियम है । शोध दो प्रकारका होता है—साध्य पोर आभ्यन्तर । जल, मिट्टी, गोबर आदिसे शरीरको साध्य रचना काङ्क्षीय है । कदवा मैत्रो, मज्जि सादि सात्विक हृत्तरिणीकी प्ररथ करना आभ्यन्तर शोध है । हम प्रकार अनुष्ठान करनेमें शरीर पोर मन निश्चय हो जाता है तदा अथर्व नामक शैताम्बा का पाशाभिनज तेजमें दृश्यता पोर सक्तता पा जाती है ।

सक्तोय, धर्मि ; (बिना परिश्रमके जो काम हो उठी में परिश्रम रहना आदि) कुछ दिन तक हम योगाङ्गका अनुष्ठान करनेमें सक्तोयचित्तमें डङ्ग हो जाता है । तप, आभ्याय पोर ईश्वरप्रविधान— यथापूर्वक आभ्योक्त तत नियमादिके अनुष्ठान करने का नाम तपसा है । प्रथम पादि ईश्वरभावक शब्दके अर्थ पर्याप्त धर्मका धरनपूर्वक उच्चारण पोर अथर्व शास्त्रके समीतुषध्यायमें रत रहनेका नाम आभ्याय है । मज्जिपूर्वक ईश्वरपवित्रचित्त को जो भाय किया जाता है, उसे ईश्वर प्रविधान कहते हैं । इन तीन प्रकारको क्रियायोंका नाम क्रियायोग है । बिना तपसाके योग सिद्ध होनेको सम्भावना नहीं । क्योंकि मनुष्यके चित्तमें पनादिकालको विपन्नवासना पोर अनिष्टा बहमूल हो पड़ो है । बिना तपसाके उपरका दूर होना सम्भव नहीं है । चित्तमें वासनासे रहनेमें योग हो नहीं सकता । इस वासनानाशके लिए तपसा अवश्य विधेय है । इन सब

नियारा (हि० वि०) १ घृणक, अलग, जुदा । (पु०)
 २ सुनारों या जोहरियोंके यहाँका कूड़ा करकट ।
 नियारिया (हि० पु०) १ चतुर मनुष्य, चालाक बादमी ।
 २ मिनी हुई वस्तुओंको अलग अलग करनेवाला । ३
 वह जो सुनारों या जोहरियोंको राख, कूड़ा करकट
 आदिमेंसे माल निकालता हो ।
 नियुक्त (सं० वि०) नि-युज-क्त । १ अधिकृत, अधिकार
 किया हुआ । २ नियोजित, लगाया हुआ । ३ प्रेरित,
 तत्पर किया हुआ । ४ अवधारित, स्थिर किया हुआ,
 ठहराया हुआ । ५ लगाया हुआ, जोता हुआ, तैनात,
 सुकरर ।
 नियुक्ति (सं० स्त्री०) सुकररी, तैनाती ।
 नियुत् (सं० पु०) नि-यु कम णि क्तिप् तुक् । वायुका
 अण्ड । (वैदिक)
 नियुत (सं० स्त्री०) नियुयते बहुसंख्या प्राप्यतेऽनेनेति, नि-
 यु-क्त । १ लक्ष, एक लाख । २ दश लक्ष, दश लाख । नियुत
 शब्दका प्रायः दश लक्षमें ही व्यवहार हुआ करता है ।
 नियुत्वतीय (सं० वि०) नियुत्वतः इदं नियुत्वत् छ ।
 वायुदेवताके हविः यादृ ।
 नियुत्वत् (सं० पु०) निदुतोऽग्वाः सन्त्यस्य मनुप्-मस्य
 वः । वायु, हवा ।
 नियुत्सा (सं० स्त्री०) भरतवंशीय प्रह्लार राजाको स्त्रीका
 नाम ।
 नियुङ् (सं० षलो०) नि युज-क्त । वाङ्मयुङ्, हायावाहीं,
 कुण्ठी ।
 नियुङ्ग्र (सं० वि०) नियुत् नियोजितो नियतो वा रथो
 यस्य । जानिके लिये नियोजित रथ ।
 नियुक्तश्च (सं० षली०) नि-युज-तश्च । नियोगार्हं,
 नियोजित करने योग्य ।
 नियुक्ता (हि० पु०) १ नियोजित करनेवाला, लगाने-
 वाला । २ नियोग करनेवाला ।
 नियुक्तृ (सं० वि०) नि युज-त्त्वं । नियुक्ता देखो ।
 नियोग (सं० पु०) नि युज-घञ् । १ प्रेरण, कार्यमें
 प्रवृत्त करना । २ इष्टसाधनत्वादि बोधन द्वारा प्रवर्त्तन ।
 ३ अवधारण । ४ आज्ञा । ५ निश्चय । ६ अपुत्रभ्रातृ-
 पत्नोपुत्तार्थं नियोजन, पुत्र उत्पादन करनेके लिये
 निःसन्तान भौजाईके साथ संभोग ।

नियोगविधिका विषय मनुने इस प्रकार लिखा है ।
 यदि अपने स्वामीके कोई सन्तान उत्पन्न न हो, तो स्त्री
 अपने देवर अथवा पतिके प्रेर किये गोवजमे मन्तान
 उत्पन्न करा सकती है । रातको सोनावनरवनपूर्यक
 स्वामी वा गुरु कर्त्तक नियुक्त व्यक्ति विधवा स्त्रीके केवल
 एक सन्तान उत्पन्न कर सकता है । किसी किसी षाचार्य-
 का मत है, कि एक सन्तान द्वारा नियोजक या नियोग
 उद्देश्य फलभूत दर्हीं छा सकता, इस कारण वह स्त्री
 और नियोजित व्यक्ति दो सन्तान तक उत्पन्न कर सकते
 हैं । नियोजित उद्देश्य वा कनिष्ठ भ्राता यदि शास्त्रानु-
 गामी न हो कर नियोगविधिका उल्लङ्घन करे, तो उसे
 प्रायश्चित्त करना होता है । (मनु ८ अ०) पर कल्पिमें
 यह रीति वर्जित है ।

नियोगी (सं० वि०) नियोगोऽपराप्नोति नियोग-इनि ।
 १ नियोगविधि, जो नियोग किया गया हो, जो लगाया
 या सुकरर किया गया हो । पर्याय—कर्मसचित्र, आयुक्त,
 व्यापृत । २ जो किसी स्त्रीके साथ नियोग करे ।
 नियोगकर्त्तृ (सं० वि०) नियोगमर कर्त्ता । कर्ममें
 नियुक्तकारी, काममें लगानेवाला, सुकरर करनेवाला ।
 नियोगपत्र (सं० स्त्री०) नियोगमर पत्रम् । वच पत्र जिसमें
 किसी मनुष्यको नियुक्तिका विषय लिखा रहता है ।
 नियोगविधि (सं० पु०) विधेयते इति वि धा-क्ति, नियो-
 गमर विधिः । किसी कार्यमें नियुक्त करनेको प्रथा ।
 नियोगार्थ (सं० पु०) नियुक्त वारनेका उद्देश्य ।
 नियोग्य (सं० वि०) नियुक्तुमार्हः, नि-युज-ष्यत् । नियो-
 गार्ह, नियोग करने योग्य ।
 नियोजक (सं० पु०) नियोजयति नि-युज-णिच्-भ्रु-क्त ।
 नियोगकारी, काममें लगानेवाला, सुकरर करनेवाला ।
 नियोजन (सं० स्त्री०) नि-युज-ल्युट् । १ नियोग ।
 २ प्रेरणा, किसी काममें लगाना, तैनात या सुकरर
 करना । ३ प्रवर्त्तन, उत्तेजना, उसकाना ।
 नियोजित (सं० वि०) नियुक्त किया हुआ, लगाया हुआ,
 सुकरर, तैनात ।
 नियोज्य (सं० वि०) नियुक्तुं शक्यः, नि-युज-शक्याधि-
 ण्यत् प्रत्ययेन साधुः । १ नियोगार्ह, नियोग करने
 योग्य, जो नियुक्त करने काविल हो ।

नियोजन (स पु०) नियुक्ति इति निबन्ध-पत्रम् ।
 १ कुत्र च, सुर्वा । २ बाहुबुद्धकारो, मन्त्रवेद्या, कुशो
 मन्त्रवेद्या, पञ्चसामान ।

नियोजन (स० पु०) नियोजन वेद्यो ।

नियोजन (स० लो०) धर्मपदार्थप्रमाण, एक परिमाण
 जो बरयोके हठे भागवे बराबर होता है ।

निर (स० चय०) नृत्तपुत्र न दीर्घ । १ नियोग ।
 २ शयन । ३ पादेय । ४ पालनम् । ५ मोम । ६
 नियत । निर एक उपसर्ग जो है जो बाल्यादिके
 पहले रह कर धर्म प्रकाश करता है, यथात्म उच्छ्वा
 उदाहरण निम्ना जाता है । १ निःसङ्ग । २ निर्मल ।
 ३ निर्दोष । ४ निःक्रान्त । ५ निर्दोष । ६ नियत ।
 ७ निश्चिन्त ।

निरस (स० पु०) निर्गतो यद्यात् । १ स्युं सुख्यमान
 रागिणी प्रथम रागिणी तीसरी भाग, रागिणी भोग्यकाल-
 का प्रथम पौर श्रेय दिन, मन्त्रान्ति । (नि०) निर्गतो
 मामो वस । २ भागवत त्रिंशे उच्छ्वा भाग न
 मिसा जो ।

पतित, समका पुत्र और श्लोक आदि निरसक पञ्चात्
 भागशून्य है, इन्हें सम्पत्तिका भाग नहीं मिल सकता
 किन्तु प्रतिपादनके लिए कुछ दे दिया जाहिये । ३ बिना
 पञ्चाशक ।

निरक्षर (हि० वि०) १ छात्रो यागिस, बिना लेख-
 का । २ अक्षय नाव ।

निरस (स०) निर्गता पञ्चसुपति यमः । पञ्चोपति
 यन्मन्त्रेय, निरसयेय पञ्चोको उत्तरार्धे पौर दक्षिणार्धे
 दो भाग करके त्रिस रेखा द्वारा भाग करते हैं उक्त
 ऋतु पौर उच्छ्वा अथवासि द्वितीको निरसयेय कहते
 हैं । निरसयेयमें रात और दिन बराबर होता है ।
 पूर्वमें मन्त्राक्षय और यमकोटि, दक्षिणमें भारतवर्ष
 और उच्छ्वा, पश्चिममें क्षिप्रमासवर्ष, रोमक, उत्तरकुण्ड
 पौर सिद्धपुरो निरसयेय उच्छ्वा मण्ड है । एवं इन पञ्च
 द्वितीको नियुक्तीका जो करजाते हैं इन्हीं दिन पौर
 रातका भाग बराबर होता है ।

निरस (स० नि०) १ पञ्चसुपत्त । २ त्रिसमें एक
 पञ्चर भी न पड़ा हो, पञ्चसुपत्त, मूर्ख । अर्थ—निरस
 महाकार्य—पञ्चित बना हुआ मूर्ख ।

निरसरी (स० लो०) नाडीमण्डल निरसउत्त, क्षान्ति
 इत्त ।

निरसना (हि० नि०) देखना, ताकना ।

निरसुनिवा (हि० नि०) निरसनी देखो ।

निरसुन (हि० नि०) त्रिसमें सुख न हो या जो सुखो न
 हो, पनाड़ी ।

निरसि (स० पु०) निर्गतोऽस्मिदात्साञ्चकार्यं यद्यात् ।
 योत पौर समाप्त पश्चिमाञ्चकार्यं रचित ब्राह्मण वह
 ब्राह्मण जो योत पौर समाप्त विधिसे चतुर्भार पश्चिम
 न करता हो ।

निरसि ब्राह्मणको हमेशा एकदिवस याद विधिका
 चतुर्भार करता चाहिये । सामान्यब्राह्मण यदि पश्चिमा
 परिष्कार करे, तो उधे मुक्त इच्छाके समान पाव सकता है ।
 मनुके पश्चिम परिष्कारको उपपातक बतकाया है ।

निरसु (स० वि०) निर्नापि च कुण्ड इव प्रतिबन्धको
 मय । १ प्रतिबन्धमूक विमल किये कोरै च कुण्ड या
 प्रतिबन्ध न हो । २ पश्चिमाञ्च को निवारण करनेयोग्य
 न हो । ३ मन्त्रकारो बिना कर दावका, वे उच्छ्वा ।

निरस (स० नि०) निर्गत पञ्च यज्ञ । १ पञ्चकोन,
 त्रिंशे पञ्च न हो । २ बेबल, वासी त्रिसमें कुछ न हो,
 जैसे यह मूक निरस पानो है । (लो०) १ स्वयं
 पञ्चकारका एक भेद । स्वयं दो प्रकारका होता है,
 एक पश्चिम, दूसरा तादृश्य । पश्चिम स्वयं को फिर तीन
 भेद मान लिये हैं मम पश्चिम पौर मूल । २ नर्मि
 'मम पश्चिम स्वयं'के तीन भेद हैं, यथा—मूल वा साव-
 द्य निरस वा निरसयय पौर परस्परित । कहाँ स्वयंमें
 उपमानका इस प्रकार आरोप होता है कि उपमानके
 पौर सब पञ्च नहीं आते, कहाँ निरसयय वा निरसययक
 होता है—जैसे "रेम नोद न चैन द्विप विमल चरम
 कुण्ड पौर न मासि, सीवनको पञ्च प्रेमकता यहिसे द्विप
 काम प्रवेश लक्षार्थे' यहाँ प्रेममें क्षयन क्षताका आरोप
 है, तमके दूसरे दूसरे पञ्चो वा सामर्थ्याका लक्षण नहीं
 है । निरस या निरसयय स्वयं भी दो प्रकारका माना
 गया है पश्चिमा स्वयं पौर मूलमाणाकार । जपरमें
 जो उदाहरण निम्ना दया है वह यह निरसययका है
 क्योंकि तममें एक उपसर्गमें एक हो उपमानका

(पेसमे लताका) आरोप हुआ है। भासाकार निरवयव उसे कहते हैं जिसमें एक एक उपमेयमें अनेकों उपमानोंका आरोप हो। जैसे—'भँवर सँदेहकी अछिह आपरत यह, गेह लीं अनम्रताकी देह दुति हागे है। टोपकी निधान, कोटि कपट प्रधान जामें, मान न विधाम द्रुम ज्ञानकी कुठारी है। कहै तोप ठरि स्वर्गहार विघन धार, नरक अपारकी विचार अधिकारी है। भारो भयकारो यह पापकी पिठारी नारो काँ करि विचार याहि भाखिं सुख प्यारो है।'

यहा एक स्त्री उपमेयमें सँदेहका भँवर, अविनयका घर इत्यादि बहुतसे आरोप किये गये हैं।

निरङ्ग (हिं० वि०) १ विवर्ण, बेरङ्ग, बदरंग। २ उदास, फीका, बेरोनक।

निरङ्गुल (सं० त्रि०) निर्गतमंगुलिभ्यः, अत्र, समासान्तः। अंगुलिसे निर्गत, जिसे उंगली न हो।

निरचू (हिं० वि०) निश्चिन्त, खाली, जिसे फुरसत मिल गई हो, जिसने कुछी पाई हो।

निरजल (हिं० वि०) निर्जल देखो।

निरजिन (सं० क्ली०) निर्गतमजिनात्। अजिनसे निर्गत, जिसे चमड़ा न हो।

निरजो (हिं० स्त्री०) संगतराश्यांकी महोन टांकी जिसने गंगमर्मर पर काम बनाया जाता है।

निरजोस (हिं० पु०) १ निचोड़। २ निर्णय।

निरजोषी (हिं० वि०) १ निर्णय करनेवाला। २ निचोड़ निकालनेवाला।

निरञ्जन (सं० क्ली०) वह चिह्न या निशान जो मापनेकी रेखासे किया जाता है।

निरञ्जन (सं० त्रि०) निर्गतं अञ्जनं कञ्जनं तदिव प्रमनं अञ्जानं वा यस्मात्। १ कल्लनरहित, बिना काजलका २ टोपरहित, बिना गुनाहका। ३ मायासे निकलित। (पु०) ४ योगविशेष। ५ परमात्मा। ६ महादेव।

निरञ्जनदास—हिन्दीके एक कवि। ये अनन्दपुरके निवासी थे। इनके पिताका नाम बसन्त और गुरुका पीताम्बर था। म० व० १७२५ इनका कविताकाल कहा जाता है। इन्होंने एक पुस्तक रची है जिसका नाम हरिनाम-माला है।

निरञ्जनयति—भंगवन्नाम-भांशोत्तरसंग्रहके रचयिता।

निरञ्जना (सं० स्त्री०) निर्नाम्नि अञ्जनमिव प्रथकारो यत्र टाप। १ पूर्णमा। २ दुर्गाका एक नाम।

निरञ्जनी—एक उपासक सम्प्रदाय। कहते हैं, कि इस सम्प्रदायके प्रवक्तृक गिरानन्दस्वामी थे। उन्होंने निरञ्जन निराकार ईश्वरको उपासना चलाई थी, इससे उनके सम्प्रदायको निरञ्जनीसम्प्रदाय कहने लगे; किन्तु आजकल निरञ्जनो साधु रामानन्दके मतानुसार साकार उपासना ग्रहण करने उदासी वैष्णवोंमें हो गए हैं। वे कोप न पहनते तथा तिनक और कण्ठी धारण करते हैं। मारवाड़में इनके भग्नाड़े बहुत हैं। ये लोग ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि उच्च श्रेणीके मनुष्योंका प्रथम ग्रहण करते हैं, इसीसे रामानन्दी वा साधारण धर्मनिष्ठ वैरागी इनके हाथका भोजन नहीं करते।

इनके मन्दिरमें सीतारामकी मूर्ति, शानप्रामथिना, गोमतीचक्र आदि प्रतिष्ठित हैं।

निरत (सं० वि०) निरमत्त। नियुक्त, किमो काममें लगा हुआ, तत्पर, लीन, मग्नगून।

निरति (सं० स्त्री०) नितरां रतिः, निरमत्तिन्। १ अव्यन्त रति, अधिक प्रीति। २ लज्ज होनेका भाव, लोन होनेका भाव।

निरतिशय (सं० पु०) निर्गतोऽतिशयो यस्मात् नितरां अतिशयो वा। अव्यन्तातिशय, स्वापेक्षद्वारा अतिशय शून्य परमेश्वर।

परमेश्वरमें निरतिशय ज्ञान है, वे सर्वज्ञ हैं अर्थात् उनमें सर्वज्ञता ही अनुमापक परिपूर्ण ज्ञानशक्ति विद्यमान है, अन्य आत्मामें वैसा नहीं है। उनका स्वरूप जब दूसरेकी समझाना होता है, तब अनुमानको सहायता लेनी पड़ती है। वह अनुमान प्रणाली ऐसी है कि उससे ज्ञात होता है कि सभी आत्माओंमें कुछ न कुछ अवश्य ज्ञान है, सभी आत्मा अन्ततः अनागत और वस्तुमान समझ सकती हैं। कोई तो अवश्य और कोई उससे अधिकज्ञ है। अतएव जिसमें और अधिकज्ञ आत्मा नहीं है, जिसमें ज्ञानकी पराकाष्ठा है, उसो परमेश्वरमें सर्वज्ञबीज निरतिशय है। तदपेक्षा और कुछ मो अर्थ नहीं है। (पाठ० ६०)

निरूप्य (सं० लि०) निर्मातोऽप्यथो यत्नः । १ पर्यय
 युक्त, त्रिसुक्ता इदं न हो । २ पर्यायामय, त्रिसुक्ता
 नाय न हो । ३ आपत्तिरहित त्रिसुक्ता वातवा चर
 न हो ।
 निरुद्ध (दि० वि०) निर्द्धेयैः ।
 निरुद्धा (दि० वि०) बोधोऽर्थो, गच्छीत, पर्याय ।
 निरुद्धा (दि० लि०) १ निरुद्ध करणा उद्धारणा प्तिर
 करणा । २ मर्मैः शरत्त करणा समभ्रान्ता ।
 निरुद्ध (सं० लि०) निष्कामोऽप्यनः, प्रादिषमाप्ति पर्य
 समावाप्तः । २ अर्थे निष्काम, जो पर्याय राप्ता भूत्
 गया हो ।
 निरुद्धा (दि० वि०) निरुद्धा देवो ।
 निरुद्धोद्य (सं० पु०) निर्द्धयता, निरुद्धता, वैरहमी ।
 निरुद्धोद्यवापे (सं० लि०) जो निर्द्धयतासे काम चरता
 हो वैरहम ।
 निरुद्धोद्यता (सं० ली०) निर्द्धयता, निरुद्धता, वैरहमी
 निरुद्धोद्यमुक्त (सं० लि०) निरुद्ध, यत्न, वैरहम ।
 निरुद्ध (सं० लि०) त्रिसुक्ता पर्यायमी न हो, जो बिना
 जोकरका हो ।
 निरुद्धासिद्ध (सं० लि०) निर्द्धयता पर्यायसिद्ध पर्य
 नासिद्धयत्न यत्न । पर्यायसिद्ध सिद्ध यत्नसिद्ध, त्रिसुक्ता
 उद्धारण नासिद्धे सम्भव्ये न हो ।
 निरुद्धोद्युक्तयोग (सं० पु०) व्यायुक्तोऽप्यनिरुद्धयत्न
 यत्न चर प्रचारका है—उत्त, प्राप्ति, भाभास चोर पर्य
 नसरपर्यय ।
 निरुद्धोद्य (सं० लि०) पर्यायसिद्ध, निरुद्ध, उद्धारण ।
 निरुद्ध (सं० लि०) निर्माप्ति पर्यय पर्ययम् बन्धुमादा
 १ विविक्त, उदा । २ उद्धारण, पर्ययसिद्ध, त्रिसुक्ता या
 त्रिसुक्ता वीच पर्यय वा पर्याय न हो, जो बराबर पर्यय
 गया हो । उदाहरणसे हो सिद्ध है देविको चोर नासिद्धी
 इतमिसे देविक विच्छेदयुक्त है । ३ पर्ययसिद्ध त्रिसुक्ता
 पर्याय पर्यय न हो, नमाता चोर्निवासा । ४ पर्यय
 भास, उदा उद्धारण, बराबर बना रहनीवाला । ५ पर्यय
 बना नभिन । ६ पर्ययसिद्ध, जो पर्ययसिद्ध न हो, जो
 इच्छिते चोभन न हो । ७ पर्यय, त्रिसुक्ता सिद्ध या पर्यय
 न हो, जो नमान या एक हो हो । ८ तात्पर्यरहित ।

८ बिना । १० पर्यायसिद्ध । ११ पर्यय । १२ पर्यय
 राजा ।
 निरुद्ध (दि० लि० वि०) सदा, इतमि, बराबर ।
 निरुद्धाव्यास (सं० पु०) निरुद्धरा उततोऽप्यसो यत्न
 कामं भा० । १ उदाहरण । २ पर्यय पर्यायसिद्ध ।
 निरुद्धाव्य (सं० लि०) १ पर्ययसिद्धयुक्त । २ निरुद्ध
 पर्यय ।
 निरुद्धाव्यता (सं० ली०) पर्ययसिद्ध ।
 निरुद्ध (दि० वि०) १ भारी पर्याय । २ उद्धारण । ३
 उद्धारणयुक्त ।
 निरुद्ध (सं० लि०) निरुद्ध, बिना पर्ययका ।
 निरुद्ध (सं० लि०) १ पर्ययसिद्ध, बिना पर्ययका । २ निरुद्धाव्य,
 जो पर्यय न थाए हो ।
 निरुद्धता (सं० ली०) उद्धारण ।
 निरुद्धा (दि० वि०) निरुद्धाव्य, जो पर्यय न थाए हो ।
 निरुद्ध (सं० लि०) नाप्ति पर्ययः सम्भव्यो यत्न । १
 उद्धारणरहित । २ निर्मासिद्धयत्न पर्ययसिद्धयुक्तय
 सिद्ध । ३ उद्धारणपर्ययसिद्ध पर्यय । ४ निर्द्धेय ।
 निरुद्ध (सं० लि०) उद्धारण, बिना पर्यायका ।
 निरुद्ध (सं० लि०) निर्मातो पर्ययसिद्ध उद्धारण यत्नसिद्ध ।
 १ उद्धारण । २ निर्मासिद्ध, उद्धारण ।
 निरुद्धाव्य (सं० पु०) १ निर्द्धयता, पर्ययसिद्धता, उद्धारण,
 उद्धारणसिद्धता । (लि०) नाप्ति पर्ययसिद्ध यत्न । २
 निर्द्धेय, पर्ययसिद्ध, उद्धारण ।
 निरुद्धाव्य (दि० लि० वि०) बिना पर्ययसिद्ध, बिना उद्धारण
 उद्धारणसिद्धे ।
 निरुद्ध (सं० लि०) १ जो उद्धारण न देता हो । २ त्रिसुक्ता
 उद्धारणसे द्वारा भास लये ।
 निरुद्धाव्य (सं० लि०) १ पर्ययसिद्धयुक्त, त्रिसुक्ता उद्धारण
 उद्धारण न थी प्राय । २ निर्द्धेय उद्धारण । ३ त्रिसुक्ता
 उद्धारण पर्यय न हो ।
 निरुद्धाव्य (सं० लि०) पर्यायसिद्ध, त्रिसुक्ता बिना
 न हो ।
 निरुद्ध (सं० लि०) निर्माता पर्ययसिद्ध प्रादिषु ।
 १ पर्ययसिद्ध, त्रिसुक्ता जो बालको पर्ययसिद्ध या उद्धारण
 हो, उद्धारण । २ जो त्रिसुक्ता पर्ययसिद्ध न हो, जो

किसी पर निर्भर न हो। ३ आशाशून्य, जिसे किसी दूसरेकी आशा न हो। ४ जिसे कुछ लगाव न हो अनग। (स्त्री०) ५ अनादर। ६ अवहेलना।

निरपेक्षा (सं० स्त्री०) निरपेक्ष स्त्रियां टाप। १ अवघ्ना, परदा न होना। २ निराशा। ३ अपेक्षा या चाहका अभाव। ४ लगावका न होना।

निरपेक्षित (सं० त्रि०) १ जिसको अपेक्षा या चाह न की गई हो। २ जिसके साथ लगाव न रखा गया हो।

निरपेक्षी (सं० त्रि०) १ अपेक्षा या चाह न रखनेवाला। २ लगाव न रखनेवाला।

निरवन्धी (हिं० वि०) जिसे वंग या सन्तान न हो।

निरविसो (हिं० स्त्री०) निर्विषी देखी।

निरभिभव (सं० त्रि०) १ अभिभवशून्य, अपराजिय, जो जीता न जा सके। २ जो अपमानित न हो।

निरभिमान (सं० त्रि०) नास्ति अभिमानं यस्य। १ अभिमानशून्य, अहङ्काररहित।

निरभिलाप (सं० त्रि०) अभिलापारहित, इच्छाशून्य।

निरभीमान (सं० त्रि०) निरभिमान, अहङ्कारशून्य, अभिमानरहित।

निरभ्र (सं० त्रि०) १ अभ्र वा मेघशून्य, विना बादलका। (अव्य०) २ मेघशून्य आकाशमें।

निरमण्य (सं० स्त्री०) नियतं रमणं। १ भियत रति, अत्यन्त अनुराग। निरम-आधारे ल्युट, नियतं रम्यत्वमिन्। २ नियतराधार।

निरमर्ष (सं० त्रि०) १ अमर्षशून्य, धीर, जिसमें धैर्य हो। २ तेजोहीन, जिसमें तेज न हो।

निरमद—१ हैदराबादके अदोलाबाद जिलेकी एक तालुक। भूपरिमाण ५४८ वर्ग मील और जनसंख्या ४५५५१ है। इसमें इसी नामका एक शहर और ११५ गांव लगते हैं जिसमेंसे १५ जागोर हैं। यहाँकी आय एक लाखसे अधिककी है। यहाँ नहरके द्वारा पानी सींचनेका अच्छा इन्तजाम है जिसमें धान अधिक पैदा होता है। गोदा वरी नदी इसके दक्षिणमें पड़ती है।

२ उक्त तालुकका सदर। यह अक्षां० १८° ६' ३०" और देशां० ७६° २१' पू०के मध्य अवस्थित है। लोकसंख्या ७७५१ है। १७५२ ई०में यहाँके राजाने निजाम

सलाबतनगर पर जो युमोके साथ औरझापादने गोलकुण्डाकी जा रही थे, चढ़ाई कर दी। नडाईमें राजा मारे गए और इनकी सेना युद्धक्षेम भाग गई। यहाँ अनेक आफिस, एक अस्पताल, डाकघर और एक स्कूल है।

३ बम्बई प्रदेयके याना जिलेका वकीन तालुकान्तर्गत एक गांव। यह अक्षां० १८° २४' ३०" और देशां० ७२° ४७' पू०के मध्य वकीननगरसे ६ मील उत्तरमें अवस्थित है। जनसंख्या २४२ है। यह एक पवित्र स्थान माना जाता है। यहाँ प्रतिवर्षकी ११वीं नवम्बरकी एक भारी मेला लगता है जिसमें बहुतसे हिन्दू सुननमान, ईसाई और पारसी समागत होते हैं। मेला आठ दिन तथा रहता है और तरह तरहकी चीजोंकी खरीद-विक्री होगी है। यहाँ आठ मन्दिर और एक गिर्जा घर भी देखनेमें आता है।

निरमोद (हिं० पु०) एक शोषधि या जड़ी जिससे अफोमके विषका प्रभाव दूर हो जाता है। यह जड़ी पञ्जाबमें होती है। १८६८ ई०में यह लन्दननगरके महामन्त्रिमें भेजी गई थी।

निरमाली—बम्बई प्रदेयके साहीकान्त जिलेके अन्तर्गत एक छोटा राज्य।

निरमित (सं० त्रि०) निर्गतोऽमितोयस्य। १ अद्वारहित जिसका कोई अन्त न हो। (पु०) २ चौथे पाण्डय नकुलके पुत्रका नाम। ३ विगर्ताराजके एक पुत्रका नाम। ४ वाहं द्रथयंश्रीय भविष्यत्पर्वमें, अयुतायुः एक पुत्रका नाम। ५ दण्डपाणिके एक पुत्रका नाम। ६ एक ऋषि जो गिवके पुत्र माने जाते हैं। (पद्मपुरा०)

निरमोल (हिं० वि०) १ अमूल्य, जिसका मोल न हो। २ बहुत बढ़िया।

निरम्बर (सं० त्रि०) अम्बर या वस्त्रशून्य, दिग्म्बर।

निरम्बु (सं० त्रि०) १ जलहीन, विना पानीका। २ निरपेक्ष जल। ३ जो जल न पीए, जो विना पानीके रहे। ४ जिसमें विना जलके रहना पड़े।

निरय (सं० पु०) निर्गतः अयोगमनं यत् निर-इ आधारे-अच-। नरक, दोजख।

निरयस (सं० स्त्री०) निर-अय भावे ल्युट्, १ निर्गमन। करणे ल्युट्। २ निर्गमनोपाय। ३ अयनरहित गणना,

ज्योतिषमें गणनाही एक रीति । सूर्य राविपक्षमें इमिया घुमना चकता है । जिनमें ममयमें बह एक चक्र पूरा कर सीता है, एतने ममयको एक मय चकती है ज्योतिषको मयनाके लिये यह पावाइक है कि सूर्यके मयनाका चारम्भ जिनो लानने माना जाय । सूर्य १ पत्र में दो स्थान में पड़ती है जिन पर कमर धानि पर रात चौर दिन ममान होती है । इन दो स्थानमिमे किमी एक स्थानमें मयगणना चारम्भ माना जा चकता है । मेकिन बिजुबरेखा (सूर्यके मय)के जिन स्थान पर सूर्यके धानिमें दिनमानको इडि होने सभनी है उसे मान्ति इ बिजुबरेखा कहते हैं । इस स्थानमें पाण्य करके सूर्य मयको इ३० प योमें निमज्ज करती है । प्रथम १० प योको मेष, द्वितीयको वृष इत्यादि मान कर रावि बिभाग द्वारा जो मज्जापुट चौर पक्षपुट गणना करते हैं, उसे 'सायन' मचना कहते हैं ।

परन्तु मचनाका एक दूसरा तरीका भी है जो पवित्र मचनित है । ज्योतिषमचनानके पारम्परिकमें मेष-रागिजित पश्चिमोत्तरदिशे पारम्भमें दिन चौर रावि मान कराकर फिर दुधा या । मेकिन मज्जमय चक्रकता जाना है । इसलिये दरएक मय पश्चिमोत्तरदिशे बिजुब रेखाके जहाँ खनका रहेगा, वही राविपक्षका पारम्भ चौर मयका प्रथम दिन मान कर जो मज्जापुट गणना को ज्ञातो है उसे 'निरयय' कहते हैं । भारतवर्षमें पश्चिमाय पक्षाङ्क निरयय-मचनानके अनुसार बनाए जाते हैं । ज्योतिषियोंमें 'सायन' चौर 'निरयय' के दो पक्ष बहुत दिनोंसे चले पा रहे हैं । बहुतमें विद्वानोंके मतानुसार सायन मत ही ठीक है ।

निरर्गल (म • वि०) निर्गमित पक्षमिध प्रतिबन्धको यत् । पक्षमय, प्रतिबन्धशून्य जिनमें कोई बाधा न हो ।

निरय (म वि०) निर्गतोऽयं सम्भाव । १ पक्ष शून्य जिनका पक्ष न हो । २ व्यय, निरयत्न । ३ परिधिपर्याय ।

निरयय (म • वि०) निर्गतोऽयं यय प्रादिवद् वा यत् । १ निरयय, वैवायवा । २ पक्षशून्य पैमानो । ३ व्यायमें एक नियमकाल । ४ निरयय, व्यय, बिना

मतनवका । इ काय्यदोषमेद, काय्यका एक दोष । निरयता (म • वि०) निरयय मान निरयतन टाप । पक्षशून्यता ।

निरयुट (म • वि०) १ नरकमेद, एक नरकका नाम । निरय (म • पु०) निरयमाये यत् । नीरय, यद्यत्का पक्षान् । निरयय । २ निरयय । ३ पवायन । ४ निर्गतरयय ।

निरययय (म • वि०) निर्गतोऽयययो ययय । १ पक्ष कामशून्य जिनमें पक्षकाम या शु जावयन हो । (पु०) २ पक्षमय का। मन्तरकत्तं पक्षकाम कायं ।

निरययय (म • वि०) निर्गतोऽययय प्रतिबन्धो यययत् । १ पक्षमय पक्षमय, प्रतिबन्धरहित । २ जो दूसरीको चकता पर न हो । ३ बिना निरय या बाधाका ।

निरयययय (म • वि०) १ पक्षमययय, जिनका मय-मिण्य न टटे । २ बिजुब, निर्गम । ३ निरयतर, समान-तार ।

निरययय (म • वि०) निर्गल पक्षय योय, पक्षान् राययेवाणि वा ययय । १ निर्गय, पक्षमय, जिनमें कोई कुरा न कहे । २ पक्षान्शून्य रागादिशून्य परमात्मा । छियां टाप । ३ गाथकीमेद ।

निरयययययय—प्राचीन कमेरकी गिनालिपिके रूप विता । यय एक प्रथान मती पी । सुइ चौर मन्त्रिका दारमदार इकीके अरप या ।

निरयय (म • वि०) निर्गमित पक्षयययय । १ निरयतर, समानार, बराबर । २ पक्षीय, पक्षार, वैद । ३ समंदा, समेया ।

निरययय (म • वि०) निर्गतोऽयययो ययय । १ पक्ष ययययय, पक्षमि रहित, निराकार व्यायके मत्ने पर माय चौर पाकायादि । २ मयका पक्षमयययय ययय ।

निरययय (म • वि०) निर्गमित पक्षयययय । पक्ष रोचरहित, प्रतिबन्धरहित ।

निरयययय (म • वि०) निर्गमित पक्षयययय । १ पक्षमययययय, पाचाररहित बिना पक्षान्का । २ निरययय, जिनमें कोई किकाला न हो, बिलका कोई मजायक न हो ।

निरययययय (म • वि०) निर्गमित पक्षययययय ययय । निरययय, पक्षययय ।

निरवशेष (स० त्रि०) निर्गतोऽवशेषो यस्य । अवशेष-
शून्य, समय, समुचा ।

निरवशेषित (स० लि०) निःशेषित, जिसका कुछ भी
अवशिष्ट न हो ।

निरवशेषाट (स० त्रि०) निर्नाम्नि अवशेषाटो यस्य । अव-
शाटशून्य, जिसे दुःख या चिन्ता न हो ।

निरवशेषित (स० त्रि०) निर-अव-शेष-कृत । जिसके भोजन
या स्पर्शसे पात्र आदि प्रशुद्ध हो जायं, चाण्डाल आदि ।

निरवशेषक (स० त्रि०) परिष्कृत, साफ किया हुआ ।

निरवशेषार (स० त्रि०) निर्नाम्नि अवशेषार आश्रयणं
यत्र । आश्रयणघ्न, विना विक्रीनिका ।

निरवशेषालया (स० स्त्री०) निर-अव-शेष-अल-य-न्-टापि
अत्र इत्वं । प्राचीर, दोवार, घेरा ।

निरवशेषाना (त्रि० स्त्री०) निरानेका काम कराना ।

निरवशेषार (त्रि० पु०) १ निस्तार, छुटकारा, वचाव । २
छुटाने या सुलभानेका काम । ३ निहट्टेगा, फैसला ।

४ गांठ आदि छुड़ाना, सुलभाना । ५ निर्णय करना,
निवटाना, तै करना ।

निरवशेषिन् (स० स्त्री०) पर्वतरूप-तोर्य-भेद ।

निरवशेष (स० स्त्री०) निर-अव-शेष-युट्-अशनस्य अभावः,
अशय्यीभावः । १ अशन, भोजनका न करना, लड़न,
उपवास । (त्रि०) २ भोजनरहित, जिसने खाया न
हो या जो न खाया । ३ जिसके अनुष्ठानमें भोजन न
किया जाय, जो विना कुछ खाए किया जाय ।

निरवशेष (स० त्रि०) अशु-आशो क्त, कान्दमत्वात् पत्वम् ।
१ निराकृत, दूर की हुई, हटाई हुई । (पु०) निर्गतानि
अष्टौ अथोऽशुनानि यस्मात् डट्-समासान्तः । २ चतु-

र्विंशतिवर्षीय अशु, वह छोडा जिसको अथस्या चौबोस
वर्ष की हो ।

निरवशेष (स० त्रि०) निहत्तो रमी यस्मात् । १ नीरम,
रसहीन, जिसमें रस न हो । २ विना स्वादका, बद-

जायका, फीका । ३ निस्तत्व, अशर । ४ रूखा, सूखा ।
५ धिरक्त । (पु०) रसस्य अभावः । ६ रसाभाव, वह
जिसमें रस न हो ।

निरवशेष (स० स्त्री०) निरवशेषे चिप्यते इति निर-अव-शेष-युट्-
१ प्रत्याख्यान, निराकरण, परिहार । २ वच । ३ निष्ठी-

वन, धूक । ४ प्रतिषेध, फेंकना, दूर करना, हटाना ।
५ खारिज करना, रद्द करना । ६ वदिकृत करना,
निकालना । ७ नाग ।

निरवशेष (स० स्त्री०) निरवशेष-टाप-; निःशेषिकाक्षण,
कीदृशदृष्टेर्गमं हीनेवाली एक किस्मकी घास ।

निरवशेष (स० त्रि०) निर-अव-शेष-कृत । १ प्रहिनवाण, छोडा
हुआ शर । २ त्वरितोदित, जदटो निकालना हुआ । ३ शोभी-

व्यागित, सुंघने अस्पष्टरूपमें जदटो जदटो बोला हुआ । ४
निराकरणविशिष्ट, त्राग किया हुआ, अलग किया हुआ ।

पर्याय—प्रत्यादिष्ट, प्रत्याख्यात, निराकृत, विकृत,
विपक्षत, प्रतिक्षिप्त, अपविद्ध । ५ निष्कृत, धूका हुआ

रगला हुआ । ६ प्रेषित, भेजा हुआ । ७ वर्जित, रहित ।
८ प्रतिहत, खारिज किया हुआ, रद्द किया हुआ । (पु०)

भाव-कृत । ९ निठोवन, धूक । १० विचारण, सोचनेकी
क्रिया या भाव । ११ क्षेपण, फेंकनेकी क्रिया ।

निरवशेष (स० त्रि०) निर्नाम्नि अस्त्रं यस्य । अस्त्रशून्य,
विना हथियारका ।

निरवशेष (स० स्त्री०) निर्गतं अस्थि यस्मात् । अस्थिहीन
मांस, वह मांस जिससे हड्डो अलग की गई हो ।

निरवशेष (स० त्रि०) १ निरमनीय, परिहरणीय, निरमन-
के योग्य । २ खण्डनीय, खण्डन करने योग्य ।

निरवशेषमान (स० त्रि०) १ दृगीक्रियमाण, अलग किया
हुआ, निकाला हुआ ।

निरवशेषकृत (स० त्रि०) अभिमानशून्य, अहंकाररहित ।
निरवशेषकृति (स० स्त्री०) निरवशेष, निरभिमान ।

निरवशेषकृति (स० त्रि०) नष्टाहंकार, जिसका अमण्ड
चूर हो गया हो ।

निरवशेषमति (स० त्रि०) निरवशेष, अभिमानरहित ।
निरवशेषहार (स० त्रि०) निर्गतोऽहंकारो यस्य । १ अभि-

मानशून्य, जिसे अमण्ड न हो । २ धमविद्यावत्त्वादि
निमित्त आत्मोत्कर्ष, सम्भावनाहीन, अहंकाररहित,
निरभिमान ।

निरवशेष (स० त्रि०) निर्गतमहमिति बुद्धियस्य । अहं-
कारशून्य, अहंभावशून्य ।

निरवशेष (स० पु०) निर्गतमहः टच्-समा० । १ निर्गत
दिन । (त्रि०) २ दिनसे निर्गत ।

निरा (वि० वि०) १ निरुध, बिना मोलका, खानिध ।
२ एकमात्र, शिबल, जिसके साथ और कुछ न हो । ३
निपट, निराला ।

निराई (वि० स्त्री०) १ निराने का काम पसकसे दोहोरे
पासपास करनेवासी एक पादिको दूर करनेका काम
२ निरानेकी मजदूरी ।

निराक (स० पु०) निर-पक्ष बहगतो भावे बन् । १
पाठ । २ कोद । ३ पसत् फलपक्ष ।

निराकरव (स० स्त्री०) निर-भा क-भावो ऋट् । १ निवा
रव, बिन्ही हुराईको दूर करनेका काम । २ खण्डन कुञ्ज
या हलोसको काटनेका काम । ३ प्रत्याख्यान, हाटना
पक्षय करना । ४ मोर्मासा घिसाला । ५ पत्रकारव,
निर्घय । ६ डटाना, दूर करना । ७ मिटाना रद करना ।

निराकरिण्टु (स० त्रि०) निराकरोति तल्लोका निर, पा-क
रन्तुच । निराकरवयोगे को निराकरव या पूर कर चके ।

निराकरिण्टुता (स० स्त्री०) निराकरिण्टु भावे-तल-
टाप । निराकरवयोगेका कार्य या मान ।

निराकाह (स० त्रि०) निर्नादि पाकाह अघर ।
पाकाहायुष्य, जिसे पाकाहा न हो ।

निराकाहा (स० स्त्री०) पाकाहायुष्यता, निस्पृहता,
सोम या कामया न होनेका मान ।

निराकाह्नु (स० त्रि०) निराकाह्नु अपत्यके रनि ।
निराकाह्नुक निस्पृह, जिसे कुछ इच्छा न हो ।

निराकार (स० पु०) निर्गत पाकारो ईशदि इन्द्र
सकृत् यस्मात् । १ परमेस्वर, ब्रह्म ।

“कारारव निराकारं वदन्ते नियु न प्रमुम् ।
धर्माचारव वरुष स्वैच्छकन भवाररम् ॥

तैव लक्षणे भवन्तु निराकारो निराकारः ।
विर्किन्तो निर्मुक्तः बाही स्वात्मावपारम्परः ॥”
(ब्रह्मसिद्धसं० कनकवि० ३ अ०)

परब्रह्म निराकार हैं, अस्तुता बनना कोई पाकार
नहीं है । ब्रह्म विषयक बिन्ही तत्त्वको पाकोपना
करना विवृण्णना मात्र है ।

यह विषय ब्रह्मार्त्तमें इस प्रकार लिखा है,—निराकार
घोर पाकारबोधक हो प्रकारकी नृत्तिया दिखनेमें आती
है । जब नृत्तिये हो दो भेद हैं; तब ब्रह्म निराकार हैं वा
पाकार पक्ष बिध प्रकार कर बिधा का सधता है ? इस

प्रकारको पापतिमें ब्रह्म क्यादिदित निराकार हैं; यही
खिर करना बर्त्सा है, उन्हें क्यादिमत् पर्यात् साकार
खिर करना ठीक नहीं । क्योंकि ब्रह्मप्रतिपादक तब सब
बाकीको निराकार ब्रह्मने हो प्रतिपादित किया है । वे
कूल, धूम, जल वा दीर्घ नहीं हैं; वे पश्यन्,
घसर्ग, प्रक्य घोर पश्यन् हैं । वे पाकाय, मान और
कपि निर्बोहक हैं; नाम घोर रूप जिनके पन्तर हैं; वे
ही ब्रह्म हैं । वे दिव्य, मूर्त्तिभोन, प्रक्य पक्षात् पूर्ण
हैं, सुतरां बाहर घोर मोतरमें विराजमान हैं । वे पद्वर्
पनवर, पन्तर घोर पक्षात् हैं । यही पाका ब्रह्म
के घोर घबरी अतुम्तलक्य है । इन सब पाकोवे
निस्पृह ब्रह्मात्मभावका बोध होता है घोर यन्त्रुवायो
निराकार ब्रह्मप्रधान है तथा साकार ब्रह्मबोधक बाक्य
राति तपासम्प्रतिबि प्रधान है, ऐसा पत्रकारित होता है ।
किर भी साकार घोर निराकार से दो प्रकारको ब्रह्म
बोधक नृत्तिया रहने पर मो निराकार नृत्तिये निराकार
ब्रह्मके पत्रकारव घोर साकारबोधक नृत्ति पक्षमें
प्रस्तुतरमें लिखा है, कि बिध प्रकार सुर्षधम्भ्योय वा
चन्द्रसम्भ्योय पाकोबधि पाकायमें पाक्यव रहने पर मो
सब कष्ट घोर ब्रह्मादिमात्र प्राप्त अङ्गुलि पादि तपाविधि
स धर्गमें शब्द घोर यन्त्रादि मात्र मात्रके जैसा होता है,
जो प्रकार ब्रह्मा मो इच्छिवादि तपाविध सर्वके इदि
यथादिधि पाकार मात्रके जैसी होती हैं । अतएव तपा-
सनाधि इहेन्द्रके इच्छिवादि तपाविध पत्रकारवपूर्वक
ब्रह्मका जो पाकार विधीय तपादिद रूप है, यह पक्ष
वा विध नहीं है । वेदवाक्यका कुछ पत्र साक्ष है
घोर कुछ निरर्थक, जो नहीं । सभी वेदवाक्य प्रमाय
रूपवे मध्य हैं ।

पाविभोगे वरुषयो तभव विद्यते—पाकार घोर निरा
कार, दो प्रकारका रूप होना पसम्भव है । इच्छिवादि
तपाविध तर्गमें ब्रह्म तहाकार प्राप्तको तरद नहीं होती,
यह विद्वत्कत् होमि पर मो यथायमें विद्वत् नहीं है ।
क्योंकि जो तपाविधमनुष्यका निमित्त है वह बहुधा बर्त्
नहीं है । वह पविद्याकृत है, तपाविधमात्र जो पविद्याने
तपाकावित है । जमानिकी पविद्या रहनेके जो लौकिक
व्यवहार घोर माज्तीय व्यवहार पत्रतदित रूप है ।

श्रुतिमें भी लिखा है, कि ब्रह्म निर्विशेष, एकाकार और केवलचेतन्य है। जिस प्रकार लवणपिण्ड अनन्तर, अवाह्य, सम्यग् और रमचन है, उसी प्रकार यह आत्मा अनन्तर, अवाह्य, पूर्ण और चैतन्यघन अर्थात् केवलचेतन्य है। कहनेका तात्पर्य यह, कि आत्माके अन्तर बाहर नहीं है, चैतन्य भिन्न अन्य रूप वा आकार नहीं है, वे निराकार, निरवच्छिन्न हैं। चैतन्य ही उनका मात्र कान्तिरूप है। जिस प्रकार लवणपिण्डके बाहर और भीतरमें लवणरम रहता है, दूसरा कोई रस नहीं रहता, उसी प्रकार आत्मा भी बाहर और भीतरमें चैतन्यरूपी है, उसमें चैतन्यके सिवा और कोई रूप नहीं है।

स्मृत्यन्तरमें विश्वरूपधर नारायणने नारदसे कहा था, 'तुम जो सुके दिव्यगम्यादियुक्त अर्थात् मूर्त्तिविशिष्ट देखते हो, वह माया है। यह सुभक्त ही मूढ हुई है। इस प्रकार जब तक मैं मायिकरूपधारी न होना, तब तक तुम सुके पहचान नहीं सकते।'

ब्रह्मके दो रूप हैं, मूर्त्त और अमूर्त्त। परमार्थ-रूपमें वे अरूप हैं। परन्तु उपाधिके अनुसार उनके मूर्त्त और अमूर्त्त हैं; मूर्त्तका अर्थ मूर्त्तिमत् अर्थात् स्थूल और अमूर्त्तका अर्थ सूक्ष्म होता है। पृथ्वी, जल और तेज ये तीनों ब्रह्मके मूर्त्तरूप हैं तथा वायु और आकाशइय अमूर्त्तरूप। मूर्त्तरूप अर्थात् मरणशील है और अमूर्त्तरूप अविनाश। (वेदान्तद० ३।२ पु०) विशेष विवरण अध्यायमें देखो।

२ निर्गताह्वान। ३ आकाश। (त्रि०) ४ जिसका कोई आकार न हो, जिसके आकारकी भावना न हो। निराकाश (स० त्रि०) निर्नास्ति आकाश यस्य। अथ काशशून्य, पूर्ण।

निराकुल (स० त्रि०) नितरा आकुलः। १ अतन्त्र आकुल, बहुत घबराया हुआ। २ अव्याकुल, जो लुब्ध या डबावाडीन न हो। ३ अनुद्विग्न, जो घबराया न हो। निराकृत (स० त्रि०) निरः-आ-कृत्। १ प्रत्याख्यात दूरीकृत, दूर की हुई, हटाई हुई। २ निरस्त, खंडन की हुई। ३ निवारित, रद्द की हुई, मिटाई हुई। ४ निर्णीत, स्थिर की हुई। ५ मोमासित, विचारो हुई, सोची-हुई।

निराकृति (स० स्त्री०) निरः-पा-कृत् क्तिन्। १ प्रत्यादिग, निराकरण, परिहार। निर्गता आकृतियस्मादिति। (त्रि०) २ आकृतिरहित, निराकार। ३ स्वाध्याय रहित, वेदपाठरहित। ४ पञ्चमहायज्ञके अनुष्ठानसे रहित। (पु०) ५ रोहितमनुपुत्र, रोहित मनुके पुत्रका नाम।

निराकृतिन् (स० त्रि०) निराकृतमनेन निराकृत-इमि (इष्टादिभ्यश्च। पा ५।२।४८) निराकरणकर्त्ता।

निराकृत्य (स० त्रि०) निर्नास्ति आकृत्यः यस्य। १ जहां कोई प्रकार सुननेवाला न हो, जहां कोई रक्षा या सहायता करनेवाला न हो। २ जो रक्षा या सहायता न करे, जो प्रकार न सुने। ३ जिसकी प्रकार न सुनी जाय, जिसको कोई सहायता न करे।

निराक्रिया (स० स्त्री०) १ वहिष्करण। २ अस्वीकार। ३ प्रतिषेध।

निराखाल—सतारा जिलेकी एक कृत्रिम नदी। नीरा नदी तथा भीमा नदीको उपत्यकाका कुछ अंश भींचनेके लिये निराखाल काटो गई है। निकटवर्ती जिन सब नगरों और ग्रामोंमें जनकट था वहां इसे दूर करनेके लिए गवर्नमेंण्टने यह सत्कार्य किया है। यह नहर कटवानेमें लगभग साठ लाख रुपये खर्चे हुए थे। १८६८ ई०में अनाहटिके कारण जब पूनामें दुर्भिक्ष पड़ा था, तब प्रधान प्रधान राजकर्मचारियोंने आकर नहर काटनेका उपाय सोचा। भीमा और नीरा नदीके मध्य इन्दापुर इसके लिये उपयुक्त स्थान चुना गया। उसी स्थान पर नहर काटना उचित है, ऐसा सर्वोंने स्थिर किया। १८७६ ई०में दुर्भिक्षनिपोद्धित लोगोंको अन्नकटसे मुक्त करनेके लिये छोटिंग साहबने उनसे खाल कटवाना शुरु कर दिया। नीरा नदीकी वाई बगल हो कर निराखाल चली गई है। इसकी लम्बाई १०३ मील है। इस खालने पुरन्दर, भीमठाहो और इन्दापुर महकूमेके ८० ग्रामोंके मध्य लगभग २८०००० एकड़ जमीनको उर्वरा बना दिया है। जून माससे लेकर प्राधा अक्टूबर तक नीरा नदीका सब जल निराखाल हो कर बह नहीं सकता। दिग्भ्रमरके शेष भाग तक भी नीरामें काफी जल रहता है।

कई बरब पहाड़के कारण निराशामने मति देकी हो गई है। जोइसी, मामिनाब घोर निमगाब पादि खानकि पहाड़को काट कर सोबा राखा बना दिया गया है।

निराम्य (स० नि०) रागमूख रागहोन।

निरामस (स० नि०) पागमहोन।

निरागस (स० नि०) निनासि पाग' यक्ष। निपाय, पापगूख।

निशचक (स० नि०) पापहहोन।

निशाचार (स० नि०) निन'विषयि जावारी यक्ष।

-पाशागमूख, पनाचार। -

निरात्री (हि० स्त्री) सुभाकीके करपिको बह सकड़ी को बलो घोर तारीकीको मिसानेके लिये दोनकि चिं' पर लमी रहती है।

निरात्रीय (स० नि०) निनासि जात्रीय यक्ष। जिसका औबिओपाय कुब मी न हो।

निराट (हि० बि०) एकमात्र, बिबहुष्ट, गिप्ट, निरा।

निराटम्बर (न० नि०) पाडम्बरगूख, पाडम्बररहित।

निरातह (स० नि०) निम'ता पातहा यक्ष, अस्माह।

१ मयगूख। २ रोगरहित, गौरीय।

निरातय (स० नि०) निर्गत पातयो यस्मात्। १ पातय गूख। खिर्वा टाय। २ रात्रि, रात।

निरातपा (स० स्त्री०) रात्रि रात।

निरात्मक (स० नि०) पाशागूख।

निराहर (स० पु०) पाहरका धमाब धयमान।

निराहाल (स० पु०) १ पाहाल वा खेनिका धमाब

२ एक कुबका नाम।

निरादिष्ट (स० नि०) जो समाप्त कर दिया गया हो।

निरादेग (स० पु०) १ सम्पू'सोध, सुगताना, अदा करमे ना सुकामेका नाम। (नि०) २ पादेयगूख।

निराचान (स० नि०) पाशागरहित।

निशाचार (न० नि०) १ धयमन्त्र वा पाशररहित, जिसि सुभारा न हो वा जो सहाई पर न हो। २ जो बिना पक्ष कण पादिषि हो। - ३ जो प्रमाभेमि-पुष्ट न हो वैजक कुनिपाहका, जिसे या जिसमें लीबिका पादिका सहाया न हो।

निरादि (स० नि०) निर्मादिष्ट पाशि रोमा यम्प। १ रोमगूख गौरीय। २ विन्तागूख, मानधिक पीड़ा रहिय।

निरामन्द (स० नि०) १ पानन्दरहित, जिसि पानन्द न हो। २ मोक्षाकुण, मोक्षादिषि कारण जिसका पानन्द नष्ट हो गया हो। (पु०) ३ पानन्दका धमाब। ४ दुःख, विन्ता।

निरामा (हि० नि०) धसकके दोबेके धामपास लमी हुई धामको छोड कर दूर करेना जिसमें दोबेको बाक न दरे, नौदना, निबाता।

निराम्य (स० नि०) निरह्य भङ्गरहित।

निरायदु (स० स्त्री०) १ पायदु वा दुःखादि परिगूखता, जिसि कोई पायदा न हो, जिसि कोई पायत वा कर न हो। २ जिसमें किसी प्रकार बिपत्तिको सम्भावना न हो जिसके जालि वा धन'को पागहा न हो। ३ कर्ष' धन' वा बिपत्तिकी धाम'का न ही कर्ष' किसेी बालका हर या खतरा न हो।

निराबाध (स० पु०) निर्म'ता धमाका प्रतिबन्धी यस्मात्। १ पक्षाभासविधिय। (नि०) २ धावाधागूख। ३ ध्याय गूख। ४ प्रतिबन्धगूख।

निराबाधकर (स० नि०) जो धनिह वा लहकर न हो।

निरामन्वर (स० पु०) एकन्वर।

निरामय (स० नि०) निर्गत धामयो - ध्याविष'कात्। १ रोगगूख, जिसे रोग न हो, गौरोग, मलाचङ्गा, तन्दुबद। पर्याय—पात', कण मोक्षक, घट क्लाय, कष्ट भगद, निरातह, पनातह। २ उपहृदयगूख। ३ रोगनायक। (पु०) ४ मनबामक, जगमी बबरा। ५ गूबर, सूपर। ६ सुपमेद, एक राजाका नाम। ७ महादेव, यिब। (स्त्री०) ८ कुयस।

निरामय' (स० पु०) महाभारतीय शृपमेद, महाभारत-में एक राजाका नाम।

निरामासु (स० पु०) १ कपिल, कौबका पीड़। २ वात्तु केक, निमनी।

निरामिन् (स० नि०) निहरा' मय्यीस।

निरामिय (स० नि०) निर्गतमर्ममिषामिषाये मांमाया' मिय वा यस्मात् प्रादिबहु'। १ लोमगूख, जिसके रोप

निरालोक (स० त्रि०) निर्गत आलोक्यो यस्मात् । १
आलोकशून्य, अन्वकार । २ आलोकरहित, जिमसे
प्रकाश निकल गया हो ।

निरावर्ष (स० त्रि०) वृष्टिसे निवारित, वृष्टिमे रक्षणीय ।

निरावलम्ब (म० त्रि०) निराधार, बिना सहारेका ।

निराग (म० त्रि०) निर्गता आशा यस्य । आगारहित,
जिमके आशा न हो, नाउम्मीद ।

निरागक (स० त्रि०) निरागकारी, निराग करनेवाला ।

निरागङ्ग (स० त्रि०) निर्नास्ति आगङ्गा यस्य । आगङ्गा-
रहित, जिसमें किसी बातका सन्देह न हो ।

निराशता (म० स्त्री०) निराशस्य भावः, निराश-तल-
टाप् । निराशाका भाव या धर्म ।

निराशा (स० स्त्री०) आशाका अभाव, नाउम्मीदो ।

निराशित्व (स० स्त्री०) निराशिनो भावः, निराशित्व ।
आशाराहित्य, निराशा का भाव ।

निराशित् (म० त्रि०) इताग, नाउम्मीद ।

निराशित् (स० त्रि०) निर्गता आशौराशमनं यस्य ।
१ आशौर्वादिशून्य । २ दृढ़ वैराग्यवशतः विगतलक्ष्ण-
लक्ष्यारहित ।

निराश्रय (स० त्रि०) निर्नास्ति आश्रयो यस्य । आश्रय-
रहित, आश्रयशून्य, बिना आश्रय या सहारेका ।

निराश्रय (स० त्रि०) निर्गत आश्रय आधारी अवनम्बनं
वा यस्य । १ आश्रयरहित आधारहीन, बिना सहारेका ।
२ असहाय, जिसे कहीं ठिकाना न हो । ३ निर्लिप्त,
जिसे शरीर आदि पर ममता न हो ।

निरास (स० पु०) निर-अस भावो धञ् । १ प्रत्याख्यान,
निराकरण, दूर करना । २ खण्डन । (त्रि०) ३ निरासक ।

निरासन (स० स्त्री०) निर-आस उपवेशने ल्युट् । १
निरसन, दूर करना । २ खण्डन । (त्रि०) ३ आसन
रहित ।

निरास्वाद (स० त्रि०) निर्नास्ति आस्वादो यस्य ।
आस्वादहीन ।

निरास्वाद्य (स० त्रि०) १ आस्वादरहिते । २ सम्भोग-
रहित ।

निराज्ञावत् (स० त्रि०) आज्ञानरहिते, प्रार्थनाशून्य ।

निराहार (स० त्रि०) निर्गत आहारो यस्य । १ आहार-

रहित, जो बिना भोजनके हो । २ नियत आहार,
जिमके अनुष्ठानमें भोजन न किया जाता हो । (स्त्री०)
३ आहारका अभाव ।

निरिङ्ग (स० त्रि०) निश्चल, पचन ।

निरिङ्गिणी (म० स्त्री०) नि-निर्भृतं जनं इति पाप्मो-
तोति निर-इङ्-इनि । ततो डोप् । तिरस्करिनो, चिक,
भ्रुनमिनो, परदा । पर्याय—प्रथगुण्डिका, पटो, यव-
निका ।

निरिच्छ (म० त्रि०) निर्नास्ति इच्छा यस्य । इच्छाशून्य,
जिसे कोई इच्छा न हो ।

निरिन्द्रिय (म० त्रि०) निर्गतानि इन्द्रियाणि यस्मात् ।

१ इन्द्रियशून्य, जिसमें कोई इन्द्रिय न हो ।

अनशौ वशीवपित्तौ जायन्धधधिरौ तया ।

उत्पन्नजमुकाञ्च ये न देविन्द्रिन्द्रियाः ॥”

(मयु० ६१२ : १)

क्षीव, पतित, जम्बाम्ब, जम्बधिर, उन्मत्त, जड, मूढ
भोर काना ये मत्र निरिन्द्रिय अशीत् इन्द्रियरहित है ।
निरिन्द्रियव्यक्ति पिच्छधनके अधिकारी नहीं हैं । २ जिसके
हाथ, पैर, आंख, कान आदि न हों या कामके न हों ।

निरिन्धन (स० त्रि०) इन्धनशून्य ।

निरी (द्वि० वि०) निरा देखो ।

निरीक्षक (स० त्रि०) निर-ईक्ष-ण्वुत् । १ दर्शक,
देखनेवाला । २ देखरेख करनेवाला ।

निरीक्षण (स० स्त्री०) निर-ईक्ष-ल्युट् । १ दर्शन,
देखना । २ देखरेख, निगरानी । ३ देखनेकी सुझा या
टंग, चितवन । ४ नेत्र, आंख । निरीक्षते निर-ईक्ष-
ल्यु । (त्रि०) ५ दर्शक, देखनेवाला ।

निरीक्षमाण (स० त्रि०) निर-ईक्ष-ग्राणच् । जो देख
रहा हो ।

निरीक्षा (स० स्त्री०) निर-ईक्षास्त्रियां अ । दर्शन,
देखना ।

निरीक्षित (स० स्त्री०) निर-ईक्ष-त्त । १ प्रबलोकित,
देखा हुआ । २ देखा भाला हुआ, जांच किया हुआ ।

निरीक्ष्य (स० त्रि०) दर्शनयोग्य, देखने-लायक ।

निरीक्ष्यमाण (स० त्रि०) निर-ईक्ष-ग्राणच् । दृश्यमान,
जिसकी देखते हैं, जो देखा जाता हो ।

मिरीवि (स० वि०) निर्गता इतिवत् । इतिरहित, पतिवृत्तादिभ्यः । पतिवृत्ति, पतावृत्ति मूषिक, पतङ्ग, पयो घोर निवृत्तचित्तं यद् राजा वेङ्ग इतिरहितः ।
 निरीय (स० क्री०) निर्गता ईया यस्मात् । १ वृत्तका फल । (वि०) निर्गता ईय ईश्वरो वृत्तः । २ ईय शून्य, मिमे ईय या भ्यामो न हो, विना मानिक्या । ३ पनीश्वरवादी, नाशिक, त्रिपञ्चो समभर्तु ईश्वर न हो ।
 निरोय्य (स० वि०) निवृत्त ईश्वरो यत् । १ ईश्वर इतिवत्, त्रिपञ्चो ईश्वरवा पतिवृत्त कीकार नही किया जाता । २ नाशिक, पनीश्वरवादी ।
 निरोय्यवाह (स० पु०) निरोय्यरो वाह । निरोय्यर विषयक वाह, यह सिद्धांत कि कोई ईश्वर नहीं है ।
 निरीय्यवादिन् (स० पु०) निरोय्यरोवादी इत्यस्तीति इति । नाशिकवादी, जो ईश्वरका अस्तित्व न माने ।
 निरीय (स० क्री०) निर्गता ईया यस्मात् । निरीय, वृत्तका फल ।
 निरीह (स० वि०) निर्गता ईहा यत् । १ वेदाग्र्य, जो किसी बातके निषे प्रयत्न न करे । २ जिसे किसी बातको पार न हो । ३ विरक्त, उदात्तको जो सब बातके विचार न हो । ४ तटस्थ, जो किसी बहिसरे में न पड़े । ५ शान्तिप्रिय, जो सबके साथ मैत्रि रक्ता हो । (पु०) ६ विष्णु ।
 निरीहा (स० क्री०) निरीह टाय । १ वेदाविरोधि व्यापार, निर्वेष्टा, वेदाका पमान । २ विरक्त वाहका न, रोना ।
 निहवार (वि० पु०) निवृत्ता ईको ।
 निहवारका (वि० वि०) निवृत्तका ईको ।
 निह्व (स० क्री०) निवृत्त का नि निवृत्तेन उक्त । १ निर्बन्ध, वा वेदाङ्गोपेय एक वेदका चोषा अंग ।
 निह्व वायु प्रकारका है—वर्नात्म, बर्बन्धित्वं च बर्बन्धित्वान्नाय, वातु घोर उच्यते चर्बन्धित्वययोग ।
 वैदिक शब्दोंके निष्पत्तियों को व्याख्या याज्ञ सुनिर्मितो है उसे निह्व कहते हैं । इममें वैदिक शब्दोंके चर्बन्धिका निवृत्त सिद्धा गथा है । यह प्रजापत्यात्मक है, त्रिपञ्चो नाम से है—अध्ययनिधि, इन्द्र्य प्रविभाग, इन्द्र्यनिर्मित, मोन, उपस्थित चर्बन्ध भूतका और उपस्थित

वृत्तका । इन सब शब्दोंमें वेदका अर्थ जाना जाता है उसीसे निह्व वेदका चर्बन्ध नामा गथा है । यह पनी पञ्चोंमें प्रधान है । क्योंकि इममें चर्बन्ध दिया गया है । चर्बन्ध की सर्वांगीया प्रधान है । कारण चर्बन्धका बोध नहीं होनेसे कोई फल नहीं होता, वैदिक शब्दका चर्बन्ध जाननेके लिये निह्व ही प्रधान है । इममें तात्पर्यके मातृ पथीय सभी शब्दोंकी व्याख्या की गई है । पतिवृत्त पर्याप्त निवृत्तसम्बन्ध नहीं है, इस प्रकार मन्वाच व्याख्या करना उचित नहीं । निवृत्तसम्बन्ध सभी मन्वाच की व्याख्या करनी होती है । इस प्रकार चर्बन्ध परे ज्ञान होनेके कारण यह प्रधान है । इममें निवृत्तसिद्धित विषय प्रतिपादित हुए हैं—
 नाम, पाप्मान उपसर्ग घोर निपातलक्ष्य, मान विचारलक्ष्य, नाम घोर पाप्मानत यथात्म उपसर्गको जो कर पथ घोर प्रतिपन्न रूपमें उच्यते विचार कर चर्बन्धवार पदविभागपरिज्ञान प्रतिज्ञानबोधके चर्बन्ध सम्बन्धित प्रदर्शनके लिये पादि, मध्य घोर चर्बन्ध तथा चर्बन्ध वेदवेदविज्ञानसङ्गतमन्त्रके याज्ञिक परिज्ञान द्वारा देवतापरिज्ञानप्रतिष्ठा, चर्बन्धप्रथम सा चर्बन्धप्रकारक, वेदवेदाङ्गसङ्घट्टन सप्रयोजन निह्वसुत्तमाचार्यविर चर्बन्ध, प्रकरव्यवस्थामा द्वारा नैसर्ग्य उपसर्ग देवता भिद्यमान प्रविभागलक्ष्य, निर्बन्ध लक्ष्य द्वारा शब्दसिद्धित विषयीपदेग, चर्बन्धप्रधानानुसारनीय उपसर्ग विचार चर्बन्धनीय घोर चर्बन्धविषयक इन सब उपसर्ग द्वारा भास्यप्रदय नही निमित्त पादि, मध्य घोर चर्बन्ध उप तथा उपसर्ग विचार चर्बन्धोपनिषदं चर्बन्धलक्ष्य-व्यापति घोर चर्बन्धप्रधान उदाहरकविन्ना, चर्बन्ध घोर चर्बन्धानुनिमित्त सप्रसंग घोर चर्बन्धप्रसंग उपसर्ग प्रकृतिसातु निह्वचर्बन्धोपदेग भाविचर्बन्धसिद्धि नैसर्ग्य शब्दार्थ प्रसिद्धि, देय चर्बन्ध द्वारा शब्दकूपक्यसिद्धि, चर्बन्धलक्ष्य, विधीय व्यापता द्वारा तत्त्वपर्यायसिद्धि, चर्बन्ध स दिव्य घोर उदाहरक द्वारा नाम, पाप्मान उपसर्ग घोर निपातके विभागातुसार नैसर्ग्य प्रकरव्यवस्था चर्बन्ध, चर्बन्धार्थ शब्दके चर्बन्धगतस प्रकारका चर्बन्धलक्ष्य, पर्योच्यते व्याख्यात्मक मन्त्रलक्ष्य, सुति, चायीर्वादि, शपक चर्बन्धाय, चर्बन्धता परिधिगत, निह्व घोर

प्रशंसादि द्वारा मन्वाभिश्चिह्नित्वपदेय; निदान परिज्ञान-
व्याख्यापनके निमित्त अनादिष्टदेवतोपपरीक्षणके निघे
अध्यात्मपदेयका प्रकृतिमूलक; इतरेतरजन्मत्व; स्यात्
त्रयभेदमे तीनकी एकावस्था, महाभाग्यकृतके अनेक
नामधेय प्रतिबन्ध; उत्पत्तिके सम्बन्धमें पृथक् अभि-
धान; देवताओंका आकारचिन्तन; भक्तिसाहचर्य, संश्लेष
कर्म, सुताभाक्, हविर्भाक् और व्यञ्जनभाक् संवह; पृथिवी,
अन्तरीक्ष, व्युस्थान और देवताओंका अभि-
वेशमिधान तथा व्युत्पत्तिपाधानका व्युत्पदाङ्करण; इन
सबका निर्वाचनविचार और उपपत्ति अवधारणानुसार
देवतप्रकरणनिर्णय; विद्यापारप्राप्त्युपायोपदेय और
मन्त्रके अर्थनिर्वाचन द्वारा देवतामिधान निर्वाचनफल।
निरुक्तशास्त्रमें यही सब विषय प्रतिगदित हुए हैं।

अमरटोकाकार भरतने निरुक्त शब्दका अर्थ किया
है, निघय्यरूपसे उक्त = निरुक्त।

हेमचन्द्रके मतसे पदमञ्जनका नाम निरुक्त है।
ऋगनुक्रमणिकामें लिखा है, कि निरुक्त वेदव्याख्याका
प्रधानतम उपकरण है। यह वैदिक अभिधान विषय
है। शाकपूर्णि, उर्णनाम और स्योलाष्टिवी ये तीन
प्राचीन निरुक्तकार हैं। यास्क इन सबके बहुत पहलें हुए
हैं। निरुक्तमें वेदमन्त्रकी यथारोति व्याख्या को गई है।
यास्कने उक्त ग्रन्थमें नाम, संख्या, व्याख्या, उपसर्ग
और निपातको सविशेष आलोचना की है।

किसीके मतसे निरुक्तने १२ अध्याय हैं। प्रथममें
व्याकरण और शब्दशास्त्र पर सूक्ष्म विचार हैं। इनमें
प्राचीन कालमें शब्दशास्त्र पर ऐसा गूढ विचार और
कहो' नहो' देखा जाता। शब्दशास्त्र पर दो मत प्रवृत्त
थे, इसका पता हम लोगोंको यास्कके निरुक्तसे लगता
है। कुछ लोगोंका मत था कि सब शब्द धातुमूलक हैं
और धातु क्रियापदमात्र हैं जिनमें प्रत्ययादि लगा कर
भिन्न भिन्न शब्द बनते हैं। यास्कने इसी मतका मण्डन
किया है। इस मतके विरोधियोंका कहना था, कि
कुछ शब्द धातुरूप क्रियापदोंसे बनते हैं, पर सब नहीं।
क्योंकि यदि 'अश'से अश माना जाय, तो प्रत्येक चलने
या आगे बढ़नेवाला पदार्थ अश कहलायगा। इसमें
उत्तरमें यास्क सुनिने कहा है, कि जब एक क्रियासे

एक पदार्थका नाम पड़ जाता है, तब वही क्रिया
करनेवाले और पदार्थको वह नाम नहो' दिया जाता।
दूसरे पक्षका एक और विरोध यह था, कि यदि नाम
इसो प्रकार दिए गए हैं, तो किसी पदार्थमें जितने गुण
हों उतने ही उसके नाम भो होने चाहिए। इस पर
यास्क कहते हैं, कि एक पदार्थ किसी एक गुण या
धर्मसे एक नामको धारण करता है। इसी प्रकार और
भी समझिए।

दूसरे और तीसरे अध्यायमें तोम निघण्टु, ऋषिोंके शब्दों-
के अर्थ प्रायः व्याख्या सहित हैं, चौथे छठें अध्याय तक
चौथे निघण्टुकी व्याख्या है। सातवेंसे बारहवें तक
पाँचवे निघण्टुके वैदिक देवताओंकी व्याख्या है। (त्रि०)
२ निघय्यरूपसे कहा हुआ, व्याख्या किया हुआ ३
नियुक्त, ठहराया हुआ।

निरुक्त तार (स० पु०) निरुक्तः नामग्रन्थं करोतीति क-
थण्, १ यास्क। २ शाकपूर्णि। ३ स्योलाष्टिवी। ४
ऋग्वेदके एक टोकाकार। मक्षिनाथने इनका नामोपलेश
किया है।

निरुक्तज्ञत् (म० पु०) निरुक्तं करोति क-क्षिप तुक्च।
निरुक्तकार।

निरुक्तज (स० पु०) निरुक्तः नियुक्तः अस्थां पुत्रसुत्पाद-
ये ध्यक्तः अन्वस्तस्माद् जायते जन-उ। चोत्रज पुत्र।

निरुक्तवत् (स० पु०) निरुक्तकार।

निरुक्ति (स० स्त्री०) निरुच्य-क्तिन्। १ निर्वाचन, क्रिषो
पद या वाक्यको ऐसी व्याख्या जिसमें व्युत्पत्ति आदिका
पूरा कथन हो। २ एक काव्यालङ्कार जिसमें किसी
शब्दका समानार्थ अर्थ किया जाय, परन्तु वह अर्थ
सयुक्तिक हो। जैसे, रूप आदि गुण सों भरो तजि कौ
व्रज वनितान उदय कुवजा वस भए, निर्गुण वहे
निदान। तात्पर्य यह कि गुणवती व्रज वनिताओंकी
छोड़ कर 'गुणरहित' कुवजाके वश होनेसे कृष्ण प्रव सच-
सुच 'निर्गुण' हो गए हैं।

निरुक्तिसम्भित्, (स० स्त्री०) धर्मप्रियाके लिये जो
एकान्तिकी इच्छा होती है, उसीको बौद्धके मतसे
निरुक्तिसम्भित् कहते हैं।

निरुद्धवास (स० त्रि०) १ सहोष्ण, सँकरा, जहाँ बहुतसे

योग न पट खंड । २ जगतीय, जहा इसाइस योग
भर हो, जहा खंड होने तककी जगह न हो । १
पान्थमिहीन, बुद्ध ।

निवृत्त (स० वि०) १ वृत्तरहित, त्रिभुजा लुप्त वृत्त
न हो, साधारण । २ जो वृत्त न दे सके जो आयु
को माप ।

निवृत्त (स० वि०) उत्पातहीन, उपद्रवशून्य ।

निवृत्त (स० वि०) निर्मांति तत्त्वों वर्य । तत्त्वहीन
धूमधामरहित ।

निवृत्त (स० वि०) उच्छादहीन, जिसे कसाव न हो ।

निवृत्त (स० वि०) निरासुत, मुक्त । १ पान्थ
तत्त्व । २ योगहीन । (पु०) १ रैवतक मनुके
एक सुसजा नाम ।

निवृत्त (स० वि०) जगहीन, जगामाव ।

निवृत्तकालि (स० पु०) पश्चिमात्यसूत्रोक्त मन्त्राभेद ;
एक-निवृत्तक, निवृत्तक, निवृत्तक, निवृत्तक निवृत्त
निवृत्त, निवृत्त, सुखीय, निवृत्तक, निवृत्तक, निवृत्तक
उद्विग्न, उद्विग्न ।

निवृत्त (स० वि०) निवृत्त-कर्म-निवृत्त । १ स वृत्त, वृत्ता
कृपा न वा कृपा । (पु०) २ योगमें पांच प्रकारकी
समीपतियोंमें से एक, चित्तकी वह अवस्था जिसमें वह
अपनी आत्मीयता प्रकटित हो मात्र हो कर निवृत्त हो
जाता है । इसका विषय पातञ्जलदर्शनमें इस प्रकार
लिखा है-समीपति वह करनेका नाम योग है । समको
इतिपा पांच प्रकारकी हैं-चित्त, मूढ़, विचित्र, एकाग्र
धोर निवृत्त । यहाँ पर निवृत्त इति जो वचनोप है, इस
आरण्य विप्र पादिका विषय विमोहवृत्त में नहीं लिखा
गया । समको चक्षिरता पर्याय वृत्तनाश नाम विना
बन्धा है । सम जमी क्षिर नहीं रहता, जमी हवा
कभी उधर हमीया पनायमान रहता है । सम जब
वर्तमानवर्तमानको पयाइ कर कामप्रोवादिसे जगो
मृत हो जाता है, निवृत्त तन्नादिसे अचोम होता है तथा
पान्थमिदि विविध तमोमव अवस्थामें निरम्य रहता है
तब तब मूढ़ावस्था कहते हैं ।

विचित्र अवस्थाके पांच पूर्वोक्त विधावस्थाका वृत्त
बोझा प्रमद है ; यह प्रमद है किन्तु चित्तके पूर्वोक्त

प्रकारके वाच्यके मध्य चक्षिरता । समका वृत्त-
व्यमाव होने पर भी बीच दोषमें वह जो क्षिर हो जाता
है, उसो चक्षिरताका नाम विचित्रावस्था है । चित्त
जब दु व्यनव विषयका परिधाय कर सुखजनक वस्तुमें
लिर रहता है, विराज्यव अवस्थाका परिधाय कर
वचवाक्ये विदे निरवस्तुम होता है, तब उसको वेषो
पवका विविधावस्था कहतातो है ।

एकाग्र धोर वृत्तान ये दो मन्त्र एक ही पर्यमें
प्रयुक्त होती हैं । चित्त जब किसी एक भाव मनु
पवका पान्थमरीय वस्तुका अवसाहन कर निवृत्तम्य
निवृत्त, निवृत्तम्य दौपमिषाकी तरह क्षिर का पञ्चमित
मात्रमें वर्तमान रहता है अथवा चित्तके रजसमो
वृत्तिका अमिमूत हो जानेसे किञ्चमात्र साक्षिबहति
उदित रहता है अर्थात् प्रशामय धोर सुखमत्र सात्त्विक
वृत्ति मात्र प्रवाहित रहता, तब उसको ऐसी अवस्थाको
एकाग्र अवस्था कहते हैं ।

पर निवृत्त अवस्थाका भी विषय जानना पान्थम्य
है । पूर्वोक्त एकाग्र अवस्थाकी अथवा निवृत्तावस्थामें
वृत्त अन्तर है । एकाग्र अवस्थामें चित्तका कोई न
कोई अवसाहन अवस्था रहता है, किन्तु निवृत्तावस्थामें
तब नहीं रहता । चित्त जब अपनी आत्मीयता प्रकटित
हो पा कर इतलताकी तरह निवृत्त रहता है, उस
समय तबसे तन्वृत्तको तरह अन्तमत्रात्र न आरामावा
पञ्च हो कर रहने पर भी उसका किसी प्रकारका विषय
परिधाय नहो रहता । इस प्रकार चित्तकी अवस्था
होनेसे तबसे निवृत्तावस्था कहते हैं ।

इस पांच प्रकारकी चित्तवृत्तियोंमें से एकाग्र धोर
निवृत्त अवस्थामें योग कृपा करता है । चित्तकी निवृत्त
अवस्था हो योग मन्त्रका प्रकट वा सुख्य पर्व है ।

निवृत्त अवस्था अन्तमें अचोमम्य नहीं हो सकती ।
चित्तको निवृत्त करनेमें पहले चित्त, मूढ़ धोर विचित्र
अवस्थाकी दूर करना होता है । उससे बाद एकाग्र
धोर निवृत्त अवस्था होती है ।

चित्तकी निवृत्तावस्था होनेसे समका जग नो ।
समका नय होनेसे आका द्रष्ट व्यकपमें ०
है । (पार्तवन्द- उपाधिगो) ११ अथवा न

निरुद्धगुद (स० पु०) क्षुद्ररोगविशेष, एक रोग जिसमें मलहार बंट सा हो जाता है। मलवेग धारण करनेसे वायु प्रतिहत हो कर गुच्छद्वयमें श्राय्य लेती है और मल निकालनेके प्रधान स्त्रोतको बन्द कर देती है। ऐसा करनेसे मल बहुत थोड़ा थोड़ा और कष्टमें निकलता है। इसीको निरुद्धगुदव्याधि कहते हैं। यह व्याधि बहुत कष्टकर है। (सुश्रुत) निरुद्धप्रकाश देखो।

मलवेगके धारण करनेसे कुपित अपानवायु मलवाही स्त्रोतको मद्धुचित कर अशुद्धारको सूक्ष्म कर देती है, इसी कारण मल बहुत कष्टमें निकलता है। इस रोगमें वातघ्न तैल द्वारा परिपेक और निरुद्धप्रकाश रोगके जैसा चिकित्सा करनी चाहिये। (भावप्र०)

निरुद्धप्रकाश (स० पु०) सेदृजाल क्षुद्ररोगविशेष, एक रोग जिसमें मूत्रद्वार बन्द सा हो जाता है और पेशाब बहुत रुक रुक कर और थोड़ा थोड़ा होता है।

भावप्रकाशमें इसका विषय इस प्रकार लिखा है— कुपित वायुसे सेदृचर्मका अगला भाग यदि बन्द हो जाय, तो हारका अल्पताप्रयुक्त मूलस्त्रोत रुक जाता है, इसीसे वेदना न हो कर पेशाब रुक रुक कर और थोड़ा थोड़ा होता है। इस प्रकारको वातजव्याधिको निरुद्ध-प्रकाश कहते हैं। इस रोगमें नोहेके दो सुंइवाले नल गथवा काठके नलको वा जतुको घृताक्त करके लिङ्गमें प्रविष्ट करते हैं और पाँचि मूम तथा सुषरकी चर्वा और मज्जाद्वारा परिपेक करते हैं। वातनाशक द्रव्ययुक्त चक्रतैलका प्रयोग करनेसे भी निरुद्धप्रकाश रोग अच्छा हो जाता है। इस रोगमें तीन तीन दिनके बाद उत्तरोत्तर स्थूल नलको लिङ्गमार्गमें प्रविष्ट करना चाहिए। ऐसा करनेसे उनका स्थान धीरे धीरे बढ़ जायेगा और पेशाब भी निकलने लगेगा। इस रोगमें सिग्ध अन्नका प्रयोग हितकर है।

सुश्रुतके मतसे—जब पुंविज्ञका चर्म वायुयुक्त हो जाता है, तब वह मणिस्थानमें श्राय्य लेता है और मणिचर्म द्वारा आच्छादित हो कर मूलस्त्रोतको रोक कुछ शब्द। इनसे मणिस्थान तो विदीर्ण नहीं होता, क्योंकि यदि रुक रुक कर और थोड़ा थोड़ा होता है। या आगे बढ़नेके प्रकाश कहते हैं।

उत्तरमें यास्क मुं। (सुश्रुत निदान स्थान १३ अ०)

निरुद्धम (स० त्रि०) निर्नास्ति उद्यमः यस्य। उद्यमशून्य, निरुद्धयोग, जिसके पास कोई उद्यम न हो।

निरुद्धप्रता (स० स्त्री०) निरुद्धम होनेको क्रिया या भाव।

निरुद्धमी (स० त्रि०) जो कोई उद्यम न करत हो, बेकार, निकम्मा।

निरुद्धयोग (स० पु०) निर्नास्ति उद्योगः यस्य। निरुद्धम, जिसके पास कोई उद्योग न हो, बेकार, निकम्मा।

निरुद्धोगी (स० त्रि०) जो कुछ उद्योग न करे, निकम्मा, बेकार।

निरुद्धिग्न (स० त्रि०) निर्नास्ति उद्दिग्गः यस्य। उद्दिग्ग रहित, निश्चिन्त।

निरुद्धेग (स० त्रि०) निर्नास्ति उद्देगो यस्य। उद्देग-शून्य, निश्चिन्त।

निरुद्धक्रम (स० त्रि०) निर्नास्ति उपक्रमो यस्य। उपक्रम-शून्य।

निरुद्धव (स० त्रि०) निर्नास्ति उपद्रवोऽस्य। उपद्रव-रहित, जिसमें कोई उपद्रव न हो, जो उत्पात या उपद्रव न करता हो।

निरुद्धवता (स० स्त्री०) निरुद्धवस्य भावः निरुद्धव-तन्-टाप। उपद्रवशून्यता, निरुद्धव होनेकी क्रिया या भाव।

निरुद्धवो (स० त्रि०) जो उपद्रव न करे, शान्त।

निरुद्धवृत (स० त्रि०) उपद्रवरहित।

निरुद्धधि (स० त्रि०) शठताविहीन, जिसमें किसी प्रकारकी उपाधि न हो, जो उपद्रव न करता हो।

निरुद्धपत्ति (स० त्रि०) निर्नास्ति उपपत्ति यस्य। उपपत्ति-शून्य, जिसकी कोई उपपत्ति न हो।

निरुद्धपद (स० त्रि०) उपपदरहित, उपपदहीन।

निरुद्धपत्र (स० त्रि०) उपपत्ररहित, उत्पातरहित।

निरुद्धभोग (स० त्रि०) निर्नास्ति उपभोगः यस्य। उप-भोगरहित, उपभोगहीन, जिसका कोई उपभोग न हो।

निरुद्धम (स० त्रि०) निर्नास्ति उपमा यस्य। १ उपमा-रहित, तुल्यरहित, जिसकी उपमा न हो, बेजोड़। (स्त्री०) २ गायत्री। (पु०) ३ राष्ट्रकूटके वंशके एक राजाका नाम। राष्ट्रकूट राजवंश देखो।

निरूपणा (स० स्त्री०) गायत्रीका एक नाम ।
निरूपणोमी (न० त्रि०) ओ उपमोक्षे न पा मये, व्यर्थ,
निरूपण ।

निरूपण (स० त्रि०) निर्माष्टि उपरोक्त यस्य । उप
रोधरहित, उपपत्ती ।

निरूपण (स० त्रि०) प्रस्तररहित, बिना प्रस्तरका ।

निरूपण (स० त्रि०) निर्माष्टि उपरोक्त यत् । उपरोध-
रहित, प्रसिपण्य ।

निरूपण (स० त्रि०) ज्ञापाररहित, उपमर्गकोन ।

निरूपण (स० त्रि०) १ पवित्र । २ आमात्रिक,
पञ्चमि ।

निरूपण (स० त्रि०) १ अनाहत । २ शुभस्य ।
३ अक्षत ।

निरूपण (स० त्रि०) निर्मता उपकथा यस्यात् । १
अमृत्युदार्ढ्य, जो बिबकुल मिया जो थोर बिचसे जोमिओ
कोई सन्धान नही । २ जिसकी म्याख्या न हो
सके । (पु०) ३ अक्ष । ४ निःकल्प ।

निरूपण (स० त्रि०) निर्माष्टि उपाधि यत् । १ उपाधि-
गुण्य आचाररहित । २ साधारणरहित । (पु०) ३ अक्ष ।
उपाधि तिरोहित जोमिसे जोन अक्ष ही आता है । एक
चेतन्य समी ज्ञेयोंमि बिराजमान है । वह पनादि अनन्त
अक्षयैव उपाधिमिसे पर्यात् आचारदेहादिमि मीदने
विभिन्न भावको प्राप्त हुए हैं । यद्यप्यंमि से पमिच हैं,
विभिन्न नहीं ।

उपाधिसे अनन्तित जोमिसे से एक हैं, नहीं तो पमिच ।
व्यो मर्त्य, पाताल से तोना जोन अक्षयैवमि पामा-
वित हो कर मायिदुःखमि देखे जाते हैं । ज्ञेयि
एक, अक्ष महात् पोर व्यापितैवमम ज्ञानित पञ्चानमि
प्रभावसे विरूप्य इन्द्रजाल प्रकार्य पाता है । इसी
कारण विद्य मिया है, किन्तु प्रकाशक सैतय जो अक्ष
है । इतना ही नहीं, अक्ष पचेतयमि जो जो मादमान
हैं, समी अक्षय हैं, से अक्ष चेतयानित पञ्चानमि विज्ञास
वा विज्ञममि सिवा पोर कुछ नहीं हैं ।

अक्षयि अक्षानित पञ्चान अक्षमि वा अक्षको अक्षय
दिखाता है । इत्ययि अक्षय पोर अक्ष अमी विमिश्रित
है । इसी कारण अमी अक्षे इत्य ही पक्षयि है । १

पवित्र—है, २ माति—प्रकाय पाता है, ३ पवि—सुन्दर,
उत्तम बड़िया है, ४ रूप—यह एक प्रकार है, ५ नाम—
यह असुख मनु है । इन पक्षयिसे प्रभवोक्त तीन रूप
अक्ष से पचमिच हो रूप अक्षय पर्यात् पञ्चान विज्ञास
है । यह पञ्चान विज्ञास वा अक्षय परमाद्यैतः अक्षय
नही है । इसीसे अक्षय सिद्धा माना जाता है ।

यह इत्यमान् अक्षयतात्त्विक सत्यायुष्य पञ्चात् मिया
है । जिस प्रकार काँरे इन्द्रजालिक मावा द्वारा इन्द्रजाल
को खटि करता है उसी प्रकार महाभावायो ईश्वरने
मी बिना व्यापारके अक्षय द्वारा अक्षयको खटि को है ।
अन्यो वैसी अक्षयमि जो मावा अक्षयताती है । अक्षय,
रजः पोर तमोमको मावाके एक जोमि पर मो गुणसे प्रसिद
क्षे से विमिच है । उसी प्रसिद्वे भी ईश्वरनिभाय प्रपञ्चित
है । मायामि उपहित ईश्वर पोर अक्षयमि उपहित
हीन है । अक्षय अक्षयान्तरमि माया पोर मलिनअक्षय
यान्तरमि अक्षय है । जोन अक्षय उपहित हो नहीं
है अक्षयमि अक्षयमि ही है । आक्षय एक जो है,
किन्तु अक्षय उपाधिसे अक्षयय पोर अक्षयय सिधा
प्रसिद हुआ करता है । अक्षय प्रकार एक अक्षयय
अक्षय जोमि पर मो मनुजादि उपाधिसे जोन पोर
इस उपाधिसे अक्षय जोमिसे जो अक्षय अक्षयता
है । अब यह सम्पुष्टरूपसे उपाधिरहित होता है,
तब जो अक्षे निरूपण अक्षय है । अब तब पञ्चान
वा मावा अक्षयो तब तब निरूपण अक्षयको सन्धानना
नही । अक्षय उपाधिरहित तिरोहित जोमिसे ही जोन अक्षय
होता है इसीसे निरूपण अक्षय अक्षय अक्षय अक्षय
है । उपाधिगुण्य जोमिसे अक्षय, अक्षय पोर निदिध्यासन
करना होता है । अब तब उपाधि अक्षय है, तब तब
अक्षयमि इन्द्रजालिक होती है । अक्षयको अक्षय अक्षय
है अक्षयको अक्षयको साक्षात्कार अक्षय अक्षय हो जाता
है । (ईश्वरार्थ) अक्षय है ।

निरूपण (स० त्रि०) निर्माष्टि उपायो यत् । १
उपाधिरहित, उपाधिरहित, जिसका कोई अक्षय न हो ।
२ जो कुछ उपाध न कर सके ।

निरूपण (स० त्रि०) १ अक्षयरहित, जिसमि उपाध न
हो । २ अक्षय अक्षयय ।

निरुद्ध (सं० त्रि०) निरुद्ध-वप-त् । यज्ञादिके भाग भागमें पृथक् करके दिया हुआ ।

निरुद्धि (सं० स्त्री०) निरुद्ध-क्तिन् । वह जो यज्ञादि के भाग भागमें पृथक् कर दिया जाता हो ।

निरुद्धार (हिं० पुं०) १ सोचन, छुड़ानेका काम । २ सुक्ति, छुटकारा, बचाव । ३ सुतभानेका काम, उन्मत्तन मिटानेका काम । ४ तै करनेका काम, निवटानेका काम । ५ निर्णय, फैसला ।

निरुद्धारना (हिं० किं०) १ सुक्त करना, छुड़ाना । २ निर्णय करना, फैसला करना, तै करना, निवटाना । ३ सुतभाना, उन्मत्तन मिटाना ।

निरुद्धोप (सं० त्रि०) उद्योपशब्द, शूनामस्तक ।

निरुद्धम् (सं० त्रि०) उपमारहित, शौतल ।

निरुद्ध (सं० त्रि०) निरुद्ध-त् । १ उत्पन्न । २ प्रसिद्ध, मित्यात । ३ अविवाहित, कुंभारा । (पुं० ४ गति तुल्य लक्षण द्वारा अर्थबोधक शब्द । ५ पशुधामेट-एक प्रकारका पशु-याग ।

निरुद्धलक्षणा (सं० स्त्री०) निरुद्धा शक्तितुल्या लक्षणा । लक्षणमेव, वह लक्षणा जिसमें शब्दका स्थिति अर्थ रूढ़ हो गया हो अर्थात् वह केवल प्रसंग वा प्रयोजनवग ही न ग्रहण किया गया हो । जैसे, कर्मकुशल । यहाँ कुशल शब्दका मुख्य अर्थ है कुशल उखाड़नेमें प्रवीण, लेकिन यहाँ लक्षण द्वारा वह माधारणतः दक्ष या प्रवीणके अर्थमें ग्रहण किया जाता है । लक्षण देखो ।

निरुद्धवस्ति (सं० स्त्री०) वस्तिभेद । कपाय वा क्षीर-तैलसे जो वस्त्रिका प्रयोग किया जाता है, उसे निरुद्ध वस्ति कहते हैं ।

निरुद्धवस्तिके प्रयोगकी व्यवस्था सूत्रमें इस प्रकार लिखी है,—अशुवासन-प्रयोगके बाद आभ्यासनका प्रयोग करे । अभ्यङ्ग और स्वेदका प्रयोग करके विष्टा, सूत्र और वायुका वेग परित्यागपूर्वक मध्याह्नकालमें पवित्र घरमें श्रोणोटिग अर्द्धी तरह रखे और विस्तीर्ण तथा उपाधान-रहित शय्या पर वाई करके सो जावे । रोगी भुक्तयके परिपाकके बाद दक्षिण शक्ति की आकुक्षित और वामशक्ति-की प्रसारित करे और प्रफुल्ल मण्डसे निस्तम्भभावमें रहे । पीछे बाएँ पैरके ऊपर आँखें रख कर दाहिने हाथकी

हृद्वाङ्गुलि और तर्जनीसे पाखोंकी सूँद से और बाएँ हाथकी अंगुलि तथा अन्तःत्रिकामे वस्तिके सुवके अर्द्ध-भागकी मद्धुचित कर मध्यमा, प्रदेशिनी और मद्धुट नामक तीन उँगलियामे दूम्बर यदि सुवके टक कर वस्तिके मध्य ओपध भर दे । ओपध भरते समय वस्ति जिसमें अधिक प्रायत वा मद्धुचित न हो जाय पश्चात् उममें वायु रहने न पावे इस पर विशेष ध्यान रहे । ऐसे वस्तिमें जहाँ तक ओपध भरो जायगो उसके अन्त भागकी सूँदमे बांध दे । अनन्तर दाहिना हाथ उठा कर वस्तिको पकड़े । बाएँ हाथकी मध्यमाङ्गुलि तथा प्रदेशिनीसे बाँध पकड़ कर अङ्गुष्ठ द्वारा उममें घुताङ्ग सुवके टक दे और घुताङ्ग मनहारके मध्य ठूंस दे । रोटकी समक्षसे ले कर नेत्रकी कर्पिका तक सञ्चालित करके रोगीको स्थिर भावने पकड़े रहे । बाएँ हाथमे वस्ति पकड़ कर दाहिने तालके प्रयोग करना पड़ता है । एक समय प्रयोग करनेका विधान है, जल्दी वा देरीसे काम नहीं लेना चाहिए । अनन्तर वस्तिको खोल कर एकसे ले कर तोस तक खोलने में जितना समय लगता है, उतने ही समयको अपेक्षा कर रोगीको बैठने उठने न रहे । ओपधद्रव्यकी निकालनेके लिये रोगीको उल्काट भावमें बैठाने । एक सुहृत्कालके मध्य निरुद्धद्रव्य बाहर निकल आवेगा । इस नियमसे दो तीन बार वस्तिके प्रयोगमे जब सम्यक् निरुद्धके लक्षण मालूम पड़ने लगे, तब फिर वस्तिप्रयोगको जरूरत नहीं । निरुद्धका बढ़ना अच्छा नहीं, थोड़ा रहना ही अच्छा है । विशेषतः सुकुमार व्यक्तिके लिये सामान्य ही हितकर है ।

वस्तिप्रयोगमे जिसकी मलवायु सामान्य वेगमें निकले उसे दुर्निरुद्ध कहते हैं । इससे मूत्ररोग, अश्वि और जड़तादीर्घ उत्पन्न होता है । वस्तिके प्रयोग करनेके साथ जिसका पुरोप पित्त, कफ और वायुक्रमसे निकल कर शरीर हलका मालूम पड़े, उसे सुनिरुद्ध कहते हैं । सुनिरुद्ध होने पर रोगीको स्नान और भोजन करावे । पित्त, श्लेष्मा वा वायुजन्यरोगमें यशकामसे क्षीर, जूस वा सांसका रस पीनेको दे । सांस रस सभी दोषोंमें दे सकते हैं । दीपाग्निके अनुसार तीन भाग, वा अर्द्धभाग वा चौथाई भाग रस भोजन करावे । बाद

द्विपक्षे पशुचार स्निहवर्तिका प्रयोग करे। पाष्ठापन और स्निहवर्तिका मन्त्रबद्धपक्षे प्रयोग करनेसे मनकी मुष्टि, दीर्घकी विनयवता और व्यापिका नियंत्रण से सब कथक उत्पन्न होती है। त्रिस दिन पाष्ठापनका प्रयोग किया जायगा, उस दिन बाहुमें निम्न पत्रिष्ठ होनेकी सम्भावना है। अतएव रोगीको उस दिन मंसिरमक्षे माघ पञ्चमीजन करावे और पशुचारवत्ता प्रयोग करे।

पौष्टि पत्रिष्ठको रोष्टि और बाहुकी वृत्ति ज्ञान कर स्नेहवर्तिका प्रयोग करना दिनकर है। सुहृत् मर्मं यन् निष्ठद्वयवत्ता बाहर न निष्ठन पावे, तो चारमूत्र का ध्यान न कुत्र तोष्ठापनद्वारा प्रोचन करे। निष्ठद्वयवत्ता पश्चिमात्मान तत्र मरीरमें रहनेसे बाहु विपक्ष आतो है जिससे विद्वन्मूत्र, धरति श्वट, पाताह यशं तत्र कि श्वटमूत्र ही हो आया करते है। भोजन करनेसे बाद पाष्ठापनका प्रयोग करना उचित नहीं है करनेसे मनो दोष कुपित हो कर विषुविका वा दाहक दमनरोग उत्पन्न हो जाती है। यही कारण है, कि पशुचार पञ्चमामें पाष्ठापनका प्रयोग बतलाया है।

दुग्ध, पञ्चमस मूत्र, स्नेह काष्ठ १४, लवण, पत्र मधु मत्तमूत्रो मर्मं, बच्च, इमायसो विषदु, राधा सरन, देवदाह वृष्टि, यशिमधु, चिह्न, कुष्ठ, योबनी-यर्मन्वित मूत्रसमुच्च-कुष्ठ, गन्ध, सोया, लसरी बह, चन्दन, कर्पूर, म कोष्ठ, महनफल, चण्डा, मायमाक, रसाक्षर, शिवनयनका मार, पञ्चवायन, मियङ्ग, मूत्रज पत्र, लक्ष्मी, चोरक कोष्ठ, ओषध, लवणमू, मूद महादीप, लक्ष्मि, हृष्टि और मसुमिका इन सब वर्गमिसे जो जो द्रव्य मिसे सबे निष्ठद्वयमें प्रयोग करे। पशुमी पशुमी पञ्चमामें निष्ठद्वयमें अतना जायसा प्रयोग करे तनका अंशभा माग हो, विषमं हर्षं भाग और लक्ष्मि पाठकी माय मिना कर प्रयोग करना होता है। सावि पातिबद्धवत्ता पञ्चम भाग हो और उतना हो लवण देना उचित है।

मधु, मोमूत्र पत्र, दुग्ध, पञ्च और मंसिरन इनमें से जो पाञ्चमस पशुमें लक्ष्मीका प्रयोग करे; लवण, होह और लपायका लक्ष्मी नहीं रहने पर भी कुष्ठ प्रथमसे लक्ष्मी एव मि लेवे। जो पत्र द्रव्य बतलाये गए हैं, उन्हें पञ्चमी तरह योगना होता है।

निष्ठद्वय (स० लो०) निष्ठद्वय विषयं टाप । १ लवण द्वितीय । (द्वि०) २ पश्चिमात्माना, कुं पारी ।

निष्ठद्वय (स० लो०) निर दहन्निम् । १ प्रतिदि । २ निष्ठद्वयवत्ता ।

निष्ठद्वय (स० लि०) १ लवणमू, निराक्षर । २ लक्ष्मि, चदमलक । (पु०) ३ बाहु । ४ देवता । ५ पाष्ठापन । गीका देखो ।

निष्ठद्वय (स० लि०) निष्ठद्वयपति निष्ठद्वय लक्ष्मि । निष्ठद्वयवत्ता, विषो विपक्षका निष्ठद्वय करनेवाला ।

निष्ठद्वयवत्ता (स० लो०) निष्ठद्वयवत्ता भाग निष्ठद्वयवत्ता टाप । लक्ष्मिपत्रमन्त्रमेद ।

निष्ठद्वय (स० लो०) निष्ठद्वय विष्णु । १ पातोष्ठ । २ विषाट, विषी विपक्षका विषेचनापूर्वक निष्प । ३ निदयन । (द्वि०) निष्ठद्वयतोति निष्ठद्वयविष्णु, ४ निष्ठद्वय निष्ठद्वय करनेवाला ।

निष्ठद्वय (द्वि० द्वि०) निररम देखो ।

निष्ठद्वय (स० लि०) निष्ठद्वय विष्णु । १ हतनिष्ठद्वय, निष्ठद्वय विषा कुपा विषका निष्प जो कुपा हो । २ विचारित विषका विचार हो कुपा हो । ३ हट, जो देखा जा चुका हो ।

निष्ठद्वय (स० लो०) १ निष्ठद्वय, शिरमावल । २ मावादिवा व्यापान ।

निष्ठद्वय (स० लि०) हट, शिरीहत, व्यापान ।

निष्ठद्वय (स० लि०) उत्तरहित मोतक, कृष्णा ।

निष्ठद्वय (स० पु०) निर सट लक्ष्मि मू । लक्ष्मिमेद, एक प्रकारको विषकारी ।

निष्ठद्वय (स० लो०) विरल, निष्ठद्वयका माव ।

निष्ठद्वयवत्ता (स० लो०) निष्ठद्वयवत्ता देखो ।

निष्ठद्वय (स० लो०) निष्ठद्वयवत्ता वृत्ति कुपा पशुम का यत्न । १ पञ्चमी, दरिद्रता । २ दक्षिण पश्चिमदिक् पति, नैऋतकोणको सामिनी । ३ निष्ठद्वय । ४ पञ्चमी को पत्रो । ५ विषाके मर्मसे उत्पन्न पञ्चमीको अर्था ।

६ मृतमाया । ७ मृगानवत्ता । ८ विपति । ९ मूत्र ।

१० लक्ष्मिपत्र एक लक्ष्मी नाम ।

लक्ष्मिमेदं निरर्तिका पञ्च पापदेवता बतलाया है ।

'द्वो निष्ठा इत्यत्र' (पट्ट १०१११११)

'निष्ठाया' पापदेवताया दूनेऽनुवा' (काण्व)

पद्मपुराणमें इसका उपाख्यान इस प्रकार लिखा है।
स्मृद्ध सधनेमें पहने निर्कृति और पोछे लक्ष्मीको उत्पत्ति
हुई। उहालकके साथ निर्कृति का विवाह हुआ।

जब निर्कृति उहालकके साथ गई, तब उनका वर देण
कर वह दुःखित हुई और उहालकसे बोली, 'यह स्थान
मेरे रहने योग्य नहीं है। जहां सर्वदा वेदध्वनि होती हो
तथा जहां देवता और अतिशुभ्र आदि सत्कार्य होते
हों, वहां मैं वास नहीं कर सकती। जहां सब प्रकारके
असत्कार्य होते हैं, वही स्थान मेरे रहने लायक है।'
इतना सुनते ही उहालक वरसे निकल गये। पोछे
निर्कृति स्वामिविरहसे व्याकुल हो कर रहने लगी। जब
सन्मीको अपनी वहनके दुःखका हाल मानसुम हुआ, तब
वे नारायणके साथ वहां पहुँचीं। नारायणने निर्कृति
को समझा कर कहा, पोपलका वृक्ष मेरे अंशमें निकला
है, इसी वृक्ष पर तुम वास करो। मन्दवारको लक्ष्मी
यहां आवेंगी और उसी दिन तुम्हारी पूजा होगी।

(पाद्मपुराण १६१ अ०)

मंथमनीपुरीके पश्चिम भागकी दिक्स्वामिनोका नाम
निर्कृति है। उनके अधिष्ठित लोकको निर्कृतिलोक
कहते हैं। वहां पुण्यशील और अपुण्यशील दो प्रकारके
लोग वास करते हैं।

जिन्होंने राक्षसयोनिमें जन्म ले कर भी परहिंसा, पर-
होष आदि कुकर्मोंको विपवत् छोड़ दिया है वे ही
पुण्यशीलसुक्त हैं। जो नोष योनिमें जन्म ले कर
शास्त्रोक्त नियमोंका प्रतिपालन करते, कभी भी अस्वाद्य-
भोजन नहीं करते और न परस्त्रीगमन, परद्रव्यहरण
आदि असत्कर्म ही करते, जो सर्वदा अच्छे अच्छे
वर्धमें अपना समय क्षिताते, द्विजसेवा, देवसेवा तीर्थ-
दर्शनदिमें लगे रहते हैं, वे ही सर्वविधि भोगसम्पन्न
होकर उक्तपुरीमें वास करते हैं। स्नेच्छ होकर भी जो
आत्महत्या नहीं करते और सुक्तिवैत काशीके सिवा
जिनकी अन्य तीर्थोंमें मृत्यु होती है वे भी इस स्थानमें
वास करते हैं।

दिक्प्रति निर्कृति पूर्वकोलमें विन्ध्याचलके वनमें
निर्विन्ध्या नदीके किनारे रहती थी। पूर्वजनामें इनका
नाम पिङ्गाच था जो शबरोंके अधिपति भोमि जाते थे।

शबरयोध पिङ्गाच बहुत वनशान्ति और सखरिव मनुष्य
थे। पथिकोंको विपद्को दूर करनेके लिये उन्होंने
कितने सिंघ, वाघ आदि मार कर पथिकोंको निरापद कर
दिया था। व्याघ्ररुचि उनको उपज्ञोविका होने पर भी
वे हमेशा निष्ठुराचरणसे पराङ्मुख रहते और कभी भी
विश्वस्त, सुप्त, वषाययुक्त, जनपानमें निरत, शिथिल
गर्भयुक्त जीव जन्तुको नहीं मारते थे। यह धर्मात्मा
अमातुर पथिकको विश्रामस्थान, सुधातुरको आहारदान
और दुर्गम प्रान्तरपथमें पथिकोंका अनुगमन कर उन्हें
अभयदान देते थे।

पिङ्गाचके ऐसे आचरणसे यह प्रान्तरभूमि नगरके
समान हो गई थी। कोई मनुष्य उरके मारे पथिकों-
का मार्ग नहीं रोक सकता था। किसी समय निकटस्थ
ग्रामनिवासी पिङ्गाचके चाचाको जब पथिकोंके महा-
कोलाहलका शब्द सुनाई पड़ा, तब वे उन्हें लूटनेके
लिये आगे बढ़े और वहां जा कर सड़क पर उठ रहे।
दैवकर्मसे पिङ्गाच भी उस दिन रातका शिकार खेननेके
लिए उसी जङ्गलमें गये थे और वहाँ ही रहे थे।

इधर सुबह होनेके साथ ही पिङ्गाचके चाचाने अपने
माथियोंसे चिन्ना कर कहा, 'पथिकोंको मारो, मारो,
गिरावो, नंगा करो, सब असथाव खोन लो।' वे चार
पथिकगण बहुत डर गए और विनोत स्वरसे बोले,
'भाई! हम लोग तीर्थयात्री हैं, मत मारो, रक्षा करो।
हमारे पास जो कुछ असवाव है, उसे हम लोग खुशीसे
दे देते हैं, ले लो। हम लोग पथिक और भनाथ हैं,
किन्तु विश्वनाथपरायण हैं। सुतरां वे ही हम लोगोंके
रक्षाकर्त्ता हैं। किन्तु वे भी दूरमें हैं, यहाँ अभी हमारी
रक्षा करनेवाला कोई नहीं है। हम लोग पिङ्गाचके
भरोसे सर्वदा इस राह ही कर जाते आते थे, किन्तु
वे भी इस जङ्गलसे बहुत दूरमें रहते हैं।' यह कोलाहल
सुन कर दूरसे 'मत डरो, मत डरो' ऐसा कहते हुए
पथिकगण पिङ्गाच वहाँ आ घमके और कहने लगे, 'मेरे
जीते जो ऐसा कौन मारका लाल है, जो मेरे प्राणतुल्य
पथिकोंकी मार कर उनका सर्वस्व हरण कर सके ?
यह कठोर वचन सुन कर पिङ्गाचके चचाने अपने साथी
दस्युगणसे पिङ्गाचको मार डालने कहा।

विज्ञापन करने से दृष्ट्युत्पत्ति माघ साक्षी मङ्गले बिछो
तरह यादियोंको अपने प्राणमने पान साय । पीछे
ग्रह योग बनका अनुवाच यौर कबक काट आना । बाद
पञ्चाङ्गाने विज्ञापका प्रौर द्वि मिय को गया यौर
के इम मोदने चम बने । इधी पित्राचने सूत्रे अचाने
ने चर्यत नामने अक्षयपत्र दिवा यौर के दिव पति हो
कर ने चर्यतकोचर्म रहति गी । (अष्टोत्तर०)

निर्देश (स० पु०) निर-श्व-बक । धामने ।
निरोध (स० पु०) १ विरहालसाय्या, विरसम्भोय ।
परिपूष, पूरा ।

निरोधप्य (स० ति०) निर-ध-ब-वि लप्य । १ पावर
योग, रोहने योग्य । २ प्रतिरोधयोग ।

निरोध (स० पु०) नि-र-ध-यम । १ नाय । २ गति
पादिका प्रतिरोध, बहावट, बन्धन । १ पयरोध,
सेरा । निरहाय्य विज्ञानसाधित, योगने बिलची
ममदा इतिदीका रोहना । इनने धम्मय यौर बेराय
को पावम्भकता होतो है । बिलतलियाके निरोधके
उपरात मनुष्यको निर्ब्रह्मसाधि प्राप्त होती है ।

निरोधक (स० ति०) निरतं बवदि नि-र-ध-य-सु ।
निरोधकारक, रोहनेवाला ।

निरोधन (स० लो०) नि-र-ध-प्युट । १ कारानारादिने
प्रथेय द्वारा मतिरोध, रोह बहावट । २ पारिका कडा
सम्भार ।

निरोधपरिचाम (स० पु०) पातच्छलोक परिचामविधेय ।
इनका विषय पातच्छल दर्शनमें इव प्रकार निना है—
बिलके चिमादि राजनिज परिचामका नाम
व्युत्पन्न यौर बहकमाय विपुलकरव परिचामका नाम
निरोध है । चिनाको जन्मदात पचका यौर परबेराह
बन्धा भी यथाक्रमके व्युत्पन्न यौर निरोध कहनातो है ।
अब व्युत्पन्नके उदय म स्फूर्ति का पला हो जाता है यौर
निरोधक पारण होनेकी होता है, तब बिलका बाका
बोका सम्भय होनी यौर रहता है उनी पचकाको
निरोधपरिचाम कहते है ।

योग क यम द्वारा विविध विषय का यमोच्चक
अपनाका पादरच कर पकते है कही किन्तु बिम
पकारके विषयके निधे किन प्रकारका उदय करना

होता है, यह उमके पचके हो जानना पावम्भक है ।
कहाँ किम प्रकारका स बम बना जादिय, किम सयम
का क्या फल है, तब तक उमका बोध नहीं होता, तब
तक उमका प्राप्ति होना पचम्भक है । सुतरा स यम
मिच्छाके पानी स यमके स्थानका निश्चय कर निना होता
है तब विविध बिलपरिचाम यथात् बिलके मिय मिय
विकारभावीको प्रत्यक्षतत् प्रतीतियोग्य कर निना पकना
है । बिलानुप्रयोगके समय एकापनाके समय यौर
निश्चयके समय विगतको कौनो पचका रहती है, उम
पर नियुक्तताके साध निदाह रहनी होती है । निरोध-
काको विज्ञानसाका ज्ञानना जिनना पावम्भक है,
व्युत्पन्नबालको विज्ञानसाके विगतपरिचामका पनु
सम्भय करना उतना पावम्भक नहीं है । निरोधपरि-
चामका यथायं उदय क्या है ? यथात् निर्ब्रह्मसाधि
के समय बिलको कौनो पचका रहती है, यमी उम पर
विचार करना बचित है ।

बाह्य कोरे म स्फार क्या न हो, समी बिलके धर्म
है यौर बिल हो तत्प्राप्तका धर्म यथात् पावार है ।
बिल तब विविध विषयाधारमें परिचय होता है, तब
उममें उतो उनी परिचामका म स्फार पचकित रहता है ।
बिलत अब बहकमाय म मन्नातउल्लिमें कित रहता है,
एकापना एकापना होता है उम समय भी उममें उमका
म स्फार निहित रहता है । बिलत अब तब इतिम्य
नहीं होता, तब तक उममें म स्फार रहता है । एकाप
उल्लि अब पदिकासाधनमें का यथाका धारमें उदित रहती
है तब तत्प्राप्त म स्फार भी उममें पावय रहता है ।
कोवि म स्फार का यथोत बिना निरोधपरिचामके तिरो
हित का अधिमूत नहीं होता । पीछे बेराय्याध्याय
द्वारा अब व्युत्पन्नम स्फार अधिमूत, तिरोहित यौर
निश्चयि पचका विमोच हो जाता है तब अब निरोध
म स्फार इवन का पुह हो कर विद्यमान रहता है ।
बिल उनी समय पूर्वमहित व्युत्पन्नम स्फारमें पचरत
हो कर बहक निरोधम स्फार से कर रहता है । बिल
के ऐसी पचकामें रहनेको यमी कोम निरोधपरिचाम
कहते है ।

यह निरोध पचका भी परिचामविधेय है । सुतरा

निरोधपरिणाम इस नामको भी अन्वय जानना चाहिए। चित्त जब गुणमय अर्थात् प्रकृतिसमय है, तब वह जब तक रहेगा, तब तक उसमें अविद्यान्त परिणाम होगा। क्योंकि प्रकृतिका यह स्वभाव है, कि वह चण काल भी बिना परिणत हुए रह नहीं सकती। सुतरां जिसे निरोध कहा है, अर्थात्में वह भी एक प्रकारका परिणाम है। कारण चित्त उस समय भी परिणत होता है या नहीं, वह उसके स्वरूपका ही अनुसूय है। तादृश स्वरूपपरिणामका दूसरा नाम स्वैर्य है। चित्त स्थिर हुआ है, ऐसा कहनेसे किमो प्रकारका परिणाम नहीं होता, ऐसा न समझ कर इस प्रकार समझना चाहिए कि विषयावगता वृत्ति नहीं होती, किन्तु स्वरूपका अनुसूयपरिणाम ही होता है। अब यह स्थिर हुआ कि स्वैर्य अथवा निर्द्वैतिक अवस्थाका नाम ही निरोध-परिणाम है। संस्कारके दृढ होनेसे ही उसके प्रभावसे निरोधपरिणामकी प्रयान्तावाहिता या स्वैर्यप्रवाह उत्पन्न होता है। (पानञ्जलद०)

निरोधिन् (सं० द्वि०) प्रतिबन्धक, रुकावट करनेवाला।
निरोध्यगानि (सं० पु०) वापितगानि, एक प्रकारका धान।

निखर् (फा० पु०) दर, भाव।

निखर्-दारोगा (फा० पु०) सुसलमानोंके राजत्वकालका दारोगा जिमका काम बाजारको चौकीके भाव या दर आदिकी निगरानी करना था।

निखर्नामा (फा० पु०) सुसलमानोंके राजत्वकालको वह सूची जिसमें बाजारको प्रत्येक वस्तुका भाव लिखा रहता था।

निखर्वंदो (फा० स्त्री०) किसी चोजका भाव या दर निश्चित करकेकी क्रिया।

निर्ग (सं० पु०) निरन्तर गच्छत्यत्वेति, निर्-गम-ड।
देश।

निर्गत (सं० द्वि०) निर्-गम-क्त। वहिःप्राप्त, वहिर्गत, निकला हुआ, बाहर आया हुआ।

निर्गन्ध (सं० द्वि०) निर्गन्धि गन्धो यत्र। गन्धशून्य, जिसमें किसी प्रकारको गन्ध न हो।

निर्गन्धता (सं० स्त्री०) निर्गन्ध होनेको क्रिया या भाव।

निर्गन्धन (सं० स्त्री०) निर्-गन्ध घटने भावे ल्युट्, १।
निघन्धन। २ मारण।

निर्गन्धपुष्पो (सं० स्त्री०) निर्गन्धं गन्धगन्धं पुष्पं यस्य,
डोप्। शाकमल्लिप्त, सेमरका पेड़।

निर्गम (सं० पु०) निर्-गम-अप्। निःसरण, निर्गत,
निकास।

निर्गमन (सं० स्त्री०) निर्-गम-करणे ल्युट्, १। १ द्वार,
दरवाजा। २ प्रतिहारो, हारपाल, छोड़ोदार।

निर्गमना (हिं० द्वि०) निकलना।

निर्गन्ध (सं० द्वि०) निर्गन्धि गन्धः यस्य। गन्धरहित,
गन्धरहित, जिसे किसी प्रकारका गन्ध या परिणाम
न हो।

निर्गन्ध (सं० द्वि०) गन्धरहित, जिसमें गन्ध न
हो।

निर्गुण (सं० पु०) निर्गुणा गुणा यस्मात्। १ सत्त्व, रज
और तमोगुणातीत, जिसमें सत्त्व, रज और तमोगुण न
हो, परमेस्वर। (द्वि०) २ विद्यादिशून्य, मूर्ख, जड़।
३ गुणरहित, जिसमें क्या न हो, जैसे निर्गुण धनु।
(अत्र देखो)

निर्गुणता (सं० स्त्री०) निर्गुणस्य भावः, निर्गुण-भावे
तत्त्व, टाप। गुणहीनता, निर्गुण होनेको क्रिया या
भाव।

निर्गुणत्व (सं० स्त्री०) निर्गुण भावे-त्व। गुणहीनत्व,
मूर्खत्व।

निर्गुणप्राधु—एक हिन्दो-कवि। इन्होंने भजनकीर्त्तन
नामक एक ग्रन्थ बनाया है।

निर्गुणात्मक (सं० द्वि०) निर्गुण आत्मा यस्य कन्।
निर्गुणस्वरूप, ब्रह्म।

निर्गुणिया (हिं० द्वि०) जो निर्गुण ब्रह्मकी उपासना
करता हो।

निर्गुणो (हिं० द्वि०) गुणोंसे रहित, जिसमें कोई गुण
न हो, मूर्ख।

निर्गुणोपासना (सं० स्त्री०) निर्गुणस्य ब्रह्मणः उपासना।
निर्गुण ब्रह्मकी उपासना। वृत्त देखो।

निर्गुणो (सं० स्त्री०) निर्गुणा गुणता गुणहृणात्
गौरादित्वात् डोप्। १ निर्गुणो। २ निसोय।

निर्गुण—महिहर राव्ये च पत्तमंत बिलनपुंगु निवेद्या
 एक नाम । यह पचा० १३ इ० उ० पोर दिवा० ७१
 ११ पू० बोनपुंगु गंधरमे ० मीच पधिममें पचकित है ।
 नगध व्या प्राया १३२ है । पूरु समपमें यह गहराणके
 पत्तमंत या पोर घई जेनिहो रानपानो यो । नग
 मन हो मो कर्ष रूप उत्तर भारतके मोनयोहर नामक
 किमी राजाने इने यनाया पोर रसका नाम मोबवतो
 पाटन रवा ।

निर्गुणो (स० ली०) निमत गुण बोहन तथा
 जोष । एक प्रकारका पु। इलके प्रत्येक हीकेस
 परहरको पलियोके समान पांच पांच पलियां होनी है
 जिनका जयोी माग मोला पोर मोवेका भाग सफिद
 होता है । इसकी पतिका जातियां हैं । किमोमें जाके
 चार बिहीमें नखि फूल जगने हैं । वृक्ष पामकी मोरके
 समान म झरीके रूपमें जगती है पोर केसरिका र नके
 होती है । यह रसरमजिपके, गरम, कमी, कामकी,
 चरपी, इसके मिलीके निवे बिलकारी तथा गुण,
 पुत्रन, पामशात, इमि पहर, कोरु पदधि, कफ पोर
 प्लरको पूर करतो है । पोपबिलोमें इसकी लकड़ा क्य
 चार होता है । बिथोमें इने स माण्, कशान् वा सिन्धु
 मार कहती है । इनेके स लहत पयोय—भोसिका, मीक
 निर्गुणो, सिन्धु, मीकनिन्धु, पोतलहा, मूलकेयो,
 इन्द्राको, खपिका, योपानि हा, पीतमोद, मीकमकारो
 नमक मशपको पोर कर्ष रोपश हैं ।

निर्गुणोदक (स० पु०) भेदव्याज्जानोदत पोपध
 भेद । भेदव्याज्जानोके मतके पिङ्गला घोमिनीके इल
 पोपधका प्रकार बिया । इसकी प्रसुत प्रचामी इस
 प्रकार है—निर्गुणोका मूल ८ पल पोर मसु १६ पल
 सोनोकी एक भाग मिखा कर घोडे बरननमें रखती है ।
 पीसे टकनिने ठसका सु च कन्द पर तथा पच्छी तरब
 सेव दे कर इने भागके टिममें एक मास तक रच कोरुती
 है । यह चूच मोमूत पोर गज्जालिके माघ कुछ दिन
 सेवन करनेसे सब प्रकारके रोग पूर हो जाते हैं पोर
 पोसे बन्, बीर्य तथा पावुकी हरि होती है । एक मास
 तक सेवनसे मरोर वन बवर्ष मा होता, इष्टि यज्ञ-मी
 होती पोर सब रोग जाते रहते हैं । जो क्वचि एक वर्ष तक

इसका सेवन करता है उसका एक दाबजोवन एव मा
 बना रहता है पोर उसे हरबक यतकागमनकी इच्छा
 रहती है । मोमूतके साथ रसका सेवन करनेसे
 पालोकी श्योति बढ़तो, कोरु गुणम शून, जोहा चर
 पादि रोग पूर होते तथा यरोर पुट बना रहता है ।

निर्गुणोत्तल—(स० पु०) यंचकोरु पोपधमेद, केषक
 में एक निमेष प्रकारके तैयार बिजा कृपा निर्गुणोका
 तिल जो सब प्रकारके जोड़े फु घिया पपकी तथा
 कष्टमाया पादिको पच्छा कारिवाला माग जाता है ।

निर्गुण (स० लि०) निर्गुणकेन गुणरमे म विवते धाम्ना
 पनेति निर्गुण पधिवारैः ॥ १ इलकोटर । (लि०)
 २ स ठन । ३ नितान्त पूरु जो बहुत हो गूठ हो ।

निर्गुण (स० लि०) यज्ञगुण्य, जिसेके बरन हो ।

निर्गुण (स० लि०) १ गोरबजोम पहरारण्य २
 यजोम, नख ।

निर्गुण्य (स० पु०) निर्गतो धर्मेषु ॥ १ चपचक । २
 दिग्भर । प्राचीनकालमें दिग्भर जैमी कपड़ा नहीं
 पहनते थे, इसीसे वे दिग्भर वा निर्गुण्य कहलाए ।
 पानो इटिया पारस पोर दिग्भरके अनुसार से कपड़े
 पहनने लगे थे । इन मोनोंका कहना है कि मानव
 जब मनुष्य निर्गुण्य पोर यज्ञगुण्य होते हैं तब ही वे
 सुखि होय हैं । पतएव पलन सव्यानिर्गुणो कपड़ा
 पहनना अनुचित है । केन देखो । ३ सुनिरेद, एक
 सुनिका नाम । (लि०) ४ पू लकर, कृपा चिक्कीनाका,
 कुपारी । ५ निर्गुण, मरीच । ६ मूर्ध, शिवकूप । ७
 निःसहाय, जिसे कोई सहायता देनेवाला न हो । ८
 निर्गुणमात्र ।

निर्गुण्यक (स० पु०) निर्गुण्य एक स्तब्ध कम् । १
 चपचक । (लि०) २ निःसह्य, बेकाम । ३ पपरिच्छेद
 न मा धुना कृपा । ४ कलकहित बिबे कपड़ा न पो ।
 निर्गुण्यक । स० क्लो०) पमि कोटिदवे निर पधि श्रुट ।
 मारच ।

निर्गुण्य (स० लि०) पन्थिवृत्त, जिममें पांड ना गिर
 न हो ।

निर्गुण्यक (स० पु०) निर्गतो पंथिवृत्तदशपन्थिवृत्त ।
 १ चपचक । (लि०) २ निपुण, चोनिवार । ३ डीन ।
 खिया टाप । ४ शैलम नागिनो ।

निर्ग्राह्य (स० त्रि०) निर-गृह्ण कर्मणि ण्यत् । जो निश्चयरूपसे ग्रहण करनेमें समर्थ हो ।
निघट (स० स्त्री०) निर्गतो घटो यस्मात् । १ घटग्रन्थ टिप्पणी । २ राजकरग्रन्थ हट्ट, वह हट्ट या बाजार जहाँ किसी प्रकारका राजकर न लगता हो । ३ बहुजगतीण हट्ट, वह हट्ट या बाजार जहाँ बहुतसे लोग हों । ४ घटाभाव ।

निघण्ट (स० पु०) निर-वण्ट-दोषो घञ् । निघण्टु, शब्द या अत्यसूची, किहरिस्त ।

निघेषण (स० स्त्री०) मघर्ष, मर्दन ।

निर्घात (स० पु०) निर-हन-घञ् । १ वायु षट्क अभिहत वायुप्रपतनजन्य शब्दविशेष, वह शब्द जो हवाके बहुतेक तेज चलनेसे होता है ।

वायुसे वायु टकरा कर जड़ आकाशतलसे पृथिवी पर गिरती है, तब वही निर्घात कहलाता है । वह निर्घातदीप्तदिक्स्थित विहंगीसे जब शब्दित होता है, तब वह पापकर माना जाता है । सूर्योदयके समय निर्घात होनेसे वह विचारक, धनी, योद्धा, अङ्गना, वणिक्, और वैश्यागणको तथा एक पहरके भीतर होनेसे शूद्र और पोरगणको निहत करना है । मध्याह्नके समय होनेसे राजीपसेवो व्यक्ति और ब्राह्मणगण कष्ट पाते हैं । तृतीय प्रहरमें निर्घात होनेसे वह वैश्य और जलदातृगणको तथा चतुर्थ प्रहरमें होनेसे चोरीको पीडित करता है । सूर्यास्तमें होनेसे वह नीचीको और रात्रिके प्रथम याममें होनेसे शस्यकी, द्वितीय याममें होनेसे पिशाचगणको, तृतीय याममें होनेसे हस्ती और अश्वगणको तथा चतुर्थ याममें होनेसे पदातिकगणको नष्ट करता है । जिस दिशामें निर्घात आता है, पक्षमें वही दिशा नष्ट होती है । (बृहद्वचंदिना ३८ अ०) जिस समय निर्घात होता हो, उस समय किसी प्रकारका मंगल कार्य करना निषिद्ध है । २ अक्षभेद, प्राचीन कालका एक प्रकारका चक्र । ३ विलसोकी कड़क ।

निर्घातन (स० स्त्री०) निर-हनस्वार्थे णिच् भग्वे ल्युट् । सुश्रुतोक्त यन्त्रनिष्पाद्य क्रियासेट । सुश्रुतके अनुसार अक्षविक्रित्वाकी एक क्रियाका नाम ।

निर्घात्य (स० त्रि०) निर-हन ण्यत् । छेदनीय, छेदनेयोग्य ।

निर्घुरिणो (स० स्त्री०) नदी, निर्धुरिणो, सोता ।

निर्घृण (स० त्रि०) निर्गता घृणा दया वा यस्मात् ।
१ निर्दय, दयाशून्य, वैरहम । २ घृणाशून्य, जिसे घृणा न हो, जिसे गन्दो घोर बुरो वस्तुओंसे घिन न लगे । ३ जिसे बुरे कामोंसे घृणा या लज्जा न हो । ४ निन्दित, अयोग्य, निकम्मा ।

निर्घोष (स० पु०) निर-घुष घञ् । १ शब्दमात्र, आवाज । (त्रि०) निर्नाम्नि दोषो यत् । २ शब्दशून्य, शब्दरहित ।

निर्घोषाक्षगविसुक्त (स० पु०) ससाधिमैदका नाम ।

निर्घा (हि० पु०) चतु नामक साग ।

निर्जन (स० त्रि०) निर्गतो जनो यस्मात् । जनशून्य-स्थानादि, वह स्थान जहाँ कोई मनुष्य न हो, सुनसान । निर्जर (स० पु०) जराया निष्क्रान्तः । १ देवता । ये जरा अर्थात् बुढ़ापेसे सदा वचे हुए माने जाते हैं, इसी लिये इनका निर्जर नाम पड़ा है । (त्रि०) २ जरा-रहित, जिसे कभी बुढ़ापे न आये, कभी बुढ़ा न होने-वाला । (स्त्री०) ३ सुधा, अमृत । सुधा पीनेसे बुढ़ापा जाता रहता है, इसीसे सुधाको निर्जर कहते हैं ।

निजरसर्षप (स० पु०) निर्जरप्रियः सर्षप । देवसर्षप-वृक्ष ।

निर्जरा (स० स्त्री०) निर्जर-टाप् । १ गुड़, ची, गिलोय । २ तालपर्यी । ३ मक्षित कर्मका तप हारा निर्जरण या तप्य करना ।

निर्जरायु (स० पु०) निर्गतो जरायुतः । १ जरायुसे निर्गत । २ जरायुहीन ।

निर्जरक्ष्य (स० त्रि०) जजरौभूत, पुराना, टूटाफूटा, विक्राम ।

निर्जल (स० त्रि०) निर्गतं जलं यस्मात् । १ जलशून्य (दिशाटि), बिना जलका, जलके संसर्गसे रहित । २ जिसमें जल पीनेका विधान न हो । (पु०) ३ वह स्थान जहाँ जल बिलकुल न हो ।

निर्जलन्न (स० पु०) वह व्रत या उपवास जिसमें व्रतो जल तक न पीए ।

निर्जलैकादशी (स० स्त्री०) निर्जला एकादशी । जीपठ

शुद्धा एकादशो तिथि, शैव शुद्धी एकादशो तिथि । एष दिन सोम निजसप्तत रक्षते ॥ एष दिन शान, पाचमन पादि विमो कामने जनशय तत्र करन मना ॥ यदि कोरे जनशय करे, तो सदाका प्रतमज्ञ होता ॥ एष एकादशोसे उदयकालसे ले कर दूसरे दिनके उदयकाल तक जन शयन करना होता ॥ निजता एकादशी करनेसे द्वादशदशमीका फल होता ॥ दूसरे दिन मन्त्रे धर्मोत्पादश्रीमें स्नान करके ब्राह्मणोंको जन पीर सुवर्षदान कर मोक्षण करना चाहिये । जो इस प्रकार नियमपूर्वक एकादशीप्रत करते हैं, उन्हें यममय नहीं रहता है, यमकालमें भी शिष्टभोजको ज्ञाने पीर उनके विद्वान् चकार पाते हैं । जो यह एकादशी नहीं करते, वे पापाम्ना, दुःखार पीर नष्ट होते हैं ।

जो यह एकादशीप्रतविश्रव मन्त्रिपूर्वक सुनते वा योक्तन करके हैं, वे दोनों भी श्रमणों जाते हैं ।

निर्जन प्रतविधि - इस प्रतमें पहले निगमनिश्चित मन्त्रके मन्त्र करके जनशयन करे । मन्त्र—

“एकारशो विराहो नर्मनिधावि नै बहम् ।

कैवलीनवार्धनं भावयन्पदैव च ह”

अस बर्धन करके एकादशीके दिन उपवास करे पीर रातको सुवय मय विष्णुमूर्तिको स्थापना करके उन्हें दूध पादिये स्नान करावे । घनकर तयागनि पूजा करके रातको आरव्य करे । दूसरे दिन प्रात स्नानादि करके यथाशक्ति असत्रुभ ब्राह्मणको दान मन्त्रसे दान दे । मन्त्र—

“इन्द्रे इतीकेव केवालेनप्रारक ।

बलकुम्भप्रदमेन वारवादि वरान्पतिव ह”

(इमंभक्तिविश्वस १५ वि०)

इतना जो काम पर कर पीर यथादिका दान करना कर्ता ॥ है ।

निजाग्रत (स० पु०) निर्जाग्रत, यथात् चौक, बहुत सुगता

निर्जित (स० सि०) निर्जित । १ पराजित, जोता हुआ, जिसे जीत निश्च हो । पर्याय—पराजित, पराभूत विजित, जित । २ बगीछत, जो बगमें कर बिया गया हो ।

निर्जाति (स० यो०) निर्जाति विष् । अथ वा ययो भूतकरव ।

निर्जितन्द्रिययाम (स० पु०) निन्दितानि इन्द्रिययामाणि येन । जितेन्द्रिय, यति ।

निर्जिह्व (स० सि०) निर्गना सुखापिच्छता जिह्वा यस्य । १ सुखसे बाहर करना । २ जिह्वागुह्य, जिसे जोम न हो । निर्जिव (स० सि०) निर्गत जोव या जोबाभा यस्य । १ जोबाभरहित प्राणजोन मृतक, शिराज । २ यथाव या यथादृशीन ।

निस्तर (स० पु०) निर भू, यय । १ परंतनिश्चयत जनप्रवाह होता । अमृताता भगदीग्रने बीवीको भगदीके निचे ऐसे चरत पशुन शर्दीको छुटि को है, कि एक बार सके देखनेसे ही भगवान् ही यमना मदिमान् को यमनामुचने गा कर मो परिवसि नहीं कोतो । निभर उन्को पाचय पक्षादीमेंसे एक है । अर्था एक मो अनायय नहीं है अर्था मो हम धन्याययं यथागामयथ निभरसे निर्मल जन प्रवल वैगने निचन कर ज्ञेयके प्रति ईश्वरको यमना दया प्रकाय करता है । यद्येज्जिनि निभरको Spring करते हैं । निभरको उत्पत्तिका कारण जाननेके पहले यह स्मरण रखना धन्याययक है, कि तरनपदायं उच्चनीय यममान यवजामिं किर माभमें नहीं रह सकता । यदि एक बल पीर सच्छिद्र दो खुने हुए सुचनासे मन्त्र एक सुधमें कुछ तरन पदायं जान दिया जाय तो नव तक दोनो नखमें उन्न तरन पदायं समान छ चाई पर न या जाय तब तक यह तरल पदायं किर नहीं रह सकता । जब उन्न नखका तरन पदायं यमान छ चाई पर या जाता है, तब यह किर रहता है । दूसरी बात यह है, कि अगदोमर ने प्राचियेके कन्यापके जिसे हम इहत् उप्योबी कहि बी है, जिसकी प्रतीक बसु पाचयं वा मित्र प्रकृतिविशिष्ट है । हम भोग महीके ऊपर जो अभय करके, कोरे तथा पीर यथाव्य कायं करके हैं, उन्हें यदि गोर कर देखे तो यह स्पष्ट मालूम हो जायगा कि यह मही को भिय भिय धर्मविशिष्ट है । जो एक प्रकार यतान्त सच्छिद्र है, उससे मध्य हो कर जन बहुत पापानोये पा ला सकता है पीर जो यह किरविशिष्ट है उससे मध्य जन

सहजमें आ जा नहीं सकता। इसी कारण वह कटम-
में परिणत हो जातो है। तीसरी तरहको मट्टी को
निम्बिड कह भो दे, तो कोई प्रयुक्ति नहीं होगी।
फलतः उसकी मध्य ही कर जल नहीं जा सकता, जैसे
पहाड, कड़ी मट्टी, काली मट्टी इत्यादि।

यदि यह विषय ध्यानमें आ जाय, तो निर्भरका
उत्पत्तिकारण सहजमें मालूम हो जायगा। दृष्टिपात वा
तुहिनज जलसमुद्र जब पर्वतसे निकल कर प्रवल वेगमें
नाचेकी ओर जाता है, तब उसमेंसे कुछ जल पृथ्वीके
ऊपर वह कर समुद्र वा जलाशयमें गिरता और नदी
उत्पादन करता है, कुछ जल वाष्पके रूपमें परिणत हो
कर मेघ उत्पादन करता है और वचा खुदा जल मट्टीके
नीचे जा कर सूख जाता है। किन्तु परमाणुका जब
ध्वंस नहीं है, तब वह शोषित जलराशि कहां किस
अवस्थामें रहती है? इसका तत्त्वानुसन्धान करनेसे यह
साफ साफ जाना जाता है, कि पृथ्वी जिन भिन्न भिन्न
स्तरोंसे बनी है, उक्त जलराशि भी उन्हीं स्तरोंको भेद कर
एक ऐसे स्तरमें पहुँच जाती है जिसे वह और भेद नहीं
कर सकती। सुतरां उक्त जलराशि वहांसे और नीचे नहीं
जाती, बल्कि उसी दुर्भेद्य स्तर पर जमा रहती है। पोछे
वह सञ्चित जल जितना ही बढ़ता जाता है, उतना ही
उसके रहनेके लिये स्थानकी जरूरत पड़ती है। विभि-
न्नतः साध्याकर्षण उसे हमेशा केन्द्रकी ओर खींचता रहता
है जिससे उक्त जलराशि पूर्वाक्त दुर्भेद्य स्तरके ऊपर
ढालूकी ओर दौड़ती है। (भूमध्यस्थ जलस्रोतका
प्रधान कारण ही यही है।) इस प्रकार गतिकी अवस्था
में यदि उस जलस्रोतके सामने भी ऐसा ही दुर्भेद्य
पदार्थ उपस्थित हो कर गतिकी रोक दे और भूपृष्ठसे यदि
जल अधिक परिमाणमें उस स्रोतकी अनुकूल पहुँच जाय,
तो वह प्रकाण्ड जलराशि इधर उधर न वह कर पृथ्वीकी
हिंद करते हुए ऊपर पहुँच जायगी, इसीका नाम निर्भर
वा भरना है। दुर्भेद्य स्तरके अवस्थानके अनुसार इस
निर्भरके वेगका तारतम्य देखा जाता है अर्थात् उक्त दुर्भेद्य
हर भूपृष्ठसे जितना नोचे होगा, निर्भरका वेग भी
उतना ही बलवान् होगा।

पर्वत आदि उच्च स्थानसे जो जल भूगर्भमें प्रवेश कर

पूर्वाक्त निर्भर उत्पादन करता है, उस निर्भरको जल-
राशि भूपृष्ठसे प्रायः उतना ही उच्च स्थान तक जा कर
गिरती है। युक्तिके अनुसार उम जलको उतना ही
ऊँचा जाना उचित है, लेकिन नोचा होनेके कारण
वह उतनी दूर नहीं जा सकता।

(क) निर्भरका जल जब मट्टीको भेद कर जाता
है, तब उसका वेग कुछ मंद हो जाता है।

(ख) भूपृष्ठकी भेद कर आकाशमुखी होनेसे वायु
उसे रोकती है।

(ग) वह जल जब किन्न भिन्न हो कर पृथ्वी पर
गिरता है, तब पतित जनसमुद्रके उल्लिखित जलस्रोतकी
तरह गिरते रहनेके कारण उक्त जनस्रोतकी गतिकी छाम
हो जाता है।

(घ) उल्लिखित जलस्रोतमें जो धातुज पदार्थ मिला
रहा है वह भी उक्त स्रोतके वेगसे ऊपरको ओर चढ़
जाता है जिससे उसका भार जलवेगके प्रतिकूल कार्य
करता है।

(ङ) साध्याकर्षण भी ऊर्ध्वगामी पदार्थका चिर-
प्रतिकूल है।

यदि ये सब कारण न होते, तो पार्वत्य प्रदेशका
निर्भर बहुत ऊर्ध्वगामी होता। अल्पदूरस्थ दुर्भेद्यस्तर-
प्रतिहत-निर्भर अधिक वेगवान् नहीं होता है।

कूपों खोदनेसे जो जल निकलता है, वह उक्त
निर्भर उत्पादक मट्टीके मध्य प्रवाहित जलस्रोतके सिवा
और कुछ भी नहीं है। जिस स्तर हो कर उक्त भूगर्भस्थ
जलस्रोत सहजमें आ जा सके, वह स्तर जिस स्थानमें वा
जिस प्रदेशमें जितना नोचे रहेगा, उस स्थानका कूप भी
उतना ही गहरा होगा।

अमो राजवर्ष वा सुन्दर सुन्दर उद्यानोंमें जो सत्र
कृत्रिम निर्भर वा फुहारि देखे जाते हैं, वे स्वाभाविक
निर्भरके अनुकरणसे निर्मित हैं। अलेक्सन्द्रियावासी
हायरोनि ई० सन्के १२० वर्ष पहले जो अत्याश्चर्य
निर्भरका निर्माण किया, उसको निर्माणप्रणालीको
समानोचना करनेसे कृत्रिम निर्भरके विषयमें कुछ ज्ञान
उत्पन्न हो सकता है। हायरोका कृत्रिम निर्भर वायु-
प्रसारणगुण-मूलसे निर्मित है। उन्हीं निम्नाह उपायसे
उसे बनाया।

एक वीतकको बड़ी क्रिय या रिखावोंके मध्य भागमें एक छिद्र है। यी। वह मनुष्य स योग्ये निष्क्रियत एक पात्रके अपरो भागमें इतकूपसे बना हुआ है। कम निष्क्रिय पात्रके तलदेग्ये दोनों समय को कर दो मल समके निष्क्रियत एक अलगावके साथ स सम्बन्ध है। सर्वापरि रिखावों में दक्षिण मल पोर मध्यस्थित पात्रके साथ काम दिक्कल मल स युक्त है पोर कम मध्यस्थित पात्रके मोर्चमें एक छोटा बाहुपधारक मल है। इस प्रकार दक्षिण पोरके मल हो कर मध्यस्थिक पात्रमें जल प्रवेश करेगा पोर वहाँ बाहुका टबाव पड़ुमिसे वह कामभाहम्य मल द्वारा मध्यस्थित पात्रमें प्रवेश करता पोर उसमें मध्यस्थ मल पर दबाव डालता है। सुतरां कम पात्रको ऊपरों रिखावोंमें स काम मल द्वारा जल अपरको पोर निर्भरके रूपमें गिरता है।

बाहुका चर्च पादि पूर्ववर्चित कारकवस्तुक यदि उस निर्भरके निवृत्त कार्य न करता, तो यह जल जल दोनों पात्रके मध्यस्थित जलके व्यवधानाहुदार ऊर्ध्वगामी होता। यथावर्चमें यह लक्ष्ये काम पूर तक खरेर उठता है। इसके बाद नामा क्लानोंमें नामा प्रकारके निर्भर तैयार हुए हैं। क्विराम निम्न प्रकारक उसका प्रकार मेटमात्र है। उदा। हैको।

भारतमें भी बहुत पड़ुमिसे अत्रिम निर्भर प्रयुत होता था। क्वानिदासके अटुल कारमें यह जलपम्प नामसे वर्चित है।

वाधारकत पात्रके प्रदेय वी कामानिष्ठ निर्भरका स्थान है। अत्रिम निर्भरका होता समी समय पम्प है। पम्पके एक रात्राबाद वा सुन्दर सुन्दर चर्चके ऊपर नामा प्रकारको चोदित मूर्तिका किसी न किसी स्थानके उचित यह अत्रिम निर्भर देखा जाता है।

पुराकालमें श्रीकदेतीय पनेक मन्त्रीमें इस प्रकारके अत्रिम निर्भर देखे जाते थे। पेशेनकने निष्ठा है कि कर्त्तिके पनेक क्लानोंमें इस प्रकारका निर्भर था पोर कायनरके निवृत्तक दिवाघाने मूर्तिका पदतल को कर एक बंधारका बंधर्योत प्रवाहित होता था। वीतके पोर भी पनेक अत्रिम पुर्णरी ये पोर बाह भी वहाँ वहाँ देने जाते हैं। पम्पनगरका राजपत्र वहाँ तक कि

पनेक घर भी निर्भरके सुयोगित थे। नैरम नगरको चित्तगामिकांमि बहुतसी 'त्रोच्छ' निर्मित प्रतिमूर्तियाँ विद्यमान हैं जिनके अत्रिम कवावके निर्भरके वाकारमें बलकोत प्रवाहित होता है। एटोमों पात्रकल पनेक गोमायाको निर्भर प्रवाहित है जिनके वहाँके पक्षि कालिंदीकी निष्ठासिताका परिचय मिलता है। ये मल निर्भर नामा वर्चोंमें चित्रित पोर पति विद्यात हैं तथा नामा प्रकारको मूर्तियोंसे निवृत्तते हैं। चितकर, सुवधार पोर रात्रमिच्छिर्चोने इन सब निर्भरोंको बनाने में शब्रमा, युधि पोर नैपुण्य का यथेष्ट परिचय दिया है। पारो यइर पादि क्लानोंमें भी बहुत पड़ुमिसे अत्रिम निर्भर बनानेकी प्रथा प्रचलित थी।

अम्पन नगरमें अक्का कोई समय नहीं चोमिसे कारक बाव तक निर्भरका कलना पादर नहीं था। सेकिल दयमें पोर निष्ठाकली उचति तथा कम्पताके विस्तारके सिधे पनेक नामा क्लानोंमें निर्भरका प्रकार हो गया है।

बैचकके मतसे निर्भरका जल लघु, पथ्य दोपन पोर क्यपनायक माना गया है।

पर्वतके बाहुदेग्ये भी जल निवृत्तता है उसे भी निर्भर कहते हैं। इसका जल दक्षिण, क्यपनायक, दोपन, लघु, मधु, कटुपाक पोर मोतल होता है। र सूर्याम्क, सूर्यका कोड़ा। इ तुपानतः इ वसो, वासी।

निर्भरिचो (स० खो०) निर्भरन्नि होय । १ नदो, दरया ।

निर्भरिन् (स० पु०) निर्भरीक्यवेति निर्भर हनि । निरि, पशकः ।

निर्भरो (स० खो०) निर-भू-पच मोरानिस्वात् होय । निर्भर, पर्वतसे निकला हुआ पानोका म्भरम, सोता, चयमः ।

निर्णय (स० पु०) निर्णयमिति निर-नी-पय । १ पवधारक, पोरिज्य पोर पनेकिय पादिवा विचार कर के किसी विषयके दो पक्षोंमेंसे एक पक्षको जीक उद्धारना, किसी विषयमें कोई विद्वान् स्थिर करना । इसका पर्याय निषय, निर्णयन पोर निचय है । २ विचार । पर्याय—तक, सुधा, चर्चा । ३ ग्यायक्य नीक जीसक पदावधि पन्तगत पदार्थमैह ।

वादो और प्रतिवादी इन दोनोंका किसी विषयमें यदि वाक्यसंग्रह उपस्थित हो, तो उनमें न्यायप्रयोग करना चाहिए अर्थात् तुम जो कहते हो वह इस कारणसे प्रकृत नहीं है, इन प्रकार न्यायप्रयोग करना होता है। उस वाक्यके प्रति दोषोद्भावन और पीछे उन दोषोंका उद्धार करनेसे जो एक पक्षका अवधारण होता है, उसका नाम निर्णय है। इसी प्रकार निर्णय विचारकी जगह जानना चाहिए। एक विषय ने कर आपसमें विचार चल रहा है, उस विचार-विषयके एक पक्षके अवधारण का नाम निर्णय है। जो निर्णीत होना, उसमें किसी प्रकारका दोष न रहे, दोषदुष्ट होनेसे उसे निर्णय नहीं कह सकते। ४ मोमांसकोत्त अधिकरणका प्रवयवभेद, मोमांसामें किसी सिद्धान्तके कोई परिणाम निकालना।

विषय, अविषय, पूर्वपक्ष, उत्तरपक्ष, निर्णय और सिद्धान्त ये सब अधिकरण हैं। तत्त्वकोशुद्धीमें निर्णयका लक्षण इस प्रकार लिखा है—

सिद्धान्त द्वारा जो सिद्ध है अर्थात् जो विचार्य विषय सिद्धान्तवाक्य द्वारा सिद्धान्तीकृत हुआ है वैसे वाक्यके तात्पर्यावधारणका नाम निर्णय है। ५ विरोधपरिहार, चतुष्पाद व्यवहारके अन्तर्गत शेष पाद, वादो और प्रतिवादीकी बातोंको सुन कर उसके सत्य अथवा असत्य होनेके सम्बन्धमें कोई विचार स्थिर करना, फैसला, निश्चय। आपसमें कोई विवाद उपस्थित होनेसे राजाके पास नालिख को जाती है। वादो, प्रतिवादो और साक्षियोंको सब बातें सुन कर राजप्रतिनिधि जो निश्चय कर देते हैं, उसको निर्णय कहते हैं।

व्यवहारशास्त्र चतुष्पाद है और निर्णयपाद उसका शेषपाद है। राजाके पास इसका अभियोग लानेसे, वे जो इसकी निश्चिन्ता कर दें, वही निर्णय है।

जब आपसमें कोई विवाद उपस्थित हो, तब राजाको चाहिए कि उसकी मोमांसा कर दे। साक्षिगण प्रतिज्ञा वा शपथ करके जो कुछ कहें और वादो-प्रतिवादो भी जो कहें, राजा भलीभांति उसे सुन लें; पीछे जिसका दोष निकले, उसे धर्मशास्त्रानुसार दण्ड दें। वीर-मितोदयमें इसका विशेष विवरण लिखा है।

प्रमाण, हेतु, चरित, शपथ, नृदास्य और वादिसम्प्रतिपत्ति द्वारा निर्णय आठ प्रकारका है।

निर्णयकी जगह याद शास्त्रोप विवाद उपस्थित हो, तो वहां युक्तिका अवनमन करके निर्णय करना होता है, कारण शास्त्रविरोधमें न्याय ही बनवाना है।

“धर्मशास्त्रप्रियोधेतु युक्तियुक्तो विधिः मृतः।

केवलं पात्रमाधित न हतंथो हि निर्णयः॥

युक्तिहीनविचारे ही धर्मशास्त्रिः प्रजायते ॥”

(वीरमितोदयभूत यचन)

निर्णयन (सं० स्त्री०) निर्-नी-भावे ल्युट् । निर्णय ।

निर्णयपाद (सं० पु०) निर्णयान्तको पादः भागविशेषः ।

चतुष्पाद व्यवहारके अन्तर्गत व्यवहारविशेष ।

निर्णयोपमा (सं० पु०) एक अर्थानुसार । इनमें उभय ओर उपमानके गुणों और दोषोंकी शिक्छना की जाती है।

निर्णयनं सं० पु०) नितरां नामः नमनम् । नितरां नमन, अत्यन्त नमन ।

निर्णयन (सं० स्त्री०) निर्-नी-णिच् ल्युट् । निर्णयका कारण । २ राजावाङ्मदेश, निर्णयण, हाथको बांधुका बाहरो कोना ।

निर्णय (सं० त्रि०) निर्-णिज-क्त । १ शोधित । २ अपगत ताप ।

निर्णय (सं० पु०) निर्-निज-क्तिप् । १ रूप । (त्रि०) २ शोधक ।

निर्णय (सं० त्रि०) निर्-निज-क्त । निजित, जीता हुआ, जिसे जीत लिया हो ।

निर्णीत (सं० स्त्री०) निर्-नी-क्त । कृतनिर्णय, निर्णय किया हुआ, जिसका निर्णय हो चुका हो । पर्याय—निन्त्य, सत्व, सनुत, इरुक, प्रतीत्य, अपोत्य ।

निर्णय (सं० पु०) निर्-निज-वञ् । नितरां शुद्ध, अत्यन्त शुद्ध ।

निर्णयक (सं० पु०) निर्-निज-ण्वु-क्त । रजक, धोबी ।

निर्णयन (सं० स्त्री०) निर्-निज-भावे ल्युट् । १ शुद्धि । २ प्रायश्चित्त । ३ चालन । ४ धावन ।

निर्णय (सं० त्रि०) निर्-नी-लच् । निश्चयकर्त्ता, विवादको निवटा देनेवाला ।

निर्णय (सं० त्रि०) निर्णय योस्य ।

निर्णोद (सं० पु०) श्याभात्कारकरण, निर्वासन ।

निर्देशानु (स० लि०) १ नितरां दग्गनधारो । २ दग्गन
 होन ।
 निर्देश्य (स० लि०) १ जो पक्षो तरह टण्ण हो । २ जो
 उभय मर्हो हो ।
 निर्देश्यका (स० लो०) निर्देश्यका रत्तायवो ।
 निर्देश्य (स० लि०) निर्देश्य इयोदरान्तिजात् मात् । १
 निर्देश्य, अठोर वैरहम । २ परनिन्द्याधारो दूमरेवे
 दोष वा पुत्राई खडनेवाना । ३ निप्रशोचन, त्रिममे कु
 पर्व निह म हो । ४ तीय, उत्र । ५ मत्ता मनवाना
 निर्देश्य (स० लि०) १ निर्देश्य, अठिम । २ निर्देश्य
 अठोर वैरहम । ३ निप्रयोचन, बेकाम ।
 निर्देश्य (स० लि०) निर्देश्येक टण्डा यव्य प्रादिषट् ।
 १ मर्षप्रकार टण्डाको, त्रिमे मर्ष प्रकारके टण्डा निपे प्रा
 म । २ टण्डाको त्रिमे टण्डा न निपे लोय । (पु०)
 ३ शुद्ध, त्रिमे मर्ष प्रकारके टण्डा दिसे जा सकते हैं ।
 निर्देश्य (स० लि०) टण्डाको त्रिमे टण्डा वा चमिमान
 न हो ।
 निर्देश्य (स० लि०) निर्देश्यता दया परमात् । दवाशुष,
 निष्टर वैरहम ।
 निर्देश्यता (स० लो०) निर्देश्यता, वैरहमो ।
 निर्देश्यता (स० लो०) निर्देश्यता माहा निर्देश्यता भागे त ।
 निर्देश्यता भाव या विद्या ।
 निर्देश्य (स० लो०) निर्देश्य टण्डा । १ मुद्रा, अन्दा । २
 निर्देश्य । ३ इत्यथा निर्देश्य । (लि०) निर्देश्यो दग्गन
 यत्मात् । ४ धार । ५ अस्ति । ६ परतय ।
 निर्देश्यता (स० लो०) १ दग्गनरहित । २ विदारण ।
 निर्देश्य (स० लि०) निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता । प्रथोप
 चात्कालात्माहा त्रिषका दय दिन कोत मवा हो ।
 निर्देश्यता (स० लि०) निर्देश्यता निर्देश्यता यव्य । दग्गन
 चात्, विद्या रीतका ।
 निर्देश्यता (स० लि०) दग्गनको, दग्गनरहित ।
 निर्देश्यता (स० पु०) निर्देश्यता दग्गननि निर्देश्यता दग्गन
 १ अज्ञान, निर्देश्यता विद् । २ अज्ञानका मोक्ष ।
 निर्देश्यता दग्गनो चमिष्ये । ३ चमिष्ये ।
 निर्देश्यता (स० लो०) निर्देश्यता निर्देश्यता । मूना
 चत्ता, पुत्राधार, मुर्ति, मर्षाद्ययो ।

निर्देश्य (स० लि०) निर्देश्यता यव्य । १ निर्देश्य । २ दग्गन ।
 ३ मोक्ष ।
 निर्देश्य (स० लि०) चमिष्ये ।
 निर्देश्यता (स० लि०) निर्देश्यता । १ मर्षो । २
 मान्य, मोटा ताजा ।
 निर्देश्यता (स० लो०) निर्देश्यता रत्तायवो ।
 निर्देश्यता (स० लि०) निर्देश्यता । १ निर्देश्यता, निर्देश्यता
 निर्देश्यता निर्देश्यता दग्गनको, ठहरावा दग्गन । २ निर्देश्यता,
 निर्देश्यता निर्देश्यता ।
 निर्देश्यता (स० पु०) निर्देश्यता भावे चमि । १ निर्देश्यता,
 दग्गन । २ चमि । ३ निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता ।
 ४ निर्देश्यता निर्देश्यता या ठहरावा । ५ निर्देश्यता, निर्देश्यता । ६
 निर्देश्यता । ७ नाम मत्ता । ८ चित्त ।
 निर्देश्यता (स० लि०) निर्देश्यता निर्देश्यता ।
 निर्देश्यता ।
 निर्देश्यता (स० लि०) निर्देश्यता रहित ।
 निर्देश्यता (स० लि०) निर्देश्यता निर्देश्यता । १ निर्देश्यता
 रहित, निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता । २ निर्देश्यता
 निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता । ३ निर्देश्यता
 निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता ।
 निर्देश्यता (स० लो०) निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता ।
 निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता ।
 निर्देश्यता (स० लि०) निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता ।
 निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता ।
 निर्देश्यता (स० लि०) निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता ।
 निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता ।
 निर्देश्यता (स० लि०) निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता ।
 निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता ।
 निर्देश्यता (स० पु०) निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता ।
 निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता निर्देश्यता ।

निर्धारण (सं० क्लो०) निर्-धृ णिच् भावे ल्युट् । १
 व्यायुक्ते अनुसार किसी एक जातिके 'दायार्थि' गुण या
 कर्म आदिके विचारमे कुछको अलग करना । जैसे,
 काली गोएँ बहुत दूध देनेवाली होती हैं । यहाँ 'गो'
 जातिसे अधिक दूध देनेवाली होनेके कारण काली
 गोएँ पृथक् की गई हैं । २ ठहराना या निश्चिन करना ।
 ३ निश्चय, निर्णय ।
 निर्धारना (हिं० क्लि०) निश्चित करना, निर्धारित करना,
 ठहराना ।
 निर्धारित (सं० त्रि०) निर्धारित-क्त । १ निर्धारण विषय ।
 २ निश्चित, ठहराया हुआ ।
 निर्धारितराष्ट्र (सं० त्रि०) चात्तराष्ट्र-गुण्य, धनराष्ट्रपुत्र
 शून्य ऐसा स्थान ।
 निर्धार्य (सं० त्रि०) निर्धार्यते स्थितो क्रियते वा निश्चि-
 यते निर्-धृ-ण्यत् वा धारि ण्यत् । १ निर्धारण कर्म,
 सामान्यसे पृथक्करण । २ निश्चय । ३ निर्भयकर्मकर्ता ।
 (क्लो०) ४ अवश्य निर्धारण ।
 निर्धूत (सं० त्रि०) निर्-धू-क्त । १ खण्डित, टूटा
 हुआ । २ परित्यक्त, जिसका त्याग कर दिया हो । ३
 निरस्त, कैका हुआ, छोड़ा हुआ । ४ भक्ति, जिसकी
 निन्दा की गई हो । ५ धोया हुआ ।
 निर्धूम (सं० त्रि०) धूमरहित, जहाँ या जिसमें धुआं
 न हो ।
 निर्धैत (सं० त्रि०) निर्-धाव-कर्मणि क्त । प्रचलित,
 धोया हुआ, साफ किया हुआ ।
 निर्धापन (सं० क्लो०) निर्-धा-णिच् भावे ल्युट् ।
 सुयुक्तोक्त शब्धोधारणार्थं व्यापारभेद ।
 निर्नमस्कार (सं० त्रि०) निर्नास्ति नमस्कारो यस्य ।
 नमस्कार या प्रणामरहित ।
 निर्नर (सं० त्रि०) नररहित, मनुष्यशून्य ।
 निर्नाय (सं० त्रि०) नायशून्य, विना मालिकका ।
 निर्नामि (सं० त्रि०) १ नाभिशून्य, जिसे टोढ़ी न हो ।
 निर्नाशन (सं० क्लो०) १ स्थानान्तरितकरण, दूसरी
 जगह ले जाना । २ वद्विष्करण, निर्वासन ।
 निर्नाशिन् (सं० त्रि०) निर्नाशन देखो ।
 निर्निमित्त (सं० त्रि०) अकारण, विना वजह ।

निनिमोप (सं० त्रि०) १ पलकशून्य, जो पलक न गिरावे ।
 २ जिधमें पलक न गिरे । (क्लि० वि०) ३ विना
 पलक भयकाए, एकटक ।
 निर्निरोध (सं० त्रि०) अनिवार्य, अप्रतिहत ।
 निर्नीड (सं० त्रि०) निर्गतं नीडं यस्मात् । नीडरहित,
 आश्रयशून्य, विना घरका ।
 निर्फल (हिं० वि०) निष्फल देखो ।
 निर्बन्ध (सं० पु०) निर्-बन्ध भावे घञ् । १ अभिनिवेश,
 आग्रह । २ जिद, हठ । ३ रुकावट, प्रद्वेषन ।
 निर्बन्धश्रीय (सं० क्लो०) विवाद, लड़ाई, भागड़ा ।
 निर्बन्धिन् (सं० त्रि०) बहुत जड़यो कामका ।
 निर्बन्धु (सं० त्रि०) बन्धुरहित, बन्धुहीन ।
 निर्बर्हण (सं० क्लो०) निर्-बर्ह-भावे ल्युट् । १ निव-
 हण, मारण । (त्रि०) २ दन्तहीन, कमजोर ।
 निर्बल (सं० त्रि०) वलहीन, कमजोर ।
 निवन्ता (सं० स्त्री०) कमजोरी ।
 निर्बहना (हिं० क्लि०) १ पार होना, अलग होना, दूर
 होना । २ क्रमका चलना, निभना, पासन होना ।
 निर्वाचन (सं० पु०) निर्वाचन देखो ।
 निर्वाण (सं० पु०) निर्वाण देखो ।
 निर्वाध (सं० त्रि०) निर्गता बाधा यस्मात् । १ अप्रति
 बन्ध । २ निरुपद्रव । ३ विविक्त । ४ निष्काश्य । (पु०)
 ५ मज्जभागभेद ।
 निर्वाधिन् (सं० त्रि०) शन्यिधुक्त, स्त्रीत ।
 निर्बुद्धि (सं० त्रि०) निर्नास्ति बुद्धिरस्य । बुद्धिहीन,
 जिसे बुद्धि न हो, मूर्ख, बेवकूफ ।
 निर्बुध (सं० त्रि०) निर्गतं बुधं यस्मात् । बुधरहित,
 विना भूषोका ।
 निर्बुधोक्त (सं० त्रि०) बुधरहित, विना भूषोका ।
 निर्बोध (सं० त्रि०) निर्नास्ति बोधो यस्य । जिसे हिता-
 हितका ज्ञान न हो, अज्ञान, अनजान ।
 निर्भक्त (सं० त्रि०) १ अविभक्त । २ जो विना भोजन
 किए ग्रहण किया गया हो ।
 निर्भट (सं० त्रि०) निर्-भट-भच् । हट, मजबूत ।
 निर्भक्षना (सं० स्त्री०) अनन्तक, खासा, अलता ।
 निर्भय (सं० त्रि०) निर्गतं भयं यस्मात् । १ भयरहित,

विद्ये कोई कर न हो, बेंबोप; (पु०) २ रोच्यमनुष्ये
 पुत्रमिदं, पुराणानुसार रोच्यमनुष्ये एक पुत्रका नाम।
 १ योह पञ्च, बापुबा सोडा।
 निर्मलता (दि० स्त्री०) १ निह्वरण, निह्वर होनेका
 भाव। २ निह्वर होनेकी चपक्या।
 निर्मलताप्रसङ्ग—ब्रह्मोपवासस्य यद् धीर सम्बन्धुस्यैव
 काकनिकेय नामक दो सस्कृत पञ्चीके रचयिता।
 निर्मलताम्—इन्दोके एक कवि। इतका कविताका
 क० १८११ काका जाता है। इन्होंने गिष्वाविनायको
 कुछ पुस्तके बनाई हैं।
 निर्मल (स० स्त्री०) निर्मलित मरो मरकत यत्न। १ बहुत
 प्यारा। २ युद्ध, मित्रा युवा। (पु०) १ शैतनगुण्य
 मूत्र बह शिवका जिसे शैतन न दिया जाता हो, शैतार।
 निर्मलन (स० स्त्री०) नितरा भ्रमं नमू निर-भ्रमं
 ष्य, ट. १ निम्दा, बदनामी। २ चतुर्ण चपक्या।
 १ मलं, तिरस्कार, डाँट छपट। ४ चमिभब; १
 चपक्या।
 निर्मलना (स० स्त्री०) १ तिरस्कार, डाँट छपट, तुरा भला
 कहना। २ निम्दा, बदनामी।
 निर्मलित (स० स्त्री०) निर-मलं-क। जलमलं,
 निचकी निम्दा की गई हो। पपाय—निम्दा, बिच्छात
 पपञ्च।
 निर्मल (स० स्त्री०) निर निह्वर भाव्य यत्न। मन्
 भाव्य, मुड़।
 निर्मल (स० स्त्री०) चविमाक्य को भावकोन्
 न हो।
 निर्मल (स० स्त्री०) निर निह्व-क। १ बिच्छित,
 पच्छित। २ चमिभ, बिच्छित;
 निर्मलचिन्तित (स० पु०) पुष्टिका।
 निर्मल (स० स्त्री०) मयरहित, निःशय, बेकर, निह्वर
 निर्मलता (स० स्त्री०) निर्मल होनेकी जिवा या
 भाव।
 निर्मल (स० स्त्री०) निर भी क। मयरहित, निह्वर
 निर्मल (स० स्त्री०) त्रिमका एक पौर भोक्ता युवा हो
 निर्मल (स० स्त्री०) तिरोधान चपक्या, गायत्र
 होना।

निर्मल (स० स्त्री०) निर्मलता भूतियं क्य। शैतनगुण्य
 चमकार, बेगार।
 निर्मल (स० पु०) १ विदारक, काङ्गला। २ विभाजन।
 निर्मल (स० स्त्री०) शैतनकारी।
 निर्मल (स० स्त्री०) निर्मलदोष्य।
 निर्मल (स० स्त्री०) मोय या चर्मोपरहित सुलकोन।
 निर्मल (स० स्त्री०) १ मयरहित जिसमें कोई मन्
 न हो। (स्त्री० स्त्री०) २ शम्भुकासे, बेकर, बेकटपे,
 बिना लकोचके।
 निर्मल (स० स्त्री०) १ मयरहित, निश्चित, जिसमें कोई
 मन् न हो। २ जिसको कोई मन् न हो।
 निर्मल (स० स्त्री०) मच्छिकाया चमता। १ मच्छिका
 का चमता। निर्मलो मच्छिका यस्मात्। २ मच्छिकागुण्य
 देय। ३ तनुपलक्षित निर्मलदेय, निश्चितज्ञान।
 निर्मल (स० स्त्री०) १ नीराजन, चारती करना। २
 सेवा।
 निर्मल (स० स्त्री०) निर-मलं चिन्त, शिदि प्रयोदरा
 दिव्यात् साङ्ग। गितात् यत्न।
 निर्मल (स० स्त्री०) मच्छाकोन।
 निर्मल (स० स्त्री०) शैतनगुण्य, जहाँ शैतन हो।
 निर्मल (स० स्त्री०) मयरहित, पञ्चकारकोन।
 निर्मल (स० स्त्री०) मयकोन, कहां या जिसमें मलको
 न हो।
 निर्मल (स० पु०) निर मयरीनिर्न निर मय-लक्षणे-बहुट्।
 चमिमयनदाक, चरचि, बिबै रमक कर यज्ञोके बिसे भाग
 निष्कान्ती है।
 निर्मल (स० स्त्री०) १ मयन, मयना। २ चमि
 मयनदाक, चरचि।
 निर्मल (स० स्त्री०) १ लक्षिका नामक गन्धद्रव्य। (स्त्री०)
 २ जो मयरी लायक न हो।
 निर्मल (स० स्त्री०) निर्मलो मयो दानप्रस चर्वागर्भो वा
 यस्मात्। १ निरमिमान। २ चर्वागुण्य। ३ दानजनगुण्य।
 निर्मल (स० स्त्री०) लक्षिका मयद्रव्यनियेय।
 निर्मल (स० स्त्री०) चमलपञ्च।
 निर्मल (स० स्त्री०) निर्मलचित्त मनुष्यो यत्न। मनुष्य
 कृप्य, निज न।

“यः प्रातःकृष्याय विधाय नित्यं
निर्मात्यमीशस्य निराकरोति ।
न तस्य दुःखं न दरिद्रता च
नाकालमृत्युर्न च रोगमात्रम् ॥”

(नारदपत्र)

हरिभक्तिविलासमें इसका विषय इस प्रकार
लिखा है,—

अरुणोदयके समय यदि निर्मात्य परिष्कार न किया
जाय, तो वह शल्यस्वरूप, एक घड़ीके बाद महाशल्य,
एक पहरके बाद प्रति शल्य और उसके बाद वज्रप्रहार-
तुल्य हो जाता है। एक घड़ीके बाद चूटपातक, मुहूर्त्त-
के बाद महापातक, चार घड़ोके बाद प्रतिपातक, तीन
मुहूर्त्तके बाद महापातक और उसके बाद ब्रह्मघतुल्य
पाप होता है। इस पापकी निवृत्तिके लिये प्रायश्चित्त
विधेय है। अर्धे मुहूर्त्तके बाद सहस्र जप, मुहूर्त्तके
बाद डेढ़ हजार जप, तीन मुहूर्त्तके बाद दश हजार जप
और एक पहरके बाद पुरस्करण करना होता है। इसीमें
वक्त पापका नाश होता है। पहर बीत जाने पर जो पाप
होता है, वह प्रायश्चित्त करने पर भी दूर नहीं होता।
निर्मात्या (स० स्त्री०) निर्मात्यते इति निर-मन एतत्
तत टाप्। स्पृका, असवरग।

निर्मित (स० द्वि०) निर-मा-क्त। कृत-निर्माण, रचित,
वनाया हुआ।

निर्मिति (स० स्त्री०) निर-मा भाषे-क्तिन्। निर्माण
करण।

निर्मुक्त (स० पु०) निर-मुच्-क्त। १ मुक्तकञ्चुक
सर्प, वह सर्प जिसने हालमें केचुली छोड़ी हो।
(द्वि०) २ जो मुक्त हो गया हो, जो छूट गया हो।
३ जिसके लिए किसी प्रकारका बन्धन न हो।

निर्मुक्ति (स० स्त्री०) निर-मुच्-क्तिन्। १ सम्पूर्ण-
स्वाधेनताप्राप्ति, मुक्ति, छुटकारा। २ मोक्ष।

निर्मुट (स० स्त्री०) निर्गतं मुटं यसमात्। १ कर-
गूय इष्ट, जिस बाजारमें चुंगो न ली जाती हो। २
अनस्पतिविशेष, एक प्रकारकी खता। ३ खपर, खपडा।
४ वह वृक्ष जिसमें बहुत फूल लगे हों। ५ सूर्य।
६ धूर्त्त, शठ, खल।

निर्मूल (स० त्रि०) निर्गतं मूलं यस्य। १ मूलरहित,
जिसमें जड़ न हो, बिना जड़का। २ जिसको जड़ न
रह गई हो, जड़में उखाड़ा हुआ। ३ जिसका कोई
साधार, बुनियाद या भवनियत न हो, बेजड़। ४ जो
मर्वाया नष्ट हो गया हो, जिसका मूल ही न रह
गया हो।

निर्मूलक (स० त्रि०) निर्मूल देशो।

निर्मूलन (स० स्त्री०) निर्मूलं कृतो णिच्-भावे ल्युट्।
१ उत्पटन, उखाड़ना। २ निर्मूल करना या होना,
विनाश।

निर्मेष (स० द्वि०) निवृत्त, बिना शतलका।

निर्मेष (स० त्रि०) निवृत्त, जिसे अन्न न हो।

निर्मजस (स० अश्व०) निर्-मृज 'इश्वरे तोसुनकसुनो'
इति सूत्रेण तुमर्थेकसुन्। निर्मानं न करना।

निर्मृष्ट (स० त्रि०) निर्-मृज-क्त। प्रोच्छिन्न, पीछा हुआ।

निर्मोक (स० पु०) नितरां मुच्यते इति निर-मुच्-वञ्।

१ सर्पत्वक, सर्पकी केचुली। पर्याय—अधिकीप,
निवृत्तनी, कञ्चुक। २ मोचन, छुटकारा। ३ त्वरुमात्र
शरीरके ऊपरको खाल। ४ पुराणानुसार सावर्णि-
मनुके एक पुत्रका नाम। ५ तीरछर्वे मनुके सप्तपिंशोमि-
से एकका नाम। ६ आकाश। ७ सभाह, कवच, जिरह-
वकतर।

निर्मोक्त (स० त्रि०) निर-मुच्-टक्। १ निर्मोचन-
कारी, मुक्त करनेवाला। २ संप्रयच्छेदक। (पु०) ३
स्वतन्त्रता, मुक्ति।

निर्मोच (स० पु०) नितरां मोचः। १ त्याग। २ पूर्ण-
मोक्ष, जिसमें कुछ भी संस्कार बाकी न रह जाय।

निर्मोचन (स० स्त्री०) निर-मुच्-णिच्-ल्युट्। मुक्ति,
मोक्ष।

निर्मोच्य (स० त्रि०) निर-मुच्-ल्यत्। मुक्ति पाने
योग्य।

निर्मोह (स० त्रि०) निर्गतः मोहो यसमात्। १ मोह-
शून्य, जिसके मनमें मोह या भ्रमता न हो। (पु०) २
रैवतमनुका पुत्रभेद, रैवत मनुके एक पुत्रका नाम।
३ सावर्णिमनुका पुत्रभेद, सावर्णि मनुके एक पुत्रका
नाम।

निर्माहनी (वि० वि०) निर्देय त्रिमये विक्रमे समता
या दद्यात् न चो कठोर हृदय ।

निर्मोही (वि० वि०) त्रिमये हृदये मोह या समता न
चो; निर्देय कठोर हृदय ।

निर्मोतुषा (स० श्लो०) निर्-आ-तुम्, स चार्था वन्
प्रयोदरादित्वात् साङ् । ध्यानिभूय चोपधिमेह ।

निर्मोक्ति (स० श्लो०) विमुक्ति देवो ।

निर्मोय (स० श्लो०) निर्मोचयति यच्च यच्च । यच्च-
यच्च यच्चमो चो यचमे शिप क्लृप्त भी यथाय न चर ।

निर्मोक्ष (स० श्लो०) निर्-यत्-भूट् । १ निर्मोहन ।
(श्लो०) २ यत्प्रभाय्य भावार्थित । ३ निर्मोचन ।
४ यत्प्रभन ।

निर्माह (स० श्लो०) निर्माति मरुतेन निर्-या करणे
भ्रुट् । १ मज्जापात्रदेग कायोको पांशुका काष्ठो कोना ।
भावे भ्रुट् । २ मोचन, मोच सुक्ति । ३ बाहर निक
नना । ४ बाह्य, रक्षामये विद्योपत; शिवाका कुडसेजकी
पोर यथा यथाकी चराईको पोर प्रत्यान । ५ यत्प्रभ
को चित्तो नगरके बाहरकी पोर जाती हो । ६ यत्प्रभ
होना, गायन होना । ७ शरीरे मज्जाका निकलना ।
८ यथाकी चैरिनि कांठकी रस्सी ।

निर्मात (स० श्लो०) निर्-या-ञ् । निर्मात्, निर्मात्,
निष्ठा वृषा ।

निर्मातक (स० श्लो०) निर्मात निर्माके कश्चिच्छरक
तत्त्वोति विद्-स्तुम् । निर्मातक, यमिह चरनेवाना ।

निर्मातन (स० श्लो०) निर्-या-ञ्-भ्रुट् । १ कौर
शक्ति, शत्रुप्रतीकार, बटना चुकाना । २ प्रतीकार । ३
प्रतिदान । ४ व्यासमयक, गच्छित द्रव्यका कोठा
देना । ५ मारण मार कानना । ६ यथादिवा शोधन
यत्प्र चुकाना ।

निर्मात (स० श्लो०) १ निर्ममन, प्रत्यान, रक्षामये ।
२ सुमुने ।

निर्मात (स० श्लो०) निर्मातक कृपक, विद्यान ।
निर्मात देवो ।

निर्मात्र (स० श्लो०) निर्-याति कर्मणि यत् । १ शोधनेन,
चुकाने योग्य । २ प्रतिदेय देनि योग्य ।

निर्माहक (स० श्लो०) शादकभूय स्थान वाहररहितः ।
निर्माह देवो ।

निर्माह (स० श्लो०) निर्-याति कर्मणि यत् । १ शोधनेन,
चुकाने योग्य । २ प्रतिदेय देनि योग्य ।

निर्माहक (स० श्लो०) शादकभूय स्थान वाहररहितः ।
निर्माह देवो ।

निर्माह (स० श्लो०) निर्-या-ञ्-भ्रुट् । वातवाह, नाभिक,
महाह, माभो ।

निर्माह (स० श्लो०) निर्-या-ञ्-भ्रुट् । १ कषाय ।
२ छात्र, आहु । ३ सुतो या पोषामि पापके पाप यथा
उपका तथा पादि कोरनेनि निरुपनेवाका यत् । ४ यौट ।

५ चरक बहना या भ्रमना । ६ यत्प्रभ यत् । ७
नाथा ।

निर्माहक (स० श्लो०) निर्माहका चतुरदेया ततो उभ ।
निर्माहककष्ट देयादि ।

निर्माह (स० श्लो०) शाकोटकाह ।

निर्माह (स० श्लो०) यत्प्र योग, सुक्तिहोना ।

निर्माहक (स० श्लो०) निर्माता सुक्ति यत्प्रमात् यत् ।
सुक्तिरहित, सुक्तिहोना, विना सुक्तिना ।

निर्माह (स० श्लो०) यत्प्रभ्रुट्, दन्ते यत्प्र, विद्या
वृषा ।

निर्माह (स० श्लो०) निरता वृषा; निर्याम, यौट ।

निर्माह (स० श्लो०) निर्-या-ञ्-भ्रुट् । निर्-या-ञ्-भ्रुट् ।
शाङ् । १ मत्तवारक । २ नागदन्त । ३ इतिदन्तके
कठय निर्मित द्वार भेदिकाका चाठमिट, दीवारमे मगाई
हुई यत्प्र कठकी पादि त्रिमये ऊपर कोर कोत्र रको या
बनाई जात्र । ४ योचर । ५ पापीवृ, विर पर यत्प्रमी
जानेवानो कोर कोत्र । ६ द्वार, दरवाजा । ७ छात्र,
काहु ।

निर्माह (स० श्लो०) यत्प्रहार, सात्र ।

निर्माहक (स० श्लो०) विपविरत, वैपयिकविद्या
विहोना ।

निर्माहक (स० श्लो०) निर्मात कृपक यत्प्र । १ यत्प्र-
यत्प्रयुक्त, यत्प्र यत्प्रको । २ यत्प्रिह, यत्प्र ।

निर्माहक (स० श्लो०) यत्प्रयोग, जो निर्याह पर न पड़े ।

निर्माहक (स० श्लो०) निर्माति कृपका यत्प्र । न्यायाधीन,
वैयम्, वैद्यना ।

निर्माहक (स० श्लो०) निर्माहक होना माह, वैयम्,
वैद्यना ।

निर्माहक (स० श्लो०) १ त्रिमया कोरि विहित विद् या
विद् न हो । २ त्रिमया निर्याहक न हो जाता हो ।
निर्माहक (स० श्लो०) निर्-या-ञ्-भ्रुट् । १ यत्प्रभय,

जो कोई स्वस्थ न रहता हो, वैलोक । २ निपरहित, राग
द्वेष आदिसे मुक्त, जो किसी विषयमें आसक्त न हो ।

निरुद्धन (स० क्लो०) निर-लुप्त-भावे ल्युट् ।

वितुषीकरणादि, लट्टमार करनेका काम ।

निरुद्धन (स० क्लो०) निर-लुप्ति-भावे ल्युट् । अपहरण,
लटना ।

निरुद्धन (स० क्लो०) निर-निश्च-भावे ल्युट् । १ किमो
चो ज पर जमी हुई मूल आदि खुरचना । २ वह यस्तु
जिससे मूल खुरची जाय ।

निरुद्ध (स० त्रि०) निर्गतः लोपो यसमात् । १ निपग्नस्य,
विषयों आदिसे अलग रहनेवाला । २ पापयुक्त्य । ३
परिणामके कारण संयोगादि शून्य ।

निरुद्ध (स० त्रि०) जिसे लोभ न हो, लालच न करने-
वाला ।

निरुद्धि (द्वि० वि०) निर्लोभ देखो ।

निरुद्ध (स० त्रि०) निर्गतं लोभ यस्य । लोभरहित,
जिसके रोए न हों ।

निरुद्ध (स० क्लो०) १ बोल नामक गन्धद्रव्य । २ व्याघ्र-
नख नामक गन्धद्रव्य ।

निरुद्धनी (स० क्लो०) नितरां लोपते संलीनी भवति,
निर-लो-ल्युट्, प्रपोदरादित्वात् साधुः । १ कष्टुक,
जामा, चीलक । २ सर्पत्वक, केसुली ।

निर्वाण (स० त्रि०) जिसके आगे वंश चलानेवाला
कोई न हो, जिसका वंश नष्ट हो गया हो ।

निर्वाणता (स० क्लो०) निर्वाण होनेका भाव ।

निर्वाण्य (स० त्रि०) निर-वच तथ्य । निर्वाण्य, प्रकाश न
करने योग्य ।

निर्वाचन (स० क्लो०) निर-वच-भावे ल्युट् । १
निरुक्ति, किसी पद या वाक्यकी ऐसी व्याख्या जिसमें
व्युत्पत्ति आदिका पूरा कथन हो । (त्रि०) २ प्रसिद्ध,
मशहूर । निर्गतं वचनं यस्य । ३ वचनशून्य,
मौनावलम्बन । ४ वक्तव्यताशून्य, जिसमें बोलनेके लिये
कुछ भी न रह गया हो ।

निर्वाण (स० त्रि०) निर्गतो वनात् असंज्ञायां षत्वम् ।
वनसे निश्चान्त, जंगलसे निकला हुआ या जंगलसे
बाहर ।

निर्वाण (स० क्लो०) निर-प्रप-भावे ल्युट् । २ दान ।

२ अत्राटिका संविभाग ।

निर्वाणनी (स० क्लो०) निरुद्धनी, सापकी केसुली ।

निर्वाण (स० त्रि०) निर्गतो वरो वरुणमस्य । १ निर्वाण,
वेगमं, वेदथा । २ निर्वाण, निडर । ३ मार, कठिन ।

निर्वाणता (स० क्लो०) वरुणके अधिकारसे विमोचन ।

निर्वाणन (स० क्लो०) निर-वर्ण-भावे ल्युट् । दगन ।

निर्वाणन (स० त्रि०) निर-वृत्त-णिष्-कर्मणि-क्त्वात् ।
निष्पादित ।

निर्वाण (स० त्रि०) निर-वृत्त-णिष्-कर्मणि-यत् ।
निष्पाद्य, व्याकरण परिभाषित कर्मभेद ।

निर्वाण (स० क्लो०) निर-प्रह-भावे ल्युट् । १

नाद्योक्ति, ममासि । २ निर्वाण, गुजर, निवाह ।

निर्वाण (स० त्रि०) विभक्ता, अलग करनेवाला ।

निर्वाण (स० त्रि०) वाक्यहीन, जिसके मुँहसे बात न
निकले, जो चुप हो ।

निर्वाण्य (स० त्रि०) वाक्यहीन, जो बोल न सकता हो,
शूरा ।

निर्वाण (स० त्रि०) १ वहिर्भाग, बाह्य । २ निर्गत ।

निर्वाण्य (स० त्रि०) निर्वाचनोय ।

निर्वाण्य (स० त्रि०) निर-प्रव-प्रव-क्त्वात् । निर्गतं,
निकाला हुआ ।

निर्वाण (स० क्लो०) निर-वा-क्त्वात् । (निर्वाणोऽशते । पा
८।२।५०) षवाते इति द्वेदः । १ गजसज्जन । २ विनाश ।

३ निर्वाण्य । ४ शान्ति । ५ ममासि । ६ विष्णु । ७

नाभिदेशमें लपनेयोग्य प्रणवपुटित श्रीर सातकापुटित-
स्त्राभिलषित मूलमन्त्र । ८ वाचशून्य । ९ अस्तगमन ।

१० संगम । ११ विश्रान्ति । १२ निश्चल । १३ शून्य ।

१४ विद्योपदेश । १५ मुक्ति । दर्शनमें यही अर्थ सब
जगह लिया गया है ।

अमरकोषमें मुक्तिवाचक षाठ विशेष्य शब्दोंका
सङ्ग्रह है,—अमृत, अयेयः, मोक्ष, अपवर्ग, निःश्रेयस,
मुक्ति, कैवल्य और निर्वाण ।

उपनिषद्के मतानुसार प्रत्यगात्म ब्रह्मके सम्यग्-ज्ञान-
द्वारा अमृत लाभ होता है । अयेयः (मुक्ति) और अयेयः

(अमृत) इन दोनों मार्गोंका सम्यक्-विचार कर जो

घोर शक्ति है। ये यद्योगीका ही प्रबन्धन करते हैं।
 शब्दद्वय 'नकार' अपिचका कहना है, कि प्रकृति घोर प्रबन्ध
 इन दोनों तत्त्वोंके सिद्धज्ञान द्वारा पुनर्नवयका अथवा घोर
 मोक्षनाम होता है। मोक्षमने अपने व्यावर्तनमें विद्या
 है, कि प्रमाद्य प्रमेयादि मोक्षय पदादींके सम्मन ज्ञान द्वारा
 पुनः, अर्थ, प्रकृति, दोष घोर निष्काशनाके उत्तरोत्तर
 पदादींके प्रपन्न काम होता है। द्रव्यसुख इत्यादि दद-
 पदादींके सम्मन ज्ञान द्वारा निश्चयताविद्यम होता है।
 वैदिकिक इयं नकार कदादका भी यही मत है। पात-
 ध्वनदमं नके मतके—योग द्वारा श्रीवाक्यके परमात्मामें
 अथ बोधिका नाम मुक्ति है। श्रीमोक्ष सन्निदादींके
 किसी किसीका कहना है, कि निष्कृतसत्तावाच्यारका
 नाम मुक्ति है। वैदिकिक लोग कहते हैं, कि पारमा-
 र्थिक ज्ञान द्वारा प्रविद्याका अथवा घोर बोधक नाम
 होता है। फिर मोक्षमोर्गका कहना है, कि प्रतीक
 प्रकृत्यय अथसमृद्धीके सम्पुष्टि द्वारा प्रपन्नका उत्तम,
 राग, द्वेष घोर मोक्षका अथवा तत्रा निर्वाण काम होता है।

मुक्तिवादप्रत्येनिष्ठा है कि प्राचीन लोग साधुत्व,
 सात्त्विक, सामीप्य भाति घोर निर्वाण इन पांच प्रकार
 को मुक्तियोंको धीकार करते हैं। निष्कलित प्रोस
 में मोक्षार्थ साधुत्व मुक्ति का विषय व्यक्त किया है।
 "साधुत्वमप्यस्ति मरुतव महागिरयार
 स्तां पशुपतव नगी नतः प्रचुराग।
 मृगमिषावचतुःसप्तशोमनाम्
 श्रीवोदने नपि मावमिरामि वायुः ॥"
 (मैत्रय ११।१२०)

इस प्रकार सात्त्विक सामीप्य घोर भाति मुक्तिका
 विषय विदित करनेमें बर्चित है।
 निर्वाणमुक्तिका विषय निष्कृतप्रधानमें इस प्रकार
 निष्ठा है—
 एक दिन मायामोहावतार कुछ नाम ब्रह्म
 परने, पार्श्वमें सुरमा नामय प्रसूति निवृत्त गय घोर
 मधुर स्पर्शके कहने लगी—कि प्रसुरगण। यदि निर्वाण,
 मुक्ति का स्वर्गको तुम स्वयं कामना करीं हो, तो यद्य-
 दि सा पादि कोई दृष्टकर्म न करो, क्योंकि इनके कोई
 फल नहीं निकलता है। इस प्रकारको विज्ञानमय

समझो। पच्छिंति भी कहा है, कि यह जगत् पना
 कार है, मयसहजमें सर्वदा परिश्रमय करता है घोर
 राग पादि दोषोंके दूषित है।

निर्वाण शब्दका व्यवहार पादि किसी समयमें क्यों न
 पारण्य हो यह शब्द मुक्ति प्रथम ही मोक्षद्वयमें कहे
 मयस व्यवहृत रूप है घोर वस्तुतः निर्वाण बोधिका
 मुक्तिशब्दका पारिभाषिक शब्द है। मुक्ति कहनेसे मोक्ष
 मोक्ष जो समझते हैं, अथ निर्वाण शब्दसे जो प्रकृत्ययमें
 जाना जा सकता है। जिस तरह इतनेके परामर्शमें
 पन्नि निर्वाण को जानते हैं उसी तरह काम, मोक्ष मोक्ष
 स एतार इत्यादिके लक्ष्यमनके लक्षा वा पच्छिंतिका
 विषय होता है। सत्ताका विरोध को निर्वाण है।
 उद्योत्त मोक्ष प्रत्येनि निर्वाण शब्दका अथवा विग्रहक्यमें
 बर्चित है। मोक्ष मुक्त्यय बोधका मत उद्धृत रूप है—
 १। परममोक्षमें सुखविरततामर्थमें विद्या है—
 "वदन्तवत्या न्यायको परबुधवियोक्षिणा।
 मैत्रये स्वान्धीवास्तवत् पुदर्थमविरासते ॥"
 (बुद्धविरत)

निर्वाण पुनर्जन्मका निवर्तक है। स एतारसमृद्धका
 पय नहीं होनेसे जन्मान्तरका उत्प्रेद नहीं होता।
 पुनर्जन्म स एतारसमृद्धके अथवा नाम निर्वाण है।
 २। भायं नामासुं नमि माधमिकसुखमें निष्ठा है—
 "निर्वाणको मोक्षके प्रथमार्थमवस्थितो ॥"
 (माधमिकसुख)

मयसज्जतिके उत्प्रेदका नाम निर्वाण है। मय
 शब्दका साधारण अर्थ स एतार है अतीति इच्छा प्रकृत
 अर्थ है आधिक, आधिक घोर मानसिक कर्मजनित
 अकार। अथ नाम त्रिम प्रकार अपने यद्यपे काम
 प्रकृत कर लक्षमें अथ भाव्य ही जाता है, हम लोग भी
 इसी प्रकार पूर्व स एतारके यद्यपे अपने स एतारको छुटि
 कर लक्षमें जाना प्रकारके अर्थमोक्षे पावक हो गए हैं।
 स एतारके अर्थ द्वारा स एतारका उत्प्रेद पापन को
 निर्वाण है।

३। रजकृत्यममें सुबोधि इष्ट प्रकार है—
 "राष्ट्रकरोहृद्वार परिनिवाण ॥" (रत्नप्रदसूत्र)
 राग, द्वेष घोर मोक्षके अथवा नाम निर्वाण है। पन्नि

जिम प्रकार इंधनके प्रभावमें निर्वाण हो जातो है, उमी प्रकार राग, द्वेष और मोहके जय होनेसे जोवका आत्मा भिमान लुप्त हो जाता है। अहङ्कारके समाप्तकारका ध्वंस होनेसे ही निर्वाणलाभ होता है।

४। वज्रच्छेदिका ग्रन्थमें बुद्धने लिखा है।

‘इह हि सुभूते बोधिसत्त्वयानपप्रथियेने एव’ निरमुत्पाद-
यितव्यं सर्वं सत्त्वा मघानुपधिरोपेनिर्वाणघातो परिनिर्वाण-
यितव्या ॥’ (वज्रच्छेदिका)

निर्वाण पदार्थके अनुपधि अर्थात् प्राण होनेसे संस्कारादि कुछ भी नहीं रहते।

५। बोधिवर्षावतारग्रन्थमें गान्तिदेवने लिखा है—

‘सर्वेत्यागश्च निर्वाणं निर्वाणयि च मे मनः ॥’

सर्वेत्याग अर्थात् संसार, सुख, दुःख, आत्माभिमान इत्यादि सभी त्यागोंका नाम निर्वाण है।

६। रत्नमेघ ग्रन्थमें इस प्रकार लिखा है,—

‘दृष्टव्या विप्रहाणेन निर्वाणमिति वक्ष्यते ॥’

(रत्नमेघ०)

दृष्टाको सम्यक् निवृत्तिका नाम निर्वाण है। यह संसार अनाधार और कल्पित है, इस मिथ्या संसारके साथ अपना सम्बन्ध रखनेकी प्रवृत्ति इच्छाका नाम लक्षणा है। उस लक्षणाके जय होनेसे ही संसारका उच्छेद, आत्माभिमानका विलय और निर्वाणलाभ होता है।

७। अष्टसाहस्रिका प्रज्ञापारमितामें लिखा है—

‘निरोधस्य निर्वाणस्य विगमस्यैतन् सुभूतेऽधिवचनं यदुत गम्भीरमेति ।’ (अष्टसाहस्रिका०)

निरोध निर्वाण और विगम ये सभी समार्थक हैं और इनका अर्थ अत्यन्त गम्भीर है। अपनापन और संसारके अपायका नाम निर्वाण है और जिस अवस्थामें संसार भी नहीं है, मैं भी नहीं हूँ, वही अवस्था प्रति दुर्वाच और गम्भीर है।

८। प्रज्ञापारमिताहृदयसूत्रमें लिखा है—

‘बोधिसत्त्वस्य प्रज्ञापारमितामाश्रित्य विहरति चित्तावरणः ।

चित्तावरणनास्तित्वात् अत्रस्तो विपर्ययातिक्रान्तो निष्ठनिर्वाणः ॥’

बोधिसत्त्वका चित्तावरण परमार्थज्ञानका अवलम्बन कर अवस्थित है। चित्तावरणके अभावमें विपर्ययासका अभाव और निर्वाणलाभ होता है। संसार मिथ्या

है, मैं मिथ्या हूँ, आन्तर और बाह्य जगत् एक महाशून्य मात्र है, इसी ज्ञानका नाम परमार्थज्ञान है। परमार्थज्ञानके अनुगोचनसे संसारभिमान और आत्माभिमान रूप विपर्ययासका ध्वंस और निर्वाणका लाभ होता है।

८। अतक ग्रन्थमें लिखा है—

‘धर्मं समाप्तरोऽहिंसा वर्णयन्ति तयागताः ।

शून्यतामेव निर्वाणं केवलं नद्विहोमयम् ॥’

बोद्धगण अहिंसाको ही धर्म और शून्यताको निर्वाण मानते हैं। जिस अवस्थामें संसारका ध्वंस हुआ है, इस लोकाका अस्तित्व भी लुप्त हुआ है, उस अवस्थामें कौन रहता है? यदि लौकिक भाषामें कहा जाय, तो अवश्य ही यह स्वीकार करना होगा कि उस अवस्थामें केवल शून्यतानात्र अवशिष्ट रहती है। यह शून्यता निर्वाण है।

१०। माध्यमिकहृत्तिकामें चन्द्रकीर्त्तिने इस प्रकार लिखा है,—

शून्यताके ज्ञान द्वारा अग्रिम प्रपञ्चके उपगमरूप शून्यता लाभ होता है। प्रपञ्चके अभावमें विकल्पकी निवृत्ति, कर्मक्रीडाका जय और जन्मका उच्छेद होता है। अतएव सर्व प्रपञ्चको निवर्तक शून्यता ही निर्वाण कहलाती है।

उक्त मतोंको पर्यालोचना करनेसे ज्ञान पड़ता है कि निर्वाणकालमें अपनापन और संसारका लोप होता है। संसारसमूहके जय होनेसे ही अपनापनका लोप होता है और मेरे साथ संसारका जो सम्बन्ध था वह भी विच्छेद हो जाता है। उस समय मेरे लिए संसारका अस्तित्व और अभाव दोनों ही समान हैं। निर्वाणके समय न संसार ही रहा और मैं ही। मेरा अस्तित्व फिर कभी भी नहीं होगा, संसारके साथ मेरा पुनः सम्बन्ध नहीं होगा और इस प्रकार मेरे पुनर्जन्मकी निवृत्ति हुई। मेरा और संसारका चरमध्वंस हुआ। मैं और संसार दोनों ही शून्यतामें निमग्न हुए। यही शून्यता निर्वाण है।

अब यह देखना चाहिए, कि शून्यता कौन-सी वस्तु है। माध्यमिकसूत्रमें नागार्जुनने इसके विषयमें जो बुद्धवाक्य उद्धृत किया है वह इस प्रकार है—

“अनयाद्यैः समीपे नृपैः ॥ ३॥ इत्यादि ॥ ३॥

मृत्युते दस दसवति हारोपारदस ॥

को पदाय किसी पक्षर द्वारा प्रकाश नहीं किया जाता, इस दुर्घ्नय पदाब्धि सम्बन्धमें क्या विवरण दिया जा सकता है ? परन्तु क, ख, ग इत्यादि पक्षर द्वारा प्रकाश नहीं किया जाता । हमला मो मो विवरण दिया गया वह मो पारमार्थिक पदायमें निष्ठा पक्षर-का आरोप करके ।

यह शून्यता प्रमाण पर्यन्त दुर्घ्नय है । यह न तो भावपदाब्धि है पौर न पद्मावपदाब्धि । शून्यता नामक किसीकी वस्तु को नहीं जिसे हम लोग निर्वाचके समय प्राप्त कर सकते हैं । इस न पौर का पयनापयना न्ये न का पद्माव मो शून्यता नहीं है । यदि शून्यता नामक कोई द्रव्य का भाव पदाय रहता तो परमत्र हो पर्यन्त होता । सुतरां इन शून्यतायके परिगममें निश्च निर्वाचका काम नहीं हो सकता था । न पौर पक्षर का पयनापयने पद्मावको जो किस प्रकार शून्यता कह सकते ? न पौर पौर में दोनों की मिया पदाय है ; न्यायिक हमला पारमार्थिक पदायक हमो भी न था । पयः पिराशून्य पदायैः पिरापीडाको तरह हमला पद्माव किस प्रकार होगा ? पद्मावको पर्यमें निष्ठा है,—

‘ न पारमार्थिक निर्वाच कुट्ट एतद्वा मायन ।

पद्मावपरापरमर्थको निश्चयुष्यते ॥’ (पद्मावकी)

निष्ठा (शून्यता) क्व पद्मावपदाय नहीं है, तब इने किस प्रकार भावपदाय कह सकते ? भाव पौर पद्मावपदाय का पय को निष्ठा नामके प्रविष्ट है । भाव पौर पद्माव पदाय परस्पर कायिक है किन्तु जिस पदायके पविगम में निर्वाच काम होता है वह बिधीका मो मायपे नहीं है । सुतरां निर्वाच का शून्यता भावपदाय मो नहीं है पौर न पद्मावपदाय को है । यह निर्वाच का शून्यता पविच-बन्धोय पदाय है । किन्तु निर्वाच काम किया है ये भाव पौर पद्मावपदायके पदायक तथा नायायके पतोत को पुत्रे है । इनको चरव्याका किसी प्रकार को वर्णन नहीं किया जा सकता ।

इस शून्यता का निर्वाचके सम्बन्धमें जोपे कुछ मत कथून किये गए हैं ।

१ । किन्तु-मायनिष्ठा भावपदायमें जो-यद्दम-नि मतकी पद्मावकोयना करते हुए कहा है कि पदाय नायिक, समय पौर पयुमय के अनुष्ठोडि विनिश्चैक पदाय को शून्यता है ।

२ । पद्मावपरापरमर्थमें निष्ठा है कि पदाय पौर नायिक दोनों को मिया है, यदि पौर पयुमि ये मो स्थित है । सुतरां पविगम लोग समय पद्मावपदायक सम्बन्धमें मो नहीं रहते । ये निर्वाचकाम पौर पदाय पौर नायिके पतोत तथा वृत्ताहोन को आते हैं ।

३ । नागालु मने कहा है, कि पय्य बुद्धिके लोग पद्माव पौर नायिकका पयुमय करते हैं । किन्तु पौर मनुष्य पदाय पौर नायिकके समयतमय अन्व-को उच्यन्ते करते हैं । शून्यता पदाय “कै” एसा नहीं कह सकते पौर “नहीं है” ऐसा मो नहीं कह सकते ।

४ । पद्मावपरापरमर्थमें इस विषयमें इस प्रकाश किया है,—जो “नहीं” पदाय न पौर पौर पिरा पय्य पद्मावपदायको को शून्यता मानते हैं ये दुर्घ्नयको प्राप्त होते हैं पौर मो नहीं मानते के भाव पौर पद्मावके पतोत शून्यताको नाम कर सुमति पौर सुमि पति है ।

५ । अनित्यविक्षरपय्यमें यो निष्ठा है,—एव न काममें कोर पदाय है” ऐसा नहीं कह सकते पौर “नहीं है” ऐसा मो नहीं कह सकते । जो पदाय पारमार्थिक परमपदायके पयमत हैं वे पदाय पौर नायिके पतोत को कर निर्वाच काम करते हैं ।

६ । वृत्तावपरापरमर्थमें निष्ठा है,—यह विषय पदाय शून्य है । जिस प्रकार पद्मावपदायमें शून्यताका पद विषय मान नहीं रह सकता, उन्को प्रकार हम पदायपदायमें मो कोर पदाय विषयमान नहीं है । पदायमेंके किसीको मो पद्माव का पय्य निरपेय मता नहीं है, सुतरां ये विषय प्रकार टूटने पदायके नय्य का अनक को सकते ?

७ । परमेश्वरपदायमें निष्ठा है, कि पदाय नमूण्ड नायिके पोर पत्तमें शून्यताका है । हमला नायिके पौर का किति नहीं है । ये वक्त्र पद्माव पौर पदायमान हैं । यह पदाय कभो पायायके लप्य निष्ठा है ।

८ । परमेश्वर उदायन कामपदायमें निष्ठा है,— जो पदाय पय्य पदायके सम्बन्धमें उच्यते हुआ है,

उसकी उत्पत्ति हो नहीं हुई है, ऐसा जानना चाहिए। उस पदार्थके स्वभाव वा स्थापन सत्ता नहीं है। जिसे अन्य निरपेक्ष सत्ता नहीं है, उसे गून्थ कह सकते हैं और जिसने गून्थता उपलब्ध की है, वह कभी भी संसारमें सत्ता नहीं रह सकता।

८। बुद्धदेवने स्वयं इस गून्थताका विषय जो वर्णन किया है, वह इस प्रकार है,—

“निर्वाण” यह गम्भीर पदार्थ शब्द द्वारा प्रकाशित हुआ है, किन्तु कोई भी निर्वाण लाभ नहीं कर सकता। ‘अनिर्वाण’ यह भी एक शब्द है और इसे भी कोई लाभ नहीं कर सकता। गून्थ पदार्थको भी निर्वाण कहते हैं और प्रपञ्चको निवृत्ति भी निर्वाण कहनाती है। निर्वाण को पदार्थका कैसा ही लक्षण क्यों न कहें, उसके साथ जीवका याज्ञ याज्ञक सम्बन्ध नहीं हो सकता। क्योंकि जीवकी प्रकृत सत्ता नहीं है। अतः उसने निर्वाण ‘लाभ’ किया, ऐसा किस प्रकार कह सकते। निर्वाण कोई भावपदार्थ नहीं है, अतः उसकी प्राप्ति भी अशक्य है। संसार और मैं दोनों ही मिथ्या पदार्थ हैं और इन दोनोंकी मिथ्या गतीति द्वारा प्रपञ्चका उपगम हुआ सही, लेकिन परमार्थतः जो या बड़ी रहा। वही पारमार्थिक पदार्थ निर्वाण है। नीचे निर्वाणलाभको प्रणाली संक्षेपमें दी जाती है,—

यह संसार दुःखमय है। जन्मलाभ करके जरा-शोकपरिदेव-दुःख-दोर्मनस्य इत्यादि द्वारा जीव रात दिन सन्तप्त रहता है। मृत्युसे भी इस सन्तापकी चिर-निवृत्ति नहीं होती, क्योंकि मृत्युके बाद ही पुनर्जन्म-लाभ होता है। जब तक कर्मका सम्पूर्ण क्षय नहीं हो जाता, तब तक जन्ममरणप्रवाह अद्यावत्तत्तावसे होता रहता है। बुढ़ने कहा है—

“न प्रणश्यन्ति कर्माणि कल्पकोटीशतैरपि ।

सामर्ग्यं प्राप्य कालं च फलन्ति खलु देहिनाम् ॥”

शतकोटिकल्पमें भी कर्मका क्षय नहीं होता। काम और पात्रके प्राप्त होनेसे ही जोशोंको कर्मफल मिलता है।

कर्म फलानुसार जीव नरक, तिर्यक, प्रेत, असुर,

मनुष्य और देव इन छः लोकोत्तम जन्म ले कर छः प्रकारकी गतिको पाता है। इन सब लोकोत्तम जन्म ले कर भी कभी अण्डज, कभी खेदज, कभी जरायुज और कभी उपपादुक योनिमें जन्म होता है।

जिस प्रकार कुम्भकारका चक्र घन्तनिर्वाहित गति प्रभावसे लगातार घूमता रहता है, जीव भी उसी प्रकार अपने अपने कर्मफलसे इस संसारचक्रमें बराबर परिभ्रमण करता है। फिर जिस प्रकार किमी काँचकी शोशीमें कुछ भीरीकी डाल कर शोशीका मुँह बन्द कर देनेसे कोई भीरा ऊपरमें, कोई नीचे और कोई बीचों बीच घूमता रहता है, एक भी उसमें निकलने नहीं पाता, उसी प्रकार जीवगण अपने कर्मफलसे इस संसारचक्रमें सब कभी नरक, कभी तिर्यक, कभी मनुष्य आदि लोकोत्तम जन्मग्रहण करते हैं, कोई भी उसमें छुटकारा नहीं पाता।

“सर्वं अनित्यं अकामा अधुना न च शाश्वताऽपि न कस्याः ।”

(उल्लिखितविस्तर)

संसारके सब पदार्थ अनित्य, अकाम, अधुना, अशाश्वत और कल्पित हैं।

संसाररूप महाविद्यान्वकारगहनमें प्रक्षिप्त प्रज्ञान-पटलतिमिराहतनयन प्रज्ञाचक्षुर्विरहित लोकोत्तम धर्मात्मीक प्रदान और सर्वदुःखसे प्रमोचनके लिए भगवान् बुढ़ने निर्वाण-मार्गका उपदेश दिया है। उन्होंने कहा है,—

“धिग् यौवनेन जया समभिष्टुतेन

धारोग्यधिग् विविधव्याधि परादतेन ।

धिग् जीवितेन पुरुषो न चिरस्थितेन

धिक् पंडितस्य पुरुषस्य रतिःप्रसंगः ॥

यदि जर न भवेया नैव व्याधिर्न मृत्यु

स्तयापि च महदुःखं पचस्कन्धं धरन्तो ।

किं पुन जरव्याधिमृत्युनित्यलिबद्धाः

साधु प्रतिनिवर्त्य चिन्तयिष्ये प्रमोचम् ॥”

(उल्लिखितविस्तर)

यौवनकी धिक्, क्योंकि जरा इसके पीछे पीछे आती है; धारोग्यकी धिक्, क्योंकि यह विविधव्याधि द्वारा पराहत रहता है; जीवितकी धिक्, क्योंकि यह चिरस्थायी नहीं है और पण्डित लोकोत्तम संसारासक्तिकी भी धिक्कार

के घटि करत, व्याधि वा मृत्यु, नहीं रहती तो भी क्यादि पक्षस्वयं कारण करनेमें लोकोको चक्षुष्य दुःख भिन्नता पड़ता। अत्रा व्याधि और मृत्युके साथ चिरा सुखद लोकोके दुःखको बात और क्या कहो जाय।

इस दुःखमनुष्यके चरमस्थ लक्षि निम्ने सुखदेवनि प्रारम्भ में अनुसार्यं एतन्ना उपदेय दिया है।

“अन्तारि कार्थवृत्तिः। नवा। दुःख, मनुष्यो, निरोधो, मार्गवृत्तिः।” (धर्मदर्शन)

दुःख दुःखका उदय वा उत्पत्ति, दुःखका निरोध वा निवृत्ति और दुःखनिरोधका उपाय वा धार्यं ये पद साम्य हैं।

अब सबसे सब रात दिन दुःखमोम करते हैं, तब दुःख पदाके क्या है, यह समझानेको कोर्दे उदरत नहीं। दुःखकी उत्पत्ति और निरोधका प्रथम, कथित विपदा, माध्यमिकसुख इत्यादि समस्त प्रत्येक विषयद्वयके वर्णित है। अथकोपर सुखवर्तिते दुःखकी उत्पत्ति और निवृत्तिका प्रथम भीति उद्भूत हुआ है—

विविध प्रकारके दुःख और स धारविषयसको अङ्ग परिव्या है। परिव्याके व्याधिच वाचिक और मान विक स प्रकारको उत्पत्ति होती है। संस्कारके विद्यान विद्याने नामद्वय, नामद्वयके पञ्चायतन, पञ्चायतनके स्वयं, स्वयंके वेदना, वेदनाके दृश्या, दृश्याके उपादान, उपादानके भव, भवके जाति और जातिके धरा, धरके तथा मोक्ष उत्पन्न होता है। परिव्याके निरोध द्वारा प्रथमः इस समुदायका निरोध होता है। परिव्यादि हादस्य पदायको प्रतीत्यमनुत्पाद कहते हैं।

उदोच्य बोधाने स धारका जो बिल पङ्कित किया है उदोच्य प्रतिवृत्ति एक चक्र है। इस चक्रके किन्हीं अतोत-क्यो रास, मर्कटको होय और मूकरदण्डो मोक्ष विद्यमान है। इस रास, होय और मोक्ष द्वारा जो स धारचक्र घूमता रहता है। स धारचक्रके निमित्तिये प्रतीत्ययसु स्थादको हादस्य मूर्तिवा पङ्कित है। प्रथम धरमें एक पञ्चो लो एक प्रदीपके सामने बैठी हुई है। दूसरे धरमें एक कुम्भकार लगातार एक चक्रको घुमा रहा है। तीसरे धरमें एक बन्दर पञ्जिर भावके उदक झूट रहा है। चौथे धरमें एक नाव पर एक पारोको बैठा हुआ

है। पञ्चमे धरमें एक पक्षको प्रतिवृत्ति पङ्कित है। षष्ठे धरमें एक पुरुष और एक स्त्री बैठे हुई है। सातवें धरमें एक तीर एक मनुष्यके समुत्तमें प्रवेश कर रहा है। आठवें धरमें एक मनुष्य ग्रास पी रहा है। नवें धरमें एक बड़ा उष्ट्रा टैक कर लड़ी है। दसवें धरमें पालिशुननव इत्यति है। अन्तर्द्वेष धरमें एक स्त्री मन्थान प्रवेश कर रही है। बारहवें धरमें एक मनुष्य तुर्देको अग्नि पर से कर अग्रधानको घोर दौड़ रहा है।

इस प्रतीत्यमनुत्पादचक्रके चारों घोर भस्म, निर्विक, पेत, पसुर, मनुष्य और देवसोकाकी प्रतिवृत्ति है। इन सब लोकोके मध्य मनुष्यलोका ही अष्ट है। क्योंकि सुखद वा निर्वाच केवल मनुष्यलोके ही उपाय है। अन्यथा लोकोके सुख दुःखादिका मोगमात्र हुआ करता है। इस चक्रलोकाके चारो तथा तुर्देकी प्रतिवृत्ति है। चक्रके राग, द्वेष, मोह और परिव्यादिको ज्ञोत किया है। अन्ते नरकादिमें पुना जन्म नहीं लेना पड़ता। लकोमें ममचक्रको धार कर निर्वाचकाम किया है।

अब यह देखा गया, कि परिव्यादिको निवृत्ति द्वारा दुःखको निवृत्ति और निर्वाचकाम हुआ करता है। अब जोनका उपाय है जिसका पक्षस्वयं करनेमें परिव्यादि-का निरोधनाशन किया जा सकता है? जोधपञ्चमें लिखा है, कि धार्यं चक्रमागंका अनुगमन जो अङ्ग उपाय है। सम्यग् इष्टि, सम्यक् स कस्य सम्यक् भावः, सम्यक् कर्मान, सम्यक्शोभ, सम्यग् ध्यायाम, सम्यक् क्वृत्ति और सम्यक् कर्माणि इन पाञ्च प्रकारके धार्यं मार्गके अनुगमन द्वारा परिव्यादि निरोधका सोधान मात्र होता है। परिव्यादा चरमस्थ ल कर चलनेके ही सुखद वा निर्वाचकाम होता है।

धररोक्ष विषयका न विप्रमात्र लोके निष्ठा जाता है। पहले मावातिपात, पदत्तादान काममिष्याचार ध्यानाद, वैशुष्य पाकस्य सन्धिचक्रका, परिभ्रजा, म्यापाद और मिष्याइति इन दस प्रकारके अनुगमन धर्म-पयोका परिहार अन्त आश्रय।

महाबलु पञ्चमें निष्ठा है, कि कत्र टय प्रकारके और अनुगमन धर्मपयोका ज्ञान करनेमें लौम (राग), मोह और द्वेषका नाश होता है। एतके नाम होनेके अनु विषय धर्मपदका नाम होता है।

“नत्वार्ति धर्मपदानि । अनित्याः सर्वसंस्काराः । दुःखाः सर्वसंस्काराः । निरात्मनः सर्वसंस्काराः । शान्तं निर्वाणं चेति ।” (धर्मसंप्रदाह)

सभी पदार्थ अनित्य और दुःखदायक हैं । किसीमें भी स्वभाव वा अन्यनिरपेक्ष-सत्ता नहीं है, शक्ति ही निर्वाण है । इस प्रकार चतुर्विध भावना ही धर्मके चार पद हैं ।

इन चतुर्विध धर्मपदका अनुशीलन करनेसे आर्याट-मार्गमें प्रवेग लाभ होता है । सम्यक् दृष्टिसे ले कर सम्यक् समाधि पर्यन्त आठ आर्यमार्गोंके अनुसरण द्वारा अविद्यादि निरोधका द्वार प्राप्त होता है । तदनन्तर दान-पारमिता, शीलपारमिता, चान्तिपारमिता, वीर्यपारमिता, ध्यानपारमिता और प्रज्ञापारमिता ये छः प्रकारकी पारमिता और प्रतीत्यसमुत्पादका सम्यग्ज्ञान लाभ होता है । इस प्रतीत्यसमुत्पादका ज्ञान उत्पन्न होनेसे अर्थात् दुःखक उत्पत्ति और निरोधका क्रम समझ करनेसे अविद्यादि ता विलय होना शुरू होता है । अविद्यादिके विनाश होनेसे बुद्धत्व वा निर्वाणलाभ होता है । इस समय जन्म, जरा, व्याधि, मृत्यु और दुःख इत्यादिका चिर उच्छेद हो जाता है । निर्वाण लाभके बाद फिर भवचक्रमें लौटना नहीं पड़ता, उस समय प्रपनापन और संसाररूप अग्नि चिर-कालके लिए बुझ जाती है ।

अब प्रश्न यह उठता है, कि यदि संसार और मैं दोनों ही मिथ्या हैं और शून्यता ही इस विश्वका प्रकृत स्वभाव है, तो किम प्रकार मैं, तुम, घट, पट इत्यादिका व्यवहार निष्पन्न होता है । शयविषाण, गगनकुसुम, बन्ध्यापुत्र इत्यादि द्वारा कोई कार्य सम्पन्न नहीं हो सकता, किन्तु “संसार” और “मैं” द्वारा अनेक कार्य हो रहे हैं, दुःखभोग भी बराबर चल रहा है । इस प्रश्नका उत्तर यही है कि बोधोंने सत्यद्वयको अवतारणा की है नागार्जुनने निम्नलिखित सूत्रमें उस सत्यद्वयका उल्लेख किया है,—

“द्वेषले समुपाश्रित्य बुद्धानां धर्मदेशना ।

लोकसंहतिसत्यञ्च सत्यञ्च परमार्थिनः ।

(साध्यमिकसूत्र)

बोधोंकी धम देयना सांस्कृतिक (व्यवहारिक) और

पारमार्थिक इन दो प्रकारके सत्योंका आश्रय ले कर प्रवृत्तित होती है । नागार्जुनने और भी कहा है,—

“व्यवहारप्रनाश्रित्य परमार्थान् देश्यते ।

परमार्थमनागम्य निर्वाणं नाधिगम्यते ।”

(साध्यमिकसूत्र)

व्यवहारिक सत्यके आश्रय बिना परमार्थ सत्यका उपदेश नहीं दिया जा सकता और परमार्थ सत्यकी उपलब्धिके बिना निर्वाणलाभ नहीं होता ।

सत्यद्वयवतारसूत्र, लदायतारसूत्र, साध्यमिकसूत्र, इत्यादि ग्रन्थोंमें व्यवहारिक और पारमार्थिक सत्यको विस्तृत व्याख्या दी गई है । यहां पर इनका कहना ही पर्याप्त होगा, कि सांस्कृतिक (व्यवहारिक) सत्य द्वारा विचार करनेसे संसार और मैं वे दोनों मिथ्या नहीं हैं । किन्तु पारमार्थिक सत्य द्वारा विचार करनेसे यह संसार अनाधार, कल्पित और मिथ्या प्रतीत होगा । जब परमार्थ सत्यका सम्यग्ज्ञान हो जायगा, तब संसार और मैं दोनों ही मिथ्या ही जायेंगे और तभी निर्वाणलाभ होगा ।

यह स्पष्ट देखा जाता है, कि निर्वाण कोई वस्तु नहीं है । संसार और मैं ये ही दो मिथ्या वस्तु हैं । मिथ्या सावित हो जाने पर भी प्रकृत जो था वही रहेगा । वही प्रकृत अवस्था ही निर्वाण है । इस कारण निर्वाण और शून्यता ये दोनों असंस्कृत पदार्थ माने गये हैं । चन्द्रकोटिने कहा है,—

जिस पदार्थका उत्पाद, स्थिति और विनाश है वही संस्कृत पदार्थ है निर्वाण वा शून्यताका उत्पाद स्थिति वा क्षय नहीं है । सूत्रोंमें यह असंस्कृत पदार्थ है । यहां तक निर्वाणलाभ, शून्यताप्राप्ति इत्यादि वाक्योंसे निर्वाण और शून्यताके लाभ और प्राप्तिको कथा कही गई है, किन्तु यदि सच पूछा जाय, तो उसका लाभ और प्राप्ति नहीं हो सकती । संसार और मैं इन दोनों मिथ्या पदार्थोंके मिथ्या ही जाने पर परमार्थतः जो पहले था, पीछे भी वही रहा । वही पारमार्थिक प्रकृत अवस्था निर्वाण है । उस प्रकृत अवस्थाका भगवान् बुद्धने आर्यरत्नकूटसूत्रमें निम्नलिखित भावसे वर्णन किया है—

“नात्र स्त्री न पुरुषो न सत्त्वा न जीवो न पुरुषो न

पुरतो वितथा इमं सर्वधर्मा । अयम् इमि मय धर्मा ।
 विठपिता इमि सर्वधर्मा । मायोपमा इमि सर्व
 धर्मा । अत्रोपमा इमि सर्वधर्मा । निमि तोपमा इमि
 सर्वधर्मा । अत्रोपमा इमि सर्वधर्मा इति विद्वत् ।
 ते इमां तयागतम् धर्म देवतां श्रुत्वा विमत् रागात्
 मय धर्मान् पश्यन्ति विगतमोहान् सर्वधर्मान् पश्यन्ति
 अक्षमावान् अनामकान् । ते धाऽत्राश्रितेन चित्तसा
 क्षान् कुर्वन्ति ते काक्षयता समाना निरुपश्रियो दे
 निर्वाणव्याप्तौ परिनिर्वाणम् ।”

बुद्धने पोर मो कहा है,—

‘अयमपराधमिह मय पर शून्य बहिर्भवम् ।

न विपते छेदिन कश्चिद् नो मारयति शून्यवान् ।”

निर्वाणके विपयसे हाथिबाण बोधपण्यो हा मत
 बंदोअमतसे प्रयत्न नहीं है ।

विशुद्धिमन् एवमेति सिद्धा है,—

“बोधमिच्छामिति श्रेष्ठ उपमावत्ता ।

विश्रान्तिमहर्षेण विवेकितमस्ति ॥” (विशुद्धिमन्)

“यमुक्ते जानक प्रसूयते तिस्रावहस्ति ॥”

(विशुद्धिमन्)

निर्वाणमें निरिच्छदय आत्मीको निरन्तर हममानाहू-
 का विहन करना उचित है । हममान बद्धुयुक्तोका
 आधार है । इस हममानके विहन द्वारा साधक धमन
 सके ही, कि जोब पोर व सार सिद्धा है । त्रिभूतमें ध्याय
 पोर प्रज्ञाका काम किया है, वे जो निर्वाणके पास पहुँच
 चुके हैं । परिवरत व सारके अभियन्तचित्तान द्वारा
 परमायं ज्ञानकाम होता है पोर तदनन्तर व सार तथा
 मैं वे दोनो सिद्धा साधित होते हैं । यही निर्वाण है ।

हम पदप्रत्ययमें सिद्धा है, आत्मी ही परम तप है
 तितिहा ही परम निर्वाण है । जोमके समान धमि, होमके
 समान वाय नहीं । कर्मके समान दुःख मानिसे समान
 दुःख पोर दुःखके समान रोम नहीं है । संस्कारसमूह
 जो परम दुःख है । इन सबका ज्ञान जो आत्मीके जोब
 परमदुःखके आधार अक्षय निर्वाणको काम करता है । इस
 द्वारा मारककुचुम त्रिष प्रकार दिव्य हो जाता है, उनो
 प्रकार बुद्धके आत्मानिमाकी विहन करी । यिमा करनके
 सुनातपदमित निर्वाणक्षय मानिमाय काम कर सकोमी ।

है मिच्छा ! इस देहक्षय नो आको चित्त आको इनको जो
 आययो । राम, होय इत्यादिको किन्तु आत्मने पर्यात्
 इनका तयाग करमेसे निर्वाणकाम होगा ।

इन सब आत्मने प्रतीत होता है, कि निर्वाणकाम
 करना हाथिपातर बौद्धोका मो करम रहेय है । इन
 निर्वाण भाविते जिसे सकोमि मो प्राचातिपातादि इत्यविष
 पक्षुयस्य कम प्रकडे परिहार पोर अतुरायं वताके अनु
 सरक्षा उपदेय दिया है ।

धर्मपदके मलयममें सिद्धा है—

जो मनुष्य प्राचातिपात सुयावाद, अदत्तादान, पर
 दारगमन, सुरावाण इत्यादि कार्याका अनुष्ठान करते हैं,
 वे इसी लोकमें पाणोचतिहा मुच विनय कर कावते हैं ।

धर्मपदके बुद्धवत्तममें सिद्धा है,—

दुःख, दुःखको उत्पत्ति, दुःखका भव व पोर दुःख
 निरोधोपायक अष्टविध धर्ममार्ग, यह अतुरायं प्रत्य
 ही अक्षर पोर उत्तम मरक है । इन्हींको मरकके
 सब प्रकारके दुःख जाति रहते हैं ।

परमज्जोतिहापदममें सिद्धा है,—“एव पन सोता

पत्तिमन् मने आ विद्धि-विचि-विच्छन्ना पानिन पनीनापाय-
 गमनो सत्तत्तत्पदमो सोतापको नाम हाति । सज्जदा
 गामि मन् मावत्ता रामदीवमोदान तनुकरणा सज्ज
 धाममि नाम होति । सज्जिदेव इम सोक पनागन्ता
 इत्थ न् परइत्त भावेत्ता पनववेसज्जिसपहानिन परइ
 नाम होति सोपाकको ।” (वरपत्तकोटिका)

अतुरायंसज्जके अनुमानो आदि इति विच-चिच्छिन्ना
 प्रज्ञा व हाप खीत पापय, राग, होय पोर मोहके सब द्वारा
 सज्जदागामो वेवस एव चार व सारमें प्रज्ञावत्तनपूर्वक
 धमामामी पोर प्रकर्म सबकेमके प्रज्ञा व द्वारा सोपासक
 हो कर चहुँसुपद काम करते हैं । त्रिभूतमें अष्टविध
 पक्षुयस्य कम पदका ज्ञान किया है तथा अष्टाविध धर्म
 मार्गके अनुष्ठान द्वारा अतुरायंसावको प्रकर्म तरक वा
 निया है, वे जो जोबनको पवित्रता द्वारा संसार खीतको
 पार गये हैं पोर खीत-पापक नामके प्रतिह हैं । उन्हें
 इस व सारमें सात बार खीटना पड़ेगा, किन्तु उनका
 निर्वाण निश्चित है । मरकका द्वार उनके निचे चिरक
 है । त्रिभूत न राय, होय पोर मोहका त्याग कर दिया

है, वे सक्रमागामी कहलाते हैं। उन्हें इस संसारमें केवल एक बार भ्राना पड़ता है, पोछे निर्वाणनाम होता है। अनागामियोंकी इस संसारमें एक बार भी लौटना नहीं पड़ता। वे अनेकों वर्ष शुद्धावास ब्रह्मलोकमें वास कर निर्वाणलाभ करते हैं। वाक्कर्मकाय शब्द पटुपरमिताप्राप्त अर्हत्तुगण देव-द्वारा मात्रसे ही निर्वाण लाभ करते हैं। अर्हत्त्व ही चरम और पूर्णपवित्रताकी अवस्था है। इस अवस्थामें धर्माधर्म, रागद्वेष इत्यादि निर्मूल हो जाते हैं। अर्हत्की पुनः इस संसारमें जन्मग्रहण नहीं करना पड़ता। उनको देह मात्र अवशिष्ट रहती है, किन्तु उस देहमें पापादि प्रवेग नहीं कर सकते। उनका अस्तित्वबीज पहले ही शुष्क हो गया है और जीवन प्रदीप पहले ही बुझ चुका है, उनकी केवल देह रह गई है। कुछ समय बाद मृत्यु पहुँच कर उनको देहको ध्वंस कर डालती है। वे निर्वाणलाभ कर अस्तित्व और नास्तित्वसे अतीत हो जाते हैं। अर्हत्त्व (बुद्धत्व) और निर्वाणमें अन्तर यह है, कि अर्हत्की अपनी सत्ता रहती है, किन्तु निर्वाणलाभ हो जाने पर सत्ताका नाश हो जाता है। निर्वाण और अर्हत्त्व (बुद्धत्व) इनमेंसे किसी अवस्थामें भी राग, द्वेष और मोह नहीं रहता। अर्हत्त्व (बुद्धत्व)को उपधिषेय निर्वाण और निर्वाणको अनुपधिषेय निर्वाण कह सकते हैं।

रामचन्द्रने भारते भक्तिगतक ग्रन्थमें लिखा है—

“सर्वे प्राणतिपातात् परधनहरणात् सङ्गमोदङ्गनाया
मिथ्यावादाच्च मयादमवति जगति योऽहालभुके निर्द्वेष-
सङ्गीतसङ्गु गन्धामरणदिलसितादुच्चशय्यापनात्
प्यासीदीमान् स एव त्रिवशनेरगुरो स्वत्सुतो नात्र संका ॥
स्रोतापत्यादिमार्गान् सदवयवयुतान् प्रथित रागादिदोषान् ।
दोषास्ते डिन्नमूला इतभवगतवस्तत्फलैर्यान्तिशान्तिम् ॥”

(भक्तिगतक)

पाश्चात्य पण्डितोंकी निर्वाणविषयक समालोचना ।

किसी किसी ग्रन्थमें लिखा है,—निर्वाण “शान्ति और सुखका प्रालय है” और अन्यान्य ग्रन्थोंमें शून्यताके लयकी निर्वाण वतलाया है। इस प्रकार परस्पर विरोधी मत देख कर १८६८ ई०में अध्यापक मैक्समूलरने इन

सब मतोंके परस्पर सामञ्जस्यके स्थापनको चेष्टा की। उनका कहना है, कि सूत्रादि ग्रन्थोंमें बुद्धकी निज उक्ति है और उन सब ग्रन्थोंके मतमें आत्माके चिरशान्तिमें प्रवेशका नाम निर्वाण है। परवर्ती बौद्ध दार्शनिकोंने कूटतर्कावलम्बन करके अभिधर्मादि ग्रन्थमें निर्वाणका जो लक्षण वतलाया है तदनुसार शून्यताके लयका नाम निर्वाण है।

१८७० ई०में अध्यापक चाइल्ड्सने निर्वाणविषयक परस्पर विरोधीमतसमूहको एक वाक्यता प्रतिपन्न करते हुए कहा है, कि अर्हत्त्व (बुद्धत्व) और निर्वाण ये दोनों ही शब्द बौद्धदार्शनिकोंने निर्वाण प्रथमं व्यवहार किये हैं। अर्हत्त्व और निर्वाण प्रायः एकार्थवाचक होने पर भी उनमें कुछ प्रभेद है। अर्हत्त्व शान्ति और सुखका निदान है, किन्तु सत्ताका ध्वंस ही निर्वाण है। जहां पर बौद्धदार्शनिकोंने निर्वाणको शान्ति का निकेतन वतलाया है, वहां पर निर्वाण शब्दसे अर्हत्त्व (बुद्धत्व) का बोध होता है।

१८७१ ई०में जैम्स-डी-मल्विस महोदयने निर्वाण-विषयक नाना गवेषणापूर्ण प्रबन्धमें अर्हत्त्व और निर्वाणका परस्पर भेद वतलाते हुए बौद्धग्रन्थके परस्पर विरुद्ध वाक्यसमूहके सामञ्जस्यकी रक्षा की है। बौद्धग्रन्थोंमें उपधिषेय निर्वाण (अर्हत्त्व) और अनुपधिषेय निर्वाण दोनोंका वर्णन है।

महामति चानूर्फने निर्वाण, परिनिर्वाण और महा-परिनिर्वाण इन सब शब्दोंका अवलोकन कर उनके अर्थोंमें प्रभेद वतलाया है। किन्तु यथार्थमें वे सभी समार्थक हैं।

किसी किसी पाश्चात्य पण्डितने निर्वाण और सुखावलीको एक वतलाया है। फिर किसी किसीने कामावचर देवलोक और निर्वाण दोनोंको एक ही पदार्थ माना है। वस्तुतः निर्वाणका प्रकृत अर्थ नहीं, मालूम होनेसे ही इस प्रकार अपसिद्धान्तकी कल्पना की गई है।

डाक्टर रीज डेभिड्सके मतानुसार चित्तकी पाप-शून्य स्थिर अवस्था ही निर्वाण है। पूर्ण शान्ति, पूर्ण ज्ञान और पूर्ण विशुद्धि ये सब अवस्थाके फल हैं।

सुप्रसिद्ध डाक्टर स्तोनिगिण्टविटने लिखा है, कि

'निर्वाच सप्ताहकार पौर सप्त सप्तकाम दोनों एक हो बात है। प्रसङ्ग सम्बन्धमे मतमे अर्ग' पौर निर्वाच दो पक्ष को बिसरलोके पक्षसम्बन्धीय है। सम्बन्ध के अनुष्ठान द्वारा सप्ताहतीमे पूर्व सुप्रयोग किया जाता है पौर दम्भक शानके परिपक्वमे स सारका सम्बन्ध पौर निर्वाच नाम होता है। मन्दाका सम्बन्ध एव स पौर स सारका सम्बन्ध सम्बन्ध निर्वाचके विषयोभूत है।

इतरे पक्षपक्षमे लिखा है, कि निर्वाच सम्बन्धका पक्ष सप्ताका एव स के वा नहीं, एम विषयमे बोधीमे मत भिद है। जो मुख हो, भविष्यत उच्येन दुष्क पौर कर्मका सम्बन्ध सम्बन्ध ही निर्वाच है। उनका कहना है, कि आत्मव्याप्तिये मे मतमे निर्वाच सुबन्धका एक स्थान है जबकि उच्येगति सुबन्ध ही नहीं है पौर जो पक्षमे मनो एम तथा परिपक्व है। सुप्रदेवमे स सारके वादि पौर पक्षका निष्पत्त्य नहीं किया। सुबन्धे मतासुरा परिष्कामान बहुभगवत् दुष्कमप है सुता। उसमे सम्बन्ध विमुक्तिनाम करना नितान्त प्रसङ्गीय है। इस दुष्कमप अत्यन्त सम्बन्ध ही निर्वाच है।

रमारण्य विषयमे चीन देस्योय बोध्यमतकी समामो बना करते हुए लिखा है कि मातासुंको प्रधाम्युन शास्त्रोकाके मतमे जो पद्याय्य सचिक्तक पौर माध्वति कालके पत्नीत है पौर निमके उपाह तथा निरोध नहीं है, कभीको निर्वाच कहते है। उनका लिहाज यह है कि जो तोना कायमे परिवहता रक्ता है पौर जो देस्यमियोपमे परिष्कव नहीं है इस प्रकारको परध्व्यातिरिक्त पक्षका ही निर्वाच है। उनके मत मुद्दर एवमप पक्षका सारममे यह कि सप्ताहके पतिरिक्त पक्षका ही निर्वाच है।

रमारण्य प्रसङ्गमे तिम्बतोय बोधमतकी पालोचना करते हुए कहा है, कि दुष्कका एव ही निर्वाच है। अर्थात् अनुराजसम्बन्धका तत्त्वानुसम्भान करमेके सिद्धा जाता है कि सप्तामाय ही दुष्क है, पतपव निर्वाच सम्बन्धका पक्ष सप्ताका एव है।

महामति पोम्डननम रित्र केमिड्स, सोनिबर निशिपस्य डाष्टर वलहरम पादि विद्वानोने निर्वाचके विषयमे बहुत कोष की है।

तिम्बतोय भाषामे निर्वाच सम्बन्धका पक्ष दुष्कका पक्ष एव है।

चीनभाषामे निर्वाचवाचक 'यस्यु' शब्दका प्रयोग है। इस शब्दशब्दमे मन्दाका एव स पौर निर्वाच दोनों का ही बोध होता है। अतएव तात्पर्य यह है, कि सुप्रयोग रहित शब्द ही निर्वाच है।

निर्वाचका शास्त्ररकार

भारतवर्षमे दुष्क निर्वाचतत्त्वका पाविपकार अब हुआ है इसका निर्वाच करना बहुत कठिन नहीं है। मगवान् बुद्ध जो इस तत्त्वके प्रथम प्रवर्तक है, इसमे सम्बन्ध नहीं। स सार मिथ्या के पक्ष सिद्धा है एम मतका उच्ये मे जो सचये पक्षमे जगतामे प्रचार किया पौर अपने जीवनमे उनका प्रयोग इष्टान्त दिखना दिया। उर्दे हजार वर्ष पहले सुप्रदेवने कोषसोका सवरक की, पतपव निर्वाचतत्त्वका सपक्षमे काममे काम उर्दे हजार वर्ष है।

बीचो का कहना है, कि मुन प्रधापारमिता महा व्याख्याकी बनारि हुई है। महाकाम्मा सुबन्धे लिख प। प्रधापारमिता पक्षमे निर्वाचतत्त्व पौर पविष्याको सुन्दर तथा विमद व्याख्या निको है।

पयसाहस्रिका प्रधापारमिता हितोय कोविचइमके समवर्षे रही गई। ई०सन्के ३०० वर्ष पहले हितोय कोविचइमकी प्रतिष्ठा हुई। इस पयसाहस्रिका प्रधा पारमितामे निर्वाचतत्त्वका औपा विमद विवरक लिखा है, उच्येमे सज्जमे अनुष्ठान किया जाता है कि कस समय निर्वाचमत जनसाधारणमे बहुत दूर तक विस्त्रत था।

सुधरितशास्त्रके प्रथमा पञ्चमोप ई०सन्को १म मा २य शताब्दके पहले निष्काम प। चीनपरिष्काक युएन सुबहुने ई०स०मे भारतवर्षके लोठटे समद पञ्चमोप को प्राचीन कवि बतलाया है। कोर्द कोर्द अनुष्ठान करते हैं, कि पञ्चमोप कलिष्के समोपदिष्टा प। जनका सुधरितशास्त्र एको शताब्दके भारतवर्षमे चीनभाषामे पौर उच्ये वा उच्ये शताब्दोमे तिम्बतोय भाषामे अनुष्ठादित हुआ। इस सुधरितशास्त्रमे निर्वाच पौर पविष्याकी ओसी सुन्दर व्याख्या देखो जाती है उच्ये कान पढ़ता है, कि पञ्चमोपके नमबने मे निर्वाचतत्त्व सेवार विषये प समामोचना चलतो थी।

सुपसिध कलिप्तविष्कार पक्ष ईपात्रकके बहुत पहले का लिखा हुआ है। यह पहले शताब्दीके चीन

निर्वाह (सं० पु०) निर्-वह वञ् । १ कार्यसम्पादन ।

२ किसी काम या परम्पराका चला चलना, किसी बातका जारी रहना, निवाह । ३ किसी बातके अनुसार बराबर आचरण, पालन । ४ समाधि, पूरा होना ।

निर्वाहक (सं० त्रि०) निर्-वह-ण्ड-न्त्यु । निष्पाटक, किसी कामका निर्वाह करनेवाला ।

निर्वाहण (सं० स्त्री०) निर्-वह-ण्ये गिच् म्य ट् । निर्वाहण, नाशोक्तिमें प्रयुक्त कथाकी समाधि ।

निर्वाहिन (सं० त्रि०) निर्वाह अस्यर्थ-इनि । चरण-गौल ।

निर्वाहित (सं० त्रि०) निर्-वह-ण्ड-क्त । सम्पादित, निष्पादित ।

निर्विकल्पक (सं० त्रि०) निर्गतो विकल्पो ज्ञातज्ञेयत्वादि विभागो विशेष्यविशेषणतासम्बन्धो वा यस्मात् ततो कप् । १ वेदान्तोक्त ज्ञातज्ञेयत्वादि विभागशून्य समाधिभेद, वेदान्तके अनुसार वह अवस्था जिसमें ज्ञाता और ज्ञेयमें भेद नहीं रह जाता, दोनों एक हो जाते हैं । २ न्यायके मतमें अलौकिक आलोकनात्मक ज्ञानभेद, न्यायके अनुसार वह अलौकिक आलोकनात्मक ज्ञान जो इन्द्रियजन्य ज्ञानसे विन्यक्त शून्य होता है । बोधशास्त्रोंके अनुसार केवल ऐसा ही ज्ञान प्रमाण माना जाता है ।

निर्विकल्पसमाधि (सं० पु०) निर्विकल्पः समाधिः । समाधिभेद, एक प्रकारकी समाधि जिसमें ज्ञेय, ज्ञान और ज्ञाता आदि का कोई भेद नहीं रह जाता और ज्ञानात्मक सच्चिदानन्द ब्रह्मके अतिरिक्त और कुछ दिखाई नहीं देता ।

वेदान्तसारमें इसका विषय यों लिखा है—समाधि दो प्रकारकी है, सविकल्प और निर्विकल्प । ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय इन तीनोंका ज्ञान रहने पर भी अद्वितीय-ब्रह्म वस्तुमें अखण्डाकारमें आकारित चित्तवृत्तिके अवस्थानका नाम सविकल्पसमाधि है । इस सविकल्प अवस्थामें जिस प्रकार नृगण्य हस्तिसे हस्तिका ज्ञान रहते भी मटीका ज्ञान होता है, उसी प्रकार हैतज्ञान-सत्त्वमें भी अद्वैत ज्ञान होता है । जब ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय वे तीन विकल्प ज्ञानके अभावमें हों, अद्वितीय ब्रह्म

वस्तुमें एक ही कर रहें, अखण्डाकारमें आकारित चित्तवृत्तिका अवस्थान हो, तब ऐसी अवस्था हीनमें निर्विकल्पसमाधि होती है । इस समय ज्ञेय, ज्ञान और ज्ञाता वे सब एक ही जाते हैं, ज्ञानात्मक सच्चिदानन्द ब्रह्मके सिया और कुछ भी नहीं रहता । जिस प्रकार जलमें लवणखण्ड मिलानेमें जलाकारमें आकारित लवणके लवणत्वज्ञानके अभावमें केवल जलका ज्ञान होता है, उसी प्रकार अद्वितीय ब्रह्माकारमें आकारित चित्तवृत्तिका ज्ञान रहते हुए भी अद्वितीय ब्रह्मवस्तुमात्रका ही ज्ञान होता है ।

इस समाधिकी तुलना योगकी सुषुप्ति अवस्थाके साथ की जाती है । यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और सवियस्यमसाधि ये सब इसमें अङ्ग हैं ।

निर्विकार (सं० पु०) प्रकृतेरन्यथा भावः विकारः निर्गतो यस्मात् । १ विकाररहित, वह जिसमें किसी प्रकारका विकार या परिवर्तन न हो, परमात्मा । (त्रि०) २ विकारशून्य, जिसमें कोई विकार या परिवर्तन न हो । निर्विकारवत् (सं० त्रि०) निर्विकारः वियतेऽस्य, सत्तु य, मस्य व । रूपपरिवर्तनोय, जो परिवर्तनके योग्य न हो, सदा एक-सा रहनेवाला ।

निर्विकास (सं० त्रि०) प्रसूट, विकासरहित ।

निर्विघ्न (सं० त्रि०) १ विघ्नरहित, जिसमें कोई विघ्न न हो । (क्ति० वि०) २ विघ्नका अभाव, बिना किसी प्रकारके विघ्न या बाधाके ।

निर्विचार (सं० त्रि०) निर्गतो विचारो यत् । १ विचाररहित । (पु०) २ पातञ्जलदर्शनोक्त सूक्ष्मविषयक समाप्तिरूप समाधिभेद ।

सवितर्क और निर्वितर्क समाधि द्वारा सूक्ष्मविषयक सविचार और निर्विचार समाधिका निर्णय होता है ।

सविचार और निर्विचार समाधिका विषय सूक्ष्म और उभकी सीमा प्रकृति है । इन्द्रिय तन्मात्र और अहंकार इनकी मूल प्रकृति है । ये सब क्रमपरम्पराके अनुसार प्रकृतिमें जा कर परिसमाप्त हो जाते हैं ।

निर्मल चित्त जब किसी एक अभिमत वस्तुमें तन्मय हो जाता है, तब उसे संप्रज्ञातयोग कहते हैं । यह

सम्प्रदायकीय सविचार, समाधि पादि नामोधि पुकारा जाता है। इस समाधिधि चार प्रकारके संकेत कल्पित हुए हैं, सवितक, निर्वितक, सविचार और निर्विचार। जब कभी पाठकमनमें तन्मय होनेसे यह सवितक और निर्वितक तथा सूक्ष्मसे पाठकमनमें तन्मय होनेसे सविचार और निर्विचार कहलाता है। चित्त जब स्वयंमें तन्मय रहता है, तब यदि उससे भाव विकस्यमान रहे, तो हम तन्मयताको सवितक और यदि विकस्यता घान न रहे, तो उसे निर्वितक कहती हैं।

चित्त चाहे किन किनो पदार्थमें अभिविष्ट हो, पक्षी नाम पक्षि सङ्केत-सङ्कलित और जन्मे पक्षि मनुष्य स्वप्नमें पर्वकलित होता है। जैसे यह शब्द कहनेसे पक्षि स-प-+ट य इन चार बर्णोंका बोध होता है, पक्षि शब्दपुत्रोवादिब्रह्मंसा यदुविमियके साथ उसका जो सङ्केत है उसका अर्थ होना है और जन्मे पक्षि सङ्केतकारको चित्ररूप निरूपक होती है या नहीं? यदि होती है, तो यह ठोका भाव मया कि प्रत्येक तन्मयतामें उस प्राणुपूर्विक ज्ञानरूपका प्रथम है। फिर ऐसा भी होता है, कि यह देखनेके साथ प्रथम यह शब्दके सङ्केत में समझ शब्दपुत्रोवादिमनुष्य और उष्ण साथ सङ्केतका सङ्केतज्ञान तथा स-प-+ट-य इन चारों बर्णोंका ज्ञान जयना सङ्केतकार नामका ज्ञान प्रति यौग्य उत्पन्न हो कर प्रथमोत्पन्न ज्ञान सुय हो जाता है। किन्तु सङ्केतकार ज्ञान वा सङ्केतकार मनोवृत्ति विद्यमान रहती है। यतएव जहाँ शब्द पाठकमनका नामज्ञान और सङ्केतज्ञान रहता है जहाँ सवितक और जहाँ सङ्केतज्ञान वा नामज्ञान नहीं रहता, किन्तु पर्वकार ज्ञान रहता है जहाँ निर्वितक होता है। मान लो, चित्त यदि स्वयंमें तन्मय हो और उससे साथ यदि नामज्ञान और सङ्केतज्ञान रहे, तो सवितक कल्पयोग और यदि नामज्ञान तथा सङ्केत ज्ञान न रहे, किन्तु जब ज्ञानधरमुक्ति स्पृशित हो, तो उस अवस्थाको निर्वितक कहती हैं। सविचार और निर्विचार भी इसका नामान्तर है। इसका प्रथमत्वमनोय विषय शून्य मनु है। शून्य मनुके मध्य पक्षमें पक्षमूल, तदपेक्षा शून्य तन्मय और इन्द्रिय है। इन्द्रियमें भी मध्य प्रथम तन्मय है, पक्षि सङ्केतक और प्रकृति। यही योग्यी

वरम बोधा है। परमाण्वयोग इसमें भी सूक्ष्म और प्रकृत्य है। जिन सब समाधियोंका विषय कहा गया वे सबीक्षणमाधि हैं। मनीषममाधिसे मध्य सविनर्त-समाधि को निरूपक और निर्विचार समाधि सबसे व्युत्पन्न है। इन निर्विचार योगका अच्छो तरह पश्याय हो जानेंगे जो चित्तका स्वच्छत्वतिपवाह इष्ट हो जाता है। उन समय कोई दोष वा बिमो प्रकाशका स्तंग प्रथम कोई मानिय हो नहीं रहता। सर्वप्रथमच चित्ततन्त्र नितान्त निर्मल होता है और पाप्मा भी उस समय विज्ञान होती है। निर्विचारयोगके मध्य शून्य प्राप्त होने पर निर्मल प्रज्ञा उत्पन्न होती है। जब निर्विचारपक्षाके साथ प्रथम किमो प्रज्ञाको तुलना नहीं होती। इन्द्रियजनित प्रज्ञा वा अनुमानज्ञान प्रथम या स्वप्नज्ञानजनित प्रज्ञा कोई भी निर्विचारपक्षाके समकक्ष नहीं है। क्योंकि उचितप्रज्ञा प्राप्त मनुष्या एक-दिम वा सामान्यज्ञानमात्र पश्य करती है नियेय तत्त्व ज्ञान नहीं सक्ती। किन्तु निर्विचार नामक योग्य प्रज्ञा का शून्य का विपरीत का स्ववहित समो पक्षाय करती है। इसका कारण यह है कि बुद्धि पदार्थ महान् सर्वव्यापक और सब प्रकाशक है। उसको सर्वज्ञग्राह्य रश्च और तमोगुणसे पाहल रहती है। हम मनस्वरूप रश्च और तन्मय पपनीत होनेसे बुद्धिभी सर्वप्रकाशक यत्रि पापसे पाप प्राणुमूल होती है। तबो कारण है, कि निर्विचारपक्षाके साथ किमो प्रज्ञाकी तुलना नहीं होती। (शाक्यप्र०) विशेष विवरण समाधि शब्दमें देखो; निर्विचिञ्चिभ्य (म० वि०) निगता विचिञ्चिभ्या कथ्य। निरस्येव।

निर्विचेष्ट (म० वि०) यज्ञान अह, मुख, विरमूय।
 निर्वितक (म० वि०) निगतो वितक यन्मान्।
 विनकंशुय। (पु०) १ पाठकमनदयंनोष समाधि भेद। निर्विचार वेको।
 निर्वितक समाधि (म० स्त्री०) दोमदयंनके चतुस्यार एक प्रकारको मनीष समाधि जो किमो स्व न पाठकमनमें तन्मय होनेसे प्राप्त होती है और जिनमें कम पाठकमनके भाव और सङ्केत पादिका कोई ज्ञान नहीं रह जाता, किन्तु उनसे पाकार पादिका जो ज्ञान होता है।

निर्विद्य (सं० त्रि०) निर्विद्यते विद्या यस्य । १

विद्याहीन, मूर्ख, जो पटा लिखा न हो ।

निर्विधत्त (सं० त्रि०) १ कार्य करनेमें अनिच्छुक । २
आसक्तिविहीन ।

निर्विध्व (सं० त्रि०) निर्गतः विध्वत् । १ विध्वयवर्त
विध्वत्, जो विध्वयवर्तने निकली हो । स्विशा टाप,

२ विध्वयवर्तसे निकली हुई एक नदीका नाम ।

निर्विभेद (सं० त्रि०) अभिन्न, भेदरहित ।

निर्विमर्ग (सं० त्रि०) विन्तर्हीन, विमर्गशून्य ।

निर्विरोध (सं० त्रि०) विरोधहीन, अविवादी, निरोध,
शान्त ।

निर्विरोधिन् (सं० त्रि०) निर्विरोध अस्त्वर्थे षनि ।
निरीह, शान्त, निर्विवादी ।

निर्विवर (सं० त्रि०) १ अद्रिग्रन्थ, विना छेदका । २
अशिराम, नियत ।

निर्विवाद (सं० त्रि०) क्लृप्तशून्य, जिसमें कोई विवाद
न हो, विना झगड़ेका ।

निर्विविष्णु (सं० त्रि०) जो जानना नहीं चाहता हो ।

निर्विवेक (सं० त्रि०) विवेचनारहित, अविवेकी, जो
किसी बातकी विवेचना न कर सकता हो ।

निर्विवेकता (सं० स्त्री०) निर्विवेक होनेका भाव ।

निर्विशङ्क (सं० त्रि०) शङ्कारहित, निर्भय, निडर ।

निर्विशङ्कित (सं० त्रि०) शङ्काहीन, भयरहित ।

निर्विशेष (सं० त्रि०) निर्णयविशेषो यस्य । १ सर्व-
देवैरूपविशेषरहित परब्रह्म । (त्रि०) २ विशेषरहित,
तुल्यरूप ।

निर्विशेषण (सं० स्त्री०) पार्श्वक्यहीनता, अभेदत्व ।

निर्विशेषत्व (सं० स्त्री०) १ विशेषणरहित, परब्रह्म ।
(त्रि०) २ विशेषणरहित ।

निर्विशेषवत् (सं० त्रि०) निर्विशेष तुल्य ।

निर्विष (सं० त्रि०) निर्गतं विषं यस्मात् । १ विषरहित,
जिसमें विष न हो । (सु०) २ जलसर्प, पानीका सर्प ।

निर्विषङ्क (सं० त्रि०) आसक्तिरहित ।

निर्विषय (सं० त्रि०) अगोचर, जो इन्द्रियग्राह्य
नहीं है ।

निर्विषया (सं० स्त्री०) निर्विषयाप, लक्षणभेद, एक

प्रकारकी वास । पर्णय-अपविषा, निर्विषी, विषंहा,
विषापहा, विषहन्तो, विषाभावा, अविषा, विषयैरिषो ।

गुण—ऋट, शीतल, कफ, वान और अस्त्रोपनाशक ।
निर्विषी देखो ।

निर्विषी (सं० स्त्री०) असवर्गकी जातिकी एक घास
जो पश्चिमोत्तर हिमालय, काश्मीर और मलयगिरिमें
प्रचिकतासे होती है । इसकी जड़ पतलमते समान
होती है जिसका व्यवहार सांप-विच्छू, आदिक विषकी
अतिरिक्त शरीरके और भी अनेक प्रकारके विषकी नाश
करनेके लिए होता है ।

डाक्टर एफ. हेमिल्टनका कहना है, कि नेपालमें जो
एकोनाइस मिलती है वह चार जातियोंमें विभक्त है,—

१ सि गिया विष, २ विष, ३ विषम और ४ निर्विषी ।

वे कहते हैं, कि निर्विषीमें विष जातीय कोई वस्तु
नहीं है । यह निर्विषी एकी नाइसविशेषकी जड़ है ।

मिटर कोन्यूकका कहना है, कि यह निर्विषी विष-
नाशक है और इससे शरीरका विष निकल कर लेहू

साफ होता है । डाक्टर डायमक (Dr. Dymock)-
के मतसे हिन्दू चिकित्सकगण एकीनाइसकी निर्विषी

नहीं कहते, बल्कि उसे लता मानते हैं जो विषनाशक
है । हिन्दुओंका निर्विषी शब्द निर्विषीसे भिन्न है ।

विषसे, जितने विष हैं सबका उधे होता है ।

इससे साबित होता है, कि पुराकालमें निर्विषी
नामक कोई निर्दिष्ट वृक्ष नहीं था । पर हाँ, जब एकी-

नाइस विषनाशक है और लतापत्ता-जात औषध प्रस्तुत
हुई हैं, तब वही औषध निर्विषी कहलाती थी ।

आसामसे जो 'ostus root' पाई गई थी, उसीकी
वर्णने अधिकांश निर्विषी कहते थे । हिमालयके मेघ-

पालकगण एक प्रकारकी एकीनाइस खाते हैं, उसमें कुछ
भी विष नहीं है, वरन् वह बलकारक है । कोलबूकका

कहना है, कि निर्विषी और जड़वार ये दोनों एक ही
हैं । एन्सली (Ainslie) के मतसे हेमिल्टनवर्णित

Nirbishi शब्द Nirbisi-से व्युत्पन्न है । उनका कहना
है, कि Nirbisi शब्द ही टिन नाम Curcuma Zed-

oaria है, किन्तु प्राचिनिक उद्भिद् विद्या-विद् इसे Del-
phinium denudatum बतलाते हैं । हिमालयके किसी

बिम्बो स्नायुः श्लोम योपोज्ज पोवचके हृद्य को ओ निर्दिष्टो
 कहती है। *Cynantus lobatus* नामक निपाज्जो
 प्रकृत निर्दिष्टो हृद्यमे मुनको निमित्त सिद्ध कर उसे वात-
 के ऊपर लगानेसे वातरोग पारोप्य हो जाता है। मोड
 शब्दमें जो निर्दिष्टो है उससे मुनका से श्लोम दन्त-
 वेज्जाके समय पदबहार करते हैं। *Trimalium* पर्यंतका
Dolphinulum denudatum दृष्टिमागमें उत्पन्न होता
 है। विमध्यसे ले कर कुमावून पौर हृद्य तक यह
 मूलो नामसे परिच है। कहीं कहीं इसीको निर्दिष्टो
 कहती है।

श्रीर मन्थद होषिने २ मन्थरै अङ्गारका उच्चैश्च
 द्विधा है। इनमेंसे एकटाई हृद्य सत्रमे उपकारी है।
 इनका वाय्वाट पक्षसे मोठा पौर पोषित होता है। यह
 बाहरसे तो देखनेमें चाम्पा, पर भीतरसे बैंगनी रंगका
 मयता है। तिम्बन, सिवाल पौर बहुपुरमें द्वितीय पौर
 तृतीय प्रकारका हृद्य पाया जाता है। चतुर्थ प्रकार
 का हृद्य हृद्य जाता होता है पौर म्थदमें बहुत होता।
 कहती है, कि दक्षिण प्रदेशमें पार्श्वरवप्रदेशमें यह हृद्य
 बहुत उत्पन्न होता है। सुतरां यह *Dolphinulum* or
Acomtum जातिका लक्ष्य है। पश्चिम प्रकारके हृद्यका
 नाम *Antiba* है जो स्पिन प्रदेशमें पैदा होता है। काश्मिर
 सुशोण सरीसृका कहना है कि दक्षिण भारतमें काज्जार-
 में तीन प्रकारका अङ्गारक विद्यता है जो विद्याज पदाब्
 ब्रजित है पौर एकोगाष्ट जातिका है। इन प्रकार
 नामा स्थानोंमें नामा प्रकारकी निर्दिष्टो देखनेमें पाती है।
 निधिष्ट (म० ति०) निद्र विद्य-त्त । १ कृतमोम, श्री
 मोम कर चुका हो। २ प्रायश्चित्त, जो पपमो तन-
 काह पा चुका हो। ३ कृतविवाह, जो विवाह कर
 चुका हो। ४ कृतान्ध्रि होम, जो पन्थिहोम कर चुका
 हो। ५ मीप्य जो मीम करनी यीप्य हो। ६ सुप्त,
 जो कोड़ दिया गया हो।
 निर्दिष्ट (म० पु०) निर्दिष्ट भोगमस्य । १ योभ्रगुप्य
 त्रिपमें बीज न हो। २ कार्पकहित जो दिना कार्पक
 का हो। (पु०) ३ पातपञ्चमीक समाधिमें, पातपञ्च
 के पनुमार यह समाधि।

दन्ध्यात इति अत्र दन्ध्र हो जाती है, तत्र चर्क-
 १०१ २११ २३

निरोध नामक मसाधि होती है। तात्पर्य यह कि योगो
 श्लोय बहुत पदमेथे निराश-श्रम्यास करी पा रक्षे से
 पमो उषो पय्यापके बन्धसे उभके चित्तका यह पत्र
 मन्थन भी निश्चय वा रिक्तोण हो गया। चित्त त्रिभ बीज
 का पवनमन्थन कर वस्तमान वा, पमो यह भी नष्ट हो
 गया। इसी पदबलाको निर्दिष्टसमाधि कहती है। यह
 निर्दिष्टसमाधि जब परिपक्वा होगी, चित्त उषो समय
 पपमो चित्तसूत्रि पञ्जतिवा पापय जेगा। प्रकृति भी
 स्वतन्त्रा हो जाइगी, मन्थिदानम्यमय परमात्मा मो प्रकृतिसे
 बन्धनसे मुक्त हो जाईगी। इन पदबलामें मनुजको सुख,
 पुत्र्य पादिका कृष्ण भी पनुभव नहों होता पौर उषका
 माध हो जाता है।

निर्वीजा (स० श्लो०) निर्दिष्ट टाप । काश्मीरद्राघा,
 बिशमिग नामका मीसा।

निर्वीर (स० ति०) निर्दिष्टो बीरो यध्यात् । चोरगुप्य,
 प्रसुताहोम।

निर्वीरा (स० श्लो०) निर्दिष्टो बीरवत् पतिगुणो वा
 यथाः । पतिपुत्रविहीन, वर श्लो त्रिपक्षे पति पौर पुत्र
 न हो।

निर्वीर्य (स० ति०) निर्दिष्टो बीर्या यथाः । वीर्य
 गुप्य, कर्हा कता न हो।

निर्वीर्य (स० ति०) निर्दिष्टो बीर्य, वन वा तीव्ररहित।

निर्वीर्य (स० ति०) हृद्यगुप्य, विना विकृता।

निर्वीर्य (स० ति०) निद्र हृद्य । सुप्य, प्रपय, सुप्य।

निर्वीर्य (स० श्लो०) निद्र-उत्तमम् । १ सुस्विति प्रस
 कता, पानम्य । २ मीप्य । ३ स्यन्तु । ४ शान्ति । (पु०)
 ५ विदमं मीप्य उच्छिष्टे सुप्त।

निर्वीर्य (स० ति०) निद्र, हनत्त । निप्यत्त, श्री पूरा हो
 गया हो।

निर्वीर्यमम् (म० पु०) दावरगुणके वपुस मोव लु० में
 निर्वीर्यमम् (स० पु०) विप्यु।

निर्वीर्य (स० श्लो०) निद्र, हन मन्थि-निम् । १ निप्यत्ति
 (ति०) निर्दिष्टो कृतनिर्वीर्यका यत्त । २ श्रीविचारहित,
 श्रीविचारहोम।

निर्वीर्य (स० ति०) १ कर्षकहित, विना बरकाका ।
 २ हृद्यमाहित, विना केशका।

निर्वेग (स० त्रि०) गतिहीन, स्थिर ।
 निर्वेतन (स० त्रि०) वेतनहीन, जो तनखाइ नहीं लेता हो ।
 निर्वेद (स० पु०) निर-विद भावे-घञ् । १ स्वाव
 मानना, अपमान । २ शान्तरसका स्थायिभाव । ३
 परम वैराग्य । ४ वैराग्य । ५ खेद, दुःख । ६ अनुताप ।
 (त्रि०) निर्गतो वेदो यस्मात् । ७ वेदरहित ।
 निर्वेदगत् (स० त्रि०) निर्वेद-प्रतुष् मव्य वः । वेद-
 ह्यपो ।
 निर्वेधिम (स० पु०) सुश्रुतोक्त कर्णवेधन आकारभेद,
 सुश्रुतके अनुसार कान छेदनेका एक औजार ।
 निर्वेपन (स० त्रि०) कम्पनहीन ।
 निर्वेश (स० पु०) निर-विश-घञ् । १ भोग । २ वेतन,
 तनखाइ । ३ मूर्च्छन, मूर्च्छा । ४ विधाइ, व्याइ, शादी ।
 निर्वेशनीय (स० त्रि०) भोग्य, लभ्य भोग करने योग्य,
 पाने लायक ।
 निर्वेष्टन (स० स्त्री०) नितरां वेष्टनमव । १ नाडोचोर,
 सूत्रवेष्टन नलिका, लुनाहोंका एक औजार, ढरकी ।
 (त्रि०) निर्गतं वेष्टं यस्मात् । २ वेष्टनरहित ।
 निर्वेष्टव्य (स० त्रि०) १ प्रवेशनीय । २ परिशोभित ।
 ३ पुनस्कार योग्य ।
 निर्वेष्टुकाम (स० पु०) निर्वेष्टुं कामः यस्य, तुमोऽन्त-
 लोपः । विवोदुकाम, वह जो विवाह करना चाहता हो ।
 निर्वैर (स० त्रि०) शत्रुभाववर्जित, मित्र ।
 निर्वैरिण (स० स्त्री०) शत्रुताहीन, हृषसे रहित ।
 निर्वोदु (स० त्रि०) सहनकारो, विभाग करनेवाला ।
 निर्वोध (स० त्रि०) ज्ञानहीन, मूर्ख ।
 निर्व्यञ्जन (स० त्रि०) व्यञ्जनहीन ।
 निर्व्यथ (स० त्रि०) व्यथाहीन ।
 निर्व्यथन (स० क्तो०) निर-व्यथ भावे ल्युट् । १
 छिद्र, छेद । २ नितरां व्यथन, निश्चयरूपसे पोड़न । (त्रि०)
 ३ व्रथाशून्य, जिसे तकलीफ न हो ।
 निर्वर्पेक्ष (स० त्रि०) निरपेक्ष, वैपरवा ।
 निर्व्यलोक (स० त्रि०) अकपट, सत्य, छलरहित ।
 निर्व्याकुल (स० त्रि०) व्याकुलताशून्य, स्थिरचित्त ।
 निर्व्याप्र (स० त्रि०) व्याप्रपरिशून्य, जहाँ वाचका डर
 न हो ।

निर्व्याज (स० त्रि०) १ अकपट, छलरहित । २ वाचा-
 हीन ।
 निर्व्याधि (स० त्रि०) व्याधिगून्य, रोगमुक्त, नोरोग,
 चंगा ।
 निर्व्यापार (स० त्रि०) निर्गतो व्यापारो यस्मात् ।
 व्यापारशून्य, विना कामकाजका ।
 निर्व्यूट (स० त्रि०) निर-विबह-क्त । १ निष्पन्न । २
 समाप्त । ३ सुसम्पन्न । ४ स्थिर, अप्रतिवन्ध ।
 निर्व्यूह (स० पु०) निर्व्यूहं पृषोदागदित्वात् साधुः ।
 निर्व्यूह, नागदन्तिका, दोवारमें लगाई हुई वह नकड़ी
 पादि जिसके ऊपर कोई चोज रखी या बनाई जाय,
 खूंटो । (त्रि०) २ व्यूहरहित सैन्यादि ।
 निर्व्रण (स० त्रि०) १ व्रणरहित, जिसे फोडा न हो ।
 २ अक्षत, जिसे घाव न हो ।
 निर्व्रत (स० त्रि०) यागयज्ञहीन, व्रताचारशून्य ।
 निर्व्रक्त (स० त्रि०) १ व्रमूचित, उखाड़ा हुआ । २
 ध्वंसप्राप्त, नाश किया हुआ ।
 निर्व्रनयनी (स० स्त्री०) सर्पत्वक्, साँपकी केशुली ।
 निर्व्रनयनी देखो ।
 निर्व्रगण (स० स्त्री०) निश्चयेन हरणं, निर-व्र-श्रुट् ।
 १ शवदाह, शवकी जलानेके लिये ले जाना । २ दहन,
 जलाना । ३ नाशन, नाश करना ।
 निर्व्रगीय (स० त्रि०) निःसारणयोग्य, अलग करने
 योग्य, बाहर करने लायक ।
 निर्व्रत्तव्य (स० त्रि०) अपभारितकरण योग्य, हटाने
 योग्य ।
 निर्व्रस्त (स० त्रि०) १ हस्तशून्य, विना हाथका । २
 कर्मादिमें अपारग । ३ लोकावलहीन ।
 निर्व्राद (स० पु०) निर-वृद घञ् । शब्दभेद ।
 निर्व्राह (स० पु०) निर-वृ-घञ् । १ मलमूत्रादित्वात् ।
 २ प्रेतदेहकी दाहार्थं वहिनयन, शवकी जलानेके लिए
 ले जाना । ३ यथेष्ट विनियोग । ४ उत्पाटन, जहसे
 उखाड़ना । ५ नाश, बरदादी । ६ खुजाना, पूँजी ।
 निर्व्रासक (स० त्रि०) निर्व्रासति वहिर्गमयति निर-वृ-
 यत् । शवकी जलानेके लिए घरसे बाहर ले जाने-
 वाला ।

निर्हारपुर (स० स्त्री०) निर्हारमन्त्र, पाषाणा ।
निर्हारिन् (स० पु०) निर्हारति दूर गच्छति निर, ह
रति । १ पूरगामिन्, बह मन्थ जो बहुत दूर तक
पेसी । (सि०) २ निर्हारकर्ता, मन्थको अहानिसे निवे
से कहिवाया ।

निर्हाम (स० पञ्च०) हिमस्वामावाः पदयोभावा । १
हिमामाव । निर्हत हिम यस्मात् । (सि०) २ हिम
शून्य ।

निर्हृत (स० सि०) अपहृत, हटाया हुआ, निष्काया
हुआ ।

निर्हृत्य (सं० सि०) भूलने आया हुआ ।

निहृति (स० स्त्री०) जपन्त्यात्, बह जो अपने स्नान
में उठाय गया हो ।

निहृत्तु (स० सि०) १ नारयणोत्त । त्रिमूर्ति छोड़ें छिपु वा
कारण न हो ।

निहृत्ति (स० पु०) नि-हृत्-त्ति । मन्थदेद, पपी चानि
का मन्थ ।

निहृत्तिन् (स० पु०) मन्थकृत्, ध्वनित ।

निहृत्तम (स० पु०) निमेषिष्य ज्ञातः । नितात्त ज्ञान,
सपशान ।

निर्हृत् (स० स्त्री०) निर्हृत्, साहसो ।

निह (स० पु०) एक राक्षसका नाम जो माको नामक
राक्षसको बहुत नामकी प्लासे उत्पन्न हुआ था और जो
विभोयचका मन्थो था ।

निह—एक चन्द्रके मन्थपथ । हितोव ब्रह्मपुत्रसे दन्विने
पच्छा नाम कहाया था । पिपासोबुद्ध समयमें भी
इन्दिने अपने बन् बुद्धि और साहसका पच्छा परिचय
दिहा था । निहारीबुद्धके लो ।

निहृत्—हेडरावाद राज्यके बोदर त्रिसेवा एक तासुव ।
इसका भूवरिमाच १११ वर्गमाय और लोचनम्ब
सगमक ३०००० है । इसमें ८८ घाम जगते हैं त्रिमूर्ति
२० जगते हैं । यहाँका राजरत्न छिद्र वाणके लुप्त
कर है ।

निहन्त—१ तिज्जल एक घाम । यह चुङ्ग (Changha)
त्रिसेवा काजको घयवा निहन्त (Nilant) नदीके किनारे
पवसित है । २ उत्तर भारतको एक नदी । यह तिज्जल

के निबन्ध कर हिमालयको पार करती हुई भागोरको
पर्यान्त गङ्गा नदीके साथ मिल गई है । यह नदीमें
जो नदी चुगमी नामसे बहती है, कोई कोई इसे की
निहन्त कहते हैं ।

निहन्तुर—मन्दात्र प्रदेशके मलवार त्रिसेवा कुरनाद
नासुवात्सर्गत एक नदी । यह पश्चात् ११ १०' उ० ५०
दिशा ०६ १४' पू० के मध्य पवसित है । इसमें प्ला
२००० है । यहाँ रक्षक सिद्ध तथा मन्दात्रको नामक
एक प्रकारकी मन्थ त लकड़ी पाई जाती है ।

निहय (स० पु०) निधीयते पत्तिमिति नि शो-पच ।
१ यद्द, घर, मन्थान । २ नि विपद्यने लय, पदार्थ,
गायन । ३ पाथयन्वान ।

निहयन (स० स्त्री०) निशीयते पत्तिमिति नि-शो-पच ।
१ नोड, बैठने का उदरनेका स्थान । २ म्थेयव सम्बन्ध ।

निहयान—बम्बई प्रदेशके पत्तर्गत काठियावाड़के गोडुन
वार विभायका एक छोटा राज्य । यहाँकी वार्षिक
पाय २४१००० है त्रिमूर्तिसे छटिय गवर्नेण्टको ३११
घोर मुनागडुके लबाबको १२४००० करने देने होते हैं ।

निहाम (हि० पु०) शीघ्रव रको ।

निहाम्य (स० पु०) निहाम्येति नि निह (शी शिन्वर्षिण ।
वा ३।१।१८) इतन्न वार्षिकोत्तरः यः । देव, देवता ।

निहाम्य निर्हारी (स० स्त्री०) निहाम्यानी देवानां
निर्हारी नदी । गङ्गा ।

निहाम्य (स० स्त्री०) निहाम्य ग, सुवादिस्वात् तुम्
छिवां टाप । १ स्त्रीयको गाय । २ दीहनभाण्ड,
दूध दूधनिका बरतन ।

निहाम्यिका (स० स्त्री०) निहाम्या पव वार्षिकं कम्
टापि पत इत् । मोरमेयो माय ।

निहाम्य (स० स्त्री०) निहारी मोन नि-शो-पच । नि-शो-
पचने मोन, न लय, पतान्ता सम्बन्ध ।

निहाम्यक (स० स्त्री०) निहाम्यक चन्द्रदेवादि, इति
वाप्यादिनाम्ब । निहाम्यक मणिहृत्तदेव मन्थति ।

निहय (स० पु०) यथादिमिं तन्ममं श्रीरको न सार्धेद
बह जीव या पद जो यथादिमिं तन्ममं बिद्या भाव ।

निहयन (स० स्त्री०) निहयन बचन, पादितम् । नि
हार बचन, निहयन बचन ।

निवहारा (द्वि० स्त्री०) निवहार देखो ।

निवहिया (द्वि० स्त्री०) एक प्रकारको नाव ।

निवत् (स० त्रि०) नि वेटे वति । १ निम्नगतादि, जो बहुत नीचेमें हो । (पु०) २ निम्नगते, तराई ।

निवता (स० स्त्री०) १ निम्नगामी, वह जो नीचेको ओर जाता हो । २ पर्वतनिम्नादिकी ओर अवतरण, पहाड़ परसे नीचे उतरना ।

निवदुङ्ग विठोवा—प्रसिद्ध मन्दिर जो पूना जिल्लेके नान नामक विभागमें अवस्थित है । एक गोसाईं इसके प्रतिष्ठाता हैं । १८३० ई०में पुण्योत्सव सम्वादात्मक नामक गुजरातके क्रिमो धनीने ३००० रु० खर्च करके इसका जोर्ण संस्कार किया । मन्दिरमें जो देवमूर्ति स्थापित है, वह निवदुङ्ग जङ्गलमें पाई गई थी । इसी कारण उक्त विठोवा देव निवदुङ्ग नामसे प्रसिद्ध हैं । मन्दिर बहुत प्रशस्त और मनोरम है । इसके चारों ओर एक बहुत लम्बा चौड़ा उद्यान है जहा मनुष्योंके स्नानोपयोगी एक प्रकाण्ड चहबच्चा भो विद्यमान है । सन्ध्यासी और भिक्षुकोंके रहनेके लिये पश्चिम ओर मन्दिरमें संलग्न एक विशाल आश्रम है ।

निवपन (स० स्त्री०) नि-वप-भावे-ल्युट् । १ पितादिके उद्देशसे दान । २ वह जो कुछ पितरों आदिके उद्देशसे दान किया जाय ।

निवर (स० त्रि०) नि-वन्तभृत्-तर्ण्यर्थे-ङ-कत्तरि-अच् । १ निवारक, निवारण करनेवाला ।

निवरा (स० स्त्री०) नितरां त्रियते-इति नि-ङ-अप् । अविवाहिता, कुमारी ।

निवर्त्त (स० त्रि०) प्रत्याहत्त, लौटा हुआ ।

निवर्त्तक (स० त्रि०) प्रतिवन्धक, प्रत्याख्यात ।

निवर्त्तन (स० स्त्री०) निवृत्त-णच् भावे ल्युट् । १ निवारण । २ क्षेत्रभेद, प्राचीनकालमें भूमिकी एक नाप जो २१० हाथ लम्बाई और २१० हाथ चौड़ाईकी होती थी । जो मनुष्य एक निवर्त्तन भूमि विणुको दान करती है, वे स्वर्गलोकमें जा कर आनन्द लूटते हैं । ३ साधन, सुमन्यव्रकरण । ४ पोछे हटाना या लौटाना ।

निवर्त्तनस्तूप—एक बौद्ध स्तूप । छन्दक जब बुद्धदेवको रथ पर चढ़ा राज्यके वाहर दे भाये, तब कपिल-

वस्तु लौटते समय जहां पर उन्होंने रथ रख कर विश्राम किया था, उही स्थान पर यह स्तूप निर्मित है । चीनपरिव्राजक युपनचुवङ्ग यह स्तूप देख गए हैं ।

निवर्त्तनोय (स० त्रि०) निवृत्त-णच् अनोयर्, भ्रमण-गोल, लौटने योग्य, पीछेकी ओर हटने योग्य ।

निवर्त्तमान (स० त्रि०) जो लौट रहा हो ।

निवर्त्तयितव्य (स० त्रि०) निवृत्त-णच्-तव्य । निवारण योग्य ।

निवर्त्तित (स० त्रि०) निवृत्त-णच्-त्त । प्रत्याहृत, जो लौटाया गया हो ।

निवर्त्तितव्य (स० त्रि०) निवृत्त-णच्-तव्य । जिसको लौटा लाना उचित हो ।

निवर्त्तितपूर्व (स० त्रि०) जो पहले लौट गया हो ।

निवर्त्तिन् (स० त्रि०) १ संग्रामादिसे प्रत्याहृत, जो युद्धसे भाग आया हो । २ निर्मित । ३ जो पीछेकी ओर हट आया हो ।

निवर्त्त्य (स० त्रि०) १ प्रत्याहृत । २ निवारित । ३ पुनर्प्राप्त ।

निवर्त्तण (स० त्रि०) उत्सव, ध्वंस, हत ।

निवसति (स० स्त्री०) निवसत्यत्रेति, नि-वस-प्रतिच् । गृह, मकान ।

निवसथ (स० पु०) निवसत्यत्रेति, नि-वस-आधारे-अथच् । १ ग्राम, गाँव । २ सोमा, हृद ।

निवसन (स० स्त्री०) न्युप्यतेऽत्र, नि-वस-आधारे-ल्युट् । १ गृह, घर, मकान । २ वस्त्र, कपड़ा ।

निवसना (द्वि० स्त्री०) निवास करना, रहना ।

निवसन्त्य (स० त्रि०) नि-वस-तव्य । जीवनयात्रा-निर्वाहयोग्य ।

निवह (स० पु०) नितरामुहते इति नि-वह-पुंसोति-व । १ समूह, यूथ । नितरा वहतीति पचावच् । २ सप्त-वायुके अन्तर्गत वायुविशेष, सात वायुधर्मोंसे एक वायु । फलितन्योतिषमें सात वायु मानी गई हैं जिनमेंसे प्रत्येक वायु एक वर्ष तक बहती है । निवह वायु भो उर्ध्वमेंसे एक है । वह न तो बहुत तेज चलती है और न धीमी । जिस वर्ष यह वायु चलती है, कहते हैं कि उस वर्ष कोई सुखी नहीं रहता ।

निबार्ह (हि० वि०) १ नवीन, नया । २ विरलचम
पनोया ।

निबाहु (घ० वि०) नि-बहु बाहुसवात् पुम् । नि-
बन्धीत् ।

निवात्र (घा० वि०) ज्ञया चरनेवाका, चतुष्टय कारने
वाका ।

निवात्र—१ हिन्दीके एक कवि । २ विक्रपासके निवाओ
घोर कातिहे सुवाहूँ धे । इनकी मूढावरसकी कविता
पच्छी होती थी ।

२ हिन्दीके एक कवि । ये कातिहे ब्राह्मण घोर
पन्तरकेनिवासी थे । महापत्र ब्रह्मवाच मुन्देका पक्षा
नैर्यके दरबारमें थे रहते थे । आजमगढ़की पञ्चाके
रहनेमें शकुन्तलानाटकका संस्कृतके हिन्दीमें अनुवाद
किया था ।

१ एक हिन्दी-कवि । ये मुन्देलक्ष्मणे ब्राह्मण थे
घोर भगवन्तराय को जो मानोपुरवासीके यहाँ रहते थे
निवाशिय (घा० खो०) १ ज्ञय मे दरवानो । २ दवा
निवाङ्क (हि० खो०) निवार देखो ।

निवाङ्क (हि० पु०) १ छोटी नाव । २ नावको एक
छोड़ा जिसमें लथे बीचमें ने आ कर पहर होते हैं
नाव ।

निवाङ्को (हि० खो०) निवाही देखो ।

निवात (घ० खो०) नितराँ काति बच्छरयस नि या परि-
करके-अ । १ पावस, निवास घर । निहत्तो वातो
बदिसम् । २ पचास, मातपूय । (पु०) ३ प्रजामेध
नम, पवस जो इविपारने शिदा न का लथे । ४
निवातक ।

निवातकवच (घ० पु०) १ देखविमेष, एक पहर जो
दिरककमिपुका घोर घे ज्ञादका पुत्र था । निवात
यजामेध कवच येपामिति । २ दानधविमेष ।

महामारतमें विद्या है, कि देवकेपे समितमेव
त्राय तोन करोड़ दानध से जो निवातकवच कवकाति
थे । पुराण पादि पन्थीमें विद्या है, कि निवातकवचने
पपने शकुन्तलके देवके पादि परमात्मके कई बार
पपस विद्या का घोर देवक मी लनके उगा करति थे ।

कठोर तपस्याके प्रभावसे उन्होंने ब्रह्माको समुद्र कर कर
पाया था, कि वे निरापदसे समुद्रकुचमें काम करेगी
घोर देवताओंसे लसी परामृत न होगी । उनकी पबिलत
समुद्रकुच घोर बहानो विवित बिगास लीकयेथी पदनी
देवरात्र इन्द्रके प्राप्तभावने थी । पोहे ब्रह्माके वरसे
यमित हो कर लक्ष्मी देवरात्रको परामृत विद्या घोर
बहाने लक्ष्मी निबान भगवा ।

घोरकेपे प्रतोय पाण्डव जनश्रय नव पुर्वीघन
वृद्धत्वसे अपनी चार मादयोके साथ लक्ष्मी वास करति
थे, उस समय से महादेवको प्रलय कर लनके वरपभावसे
प्रब्र लीकनेके किये लक्ष्मी गये थे । बहाने देवरात्र, चित्रसेन
घोर कल्याण बहुस कवच पञ्चविदे देव, यच घोर मन्वर्षी
पशुंनको पञ्चविद्या सिद्धाई । दिव्याजवधोय पुन
पुन प्रयोग घोर लय कर, पञ्चादि दग्ध कश्चि हा पुन
बखोवन घोर पपलके पमिमृत निब पञ्चका लक्षोपन
के पांच प्रकारको पञ्च कमानोको विधि कर पशुंनको
पच्छी तरह मान्मूय हो गई, तब इन्द्र पादि देवतापनि
लक्ष्मी सन्तोय चित्रलक्ष्मण पनेह प्रकारके दिव्याज दिये ।
पानि समय पशुंनमें नव शुक्रगणिका देमको इच्छा
प्रकट की तब इन्द्रने उन पर निबानकवचपोंकी मारनीका
मार मो प दिया ।

तदनन्तर देवतुल्य बौर्यवान् समरकुमल पनश्रय
दिव्य विमान पर चढ़ कर लक्ष्मी निवातकवच रहने से
बहाने पञ्च नए । दानधमच पशुंनकी लक्ष्मी, मन्व
घोर पातालीमेंसे यज्ञजनि सुन का लोहमुद्र, सुपन,
पदिम पादि माना प्रकारके कवच घोर बहुस कवच पञ्च
शकुन्तलके अपने अपने हाथमें दिजे उन पर टूट पड़े ।
निवातकवच ऐसे माकासे थे कि लनके मायानुष्टी
के वनो लक्ष्मण कवभावोको भी लथे पोठ दिवानो
पड़े थे । जो कुच हो, पशुंनमें बहुत पाषाणोके लन
पुर्वक दानवीको एक एक कर मुद्रमें मार जाना घोर
यच प्रकार देवताओंका मनोरथ विद्ये विद्या ।

(महाभारत वनपर्व १५८-१०१ प०)

भागवतमें विद्या है, कि रवातनमें निवातकवच
रहते थे ।

निबान (हि० पु०) १ मोचो लमोन लक्ष सोड़, लोचक

या पानो भरा रहता ही । २ जलाग्नय, बड़ा तालाब, भौल ।

निवाना (द्वि० क्रि०) नीचेकी तरफ करना, भुकाना
निवाभ्यवक्ता (म० स्त्री०) निव पाता भ्रम्यस्याः वक्त्रः
भ्रम्यवक्त्रो यस्याः । निवान्या देखो ।

निवान्या (म० स्त्री०) नितरां वाति गच्छति पाटव्त्वेन
नि वा-क, निवः पाता भ्रम्यः परकोथी वत्स्यो यस्याः
सृतवत्मा गाभी, वह गाय जिसका बड़हा सर गया इ
शोर दूधने बड़हेको लगा कर दूही जाती हो ।

निवाप (म० पु०) नितरामुप्यते इति नि-वप-वञ् । १
सृतोद्देश्यक दान सृत श्यक्तिके उद्देश्ये जो दान क्रिया
जाता है उसे निवाप कहते हैं । पर्याय—पिट्टदान,
पिट्ततर्पण, निषपन, पिट्टदानक । २ दान । न्युप्यते
वीजसम्प्रितिति । ३ श्रेष्ठ ।

निवापक (म० पु०) वोजवपनकारो, वह जो धीज
बोता हो ।

निवापिन् (म० त्रि०) निवपतीति नि-वप-णिनि (नन्दि
प्रदिपचादिभ्यो ष्टुणिन्पचः । पा ३।१।३३४) १ निवापकारो
दाता । २ वपनकर्त्ता, बोनेवाला ।

निवार (म० पु०) नि वृ भावे घञ् । निवारण, बाधा ।
नीवार देखो ।

निवार (द्वि० स्त्री०) १ पहिलेके आकारका लकड़ोका
वह गोल चक्र जो कुएँ की नीचेमें दिया जाता है और
जिससे ऊपर कोठीकी जोड़ाई होती है, जावन, जम-
वट । (पु०) २ सुन्यन्न, तिथीका धान, पमही । ३ एक
प्रकारकी मूली जो बहुत मोटी और स्वादमें कुछ मोठी
होती है, कड़ुई नहीं होती । (फा० स्त्री०) ४ बहुत मोटे
चर्तको बुनो हुई प्रायः तान चार अङ्गुल चौड़ी पट्टी
जिससे पन ग आदि धुने जाते हैं, निवार, निवाड़ ।

निवारक (म० त्रि०) निवारयतीति नि-वारि-ल्युट् ।
१ निवारणकारी, रोकनेवाला, रोधक । २ दूर करने-
वाला, मिटानेवाला ।

निवारण (म० स्त्री०) नि वृ-णिच्-करणे ल्युट् । १
रोकनेकी क्रिया । २ निवृत्ति, कुटकारा । ३ हटाने
या दूर करनेकी क्रिया ।

निवारणीय (म० त्रि०) नि-वृ-णिच्-अनीयर् । निवा
रणयोग्य, रोकने या हटाने लायक ।

निवारण (द्वि० पु०) निवारण देखो ।

निवार-वाक (फा० पु०) निवार बुननेवाला ।

निवारित (स० त्रि०) नि-वृ-णिच्-कृत् । कृतनिवारण,
निपिद, जिसका निषेध क्रिया गया हो ।

निवारो (द्वि० स्त्री०) १ जड़ोकी जातिका एक फलने-
वाला भाड या योधा जो जूहीके पीधेमें बड़ा होता है ।
इसके पत्ते कुछ गोलाई लिये लम्बोतरे होते हैं और इर-
सातमें इसमें जूहीकी तरहके छोटे सफेद फूल लगते हैं ।
ये फूल आमके मोरको तरह गुच्छोंमें होते हैं और इनमें-
से मनीहर सुगन्ध निकलती है । यह चरपरो, कड़वे,
शीतल, हलकी शोर त्रिदोष, नेत्ररोग, सुखरोग तथा
कर्णरोग आदिको दूर करनेवाला मानो गई है । २ इस
पौधेका फल ।

निवाला (फा० पु०) उतना भोजन जितना एक वार
सुँहमें डाला जाय, कौर, लुकमा ।

निवाश (स० पु०) यन्त्र वा गीताटिका उचित शब्द ।

निवास (म० पु०) नि वस आधारे घञ् । १ रह-
वर । २ आश्रय । ३ वास, रहनेका स्थान । ४ वस्तु,
कपड़ा ।

निवासक (म० त्रि०) निवासस्य अदूरदेशादि, निवास-
चतुरर्यां क । तत्सन्निकृष्ट देशादि ।

निवासन (स० पु०) वीक्षोकी वसुविशेष ।

निवासस्थान (स० पु०) १ रहनेका स्थान, वह जगह
जहाँ फोई रहता हो । २ घर, मकान ।

निवासिन् (स० त्रि०) नि-वसतीति नि-वस-णिनि ।
निवासकर्त्ता, रहनेवाला, वसनेवाला, वासी ।

निवास्य (म० त्रि०) १ वासयोग्य, रहने लायक । २
वस्त्राच्छादित, कपड़ेसे ढका हुआ ।

निविद (म० त्रि०) नितरां विदति सं-दन्वते नि-विद-
क । १ नोरग्ध, गहरा । २ सान्द्र, घना, घनघोर ।
पर्याय—निरवकाश, निरन्तर, निधिराष, नौरग्ध, बहुल,
दृढ, गाढ़, अविरल । ३ नत-नासिकायुक्त, जिसकी नाक
चिपटो या दबी हुई हो ।

निविदता (द्वि० स्त्री०) वंशो या इषी प्रकारके किषी
शोर वाजीके स्वरका गभीर होना जो उसके पाँच गुणोंमें-
से एक गुण माना जाता है ।

निबिद् (सं० लो०) निबिद् कश्चि जित् । १ पाब् ।
 २ भेददेवके अन्वयवर्षे स मनोव मन्वपदमिद । १
 म्बु क प्रमादा ।
 निबिद्याम (सं० लो०) निबिद् म्बुको भोयतेऽस्मिन् वा
 पाभारि लुट । ऐकादिक वक्रादि, वक्र वक्र चादि ओ
 एक हो दिनेमें समाप्त हो जाय ।
 निबिद्यामोय (सं० लि०) निबिद् सभन्मोय वैदिक मन्व
 मन्बुम् ।
 निबिदोत् (सं० लि०) नि-नता मासिवा यत्न, बिरोधत्
 (केरिद्वय विरोधनी) वा ३।२।३२) १ मत्-मासिवाहुम्,
 त्रिसको नाक बिप्यो या दूषी हो । २ साम्, वना ।
 (लो०) ३ मत् मासिवा, बिपयी नाक ।
 निबिद्वन् (सं० लि०) निवारयिष्य, ओ रोकना या
 वृत्ताना चाहता हो ।
 निबिद्ध (सं० लि०) नि बिद्य ङ । १ पित्तानिनिषिध
 बुद्ध, त्रिसका चित्त एकाय हो । २ एकाय । ३ पाबिट,
 लपेटा कृपा । ४ प्रबिट, मुना या मुसाया कृपा । ५
 पावद, बांषा कृपा । ६ ब्याट, उदरा कृपा ।
 निबिष्टि (सं० लो०) नि-बिद्य-ङिप् । लीस मर्भ,
 कामावृत्त ।
 निबीत (सं० लो०) निबीतस्मीति नि-ब्ये वाष्ठादने
 त्, तते सम्पकारत् । १ पाष्ठादन वषट्, धोठनेका
 कपडा, बादर । इका पर्याद प्राङ्गत है । २ कपट
 मन्मिन् यत्नस्य, यत्नका वच सुता ओ गलेमें पडना
 जाता है । ३ निवृत्त ।
 निबीतम् (सं० लि०) निबीतमस्तस्य इति । निबीत
 बुद्ध जिनमें यत्नस्य चारत्त किया हो । त्रिसके गलेमें
 यत्नस्य माकाओ तरङ्ग सुत्ता रहता है उबोको निबीतो
 कहते हैं । त्रिसका बायीं हाथ यत्नस्यके बाहर रहना
 पौर यत्नस्य दाहिने कन्धे पर रहता है उबे माचोना
 बीतो पौर त्रिसका दाहिना हाथ यत्नस्यके बाहर रहना
 पौर यत्नस्य बायीं कन्धे पर रहता है उबे उचपीतो
 कहते हैं ।
 निबीयं (सं० लि०) बीयं बीत्, जिनमें बीय वा पुत्रपत्न
 न हो ।
 निवृत्तम् (सं० लो०) कान्वायनोक्त इत्योमिद, एक प्रकार

का वचं वृत्त जिनमें मायवी पादि पाठ प्रकारके इत्योमि
 प्रतिपादने एक एक प्रकार कम रहता है ।
 निवृत्त (सं० लि०) निवृत्तं पाष्ठादने स्मीति नि-वृत्त ।
 १ निबीत, बाहरके ठका कृपा । परिविष्टित, घिना
 कृपा ।
 निवृत्त (सं० लो०) नि-वृत्त भावे त् । १ निवृत्ति, मुक्ति,
 मुक्तकारा । २ यत्नभेद, पित्त विषयके कपरम । ३
 परमान । ४ निवृत्तिपूर्वक परम । (लि०) ५ कृटा
 कृपा । ६ बिरक्त, ओ परतग हो गया हो । ७ ओ मुही
 वा मवा हो, काओ ।
 निवृत्तस्य (सं० लो०) मुद्गरोमभेद ।
 निवृत्तसन्तापन (सं० लो०) निवृत्त सन्तापन यत्न ।
 सन्तापविधीन ।
 निवृत्तसन्तापनीय (सं० लो०) निवृत्त सन्तापन यत्न
 तरमै कित्तु त् । रसायनमिदं ।
 "यथा विवृत्तवस्थाया शोण्ड विधि देवता ।
 पवीरवीर्याया श्राप्या शोण्डे पुत्रि मानवा इ"
 (सुसुप्त विधि- १० ल०)
 इसका विषय सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा है—देव
 गण जिन प्रकार सन्तापनीय हो कर स्वर्गमें निचरत्त
 करती है, मानवगण भी उन्ही प्रकार निष्कलित पीप-
 क्षे मिवन जन्ममें देवगणको तरह सन्तापनीय हो कर
 कृपा पर निचरत्त कर सकती हैं । इनके निवृत्तने मनुष्य-
 का शरीर बुकाके परमान पौर वच वि कृष्ट परमान हो
 जाता है ।
 इस रसायनका विवर्न ७ प्रकारके मनुष्योंके निय
 कइलाक्ष है, यथा—पनामवान् (पत्रितेन्द्रिय) पलव,
 दरिद्र, प्रमादो, झांकाफल, पापकारा पौर धियत्रापमानो ।
 इन सब मनुष्योंको पद्मभता पनारत्त पन्धिरचितता,
 हरिद्वता, पनापत्तता पचामि कता पौर मोवचको
 पचामि इन सब कारकोमि निवृत्तसन्तापनीय रसायनका
 विवर्न सुष्टं होता है ।
 इस रसायनमें पडाएक पीपघिटा है जो ओमरमर्भ समान
 पीपे बुद्ध मानी जाती है । इनके नाम ये हैं—पत्रगरी,
 योतकपोतो, कृष्णकपोतो, गीनपी, बारापी, कथा कता
 पतिवृका, करेष्ट, पत्रा, चक्रव, पादिशुपर्बिनी, कृष्ण

सुवर्चना, श्यावणी, महाश्यावणी, गोनोमो और महावेगवती । इनमेंसे जो सब औषध चौरहीन मूलविशिष्टकी है, उनमें प्रदेशनौप्रमाणके तीन काण्ड सेवन करने होती हैं । श्वेतकपोतीका पत्र समेत मूल सेवन विधेय है । चौरवती औषधियोंका चौर कुण्डल परिमाणमें एक समयमें सेवन करना चाहिए । गोनसो, अजागरो और कृष्णकपोती इनको खण्ड खण्ड कर एक मुष्टि परिमाण में कर दूधमें सिद्ध करे, पोछि उस दूधको उठा कर एक हो वारमें पी लेना चाहिए । चक्रकाका दुध एक वार पेय और ब्रह्मसुवर्चना महारात्र सेवनोय है । इस मिष्टतसन्तापनीय रसायनसे सेवनसे मनुष्यकी आयु बढ़ती है और वह दिव्य शरीर धारण कर नभस्वर्गमें अमोघसङ्घत्य हो विचरण करता है ।

निम्नलिखित लक्षण द्वारा सब औषध स्थिर को जाती है । निष्यत्, कनकतुल्य आभायुक्त, दो अङ्गुल परिमित मूलविशिष्ट, सर्पकी तरह आकार और अन्तभाग लोडितवर्ण, ऐसे लक्षणको औषधकी श्वेतकपोती ; द्विपत्र, मूलजात, अरुणवर्ण, कृष्णवर्ण मण्डलविशिष्ट, दो अरतिप्रमाण दीर्घ और गोनसके समान होनेसे उसे गोनसो ; चीरयुक्त, सरोम, मृदु और इक्षुरमके समान रसविशिष्ट होनेसे उसे कृष्णकपोती ; कृष्णसर्प स्वरूप और कन्दसम्भव होनेसे उसे वाराही और एक पत्र, अत्यंत वीर्यवान्, अञ्जनप्रभ तथा कन्दजात लक्षणविशिष्ट औषधकी श्वेतकपोती कहते हैं । इन सब औषधियोंसे जरा और मृदु निवारित होती है । मयूरके सोमकी तरह वारह पत्रविशिष्ट, कन्दजात और खर्णवर्ण चौरविशिष्ट औषधकी कन्या, द्विपत्र, हस्तिकर्ण, पलाशके समान पत्र और प्रचुर चौरविशिष्ट तथा गजाकृति कन्दकी करेणु ; अजाके स्थानके समान कन्द, सचौर, चन्द्र वा शङ्खकी तरह श्वेत और पाण्डुर तथा सुषुप्तके मृदु औषधकी अजा, श्वेतकर्ण विचित्र पुष्पविशिष्ट, काकादनीके जैसे सुदृष्ट कृष्णकी चक्रका कहते हैं । इन औषधोंके सेवन करनेसे जरामृदुका नाश होता है । मूलविशिष्ट, कोमल रक्तवर्ण पञ्चपत्रविशिष्ट और पर्वदा सूर्यका अनुवर्ती होनेसे उसे आदित्यपर्णिको, कनकम्षा आभाविशिष्ट, सचौर तथा देवनेसे पद्मिनीके समान तथा वर्षाके समयमें जो

चारों ओर प्रसारित हो ऐसी औषधकी ब्रह्मसुवर्चना, अरतिप्रमाणकृष्ण, द्वि-अङ्गुलपरिमित पत्र, नोक्तोत्पन्न-मृदु पुष्प एवं अञ्जनप्रभ फल होनेसे उसे श्यावणी और इन्हीं सब लक्षणोंको, पर उनमें अधिक कनकवर्ण चौर और पाण्डुवर्णविशिष्ट औषधको महाश्यावणी कहते हैं । गोनोमो और अजलोमो औषधि रोमविशिष्ट और कन्दयुक्त होती है । मूलजात, हंसपदो लताकी तरह विच्छिन्नपत्रविशिष्ट अथवा सर्वतोभावमें शङ्खपुष्पके मृदु अत्यन्त वेगविशिष्ट और सर्पनिर्मोकतुल्य औषधको वेगवती कहते हैं । यह औषध वर्षाके अन्तमें उत्पन्न होती है ।

इन सब औषधियोंको निम्नलिखित मन्त्रसे अभिसन्क्षण कर उखाड़ना होता है । मन्त्र यों है—

‘महेन्द्ररामरूपणां प्राक्षणां गवामरि ।

तस्मा तेवशावापि प्रशाम्भवं गिवाय वै ॥’

यहाहोन, अलस, कतघ्न और पावकारो आदिको ये सब औषध दुष्प्राप्य हैं । देवताओंमें पानाविशिष्ट अमृतसोममें अथवा सोमतुल्य इन सब औषधियोंमें और चन्द्रमें निहित किया है ।

औषधि-शास्त्रिके स्थान—देवसुन्द नामक छन्दमें और सिन्धुनदीमें वर्षाके अन्तमें ब्रह्मसुवर्चला नामक औषधि उक्त दो प्रदेशोंमें हेमन्तके शेषमें आदित्यपर्णिकी और वर्षाके प्रारम्भमें गोनसी; काश्मीर प्रदेशके सुदृ मानस नामक दिव्य-मरोवरमें करेणु, कन्या, कृत्वा, अतिशुद्धा, गोलोमो, अजलोमो और महाश्यावणी नामकी औषधि मिलती है । कोशिनी नदीके दूसरे किनारे पूर्वको ओर तीन वाजिन भूमि तक बहतीक व्याप्त है । इस बल्सोक्त के ऊपरी भाग पर श्वेतकपोती उत्पन्न होती है । मलय और नलमेतु नामक पर्वत पर वेगवती औषधि पाई जाती है । इन सब औषधियोंका कार्त्तिक पूर्णिमामें सेवन विधेय है ।

जिसके अत्युच्च मृदु पर देवगण विचरण करते हैं उस सोमगिरि और शर्वदगिरि पर सब प्रकारकी औषधियाँ मिलती हैं । इसके अलावा नदी, पर्वत, सरोवर, पवित्र चरण्य और आशुष भूमि जगत् इन सब औषधियोंका अनुसन्धान करना कर्त्तव्य है ; क्योंकि यह वसुधरा

निष्ठे अयत्तं चकारत्तं चरतो वै । (सुश्रुत निष्ठी० १० अ०)
निष्ठतात्मन् (घ० लि०) निष्ठत विषयेभ्य कपरता
याव्या चला-करत्तं यत्त । १ विषयपरागम्य, को
विषयवाक्याने रचित को (पु०) २ निष्पृष्ट ।

निष्ठति (घ० लो०) नि-इत तिन् । १ निष्ठति, सुक्ति
कुटुम्बा । पर्याय—उपरत, निरति, अपरति, उपरति,
पारति । २ ग्याबमतविह यत्तमेद । ३ बीडोके
पनुनार सुक्ति वा सोप । ४ बोडोको निष्ठति पौर
महावीका सोप एक ही है । निष्ठति या निर्वाच
यन्दवा चर्त्तं पुनश्चमिसे सुक्ति काम करमा है । ५ मडा
वेच गिय । ६ तीर्थविधिय । यहाँ विचयनमरके प्रविह
रात्रा नरसि वदिदने बहुत दान पुष्प विपि । ७ एक
अनपद । यह वनेन्दे उत्तर पौर बहुदेयके पचिम
विपारदराभ्यके नमोप चर्त्तकित है । यहाँ मरैगियीके
चरमिसे विधि बहुत मत्वा चौका मीदान है । इसका
दूसरा नाम मरह है जोकि यहाँ मरुतियां बहुत पारं
जातो है । किन्तु यप कामके तिस च मने पडाको पौर
अ मको भोग रहते है, वही च म नावारपतः उक्त नामसे
प्रसिद्ध है । इसका प्रधान नगर नईलकुठ, काच्छय पौर
चौरङ्ग वा विहारिका है । दूसरा नगर गुप नदोके
किनारे बना हुआ है पौर पहाडा एक सुखसमान मासन
कतांके टपनमें है । यहाँके पवितासी खसौकति पपरि
कृष्ण पौर भूष्ण है । यवनमासित कामने जाति
विमानको बीरे सुखयव्या नहीं है ।

निष्ठत्तत्तन् (घ० लि०) निष्ठति याव्या स्वल्प यत्त ।
निष्ठेव, चर्त्तं, मगाहो ।

निष्ठेदत्त (घ० लि०) निष्ठेदयतोति नि विह-विच-ञ्च् ।
निष्ठेदनकारो, निष्ठेदन करमेवाका, प्रायो ।

निष्ठेदन (घ० लो०) निष्ठियते विज्ञाप्यतेऽनेनेति नि
विद ञ्च् । १ पाबेदन, विषय, बिनती, प्रायणा ।
२ समपेय ।

निष्ठेदनीय (घ० लि०) नि-विद-विच मनीयत् । निष्ठे
दनाचं, निष्ठेदन करमे योप्य ।

निष्ठेदयिषु (घ० पु०) निष्ठेदयिषुमिच्छुः नि-विद-विच
यन् ततो ष । निष्ठेदन करमेने रच्छुः ।

निष्ठेदित (घ० लि०) नि-विद-अर्त्त-वि ञ् । १ इतनिष्ठे-

दन् निष्ठेदन किया हुआ । १ ज्ञापित, सुनाया हुआ,
सहा हुआ । २ चरित, चढ़ाया हुआ, दिया हुआ ।
निष्ठेदो (घ० लि०) नि-सेद परतामै इति । निष्ठेदन-
कारी, प्रकाशक ।

निष्ठेय (घ० लि०) नि-विह-ञ्च्त् । निष्ठेदनयोप्य,
ज्ञापनीय, ज्ञाताने लायक ।

निष्ठेय (घ० पु०) नि-विह-घञ् । १ विष्ठास । २
दिविर, डेरा । ३ उदाह, विवाह । ४ प्रवेश । ५ यत्त,
वा ममान ।

निष्ठेय (घ० लो०) निविद्यताश्मिति नि-विह
यचिकरि ञ्च्त् । १ यत्त, चर, ममान । २ नगर ।
३ प्रवेश । नि-विह-विच-भावे ञ्च्त् । ४ ज्ञापन ।
५ ज्ञिति । ६ विष्ठास । (ति०) ७ प्रवेशक ।

निष्ठेयत्त (घ० लि०) निष्ठेय विचयते यत्त, मतुप,
मस्य वा निष्ठाचमुक्त ।

निष्ठेयन् (घ० लि०) पाठयद्रास, प्रविष्ट चर्त्तकित ।
निष्ठेयनीय घ० लि०) नि-विह-पलायत् । प्रवेशार्त्त,
प्रवेशयोप्य ।

निष्ठेयित (घ० लि०) नि-विह-विच ञ् । १ ज्ञापित, । २
विष्ठास । ३ प्रेषित ।

निष्ठेय (घ० लि०) नि-विह-ञ्च्त् । १ निष्ठेयनीय, प्रवेश
कोप्य । २ योचनीय ।

निष्ठेय (घ० पु०) १ पाच्छादन धावरचमज्ज, बहु
कपडा जिसमें कोई चीज डाली जाय । २ सामनेद ।
निष्ठेय (घ० लो०) यत्त द्वारा पाच्छादन, कपडोके
ठामिनीको ज्ञित ।

निष्ठेय्य (घ० लि०) नि-विह-अत्तत् । निष्ठेयनीय, डालने
कोप्य ।

निष्ठेय्य (घ० लो०) नि-विह-भावे ञ्च्त् । १ ध्यात्रि ।
(पु०) २ व्यापक देवमेद । ३ पावक, पानीका भवर
४ बीहारक, कुडाकेका पानो । ५ अन्वयत्त । ६ यत्त ।
(ति०) ७ ज्ञापित, ज्ञेया हुआ ।

निष्ठाचिन् (घ० पु०) निष्ठरं विद्यति जल्लि यत्तन् नि-
व्यह-चिनि । १ इदमेद, एक बड़का नाम । (ति०) २
निष्ठाक व्याचङ् ।

निष्ठाङ् (घ० लो०) चमिनिष्ठेय, निरन्तर सेटा, ज्ञान-
तार परित्यम ।

निग (सं० स्त्री०) नितरां श्यति तनू करोति व्यापारान्, गो-कः, पृषोदरादित्वात् माधुः । १ रात्रि, रात । २ हरिद्रा, हल्दी ।

निगंक (हि० वि०) १ त्रिसे किमो वानको गंका या भय न हो, निर्भय, निडर, वेखोफ । (पु०) २ एक प्रकारका नृत्यविशेष ।

निगङ्गपुरा—भागनपुर जिनेका एक परगना । क्षेत्रकन ४४५८०६ एकड़ या लगभग ६८६५ वर्गमोल है । इस परगनेमें कुन १६८ जमींदारो लगतो है । यहांको अधिकांश जमोन उर्वरा है, अतः प्रति साल काफी अनाज उपजता है ।

इस परगनेके मध्य दुर्गापुराका राजवंश बहुत प्रसिद्ध है इस वंशके आदिपुरुष एक पमार राजपूत थे जिनका नाम हसनमसिंह था । अपने भाई मधुके साथ ये पश्चिम तिरहुतके हारानगरमें आ कर यहां बस गए थे । पहले ये दोनों भाई दरभङ्गा नरेशके यहां नोकरो करत थे ।

एक दिन वर्षाका समय था, दोनों भाई राजाको देहराचामे नियुक्त थे । कुछ समय बाद राजाने उन्हें विश्राम करनेका आदेश दिया । वहांको स्थानीय भयमें विश्राम शब्दके लिये 'श्रीय लो' शब्द व्यवहृत होता है । किन्तु 'श्रीय' नामक पूर्व दिगामें एक जागोर थी । मालूम पड़ता है, कि वर्तमान उत्तरखण्ड हो उस समय 'श्रीय' नामसे प्रसिद्ध था । दोनों भाइयोंने 'श्रीय लो' शब्दका दूसरा हो अर्थ लगा लिया । वे इसका प्रकृत अर्थ जानते हुए भी इसे न समझ सके । अतः उन्होंने कुछ स्वजातियोंको साथ ले निर्दिष्ट 'श्रीय' ग्रामको जोतनेके लिये कदम बढ़ाए । केवल 'श्रीय' जीत कर वे गान्त न रह सके, समूचा निगङ्गपुर परगना उन्होंने अपने कर्जमें कर लिया । बाट यहां पर स्थायी आवासभूमि बसा कर मधु टिल्लीके बादशाहसे सनद पानेके लिये दिल्ली गए । किन्तु वहां जा कर वे सुसलमानो धर्ममें दोषित हुए । जब वे लौट रहे थे, तब उनके अनुचरोंने जो उनके सुसलमानो धर्म ग्रहण करने पर बहुत क्रोधित थे, उन्हें मार डाला । मधुपुरसे १८ मील दक्षिण सदारोघाटमें उनका शिरच्छेद हुआ था । घोड़ा उनका बहुत सुगन्धित था, अतः वह मस्तकहीन देहको लिये सुपुलके पश्चिम-

दक्षिणमें अवस्थित नौहाटा ग्राममें पहुँच गया । नदारो-घाटमें उनकी कन्नके ऊपर एक मन्दिर बनाया गया जहा एक फकीर वास करता है । इसके भरण पोषणके लिये ४० बोघा निष्कर जमोन दो गई है । मधुके वंशवर सुसलमान हैं । ये लोग नौहाटमें रहते हैं ।

निगठ (सं० पु०) वनदेवपुत्रभेद, पुराणानुसार वन-देवके एक पुत्रका नाम ।

निगमन (सं० क्तो०) निगम-णिच् ल्युट् । १ टयन, देखना । २ श्रवण, सुनना ।

निगत्या (सं० स्त्री०) ङश्चटन्तोच्च् ।

निगा (सं० स्त्री०) नितरां श्यति तनू करोति व्यापारानिति नि-गो-क-टाप् । १ रात्रि, रात, । पर्याय—रात्रो, रजो जननो, श्वरो, चक्रभेदिनो, घोरा, श्यामा, याम्या, दोषा, तुङ्गी, भोतो, शताचो, वास्तवा, उषा, वासतेयो, तमा, निट् । २ हरोद्रा, हल्दी । ३ दारुहरिद्रा । ४ फलित ज्योतिषमें मेघ, हृष, मिथुन आदि ऋः राशियां ।

निगाकर (सं० पु०) निगां करोतीति निगा क-ट । १ चन्द्रमा । २ कुक्कुट, सुरगा । ३ कपूर, कपूर । ४ नहा देव । ५ एक महर्षिका नाम ।

निगाकरकनामोनि (सं० पु०) निगाकरस्य चन्द्रस्य कला सोलो यस्य । गिञ्, महादेव ।

निगाखातिर (हि० स्त्री०) प्रबोध, तसक्ती, टिलजमई ।

निगाख्या (सं० स्त्री०) निगाया आख्या यस्याः । निगाहा, हरिद्रा, हल्दी ।

निगाचर (सं० पु०) निगायां रात्रो चरतीति निगा-चर-ट । १ राजत । २ शृगाव, गोदड । ३ पंचक, चक्र । ४ सर्प, सांप । ५ चोर, चोर । ६ भूत । ७ चोरक नामक गधद्रव्य । ८ चक्रवात पत्ता । ९ विडाल, विडो । १० तद्भूलिका पत्तो, वाडुर । ११ महादेव । १२ एक संस्कृत कवि । १३ नेपालो भटेउर पत्तो । (वि०) १४ राक्षिचर मात्र, जो रातको चले, कुलटा, पिशाच आदि ।

निगाचरपति (सं० पु०) निगाचराणां भूतानां पतिः, ६ तत् । प्रमथपति, शिव, महादेव । २ राखण ।

निगाचरो (सं० स्त्री०) निगाचर डोप् । १ कुलटा । २ राजसो । ३ कैयिनी नामक गन्धद्रव्यविशेष । ४ अमि-सारिका नायिका ।

निष्ठाचर्म (स० पु०) निष्ठायां चर्मैव धारक इत्यात्।
 चर्मधार, चर्मिणा।
 निष्ठाचारी (स० पु०) १ निष्ठा। २ निष्ठाचर।
 निष्ठाच्छद (स० पु०) छुच्छन्नेद।
 निष्ठाच्छब्द (स० स्त्री०) निष्ठाच्छब्द इत्यस्य सञ्ज्ञापरिचयः।
 १ निष्ठा, पाप्मा। २ श्लेष।
 निष्ठाष्ट (स० पु०) निष्ठायां रासो षट्ठोति षट् षट्।
 १ पंचक, छद्म। (त्रि०) २ निष्ठाचर, रातको विवरण
 वाक्य।
 निष्ठाष्टक (स० पु०) निष्ठायां षट्ठति, निष्ठायात् षट्ठक
 षट्ठोति वा षट्ठक्युत्। १ शुभ्युत् शुभ्युत्। (त्रि०) २
 धारिचर, रातको विवरण करनिवाक्य।
 निष्ठाष्टन (स० पु०) निष्ठायां षट्ठोति षट्ठन्युत्। १
 पंचक, छद्म। (त्रि०) २ निष्ठाचर जो रातको विवरण
 करे।
 निष्ठात (स० स्त्री०) सो निष्ठामे नि-यो-स्त (रात्रौ +
 तात्वात्) वा वाहोः) इति लुक्त्वेन इत्यामावा
 याचित, तोष्योक्त तत्र विद्या वृथा।
 निष्ठातिक्रम (स० पु०) निष्ठायां पतिक्रमण, रात्रिवा
 पचमान।
 निष्ठातोष—पादुबंदोक्त तैलविशेष, बंधुबन्धे एक
 प्रकारका तैल। यह धार भर करके तैल कुरीके पत्तों
 चार धार दस, पाठ तोसे चौको हुई इकटो चोर चार
 तोसे गन्धके भेदके बनता है। यह तैल आनंदी रोमके
 किये विधेय उपचारी है।
 निष्ठाव्यय (स० पु०) निष्ठायां व्ययया। निष्ठाव्ययान
 प्रमात्, संबोधा।
 निष्ठाव (स० पु०) निष्ठायां पति भक्तवतीति निष्ठा पर-
 पच। १ निष्ठाव। (त्रि०) २ रात्रिभोगिमात्र, शिवक
 रातको आनिवाक्य।
 निष्ठावर्गिन् (स० पु०) निष्ठायां पण्डनीति इत्यत्रिनि
 पंचक, छद्म।
 निष्ठादि (स० स्त्री०) निष्ठायां पादियंत्। साय, सञ्ज्ञा।
 निष्ठाघातक—पादुबंदइत्यादय तैलौपचरिधेय। प्रसुप्त
 प्रवासी—तैल चार धार, कल्प हरिद्रा, पचकनका दूध,
 चैत्य, चितामुल, गुग्गुलु, कुटकी काष्ठ, करमोरका

मूल सब मिला कर एक धार, लव १६ धार। इससे
 भयन्दरोग जाता रहता है।
 निष्ठाधीम (स० पु०) निष्ठायां अधोऽयं। निष्ठावति।
 निष्ठाध (स० स्त्री०) निष्ठायां भावे क्युट्। तोष्याकरण,
 शिव करता।
 निष्ठाध (का० पु०) १ चिह्न, चयन। २ पक्ष चयन या
 चिह्न जिसके द्वितीयाद्योत या पक्षके ही षट्ठना पचन
 पदार्थका परिचय मिले। ३ जिसो पदार्थका परिचय
 करकेके किये लक्षके ज्ञान पर बनाया वृथा कोई चिह्न।
 ४ किसी पदार्थके पक्षित किया वृथा पचनका चोर किमो
 प्रकारका बना वृथा चिह्न। ५ शरीर पचनका चोर किमो
 पदार्थ पर बना वृथा साभाविक या मोर जिसो प्रकारका
 चिह्न। ६ वह चिह्न जो पण्डु मनुष्य परमे इत्यादिके
 बदलेके किये नामत्रा पादि पर बनाता है। ७ ध्वजा
 पताका, झंडा। ८ पता, दिशाना। ९ वह चिह्न या चिह्न
 जो जिसो विधेय काके या पक्षकाके किये निश्चय किया
 जाय। १० समुद्रके या पहाड़ों पादि पर बना वृथा पक्ष
 ज्ञान जहां लोको को मार्ग पादि दिशानेके किये कोई
 प्रबोध किया जाता हो।
 निष्ठाधोना (सि० पु०) उत्तर चोर पश्चिमका कोच।
 निष्ठाधो (का० पु०) वह जो द्वितीयाद्या, शिवा या
 दन पादिके परी भक्तका ही कर चरता हो, निष्ठाध
 बरदार।
 निष्ठादिज्ञो (सि० स्त्री०) निष्ठावदेशी श्लेषो।
 निष्ठादिही (का० स्त्री०) धामामोको सञ्ज्ञा पादिको
 नामोक्तके किये पक्षचयनार्थको विश्वास, धामामोका पता
 चरकानिका धाम।
 निष्ठाधो (का० स्त्री०) वेदकेको बनाकट पादि पचनका
 लक्षका बन्धन, वृत्तिया।
 निष्ठाधरदार (का० पु०) पक्ष जो जिसो राका, शिवा या
 दन पादिके परी परी झंडा से कर चरता हो,
 निष्ठाधो।
 निष्ठाधवाक्य—सङ्गतवि च चोर मोक्षरति इमे यह निष्ठा
 आपिन किया। जे कोम आठ आतिथि से चोर
 'दत्त' वा दत्तक इत्यादि शिवाको पताका से आने से
 इस प्रकार इनका नाम निष्ठाधवाक्य मङ्गा। यतदुनदो

दूसरे किनारे वे लोग बहुत लूट मार मचाते थे और लूटका माल ले कर बहुत दूर भाग जाते थे। एक दिन इन लोगोंने मच्छरशाहो मोरटनगर पर आक्रमण किया और उसे लूटा। लूटते इन्हे असंख्य धनरत्न हाथ लगे जिन्हें ले कर वे अपने प्रधान शब्दा शम्शानाको चने गए। यहीं पर इनका अन्न शस्त्र और खान्यादि रहता था। इनके अधीन बहुत सेना थीं। मद्रतगिंहके मरनेके बाद मोहरसिंहने इस दलका काल्प प्रहण किया। मोहरकी निःसन्तानावस्थामें मृत्यु हुई। इनके मरते समय रणजित्सिंह शतद्वके दूमरे किनारे तक पहुँच गए थे। मृत्यु-शब्दा सुनते ही उन्होंने अपने दीक्षान मोखमचाँदको एक दल सेना साथ दे देस्यु-दलको नष्ट करनेका हुकुम दिया। रणजित्सिंहका सेनानि निशानवालाको वहाँसे निकाल भगाया। उनके पास जितने धनरत्नादि थे वे सब मोखमचाँदके हाथ लगे निशाना (फा० पु०) १ वह जिस पर ताक कर किसी अस्त्र या शस्त्र आदिका वार किया जाय, लक्ष्य। २ मट्टे आदिका वह टेर या और कोई पदार्थ जिस पर निशाना साधा जाय। ३ किसी पदार्थको लक्ष्य बना कर उसको और किसी प्रकारका वार करना। ४ वह जिस पर लक्ष्य करके कोई व्यंग्य या बात कही जाय। निशानाय (सं० पु०) निशायाः नायः ६ तत्। १ चन्द्र, निशापति। २ कर्पूर, कपूर। निशानारायण (सं० पु०) एक संस्कृत कवि। निशानो (फा० स्तो०) १ वह चिह्न जिससे कोई चीज पहचानो जाय, निशान। २ स्मृतिके उद्देश्यसे दिया अथवा खा हुआ पदार्थ, वह जिससे किसीका स्मरण हो, स्मृतिचिह्न, यादगार। निशान्त (सं० स्तो०) निशम्यति विश्रम्यतेऽस्मिन्निति, निश्रम-अधिकरणे ङ। १ गृह, घर, मकान। २ रात्रिका अन्त, पिछलो रात। ४ प्रभात, तड़का। (त्रि०) नितरां शान्तः। ३ नितान्त शान्त, बहुत शान्त। निशान्तोय (सं० त्रि०) निशान्तस्य भद्रदेशः निशान्त उक्तरादित्वात् छ। निशान्त सन्निकृष्ट देशादि। निशान्ध (सं० पु०) १ फलित ज्योतिषमें एक प्रकारका योग। यह योग उस समय पड़ता है जब सिंह राशि

में सूर्य हो। कहते हैं, कि इस योगके पड़नेसे मनुष्यको रतींधो होती है। (त्रि०) २ रातका अन्धा, जिसे रातको न सूके, जिसे रतींधो होती है।

निशाया (सं० स्तो०) निशायां अभ्ययति उपसंहरति आत्मानमिति जन्म अच्. टाप्। १ जतुकालता। २ राजकन्या।

निशायो (सं० स्तो०) निशान्धा देवो।

निशापति (सं० पु०) निशायाः पतिः। १ निशावर, चन्द्रमा। २ कर्पूर, कपूर।

निशापुत्र (सं० पु०) निशायाः पुत्र इव। नक्षत्र आदि आकाशोय पिण्ड।

निशापुर—१ खोरासनका एक जिला। यह मेसिदके दक्षिणमें अवस्थित है।

२ उक्त जिलेका एक शहर। यह अक्षा० ३६° १२' २०" उ० और देशा० ५८° ४८' २७" पू०के मध्य अवस्थित है। पेगदादोय वंशोद्भव तापासुर अथवा तैसूर नामक किसी युवराजसे यह नगर बसाया गया है।

पहले अनेकसन्दर्भोंसे इसे जीत कर तहस नहस कर डाला था। पोछे अरबों और तुर्कोंने इस पर अपना अधिकार जमाया। १२२० ई०में चेहोज खाने पुत्र कुलोन खाने इसे अपना कर आस पासके प्रायः २० करोड़ निरपराध लोगोंको हत्या कर डाली। तभीसे मुगल, तुर्क और उजबक जातिने कई बार इसपर चढ़ाई की।

निशापुरसे ४० मील पश्चिममें एक उपत्यका है जहाँ रत्नकी बहुतसो खानें हैं। इसके सिवा पहाड़ पर और भी कितनी खानें देखनेमें आती हैं।

निशापुष्प (सं० स्तो०) निशायां रात्रौ पुष्प्यति विकसतीति पुष्प-धिकासे अच्। कुसुद, उत्पल, कोई।

निशाप्राणेश्वर (सं० पु०) निशायाः प्राणेश्वरः। निशापति।

निशावल (सं० पु०) निशाया रात्रौ वलं यस्य। मेघ, हृष्ट, मिथुन, कर्कट, धम और मकर ये छः राशिया जो रातके समय अधिक बलवती मानी जाती हैं।

फलित ज्योतिषमें दो प्रकारकी राशियां बतलाई गई हैं,—निशावल और दिनवल। ऊपरकी छः राशियां निशावल और शेष सभी राशियां दिनवल मानो जाते हैं। कहते हैं, कि जो काम दिनके समय करना हो, वह

दिनवत् रात्रिर्दोषो भोर जो काम रातके समय करना हो, वह रात्रिचर रात्रिदोषी कहना चाहिये।
 निशाभङ्गा (घ० स्त्री०) निशा हरिश्चा तद्वत्समो यस्याः। पुत्रपुत्री नामक योवा।
 निशामास (स० पु०) निशाया भावः। रात्रि, रात।
 निशामन्त्रि (स० पु०) निशाबामन्त्रिचि। १ चन्द्रमा। २ अपूर, अपूर।
 निशामन (स० स्त्री०) निशामन्त्रिच, च्युट्। १ द्यौ, देवता। २ बाहोचन, बिचार। ३ यवच, सुनमा।
 निशामन्त्र (स० पु०) मित्र, मन्त्रादेय।
 निशामित्र—सुपसन्नाकरचके एक टीकाकार।
 निशामुच (स० स्त्री०) निशाया सुच ३ तत्। प्रदोष काल, योषोका समय।
 निशामुपा (स० स्त्री०) चन्मूपा।
 निशाचम (स० पु०) निशाचरोच्यता यथा। नृगाक, गौहृत्।
 निशामिन् (स० त्रि०) निशामन्, सोया वृषा।
 निशाच (स० स्त्री०) निशु चि सामा चिच, च्युट्। १ मारच, मारणा। निशाया चचम्। २ रात्रिहृत्, ३ रात्रि मन्त्र।
 निशाच (स० स्त्री०) निशाया निशाया वा रत्यमिच। १ चन्द्रमा। २ अपूर, अपूर।
 निशाचक (स० पु०) १ ताकविशेष, काल प्रचारके रूपक ताकींसे एक प्रकारका ताक। इन्द्र, गौहृ, चचर, बिम्ब, चतुरङ्गम, निशाचस चोर प्रतिपाल ये सात रूपक ताक हैं। इनमें जो कष्ट चोर दो शुच माराय होती हैं। इनका व्यवहार प्रायः शास्त्ररचके गीतोके काम होता है। (त्रि०) २ निताक चि सच, बहुत पचित चि का करनीवाया।
 निशाईकाल (स० पु०) रात्रिका प्रथमाई चर्घात् प्रथम दो याम।
 निशाचन (स० पु०) निशाचत् चन्मन्त्राजनक जन यत्। अशुच्य सनका योवा।
 निशाचदान (स० स्त्री०) निशाया चचदान। रात्रिका चचदान, रातका चलिम भाग, तदुक्ता।
 निशाचिहार (स० पु०) निशाया चिहारी यद्य। राचस।

निशाचन्द्र (घ० स्त्री०) निशाया चन्द्र मन्त्र। रात्रि यच, रात्रिचमूह।
 निशाचैदिन् (घ० पु०) निर्वा निशाचरिमाच यैदि विद यति वा विद वा विद-यति। कुमुद, सुगा।
 निशाचदा (घा० पु०) १ गीत्र जो मिगे कर चसका निशाच चोर कामाया वृषा सत या गुरा। २ मांको, चकठ।
 निशाचस (स० पु०) निशाया चसति पुष्पविद्यायिन चस-पच, वा निशाया चसो निशाचो यद्य। कुमुद, कुमोदिनी।
 निशाचदा (स० स्त्री०) निशाया चलो यस्या। शिवाशिका, निशुवार, निशुकी।
 निशाच (घ० स्त्री०) निशाया पात्रा पमिधान यस्या। १ हरिश्चा, चन्दो। २ मासवदेयमें प्रसिद्ध कतुका नामकी कता।
 निशि (स० स्त्री०) १ रात्रि, रतनो, रात। २ हरिश्चा, चन्दो।
 निशिचर (स० पु०) चन्द्रमा, यति।
 निशिच (स० स्त्री०) चचौह।
 निशिचर (चि० पु०) निशाचर चैको।
 निशित (स० त्रि०) निशोच (चन्मन्त्रेणनरत्नम्। वा अशुचि) १ शचित, सात पर चढ़ा वृषा, सिक, योवा। (स्त्री०) २ चोच, योवा।
 निशिता (घ० स्त्री०) निशोच, टाप। निशोच, रात्रि, रात।
 निशिति (स० स्त्री०) निशो चम चि-चिन्, ततो चल्नम्। तन कत, चसोचना, दिवाका।
 निशिक (घ० पु०) वीया (रात्रि) के एक मुकदा नाम।
 निशिदिन (चि० स्त्री०) सच दा, रातदिन, सदा।
 निशिनाच (चि० पु०) निशाचन चैको।
 निशिनाचक (चि० पु०) निशाचन चैको।
 निशियति (चि० पु०) निशाचति चैको।
 निशियाच (घ० पु०) १ चन्द्रमा। २ एक चन्द जिनके प्रसिद्ध चरचमें समच भयच समच नगच चोर रगच होता है।
 निशियाचक (स० स्त्री०) १ चन्दोमेट, एक चच इतका नाम। निशियाच चैको। (पु०) २ निशियाचक प्रहरि भेट, वह शारयाच जो रातकी पहच देता है।

निगिवालिका (मं० खी०) निगिवा देवी ।
 निगिपुत्रा (मं० खी०) निगि पुत्राणि निगिवाग्नि पुत्र
 ७५, तसो ट ० । गोमाभिका, निगुंठा, निगुंठा ।
 निगिपुत्रिका (मं० खी०) निगिपुत्रा वामे नमः ।
 गोमाभिका, निगुंठा ।
 निगिपुत्री (मं० खी०) गोमाभिका, निगुंठा ।
 निगिवाग्न (हिं० पु०) नरंटा, मडा, दमीठा, शकटिका ।
 निगिवाग्नि—यह पञ्चम प्राचीन नगर । यह पारस्य और
 रोम दुग दो साम्राज्योर् मंगलात्क वा तथा प्राचीन और
 युद्धे हिम शक्ति प्राचीन वनसिद्धि है । यहने यह म्या
 रट्ट प्रांतल दुर्गदारा सुलिन था । रोम और पारस्य
 याभिर्दोमे कई बार हम चमेरा दुर्गको आतंकी
 नेना की थी, किन्तु एक बार भी नै लतकारों म दुग ।
 यह नगर और दुर्ग गोल गंजिरी ईंटाकी दीवारों
 त्रिग या चौर प्रत्येक दो गंजिरे मध्यभागेमें महर का
 का निजाया गई थी । पारस्यराज माहपूर १७८, १७९
 चौर १५० ई०में म्ममः १०, ८० चौर १०० दिग तक
 यहाँ चिरा जाने हुए थे, लेकिन प्रति शर चमे' निगा
 ही कर मोट जाना पडा था । चमेमें ३६३ ई०की गदि-
 यनके कीमलमे यह राज्य पारस्यराजने दान मगा था ।
 हम दुर्गके चारों चौर चर्तत है जहाँ यहुँ बह
 कामे विच्छ और विषेमे मोव पाये जाते है । यह
 नक्षत्रित परम प्रातिने १७ दिग्गामे : मान तक हम
 नगरको घेरे रगा था, हम मगा विच्छके काटनेमे
 कितनी चारमेना यमनीकको विधारी थी । यह दुर्ग पर
 चारमेनावति पट्ट कुगिग हुए चौर उखेनि एक
 हजार बड़े बड़े मारके परतनेमें दिवाक मरायव भा
 कर रातको उखे' यमकी महायतामें नगरमें फे'कना
 दिया । परतनके फूट जानेमे विच्छ, बाहर निकले
 चौर मिद्रावम्यामें हो बहतेकी काटा त्रिमसे मे नमके
 मय पक्षत्वको प्राप्त हुए । जो कुछ भय रहै, ये सुमद
 कीने ही एताग ही मय चौर दुर्ग रखाकी उगमें जरा भी
 गति न रह गई । पीछे सुमनमानेने दुर्गदारकी मोड
 कीड कर भीतर प्रवेश किया चौर कितने अधिवाविवाकी
 मार कर दुर्ग दायन किया था । कहते है, कि पारसा-
 राजने नोगेरवानके राजत्वकालमें उक्त सपावसे नगरको
 जीता था ।

वर्षीयाम मारगों मगाका यह प्राचीन लेखों मही
 है, माराग्य साम्राज्य दुर्ग जग है । हमने च ही चौर
 को यह उक्त मही है, मे वावा'स को'नि'वा प्रतिमय है
 है । मरा महेदु म्ममके पक्षे पक्षे दोपे देवमेने
 चाने है, निगा रं नगर दोहादे, मरा एक ही म्म
 है । मरोयव प्रातिना माव वाच भी पुन'वपु है ।
 निगा (मं० पु०) निगा मरुंतेने नि नि-नी-यक
 म्ममेने निगातमपु म्मपुः (उरु'वती'ने वतवार । १-
 ३५) । चमेगत, चामे गम । १ शक्ति, मग । २
 शक्तिका पुत्रम द, म मरुतके चदुगा शक्ति म्म कश्चि
 पुत्रका म्म ।
 निगादिना (मं० खी०) निगे दो'ल'मः इति इति
 होय, १ शक्ति, मग ।
 निगादिनि'काप (मं० पु०) निगादिना म्मपुः । १
 म्मम । २ कुंज ।
 निगाणा (मं० खी०) शक्ति, मग ।
 निधुम्भ (मं० पु०) निधुम्भ हिं'गा' म्म । १ म्म,
 चला । २ हिं'गम, मा'गम । ३ मर्'म । ४ चदु'म'द ।
 हमका विनाच नाममदुरागने हम म्मका निगा है ।—
 म्ममके उदु मा'म'क एक लो'नी । दुर्गके मर्मने म'म
 पुग म्मम दु'प, दु'म, निधुम्भ चौर म्ममि । ये म'ग
 म्ममे भी पधिका म्मम'नी है । म्ममि म्ममे च'मेमे
 मारे मय । म'मे दु'म चौर निधुम्भ चौरतर दु'मका च'मी-
 म्म कर देवताकी म्म म्ममेकी मेवार ही मय । म्म-
 में देवताकी हार दुई चौर उ'म'ने दानकी म्म म-
 मता म्मोकार कर मी । दु'म चौर निधुम्भ म्म म'म-
 म्ममे अधिका'र हुए, म्म म्ममय ए'नी पर च'कर
 रहने म्मने । देवताकी म्म म्ममे म्ममे म्ममे म्ममे
 उ'मे दानकी म्म म्ममे म्ममे म्ममे । दु'म चौर निधुम्भ-
 ने एक दिन म्ममे म्मम'क एक टातकी म्म म्म
 म्म म्म देम कर म्ममे कहा, 'हम म्मने हम म्ममर म्म-
 भावमे विचारव कामे की ?' म्ममे म्मने म्ममे म्ममे
 'मि म्ममे म्ममे म्ममे म्ममे । म्ममे म्ममे पर म्ममे म्ममे-
 देवीने म्ममे म्ममे म्ममे म्ममे म्ममे । म्ममे म्ममे
 म्ममे चौर म्ममे म्ममे म्ममे म्ममे म्ममे म्ममे म्ममे
 रहते है ।' यह म्म कर म्ममे चौर निधुम्भने प्रतिज्ञा की,

'हम लोग महिबादुरखाने देवीका पक्क मालमाय करे'गे।' कसो समय नमंदा नदीसे चण्ड घोर सुण्ड निकल कर दुग्ध घोर निगुणके बाब मिल यवे। सबेनि मिन कर सुघोष नामक एक बूतको निम्बपर्वत पर देवीके निचट भेजा। देवीके पास पङ्क बूतने लगेके कहा, 'संधार मरने दुग्ध घोर निगुण सभसे घोर है घोर तुम मो तिनोबसे मज सुन्दरी हो। हम दोनोमिसे तुम्हें जो पसन्द घामे लोके मरिमें बरमाका डाक दो।' यह सुन कर देवीने कहा, 'तुम्हारा कहना पक्कया सत्य है, भिचिन मीने एक भीवक पतिघा भी है, बह बह है बि, जो सुम्हिस घामने जौत सवेगा कहीको मी बरमाका पङ्कनाळ'मो।' सुम्हने जा कर बह हलान्त दानबराजके बह सुगाया। इस पर दानबराजने देवीको पङ्क लामिसे सिय पूम्हलोचनको भेजा। पूम्हलोचन लोके ही दल-बलके साथ देवीके पास पङ्क जा, लोके देवीने एक हुडका दी जिचसे बह सबेन्य मरम हो गया। बाह दानब श्रेष्ठ दुग्ध पति घणण्ड मीनाकी साथ दे चण्ड सुण्डको भेजा। जे नीय मो देवीके साथ हुडमें कहके तहां टेर हो रहे।

चण्ड सुण्डसे मारे जानेके बाद लौक कोटि पयोधिको मीनाके साथ राजबीज भेजा गया। राजबीज देवीके साथ समसान हुड करने गया। राजबीजके घरीरके लव एक बिन्दु राज कमीन पर बिरता था, तब लोकेके सङ्ग एक घुंघरा राजबीज कपसे लयव हो जाता था। पर बि एक एक करके देवीके पमित लवसे मरने लगे। पन्तमें राजबीज भी मारा गया। निरुध विररव लयवमें देखा। बाह निगुण लव सुभसेममें पकारे। लोकेनि देवीका पलोबधामाय कपलाबण्ड देव कर कहा, 'कोयिदि; तुम्हारे देह बहुत कोमक है, पत' तुम सुम्हिस पयना पति बरो।' हम पर देवीने भक्ति न बाळमें लत्तर दिया, 'अब तब तुम सुम्हिस हुडमें पराजय नहीं करोगे, तब तब मी तुम्हें पयना पति बना नहीं सक्तो।' फिर कहा था, 'दोनोमि हुड होने लया। कसय' देवीके हाथसे निगुण मो मारा गया। पीके दुग्धको मो यही हया हुई। इस प्रकार दानबीके निचल होने पर देवमज पक्षी न घमाए घोर बह कोरे मिन कर लनकी हाति करने लगे इन्दने

मो फिरसे लव राज्य प्राप्त किया। देवीकी लयाये देवताओंका दुर्वि न जाता रहा। देवीने मो मान्तामाय धारय किया। (बामनपुर २६-२७ अ०)

माळ'ण्डे यपुराचरे मज देवीमाहात्म्य पर्वत लण्डोमें हम निगुण दानबका विवक निखा तो है लोकिन इसरी लण्डिका विवक कहीं मो देवनेमें नहीं पाता। लण्डोमें इसका विवक जो निखा है बह इस प्रकार है,—पुरा काळमें निगुण घोर दुग्ध नामक दो भाई पसुरीके बनि पति थे। जे देवताओंके राज्क, यहाँ तक कि यज्ञका बनिर्माण मो, बलपूर्वक पङ्क करने लगे। मितान्त निदीहित हो देवताओंने देवी भववतीकी मरख मी। हम समयसे देवो मनोहर रूप धारक कर रहने लगे। एक दिन दुग्ध घोर निगुणके लव चण्ड घोर सुण्डने पिसा पलोचिक रूप देव कर दुग्ध घोर निगुणसे कहा, 'महाराज। हमने विमायस पर एक बामिनोको देखा। कथका जैसा रूप था वेसा घ सार मरने किसेका मो नहीं है। पापके पाब सिमुबनमें जितो पङ्को पङ्को जोकि है समी तो है, लोकिन वे ही बामिनो नहीं है। पता निवेदन है कि पाप कसे पंपनो ली बना सि।' यह सुन दुग्ध घोर निगुणने सुघोष बूतको देवीके पास भेजा। देवीने दानबराजको कहा सुन कर कहा,—

"मो मो बयति पंयामे तो वे हरे र्वरोहति।
 ने मे इतिनको लीके व मे लता मरिपति ३" (बगी)
 ओ सुम्हिस घामने जौत सवेगा घोर मिरा दुग्ध मज करनेमें समय होगा पक्कया को मीरे समान बल रखता होना कही मिरा मर्ता होया, घुंघरा नहीं। दुग्ध निगुण देवताओंके भी बलमामी है। पतएन सुम्हिस जव करना लनसे लैसे बीदुधपर्वके लिए हावना घेन है। यदि वे सुम्हसे विबाह करना चाहते हैं, तो सुम्हिस नङ्गाइमें जौत कर पङ्क करे। सुघोबने यह हलान्त अब देवराज दुग्ध निगुणसे जा कर सुगाया, तब लोकेनि पक्षी पूम्हलोचन-को, पीके चण्डसुण्ड घोर राजबीजको देवीके विवक मीना। अब वे दलबलके साथ देवीके हाथसे मारे गये, तब निगुण लव बर्हा पङ्क घे घोर लो नय तब देवीने कहती रहे। पन्तमें वे मो हुडमें निचल हुए। निगुणके मारे जाने पर दुग्धके भी फिर पर बाब लचने जगा। बह

उसी समय युद्धक्षेत्रमें आ खड़ा हुआ और देवीके हाथसे मारा गया। (मार्कण्डेयपु० चण्डो) वामनपुराण में लिखा है कि, रक्तवोज और चण्डमुण्ड महिषासुरके प्रमात्य थे, किन्तु चण्डोमें इसका कोई उल्लेख देखनेमें नहीं आता। शुम्भ देखो।

मार्कण्डेय पुराणान्तर्गत चण्डोमें एक दूधरे निशुम्भासुरका उल्लेख है। शुम्भनिशुम्भकी सृष्टिके बाद देवताकीने त्रय देवीको स्तुति की, तब देवीने उन्हें वर दिया था, 'वैवस्वत मन्वन्तरके अष्टादशवें युगमें शुम्भ और निशुम्भ नामक अत्यन्त बलवान् दो असुर जन्म ग्रहण करेंगे। मैं नन्दगोपगृहमें यगोदाके गर्भसे उत्पन्न हो कर उनका नाश करूँगे।'

“ वैवस्वतेऽन्तरे प्राप्तिं अष्टाविंशतिमे युगे ।

शुम्भो निशुम्भश्चैवान्यासुत्पत्स्यते महाशरौ ॥

नन्दगोपगृहे जाता यशोदा गर्भ सम्भवा ।

तसस्त्री नाशयिष्यामि तिन्यथावलनिवासिनी ॥”

(मार्कण्डेयपु० ८१।३६-३७)

निशुम्भन (स० स्त्री०) निशुम्भ द्विसायां भावे ल्युट् ।
वध, मार डालना ।

निशुम्भमर्दिनी (स० स्त्री०) निशुम्भं मर्दयति सृष्टि-
णिनि, ततो ङोप् । दुर्गा ।

निशुम्भशुम्भमथनी (स० स्त्री०) निशुम्भं शुम्भश्च मथनोति,
मथ्य-ल्युट् न लोपः, ततो ङोप् । दुर्गा ।

निशुम्भन् (स० पु०) निशुम्भो मोक्षनाशोऽस्त्यस्येति इनि, वा
निशुम्भ-णिनि । १ बुद्धविशेष, एक बुद्धका नाम । पर्याय-
हरिम्ब, हैरुक, चक्रमस्वर, देश, बल्लकपाली, शशिगोखर,
वञ्चटीक । (त्रि०) २ नागक, नाश करनेवाला ।

निशुम्भ्य (स० त्रि०) गत, उपनोत, लाया हुआ ।

निशुम्भ (स० त्रि०) निशुम्भ्य सम्बध्य हरति निशुम्भ्य
बाहुलकात् भक्, वदे सम्प्रसारं ततो ष्योदरादित्वात्
साधुः । निशुम्भ्य, साज लगाया हुआ ।

निशुम्भ (स० पु०) निशुम्भा ईशः । चन्द्रमा ।

निशुम्भ (स० पु०) निशुम्भास्येति एतं ईषद्वगमनं यस्य ।
वक, बगुला ।

निशुम्भ (स० पु०) निशुम्भा अपनयन, प्रभात,
तड़का ।

निशुम्भ (स० स्त्री०) ख त्रिष्टुत्, नफेद निशुम्भ ।
निशुम्भाय (स० पु०) वज्र जो रातमें विश्राम करता हो ।

निशुम्भ (स० त्रि०) अपने कुम्भसे निकली हुई ।

निशुम्भ (स० त्रि०) चन्द्रकीन, अंधा ।

निशुम्भारिंश (स० त्रि०) निर्गतः चत्वारिंशतः शतन्तात् ।

३। चत्वारिंशत् संख्यासे निर्गत, जिसमें चालोसकी
संख्या न हो ।

निशुम्भ (स० त्रि०) १ चन्द्रमारुहित । २ जिसमें चमक
न हो ।

निशुम्भ (स० पु०) शोषभ्रमेड, एक प्रकारका
अभ्रक । यह दूध, खारपाठा, भादमोके मूत्र, बकरीके
लेह आदि कई पदार्थोंमें मिश्रा कर और सौ बार उनका
पुट दे कर तैयार किया जाता है। कहते हैं, कि यह
पशुरागके समान हो जाता है। यह वीर्यवृद्धक, रसायन
और स्वरनाशक माना जाता है ।

निशुम्भ (स० त्रि०) निश्चितच प्रचितच मयूरव्यंसकादि
त्वात् समासः । निश्चित और प्रचित वस्तु ।

निश्चय (स० पु०) नियोजयतेऽनेनेति निर-चि-अप्-
(यहदृष्टनिश्चयमस्य । पा ३।३।५८) १ निःसंशयज्ञान,
ऐसी धारणा जिसमें कोई सन्देह न हो । पर्याय-निर्णय,
निर्णयन, निश्चय, संशयका अन्तर्ज्ञान । किसी वस्तुका
संशय होनेसे उसका एक पक्ष स्थिर करनेका नाम
निश्चय है । २ विश्वास, यकीन । ३ निर्णय ।

४ बुद्धिकी असाधारण वृत्तिभेद । ५ दृढ़ सहाय्य, पक्का
विचार, पूरा हरादा । ६ अर्थालङ्कारभेद, एक अर्थाल-
ङ्कार जिसमें अर्थ विषयका निषेध हो कर प्रकृत वा
यथार्थ विषयका स्थापन होता है । उदाहरण—

‘वदनमिदं न सरोजं नयने नेत्रदीपरे एते ।

इह सविधे सुगवदशो मधुकर न मुषा परिभ्राम्य ॥’

(साहित्यद० १० परि०)

यह वदन पद्म नहीं है, ये दो नीलोत्पल नहीं हैं—
चलते हैं, हे मधुकर ! इस कामिनीके समीप तुम तथा
क्यों परिभ्रमण करते हो । यहाँ पर पद्म और नीलोत्पल
इन दो अर्थ विषयोंका निषेध करके प्रकृत विषयका
स्थापन हुआ । अतएव यहाँ निश्चयान्तर हुआ ।

निश्चयरूप (स० त्रि०) निश्चितका भाव वा आकृतियुक्त ।

निक्षेपात्मक (स० वि०) पत्र दिव्य, जो दिव्यसुप्त निक्षेप
हो, जोहजोह ।

निक्षेपात्मकता (स० स्त्री०) निक्षेपात्मक होनेका भाव,
यथाकृता यथादिक्षता ।

निक्षेपन् (स० वि०) निक्षेपित, निक्षेप किया हुआ
निक्षेपता हुआ, जोह दिया हुआ ।

निक्षेप (स० पु०) एकदश मन्त्रस्तोत्र सत्रविधिमें, एक-
दश मन्त्रस्तोत्र सत्रविधिमें दिया ।

निक्षेप (स० स्त्री०) निक्षेप-पत्र । १ निक्षेप, जो अग्रा
मो न विधि कृते । २ पत्रम्, जो यज्ञमें स्थापने न कृते ।

३ पत्रभाषणा, विपरीत भाषणारहित ।

निक्षेपता (स्त्री०) निक्षेपता, इक्षेपता, निक्षेप होनेका
भाव ।

निक्षेपतामन्त्रात्मो—एक प्रसिद्ध दार्शनिक । इन्होंने प्रमाणात्
नामक पञ्चदशोक्ती एक टीका लिखी है ।

निक्षेपा (स० स्त्री०) निक्षेप टाप । १ नाकयथो । २
चरित्रो । ३ नदीविषयो, एक नदीका नाम ।

निक्षेपाङ्ग (स० पु०) निक्षेपान्तु पद यथा । १ बन्ध,
बन्धुता । २ पत्र त प्रथति । (स्त्री०) ३ अन्तरहित, जो
हिंसता छोड़ता न हो ।

निक्षेपाक्ष (स० स्त्री०) निक्षेपोत्थि निक्षेप-विष्णुम् ।
निक्षेपकर्ता, जो बिडी बातका निक्षेप या निक्षेप
करता हो ।

निक्षेपक (स० पु०) निक्षेपोत्थि निक्षेप-विष्णुम् । १
बाहु बन्धा । २ अक्षयम् । ३ पुरीषस्य प्रमादिका
नामका रोग जो चतुर्विधका एक भेद है । यह बर्षाको
प्रायः होता है और वर्षमें बहुत दृष्ट प्रायः है ।

निक्षेप (स० स्त्री०) निक्षेप-विष्णुम् । १ निक्षेप
सम्बन्धमें निक्षेप हो चुका हो, तो किया हुआ । २ निक्षेप
कोई परिवर्तन या विर बदल न हो सके । (स्त्री०)
३ नदीभेद एक नदीका नाम ।

निक्षेपि (स० स्त्री०) निक्षेपि निक्षेप । यथाकारण, निक्षेप
करना ।

निक्षेप (स० पु०) यथाकारण योयम् एक प्रशासकी
व्यवधि ।

निक्षेप (स० स्त्री०) निक्षेपिता बिक्रा यत्नात् । बिक्रा

रहित, जिसे कोई धिन्दा या बिक्र न हो, विक्रिण ।
निक्षेपा (स० स्त्री०) नदीभेद, एक नदीका नाम
त्रिसदा उत्तम महाभारतमें है ।

निक्षेपमान (स० स्त्री०) निक्षेप-विष्णुम् । यथाकारण,
निक्षेप विषय ।

निक्षेपक (स० स्त्री०) निक्षेप-विष्णुम् । यथाकारण,
निक्षेप ।

निक्षेप (स० स्त्री०) निक्षेपिता बिक्रा यत्नात् । १ निक्षेप-
रहित, चैतन्यगुण्य, वैश्वो, बह्विधाय । २ अङ्क ।

निक्षेप (स० स्त्री०) निक्षेपित चैत यत्नात् । चैतन्य
रहित, वैश्व ।

निक्षेप (स० स्त्री०) निक्षेपिता बिक्रा यत्नात् । १ निक्षेप-
रहित चैतन्यगुण्य वैश्वो, यथैत । २ यत्नम्, यथाकारण ।
३ निक्षेप, बिक्र ।

निक्षेपा (स० स्त्री०) निक्षेपिता बिक्रा यत्नात् । १ निक्षेप-
रहित चैतन्यगुण्य वैश्वो, यथैत । २ यत्नम्, यथाकारण ।
३ निक्षेप, बिक्र ।

निक्षेपा (स० स्त्री०) निक्षेपिता बिक्रा यत्नात् । १ निक्षेप-
रहित चैतन्यगुण्य वैश्वो, यथैत । २ यत्नम्, यथाकारण ।
३ निक्षेप, बिक्र ।

निक्षेपा (स० स्त्री०) निक्षेपिता बिक्रा यत्नात् । १ निक्षेप-
रहित चैतन्यगुण्य वैश्वो, यथैत । २ यत्नम्, यथाकारण ।
३ निक्षेप, बिक्र ।

निक्षेपा (स० स्त्री०) निक्षेपिता बिक्रा यत्नात् । १ निक्षेप-
रहित चैतन्यगुण्य वैश्वो, यथैत । २ यत्नम्, यथाकारण ।
३ निक्षेप, बिक्र ।

निक्षेपा (स० स्त्री०) निक्षेपिता बिक्रा यत्नात् । १ निक्षेप-
रहित चैतन्यगुण्य वैश्वो, यथैत । २ यत्नम्, यथाकारण ।
३ निक्षेप, बिक्र ।

निक्षेपा (स० स्त्री०) निक्षेपिता बिक्रा यत्नात् । १ निक्षेप-
रहित चैतन्यगुण्य वैश्वो, यथैत । २ यत्नम्, यथाकारण ।
३ निक्षेप, बिक्र ।

निक्षेपा (स० स्त्री०) निक्षेपिता बिक्रा यत्नात् । १ निक्षेप-
रहित चैतन्यगुण्य वैश्वो, यथैत । २ यत्नम्, यथाकारण ।
३ निक्षेप, बिक्र ।

निक्षेपा (स० स्त्री०) निक्षेपिता बिक्रा यत्नात् । १ निक्षेप-
रहित चैतन्यगुण्य वैश्वो, यथैत । २ यत्नम्, यथाकारण ।
३ निक्षेप, बिक्र ।

निक्षेपा (स० स्त्री०) निक्षेपिता बिक्रा यत्नात् । १ निक्षेप-
रहित चैतन्यगुण्य वैश्वो, यथैत । २ यत्नम्, यथाकारण ।
३ निक्षेप, बिक्र ।

निक्षेपा (स० स्त्री०) निक्षेपिता बिक्रा यत्नात् । १ निक्षेप-
रहित चैतन्यगुण्य वैश्वो, यथैत । २ यत्नम्, यथाकारण ।
३ निक्षेप, बिक्र ।

निक्षेपा (स० स्त्री०) निक्षेपिता बिक्रा यत्नात् । १ निक्षेप-
रहित चैतन्यगुण्य वैश्वो, यथैत । २ यत्नम्, यथाकारण ।
३ निक्षेप, बिक्र ।

निक्षेपा (स० स्त्री०) निक्षेपिता बिक्रा यत्नात् । १ निक्षेप-
रहित चैतन्यगुण्य वैश्वो, यथैत । २ यत्नम्, यथाकारण ।
३ निक्षेप, बिक्र ।

निश्रयणी (स० स्त्री०) सोपान, सोढ़ी ।
 निशाविन् (स० त्रि०) घघःपतनशील, जिसका नाश ही ।
 निश्रोक (स० त्रि०) सोपान, सीढ़ी ।
 निश्रैणिकाटण (स० पु०) एक प्रकारकी घास जो रस-
 हीन और गरम होती तथा पशुओंकी कमजोर बना
 देती है ।
 निश्रैणी (स० स्त्री०) १ सोपान, सीढ़ी, झीना । २
 मुक्ति । ३ खजूरवृक्ष, खजूरका पेड़ ।
 निश्रैयस (द्वि० पु०) १ मोच । २ दुःखका अत्यन्त अभाव ।
 ३ कल्याण ।
 निश्रैस्य (स० त्रि०) निश्रैसासयुक्त । दीर्घ निश्रैसासका
 परित्याग करना, आह भरना ।
 निश्रैस (स० पु०) निश्रैस भावे घञ् । वहिर्मुख श्वास,
 नाक या मुँहके बाहर निकलनेवाला श्वास, प्राणवायुके
 नाकके बाहर निकलनेका व्यापार । पर्याय—पान,
 एतन ।
 निश्रैसासंहिता (स० स्त्री०) निश्रैसासख्या संहिता ।
 शिवप्रणीत शास्त्रविशेष, शिवजीका बनाया हुआ एक
 शास्त्रका नाम । ब्राह्मणोंके अनुरोधसे उन्हेंने यह संहिता
 लिखी है । इसमें पाशुपती दीक्षा और पाशुपत योग
 वर्णित है ।
 निश्रैसक (स० त्रि०) निश्रैस, जिसमें शक्ति न हो ।
 निश्रैसक (स० त्रि०) १ निर्भय, निडर, देखीक । २
 सन्देह रहित, जिसमें शंका न हो ।
 निश्रैसली (स० त्रि०) वैसुरोषत, वदमिजाज, बुरे रूभाव-
 धान्ता ।
 निश्रैसलीता (स० स्त्री०) दुष्ट स्वभाव, वदमिजाजी ।
 निश्रैस्य (स० त्रि०) जिसका कुछ अवशिष्ट न हो,
 जिसमेंसे कुछ भी वाको न बचा ही ।
 निषकपुत्र (स० पु०) राक्षस, निशाघर, असुर ।
 निषकश (स० पु०) स्वरसाधनको एक प्रणाली । इसमें
 प्रत्येक स्वरका दो दो बार अलापना पड़ता है । जैसे
 सा सा रे रे ग ग म म प प ध ध नि नि सा सा । सा सा
 नि नि ध ध प प म म ग ग रे रे सा सा ।
 निषक (स० पु०) जनक, पिता, बाप ।
 निषक (स० पु०) निसरां सञ्जन्ति शरा यत्र । नि सन्ज

अधिकरणे घञ् । १ तूनार, तूण, तरकश । २ खड्ग ।
 ३ प्राचीन कालका एक वाजा जो मुँहसे फूंक कर
 बजाता जाता था ।
 निषकधि (स० पु०) नि-सन्ज-घयिन् । १ आलिङ्गन ।
 २ धनुष धारण करनेवाला । ३ रथ । ४ स्कन्ध, कन्धा ।
 ५ ढण, घास । ६ सारथि । (त्रि०) ७ आलिङ्गक, आलि-
 ङ्गन करनेवाला ।
 निषकधि (स० पु०) निषकः खड्गः धीयतेऽस्मिन् धा-
 आधारे क्ति । खड्गपिधान, म्यान ।
 निषक्री (स० त्रि०) निषक्रीऽस्त्वस्य इति ष्नि । १
 धनुषर, तोर चलानेवाला । २ खड्गधारी, खड्ग धारण
 करनेवाला । ३ नितान्त सङ्गयुक्त । ४ तूनारयुक्त । (पु०)
 ६ तूनार, तरकश । ७ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम ।
 निषक (स० त्रि०) निषोदतिस्मेति नि-षद-गत्वर्थेति ङ
 निष्ठातस्यन (रदाभ्यां निष्ठातो न पूर्वस्य च दः । पा
 ८।२।४२) उपवशिष्ट, शतिस, स्थित, अवलम्बनकारी ।
 निषक (स० स्त्री०) निषक संज्ञायां कन् । सुनिष-
 क शक, सुसनी नामका साग ।
 निषक्ति (स० स्त्री०) नि-सद-क्तिन् । निषदन, स्थिति ।
 निषक्त (स० त्रि०) नि-सद वाहुलकात् ष्टु । निषक,
 स्थित ।
 निषद (स० स्त्री०) निषोदत्यसाम् नि-सद-प्राधारे क्तिप् ।
 १ यज्ञदीक्षा । २ वेदवाक्यविशेष । भावे क्तिप् । ३
 उपसदन । नि-सद-कर्त्तरि-क्तिप् । ४. उपवेश ।
 निषद (स० पु०) निषोदति पट्टजादयः स्वरा यत्र, नि-
 सद वाहुलकात् षप् । १ निषादस्वर । २ खनामख्यात
 नृपविशेष, एक राजाका नाम ।
 निषदन (स० स्त्री०) निषोदत्यैत्र नि-सद-प्राधारे
 क्तिप् । १ गृह, घर । २ उपवेशन स्थान, बैठनेकी
 जगह । (पु०) निषोदति पापकमत्र, क्तिप् । १ निषाद ।
 निषद्या (स० स्त्री०) निषोदत्वत्प्राप्तिसिद्धि नि-सद-क्यपं-
 (पञ्चाया समलनिषदेति । पा ३।१।८८) १ पशुविक्रयशाला;
 वह स्थान जहाँ कोई चीज विकती हो, हाट । २ इष्ट,
 हाट । ३ द्रष्टृ खट्वा, छोटी खाट ।
 निषद्यापरोषत (स० पु०) ऐसे स्थानमें जहाँ स्त्री घण्ट
 पादिका आगम हो न-रहना-योग यदि इष्टानिष्टका

नहीं होता। नल राजकी राज्यका नाम भी निपाद नहीं है, निपध है। मानूँ म पढ़ता है, कि महाभारतकी उत्तरपश्चिम निपादसे द्विभार और भाटनर जिनका बोध होता है।

ब्रह्माण्डपुराणमें लिखा है, कि पृतमलिना गङ्गाको पूर्वाभिमुखो शाखा ह्लादिनी नदी निपाद देश होती हुई पूर्वसागरमें गिरी है। गङ्गपुराणमें इस प्रकार लिखा है,—यह निपाद जाति "विन्ध्यमैलनिवासक" है अर्थात् ये लोग पहले विन्ध्यगिरिके निकटवर्ती स्थानोंमें वास करते थे और यही स्थान जहां तक समाध है कि महाभारतकी निपादभूमि नामसे उक्त दुष्प्रा है। महाभारतके धनपर्वमें विनयनका जो उल्लेख है उसके दक्षिण पश्चिममें एक छोटा राष्ट्र है जो तुंग सरस्वतीके किनारे बसा हुआ है। सम्भवतः किसी निपादवंशीय राजाने यह राज्य बसाया होगा। रामायणको शृङ्गवेरपुरमें इस निपाद-राज्यकी राजधानी थी। शृङ्गवेरपुर देखो। ४ कल्पभेद। निपोदन्ति पङ्कजादयः स्वरा यत्र नि-सट्-घञ् । ५ सङ्गोतके सात स्वरोमें अन्तिम और सबसे ऊँचा स्वर। नारदके मतसे यह स्वर इन्द्रिस्वरके समान है। इसका उच्चारण-स्थान ललाट है, लेकिन व्याकरणके मतानुसार दन्त। इस स्वरका वर्ण वैश्य है।

सङ्गोतदर्पणके अनुसार इस स्वरकी उत्पत्ति असुर-वंशमें हुई है। इसकी जाति वैश्य, वर्ण विचित्र, जन्म पुंकरहोपमें, ऋषि तुष्यर, देवता सूर्य और इन्द्र जगतो है। यह सम्पूर्ण जातिका स्वर है और करुण रसके लिये विशेष उपयोगी है। इसकी कूट तान ५०४० है। इसका वार शनि और समय रात्रिके अन्तकी षट्पण्ड ३४ पल है। इसका स्वरूप गणेशजीके समान, वर्ण कृष्ण-श्वेत और स्थान पुंकरहोप माना गया है। इसको श्रुति उषा और शोभिनी है। मन्दरस्थानमें मूर्च्छना मखा और मध्यस्थानमें प्रहृष्टता है। तारस्थानमें लोचना है। आभाषणी और मल्लारी ये दो रागिणियां निपादवर्जिता हैं। नारदपुराणके मतसे यह स्वर निःसन्तान है।

निपादकर्म (सं० पु०) देशभेद, एक देशका प्राचीन नाम।

निपादवत् (सं० पु०) निपाटोऽक्षरस्य मत्पु, मस्य व । १ निपादस्वर । (त्रि०) २ निपादनायुक्त ।

निपादित (सं० क्ली०) नि-भट् णिच्-क्त । १ निपदन, बैठनेको क्रिया । (वि०) कर्मणि क्त । २ उपवेशन, बैठना हुआ ।

निपादिन् (सं० पु०) निपोदत्यवश्यमिति नि सट् णिनि । १ इन्द्रिपक, ज्ञायोवान, महावत । (त्रि०) २ उपविष्ट, बैठा हुआ ।

निपिक्त (सं० त्रि०) नि मिच्-क्त । १ नितान्तसिक्त । (क्ता०) २ शुकजात गर्भ, वीर्यसे उत्पन्न गर्भ ।

निपिक्तपा (सं० त्रि०) निपिक्तं पातोति वेटे निपातनात् साधुः । १ गर्भरक्षा-कर्त्ता, गर्भको रक्षा करनेवाला । २ सोमपानकर्त्ता, सोमपान करनेवाला ।

निपिद्ध (सं० त्रि०) निपिध्यत एमेति नि-मिध्-क्त । १ निषेधविषय, जिसका निषेध किया गया हो, जिसके लिये मनाही हो, जो न करनेके योग्य हो ।

पद्मपुराणके स्वर्गखण्डमें निपिद्धकर्मका विषय इस प्रकार लिखा है,—

ब्राह्मणोंके लिए ज्याकरपण, गन्तुनिषर्हण, क्षपि, वाणिज्य, पशुपालन, प्रथके लिये श्रुत्या, कुटिलता, कुपोद और हृषणीगमन आदि कार्य निपिद्ध हैं। ये सब निपिद्ध कर्मान्वित ब्राह्मण वैदिक और तान्त्रिक कार्यके योग्य नहीं हैं। कर ध्यतीत प्रतियह, गृहमें पनायन, याचकके प्रति कातरता, प्रजाका अपालन, दान और धर्ममें विरक्तता, स्वराष्ट्रको अनपेक्षा, ब्राह्मणका भनादर, प्रमात्यका असम्मान और उनके काम पर निगाह न रखना तथा भृत्योंके प्रति परिहास आदि कार्य अत्रियोंके लिए निपिद्ध हैं। धनलोभसे मिथ्या मूलकयन, पशुओंका अपालन, मम्पटसत्त्वमें यज्ञानुष्ठान नहीं करना, ये सब कार्य वैश्योंके लिए तथा धनसम्पन्न और दशविधकर्म शूद्रोंके लिए निपिद्ध बतलाए गए हैं। (१५५पु० स्वर्गख० २७ अ०)

याज्ञपव्रमें खाना और उसे छेदना तथा पोषण और वटखचका काटना मना है। शास्त्रोंमें जिन सब वर्णोंके जो कार्य नहीं बतलाए गए हैं, वे सभी कार्य निपिद्ध हैं। निपिद्ध कर्मका अनुष्ठान करनेसे निरयभागी होना पढ़ता है। २ निवारित, कुवित, खराब, बरा ।

निविद्धवाची (स० श्लो०) चातुर्वेदमन्त्रपुरवर्जिते वाची । सन्तानादिषु वास्तव्ये निष्कनिष्कविहितं श्रियो को वाचो नर्षो वनात्वा चापि । सोबाहुना, सुविता परिशाला, व्याधिपुत्रा, बहुवयस्का चक्रवा पतिवर्षा, पारवता श्रुवाङ्गी, पतिवयस लबाङ्गे, यमिर्षो, ऋषोपेक्षिता शोर त्रिसरे स्थान लम्बे तथा लक्ष्मणे (अथा स्थान लक्ष्मणे वास्तव्ये वास वद्वा होता है शोर वद्वा स्थाने वास्तव्ये वास नाक इव जातो त्रिसरे लक्ष्मणे चातुर्वेदो जाती है), पत्रोर्षमोत्री, धपम्यधेवी, हृषित चापमं धामना, दुःकाश्विता शोर चक्षुसपिता एत सव दोषवृक्षा वक्रोत्रे स्थान दीप्तिने वास्तव्ये रोमपथ होता है

निविद्धि (स० श्लो०) नि विद्ध-निष्क । निषेध, मनाहो । निष्कटन (स० श्लो०) मारुतिवाचा । निषेध (स० पु०) निविध्यते प्रविध्यते इति नि-विद्ध-इत् । १ खनादिना गिताया वेषन । २ गर्भाधान । ३ रीत, वीर्य । ४ पारव, चक्रवा, उपवना । निषेधादिहत् (स० पु०) निषेधादि गर्भाधानादिक क्षीणोति क क्षिप्र । यमोर्षाणादि वर्णा । निषेधस्य (स० श्लो०) नि-विद्ध-तस्य । वेषनोय, सोचने योग्य । निषेधन (स० श्लो०) नि विद्ध-विद्ध-इत् । वेषन सोचनया तर करणा, निषेध । निषेधित (स० श्लो०) नि विद्ध-इत् । वेषनकर्ता, वीर्यनिवाचा । निषेधिनस्य (स० श्लो०) नि विद्ध-इत् । निषेध, उपविद्ध, इत्वा कृत्वा । निषेधस्य (स० श्लो०) नि विद्ध-तस्य । निषेधनीय, निषेध करणे योग्य मनाहो चाप्यत् । निषेधु (स० श्लो०) नि विद्ध-इत् । निषेधक, निषेध करणेवाचा । निषेद्ध (स० श्लो०) प्रतिवन्धकत्वात्, त्रिसवा दमन वा रोचनेवात्वा बोद्धे न हो । निषेध (स० पु०) नि विद्ध-इत् । १ प्रतिषेध, चर्षन, मनाहो । २ निवृत्ति, बाधा इकादत् । ३ विधिद्विपरीत इ निवर्तन, मारण । निषेधतेन करणे इत् । ४ अनिष्टनाशनार्थादि बोधक वेदानि वास्तव्ये । पुत्रवर्षे निष्क

र्षक वास्तव्ये नाम निषेध है । त्रिस यास्तद्विधि द्वारा मनुष्य निवर्तित होती है, उसीको निषेध कहती है । निषेधक (स० श्लो०) नि-विद्ध-इत् । निवारक, रोचनेवाचा । निषेधन (स० श्लो०) नि-विद्ध-इत् । निषेध, निवारक, मना करणा । निषेधगत (स० श्लो०) मारणविधि, वद्ध पत्त विषये द्वारा विधो प्रकारका निषेध किया जाय । निषेधनिधि (स० पु०) निषेधे धामनि विधि इदवाचन तापीरितु । धामनिविषये इदवाचनताबोधक वास्तव्ये इ वद्ध वात या पाथा विषये द्वारा विधो वातका निषेध किया जाय । निषेधित (स० पु०) नि-विद्ध-इत्-इत् । प्रतिविद्ध, निवारित, त्रिसरे विधे निषेध किया गया हो, मना किया कृत्वा । निषेधितु (स० श्लो०) नि विद्ध-विनि । निषेधक, निषेध करणेवाचा । निषेधोक्ति (स० श्लो०) निषेधवाच्य । निषेध (स० श्लो०) १ निवारण, चतुरा । २ ध्याययोग्य । (श्लो०) ३ चक्रवोचने । ४ वास । ५ पूजा । ६ अनुभरण । निषेधक (स० श्लो०) १ चतुरा । २ पुनः पुन एक स्थान पर ध्यायन वा इव विषयमें धमिनिषेध । निषेधन (स० श्लो०) नि विद्ध-इत्-इत् । १ विधा । २ विधन, व्यवहार । निषेधनोय (स० श्लो०) नि-विद्ध-पनेत्यत् । विधायोग्य । निषेधित (स० श्लो०) नि विद्ध-इत् । निषेधक, विधा करणेवाचा । निषेधिनस्य (स० श्लो०) नि-विद्ध-तस्य । वेषनोय, विधा योग्य । निषेधितु (स० श्लो०) चक्रवोचन, चतुरा, दुष्प्रयोगी । निषेध (स० श्लो०) नि विद्ध-इत्-इत् । निषेधनीय, निषेध योग्य । निष्क (स० पु०) निषेधेन चापति योमते निष्क-इत् वा निष्क-इत् । १ निष्ककालका एक प्रकारका श्लोके वा शिका या मोहर । निष्क निष्क चतुर्धे निष्क मनुष्य निष्क निष्क वा ।

पूर्व समयमें यज्ञोंमें राजा लोग ऋषियों और ब्राह्मणों को दक्षिणामें देनेके लिए सोनेके समान तौलके टुकड़े कटवा लिया करते थे जो 'निष्क' कहलाते थे। सोनेके इस प्रकार टुकड़े करानेका मुख्य हेतु यह होता था कि दक्षिणामें सब लोगोंको बराबर बराबर सोना मिले, किसीको कम वा ज्यादा न मिले। पीछेसे सोनेके इन टुकड़ों पर यज्ञसूप आदिके चिह्न और नाम आदि बनाए या खोदे जाने लगे। इन्हीं टुकड़ोंने आगे चल कर सिक्कोंका रूप धारण कर लिया। उस समय कुछ लोग इन टुकड़ोंको गूंध कर और उनको माना बना कर गलेमें भी पहनते थे। भिन्न भिन्न समयोंमें निष्कका मान नोचे लिखे अनुसार था।

एक निष्क = एक कर्ष (१६ माशे)
 ,, ,, = ,, सुवर्ण ,,
 ,, ,, = ,, दीनार ,,
 ,, ,, = ,, पल (४ या ५ सुवर्ण)
 ,, ,, = चार माशे
 ,, ,, = १०८ घटका १५० सुवर्ण

२ सुवर्ण, सोना। ३ प्राचीन कालमें चांदीको एक प्रकारकी तौल जो चार सुवर्णके बराबर होती थी। ४ वैद्यकमें चार माशेको तौल। ५ सुवर्णपात्र, सोनेका वरतन। ६ होरक, हीरा। ७ कण्ठभूषा, गलेका गड़ना। निष्ककण्ठ (सं० पु०) १ सुवर्णालङ्कारविशिष्ट कण्ठ, सोनेके झेवरोंसे मला हुआ गला। २ वरुणहस्त।

निष्कप्रोव (सं० त्रि०) जिसके गलेमें सोनेका झलङ्कार हो।

निष्कण्ठक (सं० त्रि०) निर्गतः कण्ठकी यस्य। १ उपसर्गहीन। २ बाधरहित, जिसमें किसी प्रकारकी बाधा, आपत्ति या भङ्गादि न हो। ३ कण्ठकहीन, जिज्ञमें काटा न हो। ४ शत्रुपरिशून्य, उपद्रवरहित।

निष्कण्ठ (सं० पु०) निर्गतः कण्ठः कान्तो यस्य। वरुणहस्त, वरुण नामका पेड़।

निष्कनिष्ठ (सं० त्रि०) कनिष्ठाङ्गलिशून्य, जिसकी कनिष्ठाङ्गलि कट गई हो।

निष्कन्द (सं० त्रि०) जो कन्द खाने योग्य न हो।

निष्कपट (सं० त्रि०) निष्कल, कलरहित, जो किसी प्रकारका कल या कपट न जानता हो।

निष्कपटता (सं० त्रि०) निष्कपट होनेका भाव। निष्कलता, सरलता, सीधापन।

निष्कपटी (सं० वि०) निष्कपट देखो।

निष्कम्प (सं० त्रि०) निर्गतः कम्पो यस्य। कम्पहीन, जिसमें किसी प्रकारका कंप न हो।

निष्कम्भ (सं० पु०) गरुड़का पुत्रभेद, गरुड़के एक पुत्रका नाम।

निष्कम्भु (सं० पु०) देवसेनाधिपभेद, पुराणानुसार देवताओंके एक सेनापतिका नाम।

निष्कर (सं० त्रि०) करशून्य, वह भूमि जिसका कर न देना पड़ता हो।

निष्करुण (सं० त्रि०) निर्नास्ति करुणा यस्य। करुणहीन, जिसमें करुणा या दया न हो, निर्दय, बेरहम।

निष्करुण्य (सं० त्रि०) परिच्छेन्न, साफ सुधरा।

निष्कर्म (सं० त्रि०) निर्नास्ति कर्म यस्य। कार्यविरत, जो कामोंमें लिप्त न हो।

निष्कर्मण्य (सं० त्रि०) अकर्मण्य, अयोग्य, निकम्मा।

निष्कर्मन् (सं० त्रि०) १ जो कामोंमें लिप्त न हो, अकर्म। २ शालसी, निकम्मा।

निष्कर्ष (सं० पु०) निष्कृष्य भावे घञ्। १ निश्चय, सुलासा। २ करार्य प्रजापोषण, राजाका अपने लाभ या कर आदिके लिए प्रजाको दुःख देना। ३ निःसारण, निकालनेकी क्रिया। ४ सारार्थ, सार, निचोड़।

निष्कर्षण्य (सं० क्ली०) निष्कृष्य भावे ल्युट्। १ निष्जासन, निकालना, बाहर करना। २ निःसारण्य, बाहर निकालनेकी क्रिया।

निष्कर्मिन् (सं० पु०) मरुत्गणभेद, एक प्रकारके मरुत्।

निष्कल (सं० त्रि०) निर्गता कला यस्मात्। १ कलाशून्य, जिसमें कला न हो। २ निरवयव, जिसका कोई भङ्ग या भाग नष्ट हो गया हो। ३ नटवीर्य, जिसका बीर्य नष्ट हो गया हो। ४ नपुंसक। ५ सम्पूर्ण, पूरा, सम्बूचा। (पु०) ६ ब्रह्मा।

निष्कलङ्क (सं० त्रि०) १ कलङ्कहीन, जिसमें किसी प्रकारका कलङ्क न हो, निर्दोष, बेरेव।

निष्कलङ्कतीर्थ (सं० क्ली०) पुराणानुसार एक तीर्थका

नाम । इदमिदं ज्ञान करमेवे समस्त पाप नष्ट हो जाती हैं । निष्कल (अ० श्लो०) अविभाज्य होनेकी अवस्था, किसी पदार्थकी वह अवस्था जिसमें उसके चौर अधिका विभाग न हो सके ।

निष्कला (अ० श्लो०) विगता कला यक्षा । रबी-होगा शौ. इशा शो सुक्रिया ।

निष्कली (अ० श्लो०) निष्कल-होय । अतुहीना, अधिका अवकाशाको वह शौ विवक्षा मासिकधर्म बन्ध हो गया हो ।

निष्कलमय (अ० श्लो०) पापरहित, अलङ्कारहीन विषय ।

निष्कलाय (अ० श्लो०) निर्यताः कलाय चित्तमसक्तिदे यक्ष । १ चित्तयोगात्, जिसके चित्तमें किसी प्रकारका दोष न हो, जिसका चित्त अन्ध चौर पवित्र हो । २ सुसुद्ध । (अ०) १ जिनमेंद यक्ष जिनका नाम ।

निष्कालि (अ० श्लो०) निष्क प्रधुति करके पावित्र्य का सम्प-गव । यदा-निष्क, पच, पाह, माय, वाह, प्रोच, पदि । निष्काल (अ० श्लो०) निर्यतः कोटी भूमिकाय यक्ष । १ विद्यमोक्षिकात्, जिसमें किसी प्रकारकी कामना, भासना या इच्छा न हो । २ कामनारहित, जो बिना किसी प्रकारकी कामना या इच्छाके शिवा जाय । अन्ध चौर मीता पादिके मतके विषा काम करमेवे चित्त दृढ होता चौर सुख मिश्रती है ।

निष्कामकर्म (अ० श्लो०) कामनारहित कार्य । जो सब कार्य आसक्तिपरिहृत् हो कर शिवा जाता है उसे निष्काम कहते हैं । मोक्षमें भवकामने पशु नको रही निष्कामकर्मका उपदेश दिया जा । ज्ञानयोग चौर निष्कामकर्म योग इन दोनोंमेंसे कौन भवे है, पशु नको जब यह पद्वेह रूप्या, तब उन्होंने भवकामने पूछा जा, 'भवकर्म । अज्ञयोग वा ज्ञानयोग एक निष्कामकर्म इन दोनोंमें यदि ज्ञानयोग हो खंड हो, तो सुखे चौर निष्काम कर्म मयमें शो भवति है । यह इन कर भवकामने कहा था, 'पशु न । मैंने सुखे कोई विमिश्रित वाक्य नहीं कहा । तुमने सुखेदोषके विषा समझा है । मैंने, जो अज्ञानकार है वही तुम्हें उपदेश दिया है । पुनः ज्ञान दि कर जो सुख में बहता है, सुखी । जो सुख भी तुम्हारे हृदयमें मोह है वह दूर ही जायगा । इन जगत्में जो

प्रकृत अज्ञानकी अभिधावा करती है उनके लिए मैंने पशु ही वेदके माध्य विविध निष्कामा उपदेश दे दिया है । इन ही निष्कामोंके नाम हैं ज्ञाननिष्काम चौर निष्काम-कर्म निष्काम । जो अन्ध पर्याप्त पात्रविषयमें विधिकान्त-सम्बन्ध है चौर अज्ञानवर्त पायमके बाद ही समस्त काम नादिका परिज्ञान कर सकते हैं, जो वेदान्तज्ञान द्वारा परमार्थतत्त्वाका निश्चय करती हैं तथा जो परमत्र स चौर परिज्ञानक है उन्हेंके लिए ज्ञाननिष्काम है । ज्ञानयोगका अधिकारी न हो कर जो ज्ञानयोगका पात्रम लेते हैं उन्हें किसी शक्तके भवे काम नहीं होता, पण्डित उन्हें मरक-वामी होना पड़ता है । जो कामके अधिकारी हैं, पूर्वाज्ञ मन्त्रयुक्त नहीं हैं उन्हेंके लिए कर्मयोग बतलाया गया है । कारण निष्कामभावके कर्मात्पुण्यन लिए बिना सुख कर्मो जो ज्ञाननिष्काम नहीं पाते पर्याप्त पशुमें समस्त कर्म विरहित हो कर अज्ञान अज्ञानवर्तमें नहीं रह सकते । क्योंकि निष्कामभावके काम करते करती ही कामय, सुखि विमुक्त होती है-तत्त्वज्ञानवर्तके उपरुक्त हो जाती है, उसके बाद ही ज्ञाननिष्काम हो सकते हैं । जो अज्ञानवर्तके बाद ही सुखि विमुक्ति हो कर ज्ञाननिष्काम अधिकारी होते हैं उनको पूर्वाज्ञानवर्त कर्मात्पुण्यन द्वारा जो सुखि विमुक्त होती है । सुतरां एक जन्ममें फिर कर्मात्पुण्यनको आवश्यकता नहीं रहती । तब ज्ञानका स्वरुप रूप बिना केवल काम परिज्ञानके सिद्धि-काम नहीं होता । क्योंकि तत्त्वाका ज्ञान नहीं होनेके यदि समस्त ज्ञियाए परिज्ञानकी कार्य, ती वह केवल बाहर की इच्छावदादि ज्ञियाके सम्बन्धमें ही सम्भव है । पन्तर भी ज्ञिया सुख भी परिज्ञान नहीं होती । कारण जब तब पात्रा मनके समस्त कामनाओंको निर्विकल्पके परि-ज्ञान न कर सके, तब तब अचकारके विधि में कोई निष्कामभावमें नहीं रह सकते । क्योंकि अन्ध, एक चौर तमोशुच द्वारा परिष्कारित हो कर चार्चे मोतर वा बाहर कोई न कोई काम करना ही होना । निष्काममाय में रहना जब असम्भव हो जाता है, तब कार्यके कारण अज्ञानके शुक रहनेके काम में निश्चय होना । शुक जब बसपूर्वक काम करानेका, तब निष्काम कर्मात्पुण्यन ही महाकामनक है । शास्त्रमें भी लिखा है, कि जो अन्ध, एक

धीरे शिश्नादि कर्मेंन्द्रियको बाहरमें सँघत करके मन ही मन इन्द्रियके सभी विषय स्मरण किया करते हैं वहाँ विमूढ़ात्मा व्यक्तियोंकी मिथ्याचारी वा कपटाचारी कहते हैं। फिर जो कामनाकी जीत कर मन ही मन इन्द्रियोंकी प्रायत्न करके अनासक्तभावसे ईश्वर वा श्वरमें ही कर्मेंन्द्रिय द्वारा विहितकर्म करते हैं वे ही श्रेष्ठ हैं। अतएव हे भर्तुन! तुम भी फल-कामभाग्य ही कर अपने जात्युचित को सब कर्में तथा जो नित्य और नैमित्तिक अर्थात् काम्य नहीं है उन सब कर्मोंको करो। तुम्हारे जैसे अधिकारीके लिये कर्म परित्यागको अपेक्षा कर्म करना ही श्रेष्ठ कल्प है। विशेषतः तुम यदि हरूपदादि समस्त वाह्येन्द्रिय क्रियाओंका एक ही काममें परित्याग कर दो तो शरीर-यात्रा ही निर्वाह नहीं होगी, तुम्हें कर्मानुष्ठान करना ही होगा। यदि कर्म भिन्न रहना असम्भव हो, तो स्वधर्मोक्त निष्कामकर्मका अनुष्ठान ही विधेय है। यह निष्कामकर्मानुष्ठान करने से सँसार बंधनमें फँसना नहीं पड़ता। क्योंकि निष्कामभावसे ईश्वरके लिये जो काम किया जाता है उसके सिवा अन्य कामों द्वारा ही अर्थात् कामभासूलक कर्मानुष्ठान द्वारा ही लोगोंकी सँसार-बंधन हुआ करता है। किसी किसीका कहना है, कि निष्काम कर्म नहीं हो सकता। विष्णुके उद्देशसे वा अन्य कोई कामना कर जो कर्मानुष्ठान किया जाता है उसे किस प्रकार निष्काम-कर्म कह सकते हैं! इस पर शास्त्रका कहना है, 'प्रकामो विष्णुकामो वा' विष्णुके उद्देशसे जो काम किया जाता है उसीको निष्कामकर्म कहते हैं। अतएव हे भर्तुन! तुम भी समस्त कामनाओं वा प्रासङ्गिकियोंका परित्याग कर केवल ईश्वरार्थमें ही विहित क्रियाकलापका अनुष्ठान करो। ईश्वरके प्रसन्न होनेसे ही तुम्हारी कोई कामना-अपूर्वी रहने न पायगी।

पुराकावमें मनुष्य और उसके साथ साथ नित्य और नैमित्तिक क्रियाओंकी सृष्टि कर प्रजापतिने कहा था, 'हे मनुष्य गण! महत्स इमं नित्यं नैमित्तिकं कर्मानुष्ठानं द्वारा-तुम्हारी हृदि वृथा करोगे। इसी कर्मसे तुम्हारे सभी प्रकारके-अभीष्ट-सिद्ध होंगे। ये सब कार्य करन्-से-देवता प्रसन्न होंगे और देवताओंके प्रसन्न होनेसे

तुम्हारा कल्याण हीगा। इस प्रकार तुम धीरे धीरे सुखी लाभ कर सजोगे। कारण उस कर्मस्वरूप यज्ञ द्वारा परितोषित हो कर देवगण तुम्हें नाना प्रकारके अभिलषित भोग प्रदान करेंगे। अतएव उनके दिए हुए उन सब भोग्य द्रव्योंकी यदि पुनः उन्हें समर्पण न कर केवल स्वयं भोग करोगे, तो तुम चोर कहलाओगे। वेदमें कर्मोंका उद्भव है। वेद परमात्मा ब्रह्मप्रतिष्ठित हैं। ब्रह्म जब सर्वव्यापक है, तब वे कर्ममें भी अनुत्पन्न हैं। अतएव इस प्रकारका कर्मानुष्ठान करना तुम्हें अप्रसन्न कर्त्तव्य है। जो इस प्रकार निष्कामकर्मका अनुष्ठान नहीं करते, वे अपनी आत्माका किसी प्रकार कल्याण नहीं कर सकते। अतएव निष्कामभावमें सब प्रकारके नित्यनैमित्तिक क्रियाशुष्ठान करना तुम्हें सर्वतोभावसे उचित है। जो योगी वा आत्माराम हैं और एककालीन निःशेषरूपसे समस्त कामनाओं तथा वासनादिसे परिशून्य हैं, उन्हें इस प्रकार कर्मानुष्ठान करनेका प्रयोजन नहीं। आत्माराम व्यक्तिकी किसी प्रकारका निष्काम-कर्म करना नहीं पड़ता, क्योंकि बुद्धिशुद्धि ही निष्काम कर्मका फल है। किन्तु जिसकी बुद्धि शुद्ध हो चुकी है, उन्हें निष्कामकर्म करनेकी आवश्यकता नहीं। लेकिन तुम लोगोंकी अब भी चित्तशुद्धि नहीं हुई है। जब तक चित्तकी शुद्धि नहीं होती, तब तक तुम्हें निष्कामकर्म करना पड़ेगा। चित्त ही शुद्धिके लिये एक मात्र निष्काम कर्म द्वारा मोक्ष होता है। कुछ राजर्षि ऐसे हो गये हैं जिन्होंने निष्कामकर्म द्वारा ही बुद्धिशुद्धि करके ज्ञान-लाभ कर मोक्ष पा लिया है। फिर देखो, मेरा कुछ भी कर्त्तव्यत्व नहीं है, तिस पर भी मैं विहित कर्मोंका अनुष्ठान किया करता हूँ; इन्हीं सब कारणोंसे निष्काम कर्मका अनुष्ठान ही विधेय है। जब तक ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेंन्द्रिय शम, दम आदि द्वारा निरुद्ध नहीं होती, तब तक कर्म करना पड़ेगा। यह कर्म यदि सकामभावसे किया जाय, तो उसका फल बन्धन अवश्यं भावी है। किन्तु वे सब कर्म यदि निष्कामभावसे अर्थात् भावतिरहित हो कर किए जाय, तो धीरे धीरे चित्तकी शुद्धि होती है और पीछे मोक्षलाभ होता है। कर्मानुष्ठान कर्त्तव्य इसी बुद्धिसे करना होता है। उस

कर्मों में प्रति बिंदी प्रकारकी कामरिज न रहे यदि कुछ भी प्राप्त हो रहा था, तो वह कर्म निष्कामकर्म नहीं होता। कर्माभिमोक्षण ब्राह्मण चरित्र पादि बिना कर्म का भी धर्माभ्युत्थान विहित है, उसमें परिवोध में तब न-को है मत्र धर्माभ्युत्थान विधेय है। ये सब कर्माभ्युत्थान प्राप्त-परिगृह्य हो कर करनी होते हैं। इन प्रकार कर्माभ्युत्थान होनेसे बिनाको धरि होती है। ब्राह्मण ब्राह्मणोचित कर्मका पीर चरित्र चरित्रोचित कर्मका अनुत्थान करे। ब्राह्मण चरित्रका वा चरित्र ब्राह्मणका कार्य न करे, करनेसे कर्माभ्युत्थान धर्ममें व्याप न पड़ता है। अतएव पापमोचित कर्मोंको प्राप्त-परिगृह्य हो कर करे, यही निष्कामकर्म है।

निष्कामता (स० श्लो०) निष्काम होनेको यवका या भाव।

निष्कामो (स० श्लो०) निष्काम परस्परं इति। कामना शून्य स्थिति किंसी प्रकारकी कामना या प्राप्त-न-को।

निष्कारण (स० श्लो०) निर्मादि कारण बल। १ कारण-शून्य, बिना कारण, बेसबब। २ व्यर्थ, उदा।

निष्कारण (स० सु०) निष्कारणतोति निर-कारण-शून्य सुखित कैमयोमादि मूर्खों हुए बाल या रोप पादि।

निष्कासन (स० श्लो०) निर-कस मावे श्रुट्। १ कासन, चरानेको क्रिया। २ भाषण, मार जापनेको क्रिया।

निष्कामिक (स० पद्य०) काविकस्याभावा यमाभावं श्यवीभावा। १ काविकका यभाव। २ कावियिहोन शैत्यगूय, पद्य।

निष्काय (स० सु०) नितरं कायते शोभते प्रासादादो निर-काय-पद्य। १ प्रासाद पादिका बाहर निकला हुआ भाग, बरामदा। २ निष्कासन। ३ निःसारण।

निष्कायन (स० सु०) निःसारण, निष्कासना बाहर करना।

निष्कामित (स० श्लो०) निर-काय विर-अ। १ निष्कामित बहिष्कृत, निष्कासा हुआ। २ निन्दित, जिसको निन्हा भी गई हो।

निष्कास (स० सु०) १ निष्कासनेको क्रिया या भाव। २ मन्त्रान का बरामदा।

निष्कासन (स० सु०) निर-काय-श्रुट्। निष्कासन, बाहर करना, निष्कासना।

निष्कामित (स० श्लो०) निर-कस विर-अ। १ बहिष्कृत, निष्कासा हुआ। २ निःसारित। ३ निर्गमित। ४ अहित। ५ निन्दित।

निष्कामन (स० श्लो०) निर-कस विर-अ यत्न वा यस्य। पक्षिचन, चरकोन, दरिद्र, जिसके पास कुछ न हो।

निष्कामन—एक वैश्वानर। प्रजासर्गमें इसका विषय इस प्रकार लिखा है,—निष्कामन करिपान एक ब्राह्मणके पुत्र थे। रात दिन वे विष्णुकी मूर्तिमें धरि रहने और बन्धनोंकी सेवा करना जो वे अपने कोमनका सुख प्राप्त कर समझते थे। बीरे बीरे वैश्वानरकेवासी उनका सर्वस्व खाता रहा, एक छोड़ो पाठमें न बचे। एक दिन एही विषयकी चिन्ता करते करते इन्होंने किना एक लड़कामें प्रवेश किया। यहाँ एहीमें यह निश्चय कर लिया कि जो बीरे इस राहके मुकरीगा, उसका सर्वस्व सट कर लोनेमें वैश्वानरको सेवा करूँगा। इसी समय भगवान् बन्धनोंके साथ लड़ी हो कर लीलाकण पर पहुँच गए। निष्कामनमें बन्धनोंके पक्षद्वारा लीनेके लिए लगे पक्षका पीर कहा, 'अनि। तुम अपने शरीरके सभी पक्षद्वारोंमें उत्तार कर दो।' लड़कें बोलकर बरनि-के लिए लड़कें समय बल को देकर कर माग गए। एकर बन्धनोंके अपनेको पक्षको जान लेने लगे। निष्कामनमें तिस पर भी न माना, बन्धनोंकी पक्षुड़ी पीर कहकर लीन हो लिए पीर बोले, माता! ये सब ब्रह्म वैश्वानरको सेवाके लिए लेता हूँ, न कि अपना पीठ भरनेके लिए।' एही समय लड़कें अपने मूर्ति कारण कर बल लपकित हुए। निष्कामन उनको शक्ति करनी थी। बाद वैश्वानरकेवासी पक्षक मूर्ति हो रतना कह भोजन पक्षकान हो गये।

निष्करीय (स० श्लो०) चातिविशेष।

निष्कामिण (स० श्लो०) निर्मादि किस्मिया बस्य। किस्मियशून्य, पापरहित।

निष्कृत (म० पु०) कुटात् गृहात् निष्क्रान्तः वा निष्-
कृत-क। १ गृहसमीपस्थ उपवन, घरके पासका बाग,
पजरबाग। २ जैवविशेष, खेत। ३ कपाट, किवाड़।
४ अवरोध भक्तःपुर, जनानामहल। ५ पर्यतविगिप
पर्यतपर्यतका नाम।

निष्कृष्टि (म० स्त्री०) निष्कृटी दीये।

निष्कृष्टिका (म० स्त्री०) कुमारानुचरमाहमेत, कुमार-
को अनुचरी एक मातृकाका नाम।

निष्कृष्टो (म० स्त्री०) निष्कृष्टि-डीप, पला, इनायची।

निष्कृष्टल (स० त्रि०) कुवृष्टलशून्य।

निष्कृष्ट (स० पु०) निम्-कुम्भ-घट्। १ दन्तीघट्ट।
(त्रि०) निर्गतं कुम्भी यस्मात्। २ कुम्भशून्य।

निष्कृन्त म० त्रि०) निर्गतं कुन्तं अवयवानां समूहो
यस्मात्। १ अवयवममूहशून्य। २ सपिण्डादि कुन्त-
रहित।

निष्कुलो (म० त्रि०) कौम्भिन्यशून्य।

निष्कुपित (म० त्रि०) निस्-कुप-क। १ निष्कापित।
२ प्राकृष्ट। ३ नि सारित। ४ निस्त्वचीकृत। ५
जनविचत। ६ खण्डित। (पु०) ७ मरुद्गणभेद।

निष्कुह (म० पु०) नितरां कुहयति, कुह विस्मापने श्च।
घृत्त-कोटर, पेड़का खोहरा।

निष्कृत (म० त्रि०) १ मुक्त, छुटा हुआ। २ निश्चित,
निश्चय शिया हुआ। ३ मृत, मरा हुआ। ४ अपसा-
रित, हटाया हुआ।

निष्कृति (स० स्त्री०) निर-कृ-क्तिन्। १ निस्तार, छुट-
काया। २ निर्मुक्ति। ३ पापादिसे उद्धार। जो जानबूझ
ब्राह्मणका वध करता है, उसकी निष्कृति नहीं है। ४
प्रायश्चित्त। ५ अग्निविशेष, एक अग्निका नाम।

(भारत ३२१-३२४)

निष्कृप (स० त्रि०) तीक्ष्ण, तेज, धारदार।

निष्कृष्ट (स० त्रि०) निर-कृ-क। १ सारांश। २
निश्चित।

निष्कैवल्य (स० पु०) १ यज्ञिय स्तोमकारित शंभनात्मक
शस्त्रभेद। २ शस्त्र द्वारा अहणीय यज्ञपात्ररूप ग्रहभेद।

निष्कैवल्य (स० त्रि०) कैवल्यभावः कैवल्यम्। निश्चितं
कैवल्यं समहायत्वं यस्य। १ निश्चित कैवल्य। २

अन्यासकारि, दूसरेको मदद नहीं पहुँचानेवाला। ३
निरपेक्ष। ४ निरुत्तकैवल्य। ५ मोक्षहीन।

निष्क्रोप (स० पु०) निष्-क्रुप-वञ्। निष्क्रोपण,
वह्निनिःसारण, बाहर निकालनेकी क्रिया।

निष्क्रोपण (स० स्त्री०) निर-क्रुप-व्युट्। अन्तर-
वयस्कृष्टा वह्निनिःसारण।

निष्क्रोपणक (म० त्रि०) १ उत्तोलनयोग्य, उठाने
लायक। २ उत्पाटनयोग्य, उखाड़नेयोग्य। ३ अन्तरा-
यवसे विच्छिन्न। ४ निःसारित, अलग किया हुआ।

निष्क्रोपितश्च (म० त्रि०) निस्-क्रुग-तश्च। निष्क्रोपण-
योग्य।

निष्कौरव (म० त्रि०) निर्नाम्नि कौरवः यस्य। कौरव-
शून्य, बिना कौरवका।

निष्कौशाश्वि (स० त्रि०) निर्गतः कौशाश्व्या-
तत्पुरुषसमामे गोणत्वमे कृत्वः। कौशाश्विनगर-
निर्गत, जो कौशाश्विनगरसे बाहर चला गया हो।

निष्क्रम (म० पु०) निर-क्रम-घञ्। १ गृहादिसे वरि-
र्गमन, घरसे बाहर निकलना। २ निष्क्रमणकौ रीति,
हिन्दुधर्ममें छोटे बच्चोंका एक संस्कार। ३ पतित होना।
४ मनको हल्लि। (त्रि०) ५ बिना क्रम या सिनसिले-
का, बेतरतीब।

निष्क्रमण (स० स्त्री०) निर-क्रम-व्युट्। १ गृहादिसे
वह्निर्गमन, घरसे बाहर निकलना। २ दण प्रकारके
संस्कारोंमेंसे एक संस्कार। जब बालक चार महोनेका
होता है, तब निष्क्रमण किया जाता है।

शौनकने भी ऐसा ही कहा है।

“चतुर्थे मासि पुष्येण शुद्धे निष्क्रमणं शिशोः।”

(शौनक)

किन्तु किसी किसी धर्मशास्त्रमें तृतीय मासमें भी
निष्क्रमणका होना बतलाया है। यथा—

“मासे तृतीये शश्विष्टद्विपक्षे क्षपाकरे शोभनगोचरस्थे।
उत्पातपापमहर्जिते मे निष्काशने सौहयकरे शिष्टानाम्॥”

(राजमार्तण्ड)

जन्मसे तृतीय मासमें बच्चोंका जो निष्क्रमण होता है,
वह शुभप्रद माना गया है। निष्क्रमण शब्दका
व्युत्पत्तिने ऐसा किखा है,—

“अथ निष्कमम् वायुं पृथग् दत्तव्यं निर्गमः ।
महावातं कृत्वा स्वारसुः श्रीवाक्ल विद्योः ॥”
(पुररति)

बर्षीका बरदि जो प्रथम निर्गम या बाहर आता होता है, उसको वायु निष्कमम् है । बर्षीका यद्योक्त विधानसे यदि वह निष्कमम् वायुं य किवा वायु, तो उसकी प्राप्ति पौर से नष्ट हो जाती है । अर्थात् पर इस प्रकार पलितपत्रस्य ति द्वारा निवेदित कि बर्षी गई है पर्याप्त यद्योक्त विधानसे बर्षीका निष्कमम् प्रथम विवेक है । यावत्प्राप्तार निष्कमम् वायुं दत्तसे सम्पत्तिपृथि पौर दीर्घानु माह होती है । यमय विदामे किवा है,—
“उत्तरीये यदि बरुष्य विद्यो सुर्वस्य द्यम् ॥

चतुर्थं प्राति अत्तं न्यस्येत्तन्पर्यन्तम् ॥” (यम यं)
बर्षी का उत्तरीयमाधर्मं सुर्वस्यं न पौर चतुर्थं माधर्मं प्रथि तदा चन्द्रदयं न कर्त्तव्यं है । गोमिस्तपश्चतुर्थं मी उत्तरीयमाधर्मं निष्कमम् वा होना बतवाबा है ।
“वनवाचस्तपतीनी यवैस्त्वत्तपश्चतुर्थीनायाम् ॥”

(जोषिः)

जिसी बिसो अर्थात् चरने मतसे उत्तरीय माधर्मं पौर बिसीसे मतसे चतुर्थं माधर्मं निष्कमम् वा कात्त बतवाबा है । इसमें परकार विरोध उपस्थित होता है । किन्तु ज्योतिष्मन्त्रे इसको व्यवस्था इस प्रकार सिद्धी है,—
“यामवेदिषो वो उत्तरीय माधर्मं पौर यस्तुर्वेदिषो तवा अन्वेदिषो वे चतुर्थं माधर्मं निष्कमम् करना चाहिए ।
‘यामे उत्तरीय इति तु अन्वेषोर्गां योतिः ॥

वनवाचरे उत्तरीयं ह्यन्वेषोर्गां वाचामिति” (उपेतिस्तल)
निष्कमम् के विहित दिन,—रिक्तामिच तिचि पर्याप्त चतुर्थी, पञ्चमी पौर चतुर्थी मिक तिचि, यनि पौर मङ्गल तिचवार एव प्राङ्गं, पञ्चमेवा ह्यदिवा, भरुषी मङ्गा विद्याका, पूर्वकेशुगो, पूर्ववाङ्गा, पूर्वभाद्रपद पौर यममिवा मिक मङ्गल, कन्या, तुला, कुम्भ पौर सिंघ-
कर्ममें तीसरे या चौथे माधर्मं बर्षी का जो निष्कमम् होता है अत्र प्रगष्ट है ।
‘यामवेदिषो वे किञ्चि निष्कमम् वा विवय मयदेव भदने इव प्रकार किवा है,—विद्य को अनन दिवससे उत्तरीय कुम्भपत्रकी उत्तरीया तिचिमें प्रातःकाल आन

करावे । ऐसे दिवाचरण होने पर, साथ सन्ध्या करने-
से बाद ज्ञातियुक्ता पिता चन्द्रमाकी पौर कृताञ्जलि हो चङ्गा रहें । चतुस्तर माता विद्युत् वसन्तसे कुमारको ठक कर दक्षिणको पौर चपले आसीसे वामपार्श्वम पश्चिमकी सुख शिव खड़ी रहें पौर विद्युत् का मन्त्रक उत्तरकी पौर करके पिताको समर्पक कर दे । इतना दो आनी पर माता आसीसे पोछे हो कर उत्तरकी पौर चली जाय पौर चन्द्रमाकी पौर सुर्व किञ्चि खड़ी रहें । इस समय पिताको निम्नलिखित मन्त्रका जप करना चाहिए—

मन्त्र—“प्रभापति च्चैविरतुष्टु पञ्चन्दचन्द्रो देवता कुमारश्च चन्द्रदयं विनियोगः । यो यत् सुवीमि हृदय विनियोगः प्रभापती वैदाह मन्वे तद्वद्वमाह योममय तिमाम् ।

प्रभापति च्चैविरतुष्टु पञ्चन्दचन्द्रो देवता कुमारश्च चन्द्रदयं विनियोगः । यो यत् पश्चिमा यनायत दिवि चन्द्रमधि यित नोदयतस्वाह नोद नामसाह योममय कयम् ।

प्रभापति च्चैविरतुष्टु पञ्चन्दचन्द्रो देवता कुमारश्च चन्द्रदयं विनियोगः । यो इन्द्रः प्रभापये नि प्रभापती यवाय न प्रमीवति पुत्रो अनिया पधि ।”
इत तीन मन्त्रोंका जप करने पिता सुखकी चन्द्रदयं करावे, पोछे चन्द्रमाकी पार्श्व है । पार्श्वमन्त्र—

“श्रीतेरत्तं चन्द्रमन्त्रं अग्निनेत्रं चतुर्भुजं ।
वृषाणां वनादेर रोहिण्या बहिलोयम् ॥”
सुर्वको पञ्च देना हो, तो इस मन्त्रसे है—
“एहि सुर्वं चतुर्भुजे देवोरावे वगावसे ।
अनुष्मन्तं मां नच वृषाणां विवाह ॥”

बाहमें पिता उसी प्रकार कुमारको उत्तर सुर्व शिव माताको नोदमें दे दे । पोछे यवाविधि ‘यामदेव्य’ चादि द्वारा शान्तिकर्म करके यज्ञप्रवेश करे । चतुस्तर चपर युष्कपत्रस्यकी उत्तरीया तिचिमें चायं सन्ध्याके बाद पिता चन्द्रागिमुक्त हो कर कलाञ्जलि पड़क करे । बाहमें इस मन्त्रसे अन्तःकालिका ज्ञाय कर दे,—

मन्त्र— प्रभापति च्चैविरतुष्टु पञ्चन्दचन्द्रो देवता कुमारश्च चन्द्रदयं विनियोगः । यो यत् पश्चिममधि हृदय पश्चिमा हृदय चित तदह विवर्ष्यत् पञ्चम्याह योम

मघं रुदम् । पीछे प्रमत्त्वक दो धार जलाञ्जलि देनी पड़ती है ।

इतना ही जानि पर शान्तिकार्य और अच्छिद्राव धारण करके गृहप्रवेश करे । (भद्रवेवमष्ट) ३ संसारा सर्वात्म्यागन्तमें वनगमन, सांसारिक विषयवासनाके बाद वनका जाना ।

निष्कर्मणिका (म० स्त्री०) चार महोत्सवके बालकको पहले पहल घरसे निकाल कर सूर्य दर्शन कराना ।

निष्कर्मणित (म० वि०) निष्करण मन्त्र तथे तारकाटि-त्वादितत् । सञ्जातनिष्कर्मण, जिसका निष्कर्मण संस्कार ही चुका हो ।

निष्कर्म (म० पु०) निष्कर्मोयते विनिमोयतेऽनेनिति निर-को-भच् (एच् । पा ३।३।५६) १ भूति, वेतन, तनवाह । २ विनिमोयद्वय, वह वस्तु जो बराबर मोलकी वस्तुमें बदला की गई हो । ३ विक्रय विक्री । ४ क्रय, खरीदना । ५ सामर्थ्य, शक्ति । ६ पुस्तकार, इनाम । ७ हृदियोग । ८ निर्गमन । ९ प्रत्युपकार ।

निष्कर्मण (म० स्त्री०) निर-कर्म-णच-ल्युट् ।

निष्कर्मण देखो ।

निष्क्रिय (म० वि०) निर्गता क्रिया, ततो पत्वम् । क्रिय-व्यापार शून्य, जिसमें कोई क्रिया या व्यापार न हो ।

“निष्कलं निष्क्रियं शान्तं निरपेक्षं निरजनम् ॥”

(श्रुति)

आत्मा निर्गुण है, निष्क्रिय है, उसका कोई कार्य नहीं है ।

“निष्क्रियस्य तदसम्भवात् ।” (सांख्यद० १।४७)

आत्मा यदि निष्क्रिय हो, तो उसकी गति किस प्रकार हो सकती है ? जो निष्क्रिय है उसकी गति असम्भव है । पूर्ण और सर्वव्यापक आत्माका कहीं भी प्रवेश और निर्गम नहीं है । आत्मा क्या कभी कहीं जाता या आता है ? जो परिच्छिन्न वस्तु है, उसीका प्रवेश और निर्गम होता है, दूसरेका नहीं । आत्माको यदि परिच्छिन्न मान लें, तो वह अप्रकृत सिद्धान्त होगा, यह प्रमाणसे बाहर है ।

श्रुतिमें, आत्माकी परलोकगतिरूप क्रियाका उल्लेख है नहीं, किन्तु वह प्रौढाधिक है, यथायथ नहीं ।

आत्माकी निष्कर्मरूप उपाधि है, यह परलोकमें गमना-गमन करतो है । ऐसा देख कर श्रुतिमें उपाचारक्रमसे तदुपहित आत्माको परलोकगतिको वर्णना की है । तब पूछिये तो आत्मा कहीं भी नहीं जाती । जिस प्रकार घटके एक स्थानसे दूसरे स्थानमें जानिके बाद तदुप-हित आत्माग गया है ऐ॥ उल्लेख क्रिया जाता है, श्रुत्युक्त आत्माको गतिको भी ठीक उसी प्रकार जानना चाहिए । अतएव आत्मा निष्क्रिय है ।

निष्कर्म्यता (म० स्त्री०) निष्कर्म्यत्व भावः, तन्-टाप् ।

निष्क्रिय होनेका भाव या अवस्था ।

निष्कर्म्यात्मता (म० स्त्री०) निष्कर्म्य आत्मा यस्य, निष्कर्म-यात्मन्, तस्य भावः तन्-टाप् । निष्क्रिय स्वरूपता, निर्णयत्व, अनवधानता ।

निष्क्रीति (म० स्त्री०) मुक्ति ।

निष्क्रीध (म० वि०) निर्नास्ति क्रीधः यस्य । क्रीधहीन, जिसे गुस्सा न हो ।

निष्क्रीय (म० वि०) १ क्लेशहीन, सष प्रकारके कटोंमें मुक्त । २ ओद्धमतानुसार दर्शों प्रकारके क्लेशोंसे मुक्त ।

निष्क्रीश्लेग (म० वि०) निर्नास्ति क्लेशश्लेगः यस्य । क्लेशश्लेगशून्य, सष प्रकारके कटोंसे मुक्त ।

निष्क्राय (म० पु०) निःश्रुतः क्रायो यत्र । मांसादिका क्राय, मांस आदिका रस, शोरवा । इसका पर्यायवाची शब्द रसक है ।

निष्कृन् (म० वि०) निरन्तक-सहने-कृनिप्, ततो वेदे साधुः । नितरां सहनशील ।

निष्कृतो (म० स्त्री०) निष्कृन्, यमोरप्, इति ऊपो, रचान्तादेशः । नितान्त सहनशील ।

निष्कृप (म० स्त्री०) जलाना ।

निष्कृ (म० वि०) १ उल्लङ्घनोक्त, वार्निश दिया हुआ । २ उल्लङ्घन रन्धनयुक्त, अच्छी तरह पकाया हुआ ।

निष्कृ (म० वि०) १ चषेह कर कुटकारा देना । २ तर्कका अयोग्य ।

निष्कृतक (म० पु०) नितान्तस्तानकः शब्दमीदः, ततो पत्वं दुत्वश्च । सव्यथ शब्द, पानोको सो आवाज होना ।

निष्कृ (म० स्त्री०) निश-समाधो-क्तिच् । दसको कथ्या और कथपकी स्त्री दितिका एक नाम ।

निष्ठयो (स० स्त्री०) अदिनिष्ठा एक नाम ।
 निष्ठुर (स० स्त्री०) निष्-सु-निष्ठ-भेदे बाहुल्यवात् ष
 तनो मल दुःखश्च । घञ्, षोष्ठा अन्तिमावश्च, घञ्,
 विधीता ।
 निष्ठुर (स० पु०) निष्ठुर इत्यादि स्त्री-भ । निष्-
 मतायेत्यप वा, (अन्तिमावश्च) । पा ३. २. १०. ७ इत्यत्र
 'निष्ठो गत' इति शक्तिः कोष्ठा इत्यप, ततो निष्ठुरोप
 क्तत्वं दुःखश्च । १ चण्डावादि । २ कोष्ठा अन्तिमिद
 म्बेष्ठीको एक शक्तिः नाम त्रिषका कश्चैव वैदोमि है ।
 निष्ठ (स० स्त्री०) निष्ठरं तिष्ठतीति निष्ठा-त् । १
 क्लिप्त, ठहरा वृथा । २ तत्पर, कथा वृथा । ३ त्रिषसि
 किष्ठी प्रति अथा या मन्त्रि षो ।
 निष्ठा (स० स्त्री०) निष्ठरं तिष्ठतीति, निष्ठा-त्, ततो
 क्तत्वं क्लिप्ता टाव-त् । १ निष्पत्ति, इति, प्रमात्रि । २
 नाग । ३ निष्ठावकाको पत्तिम क्लिप्ति, प्रान्ती नष्ट
 चरमावका त्रिषसि वाक्ता पोर मन्त्राको एकता षो शक्ति
 है । ४ निष्कंजन, निष्कंज, गुजर । ५ धर्मादिभि अथा
 विलका अमया । धर्मादिनिष्पत्तिं पिकात्किञ्च पतुतावका
 नाम निष्ठा है । यत्र निष्ठा षो मन्त्राकी है—प्रान्तिष्ठा
 पोर धर्म निष्ठा । विष्ठी/अपोके लिपि प्रान्तिष्ठा पोर
 धर्मयोगिष्ठी के निष्ठी धर्मनिष्ठा षो प्रगण्य है । इस
 धर्मनिष्ठा द्वारा अगतुं प्रतिष्ठा षोतो है, नैतिक व्यक्ति
 बहुत पासाकीके धर्म धर्मकी रथा अरनेमि धर्मय
 षोमि है । ६ धर्म, गुह या बड़े पादिके प्रति अथा मन्त्रि,
 पूज्यवृत्ति । ७ मन्त्रारक निष्ठा । ८ अन्तर-परिमापित
 ल, अन्तु प्रताप । ९ क्लिप्ति, पत्रका, ठहराव । निष्ठरं
 तिष्ठन्ति भूतान्येक वाचारे बाहुल्यवात् ष । १ मन्त्र
 कान्तिं सर्वभूतकृतिके वाचारे विष्णु, त्रिषसि मन्त्रयके
 समय धर्मपुत्रुको को क्लिप्ति षोमो । ११ शिवावका ।
 निष्ठाप्य (स० स्त्री०) निष्ठा गतः, 'हितोपाविष्टेनादिना
 वितोया तत्पुत्रय' । निष्ठागत ।
 निष्ठाप (स० स्त्री०) निष्ठा-अरसि षञ्, अन्त्य-
 चरतो पादि ।
 निष्ठापक (स० पु०) १ नागपिद, एक नामका नाम ।
 निष्ठान प्राक् षञ् । निष्ठान, अन्त्य, चरतो पादि ।
 निष्ठाप (स० स्त्री०) निष्ठा नायो/को वष्य । नामान्त

वत्, निष्ठा नाम अन्त्य षो, षो अन्तिमाव षो ।
 निष्ठान (स० स्त्री०) निष्ठापुत्र ।
 निष्ठापत् (स० स्त्री०) निष्ठा निष्ठावत्, निष्ठा मत्पु
 मधश्च । निष्ठापुत्र, त्रिषसि निष्ठा वा अथा षो ।
 निष्ठापत् (स्त्री०) निष्ठापत् देखो ।
 निष्ठाप (स० स्त्री०) निष्ठा-त् । १ क्लिप्त, ठहरा, ठहरा वा
 अथा वृथा । २ निष्ठापुत्र, त्रिषसि निष्ठा षो । ३
 सम्यक्-ज्ञाता ।
 निष्ठोप (स० पु०) निष्ठा-त् भावे चञ्, बाहुल्यवात्
 षोष्ठी । षोष्ठी, षञ् ।
 निष्ठोवन (स० स्त्री०) निष्ठा-त् भावे चञ्, षिष्ठिषिष्ठी
 षुष्ठी वीष्ठी वा इति षोष्ठी । वा षुष्ठी टरादिवात् षञ् ।
 १ सुख द्वारा अन्तिमादिवा नमन षञ् । पर्वय-निष्ठाव,
 निष्ठापत्, निष्ठावन, निष्ठावा । २ अन्तिमादि पतुतावत्
 षोष्ठी । इस षोष्ठीको षुष्ठी अरतो पढ़तो है, इसोमि
 इमका नाम निष्ठावन पढ़ा है । अन्तिम, मीक, पौपर
 पोर निष्ठावा षुष्ठी अर उभे अन्तिमके रथमि
 निष्ठावे । वाद उभे अर सुख षो अर अन्तिमकाल मन्त्र
 रथमि है । षोष्ठी अरनेके अन्तिम, मन्त्र, पार्थ, मन्त्र
 पोर अन्तिमि अन्तिम पासाकीके निष्ठावे अन्तिम है पोर
 अन्तिमके अन्तिमकाल मन्त्र पढ़ता है । इसके अन्तिम अरने-
 मि पर्वमिद अन्तिम, मन्त्र निष्ठा वाच, मन्त्रोप, सुख
 पोर षुष्ठीवा भाव, अन्तिम, अन्तिम पादि रोग अरि
 रथमि है । षोष्ठी अन्तिमकाल विचार अर अन्तिम, षो, तोन
 वा अर अर अन्तिमो निष्ठावन अन्तिमकाल है । यत्र
 वाचिपातिव रोगको प्रति अन्तिम षोष्ठी है ।
 (अन्तिमकालमि अन्तिमकाल)
 निष्ठीविष्ठा (स० स्त्री०) निष्ठावन ।
 निष्ठीवित (स० स्त्री०) निष्ठीव अरिष्ठी अन्तिम निष्ठीव
 विष्ठा भावे-त् । निष्ठावनअरव, षुष्ठी अन्तिमो विष्ठा ।
 निष्ठीव (स० स्त्री०) निष्ठा मन्त्रावदवति अरव । १
 अन्तिमकाल । (स्त्री०) २ क्लिप्त, अन्तिम, अन्तिम ।
 ३ अन्तिम, अन्तिम, अन्तिम ।
 निष्ठीवता (स० स्त्री०) निष्ठीव भावे निष्ठीव-त्
 टाव । १ निष्ठीवका भावे, अन्तिम, अन्तिम, अन्तिम ।
 २ निष्ठीवता अन्तिम, अन्तिम ।

निष्पत्तिक (सं० पु०) नागसेट, एक नागका नाम जिसका चलेख महाभारतमें है।

निष्पद्युत (सं० त्रि०) निष्पत्ति-कृत ततो ऊट्। (चुधोः शङ्किति। पा ६।४।१८) १ विम, किं का हुआ। २ सहीर्ण, उगला हुआ, सुँघवे निकाला हुआ।

निष्पद्यति (सं० स्त्री०) निष्पत्ति-व-क्तिन्। निष्पद्यन्, यूक् निष्पद्ये (सं० पु०) निष्पत्ति-व-वज्। १ निष्पद्यन्, य क निष्पद्येन (सं० क्लो०) निष्पत्ति-व-भावे ल्युट्। निष्पद्येन, यूक्।

निष्पत्ति (सं० त्रि०) निष्पत्ति-क, 'नितदोभ्यां स्यातिः कोशले' इति सूत्रेण पत्वं, पत्वे ट्त्वत्। कुगल, होशियार।

निष्पत्ति (सं० त्रि०) नितरा स्याति स्योति निष्पत्ति-क, ततो पत्वं, पत्वे ट्त्वत् (नितदोभ्यां स्यातेः कोशले। पा ८।३।८८) १ विम, किमी विषयका प्रच्छा जाता। २ निष्पत्ति, कुशल, चतुर। ३ पारगत, पूरा जानकार ४ प्रधान, श्रेष्ठ, सुविद्या।

निष्पत्ति (सं० त्रि०) नितान्तं पत्तम्। कथित, पकाया हुआ, उगला हुआ।

निष्पत्ति (सं० त्रि०) पक्षपातरहित, जो किसीके पक्षमें न हो।

निष्पत्तिता (सं० स्त्री०) निष्पत्ति होनेका भाव, पक्षपात न करनेका भाव।

निष्पत्ति (सं० त्रि०) पदशून्य, निमल, साफ सुथरा। निष्पत्ति (सं० क्लो०) निष्पत्ति-व-क्तिन्। निर्गमन, बाहर होना।

निष्पत्ति (सं० पु०-स्त्री०) राजाधीका पताकाशून्य दण्डविशेष, प्राचीन कालका एक प्रकारका दण्ड जिसे राजा लोग अपने पास रखते थे। यह दण्ड ठीक पताकाके दण्डके समान होता था, अक्षर क्षेत्रज्ञ इतना हो होता था कि इसमें पताका नहीं होती थी।

निष्पत्ति (सं० त्रि०) निष्पत्ति-व-क्तिन्। 'ततो पत्वं'। नितान्त पतनयोग, गिरने योग्य।

निष्पत्ति (सं० स्त्री०) निर्गती पतिः, सुनय-यस्याः, ततो वाच्य पत्वं। मवीरा स्त्री, वह स्त्री जिसे स्वामी-पुत्र न हो, सुसमाप्त।

निष्पत्ति (सं० स्त्री०) निष्पत्ति-व-क्तिन्। १ समाप्ति,

पत्त। २ सिद्धि, परिपाक। ३ नादको भवत्याविशेष, इठयोगके अनुसार नादको चार प्रकारको भवत्याधीमें प्रथम भवत्या। चार भवत्याओंके नाम वे हैं, पारम्भ, चट, परिचय और निष्पत्ति। ४ भवधारण, निश्चय। ५ शुकता, मदा। ६ मीमांसा। ७ निर्वाह, निवाह। ८ अनुपात (Ratio)।

निष्पत्ति (सं० त्रि०) निर्गतं अन्य पार्श्वेन निष्पत्तं पत्वं शरमुद्धी यस्य। १ जो मपुङ्गवर मृगका एक पार्श्व छेद कर दूसरा पार्श्व हो कर निकल जाय। २ जिनमें पत्ते न हो, विना पत्तोंका।

निष्पत्ति (सं० त्रि०) निर्गतं पत्वं पणं यस्य कपः। १ पदशून्य, जिसमें पत्ते न हो। (पु०) २ क्रोररुह, करीलका पेड़।

निष्पत्ति (सं० स्त्री०) निष्पत्ति-क-टाप्, टापि पत इत्तम्। क्रोररुह, करीलका पेड़।

निष्पत्ति (सं० स्त्री०) निष्पत्ति-डाच्, ऊ-भार-क्तिन्। अतिव्ययन, अत्यन्त कष्ट, भारो तकलीफ।

निष्पत्ति (सं० स्त्री०) निष्पत्ति-व-क्तिन्। १ निर्गत, बाहर निकालना।

निष्पत्ति (सं० त्रि०) १ पादहीन, विना पहिए या पैरका। (क्लो०) निर्गतं पदं पादो यस्य ततो पत्तम्। २ पादहीन यान, वह सवारो जिसमें पहिए चादि न हो।

निष्पत्ति (सं० स्त्री०) निर्गतः पादोऽस्यां पादोऽन्तर्लोपः, ततो कुम्भपद्यादित्वात् डोपः, पद्मावः विसर्गस्य पः। १ पदहीना स्त्री, विना पैरको औरत।

निष्पत्ति (सं० त्रि०) निर्गतः सन्दो यमः। सन्दन-रहित, जिसमें किसी प्रकारका कम्प न हो।

निष्पत्ति (सं० त्रि०) सन्दनशून्य, कम्पनरहित।

निष्पत्ति (सं० त्रि०) निष्पत्ति-कृतः। १ निष्पत्तिविशिष्ट, जिसको निष्पत्ति ही चुको हो। २ सम्पत्ति, जो सनाप्त या पूरा हो चुका हो।

निष्पत्ति (सं० त्रि०) साम्य हीन, कमजोर।

निष्पत्तिकर (सं० त्रि०) १ जो युक्तहस्त नहीं हो। २ जो प्रसृत नहीं है, विना किसी तैयारीका। ३ दृढ़सङ्कल्प-हीन।

निष्परिग्रह (सं० त्रि०) निर्गतः परिग्रहः यस्य। १

विषयादि सर्वादिभिरत्रिभे कोरं यम्यति न चो । २
 त्रिो दान पादि न से । १ त्रिभने खो न चो, रं कुधा ।
 ३ परिवाहित, कुंवाग ।
 निरपरिच्छद (व० रि०) १ परिच्छदगुण विना अपहृ
 खा । २ अनुबन्धपूर्व, विना मोक्षरथा ।
 निरपिहाद (व० रि०) जो दण्ड न चो पडे, जो नहज
 म न प्रसे ।
 निरपीय (व० वि०) त्रिभने परीया न चो ।
 निरपीशर (म० रि०) त्रिभका परिहार न चो ।
 निरप्यव (म० रि०) १ कोमल, जो सुमनेमें कर्षण न
 चो । २ जो कर्षण या खडोर न चो ।
 निरप्यन (म० खो०) निरपू मासे स्पुट, ततो पय ।
 धाम्यादिवा निरुपचरक, ज्ञान पादिको भूको निजा
 मना, कूटना, चाटना ।
 निरगच्छ (म० रि०) पाच्छकगुण्य ।
 निरपाद् (म० पु०) निर्मतो पादो यस्य, चरन्वलोपा ततो
 विवर्गसा यः । निर्मत्पादक ।
 निरपाट (म० पु०) १ पनात्रको भूको निजाकमेका काम ।
 २ बोद्धा नामकी तरकारी या खको । ३ मटर । ३
 धेम ।
 निरगदक (म० रि०) निर-पद-विच्छ-व्युत् । निरपति
 कारक, निरपति करमेकाना ।
 निरपादन (म० खो०) निर-पद-विच्छ-व्युत् । निरपति
 कारक, निरपति करना ।
 निरगदित (म० रि०) निर-पद-विच्छ-प्र । १ पथा
 दित । २ पथादित । ३ धेदित ।
 निरपाहो (म० खो०) बोद्धा नामकी तरकारी या खको
 कोविदा ।
 निरपाव (व० खो०) निर-पद-विच्छ-व्युत् । मन्पाव
 निर्वाह करमे योग्य ।
 निरपान (म० खो०) नि-विषकपडे पान, रथ प्रकार या
 सेना कि कुछ मो वच न रहे ।
 निरपाव (म० पु०) निरपूसे तुपायनपदेन शोधनेन
 निर-पू-वर्षे कर्त्त । १ धाम्यादिवा निरुपचरक,
 पनात्रको भूको निजाकमेका काम । पर्याय—पवन,
 पव, भूकोकरक । २ रम्यंदिखो बाहु खोको कवा तिमने

बानकी भूको पादि पदार्थ जानी है । १ राजमार्ग,
 कोविदा । ३ निर्विच्छन्न । २ कङ्कडर, भूको, पैरा । ३
 श्वेतमिथी, मषिद धेम । भावमहायमे निरपाव, राज
 मिथी, बहक पोर श्वेतमिथिक एक पर्यायक शब्द न
 साय मये है । गुण—मधुर, कवायरक, कच, पक्क,
 निपाक, सुव, कारक शब्द पित्त रज मूत्र वायु पोर
 विहाविबन्धनक, लक्षणेय, विष, कष, शोय पोर
 दृक्कनायक है । ३ द्विगुणा परिमात्र ।
 निरपावक (व० पु०) निरपाव एक कार्थि कम् । श्वेत-
 मिथी, मषिद धेम ।
 निरपावी (म० खो०) निरपाव-विजा कीय । मिथी
 विषेक बोद्धा नामकी तरकारी वा खको । यह दो प्रकार-
 की होती है हरिदक की पोर सुवक की । हरिदक की
 पर्याय—पामत्रा, पलितो, मन्पूर्विका, मन्त्रयो
 पलित्वा, मिथी, गुच्छकना, विमानकनिजा, निरपावि
 पोर चिपटा । श्वधाधि पर्याय—पत्रु-सिधना, मन्
 निरपाविका, इकनिरपाविका, धाम्या, मन्-गुच्छकना
 पोर पयना । गुण—कवाय, मधुर रस, कष्यु-सिधकर,
 केज, दीपन पोर हविहारक ।
 निरपिष्ट (म० रि०) नि-विच-प्र । पूर्वाहित, चर विजा
 कृपा ।
 निधीक (म० रि०) निर-पीक-पय । निधीकन,
 निचोडना ।
 निपीकन (म० खो०) निर-पीक-व्युत् । निपीकन,
 निचोडना, गोरी कपड़ेकी टना कर कनमेने पानी निजा
 मना ।
 निचोडित (म० रि०) निर-पीक-प्र । की निचोडना
 मया जो ।
 निरुतिमथि (व० रि०) कर्मोप या देवयोग्य वाचक-
 की मनुष्यविदित ।
 निरुत्त (व० रि०) निर्माथि पुत्रः यन्त्रः । अनुत्त
 त्रिभने पुत्र न चो ।
 निरुत्तक (म० रि०) पुराकगुण, पुरातनरहित, मया ।
 निरुत्तक (व० रि०) इवकम्य पुरवशोन चर्दा पायादो
 न चो ।
 निरुत्तक (व० रि०) निर्मन्-पुत्राकी परमात् । १

मुलाकरहित, जिसमें भूसी आदि न हो। (पु०) २
जैनभेद, आगामी उखर्पियोंके अनुसार १४वें अर्द्धतका
नाम।

निष्पेष (स० पु०) निर्-विष-वञ् । १ निष्पोड़न,
निचोड़ना। २ निष्पर्ण, घिसना, रंगड़ना। ३ चूर्णन,
चूर करना। अभावार्थे प्रख्ययीभाव। ४ पेषणाभाव।
निष्पेषण (स० स्त्री०) निष्-विष-ल्य ट् । घर्षण, घिसना,
पौसना।

निष्पौरुष (स० त्रि०) पौरुषहीन, जिसमें पुरुषत्व न हो।
निष्प्रकम्प (स० त्रि०) निर्गतः प्रकम्पो यस्य । १ प्रकट
प्रकम्पण्युत् । (पु०) २ त्रयोदश मन्वन्तरोयं सर्गर्षिभेद,
पुराणानुसार तेरहवें मन्वन्तरके सर्गर्षियोंमेंसे एकका
नाम।

निष्प्रकारक (स० त्रि०) निर्गतः प्रकारकः यस्य । प्रका
रकशून्य, निर्विकल्पक, जिसमें ज्ञाता और ज्ञेयमें भेद
नहीं रह जाते, दोनों एक हो जाते हैं।

निष्प्रकाश (स० त्रि०) निर्गतः प्रकाशः यस्मात् । प्रकाश
हीन, जिसमें रोशनी न हो।

निष्प्रचार (स० त्रि०) प्रचारशून्य, जो एक स्थानसे दूसरे
स्थान पर न जा सके, जिसमें गति न हो।

निष्प्रताप (स० त्रि०) प्रतापहीन, हेय, नीच।

निष्प्रतिक्रिय (स० त्रि०) प्रतिक्रियारहित, प्रतिकारहीन,
जिसका प्रतिकार न किया जाय।

निष्प्रतिग्रह (स० त्रि०) प्रतिग्रहहीन।

निष्प्रतिघ (स० त्रि०) प्रतिघन्धकशून्य, जिसमें कोई
रोकटोक न हो।

निष्प्रतिहन् (स० त्रि०) प्रतिहन्धरहित।

निष्प्रतिपन्न (स० त्रि०) प्रतिपन्नशून्य, शत्रुहीन।

निष्प्रतिभ (स० त्रि०) निर्नास्ति प्रतिभा यस्य । १ अन्न,
नासमभ, नादान। २ जड़, मूर्खे। निर्गता प्रतिभा
दोस्त्रियस्य । ३ दोस्त्रिशून्य, जिसमें चमक दमक न हो।

निष्प्रतिभान (स० त्रि०) भौरु, कापुरुष, कायर, निकम्मा।

निष्प्रतिकार (स० त्रि०) प्रतिकाररहित, विघ्नशून्य।

निष्प्रतोय (स० त्रि०) सम्पुखट्टि, उद्देश्यविहीन ट्टि।

निष्प्रत्यह (स० त्रि०) निर्गतः प्रत्यहः वाधा यस्य।
प्रायहरहित, निर्विघ्न, जिसमें कोई विघ्न न हो।

निष्प्रधान (स० त्रि०) प्रधानशून्य, नेट्टेहोने।

निष्प्रपञ्च (स० त्रि०) प्रपञ्चशून्य, सत्स्वरूप।

निष्प्रपञ्चात्मन् (स० पु०) शिव महादेव।

निष्प्रभ (स० त्रि०) निर्गता प्रभा यस्याः । प्रभाशून्य,
जिसमें किसी प्रकारकी प्रभा या चमक न हो। पर्याय—
विगत, शरीक।

निष्प्रभाव (स० त्रि०) प्रभावरहित, सामर्थ्यहीन।

निष्प्रमाणक (स० त्रि०) प्रमाणशून्य, जिसका कोई
सवृत न हो।

निष्प्रयत्न (स० त्रि०) यत्नहीन, उपायरहित।

निष्प्रयोजन (स० त्रि०) निर्गतः प्रयोजनं यस्मिन् । १
प्रयोजनरहित, जिसमें कोई मतलब न हो। २ जिसमें
कुछ अर्थ सिद्ध न हो। ३ निरर्थक, व्यर्थ। (क्रि० त्रि०)
४ विना अर्थ या मतलबका। ५ व्यर्थ, फजूल।

निष्प्रवाण (स० त्रि०) नितरां प्रकर्षणं ऊयते, निर-प्र-वे-
करणे ल्युट् । तन्त्रविमुक्त वास, जो कपड़ा अभी तुरत
ताँत परसे निकाला गया हो।

निष्प्रवाणि (स० त्रि०) निर्गता प्रवाणो तन्तुवाय-
शलाका अस्मादस्य वा । (निष्प्रवाणिवच । पा ५।४।१६०)
इति-निपात्यते । नूतनवस्त्र, नया कपड़ा। पर्याय—
अनाहत, तन्त्रक, नवाश्वर, अहत, अहत, नववस्त्र।

निष्प्राण (स० त्रि०) निर्गताः प्राणाः प्राणादयवः यस्य।
श्वासप्रश्वासादिशून्य, सुर्दा, मरा हुआ।

निष्प्रोति (स० त्रि०) निर्नास्ति प्रोतियस्य । प्रोति-
शून्य, जिसमें प्रेम न हो।

निष्फल (स० त्रि०) निर्गतः फलं यस्मात् । १ फलशून्य,
जिसका कोई फल न हो। २ अण्डकीयरहित, जिसमें
अण्डकीष न हो। (पु०) ३ धानका पयाल, पूला।

निष्फला (स० स्त्री०) निहतं फलं यस्या टाप । १
विगतरजस्ता स्त्री, वह स्त्री जिसका रजोधर्म होना बन्द
हो गया हो, पचास वर्षसे ऊपरकी स्त्री। पर्याय—

निष्कली, निष्कली, निष्कला, विकली, विकला, ऋतु-
हीना, विरजा, विगतात्तवा। ५५ वर्षकी अवस्थासे
स्त्रियोंका रजोधर्म होना बन्द हो जाता है, उस समयसे
और कोई सन्तान जन्म नहीं लेती। इसी कारण उनका
निष्फला नाम पड़ा है।

निष्कलिका (न० पु०) यत्कीचि निष्कल्यत् कारिका यत् ।
 यत्कीचि चतुवार जित समय विभक्तिसन्त यत्ने साय
 रामचन्द्रको वनमें गये वी राम समय उन्होंने रामचन्द्र
 को घोर घोर यत्कीचि बाध यह यत्ने भी दिया था ।
 निष्कलिको (स० जो०) १ निष्कलता, शुद्धा जो । २ बन्धा-
 त्तकोटो, बन्धन काटनी ।
 निष्कल्य (स० त्रि०) निर्गत किन् समय । क्लिप्तचित्त,
 जितमें किन् न हो ।
 निष्कल्यत् (स० पु०) निष्कल्यत् माथि यत्, बाहुसङ्घात्
 यत् । १ शब्द, अर्थ यादिका गिरना । (त्रि०) निष्कल्यत्
 यत् । २ निष्कल्यत् ।
 निष्कल्यत् (स० त्रि०) नि-सिक्त-ज्ञ, ततो लट् यत् ।
 नितान्त प्रकृत ।
 निष्कल्यत् (स० त्रि०) त्रि-यत्, प्रथि सन्धान यत्, सु-
 द्यामादित्यात् यत् । शब्दरहित ।
 निष्कल्यत् (स० यच्च०) निर्गता समा यत्, तिष्ठत्पुत्रसमीनि
 च सुद्वारायै शब्दयोमान्, ततो यत् । नन्वरातीत् ।
 निष्कल्यत् (स० त्रि०) निर्गत जन्म यत्, सुद्यामादि
 त्यात् यत् । मासगृह्य ।
 निष्कल्यत् (स० पु०) निष्कल्यत् माथि यत्, ततो सु-
 द्यामादित्यात् यत् । नितान्त शेष ।
 निष्क (स० यच्च०) निष्कल्यत्, उपसर्गभेद, एक उप-
 सर्गका नाम । एक उपसर्गके निष्कलिकित्त पर्यायका बोध
 होता है । १ निष्कल । २ निष्कल । ३ शब्दक्य । ४ यत्किम् ।
 निष्कल्यत् निष्कल्यत् दोनों उपसर्ग यत् ही यत्में व्यपहत
 होती हैं । निष्कल्यत् ।
 निष्कल्यत् (स० त्रि०) नन्वपरहित ।
 निष्कल्यत् (स० त्रि०) स प्राचीन ।
 निष्कल्यत् (द्वि० वि०) यत्कल, कलमोर, दुर्बल ।
 निष्कल्यत् (द्वि० पु०) निष्कल्यत् ।
 निष्कल्यत् (य० जो०) १ सम्बन्ध, समाव, तात्पुत्र । २
 विवाह सम्बन्धकी बात, सूचनी । ३ यत्कीचि, तुलना,
 सुभाषिता ।
 निष्कल्यत् (स० पु०) निष्कल्यत् शब्दात् सुद्वारो यत् ।
 निष्कल्यत्, सुद्वार यत् ।
 निष्कल्यत् (स० त्रि०) निष्कल्यत् निष्कल्यत् । नितान्त मासक,
 कृत् यत्कीचि ।

निसर्ग (स० पु०) निष्कल्यत्-यत् । १ समाव, प्रकृति ।
 २ यत्कल्यत्, यादिका । ३ यत्किम् । ४ यत् ।
 निसर्ग (स० त्रि०) निसर्गाख्याती जन्म-ज्ञ । १ समाव
 ज्ञात, जो समावने सत्य हो ।
 निसर्गाद्युक्त (स० जो०) प्राणिविषयक गणनाभेद, एक
 प्रकारको मन्थना जिससे बिलसो यत्कीचि प्राणुका पता
 लगाया जाता है । एकज्वालक पादि श्लोति-प्रयोगोंमें
 इसका विषय जो लिखा है वह एक प्रकार है,—
 सद्ये यत्कीचि प्राणुका गणना नितान्त यादिका है ।
 यत्कीचि मनुष्यको परमाद्युक्ते लय ऐहिक घोर पारलौकिक
 समीक्षाएँ निर्भर हैं । यह प्राणु यत्कीचि चार प्रकारकी
 है—यत् प्राणु पिच्छाद्युक्त, निसर्गाद्युक्त घोर जीवाद्युक्त । यत्की-
 चि जिनका जन्म बनवान् है, उनमें सिध्द यत् प्राणुकी
 स्युक्त बनवान् जोमिसे पिच्छाद्युक्तको, चन्द्रके बनवान्
 जोमिसे निसर्गाद्युक्तको घोर जितक यत्कीचि, चन्द्र घोर रति ये
 तोनों बन्धन हैं उनमें सिध्द जोवाद्युक्तको मन्थना-करना
 होती है । प्राणुयत्कीचि यत्कीचि घोर घोर नीच राशि
 तथा ठायाघ घोर नीचायका जानना यादिका है ।
 निष्कल्यत् जन्मकायमें सत्य घोर चन्द्र जोमो जो बन्ध
 यत्कीचि, उसकी यत् प्राणु घोर निसर्गाद्युक्त दोनों प्रकारसे
 गणना को जाता है । गणना करके दोनों प्राणुके यत्कीचि
 जोके दे । यह योगफलको दोष माग दे कर भी कुछ
 उत्तर निष्कल्यत्, बन्धो उस मनुष्यको प्राणु है । यत्की
 जानना यादिका ।
 निष्कल्यत् जन्मकायमें चन्द्र घोर स्युक्त दोनों जो बन्ध-
 यत्कीचि, उसमें सिध्द भी पिच्छाद्युक्त ही प्रयत्न है ।
 पिच्छाद्युक्त घोर निसर्गाद्युक्तकी मन्थना करके दोनों यत्कीचि
 एक साथ जोके दे घोर योगफलका परीक्षा बन, मास
 घोर दिन जितना होया यत्कीचि परमाद्युक्त जानना
 यादिका ।
 निष्कल्यत् प्रकारसे निसर्गाद्युक्तकी मन्थना करनी
 होती है । चन्द्रका प्राणुयत्कीचि यत्कीचि करके यत्कीचि यत्
 माग दे घोर मासफलमें बिलसो कलया निष्कल्यत्
 यत्कीचि, यत्कीचि दिन घोर इच्छादिको चन्द्रदत्त निसर्गाद्युक्त
 समझना यादिका है ।
 सुद्वारा प्राणुयत्कीचि यत्कीचि करके यत्कीचि सुद्वारा करे ।

गुणनफल जो होगा उसे २० में भाग दे कर जितनी कला विकला होगी, उतना ही दिन और दण्डादि बुधका निसर्गायु होगी।

रवि और शुकके आयुःपलकी ग्रहण ३ में भाग दे, भागफल जितना होगा, उतना ही दिन और दण्डादि रवि और शुकका निसर्गायुः होगा।

मङ्गलके आयुःपलमें ३० का भाग दे कर भागफलमें जितनी कला विकलादि आवेगी, उतना ही दिन और दण्डादि मङ्गलकी निसर्गायु है।

बृहस्पतिके आयुःपलमें ३५ का गुना कर गुणनफल पा हो, उसे १० में भाग दे और भागफलमें जितनी कला विकला होगी, उतना ही दिन और दण्डादि बृहस्पतिके निसर्गायुः होगा।

शनिके आयुःपलकी ग्रहण कर उसे दो जगह रखे। पीछे एक अङ्कको ६ में भाग दे कर भागफल जो होगा उसमेंसे द्वितीय अङ्क घटावे। अब जितनी कला विकलादि बच रहेगी, उतना ही दिन और दण्डादि शनिका निसर्गायुः होगी।

आयुःपलकी इस प्रकार गणना की जाती है,—जन्मकालमें जो ग्रह जिस राशिके जितने अंशदिमें रहेगा उस ग्रहस्पष्टको राशि अंश और कलादिके अङ्कमें उस ग्रहकी उच्च राशि और अंशके अङ्कको घटावे। अब घटावफल जो होगा उसे ३० से गुणा करे। गुणनफलको अंशद्वयके साथ जोड़ दे। पीछे उस योग वा अंशको ६० से गुणा करके कलाद्वयके साथ योग करने पर जो अङ्क होगा उसी अङ्कसंख्याका नाम उस ग्रहका आयुःपल है।

यदि उस ६० से गुणित योग कलाद्वय छः राशिके कलाद्वय अर्थात् दश हजार आठ सौ में कम हो, तो उसे द्वासीस हजार छः सौ से वियोग करना होता है। अब शिष्टाङ्क जो रहेगा, उसीको उस ग्रहका आयुःपल जानना चाहिये।

अर्थ प्रकारसे आयुःपलका निकालना—जन्मकालमें जो ग्रह जिस राशिके जिस अंशदिमें रहेगा, उस ग्रहस्पष्टकी राशि अंशकलादिका अङ्क और उस ग्रहकी नीच राशि तथा अंशका अङ्क, इन तीनोंका अन्तर करने-

से जो बचेगा, उस राशिके अंशको ३० से गुणा करे। गुणनफलको अंशद्वयमें जोड़ दे। पीछे उस योग वा अङ्कको ६० से गुणा कर और गुणनफलको कलाद्वयके साथ योग कर जो योगफल होगा, उसीका नाम उस ग्रहका आयुःपल है। किन्तु उस नीचान्तरित राशिका अङ्क यदि छः से न्यून हो, तो उसे राशिके अङ्कमें छः जोड़ दे और योगफलको पूर्व प्रक्रियाके अनुसार कला बनावे। जितनी कला होगी, वही उस ग्रहका आयुःपल है। तीनोंकी गणना प्रणाली तो भिन्न है, पर फल एक-सा होता है।

मङ्गल भिन्न ग्रहगण शत्रु वा अधिगत्वके अङ्कमें हो, तो पूर्वोक्त प्रकारसे आयुःपल बना कर उसमेंसे ज्ञतोयांश निकाल लें। इस प्रकार जो कुछ बचेगा, वही अङ्क उस ग्रहका आयुःपल होगा।

शुक और शनि भिन्न ग्रहोंके अस्तगत होनेसे पूर्वोक्त आयुःपलमेंसे उसका अर्धांश निकाल लें। इस प्रकार जो बचेगा वही आयुःपल होगा।

ग्रहगण शत्रुके घरमें रह कर यदि अस्तगत हो जाय, तो पहिलेकी तरह अर्धांश निकाल लेना पड़ता है। शुक और शनिके शत्रुगृहस्थित हो कर अस्तमित हो जानेसे आयुःपलमेंसे उसका ज्ञतोयांश वियोग करे। वियोगफल जो होगा, वही उस ग्रहका आयुःपल है।

इस प्रकार आयुःपलका स्थिर करके पूर्वोक्त प्रकारसे निसर्गायुःको गणना करते हैं।

पिण्डायुः, निसर्गायुः और जीवायुः तीनों प्रकारकी गणनामें इसी प्रकारसे आयुःपलके स्थिर कर उसके बाद गणना की जाती है।

निसर्गायुः गणनाके समय आयुःदानिको गणनाकी प्रक्रिया करनी होती है। (राघवानन्द कृत विदग्धतोषिणी) पिण्डायुःकी गणनाका विषय पिण्डायुः शब्दमें देखो।

निसा (हि० स्त्री०) सन्तोष, छत्ति।

निसाकर (हि० पु०) जिहाकर देखो।

निसाचर (हि० पु०) निशाचर देखो।

निसाद (हि० पु०) भंगी, मेहतर।

निसान (फा० पु०) १ निशान देखो। २ नगाड़ा, घीसा।

निसाना (हि० पु०) निशाना देखो।

मिधानो (हि० स्त्री०) मिथानी देखो ।
 मिधापति (हि० पु०) मिधापति देखो ।
 मिधार (ङ० पु०) नि-धृ-ङ्ङत् । १ समूह । २ सहोपा
 यो सोमापाठा नामका वृक्ष ।
 मिधार (ष० पु०) १ मिधावर, पदका, वतारा । २
 कुनबीडे याहनकासका एक सिद्धा जो चौबार्ह वर्षे या
 चार पाने मूलका होता था ।
 मिसारक (ष० पु०) शाक्य रामका एक पीठ ।
 मिसारका (हि० स्त्री०) बाहर करना निष्कारणा ।
 मिसारा (स० स्त्री०) कदलीवृक्ष केशिका पत्र ।
 मिसावरा (हि० पु०) एक प्रकारका कनूतर ।
 मिति (हि० स्त्री०) १ मिति देखो । २ एक वृक्षका
 नाम । इनके प्रबोध चरचमे एक समय पौर एक कष्ट
 होता है ।
 मितिचर (हि० पु०) मितिचर देखो ।
 मितिदिन (हि० स्त्री० वि०) १ रातदिन पाठो पहर ।
 २ सर्वदा, सदा, हमीया ।
 मितिनिधि (हि० स्त्री०) चंद्ररात्रि, निशोच, पाचो रात ।
 मितिन्धु (स० पु०) वृक्षविशेष निगुंकी सहाय्य ।
 मिथिमायर (हि० स्त्री०-वि०) रातदिन, मयदा मदा ।
 मिथोठो (हि० वि०) मिथिमें कुछ तल्ल न हो नि'सार,
 मोरन, बोसा ।
 मिसुभार (स० पु०) निगुंकीवृक्ष, सहाय्यका पत्र ।
 मिसुन्धु (ष० पु०) चसुरमिद प्रजावधि भारै कावधि
 पुत्रका नाम ।
 मिसुदक (स० वि०) मिसुदयति नि-सुदि-धुम् । हि लक,
 हि सा करनीबाना ।
 मिसुदन ष० स्त्री०) नि-सृ-भावे क्त्वात् । १ निधि
 वन, हि ना । २ वन । (स्त्री०) ३ नि-सुद-ल् । ४ विना
 यक, मारनेवाका, नाग खरनीवाका ।
 मिसहन (हि० वि०) नि-सृ-ट देखो ।
 मिसता (स० स्त्री०) मितर्ता कता, नि-सृ-ङ्ङत् किन्नर्
 टाए । १ जिहता, निशोच । २ स्त्रीमाकवृक्ष, सोमा
 पाका ।
 मिसताकक (ष० पु०) कोष्मगतरोपमिद ।
 मिसृष्ट (ष० स्त्री०) नि-सृ-ङ्ङत् । १ स्वप्न, पदित किय

वृषा । २ प्रीति, मोजा वृषा । ३ दत्त, दिया वृषा । ४
 मन्थत्व, जो बीबमें पड़ कर बोई भात करे । ५ जोड़ा
 वृषा जो जोड़ दिया गया हो ।
 मिसृष्टार्थ (स० पु०) मिसृष्ट' स्वप्ना' पद' प्रबोधन
 बरिमिथित । कृतविधिय एव प्रकारका कृत । पू। तोम
 प्रकारका भागा मया है—मिसृष्टार्थ, मितार्थ' पौर
 सन्धे प्रकारक । जो दोनों पक्षोंका अभिप्राय पक्षी तरह
 समझ कर स्वप्न हो पद अर्थोंका उत्तर दे देता है पौर
 काय निद्र कर होता है उसे मिसृष्टार्थ' कहते हैं ।
 २ धर्मके अपव्यय पौर प्राक्तनार्थमें निबुद्ध पुत्रपत्निय
 वृक्ष समुच्च जो धर्मके प्रायव्यय पौर कवि तथा वाचिन्व
 जो देखैकहि लिए निबुद्ध किया जाय । ३ पुत्रप
 त्निय, सज्जोत दामोदरमें सिद्धा है, कि जो समुच्च पौर
 पौर मूर हो, पथमें मालिचका काम तत्परतासे करती रहै
 पौर यवना दोहन प्रकट करै, उसे मिसृष्टार्थ' कहते हैं ।
 मिसैनी (हि० स्त्री०) सोपान, सोड़ो, खोला ।
 मिसैनी (हि० स्त्री०) मिसैनी देखो ।
 मिसोड़ (स० स्त्री०) नि-सृ-ङ्ङत्, लतो भोव् पोष्पाष्वाय
 यः । मितान्वाचल्य ।
 मिसोत (हि० वि०) मिथमें पौर मिथो चौकका मिन न
 हो, दृष्ट निरा ।
 मिसोत्तर (हि० पु०) मिसोत्तर देखो ।
 मिसोच (हि० स्त्री०) मारै भागतवर्षके ब्रह्मो पौर
 पडाको पर जोनेबानो एक प्रकारको कता । इनके पत्ते
 गोस पौर मुकीमें होते हैं पौर इसमें मोच फल बनते
 हैं । यह तीव्र प्रकारको होता है—प्रवेद, बाकी पौर
 नाम । मवेद निधोबमें सवेद र गंध काकोमें बाधा
 पन मिये बौयनी र गंध पौर काकने फल कुछ फल
 र गंध होती हैं । मवेद मिसोचने पत्ते पौर फल कुछ
 काक अपिपाकत कुछ बढ़े होते हैं पौर ष घाकमें बड़ो
 अधिक गुणकारो भागी आतो है । म'च कोम रवका
 चुनाव मयवे थाक्या समझते हैं । मिथेव दिवरक मिथुन
 शुभये द्विषी ।
 मिसो (हि० स्त्री०) एक प्रकारका ऐयमका जोड़ा
 जिसे मिसुरो मी कहते हैं ।
 मिसृष्ट—रवक साहसमें इसे 'इत्यक वन' ग्राम वगुताया

है । यह हस्तकवचनगर वत्तमान भवनगरके पाम
वमा हुआ था । प्रभो वह हस्तकवल नामसे महहर है ।
वनभोवशके १ म ध्रुवसेनके प्रदत्त शासनमें इस यापका
उल्लेख है । पेरिप्लमने अपने ग्रन्थमें इस स्थानका
'शष्टक' नामसे वर्णन किया है ।

निस्त्रेवल (द्वि० वि०) शुद्ध, निर्मल, धर्मल ।

निस्त्रेवल (स० त्रि०) निर्गतं तत्त्वं वास्तव्यं रूपं स्वरूपं
वा यस्य । असत्पदार्थ, तत्त्वहीन, जिसमें कोई तत्त्व
न हो ।

निस्त्रेणी (स० स्त्री०) नितरां स्तनघटाकारोऽस्यस्या
इति अच् गौरादित्वात् डोष् । १ वटिका, बट्टी, गीली ।
२ स्तनरहित स्त्री, वह श्रौरत जिसे स्तन न हों ।

निस्त्रेणु (स० त्रि०) पुत्रहीन, जिसके कोई सन्तान
न हो ।

निस्त्रेन्द्र (स० त्रि०) निष्क्रान्ता तन्द्रा यस्य । १ श्रान्तस्य
रहित, जिसमें श्रान्तस्य न हो । २ तन्द्रारहित । ३ सुस्य,
सबल, बलवान्, मजबूत ।

निस्त्रेन्द्रि (स० त्रि०) निर्गता तन्द्रिरालस्यं यस्य ।
श्रान्तस्वरहित, जिसमें श्रान्तस्य न हो ।

निस्त्रेम्ब (स० त्रि०) निस्त्रेन्मृत्तम् । १ नौरव, सखाटा,
जरा भो शब्द न होना । २ निश्चेष्ट, जड़वत् । ३ स्पन्द
रहित, जो हिलता डोलता न हो, जिसमें गति या व्यापार
न हो ।

निस्त्रेम्बता (स० स्त्री०) १ स्त्रेम्ब होनेका भाव, खामोशी ।
२ सखाटा, जरा भी शब्द न होनेका भाव ।

निस्त्रेमस्क (स० त्रि०) तमविहीन, अन्धकारशून्य, उज्ज्वल ।

निस्त्रेम्भ (स० त्रि०) मृत्तमहीन, जिसमें खंभे न हो ।

निस्त्रेण (स० स्त्री०) निस्त्रेण्यतेऽनेनेति निर-ष्ट करणे
ल्युट् । १ उपाय, निस्त्रा, छुटकारा । २ निर्गम, बाहर
निकलना । ३ पारगमन, पार जानिकी क्रिया या भाव ।

निस्त्रेरी (द्वि० स्त्री०) एक प्रकारका रेशमका कोड़ा ।
इस कीड़ेका रेशम बहलालके देगो कीड़ेके रेशमको
अपेक्षा कुछ कम मुलायम और चमकौला होता है ।
इसके तीनभेद होते हैं—मदरासो, सोनामुखी और
कामि ।

निस्त्रेरीक (स० अव्य०) तरे देयः ईकः तरोकः तरोकस्या

भावः, प्रभावे प्रथयीभावः । १ तरेके लिए उपायका
महारा देना । (त्रि०) २ तरोकशून्य, विना ईकेका ।
निस्त्रेरीप (स० त्रि०) तरे पाति पाक, तरोपः निर्गत-
स्तरोपः तस्मात् । नोकापालकशून्य ।

निस्त्रेर्क्य (स० त्रि०) तर्क्य हीन, जिसको कल्पना न
की जाय ।

निस्त्रेर्त्तव्य (स० त्रि०) दमित, जिसका दमन किया गया
हो, जो जोता गया हो ।

निस्त्रेर्त्तण (स० स्त्री०) निर-ष्ट-द्वि-सायां भावे ल्युट् ।
मारण, बध ।

निस्त्रेत्त (स० त्रि०) निरस्तं तत्त्वं प्रतिष्ठा यस्य । १
वत्तुल, गोल । २ तन्मयशून्य, विना पदोका । ३ कम्पित,
चलायमान । निम्नान्तं तत्त्वं । ४ तन्म, नीचे ।

निस्त्रेत्तार (स० पु०) निर-ष्ट घञ् । १ निस्त्रेण । २
उद्धार । ३ पारगमन । ४ प्रभोष्टमाति ।

निस्त्रेत्तारक (स० पु०) नि-ष्ट-ल्युट् । १ निस्त्रेत्तारकर्त्ता,
वचानेवाला, छुड़ानेवाला । २ मोचदाता, मोक्ष देने-
वाला ।

निस्त्रेत्तारण (स० स्त्री०) निर-ष्ट-ल्युट् । १ निस्त्रेत्तारकण,
वचाना, छुड़ाना । २ पारगमन, पार करना । ३ जय-
करण, जीतना । ४ मुक्तकरण, छुटकारा देना ।

निस्त्रेत्तारवोज (स० स्त्री०) निस्त्रेत्तारस्य संसारसमुद्र-
समुत्तरणस्य बीजम् । संसारतरणकारण, पुत्राणां पुत्रा
वह उपाय या काम जिसे मनुष्यकी इस संसार तथा
जन्ममरण आदिसे मुक्ति हो जाय ।

भगवान्के नामका स्मरण, तोर्त्तन, प्रवर्त्तन, पाट
सेवन, वन्दन, स्तवन और प्रतिदिन भक्ति पूर्वक नैवेद्य-
भक्षण, चरणोटकपान और विष्णुमन्त्रजप ये सब एक-
मात्र निस्त्रेत्तारवोज हैं अर्थात् उद्धारके एकमात्र उपाय हैं ।
महानिर्वाणतन्त्रमें भी निस्त्रेत्तारवोजका विषय इस प्रकार
लिखा है—

“कलौ पापयुगे घोरे तपोहीनेऽति दुस्तरे ।

निस्त्रेत्तारवोजमेतावद् ब्रह्ममन्त्रस्य साधनम् ॥

साधनानि बहुकानि नानातन्त्रागमादिषु ।

कलौ दुर्भक्षजीवानामसाधनानि महेश्वरे ॥”

(महानिर्वाणतन्त्र)

घोर पापदुःख क्षमिकान्तं तत्र शोग तपोहोम की
 कार्यते, तत्र ब्रह्ममन्त्रा वा साधन को एकमात्र निन्दार
 कोत्र बोधा । ई मङ्गलरो ; मागतान्त्र घोर पागमादिर्ष
 को कर्त्त प्रकारके साधन निचे रूप ई ई क्षमिकान्तं
 पुत्रं न शोभोई त्रिभे वसन्त्य ई । अतएव भवसमुद्र पार
 करुनेका ब्रह्ममन्त्र को एकमात्र उपाय ई ।

निन्दितोप्यं (स० लि०) निरु-य नन गण्ट । निष्ठा-
 रामिनापो को निन्दार होना चाहता हो ।

निन्दिमिर (न० लि०) निर्गतक्षिमिर यन्मात् । तिमिर
 गृह्य, अन्वहारै रक्षित या गृह्य ।

निन्दोर्ष (स० लि०) निरु-स्त्र-अ । १ परित्रात, त्रिसका
 निन्दार को चुका हो । २ पार नया च्या, को ते या
 पार कर चुका हो ।

निरुति (स० लि०) निरुतिगृह्य प्रय साधोम ।

निरुप (स० लि०) निरुि का सुवा यस्मात् । १ विरुपो
 जन, बिना भूमिका, त्रिभने भूमो न हो । २ निर्मूक ।
 (पु०) १ मोक्षम, गिह ।

निरुपघोर (स० पु०) निरुप परिकृत घोर यस्मेति ।
 मोक्षम, गिह ।

निरुपयत्र (स० छो०) निरुप निर्मूक रज । स्फटि इ
 मन्त्रि ।

निरुपिन (स० लि०) निरुप इतो विष्-अ । इन्विहीन,
 त्रिभने भूमो न हो ।

निरुपोदस (स० श्मी०) स्फटिक मन्त्रि ।

निरुपबन्धक (स० लि०) अथ घोर कष्टकपरिगृह्य,
 त्रिभने अथ घोर कांटा न हो ।

निरुप (स० लि०) निरुप त्रिभो यस्मादिति ; त्रिभो
 रक्षित, त्रिभने त्रिभ न हो ।

निरुप (स० लि०) त्रिभो रक्षित, बिना त्रिभका, त्रिभने
 त्रिभ न हो ।

निरुप (स० पु०) निरु-पुद-भावे चन् । नितात
 व्यपन, बहुत बह ।

निरुप (स० छो०) निरु-पुद-भावे च्चु-ट । नितात
 व्यपन, निहायत तक्षसीक ।

निरुप (स० लि०) तोपघोर, विष्णु जनका ।

निरुप (स० लि०) मयहोम, त्रिभे डर न हो ।

निष्कप (स० लि०) न्यासीन, बेइया, बेइम ।

निष्कप (स० पु०) निर्गतक्षि यन्तोऽङ्गुलिभ्य ततो
 घामने इव समासाल । (बेवमायास्तुत्तररव इवत्पणव ।

य २। ३। १। २। इति कार्त्तिकोत्था इव । १ पत्र । २ मन्त्र
 भेद, तन्त्रके यनुपार एक प्रकारका मन्त्र । (लि०) १
 निर्दय, कठोर । ३ त्रि यन्गृह्य, त्रिभने तोसका व एषा
 न हो, न्याया हो ।

निष्कपारिभ (स० लि०) निष्कप घरतोति निष्कप य
 छ-बिदि । अङ्ग-मपारी, तन्पवार धारण करनेवाला ।

निष्कपगणिका (स० छो०) निष्कप अङ्ग-म-इव पत्र
 मन्था, यस्तोति ठन् । छु-भी-इव अङ्कुर ।

निष्कपिन (स० लि०) निष्कप ग-पङ्क-मः वायस्ये
 नास्त्वप्य इति इति । अङ्ग-मपारी, तन्पवार धारण
 करनेवाला ।

निष्कपुटो (स० स्तो०) निष्कपुटो, पङ्को रसाययो ।

निष्कपुष्ट (स० लि०) निष्कपाला त्रैगुणात्, त्रिगुण-
 कायात् स सारात् । १ कामादिगृह्य । २ स सारातोत,
 को कस्त, रज घोर तम इन तोमो शुभेति रक्षित या
 पन्था हो ।

निष्कपुष्पिण (स० पु०) रात्रहस्तूर, अतुरिका पङ्क ।

निष्कप (स० पु०) अथ वरी सुषो वरु को बेच कर
 रक्ष मई हो ।

निष्कप (स० लि०) निर्गता खे इ-प्रेमते कारिका वा
 पन्थ । १ प्रेमगृह्य, त्रिभने प्रेम न हो । २ मैत्र्यगृह्य,
 त्रिभने त्रिभ न हो । (पु०) १ मन्त्रभेद तन्त्रके यनुपार
 एक प्रकारका मन्त्र । ३ पतकोइव, तोषोका पोषा ।

निष्कप (स० स्तो०) निष्कप पन्थ यस्याः ।
 यत्तकष्टकारी, नदिद मटकटे या, कटेरो ।

निष्कप (स० लि०) निरुत-अन्वो यन्त्र, बाहु-विषय
 भोप । १ अन्वन्वदित, त्रिभने अन्वन्व न हो । निष्कप-
 चन् । २ अन्वन्, अ पन ।

निष्कप (स० लि०) निष्कप-त(प) । पन्थान् अन्वन्
 रक्षित ।

निष्कप (स० लि०) निष्कपका भाव ।

निष्कप (स० लि०) निष्कप-पन्थान् इति ।
 निष्कपगृह्य ।

निस्पृग् (म० त्रि०) १ विज्ञास्य । २ घ्रादरनीय ।
 निस्पृह (स० त्रि०) निर्गता स्पृहा दृष्टादृष्टविषय भावना
 यस्य । स्पृहाशून्य, जिसे किसी प्रकारका लोभ न हो,
 लालच या कामना घादिने रहित ।
 निस्पृहता (म० स्त्री०) निस्पृह होनेका भाव, लोभ या
 जालना न होनेका भाव ।
 निस्पृहा (स० स्त्री०) १ अग्निगिखावृक्ष, कलिहारो नामक
 पेड़ । २ असूल वनस्पती ।
 निस्पृष्टो (हि० वि०) निस्पृष्ट देखो ।
 निस्फ (स० वि०) अदे, आधा, टी बराबर भागमेंसे एक
 भाग ।
 निस्फोवटाई (हि० स्त्री०) बड़ बटाई जिसेमें प्राधो
 उपज जमींदार और प्राधो यनामो होता है, अधिवा ।
 निस्वत (हि० स्त्री०) निश्चय देखो ।
 निस्पन्द (स० पु०) निस्पन्द-भावे वञ्च । १ स्पन्दन
 चरण । (त्रि०) निस्पन्दते इति कर्त्तरि अच् । २
 चरणशूल । 'निस्पन्द' इसके विकल्पमें पत्व होता है ।
 (भद्रविषयैमिनिभ्यः सन्देशे प्राणिषु । पा ८।१।७०) अद्, वि,
 अभि, नि इन सब उपसर्गों के बाद स्पन्द धातुके विकल्पमें
 भर पत्व होता है, प्राणिका अयं होनेसे नहीं होता ।
 यथा—निस्पन्द, निस्पन्द ।
 निस्व (म० पु०) निस्व-अप् । १ भक्षमण्ड, भातका
 मांड । २ अपचरण, बड़ जो बड़ या झड़ कर निकले,
 पसेव ।
 निस्त्राव (स० पु०) निस्त्रायते इति निस्त्र-णिच्-घञ् ।
 १ भक्षमसुद्वेषमण्ड, भातका मांड । पर्याय—माभर,
 आचाम । निस्त्र घञ् । २ द्रव, पसेव ।
 निस्त्राविन् (म० त्रि०) जो चरणशूल नहीं है, जो
 बहता नहीं है ।
 निस्त्र (स० त्रि०) निर्गतं स्त्रं घनं यस्य । दरिद्र, हीन,
 गरीब ।
 निस्त्रन (स० पु०) निस्त्रन-अप् (नौ-गद-नदण्ठस्वनः । पा
 ३।३।६४) शब्द, आवाज ।
 निस्त्रान (स० पु०) निस्त्रन-पत्ते घञ् । शब्द, आवाज ।
 निस्त्राम (हि० पु०) निस्त्राम देखो ।
 निस्त्रकोच (हि० वि०) उद्धोषरहित, जिसमें सबोच
 या सञ्जा न हो, वैधङ्क ।

निस्त्रातान (हि० वि०) संतरहित, जिसे कोई सञ्जा न
 हो ।
 निस्त्रदेह (हि० क्रि०-वि०) १ अशय्य, जङ्गर, वेशक ।
 (वि०) २ जिसमें सन्देह न हो ।
 निस्त्ररण (म० पु०) १ निकलनेका मार्ग या स्थान । २
 निकलनेका भाव या क्रिया, निष्कास ।
 निस्त्रार (स० त्रि०) १ साररहित, जिसमें कुछ भी सार
 या गुदा न हो । २ निस्त्रास्त्र, जिसमें कोई कामकी
 वस्तु न हो ।
 निस्त्रारक (स० पु०) प्रवाहिकारीग ।
 निस्त्रारित (स० त्रि०) निकाला हुआ, बाहर किया हुआ ।
 निस्त्रोम (स० त्रि०) निष्क्रान्ता सोमा यस्मात्, बाहुज-
 कात् विसर्गस्य स । १ अवधिगून्य, जिसकी कोई भीमा,
 न हो । २ बहुत अधिक ।
 निस्त्रत (हि० पु०) तनधारके ३२ हाथोंमेंसे एक ।
 निस्त्राद् (हि० वि०) १ जिसमें कोई स्वाद न हो । २
 जिसका स्वाद बुरा हो ।
 निस्त्रार्थ (हि० वि०) स्वार्थमें रहित, जिसमें स्वयं अपने
 नाम या हितका कोई विचार न हो ।
 निहंग (हि० वि०) १ एकाकी, अकेला । २ विवाह
 आदि न करनेवाला वा स्त्री आदिसे सम्बन्ध न रखने-
 वाला । ३ नंगा । ४ ब्रेहया, वेशम ।
 निहंगम (हि० वि०) निहंग देखो ।
 निहंगलाहला (हि० वि०) जो मातापिताके दुनारके
 कारण बहुत ही उद्वेग और लापरवा हो गया हो ।
 निहंता (हि० वि०) १ विनाशक, नाश करनेवाला । २
 प्राणघातक, मारनेवाला ।
 निह (स० वि०) निहन्ति नि-हन-ङ् । निहन्ता, मारने-
 वाला ।
 निहङ्ग—सिखोंके मध्य वैष्णव-सम्प्रदायविशेष । ये लोग
 नानक पर विश्वास रखते हैं मही, किन्तु अग्यान्य सिद्धों-
 के साथ इनकी कोई सह्यता देखी नहीं जाती । ये
 लोग अपने जीवनका ममता नहीं करते ।
 निहङ्ग शब्द संस्कृत निःसङ्ग शब्दका रूपान्तर है,
 इसमें सन्देह नहीं । लक्ष्मणके उल्लिखित नामधारी
 वैष्णव विरक्त पर्यात् उदासीन हैं । ये लोग मठ बनाते

हैर हुआये हाथ दिवह-वेना करते हैं । रातको से सोर मम्मरे रहते हैं और दिनको व्यञ्जिदियेये पर-नदेव कर मठका चर्च निमाते हैं । ये लोग वधो भी तच्छुनादि सामान्य सिखा बहच नहीं करतें । जन-समाजमें हमकी खर बाक जमी रहतो है । जनता निहङ्गोवे प्रति यथाविधि मन्त्रि और कथान दिहजातो है । निहङ्ग बेश्चरकी कर कन्वु होतो है, तब जनसे वेले जयाव् पनुगत निहङ्ग पिच्छ मठमें हो उनका यव-दाह करते हैं और एक रडकमय वेदि निर्माप कर जयसे खर तुम्हो ह्व रोपते और कई दिन तक चर्ममें बह दिते हैं ।

निहत (च० सि०) १ सिखा हुआ । २ नष्ट । ३ मारा हुआ जो मार जाका गया हो ।

निहतीर-बुद्धयदेयके विजयनोर जिलेकी कामपुर तहसिल-का एक ग्रह । यह अक्षा २८ २०' ७" और देशा० ७८ २३ पूर्वके मन्त्र विजयनोर ग्रहसे १५ मील पूर्वमें अवस्थित है । जनसंख्या लगभग ११०४० है । यहाँ बहुत हन्दर एक प्राचीन मस्जिद है । यहाँको प्राय १३००० २००० है । यहाँ एक सिद्धिक स्कूल तथा बालक और बालिकाशिक्षे सिद्ध पाठशाळाएँ भी हैं ।

निहत्ता (हि० सि०) १ निहत्ते जयमें छोड़े जयियार न हो । २ निहत्ते जयमें कुछ न हो, खाकी जय ।

निहन् (स० पु०) नि-हन्-ञिप्, । जननकारि, मारने वाला ।

निहनन (च० ली०) नि हन-ञुट्, । १ मारन, बध । निहत ईस्को ।

निहन्ता (स० सि०) नि-हन्-ञिप्, । १ जननकर्ता मारने वाला । (पु०) २ मर्यादेन । ये प्रत्यय और जनन करतें हैं, इसीसे हनका नाम निहन्ता पड़ा है ।

निहन्ताय (स० सि०) नि-हन्-ताय । जननवीर्य, मारने वाला ।

निहन्त (स० सि०) निर्दत्ता ईस्को ।

निहन (हि० पु०) यह जमीन जो नदीके पोखे बट जाती है निहन छोड़े हो, गंगाधारा, बहार ।

निहन्ति (स० पु०) १ यह मनुष्य जिनका बह निहाना हो कि मनुष्यका कार्यान्वित ज्ञान होता यसमय है

कीकि मनुष्यको कला हो नहीं है । ऐसे लोग मनुष्य-को कार्यान्वित मत्ता और कम मनुष्योंवे धरात्मक ज्ञानका निरिह करते हैं । २ यह देवका एक इल । यह पक्षी एक सामाजिक दम्ब वा जो प्रचलित वैवाहिक प्रथा तथा रीति रवाज और पैखक धारणका विरोधो या क्षिप्रान पोखे एक रामनेतिव दम्ब हो गया और सामाजिक तथा सामनेतिक निमन्त्रित निहन्तो का भेदक और नायक बन गया । ३ एक दम्बका छोड़े जादमी ।

निहन (स० पु०) नि ह्ने पव, ततो मन्वसारचम् । (छ' बन्धवारणम् । प १।१।०२) पाज्ञान ।

निहारी (हि० स्त्री०) सोनारो और सोहारो का एक योजार । यह पर भी धातुको रम कर इसीकेसे कूटती या पोटी है । यह कोड़का बना हुआ चौबोर होता है और लोथिनी लपटा लपरको और कुछ पथिक कोड़ा होता है । लोथिनी कोरवे निहारीको एक काठके ट कड़े में जोड़ दीति है जिससे यह कूटती या पोटी समय रबर उबर हिलतो क्षोभतो नहीं । यह कोड़ी बड़ी कई पाकार और प्रकारकी होती है ।

निहाका (स० स्त्री०) निहत जहाति भुवमिति नि-हा-स्त्रीकम् । (मोह' । बन् १।३३) १ गोविधा भोज नामक अन्व । २ पड़ियाक ।

निहामी (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारकी बरामो जिनको लोक कई बन्धाकार होती है और जिससे बारीक खुदाई का काम होता है, बराम । २ एक लोकदार योजार जिसमें ठण्को लकीरीके बीचमें मरा हुआ रव सुरक कर लाय बिधा जाता है ।

निहायत (स० सि०) अन्तत, बहुत, पथिक ।

निहार (स० पु०) निहारा छिद्यतो पदार्थां जिन नि ह-अय । १ मोहार, विम, बरख । २ धोष । ३ कुम्भटिका, कुम्भटा, पाका, कुम्भटा ।

रात पचका दिनको ह्वयत्त और साय पारदिके लपरी भाग पर जो अन्तकवाधमृष जमा होती देना जाता है, समीका नाम निहार है । इसको उत्पत्तिके विष्णु - मत नहीं है, मिथं भिन्न निहामी ने मिथं नामित किया है । परिहन्ते ईस्को

पर लिखा है कि, 'यह नोहार एक प्रकारको वृष्टि है। वायुके साथ जो जनीय वाष्प मिलता रहता है उसमें किसी प्रकार उष्ण लगनेसे वह घनीभूत हो कर छोटी छोटी बुन्दोंमें वृष्टिकी तरह नीचे गिरता है।' किसीका कहना है कि, "शोतलताके कारण नोहार नहीं होता, नोहारमे ही शोतलताकी उत्पत्ति होती है।' कोई पदार्थविद्याविदु कहते हैं, कि शैत्य नोहार-उत्पत्तिका एक आगिक कारण होने पर भी, जमीनमे हमेशा जो रस वाष्पकारमें निकलता है, वह भी एक विशेष कारण है।" आधुनिक पण्डितगण इन समस्त मतोंका पोषण न करते हुए कहते हैं कि, 'यह विश्व-संसारस्व समुद्रय वस्तु ही प्रतिक्षणमें तापविकीरण और तापग्रहण कातो है। इनमेंसे रातको तापग्रहणको अपेक्षा तापविकीरणका भाग अधिक है। कारण तेजके आदिभूत सूर्यदेवसे दिवाभागमें सभी वस्तु बहुपरिमाणमें ताप ग्रहण करतो हैं। किन्तु रातको उस प्रकार तापदायक द्रव्यके अभावके कारण द्रव्यमात्र ही तेज ग्रहणको अपेक्षा अधिक परिमाणमें तापविकीरण करता है। इसका फल यह हुआ कि सभी द्रव्य दिवाभागको अपेक्षा रात्रिको अधिक शीतलता प्राप्त करते हैं। अतएव नोहारको उत्पत्तिके विषयमें वर्तमान मत यह है कि, 'सभी द्रव्य सन्ध्याके बादसे अधिक परिमाणमें तापविकीरणपूर्वक शीतलत्वको पाते हैं, इस कारण उसके निकटवर्ती स्थानोंका वायुसंश्लिष्ट जनीय वाष्प शीतल हो जाता है और क्रमशः घनीभूत हो कर निकटस्थ द्रव्यके ऊपर जम जाता है। कारण वायु जितनी हो उष्ण होती है, उतनी ही उसके उत्पादान विश्लिष्ट हो जाते हैं और वाष्पधारणशक्ति उतनी ही प्रबल हो उठती है। किन्तु वायु जितनी शीतलता लाभ करती है, उसके अणु, उतने ही घन सञ्चिष्ट होने लगते हैं। सुतरां वाष्पग्रहणशक्ति उतनी ही कम हो जाती है। यही कारण है कि वायु जब ठंडी हो जाती है, तब अधिक परिमाणमें अपने जनीय वाष्पको उस अवस्थामें धारण नहीं कर सकती और उक्त वाष्प घनीभूत हो कर जलविन्दुरूपमें तबकी पत्तियो, घास, तथा और दूसरे दूसरे द्रव्यों पर जम जाता है। ऊपरमे

गिरते समय उक्त जलकणसमूहका किमो शीतल द्रव्यके माध स्पर्श होनेसे ही वह उममें संलग्न हो जाता है। सञ्चित जलका नाम निहार है।' पूर्वोक्त जलविन्दु सञ्चित न हो कर जब अपेक्षाकृत सूक्ष्मतरंग जलविन्दुके रूपमें प्रवर्तित हो जाता है, तब उसे कुहामः कहते हैं।

आकाशमें जिस दिन घोर घनघटा वा प्रबल वात्या नहीं रहतो उस दिन उतना निहार जमा होते देखा नहीं जाता, सो क्यों? इसके कारणका अनुमान करनेसे पूर्वोक्त मत और भी परिस्पष्ट वा दृढ़ हो सकता है। इसका कारण यह है कि उस दिन अधिक मेघ रहनेसे उसका तेजसमूह विकीर्ण हो कर भूपृष्ठ पर पतित होता है। सुतरां भूपृष्ठसे ताप विकीर्ण होने का प्रतिबन्धक हो जाता है। इसी प्रकार प्रबल वेगसे वायु बहने पर गरम वायुके कारण तापविकीरणकार्य सुन्दररूपसे सम्पन्न नहीं होता। यही कारण है कि उस समय उतने परिमाणमें निहार देखा नहीं जाता। अरिष्टल और किमो किमो दार्शनिकका कहना है कि घोर मेघगूथ और प्रबल वात्याहीन रातको ही केवल निहार देखा जाता है। किन्तु डाक्टर वेल्न इस बातको स्वीकार नहीं करते। प्रबल वात्यासंयुक्त रातको मेघ नहीं रहनेसे शबवा घोर मेघाच्छादित रातको वायुकी गति अधिक नहीं रहनेसे वास प्रभृति द्रव्यके ऊपर जो निहार सञ्चित होता है उसे लहोने अपने आँखोंमें देखा है। किन्तु घोर मेघ और प्रबल वायु-विशिष्ट रातको निहारका जमा होना कभी भी देखनेमें नहीं आता। उक्त डाक्टरके मतसे समय और स्थानके भेदसे उक्त निहारका ध्युनाधिक्य देखा जाता है। वृष्टि होनेके पीछे यथेष्ट निहारसञ्चार देखा जाता है किन्तु दीर्घकाल वृष्टि नहीं होनेसे उस प्रकार निहारसञ्चार नहीं होता। कभी कभी दिनको भी निहार देखा गया है। किसी किसी देशमें दक्षिण वा पश्चिम दिशासे जब वायु बहती है, तब निहार अधिक मात्रामें जमा होता है, किन्तु उत्तर वा पूर्व दिशासे बहनेसे उस प्रकार निहार नहीं देखा जाता। बसन्त और शरत्कालमें जैसा निहारका गिरना सम्भव है, वैसा शोषकालमें जैसा निहारका गिरना सम्भव है, वैसा शोषकालमें नहीं। कारण पूर्वोक्त दोनों समयमें दिन और

रातकी बाहुके तापका न्यूनान्तरिक संयोजन का लक्ष्यी प्रपिचा पश्चिम है। जिस दिन पहले पञ्चमल कुशासा भावा रहता है उससे पूर्व रात्रिको निहार यंत्र परिमाणमें सञ्चित देखा जाता है। इसका धोर धीत कस्तु हो इसकोने के दिग्में निहारपातका लयकृत समय है। इस समय रातको मोहादि रङ्गनेसे निहार बहुत कम जमा होता है। किन्तु परवर्ती दिनमें उक्त निहार कुशायेके रूपमें परिचल हो जाता है।

विर यदि वाक्याय निर्मम धोर बाहु विर रङ्ग, तो मन्त्ररात्रिको धोर सूर्योदयसे पहले निहार पश्चिम भागमें सञ्चित देखा जाता है।

जिन सब द्रव्योंके ऊपर निहारसञ्चार होता है, उनका तथा तत्रिषट्क ज्ञानोका लक्ष्य मोहार-सञ्चार मुख्य ताप (Dewpoint) को जसो नहीं होनेसे उन सब द्रव्योंके ऊपर मोहार सञ्चार नहीं होता। एक ही समय बाहुको एक ही पञ्चमलमें मिश्र मिश्र कस्तुवा पर प्रत्यक्ष परिमाणमें मोहार सञ्चिन कृपा करता है। धातु द्रव्योंके ऊपर पञ्चमल अल्पपरिमाणमें मोहार जमा होता है, किन्तु चास, क्षपक, पङ्क, कागज मृत् त्रय धोर पञ्चमलके ऊपर निहार प्रचुर परिमाणमें सञ्चित होता है। जितनो बाहु है सभो बहुत कम तापविशोरेष करती है, यद्यो काश्च है कि चास, क्षपक इत्यादि तापविशोरेष-प्रक्रियामध्य बहुधाके ऊपर प्रपिचाङ्गत पश्चिम परिमाणमें मोहार-सञ्चार होता है। विर को सब मलु धा बाय के साथ माबात् प्रत्यक्षमें विद्यमान है, उनसे ऊपर जैसा निहार जमा होता है, वैसा धोर जिनो पदार्थके ऊपर जमा नहीं होता। समान तोलके दो गुच्छे पयमको से कर समझे एक गुच्छेको जिनो तन्मेंसे ऊपर धोर दूसरे गुच्छेको तन्मेंसे न्येधे रखो तथा इसो पञ्चमलमें धुने ज्ञानमें रातका झोड़ दो। सवेरा होने पर दोनो गुच्छेकी तोलमें अन्तर पङ्क प्रायगा। तन्मेंसे ऊपर जो पयम है, उसका पाकायके साथ डोब सम्मन्ध हीमिके कारण सब पर लीचेकी प्रपिचा पश्चिम परिमाणमें निहार जमा मया है।

दिशामागमें मोहार सञ्चारके सम्बन्धमें विष्टर ज्ञानर का कहना है कि 'द्रव्योंके रात्रि पञ्चमल दिशा जसो पयम

धोर वाक्यायकी जसो पञ्चमलकोमें तापविशोरेषप्रक्रिया लम्बक होती है। साधारणता सूर्य जल दृष्टिपरिच्छेदक ज्ञानके ऊपर पञ्चमल करता है, तब द्रव्योंको तापविशोरेष रण धोर तापपञ्चमल समान रहती है। जिन सब ज्ञानो वा सूर्यको विरष सम्बन्धमें नहीं गिरता, वे सब ज्ञान सूर्य धोर पञ्चमल पदार्थमें जो ताप पञ्चमल करती, समय समय उससे पश्चिम तापविशोरेष करती है; यही कारण उन सब ज्ञानो पर सादा दिन निहार जमा होता रहता है।' काष्ठीर जोषिके कि पुष्करिणि निशा है, कि निषानके पूर्व मागमें कहीं कहीं सूर्यके १० बजेसे पहले धोर तोलसे पहले १ बजेसे बाद सूर्यका मुक्त प्पष्ट देखा नहीं जाता। इन सब ज्ञानोमें जतना पश्चिम ताप विशोरेष होता है तिन जहाँ निहार जसिया गिरती देखा जाता है।

निहारिका (Nebulae) (स० ज्यो०) वाक्यायक एक प्रकारका सौषालोच-निमित्त पदार्थ, एक प्रकारका वाक्यायका पदार्थ जो दृष्टिमें छुँचने र गके धमकी तरफ होता है। इनको निर्दिष्ट वाङ्मति नहीं है। दूरकोपक्ष पञ्च द्वारा देखनेसे यह मेष (निहार)को वाङ्मति जो मान्यम पड़ती है, इनसे इसका नाम निहारिका पड़ा है।

इसीमेंसे विष्णुविज्ञान प्रत्यक्ष निहारिकाका जो विषय है उसे देखनेसे सामान्यरूपमें ज्ञान हो जाता है। दूर शोधको सहायतासे देखा जाता है कि पञ्चमल जोटे जोटे पक्ष पक्ष लक्ष्यमण्डलको समष्टि हो निहारिका है। १६१३ ई०में विनसन मैरियसने एक निहारिकाका पानिन्धार किया था। पृथिविज्ञान निहारिकासम्बन्धे विनकुल प्रथम है।

१६१८ ई०में सोस ज्योतिष'ता विनाट्जने डोब उनो प्रथम एक पदार्थका परिचय लक्ष्यमण्डलके मध्य पानिन्धार किया। चाइल्लेनस साउथने १६५१ ई०में इनका विषय प्रकाशित किया, किन्तु पहले पहले ही इसका पानिन्धार हो चुका था उसे ही नहीं जानते थे, इस कारण वे धाकादके पक्षो हो बैठे। निहारिकाका निष्कर्षकर्त्ता ज्ञान धार तमकाप्यव है, इन कारण उक्तमें समझ कि वाक्यायके मध्य जो कर क्षमैका

ज्योतिर्मय राज्य उनकी निगाह पर पडा है।

१८वीं शताब्दीके मध्यभागमें केवल मात्र २०२१ निहारिका देखी गई थीं। १७५५ ई०में फरासो ज्योतिर्विद लुकेली (Lucaelli)ने इसके सिवा और भी ४२ निहारिकाओंका विवरण प्रकाशित किया। उन्होंने इस निहारिकाकी तीन श्रेणियोंमें विभक्त किया।

१म श्रेणी,—दूरबीक्षण द्वारा देखनेसे ये सब प्रकृत निहारिकाके रूपमें देखी जाती हैं, अर्थात् कोई निर्दिष्ट आकार देखनेमें नहीं आता; २य श्रेणीकी नक्षत्रमें रख सकते हैं और ३य श्रेणी निहारिकापदार्थपरिवर्धित नक्षत्र है। एक दूसरे फरासो परिणतने १०३में अधिक निहारिकाओंका आविष्कार किया।

इसके बाद हार्सलने निहारिकाका वर्तमान विवरण प्रकाशित किया। १७८६ ई०में उन्होंने रायल सोसाइटीमें हजार निहारिकाओंकी एक तालिका दी। १७८८ ई०में उन्होंने एक हजार और निहारिकाको तथा १८०२ ई०में पांच सौकी एक दूसरी तालिका प्रदान की। आखिरी बारमें उन्होंने नक्षत्रमण्डलके पदार्थोंको बारह भागोंमें श्रेणीबद्ध किया। यथा,—

१। अनन्यसंयुक्त तारका (Insulated stars)।

२। युग्म-तारका (Binary stars) अर्थात् दो नक्षत्र एकत्र हो कर साधारण भारकेन्द्रके चारों ओर घूमते हैं।

३। त्रय वा ततोधिक तारका (Triple or multiple)।

४। गुच्छवद् तारका वा छाया-पथ (Milky way)।

५। नक्षत्रपुञ्ज।

६। नक्षत्र-गुच्छ (Clusters of stars)। इसमें और ४थी श्रेणीमें विभेद यही है कि इसकी शक्ति गोलाकार और केन्द्रकी ओर क्रमशः घनोभूत होती है।

७। निहारिका।

८। नाक्षत्रिक निहारिका (Stellar Nebulae)। उसके सामने ये सब प्रतीव दूरदर्शी नक्षत्र-श्रेणीके समान देखे जाते हैं।

९। शुभ्र निहारिका (Milky Nebulosity)—इस श्रेणीमें तारामाला निहारिकाको सद्य और शुभ्र निहारिका एकत्र देखी जाती है।

१०। निहारक-नक्षत्र (Nebulous stars) नैहारिक वायुसे परिवर्धित।

११। गृहमन्वन्धोभूत निहारिका (Planetary Nebulae), इस श्रेणीकी निहारिका ग्रहगणकी तरह सम्पूर्ण गोलाकार, किन्तु क्षीण आनोक-विशिष्ट होते हैं।

१२। केन्द्रविशिष्टग्रह-निहारिका (Planetary nebulae with centres) श्रेणीके दृश्य देखनेसे सहजमें बोध होता है कि निहारिका दिनों दिन उज्ज्वल विन्दुमें क्रमशः घनोभूत होती है।

१८११ ई०में उन्होंने रायल सोसाइटीमें निहारिकाकी तारकाकृतिप्राप्तिके सम्बन्धमें एक प्रबन्ध लिख भेजा जिसका सारांश इस प्रकार है,—निहारिका आकाशमण्डलमें विच्छिन्न अवस्थामें रहते हैं। इनके छोटे छोटे पंश परस्पर आकर्षणवशतः एकत्र हो कर पदार्थमें परिणत होनेकी चेष्टा करते हैं और क्रमशः एकत्र हो कर कठिन पदार्थमें परिणत हो गये हैं।

१८३३ ई०में छोटे हार्सलने उत्तर ख-मण्डलकी निहारिकाका अच्छी तरह पर्यवेक्षण कर उसका विवरण प्रकाशित किया। उस विवरणमें २३०६ निहारिकाओंकी कथा लिखी है, उनमेंसे ५०० का उन्होंने स्वयं आविष्कार किया। इसी प्रकार और भी कितने साहस इस विषयमें अनेक विवरण प्रकाशित कर गये हैं।

काण्ट (Kant) और लाप्लास (Laplace)का मत है कि ब्रह्माण्डके सभी पदार्थ किसी एक समय वायु-बोय निहारिकावस्थामें थे। उस समय इनका ताप अत्यन्त अधिक था। पीछे क्रमागत ठण्डा होने से वे किसी निर्दिष्ट केन्द्रका स्थिर कर उसके चारों ओर घनीभूत होने लगे। अनन्तर उनकी गतिका आरम्भ हुआ। इस प्रकार हम लोगोके सौरमण्डलको सृष्टि हुई।

हम लोग केवल इसी विश्वजगत्के अस्तित्वसे अवगत है, इस प्रकार और भी अनेक विश्व हो सकते हैं, इसमें विन्दुमात्र भी सन्देह नहीं।

सम्प्रति ज्योतिर्विदोंका कहना है, कि जितने पदार्थ हैं, वे सभी पहले विच्छिन्नावस्थामें असंख्य उल्कापस्तर (Meteorites) रूपमें वर्तमान थे। उस समय उनका उत्साप उतना अधिक न था। परस्पर संघर्षण और

प्राक्कालीन निहारिकाओं को सहीपन-इति हुई। सही-
पन-इति होनेसे उत्पन्नप्रारण्यका सधर्षक बहुत
आदा हुआ जाता है, इस कारण निहारिकासे अमग
जगत होने मयी है। तापको दिना दिन इति होनेसे
उत्पन्नता या कर नचनरूपमें परिचय होनेो है। निहा-
रिकासे नचन होनेके बाद प्रकृतिसे नियमानुसार ये ताप
बिबीरक करती है और तापबिबीरक होनेसे अमग
परिचालन मीतक होने लगती है, किन्तु नचनरूपमें परि-
चय होने पर भी, धनीकरकण्य उत्पाय विद्युत्परिमात्र
में बहुत लगता है। यह उत्पाय जिस परिमाणमें बढ़ता है
उससे अधिक बिबीरक अन्य उत्पाय निवृत्तता है। प्रत्यक्ष
इसका फल यह होता है, कि यः नचन मीतक हो कर
पहलूपमें परिचय हो जाता है। पहले साध नचन
का ज्ञेय सम्बन्ध है नचनके साध मी निहारिका कोक
केसा हो सम्बन्ध है पर्याप्त नचन उठा ही कर पाव हो
जाता है।

निहाडवा (टि० पु०) बरहमा देवी।
निहाड (फा० बि०) को सब प्रकारसे स तुष्ट और प्रसन्न
हो गया हो, पूर्ण काम।
निहाल—विद्युत्के एक कवि। जे नचनक जिनके निवोडा
पामके निहालो तथा आतिके आश्रय है। इनका जन्म
स० १८२०में हुआ था। इनका कविताकाल स०
१८५० तक जाता है।

निहाल—बहारके अन्तर्गत मिकलाटके आदिमवासी। इन
लोगोंने अमताहोन हो कर बरारके कोडुं पोंका दाखल
कोकार किया। इनकी आदिम मातृभाषा कोप हो गई
है। प्राकृतिक निहालगाव कोडुंभाषाका अनुकरण करती
है। कोडुं पोंके प्राय निहालो भी सम्मोति है। किन्तु
ये लोग कोडुं पोंको मोक्ष सम्मर्त हैं उनके प्राय प्राय
पान नहीं करती, यहाँ तक कि उनके साध बैठने तक
भी नहीं। पूर्ण सम्मर्त के लोग मावो को नुराया करती
ये अभी कितो बारीमें लग गए हैं। ये लोग बड़े पाननो
और निष्कर्ष होते हैं।

निहाल पौ—धर्मोभाके राजबरेको विमानके अन्तर्गत
अन्नपरर का तातुबके १३ मील उत्तर-पश्चिममें निहाल-
मड़ नामक एक ग्राम है जहाँ महीका दुग प्राय मी

दिवसमें जाता है। १०१३ ई०में निहाल का नामक एक
बाजिनै उध दुनको बनबाया।

निहालगाव—निहालका देवी।

निहालनरु चक्रवाक्य—धर्मोभाके सुमतामपुर जिलेका
एक ग्राम। यह सुमतामपुरसे ३५ मील पश्चिम उत्तरक
कामिके रास्ते पर अवस्थित है।

निहालवा (फा० पु०) छोटी तोमक वा गहो को प्राय
बयो के मीके बिहाई जाती है।

निहालकोचन (फा० पु०) यह चोड़ा जिनको पवाल
दो भागोंमें बटो हो, पाचो दहिना ओर पाचो बाई
पौर।

निहालसिंह—पद्मावतीशरीर कब्रित्तुसिंहके पीठ और
महाराज कब्रित्तुसिंहके पुत्र। इनको माताका
नाम चांदकुमारो का। १८३३ ई०में जे पयने
धेनापति मंगपुराको और कोटको माध जे पिदावर
प्रदेग औमनेके लिए पयनर हुए। इसी सालके मई मास-
में इन्हीं पिदावर नगर और दुमको पयने कर्जमें कर
गिया। पीछे देराउरमाइल जाके शासनकला शाह
नवाज काको परामु और राज्यक त बिदा तथा परक
राज काके तोलतुन हीन किया। १८३० ई०में इनके
बिवाहके उपसममें महाराज रकब्रित्तुसिंहने देवी
राजापी और प नरेको लेनापति तथा बहुतके सोमोको
निमन्त्रण किया था। १८३६ ई०में तीन मास राज्य
करनेके बाद कब्रित्तुसिंह जब राज्यकडे किये गए तत्र
प्राय १८ वर्षकी अवस्थामें राजवहो पर बैठे।

साहसिकता, निश्चयता और दूरदर्शिताके बलके
निहालसिंहने पद्मावतीके निवासन पर सिद्धा क्रमाया।
प नरेक आतिके अवर इनको विजय तबहा न हो। उनके
प्राय दूध करनेकी कामगति कई बार इन्हींमें मीना
इकी बी बो, किन्तु यहविवाहके कारण एक बार भी
इनका धर्मोड धर्मोमूल न हुआ। मन्दीके राजाके
विश्व मुहयाथा करके इन्हींके लक्ष्य परामु बिदा और
अमासमद दुर्ग पर अधिकार क्रमाया। १८३० ई०में
पिगाके मरने पर जब ये इनको दाहकिया करके सोट
रहिं के तत्र मोज राजद्वार पर पदुनके प्राय इनके
अपर गुग्गन गिर पड़ा और ये पचलकी माध हुए।

म्राञ्चण पण्डित, वाधा, फकीर आदि पर इनका यथेष्ट विश्वास था। म्राञ्चणको छोड़ कर और किसीकी सलाह से म्राह्य नहीं करते थे।

निहालसिंह—अज्ञवानिया सिस्लेके सरदार फर्तसिंहके ज्येष्ठ पुत्र। १८३७ ई०में पिताकी मृत्युके बाद ये राजसिंहासन पर बैठे। इस समय कुछ गोंडि इनको हत्या करनेके लिए राजप्रासादमें छिप रहे और सुयोग पा कर गुप्तभावसे इन पर टूट पड़े, किन्तु वे इनका एक वाल भी बाँका कर न सके। १८३८ ई०में जब लार्ड आकलैण्ड पञ्जाब हो कर काबुल जा रहे थे, तब इन्होंने खात्यादि द्वारा अंगरेजी सेनाको यथेष्ट सहायता को थी। काबुल्युद्धमें इन्होंने दो दल सेना भेजी थी। १८४५ ई०में प्रथम सिख-युद्धके समय इनके चरित्र पर अंगरेजोंको मन्टेह हो गया। क्योंकि इस समय इन्होंने रसद आदि दे कर उनकी सहायता न की। इस अपराधमें गनहुँके दक्षिणम्य वार्षिक ५६५०००) रु०को जो सम्पत्ति थी उसे अहमरेज गवर्नरने छोन लिया। २य सिखयुद्धमें इन्होंने तन मन धनमे अहमरेजोंको सहायता पहुंचाई। इस प्रत्युपकारमें इन्हें 'राजा'को उपाधि मिली थी। १८५२ ई०में ये धराधामको छोड़ परलोकको सिधारे।

मरते समय ये अपना सारा राज्य बड़े लड़के रणवीरसिंहको और विक्रमसिंह तथा सुचेतसिंह नामक ग्रेप दो लड़केको एक एक लाख रुपयेकी जागीर दे गए।
निहाली (फा० स्त्री०) १ तोशक, गद्दी। २ निहाई।
निहाव (हि० पु०) लोहेका घन।
निहिसग (सं० स्त्री०) नि-हिन्स भावे व्युत्। मारण, बध।
निहित (सं० वि०) निघा-क्त, घा स्थाने हि। 'दघातेहिः। पा ७।४।४२) १ आहित, बैठायी हुआ। २ स्थापित, रखा हुआ। ३ निहित, फेंका हुआ।
निहीन (सं० वि०) नितरां हीनः। नीच, पामर।
निहुंकना (हि० क्ति०) झुकना।
निहुड़ना (हि० क्ति०) निहुरना देखो।
निहुरना (हि० क्ति०) झुकना, नचना।
निहुराना (हि० क्ति०) झुकाना, नचाना।

निहोरना (हि० क्ति०) १ प्रार्थना करना, विनय करना। २ कृतज्ञ होना, एहसान लेना। ३ मनाना, मनौतो करना।

निहोरा (हि० पु०) १ पतुयह, एहसान, उपकार। २ आयम, आधाग, भरोसा, आसरा। ३ प्रार्थना, विनतो। (क्ति० वि०) ४ निहोरसे, कारणसे, बढोमत। ५ के किये, वास्ते।

निहव (सं० पु०) निह्वयते सचवाक्यमनेनेति नि-ह्व अप. (ऋ०-२प. पा ३।१।६७) १ अपलाप, असोकार करना। पर्याय-निह्वति, अपह्वति, अपह्वव। २ निह्वति, भर्खना, तिरस्कार। ३ अविश्वास। ४ गुप्त, गोपन, छिपाव। ५ शहि, पवित्रता। ६ एक प्रकारका साम।

निह्वान (सं० स्त्री०) नि-ह्व-ल्युट्। निह्वव।

निह्वसि (सं० स्त्री०) नि-ह्व-क्तिन्। निह्वव।

निह्वुत (सं० वि०) छिपाया हुआ।

निह्वुति (सं० स्त्री०) गोपन, छिपाव, दुराव।

निह्वुट (सं० पु०) नि-ह्व-घञ्। शब्द, ध्वनि।

नो (सं० वि०) नयति नो-कर्त्तरि क्तिप्। प्रापक।

नींद (हि० स्त्री०) १ निद्रा, स्वप्न, सोनेको अवस्था।

निद्रा देखो।

नोक (सं० पु०) नोयते इति नो प्रापणे कन् (अजिषुधु-नीभ्यो दीर्घश्च। उण् ३।४७) त्वच्चविशेष, एक पेड़का नाम।

नोक (हि० पु०) उत्तमता, अच्छापन, अच्छाई।

नोकपिन् (सं० वि०) प्रसारणयुक्त।

नोका (हि० वि०) उत्तम, अच्छा, बढ़िया, भला।

नोकार (सं० पु०) नि-ह्व-घञि घञ् वाहुलकात् दीर्घः।

(उपसर्गस्य घञ्य मनुष्ये बहुलम्। पा ६।३।१२२) न्यकार, मर्खना, तिरस्कार।

नोकाश (सं० वि०) नितरां कायते इति नि-काश-घच् ततो उपसर्गस्य दीर्घः। (इकः काशे। पा ६।३।१२२)

१ तुल्य, समान। (पु०) २ निश्चय।

नोकुलक (सं० पु०) प्रवरभेद।

नोके (हि० क्ति०-वि०) अच्छी तरह, भली भांति।

नोचण (सं० स्त्री०) नोच्यतेनेन नि-ईच करणे व्युत्।

पाकादि परीक्षासाधन काष्ठभेद।

मीचो (व० पु०) वचनो । मियो देखो ।
 मीच (ल० लि०) निहडामो कळो मोमां बिनोतोति
 बिठ । १ जाति मुख मीर कार्हादि हाय निहड, लुट,
 तुच्छ पचम झेठा । स रूत पर्याय—विचव, पामर
 माळन, पृथग्जन, मिडीन, चपसट, जावन, लुजक,
 पतट, पपयट, सुट, सुच मितक, सुचक । मीचीची
 स गति करमा चवटा पचमोय है । २ वतुच, जो
 खंवाण हो । पर्याय—बामन, म्बक, खब, उख । ३
 निम्ब, मीचो । (पु०) ४ चोरक नामक म्बकृष्ण । ५
 महादिका खानभेट ।

त्रिस पचको ओ रायि उचखान जोतो है, उच
 चडके उच उच खानके मचनमें ओ रायि सातमें खानमें
 पडतो है, वड खान उच पचका मीच खान होना ।
 चर्चायको ओ सो गचना है, मीचापको मी टोच उचो
 तरड है । वमा—रबिका उचखान मेष है चोर मीचका
 चर्चाय वय है । पतएव मोचाम मो दय होमा । मीचाम
 के मिय पमको वृमीचाम चडत है । इस खानमें
 जो पडमव १४दि है, से नितान्त दुर्बल होति है । रचो
 प्रकार पच रायिसे मोचाम चोर सुमीचामको गचना
 करके पडोका मसानस देखना होता है ।

पच उच मीच खानमिसे निदे मीचे एक तातिका
 दी गई है ।

पचडा उच मीच	उर्चायका	मीचाम-मीमका
नाम रायि	रायि	मोयखाल काच ।
१दि मेष	तुका	१० दिन
१दि मेष	इचिक	११।३० पच
मणल मकर	खळंड	३२ दिन
तुच	खन्दा मोन	८ दिन
मुच	खळंड मकर	२ मास
इक मीन	वमा २३दि०।१२पक	२३दि०।१२पक
मनि	तुका मेष	२० मास
रावु	मिचुन वतु	१२ मास
केतु	वतु मिचुन	१२ मास

रचो प्रकार मीच रायि खानमी चडिय । रायिसे
 मोचकित होमिसे म्बकास होता है । (कल्पितोपिच)
 ६ चड मनुच मीच मनुच, चोका चारमो । ०

खमचकाचमें बिनी चडके भ्रमवडुताका वड खान जो
 वृमीसे चविच दूर हो । ८ इमारत देमके एक एव तथा
 नाम ।

मोचव (ल० लि०) मोच एव जापि वतु । बामन
 २५. गाटा ।

मोचकाः (व० पु०) मीचः वडको परमात् । १
 मणोट मुचो । २ महासानचिका ।

मीचवमाई (वि० खो०) १ लिप्य व्यवधाय, तुच्छ काम,
 चोट्य काम । २ वड वन जो सुर कामीसे चर्चाज
 बिच गया हो ।

मोचका (व० खो०) निहडामो मोमां चकति प्रतिवृत्ति,
 चक प्रतिवृत्ति चव-टाप । वतमा मो, पचको गाय ।
 मीचको (व० पु०) निहडामो मोमां चकति चक प्रति-
 वृत्ति बाहुककाटु रनि । १ वच, खेड । २ लपरो माग ।
 ३ निहडे पाप पचको पावे वी ।

मोचकुलिय (ल० खी०) मीखान रज ।

मोचकेड (ल० पम्ब०) मीचे व, एववतएव टैः प्राय
 वच (मन्व्य वरंमागमवचरः) । पा १।१।०१ । १
 मोचे व, सुट । २ पच । ३ पचम । ४ मीच । ५ मच ।
 ६ पचम । ७ खब ।

मीचम (ल० खी०) मीच निहडेय गच्छमीति मन्-ड ।
 १ निम्बनामित्रस मीचेकी चोर जानेवाका पामो । २
 पलितोपिचके वतुवार वड पच जो चपनि उच खान-
 के सातमें पडा हो । (लि०) ३ निम्बनामो, मीचे जानि
 वाका । ४ पामर, चोका । खिर्पा टाप । ५ मीचवर्च
 मामिमी खी, मीचके साच मसन करनेवाको खी ।

मोचमा (ल० खो०) मीचग-टाप । १ निम्बना मदी ।
 २ मीचवर्च गामिमी खी, मोचके साच मसन करनेवाकी
 खी ।

मोचमामो (वि० दि०) १ मीचे जानेवाका । २ चोका ।
 (पु०) ३ वच, पामी ।

मोचयड (ल० खो०) वड खान जो बिनी पडके उच
 खान वा रायिसे गिनतीमें खानवा पडे ।

मीचता (ल० खी०) मीचएव भाव, मोच-तत् । १
 मीचल, मीच खोमिका भाव । २ चवमता, चोटार्क,
 खमीचापन ।

नीचत्व (सं० पु०) नीचता । नीचत्व ।
 नीचमोज्य (सं० पु०) नीचमोज्यः । १ पनाण्डुः प्याज (त्रि०) २ नीचमोज्यमात्र, शखाद्य ।
 नीचयोनिन् (सं० त्रि०) नीचा योनिरस्यस्येः श्लेषादित्वात् इति । नीच-जातियुक्त ।
 नीचवक्ष (सं० पु०-क्ली०) नीचमनुक्लृष्टः वक्ष्यम् । वक्रान्त मणि ।
 नीचार् (हिं० वि०) १ शिष्यके तनसेः उसके आमपामका तल जं चा हो; जो कुछ उतार या महराई पर हो । २ जो ऊपरकी ओर दूर तक न गया हो । ३ जो उसम ओर मध्यम कोटिका न हो, छोटी या श्लोका । ४ जो तोत्र न हो, मध्यम, घोषा । ५ जो ऊपरकी ओर पूरा उठा न हो, झुका हुआ । ६ जो ऊपरसे जमीनकी ओर दूर तक आया हो; अधिक ऊटका हुआ ।
 नीचात् (सं० अव्य०) तिक्ततामैः चिनोति वाहुनकात् ङात् । नीच, सुट्ट ।
 नीचामेद्र (सं० त्रि०) अधोमुण्डलिङ्ग ।
 नीचायक (सं० त्रि०) नितरां निचयेनैवा चिनोति निचि-गुम् । नितान्त चायक, बहुत-चाहनेवाला ।
 नीचावयस (सं० त्रि०) न्यग-भावप्राप्तः ।
 नीचाशय (सं० त्रि०) नीच आशयः यस्ये । सुद्रचेता, तुच्छ-विचारका, मोटा ।
 नीचिकी (सं० स्त्री०) नीचिकी, अच्छी गाय ।
 नीचीन (सं० त्रि०) न्यसेक-स्वार्थे खं अश्नते नं श्लोपात् श्लोपे पूर्वाणो ङोः । न्यग-भूत, अधोमुख ।
 नीचू (हिं० वि०) जो टपकता-न हो; जो न चुए ।
 नीच्रे (हिं० क्लि०-वि०) १ अधोभागमें; नीचेकी ओर, ऊपरका उलटा । २ अधोनामै, मातृहंतोमै । ३ न्यून, घट कर, कम ।
 नीच्रे गति (सं० स्त्री०) नीचे गति । १ समदगमन । २ निम्नगति ।
 नीचे स (सं० अव्य०) निचि-कं, नीचैर्षि संधं । (नै-धीपरच । षण् ५।१३) १ नीचे । २ खैर । ३ असे । ४ अधोमुख ।
 नीचोक्षमास-चन्द्रमा २०-दिन ३३ दण्ड १६ ५६ पलमें एक-वार-पृथ्वीके चारों ओर घूम आता है । इतने समयके मध्य चन्द्रकेन्द्रका एक बार परिभ्रमण सम्पन्न होता है ।

अंगरेजी ख्योतिषमें इसे Anomalistic month कहते हैं । 'नीच' (perigee) शब्दका अर्थ है पृथ्वी और चन्द्रका गमनकालीन सर्वाधिक निकटवर्ती स्थान और 'उच्च' (apogee) शब्दका अर्थ पृथ्वी और चन्द्रका सर्वाधिक दूरवर्ती स्थान । यतएव नीचोक्षमासमें उतने समयका बोध होता है जितनेमें चन्द्र 'नीच' और 'उच्च' में गमन कर-पुनः उसी स्थान पर लौट आता है ।
 त्रिविणन्द देवो ।
 नीचोच्चवृत्त (सं० क्लि०) वृत्तभेद, यह वृत्त जिसका केन्द्र किसी एक वृहत् वृत्तके मध्य भ्रमण करता है । (Epicyclo)
 नीचोपगत (सं० त्रि०) जो खगोलके निम्नभागमें अवस्थित हो ।
 नीच (सं० त्रि०) नीच भवः न्यून-यत्, नलोपाक्षीयो पूर्वाणो दीर्घः । निम्नभव, जो नीचे हो ।
 नीज (हिं० पु०) रस्मी ।
 नीजू (हिं० स्त्री०) रस्मी, पानी भरनेकी डोरी ।
 नीठ (हिं० क्लि०-वि०) नीठि देखो ।
 नीठि (हिं० स्त्री०) १ अरवि, अनिच्छा । (क्लि०-वि०) १ उर्वो त्वो करके, किसी न किसी प्रकार । ३ कठिनता-से, सुशकिलसे ।
 नीठो (हिं० वि०) अनिष्ट, अप्रिय, न सुहानेवाला, न मानेवाला ।
 नीड (सं० पु०-क्ली०) नितरां ईडयते स्तुयते सुदृश्यत्वात् नि ईड-घञ् । १ पश्चिमासस्थान, चिड़ियोंके रहनेका घोंसला । इसका पर्याय कुलाय है ।
 जिस जातिकी चिड़िया जिस-जिस ऋतुमें गर्भोत्पादन करती है ठीक-उसी समय वे अपने अपने घोंसले बनानेकी फिक्रमें रहती हैं । इस घोंसलेकी वे अकसर हचकी जंजी हाथियों पर हो बनाते हैं । जब गर्भिणी चिड़ियाका डिम्बप्रसवकाल नजदीक आ जाता है, तब नर और मादा दोनों इधर उधरसे खर, पंचे, घास फूस अपनी चीचमें उठा लाते और किसी हचके उच्चतम शिखर पर घोंसला बनाते हैं । यह घोंसला इस प्रकार बना होता है कि उसके बाहरी भाग पर हाथ रखनेसे कांटा चुभनेके जैसा मालम पड़ता है, लेकिन जहाँ

भादा बंधा पारती है वह स्थान परसे अपना एक बाहरकी अपने बा बाहना पोर कोमल होता है। नीच, कोबे पादिसे जो ससे भी ठीक रहो तरफ होत है। बहुत-सी ऐसे चिड़ियां हैं जो पुरानो दोबारको डरासे बौचका बनाती हैं। कंठजोड़ना नामका पक्षी हथके कोटरमें जो पका बनाना पसन्द करता है। यह पालित कुङ्कुट, बराब सब तर पादि पक्षी अपने अपने निदिष्ट जगहमें घर, घास पोर नित्र संसख बेगसे नोड़ बनासे हैं। बदा नामक पक्षीका जो सखा बड़ा जो पक्षुवा होता है। यह जो सखा बाहरसे देखनेमें सखी सुरसे के सा बनता है। इससे मोतरका प्रियपत्र पोर आवास जग बड़ी कारोगरोसे बना होता है। खरते हैं, कि बदा पक्षी अपने जो सखमें लुगनू रख कर लगे से बीएका काम सेते है। प्रति डिय प्राची सममादि पक्षियों कोमल परसे अपना प्रोसखा ऐसे कोमलमें बनाता है कि लसे देख कर पाचयित होना पड़ता है। यह अपना बौचका भयव्यहसे बोमबरतीमें सटा कर बनाता है। मोतरो नाम पोर लमी पक्षियों को जो सखो-से सुभायम होता है। बादुर कहां जो बना बनाता है, कोड़े नहीं जानता। यह सबकर भयव्यहदि वा निर्जन व्यहादिसे बोमबरतीमें पचवा किसी ठककी छासोमें दिनको बटका रहता है। काकातुषा पादि पाच तोय पक्षी पक्षीको डरारमें पोर हलके ऊपर जो ससे बनाते हैं। मधुहादि पक्षियक पक्षी पर पचवा जमोमें मधु बना कर रहते हैं। पक्षुशिया पोर लघके निचटबसो बोरों में जिमियाल होपुत्रमें पोर कोबे योहापसे उत्तर पक्षिममें एक जालिके चिड़िया रहती है की धने बहलमें मरी वा नामके नीचे बड़ा बना कर पका पारती है। भारतीय मकुमि कातोय पक्षी पादिसे नोड़ देखनेमें बटब लयते है, सेबिन मोतरका भाग कुका यम रहता है। पक्षु दिनेसे समय से पुरातन हिब बरन-की का कर लसे पोर भी सुभायम बना सेते हैं। जमो नीयके में बटसे मनुष्यसे घरसे बाब, परिलेख परमादि पचवा छोटे छोटे पोको को पतियां भी दिना करते हैं। इस नोड़का आन साधारणतः २५ १ फुट पोर लम्बाई १० २० २५ तक होमी है। पक्षिकामे लड़पकी पहाड़

के ऊपर पोर जो पालित है वे लखेभूमि पर पक्षु-प्रसन्न पु के समय व पादिसे बसा नोड़ बनाते हैं। भारतसमुद्रके सुमात्रा, बोबिंजा पोर चीनदेशके समुद्र-उपजुलमें एके प्रकारकी पक्षीबीम (Swallow) चिड़िया रहती है। यह पक्षीकी छद्ममें अपने सुखकी राखसे भी नोड़ बनाती है वह लोन पोर युरोप पाक्षीका बड़ा ही उपादेय खाद्य है। यह सुखनि-उत्त रान समुद्र उपजुल जात किसी पदाय में प्राप्त होती है। शिम्बर बाहब अनुमान करते हैं कि यह रास समुद्र-सीट की ममादिकी बनी होती है। विश्वामिन्दु रमर बडे एक प्रकारको मखलीसे पक्षु बं मसुद्र-उपजुलमें सुद्र जातीय मखलीको सहायतासे गठित बनतासे है। उसको प्राकृतिक संमिगक-को कहते हैं। यह नोड़ प्रकृत पचका में उक्त पक्षीकी चिड़ियोंके मल पोर परसे प्राप्त रहता है। यह सहायको लोय पक्षी नामसे नोड़ संघ कर लके मल पोर पर जो जाते हैं इस समय बंध नोड़ देखने में ठीक संघट मसुद्र-सीट की बनी जगता है। यह पक्षी उपादेय होता है कि युरोप पोर चीनकी भी लसे सुख पर मोहित हो कर लखे मिरबा बनाते पोर बड़ी लखे से जाते हैं। यह मसुद्र-सीट के सा पदाय विविध नोड़िया २ रूपसे लखेसे चिपावेसे विबता है पोर बंधन जमो मनुष्य लसे खरोदते है। चीनवासियोंका विश्वास है कि नोड़ पानसे शरीर सब दो हुवासे भर्वा बना रहता है। इस कारण से प्रति वर्ष कई हजार मनुष्य नोड़ संघट कर रहते हैं। यह नोड़ पक्षुपरको पक्षुपरको होता है एक खेतपक्षीका नोड़ पोर सुखर कायपक्षीका। जमो बच विविध नोड़ पक्षिक मोसमें विबता है, में लखे पोके बंधन संघट नोड़ पावे जाते है। लखेपक्षीका नोड़ सबहोपकी राखकी भी बटेमिबा बननेमें विबता है जहां लखे गला कर उमदा युरोप (पाटेके जो भा पदाय) में बोर करते हैं। किसी विषयोंका कहनेमें है कि इस जाले नोड़को कुछ कोस तक गरम जलमें डुबीसे लखेसे लखे रग लखेमें पनट पाना है। पक्षुतमकरसे, मज यह नोड़ पक्षिक संख्यामें पाया जाता है।

२ बंधन वा ठहरनेका काम। ३ रक्षियोंका पक्षिकाम

स्नान, रथके भीतर बड़े स्थान जिनमें रथी बैठता है।

“य मरुत नीहः परित्तकृशः पपात भूमौ हतवाजिरम्बरात्”

(रामायण ३।५।३८)

४ रथावधयभेद, रथके एक अङ्गका नाम।

नीहक (स० पु०-स्त्री०) नीह्ने कायति प्रकाशते कै० क० ।
खग, पक्षी, चिह्निया।

नीहज (स० पु० स्त्री०) नीह्ने जायति जम ड। पक्षी,
चिह्निया।

नीह्नीन्द्र (स० पु०) गृह ।

नीह्नि (स० पु०) नितान्तं इत्यन्तत्वं, नि-इत्य स्वप्ने-इन्
स्य ड। निवास, वासस्थान।

नीह्नीद्वय (स० पु०-स्त्री०) नीह्ने उद्ववति, उद् भू-प्रच-
वा नीह्ने उद्वधी यस्य । खग, पक्षी।

नीत (स० त्रि०) नी-कर्मणि क्त । १ स्थापित । २ प्रापित ।
३ गृहीत । ४ भतिवाहित । (पु०) ५ धान्य, धान।

नीति (स० स्त्री०) नीयते संलभ्यन्ते उपायादय ऐशिका-
मुपिकाधार्धा वास्माननया, नी-प्रधिकरणे वा क्तिन् । १
शुक्रादि-उक्त राजविद्या । भावे-क्तिन् । २ प्रापण । ३
तदधिष्ठात्री देवीभेद । हरिश्चं २५६ अ०में लिखा है—

“शिष्टाश्च देव्यः प्रवराः स्त्रीः कीर्तिर्द्युतिरेव च ।

प्रमा धृतिः क्षमाभूतिर्नीतिर्विद्या इया मतिः ॥”

४ शास्त्रविषय ।

नीतिशास्त्र जिताहित विवेचनाका शास्त्र है। इसका
अध्ययन करनेसे अच्छे बुरेका ज्ञान होता है। मानव
जब दुर्नीतिपरायण होते हैं, तब जगत्में नाना प्रकारकी
विश्वदुःखलाएँ उत्पन्न होती हैं। इसलिए सबसे पहले
नीतिपरायण होना नितान्त प्रयोजन है। महाभारत-
के शान्तिपर्व में नीतिशास्त्रका विषय इस प्रकार लिखा
है—युधिष्ठिरने जब भीष्मदेवसे नीतिशास्त्रका विषय
पूछा, तब उन्होंने कहा था कि सत्ययुगमें सृष्टिके कुछ
दिन बाद सभी मनुष्य पापपथ पर चलने लगे। यह देख
कर देवताओंने ब्रह्माकी धरण्य स्त्री। भगवान् कमल-
योनिमें देवताओंकी सम्बोधन करते हुए कहा, ‘तुम
लोग डरो मत मैं बहुत जल्द ही इसका उपाय कर देता
हूँ।’ यह कह कर उन्होंने भविष्यात् सत्य अध्याययुक्त
नीतिशास्त्रकी रचना की। उस शास्त्रमें धर्म, अर्थ,

काम और मोक्ष यह चतुर्वर्ग; मत्त्व, रज और तम तीन
गुण; वृद्धि, क्षय और समागत्व नामक दण्डत्रय त्रिवर्ग;
विज्ञ, देय, कान्त, उपाय, कार्य और सहाय नामक
श्रीतित्रय पदुर्वर्ग; कर्मकाण्ड, ज्ञानकाण्ड, कृषि, वाणि-
ज्यादि, जीविकाकाण्ड, दण्डनीति, प्रमात्य, रक्षा-
नियुक्त चर और गुरुचरविषय, राजपुत्रका लक्षण, चर-
गणका विविधोपाय, साम, दान, धेद, दण्ड, उपेक्षा, भेद-
कारक मन्त्रणा और विभ्रम, मन्त्रसिद्धि और अभिसिद्धिका
फल, भय, सत्कार, विसृष्टहृत्कार्य अधम, मध्यम और
उत्तम तीन प्रकारकी मन्त्रिः, चतुर्विधयात्राकान्त, त्रिवर्ग-
का विस्तार, धर्मयुक्त विजय और आसुरिक विजय,
प्रमात्य, राष्ट्र, दुर्ग, वन और कोप इस पञ्चवर्गके त्रिविध
लक्षण, प्रकाश और अप्रकाश सेनाका विषय, अष्टविध
गुरु विषय प्रकाश, हस्ती, अश्व, रथ, पदाति, भारवाही,
चर, पोत और उपदेष्टा यह अष्टविध सेनाङ्ग, यन्त्रादि
और यन्त्रादिमें विषययोग, अभिचार, परि, मित्र और उदा-
सीनका विषय, पथगमनका अङ्गनक्षत्रादिजनित समय
गुण, भूमिगुण, आत्मरक्षा, आश्राम, रथादि निर्माणका
अनुसन्धान, मनुष्य, हस्ती, पशु और रथसञ्चालका उपाय,
विविधव्यह, विचित्र युद्धकीगन, धूमकेतु आदि
ग्रहोंका उत्पात, उल्कादि निपात, सुप्रणालीक्रमसे युद्ध,
पलायन, अस्त्रशस्त्रका शाणप्रदान, अस्त्रज्ञान, मैत्र्य-
व्यसनमोचन, सैन्योका हर्षोत्पादन, पीडा, आपद्-
काल, पदातिज्ञान, खातखनन, पताकादि प्रदर्शनपूर्वक
शत्रुके अन्तःकरणमें भयसञ्चारण, चोर, उग्रस्वभाव,
भरण्यवासी, अग्निदाता, विषप्रयोक्त, प्रतिरूपकारों प्रधान
व्यक्तिका भेद, वृक्षच्छेदन, मन्त्रादि प्रभाषसे हाथियों-
का बलक्रास, शत्रु उत्पादन और अनुरक्त व्यक्तिका
आराधन तथा विश्वासजनन द्वारा परराष्ट्रमें पीडाप्रदान;
समाह्वाराज्यका प्रास, वृद्धि और समता, कार्यसामर्थ्य,
कार्यका उपाय, राष्ट्रवृद्धि, अत्र मध्यस्थित मित्रका संग्रह,
बलवान्का पीड़न और विनाशसाधन, सूक्ष्म व्यवहार,
खसका सम्बलन, व्यायाम, दान, द्रव्यसंग्रह, प्रभृत-
व्यक्तिका भरणपोषण, भृत्यव्यक्तिका पर्यवेक्षण, यथा-
कालमें अर्थदान, व्यसनमें अनासक्ति, भूपतिका गुण,
सेनापतिका गुण, त्रिवर्गका कारण और गुणदोष, अमत्त्व

धर्मितमिधु पशुपतोर्ध्वे स्वानुवादादिषु प्रति गङ्गा, पद्मक
 शानतापरिहार, पल्लवविषयका धाम, सत्यवस्तुको द्विः,
 प्रह्व हर्म, धर्म, काम और धर्मन विभाषके शिष्ये दान
 पद्मक, पद्मकीर्ण, सुरापान और शीशभोग चार प्रकार
 का कामक बाह्यपादक, उपमा दण्डपादक, निपट,
 पाञ्चालाय और पद्मवृषक उह ह। प्रकारका शोधक
 कुल दय प्रकारका वरसक, विभिन्नपक्ष और यन्त्र कार्य,
 चित्तविशेष, वैश्वेदिन, पयोध, क्षयि पादि कार्योंका
 पशुपासन, नामा प्रकारका उपकरण, युद्धयात्रा, मुद्रो
 पाय, पद्मक पानक, गङ्गा और मेरोद्वका उपजा न कक
 शकर्म में मन्त्रिकापन, साङ्गोकोठी पूजा और विद्यामेंके
 पात्र भाज्योयता, दान और होमका परिधान, साङ्ग-
 वस्तुका शय्य, शरीरक श्वाक, पाकार, पाटिभता, एक
 पत्रका पद्मककन कर पद्मकन्याम, पद्मक मधुर भावक,
 पामाजिक ककन, पद्मकार्य, पद्मकारिभानका प्रकल्प
 और परीक-कनहार अनुसन्धान, प्राङ्गोकी पदक-
 नीयता, कुशातुसार दण्डविधान, पशुकोविद्योके मध्य जाति
 और सुचयत पक्षपात, योगनका रक्षाविधान, हादग
 राजमण्डलविषयक चिन्ता, सत्ताईक प्रकारका शारीरिक
 प्रतिकार, दिय, जाति और कुलका धर्म, धर्मोदि मुक्त-
 कार्योंकी प्रकारको माहायोग, मोक्षानिमज्जनादि द्वारा
 नदीपद्मकरोह इन सब विषयोंका विस्तृत विवरण
 किया है।

पद्मकोनि प्रहामि इस नीतिशास्त्रका रचना कर इन्द्र
 पादि देवतामेंके कथा मेंमें विषयक संस्थापन और
 कोमेंके उपकार साधनके निपट बाकके शरीरकूप इस
 नीतिशास्त्रका उद्धारन किया है। इस नीतिशास्त्रके
 अध्यायन करनेमेंके निपट और पशुपद प्रदगंनपूर्वक
 धीकरका करनेको बुद्धि उत्पन्न होगी। इस शास्त्र द्वारा
 धर्मके समी मनुष्य दण्डप्रभावके सुवर्णक पल्लवामर्म
 धर्मक ईति, इकोये इस नीतिकाम नाम दण्डनीति रखा
 आयना। :

इस प्रकार कथाभावनकुल नीतिशास्त्रके तैदार को
 जाने पर पद्मके पद्मक महाविदने के पद्मक किया।
 श्रावणक को पाहुकी समी देक कर कथोने इस नीति-
 शास्त्रको कथेमें बनाया। यह शास्त्र दम इकार पद्मको

में विमल किया गया और कथाका नाम मने प्रति
 हुआ। पोखे मनवान् इन्द्रने उस शास्त्रको पांच प्रकार
 पद्मकोमें बना कर उपमा नाम साङ्गदण्डक रखा। पद्मक
 उद्योगतिने साङ्गदण्डक पद्मको संचिद्र कर तीन प्रकार
 पद्मकोमें विमल किया जो पोखे बाह्यस्वक नामसे
 मगहूर हुआ। कथमें पद्मकोपादमें इसीको ही कर इकार
 पद्मकोका एक नीतिशास्त्र बनाया और उसका एक
 नीति नाम रखा। यही दण्डनीति पद्मको मानवोंके पद्मने
 पोख है। इसके पद्मने विनाहितका ज्ञान होता है।

(वारप कान्तिवै १८ न०)

शास्त्रिकापुराणमें नीतिका विषय इस प्रकार लिखा है—
 राजा धरने महासुनि पोर्को नीतिमन्त्रमें कहुत
 सी बात पूकते हुए कहा, 'सुनिवर। धाम्ना, पुम और
 मार्गके प्रति सिध नीतिका प्रयोग करना कचिन है
 तसे धर्म पक्षी तरह समझ कर कहुँ। इन पर पोर्वमें
 कहुँ नीतिका इस प्रकार उपदेश दिया जा,—

पक्षी ज्ञानक, तपोक और पयोधक, पशुवामन्ति,
 उदारचित्त, विमलपक्षको केना कतव्य है। उनसे
 प्रतिदिन सुतिस्मृतिविहित विभिन्नकला कनक करे।
 वे को कुल कहुँ, राजाको उचित है कि तसे समय तसे
 कर काले। शरीर एक रव है। पद्म कर्मोन्द्रिय तसे
 शोको है। धाम्ना तसे धारोको रक्षी है, ज्ञान
 शोको का ज्ञान है और मन तसे का सारक है। समी
 शोको को विनीत करना होता है और सारकको रक्षी है य
 ज्ञानको इह तका शरीरमें केव संस्थापन करना
 पद्मक विषय है। रको दुर्विनीत पद्मकविगत रव पर
 कहु कर शोकोके साङ्गदण्डक आते जाते विषयमें पहुँ
 चता है। फिर रकोके पलायन को कर सारकके साङ्गद-
 णक पद्मकासना करने पर रको यदि नीर मो रक्षे तो
 मो कहु तसे रिपुके पक्षीन कर कालता है। पता विमल
 भोग करते समय इन्द्रिय और मनको कयोमृत करे।
 ज्ञान ज्ञानके इह रक्षे, कथने पक्षी कही करना योग्य
 है। ज्ञानक्य कथामसे इह कोने पर और सारकके
 कथकर्मों रक्षने पर, विनीत पद्म कोक मण्डके कथिता।
 इकोमे समीको पद्मो पद्मो इन्द्रिय और मनको कथमें
 करने ज्ञानक पर रव कर धाम्नाचित्तानुष्ठान विषय है।

रात्रा हो है। रात्राको उचित है, जिसे वे सुनोतीका प्राप्त करे और पवित्रोतीकी दृष्टविचारणादि द्वारा सुषय पर लाम्। इसो कारण रात्राको रात्राकी-विचारद्वे जोना उचित है।

- पवित्रपुराणमें नीतिका विषय हम प्रकार लिखा है, -
 'रामने अक्षयको नीति विषयका गी उपदेश दिया था, वह इस प्रकार है, -

विमल की नीतिका मूल है। शास्त्रनिबन्धों द्वारा विमलको उपदिष्ट होती है। इन्द्रियविषयको ही विमल कहते हैं। सभी मनुष्यको विनीत मानमें रहना आवश्यक है। शास्त्रज्ञान, प्रसाद, धृति, दयाता, प्रामद्व्य, आर-पिन्दुता, उद्याद, वाक्यरयम, शौदाव, पापवृत्तान्तमें सविद्युता, प्रसाद, उचित, मेध, त्याग, धर्म, कृतयता, क्षम, मोक्ष और हम से सब शुभ सम्पत्ति है उत्तु है।

इन्द्रिया मत्तद्वेष्टीको तरह ज्ञानावतः उद्यम हो कर हृदयको विवृणित करती हैं और विषयरूप विज्ञान प्राप्तको और दोहती हैं। हम समय ज्ञानरूप पङ्कग द्वारा कर्मों बय करना कर्त्तव्य है। जो मनुष्य ऐसा नहीं करते वे प्रवृत्तित वृत्तिको विराट्में रह कर सोते हैं। जल, पत्थि, अक्ष और इन्द्रिय हमसे हैं जिसे पर विद्यास न रहना चाहिये। विमेषता इन्द्रियको वृत्ति और शैव सबसे पवित्र है। योगसिद्ध परमविषय मो सदा इन्द्रियैवै विवृणित होती देखे गए हैं। धैर्य रूप पाठानमें ज्ञानरूप गृहणसे अब तक नहीं बधा जायगा, तब तक इन्द्रियरूप मत्तद्वेष्टीको बयोकरण करना विवृणित प्रयास है। इन्द्रियैवै सुवि विवृणित होती, मन ब मन बनना, हृदय पचन हो जाता, पाप्य परसन्न हो जाती, चेतन्य विवृणित होता तथा ज्ञान विषय हो जाता है। पतयव महा तब हो वही इन्द्रियवैवै विवृणित होय करना इत्येवका कर्त्तव्य है। इन्द्रियरूप दुर्दास इरतीको बयोमूल करनेसे स मार यहां तक कि अय ईश्वर मो वसीमूल और पराजित हो जाती है। ईश्वरको बयमें कामिसे निर्वाचक्य परमपद प्राप्त होता है इहमें अरा मो लम्बे नहीं।

ज्ञान, शोक, क्रोध, ईर्ष्या, मान और मत्त इतका नाम परि ब्रह्म है। इस ब्रह्मका परिहार नहीं करनेसे

सुख सिरी वाक्यमें मिल नहीं सकता। शास्त्रमें काम को विषयनिबन्ध माना है, क्योंकि इप्रको अवादा, विषय और पत्थिसे मो भवान्क है। नितात्त प्रमात्तविषय और कामान्कमें पतित होमिसे एहान्त पवित्र होता है। स धारमें कामयमावसे मनुष्योका जो वा पचपतन होता है, वे वा और जिसे नहीं होता। पतयव ज्ञानरूप सुगीतक असने कामान्कको मुझना एहान्त कर्त्तव्य है।

जितने प्रकारसे मनुष्य मत्तपाप गए हैं उनमेंसे शोक सबसे प्रधान मत्तु है। इसी कारण शोकको महाविषय कहा है। शरीरमें शोकसे रहनेसे पत्थ मनुष्यका प्रयोजन नहीं पड़ता। शोक घारी प्रणीको विषय कर काम्यता तथा बन्धुको को मो विवृणित करता है। शोक और विषय कर पत्रगर दोनों को एक पदाय है। सांप दिखने पर मनुष्य जिस तरह कर जाते हैं उसो तरह वे शोभी अविद्येति मी इरति और इहं सित होती हैं। शोकित अतिको जितचित्तका ज्ञान नहीं रहता। बहुतसे मनुष्य शोभमें पा कर पाप्यहत्या तक मो शर जानते हैं। शोक सायावृ कृतान्त-रूप है। इहसे य धर्म तमीगुवसे प्रजा स शर वा इहविमामगि सिप हो शोकशा अन्ध रूप है। पतः शोकका त्याग करनेसे हो सुख मिलता है। जो शोकका त्याग नहीं करते, उन्हें इमिया पतुक्त और प्रसादिमोन करना पड़ता है। शोको मनुष्य जिसे समय मानिसाम नहीं कर सकता। शान्ति नहीं होमिसे जीवन हया और विवृणितमात्र है। ज्ञान ब्रह्म कर शोकको आशय देना कमी उचित नहीं है। इसीसे इर-पक्षको शोकका परित्याग करना चाहिये। विमेषता को राजपद पर प्रतिष्ठा है, शोक शोकका परिहार करना परमयत्न है। शोको मरपति मरपति नामसे प्रयोम्य है।

शोकका पाकार प्रकार और क्लामादि पतौब भीषण है। ब्रह्मस्त स बार मिल जाने पर मो लनकी परिक्रमि नहीं होती, सोमसे बड़ कर और दूसरा महापाप है ही नहीं। सोमसे सुवि विवृणित और विषयनिष्ठा मनुष्य ही होती है। विषयकोसुप वृत्तिको जिसे शोकमें सुख नहीं। लोभी वृत्ति सदा सुख मनुष्यको पौबमें रहता है। सुख उसे शोक कर बहुत दूर चला जाता है। इस कारण लोभीका सुख पाकामनुसुमन्तु और अक्षयत्वना

वत् एकान्त अलोक है। अतएव प्रत्येकको लोभका त्याग करना विधेय है।

मोहका नाम पूर्ण विकार है। अग्यान्य विकारके प्रतिकारकी सभावना है, किन्तु मोहविकारकी शोष वा दवा कुछ भी नहीं है। एकमात्र मद्गुरु और सदिग्धा इसकी शोष है। मोहसे मृत्युकी सृष्टि हुई। अतएव मोहकी दूर करना हरएकका धर्म है।

भ्रातृचिकी, त्रया, वार्त्ता और दण्डनीति इन विषयोंमें जो विशेष अभिज्ञ और क्रियावान् है, उन्हीं सब मनुष्योंके साथ राजा विनयान्वित हो कर यथायथ राज-कार्यकी पर्यालोचना करे। भ्रातृचिकीमें अर्थ विज्ञान, त्रयोमें धर्माधर्म, वार्त्तामें अर्थानर्थ और दण्डनीतिमें न्यायान्याय प्रतिष्ठित है।

अहिंसा, सृष्टतवाक्य, सत्य, शौच, दया और क्षमा इनका सर्वदा अनुष्ठान करना चाहिये। सतत प्रिय-वाक्यकथन, दूसरेका दुःख दूर करनेमें तत्पर, दरिद्रोंका भरणपोषण, दुर्बल और शरणागतीकी रक्षा ये सब कार्य सर्वपेक्षा उपकारो हैं।

जो शरीर आधिश्वाधिका मन्दिर है, जो आज वा कल अवश्य ही विनष्ट होगा, जो मांस, मूल और पुरोपादि असार वस्तुकी समष्टि है, उस शरीरकी रक्षाके लिए किसी प्रकारकी दुर्नीतिका अवनस्वन करना सर्वतोभावे निषिद्ध है।

अपने सुखके लिए किसीको कष्ट देना सद्गत नहीं है। जिस प्रकार मनुष्य पूजनोय सज्जनको अञ्जलि प्रदान करते हैं, कल्याणकामनासे दुर्जनके निकट उसी प्रकार वा उससे भी वद कर अच्छी तरहसे अञ्जलिका विधान करे।

क्या साधु, क्या भसाधु, क्या शत्रु, क्या मित्र अथवा दुर्जन वा सज्जन सभीको हमेशा प्रियवाक्यसे सम्भाषण करे। मिष्टवाक्यकी अपेक्षा थोड़ा बशीकरण और दूसरा नहीं है। शत्रु अपराधो भीठी बातोंसे उसी समय माफ हो जानिकी सभावना है। यह सब जान कर भीठी बातोंका प्रयोग सर्वदा करना उचित है। जो प्रियवादी है, वे ही देशता और जो क्रूरवादी है वे ही पशु है। भक्ति और भास्त्रिकतापूर्ण हृदयसे सर्वदा देवपूजा

विधेय है। देवतावत् गुरुजनोंका और प्राणवत् सुब्रह्मदे-का सादर सम्भाषण करना उचित है। प्रणिपात द्वारा गुरुकी, सत्य व्यवहार द्वारा माधुकी, सुकृत कर्म द्वारा देवताओंको, प्रेम वा दान द्वारा स्त्री और भृत्यकी तथा दान्तिष्ण द्वारा इतर मनुष्यको बशीभूत और अभिसुख करना चाहिए।

परकार्यकी अनिन्दा, स्वधर्मका प्रतिपालन, दोनों पर दया सर्वदा मधुरवाक्यका प्रयोग, प्रकृतिमित्रका प्राण दे कर उपकार, गृहागत व्यक्तिको आयमदान, गतिके अनुसार दान, सहिष्णुता, अपना सन्दिग्धमें प्रत्यक्षे, दूसरेकी उन्नतिमें असम्बर, जिससे मनुष्यके हृदयमें चोट पड़चे, ऐसी बातका न कहना, जिससे मनुष्यका किंमो प्रकारका अनिष्ट होनेकी सम्भावना हो, ऐसे कार्यका न करना, जिससे इहलोक विनष्ट हो, ऐसे कार्यमें प्रवृत्त न होना, जिससे अपना और दूसरेकी ग्लानि हो, ऐसे कार्यमें हाथ न डालना, मौनव्रतचरिष्णुता, वस्तुओंके साथ बहसयोग, स्वजन पर समष्टि ये सब कार्य व्यवहारनीति कहे गए हैं और यह महात्मार्योंका चरित्र है। (शमिमु० १५०-२५८ व०)

आर्यजाति को सामाजिक उन्नतिके साथ नीतिशास्त्रका समादर है, इसका यथेष्ट प्रमाण महाभारतसे मिलता है। अभी जो सब नीतिशास्त्र प्रचलित हैं उनमेंसे उग्रनाप्रणीत शुक्रनीति और कामन्दकप्रणीत कामन्द-प्रोय नीतिसार प्रधान और प्राचीन हैं। इसके अनावा जेमेन्द्रविरचित नीतिकल्पतरु वा नीतिलता, लक्ष्मोपतिरचित नीतिगर्भित शास्त्र, विद्यारण्यतीर्थकृत नीति-तरङ्ग, नीतिदीपिका, वेतालभट्टकृत, नीतिप्रदीप, धादि-वेदकृत नीतिमञ्जरी, शम्भराजरचित नीतिमञ्जरी, नाल-कण्डका नीतिमयूख, वररुचिकृत नीतिरत्न, चण्डेकर-कृत नीतिरत्नाकर, सोमदेवसुरिकृत नीतिवाक्यामृत, ब्रजराज शुक्ररचित नीतिविलास, कर्मशम्भरकृत नीति-विवेक, चटकपर्णकृत नीतिसार, मधुसूदनरचित नीति-सारसंग्रह, चाणक्यनीति, हिनीपदेश, पञ्चतन्त्र आदि ग्रन्थ देखनेमें आते हैं।

नीति—हिमालयपर्वतके सन्निकटस्थ गढ़वाल जिलेके अन्तर्गत एक गिरिपथ। यह अक्षा० ३०° ४६' १०"

७० बीर देवा ० ७२ ११' २०" में अवस्थित है। कुमा-
यूनवे तिम्बत तब जितने पत्र हैं सभीवे यह समझ पत्र
है। इस पत्रके दो जामिने भारतवर्षके प्राय तिम्बन
पीनतातार और मोनदेयको वाचिन्परवाको विप्रिय
सुनिवा हो गई है।

सत्राज के टनमें सबसे पहली सोबोमटोके बिगारे हम
बर्षको लिखा बिबा। को बीर उमी नहोके तट हो
कर यह पत्र उत्तरकी बीर बसा गया। इस पत्र को कर
कोड़ी कर और उत्तरकी बीर पत्र कर नहोका सामाविक
दम्य और इचादि दिखनेमें पाती है। वे सब पत्र बहुत
बड़े बड़े हैं पर उनका अपरो माग बर्षके ठका रहता
है। बंटेन साहबने पहले बिप प्यान का बर्षान किया
है नच हम नीकोके विन्द्यासबर्षित विन्दुप्रवाय
लिबा और कुछ मी प्रतोन नहो होता। विन्द्यासने
बिच पत्र महाप्रवायको बसा लिखो है वह विन्दुप्रवाय
उन्कोमेंने एक है। उचके निजट होको और पनबानन्दा-
की तुलनेकी है। उत्र पनबानन्दा न यानाके विन्दु
पादपत्रक निजट विन्दुगवा नामके प्रसिद है। इस
विन्दुप्रवाय तोपका माहात्म्य सन्द्युपाके हिमबद
कल्पमें बर्षित है।

इस पत्र पर प्रायः ५८३२ काय उत्तर पत्र बड़ा गांभ
मिसता है। यहावे पत्रिबासी इस पामको नीति कहती
है। प्रामके पूर्व-दक्षिणके पर्वतके नीति नहो निजकी
है। इसको उपकका भूमि चारा बीरके इचादि तथा
तुपारमन्त्रित उचबुद्धात्मको पर्वतके चिरी है। नगरके
बन्धुबामर्षमें नहोके समोप समतल भूमिमें खेती-बारे
होती है। यहावे पत्रिबाको मोटोके दिखनेमें बसती है।
पर्वतवाको बड़े ही सरल और निर्बिबाको होवे है।
अधिकारका सार सेवत खिचोके अपर सीपा रहता है।
बर्ष भरमें बार साल है उत्तम पत्रक उपप्राय है।
श्रीतकाकर्म केहि वे पपना पावाक होइ विन्दुदेयमें
माग प्राय है धीरे ही प्रोचके पारभमें पुनः पपनी
पावासमें शोड प्राय और बर्षके ठके हुए घर पाहिको
बाहर निवारक होवे है। जामीक मोटकातिके कोन काम-
बता। अथ होमि और उनका पननावा सोमय बर्षके ठका
रहता है। इन सोमोका देवा कामा है, कि वे बिबो

दूरवर्षी बन्धुके प्राय बिबो प्रकारका पत्रक नहो रहते
हो। न उन्के पामोद-पमोदकाममें पामक्य हो
सकते है।

पामके उत्तर पावादी नहो है। उत्तरका पर्वत
केमक बुद्धाविप्रिय है। दो पिच्छोके मन्त्र बड़े बड़े
५७ दिखनेमें पाती है। इन पत्र को कर जामे पामिको
सुनिधाके लिए ज्ञान ज्ञान पर दो बुद्धाके उत्तर पाठका
पुत्र बना हुआ है। इस प्रदेशमें मोम पादि कोनेके बिप
केमक बन्दे और मी कुंके काम लिबा जाता है।

जूनमासके पारभमें प्रातःकालको पहाका उत्ताप
३० से १० तक हो। दोपहरको ७० से ८० तक देखा
जाता है। इस समय प्रति रातको नामान्य इति और बर्ष
पड़ती है। यहाको खेती बारीका यहा प्रजन समय है।

दिनके तोन बसती न बसती शाम सा बोख पड़ता है।
इस समय परतके उत्तर मीधरागि पा का। नामा बर्षमें
रक्षित होतो और उच नुत्रके उत्तर तुपार तथा निम्बतम
प्रदेशमें बस बरघता है। यद्यपि जवाहर बसावात
ना बिच नु देवो नहो जातो, तो मो यहा जन्मपयराणि
में मो बर्षोइत पिच्छर पपूर्ष पाकोकामाकामे विन्दुवित
रहता है। जूनमासमें प्रातःकालके बर्ष गलमि सपती है
और तोन बजेके बादवे चारो रात तुपार पड़ता है।
श्रीतकनुके प्राकाकर्म उपक कामुमि प्रायः बर्षके ठको
रहती है। प्रोचके पारभमें यह बर्ष नह नहोमें निर कर
उचके असेवरको बड़ा देती है।

एक नीति पाठका पर्वके ज्ञान प्रमुद्रप्रकवे १५ ८३४
पुत्र है। पर्वतके प्राय १०००० काय उत्तरमें बाहुकी
मात्रा कम रहनेके कारण ज्वाल पादि केनेमें बहुत कष्ट
मालूम पड़ता है। यहा तक कि निष्पाव तक जामिके
कारण प्राय निजकने निजकने पर हो जाते हैं। सिद्धि
नीतिपर्वतके वासियोंको इसका प्रभाव पड़ गया है, इन
कारण उन्के बतना कष्ट मालूम नहीं पड़ता। सत्राज
बंटेन साहबका कहना है, कि यह ज्ञान हीक ज्वाल
कैपके सडक और इचका प्राकृतिक दम्य लहासायके
होका है। इस ज्ञानके तिम्बतदेव बहुत काम नकर
पाता है।

पञ्चहरवे मार्च मास तक यह ज्ञान निरवच्छेद

नीचारीसे टका रहता है। इस समय उक्त गिरिपथ छोड़ कर पर्वत पर चढ़नेका और दूसरा स्वतन्त्र पथ नहीं है। कुमायुन पर्वतवामी कहते हैं, कि कई वर्ष हुए बर्हाकि अपरावर गिरिपथ दुर्गम हो गए है। पछने जो स्थान तर्क उद्भिदिनि प्रोभित या अभी बह स्तूपाकार तुपारमे आच्छादित है।

भोटवासियोंका विस्वाम है, कि पर्वतगिरिपथमे वायुके श्लथ घाघातमे प्रचुर निहारगणि स्यन्तित हो कर निम्नदेशमें गिर सकती है, इस प्राशङ्कामे से चन्द्रक ना वाद्यग्रन्थका शब्द नहीं करते।

१८१८ ई०में कमान वेवने वाणिज्यके प्रशाने चीनके साथ सम्बन्ध स्थापन करनेके लिए नीतिके निष्पटवर्ती चीनराज-प्रधिकृत टैवन्नगरमें व्यवसाय करनेकी चेष्टा की थी लेकिन उनका मनने रघ मिह नहीं हुआ।

नीतिघोष (सं० पु०) नीतिरेव नीत्यात्मकी वा घोषो यस्य । १ वृहस्पतिकारय। नीतिर्नयस्य घोषः ध्वनिः । २ नयध्वनि ।

नीतिज्ञ (सं० त्रि०) नीतिं जनानि ज्ञा-क। नीतिवेदो, नीतिकुशल, नीतिका ज्ञानसेवाला ।

नीतिप्रदोष (सं० पु०) १ नीतिरूप प्रदोष । २ ज्ञानलोक । ३ वेतालमहकृत एक नीतिग्रन्थ ।

नीतिमत् (सं० त्रि०) प्रागल्भ्येन नीतिविद्यतेऽस्य, मतुप् । प्रशस्त नीतियुक्त, सदाचारो ।

नीतिमान् (हिं० वि०) नीतिपरायण, सदाचारो ।

नीतिरत्न (सं० स्त्री०) १ वह जिसमें नीतिकथारूप बहुमूल्य रत्न निहित है । २ वररुचि-कृत ग्रन्थविशेष, वररुचिका बनाया हुआ एक ग्रन्थ ।

नीतिशास्त्रासृत (सं० स्त्री०) १ सविषेचनापूर्णे चौर ज्ञानगर्भे अमृतमय प्रसङ्ग । २ स्वनामख्यात ग्रन्थ ।

नीतिविद्या (सं० स्त्री०) नीतिविषयक विद्या ।

नीतिशास्त्र (सं० स्त्री०) नीतिनां शास्त्रं । नीतिशापक शास्त्रभेद, वह शास्त्र जिसमें मनुष्यसमाजके हितके लिए देश, कान और पोत्रासुसार आचार व्यवहार तथा प्रवन्ध और शासनका विधान हो । शोचनसमुत्त, कामन्दक, पञ्चतन्त्र, नीतिसार, नीतिमाला, नीतिमयूख, हितोपदेश और वाणिक्यसार संग्रह आदि ग्रन्थ नीतिशास्त्र नामसे प्रसिद्ध हैं । नीति देखो ।

नीतिमद्गनन (सं० स्त्री०) प्रागर्भे चौर नीतिविषयक प्रसङ्गमाना मन्विष्ट ग्रन्थ ।

नीतिमार (सं० पु०) नीतिरेव मारो यस्य । इन्द्रके प्रति वृहस्पति कर्टक नीतिशास्त्रभेद । वाणिक्यने इमीसे संग्रह करके वाणिक्यगतक लिखा है ।

नीय (सं० पु०) नयति प्रापयतीति नी-क्यन् (इन्द्रिय-नोरसिद्धादिभ्य-रूपन् । उप् २।२) १ नियन्ता । २ प्रापयिता । नी-भावे क्यन् । ३ नयन । ४ स्त्री । ५ प्रापय-हेतु, नयनहेतुभूत । (स्त्री०) ६ जन ।

नीध (सं० स्त्री०) नितरां धियये इति भि-ध् स्मृतिभिसुजा-दित्वात् कः । १ यनोक, छाजनको मोलतो । २ यन उद्गम । ३ नेमि, पक्षिका चक्र । ४ चन्द्र, चन्द्रमा । ५ रयतीनक्षत्र ।

नीनाह (सं० पु०) नि-नह-भावे घञ्, वाहुलकात् दीर्घः । निवस्य, वस्यन् ।

नीप (सं० पु०) नी-प (पाणोविधिभ्यः पः । उप् ३।२३) वाहुलकात् गुणभावः । १ कदम्बवृक्ष । २ भूकदम्ब । ३ वन्धूकवृक्ष, दुपहरिया । ४ नीलाशोकवृक्ष, शगीक । ५ देशभेद, एक देशका नाम । ६ गिरिका अधोभाग, पहाडका निचला हिस्सा । ७ पारराजके पुत्र । ८ नीपका वंश ।

नीप (अ० पु०) दो चोजोको बांधने या गांठ देनेके लिए रस्सीका फेरा या फंदा ।

नीपर (अ० पु०) १ नगरमें बंधो हुई रस्सियोंमेंसे एक । २ उक्त रस्सीके बन्धनको कसनेके लिये लगा हुआ डंडा ।

नीपराज (सं० पु०) राजकदम्बवृक्ष ।

नीपातिथि (सं० पु०) कथयवशोद्धव एक ऋषि । इन्होंने ऋग्वेदके ८म मण्डलके ३४ सूक्तकी रचना की ।

नीप्य (सं० त्रि०) नीपे गियंघोभागे भवः, नीप-यत् । १ जो पहाडके नीचे उत्पन्न हो । (पु०) २ रुद्रभेद, एक रुद्रका नाम ।

नीवू (हिं० पु०) १ मध्यम आकारका एक पेड़ या भाह जिसका फल खाया जाता है और जो पृथ्वीके गरम प्रदेशोंमें होता है, जम्बीर, कागजी नीवू । संस्कृत पर्याय-निम्बक, भन्जजम्बीर, दन्ताघातघोषन, भन्जसार,

ब्रिजोत्र, दोत्र, ब्रिज, दन्तमठ, जम्बीरत्र, चर्च, रोचन तम्बीर, मोषन और दोत्रक ।

रात्रिनिर्घण्डने मतके कस्तुरा गुण—पक्वराध कटु, उष्ण, गुण्डम, धामबात, क्षाम कफरोध, कण्डरोग और विच्छिदिनायक, पाम्बिर्बक, चपुका वितकर और पक्वने पर यति बचिहर होता है ।

भाक्वमवायके मतके—पक्व पक्व, वातघ्न, दीपन, पाचन, लघु क्षामिकमूत्रनायक, तीक्ष्ण, उदरत्रमनायक वात, कफ, पित्त और शूलरोगमें वितकर, कटुमट, बचि और रोचनपर । विरहीन, पाम्बि, चय, वातरोम और विपात्तमें कफकारक, मन्दाग्नि, कष्टगुण तथा विच्छिदिना-रोगमें प्रयोक्त्व है । पक्वने पर कष्ट घन मिष्ट, स्वादु, शुभ वातपित्तनायक, विपरीत और विष कफ, लक्ष्मण और रक्तकारक शोष चर्चि, टण्डा और हृदिह, कष्य तथा वृद्ध होता है ।

१ टाबानीठू । पर्याय—भोजपुर, फलपूरक इव लघु, पूरक मातृपुत्र, पूर, ककन, मातृपुत्र सुग-श्याब्द विरिञ्चा, वृत्तिपुष्पिका, भोजपूर, पम्बुकिग, कोनक, देवदू, परशक और मङ्गलकैटी ।

भावप्रयोगके मतके रसका गुण—स्वादु कष्य, पक्व रोचन, लघु गुण्डम पाचान, वातघ्न कष्ट विञ्चा हरीन, क्षाम, क्षाम, चर्चि, कष्य और शोषनायक है ।

रसकी क्षामका गुण—तिक्त, पुञ्ज और कफघ्न नायक है । रसका मूला क्वाटु, शीतक, शुभ, वातु और विप्लनायक होता है ।

१ पातोनीठू । म स्तक पर्याय—कोपकता, निम्बपाठ और निम्बा ।

वैद्यकके मतके गुण—शीतक पक्व, वातघ्न दीपन, पाचन, सुगन्धिय, कस्तुरा रक्तवायवीय शिरस्त्र, क्षामि, उदररोम, पक्व मन्दाग्नि, वात, पित्त, कफ, शूल, विन्-विक्वा और कष्टगुण इन सब रोगोंका नायक तथा विपरीत वितकर और बचिहर ।

म स्तक पक्वमें मोठू मन्धरे नामा प्रकारके नाम और प्राति मंडे कतनाये मर है । यह बहुत दिन पकनेके बाद भारतवर्षमें उत्पन्न होता था रहा है और यहमें ही मीठोउरिया तथा मिठोपामें और पक्वमें शीतक नामके

हो इन्होंने पाटि दिवोंमें रसका प्रचार किया गया है । मिठोपामें प्रथम प्वाभोमि के नामके कारक यह Citrus Medica नामके प्रकारा जाता है । इस प्रातिका मोठू पङ्करीभोमतने तोम प्रकारका है—सिमन नाइम और नाइफन । पाइफनका वकिर्भाव का बिलका बहुत मोटा, बलका और मन्दा । नाइम देखनेमें कमजानीठू के जैसा और रसका जवरी भाग चिक्का होता है । मन्धरता पूर्वक प्रातिका पाटिमस्मान पुर्वकका पावेक प्रदेय विपरीतः भारी और कफिया पक्व जाना जाता है । विन्नु शीतक प्राति मोठू पूर्वोक्त प्वाभने बहुत उत्तर विमानपने से कर पक्व तत्त के ही रूप है ।

मिठुनाइम—जान पङ्कना है, कि यह ककने प्रातीय मीठूके उत्पत्ति-स्थानमें बहुत उत्पन्न है । निम्न बहुत दिन पूर्व चीनदेशके निम्नकर्मों स्थानमें पक्व पक्व उत्पन्न होते देना गया है । पानाममें मोठू के पक्व बहुत पतने मिलते हैं । नाइम मिठू और पक्वके मंडेके दो प्रकारका है ।

चहपाम, सोताकण्ड, कफिया और गररी पकाइ पर ने ठू बिना कितोका हो मन्धरकको तरह उत्पन्न होता है । इसकी पत्तियां मोटे टण्डके और दोनी कोंगे पर लुभोनी होती हैं तथा उनके ऊपरका रंग बहुत महरा इस और मोक्षका रसका होता है । पत्तियोंको भागई तोम पङ्कने पक्व नहीं होते । फूल छोटे छोटे और पक्व होते हैं जिनमें बहुतने परमा-मिंमर रहते हैं । पक्व मोठू या लम्बीतर तथा लुगम्बुज्ज होते हैं । नाका रस मोठू स्वादमें कष्ट होते और लटारके लिए ही खाये जाते हैं । मोठे मोठू भी कई प्रकारके होते हैं उनमेंसे जिनका बिलका नाम होता है और बहुत कटु उत्तर प्राता है तथा जिनमें रसकोमको पक्व पक्व को प्रातो है वे नाइके पक्वता मिले प्राते हैं । -पाकारकना मोठू मन्धरे यह मोठूका ही मोक्ष होता है । जलरीय भारतमें यह ही बार कस्तुरा है—बरमातके पक्वमें और काइ (पयहन पून)में । पक्वके लिए प्राइके मोठू ही पक्का मन्धर प्राता है प्वाकि कष्ट बहुत दिन तक रस कस्तुरा है । यह मोठू के मुख्य मंडे के हैं—क्षामभो, जम्बीरी विजोरा और चकोतर ।

नीबू के पेड़से कभो कभो गोँद निकलता है। १८५५ ई०में मछलीपत्तनमें मन्दाज-महासिलमें इसका गोँद भेजा गया था। इसके फलसे उत्तम सुगन्धित तेल बनता है। हट्टोरोमें जो जल प्रसृत होता है, यह इस तेलका एक प्रधान उपादान है। नीबूके छिलकेको टवा कर और वकयन्त्रकी सहायतासे भनो भानि निचोड़ कर जो गन्धद्रव्य तैयार होता है, उसे सीझाट कहते हैं।

नीबूका छिलका उष्ण, शुष्क और वलकारक होता है। इसके बीचका मारांग शैत्यगुणसम्पन्न और वोज, पत्ता तथा फूल उष्ण और शुष्ककारक एवं रस शैत्योत्पादक और सड़ोचक होता है। किमो किमोका कहना है कि इस फलके सेवन करनेसे शरीरमें विषाक्त पदार्थ निकल जाता है। यदि किमोने अहितकर विष खाया हो, तो उसको नीबू कुछ अधिक परिमाणमें खिनानेसे पाकस्थलोमें एक प्रकारकी लसो जना होती है और विष निकल पड़ता है। गर्भावस्थामें खानेमें यह गर्भस्थ शिशुके श्वास प्रवासाका दोष नष्ट करता है। नीबू द्वारा प्रस्तुत जल अवसादक और छिलका चासाशय पोढ़ाने उपकारी होता है। बोनोके साथ इसका गूदा मिला कर एक प्रकारका खाद्य तैयार किया जाता है, किन्तु यह कुछ तिक्तस्वादविशिष्ट होता है।

इसे बङ्गालमें नेबू, बिलोरा, वैजपुरा और बड़ा नेबू, हिन्दीमें बिजौरा, निम्बूक, मधुकर्कटो चकोतरा और सुम्बू; पञ्जाबमें बजोरो, नीम्बू, गुजरातमें बिजौरा, सुरसूर और बालह; बम्बईमें धीजपूर, महालुङ्गा, निमु, बिजोरी; महागड्ढमें मवलुङ्गा, लिखू; तामिलमें एलुमिच-चम्-प्रजहम्, वा नात्तम् पजहम्; तैलङ्गमें निम्बयन्टू, नारदन्व, साधिगन्-बन्टू, पुक्त दन्व, वोजपुरम्; मलयमें गणपतिनारम्, पारसीमें लुरसूर और अरबीमें छत्रज, उत्-रेज वा उत्तरिच्छो कहते हैं।

हिमालयके बाहर गरम देशोंमें गड़वालसे चट्टियाम तक और मध्य भारतके नाना स्थानोंमें कागजो-नीबूका षेड़ देखा जाता है। मिडीके भेदसे इसके पेड़ और फलमें भी विशेषता पाई जाती है। फलका आकार प्रधानतः गोला, छिलका उजलापन लिए हरा और पकने पर पीला दिखाने पड़ता है। मानभूमिमें इसके पत्ते धमड़ा साफ करनेके काममें आते हैं।

वैद्यलोग इस नीबूका इस्तेमान किया करते हैं। उनके मतमें इसका गुण—पैत्तिक-वसननिवारक, शैत्य-कर और पचननिवारक है। इसका जल अत्यन्त सुखाद्य और लण्णानिवारक तथा टटका रस मधुक टंगनमें विशेष उपकारी और जीर्णनाशक होता है।

नीम (हि० पु०) १ पत्तो भाङ्गनिवाला एक पेड़ जिसकी उत्पत्ति हिदलाङ्गरसे होती है और जिसको पत्तियाँ बड़े दो विलेकी पतली मोकोंके दोनों ओर लगती हैं। ये पत्तियाँ चार पाँच पङ्क्त लम्बो और घट्टून भर चौड़ी होती हैं। इनके किनारे धारोके तरह होते हैं। विशेष विवरण निम्न अधःमें देखो। (फा० वि०) २ अर्द्ध, आधा। नीमवर (फा० पु०) कुण्डोका एक पेच। यह पेच उम्र समय काम देता है जब जोड़ पीछेकी तरफसे कमर पकड़ कर धाई तरफ खड़ा होता है। इसमें अपना बायाँ घुटना जोड़को दाहिना जाँघके नीचे ले जाते हैं, फिर बाएँ हाथको उसको टाँगोंमेंसे निकाल कर उसका बायाँ घुटना पकड़ते और दाहिने हाथसे उसको मुट्टो पकड़ कर भीतरकी ओर खींचते हैं। ऐसा करनेमें यह चित गिर पड़ता है।

नीमगिर्दा (फा० पु०) बड़ईका एक यन्त्र जो खानो या पंचकशकी तरहका ही कर अर्द्धचन्द्राकार होता है। यह खरादनेके समय सुराही आदिकी गर्दन कोलनेके काममें आता है।

नीमच (हि० पु०) बङ्गाल, उड़ोसा, पञ्जाब और सिंधको नदियोंमें मिलनेवाली एक प्रकारकी मछली। इसका मांस खानेमें अच्छा लगता है।

नीमचा (फा० पु०) खाड़ा।

नीमजा (फा० वि०) अधमरा।

नीमटर (हि० वि०) जिसे पुरो विद्या या ज्ञानकारी न हो, अधकचरा।

नीमन (हि० वि०) १ अच्छा, भला, नोरोग, अंग। २ दुरुस्त, जो विगड़ा हुआ न हो। ३ सुन्दर, अच्छा, बढ़िया।

नीमर (हि० वि०) शक्तिहीन, बलहीन, दुर्बल।

नीमरजा (फा० वि०) १ थोड़ी बहुत रजामन्दो। २ कुछ प्रसन्नता।

मीमंसीन (हि० खी०) मीमंसीन केको ।
 मीमा (पा० पु०) कामिने मीमि पदमे कामिना एक पद
 राधा । यह कामिने पाकारका होता है पर न तो
 यह कामिने इतना मोथा होता है और न इतने ब द
 बगलमें होते हैं । यह इतनेमें अपर तक मोथा होता है
 और इतने ब द कामिने हैं । इसही कारणसे मीमंसीन
 होता है । इसकी दोनो बगल सुराक्षियां होती हैं ।
 मीमावत (हि० पु०) मीमंसीनका एक सम्प्रदाय ।
 मीमास्त्रोम (पा० खी०) एक प्रकारको मनुई या सुरतो
 त्रिपद्यो मीमास्त्रोम पामी होती है ।
 मीमत (पा० खी०) धान्तरिक कल्प, उद्देश्य, पापय,
 उद्देश्य, इत्यादि भाव ।
 मीर (व० खी०) मयति प्रापयति स्त्रानाम् स्त्रानाम्तरमिति
 नो प्रापयि रश्च (स्मृतियुक्तं हि । कथ २।११) का निर्गत
 रो चमियैर्यस्मात् । १ अथ पान्ते । २ रम, कोरे प्रव
 यदाह । ३ पयोसे प्रादिषु मीतरका चेष का रस । ४
 सुयम्भवाका । (पु०) १ राजपुत्रमैद ।
 मीरञ्ज (स० खि०) रञ्जयन्, कर्षणीन ।
 मीरञ्ज (स० खि०) रञ्जयन्, बिना र रका ।
 मीरञ्ज (व० खी०) मीरे कले जायते जनक । १ पय,
 कसल । २ कुठोपवि । ३ सुजा, मीती । ४ चद्रश्च
 कन्तु, उद्विजाव । ५ उयोरो, यथान्त । ६ द्रव्यविशेष
 एक प्रकारको वाह । ७ कञ्जातमात्र, कञ्जमें उत्पन्न
 मात्र । (पु०) ८ रजोगुणकार्यैरायुष्य महादेव ।
 मीरञ्जस (स० खि०) निर्मोक्षि रज्जु श्रुतिः कुसुमपर-
 कादिर्मा । १ निर्मोक्षि, कर्षणी भूषण न हो । २ पराग
 गूथ, बिना परागका । ३ रजोगुणकार्यैरायुष्यगूथ ।
 (खी०) १ कर्षणीया खी, कर्षणीया खी यह योत
 विधे रजोहर्षण न होता हो ।
 मीरञ्जस (व० खि०) निर्मोक्षि रज्जु यश्च, ततो अप् । १
 रजोगूथ । २ परागगूथ । ३ रजोगुणकार्यैरायुष्यगूथ ।
 मीरञ्जात (व० खि०) मोदात् कामिने जनक । १ कञ्जात
 मात्र, जो कञ्जे उत्पन्न होता है । (खी०) २ यकादि ।
 इतिषे यकादि उत्पन्न होती हैं, इसीसे मीरञ्जात मयने
 यकादिवा मोच हुआ है । एकमात्र यकने जो प्रजाको
 उत्पत्ति और रक्षा होती है । ३ कञ्जादि ।

मीरत (स० खि०) निर्मोक्ष रत रमश्च यस्मात् । विरत,
 रमश्चाभावस्तु ।
 मीरट (स० पु०) मीर कर्षणं ददातीति कान् । १ मय
 वादक । २ सुप्रक, मोबा । (खि०) ३ रदशुष्य, दन्त
 चीन, र्शदातवा । ४ कञ्ज र्शेनावा ।
 मीरवर (व० पु०) वाहन, मय ।
 मीरवि (स० पु०) मोरानि मोरानिस्मिन् मोर वा वि
 (कर्षणविशेषे च । पा १।१।२३) समुद्र ।
 मीरनिधि (स० पु०) मीरानि अस्त्रानि वीर्यमोऽन्नंति
 निरन्तानि । समुद्र ।
 मीरन्त्र (म० खि०) निर्मोक्षि रमश्च विद्म यस्मिन् । १
 विद्मरितं त्रिमर्से विद न हो । २ अन्न वीरत ।
 मीरपति (स० पु०) कर्षणदेवता ।
 मीरपिव (स० पु०) मीर पिव यथ । १ कञ्जवैतय,
 कञ्जैत । (खि०) २ कञ्जप्रियमात्र, त्रिषे पानो कञ्ज
 प्यारा हो ।
 मीरस (हि० पु०) कर्षणीन जो अष्टाव पर कञ्ज कञ्जो
 किति ठोका रक्षनेने लिखे रहता है ।
 मीरवृक्ष (व० खी०) पत्र, कसल ।
 मीरव (स० खि०) रमशुष्य, मय ।
 मीरवृक्ष (व० पु०) कञ्जमयुक्तवृक्ष ।
 मीरस (व० पु०) निरन्त रतो यत् । १ कञ्जिम, कनार ।
 (खि०) निर्मोक्षि रतो यत् । २ रदशुष्य, कञ्जमें रत
 या वीर्यापन न हो । ३ कञ्ज, सुभा । ४ विरमि कोरे
 फ्राद या मजा न हो, खीका ।
 मीरसन (व० खि०) निर्मोक्षि रसन यत् । १ रसनगूथ ।
 २ बिना कञ्जको या कसल कञ्जा ।
 मीरका (स० खी०) निर्येविधावृक्ष, एक विधको
 वास ।
 मीरकात् (स० पु०) मीरका पाशुः । उद्ग, उदिकाव ।
 पर्याय - कञ्जमयुक्त, कञ्जविज्ञाक, कञ्जवृक्ष, उद्ग, अकाव,
 मीरका, मनुज ।
 मीरकाज (स० खी०) निर, राज, भाषे क्त्वा । मीर
 कना हीपदाव, पारतो ।
 मीरकावना (स० खी०) निरन्त राननं यत्, निर-रन्त
 विष्णु सुष्, मीरका मयुक्तकञ्ज कञ्जम यो वत् न ।

नीराजना वा । १ दीपादि द्वारा प्रतिमादि देवताका
आरात्रिक, देवताको दोषक दिवानेकी विधि, आरती ।
तिथितत्त्वमें रघुनन्दनने इस प्रकार लिखा है—

“श्रवणप्रदीपाद्यैश्चूताश्वत्यादिपञ्चमेः ।

श्रोपधीभिश्च मेघ्याभिः सर्वैर्बोर्जैर्वादिभिः ॥

नवम्यां पर्वकाले तु यात्राकाले विशेषतः ।

यः कुर्यात् श्रद्धया वीर देव्या नीराजनं नरः ।

शंखमेघादि निन्दैर्जयशब्दश्च पुष्कलैः ॥

धायतो दिवसान् वीर देव्या नीराजनं कृतम् ।

तावत् षडशसहस्राणि दुर्गालोकं महोयते ॥” (तिथितत्त्व)

‘पट प्रदीपादि, चूताश्वत्यादि पञ्च, मेघ्या, श्रोपधि
आदि एवं सर्वैर्बोर्ज यथादि द्वारा भक्तिपूर्वक नवमी
तिथि, पर्वकाल अथवा यात्राकालमें देवीकी आरती
उतारनी चाहिए । इस समय शङ्ख, भेरी आदिका शब्द
श्रीर जय-शब्दोच्चारण भी करना चाहिए । जो उक्त दिनों-
में देवीका नीराजन करता है, उसका कल्पसदृश तम
दुर्गालोकमें वास होता है । नीराजन पांच प्रकारसे
किया जाता है—

“पञ्चनीराजनं कुर्यात् प्रथमं दीपमालया ।

द्वितीयं सोदकान्जनेन तृतीयं धौतवासना ॥

चूताश्वत्यादिपञ्चैश्च चतुर्थं परिकीर्तितम् ।

पञ्चमं प्रणिपातेन साष्टांगेन यथाविधि ॥”

(कालोत्तरतंत्र)

पहले दीपमाला द्वारा आरती करनी चाहिए, पीछे
सोदकाल अर्थात् पद्मयुक्त जल, उसके बाद धौतवस्त्र, चूता-
श्वत्यादि पञ्च और प्रणिपात द्वारा नीराजन करनेका
विधान है । इसीको पञ्चनीराजन कहते हैं । आरात्रिक
प्रदीप द्वारा नीराजन करना होता है, इस प्रदीपमें ५ वा
७ वत्ती बसती हैं ।

‘कुर्यात्प्रदीपकुर्यैश्चूतचन्दननिर्मिताः ।

वर्तिकाः सप्त वा पञ्च कृत्वा वग्दापनीयकम् ॥

कुर्यात् सप्तप्रदीपेन शंखघण्टादिवाद्यैः ।

हरैः पञ्चप्रदीपेन बहुशो भक्तिस्वरः ॥”

(पाद्मोत्तरतंत्र ० १०७ अ)

कुट्टे, म, अश्रु, कर्पूर, हत और चन्दन द्वारा सप्त
वा पञ्च वर्तिका निर्माण करनी चाहिए । पीछे शङ्ख,

घण्टा आदि वाजा बजाना चाहिए । विष्णुविषयमें
पञ्च प्रदीप द्वारा भक्तिपरायण हो कर आरती उतारनी
चाहिए । हरिभक्तिविन्नासमें लिखा है, कि आरती
करनेके पहले मूलमन्त्रमें तीन बार पुष्पाञ्जलि देने
चाहिए और महावाद्य तथा जयशब्दपूर्वक श्रवणमें
घृत वा कर्पूर द्वारा विषम वा अनेक वर्तिका बना कर
नीराजन करना चाहिए ।

“ततश्च मूलमन्त्रेण दत्त्वा पुष्पाञ्जलिप्रथमम् ।

मशानीराजनं कुर्यात् मन्दावाद्यमयस्वनेः ॥

प्रणालयेत्तदर्थं च कर्पूरेण घृतेन वा ।

आरात्रिकं शुभे पात्रे विषमानेकवर्तिकां कम् ॥”

(हरिम० वि०)

पहले विष्णुके चतुष्पादतल और नाभिदेशमें दो बार
पीछे सुवमण्डपमें एक बार और सप्त मन्त्रोंमें ७ बार
आरती उतारनी चाहिये ।

अनेक वर्तिकां बाल कर आरती करनेसे कल्पकोटि
तक विष्णुलोकमें वास होता है ।

“बहुवर्तिकां समायुक्तं ज्वलन्तं केशवोपरि ।

कुर्यादांशुभिः यस्तु कल्पकोटिं वसेद्विती ॥”

(स्कन्दपुराण)

पूजादि मन्त्रहीन वा क्रियाहीन होनेसे यदि पीछे
नीराजन किया जाय, तो पूजा सम्पूर्ण समझी जाती है
अर्थात् पूजादिमें जो सब अभाव है, वह नीराजनसे पूरा
हो जाता है ।

‘मन्त्रहीनं क्रियाहीनं यत् कृतं पूजनं हरैः ।

सर्वं सम्पूर्णतामेति कृते नीराजने शिवे ॥’ (स्कन्दपुराण)

देवताका नीराजन करनेसे सभी पाप विनष्ट होते हैं ।
जो देवदेव विष्णुका नीराजन अवलोकन करते हैं, वे
सप्तजन्म ब्राह्मण हो कर अन्तमें परमपद प्राप्त करते हैं ।

“नीराजनञ्च यः पश्येत् देवदेवस्य चक्रिणः ।

सप्तजन्मनि विप्रः स्यादन्ते च परमं पदम् ॥”

(हरिम० वि०)

देवताको आरती देनेकी हाथसे लेनी चाहिए, आरती
अवलोकनमात्रसे भी अशेषपुण्य लिखा है । जो ऐसा
करते हैं उनके कोटिजुल उदार पाते हैं और अन्तमें उन्हें
विष्णुका परमपद प्राप्त होता है ।

“सूर्यं चापनिकं परितः कथञ्चनैव प्रवर्तते ।
 इन्द्रकोटिं बहुदूराय पाति विम्बोः परं परम् ॥” ;
 (विष्णुपुराणे०)

३. शान्तिमेव, राजाको नीराजन शान्तिकार्यं सम्पन्न
 करके हुदमें जाना चाहिये ।

इसका विषय इन्द्रस्य जितानि इस प्रकार लिखा है—
 मगवान् विष्णुश्च जागरित होने पर सुरस्य, मातङ्ग
 पौर मनुष्यो का नीराजन करना चाहिये । शान्तिं च
 यज्ञस्यको पूर्णमा, हावयो पौर पृथ्वीमीं पञ्चमा
 पाथिनमक्षमं नीराजन नामस शान्ति करनी चाहिये ।
 नमस्के उत्तर-पूर्वदिक्, स प्रयत्न भूमि पर बारह हाथ
 लम्बा और दस हाथ चौड़ा एक तोरण बनवाये । उसमें
 सत्रं, उदुम्बरयाचा पौर बकुलममय तथा कुम्भस्य एक
 शान्तिनिमित्तन निर्मांन करे । इसके द्वार पर च शान्तिनि
 मन्त्र, भ्रज पौर चक्रनिर्माण विधेय है । शान्तिपट्ट पौर
 पश्यान्वकी पुष्टिमे लिए चौकोरि गरीमें प्रतिघरचमस्य
 द्वारा मन्त्रातक शान्तिचान्य कुट पौर सिद्धान्तं हाथ दे
 एव रश्मि, बरच, विष्णुदेव मन्त्रावति, इन्द्र पौर विष्णु,
 उल्मशीय मन्त्रके शान्तिपट्टमें ७ दिन तक पश्यो की
 शान्ति करे । ये चौकोर पुस्त्याइमें यदि गन्ध, सुपंभनि पौर
 शीतभनि द्वारा विभुजमय पौर पूजित हा, तो पशुप-
 वास्य वा अन्य प्रकारके ताडनोय नहीं होती । पट्टम दिनमें
 कुय पौर पौर द्वारा पाठत पाञ्चमस्यिके तोरणके
 दक्षिण सुपने उत्तर सुप्य वेदोके खपर रखे । बन्दन,
 कुठ बमडा (म बीठ), हरिताक, मन्त्राभिना, विण्डु,
 मच, दन्तो, पशुत, पञ्चन, हरिद्रा, सुपच पञ्चिमस्य,
 मटभरत, प्रायमाथा, सङ्घदेवो, श्वेतवर्ण, पूर्वाकोय, नाग-
 कुसुम, कपुत्रा, मत्तावरो, बीमराभी पौर सुप्य इन पञ्च
 द्रव्योंके कनक पूर्य करके प्रभुर मनुष्यायम दाबक प्रभृति
 माना प्रकारके मन्त्रोके साथ बलिहा उपहार दे ।
 अदिद, पलाय, उदुम्बर, चामर्यी वा पञ्चम्य द्वारा
 यज्ञोय-काण्ड बनावे । पैश्व्यं मार्चिकोके लिए स्वर्ण वा
 रोप्य हाप कुक् निर्मांन करना कर्तव्य है । राजा
 पूर्णकी पौर सुख करके पाञ्चमेय पौर दैवर्षोके साथ
 पञ्चिके समीप बैठे । पीछे लक्ष्यपुत्र पञ्च पौर शेष
 इकीको स्नान तथा दोषित करा कर बधन, श्वेतवर्ण,

गन्धर्व, मास्य पौर ध्रुव द्वारा सम्पन्नित करे पौर
 वास्य द्वारा सम्पन्नता तथा पाथयन्त गङ्ग, पुष्पाइ गन्ध
 करते हुए उक्ते पाञ्चमतोरणके समीप जायें ।

इस प्रकारके हाथे हुए पाञ्च यदि दक्षिणघरचको
 मनुष्येय करके बैठ जाय, तो यह राजा बहुत लक्ष्म
 मन्त्रो विनाय करेमे, ऐसा जानना चाहिये । किन्तु ये
 पाञ्च यदि कर जाय, तो राजाका धयम होता है ।

पुरोहितके उपाविधि पश्चिमस्यच करके पाथ्य प्रदान
 करनेसे पाञ्च यदि उसे पान्नाच वा साधार करे, तो राजा
 को भय होती है । किन्तु इसका विपरीत होनेसे पञ्च मो
 विपरीत होता है । उदुम्बरको माफाको बससके खसने
 कबो कर पुरोहित सुप पौर नागसमन्वित सेना तथा पञ्च
 मचको शान्तिपेटिक मन्त्र द्वारा स्पर्श करे । पीछे राङ्गुइहिके
 निये पश्चिमकारिक मन्त्रमे भुयोभूवा शान्ति कर पुरोहित
 यज्ञस्य गन्ध प्रतिहनिनिर्माण पूर्वाक मूल द्वारा उभयका तथा
 प्यन सिद्ध हासे पौर पश्चिमस्यच करके पञ्चको समाम
 पञ्चवावे । बादमें राजा इस प्रकार नोराजित हो कर
 उत्तर पूर्वकी पौर समन करे । उस समय पारो पौर
 नाना प्रकारकी साङ्गनिक ध्वनि होने चाहिये । इस
 प्रकार शान्ति स्थापन करके राजा यदि बुद्धयात्रा करे,
 तो वे निश्चय ही सारे जन्मोको अब कर सकतें हैं ।

(हरपर्वशिवा ३३ म०)

शान्तिहापुराणमें नीराजनशान्तिकी विधि इस प्रकार
 लिखी है,—

नीराजन शान्ति द्वारा पाञ्च गन्ध पादिको उचि होती
 है । पश्चिम मानको शान्तिमुद्रा शृङ्गा दतोयाको नित्र
 पुरके ईयागकीचमें उत्तम खानका नष्टार करना
 चाहिये । पीछे पाठमें दिनमें न राः न करना विधेय है ।

राजा महाबलिष्ठ पौर मनोहर एक पाञ्चको ७ दिन
 तक गन्धपुत्र्य पौर बध्नादि द्वारा चाराधना करे । छठी
 यादिमें पूजा करके उक्त पाञ्चको दक्ष स्थानमें खड़ा
 करायें ; पाञ्चके शिष्टानुसार यमायम जाना जाता है —
 पाञ्च उक्त स्थान पर कर्पायित हो कर यदि माग जाय तो
 राजाका धय । पञ्चु जाग करे तो राजपुत्रकी मृत्यु ।
 राज चपटी प्रतिह्नाचरच करे, तो राजमहिनीको मृत्यु ।
 सुख, नाक, चक्षु पादिके त्रिज पौर खड़ा हो कर गन्ध

करे, उस औरके शत्रुओंका सय और यदि वज्र दक्षिण-
पादके प्रथमभागको राजाके सामने उठाये खड़ा रहे, तो
राजा सत्र विपक्षियोंको पराजय करेगी, ऐसा जानना
चाहिये ।

दशमी तिथिकी प्रातःकालमें नीराजन करे । दैव-
वशतः यदि उक्त तिथिमें कार न सके, तो दशमीके बाद
हाटशी तिथिमें नोराजना-शान्ति कर सकती है । इसमें
भी यदि विघ्न पड़े च जाय, तो निजपुरके ईशानकोणमें
पोडगहस्त-परिमित स्थानके मध्य दशहस्त-परिमित विपुल
तोरण निर्माण करे । ३२ हाथ लम्बा और १६ हाथ चौड़ा
यज्ञमण्डल बनानेका विधान है । वंदोके उत्तरभागमें
अत्युत्तम वेदो निर्माण करे । इस स्थान पर पुरोहितगण
भाग संस्थापन करके पूजन और शाल, उदुम्बर अथवा
अर्जुनवृक्षको शाखाको मत्स्यसमूहादित चक्र तथा ध्वज
द्वारा विभूषित करे ।

पुष्टि, शान्ति और सिद्धार्यघोटकके गलदेशमें शान्ति-
कुल और भस्मातक बांध दे । राजा वेण्वावमण्डलका
निर्माण कर दिक्पाल आदिकी पूजा करे । पुरोहितगण
एक सप्ताह तक घृत तिल और पुष्पको एकत्र कर सूर्य,
वरुण, ब्रह्मा, इन्द्र और विष्णुके उद्देशसे होम करे ।
धर्मार्थकामादि चतुर्वर्गकी सिद्धिके लिये प्रत्येक देवके
उद्देशसे महस्र वार अथवा १०८ वार होम विधेय है ।
तदनन्तर सप्तम्य ८ घंटोंमें नाना प्रकारके पल्लव दे कर
उन्हे स्थापन करना होता है । पुरोहित इन सब घटों-
में मञ्जिष्ठा, हरिताल, चन्दन, कुण्ड, प्रियङ्गु, मनःशिला,
अञ्जन, हरिद्रा, खेतदण्डी आदि तथा भस्मातक, सङ्-
देवी, प्रतापरी, वच, नागकेशर, सोमलता, सुगुणिका,
तुल्य, करवीर, तुलसीदल आदि द्रव्योंको डाल दे ।
इस प्रकार करके ७ दिन तक पूजा और होम करना
होता है । जब तक इस नीराजना-शान्तिका श्रेय न हो
लाय, तब तक राजाको रात भर घरमें रहना उचित है ।
शान्तिके समय उन्हे यज्ञभूमिमें रहनेको जरूरत नहीं
और इतने समय तक किसी प्रकारका यानारोहण निया
है । सात दिन तक देवताओंको नाना प्रकारके नैवेद्य
चढ़ाने होते हैं ।

सातवें दिनमें खड्ग चर्म प्रभृतिसे विभूषित हो कर
तोरण-भ्रान्तमें सूर्यपुत्र रेमन्तका सूर्यपूजाविधानसे पूजन
करे । इस समय राजाको हीमकुण्डके उत्तरभागमें
आत्रचर्म पर बैठ कर अश्वको देखते रहना चाहिये ।
पुरोहित इन समय मन्त्रोक्त अन्नपिण्ड उपस्थापित करे ।
यदि अश्व उग्र अश्वको खा ले अथवा सूँघ कर छोड़े,
तो जानना चाहिये कि कार्यकी हानि होगी । पोछे पुरो-
हित उदुम्बर, घाम्ब्र अथवा वकुलकी शाखाको घटजलमें
डुबो कर शान्तिमन्त्रसे सेचन करे । इस प्रकार शान्ति-
कार्यके श्रेय ही जाने पर राजा उस घोड़े पर सवार हो
उत्तर पूर्वकी ओर सब प्रकारकी जाति और चतुरङ्गवलके
साथ प्रस्थान करे । ऋत्विक्, पुरोहित और आचार्य-
गण सावधान हो कर शुभाशुभ देखनेके लिये घोड़ेके
पोछे पोछे चले ।

इस प्रकार एक कोस तक जानेके बाद राजा पूर्व-
द्वार हो कर नगरमें प्रवेश करे । अनन्तर आचार्य प्रभृति-
की यथोपयुक्त दक्षिणा दे कर विदा करे । इस तृतीया
में यदि राजाके जाताशौच वा स्नानाशौच रहे, तो भी यह
नोराजना उत्सव रुक नहीं सकता ।

(कालिकापु० ८५ अ०)

नीराजना (सं० पु०) १ दीपदान, आरती, देवताकी
दीपक दिखानेकी विधि । २ इधियारोंकी चमकाने या
साफ करनेका काम । ३ एक त्योहार जिसमें राजा
लोग इधियारोंकी सफाई कराते थे । यह द्वार (कातिक)-
में होता था जब यात्राकी तैयारी होती थी ।

नोरिन्दु (सं० पु०) निन्दर, कम्पने भावे-क्लिप्, नोरा
नितरा कम्पनेन इन्दन्ति सुभगेन घोभते ततो इटि-उण् ।
अश्वशाखोटवृक्ष, सिहोरका पेड़ ।

नीरुच् (सं० त्रि०) निश्चित रोचते रुच्-क्लिप्, रलोपे
पूर्वाणो दीर्घः । नितान्त दौसिशील, जिसमें बहुत चमक
दमक हो ।

नीरुज् (सं० पु० स्त्री०) निरु-रुज् भावे-क्लिप्, रलोपे
पूर्वाणो दीर्घः १ रोगाभाव । पर्याय—स्वास्थ्य, वात्त,
अनामय, आरोग्य । (त्रि०) निर्मास्ति रुग्, रोगो यस्य ।
२ पट्ट, चालाक, हीशियार । पर्याय—उल्लाव, वात्त,
कल्प ।

बुध, वंशाङ्कुर, मरकत, इन्द्रनील, मणि, सूर्याश्र आदि २६ सारिका पत्ति। २७ क्षणकुण्डक, नोलीकट सूर्या। २८ क्षणनिगुण्डी। (त्रि०) २९ नीलवर्णयुक्त, नीलरंगका, गहरे आसमानो रंगका।

नील (सं० क्ली०) वृक्षविशेष, एक पौधा जिससे नील रंग निकाला जाता है। इसका अंगरेजो, फारसी और जर्मन नाम इण्डिगो (Indigo) तथा लैटिन नाम इण्डिगोफेरा (Indigo ferra) है। नीलके पौधेकी ३००के लगभग जातियाँ होती हैं, पर जिनसे यह रंग निकाला जाता है वे पौधे भारतवर्षके हैं और ४० तरह के होते हैं।

जिस नीलसे रंग निकाला जाता है उसका वैज्ञानिक नाम Indigofera tinctoria है। इसे संस्कृतमें नीलका, भोटमें दसना, तुर्कीमें ओस्मा, सिन्धुप्रदेशमें जिल वा नीर, बम्बई-प्रान्तमें नोला, महाराष्ट्रमें नोलि, गुजरातमें गलि वा नोल, तामिलमें नीलम्, तेलगुमें नौलमन्दु, कर्णाटमें नोली, ब्रह्ममें सेनाई, मलयमें नीलम्, पारसमें नीलाज और पारसमें नोवह कहते हैं।

नीलके प्रादि इतिहासके विषयमें कुछ भी जाना नहीं जाता। प्राचीन उद्भिदविद्याविशारदोंका कहना है, कि भारतवर्ष, अफ्रीका और अरबदेशमें यह जंगल-चवस्थामें उपजता था। किन्तु जिस नीलसे रंग निकाला जाता है, (अर्थात् Indigofera tinctoria) वह पहले पहल किस देशमें उपजाया गया, उसका कोई निदिष्ट प्रमाण नहीं मिलता। कोई कोई कहते हैं, कि सबसे पहले नील गुजरातमें उपजाया जाता था, दूसरे जगह नहीं। डि कार्शोलीने लिखा है, कि संस्कृत कवियोंने जब 'नोलि' शब्दका व्यवहार किया है, तब निश्चय है, कि यह भारतवर्षका ही पौधा है। नीलरंग पृथ्वीके अनेक स्थानोंमें प्रचलित था। नीलवृक्ष (Indigofera tinctoria) के सिवा अनेक्य वृक्षोंसे भी नीलरंग प्रस्तुत होता था। अतएव भिन्न भिन्न देशोंमें भिन्न भिन्न प्रकारके पौधोंसे नील रंग निकाला जाता था।

नील शब्दका अर्थ क्षण है और कोई कोई काले अर्थमें भी व्यवहार करते हैं। इसी अर्थमें संस्कृत कवि-गण नीलमञ्जिका, नीलपञ्जी, नीलगो प्रादि अनेक शब्दोंका व्यवहार कर गये हैं।

१५वीं शताब्दीमें जब यहाँसे नील यूरोपके देशोंमें जाने लगा, तबसे वहाँके निवासियोंका ध्यान नीलकी ओर गया। सबसे पहले हालैंडवालोंने नीलका काम शुरू किया और कुछ दिनों तक वे नीलको रंगारङ्गके लिए यूरोप भरमें निपुण समझे जाते थे। नीलके कारण जब वहाँ कई वस्तुओंके वाणिज्यकी धक्का पहुँचने लगा, तब फ्रांस, जर्मनी आदि कानून द्वारा वे नीलकी प्राप्ति बन्द करनेको विवश हुए।

१६०९ ई०में ४वें हेनरी (Henry IV)ने टिंडोरा पिटवा दिया कि 'जो कोई नील रंगका व्यवहार करेगा, उसे प्राणदण्ड मिलेगा।' जर्मनीमें भी नीलका व्यवसाय बन्द कर देनेके लिये शरत कानून पास हुआ था। इस प्रकार यूरोपमें सब जगह वायडकी खेती (Woad plantation)की अवधति होती देख नीलकी बन्द कर देनेकी बहुत कुछ चेष्टा की गई थी, किन्तु कुछ भी फल न निकला। थोड़े ही दिनोंके अन्दर भारतके नीलरंगने वहाँके विप्रचलित रङ्गका स्थान दखन कर लिया।

रानी एलिजाबेथके समयमें १५८१ ई०को नील और वायडसे प्रस्तुत रंगका समभावमें व्यवहार करनेकी अनुमति दी गई। पश्चिमकी कुछ कारखानोंके लिये नीलका ही व्यवहार होने लगा। कुछ दिनों तक अर्थात् सन् १६६० तक इङ्ग्लैण्डमें भी लोग नीलकी विप कहते रहे जिससे इसका वर्धा जाना बन्द रहा। पीछे २५ सालके समयमें वेल्जियमसे नीलका रंग धनानेवाले सुकौशलो नीलकर बुलाए गए जिन्होंने नीलका काम सिखाया। इष्ट-इण्डिया-कम्पनीने जब नीलके कामको ओर ध्यान दिया, तब वह सूरत और बम्बईमें काफी नील भेजने लगी।

किसी किसीका कहना है, कि चन्दननगरमें फरासीसियोंकी एक कोठी थी। इसी कोठीसे नीलकी खेतीका पुनरभ्युदय हुआ था, किन्तु इससे उतनी उन्नति नहीं हुई। पीछे जब इष्ट-इण्डिया कम्पनीने देखा कि नीलके लिये फ्रांस और स्पेन उपनिवेशके लोगोंका वाट जोड़ना पड़ता है, तब वह ब्रह्मदेशमें नीलोत्पत्तिके लिये यथेष्ट उक्ताह प्रदान करने लगी।

ईस समय अमेरिका में यह रोग बर्बोने बहाम के नामान्तरणों में पा कर कोडिया कोडों । और और भारतवर्ष में देना एकदम नोन कतब कोने लगा कि वह प्रायः और कोन है। मात कर गया और बहुत पच्छे में गिना जाने लगा । १८०२ ई० में पहले पहल यशोर में नोन को खेती यह हुई ।

१८२० ई० में भी प्रथमतः नोन प्रस्तुत होता था । नगर और ज्योत निवृत्त कोलकाता में व्यवहृत पुरातन पात्रादि पात्र भी देपने में पाते हैं ।

प्रथमतः यह इण्डिया इन्फन्टी हाथों की दादनी दे कर नोन को खेती करने में बहाव देने लगे । जो कि यह कृषि देखा कि इसमें निश्चय लाभ है तब (१८०२ ई० में) वेसो रोपना देना बन्द कर दिया । १८०८ ई० में कम्पनी ने लखनऊ सरोवर में नोन खेती करने के लिए एक कोसे कोनी । यद्यपि देखा गया कि युरोप-वासियों के लडावने को पकने पकन इन दिग्गों नोन की निवृत्त खेती का कारण हुआ है । (१८वीं शताब्दी के प्रारम्भ में पाच बीर नोन २५ कि सी कर १५ ई० में विख्यात था ।

१८२० ई० में नोन की खेती के लिए जमीं दार और बर्बोने के साथ हाथों का सम्बन्ध प्रमत्त बनन और विधिय लखदायक को पड़ा । अनेक स्थानों में जमीं दार नोन हाथों को पतनिकी यार्ड पर जमीन बन्दोबस्त देने लगे । जो फिर उन जमीन को रैयतों के साथ बन्दोबस्त करने लगे । किन्तु प्रबन्ध रैयतों को पतनी जमीन में नोन उपजाना पड़ता था । जहाँ तो स्थानीय जमीं दार प्रजा द्वारा नोन की खेती करा लेते थे । जहाँ जहाँ वे नोन विपय में एक प्रबन्ध निष्ठा प्रिम में उनको ले कहा है कि नोन की खेती के लिए प्रजा के प्रति विशेष पत्राचार होता था । प्रजा को एक तरह जमीं दार के भीतर एक कहने में भी कोई कल्प न थी । उनका यह प्रबन्ध उस समय की शोचनीय प्रवृत्तियों में विधिय कन दायक हुआ था ।

इन और ज्ञान देना बाबन्धक प्रमत्त कर १८६० ई० की ८ वीं धारा के अनुसार कुछ काम चारी निवृत्त विधिय गए । जो नोन सञ्चालन । अनुसन्धान कर सब संयत्को पकर देते लगे । एक व ई० के अनुसार उद्देश्य

उद्देश्य अनुसार कार्य करने को साथ हुए, किन्तु जहाँ तक बन और कोयल के काम किया जाता था, जहाँ यह उद्देश्य निवृत्तानुसार कोई भी कार्य करने को साथ लगे था । १८६८ ई० में ८ वीं धारा के अनुसार यह धानून तोड़ दिया गया । १८७६ ७० ई० में विहार में भी इस प्रकारका प्रवृत्त व्यवहार प्रारम्भ हुआ था, किन्तु पूर्व के प्रथम नोन कर माइको ने प्रजासंगठन के प्रति विधिय दया दरमायी ; अतः गवर्नर ने इस विषय में कल्पेय न किया । केवल इतना ज्ञान प्रमत्त रखा जाता था कि नियम के विवर कोरें ज्ञान करने न पावे । अतः माग समय में इस प्रवृत्त में भी ज्ञान न प्रवृत्त है, अथवा प्रमत्त यह कि जो कोई इनका उद्देश्य लेगा यह नियम के अनुसार करने को साथ होवा । नही तो पाईलने अनुसार उसे प्रतिपूरक देना पड़ेगा । अतः पूर्व के कोई किनोने नोन को खेती का नही चलता ।

बीच बीच में नोन-अवसाधियों की समिति बँटती है । उन समितियों में एक निवृत्त प्रजापति लगे हैं । उनमें नियम के अनुसार नें कार्य करती तथा नोन को खेती के साथ सम्बन्ध करने हैं । गवर्नर ने जो नोन परने कर कटा दिया है, उनमें दिना दिन इस बाबन्ध की उपति होती देखी जाती है ।

१८०१ ई० १ प्रकृष्ट कर देने नोन के विवेक प्रिम में मन पोषि १५ ई० कर देना पड़ता था । किन्तु इस समय में नोन प्रस्तुत करने में मन पोषि १५ ई० और नोन की पतियों पर एक टन (२० मन ८ बीर)-के लवर होने पर जो तीन रुपये लगने लगे । और और ये सब कर कटा दिए गए हैं ।

बहाम के नोन की खेती और और अमेरिका और वेस्टइण्डीज में पादि स्थानों में फैल गई । यह प्रमत्त के परिभाषियों का ज्ञान उस और गया, तब वे भी बहुत यत्नपूर्वक इनको खेती करने लगे । तिरुवृत्त में भी इनको खेती होती है ।

नीचरी कोठी—मिथ मिथ स्थानों में नोन की खेती मिथ मिथ कस्तुरियों और मिथ मिथ रोतिम रोती है । मि० कल्प उस रोडने परने नोन की खेती की बाबन्ध और उपतिविषयक सुझावों निष्ठा है कि उत्तर विवर

आदि उच्च स्थानोंमें नीलको खेतीमें बहुत परिश्रम लगता है। वहाँ गृहस्थ लोग जमीनको पहले अच्छी तरह कुदानोंसे कोड़ते हैं, पीछे उसमें नीलका बीज बो कर खाद डालनेके बाद चौकी देते हैं। चौकी देने पर भी यदि ठेना रङ्ग जाता है, तो उसे हाथसे फोड़ते अथवा बालक-बालिका मिल कर सुहरसे पीटते हैं।

निम्न बङ्गालमें जमीन प्रायः समुद्रसे बहुत कम ऊँची है। इस कारण वर्षाके समय बड़ा हट्टि और बाढसे डूब जाती है। शरत्कालके आग पर जल सूखने लगता है। इसी समय इस देशमें नीलका बीया बोया जाता है। अतएव यहाँ उत्तर-विहार आदि स्थानोंके जैसा विशेष परिश्रम करना नहीं पड़ता। किन्तु जहाँकी जमीन अपेक्षाकृत ऊँची है, वहाँ खेत जोत कर बोया बोया जाता है सही, लेकिन उत्तर-विहारके जैसा कुदानसे कोड़ कर वा ढेने फोड़ कर नहीं। यहाँ विशेष कर कृषिक महीनेमें ही बीज-वपन होता है।

दक्षिण-विहारमें वर्ष भरमें दो बार बीया बोया जाता है। एक भाद्रमासमें हट्टिके समय जिसे आषाढोनोन कहते हैं। आषाढोनोलका भरोसा बहुत कम रहता है। कारण काफी तौरसे धूप और पानी नहीं मिलता जिससे बीया बरबाद हो जाता है। दूसरी बार इसके बुननेका कोई निर्दिष्ट समय नहीं है, वर्ष भरमें प्रायः सभी समय बोया जा सकता है। यहाँ कहीं तो फसल तोन ही महीने तक खेतमें रहती है और कहीं अठारह महीने तक। जहाँ पौधे बहुत दिनों तक खेतमें रहते हैं वहाँ उनमें कई बार काट कर पत्तियाँ आदि ली जाती हैं। पर अब फसलका बहुत दिनों तक खेतमें रखनेको चाल चढतो जातो है। उत्तर-विहारमें नील फागुन-चैतके महीनेमें बोया जाता है। गर्मीमें तो फसलकी बाढ़ रुकी रहती है पर पानी पड़ते ही जोरके साथ टहनियाँ पत्तियाँ निकलती और बढ़ती हैं। अतः आषाढमें पहला कलम ही जाता है और टहनियाँ आदि कारखाने भेज दी जाती तथा खेतमें खूटिया रह जाती है। कलम काटनेके बाद फिर खेत जोत दिया जाता है जिससे बरसातका पानी अच्छी तरह सोखता है और खूटियाँ फिर बढ़ कर पौधोंके रूपमें हो जाती है। दूसरी कटाई फिर

कारमें होती है। कहीं कहीं ऐसा भी देखा जाता है कि जब चैत-वैशाखमें कुछ भी पानी नहीं पड़ता, तब क्षपकगण बामके डंडेमें एक तरफ जलपूर्ण वास्टी और दूसरी तरफ कोई भारो चीज लटका कर कंधे पर चढ़ा लेते और खेतमें जाते हैं। जिस खेतमें पानी देनेकी आवश्यकता देखते, उस खेतका पानीसे सींच देते हैं। कहीं कहीं चमड़ेके थैलेमें पानी भर कर बैलको पीठ पर लाद देते और खेत ले जा कर हट्टिका अभाव पूरा करते हैं। जो धनो गृहस्थ हैं, वे कहीं कुर्मा खोद कर ही काम चला लेते हैं। कारण चैत्रमासमें यदि हाँट विनकुल न हो, तो जमीन फट जानेकी सम्भावना रहती है। ऐसा होनेसे बीज नष्ट हो जाते हैं और किसी तरह यदि पौधे उग भी जाय, तो पीछे वे तेज-होन ही जाते हैं। जब तक हट्टि नहीं होती तब तक वे इसी प्रकार खेतको सींचते रहते हैं।

निम्नबङ्गालमें नील सब जगह कृषिकमासमें बुना जाता है मही, पर इसको कटाई भिन्न भिन्न समयमें होती है। एक प्रकारका ऐसा नील है, जो आषाढ, श्रावण और कभी कभी भाद्र मासमें भी काटा जाता है। यह शरदोय नील आठ मास तक जमीनमें रहता है। कटाईके समय पहले निम्नस्थानका नील काटा जाता है। कारण बाढ़का डर बना रहता है। काटनेके बाद पौधोंकी अँटियाँ बांधते और बैलकी गाड़ी पर लाद कर कोठोंमें पहुँचा देते हैं।

बङ्गाल छोड़ कर भारतवर्षके अन्यान्य स्थानोंमें भी यथेष्ट परिमाणमें नील उत्पन्न होता है। उन सब स्थानोंमें जिस प्रणालीसे नीलको खेती होती है, वह, उपरि-उक्त प्रणालीसे विशेष विभिन्न नहीं है। पर स्थानविशेषसे विभिन्न समयमें बीजवपन और कटाई होती है। सुचतुर क्षपकगण अनेक समय नीलके साथ साथ अन्य अनाज भी उपजाते हैं। निम्नबङ्गालमें कृषिकमासमें नीलके साथ सरसों बोई जाती है। बम्बईप्रदेशमें नीलके साथ रुई, कंगनीदाना, आदिकी खेती करते हैं।

प्रत्येक बीघेमें ४५सेर नीलका बीया लगता है। कलिन साहबकी रिपोर्टसे जाना जाता है, कि बङ्गालमें प्रति बीघे प्रायः १५ रु०का नील उपजता है। नीलका

धर्म प्रतिक्रमों पाठ है। पड़ती जिन सब जमोनों मोल होता था उससे अधिकारी क्लानमें चमी पाठ होने लगा है। विदेशी रक्तों को गुणों में ये जो दो सर्वप्रधान हैं। नीलको ऐतमी सुविधा यह है, कि कान्ने पियमी मिलती है।

चाद्याम पौर ब्रह्मदेयमें मो नील उपजता है। पड़ने ब्रह्मदेयमें कोठीकी निकटतम जमीनके जलोयोगमें प्रजा भाष्य हो कर मोल उपजती हो। शिवन ब्रह्माममें नहीं बल्कि तमाम भारतवर्षमें नीलको ऐतमी प्रजाको पसीम कष्ट सुभयता पड़ता था। शिविन प्रभ वे ना नहीं है, नील उपजाना वा नहीं उपजाना प्रजाको दृष्ट्या पर है।

मन्द्राजके मन्त्र मिकूर पौर कङ्गाया जिना नीलका प्रधान स्थान है। इस पंचममें कुछ विभिन्न उपायसे मोल उपजाया जाता है। यहाँ इसकी दो प्रकारकी ऐतमी होती है, प्रथम पीपमन्त्रमें पौर हितोय नर्वाते। पड़की प्रजाकीमें जमोनों कोड़ा पानो पड़ते हो ऐत जोतमें काबिल हो जाता है पौर तब मार दे कर चेत नैलाकमें बोया जाते हैं। इस प्रजाकीमें इटिके जन्ने ऊपर पूरा मरोघा करना पड़ता है। हितोय चर्वात् पाई प्रजाकीमें इटिके जन्ने चपेघा नहीं करणे जोगो। जोकर पञ्चवा पौर जमायवे निकट बीया बोया जाता है। उस जमोनों तालाब पादिके जस सो चर्मी वरु रत नहीं पड़ती। इस प्रजाकीमें जमोनों मो कम सीती जातो है। शिविन मार हर जालतमें दिवा जाता है। कही कही ऐतकी चर्वा वनाकेके निये मिकू तोम चार दिन तक ऐतमें छोड़ दिजे जाते हैं। इनसे मन्त्र मूलादिके जमोनोंको उन्नैरतायिक पड़ती है। ३३ दिन बाद ही बीज य कुरना शुरू कर देता है। यदि कुछ दिवस हो जाय, तो एक बार जस को जनेसे निवृत्त हो पक्षुर निचन पायेगा। टहणियां निचन पायेके बाद पाया जात दिन तक जन् देना पड़ता है। तीन मासके बाद इनकी पड़ती कटाई पौर फिर तीन मासके बाद दूसरी कटाई होती है।

नीलके बीज लगानेके दो उपाय हैं। कटाईके बाद ऐतमें जहाँ जहाँ को दो बार पोषे रह जाते हैं, उसकी

कुछ कास रखा करे। पोषे फल लगने पर उसे स पाठ करके दूसरे वर्षक निये रत्न छोड़े। वे बीज सर्वोत्तम होते हैं पौर जोए जामिके तीन चार दिन बाद ही सबसे सब उभ पाते हैं, एक भी मरुत नहीं होता। पूव समवर्ष ब्रह्माल पादि ऐतमें १५ मासके एक बीज मीमे जाते थे। ब्रह्मामके कोटपादपुरमें एक प्रकारका बीज उत्पन्न होता है जिसे 'देगो' कहते हैं। उस स्थानमें जहाँ ३६ बार ऐत जोत कर नील बोया जाता है, जहाँ इस ऐतकी बीजकी बढरत पड़ती है। किन्तु ऐतकी बीजके जो पोषे उत्पन्न होते हैं, उनको कटाई ऐतकी होती है। यमोर, पूर्वियामे ऐतकी बीजके जो पोषे, जगते वे भी बिलम्बसे परिपक्व होते हैं; किन्तु पड़ने पौर कामपुरमें बीजके उत्पन्न पोषे कुछ पड़ने ही कट जाते हैं। मन्द्राजो बीजके तो पौर भी शीघ्र नील उत्पन्न होता है। किन्तु यह उनका सुविधाजनक नहीं है। उनका कारण यह है, कि नदीका जल ज्वलक परिष्कार नहीं हो जाता तब तब कोठीका काम शुरू नहीं होता है। किन्तु निच समय मन्द्राजो बीजका मोल होता है उस समय नदी वायुवामय रहती है। मोलबीजके मूल्यकी कुछ स्थिरता नहीं है। प्रति मनका दाम ४५ से कर ४०० चामीन रूपये तक है। मया पौर उज्जवे निवृत्त चर्वा उन्नोतमें प्रति बीजे ६० सेर बीया बोया जाता है। जो सब नीलके पोषे सजेन नहीं होते, उन्हीं बीजे के थिजे रत्न छोड़ने हैं। इस प्रकारके पोषेके एकड़ वीजे पाया ६ मन बीज उत्पन्न होता है।

यद्यपि नीलकी ऐतकी बहून उन्नतमें पौर कम परि जमने होती है, तो भी इसमें कभी कभी यदेष विध पड़ जाता है—(१) वे मास जस मासमें पनाउटि होने पर जन्म समय पतियां भुलस जाती हैं। (२) ज्व कभी पोषे परिपक्व हो जाते, तब जन्में एक एक सन्ना सज्जक था कोड़ा लयता है जो पोषिका यदेष मुक्त भाग करता है। इस कोड़ेके उत्पन्न होनेके जो समय सेना पादिके कि मोल कटाईके उपरुक्त समय था मया। किन्तु २३ दिन यदि कटाईमें दिवस हो जाय, तो कोड़े पतियोंकी बिलकुल कटाई गिराते हैं। (३) २३से २ एक सन्ना एक प्रकारका कोड़ा मोलके पोषेमें देया मया।

हे। कभी कभी ऐसी नोजन आ जाती है, कि खिनका खिन उक्त कोड़ोंसे वृक्षहोन हो जाता है। (४) वृष्टि और गिलावृष्टिसे तथा कटाईके बाद पौधोंके जलसे भिगो जानेसे पत्तियां बरबाद हो जाती हैं जिससे सुन्दर रंग नहीं बनता। (५) अतिवृष्टि, अनावृष्टि दोनों ही इसके अनिष्टकर है। (६) पौधोंके मतेज रहने पर भी यदि वे बहुत दिनों तक खिनमें छोड़ दिये जाय, तो वृष्टि आदिसे नष्ट हो जानेको विशेष सम्भावना रहती है।

युक्तप्रदेशमें तथा अयोध्याके गढ़लो नामक स्थानमें एक प्रकारका कोड़ा उत्पन्न होता है जो नीलके पौधोंका परम शत्रु है। कभी कभी इतने जोरसे हवा बहता है, कि पौधोंके बिलकुल डंठल टूट जाते हैं, एक भी पत्ता रहने नहीं पाता। फलतः उससे रंग निकाला नहीं जा सकता। मन्द्राजमें पङ्कपाल, गोइलोपुरुषु और कम्बाली-पुरुषु इत्यादि कोड़ोंसे पौधोंको विशेष क्षति होती है। बुद्धिदिगालू नामक कोट १५६ एख तकके अद्दुरकी नष्ट कर डालता है। इस अवस्थामें यदि ये सब कोट देखे जाय, तो सम्भ्राना चाहिए कि इस स्थान नील इतना ही तक शेष है। सिवेल साहब (E J Sewell) ने लिखा है, कि अद्दुर निकल जानेके दो महीनेके अन्दर बुद्धिदिगे और प्रागुईमण्डल-पुष्टिगुलू नामक दो प्रकारका उत्पाद होता है। पङ्कनेमें पत्तियां बिलकुल सफेद हो जाती हैं और दूसरेमें कालो हो कर जमीन पर गिर पड़ते हैं। सि० कफ साहब (C. kough) ने एक श्रेय न तन रोगका उल्लेख किया है। इसमें पत्तियों पर चकत्ता सा दाग पड़ जाता है और थोड़े ही दिनोंके मध्य पौधे मर जाते हैं।

सारे बङ्गालमें कितनी जमीनमें कितना नील उत्पन्न होता था, उसका निणय करनेके लिये सबसे पहने डाक्टर एच मैकन (Dr. H. Mocaun) ने चेष्टा की। स्थानीय कर्मचारियोंके विवरणसे उन्हें पता लगा था, कि १८७७-७८ ई०में प्रायः सात लाख एकड़ जमीनमें नील उपजाया जाता था। फिर १८८४-८५ ई०को गणना से जाना जाता है, कि प्रायः तेरह लाख एकड़ जमीनमें नीलकी खेती होती थी। उस वर्षके उत्पन्न नीलकी परिमाण-संख्याके साथ तुलना करनेसे देखा जाता है

कि १८७७-७८ ई०को विहारमें १८१७१६ एकड़ जमीनमें नील उपजाता था और प्रत्येक एकड़में २० पौण्ड नील होता था। फिर निम्न बङ्गालको ३४०३४० एकड़ जमीनमें नीलकी खेती होती थी और एकड़ पीछे १२ पौंड नील उत्पन्न होता था। १८८४-८५ ई०में विहार और निम्न बङ्गालमें किस हिसाबसे नील उपजाता था सो ठोक ठोक मान्य नही। किन्तु टमास कम्पनीके विवरणसे जाना जाता है कि उपरि-उक्त कृषु वर्षोंमें क्रमशः ३८३२६०५ पौण्ड अर्थात् एकड़ पीछे ६ पौण्ड नील हुआ था। लेकिन डा० मैकनने जमीनका जैसा परिमाण दिया है, उसमें अधिक परिमित प्दानमें नीलकी खेती होती थी। गत १८८८ ई०के विवरण पढ़नेसे मान्य होता है, कि भारत भरमें कुल चोदह लाख एकड़ जमीनमें नीलकी खेती हुई थी और १५६४०१२८ पौण्ड नील विदेशमें भेजा जाता था। इस हिसाबसे प्रति एकड़ १११ पौंड नीलका होना साधित होता है। किन्तु भारतवर्षके व्यवहारके लिये २० लाख पौण्ड नील हरवर्ष मोजूट रहता था। इससे यह सात होता है, कि बङ्गालमें एकड़ पीछे १२ पौण्ड और विहारमें २० पौण्ड नील उत्पन्न होता था।

नीलसे रंग निकालनेका उपाय।

नीलका रंग कोठीमें प्रस्तुत होता है। इस कोठीको लोग कनभान (Concern) कहते हैं। प्रत्येक कोठीमें यन्त्र रखनेके पात्रादि और दूसरे दूसरे आवश्यक वस्तु आदि तथा कुली, मजदूर और कर्मचारी रहते हैं। इन सब काम चारियोंके ऊपर एक अध्यक्ष रहता है। कार्याध्यक्षको सुदक्ष, बहदुर्गो और सर्व-कार्यकुशल होना आवश्यक है। विशेषतः परिष्कार जलका संग्रह करना अध्यक्षका प्रधान कार्य है। कारण बिना परिष्कार जल और नीलपौधोंके कोठीकी काम चल हो नहीं सकता। नीलसे रंग दो प्रकारसे निकाला जाता है। एक हरे और दूसरे सुखे पौधे।

१। हरे पौधेसे रंग निकालना।

नील प्रस्तुत करनेमें परिष्कार जलका संग्रह करना विशेष आवश्यक है। यही कारण है कि नदी वा प्रभूत जलपूर्ण जलाशयके समीप कोठी बनाई जाती है।

पात्रावन कमीसोवन यन्त्र द्वारा (pump) सबीज पावने मो मल भर कर रच दिया जाता है। एष प्रकार घनपुट बन त्रिमसे मसा मने पिये चडबडोका रचना निगान्त पावय्यक है।

एत चडबडोके पछाभा छोटे छोटे घोर मो पनेच चडबडो रहते हैं। प मीमीमें एत चडबडोको माटम (Vals) कहते हैं। एत एत चडबडोको परकर म म्म रपनेके लिए लपको कवरन होती है। ते सब माट पुट दो चोचोमि विमल है, होपि माट (Stefing Vat) घोर चोटि माट (Wetling Vat)। बडो घोर छोटे चडबडो का पाकार कोठेके समान भई होता। नीलको पाकरनेके अनुकार त्रिमल कोठेके विमल पाकारके चडबडो बने होते हैं। त्रिम लव कोठेके १२ होपि माट रहते हैं, एतका परिमाण साधारणतः २४×१८×३ पुट होना चाहिये। ये सब चडबडो ईट घोर सीमेण्ट से बने होते हैं तथा ये कोठके मजे रहते हैं। एतके सामने मरीके मोचे घोर मो चितने प्रगत घोर पक्ष मरी चडबडो रहते जिन्हें बोटि माट कहते हैं। होपि माटके नीचे एक छिद रहता है। बाहरने बनमें काठको ठेको सतो रहती है। एत चितमें मल लगा कर होपि माटके बोटि माटमें जोड़ दिया जाता है। पोछे इस ठेको को धोत देनेसे होपि माटमें ओ कुछ मनुष्य रम रहैगा बड चोटि माटमें जना आयगा। इसी प्रकार बोटि माट के ऊपर मोचे भी चितने छिद होते को लपके माय म लम्प रहते हैं।

होपि माट (पर्यात् मिसेन्का पात्र) जिस निचे बडबडो होता है, पक्षाय पात्रो का विवरण देनेके पक्षे हमोका संक्षिप्त विवरण देना चाहय्यक है। कटे हुए डो पोछे कोठेमें चितने जोड़ रहते हैं लके रती चडबडोके दगा कर रच होइते हैं घोर ऊपरसे पात्रो भर देने है। बाहर जोन्ड बटे पात्रोमें पड़े रहनेसे एतका रम पात्रो में उतर जाता है घोर पात्रोका रग धानो हो जाता है। चोटि होपिमाटको ठेको धीम देनेसे बड पात्रो दूतरो मीटमें चर्चात् बोटि माटमें जाता है। एत समय एत तरल पदार्थका बर्ष दीप्य कर महजमें बड महते है, कि रम कोसा होगा। इति बड एत महजके लिए

कुछ पीसा मान्यम पड़े, तो ज्ञानता चाहिये कि मोल बहुत छल्लट होगा। यदि यह मदीरा (Madira) के रग-मा मान्यम पड़े तो सुन्दर रम कुछ विपुल घोर सब बडबडो मिश्रित तथा पक्षान्मिश्रित माठा नील या मान्यम पड़े, तो मध्यम रग घोर यदि मनीन लाल बथ दीप्य पड़े, तो रग लराध हो गया है, ऐसा ज्ञानता चाहिये। बोटि माटमें पानिसे माड ही छिड़ दी चटे तक यह कलक्रीमे जिन्हाया घोर मसा जाता है। मनेका यह काम कही ज्ञापने घोर कही मयीनके चडबडो भी होता है। दो ठाई चटे तक मये ज्ञानके बाद बड रम पक्षी गाड़ा मधुअर्ब, पीछे के गनिया घोर मने पीछे घोर नीलबर्ष या देवनेमें लयता है। इस पात्रोइन पात्रमें दो जिपाय निय्य होनी है, इसी तरह पदार्थके ऊपर बाबुजित पक्षजन किया घोर इसी रग प्रसुतकारी कचामनुदका एकत्र हो कर एत छडदाकार चारण। सामानिक दक्कतो का मत है, कि पानोदित जोनेके पक्षे जलपय पदार्थ लोख नीला (blue) नहीं रहता कर लने मधेद नील या ह्वारट दक्कतो कहते हैं।

पक्षजन बाबुके राय मिन कर यह नील रगमें परिष्कृत हो जता है। पानोइनजिया द्वारा पक्षजन बाबुके माय मिन जाता है, इस कारण पक्षाय्य लपपये पक्षजनके भाव मिश्रित कर लही मनेसे भी काम चल सकता है मधेद नेम पानोमें मल जाता है। मेखिन लव यह पक्षजन बाबुके माय मिन कर (रूप) रचबिहित नील हो जाता है तर पानीमें लही मगता। मनेके बाद पानी पिसनेके निचे जोड़ दिया जाता है त्रिमके कुछ टेरमें मान नीचे बँड जाता घोर तन ऊपरका पात्रो मल द्वारा दूतरे चडबडोमें रचा दिया जाता है। यह पात्रो कमी कमी कमीमें मारला काम करता है। दूत पात्रोके निक्षय मने पर बड जमा हुआ नील बाथी में भर कर हमनीके ऊपर रच दिया जाता है, पिसा कनेसे एतमें जिनका झूड़ा करकट तथा पतियां रहता, धमी निक्षय जाती है।

चोटि एक लल जो कर लने एक पात्रमें लाय है। एत पात्रका नाम है पल्पमाट (Pulp Vat)। एतको पात्रमें १२×१०×३ पुटकी होती है। एतके ऊपर बायनर

रहता है। अब उस जमे हुए नीलको पुनः साफ पानीमें मिला कर उबालते हैं। उसल जाने पर थड बासकी फट्टियोंके सहारे तान कर फैलाए हुए मोटे कपडेकी चाँदनी पर ढाल दिया जाता है। चाँदनी छननेका काम करतो है। पानी तो नियर कर वह जाता है और साफ नील लेइके रूपमें लगा रहता है, यह गोला नील छोटे छोटे छिद्रोंसे युक्त एक सन्दूकमें, जिसमें गोला कपड़ा पड़ा रहना है, रख कर खूब दबाया जाता है जिससे उसकी सात आठ अंगुल मोटी तह जम कर हो जाती है। इसके कतरे काट कर धीरे धीरे सूखनेके लिए रख दिए जाते हैं। सूखने पर इन कतरों पर एक पपही-सी जन जायो है जिसे साफ कर देते हैं। ये हो कतरे नील के नामसे विक्रत हैं। इन कतरोंके ऊपर कोठोका माकी दिया जाता है।

जब कतरे इसी तरह सूख जाते हैं, तब उन्हें एक कोठरीमें सजा कर रख देते हैं। इन घरका नाम स्विट-रूम है। यहां कतरे या गोलोके ऊपरके रंगको वर्माक्त करके उज्ज्वल करते हैं। इन घरमें गोलोको एक दूसरेके ऊपर इस प्रकार सजा कर रखते कि वह दीवार-मा दीख पडता है। बाद उसे कम्बल वा भूसीसे ढक रखते हैं। घरके दरवाजेको खूब सावधानीसे बंद रखना पडता है। कारण अधिक वायुके लगनेसे गोलो नष्ट हो जानकी विशेष सम्भावना रहती है। प्रायः १५ दिन तक इस प्रकार रखनेसे नीलकी गोली वर्माक्त हो जाती है पीछे धीरे धीरे थोड़ा थोड़ा करके उसे खोलते हैं, एक-बारगी खोलनेसे गोलोके फट जानेकी सम्भावना रहतो है। ऐसा करनेसे नीलकी उज्ज्वलता बढ़तो है।

नीलके कतरेको अच्छी तरह सूखनेमें तीन मास लगते हैं। बाद उसे एक बकसमें रख देते हैं। प्रायः एक दिनकी प्रसुत गोलोसे एक बकस भर जाता है।

२। सूखे पौधेके रंग निकालना।

इस प्रणालीसे जो नील तैयार होता है, वह उतना अच्छा नहीं होता। तब इसमें सुविधा एक यही है कि कटाईके बाद जब इच्छा हो, तब उससे रंग निकाल सकते हैं। जिन्हें नीलकी वेाठी नहीं है, दूसरेको कोठी किराए पर ले कर रंग प्रसुत करते हैं, वे हो प्रायः इस

उपायका अवलम्बन करते हैं। इस प्रणालीमें तथा प्रथम मोक्त आर्द्र प्रणालीमें कोई विशेष प्रयत्न नहीं है। फर्क इतना ही है, कि प्रथम अवस्थामें नीलके पौधोंको न सुखा कर सड़नेके लिए रख देते हैं। पर इसमें पौधोंको सुखा लेने है जिससे पत्तियां भड कर गिर पडती हैं। ये सूखी पत्तियां एक मासके बाद सव्जवर्णसे नीलवर्ण लिए धूसवर्णकी हो जाती हैं। पीछे टीपिंभाटमें सूखी पत्तियां डाल कर ऊपरसे ६ गुणा जल दे देते हैं। इस अवस्थामें क्रमागत हिक्काते और मथते हैं। बहुत देर तक जलनेके बाद पत्तियां नीचे बैठ जाती हैं। पीछे जल सव्जवर्णका हो कर वीटिंभाटमें जाता है और पूर्व नियमसे नील-रंग प्रसुत किया जाता है।

डाक्टर शर्ट (Dr. Shortt)-ने रंग निकालनेका इससे भी एक सज्ज उपाय बतलाया है। इस प्रणालीसे खेतसे लाया हुआ ताजा नील एकधारगी वायलरमें डाल दिया जा सकता है। पीछे जलसे मिह करके काम चल जाता है। इस प्रकार सिह करते करते इसमेंसे कुल रंग बाहर निकल आता है; सिह करनेके समय काठके एक यन्त्रसे पत्तियोंकी जलमें डुबो रखना चाहिए। बीच बीचमें इस पर विशेष ध्यान रहे कि पानी कब उसलना शुरू करना है। कारण उस समय आंच कम कर देने पड़ेगी। जब इसका वर्ण कुछ लाल हो जाय, तब जानना चाहिए कि उसलना शेष हो गया। पीछे इसमेंसे काथको वीटिंभाटमें डाल कर मथना होता है। इसमें सुविधा यही है, कि थोड़े ही समयके अन्दर कार्य-सम्पन्न हो जाता है। वीटिंभाटमें इसकी पल्प वायलर (Pulp Boiler)में ले जाना पडता है। अनन्तर पूर्व प्रणालीके अनुसार सभी कार्य होते हैं।

सम्प्रति मि० रिचार्ड अलफार्डसने रंग बनानेका एक नई तरकीब निकाली है। इसमें सव्ज, नील और नीलवर्ण नील प्रसुत होता है। नील पौधोंकी ताजी पत्तियोंकी टीपिंभाटमें डाल कर ऊपरसे किसी वस्तुका दबाव दे देते हैं। पीछे जल पडनेसे उसमेंसे रस निकल कर जलकी नीला बना देता है। यदि ग्रीन-इण्डिया प्रसुत करना हो, तो पौधोंके अच्छी तरह सड़नेके पंडले यह

प्रतिष्ठा की जाती है और यदि इन द्रव्य-द्रवियों का नामा है, तो पतितों जिनको जो मर्कुरो र य उनका जो पच्छा किया। बाकी सभी प्रतिष्ठाएं परम की हैं।

मौल प्रत्युत कार्बनिक बहुत खर्च वृद्धता है। मिरिक माइक्रो रिपोर्ट वृद्धिने मान्युम होता है कि कोठाले मत पोके पर्याप्त ०२ पोल्ड १०० में जो मर्म २० २० परच होते हैं। यदि मौलका पोषा पच्छा हो और मोलका दर मध्यम हो तो मत पोके १०० में से कर ०११) २० नाम होते हैं।

इन मौल तापके उपयोगे बावुमि गल जाता है। यदि उसमें पचिक उत्पाव दिया जाय तो वह उत्पन्न पौर भूमसय विचारविषय हो कर प्रथमे प्रयता है।

• डिपोके १०० डिपो विच्छिद्येक तक द्रव्य कार्बिच इनके खपर बाई सिद्धा नहीं करते। लेकिन यदि वह मौल इनके कुछ मोला बना दिया जाय, तो उसने इनके भोवर कार्बिच देनेसे पहले वह मर्कुर कर्चका हो जाता है जोके इतिहासका। वनमान रासायनिक पण्डितों न सिद्धान्तान्तर्मे मौल (Indigo blue)का साहो-तिष्ठ बिड्ड $C_{15} H_{11} NO$ or $C_{16} H_{13} O_2$ तथा है। अथ, सुताधर, एथर (Ether) श्चु परक (Dilute acid), चार (Alkali) इत्यादि द्रव्योंमें यह द्रव नहीं जाता। गम्भक द्वावक (Sulphuric acid) के साथ द्रव हो कर एक्स्ट्राक्ट पाव इच्छिमा (Extract of Indigo) प्रयुत होता है।

मौल हाय रियम, परम, लुगो कपड़े आदि र पाए जाते हैं। कपड़े र गानेके पहने द्रव्य इच्छिमा पद्यात् मौलपोटोकी पन्थान्य द्रव्येके साथ मिला कर यह कर्च कर्चमें शोचते हैं। विभिन्न प्रचालीके विभिन्न द्रव्य मिश्रित किया जाता है। किसी प्रचालीमें लुगा पार फिरेक सफेद (Ferrous sulphate $Fe SO_4$) मिश्रित किया जाता है। किसी प्रचालीके साथ नेट पाव पद्याय (Carbonate of Potash), ब्रूडा (Brass) फिर किसी उपायके कर्च और कार्बनेट पाव मोडा (Carbonet of Soda) इत्यादि द्रव्यजन होता है। भारत नामी कार्बनकत (निष्कविद्यत उपायके र य प्रयुत करत है। एव पोन्ड मौलका अथ, मौल पोन्ड चून पौर

पार पोन्ड काय नेट पाव-मोडा इन सबको प्रथमे घोल कर उत्पन्न माय ठ बौम चीनो मिनाते है। यदि ताप पच्छे र मज्ज पचनसिद्धा चारभय न हो तो फिर कुछ चीनो पर चून मिनाता वृद्धता है। कच्छे दिनेमें पच्छि का उत्पाव देनेसे वह मौल बहुत उत्तम चर्चोपयोगी हो जाता है। प्राकृतिक कई पत्र प्रचालीको उर कर र ग बनामका पौर भी पनेक प्रचालिका है। इन सब प्रचालीके द्रव्य इच्छिमाके द्रव्य इच्छिमा विभिन्न हो जाते हैं। (इनका रासायनिक बिड्ड $C_{16} H_{13} NO$ or $C_{16} H_{13} O_2$ है।) इन सफेद इच्छिमाके पच्छजन कर्चका कार्बजन बावुमि इच्छिमाते चर्चिने लुगा इन-इच्छिमा प्रयुत होता है। इन इन-इच्छिमाके पच्छादि गोचरपन में र गादा जाता है।

पहले जिन कपड़ेको र गाना होगा उसे प्यात्र प्रचालीके पद्युमार प्रयुत र गर्क परनेमें डाल दे। जोके बार बार ऐसे रडमें डुबीये रके जिनु यह काय निमित्त नाश्चामीने किया जाता है। यदि गम्भुर्दरने पाई होनेके पहले यदि वह तरलपद्याय में बाहर उठ जा जाय, तो बावुच्छिमा चर्चजनक माय मिश्रित हो कर विभिन्न कालमें विभिन्न रंग हो जायगा। पतएव कच्छादि के पच्छी तरह मिश्र हो जाने पर पद्यात् इनके यथा मर्म सफेद मौलका प्रवेय हा जाने पर उसे निचोड़ मिते पौर सुवर्णके निचे पन्थान्य खैला देते हैं। इन समय बावुम्य चर्चजन (Oxuration) उसने कार्बोजेन (H) in-geon) पच्छ करके जन प्रयुत करेगा। यह जन काय रूप धारक करके उड़ जायगा। पतएव सफेद मौलके कार्बजनके बाहर हो जाने पर यह इन मौल को कर्च कर्चपच्छके पन्थान्य प्रवेय करेगा जिनके कपड़ेका र ग भी चुन जायगा। यदि एक बारमें प्यागानुवापी र ग न पच्छके तो फिर उसे उड़ा दे। परमो कपठ र माने में पहने इसके गरम प्रथमे मिया कर लेते हैं। यदि पन्थ उच्छा प्रथमें निचेय कर रनेके करननेमें डाल देते हैं। र गानेके पहले गरमनेसे र मर्म लपटका दिन कि क देना पता है। रनेके बनानेमें छोड़े पच्छमिश्रित जनमें (Aeriolated water) उसे जो मिला वृद्धता है। यदि पच्छि उच्छा र ग बनानेको कपटन हा ता ऐसे फिर

फिटकरी अथवा बाइक्रोमेट आब पटाश (Bichromate of Potash) तथा टार्टरिक एसिड (Tartaric acid) में जलके साथ सिद्ध करना पड़ता है।

इसके पहले कहा जा चुका है, कि नील पौधेके अलावा वायुद आदि अन्यान्य स्रोतोंमें भी इसी प्रकार रंग प्रसृत होता था। पहले अलकतरे (Coal tar) में नील रंग प्रस्तुत होता था। मन्द्राजके गेननील (Nerium Indigo), बम्बई और राजपूतानेके वननील, परपूरिया, (Tephrosia Purpuria) और हिमालयका पहाड़ी जातियां वनधेरो वा पुष्पी (Marsdenia tinctoria) से रंग प्रस्तुत करती थीं। यवहीपमें (M. Parviflora) और चीनदेशके मियाठलियाठ (Isatis Indigotica) नामक वृक्षोंमें भी नील प्रस्तुत किया जाता है। इसके अलावा *Gymnema Tingens* एवं कैचाई (*Acacia Bugla*) इत्यादि वृक्षजात पत्तियोंसे बड़िया नीलका रंग निकाला जाता था।

भारतवर्षके वनके हाथमें आनेके पहले करके बदलेमें फमलका कुछ अंश जमींदारको दिया जाता था। सम्राट् अकबरशाहने ही इस प्रथाको उठा कर नियमित करका बन्दोबस्त कर दिया। अकबरको मृत्यु के बाद तथा अंगरेजोंका अधिकारके पहले उक्त कर वसूल करके समय प्रजाके प्रति यथेष्ट भत्याचार किया जाता और कर अनमाना वसूल किया जाता था जिससे प्रजा तंग तंग आ गई थी। जब अंगरेजोंका पूरा अधिकार भारतवर्ष पर हो गया, तब उन्होंने देखा कि इस प्रकारका कर-ग्रहणको प्रथाका संस्कार होना आवश्यक है और जिससे एक ही वारस मालिकके निकट खजाना पहुँच जाय, उस विषयमें लक्ष्य रखना कर्तव्य है। इस आशय पर उन्होंने खजानेके विषयमें बहुतसे नियम बनाए।

मि० मैकडनेलने बङ्गालकी नीलकों खेतों तथा रैथोंको बन्दोबस्तके सम्बन्धमें लिखा है, कि इस देशमें नीलको खेतोंका बन्दोबस्त तीन प्रकारका था। यथा—जिराट, आसामीवर और खुसगी। जिराटीमें नीलकर स्वयं बेतनभागो छपकासे नील उपजाते थे। आसामीवर नियममें जमान प्रजाके दखलमें रहती थी, प्रजा स्वयं इससे नील उपजा कर जमींदारके यहाँ बेच डालती थी।

किन्तु जमींदार चीन्हे पति निदि ट करके कुछ भाँ बगीचा का टाया नहीं कर सकते थे। खुसगीमें प्रजा अपनी दृष्टिके अनुसार नील उपजाती थी। इस प्रकारके अनु-सार प्रजा जमींदारमें किसी छान्तमें बाध्य नहीं।

मनुमंछितामें लिखा है, कि ब्राह्मणको नीलकी खेतों कदापि नहीं करनी चाहिए।

नीलके बीजमें एक प्रकारका तेल निकलता है जो विशेषतः औषधिक काममें आता है।

नीलका रंग मृगो और स्नायविक रोगमें व्यवहृत होता है। यक्षाकाग्रीमें तथा क्षतस्थानमें भी इसका प्रयोग देखा जाता है। रासायनिक प्रक्रियाकालमें नीलको बहुत जहरत पड़ती है।

अनेक प्रसिद्ध यूरोपीय डाक्टर नीलके अनेक गुण बतला गए हैं जिनमेंमें कुछ नाचे टिये जाते हैं।

दीर्घकालस्थायी मस्तिष्करोगमें टैगोय विक्रियक नीलरसका व्यवहार करते हैं। पैगावके बन्द हो जाने पर नीलकी पत्तियोंकी पुन्डिम टेनेसे पैगाव उतर आता है। यह खनिज द्रव्यजात विषनिवारक, घोड़ोंका क्षत-नाशक, उदराधान तथा पैगावका सहकारक है। पशुओंके रोगमें नीलका रंग बहुत फायदासन्द माना गया है। विषको दूर करनेके लिये कहीं कहीं नीलको जड़का साथ भी दिया जाता है। नीली और नीलिषा देखो।

२ आजकल हम लोगें देगमें एक नया पेड़ आया है जिसे सम्बादपत्रमें नीलवृक्ष बतलाया है। इसे नीलवृक्ष इसलिये कहा है कि इसकी पत्तियां बिलकुल नीली होती हैं। इस पेड़का आदि उत्पत्तिसंस्थान मद्रेश्लिया-देश है इसका नाम है यूकालिपटस (*Eucalyptus*)। वृक्षश्रेणीके मध्य विद्वहृक्ष जिस वंशके अन्तर्गत है, यह भी उसी वंशके अन्तर्गत माना गया है। उद्भिद्गाह-में इस वंशको मारटासी (*Myrtaceae*) कहते हैं। इस नीलवृक्षके प्रायः १५० भेद हैं। यह खूब बड़ा होता है। यहाँ तक कि कहीं कहीं २०० हाथ तक ऊँचा देखा गया है। इससे बहुत अच्छे अच्छे तैल बनते हैं। पेड़मेंसे एक प्रकारका गोंद निकलता है जो मनुष्यके अनेक कामोंमें लगता है। इसको पत्तियोंसे एक प्रकारका तेल बनता है। यह तेल दर्दके लिये मद्यो-पध है।

इसके पत्र धीरे पुष्प देखनेमें लड़के हो सुन्दर लगते हैं। बङ्गाल देयमें इसकी बाढ़ बहुत जल्द होती है। नीलक नवमें यह ६० हाथ धीरे पशामवर्षमें १५० हाथ बढ़ जाता है। इस समय इसकी तलीबा सेरा ३० हाथ तक होती है। इस इलाके को तपस्वी पादि बनाये जाते हैं, वे बहुत शिक्षाल छोटी धीरे पशामवर्ष काठको तरह इसमें भूज नहीं लगते इसको लकड़को बनानेके अर्थ पटाय (lotsah) का पार पाया जाता है। जहाँ पर मसौरया ज्वालामातुर्मार्ग है, वहाँ इस इलाके बनानेके इलाके हैं, कि पूर्वित वायु अ बाधित होती है। इसलिये किसी किसी में इसका नाम रखा है "स्वरनायक प्रक"। इसमें मसौरिया नाम करकेका जो शुभ है उस नियतमें सचमुच काकर वैश्वस्तीने पनेक प्रभाव स यह कर यह फिर बिधा है, इसका पल्लवको सुपानिसे जो नील निरुत्पत्ता है इसकी गन्ध अपूर ही होता है। यह परक का टि पर रूपमें ही अवनतत हुआ करता है। पकीय, पकायय धीरे पदमे प्रुतातन रोप चर्चों, छमि मात पादि जामा रोनों में इसका अवनतत होता है। इसकी भाहुनिवारण यहि मो विवचन है।

इसको धीरे पनभिरिया पादि देयमें मसौरिया ज्वालामिचलक मातुर्मार्ग है। जहाँ जालमें हो पनेक नोचकक लगाय गए हैं धीरे यह देखा गया है, कि इससे फल मो पच्छे निरुत्पत्त हैं। जहाँ बारहा मास मनुष्य अग्निदेयके पोषित रहता था, जहाँ जोहा यज्ञत् बढ़ कर पिट भद्रका पाकार धारण करता था, जहाँ गिरुधोंको पाकरका सुखाय हो गईं हो, जहाँ पात्र इस नीलककके शुभके सुकषाय, सभन धीरे सुवपका अन्ध होता है।

नील—सूर्य मीय राजा धीरेकोलके शुभ। जब धीरेकोल दासिवाकके पयोधर हो कर राक्षसासन करते थे, तब समय नीलमें लड़े विदयापत्र ब्राह्मणको भूमिदान करने कहा था। लड़केके लपदेय दिया था, यदि तुम अपने पूर्व पुत्रको लड़केको कानेकी धामा रखते हो, तो धीरे लपदेयानुसार कायं करे। शुभक कइनेसे राजाने "परकंधरीचतुर्देवा मङ्गलम्" नामक पाम ब्राह्मणके दान दिया था।

नील—नामके एक राजाका नाम। इन्होंने नोचपुराणकी रचना की। जब नील कोनेमें नोचपुराणोक्त उन्धवादि बन्द कर दिए, तब पाशावधि शिवावर्यक कोने लगा। पशुमें इन्होंने चन्द्रदेय नामक किसी ब्राह्मणके यह कराया जिसके शिवावर्यक बन्द हो गया। नील—पश्चिमको एक लड़के नदोका नाम। प मरीचोमें इसे नावक (Zilo) कहते हैं। इजिप्त भरमें यह मयो लड़की नदो है। यह बहर उच-पश्चिमपाद पर्यात् शुभ नदी धीरे बहर उच चत्राक पर्यात् नीलनदोके जलक कर भूमिप्राप्तने गिरतो है। १८३६ ई०में पच्छो ज्वालामोने पश्चिमोदिपाके दक्षिण पश्चा० ७ ३८ उ० धीरे देया १३ ३८ पू०में इसका उत्पत्तिस्थान बताया था। किन्तु कनेके परवर्ती अमचकारिको का उचना है कि लड़केमें नोच नदीको लपनदो समाका नील नाम रखा था। कन मतानुसार इसका उत्पत्तिस्थान धीरे मो उत्पत्तमें है। नील नने नायेका इहमे कन ने कर ल रिया, इकडे, बेचरी, उमार, चाकी, लड़ोना मङ्गल पादि देयो के उचरा बनतो है। पाणोदान नामक जालमें यह इजिप्तमें गिरतो है।

इस जालमें अमान्य लपनकी धीरे पश्चा० २४-३६ के कर पश्चा० १० १२ उ० तक प्रवाहित हो कर उच दो गाथापेमें विभक्त हुई है। एक गाथाके लपन रोषिटा नगर बना हुआ है। दूसरी गाथा पसेकसन्धिया नगर होती हुई पश्चिमको धीरे चली गई है। प्रत्येक गाथाके उचक प्रक सात सुधामें हैं। इस नदोमें एक जलपयात है जिसमेंके इजिप्त धीरे म्बुविद्यके सोमान्त प्रदेशमें प्रक स्थित प्रयात चरके प्रयात है। इसका वत मान नाम एक-धिरको है। सुराकाचमें यह किना (Philoo) नामके प्रविष्ट था।

वीधमबाल्मी नील नदोका जल बहुत लज्जा लड़ पाता है। लुत्तारि मासके धारणमें सनेके पक्षी कायरो नगरमें अचकडि दिखी जाती है। जहाँ शैल्य ढांपके निकट इसको जलप्रति मापनेके लिए एक स्तम्भ मड़ा हुआ है जिसे मीसामोटर कहते हैं। यहने 419 दिन तक बहुत धीरे धीरे जल बहता है, लुत्तारि इसको जाम इजिप्त कर कर होती है, जाल नहीं पड़ता। इसकी कुछ दिन

वाद ही यह बहुत बढ जातो है और २० अथवा ३० सितम्बरके मध्य जलवृद्धि चरमसीमा तक पहुँच कर रुक जाती है। पीछे धीरे धीरे घटने लगती है। इस प्रकार जलवृद्धिका कारण यह है, कि ग्रीष्मऋतुमें बहुत वर्षा होती है और वर्षाका जल नील नदी को कर समुद्र में गिरता है। नील नदीको जिस शाखाके ऊपर रोजेटा नगर बना हुआ है, उसका विस्तार ६५० फुट और जिस पर डेमिएटा नगर है उसका विस्तार १०० फुटसे अधिक नहीं है। नील नदी और कायरोखालके बांधके मध्य एक मध्यम स्तम्भ गडा हुआ है। वर्षाकालमें जल जितना ऊपर उठता है, इसको ऊँचाई भी ठीक उतनी ही कर दी जाती है। इस स्तम्भकी शुरुआत अथवा कुमारी कइते हैं। जनसाधारण इससे नीलका जल मापा करते हैं। जब जल ताबे में खड़ेमें प्रवेश करता है तब वह स्तम्भ स्तौतमें बढ जाता है। प्रवाद है, कि इजिप्टके लोग प्राचीनकालमें स्तौतका वेग रोकनेके लिए प्रतिवर्ष कुमारीका बलिदान देते थे।

नीलक (सं० लो०) नीलमेघ स्वर्ण कन् । १ काचलवण । २ वर्तमान, बोदरो लोहा । ३ अमनहच, पित्रामाल । ४ मटर । ५ भद्रातक, भिलावा । ६ क्षयासारमृग । ७ नीलशृङ्गाराज । नीलिन वर्णन कायति-कौ-क । पु०) ८ भ्रमर, भौरा । ९ वोजगणितमे अत्यन्त राशिका एक भेट ।

नीलकण (सं० पु०) १ नीलमका एक टुकडा । २ टाँही पर गोदें हुए गादनका विन्दु ।

नीलदाणा सं० स्त्री०) क्षयाजोरा, कालाजीरा ।

नीलकण्टक (सं० पु०) चातक पत्ती ।

नीलकण्ठ (सं० पु०) नीलः नीलवर्णः कण्ठो यस्य । १ शिव । नीलकण्ठ नाम पढ़नेका कारण—

अमृतोत्पासके बाद भी देवमात्रोंने समुद्र मथना छोडा नहीं, बल्कि वे और उत्साहपूर्वक मथने लगे। इस समय सधूम अग्निकी तरह जगन्मण्डलको आहत करता हुआ कालकूट विष उत्पन्न हुआ। उसको गन्धमात्रसे ही तिलोकास्थित लोग अचेतन हो पडे। तब ब्रह्माके अनुरोधसे मन्त्रसूक्ति भगवान् महेश्वरने उस कालकूट विषको अपने गलेमें धारण कर लिया जिससे उनका

कण्ठ कुक काला पड गया। उसी समयमें शिवजी नीलकण्ठ नाममें प्रसिद्ध हुए। (भारत १।१८ अ०)

इसका विषय पुराणमें इस प्रकार लिखा है,—पुराकालमें देव और देवताके बीच तुमुन संघाम छिडा था। उस युद्धमें देवगण जमताहोन और मैन्यहोन ही कर नितान्त शोभत ही गये थे। यहा तक कि उनका स्वर्गाव्य भो शत्रुओंके हाथ जाने जाने पर हो गया था। तब शत्रुदमनका उपाय सोचनेके लिये उन्होंने मेरुपर्वतके ऊपरो भाग पर एक विराट् सभा की। उस सभामें चतुर्मुख ब्रह्माने देवताओंसे चक्रो विष्णुके साथ परामर्ग करनेका कहा। ब्रह्माके उपदेशानुसार देवगण वराकुल ही कर विष्णुको शरणमें पहुँचे। विष्णुने देवदत्तसे उन्हें बचानेको प्रतिज्ञा की और उनसे पहले देवताके साथ सन्धिस्थापन करके समुद्र मथनेका कहा मन्दरपर्वत उसका मन्थनदण्ड और सपराज वासुकि मन्थनरज्जु बनाए गये। विष्णुने यह भी कहा था, "समुद्रमन्थन द्वारा जो अमृत उत्पन्न होगा उसे भक्षण कर पढ़ने तुम लोग अमरत्व लाभ करना। जब तब देवगण समुद्र मथनेमें मदद नहीं देंगे, तब तक मथा नहीं जा सकता। क्योंकि वे लोग तुमसे लोनीसि बल और पराक्रममें कहीं बढे हुए है।"

देवराज इन्द्र विष्णुके उपदेशानुसार सन्धिस्थापनके लिए देवराज बलि प्राप्त गए। बलिने उनका प्रस्ताव मंजूर किया, लेकिन उन्होंने भी अमृतका कुछ अंश चाहा। जब इन्द्रने अमृत का अंश देना स्वीकार किया, तब देवगण देवताओंके साथ मिल कर दुग्ध-समुद्र मथनेका तैयार हो गये।

विष्णुके उपदेशानुसार दुग्ध-समुद्रके ऊपर शीघ्र-सूक्त लताएँ आदि फँक कर मन्दरपर्वत और वासुकिको सहायतासे दानों पढ़ने समुद्र मथना आरम्भ कर दिया। किन्तु अतलमथने समुद्रके ऊपर मन्दरपर्वत बहता तो नहीं था, बल्कि नीचेकी ओर धँसा जाता था जिससे समुद्र मथनेमें बड़ी असुविधाएँ होती

* अमृतपानके पहले देवगण भी मनुष्यकी तरह कराल कालके गलमें फँसते थे।

की। यह देख कर बिन्दुनी उसी समय क्रम से चार ब
 कर मन्दिरपर्वत को धरती पीठ पर ले लिया। बोधि देव
 और दोस्त्रमय धान्यपूर्वक समुद्र मंथन लगी।

समुद्र मंथन मन्थन उन घोचरकी जातायोंने, की मन्थने
 पक्षी समुद्रके ऊपर खेती गई बो, एक प्रकारका विप
 उत्पन्न हुआ की समुद्रके ऊपर बहने लगा। उसको
 महालक्ष्मण धनुष और तीरों बिलमें देव और दैत्य धनुषको
 मोड़ पर ले रङ्गे। यह व्यापार देख कर सृष्टि मन्थने
 अनन, मन्थ और पातानबासी सबके सब बस पतित
 पानन सृष्टि मन्थन महादेवकी शरणमें पहुँचे। शरणा
 गनपाकक पावनोप प्राचिपकि क्षेम दूर करमिने त्रिप
 कम मयानक विपकी पी गय। जो पनादि और पनल
 हैं, पनर और पनर हैं, पनप्र और पनप्र हैं, सामान्य
 विपके जनका कोड़े पनित होनेको सन्धानन न बो।
 पर भी सर्वोपविनिवन्ता भी बस मयानक विपका बोध
 शरण करनेमें विश्रुत समर्प न हुए। बस मयानक
 विपके परिपल नहीं होनेसे वे पनल पनर्दाह पनम
 करने लगी। पनमें लक्ष्मणामो को कर उप विपने उनका
 यका मोक्षरगमें परिपल कर दिया। इसी कारण महा
 देव मोक्षकण्ठ नामसे प्रसिद्ध हुए। २ मयूर मोर। १
 पीतमार, पिताशाल। ३ दाह्य। ४ प्रामचडक, शेर
 पक्षी। ५ इसी तरह कण्ठपर कासा हाग होता है, इसीसे
 इसे मोक्षकण्ठ कहते हैं। ६ पश्चिमिधिय एक चिह्निका
 जो बिलोके समयत लकी होती है। इसका कण्ठ और
 कंठे नीचे होते हैं। शिव शरोरका रग कुछ लसाई
 लिए बाहामी होता है। बीच कुछ मोटी होता है।
 यह कोड़े मकोड़े या कर जाता है, इसीसे सर्पा और
 शरपुच्छतुमें लक्ष्मण हुआ पक्षि दिवाई पड़ता है।
 विप्रवाययमीक्षे दिन इसका द्यम बहुत कम माना
 जाता है। कम इसका दर्शन हो, तब भीसे सिधे मन्थने
 प्रथम करना चाहिये। मन्थ—

"दीहस्यैरु सुमीर सर्वकमपकपय ।
 इधिसामपदीर्घेति लक्ष्मणैरु नभेसुते ॥"

"एव भोगयुक्ता सुमितुनकस्यदररतामेति निकोरुमेव ।
 एव इतस्ते प्राहपि विपेतायां एव लक्ष्मणसर्वमेव वसते,"
 (विभितर)

यदि पन, ग्रे, गज पात्रि वा मञ्जोरम पननेसे
 किसी एकको पीठ पर मोक्षकण्ठका दान करे, तो
 राक्षसकाम और कुपय होता है। मरुत, पक्षि कैम,
 नख, रोम, और तुप पर लक्ष्मण की कर देखनेसे दुःख
 मात्र होता है। यदि प्रथम कण्ठन (मोक्षकण्ठ)का दान
 हो तो देवता और ब्राह्मणका पूजन तथा दान करे और
 बोधि सर्वोपवि असर्प दान करे।

श्रीतच्छतुमें यह समस्त भारतवर्ष, तिष्ठतुहोप,
 दक्षिण चीन और उत्तर पश्चिममें देखा जाता है।
 प्रोथमका प्रादुर्भाव होनेसे यह हिमालयके उत्तर शीत
 प्रधान देशोंमें भाग जाता है। (श्लो०) ० मूलक, मूलो।
 (श्लो०) ८ मोक्षप्रोवायुक्त, जिसका कण्ठ मोला हो।

मोक्षकण्ठ—नेपाकके पनलत एक तोज कान। पाठ
 मन्थने वर्षा वारमें लगभग ८ दिन लयते हैं। यह पक्षा
 २८ २१ ७ और देवा ०६ ४ पूरके मन्थ पनलित
 है। परित्राजगमन लुसाई माससे ले कर पनलमास
 तक इनके दिनके मन्थ वर्षा प्राया करते हैं, दूसरे समय
 तुमार और पछिने सबके यहाँका प्राणा ज्ञाना बह हो
 जाता है। जहाँ ८ प्रसन्नक हैं जिनमेंसे एक लक्ष है।
 सुपलक्ष यहसे एक मासको दूरो पर है। इससे पास
 ही एक पहाड़ है जहाँसे कौबिको नदीकी एक शाखा
 निकली है। कण्ठपुराके हिमवतसुखमें मोक्षकण्ठ
 माहाय्य वर्णित है।

मोक्षकण्ठ—१ एक पण्डित। इसने महावीरचरितको
 एक टोका और भूमिका लिखी है। इनके पिताका नाम
 महनोपाल और पुत्रका नाम भवभूति था। २ प्रमोच
 मतकक रचयिता। ३ पाम्पनावनपौरसुखक एक
 टिप्पणीकारक। ४ सुखमन्थपविचानके रचयिता। ५
 कण्ठपूजायोगके रचयिता। ६ कौबिकान्देवोमाहात्म्य
 स पदके प्रथिता। ७ एक प्रसिद्ध नैययिक। इसोंने
 महाभारतको टोका रचा है। कहते हैं, ८ पयस्यको
 कोड़ इर्षीका बनाया हुआ है। ८ पिसनोचरित्र नामक
 स कृत चरित्रके प्रथिता। ९ दावभामक टोकाकार।

१० नारायणगोताके रचयिता । ११ प्रकृतिविहार-
कागिकासङ्गननकारो । १२ वालाकंपडतिके रचयिता ।
१३ विवाहसोप्यवर्णनके प्रणेता । १४ वैराग्यगतक-
नामक एक सुदृष्ट संस्कृत ग्रन्थके प्रणेता । १५ शङ्कर-
मन्दारमोरभके रचयिता । १६ एक प्रसिद्ध वैयाकरण ।
इन्होंने शब्दगोभा नामक एक व्याकरणको रचना की ।
१७ आद्यविवेकके टोकाकार । १८ एक प्रसिद्ध पौरा-
णिक । इन्होंने मोरपौराणिकमतमर्मयन नामक एक
सुन्दर पुस्तककी रचना की । १९ स्वराङ्कुरभाष्यकार ।
२० एक विख्यात ज्योतिर्विद । इनके पिताका नाम
अनन्त और पितामहका नाम चिन्तामणि था । ये अनेक
ग्रन्थ लिख गए हैं जिनमेंसे वे सब प्रधान हैं—गृह-
प्रवेगप्रकरणटीका गोचरप्रकरणटीका, गृहकौतुक, गृह-
लाघव, जैमिनिसूत्रटीका, सुबोधिनो, ज्योतिषकोमुदी,
टोडराज, ताजिक, निथिरत्नमाला, देवस्रवणम, प्रय-
कौमुदी, प्रयतन्त्र, मकरन्द, सुदृष्टचिन्तामणिटीका वषे-
तन्त्र, वर्षफल, विवाहप्रकरणटीका, सञ्जातन्त्र, सारणी-
कोष्ठक । २१ रामभट्टके पुत्र । इन्होंने काशिकातिलक
लिखा है । २२ कुण्डोद्योतके रचयिता । इनके पिताका
नाम शङ्करभट्ट था । २३ महाभारत और देवो भागवतके
एक विख्यात टीकाकार । दालिणाल्थमें इनका जन्म-
स्थान था । इनके पिताका नाम रङ्गाय देशिक,
माताका लक्ष्मी और गुरुका नाम काशीनाथ तथा
शोधर था । ये शैवसम्प्रदायभूक्त थे । रत्नजोके उखाड़ने
ये देवी भागवतकी टीका लिखनेमें प्रवृत्त हुए थे ।

नीलकण्ठक (सं० पु०) चटकपत्नी, चातक ।

नीलकण्ठत्रिपाठी—एक विख्यात हिन्दी कवि । १७वीं
शताब्दीमें कानपुर जिलेमें इनका जन्म हुआ था । कहते
हैं, कि इनके पिता प्रतिदिन एक मन्दिरमें की देवी-
सूर्ति का दर्शन और पूजन किया करते थे । पूजासे
मनुष्ट हो कर देवीने एक दिन उन्हें दर्शन दिए और
मनुष्यके चार मस्तक दिखलाए जो उनके पुत्ररूपमें
जन्मग्रहण करनेको राजो हुए । यथासमय उनके चार
पुत्र हुए जिनके नाम थे चिन्तामणि, भूपण, मतिशाम
और जटाशङ्कर वा नीलकण्ठ । शेषोक्त व्यक्ति एक
उष्णाष्वाके आशीर्वादसे कवि हुए थे ।

नीलकण्ठदोलाग—एक विख्यात पण्डित । ये स्यात-
नामा अण्ण्यटीक्षितके मन्त्री, आच्छादीक्षितके पौत्र और
नारायण दोक्षितके पुत्र थे । इन्होंने आनन्दवागर-मन्त्र,
नीलकण्ठविजयचम्पू, शिवतत्त्वरहस्य, चित्रमीमांसा अल-
ङ्कार सताथधर्षिवेक आदि ग्रन्थ लिखे हैं ।

नीलकण्ठभट्ट—१ एक विख्यात स्मार्त्त । इन्होंने व्यवहार-
संग्रह नामक निबन्धको रचना की । यह ग्रन्थ महाराष्ट्रीय
पाईन ममभा जाता है । २ एक स्मार्त्त पण्डित ।
इन्होंने शुद्धिनिर्णय नामक ग्रन्थ लिखा है । प्रयोध्यामें
इनका जन्म स्थान था । १८७२ ई०में ये पञ्चलकी प्राप्ति
हुए । ३ एक प्रसिद्ध नैयायिक । इनके पिताका नाम
रामभट्ट था । ये कोण्डिन्यमोक्तके थे और पाणिनीय-
में इनका जन्म हुआ था । ये तर्कसंग्रह दोषिकाप्रकाश
वना गये हैं ।

नीलकण्ठमिश्र—१ पर्यायार्णव नामक ग्रन्थके प्रणेता । २
एक प्रसिद्ध हिन्दी कवि । इनका जन्म १६०० ई०में
दोषावर बहुर्षाकी जिनान्तर्गत होलापुर ग्राममें हुआ
था । ये ब्रजभाषाके भी अच्छे कवि थे ।

नीलकण्ठयतीन्द्र—यतीन्द्रप्रबोधिनो नामक धर्मनिबन्ध-
कार ।

नीलकण्ठरस (सं० पु०) रमेन्द्रभारसंग्रहोक्त श्लोषभट्ट,
एक श्लोषजिभके बननेका विधि इस प्रकार है—पारा-
गन्धक, लोहा, विष, चोता, पञ्चाक, दारचोनी, रेणुका,
वायविडंग, पिपरामूल, इन्दायचो, नागकेशर, सोंठ, पीपल,
मिर्च, हड़, आवना, बहेहा और तांबा सम भाग ले कर
दुगने पुराने गुड़में मिलावे और बाद घनेके बराबर गोली
बनावे । इसके सेवन करनेसे काम, श्याम, प्रमेह, विषम-
न्त्र, ह्रिक्का, ग्रहणी, शोथ, पाण्डु, मूत्रकृच्छ्र, मूदुर्गर्भ
और वातरोग आदि दूर हो जाते हैं । यह श्लोष ब्रह्मा-
से आयिष्कृत हुई है । इसके सिवा महानीलकण्ठरस
नामक एक दूसरो श्लोष भी है ।

महानीलकण्ठरसको प्रस्तुत प्रणाली—तिमिपित्तमें
भावित शोशा १ तोला, स्वर्ण १ तोला, रससिन्दुर १६
तोला, अभ्र २४ तोला इन सबको एक साथ मिला कर
छतकुमारो, ब्राह्मीशाक, सन्हालू, कचूर, सुण्डिरी, शत-
मूली, गुड़ च, तालमखाना, तालमूली, हृद्ददारक और

शोभा इनको मावना देवे । पीने लक्ष्मि सिद्धका, त्रिचट्ट, मोक्षा, शोभा, रक्षापथी, लक्ष्मि जातिफल प्रत्येक का चूर्ण ८ तोला मिना कर २ रत्नो परिभाषको मोती बनाने । इससे बेदन करानेसे बालरोग, इ० प्रकारके विचरोग घोर रोग समी रोग प्रशमित हो जाती हैं । इससे पचेष्ट पाश्चर्य समता, कन्द्य मद्गमरूप, सेवान्नी, बलवान् प्राय, मोमसे समान विज्ञान घोर विज्ञान होता है । इससे विद्वान् करानेसे बन्धा नरानेसे मो प्रशान्त होती है । जबसे इस बोधवका सेवन किया जाय तबसे २१ दिन तक से मुमुक्षुर्न भविष्य है ।

नीलकण्ठसिंहासनात्—एक श्लोकाली । बीजापुर त्रिसिद्धि धनिक नमते घोर घामनिं इनका बास है । ये लोग दो भावनिं विमान हैं, विशिष्टादर घोर पक्षुसक्त गिनाइर । इन दो सम्प्रदायनिं पापसनिं क्षानपान घोर विनाश-मादो नहो चलती । शिवोक्त सभ्यदायको प्रथम सम्प्रदाय पतित समझना है । दुतरा इनसे साय भी खाते पीते तक मो नहीं । निजायताकी ६३ उपाधियां हैं । एक उपाधिवाने श्री सुवर्धे मध्य विवाह नहो होया । घर से बैठ कर चरखा चलावे चलाते से लोग निर्बीर्य घोर पाण्डुबर्ण हो गये हैं । इनका रुद न उतना ख था है घोर न भाडा । इनको पांश बहुत नीचेनिं घोर नाक चिपटी तथा लम्बो होती है । शिरां बरके बाहर जाती घोर मनो क्षाम काज करती हैं । ये सुवर्धे पपिका बनवान् कीष्ट पडतो हैं । चन्दाके देमोड निजायताकी मारुं से लोग भी पापसनिं परिशुद्ध कवाड़ी भावा शोक्षते हैं । ये लोग साध मरुकी तो नहीं खाते किन्तु सहसुन प्याज खाते हैं ।

सुवर्ध प्रतिदिन घोर जिवां बोवहार पोष हृदयानि मारको खान करती हैं । ये लोग तमाकु पीने घोर सुरती खानेके सिवा सुदरे सिधी मादक द्रव्यका व्यनहार नहीं करती ।

ये लोग दाढ़ी नहीं रखते घोर समूचा मिर सु का सेते हैं । तथा महाराष्ट्रींसा पचमाना पचनने हैं ।

कि ज्ञानव हदने विदेव विरान रेको ।

नीलकण्ठसिंहासनात् (स० श्री०) मयूरसिंहासनात् ।

नीलकण्ठसिंहासनात्—ब्राह्मण सोमांशामाचके रचयिता ।

नीलकण्ठसिंहासनात् (स० श्री०) नीलकण्ठ महादेवदायपियः पथो अपमाना यत् । १ ब्रह्माय । नीलकण्ठ ब्रह्मण्डलस्य पवित्रोव पवित्रो यत्, समासे यत्, समासात् । (सि०) २ ब्रह्मण्डलस्य पवित्रोव, त्रिपथे लक्षण या नीलकण्ठ-श्री पाथे हो ।

नीलकण्ठ (स० पु०) नीलकण्ठ मूत्र यत् । मरिच कन्दमिद ।

नीलकण्ठिन् (स० पु०) १ महापात्रवत्, कन्दर धाम । २ नीलकण्ठका कण्ठिन् ।

नीलकण्ठमय (स० श्री०) नीलकण्ठमय पदम् । नीलकण्ठ । पर्याय—कल्पव, नीलकण्ठ, नीलकण्ठ नीलकण्ठ । मुष्—मौतन, क्षाद्र सुगन्धि, विष्णुनामक शक्तिहर श्रेष्ठ रसायन, देहदायक घोर घोर विप्रदितकारक ।

नीलकण्ठ (स० पु०) बह को मोक्ष प्रसूत करता हो । नीलकण्ठके चन्दाकारके विषयनिं ही एक वार्ति पडथे श्री नीलकण्ठनिं कही जा चुकी है । शोक देखो । यथा इस विषयका कुछ विस्तारित विवरण देना आवश्यक है । घोर घोर नीलकण्ठको घ पना बड़ने मदी । नीलकण्ठ साधनेनिं नीलकण्ठनिंके निप कुछ जमोन पासामोसे जाय जना दो घोर कुछ फल करने हरी जो जमोन के खुदसे उपनानिं घे लक्ष्मि लक्ष्मि बहुतरसे शब्द नियुक्त किये । जो जमोन रंयतके चमोन जो, लक्ष्मि से हृदयकका विद्यगी रूपसे देते घोर लक्ष्मि एक पञ्चोकार पत्र एक प्रकार सिखा लेते घे, "इतनी जमोननिं नीलकण्ठ कर पू मा, इतन्विप इतने रूपसे विद्यगी लेता हू । यहि पुरमिच्छन्नि-पूकं च पञ्चदाक तो पापशा को मुक्तसान शोभा, लक्ष्मि नीलकण्ठकारियण पूरा करानेनिं माथ है ।" एक मयंसे ले कर दस मयं तक इस पञ्चोकार-पाठनसा नियम था । हृदयकको प्रति नीचे दो रूपसे दादनीने दिने जाती है । हृदयकका जो जमोन लक्ष्मि तो तथा पच्छो तरह होती जाती घे लक्ष्मि जमोननिं काठोके नीलकण्ठ नीलकण्ठ उपनानिंके सिप चिह्न दे दते है ।

जितनी दादनी पासामोके पञ्चोकारनिं शिथी जाती थी, नीलकण्ठके लक्ष्मि विनकुल पुष्पा नहो देत घे । जो कुछ देते घे, लक्ष्मि जो कुछ फल कोठाक नीलकण्ठ रूप कर जाती घे । १ कण्ठ चन्दासिंहासनात् मनुष्य ही नीलकण्ठ

साहबोंके काममें नियुक्त होते थे वे मानिकके प्रियपात्र होनेके लिए उनके अमीठ माधनमें एक भो गद्दितकर्मकी उठा न रखते थे। कृपकृण अपने इच्छाके अनुसार कोई फसल उपजा नहीं सकते थे। जब अन्य फसल उपजानेमें विशेष लाभ होनेको सम्भावना रहती, तब वाध्य हो कर उन्हें बोना पड़ता था। जिस वर्ष नीलकी पत्तिया अच्छी तरह उत्पन्न नहीं होती थीं, उस वर्ष उन्हें समुचित मूल्य भी नहीं मिलता था। सुतरां वे कभी भी एक बारको दो हुई दादनीसे विमुक्त नहीं हो सकते थे। एक बारको दादनी लेने पर वह तीन चार पीढो तक परिशोध नहीं हो सकती थी, इस महाजालमें नहीं फसनेके लिए यदि कोई चेष्टा भी करता था, तो उसकी जाति, मान, धन और प्राण सभी खो जानिको सम्भावना हो जाती थी। बड़े बड़े ग्रामीकी सभी गृहस्थोंको यह दादनी लेनी ही पड़ती थी। जिनके हल और बल नहीं रहते थे, उन्हें भी दूसरे लोगोंसे भूमि आबाद करा कर नील उत्पन्न करना पड़ता था। इसके अलावा नीलकरको खाँस जमानमें जो नील उपजता था उसकी बहुत कुछ काम भी इन वैचारे भोले भाले गृहस्थोंको कम तनखाहमें करना पड़ता था। फिर कोठोके व्यवहारके लिये उन्हें बाँस पुआल आदि मुफ्तमें देने पड़ते थे।

सारे भारतवर्षमें नवहोप और यशोर जिलोंमें नीलकरका अत्याचार अपेक्षाकृत ज्यादा था। नीलकर साहबोंको दोषान, नायब, गुमास्ता, ताकोदगोर आदि भ्रष्टगण केवल मानिककी अमीठ-सिद्धिके लिए नहीं, बल्कि अपना मतलब भी निकालनेके लिये कृपकीका सर्वस्व हरण कर लेते थे। जो सब नीलके पीछे कोठोमें लाए जाते थे, उन्हें कम चारिगण बिना कुछ लिये अच्छी तरह भापते नहीं थे। नीलपत्तियोंका हिसाब करते समय पुनः हाथ गरम किए बिना यथार्थ हिसाब नहीं करते थे। वैचारे कृपक जब तक अपने खेतसे अथवा गृहजात किसी द्रव्यसे उनका पेट भर नहीं देते थे, तब तक उनकी यन्त्रणा और चतिका पारावार नहीं। नीलकर साहब ये सब विषय जान कर भी नहीं जानते और सुन कर भी नहीं सुनते थे। नर-

हत्या, गोहत्या, गृहदाह इत्यादि जिस किसी कार्यका प्रयोजन होता था उसे वे अमद्चित्त चित्तसे कर डालते थे।

पूर्व समयमें नीलकर साहबगण प्रजाके प्रति जो अत्याचार करते थे वह किमोक्षि किया नहीं है। दीमधनु-मित्रके नीलदर्पणमें, लड-साहबको वक्तृतामें श्री हरि-चन्द्र मुखोपाध्यायके ज्वलन्तलेखमें उनका प्रकृत चित्र प्रतिफलित है। १८३३ ई०की १०वीं मईको यशोर जिलेके नीलकर साहबोंने हस्ताक्षर करके गवर्नर जनरल लार्ड विनियम विण्ट वहादुरके निम्न एक आवेदन पत्र भेजा। उन पत्रके पढ़नेसे उनके अत्याचारकी कथा आप ही प्रकट हो जाती है। १८३० ई०में गवर्नरने जो आवेदन निकाला, उसका प्रभाव खूब करना ही इस आवेदनका उद्देश्य था। इसीसे उनकी दरवास्तमें एक जगह लिख दिया गया कि, 'इस आवेदनके द्वारा रैयतका विशेष महत्त्व हुआ है। नीलकर साहब प्रजाके अन्याय कार्योंमें किसी प्रकार प्रतिकारका उपाय न देख बलपूर्वक उन्हें दमन करते थे। इस आवेदन द्वारा उस नृपस शासनसे प्रजा जो हमेशाके लिये विमुक्त हुई, इसमें सन्देह नहीं।' पीछे उन्होंने यह भी लिखा है कि, 'इस आवेदनके बलसे इस देशके कोठोके सत्त्वाधिकारों अथवा स्थानोय दुष्ट जमींदार, तालुकादार वा मण्डल और जनसाधारणको उत्तेजनासे उत्तेजित हो कर कृपक स्वभावतः ही अवाधरताका कर्म और दंगा फसाद करनेमें प्रवृत्त हुए हैं। फिर १८३० ई०में पूर्व आवेदनकी पूर्वी धाराके अनुसार यशोर जिलेको दोषानी पदालतमें जितने मुकदमें दायर होते हैं, उनसे साफ साफ जाना जाता है, कि यशोर जिलेमें नीलकी खेतीका यथार्थरूपमें निर्वाह होता है। किन्तु जबसे पूर्वा आवेदन जारी हो गया है, तबसे प्रजा एकवारगो मुक्त होनेके लिये दरवास्त करती है।' इसके बाद ही फिर उन्होंने लिखा है, '१८३० ई०में कोई मुकदमा नहीं हुआ। परवर्ती १८३१ सालमें ५८—३२ सालमें तीस और—३३ ई०के जनवरी फरवरी मासके मोतर तीस मुकदमें दायर हुए थे।' इससे सहजमें अनुमान किया जाता है, कि धीरे धीरे इस प्रकार अत्याचारको संख्या बढ़ती ही

बनी जा रही थी। यद्यत्तमें मासिक नहीं होनेसे भी
पत्नीचार नाममोमा तब नहीं पड़ता था यह
बात हीक नहीं है। यद्यत्त कष्टमें परीक्षित हो कर भी
दरिद्र ज्ञानक विचारपरिधि प्रायय सीनेको बाध होते हैं।

१८२८ ई०में जब प्रजाति पक्षी पक्ष्य पाषिदलपक्ष
पिग विद्या, तब साहू ब्रैण्डर बडापुरमें इसको यद्य-
हताका निन्दयन करकेके सिधे घरको मुक्तया। पीछे
पार्लियामन होनेके बाद पक्षीमें यत्मान प्राकदलको
प्रायःअज्ञानका विचार कर उत्तर दिया जा कि नीलका
मूल्य कम हो जानेसे यद्योरे मजदूरीको बड़ा जो कष्ट
हुया है। नील बलामें बहुत रूपसे कष्ट होत है।
बलामें हम लोग पक्षीको तरह पक्ष बल (प्रजा)का
उपचार नहीं कर सकते तथा इससे पक्षके कष्टों
को रूपसे बर्णन सिधे हैं कष्टें बलन करकेके सिधे दावा
दिया जाता है। दादको बलन करकेके सिधे हीन
प्रकार प्रति जो पत्नीचार सिधे मय है, वह बर्णनातीत
है तथा बित्तमें कोमोके भी गृहनि मन्त्रीमृत हुए हैं,
उपको समार नहीं।

दादलयाहीको नीलकरके बर्णोमृत रहनेके सिधे
पक्षके प्रकारके पार्लियामन विधिबद्ध होने लगी। किन्तु दादल
पक्षकवारिया क कष्टनिवारणके सिधे प्रायः कोई विधि
विधिबद्ध न हुई। गवर्मेंटमें निषेध कर दिया जा,
कि इटेलवासी इस दिमें मूल्यवर्ति नहीं कर सकते,
तो मो के ज्ञानको बर्णमें जानेके सिधे बर्णोदारोंने
परिक्रम प्राय देवीय कर्णों नाम पर इजाजत सिधे है।
देवीय बर्णोदार जब उनको क्षामना पूरा न करते
हैं तब और विवाद उपस्थित हो जाता था। जो कुछ न
बर्णोदार थे, कष्टों ता के पक्षयन कर डालते थे।
मध्य मध्य पर साहबोंके बर्णचारिण्य यद्योयोग रास
दण्ड भो पार्लियामन तो भी तज्जामोन दण्डविधि पार्लियामन
न पनुवार पक्षीकोके जिना यद्यत्तके विचारार्थीन
नहीं रहनेके कारण कष्टों कोई मायोरीक दण्ड नहीं
मिलता था। इस कारण के पक्षमें यद्योही विधि
विधि बर्णोदार तथा प्रजाको प्रतिबद्ध करकेके मात्र
नहीं पार्लियामन है। इस प्रकार बित्तमें ज्ञानको तो निषेधित
हो कर पक्षमें बलमान जाइ दिने वोरे को कुछ न

रही, जो कष्टके यद्यत्त जो कर रहने लगी।
१८२० ई०में पियाहीब्रिगेडके समय जब बहुतमें
नीलबरीको गवर्मेंटको बोरेसे उदायक मजिस्ट्रेटको
समता मिली, तब ज्ञानको का ज्ञान और भी बढ़ गया।
दुर्भाग्य कष्टको के ज्ञाननिवारणको सिधे देयका एक
मजदूर मियनरियरकेके कैडा करनी लगी किन्तु कुछ भो
उनका दुःखमोहन न हुआ। नीलकर माइर तथा पक्षीक
रात्रपुत्रय से दोनो एक जातिसे है, एक बर्णके धि तथा
पापसमें पाचार-बाबुवार पादात्मपदान कर्ता था, इस
कारण पक्षीक रात्रपुत्रय लक्ष्मी इस क्षाममें मजदूर पक्ष पाते
रहते थे। वह कर देस सुन कर इस प्रदेशकी जनताको
पक्षी तरह मालूम हो गया कि नील कष्टयाममें गव
र्मेंटका विधिपक्षी है। पक्ष यह निषेध है कि प्रजा
पर सुखका पक्षाइ ही नहीं न उठ पक्ष, तो भी गवर्मेंट
प्रतिकूलसे विद्या पक्षदल नहीं हो सकती। आचार्यके
पक्षके मनुष्य बुधियति हुए और जिलेके माना विभागमें
इस दिमें सुविध विपटी-कलक्टर और सुनिमके कर्णों
मिथित तथा बर्णोके दारोमा निवृत्त होने लगी। ये
नील गवर्मेंटका बर्णियाय प्रजाको समझाने लगी किपक्षे
उपके कष्टकेके पक्षक बर्णका बोरे बोरे दूर होने लया।
इस समय बरायत जिलेके तदागोस्वाम मजिस्ट्रेट पार्लियामन
पक्षको द्यून साइर थे। वहाँ जब ज्ञानको और मोस
क्षाममें विवाद पक्षाइ हुआ तब कष्ट मजिस्ट्रेटमें एक पर
बाना निष्ठाका ज्ञानसे सिद्धा था कि, 'जमीनमें पक्षक
कोना प्रजाकी दण्डा पर निरर है। इसमें यदि कोई
विद्य दारोमा, तो वह राजदण्डसे दण्डित होया।' पक्षी
कष्टकाले बित्त पक्षमें पाशाका जो पक्षुर उगा था, वह
इस परबर्णके दारा बड़ गया। १८२८ ई०में भारतके
कष्टकोकी एक मया हुई ज्ञानमें यह स्थिर हुआ कि
नीलकी खेती किन्तुन उठा दो जाय। फलतः बहुत कष्ट
की नीलकर और प्रजामें गुना विवाद उपस्थित हुआ।
इस समय यदायिका कष्टकष्टयय के वि० पाण्ड साइर
ब्रह्मणक कपटनेपक्ष यक्षर री। कर्णों नीलकरका कष्ट
निवारण मोसकालको प्रकृत प्रजाकोका तत्त्वानु
सम्मान तथा इस कालको किमो निदेयवासीका निर्दा
एक बर्णके सिधे १८२० ई०का ११वा विधि प्रकाशित

की। प्रथमोक्त विपक्षनिष्पादनके लिये जितने मजिस्ट्रेट थे मन्त्र मिल कर यत्न करने लगे और शिपोक्त दोनों कार्य-
 ३ मम्पाटनार्थ पांच कमिश्नर नियुक्त हुए। कमिश्नरोंने
 नीलकार्य-प्रणालीमें जितने दोष थे सब लिख कर गव-
 र्मेंटरके पास भेज दिया। इस पर नोलकर साहब, जिन्हे
 अब पूर्वसी क्षमता न रही, प्रजाके विरुद्ध तरह तरहके
 जुद्धसे दायर करने लगे। इन सब मुकदमोंमें यद्यपि
 अनेक हफ्तोंका सब नाग हो गया, तो भी उनको प्रतिष्ठा
 बटल ही नहीं। अब कोई भी नोलकी खेतो करनेकी
 श्रमसर न हुआ। थोड़े ही दिनोंमें नोलकरका
 वैभाग्यसूर्य अस्त हो गया। उनको जितनी कौठिया
 और भूमिपत्ति थी, सब ब्रेच डाली गईं। अब जो इने-
 गिने नोलकर साहब रह गये हैं, उन्हें पूर्वा प्रभाव
 नहीं है।

नीलकण्ठी (सं० स्त्री०) खनामख्यात लताविशेष,
 कालदाना।

नीलकाखक (सं० पुं०) महाराजसूत फल, सुन्दर आम।

नीलवाचोद्भव (सं० स्त्री०) काचनवण।

नीलकान्त—एषनामख्यात पक्षिविशेष, एक पहाड़ो
 चिड़िया जो हिमालयके पश्चलमें होती है। मसूरीमें
 इसे नीलकान्त और नैनीतालमें दिग्द्वज कहते हैं।
 इसका माथा, कण्ठके नीचेका भाग और छाती कालो
 होती है। सिर पर कुछ सफेदो भो और पूँछ नोनो
 होती है। कण्ठमें भी कुछ नीलेपनको भनक रहतो
 है। चौंघ और टोनों पर लाल होते हैं। इसकी
 लम्बाई २८ इंच, पूँछकी १८ इंच और डँनेको ८ इंच
 होती है।

हिमालय पर्वतकी शतदृ-उपत्यकासे लो कर नेपाल
 तक, आसामके नागापहाड़, श्याम, ब्रह्मदेश, आराकान
 भासो और तैनासेरिम तथा पूर्वधड़के पार्वत्य प्रदेशोंमें
 इस जातिके अनेक पक्षी देखे जाते हैं।

ये प्रायः तीनसे छः तक एक साथ घूमते हैं। मार्चसे
 लो कर जुलाई महीनेके अन्दर मादा वृक्ष पर एक साथ
 तीनसे पांच अण्डे पारतो हैं।

• W. S. Setonkar, President, B. Temple, W. F.
 Ferguson, Rev. J. Sale, Baboo Chandra Nath Cha-
 terjee.

कोई कोई इसी पक्षीको नीलकण्ठ कहते हैं,
 लेकिन नीलकण्ठ और नीलकान्त दोनों स्वतन्त्र पक्षी हैं।
 २ विशु। ३ मणिभेट, नीलम।

नीलकान्तगाह—मध्यभारतके नागपुर विभागस्थ चांदपुर
 जिलेके गोंड राजाओंके शिव राजा। ये अत्यन्त निष्ठुर
 और विश्वासघातक थे। इसीमें सभो प्रजा इन्हें बुरो
 निगाहमें देखतो थी। १७५६ ई०में रघुजा भोन्सलाने
 जब चांदा पर आक्रमण किया, तब किमोने भी नील-
 कान्तको तरफसे अन्वधारण न किया। सुतरा विना
 रक्षापत्रके ही रघुजो इन जिलेके अधोशर हो गए। पोंडे
 इन्होंने नीलकान्तगाहको कैद कर ममस्त स्थान अपने
 अधिकारमें कर लिए।

नीलकायिक (सं० त्रि०) १ नोनशरोरविग्रिट, जिमका
 शरीर नीला हो। (पुं०) २ ब्रह्मदेवतामिद।

नीलकुन्तला (सं० स्त्री०) नीला नीलवर्णाः कुन्तला यस्याः।
 पार्वतीकी एक सखिका नाम।

नीलकण्ठका (सं० पुं०) नीलभिण्टो, नीली कटसरैया।
 नीलकुसुमा (सं० स्त्री०) नीलवर्ण भिण्टो, नीली कट
 सरैया।

नीलश्री (सं० स्त्री०) नोनिकाहच, नोनका पीधा।
 नीलक्रान्ता (सं० स्त्री०) नीलेन नीलवर्णन क्रान्ता।
 विशुक्रान्ता, क्षण्य अपराजित।

नीलकौञ्च (सं० पुं०) नील. कौञ्चः। नीलवक, काला
 बगला, बह बगला जिसका पर कुछ कालापन लिए होता
 है। पर्याय—नोलाङ्ग, दोर्घशोष, अतिजागर।

नीलख्यात—नेपालके मध्यावर्ती एक झर। इसका दूसरा
 नाम गोसाईंकुण्ड भो है। कहते हैं, कि देवगण जब
 अमृतको आगासे समुद्र मथने लगे, तब पहले पहल
 विषकी उत्पत्ति हुई। उस विषको शिवजो पी गये और
 थोड़ी देर बाद ही वे यन्त्रणासे अचेत हो रहे। पीछे
 दुर्गाके मन्त्रबलसे वे होयमें तो आ गए, पर यन्त्रणा पूर्व-
 सी बनी रही। अनन्तर ज्वालाके निवारणके लिए निम्नत
 तुपाराच्छादित स्थानमें उन्होंने त्रिशूलने आघात किया
 जिससे तीन स्रोत उसी समय निकल आए। इन तीनों
 स्रोतोंके मिलनेसे एक झर बन गया। इसी झरका
 नाम नीलख्यात है। स्कन्दपुराणके हिमवत्खण्डमें इस

नीरगावत वा नीरगावठे माशाव्यजा बर्बन है।
 नीरगाव (म० खी०) नदीमंद, एक नदीका नाम।
 नीरगावजल— पूर्वेया जिल्लेके पत्तगंत चर्मपुर धोर
 ज्वेनो परगनेके मध्याक एक खान। यहा नीरगावो एक
 खोडो है।

२ यमोरके पत्तगंत एक खान जो बाबडूमि एक
 खोड मूर मूरनदीके किनारे अवस्थित है।
 नीरगावध (म० पु०) नीरगाव गविस। नीरगावध' यधिस।
 नीरगावध (ल० सि०) नीरगाव यम' यधिस। नीरगावध,
 त्रिनका विचका माम नीरगावो।

नीरगाव (हि० खी०) जगन्नाथीय जन्तुविधिस, नीरगा
 वन मिए भूरे रगका एक बड़ा बिरन जो गायके
 बराबर होता है। इस खोडो के हिन्दूयानमें हयोसर्ग-
 यधिस नीरगाव नामक किशो जन्तुका लक्षण होता
 था धोर लक्षके वन यानोमें बलगाव गय है। नीरगाव
 बहनेके सामान्यता नीरगाव सके बाबडुका ही बोध होता
 है। किन्तु बह गुबबुख बांडू पकसर देखनेमें नहीं
 थाने, इन बाबडु पाहणिक स्थितिकारमक नीरगाव मन्-
 के किशो प्रकृत जन्तुका नाम खोबार नहीं करतें। यकि-
 तत्त्वमें लिखा है,—

'खेदिठो जन्तु बनेर सुके पुके च पाणर।
 खेठपुरविचकाव। ह नीरगाव यधके ह'

'जबब' मरीर, सुध धोर पुच्छ पाण्डर, धूर धोर
 नूट मेलबर्ब धिस लक्षकाकाल नीरगाव नाम नीरगाव
 है। लक्ष लक्षके नीरगावका खोड पाह मोना होता
 है, इहका पनुमान नहीं किहा जाता। नीरगाव नामक
 मधिस मूयके नीरगाव जो पतुप्यर जन्तु है वह देखनेमें
 मोहितान नीरगाव' ना होता है धार कुछ पम हव
 बानिके मिश्रता लुगता है। पतु बडो नीरगाव पूर्व
 तन पयकार बनि'न नीरगाव है, इसमें ब'दिह नहीं।

नीरगाव बहनेके साधारणतः खीकिजमें धमियोका
 बोध होता है। यहादिमें लक्षके लिये उपका प्रयो
 जन होता है, गायका नहीं। इस बाबडु माखकारीमें
 नीरगावका बर्बन न कर नीरगावका ही बर्बन
 किया है।

यह जन्तु देखनेमें हव ना धोर बय जानिहा होता

है, किन्तु लक्षमारने पाकारादिमें बहुत फर्क पड़ता
 है। मुख्य जातीय नीरगावकी लम्बाई १५ से ० फुट
 धोर ल'वाई ३५ फुट होती है, खोडन खीरानि
 पयसाकृत कुछ बड। दोनो का बर्ब' छेठ फतरके ब'सा,
 पर नीरगावके रोव का अवभाग कुछ ताखर'ब'दुख होता
 है। सुध धोर मच्छक म्गने बीया लोडिन बहुत कुछ
 धोकेके सुधमे भी मिश्रता लुगता है। इसके जान मायके
 से धोर दोनो खोडके धोर ० बुबनके नयमग लम्बे धोरे
 है। भी यकी जडमें बतुकोविधिस एक काके बालो
 का हाग है। १५के दोनो जान बाने यका टेढ़ा धोर
 पानिको धोर कुछ हा हा तथा हट्ट होता है। छोटे छोटे
 बाने बालो का धोर (पायन) भी होता है। गनेर
 नीचे बडू बालोका एक खोडा गुच्छा सा होता है।
 देखनेमें यह जन्तु गाय धोर बिरन दोनोमें मिश्रता जान
 पड़ता है। लक्षके पयसा इहदेग कुछ ल'या, पया
 जान गद'मद'हके ब'सा धोर पुच्छ भी ब'सा जो होता
 है। प्रहका लपरी भाग कुछ बाले बानोमें डका रहता
 है। धोरके बाध बाले धोर धमे धोरे है। ब'दर धोर
 ब'पदेय प्राव' ध'दिह होता है।

यह जन्तु जड'धोमें दम बांध कर चमता है। कभो
 जान, पाह ना बोध एक साव मिश्र कर इधर उधर ममच
 करतें है। भारतवर्षके मज्जप्रदेयने महिसुर लक्ष, पञ्चाव
 राज्य धोर राममडूमि जे का हिमानयव'तयोको
 पाहभूमि लक्षके धमो व्याधोमें इह प्रचारके जन्तु देखने
 में पाते हैं। ये धमे जड'धन'रह नहीं मखते, छोटे
 छोटे गुल्म'विधिस पचवा जनहीन मोडलमें विचरप
 करतें हैं। ये पत्यल मतब', धुनगामो धोर बलिह होते
 हैं। इनकी पान रतनो निज होती है, कि धुनगामो
 धोके पर लवार हा बहुत देर तक इनका पोका बाने
 पर भी ब'द'ध'में से ब'डू नहीं जा मखत। नीरगाव यानो
 का लक्षण है, किन्तु कभो कभो ब'क पानक'को जो मीमधे
 पाहमच करनी है। पाहमचके पचमे यह सामनेके नाम
 लुटनोको जडोलेमें टेक कर एक टकसे दिक्ती धोर धीके
 सामनेके जन्तु पर लु'ध ओरके ध'यटतो है।

यह बाध बाडे छोटे धोकेको पतिया, जान धोर ल'वादि
 या कर पयना धिठ भरतो है। यह अ'ट'को तरह चारा

पैर मोड़ कर विश्राम करती है, गायत्री तरह धार्वर्णी और भाग रख कर विश्राम नहीं करती। शिकारी चमड़े आदिके लिए इसका शिकार भी करते हैं। इसका चमड़ा बहुत मजबूत और पतला होता है। गमिके चमड़े की टांगें बनती है। पालित प्रवस्थामें यह साधारण गो जातिकी तरह गभेवती होती और एक ही समयमें दो शावक जमती है।

ऐतरेयब्राह्मणमें लिखा है, कि जपाने जब अपने पिता प्रजापतिके भयमें रक्षवर्ण रोहित सृगीका रूप धारण किया, तब प्रजापतिने भयानक ऋष्यकृष्णमें उसका पोछा किया था। देवगण जब इस अत्याचारको गोक न मनें, तब अपने अपने विराट्-गुणको समष्टिमें उठेनि रुद्रसूक्ति-की सृष्टि की। रुद्रदेवने ऋष्यकृष्णी प्रजापतिकी वाणमें भेड़ कर डाला। ऋष्यकृष्ण (सृगशिरा पुष्प) रूपमें आकाशमें प्राथय लिया।

वह ऋष्यकृष्ण जातिका सृग था, उसका प्रभो निर्णय करना बहुत कठिन है। पूर्वकालीन सृगविशेष-का नाम वर्तमान समस्त सृगजातिके पर्यायरूपमें रहता हुआ है। ऐतरेयब्राह्मणभाष्यमें सायणचार्यने ऋष्यकृष्णसे सृगविशेषका नाम बतलाया है। तैत्तिरीय ब्राह्मणमें 'गोसृग' शब्दसे गो और सृगके सङ्ग भयानक वक्ष्यशुविशेषका अर्थ लगाया है। चक्र दो सृग ही नीलगाय प्रतीत होते हैं। ऐतरेयब्राह्मणमें प्रजापतिके प्राथययोग्य सृगरूपको ही अति दलिष्ठ, उग्र स्वभावशुक्त तथा द्रुतगामी नीलगाय बतलाया है। शब्दकल्पद्रुममें भी ऋष्यकृष्णको नीलाङ्गक कह कर उल्लेख किया है।

भावप्रकाशमें लिखा है—

“ऋष्यो नीलाङ्गश्चपि गवयो रोमे इत्यपि ।

गवयो मधुरोवलय स्निग्धोष्णः कफपित्तः ॥”

इससे यह भी जाना जाता है, कि ऋष्यकृष्णका दूसरा नाम नीलाङ्गक भी था। अतः यह साफ साफ प्रमाणित होता है कि ऋष्यकृष्ण जातिका हरिण नीलगायके सिवा और दूसरा कुछ भी नहीं है। इस नीलवृष-जातिका हरिण बहुत प्राचीनकालमें हम लोगोंके देशमें प्रचलित था, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं। वैद्यकके अनुसार नीलगायका मांस मधुर, रस उल्लकारक, कण्ववीर्य, स्निग्ध तथा कफ और पित्तवर्धक होता है।

नीलगार—जातिविशेष। नीलरंग बनाया ही इनका प्रधान व्यवसाय है। थोड़ापुर जिनके नाना स्थानोंमें इस जातिके लोग रहते हैं। इन्दि और राजापुरमें इनका प्रधान घड़ा है। साधारणतः गार और उन्नत ग्रामोंमें ही ये लोग देखनेमें आते हैं। किन्तु छत्तापटोके टाँचणस्य जिन जिन स्थानोंमें कपड़े बुननेकी प्रथा अधिक प्रचलित है, उन्हीं सब स्थानोंमें ये लोग विशेषतः रहते हैं। इनका कुलगत कोई नाम नहीं है। स्थानके नामानुसार ये लोग अपने नाम रख लेते हैं। इनमें कोई सम्प्रदाय वा विभाग नहीं है, किन्तु शाखाएँ अनेक हैं जिनमेंमें चित्तूर और कटरनक्षक प्रधान है। नीलगारगण देखनेमें सुन्दर, मंभोले कटर्क, बलिष्ठ और बुद्धिमान होते हैं। स्त्रियाँ पुरुषोंको अपेक्षा पतली और सुथो होती हैं। इनकी मातृभाषा कणाड़ी है। साधारणतः इस जातिके लोग मितभोजी, लेकिन रम्यनकार्यमें नितान्त अपटु होते हैं। इनमें से कितने ऐसे हैं जो लिङ्गायतोंकी तरह मक्खली मांस नहीं खाते और न शराब ही पीते हैं। किन्तु लिङ्गायतोंके साथ इनके चरित्र और पोगाकके विषयमें कोई विशेष प्रभेद देखनेमें नहीं आता। ये लोग सुनी कपड़ोंको जाम्बे रंगमें रंगाते और बहुत बस खेलो-वागे करते हैं। नोल, चूना, केलिके पेड़को राख और तरबट्टका धोत्र इन सबको मिला कर उल्लकाला रंग बनाया जाता है। विदेशीय द्रव्योंकी घाम-टनों ही जाननेसे इनके व्यवसायमें बहुत धका पड़ चुका है। नीलगारोंमेंसे अधिकांश ऋणजानमें फंसे हैं। विवाह और इसी प्रकारको विशेष घटनामें वे लोग अक्सर कर्ज ले कर ही काम चलाते हैं। शुद्ध लिङ्गायतमें वे जो बस समझे जाते हैं। किन्तु उनके साथ धर्मशास्त्रोंमें एक पंक्तिमें बैठ कर स्थान-पोनेमें कोई निवेश नहीं है। ये लोग लिङ्गायतकी एक शाखामें हैं और जङ्गमका विशेष आडर करते हैं। जङ्गम इनके गुरु होते और वे ही सब काम काज करते हैं। कोलापुरके अन्तर्गत सिदगेरि नामक स्थानमें जङ्गमका वास है। इनको समाजनीति और धर्मनीति लिङ्गायतोंसे कुछ पृथक् है। ये लोग अपने लड़कोंको पढ़ाते लिखाते नहीं हैं तथा जातीय व्यवसाय छोड़ कर और कोई व्यवसाय नहीं करते।

कुल सिखा कर इनकी बत्त माग चबला सोचनीय है।
 नीलगिरि—मन्दाप्रदेशके पल्लवगत एक निरिखेको पौर
 जिना। यह पचा० ११ १२ से ११ ३० व० पौर देशा०
 ०६ १३ से ०० पू० अ मध्य पर्वतान है। यह जिना
 पहले बहुत छोटा था। १८०१ ई०में दक्षिण नुबं बैलाद
 का घुस्तरको विभाग इन जिनोमें मिलया गया। पोछे
 १८६० ई०में मन्दाप्रदेश पल्लवगत बैलाद तामुलका
 मन्वन्नाडू, चेरामकोडू पौर मनगाटका कोर्ड काई
 पगे इन जिनोके पल्लवगत हो जानेसे इन जिनोका
 प्रायतन पहलेसे बहुत बढ़ गया है। जिनोका विस्तार
 उत्तर दक्षिणमें १६ मील पौर पूर्व-पश्चिममें ४८
 मील है। क्षेत्रफल ८१८ वर्गमील है। इन जिन के
 उत्तर महिस्तरराज्य, पूर्व पौर दक्षिण-पूर्वमें कोयम्ब
 तोर जिना, दक्षिणमें मन्दाप्रदेश पौर कोयम्बतोरका कुड
 प म तथा पश्चिममें मन्दाप्रदेश है। राजकोप प्रधान प्रधान
 भाषि क्तकामचरमें रहते हैं।

नीलगिरि (पहाड़) पूर्व मन्दाप्रदेश कोयम्बतोर पौर मन
 वारके पल्लवगत था। पोछे १८६८ ई०में नीलगिरि
 प्रदेश को कर पृथक् जिना स्थापित हुआ। एक कमि
 शरको नियुक्ति हुई; वे जो अजागा बल्लु करते पौर
 दोरा तथा दोषानी बिहारका काम भी चलाते थे।

कमिश्नर १८८२ ई०में कलकत्ता, ब्रिटा-महिस्ट्रट
 पौर पतिगिरी दोरेके कब्जे पद पर नियुक्त हुए हैं।
 उनके अन्तर्गत कमिश्नर प्रधान सरकारी कलकत्ता पौर
 महिस्ट्रटका काम करते हैं। इससे पनामा एक सब-अ
 पौर बनायाके डिपटीकलकत्ता नियुक्त हुए हैं। उतका
 मन्वन्में एक डिपटी तहसीलदार हैं। बत्त माग मन्वन्में
 उतकामन्वन्में समस्त बिहार विभाग स्थापित हुए हैं।

पोचबालको इस उतकामन्वन्में मन्दाप्रदेशकी
 राजधानी उठ कर आती है। नीलगिरि जिनोमें पाँच
 वर्गभाग हैं, वेरेनाद तोड़नाद मेकनाद कुन्दन
 नाद पौर दक्षिण पूर्व बैलाद। नीलगिरि प्रदेशको प्रादिम
 पर्वतान मुख्य है। शैल इनका ही पता लगाता है, कि
 हैदरपुरको १०० वर्ष पहले तोड़नाद, मेकनाद पौर
 वेरेनाद नामक व्यापक तोण शासनरक्ता थे। मसार्
 कोडा, कुलिकुलपुत्र पौर कोटागिरिमें उनका बृहत्

दुर्ग था। सुतरां यह गिरि पहले कोट्टुदिम पर्वतान पूर्व
 वेरेनादक पल्लवगत था पौर तदनन्तर १०वीं शताब्दीमें
 महिस्तरक पल्लवगत हुआ है, ऐसा अनुमान नितात्त पयो
 सिद्ध नहीं है। फिर भी अनुमान सिद्ध जाता है कि
 हैदरपुरको पूर्वोक्त दुर्ग पश्चिमा करके पश्चिमादिमा
 में पर्यट कर बल्लु करते थे। दोपुसुत्तानान में कोटा
 गिरि दुर्ग पर पश्चिमा अजाया था। १८२१ ई०में मि०
 सुब्रह्मण्य इन स्थान पर प्रथम पट्टीको कोर्दी पना।

१८०३ ई०से पहले नीलगिरि जिना अथ सिद्धोके
 पल्लवगत था तब इसका प्रायतन बहुत कम था।
 इससे चारो पौर दो निरिखेकोमें मन्वन्वर्ती पश्चिमाका
 का परे हुए जिनोको मोमावह रखा था। इस पश्चि
 मका प्रदेशमें छोटे छोटे गिरिमाता नीलवर्ष अथसे
 मण्डित है। अथ अथ छोटे छोटे निर्भर बल्लु कल
 मन्व करने हुए बह रहे हैं। खरी छोटे छोटे पिट्ट ममान
 अथ चारिमें एक सोपने लड़े जा कर पश्चिमाके मन
 का पाण्ड कर रहे हैं। यह निरि साधारणतः ६००
 फुट ऊँचा है। बैलाद पौर महिस्तरके मन्वन्वर्ती माल
 भूमिसे सोयरगदी निर्भरी है। यहमि पश्चिमघाटके
 दक्षिण-पश्चिम कोनमें कुण्डपहाड़ है जिनको एक माया
 दक्षिणको पौर बहुत दूर तक चली गई है।

प्रधान गिरिपहाड़—दोदापिता ३००० फुट ऊँचा,
 कुवियाकोडू ८१०२ फुट, वेरेनादका ८६८८ फुट, मसूति
 ८२०२ फुट, दावरनीमन्वेता ८१८० फुट, कुड ८१११
 फुट, कुडमोग ७८१६ फुट, उतकामन्व ७१६१ फुट,
 मन्वन्वेता ७२८२ फुट, कोकवन्ता ७२६० फुट, अथवेता
 ६८११ फुट, कोडनाद ६८११ फुट, दिवन्वेता ६१०१
 फुट, कोटागिरि ६१०१ फुट, कुडवेता ६१११ फुट दिम
 र्डी ६१११ फुट कुनूर १८८२ फुट पौर रक्तामोन्व
 १८१० फुट ऊँचा है। इस जिनोमें ६ निरिपत्त वा घाट
 हैं। यथा—कुनूर, पिपू गूडाक, सिषयाक, कोटा-
 गिरि पौर सुम्पको।

यहाँको निम्नलिखित नदियाँ प्रवाह हैं। सोयरगदी
 नीलगिरिसे उत्पन्न हो कर मन्वानो नदीमें गिरती है।
 वेरेनाद मन्वे सोयरको एक शाखा है। इसका सूसा नाम
 बेयपुर है। उतकामन्वका उद सुम्पुदरुधने ०१२० फुट

ऊर्चिमें अवस्थित है और प्रायः २ मील विस्तृत है। पहाड़के निम्नभागमें टानवें प्थानके ऊपर पत्तक वृक्ष लगे हुए हैं। इन सब वृक्षोंमें कायोपयोगी सुन्दर तरुण तैयार होता है। पूर्व समयमें पहाड़ पर बाघ, भालू, पहाड़ी बकरे इत्यादि जङ्गलों जानवर अधिक संख्यामें पाये जाते थे। आजकल गिरकारियों के उत्पातसे उनको संख्या बहुत कम हो गई है।

नीलगिरि जिलेमें दो शहर और ४८ ग्राम लगे हैं। जनसंख्या लासुमे ऊपर है। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई और पारसी लोग जो इस जिलेमें अधिक पाए जाते हैं। हिन्दुओंमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, शैठो, वैष्णव (भूमिकर्षक), इट्टैयर (सोपानक), कम्पलर (सूत्रधर), कणकण (लेखक वा कायस्थ), कैकलर (तन्तुवाय), वनियम (रूपक) कुम्भवन (कुम्भकार) और सतानी (मित्रजाति) प्रधान है। ईसाइयोंमें इंग्लिश, गैरकोटाम वंश, मित्रकारण पर्वतवासियोंका वहाँ दुर्भिक्ष सा हो जान पड़ता है। १८७७ ई०में यहाँके गरीब अंगरेजों और नीलगिरिके अधिवासियोंको अन्नके लिये अत्यन्त कष्ट सहने पड़े थे।

नीलगिरि जिला पर्वतमहान होने पर भा यहाँ गमनागमनयोग्य अनेक पथ हैं, ऐसा कह सकते हैं। यहाँको प्रधान सड़क कुन्नूरघाट और उतकामण्ड है। उतकामण्डमें एक पथ कर्कणहल्लामे, दूसरा गुडालूरम और तीसरा अचलद्वीमें चला गया है। प्रथम पथ हो कर महिसुरको जाते हैं। काटागिरिघाट पथ भी वाणिज्यके लिये विशेष उपयोग है। इसके सिवा जानि शानिक और भा कितने गिरिपथ हैं किन्तु इन सब राहों हो कर बँलगाडा नहीं जा सकता।

इन सब स्थानोंमें एक भी बढ़िया पठार्थ तैयार नहीं होता, पर तोड़ा लोग एक प्रकारका मोटा कपड़ा प्रस्तुत करते हैं। यहाँसे चाय, कहवा और सिनकोना अन्वय भेजा जाता है।

उतकामण्डमें प्रति मङ्गलवारको एक बड़ा हाट लगती है, यही हाट सबसे बड़ा है। तोड़ाओंमें 'कटू' नामका उरुसव प्रचलित है। प्रति वर्ष सृताह तियिमें यह उरुसव मनाया जाता है। इस उपवनमें महिपादि-

कण्डो पौर तामिलमिश्रिन एक प्रकारकी भाषां इस भातिमें प्रचलित है। ये लोग उरु और गिरकार-देशमाको उपासना करते हैं। उनका विमान है, कि सृष्टिसे बाद आत्मा पुण्यस्थानमें वा दूसरे स्थानमें जाता है।

तोड़ाओंके रहनेके लिये पांच घर होते हैं, तीनमें प्राण रहते हैं, एकमें गो और शेष एकमें उनका बकड़ा।

जहानक मानूस होता है, जि बहुगिरा लीग विजय-नगर-राज्यके धर्मरु वाट ३०० वर्षे पहलने दुर्भिक्ष-प्रदी-हित भी कर इस स्थानमें था कर रहने लगे हैं। टैगोय जातिओंमें इनको ही संख्या अधिक है और धन, मोन्दर्य तथा सम्यतामें भा वे लोग बढ़े चढ़े हैं। पुरुष लोग समतलवासियोंको तरह पोशाक पहनते हैं। इससे अनावा एक कीमती चादरसे शरीर पौर कंचेको टाँके स्तम्भोंमेंसे कितने टट फूट गए हैं। उनका भधा अनेक अन्न और नाना प्रकारके पात्रादि पाए गए हैं। तोड़ानाद और परङ्गनाद नामक स्थानके स्तम्भमें बहुमाचीन और उत्कृष्ट शिल्पनिर्मित तरह तरहके पात्रादि और अन्नगन्ध देखे जाते हैं। इन सब स्तम्भोंको आकृति बहुत अजूवा है। किन्तु व्यक्ति वा अभ्युदये समय, किस व्यक्तिसे वे सब स्तम्भ बनाए गए थे, इसका पता लगाना कठिन है। कोटागिरिके निम्नभागमें जो सब कोत्ति स्तम्भ हैं उनमेंसे कितनोंमें मटीक पुतले हैं जिनके ऊपर तातागंठीय पण्डो दिखाने पड़ती है। डाक्टर काल्डवेल (Dr. Caldwell)का कहना है कि वर्त्तमान अधिवासियोंसे कोई भी इन सब ध्वंसावशेषका अपने पूर्वपुरुषोंमें निर्मित होना स्वीकार नहीं करता। अतः इससे अनुमान किया जाता है कि वे सब कोत्ति स्तम्भ और तत्कालीन अधिवासी वर्त्तमान नीलगिरिवासियोंसे बहुत पहलेके हैं। कितने स्तम्भ हत्तसूचको प्राकृति-विशिष्ट हैं। इनमेंसे एकको तोड़ कर देखा गया था कि उसकी मध्य अनेक हत्त उत्पन्न हुए हैं। उन सब हत्तोंकी देखनेसे मालूम होता है कि वे सब कोत्ति-स्तम्भ अन्ततः ८०० वर्ष पहलेके बने हुए थे।

वर्त्तमान समयमें जो सब स्तम्भ परीक्षाके लिये तोड़ें गये हैं उनमेंसे कितनोंमें पोतलके पात्र, चबूहे, सृत्याल

हैं। जो पौर पुरुष दोनों को पूर्वोक्तिजन पौतन पौर
नामिके धामपुत्र कहते हैं।

साधारणतः पर्वतको उपत्यका पौर जनप्रजनने
रुनका नामस्थान है। पवित्रह तामिन भावा रुन
नोगोमें प्रथमित है। २७ ज्ञाति साधारणतः जयिधारी
नको कहते। बर्गविद्यान रुनमें कुछ भी नही है
दिना कह सकते हैं; पर वे प्राकृतिक कुछ द्रव्य वस्तुपा-
को उपासना करते हैं। कुचमिययो में जो पव तनापी
हैं वे बड़गिरी का पीरोहित करते हैं। पन्थाप्य ज्ञाति
कुचमिये पत्यस मय करते हैं पौर कुचम्य लोग भी
तोड़ाको भी भवने इमिया पतिव्यन्त रहते हैं।

रुचम्यज्ञाति मोरगिरि (पहाड़) को ले डालू प्रदेशमें
पौर पहाड़; तपदेशमें **पहाड़** नाम **पहाड़** प्रथमों में नाम
करते हैं। पहाड़में **पहाड़** नाम **पहाड़** पविधामो
को विद्याप है, **पहाड़** न
कहते हैं, कि वे पाण्डव शोभयथ कुचम्य नामसे प्रसिद्ध
थे। पाषाण्य पक्षितो पौर पुरातत्त्वविदो में भी शीघ्र
मतज्ञा नमयन किया है। प्रवाद है, कि कुचम्य लोग
एक समय समय दाचिवाहमें रहे हुए थे। पीछे
विदेशीय राजाओंके शासनसे किंच मित्र हो कर
उन्कोने गिरि, कडल प्यादि दुर्गमप्रदेशोंमें पान्य पडच
किया।

मन्द्राज प्रदेशमें तथा भारतवर्षके नाना स्थानोंमें ऐसे
कोर्ति प्दाथ का स्थितिप्रथम हैं जिनमें प्रोचित मृतदेव
को चित्रियां प्यादि देखो गई हैं।

मोरगिरि (पहाड़) पर एक बहुत प्राचीन बौद्धज्ञानि-
का बाव था। वे ही वि रुचक बौद्धधार्मिके प्यादिपुत्रप
मार्ग जारी हैं।

यहांका बहुत बर भागोंमें विभक्त किया जा सकता
है। (१) मोरगिरिसे पूर्व पौर दक्षिण ठालू प्रदेश,
(२) उत्तरक ठालू प्रदेश पौर मोवाको उपत्यका, (३)
दक्षिणपूर्व बेंगाद पौर (४) कोल उपत्रमिको उपत्यका।

बयमोज प्रदेशमें तरु तरुके चन्द्र पीड़ पाये जाते
हैं। इतनेच विभाज चन्द्रप्रथमसे भरा हुआ है। एतोक
विभागमें बनेक चाराचन्द्रके डच हैं। चन्द्रके विभागमें
बड़े बड़े शिबुनके पीड़ मोयम, पिगादाक चादिके

नही उपगत। पूर्व समयमें बेंगाद पौर कोडय प्रदेश
में बचवा उत्पन्न जाता था जोही मोरगिरि (पहाड़) पर
उपत्रम लगा है। यहां तोन प्रकारकी चायको खेती
होती है। मोरगिरि (पहाड़)के पश्चिम बहुत खंबे पर
चाय उत्पन्न होती है। यहाँको चायको पचव्या टेल
कर दस स्पष्ट माना जाता है कि चायके पोषे शीतप्रधान
देशों में जो अच्छे लगते हैं।

इस जिलेके समस्त स्थान प्रायः तक भी जयिद्योम्य
नका हुए हैं। जिन नियमसे पवित्राय बमोन पहा
कार्यत होती है, उसका कुछ विवरण देना यहां प्राय
शक है। कहते हैं कि तोड़ाज्ञाति पर्वतके जो सर्व-
पिता बनगाना पौर साहमो होता। चलो पारवा है पौर
पव तनी सभी उपपद्यलापामें पद्यो उज्जीविवाकं उपाय
सक्य मोहन पौर मरिवादि जोन प्रभुओं को चरावा
- नी है। उन मय चरित्तत प्रदेशों में कूमरा नीरे भी
बड़मिके पोषणकाच जाना जाता है।

सावित्री उचिवात धर दस है। यहां चर पौर वात-
रोम चरुतर हुआ करता है। जिनहाल यहाँका बरु-
बाहु बहुत पन्था होमिके कारक दस स्थान दाचिवाप्यके
स्थास्थ-निवातक्यमें निर्वाचित हुआ है।

साष्टर शिरहनका कहना है, कि इस पहाड़ पर
प्रवा ११८ ज्ञातिके पक्षियों का वास है।

शिशामन्यमें इस जिलेका नम्वर मन्द्राज जिलो
में कूमरा पावा है। यहां मित्र मित्र ज्ञातिको वे जिये
मित्र मित्र क्लृप्त हैं। क्लृप्तको मित्रा यहाँ कोत्री पन्ना-
ताल पौर तोन कारामार हैं।

मोरगिरि—उत्तीकाके अन्तगत एक देशिय राज्य। यह
पचा० २१ १० से २१ १० ४० पौर दिया० ८६ २१ से
८६ १० पू०के मध्य पवसित है। इसके उत्तर पौर
पश्चिममें मयूरमक्ष राज्य, दक्षिण पौर पूर्वमें बानेश्वर
जिला है। इस राज्यका एकहीतीर्थय पाषाण्य भूमि
एकहीतीर्थय चन्द्रगिरिपूर्व पौर पश्चिमिटांम जयिवाह
के उपरुक्त है। यहां एक प्रकारका कोमती जाना पन्तर
पाया जाता है जिसके ज्योरा, रिवाज प्यादि बरतन प्रभुत
होते हैं। हिन्दू, मुसलमान ईबाई, न पात पौर भूमिज
जातिके लोग यहां पवित्र पाव जाते हैं। प्रथम व्या

सत्तर हजारके लगभग है। राज्यको वापिक भाय (१३००००) रु० है जिसमेंसे ३८०००) रु० गवर्मेण्टको करमें देने पड़ते है। राज्य भरमें १ मिडिल स्कूल, ८ अपर प्राइमरी स्कूल और ७३ लोपर प्राइमरी स्कूल हैं। इसमें अनाया एक चिकित्सालय भी है। राजाकी मैन्य-संख्या २८ है। इसमें कुल ४६६ ग्राम नगरी हैं। प्रवाद है, कि छोटानागपुर राजाके किसी भाष्योयने उहीसाके राजा प्रतापकन्ददेवकी कन्यासे विवाह कर इस राज्यको बसाया। चवियराज कृष्णचन्द्रीसुरदराज हरि चन्दर इस वंशके चौदोमेंवें राजा माने जाते हैं।

नीलगिरिकर्णिका (म० स्त्री०) गिरिकर्णिकाभेद, नील पुष्प, नील अपराजिता।

नीलगिरिजा (म० स्त्री०) १ विष्णुकान्ता, अपराजिता।
२ आम्बोता, हापरमानी बेल।

नीलगुण्ड—१ एक सुद्र ग्राम। यह धारवार जिलेके गडगमे १२ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है। यहां उत्तम मर्मर-प्रस्तारनिर्मित एक नारायण-मन्दिर और सामनेमें एक मण्डप विद्यमान है। मन्दिरको छत १२ खुम्भोंके ऊपर स्थापित है। इसको दोवारमें पुराणोक्त पनेक मूर्तियां चित्रित हैं। ग्रामके उत्तरी फाटकके पूर्व १०४४ ई०को उत्कीर्ण एक शिलालिपि है।

२ जातिभेद। ये लोग हिमालयके अन्तर्गत गडवाल और कुमायुन नामक स्थानमें वास करते हैं। इनका आचार-व्यवहार हण्डेयवासियों-सा है।

नीलश्रीव (म० पु०) नीला नीलवर्णा घोवा यष्य। १ महादेव, शिव। (त्रि०) २ नीलवर्ण शोवायुक्त, जिसका गला नीला हो।

नीलद्रु (म० पु०) निलद्रुति गच्छतीति नि लणि-गतौ कु-निपातनात् पृषटोर्षः। (खरुषं कृषोपुनीलं गु ल्यु। उण् १३७) १ क्षमिभेद, एक प्रकारका कौड़ा। २ नृगाल, गौदड़। ३ भ्रमर, भं वरा। ४ प्रसून, फूल। नीलचक्र (म० पु०) १ जगन्नाथजीके मन्दिरके शिखर पर माना जानेवाला चक्र। २ तीस अक्षरोंका एक दण्डक-वृत्त। यह अशोकपुष्पमञ्जरीका एक भेद है। इसमें गुरु लघु १५ वार क्रमसे आते हैं।

नीलचर्मन् (म० स्त्री०) नील चर्म फलत्वग् यस्य। १

पर्यक, फालसा। २ क्षयाजिन। (त्रि०) ३ नीलचर्म विण्टि, जिसका चमड़ा या क्लिन्का नीला हो।

नीलच्छद (म० पु०) १ गरुड़का नामान्तर, गरुड़का एक नाम। २ खजूरवृक्ष, खजूर। (त्रि०) २ नीलपत्र विण्टि, नीले पत्र या आवरणका।

नीलच्छवि (म० पु०) कुक्षु भण्डो, वनसुर्गा।

नीलज (म० स्त्री०) नीलाज्जायते जन ड। १ वत्तलोह, थोदरी लोहा। नोलात् नीलवर्षात् जायते इति जन-ड क्षिर्वा टाप्। २ नीलपर्वतोत्पन्न नदोभेद, वितस्ता नदी। (त्रि०) ३ नीलजात।

नीलजा (म० स्त्री०) नीलनदोसे उत्पन्न वितस्ता (क्षिन्ना) नदी।

नीलभ्रिण्टो (म० स्त्री०) नीला नीलवर्णा भ्रिण्टो। नील-वर्ण भ्रिण्टोपुष्पवृक्ष, नीलो कटभरेया। पर्याय—नील-कुरण्ट, नीलकुसुमा, वाना, वाष्पा, दामो, कण्ठार्त्तगन्ता। गुण—कटु, तिक्त, दन्तामय, शूल, वात, कफ, कास और त्वग्दोषनाशक है।

नीलतन्त्र (म० स्त्री०) चीनाचारदिप्रकाशक तन्त्रभेद।

नीलतरा—बौद्ध कथाओंके अनुसार गान्धारदेशकी एक नदी जो उरुवेलनारण्यमें हो कर बहती थी। इस स्थान पर जा कर बुद्धदेवने उरुवेलकाग्र्यप, गयाकाग्र्यप और नदोकाग्र्यप नामक तीन भाइयोंका अभिमान चूर किया था। उक्त तीनों भाई अपनेको अर्हत् कहना करते थे और लोगोंको ठग कर अपना मतलब निकालते थे। बड़े भाईके पांच सौ, मध्यमके तीन सौ और छोटेके दो सौ शिष्य थे। बुद्धदेव उक्त तीनों भाइयोंकी अपने मतमें लानेके लिये वहाँ गए और रात भर बड़े भाईकी अग्नि-शाला वा मन्दिरमें रहनेके लिये उनसे आज्ञा मांगी। उरुवेलने उत्तर दिया, कि स्थान देनेमें तो आपत्ति नहीं, लेकिन जहाँ ये रहना चाहते हैं वहाँ एक प्रकाण्ड विष-धर सर्प रहता है। बुद्धदेवने इसकी परवाह न की और सीधे मन्दिरमें प्रवेश किया। पीछे नाना उपायसे उक्त सर्पको पराभूत और बन्दी कर अपने भाइयोंका अभिमान चूर किया। बाद में बहुत लज्जित हो कर बुद्धदेवका आदर करने लगी।

नीलतह (म० पु०) नीलस्तहः। नारिकेल, नारियल।

नीलकण्ठ (स० खो०) नीलकण्ठ नाम् । मोक्ष तत्त्व-ग्रहण । १
नीलकण्ठ, नीलकण्ठपत्र । २ कालापत्र ।

नीलकण्ठ (स० पु०) नीलकण्ठक । विन्ताकण्ठक, स्वाम-
तमास ।

नीलकण्ठ (स० खो०) नीलकण्ठ । हरिहरं पूर्वां इति
पूर । पर्याय—मोक्षकण्ठो, कर्पता माधवो, श्याम, मोक्ष,
मनपरिष्कार, पशुता, पूजा, यतपत्रि, पशुपदत्रिणा,
दिवा, विवेक, महत्ता, जवा, सुमना, मृतकण्ठो, यत
शुभा मशोवधो, विजया, मोक्षो, शान्ता, वसन्ती ।

सुख—विम, तिष्ठ, मधु, जपाय, कण्ठ, रत्नपित्त
वृत्तिपाद, कण्ठ, वसन्त पौर क्वरणाग्रक ।

भास्वप्रकाशके मन्तानुसार इसका पर्याय—दंडा, पनला
भाग बी, यतपरिष्कार, मय्य, सख्यबीबी पौर यतवह्वी ।
सुख—विम, तिष्ठ, मधु, तुवर, कण्ठ, पित्त, पशु, मोष्य,
कण्ठ पौर दाहनाग्रक ।

नीलकण्ठ (स० पु०) नीलकण्ठ पसमग्रक ।

नीलध्वज (स० पु०) नील नीलध्वज ध्वज इव । १ तमान-
ग्रह । २ मृगशिर, एक राजाका नाम । ये माहिषमर्त्या-
नमरोके परिचित हैं । इनका विषय श्रीमद्भागवतमें
इस प्रकार लिखा है,—

राजा नीलध्वज माहिषमर्त्यानमरोके भवोत्तर है ।
इसको श्रीका नाम क्या था और पुत्रका प्रबोध था ।
इसके प्लाहा नामक एक कन्या भी थी । जब वह कन्या
विवाहयोग्य हुई, तब राजाने कन्याधि पूजा, 'हमारे
पटमण्डपमें हमारी राजा पनकाल करती हैं । इनमेंसे
त्रिष विधोको चाहो, अपना पति बना लो ।' प्लाहाने
कन्याधे सुख लोके बिदे बनार दिवा, 'मनुष्य लोभके
नमोभूत पौर मोहके पाच्छे हैं । यत में मनुष्यको
पपया पति बनाना नहीं चाहती । यतपव थाप द्वि
लोभमें जा कर भरे लिये एक लपटुका बरबी तलाय
कोत्रिप । यह सुन कर नीलध्वजने कहा, 'तुम देवराज
इन्द्रको अपना पति करो, तुना है, कि मैं मातृपौका परि
पश्य कराना चाहते हैं । इस पर प्लाहा बोली, 'पित' ।
देवराज इन्द्रने देवताधो का सर्वक इरक किया है,
तपत्रिधो के विद्वद्वे धात्वाकार किया करते हैं, पर-
विमृति पर ज्ञानी हैं तदा लोभने गोतमको मार्याका

सतोत्त नष्ट किया है । ऐसे सब कर्म लोभने बितने
बिदे हैं, मानू म नहीं। हवीधे मैं कर्षे बर नहीं सकता ।
पस्विदेव धर्मो मनुष्यको पवित्र करते हैं, यत में
लभोको अपना पति बनाना चाहती हू ।' कन्याके
इच्छानुसार नीलध्वजने पस्विदेवके ही साथ लपका
विवाह कर दिया । पस्विदेव विवाह करके माहिषमर्त्या
नगरीमें रहने लगे । जब कन्याकोई मनु, इस नगर पर
चढ़ाई करता था, तब पस्विदेव नीलध्वजको सुखदेवमें
सहायता पहुँचाते थे । इसी विधोको इनके विद्वदा
चरक करके विद्वद्वत नहीं होतो जो । जब पशुंन
धर्मसिधका बोझा ले कर हिमिजबकी निजके तब वह
बोझा पड़के हवी माहिषमर्त्यानगरोमें प्रविष्ट हुआ ।
शास्त्रके पुत्र मर्बोर अपने सखाधोके साथ कतामण्डपमें
बिन्न रहे थे । हवी समय वह बोझा लगेके सामने पहुँच
या । प्रबोरने मदनतुच्छरो लप तुन्दर पश्यके मण्डक पर
जयपद देव लडे पकड़नेको कहा ।

पशुयव बोझा पकड़ा गया । मर्बोर लडे ले कर अपने
पुरको एक दिडे । जहाँ पौर सब तो लप पशुंन बोझोको
देखनेमें लग गये, लेकिन पर्वीर परसेव्य हुकबी प्रतोका
करने लगी । पौष्टे पशुंन पौर लपकेतुके प्राय धोरतर
च पास हुआ । प्रबोर विपयोके शरणागते एकधारणी
पश्यते हो गये । इस पर पावकप्रतिम नीलध्वज तोन
पशुंनके बीनाको साथ ले कई पहुँच गए पौर प्रबोर
को सुख बिधा । इस समय लोभने पस्विधा पाहान
बिधा । पस्विदेवके सुखदेवमें पहुँचनेके साथ ही पशुंन-
की धिना दम्ब होनी लगी । तब पशुंनने नारायण पश्य-
का हमारक किया । इस नारायण-पश्यका दिख कर
पस्विने शान्तिमूर्ति धारक को पौर राजा नीलध्वजको
समझा कर कहा, 'पाप छोड़के लौटा दे । लप
मयवानू निष्क, जिनके सहायक हैं, लभके प्राय बहू कर
हुकमें जन्माना करे, ऐसा लौन पस्वि है ? राजाने हवी
हुकितुक्त समझा पौर लोभके लोटा देना चाहा । जब
राजोको हकबी क्वर लभो, लभ से लोपाविसत हो लोनी
'महाप्राज्ञ । पापके रात्रकोपमें विपुन धर्म है, जयवाङ्गीनी
बिन्ध पौर सुख पोत्रादिसे रहने पस्विधर्म पर कात मार
को इस प्रकार बोझा लोटा रहे हैं ।' राजा मर्बोको

वात सुन कर पुनः युद्धके लिये बगसर हुए। इस वार भी दोनोंमें व्रमसान युद्ध चला। नीलध्वजका मद्रा-बलिष्ठ पुत्र और भ्रातृगण मारे गये, रथ टूट फूट गया और सारथिका पतन हुआ, स्वयं नीलध्वज भी मूर्च्छित हो कर रथके ऊपर गिर पड़े। सारथि राजाको युद्धक्षेत्रसे उठा ले गये। पीछे जब वे होममें आए, तब रानी पर बहुत विगड़े और नाना उपहारोंके साथ अर्जुनको छोड़ा लौटा दिया तथा आप अश्वरचार्मं नियुक्त हुए। इधर राजमहिषो ज्वाला उमो समय अपने भाई उल्मूकके पास गईं और अपने दुःखस्थाका सब विषय सुनाया। पीछे रानोने अर्जुनके वधके लिये उनसे खूब अनुरोध किया, पर वे राजी न हुए। कोई उपाय न देख ज्वाला घरने निकल कर गङ्गाके किनारे चली गईं और वहां चिसा कर बोलीं, 'पाण्डवोंने अन्यायरूपसे भोष्मदेवका वध कर डाला है।' यह सुन कर गङ्गादेवोंने क्रुद्ध हो कर अभिशाप दिया कि आजसे छः मासके भीतर अर्जुनका शिर भूयतित होगा। ज्वालाको जब भालूम हुआ कि अब उसका मनोरथ पूरा हो जायेगा, तब अस्त्रमें क्रुद्ध कर उसने शरीर त्याग किया और भवानक वाक्-रूपमें आविर्भूत हो कर घनशुद्धके संहारकी कामनासे वभ्रूषाहनके तरकशमें प्रवेश किया। (जैमिनिभारत १५ अ०) ४ कामरूपके एक राना। कामरूप देखो।

नीलनाग—काश्मीर राज्यका एक ऊँड़। इस ऊँड़से एक जलश्रोत निकल कर वराभूलाके समीप सिन्धुदेशस्थ इरावती नदीके साथ मिल गया है। यह अक्षा० ३३'४८" उ० और देशा० ७४' ४०" पू०के मध्या, श्रीनगरसे २१ मील दक्षिण पश्चिममें अवस्थित है। यह ऊँड़ हिन्दुओंका एक पवित्र तीर्थ गिना जाता है।

नीलनिर्गुण्डी (स० स्त्री०) नीलानिर्गुण्डी। नीलवर्णं सिन्धुवारहृत्, नीला सन्हालू।

नीलनिर्यासक (म० पु०) नीलवर्णीं निर्यासो यस्य, कप०। १ नीलासनहृत्, पियासालका पेड़। २ कृष्णवर्णंनिर्यास, काला गोदं।

नीलनीरज (म० स्त्री०) नील नीरजं पद्मम्। नीलपद्म, नीलकमल।

नीलपद्म (स० स्त्री०) नीलं पद्ममिव। १ अम्बकारं। २ कृष्णकर्म, काला कीचड।

नीलपटल (स० स्त्री०) अम्बोकी अर्धिका वद्द चमड़ा जिससे अर्धिका टंकी रहती है।

नीलपट्ट—एक कवि।

नीलपत्र (स० स्त्री०) नीलं पत्रं पर्णं पुष्पफलं यस्य। १ नीलवर्णं उत्पल, नीलकमल। २ गुण्डल, गोमरा घास जिसकी जड़ कषेरु है। ३ अश्मन्तकहृत्। ४ नीलासनहृत्, पियासालका पेड़। ५ दाडिम, अनार। नीलं पत्रं कर्मघा०। ६ नीलवर्णं पत्र, नीला पत्ता। (त्रि०) ७ नीलवर्णं पत्रयुक्त, जिसके पत्ते नीले हों।

नीलपत्रिका (स० स्त्री०) १ नीलपत्रो, नील। २ कृष्ण-तालमूली।

नीलपत्री (स० स्त्री०) १ नीलहृत्, नीलका पीषा। २ इन्द्र नीलीचुप, जङ्गली नील।

नीलपद्म (स० स्त्री०) नीलं पद्मम्। नीलवर्णं पद्म, नील कमल।

नीलपर्ण (स० पु०) १ हृत्तविषय। (स्त्री०) २ इन्दारक-हृत्, इन्दारका पेड़।

नीलपर्णी (स० स्त्री०) विदारोहृत्।

नीलपत्नी—सन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत गोदावरी जिलेका एक शहर। यह शहर अक्षा० १६' ४४' उ० और देशा० ८२' १३' पू०के मध्य अवस्थित है। यहां अङ्गरेजोंकी एक वाणिज्यकोठी है।

नीलपिङ्गल (स० त्रि०) नीलश्च तत् पिङ्गलश्चेति, वर्णो-वर्णं इति सूत्रेण कर्मधारयः। नील अथच पिङ्गल-वर्णंयुक्त।

नीलपिङ्गला (स० स्त्री०) नीला च पिङ्गला चेति। नील अथच पिङ्गलवर्णंयुक्त गोजातिर्भेद, नीलो और भूरापन लिये काल गाय।

नीलपिच्छ (स० पु०) नीलं पिच्छं यस्य। श्येनपत्नी, वाजपत्नी।

नीलपिट (स० पु०) वीहोका राजकीय अनुशासन और इतिहृत्तसंप्रदं।

नीलपिण्डोड़ी (स० स्त्री०) नीलान्नीहृत्, नङ्गबुडगुड नामका पेड़।

नीलपुनर्नवा (स० खी०) नीला पुनर्नवा । क्वचरव
 पुनर्नवा नाम । पर्याय—नील, श्यामा, क्वचाक्या, नील
 वर्णासु । गुण—तिब्र, कटु, उष्ण, रसायन, ब्रह्मोद,
 पाण्डु, स्वयम्, श्लाघ, वात घोर कफनाशक ।
 नीलपुर (स० पु०) काश्मीरका एक पुर ।
 नीलपुराण (स० खो०) पुराणमैद, एक पुराणका नाम ।
 नीलपुत्र (स० पु०) नील पुत्र यज्ज । १ नीलपुत्रराज,
 भीष्मी म बरैया । २ नीलाब्जान, काका खोराठा । ३
 यज्जिपथ, यज्जिन । ४ नीलपुत्रम नीला कूल ।
 नीलपुत्र्या (स० खी०) नील पुत्र यस्या । निष्कृताया
 अपराजिता ।
 नीलपुत्रिका (स० खी०) नील पुत्र यस्या । कय
 काश्चि-वत इत्य । १ धतुषी, कलसो । २ नीलोद्भव
 नीलका पोषा । ३ नील-वपराजिता ।
 नीलपुत्री (स० खी०) नील पुत्र यस्या, स्त्री । १
 नीलपुत्रा, काका बीना, नीली खोपल । २ धतुषी,
 कलसी ।
 नीलदण्ड (स० पु०) नील दण्ड चूमद्विज यज्ज ।
 चम्बि, धाम । २ मङ्गलविषय, एक हिस्मन्को मङ्गलो ।
 नीलदण्ड्या (स० खी०) नीलोद्भव, नीलका पोषा ।
 नीलदोर (स० पु०) इरुमैद, एक प्रकारकी ईड ।
 नीलदण्डा (स० खी०) नील दण्ड यस्या । १ कव्युद्रुच,
 कासुनका पीड । २ नैयन, मदा । ३ वात्सङ्गद्वय ।
 नीलपुमारो—१ बङ्गालके राजपुर जिनान्तर्गत एक मङ्ग
 कुमा । इसका विस्तार १६८ वर्गमील है । इसमें कुल
 १८२ धाम लगे हैं । बर्ग विष्णु, सुबलमान, ईश्वर,
 शिव, बौद्ध ब्राह्म समाज घोर पश्चात्थ पत्तक जातियों
 का वास है ।
 २ एक मङ्गलमेका एक धाम । मङ्गलमेको पञ्च-
 क्त यहाँ की लगती है ।
 नीलवरी (चि० खी०) कर्षे नीलवरी बहो ।
 नीलविरई (चि० खी०) सन्मयका पौधा, पना ।
 नीलम (स० पु०) नील रव भाति भा-ज । १ चन्द्र
 चन्द्रमा । २ मेष, वादल । ३ मयिदा, मल्ली । (त्रि०)
 ४ नीलवर्ष नामाधिपति, जिसे भीष्मी रोयनी को ।
 नीलमण्डा (स० खी०) पौतयाचन्द्रय पिवावाक ।

नीलमू (स० स्त्री०) नीलात् मूलवृत्ति वंश । नील-
 एवं तोरपत्र नदीमें, नीलवर्ष तथे क्वच एक नदीका
 नाम ।
 नीलमण्डराज (स० पु०) नीलो मण्डराज । नीलवर्ष
 मण्डराज नीला मगर । पर्याय—महामण्ड, महानील
 सुनीलव नीलपुत्र, श्यामल । गुण—तिब्र उष्ण, कटु, क्वच,
 बेगराज्ज । क्वच, काम, मोक्ष घोर श्लेष्मनाशक ।
 नीलम (स० पु०) नीलमणि, नीली र मन्दा रज, इन्डुनील ।
 च मरीचोमें इहे Sapphire कहते हैं ।
 वि इन्डुनीलके मज्जगत राजवर्णकाके वक्षिणित पायाकर
 प्रदेशमें इन्डुनील मिलता है । प्राचीन काश्मिरे पारस
 घोर परबदेसमें यह रज मिलता था । यह भारतके नीलम
 को खाने लहो रच यह है । काश्मीरकी खाने भी पर
 खाली हो बली है । बरमानों मानिकके हाथ नीलम भी
 मिलता है । वि इन्डुनील घोर श्यामके भी बहुत पक्का
 नीलम पाता है । उत्तर-पमेरिका, दक्षिण पमेरिका,
 इण्डोनेसा पादि खानोंमें भी नीलम पाया गया है, ऐसा
 सुननेमें पाता है ।
 नीलम वाद्ययन्में एक प्रकारका सुरक है जिसेका
 गन्ध कङ्कालमें पीये कुरा है । जो बहुत बोधा होता
 है उसका मोल भी वीरेके कम लहो होता । नीलम
 पञ्चारक याव एलुमिना (Oxide of alumina)
 घोर पञ्चारक पाव कोबाद्य (Oxide of cobalt)
 इरी को पञ्चारके प्रकृत होता है । क्वचार्थमें यदि ईका
 जाव तो पञ्चजन-वाडु (Oxygen) घोर एलुमिनियम
 कोबाद्य (Alumian Cobalt) नामक पञ्चन
 सामान्य द्रव्य जो इसमें देखनेमें पाता है । तब रजादि-
 का मूक बहिक होनीका कारण यको है । कोई विज्ञान-
 विदु पण्डित क्वचिन् रूपवाये वीरकादि प्रकृत लहो कर
 पकती । किन्तु विज्ञानको दिनेदिन खँड़ी उन्नति देखी
 जाती है घोर उन्नित विवय के कर लोको चर्चा चल
 रही है उन्नये बीच होता है, कि छोड़े की दिनोंके मज
 वङ्ग पमान पूरा हो जायगा ।
 धर्मल नीलमके र म एवही लहो होत । इनमेंसे कुछ
 नीलपत्तके लोहा, कुछ नीलवसनेके लोहा, कुछ सुमर्शित
 तलवारके लोहा, कुछ स्वमरके र मके लोहा, कुछ शिव

नीलकण्ठके जैसा, कुछ मयूरपुच्छके तारके जैसा और कुछ क्षण अपराजिता पुष्पके जैसा होता है। समुद्रकी निर्मल जलराशिरूप नीलरङ्गके बुदबुद और कोकिल कण्ठके जैसा नीला नीलम ही शरकर देखनेमें आता है। यह वर्ण भेदसे चार भागोंमें विभक्त है, यथा—यह तका आभायुक्त नील, रक्तका आभायुक्त नील, पीतका आभायुक्त नील और क्षणका आभायुक्त नील। इन चार अंगियों के इन्द्रनील यथाक्रमसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र नामसे प्रसिद्ध हैं।

पद्मराग जिस तरह उत्तम, मध्यम और अधमके भेदमें तीन प्रकारका है, इन्द्रनीलके भी उसी तरह तीन भेद हैं, यथा, साधारण इन्द्रनील, महानील और इन्द्रनील। महानीलके सम्बन्धमें लिखा है, कि यदि वह मौगुने दूधमें छाल दिया जाय, तो सारा दूध नीला दिखाई पड़ेगा। सबसे श्रेष्ठ इन्द्रनील वह है जिसमेंसे इन्द्रधनुषको-सी आभा निकले। पर ऐसा नीलम जल्दो मिलता नहीं। नीलममें पांच बातें देखी जाती हैं—गुरुत्व, स्निग्धत्व, वर्णाव्यत्व, पार्श्ववर्तित्व और रञ्जकत्व। जिस इन्द्रनीलका आर्पोजक गुरुत्व बहुत अधिक हो अर्थात् जो देखनेमें क्लोटा पर तौलमें भारी हो उसे गुरु कहते हैं। जिसमें स्निग्धत्व होता है, उसमेंसे चिकनाई छूटता है। जिसमें वर्णाव्यत्व होता है उसे प्रातःकाल सूर्यके सामने करनेमें उसमें नीली सिखा-नी फूटती दिखाई पड़ती है। पार्श्ववर्तित्व गुण उस नीलममें माना जाता है जिसमें कहीं कहीं पर मोना, चांदो, स्फटिक आदि दिखाई पड़े। जिसे जलपात्र आदिमें रखनेमें सारा पात्र मोना दिखाई पड़ने लगे उसे रंजक समझना चाहिए। गुरु इन्द्रनील वंशवृद्धिकर, स्निग्ध इन्द्रनील धमवृद्धिकर, वर्णाव्य इन्द्रनील धनधान्यादि-वृद्धिकारक, पार्श्ववर्ती इन्द्रनील यशस्कर और रञ्जक इन्द्रनील लक्ष्मी, यश और वंशवर्द्धक माना गया है। अभ्रक, वास, चित्रक, सृष्टगर्भ, अश्रमगर्भ और रौच्य ये छ प्रकारके दीप इन्द्रनील में पाये जाते हैं। जिस इन्द्रनीलके ऊपरीभागमें अभ्र-सो छाया दीख पड़े, उसे अभ्रक कहते हैं। इस प्रकारके इन्द्रनीलसे आयु और संपत्ति विनष्ट होती है। जो इन्द्रनील विशेष चिह्न द्वारा भग्न-मालम पड़े, वही वासनील

है। इस नीलमके धारण करनेमें टट्टोभय उत्पन्न होती है। जिसमें भिन्न भिन्न रंग दोख पड़ते हैं उसे चित्रक कहते हैं, चित्रकके दीपमें कुल नष्ट होता है। जिसके मध्यभागमें मट्टी लगी रहती है, वह सृष्टगर्भ कहलाता है। सृष्टगर्भके दीपमें गात्रशङ्कु, पाटि नाना प्रकारके त्वग्रोग उत्पन्न होते हैं। जिसके भीतरमें पत्थरका खण्ड दिखाई दे उसका नाम है अश्रमगर्भ। अश्रमगर्भ दीप-विनाशका कारण है। जो शर्करायुक्त है उसे रौच्य कहते हैं। रौच्यदीपाश्रित इन्द्रनीलधारो व्यक्तिकी यम-राजका द्वार देखना पड़ता है। दीपहोन होने पर भी जो गुणयुक्त है, ऐसी इन्द्रनीलमणि जिसके पास है उसको आयु और यशको हृदि होतो है। जो मनुष्य विशुद्ध इन्द्रनील धारण करता है, नारायण उसकी प्रति प्रसन्न होती है और उससे आयु, कुल, यश, बुद्धि, लक्ष्मी और मन्त्रि हो उन्नति होती है। गुणसम्पन्न और दीप-युक्त पद्मराग धारण करनेमें जैसा शुभाशुभ होता है, इन्द्रनील धारणमें भी ठीक वैसा ही फल लिखा है।

जिम इन्द्रनीलमें कुछ लोहित-सी आभा दोख पड़े उसे टिट्ठिम कहते हैं। टिट्ठिमजातीय मणि धारण करनेके साथ ही गभिणो-स्त्री सुखसे मत्तान प्रभव करतो है।

(गह्वरु०)

पद्मरागके जैसा नीलम तीन अवस्थामें पाया जाता है। यथा—(१) शुभ्र सख्ख चूनेके पत्थर (White Crystalline lime-stone)के मध्य निहित अवस्थामें देखा जाता है; (२) पहाडके निकटवर्ती मट्टीके मध्य मिथिल अवस्थामें पाया जाता है और (३) रत्नप्रसविक कण्डके मध्य कभी कभी देखा जाता है। साधारणतः द्वितीय अवस्थाका नीलम ही श्रेष्ठ पाया जाता है।

अलद्वारके सिधे इन्द्रनीलका इतना आदर है। नीलम इतना कठिन पदार्थ है, कि इस पर नकाशो आदि कार्य बहुत सुशकिलसे किया जाता है। इस प्रकार असुविधा रहते भी इन्द्रनीलमें खोदित मूर्ति देखी गई है। ग्रीसके ज्युपिटर (Jupiter)की उज्वल सुखाकृति इस इन्द्रनील पर खोदित है, ऐसा सुना जाता है। मार्लबोरो (Marlborough) संस्थानमें जो सब प्राचीन द्रव्य संग्रह किये गए हैं उनमेंसे मेडुसाका

मध्यक (Medusa's head) नासम पर प्रस्तुत दिया गया है। इसके चक्का घोर मो झितनी प्राचीन प्रति-मूर्तिर्या इस प्रकार पर निर्मित है।

पहले जो कहा जा चुका है, कि इन्द्रनीलमे नामा प्रकारकी व्याधि घोर घमण्डनका नाय होता है। यह केवल भारतवासियोंका ही विषय है, जो नहीं, यूरोपके घनेक महाका लोग भी इसका पच समर्थन कर गए हैं। एपिफानिस (Epiphanes) का कहना है कि मोसि (Mosos) के मित्र जो इस पर्वतके ऊपर उदित हुआ था घोर ईश्वरने सबसे पहले वनके पास को नियमावली भेजी थी वह नौमजमें ही निचो थी। पुष्पाका जेरोम (St Jerome) भी कहा है कि इन्द्र नील भारतके चरनेके राजका प्रियपास होता है, पशुधम में या क्षति है घोर वनके छुटकारा मिमता है। जर्मन चारक चरनेके वनबीरके छुट्टि घोर घमण्डन निवारित होता है। यदि कोई लम्पट मनुष्य इसे चारक करे, तो इसका चोख्यक जाता रहता है। पशुधमि घमण्डनेने कामरति नष्ट होती है, घड़ी चारक है कि जर्म-यात्रक यह इसे पशुधमि घमण्डने है। लच्छन चारक चरनेके चर घूर हो जाता है कपासमें चारक चरनेके यह रक्त घामको बन्द कर देता है। इन्द्रनीलको घूर कर मोमे तैयार करके घाम पर चरनेके बाहुकाक्य कोट यादि जख मो चरुमें लो न प्रवेश कर भाय लघो समय वह भाइर निवृत्त जाता है। इसके सिवा पाँचका नामा चक्का बसन्तरोगाग्रजित चक्षुषदाह श्यादि पारोम्य हो जाता है। इसके साथ इसका चूर्ण केवल चरनेके चर, मूच्छर्, विषमयोग यादि प्रममित होते हैं। निय नायकशक्ति घमण्डनेने पचिक है कि किच म्हास वा मोघोमें मोई विपवर प्राचो रहे लक्षमें यदि इसे खास दे, तो वह लघो समय मर जाता है।

पशुधमके लैसा इन्द्रनीलके पाकारके पशुधम इसका मोक्ष पचिक नहीं होता। होरेको तरक ज्योति-परिच्छन्तयके पशुधम मूष्यका तागतम् हुआ करता है। बड़ियाके बड़िया नौमज यदि एक कौरटके कम तोल में जो (कौरट-प्रायः ३ रत्नो), तो वह ३० से १२०) ५० तकमें विक्रता है घोर एक कौरट रोमिसे १२०)से

१३०) ५० तकमें। जिसो जिसो इन्द्रनीलके लक्ष्यकी तरक ज्योति निवृत्तती है। इस प्रकारका नौमज चिन्दुघो का एक पचिक पहाक है। इसका मूष्य २००) से १०००) ५० तक है। प्रकृत यह इन्द्रनील रात बिग घम नमय नौसवर्कको रोगको देता है। कभी कभी ऐसा भी देखा गया है, कि दिनमें दो चक्क नौमज एक सो रोगनी देते हैं, पर रात जोते ही वनके मिय मित्र तरकको रोगनी निवृत्तती है। कभी कभी इन्द्रनीलमें पचिक दोष भी देखे जाते हैं। घमण्डने मोक्ष, घाम तथा रोगो तरकके बिताने दोष रहते हैं। इसके चक्का घमण्डने तमाम एक सा रम नहीं रहता।

कफेट नील होरेके मिमता लुमता है। वही तक कि यदि यह पचकी तरक काटा जाय घोर बिना पचिक का रहे, तो हीरेमें घोर घमण्डन छुट्टा भा पकके देखनेमें नहीं पाता। दो चक्क चार्क से चर लक्षे मक्ष पिये लुकीयनके रम ज्ञापित किया जाता है, कि ये तमाम रती हुय-से मान्म मचने मयते हैं। घमण्डने मोक्ष पच-मर इनको नीलम ममज सेते हैं घोर पचिक समज ठरे भी जाते हैं।

पशुधम राजकुनी बागानघरमें ८५१ कौरटनीलका एक चक्क लच्छनचर्कविभिन्न इन्द्रनील देखा जा। पारिष (Paris) नगरकी खनिज-विज्ञानिका (Museum-mineralogis) में १३२८ कौरट तोल-का एक नौमज है जिसका नाम 'उल्लिन् ल्युन सेनर' है। यह नाम पशुधमका चारक लोग बतवाते हैं कि लच्छनके जखको चक्की चोनीवासे जिसो दरिद्रने इसे पाया जा। पचनेके बहुरोके घाममें लच्छन घोर होता हुआ वह पचासो द्वीय जिसो बचिकके यहाँ १८८०० कौरटमें देखा गया। योगके राजकोपमें बहुरोके सुन्दर सुन्दर नौमज हैं। इच्छेनके घोनवाकटस नामक ध्यानमें पचुकाक सुदृष्ट इन्द्रनील है। कसवी जिसो काकट पकी (Coantoss) के पास जो पचक परिनकार घोर मनोहर डिम्बाकृति इन्द्रनील था उसे पियेवनघरे महासिद्धमें देख कर लोग चकित हो गए थे। कन्दन महासिद्धिमें एक ६०) जोप (H T Hope) सचकके स यज्ञोत लच्छ नौमज दिखाने मय से घोर बहा प से

होय (A. J. Hope) साहबने अपना खुरज्योनियुक्त नीलम (Sapphire Maveilleux) सबके सामने दिखाया था जिससे दिनको नीला और रातको बैंगनी रंगको रेशमो निकलती थी। इङ्ग्लैण्डके महाराज ४४वाँ जार्जने राजसुकुट धारण करनेके लिए एक बड़ा नीलम खरोदा था। मिर्जापुरके महलके पास किसी समय अत्यन्त उष्ण एक खगड इन्द्रनील था।

नीलमकुष्ठ (स० पु०) नीलवनसुद, नकुल।

नीलमञ्जिका (स० स्त्री०) नीला नीलवर्णा मञ्जिका, नीली मञ्जी।

नीलमञ्जरी (स० स्त्री०) नीलनिगुण्डी।

नीलमणि (स० पु०) नीलः नीलवर्णः मणिः। स्वनामख्यात मणिविशेष, नीलम। नीलम देखो।

नीलमण्डल (स० स्त्री०) परुष, फालसा।

नीलमञ्जिका (स० स्त्री०) १ विषव, बेल। २ कपिल, केश।

नीलमाधव (स० पु०) नीलो नीलवर्णा माधवः। १ विष्णु, जगन्नाथ।

नीलमाय (स० पु०) नीलः मायः। राजमाय, काला उरद।

नीलमोलिक (स० पु०) नीलवर्णनिमीलनमम्यमेति नील-मील-ठन्। खद्योत, जगन्।

नीलमृत्तिका (स० स्त्री०) नीला नीलवर्णा मृत्तिकेव। १ पुष्पकामीष, हीराकसीस। २ कृष्णवर्ण मृत्तिका, कालो मट्टो। (त्रि०) नीला मृत्तिका यत्र। ३ लहा कालो मट्टो हो।

नीलमेह (स० पु०) मेहरोगविशेष। पित्तसे नीलमेह उत्पन्न होता है। इसमें शालसारादि वा अश्वत्थ कपायका प्रयोग करना चाहिए। इस रोगसे शक नीला हो कर बाहर निकलता है, इसीसे इसको नीलमेह कहते हैं।
प्रमेह देखो।

नीलमेहिन (स० पु०) नील नीलवर्ण शकं मेहति मिह-णिनि। नीलवर्ण मेहयुक्त।

नीलमोर (हि० पु०) कुररो नामक पक्षी जो हिमालय पर पाया जाता है।

नीलमयटिका (स० स्त्री०) कृष्णवर्ण इंसुमेट, एक प्रकारकी काली डेख।

नीलरत्न (स० स्त्री०) इन्द्रनील-मणि।

नीलराजि (स० पु०) नीलाना राजिः। तमस्यति, अन्धकारराजि।

नीलरुद्रोपनिषद् (स० स्त्री०) उपनिषद्देद।

नीलरूपक (स० पु०) १ वृक्षवृक्ष, पाकरका पेड़।

नीललोचन (स० त्रि०) नीलं लोचनं यस्य। नीलवर्ण-नेत्रयुक्त, नीली आँखवाला। जो मनुष्य शाक चुराता है, उसीको आँखें नीली होती हैं।

“शक्रहारी च पश्यो जायते नीललोचनः॥” (शातानप)

नीललोह (स० स्त्री०) नीलं नीलवर्णं लोहम्। १

वर्त्तलोह, वीदरो लोहा। २ कृष्णलोह, काला लोहा।

नीललोहित (स० पु०) नीलयासौ लोहितयेति (वर्णो वर्णेन।

पा २।१।६८) इति सूत्रेण कर्मधारयः। १ शिव, महादेव।

चैत्रमासमें नीललोहित शिवके उद्देशसे व्रत करना

होता है। इस व्रतमें त्रिसन्ध्या स्नान कर रातको हवि-

प्याशी और जितेन्द्रिय हो कर नाना प्रकारके उपहार और

उत्सवके साथ शिवकी पूजा करते हैं, पीछे संक्रान्तिका

उपवास और होम करके व्रत समाप्त करते हैं। भगवान्

शिवके प्रसन्न होनेसे कुछ भी अनभ्य नहीं है। महादेव-

का कण्ठ नीला और मस्तक लोहितवर्ण है, इसीसे

शिवका नाम नीललोहित पड़ा है। (त्रि०) २ नीला-

पन लिये लाल, बैंगनी।

नीललोहिता (स० स्त्री०) १ भूमिजम्बू, एक प्रकारका छोटा जामुन। २ शिवपावती।

नीललोह (स० स्त्री०) वर्त्तलोह, वीदरोलोहा।

नीलवटो (स० स्त्री०) केशरञ्जन।

नीलवत् (स० त्रि०) नीलं निलयो विद्यतेऽस्य, मनुष्य-

मस्य व। १ निवासयुक्त। २ नीलवर्णयुक्त।

नीलवर्ण (स० स्त्री०) १ रसाञ्जन, नीलमूलक। २ परुष-

फल, फालसा।

नीलवर्षाभू (स० स्त्री०) नीला नीलवर्णा वर्षाभूः। १

नीलपुनर्षवा। (पु०) २ कृष्णवर्णभेक, काला बैंग।

नीलवल्ली (स० स्त्री०) नीला नीलवर्णा वल्ली। वृन्दा, न,

परगाछा, बाँदा।

नीलवसन (स० त्रि०) मोट्या रक्त रक्त, नील वसन यज्ञ । नीलवसनपुत्र, मोटा या काका कपड़ा पहनने वाला । (पु०) २ मनिपूर । मनिपा परिचित वन नीला है, इन्हीं नीलवसन मन्त्रों मनिपा बोध होता है । ३ नीलवन् वन, नीला कपड़ा । ४ बलराम ।

नीलवन् (स० पु०) नील वन यज्ञ । १ बलराम । २ नीलवन् वन, मोटा कपड़ा । ब्राह्मणादि तीनों वर्णों की नीलवन् नहीं पहनना चाहिए, पहननेसे प्रायश्चित्त करना पड़ता है । नीलवन् पहन कर यदि ज्ञान, दान, तपस्या, योग, साध्या और पित्रार्थ के बादि पुण्यकार्य किये जाय, तो वे निष्फल होते हैं ।

“स्वाम दास एते श्रेयः स्वाम्नावाः पितृवर्षम् ।
इषा एव महाश्रे नीलीरक्षस्य वारणात् ॥”

(प्रायश्चित्तविधि)

नीलवानर—एक प्रकारका बन्दर (Inuus allenus) । यह बन्दरका राजा Leon monkey भी कहलाता है । इस जातिके बन्दर शरीर होते हैं और मध्यम शरीरके उका रहता है । इसकी लम्बाई प्रायः २ फुट और छत्रकी लम्बाई १० इंच होती है । यह जानकराति त्रिभिन्न श्रेणियों में वर्गीकृत है । जोई तो इसे Papio जोई Cynocephalus और जोई Macacus जातिके बतलाते हैं । किन्तु मध्यम और घे माइनर इसे जलन्त श्रेणीका बतलाते हैं । ये बहुत लुब्ध वसुमानुषे मिलते लुप्तते हैं । लुब्ध बाल पक्षके यूरोपवासिन्व इन्के भारतके दक्षिणय और सिङ्गपूरकी घण्टीके हैं । बालने इनका जो Wanderer नाम रखा है वह एक सिङ्गल द्वीपीय वसुमानुष जग है । किन्तु टेम्प्लेटन और सीयार्ड आइरने कहा है कि सिङ्गपूरमें ये सभी भी पाये नहीं जाते । भारतवर्षके पश्चिमघाट पर्यन्त लक्षवदेयक 'जङ्गल-के मया इनका वास है । कोकोल और जिवाहुइमें भी ये अधिक वन्यामें मिलते हैं । जलन्त निबिड़ और जलन्त परलने से रहना पसन्द करते हैं । ये प्रायः दान दान्य और बाहर निकलते हैं । एक एक दलमें १२ वा २० अथवा अधिक भी अधिक बन्दर देखे जाते हैं । ये बड़े बतक और आशुव होते हैं किन्तु ये छोटी और सिङ्गल भी पसन्द करते हैं ।

नीलवीर स० पु०, नील वीर यस्य । नीलावनवन्, पियासाक ।

नीलवुद्ध (स० श्री०) नीलवन् वसने, नीलावीर नामका पिक ।

नीलवृष (स० पु०) नीलो वृष । इषमभेद, एक किस्म का वृष । पर्याय—नील, वातादि, घोडनाशन, गर नामा, मखवृष, मखासु, मरियम । शुभ—कट, सवाय, कण्ड, कण्ड, वातामय और नागायव्यवृणायक ।

नीलवृत्त (स० श्लो०) नीलवन् वृत्त यज्ञ । १ वृष, दई । २ वृषकाक, तरुण वनानीकी लकड़ों ।

नीलवृत्तक (स० श्री०) नीलवृत्त यज्ञ । वृत्त, दई ।

नीलवृष (स० पु०) वृषविध, विधिव प्रकारका वृष या बध्ना ।

आइने नीलवृष एक पारिभाषिक मन्त्र है । सिध इषका रस साक, पूर कर और चिर य लवन् जो, वसे नीलवृष कहते हैं । ऐसे वृषके लक्ष्मणका बड़ा फल है । इसमें मया आदिद्विध समान वन प्राप्त होता है । “आवरेण वरुणा शुभा नवोद्री मनी जनेद ।
यदेव आरवेनेव वीर वा हरमुत्तरेण द” (देवीपु०)

पनेव सुखी मने वदि एक भी सुख मया जाद, पसवा पयमिदवज करे वा नीलवृषका उक्तम करे, तो उसके पित्रुण उदार पाते हैं । धीरगाय देखो ।

नीलवृषा (स० श्री०) नील नीलवन् पुण्यकारिद वर्यति प्रते इति वृषक ततहाय । नालाको, वे म ।

नीलवृत्त (स० श्लो०) वृत्तविधिव । मन्त्रपुराणमें इस वृत्तका विषय इस प्रकार लिखा है—

ओ ईम नीलोत्पल और मन्के रापास वृत्त कर वृषमके साथ दान करते हैं उन्हें पन्तमें वैन्य १८ प्राप्त होता है । इसीका नाम नीलवृत्त है । इस वृत्तकारके समव शतकी प्राप्ता होता है ।

नीलवृषक (स० त्रि०) नीला वृषको यस्य । १ नील वन् गिण्डवृषक । (पु०) २ वृषभेद ।

नीलवृष्य (स० पु०) नील वृष्य । श्रीमान्तरवृष, मखवृषका पिक ।

नीलवृषिका (स० श्लो०) दिग्बोधे ।

नीलवृष (स० पु०) मन्वाविध इतिव जातिभेद ।

नीलशोधनी (सं० स्त्री०) नीलो, नीलका घोषा ।
 नीलपण्ड (म० पु०) नीला या काला भण्ड ।
 नीलसखो—हिन्दोके एक कवि । ये जैनपुर बुन्देलखण्ड-
 के रहनेवाले थे और इनका जन्म सन् १८०२में हुआ
 था । इनके बनाए पद्य रसीले होते थे ।
 नीलसन्ध्या (सं० स्त्री०) नीला सन्ध्या । कृष्ण-अपरा-
 जिता ।
 नीलमरसूती (सं० स्त्री०) द्वितीय विद्या, तारादेवी ।
 नीलमस्य (सं० स्त्री०) अत्यविशेष, वाजरा ।
 नीलसहचर (सं० पु०) नीलपुत्र, नीली कटमरीया ।
 नीलसार (सं० पु०) नील- सारो यस्य । तिन्दुहृत्, तंदूका
 पेड । इसका हीर काला आवरण होता है ।
 नीलसिर (हि० पु०) एक प्रकारकी वस्त्र जिसका सिर
 नीला होता है । यह हाथ भर लम्बी होती है और
 सिंध, पंजाब, काश्मीर आदिमें पाई जाती है । अण्डे
 यह गरमीमें देती है ।
 नीलमिन्धुवार (सं० पु०) कृष्णवर्ण मिन्धुवारहृत् । पर्याय—
 शीतसडा, नियुं गडो, नीलसिन्दूक, सिन्दूक, कपिका, भूत-
 केशी, इन्द्राणी, नीलिका, नीलनियुं गडो । गुण—कटु,
 उष्ण, तिक्त, रुच, कास, श्लेष्मा, शोथ, वायु, प्रदर और
 आधनरोगनाशक ।
 नीलस्वधा (सं० स्त्री०) नीलः स्वधो यस्याः । गोकर्णो-
 लता ।
 नीलस्यन्दा (सं० स्त्री०) नीली अपराजिता ।
 नीलस्वरूप (सं० पु०) एक वर्णवृत्त । इसके प्रत्येक
 चरणमें तीन भगण और दो गुरु अक्षर होते हैं ।
 नीला (सं० स्त्री०) नीली नीलवर्णोऽस्त्रयस्याः अक्ष,
 ततष्टाप् । १ नीलवर्ण मलिका, नीली मक्खी । २ नील-
 पुनर्वा । ३ नीलीहृत्, नीलका घोषा । ४ लताविशेष,
 एक लता । ५ नदीविशेष, एक नदी । ६ महाररागकी
 एक भार्या ।
 नीला (हि० वि०) १ आकाशके रंगका, नीलके रंग-
 का । (पु०) २ एक प्रकारका कवूतर । ३ नीलम ।
 नीलाक्ष (सं० त्रि०) नीले अक्षिणी यस्य । १ नीलवर्ण
 चक्षुविशेष, नीली आंखका । (पु०) २ राजहंस ।
 नीलाहितदल (सं० पु०) नीलाहितं दलं यस्य ।
 तैलकम् ।

नीलाङ्ग (सं० पु०) नीलं अङ्गं यस्य । १ सारसपक्षी ।
 (त्रि०) २ नीलवर्णाङ्ग युक्तमात्र, नीले अङ्गका ।
 नीलाङ्गु (सं० पु०) नितरां निद्रतीति नि-निगि गतो कु,
 धातूपसर्गयोः दोर्वत्वं । १ कृमि, कीड़ा । २ भ्रमराणी,
 भौरा । ३ शविर, घट्टियास ।
 नीलाचल (सं० पु०) १ नीलगिरिपर्वत २ जगन्नाथजी-
 के निकट एक छोटी पहाड़ी ।
 नीलाञ्जन (सं० स्त्री०) नीलं अञ्जनं । १ मोवीराञ्जन,
 नीला सुरमा । यह उपधातुविशेष है । मलीभांति
 शोधन कर इसका व्यवहार करना होता है । नीलाञ्जनका
 चूर्णकी जम्बीरी नीचूके रसमें भावना दे, पीछे धूपमें
 उसे एक दिन सुखा कर विशुद्ध कर ले । इस
 प्रकारसे शोधित नीलाञ्जन व्यवहारोपयुक्त होता है ।
 इसका गुण—कटु, श्लेष्मा, मुखरोग, नेत्ररोग, व्रण
 और दाहनाशक, उष्ण, रसायन, तिक्त और मीदक है ।
 २ तुल्य, तृत्तिया ।
 नीलाञ्जनच्छदा (सं० स्त्री०) जम्बूहृत्, जामुनका पेड ।
 नीलाञ्जना (सं० स्त्री०) नीलं मेघं अञ्जनोति अञ्ज-
 णिच्-न्त्यु टाप् । विद्युत्, विजली ।
 नीलाञ्जनो (सं० स्त्री०) नीलवत् अञ्जतेऽनयेति अञ्ज-
 णिच्-न्त्यु, ततो ङोप् । कालाञ्जनो क्षुप, कालो कपास ।
 नीलाञ्जना (सं० स्त्री०) १ अपसरोभेद, एक प्रसरा । २
 नदीविशेष, एक नदी । ३ विद्युत्, विजली ।
 नीलाण्डक (सं० पु०) रोहितमत्स्य, रोहित मछली ।
 नीलायोधा (हि० पु०) तद्विकी उपधातु, तृत्तिया ।
 वैद्यकमें लिखा है, कि जिस घातुकी जो उपधातु होती
 है उसमें उसीका-सा गुण होता है पर बहुत हीन ।
 तद्विका यह नीला लवण खानोंमें भी मिलता है
 लेकिन अधिकतर कारखानोंमें निकाला जाता है ।
 तद्विके घूरको यदि खुलो हवामें रख कर तपावें या
 गलावें और उसमें थोडासा गन्धकका तेजाव डाल दें
 तो तेजावका अञ्ज-गुण नष्ट हो जायगा और उसके योग-
 से तृत्तिया बन जायगा । नीलायोधा रंगाई और दवा-
 के काममें आता है । वैद्यकमें यह श्वारयुक्त, कटु,
 कसेला, वमनकारक, लघु, लेखन गुणयुक्त, भेदक, शीत-

बीय, निर्विकीरितकर तेषां कर्कं, पिष्ट, विषं पर्वरी
कुष्ठ पीर खात्रको दूरे करमेवान्ना माला गया है । तृतिया
शोच कर पच्य मात्रांमं दिवा जाता है ।

विषेव विररथ हृत्प वरुमे रेको ।

नीलाद्रि (स० पु०) १ मोनपर्यंत । २ शैविजका नीला-
पत्र ।

नीलाद्रि शिबिंका (स० श्लो०) उन्नापराजिता ।

नीलाचर- हिन्दोके प्राचीन कवि । सन् १००५ ई में
अप्य वृष से । पुराणे कविमें रनको पूर प्रय सा
की है ।

नीलापराजिता (स० श्लो०) नीला अपराजिता । नीली
अपराजिता । पर्याय—नीलपुष्पो, महागौलि, मोलसि-
कशिंका, गणादनो, श्वसन्मन्दा, मोलसम्बा, नीलाद्रि
कर्षी । गुण—विमिर, निर, रक्तानोषाद, क्वर, दाह,
झट्टि, क्वाट, मदयममप्य पीडा, म्बास पीर काग
नायक ।

नीलात्र (स० श्लो०) नीलपत्र, नीला कसत ।

नीलाम (स० दि०) मोलसुत्र ।

नीलाम्ब (स० श्लो०) हृत्प पच्य काका चरकर ।

नीलाम (दि० पु०) विन्कोका एक डग निचमं प्राय स
पादमोको दिवा जाता है जो सबसे अधिक दाम मोलता
है, मोलो मोन कर पीवना ।

नीलामर (दि० पु०) बह चर वा कान कर्हा कोमि
नीलाम को जाती हो ।

नीलामो (दि० दि०) मोलाममें मोल लिवा हुआ ।

नीलाम्बर (स० पु०) मोलाम्बर यत्र । १ बकटेव । २
यनीपर । ३ शायरी (श्लो०) नील चम्बर कर्मधारय ।

४ नीलवन्ध, मोबा कपडा । ५ ताकीपयत्र । (दि०) ६
नीलवक्रवुत्र नीले कपड़े काका ।

नीलाम्बरे (स० श्लो०) एक रामिनो ।

नीलाम्बुज (स० श्लो०) नील चम्बुज कर्मधारय ।
मोलयत्र, नील कसत ।

नीलाम्बुजम् (स० श्लो०) चम्बुजि कथ्य यत्र, चम्बु
जम्बु नील चम्बुजम् । नीलोपत्र, नीलकसत ।

नीलाश्रान (स० पु०) पाशा-शु । मोलाश्रान, मोल
काशान् । सुवमेद, काका कोरका । इतका गुण—

कट, तिक्त, कष, बाहु गूच कष्ट, कुष्ठ शय, मोल
पीर स्वमदीपनायक है ।

नीलाश्री (स० श्लो०) नीला पत्नी । सुवमेद, महबुज
गुड़ । पर्याय—मोलपिरोको, म्बामाको, दोषंशानिका ।

गुण—महुर शय पीर ककनतनायक ।

नीलाश्व (स० पु०) नील पशुपत्तं बन्धो बर्मेन रति
समास । १ सुयोदयकाकमें पशुपत्तंमिति नीला
शाय । २ मोल पीर पशुपत्तंमिति ।

नीलाशु (स० पु०) नीला नीलवत् । पाशुः कर्मधारय ।
कन्दसिद्ध । पर्याय—पसिताष्ट, म्बामलाशु । गुण—महुर

शोतक, पित्तदाह पीर चमनायक ।

नीलावतो (दि० श्लो०) एक प्रकारका चामल ।

नीलामो (स० श्लो०) नील नीलवत् प्रथ से म्बामाति
प्रथ-चम मोरालिवात् श्लोय । १ मोलनिगुंशो नील
मन्नासुत्रक ।

नीलाशोक (स० पु०) नील नीलवत् पयोच । मोल
वत् पयोच ।

नीलाश्रमम् (स० श्लो०) तुल्य, तृतिया ।

नीलाश्रम (स० पु०) नीला नीलवत् पश्या । नीलवत्-
प्रशरमेद, नीलकालमचि ।

नीलाश (स० पु०) सुवमेद, एक शिवा नाम ।

नीलासन (स० पु०) नील नीलवत् । चरको हृत्पमदः ।
१ चसनहृत्प, पिबासालका हृत्प । पर्याय—नीलश्री,
नीलपत्र सुनीलक, नीलपुत्र, नीलतर, नीलनिर्वासक ।

गुण—कट, शोतक, कषाय, मारक, कुष्ठ, कष्ट पीर
हृत्पनायक । २ रतिहृत्पशिय, एक रतिवन्ध ।

नीलाशट (दि० श्लो०) नीलापन ।

नीलाश्रा (स० श्लो०) हृत्प अपराजित ।

नीलि (स० पु०) नील इत् । कषरन्तुमेद, एक प्रक-
अन्तुका नाम ।

नीलिका (स० श्लो०) नील क टाप्य कापि पत्र-दल वा
नीलोव कन् टाप्य, पूर्वकः । १ नीलवरी । २ नीला
निगुंशो, नील मन्नासुत्रक । पर्याय—मोको, नीलिनो,
तूको, चानदोका, नीलिका, रक्तनी, शोचनी तुष्टा,
पामोवा महुपत्तंका, ज्ञातका काकशेयो, मोनुप्या ।

३ नीलरोमिनीय, पांशका एक रोम, सुवमेद चम रोमका

विषय इस प्रकार लिखा है—दोष जंत्र वतुर्थ पटनमें आश्रय लेता है, तत्र तिमिररोग उत्पन्न होता है। जिम तिमिररोगमें कभी कभी एकवारगो कुछ न टिखाई पड़े उसे लिङ्गनाश कहते हैं और जिसमें आकाशमें चन्द्र सूर्य, नक्षत्र, विजली आदिकी-सो चमक दिखाई पड़े उसे नीलका कहते हैं। जब यह रोग वायुसे उत्पन्न होता है, तब सभी पदार्थ अरुणवर्ण और सचल दिखाई देते हैं। पित्त कर्तृक उत्पन्न होनेसे आदित्य, खद्योत, इन्द्रधनु, तदित् और मयूरपुच्छकी तरह विचित्र वण अथवा नील कृष्णवर्ण देखनेमें आता है अथवा सफेद बादलकी तरह प्रत्यन्त स्थूल और मेषशून्य समयमें मेषाच्छकी तरह अथवा सभी पदार्थ जलप्लावितसे मालूम पड़ते हैं। रक्त कर्तृक इस रोगके उत्पन्न होनेसे सभी द्रव्य रक्तवर्ण और अन्धकारमय नजर आते हैं।

यदि यह रोग कफसे उत्पन्न हो, तो सभी वस्तु श्वेतवर्ण और स्निग्ध देखनेमें आते हैं। यदि यह सन्निपातज हो, तो जिधर हो नजर दौड़ाई जाय उधर ही सभी पदार्थ हरित, श्याम, कृष्ण, धूसर आदि विचित्रवर्ण-विशिष्ट और विप्लुतकी तरह देख पड़ते हैं। ४ हृद्रोग भेद। क्रोध और परिश्रम द्वारा वायु कुपित हो कर तथा पित्तके साथ मिल बार मुखदेशमें आश्रय लेती है, इससे मुखमें कोटे छोटे फोड़े निकल आते हैं जिन्हें मुखव्यङ्ग कहते हैं। इस लक्षणका चिह्न जब शरीर वा मुखमें उत्पन्न होता है, तब उसे नीलिका कहते हैं।

इसकी चिकित्सा—शिराविध, प्रलेप और अभ्यङ्ग द्वारा मुखव्यङ्ग, नीलिका, न्यच्छ और तिलकालककी चिकित्सा करनी होती है। बटहणकी कला और मधुरको एक साथ पीस कर उसका प्रलेप देनेसे यह रोग दूर हो जाता है। मधुके साथ मञ्जिष्ठा पीस कर उसका अथवा शशकके रक्तका वा वरुणवृक्षके छिलकेको छागमूत्रसे पीस कर लेप देनेसे मुखव्यङ्ग और नीलिका नष्ट होती है। पकवानके दूध और हल्दीकी पीस कर उसका प्रलेप देनेसे भी बहुत दिनोंको नीलिका जाती रहती है। दूधके साथ पीस कर मधुरमें धो मिला कर मुखमें प्रलेप देनेसे नीलिकारोग प्रशमित होता है और मुखको कान्ति उज्ज्वल होती है। बटहणका हरा पत्ता,

मालतो, रक्तचन्दन, कुट और लोभ इन सब द्रव्योंकी पीस कर प्रलेप देनेसे नीलिका जाती रहती है। इस रोगमें कुङ्कुमादि-तेल ही सर्वाङ्कष्ट है। कुङ्कुमादि-तेलकी प्रस्तुत प्रणाली—तिलतेल ८ सेर, कक्कार्थ कुङ्कुम, श्वेतचन्दन, लोभ, पनङ्ग, रक्तचन्दन, खसकी जड़, मञ्जिष्ठा, यष्टिमधु, तेजपत्र, पद्मकाष्ठ, पद्ममूल, कुट, गोरोचना, हरिद्रा, साचा, टारुहरिद्रा, गेरुमहा, नाग केशर, पलाशफूल, बटाडूर मानती, मोम, मर्षप, सुर-भिवच प्रत्येक द्रव्य आध कटांक, जल ३२ सेर।

इस तेलकी घ्रामो आंचसे पाक कर प्रयोग करनेसे व्यङ्ग, नीलिका, तिलकालक, मापक, न्यच्छ आदि रोग प्रशमित हो कर चन्द्रमण्डलकी तरह सुखकान्ति उज्ज्वल होती है। (भावप्रकाश) ५ जलका च्चर।

नीलिकाकाच (सं० पुं०) नेत्ररोगविशेष। नीलिका देखो। नीलिन (सं० त्रि०) नीलः प्रशस्ततयाऽऽस्त्यस्य इति इन्। प्रशस्त नीलवण युक्त।

नीलिनो (सं० स्त्री०) नीलिनू ङोप्। १ नीलोवृक्ष, नीलका पौधा। २ नीलवृक्षाद्य, नीला वीना। ३ श्याम-त्रिपुटा। ४ अजमीरुकी पत्नी। ५ सिंहापिप्पली।

नीलिनीफल (सं० क्लो०) नीलीवोज, नीलका बोया। नीलिमा (हिं० स्त्री०) १ नोलीपन। २ श्यामता, हयाही। नोली (सं० स्त्री०) नीलो निष्पाद्यत्वे मऽस्त्यस्याः, नोल-

पच्, ततो गौरादित्वात् ङोप्। १ वृक्षभेद, नीलका पौधा। पर्याय—काला, अलोतकिका, ग्रामीणा, मधुपर्णिका, रञ्जनो, ओफली, तुल्या, तूणी, दोला, नीलिनो, मूली, चौपी, मेला, नीलपत्रो, राशो, नोलीका, नीलपुष्पो, कालो श्यामा, शोधनी, ओफला, ग्राम्या, भद्रा, भारवाही, मोचा, कृष्णा, व्यञ्जनकेशी, महाफला, पसिता, क्लोतनी, केशो, चोरटिका, गन्धपुष्पा श्यामलिका, रङ्गपत्री, महावला, स्थिररङ्गा, रङ्गपुष्पा, दूलि, दूलिका, द्रोणिका।

इसका गुण—कटु, तिक्त, उष्ण, केशहितकर, कांस, कफ, वायु और विषोदर, व्याधि, गुणम, जन्तु और व्रण-नाशक।

भावप्रकाशकीमतमें यह रीचक, तिक्त, केशहितकर और अमनाशक है।

उर्णाका गुण—उदर, मीठा, वातरक्त और कफवायु-

विद्यया (सु० सु०) १ सखेद घोर बीच कासी होती है।
 सुचसान (स० सु०) १ कास कमी, घटो। २ प्रति
 धानि, घाटा। ३ पचगुण दोष, निवार, विगाड़ धरानो।
 सुकाई (हि० लो०) सुपौषे निरानेका काम।
 सुकीका (हि० वि०) १ नोबदार, जिनमें नोक निबकी
 हो। २ सुन्दर कनका, नोक नोबका, कांका तिरका।
 सुकीसी (हि० वि०) सुकीका से लो।
 सुकड़ (हि० सु०) १ नोक, पतला सिरा। २ पन्ना, सिर,
 घोर। ३ निबका घुषा लोना।
 सुका (हि० सु०) १ नोब। २ गीकोके खेकमें एक सखड़ी।
 सुक (स० सु०) १ दोष, पैव, नरासी, सुराई। २ दूठि,
 कसर।
 सुचराना (हि० लि०) मानू का पित लोना।
 सुचार (हि० लो०) बड़ीकी मार लो कसन्दर भाकूके
 सु च पर मारते हैं।
 सुयवी (हि० स्तो०) सुपौ रेंघो।
 सुमिन—दिक्कीके निबडवर्ती एक नगर। यह माहरन-
 गुर जिनमें पकता है घोर पचा० २८ २७०० तथा
 देगा० ७८ २६ पू०के मध्य पचजित है। यहां पनेक
 प्राचीन कोसिर्तां दिक्कीमें घानी हैं जिनमेंसे कासू चांका
 दुर्ग प्रसिद्ध है।
 सुहली—पाषाणके पन्नात एक जिना। बहाके राजा
 मौबिदि हने १८३६ ई०में पचना राज्य कल्पितके पनु
 सार प घीको लो सुपुर् है किया। मन्दिकी घट्टं यह ली
 कि कल्पनी राजाको विदेयीय प्रसूके पाकमचके बचा
 धेरो। एका देसके पाईलके पनुसार प्रजाका पालन
 करेने। यदि कोई व्यक्ति कल्पनीके पविष्ठत कानोंमें
 पन्नाय कायं करके राजाके राज्यमें पाचत से, तो
 राजा उसे कल्पनीके हाथ लगा दे।
 सुपना (हि० लि०) १ प घ या प लई लगी हुई किसी
 वस्तुका अडकलै वि च कर पलन लोना, धिं च कर लक-
 जना, लकना। २ खरोचा जागा, नाचून प्रादिसे
 बिसना।
 सुचवाना (हि० लि०) नोचनेमें किसी दूधरेको प्रउत
 करन, नोचनेका काम कराना, नोचने देना।
 सुनट (हि० सु०) स नोतमें २४ मोमाधोमेंसे एक।

सुत्रिपु लोना—रोहितकलके एक प्रालनकर्ता। १८वीं
 सताब्दीमें रन्धीन दिक्कीका शासनमार पडच किया घोर
 माहपानमके बड़े सखेके सुवराज शिवानकलके प्रति-
 निधि हो कर राजकायं पचाया। पानीपतकी लड़ाई
 के बाद १७६८ ई०में पियवा माधोरावने बहुस कलक सीना
 मंघर कर भारतवर्ष कीतनेके लिए लन् सेका। बिम्ब
 की लक्ष, माधोको सिन्धिया घोर सुबाको होसकरने
 सैम्यदलका मित्रत्व पडच किया। अब लन्ने राजपूत
 राजाओंकी शोत किया, तत्र सुमिपु-ल्लोका सखत कर
 गये घोर लन्ने सेन करना चाहा। सिन्धिन पानीपतकी
 लड़ाईमें रन्धीने मराठीके बिपद विपुल स प्राप्त किया
 था, इन कारण माधोको सिन्धियामि प्रतिधि लालके
 इच्छ हो कर इनका सन्धि प्रस्थापन म गूर न किया।
 बिम्बकी लक्षमें सन्धि का समाचार पियवाको निब मेत्रा।
 पियवामि बुझ दिया कि यदि सुत्रिपु-ल्लोकाके मात्र सन्धि
 करना सिधोका ली लही भरता है, तो लन्का प्रस्थापित
 बिपद विचारपूर्वक सुननेमें क्या पापनि है ? तदनन्तर
 मराराजोंके लोगल-लक्षमें यह स्नान प घीकोके हाथसे
 ले लिया तथा किन्तु लन्को यह पाया पकवती न हुई।
 लोके ली दिक्कीके मज १७७० ई०में सुत्रिपु-ल्लोकाका
 दिहात हो गया।
 सुनिक ली (नामिक ली)—१७७२ ई०में मराराजोंका
 प्रमान लन् लोने पर सुनिक ली दिक्कोसखाट लो
 समामि पिरसे कान पाया।
 नवाबने लकीर सुनिक लीको सखुट करनेके पमिप्राय-
 से पन्नाद भ्रमामि लन्ने पचना प्रतिनिधि बनाया। सुनिक
 ली कितनी ली लड़ाईमें विजय पाई ली। रोहित-
 कलकादिमेंसे साब लो लड़ाई जिक्की ली लन्ने रन्धीने
 प गरीज घोर सुजा ल्लोकाका हाथ दिया जा घोर पेक्ष
 काठोका पमिमान गूर किया। पाचरा मरमें इनका
 प्रभाव पड च गया। अब ले दूर दिक्कीमें जाना काठोमें ली
 धे, तत्र यहा लन्ने पाकोब कर्मीमेंसे कितने इनके प्रसू,
 लो गए। ये सखदुल पचमद लोको बादप्राचको समामि
 पचना प्रतिनिधि लोके नए धे। लन्नेके हाथमें सुनिक
 ली राजकायं घोर चांवारिक कायंका मार पयं च
 किया जा। १८ जून दीवानकी सुनदु-ल्लोकाको पदवी

दी गई थी। उन्होंने सम्राट् के यहाँ मुजिफ खाँको गिका-
यत कर अपने प्रधानता जमानेमें खूब कोशिश की। मुजि
फके विरुद्ध जो सब पहचयन्त्र चला रहे थे, उन्हें धँस नहीं
जानते थे, सो नहीं। उस समय वे भारी कामोंमें उनके
हुए थे, इस कारण उन्होंने इस और कुछ भी ध्यान न दिया।
अपने सुशिक्षित पदातिक सैन्यके गुणसे ही वे विराट्
कार्यमें कृतकार्य हुए थे। जिस समय दिल्लीके सम्राट्,
अंग्रेजोंके आग्रहमें थे, उस समय उनके कर्त्तृक उक्त
पदातिक सैन्यका एकट्ठाग सुशिक्षित हुआ था। मुजिफ
खाँके अधीन दो दल सेना थी जिनमेंसे एक दल जर्मन-
वासी समरुक्त और दूसरा दल फ्रांसीसी सैनिकोंके
अधीन था।

मुजिफ खाँने निर्विघ्नतासे अपनी प्रसाधारण क्षमता-
को फँसाया। वे लुलूफिकर खाँकी उपाधि ग्रहण कर
अमीर-उल-उमराव हुए थे। अनन्तर न्यायपरायणता
और दृढ़ताके माध्यमे सम्राट् और साम्राज्य दोनोंका
शासन करने लगे।

मुजिव-उद्दोला (नाजिव-उद्दोला)—रोहिलखण्डके एक
ख्यातनामा सुदृढ़ वीरपुरुष और जमींदार। १७५० ई०-
में अहमदशाहने इन्हें सेनापतिके पद पर प्रतिष्ठित किया,
किन्तु बादशाहने अनुपस्थितकालमें वजोरने नाजिव
उद्दोलाके स्थान पर अपने पादमोको नियुक्त किया। दिल्ली
के राजपुत्र अलोजहर पिताके वजोरके स्वभावको महान
न कर सके और नाजिवकी शरणमें पहुँचे। बादशाहने
पुनर्वा नाजिव उद्दोलाको सेनापति बनाया। इस समय
२५ आल्मगोरके वजोर साहब उद्दोला ने अपनी क्षमताको
दृढ़ रखनेके लिये महाराष्ट्रसे सहायता माँगी। यह
खबर जब रघुनाथ राव (राघव)को लगी, तब उन्होंने
मालखसे दिल्लीयात्रा करके नगरमें घेरा डाला। नाजिव
उद्दोला किसी तरह भाग गये। राघवने हिन्दुस्थानका
त्याग कर सैन्यसमूहको दो दलोंमें विभक्त कर दिया।
एक दल लाहौर चला गया और दूसरा दिल्लीमें हो रहा।
शेषोक्त दलका नेतृत्व दत्तजी सिन्धियाके हाथमें था। उन्होंने
साहब उद्दोलाके भागानुसार नाजिव उद्दोला और रोहिल-
खण्ड-वासियोंके विरुद्ध अस्त्र धारण किया। अन्तमें नाजिव
उद्दोलाने गोविन्दपन्थकी सेनाको तहस नहस कर गड़ा

के दूसरे पार मार भगाया। इसी बीचमें अहमदशाहकी
१७५८ ई०में पञ्जाब जीतनेके लिए आए और नाजिवके
माथ मिल गए। दोनोंने मिल कर दत्तजी सिन्धियाको
पच्छी तरह परास्त किया। अहमदशाहके मरने पर
उनके पुत्र अलोजहरने ग्राह्यालमकी उपाधि धारण कर
सिंहासन पर अधिकार जमाया। इस समय रोहिला-
गण बहुत क्षमतागालो हो उठे थे और दिल्लीमें आ कर
रहने लगे थे। सरदार नाजिवउद्दोला ने अपने स्वाधी-
नता फँसा दी और रोहिलखण्डमें राज्य करने लगे।
१७७० ई०के अक्टूबर मासमें इनका देहान्त हुआ।

मुजिव खाँ (नाजिव खाँ) रोहिलखण्डके एक शासनकर्त्ता।
१७७२ ई०में महाराष्ट्रने रोहिलखण्ड पर आक्रमण कर
इनके प्रसुर धन-रत्न छथिया लिए थे।

मुजीवाबाद—सुरादाबाद जिलेका एक नगर।

नजीबाबाद देखो।

नुजुफगढ़ (नाजफगढ़)—कानपुर जिलेके अन्तर्गत इलाहा-
बादके मध्यवर्ती एक नगर। यह कानपुर शहरसे १० कोम
दक्षिण-पूर्व गङ्गाके किनारे अवस्थित है। वर्त्तमान समय-
में यह एक प्रसिद्ध वाणिज्य स्थानमें गिना जाता है। इसके
पास ही एक नोनकोठो है जिससे यह और भी प्रसिद्ध
हो गया है।

नुटका—उत्तर-अमेरिकाके पश्चिम उपकूलवासी जाति-
विशेष। रक्तिपर्वतके शीतप्रधान स्थानसे ले कर समुद्र-
तट तक इनका वास है। अङ्ग्रेजोंने इनका 'नुटका-
कलम्बीय' नाम रखा है। किन्तु यह नाम उनका देगोय
नहीं है। दन्तभेदसे ये कई नामोंसे पुकारे जाते हैं, यथा
चेनुक, क्लोटसप, वाकश, सुल्टलीमा या क्लामथ।

ये देखनेमें अङ्ग्रेजोंमें गोरे होते हैं। किन्तु देग
व्यवहारके अनुसार ये अपने सर्वाङ्गमें नाना प्रकारका
मटो लेपे रहते हैं। इनके मस्तकका आकार पपरापर
मनुष्योंके जैसा होता है लेकिन कुछ चिपटा होता है।
इस कारण इनका मस्तक किंचित् जातिके जैसा है, इसका
निरूपण करना कठिन हो जाता है। जब लड़का जन्म
लेता है तब उसके मस्तकके दोनों बगल काठको पट्टी
जोरसे बांध देते हैं। कुछ कालके बाद हा उसका मस्तक
सदाके लिए चिपटा हो जाता है। आश्चर्यका विषय यह

है, कि ऐसी विज्ञानमान्यने जगत्के स्रष्टात्वा वा बुद्धिपञ्चिकी कोर्द ज्ञानि नहीं होते। वे लोग समस्त पौर पद्यम्यतनुवायो सुचतुर होते हैं। किन्तु इतने शीतल ज्ञानमें रहने पर भी ये जगत्की ब्रह्मादि बुद्धि नहीं जानते। यही कारण है, कि ये हमिया रोएदार मासुका चमड़ा पहने रहते हैं। ये लोग सुशोभन पौर मत्परनाके पाप धरने बाधोपयोगे स्रष्टादि पौर प्रबोधनादुकार लोकादि बनाते हैं।

इतना पाहार-व्यवहार पश्यान्व मनुष्यजातिसे इष्ट है। सामन सबको हो इनकी प्रधान उपशोबिका है। शीतकालमें मोत्रलके निप ये पहने है जो सबकी कोन पक्ष कर सुखा रहते हैं। अरु रत्ने बायो मरुको मित् जाती है तब वे धूम नहीं समारि पौर बड़े सेन से दिन काठते हैं। जब समय कोर्द कोर्द दसपति बन में जा कर पनाहार ऐन्द्रकानिक मन्त्रशासन करती हैं। इस प्रकारके तपाचारियोंको 'तामिय' कहते हैं। इन लोगोंका विद्याक है कि दसपति तपस्वकी मन्त्र 'मौनोक्त नामक एक देवताके साथ बाधोपधमन करते हैं पौर जनोंको ज्ञापने माना प्रकारके पशोबिक धार्य कर सकते हैं।

प्रवाद है, कि तुटका लोग नरमांश खाते हैं किन्तु यह कहाँ तक सत्य है, यह नहीं ज्ञाते। 'तामिय' तपस्विक किन्तु किन्तु दिन ज्ञापकोमविष्टिधत जमं से शरीर उरु कर पौर मरुदक पर बल्लसनिमित्त कालकर्मके सुकृत पदन कर जगये बाहर निरुसने पौर प्राममें प्रवेध करते हैं। उन्हें देवनेके पाप ही पाशाबद्ध इवनिता बरहे पत्र भाम ज्ञाने हैं, वेचन जो पाइसो है, ये जो उनसे ज्ञानमें पाते हैं। इन समय में उन्हें पक्षु कर उनसे ज्ञापये दो तीन पाप मीक काट लेते हैं। मान काटनेके समय पौर हो कर स्थान रहना ही प्रय बनोय है। जो पैना नहीं करते उनको बसाजमें निन्दा होती है। तामिय भी यदि चनाबाय तथा मोत्रगाये मांघ काट न बने, तो उनको भी निन्दा वेंस ज्ञानो है। उरुचित प्रकारके जितना मान ध्याया जाता है, जमीसे पनुमान कर सकते हैं, कि ये लोग कहाँ तक मीमामो हैं। इनके पनाहा से अन्य नरमांश मोत्रन नहीं करते।

इनको मावाका पनुमीसन खरमिने से पक्षिके जातिही माया समझे जाते हैं। दोनों जातिवोंको मायाके पक्षिके शब्दोंसे हीय भागमें 'तन' वा 'तनो' शब्द लगा रहता है पौर दोनों को एक जो पक्षमें व्यवहन होती है। उदाहरणरूप हो एक शब्द पौर उनसे पक्ष' बोये दिए जाते हैं यथा—'पाप, बुद्धि, अज्ञान'—पासिहन 'तीमकशिबिन्तु'—पुष्पन, 'दिनसुत्रितस'—शुभन, 'धायकोपातक'—बुधती, रमको इत्यादि।

इनके घर काठके बने होते हैं जो बहुत परिष्कृत पौर सबकोको मन्त्रसे परिपूष' रहते हैं। घरमें काठकी पनेक सुतलियां रहती हैं। जमी जमो सबकी पक्षुने कि जितने पौशार हैं तथा किम प्रसारने महनिवां पक्षुकी जाती है, उन्हें मो दोबारीमें पक्षित कर देते हैं। इनका पावासलान जंका अपरिष्कार रहता, परिधि ब्रह्मादि लो बंधा हो रहता है।

सुतो कपड़ेका वे लोग बरा मो व्यवहार नहीं करते पौर न इसे बुद्धि हो जानती है। माकूके चमड़े से पनाहा 'बाहन' वषको कासही बनो हुई एक प्रकारकी बटारें पहनते हैं। जमी जमो बटारेंके मोरे खपर रीप से ठक कर कबे ही शरीरके लपर रख लेते हैं।

इनका ज्ञान ध्याय सबसी है। इनका घर हमिया सबकीसे भरा रहता है। सबकोको मन्त्र इतने तीव्र होती है कि तुटकाके विवा जन्म मनुष्य घरमें प्रवेध नहीं कर सकते। ये लोग सबकीका तल मो पोते हैं पौर उनसे पक्षुके एक प्रकारकी रोटी बनाते हैं।

ये लोग बड़े पक्षु होते हैं, इस कारण इनको बुद्धि जित्त उनको बुनोप्य नहीं होती। विचार सेमने तथा सबकी पक्षुनेके विवा से बूढा कोर्द जाम नहीं जानते। पाचार-व्यवहारमें ये लोग रत्नचय' माकि'नजातिको पविषा कर प्रकारके निरुद्वे हैं।

सुत (च० वि०) मु सुतोः। सुत, प्रयोजित, जितको सुति वा प्रय वा की गई हो।

सुतरिका—माकूके पन्तर्गत एक सुदु गहर। यह पया० २४ ० च० पौर दैमा० ७१ ११ पु०के मध्य पन जित है।

सुति (च० जी०) सु-जाये-जिन्। १ सुति, चन्दना। २ पूजा।

सुत्त (सं० वि०) सुद-त पासिकी नगरभाषा: (दुर्गविदेहि ।
या वा० १५६) १. चित्त, घनाया दुष्या । २. प्रेरित, मीजा
दुष्या । ३. सुदुर्गनगण । ४. मङ्गलनगण ।

सुत्ता (सं० पु०) १. सुत्त, मीया । २. सुत्तानि, घोनाट ।
नृपाशराम (सं० वि०) १. जिनकी पत्न्याति अभिजाति
की, गणेशकर, टीगना । २. कमीना, बटमास ।

सुत्तपत्त—शालिग्रहका एक परगना । सुत्तपत्त १०६६
वर्गमील है । इसमें कुल २० तमोटाओं समझी हैं और
राज्य ११००० वर्गमील है ।

सुत्तनरा (हि० वि०) वादमें समक मा प्यारा, समझीन ।

सुत्तगया (हि० वि०) उन्नया देवी ।

सुत्तमा (हि० वि०) सुत्तमा, गित काटना ।

सुत्ती (हि० स्त्री०) छोटी जातिका सुत्त । यह हिमा-
लय पर कान्धारमें से कर भिजित तक तथा परमा और
दक्षिण-भाषातक पहाड़ों पर होना है ।

सुत्तिया (हि० पु०) १. सुत्ती मई पाटिमें समक निजापदे-
याणा, समक बगानका रोजगार करमेयाणा । २. सोनिया,
सोनिया । सोनिया देवी ।

सुत्तरवार—ग्याटग जिलेका एक नगर । इसमें यह
नगर बहुत विस्तृत था । यहीं इसने चारों ओर मज्ज
प्राचीन रह गए हैं । यह पत्ता २१° २५' उ० और देगा-
०४° १५' पू०के मध्य अवस्थित है । इसमें वासकी जमीन
बहुत उर्वरा है, किन्तु समभावमें उपजुक्त मत्स्यादि नहीं
होती । नगरमें एक पायकी मूर्ती पर शालिग्रहकी मूर्ति
है । यहाँ ऊपर एक मन्दिर बना हुआ है । इसने घनाया
पहा भी कितने मन्दिर देखनेमें पाते हैं ।

सुन्दियाम (दूमरा नाम गार्गीपुर)—शानाघाट जिलेके
पत्तर्गत एक बड़जनाकीर्ण नगर । इसने चारों
ओर मद्यकी दीवार है और योचमें एक दुर्ग है । यह
पत्ता १५° २३' उ० और देगा ०८° २७' पू०के मध्य
अवस्थित है ।

सुन (सं० वि०) सुद त्त निहा तस्य पूर्वपदस्य च नः । १
सुत्त, चित्त, घनाया दुष्या । २. प्रेरित, मीजा दुष्या ।

सुन्न—लाटुकके उत्तरपश्चिममें अवस्थित एक जिला । यह
हिमालयके उत्तर पश्चिम मायुकनदोके किनारे पत्ता ३५°
३५' से ३६° उ० और देगा ००° से ०८° पू०के मध्य

अवस्थित है । जिलेके मध्यमें यह नगर बहुत जगजा और
सुन्न है ।

सुन्दरकोट—समवाय मठका एक छोटा नगर । यह
पत्ता ११° ३६' उ० और देगा ०४° ३१' पू०के मध्य
कोलिकटके ५० माय पूर्व-उत्तरमें अवस्थित है ।

सुन्दरग (का० स्त्री०) १. प्रदार्म, दिग्गावट, दिग्गावा ।
२. मङ्गल मङ्गल, मङ्गल, मङ्गल । ३. माया प्रकारकी
मद्युकीका कुम्हार और परिवर्तके पिय एक ज्ञान पर
दिग्गावा ज्ञान । ४. यह मिया विगतमें अनेक स्थानोंमें
इकट्ठा हो रहै पत्ताय और ५६५ मद्युके दिग्गावे
जाती है ।

सुन्दरगगाव (का० स्त्री०) यह ज्ञान यहाँ अनेक प्रकार
की उन्नय और सुदुत मद्युके मंदिर ऊपर दिग्गावे
जाती ।

सुन्दरनी (का० वि०) १. दिग्गाव, दिग्गावा, यो देवमें
मङ्गलना और सुन्दर हो, पर दिग्गाव या काङ्गना न
हो । २. जिनमें जयों तक मङ्गल की, मीला कुह मा
न हो ।

सुन्नि (सुन्नि)—इसुधिल्लानके कनामके पत्तर्गत सुन-
की एक गोखोके मज्ज । ये योके सुन्दरमान धर्मोपमकी
है । जहाँवाके सुन्निवद हिना मङ्गलकीके धर्ममें उन्नय
हुए हैं, योना प्रवाद है । जहाँना मज्जमें दे मीन २
मायायेंमें विमल है ।

सुत्तकापुर—सिपाराज्यका एक परगना । इसका ऐत
कम ०३३ वर्गमील है । इस परगनेमें कुल चार तमो-
टारों समझी हैं ।

सुत्तिलह—जै शिया पहाड़के मध्यवर्ती एक नगर । इस
ज्ञानके अघिवाली परतके स्तम्भ बगाने है । मेटेनेए
इतने माइयका कदना है कि इन स्तम्भके पाद उन्नके
धर्मका मङ्गल है ।

सुवन्नराय (नवन्नराय)—एनावाजिनवाली एक मङ्ग-
मेनी कायल । योने जौयनके प्राञ्चालमें ये अघोषाके
नवाय सुदैन उन्न-सुन्दरके यहाँ मेषकके कार्यमें नियुक्त
हुए ।

सुधार्तिक मज्जे पर उन्नके भागिनेय सफरजङ्ग
अघोषाके नवाय-वज्जोरपद पर अवस्थित हुए । जन्मिने

नवीनराजको राजाको उपाधि दे कर सभ्याप्यथ पोर
 अपने लक्ष्मीरूपमें निकुञ्ज बिया। इस समय सब
 दरको बई वर्ष दिखीमें रह कर निजोदिवोंको दमन
 करना पड़ा था पोर नवराज कय सुनहुषाके साथ
 पयोधामदेयके शासनकार्य चला रहै थे। सब बादमाह
 महामदमाह पत्नी महामदमाहि विरह सुखयात्रा कर
 यथास त्रिभेदे बहामुपुर्गको जेत न सके, तब नवाब
 बजोरके पादयके सञ्चारान नवल शम्भलको गय पोर एक
 को दिनमें दुर्ग-मासीरको तहस-नहस कर ग्रामको वस्तु-
 मत कर दिया। इस पर सबदरमें प्रसन्न हो कर इनकी
 बड़ी तारीफ को पोर बहुमुख पदाव सुरकारमें दिये।
 १०५० ई०में सब रोडिलत-पयमान निजोदो हो कठे,
 तब महाराज नवल सके दमन करनेके लिये पधसर
 हुए। इस युद्धमें भी पधम्मद का बहामके साथ बहुत
 काठ तक पसीम साहसके साथ लड़में हुए मारे गये।
 पीछे इनके लड़के खुषासिंह व राजा हुए।

सुयक (नवलसिंह)-मराठपुरके आठव गीब राजा सूर्यमङ्गके
 उत्तरीय पुत्र, १५ पयोके प्रथम गर्भजात। सूर्यकी प्रथमा
 पत्नीके द्वितीय पुत्र रतनसिंह इकी सख्खुके बाद उनके पाँच
 वर्षके पुत्र शिरोसिंह मन्त्रिबन्धुके राजपद पर प्रतिष्ठित
 हुए। अपने मतोत्रेका राजकार्य चलायेंके लिये नवल
 सिंह निकुञ्ज हुए। शरीर एक मासके बाद शिरोसिंह इकी
 सख्खु हो गई। यह सुबलसिंह व सिंहासन पर बैठे पोर
 शासनभावने राज्यशासन करने लगे।

राज्यवर्द्धनकी पोर इनका किमिय भ्जान था। ११८६
 विक्रममें इनोंने बागु आठके पुत्र पञ्जीतसिंह इके नाम-
 गढ़ दुर्ग खोल दिया। इस समय पञ्जोतको सहायताके
 लिये दिखीके राजनेता आई। किन्तु राष्ट्रमें हो नवलने
 सके मार मयाया। इन युद्धमें इनके दिखीके पञ्चिहार-
 सुब मिनेन्द्रा पोर पन्थाय्य ज्ञान जाय गये। पीछे
 पन्थाय्य ग्राह पासमने सभ्याप्यथ नत्रय पाँको उनके
 विरह मिला। इदल पोर नवलनेके निवृत्त दोनोंमें लड़ाई
 बिजो। पहले नवलने जो सब ज्ञान अपने पञ्चिहारमें
 कर लिये थे उनमेंके नत्रय पाँ जरीदाबाद पोर पञ्चवटा
 भाद जेत कर पीछे दीग दुर्ग जेतनेके लिये चपतर
 हुए। इसी युद्धमें नवलसिंह व रहलें थे। नवल का इन

दुर्गको दो बय तक चैर रहै थे। इस समयके सञ्चार
 नवलको सख्खु हुई।

सुबिगण्ड-जागराके पन्तर्मत एक नगर। यह फर्रुखा
 बादके १८ मील दक्षिण उच्चिममें पचा० २० १५' उ०
 पौर देगा० ७८ १३' पू०के सञ्चार पञ्चिगत है।

सुसया (प० सु०) १ निवा बुधा कागज। २ न्यायत्रया
 यह बिट जित पर इकोम या बंध रोगीके लिये पोषक
 वैभवविधि धारि लिखते हैं, इकाका पुरजा।

सुपरतु या सुपकक (नसरत)-विरोज सुपककके पोत।
 ११८१ ई०में दिखीके जमींदारगण दो दर्सीमें विमञ्ज
 हुए। इनमेंके एक दलने बादमाह महामदका पौर दूधरे
 ने नहरतका पय पयसम्भन किया। इस प्रकार यह
 बिबाद खड़ा हुआ पोर तीन वर्ष तक विषम जन्माकाष्ट
 चलता रहा। ११८६ ई०में नसरत एकबास खाके
 हावकी कठपुतली बन गये। किन्तु पन्तर्मत एकबासने
 नहरत खाकी इनबलके साथ नगरके बाहर निवास
 दिया था।

सुपुर-दिखीके प्रथम एक छोटा नगर। यह पचा० २८'
 १६' उ० पौर देगा ७० १७' पू० गहरानपुर नगरसे १४
 मोस दक्षिण-पच्चिममें पञ्चिगत है।

सुबनिङ्ग (सुबिबोङ्ग)-१ मन्त्राज प्रदेशके ज्ञान्या जिनान्त
 पंत एक जमींदारी। यह प्राचीन ज्ञान जिबो बर्हिण्डु
 जमींदारके कब्जे था। इसका विस्तार ६८४ वर्ग मील
 है। यह जमींदारी ६ मागोंमें विमञ्ज है, पचा-१ बिन्द
 प्रवडा, २ प्योशुद, ३ मिर्जापुर, ४ कपिलेश्वरपुर, १ देवो
 मोलू पौर ६ मपुरा। वार्षिक भाय ६१००००
 र०की है।

२ उच्च जमींदारीका सदर पौर प्रथम नगर। यह
 पचा० १६ ३०' २३" उ० पौर देगा० ८० ३३' २०"
 पू०के सञ्चार पञ्चिगत है। वैश्रवाङ्गसिंह यह २६ मील उत्तर
 पूर्व एक जमी भूमि पर बना हुआ है।

यहाँ एक प्राचीन मठोका दुर्ग है जो जमी जमींदारों
 के पाशासकानमें परिचत हो गया है। यहाँका बहूटे
 मठ जामोका मन्दिर शरीर बार जो वर्षका सुरागा
 है। उच्च समयका बना हुआ एक बड़त् सुव्यमानचर्म-
 मन्दिर भी है जिसका आधार बहुत कम सीम करत है।

गत शताब्दीमें शत्रुके हाथमें यह नगर बंधाया गया है।
यहांसे १५ मील दक्षिण-पूर्व परिमसिद्ध ग्राम तक जो
रास्ता गया है, वही इस नगरका प्रवेशपथ है। यहाँ
चारियल और चामके अनेक दरवाजे हैं।

नू जगडशा—कृष्णा जिलेके अन्तर्गत एक ग्राम। यह विष्णु-
कोण्डसे ८ मील दक्षिणमें अवस्थित है। यहाँके प्रम-
वास्तुदेवमन्दिर और मण्डपके सामने स्तम्भगात्रमें शिवा-
ल्लिपि उल्लिखित है। ग्रामसे १ मील उत्तरमें एक प्राचीन
दुर्गका भग्नावशेष देखनेमें आता है।

नू जिकन—दक्षिण-भारतकी एक नदी। यह कूर्ग राज्यके
पश्चिमघाट पर्वतकी मेरुकारा शिखरके निकटवर्ती
सम्पाजी उपत्यकासे निकलती है और पश्चिमभिन्नुष
होती हुई मन्द्राजके दक्षिण कण्ठा जिनकी पार कर
कासरगोडके निकट बसवनी नामके पारश्वोपसागरमें
गिरती है।

नूत (सं० त्रि०) नू-स्तवने कर्मणि क्त। स्तुत, प्रशंसित।
नत (हिं० वि०) १ नूतन, नया। २ अनोखा, अनूठा।
नूतन (सं० त्रि०) नवएव तमप् नवस्य नूरादेश्य।
(नवस्य नूरादेश्यस्तम्भान्पुत्राश्च प्रत्यया वक्ष्यामः। वाचिक
५/४१२५) इत्यस्य वाचिकोक्त्या तमप्। १ अपुरातन,
नया, नवीन। पर्याय—प्रत्यय, अभिनव, नव्य, नव, नवीन,
नूत, सद्यस्क, अजीर्ण, अभ्यय, प्रतिनव। २ बिलक्षण,
अपूर्व, अनोखा।

नूतनगुड (सं० पु०) अभिनयं गुड, नयागुड।

नूतनहोप—भारतमहासागरके बोर्नियो द्वीपके उत्तर-
पूर्वमें अवस्थित एक द्वीपपुञ्ज। इसके उत्तर और दक्षिण-
में इसी नामके दो छोटे छोटे द्वीप हैं। उत्तरस्थ द्वीप-
पुञ्ज अक्षां ४° ४५' ०" और देशां १०° ८' ०" में पड़ता
है। अक्षांशके दिसम्बर मास तक बहुतसे जहाज इसी
द्वीपके दक्षिणपथ हो कर निरापदसे चोमबन्दरकी जाती
आती हैं। दक्षिणस्थ द्वीपपुञ्ज अक्षां १° ०' और देशां
१०८° ०" के मध्य बोर्नियोद्वीपके उत्तरपश्चिममें अव-
स्थित है। मध्यस्थ द्वीपपुञ्ज ३४ मील लम्बा और १३
मील चौड़ा है। इसकी चौड़ाई सब जगह एकसो है।
इसके चारों ओर असंख्य छोटी छोटी द्वीपवालो देखनेमें
आती हैं। ये सब द्वीप पर्वतमय हैं। कोई कोई पहाड़

जो इतना ऊँचा है, कि उसका शिखर ४५ मील दूरमें
दीर्घ पड़ता है। यहाँ मलयजातिजा वाम है।

नूतनता (हिं० स्त्री०) नवीनता, नयापन, नूतनका
भाव।

नूतनत्व (सं० पु०) नयापन, नवीनता।

नूतनपत्तो—मन्द्राज प्रदेशके कर्णूल जिलेका एक ग्राम।
यह नन्दोकोटकुक्षसे १२ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित
है। यहाँ चाञ्चनेयका एक भग्नमन्दिर है जिनमें एक
अम्पट शिवाल्लिपि लोदी हुई है।

नूत (सं० त्रि०) नव एव नवस्य तप् नूरादेश्य।
नूतन, नया।

नूद (सं० पु०) नूदति रोगायनितमिति नूद-कृ प्रवी-
दरादित्वात् दोषः। अघ्नयाकार ब्रह्मदारुहृत्, गह्वरुत्।
प्रददाक देत्यो।

नून—उड़ोसाके अन्तर्गत पुरी जिलेकी एक प्रधान नदी।
यह जिलेके मध्यभागमें निकल कर अक्षां १८° ५३' ३०"
०" और देशां ८५° ३८' ०" दयानदीमें जा कर मिल
गई है। इस नदीमें कभी कभी बाढ़ आ जाया करती है
जिनसे तीरस्थ ग्रामादि नष्ट हो जाते हैं। इसकी तीर-
भूमि स्वभावतः ऊँची है और जनसंख्याकी रोकनेके लिए
कहीं कहीं बांध भी दे दिये गए हैं।

नून (हिं० पु०) १ पाल। २ दक्षिण-भारत तथा चामाम
बरमा आदि देशोंमें मिलनेवाली चामको जातिकी एक
जात। इससे एक प्रकारका लाल रंग निकलता है।
इसका व्यवहार भारतवर्षमें कम लेकिन जावा आदि
द्वीपोंमें बहुत होता है।

नूनम् (सं० पथ्य०) नू जनयतीति जन परिहाये अम्।
१ तक, ऊहापोह। २ अर्थनियत। ३ अवधारण। ४
स्मरण। ५ वाक्यपूरण। ६ उपमेया।

नूना—१ बालेश्वर जिलेके अर्दूरा परगनेका एक प्रकारका
बांध। यह अक्षां २०° ५८' से २१° १२' ०" और देशां
८६° ५२' से ८६° ५५' ०" तक विस्तृत है। समुद्रका जल
जिससे ग्राममें प्रवेश न कर सके, इसलिये यह बांध दिया
गया है। किन्तु कभी कभी यह बांध अनिष्टका कारण
हो जाता है। १८६० ई०में गमारुनदीका जल बांध
रहनेके कारण बाहर निकलने नहीं पाया जा जिससे

विशेष पण्डितको सम्मानना हो गई थी। बिन्दु ईश्वरको पशुसन्तति यह शब्द जलसे शैलसे टूट गया था। २ टिप्पण्युपरी एक मदी।

नूरो-सूर्यशास्त्रके ०४ मोक्ष चत्वार-पवित्रके कोनसे बर्णित एक सुद मगर। यह सन् २८ १६ ७० चो। देश ० ८० ८० पू०के मध्य बर्णित है।

न पुर (सं० पु० श्लो०) नू-द्विप मुनि पुरति पुर पय-मन्ने-क। १ अनामक्यात पादभूयन्, पौरसे पञ्चमिन्ना पित्रोका एक पद्मना, पैजनी, बु पद। २ नवपक्षे पक्षे मेदका नाम। ३ इन्नाह्वय भोग एक राता।

न पुरभू(क० लि०) नूपुर विधायक, मत्तुप मज्ज न। नूपुरह्व, जिनसे नूपुर पद्मना हो।

नूर (प० पु०) १ ज्योति, प्रकाश, जामा। २ जो, क्षान्ति, गोमा। ३ ईश्वरका एक नाम। ४ सङ्गीतमें वारह सुकामोर्षि एक।

नूरचौशाह-सुलतानाधिक सुफो-सम्प्रदायके एक सुख और मीर समुद्र पञ्चोदयके सुख और शिष्य। इनके पिता दादिबाबावासी और सेयद पञ्चो रबा नामक किसी सुलतानाधिक दीक्षित हुए। पारसराज करीम ज़िरे राजसुलतानसे ये पितासुल भारतवर्षको बोड़ कर विप्राजमगरको पक्षे नए पौर बहा इन्होंने अपने एक कश्चित्त नरे मतका प्रचार किया। बोड़ो को तिर्नोके मध्य माह-तोष इमार मत्तुप इनके शिष्य हो गए। नूर पञ्चोने पक्षसे इस्लामनगरमें बर्नोपदेशको बह्यतता दी। उनको बनसा बम होने पर भी हवा पौर सुदिने के बहो को मात करते थे। सुलतानाधिक ऐतिहासिकयथ सुलतानके ये इनका गुणातुवाद् कर गए हैं। दिनों दिन इनको शिष्यावन्दना बढ़ती देख इस्लामनके बर्नोबाबकमच जल लठे। पोक्षे लक्ष्मीने बहुयन्त्र करके सुफो-सम्प्रदायिक मतके विद्वद निन्दा करती हुए रामा पञ्चोनेदैन खांके पवित्र पौर सज्ज-बखामचमको फ़ायदाके लिए पाषिदल किया पौर कहा कि जल बमके ऊपर सोतीकाको निष्काश है लक्षे के शोय इटा रहे हैं। यह सुन कर रामा बहुत विपक्षे पौर हज्जमके ऊपर विश्विष बाबा दिखपाते हुए यह कहा, कि इस प्रकार लक्ष्मणका निन्दावाद बर्नो विद्वद और राजनोतिविद्वद है। यता

लक्षी समझ लक्ष्मीने हुक दिया कि इन निन्दवाचारियोंके नामक जान जाट कर देशसे निष्काश दो। फिर क्या पन, मूखं धेनिबोने पाजा पाने हो, मो कामने मिने लनको नाम, जान पौर दाही जाट करती। इस समय सुलतानाधिकबर्नोबमपुर्न पक्षि निरीह इस्लाम बर्नो सेविपोंको यह निवह भोग करना पड़ा था। ये नाना ज्ञानीमि पय टन कर सुलतानगरको लोठ थाए। पनाद है, कि निष का कर ये मरे थे। इस समय इनके प्राय-साठ हजार शिष्य हो गए थे।

नूरचौशाहवारी-एक कवि। ८०४ हिजरीमें निलन प्रदेश जब पारसराज तहमास्पसे पक्षिबार्ने पाया, तब इनके पिता मोखाना पक्षपुर राजाक निहुरमावसे मारे गए थे। ये पक्षी गिलनके शासनकर्ता पक्षपद खांके पञ्चोम खास करते थे। पिताकी मृत्यु पौर पक्षपदकी राज्यभृति देख कर ये कोषाबनिनको मान गए। पोक्षे बर्नो ८१३ हिजरीमें ये अपने भाई पशुसपद पौर इमान को पाय से भारतवर्षको भाग पाए। सन्नाट, पक्षवर शासन पक्षसे इन्हें सेव्याध्यक्षके पद पर नियुक्त किया, बिन्दु ये पक्षवारके विशुक्त पराप्तु, थि। एक समय जब ये निना इतिवारके अपने इक्ष्मी बीच था खड़े हुए, तब पाषिबीने इनको खूब हँसो लड़ाई। इस पर लक्ष्मीने जवाब दिया कि इनके लं पा शिष्यातुराको भी कुछ विद्या पच्छो नहो लयतो। इन्होंने पौर भी कहा था, कि जब तंमूर देय जीतनेको अपनेर हुए, तब लक्ष्मीने ल ड गवाहिको इक्ष्मी वीचमें पौर शिष्योंको इनके पोक्षे रना था। जब कोई इनके विद्वान् पक्षिबाबा ज्ञान पूछते, तब ये कहा करते थे कि जिसेमि भी पोक्षे विद्वान् पौर पक्षितीके रहनेका ज्ञान है, बारप शिष्यातुरामो पक्षि बमो भी साक्षी नहो हो लक्ष्मी।

इनके पक्षुसम्प्रदायके पक्षुसपद हो कर सन्नाट, पक्ष-वरने इन्हें बह्यतने मज दिया। यहाँ ८८८ हिजरी में सुलतानवर खांके शासनशोभन बह्यतानमें को राष्ट्रविद्वद हुआ, लक्ष्मीने नूरचौशाहको पक्षु, हुई।

नूरचौशाह सराव-पक्षुबाबके बहो-दोषाब विभागके पना-गंत एक मगर। यह इराकतो मदी। बाए दिनारे १० मोक्ष दक्षिण-पूर्व पौर काहोर नगरसे १४ मोक्ष पुन-

दक्षिणमें अक्षा० ३१' ३०' उ० तथा देशा० ७५' ५२' पू० के मध्य अवस्थित है।

नूरउद्दीन् महम्मद—एक सुमलमान ग्रन्थकार। इन्होंने 'जामो-उल्ल-हिकायत' नामक एक ऐतिहासिक ग्रन्थ लिखा जिसे १२३० ई०में दिल्लीखर भलतमसके सैन्याध्यक्ष निजाम-उल्ल-मुल्क महम्मदके नाम पर उत्सर्ग किया था।
नूरउद्दीन् महम्मद मिर्जा—भलाउद्दीन् महम्मदके पुत्र और खाजा हुसेनके पौत्र। सम्राट्, चाचरको कन्या गुलरुख बियमसे इनका विवाह हुआ था। इन्हींकी कन्या सलिमा सुलताना अकबरके कहनेसे १५५८ ई०में खानखाना बेराम खाँकी ब्याहो गई थी।

नूरउद्दीन् मफे दूनी—एक सुमलमान कवि। हिराटके खोरासन प्रदेशके अन्तर्गत जामनगरमें इनका जन्म हुआ था। मगहद शहरमें इन्होंने पढ़ना लिखना समाप्त किया। बाबरशाहसे परिचित होनेके पहले हुमायूँके साथ इनका सखा-भाव था; सम्राट्, हुमायूँ इन्हें खूब प्यार करते थे, सभी समय अपने साथ रखते थे। इनके आचरणसे सन्तुष्ट हो कर सम्राट्ने सफेदून् परगना इन्हें जागीरमें दिया। तभीसे ये सफेदूनी कहलाने लगे। सम्राट्, अकबरकी तरफसे इन्हें समाना परगनेकी फौजदारी और 'नवाब-तरखान'की उपाधि मिली थी। समानाके फौजदारके पद पर रह कर इन्होंने शेरमहम्मद हीमानकी धनूरी नामक स्थानमें परास्त किया। ८७३ हिजरीमें इनका शरीरावसान हुआ था।

१५६८ ई० वा ८७७ हिजरीमें ये यमुना नदीसे कर्नाल तक एक नहर काट ले गए। यह नहर सैखू-नहर नामसे प्रसिद्ध है। इसी साल सम्राट्, अकबर शाहके पुत्र जहानगीरका जन्म हुआ था। बादरके साथ इन्होंने सम्राट्, पुत्रका 'सेखुवाश' नाम रखा। सुलतान सलीमके मान्यके लिये उक्त नहरका नाम सैखू पड़ा। विद्या-चर्चके लिए कोई कोई इन्हें सुल्ला नूरउद्दीन् कहा करते थे। काश्-अगतमें इन्होंने विशेष ख्याति लाभ की थी। सामयिक कविधोंने इन्हें "नूरी"की पदवी दी थी। इनकी बनाई हुई "दीवान" और "स्तोत्र-माला" आकर दो पुस्तक मिलती हैं।

नूरउद्दीन् शेख—एक ऐतिहासिक। इन्होंने पारस्य भाषामें

"तारीख-काश्मोर" नामक काश्मोरप्रदेशका एक इतिहास लिखा है। इस ग्रन्थका शीघ्र खण्ड हैदर मलिक और महम्मद अजीमसे समाप्त हुआ था।

नूरउल्ला-बेगम—मिर्जा इब्राहिम हुसेनकी कन्या और गुलरुख बियमकी गर्भजाता तथा मुजफ्फर हुसेन मिर्जाकी बहन। युवराज मलोमके साथ इनका विवाह हुआ था। यही मनोम भयिपातमें भागते इतिहासमें जहानगीर नामसे प्रसिद्ध हुए। १०२२ हिजरीमें ये वर्तमान थे।

नूरउल्लक—१ एक ग्रन्थकार, दिल्लीवासी भवदुल हकविन सेपुद्दीन्के पुत्र। इन्होंने पिताके लिखे हुए इतिहासका पूर्ण संस्कार कर "सुबदत्-उल्ल-तवारिख" नामसे उसकी प्रकाश किया। पूर्वग्रन्थमें जो सब भूल और कूट थीं उन्हें यथाम्यान पर सन्निवेगित कर इन्होंने उज्वल भाषामें पुस्तक लिखी और सहीतुपारी तथा इस्लामधर्मके विषयमें एक "सारा" लिखा। सम्राट्, आदमगोरके राजावकालमें १६६२ ई०की इनकी मृत्यु हुई।

पल-मस्त्राकी, **पल-देलावी** और **पल नुखारा** ये सब इनके मर्षादा-सूचक नाम हैं। इनके इतिहासमें बङ्गाल, दक्षिणात्य, दिल्ली, गुजरात, मालव, जोनपुर, सिन्धु, काश्मोर आदि देशोंके राजाओंका संक्षिप्त विवरण है।

२ एक विचारवति। ये १७०६ ई०में विद्यमान थे और बरेलीमें काजोका काम करते तथा पारस्य भाषामें कविता लिखनेमें विशेष पारदर्शी थे। पारस्य भाषामें इन्होंने तीन लाखसे भी अधिक श्लोकोंकी रचना की। इनकी कवितामेंसे शोकके टंग पर लिखित कुरान-टोका, अरबो और पारसीभाषामें लिखित काशीदासग्रह कुह मसनवी और तोस दीवान मिलते हैं। कविताशक्तिके कारण इन्हें "सुनाइम"-की उपाधि मिली थी।

नूर-उल्ला-सुस्तरी—सम्राट्, अकबरशाहकी राजसभाके एक उमराव। इनका असल नाम "नूर-उल्ला-विन-मरीफ-उल्ल-हुसेन उल्ल-सुस्तरी" था। इन्होंने "मजलिस-उल्ल-मोमिनीन्" नामक एक ग्रन्थकी रचना की। इस विस्तृत जीवनीमें 'सिया' सम्प्रदायके विभिन्न उमरावोंका इतिवृत्त लिखा है। इतिहासके सम्बन्धमें यह एक अमूल्य ग्रन्थ है। इस ग्रन्थके प्रथम मजलिस वा भागमें

किन्तु प्रवादगत बीबनी घोर कश्चारीबीबीका इतिहास सिद्धा है। इससे यथासा प्रमाण विचित्रता वा इकोम से कोननपरितिके मिय भागमें लगेते कत पन्नादिके नाम भी वर्णित हैं। मिया कश्चारीके मत पर इनकी विधिय यथा बी। इस कारण अहानुवीरके राजत्वकालमें १६१० ई०को इन्हें पपेट्ट कष्ट सुगतमें पड़े थे।

मूर व किरात—भारतवर्षके पश्चिम भोमात्मवर्ती कातुस-नदीकी शाखा। मूर घोर किरात नामक दो शाखाएं विभिन्न स्थान होती हुई एक साथ मिल कर कातुस-नदीमें गिरी हैं।

मूरकोली—दाक्षिणात्यके बीजापुर राज्यके अन्तर्गत एक नगर। यह बीबपुर राजधानीमें १८ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है। काल पत्थरके पहाड़के ऊपर यह नगर बसा हुआ है। यहाँके प्रधान भो काल पत्थरके दो बने हुए हैं। इससे दक्षिण-पश्चिममें पपेयाकत एक पहाड़के ऊपर एक बड़क घोर दुर्ग 'य दुर्ग' स्थित है। इसका सिद्ध कार्य घोर गठनादि उतना सुन्दर नहीं है।

मूरयद—सुगतराजधानी द्वितीये निकटवर्ती एक नगर। यह पत्नी पत्नीसगढ़ नामके समझर है।

मूरगुन—दाक्षिणात्यके बीजापुर प्रदेशके अन्तर्गत एक छोटा जिला। यह चाटप्रमा घोर मासवमा नामक दो नदीके अन्तर्गत पर बसा हुआ है। इस जिलेमें बसामो घोर रामदुर्ग नामक दो नगर स्थित हैं।

मूरकाट—बम्बई प्रदेशके पूना जिलेके अन्तर्गत एक नगर। येथका नारायणराजको अष्टक होने पर इनके पुत्र महाराजके १६०८ ई०में विजयपट्ट पर चला गया। इनके सिंहासन पर बैठनेके रघुनाथराजके ईर्ष्यान्वित छो सुतनें पञ्चदश-के सहायता माँदी। पञ्चदशी येना पूनानगरके मूरकाटमें जो बोध कोबको बुरी पर का, पट्ट पर गई। इस महा राहुमक मी पूनाके कृत नगरको घोर पराजय हुए। दोनों वधमें अमरान कृत बला। सुदमें बिस्वी मो पचकी कोत न हुई। किन्तु रातको पञ्चदशी केनाअपने पियवा के मिक कर बिद्या घोर रघुनाथको इनके हाथ बुरद कर दिया।

मूरजान् (मूरमजल, सिद्धिबिद्या)—भारतवर्षके सुगत कश्चारी अहानुवीरकी विषयता महिनी। १६११ ई०में

इनके हाथ कश्चारी अहानुवीरका विवाह हुआ था। तभीसे ही कर १६ वर्ष तक मूरजान्को कोमनी की अहानुवीरके राजत्वका इतिहास है। मूरजान् मरिचो को कर पञ्चत्त पमावस्यक हो गई थी। बिना इनकी क्माक किए कश्चारी कोई काम नहीं करते थे। इस समय इनके जितने ही पान्थीय-अजन राण्यके प्रधान प्रधान पद पर पामिषिक्त हुए थे।

मूरजान्के इतिहासका पता क्या कर की कृत मासूम हुआ है उससे इनके पितामह तथा कृत कृत विवरण जाना जाता है; उससे पक्कीका कृत भी नहीं। मूरजान्के पितामहका नाम था क्माका महम्मद शरीफ। पारखनगरके तिहरान् नगरमें उनका नाम था। पारख के अन्तर्गत खोरासान प्रदेशमें अब महम्मद-कबी-तरफ छोड़ने उगल-ताकलु 'येनाके देवी' थे, यह समय क्माका महम्मद शरीफ इनके मनो थे, (१) घोर लकी समय के इनकी प्रतिष्ठा कम गई—ये एक प्रतिष्ठापक कवि मो थे। "द्वित्री" (२) यह उपनाम भारत कर से अविता लिखते थे। पूर्वके उगल-ताकलुके पुत्रने उन तातारसुक्तानपद प्राप्त किया, तब क्माका महम्मद शरीफ की अजीरके पद पर नियुक्त हुए। उक्त सुक्तानकी सूरुके बाद इनके पुत्रकोपात्रक कवि समयमें मो क्माका महम्मद शरीफ को अजीरके पद पर वर्तमान थे (३) पोके कोयात्रक खाँ अब मर गए, तब पारखराज माह तमाकने क्माका महम्मद शरीफको बुला कर यात्रद नामक राज्यका अजीरपद प्रदान किया (४)।

बिस्वी बिस्वी इतिहासिकका मत है कि ये पारखराज माह तमाकके ही अजीरपद पर नियुक्त हुए थे। सुगतकश्चारी, क्माका माह अब मिरयाहके मयाए मय थे, तब वे पारखराज माह तमाकके यहाँ प्रतिष्ठि हुए थे। यह समय माह तमाकने जिन सब पत्नीों घोर कश्चारीको इनको बिद्या सुगुर्गामें

(1) Iktal nama-i-Jahangiri (Elkies Vol. p. 450.)
 (2) Ain-i-Akbari (Blochmann, p. 622.)
 (3) Ain-i-Akbari (Blochmann, p. 508)
 और पारखराजने येनाक को बुला कर बुला दी है।
 (4) Iktal nama-i-Jahangiri (Blochmann, p. 463.)

नियुक्त किया था, उनमेंसे वज़ीर ख्वाजा महम्मद शरीफ भी एक थे (५)। ८८४ हिजरीमें ख्वाजा महम्मद शरीफ अनेक पुत्र पोतादिकी छोड़ परलोक सिधारे।

ख्वाजा महम्मद शरीफके दो भाई थे। एकका नाम था ख्वाजा मिर्जा महम्मद और दूसरेका ख्वाजानाजि ख्वाजा (६)।

८८४ हिजरीमें ख्वाजा महम्मद शरीफकी मृत्यु हुई। उस समय उनके भ्रातामहम्मद-ताहिर और मिर्जा गयासुद्दीन् महम्मद नामक दो पुत्र वर्त्तमान थे। भ्रातामहम्मद ताहिर भी पिताकी तरह, 'वासना' उपनामसे कविता लिखते थे (७)। मिर्जा गयासुद्दीन् महम्मद भी उस समय परिणतवयस्क, विवाहित, दो पुत्र और दो कन्याके पिता हो चुके थे। मिर्जा गयासुद्दीन् सुसज्जमान इतिहासमें गयासवेग नामसे प्रसिद्ध थे। प्राचीन अरबरेज ऐतिहासिकोंने "गयासवेग" शब्दको "भायाल्" शब्दका अपभ्रंश समझ कर 'भायासवेग' नामसे इनका उल्लेख किया है। गयासवेगका भला उद्दोलाकी कन्यासे विवाह हुआ था। भलाउद्दोला (मिर्जा अन्नाउद्दीन्) भ्रातामोलाके सङ्गके थे। जब ख्वाजा महम्मद शरीफकी मृत्यु हुई, उस समय गयासके महम्मद शरीफ और मिर्जा अबुलकुद्दीन् नामक दो पुत्र तथा मनीजा और खटोजा नामक दो कन्यायें थीं। इन चारोंका पारस्य देगमें ही जन्म हुआ था।

८८४ हिजरीमें पिताकी मृत्युके बाद ही गयास खो

(५) विश्वकोषके ८म भाग, १५७ पृष्ठमें अहानगीर शब्द देखो।

(६) इन दोनों भाइयोंके साथ भारतका कोई संभव नहीं है। जेष्ठ मिर्जा अहम्मदके पुत्र ख्वाजा अमीन रामी (पारस्य-देशमें रायशहरवासी) वा कालान्तर मनिष्ट्रेट थे। वे एक प्रसिद्ध पर्याटक और कवि थे। १००२ हिजरीमें उनका 'हस्त इक़तिस' नामक ग्रन्थ रचा गया। सम्राट अहानगीरके यहां इस ग्रन्थ और कविका विशेष आदर था। ख्वाजाकाजी ख्वाजा और उनके पुत्र ख्वाजाशाह दोनों ही साहित्यसेवी थे।

Ain-i-Akbari, Blochmann, p. 503.)

(*) Ain-i-Akbari (Blochmann, p. 622.)

पुत्रकन्याकी ले कर स्वदेगमें निकल पड़े। इतिहास पढ़नेमें मालूम होता है, कि इस समय इन्हें यथेष्ट कष्ट भुगतने पड़े थे।

जो कुछ हो, गयासवेगने टागापन्यकी साथ में स्वदेगका परित्याग किया। इस समय उनको खो पुत्र; गर्भिलो हो। केवल गर्भिलो हो नहीं, प्रसवका समय भी निकट पहुँचा था। किन्तु दुरदृष्टके प्रभावसे गयासवेग पत्नीके प्रसवकाल तक भी देगमें उठर न सके। भ्रातामहम्मद प्रसवा पत्नी और चार पुत्रकन्याकी ले कर (१) उन्हें नि देग छोड़ दिया। कहाँ जायँगे, इसका कुछ निश्चय था नहीं, निःसहाय प्रवृत्तार्थमें यत्किञ्चित् धनरत्न ले कर पूर्वदिशाकी ओर चल दिये। पितृवियोग वर्षमें ही गयासवेगने स्वदेगका त्याग किया था। (२)

क्रमशः गयासवेगने पारस्य छोड़ कर अफगानिस्तानके भीमान्तवर्त्ती कन्दहारकी मरुभूमिमें प्रवेश किया। यहां लकैतोंने उनका मर्षण खोज लिया। विपद्के ऊपर विपद् पड़ जानेसे गयास राहमें बगिकोंसे भोज मांग मांग कर दिन बिताने लगे। इस प्रकार वे धीरे धीरे मरुभूमि पार कर वनप्रान्तमें पहुँचे। इस समय पथथम और दुर्दशाकी दुर्भावनासे पीड़ित हो कर गयासवेगकी पत्नी प्रसववेदनासे व्याकुल हो पड़ी। सहायके सहाय भगवान् हैं, इसलिये उस समय कोई भारो चोट न पहुँची। सुखगरोरसे उभने एक अपूर्व सुन्दरी कन्या प्रसव की। छोटी कन्या भ्रागे चल कर भारतको साम्राज्यो नूरजहाँ हुई।

कन्याकी गोदमें लेनेके साथ ही उन दोनोंको पाँखें छव डबा भाई और उसे ले कर किम प्रकार रास्ता ले करेगे यह सोच कर वे बहुत व्याकुल हो पड़े। सद्यः प्रसूता घनोष्ठहिषी गयासपत्नी यदि कन्याकी गोदमें ले कर राह चलेगी, तो यह निश्चय है या तो उसीको जान जायगी या दुष्भावसे जङ्गलमें वह सुकुमार बच्चा ही माताको गोदमें सदाके लिये सो रहेगी, इस चिन्तासे वे दोनों फटफूट कर रोने लगे। अन्तमें सद्योजात कन्याकी भगवत्स्वरूप पर छोड़ जाना ही उन्हें निश्चि कर

(१) Ain-i-Akbari (Blochmann, p. 510-11)

(२) " " " " p. 604.

क्रिया। हृद्यकीपत्तियों पर मुद्रा कर, हृद्यको पत्तियों के
 कर गयासवेनमे भारतको अधिकतम शाखाको मरमूर्ति
 बिनादे बनबाकमें राह पर छोड़ दिया और पाप छोड़
 पर सवार हो बहावे चल दिए। उन समय बनके विष
 दो छोड़े बच गए थे। मद्योमत मत्तानको हृद्य प्रकार
 छोड़ कर गहास-जगिता परिवर्तन धारामें पञ्चमोपन
 करने के लिये लामोकी पतुनवर्ति को हृद्य। पाप कोसका
 रास्ता ते करके भी न पाया जा, कि मोक्ष और मोक्ष
 गयासवगिता पद्मान हो छोड़के पीठ परसे नीचे गिर
 पड़ी। गयासने देखा—जिसके माथकी रखाके चिह्न
 सद्योमत मिय तबको मो छोड़ पावे हैं, अभी मिय
 निच्छेदने लकीको जान जाने पर है। बाद पकीको होयमें
 सा कर पुनः छोड़ पर बिठा दिया और पाप बच कन्या
 को जाने लसे गये। मियके पाप पङ्क पर गयासने
 देखा, कि एक विषकर सप मियके लपट धुंधा बाड़े
 हुए है। यह देख कर ही गयासके होय लपट गए और
 कुछ देर बाद भयले जोखार करने लगी। जोखार हुन
 कर सप बहुत मुर्तीके मान बूबा। गयासने उठ कन्या
 को गोदमें ले लिया और लडां तक ही पहा बहुत तिरोसे
 परिवारकमें ले निकट पङ्क पर जात विवरण बच
 सुनाया। बाद सब बिडीने मनुमानको बरबाद सेने
 हुए पुनः दामा पारथ कर ही।

इसी समय दीक्षिते भारतपामो एक दुस बचिक, पा
 पङ्क। उद दुसके पञ्चस से मन्त्रिक मसउद। से
 भी छोड़े जाब पा रहे थे। गयासने न पूर मयनेके लिये
 मन्त्रिक मसउदके पास पङ्क थे। मन्त्रिकने गयास-परिवार
 का पारार-व्यवहार और पाकति प्रकृति देय कर कन्या
 परिचय पूछा। गयासने मने मो उनको छुडदयताके
 सुन को कर पाओपान्त मन्त्र बार्ति बच लगाई। मन्त्रिक
 मसउद नब्रजता कन्याके पतुनगीय क्यलानक पर
 मोहित हो लसे अपने लकीके दिखताया। मसउदपकीने
 भी बच रूप देय कर और लामोके मुकने जात विवरण
 हुन कर पानन्दपुत्रके सप सम कन्याके लालन-पाननका
 भार पङ्क बिद्या और कन्याकी बाकीपयमें कन्याको
 माताको ही निहृद्य क्रिया। गयासपकी दृष्ट, पमावनीक

पाचय पा कर जनप्रताये पमिमून हो गई। (1)
 एक मन्त्रिक मसउद और गहासवेन दोनीने मिल
 कर दामा की। दोनीने माई प्रीति हो गई। कया
 मसउदमें गयासके गको मासूम को गया कि मसउदकी
 मारतके सुयनसज्याट, पकवरके यहा लूच बचनेो बनतो
 है। गयास हृद्य मन्त्रिक सुबिधाको धायसे मन्त्रिक मस
 उदके निकट विगिब विनीय, लतत और बाध हो कर
 रहने लगी। १३८६ ई०में (२) मसउद गयासवेनको धाय
 के परिवार समेत भारतको अन्ततम राजधानी साहोर
 पङ्क। बादमाच पकवर लस समय साहोरमें ही थे (३)।
 दोषकासमें से नहीं रहते थे।

एक दिन गयासको बाब से मन्त्रिक मसउद सज्याट के
 दरबारमें उपस्थित हुए। दरबारमें गयासको एक और
 पमावनीक बन्धव मिथा। जाकरवेन पापय ली नामक
 एक उच पदके राजसर्में चारोके माय बनका परिचय
 हुआ। परिचयसे मासूम हुआ कि से दोनी एक ही बंग
 के हैं। हृद्य ज्ञातिको सहायताके सिर्का गयासउदोन,
 मसउद सज्याट-दरबारमें पङ्की तरह परिचित हो गए।
 सज्याटमें उनका विवरण जान कर अपने यहा
 पाचक दिया और कुछ दिन बाद लने लवधारने प्रमथ
 ही कर तीन ही सेनाका मनसबदार बनबा। अपने
 माथके लोरके गयासवेन सिखानी भारतसर्वमें पा कर
 एक प्रकार मनसबदार हुए। एक समय पकवर बाद-
 याके राजलता ४००० बर् बच रहा था।

गयासवेन एक प्रकार सज्याट, पकवरयाहके मन
 सबदारके पह पर पबिहित हो लयय सज्याटके प्रीति
 भाजन हो गए। बाद दोनीमें माई प्रीति भी हो गई।
 कयासउदने पकवरको मासूम हुआ कि सज्याट, हुमायू
 माच लव मरयाहके बिलकित हो कर वारकदेय भात
 गए थे, तब गयासवेनके पिता लबाका मसउद धारीके
 उनको पङ्की पहावता की थी। यह जान कर पकवर

(1) Ala-Akbari (Blochman p. 609) दिखने
 ४५ वा १५० पृ देको।
 (२) दिखने क्त वाग ११० पृ दिकी।
 १ El lok's Mahomedian Historian, Vol VI. p
 397 Dow's Hindustan III, p 25

शाहका हृदय क्षतप्रताप परिपूर्ण हो गया। इस क्षतप्रतापके प्रत्युपकारस्वरूप मस्जिदने तीन भो सनाके मनमवधार गयामकी पहल काबुलकी टीवानोके पद पर, पीछे एकहजारी मनमवधारके पद पर और तब सुकुतात दीवानो (सासारिक व्यापारके अध्यक्ष)के पद पर नियुक्त किया *। क्रमशः गयामकी पत्नीके साथ प्रकवर-या महिषी सलीमकी माता मरियम जमानोकी अत्यन्त घनिष्ठता और मित्रता हो गई। वे प्रायः कन्याकी ले कर बादशाह वेगमके अन्तःपुरमें जाया करती थी (१)। जिस अर्ध सौन्दर्य लनामभूता कन्याके कन्दहारके तस्-द्राग्तमें जन्म लिया था, वह कन्या आज बड़ी हुई और उसका नाम रखा गया मेहेरुन्निसा अर्थात् 'रमणोकुल-दिनमणि'।

गयामके ग धीरे धीरे अपनो उन्नति करने लगे। अपने परिवारके लिए भी उन्होंने अच्छी व्यवस्था कर दी। जिस कन्याके जन्म होनेके बादमे उनकी दुर्दशाका क्रमशः प्रवसान हो गया, गयामने सबसे पहले उसी कन्याकी तालीम करनेके लिए जहां तक हो सका सुव्यवस्था कर दी। उसकी परिचर्याके लिए दिलारानी नामक एक धात्री नियुक्त हुई। (२)

मेहेरुन्निसाने नृत्य, गीत, नाय, चित्रविद्या तथा काव्यमें धीरे धीरे अच्छी श्रुत्पत्ति लाभ कर ली। थोड़े ही दिनोंमें वे कविता और गानरत्ननाम आरदशि.वो हो गई। उनका सुयम चारों ओर फैल गया। सलीमकी माता उन्हें बहुत प्साइती थीं, मेहेरुन्निसा कभी कभी उनकी खुश करनेके लिए नाचती, गाती तथा कविताकी रचना कर उन्हें सुनाती थीं। (३)

एक दिन गयामके गने अपने यहां राष्ट्रके सम्भ्रात लोकोकी निमन्त्रण किया। शाहजादा सलीम भी निमन्त्रित हुए। सलीमका प्रमल नाम था मरग्यद नूर-उदीन, ८७७ हिजरी (१५६६ ई०)की १२वीं रविउन अख्यनको फतेपुर शहरमें जेवमलीम चिस्तीके घरमें जन्म होनेके कारण वे सलीम नामसे प्रसिद्ध हुए। इस समय उनकी चढ़ती छवानी थी। भगवान् सिंहकी कन्या जीधवाइ और बीकानेरके राजा राजसिंहकी कन्याइ साथ उनका विवाह हो चुका था। जो कुछ रो, निमन्त्रणमें सलीम गयामके घर पहुंचे। उल्लव समाप्त हो जाने पर जितने अभ्यागत आए हुए थे, सब चले गए, केवल सलीम रह गए। गयामने उनके निये शराब मंगवाई। उस समय ऐसा नियम था, कि राजा वा राजपुत्रोंकी अभ्यर्थना करनेमें निमन्त्रणकर्ताके परिवारकी रमणियोंकी उनके सामने आना पड़ता था। गयामके गने भी वैसा ही किया। मेहेरुन्निसा और अग्रान्य रमणियोंने भी कर शाहजादाकी मंवेदना की। मेहेरुन्निसाने शराबका बीतन युवराजके हाथमें दिया। सलीम कन्दर्पनाच्छन थे, इधर मेहेरुन्निसा भी रतिविनिन्दिता थीं। ऐसे शुभ अवसरमें एकका मन दूसरेके प्रति आकृष्ट हो गया। पीछे मेहेरुन्निसा को किलकण्ठसे वीणा-विनिन्दिस्वरमें देववालाका हावभाव दिखा कर गाने लगीं। उस मधुर तानसे शाहजादाके हृदयतन्त्रो चीन मठी। मेहेरुन्निसा भी उस समय युवती थीं, विद्यावत् और सहवासके गुणसे लोकचरित भी कुछ कुछ सम्भती थीं। सलीमका भाव देख कर वे समझ गईं, कि युवराज उनके गान पर मोहित हो गए हैं। अब उन्होंने नाचना आरम्भ कर दिया। इस समय सलीमकी ऐसा मालूम होने लगा जानो उनके हाथ पैरके सञ्चालनसे रूपकणा विकीर्ण हो रही है। सलीमका दिसाग चकराने लगा। अपनी मर्शाशको भूलते हुए वे टंक लगा कर मेहेरुन्निसाके प्रत्येक अङ्गप्रत्यङ्गकी गठन और शोभाको देखने लगे। इस समय हठात् वायुके सञ्चालनसे मेहेरुन्निसाका घूँघट फलग हो गया। नृत्य का ताल भङ्ग न हो जाय, इस भयसे वे उसे संभाल न सकीं। लज्जा और भीतिविजडित सञ्चोचपूर्वक युव-

* विश्वकोष जहानगीर शब्द देखो— ६म भाग १५५ पृ०।
Ain-i Akbari (Blochmann, p. 509)

(१) Dowla Hindostan, III, p. 24

(२) Ain-i-Akbari, Blochmann, p. 510

Waki-at-I-Jahangiri (Ellis's History of India vol. VI p. 294)

(३) विश्वकोष ६म भाग १५७ पृ०।
Ain-i-Akbari (Blochmann, p. 524)

राजकी सुपुत्रां पीर मरुके विवे ताव... कर मीरु
 विवाहे चपला गिर नीचे कर निवा। इम... दय... नी,
 कम बडाचवे सनीमके इदमने पनुपुमको व्यासा प्रक
 पठो। इ... पनम हो जानिका बहाना कर मीरु
 विधाने माना न द कर दिया। यन्म मी, अपने सरकी
 चले गए। युवके बाद लग तक... वहाँ बैठे रहे, तब
 तक उनके मुखचे एक भी बात न निकली। (१)

तदनन्तर दोनोके मनमें एक दुश्चिन्ने प्रति, पनुपुम
 बहने लगा। मनीस मीरुबहिषाको पानके लिए निताम
 उम्ह... पीर यत्र परायच हुए। यह बात... पीर पीर
 पिताम्हाताके कानमें पड़ो। बादमात्र पकवरुनी सुवर्ने इध
 परिमादको जरा भी पसन्द न किया। स्त्रीके उस
 समय शिवा नियम था, कि जब किसी राजकम... चारीकी
 अपनी कन्याका विवाह करना होत... था, तब उसे राजा
 को पनुमति लेना पड़तो हो। गयानके यम भी इका
 कतु नामक तुल्य... जातीय पत्नीकुलीके म नामक एक
 सुदय सुवतिष्ठतके शाह को दो को शिनाके मनचन्द्रार
 के, विवाहसम्बन्ध... किए करके सम्वा... को पनुमति ले
 को हो। जिने एक बार कन्यादान देनेकी पनुमति दी
 जा चुकी है, उसे जब पुनः पनुरोधके सम्बन्ध करना
 बादमात्रने पच्छा लगे समझ, बलि... जिसे प्रत्यानित
 पात्रके साथ पत्नीका प्रोप विवाह हो जाय उसके लिए
 दीवान मया... के पनुरोध किया। उन्होंने समझा था,
 कि इसी... पात्र व्यापी काम पर यकोम मीरुबहिषाको
 पाया पसन्द हो छोड़... देगी किन्तु न... न हुआ।
 विवाहकी पक्षी बातचीत हो जाने पर भी मनीसने एक
 दिन पिताके सामने अपना मन्त्र... प्रकट किया। यह
 सुनते हो बादमात्र ध्यान... हुआ जो गए पीर सखीमको
 तिरस्कार करते हुए सामनेके निवृत्तवा दिया।- इस
 प्रकार तिरस्कार हो कर कन्याके सखीमके चेहरे पर
 चर्दो जा गई। उसो दिनसे उन्होंने प्रभाव... के मीरु
 विधाने पानेकी चेष्टा छोड़ दी (२)।

पत्नी कुलीके प्रत्यानितके प्रकट उप... के मी
 पर भी इसे पक्षी पक्षी पार... का धुल्ल... कोदार
 करना पड़ा था। ये सखावीय गीत... इय इस्मारकके
 'सकरी' (मोहन... चारक) से। इस्मारककी शयु
 होने पर पत्नीकुलीके... के भारतवर्षको चले
 पाए। मुसलामने इनके साथ प्र... शिनाप्रति मित्रा
 पनदरकोम खानखानाका परिचय हो गया। उन्होंने
 इनके शिना... के प्रक... कर दिया। खानखाना कम
 समय ठका वीतनेको जा रहे थे। पत्नीकुली भी उनके
 साथ हो गये। सुनने पत्नीकुलीके अपना विधिय वे मुझ
 दिखा कर सुख्याति प्राप्त की। खानखाना... डिअरो
 (पुष्करके राज... के इति...)-में पियुको अंत कर
 कर दरबार... तब उन्होंने... को कुलीके प्रत्यानित
 का शास्त्रके साथ परिचय... कर दिया। उम्राटने खान
 खानाके सु... के प्र... कर इध नकोम बुनाको साथ कु...
 कतु सुनी, तब... के उम्ह... दो सो शिनाके मनचन्द्रारके
 पर... पर निवृत्त किया। जेके पत्नीकुली कुमार सखीमके
 साथ शास्त्रातपके विषय सुनने भेजे गए; इस समय भी
 उन्होंने अपनी बहादुरी दिखा कर... पच्छो नाम कमा
 लिया था (१)। पक्षेकर बादमात्रने इस... के गीत हो
 कर... मीरु... की उपाधि दी (२)।

इसी... सखीम पीर मीरुबहिषाके पात्र पूर्व...
 बहना... रही थीं। यह... के पक्षेकरने दीवान
 गवांसकेको... के 'मन्त्र... के' साथ कन्याका विवाह
 करनेकी... का। बादमात्रके पनुरोधके उन्होंने गाय
 मीरुबहिषा व्यापी गई (१)। इ... के... के पक्षेकर

(1) Ain-i Akbari (Blochmann p. 524)
 (2) Ikbal-nama-i Jahangiri (Eliot Vol VI p. 402.)
 किन्तु पक्षेकरनाममें पक्षी, मन्त्र (Eliot Vol. VI p. 404)
 किया है कि 'पक्षेकरनाम'की उपाधि महामुनीके ही गई थी।
 (a) Ain i Akbari (Blochmann, p. 524)

काहेन-इ लखरुने किया है, कि महामुनीके समय हो
 कर इन्ने प्रक... के, पर... पर निवृत्त किया का किन्तु 'उप...
 महामुनी' नामक महामुनीके सम्बन्धित मोहनचन्द्रके
 इका पीर... के नहीं है। काहेन इ लखरुनेके नाम पीर अर
 नामके इसकाही इति... के विधानमें किया है, कि यह

(1) Dow's Hindustan III p. 24-25. तिरस्कारके
 बहादुरी उम्ह... किया है, कि उन्होंने बादमात्रने शान्तिपत्र
 पत्र मीरुबहिषाको एक दिन इम्ह... रोजा था। यह नाम।
 (2) Dow's Hindustan Vol. III p. 26.

दिन दोनों मिल कर शिकार खेलनेके लिये किमा जङ्गलमें गए। शिकारियोंको आम पासके ग्रामवासियोंसे खबर लगी कि असुक जङ्गलमें एक बड़ा भारी बाघ है जो उनके सब शिकारको हमेशा मारा करता है। जहांगीर दलबलके साथ वहाँ पहुँच गए। बाघ चारों ओरमें घेर कर बोचमें लाया गया। सम्राट्ने हँसोके बहानेमें अपने अनुचरोंको कहा, 'हमारे इतने महाबोर अनुचरोंसे जो अकेला व्याघ्र पर आक्रमण कर सके, वह आगे बढ़े।' यह सुन कर सबके सब एक दूसरेका मुँह देख निचेष्ट हो रहे। बहुतेोंने शेरअफगानकी ओर भी दृष्टि डाली थी। शेरअफगान उस दृष्टिपातका मर्म समझ न सके। अन्तमें तीन अमितमाहमो उमराव हाथमें तलवार लिए तैयार हो गए। इन्हे देख कर शेरअफगान के अभिमान परधक्का पहुँचा। एक तो वे व्याघ्रशिकारमें पहिलेमें ही प्रसिद्ध थे, दूसरे उनके रहते तीन प्रतिद्वन्दी खड़े हो गए। यह देख कर वे क्षणकाल भी ठहर न सके और बोले, "एक जंगली पशुका शिकार करनेमें अस्त्रशस्त्र लेनेका मैं कोई प्रयोजन नहीं समझता। जगदीश्वरने पशुको जिस तरह दंष्ट्रानखायुध दिये हैं मनुष्यको भी उसी तरह हस्तपदादि दिये हैं।" इस पर अमीरोंने कहा, "बाघकी अपेक्षा मनुष्य कमजोर है। सुतरां बिना अस्त्रकी सहायता लिए उसे जय करना असम्भव है।" इस पर शेरअफगान बोले, "आप लोगीकी जो भ्रम है, उसे मैं अभी तुरन्त दिखाता देता हूँ।" इतना कह कर वे अस्त्रचर्मका त्याग करते हुए खाली हाथसे बाघ पर टूट पड़े। जहांगीरका हृदय नाचने लगा, किन्तु दिवावटो तोर पर उन्होंने शेरअफगानको इस दुःसाहसिक कार्यमें जानेसे निषेध किया पर शेरअफगानने एक भी न सुनी और वे भगवान्का नाम स्मरण करते हुए बाघको ओर चल पड़े। जितने मनुष्य वहाँ उपस्थित थे, वे उनके साहस पर प्रशंसा करेंगे वा मुखता पर मित्दा करेंगे, उस ओर शेरने कुछ भी ध्यान न दिया। बाघके साथ शेरअफगानका युद्ध हुआ। बहुत काल लड़ते रहने बाद सर्वशरीर क्षतविक्षत हो कर शेरअफगान भगवान्की कृपासे युद्धमें विजयी हुए। उनके हाथसे बाघ मारा गया।

चारों ओर जयध्वनि होने लगी। सम्राट् भोतरमें तो बहुत व्यथित हुए, पर बाघमें उनको प्रशंसा करते हुए उन्हें यथेष्ट पुरस्कार दिया। पीछे चत शेरसे शेर पालकी पर बैठे राजदरवारमें अपने द्वारे पर जा रहे थे, उस समय सम्राट्ने उन्हें राहमें मार डालनेके उद्देश्यमें महाबतको गलोंमें एक मतवाला हाथी रखनेका गुप्त आदेश दिया। शेरअफगान राहमें मत्त हाथी देख कर जरा भी न डरे और शिविका ने जानीकी कहा। हाथी सूँडमें आग लिये रास्ते पर खड़ा हो गया। महाराजोग स्यु उपस्थित देख पालकीको फेंक कर जिधर तिधर भाग गये। शेरअफगानको इस समय भारी विपद्की आगड़ा हुई और सर्वाङ्गमें वेदना रहते भी वे पालकीमेंसे बाहर निकल पड़े। बाद अपना निव्य सन्नी छोटी तलवार द्वारा हाथोको सूँडमें उन्होंने भीमबलसे ऐसा आघात किया कि उसी समय सूँड दो खंड हो कर जमीन पर गिर पड़ी। हाथी चिंघाड़ सारता हुआ भाग चला और कुछ दूर जा कर मर गया।

यह देखनेकी सम्राट्को बड़ी उत्कण्ठा थी। वे प्रासादके एक भरोखेसे शेरअफगानका यह ध्वंस व्यापार देख रहे थे। वसो हालतमें भी जब उन्होंने देखा कि शेरअफगानने ऐसे विशाल मत्त हाथीको मार गिराया, तब वे बहुत सज्जित हो काठको मूर्ति से जहाँके तहाँ खड़े रह गए। इधर शेरअफगान इस कामसे और भी उत्फुल्ल हो कर अमन्दिग्धचित्तसे सम्राट्की यह सम्वाद कहने चले गए। सम्राट्ने सुषुसे अजस्र प्रशंसा करके उन्हें विदा किया। शेरअफगान पीछे वहमानकी लौट आए। छः मास तक और भी उत्पात न हुआ। पीछे कुतुबउद्दीन् सूवेदार हो कर बङ्गालमें आए। चाहे सम्राट्के गुप्त आदेशसे हो, चाहे आप सम्राट्का प्रियकायसाधन करके और भी प्रियपात्र होनेके लिये हो उन्होंने शेरअफगानकी हत्याके लिये ४० डकैतोंको नियुक्त किया। शेरअफगानको जब यह गुप्त रहस्य मालूम हो गया, तब वे हमेशा दरवाजा बन्द किए रहने लगे। एक दिन रातको द्वारपालकी असावधानीसे दरवाजा बन्द नहीं किया गया, डकैतोंकी गृहप्रवेशमें अच्छा मौका हाथ लगा। शयनगृहमें वे

मर्षे श करके निद्रिताबख्शानि मौर पफगानको मारनेके सिधे उद्यम हुए। ठगके मर्षामेरे एक ब्रह्मा बोला, "निद्रितको मर्ष करनेके सिधे ३० थावात करनेका क्या प्रयोजन। मातृपोषित बदनहार करी, एकद्वे जो काम बल ब्राह्मण।" इस कहीवक्यमर्षे मौर पफगान भाग छठे घोर बातकी बातमें प्यागमनेसे अपने तबनार निबाह कर बोले, 'जो घोर है, यह हुए कर सी इतना कह कर वे बरके कीनेमें कहे जो गए घोर कहीनेके पांखमक्या प्रतिरोध करने लगे। १८१२ उचैत तो पाइत जो कर बन्धत हो गए मौर लसी कमर डेर रहे। जिस हडकी बातके जनकी हीट टूटी हो, यह भागा नहीं, बल्कि लघो जपक सुपचाय खड़ा रहा। मौर पफगानने लगे पुरखार दे कर कहा 'जाने, यह सम्वाद चारो थीर खेका दो। इस समय के लूँदारके शाबजाने मजहमें से घोर इस घटनाके बाद जो कईमानकी लगे थाए। पोहे कुतुब लहीन पखोनक कर्मचारिवाकी कावांनकी देवरेक करनेके कहानि कईमान पहुँचे। मौर पफगानने लनका सागत बिबा। पोहे कुतुब-लहीनका लूँदर बमल कर मौरने लन पर पाख मर कर कहे 'यमपुर मंत्र लिया। पोहे कुतुबके पलु चोने लन पर हमला किया। काओली घोर पम पख तोरका लखन मर कर भी वे चोहे परले लतरे घोर मर्षकी घोर सु क बिए खड़े हो गए। मर्षके लूँदरमे एक मुझे बून अपने मिर पर काक कर चामि'बके मरबकी तरह शोषय्या पर सो रहे (१)।

मौर पफगानको मरुके बाद मौर उबिला पर कड़ा पहरा बैठाया गया घोर बह दिखीकी भेज दी गई। कहा पड़ ब कर ल' भी कुतुब लहीनके मौर जानेके परिचय पर 'बन्दिनोमानने रहनेका हुकम हुआ। पख बरकी मर्षको बिबिया शैमकी सचचरितोमें बं लिखल हुई (२)। किसी किसीका कहना है, कि मौर

उबिलानि कहान् गौरकी मर्षाचारकी मर्षियम प्रमाणके पदां पापय किया (१)।

जिस मौर उबिलानि एक दिन अपने कड़ाघरे हुमार लहोमकी मोहित कर दिया था, मिर जो पानि पख का मारनको पघीमरी बनारं गई थीं वह मौर उबिला पात्र दासादने बुरो निबाहने देखीं का रही हैं, यह देख कर लख मरी पीट पाई। कहाओने ठगके प्रति रिवा लर बबबहार लो जिया, लखका पलट इतिहास नहीं मिखता। सुमसमान इतिहासिकोंका कहना है, कि प्रियपात्र कुतुब-लहीनकी मरु, पर वे पखम मोकाचां हुए थे।

मौर पफगानके घोरस घोर मौर उबिलाके मर्षके एक लया लयक हुई थी जिसका पादला नाम था लाकही बेमम, बिन्दु लैकार्यमें माताके नाम पर लमका मी नाम मौर उबिला रखा गया था। माताके सांख बलिबा भी दिखीपाई थी।

मौर पफगानकी मरुका सम्वाद लख दिखीमें पड़ था तब कहान् गौर पूछे न समाए घोर बोले, 'अब जाना-सुख मराधम मरबमें चिरकान तब सड़ेगा।'

मौर उबिला कुनतानाबबिया शैमके मजहमें रहने लगीं। शैममाकजानि लखको परिचयके सिधे एक लीतदाकी मो गिमुक कर दी। मासादने चानेके बाट सखाट कहान् गौरने मौर उबिलाकी कोई खोज खबर न ली। जिसके बिदे कहींनि पंगीवन लय कोमल घोर बून खारो को पात्र पाख'वर्ति'नो चोने पर भी लखी घोर बं मजर लख मो नहीं लखति। इस पख-हार पर मौर उबिलाको तो पाखय होना ही चाहिये, पखाम्य लोग मो बिस्मित हो पड़े। सम्वादने रिवा लो बिबा, मान म नहीं। सुमसमान इतिहासिकोंने भी इसका कोई लखन नहीं बिबा है। किसी किसीका कहना है कि प्रियपात्र कुतुब-लहीनकी मरु, पर मौर मोकाचां हो लखेने रिवा बिबा था। कहान् गौर व्यक्तिगत विवरणमें किसी कारणका लखे न कर किमल इतना निरा गए है कि "पचने पचने में

(1) Daws Hindostan vol III, p-26-32.

(2) Ain-i-Akbari (Blochmann p. 509 and Waki 191-Jahangiri Elliot, vol. vi. p. 393.)

(1) Ikbalsama-i-Jahangiri (Elliot vi p. 404)

उसे याज्ञ नहीं करता था। सुतरां इसका कारण चिर-अज्ञात रह गया। पीछे इससे भी बढ़ कर मेहेर-उन्निसाकी अवज्ञा की गई थी। उन्हें प्रतिदिन खाने के लिये केवल ॥१॥ पानी मिलने लगे थे।

मेहेर-उन्निसा स्नामिशोक तथा बादशाहके अवज्ञा जनित कष्टसे दिनों दिन क्लम होने लगे। अन्तमें टाढ़स बांध कर जिससे सम्म्राट् की नयन-पश्यवर्तिनी हो सक, उधकी चेष्टा करने लगे। सुलताना रुकिया वेगम-साहवा उनके व्यवहारसे बहुत प्रसन्न हुई। मेहेर-उन्निसाका अलोकसामान्यरूप देख कर वे भी सुगंध हो गई थीं। ऐसी भुवनमोहिनो सुन्दरी ऐसी बुरी अवस्थामें रहेगी, यह उन्हें जरा भी पसन्द न आया। स्वतःप्रवृत्त हो कर उन्होंने सम्म्राट् से अनुरोध किया। बादशाहने विमाताके अनुरोध पर भी कर्णपात न किया।

अब मेहेर-उन्निसा निरागासे दुःखित न हो ऐसा उपाय सोचने लगे जिससे बादशाहका मन इस और पलट आवे। वे दैनिक व्ययके लिये जो कुछ पाती थीं, उससे अपना तथा अपनी परिचारिकाका खर्च चलाना बहुत कठिन था। इसी सूय पर उन्होंने चढ़े और शिल्प कर्ममें विशेष मन दिया। आप वे भव काय अच्छी तरह जानती भी थीं, अब और भी तन मन दे कर असाधारण बुद्धिके प्रभावसे अच्छे फूल, पांड और नक्षत्र निकालने, जवाहरमें बड़िया नक्शाशी उतारने और पुराने गहनोंमें कुछ परिवर्तन कर उन्हें और भी सुदृश्य करने लगीं। ये सब कार्य वे खुद अपने हाथसे करती और अपनी परिचारिकाकी सिखा कर उससे भी कराती थीं। धीरे धीरे द्रव्यादिके प्रसृत हो जाने पर वे परिचारिका द्वारा उन्हें वेगम-महलके नामा स्थानोंमें बचनेके लिये भेज देती थीं। वेगम-साहवा और कन्याएँ बहुत प्राग्रह तथा आदरसे उन नयी नयी विलासकी सामग्रियोंको खरीदती थीं। इस प्रकार थोड़े ही दिनोंमें मेहेर-उन्निसाकी प्रशंसा वेगम-महलमें फैल गई। जब तक विलासनी उनके प्रसृत दो चार द्रव्योंकी अपने घरमें रख न लेती थीं, तब तक वे अपने कमरेकी सुसज्जित नहीं समझती थीं। सुतरां

इसी सुत्रसे मेहेर-उन्निसाको बहुत प्राय होने लगे। बाद वे सुन्दर सुन्दर द्रव्यादि प्रसृत कर दिनोंके समस्त अमीर उमरावोंके अन्त-पुरमें भेजने लगीं। उन स्थानोंमें भी इनका नाम फैल गया। धीरे धीरे दिल्ली से ले कर आगरा तक उनके द्रव्यादिको रपतनी होने लगे। इस प्रकार वे बहुत धनवती हो गईं। उपयुक्त प्रय पा कर मेहेर-उन्निसा ने अपनी परिचारिकाओंको ऐसे पत्र कौमतो तथा कामदार कपड़े दिये कि वे हो बादशाहजादी-सी मानूम पहने लगीं। पीछे अपने घरकी भी उन्हेंने भलोभाति सजा दिया। लेकिन आप अपने व्यवहारमें सफेद मामूली कपड़े के सिवा और कुछ भी काममें न लाती थीं। इस प्रकार चार वर्ष बौत गए। सम्म्राट् के निजअन्तःपुरके प्रत्येक घरसे, दरवागके प्रत्येक अमीर-उमरावके मुखसे, यहां तक कि दिहा और आगरेके सभी सम्भ्रान्त व्यक्तियोंसे मेहेर-उन्निसाको शिल्प-प्रशंसा इतनी दूर तक फैली कि सम्म्राट् जहाँगीरकी भी इसकी खबर लग गई। फिर क्या था, जो जहाँगीर एक दिन मेहेर-उन्निसाका गान सुन कर स्तम्भसे हो गए थे, आज वे उनकी शिल्प-प्रशंसा सुन कर तथा उनके शिल्पकार्यको अपने आँखोंसे देख कर उहीम हो उठे। यहां तक, कि उन्होंने स्वयं किंसी दिन मेहेर-उन्निसाके कारखाने जाने और उनके शिल्पकार्यको देखनेका सङ्कल्प कर लिया। लेकिन यह विषय उन्होंने किमोसे भी न कहा (१)।

१०२० हिलरी (जहाँगीरके राजत्वके छठे वर्ष) के प्रथम दिनमें (२) सम्म्राट् जहाँगीर मेहेर-उन्निसाके कक्षमें उपस्थित हुए। कक्षशोभा और गृहसज्जादिका चमत्कारिल देख कर बादशाह सचमुच विस्मित हो पड़े। उस समय मेहेर-उन्निसा खाट पर केङ्कनीके बस लेटो हुई अपनी परिचारिकाओंके शिल्पकार्यको निगरानी कर रही थीं। वे आप तो सफेद मसखिनका सामान्य कपड़ा पहने हुए थीं, किन्तु बहुमूल्य शोभाभय परिच्छद-परिधारिणी बहुत-सी परिचारिकाएँ घरकी शोभा बढ़ाती हुई मण्डलाकारमें बैठ कर काम कर रही थीं।

(1) Dow's Hindustan vol. III, p. 84.

(2) Iktal-nama-i Jahangiri (Ellot, vol. vi. 403)

मिर्ज़े उमिदशा बादशाहको देख बिस्मयचकितनयनसे घसटतेच विद्वानन परदे उठे घोर कुर्सी दे कर उनका ज्ञानत बिधा। इस समय बादशाह सामान्य सूक्ष्मचक्षु मन्त्रित मिर्ज़े उमिदशाको अनुमनीय मोमा घोर माहुरी देख कर पचाक् हो रहे। यह पन्नाइको घरत गठन, परिमित पाकार घोर मारे गरीरका सामक्य देन बन्धे मासुम पढ़ा मानो कोन्दर्प ही मूर्तिमान् हो कर उनके सामने खड़ा है। चम्पट कुक्ष कान तक टक समाए पचाक् ही उस क्षुरागिनीके देखते रहे। पीछे बाद पर बैठ कर लक्ष्मीने पूछा 'मिर्ज़े-उमिदशा ! ऐसी निमित्त क्या लो ? तुम्हारी परिचारिकाको ने परिच्छन्दे इतनी एवकजा लो ?' मिर्ज़े उमिदशाने उत्तर दिया 'जहाँपनाह ! दादाक कारमेके निधे जिन्हे मैं क्या किया है प्रसुते इच्छानुसार ही लक्ष्मी' अपनी मजाबट करती होती है। सुम्नें जहाँ तक यति है, वहाँ तक मैं रहने लक्ष्मी बनसिन्धी चेष्टा करतो हूँ। मैं पापकी बंदी हूँ, पापके धमिमावास्तुकार मैंने अपना परिच्छन्द मनोनीत कर लिया है।' मिर्ज़े उमिदशाके ऐसे विमोत पदच कुछ खेचक्यक उत्तरके नहानुगेर नितास प्रचक्षु हुए। लक्ष्मी समय लक्ष्मी पूर्वावुपाम पूर्ववत् प्रवक्ष्मियके लक्ष्मीत हुआ। मोठो मोठो जातीने मिर्ज़े उमिदशाको पायापन दे के बसि पाए। दूसरे दिन लक्ष्मीने मिर्ज़े-उमिदशाके साथ अपना विवाह तथा लक्ष्मी पायोजन करसिन्धा प्रकाश पादेय दे दिया (१)।

जहानुशारने निवर्तित विवरधमिं मेहेद्विसा-
के शाह द्वितीय कार प्रथम दमनका कोरे विधेय कारक
नहो दिया है केवल इतना ही सिखा है, "धम्मर्मे मैंने
काकीको बुला म गया घोर लक्ष्मीके विवाह कर दिया।
विवाहके समय मैंने लक्ष्मी 'देनसोहर' (विवाहकाकोन
नरकदक अन्धाको पकर देव योतुष)-अक्षुप ह
मेखन परिमित ८० लाख पगरपो (० करोड़ २०
लाख ह०) घोर एक लक्षी सुकाबा लक्ष्मी (इसमें ४०
सुभा थीं प्रयेकका मूल्य ४० हजार रुपये, सुनरां १४

लाख रुपये) प्रदानकी थी (१)।" १०२० हिजरीके
प्रथम मासको इरी का लक्ष्मी मातेपको सन्ध्या अहान्
गौरके साथ घेर पकरानकी निधवा लक्ष्मी मिर्ज़ेउमिदशा
पियमका दूबरा विवाह हुआ था। मिर्ज़ेउमिदशाकी
उमर उस समय ३४ वर्षको घोर जहानुशीरकी प्रायः
४२ वर्षकी थी (२)।

विवाहके बाद जहानुशीरने नवपत्नीके मिर्ज़ेउमिदशाका
नाम बदल कर "नूरमहल" यर्थात् 'धन्नापुराणोक्त घोर
पीछे लक्ष्मी बदल कर अपने नामानुसार "नूरजहान्"
नाम रखा।

नूरजहानि विवाहान्तरित शम्शाहीका पद प्राप्त किया,
साथ साथ अपने रूप घोर शशामान्य हुकिके प्रसार
ने नहानुगीरके अघर भी अपनी समता घोर प्रमुल
लक्षणा। जहानुशीरके हाथके पिन्धीने हो गए।
मिर्ज़ेउमिदशाके हुकिके प्रभाव पर सुख्य हो कर खड़ा करते
थे, "नूरजहानुसे विवाह कोमिदि पइसि मैंने विवाहका
ययार्थ पक्ष नहीं समझा था। लक्ष्मीके हाथमें राज्यका
घोर राजकोषके कुछ मविमाबिख्यादिबा मार दे कर
मैं निविन्धा हो गया हूँ। सुम्नें यही एक घेर मरान घोर
पाह घेर मांलक्ष्मी सिवा कुछ भी प्रयोजन नहीं है (१)।"
नूरजहानुके विवाहके बाद लक्ष्मीके पिता गयाह
के ग प्रधान मन्त्रीके पद पर नियुक्त हुए घोर ४ हजार
मदसबदार तथा २ हजार पय्यारोहीके पवितापत्र
बने। जहानुगीरके राज्यके इयर्मे वर्ष (१०२४ हिजरी)में
गहासुबेबने घोर भी सम्मानपद प्राप्त किया। लक्ष्मीके दर
दारके बीचमें भी लक्ष्मी सम्मानसुचक उहा नधानिका
हुकुम मिता। ऐसा सम्मान घोर बिधीके भाष्यमें नहीं
बता था। इसके पांच वर्ष बाद नूरजहानुकी माताका
देशान्त हुआ। १०२० हिजरीमें गयासने लक्ष्मीके
परिची सुख दुःखकी नहिनी प्रियतमा लक्ष्मीको जो
दिया। इस समय गयासकी जामाताके नाय काग्रीर

(1) Tuzuk-Jahangiri (Autobiographical me-
moirs of Jahangir by Jor D Pries p. 27)

(2) औरमानके लक्ष्मी गवना की मर्त। (Ain Akbari p.
508 note)

जाना पडा। राहमें भग्नहृदय गयास वीहित हो पडे। इस समय सम्राट और नूरजहान ये दोनों कागरादुर्ग देखने गये थे। गयासकी अन्तिम अवस्थामें उन्हें यह संवाद मिला और फौरन ये दोनों उन्हें देखनेको चल दिये। इस समय गयासकी सुसुप्त अवस्था थी, किसोको वे पहचान नहीं सकते थे। नूरजहान्ने अश्रुपूर्णनयनसे पिताकी शय्याके पास खड़ी हो कर सम्राटको दिग्वाते हुए पूछा, "येकोन है, पहचान सकते है?" गथाए एक कवि थे, उस समय भी उनकी कविताशक्ति नष्ट नहीं हुई थी। उन्होंने कवि शनवारोकी एक कविताकी आह्वति करके कन्याके प्रश्नका उत्तर दिया जिसका भावार्थ था—"यदि अन्त्या भी यहां आ कर खडा हो जाय, तो वह भी ललाटकी विशालता देख कर सम्राटकी उपस्थिति समझ सकेगा।" जहांगोर श्वशुरका तकिया पकड़ कर दो चपटे तक वहां खड़े थे। कुछ समयके बाद ही गयासकी मृत्यु हो गई। पत्नीको मृत्युके ३ मास २० दिन बाद १०३१ हिजरीमें उनकी मृत्यु हुई थी। आगरेके निकट उनकी कब्र बनाई गई। इनका समाधिमन्दिर देखनेमें सुन्दर और लक्ष्मणयोग्य है। गयासकी मृत्यु पर जहानगोर भी शोकासुर हुए थे।

जहानगोर स्वयं कह गए है, कि हजारों विषहृदययुक्त वस्तुको अपेक्षा एकमात्र उनकी माय प्रतीव प्रीतिकर है। गयासके एक भी शत्रु न था, सभी उन्हें चाहते थे। उनमें अगार दीप भी था तो सिर्फ यह कि वे रिश्वत लेते थे (१)।

नूरजहान्ने दिनों दिन सम्राटके ऊपर अपना इतना प्रसन्न जसाया, कि तातार पारस्यसे प्रतिदिन उनके जितने आक्षेप दिहोमें आने लगे, वे सभी अच्छे अच्छे षोहदे पर नियुक्त होते गये। इनके पिता और भाईने तो अकबरके समयसे ही प्रतिपत्ति लाभ की थी। अब वहन के भारताधिपति होने पर उन्होंने और भी अपनी पदो-

क्ति कर ली। यहां तक कि इस समय हाजोकोका नामक एक व्यक्ति राजान्तःपुरके परिचारिका-नियोगके अध्यक्ष थे। नूरजहान्की धात्री दिनारानोने नूरजहान्की कृपासे इस व्यक्तिके ऊपर भी कर्तृत्वलाभ कर "मदरो-अनास"की पदवी प्राप्त की थी। बिना उसको मनाह लिये हाजोकोका किसोको नियुक्त नहीं कर सकते और न किसोको बतन हो दे सकते थे। इस समयोने धर्मार्थ-रूपमें अपनी सभी भूमि मोहराहित करके दान करतो थीं। सम्राट उसमें जरा भी छिड़छाड़ नहीं करते थे (२)।

नूरजहान्के बडे भाईका विवरण पहले ही कहा जा चुका है। द्वितीय भ्राता मिर्जा अबुल हमन आसफ खानकी उपाधि लाभ कर पांचहजारी मनसबदार हुए थे। तृतीय भ्राता इनाहिस खान फतेहजरीकी उपाधि लाभ कर १६१८से १६२३ ई० तक बहालके सुबेदार हुए थे। उनके कनिष्ठाभगिनीपति हाकिम-बेग दरबारमें एक अच्छे उमराव थे।

नूरजहान्के पूर्व स्वामोके औरससे लाइली बेगम नामक जो कन्या उत्पन्न हुई थी, उसके साथ १०३१ हिजरीमें जहानगोरने अपने पञ्चमपुत्र शहरयारका विवाह कर दिया।

नूरजहान्ने धीरे धीरे राज्यके सभी काम अपने हाथमें ले लिए। यहां तक कि उपाधिवितरणके व्यापारमें भी उनकी सम्मतिकी आवश्यकता होती थी। शासन, युद्ध, सन्धि, राजकोष आदि सभी विषयोंमें उनको आज्ञा ली जाती थी। केवल अपने नाम पर "खुतबा-पाठ"के सिवा और सभी विषयोंमें उन्होंने सम्राटका अधिकार निजस्व कर लिया था। राज्यके सभी कागज पत्रोंमें तथा दस्तौल दस्तावेज आदिमें सम्राटके नामके बाद ही उनका भी नाम लिखा रहता था। स्त्रियोंको जो सब जमीन दान की जाती थी, उस दानपत्रमें केवल नूरजहान्का मोहर अङ्कित रहता था। राज्यकी सुदामें भी उनका नाम और इस प्रकारकी

(१) Afo-i-Akbari (Blochmann, p. 409 10) and Autobiographical memoirs of Jahangir, p. 25. Wakiat-i-Jahangiri (Elliot, Vol. VI. p. 383)में लिखा है, कि इनकी मृत्यु १०३० हिजरी, १० जूनको हुई।

(२) Wakiat-i-Jahangiri (Elliot, Vol. VI. p. 398 and Afo-i-Akbari (Blochmann, p. 570.)

बहिता मुद्रित होती थी,—“सम्बन्ध के आदेशों के बन्ध-
मुद्रा के बन्ध पर रानी नूरजहाँ का नाम चिह्नित करने के
बन्धों को ज्योति सी गुणो बड़ गई है।” नूरजहाँ ने
इतनी समता पाई थी जहाँ, सिखन कभी समता चप-
कानहार न किया। जहाँ ने जो पिछ-भन्धु का भागीय
बन्धनों को प्रधान कर्म पर निबुद्ध किया था, इससे जिये
जि-ने ऐतिहासिकने उनसे प्रति होवारोपक नहीं किया।
जबका कारण बड़ था, कि जहाँ ने सब कर्म-कारियों को
मानकें बगैर मृत कर रखा था। वे होम मो कभी राक्ष-
का पण्डित करना नहीं चाहते थे। उनका सब जि-ने को
साथ सद्व्यवहार था। वे मिष्टान्तन पौर पुष्टिमन करते
थे, पत- कोरे उनसे छान नहीं रखते थे। वे सब मनुष्य
अपने अपने लक्ष अवाचनमें निगुण थे, इस कारण कोरे
उन्हें रानी का भागीय बन्धन कर बिदेहदृष्टि नहीं
देखते थे। उनको पदोपति आलोचनाके कारण नहीं
होती जो बलिहृतकारिताके कारण। यही कारण है
कि ऐतिहासिकनच नूरजहाँ कोरे दोष बतना न
सके और वे मो पशुगततासन्धे होयते सुख हो गई।

नूरजहाँ पाम दवावतो थी। जब कभी उन्हें
अनायास बालिकाओं को खबर लग जाती तब वे उनके
प्रतिपादनको व्यनका और बिबाहादि करा दिया करते
थीं। इस प्रकार उनको दुपार्ये पांच हीरे पबिब
बाहिकाओं का बहार हुआ था।

इस प्रकार समता प्राप्त कर उनके सद्व्यवहारके साथ
हाथ नूरजहाँ अहान, सौरमी मद्यपानासक्ति घटानेको
कोमिय करने लगी। १०११ हिजरीके मरतुआसमें जहाँ
गोरकी खासदोबको बोसारी हुई। उस समय वे
कामोरीमें से पौर अक बोड़ा सा बूब पीवा करते थे।
बहुत-सी बिबिडा को गई, पर एक लुब भी पच्छा न
निबका। मद्यपानके से कुछ पारोवता अनुमन कर
रखते थे इस कारण अन्तमें लसीकी मात्रा बढ़ा
हो गई। वे दिनको भी मरार पीने लगी। नूरजहाँ ने
इसका लुबक पीब कर बहुत पानाकोदे इसको मात्रा
बटा दो और शिवा करके स्वामीको पारोव्य बना दिया।
इसी समयमें अहान्गीरके मद्यपानका परिधाब लुब कम
हो गया (१)।

नूरजहाँ केबच बुद्धिमती रमणो थी मो नहीं, वे
बीर्यामालिनी भी थीं। इनके प्रथम पामो मर पञ्चमान्
ने प्याबको मार करको साहज दिखसाया था, ये भी
बैसा ही साहस रखती थी। १०२८ हिजरीमें मद्यु राबि
निबट बाबने बड़ा बपबब मयाया। अहान्-सौरको जब
इसको खबर लगी, तब लन्देने ब्रिटिशन मर कर बाब-
को चारों ओरके मर सेनेका ब्रुकुम दिया। मानको न र
अहान्, भी मद्युचरोके साथ पडु हो। अहान्-सौरके नहीं
जानेका कारण बड़ था कि लन्देने प्रतिष्ठा को को जि ने
जि-ने प्राबोका बच नहीं करेगी, इस कारण लन्देने नूर-
अहान् को आने तथा मोको चकानेका आदेश दे दिया।
बाबकी मन्थने जादी कर रज न सका। पत- होदेके
मीतरके निगाना ठीक करना बहुत कठिन-सा हो गया।
उस समय केषव मिर्जा अहम नामक एक पञ्चमर्गलर
मिहारी उपबिबत था। उसने तीन बार निगाना किया,
सिखन एक बार भी सफल न हुआ। अन्तमें नूरजहाँ
ने उस पञ्जिर जाबीको पीठ परसे पञ्च-मद्याके बन्ध
एक ऐसी मोको चलाई कि बाब बित हो रहा (१)।

दरबारमें किसी कविने इस बतनाया उपकल्प करके
कवितामें कहा था, “वद्यपि नूरजहाँ ली थी तो
भो के मर पञ्चमानकी पत्नी ही तो हो।” “कानि
मर पञ्चमान” अर्थात् मर पञ्चमानकी पत्नी का नाम-
नामिनी रमणो यह बिबरण अहान गोर पर्य निध
मर थी।

महरारारके नूरजहाँके लमारे होने पर तथा नूर
अहान् का प्रभाव देव कर अहान गोरके अन्धान्य मुबनय
कर गए। सम्बन्ध के पुनीमेंसे बुबराज सुरैम (जिसे साह
अहान्) बुद्धिमान्, बीर, कर्म-कुशल तथा पितामह
अकबरेके मिदपात थे। अजमेरके मूर्-दक्षिण राममिरके

(1) Wakhan-Jahangiri, Elliot Vol. VI, p. 287)

जावेद इ-कबरी (१२३३ ए०) में बार बाबको पना क्विनी
है किनेमें से बाबको एक एक गोलीके और दोर दोषी हो
के गोकिनेके बरबहान् में मारा था। पिबारमें इन्हे पना
मैम था, इन कारण इव करके सम्बन्धके माडा के ही
केटी थी।

(1) Wakhan-Jahangiri (Elliot Vol. VI, p. 281.)

निकट राजी नूरजहाँकी प्रति विस्त्रुत जागोर थी। १०३१ हिजरीके शेषमें जहान्गोरके राजत्वके सत्सर्व्वे वर्षके आरम्भमें यह सम्वाद पहुँचा कि युवराज खुर्रमने नूरजहाँ, और राजकुमार शहरशारकी जागीरका अधिकार्य अधिकार कर लिया है। उस समय शहरशारके कर्मचारी डोलपुरके फोजदार अमरफ-उम-मुस्तके साथ लड़ रहे थे, जिसमें दोनों पक्षको बहुत-सी सेनाएँ इताहत हो चुकी थीं। यह खबर जब जहान्गोरकी लगी, तब उन्होंने शाहजहाँके अधीनस्थ सैन्यदल दिल्ली भेजे तथा उन्हें अपनी जागीरमें सन्तुष्ट रह कर कर्त्तव्यपथसे विचलित नहीं होनेके लिए एक अनुशासन पत्र उनके पास भेजा। शाहजहाँने पिताकी आज्ञाका पालन किया। प्रधान सेनापति मिर्जा अबदुल-रहोम खानखानाने शाहजहाँका सदा दिया। अन्तमें २५ हजार अश्वारोही ले कर आसफ खाँ (नूरजहाँका द्वितीय भ्राता) ने बिलुचपुरके निकट विद्रोहियोंके ऊपर आंग्रिक जगलाम किया। पीछे १०३२ हिजरीमें तुतामद-उद्दौला अलकाहिर महब्वत खाँ कुमार परवीजके अधीन रह कर ४० हजार अश्वारोहियोंको साथ ले विद्रोहदमनमें अग्रसर हुए। अजमेरके समीप महब्वत खाँ विद्रोहियोंके प्रभावको बहुत कुछ खर्व कर डाला। पीछे खानखानाने जब शाहजहाँका साथ छोड़ दिया, तब वे उड़ीसा भाग गए। इस घटनासे नूरजहाँ, शाहजहाँके ऊपर बहुत विगड़ीं और भविष्यमें अपने जमाई शहरशारकी ही दिल्लीके सिंहासन पर विठानेका उन्हें न सद्बुद्ध कर लिया, किन्तु शाहजहाँका अनिष्ट करनेको उनकी जरा भी इच्छा न थी। कारण महब्वत खाँ जब उनके विरुद्ध रणकी और अग्रसर हुए, तब नूरजहाँने ही एक गुप्त पत्र लिख कर उन्हें गुजरातको राहसे भाग जानेकी सलाह दी थी (१)।

जहान्गोरके राजत्वके इकीसवें वर्षमें १०३५ हिजरीको महब्वत खाँ बङ्गालके दार हुए। सुबेदार हो कर उन्होंने बङ्गालसे हथियारोंको प्रति वर्ष पकड़ कर भेजा जाता था) भेजना बन्द कर दिया। अरबवासी

दोस्तगायर नामक एक कर्मचारी द्वारा हाथो भेजने तथा महब्वत खाँको दरबारमें उपस्थित होनेके लिए सम्नाटने कहना भेजा। महब्वतने हाथो तो भेज दिया लेकिन आप न गये। इस समय उन्हें खबर लगी कि सम्नाटकी सलाह लिये बिना उन्होंने जो अपनी कर्त्तव्य का विधाए किया है, इस कारण सम्नाटने उनके जमाईको पकड़ लानेका हुकुम फिदाई खाँको दे दिया है। इस समय सम्नाट दमनकके साथ काबुलकी ओर जा रहे थे। देशांत (बितम्ता) नदीके किनारे उनको हाथनौ डालो गई थी। नवाब आसफ खाँ अपनी सारी सेनाको ले कर नदी पार हो चुके थे। महब्वत खाँने मित्र मान, सम्मम और जीवनसमृद्धकी विपटुमें समझ कर २०० राजपूत सेना साथ ले सम्नाटकी हाथनौमें प्रवेश किया। एकवाचनामाके प्रत्यकार सुतामद खाँ इस समय सम्नाटकी वकली और मीर तुजकके पद पर अधिष्ठित थे, इस कारण वे हमेशा उन्हेंके साथ साथ रजा करते थे। महब्वतने दमनकके साथ हाथनौकी घेर लिया। सेनाने दरवाजेके परदेको चोर फाड़ डाला। द्वाररक्षकने भीतर जा कर सम्नाटको यह खबर दी। सम्नाट तुरत ही बाहर निकल आए और पालकी पर चढ़ कर जहाँ महब्वत खाँ थे, वहाँ पहुँचे। महब्वतने उनसे कहा, नवाब आसफ खाँकी हिंसा और ताच्छिष्यका सहन नहीं करते हुए मैंने जहापनाहको शरण ली। मैं यदि प्राणदण्डके उपयोगो हूँ, तो हुकुम दोजिए, आपके सामने ही दण्ड-भोग करूँ।' इसके बाद योहागण पालकीको चारों ओरसे घेर हुए खड़े हो गए। रागके मारे सम्नाटने दो बार तलवारकी खोंचना चाहा, पर दोनों बार मनसुर-वदकशीने उनका हाथ पकड़ लिया और धैर्य रखने तथा ईश्वर पर निर्भर करनेका अनुरोध किया। पीछे महब्वत खाँने सम्नाटको अपने घोड़े पर सवार होनेकी कहा। लेकिन सम्नाटने वैसा नहीं किया वरन् उन्होंने अपना घोड़ा और पोशाक लानेका हुकुम दिया। घोड़ेके पहुँचते ही वे तुरत सवार हो गए। योही दूर जा कर महब्वतने उन्हें हाथी पर चढ़ा लिया और दोनों बगलमें पहरो बैठे गये। पीछे शिकारका बहाना

करके महम्मद समाद को अपने घर से गए और अपने पुत्रों को समाद के रथोत्सवमें निहत्त किया।

महम्मद को समाद को बन्दी करके से गए, यह रहस्य किसी को मालूम होने न पाया। यहां तक कि राजी मूरखान को भी इसकी खबर न लगी। महम्मदने जब समाद को बंद किया, उस समय उसने मनमें सुझमती मूरखान की कहा करा भी याद न थी। इस प्रकार कई दिन बीत जाने पर जब उन्हें मूरखान का घर लगा, तब उन्होंने समाद को पुनः राजमाघादमें भेज देनेको कल्पना की। बिना अब इतर मूरखान को समझ चुका, तब से अपने भाईके साथ मुसाकात करनेको गई। जब समाद वा कर महम्मद अपने भूल समझ मने और सुविधा रहती भी मूरखान को बन्दी कर न सके यह सोच कर से अपने थोठ पकाने ली। पलमें हुमार महरवारको समाद के साथ बन्दी रहनेके उद्देश्य से से समाद को महरवारके घर ले गए।

इतर मूरखान आदमिनिरसे पड़ने को और अपरि कामकर्मिताके सिधे उनको पक निन्दा की। नवान पापक खा भी बहुत व्यथित हुए। उस समय सबोंने बकाइ करके बड़ खिर किया कि दूसरे दिन महम्मद पर पाकमच और समाद को उधार करना ही कर्णक है। यह खबर और और समाद के खानसे पहुंची। उन्होंने इस खबर पाओजनको रोक देनेके सिधे मुबारिक खाके हाथ पहाट मीना और नदी पार हो कर हुए करनेका निविध किया। दूत यह खबर पहुंचानेके सिधे राजा की र्णुठी से कर कहा गया था, किन्तु पापक खान महम्मदका नुतमोगस समझ कर उस परामर्श को और कर्णमात न किया।

महम्मदको भी इसकी खबर जब गई। नदीके अपर को पुत्र का बंधे लकीने कहा दिया। फिराई खां समादका पुत्र सुननेके साथ ही कई एक पापकी बीरोंको धार (१) कर नदी पार होने लगी। लतसेमे कुछ नदीके किंग और बसकी शीतकतासे मर गए, केवल का बोहा हुमरसे पार हो बने है। इन का सिधे भी फिर पार मनुष्ये हाबसे मारे गए। फिराई अपने निहुं सिता समझ हुनः तैर कर नदीके पार चले पाए। पलमें

पानक खां मूरखानको साथ से साथ न्य हाबी और चोके द्वारा नदी पार कर गए। मूरखानने दूत भेज कर सबोंको उम्माहित किया और कहा, 'पभी इतप्यता करनेसे सब खर्च हो जायंगे। यद्वा, बहापमाइको से कर भाग जायंगे। इसमें जनके पाक जानिबी पायहा भी है।'

नदी पार होनेके समय सात घाठ छो राजपूतसेगने सुयच्छीकोसे कर कबसे मोचने ही उन पर पाकमच किया। मूरखानके हाकोबी दूक पर निपचियोंने तलवार द्वारा बहुत जोरसे महार किया। जब हाबी शौदा, तब से तोर वरदाने लगी। हुमार महरवारकी कन्नाबी चालीने पड़ने एक तीर जुम गया (२)। मर बहानने उस तीरको खींच कर बाहर किंव दिया। चालीका समुचा शरीर खिड़के र न गया। हाबी रामीको अपने पीठ पर लिए राजमाघादको और चले दिया। पार होते समय पापक खां चोके परसे पानोमें गिर पड़े और रिकार पकड़ कर कुछ दूर तक लटक रहे। बोहा जनके बोझसे पानोमें डूब मरा। इसी समय एक खन्दीरो नाविकको जत्र पापक पर पड़ी और बसने उनको जान गया लो। पीछे पापक खां इस प्रकार अपने उद्देश्य और परामर्शको निपक होते देख लयासे मर गये। फिराई खां कतिपय पनुचरीं और समाद, धरतीको से कर नदी पार हुए और धनुषो पर टूट पड़े तथा लकवा व्युच मर करती हुए दलबकके साथ हुमार महरवारके माघादमें कहा समाद, बन्दी से पहुंचे। माघादके पन्धर निपचियो के जो बहुत खरक पन्धरोकी और पदानि बैठे हुए थे, लकी नि फिराईको सुरोमें प्रवेश करनेके रोखा। इस पर फिराई खां पाठक परसे तोरकी बर्षा करने लगी। जिस धरमें समाद, व दो

(१) यह बाहरके इतिहासमें किया है, कि मूरखानों द्वारा महरवारके पानी से बाहर हुने की और बड़ी शीक थी मरीठ होता है। क्योंकि ऐसे धरमें वे ली बाकिपको से कर हुए बहा पानीके साथ हापी नर कवार की यह बहुबलसे बाहर है। जबकी कन्नावा हाव रहना कोई लगी बाठ नहीं थी। (Deew's Hindoostan Vol. III, p. 91.)

घे, उस घरमें भी दो एक तोर जा गिरा। सुबनिस खी नामक एक व्यक्ति सम्राट् के जीवनकी अग्रदूत देख निज शरीर द्वारा सम्राट् को आहूँ दिए खड़ा रचा।

शत्रुओं के तीरने फिदाई खी के कितने अनुचरो की यमपुर भेज दिया; वे स्वयं भी आहत हुए और उनका घोड़ा मृतप्राय हो गया। जोतको आशा न देख फिदाई खी लोट जानीको बाध्य हुए और नदी पार कर रोहतस दुर्गमें जा ठहरे। आसफ खी भी सज्जित और परास्त हो अपने जागोरके अन्तर्गत अटकदुर्गमें भाग गए। महब्वतने जयो हो कर आसफ खीको पतङ्गनेके लिये अपने मङ्गके विहरोज और एक राजपूत सेनापति-की विपुल सेना साथ दे भेज दिया। आसफ खीके सेना-बल कुछ भी न था। अत वे सहजमें पराजित और पुत्र भ्रमित पकड़े गए। महब्वतने फौज पङ्च कर उन्हीं के उनका पक्ष ग्रहण करनेका शपथ खाया। अटकदुर्ग महब्वतके अधीन रचा। सम्राट् कुछ दिन जलालाबादमें रह कर काबुलकी चल दिए। महब्वत भी उनके साथ घे, उनका बन्दित्व उस समय भी पूरा नहीं हुआ था (१)।

आसफ खीके सपुत्र बन्दो हीने पर नूरजहान् लाहौर-से भागी जा रही थी। किन्तु सम्राट् ने उन्हें एक पत्र लिख कर सूचित किया कि महब्वतने उन्हें सम्मान पूर्वक रखा है और महब्वतके साथ जितना गोलमाल था, सब सर मिट गया है। स्वामी कुशलपूर्वक हैं, यह ज्ञापन कर नूरजहान् को चैन पड़ा। महब्वतने भी सम्राट् के पत्रानुयायो सब विवाद मिट जानीकी कथा लिखी और अन्तमें नूरजहान् को सम्राट् के साथ काबुल वा जहा वे चाहें वहाँ जानेंमें बाधा नहीं देंगे, ऐसी खबर दी। अब नूरजहान् ने स्वामीके पास जानेंमें जरा भी विलम्ब न किया। लाहौर छोड़ कर वे उसी समय जहा

सम्राट्, वे यहाँ पङ्च गईं। महब्वतने सेना भेज कर उनकी मद्दतसम्भ्रमसे अभ्यर्थना की।

महब्वतने इस प्रकार नूरजहान् को हस्तगत कर उनकी कार्यवाहियोंको भीर टट्टि रखी और वे शीघ्र हो सम्भक्त गए कि नूरजहान् अपने जामाताकी राजगद्दी पर विठानेकी कोशिशमें हैं। महब्वतने इसकी खबर सम्राट् को दी और कहा "मोता मिलने पर रामो आप-के प्राण तक भी ले सकते हैं। अतएव इस समय नूरजहान् को मार डालना ही उचित है।" इस पर सम्राट् ने उसी समय नूरजहान् के वाघादेग पर हस्ताक्षर करके भेज दिया। महब्वतने यथासमय वह प्रादेश-पत्र नूरजहान् को दिखाया। नूरजहान् ने कहा, "सम्राट् अभी बन्दे हैं। उन्हें स्वाधीनता कर्हा। मैं एक बार उनसे मुलाकात करना चाहती हूँ।" उनको प्रायना स्वीकार की गई। नूरजहान् पर नजर पड़ती ही सम्राट् फूट फूट कर रोने लगे। जिस हाथसे सम्राट् ने वाघादेग लिखा था, उसे अशुजनसे सिक्त किया। सम्राट् ने व्याकुल हो कर महब्वतसे कहा, 'महब्वत! क्या तुम केवल इसे एक स्त्रीकी छोड़ नहीं सकते?' यह कातरोक्ति सुन कर महब्वत भी सुख हो गए और सुँहसे एक बोली भी न निकालती हुए रक्षिगणको जाने कह दिया। नूरजहान् मुक्त हो गईं। इधर महब्वतके इस आचरणसे उनके साथी लोग क्षुब्ध और विरक्त हो गये तथा बोले, 'इस दया पर, इस भूल पर एक दिन तुम्हें ठोकर खाने पड़ेगे। वाघिन जब कभी सोका पायगो तभी उसकी हड्डी चबा डालेगो। भागे चल कर हुआ भी वैसे ही। नूरजहान् के हृदयमें यह अपमान प्रस्तराक्षित रेखाकी तरह बैठ गया था। (२)

बादशाह और वेगम काबुलमें छः मास तक ठहरी थीं। इस समय वे बोच बोचमें शाह इस्माइलसे मुलाकातकी लाया करते थे। महब्वतकी छावनी बादशाही छावनीसे कुछ दूरमें थी और वे कभी कभी बादशाहको देखने आवा करते थे।

नूरजहान् का हृदय पूर्व अपमानसे दिनों दिन धधक

(१) एकबालनामामें नूरजहां कर कहाँ और किस तरह सम्राट् से मिली उसका कोई उल्लेख नहीं है। पर काबुलभ्रमणके समय वे सम्राट् के पास थी, ऐसा लिखा है। सुतरां काबुल प्रवेशके पहले ही वे जलालाबादकी छावनीमें मिली थीं ऐसा अनुमान किया जा सकता है।

रहा था। जिस प्रकार मङ्गलतारा बदका बुझाए। रात दिन वे दूरीको विज्ञान में थे।

एक समय मूरखदान जमिया आसोके साथ रजा करनी थीं थोड़े बहारके लिये नागा परामर्श दितो थीं। बिन्दु सम्राट एक भी परामर्श न सुनते थे। उस समय वे मङ्गलतारे काच मित कर विद्यास दिक्षानेको बिट्टा कर रहे थे। मङ्गलतारी सन्नाहके व्यवहारसे दिनों दिन उस विषयमें निश्चय हो रहे थे। सम्राटको भी यह पक्की तरह भाव न हो गया था। वे उध विद्यासको एक बारको दूरीमूल करनेके लिये मूरखदान के समो परामर्शको निष्पत्त पूर्वक मङ्गलतारे कहने लगे। यहां तक कि मूरखदानने मङ्गलतारे प्राचन्यागकी को सलाह दी जो तथा उनको आठपुत्र वधू (गारैया) को पत्नी और माह नवात्रको बन्धा (मि) भवनर पा कर र्णिकोकोके धार गिरानेको को विचार किया था उसे भी सन्नाहने मङ्गलतारी कह दिया।

मङ्गलतारि विद्यासके विद्वानोंके बहाराव से धन उठावेडाको क्या सुन कर हुआकी वही व पति थे। मूरखदानको इसकी भी खबर नय नहीं थीर चलने में वे हमे बरबाद कर न छोले। वे मङ्गलतारी पत्नीके पक्षग करनेको कोशिश करने लगे। उन्होंने एक बार सम्राटको भी हमको सुनना न दी। मङ्गलतारि राह हो कर बादमाही गिरिमें पा रहे थे, एक दिन उस राह पर उन्होंने कुछ काहुमी बन्दूकधारियोंको शुभ जानने रखा। मङ्गलतारी पर बहुत ज्यों हो गयो, जो कर कुछ दूर पानी बड़े, जो ही दोनो बयनकी प्रशंसिकाकी परधि उन पर मोको बरचने लगे। शोभास्यय मङ्गलतारि प्रीरमें एक भी मोकी न लगी। वे बाहुनेगले गलीको का बन्दूकधारियोंको विमर्शित करते हुए सामान्य पाहत पा कर अपने गिरिमें पहुँचे। काहुलियोंने सन्नाहको पाँच ही घेनाको मार लाका। जोके मूरखदानने मानो एक दिवसके बिलकुल धनमिश्र हो, सम्राटने एक घटनाका कारण पूछा। सम्राट बचतुष इरका कुछ भी हाल नहीं जानते थे, सुतां मेधा ही उत्तर दिया। बाद मङ्गलतारी काहुलियोंके एक प्रदेशको चेर किया। काहुनी भवनीत हो गए। नगरके प्रधान प्रधान मनुष्य

मङ्गलतारी पात बहुत विनीतमायमें उपस्थित हुए। सम्राटने भी उन कोनीको घोरसे मङ्गलतारे चमा मगी। एक घटनाके कुछ नेतायक जब पञ्चदश दिने गए, तब मङ्गलतारी भी समुद्र विषयमें घेरा उठा दिया। उन सब नेतायो को सामान्य दण्ड दे कर सुति मिली। हमके बाद ही मङ्गलतारी वातुनधि जाननी उठा छेनेका बहुम दिया और वे सबके सब बाहोरकी घोर पक्ष दिए (१)।

मूरखदानने जब देखा कि सम्राट, धनकी बात पर धान नहीं देते, तब वे बहुत उद्विग्न हो गई और क्या करना चाहिये उसकी तरकीब सूत्रने लगी। स्वामी परसे उनका विद्यास उठ गया और क्षिप्रके उधार पानेके लिये वे पञ्चदश रुपये तथा सम्राटको भी प्रबोध देनेके लिये उनके साथ सिन्धा परामर्श करने लगीं। सब प्रबुधिये तो मूरखदान इस समय भी शानसे बैठकारा पानेको कोशिशमें लीं। वीतन दे कर वे पनुचरकी सफा घोर घोर बड़ाने लगीं। तमया उनके कोवाचक कोशियार काँ हो बहार मनुष्योंको स पक्ष कर साहोरको घोर पक्षर हुए। उस समय मूरखदानने भी राजपक्षपरिचयके कितनी ही कोरीको सपक्ष कर रखा था। कोशियारने रोहतसके कुछ दूरमें रह कर मूरखदानको सम्राट भेजा। मूरखदानने आसोको निरन्तरपरिदयानके लिये पापपूर्वक पनुचरकिया। सन्नाहने हमे कोकार कर लिया। उन्होंने निज परिचारक बन्धु काँ द्वारा मङ्गलतारी काहला भेजा कि इस दिन दिनक शूचकबावट बन्द रखो जाय कारक मन्नाह वैभवमें भग्गरोकोका परिदयान करैने। पहले मङ्गलतारी राजो न हुए पर जोके खाजा अनुभवसने तथा द्वारा उन्हें राखी कराया। राजमासादे से कर नदी के बिनारे तक दोना बयन पानेके प्रशारोही एक शोधमें पहुँचे किये गए। उधर नदीके दूसरे बिनारे कोशियार काँको भेयदस रोहतत दुर्ग तक पसेवा हुआ था। बादमाह घोर वैभव जोके पर उत्तर हुई। उनके कुछ

दूर जाने पर सैन्यदल घोर घोर सम्राट् के पीछे पीछे आने लगे। अन्तमें बहुत तेजीसे वे सबकी सब वाद शाह और वेगमके साथ नदी पार कर रोहतस दुर्गमें पहुँचे। इस प्रकार रानी नूरजहाँके बुद्धिबलसे सम्राट् ने चिरवन्दित्रमे उधार पाया। अब स्वामीकी उधार कर वे अपने भाई और भतीजेके उधारकी चेष्टा करने लगीं। उन्होंने महब्वन खाँको एक आदेशगत स्वामीसे लिखवा कर भेजवा दिया। उस पत्रमें महब्वन खाँको उद्देश्यमें शाहजहाँके विरुद्ध युद्धयात्रा करने, आसफ खाँ और उनके पुत्र आवू तानिव (पीछे शाहस्ता खाँ)-को दरबारमें भेज देने, शाहजादा दानियालके दोनों पुत्रोंको और सुबलिस खाँके पुत्र नस्रतो खाँको भेज देनेका आदेश था। पत्रमें यह भी लिखा था, कि उनके आदेशका उल्लंघन करनेसे उनके विरुद्ध सेना भेजी जायगी। महब्वनने देखा, कि इस समय बिना किसी छिड़कावके सबकी भेज देना हो अच्छा है, नहीं तो आफत सेरे हीरेभिर पड़ेगे। यह मोच कर उन्होंने सब किसीको भेज दिया सिवा आसफखाँके, जिसका कारण लिख भेजा कि वे उद्देश्य जा रहे हैं, इस समय वे आसफ खाँको छोड़ नहीं सकते। क्योंकि नूरजहाँ वेगमसे वे पटपटमें प्रतिगोधको आगवा कर रहे हैं। उद्देश्य और जाननेसे सम्भव है कि स्वाधीनता-प्राप्त आसफ खाँ उनके विरुद्ध अप्रसन्न करे। अतएव लाहोर पार होनेके बाद वे छोड़ दिये जायेंगे। नूरजहाँ यह सम्राट् पा कर आगववूना हो उठीं। उन्होंने पुनः महब्वनको लिख भेजा कि वे फोरन आसफको छोड़ दें अन्यथा उनके पक्षमें अच्छा नहीं होगा। इस पर महब्वनने बिना किसी ना हाँके आसफको भेज दिया, लेकिन उनके पुत्रकी कुछ समय तक रोक रखी।

डाह साहबके इतिहासमें सम्राट् के उधारका वर्णन और प्रकारसे लिखा है। महब्वनकी राज्य पानेकी जरा भी इच्छा न थी। पट्ट और मर्यादासे किसी प्रकारकी हानि न पहुँचेगौ इस प्रकार सम्राट्से प्रतिज्ञा करा कर उन्होंने उन परसे कठोरता घटा-दी, पहचर्षीकी मन्थ्याको कम कर दिया तथा जो सब राजकीय समता अपने हाथमें ले ली थी उसे भी सम्राट्को प्रत्यर्पण किया। इस

सद्व्यवहार पर भी नूरजहाँ खुप चाप बैठो न रहीं, वरन् समता पानेसे उन्हें अब और भी सुयोग मिल गया। उन्होंने यह कहना भेजा कि, "जो भयानक दुर्दान्त समता शाही और कुटिल मनुष्य सम्राट्को कैद कर सकता है, उसे यदि बिना दण्ड दिए ही छोड़ दें" अथवा मोखिर आनुगत्यसे बगीभूत हो कर उसका पादर करे" ता फिर प्रजा क्या सम्राट्को प्रकृत सम्राट् मानेगी?" यह कह कर वेगमने जनताके सामने उसे प्राणदण्ड देनेके लिये सम्राट्में अनुरोध किया। लेकिन सम्राट्ने वे सा नहीं किया, वरन् इस विषयमें कोई बात उठानेसे मना किया। स्वामीसे इस प्रकार विफलमनीरथ हो नूरजहाँने एक खोजाको सम्राट्, शिविरमें प्रवेश करते वा उससे बाहर निकलते समय महब्वन पर गोली चलानेका हुक्म दिया। जहाँगीरकी धीही इस आदेशको खबर लगी, ली ही उन्होंने महब्वनको सावधान होनेके लिये कहना भेजा। महब्वन सावधान हो गए लेकिन मारे जानेका डर हरवक्त बना हुआ था। अन्तमें सम्राट्को बात पर विश्वास करते हुए वे सुरा कर उद्देश्यको चन दिये।

जब नूरजहाँको मालम हुआ कि महब्वन जान ले कर फर्ही भाग गया, तब उन्हें खोजने और पकड़ लानेके लिये उन्होंने चारों तरफके शासनकर्त्ताओंके पास फरमान भेज दिये। टिटोरा भी पिटवा दिया गया कि महब्वन खाँ वागी हो गया है, जो उसको पकड़ लावेगा उसे यद्ये पारितोषिक मिलेगा।

आसफ खाँने अपने वजनके ऐसे कठोर आदेशको अच्छा न समझा। वे महब्वनकी गुणावत्तो जानते थे और स्वयं भी उनके सहवहारके बगीभूत थे।

महब्वन नूरजहाँके आदेशसे ताड़ित कुत्तोंकी तरह नाना स्थानोंमें सुरा कर घूमने लगे। अन्तमें एक दिन हज्रतेशमें अमम साहस पर निर्भर करते हुए घोड़े पर सवार हुए और उद्देश्य दो सौ कोसका रास्ता तै कर कर्णाल नामक स्थानमें आसफ खाँके शिविरमें पहुँचे। रातके ८ बजे जब वे द्वार पर जा खड़े हुए, तब एक खोजाने उसे पहचान आसफको खबर दी। आसफने महब्वनके मलिन वेश और दुःदशा देख कर

उत्तम पाणिपुत्र विद्या धोर दोर्नो रोनि ली। वहुत
 बातवोत रोनिसे बाद मरम्भतने कहा, "समाट्की
 खेतामि हो उतका सर्वनाय लिबा। नूरकाई खेयो
 पकतय है धोर लोके निमे अब मेरो ऐसी दुट्ट्या हो
 गई है, तब एक दुनरेकी समाट्, बजाज मा, घिसी मैने
 प्रतिज्ञा कर मो है। कुमार परमोत्र धार्मिक बन्धु होने
 पर मो दुर्बलमत्ता धोर निर्बोध है। किन्तु शाहजहाँ
 सर्वाश्रम उपबुद्ध है। जसे मैने सुधमें पदापठ किया है।
 पनएव यदि पाप हमारो मजावता करे, तो हम पाप-
 के आमाताको राज्य दे सकती हैं।' पासक प्रयापित
 बन्धु पा कर बिरिमत धोर भीत हुए तथा संघ्य धोर
 पय दे कर सहायता पनु जानेको तैयार हो गए।
 बाद मरम्भन बहाबि चम दिसे।

तदनन्तर दशरथके मोक्षयोगका सम्पाद पहुचा।
 सम्पाटने मरम्भतने सेवे सेनापतिका प्रमाण लच्छेप
 करते हुए धार्येय किया। इसी मोक्षमें पासक धानि
 मरम्भतकी मार्गगाथा पादेय बाहर निवास लिवा।
 मरम्भतने फिरले पूर्व समान धोर पदादि पाय-तथा के
 नेम्बरुके परिनायक हो कर शाहजहाँके निदय सिधि
 गए। (१)

सुसप्तमान पतिवार्तिकीनि लिखा है,—इसी बीच
 समाट्, दसबसके साथ साहोर पहुँचे। पासक छोटे
 बच्चा पहुँचने पर वे पञ्जाबके सुबेदार धोर प्रवान मन्त्री
 के मद पर निहृदक किए गए तथा लके समस्त राजनैतिक
 धोर राजस्व ज्ञाना मन्त्रबाहमादि समापतिद्वयमें काय
 करनेका धार्येय मो दिया गया। इस समय मरम्भत
 बहूदेयसे २२ लाख मुद्रा खय लिय पावे से। बिहारके
 निकट शाहाबाद पहुँचने पर अब समाट्की दसवीं
 बरर लगी, तब लखीमें सेना भेज कर लये होन लिवा।

दसवीं बाद शाहजहाँने उड पदेय होत हुए पारस्य
 धानि तथा बर्हाक पक्षीधर शाह पञ्जाबके सहायता
 भांगिनीका बिचार किया। उडपदेय पहुँचने पर कुमार
 शहरधारेके कमचारी करोक वन सुपुत्रने दुर्गमें गीला
 दिख कर लगे बिलतन पनुबरीको मार डाला। १४

समय १८ वर्षकी अवकाशमें कुमार परमोत्रकी वल्लु
 हुई। पता शाहजहाँ उडकी छोड़ कर नासिक भाग गए।
 मरम्भन का शाहाबादमें २२ लाख रुपयेसे बसित हो कर
 अब पायापीका परिधान करते हुए राजपूतानेमें राधा
 के राज्यके मन्त्र पारबन्ध बदेयमें दिव रही। पीछे अब
 लखीमें हुआ कि शाहजहाँ नासिकमें हैं तब लगे पास
 एक दूत भेजा। एक समय शाहजहाँको मरम्भतके सेवे
 एक पादमीको बकरत को, दसलिए लखीमें मरम्भतको
 अपने पास हुआ भेजा। इस समय मी मरम्भतके साथ
 १००० पञ्जाबोही से। सुनिर नामक ज्ञान पर दोर्नोमें
 मुहाबात हुई।

१०१० दिवरीमें सम्पाट, बहामीर रोम-पट्ट हुए।
 दिनों दिन उनका भोजन कम होता गया। बेचनमास
 एक पात्र प्राणा-रसके पिया धोर कुछ मी खानिका उपाय
 न रहा। पच्छो चिकित्सा होने लगी। पर कोई फल
 दिखान गया। काजोरसे भी पाककी पर चढ़ा कर
 काजीर भेज दिए गए। इस समय कुमार शहरधारे
 एक प्रकारको उपद्रवपोड़ाके बलगत दुट्ट्या पठा हुए।
 लगे सुधमपठनके आहु, गुनक भू-युध, मन्त्रादि बाध
 धोर मातंगेम भङ्ग गए। जो नितास लखिन हो पिताने
 निकटवै साहोर भाग पाए। सम्पाट, मो पर्वतसे उत्तर,
 रहे से। राहमें बरमबस (ब्रह्मबास) नामक ज्ञान पर
 पनु च कर चिरमिभारयिध बमाट्की विहार छिनने
 को रण्णा हुई। कुछ धामबायो समाट्के पादेयसे
 एक हरिचकी बहसके मया काए। समाट्ने कटके
 बन्दूक ठठा कर मोठी चलाई। हरिच मोठी था कर
 बहुत त्रससे भागा धोर हरिचोके पास जा बड़ा हुआ।
 बाह लकी लयक लतकी जान निकल गई। कुछ समय
 जो दसके पीछे पीछे दोड़ से पय तसे गिर कर पच्छलको
 प्राण हुए। यह दिख कर दुर्बलमस्तिब बमाट्का
 मन धोर विकल हो गया। लखे-कच-यमक-शेया मानूम
 पदने लवा कि जो समदूतकी देख रही हैं। बाह से हम
 लानसे दो दण्डका राधा तै कर साहोर पहुँचे। इस
 समय लखी बसक दुराकी लण्णा ली। लखिन से लखे
 दूट न लखी। दूधरे दिन बरेरे (१८वीं) बरर १०१०

हिजरोको) सम्राट् नूरउद्दीन् जहांगीर परलोकको सिंघार गए (१)।

बाद आसफ खानि इरादत खानखानि आजमके साथ परामर्श किया और तदनुसार नृत शुवराज खुशरू-कि पुत्र दौरा बकशको बन्दित्वसे उद्धार कर उसको राजकी आशा दी। दौरा बकशने उन लीगोंसे इस विषयमें प्रतिज्ञा कर ली। अन्तर्नि आसफ खानि उन्हें घोड़े पर चढ़ा उन्हें एक महत्क पर राजद्वार पहना दिया और सबके सब अग्रसर हुए। नूरजहानि इस समय भाईसे भेंट करनेके लिये अपने क वार उन्हें अनुरोध किया; किन्तु आसफ खानि कोई बहाना लगा कर सुना-कात न को। दौरा बकशको आश्वासन दिये जाने पर भी आसफखानि अपनी प्रतिज्ञा पर कार्यम न रहे। उन्हें नि वाराणसी नामके एक अत्यन्त दूरतामी दूतकी भेज कर शाहजहां और महबूबतकी इसकी खबर दी, पत्र लिखने का उन्हें अवकाश न था। अभिज्ञानस्वरूप उन्हें अपने प्रपती प्रभूतै दूतके हाथ लगा दो। ऐसा करनेका कुछ कारण था (२)। इनकी कन्या मुमताज-महलके साथ १०१८ हिजरीमें कुमार शाहजहांका विवाह हुआ था। सुतरां जामाताके लिये सिंहासनकी निरापद रखनेके उद्देश्यसे दूसरे दूसरे प्रतिद्वन्द्वियोंकी बाधा देनेके लिये ही उन्हें नि दौरा बकशको सिंहासनकी आशा दी थी।

दूसरे दिन भीमवरसे बड़े धूमधामसे सम्राट्की नृतदेह लाहौर लाई गई और नूरजहान्की उद्यानमें गाड़ी गई। यहां पर अन्यान्य अमीरगण आसफ खानि की अभिसन्धि सन्ध कर वहींके मतानुसार चलने लगे। दौरा बकश सम्राट् कह कर विघोषित किये गए और भीमवरमें उस दिन उनके नाम पर श्रुतवा पढ़ा गया। नूरजहां भाईके इस कार्य पर बहुत असन्तुष्ट हुईं। वे नृत सम्राट्के इच्छानुसार काम करने लगीं और उसे स्थान पर अमीर सम्राट्की

मध्य स्वयम्में लोक संग्रह करनेके लिये चेष्टा भी की। आसफ खानि उनको चेष्टाको विफल करनेके लिये उन्हें अपने शिबिरमें बन्दिनीके स्वरूप रख दिया।

उधर शहरयार पिताका मृत्यु-पञ्चाद पाते ही लाहौरके राजकोष पर अधिकार कर बंटे और उसीसे सैन्य संग्रह करने लगे। उनकी पत्नी नरजहान्की कन्या मेहे बखिसाने स्वामीको उत्तेजित कर उन्हें सम्राट् कह कर तमाम घोषणा कर दी। सैन्य और सेनापतियोंकी अपने दलमें लानेमें शहरयारके एक सहाय-के अन्दर १० लाख रुपये खर्च हुए थे। शाहजादा दानियालके भतीजे मिर्जा वाइसिन्दरने इन समय भाग कर लाहौरमें अपने भतीजे शहरयारका आश्रय ग्रहण किया। शहरयारने चाचाको सेनापति बनाया। वे सैन्यदल ले कर नदी पार हुए और वहां किनारेकी चारों ओरमें सुरक्षित कर रहने लगे। हाथी पर चढ़े हुए आसफ खानि और दौरा बकशने देखा कि नदीके किनारे तीन कोस तक विपक्ष सैन्य एक कतारमें खड़े है। आसफकी सैन्यसंख्या बहुत कम थी। अतः वे पहले तो डर गए, पर पीछे जब उन्हें युद्ध करने का पक्का विचार कर लिया, तब शहरयारकी अशिक्षित सेना गोलाघातसे भीत हो कर अस्त्रचालनके पहले ही तितर-बितर हो गई। दूरमें शहरयार पर्वतशिखर पर तीन सहस्र अग्ररोही ले कर खड़े थे। जब उन्हें मालूम पड़ा कि उनकी सेना जान ले कर भग गई, तब वे पर्वत परसे उतरे और किलेमें आश्रय लिया। दूसरे दिन आसफ खानि सुशिक्षित राजभक्त सैन्य और घोड़ों से सहायतासे पुनः दुर्गको अपने अधिकारमें कर लिया।

उस समय शहरयार अन्तःपुरमें छिपे हुए थे। फिरोज खानि उन्हें आसफके पास पकड़ लाए। दौराबकशके आदेशसे उनकी दोनों अर्धों उपाट ली गईं। शाहजादा दानियालके दूसरे दो पुत्र भी बन्दी हुए (१)।

उधर वाराणसी काशीरके पहाड़से २० दिनमें मौलकण्डा पहुंचा और १०३७ हिजरी १८ रविउल

(१) Ikbāl-nama-Jahāngiri (Elliot, Vol. VI, p. 481-85.)

(२) Dow's Hindustan, Vol. III, p. 118 and Ikbāl-nama-Jahāngiri (Elliot, Vol. VI, p. 486.)

(१) Dow's Hindustan Vol. III, p. 114 and Elliot Vol. VI, p. 487.

बम्बईकी सुनिर नामक ज्ञानमें महम्मद खाँके कर उपस्थित हो सकने का मतलबका प्रेरित मन्नाद बह सुनाया याहजहानकी भी इतको खबर लगी। पीछे लन्डनमें २१ तारीखकी मुजरातकी राह हो कर यात्रा कर दी। पहमदावाए पक्ष बर याहजहानने अपने म्बइको बह पक्ष निष्ठा जिनमें कुमार सुयुद्धने पुत्र दोरा मन्दा, कुमार म्बइवार और याहजहान दानियालने मुन्नीको मार काबुलका परामर्श था। तदनुसार १०१० हिजरीको २री जमादियस पक्षको काहोरमें सर्वधम्मतिज्ञानमें याहजहान समार बनाने गए। २५ तारीखको दोरा-बह य लन्डे आई गराफा म्बइवार और दानियालके दोनों पुत्र मार डाले गए। पाचप छानि इस विषयमें कोई खोत्र खबर न थी। सूदरे दिन के सबके सब पामराको बह दिये दोर २५वीं तारीखको याहजहान दलबलने हाथ पागरा पक्ष बर सर्वबादो सच्चाटके जैसा खोजत हुए।

म्बइवारको म्बइ जोने पर मूरजहानकी समी पाया समी बिहा दूनमें मित्र मरे। बम्बेनि राजनेतिब व्यापारके एखबारको हाथ पलग कर लिया। याह जहानने लन्डे बार्निंगको हाथ बपेकेकी इति निर्धारित कर दी। बाद के तब तक जोती रहो तब तक लन्डनमें म्बइ बह पक्ष बर बिबवाचारके जीवन व्यतीत किया। इन समय के पक्षने तब पारसीमें कबिता बनानिमें रत रहतो थे। 'मुब.फि' बपनामके ने खरबित कबितामें भबिता दिती थीं। पामोद बहवमें इन समय इनको जरा भी परिनामा न थी।

मूरजहान पचामाया रमको थी। राजनीतिको बम्बेनि लखदूरबमें रखवा किया था। जो की कर के जिन तरह मारतवाम म्बइका शासन कर गई है, पक्ष बरके बम्बे पात्रनीतिब बादमाइके पुत्र जो कर काहमीर भी लख तरह राज्यशासन कर न सके थे। मूरजहानकी बुद्धिमत्ती रमकी यदि जहमीरको न मिलती, तो सन्ध बह बि, मे वा तो बिज्जेधमें बि हासनपुत्र जोदे, पचमप जिन्दगी भर महम्मद खाँके बिरादगिजमें रह कर म्बइ बनाने। बुदि, माइद, खोशन, पूतता, दहा, खेज ममला और खत बनिबता पादि हुए मूरजहानमें भरपूर थे।

पर ही, महम्मदकी साह उनका व्यवहार बियेप जिन्दगीय था। खान्बि जो कर बम्बेनि जो पक्षतबता दिखनामें हुए पुत्र खोयसका पक्षसम्बन्ध किया था, लन्डो पक्ष भूकीचे उनका इतना मीघ पतन हुए।

काहोरमें ७२ वर्षकी उमरमें १०१२ हिजरी, २८वीं सोयासको मारतगरी मूरजहानका मरीदाबखान हुए। म्बइको खन्नके बगल की निन्न निर्मित खन्नमें उनको देह समाहित हुई।

मूरजहान कीसो पतुसनीय-पयाबि-ब-सोन्दर्बयालिनो थी, बसो जो सोन्दर्बपिया और बिबासिनो मी थी। मीर पजमानको म्बइके बाह बह के खामीरको बन्दिनी था, तब लन्डनमें लन्डे लन्डे पादमके म्बइने बगल कर रमको म्बइमें म्बइको खरके निन्न म्बइकुमलता और सोन्दर्बखानको पदिपुत्र दिया था। पीछे पाप म्बइपो जो बिबासियाकी बुझना बह म्बइ कर मुबन पर बिर प्रनिदिकाम कर गई है। 'पतर-ब-खानगिरी' नामक सर्बिखट गुनाबकल पियवाजके लिबे सूच बिबब "दुदासी" नामक बह (तोलने दो दाम मात्र), जोकुनेके लिये 'याब तोसिया' (तोसने ५ तोला मात्र), 'बादका' नामक बूटेदार वा गुलदार सूफ रमकीबह और बरी इन्डोके म्बइपकको ल्हावित बलु है। 'खरा-ब-बन्दी' नामक बन्दिनबम्बेकी कार्पेट, लन्डे समस्त मिष्को की पपिया ग्रेड मिषप और परम योमानियेट के (१)।

चित्तौड बर बिबवा जो कर मूरजहान ईम्बारपना और पतिकी बिनामें इतना खुशी हुई थी कि लन्डोने बिरनिय पात्रनीतिबको परिरयाम कर दिया था।

मूरजा—सिन्धुपदेयाका म्बइ डबलू पाम। म्बइ पचा २५ ३७-७ तथा देया ६० ३३ पू०के म्बइ पक्षसित है। म्बइ बिकानके १० मीघ फुतर और विष्णुनदोधि ३ मीघ पक्षिम पक्षता है। इब प्रामके चारो धोरको जमान लम तक है धोर पति बम्बे पक्षके पक्षमें बह खरंरा हा जानो है। बहा बहुतसी लखे है। इब खारके पक्ष खादि पक्षकी लप्यो है।

(1) Al Akbari (Bombay p. 810)

नरनगर—१ बहालदेशके अन्तर्भूत त्रिपुरा जिलेके अधीन एक सुदूर नगर। यह अक्षा० २३° ४५' ७०" और देशा० ८१° ५' पू०के मध्य टाका गहरसे ५५ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है।

२ खुलना जिलेके अधीन एक गण्डग्राम। यहाँ राजा वसन्तरायके वंशधरगण शासक करते हैं।

३ युक्तप्रदेशके छोटे लाटके शासनाधीन एक नगर। यह अक्षा० २८° ४१' ७०" और देशा० ७७° ५८' पू०के मध्य मुजफ्फरनगरसे हरिद्वार जानेके रास्ते पर बना हुआ है। यहाँसे मुजफ्फर नगर २२ मील उत्तर-पूर्व पड़ता है।

नूरपुर—१ पञ्जाब प्रदेशके कांगड़ा जिलेके अन्तर्गत एक तहसिल। यह अक्षा० ३२° १८' ७०" और देशा० ७५° ५५' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपट्टिमाण ५२५ वर्ग मील और लोकसंख्या चार हजारसे ज्यादा है। यहाँ एक आर्ध-जनक लकड़ीका मन्दिर है। यहाँ चावल, गेहूँ, मकई, जौ, चना, ईख, रुई और अन्धान्ध साक सबी उत्पन्न होती है। यहाँके तहसिलदार ही दीधानी और राजस्व विभागीय विचारकार्य तथा शासनकर्त्ताके कार्य करते हैं। यहाँ तीन थाने हैं।

२ उक्त तहसिलका एक शहर। यह अक्षा० ३२° १८' १०" ७०" और देशा० ७५° ५५' ३०" पू०, समुद्रपृष्ठसे दो हजार फुटकी ऊँचाई पर तथा धर्मशाळा नामक स्वास्थ्य-निवाससे ३७ मील दक्षिण-पश्चिमी स्रोतस्वतीकी एक शाखा पर अवस्थित है। पहले यह नगरी एक लुप्त देगौय लुप्त राज्यकी राजधानी थी। राजा वसुदेव समतल क्षेत्रसे इस नगरकी उठा कर पहाड़की ऊपर बसाया और चारों ओर दुर्गसे सुरक्षित कर दिया। बहुत दिनों तक यह नगर वाणिज्यवृद्धिके कारण जिलेका प्रधान सदर था। किन्तु वर्तमान समयमें व्यवसायका क्रास हो जानेसे नगरकी पूर्वाओ जाती रही और अन्धाभावसे जनसंख्या भी दिनों दिन घटती जा रही है। फ्रान्स-मुसिया युद्धके बाद ही यहके वाणिज्यकी अवनति हुई। यहाँ शासक और धर्ममोने कपड़े तो तैयार होते हैं पर वे काश्मीर वा अन्यतमारेके कपड़ोंसे बहुत निकट हैं।

यहाँके अधिवासी विशेष कर राजपूत, कश्मीरी और क्षत्रिय हैं। ये क्षत्रियगण सुमनमान राजाओंसे उत्प्लोडित हो कर लाहौरसे भा कर इसी स्थान पर बस गए। १७८२ और १८३० ई०में जब काश्मीरमें घोर दुर्भिक्ष पड़ा था, तब कश्मीरियोंसे बहुतोने स्वदेश छोड़ दिया और इसी स्थानमें भा कर रहने लगे। आते समय वे पश्मोना वस्त्रादि बुननेके उपयुक्त यन्त्रादि भी अपने साथ लाए थे। इस समयसे यह स्थान शासक व्यवसायके लिए विशेष मगझर हो गया है।

फिलहाल वहाँके कश्मीरिगण शासकव्यवसायके बदले देशमेंके छोड़के खेतो करती और उसीसे देशमादि तैयार कर बेचती हैं। यहाँ एक बड़ा बाजार, अदालत, शोधालय, विद्यालय और दो सराय हैं। निकटवर्ती स्थानोंसे नाना प्रकारके द्रव्यादिकी आमतनी होती है।

इरावती और विपासानदियोंके बीच १६ मील तक विस्तृत एक भूभाग है जो नूरपुर जिला नामसे प्रसिद्ध है। इसके उत्तरमें चन्द्रभागा नदी, पूर्वमें चम्बाराज्य, पश्चिममें पञ्जाबराजके अधीनस्थ कई एक हिन्दूराज्य और विपासानदी तथा दक्षिणमें हरिपुर है। इस जिलेके प्रकृतत्व-विषयमें जो कुछ पता लगा है, वह जोचे दिया जाता है। प्रसिद्ध ग्रन्थकार अबुलफजलने इस स्थानको दमझी बतलाया है। यहाँके अधिवासी इसे 'दहमेरी' कहा करते हैं। तारीख-इ-भल्जिनामक ग्रन्थमें इसका दमान नाम रखा गया है। उक्त पुस्तकमें लिखा है, कि यह स्थान हिन्दुस्थानके प्रान्तभागमें एक पर्वतके ऊपर बसा हुआ है।

इस दहमेरी जिलेको राजधानी पठानकोटमें है। यह पठान-कोट नगर इरावती और विपासा नदीके मध्य-स्थलमें अवस्थित है। यहाँके निकटस्थ पर्वतों पर काण्डा और चम्बानगर तथा समतल क्षेत्र पर लाहौर और जलन्धरनगर बसे रहनेके कारण एक समय यह नगर वाणिज्यका एक उत्कृष्ट स्थान गिना जाता था। इस स्थानके प्राचीन हिन्दुराजगण पठान जातीय राजपूत-शाखासे उत्पन्न हुए हैं और पठानिया वा पठान कहलाते हैं। ये लोग सुमनमान वा अफगान जातिको पठान शाखासे बिलक्षण विभिन्न हैं। यह पठानिया वा पठान

हिन्दु) अर्थात् 'प्रतिष्ठान' नामक अन्वयका प्रथम या मन्त्रज्ञाना जाता है। जो मन्त्रता है, जिसे गोदावरी तीरवर्ती 'विष्णुना पेठान वा प्रतिष्ठान अन्वयके बिलो राजानि इति' बताया हो।

इन्द्रादिम मन्त्रको नामक बिलो सुवसमानने इस पठिष्ठान वा पठियानकोटके दुर्ग'को बहुत दिन तक धरे रहनेमें बाद होता था। जोरे जोरे इतका पूर्वतन हिन्दू नाम लीप होता गया और वर्तमान सुवसमान पवि कारमें पठानकोट कहानमें लया है।

यहांके सुगतन दुर्ग'का जो अन्वयमय देखा जाता है, तन्मते चारो पोर का जो वर्ग'पुत्र तन्व एक महीका रूप है जिसकी कर्'चारै खरोर एक जो पुत्रको बीगी। यहाँ जो यन् ईट मिश्रतो है वे बहुत बड़ी बड़ी हैं जिन्हे देवदेवों को पना लगता है कि ये माचोन हिन्दुओं के बनाई गई हैं। यहाँ पौषराज मिस्र (King Zolus), गण्डपुतिर्देवों मीच्छपरिस (Gondophares), कनिष्क पोर बुविष्णुकी कनिष्क सुद्राय मिश्रतो हैं पोर मो पाचव'का विषय यह है कि पठानकोटमें हिन्दूराजाओं के समयको मी गान्धसुद्राय' पारं गई हैं। इस सुद्रायि खवर पासो पाचरमें धोदुग्बर नाम खोदा हुआ है। जो सब सुद्राय' प्राय' दो हजार वर्षको सुद्रायो बीगो। इस प्रकारको सुद्रा इषो जगह देखी नहीं आती, किन्तु इसी स्थानमें पाई गई हैं। इस कारण डा० कनिष्क इस इस त्रिंशोको प्राचीन धोदुग्बर देग बतला गय है।

प्राचिनमें बहुमण्डल (Fiona glomerata) समन्वित देगको धोदुग्बर बतलाया है। वर्तमान भूरपुर जिलेमें मी इस जातिके धर्मक पीढ़ देखे जाते हैं। इसके अलावा धनेकीनिक देगीक पत्थो में यह धोदुग्बर देग पत्थोके अन्त-पुर्णमें अचलित माना है। बराचमिहिरने लुग्बरवासीके साह कपिहृदवाविद्यो का अन्वय निर्णय किया है। माकच्छेवपुराचमें मी यह मत बमर्षित हुआ है। विष्णुपुराचमें मी विगर्त'वासो धोप लुनिन्द कानिके माय इतका अन्वय बर्षित है। * इसक बिना प्राचोन "दन्वरी वा इहमन्वी" मन्व धोदुग्बरका अन्वय है, इसमें अन्वय नहीं। प्राचोन धोदुग्बर अन्वय

पोर तत्वाच वर्ती स्थानसमूह जो एक समय दक्षिणो नामने जनसाधारणमें प्रसिद्ध था, पठानराजाओंके समयमें पठानकोट कहानमें लया। जोखि अब यह सुवस मानके वाचमें पाया, तब पठानकोट धोर लार्वागरेके राजत्वकार्त्तमें मुरभवाम्बके नाम पर मुरपुर नामसे प्रसिद्ध हुआ। यहाँ जितनो ताब्तसुद्राय पारं गई हैं, वे सभी धोचोन हैं। इसके एक छठ पर एक मन्दिर धोर दूधरे छठ पर बाबो धोर छठ अर्थात् है। मन्दिरके वायव्यभाग में बीर्वाका अर्थात् धोर अर्थात् तथा तत्तदेवमें एक सर्वसृष्टि' खोदित है। दूसरे छठ पर जो छठ है वह चारों पोरले विद्य है धोर छठ पर धोदुग्बर नाम खोदा हुआ है। इन सब प्रमाणोंके बलसे डा० कनिष्क इस प्रादि प्रकृतध्वनिदाने इधो स्थानको धोदुग्बर राज्य किर किया है।

भारतवर्षमें सुवसमान पाचमचक्र पक्षे यही नाम जनसाधारणमें प्रसिद्ध था। परवर्तीकालमें प्रातु रिहन नामक द्विपो अर्थात् अक्षरकी राजधानीको दमाक (पन्थाय सुवसमान प्रन्थीमें इसो स्थानका नाम देव-मारो है।) बतलाया है *। मात्स्य होता है, इसी समय ग्रेगत्' का काङ्कामाक्षीने इस स्थानको अपने पवि कारसुख किया था। इस समयके बादके छे कर सप्ताद पाचरके माचनकास तत्त इतका कोई लक्ष्य देखनेमें नहीं आता। पर ई, यह स्थान किसी एक पुत्र हिन्दु सरदारके पचोन था, इसमें अग मी अन्वय नहीं। पाचरवाचके राज्याोरवाचके पक्षे ८६३ खिजरोमें अब पठान-राज मन्वतमस विष्णुन्दर-पुरके बहयानो वा कर मानकोट नामक स्थानमें सुवसम अर्थात् अर्थात् जो मने धे तब बोराम खान लक्षे केद कर किया धोर बड़ा सुरो तरङ्गके मार डाला।

भूरपुर राजब पक्षा प्रकृत प्रतिष्ठाक सुवसमान धोर विष्णुपुरके समयमें नहीं मिलता है। किन्तु १८७६ ई०में धेरपुरके कौतवान मीखमइयद चमोरके बर्वाक देवीयाह नामक ८६ वर्षके एक छठ काङ्कामने राजब मन्वा वा

* इन्द्र-वैदिया १२ वी अन्वय।

* Hall's Eulogia of Sanskrit, Vol. II. p. 180. Eulogia Mohammedan Historians, Vol. I p. 62.

इतिहास संग्रह किया है तथा सुसलमान ऐतिहासिकीन नूरपुरके इतिहासके विषयमें जो कुछ लिखा है, वह एक दूसरेसे विलकुल मिल जाता है।

यहांके राजगण विपोली, मन्दो और सुखेत आदि देशोंके राजाओंकी तरह अपनीकी पाण्डु वंशोद्भव वतलाते हैं। इनको जातीय आख्या पाण्डोर है। देवोशाहका कहना है, कि ये लोग अर्जुन वंशोद्भव तीमरजातिके राजपूत हैं। उनके मतानुसार, — जयपाल और भूपाल नामके दो भाई थे जिनमेंसे जयपाल दहमेरीमें और भूपाल पैठान नामक जनपदमें राज्य करते थे। जयपालके बादसे जो उन्होंने शोड़े राजाओंके नाम दिए हैं, उनके राजत्वकालका निर्धारित समय मालूम नहीं होनेके कारण अकबर बादशाहके राजत्वके पूर्व समयके केवल उनोस राजाओंके नाम नौचे दिए जाते हैं। यथा—

१ जयपाल, २ गोत्रपाल, ३ सुखीनपाल, ४ जायतपाल, ५ रामपाल, ६ गोपालपाल, ७ अर्जुनपाल, ८ वर्षपाल, ९ यतनपाल, १० विद्रथ वा विद्रथपाल, ११ जोखानपाल (इन्होंने तिर्धारण राजाकन्यासे विवाह किया), १२ राना किरातपाल, १३ कक्षपाल, १४ जससुपाल, १५ कलसपाल (इन्होंने जम्बूराजकन्याका पाणिग्रहण किया), १६ नागपाल, १७ पृथ्वीपाल, १८ दिलो और १९ भकतपाल। शेष राजा १५२५ ई०में राजगद्दी पर बैठे और १५५८ ई०में मानकोटके युद्धमें बँराम खाँसे मारे गए। पोछे २०वें विहारीमल्ल राजा हुए। १५८० ई०में इनकी मृत्यु हुई।

२१वें राजा वसुदेव—इन्होंने १५८० ई०में राच्या-रोहण किया। सम्राट् अकबरके राजत्वके ४२वें वर्षमें ये एक बार विद्रोही हुए थे। फल यह हुआ कि सम्राट्ने उनकी राजाकी उपाधि छीन ली और वे उन्हें मान तथा पठानप्रदेशके जमींदारके रूपमें गिनने लगे। पाच वर्षके बाद फिर भी वे विद्रोही हो उठे। इस बार सम्राट्ने पठानराज्य उनके हाथसे छीन लिया। १६१२ ई०में उनकी मृत्युके बाद उनके लड़के राज्याधिकारी हुए।

२२वें राजा सूर्यमल्ल थे। जब ये गद्दी पर बैठे, तब जहांगीरके विरुद्ध धरुयन्त्र रचने लगे। इस पर सम्राट्ने

१०२१ हिजरोमें उन्हें दमन करनेके लिये राजा विक्रमजित्को भेजा। सूर्यमल्ल डर गए और उन्होंने परले वसु-राज-निर्मित नूरपुर दुर्गमें, पोछे चम्बाराजके यहाँ आश्रम लिया। विक्रमजित्ने उन्हें पराजित कर मी, चारा, पहारो, ठट्ट, पकोत, सूर और जवालोके दुर्ग देखल कर लिए। बाद बहुसंख्यक हाथी, घोड़े और धन-रत्नादि लूट कर दिसो भेज दिये * १६१८ ई०में सूर्यमल्लके राज्यच्युत होने पर उनके भाई जगत्सिंह (२३वें) राजा हुए।

सम्राट् जहांगीर जगत्सिंहकी बहुत चाहते थे। अतः प्रसन्न हो कर 'सम्राट्ने उन्हें ३०० सेनाओंके अध्यक्षका पद और राजाकी उपाधि दी।

१०४७ हिजरोमें वे शाहजहानके विरुद्ध हो गए। पोछे उनकी अधोनता खोकार करने पर छीना हुआ अधिकार लौटा दिया गया। १०४२ हिजरोमें वा १६४२ ई०में वे दाराशिकोहकी कन्दहार ले गये और वहीं उनकी मृत्यु हुई। पोछे उनके लड़के राजा रूपने १५ सौ सेनाओंका अध्यक्षपद और राजाकी उपाधि पाई। तारागढ़के युद्धमें इनकी हार हुई और किला हाथसे जाता रहा। १०७७ हिजरोमें उनके मरने पर उनके लड़के राजा मान्धाताने राज्यभार ग्रहण किया। यह एक अच्छे कवि थे। उनके लिखित काव्यसे महासाम्य वीरस साहबने जो वंशपरिचय और अद्भुत कहानो संग्रह की है, उसका अधिकांश मिं इलकमैन साहबके अनुवादित पादशा नामाकी वर्णित कहानीसे बहुत कुछ मिलता है। इस ग्रन्थमें राजा जगत्सिंहकी गुण-

* शब्द 'फय' कागरा नामक ग्रन्थमें लिखा है कि युद्ध जयके बाद इस घमौराज्यका नाम 'नूरउद्दीन जहांगीरके नाम पर 'नूरपुर' पड़ा था। (Elliot Vol VI, p. 522.)

† स्थानीय प्रवाद है तथा मान्धाताविरचित ग्रन्थमें लिखा भी है कि राजा जगत्सिंह युद्धलमान सेनाको पराजित करनेमें असम हुए थे। बादशाह-नामानें लिखा है कि जगत्सिंहने पराजित हो कर मी, नूरपुर आदि दुर्ग शत्रुओंके हाथ लगा दिये और अन्तमें तारागढ़ युद्धमें आत्मसमर्पण किया।

(Elliot, Vol. VII, p. 96 & Vol. V, p. 521.)

नरिमा ही बकिज बार्द गर्द है। वीक्षे २६मि राजा दयोदात २०मि हज्जीसि ह २८मि उत्तमि ह पौर २८मि राजा बोरसि ह (१८०३ ई०) हुए।

मुगल साम्राज्यकी पतननिमित्त ही कर सिक्कजातिके पन्हुदप तक पञ्जाबके दिसे छोटे छोटे राज्योनि प्रान्तमात्र धारण किया बा। १०८३ ई०मि सि० फरीदशा अब नूरमहम्मद दिखनेके दिसे पाए छे, उस समय इस राज्यका प्रान्त भाव दीक्ष कर ने लिख गए है, त्रि लिखटबर्ती कानोसि यहाँकी शासननिधि बहुत पञ्जी है और सिक्क सोनों का अधिक उपद्रव नहीं है। १८१३ ई०मि महाराज रथ भिक्षुसि इनि बोरसि हको खेट कर लनका राज्य अपने कब्जेमें कर लिया। बोरसि इनि किसी तरह भाग कर पान्नाया गयो। १८२६ ई०मि जो मुन खैद कर लिए गए और मासिक ६००) रु० मत्ता छके मिलने लया। ३८६ ई०मि उनकी मृत्युके बाद बसोबन्दासि ह उनके पद पर परिधिष्ठ हुए।

राजा बसुदेवनो समतलदेवदाश पठानकोट नगर पक्षवर बादशाहके हाथ लया दिया। उन्मत्त इमी समय लखोनि परत पर इस नूतन नगरको बसा कर बहागोर बादशाहको सुय करनेके लिए नूरमहम्मदको नाम पर इस गहरका नाम रखा बा।

३ धयोधा प्रदेशके अन्तर्गत एक नगर। यह अखनल गहरके १३ मील थीर कानपुरके ०१ मील उत्तर पूर्वमें अथा० २० १८' उ० तथा दिया० ८२ ११' पू०के मध्य अवस्थित है।

४ पञ्जाबके त्रिमुसापर होषाब विभागका एक नगर। यह बितपटा नदीके दक्षिण मुनके १२ मील उत्तर-पश्चिम (अथा० ३१ ७' उ० और दिया० ७२ १८' पू०)में अवस्थित है।

५ एक प्रदेशके दमन विभागका एक नगर। यह मुजतामके ८० मील दक्षिण-पश्चिम अथा० २८ ८ ७०

तथा दिया० ७० १६ पू०के मध्य अवस्थित है।
६ बहालके ठाका ज़िन्धके अन्तर्गत अन्नातपुरका एक नगर। यह ठाका गहरके २२ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है और बहालके छोटे काठकी शासनधीन है।

७ स मुक प्रदेशके छोटे काठकी शासनधीन विम मोर मिलेका एक नगर। यह अथा० २८ ८ ७० तथा दिया० ७८ २८' पू०में पड़ता है।

नूरबाघ (फा० पु०) सुतावा, तांती।
नूरम—पक्षवरपाहको बंमाले व माई। अन्नाटके राकलके ११मि वर्षमें इन्नि हीरापर्वत पर पक्षगात्र जातिके साथ ब्रुक किया बा। वीक्षे अब मानसि ह लक्ष्मीका ओतनके लिए बहाल पाए, उस समय से एक बहार रीनाके नाटक हो कर लनका सामना करने गये हैं।

नूरमन्दिब—पापरा नगरका एक उपनाम। इसे अन्नाट लुङ्गाओरने लयाया बा। अन्तर्गत समयमें लोग इने 'दिहाराबाम' कहते हैं। अन्नाटके मन्थ एक बड़ा झूप है जिसे दिखनेसे होयोसा अन्त होता है।

नूरमहम्मद—सिन्धुप्रदेशके एक शासनकर्ता। १०१८ ई०मि इनके पिता पारमहम्मद अन्नाटोके मरने पर उनके राज्य पर परिधिष्ठ हुए। इकर नूरमहम्मदने दाकदपुनोसि नहर उपविभाग ज्ञान लिया, साध साध सिक्क और तदधीन राज्य भी अपने अधिकारमें कर लिये। १०३६ ई०मि इन्नि महार दुर्गकी ओत। बाद मुकतामके बहूतक इनका परिधिष्ठ हो लया। १०३८ ई०मि जब आदिर ग्राह भारतवर्ष पर बर्दाई करनी चाहे, तब दिखोखरने बहू और गिबारापुर जीत कर लखोनि नूरमहम्मदको त्रिमु और पञ्जाबका शासनभार सौंप दिया और पाप अदेषको सौट गये। इमी बीच नूरमहम्मदने ठडके लुबेदार साठिबधनीकी तीन लाख रुपये दे कर लखे ठड प्रदेश खरीद लिया। इस पर आदिरग्राह बहुत विमर्क और लखे दमन करनीके लिए सिन्धु और पञ्जाबकी पौर पयबर हुए। इनका पारमन मुन कर नूरमहम्मद पमरकोटकी माम गये। अन्तर्नि इन्नि गिबारापुर और गिबप्रदेश आदिरकी दे कर अपना पिच्छ सुहाया। आदिरने लखे गौह लुकी लखी पदवी दो और इन

‡ Proceedings Asiatic Society of Bengal 1872. p. 158 and Journal of the Asiatic Society of Bengal 1873, p. 201.
— Cunningham's Ancient Geography of India.

मान्यपुरस्कार-स्वरूप इन्हें 'वायि'क २० लाख रुपये कर देने पड़ते थे। १७४८ ई०में अहमदशाह दुरानीने गिन्नुप्रदेशको जीत कर इन्हे ग्राह नवाज खांको उपाधि दी। १७५४ ई०में नूरमहम्मदने ज़ब्त कर देनेसे इनकार किया, तब अहमद उनसे लड़नेके लिए अग्रसर हुए। दुरानीका आगमन सुन कर नूरमहम्मद जगलमेर को भाग गये और वहाँ उनका शरोरावमान हुआ।

नूरमहल—पञ्जाबके जलन्धर जिलेकी फिलौर तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० ३१° ६' ७०" और देशा० ७५° १६' ००", जलन्धर शहरसे १६ मील दक्षिण, सुनतानपुरसे २५ मील दक्षिण-पूर्व और फिलौरसे १३ मील पश्चिममें अवस्थित है। जनसंख्या आठ हजारसे ज्यादा है। यह नगर बहुत प्राचीनकालका है। इसके विषयमें अनेक प्रमाण भी मिलते हैं। यहाँकी सटो खोदने पर १३' × ११' × ३' मापको जो ईंटे निकलते हैं, उनके ऊपर हाथका चिह्न है और हाथके तल पर एक केन्द्रमें तीन अक्षरोंके अक्षर हैं। ये सब ईंटे पूर्वतन हिन्दू राजाओंके समयको मानी जाते हैं।

इसके अलावा यहाँ जो सिक्के पाए गये हैं वे भी बहुत पुराने हैं। इनमेंसे छेनीको कटी हुई (Punch-marked) रोप्यमुद्रा, चतुर्भुजकी ताम्रमुद्रा और दिल्लीशहर महीपालको मुद्रा तथा विभिन्न समयके सुसलमान राजाओंकी मुद्रा भी पाई गई है। ये सब मुद्रायें नूरमहलके प्राचीनत्वका परिचय देती हैं।

सम्राट् जहाँगोरने इस नगरका जोर्ण संस्कार कराके मिर्जा प्रियतमा पत्नी नूरजहाँके नूरमहल नाम पर इस नगरको फिरसे बसाया। उस समय जहाँगोरको आज्ञासे यहाँ एक बड़ी सराय बनाई गई जो देखने लायक है। इस सरायकी लीग वादशाही सराय कहते हैं। इसमें एक कोणविशिष्ट चूड़ा और कुल ५२१ वर्गफुट परिमाणफल है। इसका पश्चिमो प्रवेशद्वार लाल पत्थरोंका बना हुआ है। वे सब पत्थर फतेपुर सिकरीसे मंगाये गये थे। सरायकी दोवारमें जहाँ तहाँ देव, दैत्य, परी, हाथी, गैंडे, कंट, घोड़े, वानर, मयूर, अम्बारीही योद्धाओं और तोरन्दाजोंकी मूर्तियाँ खोदी हुई हैं। किन्तु इसका शिल्पकार्य उत्तना सुन्दर नहीं है।

प्रवेशद्वारके ऊपर एक खण्ड शिलाफलकमें जो शीप खोदी हुई है उनसे जाना जाता है कि यह स्थान फिलौर जिलेके अन्तर्गत है। किन्तु कोई कोई उस निपि को 'कोटकपुर' वा 'कोटकहलौर' ऐसा पढ़ते हैं। पूर्वद्वार दिल्लीकी ओर है और पश्चिमद्वारके लैसा लाल पत्थरोंका बना है। इसके ऊपर भी पारस्य भाषामें एक शिलालिपि खोदी हुई थी, किन्तु पूर्वद्वारकी गठनादि जिलकुल भूमिघात हो गई है। इसके पश्चिम वा लाहौरमुखी द्वारके ऊपर शिलाफलक उत्कीर्ण है जिससे ज्ञात होता है, कि सम्राट् नूरजहाँके आदेशसे फिलौर जिलेमें यह 'नूरसराय' १०२८ हिजरीमें स्थापित हुई, किन्तु इसका निर्माणकाय १०३० हिजरीमें समाप्त हुआ था।

सम्राट् जहाँगोरके राजत्वकालमें जलन्धर-सुबाके नाजिम जकरिया खांने इस सरायका निर्माण किया, किन्तु इसके पश्चिम वा पूर्वद्वारको शिलालिपिसे मालूम होता है कि वेगम नूरजहाँको आज्ञासे यह 'नूरसराय' बनाई गई है। जकरिया खांकी कथा नितान्त असम्भव नहीं है, कारण वहाँके उत्कीर्ण फलकसे जाना जाता है, कि वे इसके निर्माणविषयमें विशेष उद्योगी थे।

यहाँ एक सुसलमान फकीरकी कब्र है जहाँ प्रति वर्ष मेला लगता है। भेजेमें दूर दूरके सुसलमान एकत्रित होते हैं। शहरमें १८६७ ई०की म्युनिसिपलिटि स्थापित हुई है। यहाँ एक वर्नाचयू लर मिडिल स्कूल है जो बोर्डके खर्चसे चलता है। इसके अलावा भीषघालय, डाकघर और पुलिस-स्टेशन भी है।

नूरमा—आसामकी गोरजातिका देवताभेद।

नूरुद्दौलत—एक कवि। इनका जन्म संवत् १७७० (११२७ हिजरी) में हुआ था। आपने तीस वर्षकी अवस्थामें दोहा चौपाइयोंमें जायनीकृत पद्मावतीके ढंग पर इन्द्रावती नामक एक अच्छा प्रेमग्रन्थ बनाया है। आपने वावैला आदि फारसी शब्द, त्रिविष्टप, स्वान्त, इन्द्रावती, स्वस्विरम आदि संस्कृत शब्द भी अपनी भाषा में रखे हैं। आपने गँवारी अवधी भाषामें कविता की है, परन्तु फिर भी उसको छटा मनमोहिनो है। इनकी रचनासे विदित होता है, कि ये काव्याङ्ग भी जानते थे। एकाध स्थान पर इन्होंने कूट भी कहा है। इनका मन-

पुस्तकारीबाद्य बर्चन बड़ा ही विरल है। रत्नोंमें कामाधिक बर्चन जायको भी मालि खूब विस्तारसे किए हैं तथा भाषा, भाव और बर्चन-वाङ्मयमें प्यमी कविता कावसीमें निष्ठा दी है। रत्नोंमें प्रीतिकी भी अच्छा बिज दिखाया है।

न रयाइकसी—एक सुखमान बामि'क पकीर। पञ्जाब के खिरोबपुर नगरमें जे रहते थे। मरने पर इनकी कन्न खिरोबपुरमें जो बनाई गई थी। प्रति उपस्थितनारको सुखमान लोग सब खन्नके पाप का कर जमाव पड़ते हैं। पापपासके हिन्दू भी कन्नके दर्शन करने पाते हैं। सुहरंम लक्षके छह दिन बाप ही वहां एक बड़ा मेवा लयता है। लममम जो बर्चन हुए लव सर हैमरो कारेण इस कानको देखने पाए ये लव लमय इस छोटी खन्नके निकट पनेक खोमीका समायम देव कर के बहुत प्राब-यन्वित हुए थे। धत' लको भी मन्वावयिट कन्नकी मरकत करनीका हुकुम दिया और पावत खोमीके रहने-के लिये जो वहां दूटा फूट मकान का लवे लेंदुवा काता। खिरोबपुरमें प्रवाद है, कि पइसे कतान कारेण-में सब छह मूमिपात् करना चाहा था। लेकिन रात को लक्षमें लवे माकूम पड़ा कि कोई रहसीके लवे मन्नूतीके बांध रहा है और कन्नता है कि 'यदि तुम मिरा लव करती तो तुम्हारे कान नहीं बंधी'। दूसरे दिन लवे कारेण साइबने कोतवासको हुसवा कर कन्नका बन्वार कराया और पाव'वर्ती पञ्जादिको तोड़ करकेका पादेय दिया।

नूरा (वि० सु०) बड़ लुखो जो पापसमें मिस कर लड़ी काह बर्चात् जिसमें जोड़ एक पूषरेके खिरोबो न हो।

नूरात—रवावावाइके मन्ववर्ती एक महर और मिर-सहट। बड़ पचा० २४ २४ स० और सिम० ७८ ३४ पू०के मध्य तिपाउके ३० मील दक्षिण पथिममें पव क्कित है।

नूराबाइ—मध्यभारतके ग्वाबियर राज्यके पन्मर्गत एक नगर। यह बच्चा० २६ २४ स० और सिमा० ७८ ३० पू०के मध्य मध्यदीके बाहिने किनारे पर बसा हुआ है। पावरा राजधानीके यह नगर ६० मील दक्षिण और ग्वाबियरके ११ मील उत्तर-पश्चिममें पड़ता

है। सुखमानो मायलबाचमें यह नगर पागराके पन्मर्गत वा।

सुखरालको पवभतिके पाप साब इस नगरको पूर्व-दक्षिण की ओर ओरे जावत हो गईं। यहां जितने मकान हैं वे सभी पत्थरके बने हुए हैं। १००१ हिजरोमें यहां एक मस्जिद बनाई गई और दूसरे बर्चन मोता मिद लखे एक बड़ी सरायका भी निर्माय किया गया। इन दोनोंके ऊपर जो मिसाफसक खोदित हैं। सरायका पत्ती मन्वावयेय मात्र देखा जाता है।

यहां ग्वा-नहीके ऊपर सात गुम्बजका एक गुल बना है। इसके पाप ही औरइजिब कस्तू'क १६६६ ई०में बना हुआ एक सुखव प्रमोद-प्रदान है। इस सुरम्य लयानके मध्य दिशींमर पइमदगाइ और लनके परमर्ती मन्वाट २५ पासमपरेके नकोरुनाकोठेण लखी पको गुवा वेगमके समरबा'के १७३६ ई०का एक छ्त्र है। यह लुख पात्र भी लड़ीका लो है। इस कामिगीने पपना प्रकर मानविक लुसिके बलवे नानायाधर्मि म्युत्पति काम को लो। लनके बायबी माया पन्नत परम और पावक है। लनोंके हिन्दी भाषामें जो गीत बनाया है वह बहुत प्रयत्नीय है और पात्र मो पादरपूर्वक गाया जाता है। लल स्मृतिपत्रमें पाएज भाषामें लकी'के जो सब भाषि लिखे हैं, वे सब लनके विद्यो-७ पावत बर्चनानुसक हैं।

नरि—मुक्तानप्रदेशके सिन्धु विमाममें पुसासो नदीके किनारे अवकित एक गच्छ पाव। यह हैदराबाद नगरके १३ मील दक्षिणमें अवकित है।

नूरी (वि० खी०) एक विड़िया।

नूरीकल-बैठा—कूर्म राज्यके पन्मर्गत एक पन्नू प पर्वत-शिखर। यह सिधपुरबाट जामि'के राफे पर मरकाराके १२ मील पूर्वमें अवकित है। इस शिखर पर पड़ा हो कर लेंचमेंके कूर्म राज्यका इपसमूह बहुत सुन्दर दीखता है।

नूह—१ पञ्जाब प्रदेशके सुरमय जिरीकी एक लक्षमील। यह बच्चा० २० ३६ और २८ २० स० लजा सिमा० ७६ ३१ और ७७ १८ पू०के मध्य अवकित है। मुरिमाच ७०१ वर्षमील और लवज न्हा करीक छेड़ पावकी है। लनके पश्चिममें बन्वार राजा पड़ता है। लक्ष्मीसमें लुख

२५७ ग्राम लगते हैं। राजख टो लाख रूपयेसे अधिक है। १८०८ ई०में यह स्थान वृटिश गान्धाजाभुक्त हुआ।

यहा बाहरा, च्चार, लो, चना गीह, रुई, फल-मूलादि और अचरापर ग्रन्थोंकी खेती होती है। यहाँके तहसीलदार ही ग्रामनकार्य करते हैं। यहाँ एक दोबानो और एक कोजटारी अदायत तथा तीन थाने हैं।

२ चक्र तहसीलका सदर और म्युनिसिपलिटोके अधि-कृत नगर। यह अक्षा० २८° ६' ३०" उ० तथा देगा० ७७° २' १५" पू०के मध्य गुरुगाँव नगरसे २६ मील दक्षिण प्रनवार जानिके रास्तेपर अवस्थित है। यहाँके निकटवर्ती स्थानोंमें तथा लक्षणयुक्त पुष्करिणोसे नमक प्रसृत हो कर नानास्थानोंमें वाणिज्यके लिये भेजा जाता था। किन्तु अभी मन्वरजदसे लक्षण प्रसृत होनेके कारण यहाँके व्यवसायका ज्ञान ही गंजा है। शहरमें विद्यालय और औपधालय भी हैं।

३ मधु रा जिलिके नरभोल परगनेके अन्तर्गत एक नगर। यह यमुनानदीके बाएँ किनारेसे ४ मील दूर अक्षा० २७° ५१' उ० और देगा० ७७° ४२' पू०के मध्य-अवस्थित है।

नूह (अ० पु०) ग्रामी या इवरानो (यहदी, ईसाई, मुसलमान) मतोंके अनुसार एक वैगम्बरका नाम जिनके समयमें बड़ा भारो तूफान आया था। इस तूफानमें सारो सृष्टि जलमग्न हो गई थी, केवल नूहका परिवार और कुछ पशु एक किस्ती पर बैठ कर बचे थे।

नूह-होतियानी—सिन्धु प्रदेशके अन्तर्गत एक ग्राम। यह उदरनालसे तीन मील उत्तर-पश्चिम तथा मतिघारोसे प्रायः ११ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। यहाँको और-नूह-होतियानोको दरगाह १०६२ हिजरीकी बनी है।

नू (स० पु०) नौ-अनु डिब्ब। १ मनुष्य। २ पुरुष। ३ शब्द। (त्रि०) ४ नेता।

नूकपाल (स० स्त्री०) नुः कपालं इत्यत् । नरकपाल, मनुष्यकी खोपड़ी।

नूकुकर (स० पु०) १ कुत्तेका जैसे मनुष्यका शरीर। २ कुत्तेके जैसे व्यवहारविशिष्ट मनुष्य।

नूकशरो (स० पु०) केशरः प्राचुर्यं नाशयन् इति इति, ना चासी केशरो चेति। १ नरमिं हावना, नृमिं इक्ष्व विष्णु। २ मनुष्योंमें विंइके समान पराक्रमी पुरुष, अष्ट पुरुष।

नृग (स० पु०) १ एक राजा जिनकी कथा महाभारतमें इस प्रकार है,—

द्वारकानगरमें यदुबालकीने किमो कुपमें एक बडे गिरगिटकी देखा और उसे बाहर निकालनेकी श्रुष कोशिश की, किन्तु कर्मकाय न हुए। बाद वे मन्त्र सब भगवान् श्रीकृष्णके पास गये और मारा वृत्तान्त कह सुनाया। कृष्ण कुपके पास आए और उन्होंने गिरगिटको बाहर निकाल कर उसका पूर्वजीवनवृत्तान्त पूछा। इस पर गिरगिटने कहा, 'भगवन्! मैं पूर्व जन्ममें नृग नामक राजा था। मैंने हजारों यज्ञ और नाना प्रकारके भक्त्यार्थ किए हैं।' भगवान्ने उसकी पुष्टकथा सुन कर कहा, 'जब आप ऐसे दानी और धर्मात्मा हैं, तब ऐसी दुर्गति होनेका क्या कारण?' इस पर कृष्णसे रूपी महाराज नृगने जवाब दिया, "प्रभो! कोई अग्निहोत्री ब्राह्मण किसी कारणवश जब परदेग गया था, तब यहाँ उसको गाय सेरो गाथोंके भुण्डमें आ मिली। मैंने एक बार एक ब्राह्मणकी सदस्त्र गोदानमें दो जिनमें यह ब्राह्मणवाली गाय भी थी। जब वह ब्राह्मण पर-देगसे लौटे और गायको घरमें न देखा, तब वे उसको खोजमें इधर उधर निकले। जिस ब्राह्मणकी मैंने गोदान किया था उन्होंने घरके पास वह गाय बर रही थी। उक्त ब्राह्मणने अपना गायको पहचाना और उनमें मांगा। इस पर उन्होंने कहा, 'राजा नृगने मुझे यह अनुदान किया है।' बाद दोनों भगवते हुए मेरे निकट आए और सारा वृत्तान्त कह सुनाया। जिम ब्राह्मणको मैंने गाएँ दान-में दी थीं, उन्हें बहुत ममत्ता कर कहा, कि इस गायके बदलेमें मैं आपको एक हजार गाथें और देना हूँ, आप उनको गाय दे दें।' लेकिन उनने एक भी न मानी और कहा कि ये सब गाथें-सुलक्षण हैं, अतएव इसे मैं लोटा नहीं सकता। इतना कह कर ब्राह्मण चल-दिये। बाद मैंने निरुपाय हो प्रधासागत ब्राह्मणसे कहा, 'भगवन्! मैं उस गायके बदले आपको एक लाख गाएँ देता हूँ।

पाप ज्ञापयन् 'क लो' शि ले' ।' इस पर नें बोले, 'मैं
 अपना मरव घोषक मसोमाति जय कर शिता हूँ, तब
 फिर राजाघोषका दान करों मू । इतना कह कर नें
 विपक्ष बिलसे अपने घरकी चला दिए । धनदार बोड़े
 जो दिनोंके मज मीरा मीराबाधन हुआ । लभ मी बम-
 लोच पक्ष या तब धर्म राज यमने भिरे सुखकम की विधि
 प्रय या करती हुए सुभसे कहा, 'पापका सुखफल बहुत
 है, पर ब्राह्मणकी गाय हरण करनीका पाप भी पापकी
 लगा है । चाहे पापका फल पक्षसे भोगिये, चाहे सुखका ।'
 इस पर मीने पापका ही फल पक्षसे भोगना चाहा । पता
 महक बच से लिए विरमिठ जो कर मी इस लुप'में रहने
 लगा । यमने कहा था 'सहस्रवर्ष' बीत जानेके बाद
 भगवान् वासुदेव पापका उद्धार करेगी पीर तब पाप
 इस सनातन लोकमें पावने ।' यमी पापने ज्ञया करके
 भोग उद्धार किया ।' बाद राजा हृद ज्ञापके पादियेने
 दिव्यनिमान पर चढ़ कर सुरप मने पक्षे गये ।

महाराज-शुभक कर्णगीहर करने पर भगवान् वासु-
 देवने लोभाको मसार्थके लिए कहा था, कि शुभने ब्राह्मण-
 का गो-बल सुराया का बिलसे लगे ऐसी दुर्दया सुन-
 तनो पक्षी की । पतएव ब्राह्मण हरण करना कहापि
 कचित नहीं है । फिर मो देखना पाछिय कि सासुधमा
 गमसे महाराज शुभने नरकसे उद्धार पाया था । पतएव
 सासुधम सर्ग' मो कमी निष्कल हानिको नहीं । दान करने-
 में बितना पक्ष बिपत्ता है, पापहरणमें छतना ही पावर्ग
 मी होता है । (मारत मनुशास्त्रमें ७० अ०)

१ पीरकतके पीर । २ योकेय न शका पादि सुख
 को शुभाके गम'से उत्पन्न उभोमरका सुव का । ३ मनुके
 एक सुकका नाम । ४ सुमतिका पिता ।

शुभपुत्र (स० पु०) तोरभेद, एक तीर का नाम ।

शुभा (स० ली०) जमीनकी पक्षी पीर शुभराजकी
 माता ।

शुभ (सं० त्रि०) नरघातक ।

शुभघम (स० पु०) मनु कहें मरत्यसेन पश्यतीति श्रु-
 त्तं च मनु, वा अपि (बर्षेवैवृक्ष विष । ब०, ३।२२)
 १ साधय । २ दिव । ३ मनुचर्या का ।

शुभपुत्र (स० पु०) शुभा प्रजाता चतुरिण । सुनोय राज
 पुत्र ।

शुभपुत्र (स० पु०) दन्तिनारराजका एक पुत्र ।

शुभपुत्र (स० त्रि०) मनु धति, मनु-अ तनो जन्मदिन ।
 नरमन्त्रक मनुचको-पानिवाता ।

शुभपुत्र (स० ली०) सुग लक ३-तत् । २ मनुधनेतत्रक
 पात् । ३ मानवमूल, मनुधका मूल ।

शुभजाति (स० ली०) नरजाति, मनुधजाति ।

शुभित् (स० त्रि०) १ नयकसे जिता । २ एकादिद ।

श्रुति (स० ली०) श्रुत नर्त'ने इन् सच, श्रुत् (इत्युपा-
 क्रिय । उ०, ३।२१८) नर्त'न, नाच ।

श्रुत (सं० पु०) श्रुत्वतीति श्रुत वाशुतकात् श्रुः । नर्त'क,
 नाचनेवाका । २ मूर्ति, कमीन ।

श्रुत् (स० त्रि०) श्रुत ह । नर्त'क । मनु श्रु'ति श्रु'त'
 श्रिप । २ नरदि लक ।

श्रुत (स० ली०) श्रुत भाषे च । श्रुत् नाच ।

श्रुत् (स० ली०) श्रुत्-क्यप् । तासमानरमान्न सविनास
 पक्षविशेष, उद्घोतके तास पीर मतिके पशुमार जाय पाँच
 विशाने, उल्लने, श्रुने पादिवा व्यापार, नाच । पर्याय-
 तापक, मदन, नाच, साधक नर्त'न, श्रुत्, नाट, कास
 कापुत्र, श्रुति ।

शुभ मानवीका कामनिध है । क्या प्राचीनकाय
 का पातुनिक कास लमी सुभन्व धमर्से शुभ प्रचलित
 का पीर है । सुराकासमें जिस प्रकार शुभ होता था,
 उष प्रकार पाव कास नहीं होता, क्यपत्करित मानमें
 हुआ करता है । शिबने सर्व'दा श्रुत्य किया करते हैं,
 ज्यसें पशुपार्ये मनोहर शुभ करके देवतापीको ज्ञय
 किया जाती है ।

महपि भरत नाचवापक्षे मथना है । वे शुद्धि
 कर्तमें पशुपार्योको शुभ शिपारि है । प्रायः सभी सुगर्षो
 में शिवा है कि देवमन्दिरका प्रदक्षिण कर श्रुत् करनेमें
 महासुख प्राप्त होता है । चैतन्यदेवने अपने शिष्योंको
 नामोच्चारणपूर्वक श्रुत्य करनेका उपदेश दिया था ।

पति सुराकासमें पीर लोग उल्लनोपक्षमें श्रुत् पीर
 गान करते हुए देवमन्दिरकी प्रदक्षिणा करते थे । यज्ञ-
 दिवसें मो श्रुत्य बहुत पक्षसे प्रचलित है । उद्धारयोग
 बोधितपागर पार कर पानचपुत्र'क श्रुत्य किया था ।
 पीरकोमीका श्रुत्य अभिनव प्रयास चकमूल है । इन्से

भयानक रसका नृत्य देख कर बहुतेके मनमें मयका सञ्चार होता था ।

ग्रीक-गिल्स विद्याविशारद भास्कारों की प्रस्तरबोधित प्रतिभृत्ति पर नृत्यकी नानाप्रकारकी भङ्गी प्रदर्शित हुई हैं । होमर, आरिस्ततल, पिण्डार आदिने अपने अपने ग्रन्थमें नृत्यका विशेष उल्लेख किया है । आरिस्ततलने नृत्यकी विविध प्रणालीका उद्घाटन कर उसे 'पोइटीक' ग्रन्थके मध्य सन्निवेशित किया है ।

स्पार्टनगण युद्धके समय नृत्य करनेके लिये जब उनकी उमर पांच वर्ष की होती थी, तभीसे नृत्य सीखते थे । उनके युद्धके इस नृत्यका नाम 'पाइरिक' नृत्य था ।

सम्भ्रान्त रोमकगण धर्मकार्य भिन्न हम लोगोंके लिये नृत्य नहीं करते थे । हम लोगोंके निमित्त नृत्य वहाँके व्ययमायिषोंके सम्पादित होता था । मिस्रदेशीय नर्तकियोंका नाम 'आलमी' है । ये अच्छी अच्छी कविता गान करते हुए नाचते हैं । यह नृत्य हम लोगोंके नृत्यसे बहुत कुछ मिलता जुलता है ।

यूरोपियोंके मध्य सम्भ्रान्त वर्गसे ले कर साधारण मनुष्य तक सभी नृत्य किया करते हैं । कोई स्त्री या पुरुष जो नाच नहीं सकते वे प्रकर्मण और असभ्य समझे जाते हैं । यह Ball नामक नाच कई प्रकारका है, यथा—पोल्का, कोयाडि ल, कनडो डान्स इत्यादि । इसके सिवा अभिनय कार्यमें भी अनेक प्रकारके नृत्य हैं ।

हम लोगोंके देशमें सङ्गीतशास्त्रानुसार जो सब नृत्य हैं अभी उन्हीं पर विचार करना चाहिये ।

इतिहास, पुराण, स्मृति आदि सबमें नृत्यका उल्लेख मिलता है । जो नर्तक वा नर्तकी नृत्य करेगी उसका सुन्दर रूप रहना आवश्यक है, अरूपा नर्तकीका नृत्य निन्दनीय समझा जाता है ।

“नृत्येनात्म रूपेण सिद्धिर्नाम्यस्य रूपतः ।

धाविषिष्ठानृत्यं नृत्यमग्यद्विबुधना ॥”

(मार्कण्डेयपु०)

अरूप नृत्य नृत्तपदधातु नहीं है । सुन्दररूपविशिष्ट नृत्य ही नृत्य कहलाता है । देवदेवीकी पूजामें नृत्य करनेमें अग्रेय प्रकारके मङ्गल प्राप्त होते हैं ।

जो देवीदेवसे नृत्य करते हैं वे सारसागर्भे सुखलाभ कर स्वर्गलोक गमन करते हैं ।

“यो नृत्यति प्रहृष्टात्मा भावैर्दुष्टमफितः ।

ए निर्देहति पापानि जन्मान्तर शतैरपि ॥”

(द्वारकामाहात्म्य)

जो प्रफुल्लितचित्तसे अत्यन्त भक्तियुक्त हो नृत्य करते हैं वे शतजन्मान्तरके पापसे मुक्ति लाभ करते हैं । इति-भक्तिविलासमें भी लिखा है—

“नृत्यतां श्रीपतेरभे तालिकावादनैर्दृक्कम् ।

उद्गीयन्ते शरीरस्थाः धर्मे पातकपक्षिणः ॥”

जो विष्णुके आगे तालिकावादन द्वारा अर्थात् ताली दे दे कर नाच करते हैं, उनके शरीरस्थित सभी पाप दूर हो जाते हैं । प्रायः सभी धर्मशास्त्रोंमें देवीके समीप जो नृत्य किया जाता है उसकी प्रशंसा लिखी है ।

रामायण और भागवतके दशमस्कन्धमें नृत्यका विशेष विवरण मिलता है । महाभारतके विराटपर्वमें लिखा है कि अर्जुन उत्तम नर्तक थे और उसीसे वे (बृहन्नगारूपमें) विराटके पन्तःपुरमें स्त्रियोंकी नाच गान सिखानेके लिये नियुक्त हुए थे ।

धर्मसंहितामें लिखा है कि नृत्य जिसकी उप-जीविका है, वे निष्कष्ट समझे जाते हैं, यथा—रजक, चर्मकार, नट प्रभृति अति निष्कष्ट जाति है । देवात् यदि इनका अन्न भक्षण किया जाय, तो प्रायश्चित्त करना होता है । मनु प्रभृति सभी धर्मशास्त्रोंमें नट-जाति और नृत्यका उल्लेख है । अतएव इस देशमें नृत्य-चर्चा अत्यन्त पुरातन है, इसमें जरा भी सन्देह नहीं ।

मूलका उद्धरण ।

“देवाभ्युपा प्रसीतोऽप सालमानरसुधयः ।

सविलासोऽङ्गविक्षेपो नृत्यमित्युच्यते बुधैः ॥”

(सङ्गीतशामोदर)

जिस देशकी जंसी रूचि है, तदनुसार ताली, मान और रत्नायित विलासयुक्त अङ्गविशेषका नाम नृत्य है । नृत्य दो प्रकारका है, ताण्डव और लास्य । पुंनृत्यको ताण्डव और स्त्रीनृत्यको लास्य कहते हैं ।

तण्डव नामक मुनिने ताण्डव नृत्यकी विधि रची थी । यह विषय भरतमल्लिकने अमरकोषकी टीकामें

विस्तृतकल्पे सिद्धा है। ताण्डने चौर काण्ड भी दो दो प्रकारके होते हैं,—दिनचि चौर बहुकल्पक। पश्चिमयग्यव पञ्चविधेयको दिनचि चौर सिद्धि में छिद्र घेद तथा पनेक प्रकारके मार्गके पश्चिमय चौर चवे बहुकल्पक कहते हैं।

भास्करमुनि भी दो प्रकारका होता है—कुरित चौर योगत। पनेक प्रकारके भाव दिक्कति रूप मायक-नायिका एक दूतरका सुम्भन, पाण्डित्यन पादि करते हुए जो मूख करती हैं, वह कुरित कहलाता है। जो नाच नाचने बाकी चवेभी पाप ही नाच वह योगत है।

मानवे भाव चौर कायके लयको उत्पत्ति है। जोहि लय चौर ताण्डने यमावह हो कर सुता करमा होता है। जितने प्रकारके विगेष विगेष मूख हैं, उनमेंसे घमसा केरं पचात् विस्तरकक पञ्चविधेयको जो मूख का नर्तन कहते हैं। नर्तननिर्घंयमे सिद्धा है—

'लंघिते चरेतिर्ध्वं बभितानुदेवमम् ।
खेव दर्शितं वन कर्त्तुं कल्पते तदा' (नट वनिर्घंय)
नट नामा प्रकारके पञ्चविधेयके माव लोको का जो चित्तानुभवन करता है, उसीको नर्तन वा मूख कहते हैं। वह नर्तन तीन प्रकारका है—माव, मूख चौर सुत।

इनमेंसे मावनाटकदि चर्चाम् इष्टकाय चौर नटु मत कहा, दीय, इति, भाव चौर रकादि चार प्रकारके पत्रिनत्र द्वारा प्रदर्शित होनेके उचि नाट्य चौर कोरं पाक्काविद्या को पुष्टकमें अनुगत वा नियय विधानके चर्चाम नहीं है। पचव रचनावादि पश्चिमय द्वारा विभू कित चौर तत्तत् रचनावादि पश्चिमय द्वारा प्रदर्शित होती है, चवे मूख कहते हैं। यह रचनाकल्पद्वारे होने पर कभी मनुष्यो का मनोहारी होता है। पश्चिमय वर्जित, चर्चामकारजनक पञ्चविधेय विधेय का नाम मूख है।
'हाल्यदारासिद्धिके रीचमत्तन्त्रांशोविनम् ।
अर्थात्तानिचमत्तन्त्रांशुत्त वननिर्घंयम्' (वर्तन निर्घंय)

यह मूख तीन प्रकारका माना गया है—विषय, विच्छेद चौर मूख। चर्चाम् कल्पके प्रत्य चौर रक्ष्मिं परि लसक रखादि प्रकारका नाम विषय मूख है। यह मूख मन्त्रांशो नाचोकर जोन करते हैं। वेकल्पजनक

शिशुवादि व्यापारका नाम विच्छेद मूख चौर पत्य लय काच पचनमनपूर्वक कल्पनादि गति विधेयका मम कल्प मूख है। यह मूख रास-रितियोंमें व्यपहृत होता है।
नर्तक वा नर्तकीको रक्ष्मिमें प्रवेय 'वर सुप पादि उल्बूट बल किकक देनो चाहिसे चौर तत्र पक्षसे पशुक्य तावसे कोमल मूख पारम्भ करना चाहिये। विषय चौर चोइप्रविहीन मूखका नाम कोमल मूख है।

रक्ष्मिमेंसे बादको मूख किया जाता है वह दो प्रकारका है—बन्ध चौर चर्चम् मूख। बन्ध मूखमें गति नियम चौर चारो प्रभृति विविध शिक्षापांका नियम रहता है। चर्चम् मूखमें यह नहीं रहता।

मूखको मध्य पनेक व्यापार चौर ज्ञातय्य विषय हैं। मद्रक, चण्ड, भ्रू, सुख, बाहु, हस्तक, चालक तत्तद्वर, हस्तप्रचार, करवर्म, पैर कडि, पडि, खानक, चारी, नारक, ऐचक प्रभृति शारीरिक पनेक प्रकारके व्यापार हैं। मूखमाका, नर्तकचक्षुच, रखावच, मूखाइ चौर लठके लोठक इकादि पनेक प्रकारके ज्ञातय्य भी हैं। पश्चित विद्वतने ये पच विषय नर्तननिर्घंयके चर्चाम प्रकारमें विस्तारकल्पने लिखे हैं।

मूख चौर पश्चिमयमें मद्रक, इति चौर भ्रू चाल नादिके पनेक प्रकारके भेद हैं जिनमेंसे मद्रकको चर्चाममें १८ प्रकारके भेद बतनाये गये हैं। दोप-रहित रचनावादिचर्चक चवलोवनका नाम इति है। यह इति तीन प्रकारको है—रचइति, ल्याविइति चौर सच्चारिइति। इन तीनोंके पनाका व्यभिचारिइति भी एक है। नर्तक वा नर्तकिकोंके लिये यह इतिवचनाम कोना कर्मिन है, व सा कर्मिन चौर दूनटा कुल भी नहीं है। मूखार, मोर, कचच पादि सभी रचनाय इनो इति द्वारा मूर्ति मान् करने होते हैं। इनमेंसे रचइति ८, ल्यावि भावकमायक इति ८ चौर व्यभिचारिइति १०, कुल ११ प्रकारकी इति हैं। इनके बिना ताराचर्म चर्चाम् लचि शिक्षारवाचक व्यापार भी है।
मूखिचार ० प्रकारका है—चर्चमा उचिचमा कुचिमा रचिमा, पतिता चनुरा चौर मूखुटी। पत्यल्यत रचनाय जिनमें सुगम प्रकाय हो, दिवे मुकमर्चको मुगदान कहते हैं। यह मुगदान

४ प्रकारका है। बाह्य (अर्थात् नृत्यकालमें किस प्रकार हस्तसञ्चालन करना होता है, वह) १८ प्रकारका है— यथा ऊर्ध्व, अधोमुख, तिर्गक, अपोविह, प्रसारित, अचिन्त्य, मण्डल, गति, स्वस्तिक, वेष्टित, आवेष्टित, पृष्ठानुग, अविह, कुञ्चित, सरल, नम्र, आन्दोलित और उल्लारित। नृत्यकालमें अनुरागजनक अथवा अथच अर्थप्रकाशक जो हस्ताङ्गुलिका विन्यास वा विक्षेप-विशेष क्रिया जाता है, उसे हस्तक कहते हैं। यह हस्तक तीन प्रकारका है—भंयुत, अमंयुत और नृत्य-हस्त। फिर संयुतहस्तके ३८, अमंयुत और नृत्यहस्तके ३२ भेद वनलाये गये हैं। पताक, हंसपत्र, गोमुख, चतुर, निकुञ्चक, सर्पशिरा, पञ्चाय, अर्धचन्द्रक, चतुर्मुख इत्यादि नृत्यके ही भेद कहे गये हैं।

चालक—अंगो वा अन्यप्रकारके लययन्त्रका अनुगत कर हस्त विरेचनाका नाम चालक है। नृत्यमें इस चालक-विषयके अनेक विवरण लिखे गये हैं। इसके अतिरिक्त करकर्म है, यथा—उत्कर्षण, विकर्षण, आकर्षण, परिग्रह, निग्रह, आह्वान, रोधनसंश्लेष, विश्लेषरक्षण, मोक्षण, विक्षेप, धूनन, विसर्जन, तर्जन, छेदन, भेदन, स्फोटन, मोटन, ताड़न ये सब हस्तकर्मके नामसे प्रसिद्ध हैं। नृत्यकार्यमें इन सब हस्तकर्मोंका विशेषरूपसे ज्ञान रहना आवश्यक है।

हस्तचेत्र—पाश्र्वहाय, मंमुख, पश्चात्, ऊर्ध्व, अधः, मस्तक, ललाट, कर्ण, स्कन्ध, नाभि, कटि, शीर्ष, ऊर्ध्वहाय ये तैरह हस्तचेत्र अर्थात् हस्तविन्यासके प्रधान स्थान हैं। नृत्यकालमें इन सब स्थानोंमें हस्तविन्यास करना होता है।

कटि—निर्दीप नृत्ययोग्य ऋग कटि ६ प्रकारकी है, यथा—ऊर्ध्वा, समाच्छिन्ना, निवृत्ता, रेचिता, कम्पिता और उद्वाहिता। नृत्यमें इनका साधन और लक्षण विशेषरूपसे जानना आवश्यक है।

चरण—नृत्यके उपयुक्त चरणके साधन और लक्षण तैरह प्रकारके हैं, यथा—सम, अञ्चित, कुञ्चित, सूच्य, तलसञ्चर, उद्वेष्टित, चटित, उल्लेखक, वदित, मर्दित, पाण्डिग, अस्त्रग और पाश्र्वग, नृत्यमें इनका भी विशेष लक्षण जानना आवश्यक है।

स्थानक—आनुरक्तिजनक अथवा अङ्गसन्निवेशविशेषका नाम स्थानक है। यह स्थानक असंख्य प्रकारका है, जिनमेंसे नृत्यमें २७ प्रकारके लक्षण प्रयोजनीय हैं। इनके नाम ये हैं—समपाद, पाण्डिग, स्वस्तिक, संहत, उल्लट, अर्धचन्द्र, मान, नन्द्यावर्त्त, मण्डल, चतुरस्र, वैशाख, आवहित्यक, पृष्ठोत्थान, तलोत्थान, अश्वक्रान्त, एकपादिक, त्र्यङ्ग, वैष्णव, शैव, आलीढ, खण्डसूचि, प्रतालीढ, समसूचि, विषमसूचि, कूर्मासन, नागवन्ध, गारुड और ह्यभासन।

चारो—इसका साधारण लक्षण यह है कि जिनसे पाद, जहा, वच और कटि ये सब स्थान आयत्त किये जाय। आयत्त ही जाने पर तट्टारा विरचन करनेका नाम भी चारो है। सञ्चरणविशेषमें उनके किमो अंशका नाम चागीकरण और किसी अंशका नाम व्यायाम है। इस व्यायामके परस्पर चटित अंशविशेषका नाम खण्ड और खण्डसमूहका नाम मण्डल है।

“चारीभिः प्रस्तुतं त्वं चारीभिर्वेष्टितं तथा।

चारीभिः शरणीष्व चार्यो युष्टेयुकीर्तिनाः।”

(नर्तकनिर्णय)

चारो प्रथमतः दो प्रकारकी है—भौमी और आकाशिका। भूमि पर सञ्चरण विशेषका नाम भौमी और शून्यमें गतिविशेषका नाम आकाशिकाचारो है। इन दोनों प्रकारकी चारोका आशय ८२ प्रकारका है। इनके नाम ये हैं—समपादा, स्थितावर्त्ता, शकटास्या, विच्यवा, अर्धङ्गिका, आगति, एलका, क्रीडिता, सममयिता, मतन्दो, उत्स्यन्दिता, उड्डिता, स्यन्दिना, वहा, जनिता, उन्मुखी, रथचक्रा, परोहता, नूपुरपादिका, तिर्यङ्गसुखा, मराला, करिहस्ता, कुलीरोका, विश्लिष्टा, कातरा, पाण्डिगरेचिता, ऊरुताडिता, ऊरुवेणी, तलोद्दृष्टा, हरिणत्रासिका, अर्धमण्डलिका, तिर्यङ्गकुञ्चिता आदि भौमी चारोके अन्तर्भूत हैं। अतिक्रान्ता, अपक्रान्ता, मृगभ्रुता प्रभृति ३१ प्रकारकी आकाशचारी हैं।

करण—नृत्यकालमें हाथ हाथ जुड़ कर, पद पद जुड़ कर वा हाथ पर जुड़ कर जो नृत्य किया जाता है उसका नाम करण है। यह करण नाना प्रकारका है जिनमेंसे १६ प्रकारके करण नृत्योपयोगी हैं। इन सोलहोंके नाम ये हैं—लीन, समनख, द्विज, गङ्गावतरण, वैशाख,

रचित, पञ्चाङ्गमिश्र, पुष्पपुट, पाख, आहु, अर्धबाहु, टण्डपख तन्त्रविद्यासिद्ध, विष्णुस्तोत्र, अन्वयसंज्ञक, स्थापित अन्वयसिद्ध, नामगता धोर ह्यविष्णु । नृत्तमै इत्येव सप्रवादि नाम्ना परमाव्ययकै ।

अपरमै विन सन् पदार्थोका सङ्घेय विद्या मया, सन्धे संयोग धोर द्वियोगवचन 'अनेक प्रकारके नृत्त को सङ्घर्ष के धोर जोसे भो है । नृत्त कुञ्ज भो नहो है, कश्चित् नियमो को पाठ्यत कर ताकस्यसंयोगे हो नह नृत्त कश्च्यता है । यदि नृत्त करना हो, तो पूर्वोक्त समो नियमोका मञ्जीमैति ज्ञानना आवश्यक है । प्रथमतः नृत्त दो प्रकारका है बन्ध धोर अनिबन्ध । यत्प्रादि नियमोके पचोन लो-नृत्त है, उदका नाम बन्धनृत्त धोर अनियमके पञ्चायु केवक ताकनवस कुञ्ज नृत्तका नाम अनिबन्ध नृत्त है । इत्य बन्ध धोर अनिबन्ध नृत्तके पञ्चिकायके नाम दिने जाते हैं । यथा—इमलवर्षेणिका नृत्त मकरवर्षेणिका धोर मारुतिनृत्त, भागवी नृत्त संभौनृत्त पद्यनृत्त व सोनृत्त कुञ्जो नृत्त, रत्नगोनृत्त, नवगामिनो नृत्त, निरिनृत्त, अरुपनिरि-नृत्त, मित्र नृत्त, विमनृत्त, मिक, पञ्चश्रीक, कुमाङ्ग, अक्षय्य, नामव्य, व्रतकृतिका, कासुक, लन, प्यक, पपक, रविचक्र पद्यव्य इत्यादि ।

नेरिनृत्त-अतुरसमै जित करके राक्षनामक ताकवे लो-विश्वजित लयके पद्यत को कर निरिनृत्त पारण्य करना चाहिये । लीङ्गे रव चक्र, पाठ धोर यथावोप्य गतिका पञ्चकर्मन करना चाहिये । चारो दिगामै यथावद्यु को कर तक्षतचार करना चाहिये । नाम धोर दक्षिण भागमै मोरि का विद्युदि गतिका जोना आवश्यक है ।

चक्रवन्द-यद्य नृत्त किमी सुनताकवे पारण्य करे, लीङ्गे सर्वोपर्य धोर अनेक प्रकारकी यति द्वारा सुन्दर रूपसे प्रकृत कुमाङ्ग नामक मोतकालिका मोत धोर उस कालिके ताकवी जोकना करे । बाद इष्ट, वाङ्, कामपद पादि क् पञ्च परिमित ताम द्वारा मिक्का कर क-पक ताम यदि इमान् माझामै सिद्धा जाय धोर हुन एव लङ्ग इत्ययं पदि सभसे रई, तो पूष पूर्व माझाया परितोग कर क्रमसेः पञ्चमादि पञ्चवर्षे नृत्त करना चाहिये । नृत्तविद्याविद्यारदीनि इकोको चक्रवन्द कइ है । (नर्तकसंज्ञक)

इम वन नृत्तको विचक्र यति संविद्यमानमै कइया गया । पाञ्चकल इममै पञ्चिकाञ्ज नृत्त प्रचलित देखमैमै नहो पाते । पमो सचराचर जो नृत्त प्रचलित है ये धव प्रायः प्राहुनिव्य है । इममै विद्ये विद्ये काईनाय पादि पवित्र है । नरत कनिचैयके सिद्धा नृत्त प्रयोग, नृत्त विकास नृत्तसर्वेण, नृत्तयाप्य धोर अयोकमक विर चिन नृत्तप्राय नामक करै एक पञ्जीमै नृत्तके प्रकर पादि विमोपक्यके कर्षित है । मञ्जिनामै विद्यातायुं भौप नाट्यको टोकांमै नृत्तविकाक धोर नृत्तसर्वेणका सङ्घेय विद्या है ।

नृत्तवाक्यो (स० ली०) मञ्जिक्यपीद ।
नृत्तविद्य (स० लि०) नृत्त विद्य यज्ज । १ नर्तनविद्य,
जिसै नाच विद्य हो । (पु०) २ ताण्ड्यविद्य महादेव ।
३ कालि विद्या एक प्युचर ।

नृत्तयाशा (ल० ली०) नृत्तस्य शान्ता । नाट्ययज्ञ,
अचर ।

नृत्तज्ञान (व० लो०) नृत्तस्य ज्ञानम् । नृत्तका ज्ञान,
नाचनीकी जयक ।

नृत्तेश्वर (स० पु०) महाभैरवमैद ।

नृत्तुर्म (स० पु०) सेनाका चारो ओरका घेरा ।

नृत्तैव (स० पु०) नृत्तु नरैषु मञ्जे देना, ना धिच इव
शत्रुपतिसमाभो वा । १ उडा । २ ब्राह्मण ।

नृत्तमै (स० पु०) सुनैरज्ज इव चरतो यज्ज इति
पतिच् (चरामैश्चि कैपकात् । वा ३।३।२३) १ कुपैर ।
(लि०) २ नरवर्मैकुत ।

नृत्त (स० लि०) मनुष्य कर्तव्य योजित, पादमोके
योषा वृषा ।

नृत्तमन (स० ली०) नृत्तमै नृत्तमै नाम कर्मणि क्युट्
पूर्व पदादिति पूर्व्ये प्राप्ते सति कृत्वादिनात् न चत्वम् ।
मनुष्यमनमोय देनादि ।

नृत्त (स० पु०) नृत्तु नरात् पाति रक्षति इति नृत्त पा
क । १ नरपाति, राजा ।

विनका पञ्चिकार शोदक योजन तक विश्वत हो,
अन्धे नृत्त कइते है । इत्ये मतगुण पञ्चिक होमिसे
राजा वा मन्त्रसेव्यर धोर इत्ये भी इय सुच पञ्चिक
होमिसे रामैश्च कइते है । नृत्तय वा इव प्रकार है—

“अपुत्रस्य नृपः पुत्रो निर्धनस्य धनं नृपः ।
अमातुर्जननी राजा असातस्य पिता नृपः ॥
अनापस्य वृषो नाथः तामस्तुः पार्थिवः पतिः ।
अनृत्यस्य वृषो वृत्यः नृप एव वृषां सखा ॥
सर्वदेवमयो राजा तस्मात्त्वामर्थये नृप ॥”

(शालिकापु० ५० अ०)

राजा अपुत्रका पुत्र, निर्धनका धन, मादहोनको माता पिदहोनका पिता, अनाथका नाथ, जिसके भर्त्ता नहीं है, उसका पति, अभृत्यका वृत्य, एकमात्र राजा ही सबकी सखा है, राजा सर्वदेवस्वरूप है। नृपकी दुष्टोंका दमन और शिष्टोंका पालन करना चाहिए। जगत्में अराजकता फैल जाने पर चारों ओर हाहाकार मच जाता है, मनुष्य डरसे विह्वल हो जाते हैं। इसी कारण भगवन्ने चराचर जगत्की रक्षाके लिए राजाओंकी सृष्टि की है। इन्द्र, वायु, यम, सूर्य, अग्नि, वरुण, चन्द्र और कुबेर इन षट्दिक्पालोंके अंशसे राजा जन्मग्रहण करते हैं। इसी कारण राजाको सर्वदेवमय कहा है।

मनुसंहितामें नृपोत्पत्तिका विषय इस प्रकार लिखा है—

‘राजा षट्दिक्पालोंके अंशसे जन्मग्रहण करते हैं। इस कारण वे अत्यन्त तेजस्वी होते हैं। नरपति प्रभावमें अग्नि, वायु, सूर्य, चन्द्र, यम, कुबेर, वरुण और महेंद्रके समान हैं। नृप देवता ही हो कर मनुष्यके रूपमें अवस्थान करते हैं, इसलिए उन्हें नरदेव कहते हैं। राजा प्रयोजनीय कार्यकलाप, स्वकीयशक्ति और देशकालकी सम्यक् पर्यालोचना करके धर्मानुरोधसे सब प्रकारके रूप धारण किया करते हैं। जिनके प्रसन्न रहनेसे महती श्रेष्ठि प्राप्त होती है, जिनके पराक्रमप्रभावसे विजय लाभ होता है और जिनके क्रोध करनेसे मृत्यु दुःखा करती है, वे सब तेजोमय हैं। किसीकी राजाके प्रति क्रोध वा श्रेष्ठि करना कर्त्तव्य नहीं है। राजा शिष्टोंके प्रतिपालन और दुष्टोंके दमनके लिए जो धर्मनियम संस्थापन करते हैं, उन नियमोंका कमी उल्लङ्घन नहीं करना चाहिए। विधाताने राजाके मङ्गलके लिए सर्वप्राणियोंके रक्षाकर्त्ता, धर्मस्वरूप और प्रामाज ब्रह्मतेजो-

मय दण्डकी सृष्टि की। राजा स्वयं उस दण्डका परिचालन करते हैं। इस दण्डके भयसे चराचर जगत् अपना अपना सुख भोग किया करता है, कोई भी स्वधर्मसे विचलित नहीं हो सकता। एकमात्र दण्ड ही चारों वर्णोंके धर्मका प्रतिभूस्वरूप है। दण्ड ही सारे प्रजाका शासन और रक्षणविषय करता है। सबके निद्रित होने पर एकमात्र दण्ड ही उन्हें जागरित करता है। राजाको उचित है, कि ये प्रजाम ही कर धर्मानुसारके दण्डको परिचालना करे।

राजाओंके कर्त्तव्यकर्म—नरपतिकी चाहिए, कि वे शास्त्रानुसार दुष्टोंको दण्डविधान, विदेशीय गद्दुओंको तोच्छ दण्डसे दमन और अक्रपटभावसे प्रामोय स्वजनोंके प्रति सरल व्यवहार करे और कम अपराधमें ब्राह्मणोंको मजा न दे।

जो राजा सदाचार और सुप्रथापूर्वक शास्त्रानुसार राज्यशासन करते हैं, यहाँ तक कि यदि उन्हें सन्ध-वृत्ति द्वारा जोषिका-निर्वाह करना पड़े तथा उन्हें धनसम्पत्ति बहुत थोड़ी हो, तो भी जो प्रजाकी रक्षा करनेमें सुख नहीं मोड़ते, उनकी योगराशि संसार भरमें फैल जाती है। जिन राजाओंका आचार व्यवहार इसके विप-कुल विपरीत है, उनके अत्यन्त धनमाली होने पर भी इस लोकमें उनकी निन्दा और परलोकमें नरक होता है। राजा प्रतिदिन मर्बरे शय्याका त्याग कर बिद्वेष और नीतिग्राह्यकुशल ब्राह्मणोंको सेवा करे और वे जो कुछ कहें उसका प्रतिपालन भो करे। राजाको विनयी होना सर्वतोभावे उचित है। राजा कामज दम और क्रोधज भाठ इन अठारह प्रकारके वस्त्रोंमें कदापि आसक्त न होवे। वे सन्धन्वीके साथ परामर्श करके पद्वर्गका विचार करे।’ (मनु० ७ अ०) विशेष विवरण राशन्-गन्दमें देखो। २ नृपभक्त, ३ राजादनतृप्त, खिरनोका पेश। ४ तगर-पादुका।

नृपकन्द (सं० पु०) नृपप्रियः कन्दः, कन्दानां नृप-अष्टो वा। राजपलायुः, खाल प्याज।

नृपगृह (सं० श्लो०) नृपपाषां गृहम्। राजमन्दिर, राजाका मङ्गलान। राजाओंका कैसा घर होना चाहिए, उसका विषय ब्रह्मसंहिता (५३ अध्याय)में और

धोयमयनोतिपरिमिट (१ पञ्चाय) में विम्वरूपसे लिखा है ।

मृपञ्चय (स० पु०) पञ्चान् मृदान् चवति लि-ञ्चय् ।
घोरव मृपसिद्ध ।

मृपतव (स० पु०) १ चारवचद्वय चमत्तास । २ राजा दमोद्वय, खिरमोका पिङ्ग ।

मृपता (वि० श्लो०) राजावन राजाका गुण या भाव ।

मृपति (स० पु०) पति पा इति, मृषा पतिः ६ तत् १ राजा । २ छत्रे ।

मृपतिवचन (स० पु०) १ बटिकाव्य वचनदत्तोच्च धोयव निगोव । रवेन्द्रवारन प्रथमं वचनी प्रस्तुत-प्रवाची इव प्रकार लिखी है—आवङ्ग, अवङ्ग, मोदा, इलायचो, मोहागा, डौम, जोरा, नैवयन मोठ, संव्यवत्तवच, कोइ, पञ्च, पारा वच्य व घोर ताव प्रञ्च ८ तीका, मिचं ११ तीका इन चवचो वचरीके दुषमं दीउ वर मोलो बनते हैं । श्रीमन् गहननायने वङ्गो शोचसे वचका पाविष्कार किया है । इचके देवन करमिधे तोउं शोचननाम घोर रोगो रोवने सुख होता है । चवचो पाविष्कारको वच एक वचन भोवच है । (रवेन्द्रवारवैमव वदनीवि०) इचके मिचा इच पविष्कारसे इहम्नृपति वचनम घोर दो प्रकारका 'महापराव मृपतिवचनकरव नामक चोइबियोकी प्रस्तुतवचको लिखी है ।

इहम्नृपतिवचनको प्रस्तुत प्रवाचो—पारा, गन्धक मोइ, पञ्च, शीसक, चिता, लिशोव, घोहामा, कावजल डौम, दाइचोना, इनायचो, अवङ्ग, निजयन, शीरा पीठ, संव्यवत्तव घोर मिचं प्रञ्च ८ एक तोना से वर चये दो चानि भर स्वचं पदरवके रच घोर पाँचसे इचमें मावना दे वर दो माये भर को मोही बनाने । मात-काव वड वर इने चानिसे को सब पढाव मोचन बिसे काव है मसोमति पाव सिसे हैं । इच धोवचके देवन करमिधे कम्मिमात्त, चत्रोचं, पयं, चवचो चामाचीचं, वदनी चादि रोम प्रममित चोउं हैं । (रवेन्द्रवारवैमव, वदनी-वि०) । मृपतिवचनम चोवच मैपञ्च राजाचोसिं शो मृपतिवचनम नामसे प्रसिध है । इहम्नृपतिवचनका नाम इहम्नृपतिवचन है । (नेवन्दरवचो) (वि०) २ राजापाँटा विव । (श्लो०) लिखी टाव । ३ राजपञ्चो, राजमचिबी ।

मृपतिवचनो—ध्यावपुरके एक राजा । इनके परवर्ती राजा अयवर्मनि महुन्द्र पर्वत पर जा कर राज्यकावन किया ।

मृपतुङ्ग—१ दाविपाताव व राइकूट व योव एक राजा । ये इय योविन्द्रावके पुत्र थे । मिन्द्राव प्रदेशके पार्लेट प्रिसेधे को तावकावन प्राव वृथा थे जसमें इनका व म परिचय है । इन तावकावन द्वारा इचोने प्राइचोको 'प्रतिमादेवी वसुदेवो महुन्व' नामक धाम दान किया । इचोने माहुमासोकी कन्या वृषिबी माचिक्वाये विवाह किया या घोर वासुक पञ्च, मच चादि जालियों को कोत कर दीके माव्यैरनगरका मुनिर्मिर्माच किया । यही नगर इनके व मचोको राजधानीरूपमें मिना जाता था । वच विचोने नगर वत्तमान निवामरावके पला सुंठ मानवैरा वा मावकेइ है ।

इचोने बहुत दिन तक राज्य किया था । ७०१ मचमें लकीर इनेके राज्यकावका एक घोर तावकावन यादा गया है । पिठट लाइवने रम चमोचवर्ष घोर पतिमयवचन इनके को नाम बतवाये हैं ।

२ उच व मचे एक कुलरा राजा । ८११-८१२ मचमें चन्द्रपञ्चके वचनचमें लकीर आरवाइ प्रिसेधे वङ्गा पुर ताहुकमें इनको एक विवाहविधि है । उच विधिये जाना जाता है, वि ७४१-८१७ मचके मच इचो न २५ मोमरावके वाव हुइ किया । रण्डुइरमच व हैको ।

मृपञ्जी (व० श्लो०) मृषा पतिः, पालविज्ञो, भावादेय-नामकात् जिघां को२ । मनुचोको पावबियो श्लो, वइ घोरत को मदीका पावन करतो है ।

मृपञ्च (व० श्लो०) इरव्य मावः, मृपञ्च । राजव, राजा का नाम ।

मृपञ्चम (व० पु०) मृपवियो हुम । १ चारवच, चमत्तास । २ राजादमोद्वय, खिरमोका पिङ्ग ।

मृपञ्जी (वि० पु०) परपुराम ।

मृपमिव (स० पु०) मृपार्चो मिव । १ विहव म, एक प्रकारका वच । २ राजपञ्चो, काव प्यात्र । ३ राम मरवच, वरवचका । ४ दाविष्काव, वङ्गवचन । ५ पाव्यवच, नामका पिङ्ग । ६ राजगूचपयो, राजगुपा, पदाकी या पार्वतो तोता । (वि०) ७ राजवचनम, राजाका विव ।

नृपप्रियफला (सं० स्त्री०) नृपप्रियफलं यस्याः ।
वात्सीको, वैंगन ।

नृपप्रिया (सं० स्त्री०) नृपप्रियस्त्रियां टाप् । १ केतकी
२ राजखजूरो, पिण्डखजूर ।

नृपवदर (सं० पुं०) वदराणां नृपः, राजदन्तादित्वात्
पूर्वनिपातः । राजवदरहृत् ।

नृपमन्दिर (सं० स्त्री०) नृपाणां मन्दिरम् । राजगृह,
प्रासाद ।

नृपमाङ्गल्यक (सं० स्त्री०) नृपस्य साङ्गलयं यस्मात्,
कप् । आङ्गलहृत्, तरवटका पेड़ ।

नृपमान (सं० स्त्री०) नृपस्य तद्भोजनस्य मानमावेदकं
वाद्यं । एक प्रकारका वाजा जो राजाभोजके भोजनके
समय बजाया जाता था ।

नृपमाप (सं० पुं०) राजमाप ।

नृपसूत्र—दाक्षिणात्यके पूर्व चालुक्यवंशीय एक राजा ।
इसके पिता त्रिपुरके कलचुरिवंशीय थे और इसकी
माता हैहयवंशसम्भूता थी । चाणक्यवंश देखो ।

नृपलक्ष्मन् (सं० स्त्री०) नृपाणां लक्ष्मन् इ-तत् । राजचिह्न,
छत्रचामरादि ।

नृपलिङ्गधर (सं० पुं०) धरतीति छ-धच् । नृपलिङ्गस्य
धरः । नृपवेशधारी ।

नृपवल्गव (सं० स्त्री०) १ चक्रपाणि दातोक्त पक्ष हत और
तैलविशेष । भैषज्यरत्नावलीमें इसकी प्रस्तुत प्रणाली
इस प्रकार लिखी है—तिलतैल ज्या गव्यघृत ॥ सेर,
दुग्ध ७२ सेर, भावार्थ जवक, नृपभक्त, मेद, द्रुचा,
शालपर्णी, कण्टकारी, हड़ता, यष्टिमधु, विडङ्ग, मञ्जिष्ठा,
चीनी, रास्ना, नोलोत्पल, गोक्षुर, पुण्डरीककाष्ठ, पुन-
नंवा, मन्थक, पोपर प्रत्येक २ तोला । तैलके लिए
प्रत्येक द्रव्य २॥ तोला करके देना होता है । नृपवल्गव हृत
वा तैलको यथाविधान प्रस्तुत कर भेवन करनेसे तिमिर,
रात्रिमथता, सिङ्गनाय, मुखनाशा, दोर्गन्ध आदि नाना
प्रकारके रोग प्रशमित होते हैं ।

(भैषज्यरत्ना० नेत्ररोगाधि०)

२ राजासंहृत् । त्रि० ३ राजप्रियमात्र ।

नृपवल्गवा (सं० स्त्री०) १ केतकी । २ महाराजचूतहृत् ।
नृपहृत् (सं० पुं०) रायहृत्, सोनालुका पेड़ ।

नृपण (सं० पुं०) ना पशुविद्य, वा ना चासौ पशुवति ।
१ नरपशु । २ सूख ।

नृपगार्हूल (सं० पुं०) नृपः गार्हूल इव 'सपमियं वग्रा-
दिभिः यो दायै' इति सूत्रेण कर्मधारयः । राजगार्हूल,
राजयेष्ठ ।

नृपगामन (सं० स्त्री०) नृपस्य गामनं इ-तत् । राज-
गामन, राजाका गामन ।

राजाको प्रजा, दास, मृत्य, भर्षा, पुत्र, मिष्य आदि-
के प्रति किस प्रकार गामन करना चाहिये, उसका
विषय श्रोगनम नीतिपरिगिटके १६ वें अध्यायमें विस्तृत-
रूपसे लिखा है । राजगामन देखो ।

नृपसभ (सं० स्त्री०) नृपाणां सभा तस- तत्पुरुषसमासे
स्त्रीबत्वम् (समा राजासमुष्यपूर्वात् । पा २।४।२३) ।
राजाभोजको सभा ।

राजाको चाहिए कि वे सुगुण मनोरमं विकीर्ण,
पञ्च शोष्ठ वा सप्तकीर्ण विस्तृत राजमभा प्रस्तुत करें ।
इस राजमभाके निर्माणका विशेष विवरण श्रोगनस
नीतिपरिगिटके १ अध्यायमें लि । है । राजसभा देखो ।

नृपसुता (सं० स्त्री०) नृपस्य सुता । १ राजकन्या,
राजकुमारी । २ ककुन्दरो, छकूँटर ।

नृपांग (सं० पुं०) नृपाय देयोगः भागः । १ राजाको
देय पहणशरूप भाग । राजाको उपजका छठा भाग करमें
देना होता है इसको नृपांग कहते हैं । २ राजपुत्र,
राजाका लड़का, राजकुमार ।

नृपाकट (सं० पुं०) नृपेण आकटः । क्रीडाके निमित्त
राजकत्तक पकट राजा, चतुरङ्ग आदि खेलनेके लिए
आकट राजा ।

नृपाङ्गण (सं० स्त्री०) नृपस्य अङ्गणं इ-तत् । राज-
प्रासादका प्राङ्गण या भागन ।

नृपाण (सं० स्त्री०) नृपाणां पानं ततो णत्वं । १ कर्म-
नेताका पानयोग्य । (पुं०) २ देवताओंका पानसाधन ।

नृपाह (सं० पुं०) मृपां पाता रक्षकः । मनुष्योंके सर्वदा
रक्षक; मनुष्योंको पालनेवाला ।

नृपात्मज (सं० पुं०) नृपस्य आत्मजः । १ राजपुत्र, राज-
कुमार । २ आत्मातकहृत् । ३ महाराजचूतहृत् ।

नृपात्मजा (सं० स्त्री०) नृपात्मज टाप् । १ राजकन्या,
राजकुमारी । २ कटुमुम्बो, कड़वा घीया ।

सुपाधर (स० पु०) सुपमात्रकर्मण्यं यथा । राजस्य
 यत् । प्रत्येक राजाको बह यत्त यत्त करना चाहिये ।
 सुपाधर (स० पु०) राजकृत्य, राजाभा मोक्षर ।
 सुपात्र (स० झी०) नृप प्रियं यत् । १ राजाका नामक
 शान्तिद, राजमोम धान । नृपयत् यत् । २ राजाका
 यत् ।
 सुपात्र्य (स० झी०) राजपरिवर्तन ।
 सुपामोर (स० झी०) यमीरयति सूचयति मोक्षणकाम-
 मिति, यमि-दूर क, यमीर, नृपयत् यमोर मोक्षणकाम-
 सुचयकायविमिव । एक प्रकारका राजा जो राजाओंके
 मोक्षणके समय राजाका जाता था ।
 सुपामय (स० पु०) यामयाको रोपायां नृप, राजदन्ता
 द्विजात्पूर्वमिवात् । १ राजपत्न्या, यदयोम । यह रो ।
 यमो रोमीका राजा है इसीसे इसको नृपामय कहते
 हैं । नृपयत् यामयो यामि ६-तत् । २ नृपको पीड़न,
 राजरोग ।
 नृपाय्य (स० त्रि०) नृमिर्नखमिदोर्बे पाय्य । देवताओं
 के पागपोष्य कोम ।
 नृपाय्यं (स० झी०) मासिधाम्य, एक विश्वका धान ।
 नृपाय (स० पु०) नृप वासयति पासि-यत् । नृपति,
 राजा ।
 नृपायव (स० पु०) राजप्रासाद, राजाका घर ।
 नृपायस (स० झी०) नृप ह्य पावससि इति पा-सत्-
 यत् । राजाकसंज्ञक मन्त्रिभूमिय ।
 नृपायन (स० झी०) नृपयत् पायनम् । राजासन, तख्त ।
 पर्याय—महासन वि हासन ।
 नृपायद (स० झी०) नृपयत् पायद है-तत् । राजप्राथ,
 राजप्रतिष्ठा ।
 सुपाय्य (स० पु०) सुप याहयति यन्मिति, या-ह्ये-यत् ।
 १ राजपक्षात्, नाल प्यात्र । २ राजा कष्टनामिकाका
 राजनामधारी ।
 नृपीड (स० झी०) कष्टक, जम ।
 नृपीति (स० झी०) पा-रक्षके माथे त्रिम्, पात ईत्वं पीति,
 नृपां पीति ६-तत् । १ मनुष्यरक्षक । (त्रि०) कर्त्तृ-
 तिच् । २ मनुष्य-रक्षक ।
 नृपीयत् (स० त्रि०) नरक्षय ।

नृपीड (स० पु०) १ राजपक्षात्, नाल प्यात्र । २
 राजपदरक्षक, शेरका पीड़ । ३ मोक्षरक्ष, मोक्षका पीडा ।
 नृपीयत् (स० पु०) नृपीयु कर्त्तव्यः । १ राजमाय आना
 कष्टा रक्ष । २ शोभिया । (त्रि०) ३ राजयोष्य ।
 नृपायु (स० पु०) नृपां वायु । १ कर्ममेता अस्त्रिषोर्बी
 वायु । २ नरवायुमात्र ।
 नृपाय (स० पु०) नृपां भगतां । मनुष्योंका रक्षक ।
 नृपीन (स० त्रि०) याकाय जात, जो याकायमें लयप हो ।
 नृपाय (स० पु०) नृपु यजमानिषु मनो यत्त ततो पत्त ।
 १ रक्षितव्य यजमानके प्रति अनुग्रहद्वयिषुक्त इन्द्रादि
 देव । २ जम सम्यक्त ।
 नृपाय (स० झी०) उच्यतेपर्वी एक भद्रानदो ।
 नृपायि (स० पु०) यिपायमेव, एक मृत जो कहींको
 मय कर लग जिबा-करता है ।
 नृपाय (स० पु०) मनुष्यविर्मिद, कर्त्तुं पादमी हो ।
 नृपाय (स० त्रि०) मनुष्यका इला, राक्षस ।
 नृपाय (स० झी०) नृपां मांस । नरमांस पादमीका
 मांस ।
 नृपादन (स० त्रि०) नृपां मादन । अस्त्रिक्, पीर यत्त
 मानका कर्त्तव्याहक सोम ।
 नृपायु (स० झी०) नृपां मिषु नम् । श्रीपुत्रयका
 जोड़ा ।
 नृपाय (स० पु०) ना मिषवेत्त मिष याचते यत् ।
 १ पुत्रपतिवत्त, नरपिषयत् । यत्तुर्वेदके १०-वे अध्यायमें
 इस यज्ञका विधि विवरण लिखा है । २ अविमेट, एक
 अस्त्रिका नाम ।
 नृपाय (स० झी०) नृमिर्नयतेऽयस्यति यत्-यत्-वे क
 ततो पत्त (इन्द्रधरवमहाद । प ८३।२६) यत्, मयसि ।
 नृपाय (स० पु०) नृप-रायां यत्त । एक यज्ञोपनिष एक
 जिनका करना अष्टकमे लिए कर्त्तव्य है, पतिवि-पूजा
 यन्मायतका सम्भार । जो पतिविदेका करते हैं उनके
 पक्षसमाजका पातक नष्ट हो जाते हैं ।
 नृपाय (स० झी०) नृपु-स्मम् । नृपायु न श्रीपुत्रयका
 मिषु न ।
 नृपाय (स० पु०) ना पय कोक । नरकोक, मनुष्य
 कोक ।

नृवत् (स० त्रि०) ना परिचारकादिरस्त्वस्य मत्तुप् वेदे मस्यवः । परिचारक नरयुक्त ।

नृवत्सखि (स० त्रि०) अध्वर्यादि सहाययुक्त कर्मनेता ।
नृवराह (स० पु०) न चासौ वराहस्येति वराहरूपधृक् भगवदवतारः । वराहरूपधारो भगवान् ।

यही नृवराहरूपी भगवान् वलिके द्वारो रूप धे ।
“श्रीकरं रूपमास्वाय द्वारस्य च दुरात्मनः ।
भविष्यामि न सन्देशे ब्रह्म धनुः त्वराग्नितः ॥”

(पद्मपु० सृष्टिसं० २८ अ०)

मैं श्रीकर अर्थात् वराहरूप धारण कर इस दुरात्मा वलिका द्वारी होऊंगा, इसमें सन्देह नहीं । नृवराहदेवकी मूर्ति इस प्रकार है—प्राकार वराहके जैसा, अङ्ग प्रत्यङ्ग मनुष्यके जैसा, हाथमें शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म ; दाहिनी ओर धार्द्रं और शङ्ख, लक्ष्मी वा पद्म, वामकूर्परमें त्र्यौ और चरणयुगलमें पृथिवी तथा अनन्त है । ऐसी मूर्तिकी धर्ममें स्थापना करनेसे राज्यलाभ और अनन्तमें अनन्तस्वर्ग लाभ होता है । (अग्निपु० ३० अ०)

नृवाङ्ग (स० त्रि०) नेत्रबोद्धा, नायकवाङ्क ।
नृवाहन (स० पु०) ना वाहनं यस्य । नरवाहन कुवेर ।
वन्दिक प्रयोगमें गत्व हो कर नृवाङ्गयोग ।
नृवाहसू (स० त्रि०) नरवाहक, इन्द्र और उनके सारथि आदिका वाहक ।

नृषेष्टन (स० त्रि०) ना.वे.ष्टनं यस्य । १. मनुष्यसेष्टित, आदमीसे घिरा हुआ । (पु०) २. महादेव, शिव ।

नृशंस (स० त्रि०) नृनृ-नरान-शंसति, हिमस्तीति नृ-शनसु-अण् (कर्मण्यण् । पा ३।२।१) १ क्रूर, निर्दय । २ परद्रोही, अनिष्टकारी, अपकारी । निर्दिता स्त्रीसे विवाह करनेसे नृशंस पुत्र उत्पन्न होता है ।

चार इतर विवाह अर्थात् गान्धर्व, असुर, राक्षस और पैशाच विवाह करनेसे नृशंस, मिय्यावादी, धर्म और वेदविहीणो पुत्र उत्पन्न होता है । जो नृशंस है, उनका अन्न तक भी खाना नहीं चाहिए ।

याज्ञवल्क्यमें लिखा है, कि नृशंस राजा, रजक, कतघ्न, बधजोषी, चेलधाव अर्थात् बख्कती में स दूर करने वाला और सुराजोषी इनका अन्न खाना निषेध है ।

नृशंसता (स० स्त्री०) नृशंसस्य भावः, भावतल, तत-ष्टाप् । निर्दयता, क्रूरता ।

नृशंसवत् (स० त्रि०) नृशंसः विद्यतेऽस्य, मत्तुप् मस्यवः । पापकर्मा, अपकार करनेवाला ।

नृशङ्ग (स० स्त्री०) नृणां शङ्गम् । अनीक पदार्थ, मनुष्यकी भीमके समान अनहोनी बात या वस्तु ।

नृशोवा—दाक्षिणातारके भोजपुर प्रदेशके पन्तभुंक्त कीलापुर सामन्तराजके अधीन एक ग्राम । यह क्षणा और पञ्चगङ्गा नदीके सङ्गमस्थल पर अवस्थित है । यहाँ क्षणा नदीके किनारे भोपानराजिविराजित घाटके ऊपर नरसिंहदेवका मन्दिर है । सम्भवतः इसी नृसिंहदेवके मन्दिरसे इस स्थानका नामकरण हुआ होगा । यहाँ ब्राह्मण भी रहते हैं । पूर्वीक घाटके दूमरे किनारे करन्दर नगर है । यहाँका घाट जो मा सुन्दर है, वैसे ही तोरवर्ती स्थानसमूहका दृश्य भी मनोरम है ।

नृपद् (स० पु०) नरि पुरुषे अन्तर्धामितया सोदति मट्ट-क्षिप, षेदे पत्वम् । १ परमात्मा । २ कपलक्षपिके पितृ ऋषिभेद । ३ मनुष्यस्थावो ।

नृपदन (स० स्त्री०) नरः नेतारः ऋत्विजः तेषां मदनं, षेदे पत्वम् । यज्ञगृह, यज्ञशाला ।

नृपहनु (स० त्रि०) मनुष्यमें रहनेवाला ।

नृपा (स० त्रि०) पुत्रदाता, लहका देनेवाला ।

नृपाच् (स० त्रि०) प्राणरूपसे मनुष्यको सेवा करनेवाला ।

नृपाता (स० स्त्री०) मनुष्योंके स भक्ता ।

नृपाह (स० त्रि०) शत्रुओंका परास्त करनेवाला ।

नृपाद्य (स० त्रि०) शत्रुओंका अभिभावक, दुष्मनोंकी जोतनेवाला ।

नृपूत (न० त्रि०) पू-प्रेरणे कर्मणि क्त, नृभिः पूतः ३ तत् । स्तोत्रगण कर्त्तृकमेरित ।

नृमार (स० पु०) १ निपादन । २ महाद्रावक ।

नृसिंह (स० पु०) ना चासौ सिंहस्येति कर्मधारयः । १ भगवदवतारभेद, नरसिंहरूपी विष्णु, नृसिंहावतार, दश अवतारोंमेंसे चौथा अवतार ।

“सिंहस्य कृत्वा वदनं सुरारिः सदा करालं च सुहृत्कनेत्रम् ।
मर्दं वपुर्षु मनुजस्य कृत्वा यथौ समां दैत्यपतेः पुरस्तात् ॥”
(अग्नि०)

भगवान् सुरारि आधा शरीर सिंहके जैसा और आधा मनुष्यके जैसा इस प्रकार नरसिंहमूर्ति धारण कर दैत्यपतिके सामने सभामें पहुँचे थे ।

अग्निपुराणके मतसे—शुनि इमूनि स्थापन करनीका
ऐसा विधान है। उनका शरीर ध्यादि, नाम पत्र पर
घतनामक मछीमें माना जायमें चक्र धोर गटा है ऐसी
पत्रकामि है ऐच्छपतिना कच पाक रहे हैं। (अग्नि० १०
अ०) नूनि इ तथा महाविष्णुका मन्त्र धोर पूजादिका
विषय तन्त्रसारमें विशेषरूपसे विद्या है। नूनि इमन्त्र
इस प्रकार है, यथा—

“इम पीरे बरेण पूरे महाविष्णुवन्मठरे ।
उत्कथ्य बह्मात्मय सर्वतो सुखपीयेत ॥
दुष्टि इ भीरण मर मूरुपुत्रु वरेत्ततः ।
वामाग्निहस्ति शीको मन्त्रपत्रः पुःसुः ॥” (तन्त्रकार)
यद्य नूनि इमन्त्र मायादुष्टि धोर सर्वकामद है।
“इमे पीरे बरानिष्णु उत्कथं सर्वतोपुत्र ॥
दुष्टि इ भीरण मर मूरुपुत्रु वामान्म इ”

इसी मन्त्रसे नूनि इदेवकी पूजा करनी चाहिये।
इस मन्त्रसे ध्यादि धोर अन्तमें “ओ” यद्य मन्त्र योम करके
अर्घ्यादि करनीसे धावचका करवाय होता है। इस मन्त्र
का पूजा प्रकीर्ण इस प्रकार है—वामाग्नि पूजापत्रिके
अधुना मातःकलादि करके विष्णुपूजापत्रिकामसे
पीठ्याधाना समस्त कर्म कर चुकनेसे बाद अर्घ्यादि
स्नान, करन्धास, पाङ्गन्धास धोर मन्त्रन्धास करे। पीछे
शुचि इदेवका ज्ञान करनीका विधान है।

ज्ञान—“माविष्यन्दिहपत्रं विवदथा वंस्तत्तत्तपोप
बाहुस्वस्तपुत्रमुत्र विवदव रलोत्तवदपुत्रमम् ।
बाहुर्ना हुतप अचकनतिष्ठ” इ श्लोकान्तरात्
अथा विष्णुपुराणकेअर्थ वन्दे दुष्टि विष्णुम् ॥”

‘शुचि इदेवकी दिहकान्ति माचिष्णादिषो तत्र
अन्वय है, शरीरकी प्रमाथि राक्षसगण धवदा करी
हैं, सोनी जाय जातुके लयप रखे हुए हैं, इनके तीन निम
हैं धोर समूचा शरीर रत्नमूयचके भूवित है। जायमें मद्य
धोर चक्र है, पात्रा शरीर समुपके असा धोर पात्रा
वि इके असा है। निवदव इत्यने अग्निगिष्णाकी नाई
विद्या वादर निवदवी हुई है।’ इस प्रकार ज्ञान कर
के मानकीउपारसे पूजा करे धोर मद्यकामपुत्रुके
विष्णुपूजा पत्रिकामसे पीठपूजा धोर पुनर्वात् ज्ञान
पात्राअर्घ्यादि द्वारा पूजा करके पावचकी पूजा करनी

होती है इस मन्त्रका पुराकरण १२ साल जय है। यथा-
विधि पुराकरण करके हुतन मुक्त पायस द्वारा १२ अन्नार
होम करना होता है।

नूनि इदेवका मन्त्रान्तर—
“पाका अर्घ्येवहरेरुद्रो वदे कः मनुः ।
वदुद्रो वरहो वधितः सर्वदा इ”

पां श्रीं श्रीं लो वृ तथा घट, ये का पत्र नूनि इ
देवके मन्त्र हैं, यह मन्त्र सर्वकामप्रद है। यथाविधान
इस मन्त्रसे नूनि इदेवकी पूजा करनी होती है। इस
मन्त्रका पुराकरण भी साध बार जय है। अथ करनीसे बाद
हुत द्वारा का अन्नार होम करनीका विधान है।

नूनि इदेवका एकाक्षरमन्त्र—
‘अथो वदियास्ते मनुषिभूजमन्त्रितः ।
एवाधरो मद्यः श्रेष्ठ सर्वकामफलप्रदः ॥’

श्री यही नूनि इदेवका एकाक्षर मन्त्र है। यह मन्त्र
सर्वकामफलप्रद माना गया है। इस मन्त्रका पुराकरण
८ साल जय है धोर अथका वर्त्यां होम।

नूनि इदेवका चटाक्षर मन्त्र—
‘अथयुवाः सुतुषारं श्रीरो दुष्टि इ इत्यपि ।
अप्यजरो मद्यः शोको मन्तां कामरो धमिः ॥

‘जय जय श्री नूनि इ’ इही चटाक्षर मन्त्र है जो
साक्षकीसे निजे अर्घ्याच तर माना गया है। इस मन्त्र-
का पुराकरण भी ८ साल जय है धोर अथका वर्त्यां
होम होगा।

शुचि इदेवके पङ्कचर मन्त्रका ज्ञान—
‘शोशाराशोतविष्णु विष्णुभिवहृत्त शीपवूर्वाभिनैव
शाराशारिःकथमस्तुवैमित’ निर्दरितैवशात्रम् ।

इह पत्र अर्घ्यांउत्कथिअन्तर शरधाम्पुत्ररत्त
पीरं पीरयोपैव्द अग्निवसतिविना अन्वीरौ हुष्टि एम् ॥”
इस प्रकार ज्ञान करके पूजा करनी है।

शुचि इदेवके यन्त्रविषयमें तन्त्रसारमें इस प्रकार
लिखा है। शुचि इ यन्त्र—

“यैव लाम्बमन्त्रित इहैश्वरिण्यमन्त्रैःपुत्रार्थधरो
मन्त्रार्थं शुष्टिरो विमन्त्र विच्छिद्येत् किन्वा वक्षिर्हरेत् ।
वाद्यं शोशारौवद्वयहृत्तयोइत्यने बाहुप
मन्त्र सुद्वित्यमामवैपुत्रय वन भीरवम् ॥”

मध्य स्थलमें बोज और साधनामादि लिख कर अष्टदलमें यह लिखे—

“उग्रं वीरं महाविष्णुं ज्वलन्तं सर्वतो मुखं ।

नृसिंहं भीषणं मद्रं मृत्युमृत्युं नमाम्यहं ॥”

इस मन्त्रके चार चार मन्त्रसे विन्यास और उपरके चारों ओर माटकावर्ण अर्थात् अकारादि वर्ण द्वारा परिहृत करना होता है। उसके बाईंभागमें दो भूपुर लिख कर उसके प्रत्येक कोनेमें चौं यह मन्त्र लिखना पड़ता है। इस यन्त्रका यथाविधि पूजन कर शरीर पर धारण करनेमें चंद्र विष अह-दोष, व्याधिनाश, शत्रुध्वंस और लक्ष्मीनाम होता है। भूर्जपत्रलिखित यन्त्र १२ वर्ष तक धारण किया जा सकता है। (तन्त्रधार) नृसिंह अथतारादिका विषय नरसिंह मन्दिरमें देखो।

२ षोडश रतिव्यन्तर्गत नवम बन्ध । ३ नरशेष्ठ, अष्टपुरुष । ४ स्नानाम्भ्यात नृपविशेष ।

नृसिंह—पञ्जाबके अन्तर्गत काङ्गडा जिलेमें विष्णु-अवतार नरसिंह वा नारसिंहदेवका पूजन प्रचलित है। वहाँके प्रायः दो द्वादश्यांश मनुष्य इस पूजाकी विशेष श्रद्धाभक्तिसे करते हैं। स्त्रियोंका विश्वास है, कि यही नरसिंहदेव उन्हें सन्तानादि देते और विपदकालसे रक्षार करते हैं।

इस पूजामें वे लोग एक नारियलकी ले कर घाली पर रखते और पहले परिष्कार जलसे उसे धोते हैं। पीछे उसमें चन्दन घिस कर लेप देते हैं तथा उस चन्दन से उसके ऊपर तिलक काढ़ते हैं। बादमें उस पर अरवा चावल छोड़ते और मालादिसे विभूषित कर उसके घागे धूप जलाते हैं। पूजाके बाद वे मिष्टान्नादि भोग लगाते हैं और उस प्रसादकी अपने तथा पड़ोसोंके बालबच्चोंके बोच बांट देते हैं। साधारणतः प्रति रविवार अथवा मासके प्रथम रविवारको यह पूजा होती है।

यहाँके लोग नरसिंहदेवसे साधारणतः डरते और उनको भक्ति किया करते हैं। सभी अपनी अपनी बांह पर कवच पहनते हैं जिसके ऊपर नृसिंहमूर्ति खोदित रहती है। इसके सिवा बहुतसे मनुष्य ऐसे भी हैं जो कवच न पहन कर अपने घरमें नारियल रखते और प्रति दिन उसीकी पूजा करते हैं। माता वा सास जब यह

पूजा करते हैं, तब कन्या या पुत्रवधूकी उनकां आंघं देना पड़ना है। जब कोई बन्धनारो पुत्रके लिये किसी योगीसे प्रार्थना करती है, तब वह योगी उसे नरसिंह-पूजा करनेकी सलाह देते हैं। प्रवाद है, कि इस प्रकार पूजा करनेसे नरसिंहदेव रातको उन्हें स्वप्न देते हैं। जब किसीको ज्वर लगता है, तब नरसिंहका चेला आ कर उसका रोग भाड़ देता है।

नृसिंह—भारतवर्षके मध्यप्रदेशके अन्तर्गत विषयी जिलेका एक मन्दिराकृति पर्वत। यह वेणुगङ्गा नदीकी उपत्यकाभूमिमें एक मो फुट ऊँचा है। पहाड़के ऊँचे शिखर पर नरसिंहदेवका मन्दिर और मध्यभागमें विष्णुकी नृसिंह-मूर्ति प्रतिष्ठित है। पर्वतके निम्न-भागमें इन्ही नामका एक ग्राम भी है।

नृसिंह—एक राजा। ये कुमारिकाभक्त चम्पकसुनिके कुलमें उत्पन्न राजा नागमण्डनके पुत्र थे।

नृसिंह—अनेक संस्कृत ग्रन्थकारोंके नाम। जो जो ग्रन्थ इनके रचित हैं, उन उन ग्रन्थोंके नाम और ग्रन्थकारोंका यथासंभव परिचय नीचे लिखा है।

१ आपस्तम्बसोमटीका, आमोर्गसप्रयोग, चयनपद्धति, प्रयोग-पारिजात, विधानमाला और संस्कार आदि ग्रन्थोंके प्रणेता।

२ कालचक्र, जातकसानिधि, जैमिनिसूत्रटीका निबन्ध-शिरोमणि-उक्त निग याह, केशवार्कको जातक-पद्धतिकी प्रौढमनोरमा नामक टीका, यन्त्रराजोदाहरण, हिज्जाजदीपिका आदि ग्रन्थोंके रचयिता।

३ गणेश-गय नामक एक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता।

४ दत्तकपुत्रविधानके रचयिता। इनकी उपाधि भट्टकी थी।

५ नलोदयटीकाके प्रणेता।

६ बन्धकौमुदी नामक ग्रन्थकर्ता।

७ वीरनारसिंहावलोकनके प्रणेता।

८ उत्तरताकरटीकाके रचयिता।

९ शिवभक्तिविलास नामक ग्रन्थके प्रणेता।

१० शृङ्गारस्तवकभागके प्रणेता। ये अपनेकी शारोत-वंशोद्भव वतन्ताते थे।

११ कुशलके पुत्र। संचिह्नमारके अन्तर्गत धातुपाठकी गणमात्तं यह नामक टीकाके रचयिता।

१२ एक ज्योतिर्विद् । ये दिवाकरके योत, स्य
दे वसके पुत्र, स्येय व'वसरे भ्रातृपुत्र चोर कर्मनाकर
के पिता थे । इन्होंने निबिदिशामन्विटो वा मिहात्म-
यिरोनबिबामनाजातिके चोर सुय'मिजाल-बाहनामाप्य
रचे हैं ।

१३ जातकमन्त्रोके प्रयोग । ये नामकाके पुत्र
चोर मोदृगप्य गोत्रके थे ।

१४ मारापच महेके पुत्र, मुमि वके योत्र चोर
गोवीनाथके भाई । होयमान राज्यके पत्तगर्त वर
काट्टु धाममें इनका कथन हुआ था । इन्होंने प्रयोगात्
नामक एक स रक्षत पन्थको रचना की ।

१५ एक ज्योतिर्विद् । ये रामदे वसके पुत्र चोर
के मवके योत्र थे । इन्होंने लथिय दे वसके ज्योतिःप्राप्य
पढ़ा था । इनके बनाये हुए पन्थकोमुडी, परदीगिका
चोर विहाजरो के नामक पन्थ मिलने हैं ।

१६ एक बिलगत पण्डित । इनके बनाए हुए
कालनिष'ददीपिकाविवरण चोर सि'मिनि'य'य' लयह
टोका नामक हो ज्योतिर्विद् हैं । ये मगवकाम कोमुदी
के प्रथिता लक्ष्मीहराचार्यके पितामह चोर बिहनाचार्यके
पिता थे । इनके पिताका नाम रामचन्द्राचार्य था ।
इन्होंने मोवासगन्धिनने विद्या सिखा पाई थी ।

१७ महारज्यदायिषोके पटम गुह । इनको उग्राधि
तोय' थी ।

शुभिर चण्डो—मन्दात्र प्रदेशके दक्षिण कथाका जिला
नामके लखिचण्डो तालुकका एक प्रधान नगर । यह
पचा० १३ २' उ० चौर दिशा० ०२ इ० पू के मध्य
पर्य'कत है । १००४ ई०में टांगुखतान अब महारुने
इसो काल हो कर आ रहे थे तब लखिमि एवं रघुनाथको
दखुके पात्रमथके सुरासन तथा पर्व'तोपरि सुरारोह
रनामके चरित्रक दिष्ट बहाका साधोन नाम बहन कर
कमोकावाट नामका एक नगर बनाया । यह नगरके
पश्चिम पन्थुच पर'तमिया पर एक दुर्ग बना कर लखिमि
इस नगरको रक्षा की थी । १००८ ई०में च नरेको विना-
के काक टांगुखतानके वैनाये का नगर तब बुर बनना
रहा । उनमें हीरुके वैनायचन अब पाजहका कर
वाभे, तब च नरेज-वहवारो कुप'के राजासे अमाना

बादनगरका लखन नरम कर जाया । इनके पाय'वर्ती
'यामोमें यात्र भो बहून प्यह सुमकमानो का प्राप्त है ।
शुमि वलाचार्य— एक पण्डित । ये शुभिरकथन के थे ।
कोई कोई इन्होको रामानुजके पिता बतलाते हैं ।

२ धनहमव'स्यमाचके प्रथिता लक्ष्मी शुभिरके पिता ।
३ एक दार्शनिक । इन्होंने महाराचार्य'सन पितरौप-
नियदुमाप्यकी टोका मारापरोरनियदुमार चोर महारा
चार्य-निरागिन स्येतायतरोरनियदुमाप्यकी टोका प्रच-
यन की ।

४ विमानलक्षत पन्थ'पण्डिका नामक पन्थके
टोकाकार ।

५ पल्लमहेको मारतपन्थुटोकाके रचयिता ।

६ मन्थविशामन्विडे प्रथिता ।

७ ज्योति-शास्त्रविहारट एक पण्डित । ये भरहाज
योत्रके बाधुल'रमाय चरदाचार्यके पुत्र थे । इन्होंने काल
प्रकाशिका नामक एक न'सिन्न ज्योतिर्विद्म लिखा है ।

८ लक्ष्मु मारतको सरस्वती नामक टोकाके रचयिता ।

शुमि इक्षवच (स० छो०) शुमि वस्य कथकम् । तन्वपारोह
शुमि इक्षेका कथकमेद, विपविवाक मन्थमेद । इस
कथकको भोजपत्र पर लिख कर पञ्चामिषि हटवमें
धारण करनेसे सब प्रकारको विपद् जाती रहती है ।

तन्वकारने लिखा है—

‘‘भारत उवाच ।
इष्टाग्निरेवदुग्धेव तापेतर वसुधरे ।
मरुतिष्येर्दृमि इरव कवचं हृदिने प्रभो ह
वसु धरुवादिहान् वैलोहव विजयीवैतेतु ह
मटोउवच ।
शुभु मारव वराधि शुभरेष्ठ लोचन ।
कवच मरुवेरुव जैलोहवविषयामिदम् ह
वसु धरुवादिहान् वैलोहव विजयीवैतेतु ह
अह ह कवचो वरुववसुधर वारव एवम ह' इत्यादि ।
एक दिन मारुने जब इन्द्राके महाविष्णु लुकि ह
दिशके कवचके विषयमें पूछा, तब लोहान कथा था,
'हे नारद ! तुम जैलोहवविजय नामक लुकि कवचक
प्राप्य लोह मुद्रक कवचके पन्थसे प्राप्तनाम नाम चोर
जैलोहवविजयी होता है । मैं इस कवचको फारण

करके ऋष्टृत्वशक्ति लाभ को है। इसीको पाठ और धारण कर लक्ष्मोटिवो त्रिजगत्का पालन करती है, महेश्वर इसीके प्रभावसे जगत्संसार करते हैं और देवताओंने इसीसे टिगीश्वरत्व प्राप्त किया है। यह कवच ब्रह्ममन्त्र-मय है, इसमें भूतादि निवारित होते हैं। मुनि दुर्वासा इसी कवचके प्रभावसे त्रिलोकविजयी हुए थे। इस त्रैलोक्यविजयकवचः ऋषि—राजापति, ऋन्द्ः—गायत्री, विभु—नृसिंहदेवता है।

इस कवचको यथाविधि भोजपत्र पर लिख स्वर्ण-पात्रमें रख कर यदि कोई कण्ठ वा वाहुमें धारण करे, तो वह मनुष्य स्वयं नृसिंहरूपो हो जाता है। स्त्रियोंको यह कवच वास वाहुमें और पुरुषोंको दक्षिण वाहुमें पहनना चाहिए। भाकवन्धा, ऋतवत्स, जन्मस्थ्या और नष्टपुत्रास्त्री यदि इस कवचको धारण करे, तो वे बहु-पुत्रवती होती हैं। इस कवचके प्रभावसे सब प्रकारकी विपत्तियाँ जाती रहती हैं और साधकका जीवन शुद्ध होता है, जिस घरमें वा जिस ग्राममें यह कवच रहता है, भूतप्रेतगण उस देशको छोड़ कर बहुत दूर चले जाते हैं। ब्रह्मसंहितामें यह कवच लिखा है। तन्त्रसारमें भी इस कवचका अन्यान्य विषय देखनेमें आता है।

(तन्त्रधार)

नृसिंहगढ़-१ मध्यप्रदेशके अन्तर्गत होलकरराजके अधीनस्थ भूपाल एजेन्सोका एक छोटा राज्य और परगना। यह अक्षा० २३° ३५' से २४° ०' तथा देशा० ७६° २०' से ७७° ११' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ७३४ वर्ग मील है। इसके उत्तरमें इन्दौर, खिलचीपुर और राजगढ़ छोटे; पूर्वमें मधुसूदनगढ़ और भूपाल; पश्चिममें देवास और ग्वालियर तथा दक्षिणमें भूपाल और ग्वालियर है।

राजगढ़के रावतवंशोय सामन्तराजके मन्त्री आजव-सिंहके पुत्र परशुराम १६६० ई०में पिढपद पर नियुक्त हुए। पीछे १६८१ ई०में इन्होंने रावतोंसे यह नृसिंहगढ़ राज्य बलपूर्वक ग्रहण कर लिया और स्वयं इस प्रतिष्ठित राज्यके अधीश्वर हुए। १८वें शताब्दीमें यहांके राजाने मराठोंको अधीनता स्वीकार की और वे होलकरके साथ सन्धि करनेमें बाध्य हुए। उसी सन्धिके अनुसार राज्यकी

आयमेंसे होलकर राजा को वार्षिक ८५०००), ६० देने पड़े।

पिण्डारो टस्युदनसे यह परगना उत्साहित होने पर इस स्थानके अध्यक्ष दीवान सुभगसिंह बाकी खजानेके दायी हुए। उक्त ऋणपरिशोधके लिये उन्होंने तथा उनके पुत्रकुमार चैनसिंहने वहांके स्वैदार महाराजाधिराज वहादुर योजनराजो सन्धियाको एक पत्र लिखा। वह पत्र जब होलकरके दरबारमें पहुँचा, तब राजा महेश्वर राव होलकरने नृसिंहगढ़के अधिपति सुभगसिंहको १२१८ हिजरीमें अपना इम्तान्तर करके परवाना भेज दिया जिसमें छः वर्षको सलीमशाही मुद्रा पर तीन लाख पच्चीस हजार रुपये देनेकी बात लिखी थी।

१८२४ ई०में चैनसिंहने ब्रिटिश सेना पर धावा बोल दिया और आप ही युद्धमें मारे गये। पीछे १८७२ ई०में इनवलसिंह नृसिंहगढ़के सिंहासन पर अधिरूढ़ हुए। इन्होंने ब्रिटिश गवर्नेण्टकी ओरसे राजाकी उपाधि और १५ सलामी तोपें मिलीं। १८७३ ई०में इनवलसिंह मरने पर होलकरने उनके उत्तराधिकारी प्रतापसिंहसे नजराना तलब किया। लेकिन ब्रिटिश सरकारने इस दावाको स्वीकार न किया। १८८० ई०में प्रतापको ऋणके बाट उनके चचा महतावसिंह सिंहासन पर बैठे। महतावकी निःसन्तानावस्थामें नृत्य हुई। पीछे ब्रिटिश सरकारने भाठखेर ठाकुरके वंशधर अर्जुनसिंहको १८८६ ई०में नृसिंहगढ़के सिंहासन पर अभिषिक्त किया। ये ही वर्तमान राजा हैं। इनका पूरा नाम यह है—एच, एच राजा सर अर्जुनसिंह साहब वहादुर, के० सी० आइ० ई०। इन्होंने ग्यारह सलामी तोपें मिलतो हैं।

राज्यको जनसंख्या लाखसे ऊपर है। सैकड़ों पीछे ८० हिन्दूकी संख्या है, शेषमें अन्यान्य जातियाँ। राज्यको आय पांच लाख रुपयेकी है। राजाके पास ४० अम्बारोही, पदातिक और २४ गोलन्दाज सेना है। २ उक्त राज्यका एक शहर। यह अक्षा० २३° ४३' ०' और अक्षा० ७७° ६' पू०, सेहोरसे ४४ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। जनसंख्या लगभग ८७७८ है। नृसिंहगढ़के प्रथम सरदार परशुरामने इस नगरको बसाया। यहां

रुद्र, यमराज, काराधार तथा काकेश्वर चौर टेलियाय
यासिन है ।

३ मन्वन्तरेयके दमोद जिरीका एक प्राचीन नगर ।
यह पचास २३ इ. स. पीर देस ०८ २६ पू० दमोद
नगरके १२ मील उत्तर-पश्चिम तथा इस्फरबनके १५ मील
दक्षिण पश्चिममें अवस्थित है । पश्चिमी पट्ट नगर प्रताप
बाण महामुनेके पत्नीका । सुवर्णमानो पत्तनमें यहाँ
एक दुर्ग चौर मन्दिबद बनाई गई । सुवर्णमान कोन
ब्रह्म स्वामको नगरतगढ़ कहा करती थी, परन्तु महापाण्ड-
वस्युदयमें उक्त नामके बट्टे ने नरसिंहमङ्ग नाम रखा गया ।
यहाँ महाराष्ट्रोंका बनाव हुआ एक दुर्ग है । १८२०
ई०के मद्रासमें पत्नीको येलाने दुर्गका बहुत कुछ पत्र
तहस तहस कर डाला था ।

सृष्टि चक्रवर्ती—द्वितीयाकाण्डकीरिखाके रचयिता ।
सृष्टि चक्रवर्ती (स० ली०) सृष्टि इत्यादि सृष्टि चक्रतो
प्लवितता वा चतुर्दशी । वेदाद्यत्मको यज्ञाचतुर्दशी ।
इस तिथिमें सृष्टि इतिहासके उत्सवमें प्रतानुष्ठान किया
जाता है ।

“शैवाक्षरव चतुरर्था ह्यम्बरा श्रीभूदेःसृष्टि ।
वागसहस्रका वरुणोत्सवः प्रकीर्त चतुर्दशी”

(याचि इ)

वेदाद्यत्मको यज्ञाचतुर्दशी तिथिमें सृष्टि इतिहास
पवतीच हुए ही पतपत्र इस दिन जनके उत्सवमें पूजा
व्रत चौर मन्वन्तरे करना चाहिए । यह व्रत पत्नीके अज्ञि-
का चक्रवर्तीच है ।

मनविधि—“वर्षे वर्षे तु चतुर्थे नव चतुर्दश्याचतुर्दशी ।
महाप्रतिर्दिने चैवं नारैर्वैश्वदेवसि ॥

किंच—विद्याय मरिच वस्तु चतुर्थे तु तु पारभाक ।
एव शाखा प्रवर्धने चतुर्थे प्रपुत्रपत्नी ॥
अथवा चतुर्थे भाषि वाचचतुर्दश्याचतुर्दशी ॥”

(छात्र याचि इत्यादि)

प्रति वर्षे ममवान् सृष्टि इतिहासकी चतुर्दश्याके दिने यह
चतुर्दशी चौर चतुर्दशी व्रत मन्वन्तरे पनुष्ठान है । इस व्रत
का पनुष्ठान करनेमें मन्वन्तरे जाता रहता है । जो इस
दिन प्रतानुष्ठान नहीं करते, वे पापमायी होते हैं ; पत्नी
मन्दिमें चर्चात् सृष्टि चक्रवर्तीमें यह चतुर्थ व्रत पवती

कर्त्तव्य है । इसका पन्थाचरक करनेमें मन्वन्तरे तब तक स्वर्ग
चौर चतुर्दशी तब तक नरकमें जास होता ।

इस सृष्टि चक्रवर्तीका करना सर्वोदाय पवित्रार है, इसमें
ब्राह्मणादि वर्णविभाग नहीं है । विधिवतः मन्वन्तरेयको
एकाय को कर इस व्रतका पनुष्ठान करना चाहिए ।

मन्वन्तरे ममवान् सृष्टि इतिहासके इस व्रतका माहात्म्य
पूजने पर लक्ष्मीका नाम,—पुराणात्ममें पत्नीचतुर्दशी बहुत
दिव नामके एक ब्राह्मण है । वे पत्नीके विद्वान् चौर
नामा प्रकारके चतुर्दश्याचतुर्दशी । उनको पत्नीका नाम का
सुगीका । सुगीका चतुर्दशी सुगीका ही । जनके गर्भके
पंच मुत्र उत्पन्न हुए जिनकेसे कोटिका नाम सुर्वीनीत
था । वह बहुत विद्याको था चौर इत्यादि विद्यात्मिकाके
घरमें रहा करता था । यहाँ तब कि उसने वेदात्म्य
को जनके साक्ष प्रदान तब भो चारुच कर दिया । एक
दिन वेदात्मके साथ इत्यादि विवाद हुआ । सृष्टि चक्रवर्ती
दुर्गोका दिन था । विवाद करके छह दिन दोनों कप
कुसी रहि कपवास चौर रात्रिआमरक तो विवादसुत्रके
हुए, लेकिन काक पात्र इस महाव्रतका पनुष्ठान भो
किया गया ।

इस व्रतके प्रभावके उक्त वेदात्मके चौर चतुर्दश्याचतुर्दशीमें
पुनरी समान मन्दि हो पाई । यह वेदात्मके इस लिलोच-
में चक्रवर्तीको जो कर पत्नीके साथ ही पत्नी हुई चौर
नामा प्रकारके सुच भोग करने लगी । ब्राह्मण-कुमारके
भी पत्नीमति हुई । इस व्रतका माहात्म्य पवित्र वदा
कहा जाय, ब्रह्मने सृष्टि करनेके लिये स्वयं इस व्रतका
पनुष्ठान किया था । इतो व्रतके प्रभावके ही सृष्टि करने
में समय हुए हैं । देवत्वके इती व्रतके प्रभावके ही देवता
को कर सर्वमें सुखके पवकान् चौर समस्त मिहिनाम
करने है । जो मनुष्य यह व्रतानुष्ठान करते चक्रवर्ती-
यत वर्षमें भी उनको पुनरावृत्ति नहीं होती । यह व्रत
के प्रभावके चतुर्दश्याचतुर्दशी करता है, दरिद्र लक्ष्मी पाता
है चौर राज्यकामी राज्य प्राप्त करता है । हमारे मन्वन्तरे
मन्वन्तरे यह व्रत करके जो सुख प्राप्त ना करती, वही पाति
है ; जो मनुष्य यह व्रतमाहात्म्य मन्दिपूजक करके
करते हैं जनके ब्रह्मदेवता अमित वाय धूर को जाते हैं
चौर जनकी वही पवित्रापाय पूज्य होती हैं ।

(हरणनारिके ६३०)

व्रतदिननिर्णय यथा—

‘वैशाखे शुक्लपक्षे च चतुर्दशी महानियौ ।

सायं प्रह्लादधिविकारमसहिष्णुः परोहरिः ॥

स्वातीनक्षत्रयोगे तु शनिवारं हि मद्युव्रतम् ।

सिद्धयोगस्य योगे च लभ्यते दैवयोगतः ॥

सर्वैरेतस्तु संयुक्तैर्हस्त्याकीटविनाशनम् ।

केषलं च प्रकल्प्यं मद्दिनं फलकाङ्क्षिभिः ।

वैष्णवैर्न तु क्लृप्त्या स्मरविदा चतुर्दशी ॥”

(सहस्र नारसिंहपु०)

वैशाख मासको शुक्लचतुर्दशी महातिथिकी भगवान् परब्रह्म प्रह्लादके प्रति विकार मद्दय न करते हुए सन्ध्या समय नृसिंहरूपमें अवतारणं हुए । इस दिन उनके उद्देश्यसे यह व्रत अवश्य विधेय है । यदि इस दिन स्वातिनक्षत्र, शनिवार और वैष्णवसे सिद्धयोग हो, तो व्रतानुष्ठान करनेसे कीटिहत्याका पाप दूर जाता है । यदि यह चतुर्दशी स्मरविदा हो, तो वैष्णवोंको इस दिन व्रतानुष्ठान नहीं करना चाहिये । इस व्रतके करनेमें बहुत मन्त्रोंके विद्यावनमें उठ भगवान् विष्णुका स्मरण करने संयम करना होता है और नियमकालमें निम्न लिखित मन्त्रका पाठ करना होता है ।

“ओ नृसिंह । मक्षीग्रहणं दद्यां कुरु ममोपरि ।

अथाहं ते विधास्यामि व्रतं निर्विघ्ना तां नय ॥” इत्यादि ।

इस दिन मिथ्यालाप, पापिसङ्ग भाटि दुष्कार्य न करे, सर्वदा नृसिंहमूर्तिके ध्यानमें मग्न रहें । पीछे मध्याह्नकालकी नदी वा किसी पृतजनमें स्नान करके पटवस्त्र परिधानपूर्वक घर लौटे और यहाँ पवित्र स्थान पर एक अष्टदलपद्म बनावे । उस जगह एक कलसो भी स्थापन करे और उसके ऊपरमें हेममय नृसिंह और लक्ष्मीप्रतिमाको स्थापना करके पूजा करे । इस पूजामें पहिले प्रह्लादको पूजा, पीछे मूलपूजा विधेय है । इसमें चन्दन, पुष्प, दोष और नैवेद्यकी जरूरत पड़ती है तथा पूजाका पृथक् पृथक् मन्त्र भी है । हरिभक्तिविलासके १४वें विलासमें ये सब मन्त्र तथा अन्यान्य विवरण लिखे हैं । विस्तार हो जानेके भयसे यहाँ नहीं दिये गये ।

नृसिंहकी पूजा कर इस मन्त्रसे प्रार्थना करनी चाहिये ।

“मद्भक्षे ये नराजाते ये जानिष्यन्ति मत्पुरः

तांस्तनमुद्धर देवेश दुःसहात् भवगागरात् ॥

पातकार्णव मनस्य ध्यायितुःस्वाम्पुराग्निभिः ।

तीव्रैस्तु परिभूतस्य महादुःखगतस्य मे ।

करावम्बनं देहि शेषशायिन् जगदपते ।

श्रीशृणुं ह रमाधान्त मफानां भयनाशन ॥” इत्यादि ।

(हरिभ० १४)

नृसिंहचतुर्दशी—एक संस्कृतज्ञ पण्डित, भगवद्गीतायें सङ्गतिनिबन्ध, काव्यप्रकाशटीका और प्रमाणपञ्चव नामक संस्कृत ग्रन्थके प्रणेता । इन्होंने काव्यप्रकाशटीका रचा है । एक जगह इन्होंने धावक कविकृत रत्नावलीनाटिकाके शोर्षराजके यहाँ विक्रय और उससे अर्थ प्राप्तिविवरणका उल्लेख किया है । यह प्रसङ्ग रहनेके कारण कोई कोई इन्हें वैयानाथ, नागेश और जयरामप्रभृति टीकाकारोंके समनामयिक बतलाते हैं । किन्तु इनके ग्रन्थमें नागेशका मत उद्धृत रहनेके कारण ये उनके परवर्ती माने जाते हैं ।

नृसिंहतापनोय (सं० पु०) उपनिषद्विशेष । शङ्कराचार्यने इस उपनिषदका भाष्य प्रणयन किया है ।

नृसिंहदेव—१ काशिक कुलीश्वर वेदान्तचार्यके भागिनेय । ये बक्स गोरक थे । इन्होंने भेदधिकारन्याकार नामक संस्कृत ग्रन्थ लिखा है ।

२ कर्णाटदेशके एक राजा । ये ज्योतिरोत्तर पण्डितके प्रतिपालक थे ।

३ मिथिलादेशके एक राजा । इनकी सभामें कवि विद्यापति विद्यमान थे ।

४ एक अयोधिविद्, विष्णुशैवज्ञके पुत्र । इन्होंने सूर्यसिद्धान्तभाष्यकी रचना की ।

५ उड़ोसाके एक राजा ।

गाङ्गेश्वर और उदक देखो ।

नृसिंहदेव—श्रीनिवासाचार्यके शिष्य, मानभूमके एक राजा । पदकी रचना करके ये भी चिरजीवो हो रहे हैं ।

नृसिंहदेव नृपति—एक विख्यात पदकर्ता । प्रेमविलासमें लिखा है, कि जिस समय ठाकुर महाशयके प्रभावसे ब्राह्मणादि भी उनसे दीक्षित होने लगे, कुलकाभेद

प्राजा जाता रहा, उस समय पत्नीक ब्राह्मण रहीं नर-
सि करारकी प्रारम्भ पद्वि। नरसि व रायको समामि
पत्नीक देयविद्यात पञ्चित थे। कृपनारायण नामक
दिम्बिप्रको पञ्चित रहींके प्रमात्र रहे।

कनकापय रैको।

ब्राह्मणको प्राबर्णसि राजा उन सब पञ्चितको
साब से नरोत्तमक माव शाखाके करनि गए। प्रत्तमि
शाखाके मी पराप्त हो कर लक्ष्मि दसवसे साब ठाहुर
महाप्रवका मिपत्रक प्रदत्त बिबा। इषी समयसे राजा
कर भन्न हो गए और पदको रचना भी करनि ली।

दृष्टि हृदय—एक प्रसिद्ध स्थानिर्बिदु। इकोने दुर्ग
विद्याके माव और तिजविद्यामिचिठोकाको रचना
को है। मोक्षधाम नगरमि महाप्रयोगमि इनका काम
हुवा बा। इनका व मपरिचय इस प्रकार मिलता है—
राजपुत्रित बिबाकर दैव्यको र पुत्र थे जिनके छत्र
दैव्य बड़े थे। छत्रकेबनने कोबसुत्रामय पन्थ सिखा।
इकोके पुत्र नृसि हृदयक है।

दृष्टि इनहुर—मन्द्रास प्रदेशके तिर्षकेसी त्रिशास्त्रगत
एक धाम। यह पचा० ८ ४२ ७० पोर दिया ७० ४२
पू० तिर्षकेको नगरके ई मास पञ्चममि पञ्चकित है।
दृष्टि कपचानन—एक पन्थकार। इकोने न्यायविद्याके
मन्त्रा नामक न्यायपन्थको एक डीकाका प्रदत्त
बिबा।

दृष्टि कपचानन महाचार्य—एक नैयायिक। इकोने वेद
उपन नामक तन्त्रविद्यामिचिठोचितको एक डीका
बिबो है।

दृष्टि कपुराव (च० को०) नरसि हृदयके रैका।

दृष्टि कपुर—नरसि हृदयके रैको।

दृष्टि कपुरोपरिब्राह्मण—एक पन्थकार। इकोने राजकोप
नामक एक पन्थ सिपा है।

दृष्टि कभर—इस नामके कई एक उक्त पन्थकारके
नाम मिली है—

- १ दयकपके एक डीकाकार।
- २ विष्णुधर्मसोमासाके रचयिता।
- ३ विष्णुपुराणके एक डीकाकार।
- ४ एक ईमास पञ्चित। इनको उपाधि सोमासक

को। "स्मृतिनिबन्ध" नामक पन्थ रहींका बनाया
हुवा है।

१ हरिहरातुहर—याना नाटकके प्रथिता।

२ सकाररजाबकोके प्रथिता, सिद्धमहके पुत्र।

नृसि कभारतो—एक ईश्वरतलक पञ्चित। ये देवी-
मन्त्रिचिठोके प्रादि कई पन्थ बना गए हैं।

नृसि कभूपति—एक चोकराज। ये पूर्वकालुज्यव मोय
चोकराज बिबेकर मूर्धके पोत्र और उपेन्द्रके पुत्र थे।

बालनरामवक रैको।

नृसि कसुनि—१ एक वेदान्तिक। इकोने व दान्तर
कोपको रचना को। २ राममन्त्रार्थ बन्ध-प्रथिता।

दृष्टि कयजन्—मन्त्रिचरुवाको एक पञ्चित। इकोने
प्रयोगरत्न और चोतकारिका नामक दो पन्थोको
रचना की।

नृसि कयनोन्द्र—एक प्यतनामा पञ्चित। ये वेदान्त-
पद्धिमायाकार बमराज चम्परोन्द्रके शिष्य थे।

नृसि कराय—विजयनगरके नरसिंह राजा। ये और नर-
सिंह का नृसिहृदयक पिता थे। इकोने तिष्याकीदेवी
और नायकासे बिबाह किया बा। विजयनगर रैको।

नृसि कवन (सं० पु०) कूर्मबिभागमि चार्पत पचिस-उत्तर
दिक्-कितएक देश।

नृसि कवनी—एक व मोय एक राजा। इकोने प्रायः
११० ई०मि काकोपुरकके कासनव वा रामसि कुंकर
देवमन्दिरका निर्माच बिबा।

नृसि कबन्धमभिधुक्कुर—कासीकरक मित्र नवाबके होवान
से। इनके मन्तान जोती को पर मर मर जाती को।
एक दिन एक पन्थानकी पत्नी कोने पर उनको छोी गदो
लिनारे बैठ कर रो रही थी। इही समय ठाहुरमहस
(जानदान)के साथ उनको मेटे हुए। मरार रैको।
उकोने मित्रपत्नीको दुःखकारां सुन कर दबाईबित्तके
बन्धे पाशासन दिया और बिबा, "इस बार को तुम्हारे
पुत्र होया, वह बचैना और प्रसुवा मन्न जाना।" यह
सुन कर मित्र ठाहुरको विनीतभावसे बोली, 'यदि
पाठके बचन धर्म निबन्धे तो मैं उस पुत्रको ठाहुरके
चरकमि पदक कर दूँगे।'

इको दीप पुत्र दृष्टि क बन्धम थे। उन नृसि कको उत्तर

१६ वर्षको हुई, तब ठाकुरमङ्गलने उन्हे' मन्त्रदान किया। समय पा कर उनको एक पुत्र हुआ जिसका नाम हरिकृष्ण ठाकुर रखा गया।

पुत्र होनेके बाद एक दिन 'प्रभु' (शायद निव्यानन्द प्रभु) ने उन्हे' दर्शन दिये और विषयत्याग करनेको कहा। आदेश पाते ही नृसिंह घर द्वार छोड़ कर वीरभूम जिलेके मैनाडल जहलमें स्त्री समेत चले गये और वहीं कृष्णभजन करने लगे। इस समय बहुतसे मनुष्य उनके शिष्य हुए। इसी समय उन्हींके काँदह्रासे गिम्बहल ला कर गौराङ्ग को विद्यम्बर नामक मूर्त्तिको स्थापना की। उस मूर्त्तिके निर्माणकर्त्ता भास्करका नाम था केनासाम। वह मूर्त्ति आज भी विराजमान है।

वृत्सिंह वाजपेयो—२ एक पण्डित। इनके बनाए हुए आचार और व्यवहार तथा श्रुतिमोमांसा नामक दो ग्रन्थ मिलते हैं। २ विधानमालाके रचयिता।

वृत्सिंहशास्त्री—एक विख्यात नैयायिक। इन्होंने अन्धकारघाट नामक एक ग्रन्थकी रचना की।

वृत्सिंहसरस्वती—१ एक ख्यातनामा वैदान्तिक। कृष्णनन्दके शिष्य। इन्होंने १५७८ ई०में वाराणासीवासी अपने प्रतिपालक गोवर्धनके अनुरोधसे सुशोधिनी नामक एक वेदान्तसारटीकाकी रचना की।

२ गङ्गारसम्प्रदायके १५वें गुरु।

वृत्सिंहसूरि—एक पण्डित। ये दाक्षिणात्यके वेङ्कटगिरिनिवासी शिङ्गन्नके पुत्र थे। वेङ्कटाद्रिनाथीय ग्रहतन्त्र इन्हींका बनाया हुआ है।

वृत्सिंहानन्द—एक विख्यात पण्डित, भास्कररायके गुरु। इन्होंने कलिताराहस्यनामपरिभाषा और वारिवस्यारहस्य नामक दो संस्कृत ग्रन्थ लिखे हैं।

वृत्सिंहारण्यमुनि—एक पण्डित। इन्होंने विष्णुभक्ति चन्द्रोदयको रचना की।

वृत्सिंहाश्रम—२ एक विख्यात पण्डित और महीधरके गुरु। २ गौर्वाण्ड्य सरस्वती और जगन्नाथश्रमके शिष्य तथा नारायणाश्रमके गुरु। इनके बनाए हुए अहं तदोपिका, अहं पञ्चरत्न, अहं तदोपदोपिका, अहं तरत्नकोप, अहं वाद, तत्त्ववाचिन संक्षेपारोहटीका तत्त्वविवेक, पञ्च-

पादिका, विवरणप्रकाशिका, मीदधिकार, वाचारभंग और वेदान्तविवेक आदि ग्रन्थ मिलते हैं।

वृत्सिंहेंद्र—विजयनगर राजवंशके एक राजा। ये नरग अश्वनिपाल वा वृत्सिंहारायके पुत्र थे। इनकी माताका नाम तिप्पाजो देवी था। विजयनगर देखो।

वृत्सेन (सं० क्तो०) नृणां सेना, ततो विकल्पपक्षे क्तोवत् (विभाषा सेनेति। पा २।४।२५) मनुष्योंकी सेना। विकल्पपक्षमें क्तोवन्तिङ्ग नहीं होनेसे 'नृसेना' ऐसा पद और श्लोचिङ्ग होगा।

वृत्सोम (सं० पु०) ना सोमचन्द्र इव, इत्युपमितकर्मधारयः। नरथेष्ट, वह जो मनुष्योंमें चन्द्रमार्के सदृश हो।

वृत्सुन् (सं० पु०) नृ-नृ हन्ति, हन-क्तिप्। शब्दुहन्ता, नरघातक।

वृत्हरि (सं० पु०) ना चाभो हरियेति। नृसिंहावतार, नृसिंहरूपो विष्णु।

वृत्हरि—दाक्षिणात्यके एक राजा। ये योगेश्वरके भक्त थे। भागु नामक ऋषिके कुलमें इनका जन्म हुआ था।

(सहादि ३३।१२८)

ने—सकर्मक भूतकालिक क्रियाके कर्त्ताका चिह्न जो उसके आगे लगाया जाता है, सकर्मक भूतकालिक क्रियाके कर्त्ताको विभक्ति। जैसे, रामने रावणको मारा। हिन्दोकी भूतकालिक क्रियाएँ सं क्तदन्तासे दनी हैं, इससे कर्मवाच्यरूपमें वाक्योंका प्रयोग आरम्भ हुआ। क्रमशः उन वाक्योंका ग्रहण कर्त्तृवाच्यमें भी होने लगा।

नेउरालियापत्तन—सिंहलद्वीपको काण्डी राजधानीसे ३३ मील दक्षिणमें अवस्थित एक उच्च पर्वतकी अधितरका भूमि। यह समुद्रपृष्ठसे ३२०० फुट ऊँची है। पर्वत शृङ्गके उन्नत रहनेके कारण इस विस्तीर्ण अधितरकाका अंश सीमान्तदेशमें कहीं कहीं बहुत ऊँचा मालूम पड़ता है। यहाँका जलवायु बहुत स्वास्थ्यकर है। यहाँ लोगोंका वास बहुत कम है। वासोपयोगी गङ्गारादिमें तथा प्रशस्तभूमिमें असंख्य हाथी वैरोक टोक भ्रमण करते हैं।

नेउर—छोटानागपुरके भन्तर्गत चाङ्गभकर राज्यके मध्य प्रवाहित एक नदी। यह कोरिया राज्यके पर्वतसे निकल कर उत्तर-पूर्वको बह गई है।

मिठका हि० पु०) वैरका रंजो।

मिठली (घ० खो०) इठयोगिद। बद्रूपामरुमें इठका विषय इस प्रकार लिखा है—

बौतोबोगधि म्रिय जो जानिच बाद यह मिठबी-वोग बिया जाता है। इसमें पड़ने मूग बनाइको सिद्ध कर खाति है, पोधि चपना उदर कासन करती है। इठयोन में इठका विषय विस्तृतपदये लिखा है।

मिठसोबो—उठोसा विभागके प्रथमतः ऋतुत्र जिलेका एक परगना। भूमिपरिमाण ३८५ बर्गमील है। यहाँ बोधु घोर मयापाड़ा नामक दो विभिन्न ग्राम हैं।

मिठ (पा० बि०) १ उत्तम पच्छा, मला। २ मिठ, धज्ज। (हि० बि०) ३ बोद्ध, करत, तनिष्ठ।

मिठबलन (हि० बि०) पच्छे पाण्डवकनका, सदाचारी।

मिठनबनी (हि० खो०) सदाचार, प्रथममसाहत।

मिठनाम (पा० बि०) बिषका पच्छा नाम जो जो पच्छा प्रसिद्ध हो गयलो।

मिठनामी (पा० खो०) दुष्प्रति, खोति, नामवरी।

मिठनीयत (घ० बि०) १ प्रथमसङ्कमका, जिषका प्रायय वा उद्देश्य पच्छा हो। २ सदाचार्य, उत्तम विचारका, मचारिका विचार रखनेवाला।

मिठनोवती (पा० खो०) १ मिठनीयत होमिका माव, पच्छा सङ्कम, मला विचार। २ ईमानदारी।

मिठबलन (पा० बि०) १ भाव्यवान, धुयविरमत। २ पच्छे कामका, सुयोत।

मिठमर्द—बहालके दिनात्रपुर जिलेके चम्पगत मवानन्द पुर (मवानोपुर) ग्रामके मण्डलित एक स्थान। यह पचा० २१ ३८' उ० घोर देगा० ८८ ३८' ३०" ०" कुञ्चिक नदीके ई मोल पश्चिममें अवस्थित है। यहाँ पर मिठमदन नामक जिसे सुसन्मान पञ्जीरकी कन्न र मिठे कारण यह स्थान सुखसमान समाजमें बहुत पबिन्न दिना जाता है। यही पञ्जीरके नामानुसार इस स्थान का नामकरण हुआ है। यहाँके उद्देश्यके यहाँ प्रतिबन्धों मिला समता है बिचमें पाण्डुके साव पादमी सुठते हैं। जिस तरह धीमपुरके हरिहरदेवके मिसमें जाबी, सोडे घोर माबीबी इट हावनी है यहाँ भी उनी प्रकार मधेयी पादि बिचनेको खाति है।

मिठविहार—हिन्दुधर्म पर्वतके चम्पगत एक पुरातोक विरिचिद्ध। यह स्थान प्राय सभी समय तुपारमें ठका रहता है। सन्ध्याकालके से कर पुष्प दिनके दो पहर तक तुपाररथि प्रबन्धनोत्तमें ठाठका पय हो कर दिव्य मदेयमें गिगती है।

मिठरी (हि० खो०) सद्गुणको चरका अपेक्षा जिसेक बहाल बिसे घोरको बद्धता है, शीक।

मिठो (पा० खो०) १ उत्तम म्यनहार, मकार। २ धज्जना मरुमनसाहत। ३ उपभार, इति।

मिठोशिवर-सुवतान—उच्छाद, घोरइजिक पोन्न घोर मठ बाद पच्छवरी पुन्न।

मिग (हि० पु०) १ विवाह पादि धम पवसरो पर सम्भन्धियों, पात्रितों तथा काय वा कृत्यमें योग देनेवाले घोर खोनोंको कृष्ण दिव जानिका नियम, देने पानिका इक वा इष्ट। २ यह मध्य वा जन जो विवाह पादि धम पवसरो पर सम्भन्धियों, मोठरी पाकरों तथा नाई बारी पादि काम करनेवालोंको उनको प्रथमतःके सिधे नियमानुसार दिया जाता है, तथा हुआ पुरस्कार, इनाम, बन्धगिय।

मिगवार (हि० पु०) मिननाम देका।

मिगजोब (हि० पु०) १ विवाह पादि मङ्गल पवसरो पर सम्भन्धियों तथा काम करनेवालोंको उनको प्रथमतःके सिधे कृष्ण दिव जानिका दफ्तर देने पानिकी रीति, इनाम बाँटनेकी रस्म। २ यह धन जो मङ्गल पवसरो पर सम्भन्धियों घोर मोठरी पाकरों पादिको बाँटा जाता है इनाम।

मिगो (हि० पु०) मियपानेवाला, मिग पानेका इकदार।

मिगोखोवी (हि० पु०) मिन पानेवाले विवाह पादि मङ्गल पवसरो पर इनाम पानेके पधिकारी।

मिगरिया (हि० पु०) प्रकृतिक पतिरिक्त ईश्वर पादिको न माननेवाला, नास्तिक।

मिन्नक (घ० पु०) मिन्न यही खुल। निर्धैक, भोबो।

मिन्न (घ० खो०) निवयसम निन्न पकरे खुद। १ मिन्नकाय, घोबीका घर। २ मोबन।

मिन्ना (पा० पु०) १ भासा, बरहा। २ निद्यान, सीम मिन्नाबरदार (पा० पु०) भासा वा राजाघोका निद्यान पदामिनाका।

नेजारासिंह—रेवाप्रदेशमें बाघलखण्डके अन्तर्गत जांदा-
का एक वधेला-नरदार । इनकी उपाधि राजाकी थी
और वे अकबरशाहके समसामयिक थे । फतेपुरके हरि
नाथ कविका एक दीक्षा सुन कर आपने उन्हें लाव
रूपयेका दान किया था ।

नेटा (हिं० पु०) नाकसे निकलनेवाला कफ या बलगम ।
नेहु, डुम्—उत्तर अर्काट जिलेकी बन्दिवाम तालुकके अन्त-
र्गत एक ग्राम । यहाँके दो प्राचीन मन्दिरोंमें बहुत सौ
शिलालिपियाँ उन्कोर्ण हैं ।

नेहु-माढण-दालिणातरके पाण्ड्यावंशीय एक राजा । इन्हीं-
ने नलवेली युद्धमें विजय पाई थी । चीनराजकी एक
कन्यासे इनका विवाह हुआ था । आप जैन धर्मावलम्बी
होने पर भी आपकी स्त्री शैव थीं । एक समय जब
राजा बीमार पड़े, तब उनकी स्त्रीने जैन पुरोहितकी
बुला कर उन्हें आरोग्य करने कहा था । लेकिन जब वे
कृतकार्य न हुए, तब रानोने गौवाचार्य तिरुणान-सम्ब-
न्दरकी बुला कर अलौकिक मन्त्रकी सहायतासे राजाको
बचा किया । शैवचार्यको आश्चर्य चमता देख राजा
उन्कोसे शैवमन्त्रमें दीक्षित हुए ।

नेडमड्डलम्—दालिणातरके कर्णाट राज्यके तञ्जावुर जिले
का एक नगर । यह तञ्जावुर राजधानीसे प्रायः २२
(मील) पश्चिम-दक्षिणमें अवस्थित है । यहाँ हिन्दू पथिकोंके
लिए अनेक धान्यनिवास और प्राचीन देवदेवोंके मन्दि-
रादि देखे जाते हैं ।

नेडियावत्तम्—मन्द्राज प्रदेशकी नोलगिरि-पर्वतश्रेणी-
के गुडालुरघाटके ऊपर अवस्थित एक ग्राम । इसके ऊँचे
शिखर पर खड़े होनेसे मलबार उपकूल और बैनाद
जिला दृष्टिगोचर होता है ।

नेडुमनगढ़—मन्द्राज प्रदेशके त्रिवाङ्गुड राज्याका एक
तालुक वा उपविभाग । भूपरिमाण ३४० वर्ग मील है ।
इसमें कुल ६८ ग्राम लगते हैं ।

७ यह स्थान सम्भवतः तिरुगेलवेली माना जाता है ।
कारण पाण्ड्य-राजा जब सिंहलसे शत्रुद्वारा आक्रान्त हुए,
तब अपने ही राज्यके मध्य दोनोंमें सुठमेड हुरे थी और पीछे
राजाने पराजित शत्रुओंको राज्यसे मार मगाया था ।

(Ind, Ant. XXI, p. 68.)

नेत् (सं० अर्थ०) नी-विच्, बाहुनकार् तुक् वा नेद-
विच् बाहु० चाटि० । १ गद्दा । २ प्रतिपेव । ३ ममुच्चय ।
नेत (हिं० पु०) १ ठहराव, निर्धारण, किसी बातका
स्थिर होना । २ निघय, ठहराव, ठान । ३ व्यवस्था,
प्रवन्ध, आयोजन । ४ मधानीकी रस्सी । ५ एक गहना ।
नेतली (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी पतली डोरी ।
नेता (हिं० पु०) १ नायक, सरदार, प्रभुत्वा । २ प्रभु,
स्वामी । ३ नीमका पेड़ । ४ विष्णु । ५ निर्वाहक,
प्रवर्तक । ६ मधानीकी रस्सी ।

नेताजी पालकर—एक महाराष्ट्र-सरदार । ये १६६२ ई०में
शिवाजीके कषनेसे अम्बारीही महाराष्ट्रीय सैन्य ले कर
दालिणातरके सुगलराज्यकी लूटने अग्रसर हुए थे । इस
समय वे अतन्त्र निहुरातके साथ प्रतिक्रम ग्राम और प्रतिक्र-
नगरकी ध्वंस करने तथा लूटने लगे । इस प्रकार घेरि
घेरि एक स्थानमें दूसरे स्थानमें लूट-मार मचाते हुए ये
श्रीरङ्गावादेके पार्श्वस्थित ग्राममें जा धमके । इस समय
शमीर-उल-उमरा शाहस्ता खानि राजकुमार सुभाजिमके
पद पर दालिणातरका प्रतिनिधित्व ग्रहण किया था । इस
उपद्रवकी टमन करनेके लिये वे दलबलके साथ श्रीरङ्गा-
वादेसे अहमदनगर और पेलगावसे पूनाकी गए । १६६३
ई०में जब शाहस्ता खान पूनामें ठहरे हुए थे, उस समय
नेताजीने अहमदनगरके निकटवर्ती ग्रामोंकी दग्ध कर
धनादि लूटना आरम्भ कर दिया । शाहस्ता खानकी एक दल
सेना उन पर टूट पड़ी, दोनों पक्षमें घनघोर युद्ध हुआ ।
पीछे जब नेताजीने देखा कि लयकी कीर्ति सम्भावना नहीं
है, तब वे भागनेका उपाय सोचने लगे । बीजापुरके सेना-
ध्यक्ष रस्तम-जमानने उन्हें अभय दान दे कर छोड़ दिया ।
युद्धमें वे विशिष्टरूपसे भागते हुए थे । १६६४ ई०के मध्य-
भागसे ले कर १६६५ ई० तक उन्होंने पुनः इन सब
प्रदेशोंकी लूटना आरम्भ कर दिया । अन्तमें १६६५ ई०के
पगस्तमासमें महाराष्ट्र केशरी शिवाजीने आ कर उनका
साघ दिया । दोनोंने अहमदनगर और श्रीरङ्गावादेके
निकटस्थ स्थानोंकी लूट कर प्रचुर रत्न संग्रह किया था ।
नेतादेवी—भैरवोविशेष । नेपालके नेवारजातिके लोग
इन्हे शक्तिका अंश मान कर पूजा करते हैं । नेपाल-
राजधानी काठमाण्डुमें जो भैरव-मूर्ति है, ये उन्को की

सङ्घिनो है। विषकाटी-ठकनके कुछ पक्षमे काठमण्ड
शहरमें इनके मन्थानके निचे निपासनामो प्रति वर्ष मको
ब्रह्म करती है। इस मकोब्रह्ममें अथ निपासनाम और
इनके पचीमन्न सरदार तथा बोध और हिन्दू-मतावलम्बो
समो योमदान देते है। यह उद्यम मितान्देवीको यात्रा
नामसे प्रसिद्ध है।

मिति (स० पु०) १ इठयोममि० । २ एक म अक्षत वाक्म
(न इति) ब्रह्मका पक्ष है "इति मही" चर्चात् "वत्स
मही है" ब्रह्म या उद्यमके सम्बन्धमें यह वाक्म उपनिषद्
में यमलता सुचित करके निचे पाठा है।

मिती (वि० श्लो०) मङ्गलको जो मन्थानमें लपेटो जाती
है और जिसे लीचनेसे मन्थानो फिरतो है और वृष या
इसो मया जाता है।

मितीकोतो (वि० श्लो०) इन्द्रायकी एक श्रिया क्रिममें
अपडेकी अन्तो घटमें डाल कर पाने माफ करती है।
शक्ति देखो।

मितीयोग (म० पु०) इठयोममि० । इस योगका विषय
ब्रह्मामन्त्रके उत्तराखण्डमें इस प्रकार लिखा है—

मितीयोगका पञ्चममन्त्र करनेसे मन्थानमें ब्रिजना
अथ है मङ्गल पूर हो जाता है। इस योगमें पहले एक
पत्तरी सूतीको माकमें डाल कर सुख हो कर निकालते
हैं। इस प्रकार पञ्चममन्त्र करने के लिये कुछ मोटे सूतके
काम सेमि लगते हैं। इस न तियोगसे नासारथ प्राण
होता है।

नेत्र (स० पु०) नयतीति नी-उत्थ । १ प्रसु । २ निर्वहक ।
३ नायक । ४ प्रवर्तक । ५ प्राणक । ६ निम्नतुष मीम-
का पीड । ७ विष्णु ।

नेत्रक (म० श्लो०) नेत्रमोच नेत्रक नायधता, पञ्च
यता ।

नेत्रमत् (म० श्लो०) निद्रद्वय नायकद्वयमे निम्नक ।

नेत्रोक्तम्—दासिनाम्बदे वैशारो विमानामंत पशोमो
तासुक्तका एक नाम। यहाँ पर्वतके ऊपर पाश्चिमिका
एक मन्दिर है। उक्त मन्दिरके दौडलानके निकट एक
पत्थरके ऊपर लंकाको भाषामें लक्ष्मीर्ष एक शिवालिपि
है। इस पत्थर और पत्थरके पामको मोमाके मन्थानामें
एक ब्रह्मता शिवायकके दीर्घमें पाता है।

नेत्र (स० श्लो०) नीयते नयति यामिति नी उत्तरं द्रुम्
(शम्भो उच्यते । वा १।२।१८२) १ पशु, मयम पाँव । २
मन्थननाम मन्थानोकी रखी । ३ लक्ष्मी, एक प्रकारका
पशु । ४ उल्लसूक, पिङ्गो लङ्का । ५ रथ । ६ जटा । ७
नाङ्गो । ८ प्राणमिता । ९ मन्थिगलाका, यस्तोको मन्थारि,
कटीका । १० दोषा मन्थानुचक शब्द । ११ अशुभ मोलक
अथि मन्थिदेवताक तेजम इन्द्रियमिद । (पु०) १२ वैद्य
राजाने एक पुत्रका नाम ।

नेत्रकनीनिका (स० श्लो०) नेत्रको अशुभो कर्मोनिष्ठा ।
अशुभा तासा ।

नेत्रकोष (म० पु०) नेत्रयो, कोष । नेत्रपटल, पाँखके
पट्टे ।

नेत्रकण्ठ (म० पु०) नेत्रे कायतेऽनेनेति कण्ठ चिच्, क,
ततो कण्ठाः । नेत्रविधायक चर्मपुट, पाँखके पट्टे ।

नेत्रत्र (म० पु०) नेत्रात् जायते जन्-ड । निद्रजात
पाँव ।

नेत्रत्रय (म० श्लो०) नेत्रयोर्लक्षम् । अशु पाँव ।

नेत्रता (स० श्लो०) नेत्रस्य भावः नेत्र-लक्ष्, टाप । नेत्र
का भाव और चर्म ।

नेत्रवयंत् (स० पु०) नेत्रयोः पयंत् यन्त-कोषः हीमा ।
१ पयाङ्ग, पाँखका कोना ।

नेत्रपाक (स० पु०) नेत्रोद्यमिद पाँखका एक रोग ।
अशु, उपदेव अशुजात पक्षे ब्रह्मरक्ष जोसा पाकार,
हाथ, मङ्गल, तान्त्रिक तोड, गौरव, शोक, सुदुःख
उत्थ मोलक और विष्णुना पाछावमरथ पाहि लक्षण
रहनेसे समोक्त नेत्रपाक और शोक नहीं रहनेसे अशोक
नेत्रपाक जानना चाहिये ।

नेत्रपिण्ड (स० पु०) नेत्र पिण्ड एव यन्म । १ विज्ञान
विही । स्थानं आत्मिनात् उच्ये । (श्लो०) २ नेत्रयोगद,
पाँखका डोला ।

नेत्रपुष्करा (स० श्लो०) नेत्रयोः पुष्कर अक्ष यन्माः
यन्मैवगादिपञ्च । इन्द्रजटा नामको जटा ।

नेत्रप्रवन्ध (स० पु०) नेत्रे प्रवन्धनेऽनेन इ-वन्ध-करके
बहुत । नेत्रपुट पाँखका पट्टा ।

नेत्रप्रसादनकर्तव्यं (म० श्लो०) अशुप्रसादनकार्य-
विधि, यह काम ब्रिजके करनेसे अशु प्रवन्ध रो और

दृष्टिशक्तिको सहायता मिले; जैसे, कज्जल इत्यादि।
नेत्रवन्ध (सं० पु०) नेत्रयोर्वन्धः इत्यत्। चक्षुःद्वयको
आवरणरूप बाल्यस्त्रीडाविशेष, आँख मिचौलीका खेल।
नेत्रवाला (हिं० पु०) सुगन्धवाला, कचमोद, बालक।
नेत्रभाव (सं० पु०) सङ्गीत या नृत्यमें एक भाव जिसमें
केवल आँखोंको चेष्टामें सुख दुःख आदिका बोध कराया
जाता है और कोई अङ्ग नहीं हिलता डोलता, यह भाव
बहुत कठिन समझा जाता है।

नेत्रमण्डल (सं० पु०) आँखका घेरा।

नेत्रमल (सं० षष्ठी०) नेत्रयोर्मलम्। चक्षुःका मल, आँख
का कोचड़, गिहू।

नेत्रमार्म (सं० पु०) नेत्रगोलकसे मस्तिष्क तक गया
हुआ सूत्र जिसमें अन्तःकरणमें दृष्टिज्ञान होता है।

नेत्रमीना (सं० स्त्री०) नेत्रयोः मीना सुदृणं यस्याः,
शृषादरादित्वात् लस्य न। यवतिक्ता लता। इसके सेबनसे
आँखें बन्द रहती हैं।

नेत्रमुष् (सं० त्रि०) नेत्रं तपप्रचारं मुष्याति मुष्-किरः।
दृष्टिका उपघातक, दृष्टिप्रचारनाशक।

नेत्रयोनि (सं० पु०) नेत्राणि योनिभिर्जातानि यस्य,
नेत्राणि योनय इव यस्य इति वा। १ इन्द्र। गौतमके
शापसे इनके शरीरमें सहस्र योनि-चक्र हो गये थे जो
पीछे नेत्रके आकारमें हो गये, इसी कारण इन्द्रका नाम
नेत्रयोनि पडा। नेत्रं अत्रिचोचनं योनिरुत्पत्ति-कारणं
यस्य। २ चन्द्रमा। ये अत्रि हो आँखसे उत्पन्न हुए
थे, इस कारण इन्हे भी नेत्रयोनि कहते हैं।

नेत्ररञ्जन (सं० स्त्री०) नेत्रे रज्यते अनेन रञ्ज करणे
त्युट्। कज्जल, काजल। कानिकापुराणमें लिखा है, कि
अञ्जनके मध्य सौवीर, जाखल, तुल्य, मयूर, श्योकर और
दर्विका ये ही छः प्रकारके प्रसिद्ध हैं। इनमेंसे सौवीर
स्वदूष, यामुन, प्रस्तर, मयूर और श्योकर रत्न, मेघनौल
तैजस—इन्हे शिला पर अथवा तैजसपात्रमें विस कर
रस निकाल लें और उसे देवदेवीको लगावे। ताम्बादि-
पात्रमें घृत और तैलादि लेप कर आगको गरमीसे जो
काजल नैयार होता है उसे दर्विका कहते हैं। अगर
किसी प्रकारका काजल न मिले तो देवीको दर्विका
अन्न दे सकते हैं। विधवासे प्रसून किया हुआ काजल

देवीको नहीं लगाना चाहिए। (कालिकापु० ७६ ५०)
नेत्ररज्जु (सं० स्त्री०) रज्जु-क्षिप, नेत्रयो रज्जु। नेत्र-
पीड़ा, नेत्ररोग।

नेत्ररोग (सं० पु०) नेत्रयोः रोगः। चक्षुपीडा, आँखका
दर्द। इसका विषय सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा है,—

अपने षड्बाहुके उदरदेशके परिमाणसे दो अङ्गुलि
नेत्रमण्डलको लम्बाई है। इसका कुल परिमाण
ढाई अङ्गुल है। इसका आकार गोस्तनके जैसा
सुदृक्त और यह सब प्रकारके भूतोंके गुणसे उत्पन्न हुआ
है। नेत्रमण्डलका मांस क्षितिसे, रक्त अग्निसे, कृष्ण-
भाग वायुसे, श्वेतभाग जलसे और अश्रुमार्ग आकाशसे
सम्भूत हुआ है। नेत्रका दृतीयंश कृष्णमण्डल है और
दृष्टिस्थान कृष्णमण्डलका सप्तमांश है। दोनों नेत्रके
मण्डल ५, सन्धि ६ और पटल ५ हैं। पाँचों मण्डलके नाम
ये हैं,—पद्ममण्डल, वर्कमण्डल, श्वेतमण्डल, कृष्ण-
मण्डल और दृष्टिमण्डल। ये सब यथाक्रमसे एक दूसरेके
मध्यगत हैं। सन्धि छः प्रकारको है, यथा—पद्म और
वर्कमध्यगत सन्धि, वर्क और शुक्लमध्यगत सन्धि,
शुक्ल और कृष्णमध्यगत सन्धि, कृष्णमण्डल और
दृष्टिमण्डलकी मध्यगत सन्धि तथा कानोनिका और
अपाङ्गगत सन्धि। पहला पटल तेजजलाश्रित, दूसरा
सांगाश्रित, तीसरा मेदाश्रित, चौथा अस्थि आश्रित और
पाँचवाँ दृष्टिमण्डलाश्रित है। ऊर्ध्वगत गिरानुसारो
दोषसमूह द्वारा नेत्रभागमें दारुण रोग होते हैं। आवि-
लता, संरम्भ, अश्रुपतन, गुरुत्व, दाह, राग प्रवृत्ति
उपद्रव होनेसे अथवा नेत्रवर्ककोषमें शूक पूर्णकी तरह
अर्थात् आँखमें काँटा निकल आया है, ऐसा बोध होनेसे
किंवा इसके प्रकतरूप वा पूर्वोक्तरूपसे क्रियाशक्तिका
व्याघात होनेसे नेत्र दोषयुक्त है, ऐसा समझना चाहिए।
ऐसी अवस्था होने पर अच्छी तरह चिकित्सा करना
विधेय है।

नेत्ररोगका निदान—उष्णाभिताप, जलप्रवेश, दूरदर्शन,
स्वप्रविपर्यय अर्थात् दिनमें सोना और रातमें जागना,
स्थिरदृष्टि, रोदन, शोक, कोप, क्रोध, अभिघात, पति-
मैथुन, शूल, काष्ठो, अन्न, कुलथी और उरद-सेवन, वीग
धारण अथवा स्नेह, रजो वा धूमसेवन, बमनव्याघात वा

पमिद्योग, बाधबलकारक वा शून्यप्रदानं निद्रोद्युक्त इत्येव कारकोऽपि दोष कृपित को कार जैत्रोम होता है । ये नित्रोम ७१ प्रकारके हैं जिनमें बाहुल्य दम कष्टप्रत्य निरुह, रजसप्रय श्लेष्म, सन्निपातक पक्षीसू पौर वाह्य-रोम ही प्रकारके हैं । इनमेंसे इताधिमन्त्र, निम्पे प इष्टिमन्त्र, नभोरिका पौर वातहतवर्त्मन् हे प्रथम बाहुल्य कष्टरोगके मध्य प्रपाद्य हैं । बाहुज काचरोम वाय्व तथा पथतोवात, सन्निपातक, पथिमन्त्र पमिद्युत् पौर माधत से सब रोग साम्य हैं । विप्राक रोगीमिसे अरुणवन्त्र, अक्षय्य परंज्जयो पौर मौलीरोग प्रसथा है । काचरोम, पमिद्युत्, पथिमन्त्र, सन्निपात् पित्तहृदि, यक्षिका, पित्तविदग्धहृदि, पोषणी पौर सगच ये सब वाय्व हैं । कष्टजात नित्रोमके मध्य खानरोम प्रथम पौर काचरोम वाय्व है । पमिद्युत्, पथिमन्त्र, कष्टप्र-प्रथित, श्वेतिदग्धहृदि, पोषणी, सगच, कृमिपथि क्लिप्त-वर्त्मन् पौर श्वेत्प्रपातक श्वेत्प्रकारोमके से सब रोग साम्य हैं । श्वेतजात नित्रोममें अक्षय्य प्रसथा, शोचितामं, पथकथित पौर अक्षरोग प्रसथा है । रजस काचरोम वाय्व तथा मन्त्र, पमिद्युत्, क्लिप्तवन्त्र, श्वेत्प्रात् पिराक, पथिमन्त्र, पिराज्जक, पथको, पथक, यक्ष, शोचि-तामं पौर पक्षुं न ये सब साद्य हैं । पुष्यका, नाक-काण्ड, पथिपाक पौर पथको से सब रोग सर्वदोषक हैं । पथक से सब प्रसथा हैं । सन्निपातक काचरोम पौर पथकोपरोम वाय्व है । वर्त्मन्वन्त्र, पित्तका प्रसथा-वर्त्मन्, मसिमन्त्र, धावन्त्र, कक्षात्रिणो, पूषाक, पक्षुं श्वेतवन्त्र प्रथमक श्वेतार्ग, मूक श्वेतक, सयोग पौर सयोग से दो प्रकारके पाचरोम, कष्टवन्त्र, पथिमन्त्र, कृष्णीका पौर विपथक से सब रोग साम्य हैं । सन्निपात-पौर सन्निपात से दो प्रकारके वाह्यरोग हैं ।

नित्रोम ७१ प्रकारके हैं । इनमेंसे ८ सन्निपात २१ वर्त्मन्त्र, ११ यक्षयामकित, ४ सन्निपातकित, १० कष्टप्रसथा १२ इष्टियत् पौर ३ वाह्यरोग हैं ।

नित्रके सन्निपातप्रोम ८ प्रकारके हैं—पूषाक, कप-ताक, पूषाका, श्वेत्प्रपातक रजसका, विप्राका, पथिमन्त्र, पथको पौर क मथन्त्र । नित्रके सन्निपातप्रोम अथ पथकोक को जाता पौर इधसे प्रतिगन्त्रिमिष्ट पूष

निष्कृता है, तन्म कष्टे पूषाक प्रोम कष्टके है । अन्तर्गते कष्टप्रसथाके पुष्पके पुष्पायुषे ओ पथकाय तक नित्रोमका निरुद्धत निरुद्धत सिद्धा है ।

अथैक विमिन रोगका निच वत्तत् इत्येव देखो ।
 भावप्रकायके नित्रोमकाचिकारमें इधका विषय इध प्रकार लिखा है,—पथको पथको इधबाहुल्यसे ही पथक नित्रमन्त्रका परिमात्र है । पथक मन्त्र, श्वेत, कष्ट पौर इष्टि से सब इधके पथक हैं तथा इधमें ७८ प्रकारके रोग होती है । (चरकके मतानुसार १४ प्रकारके हैं ।) इष्टिमें १२, कष्टयुक्त ४, कष्टकृत ११, वर्त्मन्त्र २१, पथक मन्त्र २, कथिमन्त्र ८ पौर समस्त नित्रमन्त्र १० प्रकारके रोग हैं ।

नित्रोमका निदान — प्रातःप्रातः द्वारा उत्तम अन्त्रिके रोगान् करन्निधे न्यतरीजका पथिमन्त्र, पूषक कष्टप्रसथा, निद्राविषयं पर्यात् द्विवाग्निद्वारा पौर रात्रिकावन्त्र, पथक वि द्वारा उपवात, नित्रं धूलि वा धूमप्रसथा, वसन-वेधधारक, पथकवसन, यक्ष, पारनात, कथ कृष्णी पौर कष्टके प्रतिरिक्त धेवन, मन्त्रमूत्रका वेधधारक, पथिप्रय कष्टकृष्णी शोचितामं सगथा, मन्त्रक पर श्वेत, हुतशमी शान पर श्वेतोष्क, कष्टु वेधयं व दिविक कष्टप्र-प्रसथा पथिताय, पथिरिक्तशीघ्रकृष्णी, पथको पथारक पौर पथिकल्प कष्टकृष्णी इत्येव कारकोऽपि वातादि दोष कृपित को कार नित्रोम उत्पादन करती हैं । पुष्पके ७ प्रकारके प्रकृपित दोष विद्रावस्तुके द्वारा कथके देगला पाच्य कर नित्रोमकाकारक होती है ।

नित्रहृदि का प्रसुप्त—इष्टि कथमन्त्रकके मध्यकित सद्यःहास प्रसथा प्रापे मन्त्रके परिमात्रको सुप्तु नामक कीटको को ही सा प्रकृष्णीकाभी तरह प्रसथा, कथिप्र पौर वाह्यप्रसथाके प्राप्सु है । कथ श्वेतकथ पर्यात् श्वेत श्वेत्प्रसथा प्रसथा, पथमूत्रक पौर चिरक्यायी रोगमय है ।

पथक विषयक—नागपुष्टन रथरजाजित, पूषा मांसा-मित, तोषा वैदुष कृत पौर श्वेत् पथक काककाक सन्निपात है । पुष्टमन्त्रककी कितता निरमन्त्रकके पथके प्रसथा एक प्रसु है । पथके पथके दोष जानके रोगी कभी पथक पौर कभी कथकपथके दिक्ता है । पुष्टमें दोष कृपित को पर कथकपथके दिक्ताई नहीं पथका पौर कभी मन्त्रिका, मन्त्रक, कथ, काचक, मन्त्रक,

पताका, मरीचि चौर कृष्णमास्रणि। कर्मा कृष्णचित्तके
 त्रैसा वा दृष्टि-पञ्चसाह दृष्ट्यादि माना पञ्चकारके प्रति
 च्छायादि दीपना है। दृष्टिभ्रमके कारण दूरस्थ वस्तु
 समीपवर्ती चार समीपवत् वस्तु दूरस्थ होय जाती है।
 अतिसी ही चेतन करने पर भी चूर्णका दृष्टि भ्रमना हुय
 चर्छी महता।

दूरस्थ पदार्थगत दीपका विपरण—जसके पदार्थमें
 दीप ही जाता है, तब रोगी जपरना चार दृष्टि
 महता, भाषे उसे दूर भा दिवार्द्धि चर्छी पड़ता है। जपर-

णवत् स्यात्कार पदार्थ वदार्थगतके जैमे मान्नुम हीने
 नगमे है चार पाणिमसृष्टके जान, नाक चौर पाणिनिलम
 दि दि पड़ता है। जसमें जो दीप सज्जान् ही ज
 दृष्टि ही जाते है, उन्ही सब दीवार्द्धि चर्छुमाने सब
 वस्तु मान दिवनेमें पाती है। स्वर्णान् मानाभिहित होने
 पर जान, विद्याभिहित होनेमे माना या माना चौर कक्षा-
 विद्वानमें उज्जवा दिवार्द्धि पड़ता है। पदार्थके चर्छीनेमें
 दीप होनेमे मनीरथ वस्तु, जसके होनेमे दूरस्थ वस्तु
 चौर दीपवाग्य होनेमे पार्श्वस्थित वस्तु दीप चर्छी
 पड़ती। इसमें यदि सब जगद् दीप ही चैव, तो भिन्न
 भिन्न रूप निहित भावमें दृष्ट होता है। दीप सज्जान् होने
 में चर्छी वस्तु होती, तिर्यक् चौर दीर्घा वाग्यमें हीनेमे
 एव ही दृश्य दार्द्धि चारारमें तथा दीवर्द्धि एक न्यानमें
 प्रियभाषणे चर्छी रहने पर एक वस्तु चर्छी ज्ञान
 पड़ता है।

वाद्यपटनर दीपका विपरण—कृषिनेदीवर्द्धि याद्य-
 पटलने प्रवस्थान करने पर सब तरहसे दृष्टि रुद्ध ही
 पातो है। किमो किमो र मतेमे यह तिमिर वा चिद्र
 नागरोग कहा गया है। (गोपब्रह्मज्ञ ४ भाग)

वाद्यपटन विषय वस्तुहीनेमे ही तो।
 सञ्चलने नेत्रके सब स्थानगत रोगका विषय इस
 प्रकार निव्या है,—पक्षिघ्न चौर पक्षिघ्नरोग चार चार
 प्रकारके है। यथा—शोकयुक्तपाक, शोकहीनपाक,
 उताधिमन्थ, अनिलपयाय, शुक्रान्निपाक, ध्वस्तोपात,
 अन्नाधुपितादृष्टि, मिरौत्पात चौर सिराहण। इनका
 प्रतीकार शुरुवे ही करना चाहिये। वायुजन्य पक्षिघ्न
 होनेमे नेत्रका स्त्र्यभाष, संद्वर्ष, पर्यभाष, शुक्रभाष

चौर इसमें शीतल अद्वयान तथा मिश्रितमें पक्षिघ्नान् चै
 सब लक्षण दिवार्द्धि पड़ते है। विषयार्थके पक्षिघ्नरोग
 होनेमे चर्छीमे पाए, पाए, शोकविशय, पुम चार पाकका
 पदम तथा च्छा वस्तुगत होता है चौर चर्छी वाग्य ही
 जातो है। च्छा च्छा पक्षिघ्नरोग होनेमे जैमे जप्या-
 भिषाव, मुदना, शीकराष्ट्र, पञ्चमंशर, शीतलना चौर
 चर्छीमा विद्विजसराव हे सब पदार्थ मान्नुम पड़ते है।
 रक्त पक्षिघ्नरोग चर्छीमे मान हा चर्छी है, चौर मान
 मान रेवार्द्धि दिवार्द्धि होने अद्वय ही तथा दूरस्थ पदार्थ
 भाग वदुन मान ही जाता चौर इसमें मान्नुम चर्छी जैमे
 दोम निरते है। चर्छी चर्छी सज्जान् विषयार्थ जैमे
 हीने है।

यद्यपिवाद्यवर्द्धि इसका प्रतीकार न किया जाय, तो
 जसका यह चर्छी चर्छी पक्षिघ्नरोग ही जाता है। इस-
 के होनेमे चर्छीमे चर्छी पाहा चौर जैमे पक्षिघ्नरोग तथा
 पक्षिघ्नरोग चैसा वाग्यना भी होती है। वायुज्य पक्षिघ्नरोग
 भाषेगा ही वेदना हीतो है चौर इसमें पक्षेप, तीद,
 भेद, मरेश, अनिलता, वाक्युदन चारमोटन, चाक्षान,
 कल्प चौर लता ये सब पदार्थ ही हर मिश्रितके चर्छी-
 भाग तक व्याप्त हो जाते है। विषय पक्षिघ्नरोगमें नेत्र
 पाक ही जाते चौर मूत्र हर पर जाते है। इसमें चर्छी वा
 चार द्वारा दृश्यता तरह वेदना हीतो है। इसमें चर्छीमा
 मरीचि वम, ना निरलता है, चर्छी चौर पुनाला-मा
 दिवार्द्धि पड़ता है चौर मिरने प्रथम मो होता है। च्छा-
 जन्य पक्षिघ्नरोगमें शीत, च्छाचर्छी, स्याव, मीतर, गोरव,
 नेत्रहय चौर विद्विजसराव हे सब पदार्थ हीने, दृष्टि चादिन
 तथा सब पदार्थ पक्षिघ्नरोग दिवार्द्धि पड़ते है चौर
 नासकाम चाक्षान तथा मन्नाचर्छी यातना हीतो है।
 रक्त पक्षिघ्नरोगमें नेत्ररक्तछाय तथा तीदविद्वि, चर्छी
 चौर पक्षिमहत्त चौर मन्ना च्छाचर्छी रक्तमन्ने केसा
 मान्नुम पड़ता है। इसमें चर्छीमे ही बहुत दर्द जाता है।
 पक्षिघ्नरोगके च्छेभजन्य होनेमे सम्राजमें, रक्तजन्य
 होनेमे पञ्चरात्रमें, वायुजन्य होनेमे पञ्चरात्रमें तथा
 विक्षय्य होनेमे बहुत ज्वर दृष्टि चाव ही जाती है।

कण्डु, उपदेश, सञ्चुपात, पाक उड, मरेश जैसा
 प्रकार, दाह, संद्वर्ष, ताम्बयर्ष, तीद, गोरव, शोक,

सुदृशुः कः उच्यते, शीतल तथा विच्छिन्न आस्त्राव, सख्ये चोर
 पक्ष आत्मा ये सब समोप निवपाक्षके लक्षण है। पयोप
 निवपाक्षमें शीतले मित्रा चोर कुर्वते सब प्रत्यक्ष देखे
 जाते हैं। चाक्षुषी आन्धकारिक विरामे वापुष्कित हो
 कर इच्छिको प्रतिवेपथुवृत्त क इत्ताविमत्य नामक असाध्य
 रोग उत्पन्न होता है। सुचित वापुष्के दोनो पक्ष चोर
 मूर्ध्नि पात्रप्रकार सहाय्य करनेमें समी तो मूर्ध्नि चोर
 समी पक्षमें वेदना होती है, इसीको वातपयोप कहते
 हैं। नेत्रवर्णके कठिन तथा सख्ये होनेसे पक्षवा इच्छिके
 शीत होनेसे चोर नेत्रको लम्बीतन करनेमें असम्यक्त अथ
 मानस होनेसे दाहशक्तिप्रारोग समझा जाता है। पक्ष
 वा बिहाको प्रत्यक्ष क्षान्तिसे पाक्षोके लक्षण चोर (नेत्रावप
 लिये प्राप्त हो जानेको जो पञ्चाप्युचित इच्छि कहते हैं।
 वेदना हो या न हो, शीतल समुचो पाक्षोके साक
 होनेसे ही शिरोत्पातरोग कहा जाता है। इस प्रकार कुछ
 दिन रहनेसे पाक्षोके तन्मयवर्णके होनेसे चामू निकलते
 रहते हैं चोर रीसो दिव लक्ष्मीं यकता। (अप्युप उत्तरासन
 ६ म०) अथवाच (वचन तथा विचार) उत्तर गत्ये देखो।
 नेत्रोद्यम् (स० पु०) नेत्ररोग इति जन-ज्ञाप। उचि
 काक्षोद्वय।
 नेत्रोद्य (स० श्लो०) नेत्रयो रीम। नेत्रपक्ष, पाक्षकी
 विरामो, शरीरो।
 नेत्रपक्ष (स० श्लो०) नेत्रयोर्वक्षसि पाक्षोदक। नेत्र
 पक्ष, पाक्षके पक्ष।
 नेत्रपक्षि (स० श्लो०) एक प्रकारको छोटी पिपकारो।
 नेत्रवारि (स० श्लो०) नेत्रयोर्वारि। अक्षुन्नक, चामू।
 नेत्रविष् (स० श्लो०) नेत्रयोर्विष्। नेत्रमल चापका
 शीतक।
 नेत्रविष् (स० पु०) नेत्रे विष पक्ष। द्विष्यवर्णभेद, एक
 प्रकारका द्विष्यवर्ण विषकी चापोंमें विष होता है।
 नेत्रवर्ण (स० श्लो०) चाक्षुषा शोभा।
 नेत्रपक्ष (स० पु०) नेत्रयोः पक्षः इत्यम्। अक्षुन्नक
 लम्बीतनादि व्यापारराहित्य, चापको पक्षकोका विराम हो
 जाना कर्णोत्तमना चोर गिरना इत्ये हो जाना।
 नेत्रपक्ष (स० पु०) चापोंमें पानी बहना।
 नेत्रपक्ष (स० श्लो०) नेत्रयो पक्षम्। अक्षुन्नक काष्ठक,
 चामू।

नेत्रानन्द—अयथासा नामक एक लक्ष्मण पक्षके रचयिता।
 नेत्रान्त (स० पु०) नेत्रयो यन्त। अयाङ्गदेय, चापक
 होने चोर क्षान्तिके शीतका स्थान बनपटो।
 नेत्रामिष्यन्द् (स० पु०) नेत्रयोः अमिष्यन्द् इत्यम्।
 नेत्रोद्यमिद, पाक्षका एक रोग जो बहुतवे पक्षता है,
 चाप चापिका रोग।
 सुदृशुत्तमि चिन्ता है कि प्रसङ्ग, मानस कर्म, निःश्यास,
 एक साह्य भोजन एक घस्या पर अयन, पक्षक लयके मग,
 एक बह्यपरिधान चोर आस्यप्रसूति शीतल करनेसे कुछ
 अथ, शोथ, नेत्रामिष्यन्द् चोर शीतपरिष्क रोग एक पक्ष
 के कुर्वते पक्षिको हो जाता है, ये सब लक्षणकारो है।
 सर्वभूतमत अमिष्यन्द्रोग चार प्रकारका है—
 वातक, पित्तक, कफक चोर रज्जक। इस रोगमें पाक्षि
 साक साक हो जाती है चोर लक्ष्मीं बहुत पोड़ा होती है।
 वातक अमिष्यन्द्रोगमें चूर्ण लुभनिको-सो पोड़ा होती
 है चोर पैसा जान पड़ता है कि चापोंमें विच्छिकरी पड़ो
 हो। इसमें ठण्डा पानी बहता है शिर पुष्कता है चोर
 शरीरके रंगते लक्ष्मीं हो जाते हैं।
 पित्तक-अमिष्यन्द्में चापोंमें अन्न होता है चोर
 बहुत पानी बहता है। अक्षुन्ने शीतले रहनेसे पाराम
 माक्षुम् होता है।
 कफिक अमिष्यन्द्में चापि शरीर जान पड़तो है
 मूत्रक पाक्षिक होती है चोर बार बार माफा पानी बहता
 है। इसमें गरम चूर्णोंसे पाराम माक्षुम् होता है।
 रज्जक-अमिष्यन्द्में पाक्षि बहुत साक रहतो है चोर
 सब लक्षण पित्तक अमिष्यन्द्के होने हैं। अमिष्यन्द्
 रोगकी विच्छिका शर्तों होनेसे अमिष्यन्द्रोग होनेका जर
 रहता है। (आयुर्वेदक उर्ध्व माने)
 विच्छिका—वापुष्क अमिष्यन्द् वा अमिष्यन्द् होने
 से पुरातन द्रव द्वारा चिन्त कर, पीछे यथाविधि प्लेवक।
 प्रयोग चोर शिरोवेचनपुत्रक रज्जकोपका विधान है।
 इसमें तर्पण पुदपाक, भूम, पाक्षोत्तम मल शोपरि
 पिचन, शिरोवेचन, अक्षुन्नक वा कर्णोद्य देमचर मातप्र
 पण्डे प्रांस पक्षका अक्षुन्नकका परिपिचन कर्तव्य है।
 इत, चर्मी, मिद चोर मज्जा मज्जो एक माघ गरम करके
 प्रयोग करनेसे यह रोग जाता रहता है। अक्षुन्नके कर्त

तन्त्रके ८से १२ अध्याय तक इस नेत्रोपधोपदेका विधि विवरण लिखा है।

नेत्रामय (स० पु०) नेत्रस्य आमयो रोगः । चक्षुरोग, आखको वोमारी ।

नेत्राम्बु (स० फलो०) नेत्रस्य अम्बु जलम् । अश्रु, आस ।

नेत्राम्बु (स० फलो०) नेत्रस्य अम्बु । अश्रु, आस ।

नेत्रारि (स० पु०) नेत्रस्य अरिः शत्रुः । सेहुण्डवृक्ष, सेहूँड, यूहर ।

नेत्रावती—मन्द्राज प्रदेशके दक्षिण कानाडो जिलेमें प्रवाहित एक नदी। यह अक्षा० १३° १०' १५" उ० और देशा० ७५° २६' २०" पू०से निकल कर पश्चिमकी ओर मङ्गलूरके निकट (अक्षा० १२° ५०' उ० और देशा० ७४° ५२' ४०" पू०) समुद्रमें आकर गिरी है। कुमारदारो नामकी एक शाखानदी कृष्णनदिका नामके निकट इसमें मिल गई है। जहां पर उक्त नदी इससे मिली है, वहाँ इसका नाम नेत्रावती पड़ा है और इस नदीसे यह मङ्गलूर तक चली गई है। बाँदकी समय छोड़ कर और सभी समय इसमें वाणिज्यकी नावें आती जाती हैं।

स्कन्दपुराणके अन्तर्गत सद्वाद्रिखण्डमें लिखा है, कि सूर्यवंशोद्भव ईमाङ्गदे राजाके पुत्र मयूरने भाद्रिलेवसे आगत वेदवित् ब्राह्मणोंकी रक्षनेके लिए कई ग्राम दान किए। इनमें न नेत्रोपधोके संसरी किनारे पर अवस्थित गजपुरि नामक एक ग्राम था जहाँ ऋषि ४ मुक्तिं प्रतिष्ठित था। दूसरे ग्रामको नाम था त्रैकुण्डं जिसके उत्तरमें कोटोलिङ्गम्, पूर्वमें सिद्धेश्वर, दक्षिणमें हीतानटा और पश्चिममें लवणसमुद्र पड़ता था। यह ग्राम देवविग्रहादिके लिये जगतीतल पर विशेष संशुद्ध था।

(देवादि २।८।१-११)

नेत्रिक (स० फलो०) एक प्रकारकी छोटी पिचकी रो ।

नेत्रो (स० स्त्री०) नोद्यतेऽनेत्रेति नी करणे ष्टुन् (दास्यी शशेति । पा ३।२।१८२) पित्वात् ङीष् । १ लङ्गी । २ नाडो । ३ नदी । नद्यतीति नो तं ष्टु ङीष् । ४ प्रथं गामिनौ, अशुभा, सरदारं । शशिकथितौ, रोह वताने-अस्त्री, मित्रानिवालो ।

नेत्रोपकार शुरुते ही नेत्रोपध' नयमसुख' फल' यस्य वादास । अन्वभाव, स

नेत्रोत्थिव (स० पु०) १ नेत्रोका आगट, देखनेका मन्त्र । २ दशनीय वस्तु, वह वस्तु जिसे देखनेमें नेत्रोको आनन्द मिले।

नेत्रोपध (स० फलो०) नेत्रस्य औपधम् । १ पुष्पकसीस । २ आखको दवा ।

नेत्रोपधो (स० स्त्री०) नेत्रस्य औपधो । अश्रुश्लेष्मो, मेढासिंगी ।

नेत्रागण (स० पु०) रसौत, त्रिफला, लोध, खारपाठा, वनकुलथो आदि नेत्ररोगोंके लिये उपकारो औपधियोंका समूह ।

नेदिष्ठ (स० त्रि०) अयमेपामतिशयेन अन्तिकः, अन्तिक इष्टन् अन्तिकशब्दस्य नेदादेशः । (अन्तिक वाद्योनेदसापौ । पा ५।३।३) १ अन्तिकतम, निकटका, पासका । २ निपुण । (पु०) ३ अष्टोत्थष्ट, ठेरिका पेड़ ।

नेदिष्ठतम (स० त्रि०) नेदिष्ठ-तमम् । अत्यन्त निकट, बहुत समीप ।

नेदिष्ठी (स० पु०) नेदिष्ठं जन्मतः सन्निकटस्थानं विद्यतेऽस्य इति । १ सहोदर भाई । (त्रि०) २ निकटस्थ, समीपका ।

नेदीयस् (स० त्रि०) अयमनयोः प्रतिशयेन अन्तिकः, अन्तिक इयसुन्, ततो अन्तिकस्य नेदादेशः । नेदिष्ठ, समीपका ।

नेदीयस्ता (स० स्त्री०) नेदीय-भावे-तल-टाप, अति समीपता ।

नेनमिनो—मन्द्राजकी तिनवली जिलेके शातूर तालुकके अन्तर्गत एक ग्राम। यह शातूरनगरसे ५ मील पूर्वमें अवस्थित है। यहांके अनन्तराजस्वामो-मन्दिरके सम्मुखस्य पत्थर पर एक गिलानिपि खोदी हुई है जो चोक्कलिङ्ग नायक आदिके समय (१५८३ सम्बत्)की मानी जाती है। वहाँके पेशवसके मन्दिरमें भी चोक्कलिङ्गके समयमें उक्कीर्ण एक दूसरा गिलापट देखा जाता है।

नेनुभा (हि० पु०) विद्यातोरई, विवरा ।

नेप (स० पु०) नयति प्रापयति शुभमिति नो-प, ततो गुणः । (पानी विपिभ्यः । उण् ३।२३, १ पुरोहित । २ उदक, जल ।

नेपथून—सूर्यको परिक्रमा करनेवाला एक ग्रह । इसका

पता ७५ ई०६६ ई०६६ वरुण विद्यापीठ नगरी । लडी
 घाटके पत्र बर मासमें करारोमी ज्योतिर्विदु मेमिरियर
 (M Lovest)मे इस पत्रका पता लगाया । पत्र तत्र
 त्रितमि पत्रोका पता जमा ईं लमने यह कबसे पत्रिक
 पूरी पर ई । इसका खान १०००० मोन ई । सुबंसे
 इसकी पूरी २०००००००० मोनके लयमग ई, इसोसे
 इसकी कियेके धारीधोर कुममिमे १६४ वर्ष लमते ई
 पत्रात् निपचनका एक वर्ष हमारे १६४ वर्षीका होता
 ई । तिस प्रकार इंग्लीका लयपत्र जम्बूमा ई, लडी प्रकार
 निपचनका भी एक लयपत्र ई । जगोव देखा ।

नैपथ्य (७० ली०) नी-निच, गुहा मे नेता तत्र
 पत्रम् । १ वेद्य । २ भूयच । ३ बेगजान, लम्ब, पमि
 नय मांठका पादिमे परदेके मोतका बह खान त्रिसमे
 लटे लडी जगना प्रकारके बेग चलते ई ।

नच कनिच मने नैपथ्य विद्यालका निपच इस प्रकार
 लिखा ई । पमिनेपमे निपचानिचि विधीय प्रबोक्मनीय
 ई । निपचानिचि चार प्रकारकी ई—पुष्ट, पत्रहार,
 ल जोव धोर पत्ररचना । फिर पुष्ट नैपथ्य ३ प्रकारका
 ई, उन्निमा, भाजिमा धोर विहमा । बख बा जर्मादि
 धारि जो इंदर बर्माया जाता ई लठका नाम लन्निमा
 ई । बहं डेयें बदि यन्त्रबदित जो लो लडे भाजिमा धोर
 बदि इन्ने विहमान जो, लो लडे विहमा कहते ई । माक,
 धामरके धोर बर्मादि धारा यथाशेय्य लत्तद्वयोमाके
 त्रिडे जो इन्ने बर्माया जाता ई लठका नाम पनहारनैपथ्य
 ई । निपथ्ये जो पत्रिमथेय होता ई लडे ल जोव
 कहते ई ।

भम्य धोर धामरकादि तत्रा र्जिन, लीन नील धोर
 लोहितोदि बचधारा बबालोय्य जगनेमे यथापय भावके
 जो विन्यास लिखा जाता ई, लडे पत्र रचना कहते ई ।
 (बनेडमि)

निपाठ—भारतवर्षके उत्तरमे पत्रलिखत एक आजीन
 शाल । इस शालके उत्तरमे त्रिम्बक-शाल, पूर्वमे प ग
 रीकी बरई विहिनशाल लखिचमे ध परेबाविहृत विन्दु
 खान धोर लखिमने पत्ररत्राविहृत कुमायुल धोर रोडिना
 पन्तरदेय ई । १८२१ ई०के पत्रमे कुमायुल धोर
 धोर लखि पत्रिक घातकु लडीके लोर लठ इस शालकी

धोमा विहृत लो । १८२१ ई०के मथिपुल्लवे ये पत्र
 खान प गरीजेके पत्रिधारमे पत्र गय ई । पत्रिमने काता
 बा मरयु लगे, दक्षिचमे पयोप्याके मथ्य लुच्छना परंत,
 पम्पारके मथ्य सोमिधर पत्रंतकी लखमूमि लत्रा पूर्वमे
 मिथीनदी धोर गृहगत पत्रंत ही निपाठ धोर पत्ररिजी
 शालके मथ्य धोमा-रैषाकपमे निर्दिष्ट ई ।

यत्रिहृदमतन्मि निपाठकी सोमा इस प्रकार
 लिखी ई—

“उत्तरर बभारन भोगेभाल बहेररी ।
 वेगकडेये देवेति पत्ररानां इतिभिरः ॥”

जटेगडवे से कर लोमिधर लठ निपाठ देय माग
 मया ई । यह खान पत्रकीका सिद्धिपद ई ।

वेगक्यामथी उपति ।

हिमाकय पत्रंतकु लठदेयके त्रिस पत्रंतोय प ग्रमे
 मोर्जाजातिका वाम ई, लडे त्रिम्बतोय धोर हिमाकबडे
 लपरिक पत्रिन्दु पात्र (पत्रातिबो माधामे 'पान' देयके
 कहते ई । पत्रंतमान निपाठशालके पूर्वोय धोर सिद्धिम
 प्रदेयकी पत्रकी पादिम पत्रम्य लियेजाजाति 'मि' कहती
 थे । लियेजा, मिशर धोर पयरापर लई एक परलपर
 ल लम्ब जातिवोकी येन भारतीय भाषामे 'मि' शब्दका
 पत्र 'पत्रंत गुहा ई लडां ध्यादिके लोमा पाचय से
 कर मनुष्य रच कहते ई । त्रिम्बत धोर लठमने तप्य
 लामार्को भाषामे 'मि' शब्दका पत्र ई 'पत्रिन्न गुहा
 का दिवताके लडेयमे रचित पत्रिन्न खान का पोड' लखि
 मडकमे पनुमान लिखा का कहता ई कि मोर्जाजातकी
 बाधमूमि हिमाकयतलक पात्रदेयमे लडां जायाका ल्पुर्ण
 धोर लखक्युलाब बसति 'मि' पत्रात् पत्रिन्न लीब' खान
 ई लमो पमडिको निगम (पत्रात् पात्रराष्यालगत
 पत्रिन्न लीय' वा धाममूमि) कहते थे । फिर लिमो
 लिमोका कहता ई कि लय पान देयके लिम मागमे
 मिशरजातिका वाम का, बह पत्रमे 'मि' कहलाता वा ।

७ लिखलोक माधामे 'पान' शब्दका लई ई लपत्र ।
 हिमाकबडे इस ल'लमे पत्रमरके लडेय काव लडे लडे ई
 इस कावके लडेय इस ल'लमे पात्रदेय कहते थे ।

† An account of the Steps See Proc. of the Ben
 gal A latio Society 1897

'ने' नामक स्थानमें वास करनेके कारण ही इस जाति-का नाम 'नेवार' पड़ा है। इस नेवारजातिके लामाओंनि पहले बौद्धमत ग्रहण करके अपने देशमें बहुते-सी वीर-कीर्तियाँ स्थापन कीं तथा उन्हेंके नाम मछुते पर इस स्थानका नाम नेपाल हुआ था, ऐसा लोगोंका विश्वास है। यह स्थान लेप्चाकथित 'ने' नामक स्थानसे स्वतन्त्र है।

"नेपाल" यह नाम समय देशता नहीं है। जिस उपत्यकामें इस राज्यकी राजधानी काठमाण्डू नगर अवस्थित है, उसी उपत्यकाका नाम नेपाल है। उसीसे समय राज्यका नामकरण हुआ है। यह राज्य पूर्व-पश्चिममें २५६ कीस लम्बा और उत्तर-दक्षिणमें ३५से ७५ कीस चौड़ा है। यह अक्षा० २६° २५' से ३०° १७' ०" और देशा० ८०° ६' से ८८° ५४' ०" के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ५४००० वर्ग मील है।

प्राकृतिक विभाग।

नेपालराज्य स्वभावतः पश्चिम, मध्य और पूर्व इन तीन उपत्यकाओंमें विभक्त है। चार अत्युच्च पर्वत-शिखर इन तीन उपत्यका-विभागके प्रधान कारण हैं। अश्रेणीविभक्त कुमायुन प्रदेशमें अवस्थित नन्दादेवी-शिखरकी छोटी छोटी नदियोंके एक साथ मिलनेसे काली नदीकी उत्पत्ति हुई है। यही नदी नेपालराज्यके पश्चिम उपत्यकाकी सीमा है। नन्दादेवीसे सी कीस पूर्व धवल गिरिशिखर (देशीय नाम दूधगङ्गा) अवस्थित है। इसके ठीक दक्षिण गोरखपुर नगर पड़ता है। यह पर्वत शिखर मध्य उपत्यकाके पश्चिमसोमारूपमें उपस्थित है। पूर्वीत नेपाल नामक उपत्यकाके ठीक उत्तर यह गोसाईंथान पर्वत दण्डायमान है। यह पर्वत शिखर पूर्व उपत्यकाके पश्चिम सीमा और धवलगिरि तथा गोसाईंथान पर्वतके मध्य उपत्यका पर अवस्थित है। गोसाईंथानसे ६५ कीस पूर्व अङ्गरेजाधोन सिक्किम राज्यमें अवस्थित काञ्चनजङ्गाशिखर ही नेपालकी पूर्व-उपत्यकाकी पूर्व सीमा है। इस पर्वतके दक्षिणतर्फके कुछ अंश और सिक्किम नेपालराज्यकी पूर्वसीमा रेखारूपमें निर्दिष्ट है।

गिरिपथ।

नेपालान्तर्गत हिमालयपृष्ठको भेद कर तिब्बतराज्यमें जानेके अनेक गिरिपथ हैं। किन्तु ये सब पथ प्रायः तुपारसे टके रहते हैं। इनमेंसे जो पथ सबसे निम्न-भूमिमें अवस्थित है, वह यूरोपके सर्वोच्च पर्वतसे भी उच्च है।

१ धकला-खर पथ वा यद्विपथ—यह नन्दादेवी और धवलगिरि-शिखरके मध्यस्थलमें है। गतेहु-नदीके उत्पत्ति-स्थानके समीप घर्घरा नदीकी कर्णाली नामक उपनदी निकल कर इसी राह होतो हुई तिब्बतकी छोड़ कर नेपालमें प्रवेश करती है। जिस स्थान पर कर्णाली नदी तिब्बतसीमामें गिरती है, उस स्थान पर धक नामक ग्राम है। इसी ग्रामके नाम पर इस पथका नामकरण हुआ है। धक ग्राममें तिब्बतसे लाए हुए लवणका विस्तृत व्यवसाय होता है।

२ मस्त पथ—यह धवलगिरिसे २० कीस पूर्वमें अवस्थित है। धवलगिरिके पादमूलमें तिब्बतकी और इस नामका एक प्रदेश भी है। उसी प्रदेशके नामानुसार इस पथका नाम पड़ा है। मस्त प्रदेश धवलगिरिके उत्तर होने पर भी वहाँके राजा नेपालके कर्द हैं। मस्त उपत्यका हिमालयके तुपाराहत उत्तर और दक्षिण पर्वत-श्रेणियोंके मध्यवर्ती एक ऊँचे स्थान पर अवस्थित है। यह राज्य गोर्खाराज्यमालाके अन्तर्गत नहीं है। मस्त गिरि-पथके उत्तरभागमें प्रधान रास्तेके ऊपर मुक्तिनाथ नामक एक ग्राम बसा हुआ है। यह ग्राम तीर्थस्थानमें गिना जाता है और यहाँ भी तिब्बतीय लवणका व्यवसाय होता है। मस्तसे आठ दिनमें और धवलगिरिके क्रोड़स्थ मालीभूमके प्रधान नगर वीनोयहरसे चार दिनमें मुक्तिनाथ तीर्थ पहुँचते हैं।

३ केर पथ—यह गोसाईंथान पर्वतके पश्चिममें पड़ता है।

४ कुटि पथ—गोसाईंथान पर्वतसे पूर्वमें है। ये दोनी पथ राजधानी काठमाण्डूके निकटवर्ती होनेके कारण दोनों पथ हो कर तिब्बतीय तीर्थयात्री और व्यवसायी प्रति वर्ष श्रौतकालमें नेपाल आते हैं। नेपालकी राजधानी काठमाण्डूसे तिब्बतकी राजधानी लामा जामिका

राष्ट्रादिरपय को कर चना गया है। ठेरो नामक स्थानमें यह राष्ट्रा कुट्टिपयके राहमें मिल गया है कुट्टिपय राष्ट्रा को तिब्बत जामिना पर्येवाहत होता था सोचा है। बिन्तु इस राह को कर टङ्ग नहीं चलता।

चोन जामिने बिचें निवासाप्रभूतक कुट्टिपय को कर जाता है। बिन्तु धाने समय चोन दियोड टङ्ग जामा होता है इस कारण वह बेर पत्र को कर छोड़ता है। १०८२ ई०के इहमें चोनबेना दसो डिर पय को कर पाई थी। कुट्टिपयके पवित्रस्थ तुपाराहत पर्वतको चुरै भूमि (ताम्बभूमि) चौर इनके पूर्वका पर्वतको तीव्र कुपो कहती है। दसो पर्वतके ताम्बकोयीनदीकी उत्पत्ति हुई है। यह कोयो नदीको एक उपनदी है। कुट्टियानदी भी (कोयीनदीकी सत्र उपनदियोंमेंसे अन्य तम) दसो कुट्टिपय को कर बह गई है।

१. हबिया पर्व—यह कुट्टिपयके २०१२५ कोच पूर्वमें है। जामोनदीको नम उपनदियोंमें प्रथम पर्वत नदी मो इस राह को कर निवासमें प्रवेश करता है।

२. बर्न भा बरबन पर्व—बाबरनडाके पवित्र निवासके पूर्व चौमानमें यह पर्वत पर्वत है। इस बर्न पर्वत को कर तिब्बतको चोन मीतकात्मने निवास पावे जामि है।

वरीष्ठ नदियादिः।

निवासके त्रिन तोम प्राकृतिक विभागाका उत्तरे बिधा गया है, कि फिर भी तोम नामीने चर्केच बिचें आ कहती है। निवासमें प्रथम नदी तोम है, चर्करा, गच्छक चौर कोयो। ये तोमी नदियाँ पवाबरमके पश्चिम चौर पूर्व पक्षकाच मध्य होती हुई प्रवाहित हैं चौर पवाबरम के तोम चण्डकाए दसो तोम नदियाँ नामीने मुकारा जाती हैं। इन तोम उपनदीको कोडू कर गच्छका चौर कोयोनदीके मध्य निवास-पक्षका है। दसो उप नदीके काठमण्डल नगर पर्वतगत है। दसो बाबरमती नदी कहती है। यह नदी मुहुरैके समोप नदीमें मिलता है। इस चार नदियोंकी पश्चादिधामि पार्श्वनिवासका समा भूषण समानत. विमल है। इनके पश्चात् पार्श्वनिवासके पवित्राधमि नवासराज्यके पश्चात्त जा भूषण है, यह तपारे नामके ब्रह्म है।

राजविभाग।

पूर्विक प्राकृतिक विभाग पुनः नामा पञ्चोंमें विभक्त है।

१. पश्चिम उपनदीका जा चर्चदा पश्चादिधामि प्रदेय—यह २२ पञ्चोंमें विभक्त है। इन चर्चदा पञ्चोंको एक पाव मिला कर चर्चदाराज्य कहती है। फिर इन चर्चदा राज्योंमें चर्चदा राजा जा जमी दार रहती है जिनमेंसे एक राजा प्रथम चौर मिय इकोम उमने भरद है। लुमना, जगको कोट, चाम, पाचाम जगम सुविचोट दीयव्या, मन्नि ग्रन्थ बनर, देनिच दरिमेक, दोती, कुबियागा, वसवी विहरो, कासागाव, चर्चियाकोट, गुटम चौर मशुर यही चर्चदा राज्य हैं। इनमेंसे लुमना-राज को प्रथम है। ये जो मिय इकोम राज्यों पर पाबिपत्य करती है। लुमना-राजको राजधानीका नाम बिबापिन है। इस राज्यके पश्चिमि कोर्वादिमें पराजित होनेके पक्षे ४६ राज्योंके पश्चिमि है। कामोनदी चौर कोर्वाउमके मध्य य ४६ राजा पञ्चों में जिनमेंसे चर्चदा जामोनदीको चौर चोबोम गच्छक नदीको पश्चादिधामि पश्चिमि है। ये सब कामना राज लुमकाराजको समक, पय इत्यादि रूप्य करपक्ष्य देती है। यद्यपि लुमकाराजका बसा प्रभाव पमी नहीं है तो भी पश्चात्त सामन्तराज पात्र मो लके पश्चात्ती राजा मालती है चौर निर्दिष्ट कर भी दिया कहते हैं। ४६ राज्याँके मध्य मच्छक पश्चादिधामि चोबोम राज्य बहादुर-ग्राहके निवासराज्यमें निवास गये है। इस चोबोमो चौर चर्चदाग्राहके राजमय पात्र भी राजा कहनाते है चौर राजम योपद जंने उत्थापित होते हैं। य नाम पयो निवासराजके जागोरदार मात्र हैं। इस चार राज्योंको चार पाँच चर्चदाके डिक चार पाँच नाम तकको पामदनी है। इनमेंसे मर्केके पास पक्षधारी पञ्चुचर हैं। बिधीके पास तो चार पाँच को तक चौर बिधीके पास जानाम पचाय भी है।

लुमकाराज्यके बाद ही पमी होति राज्यका उत्तरे बिधा जा सकता है। इसका राजधानीका नाम है कोति (पुमि) वा दीपुमि। इस राज्यकी जनक व्या पयिका जन पवित्र है। कोतिनया चर्चदाकी मर्केको म्येतगडा नामक शाखाके बाए बिनारे तथा चर्चदा मर्केके ४२८

कीस उत्तर पूर्वमें अवस्थित है। यहाँ दो दल पदाति घोर कुछ कामान हैं।

इसके बाद सुन्धियाननगर है। यहाँ श्रवोध्यामीमान्त पर नेपाली-स्कन्धावर है। यह नगर लखनऊ से ६० कीस उत्तरमें पड़ता है। यहाँसे २५ कीस उत्तर पूर्वमें पेतानागड है जहाँ नेपालियोंकी शिलालाना और वास्तुशाना है। इस प्रदेशमें गोरा बहुत पाया जाता है। सुन्धियानमट्टी नामक विख्यात उपत्यका रामो-नदीके दोनों किनारे तक विस्तृत है।

२ मध्य उपत्यका वा गण्डक प्रववाहिकः प्रदेश।

नेपालोन्नोग बहुत पहलेसे इस प्रदेशकी जानते थे। वे लोग इसे मगगण्डकी उपत्यका कहते हैं। मगगण्डकोसे गण्डकनदीके उपादान-स्वरूप मात उपनदियोंका बोध होता है। वे सातों नदियां धृवनगिरि और गोसाइँ-थान गिखरके चिरतुपारक्षेत्रसे उत्पन्न हुई हैं। सातों नदियोंके नाम ये हैं,—भरिगर, नारायणी वा गाल प्रामै, श्वेतगण्डकी, मरस्यांगट्टी, धरमट्टी, गण्डी और त्रिशूलगण्डा। इनमेंसे भरिगर और नारायणी; श्वेतगण्डकी और मरस्यांगट्टी; त्रिशूलगण्डा, धरमट्टी और गण्डी नदी एक साथ मिल कर पुनः तीन गाखाश्रीमें विभक्त हुई हैं। इसके बाद जिन स्थान पर वे मिल कर गण्डक नामसे सोमेश्वर पर्वतके एक पथ हो कर बिहारमें प्रवेश करते हैं, उस स्थानको तथा उस गिरिपथको त्रिवेणी कहते हैं। त्रिशूलगण्डाके उत्पत्तिस्थानके समीप छोटे दहे २२ ऊद हैं। इनमेंसे गोसाइँ-थानके गिखर पर गोसाइँ-कुण्ड वा नीलखियत् (नीलकण्ठ) कुण्ड हो बड़ा है। इसो ऊदके नामानुसार समस्त पर्वत गोसाइँ-थान कहाता है। इस ऊदके बीचमेंसे एक नीलवर्ण दिव्याकृति पर्वतखण्ड निकला है। यह गिखर जल मेद कर ऊपर नहीं चठा है, बल्कि जलपृष्ठसे एक फुट नीचेमें ही है। स्वच्छजल रहनेके कारण यह साफ साफ दीख पड़ता है। वह पर्वतखण्ड नीलकण्ठ महादेवकी प्रतिमूर्तिके रूपमें पूजित होता है। आषाढ़, श्रावण और भाद्रमासमें यहाँ भस्त्रय यावो या कर स्नान करते और नीलकण्ठकी पूजा करते हैं। यह पथ जैसा दुर्गम है, वैसा ही भयावह भी है। इस कुण्डके उत्तरी किनारे एक श्रवण पर्वत है।

उस पर्वतके दृश्य तीन गण्डोंसे तीन निर्भरिणी निष्कली हैं। इन तीनोंका जल तीस फुट नीचेमें पतित हो कर पुनः एक ऊदमें जमा होता है। इस त्रिधाराका नाम त्रिशूलधारा है। कहते हैं, कि मसुद्र मयनेत्र समय विपयानके बाद गिबजी शिपको ज्वाला और लक्ष्मणे कातर हो कर हिमालयके इसी तुपारक्षेत्रमें जलकी खोज करते हुए आए। यहाँ जब जल नहीं मिला, तब उन्होंने पर्वत-गात्रमें त्रिशूलाघात किया जिससे तीन निर्भरिणियोंको उत्पत्ति हुई। पोछे गिबजी नीचे लीट रहे और त्रिधारा पान कर गए। इसी शयनस्थानमें गोसाइँ-कुण्ड वा नीलकण्ठ ऊदकी उत्पत्ति हुई है।

ऊदगर्भस्थ दिव्याकृति प्रस्तरखण्ड हो समु शयित, महा देवकी प्रतिमूर्तिके रूपमें गिना जाता है। तीर्थयात्रियोंका कहना है, कि ऊदके किनारे खड़ा हो कर देखनेसे ऐसा मानूम पड़ता है मानो भगवान् नीलकण्ठ सर्प-शय्या पर ऊदगर्भमें सो रहे हैं। मि० प्रोव्हफिन्ड अनुमान करते हैं कि यह गिखरोपम प्रस्तरखण्ड बहुत पहले किसी हिम-गिलाके साथ खनित हो कर ऊदगर्भमें इस प्रकार जड़ोभूत है। इस तीर्थस्थानमें एक ऊद प्रस्तरमय रूप और डेढ़ फुट ऊँची नरगमूर्तिके सिवा और कोई प्रतिमूर्ति नहीं है। यहाँ कुछ स्तम्भ भी खड़े हैं जिनमें पहलें एक लड़कण्टा लटका रहता था। अभी वह घण्टा नष्ट हो गया है। समस्त गोसाइँ-थान पर्वत पर और कहीं भी गिबमूर्तिके वा निष्कला चिह्न नहीं है। इस ऊदमें आनिके पथ पर चन्दनवाही नामक यामके पास एक फुट ऊँचा एक प्रस्तरखण्ड है जिसे लोग गणेशकी प्रतिमा समझ कर पूजा करते हैं। इस गणेशकी वे "लोहो गणेश" कहते हैं। इस गोसाइँ-कुण्डसे उत्पन्न होनेके कारण गण्डककी पूर्वीय उपनदीका नाम त्रिशूलगण्डा पड़ा है। सूर्यकुण्ड नामक ऊदके उत्तराग्रेसे त्रिशूलगण्डाको एक और क्षत्रदो वेदत्रतोसे निकली है। इसी सूर्यकुण्डसे टाही वा सूर्यवती नदीकी भी उत्पत्ति हुई है। देवीघाट नामक स्थानमें सूर्यवती त्रिशूलगण्डामें मिली है। यह देवीघाट नयाकोट नामक एक उपत्यकाके मध्य अवस्थित है। यह भी तीर्थस्थान माना जाता है। इस स्थानकी शक्तिशाली देवी भैरवीकी

मन्दिर नवकोट गहरमि पड्कता है । किन्तु प्रतिवर्ष तुषारके मस जाति पर नव मनुष्य यहाँ पामे लगते हैं, तब होनों नदीके सत्रम खन पर सन्धे सन्धे तपते धोर खुपोहन पर्वतपारि द्वारा एक मन्दिर बना कर लयी में देवोबी पूजा की जाती है । कहते हैं, कि देवोबी प्रतिमा पक्षी इली रजान पर ली गेहै क्कप्रदेमके नव कोटमि रजानात्तरित हुई । टाकी वा सिगुलपहाका स्वभावता शैव इतना तेज है धोर वर्षाके समय उसका अस इतना बड़ जाता है, कि होनों किनारे टूट पड्क जाते हैं । इली नगर धेवीने क्कप्रदेमके भवना प्रतिमा क्कानात्तरित कहा लो । गण्डक पर्ववाहिका जिन शीतोस सुदु खखीमि विमल है वा पक्षी क्कच शीतोराजराहा सन्धे क्किया गया है तब वष प-पर्ववाहिकाके पन्तम त बाईयो राब्धाविपति शुमया राजनेपबोध बा । उन राब्धीक नाम से है—डागाहु गुलकोट, मासोभूम, गतहु, गडहु, पोखरा, मडकोट, रिवि, धिर, बोयाट, बासबा, शतुच, पासा, गुजमी, पश्चिम नवकोट, खवि वा खवि, इया, धरकोट, सुक्काट, बिकि, सखियावा विच, पैवान, खडहन, इ, खसि, लसहुध धोर प्रबल । ये सब पमी मोर्खाण्णके सन्धे विच हुए हैं । मोर्खांथोने समस्त गण्डक पर्ववाहिको मासोभूम, खवि, पसा धोर मोर्खा इल नार भायोमि विमल कर निबा है । मासिभूम प्रदेश मोच बनसमिरिसे मोषे भरिगर नदी तक विस्तृत है । इबको राजधानी विनि-गहर नारायको नदीके किनारे बसा हुया है । खचिमदेव मासिभूमके दक्षिणपूर्वमि पड्कता है । पन्नाप्रदेमका विस्तार ग्वाहा लहो होने पर मो नव सन्धे प्रदीकनोब विमल है । यह पन्नेकी राज्य मोरख धुरविसेके सोमान्नेमि पर्वजित है । इसके उत्तरमि व्यापयबीनदी बहतो है धोर निम्नमाममि मोरखधुरके डीक उत्तर "शैतुसखार्थ" नामक तरारि प्रदेश है । यह तरारि खयोधाके पन्तम त तुलकोधुरके से कर गण्डक नदीके पश्चिम पावो बहर तक विरहक है । मासवनमि पर्वतत्रा निम्नप्रदेम धोर दक्षिणार्ध परिक्रात है । पश्चिम नवकोट विमल गण्डक नदीके पश्चिममि पर्वजित है । यह पसा प्रदेशका जो एक अंग है । वर्तमान मोर्खांथके

पूर्वप्रबल राजपूतगण इथीं प्रताप्योमि वष सुसक-मानोषे विताङ्कित हुए, तब से इयो प्रदेशमि पा कर रहने लगे है । गेहै ये लोग शीतगण्डकोषे किनारे लसलु प्रदेशमि जा बसे । पन्नानगर की प्रधान गहर है, वर्षके बाद बोलु धोर गुजमी गहर है । पन्नानगरके २३ कोस पूर्व तानवेन गहर पर्वजित है जहाँ पन्ना-प्रदेमको शैना रहती है । यहाँ एक दरवार, बाजार धोर टकमाख है । इस टकमाखमि तपिका बिबा ठाका जाता है । पसा प्रदेशमि गुरांजातिसे लोग खुतो लपके मुनते तथा तरख तरखका व्यवसाय करते हैं ।

गोर्खाराण्य मण्डक पर्ववाहिकाके पूर्वोत्तर प ममि किगुलपहा धोर मरखान्की शोमी नदियोके बीच पर्व जित है । राजधानी मोर्खानगर इतमानवतनत्र पर्वत के उत्तर चरमडूी नदीके किनारे बसा हुया है धोर बाठ मण्डनगरके १३ कोस दूर पड्कता है । मोर्खांथप्रदेमके पश्चिम-वर्षिणार्धमि पोखरा उपत्यका है । इस उपत्यकाका प्रबल गहर पोखरा श्चेतगण्डकोनदीके किनारे भवजित है । यह गहर बहुत बड़ा है, लोकस प्या भी कम लगी है । इस खान्की तान्त्रद्वयका व्यवसाय प्रसिध है । यहाँ प्रति वर्ष एक निजा खगता है जिसमि समस्त पोखरा उपत्यकाके उत्पादित मस तथा ताम्र द्रव्यादि विक्रमि जाते हैं । निपाक उपत्यकाके पोखरा उपत्यका बहुत बड़ी है । यहाँ बहुतसे ऊँच हैं । सर्वापिधा लहलु ऊँच इतना बड़ा है कि उसका प्रदक्षिण करनमि दो दिन लगते हैं । इन सब ऊँचोमि पश्चिणार्ध बहुत गहरें हैं । इनके किनारेके लसलु प्रया १२-१३०० फुट निम्न है । उत्तरां क्षिणार्धमि इन सब ऊँचोके खीरे उपचार नहीं होता । पसा धोर शैतुल प्रदेशके मध्य गण्डकनदीके पश्चिमी किनारे मोडतासीमडूी नामक उपत्यका धोर गण्डकके पूर्व चितवन वा चैतनमडूी नामक उपत्यका तथा इण्ड-के उत्तर मकवल वा माचनमडूी नामक उपत्यका विद्येय प्रसिध है । चितवन उपत्यकामि रात्री नदी बहतो है । यह भीमपेडूी नामक खान्के सुख पूर्व मिगपाकि पर्वत से निक्षल कर छोमेयर पर्वतके उत्तर गण्डकनदीमि मिक्तो है । यह नदीके उत्तरमि ही फुटवारा गहर बना हुया है । चितवन उपत्यकामि बड़े बड़े इलीके नखो

कक्षाके प्रबोधन दो हफ्ता तथा एक दिन रहती है। प्रकृत तपार्हे चार विभागमें विभक्त है, १ बडा पौर पारना, २ रोचत, ३ शक्य-प्रभागी पौर ४ मोहतारी। गच्छकके क्रोडयस प्रथम क्रिषिके मन्थ हो कर ही काष्ठमन्थका रूपान्तरण होता है। विरोधिताके निष्कटमूर्त्तौ पारना नामक स्थानमें १८२३ ई०को स्वान्न विस्फो पदाप्य ह्य ये पौर जनको दो नमान ग्रामु धौं हाक लगे थीं। रोचत जिहा पारनाको सीमासे छे कर बाबमये तक विस्तृत है। यामिनीनदोके किनारे रोचत जिलेको सीमा पर बाप-मनीसे आ कोल पश्चिम सिमरौननगरका अ साकसेव नगर जाता है। यह अन्त स्थान बहुविस्तृत पौर नमीर बनायादिता है। पितृदायिक सर्वे मये रचना परिष्कार होना शकित है। इन अ साकसिद्ध स्वान्नमें प्राचोन मिथिला राज्यकी राजधानी थी। इस समय मिथिला राज्य पूर्व-पश्चिममें गण्डक पौर उत्तर-दक्षिणमें निपासको पर्वतमालासे गङ्गातोर तक विस्तृत था। १०८० ई०में मिथिलाराज नाम्नापदेनके सिमरौननगर नयाया गया। ११२२ ई०में दिकोठ चम्पाई गयासुतेन तुगडनने नाम्नाप न योग्य हरिदिश हदेनको पदाप्य कर सिमरौननगर अ न कर जाना। हरिदिश हदेन निपासको भाग गये पौर निपाल मय करके वहीके राजा बन बैठे। बाबमतीके किनारे बहारवार घाम बहुत खाल्पमह पौर शुद्ध-स्नान है। १८२३ ई०के प्रथम निपासकुर्तने भिन्न जाडसने सबसे पहिले रहो हवान पर प्राबलमच किया पौर हवे प्रांत किया।

मध्यपश्चिमारे जिहा बाबमतीके समस्तानदो तक विस्तृत है। इत जिलेके सीमान्तमें प्राचोन नगर जनकपुरका सम्मानमिय है। मोहतारो जिहा अमकाके कोयो तक फैला हुआ है। कोयोके दक्षिण किनारे योगान्तर के निष्कट भागुरा नामक स्थानमें बेन्गवान है। कोयी के पूर्वमें सीकीनदी तक तरौयर नामक मोरछ समतल देग है। इस देगको भूमि अर्द्धसमर है। मसैरियाला वहां विविध प्रकार पशुता है। तपार्हेके मन्थ जितने देग हैं, जनमेंसे बहु देग सर्वोपिया पशुारण्यकर है। नदियों का जल भी बहुत पूजित है, वहां तक कि जनेक नदियों का जल निपास है। मोरछ जोड़ कर तपार्हेको पश्चिम भूमि प्राबल सर्वरा है। वहां तरह तरहका मन्थ, ईष,

पकोम पौर तमाकु भी खायो उपजता है। कोयोके पश्चिमांशके बहुसमं कोयोको सख्या दिनी दिन कम होती जा रहो है। मोरछमें पनी बहुत हाचो मिलते हैं लेकिन पहिलेके जैसा नहीं।

नेपाल-उत्तरका ।

गोबार्दे ग्राम पर्वतके उत्तरगत वेवङ्गपर्वतके दक्षिण महागण्डकी पौर पञ्चकोगिकोके मध्य को एक उप-खण्डा प्रदेश पर्वतमान है उड़ीका नाम निपास उपत्यका है। यह उपत्यका सिधोचण्ड है। इसकी लम्बाई पूर्व-पश्चिममें १० कोस पौर चौड़ाई उत्तर दक्षिणमें ७३ कोस है। इस उपत्यकाके पश्चिम सिमरौनगङ्गातोर पौर पूर्वमें मिताली वा इन्द्राकोनदो है। उपत्यकाके चारों पौर पर्वतवैदित है जिनमेंसे उत्तरमें चैङ्ग पर्वतमालाके शिबपुरो, काको, पूर्वमें महादेव-पोखरमिछर, देव कोका, पश्चिममें नागासु नपर्वत पौर दक्षिणमें शेषपानो पर्वतमालाके चन्द्रनिदि, चम्पादेको पौर कुतकोका पादि पर्वतमिछर होके पर्वतखण्डमें पवस्थित है। निपास-उपत्यका को पसुदुपठके ३२०० फुट ऊंचो है। निपास-उपत्यकाके चारों पौर छोटे छोटे पर्वत रङ्गिने कारण ठण्डे भी चारो पौर छोरो कोरो उपत्यका है। इन सब उपत्यका उपत्यकाको के मध्य दक्षिण-पश्चिममें बित्-चण्ड उपत्यका, पश्चिममें भूना पौर कासपूडपर्यन्त, उत्तर में नवकोट उपत्यका पौर पूर्वमें बनेया उपत्यका ठण्डे ख योग्य है।

नेपालकी निरिमका ।

निपासउपत्यकाके बहुप्यायवर्ती पर्वतमाला विविध प्रसिद्ध है। इन सब पर्वतमिछरोंके परस्पर संयुक्त रहने के कारण निरिमप पौर नदो चारा जोड़ कर पन्थ दिया है इस उपायकारने प्रथम नहीं कर सकते।

उत्तरका शिबपुरो पर्वतमात्र बहार फुट ऊंचा है। इसका शिखरदेव ग्राम पौर बिमरौननदोके समान्तर तथा पश्चाम्ती पर्वतको चर्पिया ल्युच है।

पश्चिमत्य काकोको पर्वतके शाय शिबपुरी पर्वतका शीत है। दोनोके मन्थ हो कर 'सङ्गता' नामक निरि पव लया है। काकोके पर्वतको ऊंचाई ७ हजार फुट है।

यान्त्रिक शक्ति का उपयोग करके परिवर्तित किया है। उन्होंने अपनी तबकाना के कोठार नामक एक एक त मिनरको काट कर छठी पय हो कर बस बना दिया था। पुनः चौथा धोर चम्पादेवी पर्वतोंके मध्य जिस गड्ढे को बन बाजमती नदी प्रवाहित है, कहते हैं कि नष्ट नष्ट मन्त्रुओंके इस प्रकार बनाया था। मन्त्रुओंका उपाय प्रदान यदि होड़ दे, तो भी यह क्षान एक समय बलमय था धोर प्राकृतिक परिवर्तनसे बहुत समयके बाद उपत्यकामें परिपत हो गया है यह विद्यास दिया था सक्ता है।

उपत्यका भी नहीं।

बाजमती—यह गिजपुरी पर्वतके ऊपर उत्तरकी धोर बाघदार नामक स्थानमें एक निर्भरसे उत्पन्न हो कर गिजपुरी धोर मन्चिकुली मध्य होती हुई जिजपुरी पर्वतके ऊपर मोक्षके नामक तीर्थस्थानसे निकट स्थान मती वा गिजानदीके साथ मिल गई है। इस स्थानसे यह नदी दक्षिणामुक्तमें प्राचीन बोक्सैज क्षेत्रमें प्रवेश समीप पहुँच गई है। वीक्षे मन्त्रुओंके खादके मध्य होती हुई उपत्यकामें प्रवेश प्रायः तीन धोर शिष्टन करके दक्षिण-पश्चिमकी धोर राजधानी काठ्मण्डूके निकट धार है। काठ्मण्डू इतके दक्षिण दिशा में धोर पाटननगर बाएँ दिशा में तथा कुशा है। वीक्षे यह दक्षिणकी धोर एक खाद होती हुई पम्बर नामक प्राचीन नगरके निकट हो कर चम्पारियवत मृकमें खोल गई है धोर वहाँ से चम्पादेवी धोर महाभारतमिथारके मध्य विरजिष्ठ पर्वतके निकटसे खाद हो कर नेपाल उपत्यकाको छोड़ती हुई बसी गई है। वहाँके बोहोला कहना है, कि मोक्षके निकटसे खाद, गन्धारीखाद, पम्बरके निकटसे खाद धोर विरजिष्ठ पर्वतके निकटसे खाद मन्त्रुओंकी बौद्धिककी तबकानाके प्राकारसे उत्पन्न हुआ है। शिवमार्यो नीबार धोर पन्थान्द्र हिन्दू उनको उत्पन्निका विष्णुके प्रति पायीय करती हैं। विष्णुमती कीबिष्णोका वा ब्रह्ममती समीप धोर बहुमानमती से धार बाजमतीकी प्रधान उपनदियाँ हैं। विष्णुमतीका दूसरा नाम उच्छवती है। यह गिजपुरी पर्वतके दक्षिण बड़े मोक्षकच्छ ऊपरने निकल कर विष्णुनाय नामक घाम

के निकट पर्वतको छोड़ कर उपत्यकामें प्रवेश करती है। वहाँसे यह दक्षिणकी धोर नागार्जुन पर्वतके धारी धोर धूम कर बासाही धोर जयभुनाब नामक तीर्थस्थानके धारें धोर होती हुई काठ्मण्डूनगरके पश्चिमामें पहुँच गई है धोर वीक्षे नगरसे कुछ दिग्ग दक्षिण दिशामें बाजमतीके साथ मिलती है। इन दो नदियोंके सहज स्थान पर बहुमने मन्दिर हैं धोर एक बड़ा घाट भी है। यहाँ मन्त्रुदाह करना काम प्रुष्क-मद समझते हैं, इन कारण दूर दूर स्थानोंसे प्रा कर लोग यहाँ मन्त्रुदाह करती हैं। बाजमती धोर विष्णुमतीको उत्पत्तिके विषयमें एक कथास्थान है। बोहोला कहना है, कि जब ब्रह्मण्डल नामक पतुर्मानम तुव तीर्थद्वामने उत्पन्नसे नैपाठके गिजपुरीपर्वत पर पाये, उस समय उनके कुछ पन्त्रुओंने उस स्थान को मोना देव कर बोद्धमं प्रकथ करना चाहा धोर वहाँ बिरजान तस रहनेको दण्डा प्रकथ को। उनके दैमिपैक्षके दिने ब्रह्मण्डलको वहाँ भी बस न मिका। तब देवमन्त्रिकी पाराजना करके उनको ने एक पर्वतमात्र में अपना इच्छाकृत्य प्रवेश कर दिया। उस दिग्ग हो कर देवमन्त्रके एक निर्भरको गिजली। उद्यो निर्भर-को धारा बरिमती वा बाजमती नामसे प्रसिद्ध है। तब नगर छठी जगसे पश्चिमिक हुआ। नव बोर्दीके सुष्कण्, के बाद लूपोक्त क्षेत्रामि प्रस्तूरीमृत हो गई। यही वर्तमान बोद्धतीर्ष क्षेत्रमें स्थानाता है। उन सब क्षेत्रोंका कुछ पय बाहुसे उड़ कर वहाँ चला गया, वहाँ भी फिर इसी तरहको उत्सवाचार बर्धित हुई। नवो धारा क्षेत्रकी वा विष्णुमती नदी कहलाती है। फिर सुवर्णमती धोर बहरी नामक विष्णुमतीको दो उपनदियाँ हैं। कीबिष्णोका वा ब्रह्ममती गिजपुरी पर्वतसे निकल कर काठ्मण्डूके छोड़ कर दूर बाजमतीमें मिल गई है। इससे किनारे हरियाव धोर देवपाटन चर्चकित है। मनोहरा वा मनोमती मन्चिकुली पर्वतसे निकल कर पाटन नगरके सामने बाजमतीनदीमें गिरी है। बहुमानमती महादेवकोशा पर्वतसे एक ऊँचे कण्ठ हो कर माटवाँनगरके दक्षिण होती हुई एक स्थानकी नदीके साथ मिल गई है।

हृषि ।

नेपालकी खेतोयारी और उद्भिजादिकी उत्पत्ति तथा वृद्धि वहांके जलवायु और हिमन्तादि षड् ऋतुके ऊपर निर्भर करतो है। इस राज्यके सभी स्थानोंके सम-तल नहीं होने तथा जगह जगह उपत्यकादिके ऊँची और नोची रहनेसे यहाँको प्रकृतिका विनक्षण विपर्यय देखा जाता है। हिमालयके क्रमनिम्न प्रदेशोंमें तथा नेपालकी पार्वतीय उपत्यकादिमें सुमिष्टफल और आहारोपयोगी शाक सबो प्रचुर परिमाणमें उपजती है। जलवायुके गुणानुसार पर्वतांशके किसी किसी स्थानमें बड़ा बड़ा वाम और बेंतका पेड़ देवनेमें पाता है। किन्तु अन्यत्र भ्रंशोंमें केवल सुन्दरीवृक्ष और देवदारुके पेड़की ही संख्या अधिक है। इसके अलावा कहीं कहीं अमुरोट, सहजत, गोरोफल (Rashbery) आदि सुमिष्ट-फलोंके दरहत भी नजर आते हैं। छोटे छोटे पहाड़ोंकी उपत्यका भूमिमें जहा शीशमकी प्रचुरता अधिक है वहां सुपक्क अनानास और ईख तथा दूसरे दूसरे स्थानोंमें जी, गेहूँ, कंगनी आदिको विस्तृत खेती होती है। यहां शीतकालमें कमलानीवृ उत्पन्न होता है। पर्वतादि उच्च भूमि पर वर्षाकालमें खूब हृष्टि होती है जिससे फलादि नष्ट हो जाया करते हैं।

वर्षाकालमें पंक पड़ जानेसे शीशमऋतुमें धान चुन्दरी तथा अन्यत्र फसल अच्छी लगती है। यहां बहुतांसी जमीन ऐसी है जिनमें ऋतुभेदसे वर्ष भरमें तीन बार फसल लगती है। शीतकालमें जिस जमीनमें गेहूँ, जौ, सरसों आदि फसल लगती है, वसन्तके प्रारम्भमें उस जमीनमें पुनः मूली, लहसुन, आलू आदि तथा वर्षाकालमें धान, मकई आदि उपजाते हैं। टालुवां पर्वत जहा काट कर समतल बना दिया गया है, वहाँ मटर, सरसों, चना, गेहूँ और जौ आदि भी नजर आते हैं। यहां सरसों, मख्खिठा, ईख और इलायची प्रचुर उत्पन्न होती है। जहाँ इलायचीका पेड़ लगता है, वहाँ अधिक जलका रहना आवश्यक है, नहीं तो फसल उत्तम नहीं होती।

चावल ही नेपालवासियोंका ग्हाय है। इस कारण राज्यके सभी स्थानोंमें एक एक तरहके धानको खेती

होती है। एतद्भिन्न नेपालमें चार भी नामा प्रकारके धानकी खेती होती है जिसे नेपाली 'घिया' कहते हैं। इन सब धानोंको परिपक्व होनेमें शीघ्र वा वर्षाकी जरूरत नहीं पड़ती। पर्वतके ऊपर खेत जीतनेके लिये हल वा अन्य औजारको आवश्यकता नहीं होती। वे लोग कायिक परिश्रमसे हस्त द्वारा ही जमीनको शस्यवपनोपयोगी बना लेते हैं। जमीनको उर्वरता बढ़ानेके लिये उसमें गोबर, एक प्रकारकी काली मट्टी तथा घरके कूड़ा-करकट आदि डाल देते हैं। नेपालके तराई नामक स्थानमें चावल, अफोम, सफेद सरसों, तोसी, तमाकू आदि उपजते हैं। इस प्रदेशके चारों ओर खाल और पर्वतनिःसृत छोटी छोटी स्त्रोतस्त्रिनी बहती है जिससे यहां कभी जलाभाव नहीं होता।

इस तराई प्रदेशके वनविभागमें शाल, श्वेतशाल, पियासाल, खैर, शीशम, कण्णकाष्ठ, बट और भाञ्ज नामक एक प्रकारका पेड़, रुई, डुमर और गोंद उत्पन्न कारी वृक्ष पाए जाते हैं।

पर्वतके उपरिष्ठ वनमें सुन्दरी, तिलपत्र, मन्दार, पहाड़ी कटहल, कच्छरू, तालीसपत्र, मण्डल, शृङ्गाट, अखराट, चम्पक, शिरीष, देवदारु और भ्राञ्ज आदि वृक्ष ही प्रधान हैं। इसके अलावा खायोपयोगी भेवा तथा सुगन्धविशिष्ट पुष्पवृक्ष भी देखनेमें आते हैं।

जमीनसे कृषककी सहायतासे नाना जातीय शस्य और उद्भिजादि उत्पन्न होने पर भी यहाँकी मट्टीमें नाना प्रकारके कन्द, शोषधलता आदि पाई जाती हैं। यहाँके तिकास्त्राद्युक्त और सुगन्धविशिष्ट वृक्षादिके निर्याससे नाना प्रकारका रंग निकाला जाता है। 'जीया' नामक एक प्रकारकी लतासे चरस उत्पन्न होता है। इसका सेवन करनेसे नशा आता है। हम लोगोंके देशमें इसे नेपालोचरस कहते हैं। नेवारी लोग उक्त जीयाके पौधेकी नोरस पत्तियोंको कूट कर उससे घृत सरोखा एक प्रकारका पदार्थ निकालते हैं जिससे एक तरहका सूती कपड़ा तैयार होता है।

भूतस्व ।

नेपालकी पार्वतीय भ्रंशसे जो सब भूखदान् पत्थर और धातु पाई गई हैं, उनसे अच्छी तरह अनुमान

बिद्या जाता है, कि निपासके बिछो दिखो प ममें सुब खान बिपमान है। कमीनके कुछ नीचेमें तास, लोड पादिही खान देखी गई है। तास उलट होने पर भी यहाँका लोड पदार्थ खानोंमें निरुद्ध होता है। यहाँ म्बक प्रचुर परिमाणमें मिलती है और नाना खानों में भी जाती है।

निपासमें जो सब विभिन्न प्रकारके मिश्रित चीर अपरिष्कृत क्षत्रिय पदार्थ पाए जाते हैं उनको विविध प्रकारका करकेसे खाना जाता है; कि उन सब मिश्रित पदार्थोंमें पनेक मूल्यवान् पदार्थ हैं। इन्में पलाषा यहाँ नाना जातोंय प्रचुर देखीनेमें पाते हैं जिनमें से मारम्ब, खेट, चूनापत्थर और सास तथा पीतबत्थके पत्थर जो बड़ेबड़ोप्य हैं।

मोर्षासदेसके निरुद्ध एक प्रकारका खण्ड क्रस्तन (Crystal) पत्थर पाया जाता है। यन्को तरङ्ग काटने से बह छोरेके खेबा बसक करता है। यहाँका सडो रतनी तरङ्ग है, कि कुछ खाखे बाद बह लमेंप्यकी तरङ्ग दृष्ट हो जाती है।

वाक्त्रिय ।

निपासपत्थके वाक्त्रियके विषयम कुछ बरनेके पहले यह दिखना होमा, कि किस किस राज्यके छाय निपासवासियोंके व्यवसायके सम्बन्धमें विविध बखर है। हिमालयपर्वतके अपरपारिखत तिब्बतदेस और इति बल पडैरिखित भारतप्राय्यान्व, इन दोनोंके बाब जनको विविध बनिठता देखी जाता है। तिब्बतदेस खानमें बहुतेके विविध हैं बडो। खेबिन के इमिया उपारके उके रचते हैं। बिबल बाबम्पू नगरके उत्तर पूर्व का कर जो राष्ठा बोयी नदोको जननीके बिनारेक बोमासपर्वतो नीचम् वा ह्यो नामक पड्या तक बजा गया है, बह प्रायः १४००० फुट खेटेमें है और दूसरा राष्ठा जो ८००० फुट खेटा है बह मण्डकनदोके पूर्वाभि लुको खीतको पतिबाहन कर सोमासमें बिरेङ्ग पामक पाय्य हो कर ताङ्गू नामक लखिबट पामपूरदाके बिनारे तक बजा गया है। इका दो वड हो कर निबारी खीन बाबापत्थः तिब्बतराज्यमें जाते पाते हैं। पत्थदेस से कर जानेमें खोरे विविध सभारी नदो मिलता। एकमात्र

पार्शतोय बहरे और मेङ्गेको पीठ पर मास काट कर बह राइने जाते हैं। चोङ्गे वा बेंककी गाङ्गे से कर ऐमि दुर्गम पथमें जाना सुविबल है। तिब्बतमें पगमोना शाल और एक प्रकारका पगम निर्मित मोटा खपड़ा लबन्ध, सोडामा खबनादि, चामर, इरिताल, पारा, खर्चैरु, सुरम, म खोड, चरस, नाना प्रकारको चीप चियाँ और शुङ्फकादि नेपाल तथा पास पासके पडैरिखितन राज्योंमें लाये जाते हैं। फिर वडिदि तधि, पीतन बाङ्गे, खाये, विद्यायतो खपड़े, खोङ्गेके दुष्पादि, भारतीत्यक सुती खपड़े, सुवन्धित सपाके तमाङ्ग सुपारी, वान, नाना धातु और मूडबान पत्थरोंकी तिब्बतमें रफ्तानी होती है।

निपासी भारतके साथ जो व्यवसाय-वाक्त्रिय करती हैं वह प्रायः निपासलोभ्यान्वके ००० मोसके पलासुङ्ग समी इट वाजारोंमें हो; उनसे बाहर नहीं। निपासके भारतके नाना खानोंमें सब पत्थरदुष्पोंको रफ्तानी होती है, उनके ऊपर निपासराज्यने कर लना दिया है। इमो प्रकार भारतके जो पदार्थ निरुद्ध लाये जाते हैं, उन पर मो निर्दिष्ट कर है। इय तरङ्गका स पडोत कर राम खोवका होता है। राजाके प्रादेशिक देसवासियोंको मोकी मना और बिबाबिताके बिपना प्रुख निपासमें खिए जाते हैं उन पर पबिब दुल्ख निर्धारित है। किन्तु खदेसीप-के पाबम्बखानुरोवके जो बह बस्तुएँ पामदना जायो हैं उन पर राजा बहुत कम दुल्ख लगाते हैं। ये सब दुल्ख बस्तुन करनेके लिए प्रबल काटमें और मित्र देसमें ही जनिमें प्रबल पथ पर एक एक खोतवर स्थापित है। खमी खमो इय खोतवरका कार्य बचानेके लिए बह ठेके दार वा सहाजनको नोसाममें दिबा जाता है। तमाङ्ग, वसायको, लबन्ध, पेंधा, इष्टिदुग और खकोरकाठ खान निपाल मयमेंप्यका होता है। इय व्यवसायको बचानेके लिए राजपरिवारसुख पडबा राजबहायामात्र खोरे खानि नियुक्त बिये जाते हैं। एतद्विषय समो दुःख सुधरे सुधरे खोमो के परिचारमें है। किन्तु दुल्ख देनेको कमो बाध्य हैं। यह दुल्ख प्रत्येके शुबल वा स प्यानुनार लिया जाता है।

काठमण्डुके किस राज को कर निपासजात द्रवधमसुव

भारतवर्षमें लाया जाता है, वह राइ मिगौलीसे राजधानी काठमण्डू को और पहले नेपाल-सोमान्तमें राकशूल ग्रामको पार कर सम्भावसा, हतोग, भोमफेडो और यानकोट नगर होतो हुई राजधानीकी चलो गई है। पहले इस राइ ही कर चम्पारण जिलेके मध्य पटना नगरमें आते थे, किन्तु वर्त्तमान समयमें मिगौली तक रेलपथ हो जानेसे वाणिज्यकी विशेष सुविधा हो गई है। इन सब सुविधाओंके रहते भी यहाँके दुर्गमपथ ही कर द्रव्यादि ले जानेमें बड़ी कठिनाइयाँ उठानो पड़ती हैं कहीं बँल, कहीं घोड़े और कहीं कुलीको सहायतासे माल पहुँचाया जाता है। मिगौलीसे काठमण्डू तक जो रास्ता गया है, वह प्रायः ८२ मील लम्बा है। स्थानीय नदी वा स्रोतादि ही कर क्लेश शाल और अन्यान्य चकोरकाष्ठ बहा कर ले जाते हैं।

चावल तथा दूसरा दूसरा अनाज, तैलकारबीज, घृत, टहू, गो-मेयादि, शिकारोके लिए शिकार पचा, मैना, गाल आदिका चकोर, अफोम, सृगनाभि, विरायता, सोहागा, मञ्जिष्ठा, नारपिनका तैल, खैर, पाट, चम, छागका लोम, सौंठ, इलायची, मिर्च, हल्दी और चामरके लिये चामरी गोकुली दुम आदि नाना द्रव्य भारतवर्षके प्रधान प्रधान नगरोंमें आमदनो होतों हैं और यहाँमें रुई, रुईके सूते, सूतो कपड़े, पगमो कपड़े, गाल, फ्लानेल, रेशम, किंखाप वा बूटेदार चिकने कपड़े, कारकर्मयुक्त भालर वा जरोके पाड़े, चीनो, मिर्च आदि मसाले, नील, तमाकू, सुपारो, धिन्दूर, तैल, लाख, लवण, वारोक चावल, महिष, छागल, भेड़े, ताम्र, पोतलके अलङ्कार, भाला, आरसो, शिकारके लिये बन्दूक और बारूद तथा दाजि लिङ्ग और कुमायुनसे 'चाय' आदि द्रव्योंको नेपालमें रफ्तानो होतो है। जिस तरह चम्पारण ही कर पटनानगर जानेका रास्ता है, उसो तरह दरभङ्गा जिलेके मिर्जापुरनगरमें तथा पुर्णिया जिलेके सीरगञ्ज नगरमें नेपालसे द्रव्यादि ले कर जानेके लिये भी दो रास्ते गये हैं।

वाणिज्यार्थ वत्सप द्वय ।

नेपालको सभी जातियोंमें नेवारगण बड़े परिच्यमो होते। स्त्री-पुरुष दोनों ही कठिनसे कठिन परिच्यम कर सकते हैं। नेवारी स्त्री और पर्वतवासी मगरजातीय

पुरुषगण सूती कपड़े बुननेमें विशेष पटु हैं। वे साधारणतः अपने पहननेके लायक एक प्रकारके मोटे कपड़े तैयार करते हैं और अन्यान्य देशोंमें रफ्तानोके लिये एक दूसरा वस्त्र बुनते हैं। गरीब लोगिके लिए पगमका कम्बल प्रस्तुत होता है जिसे भुटियागण बुनते हैं। नेपाल राजग और अन्यान्य सम्भाव्य वास्तुगण जो सब पोशाक और परिच्छेद पहनते हैं, वे यूरोप आदि नाना स्थानोंमें यहाँ लाये जाते हैं। खदेयजात मोटे कपड़ेके ऊपर उनकी विशेष दृष्टा देखो नहीं जाती।

नेवारो पुरुषगण लोहे, ताँदे, पीतल और काँसेसे नाना प्रकारके तैजसादि निर्माण करते हैं। पाटन और भाटगोवनगरमें इन सब धातुओंका विस्तृत कारखाना है। यहाँ बहुत अच्छे अच्छे घंटे तैयार होते हैं। ये लोग जेजू पेड़को छालसे मोटा कागज बनाते हैं। पहले हिलकेकी किनो वरतनमें रख गरम जलमें सिद्ध करते हैं। सिद्ध हो जाने पर उसे एक खनमें कूटते हैं। बाद उसे जलमें धोकर छाननोसे छान लेते हैं। ऐसा करनेसे जो पदार्थ कपड़े पर जम जाता है उसे एक चीरस काठके ऊपर सूखने देते हैं। अच्छो तरह सूख जाने पर उसे विकरने काठकी सहायतासे घिस कर चिकना बनाते हैं। कालीनटीके तीरखर्चों भुटिया लोग इस प्रकारका कागज तैयार करते हैं। काठमण्डूमें तीम सेर कागज सत्तरह पानेमें विकता है। कोई धौज बांधनेके लिए यह कागज बड़े कामका और बहुत घोमड़ होता है।

नेपाली चावल और अन्यान्य शस्यसे सुराका सार, गीह, महुएके फूल और चावलसे मध्य तैयार कर बाजारमें बेचते हैं। वे लोग इस मद्यको 'रुकसा' कहते हैं। यह सुमिष्ट होता है और अन्यान्य मद्यकी तरह इसमें तीव्रमादकता शक्ति नहीं रहती।

प्रचलित मुद्रा ।

नेपालमें फिलहाल जो मुद्रा प्रचलित है तथा समय समय पर जो स्वर्ण, रौप्य और ताम्रमुद्रा प्रचलित थी एवं अङ्गरेजाधिकृत भारतवर्षमें उन सब मुद्राओंका क्या मोल है, उसकी एक तालिका नीचे दी जाती है।

पूर्व प्रचलित मुद्रा	वजन	उपचा दाम
पयारकी		२७ द०
पाटरी		५७ धा०
सूबा		४७ ८ पाई
बूकी		४७ ४ पाई
धाना		४७ ८ पाई
दाम		१२ पाई
रोय्यमुद्रा		
हुरी		४७ ४ पाई
मोहर		४७ ८ पाई
सूबा		४७ ४ पाई
बूकी		४७ ८ पाई
धाना		४७ ८ पाई
दाम		१२

ताम्बमुद्रा

पैसा	१५ पाई
दाम	३ पाय पाई

यसो निपातमें जो मुद्रा प्रचलित है उसका नाम मोहर है। वह मोहर हम सोमोके देयके च याने पाठ पाईक बराबर होता है। किन्तु इस प्रकार की मुद्राका सब प्रकार नहीं है, केवल मात्र मकानके लिये पाकरपक है। किन्तुहास निपातमें जो मुद्रा प्रचलित है वह इस प्रकार है—

३ दाम	=	१ पैसा
३ पैसा	=	१ धाना
१६ धाना	=	१ मोहरकीप्यी

इसके अलावा यहाँ और भी तीन प्रकारको ताम्ब मुद्रा प्रचलित देखी जाती है। य गरीजाबिजल बराबरमें चम्पारन तकके स्थानोंमें जो चौका ताम्बमुद्रा देखी जाती है वह मुद्रिया का मोरसपुरी पैसा नामसे परिचित है। इस प्रकारके ०५ पैसो हम सोमोके देयके दस रुपयेके बराबर माने गये हैं। किन्तु निपाती यह देखिये हमने ध्याया है, कि इस तरहके ८ पैसोकी चम्पारन मोहर य गरीजी ८ पैसोके बराबर नहीं है। ये सब पैसो निपातराम्यके यन्त्रा विहितके अन्तर्गत ताम्बेन नामकी टकमानमें बनाये जाते हैं।

इस राज्यके पूर्व और उत्तरपूर्व में एक प्रकारका चाका सिक्का प्रचलित है जो कोहिया-पैसा कहलाता है। इस सिक्केमें कोहा सिक्का रहता है इस कारण इसका नाम भी इसमें है। इस प्रकारके १०० पैसो हम सोमोके देयके एक रुपयेके बराबर ही समझे हैं। कोहिया पैसा बनारसी पूर्व दिक्कत पर्यंतयेशोमें यमिक टकमान है जिनमेंसे सिक्का सिक्का पामकी टकमाना ही कहलसोय्य है। आज भी चम्पारन और पूर्बिया की तर से सब मुद्राएँ उत्तरबिहारमें आती हैं।

१८६१ ई०में काठमण्डू उपजाकामों को नया पतला तमिका सिक्का प्रचलित हुआ है, उसका पाचार तोल है वह सबको पहायतासे बनाया जाता है और उससे ऊपर राजाका नाम भी अंकित है। इस न तन मुद्राका प्रचार ही जामिने राजधानी मरुमि कोहिया-मुद्राका प्रचार बिलकुल चठ गया है। इस मुद्राको ठाकनेमें ठिके काठमण्डू नगरमें अतन्त्र टकयाथ है।

• पूर्व समयमें निपातराम्यमें जो रोय्यमुद्रा प्रचलित थी, वह वर्तमानकालकी मुद्रासे बड़ी बड़ी थी। इस राज्यके दक्षिणरय समी स्थानोंमें निपाती मोहरके बड़े पैस गरीजी रूपका प्रचार हो गया है। यहाँ य गरीज प्रचलित मोटका भी पादर होता है। काठमण्डू नगरमें इस मोटका विदेय पादर है, कारण यपदेके निन्देनमें मोट रहनेमें उससे लकड़े पोखे हुए नाम मिलता है।

किन्तुहास निपातमें जो रोय्यमुद्रा प्रचलित है, उसमेंसे यह पर राजा सुरेन्द्रबिहमसाहदेव और तिरगून तथा दूसरे हुए पर मोरसपुरी और बोचमें योमबानी तथा ब्रियन अंकित है। केवल साहदेव सिक्का है, कि निपातमें प्राय ०५ यताकीको मुद्रासे अगोप्य पाकोन इतिहासतक के यनेक विषय जानी जाते हैं। किन्तु १६वीं यताकीके परन्तीकालकी मुद्रासे ही इतिहासिक समय तथा राजाओंके नामका निरय करनेमें विषय सुविधा हुई है।

• Zeitschrift der deutschen morgenlandi. h.-s. Gesellschaft 1852 p. 651
 † Broadell's Catalogue of British Monnetors Cambridge Intro. XI

तौल और वजन ।

इस समय स्वर्ण, रोप्य, अग्र्यान्ध धातु, शुष्क और जलीय पदार्थ का वजन तथा उसका परिमाण निर्धारण करनेके लिये जो सब बटखुरे वा माप प्रचलित है, वह क्रमशः नीचे दिया जाता है ।

स्वर्ण

रोप्य

१० रत्ती वा लाल = १ मागा | ८ रत्ती वा लाल = १ मागा

१० मागा = १ तोला | १२ मागा = १ तोला

ताम्र और पित्तलादि धातुकी माप ।

४॥ तोला = १ कुणवा

४ कुणवा = १ टुकणी वा पीष

४ टुकणी = १ सेर

३ सेर = १ धारणी, एक धारणीका वजन = अङ्गरेजो एवर्डोपाईज ५ पीण्ड ।

शुष्क द्रव्यादिकी माप

तरल पदार्थादिका परिमाण

२ मन = १ कुडवा

४ दोया = १ चौथाई ।

४ कुडवा = १ पाथी

२ चौथा = आधटुकणी ।

२० पाथी = १ सुही

२ आधटुकणी = १ टुकणी

१ पाथी = अङ्गरेजी एभर्डो-

४ टुकणी = १ कुडवा =

पाईज ८ पीण्ड

१ सेर

४ कुडवा = १ पाथी

समयनिरूपण ।

वर्त्तमानकालमें केवल धनी लोग ही युरोपमें मंगाये हुए घटिकायन्त्रकी सहायतासे समयादिका निरूपण करते हैं, पर और लोग पूर्वकालसे भारत-वासीका अनुकरण कर समयका जो निरूपण करते आए हैं, वह इस प्रकार है,—

६० विपल = १ पल

६० पल = १ घड़ी = २४ मिनट ।

६० घड़ी = १ दिन वा २४ घण्टा

प्रभातकालमें जब हाथकी रोएँ अथवा गृहादिकी घटके ऊपरकी कीठरी साफ साफ गिनी जाती है, ठीक उसी समयसे इन लोगोंका दिन शुरू होता है ।

प्राचीन समयमें नेपाली एक ताँबेकी हंडीकी पेंदोंमें छेद करके उसे किसी एक पात्रस्थित जलके ऊपर बहा

देते थे । हंडीका छेद इस प्रकार बना रहता था, कि तलदेगस्थ जल धीरे धीरे हंडीमें प्रवेश करता और हंडीकी पात्रस्थ जलके मध्य उबनेमें एक घड़ी समय लगता था । इस प्रकार प्रत्येक बार पूरण और निमज्जन से कर एक एक घड़ी समय निरूपित होता था । हम लोगोंके देशमें पूजादिके समय कामिने वने हुए जिस गोलाकार घंटेका व्यवहार होता है, ठीक उसी तरहके घंटेमें वी लोग घड़ीके निरूपण हो जानेके बाद एक दो करके चोट देते थे ताकि जनसाधारणकी समयका ज्ञान हो जाय । आज कल हम लोगोंके देशमें भी धनी लोगोंके यहां उसी तरहके घंटेका व्यवहार होती देखा जाता है । नेपालियोंमें दिन रात चार भागोंमें विभक्त है । पहला प्रभातसे पूर्वाह्नकाल तक, दूसरा पूर्वाह्नसे सन्ध्याकाल तक, तीसरा सन्ध्यासे दोपहर रात तक और चौथा दोपहर रातसे फिर दूसरे दिन प्रभातकाल तक । किन्तु हम लोगोंके देशमें दिशारात दो ही भागोंमें विभक्त है,— यथा दोपहर रातसे दोपहर दिन अर्थात् १२ बजे तक और १से फिर रातके १२ बजे तक ।

जाति-तत्त्व

पर्वत श्रेणी द्वारा यह देश बहुधा विच्छिन्न होने पर भी राज्यमें अनेक उपत्यकाओंकी सृष्टि हुई है । इन सब उपत्यकाभूमि पर नाना प्रकारकी पार्वतीय जातियोंका वास देखा जाता है । वे लोग यहांकी आदिम अधिवासी माने जाते हैं । कालीनदीके पूर्वस्थित उपत्यकाओं पर जिन प्रधान प्रधान जातियोंका वास है, उन्हेंके नाम उल्लेखयोग्य हैं । (१) मगरजाति—भेरी और मत्सेन्द्री वा मत्स्यांनो दोनों नदियोंके मध्यावर्त्त पर्वत-मय प्रदेशमें इनका वास है । ये लोग बड़े साहसी हैं और सैनिकवृत्ति द्वारा जोविकानिर्वाह करते हैं । २ गुरङ्गजाति—अज्ञ मगरजातिकी वासभूमिसे हिमालयके तुपाराहत स्थान पर्यन्त पर्वतखण्ड पर इनका वास है । (३) नेवार जाति—काठमाण्डू उपत्यकाके 'ने' नामक प्रदेशके आदिम अधिवासी । नेपालके क्षत्रि आदि सभी काय' इन्हींसे सम्पन्न होते हैं सही, लेकिन ये ही लोग धनहीन भी हैं । इस उपत्यकाभूमिके पूर्वदिक्स्थ पार्वत भूमिमें (४) लिम्बू वा याक-ग्युम्बा और (५)

बिरामी वा जोसो जातिवा नाम है। (४) लेपचा जाति—ये लोग ब्रह्मिन् धोर दार्जिलिङ्ग विभागके पश्चिमपार्वतमे तथा नेपालके पूर्व भोमान्तमे वास करति है। (५) मृट्टिया जाति—किमु बिरातो धोर लेपचा जातिको बाघभूमिके उत्तररूप धरतको उपतथाकादिमे तथा तिब्बतकीमात्स तकके स्थानोमेिं इस जातिवा नाम है। मृट्टियाजोके 'सो' नामक स्थानवासी कोकथा धोर तत्पार्थक्यको जाति दुक वा बहुराती है। हिमासकके पूर्वरे पार तिब्बतके तिब्बतबर्माके सिमेमेिं मृट्टिया जातिके नामभूमिमेिं र को, बिबेना वा काठभुट्टिया, पशुपेन, वापेन, सयं पादि पाकंतीय जातिमेिंका नाम है। एत- द्विय तिब्बत उपतथाकादिमे तथा मैयासको तराई प्रदेश मेिं (८) कुम्भार, (९) दिनवार धोर (१०) बासु कोटिया, दूर वा दहरो, बासु कोन्हा, चेज, कुटुन्दा वाद पादि जातिमेिंका नाम है। एतद्वरातीत (११) गुनवार धोर (१२) मूमिं वा तमर नामक धोर भी दो विभिन्न जातिवा है।

जासो वा सारदानदीके पश्चिम कुमावुन प्रदेशमे १२मीं यताप्योको राजपूतानेके मोर्चाजाति यहाँ पा कर मास कहते है। एन लोगोमेिं ओ ब्राह्मण है उनको कपाचि पार्के धोर कपाध्याय तथा कानियो की कपाचि खुय धोर कथा है। यमी नेपालकी समस्त जातियो के कपर रक्षोका वाधिपण है। यहाँ हैको।

कारे नेपालको जनसंख्या पञ्चदशरात्रके पशुमानके बालोम लाकके अधिका नहीं होगी। किन्तु नेपाली राजदरबारको तानिवाके जाना जाता है कि यहाँको जनसंख्या बाबन लाकके ह्यपन लाक तक है। नेपालमेिं बिबो समग्र मरदुमयमारो नहो कोमेिंके पञ्च जन स संख्या निरूपक करना बहुत कठिन है।

पूर्वाञ्च पादिमजातिके रहति भी यहाँ कोकथाय धोर पशुपुनाके मन्दिरके निकट भूदान धोर तिब्बतवासी जातिकोका वास है। काठमान्डू उपतथाकामेिं कज्जोरो धोर दराको सुनसमान वनिष्क पन्थनयका नाम है। एन लोगोमेिं बहुत पहलमेिं ही यहाँ उपनिषेय राजगण कर रथा है।

नेपालमेिं पश्चिम दिग्देविदेके मन्दिर रहमेिंके कारक

ब्राह्मण धोर पुरोहितकी संख्या भी बहुत है। यत्रे यथासा प्रतिष्ठा पदस्वयं एक क्षतन्व पुरोहित रहता है। ये नव पुरोहित चमबात्रक धोर गुह यपने यपने गिन्ध वा यजमानके पदस्त दक्षिणा, शिष्यान्व्य इत्यादि धोर ब्रह्मोत्तर जमीनके ही यपनी जीविका निर्वाह करति है। एन लोगो मे जो राजगुह है, वे ही सबसे अधिक माननीय है। राज्यभरमेिं वे एव यमतापक पात्रि माने जाते है, उनका बाधय यमान्य करनेको बिभीमे यमता नहो है। नेपालराज पदस्त जमीनके उपमखसोमके सिवा वे लोग देववासियोके मध्य जातिगत किमो दोय कोमोमासा करके भी प्रचुर पर्यं कपाजन करते है। नेपालीगण ब्राह्मणको विषय मन्त्रि करति है। किमो प्रकारकी पौषा वा ब्रह्मव विपदके उपस्थित होने पर ब्राह्मणभोजनका नियम मो प्रचलित है।

ग्रामवान् ब्राह्मणक निवा यहाँ देवको वा भी नाम है। यद्यपि कोई कोई पुरोहितारी करति है तो भी देवकोस्थित ही उनका जातीय व्यवसाय है। मन्त्रियत् बालके कपर नेपालियो को विधीय पाएबा है। यहाँ तक कि एक किमु पोषकविषयके सुदवाला पादि दुकक पाये यपना कर तक देवको यमकालका निययं नहो कर दिति तब तक वे किधी काममेिं हाय नहो जानति।

बेषजाति—पासुबेद शास्त्रको पाठोचना करना ही इनका व्यवसाय है। नेपालको पात्रे जिस यवस्थामे को न हो प्रत्याक परिवारमेिं एक एक बेष नियुक्त रहता हो है। यहाँ जनसाधारणके उपरारायं कोई पोषकास्त नहो है।

को वीष्क वा हितान हितानका काम करति है वे निवारजातिगत होने पर भी कर्त्तमानकालमेिं क्षतन्व न्कोसुष्ठ रूप है।

यहाँ व्यवहार जीवका विषय पादर नहो है। पहली को तरह यह चाराजता हीन नहीं पकती। पर ब्रह्म-बहादुरके कृपासमके नेपालियोकी वर्त्तमान समयमेिं कृषयं करनेका मादक नहो होता। यहाँके जो प्रधान विचारपति है इनका मासिक वेतन दो सो रुपयेमेिं अधिक नहीं है। इस कारक विचारकको ज्ञपय समर्थनके सिधे प्रतिवादिनय रिघमत दे कर यपना काम निष्ठास लेति है।

वहुत पहिले बङ्गालदेशके साथ नेपालका संस्त्रय या जिम्का प्रकृत इतिहास यथास्थानमें दिया गया है। उमो समयसे नेपालमें ब्रह्मास्त्रियोंका व्यवसाय आरम्भ हुना था। वे सब-पूर्वतन बङ्गाली धीरे धीरे नेपाली आचार-व्यवहारका अनुकरण कर तथा बहुरि प्रचलित हिन्दू, बौद्ध और पर्वतवासियोंकी भाँति धर्मप्रथाके अनुकर्त्ता हो कर नेपालराज्यवासियोंमें परिणित हो गए है। वे लोग धर्मप्रचारके उद्देशसे वा अन्य किसी कारण वगैरे स्वदेशसे विताडित हो कर अथवा वाणिज्यादि कार्यव्यपदेशसे इस पार्वत्य-प्रदेशसमूहमें आ उपस्थित हुए, इसमें कोई सन्देह नहीं।

पूर्वोक्थित जातियोंके अतिरिक्त नेपालमें जगह जगह और भो कितनी जातियोंका वास देखा जाता है। काठ-भूटिया जातिके वासस्थानके निकटवर्त्ती पर्वतमाला पर यकसिया और पकोया नामक दो जातियां रहती हैं। उनमें एक दूधरेके साथ सखामाव है। नेपालमें जगह जगह पद्मि वा पधि, वायु वा कायु, खय वा खगिया कोलि, डोम, राभी, हरी, गड़वाली, कुनेत, दोगडा, कक, बम्ब, गङ्गर, ददु और दूँवर तथा दक्षिण भागमें नेपालके तराई-प्रदेशके समीप तथा मध्यभागमें कोच, बोदो, धिमाल, कीचक, पस, कुच, दधि वा दरि बोधपा और भवलिया-जातिका वास है। इस भवलिया जातिके मध्य और भो कितने थाक हैं, यथा—गरो दोलखलो, वतर वा बोर, कुदो, हाजङ्ग, धनुक, मरहा, अमात्, वेन्नात्, यामि प्रभृति।

जिन सब प्रधान प्रधान जातियोंका विषय पहले लिखा गया है। उनमेंसे जातिगत व्यवसायसे जिस जिम सम्प्रदायने विशिष्ट आख्या लाभ की है तथा जिस व्यवसायके अभिधानसे जिस थाकको उत्पत्ति हुई है उसको एक तालिका नीचे दी जाती है।

चुनारा, साकि (चम कार, चमार), - कामी (कमार, बट्टे) सोनार (स्वर्णकार), गान्दन (वाय्यकर और गायन), भानर (गायक, इन लोगोंकी स्त्रियां वैशाखि करती हैं), दमाई (दरजो) भागरो (खनन हारो), कुम्हन और कुम्हरि (कुम्भकार), पो (डाम, ये लोग जसादका काम करते हैं), कुलु चमकार), नाय

(कसाई), चमाखन (धांगड़ जो मैला फेंकता है), डोङ्ग वा युगी (वाय्यकर सम्प्रदाय), को (कमार, बट्टे), धुसो (धातुशोधनकारी), भव (स्वपति), बालि (कपक), नौ (नापित), कुमा (कुम्भकार), सङ्गत (धोवो) तेंद्रि (दरो भादिका बनानेवाला), गथा (माली), सावो (जो क लग कर लेङ्ग निकालनेवाला), क्षिपि (रंगरेज), सिकमी, दकमो (गृहादि-निर्माता, राजमिस्त्रो), लोहोङ्गकमि (पत्यरकहा)।

परिच्छद और अलङ्कार।

नेपालियोंमें गोर्खा जातिने ही वैशभूपा और भद्र परिपाट्यमें अन्यान्य जातियोंसे अष्टता लाभ की है। यौष्मकालमें यहाँके लोग सफेद वा नीलवर्णका सूती कपड़ा बना कर पैजामा, कुर्त्ता वा घुटने तक लम्बा चपकनकी तरह अंगरखा पहनते हैं। शीतकालमें वे लोग पूर्वोक्तरूपके परिच्छदादि धारण करते हैं सही, किन्तु उसमें रुई भर कर। जो धनी हैं, उनके लिये स्वतन्त्र व्यवस्था है। वे कुर्त्तेके भीतर बकरेके रोएँ डाल कर उसे पहनते हैं। मस्तकशोभाके लिये ये लोग शिरस्त्राणका व्यवहार करते जो जरो भादिसे जड़े रहते हैं।

नेवारो लोग साधारणतः कमर तक कपड़ा पहनते हैं और शोत तथा यौष्मके अस्याधिक्यमें मोटे छूते वा पयमीने कपड़ेका व्यवहार करते हैं। इन लोगोंमें जो व्यवसाय द्वारा धनशाली हो गए हैं तथा जो एकसर कार्यापलक्षमें तिब्बतदेश जाया करते हैं, वे चूड़ोदार हजार, चपकनकी तरह लम्बा कुरता और मस्तक पर पयमनिर्मित टोपी पहनते हैं। हरसिद्धि नामक स्थानमें जो सब नेवारो रहते हैं वे स्त्रियोंके घबरेकी तरह पाँधकी एंड़ी तक लम्बे कुरतेका व्यवहार करते हैं। इनके मत्थे पर सफेद वा काले कपड़ेको टोपी रहती है।

नेपालमें और जितनी सब जातियां हैं, उनका पहनावा पूर्वोक्त प्रकारका होता है। पर स्थानविशेषसे कुछ प्रमेद भी देखा जाता है। स्त्रियोंके मध्य वैशभूषामें विशेष बालस्रण नहीं देखा जाता। सभी जातिकी स्त्रियां एक खण्ड कपड़ा ले कर उसे सामनेके भागमें घबरेकी तरह कोचो करके पहनती हैं। इनकी परिधान

संघा बहूत पयुर् है । समुदायमानमं चो बपुर्के का कृदित पठिममूह विचिन्तित रहता है, यह प्रायः दोनीं वैरको कृताता हुआ मशेको झूता है । बिन्दु पक्षाद्वागका बपुर्का उतना जटका हुआ नहीं रहता । रात्रपरिवारमुखा रमचियां तथा दियोप बनीं ब्यक्तिची ओकव्याये व वरे की तरह कींची करके पचनेके लिये किस बपुर्के का व्यवहार करती हैं, उषत्री लम्बाई ६०से ८० गज होती है । यह बपुर्का मरुदिनकी तरह बारीक होता है । बनीकी भी रस प्रकारका लम्बा बपुर्का पचन कर कभी घूमनेके लिये बाहर नहीं निकलती । बनी वा बह कुलोडका शियां अपने म बको मर्यादा घोर सम्बन्धको रचाके लिये रस प्रकार अपनाभाव वैयमूवाधि भूपित हो कर अनसमानमं धादरबोध होती है ।

समी जियां प्रायः बूडो बार जन्मा लगा हुआ पेजामा घोर झाडो पचनती है । भारतके सपतन्त्रके मसिदीके जे धा है कभी समुचे शरीरमें कभी कभर तक जो बपुर्के का व्यवहार करती हैं । इनके सिर पर बिबो प्रभारका विधिय परिच्छद नहीं रहता । निवाररमचियां अपने बारीका सिरके सम्बन्धमें कृद्धा धिक्ती है, बिन्दु पचनत्व जियां धीपकी तरह उधे वीट पर लटकाये रहती हैं घोर उच प्रन्त भावको रैयम वा सुवेके बांघ कर बालको गोमाको बढ़ाती है ।

नेवाकी जियां पलहारको बहुत पसन्द करती हैं । ये पक्षबलि अपने अपने पक्षको गोमा बढ़ानिके लिये नागा प्रकारके धामरच पचनती है । बनीको ओ-बन्धा जिस तरह मचिनुकाप्रवासादि कृदित तथा कर्च घोर रोधका पलहार पचनती, उधी तरह पक्षाकी जियां भी अपने अपने सामन्धके अनुहार पचनती हैं । बनी ब्यक्ति निज परिवारकी व मयोमाकी हृदिके लिये मरुध पर लखे वा दीतकका बना हुआ पृथ, गधेमें घोने वा प्रवासको साका, बाधमें पहरि घोर बाका, जानमें कर्चपूज, भाकमें गधनी तथा उधो तरहके मूखान् धामुषकी को बाममें लाते हैं । कचमर मूटिया जोग भो कजानीय बामिनीकुसके लिये सुसेमानी पत्तर, प्रवाच घोर पण्यम्य बामनी पठनेको साका, जदीकी माहुको वा लुपी पादि नागा प्रकारके पलहार बनवाते हैं ।

ओमात्र ही समन्वित युग्मकी विधिय चर्चुरामी होती है । ये विद्योमाकी हृदिके लिये जिन्या घिर पर पूज गथि रहती हैं । खोहार पादि उरुधमें ये अपने बारीको पूजने पक्षो तरह सजाए रहती हैं । आभाविक सदा बारी घोने पर भो उनको सुप्ररुष्टा बहुत पचिक होती है । इसीके अब कभी कबे पूज मिल जाता तब उधे सुधनेके लिये ये बाममें छे छेतीं पयवा प्रकृति सतीकी मर्यादाको रचाके लिये उधे तिर पर मांस छेतीं घोर उच तरह अपनेको चरितार्थ समझती हैं ।

रात्रयुद्धको परिच्छदप्रका कतन्व है । ये मरुध पर खरी घोर मचिनुकाकवित ताक, पक्षमें रैयमका बपुर्का बहवा बूडोदार इत्या लना हुआ पचनत्वके लीज लम्बा कुता, पैजामा घोर घेरमें खरोका लूता पचनती हैं । गभी रात्रयुद्धके शायमें बलनेके समय समाक घोर तलवार रहती है । राजा बह्वनहापुर अपने मरुध पर जो सुकृट पचनती है, बसका मूख एक काच पचाच जहार सुये वा । उच प्रजात मरु धन्तान धव समय घिर पर टोपी शरीरमें लुटने तक लम्बा लुता, कसरक ट पैजामा घोर लूता लयाए रहती हैं । ये निज विभागके पच्यघनक साधारणता बेशमयामें घ गरीजे बिन नावकीका अनुकरण करती हैं ।

बाप और पमीव ।

नेपाकराज्यमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्या घोर शूद्र पादि जातिकीका विभाग घोने पर भो वायखादक विषयमें कोई प्रबन्धता दिखी नहीं जाती । यहाँ की ब्राह्मण कर्ण-साते हैं, उनका धाधार-व्यवहार घोर काच-प्रवाको समो धारतबर्धके समतकचक्रवाको ब्राह्मणोंके लिये है । बिन्दु पचिकीय ब्यक्ति पचनत्व सांसिध होती है । गोर्वा जातिका धाधारकतम कनरम्य पावन्तीय प्रदेशे घोर तराई भूमिके साप हुए भेके पादिका मांस खाती हैं । ये लोम चरयन्त विधारमिध होती हैं । जनपान् सभी ब्यक्ति विधार विषयमें पचरी तरह पचिन्न है । वे धावा समो समय विधार खेत्तनेको बाहर निकलते हैं घोर इच्छानु रूप हरिच, जगती सुधर मोचालु तथा गोर्वागु कुवाच-देती हुरेन, नुरनचोन पादि पबंतजात पचिकीका विधार कर उनका मांस खाते हैं ।

वे लोग अक्सर सुप्रभके वस्त्रको पोसते हैं और इंग्लैण्डकी प्रथाके अनुसार उन्हें खिला कर बड़ा करते हैं। बचपनसे पालित शूकर-गावक प्रतिपालकके वशी-भूत हो जाते हैं। यहां तक देखा गया है, कि वे कभी कभी कुत्तेको तरह अपने मानिकका पदानुसरण कर बाहर निकलते हैं। निवारण महिष, भैंडे, कागल, हंस आदि पक्षियोंका मांस खाना बहुत पसन्द करते हैं। यहांकी मगर और गुरङ्ग जाति अपनेको हिन्दू बतलाते हैं। किन्तु उनके कार्यकालपादिके ऊपर लक्ष्य रखने से वे नीचश्रेणी से प्रतीत होते हैं। मगरजाति शूकरका मांस खाती है, महिषका नहीं। इसके विपरीत गुरङ्गलोग महिषके मांसको बहुत पसन्द करते हैं, किन्तु शूकरके मांस छूते तक भी नहीं। लिम्बू, किरातो और लेपचा आदि बौद्ध धर्मावलम्बियोंको खाद्यप्रणाली निवार जातिकी नाई है।

अवस्थापन्न व्यक्ति-साधारण मांसादि भोजन और भानापकारके विलास द्रव्य उपभोग करनेमें तो रमय है, पर अपेक्षाकृत दरिद्र और निम्नश्रेणीय व्यक्तिके भाग्यमें मांसादिका भोग हमेशा बढा नहीं रहता। मांस-प्रिय होने पर भी ये लोग अर्थाभावघगतः सब समय खाद्यके सिवा मांसका बन्दोबस्त नहीं कर सकते। इसी कारण साग सजी द्वारा वे लोग उदर-पूरण करनेमें बाध्य होते हैं। वे लोग अक्सर चावल, साक सजी लहसुन, पाज और मूली आदिकी तरकारो बना कर खाते हैं। मूली पचानेके लिये वे एक प्रकारकी चटनी बनाते हैं जिसको अन्नादिके साथ खाते हैं। इस चटनीको धे 'सिनको' कहते हैं। यह अत्यन्त दुर्गन्धयुक्त और नितान्त घृषित होती है।

निवारण और अन्यान्य निम्नजातिके लोग मदि-रासक्त होते हैं। वे अपनी अपनी पान-पिपासाकी पने टहल करनेके लिये चावल अथवा गोधूमसे एक प्रकारका निकट मद्य तैयार करते हैं जिसे रुकसी कहते हैं। यहाके उच्चश्रेणीके मनुष्य शराब नहीं पीते। कारण जो समाजके नेता हैं और जातीयतामें सबसे अछ हैं, वे शराबको नलमूत्रके समान समझते हैं। इस प्रकारके सम्भ्रान्त कुलमील भद्र व्यक्ति यदि मद्यपान कर लें, तो

वे जातिसे श्युत किये जाते हैं। आश्चर्यका विषय यह है कि स्वदेशमें उत्पन्न मद्यकी अपेक्षा अभी नेपालमें विना-यती ब्रैंडो और गैमपिन मद्यकी शूष आमदनी देखी जाती है।

निवारजाति आमोद-प्रमोदके लिये जो मद्य पान करतो है, उसे वह अपने घरमें ही बनातो है। इसके लिये राजाको कोई कर देना नहीं पड़ता। किन्तु यदि कोई इस रुकसी मद्यको बाजारमें बेचे, तो राजकर्मचारी उससे कर वसूल करते हैं। निवारण सब समय मद्य पान करते हैं, किन्तु वे कभी भी नशेमें वेहोग नहीं देखे जाते। केवल मेला आदि पर्वोपलक्षमें अथवा धान्यादि के एक स्थानसे दूसरे स्थानमें रोपनेके समय वे हृदमे ज्यादा शराब पीते हैं। पावतीय कौल जातिमें जिस तरह 'हाडिया' प्रचलित है उसी तरह इन लोगोंमें रुकसी मद्य।

उत्तम, मध्यम और निम्न श्रेणीके सभी मनुष्य चाय पीते हैं। निम्नश्रेणीमें जो नितान्त गरीब हैं, जिन्हें चाय खरीदनेको विनकुल शक्ति नहीं है, केवल ऐसे ही मनुष्य चाय पीनेसे वंचित रहते हैं। यह चाय तिब्बत से लाई जाती है। ये लोग चायको दो प्रकारसे बनाते हैं,—(१) मसालादिके साथ एकत्र सिद्ध करके जो चाय बनाई जाती है उसका स्वाद मद, चोनी, नेबूके रस और जायफल मिश्रित द्रव्य सरोखा लगता है। (२) दूध और घीके संयोगमें जो चाय बनाई जाती है, उसका स्वाद बहुत कुछ अंगरेजी चाकलेट (Chocolate) से मिलता जुलता है। इसके अलावा नेपाली चाय-पिष्टककी खाना बहुत पसन्द करते हैं। इसकी प्रसृत प्रणाली इस प्रकार है;—ताजी चायकी पत्तियोंके साथ चर्बी, चावलका पानी अथवा खारयुक्त पदार्थ मिला कर उसे कुछ कालके लिये धूपमें छोड़ देते हैं। पीछे फेन या जाने पर उसे चौकीर या लम्बे बरतनमें भर कर अच पर चढ़ाते हैं। यह दूध आदिके साथ भी खाया जाता है। चोन भाषामें इसका नाम तुङ्गकाउ है। अंग्रेजी प्रणालीसे प्रसृत की हुई चाय विशेष आदरणीय नहीं होती। केवल उच्चश्रेणीके नेपाली जो अक्सर कलकत्ते आया करते हैं, वे ही इसके पक्षपातो हैं।

निपाठ-महा

श्रीक्रीन निपाठियों में बहुत विवाह प्रचलित है। विवाह उन लोगों के लिये एक प्रकारका पञ्चोपक्रम है। जो पंचोपक्रम बनवाना हैं, वे एक से अधिक स्त्री रखने के काम नहीं आते। बहु-पत्नीपरिहृत रहना निपाठियों के अध्यात्मका विज्ञ है। इन कारण १०१६० दारपरिपत्र करने पर भी किसी किसी धर्मोपस्थिती पाया ठक नहीं होती। बहु-विवाहका स्त्रोत निपाठमें केसा प्रवृत्त है, वेसा ही विचक्षाविवाह एकप्रकारमे नियोज है। यहके यहां ज़ारो विचक्षाएँ बतौ होती हैं। कामोको धर्म पर धीके इस पदुर् काबं तयावने निपाठियों के कठोर हृदयमें समामान्य धर्म-धरोतिः काव ही दो है। वे सब विवाही भी धर्म-अमर्त्त 'सती' नाम अर्थ कर तथा भारतके सब पर धर्म-स्थान स्थापन कर सारे अगतमें पयनो इस विचक्षा-धोव कोरितीको धोवबा करके सबो की पूज्य हुई हैं, इनमें विन्दुमात्र मो संभव नहीं।

पूर्वतन राजप्रपुत्रो को नियमावको धर्म-व्यापारिता होयके कृति रहनेके कारण तथा राजाके राज्यमासनमें सिद्धि प्रयत्न होनेके कारण राज्यमें नियम विन्दुवृत्ता उपस्थित होती है। राजप्रपुत्रो के धार्मिकवृत्तके राष्ट्र विज्ञान होता है। इसी समय अङ्गबहादुरमें राजाको सि हासनकुन करके अर्थ राज्यभार पश्य किया था। निपाठका राज्यभार पयने ज्ञानमें से कर भी सब राधा अङ्गबहादुरमें देखा सि पच मो के मनुपुत्रोयको कुहलिये निष्कति काम न कर सके तब कयो निपाठकी सम्मानन व शोय धर्मोके अध्यात्मोका पाणिपदक कर बहुतोंको चरितार्थ किया। इस विवाहका मुख्य उद्देश्य यह था, कि मनुहल पच किसी कामसे लभके विचक्षाकरक न करेगी। इसी उद्देश्यको धारनेके लिये वे पच समय देयके पण्डितान्य धीर समतापच समो सरोमें पयने पुत्र कथा धीर आतायो का विवाह दे कर अनन्यसुत्रके पावक हुए। इस प्रकार पयनेको विपक्ष कसके निरापद पमक कर है १२५१ ई. में देवकी वृ मए धीर महा एक बर्ष उर कर सुदरे वर्षको ८वीं धारकीको कदेय कोडे अक्षेयमें पा कर केडेकोने प धेकीके पनुकरकर्म धारमिच अङ्गबहा धीर धोरदारी काईन काईमें धीर धीर

करके देयमें सुखबहा स्थापन की। इस समय लकोने धतीनाइको रोमनिके निदे काई एक निबन बनाए। धतीदाइके सम्बन्धमें लकी स शोचित नियमावको इस प्रकार की—(१) पुत्रबती खियां दह्या रहते भी धती नहीं हो सकती। (२) सती सुनामावाइयो कोरे रमकी यदि अकल चिताको देव कर कर आय धीर सायाव समनक्ष्य धर्मिमें श्रीबन विपन्न करनेमें आतरता प्रकट करे तो कभी मो बच रमको धर्मि मयेय नहीं कर सकती। पक्षके यह नियम था, कि जो श्री अतपतिके साव कामिको दह्या प्रकट करतो धीर यदि बच समानधाय का कर समानका योमक इव देव सतो होना नहीं भी चाहतो की, तो मो लके अनुबान्यक बनपूना चितामें बेटा देते थे। यदि बच माम कामि को कोशिय करतो, तो उठके प्रहारके लसकी खोपकी पूर कर देते थे त्रिभुके बच लको समय पक्षको प्राप्त होतो थी। अङ्गबहादुरको अयाधे पचहावा जियो ने धिये लय प पामाचारके धारके रथा पाई है। प्राज्ञको धीर पुरोहितों में यद्यपि इस नभानुमोदित मतको 'पसकत धीर पयोत्रिच तथा धर्म का बाधाअनक' मतलाया था, तो भी लके मतामतकी लपिषा करक निश्चय स्थापन के लिये वे इङ्गपद्वन हुए थे।

मोक्षात्रातिको हाम्यक प्रथममें एक बार पवित्र्याह जो कामि पचका पत्रोके चरित्रमें सम्प्रेष होने पर ये खिया को लू बन्तपा देते हैं। यदि कोई स्त्री अमवय विपन्नगामिनो हो काय, तो पक्षके लये धर्म लुनियम-पूर्वक रथ कर लसके चरित्र-स शोयनको चेहा करते हैं पचका लभके पूर्व धारपरित पाय कर्मके धार्यधित-कक्ष्य लक्षम मध्यम बेशात्रात द्वारा लभे पुन सुपय पर कामिनी कोशिय को जाती है। इतना करने पर भी कर देखते हैं कि कोई पक्ष न निश्चला तब के लये याव लोबन कैदमें रक कोरुते हैं। जो मनुच लपति हो कर धूर्तको पयो पर पासक होता है धीर लये लक्षमें ने अर्थ करनेको चेहा करता है तथा बच बात यदि कस लोके धामोको माहम हो जाव, तो निचय ही लसकी पत्रीका धर्म-दह्या लपति है। देवा कायि अत्र कयो नत्र पाता है, तमो लके बेशात्रात प्राय कमीन पर

सुत्ता देते हैं। सर जङ्गबहादुरने जब देखा कि इस प्रकार अर्ध-प्रणयसे केवलमात्र जातीयताकी अभनति होती है और सतीत्व हरणसे स्वदेशकी ग्लानि तथा आत्म-ज्ञाघाती सम्भावना है, तब उन्होने इस दृशंस व्यापार-को रोकनेके लिये एक कानून निकाला। उस कानून-के अनुसार यदि कोई मनुष्य अर्ध धरूपसे उपपत्नी-प्रेममें आसक्त हो जाता, तो उसे राजदरवारमें उचित दण्ड मिलता था। दोषी व्यक्तिको कैदमें रख कर उसका विचार किया जाता था। विचारमें यदि वह दोषी ठहराया जाता, तो राजाके आज्ञानुसार उस रमणोका स्वामो आ कर मवके सामने अपनी स्त्रीके सतीत्वपहारी उपपत्तिको दो खण्ड कर डालता था। किन्तु उसकी मृत्युके ठीक पहले प्राणरक्षाके लिये उसे एक मात्र अष्ट-परीक्षा करनेकी दी जाती थी। इस परीक्षा-में दोषी व्यक्ति अपने जीवन-संहरासे कुछ दूरमें खड़ा रहता और उसे भागनेकी कहा जाता था। यदि वह दोषी व्यक्ति किसी उपायसे अपने जीवनरक्षा कर सकता, तो वह पुनर्जीवनलाभ करता था। उसका विचार फिर नहीं होता। इसके अलावा उस उपपत्तिको प्राण-रक्षाके और भी दो उपाय थे। किन्तु नेपाली इन उपायोंकी अन्तःकरणसे हीय समझते थे। नेपालीके मतसे इस प्रकार घृणित प्रथाकी अनुसरण करनेमें जातित्याग करनेकी अपेक्षा प्राणत्याग करना अच्छा है। फिर यदि वह स्त्री कह देती कि वह व्यक्ति उसका प्रथम उपपति नहीं है और न वह सबसे पहले उसे कुपथ पर ले ही गया है, तो राजा उस स्त्रीकी बात पर विश्वास करके विचारार्थ लाए हुए उपपत्तिको छोड़ देते थे। इस प्रकार अर्ध स्त्रीके साथ गुप्त भावसे प्रणय करनेमें कितने ही सम्भ्रान्तवंशीय युवकगण कराल कालके गालमें पतित हुए हैं।

व्यभिचार और जातिभङ्गदोषके लिये पूर्व समयमें नियमके अनुसार नेपालियोंकी शुरुतर सजा दो जाती थी। वैसे कार्यमें ऐसा दारुण दण्ड और पाश्चविक अन्याचार स्वभावतः ही विद्रोहका उत्तेजक था।

वर्तमानकालमें उक्त नियमोंमें बहुत हेरफेर हो गया है जिसका यहाँ पर उल्लेख करना निःप्रयोजन है। नेवार,

लिम्बू, तिरातो और भूटियाजातिके लोग बौद्ध होने पर भी उनमें हिन्दूधर्मका प्रभूत प्रभाव देखा जाता है। इस कारण उनमें विभिन्न श्रेणियोंकी उत्पत्ति हो गई है। इनके परस्परका आचार-व्यवहार प्रायः एक-सा है।

यहाँकी नेवार आदि जातियोंकी अपेक्षा गोर्खाओंके विवाह-वन्धनमें कुछ विशेषता देखी जाती है। भारत-वासी हिन्दुओंके जैसा इन लोगोंमें भी स्त्री-विद्योगका नियम नहीं है। स्त्री त्याग और उस स्त्रीका पर्यान्तर-ग्रहण ये दोनों कार्य यथार्थमें जातीय गौरवमें हानि पहुँचाने वाले हैं। नेवारलोग अपनी अपनी कन्याका वचनमें ही एक बेलके साथ विवाह कर देते हैं। पीछे वह कन्या जब बड़ी और श्रुतमती होती है, तब उसके लिये एक उपयुक्त घर ढूँढ़ खाना पड़ता है। यदि उस नव-दम्पतीके मनमें प्रणयसञ्चार न हुआ और सर्वदा कलह होता रहा, तो वह कन्या अपने स्वामीके सिरके तकियेके नीचे एक सुपारी रख कर पोहर वा अन्यत्र चली जाती है। ऐसा करनेसे ही वह स्वामो समझ जाता है, कि उसकी नवविवाहिता पत्नी उसे छोड़ कर कहीं चली गई है। सम्प्रति यह स्वामोत्यागप्रथा विधि-वद्ध हो गई है। अभी सहाजमें कोई स्त्री स्वामोको छोड़ कर अन्य स्थानमें नहीं जा सकती।

इनमें विधवा विवाह प्रचलित है। प्रायः इनमें किसी-की विधवा होना ही नहीं पड़ता। इनका विश्वास है, कि प्रतिसे पत्यन्तर ग्रहण करने पर भी बाल्यकालमें वेनके साथ उनका जो विवाह हुआ था उसके लिये माँगका सिन्दूर कभी धुल नहीं सकता।

इनकी स्त्रियाँ जब व्यभिचार दोषसे दुष्ट हो जाती हैं, तब उन्हें प्रति सामान्य सजा मिलती है। किन्तु जिस उपपत्तिके सहवाससे उसका पातिव्रत्य-धर्म नष्ट हो गया है वह उपपति यदि पत्नीपरित्यक्त स्वामीके पूर्व-विवाहका कुल खर्च न दे और उसकी स्त्रीका बिना कष्ट उठाए भोग देखल करनेकी चेष्टा करे, तो उसे कारागारकी हवा खानी पड़ती है।

ये लोग मृतदेहका दाह करते हैं और विधवाकी इच्छा होने पर वह सती हो सकते हैं। किन्तु उनमें विधवाविवाह प्रचलित रहनेके कारण और दूसरा पन्थ

बहन करना नही पड़ता। हमने अभी अभी ही एक पत्नीदाह भी चोरी देखा गया है।

राजन-प्रथाके।

प्राचीन कालमें यदि कोई मारो दीव करता था, तो उसका कोई एक बट्टाया दिया जाता पचवा देखा कोई कोई काम चोर टिका जाता या पचवा बैठती सजा दी जाती थी त्रिदशे चर्खे अभी अभी प्राच भी निकल जाये है। सर जहाबहादुर जब हमसे छुड़े छोट, तब हमोंने कितने शुभ स धार्शन बडा दिव पोर राज्य मासन सम्बन्धमे निम्नलिखित हुज नूनन धार्शन प्रचार किये। जो स्थिति राजपूतो होया वा राजकीय कार्य सम्बन्धमें विन्यासवातकता करेया तथे याज्योवन-कारावाप पचवा गिरछोइको दण्डना मिलेगी। जवमेंहु सम्बन्धीय जो स्थिति रिगतल सेया पचवा राजकीय तहकोसको नष्ट करेया पचवा बिना किसीके जनि राजकीयके रूपके से कर दूतके यहां सुद पर लागेया तथे शुर्माना देना पड़ेया पोर बाब साव जननी मीबरो मीबुट जायगी।

हम राज्यमें जो दो सिंहा नरहत्या करता है, कबी समस कथके गिरछोइको पाशा होती है। यदि कोई मोके भावधर्मको पछादि हाया सतविधत को पचवा पचसे बिना मोके बिचारे कोचके बयोभूत हो कर उधको डया कर डाले, तो तथे याज्योवन के हर्ष रचना पड़ता है। राजनियम-बहाहनकारो बाजिको कथके दोषके पनुसार शुर्माना देना हाया पचवा कारावापमुपगतना पड़ता है।

यदि कोई गीच भेबोका मनुष्य अपनेको कथक मी इन बतसाथे पोर हब कारण किनो कथानाकसयोस बाजिको पचना आय बिवा पथ पोर बस बितामके किये जनुवेक करे तथा तथे स्वजातिपुत करमेंकी कोबिज करे, तो तथे शुर्माना देना पड़ता, कौइकी बजा भोगकी पड़तो पोर उसकी सारी सम्पति बह कर को जाती है। अभी अभी ज्योतदाकथे कपमें बह दूतके बाब सेव भी दिया जाता है। किन्तु यह जातिभेद भद्र मनुष्ये उपवाकाहि पोर भावबिज करके तथा हुज पोर हुरीहितको निदिह पर्यदण्ड दे कर स्वजातिमें विरथे मिल जाता है।

शास्त्रों पोर रसविद्योके गिरछोइका विधान नहीं है। मारोसे मारी पपराच करने पर जिवोको कठिन परिश्रमके साथ चिरनिर्वासन होता है। शास्त्रोके किये मी बरी एक नियम है। पर विधिवता यह है, कि शास्त्र गच कारामारमें वा कर काटीय गौरव नामके माय माह की जातिपुत होये है।

ऐतानियम।

राज्य-रथा पोर राज्यमासन सम्बन्धमें निपासरायको बहुत रूपसे चर्च करनी पड़ती है। जिन सुनियमके विनापोंको सुखविद्या सिखाई जाती है, अमान पोर कम्प-बादि तैयार करमें मी बैये जो पबिस परियम पोर रूपसे चर्च करनी पड़ती है। बडा रात्रकेतनमोमी प्राय' सोनह डकार विनाए हैं। उक्त विनादस २६ विभिन्न ऐत्रिभिष्यमें विभक्त है। इतके पक्षावा निपासरायके नियमा मुसार कुछ मनुष्य सै निच विभागमें निर्धारित समय तक सुखविद्या सीख कर करमें मी बैठ सकती है। समय पड़ेने पर वे कैन्दाससुख हो कर बड़ाईमें जाते हैं। राज्यमें ऐसे नियमका प्रचार रहनेके कारण निपासराय को प्रैम्बस यह करमें कोई कठिनाई उठानो नहीं पड़ती। इच्छा होने पर ही वे एक दिनमें ७० हजार सिंचित बेनाए स पच कर सकते हैं।

पड़रकी प्रचालीके पनुधार पडाकी विना सिंचित है। किन्तु अभी विषयमें पड़रकी नियम है, जो नहीं। सेव वा विभाग पोर दसक मायक पोर पबितायकादि पद अभी पड़रकोके पनुकप होने पर भी उनकी पड़रकीको तरह कसिद पडोबति नहीं है। राजपुत्र वा राजकुटुम्ब नच प्रति बपे उच पद पाते हैं, किन्तु जो बयोडब बिचपच बर्न'वारी है, वे प्राय' सामरिज बिनायका दिखपद मोस करते देखे जाते हैं, इनकी बहजमें बजति नहीं होती।

विनाहमका सै निच परिच्छरामीताडका घुनी पड़ रथा पोरपै जाता है। सामरिज पोहाचोंको काम र म का पगरका बाका रकार, बबकमें काम छोरी परमें पुता पोर धिर पर डीने तथा स्वदसको बिजपुत्र बह बँदोको तसनी रहती है। अमानवायो विनाहकको योमाक नौको होती है। बयादि परिधाननका काम

नहीं रहनेके कारण नेपालराज्यकी अग्तारोही सेनाकी संख्या बहुत थोड़ी है। यहां बाहुर, मोने पोर गोनी घाटि तै यार करनेका कारखाना है।

शाज भी सन्ध-गिचाके लिये कूचकवायद होती है। पाव तीय मदेशमें ये लोग युद्धमें विलक्षण पट, होते है। पङ्क्रेजोके साथ इनका जो दो बार युद्ध हुआ था उनमें इन्होंने खूब वीरता दिखाई थी। इनकी फमान, बन्दूक और अत्यायि भक्षादि उतने सुविधाजनक नहीं है। फिनलैंड नेपालराजके पास ४ पहाड़ी फमान (Mountain battery) और ४४ हजार सेना है। जब सरदार बाबरजङ्गने नेपालीसेनाका चालक हो कर अङ्गरेज-सेनाध्यक्षको अपने व्यवहारसे परित्यक्त किया था, तब अङ्गरेजराजने बन्धुत्वके निदर्शन-स्वरूप उक्त चार यन्त्र नेपालराजको उपहारमें दिये थे। राजाके पश्चात्तारमें असाख्य फमान रहने पर भी प्रतिदिन यहाँ फमान और अस्त्रादि तै यार होते हैं।

दास-प्रथा।

नेपालमें आज भी दासदासीको विक्रयप्रथा प्रचलित है। सामान्य अवस्थापन्न व्यक्ति भी अपने अपने गृह कार्य की सुविधाके लिए क्रीतदास खरोदा करते हैं। किन्तु यह दास-प्रथा अफ्रिकाके पूर्व प्रचलित दासव्यवसायमें भिन्न है। यहकि दासगण केवल घरके काम काज करते हैं और एक तरहसे स्वाधीन भावमें रह सकते हैं किन्तु अफ्रिकाके विस्तीर्ण दासगण अपने प्रभुसे समय समय पर विशेषरूपसे निगूँठे होते हैं। नेपालके जो दासदासी हैं, वे बहुत कुछ भारतवर्षोके घरमें रहित दासदासियों-से होते हैं।

नेपालको वर्त्तमान दाससंख्या प्रायः ६२ हजार है अगत्यागमन वा जालि-खोस-सग आदि निकट पापोंमें लिप्त होनेसे अथवा जातिगत कोई दोष करनेसे वह खोर्षा पुरुष राजाके आदेशसे परिवार समेत क्रीतदासरूपमें विधा जाता है। इस प्रकार नेपालकी दाससंख्या दिनों-दिन बढ़ती जा रही है।

क्रीतदासी हमेशा गृहकार्य में व्यस्त रहती है। इसके अलावा उन्हे लकड़ी काटना, बंकरे, बौड़ आदिके लिये घास काटना आदि कितने पुरुषोचित कार्य भी करने

पहुते है। कोई कोई धनी इन सब दामियोंको अपने घरसे बाहर निकलने नहीं देते। किन्तु वे अकसर अधिकांश समय स्वेच्छामे विचरण करती है। इन सब दामियोंका चरित्र उतना पवित्र नहीं होता। वे प्रायः गृहस्थित किसी न किसी व्यक्तिके साथ अयैध-प्रणयमें आसक्त रहती है। यदि खरोदनेवाले गृहस्थामोके सहायमें उस दाम-रमणोके गर्भमें सन्तानादि उत्पन्न हो, तो यह स्त्री अपने स्वाधोमता पुनः जन्मा सकती है। उस समय यह कभी भी उस घरका परित्याग करना नहीं चाहती। यहां क्रीतदासोका मूल्य (१५०)से २००) और दासका मूल्य (१००)से (१५०) रु० है।

देवदेवीकी पूजा और उपवादि।

देवहिजमें विगैव भक्तिप्रयुक्त नेपालमें असंख्य देव-देवियोंके मन्दिर प्रतिष्ठित है। यहां २७३३ उन्हे खयोग्य तीर्थ क्षेत्र वा देवालय हैं और उन सब देवमन्दिरोंमें पर्वोपनक्षमें उत्सव दृष्टा करता है। प्रायः वर्षके प्रत्येक दिन एक दो वा ततोधिक पर्वोत्सव धार्य है। कहनेका तात्पर्य यह है, कि वर्षभरमें छः मास पूजा और उत्सवादिमें व्यतीत होते हैं। इस देशमें आनेसे ही मालूम पड़ेगा कि यहाँ पावर्ष और उत्सवका श्रेय नहीं है। आख्यका विषय यह कि यहांके लोग इन सब उत्सवोंमें मदा लिप्त रहते हुए भी किस प्रकार अपने जीविका निर्वाह करते हैं। प्रत्येक निर्दिष्ट पर्वदिन और तत्काल्य उत्सवादि सम्बन्धमें प्रचलित प्रवाद है। विस्तारके भयमे उनका विवरण नहीं दिया गया। यहां जो सबसे प्रधान प्रधान पीठ वा देवालय हैं उनके पर्वदिन और उत्सवादिकी उत्पत्तिकी कथा बहुत संक्षेपमें दी जाती है।

१। मत्स्येन्द्रनाथयात्रा—नेपालके अधिष्ठात्वदेवता मत्स्येन्द्रनाथके विषयमें प्रचलित प्रवादोदि यथास्थानमें वर्णित है। पाटनके अन्तर्गत भोगमती ग्राममें यह मन्दिर और लिङ्ग स्थापित है। वर्षके प्रथम दिन (विशाखकी श्लो तारीख)की प्रथम उत्सव आरम्भ होता है। इस दिन विश्रहस्थानके बाद राजाकी तलवारकी मूर्त्तिके पाददेशमें रख कर उसकी पूजा करते हैं। पूजाके बाद एक सुसज्जित रथ पर मत्स्येन्द्रनाथकी मूर्त्तिको विठा कर पाटन ले जाते और वहाँ प्रायः एक मास तक रह

बौर पुनः पुष्पादिन पौर शुभकर्मने बंगमती धाममे
 काति है । १०-१४ दिन विद्युत्को बभ्रुवृद्धि ठक सेते पौर
 ज्ञान ज्ञान पर बह भावरसुखज्ज, खोन बर प्रमताको
 मूर्ति का दान बघति है । इसये होमोको यह अताया
 जाता है कि देवता गरोब नहो होमि पर भी एक गुटको
 (बभ्रुवृद्धि) के सिवा पौर कुञ्ज भी से नहो जाति । बे
 मर्हीको यह बतमावे है, कि पयनी पयनी पयका पर
 मनुष्य रचना को पच्छा है । इनका नाम गुटको म्हाका
 बभ्रुवृद्धि है । पाटनमे सोडते समय राजमे लडा बडा
 देवको के पाहारके बिदे विद्युत् रखा जाता है, बडाके
 पश्चिमाभिगच्छ बाघ द्रव्यादिका डेर लगति है । मैत्रारो में
 भी जेपासके पश्चिमाता पायाबको बित्तियर मन्त्रे नूनाय
 देवके दो पत्र दिन निदित है । विद्युत् विनय पाटन और
 मन्तदेवराय मन्त्र है देखो ।

३ । नेतादेवीकी धामा वा देवीपात्रा ।

येगादेवी देखो ।

१ । पण्डितनाथपात्रा । ननुपठियाव देखो ।

४-१ नय्ययोगिनी-पात्रा—यह बोको का उल्लव है, जो
 मोहके पलावा हिन्दू कोम भी पमो उनकी उपासना करत
 है । यह नामक पत्र पर इस देवीका मन्दिर है । यह
 नैपाळको इस उल्लवका लक्षण होता है । इस समय
 लोग एक पाटके उपर नय्ययोगिनी-मूर्ति को रख कर
 पर बड़ा महु महरका प्रदक्षिण करति है । उन मन्दिरके
 नामने ही बहयोगिनीका मन्दिर है । - देवीमूर्ति को
 धामने पवित्र हमे यत् प्रणमित रहती है पौर बडा एक
 मनुष्यका मच्छाकाजति मो रबी हुई है ।

५ । त्रिबीयात्रा—बाठमच्छु पौर पनवन्नुनाथके
 मय्यवर्ती विपु मतीमतीके किनारे ११ ज्येष्ठको एक
 उल्लव होता है । भोजनके बाद तोरं बित्तमे उपजित
 पश्चिम को हकोमे विमल को जाते पौर दोनो
 एक एक हुनर पर टंगा कि जगा बह कर देते हैं । पून
 धमयमे यह प्रवा ही कि जो कोरि ई दो के—बाधातके
 मूर्तिगत हो-रहता था उदे विपव दम्बे कोम निकट-
 वर्ती कहे मरी मन्दिरमे से का कर बति देते ही । पमो
 राजाके पादेबने एककोका ई दोका कि जगा बह को
 गया है ।

५ । योगिया मन्त्र वा मय्यवर्त — बय्यवर्त नामक
 उल्लवको स्वदेयमे विनास, म्यागा को इस उल्लवका
 उहे म्हा है । निवार बाजुल उष समय महीबासमे, पुरको
 एक प्रतिमूर्ति बना कर, रासो प्रमते पौर मन्त्रे
 मनुष्यमे भीष मर्मते है । १४ भावबको उल्लवके बाद
 बासकगव उल्ल मूर्ति जगा कर प्रमोद-प्रमोद करते है ।

६ । बंका-यात्रा—बौरमार्गी निवार जातिमे सुपेहित
 पत्राव पौर ११ शुद्धये हो दिन प्रत्येक म्हावकके
 पशु कारिके एकछपु पावत पौर शुक्रादि मर्मते जाति
 है । इस मिच्छाजतिका पत्र यह है कि माओनकासने
 बांकापो के पूर्व सुषप बोह-सुपेहितमय मिच्छा मी । जन
 महाकापो के ब यत्र उल्लके मनुष्यके पलाय का पावत
 करमेके सिधे वप मर्म, सिधक हो-वार मिच्छाजतिका
 पयमन्त्र करती है । इस मिच्छाकय प्रसवे के एक मर्म
 तक गुबारा करते है ।

७-१ उष दिनमे निवारोपक पयने-पयने बर और सुखान-
 की उल्ल आदिचे यजति-पौर उष भाकी रमभिया एक
 एक दोकरा-बासक तथा और दूरी सुमरी-प्राप्तको ही
 कर सुकान वा प्रयेबाहर का म्हाती है । बांकागव जन
 बारदेय जो वर गुजरते हैं, उन समी कके, काकी स्याज
 म्हा कर उनको विदा-करतो है । उनबानु मेबारे उल्ल
 निविह दिनेके सिवा यदि-पुष्टी-दिन गुलमावने पयने
 पदेगा ही बांकापोकी इस-प्रकार— मिच्छा प्रि, बर विदा
 करनेको इच्छा मय्य करे, तो विना प्रमूत धर्म-प्यव बिदे
 उनको यह मन्त्रात्मना पूर्व नहो, को-सकतो । -यह
 उल्लवमे बांका सवये पक्षी चौक-पर पक्ष काता
 है, इसे कुञ्ज पश्चिम-दान मिलता है । यदि म्हावय इस
 उल्लवके उल्लवमे राजाको- निमन्त्रण करे, तो राजाके
 पश्चात्तमे उमे एक-पुष्पसि बावम, बह भोर-मय्य-
 तैजवादि दि-कर-पाम्यमर्षदाकी रखा करनी प्रकृती है ।

८ । राको-पूषिमा-पानवमासकी पूषिमाके दिन
 बौर पौर हिन्दू होमो उल्लवप- -यह उल्लवमे-योगदान
 करके है, किन्तु होमो इन्धके पाव बादि बतम्य- है ।
 ओषवक एक दिन पवित्र नदीमें जाति करके देवदमनेके
 लिए-मन्दिर-जाति-है । -यत्र प्राण्य सुपेहितमय पयने
 मिय्य वा यत्रमानये जाति हुएजित च तज जिने रापो

कहते हैं, बाँधते हैं और उससे लिए उनसे कुछ दक्षिणा वसूल करते हैं। बहुतसे हिन्दू पुण्य कामानिके उद्देश्यसे गोसाईंयान नामक पर्वतके तटवर्ती नीलकण्ठछन्द वा गोसाईंकुण्ड नामक स्थानमें स्नान करनेकी जाते हैं।

८। नागपञ्चमी—प्रति वर्ष आचणमामकी पञ्चमी-तिथिकी नाग और गरुड़के उपलक्षमें यह उत्सव होता है। चाङ्गुनारायणके मन्दिरमें जो गरुड़मूर्ति प्रतिष्ठित है, नेपालियोंका विश्वास है, कि उस दिन उस मूर्तिके शरीरमें दृक्क्षेत्रके कारण पसीना आ जाता है। पुरोहितगण एक तौलियासे उस पसीनेकी पीछे छानते हैं। इस प्रकार सर्पोंका विश्वास है, कि उस तौलियाका एक सूता भी सर्पविषका विषय उपकारी है।

१०। जग्माष्टमी—श्रीकृष्णके जन्मोपलक्षमें यह उत्सव होता है।

११। गोष्ठ वा गाभीयात्रा—रेवसमात्र नैवार प्रातिके मध्य यह उत्सव प्रचलित है। किसी गृहस्थ परिवारके किसी व्यक्तिके मरने पर उस घरके सब कोई मिस्र कर १ भादोंकी गाभीरूप धारण करते और राजप्रामादके चारों ओर भ्रमण और नृत्य करते हुए घूमते हैं।

१२। वाघयात्रा—गाभीयात्राके बाद जो १ भादों की नैवारगण वाघकी सजा कर नृत्यगोत करते हैं। यह गाभीयात्राके अनुसूच्यमात्र है।

१३। इन्द्रयात्रा—२६ भादोंकी काठमाण्डू नगरमें यह उत्सव होता है और ८ दिन तक रहता है। प्रथम दिन राजप्रामादके सामने एक उच्च काष्ठकी ध्वजा गाड़ी जाती है और राज्यका नक्षत्रकमण्डप सुखस, पहन कर प्रामादके चारों ओर घूम घूम कर नृत्यगोतादि करते हैं। द्वितीय दिन राजा कुछ बानिकाओंकी बुजा कर कुमारोपूजा करते हैं। पीछे उन्हें गाड़ी पर चढ़ा कर नगरमें घुमाते हैं। जब वे सब कुमारियाँ-नगरका परिक्रम कर राजप्रामादमें पुनः पहुँचती हैं, तब एक गहरेके ऊपर राजा स्वयं बैठते अथवा राज-तलवारकी ला धार उसके ऊपर रख देते हैं। इस समय राजवरकारभुक्त कामचारिगण नाना प्रकारके उपडौकन और नजराना टाखिल करते हैं। उसी दिन पल्लवचतुर्दशी होती है। गोखरिजण पृथ्वीनागयज्ञने इन पर्व दि-

में दक्षधर्मके साथ काठमाण्डू नगरमें प्रवेश किया था। जब राजाके बैठनेके लिये गहो बाहर निकाली गई, तब गोखरिजण उस गहो पर बैठे। नैवार लोग सबके सब उत्सवमें मग्न और नगरीमें घूर रहे, इस कारण वे विषयके प्रति अन्धधारण कर न सके। नैवारराज नगरसे भाग गण, पृथ्वीनारायणने निर्बिधादसे नैवालराज्यको देख कर लिया। इन पर्वके दिन यदि भूकम्प हो, तो विभीषणनिष्ठपातकी सम्भावना रहती है, ऐसा नेपालियोंका विश्वास है। यही कारण है कि नैवारगण भूकम्पके घटने आठ दिन तक पुनः इस उत्सवकी मानते हैं।

१४। दशहरा या दुर्गाक्षय—महालयाके वाक्ये विजया दशमी तक दश दिन यह उत्सव होता है। भाद्रपर्वमें दशहरा उत्सवके उपलक्षमें जो सब कार्मादि विहित हैं, यहाँ भी ठोक वही सब हैं। उत्सवका स्थितिकारण दश दिन है। इन दश दिनोंमें अनेक भेषे और वस्त्रोंकी वलि दी जाती है, किन्तु ब्रह्मण तथा विद्यारके जे मा मष्टीकी दुर्गा-प्रतिमा नहीं बनाई जाती। प्रथम दिन अर्थात् घट-स्थापनके समय ब्राह्मण लोग पूजाके निमित्त निर्हारित स्थान पर यवादि पशु गण्य वीते और पवित्र नदीके जलसे उसे धोते हैं। दशमं दिन वे गिष्वादि की गिष्वामें जो के अद्भुत खोस देते और राखीको तराई इसमें भी दक्षिण पाते हैं।

१५। दोवालो—घनाघिष्टात्री लक्ष्मीदेवीकी पूजाके उपलक्षमें कार्तिकी पमावस्याको यह पर्वोत्सव मनाया जाता है। इस दिन नगरवासी सारी रात जुभा खेलते हैं। राजनियमसे जुभा खेलना निषिद्ध होने पर भी इस उत्सवमें तीन रात और तीन दिन तक कोई रोक टोक नहीं है। जुभाड़ी स्वर्ण रोप्य आदिका दाव रखते हैं। सुनते हैं, कि कभी कभी वे अपनी स्त्रीको भी दाव पर रख कर खेलते हैं। एक समय किसी मनुष्यने अपना हाथ काट कर दाव पर रखा था। जब जीत उसकी हुई, तब उसने प्रतिपक्षसे कहा, कि उसे भी हाथके बदले हाथ देना होगा अथवा जीता जुभा जो कुछ द्रव्य उसका पास है, वही लौटाना पड़ेगा। ऐसा मनुष्य संसारमें बहुत कम है।

१६। विद्या-पूजा—३वक निवार प्रातिसिं वर उल्लव होता है। १६ कालिकाको निवारणच सिद्धं कृतोषी पूजा करती हैं। इस दिन निपासके प्राङ् समी कृतोषे के यक्षिणं पुष्पमाला घोमित देखी जाती है। मध्यि काक और मीक प्रादि शैवपूजाके लिये भी इसी प्रकारका दिन निर्दिशित है।

१७। भाई-पूजा वा आद्य-दिनोया—कालिका यज्ञादितोयाको रमचिवां यपने परमी भाईके घर जाती है और भाईके पांश को कर उनके बपाकमें तिजब लगातो और गलेमें मालादि पहना कर मिठाकादि भोजन कराती है। भाई मो चलोच दिनेके लिये बहनको कपड़ा पहनारादि देती हैं।

१८। भाबा चतुर्दशो वा मत्तु—१४ पनहनको यह उल्लव होता है। इस दिन देववासियच पद्यति नाब मन्दिरके अपर पाखैवतीं युगलको नामक बनने का कर बन्देके भोजनके लिये खावन, अना और मिठाकादि समोन पर सिद्धुच देती हैं।

१९। कालिका पूर्णिमा—१५ पर्वोत्सवमें एक मास पक्षे बहुतवी किर्या पद्यतिनाब मन्दिरमें जाती है और एक मास तक उपवास करती हैं। वे सब पिदा बंधके नियमके रनामकोत बलके सिवा और कुछ भी नहीं खाती। मासके शैव दिन पर्वोत् कालिका पूर्णिमाको उपवासके पन्तमें है अस्तबादि करती हैं। इस दिन पद्यतिनाबका मन्दिर रोयनीर्षि भ्रका भ्रज करता है और रात्री रात नाच घान होता रहता है। दूधरे दिन जिस पर ततट पर देवमन्दिर बन कित है, उस के साध-पर्वतके अपर रमचिवां प्राङ्गच भोजन कराती और अपने हट्ट-बादिके अन्वबाद से कर कर बापिच घाती है।

२०। गणेश-शैव वा चतुर्षी—साधमानमें बंधिगके भांन्धके लिये यह उल्लव होता है। सारा दिन उपवास करके रितको भोजनादि करती हैं।

२१। बल्लोत्सव वा शैवचमी—१४ उल्लव हम कीर्तिगके दिग्ध के ना होता है।

२२। होनी वा होल-लीला—प्राच्युन मानके शैव दिनमें यह उल्लव होता है। इस दिन १३-उपादके

सामने एक 'बीर' वा काठकाछको उल्ल कर चरमें गियागादि घोमित करती हैं और रातको लये अन्ना देती हैं। निपासितीमें प्रवाद है, कि इस प्रकार के मत बर्चको अन्नाकर नूतनबर्चके पायमन्की पतीया करती हैं।

२३। माघी-पूर्णिमा—साधमानमें निवारयुवकाच प्रतिदिन पूतसलिका बाबसतोके बरमें खान करती है। जिनका कुछ मानसिच रहता है, माघके शैव दिनमें पनमेंके खोई तो दाब पर, खोई पीठ पर, खोई वच पर, खोई पद पर पन्नि अन्ना कर सुसन्धि डोको पर चद्रते और परमी पपनी कागहाउके दिशदवन्को जाति है। दूधरे दूधरे खानयातो मो परमी पपनी जात्रमें एक एक सिद्धुच अस्तपूर्व अस्तौ से कर उनके पीछे पीछे चलते हैं। उस कलचौके सिद्धे हुद बुद्धमें पानो मिरता है जिस लोक पन्निच घनम्भ कर मिर पर से छेती है। इस दिन पनेक मनुष्य पन्नि लकालि हुए राके पर चलते हैं इस कारण निवारणच पांशमें पयमा कगाए रहती हैं। बर प्राङ्ग उल्लव सर्व तोमात्रमें प्राप्तीहोपच है।

२४। घोड़ा-यात्रा—एक पंगमसेता। १५ पौतको राजाके भादेवके राजबन्धकारिणच पपने पपनी घोड़े से कर कुछ कबायदके मदानमें पहुँचती हैं। यहाँ पर अङ्गबहादुरकी प्रतिमुक्तिके निशट राजा और दूधरे दूधरे कर्षे तन बर्चकारी उपजित होती हैं। समी पपनी पपनी घोड़े पर चमार को बहुदौड़ करती हैं। जिस उल्लके अपर अङ्गबहादुरकी मूर्ति कापित है उरी उल्ल निर्माचके बापिच बल्लवमें एक बड़ा मीसा लपता है। गममेंच उल्लान्त कर्मकारिणच दूध कबायदके लिये निर्दिष्ट मदानमें पा कर तम्बु लगाते हैं। यहाँ दोहाकी के असा इस दिन मो रातको बधनरत धामोद और लुवा खेला जाता है। जेप दिनमें प्रतिमुक्ति के सारों और पासीक साधाधि सुपञ्जित करके उल्लवमङ्ग करती हैं।

२५। पिशाच-चतुर्दशो—यह बन्धेगरी भाबका दिनेका पर्वदिन है। जेज प्राचाराहपोमें नामा आनीके इस दिवमन्दिरमें भीम था कर रहके होते हैं। इस दिन द्वितीय नामने नरबलि होती है। उखोदयोके दिन कुमार और कुमारिबीको भोजन कराया जाता है और पिशाच

चतुर्दशीका व्रतकल्प भारभ होता है। उस दिन रात भर दोप जलता रहता है और अग्निरक्षा की जाती है दूसरे दिन सबेरे बधेश्वरी देवीको एक रथ पर चढ़ा कर नगरकी परिक्रमा करते, पीछे मन्दिरके निकटस्थ महा-देवमूर्त्तिके प्राङ्गमें रख देते हैं। देवीका रथयात्रापर्व बहुत धूमधामसे मनाया जाता है।

२६। पञ्चलिङ्ग-भैरवयात्रा—प्राग्धिनकी शुक्ल पञ्चमो-की यह उत्सव भारभ होता है। प्रवाद है, कि इस दिन महाभैरव आ कर खड्गिनो वा काशायिनी देवीके साथ उक्त स्थान पर कीलोविहार करते हैं।

२७। ह्रीत्या-यात्रा—कान्तिपुर-स्थापनके बहुत पहलसे देवमाहात्म्यप्रकाशके लिये इस उत्सवकी सृष्टि हुई है।

२८। कृष्णयात्रा—देवकीर्ति-क्षोषणार्थ महोत्सव। कान्तिपुरस्थापनके पहलसे यह प्राचीन उत्सव नेपालमें प्रचलित है।

२९। लाखिया-यात्रा—शाक्यमुनि जब बोधिवृक्षके नीचे ध्याननिमग्न थे, उस समय इन्द्र उनका ध्यान तोड़नेके लिए आए, लेकिन उनके वलसे पराभूत हो वापिस चले गए। पीछे ब्रह्मादि देवगण शाक्यबुद्धकी भाषीर्वाद देने आए। इसी उद्देश्यसे इस उत्सवकी सृष्टि हुई है।

३०। भैरवो-यात्रा और विषकाटी उत्सव—भातगाँव नगरके अविष्ठाता भैरवदेवके उद्देश्यसे नैवारजातिका उत्सव। यह उत्सव दो तीन घण्टाखकी मनाया जाता है। इसके पास ही शक्तिस्वरूपिणो भैरवोमूर्त्ति नेतादेवीका मन्दिर है। इस दिन भैरवमन्दिरके सामने एक चक्रोरकाष्ठ रख कर उसकी पूजा करते हैं। इसका नाम लिङ्गयात्रा वा विषकाटी है।

३१। अमिताभ-बुद्धका उत्सव—स्वयम्भूनाथके मन्दिरसे भानाप्रकारके पवित्र उपकरण और साजसज्जादि तथा अमिताभ बुद्धके शिर परका-मुकुट ला कर काठमण्डूमें यह उत्सव होता है। पूजादिके बाद वांटा-नामक बौद्ध ब्राह्मणोंको धान्यादि शय्य और नानाप्रकारके द्रव्यादि दान करते हैं। तदनन्तर देवीच्छिष्ट नैवेद्यादिको रास्ते पर छिड़क देते हैं। इस समय आगत बौद्ध-नैवारीगण बुद्धका पवित्र प्रसाद पानको आशामें गोलमान करते

हैं। पीछे वांटा-भोजन-होता है। इसके बाद ही सब कोई मिलकर बाहर निकलते हैं।

३२। रथयात्रा—यह इन्द्रयात्रासे स्वतन्त्र है। १७४०-१७५० ई०के मध्य राजा जयप्रकाशमल्लके राश्र्वकालमें इस उत्सवको सृष्टि हुई। एक समय सात वर्षकी एक वांटा-बालिकाने प्रन्नाप करते हुए कहा कि वह कुमारी देवी वा शक्तिकी, अंशसम्भूत है। लेकिन राजाने उसे पाखण्डी समझ कर नगरसे बाहर निकाल दिया और उसकी जमीन जमा सब जम कर ली। उसी रातकी राती वायुरोगसे पीड़ित हुई। उनके उग्रत प्रलापसे मालूम हुआ कि उन पर देवीका क्रोध है। यह देख कर राजा क्षुब्धित हो रहे। उन्होंने सबके सामने उस वांटाबालिकाको ईश्वरीय अंशोद्भव बतलाया और उसी समयसे उसकी पूजादि करके देवीका क्रोध शान्त किया। पीछे राजाने उस कन्याको-स्वदेशमें ला कर बहुत-सी जागोर दीं। प्रतिवर्ष उस कन्याको रथ पर चढ़ा कर नगरके चारों ओर घुमाते थे। इसीसे रथयात्रा उत्सवकी सृष्टि हुई है। जिस तरह उड़ीसामें जंगनाथ, बलराम और उनके बीचमें सुभद्रा देवी-अवस्थित है, उसी-तरह यहाँ भी देवीको मूर्त्तिके रक्षणवेक्षणके लिये दो वांटा बालक नियुक्त रहते हैं। वे भैरव वा महादेवके पुत्र गणेश और कुमारके रूपमें गिने जाते हैं। वह कुमारी-पट-माटका वा काकोदेवीकी तरह पूजित होती है।

३३। स्वयम्भूमेला-वा-स्वयम्भूत्पत्तिक-दिन—स्वयम्भूदेवके जन्मदिन-उपलक्षमें प्राग्धिनो-पूर्वमाको यह उत्सव होता है। वर्षाके प्रारम्भमें ज्यैष्ठमासकी स्वयम्भूनाथकी चूड़ा आदिको बस्त्रसे ढक-देते हैं। इस दिन मन्दिरावरक वस्त्रका-उत्सोचन किया जाता है। बौद्धधर्मावलम्बियोंके लिये यह महापुण्यका-दिन है। इस दिन नेपालको सभी उपत्यकाओंमें बुद्धकी पूजा होती है।

३४। छोटी-मत्स्येन्द्रनाथ-यात्रा—काठमण्डू-नगरका एक वार्षिक महोत्सव। पाठनमें जिस-तरह-पशुपाषाणो-उत्सव होता है, यहाँ भी उसी तरह समन्त-भद्रके उद्देश्यसे एक उत्सव होता है। किन्तु समन्त-भद्रका नाम-माहात्म्य जनसाधारणमें विशेष व्याप्त न रहनेके कारण यह पार्वणोत्सव-नेपालके अविष्ठाता मत्स्येन्द्र-नाथके

नामानुसार कोटी कोटो मरेश्वरनाथवासा नामसे प्रसिद्ध है। अत्रमासकी छठौंठो तिथि को यह पर्वोत्सव होता है और चार दिन तक रहता है। किन्तु वैश्वदेविकाके यदि रथवज्र टूट जाय तबमा रथयात्रामें कोई निम्न पर्वत्र प्राय तो अतिपूरव स्वल्प एक दिन और भी उत्सव होता है। प्रथम दिन रामो-योधराके पावनताम तक, दूसरे दिन पावनताके दरबार तक तथा तीसरे दिन दरबारके आसनताक तक आते हैं और चौथे दिन आसनताके पुनः रामोयोधराको शोभते हैं।

१५। रामनवमी-उत्सव—ओरामचन्द्रके जन्मोपलक्षमें गोर्खातिथिका पशुहित उत्सव। अत्रमासकी छठौं-पठमी तिथि को शुद्धदेव उत्तरायणमें पहापर्व करती है, गोर्खों भीम दत्त दोम-दिनमें अपने अपने दलमध्यमें पूजा और देवताओंको समोमत इत्यादि उत्सव करते हैं। दूसरे दिन नवमी तिथि पड़ती है। इस पुष्पतिथिमें हिन्दूओंका उत्सव देख कर बौद्ध विचारण्य घटमोषि से कर 'पञ्चादमी तक समस्तमनुष्या उत्सव दिन फिर करते हैं।

१६। नारायणपूजा और उत्सव—विश्वपुरो पर्वतके सातुदेवमें बड़ा-भोलकण्ठ नामक दामिनें तथा नागाकुंभ-पर्वतके निम्नका बाबाकी दामिनें विश्वपुत्रा महा पूजनामसे होती है। पर्वसे पूर्व बड़ा-भोलकण्ठमें यह उत्सव होता था। यहाँ एक पुर पुष्करिणीके मध्यभागमें पनकप्रयाग-यात्री नारायणकी सुन्दर मूर्ति विद्यमान है। इस विश्वमूर्तिके शक्तमें शङ्ख, चक्र गदा और मालप्राम है। मोनाई दाम पर्वतके शीखण्ठ उदतीरवर्ती महा-देवकी सुन्दर मूर्ति देख कर नारायणकी एक नारायणमूर्ति को भी महादेवको मूर्ति मानते हैं।

बड़ा-भोलकण्ठतीर्थमें विष्णुप्राय और शङ्खपरि-वारसुख बिची काजिका नामा निविद्ध है। किन्तु दूसरे दूसरे समी बोध और हिन्दूतक इस तीर्थमें जा सकते हैं। प्रायः दो सौ वर्ष हुए कि निकाटीने कपडे पशुकरवर्ती बाबाजीमें बालोभोलकण्ठ नामक मूर्तम नारायणकी मूर्ति स्थापन की है। हिन्दूतक यहाँ शिवकामत नारायणमूर्तिको पूजा करते हैं और मानसिक दुःखतादि उप-हार देते हैं। किन्तु बोधमय पूजाके बाद नामानुग पर्वतकित बोधवैश्वदेव नामकी आते हैं।

१७। उपरोक्त यात्रावर्तीत मठ्यात यात्रा, (१८) मङ्गलरो यात्रा, (१९) कोबेयायात्रा (२०) स्वयं कोबेयरायात्रा घाटि धनेत्र यात्रा हैं।

रुम्दपुराणके विभवतुल्यक्रमे और स्वयम्पुत्राणमें उक्त वायापोंमेंसे बिबो बिपीला विषय बर्णित है। नैवारजातिसे उत्सवमें पावर्षकायं चाङ्गे हो चाङ्गे न हो सेबिन रुचमोन मानभोवन और मधपान प्रवण्य होता है।

प्राग्भुममासकी विभवतुर्दमी तिथि को विष्णुकोमय ग्रिभ पूजा और रामिजानरवादि करते हैं। प्रायेक मनुष्य पशु-पतिनायके मंदिरमें जाता और शक्तमतेमें खान करता है। प्रसिद्ध स्वावादि।

विष्णु उत्सवकामें सबसुख शिखर चार नगर हैं। विभिन्न राजाके समयमें वर्षों चार नगरमें राजधानी थी। बर्षाभाष राजाकोभी काठमाण्डू और प्राचीन राजधानी कोर्त्तपुर, पाटन और मातगंज यही चार नगर विष्णुमतीनदीके किनारे बने हुए हैं। इसके पन्नाका पौर को सब प्रसिद्ध खान हैं, उनमेंसे पचिक्राय तोय खान का मन्दिरदिदिदि निव विख्यात है किन्तु वे सब पाम प्राप्त हैं। नेपाल उत्सवकामें इस प्रकारके जितने धाम हैं उनमेंसे बड़ा भोलकण्ठ धाम बाबाको बा कोडा भोलकण्ठ धाम स्वयम्पुत्राध धाम (ये सब विष्णुमती नदीके सुवाने पर प्रवक्षित है), हरिधाम, हर (बद्रमतीके किनारे), हरियाय धाम और बोध नाथ धाम (बद्रमती और बाधमतीनदीके मध्यवर्ती ब्रह्ममि पर प्रवक्षित), गोबर्षधाम, देवपाटन धाम, भन्वपेहर, विरविह्वमठ, यद्गुपहर, चाङ्गनारायण धाम, तिथियहर (मनोहरानदीके निकटवर्ती) गोदा बरो धाम (गदोरी, पुनकोपापर्वतमूल पर प्रवक्षित), धानकोट महर (बद्मगिरि पर्वतमूल पर प्रवक्षित) पादि धाम ब्रह्मस्योप्य हैं।

बाकमण्डू कोर्त्तपुर, पाटन और मातगंज से चार नगर नैवार राजाओंके समयमें प्राचीर द्वारा चालीं पौरके धिरे से और जाने पामिसे निव प्राचीरके खान कानोमें तोरक बने हुए है। सोकापोंके समयसे ये सब प्राचीर दिनीं दिन तक नष्ट होने आ रहे हैं। पचिक्राय तोय

ध्वंसावशेषों में परिणत हो गए हैं। किन्तु नगरसोमा उस प्राचीन प्राचौर तक आज भी निर्दिष्ट है। उस समयके नियमानुसार नीच जातीय हिन्दू (मेइतर, कसाई, जहाद आदि) किसी नगरभीमाके अन्तर्भागमें वास नहीं कर सकते। सुसलमानोंके प्रति यह नियम नहीं है। चहुँतरे सुसलमान नगरमें ही वास करते हैं। प्रति नगरके प्रत्येक फाटकसे संलग्न एक एक टोला वा पक्षी है। इन सब पक्षियोंकी स्युनिसपनिटी स्वतन्त्र है। स्युनिसपनिटीके हाथमें पक्षीके संस्कार और रक्षाका भार है। इन चार नगरोंके प्रत्येक नगरमें एक राजप्रासाद वा दरवार है जो नगरके प्रायः मध्यस्थानमें अवस्थित है। प्रत्येक प्रासादके सामने एक लम्बा चौड़ा मैदान है। उसी मैदान ही कर राजप्रासाद आना पड़ता है। मैदानके चारों ओर मन्दिर प्रतिष्ठित हैं। नगरके अन्तर् भी इस प्रकारका खुला मैदान देखनेमें आता है। काठमण्डू नगरमें ऐसे मैदानकी संख्या १२ है। विचारानय और साधारण कर्मस्थानादि इसी प्रकारके मैदानके किनारे अवस्थित है। काठमण्डू पाटन और भातगाँवके प्रधान प्रधान मन्दिर दरवारके पास ही बने हुए हैं। यहाँ तक कि उनमेंसे कितने दरवारकी सीमाके मध्य उपस्थित हैं। उससे निकटवर्ती कोई कोई मन्दिर आज भी भग्नावशेषोंमें वर्तमान है। दरवारोंके पीछे राञ्चोद्यान, हथसाल और घुड़माल है।

काठमण्डू नगर आयताकार है। बौद्धोंका कहना है, कि यह नगर मञ्जुश्री द्वारा उनकी तलवारके आकारमें बनाया गया है। लेकिन हिन्दू लोग, भवानीके खड्गाकारमें यह नगर बनाया गया है, ऐसा कहते हैं। जिस किसीका एङ्ग हो, उसका सृष्टिभाग दक्षिणकी ओर दाघमतो और विष्णुमतीके सुइम स्थल पर तथा उत्तरकी ओर तिमल ग्राममें अग्रभाग कल्पित हुआ है। काठमण्डू उत्तर दक्षिणमें आध कोस और चौड़ाईमें कहीं उससे अधिक है। इसका प्राचीन नाम है मञ्जुपाटन। दरवारके सम्मुख और काठमय भवनको नैवारलोग संव दिनसे काठमण्डू (काठमण्डप) कहते आये हैं; जहाँ तक सम्भव है, कि उसीसे नगरका नाम भी 'काठमण्डू' पड़ा है। १५६६ ई०में राजा

लक्ष्मीन्द्रसिंहमङ्गले यह काठमण्डप बनाया था। यह कोई देवमन्दिर नहीं है। देवताओं और आगन्तुक सन्त्यागिणिके रहनेके लिये ही यह बनाया गया है। आज भी उसमें वही कार्य होना है। लेकिन कुछ दिन हुए कि उसमें एक शिवमूर्ति भी प्रतिष्ठित हुई है। काठमण्डूके प्राचौर ३२ फाटकोंमेंसे कितने आज भी भग्नावशेषोंमें पड़े हैं किन्तु उन ३२ फाटकोंके संश्लेष ३२ टोला वा ग्राम अब भी पूर्ववत् दोग्य पड़ते हैं। इन ग्रामोंमेंसे पासनटोला, इन्द्रचक्र, दरवारचक्र, काठमण्डू टोला, टोषा टोला और लवन टोला उल्लेखयोग्य हैं।

दरवारचक्रमें दरवार वा प्रासाद अवस्थित है। प्रासादके उत्तर तस्त्रिंशु मन्दिर, दक्षिण वसन्तपुर नामक मन्त्रणागट्ट और नूतन-दरवार (अभ्यर्चना-गट्ट), पूर्व राञ्चोद्यान और हाथी-घोड़े रहनेके घर तथा पश्चिममें सिंह-द्वार है। प्रासादमें उस समयके नैवारोंके बने हुए प्राचौर गठनके गट्टादि आज भी विद्यमान हैं।

काठमण्डू नगरमें हिन्दूके जितने मन्दिर हैं उनमेंसे तस्त्रिंशु मन्दिर छोड़ कर और कोई मन्दिर उतना शोभायुक्त वा उल्लेखयोग्य नहीं है। बौद्धमन्दिर नगरके नाना स्थानोंमें हैं जिनमेंसे 'काठोगम्भू' और 'बौद्धमण्डल' नामक दो मन्दिर उल्लेखयोग्य हैं।

काठमण्डू नगरमें ६०से ८० हजार लोग रहते हैं जिनमेंसे नैवारोंकी संख्या ही अधिक है। नगरके बाहर पूर्वकी ओर ठण्डोखेल नामक मैदानमें सेनाओंकी कूच कवायद होती है। इसके मध्यस्थलमें प्रस्तर-वेदिकाके ऊपर सर जङ्गवहादुरकी गिठो की हुई एक प्रतिमूर्ति है। १८५६ ई०में बहुत धूमधामसे जङ्गवहादुरने स्वयं इस मूर्तिकी प्रतिष्ठाकी थी। बारूदखानेमें जगन्नाथका मन्दिर है जिसे १८५२ ई०में जङ्गवहादुरने प्रतिष्ठित किया। ठण्डोखेल मैदानके एक ढगलमें बहुत पुराना एक छोटा मन्दिर है जहाँ नेपालके सभी मन्दिरोंकी भवेचा अधिक यात्रो एकत्रित होती हैं। इस मन्दिरमें महाकाल नामक शिवकी जो मूर्ति है, बौद्ध लोग उसीकी पद्मपाणि बोधिसत्त्व बतलाते हैं। महाकालके कपाल पर एक और भी छोटी मूर्ति खोदित है। हिन्दू लोग उस मूर्तिकी क्या कहते हैं, मालूम नहीं (शाब्द

चन्द्रमूर्ति कहति है) ; किन्तु रोहटोग उन मूर्ति को पप्रपाषण्डे लगाटने कल्प्य समितामको मूर्ति मानति है । जो कुछ हो, इस मन्दिरमें हमी विधि एक ही प्रतिमाको विभिन्न बर्णका विभिन्न देवता जान कर शिष्टु धोर भेद होतो यन्प्रशासक मनुष्य उसको पूजा करति है ।

नगरके उत्तर-पश्चिम कोणके रामीजोखरा नामक त्रिम सरोवरका उत्तरेय किनारा गया है, उसमें मन्मथलक्ष्मी देवी का मन्दिर है । इसमें शक्तिके लिये पश्चिम दिशासे पुत्र लगा हुआ है । पहले इस छोटको मोमां चतुर्ध्वं थी, किन्तु जबही बङ्गबहादुरने इसे 'चारों' धोरने देीवारने घेर दिया है, तबसे इसको मोमां नष्ट हो गई है ।

रामीजोखरा सरोवरके पूर्वोत्तरकोणमें नारायणका एक छोटा मन्दिर है जिसके चार तरफ दिग्दशके सुन्दर नम नमि हुए हैं, यह ज्ञान देवकी सायक है । इसके दक्षिण को एक तिमर है । इस स्थानका नाम नारायणेश्वरी है । इस मन्दिरके सामने प्राकृतिक चूना पत्थरका काम किया हुआ पवित्रज्ञ शीतला नामक एक पहालिका है जहाँ पूर्व समयमें पवित्रज्ञ बास करते थे । रामीजोखराके दक्षिण एक प्रखरमय झालीके ऊपर राजा प्रतापमल्ल धीर उनको मङ्गिणीकी प्रखरमयी मूर्ति है । यही मङ्गिणी इन सरोवरको शुद्धना गई है ।

काठमण्डू महारके पश्चिम मध्यमन्नाय पहाड़के दक्षिण चन्द्रमूर्ति पर शम्भाय धोर कबाबदका मंदान है । जहाँ मोहम्मदाज शिनाबी कबाबद होतो है । महारके दक्षिण बाधमती धोर किण्डूमतोके सहासलक्ष पर बाधमतीके दाहिने किनारे शिनापति श्योम बहादुरके निर्मित २३३ हो मत्र शोका पत्थरका एक बड़ा घाट है । यह घाट काठमण्डू, कालिपुर, चिनदेयो पादि नामोंके भी सुकारा जाता है । कहते हैं, कि राज शुकबामदेवने १२२४ काल्द (०२३ ई०) में यह नगर बसावा ।

रामीजोखराके धीर भी दक्षिण उष्णोष्ण का तुड़ी केह नामक कबाबद करनीका मंदान है । इसके पश्चिम बराप नामक एक प्रखरपत्थर है जिसे भीमसेन ज्ञाय नामक किरी शिनापतिने बनाया है । इसको जंवाई ११० फुट है । इसमें सोढी धोर म्भोके लगी हुए हैं १२३ ई०के कबाबपातके इसका बहुत कुछ पय टट

फूट गया था, किन्तु इसका य प्रकार हुआ है । जहाँ भीमसेन निर्मित रही प्रखरका एक धीर भी शम्भ का जो १२३३ ई०के भूमिस्वल्पसे तबस लक्ष्य हो गया है । वर्तमान स्थानकी गठन धीर काबकायं पत्थर का छोट धीर शोभास्वल्प है । काठमण्डूमें पाब कोष उत्तर पंग-रेडी शिष्टोष्णका धावाकमवन धीर उद्यान है ।

काठमण्डूके शिष्ट शिष्टु हाप बाधमती धार कर पाटन जाना होता है, उस शिष्टुके उत्तर एक प्रखरमय बङ्गत् कल्पनेके एक पर प्रखरपत्थर है । स्थानके ऊपर एक प्रखरमल्ल वि चन्द्रमूर्ति विद्यमान है । यह चतुताकार स्थान भी शिनापति भीमसेन ज्ञायके बनाया गया है । शिष्टु भी उर्षीको शक्ति है ।

पाटन—यह नेपालमें सबसे बड़ा नगर है । इसका घूरा नाम है कलितपत्तन । यह काठमण्डूसे दक्षिण पूर्व तीन पाबकी दूरीपर बाधमतीके दाहिने किनारे परकलित है । गोकर्ण-विजयके पक्षके नेपाल की तीन राष्ट्योंमें निमज्ज था, उस समय इनो नगरमें नेवारराजको राजधानी थी । पत्तन केको ।

शक्तिपुर—चन्द्रगिरि पर्वतके उपरिर्कित मिरिपय-के मोषे को सब ग्राम धीर नगर है । उसमेंसे घानकीट महार बहुत कुछ प्रविष्ट है । इसीके पूर्व पर्वतके ऊपर बहुतसे घाम हैं । उन घामोंमें शक्तिपुर ही प्रधान है । जहाँ पक्षके एक क्षायीन राजा की राजधानी थी । पत्तनमें यह घाटभराके ज्ञाय बना । शक्तिपुर निकटमर्ली प्रम-तल भूमासके ३४ वीं फुट ऊँचे पर तथा पाटन धीर काठमण्डू नगरसे छेद कोषको दूरी पर परकलित है । यह नगर प्राचीनकालमें बहुविस्तृत नहीं था । किन्तु यहाँका दुर्ग दुर्ग बहुत मजबूत था । १०३३-३३ १० ई० तक तोल कर्ण घेरा जाने रहनेके बाद गोकर्णराज पृथ्वीनारायणने जल करके यह नगर जीता धीर शिम्भाय ज्ञायकतासे नगरके प्रयोग कर पाशाकतबधनिता नवीनी नाक काट जाती । शिम्भ के ही कच मय थी, जो बाँहुरी बजाना जानति थी । कादरमाहनिनी नामक एक पादनी इन समय शक्तिपुरमें थी । वे पत्तने नेपाल इतिहासमें एक विजयमें पक्षके जिहूर घटनाओं का उत्तरेय कर मय है । कर्णल काबपैटिह भी एक

घटनाके १० वर्ष बाद जब कीर्तिपुर गए थे, तब उन्होंने भी वहाँ कितने नकटे मनुष्योंको देखा था। कीर्तिपुरकी लोकसंख्या चार हजारके लगभग है। पृथ्वीनारायणके पाटेशसे कीर्तिपुरका नाम बदल कर 'नाम काटापुर' रख गया। तभीसे यह नगर क्रमशः ध्वंस होता जा रहा है, मन्दिर और अष्टालिकाओंके संस्कार करनेका कोई चेष्टा नहीं की जाती। प्राचीन तोरण और प्राचीर आज भी ध्वंसप्राय अवस्थामें पड़ा है। यहां केवल निवारोंका वास है। जलवायु बहुत स्वास्थ्यकर है। पर्वतसुलभ गलगण्डरीगो यहां एक भी देखनेमें नहीं आता। यहांके दरवार और निःशुटवर्ती मन्दिरादि शहरके पश्चिम छोटे पहाडके ऊपर अवस्थित है। अभी इसका जो ध्वंसप्राय वर्त्तमान है, उससे प्रकृत आकारका निरूपण नहीं किया जा सकता। पोतवर्ण प्रस्तर (अभी इस तरहका पत्थर नेपालमें प्रसुत नहीं होता) निर्मित दो मन्दिर आज भी वर्त्तमान है। इनकी छत गिर पड़ी है, दोवार पर जट्टल हो गया है, किन्तु कितने हाथी, सिंह आदिकी प्रस्तर मूर्त्ति आज भी रक्षित अवस्थामें वर्त्तमान है। मन्दिर १५५५ ई०में बनाया गया था और उसमें हरगोरीकी मूर्त्ति प्रतिष्ठित थी।

यहांके सभी मन्दिर ध्वंसप्राय है, केवल जिनका खर्च गोर्खा-राजाकीपसे दिया जाता है, वे ही आज तक पूर्ववत् अवस्थामें विद्यमान हैं। भैरवका मन्दिर ही प्रधान है। यहां उत्सवके दिन बहुतसे यात्री एकत्रित होते हैं। मन्दिरमें कोई मनुष्याकृति वा निरङ्गरूपो देवप्रतिमा नहीं है। उसके वदलेमें एक प्रस्तरमय माना रंगोंमें रङ्गित व्याघ्रमूर्त्ति है। यहो मूर्त्ति देवमूर्त्तिरूपमें पूजित होती है। इस मन्दिरके पास ही और भी दो तीन मन्दिरोंका ध्वंसप्राय देखनेमें आता है।

कीर्तिपुरके उत्तर पर्वतके ऊपर गणेशका एक मन्दिर है। इस मन्दिरका तोरण बहुत सुन्दर और उत्कृष्ट खोदित कारुकाय शोभित है। इन सब खोदित शिल्पोंमें पश्चिमांग पौराणिक चित्र है। १६६५ ई०में जैपो जातोय शेरिस्थानेश्वरने इस मन्दिरको प्रतिष्ठा की। तोरणको कपाळीके मध्यस्थलमें गणेश, वाम भागमें मयूर

रोहिणी कुमारी, कुमारीके वामभागमें महिषारोहिणी वाराही, और वाराहीके वामभागमें शिवारोहिणी वामुण्डा है तथा गणेशके दक्षिण महाहरोहिणी वैष्णवी, वैष्णवीके दक्षिण ऐरावतारोहिणी इन्द्राणी और इन्द्राणीके दक्षिणमें सिंहवाहिनी महालक्ष्मी है। गणेशके ऊपर मध्यस्थलमें भैरव और शिवकी तथा वामभागमें हंमारोहिणी ब्रह्माणीकी और दक्षिणमें हवारोहिणी रुद्राणीकी मूर्त्ति खोदित है। इन अष्ट देवमूर्त्तियांकी अष्टमातृका कइते हैं। दोनों द्वारके कोनेमें मध्यविन्दुयुक्त पट्टकोणो यन्त्र है और दोनों बगल पक्षयुक्त सिंहमूर्त्तिके नीचे कलस और श्रीशक्त खोदित है।

कीर्तिपुरके दक्षिण-पूर्वमें "चिह्ननदेव" नामक एक बौद्धमन्दिर है। यह मन्दिर छोटा होने पर भी इसमें बौद्ध देवदेवियों, बौद्ध शास्त्रोक्त घटनाओं और बौद्ध चिह्न यानादिके जो सब विग्रह चित्र स्वरूपसे खोदित हैं, उन सबके लिये इस मन्दिरका विशेष आदर होता है। कीर्तिपुरके पूर्व काठमाण्डूसे एक कोस दक्षिण चौधहाल नामक ग्राम और उससे भी डेढ़ कोस पूर्व में भातगांव पड़ता है।

भातगांव—यह महादेव-पोखराग्रिखरसे डेढ़ कोस और काठमाण्डूसे दक्षिण-पूर्व ४ कोस दूर हनुमान्-मतीके बाएँ किनारे अवस्थित है। इस नगरके पूर्व और दक्षिणमें हनुमान् मती नदी और उत्तर तथा पश्चिममें कंसावती नदी प्रवाहित है। इस नगरका आकार शङ्ख-सा है। भातगांव देखो। भातगांव और काठमाण्डूके मध्य नदीबुर्द और घिसी नामक ग्राम बसा हुआ है। घिसी ग्राममें बहुत सुन्दर मृण्मय पातादि प्रसुत होते हैं।

फिरफिङ्ग—यह छोटा नगर वावसती नदीके दक्षिण बसा हुआ है।

चांवागांव—गाटनसे जो रास्ता दक्षिणकी ओर गया है उसोके ऊपर यह छोटा नगर अवस्थित है। इस नगरके समीप एक पवित्र कुञ्जके मध्य एक बहुत प्राचीन मन्दिर है।

हरिसिद्धि—पाटनसे दक्षिणपूर्वकी ओर जो रास्ता चला गया है उसोके ऊपर यह गण्डग्राम अवस्थित है।

मोदाखरी वा गदौरी—पुनःकोटा पर्वतके पादमूर्धनि तत्रा पाटनके पश्चिमपूर्वकी ओर जो रास्ता गता है वही के ऊपर बड़ नगर प्रवर्धित है। यह नगर नेपाल भरमें बहुत पवित्र स्थान माना जाता है। हर बारवर्षमें यहाँ एक निर्भरके समीप एक भासबायी मेला लगता है। स्थानीय लोगोंमें प्रवाद है कि बाघिपायकी गोदा नदीके साथ इस नदीका सयोग है और तदनुसार इस स्थानका नाम भी पड़ा है। इसके समीप बहुतसे छोटे छोटे मन्दिर और पुस्तखाने हैं। मोदाखरीमें रत्नायकीका चैत बहुविस्तृत है। यहाँकी रत्नायकी पत्थर मीठी जाती है और ऊपर इसके काको काम करता है। यहाँ पर्वतके विश्व पर गुलाब, जूँ, जाती पादि फलकी बहुत बहुत समृद्धि है, ऐसा नेपाल भरमें और कहीं भी देखनेमें नहीं आता। प्रभुर परिमार्थमें खुल उपग्रहमें कारक जो हम पर्वतका नाम पुस्तोच वा 'पुन-कोटा' पड़ा है। पर्वतके ऊपर एक छोटा पवित्र मन्दिर है जहाँ से कहीं दाली बसा जाते हैं। मन्दिरके निकट से पत्थरगोलेमें एकके ऊपर तालिकाके चितने माको पीर धूरी पर एक निपूत बड़ा हुआ है।

पद्यपतिनाथ—काठमण्डूमें पूर्वकी ओर एक शष्पा निकल कर नवलपरा, मन्दीगाँव, हरिगाँव, चम्बलिन ओर देवपाटन धामके मध्य होता हुआ पद्यपतिनाथ तक चला गया है। यह तीर्थस्थान काठमण्डूके ईश्वरकोस पूर्व-उत्तर कोनेमें प्रवर्धित है। यह स्थान देखो।

बाहुनारायण—पद्यपतिनाथके दो कोसकी दूरी पर यह शहर प्रवर्धित है। इसके निकट मनोहरिगदो प्रवर्धित है। बाहुनारायण चार धामोंकी समष्टि है। प्रविष्ट धाममें चार नामक चार नारायणके मन्दिर हैं। उन्हीं में देवतायें भी नाम पर एक धामका नाम पड़ा है। चारिनारायणमूर्तियोंके दायंन करनिके लिये दूर दूरके देगो कोष कहाँ आते हैं। चारिनारायणके नाम हैं—बाहु-नारायण, विश्व-नारायण, विश्वनारायण और पद्माहु-नारायण। इन चार धामोंको सोमा धाम २२ कोस है।

यह—बाहुनारायणके पूर्व-उत्तर कोनेमें एक कोस की दूरी पर यह नगर प्रवर्धित है। इसको भी तीर्थस्थानमें गिनते कहते हैं। यहाँ से संकड़ों दाली बसा

गम होते हैं। यहाँका भिखिनाथक नामक गणेशका मन्दिर बहुत प्रसिद्ध है। निवाल प्रदेशमें विनायक नामक चार गणेशकी मूर्तियाँ प्रसिद्ध हैं। इन चारोंमेंसे प्रभु-नगरमें विधिबिनायक, मातमार्थमें सृष्ट विनायक, काठ मण्डूमें पाद-विनायक और चम्बरनगरमें विधिबिनायक मन्दिर प्रवर्धित है।

गोकर्ण—बड़ पद्यपतिनाथके एक कोस पूर्व-उत्तर कोनेमें बाधमतोके लिनारे प्रवर्धित है। यह निवाल तीर्थके मध्य स्थिति प्रसिद्ध है। इसके समीप धर शत्रु बहादुरके यज्ञमें स्यधार्थके लिए एक वन लगा हुआ है।

बोधनाथ—पद्यपतिनाथ और काठमण्डूके मध्य पद्य-पतिनाथके माय पाध कोम उत्तर बोधनाथ (बुद्धनाथ) नामक धाम प्रवर्धित है। यह बड़त् बोधमन्दिरके चारों ओर शष्पाकारमें यह धाम बना हुआ है। मन्दिर की बंदो गोलाकार ईंटोंके बनी हुई है। बंदो बंदोके ऊपर पूर्वगमं गम्बूजाकृति मन्दिर है जिनकी चूड़ा पौतलको बनी हुई है। बंदोमें कुल्लोके मध्य बोधिमल्लोकी प्रतिमा है। ये मध्य कुल्लो १२ इंच ल को और ६ इंच चौड़ी है। मन्दिरका व्यास १०० गजके बराबर नहीं होगा। यह मन्दिर मूर्तिका पीर तिम्बतोय बोधीका स्थिति पादरका स्थान है। शोतकात्तमें ब्रह्म बोधनाथ हम मन्दिरको देखने आते हैं।

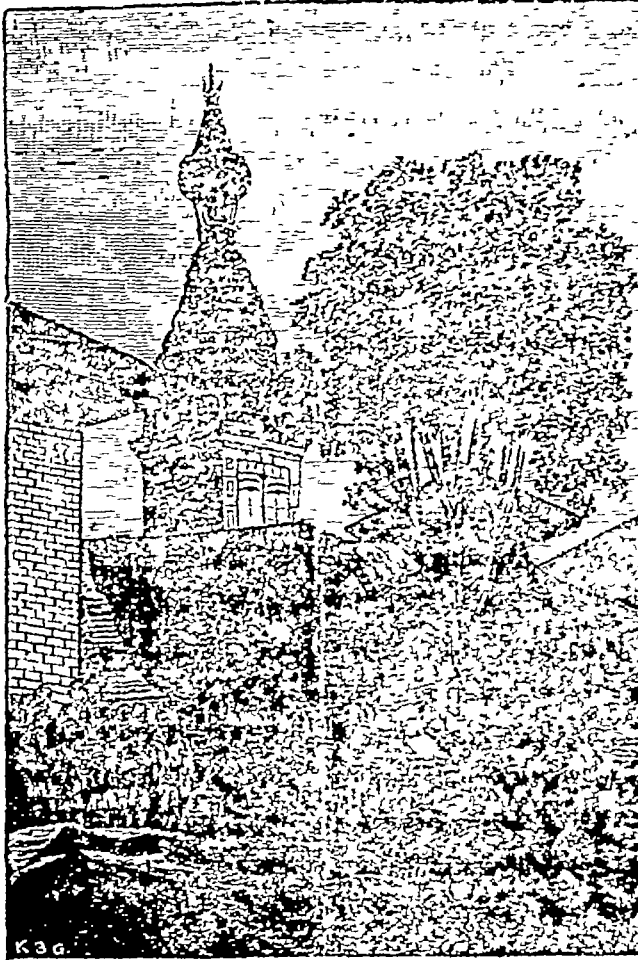
नीलकण्ठ—शिवपुरी पर्वतके पादमूर्धनि नीलकण्ठ ऋषिके लिनारे नीलकण्ठ वा नीलकण्ठ नामक धाम वर्तमान है। यहाँके नीलकण्ठ देवताका विनायक इसके पक्षमें शिवपुरी पर्वतके बर्षाकारवर्षमें लक्षित हुआ है।

बालाको—काठमण्डूके विष्णुमनो पार को कर एक निकुण्ठधाममें नामाशु न पर्वतके नीचे यह धाम बना हुआ है। इस पर्वतका बहुत कुछ पय मर बड़बहादुर द्वारा पाथीरके विना हुआ है और इसके मध्य सुरमित प्रवर्धन है। इस पर्वतके नीचे चितने निर्भर बहते हैं और निर्भरके नीचे एक बड़दाकार धायन महादेवको मूर्ति है। इस धाममें निपाकाधिपतिको उद्यानवाटिका विद्यमान है।

श्वयम्भूनाथ—काठमण्डूके पश्चिम तोन पानकी दूरी पर श्वयम्भूनाथ धाम प्रवर्धित है। इस धाममें

पर्वतके शिखर पर बौद्ध देवता स्वयम्भूनाथका मन्दिर है। मन्दिरमें जानिके लिए चार सौ सीढ़ियां लगी हुई हैं। मन्दिर २५० फुटको ऊँचाई पर अवस्थित है।

सीढ़ीके नोचे शाक्यसिंहको एक प्रकाण्ड मूर्ति बिखामान है और ऊपरमें ३ फुट ऊँचो बौद्धके ऊपर इन्द्रके वज्रकी मूर्ति है। स्वयम्भूनाथ देखो।



स्वयम्भूनाथका मन्दिर।

भोगमती—कोत्तिपुरसे टाई कोस दक्षिण वाघमतीके पूर्वी किनारे यह ग्राम अवस्थित है। रथके ऊपर इस ग्राममें मरत्येन्द्रनाथकी प्रतिमा छः मास तक रहती है। प्रवाद है, कि नरेन्द्रदेव और आचार्य जब पाटनसे पवित्र वारिपूर्ण कलस ले कर कपोतल पर्वत पर धूम रहे थे, तब इन्हींने एक दिन इसी ग्राममें वास किया था।

नवकोट—यह नवकोट उपत्यकाका प्रधान नगर है। काठमाण्डूसे पूर्व ८॥ कोसकी दूरी पर अवस्थित भैरव तथा जिबन्जिया पर्वतके दक्षिण-पश्चिमको और जो शिखर

है, उसीके ऊपर यह नगर बसा हुआ है। इस नगरके पूर्व भाग कोसकी दूरी पर त्रिशूलगङ्गा और पूर्व तथा दक्षिण भाग कोसकी दूरी पर ताङ्गी या सूर्यमती नदी प्रवाहित है। इस नगरमें दो दरबार वा प्रासाद हैं। नेपालका विख्यात भैरवीदेवीका मन्दिर इसी नगरमें अवस्थित है। अङ्गरेजों और नेपालियोंके साथ जो अन्तिम लड़ाई हुई उस समय तक इस नगरमें नेपालाधिपतिका शोभावास था। १८१३ ई०में नेपालाधिपतिने यहाँका वासपान छोड़ कर काठमाण्डूमें ही निवास

कार्त्तिकी शंभुका भी है और तमीचे यहाँके प्रामाटादि मन्त्रीमण्डल हुआ है। छत्रमती नदीकी घोर चने प्राय का बन है। चैत्रमासमें मया होट लपलहा घोर तराई-प्रदेशमें महेरिया लखरका प्रासुरांन पवित्र देखनेमें आता है।

देवीघाट—नवाकोट नगरके तीन पावकी दूरी पर देवोघाट नामके ज्ञान है। यहाँ त्रिशूलगङ्गा घोर छत्र-मती नदी प्रायमें सिंधी है। इस घाटमें ज्ञान पर भैरवोदेवीका मन्दिर बसमान है। ये शास्त्रमासमें मधे रियाके प्रयोगके समय इस देवमन्दिरमें पनेक बालो एकत्रित होते हैं। मन्दिरमें खोई प्रतिमा नको रहतो, इस समय मयाकोटको भैरवोदेवी यहाँ लाई जातो है। भादपक्ष—यह तराई-प्रदेशमें बसा हुआ है। इस नगरके नेपाळ जामिं कीसीनकी पार होना पड़ता है। इस ज्ञानके निचट को छपाच्छादित सुन्दर मधुमत्त मीदान है वह से ज्ञानासके लिए लपलहा है।

रङ्गेशो—मोरङ्ग तराईके मध्य यह ज्ञान ज्ञानस्थ निवासके रूपमें विना जाता है। मोरङ्गके पन्ध सरो ज्ञान पक्षास्थल पर मी रङ्गेशीका बसबाहु बहुत उत्तम है। यहाँका पानो मो सुल्हाहु है।

तराई-प्रदेशमें बहुमानमक्ष, लक्ष्मण, तुङ्गुर्ना पादि ग्रहर जगती हैं।

नेपाळ लपलहाके पश्चिम कुमानुन जामिं निम्न-विश्रित प्रविष्ट स्वान राक्षमें पड़ते हैं—

घानकोट नेपाळ-लपलहाका सीमान्तवर्ती है। यह एक छोटा सुन्दर ग्रहर है।

मङ्गेशोबङ्ग—यह काठमण्डूके दम कोक पश्चिममें पड़ता है। इस घामके नीचे त्रिशूलगङ्गा घोर मङ्गेश कोवानदीका जङ्गल है।

मङ्गेशोघाट—यह काठमण्डूके मोस कोस पश्चिममें है। यहाँ सेनापति भीमसेननिर्मित शिवने की पत्थरके मन्दिर हैं।

मीर्छानगर—हरमङ्गोनदीके दूबे का पश्चिम किनारे काठमण्डूके २६ कोसकी दूरी पर यह नगर पवस्थित है। यह बहुमानमण्डल पर्वतके उत्तर प्रतिष्ठित है और बसमान राजन मकी प्राचोन राजधानी है।

डागाहुङ्ग—यह काठमण्डूके ३३ कोस दूर है और इसी नामके छोटे राज्यकी राजधानी है। इसका दरबार मन्मप्राय है।

पोखरा—यह चेतुपन्न नदीके किनारे बसा हुआ है घोर एक छोटे स्वार्थोन राज्यकी राजधानी है। नगर बहुत बड़ा घोर बहुबलाकीर्ष है। यहाँ सब प्रकारका पनात्र लपलहा है। यह घाम ताव्यनिर्मित प्रवादिने वरनवापके लिए विख्यात है। यहाँ एक शक्ति मिला लवता है।

घनहु—पोखराकी तरह यह मो एक सुदृष्ट स्वार्थोन राज्यकी राजधानी है। यहाँ एक दरबार है।

तानसेन—पोखराको तरह यह एक सामन्त राज्यकी राजधानी है। पक्षाप्रदेशका सेनावास रकी नगरमें है। एक हजार सेना घोर एक खाकी बहा रहते हैं तथा एक नूतन दरबार घोर घाट मो है। सुरङ्गके प्रसुत सुगी लपलहा वरनसाक यहाँ खूब होता है। यहाँको टक्यायमें ताव्यसुत्रा डाको जाती है। काठमण्डूके ६१ कोष पश्चिममें यह नगर पवस्थित है।

पल्मानगर—यह काठमण्डूके ६३ कोस दूर है। यहाँ एक दरबार घोर भैरवनाथका मन्दिर है।

पिच्छाना—यह काठमण्डूके ८६ कोस पश्चिममें है। यहाँ बाहुद घोर बन्दूकका कारखाना है। निचटवर्ती सुविनिद्या मनबङ्ग घामके यहाँ घोरकी घामरनी होतो है।

सनिधाना—पोखरा राज्यको तरह स्वार्थोन राज्यकी राजधानी। यह काठमण्डूके एक से दस कोस पश्चिम वरनकोला नदीके लपर पवस्थित है। यहाँ दरबार घोर मन्दिरादि हैं।

असुरकोट—एक प्राचोन राजधानी। यह मङ्गो-मङ्गानदीके किनारे पवस्थित है। यहाँका दरबार घोर देवी-मन्दिर मन्मप्राय है।

तरिया—भैरव पर्वत घोर त्रिवनिविद्या पर्वतको एक शाखाके लपर यह घाम बसा हुआ है। यहाँ मूडिया जातिका वास है। इसके समोप एक सामाजिक डबल्टु गुणवत् स्थान है। यहाँ २१३ से मनुष्य रह लकते हैं। जोघाई ज्ञान पर्वतके लोबवालो यहाँ घा कर पावप

लेते हैं। निवारण इस भीमलपाक और पार्वतीय लोग "भीमलगुफा" कहते हैं। प्रवाद है, कि भीमल नामक एक निवार-काजीने तिब्बत जीतनेके लिये एक दल सेना भेजी। जब सेना वहाँ पहुँची, तब तिब्बतके लामा ऊपर से बड़े बड़े पत्थर उन पर फेंकने लगे। किन्तु भीमल अपने हाथोंसे उन गुहाकी छतको तरह बड़े बड़े पत्थरोंको रोकते गए और किसीका कुछ भी अनिष्ट न हुआ। तभीसे इसका नाम 'भीमलगुफा' पड़ा है।

दुमचा—यह भीमलगुफासे डेढ़ कोस दूरमें अवस्थित है। यहाँ प्रस्तरनिर्मित एक बुद्धमन्दिर है। इस ग्रामके निकट चन्दनवाडो पर्वतके ऊपर लोडो-विनायकका मन्दिर है। लोडो विनायकके मन्दिरमें एक मूर्ति होन प्रस्तरखण्ड गणेशकी प्रतिमाके रूपमें पूजित होता है। मन्दिरकी परिक्रमा करनेमें यष्टियोंको उँडे आदि रख देने पड़ते हैं, नहीं तो उनपर विनायकका क्रोध पड़ता है।

इतिहास और पुरातत्त्व।

नेपालका विश्वामयोग्य प्राचीनतम इतिहास प्राय नहीं मिलता। पौराणिक ग्रन्थ-समूहसे अथर्ववेदके परिशिष्टमें, स्कन्दपुराणके नागरखण्डमें (१०२।१६) और सद्मन्द्रिखण्डमें (३८।८), देवोपुराणमें, गरुडपुराणमें (८०।२), अरिष्टनेमि-पुराणान्तर्गत जैनहरिवंशमें (११।७२), ब्रह्मलीलतन्त्रमें, वाराहोतन्त्रमें, वराहमिहिरकी ब्रह्मसंहितामें और हेमचन्द्रकी स्थविरावली चरित्रमें नेपालका सामान्य उल्लेख मात्र पाया जाता है। बौद्धतन्त्र और बौद्धस्वयम्भूपुराणमें तथा स्कन्दपुराणके हिमवत्खण्डमें नेपालका थोडा बहुत वर्णन देखनेमें आता है। किन्तु इन सब ग्रन्थोंमें केवल अलौकिक उपाख्यानावली वर्णित है। इनको ऐतिहासिक बातका पता लगाना मुश्किल है।

सुना है, कि नेपालके नाना स्थानोंमें समृद्धिशाली पुरातम वंशके घरोंमें विभिन्न समयको राजवंशावली संगृहीत है। सुप्रसिद्ध प्रतत्त्वविद् भगवानलाल इन्द्रजी जब नेपालमें ठहर चुके थे, तब उन्हें इस प्रकारक वंशावलीकी खबर लगी थी। किन्तु दुःखका विषय है, कि वे भी उन्हें संग्रह कर न सके थे। आज कल रचित

पार्वतीय-वंशावली नामक ग्रन्थमें एक प्रकार नेपाल-राजाओंका संचित विवरण लिखा है। किसी किसी यूरोपीय ऐतिहासिकने इस प्रकारको वंशावलीके आधार पर नेपालका इतिहास लिखा है।

बौद्धपार्वतीय वंशावलीके मतसे—नेमुनि कर्णक सबसे पहले गोपालवंशने नेपालके अन्तर्गत मातातीर्थमें राजत्व लाभ किया। इस गोपालवंशने ५२१ वर्ष तक नेपालमें राज्य किया था। इसके १५२६ वर्षे पोछे जितेदास्ति नामक किरातवंशीय एक व्यक्ति राज्य करते थे। कुरुपाण्डव-युद्धके समय जितेदास्तिने पाण्डवका पक्ष अवलम्बन किया था और कुरुक्षेत्रके समरप्राङ्गणमें ही उनकी जोधलीला शेष हुई थी। यह विवरण प्रकृत ऐतिहासिक है या नहीं, इसमें बहुत सन्देह है। पर इतना तो अवश्य है, कि जब किसी सभ्य प्रार्थसन्तानने नेपाल जा कर अपना अधिपत्य नहीं फैलाया था, तब नेपालमें गोमिप-प्रतिपालक और मृगयाशोल गोपाल और किरातोंकी ही प्रधानता थी।

सम्प्रति नेपालकी तराईसे जो अशोकनिधि आविष्कृत हुई है उससे ज्ञात होता है कि नेपालके दक्षिणाञ्चलमें एक समय शाक्यराजगण राज्य करते थे और वहाँ ज्ञानावतार शाक्यबुद्ध आविर्भूत हुए। वायु और ब्रह्माण्ड-पुराणमें शाक्यवंशीय कई एक राजाओंके नाम पाये जाते हैं जिससे अनुमान किया जाता है, कि बुद्धदेवके बाद भी शाक्यवंशीय १।७ पीढ़ियोंने इस अञ्चलमें राज्य किया था। पीछे सम्राट् अशोकका अधिपत्य हुआ।

इसके बाद ही नेपालमें पराक्रान्त लिच्छवि राजाओंका अभ्युदय हुआ था। यद्यपि पार्वतीय वंशावलीमें 'लिच्छवि' नामका उल्लेख नहीं है, तो भी हम लोगोंने क्यातनामा प्रतत्त्वविद् भगवानलाल इन्द्रजीके यत्नसे इस प्रथित राजवंशका बिलक्षण परिचय पाया है। नेपालका पुरातत्त्व संग्रह करनेके लिये नेपालमें जा कर उन्होंने ही सबसे पहले २३ पुरातन शिलालिपियोंका उद्धार किया। उनकी संगृहीत शिलालिपियोंमेंसे १५ लिपिके ऊपर निर्भर करके डाक्टर फ्लोड और डाक्टर हीरनलीने लिच्छवि राजाओंका धारावाहिक इतिहास लिखनेकी चेष्टा की। किन्तु

दुःखसा विषय है कि यद्विद मानसमाणा लक्ष्मि पञ्चोत्तर
 १४०० वृष मो मे मङ्गलि सिधिरुवापनमे चतने लपयोगो
 न वृष । लक्ष्मी मे किस प्रकार किञ्चिद्वि राजापो कि
 १। मङ्गलाशुभा निर्यय विद्या है, पक्षके वशो सिद्धते हैं ।

परिष्कृत मगनाम्नाश्रमि निज स पट्टीत १३ शिखा
 निर्यय मे मियाल राजापो का खेसा बारावादिह नाम
 पोर काकानिचय किया है, बह मोचे लक्ष्मि किया
 जाता है,—

१। अयदेव १२—प्रायः १५५ ई०में । (१३ को
 लिपि) ।

२। १३ को कर १२ पञ्चात् ११ राजापोके नाम शिखा-
 लिपिमें नहीं लिखि गये हैं । (१३की लिपि) ।

३। अयदेव—प्रायः २५० ई०में । (१३की पोर १३
 की लिपि) ।

४। अयदेव—प्रायः २८५ ई०में ।

५। अयदेव—(राज्याश्रमि के साथ विवाह हुआ
 था) प्रायः ३०३ ई०में ।

६। मानदेव सम्बत् ३८५ ३९२ वा ३९८ ३९६
 ई०में ।

७। मञ्जीदेव—प्रायः ३५० ई०में ।

८। अयदेव वा अयदेव—सम्बत् ३९५ वा
 ३९८ ई०में ।

९। अयदेव—प्रायः ४०० ई०में । २०के २० वन
 ८ राजापोके नाम १५की शिखालिपिमें नहीं लिपि गये हैं ।

१०। अयदेव १२ प्रायः ४१० ई०में ।

महाकामला प अयवर्मा (पोके महाराज) ३३-३४
 ओडयं सम्बत् वा ४३० १के ४३१-२ ई०में ।

१८। १३की शिखालिपिमें कोई लक्ष्मी नहीं है ।

१०—अयदेव - ओडयं सम्बत् ४८८ वा ४९४ ४९४
 ई०में (८की लिपि) । शिखरसुत ओडयं सम्बत् ४६५ वा
 ४६४-४६५ ई० ।

११। १३ की लिपिमें नाम नहीं दिया गया ।

१२। शिखरसुत पोर अयवर्मा शिखरसुत । (८की
 लिपि) ।

३१। अयदेव—प्रायः ४८० ई०में ।

३४। अयदेव २५, (पादिल्लयेनको दोबिसो पोर

मौजीराज भोगवर्माको कन्याके विवाह ।) श्रीवर्ष संवत्
 ११८ ११४ वा ०२५ ६—०२१ १ ई०में ।

३३। अयदेव २५ परबन्धनाम (मोडोडुडुलिङ्ग
 ओडयसाविप भगवतस्य श्रीव अयदेवकी कन्या राज्यमतो
 से विवाह हुआ) श्रीवर्ष संवत् ११३ वा ०२८-२० ई०में ।

उक्त विवरण ३ प्रकाशित होनेके बाद वैष्णव साहबने
 मियालके ३१६ स अयदेव प्राप्त अयदेवको एक शिखालिपि
 प्रकाश की । उसमें मो प अयवर्माका नाम ररनेके कारण
 मङ्गलस्यपितृ पञ्चोड साहबने इस अयदेवको अयवर्ष संवत् प्राप्त
 पर्यात् ४२३ ६ ई०की लिपि बतलाया है । इसी लिपि-
 को सहायतासे लक्ष्मी पूर्वक मगनाम्नाश्रमि पोर काकानि-
 चय साहबका मत परिवर्तन कर दिया है ।

शान्तर पञ्चोड साहबका मत ।

काकानिचय पञ्चोड साहबके मतसे अयदेवके समर्थमें
 लक्ष्मी ३१६ अयदेव शिखरसुत लिपि को सर्वप्रमाण है ।
 इसीके आधार पर लक्ष्मीके काकानिचयके संविद्य का
 विवरण प्रकाशित किया है (१), लक्ष्मी वहाँ पर लक्ष्मीमें
 लिखा जाता है ।

१। (मानस्यसे) महाराज महाराज लिखविष्णु
 हेतु अयदेव (१ म) से । लक्ष्मीमें महाकामला प अयवर्माके
 अयदेव वा अयवर्षके ३१६ (अय) सम्बत्में पर्यात् ४३३
 ई०में एक ताम्रपात्र प्रकाश किया । इस पात्रके प्रकृत
 प्रामाणिकता वनम् है । (२)

२। (अयवर्षके महाराजके) महाकामला प अयवर्माके
 अयदेवके अयवर्षके पर्यात् ४३३के ४३८ १० ई० तक
 राज्य किया ।

३। प अयवर्माके बाद अयवर्षके महाराजके श्रीलिख
 अयवर्षके लिपिमें ४८ सम्बत् पर्यात् ४३३ ई० पोर मान
 स्यसाविप अयदेवका नाम है ।

४। अयदेवके प्रयोग, अयदेवके पोर पोर अयवर्ष
 देवके पुत्र मानदेव ३८६ अयवर्षके पर्यात् ०२५ ई० में
 राज्य करते हैं ।

(१) Dr Fiee 's Oerpos Inscriptionum Indiarum,
 Vol. III pp- 177 ff.
 (२) अयवर्ष पञ्चोड अयवर्षके महाकामला अयवर्षके
 मन्विनीपति करते हैं । p. 177n.

५। परम भद्रारक महाराजाधिराज श्रिविदेव (२५) ११८ हर्षसम्बत् अर्थात् ७२५ ई०में राज्य करत थे।

६। पीछे ४१३ गुप्तसम्बत्में अर्थात् ७३२ २३ ई०में मानदेव नामक एक राजाका नाम मिलता है।

७। फिर २५ शिवदेवकी एक दूसरी लिपिमें जाना जाता है, कि वे १४३ हर्षसम्बत् अर्थात् ७४८ ई०में राज्य करत थे।

८। मानगृहस्थ महाराज श्रीवसन्तनेन ४३५ गुप्त सम्बत् अर्थात् ७५४ ई०में विद्यमान थे।

९। जयदेव (२५)—विक्रम परचक्रकाम—१५३ हर्षसम्बत् वा ७५८ ई०में। इनकी लिपिमें पूर्वतन लिच्छवि राजाओंकी वंशावली वर्णित है।

१०। राजपुत्र विक्रमसेन ५३५ गुप्तसम्बत् अर्थात् ८५४ ई०में विद्यमान थे। डाक्टर पलौटन उपरोक्त राजाओंकी पर्यालोचना करके स्थिर किया है, कि नेपालकी दो स्थानोंमें दो राजवंश राज्य करत थे जिनमेंसे एक वंश नेपालके प्राचीन लिच्छवि वंश था और दूसरा महासामन्त अंशुवर्मासे आरम्भ हुआ था। उन्होंने दो विभिन्न राजवंशकी ताम्रिका इस प्रकार लिखी है—

मानगृहके लिच्छवि वा
सूर्यवंश।

कैलास कूट भयनका
ठाकुरीवंश।

१ जयदेव १म—प्रायः ३३०
३५५ ईस्वी।

२
३
४
५
६
७
८
९
१०
११
१२

शिलालिपिमें इन
कई एक मनुष्यों
के नाम नहीं
मिलते।

प्रायः
३५५-
६३०
ई०।

महाराज शिवदेव १म ६३५
ई०।

१३ हर्षदेव—प्रायः ६३०-
६५५ ई०।

महाराज भ्रुवदेव ६५३ ई०।

१४ शङ्करदेव (हर्षदेवके पुत्र)
लगभग ६५५-६८० ई०।

१५ धर्मदेव (शङ्करदेवके पुत्र)
६८०-७०४ ई०।

१६ मानदेव (धर्मदेवके पुत्र)
७०५-७३२ ई०।

१७ महीदेव (मानदेवके पुत्र)
७३३-७५३ ई०।

१८ वसन्तदेव (महीदेवके पुत्र)

अंशुवर्मा महासामन्तके बाद
महाराज ६३५-६५० ई०।
जिष्णुगुप्त—६५० ई०।

उदयदेव लगभग ६७५ ७००
ई०।

नरेन्द्रदेव (उदयके पुत्र)
लगभग ७००-७२४ ई०।

शिवदेव २५ (नरेन्द्रके पुत्र)
७२५-७४८ ई०।

जयदेव २५ (शिवदेवके पुत्र)
७५०-७५८ ई०।

मध्य सखीय लिपियोंमें देखनेमें आता है (१)। इसके किसी एक पूर्ण शब्दका छान्द ८ वीं वा ८ वीं शताब्दीकी लिपिमें नहीं मिलता (२)।

प्रथमतः शिवदेव और शंशुवर्माके समयकी लिपि देखनेसे यह ७ वीं शताब्दीकी लिपि प्रतीत होती है। किन्तु जब हम लोग जापानके होरि-उजु-मठके तालपत्रके ग्रन्थकी प्रतिलिपि देखते हैं, तब शिवदेवकी लिपि ७वीं शताब्दीकी है, ऐसा स्वीकार करनेमें महा सन्देह उपस्थित होता है। होरो-उजुमठमें जितने ग्रन्थ हैं वे भारतके लेखकसे उत्तरभारतमें बैठ कर लिखे गए और ५२० ई० के कुछ पहले बोदाचार्य बोधिधर्म कटक चीनदेशमें गए गए। फिर वे सब ग्रन्थ चीन देशमें ६०८ ई०में जापान भेज दिए गए (३)। उन ग्रन्थोंकी प्रतिलिपिकी प्रसिद्ध अध्यायक मोचिसुत्सरने प्रकाश किया है और उसे देख कर प्रत्नत्त्वविद् डाक्टर बुद्धने ऐसा स्थिर किया है, कि उक्त ग्रन्थ ६ठी शताब्दीके प्रथम भागमें लिखे गए हैं (४)। उक्त ग्रन्थोंकी लिपिमें तथा शिवदेव और शंशुवर्माके समयकी लिपिमें बहुत कुछ सदृशता देखी जाती है। दोनों लिपियोंका अक्षरविन्यास एक सा होने पर भी शिवदेवकी शिलालिपिमें उसका प्राचीन रूप रखा गया है। डाक्टर बुद्धर साहवने बहुत खोजके बाद स्थिर किया है, कि शिलालिपिमें हम लोग जो अक्षरविन्यास देखते हैं, राजकीय दहीलपत्रमें व्यवहृत होनेके बहुत पहले यह विद्वत्समाजकी लिपि माना गया था।

लिखने पठनेमें पहिले जो व्यवहृत होता था, धीरे धीरे वही राजकीय लिपिमें व्यवहृत होने लगा, किन्तु

(१) Dr. Bubler's Gundriss, (Indischen Palaeographie) IV Tafel.

(२) यह लिपि दृश्य है—The inscription of Gopala (Cunningham's Arch Surv. Reports Vol. I.) of Dharmapala (Cunningham's Mahabodhi) and of Devapala (Ind. Ant. XVII, p. 610.)

(३) Professor Max Muller's Letter, in the Transactions of the 6th International Congress of Orientalists held at Leiden, pp. 124-128.

(४) Anecdota Oxoniensia, Vol 1, 5 t. III, p. 64.

प्रश्न यह उठता है, कि यदि विद्वत्समाजमें पुस्तक-रचनाके समय किसी विशेष अक्षरका व्यवहार होता है, तो क्या यह उस समयकी राजकीय दहीलपत्रोंमें प्रयुक्त नहीं होगा? प्राचीन शिलालिपिकी आलोचना करनेमें देखा जाता है, कि राजकीय शासनादि राजसभाके प्रधान प्रधान परिदृष्टीमें लिखे जाते थे। यहाँ तक कि तान्त्रशासनका कोई कोई श्रेष्ठ राजा स्वयं रच कर अपने शक्तिकी शक्तिभा परिचय देते थे। इस दिशामें राजगण सामयिक पुस्तकादिके उपयुक्त अक्षरोंके छान्दका अर्थ न कर पूर्वतन अक्षरोंका छान्द अर्थ करेंगे, यह कहाँ तक सम्भव है, सम्भवमें नहीं आता। इसी कारण मान्य होता है, कि गुजरातमें राष्ट्रकूटराज दह प्रमान्त रागका हस्ताक्षर देख कर डाक्टर बुद्धरने लिखा है, 'अधिक सम्भव है, कि ६ठी शताब्दीके प्रथम भागमें भी उत्तरभारतके अर्द्धांशमें दो प्रकारके हस्ताक्षर प्रचलित थे (१)।'

पहले ही लिखा जा चुका है, कि डाक्टर फुनोटके मतानुसार शिवदेवकी लिपि मानदेवलिपिके बहुत पहलीकी है। किन्तु खोदित लिपिके धारावाहिक कालानुसारी अक्षरतत्त्वकी आलोचना करनेमें मान्य होता है मानदेवकी खोदित लिपि बहुत प्राचीन कालकी है। इस हिसाबसे कौन साक्षर किया जा सकता है? यदि हम लोग उपरोक्त प्रत्नत्त्वविद्-निर्देशित ७वीं शताब्दीमें अर्द्धांश ६२५-६५० ई०में राजा शिवदेव और महासामन्त शंशुवर्माका प्रकृत समय स्वीकार करें, तो सामयिक इतिवृत्तके साथ विरोध उपस्थित होगा। इस हिसाबसे यदि डाक्टर बुद्धरके मतानुसार एक ही समयमें दो प्रकारकी लिपिका छान्द प्रचलित था, ऐसा स्वीकार कर शिवदेव और उनके महासामन्तकी पाँचवीं शताब्दीके मनुष्य माने, तो कोई गड़बड़ ही नहीं रहती।

उक्त लिच्छविराजके समयकी दो खोदित-लिपिके प्रतिस्वरूप वेण्डल साहवने प्रकाश किया है, कि एक ही समयकी दोनों लिपि होने पर भी परस्पर वर्णविन्यासमें कुछ फर्क देखा जाता है। पहलीके स्वर चिह्नका छान्द

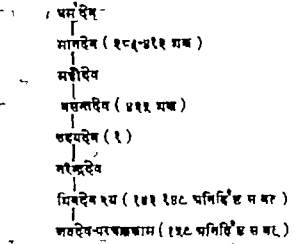
(१) Dr. Bubler's Remarks on the Horuzi palm-leaf MSS (Anec. Oxon, Vol. I, pt. III, p. 65.)

५) देखनेने जो मान्म पडता ते कि बह दूसरीकी
 घपेका पायुनिव घर्माव (३) यताम्बे वादका है।
 -बिन्दु द्वितीय विविधा पणुट 'i' तथा 'i' देखनेने रसकी
 प्राचीनताके विषयमें उतना सन्देह नहीं रहता। पच्छिम
 'मन्वानुशासकी प्रकाशित श्लो- गिन्नाक्षिपि उक्त निवदेव
 प्रदत्त होनि पर- मी उपमा पा' वार देखनेने बह
 वैष्णव प्रकाशित विविधा संमकाशीन प्रतीत नहो
 होता। इस प्रकार पश्चिम मन्वानुशासकी ओरो विवि-
 धा पाकार 'i' तथा वैष्णवशासकी श्लो विविधा पाकार
 'i' रण दोनोको मित्रा कर देखनेने साक्ष्य मन्वीया कि
 शिरोत्र 'i' नही यताम्बे वादका है। पच्छिम मन्वानु
 शासकी श्लो विविधि पाकारने जनको ओरो विविधि
 बहूत छह परिपुष्टि को है एया ज्ञान पडता है। ए. यकी
 कारके है कि पच्छिमवरने ओरो विविधो श्लो विविधि
 बहूतपरती कड कर उल्लेख किया है। बिन्दु- वैष्णव
 शासकी प्रकाशित श्लो श्लो श्लो गिन्नाक्षिपि तथा
 पच्छिम मन्वानुशासकी श्लो, श्लो, ओरो श्लो श्लो
 श्लो विविधि पंचवीको पाकोचना करनेने एयो 'मान्म
 पडता कि एयो विवि सवने प्राचीन है। एयो विविधो
 श्लो पच्छिम 'कार्सेन' श्लोका का श्लो श्लो विविधि
 द्वितीययाको श्लो पच्छिम 'वा' रण दोनोको श्लो प्रमैव
 नहीं दोष पडता।

वाचस्पतिक इतिहास

पच्छिम मन्वानुशासके स पृथीत निष्पन्निराज जव
 देव-परचक्रात्मके गिन्नाक्षिपि ओ र्वाचकी है, बह एव
 प्रकार है—

- बिष्णुवि (स्यं व गोप)
- सुभुव्य (सुभुपुरवा वास)
- (दीक्षि ब्रह्मात्मके ११ व्याधि)
- बहदेव (१२ मीपाक्षिपि)
- (११ मनुष्य इयो व श्लो राजा)
- हपदेव
- महदेव



मीपाक्षिपि बिष्णुवि राजा पोके समयकी मित्तो
 गिन्नाक्षिपिवां पानिष्कत बूई है तननेके लपरोत्र १३वीं
 विविधित-न शककी प्रकृत भावनाक्षिपि है। उक्त
 न शककोके पाधार पर ही, बह मीपाक्षिपि प्राचीन श्लो
 प्रासाख स चिह्न इतिहास निवर्ति है।

मीपाक्षिपि पाक्षीय व शासकी पत्रिभाषा जनेति
 क्षिपि विषयपूर्व होनि पर इवने कीय कोचमें प्रकृत
 पतिष्ठाक्षिपि बह देखनेमें पाती है त्रिपे पच्छिम भग
 वानु प्रकृति प्रकृतक्षिपिने एव वाचके श्लोकार किया
 है। एव व वाचकोमें एव जवह लिखा है,—

'स्यं व' श्लोय राजा बिष्णुदेवशर्मने ठाडुरीय गोय
 प शकमाओ पपनो लडुको ब्याह हो। इनके समयमें
 बिष्णुमादिज मीपाक्षिपि पाक्षी श्लो बह पपना पण्ड मय
 कित किया था।

'प शकमां मी राजा बूय पी। उकोने मन्वहपु
 (को कासकूट) नामक ज्ञानमें पपनी राजधानी बसाई।
 तनके समयमें बिष्णुशर्मने पत्रिभारतुष एव जलमपाक्षी
 प्रकृत करके उसके समोय एव लक्ष्मी शिवापड (३)
 कापल किया (१)।'

(१) बहिष्कृत मन्वानुशासके विव वामके बहार पर
 प्रकाशित किया है, उके अनुवार बहवदेवके वाद ११ राजा
 हुए, पीके नरीन्द्रदेव मीपाक्षिपि नहो पर वैडे। श्लो बहवदेवके
 वाद श्लोय राजा हुए, बह गिन्नाक्षिपिमें जलपण्ड है। वादमें उकी
 व श्लोके नरीन्द्रदेव राजकी हावन पर बहिष्कृत हुए।
 (२) बिष्णुव मन्वानुशासक प्रकाशित श्लो विविधिवि।
 (३) Wright's History of Nepal, and Ind., Ann.
 1884, p. 412.

पण्डित भगवानलाल और डाक्टर बुद्धरने कहा है, 'अशुवर्माके समयमें विक्रमादित्यका नेपाल-आगमन बिलकुल भ्रममय है। मानूम होता है, श्रीहर्षदेवके विजय-उपलक्षमें उनका अर्ध नेपालमें प्रचलित हुआ, यह उस चीण स्मृतिको विकृतरूप वंशावलीमें भूलसे दिख लाया गया है (१)।'

इसकी अनुवर्त्ती ही कर डाक्टर फ्लोटने भी अशुवर्माके समयमें स्क्वीण लिपियोंके अर्द्धोको श्रीहर्ष संवत् ज्ञापक स्वीकार किया है।

अब अत्र यह उठता है, कि मन्नाट हर्षदेव क्या मच सुच नेपाल गये थे और वहां जा कर क्या अपने अर्द्धो प्रचार किया था ? इस विषयमें कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं है। वाणभट्टके हर्षचरितमें, चीनपरिव्राजक यूएन-सुवङ्गके भ्रमणवृत्तान्तमें, म तोशन-लिनके विवरणमें और राजा हर्षवर्धनको निज खोदित लिपिमें हर्ष द्वारा नेपालविजय और हर्षसंवत्प्रचारकी कोई बात लिखी नहीं है। हर्षदेवने नेपाल जय किया था, उसका आज तक कोई प्रमाण नहीं मिलता। इस हिसाबसे हर्षदेव वहाँक नेपालविजय और हर्षसंवत्के प्रचारकी कथाको प्रामाणिक तौर पर ग्रहण नहीं कर सकते।

ग्रहण नहीं करनेका कारण भी है। यदि हम लोग अशुवर्माको खोदित लिपिके अर्द्धोको श्रीहर्ष संवत्-ज्ञापक माने, तो भी सामयिक विवरणके साथ विरोध उपस्थित होता है। अशुवर्माके प्रसङ्गमें जो '३८', '३०', '४४' वा '४५', अङ्कके चिह्न हैं उन्हें श्रीहर्षसंवत् अर्द्ध माननेसे ६४०से ६५१ ई०मन् होता है। किन्तु चीन परिव्राजक यूएनसुवङ्गने ६३७ ई०की ५५वीं फरवरीको नेपालको यात्रा की थी (२)। वहींने नेपाल देख कर लिखा है, "अशुवर्मा नामक यहाँ एक राजा थे। वे स्वयं विद्वान् थे और विद्वान्का आदर भी करते थे। वे स्वयं अर्द्धव्याके विषयमें पुस्तक रच गये हैं। नेपालमें उनकी कोष्ठी बहुत दूर तक फैली हुई थी। (३)'

(१) Indian Antiquary. 1881, p. 424,

(२) Cunningham's Ancient Geography of India.

(३) Beal's Records of Western World, Vol. II, p. 81.

चीनपरिव्राजकका उक्त विवरण पढ़ कर उपरीष्ठ पण्डितोंने स्थिर किया है कि, 'चीनपरिव्राजकने नेपालमें कदम तक भी नहीं बढ़ाया। वे केवल हजिकी राजधानी तक पहुँचे थे और वहाँके लोगोंसे जहाँ तक सम्भव है, कि पृष्ठपाठ कर कुछ लिखा होगा। यद्यपि-में उस समय भी अशुवर्माकी मृत्यु नहीं हुई थी।'

उक्त समालोचना ठीक प्रतीत नहीं होती। निम्न व्यक्तिकी सुख्याति नेपाल भरमें फैली हुई थी, उनका मृत्यु संवाद जाननेमें भूल ही गई थी, यह कहाँ तक सम्भव है। चीनपरिव्राजकने अशुवर्माके रचित ग्रन्थ का भी परिचय दिया है; इस हिसाबसे उनका विवरण अमूलक नहीं मान सकते। चीनपरिव्राजकके पहले ही अशुवर्माकी मृत्यु हुई थी, इसमें जरा भी संदेह नहीं। अतः अशुवर्माकी खोदित लिपिके अर्द्धोको श्रीहर्ष संवत्का पढ़ नहीं मान सकते, बल्कि उसे गुप्तसंवत्का पढ़ मान सकते हैं। गुप्तसंवत् माननेका कारण भी है।

गुप्त राजाओंके साथ लिच्छवि राजाओंका घनिष्ठ संबंध था, इसमें तनिक भी संदेह नहीं। डाक्टर फ्लोटने अर्द्धोच-पूर्वक लिखा है, 'गुप्तसम्बन्ध यद्यपि-में लिच्छविसम्बन्ध है। लिच्छवि राजवंशसे आदि गुप्त राजाओंने सम्बन्ध ग्रहण किया है, इसमें किसी बातकी प्राप्ति उठ नहीं सकती।.....में समझता हूँ, कि लिच्छवियोंमें साधारणतन्त्रके विलुप्त और राजतन्त्रके आरम्भमें अथवा १म जयदेवके राज्यारम्भमें ही उक्त सम्बन्ध आरम्भ हुआ है (१)।'

(१) 'And no objection could be taken by the Early Gupta Kings to the adoption of the era of a royal house, in their connection with which they took special pride, I think, therefore, that in all probability the so called Gupta era is Licchhavi era, dating either from a time when the republican or tribal constitution of the Licchhavis was abolished in favour of a monarchy; or from the commencement of the reign of Jayadeva I. as the founder of a royal house in a branch of the tribe that had settled in Nepal' (Fleeb's Corpus Inscriptionum Indicarum Vol. III, Intro, p. 186)

सुभद्राजीके लिच्छवीके साथ सम्बन्धपूर्वमें प्राप्त होने पोर इस कारण अपनीका तीरनाशित समझनेके, अपनेको लिच्छवी-पद ग्रहण किया था अनुमानके सिवा इस विषयमें और कोई प्रमाण नहीं है। पर लिच्छवी राजाओंमें सुभद्राका व्यवहार किया था, यही पवित्र सम्बन्ध परतीत होता है।

पाषाणकाल में सुभद्राके सुभद्रा पदके विद्वान्मादिहने प्रायमगधा प्रसङ्ग है, यह नितात्त अन्वयमात्र म नहीं पड़ता।

भारतवर्षमें विद्वान्मादिह नामके चितनेनी राजाओंमें राज्य किया था। उनमेंसे जो निपात गये थे सुभद्रा मत बर्तनक प्रथम सुभद्रात्त, थे। उनका नाम था चन्द्र-सुभद्रादिह। उसका लिच्छवीराज दुहिते सुभद्रा-देवीके साथ विवाह हुआ था। इस सम्बन्धपूर्वमें सुभद्रात्त अपनेको विधिय तथागत समझन लगे थे। इसीमें अनुमान किया जाता है कि उनको सुभद्रा पर 'लिच्छवत' यह शीर्षकपूर्वमें शब्द जोड़ा गया है। उस लिच्छवीराज दुहिते सुभद्रादेवीके गर्भमें जो सुभद्रात्त ननुप्रसूत जन्म हुए थे।

इस सुभद्रात्तने अपने मातृवर्षमें निपातान्तिके समीचीमान् राजाओंको बर्षमें कर दिया था यह उनको इकाहावादमें लक्ष्मीके शोधितविधिमें साथ साथ किया हुआ है। किन्तु निपातके लिच्छवी राजाओंमें सुभद्रात्तोंको जब पराजय किया था, इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। इस इकाहाके समुद्रपुत्रके विता पोर लिच्छवी राजासाम्राज्य चन्द्रसुभद्रादिहके निपातमें सुभद्रात्त इच्छित हुआ था, इसीका प्रसूत प्रामाण्य पाषाणकाल में शासनीके पाया जाता है।

य शासनीमें लिखा है, 'य शासनीके शहर विच्छदेव त्रय निपातके राजा थे, उसी समय विद्वान्मादिह निपात गये थे पोर अपना पद ग्रहण किया था।' पतर यह जोस भ्रान किया जाय तो फिर कोई ऐतिहासिक मोक्षमात्र नहीं रहता—

"चन्द्रगुप्त विद्वान्मादिहके शहर उपदेव त्रय निपात के राजा थे, उस समय चन्द्रगुप्त विद्वान्मादिहने निपात का कर सुभद्रादेवीका पवित्रपद किया पोर नही अपना पद ग्रहण किया।"

प्रथम सुभद्रात्त, चन्द्रगुप्त विद्वान्मादिहने ३१८-२० से ३७०-३८ ई० तक राज्य किया। इससे बीच में बिम्बो समर्थ निपात गये थे।

मानदेवकी सिक्काविधिसे मालूम होता है, कि लिच्छवीराज ३८५ तक (३८५ ई०) में राज्य करते थे। उपदेव उनके प्रतिपितामह थे। तीन पोतों तक एक प्रतापही मान लेनेके जिस समय सुभद्रात्त, निपात पाये, उसी समयमें इस सीध उपदेवकी लिच्छवीराजर्षि शासन पर पवित्रित देखते हैं। इसके यह बोध होता है, कि पाषाणकाल में य शासनीके रचयिताने 'उपदेव' की जगह विद्वान्देव यह प्रामाणिक पाठ ग्रहण किया होगा।

उपदेवके बाद ३३ सुभद्रात्तने वर्षात् ३३३ ई० में महासामन्त प सुभद्राका प्रसूत हुए। पच्छिम मन्वानुत्तान प्रादि संपूर्ण पच्छिमोंमें लिखा है, 'यहसे पहले से राज्याधिप ग्रहण करनेमें डाकमटाक करते थे। वीक्षे इच्छे पहले से 'महाराजाधिराजको लयाधिपे भूवित हुए।' किन्तु इस भोगो का विख्यास है, कि ये अपने इच्छाके समी राज्याधिप ग्रहण करनेमें प्रथम न हुए। सोयें सोयें, पराक्रम पोर विद्युत्तुहिमें प्रथानता काम करने पर भी लक्ष्मीके समी सञ्चालित लिच्छवी-राजाको भी परदेहा करके 'राज्याधिपे' पदग्रहण की। उनको निम्न शोधित सिक्काविधिमें 'राज्याधिपे' नहीं है। ये महासामन्तको लयाधिपे ही प्रसूत थे। इस विच्छेवकी सिक्काविधिसे जाना जाता है कि लिच्छवी राज महासामन्त प सुभद्राके पराक्रमके पपनो राज लक्ष्मीको देवा करनेमें समर्थ हुए थे। सम्भवता जिस समय से अपना प्रामाण्य जोड़ कर दूर दिग्में हुए करने के विवे गये थे, उसी समय तक इच्छे पहले किष्ण सुभद्राको लिपि खोदी गई होगी।

पूर्वतन पोर पञ्चनातन भारतीय सामन्तीको अपने अपने पवित्रारके समय 'राजा' महाराज' इत्यादि लक्षण लयाधिपे भूवित देखते हैं। महासामन्त प सुभद्रा भी उद्यो तरह अपने पवित्रारके समय किष्णगुप्त प्रादि पञ्चमल्लस्यधिपेके 'राजाधिराज' याख्यासे पमिहित हुए हैं। यह चतुर्थक नहीं है पोर वे सो राजो पाधि देख से लिच्छवी राजाधीही पञ्चमल्लसे सुभद्रा की

कर एक स्वाधोन राजाके मध्य गिने गये थे, यह ठीक प्रतीत नहीं होता। आज भी जिस तरह नेपालराजके अधोन राजा-उपाधिधारी बहुसामन्त हैं, लिच्छवी राजाओं के समयमें भी उसी तरह थे। लेकिन अंशुवर्माने सर्वप्रधान सामन्तपद पर अधिष्ठित हो कर लिच्छवी राजाओंसे राज्योचित महासम्मान प्राप्त किया था, यह असम्भव नहीं है।

उनके अभ्युदयके समय ध्रुवदेव लिच्छवीराजधानी मानगृहमें प्रतिष्ठित थे और गुप्तसम्राट् समुद्रगुप्तने समस्त भारतवर्षमें अपना अधिपत्य फैला लिया था। जिस तरह मालवराज महासेनगुप्तकी वहन महासेनगुप्ताके साथ स्थाण्वेश्वरादेय आदित्यवर्द्धनका विवाह हुआ (१) उसी तरह मालूम होता है कि समुद्रगुप्तके पुत्र २य चन्द्रगुप्त विक्रमाङ्गके साथ ध्रुवसेनकी वहन ध्रुवदेवकी परिणय कार्य सुसम्पन्न हुआ होगा (२)।

ध्रुवदेव ४६ (गुप्त) सम्वत् अर्थात् ३६७-८ ई०में राजसिंहासन पर बैठे थे। किन्तु उन्होंने कब तक राज्य किया, ठीक ठीक मालूम नहीं। उनके समयमें उत्कीर्ण जिष्णुगुप्तकी शिलालिपि देख कर कोई कोई अनुमान करते हैं, कि उक्त सम्वत्के पहली ही महासामन्त अंशुवर्माकी मृत्यु हुई थी; लेकिन यदि सच पूछिए, तो उस समय भी उनकी मृत्यु नहीं हुई थी। ३१६ (शक) सम्वत् अर्थात् ३८४ ई०में वे विद्यमान थे, यह वेण्डल साहबकी आकाशित लिच्छवीराज शिवदेवकी शिलालिपिसे जाना जाता है।

महासामन्त अंशुवर्मा ध्रुवदेव और शिवदेव दोनोंके राजत्वकालमें ही विद्यमान थे। उनके यत्नसे नेपाल उन्नतिकी चरम सीमा तक पहुँच गया था। इस समय नेपालमें लिच्छवीराजगण बौद्ध और ब्राह्मण्यधर्मावलम्बी सभोको समान दृष्टिसे देखते थे। अंशुवर्माके समयमें उत्कीर्ण लिपिसे मालूम होता है, कि एक ओर वे जिस तरह हिन्दूधर्मके प्रति भक्ति दिखलाते थे, दूसरी ओर

उसी तरह बौद्धोंका आदर भी करते थे। नेपालमें बहुत दिन तक गुप्तसम्वत् प्रचलित था, ऐसा बोध नहीं होता। क्योंकि शिवदेवके समयसे पुनः पूर्वप्रचलित (शक)-सम्वत्का प्रचार देखा जाता है।

ध्रुवदेव और शिवदेवके बाद कालानुसार हम लोग मानदेवका नाम पाते हैं। इनके साथ ध्रुवदेव और शिवदेवका क्या सम्बन्ध था, मालूम नहीं। पर हाँ, इतना तो भवशर है, कि वे सबके सब लिच्छवीवंशके थे। मालूम होता है, कि शिवदेवके बाद धर्मदेव और धर्मदेवके बाद उनके पुत्र मानदेव राजा हुए।

मानदेवने ३८६से ४१३ शक (४६४से ४८१ ई०) तक शान्तिपूर्वक राज किया। ये बड़े मातृभक्त और महावीर माने जाते थे। उनके समयमें महासामन्त अंशुवर्मावंशोय ठाकुरो राजाओंने सम्भवतः लिच्छवीराजको अधीनता अस्वीकार कर स्वाधीनता पानेको चेष्टा की थी। मानदेवके शिनापट्टमें लिखा है, "उन्होंने पूर्वकी ओर यात्रा की। वहाँ पूर्वदेशान्वित सामन्तोंको वशीभूत कर राजा (मानदेव) निर्भीक सिंहासी तरह पश्चिमकी ओर अग्रसर हुए। उधर किसी एक नगरमें पहुँच कर उन्होंने सामन्तका कुञ्चवहार देख गवित भावमें कहा था, 'यदि वह मेरे आदेशानुवर्त्ती न होगा, तो मेरे विजयमयभावसे निश्चय ही पराजित होगा।' इस सामन्तका नाम क्या था, मालूम नहीं। लेकिन जहाँ तक सम्भव है, कि वे महासामन्त अंशुवर्मावंशोय कोई हंगी।"

मानदेवके राजत्वकालमें जयवर्मा नामक एक व्यक्तिने उत्तमान पशुपतिनायके मन्दिरमें जयेश्वर नामको एक मूर्त्तिको प्रतिष्ठा की, लेकिन वह लिङ्ग नष्ट हो गया है। अभी उस स्थान पर मानदेवके पिता शङ्करदेवका प्रतिष्ठित १४ हाथ ऊँचा एक त्रिशूल विद्यमान है।

मानदेवके बाद उनके पुत्र महोदेव सिंहासन पर बैठे। उनके समयका कोई विवरण जाना नहीं जाता। पीछे वसन्तदेव पिटरान्यके अधिकारी हुए। ४३५ (शक) सम्वत् अर्थात् ५१३ ई०में उत्कीर्ण इनके समयकी खोदित लिपि पाई गई है। २य जयदेवकी शिलालिपिमें लिखा है, कि ये बड़े ही शूरवीर थे। विजित सामन्तगण इनको वन्दना किया करते थे।

(१) Epigraphica India, Vol. 1, p. 6873.

(२) २य चन्द्रगुप्तविक्रमादित्यने ४००-४१३ ई० तक राज्य किया। मालूम होता है, राज्याभिषेकके बहुत पहले उनके साथ ध्रुवदेवकी विवाह हुआ था।

वसन्तदेवकी समस्त ही सभ्यता चार्वाकभौतिक विचारका प्रमाण निगलनें बड़ा बड़ा था। चार्वाकीय व यावभौमि" लिखा है,—'११२१ खडिगतान्दको चर-कोकितेश्वर निपाणने उदिन हुए।'

यहमी ही कहा जा चुका है, कि पश्चिम भगवान्काण पादि भवनत्त्वविदो ने स्वीकार किया है, कि चार्वाकीय व यावभौमिं पनेक पनैतिहासिक चित्ररूप रक्षने पर मो रममें ऐतिहासिक कथाका मो प्रमाण नहीं है। ऊपर में चरकोकितेश्वरके विवरणमें जो कुछ उद्धृत किया गया है, उससे मूलमें सब हिवा रह सकता है।

११२१ अखण्ड चर्वात् ११२ ई०में मासूम होता है, कि वसन्तदेवने समस्त साम्राज्यको सम्पूर्ण रूपसे चर्वा-मूल वर निपाणमें चरकोकितेश्वरकी पूजाका प्रचार किया। वहीं समयसे ही चर पात्र तक चरकोकितेश्वर का मन्त्रेन्द्रनाथको निपाणके पश्चिमाङ्कदेवता मान कर चरको पूजा करती पा रही है।

वसन्तदेवके पञ्चमन २५ मिनदेव और २४ जयदेव को यिवाकियिमें स वत् पक्ष है। मान्म होता है, कि वह वज्र चरकोकितेश्वरके साथै बनिज पूजा प्रकाय तथा राजा वसन्तनेन कर्त्तव्य चार्वाकभौमिक राजा कर्त्त कर परिचित होनेके समयसे गिना जाता हीया।

वसन्तदेवके बाद वसन्त कर्त्तके उदयदेव काया हुए जाकर एन्टीके मतसे उदयदेव लिच्छमोन गीय नको है। ये आङ्गरीय गीय चर्वात् च शम्भुर्वाग्गीय है। २४ जयदेवको यिवाकियिमें उदयदेवने पहले जिन सब राजाओ को व मान्मो ही हुई है वे लिच्छिवीय गीय होने पर भी (जब मुसकिद्धं मतसे) उदयदेवके ही आङ्गरीयंयको बर्चं नाका पारथ है। किन्तु मूल यिवा कियि यदुर्गके उदयदेव लिच्छिवीय गीय और वसन्तदेवके पुत्र माने जाते हैं। उदयदेवके बाद जो वज्र वनि राजनि वासन पर बैठे, वह यिवाकियिमें कुछ पक्षर है। किन्तु उससे बाद ही नरेन्द्रदेवका विवरण साथ साथ लिखा है।

इस नरेन्द्रदेवके पराक्रमकी बात २५ जयदेवको यिवाकियिमें विस्तारसे बर्णित है। सभ्यता: इनके परा-क्रमसे कान्यकुब्जादिपति चर्वाकभौम निपाण जोत नहीं सके

थे। इनके राजत्वकाकमें चोलपरिव्राजक युपनयनइने कुछ समयके लिए निपाणमें पदायं च किया जा। ये इस प्रकार लिख गये हैं—

'मैं बितने पर्यंतोको जांचते हुए तथा बितनी ही उप-त्यकाय होते हुए निपाणदेवमें पाया। यह देव तुषार-मय पर्वत माभासे बं डित है। पर्वत चौर जययका एक पूर्वरेसे स हुन है।' इस प्रकार देवको प्राकृतिक चौर कोकनाचारको अवस्थाके बर्चं नके बाद लनोंने लिखा है, "यहां विद्यापी चौर चविद्यापी (चर्वात् मोड चौर जिन्तू) दोनों सम्भदाय एक साथ प्राप्त करती हैं। यहां सङ्घाराम और देवमन्दिरकी स पूजा पनेक है। महायान चौर चीनयान मताबबन्दी प्राप्त २००० चरकीका प्राप्त है। राजा चन्द्रिय चौर लिच्छिवीय गीय है। वे पमिन्न, गिम्सचरित्त/चौर उक्तप्रकृतिके हैं। बोधवर्ममें उगका प्रगाढ़ शिखास है।" इत्यादि।

चीनपरिभ्राजकने जिन लिच्छवोरारका उल्लेख किया है, वे ही सभ्यता: नरेन्द्रदेव हैं। नरेन्द्रदेवके विषयमें पनेक लिभन्दलियां प्राप्त मो निपाणकी बोधसमाजमें प्रच-लित हैं। २५ जयदेवको यिवाकियिसे जाना जाता है, कि नरेन्द्रदेवके पहलेके जो लिच्छवोरारकयच बोधघासन के पञ्चपाती हुए थे।

नरेन्द्रदेवके बाद उनसे पुत्र २५ मिनदेव कि वासन ७ पर बैठे। मयचराज पादिल्लेखनी दीहकी चौर मोचरी राजा भोगवर्माको कन्या वन्देकोके साथ इनका विवाह हुआ था। इनके समयमें जो यिवाकियि लकीर्ण हुई है उसमें १३१, १३२ और १३८ (पनिटिंट) समत् पहित है। इससे पटुमान किया जाता है कि इनमें ११३१ से ७७१ ई०के मन्त्र कियो समय राज्य लिखा था। पीछे इनके पुत्र २५ जयदेव लिच्छवोरारकनि हासन पर चकिरुत हुए। इसका दूसरापनाम परचक्रकाम था। इनके समयकी १५८ वसन्त चिह्नित यिवाकियिसे जाना जाता है, कि इन्हीं मोड, उद, बलिह और कोयचापिय चर्वादेवकी कन्या राज-मतीके साथ विवाह किया। इसी जयदेवको हम सोनी में इससे पहले जयवर्धन समझ जा। किन्तु, यही मन्त्र म होता है, कि वे लकोराज चर्वावर्धन नहीं थे। जिस व यमें कामरुपादिपति कुमार भास्वरवर्माने कामपदय

क्रिया था, २य जयदेवके श्वशुर रूप देव भो उसो वंशमें उत्पन्न हुए थे। आसाम अञ्चलसे आविष्कृत ताम्रशासन-सम्बन्ध पढ़नेसे जाना जाता है, कि वे कुमार भास्करवर्माके पुत्र अथवा पौत्र हींनि। तेजपुरके ताम्रशासनमें ये 'हरिप' नामसे प्रसिद्ध हुए हैं।

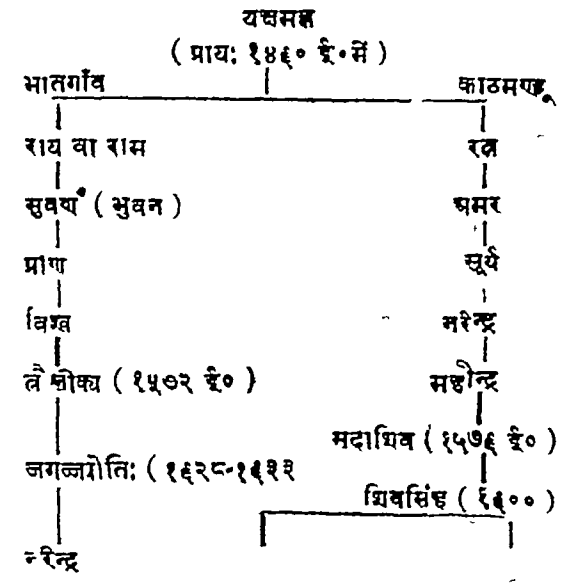
पार्वतीय वंशावलीमें शहरदेवके ४ पीढ़ीके बाद 'गुणकाम' नामक एक राजाका नाम मिलता है। वंशावलीके मतसे ७२३ ई०में उन्होंने काठमाण्डूको बसाया। पराक्रमकाम और गुणकाम यदि एक व्यक्तिकी उपाधि हो, तो २य जयदेवको ७२३ ई० तक नेपालके राजसिंहासन पर अधिष्ठित देखते हैं।

२य जयदेवके बाद प्रायः ढाई सौ वर्षका इतिहास सम्पूर्ण अन्धकाराच्छन्न है। इस समयके नेपाल इतिहासके विश्वासयोग्य विवरणदि भ्रूज तक संगृहीत नहीं हुए। नेपालाधिप राघवदेवने ८७८ ई०की २०वीं अक्षरकी एक नया शब्द चलाया जो नेपाली सम्बन्ध कछुता है। तदनन्तर प्राचीन ग्रन्थोंसे बहुत अनुसन्धान करने पर अध्यापक वेण्डलसाहवने जो तालिका प्रस्तुत की है, वह नीचे दी जाती है—

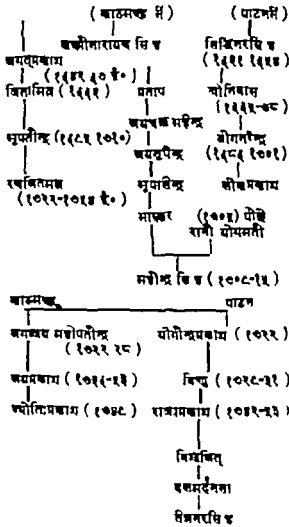
राजाके नाम	शासनकाल	राजधानी
निर्मयरुद्र	१००८ ई०	
भोजरुद्र	१०१५ ई०	
लक्ष्मीकाम	१०१५-१०३८ ई०	
जयदेव		काठमाण्डू
उदय		काठमाण्डू
भास्कर		पाटन
वल्लदेव		
प्रद्युम्नकामदेव	१०६५ ई०	
नागार्जुनदेव		
शहरदेव	१०७१-१०७२ ई०	
वाणदेव	१०८३ ई०	
रामहर्षदेव	१०८३ ई०	
सदाशिवदेव		
इन्द्रदेव		
मानदेव	११३८ ई०	
नरेन्द्र	११४१ "	

आनन्द	११६५-११६६ ई०	
रुद्रदेव		
मित्र वा अमृत		
अग्निदेव		
रणशूर	१२२२ ई०	
सोमेश्वर राजकाम अन्यमल्ल	}	
अभयमल्ल		१२२४ ई०
जयदेव	१२५७ ई०	भातगाँव
अनन्तमल्ल *	१२८६-१३०२ ई०	काठमाण्डू
जयार्जुनमल्ल	१३६४-१३८४ ई०	
जयस्थितिमल्ल	१३८५-१३८२ ई०	
रत्नच्योतिर्मल्ल	१३८२ ई०	
जयधर्ममल्ल	१४०३ ई०	
जयज्योतिर्मल्ल	१४१२ ई०	काठमाण्डू
शचमल्ल	१४२८-१४५७ ई०	

यशमल्लके बाद नेपालराज्य उनके लड़कोंके बीच दो अंशोंमें विभक्त हो गया। एककी राजधानी भातगाँवमें और दूसरेकी काठमाण्डूमें थी। राजवंशावली, उनके समयको सुद्धा तथा गिशासिपिसे जो वर्ष मान्यम हुआ है वह नीचे देते हैं—



* इनके बाद ६० वर्ष तकका पता नहीं लगता।



पामण्डलके सुखसमान लोग इस स्थिति या कर विद्विष रूपके सम्बन्धित और सन्धानित रूप तथा रहनेके लिये एक वरजित ज्ञान अधिकार कर बैठे। सुखसमानो में मनुस्वयम्भवे भारतवर्षमें पदायुष क्तिवा क्यो, किन्तु पक्षिषे ही उनको पाके भारत पर गङ्गी हुई थी। धारा और और उनको मनुस्वयम्भवे महसिमें भारतसाध्याय पर अपना अधिकार जमा सिद्धा। निपासके माग्यवेदमें भी एक दिन ऐसी ही पत्रका हुई थी।

११२२ ई०में ज्योधाधि कृत्य मीठव राजा हरिसिंह दिव पर जब सुखसमानो में, पाठमच सिद्धा तब उनको ने ज्योधाधि मिथिवाको राजधानी सिमरौनपर्वमें दसवत्स के साथ भाग कर भास्करका थी। इहम निपासोपगन्त में (११२४ ई०में) वे मुना विस्वीयर तुमनकायके पाठान्त हुए। इस वृद्ध सिमरौनमें लको ने मन्धुपो के साथ तुलुच-य घाम बिद्या, पोषी परानित हो कर निपास में ज्ञा प्राप्त सिद्धा। इस समय निपासमें जम'न गीय राजनच राज्य करती थी। जब राजा हरिसिंहदेव यहां पहुंचे, तब उनको ने यहाके राजाको के पूर्व प्रभावका ज्ञात देख जब निपास राज्यको करायत कर किया। प्रवाद है, कि राजा हरिसिंहदेवके राज्यमें खननका उत्पात देख देवी तुलुनामनामीने राजाको दस सुसप्त मानसुष्ट राज्यका परिज्ञान कर निपासके उत्कृष्टतम प्रदेश- में जाते घोर नर्दा, राज्यलापन करनेका पादिय दिया था। राजा देवीके पादियातुघार जब दस प्रदेशमें पाए, तब धातनाथके ठाकुरीराजापोने तना नर्दाके धरिवा बिधीने स्वमी देवीका प्रसादेय सुन कर लकीके धाम निपास-दरवारका कुल कार्यभार अपने किया।

निपासमें राज्यभार ग्रहण करनेके साथ ही लको ने नर्दातुलुजादेवीके स्मरणार्थ एक मन्दिर बनवाया। उस मन्दिरका नाम मूक-बीक है। मोटियागञ्ज लको अधिकृत तुलुजादेवीका माहात्म्य सुन कर देवमूर्त्तिको मुदा लानिके लिये मातलीकको घोर बल दिये। जब वे लोग सम्पुष्ट नदोके किनारे पहुंचे, तब लकोने देखा कि प्रवृत्तित हुताशन मातलीक नगरको चारो घोरसे घेरेन कर रहा है। देवीको चतु, चमता देख मोटिया कोन जबसे सब कर मय और विभिन्न हो बापित लके पाए।

इसके बाद ही निपासमें लोकाधिपण विस्तृत हुआ। उपरोक्त राजाको के विषयमें का अचिन्न इतिहास पाया गया, उसे अन्वेषमें लिखते हैं—

११ वीं शताब्दीमें जब सुखसमानोने भारतवर्ष पर पाठमच किया, तबके पक्षिषे ही भारतका अधिकोत्तर प्रदेशसमूह छोटे छोटे खण्डराज्योंमें विभक्त था। उन सब राजाओंके एक पक्षिषे प्रति पाठोच और ईर्ष्या मयता कुञ्जविषयमें सित रहनेके कारण बिना दिन लकी केगा और पर्यको जालि होने लगी जिसके ही दुर्बल होने लगी। ऐसे समयमें लकोने मन्धुस्वयम्भुके कावसे रचा पालि तथा जदेयमें अपने मान सर्वदा और चमताको पक्षुप रहनेके लिये बहिर्द्वारक मन्धुपोको पाम-काय किया। इहका पत्र यह हुआ कि भारतवासीके

१३३० ई०में दिवलीके वादशाह महम्मद तुगलकने चीनसाम्राज्य जीतनेके लिये अपने भागिनेय सेनापति सुशरू-मानिककी दस लाख अम्बारोही सेनाके साथ चीन देशमें भेज दिया। इनकी सेना इसी नेपालराज्यके मध्य हो कर गई थी। इस समय सेनाके अन्धा चारसे नेपाल प्रायः तहस नहस हो गया था। मुसलमानी सेनाने बहुत सुशकिलसे पर्वतादिको पार कर नेपालसीमान्तमें चीनसे न्यत्रा सामना किया। यहाँ दोनो 'मे' घमघोर युद्ध हुआ। एक तो शीतका समय, दूसरे यह स्थान उनके लिये पक्षास्प्यकर था, इस कारण मुसलमानी सेना दिनों दिन नष्ट होने लगी। बचो खुचो सेना रणक्षेत्रमें पीठ दिखा कर दिवलीकी ओर भाग चली।

राजा हरिसिंहदेवने प्रायः १८ वर्ष तक राज्य किया था। पीछे उनके लड़के मत्तिसिंहदेवने १५ वर्ष और मत्तिसिंहके लड़के शक्तिसिंहदेवने २२ वर्ष तक राज्य किया था। इनके साथ चीनसम्राटकी मित्रता थी, इस कारण वनेप (वणिकपुर) ग्रामके पूर्ववर्ती पलाम-चौक ग्राममें इन्होंने राजधानी बनाई। वहाँसे वे चीन-राजसभामें तरह तरहके भेंट भेजा करते थे और चीन सम्राटने भी इसके बदलेमें उन्हें ५३५ चीनाष्ट्रका लिखित एक अनुमोदनपत्र और सीलमुद्रा भेज दी। शक्तिसिंहके पुत्र श्यामसिंहदेवके एक भी पुत्र न था। इस कारण वे १५ वर्ष राज्य कर चुकने बाद अपनी एक मात्र कन्या और जामाताको राज्यसम्पत् देनेकी बाध्य हुए। राजा नान्यपदेवने जब नेपाल पर आक्रमण किया, तब नेपालके मल्लवंशीय राजाने तिरहुत भाग कर अपनी जान बचाई। लक्ष मल्लराजवंशमें श्यामसिंहदेवने अपनी कन्याका विवाह किया। इस सत्रसे नेपालमें मल्लराजवंशकी पुनः प्रतिष्ठा हुई। ५२८ नेपालसम्बन्धमें यहाँ भयानक भूमिकम्प हुआ जिससे मल्लराजवंश तथा दूसरे दूसरे कितने मन्दिरादि तहस नहस हो गए।

हरिसिंहदेववंशका राजत्व शेष होने पर मल्लराज जयभद्रमल्लने पहले पहल नेपालराज्यमें अपना गोटी जमाई। १५ वर्ष राज्य करनेके बाद जयभद्र परलोककी सिधारे। पीछे उनके लड़के नागमल्ल राजगद्दी पर

बैठे। इन्होंने सिर्फ १५ वर्ष राज्य किया। बादमें उनके लड़के जयजगत्तमल्लके ११ वर्ष तक राज्य कर चुकनेके बाद अपने लड़के नगेन्द्रमल्लके हाथ राज्यका कुल भार सौंप थाप परलोककी सिधारे। राजा नगेन्द्रमल्लने १० वर्ष और उनके लड़के उग्रमल्लने १५ वर्ष राज्य किया। पीछे उनके लड़के अगोक्षमल्ल राजसिंघामन पर अधिकार हुए। इन्होंने ही विष्णुमती, वागमती और रुद्रमती तीनों नदियोंके मध्यवर्ती स्थानमें श्वेतकाली और रक्तकालीकी स्थापना करके उस स्थानकी पुण्यभूमि काशीधामके जैसा आदर्ग बना दिया और उसका नाम रत्ना उत्तरकाशी वा काशीपुर। अपने भुजाव्रतसे राजा अगोक्षमल्लने ठाकुरी राजाओंकी परास्त कर उनके राजधानी पाटन नगर पर अधिकार कर लिया।

तदनन्तर इनके पुत्र जयस्थितिमल्ल राजा हुए। इन्होंने पूर्वतन राजगणघात शासन विधि का विरोध संग्रोधन और कुछ नये नियमोंका प्रचार किया। इन्होंने शासनकालमें जातिभेदादिक मर्यादित हुई। समाजशासन तथा धर्मसंक्रान्त कुछ नवीन प्रथाका प्रचार कर वे जनसाधारणको श्रद्धा और भक्तिके पात्र हुए थे। पार्यतोर्षके दूसरी ओर वागमतीके किनारे इन्होंने रामचन्द्र, उनके लड़के लव और कुशकी मूर्तियोंकी स्थापना तथा गोरक्षनाथदेव मूर्तियोंकी पुनः प्रतिष्ठा की। सलित पाटनका कुम्भेश्वर मन्दिर तथा अन्यान्य बहुसंख्यक देवमन्दिर इन्हींके प्रतिष्ठित हैं। ४३ वर्ष राज्य करने बाद इनके लड़के राजा जयथकमल्ल राजसिंघामन पर सुगोभित हुए। इन्होंने पहले शङ्कराचार्यप्रवर्तित धर्ममत ग्रहण कर भारतके दक्षिणात्यसे भद्रब्राह्मणकी बुलाया और पद्मपतिनाथदेवकी पूजाका भार उन्हीं पर सौंपा। इसी समयसे भारतवर्षी हिन्दूधर्मावस्थी ब्राह्मणोंने नेपालमें प्रकृत हिन्दूमतानुसार देवपूजाविधिके प्रचार किया। इनके राजत्वकालमें धर्मराज मीननाथ-लोकेश्वरका मन्दिर बनाया गया। उस मन्दिरमें समन्तभद्र बोधिसत्व, पद्मपाणि बोधिसत्व और अन्यान्य बोधिसत्व तथा नाना देवदेवियोंकी मूर्तियाँ प्रतिष्ठित हैं। ५७३ नेपालसम्बन्धमें इन्होंने एक दुर्गनिर्माण किया और उसको देखभासके लिये कुछ विशेष नियम

वशात् । मातर्भावके तथपाण्डोस धाममें रहने के दातानेयका एक मन्दिर बनवा दिया । राजा शुचकाम देव-भक्तिष्ठित भोजेश्वर देवमूर्ति काङ्करी राजापो के समवेत यमना नामक स्थानके मम्मन्दिर स्तूपके मध्य पार्श्व गई थी । उन्होंने कठ देवमूर्ति का सञ्चार करा कर काठमण्डलं पुनः उत्खनी प्रतिष्ठा की । बड़ मूर्ति अभी धर्मेश्वर नामसे प्रसिद्ध है । ये पाटन पौर काठमण्डलं राजापो के अर्द्धय कालमें समर्थ हुए थे ।

राजा यशमङ्गले तीन पुत्र पौर एक बनाये । मरनेके पहले इन्होंने अपने बड़े लड़केको मातर्भाव रायमङ्ग पुत्रे रचमङ्गको बनेया पौर तीसरे लड़के रङ्गमङ्गको काठमण्डलं तथा चण्डाको पाटनका सामन्तराज्य दे दिया था । किन्तु बीरे बीरे पापनमें विवाद हो जानेसे वे कमजोर हो गये । राजा यशमङ्गले इस प्रकार अपना राज्य विभाज कर देने पर भी प्रजन व शरके धमाकेसे अपना जिवी धमाकनोय कारकसे रनेया पौर पाटनराज्य भातर्भाव पौर काठमण्डलं राजम शेष प्राप्त था पाया । इसी कारण नेपालके इतिहासमें योर्षा पाठमण्डले पहले उक्त दो राज्योंका बोझा बहुत इतिहास मित्रता है । १८२

नेपालको-सम्बन्धमें यशमङ्गकी मृत्यु होने पर नेपालराज्य इस प्रकार विभक्त हो गया । उनके बड़े लड़के रायमङ्गने मातर्भावका स्थिति प्राप्त पाया । इस समय मातर्भाव का राज्य पूर्व पूर्वकीये तक विस्तृत था । रायमङ्गके बाद उनके लड़के प्राचमङ्ग, प्राचमङ्गके बाद उनके लड़के विष्णुमङ्ग मातर्भावके राजा हुए । विष्णुमङ्गने अपने मठ पौर देवमन्दिर बनवाये । विष्णुमङ्गके पुत्र लक्ष्मणमङ्गके राजत्वके बाद उनके लड़के अनन्तरीतिमङ्गने प्रासनमार पञ्च किया । इन्होंने भी मातर्भावमें आदिमें रचकी रज थायाका उत्पन्न प्रवर्तन किया । इनको मृत्युके बाद उनके लड़के भैरवमङ्ग राजा हुए । इनके बाद इनके पुत्र जगन्महागममङ्गने राज्यपर पा कर ७७९ नैपालसंवत् में अपने-कीर्ण स्तूप स्थापन किये । तथपाण्डोस धाममें आदि ज भारो पौर आदि ज भारो नामक दो स्थिति मीमक्षेणके उद्देश्जने एक मन्दिरकी प्रतिष्ठा की । ७८२ नैपालसंवत्में उन्होंने विमलालेश्वर मण्डप पौर ७८७ नैपाल संवत्में मङ्गलनाम नामक एक स्तूप निर्माप किया ।

इनके लड़के राजा जितामिहने (८०२ नैपाल) एक धर्मशाळा, नारायणमन्दिर पौर (८०१ नैपाल) उत्पत्त में येमका मन्दिर बनवाया । इनके पुत्र राजा भूपतोत्तमङ्गके राजत्वकालमें नैपालमें एक सुदृढ, दरबार पौर नाम देवदेवियोंके मन्दिरकी प्रतिष्ठा की गई । इन्होंने अपने तथा अपने पुत्र रचमिहकी सहायतासे ८११ नैपाल संवत् में रचदेवके मन्दिरमें लक्ष्मीको उत बनवा दी । पिताके मरने पर रचमिहका शासनमार पञ्च कर नैपालमें पनेक बहुत शक्ति जोड़ गए हैं । इन्होंने राजत्वकालमें मातर्भाव, कठितपाटन पौर आदिपुरके राजाओंके बीच परस्पर विरोध बढ़ गया । शुर्षादिमा विपति राजा नरभूषणने तत्कालीन राजापोको इस प्रकार कमजोर दिख उन पर पाठमण्डलं कर दिया । कम है त्रिगुणगङ्गादी पार कर नैपाल पड़ने तक लक्ष्मीके के मराजने उनके विरुद्ध पञ्चप्रारथ किया । इस युद्धमें शुर्षाराज पराजित हो कर सदैवको शोच मये ।

* शुर्षापति नरभूषणके पुत्र राजा पुष्पोनारायण रचमिहके राजत्वके समय नैपाल दिखनेकी पाए । रचमिहने उनका आचार-व्यवहार देख अपने पुत्र और मृषि जमङ्गके साथ उनकी मित्रता करा दो; किन्तु शुर्षाराजकी पत्नीका मृत्यु होने पर मातर्भावके सर्ववर्षीय राजापो का पक्षित्व होय हो गया ।

राजा यशमङ्गने विलोय पुत्र रचमङ्गको नचिचपुर तथा पौर सात प्राप्ती का प्रासनमार उपेश किया था । उनका आधिपत्य पूर्वमें सुवकीयो, पश्चिममें सङ्गा नामक स्थान, उत्तरमें सङ्गाबक पौर दक्षिणमें क्षिदिना मल नामक बन्धमूर्ति तक फैला हुआ था । नचिचपुरके किशो स्थिति (११२ नैपाल) मण्डपतिनायकी एक भूज्जान् लक्ष्य पौर एकमुक्ती वशप उपहार देते समय राजाको एक दुयाका मेटमें दिया था । बड़ दुयाका प्राज की आन्तिपुर राजधानीमें रखा हुआ है ।

राजा यशमङ्गके उत्तोर पुत्र राजा रङ्ग वा रतनमङ्गने पिताके विभागानुसार काठमण्डलं का राज्यभार पञ्च किया । इस राज्यके पूर्व सीमार्थ बाबमरी, पश्चिममें त्रिगुणगङ्गा, उत्तरमें योर्षाई बान पौर दक्षिणमें पाटन विभागीकी उत्तरीय सीमा है । राजा रङ्गमङ्गने पिताके

मरते समय उनसे तुलजादेवीका बीजमन्त्र ग्रहण किया था। प्रवाद है, कि इस मन्त्रबलसे देवी उन पर हमेशा प्रसन्न रहती थी। इनकी भविष्यत् उन्नति देख इनके बड़े भाई जलने लगे। अन्तमें इस मनोमालिन्यसे दोनोंमें भारी विरोध खड़ा हो गया।

राजा रत्नमन्त्रने एक दिन स्वप्नमें देखा कि नोक्षतारा-देवी उन्हें कह रही है, 'यदि तুম कान्तिपुर जा सकी, तो काजीगण तुम्हें भवश्य ही राजा बनाके।' तदनुसार राजा बहुत तड़के विद्यावनसे उठ देवीको प्रणाम कर ठाकुरी राजाओंके प्रधान काजीके समीप पहुँचे। काजीने उन्हें राजा बनानेकी प्रतिज्ञा की। अपनी प्रतिज्ञा पूरी करनेके लिये काजीने एक दिन वारह ठाकुरीराजाओंकी अपने यहाँ निमन्त्रण किया और व्यञ्जनादिके साथ विष मिला कर उन वारहोंको यमपुर भेज दिया। कान्तिपुरके सिंहासन पर बैठनेके साथ ही रत्नमन्त्रकी काजीके चरित्र पर विशेष सन्देह हो गया और आखिरकी उसे मरवा ही जाना। स्वप्नदृष्ट वाक्य मिया होने पर भी उन्होंने भाइयोंके साथ विवाद कर जो कान्तिपुर देखनेमें कर लिया था, इसमें सन्देह नहीं।

६११ ने०स०में इन्होंने नवकोटके ठाकुरीराजाओंको पराजित कर उनका राज्य अपना लिया था। इस स्थानसे इन्होंने माना प्रकारके फूल और फल ले कर पशुपतिनाथको पूजा की थी। यही कारण है, कि आज भी वहाँके लोग नवकोटसे द्रव्यादि ला कर उक्त देवमूर्तिको पूजा करते हैं।

इनके राजत्वकालमें कुलु नामक भूटिया जातिने विद्रोह हो कर राजा पर विशेष अत्याचार आरम्भ कर दिया। राजा जब उन्हें टन्न कर न सके, तब देवधर्मा ग्रामवासी चार तिरहुतिया ब्राह्मण पत्थके सेनराजाओंके अधीनस्थ सेना ले कर रत्नमन्त्रकी सहायतामें पहुँच गये। कुकुस्यानाजोर नामक ग्राममें भूटिया लोग पराजित हुए। राजाने ब्राह्मणोंको कई एक ग्राम और बहुत धन दान दिये। इन्हींके शासनकालमें भोटिया-विद्रोहके बाद नेपालमें यवन (मुसलमान) जातिका वास आरम्भ हुआ।

इन्होंने ६२१ नेपालीसम्बतमें तुलजादेवीका एक

मन्दिर बनवा कर उसमें देवमूर्तिकी स्थापना की। बाद इन्होंने कान्तिपुर और ललितपाटनके अधिवासियोंको वशमें ला कर शिवागढ़ि पर्वतकी घित्निङ्ग उपत्यकाकी तंविनी खानसे ताँवा निकाल कर सुकिचा (१)-के बदलैमे ताँबेके पैसेका प्रचार किया।

रत्नमन्त्रकी मृत्युके बाद उनके लड़के भ्रमरमन्त्र काठमाण्डूके सिंहासन पर अधिरूढ़ हुए। इनके शासनकालमें वणिकपुरके कुमारोंने अनन्तनारायणकी मूर्तिको ले कर पशुपतिके मन्दिरमें स्थापन करना चाहा। किन्तु राजाका आदेश नहीं मिलने पर इन्होंने उसी रात भरमें बाह्य देवके मन्दिरको बगलमें एक दूसरा मन्दिर बनवा लिया और इसीमें नारायणकी मूर्ति-प्रतिष्ठा की। भुवनेश्वरके उपासक मणि आचार्यके वंशधरोंने ८ कुमार और कुमारियोंके उद्देशसे एक यात्रा-उत्सव किया। प्रति वर्ष ८ प्रापादको यह उत्सव होता है। प्रवाद है, कि ६७७ ने०स० जिन दिन मणिआचार्य 'मृतसञ्जीवनी'के अन्वेषणमें बाहर निकले थे, उसी दिन यह उत्सव मनाया जाता है। उनके वंशधरोंने उनके अन्तर्धान होनेका समाचार सुन कर जब अन्वेषण-क्रियाकी तैयारियाँ कीं, तब वे देवपाटनसे लौट कर उनका अभिप्राय समझ खेच्छासे अग्निमें जल गये।

राजा भ्रमरमन्त्रने मदनके पुत्र अभयराजकी मुद्रा-रक्षणका कर्तव्यभार दे कर 'दृष्टिनायक'के पद पर अभिषिक्त किया। इन्होंने अपने खर्चसे अनेक मन्दिरादि बनवाये थे।

इस राजाने खोकनाकी महालक्ष्मीदेवी, हलधौक-देवी, मानमईदेवी, पचलौ-भैरव और लुम्बिकास्त्रीकी दुर्गादेवी, कनकेश्वरी, घटेश्वरी और हरिसिद्धिकी पूजामें उत्सव-उत्सवका प्रचलन किया। पूर्व समयमें कनकेश्वरी-देवीकी पूजामें नरबलि दी जाती थी, इस कारण अभी उक्त देवीको पूजा और उत्सव बन्द हो गया है।

ललितपुर, बन्दगाँव, घेचो, हरसिद्धि, लुभु, चापागाँव, फिरफिङ्ग, मत्सेन्द्रपुर वा वागमती, खोकना, पाङ्गा

(१) सुकिचा वा चवनी प्राचीन नेपालीमुद्रा। इसका वर्तमान मीट ८ पैसे वा दो आने है।

कीर्तिपुर, ब्रानकोटे, बबळ, शतद्वज, इलचांच, फुडुम, धर्मकोबो, डेबा, चणकोनांब, डिसिपाम, चुकपाम, पोबच, देवपाटन, मन्दोपाम, नमयाळ मासीपाम वा मानव पादि विविध जनपद लक्षे पबिचारिनि धि। काळ मच्छूषे पक्षयि पाम जातिने राष्ट्रे पर मन्दोपाम पद लिखत है। नमयाळ धोर मासीपाम एव समय विद्यान नवर नामसे प्रसिद्ध बा। यही प्राचीन कीर्तिक्षे धनेक थ साक्षीय ऐकनेनिं पाति हैं।

मिवाळीमन्थनाके पशुघार ३० वय राज्य करनिं बाह धमरमळका देवाळ वृषा। पीक्षे लक्षे लक्षे सूर्य मळ राजा बने। इन्नेनिं मातनबिने राजाबे राजा गडर देवजापित बाहुनारायच धोर गडपुर पाम जोत विष्ट। पीक्षे गडपुर का कर वयदोगिनोदेवीकी तपा सनाक्षे सिधे बहां का ययं ठहर क्षर यत्तमं कात्तिपुर कीटे धोर यहीं लक्षी वतुरा हुई। पनकर लक्षे लक्षे नरेन्द्रमल्ल धोर पीक्षे नरेन्द्रमल्लके लक्षे महीन्द्रमल्ल राजा हुए। इन्नेनिं दरबारके धामने महीन्द्रधरो धोर पक्षयिनाबका मन्दिर बनवाया। मारतको राजधानी दिल्ली का कर इन्नेनिं सखाड को नामा जातीय व व धोर मिचारी पक्षी लपकारनिं विष्ट। लखाडके सुझाडच का पादे मंगनिं पर सखाडके लक्षीके इन्ने रीप्यसुद्रा मयलनकी पशुमति दी बी।

क्षराज्य कीट कर राजा महीन्द्रमल्ल धपने नाम पर 'मू' कर नामकी रीप्यसुद्रा ठरवनिं ली। यहीं सुद्रा मिवाळकी प्रथम रीप्यसुद्रा को। इक्षे पक्षे धोर लक्षी मी नेपाळने रीप्यसुद्राका प्रचार का बा लक्षी, कळ लक्षी लक्षे। इत समयके पक्षेकी नेपाळने लो सव ताळ सुद्राए पाई जाती हैं, लक्षे लपट इष्ट, सि व, इक्षी पादि जन्यु भी प्रतिज्ञति पक्षित है।

महीन्द्रमल्लके ही यक्षके कात्तिपुर नगर बडुवना कीर्त वृषा बा। ११८८ न०४ ०६ मासमासने इन्ने ने बडु नवरने तुळनामवाणीकी प्रतिहाके सिधे एव मन्दिर बनवाया। इक्षे राजत्वकाळने १२०१ न०४ ०६के विष्णु सि वक्षे पुत्र पुरन्दर-राजव मीने कलितपाटन दरबारके धामने नारायचके विष्ट एव मन्दिरको ज्ञापना को। राजा महीन्द्रमल्लके दो पुत्र धे। बडुका नाम बा

सदाशिवमल्ल धोर कीटेका विवर्षिंमल्ल। इतकी माता ठरुनी व मयभूता की।

पिताके मरने पर बडु लक्षुके सदाशिव राज्याभि-कारो हुए किन्तु धे धे लप्यट धोर लक्षे लक्षपारी राजा। बिचो मीक्षे वा यात्राके लपक्षबनें जब बिचो सुन्दरी की पर लक्षी नजर पड जाती थी, तब धे लक्षकी पावड ली क्षे धे। इत प्रकार इन्नेनिं बितनीही लक्ष-लक्षणापोक्षे लक्षनें कात्तिमा लखा दी थी, लपक्षी इयता लक्षी। विखाबिताके मयभूर्ता की कर धे धोर कीरे राजकोप खाको करने ली। मत्रा मी लक्षका ऐसा प्यवहार देव दिने दिन यत्राहीन होनिं लक्षो। एव दिन जब इन्नेनिं देखा, कि राजा मनीहराकी धोर का रक्षे है तब धे लक्षे सुद्रा, पादि ली कर लन पर टूट पडे। राजाने कर करु मातनबनें का कर धाचय लिया; किन्तु मल्लपुराधिपतिने लक्षका लयव्य खरिज बिबल सुन कर लक्षे कंठ कर दिया। राजा सदाशिव लक्ष दिनके बाद बिचो तरक्ष जान ली कर मक्षे मंग पावे। इन्नेने मयभनें प्रहल लुप व मखा बाबिपय मिवाळके पक्षाडिंत को मत्रा।

पक्षाने सदाशिवकी राजकुत करके लक्षके वे मास मारि मिबलि इमलक्षको रावलिं हासन पर बिजया। राजा मिबलिं व लक्षे ज्ञानो धे। इन्नेनिं मक्षाराड देवक्षे काक्षय लुका कर लक्षे शुभपद पर धमिविज बिजया। इतके राजत्वकाळनें सूर्यवय नामक कात्तिपुरवासी कीर्ति मल्लिच तिम्पतको राजधानी खासानगर पदे। (मिब सि वक्षे दो पुत्र धे, लक्षोनरविं इमल्ल धोर हरिहरवि व मल्ल)। कीटे हरिहर लक्ष लप प्रकृतिके धे। पिताके कीर्ति-को धे लक्षितपाटनका घाचन करनेके सिधे लपनर हुए। इतको माता मत्रारानीने कात्तिपुर धोर बडा नीकलक्षके मल्ल एव लपान लयवाबा को रानीवन नामसे प्रसिद्ध है। लक्षमान पक्षेकी-रीक्षेक्षे लक्षो लक्षे लक्ष लपानके धं लपयिष्ट लक्ष माचोपदि देखनेनिं पाति हैं। लक्ष समय पक्षे यही मल्ल लपान लक्षे लक्षपुर धे मिचारेके विष्ट हरिहरनामक पाठनके ज्ञानधर्म परि मलित था।

एव समय हरिहरवि इने जब देखा कि लक्षे पिता

शिकारके लिये बाहर गये हुए थे, तब उन्होंने किसी विवादके कारण अपने भाई लक्ष्मीनरसिंहकी दरबारसे बाहर निकाल दिया था। ७१४ ने०स०में राजा शिवसिंहने स्वयम्भूनायकके मन्दिरका पुनः संस्कार करा दिया। कुछ समय बाद राजा और रानी गङ्गादेवीके मरने पर च्येष्ठ पुत्र लक्ष्मीनरसिंह कान्तिपुरके राजा हुए। इनके किसी आत्मीय भोममल्लने स्वयं भोटदेगमें जा कर कान्तिपुर और भोट इन दोनों स्थानोंकी वाणिज्यसूत्रमें एक कर दिया। इस प्रकार व्यवसाय व्यापारमें भोटसे स्वर्ण और रौप्य निपाज लाया गया था। काजी भोममल्लके यत्नसे भोटराजके साथ राजा लक्ष्मीनरसिंहकी इस शर्त पर एक मन्त्रि हुई कि व्यवसाय-उपनक्षमें यदि किसी मनुष्यका निव्वतकी राजधानी लासानगरमें जीवन नष्ट हो जाय, तो उसकी स्थावर अस्थावर सम्पत्ति नेपाल-गवर्मेष्टकी देनेी पड़ेगी। इनकी सहायतासे भोममल्लवर्ती कुटी नामक प्रदेश नेपालके अधीन किया गया।

तिब्बत-राजधानी लासानगरसे लौट कर भोममल्लने राजाकी उन्नत करनेमें विशेष सहायता की थी। यद्यार्थमें वे राजा लक्ष्मीमल्लको नेपालके एकच्छत्र राजा बनाने में विशेष यत्नवान थे। किसी मनुष्यने एक दिन राजासे कहा, "भोममल्ल स्वयं राजा लेनेके लिये ये सब चेष्टाएँ कर रहे हैं। आपकी राजाश्रुत करना ही उनका मुख्य उद्देश्य है।" यह सुन कर राजाने भोममल्लका शिरच्छेद करनेकी आज्ञा दे दी। भोममल्लने अपनी जीवहथामें धर्मशिला विग्रहका एक ताम्र आवरण बनवा दिया था। जनश्रुति है, कि दक्षिण-भारतवासी नित्यानन्दस्वामी नामक एक ब्रह्मचारी इस समय नेपालमें आए हुए थे। वे ब्रह्मचारी थे सदा, किन्तु किसी मूर्त्तिको प्रणाम नहीं करते थे। यह कथा सुन कर राजा आगवबूला हो गए और ब्रह्मचारीको विग्रहादि प्रणाम करनेका इशुकम दिया। नित्यानन्दस्वामीने जगो ही विग्रहके सामने अपना शिर झुकाया, तब ही चन्द्रेश्वरी, धर्मशिला, कामदेव अदि मूर्त्तियाँ टूट फूट गईं। भोममल्लकी हत्या पर उनकी स्त्रीने राजाकी श्राप दिया था जिससे कुछ दिन बाद राजाका मस्तिष्क विकृत हो गया। जब वे राजकार्य चरानसे असमर्थ हुए, तब उनके लड़के प्रतापमल्ल ७५८

ने०स०में नेपालकी गद्दी पर बैठे। ७८७ ने०स०में १६ वर्ष कारागारके बाद राजा लक्ष्मीनरसिंहकी मृत्यु हुई।

उन्होंने इन्द्रपुर नगर और जगन्नाथ देवालयको स्थापना की। ७७४ ने०स०को माघ-शुक्ला पक्षमीकी उन्होंने कालिकादेवी-स्तोत्रकी रचना कर उसे पत्थरके ऊपर खुदवा दिया और जहाँ नडा देवालयमें भी लिखवा दिया। वह देवस्तोत्र १५ विभिन्न भाषाओंको वर्णमान्तामें रचा गया था *। ये विद्वान् और अनेक शास्त्रीके पण्डित थे तथा १५१६ विभिन्न भाषा जानते थे।

इनके राजत्वकालमें श्यामार्प-लामा नामक कोई भोटवासी नेपाल आए और ७६० ने०स०में उन्होंने स्वयम्भूनायका गर्भकाष्ठ बदलवा दिया तथा देवमूर्त्तियाँ गिबटो करवा दीं। उक्त मन्दिरके दक्षिणस्थ गुम्बजमें राजा लक्ष्मीनरसिंहका नाम अङ्कित है। ७७० ने०स०में राजा प्रतापमल्लने स्वयम्भूनायका माहात्म्य वर्णन करते हुए एक और कविताकी रचना की तथा उसे प्रस्तर पर खीदवा कर देवमन्दिरमें रखवा दिया। उन्होंने अपनी प्रचलित मुद्रामें 'कवीन्द्र'-की उपाधि संयोजित कर अपनेको विशेष गौरवान्वित समझा था।

उन्होंने पहले दो तिरहुत-राजकुमारोंको पाणिग्रहण किया। पीछे योवनस्वभावसुलभ चपलतासे उन्होंने इन्द्रिय-लासलाकी परितम करनेके लिये नेपाली प्रथासुसार प्रायः तीन हजार रमणियोंकी स्त्रोके रूपमें वरण किया था। इस अहमवासनाके वशमें आ कर उन्होंने एक समय एक बालिकाकी मार डाला था। स्वकृत पापोंसे भयभीत हो कर उन्होंने तथा परिवारस्थ सब किसीने पापमोचनके लिये तुलादान उत्सव किया।

इनके राजत्वकालमें महाराष्ट्रसे लम्बकणभट्ट और तिरहुतसे नरसिंहठाकुर नामक दो ब्राह्मण नेपाल आए और राजामें परिचित हो कर 'गुरु'-उपाधिसे भूषित हुए। राजा प्रतापमल्लके चार पुत्र थे, पार्थिवेन्द्रमल्ल, नृपेन्द्रमल्ल, महीपेन्द्र (महीपतोन्द्र)-मल्ल और चक्रवर्तीन्द्रमल्ल।

* D. Wright's History of Nepal नामक पुस्तकमें उक्त शिलालिपिको एक प्रतिङ्कति है।

पिताके ओंसे-भी उन चारो ने एक एक बर्ष पिताके इच्छा।
 सुधार राज्यकीय किया। तभीक पुत्र सहोपतीन्द्रके
 प्राशनकासमें पिताने पुत्रको सहायताके ७८८ में ७९० की
 पचोत्सवुद्धमन्दिरके धामनि बर्महातुमचञ्चलमें एक इन्द्र
 को बन्धावति स्थापित की। अतुसं पुत्र चन्द्रवर्त्तीन्द्रने
 एक बर्ष राज्य कर बीबलोका सञ्चरक की। ७८८ में ७
 स ७ में चन्द्रवर्त्तीन्द्रने जो सुद्धा चक्रार्थ, उरुके एक पठ
 पर याथास्ते पाय, अतुय, कसल और चामर अहित देखा
 जाता है।

पुत्रकी अन्तु पर राजमाता जब व्याकुल हुई, तब
 राजाने उनका गोक दूर करनेके निम्ने एक सुवर्ण पुष्प
 रिचो और मन्दिरकी प्रतिष्ठा की। यह सुष्करिचो राजो
 पोखरी नामसे मयका है। ८०८ में ७९० को राजाको
 अन्तु हुई। पीछे चन्द्रवर्त्तीन्द्रने महीन्द्रमन्त्र भूपालेन्द्र
 नाम धारण कर राजसिंहासन पर बैठे। ८१४ में स ७
 को भूपालेन्द्र भी पञ्चलको प्राप्त हुए। बाहने उनके
 सङ्के वीमास्तरमन्त्र चोदक बर्षकी भवजामि राजपदको
 प्राप्त हुए। इनके राजत्वकालके धामने वर्षमें दसहरा
 का उल्लास ही कर पाटन और भातमार्गवादिभो से जोष
 विवाह उपभोग बुधो। इसी साल निपाकमें महाभारती
 का प्रकोप हुआ जिससे उनको पक्षान मरुतु चुटे।
 उनको अन्तुके साथ पाच कालिपुरका अन्तु व वीथ राज
 व यका भी विराग हुन गया। राजाकी मरिचो तथा
 सुसरी सुसरी विद्या सतीदाह जोनेके पक्षसे अपने विधिय
 पामीक अवस्थयमन्त्रको राजा बना रहे वों।

राजा अयव्ययके पांच पुत्र थे। राजेन्द्रप्रकाश और
 अवधकायने उनके राज्यप्राप्तिके पक्षमें अयव्ययक किया
 था। राजदमकाय नरेन्द्रप्रकाश और अन्तुप्रकाश पीछे
 उत्पन्न हुए थे। राजाको जीविततावकामि अन्ते राजेन्द्र
 और अन्ति चन्द्रप्रकाश कर्तव्यमका विचार। दोनों
 पुत्रको विद्योगके जब राजा बहुत व्याकुल हुए, तब
 उनको पचीनक अन्तु-विद्यायोंने पा कर अन्तुं साङ्गला
 गो और राजकुमार राज्यप्रकाशके राजपद-प्राप्तिके निम्ने
 उनसे विधिय अन्तुरोध किया।

इस समय जब राजाको मारुत हुआ कि सुश्रीकी
 राज प्रमीनारायचने नवकोट तब राज्य वी का किया है

और बनकी देवोत्तर सन्ध्या मरुतुके हाथ लग गई है,
 तब से बहुत दुखी हुए। ८१२ में ७९० में उनको अन्तु
 रोषक करनी पर बनके सङ्के अयव्ययमन्त्र काठ
 मन्त्रके सिंहासन पर पविष्टक हुए। कुमार राज्य
 प्रकाशको जब सिंहासन प्राप्त न हुआ, तब से विराग
 जो पाटनको चले गए और राजा विष्णुमन्त्रके यहां रहने
 लगे। राजा विष्णुमन्त्रको एक भी पुत्र न रहनेके कारण
 अन्तुने राज्यप्रकाशको जो अपना उत्तराधिकारी बनाया
 था।

राजकर्मचारी ठारिगपने उनके अन्ति आता नरेन्द्र-
 प्रकाशको देवपाटन मरुतु, बाहु, गोकर्ण और मन्दी
 प्रास नामक पांच धामोका प्राथियम प्रदान किया।
 ठारिगोंके कार्यसे विराग जो कर अन्तुने अन्तु केद कर
 किया और भारसे उरु पक्ष धामका अधिकार होन
 किया। अन्तु नरेन्द्रप्रकाशको विराग अन्तुको काठमाण्डू
 कोदुकर भातमार्ग का कर रचना पड़ा था। इसके
 कुछ दिन बाद नरेन्द्रप्रकाशकी अन्तु हुई।

जो कुछ जो उरु ठारिगकर्मचारियोंने समय पा कर
 केदने कुदशाया पाया और राजी दयावतीका पक्ष पक्ष
 लम्बन कर उनके अन्तुके मापके सङ्के ज्योतिप्रकाशको
 सञ्के सामने राजा उरु कर होयथा कर दी। राजा
 अवधकाय दरबार कोदु कर कलितपाटन माग,
 गये। अन्तु अन्तुके प्रथामने अन्तु पाचक न दिया।
 इस कारण से राजी दयावतीका पक्षय पक्ष करनेके
 निम्ने गोदावरीको चले गए। अन्तुसे भी निष्ठासे जामि
 पर अन्तुने गोकर्ण अन्तुने और पीछे सुश्री अन्तुके मन्दिरमें
 प्रायय किया। यहाँ एक मन्त्रने अन्तु देवोका अन्तु
 दे कर मरुतु अन्तुके विरुद्ध सुत्र करनेकी सलाह दी। अन्तुके
 विरुद्ध जो अन्तुके कालिपुरसे पा रहा था, से अन्तुके
 सत्र अन्तुके हाथसे मारे गए। पीछे राजाने कालिपुर
 कोदु कर दरबारमें प्रवेय किया और मरुतु ज्योतिप्रकाश
 को दो अन्तु करके अन्तुकी माता राजी दयावतीको
 अन्तुपुर-अन्तुके केद कर रखा।

इस प्रकार अयव्ययामने अपने मरुतु-पीको दमन कर
 नवकोट पर आक्रमण कर दिया। मोर्षारण प्रमीनारा
 यक पराजित हो कर अन्तुसे लौटे। इसके पाठ बर्ष

बाद पृथ्वीनारायणने पुनः नवकोट पर हमला बोल दिया और १२ तिरहुतवासी ब्राह्मणों का ब्रह्मोत्तर छीन लिया। उन ब्राह्मणोंने नेपाल-राजको पास जा कर अपना दुखड़ा रोया। इसी समयसे राजाको भ्रमःपतनका सूत्रपात हुआ। जब उन्हेने सुना कि काशीराम ठापा नामक एक व्यक्ति पृथ्वीनारायणकी नवकोटका अधिकार देनेके लिये सहायता कर रहे है, तब उन्हेने समझा कर सहायता करनेसे मना किया। काशीरामने अपनेकी विलकुल निर्दोष बतलाया, तिस पर भी जब वे चावहिन-की गौरीघाट पर सभ्या कर रहे थे, तब राजप्रेरित गुम-चरोने आ कर उन्हेने मार डाला।

गुप्त श्वरीकी कृपासे जयप्रकाशने पुनः राज्यभार ग्रहण किया और कृतघ्नताके लिये मन्दिरके सामने घाट और उसके चारों ओर गृहदादि बनवा दिये तथा उक्त देवोकी पूजाके लिये बहुत-से जमीन दान दी। वे ही उक्त देवीपूजाके उत्सवमें बहुत-स्यक लोगोंको खिलानेकी प्रथा चला गए है। पशुपतिनाथ-मन्दिरके समीप उन्हेने एक वेदोके ऊपर मूर्तिकानिर्मित कीटिशिव-लिङ्गपूजाकी पद्धति जारी की थी जो अभी कीटि-पार्थिव पूजाके नामसे प्रसिद्ध है।

इस समय पृथ्वीनारायणने बहुत-से सेना ले कर कीर्तिपुर पर आक्रमण कर दिया। दोनों दलमें घमसान युद्ध चला। युद्धमें नेपालराजके सरदार शक्तिवत्तभके अधीनस्थ वारह हजार सेना बिनष्ट हुई थी। दोनों दलकी विशेष क्षति होने पर भी राजा जयप्रकाश पृथ्वीनारायणकी राज्यसे बाहर निकाल देनेमें सक्षम हुए थे। किन्तु ठारिगण सीमान्तवर्ती तिरहुतवासी ब्राह्मणोंके ऊपर ईर्ष्यापरतन्त्र हो कर पुनः पृथ्वीनारायणके समीप गए और उन्हेने नेपालके कितने भ्रंश प्रदान किए।

इस समय मातगाँवके राजा रणजित मल्ल थे। वे भी गुर्खालियोंकी पराजित करनेकी इच्छासे भागसिपाहियोंको शिक्षा देने लगे। ८८७ ने०सं०के आषाढ़ मासमें यहाँ २४ घण्टेके मध्य २१ वार भूमिकम्प हुआ जिसके आठ महीने बाद ८८८ ने० संवत्की पृथ्वी-राजाका मोक्षान्तिपुर पर धावा मारा। उस दिन ५ नवसे असमर्थ हुए, नेपाली सेना और नगरवासी

सबक सब नशमें नूर चूर थे। फलतः दो एक शक्ये युद्ध करनेके बाद ही वे यत्र गए। राजा उम समय मन्दिरमें देवीकी उपासनामें मग्न थे। पृथ्वीनारायणको अच्छा मोका हाथ लगा। उन्हेने पढ़ने कान्तिपुर पर और पीछे ललितपुर पर अपने गौटी जमा ली।

राजा यत्नमकने पाटन जीत कर अपनी एकमात्र कन्याकी वहाँका शासनभार संपण किया। क्रमशः यह जनपद काठमाण्डू राजाके दखनमें आ गया। राजा शिवसिंहके छोटे लड़के राजा हरिहरसिंहमल्ल इस प्रदेशका शासन करने आये। हरिहरसिंहकी मृत्युके बाद उनके लड़के मिथिनरसिंह राजा हुए। ये अत्यन्त ज्ञानवान् थे, उनकी कीर्ति आज भी नेपालमें जगद जगद विद्यमान है। ७४०नेशासनम्भत्की उन्हेने अपने गुरु विश्वनाथ उपाध्यायकी सलाहसे तुलजादेवीको पुनः प्रतिष्ठा की। ७५७ नेपालमन्वतके फाल्गुणमास पुनर्वसुनक्षत्रकी प्रायुमान योगसे उन्हेने कीट्याङ्कृतियत्र कर राधाकृष्णका मन्दिर बनवाया।

वे बुद्धमार्गीसम्प्रदायके ऊपर विशेष श्रद्धा रखते थे। राजाने स्वयं हठकोविहारकी तीर्था कर उनका पुनर्निर्माण किया। इसके अलावा पन्थान्य सर्वोके यत्रमें ज्येष्ठवर्षतङ्गल, धर्माजितिव, मयूरवर्ष, विष्णु-भक्ष, योगवर्ष, श्रीकालीरुद्र वर्ष, हस्त, शिरण्यवर्ष, योगी-धराध्यूह, चक्र, शक, दत्त, यशु, वम्बाहा, जगोवाहा और धूमवाहा नामक कई एक विहार बनाए गए थे। यहाँका जम्बोविहार 'निर्वाणिक' है अर्थात् यह उन्हेके लिए है, जो निर्वाणतत्त्व जानना चाहते हों वे द्वारपरिग्रह नहीं करते। यहाँ निर्वाणसम्प्रदायियोंके और भी पाँच विहार है।

पहले कहा जा चुका है, कि राजा लक्ष्मिनरसिंहके आत्मोद्य काजी भीममल्लकी सहायतासे नेपालमें तिब्बतवासियोंके साथ वाणिज्यके लिये जो सन्धिका प्रस्ताव हुआ था, उसी शर्त पर ललितपुरका वाणिकसम्प्रदाय भी भोटजातिके साथ वाणिज्य व्यवसाय करने लगा।

७६८ नेपाल-सर्वो-विश्वीनारा-सके आठ वर्ष

नेने भण्डारखानके निकट-हरिणीके समीप एक भूगोच मन्दिरके ऊपरी भाग पर

काठमाे खपर मन्त्रादिको प्रतिष्ठति चौर कर्मींदि दिन तापो की मूर्ति कोहित है। एक वर्षको दीपमाघकी महारथ आशिके सम्वर्षमें लम्बोने ब्रह्महनुवापो जानकी नाम राक्षसकी नामक एक ब्राह्मणको घडारथ महापुराच दान किये। ७०२ निपाससम्बत् में धी तोर्षावालाको निकसे। ७०७ निपाससम्बत् में मवानक तुषान ठडा त्रिसे निपासके धर्मक मन्दिर चौर घडादि तहस मङ्ग हो ख्ये। लम्बोने धपना चारा ओमन बन्धर्मिं विताया। ७०७ नि०घ० में लम्बोने राजाधनका परित्याग कर स न्यास करी पङ्क किया। प्रवाद है, कि निपासमें धिसे सत्सुखपन्धर राजा चौर कोई न हुए धि। उनका नाम सेनेधि लवंपाय भय होता है।

उनको मृत्युके बाद श्रीनिवानमङ्ग १२ बौठ बुदि (७०७ निपाससम्बत्)को मङ्गलमाघके सम्व दिन निपासके सिवाकान पर समिपिष्ठ हुए। ७०८ निपाससम्बत् में लम्बोने मातगाव चौर कञ्जितपुर राजाके बाद मेक कर कान्तिपुर राजाके विद्वर लडाईं डाल दो। एक समय श्रीनिवास चौर प्रतापमङ्गके बीच कासिकापुराच तथा हरिच मङ्गलर मिमता क्वापित हुई एक मातगाव, कञ्जितपुर चौर कान्तिपुर कानि धामके सिधे जो एक राधा मया है वह दस मुहने सुना रक्षिके पापघने राबी हुए।

७०८ निपाससम्बत् में मातगावके राजा अयत्पकाम मङ्गले बादके निकटवर्षीं सेनानिवासमें धाम सुना कर ८ मनुष्यको हत्या कर डाले चौर २१को कैंड कर धपने गङ्ग से गए। इस पर राजा श्रीनिवासने प्रतापमङ्गके धाव मेक कर पक्षि बन्देपाम चौर चम्पारच सेवानिवास को भेत किया, पीछे वे चोरपुरो कीलमिके सिधे पक्षर हुए। चोरपुरी कर दनके कायमें पा मया, तय मातगावके राजाने हाबी कोड़े पादि है कर दनके मेक कर लिया। ७०९ नि०घ० में वे बोधगाव जा कर रक्षि करी। वर्ष ७०९ दिन रक्षिके बाद लम्बोने लक्ष्मीगावको लीता तथा ब्रह्म। पीछे सेमी लीत कर धे धपनी धपनी राज बान्को छोटे।

राजा श्रीनिवासने ७०९-८०८ निपाससम्बत् में मङ्ग धर्मक मन्दिर बनवाये तथा बहुरींका स सकार कथाया।

८०९ निपाससम्बत् में लम्बोने मोमयेनके लक्ष्मणे एक हठद मन्दिरका निर्माच किया। उनके बाद उनको मङ्गले योगनरेन्द्रमङ्ग सि हासन पर रंठे। लम्बोने मसिमण्डप नामक एक बड़ा कर बनवाया। इनके मासकपुत्रके कोकालर जोने पर दरहोने रामेक्षरके कदासोन धी स शारभमका त्याग कर दिया। इस समय जनताके पापघने कान्तिपुरके राजा महोपतीन्द्र का महोम्सि क मङ्ग पाटनके राजा हुए। इनको सत्सु जोने पर अययोगप्रकायने राज्यभार पङ्क किया। अजयोमकायको पक्षाच मङ्ग हुई। पीछे योगनरेन्द्रको एकमात्र बन्धा बद्धमतीके पुत्र विष्णुमङ्ग ८३१ नि०घ० में राजा बनाए गए। उनके राजसकालमें महादुर्भिक्ष चौर पनाघटि कञ्जित हुई। लम्बोने पनेक पुत्रधरच चौर नाग धावन करके बह देवताका मान्तिविधान किया। कोई सन्तान न रहनेके कारण लम्बोने राजाप्रकायमङ्गको गोद लिया। राजाप्रकाय गान्धपञ्जतिसे मनुष्य धि। इसो कारण प्रधान काम चोरियोने पङ्कयन्त्र करके लम्बो दोनो पक्षोके पन्था बना दिया। इस पर उनके भाई अक्षयकायने मङ्ग हो कर लक्ष प्रधान चौर काबिदोको केटमें काट दिया। राजा राजाप्रकाय पङ्क-लपाटनकी दाइच यन्त्रकाको सङ्ग न लके चौर पक्षासमें हो करराक काकके माकमें पतित हुए।

इस समय पाटनके ठालाहिकाहज्रातोय पर्यायय प्रथानेने मातगावके राजा रञ्जितको लुका कर पाटनका यासनभार धरपेच किया। किन्तु धी राज्यबासन पङ्को तरङ्ग चला न करे, इस कारण एक वर्षके बाद ही राज्य मृत किये गए। इनके बाद लम्बोने पुनः कान्तिपुरके राजा अययकायको का कर पाटनके सि हासन पर बिजया। किन्तु प्रायवर्षका विपय का कि एक वर्षके बाद ही अक्षयकायको नी नि हासनमृत करके विष्णु मङ्गके हीद्विषको राज्यभार धरपेच किया। उनका नाम था राजनिम्बजित्। चार वर्ष राज्य करनिके बाद पक्ष नने पङ्कयन्त्र करके विष्णुजित्को मङ्गना हासा, लदनकर के मङ्गकोट गए चौर राजा सुम्बोनारायचको मङ्ग सि कर उनके कोड़े मारे दलमङ्गलना नामक एक पञ्जिने पाटन के सि हासन पर समिपिष्ठ किया। दसमर्गन प्रथानो को

विना सलाह लिए ही राजकाय चलाने लगे। एक समय पृथ्वीनारायणके विरोधी होने पर उन्होंने भी बड़े भाईके साथ युद्ध किया था। क्रमशः उनके आचरणसे विरक्त हो कर चार वर्ष राज्य करनेके बाद ही प्रधानोंने उन्हें निकाल भगाया और विश्वजित्के वंशोद्भव तेजनरसिंह-महाकी सिंहासन पर अभिषिक्त किया।

तेजनरसिंहने केवल तीन ही वर्ष राज्य किया था कि पृथ्वीनारायण नेपाल पहुँचे। उनके पाटन पर आक्रमण करने पर तेजनरसिंह भातगाँवमें भाग गए। पृथ्वीनारायणने जब देखा कि, प्रधान ही एकमात्र इर्ता कर्ता हैं, तब उन्होंने इन विश्वासघातकी को पकड़ा और मार डाला।

१८वीं शताब्दीके मध्यभागमें जब साहू क्लाइव घोरि वज्जालके बख्शखल पर पदद्वेष कर इतिहासकी निर्भीकतासे भारतमें अङ्गरेजी राज्यकी नींव डालनेकी कोशिशमें थे, ठीक उसी समय वज्जालके उत्तर हिमालयके पादमूलमें नेपोखराज्य छोटे छोटे सामन्तकीके अधीन हो जानेसे परस्परमें विरोध चल रहा था। पूर्वोक्थित भातगाँव, काठमाण्डू और पाटनके शेष इतिहाससे जाना जाता है, कि जब तेजनरसिंह पाटनके सिंहासन पर और अप्तक राजा जयप्रकाश काठमाण्डूके सिंहासन पर अधिरुढ़ थे, तब भातगाँवके अधिपति राजा रणजित-मल्ल किसी सामान्य कारणसे उक्त दोनों राजाओंके प्रति-द्वेषी हो दलबलके साथ उन पर आक्रमण करनेके लिए अग्रसर हुए। राजा रणजित, स्वदेशवैरियोंके हाथसे छुटकारा पानेके लिए तथा अपनीकी काठमाण्डू, पाटन और भातगाँवके एकेश्वर राजा बनानेकी कामना कर दूर-दूर गोर्खापति पृथ्वीनारायणको बहुत आदरसे बुलाया। अपने मदगर्बसे उच्चजित रणजित ने नहीं समझा कि इस गृहवैरिताके वे गुणसे अभिष्यत्में क्या विषमपरिणाम होगा। राजा पृथ्वीनारायण इस आम्न्यणसे मन ही मन आनन्दित हुए—उनके हृदयमें पुनः नेपाल-जयकी आशा जग उठी। जिस नेपालमें उनके पूर्व पुरुषगण आक्रमण करके भी श्र्थमनोरथ हुए थे और स्वयं भातगाँवसे युद्धमें प्राण ली कर भागे थे, उनकी राशय-पिशाचान भी उनके हृदयसे दूर नहीं हुई थी। उनके

भाई दत्तमदनकी पहले पाटनका ग्रामभार प्रदान पीछे प्रवृत्तना करके उन्हें राज्यसे बहिष्करण-व्यापार, तब भी उनके हृदयमें विशेषरूपके जाग्रत, था। अतः उन्होंने रणमञ्चके आङ्गानकी सपेक्षा न की। विचक्षण रणजित्-थोड़े ही दिनोंके मध्य समझ गए, कि उनके महायुद्धकारी बन्धु उन्हेंके शत्रुताताधनमें सतारू है। इस पर राजा रणजितने अपनेकी कमजोर समझ सन्धि करनेका प्रस्ताव पास किया और परस्परमें सन्धिवलसे दृढ़बद्ध हो उन्होंने शत्रु और शत्रु सेनाकी मार भगानेका सङ्कल्प कर लिया। किन्तु कार्यतः इससे कोई अच्छा फल न निकला।

राजा पृथ्वीनारायणने पूर्वोक्त राजाओंकी एकत्र देख उनके विरुद्ध युद्ध न किया। वे अपने बलकी वृद्धि करनेके लिए पार्वतीय सरदारोंकी हलबलसे खदलमें लानेकी चेष्टा करने लगे। पहले वे भातगाँवके पूर्ववर्ती धूलखेल और चौकोटवासियोंके साथ प्रायः छः बार युद्ध करके उन्हें अपने वशमें लाए। पोछे चौकोटमें एक गढ़ बना कर अपनी सेनासंख्या बढ़ाने लगे। इस समय महेन्द्रसिंहराय नामक किसी राजपुरुषने गुर्खाओंके साथ १५ दिन तक अनवरत युद्ध किया। उस युद्धमें पहले तो गुर्खा लोग हार कर भाग गए, किन्तु परवर्ती युद्धमें महेन्द्रसिंहरायके भूमिशाही होने पर चौकोटियागण रणक्षेत्रका परिव्याग कर नींदे ग्यारह हो गये। दृष्टरे दिन सवेरे जब पृथ्वीनारायण रक्तभूमि देखनेके लिए आए, तब महेन्द्रसिंहकी वरदा-विद्व मृतदेह देख कर उनके वीरत्वकी भूरि प्रशंसा की और उनके परिवार-वर्गकी कुछ दिन राजप्रासादमें रख कर आदरपूर्वक भोजन कराया। अन्तमें भरणपोषणके लिये वे उन्हें पनावतो, वनेपा, नाला, खदपू, सङ्गा आदि पाँच ग्राम दान कर अपने पूर्व अधिपत नवकोट राज्यको लौट गए।

कोसिपुरका प्रथमयुद्ध १७६५ ई०में समाप्त हुआ। इसके कुछ समय बाद राजा पृथ्वीनारायणने पुनः दो बार इस नगर पर आक्रमण किया था। तृतीय बारके आक्रमण और जयके बाद जो भीषण अत्याचार हुआ था, वह फादर गैस्पी द्वारा प्रकाशित नेपाल-मिसनकी तालिका पढ़नेसे विशेषरूपसे जाना जा सकता है।

शीर्षपुरमें यह पामबिक धर्याचार दिखा कर
 पुम्नोनारायण पाटन जोतेनेको पमिकावापि पयसर रूप ।
 पाटनराज तेजगरधिंके धामसमर्पक करनेके पक्षे
 पुम्नोनारायणकी सुता बि ब्रह्मान कौनसकक्षे पवीन पक्ष
 ऐजीवेना नेपाल तराईके दक्षिण मालमें पहुँच गई है ।
 तब ने लखी घमब हूसरी राह जो कर लखी गय पौर
 पाटनराज तेजगरधिं ह माय एक वर्ष तक निश्चिन्त
 रही ।

शीर्षपुरकी यह धर्याचार कहानी नेभारराजने
 कहरेकीको सुनाई । १०५० ई०के प्रारम्भमें कौनसक
 राजब नेपाल पर्वतके सातदेगमें जा बसके । उस समय
 नर्वाका समय था, कहरेकीके सैन्य बलवास्तुनिबन्धन पौर
 आपहृषके धमावने दीड़ित हो बहुत कह मोमने
 लगे । पता ने हरिदुर्गके सामनेके छोट बानिकी बाग
 हुए । कौनसकके कछेय छोटने पर मो प्राब म्बक बने
 तब हुर्बा कौम नेपालमें प्रवेश कर न सके । पुन १०५८
 ई०के इन्द्रयात्रा-कालके समय पुम्नोनारायणके काठ
 मन्डू पर बाधा भोत दिवा । काठमन्डू राज पौर राजा
 तेजगरधिं इने करे बार लखे रोका सेलिन कोई पक्ष
 न हुआ । धर्ममें जब लखेने देखा कि नेपालके उन्मान
 अर्द्धि पौर लखे धाम्कोवगधने पुम्नोनारायणका पक्ष
 बलसम्पन्न किया है, तब ने पौर कुछ कर न सके पौर
 भातर्पावमें जा कर पाक्षय लिवा ।

राजा रबजित्के एकमात्र पुत्र मोर-नरसि इको
 बलिन करनेके लिए लखेके प्लय खोबमंजात 'घात-
 बहाकिवा' (१११ पुत्र, प्यवने पदुयन्क रवा पौर हुर्बा
 पतिने केबलमात्र राजदेकर नामके धापधने सम्पत्ति
 पौर सि हावन नाँट सेनेका बन्दोबस्त किया । पोके
 लखेने पयना यह लखेय पौर प्रस्ताव राजा पुम्नो
 नारायणको प्राप्त किया । मदतसार हुर्बापति प्रथम
 बिलसे भातर्पावका मन्थियत् राजत्व प्राप्त करनेकी
 धाम्काधामे पयसर हुए ।

हुर्बाराजने लन लोकोके पुर्वीक पयसर्पातसार
 भातर्पाव पर-प्राप्तयक कर दिया । सातबहाकिवाधने
 कुछ बपने तब केबल दिखानेके लिए लको बन्दूकके
 हुय किया पौर धाय ही साब लखेने सुरा कर पयने

गोती पौर बाकदको यत्न पोके पास भेज दिया तथा ने
 पयने सुरचित पुर्वाचार यत्न पोको कोक कर पाप पचातुपद
 हो गय । हुर्बापिने नगरमें प्रवेश कर लखे पयने पक्षिका
 में कर लिया । हरवारके सामने एक बार भीषण युद्ध
 हुआ जिधमें राजा कयमकायके पैरमें मकत छोट लगे
 पौर ने कयमक हो कमीन पर मिर पड़े । १०५८ ई०के
 प्रारम्भमें ही यह युद्ध खिटा था । इसी युद्धके निगलके
 पूर्वतन राजन यथा पम्पतन हुआ पौर हुर्बाराज य
 नेपालके विहासन पर मन्थियत, राजदपमें प्रतिष्ठित
 हुए ।

राजा पुम्नोनारायणके रबजकी हो कर दरबारमें
 प्रवेश किया । उस समय नर्वा राजा कयप्रकाय रबजिद
 पौर तेजगरधिं ह यमो बंटे हुए थे । दोनमें बालवीत
 होते होई पापलमें पीति हो गई । पुम्नोनारायणने रब
 जित्मन्डको पयने मातर्पाव राज्यमें पूर बत, राजा कोने
 के लिए विधिय पतुनय विनय किया । चित्तु रबजितने
 रधमें पयने पन्थिच्छा प्रकट करते हुए कहा, "प्राचीन
 कालको विष्ठाधवातकताके में विधिय लुप्त है, सुतरां
 राज्यमार पक्ष नही करूँगा; धरं इस उपायजामें मरे
 रच्छा है कि बामो जा कर निखेकरको सेवामें कोबन
 प्यतीत करूँ ।" ऐसा पमिमात्र प्रकट खरने पर हुर्बा-
 पतिने लखेके लिए बंधा हो सुबन्दोबस्त कर दिया ।
 बामे समुद्र चन्द्रगिरिंके अणर लड़ा हो कर लखेने मात-
 बहाकिवाकी प्रथता पौर पुत्र वीर नरसि इको इत्या
 कहानी पुत्र कौनारायणको सुनाई । राजा प्रयवोना-
 यणमें विष्ठाधवातक-नामको धातबहाकिवाको अप र-
 बार हुक्या पौर हातपद पामेके लिखे लको नि पित्तके
 यत्नताचरक किया है, इन पयराधमें लखे भात हाग
 कटवा दिव, तथा लखेको ज्ञाकर पौर पक्षावरधभ्यति
 इच्छागत कर लो ।

राज्यप्रकायने प्रायं गा लो, 'कोलोके पावाने में
 सुसुर् हो गया है । धतएव तुम कोम सुम्ने पय्यति
 नाके प्रायं घाटमें ही चको । नर्वा मिरा मरीरायण
 रोमें पर पन्थेदिखिवा करना ।

सहितपुरराज तेजगरधिं इने जब देखा कि लखे
 प्राचीन रबजित्के ही यह धमावनीक विपद निपावके

अष्टममें पड़ी है, तब वे किसकां दीप दें। यह सोच कर उनके मनमें दारुण क्रोध हुआ और आत्महत्यानि उप-
नियत हुई। किं कर्त्तव्य भिमूद ही उन्होंने मौनावलम्बन
क्रिया और एक चित्तसे ईश्वराराधना करने लगे।
छोत इनो समय पृथ्वीनारायण उनका अभिप्राय जानने-
के लिए भयसर हुए। लेकिन जब उन्होंने देखा कि तेज-
नरसिंहने उन्हें एक बात भी न कही, तब वे बहुत
विगड़े और लक्ष्मपुरमें उन्हें कैद कर रखा। यहीं पर
नेपालके मन्त्रवर्गोय श्रेय राजा तेजनरसिंह वहादुरने
अवशिष्ट जीवन व्यतीत किया था।

नेपाल-सिंहासन पर अघिष्ठित हो राजा पृथ्वी-
नारायणने किरात और लिम्बुजातिको वासभूमि अपने
अधिकारमें कर लो। क्रमशः एक एक करके नेपालको
वर्त्तमान सीमाके अन्तर्भूक्त प्रायः सभी प्रदेश उनके हाथ
लग गए थे। उत्तरमें किराण्य और कूटो, पूर्वमें विजय-
पुर और सिक्किम सीमान्तवर्त्ती मीचीनदी, दक्षिणमें मक-
वानपुर (माखनपुर) और तखली (तराई) तथा पश्चिममें
सप्तगण्डकी, इस सीमाके मध्यस्थित विन्धीण भूभाग
राजा पृथ्वीनारायणके शासनाधीन हुआ। भातगावसे
कान्तिपुरमें आ कर उन्होंने वसन्तपुर नामक एक बृहत्
धर्मशाला बनवाई। इन्होंने ही सबसे पहिले निरुद्ध
('पुतवर' जातिको राजाके समीप लानेकी प्रयत्नमति दी
थी *)। प्रायः ७ वर्ष राजत्वके बाद गण्डकीतोरण
सोहनतीर्थमें ८८५ नेपालवर्षत्की उनका शरीराव-
सान हुआ।

* जब प्रथम कीर्तिपुरके युद्धमें राजा पृथ्वीनारायण राजा
जयप्रकाशमल्लसे पराजित हो एक डोली पर चढे भागे जा रहे
थे उस समय एक सिपाहीने उनके प्राण लेनेके लिये उथो ही रुक
लगाया, रों ही उसके एक दूसरे साथीने उसका हाथ पकड़
कर कहा, 'ये राजा हैं, अतः हमें इन्हें मारनेका अधिकार
नहीं।' पीछे एक दुआम और एक कसाईने उन्हें दस्ये पर
बद्ध कर रात भरमें नक्कोट पहुँचा दिया। रजिने दुआनकी
अधेतरतरासे प्रथम हो 'शाबाश पुश' ऐसा कहा था। इसी
दिने दुआनकी जाति 'पुतवर' कहलाने लगी। ये लोग राजाके
गणदि भी स्वर्ण कर सकते हैं।

पृथ्वीनारायणके दो पुत्र थे। बड़ सिंहप्रताप-शा
पिताके मरने पर सिंहासन पर बैठे और छोटे भा बहा-
दुर बेतियाराव्यमें निर्वासित हुए। पाचार्थीके कुवन्त-
में पड़ कर १८८८ नेपालवर्षमें उन्होंने नखर मानवदेवका
त्याग किया। उनकी मृत्युके पश्चात् उनके पुत्र रण-
बहादुरने राजामन ग्रहण किया। पाचार्थीके चरित पर
इन्हें सन्देह हुआ, इस कारण उन्हें मरवा ठाना। पोछे
अन्य किसी कारणसे विरक्त हो उन्होंने मन्त्रि-नायक
बंगराज पांडेका गिरफ्तार किया था। इस समय
इनके चाचा सा बहादुर नेपालमें आ कर रणबहादुरके
प्रतिनिधि हुए। किन्तु राजमाता राजेन्द्रनम्बोके साथ
उनका विवाह होनेके कारण वे पुनः राज्यसे निकलवा
दिए गए। अब राजमाता अपने हाथमें शासनभार ले
कर राजकार्य चलाने लगीं। राजमाता अत्यन्त बुद्धिमति
और कार्यक्षमा थीं। उन्हींके यत्न और उद्योगसे गुर्खाके
पश्चिमस्य पन्था और कश्चिके मध्यवर्त्ती समुदय भूभाग
नेपाल राज्यान्तर्गत हुआ था। उनकी मृत्युके बाद सा
बहादुर नेपाल छोड़ कर पुनः राज्यको परिपालना करने
लगे। उनके उत्साहसे चौबोसो और बाइसी सामन्त-
राज्य, लमलुङ्ग और टनहो तथा पश्चिममें गद्दानदोत-
वर्त्ती स्यान, योनगर और कञ्चि तकके भूभाग तथा
पूर्वमें किरातराज्य और शुभेश्वर तकके स्यानने नेपाल
सीमाके कलेवरकी दृष्टि की थी।

१७८१ ई०में गुर्खालोगोंने नेपाल, तिब्बत और मंग-
रेजाधिकृत भारतवर्षमें वाणिज्य सम्बन्धरक्षाके लिये
सन्धिके प्रस्ताव किया। इस समय चीनराजके साथ
गुर्खापतिका, चीनराजगुरुके अधिकृत दिग्गारवा नामक
स्यानका आक्रमण ले कर घोर युद्ध छिड़ा। चीनसन्धी
धुसयाम और काजी धरिनडे अधीन चीन-सैन्यने आ
कर खत्रिया, रसोआ और गोसाईंथान पर्वतके मन्त्र-
द्वयमें दौराली नामक स्यान पर नेपालियोंकी अच्छी
तरह पराजित किया। नेपालीगण पराजित हो कर पहाले
धुनचू और पोछे खजोरा भाग गए। इस युद्धमें मन्त्रि-
नायक दामोदर पांडेने खूब वीरता दिखलाई थी।

१७८२ ई०में चीन-सैन्यसे इस प्रकार पराजित हो
कर नेपालियोंने सितम्बरमासमें लाङ्कानवाक्सिसे

सहायता मांगी। कामं बलिदाने पक्षी तो चीनके विषय
 पक्ष भारत करनेके पक्षीकार किया, पर पीछे बहुत
 लड़ावोइके बाद १०२१ ई०के मार्च मासमें मेजर
 कार्बेरेटिको कामपण्डू मंत्र दिया। किन्तु प ग-
 र्जो को सहायता पहुँचनेके पक्षी ही निपातारा चीन-
 ब्रह्मादेके सम्बन्ध कर चुके थे।

१०२१ ई०में रचवहादुर एक शोध करके हुए, तब
 उन्होंने पित्रागत्य प्राप्त किया। इस समय किमो कारण
 क्या थाकिसे साय उनका विवाद पहाड़ा हुआ जिसका
 फल यह हुआ कि सा बहादुरको यावज्जीवन कैदमें
 रखा गया।

रचवहादुरमें १८०० ई० तक बहुत सत्कार और
 कमीरताके साथ राज्यपालन किया। इनके व्यवहार पर सबके
 सब बानो हो गए और उन्होंने मन्दिनायक दामोदरपांडे
 को सहायताके लिये शक्यतुत कर वापसहीबाममें भेज
 दिया। उनकी प्रथमापत्नी गुजरी राजबन्ध्याके कोई
 प्रमाण न रहनेके कारण राजारचवहादुरमें एक विधवा
 मित्र रमबीका पालनशुभ किया। इसके गर्भमें ही मीर्जाबखो
 विक्रम सा नामक एक पुत्रने जन्म लिया। शक्यतुत
 राजकी शासनकी कर्त्वा प्रवृत्त करना पसंद है। यह
 देख कर सब किसीने उन्हें राज्यके निश्चाल मगाथा।

१८०१ ई०में निपात और प गैरजेके साथ एक
 सम्बन्ध हुआ। उस सम्बन्ध यतके अनुसार निपातके राज-
 कायके प्रति इच्छित करनेके लिये अज्ञान उदरकू कि नकल
 नामक एक प गैरजेके सिद्धिपत्र हो कर निपातमें रहने
 लगे। पक्षी तो निपातियोंमें इस प गैरज शक्यतुतको
 मरनेमें प्रवेश करने न दिया था, पर १८०२ ई०के अगस्त
 मासके ही निपाताराज्यामें रहने लगे थे। यहां एक गण
 रह कर वे १८०१ ई०में अद्वैतको लौट गए। १८०३
 ई०में काठं बंधेको निपातके नाम पक्षीको जितने
 शक्ति थी, तोड़ ही और १८१० ई०के मई मासमें एक नई
 शक्तिका प्रकाश प्रिय किया।

राजा रचवहादुर चार वर्ष तक अत्यासी बेगम
 कामीबाममें रह कर पुत्र, निपात लौटे। यहां पहुँचने को
 उन्होंने मन्त्रुधर्म और दामोदर मन्त्रीको समपुर मंत्र
 दिया तथा राजा भरमें लूतन काईनका प्रचार कर धार

बागराकी और पयसर हुए। दुर्भेने उन्होंने कायराधि
 पति स सारवादिको पारदा कर बनका राजा निपातके
 सीमाकार्यत कर लिया।

राजा रचवहादुरकी मृत्युके बाद उनके पुत्र मोर्बा
 योव विक्रम सा राजगद्दी पर बैठे। उन्होंने राजारचा
 के लिये मीमबेन डायाको अपना प्रधानमन्त्री बनाया।
 १८०८ ई०में यहाँ मयाजक मूमिकण्डू हुआ जिसके फलमें
 मनुष्योंकी जान मरे और इबारों मन्दिर धरबाद हुए।

इनके पिता रचवहादुरमें सबसे पक्षी निपातमें
 पक्ष सुद्राका प्रचार किया था। उन्होंने ही पित्रमौरक
 परंपरेके लिये ठाल (इबल पेरा) नामक तथिका विद्या
 अपने नाम पर सलाया और बमबहिन खेक नामक स्थानमें
 गोसो और बाण्डका कारखाना खोला। १८१० ई०में प ग
 र्जाराजके अन्तिमप्राय करनी पर भी निपातके साथ प ग
 र्ज बलिबोके बाबिन्द्यात्मकधायमें दिनोंदिन पक्षनति
 दिखी गई। १८०० ई०के १८१३ ई० तक निपातियोंने
 प गैरजे सीमातमें पा कर खूब उपद्रव मचाया, अन्ततः
 जमी बानके नरभर मासमें प गैरजेने निपातके विरुद्ध
 युद्धोपयत्न कर टी। इस युद्धमें जनरल मारको और
 लड बिसिपदपवे पाहत हुए और जनरल जित्थी मारे
 गए। किन्तु जनरल पाण्डुरकोनो इच्छित-मीरबको रक्षा
 करनेमें समर्थ हुए थे। प गैरजेने जब मन्त्रुधर्मपुर नगर)
 और दुर्म पर बलिबार किया, तब गुर्धाराकने १८११ ई०में
 बसिन्दुरके प गैरजेके नवाबिज्जत दिम खोड़ दिए और
 इससे कुछ दिन बाद प गैरजे ने निपाताराजकी इससे
 बरक्षीमें तराईमदिय पर्यंत किया।

१८११ ई०की सन्धिपत्रको बावम रचनेके लिये
 मि० गाडिंजर नामक कोई प गैरजके सिद्धिपत्रके फलमें
 निर्धारित हो काठमण्डू पक्षी। इस समय राजा
 नाबानिग थे, यथा सरदार मीमबेन डायाके कार्यमें ही
 मासतका कुछ भार था। प गैरजे युद्धविपक्षके बाद
 ही निपातमें मयाजक बसला देखा गया। इस महामारो-
 के मयके निपातवासी बहुत कर गए। दिनके समय
 प्रकाश राज्य ही कर नरमान सुषम लिये पक्षिने
 और हस्त इधर उधर भूमने फिरने लगे। निपातका यह
 बीमलकण्डू दिव्य कर पक्षी तब न हतित हो पड़े।

राजा दरवारसे बाहर नहीं निकलते थे। शीतला देवी-की कृपासे उनका सारा शरीर गोटीसे घाच्छादित था और अन्तमें इसीसे उनकी मृत्यु भी हुई।

इनकी मृत्युके बाद उनके तीन वर्षके लड़के राजेन्द्र विक्रमशाह वहादुर समग्र जङ्ग नेपालके सिंहासन पर अधिष्ठित हुए। रण वहादुरकी विधवा पत्नी ललित-त्रिपुरासुन्दरादेवी राजकर्त्री और सरदार भीमसेन ठापा उनके आदेशानुसार बालकराजका राज्यशासन करने लगे। १८१७ ई०में ७० वान्निचु चन्द्रिका विषय जाननेके लिये नेपाल आए। १८२८ ई०में राजाके एक पुत्र उत्पन्न हुआ।

भीमसेनके इस प्रकार एकाधिपत्यसे सब कोई विस्मित और स्तम्भित हो गए। पशुपतिनाथके मन्दिरमें उन्होंने जो सोने और चाँदीका किवाड़ दान किया तथा उनकी कृत धारा और धर्मशाला आदि देख कर धीरे धीरे राजाके मनमें विकार उपस्थित हुआ। १८३३ ई०में उन्होंने रानीके कहरनेसे उन्हें कैद करनेकी उताहूँ हुए।

१८३४ ई०के भौषण तूफानसे नेपालके वारुदखानेमें प्रायः जग गई जिससे रेसिडेन्सी टूट फूट गई और बहुत से लोग मरे।

१८३५ ई०में राजाने सेनापति मतवरसिंहको कलकत्ते भेज दिया।

१८३८ ई०में रणजङ्गपांडे जब महारानीसे नेपालके सेनापतिपद पर नियुक्त हुए, तब भीमसेन और मतवर-हताय हो पड़े। इस समय किसी तरह मतवर पञ्चाय-केशरी रणजित्सिंहके निकट किसी विशेष परामर्शके लिये भेज दिए गए। कई वर्ष तक चेटा करके अन्तमें १८३८ ई०की राजाने भीमसेनको कैद कर लिया। कारागारमें ही भीमसेनने आत्महत्या करके अपने हृदयका भार लाघव किया था। नेपालको जिस वीरसेता से निक-ने प्रायः २५ वर्ष तक राज्य किया था, आज उसके मरने पर उसकी लाश अत्यन्त जघन्यभावसे काठमाण्डू-के रास्ते ही कर विष्णुमतोके किनारे लाई गई थी।

भीमसेनको मृत्युके बाद १८४३ ई० तक नेपालके शासन-विभागमें विशेष गड़बड़ी होती रही और इसी सूत्रसे अंग्रेजोंके साथ युद्धकी सूचना हुई। महाभारत

हजसन साहबकी मृत्युश्लामे विपदका सभा आग्राहार् निर्वाचित हो गईं। उसी वर्ष बड़ी रानीने रणजङ्गपांडे-का पक्ष ले कर अर्द्धीको राज्यका प्रधान मन्त्री बनाया। उधर छोटी रानीने भीमसेनके आक्षेप-मतवर-सिंहके पञ्चायसे लौटने पर अर्द्धीको मन्त्रिपद पर वरण किया। राजपुरुष और मन्त्रदलने भी मतवरका पक्ष प्रबलस्वन किया जिससे अर्द्धीने निज विक्रम द्वारा गीत्र ही उस पांडित्यको उन्मादित कर दिया।

इस समय नेपालके एकमात्र गोरवखल, भद्रनवल, बुद्धि और वीर्यशाली जङ्गवहादुर सामान्य सैनिकरूपमें अपनी भविष्यत् उत्थतिका आभास दे रहे थे। ये बाल-नरसिंह नामक नेपाली काजीके पुत्र और राजमन्त्री मतवरके निकट आक्षेप थे। मतवर इस बालककी भावी क्षमताके विषय पर-विचार कर बहुत डर गए थे अंग्रेज रेसिडेण्ट हेनरी लारेन्स इस बालकको बुद्धिमत्ता-को विशेष प्रशंसा करते थे।

जङ्गवहादुरने प्रासादप्रधान राजमहिषियोंके साथ पट्टयन्त्र करके १८४५ ई०के मई मासमें मतवरकी मार डाला और आप राज्यके एकमात्र हर्षाकर्ता हुए। किन्तु गगनसिंह प्रधान मन्त्रीके पद पर नियुक्त रहे। १८४६ ई०में जब सर हेनरी लारेन्सने नेपालका परित्याग किया, तब मि० कलभिन नेपालके रेसिडेण्ट हो कर आए।

मतवरकी मृत्युके बाद राजा और रानी दोनों जङ्गवहादुरके हाथमें कठपुतली-से रहने लगे। इस समय राजमन्त्री गगनसिंह और फाजङ्ग प्रभृति राजकीय दलके साथ रानी और जङ्गवहादुरका मत-वैयम्य उपस्थित हुआ। इस विवादसूत्रसे १८४६ ई०की १४वीं और १५वीं सितम्बरको नेपाल-राजधानीमें भौषण इत्या-काण्ड किया गया। राजा गहरौ रातमें भाग कर कल-भिन साहबकी शरणमें पहुँचे। उधर नेपालके अधि-कांश सम्भ्रान्त व्यक्ति जङ्गवहादुर और उनके सैन्यदलसे यमपुर भेज दिये गए। राजाने रेसिडेन्सीसे लौट कर देखा कि कोटप्रासादके चारों ओर नालेमें रक्त स्रोत बह रहा है।

जङ्गवहादुर भ्रातृदलसे पुष्ट हो कर नेपालके सर्व-एक विशेष क्षमतापन्न व्यक्ति समझे जाने लगे। जिन सब

पूर्वमेव विद्वानि एतन्ने विद्वत् विर उद्योगा वा, न युवके
 सर्वे अङ्गवहादुरादी तत्रवार्षे धामातमे यमपुर विचारि ।
 राजा सो चपनेको धारिं चोरके विपदके चिरा देख नारा-
 यकोको मय गए । विष चपनेने चपने पुत्रको सि हा
 वर्तन-प्रतिवे सिवे अङ्गवहादुरको सहायता की थी, ने
 भी प्रवर्तित हो कर काशीधाम गिरी गई । १८३० ई० में
 राजानि निपासराज्यकामकी पायाये दो बार निपास
 पर शासनक किया, किन्तु वे पञ्चतवार्य हुए और
 चलाये तैराई-कुदरने खैर कर' सिधे गए । इस प्रकार
 राजाके राज्यभूत होने पर तन्ने व मरनेके बाद सि हा
 मय चरित हुआ ।

राजा राजेन्द्र विक्रमके निपासके बाहर जानि तथा
 चलाका मुष्टिगत चारन हो जानिबे अनताके आग्रह और
 सहायताके निपासके राज्यक मन्दायाच सुरेन्द्रविक्रम
 मोह समसेरजङ्ग निपासके विहावन पर बैठे । राजा सुरेन्द्र-
 विक्रमकी शम्भुके बाद तन्ने कङ्कने नौ सोलहवीर विक्रम
 मोह वहादुर समसेरजङ्ग ने गवने राधा हुए । १८००
 ई० की १०वी दिवसके रथीने अन्वयवच विक्रम वा ।

राजा मौरविक्रमने अङ्गवहादुरको कन्याके विवाह
 किया । लक्ष्मीके गर्भ और राजाके चोरसके १८०१ ई०
 को ८वीं चमराको अङ्गवहादुरके दोदित निपासके च-
 चनके मायी उत्तराधिकारीका जन्म हुआ ।

मैगलका चतुर्मासतन इतिहास और राज्यकी एकेकर
 समता मन्त्रियोंके शाय अन्वय रथनेके चारच निपासका
 इतिहास लक्ष्मीके मन्त्रियोंको कार्यकारिताके उपर विर
 कुच विमर है । एषमास प्रचान मन्त्री की निपासके
 चर्चाकर्ता और मित्रता हैं, राजा इनके शायके खिलीने
 हैं । राज्यके किंसे विषय वा कार्यमें लक्ष्मीके चक्षुष्य
 करनेका कोई अधिकार नहीं है । राजा अङ्गवहादुरके
 समसके भी मन्त्रियोंके रथ मरहादा और समताकी हवि
 हुई है तथा लक्ष्मीके समसके निपासका इतिहास तन्को
 मय-पायाके मन्त्र गिना जाता है । निपासके पूर्व-
 राज्यक शासिका इतिहास मय करके चमी अङ्गवहादुर
 और तन्ने विद्वत् चतननेकीका लक्ष्मीके कर निपासका
 इतिहास मय किया जाता है ।

१८३६ ई० में दिवसके लक्ष्मीके माता चंदमारीने

लाहौरका परिग्राम कर निपासके चपना पायब पदच
 किया । अङ्गवहादुरने राज्यके समस्त सम्माना लक्ष्मी
 निव पुत्रकन्याका विवाह कर, विद्यालय ला कर, स्वदेश
 में लौट लूतन धारिणका प्रवर्तन कर, सामरिक
 विभागका संस्थापन तथा मन्त्रके शायके चपनी रथा कर
 बरवीर्य और एतन्नुविधा यथैव परिचय प्रदान
 किया है ।

१८२१ ई० में अङ्गवहादुरने चपने मायीको पत्नी और
 भूतनक पदेयका शासनकर्ता बनाया । १८२१ ई० में
 प्राविन्दु इन्ने ने प्राणिक तन्नेके चम्पेचके सिवे निपास
 जाने की अन्वयवहादुरके सहायता मायी, तन् अन्नेने
 विषय परलताके साथ चनकी प्राचन शम्भुकार थी ।

पूर्वकल्पिके ज्ञानानुसार निपासका प्रति पंच वर्षमें
 मन्त्राया और लक्ष्मीके अन्वय चम्पे इत्यादिके साथ एक
 भूत चोनमन्त्राके पास मन्त्रा करने थे । तन् भूतके
 कुंठारि से कर तिम्बन हो कर जाना पड़ता था । एक
 समय तिम्बनकारकेने चच राजभूतकी चयमानना को ।
 १९ पर १८१४ ई० में निपासका तन्ने ऐसे चपदु अन्व
 चार पर लक्ष्मीके चम्पे इन्नेके सिवे चमरत हुए ।
 १९ बुधव्यामें विषयके चन्त्रित होने पर मो पाय
 तीर्य एक हो कर जानिने निपासके शायके विषय अन्व
 उद्योग पड़ा था । रथी समय निपासके मन्त्र चमरी मो
 मन्त्र जानिनी मन्त्रा पायब हुई । समस्त मन्त्र पर तिम्ब-
 तोय और मोडिया लोमीके पराए चोने पर मी, निपाकी
 मय लक्ष्मीके लक्ष्मीके लक्ष्मीके मन्त्रा न सके ।
 १८११ ई० के मन्त्रा मासमें भोडियाने कुटी, शिरङ्ग और
 लुङ्गा इन्नेके किया । वीके लक्ष्मीके अन्व निपाकी
 शाय पाई, तन् लक्ष्मीने एक एक करके चय देय छोड़
 दिए । किन्तु तन्ने इन्नेके विद्वेषके चामका अन्वचना
 अन्व न हुआ । इस पर अङ्गवहादुरने भूतन सामरिक
 कर से कर लक्ष्मीके देना लक्ष्मी थी । १८१६ ई० में
 माच मासमें तिम्बनके साथ जो चम्पे हुई, तन्ने
 निपासकेने मो तिम्बनके चरित्तत प्रदेश छोड़ दिव और
 तिम्बनका चर्चाके १००००००० देने और लक्ष्मीके
 चर्चाके एक शायक चम्पेकारी रथनेको राजी हुए ।
 १८१६ ई० चमरा मासमें अङ्गवहादुरने निपासके

महामन्त्रीका पद अपने भाड़े वाम-बहादुरको दिया और प्राय महाराजकी उपाधि धारण कर कालि और लुमजङ्गका शासन करने चले गए। इस समय मि० ज्ञानिन्ट, इटने नेपाल जानिकी अनुमति प्राप्त की। १८५७ ई०में नेपाली सेनाके मध्य विद्रोहके लक्षण दिखाई दिए, किन्तु जङ्ग-बहादुरके यत्नसे तमाम गान्ति बनी रही। इसी सालके छून मासमें भारतका वीर सिपाहीविद्रोह शुरू हुआ। इस समय जङ्गबहादुरने १२००० पदातिक और ५०० गोलन्दाज भेज कर अंग्रेजोंकी सहायता की। जूनमासके शेषमें प्राय महामन्त्री और सेनाध्यक्षका पद ग्रहण कर स्वयं अंग्रेज-शत्रुदमनमें अग्रसर हुए। १८५८ ई०में विद्रोहियोंके मध्य लखनऊकी रानी और उनके पुत्र, वज्रिकाटि, नानासाहब, बालाराम, मामूसी, वंशीमाधव आदि प्रधान विद्रोही नेताओंने नेपाल आ कर आभारदा की। १८७५ ई० तक लखनऊकी वेगम यज्ञां घाण्टलीके निकट रही थीं।

सिपाहीयुद्धमें इस प्रकार सहायता पा कर अंगरेजराजने नेपालको तराईके कुछ अंश छोड़ दिए और सरदार जङ्गबहादुरको जो० सी० बो० की उपाधि प्रदान की। भारतके सिपाहीविद्रोहके बाद नेपाल-इतिहासमें कोई उल्लेखयोग्य घटना न हुई; केवलमात्र पूर्वकृत मन्त्रिके मध्य अंगरेजोराजमें पलातक कोई दोषी व्यक्ति यदि नेपाल जा कर छिप रहे, तो नेपालराज उसे प्रत्यर्पण करने और नेपालमें यदि कोई दोषी अंगरेज-अधिकारमें आश्रय ले, तो अङ्गरेजराज उसे लौटा देनेकी वाध्य हैं। इस प्रकारको एक शर्त लिखी गई।

१८७३-७४ ई०में तिब्बतके साथ पुनः विवाद छिड़ा, किन्तु यह शीघ्र ही रुक गया। इसी साल जङ्गबहादुरने अङ्गरेजोंसे सम्मानसूचक जी. सी. एस. आइ. की उपाधि पाई थी और चीनसम्बन्धने उन्हें थोड़ा-लिन-पिस, मा-जो-काङ्ग-वाङ्ग-म्यानकी उपाधिसे भूषित किया। १८७४ ई०में इङ्गलैण्डयात्राके लिये वे सपरिवार बम्बई गहर पहुँचे और वहाँ पीड़ित हो कर स्वदेश लौट आए। साठ वर्षकी अवस्थामें १८७७ ई०की जङ्गबहादुरकी मृत्यु हुई। इन्होंने १८ तापोंकी सलासी मिल्तो थी। वे अपने जीते-जो मन्त्रिपद अपने भाई-रजुदीप

मिंङ्के हाथ छोड़ गए थे, क्योंकि उनके बड़े लड़के जगत्-जड उस समय बहुत बच्चे थे। उन्होंने यह भी कह दिया था कि वान्तिग होने पर जगत् मन्त्रिपदके अधिकारी होंगे।

१८८१ ई०में नेपालके राजा महाराजाधिराज पृथ्वी वीर विक्रम शाह सुरेन्द्र विक्रमशाहके उत्तराधिकारी हुए। इस समय इनकी अवस्था केवल छः वर्षकी थी। १८८२ ई०में उसी साल मन्त्री रजुदीपसिंह और कप्तानने उनके भाई धीर शमशेरके विरुद्ध पड़यन्त्र किया। इस पड़यन्त्रके नेता जगत्जङ्ग ठहराये गए और वे कुछ कालके लिये देशसे निकलवा दिए गए। पीछे १८८५ ई०में स्वदेश लौटनेका उन्हें आदेश मिला। उसी साल धीर-शमशेरके लड़कोंने जगत् जङ्गका साथ दे कर मन्त्रिपद पानेके लिये रजुदीपसिंहके विरुद्ध अस्त्रधारण किया और उन्हें मार कर राजाका कुल कामकाज अपने हाथमें ले लिया। जगत्सिंह मार डाले गये और धीर शमशेरके बड़े लड़के वीर शमशेर प्रधान मन्त्रिपद पर प्रतिष्ठित हुए। इनके समयमें नेगल भरमें शान्ति विराजती थी। देश उन्नत दशामें था। इन्होंने स्कूल और अस्पताल बनवाए। वे १८८८ ई०में लार्ड कुजनसे मेंट कर्नलके लिये फलकत्ते पधारे थे। १८९१ ई०में उनका गरीरावसान हुआ।

वीर शमशेरकी मृत्युके बाद उनके भाई देव शमशेर उनके उत्तराधिकारी हुए। लेकिन ३ मासके बाद वे अपने भाई चन्द्रशमशेरसे पदच्युत किये गए। फिलहाल वे ही यहाँके प्रधान मन्त्री हैं। नेगलके वर्त्तमान शासन-कर्त्ताका पूरा नाम यह है,—His Majesty Sri Giriraja Chakra Crunamany Nar-Narayanetydi Bibidhabirudabali Birajaman Manonnat Sri Man Maharajadhiraj Sri Sri Sri Sri Sri Maharjaa Tribhuban Bir Bikram Jung Bahadur, Shah Bahadur, Shum Shere Jung Deva.

नेपालका प्रकृत इतिहास क्या है वह आज भी किसीको मालूम नहीं। कारण नेपालीगण अङ्गरेज वा अन्य किसी भिन्न देशीय व्यक्तिको काठमाण्डू राजधानीके चारों

घोर १६ मीनके पहातमें घामे नहीं देती। हिन्दू हठिया-परकारकी विगोबधेहायि उसका कुछ पय बहार भी कामसे इतिहासतत्त्वका बहुत कुछ धामान माहूम पड़ने लगा है। निपासोगब प्रायः चान्द्रमासमें वर्षको पचना करते हैं। इससे पन्नावा निमित्तनक्षत्र मिश्रानेके सिद्धे कामो कामो मास घोर दिनको घटा देते हैं। इसी सब कारणसे वर्तमान वर्षनक्षत्राणि साब पूर्ववर्ती निपासिमीका विरोध करनेका शक्ति होता है।

देवाह्वय वर्म

मेघान उपलब्धामें हिन्दू घोर बोधवर्मका प्रायः वर्मान प्रमाव देखा जाता है। हिन्दूयच गिबमार्मी घोर बोधवच सुहमार्गी नामसे प्रसिद्ध हैं। कासप्रमावसे उभय वर्मका ऐसा पविच्छेद्य स मियय हो गया है, कि पसो पनेक जगह पनेक वर्महात्व सुहमार्गी पनेक पाचार व्यवहार बोधवर्मभूतक है वा बोधवर्मभूतक पद वर्मवर्ममें नहीं आता।

वर्तमान सुहमार्गी वीरहात्म्य वर्तमान रीति नीति यात्रको का विगोपाचिहार, निन्दयेकोको सामाजिक व्यवस्था समो जातिमें दको विविधे नियमसे निमित्तियन है। नेवारियेमें प्रायः पनेक हिन्दू वा गिबमार्मी घोर पनेक बोध वा सुहमार्मी हैं। नेवारि हिन्दूक वप में पड़ कर तीन खेचिमीमें निमज हो गये हैं। हिन्दू चातुर्वर्ण्य ब्राह्मण चण्डिव, बौद्ध घोर गुरुको तरह उनकोमो क मध्य ब्रह्मा, उदास घोर ज्ञानुहन तीन खेचियोकी उत्पत्ति हुई है। हिन्दूके चण्डिव वर्मके कंधा वधा बोधी में बुधव्यवसायी कोई खेचो नहो है। हिन्दू चातुर्वर्ण्यके मध्य वर्मगत पाब करपाको खेचो विवि व्यवस्था है, पसो नेवारोको उच्च तीन खेचियोमें डीक बँकी हो है। हिन्दू जिस तरह वर्मगत गिबमार्दिक्क बह्वहन करनेसे जातिभूत होती है, नेपाको बोधवच मो डीक लमी तरह वर्मगत गिबमार्दिक्क पचव्यवहार करती है पतित होती हैं। पाठ प्रकारसे व्यवसायकी ये खोम बहुत छुपा करते हैं। इन पाठ व्यवसायो मेंसे यदि कोई किसीका व्यवसाय पचकम्पन कर लेतो वह जातिभूत होता है। कसई वा पदमार्गव्यवसायो, एक खेचोका बोधवापसिमी, कसके बोधरीका व्यवसायो, वर्मव्यव

सायो, मरजजीवी नवरका अन्धान पचव्यवहार (बामक) तथा रजज वे सब जिस तरह हिन्दूम नोच समझि जाते हैं उसी तरह बोधोमें हो। उच्च व्यवसायोका पच कम्पन करनेसे बोधोको मी जातिभूति होती है।

बोधोके विषय मध्य वर्गका नामक यामव्यवयो हिन्दू ब्राह्मणको मँषो समर्थोच है। उदासवयो पञ्च जोती हैं। हिन्दू बौद्धाके साब उनका माह्वय है। उच्च होने खेचोके विना घोर पसी खोग जापु मह-सायि है। हिन्दू गुरुके साथ इनका सम्पूर्ण साह्वय है। जापुपोमें पधिकांग हठियाकी है। इसी खेचोसे निगयो दानदाशो पारि जातो है। ये खोग निखखेचोके काम जात्र मी करते हैं।

बौद्धा घोर उदासवचयो की एक प्रकारके प्रहल बोधानारी कइ सकसि हैं। जापुसोग गैब पार बोधके पाचारको पविमित्तमार्गसे पासत करते हैं। पनेक जगह के मीय मँष देवताको गिब मान कर मो उनको पूजा करते हैं।

हिन्दूके चारो खेचोमें भी जिस तरह फिर भोटे भोटे विभाग हैं, बोधव्यवर्ममें मो बहुत कुछ उसी तरह है। हिन्दु पोमें जाति भेदको पसुसार जिस तरह कौबिक्कानके खिमे न गगत व्यवसाय है बोधोमें डीक समो तरह है। इन पच व गगत व्यवसायो मेंसे पनेक व्यवसाय दिखे हैं जिनसे पसो पच्छी तरह कौबिक्कानिर्वाह नहीं हो सकतो। ऐको जासतमें उच व्यवसायके खोग एक प्रकारके साधारण व्यवसाय (अथि ह्ययि) का पचकम्पन करते हैं। ईकिंग वे किमो व गगत व्यवसायका पचकम्पन नहीं करते पघात्तु बङ्कुर यदि पयने व्यवसायसे गुत्राण कर न सके तो वइ सिद्धि शिलो करेना कोहार वा सोनारका व्यवसाय नहीं करेया। प्रत्येक निगरीके (का हिन्दू वधा बौद्ध) एक न एक व गगत व्यवसाय पचम्क है। काबिक्कान सिद्ध नइ केसा हो को न कुछ करे, उसे लामो न कर्मो न गगत व्यवसाय करना हो होया।

बोधीमें बौद्धाकेको की सर्वथेच घोर माय है। पूव समयमें जो वैशान्वायमका पचकम्पन करते थे निवारो खोद लईको बापुका वा बांड। (स कान पच्छित)

कहते थे। हिन्दुस्तानके बौद्ध संन्यासीकी जिस सरह
अम्ण कहते थे, यहाँ भी उसी तरह उनका "वाँडा"
नाम था। पूर्व समयमें यह अँगो अर्हत, भिक्षु और
आवक इत्यादिमें विभक्त थी।

पहले ये लोग संन्यासी थे, अभी इस प्रकारके विभाग-
का विच्छेदात्मक रङ्ग न गया है। जब बौद्धमतकी छान-
बीन कम गई, उस समय इनके संन्यासग्रहणको एकात्म-
त्वन्यता भी लुप्त हो गई। अर्हत, और आवक आज
भी देखे जाते हैं सही, लेकिन अभी वे किसी तरह
भिक्षुक नहीं हैं। वे ही लोग अभी छोने चाँदीका व्यव-
साय करते हैं। यहाँके वाँडाओंमें नौ अँगो हैं। प्रत्येक
अँगोका एक न एक वंशगत व्यवसाय अवश्य है। इन
नौ अँगियोंमें गुभाल वा गुभालु नामक अँगो ही प्रधान
है। 'गुरुभज' वा 'गुरुमाइव' शब्दसे इस नामको उत्पत्ति
पड़े है। याजकता हो इनका वंशगत कर्त्तव्य कार्य है,
किन्तु अभी वे केवल इन्ही व्यवसायका अवलम्बन किए
हुए नहीं हैं। इसमें कितने टारिद्रोहित हैं, कितने
खेती वारी, सूचीकार्य, अटालिकानिर्माण, मुद्रा प्रस्तुत
आदि कार्य करके जोविकानिर्वाह करते हैं और
कितने मराजनों भी करते हैं। इनमेंसे जो शिक्षित और
धर्मग्रन्थादि जानते हैं, वे ही पण्डित और पुरोहितका
काम करते हैं। गुभाजूके मध्य जो याजकता करते हैं,
वे वज्राचार्य कहलाते हैं। प्रत्येक गुभाजूको युवावस्थाके
पहले वज्राचार्यकी कर्त्तव्यशिक्षा देने पड़ती है।
वज्राचार्य छत और धान्यादि द्वारा अग्निमें होम करते हैं।
यह होमाग्नि और मन्दादि उन्हें वचपनमें ही सिखाने
पड़ते हैं। जब तक शिक्षा दी जाती है, तब तक
उन्हें भिक्षु कहते हैं। कोई भिक्षु अपने घरमें भी शिक्षा-
व्ययामें याजकता नहीं कर सकता। प्रत्येक शिक्षित
भिक्षुको मन्तान-जननके पहले वज्राचार्यपदमें दीक्षित
होना पड़ता है। टारिच्य, मूर्खता, पापाचार या अन्य
किसी कारणसे यदि कोई मन्तानजननके पहले वज्रा-
चार्य न हो सके, तो वह मनुष्य तथा उसके वंशधर
सदाके लिए वज्राचार्य होनेसे वञ्चित रहेंगे। वे वज्रा-
चार्य न कहला कर भिक्षु नामसे ही पुकारे जाते हैं।
गुभाजू अँगोके ज्ञानकी वज्राचार्य होनेका अधिकार

है। वज्राचार्योके याजकताकालमें शिक्षार्थी भिक्षुगण
उनकी सहायता करते हैं।

स्वर्ण-रौप्य व्यवसायी भिक्षु नामक अँगोके लोग
भी इस प्रकारकी सहकारिताके अनधिकारी नहीं हैं।
भिक्षु लोग देवताको स्नान कराते, वेगभूषण पहनाते,
उत्सवके समय वसन, देवधर्म्यतिकी रक्षा, उत्सवका
आयोजन तथा तत्त्वाविधान करते हैं। गुभाजूमन्तान
दीक्षाभ्रष्ट होने पर वज्राचार्य नहीं हो सकती हैं सही,
लेकिन सद्गजात ब्राह्मणमन्तान हिन्दू होने पर भी
यदि गुभाजूगणसे दत्तकरूपमें गृहीत ही, तो उन्हें
भलीभाँति शिक्षादानके बाद वज्राचार्य करना होता है।

गुभाजू और भिक्षुको छोड़ कर वाँडाओंमें ऐसी कोई
अँगो नहीं जो याजकता करके अपना गुजारा करती
हो। अन्य मात अँगोके वाँडाओंके मध्य कितने ऐसे हैं
जो वंशावृत्तमें स्वर्ण-रौप्यका अलङ्कार, लोहद्रव्य और
पित्तलादि पात्रनिर्माण, देवतागठन, कमानबन्दुकादि
निर्माण और काठ पर खोदाई करके अपने जीविका
निर्वाह करते हैं। इन नौ अँगियोंमें परस्पर आदान-
प्रदान और आहारादिको प्रथा प्रचलित है। वाँडा लोग
अपने नौ अँगियोंके बौद्ध छोड़ कर और दूसरे अँगोके
साथ खान पान नहीं करते। वे लोग यदि कारणवश
निम्नअँगोके बौद्धोंके साथ खान पान तथा आदानप्रदान
कर लें, तो उनकी जातिच्युति होती है और जिसके
संस्पर्शसे उनकी जाति नष्ट हुई है, वे उसी जातिके
हो जाते हैं। वे लोग अपना सारा मस्तक मुड़ाते हैं, किन्तु
अन्यान्य बौद्धगण रुचिके अनुसार केशसंस्कार करते हैं।
बहुत ऐसे हैं जो बाल बिलकुल नहीं कटाते और शिक्षा-
स्थान पर दीर्घवेणी बिलम्बित रखते हैं। किसीकी यश
वेणी कुण्डलीके आकारमें बँधी रहती है। वाँडा स्त्रियों
के केशसंस्कारकी विशेष पक्षपातिनी हैं। उनको पोशाकमें
कोई विशेषता देखनेमें नहीं आती। किसी उत्सवादिके
समय ये लोग प्राचीनकालके बौद्ध-मठवासियोंको तरह
पोशाक पहनते हैं। पूर्व समयमें नेवारियोंको एक साम्प्र-
दायिक परिच्छेद था, वही आज कल वाँडाओंका नित्य
पहनावा हो गया है। उत्सवके समय जब उन्हें देव-
मूर्त्ति ले कर कोई काय करना होता है, तब ये लोग

कौशल अपने हाथिने हाथको चरखेमें बाहर निकाल लेते हैं। दाहिने हाथ से साब साब पापाबच भी पनाहत हो जाता है। ये सब योगाचरकचर्य वा पबबचर्यकी होती हैं। बहुतने योगबचको योगाचर भी पबनते हैं बन्धाचार्य और निरुको भी योगाचरमें कोई प्रभेद नहीं है, केवल गिरीभूया विभिन्न है। बन्धाचार्यके मन्दाक पर तापबचका बाबबाबनिमित्त सुकुट, अट्टिबन्धति माकीय पन्ध, हाथमें बचदृष्ट्य और चप्य गलेमें १०० दागो की विचित्रबचकी रुद्रटिकमासा का वृषयो तरबकी मासा रहते हैं। मासाको एक कोरमें छोटा चप्य और दूसरी कोरमें छोटा बच कटका रहता है। निरुकोकी मन्दाक पर रश्चिबप्यका लक्ष्यो रहता है जिसे 'उद्दान टोयो' कहते हैं। इन टोयोके ऊपर एक पीतबका तुताम का बच रहता है और भासमें एक पीतकी पाकृति रहते हैं। सामान्य सामान्य लक्ष्यमें तथा बाङ्गायाममें बन्धाचार्य लोग भी लक्ष प्रकाशकी उद्दान टोयो पबनते हैं। निरुकोके गलेमें सामान्य मासा, दाहिने हाथमें 'बिचिन्धा' नामक दृष्ट्य और बाए हाथमें 'पिच्छपाय' नामक पीतबको टाकी रहते हैं। इसीमें योग निचादान करते हैं।

बाँदायोग कहाँ नगातार बाध करते पाए हैं वही बिहार वा मठ कहलाता है। ये सब बिहार वा मठादि प्रधान प्रधान बौद्ध मन्दिरोके निकट प्रवृत्त हैं। पति प्राचीनकालसे ये सब मठ जो बिहार वा मठमें बान करते पा रहे हैं, उनमें एक पेशी लगिहता हो गई है कि उनमें बहुतमार एक एक बिहार वा मठबानियोको एक एक सुद्रमन्दाय कहते हैं। इस प्रकार एक मन्ध दायके मन्ध जिनमें पाचार कबहार और रीतिनीति बहमूल हो गई है। उनमें कौन किस बिहार वा बिह मठके ध्यति है यह सबमें भाकूम हो जाता है। बाँदायोग शास्त्रमात्रके, परिचयी और सहाचारी होते हैं। बिन्दु इनमें पसी बौध धर्मके पन्थानी पबबा दृष्टीका पाचारव्यवहार पबिहत प्राचर्न प्रवृत्त मठों है। बौद्धधर्ममें कहीं पर भी मन्ध्यानाहार वा भादक व्यवहारका निवाम नहीं है तथा मन्धाचर्ये परही हो देनिह पाचार करमेवा बिधान है। बिन्दु बाँदा

योग लभ ममकवे बौध मन्थानोके ज्ञान पर पबिपिह हो कर इन सब सामान्य निवमीका सो प्रतिपालन नहीं करते। सुबिहा पा लेने पर हो ये लोग ज्ञान और महिन्मांस खाते हैं, अपने हाथके जामो को खाटते हैं, मराम खुब पीते हैं तथा दिनमें भर रच्छा होतो, तमी दो बार बार खा लेते हैं। मन्धपायो जामे परभी ये लोग मतबन्धे से नहीं समते। पन्थान्य बौद्धग्य बाँदापो की लोक ब्राह्मणोंकी तरह मानते हैं। बाँदापो को दान देना बिन्दुके लिये जेसा सुखाननक है बाँदापो को भी दान देना जेपाको खोम वंसा हो समझते हैं। बाँदा मो धर्म-द्वय वराकिसे इस प्रकारका दान लेनेमें हमिया तैयार रहते हैं।

उदासग्य बाबिन्धयव्यवसायी बिन्दुके बंध्यबचके जेके होते हैं। इन लोगोमें सात खेचिबां हैं। प्रथम खेचिबां नाम कदाप है। तिब्बन और चीनके मय जिनसे बरबसाय चलते हैं, सभी इसी उदासपयचोके हाथ हैं। इन सात खेचियोका एक एक वन्नगत बरब साय है। बिबिन ये लोग बाँदापो की तरह बरबसाय करनिमें कतने बाध नहीं हैं। ये लोग सभी मन्धाजलो करते हैं इसके पन्थाका निपन्थातुको दूबगादि और फाट निचित दूब्यादि प्रसुत, प्रखरकी पशाबिपादि और भाकुर काबं, देवनामुर्धिनिमांथ, गिखरनागायं तोक्यादि निर्मांथ, छोटा छोटा तर और दृष्ट्यादि निर्मांथ पादि काबं भी करते हैं। उदास लोग कहर बौध हैं। प्रकांथ रूपसे ये लोग बिन्दु देवदेवाको पूजा नहीं करते और न ब्राह्मण द्वारा पपना योरोहित्य हो करारते हैं। ये लोग धर्मधर्म में बन्धाचार्यका लपदेय पदक करते हैं। उदास लोग सभी बाँदा खेचोमें प्रवेय नहीं कर सकते, पर बाँदा इनके साथ पाहारबदवहार करके इनको इनमें मिल सकते हैं। ये अपने सात खेचियोमें एक साथ पाचार व्यवहार करते हैं पर जापुपो के भाध ज्ञान पान नहीं करते। बिची समय ये भीम बहुत धनी हो गए थे, बरबसायकी जीमताके इनको पबसा पात्र बन लतने पबको नहीं है। सभी बाँदा लोग ही वाबिन्ध बरबनाथमें बर्षे चढ़े हैं। पन्थान्य सभी बौध जापुखेचोमें गिने जाते हैं। इनको

रोतिनोति तथा आचार व्यवहार और भी विस्तृत है। वीणाचारके साथ इन्हीं हिन्दूके आचार प्रविच्छेद्य-रूपसे मिला लिया है। हिन्दूके मन्दिरादिमें जा कर रखवके समय ये लोग पूजा करते हैं। विवाह और अन्वेषिक्रिया हिन्दूको तरह की जाती है। इनके सामाजिक कार्यके समय वज्राचार्यके साथ साथ एक ब्राह्मण पुरोहित रहते हैं। इनमें आठ श्रेणियाँ हैं। सभी श्रेणियों का संगत व्यवसाय है जिनमेंसे छः श्रेणियों का धार्मिक काम, एकका जमीनका परिमाणदि और शेष एक श्रेणियोंका कर्म कुम्भकारवृत्ति है। क्षत्रियश्रेणी छः श्रेणियों का नाम ही जापू है। इनका स्थान उदास-के बाद ही आया है। तोस प्रकारके जापुओंमें उक्त प्रकृत जापूगण सामाजिक विधानमें अन्त्यान्व श्रेणियोंको श्रेष्ठता मन्माना है। प्रकृत जापू श्रेणी छः श्रेणियोंके अनिर्दिष्ट दूसरे श्रेणियोंके साथ खान-पान तथा अटान प्रदान नहीं करते। अन्त्यान्व २४ श्रेणियोंमें पट्टा, वण रञ्जककारो, बट्टे, मालो, टीकादार, अन्वचिक्रिक, कक, नापित, निम्नश्रेणियोंका डोम, दुमाध, ग्वाला, काठ, रिया, हारपाल आदि प्रधान है। इनमेंसे एक श्रेणियोंका नाम है "सर्म्भे"—जिसका जातीय व्यवसाय तेल प्रसृत करना है। नेवारियोंमें अभी अभी सर्म्भेके लोग धनी हैं। अभी इन्हीं उदासोंकी तरह महाजनी और वार्णिक्य व्यवसायका आरम्भ कर दिया है। श्रेणिक विमत्य बाह्यके हाथका हिन्दू लोग पानी नहीं पीते। नेकिन सर्म्भे आदि कई एक श्रेणियोंके लोग अभी नेपाल-राजसकारके अनुग्रहसे जलाशयणीय हो गए हैं।

आज कल बीहोमें ये सब जातिभेद क्रमशः दृढ़वद होते जा रहे हैं। इसके भिन्न दूसरा व्यवसाय अवलम्बन करनेसे बीहोकी जातिच्युति होती है, वे सब व्यवसायी आठ श्रेणियोंके लोग 'पतित' कहलाते हैं। इनका स्पष्ट कोई द्रव्य क्या बौद्ध क्या हिन्दू कोई भी ग्रहण नहीं करना। इन आठ श्रेणियोंके मध्य आपसमें व्यवहार नहीं चलता। इस देशके वर्ण ब्राह्मणोंकी तरह नीचश्रेणियोंके वर्ण बाँटा लोग उक्त नीच श्रेणियोंकी याजकता करते हैं।

नेपाली बीहोके मध्य बाँटाओंकी समितिमें धर्म-स्वधर्मोपय संशयादिकी और 'गति'के विधानानुसार

सामाजिक विषयकी सीमांसा होती है। किन्तु कोई विचारार्थीन विषय होनेसे वह श्रेणियोंके ब्राह्मणप्रधान याजकराजगुरुके सामने पेश किया जाता है। इस विषयमें कोई बौद्ध विचारक नहीं होते। राजगुरुके विचारालयका नाम धर्माधिकरण है और वे स्वयं धर्माधिकारी हैं। ये हिन्दूगामानुसार जातिगत विवादका विचार करते हैं। विचारमें धर्मदण्ड, कारादण्ड, प्राणदण्ड, कौमा ही श्रेणों न ही, अपराधी बौद्ध होने पर भी उसे हिन्दूगामानुसार दण्ड भुगतना पड़ता है। राजगुरु इस विषयमें बौद्धगामानुसार और जरा भी ध्यान नहीं देते।

नेपाली बौद्धगण तिब्बतीय लामाओंका प्रधानत्व प्रस्वीकार नहीं करते। ये लोग लामाकी बौद्ध धर्मका प्रधान स्थान मानते हैं। किन्तु धर्मसम्बन्धमें दोनों देशमें कोई सम्बन्ध वर्तमान नहीं है। तिब्बतो लोग नेपाली बौद्धोंको हिन्दूकी प्रेषणा कुछ प्रच्छा समझते हैं। वे लोग श्रमभूनाथ, बोधनाथ और केशचैत्यके दर्शन करने आते हैं, किन्तु नेपाली बौद्धधर्मकी कोई खबर नहीं लेते और न उनके उत्सावादिमें साथ ही देते हैं।

गतिके नियमानुसार प्रत्येक श्रेणियोंके प्रत्येक परिवारके कर्त्ताको एक बार करके सामाजिक व्यक्तियोंको भोज देना पड़ता है। इस प्रकार एक एक भोजमें हजारों रुपये खर्च होते हैं। गरीबके लिये यह भोज बड़ा ही कठिन हो जाता है। जो इस भोजको नहीं दे सकता, वह जातिमें हीन समझा जाता है। वह हीनता जातिच्युतिके समान है। फिर एक नियम ऐसा है जिसके अनुसार किसी परिवारमें किसीके मरने पर उस जातिके प्रत्येक परिवारमेंसे एक एक मनुष्यको उस मृतके सत्कारमें योग देना पड़ता है। केवल इतना ही नहीं, उन्हें हाटघाह श्रेणोचान्तके दिन भी उपस्थित होना पड़ता है। नेपाली बौद्धोंको मृतदेहका दाह होता है। प्रत्येक श्रेणियोंका दाहस्थान स्वतन्त्र है, पर ही सहीका नदी किनारे ही। गतिके नियमका उल्लंघन करनेसे अपराधी स्वजातीय प्रधानोंके विचारसे धर्मदण्ड पाता है। भारी अपराध करने पर जातिच्युति भी होती है। जातिच्युत व्यक्तिकी मृतदेह रात्र पर छोड़ दी जाती है।

मैपल वीरुध संवर विषय ।

मैपल वीरुध पादि चैतन्यवो पादिदुष्ट नामधे वीर पादिकारणरूपिणी को पादि-प्रज्ञा नामधे प्रतिष्ठित कर चर्म-खंड देवदेवीके रूपमें बननी उपासना करते हैं । पादिदुष्ट स्वबन्धु, ज्ञानमय बनके वर्त्ता नहीं हैं, वे जो चर्मके वर्त्ता हैं । पादिकारणरूपिणी पादि-प्रज्ञा पादिदुष्टकी ही पात्ररूपत्व हैं । रन्धे मतधे पादिदुष्ट वा पादिप्रज्ञाकी कोई मूर्ति कल्पित नहीं हो सकती । किसी मन्दिरमें वा कारुहासके मध्य रन्धे की कोई मूर्ति देखी नहीं जाती । मैपलका प्रधान वीरुध मन्दिर पादिदुष्टके नामधे उन्मूर्जित है । लोगो का विश्वास है कि इन सब मन्दिरोंमें पादिदुष्टका भाव मौजूब है ।

मैपलमें ज्योतिशको जो पादि दुष्टका स्वरूप मान कर उनको प्रथामादि करते हैं । समो ज्योतिश्च प्रक्षार पूजो नहीं जाती । सूर्य-रश्मिसे निर्गत ज्योतिशो पादि दुष्टज्योति-रूपमें पूजित-होती हैं । वे सूर्यको जन्मो मी चकी को ज्योति मानते हैं ।

बौद्ध लोग विमूर्ति वा निरञ्जकी पूजा करते हैं । बुद्ध, धर्म पौर मङ्ग यज्ञो विमूर्ति निरञ्ज नामधे प्रतिष्ठित हैं । सामान्यतः बुद्ध पौर मङ्ग सुव्यवहारे पौर धर्म लौक्यमें कल्पित पौर चिन्तित होते हैं । ज्योमूर्ति धर्म जो प्रसादेवो, धर्मदेवो पौर जपतारादेवी नामधे मयाज्जर हैं । मैपलमें निरञ्जदेविका विधेय पात्रिण्य देखा जाता है । प्रायः समो मन्दिरोंमें निरञ्ज वा विमूर्ति खोदित है, मङ्गल रसको पूजा करते हैं । नर्तकियों कोतोंके मङ्गल दरवाजेके ऊपर जोखट या वा प्राचीरमें, शबनयदेवी दीवारमें, बुद्ध वा बोधिसत्वके मन्दिरमें बह विमूर्ति देखनेमें पाती है । रस विमूर्तिको छोड़ो पौर बड़ो ज्ञाना प्रक्षारकी प्रतिमा होती है । विमूर्ति-की तीनी मूर्तियां प्रायः एक दूसरेके चरी रहती हैं । कहीं मध्यवर्त्यमें बुद्ध, कहीं धर्म मूर्ति खोदित हैं । ये विमूर्तियां प्रस्तुटित पक्षके ऊपर जेठे हुई हैं । मध्य कक्षकी मूर्ति जो साधारणतः बड़ी होती है । बुद्धमूर्ति मूढ़ प्रवय, धर्म मूर्ति हुबनी रसको पौर बह विमोर नवक सुव्यवहारे कल्पित होते हैं । निरञ्जमें थकोष्य

पञ्चवा शान्तमसि च बुद्धकी पात्रिति हो ली जाती है । धर्मकी मूर्तिके चार सुनार्ये होतीं जिनमेंसे दो ऊपर की ओर ओर दो नीचेके ओर रहती हैं । ऊपरकी दो हाथोंमें पत्र पौर अन्नमाका तथा नीचेके हाथोंमें पुस्तक रहती है । ऊपरके एक हाथका पञ्जु टूटने हाथको तर्जनीधे लुटी रहती है । कहीं तो बोधिसत्वकी मूर्ति जो पञ्चमूर्तिके रूपमें मानी जाती है । कोई कोई पञ्चमूर्ति चतुस्र पौर कोई मूर्ति विदुष्ट मी देखी जाती है । रन्धे दो हाथ मुद्रास्थितच होते, एक हाथमें मधियमपत्र वा पुस्तक पौर दूसरे हाथमें मन्दिनिर्मित जयमाका रहती है ।

प्रथमतः पादिदुष्ट पौर पादिप्रज्ञाकी उपासना वीरि विरञ्जपूजा, तत्र ध्यानी पौर मानवधे देवे विधियन्ते वीरि बुद्ध तथा उनको मन्त्रि एव बोधिसत्वकी उपासना प्रचलित है ।

ध्यानीबुद्धको च पञ्चा पांच (विद्योके मतधे दो) पौर मानव बुद्धकी सख्या पात (किसीके मतधे नो) है । ध्यानीबुद्धोंको शक्तिवा बनकी पञ्चो पौर बोधिसत्वगण उनके पुत्र मानी जाते हैं । ध्यानीबुद्धोंकी च च्चा ये हैं— मन्त्रि, बोधिसत्व, बुद्ध, भूत, रश्मिध, पावतन, बाहन, मध्य, च्चुवा पौर मुद्राकतम् ।

मानवबुद्धोंको तारागण पञ्चो है सद्यो, लेकिन बोधि, चत्त पुत्र हैं, दिव्य नहीं । ये सभी पोत वा अन्ध-बन्ध के हैं, धूमिधर्म सुद्राविधिध है, कि हवाहन है । जो पांच ध्यानीबुद्ध मानते हैं, वे तन्त्रके मतधे दक्षिणाचारी पौर जो ह् ध्यानीबुद्ध मानते हैं, वे सामाचारो ब्रह्मि हैं ।

अस मानवबुद्ध यामधि हन्को चरचपूजा मी मैपलमें प्रचलित है । रथमें ८ मङ्गलविष्ट हैं, यथा वीरुध वा कोसुम चित्र, पद्म, ध्वज, बरस, चामर, जस, मरुज हुमन पौर बह ।

मन्त्रुको बोधिसत्व मैपलियोंके मध्य विधिच उपास्य हैं । ये मन्त्रुकी, मन्त्रुबोध पौर मन्त्रुनामधे प्रथिय हैं । मैपलमें प्रायः समो जयच रन्धे मन्दिर है । जयधुनामको निचरन्ध मन्दिर हो प्रथान है । ये मैपलियोंके मतधे विद्यनायक तथा रघाकर्ता मानी जाती

है। कितने नेपाली गिल्पजीविगण सरस्वती और विष्णु-कर्मों को तरह इनकी पूजा करते हैं। इनकी द्विभुज और चतुर्भुज प्रतिमा देखी जाती है। द्विभुज प्रतिमाके एक हाथमें खड्ग और एक हाथमें पुस्तक है। चतुर्भुज प्रतिमाके अन्य दो हाथोंमें तोर और धनुस् है। इनके मन्दिरके सामने मण्डल नामक एक खण्ड पत्थर रहता है जिस पर मञ्जुश्री चरण-चिह्न उल्कोर्ण देखा जाता है। मञ्जुश्री चरणके गुल्फ देगमें चतुर्चिह्न है। चम्पादेवी पर्वत पर इनकी एक पत्नी वरदा (लक्ष्मी) और फुलचोया पर्वत पर भीमदा (सरस्वती) नामक दूसरी पत्नीका मन्दिर है।

नेपाली बौद्धोंमें हिन्दूका शैवाचार और तन्त्राचारके मिश्रित हो जानेसे वे अनैक शैवदेवदाता और तान्त्रिक उपास्य योनिनिद्रादिकी उपासना करते हैं। नेपालमें स्वयम्भुनाथ ही आदिबुद्धरूपमें और गुह्येश्वरी आदिप्रशारूपमें पूजित होती हैं। ध्यानैबुद्धोंमें अमिताभ, तस्मश्रु और पुत्र एवं मानवबुद्धोंमें शक्यसिंह एवं बोधिसत्व मञ्जुश्री सबकी अपेक्षा प्रधान उपास्य हैं। इसके अलावा बुद्धचरण, मञ्जुश्रीचरण, त्रिकोणप्रभृति विशेष भावमें पूजित होते हैं।

नेपाली बौद्ध धातुमण्डल नामक एक और प्रकारके चिह्नकी पूजा करते हैं। धातुमण्डल दो प्रकारका है, बच्च धातुमण्डल और धर्म धातुमण्डल। बच्च धातुमण्डल बरोचनबुद्धके साथ और धर्म धातुमण्डल मञ्जुश्री बोधिसत्वके साथ संश्लिष्ट है। बड़े बड़े बौद्धमन्दिरोंके निकट इन सब धातुमण्डलोंकी प्रतिष्ठा है। ये सब गोलाकार वा अष्टकोणी २३ इञ्च मोटे पत्थरखण्ड पर बने होते हैं। उनमें पञ्चचिह्न खोदित रहते हैं। प्रतिमा बैठानके लिये वा चरणचिह्न खुदवानेके लिए इस प्रकारके मण्डलकी आवश्यकता होती है। जैसे बुद्ध वा बोधिसत्वोंके पवित्र स्थानादिमें वा उनके भवशेषके ऊपर चैत्य बना होता है, वैसे ही देवताके पवित्र स्थानादिके ऊपर बड़े बड़े धातुमण्डल प्रतिष्ठित होते देखे जाते हैं। बड़ा बड़ा धातुमण्डल स्तम्भ वा वेदिके ऊपर स्थापित होता है। इन सब मण्डलोंमें बौद्ध देवदेवियोंकी मूर्त्ति और चिह्नदि अंकित होते हैं। धर्म धातुमण्डलमें २२२

प्रकारके चिह्नोंमें क्रम नहीं रहते। समर्थन्द्री क्रम-खण्डतुल्यके मध्य पृथक् पृथक् कक्ष पर शम्भोज्ञ शङ्ख-लातुसार एक एक प्रकारका चिह्न खोदित रहता है। बच्च धातुमण्डलमें ५०१० प्रकारके चिह्नोंमें अधिक चिह्न नहीं रहते। इन दोनों प्रकारके मण्डलोंके चिह्नादिकी शृङ्खला एक-सो नहीं होती।

इसके अनाया हिन्दूके दिक्पालोंको तरह बौद्धोंके भी उपास्य चार देवराज हैं। वे सब भी दिक्पाल हैं। खड्गपानि खड्गराज पश्चिमाधिपति, चैत्यधारी चैत्यराज दक्षिणाधिपति, बीणावाणि योणराज पूर्वाधिपति और ध्वजधारी ध्वजराज उत्तराधिपति माने जाते हैं।

शिवमार्गी हिन्दुओंके निम्नलिखित देवता क्या हिन्दू, क्या बौद्ध दोनों सम्प्रदायके उपास्य हैं,—

भैरव और महाकाल, भैरवी वा काली, गणेश, इन्द्र और गरुड़। भैरवका मुख महादेन्द्रनाथके रथके सम्मुख भागमें संलग्न रहता है। बौद्ध लोग इस मुखकी यद्यपि रथका फलदार विशेष मानते हैं, तो भी पर्यन्त पवित्र समझ करके उसे एपिताह, विहारके मध्य रखते हैं। भैरवका दैत्यशवारोहो विग्रह अनेक बौद्ध मन्दिरोंके भी सामनेके मन्दिरके रक्षाकर्ता वा द्वारपालरूपमें देखे जाते हैं। महाकाल गणाधिपति गणेशके गणभुक्त होने पर भी इनकी प्रतिमा बौद्धमन्दिरके उभयपार्श्वमें देखी जाती है। मञ्जुश्रीमन्दिरके चरणमण्डलके एक पार्श्वमें गणेश और एक पार्श्वमें त्रिशूलधारी महाकालकी मूर्त्ति है। महाकाल प्रतिमा ही अनेक स्थानोंमें बच्चपाणि बोधिसत्वके विग्रहरूपमें पूजित होती है।

मिहिदाता गणेशको बौद्ध लोग बुद्धिदाता मानते और श्रद्धाभक्तिके साथ उनको पूजा करते हैं। पशुपतियोंके दण्डदेव मन्दिरके निकट अशोककन्या चारुमतीका प्रतिष्ठित एक बहुत प्राचीन गणेश-मन्दिर है। 'चारु-बोधि' विहारके बांटापुरोहितगण ही इस गणेशकी पूजा करते हैं।

काली वा भैरवी मूर्त्ति किसी बौद्धमन्दिर वा उसके निकट देखनेमें नहीं आती। पर हाँ, उनके जो स्वतन्त्र मन्दिर हैं, बौद्ध लोग वहाँ जा कर पूजा करते हैं। अनेक काशीमन्दिरमें बांटा पूजकका काम करते हैं।

इन्द्रकी पत्नीका इन्द्रवधको वीर्य सोम पवित्र पौर
 उपास्य देवता मानते हैं। वीर्यजात्रमें निष्ठा है, कि
 पुत्र देवमें एक समय इन्द्रकी पराधा कर उनका वध
 अवधिअक्षय्य होन दिया या। वध सुदानियो को
 मध्य 'दोरे' बन्धने प्रविष्ट है।

अयम्भूनाथको मन्दिरके सामने बसंकातुमन्त्रको
 ऊपर १ पुत्र लम्बा एक वध प्रतिष्ठित है। पशोम्य
 हुबन्का चिह्न वध है। एक वधको मन्त्रभाषमें पौर
 पुरदेके निबंभाषमें स्थापित होनिसे वध विधायक वध-
 काता है। यह विधायक पशोवर्धक सुदवा चिह्न है।
 हिन्दू सोम सिद्ध पौर योनिको जिस तरह देवदेवीको
 प्रतिनिधि रूपमें पूजा करते हैं, उसी तरह मियासमें वध
 पौर यथा सुव तथा मन्नादेवीको प्रतिनिधिक्रममें पूजित
 होता है। हिन्दूधर्मके सुष्टिभाग पर जिस तरह गणक,
 पशुम्य, पशु पादि मूर्तियां होती हैं, वीर्यधर्मके सुष्टि
 भाग पर भी उसी तरह प्रथा वा बर्माका सुष्ठु पहिजत
 दिया जाना है।

हारिती (श्रोतक) पौर गणककी मूर्ति प्रायः सभी
 वीर्यमन्दिरोमें देखी जाती है। वीर्य वरकको मूर्तिके
 बसीमें सर्वमाका, जात्रमें सर्ववध पौर चक्रुमें धत सर्व
 तथा होनी पदके नीचे चरैनारो पर्याकार मानकथाको
 मूर्ति है। अतोपनिष्ठ सुदवा वाहन भी मण्ड है।
 प्रायः सभी वीर्यमन्दिरोमें पौर वीर्य देवदेवीको
 मन्दिरमें गणकमूर्ति देखनेमें आते हैं। यण्डका अन्त्य
 मन्दिर नहीं है। सिद्ध पौर होनिपूजा भी वीर्यमें प्र-
 स्थित है। ये वीर्य सिद्धको पादिपुत्र वा अयम्भूप्रथा
 सुधमान पौर योनिको स्वयम्भूप्रथा मुखक पादि
 किन्नर वा सुहोयरोका ज्ञान मानते हैं। वीर्यमें पवि-
 र्माय इत्ये वरासक नहीं है। हिन्दू मियसिद्धके सामने
 वीर्यसोम वीर्य देवदेवीकी मूर्ति बन्धोर्ण कर उनकी
 पूजा करते हैं। सिद्ध मन्त्रावकी भी उन्हीं वेषके पाका-
 रमें बरत दिया है। यह प्रकार प्पोदित सिद्धकी नियम
 स्रक्कडिथि परीक्षा विधे बिना बहजमें वधे हिन्दू मिय
 सिद्ध नहीं कर सकते। हिन्दूतामिधीके उपास्य सिद्धोव
 पिकको वीर्यसोम वधे सिद्धका चिह्न, बानी सुहोयरी
 पादि देविवर्धे चिह्न मानते हैं। हिन्दू-तामिधके पञ्चमें

यणकारवको तरह वीर्य सोम भी यह सिद्धोव यण
 धारण करते हैं।

वीर्यसोम जिस तरह हिन्दूदेवदेवियोंकी उपासना करते
 हैं, वधो तरह हिन्दू सोम भी परीक वीर्यदेवदेवियोंको
 हिन्दूदेवदेवीकी प्रतिमा समझ कर उनको पूजा करते
 हैं। ये सोम सुहोयरीको भगवतीका अक्षय्य मानते हैं।
 मन्त्रकीको हिन्दू सोम जोदेवता सरकतोउपमें पूजा
 करते हैं। उनको दो पत्नी भी सधो सरकतीके रूपमें
 हिन्दूके लिखत मान्य हैं। व वीर्य पूजा पमितामहय पौर
 मियके प्रवतारधर्ममें मन्त्र कोरि हैं।

एतन्निष्ठ अयम्भूनाथ पर्वत परथे वीर्यदेवीके मन्दिर
 में हिन्दूकी तरह वीर्य सोम भी उन्हीं हिन्दूदेवी समझ
 कर ही पूजा करते हैं।

मियाकी मियमानीं हिन्दूमेंसे कितने ही तामिक मैन
 हैं। मियाको व क्षया बहुत जोड़ो है। हिन्दूको भी उपास्य
 देवदेवीका विररथ इसके पञ्चके हो पूजा पौर उण्यवादि
 के मन्त्र सिद्धा गया है। मिया देखो।

नेपालक (स० जो०) नेपाक रवाबे बन्। १ मियाक। २
 ताम्यथात, तावा।

नेपालकमन्त्र (स० पु०) सुवाअन विलकमन्त्र।

नेपालका (स० जो०) मन्त्रविद्या मैनसिद्ध।

नेपालनिष्ठ (स० पु०) नेपाकोरुको निष्ठः। नेपाक
 देवोद्वय निष्ठ, नेपाकको नेम, एक प्रकारका चिरप्रताः
 पर्याय—नेपाक, अयनिष्ठ, अयनायक, माकोनिक, निप्रारि
 सविधातरिपु। सुव—श्रोतक, कण्ड, कहु, तिह, योगा
 पादि, पञ्चम्य वध, पित्त, पञ्च, शोच अथ पौर अर
 नाशक।

नेपालसमूहक (स० जो०) इतिहास्य यद्व मूखमंथ
 इतिहास्यके समान एक वन्ध।

नेपालिका (स० जो०) १ मन्त्रविद्या, मैनसिद्ध। २
 वीर्यसोम।

नेपाकी (वि० वि०) १ मियाकका, मियाकमें रजनी या
 जोनिवाका। २ मियाक सम्यो। (पु०) १ मियाकका
 रजनीवाका पादमो। (जो०) १ मन्त्रविद्या, मैनसिद्ध।
 १ नेवारीका वीर्य।

नेपियर (मर वानेस विम्व) —एक पञ्चदेव देवोवध।
 इनका जन्म १७८२ ई०में हुआ था। ये ऐडमिरल मिय

यर (Admiral Napier)-के प्रातिभ्राता थे। १७८८ ई०में आइरिस-विद्रोहके समय वारह वर्षकी अवस्थामें ये २२ न० रेजिमेण्टके पताकावाहक (Ensign officer)-के पद पर नियुक्त हुए और १८०६ ई०में सर जान मूरको सहायताके लिए ५० न० पदातिक सेन्ये का अध्यक्ष हो कर स्पेन गए। इसी समय कर्णाकी लडाईं-में इनकी पांजरेकी छल्ली टूट गई और ये बन्दे हुए। बाद इङ्ग्लैण्ड लौट कर एक वर्ष तक ये कैदाम बँडे रहे। इसी समय इन्होंने सामरिक विभागीय नियमावली, उपनिवेश और प्रायरनैण्डकी अवस्थाके विषय पर एक पुस्तक लिखी। बाद १८०८ ई०में ये सन्निह-सेनादलमें मिल गए और स्पेनके विरुद्ध पुनः युद्धयात्रा कर दी। किन्तु इस बार इन्हें गहरी चोट लगी। इसके बाद १८१३ ई०में ये उत्तर अमेरिकाके सामरिक कार्योंमें चले गए और १८१९ ई०में भारतके सर्वप्रधान सेनाध्यक्ष (Commander-in-chief) हो कर आए। लार्ड एनेन-वरा जय गवर्नर-जनरल हो कर भारतवर्ष आए थे, तब इन्होंने उन्हें अफगानयुद्धके लिए सलाह दी थी। अफगानिस्तानमें अङ्गरेजोंकी दुरवस्था देख कर सिन्धुप्रदेशके अमीरगण उनको अधीनतासे छुटकारा पानेके लिए तत्पर हुए। इसी समय यहांके रजिडेण्ट मेजर आटरम (सर जेम्स) अमीरोंके श्रेष्ठत्वसे डर गए और राज प्रतिनिधि एलेनवराको इसकी खबर दी। इन्होंने उक्त प्रदेशको सामरिक और राजनैतिक कार्यावलीको देखरेखके लिए नेपियरको आदेश दिया। नेपियरने सिन्धुप्रदेश जा कर पहलीकी लिखी हुई शर्तोंमें कुछ छेड़ फेर कर यहांके अमीरोंकी अपने वशमें कर लिया।

१८४१ ई०की ८वीं जनवरीको नेपियरने मरुदेशस्थ इमामगढ़ पर आक्रमण किया। अमीरगण पहलेसे ही उनकी हठकारिताकी बात जानते थे। अतः वे युद्धकी कोई घोषणा पानेसे पहले ही इमामगढ़ पर ही कर हैदराबादकी ओर चले गए; नेपियरने भी दुर्गकी जीत और उसे ध्वंस कर अमीरोंका पीछा किया। इधर हैदराबादनगरके अमीरगण एकत्र हो कर आटरमके साथ

सन्धिका प्रस्ताव कर ही रहते थे, कि अमीरोंने नेपियरके हैदराबादकी ओर आनेको खबर सुनी। इस समय अमीरोंके सारे मित्राग्री पीछे सोचे उन्होंने सन्धिपत्र पर अपने हस्ताक्षर कर दिए। अमीरोंने तो हस्ताक्षर उभो समय बना दिए पर उनके प्रधानव्य जो बेलूच सरदार थे, अमीरोंने अङ्गरेजोंको वग्नता स्वीकार नहीं की। १८४३ ई०की १५वीं फरवरीको इन्होंने दल बांध कर रजिडेण्टों पर आक्रमण कर दिया। मेजर आटरम हैदराबादके यासमवनका परिग्याग कर भाग गये।

सर चार्ल्स, नेपियर यह खबर पाते ही आगबवला हो उठे। इन्होंने १७वीं फरवरीको बेलूचों पर धावा बोन दिया। मियानोके निकट दोनों दलमें घमसान युद्ध हुआ, लेकिन बेलूच दल पराजित हो कर रजबखाने में लौटो ग्यारह हो गए। नेपियरने हैदराबाद पर अधिकार जमाया और अमीरोंके अलद्वारादि अपने दखनमें कर लिए।

पुनः उसी सालकी २२वीं मार्चको बेलूच-दल अमीर शेर महमदके अधीन हैदराबादके निजटवर्ती दूबा नामक स्थान पर अङ्गरेजोंके विरुद्ध पा डटे, किन्तु इस युद्धमें भी इन्हींकी हार हुई। युद्धमें नेपियरने बड़े वीरता दिखाई थी। यद्यपि ये सिन्धुप्रदेशके अधीन कई एक बेलूच सरदारोंकी अपने वशमें लानेमें सफल हुए थे, तो भी कच्छ गण्डवा, मरी, बुगटो आदि उत्तर-पश्चिमसीमान्तवासो कुछ बेलूच जातियोंने इनकी अधीनता स्वीकार नहीं की। वे उस समयके पारस्य और सिन्धु अमीरोंके प्रभावकी उपेक्षा कर उन लोगोंके राज्यमें लूट पाट मचाया करते थे। फिर क्या था, नेपियर जब सुपचाप वैठनेवाले थे। इन्होंने १८४५ ई०की १३वीं जनवरीको उनका सामना किया। विद्रोहीदलके नेता सरदार बीजा खाँ युद्धमें पराजित हो कर बन्दे हुए। अन्तमें यहांके विद्रोह ने शान्तभाव धारण किया। बाद १८४७ ई०में नेपियर इङ्ग्लैण्ड गए और पुनः १८४८ ई०में सिन्धुयुद्धके समय भारतवर्ष आए थे। इस युद्धमें भी इन्होंने अचम साहसके साथ अपने बुद्धि और रणचतुर्यका परिचय दिया था। गोविन्दगढ़के ६० न० देशीय पदातिक दलके १८४८ ई०में विद्रोह होने पर, नेपियरने उन्हें दमन किया तथा

धनोंको बरखाप्य कर उनको अय्य पर मोर्खांकीको रखा। यहाँ पर निवियर अपने खोबनमें बदाराताया लयच दिया मय है। अन्तमें राबड्रोइयोको माबदल्ल न दि कर धनो को दयावा पाय समझ छोड़ दिया। उनका यह विस्वास था कि यहूद-राजके पविचारसे जो प्रजाजनके मध्य राजमन्त्रिका उच्छेद देना जाता है।

इस निर्मिथ विनायनिने खोबनके अन्तिम समय तक मारतमर्षके विषयमें बालबापन कर पोर्टसमाजयके निबडमर्षी पाबनल्ल नगरमें १८३१ ई०को मानव लीला म बरच थी। इनको अष्टाक्षिपि पल्लव हो सुन्दर होती थी। इनकी माया पौर मध्यविषयास देव कर पल्लवत होना पड़ता था। ये बड़े ही शीरप्रकृतिके मनुष्य थे शीर मध्यपानादिको पौर इनको तनिच मो पासत्रि न थी।

नेपोसियमबोनापाट—जयद्विख्यात वीर। १७८८ ई०को ११वीं अगस्तको नेपोसियमने कर्त्तिकाशोयके प्रयाण ज्ञान एकेसिधो नामक नगरमें अय्य पदच किया। नेपोसियमके अय्य क्षेत्रमें दो वर्ष पक्षसे ही पराधीनियों में एकेसिधो पर अधिकार जमा सिद्धा था। दुतरां नेपोसियम पराधीको प्रजा को कर उत्पन्न हुए थे। थाप के पिता बालक बोनापाट अन्वहारकोयो थे, किन्तु पराधीनियों ने अन्न अमि का पर चढ़ाई कर दी तब अन्वो ने बबानती छोड़ कर मैनिब्रह्मिका पवनवजन सिद्धा था और पल्लव विषकोई साब मिच कर दीयके सिधे यथासाध्य हुक अन्तमें एक मी अचर उठा न रवी थी। अब नेपोसियम मारुमर्षमें से उस समय अन्वके मातापिता एक ज्ञानके पुत्रे ज्ञानमें मान कर स्वाको नतारथाको विधेय सिद्धा कर रके थे। अन्तमें कोई अपाय न देव अन्व पराधीकीकी अजीनता बाध्य हो कर स्वीकार करनी पड़ी। थापके पिता अम्बाल्ल व मोड्डन थे। थापकी माता सिद्धिचिया ऐकोबकिनी केको सुन्दरी थी, वे को लघुचुचपाक्षिनी मी थी। व गमर्बादामे उनमें के कोई मो शीन न थे।

थाप अपने पिताके हितोय पुत्रके थे। थापके चार भाई और तीन बहन थी। किन्तु अचपनके ही थाप बड़े भाईके अपर अचना प्रमुख अमाने ली थी।

यैअबबाअममें पिताकी गोद पर बैठ कर नेपोसियम कर्त्तिकाशोयके बोरलकी अजाग्ये सुना करती थी। परासोसियोके साब हुकमें पियकोने असा पविचयित साइस, अदम्य उम्माइ पौर अट्टत बोरल दिनुसाया था, असे सुन कर बालक मोहित होये थे। पितामाताके एक ज्ञानके पुत्रे ज्ञानमें मान्ये पौर उनको लष्टसि अट्टताका परिचय सुन कर से समझते थे, कि उस समय यदि वे विद्यमान रहते, तो अमी अन्व नहीं था कि परासोसी कर्त्तिकाको जीत सकरी।

अचपनमें जो नेपोसियमको दिव्यियोमदुअका पत्तु मय करना पड़ा था। पीछे थापकी माता थापका तथा पन्थान्य अन्तार्नाका अन्नपूर्वक साधनपावन पौर विद्याप्रदान करती अयो। अचपनमें थाप बड़े मटअट पौर अमिमाभी थे। माताके सिवा कोई मो थापको मानन नहीं कर सकरी थे। वे मो अन्नपयोमको अयेका मोडो मोडो बानो के नेपोसियमको अय्य पर अानिकी सिद्धा करती थी। यको समझ कर सिद्धिचिया अन्नका अष्टि पाहर मडो अरती थी। पीछे नेपोसियमने मी स्वीकार किया था कि उनकी माताने उनकी अष्टिअन्नको दुहाता था। थापको मादमत्रि अति प्रबल थी।

परासोसियमने कर्त्तिका जीत कर यह नियम अनाया था, कि अम्बाल्ल व मोड्डन हुक बालकोंको अद्वैत अाअ के आ कर अन्व सामरिच दिया को सिद्धा हो थापकी। कर्त्तिकाके साधनकर्ता काउल्ल मारकोपका बोनापाट - परिवारके साब अच्छा अज्ञान था। अयोके पुत्रे पुत्रे नाबकोके साब नेपोसियमको मी अर्धनि अान्य अज्ञाना थाहा। इस समय थापकी उमर केवल अय वर्षकी थी। अय्य समय थाप माताके निबड विद्वाई लेने मए, उस समय थाप अट्ट अट्ट कर रोने लगी पौर बहुत आह्वान हो लठे। अान्तमें अर्धव अर अोन अमक ज्ञानके साम रिच विद्यालयमें थाप मर्ती अिबे गये। उस विद्यालयमें अान्तके अचवधोड्डन अूरनामी पौर अनियोंके अड्डन पडुनी थे। वे अोन निदमी बालककी योगाअ चादि देव कर इनकी अयो अकानि अनी। अचपनके ही नेपोसियम निम्नअमिय पौर विन्तायीच थे। अमी विद्या अर्धमें था कर अलक्षितके पाठान्नाअ करनी अनी। अनी

लड़कों का साथ करना आप जरा भी पसन्द नहीं करते थे और न उनकी तरह बुराई करना ही चाहते थे। विस्त्रासिताके साथ कष्ट दुःखन थे। यही कारण था कि विलासप्रिय धनी सन्तानोंको आप नीच निगाहसे देखते थे। एकाग्रचित्तसे पाठभ्यास करके आप सर्वदा परोक्षासे सर्वोच्चस्थान पाते थे। परोक्षाका साफल्य देख कर धनी-सन्तान आपकी खूब खातिर करने लगी और जहूरत पडने पर आपकी प्रपत्ता दलपति भो बनानो थो। नेपोलियन उन्हें साथ करके बर्फ का किला बनाते और बर्फको गोलागोली करके दुर्गरक्षा और आक्रमण-गिचा करते थे। विज्ञान, इतिहास और अद्वैतशास्त्र आपके प्रिय-पाठ्य थे। दर्शन, न्याय आदि तर्क प्रधान शास्त्र पर इनकी उतनी रुचि न थी। चरितपाठ और होमरके काव्यमें इनका प्रगाढ़ अनुराग था। जर्मन भाषा सोखनेसे इन्होंने आनन्द नहीं मिलता था। आपकी हस्तलिपि अच्छी नहीं होती थी। १७७८ ई० तक ब्रौनके विद्यालयमें पढ़ कर आपने हृत्ति लाभ की। पीछे आप पारोकी राजकीय विद्यालयमें भेजे गए। वहां केवल एक वर्ष तक श्रेय परोक्षामें प्रशंसाके साथ उत्तीर्ण हुए। बाद आप एक दल गोलन्दाज सेनाके लिफ्टेनेण्ट बनाये गए। सोलह वर्षके लड़केके लिये यह कम गौरवकी बात नहीं है।

नेपोलियन कुछ दिन तक सेनादलमें काम करके एक समय छुट्टे ले कर कश्मिरा गए। माता और भ्राता-भगिनियोंके साथ मिल कर आपकी आनन्दका पारावार न रहा। एक समय इन्होंने पिटरसखां पेयलीके साथ मुलकात की। पेयलीने नेपोलियनकी तोच्छाबुद्धि और अभिज्ञताका परिचय प्रा कर आग्रहपूर्वक उन्हें अपने मतमें लानेकी कोशिश की। किन्तु नेपोलियन यद्यपि पेयलीको भक्ति और सम्मानकी दृष्टिसे देखते थे, तो भी उनकी सब बातोंमें इन्होंने साथ न दिया। कुछी पूरी हो जाने पर नेपोलियन पुनः सेनादलमें आ मिले। इस सेनादलको जत्र जहां पर रहनेका हुकुम मिलता था, तत्र इन्होंने भी वही जगह पसन्द किया। वे अन्यान्य सेनिककर्मचारियोंकी तरह वहां आसोदमें समय नहीं बिताते थे। जहा जहां वे जाते, वहां वहांके अंग्रि-

वासियोंसे मिल कर उनकी रीतिनीति और अवस्थाका विषय जाननेकी चेष्टा करते थे। १७८८ ई०में फरासीदेशमें राष्ट्रविप्लव उपस्थित हुआ। फ्रांसकी प्रजा प्रचलित शासननीतिके विरुद्ध अच्छी तरह उठ गई। इस समय बोर्बो वंशधर फ्रांसमें राज्य करते थे। राजा १६वें लुई शान्तस्वभावके और प्रजाहितपी थे। पन्द्रह वर्षमें ज्यादा वे राजनिहासन पर बैठ चुके थे। उनकी चेष्टा और सहायतासे अमेरिकाका युक्तराज्य अंग्रिजो अधोनताका त्याग कर स्वाधीन हो गया था। उनके पूर्ववर्ती राजाओंके अनेक व्ययसाध्य युद्धकार्यमें लगे रहनेके कारण राजकोप खाली होता आ रहा था। १६वें लुईके राजत्वकालमें मन्त्रियोंके अटूट परिचय करने पर भी राजकोप पूरा न हो सका। अन्तमें सभा कर जनसाधारणके कर्त्तव्यनिर्णयको व्यवस्था हुई। प्रजाने प्रचलित शासननीतिका परिवर्तन करना चाहा। उन्होंने देखा कि फरासी अमजीवियोंके अमानुषिक परिचय करने पर भी उनका पेट नहीं भरता—अधिकांश कर-भारसे पीड़ित है। फरासी जसोंदार भो बहुत बुरी तरहसे प्रजाके साथ प्येय आ रहे है। यह सब देख कर सहायुभूतिका सूत्र दिनों दिन छिन्न होने लगा। ऐसो हालतमें प्रजाकी विह्वलरूपी अग्निमें धनी और भूखामियोंके भस्मीभूत होनेकी सम्भावना थी। उन्होंने राजाको शरण ली। राजाने उन्हें समर्थन करनेमें अपनी असमर्थता प्रकट की। राजा यदि प्रजाके मतानुसार चलते, तो सम्भव था कि कोई उपद्रव नहीं उठता। राजत्वमताकी कुछ सावधता अवश्य होती। जातीय सभामें सर्वप्रधान राजनैतिक शक्त मिरावीं यदि जीवित रहते, तो निश्चय था कि राजसभामें विलुप्त न होती। उनकी मृत्यु होनेसे ही राजसभ नितान्त दुर्बल हो गया। राजाकी अपरिणाम-दर्शिताके श्रेयमें राजा, रानी दोनों ही अवमानित, निगृहीत और बन्दे हुए। फ्रांसका राजनैतिक आकाश मेघाच्छन्न हो गया। यूरोपके अन्यान्य राजाओंने प्रजाशक्तिके विकास पर प्रमाद समझा। अष्टीयराज लुईके साले थे। उन्होंने प्रुसीय और सार्डिनीयाके राजाओंको अपने मतमें ला कर फ्रांसके विरुद्ध युद्धोपग्राह कर दी। फरासीसी-

मोय मी लडाईको ते वारियां करणे मग । पहील पोर
 प्रुमीव सेना पराजित हो कर मी दो प्यारड हो गई ।
 फेरावोमिदोको बर मासूम बुधा कि लनके रात्रा मय
 कर दीयके गजु पोथि भाय वीय दीनेको ला रहे हैं, तब
 लहनेन राबा रामो दोनोको दीयके यजु संमभ कर लण्डे
 फेनो दे ही । तदनकर प्राप्समें साधारणतन्त्र स्थापित
 हुआ । एकर यूरोपीय राजमय पुंन बुयका भायोअन
 करणे लगी । चारी पोरेवे प्राप्स थाळाला हुआ । देय
 भरमें पराजयता फेस गई । अंततो राजने तिंक घमतां
 के कामने लप्यतमाय हो गई पोर छोटे-छोटे वलोमें
 बिभन्न हो कर भायसमें बिबदापरण करणे लगी ।
 कितने अदेयमें मिश्र कापोनचिता थ्याकि अबादके हाबये
 यमपुर भेजे जाने लगी । एतकी चारो बर निबसी ।

प्राप्सके पलबिंदोइका सुयाय पा कर कगि का
 कानिबोने अदेयको कापीन वंजानेमें अंकर लसी ।
 पियको विरथे लनके पचिनाबक हुए । नेपोलियन इस
 समय आतीय सेनाके पचिनायकपदमें कगिअमें से । पियकी
 ने लण्डे अपने पयमें ला कर पडुरेकोथे हांज कगिअको
 समर्थ करला थाका । बिन्दु नेपोलियन इस पर राबो
 न हुए । प्राप्सके भाय कगि काका पचिकतर पबदागत
 मन्त्र्य दीय कर लण्डेने पियकोके मत्का कबडन बियाय
 एपोथे पियको लनके जानोपुयन हो गये । पियकीको
 लनकानके कगि काके लोको ने नेपोलियनका कर जसा
 डाका । गाना पियदो को भिकथे हुए ने माता पोर भ्राता
 भमिनीके हांज प्राप्समें मन पाय पोर भासयिन नगरमें
 रहने लगी । संपीने परिवार प्रनियासतका कुच भार लण्डेके
 ऊपर रहा । यहाँ नीबरीकी तसाय करने पर लण्डे
 गोकन्दाज सेन्थके कथानका पर प्राप्त हुआ । कुच समय
 बाद पाय टुअंमि वीरा कानके लिप भेजे गये । टुकी
 प्राप्सका मसुदोपकुचवर्ती पक नगर है । बहाबे राज
 पयोय पचिबासियेने नगरको पडुरेको को हांज सुपुद
 कर दिया था । साधारणतन्त्रके लपये पनेक चेडा करने
 पर मी वड कान हांज न लगा । पोथि नेपोलियनने मोस-
 न्दाअके नाबे पचिभायक दरमें पा कर निज बुदकीयन
 द्वारा नगरको जीत लिया पोर पडुरेको को बचने भागना
 पड़ा । एही कान पर पडुरेको को फाय नेपोलियनको

पहली लुठभेके हुई थी । इस काममें नेपोलियनको परोचति
 हुई पोरथे लुठोयनेपथे बिबद थाक्यप यव तबे लनदेयमें
 भेजे गये । यहाँ मी लनके परामर्शानुसार कार्य करण
 कराही सेनाने निबय पाई । इस समय प्राप्स गवमें प्य-
 को नेपोलियन पर हांज सन्देह हुआ पोर ये पटभुन
 किए गए । दो केराइ बाँडे नेपोलियन सुते तो हुए पर
 फिरसे नीबरी में निर्यो । इस कारण ने रोकपातोथो
 बच दिई । यहाँ परथे येमाबके इण्डे बिमिय केड
 लनमें पक्यो । यहाँ तक कि योअबनां चारो एको ने
 भापेकागका मो सडुए कर किया था । बिन्दु लनके
 मित्र डिमागियकी पब मजापतामें लसकी जान यतरने
 बच गई । बिधी समय इण्डे ने सुबक जा कर लुप्तता
 के पसीन बाँडे करनेकी एण्डा प्रबडे की थी । जो सुप
 को, सीख ही इनके कडका भवसंजि हुआ ।

पहलीसिबोको आतीय समिति १८०१ ई. तक
 मीमनकोय बला किर बनताकी विरोधभांजन हुई ।
 पोरोनगरके कनमोदारण लनके बिबद पंफवारके करने
 में लप्यते हुए । इस विपदेके समय कड समितिने
 नेपोलियनको राजपोनोकिंत सेनापीका मजबूती संगापति
 बनाया । नाममात्रके सडकारी होने पर मी इरका कुन
 दारिमदार नेपोलियनके हांज था । ये हांज उचार सेना से
 कर बिद्रोहदमनमें समर्थ हुए थे । कतिघताके बिडलकप,
 आतीय समितिने पापको संगापतिका पद प्रदान किया ।

इस समय आतियसमितिने पांथ क्यतिथीके हांथ
 गासनघमेंता दोथे हांथ प्यबलापबर्गने पोर कांय परि
 दय नका भार दिया । एको यासनकवां डिरेक्टर नामने
 प्रसिद्ध हुए । इनमेंके वरन नामक डिरेक्टर नियुक्तिमें
 बन्धु पोर प्रलोपक थे । लण्डेके बजने नेपोलियन इटली-
 की फरासी सेनाके प्रधान सेनापति बन कर बहा
 मय । एही समय पापका प्रथम विवाहकार्य सम्पन्न
 हुआ । जोसेफारन नामक एक सम्भाला बिबवा महिना
 का पाचिपहच कर अपने पयनेको कताय समझा ।
 एके समरी लवोंयमें नेपोलियनको लपकुच ही । जे पो
 सुन्दरी थी वहीको मुबंशुपयानिने पोर बिनीतअभावा
 होनेके कारण लण्डेने नेपोलियनका मन कर लिया था ।
 जोसेफारनके प्रति पापका पामारिक पसुराय हो गया

था। जोसेफाइन भी वीरंपवरकी प्राप्तिसे बड़ कर चाहती थीं। उनके एक पुत्र और एक कन्या थी जिन्हें नेपोलियन अपनी सन्तानकी तरह मानते थे। ऐसी स्त्रीके साथ नेपोलियन अपना अधिक दिन बिता न सके। शीघ्र ही उन्हें अपनी नोकरी पर जाना पड़ा।

इस समय इटलीसीमान्त पर ६५ हजार फ्रांसीसी योद्धाएँ दुरवस्थामें प्राप्त थे। शत्रुसे बार बार पराजित हो कर वे विलकुल भग्नोत्साह ही पड़े थे। उनके परिश्रम वस्त्र क्षिप्त और पदतल पादुकाविहीन हो गए थे। कुछ मास तक वेतन नहीं मिलनेके कारण खानेकी भी विशेष तत्सोफ थी। नेपोलियनने वहां पहुँचते ही उन्हें उद्घाटित किया और इटलीमें ले जा कर उनके कुल अभाव दूर किये जायँगे, ऐसा आशा दी। अल्प-वयस्क सेनापतिके उद्घाटनकेसे उत्तेजित हो फ्रांसीसी सेना प्राक्स पर्वत पार कर शत्रुपूर्ण इटलीदेशमें पहुँची और बहुसंख्यक शत्रुसेनाकी क्रमागत कई एक युद्धोंमें परास्त किया। सार्डिनियाराज नेपोलियनके साथ सन्धि करनेकी वाध्य हुए। इसके बाद अष्ट्रीय सेना आक्रान्त और परास्त हुई। किन्तु डारने पर भी उन्हें ने डार स्वीकार न की। युद्धविहारद सेनापतियोंके अधीन अष्ट्रीय-सम्राट् प्रनवरत सैन्यदल भेजने लगे। नेपोलियनने भी क्रमशः उन्हें लोडो, आकोला, रिभोलो और काटिलियन आदि स्थानों पर परास्त किया और विनष्ट कर डाला। सारा लम्बादि-प्रदेश फ्रांसीसियोंके अधिकारमें आया और वहां साधारणतन्त्र प्रतिष्ठित किया गया। अष्ट्रीय सम्राट्के उत्तर-सेर, आलभिन्जो, प्रभरो आदि समरकुशल सेनापतियोंके बार बार परास्त होने पर भी वे सन्धिस्यापनमें अग्रसर न हुए। नेपोलियनने इटलीसे अपनी सेनाका अभाव दूर कर फ्रान्समें प्रचुर अर्थ, मृल्यवान् चित्र आदि भेजे थे। अभी अन्यान्य स्थानोंकी फ्रांसीसीसेनाकी सहायताके लिये भी कुछ रकम भेजी गई। इसके अनन्तर नेपोलियन अष्ट्रिया पर चढ़ाई करनेका आयोजन करने लगे। अष्ट्रीय-सेनापति राकपुत्र वाइव उन्हें रोक न सके। नेपोलियनके कुछ दूर अगि बढ़ने पर अष्ट्रीय सम्राट्ने उनसे सन्धि करना चाहा। कम्पोफर्मिओ नामक स्थान पर

सन्धि हुई। फ्रांसीसियोंको उत्तर इटलीका भाग प्राप्त मिला।

युद्धमें विजय पा कर नेपोलियन राजधानीकी लौटे। देशके लोगोंने सहस्र कण्ठसे उनकी प्रशंसा की। समस्त यूरोपकी निगाह नेपोलियनकी ओर आकृष्ट हुई। अभी सब कोई नेपोलियनकी देखनेके लिये तथा उनके परिचित होनेके लिये उत्सुक हुए। इस समय नेपोलियनकी इङ्गलैण्ड पर चढ़ाई करनेका आदेश मिला। किन्तु इङ्गलैण्ड पर आक्रमण करना फ्रांसीसियोंकी आन्तरिक इच्छा न थी। अतः नेपोलियन मित्र पर चढ़ाई करनेके लिये भेजे गये। १७९८ ई०की १८वीं मईकी टूलोके बन्दरसे ४० हजार सेनाकी साथ से नेपोलियनने मित्रकी ओर यात्रा कर दी। कितने विद्वान्, पुरातत्त्वज्ञ और वैज्ञानिक व्यक्ति भी उनके साथ हो लिये। राहमें मान्टा जोत कर नेपोलियन मित्रके उपकुलमें पहुँचे।

अंग्रेजोंके जंगो जहाज उनके अनुसन्धानमें रक्षर उधर घूम रहे थे। उन्होंने फ्रांसीजंगो जहाजोंको राहमें पा कर उन पर आक्रमण किया और कितनेकी नष्ट भ्रष्ट कर डाला। इसी बीच नेपोलियन मित्रकी जीतनेके लिये दनबलके साथ अग्रसर हुए। उस समय मित्र नाममात्र तुर्कके सुनतानके अधीन रहने पर भी मान्दूक लोग वहां राज्य कर रहे थे। नेपोलियनने कई एक युद्धोंमें उन्हें परास्त किया और मित्रकी अधिकार भुक्त कर लिया। भारतवर्ष पर आक्रमण करना नेपोलियनकी एकान्त इच्छा थी। इसीसे टीपू सुलतानके साथ उन्हें ने दूत भेज कर सन्धि कर ली। यदि एक बार वे भारतवर्ष पर आ सकते, तो अंग्रेजवणिकोंको विपन्न कर डालते, इसमें सन्देह नहीं। सिख और महाराष्ट्रके साथ मित्रता कर वे नूतन साम्राज्यस्यापनमें क्षतकार्य हो सकते थे, किन्तु स्थल पथ हो कर तुर्ककी ओर अग्रसर होते समय एकर नामक स्थानकी वे जीत न सके। अंग्रेजोंको सहायतासे तुर्की सेनाने नेपोलियनकी अभिचापा धूलमें मिला दी। बेहताश ही मित्रकी लौट आए। इधर अंग्रेजी सहायतासे प्रकाण्ड एक दल तुर्की सेनाने मित्र पर आक्रमण कर दिया। किन्तु नेपोलियनके

प्रीतिप्रसंगों के इतने सब मारे हुए। इस समय उन्हें
 खबर मिली, कि फ्रांस चारों ओरसे आक्रामक हुआ है।
 पड़ोय इंग्लैंड ने उन्हें तोड़ कर इटली पर आक्रमण कर
 देनेकी बात लिखा है। अतएव राजाकेनि सुयोग वा कर
 फ्रांसके निरुद्ध घेना भोजी है। परानोसो कई एक हुजूमि
 पराप्त हो चुके हैं। फिर क्या था! वीर नेपोलियनने
 कोबर्गकी सभानियां होइ गईं। अंत्यकाय मी फिर
 रथ न सके। मिश्रयावनकी सुभयका कर पोर
 बाइसो सेनापति कोवरको सेनापति बना नेपोलियन कुछ
 पनुचरों वीर सेनाकोके साथ एक छुद्र पोट पर धारोइय
 हुए पोर वप्रिवाके कूच होते हुए पामि बड़े। १७८८
 ई०की २२वीं अगस्तको कर्नामे अट्टेयको यात्रा को पोर
 ३१ दिन समुद्रपर्यटन रथ करके फ्रांसके उपकूलमें पहुँचे।
 राजमें पधेनी कइो कजाकने कनके छुद्र पोटका पोहा
 लिखा था। सेडिन ईकरकी कपाके नेपोलियन हुमान
 पूर्वक करानमें पहुँच गए।

इस समय फ्रांसीसी कोय डिरेक्टर-उपाधिधारी मासम-
 कर्तापो पर बहुत नियंत्रण थे। स्वायंकोमुप डिरेक्टर
 सेयकी मनाईकी पोर कर मी प्रधान नहीं देते थे। अतः
 शासनप्रथाकीमें डेर डेर करनीकी आवश्यकता हुई थी।
 सेयके कमी मनुष्य नेपोलियनके प्रागमन पर विधिय उखा
 विंग हुए। सब कोई कनकी सम्झौता करनी लगी,
 किन्तु कोई कोई डिरेक्टर उनके प्रतिद्वन्द्व थापरकमें प्रवृत्त
 हुए। वे जो सभेके प्रिय हो गये हैं यह कुछ स्वायं-
 पर डिरेक्टरों को अक्षय न बना। यहां तक कि वे
 उन्हें आक्रामकारी समझ कर पकड़ने पोर बन्दे करनी-
 की मी तैयार हो गए। इतका यह यह हुआ कि नेपोलि-
 यन डिरेक्टरों को समताका सोप कर पाप को सर्वोच्चको
 हो गए। बिना किसी मूलप्रणालीके कइोने धारी
 अमता अपने हाथमें कर ली थी। पाप प्रधान कान्पन
 (Consul) इने पोर पत्त हो अन्ति कनके सहाकारी
 हुए। मूलतः शासनप्रथाको बदली गई। अब किसीने
 नेपोलियनको आबं प्रणालीको सहाय।

अन्तर्गत सर्वसंयुक्तों को नेपोलियनने प्रथमतः यूरो
 पीय राजाको के साथ सम्मिलापनको चेता को। कइो
 कन्वेंटमें मी राजकी अधिपतिको नेपोलियनके साथ

बन्धि करकेके लिए एक पत्र लिखा। सेडिन कर्णोंने
 पत्रिका पकट को। पत्रिको प्राग न देख नेपोलियन
 हुजूमो तैयारो करनी लगी। किन्तु उस समय फ्रांसकी
 आन्तरिक परका रतनी शोचनीय थी, कि वे बहुत
 घटने पानोस इकार सेना सुटा चके थे। इतर पड़ोय
 सेनाने इटलीको जोत कर फ्रांसो सेनापति सेनेनाको
 त्रिनोया नगरमें पकड कर रखा था। नेपोलियनकी
 सेना महादुरारोच पाकस परकतं लय गिधरको पार
 कर पड़ोय सेनाके पक्षागमें पहुँचो। कर्णोंने मनुष्य
 प्रायमगको पादद्वार मी से इसोसे वे सहाय
 कनकी वति रोच न सके। अन्तमें मरीको नामक ज्ञान
 पर योग सेनामें सुदमीइ हुई। पड़ोय सेनापति
 मिशरने घाट इकार सेना से फरासामिती पर आक्रमण
 कर कर्णों किच मिय भर कासा। इस समय फ्रांसी
 सेनाकी सख्या कुछ घाट इकार हो। नेपोलियन
 यद्यपि समय नुबलकमें उपलब्ध थे, तो मी के मिशरको
 गीत रोच न सके। कोनीं पथमें अममान नुबलकने अगा।
 फ्रांसोसेनामें हुजूम पौठ दिखलाई। मिशरने अपनेको
 हुजूम अयो समझ यूरोपीय राजाको को पत्र लिखा कि
 नेपोलियनको हुजूम पराप्त कर दिया। किन्तु कुछ देर
 बाद ही फ्रांसवे एक हक सेना पहुँची। इस बार मिशर
 पराजित हुए पोर समस्त इटली मनुष्ये हाव पर्यं कर
 पाप ज्ञान से कर कलेयको भागी। नेपोलियन मो कइोई
 जोत कर राजधानीको लोटे। पड़ोय मन्व्यट पराजित
 होने पर मो सहाय सन्धि करकेको तैयार न हुए। केवल
 कुछ कास तक नुबलक रहा। बाद फिरवे कोनीं को
 बक-परीया हुई। इस बार पड़ोय मन्व्यटने पराजित हो
 अन्तिके लिए मासम को पोर नुबलक प्रदेय फ्रांसीसियों-
 को देनेका वचन दिया।

पड़ोय समसंयुक्तने अब देना कि उनके मिशरान
 पक्षीय-सन्व्यट फ्रांसिसियोंके वे अन्तिपुत्रमें पाकस को नप
 है, तब कर्णोंने मो अट्टेयके सहायनेतिको को अन्वय
 के कर नेपोलियनके साथ सन्धि करनेको इच्छा प्रकट
 की। पड़ोय-सुत नाडं कानं दाविचकी चेष्टाके सन्धि
 स्थापित हुई। कइो एम्पिको सन्धि बहमातो है।
 १८०१ ई०की २०वीं मार्चको यह सन्धिपत्र साक्षरित

हुआ था। इस सन्धि द्वारा अंगरेजों ने सिंहाल छोड़ कर युद्धक्षेत्र सभी स्थान फरामो और श्रीलन्दाजों को दे दिए थे। इसके बाद यूरोपीय अन्यान्य राजाओं के साथ सन्धि स्थापित हुई। इतने दिनों तक यूरोप में जो महासमर की आग धक्क रही थी, वह नेपोलियन की चेतामि बुत गई। फरामोसियों ने कृतज्ञता के चिह्नस्वरूप उन्हें यावज्जीवन कान्मन बना कर उच्चराधिकारी निर्देश करनेकी क्षमता प्रदान की।

इस समय फ्रान्स के भूतपूर्व राजवंशोय राजपुत्र लुई ने फ्रान्स के सिंहासनको फिरसे पानेकी आगामे नेपोलियनको पत्र लिखा था। जब वे स्वराज्यमें पुनः प्रतिष्ठित हुए, तब उन्होंने नेपोलियनको पुरस्कारस्वरूप सर्वोच्च पद देनेकी इच्छा की थी, लेकिन कई एक कारणोंसे वे अपना अभिनाय पूरा कर न सके। इन्होंने लुईको जो राजसिंहासन पर प्रतिष्ठित किया, इस पर फ्रान्सको लोग मन ही मन बहुत विगडे और नेपोलियनकी श्रद्धा करनेका प्रहयन्त्र करने लगे। एक बार वे गुप्तभाष्यमें नेपोलियनको अग्रगण्यको राक्षमें वाह्यसे उड़ा देने गए थे, लेकिन कृतकार्य न हुए। नेपोलियनने दया दिखाना कर देगमें ताहित जिन सब फरामोसियोंको श्रद्धेश लौटने का अधिकार दिया था, आज वे ही लोग भवसर पा कर उनके प्राणनामको चेता करने लगे।

एमिन्सकी सन्धिके बाद अंगरेज लोग वाणिज्य-विस्तार करनेका रास्ता ढूँढ़ने लगे। लेकिन नेपोलियनने फ्रान्समें व्यापार करनेको उन्हें अनुमति न दी, क्योंकि ऐसा करनेसे फरामोसियोंके गिल्डवाणिज्यमें धक्का लग सकता था। इस पर अंगरेज बहुत असन्तुष्ट हुए और उन्होंने भूमध्यसागरका माव्टा नामक झुंड द्वीप ले कर सन्धि तोड़ दी। पूर्वकन सन्धि द्वारा अंगरेजोंने माव्टा छोड़ देना चहा था। लेकिन जितना ही दिन गत होने लगा, उतनी ही उक्त द्वीप छोड़नेकी उन्हें ममता होने लगी। नेपोलियन सन्धिगतके प्रसुसार काम करनेके लिये अंगरेजों दूतको धमकाने लगे। अन्तमें १८०३ ई०के सेंडे मासमें अंगरेजोंके साथ नेपोलियनका विवाद छिड़ गया। एमिन्सकी सन्धिके केवल एक वर्ष सोलह दिनके बाद ही दोनों पक्ष युद्धको तैयारो करने लगे। युद्ध-

घोषणा करनेके पहले अंगरेजों जंगोजहाजन फरामोके कितने ही वाणिज्ययोर्ताको रोक रक्का। नेपोलियनने भी इसका बदला लेनेके लिये फ्रान्स और तटक्षिन्न देशोंमें जो सब अंगरेज मौजूद थे उन्हें कैद कर लिया। बाद इङ्गलैण्डेश्वरके पेटेकरान्य हैनोवरको फरामोसियोंने जित लिया। किन्तु तिसमें यह महा समरान्त्र शोध ही बुत जाय इसके लिये नेपोलियन खूब कोशिश करने लगे। अंगरेज लोग जलयुद्धमें प्रबल हैं, उनको शर्य-सहायतामें यूरोपीय सभी राजा फ्रान्सके गठु हो सकते हैं यह नेपोलियन अच्छी तरह जानते थे। अंगरेज-जातिको विगेष विपन्न करनेके लिये उनको उल्टा इच्छा ही गई। उन्होंने इङ्गलैण्ड पर चढ़ाई करनेका सहाय्य कर लिया। किन्तु फरामो स्थलयुद्धमें प्रबल होने पर भी जलयुद्धमें अंगरेजोंके समान न थे। इस कारण वे जंगो जहाज बनानेका उद्योग करने लगे। फ्रान्सके सभी लीगोंने इस कार्यमें असाधारण उत्साह दिखलाया। बहुतसे लीगोंने धनःप्रवृत्त हो कर तन मन धनसे सहायता दी। फ्रान्सके समुद्रोपकरणमें छोटे बड़े सभी तरह के जंगो जहाज बनने लगे। बुलोनियां आदि स्थानोंमें बहुतसंख्यक सेना एकत्रित हुई। यह भारी युद्धमत्वा टैंग कर अंगरेज लोग डर गए। इस समय विलियम पिट इङ्गलैण्डके प्रधान मन्त्री थे। वे बुद्धिकोपलसे नेपोलियनको पराजित करनेकी चेष्टा करने लगे। उनके राजनीति-कौशलमें क्षमियां, अट्टिया और नेपलम आदि स्थानोंके राजगण फ्रान्स पर आक्रमण करनेकी सहमत हुए। पिट साहबने उन्हें युद्धके सभी खर्च देनेके वचन दिये। इंगलैण्डकी शर्य-सहायतामें अट्टीय और रुमसवाट्, मैन्स संघर्ष करने लगे। यह खेवर नेपोलियनको लग गई, किन्तु वे अच्छी तरह जानते थे कि इङ्गलैण्ड पर चढ़ाई कर देनेमें ही वे सब भावी उपद्रव दूर हो जायंगे। इस कारण वे उरोंकी कोशिश करने लगे। इधर नेपोलियनको गुप्तभाष्यसे मरनेके लिये बोर्वाण्डोय लोग मोका डूढ़ रहे थे। दो एक सेनापतियोंमें भी इस चक्रान्तमें साँध दिया। एक राजपुत्र फ्रान्सके मोमान्तभागमें रह कर फ्रान्स पर आक्रमण करनेके भवसरकी खोजमें थे। किन्तु देवक्रामसे फरामो

मुसिमको हलको ध्वज मड मिम मई । उनरि यजने मङ्गलकातो पङ्कट गए । सब बिधीने पगना पपराय सोबार बिद्या पोर चङ्गी कथा कि उर्ये पङ्कटको वीं दोरि पर्यवसायता मिने है । धृतव्यवहियो मिने बिधी बिधीने सज्जाले माए पाकहत्या कर हाकी पोर कुह बलादके हाथमे कमपुर निभारे । घोमाग्याको राजपुत्र भी पङ्कट गए । सामरिकबिचारानयमे उनका विचार बुधा पोर हाथदण्डकी प्राप्ता मिनी । निजोमियनको यदि समय पर एक सज्जाल मिमना, तो नयाव या कि ये उर्ये मानदण्डकी प्राप्तासे सुख कर देने, सिद्धि पिया नही हुया । हमरि कारि कीर कीरि निजोमियनको दोषो बनावि है । जो कुह हो परानी नोय पङ्की तरह उमरु मरि है, कि निजोमियनका जोवन येवा मरुपवान है पोर सुत्रगतके हाथमे उनके प्राय को नानिको हो से नयावना है । हम कारव मोर हो उर्यो ने निजोमियनको प्राप्तासे सज्जाल पट पर परिमिन्न बिद्या । १८०३ ई०के नवम्बर माघमे उनकी परिमिन्नबिद्या कायव हुई थो । रोमसे पोमने पा कर न्यय उर्ये सज्जाल मे पट पर परिमिन्न बिद्या मा । पदमे कमो भी बिधी हाथासे परिमिन्न काममे दोष नही पाव है ।

सज्जालपट पर बैठ कर निजोमियनने इङ्गलैण्डसे पुन मन्त्रि करनेकी बिद्या की । उर्ये एक पङ्की तरह मान्म का, कि परमाननके एक बार अङ्कित होनेसे यह सङ्गमे पुङ्कनेको नही । इस कारव सन्धिक लिखे प्रायना करति हुए उनाने इङ्गलैण्डको एक पत्र लिपा, सिद्धि पङ्कट मरमेण्डने मन्त्रि करनेमे परिमिन्न प्रकट की । विर क्या बा । निजोमियन कर इटनेनाके से सुरत हो बुद्धको ती यारो करने मने । उर्येनि पङ्कटके से सपुत्रके बिभारे एक नाय माड इमार बिना पोर बहुस दरव बुधोकरव म पद कर रङ्गे थो । नैम्य पाव इटनेको बिगतको नाथे भी घ घरीत हुई थो । सिद्धि बिना एक पैदा नैयोत्रहाके उर्येनि पाता करना पङ्का न बमभा । हमरि नोबेनापति एक पैदा न लोचहात्र से कर परमेरका गए हुए थो । हाथो प नरीकी रचपोतने भी उनका जोडा बिद्या बा । से लोट कर अनेके उपहृस-मे कर्पलिन हुए पोर उर्येने एक पैदा पङ्कटको बहाव

को पराप्त बिद्या । निम्नु बिदति रचपोतके सामान्यदमे सतिपस्त हो जनेसे कारव, से मुहोयनोमे पङ्कट न बको । निजोमियन पङ्कटमात्रके नोबेनापतिसे परामनको प्रतीया कर रहे थो । सेनापतिके समय पर नही पङ्कटनेके कारव से बहुत पचमुट हुए । इही सेनापतिके दोपमे परामने करानी रचपोत बिभन्न हुया था । निजोमियनने इङ्गलैण्ड-प्राप्तमन्त्रका जो सङ्कल्प बिद्या या कबे त्याग कर पङ्कटकी पोर याता कर दो । उनके नोबेनापति यदि समय पर पङ्कट करि, तो इङ्गलैण्डके पङ्कटमे क्या जोता, कब नही सकति । भाष्यनमसे इङ्गलैण्डने रचा पाई । इकर पङ्कटपणेनाने प्राप्ताके मितराज्य पर प्राप्तामन्त्र कर उक्तम नामक कामको शीत लिवा । दस सेना उनका साव देनके नियो बहून त्रिओसे पायि बङ्गे । विपदका सुखक समय निजोमियनने मनेम्य ममुद्रीपुस्तको जोड़ दिया पोर बहुत सिद्धीपैचामि बङ्ग कर उनमकी पको इमार पङ्कटपेनाको चारो पोमने सेर लिवा । गङ्गसेम्य पराजित पोर बन्दी हुई । सेने निजोमियनने पङ्कटको राजधानी मिनेनाको पोर कदम बङ्गावा । मिनेना भी बातकी बातमे परिमिन्न हुया । उस समय दस सेना पङ्कट मई थो । पङ्कटके न मरु कामने सेनाको सुठिहू हुई । नमनेत पङ्कट पोर दससेम्य पराजित तथा बिगट हुई । पङ्कट सज्जालने कीरि पूरवा राफा न देख सन्धि को प्राय ना को पोर न्यय का कर निजोमियनसे मिने । हम समय निजोमियन दस सज्जालको इमरनके नाय बैठ कर सकति थो, सिद्धि पिया न कर उर्येनि इदाराता दिखलाई पोर उनके माव सन्धि कर की । तदनतर से न्येय लोट । प्राप्ता पर जो ये मव विपद था पङ्कट की से बिबन इङ्गलैण्डके पत्रके पत्रान सन्धोके मुष्टि कोयसे ही । यूरोपीय नमो राजपवन प्राप्ता से विद्वह डट मये थो । पसी बन सने को पराजय हुई पोर सन्धोने मज्जा तथा चिन्ताके माए प्राय रयाग बिद्या । प्ठिको पङ्कटके बाद चारमे प्राक्क पाटि उदारातेतिको ने सन्धोका पद पाया निजोमियनके नाय सन्धि करमिन्ना उनकी पकाना इच्छा थो, सिद्धि पङ्के ही दिने के पन्दर उनकी बरहु थो बई त्रिमये सन्धि न हो मकी ।

राजधानी लोट कर निजोमियन दिग्दहतकर चारमे

लग गए, नाना स्थानों में सड़क, पुन और नहर तैयार कराने लगे। पारीशहरके निम्नभागमें जो सब पयःप्रणाली थीं उनका संस्कार किया गया। उस समय फरासी भारतीय चीनीका व्यवहार करते थे, किन्तु अंग्रेजोंके साथ युद्ध उपस्थित हो जानेसे पर्याप्त चीनीका मिलना बन्द हो गया। इस पर नेपोलियनने विट.मूलसे चीनी तैयार करनेका उपाय आविष्कृत किया। तभीसे फ्रान्स आदि देशोंमें विट्चीनी प्रचलित है। इस प्रकार चारों ओर देशहितकर कार्य करके नेपोलियन सबोंके धन्यवादके पात्र हुए। इसके पहले ही उन्होंने 'कोडनेपोलियन' नामक व्यवस्थापुस्तककी विधिवत् प्रकाशना प्रचार किया था। फ्रान्समें रोमनके यलिक धर्म विप्लवके समय अन्तर्हित हो गया था। नेपोलियनने पुनः उसकी स्थापना की। वे वंशमर्यादाका आदर न कर गुणानुसार सबोंकी राजकार्यमें नियुक्त करते और गुणी तथा विद्वान् लोगोंका सम्मान भी करते थे। विद्वत्समाजके उत्थत्सिद्धांतमें खर्च करनेसे वे जरा भी हिचकते न थे। फ्रान्समें विद्यालयकी स्थापना कर तथा बालिका-विद्यालयमें उत्साह दे कर आप वहाँ नवयुगका आविर्भाव कर गए हैं। उनको धारणा थी, कि माता अच्छी होनेसे मन्तान भी अच्छी होती है। इस कारण बालिका जिससे आवश्यक गृह-कर्म और सन्तानपालनादि भनो-भाति सीख ले, इसके लिए वे विशेष यत्नवान् थे। अपने शिक्षकके उपस्थित होने पर वे उन्हें आयातीत भेंट दे कर विदा करते थे। अपनी दुरवस्थाके समय इन्होंने जिन सब सम्भ्रान्तोंसे सहायता पाई थी उन्हें सब सहायता देनेमें विशेष आज्ञादित होते थे।

इसी समय नेपोलियनने बर्मेरिया और उरटेम्बर्गके अधिपतियोंकी राजाकी उपाधि प्रदान की। यह उपाधि आज भी वे भोग कर रहे हैं। पीछे नेप्ल्सराजकी सिंहासनच्युत करके उस पद पर इन्होंने अपने बड़े भाई जोसेफको प्रतिष्ठित किया। उक्त राजाको इन्होंने तीन बार क्षमा करके राज्य छोड़ दिया था, किन्तु चौथी बार अङ्ग्रेजोंको उत्तेजनासे नेप्ल्सराजने फ्रान्सके विरुद्ध युद्धघोषणा कर दी थी और जब नेपोलियन अष्ट्रियामें युद्ध करने गए थे, तब उन्होंने इटलीके

फरासियों पर धावा बोल दिया था। अतः उन्हें स्वपद पर रखनेसे फ्रान्सके पक्षमें प्रतिष्ठ होगा, यह देख नेपोलियनने उन्हें पदच्युत कर दिया। नेपोलियनने फरासियोंके प्रान्तके साथ जोसेफकी अभ्यथना की थी।

१८०६ ई०के मध्यभागमें प्रूसियाके साथ नेपोलियनका युद्ध अपरिहार्य हो उठा। पहली बारके अष्ट्रीय-युद्धके समयमें प्रूसिया रूसका साथ देता था, किन्तु अष्टर्लिनमें नेपोलियनने उन्हें परास्त किया, तब फिर युद्धमें अग्रसर होनेका उन्हें साहस न हुआ। अब रूसका उत्साह और सैन्य-साहाय्य पानेकी आशासे प्रूस युद्धके निये प्रस्तुत हुआ। प्रूसियाअधिपति फ्रेडरिक विलियम शान्तस्वभावके और विद्वत् राजा थे। शान्तिके पक्षपाती होने पर भी अभी उनका मत स्थिर रह न सका। उनकी स्त्री और राजपरिवारस्य सभी भूखामो तथा सेनापतियोंके साथ एकमत हो कर उन्होंने युद्ध करना ही स्थिर कर लिया। नेपोलियन अष्ट्रिया जाते समय प्रूसियाअधिकृत किसी स्थान हो कर जानेमें बाध्य हुए थे। इस कारण मीठी मीठी बातोंसे प्रूसियाअधिपतिको इन्होंने खुश करनेकी चेष्टा भी की थी। उन्हें अपने पक्षमें रखना नेपोलियनकी एकान्त इच्छा थी। यही कारण था कि नेपोलियनने इङ्गलैण्डके अर्थशास्त्रज्ञ एडमण्ड डेविड को बुला कर उन्हें दे दिया था। अभी प्रूसवासियोंने नेपोलियनसे हालण्ड और इटलीकी छोड़ देने कहा। किन्तु नेपोलियन राजे न हुए। फिर क्या था, दोनोंमें युद्ध छिड़ गया। १८०६ ई०के सितम्बरमासमें फरासियोंने प्रूसियामें प्रवेश किया। दो एक छोटी छोटी लड़ाईके बाद जेना नामक स्थानमें पुनः दोनोंमें मुठभेड़ हो गई। कई घण्टों तक भौषण युद्ध होता रहा। पीछे प्रूसवासी पराजित हो कर भाग चले। उसी दिन प्रूसके राजाने ६३ हजार सेनाके साथ नेपोलियनके एक सेनापतिको औरस्ताद नामक स्थानमें आक्रमण किया। किन्तु सेनापतिने सिर्फ २६ हजार सेनासे उन्हें परास्त किया था। पीछे क्वबर्ग प्रूससेना भुण्डके भुण्डमें आक्रमण करने लगी। फरासियोंने उनकी राजधानी बर्लिन पर अधिकार जमा लिया। प्रूस-राज भग कर

कपडों परचमि पडु थि । नेपोलियनने मज्जु राख्य ओत कर मी दान्तिआपनकी कोमिय को चोर प्रुस-राजको जनके राज्यका पत्रिकाय सेना कर सन्धि करना पाव, किन्तु कनसन्धि को सबाइये थि सन्धि करनेको राजो न हुए । इस पर नेपोलियन बहुत गिगके चोर हुइके बिना चोर कोई दूसरा उपाय न देख कइसी चोर पप पर हुए । कसिरीके साथ पइसे कई एक छोटे कोटो सङ्गारया हुई । योके सिद्धमेक नामक खानमें जब कइसेना पपारत चीर बिभगत हुई, तब एक सन्धिाट नि कोई उपाय न देख सन्धि के निवे प्राप्त ना हो । नेपोलियनके साथ टिकसिट नामक खानमें लजकी शिट हुई । नेपोलियनने लजकी कूथ खातिर जो चोर इस प्रकार होनो कन्सुलसन्धि पावय हुए । नेपोलियन दूसरे दूसरे राजाको भी प्रतिग्रामाङ्ग खातिर देब लजके प्रति पसन्द हुए थि चोर कनसन्धिाट को पपने पपमें खानेकी कोमिय करनी ली । नेपोलियनके खानहार चोर कायै थि सुख हो कन-सन्धिाट, पसेकसन्धरने प्रतिग्रामा को थि थि लजके चिरबन्तु हो थि ।

पूरे समयमें योके एक नामक एक स्वतन्त्र राज्य था, किन्तु कइबना, पडिया चोर प्रुधिया लीनो राज्यके कडे बाट कर पपने पपने इकठमि कर लिया था । पपने प्रुधियाके पपमें जो चार भाग पके थि लजके नेपोलियन चिरबे स्नापोन कर देनिये इच्छुक हुए । पपानोके पचिपतिको राजोपाधि थि कर लजको देखाकेमि यह छोटा प्रदेश रक छोड़ा । प्रुधियाके एक दूसरा भाग थि कर देनोमि कडियेकिना नामक एक राज्य प मठन बिना चोर पपने कोटे भाई किरोमको कर्जाका राजा बनाया । इसके कुछ दिन पइसे पापके एक चोर भाई शलैके थि कइयन पर पमिबिब हुए थि ।

जब कइसे शाक बुह पस रहा था, तब समय पड्ये-सन्धिाट थिय कर चिरबे सङ्गारयो मे कारो कर रई थि, किन्तु इसके पराजित होनेके, लजकेमे सङ्गारका कुन कसोय कोइ दिया । पपके लोग लज कियोकी हुइके पसाइ देथि थि, पपके शाहाय्य करथे थि चोर हुइके खानान मे मेअके थि । किन्तु कुरोसीय दान्तिके पराजित होनेके लजकी पपने पाशाकी पर पामी किर मया । मे पशाको

दियेमे लखपक हो कर कियोको बाबिब करनी लकीं जामे देथि, पेशा पमिमाय लख लकीने प्रकट किया, लज नेपोलियनने भी पपने लजके चारियो को हुकुम दिया कि निजराख्य तथा निजराख्यने लजके पपके बाबिब बाबिब प्रुख सिधे लजे इप्त कर लो । बाबटिकनानरने मूख्य धामरके कुन तब पङ्करीकोका पञ्चद्वय भागा कन्द हो गया । कनसन्धिाट चोर नेपोलियन दोनिये पापनमे पेशो प्रतिग्रामा को कि दोनो एक दूसरेके मज्जुको निज मज्जु मा पामिं थि ।

इस समय यूरोपके मध्य सुदुर पोस्तुगलके बिना पङ्करीकोका चोर कोरे मिन्न न रहा । पपने नेपोलियनके यकीभूत हुए । चिरवतः कनसन्धिाटके कन्सुलनामके नेपोलियन पपने पपनेको कसबांगु पममने पगी । कस सन्धिाट, पसेकसन्धरने पङ्करीकोके मन्धि करमेके थिय पसुरोच किया । किन्तु पङ्करीके लोन इस पर राजो न हुए चोर शाक पाव लकीने कर्मित माथये लतर टियर । पपने थि मी पङ्करीकोके निवद सङ्गार करनेको प्रवृत्त हो गए । तदनन्तर पोस्तुमकराजको श्वपचमे जामेके थिय नेपोलियन कोमिय करने लगी । किन्तु नेपोलियन यदि धानलमाननिमिद प्रुधियापतिके पचिकीय राज्य कडु देथि तो पपन था कि थि लजकी कृतघ्नता चोर चिरबन्तुल काममें लजके जोथि । पपना लज प्रुधियाकी रानोने नेपोलियनके निवद पा कर कइयन मामद्विगं दुमं थि थिय लजके प्राय ना ली ली लज पमय यदि लजकी पावना पुरी करनी, तो प्रुधियापति लजके चिरबन्तु हो जाते, इसमें जरा मी सन्देह न था । किन्तु राजोकी हुइका कारक क लज कर नेपोलियनने लतारना लजे दिन्नाई । प्रुधियापतिके मन को मन नेपोलियनके प्रति किरल गेथि था यथो कारक था । इतर पोस्तुमकराजने नेपोलियनके कइयनपुकार लज पङ्करीकोका पस छोड़ा तब लजके लजके राज्य पर पञ्चमक कर कडे जेत लिया । १८०० ई०के शिवमें यह घटना हुई थी ।

इस समय स्पेनदेशीय राजपरिचारके मध्य पङ्करीकोका लजपात हुआ । राजा पपनके राजकाय की चोर ध्यान लकी देथि थि । राजोके प्रियपातकी राज काय कइते थि । प्रधान मन्त्री पपने इच्छातुसार पस लकी

यस ठहरे शासितपुत्र मोन करमे नहो दिने छै । हुनके
कारणसे ही कर पन्ध तब हजारी को करवाटो हुई
तबा थोचितपात मो हुया । सिद्धितकर कार्यमें ध्यान
देनेबा पसवर उरु नहो गिला । परासोनोरबके फेसामे
तबा गिबन याचिम्बे उन्नति-कार्यमें मो के कुछ कर न
न सके । यह सब सोच कर बिसे पुरोयेब राजन यके

याप नइ कर मर मिटना इन्को मे खिर कर बिबा । हुनको
मो त्रीसेपाहन पयब मुचयानिनी की पोर निपोनिबन
के थोरसे उरु कोरे घन्तान न बी । पता निपोलियनने
बिसे राजन योय अन्धासे बिबाइ करना चाहा । सिबिन
एक ओके एचथे बूसरी ओसे बिबाइ करना हुन कोयो
में नियेब बा । हुन कारण कोनेकारनको कोइ हेमिनी



नेपोलियन बोनापार्ट ।

धान्यकता हुई । निपोलियन को इतना कर रई से नइ
पयमे कार्यके सिधे नहो, बलिह प्राप्तको उन्नतिके सिधे ।
प्राप्त-इतके सिधे इहोमि पयमेको उन्नत कर दिया या
ओज्जानको बात बनके भागमें कुछ मो नहो हो । इकर
इधके सिधे अगलाम केसा प्रय सनीय है, उकर राज
नीतिके सिधे ओी जग बंहा की दूबचोय होने पर मो

याप बिसे बिबाइ करमेको वाक्य हुय । परासो सिनेट
बमाने उनके दइ कार्यका पनुमोहन किया । ओके
पाहनमे मो पयमी उदारता दिखका कर इधमे धर्मति
ही । पोके पद्मोय सन्धाइ-कुमारो भेरो सुदसाके साथ
निपोलियनने १८२० ई०के मई मासमें बिबाइ किया ।
१८२१ ई०के माच मासमें इधे एक मुल, उत्पन्न हुया ।

इस समय नेपोलियन तथा फ्रान्सवासियोंके आनन्दका पारावार न रहा, चारों ओर शान्ति विराजने लगी।

इस समय नेपोलियनने सुना कि रूस-सम्राट्, उनके पत्र हो कर भी अट्टिभा, प्रूसिया और स्वीडनके साथ इङ्लैण्डके वाणिज्यसम्बन्धमें नया प्रस्ताव कर रहे हैं। अपने राज्य तो कर अंग्रेजोंका वाणिज्यद्रव्य जाने न देंगे, ऐसा प्रतिज्ञा करने पर भी वे अंग्रेजोंको अपने राज्य हो कर वाणिज्यद्रव्य यूरोप जाने देते हैं। रूस-सम्राट्, मित्रता छोड़ कर प्रतिकूलताचरण कर रहे हैं तथा अपनी पराजयका बदला लेनेका मौका ठूँठ रहे हैं। शान्तिरत्नाके प्रयासो हो कर नेपोलियनने रूस-सम्राट्को अपने पक्षमें लानेकी विशेष चेष्टा की, लेकिन कोड़े फल न निकला। रूससम्राट्ने तुर्ककी पन्तर्गत कई एक प्रदेशों पर अधिकार जमाना चाहता और नेपोलियन कभी भी पोलैण्डराज्यके पुनःसंस्थापनमें कोशिश न करेंगे, ऐसा उन्होंने प्रस्ताव किया। किन्तु यह प्रस्ताव नेपोलियनको अच्छा न लगा। अतः दोनोंमें फिर युद्ध छिड़ गया।

१८१२ ई०को १३वीं जूनको तीन लाख फ्रांसीसी पदाति, साठ हजार भस्मारोही और बारह सौ कमान ले कर नेपोलियन रूस सीमान्त पर जा धमके। अष्ट्रीय और प्रूसीय सेना भी उनकी सहायताके लिये आगे बढ़ी। नेपोलियनने फिर एक बार सन्धि करनेकी चेष्टा की और रूस सम्राट्से मिलना चाहता, किन्तु वे कृतकार्य न हुए। इस समय नेपोलियन यदि पोलैण्डराज्यका पुनःसंस्थापन कर शान्त रह जाते, तो बहुत कुछ अच्छा होता; एक मासकी जातिकी स्वाधीन करना होता, रूस-सम्राट्को यूरोपीय शक्तिपुञ्जसे अलग रखना होता और रूसयुद्धमें अस्त्र शोणितपात करना न पड़ता। लेकिन ऐसा नहीं हुआ, विघाताकी गतिको कोई रोक नहीं निकला। आखिरकी फ्रांसीसी सेनाने रूसमें प्रवेश किया। शत्रुगण पद पदमें पराजित होने लगे। बरोडिना नामक स्थानमें जो भोषण युद्ध हुआ उसमें रूसवासी पराजित हो कर भाग चले। नेपोलियनने रुसियाके प्रधान नगर अस्को ले लिया। अभी वे फ्रांससे प्रायः हजार कोस दूर आ गये थे। नेपोलियनने सोच रखा था कि

वे मस्कोनगरमें शीतकाल बिता कर दूँदरे वर्ष रूसकी राजधानी सेण्ट-पिटर्सबर्ग पर आक्रमण करेंगे। लेकिन रूसवासियोंने मस्कोनगरमें आग लगा कर उनकी आशाको निमूल कर दिया। मस्को नगरके भस्मीभूत हो जानेसे शत्रुमित्र सभी विपन्न हो गए। मस्कोनिवासी रुसियोंकी दुरवस्थाका शेष हो गया। नेपोलियन यथासाध्य उनकी सहायता करने लगे। वे रुसियोंकी वर्धरता और निहुरतासे किंकर्षणविमुक्त हो गए। अतः इस समय इन्होंने मस्को नगरका परित्यग कर वापिस जाना ही अच्छा समझा।

१८वीं अक्तूबरको फ्रांसियोंने मस्कोनगर छोड़ दिया। शहर दारुण गीतका भी समय पहुँच गया, तुपारपात होने लगा। कुहासे से चारों दिशाएँ आच्छादित हो गईं। दिनको भी राह देख न पढ़ने लगी। भोजनके अभावसे घोड़े और सेनाके प्राण निकलने लगे। ये सब दुर्घटनाएँ देख कर नेपोलियन बहुत कातर हुए और स्वयं पैदल चल कर उनकी साथ दृष्टानुभूति दिखाने लगे। इस तरह ३० दिनका रास्ता तै कर नेपोलियन सकुशल पोलैण्ड पहुँचे। उनकी सेनाओंमेंसे बहुतोंको शत्रु हई और बहुत थोड़ी बच गईं।

नेपोलियनकी दुरवस्थाका संवाद पा कर जो सब उनके मित्र थे वे भी गतु हो गए। सबसे पहले प्रूसियाधिनितिन अस्त्र धारण किया। नेपोलियनके खसुर अष्ट्रीय-सम्राट्, भीतर ही भीतर युद्धका आयोजन करने लगे। नेपोलियनके जो सब सेनापति उनकी कृपासे स्वीडनके राजा हो गए थे, उन्होंने भी नेपोलियन तथा निज जन्म भूमिके विरुद्ध अस्त्रधारण किया। अंग्रेज गवर्नमेंटने सर्वोंकी अर्थसाहाय्य कारिका बचन दिया। स्पेनदेशमें भी दूने उत्साहके साथ युद्धारम्भ हुआ। स्पेनमें अंग्रेजसेनापति आर्क आर्थरलेलिङ्गटन फ्रांसीसीसेनापति मेसिनासे पराजित हो कर लिस्बन् देशमें भाग गए थे। इस समय उन्होंने भी फिरसे उत्साहके साथ अंग्रेजों से स्पेनमें प्रवेश किया। नेपोलियन और फ्रांसो इससे जरा भी न डरे और लड़ाईको तैयारी करने लगे। किन्तु इस बार वे शिथिल बहुर्यी सेनाके बदलेमें अल्प-वयस्क अर्धशिथिल सेनाको साथ ले बढे। यद्यपि ये

लोग समझते बड़ेत कबसे घोर नौ बिलव है, तो मो
 रानी लड्डिन घोर बड्डिन नामक स्थानमें बड़ब कबब
 मरु सेनाकी बातकी बातमें परास्त कर डाला। नेपोलि
 यनने कुँसडिनको बख्तिमें कर लिखा। साक्षमनेके राजा
 ने नेपोलियनका पक्ष नहीं छोड़ा था रानीने मरु पीने
 कनके राज्य पर आक्रमण किया। यमो नेपोलियनने
 उन्हें अपनी राज्यामें पुनः प्रतिष्ठित किया। इससे बाद
 कुछ दिन तक लड़ाई बन्द रखनेके लिये कुछ उच्चाटने
 प्रस्थाप किया। सम्भिरवापनकी धारा पर नेपोलियन
 ने उसे लौकार कर लिया। यहोयनस्थाटके मन्त्रालयमें
 यन्त्रिकी बातचीत होने लगी, किन्तु सम्भिर करनेकी
 राजाकीको दख्खा न थी। ये पच्छी तरह प्रशुत नहीं
 थे इस कारण कर्नलिन कुछ काब तक कुछ बन्द रखा था।
 जब वे पच्छी तरह प्रशुत हो गए, तब यहोयनस्थाट
 अपनी सभ्यताको घोर बूझ मो ख्यात न करती हुए तोन
 काय सेनाके हाथ कुछ करनीके लिये तैयार हो गए।
 इससे बाद वे सभके सब पशुबिष मत शाना कर बैठे।
 लोकि पैसा करनेके नेपोलियन लौकार नहीं करेगे।
 जो कुछ हो, इस समय नेपोलियन यदि सम्भिरके
 लौकार करे, तो चारों घोर यान्त्रिक विराजतो। कितना
 की अपमानकर घोर बन्धननक लो न होता
 नेपोलियनको बड़ सम्भिर लौकार करना कर्तव्य था।
 यहोयनस्थाटने अब देखा कि नेपोलियन रहने राजा
 नहीं है तब लण्डने मो मरुके दलमें योग दिया।
 मरु पीने चारों घोरने नेपोलियनको घेर लिया। कुँसडिन
 के कुछने नेपोलियनने लख, मरु घोर पक्षीयनेगाके लख
 अब काम ली। घनेकी मरुसेना मारो गई। किन्तु
 कुछके बाद नेपोलियनके यहथा पीड़ित हो जानेसे कुछ
 कबका बम्बक पक्ष में काम कर न सके। नको तो
 कुछके बाद हो मरुमन्त्र सम्भिर करनेको नाप्य होय।
 शिकन ईखर इस घमघ लने पशुबूके है।

तदनन्तर यूरोपीय राजबब चारों घोरने नेपोलियन
 पर आक्रमण करती ली। यहकुछदमें लार्ने नेपोलियन
 लय अपकित नहीं रहते थे, लन कर कुछने के लयो होने
 ली। यन्त्रमें बिचबिच नगरमें दोनों पक्षको सेनाके
 लुकाबात हो गई। बिबित राजापीके पक्षमें प्राय ४

काब सेना लो घोर नेपोलियनके पक्षमें बिलब डेड नाव।
 दो दिन तक घनघोर लुड होता रहा। तोस लकार मरुन
 सेना मरुके समय नेपोलियनका पक्ष छोड़ कर मरु लक्षमें
 मिल गई। इससे नेपोलियन लरा मो न कर, शिकन इस
 समय लखे माखूम पड़ा कि कुछको घामपो लुन पीप हो
 गई, लतनो मो लोको या बाकह लको है जिससे पूर्व
 दिन कुछ लिया जाब। पता इस समय नेपोलियनको
 लड़ाईमें पीठ दिखानो पड़ो। इससे पक्षके लर्नलिन
 लोत कर लई सैन्धव स्थापन करनीको लोका था किन्तु
 सेनापतिको दख्खा नको होनेसे वे भी पा कर न सके।
 यमो लखे बट कर प्रायसोमामें धाना पड़ा। चारों
 घोरने प्रायस पाखान्त लुका। पशुयानको तरह मरु
 सेना प्रायसमें प्रवेश करने लयो। इस समय नेपोलियन
 ने ल्दिनेके राजकुमार लर्नलिनके लो पित्रराज्य छोड़
 दिया। किन्तु इस पर मो लुड मान्य न लुका। ल्दिनेय
 घोर लर्नलिनको सेनानि दक्षिणको घोरने प्रायस पर राज
 मंच किया। पूर्व दिशासे पशुबसेना दक्षिण दक्षमें पक्ष
 सर हुई। लत्तारे लख, मरु घोर लोडिनको सेनानि
 प्रायसको घेर लिया। नेपोलियन अपनी मौरस घोर
 लरुलकोयल दिखबासी हुए तोन मास तक मरु लोको
 रोके रह्ये। किन्तु एक मरुदलके विनल होनेसे लका इन
 पा कर लक्षकी मुष्टि करने लगा। किन्तु नेपोलियन
 नया लक्ष य लख करनेमें बिलकुल पक्षमर् यी। ऐको
 ललतने मो नेपोलियनने मुडो लर सेनाके बहुत कबब
 मरु सेनाको परास्त किया। किन्तु इस पर मो लखे
 कोई पच्छा पक्ष लघन लना। लोको मरुसेनाको
 वे पक्षको लकार सेनाके लब तक रोके रख लर्नलिन। लब
 के लखर पक्ष घोर स माखने पर है, तब लखर मरु सेना
 लुवरी घोर लर्नलिन कर दितो लो। तीन मास पश्चिमात्
 लुके बाद मरुसेनानि राजबासी पाटी नगर पर पश्चि
 कार लमा लिका। इनके बिबलुय सेनापति घोर लर्नलिन
 चारिगब लिवके मरु लोका साक्ष ली है। शिकन सेना
 घोर लनता नेपोलियनके लिये लाल देनेकी धरतुत ली।

यूरोपीय राजाघोने लोपीन लोको लो प्रायसके लक्ष
 लि लानन पर प्रतिष्ठित किया। नेपोलियन बड़ ललसे लो
 कुछ दिन घोर लुड लला ललती है। लेकिन यन्त्रलिनो

जैसे सुयो पुरुष थे, उनका स्वभाव भी वैसा ही उल्टा था। उनको सेना देवता सरोखा उनकी भक्ति करती थी। वे सर्वसाधारणकी श्रद्धाके पात्र थे। फरासी लोग आज भी उनका नाम भक्तिपूर्वक लेते हैं। उनकी नाम पर आज भी सभी उस्ताइसे उत्फुल्ल होते हैं। नेपोलियनके चिरगढ़, अंग्रेज लोग भी आज उनको भूयसे प्रशंसा करनेमें कार्पण्य नहीं दिखलाते। इधर कच्छो उमरमें उहोंने युद्धविषय में वे सो गारदगिना दिखलाई थो, वडे हीने पर अद्धशास्त्रमें वेसा ही नाम भी कमा लिया था। समय समय पर उनको दयाशोलताका भी विशेष परिचय पाया गया है। जिन सब व्यक्तियोंके साथ बाख्यकालमें तथा सैनिकवृत्तिके अवलम्बनकालमें उनका आन्तरिक आलाप हुआ था, सम्राट्-पद पानेके साथ ही उहोंने उन सबको यथोपयुक्त कर्मपद भूयवा वेतनस्वरूप कुछ अर्थका वन्दोवन्त कर उहें सन्तुष्ट किया था। विद्यालयमें पढ़ते समय जिहोंने नेपोलियनको हस्तलिपि सिखलाई थो, अर्थाभाव जताने पर वे उन बाख्यगुरुको उसो प्रकार पुरस्कार दे कर उनके उपकृत हुए थे। पूर्वोक्त वर्फका किला बनते समय किसी सहपाठीके साथ इनकी अनवन हो गई थी इस पर वर्फके टुकड़ेसे उहोंने उसे ऐसा खींच कर मारा कि उसके मस्तकसे लोइ बह निकला था। नेपोलियनको उन्नतिके समय जब उम बालकने उनके पास जा कर पूर्वोक्त बातकी याद दिलाई, तब नेपोलियनने उसे पहचान लिया और यथोचित सहायता दे कर दयाको पराकाष्ठा दिखलाई थो। जिस डिमासिथके अर्थसे एक दिन नेपोलियन परिवारका गुजारा चलता था, वीर नेपोलियन जब फ्रांसके सर्ववादिसम्मत राजा हुए, तब उहोंने उनका ऋण परिशोध कर अपनीकी कृतार्थ समझा था।

नेफा (फा० पु०) पायजामे लहनेके घेरमें हजारबंद या नाइ पिरोनिका स्थान।

नेत्र (हि० पु) सहायक, मंत्री, दीवान।

नेवू (हि० पु०) नौवू देखो।

नेम (सं० पु०) नयतीति नो मन् (भाषिस्तुष्टिति ।

७७ ११३८) १ काल, समय। २ अवधि। ३ खण्ड, टुकड़ा। ४ प्राकार, दीवार। ५ कैतव, छल। ६ अर्थ,

आधा। ७ गन्त, गड़ा। ८ नाट्यादि। ९ अन्य, और। १० सायंकाल, शाम। ११ मूल, जड़। १२ अन्न, अनाज।

नेम (हि० पु०) १ नियम, कायदा, बंधन। २ बँधी हुई बात, एसी बात जो टलतो न हो। ३ रीति, दस्तर। नेमधित (सं० त्रि०) नेमं हितः, नेम-धा-क्ति, तनो धाञो हि। अर्थभागधारी इन्द्र।

नेमधिति (सं० स्त्री०) नेम-धा-क्तिन्, धाञो हि। १ अन्तर्धान। नेमं धोयतेऽत्र ध-क्तिन्। २ संग्राम, युद्ध।

नेमन्धिप (सं० त्रि०) नमस्कार पूर्वक गमनकारी, जो प्रणाम करते अपनी राह लेता हो।

नेमनायसिद्ध एक ग्रन्थकार। नित्यभाष देखो।

नेमादित्य—दमयन्तीकथा वा नलचम्पू नामक ग्रन्थके प्रणेता। ये त्रिविक्रमभट्टके पिता और श्रीधर पण्डितके पुत्र थे। इनका गोत्र शाण्डिल्य था।

नेमावुर—मालवप्रदेशके अन्तर्गत हिन्दियाके दूसरे किनारे नर्मदा तट पर स्थित एक नगर। यह अक्षा० २२° २७' ३०" और देशा० ७७° ५०' के मध्य अवस्थित है। यह नगर होलकरराजके अधीन है।

नेमि (सं० स्त्री०) नयति चक्रमिति नो-मि। (नियोगि।

उण ४।३३) १ चक्रपरिधि, पहिएका घेरा वा चक्र।

पर्याय—प्रधि और नेमो। कूपोपरिस्थित पट्टप्रान्तभाग,

कूपके ऊपर चारों ओर बँधा हुआ ऊँचा स्थान या चम्पू-

तरा। ३ प्रान्तभाग, किनारेका हिस्सा। ४ भूमिस्थित

कूपपट्ट, कूपके ऊपर। ५ कूप समीपमें रज्जुधारणार्थ

त्रिदारु यन्त्र, कूपके किनारे लकड़ीका बड़ा टाँचा जिस

पर रस्सी रखते और जिसमें प्रायः घिरनो लगे रहती

है। इसका पर्याय त्रिका है। ६ कूपके निकट समान

स्थल, कूपके समीपको समतल जगह। (पु०) ७ नेमिनाथ

तीर्थहर। ८ दैत्यविशेष, एक असुरका नाम। १० वज्र।

नेमियाम—चन्द्रहोपके अन्तर्गत एक ग्राम।

नेमिचक्र (सं० पु०) परीक्षितके वंशके एक राजा जो

असीमकण्ठके पुत्र थे। उहोंने कौशाम्बोमें अपनी राज-

धानो बसाई थो। (भाष्यत० ८।२२ ३८)

नेमिचन्द्र—एक विख्यात तार्किक। ये वैश्वाम्बोके

गिय और सागरेन्द्रमुनिके गुरु थे। सागरेन्द्रके शिष्य

मासिकचन्द्रमे १२०६ मन्वत्को अर्थात् पञ्चमे इतथा
उक्तं च विद्या है ।

मैमिषम् विज्ञानदेव—एक विज्ञान पंडित पौर मासिक
चन्द्र में विद्यते सुख । इन्हींको पनाहने उक्त मासिकचन्द्र
में विद्यते मासकी मायामि विद्यते तिस्रोपचार वा तिस्रोच
चार पञ्चमी डोका सख्त मायामि सिद्धी ।

मैमिषम्पुरि—उत्तराखण्डप्रति गामक बैलपुत्रके डोका-
कार । डोकाके पत्नये पञ्च वारमी धामपरिचय दिवा है ।

इन्हींने पाञ्चानमविशेष पौर वीररचित डोका नामक
पौर मी हो पञ्च रहे हैं । इनका पार्दनाम ऐबैम्भुमवि
हा । पीछे इन्हींसे हान्तिव मिरोमविही उपरि पञ्च
थी । वे इहद गच्छ गानासम्पूत थे ।

मैमितोव—एक पवित्र तोषांज्ञान । चैतन्यदेव य श्वास
वर्मके प्रचारके शिष्ट अब नागा प्लानोमि अमव कर रहे
थे, तब उन्होंने इसी मैमितोवमें ज्ञान पौर इसके वाद
पर विचार किया था ।

मैमिषु (४० पु०) मैमि अर्धमज्जास्तीति मैमि-इति ।
तिनिग्रह्य, निवास तिनसुग्य ।

मैमिमाय—एवं वीन तोषांज्ञान । इनका कुररा नाम था
मैमि वा अरिहमेमि । ये राजा समुद्रविजयके पौरस पौर
राजी सिवादेवीके मर्मके ८ मास ८ दिन गर्भवासके बाद
हरिब यजुसमें जावको यज्ञपत्रको अघारायि बिना
नपत्रको धीरोपूर नगरमें पनतोष हुए । इनका उल्लस
विजय मह, यरोस्मान १० अनु, नव ग्याम पौर पादु
काय इजार नवका था । राजकुमार पञ्चधारच समता
माथी थे । बसुदेवके पुत्र योह्यक पापके स्वाहयम्पर्वीय
थे । हिन्दूधर्मशास्त्रमें गोवर्धनचारी योह्यकको पनेक
पनौडिक समताका उल्लेख है । जनश्रुति है कि नारायण
चतवार द्वारवापति कथ्यके सिवा पौर कोई भी जनका
पाह्यत्रय मह ब्रजा नहीं पकते थे । एक दिन ऐसा हुआ कि
मैमिमायने योह्यकके रचित महको से कर अर्ध मोरके
ब्रजावा । योह्यक दूरसे महनाद सुन कर बहुत तेजीके
उम ज्ञान पर पहुँच गए पौर वहां था कर लकीमि देखा
कि उनके माई की ऐमी उन्मिद अग्निके पचतम कारच
है । योह्यक ऐसी प्रद्वितीय समता देव जनकी प्रति-
द्विष्टतामें पचतर हुए । माईके अघोमवन पौर योप का
जाव करनेके लिए चतुरचक्रामचिने उनके पास एक जो

योपियां मित्रो चीं । योपकुलसनाय उनके पास पहुँच
कर उनके नागा प्रचारके विपुल करने लगीं पीर उनमें
के किचोके साव विवाद करनेको कहा । लेकिन मैमि-
मायने पञ्चत्न विरक्तमायके लिये पसोकार किया ।
पेछे विषय रूपके नाप्पित पौर तिरपुक्त होने पर वे
विवाद करनेको राबी हो गए । योह्यकका लक्ष्य था
कि मैमिमायका बौद्ध चप होनेके जो उनके पक्षयजो
सम्भावना है इस विषये वे हमेशा लकीकी चेष्टामें लगी
रहे । जनमें लकीने निर्दरके राजा उपदिनकी कथा
राज्यमतीके माय विवाद करना चाहा । निर्दरित
निर्दर मैमिमायने अनामककी पौर धाया की । नगरमें
पहुँचते जो लकीमि देखा कि नगरवासी सबके सब विवादो
मर्ममें मग्न हैं । विवाह-पद्धतिं धावृति ऐनेके लिए
पत्र क्य काम साये गए हैं, जन ज्ञानो की बलि दे कर
निर्ममित व्यक्तियों का मोक्ष होगा । एक पानोदके दिन
पत्र क्य जोवहना पौर उनका चोम्बार सुन कर इनका
हृदय अचचामे भर पाया । मानवमीवनका सुख अति
तुच्छ है ऐसा लके मासूम पड़ा, वे लीको ली पुर्नति
की कहा स्मरण कर लके की कातर हुए । पता उनको
प्राचरवाके लिये स धारायमका त्वाव कर निर्दरपत्र त
पर जा पहुँचे । नावचमासकी यज्ञावटोकी रीतम
उपके तसे लकीने एक हजार बाहुओंके साव दोषा
पत्रक की । पीछे एक दिन अचल रह कर इन्हीं दिनमें
प्राथिको पसायकाको यज्ञुचय नगरमें लके ज्ञानलाभ
हुया । इसके बाद सात जो वर्ष ज्ञानमार्गमें विचरण कर
धावाकको यज्ञाहमी तिथिको लकीने यज्ञुचय नगरमें
पसायनके बँड सोचलाम किया । अचयनत पर्वतके
विष ज्ञान पर उनको सुनि हुई थी वह ज्ञान जैन-

० अनापदके दुर्गके निचरपरीं यूरिलोडको नाक रपान-
के गार्तेरलेई इव रावशाशरका अ वारकेव नाम भी देखनेमें
लगा है । Ind. Ant. Vol. II, p 189

1) इहद उज्ज्वल और प्राइत उज्ज्वल निर्दरका नाम
नरवार है और वर्तमान अडिवाचार डिकेके अनापदके
निच अवलित है । कोई कोई इव ज्ञानके अत वगुने हैं ।
अचयनत देवी ।

मात्रका ही पवित्र तीर्थ माना जाता है। यहाँ उनके पदचिह्नके ऊपर एक छत्र निर्मित है जो नेमिनाथ-छत्रनि कल्पता है। इसके दक्षिण-पश्चिममें जो गुफा है, वह राज्यमतीका आसुरद्वार मानी जाती है *।

दक्षिणात्यवासो जैनियोंके उत्तरपुराणमें लिखा है कि त्रिवेण्यधिरपति अर्थात् त्रिजगत्के अधिपति श्रीकृष्ण ने मोर्यद्वार नेमिनाथकी शिष्यत्व ग्रहण किया था †।

हेमचन्द्रसुरि विरचित त्रिपट्टिगणाका पुरुषचरित नामक ग्रन्थमें नेमिनाथका आनुपङ्गिक इतिहास विस्तृत रूपसे लिखा है।

नेमिद्वार (स० पु०) श्वेतखदिरवृक्ष, सफेद खैरका पेड़।

नेमिग्राह—रसतरङ्गिणोटोकाकी प्रणयता।

नेमिसेन—टिगम्बर जैनियोंके माधुरसम्प्रदायके प्रन्तर्भूक्त अमितगतिके शिष्य और माधवसेनके गुरु। इन्होंने कम्पलाकर नामक एक व्यक्तिको स्वधर्ममें दीक्षित किया था।

नेमी (स० स्त्री०) नेमिवाहुलकात् लीप्। तिनगवृक्ष, तिनसुना।

नेलो (हि० वि०) १ नियमका पालन करनेवाला। २ धर्म जो दृष्टिसे पूजा, पाठ, व्रत, उपवास, आदि नियम-पूर्ण करके करनेवाला।

नेय (स० वि०) १ जाने योग्य। २ अतिवाहन।

नेयतद्वाराय मन्द्राजप्रदेशके त्रिवाङ्गुड राज्यके अन्तर्गत एक तालुक। इसका भूपरिमाण २१ वर्गमोल है। इसमें कुल मिला कर १५ ग्राम लगते हैं।

नेयपाल (स० पु०) राजपुत्रमेद।

नेयार्थता (स० स्त्री०) काव्यटोपभेद।

नेर—१ अश्वईप्रदेशके खान्देश जिलान्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २५° ५६' ३०" और देशा० ७४° ३४' पू०के मध्य, धौलियासे १८ मोल पश्चिम पंजरानदीके दाहिने किनारे अवस्थित है। पहले यह नगर विश्व सन्तुष्टिशाली था।

* गङ्गु उग्रय-माहात्म्य—१३वां अध्याय, विशेष विवरण जैन शब्दमें देखो।

† Wil. Mack, Col. Vol. 1, p. 146 and Ind. Ant. 11, p. 199

चारों ओर कत्र रहनेके कारण ऐसा प्रतीत होता है कि एक समय यहाँ अनेक सुसलमानोंका वास था। अभी पूर्वसौन्दर्यका दिनों दिन क्षाम होते देखा जाता है।

२ वरारके अमरगती जिलेके अन्तर्गत मोर्री तालुकका एक शहर। यह अक्षा० २१° १५' ३०" और देशा० ७८° २' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या पाँच हजारके करीब है। इसके निकटस्थ पर्वत पर पिङ्गली-देवीका मन्दिर है। एक समय यह बहुत बड़ा बड़ा नगर था।

नेरनाला—वरारप्रदेशके अन्तर्गत एक जिला। एजिप्टामें ली कर वरदानदी तक समस्त पार्श्वतीय भूभाग इस जिलेके अन्तर्गत है। इसका प्राचीन नाम नारायणाक्षय है। नेरनाला नगर ही सुसलमान राजाओंके समयमें इसका सट्टर गिना जाता था। १५८२ ई०में अलुफजलने लिखा है, 'इस पर्वतशिखरस्य नगरमें एक लक्ष्म दुर्ग और अनेक प्रासादतुल्य गृहादि हैं।' यह नगर पूर्णानदीके किनारे अवस्थित है। अभी इसकी पूर्वे सन्तुष्टि नष्ट हो गई है, जनसंख्या दिनों दिन घट रही है।

नेर-पिङ्गलाय—वरार राज्यके अन्तर्गत अमरावती जिलेका एक नगर।

नेरवती (हि० स्त्री०) नीली रंगकी एक पहाड़ी में लगी भीटानसे लहराव तक पाई जाती है। इसके ऊनके कम्बल आदि बनते हैं।

नेराली—अश्वई प्रदेशके धौलगांव जिलान्तर्गत एक नगर। यह शङ्कर और हुकेरो नामक स्थानके मध्य अवस्थित है। यहाँ एक दुर्ग है। सिदोजीराव निम्बलकर (अय्यासाहब)ने १७८८ ई०में उक्त दुर्ग पर आक्रमण किया था।

नेरि (नारि)—मध्यप्रदेशके चाँदा जिलेकी बरोरा तहसीलके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २३° २८' ३०" और देशा० ७८° २८' पू०के मध्य चिमूरसे ५ मोल दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। वर्त्तमान नगरके पार्श्वमें ही-पुरातन नेरिनगरका ध्वंसावशेष देखनेमें आता है। पुरातन नगर श्रीहीन हो गया है। यहाँ धान तथा तरह तरहके अनाज उपजाये जाते हैं। इसके पलावा यहाँसे तबि और पीतलके इतने दूर दूर देशोंमें भेजे जाते हैं।

पुरातन नगराभिं दो भन्वदुर्ग देखनिं पाते है ।
 वडके पन्नावा बडा एक पन्नास प्राचीन मन्दिर भी है ।
 निरिखपैर—श्रीयम्बपुर जिलेका एक नगर । यह श्रीरङ्ग-
 पत्तनके ८८ मील दक्षिण-पूर्व कावेरीनदीके पश्चिमी
 किनारे अवस्थित है । यहांके निकटवर्ती पहाड़ पर
 पत्तनका मन्दिर पाते पाते है ।

नेहुर—१ मन्दाई प्रदेशके राजमन्नावाड़ी जिलेका एक नगर ।
 यह ब्रह्मावती धोर मन्दापुर पामके मध्य बसा हुआ
 है तथा सुन्दरबाड़ी नगरमें १३ मील उत्तरमें है । १२२
 मीलमें चातुखन योग राजा विजयादिजने दिवस्वामी
 नामक एक स्थानको यह नगर दान किया था । यहांके
 पत्तनके विद्याविद्या पाते पाते है ।

२ मन्दाई प्रदेशके श्रीयम्बपुर जिलागत एक
 तातुखका एक नगर । यह पन्ना ११ ० १३ ० ७० धोर
 देगा १८ ११ ३० पूंके मध्य, कच्छके ३३ मील
 उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है । यहांके मिय धोर विष्णुके दो
 प्राचीन मन्दिर हैं ।

नेरे (हि ० जि ० नवि ०) निकट, पास, समीप ।

नेरवत—मन्दाई प्रदेशके भारदार जिलागत एक नगर ।
 यह सुन्दरके दो मील दक्षिण पश्चिम धोर ब्रह्मके १३
 मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है । यहांका सर्वेश्वर-
 मन्दिर बहुत पुराना है । इसको वत २४ सुन्दर मन्को
 के अग्र रचित है । सर्वेश्वरके मन्दिरमें ८८८ प्रथम
 लम्बोई एक विद्यालय है । इसके पन्नावा निकट-
 वर्ती पुण्डरिका तोट पर तथा बनया मन्दिरमें धोर भी
 बहुतके विद्यालय देखनेमें पाते हैं ।

नेरो—हजारीशाम जिलेके माण्डेर पर्वतके निकट धोर
 गन्धोगदोको पन्नावादिजके पश्चिम १०१० फुट ऊंचा एक
 पर्वत है ।

नेरुई—मन्दाई प्रदेशके सतारा जिलागत बनया उप
 विभायका एक नगर । यह पन्ना १० ३ ० ७० धोर देगा
 ७३ १६ ५०, यताराके ३५ मील दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित
 है । जनसंख्या ७३२३ है ।

नेरुकोट—मन्दाई प्रदेशके पन्नापुर जिलागत एक
 ग्राम । यह धोरकोलाके २३ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित
 है । इन ग्रामके पास एक प्राचीन दुर्ग है जो पत्तनवाके
 समयका बना हुआ प्रतीत होता है ।

नेरुको—मन्दाईके श्रीयम्बपुर जिलागत धोरपुर
 तातुखका एक ग्राम । यह धोरपुर नगरके १३ मील
 उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है । यहांके मिय धोर विष्णु-
 मन्दिरमें बहुतके विद्यालयका लम्बोई है ।

नेरुकेरी—मन्दाईप्रदेशके पन्नागत तिलकेको या तिर-
 केकेरी जिलेका प्राचीन नाम । विभवकी देवी ।

नेरुमण्डल—मन्दाई राज्यके पन्नागत ब्रह्मपुर जिलेका एक
 नगर । यह पन्ना १३ ६ १० ७० तथा देगा ७०
 २६ ५०के मध्य अवस्थित है । यह नगर मन्दाई
 तातुखका सदर है ।

नेरुमूर—१ मन्दाई प्रदेशके श्रीयम्बपुर जिलेके पन्नागत
 पन्नाम तातुखका एक नगर । यह पन्ना १० ३६
 १३ ० ७० धोर देगा ७० १८ २० पूंके मध्य अवस्थित है
 २ उच्च प्रदेशके मन्दाई जिलागत एगोट तातुखका
 एक ग्राम ग्राम । यह पन्ना ११ १० ७० धोर देगा
 ७६ १३ ३३ पूंके मध्य अवस्थित है । धोर, धोर, धोर
 स्थानको नेरुमूर कहते हैं ।

नेरुसन होरेयिन—दक्षिणके एक प्रसिद्ध भोजेनागत ।
 १८वीं यताब्दीके पत्तनमें इनके द्वारा दक्षिणके मन्दा-
 का मोरव विशेष बर्धित हुआ था । जब ये विद्यालयका
 में से एक समय एक बार भारतमें भी पन्ना के ।
 भारतके उपरान्तमें जो इनको विद्या पूरी हुई । धोर
 इनके ऐडमिरल निवसन' कहा करते थे ।

दक्षिणके पन्नागत मन्दाईकायरेके बाबा' मन्दा-
 डोपमें १०१८ ई०को निवसनका मध्य हुआ था । इनके
 पिताका नाम था १३० मि० निवसन । ये अपने पिताके
 इले लड़के थे । नाब' मन्दा नगरमें दक्षिणमें पन्ना
 विद्याना बोका । सेविन जब इनकी उमर केवल १२
 वर्षको ही तभी इनके मामा कन्नन साकविजने १७
 ने-नेनाविमाममें विद्याविषयमें निवृत्त किया । कन्नन
 साकविज 'देवीनेध' नामक ब्रह्मके पन्नाके थे । कुछ
 दिन बाद से भोजिनी ब्रह्म पर विद्या देन लगी । एक
 समय एक ब्रह्मके विद्व-दक्षिण वीणुकाकी धोर से
 जानेका बहुत हुआ । नेरुसन मो मामाके साथ ब्रह्म
 पर गए । जब से धोर, तब नाविनविद्यामें दक्षिण

विशेष पटुता लाभ की। इस समय राजकीय काम नहीं करने, ऐसा इन्होंने सहज्य कर लिया। किन्तु कुछ दिन के बाद ही इनके मामा जब 'टायम्प' नामक जहाजके प्रधान नियुक्त हुए, तब फिर इन्हें उनके साथ जाना पडा। १७७३ ई०में कमडोर क्रिप्प और कप्तान लाट बीजी जब उत्तर-पश्चिम समुद्र हो कर पथके प्राधिकारमें बाहर निकले, तब युवक नेलसन भी लाट बीजीके जहाज पर भर्ती हो कर उनके साथ भाग गये। इस समय अपने कौशल, साहस आदिसे इन्होंने अच्छा नाम कमा लिया।

पीछे १७७३ ई०के अक्टूबर मासमें इन्हें 'सि-हर्ष' नामक जहाज पर नौगरी मिली। वे अपनी दैनन्दिन लिपिमें लिख गये हैं कि, "कप्तान फार्मरके २० कमान-युक्त जहाजके प्रधान मस्तूल पर चढ़ कर चारों ओर दृष्टि रखनेके लिये मैं जो पहले पहल नियुक्त हुआ। कुछ दिन बाद मुझे 'कोयाटर-डेक'में काम करना पडा। इस जहाज पर रहते समय मैंने पूर्व भारतीय द्वीपपुञ्जमें और बङ्गालसे बसोराके मध्य जितने स्थान हैं प्रायः सभी देखे हैं।" जो नौदल महाराष्ट्र-युद्धके समय भारत-की ओर आया था, ऐडमिरल सर एडवर्ड ह्यूज उसके प्रधान थे। 'सि-हर्ष' जहाज कप्तान फार्मरके अधीन इनके दलमें था। अत्राहम परसन्सके भ्रमणवृत्तान्तसे भी जाना जाता है कि १७७६ ई०की १७ वीं फरवरीकी 'सि-हर्ष' जहाज बम्बई-उपकूलमें नहरर डाली हुए था। नेलसनकी दैनन्दिन लिपिमें उनके भारतदर्शनकी अभिस्रताका विषय वा उनके देखे हुए नगरादिका कोई विवरण लिपिवद्ध नहीं है। नेलसनने १७७७ ई०में स्वदेश भा कर लोफ्टेनैण्टकी परीक्षा दी। परीक्षामें उत्तीर्ण होनेके साथही वे लाउसटफ्ट, फ्रिगैटके हितोय अध्यक्ष पद पर नियुक्त हुए। अमेरिका युद्धमें यह फ्रिगैट बर्हा गया था। नेलसनने बर्हा भी नाम कमा लिया था। १७७८ ई०में इन्होंने 'पोल-कप्तान'के पद पर नियुक्त हो कर 'दक्षिणतोक' जहाजको प्रधानता लाभ की। यह जहाज ले कर वे वेष्टइण्डो द्वीपपुञ्जमें गये और मेक्सिकोपसागरके तीरवर्ती फोर्ट सानतुवनको जीतनेके लिये विशेष यत्नवान् हुए। इन युद्धके बाद वे रोग ग्रस्त हुए। आरोग्यता-लाभ करने-

के कुछ दिन बाद ही 'बलिश्मारसे' जहाजके प्रधान हो गए। पीछे इन्हें 'वोरियम' जहाजकी प्रधानता मिली। उस समय ह्यूक-प्राव-कारेन्स (वे ही चतुर्थ विलियम नामसे इन्होंने एडवर्डके राजा हुए) पैग-स नामक जहाजके कप्तान थे। यह जहाज नेलसनके अधीन था। इसी समय नेलसनका विवाह हुआ। पहले इन्होंने नेमिस द्वीपके विचारपति मि० विलियम एडवर्डकी कन्यासे, पीछे उसी द्वीपके डा० नेसविटकी विधवा पत्नीसे विवाह किया। दूसरी पत्नीके गर्भसे नेलसनके कोई सन्तान उत्पन्न न हुई।

इसके बाद फ्रान्सके साथ जब घोर युद्ध चल रहा था उस समय 'भागसेमनन' जहाजके प्रधान हो कर नेलसन टूलोशहरके सामने उपस्थित हुए। वैष्टिया अवरोधके बाद वे दक्षिण कालभौकी गये। यहाँके नौ-युद्धमें इनको दोनों पाखे नष्ट हो गईं। इस समय इनके युद्धकौशल और तोच्छुद्धिकी कथा चारों ओर फैल गई। १७८५ ई०में ऐडमिरल हथामके अधीन नेलसनने फरासी जहाजदलके साथ बड़े साहससे युद्ध किया था। १७८६ ई०में मिनर्भा जहाज पर 'कमोडोर' नियुक्त हो कर इन्होंने फरानियोंके 'सामेविन' नामक जहाजको रोक रखा। किन्तु जब इन्होंने देखा कि उनकी मददमें स्थानीय जहाज पहुँच गया है, तब वे उसे छोड़ नौ दो ग्यारह हो गये। इसके बाद ही इन्होंने सेण्ट-भिनसेण्ट बन्दरको पार कर छिपके फरासीजहाजका पीछा किया। पीछे इन्होंने स्यानटिसेमा त्रिणिदादा, सानतिकील और सानजोसेफ पर आक्रमण कर उन्हें जीत लिया। इस कार्यके पुरस्कारस्वरूप नेलसनको कै० भी० वी० की उपाधि मिली। पीछे ये कैडिज अवरोधकारो जहाजदलके अधिनायक हो कर भेजे गये। कैडिजनगरको इन्होंने गोलीसे उड़ा देना चाहा था लेकिन इसमें सफलता प्राप्त न हुई। तदनन्तर टेनरिफ्टे युद्धमें गोलीके आघातसे नेलसनकी दाहिनी भुजा नष्ट हो गई। इस युद्धमें अंग्रेजोंकी जीत नहीं हुई। आघात पा कर वे स्वदेशकी लौट गये और इन्हें वापिक एक हजार पीण्डको वृत्ति मिलने लगी। वेगन पानेके आवेदन पत्रमें लिखा है, कि वैष्टिया और कालभौ अवरोधमें इन्होंने यथेष्ट सहा

वेता कां पोर इन्हे' छत्र मिखा कर १२० बार हुइ करनि पड़े सै। पीछे बहुत दिन तक निससन सिद्धो काजमें निरुद्ध गयो हुए।

तदनंतर जब यह खबर पहुँचो कि निपोलियन बोनापार्टने टूको का परिजाम किया है तब निससन परसं 'प्राय वैप्यमिनयेप्यकी कलाइये निपोलियनका समुद्रतक करनेसे सिद्धे सिद्धि गये। निससन अग्रे जहाज से कर उठकोका उपरान्त भूम कर उनको जोरमें प्रक्षिप्तकरिया ली पोर बचकर हुए। सिद्धि नई इन्हे न' देव कर के जताय हो पड़े। पीछे निससनने विपचीको यात्रा ली। विपचीमें विपिव क बाइ पा कर १८२८ ई०में निससनने मुन्ना पडेकपरिद्धा होत हुए पाउसीके उप जामाके सुहाने पर उपरिगत हुए। यहाँ लगेने पुरा सिद्धोको प्रथम श्रेणीके कुछ सिद्धोको बहुर खासे हुए देखा। ऐडमिरल निससनने यह देखनेके साथ ही उसी समय लड़ाई शुरू कर दीन। बहुत दिना। निकटवर्ती एक पोपके खपर निपोलियनके बड़ी जहाजीकी रक्षाके लिये बसमानके भी प्रयत्न ली। हुइ सिद्धि गया; निससनने कुछ जहाज यमुके जहाज-दलमें प्रिनट हुए। यहाके मो-बल इस प्रकार होनी पोरसे पात्रात हो कर तब तक था गया। गद्दुको प्रायः चार हो गई ली, रवी समय निससनने 'एलवेरिएप्य' नामक जहाजमें प्राय लग गई। उस प्रायमें रतना मयहर उप धारक किया कि प्रतेक पीछा करनी पर भी वह न मुसी। लुनेर दिन सुनेर देखा गया कि यमुपचके दो जहाज जगत प्रबलामें उपजावरके बाहर हो कर सावरके समीप जा चके हैं, 'यन्व हमो जहाज प्रबलेश्व हो गये हैं। इस बुइका बन्दाय पोर जवको खबर इहसेप्य पहुँचो। निससन सम्मानसुचक 'वेरल प्राय दि नाररु'की मराजि के मूर्धित सिद्धे गये पौर के तमोके साइकी श्रेणीमें पिने जानि ली। उनको पियन भी बड़ा कर १ जहाज कर दी गई। विदेशमें लो इन्हे' सम्मान काम हुया बा। निससनका नै इन्हे' यपने राखके मवा मृदम्यत दे कर 'युं क पापप्रिय'की कपाविके मूर्धित किया। इससे नाइ साइ' निससन सिद्धो, गये। इस समय निससनने ब्रिटीश उपरिगत हुया बा। राजा प्राय' राजबन्त हो

गये सै। निससनको ल्या हो इसकी खपर पहु ली, ली हो बर्षा का कर इकोनि ब्रिटीश समन किया पौर राका को मुना गयी पर बिठाया। देग लोड कर साइ' निससन बड़े समारोहसे पम्पवित हुए। इस समय बुरोप-के उत्तरांगके सन्ध्यय राजापीने मिल कर इन्हे'उपको तहत गहन कर डालनेका पड़यन्त्र रचा। य गरीज नवनमोप्य यह सम्वाद पा कर कर गई पोर इस पीछा-को यव' करनेके लिये एक पैड़ा अङ्गीकृत कर तैयार किया तथा सर हाइड पाकर'को प्रजन पञ्चय पौर साइ' निससनको बितोयवह पर निरुद्ध कर अहाबके साथ भेज दिया।

यह पैड़ा जब साइडेट उपधामरमें पहुँचा, तब दिनेमारीने प्रवाली हो कर य नरकरवतरोको बानेसे रोका। री पप्रितको तीसरे पहरमें लड़ाई शिद्ध गई। दिनेमारीने १० जहाज मस्मोभून पौर निम लत वा पप्रितत हुए। ईश्वर'की रावनी लोई कपाय न देव निससनके प्राय सन्धि कर ली। पीछे साइ' निससनने सीडिनके राजाको प्राय करके लगेसे बाबडिकतारामें य गरीज बाबियवका प्रादेय ले लिया; इस कामके बाद निससन दिग लोटे। इस बार इन्हे' भाइ 'काठप'का पद प्राप्त हुया।

१८०१ ई०में निपोलियन हुपलनिके निरुद्ध इन्-स प्यको बीतन ली कामगावे विमुक्त प्रायोवन कर रई ली। निससन इस प्रायोवनको प्रय करनेके लिये समुद्र हुए। इस बार विधेय होहा करने पर लो साइ' निससन यमुका कुछ प्रनिट कर न सके पौर साधार को देसको लोटे। किन्तु हो एक वर्षके बाइ ही मुना हुइ सिद्धि गया। १८०१ ई०के मार्चमासमें 'मिक्की' जहाजके प्रबल बन कर वे मुम्बारासामरमें बचकर सीने ली। इस बार लो वे साक बोहा करने पर यमुके बँकीको रोव न पके। वे बड़ी बतुगाईके टूकोकी लोड़ कर किडिनमें उपरिगत हुए। साइ' निससनने परिचाजत पञ्चय लख नीबल से कर कपामियोका पोहा किया; पीछे कपानियो पौर श्रेणियो ने मिल कर १८०१ ई०के पञ्चवत्सामरमें टूकोवनर कलरोपके सामने निससन पर लड़ाई कर दी। २१वीं पञ्चवरको होनी पयमें

लड़ाई छिड़ गई। नेलसनने 'इङ्गलैण्डका प्रत्येक व्यक्ति देशरक्षाके लिये अपना अपना कर्तव्य पालन करेगा' इस वाक्यचिह्नित वचन पताकाकी उड़ा दिया। उनके भिकट्टी जहाजके साथ प्राचीन प्रतिद्वन्द्वो 'स्यान्टिसोमा विनिदाद' जहाजकी मुठभेड़ हो गई। विपक्षकी ओरसे नेलसनके जहाज पर शिलाहट्टिके समान प्रजस्त्र गोलीकी बौकाड होने लगे। ये चारों ओर घूम घूम कर पधरता कर रहे थे। इसी समय एक गोली इनके कंधे पर गिरो और इस आघातसे तीन घण्टेके मधर लाड नेलसनकी प्राणवायु निकल गई। जिस समय नेलसनका जीवन नष्ट हुआ, उस समय विपक्षको पराजय भी एक प्रकारसे निश्चित हो चुकी थी। नेलसनको मृत्युके बाद ऐडमिरल कलिउडने अधाक्षता ग्रहण कर सुकौशलसे जयनाम किया।

नेलसनकी मृत्यु पर सारे इङ्गलैण्डमें गभीर शोक छा गया। किन्तु वे इङ्गलैण्डके लिये जो कुछ कर गये, उसके प्रतिदानस्वरूप लार्ड चोरिगिष नेलसनके भाई रेभरेण्ड विलियम नेलसनको आर्लको पदवी दे कर लार्डको श्रेणीमें उनकी गिनती की गई और उन्हें वार्षिक ६ हजार पेंशन मिलने लगे। नेलसनके दो बहन थीं; उन्हें भी काफी पेंशन निर्धारित हुई।

१८०६ ई०के जनवरी मासमें लार्ड नेलसनकी मृत-देह सेण्टपेल्स कैथेड्रलमें समाहित हुई।

नेत्रिकाह—मन्द्राज प्रदेशके दक्षिण कनाडा जिलेके अन्तर्गत मङ्गलूर तालुकका एक ग्राम। यह मङ्गलूर नगरसे २७ मील उत्तर-पूर्व में अवस्थित है।

नेत्रितोथ—दक्षिण कनाडाका मङ्गलूर तालुकके अन्तर्गत एक ग्राम। यह मङ्गलूर नगरसे १२ मील उत्तरमें पड़ता है। यहाँके एक प्राचीन मन्दिरमें कनाड़ी भाषामें लिखा हुआ एक शिलाफलक है।

नेत्रिपटला—मन्द्राज प्रदेशके उत्तर प्राकैट जिलाअर्गत पलमन तालुकका एक ग्राम। यह उक्त तालुकके सदरसे पाँच कोस दक्षिणपश्चिममें अवस्थित है। ग्रामके उत्तर देवरकोण्डा पर्वतके शिखर पर एक भग्नमन्दिर है जिसके बाहर एक शिलालिपि लकीर है। इसके अक्षर तेलगु भाषासे देखनेमें लगते हैं। वर्ष-

गत सादृश्य रहने पर भी उसे स्पष्ट तेलगु नहीं कह सकते।

नेत्रियम्पति—मन्द्राज प्रदेशके कोचीन राज्यके अन्तर्गत एक गिरिश्रेणी। यह पालघाट नगरसे १० कोस दक्षिणमें अवस्थित है। समुद्रतलसे यह पर्वत कहीं ३००० और कहीं ५००० फुट ऊँचा है। १५००से ४००० फुट ऊँची भूमि पर शाल, चन्दन आदि अनेक प्रकारके कीमती पेड़ लगते हैं और कहीं कहीं इलायची, अदरक, मिर्च आदिकी खेती भी होती देखी जाती है। १८६० ई०से यहाँ कड़वेकी खेती होने लगी है। इसकी खेती दिनों दिन उत्थति पर है।

पर्वतके जङ्गलमें केदार नामक एक असभ्य जातिका वास है। इनका आचार-व्यवहार बहुत कुछ वेनाद जिलेकी कुम्ब जातिसे मिलता जुलता है। ये लोग फल-मूल और जङ्गली आहार खा कर अपना गुजारा करते हैं। इसके अलावा ये लोग सूसे आदि छोटे छोटे जानवरोंका मांस भी खाते हैं। संतो समय ये एक जगह वास नहीं करते। इनका जातिगत कोई खास व्यवसाय नहीं है।

नेल्लू—सिंहलदीपजात वृक्षविशेष। यह पेड़ आठ वर्षके बाद फलता फुलता है। इसके फूलोंसे काकी मधु पाया जाता है। इस कारण सिंहलवासी इस वृक्षकी मधुका पेड़ कहते हैं।

नेल्लूर—मन्द्राज प्रदेशके मध्य अर्धजातिगत एक जिला। यह अक्षा० १२° २८' से १६° १' ८० तथा देशा० ७८५' से ८०' १६' पू०के मध्य अवस्थित है।

जिलेके सदर नेल्लूर नगरके नामानुसार इस जिलेका नाम पड़ा है। स्थानीय भाषामें इस नगरका नाम नेल्लू वा नेत्रि उरु है। उरु शब्दसे ग्राम और नेत्रि शब्दसे ग्रामतको वृक्षका बोध होता है। कहते हैं, कि नेल्लूर नगर रामायणोक्त प्रति प्राचीन दण्डकारण्यके एकशिवमें बसा हुआ है। यह ग्रामतकी वन शायदे किसी प्राचीन समयमें उक्त दण्डकवनके अन्तर्वाती था।

यह जिला नानाजातीय वृक्षादिसे परिशोभित होने पर भी यहाँका स्वाभाविक सौन्दर्य उतना दृष्टिकर नहीं है। जलवायुकी दृष्टताके कारण तथा स्वाभाविक

इत्यादिमें कोई विशेष परिवर्तन न होकर पड़नेके कारण विदेशियोंके सिधे यह खान उतना रोचक नहीं है। पश्चिममें वेतो मीकाबी निरखेबी खानर जड़मात्रक सुदीर्घ पकवत कारण कर विमोचिबामको जोयवन्तुपोंके साथ दखाबमान है। पूर्वमें बज्जोपधामकी लपप्यात्र अलरायिके बापायतने तीरवर्ती प्रस्तरमूमि चूब हो कर बाणुक्रामव हो रहो है। समुद्र तोर पतिज्जम कर कमीन कीबी होती गई है। पश्चिमाय खान पर्वतमय और बनरायिके परिपूर्य है।

पश्चिम टियासी कमख मूमि पर्वतमय और पतुर्वर है। इस पर्वतके सर्वोच्च शिखरका नाम पिचला कोप्या है जो कमतक पिचले १००० फुट ऊंचा है। इस शिखरमें स लक्ष दूधरे जङ्गलका नाम लदयमिरिदुग है। इसकी लंबाई १००८ फुट है। जिसके धनी कानोंमें इन शिखरको ल पा छोटे पिचलेमें पातो है।

इस जिलेके मध्या एक पाचवें खान है त्रिधे जग-पाधारक पक्कर देखने जाया करते हैं। लप खानका नाम है श्रीहरिकोट्यादीप। लप हीपत्र एक और पतक-स्थायी लवच-वस्तु और सुधरी और जोच कमिबर पकि-कट उद है। इनो अलरायिके बोधमें बाणुक्रामूमि बहिष्कपमें दखाबमान है जो धनो होप कहन्पातो है। यह पक्कर कहना होना कि यह जयदीनरके गोरव और क्षमाकबी सुन्दरताको बड़ा रही है।

यहां पिबर (पिनाकिनो), सुनकंसुको और गुगुला कंधा नामक तीन नदियां प्रवाह हैं जो पूर्व वाट पर्वत-को पश्चिमका मूमिसे निकली हैं। इन तीनोंके सिवा पर्वत गावधे और भी पक्कय छोटे छोटे अकस्योत निबल कर मिच मिच और बह गये हैं। इनती नदियां रहने भी बहाको उर्वरता वा बाधिष्यको कोई विधिय लजति देखी नहीं जातो। एकमात्र पिम्बर नदी जो काढ़के समय चलपूर्य होतो है।

जङ्गलमें इन दिनों बन्ध वा हि अजन्तु नहीं पाये जाते। बाघकी जग्या बहुत कम है, जो कुछ है भी वे बहुत कमसे उर्दा पाये हैं। शैता बाघ, भालू, धाधर हरिच, बाइसन आतीव मज्जि और बन्ध बराह पश्चिम कंधामें पाये जाते हैं। पयिजातिसमें कल ५५, अ मनी बपोत और तीतर प्रवाह हैं।

माना जातोय प्रस्तर रहते भी यहाँ महीके पन्धर एक प्रकारका लोहमिणित कटम पाया जाता है। यह मही प्यहाई तथा पय बनानिके काममें पाती है। १८०१ ई०में यहाँ तथिको खान पायो गई है। कमीनके भीधे चूबकोइ भी पाया गया है। लप चूबकोइको यहाँके खोग तथा कर क्पाकारित करते हैं और लदल पड़ने पर यन्धादि भी निर्माच कर लेते हैं। कहीं कहीं महीमें बोझा सोरा भी पाया जाता है।

यहांके अलबाणुका मात्र लप खगुमें एक सा है, कमी भी तापको चटती वा बड़ती नहीं होती। लक-बाहु स्वभावता इस ज़ीने पर भी, स्वास्वयमद है। यीध-कालमें पश्चिमके जो लप्य बाणु, पकनी है यह बड़ी ही कष्टकर होती है। उत्तर-पूर्व और दक्षिण-पश्चिम मोन सुन बाणु, बज्जने पर भी बर्ष भरमें दो समय प्रहुर बर्षा होती है। उत्तर-पूर्व मोनसुनबाणु, धि त्रिलेखे उत्तर में और दक्षिण-पश्चिम बाणु, धि त्रिलेखे दक्षिणमें पश्चिम बर्षा होती है।

अलबाणुके प्रबोधधे जावारकतः यहाँ कई एक विधिय रोगीकी उत्पत्ति हुआ करती है। सचिरामन्वर, वात, कुष्ठ, गोद, बमि, पत्रोचं पाभावय, बिदुसिवा और बधन पाहि रोगोंका प्रमाच ही पश्चिम है। समय समय पर हैत्रा और ड्रेग भी हुआ करता है।

यहाँ जो पिस्तीचं बन देखा जाता है और जो एक समय सुनिपट्टत दखकारक्यका पय धमभा जाता वा यह बन्ध मूमाम धमी कैलीकोप्याके पूने स्थित डालू प्रदेश तथा रायपुर, पाञ्चकूड, लदयगिरि और बधिमिरि लसुकाके परतुंज है। एकचन्दन, पक्कन, पिवाबाल पादि मूष्यगानु क्वको का जहन काय गवमें प्यडे पकोन है। पानिकट उदके पत्तर्त्ती श्रीहरिकोट होपके बाणुक्रामय बज्जानमें जो बनविमाय है, लपमें भी तरह तरहके पिड़ पाये जाते हैं।

इस जिलेमें १० महर और १०५८ ग्राम जगते हैं। जनन क्या बाड़े इस मापके जगमय है। ये कड़े पीछे ८० हिन्दूको धक्या है। वनकी जालि ही यहाँको पादिम पश्चिमायो दिने जाती है। कमी जगह दणका बाघ है। श्रीहरिकोटहोपमें जो पक्कर अलच यनकी

रहते हैं उनका आचार-व्यवहार बहुत कुछ राजसोंके सदृश है। १८३५ ई०में जब यह हीप प्रकृतिज गवर्मेण्ट-के अधिकारमें आया, तब अङ्गरेजोंने यन्त्रियोंका अत्यन्त हृषित और पैशाचिक आचार दूर कर उनको जातीय अवस्थाकी उन्नतिके लिए विशेष चेष्टा की; लेकिन वे अपने वन्य और अनभय जोवनका परित्याग कर खेती बारी और गवादिपालन द्वारा जीविका निर्वाह करनेमें राजी न हुए। ये लोग जङ्गलमें घूमना बहुत पसन्द करते हैं, शीकीनी क्वा चीज है उसे वे जानते तक भी नहीं। ये लोग द्राविडवंशीय हैं, सभी तेलगु भाषामें बोलते हैं और भूतयोनिकी पूजा करते हैं। ये लोग श्वदेवको जमीनमें गाड़ते हैं।

येस्काला नामक एक दूसरी भ्रमणशील जाति है। ये लोग तामिलवंशके हैं। वेधू, डोन्कारा, सुकाली वा लम्बाड़ी जातिकी भाषा मराठी है। हिन्दूके प्रतिरिक्त यहां अरबी, लब्बाई, मुगल, पठान, शिख, सैयद आदि सुसलमान तथा यूरोपीय और ईसाई लोग भी रहते हैं। इसजिल्लेमें पहले पहल रोमनकैथलिक मिशन और पीछे १८४० ई०में अमेरिकाके वेपिट मिशन पधारे थे। क्रमशः स्काट और जर्मनके लुथर सम्प्रदायिकोंने भी उनका अनुसरण किया।

अति प्राचीनकालमें इस प्रदेशके वाणिज्यकी विशेष उन्नति हुई थी। भारतवासो और सिंघलहोपवाशोके साथ दूरदेशवासो रोमकजातिका वाणिज्य-संस्त्र था। १७८५-८६ ई०में नेल्लूरनगरके निकटस्थ स्थानकी जमीनसे जो सब प्राचीन रोमकमुद्रा पाई गई है, मन्द्राज के गवर्नरके मुद्रित पत्रसे वह जानी जाती है *। कर्नल

* The Asiatic Researches, Vol. 11, p. ३३२ नामक पुस्तकमें वह पत्र मुद्रित हुआ था। उसका मर्म इस प्रकार है—नेल्लूर नगरके निकट कोई कृषक इत चला रहा था। इसी समय एक प्राचीन हिन्दूमन्दिरके सिंघर पर इतकी फाट अटक गई। पीछे अनुसन्धान करनेके बाद वह स्थान खोदा गया और उस मन्दिरके मध्य एक पात्रमें बहुत-सी रोम देशीय मुद्रा और पदक पाये गये। इस समय माननीय डेभिड-सर्न मन्द्राजके शासनकर्त्ता थे। कृषकने उस मुद्राको जब अर्थकी मोहमें बेचना चाहा तब उन्होंने हय्यं एडियन और

मैकेन्सीने १८०६ ई०में कोयम्बतूर जिल्लेके क्याम स्थान-में वह त-सो मुद्राएँ पाई है। १८४०से १८४२ ई०के मध्य कोयम्बतूर, गोलापुर, कडापा, मदुरा और कन्ननूर-से १० मील पूर्व कोणायमके निकटवर्ती पहाड पर अग-टस, क्लडियस, केलिगुला, सेभारस, एण्टोनिनस, कमी-डस, गेडा, द्राजन, डूसस, जिनो आदि राजाओंके समयकी मुद्रा पाई गई है। इन सब मुद्राओंसे अच्छी तरह जाना जाता है कि अति प्राचीनकालमें रोमक वाणिज्य-करण करमण्डल उपकूलमें आते और भारतीय पण्यद्रव्य खरोद कर स्वदेशकी लौट जाते थे। करमण्डल उपकूल हो उस समय वाणिज्यका प्रधान स्थान माना जाता था, इसमें जरा भी सन्देह नहीं। चीनदेश और अरवदेशके नाना स्थानोंसे व्यवसायिगण वाणिज्यके उपलक्षमें इस प्रदेशमें आते थे। करमण्डल उपकूलमें प्राप्त चीन और अरबी मुद्रा ही उसका प्रमाण है। पूर्व-में चीनराज और पश्चिममें लोहित सागरतीरवर्ती सुमल-मानाधिकृत राव्योंके मनुष्य उसी प्राचीन समयमें वाणिज्य के उपलक्षमें भागतवर्ष आया करते थे। ३३० ई०में तिबेबेली जिल्लेमें लाख रुपयेसे अधिक स्वर्ण-मुद्रा पाई गई थीं जिनमेंसे ३१ मन्द्राज म्यूजियममें रखी हुई है। इन सब मुद्राओंमेंसे बहुतोंके नाम अरबी भाषामें तथा बहुतोंके क्यूफिक भाषामें अंकित हैं। अरबी मुद्रा प्रायः खलीफ, आतबेग, आयुब और मामलुक-वंशीतवंशीय राजाओंके समयकी है। ये मामलुकवंशीय राजगण इजिप्टमें राज्य करते थे इतिहास पाठक इसे अच्छी तरह जानते हैं। कितनी मुद्राओंके ऊपर सैटोन भाषामें आरागणराज ढतीय प्रिंट्रीका नाम खोदित है।

फटिन (Adrian and Faustina)-के समयकी अर्माव २री शताब्दीकी दो मुद्राएँ पसन्द की और नवाब अमीर-उल उमराने उनमेंसे तीस मुद्राये खरीदीं। इसके अलावा द्राजन समयकी भी अनेक मुद्राये पाई गई थीं। उस मुद्राको गवर्नर बहादुरने अपनी आँखोंसे देखा था। उन्होंने मुद्राकी उज्ज्वलता देख कर लिखा है, कि ये सब मुद्रामें इतनी नई मालूम पड़तीं, मानो वे अभी सुरत टकालसे आई गई हों। उन मुद्राओंमेंसे कुछ ऐसी भी हैं जिनके ऊपर दाग बिध गया है।

इन्होंने १२०६ ई० में राज्य प्राप्त किया। सामंतुक्त-अडौल-
न शीघ्र सुलतानके पाद एक समय उनको सन्धि हुई
थी। लखनौ लखौ सन्धिपुस्तके उनको सुदा राजपूतों
पौर बहादुरी वाचिस्पत्यपदेशके भारतवर्ष खारि गई
होयो। त्रिवाङ्गुवराज पौर शिष्टोप्य अनरन काशिन
साहसके पास बहुत-से प्राचीन रोमक सुदा हैं। कि-
न्तु कितनी सुदा पर भी स्योनिबन, स्युडोसिबन पौर धुङ्को
सिवाके नाम भी खोजित हैं। इन सब सुदाओंका धार-
वाहिकताएक मध्य कालके पौर सुमसमानोंका इति
हास पढ़नेसे पक्की तरह जाना जाता है कि कई मतास्की
तक मीरूर पौर समस्त कर्मचरन उपरान प्रसिद्ध वाचिस्प
ज्ञान समझा जाता था। ताजिश तुम समर नामक
इतिहासमें लिखा है कि छत्रसे के कर मीरूर तक प्रायः
तीन सौ धारक मिस्रन बहुदुहा उपरान मानावर कह
जाता था। यही राजाओंको उपाधि देकर जो। चीन
पौर महाचीनवासिनक अपने बहु नामक अहाज पर
तद्दमनात सुफ कासबाय विमिह दुर्गम बहु साद कर
रस प्रदेशमें बैचनेके लिए लाया करते थे। सिन्ध पौर
तत्प्रायः नगीर जनपदनामो सुमसमान भो इम देशमें
वाचिस्पत्यके लिए अहाज पर लाया करते थे। इराकके
खोरामन तकके इरान समुद्रमें पौर रोम तथा यूरोपके
ज्ञान ज्ञानमें जो सब प्राचीन पौर सुन्दर व्यवस्था देखने-
में पातो हैं उनमेंसे पहिलीय एक समय इही भारत-
उपमूलके जाया गया था। धारक उपमानके शीघ्रवाचियों
का चर्च पौर मसिहवादि एक समय इनो प्रदेशके
पाहन हुई थीं, इयमें सम्प्रेष नहीं। किन्तु समस्त सुन्दर
पाहन इत प्रदेशके राजा थे, एक समय कासेर-शोपके
बचिस्पत्य पौर मासिक एक इस्लाम जमाक लहोन्
लर्च वाचिस्पत्यके लिए कररकूप प्रतिभय १३०० पाह
देनेको राजी हुए थे। किन्तु यह भी जाना जाता है कि
दूरवर्ती चीन पौर पन्थाथ ईरानके जो सब सुन्दर पौर
सुफ द्रव्य यहां लाके जाते थे उनमेंसे पहिले राजा कररकूप
कृष से लिया करते थे। इससे पलाका मीरूर-आइनेतर
पौर निजोरेके समस्त वाचिस्पत पौर इतिष्ठ देसीय

बचिस्पत्य वाचिस्पत्यके लिए भारतवर्ष पाते थे, यह एक
समयका इतिहास पढ़नेसे जाना जाता है।

मिर्दु कनेर देतो।

बतमान समयमें दुश्चिन्ता भारतका सब वाचिस्प
नोरन नहीं है। प्राय १३वीं मतास्के तक इन मकारका
स्यवसायस्रोत बरता रहा था। पोखे बीरे बीरे इनका
विनकुल ज्ञान हो गया है। जब प्राचीन व्यवसाय सब
साथ मीरूरके मोसवर्ष 'सलेमपुरी नामक सत्यने भी
रिधिय ख्याति लाभ ली थी। पूर्व समयमें उस सत्यने
विष्ट इण्डोप्रदोपनामी निधोत्रातिके लोग बहु पावदके
बाब पढ़नेके थे। इस कारण उस सत्यका लमी मो
पनाद नहीं हुआ। यमो मीरूरके खदान-बस्त्रने
विदेशमें रतनो नहीं होती। मीरूर नगरके निकटवर्ती
कोरु धाममें एक प्रकारका सुफ बरत तथा फमानका
उपयोगी बरत भी मैयार होता है। लको ताँबे, पोतव
पौर कानिसे भी पक्की बरतन तैयार होते हैं।
* इनपय होनेके पक्षसे ही वाचिस्पत यमनलिहा सुफ
पात देखा जाता है। अहावा पौर कर्चुलके लोग कई
के बदलेमें मीरूरके सबक से जाते थे। पात्र अब समुद्र
के किनारे किन्तुमात्र मखादिकी रत्ननो होती है।
यहां कई, चावल नील, तमाकू उरद पौर पन्थान्य
मखकी खेती होती है। उपरानलिहा कोइपाटम तथा
इसुबुला नामक दोनी बन्दरीके पात्र भी इन सब
देवजात द्रव्यो को रत्ननो पौर विभिन्न देशों के वाचि
स्पत्य उत्पन्न नागा प्रकारकी इन्को भी धामदना
होती है।

कमो कमो अब पौर इतिष्ठ प्रमाणसे, पिरा नदीकी
बाढ़में तथा समुद्रसुखन्य नृपानसे यहाँके सुफ भी विधिय
रति हुआ करती है। १८०३ १८०६ १८२०, १८२८
१८२९ १८३६ १८३९ १८४० १८४३ १८५६ पौर
१८८२ ई०में यहां नृपान पौर बाढ़में पौर दुमिच पड़ा
था। १८०६-०८ ई०में जो दुमिच पड़ा था उसमें
पसक बिलकुल नहीं हुई थी। इस समय प्राय
६००० मीसव पौर पसक समुप्य पसक प्रमाणसे
करास कासक पाकमें पतित हुए थे।

यहाँके इन्दू अरर अनातनचर्मावकको होने पर मो

• In the Antiquary Vol VI p. 215-19
† Indian Antiquary Vol II p. 241-420.
Vol. XII 85

सुवर^१में मुसलमानों का साथ देते हैं। नेल्लूर जिलेके १२० ग्रामों में प्रतिवर्ष सुवर^१में उपलक्ष्यमें हिन्दू-मुसलमान दोनों ही अग्नि जला कर नृत्य करते हैं। बुन्दर-शाह मदुर नामक किसी मुसलमान पीरके महात्म्यकी स्तुतिके लिये मुसलमान फकीरगण मधुमासमें दो विभिन्न स्थानोंमें दो बार अग्निक्रोड़ा करते हैं।

इस प्रदेशका कोई स्वतन्त्र इतिहास नहीं है। अति प्राचीनकालसे ही यह स्थान दाक्षिणात्यके तैलङ्गराज्यके अंगरूपमें गण्य होता आ रहा है। यही कारण है, कि पूर्वतन वणिक्गण करमण्डल उपकूलस्थ नेल्लूर और तन्निक्रोटवर्ती तैलङ्गराज्यके अन्तर्गत बुन्दरसमुद्रमें आकर प्रणद्धव्य खरीदा करते थे। इस राज्यमें एक समय यादव, चालुक्य, कल्याण और गणपतिवंशीय नरपति-गण शासन करते थे और उक्त वंशीय राजाओंके समयमें यह स्थान वरवसाय-वाणिज्यमें जो विशिष्ट सृष्टिगालो हो उठा था वह रोमक, चीन और अरबदेशोंमें सुदा तथा यहांके राजाओंको शिनालिपिसे जाना जाता है।

यादव, चालुक्य आदि देखो।

यहांके मन्दिरादिमें उल्लो^१ शिनालिपिसे जाना जाता है कि महाप्रतापशालो विजयनगरके नरपति-वंशीय राजा कण्ठदेव रायनूने कितने मन्दिरोंका निर्माण और कितनेका जीर्णोद्धार किया *। राजा कण्ठदेवने १५०८में १५३० ई० तक राज्य किया था। दशमीय प्रवादसे ज्ञात होता है, कि ११वीं शताब्दीमें यथा सुकन्ति नामक एक सरदार आधिपत्य करते थे और वे चौक राजाओंके सामन्तरूपमें गिने जाते थे। चोलराजाओंके पूर्ववर्ती समयका कोई ऐतिहासिक-तत्त्व मालूम न होनेके कारण यह अनुमान किया जाता है कि कडापा, बेलारी, अनन्तपुर, कण्ठ आदिके जैसे इस प्रदेशके अपरापर अंग प्रसिद्ध दण्डकारण्यके निवृत्त गर्भमें निहित थे। केवलमात्र वाणिज्यके उपयोगी समुद्रतीरवर्ती बुन्दर पूर्वोक्त राजाओंके अधिकारसुक्त रहनेके कारण यह स्थान भारतका प्राचीन वाणिज्य-गौरव समझा जाता था। सुकन्तिके बाद १२वीं शताब्दी-

में सिद्धराज यहाँ राज्य करते थे। इस समय यादव-वंशीय कई एक सरदारोंने इस जिलेके उत्तरांगमें राज्य स्थापन किया।

नेल्लूर नगरके अति प्राचीन अधिवासी वेङ्कटगिरिके राजवंशधरोंको प्राचीन वंशावलीसे जाना जाता है, कि इस वंशके पूर्वपुरुषोंने मुसलमानोंके साथ अनेक बार युद्ध किये थे। सम्राट् अलाउद्दीनके राजत्वकालमें मालिक काफुरने १३१० ई०में इस प्रदेश पर आक्रमण किया। पोछे कुतुबशाही वंशीय मुसलमानोंने १६८७ ई०में दाक्षिणात्य जीत कर गोलकुण्डामें राजधानी बसाई।

पहले लिखा जा चुका है, कि नेल्लूर नगरका कोई धारावाहिक इतिहास नहीं मिलता। इसका एकमात्र कारण यह है कि उस समयके राजाने इस नगरमें अपना आवास वा राजधानी बसानेको इच्छा ही न की थी। १६२५ ई०में इस जिलेके ग्रामोंमें अङ्गरेज-वणिकोंके अवस्थानमें ही इस जिलेका इदावीन्तन इतिहास आरम्भ होता है।

१६२३ ई०में चोलन्दाजसे आश्रयना नगरमें अङ्गरेजोंके निहत और निर्जित होने पर इष्ट-रक्षिया कम्पनी नामक वणिक-सम्प्रदायने करमण्डल उपकूलके मङ्गलोपत्तन और पट्टोलि (वर्तमान नाम निजाम-पत्तन) नगरमें अपनी वाणिज्यकोठोंमें आकर आश्रय लिया। इसके चोदह वर्ष बाद चोलन्दाजोंके उत्प्लेडनसे जर्जरित हो कर फ्रान्सिस डे नामक अंगरेज कर्मचारी दक्षवल्के साथ हुर्गाराजपत्तन ग्राममें भग गये। उक्त ग्राममें पहुँचनेसे ग्रामपति सुदालियरने अङ्गरेजोंके विरुद्ध अस्त्रधारण किया था। उन्हें दमन करके डे साहबने उक्त-मोडलरके नामानुसार इस ग्राममें आमु-गम सुडेलियर नामक एक दुर्ग बनवाया। इसके १४ वर्ष बाद १६३८ ई०में मन्द्राजके सेण्ट जार्ज दुर्ग स्थापित हुआ।

१८वीं शताब्दीमें अङ्गरेज और फरारोंके 'कर्पाटक-युद्ध'से ही यहाँकी प्रकृत ऐतिहासिक घटनाका उल्लेख मिलता है। इस समयका इतिहास पढ़नेसे अच्छी तरह जाना जाता है, कि दाक्षिणात्यके पूर्व उपकूलमें फरारों

* Sewell's List of Antiquities, Madras I. p 144

घोर घोरक भाव अपना अपना पाणिपथ के कामिने विमिय
 सज्जानु दि । १०३१ ई०में नाजिबउददौलाने अपने भारी
 नवाब मरहमद खानोके प्रदत्त निजूर प्रदेशका शासनमार
 प्राप्त किया । इसो भास मरहमद खानस नामक बिघो
 सुपनमानने निजूर नगरमें प्रथम कर नाजिब उल्लाको
 निवास भगाया । अब यह तिहपतिका मन्दिर भू स
 करनेको पागि बड़ा, तब मन्दिरका रक्षाभार पञ्च
 रौकोके हाथ समर्पित हुआ । दोनो दरमें बगधोर बुद्ध
 बना । पक्षसे पञ्चरौको की हो द्वार खुई, पर पोषि कर्मीने
 बरमास पर पाहमव कर लभे बौदे कर लिया ।

नाजिबउल्लाके फरार्यमें प्रतिष्ठित हो कर कुछ दिन
 पोषि (१०३० ई०में) अपनी प्राधोपता लख्खे करनेके
 सिधे भारीके बिबरक पञ्चवारक किया । नवाब मरहमद
 पञ्चोने अपने पञ्चरेक बन्धुका वायव्य पक्ष किया ।
 नाजिबउल्लाके मी अपना एक इफ़र खानेके सिधे फरारिपयो
 को सहायता ही । इधमें पञ्चरेको की शर बुई । कर्बल
 फार्ड डल खतिके उत्तरदायो हो कर मन्दाक भट्टे ।
 १०३८ ई०में नाजिबने बनावल अफ़र पोर मशारफ़ोको
 प रोज़ेके बिबरक उभाड़ा । १०४८ ई०में अब पराको
 शिनापति खासो शिना की कर मन्दाकके थपकत हुए, तब
 लकोने प रोज़ेके सन्धि कर ली । पोषि के प रोज़ेके
 लख प्रदेशके शासनकर्ताके पक्ष पर निजुब हो कर
 प रोज़ेको कारिब तीस हजार 'पतोड़ा दिनेको राखी
 हुए । १०८० ई०में डीपू दुलतानके मास अब प रोज़े
 का बुद्ध बिड़ा, तब प रोज़ेको अपने हाथमें कर्बल प्रदेश
 का राजक बनूत करनेका मार ले किया । १०८३ ई०
 में डीपूके पाक मन्धि होने पर लखका शासनमार मुला
 नवाबके हाथ दे दिया गया । दीखे १८०१ ई०में
 प रोज़ेके बहाके सिधे इस प्रदेशका शासनमार अपने
 हाक ले किया । जिसे मरमें १ कालेज, १८ शिष्यकु, ८८३
 प्राधमरी पोर ३ ट्रेनि ग स्कूल है । मिर्जाबिमानमें
 इतिवर्ष (१०००००) ४० खर्च होतें हैं । रज्जुके बनाव
 बर्षा १० पञ्चगाह पोर १० बिदिवालय हैं ।

२ लख जिनकेका एक उपविभाग । पञ्च निजूर पोर
 खानको तासुब ले कर स मन्ति हुआ है ।
 ३ निजूर उपविभागका एक तासुब । यह खचा०

१३ २१ से १४ ४६ उ० पोर दिशा० ७८ ४१ से ५०
 ११ पू० से मध्य पश्चिम है । पक्षमें पूर्वमें बडानजी
 खाड़ी पड़तो है । भूपरिमास ६३८ वर्गमील पोर जन-
 स क्या समय २२६१२३ है । इधमें निजूर पोर पञ्चूर
 नामके दो शहर पोर १४८ ग्राम लवते हैं । पिकर नाम-
 को नदी तासुबको दो मार्गोंमें विभक्त करतो है । यहां
 पानको पक्षक पक्को लागतो है ।

४ लख जिनकेका एक प्रधान शहर । यह पक्षा०
 १४ २० से उ० तथा दिशा० ७८ १८ से पू०, पिकर नदीके
 दाहिने किनारे पश्चिम है । लखक क्या तोस हजारसे
 खपर है । इस नगरका प्राचीन नाम शि डपुर था ।
 यहांका मूककानेखरका मन्दिर मुकलि नामक किमी
 राजाके बनावा गया है । शिखमुदेयमें ये 'मुकलि महा-
 राज' नामसे प्रसिद्ध हैं । यहां सुवकसानोके समयका
 एक किशा है ।

बादमें यह शहर 'दुर्गमिशा' नामसे प्रसिद्ध हुआ ।
 पात्र मी निजूरका उपपक्ष इसी नामसे पुकारा जाता
 है । इस नगरकी मठल पोर पाबइवा बतनो खराब
 नहीं है । खूशियानोके बाबासमबनके वृधे पाखमें
 भरिष इच्छांछा पक्षमेंके खपर बहूनके मन्दिर विद्यमान
 हैं । यहां १२वीं सताब्दीमें 'कि०ना सोमयजुनु' नामक
 एक कविने शिखु भाषामें स कृत महाभारतका अनुवाद
 किया । इकोके समयको मुक्ता नामक एक खी कविने
 मी रामायणका अनुवाद कर निद्यापचरिठे गोरबको रपा
 की थी । राजकवि परलानो दिव्याना राजा खपदेवको
 समामे वर्णमान है । १८६६ ई०में यहां म्युनिसिपलिटो
 स्थापित हुई है । शहरकी पाय प्रायः ४४००० ४० है ।
 बर्षा प्लुनापटेक प्रो पक्ष मियल हाई स्कूल पोर पिट्ट
 गिरि राजाका हाई स्कूल है । इसके सिवा पोर मो
 जितने स्कूल हैं ।

- नेवगी (वि० पु०) निजी ।
- नेवकावर (वि० खी०) मिश्वर ई की ।
- नेवत्र (वि० पु०) देवताको परित करनेको बहु खाने
 पोनेको जोक जो देवताको पढ़ाई काय मीय ।
- नेवत्रा (पा० पु०) चित्तरीका ।
- नेवजी (पा० खी०) एक खूबका नाम ।

नेवटनी—प्रयोध्या प्रदेशके उनाय जिलेका एक नगर। यह मोहन नगरसे दो मील दक्षिणपश्चिम साइनेटोके किनारे अवस्थित है। एक समय दक्षिण उपाधिधारी राजा राम गिहारको वाहर निकले और इस स्थानको खाभाविक सुन्दरता देख कर मोहित हो गये। पीछे उन्होंने जङ्गल कटवा कर नेवटनी शहर बनाया। नगरके एक स्थानमें प्राचीन राजाधिका दुर्ग था। वर्तमान अधिवासो टीह नामक स्थानको उसका धर्मभावगोप बतलाते हैं। दक्षिण वंगोय राजाओंने यहां बहुत दिन तक राज्य किया था। अन्तमें गजनेपति महम्मदके सेनापति मरिन महम्मद और जहोर-उद्दोनी भारत वर्ष पर चढ़ाई कर राजाको राज्यमें निजान भगाया और स्वयं राज्यभार ग्रहण किया। उक्त दोनों सुमन मानके वंशधर प्राज भी इस नगरमें वास करते हैं। शहरको दिनों दिन उन्नति होती जा रही है।

नेवना (हिं० जि०) निमन्त्रित करना, नेवता भोजना।

नेवतरहनी (हिं० पु०) न्योतरहो देखो।

नेवता (हिं० पु०) न्योता देखो।

नेवहो—बखर प्रदेशके रत्नगिरि जिलान्तर्गत एक बन्धर। यह अक्षा० २५° २५' उ० और देशा० ७३° २२' पू० पश्चिम-गोत्र राजधानी गोधासे १८ कोस उत्तरपश्चिममें अवस्थित है। पहले यह नगर गोजापुरके अधीन था। यहां एक दुर्गना भग्नावशेष देखनेमें आता है। मि० रेनल प्रादि पुरा विदोंने इस स्थानको टलेमो-कथित 'निद्र' वा प्लिनो-कथित 'निद्राम' बतलाया है। अभी इस स्थानके वास्तव्यकी शीघ्र उन्नति जाती रही, दिनों दिन इसका प्रसार होता जा रहा है। १८१८-१८ ई०में अंगरेजोंसेना-ने इस बन्दर पर आक्रमण किया और गोलियोंके आघातसे दुर्गका तहस नहस कर महाराष्ट्रोंके हाथमें छोड़ दिया।

नेवधुवा—युक्तप्रदेशके कुमायुन जिलान्तर्गत एक गिरि-पथ। यह अक्षा० ३०° ३८' उ० और देशा० ८०° ३७' पू० के मध्य अवस्थित है। इसका दूसरा नाम रत्नविटल है। यहांसे धौलानदी निकली है। यह सड़क पार कर उत्तरको और जानिसे हणदेश प्रयत्ना तिव्यत वा दक्षिण-पश्चिम प्रदेश मिलता है। यहां बहुसंख्यक सूटियोंका वास है। वे धर्मनगरसे बकरे और भैंसेकी पीठ पर

धान, गेहूं प्रादि पनाज, वनात, रुई, लोहेको बनी धनु तथा अन्यान्य द्रव्य लाद कर वाणिज्यके लिये यहां लाते हैं और यहांसे लवण, स्वर्ण, चूर्ण, मोहागा और पन्नादि ले जाते हैं। यह स्थान समुद्रपृष्ठमें १५००० फुट ऊंचा है।

नेवर (हिं० पु०) १ पैरका गहना, नूपुर। (स्त्री०) २ घोड़ेके पैरका वह घाव जो दूसरे पैरको ठोकर वा रगडमें हो जाता है। ३ घोड़ेके पैरमें पैरको रगड़।

नेवरा (हिं० पु०) लाल कपड़ेको भारीको खोलो।

नेवल (हिं० पु०) नेवर देखो।

नेवनदास—एक हिन्दी-कवि। इनकी कविता सरस और मधुर होती थी। इनका कविता-काल १८२३ संवत् कहा जाता है।

नेवना (हिं० पु०) चार पैरोंमें अमोन पर रेंगने-वाला हाथ सवा हाथ चम्बा और ४-५ अंगुल चौड़ा मांसाहारो पिंडज जन्तु। यह देखनेमें गिलहरीके आकारका पर उसमें बड़ा और भूरे रंगका होता है। विशेष धिक्कण मकूल शरीरमें देखो।

नेवहो—राजपूतानेके पन्तर्गत अजमेरका एक नगर। यह जयपुर राजधानीसे ३७ मील दक्षिणपूर्व अक्षा० २६° ३३' उत्तर और देशा० ७५° ४४' पू० के मध्य अवस्थित है। सो वर्ष पहले यह नगर खूब समृद्धिगाली था और इसका आयतन भी विस्तृत था। अमौर खुनि जब इस नगरको लूटा था, उस समय यहांके अधिवासो दूसरी जगह भाग गए। पीछे १८१८ ई०में जब यहां शान्ति स्थापित हुई, तब लोगोंको संख्या धीरे धीरे बढ़ने लगी। इसके पचासवागमें सरल भावमें दण्डायमान उच्च पर्वत और सामनेमें अजपुर तक विस्तृत प्रातरभूमि है। पर्वतके ऊपर नहरगट नामक दुर्ग है। उस दुर्गकी रक्षाके लिये १५ गोलाकार मोर्चे बने हुए हैं। नगरके सम्मुख स्थे बालुकामय जमीन पर हमलो और पीपलके पेड़ खूब लगते हैं। इसके अलावा यहां जगह जगह चद्यान, देवमन्दिर, कृत्रिम चहबुच्चा और सतीदाहके स्मृतिस्मारक रक्षित हैं।

नेवा (हिं० पु०) १ रीति, दस्तूर, रवाज। २ लोकोक्ति, कहावत। (वि०) ३ नाई, हमान।

निवाह (हि० वि०) निवाह देखो ।

निवाह—१ हिन्दीके एक कवि । इनका जन्म सन् १८०३में हुआ था । ये जातिके सुकाई तथा बिक्रपान-वासी थे । इनको कविता-रचना अच्छी होती थी ।

२ एक हिन्दी कवि । ये जातिके ब्राह्मण और पुण्ड्र-खण्डके रहनेवाले थे । इनोंने १८०० स वर्तमें पञ्चरात्रो नामक एक पुस्तक बनाई है । ये पञ्चोदरके रामा भयवला राय खीचोके यहां रहते थे ।

निवाजना (हि० शि०) निवाजना देखो ।

निवाड़ा (हि० पु०) निवाड़ा देखो ।

निवाह—निवाहमें जो कानो चादिम जातिवियेय । जो ज्ञान धर्मो विपत्तमापन्न कबलाता है और जिस उपपत्तान्मूमि पर बर्तमान काठमण्डु नगर तथा बुधा है वही ज्ञान इस जातिका चादि भावज्ञान है ।

निवाह मन्मं विद्या है, कि इस ज्ञानमें जोमहदुल ज्ञानजातिका भाव रहनेके कारण तिम्बतवासी हिमं कथको इस मन्मूमिको 'पान्देय' कहते हैं (तिम्बतीय भावामि पाव मन्मका पत्र' पयम है) । यह उपपत्तिका बहुत पक्षके ही 'नि' नामके प्रसिद्ध को । एषो, 'नि' नामके ज्ञानके पत्रवासी जोमिके कारण है जोमं निवाह ना निवारी कहलाते हैं । चादिम निवाह जाति बहुत पक्षके पसम्प रहने पर भी उर्ध्वमे बोद्धमंको उचतिथि साव साय पयनेको भी उचतिथि भोपाल पर बहामिदी केटा को भी । ये ही सोम निवाहमें प्रवर्तित बोद्धमंमते के ज्ञापनकर्ता हैं । पमो निवाहजातमें जो सब प्रायोजन बोह थोर हिन्दूकर्ति देखो जाता है वह इनके उद्यम पीर यज्ञने बनाई गई हैं । पान्दास्यके 'नि' नामके ज्ञानवाको पूर्वतन नेवारिके मोरव पीर परमान रचाव' वर्धको वासमूमिके नाम पर इस राज्यका नाम 'निवाह' हुआ था ।

इनकी जाति मोर्वा सोमोके पपिका वर्ध है जो सुकाकति देखनेके ही मन्मोपके जैसे मालूम पड़ते हैं । भारतके साय तिम्बतका नैदव्य रहनेके कारण हीको जातिमें क सब हो गया है । बोद्धमंके प्राक्पथके जब बोद्धमत तिम्बतमें प्रचारित हुआ और निवारीकोमो नि भी जब बोद्धमत कहच किया, उषी समयके दोना

जातिमें चादान दान होता था रहा है, ऐसा अनुमान किया जाता है । कारण निवारजातिको धर्मप्रदा, मायम वर्षामिप्राण पोर उनको वाद्यगठन प्रचासोके खपर कल्प करनेके यह अष्ट बोध होता है कि तिम्बतीय स सब मिय निवारजातिके मध्य इस प्रकार प्रका-रान्तर बमो भो जोमिको पन्थावना न रहतो । इनके वर्तमान बमके कुछ शिष्याकथाय ही इसके एकमात्र निदर्यम है ;

बहुतोका अनुमान है कि पूर्वसमयमें निवाह उप-पत्तिका तथा इस देसके नि कर तुपाराहत हिमाकय परंत पर्यन्त विस्तृत ज्ञानमें जो सब जाति बान करती थी वे जोन पोर तिम्बत जातिके मियथके बल्प बूई थो । जिस समय बोध गुरु मन्म, योने महाबोधने निवाह या कर बोद्धमंका प्रचार किया था, उषी समय भारत वासोके साय तिम्बतीय पत्रका महाबोधन-वासीके स खपके यह निवार जाति मठिन बूई होयो । फिर निवार जातिके तिम्बतीय पूर्वपुत्रमगव हिन्दुज्ञानवासी पाव' तीय जातिके साय विवाहादि करके उनको पूर्वदेसा कव्य बोद्धमतके पत्रवको मेषे नवविवाहित हिन्दुको को धर्मप्रदाके कुछ प्रकरव उचिविष्ट कर दिए हैं । इस कारण निवाहमें प्रचलित बोद्धमंको साय हिन्दुत्वका सम्बन्धन हो जानेके सन जामोका बोद्धमंमन बहुत कुछ बिचर भाषापत्र हो गया है । इन सोमोमें हिन्दु याजोके नियमादिका निरीच आदर देखा जाता है ।

इसको विमोका कबला है कि समय बमव पर भारत वर्धके मसनन क्षेत्रके पम द्य परिवाहक, मोर्वायोमो तथा प्रवासो हिन्दुत्व निवाहको इस पत्रिक उपपत्तिका मूमिमें या कर रहते थे । वे जो नवायत हिन्दुत्व या इन सोमोके व घहर कालक्रमके पत्राके पादिप्रवासी पयथा पोपनिवेयिक तिम्बत जातिके साय विवाहादि सम्बन्धमें पावय बपु हैं । इनो तरह कथव है कि भारतवासोके साय तिम्बतके समियथके इस निवार जातिके उपति बूई होयो । भारतके तादित हो कर पयथा अदेयके भी धर्मप्रदाकके बह्मके यहां पाये, जनमेके कविज्ञाय काठमतायको पोर का तोच दर्शनके उपपत्तमें पत्रका हिमालयप्रदेय-परिदर्यमंको कामलादे

यहां आये, उनमेंसे बहुत कुछ हिन्दू थे। इन हिन्दू प्रवासियों के मध्य किसीने तो नेपाल आ कर बौद्धमत प्रहण किया और कोई स्वधर्म के जप आस्था स्थापन करके हिन्दूधर्म के अनुसार क्रिया-कलापका निर्वाह करने लगे। नेपालप्रवासो दोनों मतावलम्बियोंने इस स्थानको लक्ष्मी बना लिया और वहांके आदिम अधिवासियोंको कन्यासे विवाह कर गृही हो गये। इस प्रकार प्राचीन पार्वतीय अधिवासियोंके मध्य हिन्दू और बौद्धमत एकत्रित हो जानेसे वे दोनों हो यहाके प्रधान मत समझे जाने लगे।

प्रति प्राचीन कालमें इस आदिम जातिके मध्य जातिगत किसी प्रकारका पार्यक्य देखा नहीं जाता था। ये लोग जिस प्रकार भारतके प्रान्तरेशमें पर्वतके ऊपर वास कर जगत्के स्वाभाविक सौन्दर्य पर मोहित होते थे, उसी प्रकार इस अल्पसुन्दर स्थानमें वास करके भी वे लोग स्वभावतः ही सरल और निरोह हो गये। बौद्धधर्म प्रहण करनेके बाद इन लोगोंके मध्य उदासीन वा संन्यासी और गृही इन दो श्रेणियोंकी सृष्टि हुई। जो लोग बौद्ध-संन्यासी है वे बाढ़ा कहलाते हैं। धीरे धीरे यह बाढ़ाश्रेणी चार विभिन्न शाकोंमें विभक्त हो गई। इन चार श्रेणियोंके मध्य भी पुनः उच्च नीच देखे जाते हैं। जो श्रेणी जिस परिमाणमें योगाभ्यास करती है, उस श्रेणीके प्रमुख जनसाधारणमें उसी प्रकार श्रुता काम करते और समाजमें मान्यास्पद होते हैं। उधर गृहिण्य नाना प्रकारके विषयकार्यों और व्यवसायमें ललके रहते हैं।

जिन सब प्रवासियोंने हिन्दूधर्मको रक्षा की थी उनके वंशधरगण अथवा पश्यान्व नेवारोलोग भी काल-माहात्म्यसे हिन्दूधर्मके पक्षपाती हो उठे। पहलेसे जो सामान्य प्रक्रियादि उनमें लक्षित होती थीं, कालक्रमसे यह परिपुष्ट हो हिन्दूधर्ममें परिणत हो गईं। इस समय हिन्दूमतावलम्बियोंने सरल स्वभाववाले पूर्वतन अधिवासियोंमेंसे कितनेको हिन्दूधर्ममें दीक्षित किया। इस प्रकार एक समय नेवानराज्यमें ब्राह्मण-धर्मको प्रतिष्ठा हुई। इसके बाद हिन्दूनेवारोंमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ये चार जातिगत विभाग कल्पित हुए। हिन्दूधर्ममें

यह भेद रक्षित होने पर भी बौद्धगण इस प्रकार किसी स्वतन्त्र नियमसे श्रावद्ध नहीं हुए।

धीरे धीरे नेवारियोंमें दो विभिन्न सम्प्रदायको उत्पत्ति हुई। जिन सब नेवारियोंने बौद्धमत प्रहण किया, वे बुद्ध-मार्गी और जो हिन्दूधर्मके जप आस्थावान् हुए, वे शिषोपासना करनेके कारण शिवमार्गी कहलाये।

इन दो श्रेणियोंके मध्य पूर्वापर किसी प्रकार वाद-विसम्वाद नहीं हुआ। समय नेवार जातिके मध्य प्रायः प्रत्येक मनुष्य हिन्दूधर्मावलम्बी और पञ्चशिष्ट सभी बौद्ध वा मिश्रभावापन्न हैं।

शिवमार्गी नेवारियोंके मध्य ब्राह्मणश्रेणीमें उपाध्याय, लक्ष्जु और भजु वा भाजू ये तीन विभिन्न उपाधियाँ हैं। क्षत्रियश्रेणीमें ठाकजू वा मन्न (ये आदि नेवार-राजवंशीय हैं, राज्यभ्रष्ट हो कर अभी गोर्खादलमें नेनिकका काम कर रहे हैं) और निखु (ये लोग देव-मूर्तिको रंगते हैं) तथा वैश्यश्रेणीमें जोसि, भाचार, वन्नि और गावक आचार-प्रेम्भति चार स्वतन्त्र उपाधियाँ हैं। क्षत्रिके मध्य शिवासु और सेरिष्ठा-नामक दो थाक देखनेमें आते हैं। ये लोग आपसमें आदान-प्रदान करते हैं। शूद्र श्रेणीमें मखि, लखिपर और बघो-शाश आदि तीन थाक हैं। ये लोग सभी दासवृत्ति द्वारा जीविका-निर्वाह करते हैं। उक्त चौदह श्रेणियोंमें सभी हिन्दू हैं, कोई भी बुद्धकी पूजा नहीं करता और न बौद्ध धर्म संस्क्रान्त मन्दिरमें जाता ही है। ये लोग आपसमें विवाह नहीं करते और न एक श्रेणी दूसरी श्रेणीके साथ भोजन ही करती है।

बुद्धमार्गी वा बौद्धधर्मावलम्बी नेवारोंमें तीन प्रधान श्रेणी-विभाग हैं—

१म।—गाड़ा वाण्डा वा बाढ़ा, इनके मस्तक मुण्डित रहते हैं।

२य।—गोड़ा बौद्ध। ये लोग जनसाधारणमें उदास नामसे प्रसिद्ध हैं, प्रत्येक सिरके ऊपर जूड़ा बांधता है।

३य।—निश्रश्रेणीके बौद्ध। ये लोग हिन्दू और बौद्ध दोनों धर्मके सेवी हैं। सांसारिक पञ्चव्याकी हीमता वशतः ये लोग निश्रवृत्तिका अवलम्बन कर अपना गुजारा करते हैं।

प्रथमोक्त बाँका खेबोके निवारोमि पुनः ८ स्वतन्त्र ताक
 है। यथा— १ गुमासु, २ बङ्कवासु ३ सिन्धु, ४ सिन्धु ५
 निमार, ६ निमार माङ्कि, ७ टङ्कामि, ८ गम्बमाङ्कि, घोर
 ९ चिबङ्का माङ्कि । ये खोम दोरोद्विज्जवे से
 कर खोम चांदोके पलङ्कार, मोहनपात्रादि घो। वस्तु-
 वादि बनाए, यथा तत्र कि सुतवार चादिसे
 निहत्त खर्म भी करते हैं। द्वितीय उदाहरणको—पत्नी
 महाजन वा व्यवसायीका काम करते हैं। एक बाँका
 निवार इच्छा करने पर उदास हो सकता है। त्रिभु
 बाँकाको पपिया निहत्त उदास काम भो बाँका खेबी
 सुख नहीं हो सकता। फिर उदास-नेवारको इच्छा
 करने पर वे चाणु निवारसे दम्भसुख हो सकते हैं। त्रिभु
 चाणुके विधिसे विद्या करने पर भी वे तत्त्वोबीसुख
 नहीं हो सकते। चाणु निवारमन्त्र खेने वायो करके
 पपिया सुखारा करते हैं। निवार जातिसे मन्त्र धे खोन
 ज्ञानकर्त्तबीसुख हैं। इनकी एक प्रणाला मर्मि है, ये
 खोन बड़े धनी होते हैं। पतञ्जलि उदास खेबीके मन्त्र
 ब्रह्मा, सोहार-कर्मि (जो फ्यार काट कर घर बनाते
 हैं), मिर्कर्मि, ताभ्यव, पवन मर्हिकर्मि प्रकृति क
 वाक हैं। तृतीय खर्वाँ मिथिन सम्बन्धवासे मन्त्र मन्त्र,
 यष्टु, सुन्दार, वस्तुसुख, चाणु वा किचिदिने, खोनी, चिन
 कर, दाता, जिवा खोहा वा मिर्कर्मि नौ (कापित),
 कर्मि, पुष्पसुख खोया, खोमार, यङ्कवी (माखो), काट
 कार, टडी बसईको, बुङ्कवार, बडा कस्तु दको, पिङ्कि,
 मापोहा, मन्त्रवापोहा, बडाभी, गोको, लडो, गाई वा
 कर्काई, जोडी, हुन, खोरो, कुङ्कु, सुरिया, वस्तुसुखक,
 स धार चादि ३८ विभिन्न वास पात्रे जाते हैं।

नेवार देको।

यद्य निवार जाति को एक समय निपालकी सर्वप्रथम
 कर्ता थीं, वह निपालके इतिहासमें विविधरूपसे उचिंत
 है। निवारराज प्रथम दस देवपाटनमें दामदेवका मन्दिर
 निर्माच कर उहाँमें पादि बुधमूर्तिकी प्रतिष्ठा कर गये हैं
 और पदपतिनाथका मन्दिर भी उहाँके द्वारा कापित हुआ
 है। १६६१ ई.में देवपाटन दरबारके खर्चके उक्त मन्दिर
 का उच्चारण हुआ था। सुर्वा-प्राज्ञमन्त्रके समय मन्दिर-
 का ताजबनसक तोड़ फोड़ जाता गया था और नेवार

राजकी लयीको बंध कर युद्धका खर्च चलाया जा ।
 निवारियोंमें मन्त्र घोर सर्वप्रथम विधिसे प्रचलित है।
 मन्त्रपूजाके विषयमें मिथिन मिथिन खोमो का मिथिन मिथिन
 मत है। खोरे करते हैं कि मिथिन प्रकार सभी पादिम
 पदमन्त्र जातियोके मन्त्र किती किमी विभिन्न प्रत्युकी
 पूजा प्रचलित है, निवारियोंमें मन्त्रपूजा भी उन्नी प्रकार है।
 फिर किसे किसे वा कहना है, कि निवारी खोम मन्त्रपूजा
 के ऊपर विधिसे पाखाना नू है, इस कारण सर्वत्र एकमात्र
 पाशर इस मन्त्र जाति का प्रसार किया करते हैं।
 त्रिभु निवार खोम करते हैं कि इस मन्त्रके पाखाने की
 मन्त्रभूमि पर उठि होती है और उठि होनेके दिन बरा
 मरा हो जाता है। मन्त्र की दिग्गो उन्नतिका एकमात्र
 कारण है, यह जान कर वे लोग मन्त्रकी पूजा किया
 करते हैं। आपान द्वीपमें भी बड़े भूमिनाथ मन्त्रकी
 पूजा होती है।

० निवारी खोन जातिके मन्त्रकी उच्छा प्रथमोको वह
 पूजा करते हैं। इस दिन वे नामा प्रकारके द्रव्य से कर
 किमी सुन्दरिबीमें जाते घोर बड़ा एक मन्त्र द्रव्यको रख
 कर इतने से योगसे पञ्चि प्रकृति घोर मन्त्र पकृति हैं।
 मन्त्रका मर्म इस प्रकार है, 'ये परमेश्वर भूमिनाथ।
 हम लोगोंकी प्रार्थनासे पशुघार यह उपहार पदक
 कीर्ण घोर समय समय पर बन्धु दे कर हम लोगोंके
 प्रकृति रक्षा कीर्णिय।'

अब मन्त्रकी महाधीनके इस निवारामन्त्रके प्रकारसे धि, सम
 समय कात्मन्त्रका उपलब्धवादेय जनपूर्व था। मन्त्रकी
 ने पपनी अथोकिच-कमता दिखलानेके लिये परंत
 को काट कर वह मन्त्रि कस बाहर बडा दिया जसमें
 को सब सर्व घोर पन्थान्त्र बलवन्तु धि वे घोर घोर
 जसकोतवे बाहर निकल पड़े। अब मानराज कर्काईक
 धारसुख पर पा बड़े हुए, तब मन्त्रकीने उन्ने भीतरमें
 रहनेका पशुगोच किजा घोर उन्नत रहनेके लिये उच्छा
 नामक एक विस्तृत ऊद वा सुन्दरिबी निर्दिष्ट कर दी।
 मानराज कर्काईकका साहाय्य-प्रकाशके लिये निपालमें
 सर्वप्रथम प्रचलित हुई।

० H. A. Olden's History of Nepal II, p. 268-259.

श्रावणमासकी नागपञ्चमीकी यह पूजा और उत्सव होता है। जहाँ चार वा पांच जलधारा एक साथ मिल गई हैं, वही स्थान पूजाके लिये उद्भूत समझा जाता है। इस पूजामें एक पुरोहित श्रावण्यक है। इस दिन वह पुरोहित प्रातःकल्यादि समाप्त करके चावल, सिन्दूर, समान भागमें मिश्रित दुग्ध और (जल, फूल, घृत, मखन, जायफल, ममाला, चन्दन और धुना आदि उपकरण एक पात्रमें रख नदीतट जाते और पूजा समाप्त करते घर लौटते हैं। भव्यान्व विवरण नेवाल शब्दमें देखो।

नेवारी (हि० खो०) जूही या चमेनोकी जातिका एक पौधा। इसमें छोटे छोटे सफेद फूल लगते हैं। पत्तियाँ इसकी कुंट या जूही को-सो होती हैं। यह पौधा वर्षा-ऋतुमें अधिक फूलता है। फूलोंमें बड़ी अच्छी भोनी महक होती है। इसे वनमल्लिका भी कहते हैं।

नेवाल—श्रीश्री प्रदेशके बाङ्गड-मऊ नगरसे २ मील उत्तर कल्याणी नदीके समीप पचनार्दे नालाके ऊपर स्थापित एक प्राचीन ग्राम। यहाँ अपने कृत्तिका और इष्टकादिके स्तूप देखनेमें आते हैं। यही भग्नावशेष इसके प्राचीनत्वका परिचायक है। यह कान्यकुब्जराजधानीसे प्रायः १८ मील दक्षिणपूर्व गङ्गानदीके किनारे अवस्थित है।

चीन इतिहासके फाहियान और यूएनचुवङ्गका भ्रमण-वृत्तान्त पढ़नेसे जाना जाता है कि वे कान्यकुब्जमें बाहर निकल कर गङ्गानदी पार हुए। पीछे उक्त महानगरीसे प्रायः ३ योजन वा १०० लोग की रास्ता तै कर वे दक्षिण दिशामें नवदेवकुल (No po-li po Kung) नामक एक सन्दिग्धशाली नगर पहुँचे। यूएनचुवङ्गने इस नगरके नामके सम्बन्धमें लिखा है, कि बुद्धदेव यहाँ पांच सौ राक्षसोंकी धर्मका उपदेश दिया। उन असुरोंने बुद्धदेवसे धर्मका उपदेश पाकर दक्षिण दिशि छोड़ दो और नया जन्म प्राप्त किया। इस स्थानसे नूतन देवजातिको उत्पत्ति हुई, इस कारण ग्रामका नाम 'नवदेव-कुल' रख गया।

डा० कनिं हन नेवाल ग्रामकी प्राचीन कीर्ति देख कर विस्मित हो पड़े और उन्होंने अनुमानसे समझा कि भवशेषकी प्राचीन नवदेव-कुल नगरीका निर्दग्गन बतलाया। उन्होंने यह भी कहा है, कि यूएनचुवङ्गने नगरके परिदग्गनके समय भिन सब गृहादिका उद्भूत किया है, उनको अच्छी तरह शालीचना करनेसे मालूम पड़ता है कि वर्तमान नेवाल और बाङ्गड मऊ नगरमें जो सब भग्न गृहादि और स्तूपादिका भवशेष है, वही उस प्राचीन कीर्तिके स्वरूपान्तरमात्र है। बाङ्गड-मऊ नगरसे नेपाल दो मील दूर होने पर भी बाङ्गड मऊके प्रान्तभागमें स्थित जो टीला देखा जाता है, उस स्थानसे नेवाल ग्रामकी दूरी एक मीलसे भी कम होगी। यूएनचुवङ्गने नवदेवकुल नगरका घेरा प्रायः तीन मील लिखा है। यदि ऐसा ही, तो अनुमानसे यह भवशेष कह सकते हैं, कि वर्तमान नेवालग्राम और बाङ्गड मऊके शंशमें प्राचीन भग्न गृहादि हैं। उनका बहुत कुछ शंश ले कर उस समय दृष्टानतापूर्ण सन्दिग्धशाली नवदेवकुल नगरी गठित हुई होगी।

यहाँके भवशेषके विषयमें अधिवासियोंके मुखसे ऐसा सुना जाता है, कि एक समय यह नगर बहुत सन्दिग्धशाली और रम्योदिसे परिपूर्ण था। सुसलमागोंके प्रथम आक्रमणके समय यहाँ नल नामक एक हिन्दू राजा वास करते थे। इस समय सैयद अलाउद्दीन बिन घातुन नामक कोई फकीर इस स्थान पर रहनेको इच्छासे कान्यकुब्जमें रहना हुए। राजाने अपने राज्यमें यवनता धाम होना पसन्द न किया और उस फकीरको दूसरे देशमें जानेका हुक्म दिया। फकीरने उनकी बातको प्रवृत्ति कर दी। इस पर राजाने अपना अनुचर भेज कर उन्हें बाङ्गड-मऊमें निकान भगाया। जाते समय फकीरने श्राप दिया, 'तेरा राज्य शीघ्र ही भूमिसान् होगी।' आज भी इस ग्रामके भवशेष शंशकी यहाँके लोग उन्मुखे खेरा (उलट पलट) नगर कहते हैं। उनका विश्वास है कि उस फकीरके श्रापसे यहाँ जितने मकान घेसभो उलट गये और उस भग्नावशेषका धर्मो केवल एक टीला रह गया है। फकीरको नेवालमें स्थान न मिलने पर वे बाङ्गड-मऊ नामक स्थानको

* Beal's Fa hian, chap, XVIII p. 71.

f Julien's Hwen Th-ang, Vol. II, p 265.

जान दिये। यहाँ जगकी कसके ऊपर लिखा है कि ७०२
 क्रिस्तीमें लकको मन्दिर बूई। लकी पश्चिमाधो लकें यति
 वा श्यापारी मानते हैं।

हिमो कितोबा कहना है, कि यह बाहुकु-मल नगर
 लक सुमसमान सन्ध्यामीके बसाया गया था किन्तु जग-
 साधारणमें ऐसा प्रवाद है, कि यहाँ बाहुकु नामका एक
 ब्रह्मो रहता था; ब्रह्मोके नामानुसार इस नगरका नाम
 बाहुकु मल पड़ा। सुमसमान सन्ध्यामीको कसके नामसे
 लकको भी कस खोदी गई थी। जो कुछ हो वह यथ
 माल नहीं होमें पर भी उस समय पश्चात्पौरवर्षीं यताब्दो
 में अब यह खकीर निवास नगरमें आये हुए थे, तब
 व नगरकी सुन्दरता देख कर विमोहित हो गए। हममें
 अरा भी सम्प्रेक्ष नहीं। यथावर्षीं त्रिभ समय यूपन-
 तुपुष्ट इस स्थानको देख गए थे, लक मल कसके पर
 वर्षीं कः यताब्दियोंमें भी लक सभ प्राचीन कोर्त्तिके कुछ
 पय बच रहि थे यह पश्चर्त्तमें ही अनुमान किया जा
 सकता है।

बाहुकुके समाधिमन्दिरमें जो प्रस्तरलिपि है उससे
 जाना जाता है कि यह मन्दिर ७२२ क्रिस्तीमें कितोत्र
 शाह तुगलकके राजसत्ताकालमें निर्मांन किया गया था।
 सुमसमान समाधिमन्दिरको ई. ई. १५०२२ तक है
 और लक पर लकको चार पट्टियोंके बिन्दु देखे जाते
 हैं। इनके बरामदे और कण्टकमाममें प्राचीन हिन्दू-
 राजाओंके समयका स्तूप विद्यमान है। जिस लकसे
 टोसेके ऊपर यह मन्दिर स्थापित है वह किसी प्राचीन
 हिन्दू-कोर्त्तिके मन्त्राशयके जैसा देखनेमें समता है।
 निशाकमें प्राचीन प्य मानकेपके मन्त्रा शिलालकके लकसे
 टोके हीनार, टेढ़ो ई. ई., पत्तरकी भस्म प्रतिमुर्त्ति
 लकी हुई मिठीका कादकार्य और सुलखिकादि तथा
 मिष मिष समसकी मुद्रा और माका पाई जातो हैं।

यहाँ त्रितने टोसे हैं इनमेंसे देवराज नामका टीना
 सबसे बड़ा है। इस रत्नको खोदने समय दो बड़े
 पाचोर देखे गए थे त्रिनकी प्रखेख ई. ई. १५०८ तक
 लको थी। सीतल्लादि टोसेमें एक चतुर्भुज विष्णुमुर्त्ति
 और कई एक बुद्धदेवके तुल्य पाये गए हैं। यामसे पाङ्के-
 लीन हजार छुट पवित्रोत्तर दिशामें 'दाभोसिरो' नामका

एक दुबरा बड़ा लक टीना है। यहाँ ब्राह्मणोंके पचीन
 एक मन्दिर और कुछ प्रति मुर्त्तियाँ हैं। नैवाल यामके
 उत्तराधमें महादेव और पुनवाड़ी नामक दो म्वाल हैं।
 यहाँके मन्दिर ब्राह्मणधर्मके परिचायक हैं। इससे
 पून और उत्तरपून दिशामें पवगाई नाशाके और भी
 कुछ स्तूप तथा इहकादि देखे जाते हैं।

यूपनतुपुष्टी नगदेन नगरके विषयमें जो लिख
 है—इस नगरके उत्तरपश्चिम तथा मण्डके पूर्वी किनारे
 एक देवालक था त्रिनका मन्थप और गिह्वर बहुत
 लक था और कादकार्य मो मनोरम था। नगरके एक
 लीन पूर लीन बौद्ध सङ्घाराम थे। लक सङ्घारामको पार
 कर दी लो पाद जानेसे बाद पयोबनिर्मित २० फुट
 लक था एक स्तूप देखा जाता है। यहाँ बुद्धदेवने सात दिन
 तक धर्ममन्त्रो गिया दो बी। इनो स्तूप पर लकधा
 गरीर गाड़ा गया था। लकके पास ही धियोत्र पार बुद्धके
 बौद्धके पावन और लकके लमसल्लान हैं। लपुत्र लीन
 लहायामसे पाथ मोक्ष उत्तर गङ्गाके किनारे पयोब
 निर्मित दो लो फुट लक था एक और स्तूप है। यहाँ
 बुद्धदेवने ३०० राचकोंको धपने मतमें प्रवर्त्तित किया
 था। इसके समीप चार बुद्धासन हैं। कुछ दूरमें बुद्ध
 देवका शिष्य और लकपोठ नामक एक लूना स्तूप देवने
 में पाता है।

यत्त मान निवासयाम और बाहुकुमलमें जो पय
 लक सापथिय हैं लकके साम यूपनतुपुष्ट-प्रवर्त्तित बौद्ध
 और हिन्दू कोर्त्तियोंको तुलना करकेसे दोनोंमें
 बहुत साइस देखा जाता है। इससे सिवा जिस स्तूप
 पर बाहुकु रत्नको कस है, प्रमतल्लविद्ध लकीको बुद्ध
 देवका शिष्य और लकपोठ वतथाते हैं। लसीमाडो-कोरोमो
 (Coma-de-Korose) साइबने धपने तिक्ततोय बौद्ध
 पन्थको समाप्तीचलाक समय एक पन्थके एक मलका
 कर्त्तव्य किया है जो इस प्रकार है,—लम्यक नाःक
 एक शक्य कपिलवस्तुके भगाथे ज्ञानि पर थे बुद्धके मल
 और शिष्य धपने साक ले पाये थे और बाहुकु नामक
 स्थानमें रहने लगे थे। बाहुकुके राजा लो कर लजाने मल
 और शिष्यको मडोके पन्थर माङ्क दिया और लकके ऊपर
 एक चैत्यका निर्मांन किया। बुद्ध कोर्त्तिके स्तूप लकीके

सुनाम और कीर्ति का परिचायक है * । परिव्राजक युएनसुप्रहने नवदेवकुलके जिस अंशमें बुद्धके वेश और नख देखे थे और जो अभी बाङ्गडसज कहलाता है, सम्भवतः वही तिञ्चतोय बौद्ध-ग्रन्थमें बाङ्गडके अपम्भ-ग्ररूप वागुड नामसे लिखा गया होगा ।

नेपालगञ्ज-कुम्भहारजगञ्ज—अयोध्या प्रदेशके उनाव जिला न्तर्गत दो गावसंलग्न नगर । यह अक्षा० २६° ४७' १०" उ० और देशा० ८०° ४५' २१" पू०, मोहननगरसे दो मील पूर्व अयोध्यासे लखनऊ जानिके रास्ते पर अवस्थित है । पहले नवाब सफदरजङ्गके नायब महाराज नवलरायने इस नगरको बनाया । पीछे अयोध्याके अन्तिम नवाब वाजिदअली शाहके राजत्व-सचिव महाराज बालकृष्णने उक्त नगरके समीप महाराजगञ्ज नामक एक नया शहर बसाया । वाजिदअली शाह अङ्गरेजोंसे नजरबन्द हो कर कलकत्तेके निकट मोचोखोला (Garden Beach) नामक स्थानमें रहते थे । यहीं पर १८८७ ई०में उनकी मृत्यु हुई । उक्त गञ्ज बहुत बड़ा है । दोनों नगरोंमें जाने आनेके लिये पुल बने हुए हैं । यहां पीतलके बरतन तैयार होते जो भिन्न भिन्न स्थानोंमें भेजे जाते हैं ।

नेवूकाडनेजर—बाबिलन देशका एक प्रसिद्ध प्राचीन राजा । शायद उन्हेने ५८८ से ५६२ ई०सन्के पहले राज्य किया था । पिताको जीवद्दशामें ही उनका यशःसौरभ चारों ओर फैल गया था । उनके पिता नवोपल सर मिदोयाराज सायकसारिग और इजिप्टराज निकोके साथ मिल कर ताईग्रोस नदीतीरवर्ती निनिभो नगर जय करनेके लिए अग्रसर हुए थे । ६०६ ईस्वीसन्के पहले आसिरीयगणके अधःपतन होनेसे उक्त राज्य विभक्त हो गया था । मिदोया प्रदेश और उत्तर आसिरीयामें सायलीसिया तकका भूभाग मिदोयाराज सायकसारिगके, आसिरीयाका दक्षिणांग और अरबके कुछ अंश बाबिलनराजके तथा सायलीसियाके दक्षिण और कारकोमिस देशके पश्चिमांशवर्ती स्थान इजिप्टके हाथ आये ।

निनिभि देखो ।

इसो युद्धमें नेवूकाडनेजर भी पिताके अशुवर्ती

हूए थे । प्राचीन इतिहासमें वर्णित निनिभि-युद्ध की जयमें उनको गुणगरिमा समय पश्चिम एशियामें फैल गई थी । उन्हेने अपने प्रतिभा-बलसे बाबिलनकी एशियाके पश्चिम खण्डका केंद्रस्थल बना लिया । निकटवर्ती राजाओंने इस समय इनके सामने अपना अपना सिर झुकाया था । ६०५ ईस्वी सन्के पहले इन्हेने पिताके आदेशानुसार इजिप्टराज द्वितीय निकोकी विरुद्ध युद्ध-यात्रा की और उन्हे' कारकोमिस नगरके समीप पराजित कर सीरिया पर दखल जमाया । ६०२ ईस्वीसन्के पहले पैसोस्तिनमें जब बिट्रोह खड़ा हुआ था, तब ये दलबलके साथ वहां उपस्थित हुए थे । जाते समय इन्हेने टायरको जीता और जूडा नगर पर आक्रमण किया । इन्हेने जूडाराज जोहाइया चीनको राज्यच्युत करके सिंहासन पर अपने चचा जेडकियाको बिठाया । पैसोस्तिनका बिट्रोह दमन कर इन्हेने जूडाराजको कैद कर लिया और आप बाबिलनको लौट आये । पीछे चचा के बिट्रोही होने पर ५८८ ई०सन्के पहले आपने सेनापति नेवुजरदनको सेनाके साथ उन्हे' दमन करनेके लिये भेजा । ५८७ ई०सन्के पहले जेडकिया पराजित हुए और जेरुजलमनगर उनके हाथ लगा । नगरमें प्रवेश कर इन्हेने मन्दिरादि तोड़ने और समय नगरको जला देनेका हुक्म दिया । जेडकियाको आंखें निकाल ली गईं और उनके लहके यमपुरको भेज दिये गये । जेरुजलमके पवित्र मन्दिरके तैजसादि और मृत्युवान् धनरत्नादि ले कर वे स्वदेशकी लौटे । राहमें जूडानगर जीता और लूटा तथा वहांके गण्यमान्य व्यक्तियोंको कैद कर अपने साथ ले चले । उसी साल इन्हेने फिर टायर नगरको अवरोध किया । प्रवाद है, कि कई वर्ष अवरोधके बाद ५७२ ई०सन्के पहले यह नगर उनके अधिकांशमें आया था ।

इसी बीच यहदियोंने पुनः बिट्रोही हो कर काल-दियाके शासनकर्त्ता गोदाज्ञियाकी हत्या की । इस अन्याय आचरणसे उत्तेजित हो कर नेवूकाडनेजरने पुनः ५८२ ई० सन्के पहले जेडानगर पर घावा बोल दिया और आबालवृषिता सभीको कैद कर बाबिलन ले गये । पीछे मरुभूमिमें प्रान्तवर्ती जातियोंको दमन करनेका सङ्कल्प

विद्या तथा परबन्धे संन्यास्यं ज्ञानो पर मी दक्षन्
क्याया ।

६०२ ई०सन्के पक्षके प्रायः अपनी सेनाके अधि-
नायक जो बर इन्द्रिय राज्यमें गए और वहाँके अधिपति
कोड़ोको पराजित कर राज्यमें बहुतमार मर्दाने की।
यौके पक्षमें नामक एक सेनापतिको इन प्रदेशका
यासनकर्ता बना कर प्रायः वाकिशन लौटे। इस समय
वाकिशन राज्य उत्कलिनी परम सोमा तक पहुँच
गया था।

महाप्रमानयानी सन्नाट, निबूबाइनेतरके राजत्व
कालमें ही वाकिश्वकी इतिहासी पराकाष्ठा भ्रष्टपनी लगी
थी, उनके यासनकालमें इन्द्रिय और वाकिशनवासो
भारतवर्षमें वाकिश्वके विद्ये प्राया करती थी। उनके
प्रतिद्वन्द्वो इन्द्रियराज २५ निकोने वाकिश्वविप्लारके
बिप नौसनकोही साय कोहितसारके स योगात् एक
नहर काटनेका इरादा किया।

निबूबाइनेतरने बहुतसे मन्दिर बनवाये थे। बेनि-
शनका प्रसिद्ध 'विष्णु मन्दिर' और 'सिमन-समिहत्'
मिति नामक स्थल, यहाँके इन्द्र नदीके किनारे पश्चिम
तीर्थ स्थान और भ्रम मन्दिर-समूह तथा बेनिशन नगरके
पुनर्निर्माण कराया। बेनिशन महानगरीमें जो प्राकृत
उद्यान (Hanging Garden of Babylon) सम्य
जगत्के मध्य प्राकृत्यकोत्ति समझा जाता है और जो
निर्मिताके प्रचीनिक कार्य तथा प्रचीन सुविधा परि-
चायक है, सन्नाट निबूबाइनेतर अपरिमित धन अथ
करके बनवते वरत पूर्वकोत्ति की प्रतिष्ठा का गए हैं।

दानियेल-लिखित घटनावली पढ़नेमें जाना जाता
है कि निबूबाइनेतर हबाकजामें लम्बाद रोबवत्त हुए।
ई०सन् ६०६ वर्षके पक्षके लगे हुए होने पर उनके
हुत धर्मिक महदकमें राज्यमार प्रवृत्त किया। दानियेल
और एजिप्ताकेन पुस्तकमें उनके नामही विभिन्न परि-
भाषा दिये जाती है। बिबुलन गिस्सालिपिमें उनके तीन
नाम देखे जाते हैं नबोकोद्रीसर, मनुषद्वर और मनु-
षद्वर। सुमरनाम इतिहासियोंने उनके 'बबल' धन
नगर नामके बड़े-से जिक्र है।

मिट (स० जि०) न दक्षन्, नक्षत्रान् यन्मेन सद्यः सु-
दृषित समासा। १ अनिष्ट। २ तन्वाचनमिषिद्य को माध-
मि लिपिद्य बतनाया गया है, उसका अनुष्ठान करनेके
अनिष्ट होता है, यद्यपि उद्ये मिट कहती है।

मिटा (वि० पु०) वैष्टु ईको।

मिट्ट (स० पु०) नियन्तुम्। लोह, टेला।

मिट्ट (म० पु०) नवति द्युमिति लो-न्तुम् प्रत्ययेन साहः
(व्युत्प्रेष्टु स्वकोति। इव २।६।) १ कश्चित्। २ त्यष्टु
द्वि, लक्षा द्विता।

मिसे (पा० पु०) सङ्गीत ज्ञानवर्धके लम्बे सुकीर्ति दाते
मिसेके ही काटते हैं।

मिसेकल (वि० पु०) बन्दरका जोड़ा खाना।

मिसेरों—बन्दर मदेयके वैश्वानर जिज्ञानार्थत प्रायगीन
तासुका एक नगर। यह प्रायगीन नहरने ३३ कोस
उत्तर दिक्काके लबाइनेती आनिके राज्य पर पवकित
है। प्रति सोमवारको यहाँ बाट लगती है। बन्धनयन
और फलहार निर्माण यहाँके अधिकाधिकोंका प्रधान
व्यवसाय है। यहाँका बालकका मन्दिर बहुत प्राचीन है।
इसके ध्वजाधारीका काटकाय बड़ा हो सुन्दर है।
मन्दिरके धामने बाबकेखर शिवके लक्ष्मीके प्रति बय
एक उत्सव होता है। राजा याव राजा ६३०० साल पूर्व
के राजत्वकालमें ११६१ मयमें लम्बोच एक विवा-
हवि मन्दिरमें सल्लय है। उक्त जिज्ञासकके
जाना जाता है कि मिसेरों पादि का प्राचीने मानन
कर्ता वाकिश्वनायकने तीन मन्दिर बनवाये और राजा
कात्वाके पादेमासुसार उक्त मन्दिराधिके व्ययके
लिए कुछ भूमि दान की गई। यहाँके पूर्वमन्त्र जैन-
मन्दिरमें जो जिनमूर्ति प्रतिष्ठित है उसके नीचे ११वीं
वा १२वीं यतायोके प्रकृत पक्षोंमें खोदित एक और
गिस्सालिपि है। १८०० ई०में सुविष्टयावका पोका
करनेमें मिसेरोंके 'देवार्थ' सरदार दनवत्तके प्रायः पक्षे
सेनापति बेकीरकोके साय मिल गए थे।

मिष्ट (पा० वि०) को न हो।

मिष्टा (पा० खी०) १ अनिष्टाल, न होना। २ प्रासङ्ग।
३ भाय, बर्धनी।

नेह (हिं० पु०) १ स्नेह, प्रेम, प्रीति । २ चिकना, तेल या घी ।

नेहङ्ग खाँ—एक अविशिनीय सेनापति । निजामशाही राज्यमें जब चाँदबीबी बालकराज बहादुर खाँको अभिभाविका हुई थीं, उस समय (१६८४ ई०में) नेहङ्ग खाँ सेनापतिके पद पर नियुक्त थे । राजा इब्राहिम खाँको मृत्यु के बाद प्रधान मन्त्रोंने मियाँ मञ्जू अहमद नामक एक दूसरे बालकको राजा बनानेका विचार किया । सेनापति इखलास खाँने अहमदके राजवंशोपत्य पर मन्देह करते हुए एक और बालकको राजा बना कर घोषणा कर दी । नेहङ्ग खाँने प्रथम बुरहान निजाम शाहके दृढ़ पुत्र शाहमल्लोको भौ जिनकी उम्र ७० वर्षकी थी, सिंहासनके प्रार्थिरूपमें उपस्थित किया । इधर सुलताना चाँदबीबीने इब्राहिमके पुत्र बहादुरकी यद्यार्थ उत्तराधिकारी समझ रखा था । इस प्रकार एक सिंहासन पर तीन बालक राजपदके प्रतिद्वन्द्वी हुए । अकबरके पुत्र मोरङ्गने मियाँ मञ्जूका साथ दिया । मुगलयुद्धमें इखलास खाँ पराजित हुए । नेहङ्ग खाँ मुगलसेनाको भेद करते हुए अहमदनगर गढ़में पहुँचे और चाँद सुलतानाके साथ मिल गए । सिंहासन प्रार्थी शाहमल्लो युद्ध में अपने अनुचरोंके साथ मारे गए । इसके बाद नेहङ्ग खाँ मन्त्रिपद पर अभिषिक्त हुए । इस समय चाँदबीबीके साथ सम्राट् अकबरका युद्ध छिड़ा । अकबरके अधीन जब मुगल लोग अग्रपर हुए, तब नेहङ्गने पहले तो उन्हें रोदनकी खूब कोशिश की, लेकिन पौछे उन्हें जूनीर नामक स्थानमें भाग जाना पड़ा ।

बहादुर निजामशाह देखो ।

नेहाल—पावत्य आदिम जातिविशेष । बरारके अन्तर्गत बरदा नदीके किनारे मेलघाट नामका जो पर्वत है उसके जङ्गलमें इनका वास है । ये लोग फल मूल खा कर अपना गुजारा करते हैं । जातिमें ये गोंडसे निकट समझे जाते हैं । कहीं कहीं इस जातिके लोगोंने गोंडके यहा दासत्व स्वीकार कर लिया है । खान्देशमें ये लोग भील जातिके साथ एक श्रेणोमें आबद्ध हैं ।

नै (हिं० स्त्री) १ नदी । (फा० स्त्री०) २ वाँसको नली । ३ डुकेकी निगाली । ४ बाँसुरी ।

नैख (सं० स्त्री०) निःस्वस्य भावः, अण् । निर्जनत्व । नैक (सं० त्रि०) न एकः नवर्थशब्देन सहसुपेति समासः । १ अनेक, बहुत । (पु०) २ विष्णु ।

नैकचर (सं० त्रि०) नैकः संचाभूय चरतीति चर-ट । संचाभूयचारी, जो अनेके न चलते हैं, कुंडमें चलते हैं, जैसे सूपर, मेड़िया, डिरन आदि ।

नैकज (सं० पु०) नैकभा जायते जन ड, प्रवीदरादि त्वात् धा लोपः । धर्मरक्षाके लिये अनेक वार जायमान परमेश्वर ।

नैकटिक (सं० त्रि०) निकटे वसति निकट-ठक् (निकट वसति । पा ४।४।०३) निकटवर्ती, निकटस्थ, समीपका ।

नैकट्य (सं० स्त्री०) निकटस्थ भावः, निकट-प्यञ् । निकटत्व, निकट होनेका भाव ।

नैकनी (सं० स्त्री०) नैकं तायते ताय-ड, गौरादित्वात् ङीष् । १ गोष्ठो । तत्र भव पलयादित्वात् अण् । (त्रि०) २ नैकत-गोष्ठीभव ।

नैकट्य (सं० पु०) विश्वामित्रके एक पुत्रका नाम । (भारत १३।२५३ अ०)

नैकधा (सं० अर्थ०) नैक प्रकारे धाच् । अनेक प्रकार, कई तरह ।

नैकपृष्ठ (सं० पु०) राजपुत्रभेद ।

नैकभेद (सं० त्रि०) नैको भेदीयस्य । उच्चावच, अनेक प्रकारका ।

नैकमाय (सं० त्रि०) नैका माया यस्य । १ अनेक कपट, बहुप्रकार मायायुक्त । (पु०) २ परमेश्वर ।

नैकरूप (सं० त्रि०) नैकरूपं यस्य । १ नानारूप । (पु०) २ परमेश्वर ।

नैकवण (सं० त्रि०) बहुवर्णसमन्वित ।

नैकशस् (सं० त्रि०) बहुवार, अनेकवार ।

नैकशस्त्रमय (सं० त्रि०) नानाविध अस्त्रयुक्त ।

नैकशुद्ध (सं० पु०) नैकानि चत्वारि शुद्धाणि दृश्य । परमेश्वर । "नैकशुद्धो गदाप्रभः" (विष्णुसं०) भगवान् विष्णुके तीन पैर और चार सोंग माने गये हैं ।

नैकधिय (सं० पु०) निकषाया अपत्यं ठक् । निकषा-त्सज, राक्षस ।

नैकमातु (स० पु०) नैकी मानकी यज्ञ पर्यंतमंद, एक पचाइका नाम ।

नैकमातुवर (स० पु०) नैकमाती चरतीति चरट । मिव, महादेव ।

नैकाभक्त (स० पु०) नैक भाव्या स्वरूप यज्ञ । पर ब्रह्म परमेश्वर ।

नैकभ (स० श्लो०) जेपालभोज जपालभोटेका बोया ।

नैकतिक (स० श्लो०) निहत्या परापकारैय जीवति निहत्या निहृतरता चरति वा निहति ठक् । १ पूरवैकी बानि चरति निहृर जगिष्ठा करनीवाप्य । २ चट्टुभायो ।

नैकनदुर्गा—महिपुरके पत्तमंत एक सुदु नगर । यह बिलनदुर्गके २१ मोन उत्तर पश्चिममें परब्रह्मिण है ।

नैकाव्य (न० श्लो०) निष्कलभयोम्य, खोदने वा गाड़ने कायक ।

नैगम (न० श्लो०) निगम एक श्राव्ये पञ्च । १ ब्रह्म प्रतिपादक उपनिषद् रूप वेदभाष्य । २ नय नीति । निगमे अथ पञ्च । ३ बधिक जग, ४ नागर । ५ निष्पत्तु पत्नीयमिद । ६ क्षति । ७ पञ्च । ८ नायक । ९ नगरबाहो मनुष्य । (श्लो०) १० निगमसम्बन्धो । ११ त्रिषमि ब्रह्म पादिका प्रतिपादन हो । १२ निगम साकारेता ।

नैगम—पकारी ज्ञातिके एक राजा । सोमप्यनविकुलमें राजा पाइलिकके व ममें इनका जन्म हुआ था । एक भोरा इनके कुछ देवता थे ।

नैगम—देवाके छ । सुत्रयिज्ञातिविमें निष्ठा है, कि विष्णुवर्षन राजाके समथमें बहिदल नामक किमो राजा कर्मकारोके निगमविद्याका विम्वे पाइर हुआ । इमोके ब्रह्म यिज्ञानिविमें बहिदलभो नैगमसा पादि पुत्रप यतमाता है ।

नैगमस (स० पु०) बह नय या तर्क जो इत्य और वयोय होमो को सामान्यविम्वेयुक्त मानना ही पोर करता हो कि सामान्यके बिना विम्वेयु और विम्वेके बिना कामलय नहीं रह सकता ।

नैगमिक (स० श्लो०) निगमे अन्तः, तथ्य व्याख्यानो वा अन्तःप्रवाहितान् ठक् । १ निगमअन्त, जो निगमके

उत्पन्न हो । (श्लो०) २ मनुष्याव्यायन यन् । ३ उत्सवा पञ्चाय ।

नैगमिव (स० पु०) १ कुमारातुचरमिद, ज्ञातिवेयके एक अनुचरका नाम । २ सुन्दुमोक्ष भाष्यपर मंद ।

नैगमव (स० पु०) सुन्दुमीक्ष बालपदमंद । सुन्दुमने ८ बालपदमंदका उल्लेख है जिनमेंके नैगमव नवम पद है । इहके द्वारा वीक्षित होमिसे कथोके सुन्दुके किन दिरता है, वे रोते हैं, बैचन रहते हैं, उन्हें नवर होता है तथा जनको दृष्टि अचरको टंगो रहती है पोर इहके चरको-को-को यथ पातो है ।

इसको चिन्विष्ठा—विद्वन्, पश्चिमन्त्र, माताकरपु इन सबका ज्ञात पोर सुता, ज्ञानो, ध्यायाम्भ परिषेयन, मियष्ट, चरनबाह्य पनक्तमूक, कुटपट, गोमूत्र, इधि-सपु पोर चन्द्रकाष्ठी इतके योत्रवे रीत पाक करके पम्प्य करना होता है । इयमूलका ज्ञात, दुम्भ पोर महरगव तथा अत्रकी माफो इन सबके योत्रके पाक करके पुतपाल, इरीतको, बडिना पोर बचका पङ्कम चारक, खेतसर्वक, नच, विष्ट, कुट मजातक पोर पत्र-सीदा इनका रूप प्रयोम्य है । रातको सबके सो जामे पर बन्द, उजू बिड़िया पोर गिहको विज्ञात बने हुए हुए, तिल, तखुन तथा विविध प्रकारके मसहृष्योमि इस पञ्चका पीकृषे नीचे पुत्रन करना चाहिए । बट इहके मोचे इनका पुत्रन करना प्रयष्ट है । इव पञ्चका ज्ञान मन्त्र इस प्रकार है—

“भक्तनरावकाशित्म् कामकी प्रशापका ।

नाक राधविता देवा नैकनेरोडभरउत्तु ।”

(इष्टुन उत्तरपञ्च • न०) अथर देवो ।

नैगमैपापहत (स० पु०) नागोदर, मोनाक इ ।

नैरीय (स० पु०) सामवेदकी एक शाखा ।

नैपण्य (न० श्लो०) निष्पत्तुः परादप्यम्बविज्ञान प्रह्लात ठक् । भाष्यकवित प्रबसाध्यावप्रयाम्भ निरगत, पञ्चका प्रथम काष्ठ ।

नैचा (पा० पु०) हुकेको डोहरी नकी त्रिषमि पञ्चम मिर पर बिजय रावो जातो है पोर पूनवेका बीर सुचमि एक कर हुआ चौथे है ।

नैचार (पा० पु०) नैचा बगानवाता ।

नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।
 नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।
 नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।
 नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।
 नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।
 नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।
 नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।
 नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।
 नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।
 नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।
 नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।

नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।
 नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।
 नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।
 नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।
 नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।
 नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।
 नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।
 नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।
 नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।
 नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।
 नैतन (मं० का०) नैतन इति नाम्ना ।

"माभ्यां यं महायज्ञ नैतनिकं स्मृतिकर्म च ।" (मनु)
 माभ्यां चोर पक्ष महायज्ञ यह नैतनिकं कर्म है ।

त्रिसिंघं चक्रित एव पार्ष्ण नगर। यद् यथा ०
 २८ ३१ से २८ ३० स० पोर दिया ०८ ४३ से ८० ३
 पू०के मन्थ चक्रित है। नगरको गोत्रे एक बड़ा पोर
 सुन्दर मोसामय ऊट है। यह एक प्लास्मनिवास पोर
 यूरीविवनोका मोसामास है। सुहृददेयके छोटे लाट
 योभक्तान्तमें हृद नगरमें वा कर रहते हैं। यहाँका पारि
 पोरका पार्ष्ण प्राकृतिक इम्न बहुत मनोहर है। समुद्र
 हृदमें यह नगर ६३०८ फुट ऊँचे पर बसा हुआ है।
 पोभक्तान्तमें यहाँकी जनसंख्या प्रायः चार हज़ार हो
 जाती है। १८८० ई०की १८८१ ई०में सितम्बरको यहाँ एक
 भारी तूफान आया था जिससे एक तटवृद्धका एकभाग
 धन तथा वा पोर १२० मनुष्योंको जान गई थी। ग्युनि
 सिपिन्टोने २ लाख रुपये खर्च करके नगरके चकार
 पोर १२००की व्यवस्था कर दी है। सिपाहोबिद्रोहके
 बाद यहाँ पोलिटिक्लिनानिवास स्थापित हुआ है। १३०
 प नैनुमेना यहाँ बिक्रितके निचे रह सकते हैं। त्रिप
 ऊदके चिकारै शहर पश्चित है उसकी सभार्द पात्र
 कोन पोर पोहार्द ३ सो गज है। ऊदकी दोनो बगल
 शेरकुदण्ड पोर लुङ्गाकण्ड नामक दो पर्वतशिखर
 हैं। ऊदमें मन्थकियाँ पवित्र सध्यामें देखी जाती हैं।
 त्रिप कण्डका दर नैनुतात बसा हुआ है, यह एक नोन
 नगी पोर पात्र कोन चौड़ी है। ऊदका नाम नयनतात
 है। शायद नयनतातमें जो नयनोतात वा नैनुतात
 ऐसा नाम पड़ा है।

नैनु (वि० पु०) १ एक प्रकारका खुरी खपड़ा। २समें
 पर्वतको-नो मोल समरो हुई बूटियाँ बनी होती हैं। ३
 मन्थन।

नैव (स० त्रि०) नैपय्य विचारः नैप रक्षतादित्यात्
 पञ्च। नैपविचारः।

नैपातिष्ठ (स० त्रि०) निपातनरं हित प्रयोगमुख।

नैपातिष्ठ (य० छी०) सामभेदः।

नैपाय (य० छी०) निपातक भावः, प्राज्ञवाटित्यात्
 पञ्च। निपातका भावः।

नैपाय (स० पु०) नैपासे नैपायान्देयों मन्थ, पञ्च। १
 नैपासनिष्ठ। २ इच्छातिर्मद एक प्रकारको ईश्वर। ३

मूनिम्बविषय। (वि०) ३ नैपासमन्थयो। ३ नैपास
 देयका, नैपासमें जोनिपाता।

नैपातिष्ठ (स० छी०) नैपासे मन्थ इति उक्त्। ताम्ब
 तांवा। ताम्ब देखा।

नैपासी (य० छी०) नैपासकी। १ नवमन्थिका,
 नैपासी। २ मन्थयिना मैनसिक। ३ नालो, नोलका
 पोवा। ४ शोभासिका, एक प्रकारको गिगुँछी।

नैपासी (वि० वि०) १ नैपास देयका। २ नैपासमें
 रहने वा जोनिपाता। (पु) १ नैपासका रहनेवाला
 पादमी।

नैपासीय (स० त्रि०) नैपासदेयमन्थ, नैपास देयर्द जोने
 बाबा।

नैपुच (य० छी०) निपुचस्य भावः, खम् वा पञ्च।
 नैपुच्य, निपुचता।

नैपुच्य (य० छी०) निपुच्य भावः खम् वा, खञ्
 (कुचरन मन्थयिन्वा कर्मिणः। वा ३१।१२३) निपु
 चता, चतुरार्द, कोमियारी।

नैबह्व (स० त्रि०) निबहस्य चतुरदेयादि बराहादि
 त्यात् पञ्च। निबहसमीप देयादि।

नैभृत (स० छी०) निभृतस्य भावः प्राज्ञवाटित्यात्
 खम्। निभृत्य, पञ्चाह्वय।

नैमन्थ (स० त्रि०) निमन्थ बराहादित्यात् पञ्च। (वा
 ३१।३०) निमन्थका चतुर देयादि।

नैमन्थपञ्च (स० छी०) निमन्थित व्यक्तियोंको बिनाना
 विज्ञाना मोक्षः।

नैमन्थ (स० पु०) बबिक ध्वनशायी, रोहगारी।

नैमित्त (स० त्रि०) निमित्तो मन्थः, निमित्तस्य मङ्गल
 प्राज्ञप्ल प्याप्तो पञ्चो वा खण्डयनादित्यात् पञ्च।
 (वा ३१।३३) १ निमित्तपञ्च। २ मङ्गलस्य निमित्त
 लुपक धग्ध्यादान।

नैमित्तक (स० त्रि०) निमित्त कैठि तन्मतिपादक
 पञ्चमसीत वा एक वाटित्यात् उक्त्। १ निमित्तानिष्ठ।
 २ निमित्तस्य मङ्गलप्राप्तके पञ्च्यता। ३ जो किसे
 निमित्तमें किया जाय, जो निमित्त उपस्थित होने पर या
 कसो विधि मशोरनको निदिदि निचे हो। जैसे, नैमित्त

त्तिककर्म, पुत्रप्राप्तिके निमित्त पुत्रेष्टियज्ञका अनुष्ठान, ग्रहणके लिये गङ्गास्नान।

नित्य, नैमित्तिक और काम्य ये तीन भेद हैं। स्नान, ग्रहण और संक्रान्ति आदि निमित्त उपस्थित होने पर जो स्नान किया जाता है, उसे नैमित्तिक स्नान कहते हैं। स्मार्तोंने नैमित्तिकका लक्षण इस प्रकार बतलाया है—

निमित्तका निश्चय होने पर अधिकारीकी कर्तव्यता, अधिकारी अर्थात् शास्त्रमें जिसका अधिकार है, एवम्भूत अधिकारीके कार्यको नैमित्तिक कहते हैं।

गरुडपुराणमें लिखा है, कि पापशान्तिके लिये पण्डितोंको जो दान किया जाता है उसे नैमित्तिक दान कहते हैं। ४ निमित्ताधोन, निमित्तके लिये।

नैमित्तिक-लय (सं० पु०) नैमित्तिकः ब्राह्मणो दिवावसाननिमित्तवशात् यो लयः । प्रलयविशेषः । गरुडपुराणमें लिखा है, कि इस प्रलयमें सौ वर्ष तक अनादृष्टि होती है। वारहों सूर्य उदित हो कर तीनों लोकीका शोषण करते हैं। फिर बड़े भीषण मेघ भी वर्ष तक लगातार बरस कर सृष्टिका नाश करते हैं।

नैमिश (म० क्ली०) निमिशमेव स्वार्थं शब्दः । निमिशारण्य । पृथ्वी पर नैमिशक्षेत्र अष्टतीर्थ माना जाता है।

नैमिशि (सं० पु०) निमिशस्य अपत्यं इच्छ् । निमिशका अपत्य।

नैमिष (सं० क्ली०) १ अरण्यरूप तोर्यभेद, नैमिषारण्य । २ यमुनाके दक्षिण तट पर बसनेवाली एक जाति जिसका उल्लेख महाभारत और पुराणोंमें है।

नैमिषारण्य (सं० क्ली०) निमिषान्तरमात्रेण निहतं आसुरं बलं यत्र, ततस्तत् नैमिषं अरण्यं । अरण्यविशेष, नैमिषक्षेत्र, एक प्राचीन वन जो आज कल हिन्दुओंका एक तीर्थस्थान माना जाता है और नीमखार कहलाता है। यह स्थान भवधके सीतापुर जिलेमें है।

गौरमुख मुनिने यहां निमिषकालके मध्य असुरसैन्य और उनके बलकी भस्मीभूत कर दिया था, इसीसे इस स्थानका नाम नैमिषारण्य पड़ा है। देवीभागवतमें इसका विषय इस प्रकार लिखा है,—ऋषियोग जब कलिकालके भयसे बहुत घबराए, तब उन्होंने पितामह

ब्रह्माकी शरण की। ब्रह्माने उन्हें एक मनोमय चक्र दे कर कहा था, 'तुम लोग इस चक्रके पोछे पीछे चलो, जहां इसकी नेमि (घेरा, चकर) विशेष हो जाय उसे अत्यन्त पवित्र स्थान समझना। वहां रहनेसे तुम्हें कलिका कोई भय नहीं रहेगा। जब तक सत्रयुग उपस्थित न हो, तब तक निर्भय हो कर तुम लोग वहां वास करना।' ऋषियोग ब्रह्माका आदेश पा कर समस्त देश देखनेको इच्छामें उस चक्रके प्रतुगामी हुए। वही चक्र सारी पृथ्वीका परिभ्रमण कर हम लोगोंके समक्षमें ही विशेषनेमि हो पड़ा। तभीसे यह स्थान नैमिषक्षेत्र वा नैमिषारण्य नामसे प्रसिद्ध हुआ है। यह स्थान बहुत पवित्र है। कलिका यहां प्रवेशाधिकार नहीं है। (देवीभागवत १।२।२८।३२) कूर्मपुराणके ४०वें अध्यायमें नैमिषारण्यका जो उत्पत्ति-विवरण है वह इस प्रकार लिखा है—

'ततो मुनोच तच्चक्रं ते च तत् समनुव्रजन् ।
तस्य वै व्रजतः शिष्यं यत्र नेमिरस्तीर्यत ॥
नैमिषं तत् स्मृतं नाम्ना पुण्यं सर्वत्र पूजितम् ॥'
(कूर्मपुराण ४० अ०)

विष्णुपुराणमें लिखा है, कि इस क्षेत्रकी गोमतो नदीमें स्नान करनेसे सब पापों का नाश होता है। कहते हैं, कि सीतिसुनिने इस स्थान पर ऋषियोंको एकत्र करके महाभारतकी कथा कही थी।

आर्देन-इ-अकवरी नामक सुसलमान इतिहास पटनेसे जाना जाता है, कि पूर्व समयमें यहां एक दुर्ग था। इनके सिवा हिन्दुओंके अनेक देवमन्दिर और एक बृहत् पुष्करिणी आज भी देखनेमें आती है। यह पुष्करिणी चक्रतीर्थ नामसे प्रसिद्ध है। प्रवाद है, कि दानवोंके साथ युद्धकालमें विष्णुका सुदर्शनचक्र यहां आ गिरा था। पुष्करिणीकी आकृति पट्कीषी और उसका व्यास ८ हाथका है। इसके मध्यभागसे एक जलस्रोत निर्भरके आकारमें निकल कर दक्षिणामिमुख होता हुआ जलभूमिके ऊपर बह गया है। इस स्थानका नाम गोदावरी-नाला है। सरोवरके चारों ओर बहुतसे मन्दिर और धर्मशाला निर्मित हैं। इस पवित्र चक्रतीर्थके दक्षिण-पश्चिम उच्चभूमिके ऊपर उक्त दुर्ग स्थापित है। दुर्गकी

पश्चिमायल्ल लक्ष्मणं प्राणं बुद्धं नामवे प्रथितं है । दुर्ग
 में बहुतेके स्थान पर्वे है अत्र मोर वर देखनेने मानुष
 होता है कि प्रकटा वा प्रो प्राणहर्ष के दोनो स्थान
 बहुत प्राचीन है और हिन्दू राजा ने समयके बने हुए हैं ।
 एक ही स्थानको लक्ष्मणदि प्रो पश्चिमादि देखनेने
 इनके प्राचीनत्वका मन्त्र नहीं होता । स्मरणोप
 प्रवाद है, कि यहां को प्राचीन दुर्ग था वह पाण्डव
 राजाको प्रथममें बनाया गया था । तीक्ष्ण लक्ष्मण साव-
 र्थिके लपर दिहोयार पक्षाद्वारेण विजयीके बजोर हाहा
 बल (एक लक्षसंख्याको हिन्दू सन्तान) ने ११०५ ई० में
 लक्ष्मणका पुनर्निर्माण किया ।

गोमतीके दूरे बिजारे घोराभर, घोराबोह प्रो
 लैननवर नामक एक पत्थल विस्तृत पर्वबेहृत स्थान
 इतिशेखर होता है । वहांके भोगो का कहना है कि
 यही स्थान बेहराजाका प्रासाद माना जाता है ।

मैत्रिकि (च० पु०) मित्रिकति मित्रिक क, मित्रिकदा
 स्थापक इत् । मैत्रिकारण्यवाको ।

मैत्रिकीय (च० पु०) मित्रिकय इत्, क । मित्रिक
 धर्म्यी ।

मैत्रिकिय (च० ति०) मित्रिके मय, मित्रिकय्दे व इत् ।
 उक्त् । १ मित्रिकारण्यक, मैत्रिकारण्ये १ कमेवात्ता ।

२ मैत्रिकयण्यो ।

मैत्रिक (च० पु०) मित्रिकयण्यीय ।

मैत्रिक (स० पु०) मि + मि + चिदाने पचो मत् इति कत्,
 ततः कार्यं प्रदायक । परिचरत्, विनिमय, बहुषो का
 वदता ।

मैत्रिक (च० ति०) मित्रिकयण्यीय ।

मैत्रिकीय (स० ति०) श्वषोचक विचार, ततः प्रसादि
 श्लोत् । (वा ३।३।१६३) लक्ष विद्यानशास्त्रार्थत् पक्षे न
 सुक्, ततो मन्त्रिरेकागमक (प्रतीकवच व वैरलय ; वा
 ३।३।१) १ श्वषोचक, वरमदका पत्न ।

मैत्रिक (च० ति०) श्वषोचकार इति कत्, (अत्रि
 रजगतिश्लोत् । वा ३।३।१६४) श्वषुचमजत कल्प-
 चर्मादि वारहकि ईका पमदा ।

मैत्रिक (च० ति०) मित्रिक इत् मित्रिक-यत् । मित्र
 लक्ष, नियम कोमेका भाव ।

मैत्रिक (स० ति०) नियमाशयत उक्त् । नियम
 विधियाम् कर्म, कर्तुमती श्लोके माह गमनात् ।

मैत्रिक (च० ति०) श्वषोचक श्वषोचो पत्नः श्वमत्प्या
 दिव्यात् पत्न । (वा ३।३।१०१) श्वषोचकपत्न पत्न ।

मैत्रिक (च० पु०) श्वषोच गोतमादिपत्नीत तर्क-
 याश्लिकिय पचोमि श्लोत् वा श्वषोचक । (अत्रुत्प्रादि
 कृत्वात्क । वा ३।३।१०) १ श्वषोचक श्वषोचक मा
 कालनेवाका । २ श्वषोचक । पर्याय—कायदाद
 पात्रादिक परिचित ।

मैत्रिक (च० ति०) श्वषोचक ।

मैत्रिक (स० श्लो०) श्वषोचक । गया श्लोकी पचम्
 नदी पक्षे इत्ये नामके पुकारी जाती थी । पात्र मा
 वसको पश्चिमामिषुभिनी याथा नीसाकान् वा कोला
 लन नामके उक्त् श्लोकी मोहानीनदीमें मिल गई है ।

मैत्रिक (च० श्लो०) निरन्तरक मावः निरन्तर पत्न ।
 निरन्तरक, निरन्तरका भाव परिच्छेद ।

मैत्रिक (च० श्लो०) निरन्तरक माका पत्नः । अपिचा-
 म्पत्न ।

मैत्रिक (स० ति०) निरन्तरक इत् । नरकवापो ।

मैत्रिक (च० श्लो०) निरन्तरक मावः कर्मका, निरन्-
 कत् । निरन्तरता ।

मैत्रिक (स० श्लो०) निरन्तरक मावः, पत्नः । निरा
 कता ।

मैत्रिक (च० श्लो०) निरन्तरक निरन्तरक भाव पत्नः ।
 पात्राम्पत्न ।

“बाधा द्वि परम सुख नैराद्य परम सुखम् ।
 वया कल्पन बाष्पाणं सुख सुखान्ति मना ह”
 (बाधव-भाष्य)

पात्रा को सुखको कारण है, नैराध्य परम सुख है
 अत्र प्रचार पित्र्या कालको पात्राका परित्र्या वर सुखने
 सोतो है । पात्राका त्याग नहीं करनेके सुख मिलना
 दुर्लभ है । पत्न को सुखका परित्र्या इत्ये वत्, वद-
 पात्राका परित्र्या करना दुर्लभोभावके परिचित है ।
 नैराध्य (च० पु०) श्वषोचक श्वषोचक माव श्वषोचका
 एक मन्त्र ।

मैत्रायणी (सं० लि०) निवासेनाह सुकादिरवात् उज्ज-
(वा ३३।१०३) र निवास साहु । २ उज्ज पर रज्जि
वाता देवता ।

मैत्रेय (सं० स्त्री०) निविद्धस्य मावा, प्यञ् । १
उज्ज । २ निविद्धता । ३ पविच्छेदपक्षे च योय
व सोऽप्युच्चारण्य सुवर्मेद ।

मैत्रिद (सं० लि०) निविद्ध सम्बन्धोय ।

मैत्रेय (सं० स्त्री०) निवेद निवेदनमर्थातीति निवेद
प्यञ् । देवताको निवेदनीय इत्यर्थ, यद्द सोऽज्जमन्त्री
सामर्थी को देवताको चढ़ाई जाय देवबलि, भोग ।

"मैत्रेयस्य इत्यस्यु वैश्वस्येति क्यत् ॥" (स्वधिति)
द्विबोधे गये निवेदनीय बहुमात्र स्त्री मैत्रेयपदवाच्य
के । मैत्रेयपदको नामनिश्चिन्ने विषयमें पौर मी
लिखा है—

"वदुभिं व कुडैगामि इत्यस्यु वदुवापिनत्तम् ।
मैत्रेयान्त् नभैव सुर्विषैषं वदुवाइत्तम् ॥"
(इकापवत्तम् १० व०)

हे कुडैगामि ! वदु रमाश्रित वदुभिं व इत्य-निवेदनमें
में तो खलि कोतो है, इयोसे इसका नाम मैत्रेय पढ़ा है ।
मैत्रेयके इत्य—

"उचितन कुडैगम वापवेन वदुभिं वा ।
वितोदन वदुवदि-वम्पारोएव मैत्रेयैत् ॥"
(एनवत्तम्)

सहित (यज्ञं वा उहित), वदुत्त विदुत्त पायत्त,
वितोदन (व्यंताव) वदुको पौर दधि आदिसे साव
देवदेविषीका निवेदन करना चाहिये ।

मैत्रेय पदवाच्य—

"मैत्रेयस्य वदुत्तम् इत्यस्य इत्यस्य उवा ।
उदुवाइं वदुवदि मैत्रेयस्येति क्यत्ते ।
नव सोऽस्य वेदवत् वेन सोऽप्यञ् वदुमम् ।
वर्षेन वैतमैत्रेयवाराणास्वै दिवेदयेत् ॥" (एनवत्तम्)

मयस्य मन्त्रेयको सो सव वदु देवताको चढ़ाई जाती
है वसवा नाम मैत्रेय है । यद्द मैत्रेय पांच प्रकारका
है—भस्व, सोम, छिद्य पित पौर सोम्य । अवाविधान
देवपुत्रन करके मैत्रेय चढ़ाना चाहिये ।

मैत्रेयदान-समय—

"अवाक विवर्नान्दरवर्नं वैवेक वरैदुष्यते ।
विवर्तिते अयनाये विवर्तय्य भवति धवात् ॥
वदुवात्तितो सुवरा वैवेरा सुष्यते सुकम् ॥" (एनवत्तम्)
विसर्गमन्त्रे पदसे मन्त्रद्रव्यको मैत्रेय पौर विव-
र्नन को जाने पर उसे निर्माक्य कहते हैं ।

मैत्रेयस्वापनका क्रम—

"मैत्रेय दक्षिणे माये पुरिलो वा व इवत्तः ।
वववत्त देवता वाये आमावत्तव दक्षिणे ॥" (प्रा१००)
"दक्षिणस्य पयिपयस्य वाये वैर निवारयेत् ।
अभोग्य उद्वेदयन वापीवत्त सुपोवमम् ॥"
(एनवत्तम्)

मैत्रेय देवताके दक्षिण मागमें रखना चाहिये, पानी
या पोखे नहीं । इसमें विधियता यह है, कि पञ्च मैत्रेय
देवताके बाएँ पौर बाह्य दक्षिणे मागमें रखना चाहिये ।
अथवा यह पनोम्य पौर पानीय सुरा घट्टय घमम्ना
जाता है ।

• मैत्रेयदान-प्रसंग—

"वैश्वेदेव नभैव स्वर्गो वैश्वेदेवामुव नभैव ।
वर्षांश्चाममोद्याव वैश्वेदु प्रतिच्छिन्ना ॥
वर्षेवत्तव नित्य वैश्वेक वरैदुधिरम् ।
वापर वापर इव वरैवोगवर्नं तदा ॥"
(वाचिष्पु० १५९ अ०)

मैत्रेयदानमें स्वर्ग पौर मोच काम होता है । वर्ष,
पर्ष, काम पौर मोच मैत्रेयमें प्रतिहित है । मैत्रेय
दानमें सब यज्ञका फल, प्राण मान पौर पुण्यकाम
होता है ।

मैत्रेय उद्वेक करके समस्त सुद्रा दिव्यानी चाहिये ।

"मैत्रेयपुत्रास्युष-कनिष्ठान्यां वरैदुकेत् ।
कनिष्ठानामिकासु सुर्वे इत्यापस्य कीर्तिता ॥
उर्वेकीमपमासु उरेवापस्य उ सुदिवा ।
अनामानप्यवोऽप्युर्वेवरापस्य उ पा स्युवा ॥
उव म्यवावावावाकि वासुहाविरपुर्विका ।
वर्षांनि वा वनापस्य वापारपरेषु मेरिणा ॥" (एनवत्तम्)
पञ्च पौर अग्निह पञ्च निवेद पदयोमसे मैत्रेय
सुद्रा दिव्यानी चाहिये । इसमें विधेयता यह है, कि
प्राच पयान, वदान अ्यान पौर समान दन दांच वासुधोर्षे

उद्देश्ये निवेदन करना होता है। किमिठा, अनामिका और अद्भुत द्वारा प्राणवायुकी, तर्जनी, मध्यमा और अद्भुत द्वारा अयान वायुकी; अनामिका, मध्यमा और अद्भुत द्वारा उदान वायुकी; तर्जनी, अनामिका और मध्यमा द्वारा व्यान वायुकी तथा सभी उंगलियों द्वारा ममान वायुकी मुद्रा दिखानी चाहिए।

देवीद्देश्ये नैवेद्यके उत्सर्ग हो जाने पर यह ब्राह्मण को देना चाहिए। जो देवदत्त नैवेद्य ब्राह्मणकी नहीं देते, उनका नैवेद्य भस्मोभूत और निष्फल होता है।

“साक्षात् खादति नैवेद्यं विप्रस्वी जनादेनः ।

ब्राह्मणे परिपुष्टे च सन्तुष्टाः स्वदेवताः ॥

देवाय दत्त्वा नैवेद्यं द्विजाय न प्रपच्छति ।

भस्मीभूतञ्च नैवेद्यं पूजनं निष्फलं भवेत् ॥”

(ब्रह्मवै० श्रौहृष्यब्रह्मसू० २१ अ०)

‘श्वदश्चेद्वरिभक्षश्च नैवेद्यभोजनोत्सुकः ।

आमास हरये दत्त्वा पाकं कृत्वा न खादति ॥”

(ब्रह्मवै० २१ अ०)

हरिभक्त शूद्र यदि नैवेद्य खानेकी इच्छा करे, तो हरिको आमन्न चढ़ा कर पोछे उसे पाक कर खा सकता है।

नैवेद्यभोजनफल—

“कृत्वा चैवोपवासस्तु भोक्तव्यं द्वादशीदिने ।

नैवेद्यं तुलसीमिश्रं हस्ताकीटोयिनाशनम् ॥

अग्निष्टोममहस्त्रैश्च वाजपेयशतैस्तथा ।

सुख्यं फलं मवेद्देवि विष्णोर्नैवेद्यमभ्रणात् ॥”

(स्कन्दपुराण)

एकादशीके दिन उपवास करके द्वादशीकी तुलसीमिश्रित नैवेद्य खानेसे कीटिहत्याका पाप विनष्ट होता है।

सहस्र अग्निष्टोम और शत वाजपेय यज्ञका अनुष्ठान करनेसे जो फल लिखा है, हरिको निवेदित नैवेद्य खानेसे वही फल मिलता है।

श्राद्धिकतत्त्वमें नैवेद्यका विषय इस प्रकार लिखा है,—मोचक (कदलोफल), पनस, जम्बु, माचीननामलक (करमदक), मधुक और उद्भुम्बर आदि फल सुपके होने पर नैवेद्यमें दे सकते हैं। अपर्युपित पक्क

वस्तु नैवेद्यमें नहीं देने चाहिए। खण्डान्यादिकत पक्क वस्तु पर्युपित नहीं होता। यम, गोधूम और शान्त्रिको घृत द्वारा संस्कृत करके तिल, मुद्गादि और माप नैवेद्यमें दिये जा सकते हैं। जो मद्य वस्तु अभक्ष्य हैं उन्हें नैवेद्यमें नहीं दे सकते। अभक्ष्य, जिस यज्ञके निचे जिस वस्तुका खाना निषिद्ध है, वी मद्य वस्तु और जिस दिन जो द्रव्य खाना निषिद्ध है, वह द्रव्य उस दिन नैवेद्यमें नहीं देना चाहिए।

“माहितं वर्जयेन्मासं क्षीरं दधि घृतस्तथा ।”

(आह्निकतत्त्व-देवउ)

माहितघृत, दुग्ध और दधि द्वारा नैवेद्य नहीं देना चाहिए। घृत चण्डालादि और कुकुर द्वारा देखे जाने पर यह नैवेद्यमें प्रयोज्य है।

“यद्वददित्तमं लोके यच्चापि प्रियमात्मनः ।

तत् तत्रिवेदेयं यद्वा तदानन्तवाय कल्पते ॥”

(आह्निकतत्त्व)

जो कुछ अभिलषित वस्तु है और जो विशेष प्रीतिकर है, वही सब वस्तु अभीष्ट देवताको चढ़ाना चाहिए। इस प्रकारका नैवेद्य अनन्तफलप्रद होता है।

‘त्यजेत् पादोदकं यस्तु नैवेद्यं च त्यजेच्च यः ।

पष्टिषर्षसहस्राणि रौद्रे नरके वचेत् ॥”-

(आह्निकतत्त्व)

जो जिस देवताकी अर्चना करते हैं, उन्हें उस देवताका नैवेद्य खाना चाहिए। जो अथहेलापूर्वक उस नैवेद्यका त्याग कर देते वी साठ हजार वर्ष तक नरक भोग करते हैं।

जो कुछ अभिलषित वस्तु हो उसे देवताको चढ़ाये बिना न खाना चाहिए, अतएव प्रिय वस्तु मात्र ही देवताकी चढ़ा कर उसे प्रसाद रूपमें खा सकते हैं।

“विष्णोर्निवेदितं पुत्रं नैवेद्यं वा फलं बलम् ।

प्राप्तिसाधने भोक्तव्यं तत्राग्रेण ब्रह्महा जगः ॥”

(ब्रह्मवैवर्त ब्रह्म० ३७ अ०)

विष्णुनैवेद्य पानेके साथ ही खा लेना चाहिए, जो इसका परित्याग कर देते हैं, उन्हें ब्रह्महत्याका पाप लगता है।

यिष्णुनैवेद्य खानेसे जितने प्रकारके पाप हैं, वे सभी

दूर जो जाते हैं। ब्रह्मदेवता पुराणके शोडश-ब्रह्मण्डलके
१०वें पञ्चाङ्गमें इसका विस्तृत विवरण लिखा है। मिय
घोर सुय का नैवेद्य जाना गया है।

“जगद्देवैर्गिरिभैरेव पत्र पुत्र चक बभूवुः।

प्राजपतयजिभार्यर्जुन इवै वासि पवित्रताम् ॥

(भाद्रि ब्रह्मण्डल)

यन्पुत्र्यादि घोर गिरिनिर्बन्धित नैवेद्य पयादा है
पर्याप्त मन्त्र करना निश्चि है। इसमें विशिष्टता यह है, कि
यदि वह नैवेद्य शास्त्रियों गिरिणाष्टु हो, तो वह पवित्र
होता है। शास्त्रियान्-भूट मिय नैवेद्य जानिमें कोई दोष
नहीं। इसका तात्पर्य यह कि शास्त्रियोंगिरिणाष्टि गिरि
पूजा करनिसे वह नैवेद्य जाया जा सकेता है।

गिरिभैः शङ्खैश्चै बह्मया ब्रुवा यज्ज घोर नैवेद्य
जिसे पढ़व नहीं करना चाहिये, पढ़व करनिसे नैवेद्य
बह्मनिजा कुछ भी फल नहीं मिलता। फिर दूसरे शास्त्रमें
मियनैवेद्यका पढ़व पयादा नहीं मतनाया है—

‘इत्या नैवेद्यकामि नारण्य चक चक ॥

प्राजपतौ गिरिभैरेव तदावासे नो तत् कर्म ॥”

(पद्मपुराण)

गिरिनिर्मात्र कारक करनिसे रोग, बरबोदक पीनिसे
शोक घोर नैवेद्य धामिसे प्रमिय पाप नाम होते हैं।

गिरिभैवेद्य मन्त्र जो लिखिय मतलाया है उसका
पौराणिक उपाख्यान इस प्रकार है—

“सोय इती निर्मात्र सोऽग्न्यु बरभोरबम्।

बरोर्वा वाचः इति शम्भोर्देवमस्रगम् ॥”

(शाखाब्रह्मण्डल)

एक समय यन्तुक्रुमार विष्णुके भ्रेंट करने के लिये
बैकुण्ठ गये। इस समय भयवान् विष्णु, मोक्षन कर रहे
थे। महाब्रह्मण्डल विष्णुमें यन्तुक्रुमारको देख कर यन्तुका
बहिष्कृत प्रसाद दिया। यन्तुक्रुमारने उस प्रसादमेंसे
कुछ भी पाप खा लिया घोर कुछ धाम्नीपयम्को देनेके
लिये घर ही धार्ये। मित्राचममें पढ़व कर लकीने अपने
गुह महादेवको कुछ प्रसाद दिया। महादेवने उस
प्रसादको प्य कर लकी समय खा लिया घोर मन्त्र करने
लगे। ‘स्वी वीच पावतो बर्वा पद्मवी घोरं चयने
कुचै चक इत्यान्तु दन कर दिवजो परबहुत बिगड़ें। यहाँ

तब कि पावतोने माप दे दिया, ‘पापने जो विष्णुका प्रसाद
मुझे दिये बिना खा लिया, इस कारण लगतमें पावते
जो मनुष्य धापका नैवेद्य खायागा, वह दूसरे जन्ममें
कुचुरदोनिमें जन्म लेया।’

“अथवपति ये कोश नैवेद्य मुचकटे तव।

सै कर्मैक धारनेया नरिरास्त्वैव भ्राते ॥”

(श्रीहृत्पद्मसूक्त)

इस प्रकार माप दे कर पावतो जो विष्णुका प्रसाद
पा न नहीं, इस कारण वे कारकवार रोने लगे।

इसका दूसरा कारण किङ्कर्णनतम्के ११/१४ पटल
में जो विस्तृत रूपसे लिखा है—

“दुर्भेग तव निर्मात्रः ब्रह्मणीन इयानिने।

तव चक परमेष्ठान् विमर्शत तव सूचिगम् ॥”

(किङ्कर्णनतम्)

काकिङ्कापुत्रके नैवेद्यका विषय इस प्रकार
लिखा है—

प्रसन्न घोर पवित्र निवेदनीय वस्तुका नाम नैवेद्य
है। यह नैवेद्य मन्त्र (भात) प्रथमि सिद्धे र प्रकार
का है। इन पाँच प्रकारके निवेद्योंमेंसे देवीका नैवेद्य जो
सर्वसे मिय है, लकीका विषय यहाँ लिखा जाता है।
पाँची प्रकारका नैवेद्य देवोका मिय है। नामर कपिल
प्राचा, कसुच, करक, बहर कोल, कुष्माण्ड पनस, ०
बहुल मनुष्य, रसाक, पान्नातक, क्षीर, पाथोड,
पिच्छलहुरं कदव ओषध, लडु, थोदुग्ध, सुधाम
मांसक, कर्कटीफल (ककड़ी), जाम्बव, जोकपूर,
जम्बक, इरोतकी पामकक, १ प्रकारका नारङ्गक,
देवक, मधुर घीत पटोल, चोरिण्डक, पटल, कालज,
हल, पम्पिन, बरकोषक, तिमूक, कुसुम, पीत, कार
भिर, कण्ठप्र, समीकत्तं पादि तथा माना प्रकारके अन्य
पन द्वारा देवीका नैवेद्य मलुन करना चाहिये। योधा
तब बिम्ब, योसक प्रथमि फल मिय समी फल देवीके
मिय हैं। मातुलुङ्ग, मटक, करमटं घोर रसालक से
यव कामाचा देवीको चढ़ाने चाहिये। गङ्गातल समीह,
मातुक, प्वाल नुङ्गैर, काचान, कूकण्ड, कुतुम्ब
पादि पन परमांश पिच्छ, पावक, क्षयर, मोदक,
इसुक, पिच्छा घोर कर्कू इन सब इन्हीं नैवेद्यके देवो

प्रसन्न होती है। गो, महिष, अजा, आविक और मृग इन सब पशुओंका दूध, सब प्रकारका मधु, शर्करा, सब प्रकारका अन्न, पान और मांस ये सब देवीके नैवेद्यमें प्रशस्त माने गये हैं। आमिन्दा, परमान्न, शर्करामिश्रित दधि और घृत ये सब वस्तु महादेवीकी प्रर्पण करनेसे अश्वमेधयज्ञका फल मिलता है। शर्करा, मधुमिश्रित सुरा, लाङ्गुल, अस्त्रक, रुचक, मुद्ग, मसूर, तिल और यव आदि सब प्रकारका शस्य देवीकी चढ़ाना चाहिए। कैसा ही भक्ष्य द्रव्य क्यों न हो, उसका केश-करकादि संस्कार करके तब नैवेद्यमें दे सकते हैं। संस्कार्य वस्तुका जिस प्रकार संस्कार करना होता है, उसी प्रकार संस्कार कर के नैवेद्य चढ़ाना चाहिये। जो पूतिगन्धषण्डुक्त ही, दग्ध तथा भोजनके अयोग्य ही, उसे नैवेद्यमें नहीं देना चाहिये। सुगन्ध कर्पूरवासित ताम्बूल देवीकी चढ़ानेमें विशेष फल है। जो सब मृग और पक्षी वलिदानमें छेदित होते हैं उनका मांस, गण्डार, धार्धिनस और छाग मांस तथा मत्स्य रन्धन कर देवीकी नैवेद्यमें दे सकते हैं। खलुर, पिण्डखलुर तथा सप्तत यशचूर्ण देवीकी चढ़ानेसे राजसूययज्ञ करनीका फल मिलता है तथा क्षयरान्न (खिचडो)के नैवेद्यसे अतुल सोभाग्य प्राप्त होता है। नारियलका जल चढ़ानेसे अग्निष्टोम-यज्ञका फल और जामुन, लवली, धात्री तथा श्रीफल चढ़ानेसे भी अग्निष्टोम फल प्राप्त होता है, पीछे उसे देवलोककी प्राप्ति होती है। द्राक्षा, शर्करा और नारङ्गक, इक्षुदण्ड, नवनौत, नारियलका फल, शर्करा और दधिपुक्त पेय वस्तु, नीवार और उरदकी दधिके साथ कूट कर देवीकी चढ़ानेसे लक्ष्मोवान् और रूपवान् होता है, पीछे मरने पर उसे मोक्ष मिलता है। मिर्च, पिप्पली, कोष, जीषक और तन्तुभ इन्हीं भलोभाति संस्कृत कर देवीकी चढ़ाना चाहिये। राजमाष, मसूर, पालक, पोतिका, कलिशाक, कलाय, ब्राह्मीशाक, मूलक, वासुक लक्ष्मोक, चटुक, हिलमोचका, चुचुविष्टम पत्र और पुनर्षा आदि शाक देवीकी चढ़ा सकते हैं। मन्थ और कालविरुह तथा गुरुभारसमन्वित नैवेद्य देवताकी चढ़ाना निषिद्ध है। चांदो वा सोनेके पात्रमें देवताकी नैवेद्य चढ़ाना चाहिये। (कालिकापु० ७० ध०)

घण्टा बजा कर देवताकी नैवेद्य चढ़ानेकी निम्ना है।

“धूपे दीपे च नैवेद्ये स्नपने वसने तथा।

घण्टानादं प्रकुर्वीत तथा नीराजनेऽपि च ॥

(विधानगा०)

नैवेद्य (स० त्रि०) निवेशनं निर्वृत्तं सङ्गलादित्वाद्ब०।

(पा ४।२।७५) निवेशनिर्वृत्त, विवाहनिर्वृत्त।

नैवेद्यिक (स० क्तो०) निवेशाय गार्हस्थाय हितं, निवेश-ठक्। १ विवाहयोग्य कन्या। २ विवाहार्थं दीयमान द्रव्य, विवाहके लिये दिये जानेका धन।

नैश (स० त्रि०) निशाया इदम् निशा-षण्। (तयदेदम् पा ४।३।२२०) १ निशासम्बन्धो। २ निशाभाव।

नैशिक (स० त्रि०) निशया भवम्, निशा-ठक्। (निशापदो-पाभ्याञ्च। पा ४।३।४१) १ निशाभव। २ निशाव्यापक।

नैद्यित्य (स० त्रि०) नियतस्य भावः, प्यञ्। निद्यय। नैश-श्रैयस् (स० त्रि०) निश-श्रैयसाय हितमप्य। निःश्रयसमाधन।

नैश-श्रैयसिक (स० त्रि०) निःश्रैयसं प्रयोजनमस्य ठक्। निश-श्रैयसाधन। विकल्पमें 'स'-की जगह विसर्ग हो कर निःश्रैयसिक ऐसा पद होगा।

नपदिक (स० त्रि०) १ निपदभव, निपदका। २ उप-वेगनकारी, बैठनेवाला।

नैपथ (स० पु०) निपथानां राजा, निपथ-षण्। १ नलराजा। २ निपथदेशाधिपति। ३ वर्षविशेष। ४ पित्रादिक्रमसे निपथदेशवासो, नैपथं नलमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः षण्। ५ नलनृपचरितरूप महाकाव्यभेद, श्रीहर्षरचित एक संस्कृत काव्य जिसमें राजा नलकी कथाका वर्णन है। यह काव्य २२ सर्गोंमें सम्पूर्ण हुआ है।

“उदिते नैपथे काव्ये क्व माघः क्व च भारविः।” (उद्भट)

इसका तात्पर्य यह कि नैपथ काव्यके सामने माघ और भारवि कुछ भी नहीं है। इसके सिवा और भी प्रवाद है कि—

“उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थं गौरवम्।

नैपथे पदलालित्यं माघे सन्नि प्रयो गुणाः ॥” (उद्भट)

कालिदासकी उपमा, भारविका अर्थगुरुत्व और

नैवशका पदसामिन्न प्रय समोच है तथा मासमें ये तोनों
 गुण पाय जाते हैं। यद्यार्थमें नैवश-काण्यका पदसामिन्न
 अनुपम है। य खतामिन्न मात्र ही इतली यद्यार्थताका
 अनुपम कर सकती है। नैवशके चत्वार्यमें एक कि वदन्ति
 प्रथमिण है—वीर्यदेवने नैवशकाण्यको रचना कर
 कचे अपने धार्मीय एक पातहारिकको देखने दिया
 उन्मेंनि नियोकक्यके परासोचना करके कहा, 'मैने जो
 एक चमदार पत्र लिखा है उसके दोष परिच्छेदके लिये
 मुझे कई पत्र देवने पड़े हैं। कुछ दिन पहले यदि
 तुम्हारी यह पुस्तक मिल जाती, तो एक ही पत्रके मेरे
 दोष-परिच्छेदके समी उदाहरण संपन्न हो जाते। स खत
 महाकाण्यमें यह एक प्रधान काण्य है, इसमें सन्देह
 नहीं। (त्रि०) १ नैवशदेगसम्बन्धो, नैवश देगका।
 नैवशीय (स० त्रि०) नैवशस्य इदम् 'इवाच्छ' इति च्छ
 नक्षत्रम्बन्धा।

नैवश (स० पु०) नैवशस्य सञ्चयया तन्वृत्स्थापयन्
 नादित्वात् पञ्च। राजा नक्षका पुत्र या न शत्रु।
 नैवाद (स० पु०) नैवादश्च पञ्चय विदादित्वात्पञ्च।
 नैवादका न शत्रु।
 नैवादक (स० त्रि०) नैवादेन कृतम्, कुञ्जाकारित्वात्
 च द्वार्यां कुञ्ज। (पा ४।३।१८) नैवादकृत पदाच'नैद।
 नैवादिक (स० पु० त्रि०) नैवादस्य पञ्चय इति चञ्च
 नैवादका न शत्रु।
 नैवादि (स० पु०) नैवादस्य पञ्चय इति चार्थे इत्।
 नैवादका न शत्रु।
 नैविश (स० पु०) नैविश' नलो पाचकतयाऽस्तस्य,
 पञ्च, उपोहरादित्वात् पाञ्च'। तन्नामक नक्षत्रप दक्षि
 चाम्नि।
 नैव्यर्थ (स० त्रि०) नैव्यर्थो धावा, पञ्च, विवि-
 पूर्वक चर्च'कर्म'इति। पापविपरिच्छेद ही कर विवि
 पूर्वक कर्म करते करते चर्म'इयाम किया जा सकता है।
 नैव्यतिक (स० त्रि०) नैव्यतिकसम्बन्ध उक्त। (पा
 ४।१।१११) नैव्यतिकमानुक्त।
 नैव्यसञ्चिक (स० त्रि०) नैव्यसञ्चिकसम्बन्ध उक्त।
 नैव्यसञ्चिक परिभाषाकुञ्ज।
 नैव्यस (स० पु०) नैव्य' कृत्वि दोनारे तदागारे निवृत्त

उक्त। १ शोवाञ्चक, उक्तमानका पञ्चनर। २ नैव्य
 विकार। (त्रि०) ३ नैव्यसञ्चिक, नैव्य द्वारा मोक्ष किया
 हुआ। ४ नैव्यसञ्चिकी।
 नैव्यसञ्चिक (स० त्रि०) नैव्यसञ्चिक-सञ्चिक, नैव्यसञ्चिक
 दरिद्रता।
 नैव्यतिक (स० त्रि०) पञ्च'सि-सिद्धमे तत्पर दूर'इति
 ज्ञान करके अपना प्रयोशन निवारणमें जाना।
 नैव्यसञ्चिक (स० त्रि०) नैव्यसञ्चिके गिरोर्य'वाद्वाचिकम
 काते दीयते तत्र कार्य' वा श्रुत्यादित्वात् पञ्च, (पा
 ४।१।१०) १ नैव्यसञ्चिककार्यमें दीयमान वस्तु वह वस्तु
 जो नैव्यसञ्चिक चक्षुष्यके समान दान की जाती है।
 नैव्यिक (स० त्रि०) निहा विचार'इत्यंति निहा-उक्त। १
 निहावान्, निहावृत्त। २ मरचकाच'कर्म'कर्म'इति (पु०)
 ३ ब्रह्मचारि'इति, वर ब्रह्मचारी जो उपनयनकालके से
 कर मरचकाल तक ब्रह्मचर्य-पूर्वक गुणके पापमें
 ही रहें।
 पाञ्चसञ्चिकमें लिखा है, कि नैव्यिक ब्रह्मचारिण्य
 यावज्जीवन पाचार्यके समीप, पाचार्यके समानमें पाचार्य-
 पुत्रके समीप, उसके भी समानमें इनको पत्नीके समीप
 पीर यदि पत्नी भी न रहें तो यन्त्रिकोमोय पत्निक
 समीप भाग करे। त्रिपरिच्छेद नैव्यिक-ब्रह्मचारो यदि
 निविपूर्वक रहना अवसम्भन करे, तो पत्नीमें कचे मुञ्चि-
 काम होता है। इस न लारमें फिर कचे अन्तरयन्त्रका
 भोग करना नहीं होता। यावज्जीवन ब्रह्मचर्य' धम
 करनका काम ही नैव्यिक-ब्रह्मचर्य' है।
 नैव्यर्थ (स० त्रि०) नैव्यर्थस्य इत्, नैव्यर्थ-वान्।
 नैव्यरता, नैव्यर्थ, कुरता।
 नैव्य (स० त्रि०) नैव्यसञ्चिक, व्रतभियमादि पाचरच
 मोन।
 नैव्यसञ्चिक (स० त्रि०) नैव्यसञ्चिक, पाच' कर्मम्।
 गामामाह।
 नैव्यसञ्चिक (स० त्रि०) नैव्यसञ्चिकका कार्य, वीर्यमें
 वासिका काम।
 नैव्यसञ्चिक (स० त्रि०) नैव्यसञ्चिकारी वीर्यमेंजाना।
 नैव्यसञ्चिक (स० त्रि०) नैव्यसञ्चिक-सञ्चिक। (पा ४।१।४१)
 नैव्यसञ्चिक भाव।

बहाम पर पात्रमच क्रिया क्रिये यहाँ मुसलमानों की सव्या घोर भी बड़ गई। इससे पलाहा परबदेमोय बहामच हिन्दु घोर सखवार बहामुत होते हुए भागि न्याय यहाँ पावे थे। बोरे बोरे यहाँ मुसलमान सख दायकी निभो निभ सकति होनी लनी।

१५४६ ई०में सोजर-ओडिच नामक एक सिनिध निवाओ बहाम खानकी देख कर किछ यसे हैं,— यहाँ के पबिवाबिच मूर नामक दख्खे समान हैं। सखहो यहाँ बहुत सखो सिनती घोर लमकहा बहुत बड़ा कारवार है। प्रति बयं नाको मन लमक यहाँ दूरी खानमें भेजा जाता है।

भोसहवी गताप्योके धलमें कुछ पोचुं योम इन देवमें धाय घोर धाराखानरात्रके पबोम रहनी लनी। १६०० ई०में बिबी कारव पाराखानरात्रने ठक्के मर ममावा। बहुतोकी आने गई घोर जो कुछ बच रहे ने गङ्गा लदोके सुखामें दख्खुठलि करने लये। इनके पलाधारवे पत्नीद्वित को कर रजाहिस याने ४० बहो ब्रहाम घोर १०० सेना से कर माहाबाजपुर होयमें इन पर चढ़ाई कर दो, हिन्दु इन लड़ाईमें से पराश्रित हुए। योत्तुं भोत्रोनि सभके चहावादि यपने पबिचारमें कर लिपे। इससे इन कोमाने लम्बाहिस भो कर १६०८ ई०में बलबीव पर पाक मच कर सुखसमानेके दुर्गकी चबरोच क्रिया। गिवित घोर कोयसी योत्तुं भोत्रोके पाब हूदमें सुखसमानेको डार हुई घोर सतबीव सभके पबिचारमें पा मया।

धराभी योर्दक सनिं वरकी निशित बर्ननावे खाना जाता है, कि अब योत्तुं भोत्र सुयल द्वारा दगाश्रिन हुए लव पाराखानरात्रमें इन कोयके धाय नात पन्थान्य च योत्रीको भो धायब दिया घोर इन भोत्रीको लहायताने बहाम बन्धुको सुगल-पात्रमचसे बचावा। मय घोर योत्तुं भोत्र सिनिध दख्खुमन्थापके सुष्ठम घोर पन्था चारने लुनन्-बन्धाद, योर्दकिस त म त म पा यसे घोर बहामके मानकनां माहस्ता योके धक्के हमम खानेके लिप भेजा। माहस्ता याने इन भोत्रीको डरा चमका कर बयोमुत क्रिया घोर लहा कि यदि की भोग पन्था-चार करम होइ दे तो योत्तुं भोत्र लम लानीको रहनेको अनव खसोम दे सकने है। इस प्रकार माहस्ता यो

लम लोवीको गान्त कर १६११ ई०में सेयद पक गागवे पबोम १०० सेना लवरको रसाक लिप एक भोट पाय।

१०१६ ई०में दट हकिबा-अप्योम खपहोका मय सय करनेके लिप यहाँ एक भोठा बलवाई। इससे पलाहा चारपाता, काकोबन्दी, खटवा घोर लखोपुर याममें लसे समय पनेक कोओ निमाच की यद जिनेके लव धानवीय पात्र भो लखर पाते हैं। यहाँ मुसलमान-यव ल्हालमतागुवारी हैं। ये भोग लमात्र पकृते घोर धर्मक हिन्दु-पूत्रांमें योयदान देते हैं तथा पन्थान्य सुमस मान घोरकी बिसिय मजि नहो करते। हिन्दुयोके मन्प ब्राह्मचमच योम घोर निनचकोक हिन्दु-गन्प भेष्य है। बहां योतकादेभो घोर नागपूत्रा ही प्रसिद्ध मानो जाता है।

यहाँके ल्या हिन्दु ल्या सुमसमान योने कालिके मन्प सुववा १२वे २० वर्षे चोर लम्बाका १० वर्षे कोने-से-विनाच होता है। यहाँक सुमसमानकी विनाच-प्रथामे हिन्दु-से बहुत कुछ धक्के पकृता है। विनाचके दिन वर धामीव खानन घोर यामल निमन्थिल बरयाओके साब लम्बाके कर जाता है। यन्थागतके निर्दिष्ट खान पर के डनेके बाद एक पाबनी बकील यो। दो पायमी मांसि यपने निबुल होते हैं। गट वर दमा बकीलव द्वारा बहुतवे प्रम्य लम्बाको लवहारलकप देता है। कन्था इन सब दूयो को से कर विवाहको सन्धति बकट करतो है। पनलर बकील वरवे निबट पा। वर लुन यानी कव लुगते घोर कल धासिहव लनका ममलन करने हैं। यामन्थित म्थिसिचके भोत्रन कर बुबनी पर निबाच होता है। इससे बाद वर लम्बाका यपना धर से जाता है।

इस प्रसिद्धे ल्या जातोय मनुच खानको यिनी करने है। केन सेपायमें को पाबच धान भोग जाता है, लव खानच भान्नेम घोर लो ल्थेठ, पायाकमें कोया जाता व बह कार्तिब, पयहायनेके कृता है। यहाँ लट, मरधा, मारियल सुवारी इन्दी ईप, पाट घोर पानकी बहुत यिनी जातोके। ये म लपक दख यहाँके लहा चह याम पादि ब्रिहानि भेके जाते घोर इन सब ल्याने

नाग दूखीकी इस जिलेमें आमदनी भी होती है।
१८७६ ई०में यहाँ एक भयानक बाढ़ आई थी जिससे
बहुत मनुष्योंके प्राण नाग हुए थे।

२ उक्त जिलेका एक उपविभाग। यह भूभाग २२°
१०' से २३° १०' ७०' और देगा० ८०° ४०' से ८१° ३३'
५०'के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १३०१ वर्ग मील
और जनसंख्या ८२२८१ है। इसमें सुधाराम नामका
एक शहर और १८५५ ग्राम लगते हैं।

३ उक्त जिलेका एक प्रधान नगर। सुधाराम देखो।
नोड़नी (हिं० स्त्री०) नोड़ देखो।

नोड़ (हिं० स्त्री०) दूध दुहते समय गायके पंर बाधने-
का रस्मी, बंधो।

नोक (फ्रा० स्त्री०) १ सूक्ष्म अग्रभाग, शङ्कुके आकारको वस्तु-
का महीन वा पतला छोर। २ कोण बनानेवालो दो
रेखाओंका सहस्रस्थान या बिन्दु, निकला हुआ कोना।
३ किमी वस्तुके निकले हुए भागवा पतला सिरा, किमी
औरकी बटा हुआ पतला अग्रभाग।

नोकभोंक (हिं० स्त्री०) १ बनाव सिंगार, ठाटवाट,
सजावट। २ पातझ, दर्प, तैज। ३ चुभनेवाली बात,
व्यंग्य, ताना, आवाजा। ४ छेड़छाड़, परस्परको चोट।

नोकरदार (फ्रा० वि०) १ जिसमें नोक हो। २ चुभनेवाला,
पैना। ३ चित्तमें चुभनेवाला, दिलमें असर करनेवाला।
४ शानदार, तड़क-भड़कका, ठसकका।

नोकना (हिं० स्त्री०) ललचना।

नोकपलक (हिं० स्त्री०) शीख नाक आदिकी गढ़न,
चेहरकी बनावट।

नोकपान (हिं० पु०) जूतेकी काट काट, सुन्दरता और
मजबूती।

नोकामोंको (हिं० स्त्री०) १ परस्पर व्यंग्य आदि द्वारा
आक्रमण, छेड़छाड़, ताना, आवाजा। २ विवाद,
भगड़ा।

नोकीला (हिं० वि०) नुकीला देखो।

नोखा (हिं० वि०) प्रदुभत, विचित्र, अनूठा, अपूर्व।

नोग्राम वा नवग्राम - युक्तप्रदेशके यूसुफजाई जिलेमें
अवस्थित अंगरेजाधिकृत एक ग्राम। यह मदनसे ११
कोष पूर्व और मोहिन्द नगरसे ८ कोष उत्तरमें अव-

स्थित है। इसके पाम ही रानीघाट नामक पर्वत है।
ग्राममें तथा पर्वत पर अनेक प्राचीन धर्मशास्त्रोंके देखनेमें
आते हैं। स्थानीय प्रवाद है, कि देखको शासनकर्त्ता कोई
रानी इस पर्वतके उच्च शिखर पर बैठ कर चारों ओर
देखा करती थीं। जब उठती हुई धूल नजर आती थी,
तब वे समझ लेती थीं कि देगान्तरस्थ बणिक, भारत-
वर्ष आ रहे हैं। इस समय वे उन्हे लूटनेके लिये
अपनी सेनाकी भेज देती थीं। इसी रानीके नाम पर
पर्वत और निःपत्थ ग्रामका रानीघाट नाम पड़ा है।
आज भी रानीघाटके शिखरदेश पर रानीका प्रस्तरासन
नजर आता है। विशेष विवरण रानीघाट शब्दमें देखो।

नोड़कम—आसामप्रदेशके खसिया पर्वतस्थित खैरिम
राज्यके अन्तर्गत एक ग्राम। इसके पास ही लोहकी
खान है। वह लोहा अग्निके तापमें गला कर समतल-
क्षेत्र पर गड़ा जाता है और पीछे बहुत उछल लोहा ही
जाता है। इससे स्थानीय अधिवासी अपना अपना व्यव-
हारोपयोगी अस्त्रादि बनाते हैं।

नोड़ एलाव—आसामके खसिया पहाड़के अन्तर्गत एक
छोटा राज्य। यहाँके राजाओंको उपाधि सि-एम है।
१८२६ ई०में खसिया राज्यके मध्य सजसे पहले इसी
स्थानके राजाके साथ अंगरेजोंको मिलना हुई थी। फल-
स्वरूप सि एम राजाने अपने राज्य हो कर उन्हे आसाम
जानेका एक रास्ता बनानेका आदेश दिया। किन्तु
१८२८ ई०में अंगरेजोंके साथ इनका मनसुटाव हो गया।
खसिया लोगोंने बागो हो कर इस नगरके दो अंगरेज-
कर्मचारी और सियाहियोंको मार डाला। विद्रोहियोंका
दमन किये जानेके बाद अंगरेजोंने इस नगरमें पालिटि-
कल एजिण्टका सदर स्थान बनाना चाहा। यहाँके अधि-
वासी व्यवहारोपयोगी सुती कपड़े बुनते और लोहके
हथियार भी बनाते हैं।

नोड़तरमेन—आसामप्रदेशके खसिया पर्वतके अन्तर्गत
एक छोटा मामन्त राज्य। इसे कोई कोई हार-नोड़तर-
मेन भी कहते हैं। यहाँके राजा वा शासनकर्त्ताकी
उपाधि सर्दार है।

नोड़-ष्टोइन—खसिया पर्वतके अन्तर्गत एक सामन्त
राज्य। यहाँकी जनसंख्या दस हजारके करीब है। यहाँके

राजाको तपासि सि दम है । चाँवम, क गन, तिनपात, रबर, नाख घोर मोस रस राख्मिं पधेइ पावा जाता है । राख्मिं चूनी घोर लोपनीको धान मी पाइ नई है । सोख्मिं रस राख्मिं पातेना एउ राखा ह ।

नीपसोफी—इसिया परतके पस्तमुत्र एक छोटा राज्य । यहाँ धान चावल, सब्जें पाकिजे खेती होती है । यहाँके लोग पटाईका व्यवसाय पचित्र करते हैं ।

नीपभद्र—धामामके लुसिया परतका एक सामन्त राज्य । जनस क्या दो हजारके जनसग घोर राज्ज ८८०) ह० का है । यहाँकी प्रधान उपज धान, चानू घोर महु है । राज्यमें लोहा भी पाया जाता है, सेबिन यह काममें जाता नहीं जाता ।

नीप (चि० खी०) १ नीपनेको सिद्धा या भाव । २ खीनने या सीनेको सिद्धा, कई घोरसे कई पाटसिनीका म्हापट्टेके साथ खीनना या खेना । ३ चारी घोरकी मांग, बहुते खोरीका लडाका ।

नीपखयोड (हि० खी०) भ्रमपट्टेके माव लेना या खीनना, कहरदफो खो च खो च करके सिना, खीना भ्रमटी ।

नीपना (हि० खि०) १ बिरो बसो या लमी हुई महुको म्हापट्टेके खींच कर पनय करना लकाइना । २ शरीर पर रस प्रकार दाब या पत्रा लुभाना जि लागून रस काव परोचना । ३ नख पाकिसे बिरोच करना, बिरो महुमें दान, मछ वा पत्रा रसा कर कसका कुह प घ खी च सेना । ४ रिसा लकाजा करना जि नाममें दम हो जाय बार बार लग काम मांगना । ५ दुखी घोर कैदान करके सेना, पाके पड़ कर बिरोको इच्छाने बिहद कससे सेना बार बार त न करके सेना ।

नीपनापो (चि० खी०) नीपखयोड देखी ।

नीपू (चि० पु०) १ नीपनीवाणा । २ लग करके सिने बासा । ३ खीना भ्रमटी करके सिनेबासा । ४ लकाजीके सारे गको दम करनेबासा ।

नीपनी—युक्तप्रदेशके मन्गलपुर जिलात्मत्त एक प म । यह पन्ना २८ ३१ १८०० घोर देमा ०० ३२ ३२ पू०के मध्य, पाकिर नगरके १ मील दक्षिण घोर महुपुर ग्रामके १ मील दक्षिणवर्धममें अवस्थित ।

नीट (स० पु०) मट-पच, प्रवोदपदिसिन्नाम् पाइ । मट ।

नीट (स० पु०) १ ध्यान रहनेके निजे निख सेनेका काम टांकी या बिपनीका काम । २ पाथय या पर्य प्रकट करनीवाणा लेख टिप्पणी । ३ सिक्का चुपा परवा पत्र, बिडो । ४ घुरोप, परमेरिका घोर च गरीजाबिहल भारत वर्षमें प्रचलित आगत्र (Parohment)को सुप्रसिद्धिय, सरकारकी घोरसे बारी बिबा चुपा यह कामज जिन पर कुछ बपतीको स स्या रफती है घोर यह बिबा रहता जि सरकारने छतना बपया मिन जाधगा, सरकारो हुडो । भारतवर्षमें नीट दो प्रकारका होता है, एक करे खो, दूसरा ग्रामिसरो । करे खो नीट बराबर मिखाजे रमान पर चकता है घोर छसका बपया जव चाड़े, तब मिन चकता है । ग्रामिसरो नीट पर छेकल लुद मिनता रहता है । सरकार मानने पर कसका बपया देनेके बिजे पाथ्य नहीं है । ग्रामिसरो नीटकी दर पटतो बहुतो है ।

नीटपेवर (स० पु०) पत्र निखनेका कामम ।

नीटबुख (स० खी०) मछ चापी या लखो बिप पर खीरे बाँत बाँददाम्पके बिजे बिबो जाय ।

नीटिस (स० खी०) १ बिपत्रि, लुहना । २ बिघापन, इतिहास । इस शब्दको कुह खीम पुनिङ्ग मो मोचते है ।

नीप (स० बसो०) कबच, नमक ।

नीपखबाड़ी—बर्तमान महिसुर जिलेका उत्तरीय को पमी बिचलुबुन कसकाता है, प्राचीनकालमें नीपख प्रभावित देय का नीपखबाड़ो नामने प्रचिद या ।

नीपखघोर—वासुदेव शोध एक राजा । पाठ१५ देखी ।

नीहन (स० बसो०) मुद भाषे खुट । १ कचहन । बिह माने खुट । २ घेरच, बचाने या रोकनेका काम । ३ प्रतोह, बैलीकी जालनेको बड़ो या खोड़ा, पेना, पीगी ।

नीप (स० खि०) पपपारचवोप्य ।

नीपम (स० पु०) हु पकि-हुट, च । खविमेद ।

नीपसिंह—पन्नाबकेशरो मन्गलराज रचयित् सि बंधे पूर्व सुदय । इनके पिता बुद्धि च अपने पिताके पादेमागुहार नामकका नामदाय पड़ कर मिक्षमन्दावमुक्त को गय है । बुद्धि च पन्नाबके नामा ध्यामने जो मत्र दूध मुट करते है लखे बुद्धिरचक नामक धाममें बर्षा जनका दर का, रच देते है । सुखेरचक नामक काममें घर रहने

कारण उनके दलभुक्त सिखगण 'सुखिर-चक-मिगल' नामसे प्रसिद्ध हुए। बुद्धसिंहके दो पुत्र थे, नोधमिंह और चान्दमिंह। नोधमिंह पिताके मिथलमें ही रहें और अनिष्ट चान्दमिंहसे 'सिन्धियन-वाला' नामक यात्रकी उत्पत्ति हुई।

उस समय 'धारवो' वा दस्त्रुयवमाय जातीयताका गौरवसुचक ममभा जाता था। इसीसे नोधमिंहने अन्य कोई हृत्ति अथवा स्वयं करनेके पङ्के ममानसुचक दम्बु-नेता होनेका पक्का विचार कर लिया। क्योंकि वे जानते थे, कि हम अथवा मयासे प्रसुर धन हाथ लीगा। भविष्यत् उन्नति को आगामे इन्होंने रावलपिण्डोकी सीमामें ले कर धनदूके तोरवर्ती मभी स्थानोंको लूट कर प्रभूत अर्थ संग्रह किया। इस समय क्या सिख, क्या जाट, क्या सीमान्तवर्ती सरदारगण, सबसे इनको अवस्था उन्नत हो गई थी। विविष्ट धनगाली ही कर वे अपने देग भरमें विविष्ट गण्यमान हो उठे थे। १७३० ई०में इन्होंने माजि-थिया सन्धि-जाटशंशय गुलाबसिंहकी कन्याका पाणि-ग्रहण किया। इसके बाद नोधमिंह फौजपुरिया मिगलके सरदार नवाब कपूरसिंहसे आ मित्रे। इसी समय अहमदगढ़ अवदलीने भारतवर्ष पर आक्रमण किया। नाना स्थानोंमें प्रसुर धनरत्न ले कर नोधमिंह सुखिरचकमें आ कर रहने लगे और जनसाधारणने उन्हें सुखिरचकके सरदार वा सामन्तराल मान कर घोषणा कर दी। १७४७ ई०में इनके साथ अफगानोंका एक सामान्य युद्ध हुआ। युद्धमें एक गोला इनके शिर पर आ गिरा। इस आघातसे इनकी सत्य तो न हुई, पर ५ वर्ष तक वे अकर्मण्य ही रहें। १७५२ ई०में आप चरत्सिंह, दलसिंह, चेतसिंह और मङ्गीसिंह नामक चार पुत्र छोड़ सुरदामको सिधार गए।

नीधा (म० अर्थ०) नव-धाञ्ज, प्रयो० नवधा, नो प्रकार। नीनगढ़—जयनगरसे ३ कोस दक्षिणपूर्व किलुल नदीके किनारे अवस्थित एक ग्राम। कोई कोई इसे लीनगढ़ भी कहते हैं। यहाँ एक भग्नमूर्ति पाई गई है जिसमें ई०सत्के पङ्के १ली शताब्दी और बादकी १ली शताब्दी-के मन्थवर्ती समयके अक्षरोंमें खोदित एक शिलालिपि है। मूर्तिकी भास्करकायं भी मथुरामें प्राप्त उक्त

मयको खोदित प्रतिमूर्ति के अनुरूप है। चीन-धीर-ब्राजक यूनसुवङ्ग नि-इन्-नि-लो नामक स्थानमें भ्रमण कर लाव गए हैं, कि यहाँ एक बौद्ध मन्थाराम और स्तूप है। वर्त्तमान नीनगढ़में भी इसी प्रकार दो चिह्नके ध्वंसावशेष देखनेमें आते हैं। यहाँके स्तूपकी लम्बाई शीघ्र खोड़ाई तथा उसके प्राचीनत्वकी आलोचना करनेसे मान्यम होता है, कि यहाँ नीनगढ़ चीन-परि-ब्राजक-वर्णित नि-इन्-नि-लो नगर है।

नीनवा (हि० पु०) १ नमकीन प्रचार। २ नम हमें डाली हुई आमको फाकीकी खटाई। ३ वह जमोस जहाँ लोनी बहुत हो।

नीनछो (हि० स्त्री०) लोनी मटो।

नीनहरा (हि० पु०) पैसा। यह गन्धर्वोंको बोली है।

नीना (हि० पु०) १ नमकका अंग जो पुगनी दोधारी तथा सोडकी जमीनमें लगा मिलता है। २ लोनी मटो। ३ गरीफा, मोताफन, पात। ४ एक कीड़ा जो नाव या जहाजके पेटमें लग कर उसे कमजोर कर देता है, उधईकोडा। (धि०) ५ नमक मिला, खारा। ६ लावण्यमय, मलोना। ७ सुन्दर, अच्छा, बढ़िया।

नीनाई—आमामपदेगमें प्रवाहित दो नदी.,—१ली भूटान पर्वतमें निकल कर दरङ्ग जिलेके पश्चिम होती हुई ब्रह्मपुत्र नदीमें गिरती है और २री मिकोर पर्वतसे निकल कर हरियामुख ग्राममें ब्रह्मपुत्रको कलङ्ग शाखामें जा गिरी है।

नीनाखाल—२४ परगनेके अन्तर्गत विद्याधरो नदीको एक शाखा।

नीनाचमारी—एक प्रसिद्ध जादूगरनी। इनको दीक्षाई अब तक भी संवेमिं दो जाती है। लोगोंका कहना है, कि यह कामरूप देगकी रहनेवाली थी।

नीनिधा (हि० पु०) लोनी मटोसे नमक निकालनेवाली ५ एक नीच जाति। गया, शाहाबाद, सम्भारण, सारण, आदि जिलोंमें इस जातिके लोग अधिक संख्यामें पाए जाते हैं। सोरा प्रस्तुत करना ही इनका प्रधान व्यवसाय है। इस जातिकी उत्पत्ति किस प्रकार हुई, मालूम नहीं। लेकिन दम्तकहानी है, कि विदुरभक्त नामक किसी योगीसे अवधियाका लक्ष हुआ। उक्त

दीर्घा बिदूर सोनो मही पर बैठ कर तपस्या कर रही थी
 और छोटी चबकामें लज्जा तपोव्याहृष्या वा। पीछे
 योग्यात्ममें लज्जा पश्चिंकार न रहा। रामवन्दने कब
 प्राय से कर सोरा प्रस्तुत करमेका चादिदिवा। दिन्द
 पोर मेनदारकी उत्पत्ति विवधमें एका ही प्रवाद है।
 किमोका मत है, कि दिन्द जातिके चादि पुत्रपये मोनिवा
 पोर वैशदाकी उत्पत्ति हुई है।

बिहारमें मोनिवा जातिके सात मन्वदाव हैं, यथा—
 चबकिया वा चयोद्याबानो भोजपुरिया, खाराठ, मधिया
 भोज, पचाइया पोर मेमारवार। इन मन्वदावीमें एक
 कुचरेये विवाह मादो नहीं होता। पर हां, तीन वा
 पांच छोटी तब जोड़ कर पन्च दिन्दु जातिके जेना
 विनाश कर लेते हैं। बहुत नमदोको मन्वदमें विवाह
 नहीं करते। ये लोग कबो उमरमें हो लड़कोको व्यापते
 हैं। बिन्दु चर्माभावगत कोई कोई पश्चिं उमरमें
 मो विवाह करते हैं। इन मोदीमें बहु विवाह प्रचलित
 है, किञ्चिं दोसे पश्चिं चो मनि बहुत जोड़े देखे जाते
 हैं। न मरणाके बिजे यदि कोई दो पार, जो भी कर
 ले, तो समझमें उसको निन्दा नहीं होती। विवाहा
 विवाह भी इन लोगमें चलता है। विवाहा विविपता
 अपने देवके साथ विवाह करना ही पक्ष्य समझतो है।

प्योके पसतो होने पर पयवा पतिप्योमें भिन्न नहीं
 रहने पर पचाइतने प्योपरिवाही अनुमति दो जाती
 है। इन प्रकार एक स्वामी जोड़ देने पर मोनिवा
 खिया पन्च धामो पक्ष्य कर सकतो है। बिन्दु एक
 बार यदि पन्च जातिका सहवास करे, तो वह समाजमें
 धन्य कर दो जाती है और बिंर वह पञ्चजातिमें विवाह
 नहीं कर सकतो।

तिरहुतिया ब्राह्मण इनसे पुरोहित होते हैं। इन
 मोनोकी विवाहपदा पन्चान्य जातिकी पदाये कुछ
 पन्तर पड़ती है। बरका मूय कुनरोतिकि अनुसार
 किन्न एक जोड़ा कपडा पोर एकसे पांच रुपये तक है।
 इस मूयका नाम तिन्नक है। विवाहके पड़ते ही इस
 मूयका निष्कृत करना होता है। विवाह को जाने पर
 केव्या बारातके साथ पोर जातिके जेना संसुराम नहीं
 जाते। जब तक विवाहसम नहीं होता, तब तक न
 पीहरमें ही रहतो है।

चबकिया मोनिवामें 'बादमाई' 'माडा' नामक एक
 पाहय्य पशुति पशुचित है। इस पशुतिके अनुसार बर
 कथाको विवाहके समय कूसरे स्थानमें रहना पड़ता है।

बिहारमें पश्चिं बिन्दुवर्ग हो मोनिवाका धर्म है।
 धर्म शास्त्रको स पदा हो पश्चिं है, केव्य बहुत जोड़े
 हैं। भगवतो इनको प्रधान पाराय्यदेमी हैं। ये लोग
 बन्दो गोरिया पोर मोतहाकी पूजा मङ्गलवार, बुधवार
 पोर शनिवारकी विवा करते हैं। खिया पोर छोटे
 छोटे कबुके किमी देवदेवीकी पूजा नहीं करते। कभो
 कभो खिया मोतहापूजामें पुत्रवला माव देनी है।
 न साथी पक्षीर लोग हो इन जातिके मुद्र होते हैं। ये
 लोग पतदेवको उपाते है, माङ्गते नहीं। जिसको श्च्य
 पांच पर्वके पन्तर होता है, किन्न छोटीको पतदेव
 गाड़ी जाती है।

मोनो महीमे सोरा पोर लवच प्रस्तुत करना जो इनका
 पैदाव व्यवसाय है। वर्तमान समयमें इनमेंसे कुछ
 पन्निर्माच, पुष्करिबीजनक, पहासिवाग्निर्माच, बर
 जावन चादि मजदूरका काम करते हैं।

पटना, सुङ्गेर पोर सुभङ्गपुरके मोनिवा कुर्मी,
 कोरतो पाहि जातिके समकथ है पोर ब्राह्मण इनके
 हाकका कथ पीते है। बिन्दु मागसपुर, पूर्बिया, पन्चा
 रच पाहावाड पोर गवाये मोनिवाका कथ कोई दिन्दु,
 नहीं पीता। बर्दा ये लोग तारीके समान मामे जाते हैं।
 इस जातिके प्राय सभी लोग खूँ पोर सुपरका माच
 खाते तथा शराब पीते हैं।

मोनो (बि० खो०) १ मोनो सिङो। २ सोनिया पम्
 मोनोका पोवा। (बि०) १ कपवतो, सुन्दर। ३ पन्की,
 बड़िया।

मोनिकवि—एक हिन्दी गाथक कवि। तुन्दकसुखके
 पन्तर्गत बाबा नमरमें १८३३ ई०को इनका जन्म हुआ।
 इनके पिताका नाम था हरिदास।

मोनरा—बुधमदेयके पागारा विभागकी मंगपुरी तहसील
 के पन्तर्गत एक मन्त्रपाम। यह त्रिसिके सदरके ८ मोल
 उत्तरपश्चिम ४० फुट लची भूमिके लपर पश्चिंत है।
 इस कथ मरुपके पूर्ब दिगामें पश्चिंत एक प्राचीन
 मन्दिरकी ईटोके उत्तरामें एक दुर्ग बनाया गया था।

नोपस्थातृ (सं० त्रि०) न-उपतिष्ठति स्था-लृच् । दूरस्थ, दूरका ।

नोमुर्दी—भारतवर्ष की सोमान्तवर्ती विलुप्त जातिकी एक शाखा । सेवानसे ले कर खूटो तक इन लोगोंका वास है ।

नोया (नोया)—पश्चिम एशियाके प्राचीनतम ईसाइयोंके एक पेट्रियाक वा महापुरुष । सर्वशक्तिमान् जगदीश्वरने जब देखा, कि धरावासो मानवोंकी अधार्मिकता और अत्याचारसे धरितो भारयन्ता हो गई है, तब उन्होने भूमरकी घटानिका सङ्कल्प किया । तदनुसार उन्होने धार्मिक प्रथर नोयाकी आत्मीय स्वजनोके साथ एक जहाज बना कर उस पर रहनेका आदेश दिया । वह जहाज 'नोयासूआक' वा नोयाका जहाज नामसे प्रसिद्ध हुआ । नोया सपरिवार जहाज पर चढ़ कर निरापदसे रहे । इधर जगत्प्रतिके महाप्रलयसे पृथिवी जन मग्न हो गई ; मभो जोव जन्तु इस नौकाकी छोड़ कर परलोकमें जा यसे । मात मास तक जलस्त्रोतमें बहता हुआ नोयाका जहाज आराराट गिरिशिखर पर जा लगा । यहाँ जब इन्हे रहनेका आश्रय मिल गया, तब जगदोश्वरको खुश करनेके लिए इन्होने एक बलि चढ़ाई । जगदीश्वर भी उनकी सुस्तिके लिये प्रतियुक्त हुए ।

इस स्थान पर उतर कर नोयाने भद्रूरको खेती की । एक दिन भद्रूरकी रस पी कर वे मत्तावस्थामें अपने पुत्र छामकी वगलमें आसी रहे । छामने पिताका दौबल्य न समझ कर श्याम और जाफर नामक अपने दो भाइयोंको बुलाया और पिताकी मादकताजनित भ्रष्ट गिरिधरता और निद्रितावस्थाकी दिखा कर वे आनुपूर्विक सभी विषय जान गए । पन्द्रह दिन तक पिताकी इसी अवस्थामें देख वे बड़े लज्जित हुए और उन्हे सर्वाङ्ग एक वस्त्रसे ढक कर रख दिया । निद्राभङ्ग होने पर नोया अपने पुत्रोंके इस आचरणको समझ गये और श्याम पर अशंतुष्ट हो कर शाप दिया, 'तुम्हारे भविष्यत् उन्नति कदापि नहीं होगी ।' पृथ्वीके जलज्ञावित होनेके ३५० वर्ष बाद धार्मिक नोया स्वर्गधामकी सिधार गए इनका पूर्ण जीवनकाल ८५० वर्ष था ।

सुसलमान इतिहासमें भी नोयाका उल्लेख है । वास्ता

निया-व'शोय प्रम राजा विवर-भास्य दुषङ्गके पुत्रे जनसेदको सिंहासनच्युत करके राजा बन बैठे । कुकर्मदिमें लगे रहनेके कारण जगदीश्वरने उसके पूर्वजत पापका खण्डन करनेके लिये नोयाको उसके पास भेजा । नोयाके लाखों उपदेश देने पर भी राजाको शान न हुआ । इस पर परम पिता परमेश्वरने धराभारहरणके लिये महाप्रलय उपस्थित किया । ऐसा करनेसे पृथ्वी पर जितने पापो ये सबोंकी सृष्ट्यु हो गई । नोयाको सृष्ट्युके प्रायः एक हजार वर्ष बाद श्यामके पुत्र लुभाक राजा हुए * ।

केवाक ग्रामके दक्षिण जीवनसे १ कोस दूर बेकार समतल क्षेत्रके ऊपर बालवेकवासिगण नोयाको कन्न वतलाने है । यह कन्न १० फुट लम्बो, ३ फुट चौडो और २ फुट उंचो मानी जाती है । कन्नके ऊपर ६० फुट ऊंची एक आकृति बनी हुई है । यहाँसे २ कोसकी दूरी पर चारमिमका भग्नमन्दिर है । अंगरेजो वाइल्डके नोया, हिन्दुवाइल्डके गिशफस वा एकेडियन नोया तथा अग्यान्ध भाषामें इनकी घटनाधनो विभिन्न नामोंसे वर्णित है । मनु देखी ।

नोयाकोट (नवकोट)—नेपाल राज्यके अन्तर्गत हिमालयतटस्थित एक नगर । यह त्रिशुलगङ्गा-नदीके पूर्वी किनारे अवस्थित है । धैवङ्ग पर्वतके निकटवर्ती गिरिपथ हो कर तिब्बती अथवा चीनवासिगण सहजमें नवकोट राज्यमें प्रवेश कर सकते हैं । १७२२ ई०में चीनसेनाने इसी नगर हो कर नेपाल पर आक्रमण किया था । यहाँके महामाया वा भवानीके मन्दिरके ऊपरी भाग पर चीनसे न्यसे लम्ब कितने द्वारा युद्धजयके गौरवचिह्न स्वरूप संलग्न हैं । नेपाल देखी ।

नोयाग्नि—भारतवर्षके उत्तर काश्मीर राज्यके अन्तर्गत एक गिरिपथ । इसके एक ओर उच्च हिमालय-शिखर और पूर्वकी ओर काश्मीरकी उपत्यकाभूमि है । इसका सर्वोच्च स्थान समुद्रपृष्ठसे बारह हजार फुट है ।

नोयापुर (नवपुर) --१ गुजरात प्रदेशके अन्तर्गत एक

* तारीख-इ मुकद्दसी नामक मुसलमान इतिहासमें नोयाकी वंशावली इस प्रकार लिखी है । नोया, उनके पुत्र काया, कायाके पुत्र तारा, ताराके पुत्र अवबन्द आस्य, आस्यके पुत्र कुभाक वा विवर-भास्य । Tabakat-i-Nasiri, Vol. I. p. 303b.

नगर । १८१८ ई०में यहाँ कङ्करीको देना था बसो जो ।
२ बम्बई प्रदेशके आन्द्रेय जिल्लात्मगत एक ग्राम ।
इस ग्रामके चारों ओर पाषाणतैल चमेली मील आतिथा
बास ही पवित्र है ।

नोपारबन्ध—प्रासाम प्रदेशके कङ्करी जिल्लाका एक नगर ।
यह मित्तचरके १५ मील दक्षिणमें अवस्थित है । सुसाई
घोर कुशी घाटमन्चके देवकी रक्षाके लिये यहाँ इटिय
सरकारने देना रखा है । इसके पास चायकी खेती बहुत
होती है ।

नोपिय—सम्प्राप्त प्रदेशके कोयम्बतूर जिल्लाकी एक नदी ।
बहु वैश्वनगरिके निश्चय कर आन्डरोनदोमें गिरती है ।

नोर—पामामके दक्षिण ओर पाषाणनगरके उत्तर तथा
बिन्दुपुल ओर ऐरावती दोनों नदियोंके मध्यमें अवस्थित
एक जनपद । १६८२ ई०में यह स्थान ब्रह्मके राजाके पत्नी
का । यहाँके सामन्ताराज पामाम राज्यकी गीय है ।

नोरौत्र इत्रमाकी (या नौरात्र-अज्ञानो) सुष्ठवमान
वर्षमासका एक प्रसिद्ध दिन । सुवृत्तान मालिक-शास्त्रके
पादके ज्योतिर्विद्दों ओर पद्यशास्त्रविदानी वर्ष, अष्ट
मास ओर आत्मनिर्घण्टे लिये फिरने गचना पारण्य कर
दी । उक्त मन्त्राधिके यह शिखर हुआ, कि दादय रायिणी
प्रथम शिवरायिणी की पक्षके बल्लाहाका ही विदुष्यात्मिका
पतिव्रत कर पयन इत्यनें गमन करती है । इस कारण
उक्त दिनके सुनकामाकीके मास ओर वर्षकी गचना पक्षो
पा रहती है ।

नोवना (हि० लि०) दुष्टि समय रहस्ये गायका पेर
बाँधना ।

नोबिन्दुवा—सम्प्राप्तके पनमपुर तालुकाके पनगत एक
ग्राम । यह मुठीमें १३ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित
है । यहाँके आन्ध्रनेवके मन्दिरमें १३३८ अम्बतमें लक्ष्मी
एक मिलाकिये देखनेमें पातो है ।

नोबिलिबन राबर्ट-वि—एक पोल्सु नोत्रमियनरो । १३०६
ई०में के पहले पहल मद्रा नगरमें पाये । इस समय
तिष्ठमान नायक यहाँ राज्य करती थी । यहाँके हिन्दू
पवित्रार्थगक श्रुतीय धानकप्रधान नोबिनोको तत्परवीच
नगर नामके पुकारते हैं । १६६० ई०में सम्प्राप्तके निरुद्ध
वर्षी प्राप्तमें इनका दिहाज हुआ । अष्टन देखो ।

नोवना—उत्तर-भारतके आम्पौर राज्यके कदाय विनायक
पन्थगत एक उपविभाग । यह आराकोरम विरिणोकोके
प्यारक हजार फुट ऊँच पर अवस्थित है और चारों
ओरके प्यारकोक वा नोवानदीके घिरा है । दिग्बिन्तु दृष्टका
प्रधान नगर है ।

नोडर (हि० लि०) १ पकम्प, दुष्टम, बरदो न मिथने
वाला । २ पञ्चुल, पनीया ।

नोइला—प्रासुपयन गीय राजा अवनिवर्माके कथा ।
इसका सुष्ठव राजपुत्र केवूरवर्षके साथ विवाह हुआ
था । इनके प्रतिष्ठित मन्दिर ओर विमलित्तु नोइलीम्बर
नामके प्रसिद्ध हैं ।

नो (स० खो०) सुष्ठवनेवेति सुष्ठुमेरेके डो (ग्वाड
दिन्यां डोः । इच्छ २।६४) १ मोका नाम । २ यन्त्रवासीव
नोनेद, पाषोमज्ञानको एक नाव जो यन्त्रके सहायके
पक्षाई जाती हो । अज्ञानभारतमें एक प्रकारकी नावका
कक्षेय देखनेमें पाता है ।

० इस यन्त्रवासीय नौका यन्त्रके पात्र कक्षके अज्ञान
का ही बोध होता है । वस्तुमान समझमें अज्ञानके जो
सब कक्ष देखे जाते हैं, वे पूर्वाञ्च यन्त्रवासीय नौका-
के साथ मिलते सुलते हैं । पात्रः इस यन्त्रवासीय नौकाकी
यदि अज्ञान अर्थकीमें मिलतो ही जाय, तो कोई बोध
नहीं होता । नौका देखो ।

नो (हि० लि०) जो गिनतीमें पाठ ओर एक हो, एक
क्रम दय ।

नोकाड़ा (हि० पु०) एक प्रकारका सुपान जो तीन पादनी
तीन तीन कोङ्करीके ही कर चिकते हैं ।

नोकर (पा० पु०) १ अन्न, आकर, टहलुवा, खिदमत
नार । २ कोई काम करनेके लिये भितन पादि पर नियुक्त
बिद्या हुआ मनुष्य नैतनिक काम चारी ।

नोकरानो (पा० श्री०) दास्यो, चरवा काम च वा करने
वाली स्त्री ।

नोकरो (पा० श्री०) १ नोकरका काम, देना टहल, खिद
मत । २ कोई काम जिसके लिये तनबाध मिलती हो ।

नोकरोपिया (पा० पु०) बहु शिष्टका जोवननिर्वाह
नोकरोपि होता हो, बहु शिष्टका काम नोकरो करना हो ।

नोकरचंभार (स० पु०) नावा कक्ष चारपति, चारि पक्ष ।
नाविक मद्राह ।

नौकर्णी (सं० स्त्री०) नोरिव कर्णी यस्याः, डीप. ।
कुमारानुचर मादभेद, कात्तिकेयको अनुचरो एक
मादका ।

नौकर्मा (सं० स्त्री०) नावि कर्मा, चालनादिव्यापारः ।
नौकावाहनादि कार्य, नाव चनानिका काम ।

नौका (सं० स्त्री०) नोरिव स्त्रायः कन् स्त्रिया टाप. ।
तरणि, नाव, जहाज । पर्याय—त्रारिण, नौ, तरिका,
तरणि, तदि, तरो, तरण्डो, तरण्ड, पादास्त्रिन्दा, तत्प्रवा,
डोड, वाधू, वावँट, वहिन, पोत, वहन । यान दो
प्रकारका होता है, जलयान और स्थलयान । नौका
निष्पद् यान है ।

नौका प्रवृत्ति जलयानकी निष्पदयान और अश्वादि-
यानकी स्थलयान कहते हैं । जलमें नौका ही एकमात्र
यान है अर्थात् जलपथ हो कर जानेसे नौका ही उसका
एकमात्र उपाय है । इस कारण शुभ दिन देख कर नौका
प्रस्तुत और नौकारोहण करना चाहिये ।

नौका बनानेमें पहिले काष्ठनिर्णय करना होता
है । काष्ठजाति चार प्रकारकी है—ब्राह्मण, क्षत्रिय,
वैश्य और शूद्र ।

इन चार प्रकारके काष्ठोंमें जो लघु, कोमल और
सुघट होता है, वह ब्राह्मण जातिका काष्ठ ; जो दृढ़ाङ्ग,
लघु और पघट है, वह क्षत्रियकाष्ठ, जो कोमल और
गुरु होता है, वह वैश्य जातिका काष्ठ और, जो दृढ़ाङ्ग
तथा गुरु होता है, वह शूद्र जातिका काष्ठ कहलाता
है । प्रथमतः काष्ठकी इन चार जातियोंमेंसे जिस काष्ठ
द्वारा नौका बनाई जायगी, वह काष्ठ किस जातिका है,
पहिले उसीको स्थिर करना होता है । ये सब लक्षण
ठोक करके द्विजजाति काष्ठ नौकाके लिये संग्रह करना
चाहिए । भोजके मतसे क्षत्रिय जातिका काष्ठ ही नौका
के लिये प्रशस्त है । फिर दूसरे दूसरे पण्डितोंका कहना
है, कि लघु और सुदृढ़ काष्ठसे जो नाव बनाई जाती है,
वही सबसे बढ़िया है ।

जो नौका दो विभिन्न जातिके काष्ठोंसे बनाई जाती
है, वह शुभफलद नहीं होती ।

नौका प्रथमतः दो प्रकारकी होती है, सुदृढ़नौका
और मध्यमा नौका । जो नौका जितनी लम्बी होगी

उसका चौथाई भाग यदि उसका चौडाई और उतनी
ही चौड़ाई हो, तो उसे सुदृढ़नौका और जिसका परि-
णाह लम्बाईसे आधा तथा जिसकी चौड़ाई तिहाई भागके
समान हो, उसे मध्यमा नौका कहते हैं ।

यह सामान्य नौका दश प्रकारकी है । यथा—सुदृढ़,
मध्यमा, भोमा, चपला, पटला, अभया, दीर्घा, पत्रपुटा,
गर्भरा और मन्थरा । इन दश प्रकारको नौकाओंमें भीमा,
अभया और गर्भरा नौका शुभजनक नहीं है ।

दीर्घनौकाका लक्षण—जो नौका दो राजहस्त दीर्घ
उसका आठवां भाग परिणाह तथा दशवां भाग-
उन्नत हो, वैसी नौकाको दीर्घा कहते हैं । दीर्घा नौका
भो पुनः दश प्रकारकी है—दीर्घिका, तरणि, लोला,
गत्वरा, गामिनो, तरि, लहलहा, प्लाविनो, धरणी और
वेगिनो । इन दश प्रकारको नौकाओंमें लोला, गामिनो
और प्लाविनो नौका दुःखप्रदा माने गई है ।

नौकामें जाना-प्रकारकी धातु द्वारा चित्रकार्य करना
होता है । यथाक्रमसे कनक, रजत और ताम्र द्वारा
ब्रह्मादिभी आकृति चित्रित करे ; पोछि सित, रक्त, पोत
और मोल आदि वर्णोंसे उसे सुशोभित बनाए रखे ।
केशरी, महिष, नाग, हिरद, व्याघ्र, पक्षी और भेक
इनके मुख नौकाके मुखको और बने रहें । जनमें नौका
भिन्न अन्य जो कोई यान है उसे जवययान कहते हैं ।

जलपथ-गमनमें द्वीपीयान, घटानौका, फलयान,
चर्मयान, वृक्षयान और जन्तुयान ये सब यान निन्दित
माने गए हैं ।

उत्तम दिन चर और मकरादि ६ लग्न तथा विहित
नक्षत्र देख कर नौका बनवानो चाहिये ।

(शुक्रिहृतक)

नौकाकण्ड (सं० स्त्री०) चतुरङ्गकोड़ाभेद ।

नौकादण्ड (सं० पुं०) नौकाया परिव्यालनाथ यो
दण्डः । चपणो, नावका डांड, वल्ली ।

नौकाम—नौकाश्रेणोसंयुक्त सेतु, नावका बना हुआ पुल ।

नौगाँव (नवग्राम)—शासामके चौफ कमिश्नरके अधीन
एक जिला । यह अक्षा० २५° ४५' से २६° ४०' उ० तथा
देशा० ८२° से ८३° ५४' पू०के मध्य अवस्थित है । इसके
उत्तरमें ब्रह्मपुत्रनदी, पूर्वमें शिवसागर, दक्षिणमें

कनिका धोर अंतिवा। पव त तथा पश्चिममें बसत नदी धोर कामरूप बिसा है। एवमा प्रधान नगर मोगीय नगर है।

एष जिलेके धारी धोर जिन तरह कामरूप, मिर्जौर, कनिका धोर अंतिवा पर्वतमात्रा सुद्योमित है, वही तरह पर्वतमात्रावाहिनी बहुतसी नदिसिंधि एष उपविभाग बिच्छिन्न हुआ है। इनमेंसे वानिखरो, कबवाबो, दिखफ, देवपानी, ब्रह्मपुत्र धोर कामरूप बदिमा ही प्रधान है। दिहु, नगाई, कापिबो, यमुना बड़वानो, दिमास धोर बिनिङ्ग पादि छोटी छोटी शाखानदियां ब्रह्मपुत्र धोर बलाहबी हदि करती है।

कामाका-पर्वतको कामाकादेशोका मन्दिर उल्लेख योग्य है। शायद एष मन्दिर ब्रह्मबिहार-पञ्चम शक्ति किशो राजाके बनया गया होना। प्रवाद है, कि एष स्थान पक्षी एक बौद्धतोष रूपमें बिना जाता था। मोह मतावलम्बी राजा नरनारायणने १३६३ ई०में एष मन्दिरका पुनर्निर्माण किया। कामाका और कामरूप देखो।

पार्श्वीय असम्य जातिवर्गमें मौनिक, नारो कुबी धोर नागा ही प्रधान है। ये लोग बहुत कुछ झोडानाग पुरके धोराराम, मोस धोर सगदासीके मिश्रते सुसते हैं। यहाँ मोह जातिबी लक्ष्मी की बजिह है, ये लोग चम्पाम्ब जातिवर्गके श्रेष्ठ माने जाते हैं।

२ लख जिलेका एक प्रधान नगर। एष लखन नदीके पूर्वो बिनाई पश्चिम है।

१ मज्जभारतके मुन्दलच्छण्ड राज्यके चम्पामंत एक नगर धोर अंतिवाका। एषके एक धोर प नरैनाधिष्ठित बमौरपुर जिला धोर दूसरी धोर बजपुरका सामन्तारण्य है। यहाँ काई मंयोके समरथाय मुन्दलच्छण्डके सामन्त राजने 'राजकुमारकासीत्र' नामक एक विद्यालयको स्थापना की।

मोपडी (हि० एलो०) राजमें पहलमेका एक महाना जिलमें लो कगूरेदार दानि पाठमें सुंधि रहते हैं।

मोबर (स० त्रि०) नावा बरति बर-ट। मोबाबरबमीक, जो नाव पर बड़ कर विचरच करती हीं।

मोबो (वा० एलो०) ऐम्बोको पावो बूई लड़की जिसे बड़ चपना प्यबलाव बिजातो हो।

मोबावर (हि० एलो०) मिजारर देवा।

मोब (हि० पथा०) १ ईम्बर न बर, पैना न हो। २ न हो, न धरी।

मोबवान (वा० वि०) नवबुद्ध, उठतो लवानी।

मोबवानो (वा० एलो०) उठतो सुवावस्था।

मोबा (वा० पु०) १ कादाम। २ पित्तमोबा।

मोबो (वा० एली०) सोबो।

मोबोबिच (घ० त्रि०) नावा मोबिवा वष्य। मोबाक-पादि ओबिबावुल, जो नाव बला कर चपना सुभारा करता हो।

मोता (स० पु०) म्बोता देखो।

मोताय (स० त्रि०) नावा मोबया ताये तरबीय। मोबाम्ब देयादि।

मोठिरवो (हि० एली०) १ बबई ई.उ. छोटी ई.उ। २ एक पञ्चारका लुधा जो पाछेके खेला जाता है।

मोतोड़ (हि० बि०) १ नवा तोड़ा हुआ, जो पक्षी पचन भोता गया हो। (एलो०) २ नव लमोन जो पक्षी बर जाती गई हो।

मोदवड (स० पु०) १ मोबादिके मज्जस्थित काठवड। २ डाँड़।

मोदसो (हि० एलो०) एक रीति जिसेके अनुसार शिसान पपमें जर्मोदारके रूपया बजार लीं है धोर साकमरमें ८) ६०३ (१०) दिरी है।

मोड (हि० पु०) नया पोवा, कंठुवा।

मोधा (हि० पु०) १ मोलको बड़ पसक जो नर्मार-धोमें बोई गई हो। २ नए पलदार पीधोका बमोका नया लवा हुआ मणीका।

मोदवा (हि० पु०) बाहु पर पहलमेका एक महाना जिलमें मो नग बड़े होतें हैं। एषमें लो दानि होतें हैं धोर प्रदेवक दानिमें मिच मिच र गबे नग बड़े जाते हैं। एसे मोरतन से बहरतें हैं।

मोना (हि० पु०) १ नवना, सुवना। २ लुब कर टेफा होना।

मौनिकिराम—एक प्रत्यकार। एकोमें गबड़पुपाचकार ल एष धोर टोकाबी रचना को। ये हरिनारायणके पुत्र धोर राजा माहूँलके पुराणपाठक पश्चिम ब्रह्मचानत्रोके योत्र है।

नौनार (हि० स्त्री०) वह स्थान जहाँ नोनिया लोग लीने मट्टीसे नमक बनाते हैं।

नौवड़ (हि० वि०) जिसे लुद्र वा हीन दशासे अच्छी दशामें आए थोड़े हो दिन हुए हों।

नौवत (फा० स्त्री०) १ वारी, पारो। २ गति, दशा, हासत। ३ वैभव, उत्सव या मंगलसूचक वाजा जो पहर पहर भर देवमन्दिरी, राजप्रासादों या बड़े आठमियोंके द्वार पर बजता है। नौवतमें प्रायः शकनाई और नगाड़े बजाते हैं। ४ स्थितिमें कोई परिवर्तन करनेवाली बातोंका घटना, उपस्थित दशा, संयोग।

नौवतखाना (फा० पु०) फाटकके ऊपर बना हुआ वह स्थान जहाँ बैठ कर नौवत बजाई जाती है, नकारखाना। नौवती (फा० पु०) १ नौवत बजानेवाला, नकारचो। २ फाटक पर पहरा देनेवाला, पहरेदार। ३ बिना सवारका सजा हुआ घोड़ा, कीतल घोड़ा। ४ बहा खिमा या तम्बू।

नौवतीदार (फा० पु०) १ द्वारपाल, दरवान। २ खिमे पर पहरा देनेवाला, संतरो।

नौवरार (फा० पु०) वह भूमि जो किसी नदीके छट जानिसे निकल आती है।

नौमासा (हि० पु०) १ गर्भका मर्वा महीना। २ वह रीति रस्म जो गर्भके नौ महीने हो जाने पर की जाती है और जिसमें पंजीरी मिठाई आदि बाँटी जाती है।

नौमो (हि० स्त्री०) पक्षको मर्वा तिथि।

नौयान (सं० स्त्री०) नौकादि पर चढ़ कर देशान्तरकी यात्रा।

नौयायिन् (सं० वि०) नावा याति या जिनी। नौका द्वारा नदी आदिके पारगामी। नौयायियोंको तरपण्य देना होता है। इस तरपण्यका विषय मनुमें इस प्रकार लिखा है। नदी मार्ग हो कर जानिमें नदीकी प्रवृत्तता वा स्थिरता तथा योग्य वर्षादिकालकी विवेचना करके तरमूल्य स्थिर करना होता है। समुद्रके विषयमें यह नियम लागू नहीं है। गर्मिणी स्त्री, परिव्राजक, भिक्षु, वानप्रस्थ, ब्रह्मचारी और ब्राह्मण इन सबसे उत्तराई नहीं लेनी चाहिए। खाली गाड़ी नाव पर पार करनेमें एक पण महसूल, एक मनुष्य जितना भी भट्टी सकता है

उतनेमें श्रद्धपण, पशु और स्त्रीको पार करनेमें चतुर्थांश पण तथा भारशून्य मनुष्यको पार करनेमें एक पणका प्राठवां भाग महसूल लगता है। बीच धारमें अथवा और कहीं नाविकके दोपमें यदि सुगाफिर को थोड़े वस्तु नष्ट हो जाय, तो उसका टायी नाविक होगा। नाविकके दोपसे यदि उनकी चोत्र चोरी हो जाय, तो नाविक को हो उस चोत्रका दाम लग कर देना होगा। किन्तु देवसंयोगमें नष्ट हो जाने पर वह उसका टायी नहीं है। (मडू ८५०)

नौरग (हि० पु०) एक प्रकारकी चिड़िया।

नौरतन (हि० पु०) १ नवरत्न देवी। २ नौदगा नामका गहना। (स्त्री०) ३ एक प्रकारकी चटनी जिमें वे नौ चोजें पड़ती हैं—खटाई, गुठ, मिर्च, शोतसचोनी, केशर, इलायची, जाधिवी, मौफ और जोरा।

नौरवे—यूरोप महादेशका एक देश। नारवे और इसके पूर्ववर्ती स्वीडन ये दोनों देश मिल कर स्वीडिनेवीय उपदीप कहलाते हैं। नारवे भूभाग ५८° से ७१° उ० और देश ० ५° से २८° पू०के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तरमें उत्तरमहासागर, पूर्वमें स्वीडन, दक्षिणमें काटो-गाट उपसागर और पश्चिममें जर्मन तथा उत्तरसागर हैं। इसकी लम्बाई उत्तर-दक्षिणमें ग्यारह हजार मील है, किन्तु चौड़ाई सब जगह समान नहीं है। भूपरिमाण १२५००० वर्ग मील है।

इस विस्तीर्ण देशका अधिकांश पर्वतमय है। एक गिरिमाला उत्तरसे दक्षिण तक फैली हुई है। उत्तर भागको क्यूलेन और दक्षिण-भागको फीयलेन कहते हैं। क्यूलेन पर्वत श्रेणीका सबसे ऊँचा अंश सलीतेलमा कहलाता है जिसकी ऊँचाई ४८०६ फुट है। इसमें अनेक शृङ्ख हैं, सबसे ऊँचे शृङ्खको ऊँचाई ६२० फुट है। क्यूलेन-पहाड़ बर्फसे ढका हुआ है; इससे बहुत-सी बर्फको नदिया निकली है। यहांको नदियोंके ऊँची भूमिसे निकलने और इनकी लम्बाई अधिक न होनेके कारण वे सबके सब नौवाणिन्यकी अनुपयोगी हैं। ग्लोमेन नदी हो सबसे बड़ी है। यह रुटफेल पहाड़से निकल कर स्कागारक उपसागरमें गिरती है। नारवेका पश्चिम उपकूल पति हड़ और भग्न है। इसके

दक्षिण प्रदेशोंमें बड़े बड़े उद भवर पाते हैं। जोडेन की सीमासे निचट पामक उद समुद्रतटसे ३२० फुट लंबा है।

यहाँको पावकशा ज्ञान मध्ये निच निच प्रसारकी है। समुद्र और उपशागीय खोलेके प्रभावसे उत्तरीयमें उतनी ठ ठ नही पड़ती है। वहाँ वर्ष भरमें प्रायः पाठ सड़ोना समय धराय रहता है। गर्म और शोलकाबनें इवा बहुत और-औरकी रहती है और कुहासा भी देखा जाता है। बाद पूरबकी इवा बचने पर बह जाता रहता है। १५ मईसे २८ जुलाई और १८ नवम्बरसे २६ जनवरी तक यहाँ रात बड़ी होती है। इन सब एक सड़ोनोंमें उत्तरीय और एक प्रसारका उत्पन्न पालोस (Aurora Borealis-नोमगिरि) दिखाई पड़ता है। मस्के-कोको इसी रीयनीकी सहायतासे रातमें दिनकी तरह सड़बनें की सड़की पादि पकड़ सकते हैं। पश्चिमोत्प-भूकमें क्या जाड़ा, क्या मरीं बच समय समान इवा बसती है, पानी बरबता है और बिजली बड़बती है तथा अभी अभी मूकम्प भी हो जाया करता है।

यहाँ बड़े बड़े जलक देकनेमें पाते हैं। इन सब जलनेमें उत्पन्न पत्त और पाठ हो यहाँको प्रधान पत्तलि है। मटर खादि सब तरहकी फसल भी बगतो है। दिग्ब लोग छविजाबं यथैत पत्तियमसे करते हैं सड़ो, सेबिन उत्पन्न इन्धने यहाँका प्रभाव पूर नहीं होता।

यहाँसे पहाड़ों पर पाकारिक इन्ध बहुतायतसे मिलते हैं। गरुडों कोपरीन पहाड़ पर मोडा, ब सभमं और पायसं पर्वण पर कपा, कोबरकेल ह पर तांबा और दक्षिण प्रदेशोंमें कोडा, अष्टा, मावंस खादि पाबे पाते हैं। स्नागरक उपधायाके उपजुनबर्ती प्रदेशों में समुद्रके लकसे लक प्रसृत किया जाता है।

यहाँसे पादिसे पच्छिम लोग मस्के, काफ तथा वायुजा ध्यवमाय करते और पबसिष्ट लोग छविबोधि हैं। वेग धती नदीके किनारे सड़की काठनेकी बड़ी बड़ी बड़े बड़े हैं। यहाँ कोड़े, ताँबे काँच और बाढ़देके भी बहुतने कारखाने देखनेमें पाते हैं। समुद्रतीरके पनेक नगरो में नडाज भी तैयार किया जाता है।

पम्पाय दिगोके साथ नारवेका विप्लव नाबिन्ध प्रथ-जित है। परप्लोपक इन्ध, मास्के तथा कानिज पदार्थ इन्हीके, खीन, मूम्पकासा और नाटिकपागर मेका जाता है। जोडा बिदिग नहीं मेका जाता, दिग्बे व्यवहारमें ही बयत होता है। यहाँसे खोम नाबिक कार्यमें बड़े को नियुक्त हैं।

१७ दिग्बे विद्याविद्याको विधि उपरति है। यको को ही विद्यया पढ़ना पाचना पड़ता है। पाम पाममें विद्याध्य है, प्रत्येक नगरमें बचनेकी विद्याध्य तथा १० बड़े बड़े नपेटेमें उत्तरह विगविद्यालय भी हैं।

नौरवेके पश्चिमोत्पन्न व्युत्पन्न जातिसे हैं। पत्तल प्रायोन कासमें वे खोग समुद्रमें दक्षिणदिशि कर दिन बिताते थे। वे सब जनदण्ड, उत्तर समुद्रके उपकूलबर्ती दिग्बोंमें जा कर पश्चिमोत्पन्न, नरकया तथा कुप्लन किया करते थे। उस समय यहाँ बहुतसे छोटे छोटे राजा थे जो हमेशा पापधर्म सड़ते-भगड़ते रहते थे। प्रायोन कोरवेकाशियो ने पारसई प्लका पता लगाया और वहाँ पश्चिमोत्पन्न क्रांति किया। १०३ ई०में केरलड करकाप्रा नामक एक राजा समस्त छोटे राज्यों को मिला कर एकाधिपति हुए थे। इधने कुछ दिन बाद ही नारवी और डेनमार्कके सीमोंमें मिल कर डेनमार्क के राजा कैल्फुडेके साथ इन्हीके पर पड़ाई को की। बाद बीच में ही दोनो जाति पकय पकय हो गईं। १०७० ई०में राजी मारकोरेठके समयमें फिर एक दोनो जाति एक धाय मिल कर १०९६ ई० तक सभी पकयमें रहीं। १२१६ ई०में जोडेन डेनमार्कमें नारवेमें मिलाया गया और तभीसे नारवे और जोडेन एक राज्यसुत्र हुआ है।

प्रायोके प्रतिनिधि के कर नारवेकी व्यवस्थापक समा स मक्ति हुई है। प्रजा वापात्पने प्रतिनिधि नियोग नहीं करते। वे निर्वाचक चुनती हैं और निर्वाचको में प्रतिनिधि निर्वाचित होते हैं। नगरमें ३० नगरवासियो मेंसे एक निर्वाचक चुननेका अधिकार है और छोटे छोटे गाँवों मेंसे दोबड़े पोड़े एक। इन प्रतिनिधियों को क एका ०१ और १०० के बीच होने चाहिए। नारवेकी व्यवस्थापक समाका नाम है "उबि"। राजा का प्रतिनिधि एक समाका धाय चुक करते हैं। इध

सभा द्वारा प्राईनमें अदल वदल करना, नया कर लगाना और तोडना, राजपुरखोंको संप्र्या तथा वेतन ठोक करना और अन्यान्य अनेक कार्य निर्वाहित होते हैं। एंिके दो विभाग हैं, लैगर्थि और प्रोडिनथि। पहले विभागका काम प्राईन-कानून बनाना है और दूसरेका टेगके कागजातीको ले कर पहलेमें पेश करना। प्रत्येक तीन वर्षको १ नो फरवरीको एथिमें अघिवेगन होता है। कुल शासन-भार राजाके ऊपर रहता है। नारवेके गवर्नर, एक मन्त्री और सदस्यगण ले कर यहाको मन्त्रिसभा संगठित है। राजा जब नारवेसे कहीं दूररो जगह चले जाते हैं, तब मन्त्री और दो सदस्य उनके साथ रहते और बाकी गवर्नर तथा अपरापर सदस्यगण मिल कर राज्यको देखभाल करते हैं। नारवेके मनुष्य गवर्नर नहीं हो सकते। वे मन्त्रिसभाके अन्यान्य सभ्य हो सकते हैं। युद्ध-घोषणा करने पर राजा नौरवे और स्वीडेन दोनों देगोंके सदस्योंको बुला कर उनके अभिमतानुसार कार्य करते हैं। यहांका राजस्य लगभग दो करोड़ अम्नी लाख रुपयेका है।

नारवे और स्वीडेन एक ही राजाके शासनाधीन है। यहां ४६ जहाज और १३८ तोपें हैं। सैन्य-संख्या १८००० है। तैरेस वर्षसे ज्यादा सम्रवाला मनुष्य हो सै निरक कार्यमें नियुक्त किया जा सकता है और तेरह वर्षसे अधिक समय तक उक्त कार्यमें कोई नहीं रह सकता।

नौरस (हि० वि०) १ जिसका रस नया अर्थात् ताजा हो, नया पका हुआ, ताजा। २ नवयुवक।

नौल (हि० पु०) नौलको फसलको पहलो कटाई। नौल देखो।

नौरोज (फा० पु०) १ पारसियोंमें नए वर्षका पहला दिन। इस दिन बहुत आनन्द उत्सव मनाया जाता था। २ त्योहारका दिन। ३ खुशोका दिन, कोई शुभ दिन। नौल (हि० वि०) १ नवल देखो। २ जहाज पर माल लादनेका भाड़ा।

नौनकवा (हि० वि०) नौलका देवां।

नौलखा (हि० वि०) नौ लाखका, जिसकी कोमत नौ लाख हो, जहाज और बहुमूल्य।

नौनखी (हि० आ०) जुलाईको वह लकड़ी जिसमें ताने दबाए जाते हैं और जिसमें इधर उधर वजनी पत्थर बंधे रहते हैं।

नौला (हि० पु०) नेकल देखो।

नौलामो (हि० वि०) नर्म, कोमल, मुनायम।

नौवत खां नवाब—सम्राट्, अकबरके एक सेनापति। इन्होंने शाहजहानके अन्त पुरके मिर्कट ८०३ हिजरीमें एक ममजिद बनवाए जिसे लोग 'नौनोख्यो' कहते हैं। अभी वह टूटी फूटी अवस्थामें पड़ी है।

नौवतपुर—युक्त प्रदेशके धारागमो जिलान्तर्गत एक ग्राम। यह अक्षा० २५° १४' ३८" उ० तथा देगा० ८३° २०' ४०" पू०के मध्य अवस्थित है। यहां बनवन्त सिंहके तटमीनदार शिखराम सिंहप्रतिष्ठित एक मन्दिर और सराय है। कर्मनाशानदी पार करनेके लिए यहां एक प्रस्तरनिर्मित सुन्दर सेतु है।

नौवम्भनतीर्थ—हिमालयपर्वतस्य तीर्थ विधिप। महाप्रभयके बाद मनुने यहां प्राथय लिया था। मनु देखो।

नौलमतपुरायमें लिखा है—महर्षि करयप जब तीर्थपर्यटनको निकले, तब उनके पुत्र नौलने कनकलमें आ कर उनमें निवेदन किया कि संग्रह दैत्यके पुत्र जलोद्भवके उपद्रवसे धरा समहित हो गई है। तदनन्तर कश्यपने ब्रह्मा और विष्णुके निकट जा कर उन्हें सब वृत्तान्त कह सुनाया। मुनिको प्रार्थनासे तुष्ट हो कर ब्रह्माने देवताओंको दक्षधलके साथ नौवम्भनतीर्थमें भेज दिया। कंसनागके उत्तर हिमालय पर्वतके अत्युच्च शृङ्ख पर यह तीर्थ स्थापित है। यहां पहुंच कर ब्रह्माने उत्तर, विष्णुने दक्षिण और शिवने दोनोंके बीचमें खड़े हो कर जलोद्भव दैत्यको छेदके भीतरसे बाहर निकलने कहा। लेकिन दुरन्त दस्युने उनकी बात अनसुनी कर दी। इस पर विष्णुके परामर्शानुसार शिवने अपने त्रिशूल द्वारा पर्वतको छेद डाला। ऐसा करनेसे जब जल निकलने लगा, तब विष्णुने अन्वमूर्त्ति धारण कर जलमें प्रवेश किया और वहां जलोद्भवके साथ युद्ध करके उसे मार डाला। कोई कोई आराराट पर्वतको जहां नौयाका जहाज आ लगा था, नौवम्भन-तीर्थ मानते हैं। नौया देखो।

नीवाह (सं० द्वि०) नाम वाहकति वाहि पद्व। नीवा
वाहक, त्रिषुषे नाम चकारि भाती है उक्ति।

नीविद्या—महावादि परिचामन विद्या। नाविः द्वेषी।

नीव्यसन (सं० द्वि०) नावि म्यसन। नीवा पर विपद।

नीवाहर—१ उत्तरपश्चिम सोमात प्रदेशके विद्याहर जिनेको
एक तहसील। यह पचा० २३ ४० से २४ ८० ८० पीर
दिशा० ०१ ४० से ०२ १२ पू०के अवस्थित है। मूपरि
माच ००३ वर्गमोस पीर कोकस प्या बाबुसे उपर है।

२ एक तहसीलका प्रधान नगर धोर जामनी। यह
पचा० २४ ४० पीर दिशा० ०२ पू० दिशावरसे २०
मील पूर्वमें अवस्थित है। जनन प्या दस बजारके
बरोब है। जामनी काबुल नदीको बाबुलकामय जमोन पर
अवस्थित है। काबुल नदी वार करमेंके निचे १८०३
ई०को एसी दिसवरमें एक पुक धोर कोहिनी सकुब
बनारि गई है। यहरमें एक सरकारो पकतान पीर एक
बर्गमोस कर रख है।

३ पचाबके बहावलपुर राज्यके अन्तर्गत खानपुर
निजामतकी एक तहसील। यह पचा० २० ३५ से २८
३४ ८० पीर दिशा० ०० ० से ०० ३५ पू०के मज्य अव-
स्थित है। मूपरिमाच १५८० वर्गमील पीर जनस कया
करीब ८००३२ है। इधमें इलो नामका एक शहर पीर
०१ पाम समते है। राजस हो नाच कपेबा है।

४ एक तहसीलका एक शहर। यह पचा० २८ २१
८० पीर दिशा० ०० १८ पू० बहावलपुर शहरसे १०८
मोस दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है। जनस कया प्रायः
४४०१ है। यहाँ बाबलकी एक बाघ पीर बिक्रिस्त-
कय है।

५ बम्बईके डिब्रुगढ़मेंके अन्तर्गत वैदपाबाद जिलेका
एक उपविभाग। इसके उत्तर पीर पश्चिममें डिब्रुगढ़
पूर्वमें खैरपुरराज्य, हर पीर पाकैर जिहा तथा दक्षिण
में हाका उपविभाग है। मूपरिमाच २८२८ वर्गमोस है।

यहाँ कितोवारीकी अवस्थिसे सिप ८८ नहर काटी
गई है जिनमेंसे नसरत नामक नहर नूरमहमद कब
कोराके राजसबाधमें काटी गई थी। १८०५ ई०में शाह
पुर-बुर्खेके बाद डिब्रुगढ़में तामपुर सरदारोंके मध्य निमज
हो गया। इस बुर्खेमें मोर फरी पसी पीर रफ्तम कधि

कब पबटुन नविबनहोप पराष्ट हुप, तब कन्दि
हर तथा नीवाहर तामपुरके शासनकर्ता मोर छोडाव
कधि हाप कया। इस निवाहपुत्रके को मुह जिहा
कसमें पसोसुराहकी ओत हुई पीर १८४३ ई०में कन्दि
रायकी उपधि मिली। १८४२ ई०तक उपविभाग सुमस
मानोके पविहारमें रहा। पीछे कन्दि पसदुवावजारके
मुह को कर इतिहासकारने इसका शासनभार पपने
हाकमें से लिहा।

६ एक उपविभागका एक प्रधान नगर। यह मोरो
नगरसे १३ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। ताबपुरके
मोर राजाधेके समयमें यहाँ मोसप्रात्र विहा रहती थी।
यह नगर २०० वर्ग हुप बसावा मया है।

७ मिथोहाबाद तहसीलके अन्तर्गत एक पाम। यह
मैनपुरो नगरसे १४ मील दक्षिणपूर्वमें अवस्थित है।
सम्बादशाहजहाके राजसबाधमें हाको पयू सैयद
नामक किसी मुसलमानसे इस पामका पचन हुपा।
यहाँ कन्दि तथा कन्दि पामोव घाटिहुका-हाका समाधि-
मन्दिर है। इसके पलापा यहाँ पनेक कुप, समाधि
मन्दिर पीर यहादिके मम्बाकपेव देखनेमें पाते है।

नीवाहर पन्नी—डिब्रुगढ़मेंके मिबाबपुर धोर पकर उप
विभागके अन्तर्गत एक तालुका। यह पचा० २० ४२ से
२८ ८० पीर दिशा० १८ १२ से १८ पू० के मज्य अव-
स्थित है। मूपरिमाच ४०८ वर्गमील पीर जनस कया
प्रायः ४१०३५ है। इधमें एक शहर पीर ८० पाम समते
है। यहाँकी जमोन बहुत उपजाव है। बाग, क्याट,
गोर्न पीर चना यहाँको प्रधान उपज है।

नीया (पा० पु०) कूडा, घर।

नीमी (पा० प्यो०) नवकयू सुकडिन।

नीशेरवा—पारस्यराज कुबाबके पुत्र। जे साधुताके विधीन
पकपाती है। १४०के पश्चिममें बुरोव पीर पूर्वमें भार
तादि नालाराज्यमें जे 'सयू' नामके प्रसिद्ध है। सुसल-
मान मोग १४के 'पादिक' पीर पीकबाको खसक (Chok-
rubs) कहा करत है। १३१ ई०में पिनाकी खकुके
बाद ये राजग्यो पर बैठे। इस समय इन्हीं रोमन
मोगी को हुयमें कई बार पराष्ट किया, सुनकमान
सिखकोने तो लिहा है कि १४०में रोमके बादशाहको

कैद किया था। रोमके सम्राट् उस समय जटिनियन थे। नीशेरवांकी पण्डित्योक्त पर विजय, ग्रामदेश तथा भूमध्यसागरके प्रतिक स्थानों पर अधिकार तथा साइबेरिया युष्माइन प्रदेशों पर आक्रमण रोमके इतिहासमें भी प्रसिद्ध है। रोमके बादशाह जटिनियन पारस्य साम्राज्यके प्रबोधन हो कर प्रतिवर्ष तीस हजार अश्वार्थियों कर दिया करते थे। ८० वर्षको हहावस्यामें नोशेरवांनि रोम राज्यके विरुद्ध चढ़ाई की थी और दारा तथा ग्राम आदि देशोंको अधिकृत किया था। ४८ वर्षराज्य करके परम प्रतापो और न्यायो बादशाह परलोक सिधारे।

फारसोकितावेंनि नोशेरवांकी न्यायकी बहुतसे कथाएँ हैं। ध्यान रखना चाहिए कि इसी बादशाहके समयमें सुसलमानोंके पैगम्बर मुहम्मद साहबका जन्म हुआ जिनके मतके प्रभावसे आगे चल कर पारसकी प्राचीन आर्यसभ्यताका लोप हुआ। सर जान मानक्रमके पारस्य भ्रमणवृत्तान्त तथा अन्यान्य पारस्य ग्रन्थोंमें पूर्वकी और भारत और सिन्धु प्रदेशमें तथा उत्तरकी और फरगणा राश्ट्रमें नोशेरवांके आगमन और आक्रमणको कथा लिखी है। सर इनरी पटिञ्जरसाहबने लिखा है कि बलभोरराजपुत्र गुहने नोशेरवांकी कन्याका पाणिग्रहण किया था।

नीशेरवाणी—बिलुचिस्तानवासी जातिविशेष।

नोपेचन (सं० लो०) नावः सेचनम्, सुपानादित्वात् पत्वम्। नोकासेचन।

नोसत (हिं० स्त्री०) शृङ्गार, सोलहो सिंगार।

नोसरा (हिं० पु०) नो लहोको माना, नोसरा चार वा गजरा।

नोसादर (हिं० पु०) एक तीक्ष्ण भालदार चार या ममक जो दो वायव्य दृष्टिको योगसे बनता है। यह चार वायव्यरूपमें वायुमें अल्पमात्रमें मिला रहता है और क्षुब्धकी शरीरके सङ्गे गलनेसे एकत्रित होता है। र्सींग, खुर, हड्डो, बाल आदिका भवकेमें अर्क खोच कर यह प्रायः निकाला जाता है। गै मके कारखानोंमें पत्थरके कोयलेकी भवके पर चढानेसे जो एक प्रकारका पानो-सा पदार्थ छूटता है आज कल बहुत-सा नोसादर उसीसे निकाला जाता है। पूर्व समयमें लोग ईंटके पजावेंसे

भी चार निकालते थे। उन सब पजावेंमें महीके मांस कुछ जन्तुओंके श्रंग भी मिला कर जमते थे। नोसादर भीषण तथा कलाकीगलके वायव्यरूपमें आता है।

यै व्यक्रमें नोसादर दो प्रकारका माना गया है, रसाक्षतिक मोर रसा अक्षतिक। जो और चारोंमें बनाया जाता है उसे अक्षतिक मोर जो जन्तुओंके मूत्रपुरोप आदिके चारोंमें निकाला जाता है उसे अक्षतिक नोसादर कहते हैं। आयुर्वेदके मतानुसार नोसादर जोधनागक, शोतक तथा यक्षत, प्रोहा, च्चर, अर्बुद, सिद्ध, खोमो इत्यादिमें उपकारी है।

नोशारि—बड़ोदाराख्ये अन्तर्गत एक नगर।

नवषारि देखो।

नोसिव (हिं० वि०) नोसिप्रिया देखो।

नोसिविया (हिं० वि०) जो टच या कुगल न हुआ हो, जो भीषण कर पका न हुआ हो, जिसने नया सोखा हो।

नोहड (हिं० पु०) महीकी नई हाँडी, फोरो हँडिया।

नोहडा (हिं० पु०) पिटपत्त, कनागत। इसमें महीके पुराने वरतन केक दिए जाते हैं और नए रखे जाते हैं।

नोशजारी—बहानके २४ परगनेके अन्तर्गत एक ग्राम।

न्यका (सं० स्त्री०) नि-प्रकि, वाहुं न लोपः। विष्ठाका कीटा।

न्यकारका (सं० स्त्री०) न्यक्, क्रियतेऽसौ श्योदरादित्वात् क लोपे साधु। गल्लुकोट, विष्ठाका कोटा।

न्यकार (सं० पु०) न्यक्, क्रियते इति लघञ्। न्यक्-करण, नोचकरण। पर्याय—अवज्ञा, परोहार, परिहार, पराभव, अपमान, परिभव, तिरस्त्रिया, तिरस्त्रिकर, अर्बुद, हैला, हैला, अवहेलन, हैलन, अनादर, अभिभव, सूक्ष्ण, सुक्ष्ण, रीटा, अभिभूति, निकृति, अक्षुण्ण, अक्षुण्ण, नोकार, अवहेल, अमानन, चेष, निकार, धिकार।

न्यकारका (सं० स्त्री०) पतङ्गविशेष, मलका कीटा।

न्यक्त (सं० स्त्री०) नि अन्ज-क्त, ततः कुत्वम्। नितान्त अञ्जनयुक्तोक्त।

न्यक्त (सं० वि०) नत, नीचे रखा हुआ।

न्यक्ताङ्गुली (सं० स्त्री०) नोचकी और रखी हुई उँगली।

न्यक्त (सं० पु० स्त्री०) नियते निकृते वा अक्षिणी यस्य समासे षच्। १ महिष, भैस। २ कामदन्व, परशुराम।

३ आत्स्य । (ङी०) इ महिपत्य । (त्रि०) इ निहृत् ।

म्यङ्वाति (स० ङी०) नीच वाति ।

म्यङ्माव (स० पु०) मीथो भावः । नीचत्व, मोघ होने का भावः ।

म्यङ्भावन (स० ङी०) नीचत्ववाचक, सुधाके साथ मार कर करना ।

म्यङ्भावनियुक्त (स० त्रि०) मन्त्रकारी, नवाने वा सुकाने वाला ।

म्यदोष (ङ० पु०) म्यङ्द्वयदि इति इव इव् । १ बटइय, वरपद । २ यमोहय । ३ वामपरिमात्र बतनी लम्बाई अतनी दोनों बायीं कि फौलानेसे जोतो है, पुरवा । ४ विष्णु । ५ मोहनीवधि । ६ उपदिन राजाधि एक पुत्रवा मगम । ७ मन्त्रदेव । ८ बाहु । ९ माराचसीके चमत्वंत एक धाम । १० सुविषयर्षी मृमाकानो ।

म्यदोषक (स० त्रि०) मारीष, लक्षादुरदेगादि लक्ष्णा रित्वात् ङक । (या ४।२।८०) म्यदोषके दूरदेगादि ।

म्यदोषपरिमण्डक (स० पु०) म्यदोषः व्यामः परिमण्डक परिचाहो यम् । वामपरिमित-लक्षणापरिचाह सुवच नव मनुष्य त्रिसुत्री मन्त्राई चौद्वारि एक वाम या पुरवा हो । ऐसे सुवच मन्त्रार्थे चान्य करसे है ।

म्यदोषपरिमण्डका (स० ङी०) म्यङ् इवदि इति म्यदोषं यच्चः प्रसूत परितो मण्डक निरन्तरमण्डकय यक्षाः । छिपोंका एक भेद, नव ङी त्रिसके छान करीर निरन्तर विमात्र पौर षडि चोष ही ।

म्यदोषपुटपाक (स० पु०) बट कल्यादि पुटपाकभेद ।
पुटपाक के चो ।

म्यदोषमूल (स० ङी०) बटइयको अङ्ग ।

म्यदोषा (स० ङी०) म्यङ्द्वयदि इव यच्-टाप् ।
म्यदोषी । यवाव—दन्तो, लदुगवरपर्थी, निहृत्, मुकुचक दूरम्यो, बिना पौर म्यदोषाववा ।

म्यदोषादिमच (स० पु०) द्युतीक्ष्ण इव स यचवीयवच त्रिमिच, नैष्यधर्म इयोका एक मय या वगै त्रिमिच यन्त मंत ये इव मर्मि जाति हैं—बगाद, पीपत्र मूलर, पाकट, मङ्गल, यत्तुंन चाम, इष्टम, चामड़ा, कासुन, चिरीडी, मांयरोहिणे, बदम, बेट, तेंदू, सनई, त्रिजयता, खोब

सावर, मिनाश, पलाय, तुम, बूँतवां या सुसेडी ।
(लभुन पूवत्यान इत् ङ०)

म्यदोषादिमच (स० ङी०) द्युतीक्ष्णभेद । भेदव्यवहार- बनीमिं इवमीं प्रपुन मयायो इव प्रकार बिखी है— इत इ येर हायदि सिधे बट, पीपत्र, गुणच, पङ्क, कुट, पाकर, कासुन, चिरी जो, यमस्ततास, शैत, सुपारी, बदम, लखरोड़ा पीर मास पर्वकको ज्ञास २ यत्तुंन ३ इ येर शिप इ येर चांसेला रम इ येर । लक्ष्णाव यदिसुत कुसुम, पिण्डवत्तूर, दाहइवदी, लीवन्तोपन गाथारीयन, क कोक, सोरक कोक, रत्नचन्दन मंत चन्दन, रसाचन्दन, प्रमत्तमूल प्रत्येक इ तोका, लवकी मिला कर यथाविधि पाक करतें हैं । इवमि वेचन करतेंसे माना प्रकारके मटर, योनिगूल, कुचिगूल, बसिगूल, पाकट-च पौर योनिदाह चादि रोय अति रहते हैं ।

(धैवज्ज० लीतोवागिहार)

म्यदोषादिमच (स० ङी०) माववलाग्रीक्ष्ण चूर्णोपधि भेद । प्रस्तुत प्रवालो—बट, यच्छूसर, पीपत्र, यमत्तास पीतमात्र, कासुन, चिरी जो, यत्तुंन, बरइय, बटि- मङ्ग लोच बरइय म दाद, भेयदुडो, दन्तो चोता, पङ्क- हुस, कहरकरक, त्रिजयता, रन्दयच पीर मिनाश प्रत्येक का बराबर बराबर भाग ले कर चूर्ण बनाते हैं । पीछे लघु चूर्णको मङ्गके साथ या कर त्रिजयतावा पानो पीने से सुखाद विद्युत् होता है । रतना हो नहीं लोच प्रकारके प्रमिच पौर मूलज्जच्छु, मो जाति रहते हैं ।

म्यदो रराम—अपित्तवस्तु लघुरक्ष बोधोंका एक महाराम ।
म्यदु हृदये इम क्षान्तिं रहते है ।

म्यदोषिक (स० त्रि०) लक्षं बद्धतमि बटइय हो ।

म्यदोषिका (स० ङी०) धापुचर्षी मता, मूलाकानो कता ।

म्यदोषी (स० ङी०) इ म्दिवयर्षी, मूलाकानो । २ इवमदन्तो ।

म्यङ् (स० पु०) यानादिना य मर्मदे रवका एक यम् ।
म्यङ् (स० पु०) निनरां यचति मच्छतोति यच्-मतो च (यवयवः) इव १।२।८ म्यङ्गणैषात् । या ०।३।२१) इति हुत्सम् । १ म्दमभेद, यच प्रकारका हिरच, मारच विना । भावयथायथि मतये इवका मांस काहु, कपु

बलाकारक श्री। त्रिदोषनागक होता है। २ मुनिभेद, एक ऋषिका नाम। ३ मणिभेद, एक प्रकारकी मणि। (त्रि०) ३ नितान्त गमनगोल, बहुत दौड़नेवाला।
 न्यङ्कभूरुह (स० पु०) न्यङ्कुरिव भूरुहः। १ श्योनाक वृक्ष, सोनापाठा। २ आरग्वधवृक्ष, अमनतास।
 न्यङ्कगिरि (स० स्त्री०) ककुभकन्द।
 न्यङ्कसारिणी (स० स्त्री०) वृहती कन्दोभेद, एक वैदिक छन्द जिसके पहले और दूसरे चरणमें १२, १२ अक्षर और तीसरे तथा चौथे चरणमें ८, ८ अक्षर होते हैं।
 न्यङ्कादि (स० पु०) कुत्वनिमित्त गष्टगणभेद। यथा—
 न्यङ्क, मट्गु, भृगु, दूरेपाक, फलेपाक, क्षणेपाक, दूरेपाका, फलेपाका, दूरेपाक, फलेपाका, तक्र वक्र, व्यतिपत्र, अनुपद्म, अवसर्ग, उपसर्ग, श्वपाक, सांभपाक, सूमपाल, कपीतपाक, उल्लूकपाक।
 न्यङ्क (स० पु०) नि अन्ज-घञ्। अनितरां अञ्जन, नितान्त अञ्जन।
 न्यच्छ (स० फली०) नितरामच्छम्। क्षुद्ररोगविशेषः। जिस रोगमें शरीर श्याम या शुष्कनवण हो, शरीरमें जहां तहां थोडा बहुत दर्द होता हो अथवा वेदना-विहीन मण्डलाकृति चिह्न हो गया हो, उसे न्यच्छरोग कहते हैं। शिरावेध, प्रलेप और अभ्यङ्ग द्वारा न्यच्छरोगको चिकित्सा करनी चाहिए। चौरिहृत्के कक्कको दूधसे पोस कर उसका प्रलेप देनेसे अथवा सिद्धिपत्र, हृदारक और शिशुकाष्ठको चूर्ण कर उससे सहजान करनेसे न्यच्छ और मुखवर्णरोग नष्ट होता है। (भावप्रकाश ४४०० क्षुद्ररोगा०) (त्रि०) २ अत्यन्त निर्मल, बहुत साफ।
 घच् (स० त्रि०) निम्नतया अक्षति अन्च-विच्। १ निम्न। २ नोष। ३ कार्त्स्न्य।
 यञ्चन (स० स्त्री०) नितरामञ्चनं गमनं। नितरां गमन, तेजोसे चञ्चना।
 यच्चित (स० त्रि०) नि-प्रच णिच्, क्त। अधःक्षिप्त, नीचे फेंका या डाला हुआ।
 यञ्चलिका (स० स्त्री०) निम्नकृता अञ्चलिः। निम्नभागमें न्यस्त हस्तपुट, नीचे की ओरकी हुई अंजली या हथेली।
 यन्त (स० पु०) नितरां अन्तः। चरमभाग, शेषभाग।
 न्यय (स० पु०) नि-इ-अच् (एरच्। पा ३।३।५६) अपचय, नाय।

न्ययन (स० स्त्री०) छट।
 न्यर्ण (स० त्रि०) नि-अर्ण। द्रवोभूत।
 न्यर्ष (स० पु०) नि-अर्ष गती घन्। १ निकटगति। २ ध्वंस, नाग। (त्रि०) निकटो अर्थां यय्य। ३ निकटार्थ।
 न्यर्षुद (स० स्त्री०) १ दगगुणित षर्षुद संख्या, दग षरव।
 न्यर्षुदि (स० पु०) निकटः षर्षुदिष्टे की देवात्तरं यस्मात्। रुद्रभेद, एक रुद्रका नाम।
 न्यस्त (स० त्रि०) नि अम-कर्म णि-क्त। १ क्षिप्त, फेंका हुआ, डाला हुआ। २ त्यक्त, छोड़ा हुआ। ३ निहित, रखा हुआ, धरा हुआ। ४ स्थापित, बैठाया या जमाया हुआ। ५ विच्छट, चुन कर सजाया हुआ।
 न्यस्तदण्ड (स० त्रि०) जिम्ने उंडोंको फुकाया या नयाया हो।
 न्यस्तदेह (स० स्त्री०) १ स्थापित देह। २ मृत देह।
 न्यस्तगम्भ (स० पु०) न्यस्तं गम्भं येन। १ पिटलोक। (त्रि०) २ त्यक्तगम्भ, जिम्ने हथियार रख दिये हो।
 न्यस्तिका (स० स्त्री०) दोर्भाग्य लक्षण।
 न्यस्य (स० त्रि०) नि-अस्य क्षेपे कर्म णि वाहुलकात् षाप्ते यत्। १ स्थापनीय, रखने योग्य। २ त्यक्तवा, छोड़ने योग्य।
 न्यङ्क (स० पु०) प्रभावस्याका सायं काल।
 न्याक्य (स० स्त्री०) निनरामस्यते इति नि-प्रक षत्। मृष्ट तण्डुल, भूना हुआ चावल। इसका पर्याय मृष्टान्न और कुहव है।
 न्याङ्क्य (स० फली०) न्यङ्कोरिदं ग्युद्-अण्। रङ्क-स्य-चर्म, वारहसिंधिका चमड़ा।
 न्याद (स० पु०) न्यदनमिति नि-प्रद-भक्षणेण (नौण च। पा ३।३।६०) आहार, भोजन।
 न्याय (स० पु०) नियमेन ईयते इति नि-इण घञ्। परिन्वीर्णीणोयू ताभ्रेषयोः। पा ३।३।३०) १ उचित बात, नियमके अनुकूल बात, एक बात, इत्साफ। पर्याय—प्रभ्रेषा, कल्प, दिगुरूप, समञ्जस। २ विष्णु। ३ साधु। ४ नीति। ५ जयोपाय। ६ भोग। ७ युक्ति। ८

प्रतिष्ठा हेतु उदाहरण, उपनयन और निरमनस्य च पञ्च
 पञ्चमय वाच्य । यह पञ्च पञ्चमय वाच्य ही न्याय है ।
 पञ्चमय शब्दको मङ्गल कहते हैं, ये सब पञ्चमय न्यायके
 पञ्च हैं । पञ्चमय वह पञ्च पञ्चमयपुत्र वाच्य ही न्याय
 पञ्चमय है । न्याय कहनेमें न्यायपरतत्त्वा बोध होता
 है । न्याय ही दर्शनमें है । इतके प्रवर्तक मोतम स्थिति
 सिद्धिवाच्ये निवासो माने प्राप्ति है ।

गोतमप्रकार—रीतमङ्गल मङ्गलकारमें पञ्चित पञ्चम
 यमूह पर जोड़ा विचार करणा यहाँ पावय्य है । गोतम
 दर्शनके प्रतिपाद्य विषय है । प्रथम पञ्चमयके प्रथम-
 क्रममें प्रमाणादि योद्धम पदार्थोंका बहुमै पाप्मनत्व-
 साक्षात्कार और मोक्षरूप प्रयोजन प्रतिपादन योद्धे
 तत्त्वज्ञानयोग बुद्धिवाच्य उत्पत्तिरूप एव प्रमाय पदार्थ
 का प्रत्यक्ष, अनुमान उपमान, शब्द से चार कथन,
 पोषि इत्यादि और पदार्थके मीदमे शब्दविमाम और
 प्रमेय कथन तथा प्रमेयविमामयुक्त का शरीरानिष्ट
 एक इन्द्रिय, मृत और पञ्चविमाम, बुद्धिकथन, मना
 निरूप्य, प्रवृत्तिरूप और तत्विमाम, दोष, प्रोक्तभाव,
 प्रक, पुण्य, उपनयन और स यद्यनयन, यद्यथा कारक-
 निर्देश, प्रवृत्ति और विद्यान्तकथन विद्यान्त विमाम
 एव सब तत्त्वविमाम, प्रतिपत्तिविमाम, पञ्चिकरूप-
 विमाम, पञ्चमयमसिद्धात्त सत्य, न्यायवचन विमाम,
 प्रतिष्ठाहेतु कर्तारोहेतु, उदाहरण, व्यतिरेक उदाहरण,
 उपनयन और निरमनस्यच, तर्क और निरूप्यरूपच ;
 द्वितीयाङ्किक्रम—वाद, कथा, वितप्याकथन और श्रुत्या-
 भाषविमाम, सम्प्रतिचार, विचार, प्रवृत्तिरूपम साध्यमम
 और प्रतीतकाक्षरूप, कथिवाचो विचरै सप्रतिपत्तित
 पञ्चिक और कर्तित पञ्च पञ्चिक पुण्यहेतुका कथय है,
 इनके बाद कथनरूप और कथविमाम; वाक्यरूप, सामान्य
 कथन और उपचारकथन इन विविध कथनका लक्षण और
 तत्त्वमन्वी पूर्वपक्ष तथा समानान्तर, धनन्तर जाति और
 नियमज्ञानका लक्षण वर्णित है । द्वितीय पञ्चमयके प्रथम
 पाङ्क्तिमें य शब्दमन्वी पूर्व पक्ष और विद्यान्त एव
 प्रमायचतुष्टयमन्वी पूर्वपक्ष और तत्त्वमन्वी, प्रवृत्ति
 कथनमें वाच्य और मन्वीमान समानिष्टविषयमें बुद्धि
 और प्रवृत्तिविद्यान्तयुक्त, इन्द्रियविषयमें प्रमाणाहेतुत्वं

मङ्गल, प्रवृत्तिमें समीपतत्त्वमन्वी और तत्त्वमन्वी चय
 यत्न-कथन और तत्त्वमन्वी, अनुमानपूर्वपक्ष और
 तत्त्वमन्वी, उपमानपूर्वपक्ष और तत्त्वमन्वी रूप
 मानका अनुमानान्तोभाषाकथन एव शब्दमन्वी
 चतुष्टयमें पूर्वपक्ष और वेदनामात्रादिप तत्त्वमन्वी
 वेदनास्वविमाम, विविधकथन, पञ्चविमाम और
 पञ्चवाचकथन, वेदनामात्रात्त बुद्धि, प्रमाय चतुष्टय
 चतुष्टयमें वाच्य, तत्त्वमन्वी शब्दका पञ्चिकरूपम
 शब्दविचार निराकरण, विमामयत्ति, वेदनाकथन और
 विमाम जातिमें शब्दका निराकरण और आत्माकथनविमाम
 शब्दिकमें पदका शब्द-प्रतिपादन, शब्द पाठ्यति और
 जातिका कथन; द्वितीय पञ्चमयमें वाच्यदि शब्दकथन
 प्रमेयको परोक्षा इन्द्रियतेस्यवाद् शरीरान्तरात्त पञ्चति
 रूपच कथनका पञ्चतत्त्वनिराकरण, मन्वी वाच्यमन्वी-
 निराकरण और वाच्यका निरूप्यप्रतिपादन शरीरका
 एक मोतिरूपकथन और पञ्चिक्रममें बुद्धि इन्द्रियका
 मोतिरूप और नानात्व परोक्षा रूप, रूप मन्वी, कथय,
 शब्द, एक पञ्चिक पञ्चके चतुष्टयमें परोक्षा शान्तका
 पञ्चोपपत्तिप्रतिपादन, वाहनिरूप, बुद्धिका पञ्चगुणत्व
 प्रतिपादन, बुद्धि जो शरीररूप नहीं है, रचना विविध
 रूपके प्रतिपादन, मन्वी परोक्षा और शरीरका पुत्रवा-
 द्द निष्पादन प्रतिपादन । चतुर्थ पञ्चमयमें प्रवृत्ति और
 दोषपरोक्षा एव अन्तारात्त चतुष्टयमें विद्यान्त उत्पत्ति
 प्रकार प्रदर्शन, पुण्य और पाप्मनकी परोक्षा तत्त्वज्ञान
 को उत्पत्ति, पञ्चमयी और निरवयवप्रकार पञ्चमा-
 न्यायमें जातिविमाम, साध्यमम, वैचल्य सप्र-प्रवृत्त
 पञ्चिकविषय जाति विविधका प्रतिपादन, धनन्तर नियम
 ज्ञान विमाम, प्रतिष्ठाकथन, प्रतिष्ठात्त प्रवृत्ति वाच्य
 प्रकारके नियमज्ञानका लक्षण योद्धे श्रुत्याभाषका उपपत्ति
 कर यह न्यायवचन समान कथा है ।

स चित्रमन्वी न्यायवचनके समी पदार्थोंका या -
 चना को जाती है, विचार प्रवृत्तिवा विषय न्यायवचन
 पर वाच्योचनका ही वाच्यो ।

मन्वी मोतमने पञ्चके लोचन पदार्थोंका निरूप्य विद्या
 है । यथा—प्रमाय, प्रमेय, चंगय, प्रयोजन, इत्यान्त,
 विद्यान्त, पञ्चमय, तर्क, निरूप्य वाद, कथा, वितप्या,

हेत्वाभास, ह्य, जाति और निग्रहस्थान । इन मोलह पदार्थोंके तत्त्वज्ञानसे निश्चयेयम पदार्थ सुक्ति लाभ होता है । इन सब पदार्थोंके तत्त्वज्ञान ही जाननेसे सुक्ति उभो समय लाभ होती है, अथवा टेरोसे इसका निदान्त इस प्रकार है । वात्स्यायि प्रमेय वा पूर्वोक्त पौडुश पदार्थका तत्त्वज्ञान ही जाननेसे पहले सिध्याज्ञान निहृत्त होती है । इस सिध्याज्ञानके निहृत्त होनेसे तत्कार्य धर्माधर्म का भा नाग होता है । धर्माधर्म रूप निहृत्तिका नाग होने पर जन्मकी भी निहृत्तिका इया करता है । जन्मनिहृत्तिका द्वारा दुःखनिहृत्तिका ही सुक्ति कहते हैं । प्रियथाज्ञान, दोष, प्रहृत्तिका, जन्म और दुःख इनमेंसे पूर्व पदार्थ एक दूसरेका कारण है । शरीरके रहते भी जीवन्मुक्त हो सकता है, किन्तु गौतम वा वात्स्यायनने इस विषयका झूठ भी जिह नही किया है । परवर्ती नैयायिकोंने जीवन्मुक्तका विषय कहा था । जीवन्मुक्तपुरुषके पारम्ब-कमने कारण शारीरिक कितने दुःख रहते हैं । किन्तु तत्त्वज्ञानवशतः मोह उत्पन्न नहीं हो सकता, इस कारण एवोपुत्रादि वियोग जनित और मानसिक दुःख एव मोह उत्पन्न नहीं होता । यही कारण है, कि तत्त्वज्ञानोकी प्रहृत्तिका (यत्न वा चेष्टा) धर्माधर्मको उत्पन्न नहीं कर सकती । सुतरा जन्मनाश नही होने तक जीवन्मुक्त गृहवाच्य होता है ।

इन मोलह पदार्थोंके जाननेमें प्रमाणकी आवश्यकता है । इसी कारण इसके बाद ही प्रमाणका विषय लिखा गया है ।

प्रमाणका लक्षण और विभाग—

प्रमा वा प्रमिति अथवा यथार्थज्ञानके करणको प्रमाय कहते हैं । इसका तात्पर्य यह कि जिसके द्वारा यथार्थरूपमें सभी वस्तुओंका गिणय किया जाय उभोको प्रमाण कहते हैं । प्रमाण चार प्रकारका है, इस कारण प्रमाणजन्य ज्ञान भी चार प्रकारका बतलाया गया है । यथा—प्रत्यक्ष, अनुमिति, उपमिति और शब्दबोध । प्रत्यक्ष प्रामांतको प्रत्यक्ष, अनुमितिकी अनुमान, उपमितिकी उपमान और शब्दज्ञानको शब्दप्रमाण कहते हैं । प्रत्यक्ष प्रमाण—

नयनादि इन्द्रिय द्वारा यथार्थरूपमें वस्तुओंका जो

ज्ञान प्राप्त होता है, उसको प्रत्यक्ष प्रमिति कहते हैं । यही सफ़्त लक्षण है । गौतमसूत्रमें इसका लक्षण इस प्रकार है—इन्द्रियके माय अर्थके सन्निकर्षसे जो ज्ञान उत्पन्न होता है वह प्रत्यक्ष प्रमाण कहलाता है । यह प्रमाण अथपदेष्ट, अथभिचारी और व्यवसायरूप माना गया है । अथपदेष्ट शब्दका अर्थ नामोक्तेखुके योग्य नहीं है । वात्स्यायनभाष्य देखनेसे मान्य होता है कि उक्त विशेषण उनके मतमें स्वल्पवत् विशेषण है अर्थात् अथ्यामि वा अतिव्याप्तिसाधारक नहीं है । अथ्यामि शब्दका अर्थ लक्ष्यसे लक्षणका आगमन है, इसे अथ-सफ़्त भी कह सकते हैं ।

अतिव्यामि, (अत्यल्पसे लक्षणका गमन) इसे अति-प्रसङ्ग वा अतिव्यामि कह सकते हैं । जिस पदार्थका लक्षण किया जाता है उसे लक्ष्य कहते हैं ।

प्रथम इन्द्रिय-सन्निकर्षाधीन रूपादिहा ज्ञान होनेसे रूपरसादिका नामोक्तेखुपूर्वक 'रूप जानता हूँ, रस जानता हूँ' इत्यादि प्रकारसे रूपरसादिके ज्ञानका व्यवहार हुआ करता है । व्यवहारकालमें रूपादि प्रत्यक्ष ज्ञानको शब्दमिथित करके शब्दज्ञान ही सफ़ता है । इसी अर्थके निराशार्थ उक्त विशेषण दिया गया है । इन्द्रियसन्निकर्षमें उत्पन्न रूपादिप्रत्यक्षज्ञानका व्यवहारकालमें शब्द द्वारा उल्लिखित होने पर भी वह शब्दजन्य नहीं होनेके कारण शब्दज्ञान नहीं है । इन्द्रियसन्निकर्षजन्य प्रत्यक्ष ज्ञान व्यवहारकालमें परिवर्तित नहीं होता, पूर्वरूपमें ही रहता है, यही वात्स्यायन भाष्यका तात्पर्य है ।

कोई कोई कहते हैं कि अनुमितिवारणाथ अथप-देष्ट विशेषण दिया गया है । वास्तविककारने कहा है, कि अनुमिति इन्द्रियसन्निकर्षके कारण नहीं होती, अतः अनुमितिके अतिप्रसङ्ग भी नहीं हो सकता ।

वात्स्यायनका कहना है कि, अथभिचारी शब्दका अर्थ भ्रमभित्त और व्यवसाय शब्दका अर्थ नियम है । मरीचिकादिमें इन्द्रियसन्निकर्षवशतः जलादिके भ्रमसे उभके प्रत्यक्ष प्रमाणत्वकी वारण करनेके लिये 'अथभि-चारी' विशेषण और दूरस्थ वस्तुके स्थायु प्रादिमें पुरुष-त्वादि सन्देह प्रत्यक्षप्रमाणलक्षणके प्रसङ्गको वारण करनेके

हिसे 'व्यक्तवाच' वह विद्येयक विद्या मया है। यह-
द्वयं नदीवाहात् वाचस्मिन् मिथ प्रवृत्ति मीढ नोवाचितो
तथा विद्यताव प्रवृत्ति मया नोवाचितोता वाचता है
कि इन्द्रिय सविद्यव्यक्त्य पञ्चमिवाधो यथाय'। ज्ञान
मात्र ही प्रत्यक्षता लक्ष्य है। पञ्चमपदेय्य और वचनसाय
इस ही प्रत्यक्षता विभाग, पञ्चमपदेय्य मन्दाका धर्म,
निर्विकल्पक प्रत्यक्ष, पञ्चमपदेय्य मन्दाका धर्म और
सविद्यव्यक्त्य प्रत्यक्ष है।

जो ज्ञान विद्येयक और विद्येयकके सम्बन्धको विषय
करता है, वह सविद्यव्यक्त्य है यथा भोजन घट इत्यादि।
इस ज्ञानमें लोकात्मकत्व विद्येयक और घटरूप विद्येयक
के सम्बन्धको विषय किया है। पतयक इस सविद्यव्यक्त्य
ज्ञानको विद्येयकविद्येयक कहते हैं। जो ज्ञान सम्बन्धको-
विषय नहीं करता वह निर्विकल्पक है। घट
रूपदिष्टि साक्ष चक्षुसे सविद्यव्यक्त्य होने पर वहमें एकक,
द्वयक रूपमें घट और घटत्यादिका जो ज्ञान होता है
उसमेंही प्रथम ज्ञान निर्विकल्पक और उत्तर ज्ञान सवि-
द्यव्यक्त्य है। इस निर्विकल्पक ज्ञानका वाकार मन्दा-
काका विद्येयकमया नहीं ज्ञान। इस ज्ञान पर पञ्चमपदेय्य
कहते हैं। 'घट, घटल' इत्यादिरूप निर्विकल्पक ज्ञान
का जो वाकार विद्येयकमया मया, वह और कर ईश्वरमेंही
सुखिमात्र वाचि साक्ष जो लक्ष्य मय'में कि यह निर्वि-
कल्पक ज्ञानका प्रकृत वाकार नहीं है। जोकि
तादृशकारक ज्ञान और घटांगी घटत्यादिका प्रकृतत्व
ज्ञान हुआ करता है, इस कारण तादृशकारक ज्ञानको
सविद्यव्यक्त्य कहते हैं। निर्विकल्पक ज्ञानका प्रत्यक्ष
नहीं होता। पता वह पतान्द्रिय है। किन्तु पतुमान
हाथ उसका पञ्चात् निर्विकल्पक ज्ञानका पतुमितिरूप
ज्ञान हुआ करता है।

साधारण नियम यह है, कि विद्येयक विद्येयके प्रति
विद्येयक ज्ञान कारण है। जोकि यहमें घटल, मन्दादि-
रूप विद्येयकका ज्ञान नहीं होनेसे घटलमन्दादि विद्येयक
घटका ज्ञान नहीं होता। इस कारण घटमावविद्येयक
घटज्ञानमें यहमें विद्येयकघट घटमाव (घटल) का ज्ञान
प्रथम हीकार करना होगा। किन्तु घटल सविद्यव्यक्त्य
वहमें घटलका पतुमितिरूप कोई सविद्यव्यक्त्य ज्ञान

नहीं रहने पर जो घटमें पतुमय योगादिकमया घटमाव
विद्येयक घटज्ञान हुआ करता है। उत्तरा पागी चल कर
तादृशविद्येयकविद्येयक यहमें घटमावका निर्विकल्पक ज्ञान
स्वीकार करना होगा। इस निर्विकल्पक ज्ञानके प्रति
पतुमय कारण पतुमय होनेसे इन्द्रियाय' सविद्यव्य-
क्त्य ही कारण स्वीकार किया गया है और इन्द्रियाय'
सविद्यव्यक्त्य कारण है ऐसा जान कर घटमावके निर्वि-
कल्पक ज्ञानके साक्ष घटका जो निर्विकल्पक ज्ञान
स्वीकार किया गया है।

यहां सोचनेको बात यह है कि, उत्तररूपमें सवि-
द्यव्यक्त्य ज्ञानके प्रति निर्विकल्पक ज्ञान कारण होने पर
और निर्विकल्पक ज्ञानके प्रति इन्द्रियसविद्यव्यक्त्यमात्र
कारण होने पर सपत्यादिका और सविद्यव्यक्त्यनिर्वि-
कल्पकज्ञानमें जो उत्तररूपमें कार्यकारणमात्र हीकार
करना होगा। यमों यह पताहूँ ही मकतो है कि
रज्जुमें पतुममितिकत्व होनेसे रज्जु रज्जुत्वका निर्वि-
कल्पक ज्ञान जो कर रज्जुमें रज्जुत्वज्ञानरूप सविद्यव्यक्त्य
ज्ञान ही होनेका ही मकतो है एवं रज्जुमें मय'त्वमम
कटावि नहीं हो सकता। जोकि रज्जु रज्जुत्वमें पतुम-
सविद्यव्यक्त्य है इस कारण रज्जुत्व विद्येयक सुखिके कारण
रज्जुत्वरूप विद्येयक ज्ञान प्रथम है और मय'त्वमें पतुम-
सविद्यव्यक्त्य नहीं है, इस कारण यह मय' इत्याकार सर्वत्र
विद्येयक सुखिक कारण सर्वरूप विद्येयक ज्ञान नहीं
है। पञ्चमममता सपत्या ही स्थिति भी कर घटल दोष-
निवन्धन मय'त्वका रज्जुमें मम होता है। ऐसा कहने-
में ही पताहूँ रहते है कि सर्वत्रमम पतुमितिकाव्य-
क प्रत्यक्षतामक है किमें व्याधिज्ञान और चतुर्वेद्यकाव्य-
क्य समरथ-संज्ञक तादृशज्ञानादि नहीं है, इस कारण
वह सर्वत्रमम पतुमितिकाव्यक नहीं हो सकता और
मय'त्वमें सविद्यव्यक्त्य का नहीं रहना प्रथम सर्वत्र भी
प्रत्यक्ष नहीं हो सकता।

रज्जुमें रज्जुत्व प्रत्यक्ष नहीं होगा जो कि? इसका
उत्तर इस प्रकार है—प्रथम ही प्रकारका है लौकिक
प्रत्यक्ष और पञ्चोक्तिक प्रत्यक्ष; इनमेंही पञ्चोक्तिक प्रत्यक्ष
में इन्द्रियसविद्यव्यक्त्य कारण नहीं है। यमों यह ईश्वरता
चाहिये कि रज्जुमें जो सर्वत्रमम हुआ करता है, यह

की है—नदीको पत्थर इति देख कर टटिका अनुमान ।
 सामान्यतोऽहं अनुमान—भारत पौर कार्यमिष
 क्षिप्य भाष्य को बलु है उच्ये देख कर जो अनुमिति
 होती है उच्ये सामान्यतोऽहं अनुमान कहते हैं ; जैसे—
 गगनमण्डलमं सम्यक् न्यस्यते उच्ये शुकुपक्षे अनुमान
 को हेतु करके गुणवा अनुमान पौर प्रविबोध जाति को
 हेतु करके इत्यत्र जातिवा अनुमान । बाह्यापनने म मा
 न्यतोऽहं अनुमानका कोई लक्षण नहीं बतनाया जेकिन
 उदाहरण हम प्रचार दिया है—सूर्यका गमनानुमान
 यह सामान्यतोऽहं अनुमान है । उद्योत इर पौर विष-
 नाय प्रप्रतिने कार्यका च मिष निरुह अनुमानको
 सामान्यतोऽहं अनुमान कहा है । पसो यह देखना
 चाहिये कि सूर्यका गमनानुमान वहाँ पर लक्षणे पतु
 सार उदाहरण जो मजता है ना नहीं ? हममें पक्षी
 देखना होता कि तेम गमनानुमानमें निरुह क्या क्या है ?
 यहि व योय जो निरुहो, तो पक्ष योय मतिने कार्यके
 कोसा शिववत् अनुमान इ वतमत हो जता च सुतरी
 कार्यकारणमिष सिद्धउ नहीं हो मजता । देगाम्भ-
 प्राप्ति पौर देगाम्भर उ वोगने मिष नहीं है, पतपव
 देगाम्भरामिषानको विषयवादिवा हेतु जगना होना ।
 यहाँ पर देगाम्भरामिष इ मतिभाव होने पर भो देमा
 म्भर प्राप्तिप्राप्त निषयल गतिजाय नहीं है । हमने ताहय
 सिद्ध अनुमान शिववत् अनुमानके वन्यगत नहीं हो
 सकता । इतरी सूर्यका गमनानुमान सामान्यतोऽहं अनु-
 मानका उदाहरण जो मजता है, ऐसा बहुतरे कहा
 करते हैं ।

बाह्यापनका हितोक्त वाक्य—जिन अनुमानका निरु-
 हिको सवन्ध पक्षी देखा गया है उच्ये पक्ष वत् कहते हैं ;
 जैसे—भूमसिद्ध इ वाङ् अनुमान प्रमथ्यमान (जितके
 प्रयत्न है) इतर सम्ये निराहृत होने वा पक्षविष्ट
 समानुमान शिववत् है । यथा मग्धं गुणत्वानुमान पौर
 मत् ० पदार्थ होनेके कारण हममें द्रव्यत्व, गुणत्व
 पौर समत्वव्यव्युप समत्वको प्रयत्न है । पसो मग्ध पक्ष
 प्रथम प्रयत्न होनेके कारण द्रव्य नहीं है मग्ध सम

तोय जनक होनेके कारण हम नहीं है । सुतरी द्रव्यत्व
 समत्वके निराहृत होने पर मग्धमें पक्षमिष्ट गुणत्वका
 अनुमान होता है । निरु पक्षत विक्रोका मग्धत्व पक्षत्व
 को हर जिमो सम द्वारा निरुको समानता (एक स्वता)
 निवन्धन पक्षत्व विक्रोका अनुमान सामान्यतोऽहं है ।
 यथा द्रव्यादि द्वारा पक्षाका अनुमान । प्रयोग यथा—
 द्रव्यादि गुण गुणपदार्थ द्रव्यवृत्ति, पतपव द्रव्यादि
 पौर द्रव्यवृत्ति । पसो यह देखना चाहिये कि द्रव्यादिका
 आधार पक्षत्व द्रव्य है पौर द्रव्यादिका मग्धत्व से
 प्रतय नहीं है । द्रव्यादिमें गुणत्वका प्रम द्वारा द्रव्य-
 वृत्ति पक्ष गुणत्व माय समानता निवन्धन द्रव्यादिके द्रव्य
 वृत्तिव निरि द्वारा समानता प्रवरावृत्तमें पक्षाको
 वा निरि दूर है ।

उद्यमनायाय, नद्वेग, विषयनाय प्रप्रतिने पूर्ववदादि
 मग्धमें यथाक्रम केवलान्वया केवलवातिरेका पौर पक्ष-
 वातिरेको से तोम प्रवराके अनुमान बतनाये हैं । उमके
 उम क्षिप्यवाक्यो मग्धतिने उच्ये पौर लक्षणे मतमिष्टने
 नामादा कारण किया है ।

उद्यमने मतने—क्षिप्यमात्र वक्त्र पक्षवार जान
 द्वारा जहाँ प हेतुवाक्यको वासिका निषय होता है,
 वहाँका हेतु क्षिप्यवाक्यो । क्षिप्यवातिरेक-पक्षवार द्वारा
 नहीं हेतु वाक्यको वासिका निषय होता है वहाँ हेतु
 क्षिप्यवातिरेको पौर जहाँ उमके मक्त्रवार द्वारा वासि-
 का निषय होता है यहाँ हेतु पक्षत्ववातिरेको है ।

मग्धमिष्ट मतने—जहाँ केवल मग्ध वासिप्राप्त द्वारा
 अनुमिति होती है, वहाँ जो पक्षत्ववासिप्राप्त है, वही
 केवलान्वयो है । क्षिप्यवातिरेक वासिप्राप्त द्वारा अनु-
 मिति होनेके वक्ष वासिप्राप्त क्षिप्यवातिरेको, उमयविष
 वासि द्वारा वासिप्राप्त पक्षत्ववातिरेको है ।

७. योमकर प्रप्रतिने यह पूर्ववदादि मिष क्षिप्य
 लको क्षिप्यवातिरेको पौर पक्षत्ववातिरेको अनुमान
 कोकार किया है । निष्पारके मग्धे तथा यह लक्ष-
 है पक्षत्व लक्षत्व । उच्ये उच्ये मग्धत्वने लक्षत्व, इत्यने
 उच्ये उच्ये उच्ये, उच्ये उच्ये लक्षत्व वा वासि उच्ये
 वरनापुने लक्षे रहता है । उच्ये उच्ये उच्ये उच्ये लक्षे
 रहता है ; इत्यादि रहता है, मग्ध उच्ये लक्षे नहीं होता ।

* उदाहरण उच्ये उच्ये, उच्ये उच्ये उच्ये है ।

† उच्ये लक्षत्वका उच्ये उच्ये उच्ये उच्ये है । उच्ये उच्ये उच्ये

न्यायका विषय होनेके कारण इस पर विशेष ध्यानचना नहीं की गई।

अन्वय और धातिरेकके भेदमें गौतमके मतमें भी अनुमान जो विभिन्न है उसे गौतमोक्त हेतु प्रभृति लक्षण देख कर सभी हृदयङ्गम कर सफते है।

उपमान—किमो किमो शब्दके किमो किमो अर्थमें शक्तिपरिच्छेदकी उपमिति कहते हैं। यथा, जिन मनुष्योंमें पहले गवयजन्तु नहो' देखा, किन्तु सुना है कि गोमूटग गवय होता है, अर्थात् जिन वस्तुकी प्राकृति अक्षि-कल गोकर्की प्राकृति-भी होती है, गवय शब्दमें उसीका बोध होता है। वर मनुष्य उस समय देखल इतना ही जानता है, कि जो वस्तु गोमूटग होगी, गवय शब्दमें उसीका बोध होगा। गवय शब्दमें गवयजन्तु समझा जाता है, सो यह नहीं जानता। किन्तु जब यह मनुष्य अपने पाँखोंमें गवय जन्तु देखता है, तब उस गवयकी प्राकृति गौ-की प्राकृतिके समान देख कर तथा पूर्व श्रुत गोमूटग गवय होता है इस वाक्यका स्मरण कर वह विशार करता है कि यदि गोमूटग जन्तुमें गवय शब्दका बोध हो, तो जब यह जन्तु गोमूटग होता है तब यही जन्तु गवयवदवाच्य होगा, इतने मन्देह नहीं। इस प्रकार गवयशब्दके शक्तिपरिच्छेदकी उपमिति कहते हैं।

गौतमसूत्रमें इसका लक्षण इस प्रकार है—प्रसिद्ध-माधर्म्यं हाग साध्यनियमका नाम उपमिति है, तत्करण उपमान है। वाक्यायनने इसको व्याख्यामें कहा है, कि अतिदेशवाक्यप्रयोज्य स्मृति द्वारा प्रसिद्ध वस्तुके सादृश्यज्ञानमें प्रसिद्धवस्तुविषयक संज्ञासंज्ञात् बोधका नाम उपमिति है।

एक वस्तुमें अपर वस्तुके धर्म-अयनकी अतिदेश वाक्य कहते हैं। 'गोके जैसा गवय' यही हृदवाक्य अतिदेश वाक्य है।

शब्द-प्रमिति वा शब्दप्रमाण—शब्द द्वारा जो बोध होता है, उसे शब्दबोध कहते हैं। जैसे, गुरुका उपदेश वाक्य सुन कर श्रोताकी उपदिष्ट अर्थका शब्द बोध होता है। गौतमसूत्रमें इसका लक्षण इस प्रकार है—प्राप्रवाक्यका नाम शब्द है, ईदृश शब्द-अन्वय बोध शब्द-

प्रमाण है। यह शब्द-प्रमाण ही प्रकारका है, इष्टार्थक और अष्टार्थक।

जिन शब्दका अर्थ अत्यन्तविश्व है उसे अष्टार्थक और जिनका अर्थ अष्टार्थक है उसे अष्टार्थक कहते हैं। इसका उदाहरण इस प्रकार है—'तुम गौरवर्ष' की, मेरी किताब अत्यन्त सुन्दर है' इत्यादि मिथ्या अर्थ वाक्य और 'वाग करनेमें स्वर्ग ही प्राप्ति होती है', 'विष्णुकी पूजा करनेमें विष्णुकी प्रति होमी है' इत्यादि विधिवाक्य हैं। गौतमने ऐसा प्रमाण दे कर प्रमेय पदार्थका निर्देश दिया है।

प्रमेयपदार्थ—आत्मा, शरीर, इन्द्रिय, अर्थ, बुद्धि, मन, प्रवृत्ति, दोष, प्रेशभाव, फल, दुःख और परमार्थके भेदमें बारह प्रकारका है। सुमुक्त्याकृतिके लिए उक्त आत्मादि पदार्थ यथायत्न ज्ञानयोग्य होनेके कारण प्रमेय है। प्रमाण द्वारा जो यह प्रमेय पदार्थ स्थिर करना होता है। इसीमें पहले प्रमाणका विषय लिखा जाता है।

अनुभवमें यथायत्न ज्ञान विषयरूप प्रमेय लक्षणका निराल पदार्थ ही लक्ष्य हो सकता है। यही कारण है कि उत्तरकानान में यादिकानि निम्न पदार्थकी ही प्रमेय वतलाया है। इन बारह प्रकार प्रमेयोंके यथा-विधि लक्षण क्रमशः मिले जाते हैं।

आत्मा—इच्छा, ईप, प्रयत्न, सुख, ज्ञान ये सब आत्मा (जीवात्मा)-के निम्न अर्थात् अनुमापक गुण हैं। फीरे कीड़े निम्न शब्दका अर्थ लक्षण ऐसा भी कहते हैं—'जिसके ज्ञानादि हैं वे आत्मा हैं; जो चैतन्यमय हैं, ये आत्मवदवाच्य हैं। आत्मा सभी इन्द्रिय और शरीर-रादिकी अधिष्ठाता है। आत्माके नहीं रहनेसे किसी इन्द्रिय द्वारा कोई कार्य सम्भव नहीं हो सकता।

जिन प्रकार रथगमन द्वारा सारथिका अनुमान करना होता है, उसी प्रकार जहाजकदेहकी चेष्टादि देख कर आत्मा भी अनुमान हो सकती है। कारण, यदि यह शक्ति शरीरादिमें रहती, तो अतव्यक्तिके शरीरमें भी चैतन्यकी उपलब्धि होती, इसमें तनिक भी मन्देह नहीं और जब मेरा शरीर क्षीण हो जाता है, मेरी पाँखें बिलत हो जाती हैं, तब आत्मा जो शरीर और इन्द्रियमें भिन्न है, वह स्पष्टरूपसे जाना जाता है। यह आत्मा दो प्रकारकी है—जीवात्मा और परमात्मा।

मनुष्य बीट, धतूरा प्रभृति औषधोपदेवकार्य है, पर
मात्मा एक परमेश्वर है। कुतूहलानुभवको पानोचनाको
मगध पर पाप्माके विषय पर विचार किया जायगा।

शरीर—ओ बिहर, इन्द्रिय और सुख-दुःखके भोगका
पायतन है इहे शरीर कहते हैं।

इन्द्रिय—भौतिक इन्द्रिय पाँच प्रकारको है।—श्राव्य,
रचना बद्ध शब्द और श्रोत्र। स्पर्श मी पाँच प्रकारका
है—स्पर्श, रस, शीत, मधु और बसोम।

पर्व—(इन्द्रिय विषय) मन्थ, रण, क्षय, स्यागं और
गन्ध भेदने पर्व पाँच प्रकारका है। यहाँ पर पर्व
गन्ध पारिभाषिक है। मन्थरगादिसे एक एक इन्द्रिय-
के एक एक विषय विषय होनेसे कारण गन्धादि
मात्रको ही एक प्रकारसे इन्द्रियार्थ कहा गया है।
यथावर्तमं पतनविषय यथावर्तमात्रको ही इन्द्रियार्थ
समझना होगा।

बुद्धि—बुद्धि, ज्ञान और उपलब्धि से तीनों एक प्रकारके
है। नाप्यग्राह्य बुद्धि नामक अचेतनको चक्षु-रश्मिद्वय दृश्य
और शब्द द्रव्यके शुभविषयको ज्ञान तथा जेतन पाप्मा
के चर्मको उपलब्धि मानते हैं। शिबिन नैवाधिक भोग
रसे ओकार नहीं करते, इकका विषय दोहे पानोचित
होना।

त्रिमये कामादता विषय होते हैं उसे बुद्धि कहते हैं।
इस बुद्धिका विषय दोहे निम्ना जायगा।

मग—श्राव्य शुभ और ज्ञानसुखादिप्रत्यक्षकारण है।
नैवाधिक भोग यस कामर्तमं चर्मक इन्द्रियत्रय ज्ञान
को ओकार नहीं करते यहाँतु पापुपयत्नय जानने
नामक वा इवायं म प्रत्यक्षादि नहीं होता। जैसे—विभी
ष्यबिधे अचित विषयमें प्रविष्टान करके पर उस समय
गन्धित द्राव्याभिधावक प्राग्नेरे निवा इव च विभी दूमने
गन्धादि विषयक ज्ञान नहीं होता, इसका क्या कारण
है। यदि इन्द्रिय मात्र ही कारण होतो तो तत्तित्तन
पद्मादिमें जिस तरह चक्षु-लक्षिकर्त है उसी तरह तात्प्या
शिव गन्धादिमें भी ज्ञानादि इन्द्रियका मध्यम होनेके
कारण समझे पद्मादिवा पापुपके लइय मन्थ प्रत्यक्ष होना
अचित या शिबिन से ना नहीं होता। पतयव वर कहना
पुंगेय कि ईवय इन्द्रियबिधिवर्तमान प्रत्यक्षका कारण

नहीं है, एक दूसरा भी कारण है जिससे रहनेसे ज्ञान
होता है और नहीं रहनेसे ज्ञान नहीं होता। वह कारण
और बुद्ध मी नहीं है, मगमयोग है। किन्तु यह
प्रत्यक्ष नहीं है। इस कारण गीतमने कहा है कि एक
धमय ज्ञानवृत्तका नहीं भोग मगता पनुमायक है।
प्रज्ञति (यज्ञ) तीन प्रकारको है मग-पाशित दवा
और पद्युवादि वाक्याशित महत् और पद्युवादि तथा
गोराशित परोपकार और कि नादि।। पर इन मधयज्यो-
के भी ही मन्थ वनकाये मने हैं पाप और पुष्करूप।

दोष—ओ मनुष्यको प्रकृत कार्याये वही दोषउपधाव्य
है। यह दोष तीन प्रकारका है राम, द्वेष और मोह।
राम, द्वेष और मोहके मधमें पर कर मनुष्य कार्त्तमें प्रकृत
होते हैं चम्बदा नहीं होते। राम, द्वेष और मोह इन
तीनोंमें मोह अधिक निम्नोप है। बर्त्तके मोह नहीं
रहनेसे राम और द्वेष नहीं होते।

राम—ज्ञान मन्थ स्वरुप दृष्ट्या, भोग सामा और
दृष्टादिसे मन्थे रागपदार्थ माना प्रकारका है। बहुत
विषयके परिभाषको चाम और चमना प्रवोजन नहीं रहने
पर भी दूसरेके परिमित विषयको निवारणिकाको मन्थर
कहते हैं। परशुपती निवारणिका भी मन्थर कहनातो
है। विषये किसी विषयको जानि न हो ऐसो विषय
पानिको रक्षणाको स्वरुप, अचित मनुष्या चय न ही पदो
रक्षणाको दृष्ट्या, अचितकारण न कर धनरक्षणाको
कार्येण, त्रिमये पाप जो मध ऐसो विषय-त्राओकाको
भोग परकनेकाको माया और क्लृप्तव च यपने
जानि कलादिको पद्याशित कर लक्षोप शक्यत व्यक्ता
पनिष्ठाको दम्भ कहते हैं।

ओत्र, ईर्ष्या, मनुष्य अमयं और परिमामादिके मन्थ
से द्वेष भी माना प्रकारका है। निवादिच रथगादिजनय
द्वेषको ओत्र, नाचारक जनादिने निज्ञानघाती एक चर्त्त-
के प्रति यपर य मोक्षा को द्वेष होता है उसे ईर्ष्या कहते
हैं। दूसरेके शुभ पर निर्वेय कारनिता नाम पद्युवा है।

पाणि-विनायत्रमक द्वेषको द्वेष दुर्ज्ञान पपकारीके
प्रति प्रत्युपकारात्मक व्यक्तिके द्वेषको चर्मयं और ताइय
पपकारीका चपकार न कर मन्थे पर इका पाप्मा-
माननाको परिमाण कहते हैं।

विषय, मंग्य, तक, मान, प्रमाद, भय और शोकादि सेटमे मोड़ भी नाना प्रकार का है। अथवायं निश्चयकी विषय, जो जो गुण अथवायं अपना नहीं है वे सब गुण अपने प्रारोप कर अपनेकी उत्कृष्ट समझनेको मान, स्थिरमतिताकी प्रमाद, अनिष्टजनक विमो वशापाके उपस्थित होने पर तत्प्रतीकारमें अपनेकी असमर्थ समझनेकी भय और डटवस्तुने वियोग होने पर पुनर्वार उभकी प्रामिकी सम्भावनाको शोका कहते हैं।

प्रेत्यभाव - पुनर्जन्म, वारम्बार उत्पत्तिकी अर्थात् एक बार मरण और एक बार जन्मग्रहण तथा फिरसे मरण और जन्मग्रहणरूप घाटित्तिकी प्रेत्यभाव कहते हैं। आत्माकी निराल्प सिद्धि द्वारा पुनर्जन्म सिद्ध होता है।

फल—दोष-सहकृत प्रवृत्ति जनित जो मूल वा दुःखका भोग है, यह फल है। फलके प्रति दोषसहकृत प्रवृत्ति ही कारण है।

दुःख—जो मनुष्यता हेतु वा प्रतिकूलवेदनोप ही उसे दुःख कहते हैं। यह दुःख सुख और गौण सेटमे दो प्रकारका है। जो दुःखान्तरको अपेक्षा न कर प्रतिकूलवेदनोप है उसे मुख्य और जो दुःखान्तरका अपेक्षा कर प्रतिकूलवेदनोप है उसे गौण दुःख कहते हैं। गौणसे कहा है कि जन्मके माय हमेशा दुःख अनुसह रहता है, इसीसे तब होता दुःख है।

अपवर्ग—दुःखकी अन्वत्त निवृत्ति ही अपवर्ग है। अन्वत्त शब्द का अर्थ है जन्मके बाद और दुःख नहीं होगा। मोक्षके सम्बन्धमें अनेक समीप है। वाक्यायनने कहा है, कि दुःख शब्द का अर्थ है दुःखरूप जन्मका,-- अन्वत्त शब्दका तात्पर्य है शरीर जन्मका त्याग और भविष्यमें जन्म ग्रहण नहीं करना। शब्द मिय प्रकृत का कहना है कि दुःखका अनुवाद ही दुःखविमोक्ष है। विश्वनाथ प्रकृत कहते हैं कि दुःखविमोक्ष शब्दका अर्थ है दुःखनाश और जन्मविमोचन। यह स्वयंप्रयोजन नहीं ही सकता; इस कारण मुक्तिके स्वतःप्रयोजनत्वकी रक्षाके लिये प्रकृत दुःखनिवृत्तिकी मुक्ति कहते हैं और तत्रत्य दुःख शब्द भी प्रकृतदुःखपरके जैसा अर्थ है। जो कुछ ही, गौणके अभिप्रायके साथ प्रकृत विषयमें किसीका भी विरोध नहीं है। किन्तु

सुप्रियानामं स्वप्न नहीं देखनेमें क्लेशका प्रभाव रहता है, इस कारण अपवर्ग ही सकता है। गौणके ऐसे स्वप्नमें प्रभाव शब्द अनुवादपर है, नागपर नहीं है। क्योंकि स्वप्नादर्शन क्लेशभागे प्रति कारण नहीं ही सकता, किन्तु स्वप्न नहीं रहनेमें क्लेश स्वप्न नहीं होता, अतः अनुवाद प्रति प्रयोजक ही सकता है। अभी देखना चाहिये कि सुप्रियानामं क्लेश अनुवादकी दृष्टान्त दिया गया है। इस कारण मुक्तिप्रयोजक दोषरूप क्लेशभाव और क्लेशानुत्पाद ही प्रकृत करना होगा तथा दोषानुत्पाद दुःखनाश का कारण नहीं होने दोषका अनुत्पाद प्रयोज्य और दुःखकी अनुत्पादरूप मुक्ति गौणके अभिप्रेत है, यह समझा जाता है। यही हाटक प्रकार प्रमेय है।

प्रमाण और प्रमेयका विषय कहा गया, अभी संगयका विषय कहा जाता है।

संगय - साधारण धर्मज्ञान, समाधारण धर्मज्ञान और विप्रतिपत्ति वाक्यायं ज्ञान तथा उपलब्धिकी अभाववा हो मंग्यके प्रति कारण है। अनुपलब्धिकी अभाववाकी भी कंडे की ही स्वतन्त्र कारण प्रतीति है। किन्तु यह वाक्यायनादि विमोका भी मतपिद नहीं है।

दोनोंके समान वा अन्वत्तकी साधारण धर्म कहते हैं, जैसे स्वांगू और पुरुषका अन्वत्त समान है, सुतरां यह साधारण धर्म है। जो वा समानज्ञातोप, क्या असमानज्ञातोप किसीका भी धर्म नहीं है, ऐसा धर्म समाधारण धर्म कहलाता है। अथवा न्द्रिययायं सता शब्द का समाधारण धर्म है, शब्दके सजातीय अन्वत्तगुण वा शब्दके असजातीय अन्वत्तधर्ममें क्लेश भी अथवा न्द्रिययायं सत्ता नहीं है। वह समाधारण धर्म ज्ञानाधीन शब्दमें गुणवादि मंग्य हुआ करता है। परस्परविरुद्ध वाक्यद्वयका विप्रतिपत्तिवाक्य कहते हैं। किसीने कहा आत्मा है। किसीने कहा आत्मा नहीं है, इस प्रकार 'आत्मा है वा नहीं' यह विद्वान् ज्ञानहेतु इस प्रकार संशय हुआ करता है।

उपलब्धि ही अव्यवस्था शब्दकी अर्थस्थिरताका नहीं रहना वा अप्रमाण संशय, सरोवरादिमें जनमान सब होता है। किन्तु फिर मरोचि कामें प्रथम अज्ञानका

अथ होनहे, पोहि त्रिप सन्ध निवृत्त आने ई तप
 समथ जन्मानाव ध्यान को कर त्रपधानवा मित्रात्थ कोर
 होता है। अनुपवन्धि वन्द्या परे ई ध्यान का
 विपीत कामको शिरताजा नको रहना का धन्यात्थ
 स गय। यथा—मूत्र विधेयते पदसे जनका ध्यान नही
 हुआ, पर जनका परमाव को रोष हुआ। किन्तु पीछे कर
 जन दीक्षा गया तब जन्मानावधानमें निश्चाल कोष हुआ,
 इस कारण यनात्र जन्मानावधानमें धन्यात्थ स गय हो
 कर जन है या नको, इस प्रकार स गय हुआ करता
 है। पन्थवन्धि वन्द्या धूमरा परे मो को मकता है।
 धिग्वनाव प्रवृत्तिने धन्यात्थ स गयवदा येना परे
 विद्या है।

प्रयोजन—ओ वस्तु इच्छाप्रयत्ना मनुष्यमें प्रवृत्त होते हैं
 करवा नाम प्रयोजन है जैसे सुख, दुःखानिर्मुक्ति
 प्रवृत्ति। सुखादिहे इच्छावयव ही मनुष्य प्रवृत्त होते हैं।
 मोक्षमें प्रयोजन का कोई विधान नहीं किया। गदा
 धरने मुक्तिवाचनमें गोच धोर सुखके भेदमें दो प्रकारका
 प्रयोजन माना है।

धमिलयधोय विषयके सम्पदकहे ओना जो विषय
 धमिलयधोय होता है उसे मौन धोर तदतिरिक्त ध्यान
 धमिलयधोय विषयको मुख्य प्रयोजन कहते हैं। ओ ओव
 का स्वभावतः इष्ट है, वही मुख्य प्रयोजन है, यथा—सुख
 धोर सुखमोग तदा दुःखनिर्मुक्ति। किन्तु जो धन्यावत
 इष्ट नहीं है, दुःखादिका जनक हो कर इष्ट होता है,
 वह दोष प्रयोजन है, यथा—भीषणादि परमावतः
 भीषणादिकी इच्छा नहीं होती। भीषण सुखजनक
 वा दुःखादिनिर्मुक्त दुःखनिर्मुक्तिजनक होनेके कारण
 भीषणको इच्छा हुआ करती है।

इहान्त—प्रवृत्त विषयको इष्टोकरवाय त्रिप प्रविष्ट
 जनका उपन्यास दिया जाता है, कम जनको इहान्त
 कहते हैं, पर्यात् मौक्य तथा माध्यमे दोनों त्रिप
 विषयका औधार करते हैं, उरीका नाम इहान्त है। यथा—
 इस पर्यात् पर धमि है श्लोकि यथा धूम देया जाता
 है, जहाँ जहाँ धूम रहता है वहाँ वहाँ धमि रहती है।
 जैसे, रत्नयाना, यहाँ पर रत्नयाना नहीं इहान्त पर
 था है।

सिद्धान्त—धनिदिध विषयका माध्यात्थार निश्चय
 धरनेको सिद्धान्त कहते हैं। यथा—सुक्ति त्रिप प्रकार
 होती है। इस तरह त्रिधाका करने पर तत्त्वज्ञान होनेके
 सुक्ति होती है। येना निश्चित हुआ। यह सिद्धान्त धार
 प्रकारका है—धर्मतत्त्व प्रतिपत्त, धर्मिकरण धोर धम्य
 धर्म। ओ विषय धर्मो माध्यमि ओहात हुआ है इस
 प्रकार विषय औधारका नाम सर्वतत्त्वसिद्धान्त है।
 जैसे परधनापहरण, परलोच धर्म धादि देय सर्वतो
 मानमें परधत्त है, फिर दोनके प्रति रया प्रवृत्ति सम्भ्रम
 धर्मो शास्त्रिके धर्ममत हैं, इनको धर्मतत्त्वविद्यार्थ
 कहते हैं। ओ विषय शास्त्रात्परधत्त नहीं है, ऐसे
 विषयके औधारको प्रतिपत्तसिद्धान्त कहते हैं। पर्यात्
 ओ एक माध्यमिक है किन्तु धर्म माध्यमिक, वही
 प्रतिपत्तविद्यार्थ है। यथा, इन्द्रियका मोतिकर्य धर्म
 माध्यमिक है, लेकिन न्यायमाध्यम स गत है। धर्मतत्त्व
 यह प्रतिपत्तसिद्धान्त हुआ।

एक पदार्थके सिद्ध होने पर कममें धानुपवृत्तिक त्रिप
 पदार्थको सिद्ध होते हैं वह धर्मिकरणसिद्धान्त है।
 यथा, इन्द्रियको नाशाल सिद्धि द्वारा इन्द्रियके धिय
 धानुपवृत्त एकप्रताको सिद्धि हुई है वही धर्मिकरण
 सिद्धान्त है। ओ विषय माध्यात्थसुद्धमें नको कहा गया
 परध धर्म धर्मजनक द्वारा धारारणमें औधार किया
 गया है, जैसे धम्युपमसिद्धान्त कहते हैं। यथा, गौतम
 नि समको साध्यात् इन्द्रिय नहीं धतनाश है परध धर्म
 को सुख साध्यात्कारादि कारण कोधार कर प्रकारात्थार
 में इन्द्रिय कहा है।

परधम—विचारार्थ बोधविधेय दो परधम कहते
 हैं। परधमके पर धेद हैं—प्रतिज्ञा हेतु, लदाकरण,
 धरध धोर धिगमन। इस पञ्चाशयवरी न्याय
 कहते हैं।

प्रतिज्ञा—त्रिप विषयका व्यवसायन करना जोग
 सब उपन्यासको प्रतिज्ञा कहते हैं। यथा—धर्मत पर
 वृद्धिसे साधनार्थ परधतो वृद्धिमान् पर्यात् परधत पर
 धमि है इत्यादि वाक्य।

हेतु—जिस हेतु परधत पर वृद्धि है इस त्रिधामो
 के नितामाध तदनुमापुत्र हेतुका ओ उपन्यास है, जैसे

हेतु कहते हैं; अर्थात् साध्य की साधन करनेके लिये प्रयुक्त लिङ्गवाक्यका नाम हेतु है। जैसे—उम जगह 'धूमत्' अर्थात् धूमहेतु इस वाक्यका उपन्यास है। यह हेतु दो प्रकारका है—अन्वयो और व्यतिरेकी। पर्वत पर धूम रहनेमें वहि कया रहतो है? इस आशङ्काके निवारणार्थ जिस जगह स्थान पर धूम रहता है उसी उसी स्थान पर वहि रहती है। यथा—रन्धनशाला इत्यादि वाक्य प्रयोजनको व्यतिरेकी उदाहरण कहते हैं।

१। प्रतिज्ञा। पर्वत पर वहि है वा पर्वत धूममान् है।

२। हेतु। धूम होनेके कारण।

३। उदाहरण। जहाँ जहाँ धूम है, वहाँ वहाँ वहि है। जैसे पाकशालादि।

उक्त उदाहरण वाक्य द्वारा वहिविगिष्ट पर्वतरूप साध्यके साथे पाकशालादिरूप दृष्टान्तका धूमवस्त्रादिरूप साधर्म्य वा एक रूपभाव होनेसे यहाँ पर अन्वयी-हेतु हुआ है।

व्यतिरेकी हेतु—फिर पूर्वाक्त शङ्कानिराकरणार्थ जहाँ वहि नहीं रहती, वहाँ धूम भी नहीं रहता। यथा—युष्करिणी इत्यादि वाक्यप्रयोगकी व्यतिरेक उदाहरण कहते हैं। अर्थात् जो नायवाक्यके अन्तर्गत उदाहरण वाक्य द्वारा साध्य है और दृष्टान्तका वैधर्म्य वा विरुद्धरूपता बोध होता है, उस न्यायान्तर्गत हेतु-वाक्यको व्यतिरेकी हेतु कहते हैं।

१। प्रतिज्ञा। पर्वत पर वहि है।

२। हेतु। धूम होनेके कारण।

३। उदाहरण। जहाँ धूम नहीं है, वहाँ वहि नहीं है। यथा—ऊँच, जलाशय प्रभृति।

इस उदाहरण वाक्य द्वारा पर्वतरूप पक्ष (वहिका अभाव प्रसूति विरुद्धत्व) का ऊँचमें बोध होता है, अतएव यहाँ पर व्यतिरेकी हेतु हुआ है।

साध्य दृष्टान्तका एकरूपताके साधर्म्य निवन्धन अन्वय व्यतिरेककल्पना प्राचीन सङ्गत है। इस पर नव्य लोग कहते हैं कि न्यायके अन्तर्गत उदाहरण वाक्य द्वारा हेतु और साध्य (लिङ्गी) अथवा अन्वयसहचार वा अन्वय-

वाचि बोध होती है, वही न्यायान्तर्गत हेतुवाक्य अन्वयो हेतु है। (दो वस्तुओंके एक साथ रहनेकी अन्वय-सहचार, अभावसहचारके एकतावस्थान ही व्यतिरेक सहचार और उसके इस सहचारसहचरि नियत वा अव्यभिचारो होनेसे उसे क्रमशः अन्वय और व्यतिरेकवाचि कहते हैं।)

पूर्वाक्त जिस जगह स्थान पर धूम है वहाँ वहाँ वहि है, इस उदाहरण वाक्यमें धूमहेतु और वहिरूप साध्यके अन्वयसहचार वा धूममें वहिरूपकी अन्वयवाचिका बोध हुआ, अतः तत्रत्य हेतुवाक्य अन्वयो हेतु हुआ। जिस वाक्य द्वारा हेतुसाध्यके व्यतिरेकसहचार वा व्यतिरेक वाचिका बोध होता है, वह न्यायान्तर्गत हेतुवाक्य व्यतिरेकी हेतु है।

उपनय—पक्षमें हेतुबोधक वाक्यका नाम उपनय है। व्यतिरेकी उपनयकी जगह भी हेतुके अभावका अभाव होनेसे प्रकारांतरमें हेतुका बोध होता है। यह उपनय भी दो प्रकारका है, अन्वयी और व्यतिरेकी। अन्वयी यथा—

जहाँ जहाँ वहि है, वहाँ धूम है। जैसे—पाकशाला। व्यतिरेकी यथा—जहाँ वहि नहीं है, वहाँ धूम नहीं है। जैसे ऊँचादि।

निगमन—हेतु कथन द्वारा प्रतिज्ञावाक्यके पुनः कथनकी निगमन कहते हैं, अर्थात् यथायथमें प्रकृतसाध्यके उपसंहार वाक्यका नाम निगमन है। जैसे 'तस्मात् वहिमान्' अर्थात् उस हेतु पर्वत पर वहि है, इत्यादि वाक्य।

निगमन—अतएव धूम है इसीसे पर्वत वहिमान् है।

अनेक नवप्रत्ययविक उपनय और निगमन वाक्यार्थ-बोधसे भी वाचिदानका स्वीकार करते हैं और पर्वत ऐसे शब्दसे वहिनवाप्यवान् इत्यादि अर्थ जगते हैं। ये सब विषय और भी सूक्ष्मातिस्वरूपमें नवप्रत्ययमें आलोचित हुआ है।

यहाँ पर बहुतांशकी आशङ्का हो सकती है कि अन्वय-दार्शनिकगण (वैदान्तिक) उदाहरण, उपनय और निगमन ये तीन प्रकारके अवयव स्वीकार करते हैं और ये ही तीन अवयव उनके मतसे न्याय हैं। वे गौतमका मत पञ्चावयव स्वीकार नहीं करते। गौतमने पञ्चावयव क्यों स्वीकार किया है, इस सम्बन्धमें चिन्तामणिकार

प्रकृतिमें ऐसी क्रिया दो है। पहले देखना होता कि व्यापका प्रयोग क्यों होता है ? हम विषयमें मनी ओकार को भी कि किसी विषयमें मन्त्रेण उपलब्ध होने पर उसे पूरा करनेके लिए तत्काल प्रयोग व्यापका प्रयोग हुआ करता है। पतएव यह देखना उचित है कि किस प्रकार १५३ में व्यापका प्रयोग होता है। यथा—उर्ध्वत पर चम्पिका स मय होने पर वहाँ पत्थि के बागणों ? यिना प्रकृ होता है।

इसके उत्तरमें यदि कहा जाय कि नहीं धूम है वहाँ बह है, तो प्रकृतांगीका यह भाव्य द्वारा स मय पूरा नहीं होता, इस कारण चम्पिकावित होकर पत्थि-प्रकार प्रकृतांगी जाता है। पतएव इस प्रकृते उत्तरमें पहले तुम्हें आचार्यकोना कि पर्वत पर बह है। वीक्षि बह है, इसका प्रमाण क्या ? इससे उत्तरमें यह कहना पड़ेगा कि धूम कोनेके कारण। वीक्षि धूम कोनेके कारण बहिर रक्षको उर्ध्वका क्या प्रमाण है ? तब कहना होगा कि वहाँ धूम है वहाँ बह है। धूम रहनेमें बहिर चम्पक रहतो है। यथा—पाकप्रमाण। पतएव प्रकृतांगी प्रतिष्ठादिप्रमाणों से वाच्य प्रकृत हुआ करता है, यह कारण नै वाचिकोंमें प्रतिष्ठादि पक्ष धरारणको से व्यापक प्रमाण है।

आम्नाशन-मात्रके मान्य होता है कि कोई कोई हम प्रकारका पक्षधर ओकार करते हैं। पूर्वाक्ष प्रतिष्ठादि पक्ष प्रकार और विज्ञाना, स मय सक्षयानि, प्रयोगन तथा स मयप्रकृतांग (स मय-प्रकृति) यह पक्ष प्रकार व्यापकय है। यीतमने प्रतिष्ठादि पक्षधरको से निर्णयत परवक्षि निर्णय विषयमें समर्थ बनता कर उक्त पक्षधरणको से व्यापकय ओकार किया है। विज्ञाना प्रकृति परम्पराक्रमसे निर्णयत परवक्षि निर्णय विषयमें उपयोगी होने पर मो सत्ता तादृश परव-निर्णयमें समर्थ नहीं होते इस कारण विज्ञानादि पक्ष को व्यापकय नहीं माना है।

कोई कोई उदाहरण दीर कपय हकी दोको व्यापकय मानव है, क्योंकि यही दो पापव्यक्ति उपयोगी है। व्यापकयमें तादि निर्णय द्वारा निर्णय तथ्य वक्षि निर्णय करता है। इत्यादि कप प्रमाण

यहसे व्यापकयमें धोर मो पनी व मत है। यीतमने व्यापका पक्षधर ओकार किया है, इस कारण पक्ष धरणका विषय हो किया गया, व्यापकय मतका विषय सामोचित नहीं हुआ।

तर्क—पारलित विषयको तर्क कहते हैं। यथा—पर्वत पर यदि बह नहीं रहतो, तो वहाँसे धूम नहीं निकलता, क्योंकि धूम बहिर्याप्य है। यीतमने तर्कका कोई विमान नहीं किया, किन्तु प्रमाणों से वाचिकोंमें बहिर्याप्य किया है। व्यापकय, व्यापकय वक्षक, पतएव गीर प्रमाणवाचिकान-प्रकृ।

निर्णय—पक्षधर द्वारा जो निर्णय है, पर्याप्त विवेचना करके पक्ष धोर प्रतिपक्ष द्वारा जो चर्चापक्षारण होता है, उसे निर्णय कहते हैं।

वाच्य—परलित जिनोपु न जो कर विषय प्रकृत विषयके तत्त्व निर्णयवादी धोर प्रतिष्ठादीके विचारको बाद कहते हैं, पर्याप्त प्रमाण धोर तर्क द्वारा उपपन्न साधन धोर परपक्षधरपूर्वक सिद्धान्त पक्षधरोंको पक्ष धरणवृत्त बादी धोर प्रतिष्ठादीको उक्ति तथा प्रमुक्ति कथनको बाद कहते हैं। यहाँ भाष्यका जो सक्तो है कि बादी धोर प्रतिष्ठादी दोनोंका वाच्य किस प्रकार प्रमाणतर्कादिबिधि से प्रकृता है ? इसका उत्तर यही है कि कक्षक प्रमाणदि प्रकृता पर्य को है जो समझना होगा। यदि प्रकृत स्थानय प्रमाणामाच, तर्कामाच, सिद्धान्त धोर व्यापकयका प्रयोग करे, तो विचारको बादलक्षानि होता है।

बादविचारमें समीको पक्षधर नहीं है। जो प्रकृत विषयके तत्त्वनिर्णय, पर्याप्तवादी वक्षकतादिदोष शून्य, यथावाकमें प्रकृतोपयोगी कथनमें समर्थ है जो सिद्धान्तविषयका पक्षधर नहीं करते तथा मुक्तिविधि विषय ओकार करते हैं, वे ही पर्याप्तमें बादविचारके पक्षधरों है।

किन्तु विजयीवाचकः मनुष्य यदि प्रमाणदि कक्ष कर प्रमाणमावादिका प्रयोग करे, तो वह बाद नहीं होगा। तत्त्वनिर्णयके लिये बादप्रतिष्ठादी को बाद कक्षकता तथ्य है धोर निष्पन्न इह करमेके लिये है

उदाहरणका अधिक प्रयोग युक्त होनेसे वादविचारकी जगह अवयवका आधिक्य दीपावह नहो' है। उदाहरण वा उपनयनरूप अवयवप्रयोग नहो' करनेसे प्रकृतार्थ सिद्ध नहो' होता, इस कारण लक्षणसूत्रस्य पञ्चावयवशब्द द्वारा न्यूनावयवका ही प्रतिषेध किया गया है, अधिक अवयवका नहो'। लक्षणसूत्रस्य पञ्चावयवशुक्त इस शब्द द्वारा हेत्वाभासका निराश श्री। मिहान्तिदिरो भो ग्यत् द्वारा अपसिद्धान्तका भो निराश किया गया है। हेत्वाभास नियहस्थानान्तर्गत होने पर भो हेत्वाभासका पृथग्भिधान किया गया है। इस विषयमें वृत्तिकार और वार्त्तिककार आटिका मत इस प्रकार है।

वार्त्तिककार—वादमें कथनीय होनेके कारण हेत्वाभासका पृथग्भिधान दुष्प्रा है, वह वात स्वोकार करने पर न्यूनाधिक अपसिद्धान्तादि और वादमें कथनोप होनेसे उभेका भो पृथग्भिधान किया जा सकता है। अत एव विद्याप्रस्थानमद्वेषापनार्थ ही हेत्वाभास पृथक् रूपसे कथित दुष्प्रा है।

वृत्तिकार—नियहस्थानान्तर्गत हेत्वाभास कथनसे ही विद्याविषयका भेद जाना जा सकता है, इसीसे हेत्वाभासके पृथक् उपादानकी कोई आवश्यकता नहीं। इस प्रकार वार्त्तिकके प्रति टीपारीय करके अन्यरूप मौमासा की गई है। भाष्यकारका मत जो युक्तियुक्त है, इस कारण यथा पर अन्य मत पर विचार नहो' किया गया।

जल्प—प्रमाण, तर्क, छल, ज्ञाति और नियहस्थान द्वारा यथायोग्य स्वपक्षसाधन और परपक्ष प्रतिषेधयुक्त वादी तथा प्रतिवादीको उक्ति और प्रत्युक्तिको अल्प कहते हैं। जल्प विचारविजिगोपावशतः दुष्प्रा करता है। इस जल्पमें प्रमाणाभास, तर्कभास और अवयवभास दुष्प्रा करता है। स्वपक्षसाधन और परपक्षप्रतिषेधरूप विजिगोपुद्ध्यकी उक्ति प्रत्युक्ति ही यथार्थमें जल्पपदवाच्य है।

वितण्डा—स्वपक्ष साधनरहित परपक्षप्रतिषेधक जल्पको ही वितण्डा कहते हैं।

हेत्वाभास—प्रकृतविषयका वास्तविक साधन नहो' होने पर भो अपाततः प्रकृतविषयके साधनके जैसा जिसका बोध होता है उसे हेत्वाभास कहते हैं। यथास्

इसका साधारण अर्थ यह है कि असाधक वा दुष्टहेतुको जो हेत्वाभास कहा जाता है। जिसका ज्ञान होने पर प्रकृत अर्थको सिद्धि नहो' होती, उसे अनुमिति-विषयमें दोष कहते हैं। यह दोष ५ प्रकारका है, व्यभिचार, विरोध, प्रकरणसम, अभिहित और कालात्यय। दोष ५ प्रकारका होनेसे दुष्टहेतु (हेत्वाभास) भी ५ प्रकारका है, यथा अत्रभिचर, विरुद्ध, प्रकरणसम, असिद्ध और अतोक्तकाल।

व्यभिचार और अव्यभिचार—हेतुमें साध्यकी व्याप्तिका प्रभाव रह कर साध्यभावकी व्याप्तिके नहो' रहनेकी व्यभिचार और व्यभिचारयुक्त हेतुको अव्यभिचार कहते हैं। यथा पर्वत पर धूम है, वहि होनेके कारण यहाँ पर धूम साध्य और वहि हेतु है। धूमशून्य अयोगोलकमें (लोहपिण्ड) तथा धूमयुक्त पर्वतादि पर वहि है, अतः वहिमें धूम वा धमाभाव किछोको भी व्याप्ति नहो' है। अतएव धूमशून्य स्थानमें स्थिति और धूमयुक्त स्थानमें स्थिति, इन दो स्थितिरूप साध्य और साध्याभाव व्याप्तिका प्रभाव जो वहिमें धूमका व्यभिचार है एवं व्यभिचारविशिष्ट वहि सव्यभिचार है। इसका तात्पर्य यह कि धूमके रहनेसे वहि अवश्य रहती है, किन्तु वहिके रहने पर जो धूम रहेगा, सो नहो'; धूम रह भी सकता है और नहो' भी रह सकता है। पर्वतादि पर वहि हेतु धूम है सही, लेकिन अयोगोनका धूम नहो' है इसीसे यह व्यभिचार दुष्प्रा। व्यभिचारका ज्ञान रहने पर पक्षमें साध्यवशाप्यहेतु ज्ञानरूप लिङ्गपरामर्श नहो' हो सकता। इस कारण प्रकृतार्थनिहि भी नहो' भी सकती। सुतां व्यभिचार दोष दुष्प्रा।

विरुद्ध—जो प्रकृतसिद्धान्तका विरोधी है उसे विरुद्ध कहते हैं।

प्रकरणसम वा सप्रतिपक्ष—तुल्यबल परामर्शकालीन परस्पर विरुद्ध अर्थसाधनके निमित्त तुल्य बलसंयोग द्वारा प्रयुक्त हेतुद्वयको सप्रतिपक्ष कहते हैं। एक पक्षका कहना है कि शब्द रूपादिकी तरह वहिरिन्द्रियग्राह्य होनेके कारण अनित्य है, फिर दूसरे पक्षका कहना है, कि शब्द आकाशादिकी तरह स्पर्शशून्य है, अतः वह नित्य है। यहाँ पर जिस समय अनन्तर पक्षमें हेत्वा-

भाषादिभाषा उद्गाहन नही होमा, उस समय अतिरिन्द्रिय
 पाण्डव एवं कामेशुनालकप हेतु द्वारा परस्पर विवदाव
 पाण्डवने समानरक्तबुद्ध होमने सप्रतिपक्ष होमा । किन्तु
 धनाहरपक्षमें लकीरि द्वारा मङ्गला पाबिचय ना होला
 भाषादि द्वारा शुभता होमने सप्रतिपक्ष नही होमा ।
 परस्पर विवदाव साधनके निमित्त प्रबुद्ध हेतुवदकी
 अदुष्टता नही हो नकती, इस कारण सप्रतिपक्षको
 अथव सकारकाक्षमें त्रिष पक्षके जोमा के सामान उद्गावित
 होमा नव पक्षोव हेतु मैसा हो होलासाव दरा दुष्ट
 होमा । यदि बादो प्रतिवादो पयमा मन्त्रके बिना पक्षमें
 होला साम उद्गावन न करी तो उस समय हेतुका दुष्टत्व
 नाकार नही होमा ।

पवित्र—साध्यको तरह हेतु यदि पक्षे पवित्र
 वा अनिहित हो, तो उने पवित्र कहते हैं । यथा—श्राया
 दुग्ध मति होमनेके कारण यहाँ पर जाया पक्ष है और
 दुग्धमात्रसाध्य मति हेतु है । यहाँ पर यहाँ पर गतिको
 हेतु करके जायाका उद्गावन मित्र किया गया है । किन्तु
 नैपाबिचके मतके आकारमें दुग्धमात्र (दुग्धत्व) केला
 पवित्र है मैसा ही प्रतिपक्षमें पवित्र वा अनिहित
 है, पक्ष एवं प्रकार हेतुका नाम पवित्र वा साध्य
 पक्ष है ।

काशातोत वा शक्ति पक्षमें साधारणताका शाल पक्षोत
 होमने पक्षमें साधारणताके निये हेतुको काशातोत
 कहते हैं । जिसका एक दिन निश्चयानके पक्षोत होमने पर
 अनिहित होता है, उसी हेतुका नाम काशातोत है ।

कल—यथा त्रिष पर्यन्ताप्यर्थे त्रिष मन्त्रेण प्रयोग
 करणा हेतु मन्त्रका नैवा मन्त्रेण न कर तद्विप-
 रीत पर्यको कल्पना करते हुए मित्या दोषारोप करके
 को कल कहते हैं । वादिवाक्यको पक्षान्तरकल्पना पर्याप्त
 कलाके अनिश्चयके पक्षोत वा तात्पर्यकी कल्पना कर
 वादिवाक्यके पक्षोत्पन्नको कल कहते हैं । यथा—मि
 वरिचा पक्षाद् आता इ । यहाँ पर हरि मन्त्रका विपु
 रूप तात्पर्य न पक्ष कर आनरके पक्षको कल्पना करके
 कलका निश्चय करणा, यही कल है । यह कल तीन
 प्रकारका है, नाक, श्रव, सामान्य कल, उपचार कल ।
 पक्षोत्पन्न मन्त्र प्रयोग करके ही बादोके पक्षि

पैतात्र मित्र पर्यको कल्पना करके वादिवाक्य
 प्रायाज्यानको वाक्यकल कहते हैं । यथा—समापत
 वाक्त्रि नवकल्पकवासी, यह वादिवाक्य कल कर प्रति
 वादो कहता है, इससे एक कल्पक है, जो कल्पक कहा
 है । यही प्रतिवादीका वाक्य वाक्यकल है । नवकल्पक
 मन्त्रके न तनकल्पक मोर ८ कल्पक ये दो पक्ष को कहते
 हैं, किन्तु बादोमें नवकल्पका 'मूलन' ऐसा पर्य कहावा
 है, पर प्रतिवादीने उस पक्षका परिष्कार कर ८ कल्पका
 दोषा पर्य किया है । यहाँ पर प्रतिवादीने जो बादोके
 वाक्यका मूलना पक्ष समाया नही कार, कल है ।

सम्भवर सामान्यता पक्षानिपायके अनिहित वादि
 वाक्य परसम्भर पक्षको कल्पना करके सामान्यपक्षका
 कदाचित् पक्षिष्ठम निवन्धन वादिवाक्यप्रमाणानको
 सामान्य कल कहते हैं । यथा—बादोने कहा 'ब्राह्मण
 विद्वान् होतु' । इस पर प्रतिवादीने बोका ब्राह्मण यदि
 विद्वान् हो तो ब्राह्मण मित्त मो ब्राह्मण होमनेके कारण
 विद्वान् को कहते हैं किन्तु मैसा नही होता, सुतरा
 तुम्हारी बात मित्या है ।

पक्षो देवना वादिके कि बादोका पक्षिष्ठम कल
 वा, कलका पक्षिष्ठम वा कि सामान्यता ब्राह्मणमें विद्या
 कल्पकर है । प्रतिवादीका कहना है, ब्राह्मण होमनेके
 ही विद्वान् होवा वादिवाक्यके विदे पक्षमूलपक्षकी
 कल्पना कर विद्वान् मित्र भी ब्राह्मण होमने है, पक्षएव
 ब्राह्मणत्वकल सामान्यपक्षमें विद्याका पक्षिष्ठम करता है,
 इस कारण ब्राह्मणका विद्वान् होना कल्पक है, पक्षएव
 इस वाक्यमें प्रतिवादीने मित्रत्वसारोप किया है, सुतरा
 प्रतिवादीका कल वाक्य यहाँ पर सामान्य कल कृपा ।

मन्त्रके पाठ्य और वाक्यकल भेदके पक्ष दो प्रकार
 का है । १. मन्त्रके एकतावर्तिमपक्षके बादोके मन्त्रप्रयोग
 करने पर पक्षारोपकी कल्पना कर वादिवाक्यके प्रमा
 एषानको उपचार कल कहते हैं । जैसे—बादोने कहा,
 'मित्र मित्र गृहामि वास करता है' इस पर प्रतिवादी
 बोका, तुम्हारा मित्र गृहामि किना करता है, इस
 कारण तुम्हारी बात मित्या है । पक्ष यहाँ गृहामि दो
 पक्ष होते हैं प्रथम वाक्यका पक्ष गृहामि और द्वितीय
 का गृहामि । बादोने कल्पानिपायके वाक्यका प्रयोग

क्रिया है। शकार्य ग्रहण कर प्रतिवादीने उसका प्रत्याख्यान किया है।

जहाँ शब्दके शक्तिभेद वा लक्षणभेदसे शब्दार्थ अनेक प्रकार होंगे, वहाँ वाक्छेद और जहाँ शक्तिलक्षणभेदसे शब्दार्थ अनेक प्रकार होंगे वहाँ उपचारच्छेद होगा। वाक्छेद और उपचारछेदमें केवल इतना ही प्रभेद है।

जाति—व्याग्निरपेक्ष किसी साधर्म्य वा वैधर्म्य द्वारा परपक्ष खण्डनको जानि कहते हैं। इस जातिका दूसरा नाम स्वध्याघातक उत्तर वा असदुत्तर भी है। असदुत्तरको अर्थात् वादिकर्तृक संस्थापित मत दूषणमें असमर्थ अथवा निजमतका हानिजनक जो उत्तर है उसे जाति कहते हैं। यह जाति २४ प्रकारकी है। यथा—साधर्म्य सम, वैधर्म्य-सम, उल्कार्य सम, अपकर्ष सम, वर्ण्य सम, अवर्ण्य सम, विकल्पसम, साध्यसम, प्राप्ति सम, अप्राप्ति सम, प्रमङ्ग सम, प्रतिदृष्टान्तधर्म, अनुत्वत्ति सम, संशय सम, प्रकरण सम, अहेतु सम, अर्थापत्ति सम, अविशेष सम, उपपत्ति सम, उपलब्धिसम, अनुपलब्धिसम, नित्य सम, अनित्य सम और कार्य सम।

१। साधर्म्य सम—व्याग्निरपेक्ष स्थापनाहेतुको वस्तुका साधर्म्यमात्र ग्रहण कर स्थापनार्थ विपरोतार्थके आपादान वा प्रसञ्जनको साधर्म्य सम कहते हैं। यथा-घटवत्, प्रयत्ननिष्पन्न होनेके कारण शब्द अनित्य है। इस पर प्रतिवादीने कहा, यदि घटका धर्म प्रयत्न निष्पन्न होनेसे शब्द अनित्य हो, तो आकाशधर्म स्वयं-शून्यत्व भी शब्दमें है, इस कारण शब्द भी नित्य हो सकता है, यह प्रतिवादि-दत्त आपादान हो जाति है। इस प्रकार सभो जगह जाति होगी। वादिवाक्यका सादृश्य ग्रहण कर वादिवाक्य खण्डनमें उद्यत होनेके कारण वादिपक्षखण्डन द्वारा निज पक्ष भी खण्डित होता है, सुतरां काङ्क्षुत्तरको स्वध्याघातक उत्तर कहते हैं।

२। वैधर्म्य सम—व्याग्निरपेक्ष वैधर्म्यमात्र ग्रहण कर प्रतारवस्थानको वैधर्म्य सम कहते हैं। यथा—जो जो अनित्य नहीं है, वह प्रयत्न निष्पन्न नहीं है, जैसे, आकाश। शब्द प्रयत्ननिष्पन्न है, सुतरां शब्द अनित्य है। इस पर प्रतिवादीने कहा, 'यदि नित्य

आकाशमें वैधर्म्य प्रयत्ननिष्पन्नत्व होनेके कारण शब्द अनित्य हो, तो अनित्य घटवैधर्म्य स्वयंशून्यत्व होनेके कारण शब्द नित्य होगा। प्रयत्न निष्पन्नपदार्थ भावयव होता है। यथा—घट, शब्द भावयव नहीं है, अतएव घटवत् अनित्य नहीं है।

३। उल्कार्य सम—दृष्टान्तसाधर्म्यमात्र ग्रहण कर पक्षमें साध्यतर दृष्टान्तधर्मके आपादनको उल्कार्य सम कहते हैं। यथा—यदि घटधर्म प्रयत्न निष्पन्न होनेके कारण शब्द घटवत् अनित्य हो, तो घटवत् रूपशब्द होगा।

४। अपकर्ष सम—दृष्टान्तसाधर्म्य ग्रहण कर पक्षमें पक्षवृत्ति धर्मके प्रभावापादनको अपकर्ष सम कहते हैं। यदि घटधर्म प्रयत्न निष्पन्नत्व होनेके कारण घटवत् अभिव्य हो, तो घटवत् प्रयावण (यवणेन्द्रियका अगोचर) होगा।

५। वर्ण्य सम—पक्षसाधर्म्य आपादन कर दृष्टान्त पक्ष वृत्ति सन्दिग्ध साध्यात्वादिके आपादनको वर्ण्य सम कहते हैं।

६। अवर्ण्य सम—दृष्टान्तसाधर्म्य ग्रहण कर दृष्टान्त पक्षमें अवर्ण्यत्वके अर्थात् दृष्टान्तधर्म निश्चितरूपमें साध्यात्वादिके आपादनको अवर्ण्य सम कहते हैं।

७। विकल्प सम—हेतुविशिष्ट दृष्टान्तका धर्म नाना प्रकार होनेके कारण तत्साधर्म्ययुक्त पक्षमें नाना धर्मके आपादनको विकल्प सम कहते हैं।

८। साध्य सम—पक्ष और दृष्टान्तका साधर्म्य ग्रहण कर लिङ्गविशिष्ट पक्षको तरह दृष्टान्तके साधनोपाध आपादनको साध्य सम कहते हैं।

इस प्रकार और सभोके लक्षण और उदाहरण लिखे हैं, विस्तारके भयसे तथा ये सब लक्षण दुर्बोध्य होंगे यह सोच कर उनका विवरण नहीं लिखा गया।

निग्रहस्थान—प्रतिज्ञात विषयमें प्रतिवादीके दोष दान करने पर उस दोषके उद्धारमें अग्रह हो प्रतिज्ञात-विषयमें परित्यागारूप पराजयता जो कारण है उसीका नाम निग्रहस्थान है। अर्थात् जिसके द्वारा निग्रह हुआ करता है उसे निग्रहस्थान कहते हैं। प्रकृतार्थ-विचारोपयोगी ज्ञानका विपरीत ज्ञान तथा विचार

वियवका पञ्चानमूकका ही शब्दों निरवरोध हुआ करता है, यह कारण ताड्यविवतिवति (वियवोत छान) अपति-पति पञ्चान द्वारा नमो निवदस्थानको अनुष्ठान मानना होगा। शरीर कारण है कि मोतमने विप्रतिपत्ति पोर-पत्तिवतिको निवदस्थान वतजाया है। यह निवद-स्थान एव व कारण है। यथा प्रतिप्राधानि प्रतिप्राधिकार प्रतिप्राध-काय प्रोक्तार, पदात्मर, निरव'क, पवित्राना-कक यथायथ पयामकाय म्यून, यद्विज, पुनदक, पनमुमायव पञ्चान, अपतिमा विधेय मतामुप्रा, पदमुवीञ्चोपचय, निरनुयोग, पप्रविहाम पोर हेल'-मान। यामाभ्य प्रकारके बीच करनेके लिये दो एक विषय दिये जाते हैं।

प्रतिप्राधानि—अट्टकालके प्रति पञ्चानमचम लोकार को प्रतिप्राधानि कहते हैं। यथा—चटवत् इन्द्रि-याया कोनेके कारण मन्द अनिता है। इस दवायना पर प्रतिप्राधोने कहा, कि जितना प्रथमत्वादि इन्द्रिययाया कोनेके कारण इन्द्रिययायात्वं अनित्य प्राप्त नहो वो कहना। इस प्रकार दोपारोय कामी पर कारोने कहा, तब तो प्रथमत्वादि जातिवत् चट मी अनित्य होता।

प्रतिप्राकार—प्रतिप्राकार विषयका प्रतिपेच कामी है यथायथम द्वारा प्रतिप्राकारके कहनको प्रतिप्राकार कहते हैं। यथा—इन्द्रिययाया कोनेके चटवत् मन्द अनित्य है। इस दवायना पर इन्द्रिययाया इत्यत्वादि अनित्य कोनेके इन्द्रिय यायात्वं ही अनित्यत्वमात्र नहो हो सकता, प्रतिप्राधीने इस प्रकार दोपारोय किया। इस पर कारोने कहा, इत्यादि वदुनिष्ट है। किन्तु चट पोर मन्द वदुनिष्ट नहो है। अतएव जातिके माय एवम्वय नहो कोनेके चटवत् मन्द अनित्य होता, कतादि।

प्रतिप्राधिकार—प्रतिप्राध पोर के तुके विरोधको प्रतिप्रा-धिकार कहते हैं। यथा—चटादिशुभ कदादिगुण व्यतिरेकमें चटादिको उल्लंघन नहीं होती। क्वारिगुण-व्यतिरेकमें चटादि को अनुपनधि होनी है। चटादिनिष्ठ क्वारिगुण मिथानका अनुमायव न हो कर प्रतिपिपच होता है। इसकारण प्रतिप्राध पोर के तुकारण कहते हैं।

कोनव पदार्थके लक्ष्य निधि मते। इस लक्ष्य पदार्थके अर्थान कोनेके कारण अर्थान लक्ष्य

होता है। यामा लो शरीरदिने प्रथमभूत है यह अर्थानपने प्रतीकमान होता है। सुवर्ग शरी-रादिमें यामाहवदुद्विष्टव विप्राधानि कि कारण नही होता। इस प्रकार राम पोर द्येयका कारणवत्क उच मिप्राधानके निष्ठत होने पर राम पोर ह्येयको उत्पति नहो होती। यदि राम पोर ह्येय को निष्ठत हुआ, तो उनका कार्यवत्क काम पोर पयमाभ्य म प्रुपिओ पुन कार उत्पतिको सम्भावना क्या? फिर लक्ष्य धर्म पोर पथम हो अप्रम पदार्थके मूलोभूत हुआ है, तब धर्मो धर्मके निष्ठत होने पर अप्रादि निष्ठत होगा इसमें पोर पायवर्ग को क्या? एक पोर दुःखके पायतन व्यक्त्य शरीरादिके पमाभ्य तत्त्वकानीके मरनके बाद फिर दुःख का दुःख कुछ मी उत्पन्न नही होता। कुछ पोर दुःख एव ही समयमें निष्ठत हो जाता है तबो दुःखनिष्ठति को मुक्ति कहते हैं।

प्रमाण पोर प्रमेयका विषय निश्चय जाता है। प्रमाण द्वारा प्रमेयपदार्थ निष्कृत होता।

मोतमने मोक्ष पदाथके विषयको वर्णना कर परोषाका विषय कहा है। अधिममें इनके विषयमें की चार बात कह देना आवश्यक है। न्यायद्वय मने धर्मके पदाथको परोषाका विषय निश्चय कहा है। किन्तो विषयको लोकार करनेमें जो सुविधा उपस्थाप किया जाना है, उसे उसको परोषा कहते हैं। त्रिष विध विषयका म देह होना है तबसे तत्त्वानुकारके लिये परोषा हुआ करती है। अध्यात्म विषयको परोषा नहो होती। प्रमाणदिने किन्तो किन्तो क्षान्तमें जो न शय है वह पति अधिममें निश्चय जायगा।

यथायथम एक प्रप्यवको दो प्रमाण माना है, अनु-मानादि समो प्रमथ लक्ष्य नहो होता, एव कारण लक्ष्य प्रमाण नहो माना है। यथा मिकोकतिद्वयमने कृष्टि-काचक अनुमान प्रमाण नही हो सकता, सुवर्ग अनुमान भी प्रमाण नहो है। क्योंकि अनुमान विषयमें कमी लक्ष्य कमी मिप्रा पोर कमी परस्पर विनिश्चयन कोनेके अनुमानादिमें यामाभ्यन शय हुआ करता है। इसमें न्यायद्वय लक्षा परिप्राय यह है, कि प्रमाण ही अनुमान है। यामान्य लोकोक्ति देत कर कृष्टिकाचक अनुमान

प्रमाण नहीं है, मीघोन्नति विग्रेष दर्शन ही वृष्टिभावक अनुमान प्रमाण है। अतएव सामान्य मीघोन्नति देख कर वृष्टि को अनुमिति मिया हुई। अनुमितिके अयोग्य स्थानमें जो अनुमिति की गई है वह अनुमाताका दोष है, अनुमानका फोड़े दोष नहीं। जिस प्रकार साधन प्रकृति विषयमें अनुमिति का हेतु है, यदि उसी प्रकार साधन द्वारा अनुमिति मिया हो, तो अनुमानका अप्रामाण्य कहा जा सकता है। भाविवृष्टि-अनुमानविग्रेषमें मीघोन्नति ही हेतु है, सामान्य मीघोन्नति हेतु नहीं। सुतरां सामान्य मीघोन्नतिदर्शनजात अनुमितिके मिया होने पर भी उसमें अनुमानका अप्रामाण्य नहीं हो सकता।

गीतमने अनुमानप्रामाण्यके सम्बन्धमें प्रतिकूल तर्क-भात्रका निरास किया है। गीतमके परवर्तीनैयायिकोंने अनुमानगम्यायके सम्बन्धमें अनुकूल तर्क भी दिखलाया है। विस्तार ही जानेके मयसे वे सब मत सामान्य भावमें दिये गए हैं।

जीवमात्र ही भविष्यत्सुखलामके लिए नाना प्रकार के उपायका अवलम्बन किया करता है। मैं देखता हूँ और सुनता हूँ इत्यादि अनुभव तथा अत्रणयोग्य विषय सुननेके लिए एवं दृश्यविषय देखनेके लिए यत्न किया करता हूँ। किन्तु वधिर मनुष्य सुननेके लिए और अन्य मनुष्य देखनेके लिए प्रयत्न नहीं करता। इसका कारण यह है, कि चिन्ता करनेमें सब किसीको एक स्वरमें स्वीकार करना होगा कि वधिरके अणुन्द्रिय और अन्यके चक्षुरिन्द्रिय नहीं है। इस कारण वह अपनी को अयोग्य समझ कर देखने वा सुनने का यत्न नहीं करता। अतएव यह स्वीकार करना होगा कि वधिर और अन्य अपनी इन्द्रियका अभाव जानता है। अभी देखना चाहिए कि निज अणुन्द्रिय वा चक्षुरिन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाणका अगोचर होनेके कारण उसका बोध प्रत्यक्षप्रमाण नहीं हो सकता। 'अतएव मेरे चक्षु हैं' इस ज्ञानके प्रति अनुमानको ही प्रमाण स्वीकार करना होगा। पीछे नश्चनैयायिकोंने इत्यादि रूपसे बहुतार युक्ति दी है।

वैशेषिकके कटेशो कतिपय परिष्ठतीका कहना है कि

उपमान और शब्द स्वतन्त्र प्रमाण नहीं हैं, अनुमान प्रमाणके अन्तर्गत है। जिस प्रकार अज्ञानानवगतः पर्वत पर वहिला और गोसाष्टय ज्ञानवगतः जन्तुविग्रेषका अनुमान हुआ करता है, उसी प्रकार उपमान अनुमानके भिन्न प्रमाण नहीं है।

जो शब्दका स्वतन्त्र प्रामाण्य स्वीकार नहीं करते, वे कहते हैं, कि 'पद्म अग्नि सुन्दर है' ऐसे स्थान पर पढ़ने पक्ष और सुन्दर वे दो शब्द अत्रण द्वारा पद्म और सौन्दर्यका स्मरण होता है। जिस प्रकार प्रत्यक्ष प्रमाणादि द्वारा अप्रत्यक्ष पर्वतमयल्य वदिके अनुमिति होती है, उसी प्रकार चेत जानता है इत्यादि प्रत्यक्ष शब्द द्वारा अप्रत्यक्ष चैतन्यमनादि को अनुमिति हुआ करता है। जिस प्रकार अनुमितिको जगह धूमादि हेतुके साथ वदिके साधना नियतसम्बन्ध है, उसी प्रकार चैतनादिपदके साथ चैतनादि पदार्थका भी नियतसम्बन्ध है। पद और पदार्थका नियतसम्बन्ध स्वीकार नहीं करने पर चेतपद द्वारा जिस प्रकार चैतका बोध होता है, उसी प्रकार चैत भिन्न पद वस्तुका भी बोध हो सकता है। अतएव पद और पदार्थका नियतसम्बन्ध स्वीकार करना होगा। सुतरां प्रामाण्य सम्बन्धमें अनुमान शब्दका कोई पाठ्य नहीं है।

इस विषयमें गीतप्रका मत इस प्रकार है—उपमान और शब्द अनुमान प्रमाणके अन्तर्गत नहीं हो सकता, कारण सामान्यतः अनुमिति हेतु और साधनका व्याप्तिज्ञान सापेक्ष है अर्थात् जहाँ हेतुसाधनको व्याप्ति मालूम है, वहाँ पर अनुमिति हुआ करती है, जहाँ मालूम नहीं है, वहाँ साधन को अनुमिति नहीं होती। उपमिति वा शब्दजन्यबोध व्याप्तिज्ञान अतिरिक्तमें भी हुआ करता है। उपमितिकी जगह पदार्थका साष्टय ज्ञान-मात्र आवश्यक है, व्याप्तिज्ञान की आवश्यकता नहीं।

यहाँ पाशङ्का हो सकते हैं कि यदि वैवल्लो-साष्टय ज्ञान ही गवय नामधारित्वता कारण ही, तो महिषादिमें भी गवय नामधारित्वका ज्ञान हो सकता है। यदि कहा जाय, कि सामान्यतः गोसाष्टय महिषमें रहने पर भी विलक्षण गो-साष्टय साधनमें नहीं होनेके कारण

विषय नामधारण नहीं होता। सादृश्य मध्य द्वारा विनयक व द्रष्टा ही ब्रह्माका धर्मित ज्ञानना होता। विनयक उग्रमान द्वारा पक्षी पक्षत मयय पदबाध्य हो कामरूप स का समोका बोध होता है।

बहि चोर व मादिकी तरह घटादि पद चोर पदार्थ का कोरि ज्ञानाधिक प्रत्यक्ष नहीं है, पतएव मय्य पशु मान प्रमाचः प्रमर्गत नहीं हो सकता। मय्यभ्यासमें ही ये सब विषय विनियमके आसीवित श्रीर चम्पान्य नामानत व्यक्तित्व हुए हैं।

कोरि कोरि कहते हैं कि प्रत्यक्ष प्रमाच चोर पशु मानके प्रमर्गत अतन्त्र प्रमाच नहीं है, वह मादिकत चम्पिन हुआ है।

कोरि कोरि तो पर्यापत्ति मय्य प्रमाच चोर ऐतिह्य यह प्रकारका धर्मित प्रमाच श्रीकार करमें हैं। किन्तु गीतमें इन सबका व्युत्पन्न कर पर्यापत्ति, प्रमाच चोर कथनको अनुमान प्रमाचके प्रमर्गत चोर ऐतिह्यको महदप्रमाचके मध्य निविह बिबा है।

प्रमर्गपीठा—कोरि कोरि कहती हैं, कि चक्षुरादि इन्द्रिय को प्रमदा विनयको प्रकथ करती है, पतएव चक्षुरादि इन्द्रिय ही आत्मा वा प्राणी है। फिर किमो का कहना है, कि वह मयोर प्रत्यक्ष कर्ता है, कोरि कोरि मयकी हो कर्ता मतवासी है।

इस पर मैवायिकका विद्वान इस प्रकार है—चक्षुरादि इन्द्रियको आत्मा नहीं कह सकते, क्योंकि चक्षुरादि एक एक इन्द्रिय द्वारा समो विनयका प्रतारण नहीं होता, एक एक इन्द्रिय द्वारा एक एक विनयका प्रतारण हुआ करता है। पर तुम्हें यह कहना होगा कि चक्षुरादि इन्द्रिय मित्र होनेके स्वयम्भोदिका प्रतारणकर्ता सो मित्र मित्र है, किन्तु हमने शुरुआतका रूप चोर अर्ग्य दोनोंको ही प्रतारण किया है चोर हमने पक्षी देखा था कि इन सबका अर्ग्य किया है, इतीदि धर्मसौखिक पति द्वारा रूप चोर स्वयम्भोका एक ही प्रतारण हुआ करता है।

तिमित्की (हमने) देखने वा हमका विषय मोचने के विज्ञानमें प्रमेम का जाता है, वह भी ब्रह्म है। प्रमी देखा जादिके, कि यदि इन्द्रिय आत्मा हो तो, तो

तिमित्की प्रकाशे चक्षुराका रदानुभाव नहीं वा। इस कारण रसको स्थिति नहीं हो सकती चोर चक्षुराक वर्म तिमित्की दग्ग विज्ञाना ब्रह्मोचक नहीं हो सकता, इस कारण स्मरण नहीं हो सकता।

अन्ततम दधि चोर गोमय व योमसे दधिच कल्पके हुआ करता है चोर केदात्तत्रात मय्यकादि प्रकारो-पत मनुष्यादिपी देव कर डरके मारि भाग जाती हैं। पर देवना जादिके कि यह उच्चकके उपादान गोमयादि पचितन हैं चोर उन्मार्गमूर्त होनेके कारण उपादान कारणके उन्मार्गका मय्य मय्यप्रव है। सुतरा मय्य-हेतु स्मरण नहीं हो सकता। मैवायिकोका मत है कि पूर्वकथके उन्मार्ग द्वारा आत्माका उच्चकमें उरक हो सकता है।

मनको भी आत्मा नहीं कह सकते, कारण मन सुखदुःखादि प्रमर्ग करण है, कारण कर्तावि मिन्न होता है, इस कारण मन कर्ता नहीं हो सकता। चक्षुरादि ज्ञान करणमयिक होने पर भी सुख दुःखादिज्ञान करण मयिक नहीं है, ऐसा नहीं कह सकते, क्योंकि सामान्यता ज्ञानमात्र ही करणमयिक है। यह देखा जाता है, इन कारण सुख दुःखादिका ज्ञान मो को करण-मयिक है वह हम मोच अनुमान कर सकते हैं चोर ज्ञानरहका प्रयोगपथ कारणका मनको प्रति सुखमूर्त प्रथ स्वीकार करना होगा। सुतरा प्रतिसुख मन आत्मा नहीं हो सकता। आत्मा जित्त है वा अनित्य, इस विषय पर कुछ विचार करना आवश्यक है।

धीकारकता मनुष्यको प्रकृतिके प्रति राग (इह साधनता ज्ञान) कारण है, राग नहीं रहने पर वह किमो विनयम प्रकृत नहीं होता। ज्ञानमात्र वाचकके प्रतारणमें चोर मयके धर्मितःपत ज्ञानर मिद्यके माका मय्यमर्गमें प्रकृति करो होती है? इस पर मायिकोका कहना है कि जिस प्रकार स्वभावत ही बिना कारणके प्रसादिका विज्ञान चोर सहोच हुआ करता है, उचो प्रकार स्वभावता ही उच प्रकृतिका उदय होता है; इयके सुतरा मैवायिक कहते हैं, कि कार्यमात्र ही कारणमयिक है इतीने प्रसादिका विज्ञान चोर सहोच स्वभावतः बिना कारणके नहीं होता, पतएव पद

प्रभृति का विकासदिबत् स्वभावतः प्रवृत्त होगे, ऐसा नहीं कह सकते। किन्तु प्रवृत्ति-कारण इष्टसाधनताज्ञान इहजन्ममें अमभव है, क्योंकि वानरादि शाखावल्गवनादि इष्टसाधन इहजन्ममें प्रवृत्त नहीं करते। इस जन्ममें प्रवृत्त नहीं करनेसे अन्य सभी अनुभवज्ञान प्रवृत्त-मूलक होनेके कारण इष्टसाधनताका प्रवृत्तमिथ अनुभवज्ञान भी स्वीकार नहीं किया जा सकता, अतएव स्मरण स्वीकार करना होगा। किन्तु स्मरण पूर्वानुभव-व्यतिरेकमें नहीं होता, इस कारण आत्माके पहले यह विषय अनुभव था, यह अवश्य स्वीकार करना होगा। वानरशिशु आदिके शाखावल्गवनमें इष्टसाधनताका अनुभवज्ञान ऐहिक असम्भव होनेसे इस जन्मके पहले भी आत्मा थी और उस समय उसका यह विषय अनुभव था। उस अनुभवजन्य संस्कारसे इहजन्ममें उस विषयमें स्मरण ही कर प्रवृत्ति हुई है, यह बात स्वीकार करना आवश्यक है। इस प्रकार पूर्वजन्मको प्राथमिक प्रवृत्तिके विषय पर विचार करनेसे उसके पूर्वजन्ममें भी आत्मा थी इत्यादि रूपमें तत्पूर्ववर्ती सभी जन्मके पहले आत्मा भी वर्तमान थी, यह मानना होगा। इससे यह भ्रम हुआ कि किसी भी जन्मके समयमें उत्पन्न नहीं होने पर भी अवश्य आत्माको नित्य स्वीकार करना होगा।

आत्माका प्रथम जन्मस्मरण किस प्रकार होता है, भास्त्रिकोंके ऐसे प्रश्न पर नैयायिक लोग कहते हैं कि आत्माका जन्म प्रवाह अनादि है, सुतरां प्रथम जन्म नहीं हो सकता। विस्तार ही जानेके भयसे इस विषय पर और कुछ नहीं लिखा गया।

शरीर-परोक्षा—शरीर-सम्बन्धमें अनेक मतभेद हैं। कोई कोई कहते हैं कि पञ्चभूतयोगसे शरीर उत्पन्न होता है, इस कारण शरीर पञ्चभौतिक है। फिर किसीका कहना है कि आकाशयोग शरीरमें रहने पर भी आकाश उपादान कारण नहीं है, अतएव शरीर चातुर्भौतिक है। फिर कोई कहते हैं कि वायुयोग रहने पर भी शरीरके घट्टिईंश और अन्तरमें सदागमनशील वायु उपादान कारण नहीं हो सकती। इस पर गौतम कहते हैं, कि

शरीर पार्थिव है। जनादि शरीरमें उपश्रमात् अर्थात् ग्रहयोगी संयोगमात्र है।

इन्द्रिय परोक्षा—इन्द्रिय सम्बन्धमें भी मतभेद है। कोई कोई कहते हैं कि अधिष्ठान गोनकादि इन्द्रिय-विषयके साथ सन्निकष नहीं होने पर इन्द्रिय द्वारा प्रत्यक्ष नहीं होता, सन्निकष-व्यतिरेकमें प्रत्यक्ष स्वीकार करनेसे चक्षुःसन्निकष विषयकी तरह असन्निकषित विषयका भी प्रत्यक्ष हो सकता है। अतएव इन्द्रियके साथ विषयके सन्निकष-प्रत्यक्षकी अवश्य कारण स्वीकार करना होगा। अब देखो, कि अधिष्ठान गोनकादिको इन्द्रिय माननेसे गोनके साथ विषयका सन्निकष नहीं होता, अतएव ऐसा होनेसे घटादि विषयका प्रत्यक्ष नहीं हो सकता। अतः स्वीकार करना होगा कि गोनकादि अधिष्ठानसे इन्द्रिय भिन्न है, किन्तु गोनकादिसे इन्द्रिय भिन्न होने पर भी इनके उपादानादि क्या हैं? इस पर गौतमने कहा है कि इन्द्रियगण भौतिक अर्थात् प्राण पार्थिव, रसना जलीय, चक्षु तैजस, त्वक् वायवीय और श्रोत्र आकाशीय है।

इन्द्रियकी नानात्व-परोक्षा—कोई कोई कहते हैं कि सर्वशरीरव्यापी एक त्वगिन्द्रिय स्थानभेदसे नाना-रूप विषय ग्रहण किया करते हैं। उनके उत्तरमें नैयायिक लोग कहते हैं कि एक त्वक्मात्र इन्द्रिय नहीं हो सकता, कारण एक त्वक्के इन्द्रिय होनेसे घस्तादि द्वारा स्वयं प्रत्यक्षकालमें रूपादिका भी प्रत्यक्ष हो सकता है, चक्षुगादिस्थित त्वक्, ही रूपादि ग्रहण करेगा, अन्य त्वक् नहीं।

बुद्धिपरोक्षा—शरीरादि मूर्त्तसे ज्ञानवान् अतिरिक्त है; किन्तु कोई कोई कहते हैं कि आत्मा चेतन है, ज्ञानवान् नहीं, महत्तत्त्व चित्तादि नामक बुद्धिरूप अन्तःकरण ही ज्ञानवान् है। सांख्यके मतसे चैतन्य और ज्ञान विभिन्न हैं। उन्होंने इस विषयमें अनुभव प्रमाण दिखलाया है, यथा 'हम लोगोंके ज्ञानका विषय है' मैं जानता हूँ यह कहनेसे क्या जनते हो, ऐसी एक आकाङ्क्षा रहती है। विषयव्यतिरेकमें कोई ज्ञान नहीं होता, किन्तु उसके चैतन्य हुआ है, ऐसा कहनेसे किस विषयमें चैतन्य हुआ है यह आकाङ्क्षा नहीं रहती। पहले प्रथमतः

(पदवी) कृपा का, पदो चैतन्य कृपा है, विदय यही शेष होता है। चैतन्य का जोई भी विदय नहीं है। अतएव चविदयक घोर निर्विदयक चैतन्य एव नहीं हो सकता ज्ञान ही मुख शक्ति चैतन्य है, वह पाप्मा। धर्म है, ज्ञानादि बुद्धिका धर्म है, ज्ञान बुद्धिका धर्म होने पर भी बुद्धिचे प्रतिरिक्त नहीं है। क्योंकि बुद्धि स्वतिरिक्तमें ज्ञानकी कदापि उपपत्ति नहीं होती। विदयदेशमें ममत्त कर बुद्धि ही चटपटादिका आधार कर ज्ञान नामके पुकारो जाती है। जिसे वहसि ज्ञानके दो दृष्टा को यो, उसे पदो ज्ञानता प्र इत्यादि प्रत्यभिज्ञान घोर स्मरण आदि द्वारा बुद्धिका नितरान्य निवृत्त कृपा है एव चैतन्य पदाहृतिक घोर विमु है, पाप्माने चटादि विदय प्रतिबिम्बित नहीं हो सकता इस कारण चटादि ज्ञान भी पाप्माना नहीं हो सकता। इस पर नैवाधिकीका भविमत्त है कि प्रत्यभिज्ञान बुद्धि श्रिया करती है ना पाप्मान, यह सन्देह है। अतएव प्रत्यभिज्ञान द्वारा बुद्धिका नितरान्य सिद्ध नहीं हो सकता। ज्ञानाध्ययको नितरान्य हम कोगीको परनिवेशित नहीं है। चैतन्य घोर ज्ञान यह विमिश्र नहीं है। इसमें चैतन्य नहीं, वा पदो चैतन्य कृपा है, इत्यादि नावैशेषिक व्यवहार द्वारा चैतन्य का विदय कोकार करना होगा। यदि कहा जाय 'इस विषयमें मेरे चैतन्य न वा' इसका पद यह है कि इस विषयमें मेरा ज्ञान नहीं वा, पर सुषुप्ते भी मग्न न चोम होता है, इस कारण इस समय चैतन्य नहीं रहता। सुसुप्ते मग्नने व्यापारिक धवधर्मों पानिने ही ज्ञान हो सकता है। इस कारण मग्न व्यापारिक धवधर्मों प्राय कृपा है, इको तात्पर्यमें पदो धर्मके चैतन्य कृपा है इत्यादि व्यवहार होता है। चैतन्यज्ञानके प्रतिरिक्त होने पर भी मग्न न शेष प्रतिरिक्त नहीं है। ज्ञानानवर्ति मग्नान योग के अत चैतन्य भी ज्ञान है। यह एक पदाव का धर्म नहीं है, ऐसा नहीं कह सकते। बुद्धि विदयके ज्ञानमात्र है केवल उपपत्ति नहीं करता। कारण उपपत्ति ज्ञानने विभिन्न नहीं है। अतएव यह भी अयुक्त है। बुद्धिमें ज्ञान कोकार करनेमें उपपत्ति भी कोकार करने पड़ेगी।

चैतन्य पदाहृतिक घोर विमु पाप्माने स्वीकार नहीं करने पर भी बुद्धि धर्मने ज्ञानादिका प्रतिबिम्ब स्वीकार किया है, अतएव वह पाप्मानो प्रतिबिम्ब नहीं। कर पक्षः, ऐसा भी एव नहीं कह सकते। यदि कहो कि बुद्धि घोर ज्ञानादि विभिन्न नहीं है, तो इस पर भी विचार कर देखनेमें मायूम पड़ेगा कि चटपटादि निश्चिन्त विदय ज्ञानका भी रहना आवश्यक है। किन्तु निश्चिन्त विदयज्ञान कदापि नहीं होता घोर निश्चिन्त ज्ञान ही मत्ता अयुक्त नहीं होती एव एव ज्ञाननाथमें पवित्र ज्ञानाध्यय बुद्धिका नाग स्वीकार करने पर नहीं ज्ञानका नाथ हो सकता है। एक ज्ञान नष्ट कृपा एव ज्ञान रहा ऐसा नहीं कहा जाता। चटपत्तान घोर चटपत्तान एव बुद्धिचे अमिश्र होने पर चटपत्तान घोर चटपत्तान एव हो सकता है, केवल नैवाधिकीके मतमें ज्ञानादि मुख घोर पादमसुषुप्य परस्पर विभिन्न है तथा चटपत्तान घोर चटपत्तान परस्पर विभिन्न है, सुतरो पूर्वोक्त पापति नहीं हो सकते।

मग्न सही इन्द्रियोके साथ एक कालमें अयुक्त नहीं हो सकता, अथवा विभिन्न इन्द्रियके साथ विभिन्नकालमें अयुक्त कृपा करता है और निश्चिन्त विदयके साथ एक कालमें इन्द्रियका अतिरिक्त नहीं होनेके एव कालमें निश्चिन्त ज्ञान नहीं होता। इस बुद्धि विदयमें और भी पदिक प्रकारको विचार-अथाको प्रदर्शित हुई है।

रिपेन बुद्धि अगमें देखो।

एकमात्र एक ही इन्द्रिय है ऐसा कहनेमें भी अयुक्त द्वारा अयुक्त कालमें स्वयं प्रताप हो सकता है क्योंकि अयुक्तियत एक द्वारा स्वयं प्रताप होनेके कारण अयुक्त एकको अगं प्रतापका कारण कहना पड़ेगा। सुतरो अयुक्तियत अयुक्तियत अतिरिक्त होने पर अयुक्तियत प्रताप भी हो सकता है।

एकमात्र स्वनिन्द्रियमें मग्नान योग होनेके मभी इन्द्रियोके साथ मग्नान स कोन स्वीकार करना होगा। सुतरो इस मतमें एक कालमें मग्नो इन्द्रियो का प्रताप हो सकता है। किन्तु नैवाधिकीके मतमें इन्द्रियके विभिन्न होनेके कारण प्रति अयुक्तियत अयुक्तियत अयुक्तियत मग्नो, इन्द्रियोका स योग नहीं हो सकता, मग्नान योगक

कारणके, नहीं' रहने पर प्रत्यक्ष भी नहीं' होगा। यदि कहो, कि एक त्वक्के इन्द्रिय होने पर भी गोलकादि अधिष्ठानाश्रित त्वग्भागके चक्षुः(दि इन्द्रिय स्वीकार करना होगा और तादृग त्वग्भावमें मनःसंयोग नहीं' रहने पर प्रत्यक्ष नहीं' होगा, तब यदि विभिन्न त्वग्-भागकी इन्द्रिय मान लिया जाय, तो प्रकारान्तरमें इन्द्रियका नानात्व ही स्वीकार किया गया, ऐसा समझना हीगा।

प्राचीन न्यायका विषय एक प्रकारसे कहा गया। अब नव्य-न्यायके विषयमें दो एक बातें लिखी जाती हैं।

नव्यन्यायविषय कहनेमें पहले प्रमाणका विषय चाहना आवश्यक है। गङ्गेशने गीतमसूत्रके मूल पर प्रमाण, अनुमान, उपमान और शब्द इन चार प्रमाणोंका निरूपण कर चिन्तामणि प्रस्तुत की है। यही चिन्तामणि नव्य-न्यायका प्रथम है। नव्य न्याय-प्रदर्शित सभी विषयोंका उत्तम विस्तार ही जानिके भयसे नहीं' किया गया, केवल प्रमाणादिका विषय संक्षिप्त भावमें लिखा जाता है।

प्रमा या यदार्थज्ञान—सम्बन्धों और विवक्षादीके भेदसे प्रमा और अप्रमा दो प्रकारकी है। यह प्रमेयान्तर्गत बुद्धिका विभाग है। इनमेंसे पूर्वानुभूत वस्तुका ज्ञान ही प्रमा है, तद्विन्न सभी अप्रमा। इस प्रकार लक्षण जो पहले था, वह प्रमाण पदार्थके चार प्रकारके विभाग द्वारा अनुमित होता है, क्योंकि नव्य न्यायमें प्रचलित तद्वत् तत्प्रकार ज्ञान (उस पदार्थके अधिकरणमें उसी पदार्थका ज्ञान)के ज्ञानमें प्रमा इस प्रकार प्रमालक्षण होने पर स्मृति भी प्रमाके अन्तर्गत होती है। सुतरां तत्कारणत्व ले कर प्रमाणकी पञ्चविधत्वापत्ति प्रीती है। मीमांसकने गीतमका इस तात्पर्यका अनुसरण करके ही अष्टहीतशाहित्व प्रमाका यह लक्षण किया है। पर हाँ, स्मृतिके करणमें तादृग प्रमाणत्व नहीं' है इस कारण उसको प्रमाख्यापत्ति नहीं' होती। वस्तुतः यही युक्त है, कि अष्टहीतशाहित्व ही प्रमात्व है, इस लक्षणमें धारावाहिक प्रत्यक्षादिप्रमामें अध्यागमि दोष होता है। क्योंकि पूर्वानुभूत वस्तुकी विषय करता है, इस कारण

अष्टहीत (आनुभूत) पदार्थशाहित्व उसमें नहीं' रहता और अन्तर्गत भी प्रतिव्यागिदोष होता है। इसीसे उदयनाचार्यने कुसुमाञ्जलि ग्रन्थमें लिखा है, "अप्राम्नेरधिष्ठानान्ते-लक्षणमपूर्वदिक् । यथार्थानुभवो मानं अनपेक्षतयेत्येते ।" अपूर्वदिक अर्थात् अष्टहीतशाहित्वरूप प्रमात्व लक्षणद्वारा नहीं' होता, क्योंकि पूर्वोक्त प्रकार अध्यागमि और प्रतिव्यागमि दोष होता है, अतएव यथार्थानुभवत्व ही प्रमालक्षण है। अनरणात्मक ज्ञानमें तादृग प्रमात्व नहीं' होनेके कारण प्रमाण चार प्रकारका है। उक्त कारिका द्वारा यह भी प्रतीत होता है कि अनुभव और स्मृतिके भेदसे ज्ञान दो प्रकार तथा अनुभव और भ्रम प्रमादके भेदसे दो प्रकारका है, यह प्राचीन परम्परा-अङ्गोक्त है, नहीं' तो मीमांसकसमयत सभी अनुभव ही यथार्थ होने पर 'यथार्थानुभवो मानं' यहाँ पर यथार्थपद वर्ण्य होता है। गीतमने जो प्रत्यक्षलक्षणमें अध्यागमिचारी पद द्वारा यथार्थ इन्द्रियसन्निकर्षजन्य ज्ञानकी प्रत्यक्ष वस्तुताया है वह भी प्रमाप्रत्यक्ष है, लक्षणाभिप्रायसे ऐसा कहना हीगा। स्मृतिमें प्रमाके जैसा तान्त्रिक व्यवहार नहीं' रहनेका क्या कारण ? स्मृति और तद्विशिष्ट तत्प्रकारकत्वरूप प्रमात्वविशिष्ट होता है। इस कारण उसे प्रमाके अन्तर्गत कहना उचित है। ऐसा होनेसे यथार्थ ज्ञानभात्र ही प्रमा लक्षणयुक्त होता है। यही कारण है कि परिच्छेद वा नव्य-न्यायमें 'धनसिद्धन्तु ज्ञानवाचोच्यते प्रमा' ऐसा लक्षण प्रचलित हुआ है। अतएव यह कहना हीगा कि स्मृति, समानाकारक अनुभवसापेक्ष होनेके कारण उसमें तान्त्रिकका प्रमाव्यवहार नहीं' है। अनुभव समानाकारक अनुभवान्तरकी अपेक्षा नहीं' करता इस कारण उसे प्रमा ही तन्त्रमें व्यवहार किया है।

"मितिः सम्भूत परिच्छित्तित्तद्वेषा च प्रमावृता ।

तदयोगव्यवच्छेदः प्रामाण्यं गौतमे मते ॥"

आचार्यका कहना है कि यथार्थानुभवत्व प्रमालक्षण होने पर ईश्वरमें तादृग प्रमाणयुक्त स्मृतिरूपलक्षण प्रमात्व नहीं' रहता। क्योंकि ईश्वरज्ञान नित्य है, उसमें प्रमाणजन्यरूप प्रमात्व वा प्रत्यक्षादिका अन्यतमत्वरूप यथार्थ अनुभवत्व नहीं' है, सुतरां अनरूप प्रमालक्षण युक्त होता है। सम्यक् परिच्छित्ति अर्थात् स्मृति भिन्न

सर्वार्थ ज्ञान ही प्रमा है उसका वाच्य ही प्रमाया तद-
 योग्यत्वच्छेद पर्योत्पत्तिमे समय प्रमाको चयत्ताया
 नहो रहता ही प्रामाण्य है, ऐसा गौतमका अभिप्रेत है ।
 नहो तो "अनाद्युर्ध्वकालाद्यवयव तदावयव अद्य
 ज्ञानायाम्य" इन शून्यके आद्यप्रामाण्यरूपको महति नहो
 कोतो, प्राय-पर्याय् वाक्यान्वयोरथ यद्यार्थं ज्ञानवत्
 सुवचक्यप रीदृशकथं ईदृशमे प्रामाण्य नहो रहता, क्वचि
 अत्रप्रमा नहो कोनिके प्रमासाधनरूप प्रमाकरकत्व भो
 ईदृशमे पक्षभव है । त्रिषु प्रामाण्यको ईदृश करके समस्त
 ईदृश प्रामाण्य स स्थापित होय। ऐसा प्रामाण्य गौतमा
 नियति कोने पर भो "असंज्ञाप्रधानवशा ज्ञानायति" यथा
 पर प्रमाक मन्त्र यथादायुमवसावताप्ययमे तत्र रूप
 है प्रमा कहना होता, + को तो अदुर्बिध प्रमाक सज्जत
 नहो होता । तत्त्वविज्ञानविचार मङ्गलोपाख्यायके मत
 के अन्तो पदार्थत्वके प्रमावाचीन निमित्तोतो है पत-
 न्जय प्रमावत्त्वकी विवेचना सर्वथा कर्त्तव्य है । यह
 कोष कर उक्तमे प्रत्यादि भेदके चार पञ्च भावतत्त्व
 विज्ञानविधको रचना को है— "अनाद्यपीय अर्थां वरत
 त्विरितेऽवसानं तदवयव विवेचते" एते प्रतिज्ञा करमेऽ
 अभिप्राय यह है कि यह प्रमावत्त्व निरूपण करता है
 इन प्रकार प्रतिज्ञा करमेने ही अन्त ज्ञान मनेने । इन
 शास्त्रके प्रवच वा अन्वयन करमेने समी निरर्थको अभि-
 प्रता होवे । गौतमने प्रमेयन यह धारि को कुछ निदंय
 किया है वह तत्त्व चोर प्रमाकके विद्यारण्यरूपमे हो
 विवेचित है । अनुता उपमे जन्मेने प्रमापितर प्रथम
 प्रमाकके माध्यमे यह महार उल्लास को है, "अनाद्य
 र्थां तदा प्रमेयवत्त्वम् वाक्य व. म. भा. भा. भा. भा. भा.
 सम्बन्धते ।" यद्यत् इय माध्यमे को प्रमाकादिवा तत्त्व
 ज्ञानन उपपन्न होता है वह परम्परा निर्येयसमाधन कोनिके
 कारण इन माध्यमे वाक्य बुद्धि वा परम्परा पञ्चमयोरुक्त
 भाव करम्य है । पतञ्ज को प्रमा नहो ज्ञानता, उपमे
 प्रमापिता नहा हा अज्ञता । विर विमित्त ज्ञान विधि
 अचज्ञानपर्यय कोनिके जिन प्रमावत्त्वज्ञानका पक्षी होना
 वा प्रमाक है इन प्रमा तत्त्व वा ज्ञान प्रमः पक्षवा परत
 नहो ही कहता । क्वचि प्रमाकरके मनेने ज्ञान प्रामाण्य
 ज्ञान ही पर होता है चर्चात तत्र समीकक कहने है

कि ज्ञानका प्रमात्व (प्रामाण्य) उन्नी ज्ञानका विषय
 है । कारण ज्ञानमात्र स्वप्रामाण्यरूप है । अतएव
 प्रीमानकके मतके "अधिगोपयेत्यत्र" वाक्याभारत
 विवशः । प्रमा चोर प्रमाज्ञानका प्रायव तथा विषय
 ये समो तत्त्व ज्ञानके विषय है, यह विरस्तन उक्ति
 है । महदा कहना है कि ज्ञान मात्र ही प्रतीन्द्रिय कह
 कर ज्ञानोत्पत्तिके परस्परमे ही चट्टानत रूप है, यह
 अनुभवविध ज्ञानतामिच्छक अनुमानका विषय ज्ञानका
 प्रामाण्य होता है । सुरारि मिय कहते हैं, कि ज्ञानो
 त्पत्तिके पीछे, 'मि मयाव' रूपमे चट्टानता है" इय प्रकार
 को ज्ञानका मानव अनुभव वा अनुभववसाय है उन्नीका
 विषय ज्ञानोका प्रमात्व है । उक्तमे इन सब नैवाधिको
 का मत प्रत्यय नन्वप्रायमे उल्लासन करके प्रमावत्त्वके
 हीनोत्पन्न ज्ञानमे प्रामाण्यरुप मध्यमपर्यय आदि दोषोका
 उल्लेख करती रूप स्पष्टतन किया है । अनुमान यदि
 प्रमात्व निर्वाचक हो, तो अनुमानगत प्रामाण्यके अनु-
 मायक अनुमानात्तर तथा तदवयव प्रामाण्यके अनुमायक
 मानका अनुमान नैवाधिके तुक्त अनवस्थादीय नमता है ।
 जय नैवाधिकेने इन सब दोषोका उल्लासन कर विशाल
 किया है,— यद्यथाकि आभिप्रायमे ही प्रामाण्य क'देक
 होवा चोर तत्र प्रामाण्यनिर्णयके निर्ये अनुमानकी
 परिधा उपमे प्रमाव नहो होगा, अतएव प्रमावोत्पन्न
 आभिप्रायरूप अनुमानमे प्रामाण्यका मानव अनुभवरूप
 निर्यय लभ्य है पतएव प्रमावत्त्वा होत नहो है । उक्तमे
 ज्ञाना प्रकारके माध्यमिक प्रस्तुतिके उल्लासित होवेके निर्या-
 पूर्वक प्रामाण्यरूपमे प्रामाण्यनिर्णयका उपस हार
 किया है उपमे प्रामोच न्यायके विज्ञानवि पक्ष भो
 प्रतत्त्व ही ज्ञाना है, इस कारण विज्ञानवि पक्षकी
 नवा-न्यायमे गिनती हुई है ।

इन सब विज्ञानोका समर्थन करमेने सुप्रामाण्यरूप
 विचारनिवन्धन अनुभावविद्यारण्यकका दार्ष्टान्तिक, मनुवा
 नाक तर्कवागेयकन रक्तक अनुभावकन दार्ष्टान्तिक तथा
 विद्यापीर गदाकर महावायकन दार्ष्टान्तिकोका ये सब
 पक्ष इतने दुर्लभ चोर विज्ञान ही मने है कि उक्त
 हिन्दुमतवामे लभ्यरूपमे लभ्यकिका विद्या करत
 पक्षभव है । एकोके नव विषय बाँके दिया गया ।

गङ्गेशोपाध्यायने असंख्य प्रमासि लक्षण दिखलानिमें नये नये पर्यो का आविष्कार किया है अर्थात् अवच्छेद्य-वच्छेदकभाव, प्रतिशोध्यनुयोगिभाव, निरूप्यनिरूपकभाव, विषयविषयिभाव, प्रतिषध्यपतिष्यकभाव, कार्य-कारणभाव और प्रकारप्रकारीभाव इन सबको विशेषरूपमें पर्यालोचना कर लक्षणसम्बन्धी विशेषणप्रयोगोंकी उसके जैसा करनेमें खनन्व हो जाता है। ये सब बातें पूर्वतन ग्रन्थकारोंसे आलोचित हुई हैं, ऐसा समझमें नहीं आता। पीछे सूत्राधिप्राप्तभावमें वद ले कर एक युगांतर उपस्थित हुआ है, ऐा कहनेमें भी अत्रुक्ति नहीं होती।

प्रत्यक्ष प्रमा—ज्ञान, रमना, चक्षु, त्वक्, और श्रोत्र इस पञ्चविध इंद्रियके गन्ध, रस, रूप, स्पर्श, शब्दादि और पृथिव्यादि अर्थ का तथा अन्तरिन्द्रिय मन का सुखदुःखादि आत्माके साथ सम्बन्धाधीन जो भ्रमभित्त ज्ञान है वही प्रत्यक्षप्रमा है। यह वप्रसायात्मक निर्विकल्प भेदसे दो प्रकारका है, यह अर्थ नवोन मतसिद्ध है। क्योंकि प्राचीनोंने निर्विकल्पज्ञानको कल्पना नहीं की। भाष्यकारका कहना है कि अव्यपदेश्य (शाब्दभित्त) ध्यवसायात्मक (निश्चयात्मक) अव्यभिचारी इन्द्रियसन्निकर्षजन्य जो ज्ञान है वही प्रत्यक्षप्रमा है। सूत्र और भाष्यकारके परवर्त्तो नैयायिकोंने प्रत्यक्षके जनककी इन्द्रियसन्निकर्षके लौकिक और अलौकिक भेदमें दो प्रकारमें विभक्त किया है। इनमेंसे लौकिक सन्निकर्षक प्रकारका है। यथा—संयोग, संयुक्त समवाय, संयुक्त समवेत समवाय, समवाय, समवेत समवाय और तद्विशेषणता।

प्रत्यक्षको अनुमिति और शब्दनिर्वाण—व्याप्तिज्ञानकरणक ज्ञान ही अनुमिति है, जैसे धूमादिके हेतु बह्रादिका अनुमान। फिर एक देशमें इन्द्रियसन्निकर्षसे हृत्वादिके अपर अंशका प्रत्यक्ष किस प्रकार सम्भव है ? इस पर मिहान्त किया गया है कि अनुमिति भिन्न प्रत्यक्ष नामक जो प्रमिति नहीं है, यह स्वीकार नहीं किया जा सकता, क्योंकि मूल वा शाखदिरूप किसी एक देशका जो इन्द्रियसन्निकर्षाधीन ज्ञान हुआ करता है, वह कभी भी अनुमितिके अन्तर्गत नहीं हो सकता।

कारण उक्त ज्ञानके पहले किसी भी व्याप्तिविशिष्ट निष्कर्षा ज्ञान नहीं है। अतएव विशिष्ट गन्ध, रस, रूप, स्पर्श, शब्द प्रभृतिके एक देश नहीं है, इस कारण वे गन्धादि प्रत्यक्ष अनुमितिके अन्तर्भूत नहीं हो सकते। अतएव प्रत्यक्षप्रमाणमें अनुमितिको शब्दा अयुक्त है, फिर हृत्वादि प्रत्यक्षकी जगह एक देशमात्रकी उपलब्धि हुआ करती है, यह भी नहीं कह सकते। कारण अवयवमें अवयव जो पृथक् है यह प्रमाण सिद्ध है, सुतरा अवयव प्रत्यक्षकालमें अवयवका भी प्रत्यक्ष क्यों नहीं होगा ? चक्षुसंयोग जिस समय हृत्तके अवयवमें उत्पन्न होता है उसी समय स्वतन्त्र अवयवो जो समुदित हृत्त है उसमें भी उत्पन्न होती है, यह स्वीकार करना होगा। सुतरा हृत्तमें इन्द्रियसन्निकर्षक कारणसम्बन्धनके अवयवहित परत्तणमें जो हृत्त का ज्ञान होता है उसे अवश्य ही प्रत्यक्ष कारणजन्य होनेके कारण प्रत्यक्ष कहना होगा। इस प्रकार एक देशमें सन्निकर्षावयवः समुदित हृत्तको प्रत्यक्ष चोपपत्ति करनेके लिए शोतमने द्वितीयाध्यायके १२म आहिकमें अवयव सिद्धिप्रकरणका आविष्कार किया है, 'साधयत्वादवयवनिर्देशः' अर्थात् सकम्पत्वनिष्कम्पत्वाद विरुद्ध धर्मक्षयका एकत्र सत्तारूपत्तिप सध्यत्व हेतु अवयवी अवयवसे स्वतन्त्र है वा नहीं ? इस प्रकार सन्देह उद्भावन और समाधान किया है, 'सर्वमहणं अवयवसिद्धेः' अर्थात् स्वतन्त्र अवयव अवयवो विद नहीं होने पर मभोको परमाणुपुञ्ज ही कहना होगा। हृत्वादि यदि परमाणुपुञ्जसे स्वतन्त्र न हो, तो परमाणुगत रूपादिका महत्त्वाभावनिवन्धन जिस प्रकार प्रत्यक्ष नहीं होता, उसी प्रकार परमाणुपुञ्ज और परमाणुसे भिन्न नहीं होनेके कारण हृत्वादिगत रूपादिको अनुपलब्धि प्रापति होती है। फिर अवयवो को स्वतन्त्र स्वीकार करने पर उसके महत्त्ववप्रभावमें हृत्त और हृत्तगत रूपादिकी उपलब्धि हो सकती है। फिर एक देशके धारण वा आकर्षणसे सभी हृत्तके धारण और आकर्षणको उत्पत्ति होती है, जैसे दग्धादिका एक देश उच्चोत्तन वा आकर्षण करनेसे दूसरा देश उत्तोलित वा आकृष्ट होता है। परमाणुपुञ्जात्मक होनेसे

एकके कारणसे दूसरेका कारण उस प्रकार नहीं होता, तबूय एकद्वैती परमाणुत्वके कारणसे अगर परमाणु-गुणका कारण असम्भव होनेके कारण एकद्वैत कारण और पाश्चात्त्यके द्वैतके कारण और पाश्चात्त्यको अनुप-पत्ति होती है। फिर सदादि परमाणुनिवृत्तत्व नहीं होने पर वस्तुके द्वारा वस्तुवादिमा धारणन मो असम्भव है। अतएव एकद्वैतमें वस्तुसर्वव्यवर्ध होनेसे मो समस्त द्वैतमें वस्तुसर्वव्यवर्ध हुआ है, ऐसा कहा जाता है और हम सबव्यवर्धवस्तुसे समुदित द्वैतको उपपत्ति भी युक्त-युक्त है।

‘समी प्रत्यक्षमें, वस्तुवादिमा इन्द्रियके सचिवयं वस्तुत्व समर्थमें यह भावना हो सकती है, क्या इन्द्रिय यथाकालमें रह कर विषयके साक्ष म कल्प होती है? यथा विषयमें नहीं रह कर प्रत्यक्ष उत्पन्न करता है। वस्तु धारणमें क्षान्तमें रहती वृत्त धारणमें रहित जैसा कर विषयके साथ युक्त होता है यह उत्तर महत्त नहीं होता। कारण सर्वव्यवर्धवस्तुके तरह प्रत्यक्ष नहीं होनेके कारण वस्तुको विरक्त है, ऐसा नहीं कहा जाता। इसमें “वस्तुकार नवकारिवर्धवन्” इस सूत्र द्वारा इस प्रकार सिद्धान्त होता है कि रातको मार्जार, मातृक पादिसे वस्तुमें रहित होने जाती है अतः मनुष्य-वस्तुमें भी रहित है, यह दृष्टान्तत्वसे सिद्ध होता है। पर वही वस्तु रहितसे वस्तुमूलकत्वका होनेसे ही उसको उपपत्ति नहीं होती, वस्तुमान ही रहितविशेष है। क्योंकि तिरजपदार्थ जिस प्रकार रात्रिकर मार्जारका वस्तु है, उसी प्रकार सुबोध द्वारा मनुष्य-वस्तुमें भी रहित ही वस्तुमान व्याप धिय है। फिर वस्तुके तिरजपदार्थ होने पर वह क्यादि विषयका प्रकाशक नहीं हो सकता, जैसे पाश्चि-म सदादि एक रूप उस सम्यक धारण इस सम सुबोधमें वस्तु केवल रूप प्रकाशक है। अतएव वस्तु तिरजपदार्थ है। वस्तु यदि पार्थिव होता तो वह धर्मका भी पाहक होता। वस्तुको रहित रहने पर भी विषयमें कुछ नहीं होनेसे वह विषयप्रकाशक है। कारण कांच और धातु तथा स्फटिक प्रकृति स्फटिक पदार्थके उत्पत्ति विषयको भी उपपत्ति होती है। “अतएव तत्र धातुत्पत्ति-रहितत्वमेतौतकल्पे” इस सूत्र द्वारा हम भावना करके

द्विर ‘व वृत्तान्तैरावृत्तवन्तर प्रविशेत्” इस सूत्र द्वारा उसीका निरास्र विद्या है। यदि वस्तु इन्द्रिय असचिच्छेद पदार्थको प्रत्यक्ष कारणमें समर्थ होती, तो वह मितिके द्वारा उत्पत्ति पदार्थका भी प्राप्त कल्पक कर सकते ही। यह प्रतीतिप्रति प्रतिबन्धकत्वसे वस्तु-विरक्त जिस वस्तु पर नहीं पड़ सकते, उस वस्तुको हम लोग हमने भी उपपत्ति नहीं कर सकते। अतएव इन्द्रियसे यह पदार्थका उत्पत्तिवर्ध रहने पर भी प्रत्यक्ष उत्पन्न होता है, यह सिद्धांतमहत्त है। पर वही जो कांच धर्म पादि स्वभावानमें रह कर भी धर्म वास्तुय प्रताक-विधान होता है, उसमें वस्तुत्व नहीं है “अस्ति यथात् उत्पत्तिवर्धवर्धित। अस्तिकारणे स्फटिकान्तरितोपि रक्तं कनिषात्” कांच पादि धर्मवस्तुवादिको मयनरमि भी प्रतिरोधक नहीं होती। अतएव कांच पादि द्वारा व्यञ्जित वस्तु पर भी वस्तुविरक्तिय पतित हो सकती है। जिस प्रकार पाश्चिमायमि स्फटिक वा कांच-विषयमें धर्मःप्रविष्ट हो कर तदावृत्त दाक्ष वस्तुमें वीर्य होती है, उसी प्रकार तिरजपदार्थ वस्तुको रहित कांच धर्म प्रकृतिको मेल कर उत्पत्ति पदार्थमें समुक्त वस्तु न हीमी? ऐसा नहीं कह सकते कि पाश्चिमायमि और स्फटिकान्तरित दाक्ष प्रकाश में प्रवेश नहीं करता, यदि ऐसा हो, तो तदन्तर्गत वस्तु धर्मका दाक्ष पदार्थको उत्पत्ता और दाक्ष उत्पन्न नहीं हो सकता है। जिस प्रकार कुत्तल वस्तुमें तिरजपदार्थ वस्तु और सूत्र प्रविष्ट हो कर उत्पत्ति सम्पादन करता है, उसी प्रकार वस्तु धारणमें रहित द्वारा वस्तु वस्तुमें प्रविष्ट हो कर उसका प्रत्यक्ष ज्ञान उत्पादन करता है, इस प्रतीतिमें वस्तुवादि इन्द्रिय को प्राप्यकारी है इसमें कल्पे नहीं। जो कहते हैं, कि विषयका प्रतिबिम्ब वस्तु पर पड़नेसे ही वस्तु विषयप्रकाशक हो जाता है, उसे भी सुविश्रुत नहीं मान सकते। क्योंकि कांच, धर्म पादि द्वारा धारित वा धारणको पार्थिव पदार्थ है वस्तुवा प्रतिबिम्ब वस्तु पर पड़ नहीं सकता कारण तीजोति रहित पदार्थका आवाधनेद कर वस्तु पर आ प्रतिबिम्बत होनेको उसमें प्रति नहीं है। आवाध हो उसमें प्रतिबन्धक है। ऐसे पादिने सुपका

प्रतिविम्ब उपलब्ध हुआ करता है। सुब पर चतु-
सन्निकर्ष व्यतीत वह किस प्रकार सम्भव हो सकता है।
अतएव यह कहना होगा कि चतुरश्चि दर्पणादिमें प्रति-
बुत हो कर उल्टे सुब पर पतित होतो है, इस प्रकार
सन्निकर्षके कारण तत्रा दर्पणके दोपसे सुबके विपरीत
क्रमवश भ्रमात्मकको उपलब्धि होतो है। अभी चतुरश्चि-
को नहीं माननेसे दर्पणादिमें सुबका प्रतिविम्ब उप-
लब्धिका विषय नहीं हो सकता, अतः यह प्रथम्य हो
स्वीकार करना होगा।

इसके बाद अनुमितिलक्षण और विभाग लिखा गया
है। "अयत्तद्विकं त्रिभिन्ननुमानं पूर्ववत् शेषवत्
सामान्यतो दृष्ट्वेति।" तत्पूर्वकं अर्थात् निद्र निद्रो
नियतसम्बन्धरूप वरामिका प्रत्यक्षपूर्वक जो ज्ञान है,
वही अनुमान कहलाता है। यह अनुमान तीन प्रकार-
का है, पूर्ववत् (कारणलिङ्गक), शेषवत् (कार्य-
लिङ्गक) और सामान्यतोदृष्ट अर्थात् कारण और कार्य
मिन्न लिङ्गक है। नवग्रन्थाप्रक्रममें केवलान्वयो, केवल
व्यतिरेकी और अन्यव्यतिरेकी जिस प्रकार अनुमान-
के ये तीन भेद कहे गये हैं, उसी प्रकार स्वार्थानुमान
और परार्थानुमानभेदसे अनुमान दो प्रकारका है।
वहिव्यतिरेकी विशिष्टहेतु पर्वत पर है इत्यादि रूप जिस
हेतुमें वरामि और पक्षधर्मतानिर्णय है, वही स्वार्थानु-
मान है। फिर वादो प्रथवा प्रतिवादीसे अन्य जो मध्य-
स्थिति उसमें निर्णयार्थ अनुमान प्रकट करना है वही
परार्थानुमान है। यह परार्थानुमान न्यायसाध्य है अर्थात्
पर द्वारा उच्चारित न्यायवाक्यसे उत्पन्न होता है। गौतम-
के न्यायलक्षण स्पष्टतः नहीं कहने पर भी प्रतिज्ञा (साधक
का निर्देश), हेतुप्रयोग (साधकसापेक्षका उल्लेख), उदा-
हरण (दृष्टान्तकथनयोग्य व्याप्तिबोधक वाक्य), उपनय,
(उदाहरणानुसारी अवयव विशेषका उपन्यास) अर्थात्
प्रकृत उदाहरणमें उपदर्शित व्याप्तिविशिष्ट हेतुका पक्ष-
दृष्टिताबोधक वाक्य, निगमन (उही हेतु द्वारा साध-
नीय साधकका उपसंहार) "यथा पर्वतो वहिमान्
धूमान्, यो यो धूमवान् स स वहिमान्, यथा महानसः
तथानासः, तस्यादयं वहिमानिनि" इस पञ्चविध अव-
यवका उल्लेख करनेके लिये ही पंचावयवोपपन्नवाक्य

न्याय है, यह लक्षण गौतमभिप्रेत समझा जाता है।
भाष्यकारका कहना है कि 'प्रमाथैर्यपरीक्षणं न्यायः'
अर्थात् प्रमाणनिश्चय द्वारा अर्थको परीक्षा जिस वाक्यसे
होती है, वही वाक्य न्याय है। भाष्यमें अनन्तरवर्ती
प्राचीन न्यायमें 'पञ्चयोग्यमलिङ्गप्रतिपादकं वाक्यं
न्यायः" इस प्रकार लक्षण दृष्ट होना है अर्थात् पक्षध्व,
सपक्षध्व, विपक्षामध्व, अमत्प्रतिपक्षितस्व और अवाधि-
तस्व इस पञ्चविधधर्मान्वित हेतुका निर्णय जिस वाक्य-
से होता है, वही न्याय है। उक्त सभी प्रकारके लक्षणोंमें
अतिव्याप्तगादि दोष लगता है, क्योंकि प्रतिज्ञा-वपर
न्यायका हेत्वादिघटित पक्षवाक्य भी न्याय हो सकता है
एवं हेतुके बाद प्रतिज्ञा; पौष्टि उदाहरणादिघृतक्रम
प्रयोगघटित वाक्यमसुदायमें अतिव्याप्ति दोष होता है।
फिर भाष्योक्त प्रमाण द्वारा जिस वाक्यसे अर्थपरीक्षा
होती है, वही न्याय है। इस प्रकार चिन्तामणिके लक्षण-
के ऊपर दोषितकारने केवल उपनय वाक्यमें अतिव्याप्ति
प्रभृति दोष देख कर स्रमन्त्र लक्षण किया है,—“उचि-
तानुपूर्वीप्रतिज्ञादिप्रवृत्तवाक्यं न्यायः” उचितानुपूर्वी अर्थात्
यथाक्रम और यथोपयुक्त आनुपूर्वीक्रमसे उक्त ही
प्रतिज्ञादिपक्ष है, तन्मसुदायात्मक वाक्य न्याय कह-
लाता है।

हेत्वाभास।—मूलसूत्र वा भाष्यमें हेत्वाभासके
सामान्य लक्षणका उल्लेख नहीं रहने पर भी चिन्ता-
मणिकार गङ्गेशने सामान्य लक्षण निर्देश किया है,
'वहिव्यक्तत्वेन लिङ्गनस्यानुमितप्रतिषेधकत्व' अर्थात्
जिसके निर्णयसत्त्वमें अनुमिति नहीं होती तादृशदोष-
विशिष्ट जो पदार्थ हेतुत्वमें अभिमत होता है, वही
हेत्वाभास है। हेतु नहीं है, पर हेतुके जैसा दीप्तिमान्
है, वही हेत्वाभास शब्दका व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ है। उक्त
लक्षणके अलक्ष्य 'वहिवान् धूमानित्यादि सहेतुमें अति-
व्याप्ति होती है। क्योंकि वहिगुण्य पर्वत, इस प्रकार
भ्रमका भी वहिमान् पर्वत इस अनुमितिका प्रतिबन्ध-
कत्व रहनेसे जो वहन्यभाव-विषयत्वरूपमें अनुमिति
प्रतिबन्धकता है वही अज्ञातभावरूप दोषविशिष्ट धूमादि
होता है। इसी कारण दोषितकारने कहा है, कि
मादृश्य विशिष्ट विषयक निश्चयज्ञ हो प्रकृत अनुमितिको

प्रतिबन्धकताय प्रतिविद्य हतिलक्षण चक्षुःदृष्टता विद्यित होता है, तद्वय विद्यित हो दोष है अन्तर् बन्धनाया करनेके पुनर्दि हेतुमें बन्धनगुण अथ ही दोष होता है। क्वीकि र्बन्धनगुण अन्वविषयक निश्चयक प्रकृतानुमिति ही जो प्रतिबन्धकता है उसके प्रतिविद्य ज्ञानमें वास्तविक है। किन्तु पर्यंत बन्धिते वाप्यता अन्तर् प्रकृतानुमिति प्रतिबन्धकतागुण जो बन्धन भाववान् है इस प्रकार पदानवगाही बन्धनभावमान प्रकारक निश्चय है, उसमें बन्धनभावविषयक निश्चयक होनेके कारण वेधे परमें प्रकृतमान नहीं लिया गया। क्वीकि अन्तर्का विषय जो बन्धनभाव है, तद्विद्यित पर्यंत नहीं होनेके बन्ध नहीं सिद्धा का पद्यता। पर्यंत बन्धनान् है, इस अनुमितिमें गुण बन्धनभाववान् यह निश्चय जो प्रतिबन्धक नहीं होता। दीक्षितिकारके सचके कर जो दोष प्रमता है, कारण, भावकालमें दृष्टानुसुष्य जो बाह्यमें वा पयामात्र है उससे ज्ञाना सन्दिह बन्धनगुण अन्वविषयक निश्चय अनुमितिका प्रति- बन्धकतागुण होनेके बन्धनगुण अन्वविषयक निश्चयक उक्त प्रतिबन्धकतागुण हति हुआ। सुतरां बन्धनगुण अन्वक- द्वायमें शीघ्रसचके जो तन्वकीय हेतुके शीघ्रसचके दुष्टत्व सचकेवा पयामिन्देय होता है। इसी कारण जनदीय मदाहर प्रकृतिका बन्धना है कि पनाहाय पयामात्र ज्ञानायासन्दिह निश्चय हतिलविद्यित यद्वय विद्यित विपत्तिका व्यापक होता है, प्रकृतानुमिति प्रतिबन्धकता तद्वय विद्यित हो दोष है। तद्वय ही दुष्टत्व है। जगदीय जो मदाहमें इस सचके अवर पन कय दोष दिव्यसति हुए निश्चयमें शीघ्रक अनुसम जोर अनु- पुर्ण विचारसोतुर्ण बिलगाया है साधसाधनदृष्टि धिरोको पचक प्रकृतनाया व्यामिपके विरोधिया- का जो विषय है वही व्यामिचार है। बन्धनविधा काधारक, पदाधारक जोर अनुसम शरीरे के द्वेष्टे हीन प्रकारका है। साधारण्य हेतुके साधारक कचते है। यथा—शब्द निय है क्वीकि वह व्यसंगुण है, यथा पर निश्चयक साधारण्य जो शब्द है उसमें निश्चयके हेतु होनेके कारण निश्चयतागुण हति निश्चयक है ही साधारक है। साधारणिकरणमें पर्यंत हेतु बन्ध

नरक शब्द प्रकृतवान् है, क्वीकि वह यवनिन्दितपाठ है। यथा पर सुवर्णसाधारके पचिकरणमें यवनिन्दित पाठान्न नहीं होनेके कारण पदाधारक हुआ, ऐसा ज्ञानता होता। वेदसाध्यो सर्वत्र वाप्यत्वादि- पयताबन्धेदकादि अनुसम शरीर है। पचकति साधारण्य- क्वीकृतानुमति प्रतिबन्धो हेतु विद्यक है। यथा—गोत्र साधारक पयत्वादि हेतु है, पचक पयतानन्धेदका भावादि पयत्सिद्धि के हेतुगुण पच को कल्पसिद्धि है, यथा—अद्वैत बन्धनवाक भूनादि। पचकविषयक- रूप वाप्यलनुसिद्धि होती है। इस कारण शीघ्रभूम हेतु करने पर भी दुष्टहेतु होता है। विरोधियामय काकोनहेतु सप्रतिपक्षित है, यथा—अरोर पचेतन के क्वीकि यह शीतिह है, जो जो शीतिह है, वे समी चेतनविद्यो न होती है, जैसे यद शरीर पादि। नया दिक्के इस साध्यके समानकालमें यदि पार्थक्य कर्ण, शरीर जो चेतन्यविद्यित है शीतिह बन्ध सचेत है, जो जो सचेत है, वे समी सचेतन है, जो सचेतन नहीं है, बन्ध सचेत जो नहीं है। इस प्रकार चेतन्यका व्यामि विद्यित चेष्टानु शरीर शीर चेतन्यव्यामि विद्यित, शीतिहस्यवान् शरीर इस प्रकार सचेतन्य शीर पचेत नन्व इस विरोधियदाह्यको व्यामि विद्यित चेष्टा शीर शीतिहक्य हेतुके एक पार्थक्य एक पचमें परामय कायमें सप्रतिपक्ष दोषदुष्ट हेतुद्वय विद्यो जो पचके साधनके पर्यायके अनुसमपक नहीं होती। तत्र यदि, "यशरीर शरीरानु पनकके अन्वकित मजाला विभुमान न मज्जा शरीर न शीतिह" इत्यादि श्रुतिका सङ्घ करे तो शरीर चेतन्यनाह तुर्ण होता है। उस समय समानकता नहीं होनेके कारण हेतु सप्रतिपक्षित नहीं होता। शरीर चेतन्यवाच्य नहीं है, इससे प्रतिपादक शीघ्रमवाचकसे चेतन्यको व्यामि विद्यित चेष्टाके शरीरक्यपचमें निश्चयान्कविरोध परामयके परामात्र ज्ञान को कर चेतन्यमानका अनु मान को हतु होता है। साधारण्य पच ही वाच है, यथा—अद्वैत बन्धनविद्यित भूमहेतुह, यथा पर बन्धनगुण अद्वैत वाहदीय हुआ। परकीय हेतुमें शीतिहभावाका बन्धन नैना व्यापकानुमान अन्वयमें उद्योगी है, बंधा

ही स्वीय हेतुमें व्याप्तिपक्षधर्मता दिखानेमें भी प्रकृतोपयोगी है, इस कारण व्याप्ति किस पदार्थ का स्वरूप है, यह जानना आवश्यक है ।

व्याप्तिवाद—अति प्राचीनकालमें लिङ्गलिङ्गीका नियमसम्बन्धस्वरूप ही व्याप्तिका उल्लेख था, अनन्तर वही अव्यभिचारित, सम्बन्ध और अधिनाभावसम्बन्धके कौसा उक्त होता था । पीछे मिद्धपुरुष गङ्गेशने प्राचीन परम्पराप्रचलित अव्यभिचारितल शब्दका ही जो पांच प्रकारके अर्थोंका उल्लेख कर टोप दिखानेते हुए निराकरण किया है उसमें साध्याभावप्रदवृत्तित्व इस लक्षणमें साध्यगुण्यदेशमें हेतुता नहीं रहना ही व्याप्ति है । यथा—युतार्थमें असम्भव होता है, क्योंकि साध्यघट उभयका अभाव और साध्य प्रतियोगिक होनेसे साध्याभाव है, उभयभाव सब जगह है, सुतरां तदधिकरणमें वृत्तित्ता ही धूममें है । इस अव्याप्ति अथवा असम्भव दोषमें तथा 'धूमवान् वह्निः' इत्यादि स्थलमें अतिव्याप्ति दोष होता है इस कारण अनन्तर, साध्यसामान्याभाव और तादृशवृत्तित्तासामान्याभाव आदि लक्षणोंका निवेश किया गया है । यत्किञ्चित् साध्य रहने पर भी साध्यसामान्यका अभाव नहीं रहता, सुतरां पर्वत पर वह वृद्धि नहीं है, ऐसी प्रतीति होने पर भी वृद्धि नहीं है ऐसा नहीं कह सकते । साध्यसामान्याभाव निवेश करके लक्षणवा अर्थ उच्य होता है कि अनुमितिकी विधेयतारूप साध्यतामें अवच्छेदकमिन्न जो धर्म है तसिद्ध अवच्छेदकताका अनिरूपक और साधयतावच्छेदकानिष्ठ अवच्छेदकताका निरूपक जो प्रतियोगिता है, उभयका निरूपक जो अभाव है, तदधिकरण-निरूपित वृत्तित्ताभाव-व्याप्ति, वहि घट दोनों नहीं है, यह प्रतीतिसिद्ध अभाव साधयतावच्छेदकके अतिरिक्त उभयत्वधर्मनिष्ठ-अवच्छेदकताका निरूपक होनेसे तादृशसामान्याभाव नहीं है अतः साधयतासामान्याभावाधिकरणधूमाधिकरण नहीं होता, सुतरां अव्याप्ति दोष नहीं लगता है । साध्याभावाधिकरणवृत्तित्वसामान्याभाव निवेश नहीं करने पर भी तादृश वृत्तित्व जलत्व उभयभावादि आदान करके व्यभिचारि-स्थलमात्रमें अतिव्याप्ति होती है । "धूमवान् वह्निः"; इत्यादि घलक्ष्यस्थलमें धूमरूप साध्या-

भावाधिकरण जलज्जदनिरूपितवृत्तित्वाभाव वहि हेतुमें रहता है इस कारण तथा धूमरूपसाध्याभावाधिकरण-निरूपितवृत्तित्व जलत्व एतदुभयभाव वहिहेतुमें रहनेसे लक्ष्यमें लक्षण होता है, सुतरां अतिव्याप्ति है, "अतएव साध्याभावाधिकरणनिरूपितवृत्तित्वं नास्ति" इत्याकारक प्रतीतिसिद्ध तादृशवृत्तित्व सामान्याभाव निवेशपूर्वक अतिव्याप्ति वारण करने हीतो है । वृत्तित्वसामान्यभाव निवेशको प्रणाली अति दुरुह और विस्तृत होनेके कारण प्रागे नहीं लिखी गई । इस रीतिसे एक एक लक्षण विशेषरूपसे निवेश प्रवेश कर अति दुरुह और नानारूपकी कल्पना करनेमें व्याप्तिरक्षक भी विस्तृत हुआ है । यही पांच लक्षण साधयता अभाव अथवा साध्यावशिष्टका सामान्यमेदघटित होनेसे केवलान्वयिस्थलमें (जिसका अभाव अपसिद्ध है ऐसे साधयता हेतुमें) अव्याप्ति दोषसे परिरक्षक हुआ है । पीछे सिद्ध व्याप्तेक लक्षणद्वय-एवं सुन्दरीपाध्याय-मतसिद्ध व्यधिकरणरूपमें अभावघटित अनेक प्रकारके लक्षणोंकी कल्पना पर निराश और पूर्वपक्षोक्त बहुविधलक्षण परिहारपूर्वक सिद्धान्तलक्षण किया है, "प्रतियोग्यसामानाधिकरणयत्समानाधिकरणान्यन्ताभावप्रतियोगितावच्छेदकावच्छिन्नं यन्न भवति तेन समं तस्य सामानाधिकरण्यं व्याप्तिः" अर्थात् जिस हेतुके आश्रयमें वर्त्तमान अभायीय प्रतियोगिताके विशेषको-भूतधर्म विशेषसे भिन्न जो साधयता है उसके अधिकरणमें उस हेतुकी सत्ता ही व्याप्ति है । जैसे पर्वत वहिमान् है, क्योंकि वहां धूम है । इस प्रकार धूमहेतुक वहि साधयकस्थलमें हेतुका अधिकरण जो पर्वत चत्वर, गोष्ठ और महानस उसमें वर्त्तमान जो घटाथभाव है, तदीय प्रतियोगितावच्छेदक जो घटत्व गोज्व प्रभृति है, तदवच्छिन्न जो घट और गोष्ठभृति है, तद्विन्न वहिरूप साधयके साथ धूमरूप हेतुमें जो एकाधिकरणभाव है, वही वहिकी व्याप्ति है, इस लक्षणमें उक्त स्थल पर ही अव्याप्तिदोष होता है हेतुके अधिकरण पर्वत पर महानसोय वहिका, महानसमें पर्वतीय वहिका, चत्वरमें गौठादिनिष्ठवहिका, गोठमें चत्वारादिनिष्ठवहिका जो अभाव वर्त्तमान है, तत्तदभाषेय प्रतियोगिताका अवच्छेदकोभूत तत्तदव्यक्तित्वविशिष्ट समो वहि होती है,

ऐसा कहने पर भी प्रतियोगिताका पक्के-कोमूतबर्तन
 चिह्न काय होमिजे कारण यह है जो मान नहीं मान
 कहने। पतनके तादृशभाव समानाधिकरणरूप व्याप्ति
 लक्षणका उक्त लक्षणमें नहीं होता व्याप्तिद्वेष होता
 है। इसीसे प्रतियोगिताका प्रमाण ही कहते हैं,
 'प्रतियोग्यमानाधिकरणरूपद्वेषविशिष्टप्रमाणानाधिकरणका
 व्यवसायप्रतियोगितापक्केद्वेषो जो धर्मसादयभाव-
 किञ्चन वेन वीत्यादि सम समानाधिकरण तद्वेषविशि
 ट्त्व तदभावकिञ्चनपावकिञ्चिद्विना व्याप्ति।' जोय प्रति-
 योगिताके पक्षिकमें पक्षिक जो कर जो हेतुतापक्के-
 दक्षकविशिष्टके पक्षिकमें वक्तमान होता है जो जो
 पक्षिक तत्तद्वेष प्रतियोगिताका पक्केद्वेष नहीं होता,
 जो साक्षात्पक्केद्वेष धर्म तद्विगिट विन विनो पावा
 पक्षिके माव विन हेतुको जो पक्षिकिकरणविशिष्ट है,
 वही धर्म हेतुतापक्केदक्षकविशिष्टहेतु है, वही कारण
 तावक्केदक्ष धर्मविगिट निवृत्ति व्याप्ति है। धर्मतोय
 नव व्याप्यविगत तत्तद् व्याप्तिव धूमलक्षर हेतुताप-
 क्केदक्ष विगिटका पक्षिकरण पक्षिकत्वमासीय प्रति-
 योगिताके घटनादिने तरह पक्केद्वेष होने पर भी
 तद्वेष किञ्चनका साक्षात्पक्केदक्षविशिष्ट यहिका
 जो सामानाधिकरण है वही साक्षात्पक्केद्वेषो व्याप्ति
 हुआ। धर्मतादृश व्याप्तिमान ही पक्केद्वेषविशिष्ट
 लक्षण है। इस लक्षणके प्रतियोग्यमानाधिकरण पक्षिक
 लक्षण पक्षिक साक्षात्पक्केद्वेष साक्षात्पक्षिके शोनीका लक्षण
 कक्षिके शोनीपक्षिके ही स्वतन्त्र पक्षिक है धर्म में
 धर्मो लक्षण स्वतन्त्ररूप हुए हैं। साक्षात्प्रतियोगिता
 पक्केद्वेषाधिकरणपक्षिकहेतुमत्ता तादृश प्रति-
 योगितापक्केद्वेषसाक्षात्पक्केदक्षविशिष्टमानाधिक-
 णरूप व्याप्ति। त्रिप्रकार प्रतियोगितापक्केदक्ष-
 विशिष्टके पक्षिकरणहेतुका पक्षिकरण होता है, वही
 प्रकार प्रतियोगिताके पक्केद्वेष धर्म निय साक्षात्पक्के-
 दक्षविशिष्टके पक्षिकरणहेतुका वक्तमान ही वक्तमान
 है। इस लक्षणमें धर्म साक्षात्पक्षिक मध्यममें घटनापक्ष
 साक्षात्पक्षिकहेतुमें पक्षिकहेतुके ही वही धर्म साक्षात्
 पक्षिक साक्षात्पक्षिकमें समो वक्तमान पक्षिकरण वक्तमान
 होता है। दूसरे जो पक्षिक मान का लक्षण निय साक्षात्

धर्म पक्षिकके प्रतियोगितापक्केदक्ष विशिष्टका पक्षिक
 कारणसाक्षात्पक्षिकहेतुपक्षिकहेतुको जोत, इस कारण पक्षिको
 भी पक्षिकके प्रतियोगिताको तादृश प्रतियोगिता नहीं
 मान कहते। दूसरे उक्त लक्षण यहाँ नहीं जाते। इससे
 बाद प्रतियोग्यमानाधिकरणरूपदक्षके लक्षणरूप पक्षिकविशि
 ष्टके लक्षणका जानेने सममें भी साक्षात्पक्षिकसाक्षात्पक्षिक
 सममें दोय होता है। पक्षिक पक्षिकमें वहीसे ऐसा लक्षण
 किया है, किञ्चनप्रतियोग्यमानाधिकरणहेतुमत्तसाक्षात्पक्षिक
 योगितासामान्यो यत्प्रमाणव्यवहितत्ववक्तमानपक्षिक-
 लोभयमानावक्षो मध्यममें तादृशमानाधिकरणरूप पक्षिक
 कोशः' इस पक्षिकमें प्रमाणरूपदक्षके व्याप्ति धर्म
 साक्षात्पक्षिक साक्षात्पक्षिक लक्षणका पक्षिकरण कर प्रमाण
 हीय धर्म गटापक्षिक हीका पक्षिक विपक्षिक हुए हैं।
 त्रिप्रकार पक्षिकके हीय प्रतियोगिताके पक्केद्वेष
 पक्षिकमें वहीय प्रतियोगिताका पक्केद्वेष धर्मविशिष्ट-
 का पक्षिकरण निय होता है जो पक्षिकरण है धर्म
 पक्षिकके प्रतियोगितामें जो मध्यमपक्केद्वेष है, साक्षात्
 तावक्केदक्ष जो धर्मोपक्केद्वेष है इस धर्मोका
 पक्षिक रहता है यह हेतुका व्यापक होता है। धर्म
 साक्षात्पक्षिक उक्त धर्मविशिष्ट पक्षिक व्यापकोमूत साक्षात्
 पक्षिकधर्ममें हेतुको पक्षिकको वक्तमान है। वहीय प्रति-
 योगी घटनादिना पक्षिकरण धूमलक्षर हेतुके पक्षिकरण
 में वक्तमान जो जो घटनादिना पक्षिक है, उक्त प्रति-
 योगितासामान्यमें ही स योग्यमानाधिकरणरूप धर्म पक्षिक
 साक्षात्पक्षिक इन दोनोका पक्षिक देना जाता है। दूसरे
 स योग्यमानाधिकरण पक्षिकविशिष्ट धूमलक्षर व्यापक हुआ।
 समके पक्षिकधर्ममें वक्तमान है, पक्षिक धर्म ही पक्षिकका
 व्यापक हुआ। मिथ्या लक्षणका प्रतियोगितापक्केद्वेष
 पक्षिकका घटना जो पक्षिकहेतुका है वक्तमान प्रकार है
 लक्षणधर्मरूपके ही प्रतियोगिताका धर्मविशिष्टप्रति-
 ष्टरूप है ? इस प्रकार साक्षात्पक्षिक पक्षिकहेतुका
 निर्वचन करके पक्केद्वेषत्वनिवृत्ति लक्षण ही हीय प्रति-
 योगी पक्षिक धर्म पक्षिकको रहता ही है। ये पक्षिक पक्षिक
 लक्षण लक्षणके लिये मध्यमधर्म धूमलक्षर पक्षिक
 पक्षिक प्रतियोगिताका पक्षिक लक्षण प्रतियोगिता पक्षिक
 पक्षिकहेतुका व्यापक है हीय विनका पक्षिक

दक होता है, अवच्छेदक शब्दका क्या अर्थ है, पचच्छेदकता किन्तु प्रकारको है, निरूपितत्व और निरूपकत्व, अधिकरणत्व, आवेष्टत्व, विप्रपञ्च, विपरिग्रह, प्रकारता, प्रकारिता आदि विषय विगोपरूपमें जानना आवश्यक है और किसी पदार्थको ले कर नागरूप लक्षण और उसका दोषानुसन्धान करते करते व्यामिश्राद भी इतना विस्तृत हो गया है कि उसके पद्यान करनेमें तीन चार वर्ष लगेंगे ।

'यस्याभावः स प्रतिगो', जिनका अभाव है, वही पदार्थ अभावका प्रतिगो होता है, क्योंकि प्रतिगो अर्थात् प्रतिकूलमन्वय उसमें है, प्रतिगोका असाधारण धर्मरूप जो प्रतिगोविता है उसका इतरव्यावृत्तक विशेषत ही अवच्छेदक है। वह अवच्छेदक दो प्रकारका है,—संयोगादिमें मन्वय अवच्छेदक और प्रतियोग्य शमें प्रकारोभूत धर्म अवच्छेदक, प्रतियोगिताकी निरूपित अवच्छेदकता, अवच्छेदकताकी निरूपक प्रतियोगिता और प्रतियोगिताका निरूपक (निर्णायक) अभाव आदि विषय जो जानते हैं, वे ही उक्तविध लक्षण जाननेके अधिकारी हैं।

चार्वाकका कहना, 'सर्वमिदं वराग्निनिश्चये सति स्यात्' "तदेव तु न भवति उपायाभावात्" अर्थात् प्रत्यक्षातिरिक्त अनुमितिरूपतन्त्र प्रमा तमो सिद्ध होता है, जब वराग्निनिश्चय हो सके, वही वराग्निनिर्णय तुम्हारे उपायका अभावहेतु असम्भव है। इस कारण वराग्निविदा सिद्धान्त करके भी नैययिकोंने वराग्निप्रमाणका उपाय नहीं किया है। अनेक स्थल पर यद्यपि बार बार सहचार दर्शन वराग्निनिर्णायक न हो, तो भी वराग्निचर ज्ञानका असहस्रत सहचारज्ञान जो वराग्निनिर्णयका कारण है उसमें सन्देह नहीं। अन्यथा त्रिसाधनार्थी भोजनार्थ प्रयत्न नहीं होता और जो भविष्यसोजन भविष्यत्कृतिका कारण है उसके सम्पादनके लिये प्राणित्वन्द इतना व्याकुल नहीं होता। इष्टसाधनतात्रन छोड़ कर जब कहीं भी प्रयत्न देखा नहीं जाता, तब अवश्य ही कहना होगा कि भोजनप्रयत्न पुरुषके भोजनमें त्रिरूप इष्टसाधनत्व निर्णयित था, तद्वग इष्टसाधनत्वनिर्णय कभी भी प्रत्यक्षात्मक नहीं हो सकता। भविष्यज्ञानके त्रि-

साधनत्वके सम्बन्धमें कोई भी उपदेय वा स्मृति नहीं है। केवल मात्र भोजन ही त्रिसाधन है, इस प्रकार भोजनमें त्रिसाधनत्व ज्ञानात्मक व्यातिनिर्णयवगतः, भविष्यसोजनमें त्रिसाधनताका अनुमानात्मक निर्णय हुआ करता है। सुरा भोजनत्रिसाधनताका अभाव भी होता है, इस प्रकार व्यभिचारानुसन्धानके नहीं रहनेमें किसी भी भोजनमें ही त्रिसाधनताका ज्ञानरूप त्रिसाधनताके सहचारदर्शनमें भोजनत्वमें त्रिसाधनताका अव्यभिचारित सम्बन्धरूप पूर्वाक्त व्यातिनिर्णय अवश्य ही स्वीकार्य है। इस प्रकार विचारपूर्वक सिद्धान्त करनेमें व्याग्निप्रहोपाय नामक व्याग्निवादेके अन्तर्भूत ग्रन्थान्तर प्रणीत हुआ है। कई जगह व्यभिचार संग्रहके निराकरणार्थ तर्क भी विशेष उपायो होता है। महर्षि गौतमने कहा है, "अविज्ञाततत्त्वेऽत्र कारणोपपत्तितः तत्त्वज्ञानार्थं जहस्तर्कः।" इसका तात्पर्य यह कि व्याप्य सा आरोप प्रयुक्त होता है, जो व्यापकका आरोप है वही तर्क है अर्थात् जिस पदार्थके विना नहीं रह सकता उसका आरोप वा आश्रित करके जो उस पदार्थका आरोप होता है, वही तर्क पदार्थ है। उस तर्क पदार्थका प्रयोजन अविज्ञाततत्त्वपदार्थका तत्त्वज्ञान है। वह तर्क नव्यन्यायके अनुसार पांच प्रकारका माना गया है—आत्मान्वय, अन्यान्यान्य, चक्रक, अनवस्था, तदन्यवाधितार्थप्रसङ्ग। तर्कका विशेष प्रतिपादन करनेमें तर्क नामक एक ग्रन्थ रचा गया है। व्यापकपदार्थका अभाववक्तानिश्चय जहाँ रहता है, वही स्थान व्याप्यके आरोपाधोन व्यापकका आहार्यारोपरूप तर्क हुआ करता है। पक्षत यदि वहिर्गन्ध ही, तो वह निर्धूम होगा। इस प्रकार वहिर्गन्धभावत्क व्याप्यके आरोपाधोन धूमाभावात्मक व्यापकका आरोप ही तर्क हुआ। सक्त तर्कबलसे आपादकीभूत धूमाभावकी अभावस्वरूप धूमवक्ता निष्पाधोन आपाद्य वहिर्गन्धभावके अभावस्वरूप वहिका अनुमानात्मक निर्णय होता है और धूम यदि वहिर्गन्धमच रो ही, तो वह वहिर्गन्ध नहीं होगा, इस प्रकार तर्कबल वक्ता अनवस्था निर्णय धोन वहिर्गन्धमिचाराभाव धूममें निर्णयित हुआ करता है। अनेक विन्तामणियोंमें व्याग्निप्रहोपाय

उपाय, तर्क निर्बन्धन योद्धे इत्यादि चौर श्रामान्यलक्षण । धनस्तत्र पञ्चतानिर्बन्धन पञ्चान् निर्बन्धित पदार्थको यन्तु मिति नही होमिने यन्तुमिति कि प्रति साध्यबन्धन चौर इच्छासुप्रभाचीन मतमिद पञ्चताका कारणस्यनिगम पूर्वक यन्तुमिच्छासुय पाकनिर्बन्धने पञ्चतानको कारण बननावा है । इसकी उत्तर कागदीसी माहाचरो पादि विरयत टीका रही है । गङ्गेशनि परामर्शक कारण निर्बन्धन योद्धे स्वाभाविक तदन्तर इत्यादिमिद निरूपण, यन्तुमिद ईश्वरानुमानका रूपनकार यन्तुमानकय शिव किया है ।

शिव शब्दकथ । शब्दका प्रामाण्य—यन्तुमान त्रिस प्रचार प्रक्याचारितिरिक्तस्वतन्त्र प्रमाण है शब्द मो इहो प्रचार प्रक्याचारानुमानोपमानके स्वतन्त्र प्रमाण है । महर्षि योतनकृत 'बायोपदेशः शब्दः' इस सूत्र द्वारा शब्दप्रामाण्यका कथन प्रतिपादित हुआ है । पाठ परब्रह्म ब्राह्मणार्थ गोचर यथाक' ज्ञानशान् पुत्रव है, तदुच्चारित को वाक्य है नही प्रमाण है । नञ्प्रयोगके मतमें यामति, पाकाहा, तात्पर्य चौर बोधतावदुक्ताका ही प्रमाण है । क्योंकि यथाकि वाक्यार्थविषयक ज्ञान रहने पर भी तदुच्चारित योडादिने पर अनिश्च व्यञ्जिते प्रमाणक शब्दबोध उत्पन्न होता है । कौत्सिकशास्त्रमें भी यनिक समय स्वभावक शब्दबोध हुआ करता है, इस कारण सभी कौत्सिक शास्त्रको प्रामाण्य नहीं है । श्रम, प्रमाद, प्रता रथिच्छम, कारकापाटन यह दोषयत्तुद्वरहित पाप पुत्रयो चारित यमो वाक्य प्रमाण है । तादृश पात्रे चारित ही शिदका प्रामाण्य है । 'अन्वहृत्' इत्यादिप्रमाणक तत् प्रामाण्य पात्रशामाच्छात्' इन स्वायम्भुव द्वारा शब्द प्रामाण्य परोक्षप्रकरणमें उक्त तात्पर्यमुक्तक को शिदप्रामाण्य सिद्धात हुआ है चौर यामति, पाकाहा तात्पर्य चौर योष्यताविशिष्ट वाक्य को स्वतन्त्र प्रमाण है इसकी प्रथममें पूर्वपक्ष चौर सिद्धान्त चरमिमें शब्दप्रामाण्य नामक चित्तमिदिके यन्तुमिद एक विस्मृत पक्ष हो जाता है । यामति पाकाहा तात्पर्य चौर बोधता इन्हीं चार विषयों पर चार पक्ष रथि रथि हैं, तदन्तर शब्दानिष्ठातावाद चौर योद्धे प्रमाणके पक्षकेदिएप निराल्प कथनमें उक्तप्रमाणकवाद नामक चौर भी एक पक्षकी

रचना को मई है । वाक्यत्ववचने वादको एक विशिष्ट-ज्ञान उत्पन्न होता है नही शब्दबोध है । यह शब्दबोध पदज्ञान ही कारण है, क्योंकि पदज्ञान पदार्थकी स्थिति उत्पन्न कर उक्त विशिष्टबोधका यन्तुमुक्त होता है । यनिक समय पदज्ञान याम चक प्रत्यक्षान्त इ चोनि पर मो पदके पक्षविधान शिव देख कर मोनि योषा'दका शब्द बोध हुआ करता है, इस कारण पदका ज्ञानमात्र ही उत्पन्न कारण है । पुत्रक देखनेसे हम योत्सुकि को ज्ञान उत्पन्न होता है यह चिह्नविमिश्रण पञ्चादि पक्षमें ज्ञानसुय पदस्वति होता है, इसी कारण उत्सुकि पुत्रक प्रतिपाद्य विषयका यन्तुमन होता है । उक्तका प्रमाण—कोरि भी मनुष्य यदि कश्चि कि तन्पार सुत्र उत्पन्न हुआ है यथवा पुत्रका दिशान्त हुआ है तब इव' चौर विवाद दोनों ही होते हैं, यतएव यह कहना होगा कि शब्दके इदि शेषक पराबोधकिति वा सुत्रकय चौर मरथ एव शब्दव्याप्य मरथ मात्र ही हो तो चर्च' चौर विवाद किसी प्रकारके ही उत्पन्न नहीं । क्योंकि कोरि भी मनुष्य कथ पञ्चवा मरथ शब्द मात्रमें चर्च' विवादोपपन्न नहीं होता । किंनि हमारे सुत्र उत्पन्न हुआ है इत्यादि विशिष्टसुयि रथिने हो इवोदि उत्पन्न होता है । इसको विशिष्टसुयि रथित नहीं कह सकते, क्योंकि पक्षके शिवा यन्तुमन नहीं होता । इने प्रत्यक्ष भी नहीं कह सकते, क्योंकि तादृश विशिष्टार्थमें इन्द्रियनिश्चय' नहीं है । फिर यह यन्तुमान भी नहीं है, कारण व्याघ्रिज्ञान वा व्यञ्जिका कथकापक्ष कोरि भी नहीं है । रथि यन्तुमान भी नहीं मान सकते कारण तन्वरचीमूल पदार्थका शक्तिपक्ष कोरि भी शक्तिज्ञान नहीं है । चतुरां शब्दबोध स्वतन्त्र प्रमा चोर् तन्वाच शब्दप्रामाण्यविषय हुआ ।

उक्तप्रमाण यामयन क्षति इत्यादि निराकाहा वाक्य उदादि पक्षके उत्तिययता उपकापक्ष होमि पर भी उक्त कर्मताक यामयन कर्त्तव्य इत्यादि विशिष्ट सुयि उत्पन्न नहीं होतो इस कारण उतपदोत्तरत्वविशिष्ट को 'यम्' पद तथा 'यम्' पदोत्तरत्वविशिष्ट पाङ्गपूर्वक नीपट गोपदोत्तरत्वविशिष्ट 'दि' पदकथय 'उत्तमानव' इत्यादि कसौय वाकाहा ज्ञानको कारणता उक्त प्रथम-

बुद्धिमें अवश्य स्वीकार्य है। 'बहिना सिञ्चति' इत्यादि योग्यताविहीन वाक्यसे अन्वयबोध नहीं होता, अतः बहि-करणकारत्ववत्त्वरूप योग्यताज्ञान और शाब्दबोधमें कारण है। सेचनरूप पदार्थमें बहिहरणशक्तका बोध है; इस कारण तादृश योग्यताज्ञान अमभव है। सुतरां बहि-हरणकसेक इत्याकार अन्वयबोध भी नहीं होता। जिस पदके अर्थके साथ अन्वयबोध होता है, उस पदके अर्थको उस पदमें सत्ता ही योग्यता है, तादृश योग्यताका प्रमात्मक ज्ञान ही शाब्दप्रमाका निदान है। पदके अन्वयधानमें उच्चारण रूप आसक्तिज्ञान भी कारण है। वक्ताका अभि-प्रायरूप तात्पर्यनिर्णयत्मात्मक उक्त अन्वयबुद्धिमें कारण होता है।

इस शाब्दबोधमें 'घटमानय' इत्यादि आनुपूर्व्यविशेष-रूप आकाङ्क्षा और वक्ताके इच्छास्वरूप तात्पर्यका निर्णय, निकटमें उच्चारणरूप आसक्ति और जिसमें जिसका अन्वय ही उसमें उसका बोध नहीं रहनेके समान योग्यताका ज्ञान जैसा कारण है, पद पदार्थका नियत सम्बन्धरूप वृत्तिज्ञान भी वैसा ही कारण है। वह वृत्तिमद्धेत और लक्षणा अन्वतररूप है। गदाधर भट्टाचार्य का कहना है, "मद्धेतो लक्षणा चार्थे पदवृत्तिः।" "आजानिकस्त्वधु-निकः सद्धेतो द्विविधो मतः, । नित्य आजानिकस्त्व या शक्तिरिति गीयते।" यह जगदीशका कथन है। आजानिक और आधुनिकके भेदसे मद्धेत दो प्रकारका है जिनमेंसे भगवद्विच्छारूप नित्यमद्धेत है अर्थात् इस शब्द-में यह अर्थ मनुष्यको अनुभवगम्य ही, इस प्रकार ईश्वरीय इच्छा ही नित्यमद्धेत है, उसीका नाम पदकी शक्ति है। सृष्टिकालमें गो-प्रभृति शब्दका गवा-द्यर्थका तात्पर्यमें प्रयोग देख कर अनुमिन होता है कि ईश्वरको ही ऐसी इच्छा है कि गो-शब्द गवाद्यर्थका अनु-भावक ही, इस प्रकार भगवद्विच्छारूप गो-पदका शक्तिग्रहमुलक ही कालान्तरमें 'गो आनयन' इस प्रकार साक्षात् गवादिपदज्ञानाधीन गवाद्यर्थका स्मरण हो कर गौका आनयन कर्त्तव्य है, ऐसा अनुभव होता है। शास्त्रकारोक्त नदी और वृद्धि आदि पदके स्त्रोक्तविहित क, ईप, और आर, ऐ, औ आदिमें जो आधुनिक शास्त्र-कारीय मद्धेत अर्थात् शास्त्रकारका जो नदीपद है, वह

क, ई और वृद्धिपद आर, आदि वर्णका अनुभावक ही, इस प्रकार जो इच्छा है वही आधुनिक मद्धेत है। इसका दूसरा नाम परिभाषा है। प्रथमतः मद्धेतग्रहके उपाय वृद्ध्यवधारको ही शास्त्रकारोंने निर्देश किया है, इसीसे जगदीश कहते हैं, "मद्धेतस्य ग्रहः पूर्वं वृद्धस्य व्यवहातः। पद्यादेशोपमानार्थः शक्तिधोपूर्वकैरसौ।" प्रथमतः ध्युत्पन्न किमो पुरुषके शब्दाधीन व्यवहारको देख कर जान कके शक्तिग्रह हुआ करता है, पोछे शक्ति-ज्ञानपूर्वक सादृश्य ज्ञानरूप उपमान व्यकरण कोप, आमवाक्य, निरूपदके सन्निधि वाक्यशेष और विवरण आदि पदकी शक्ति वा मद्धेतग्रह होता है। जिस पदके मद्धेतग्रह नहीं है, उसके अन्वयमन्वयरूप लक्षणाज्ञान भी नहीं रहता। सुतरां उस पदका ज्ञानाधीन किमोके भी गत्यानुभव नहीं होता। इस शक्तिको निर्वाचन करने में गदाधर भट्टाचार्यने अति दुरुद्ध एक विफल ग्रन्थको रचना की है, जिसमें शक्तिज्ञानका शाब्दबोधके प्रति कैसा जनकत्व है और शक्ति ही क्या पदार्थ है, किस शब्दके कौसे अर्थमें शक्तिको प्रयोग होता है इत्यादि विषय-विशेषरूपसे प्रतिपादन किये हैं।

जगदीशने शब्दके प्रामाण्यके सम्बन्धमें पामत निरा-करणपूर्वक शब्द जो स्वतन्त्र प्रमाण हैं उसे संस्थापनाग-न्तर प्रकृति, प्रत्यय और निपात इन तीन प्रकारोंमें सार्थकशब्दका विभाग किया है। इनमें नाम और धातुके भेदसे प्रकृति दो प्रकारको मानो गई है।— वह नाम रूढ़, लक्षक, योगरूढ़ और योगिकके भेदसे चार प्रकार-का है। जिसका जिस अर्थमें मद्धेत है, वह पद उस अर्थमें रूढ़ है, उक्त रूढ़ नाम हो संज्ञा नामसे प्रसिद्ध है। यह संज्ञा तीन प्रकारको है— नैमित्तिकी, पारि-भाषिकी और औपाधिकी। गो मनुष्य प्रभृति संज्ञा गौत्व, मनुष्यत्व जातिविशिष्टकी वाचक होनेसे नैमि-त्तिकी और आधुनिक मद्धेतविशिष्ट नदी वृद्ध्यादिपद औ पारिभाषिकी संज्ञा है। विशेषगुणविशिष्ट आगान्धवादि अनुगत उपाधिविशिष्टमें मद्धेत होनेसे भूत दृतादि शब्द औपाधिकी संज्ञा है। लक्षक नाम नाना प्रकारका है— जहत्स्वार्थलक्षणा, अजहत्स्वार्थलक्षणा, निरुद्धलक्षणा और आधुनिकलक्षणा इत्यादि। पद्धजादि शब्द-स्वघटक,

पदसे कृत्स्नसम्पन्न पदों के साथ सम्बन्ध—यथादिशा शेष
 ज्ञानके होनेसे योगपदक है। पाचकादि सम्पन्न शेष-
 षट्कपदके शेषार्थ भासना अनुभव होनेसे प्रीतिगच्छ है।
 ये सब विचार नामरूपरत्न विषये पदपदके प्रतिपादित हुए
 हैं। प्रकृति, प्रकृत्य और गिजातादिसे लक्षण भी यथाक्रम
 वर्णित हुए हैं। तदन्तर योगिक नामके 'पञ्चमैत
 समासता कश्चन शेर विमाय प्रतिपादन करके समास
 नामक कृतम्ब प्रकरण हुआ है। बाद पठ करके शेर
 तथाकारकका व्युत्पादनपूर्वक कारक नाम सुदीर्घ प्रकरण
 रचा गया है। इस कारकप्रकरणमें प्रत्यग्वी विमञ्जि,
 धत्त्व इ, तदित शीर इत चार प्रकारोंमें विमञ्जि विमञ्जि
 पादिका धामात्रकश्चय शीर विशेष कश्चय वर्णित है।
 विमञ्जि दो प्रकारकी है, सुप, शीर तिङ्। इनमेंसे सुप,
 कारकायं शीर इतराचं है, आत्मार्थमें जो विमञ्जयं
 प्रकार कह कर अनुभवका विषय होता है, वही कार
 कायं शीर ताडक सुचयं ही कारक है। तदितर सुचयं
 ही उपकारक है। यदापर महाकार्यमें यथादि व्युत्पत्ति
 बाद नामक विस्तृत पत्रको रचना कर लक्षमें प्रथमादि
 का पद, लक्षका धर्म्य शीर लक्षसे सम्बन्धमें धानुपक्रिय
 विचारपूर्वक प्लमत्तय आगम किया है। द्वितीयादिभ्यु-
 त्पत्तिबादमें धर्मैवात्म्यके कारणादि निर्देश शीर लक्ष
 धर्ममें विचार किया है तथा द्वितीयादिभ्युत्पत्तिबादमें
 ही द्वितीयादिके पद शीर आत्मार्थके साथ केषा सम्बन्ध
 है, इत्यादि विवर लिखे हैं।

श्रीक-२४२१।

प्रकृत्य शीर-नेवादिषु धर्मकोर्णितं रचित श्याय
 विन्दुधर्ममें शेष श्यायके विषयमें जो कुछ लिखा है उस
 का सर्वत्र विवरण नीचे दिया जाता है। इस पत्रके
 प्रथम परिच्छेदमें प्रत्यय-ज्ञानका विषय शीर द्वितीय
 एवं तृतीय परिच्छेदमें आद्य तथा परार्थावृत्तमानका
 विषय प्रतिपादित हुआ है। सम्पन्नज्ञान होनेसे सम्पन्न
 सुचयार्थ सिद्ध होते हैं, सुचयार्थसिद्धिके विषयमें धर्म्य
 ज्ञान ही एकमात्र कार्यक है। धर्म्यज्ञान को धानिके
 निर्वाच प्राप्त होता है। विन्दुध्यायमें भी लिखा है
 'ज्ञानाभ्युक्ति पर्याय कानकाम होनेसे सुनि होता है।
 शीरके समाप्तकार सम्पन्नज्ञान होनेसे समी सुचयार्थ'

सिद्ध होते हैं। यतएव जिससे सम्पन्नज्ञान प्राप्त हो उस
 से लिखे यत्न करना इत्येवमा कर्तव्य है।

इसके पदसे सम्पन्नज्ञानका विषय लिखा जाता है—
 'पञ्चिना वादक जो ज्ञान है' लक्षका नाम सम्पन्नज्ञान
 है जिसमें किसी प्रकार विषयवाद (विपरोत ज्ञान)
 शीर विरोद प्रकृति न हो, वही सम्पन्न ज्ञानपदवाच्य है।
 प्रमाण द्वारा जो वस्तुका स्वस्वरूपबोध हुआ करता है, पत
 एवं लक्षणज्ञान प्राप्त करनेमें प्रमाणही विधीय पाचक्य-
 कता है। पर्यायवर्णित ही प्रमाणका धर्म है। प्रमाण
 द्वारा जो पदोंको पञ्चमति होता है, लक्षमें शीर किसी
 प्रकारका सम्यग्वै रहता, लक्षो समय पुद्वार्थ प्राप्त
 होता है। धनपत्र को सब विषय पञ्चिगत नहीं है,
 प्रमाण द्वारा लक्षोंको पञ्चमति हुआ करता है। अनुपय
 पदसे पदक जिस ज्ञान द्वारा पर्यायमान्य करते हैं लक्षी
 ज्ञानके अनुपकार प्रवर्तित हो कर पर्यायमान किया करते
 हैं। ये सब धर्म इत्येवमें परगत होते हैं, यह प्रथम
 का विषयमूर्त है शीर जो निष्क (शीर) द्यमर्णितु
 निष्कपदमें पर्यायबोध होता है वह अनुमानका विषय
 है। यह प्रमाण शीर अनुमान निश्चित पदसम्बन्धका
 प्रथमक है इतिथि से दो प्रमाण हैं। यही धर्म्य
 विज्ञान है, इससे पतिरिक्त धर्म्यविज्ञान शीर कुछ भी
 नहीं है। धानिके निर्मित धर्म्य को पद है, लक्षका
 नाम प्रापक है शीर प्रापक प्रमाणपदवाच्य है। इन दो
 ज्ञानोंसे पतिरिक्त जो ज्ञान है लक्षसे प्रवर्तित को पद
 है वह पदका विषयवस्तु हुआ करता है। जैसे मरी
 चिकारमें लक्ष पदसे ही कहा गया है कि जो धानिके
 सिप प्रक्य है वह प्रापक है शीर यही प्रापक प्रमाण है।
 विन्दु मरीचिकारमें लक्ष नहीं मिलता यहाँ पर लक्षका
 प्रपकत्व नहीं है सुतरा प्रमाण भी नहीं होता। मरी
 चिकारमें लक्षको पचयत्न पचयत्ता है इसीसे लक्षमें ज्ञान-
 मार्जि पचयत्न है। यहाँ यहाँ वस्तुका प्रापक नहीं होगा
 यहाँ प्रमाण भी नहीं होगा। सम्पन्नज्ञानके लक्षणमें भाव
 शीर धमात्रक्यको ही पदार्थ देखनेमें नहीं होता शीर
 वह वस्तुका प्रापक नहीं है सुतरा समय भी धर्म्यवत्
 प्रमाण नहीं होगा। सम्पन्नज्ञान होनेसे तत्त्ववाच्य पुद्व-
 पार्थसिद्धि नहीं होने। सुचयार्थसिद्धिके प्रति धनपत्र

ज्ञान साक्षात् कारण नहीं है, पूर्वमात्र है। सम्यग्ज्ञान लाभ होनेसे पूर्व दृष्टका स्मरण होता है। स्मरणसे अभि-
लाप, अभिलापसे प्रवृत्ति, प्रवृत्तिसे पुरुषार्थ की प्राप्ति होती
है इसीसे सम्यग्ज्ञान साक्षात् कारण नहीं है, पूर्वमात्र
निर्दिष्ट हुआ है।

यह सम्यग्ज्ञान दो प्रकारका है, प्रयत्न और अनु-
मान। इन्हीं दो द्वारा सम्यग्ज्ञान लाभ होता है। जहाँ
प्रयत्न द्वारा वस्तु की उपलब्धि नहीं होती, वहाँ अनुमान
द्वारा होती है। अनुमान-ज्ञान को भी प्रयत्नवत् जानना
चाहिए। यह प्रयत्न भी अनुमान द्वारा निखिल वस्तु-
तत्त्वका ज्ञान होगा। निखिल वस्तुतत्त्वका स्वरूपबोध होने-
से तब सम्यग्ज्ञान लाभ होता है। इस प्रयत्न और अनु-
मानकी प्रयत्न और मानप्रमाण कहते हैं। यथाक्रम इस-
का सचण भी लिखा जाता है।

प्रत्यक्ष—ओ कल्पनापोद और अभ्रान्त है वही प्रयत्न
है अर्थात् जो कल्पनापोद (काल्पनिक) नहीं है और
अभ्रान्त है जिसमें कुछ भी भ्रम नहीं है, वही प्रयत्न
पदवाच्य है। जिस किसी अर्थका साक्षात्कार जो
ज्ञान है, वही प्रयत्न है। चक्षुके साथ विषयेन्द्रियजन्य
जो ज्ञान होता है, वह प्रयत्न है। इन्द्रियायित ज्ञान-
मात्र ही प्रयत्न पदवाच्य होगा।

कल्पनापोद और अभ्रान्तत्व ये दो विशेषण विप्रति-
पत्तिनिराकरणके लिये उक्त हुए हैं, अनुमाननिवृत्तिके
लिए नहीं।

तिमिर, आशुभ्रमण, नीदान, संशोभ आदिमें जो
ज्ञान होता है, उससे यथागम वस्तुका अवरोध नहीं
होता, इसलिए भ्रान्तत्वका निरास किया गया है।

यह प्रत्यक्षज्ञान चार प्रकारका है—इन्द्रियजन्यज्ञान,
मनोविज्ञान, आत्मज्ञान और योगिज्ञान। इन्द्रियका जो
ज्ञान है अर्थात् जो ज्ञान इन्द्रियायित है, उसे इन्द्रिय-
जन्यज्ञान कहते हैं। यह इन्द्रियजन्यज्ञान भो फिर दो
प्रकारका है, परस्पररोपकारी और एककार्यकारी। जो
इन्द्रियज्ञानका विषय नहीं है, वही मनोविज्ञान होगा।
जो सिद्धान्त द्वारा प्रसिद्ध है वह मानस प्रत्यक्ष और जो
रूप द्वारा आत्मवेदिता ही वह आत्मसंवेदन वा आत्म-
ज्ञान है।

योगका अर्थ समाधि है, जिसके यह योग है,
उसकी योगी कहते हैं। एवम्भूत योगीका जो ज्ञान है
उसे योगिप्रयत्न वा योगिज्ञान कहते हैं। धर्मसाराचार्य-
रचित न्यायविन्द, टीकामें इसका विवरण विस्तृत रूपसे
लिखा है।

अनुमान—अनुमान प्रमाण दो प्रकारका है,
स्वार्थ और परार्थ अर्थात् स्वार्थानुमान और परार्थानु-
मान। इनमेंसे परार्थानुमान शब्दात्मक है और स्वार्थानु-
मान ज्ञानात्मक। इन दोनोंमें प्रत्यक्ष भेदव्ययतः पृथक्-
लक्षण निर्दिष्ट हुआ है। स्वार्थानुमान ज्ञानस्वरूप है,
इसमें किसी प्रकार शब्दोच्चारण करना नहीं होता। जिस
अनुमानमें आपसे आप प्रतिपन्न हो जाय अर्थात् जो अपने
लिए है वह स्वार्थानुमान और जिससे दूसरेको प्रतिपादन
किया जाय अर्थात् जो दूसरेके लिए है वह परार्थानुमान
है। इस स्वार्थ और परार्थ ज्ञानके मध्य पहले स्वार्थ-
ानुमानका विषय कक्षा जाता है। स्वार्थानुमान—निरूप
अर्थात् त्रिविधलिङ्ग उपपन्न अनुमेयका आत्मस्वन अर्थात्
अनुमानके विषयीभूत जो वस्तु है उसका आत्मस्वन जो
ज्ञान है, वही स्वार्थानुमान कहलाता है।

त्रिविध लिङ्ग यथा—अनुमेयविषयमें सत्ता (अस्तित्व)
अनुमानके विषयोभूत जो वस्तु है उसमें अस्तित्व है।
सपक्षमें सत्ता और असपक्षमें असत्ता इन तीन लिङ्गोंके
द्वारा स्वार्थानुमान ज्ञान हुआ करता है। इस त्रिविध
लिङ्गका विषय न्यायविन्दुटीकामें इस प्रकार देखनेमें आता
है। प्रथम अनुमेय और सपक्षमें जो सत्ता है तथा अस-
पक्षमें अर्थात् विषयमें जो असत्ता है, उसका नाम लिङ्ग
है। अभी इसके अर्थका विषय देखना चाहिये। अनु-
मेय अनुमानके विषयीभूत वस्तुमात्र ही अनुमेय शब्दका
तात्पर्यार्थ है। किन्तु इसके मतमें अनुमेय कहनेसे ठीक
वैसा समझा नहीं जाता; नियेत्य जो हेतु और लक्षण
है, उस विषयमें जो धर्म है, वही अनुमेय है। जानने-
के लिये अभिलक्षित विषय जो धर्म है अर्थात् कर्तव्य
विषय ही धर्म नामसे प्रसिद्ध है। यह अनुमेय जो सत्ता
(अस्तित्व) है वह प्रथम है। द्वितीय सपक्षमें सत्ता-
समान अर्थ सपक्ष अर्थात् साध्यधर्मके साथ तुल्य जो
अर्थ है, उसे सपक्ष कहते हैं। इस सपक्षमें जो सत्ता

को ही कि न्यायशास्त्रकें जैसा जैसीका भी वास्तव तकंगाए ही । उद्योगे न्यायदाके मध्य अधिकांश तकंगाएकी वाचनगत को ही । कथाए केमे ।

गामोम द्वादशावका मध्यम इतिहास ।

किम प्रकार हम भारतवर्षमें न्यायदर्शनमें अत्यन्त दृष्टि थी, उसका महत्त्व तत्रप्रतिष्ठापय कराना महत्त्व लक्ष्य है । तत्रांताम वाचन अधिकांशका विग्रहण है कि कोइ प्रशस्ति सिद्धहमनामभिरयैका मत्त एतत्तु त्रुमैके अये हिन्दुधर्म तत्रके अर्थेण विदित प्रथाए रिये । हिन्दु धोर बाहोके परतम संघर्षके परिणाममें मृतवृत्त अद्युत-गताष्टामें न्यायशास्त्रका उत्पत्ति हुई ।

किर किमो भारतीय एतितका मत है—“वेदिक वाचनमसूत्रके मन्त्रव्यवसाय-निमित्त पौर्मिन्त्रिणी को मत्र तर्क धोर उभके अियस विधियद्य किसे से, तत्रां उदरे न्याय नाममें प्रसिद्ध था । वाचनप्रकारमसूत्रके (दोस्य अथायम्) जो न्याय मन्त्रका लक्षणे है, मह अमिन्त्रिका पूर्व-सामासाजिर्देगक है धोर उभ अथायम्) जो न्याय वित्तु मन्त्र है उभका अर्थ सामासिक है । माधवाचार्य-ने पूर्व मोमावाका जो मत्र संघर्ष किया था उभका नाम है न्यायमन्त्रविस्तार । वाचनप्रतिभिरने भी न्याय-कलिका नामक एक धोर मोमावा अत्यन्त स्वता को । हम प्रकार प्राधान संस्कृत धर्मोका वाचनगतकाममें जाना जाता है कि वदमे न्याय मन्त्र मोमावा अर्थमें ही व्यवहृत होता था । पिटाका अर्थ विदित कानीके अर्थमें जो मत्र तक या न्याय स्वयन्त्र होतें से, तें मह न्याय पुन्यहनाभावमें मन्त्रहोत ही कर जिय गावाका उत्पत्ति हुई यहां वाचोचिका-विद्या नाममें प्रसिद्ध था । यथार्थमें महवि जौमिनिका उदावित तर्क मसूह ही वाचोचिका विद्याका बीज है, यही तर्कमसूह न्याय कहनाता था । मन्त्रका मित्वानित्य, मोमावाका स्वरूप, मुक्ति इत्यादि तत्त्वमसूहका वाचोचिका विद्यामें प्रस्त-निविट करके मोतमने जो दार्शनिक मत प्रथाए किया, यह कानक्रममें न्याय-शास्त्र नाममें प्रचलित हुआ ।

वाचनत्व धोर एक भारतीय विद्वानोंने न्यायदर्शन को उत्पत्तिके विषयमें जो कालनिर्णय धोर मुक्ति प्रकार को है, हम मोमावाके सुद्ध विचारमें उभका अधिकांश

परोपमेन जैसा भीय मनों सीता । सुद्धमेके अन्तुद्ध-के पाट विष्णु पात्र कीरी च संघर्षेण न्याय वा मत्त-विद्याका उत्पत्ति हुई अथवा मोमाम का तर्कमसूह को पुनर्कापने वाचोचिका मत्रामें प्रचलित था धोर वही मोतमका वाचनगत प्रवर्तित होने का वाचोचिका मन्त्र है न्यायशास्त्राचार्यें विद्या नामें जना है, उभ मुक्ति-क मन्त्रके मही विद्या जाना । मोमावा अर्थे । न्यायशास्त्र का वाचन अर्थविष्णुने ही व गृह ३ । ने २३ । नमयने मत्तु दार्शनिकमत, अर्थैण ही । वा उदा है । मोतमने उभका कोइ तर्क मत्र प्रतिभिर को परिष्कारित कर में अर्थमें मूत्रके अर्थ परिष्कार किया है ।

वेदाधिक मानीमा मने नि अर्थविष्णु वा वेदाकाके अर्थ मन्त्राए के अर्थमत्त । ३० । मत्र अथवा वाचन ही है । व ही देवा नामके न्यायमन्त्रमत्रके मत्रमें मुक्ति का मन्त्रका अर्थ अथवा हम मोमावा के अर्थविष्णु नाम कर अथायम् अर्थ अर्थ किया है । कोइ कोइ मोतमसूत्रका अर्थहिन्दुके मूद्रक वाचनप्रकार मत्रमें, 'दत्तमन्त्राधिके अर्थविष्णु नाम अर्थअर्थ' इत्यादि अर्थि देवा कर अर्थमें से कि वाचनका अर्थ अर्थ अर्थि अर्थि अर्थमें भी मोमावा अर्थ अर्थमत्र है । मन्त्रा-प्रकार अर्थमें कोइ का अर्थविष्णु ३० अथवा वाचन का अर्थ है, माधवाचार्यके उभ या अथाय मत्र अर्थविष्णु किया है । किन्तु मोतमने अर्थविष्णु नाम ही अर्थ अर्थ अर्थकार किसे से हमका मत्तमत्र मत्त मित्तमा ।

ममा हिन्दुशास्त्रके मतमें—नामम वा अथायमन्त्रके प्रवर्तित है । मोतममिन्त्र वाचनप्रकारमें हम न्याय वा तकंगाएकी अर्थमत्रिका अर्थ अर्थमत्तमा है ।

"प्रतिस्वरूपमें कावेगाव अर्थी मोमावा मन्त्राधिके अर्थविष्णु-प्रकारि" (वाचनप्रकार)

इतिहासके मतमें—न्यायशास्त्राचार्यों विद्यार्थि प्रवर्तित है । मन्त्राण्डपुराणमें विद्या है कि—“जायु-कय" नामक अर्थमें अथायके समय प्रमासतोर्गमें योग्या मोमाममाका आधिर्भाव हुआ । अथवा, अथाय उभक धोर अर्थ वे च र अर्थमें पुत्र है ।

प्रसिद्ध अर्थम परिष्कृत वेधराहावरने अर्थमें "संस्कृत वाचनके इतिहासमें" विद्या है कि अर्थम अथवा

नाम माधवाचार्य के सर्वद्वयानन्दपदमें पाया है किन्तु पद्यपाद नाम नितात्म धार्मिक नहीं है, यह ब्रह्माण्ड-पुराणकी उक्ति द्वारा प्रमाणित होता है ।

वाचस्पत्यविरचिते निघांटे कि प्रथी यताब्दीमें ब्रह्माण्डपुराण योग महाभारत यज्ञोपनिषद् आया गया था । सुतरां इन्ही यताब्दीके बहुत पहिलेसे 'पद्यपाद' नाम प्रचलित था, इसमें शब्दक नहीं । बाईसे के द्वादशतार धनुमें पद्यपाद-द्वयनका उल्लेख है । उद्योतकराचार्यने म्यापधर्मिकमें और वही वाचस्पतिमिश्रने वात्स्य तात्पर्यटीकामें व्याख्यान प्रवर्तक पद्यपादको प्रथम बार अपने पदमें पद्यका पारम्य लिखा है । उद्योतकर और वाचस्पति दोनों को माधवाचार्यके बहुपूर्वजर्तरी है, इसमें शब्दक नहीं ।

पद्यपाद नाम को पद्य, इस शब्दमें धार्मिक नैयतिक समाजमें भी प्राप्ताश्रय प्रचलित है यह इस प्रकार है ब्रह्मदेवायन वेदव्यासने मोक्षमप्रयोग म्याप सुखकी निम्ना की थी । इस कारण गीतमने प्रतिष्ठा कर ली कि वे फिर कभी नहीं वेदव्यासके सुखद्वयन करेगी । इस पर वेदव्यासने जनकी यष्ट उल्लेखना को । किन्तु गीतमने जो प्रतिक्रिया को है वह कदापि उत्तरकी नहीं । पीछे गीतमने पद्यमें पद्य प्रकाशित करके जनो द्वारा व्यासका सुखाधनोक्तन किया । गीतम-का पद्यपाद नाम पद्यके पद्य कारण है ।

यह प्राप्ताश्रय किसी पुराणार्थमें लिखी नहीं है । ब्रह्माण्डपुराणके ज्ञाना जाता है कि पद्यपाद और कथाद्वय पीछे ब्रह्मदेवायन म्याप धर्मिकमें हुए है । फिर महाभारतके पादि पर्वमें (२।१०२) और वात्स्य पर्वमें (१८-१७०-७८) पान्थोचिकी और तर्कविद्याका बहिर् निम्नावाद है ।

“पान्थोचिकी तर्कविद्यायुक्तो विरथि कान् ।
वेदव्यास्य परनिष्ठा कथा बह्वन्त इत्यन्त ॥
आशेषा यन्निष्ठा न महापातकेतु न शिवात् ॥”

यहां तक कि पान्थोचिकी और तर्कविद्यापुराणोके शृंगारयोगि धर्मिकी कथा भी वेदव्यास और वाचस्पतिक नि लिखनेके लिखे नहीं छोड़ी । मातृम होता है, यत्नादि

निम्नावाद देख कर ही पद्यपादको प्राक्काविको कथित हुई होगी ।

पान्थोचिकीके पद्यमें मनुष्य हन सरस्वतीमें प्रकाश मेद नामक पद्यमें लिखा है—

“म्याप पान्थोचिकी पद्यमयी नैतमेन प्रथिता ॥”

ब्रह्मदेवायनके समयमें जो नैयतिकग्रन्थ लिखमान थे, महाभारतके ही उद्योतकराचार्यके परिचय पाया जाता है ।

महाभारतके सुविख्यात टीकाकार नोसकण्ठने उपरोक्त महाभारतवर्षित पान्थोचिकी और तर्कविद्या शब्दको ऐसी व्याख्या की है—

“ईशा प्रत्यक्ष नामगुणधर्मो ईशा पद्योष्ठा धूमादि द्यमैनेन बहु म्यापयुक्तान तत्प्रेषामामान्थोचिकी तर्क विद्या कथमम्याप चरचादिमयीत म्याप ॥”

देवदत्तामी, विमलशेखर धीदि महाभारतके प्राचीन तम टीकाकारोंने भी नोसकण्ठ करीकी व्याख्या की है ।

मनुष्य विताके भिन्नानिधि-भाष्यमें भी 'पान्थोचिक्यापि तर्कविद्याय' 'प्राणादिका' ऐसा लिखा है । विद्यो जो प्राचीन ब्रह्मण्डल में पान्थोचिकी शब्दका पर्ये 'पूर्व' मीमांसावर्षित बुद्धि है ऐसा कहो भी नहीं मिला । सुतरां पान्थोचिकी विद्या मीमांसायाकसम्पूत है ऐसा नहीं मान सकते । मीमांसासूत्रक होने पर वेदव्यास कभी भी पान्थोचिकी विद्याका निम्नावाद नहीं करते है । वेदव्यासने पान्थोचिकी का नैवा पिथो को को निम्ना को है ?

पादिपर्वमें २।१०२ कोइके—“नैयतिकानां सुखमेन बहवप्यायमेन न ॥” इत्यादि पद्यमें विमलशेखरने पुत्र-दाय प्रकाशिकी नामक भारतटीकामें लिखा है, “नैय-तिकानां सुखेन बुद्धिरन कलीयसी न तु श्रुतिरिति मन्थ मार्तन' पर्वार्त्त नैयतिक लोगोंने श्रुतिके प्रमाणको धरिदा सुझिको ही प्रधान माना है । किन्तु मीमांसकमन्थ कथका लच्छा मानने है । श्रुतिकी धरिदा बुद्धिका प्राचाय जोकार कर्ममें जो नैयतिकग्रन्थ वेदव्यासके निषेध निम्नित हुए है ।

मीमांसकमन्थ वेदको धरिदपीय और नैयतिकग्रन्थ पीदपीय मानने है, यह भी निम्नाका पद्यमन्थ कारण ही प्रकता है ।

मनुसंहिताके भाष्यमें मेधातिथिने भी लिखा है,—
 “तर्कप्रधाना ग्रन्था लौकिकप्रमाणस्वरूपेण परा न्याय
 वैशेषिकलौकायतिका उच्यन्ते । ...कपिलशुण्डकिया
 मखिरयतानि ग्रन्थान्नाट्टियु हि शब्दः प्रमाणं तथा वाच
 पादस्रवम् । प्रयत्नाभुमा(नोपमा) शब्दाः प्रमाणानि यै गे
 पिका अपि” (१२।१०६) यहाँ मेधातिथिने भी न्याय-
 वैशेषिकको लौकायतिक, कपिल शब्दाटि निरीशरयाटी-
 के साथ एक यैणीभुक्त किया है ।

महाभारत छोड कर रामायणके पयोध्याकाण्डमें
 भी “नै गायिक” शब्दका उल्लेख है । इसमें पशुमान
 किया जाता है कि रामायण-रचनाके पहले ही न्याय-
 शास्त्रका प्रचार हुआ था एकद्विज पाणिनिने उक्त-
 शादिगणसे ‘न्याय’ शीर उक्त गणमुनक ४।२।६० सूत्रमें
 नै गायिक शब्दकोकार किया है । मनुस्मृतमें तर्कग्रन्थका
 नाम शीर ‘वचसंहिता’में छेम्, उपनय, प्रयत्न, पशुमान
 इत्यादि बहुतर पारिभाषिक शब्द द्वारा न्यायशास्त्रका
 प्रसङ्ग सूचित हुआ है ।

शबरस्वामीने मीमांसाभाष्यमें उपवर्षके भाष्यमें जो
 वचन उद्धृत किये हैं, उनमें स्पष्ट जाना जाता है कि
 उपवर्ष गौतमके न्यायसूत्रमें अच्छी तरह जानकार थे
 शीर उन्होंने गौतमका मत कई जगह ग्रहण किया है ।
 श्वेताश्वर जैनेके उत्तराध्ययनश्रुति, त्रिपटिगनाकापुराण-
 चरित, कपिलमण्डल प्रकरण आदि ग्रन्थ पढ़नेमें श्रात
 होता है कि उपवर्ष महाराज मन्दके समयमें पाँचवों
 शताब्दीके पहले विद्यमान थे ।

उपरीक्त अनेक प्रमाण देखनेसे यह सुक्तकण्ठमें कहा
 जा सकता है कि शाक्यबुद्धके आविर्भावके कई सौ वर्ष
 पहले गौतमका न्यायशास्त्र प्रचलित हुआ था, इसमें
 सन्देह नहीं ।

महामहोपाध्याय चन्द्रकान्त तर्कालङ्कारमहाशयने
 लिखा है कि सभी दर्शनसूत्रोंमें वैशेषिकसूत्र ही प्रथम
 है । किसी किसीका यह भी मत है कि न्यायसूत्र सभी
 दर्शनोंका शीष है । किन्तु भिन्न भिन्न दर्शनसूत्रसमूह-
 की शालोचना करनेसे कौन पहले और कौन पीछे ग्रथित
 हुआ है इसका स्थिर करना असम्भव हो जाता है । फिर
 एक ही दर्शनको एक ही बात भिन्न भिन्न दर्शनोंमें

देखनेमें आती है । जैसे—गौतमसूत्रका ३।२।१४ सूत्र
 शीर ब्रह्मसूत्रका २।।।२४ सूत्र, फिर कणादसूत्रका
 ३।२।४ सूत्र शीर गौतमसूत्रका १।१।१० सूत्र मिलानेसे
 भिन्न दर्शन होने पर भी एक ही बात देखनेमें आती
 है । ऐसे स्थान पर कौन किसका पुराण्यर्थाँ है, यह स्थिर
 करना असम्भव है । इस प्रकार भिन्न दर्शनमें एक ही
 कथा पा कर दार्शनिक लोग अनुमान करते हैं कि
 गौतम, कणाद वा वादरायणके समयमें या उनके पहले
 लौकममात्रमें ये सब युक्तियाँ या दृष्टान्त प्रचलित थे ।
 यद्यार्थमें ये सब युक्तियाँ वा सिद्धान्त मार्वाजनिक वा
 सर्वाके मनमें यथासमय उदित हो सकते हैं, इसलिये दूसरे
 स्वतःप्रयुक्त हो कर हो ग्रहण करें, तो फिर आपस ही
 क्या है ! किन्तु सभी दर्शनोंका एक विशेषत्व वा पारि-
 भाषिकत्व है जो एक दर्शनके सिवा दूसरे दर्शनमें नहीं
 है शीर विशेषत्वनिश्चयने ही भिन्न भिन्न दर्शनोंका
 भिन्न भिन्न नाम पड़ा है ।

जिम दर्शनका जो विशेषत्व है, उसका प्रसङ्ग यदि
 हम लोगोंको भिन्न दर्शनमें मिले, तो यह अवश्य कहना
 पड़ेगा कि जिम दर्शनने दूसरे दर्शनका विशेष मत
 ग्रहण किया है, वह दर्शन परवर्षोंकानामने निषिद्ध हुआ
 है । मांस्यसूत्रमें “न वयं पट,पदार्यथाटिनो वैशेषिका-
 दिवत्” (१।२४) इत्यादि सूत्रसे स्पष्ट वैशेषिक मत-
 खण्डन, “पञ्चाययवधयोगात्, सुषुप्तस्मिति” (५।२०)
 शीर “पौडगादिव्यथेयम्” (५।८६) इत्यादि सूत्रसे
 गौतमसूत्रका खण्डन शीर “ईश्वरासिद्धेः” (१।८०)
 इत्यादि सूत्रसे पातञ्जलसूत्रका मत खण्डित हुआ है ।

जै मिनिने मीमांसासूत्रमें “मौर्षसिक्तन्तु यन्म्या-
 यै न मन्वन्मन्तस्य हानमुपदेगोऽव्यतिरेकसार्धेऽनुपलक्षे-
 स्तत्प्रमाणं वादरायणस्यानपेक्षत्वात्” (१।।।४)

“कर्माण्यपि जैमिनिः फलार्थत्वात्” (३।१।४)
 इत्यादि सूत्रमें वादरायणका मत खण्डित हुआ है शीर
 जैमिनिका नाम पाया जाता है ।

फिर वेदान्तसूत्रमें “साक्षादप्यविरोधं जैमिनिः”
 (१।२।२८)

“सम्पत्तेरिति जैमिनिस्तथा हि दर्शयति ।” (१।२।३१)
 फिर “तदुपर्यपि वादरायणसंभवात् ।” (१।३।२६)

३। ७८ ई० में कनिष्क का परिचय हुआ। इस विषयमें कठो मताम्बोके इतिवार्त्तमें पद्यका और बहुबन्धुका समय मान सकते हैं। दिङ्गनाम काण्डिदासके प्रति पद्यो और पद्यका विषय है। पद्यका और बहुबन्धु विज्ञमादिनाके समयमानियक माने जाते हैं। सुतरां विज्ञमादिना कानिदान और दिङ्गनाम के तीनों कठो मताम्बोके मनुष्य होते हैं।

मोक्षमूलके उक्त मतको अपने परिचयमें लिखक पद्यक करते हैं। किन्तु उक्त मत समोचोन-सा प्रतीत नहीं होता। ब्रूएनपुत्रका अन्तबहत्तात्वा और उक्तको खोजने पढ़नेमें ऐसा ज्ञान नहीं पड़ता कि उक्त गृह मोक्षमूल पद्यक बोधिसत्त्वके शिष्य है। चोनपरिब्राजक ब्रूएनपुत्रके पद्यकबोधिसत्त्व, उक्तके सारं बहुबन्धु और मोक्षमूलका पद्यक परिचय दिया है। किन्तु नहीं मोक्षमें मोक्षमूलको पद्यकका शिष्य नहीं बतलाया है। मोक्षमूल यदि पद्यकके शिष्य होते, तो चीनपरिब्राजक समो मोक्षका जित्त किसे बिना न रहते कल्प उक्तका उद्येक करमेंमें मुक्तका गौरव समझने। पद्यक बोधिसत्त्व चोनपरिब्राजकके लोकाको सर्व पद्यके शिष्यमान है। पद्यकके सारं और शिष्य बहुबन्धु परिचयके अन्त पर चोनपरिब्राजकनेलिखा है, 'सुदन्निर्वाचके बाद उत्रार वर्षके मघा बहुबन्धु और उक्तके शिष्य मगोहृत पाविमृत हुए है।' चोनमाख्यविषु र्वासाएन विषय साङ्गमें उक्त विवरणको टोकांति लिखा है 'इय समय य लोहमय ८१० ई० तकके पद्यके सुदके निकोचकासको कल्पना करते हैं। इस विषयमें बहुबन्धु और उक्तके सारं पद्यक दूसरो मताम्बोके मनुष्य होते हैं।

चीन-बोध पद्यके आना जाता है कि बहुबन्धु और दिङ्गनामाचार्य दोनों को पद्यकके शिष्य है, इस तरह दिङ्गनामाचार्यको भी दूसरी या तीसरो मताम्बोके मनुष्य मान सकते हैं।

चोनपरिब्राजक ब्रूएनपुत्रने लिखा है कि बहुबन्धु चाबधोरात्र विज्ञमादिनाकी समामें उपस्थित हुए है। चोनपरिब्राजक पाण्डियान ३३१ मताम्बोके चाबधोका धम्मूचं प्च कावथिय दिख गये हैं। इस विषयमें ३३१ मताम्बोके पद्यके बहुबन्धु को चाबधोनमामें उपस्थित

हुए है इसमें सन्देह नहीं। बहुबन्धुविरचित घत माख और बोधिसत्त्वोत्पादनमाख कुमारजीवके ४०४ ई०को चीनमायामें पद्यकाहित हुए। एतद्विषय उक्तके दूसरे दूसरे पद्य उक्तो मताम्बोके चोनमायामें पद्यकाहित हुए है। फिर कोई कोई चोनपरिब्राजक इतिवार्त्तका विवरण उक्तके करते हैं कि बोध मैयाविषय धर्म चोर्त्ति इतिवार्त्तके समयमानियक है। इतिवार्त्तने ६८१ ई०में पद्यका पद्य समाप्त किया। पद्यक उद्येक मुक्त पद्यके धर्म चोर्त्तने अज्ञानि नाम को जो। इतिवार्त्तकी अन्त एक कासमें जो निम्बासवोष्य नहीं है। इसमें तन्मासोन समय इतिवार्त्तविषय ऐसी पद्यके शक्ति हैं जो किशो मत्तके प्राचोन माना नहीं जा सकते। चीन और भोटके समो बोधपरको में धर्म चोर्त्ति पद्यकके शिष्य बतलाये गये हैं। पद्यके बहुबन्धुके क्लेश सरोदर और सुद के, यह चीनपरिब्राजक ब्रूएनपुत्रके अन्तबहत्तात्वा-में लिखा है।

चीन बोधपरमात्रमें बोधिसत्त्वो की जो चाबावादिना ताकिना प्रचलित है उद्येक इस प्रकार जाना जाता है— बहुबन्धु २१६ उक्तके शिष्य मगोहृत २२६ और बोध पद्यके २८६ बोधिसत्त्व हुए है। उक्त बोधिसत्त्वमें ३२० ई०को चोनदेवमें पद्यापक किया। इस तरह उक्तके बहुबन्धुपद्यके पद्यके बहुबन्धुका पाविर्भाष खोकार करना पड़ता है। मोक्षमूलमें अय लिखा है कि पद्यके मैयाविषय धर्म-कांति बहुबन्धुके शिष्य है। पद्यके ३३१ मताम्बोके बहुत पद्यके धर्म चोर्त्तिका होना साहित होता है। पाण्डु निक भोटदेवीय ताराणात्र और रत्नचर्मराजका तथा एवान धर्मेतिशासिक पी। पद्यमीचोन होमिके कारण उद्येक परिज्ञान करना उचित है। बोधमाखकी पासीपना करमेंमें यह अर्थ जाना जाता है कि २१ या ३१ मताम्बोके मध्य पद्यक, बहुबन्धु दिङ्गनाम और धर्म चोर्त्तिमें बोधपरमाखका पद्यकृत किया जा।

दिङ्गनामादिके बहुत पद्यके धारं नागासुंन पावि मृत हुए है। मोटदेवीके बोधपरम्यके मतमें सुदन्निर्वाचके ३०० वर्ष पीछे राजा कनिष्क और न नासु लका धम्मू एव हुआ था। मोटदेवीके श्रीकांति मगानुमार ६०० वर्षके जो वर्ष पद्यके सुददेवका निवार हुआ। पद्य

कानक और नागार्जुन १ शी गताब्दों के समुद्र होते हैं। अध्यापक मोक्षमूलरने लिखा है कि कनिष्क ७८ ई० में अभिषिक्त हुए। सम्प्रति यह मत उलट गया है। एक बार ख्यम्भनामा प्रत्नसत्त्वविद डाक्टर बुद्धरने नवा-विश्वकत बहुतमो प्राचीन मुद्राकी सहायतासे भायेना-प्राच्य-ममतिको पत्रिकामें प्रकाशित किया था कि कनिष्क, हुविष्क, वासुदेव प्रभृति शकराजाओंका राज्याड जो शकमन्वत्के समान गिना जा रहा है, अभी उसे बहुत पोछेका जानना चाहिये अर्थात् ईसा-जन्मके क्रिसो समयमें कनिष्कके समयका निर्णय करना चाहिये। उन्हींके समयमें नागार्जुन आविर्भूत हुए थे। चीनपरिव्राजक यूएनचवङ्गके विवरणसे हम लोगोंकी पता लगता है, कि बोधिसत्व नागार्जुनने 'न्यायहार-तारकशास्त्र' प्रकाशित किया। चीनदेशीय दार्शनिक ग्रन्थसमूहकी विवरण मूलक तालिकासे जाना जाता है कि उस पुस्तकमें हिन्दू-नैयायिक भरद्वाज वात्स्यका मत उद्धृत हुआ है। बौद्धाचार्यवर्णित भरद्वाज वात्स्य सम्भवतः भाष्यकार वात्स्यायन थे।

अब हिन्दूग्रन्थोंमें दिङ्नागादिका परिचय कैसा लिखा है वह देखना चाहिये।

सम्राट, हर्षवर्धनके समामष्ट कवि वाणभट्टने अपने श्लोडर्षचरितमें वसुवन्धुके 'अभिधर्मकोष' और सुवन्धुके 'वासवदत्ता' ग्रन्थका उल्लेख किया है। केवल इतना ही नहीं, श्लोडर्षचरितके अष्टमोच्छ्रवामकी आलोचना करनेसे इसका अधिकांश वासवदत्ताकी नकल है, ऐसा बोध होता है। वाणभट्टने गम्भीर भावमें कहा है—

"कवीनामगलहर्षो नूनं वासवदत्तया।" इससे जाना जाता है कि वासवदत्ताकी सुख्याति वाणभट्टके समयमें सब जगह फैली हुई थी। इस हिसाबसे वाणभट्टसे कमसे कम ५०।६० वर्ष पहले वासवदत्ताकार-सुवन्धु आविर्भूत हुए थे। वाणभट्टने ६०६से ६२० ई०के मध्य हर्षचरित प्रकाशित किया। यह सम्राट, हर्षवर्धनका इतिहास पढ़नेसे मालूम होता है। वासवदत्ताके टीकाकार नरहरिवर्धन सुवन्धुके विषयमें लिखा है, 'कविरयं विक्रमादित्यसभ्यः। तस्मिन् राशि लोका-न्तरं प्राप्ते पतन्निवन्धं हतवान्," अर्थात् कवि सुवन्धु

विक्रमादित्यके सम्प्रथे। राजाके आगंवास होने पर कविने इस वासवदत्ताकी रचना की। यह कौन विक्रमादित्य थे? चीनपरिव्राजक यूएनचवङ्गने उज्जयिनो-दर्शनकालमें वर्णन किया है कि उनके ६० वर्षे अर्थात् ५८० ई०के पहले गिनादित्य विक्रमादित्य नामक एक महान्पण्डित और बुद्धिमान् राजा उज्जयिनोमें राज्य करते थे। अभी मानूम होता है कि वासवदत्ताकार सुवन्धुने (६ठी गताब्दोंमें) उक्त गिनादित्य विक्रमादित्यकी सभा उज्ज्वल की थी। ६ठी गताब्दोंमें सुवन्धुने वासवदत्तामें दिङ्नाग, न्यायस्थिति, उद्योगकर, धर्मकोर्ति, मल्लनाग आदि प्राचीन दार्शनिकों नाम लिखे हैं और "केचिज्जैमिनिमतानुसारिण इव तथागतमतधर्मिनः" एवं "भौमांसानाया इव पिहितदिग्भ्ररदृग्मः"—इत्यादि उक्ति द्वारा सुप्रसिद्ध कुमारिलभट्टके प्रश्नको आलोचना की है। उक्त प्रमाण द्वारा जाना जाता है कि ६ठी गताब्दोंके पहले दिङ्नाग, उद्योतकराचार्य, धर्मकोर्ति, कुमारिल आदि आविर्भूत हुए थे सुवन्धुके बहुत पहले उन्हीं धर्मजगत् आलोकित किया था, जैनशास्त्रोंमें उनके अनेक प्रमाण मिलते हैं।

भारतप्रसिद्ध बौद्धजैनमतवेदिकागे मोमांसावातंकार भट्ट कुमारिलने समन्तभद्ररचित भाष्यमोमांसांसे प्रति-ष्ठापित स्याहादमतका खण्डन किया है। तदुत्तरमें उनके परधर्मो दिग्भ्रराचार्योंने जैनश्लोकवाचिं क तथा और दूसरे दूसरे ग्रन्थ लिख कर कुमारिल पर आक्रमण किया। इन सब प्रतिवाटकारियोंमें आत्ममोमांसाको अटवहस्त्री नामक टोहाके रचयिता विद्यानन्दका नाम पहले देखनेमें पाता है। प्रसिद्ध जैनपंडित माणिक्यनन्दीने अपने 'परोचासुख' नामक ग्रन्थमें आत्ममोमांसाके टीकाकार अकलह और विद्यानन्दका नाम उद्धृत किया है। फिर प्रसिद्ध जैन कवि और दिग्भ्रराचार्य प्रभावन्दने 'प्रमेय-कमलमातं गड' नामक परोचासुखटीकामें अकलह, विद्यानन्द और माणिक्यनन्दीका प्रसङ्ग लिखा है।

राष्टकूटराज भमोषवर्षके गुरु प्रसिद्ध जैनाचार्य जिनसेनने ७०५ अथवा अर्थात् ७८२ ई०में हरिवंशपुराणकी रचना की। उनके आदिपुराणमें अकलह, विद्यानन्द, पांचकेशरी, प्रभावन्द और उनके न्यायकुमुदचन्दोदय ग्रन्थका उल्लेख है—

‘अर्थात्प्रत्ययवच्च प्रमाचन्द्र’ इति सूत्रे ।
 इत्या चन्द्रोद्भवस्य चन्द्रराज्यमित्यत्र चन्द्रः ।
 चन्द्रोद्भवत्वात्तत्र चन्द्रा येन च चन्द्रवत्ते ।
 ‘राज्यस्यसामान्यानि कर्ता येनकालो ननुम् ॥
 महात्मकं चर्मासकचानकेवर्तनां प्रयाः ।
 विदुषां इत्याख्या हागान्तेऽस्तिमिदं ॥’

उपर्युक्त श्लोकमें जिनकेनने जिध प्रकार प्रमाचन्द्रकी प्रय या थी है, वह चन्द्रकेवद्योग है । प्रमाचन्द्र यदि जलके समकामकिक होई, तो जिनकेन प्रकार के चन्द्रका बिजल करते । इस तरह हम लोग प्रमाचन्द्रको जिनकेनके पूर्व कर्ता पर्याय् ॐ यतान्दोके मनुवा मान लकते हैं । सावित्रीजन्मदी जलके पूर्व कर्ता सि ज्योकि प्रमाचन्द्र अपने जन्ममें सावित्रीजन्मदीको पधेष्ठ प्रम सा कर गये हैं । दिग्गन्तविके मरत्कतोरन्मन्मदी पडावकोके मत के सावित्रीजन्मदी इत्त बिजल-सम्बन्धमें पर्याय् इत्त इत्तमें पडकर हुए है । परन्तु हमेंके पदसे पर्याय् (रो यतान्दोके प्रथममाममें सावित्रीजन्मदीमें ‘परोचामुक्’ थी रचना थी । पदसे ही कहा जा चुका है कि सावित्री जन्मदीमें विद्यान्म पारमेश्वरीका नाम पोर जलको पारमोमाबादोका उद्भूत को है । इस प्रकार विद्यान्म सावित्रीजन्मदीके पूर्व कर्ता पोर इको यतान्दोके बिचो समयके मनुवा होने हैं ।

प्रमाचन्द्र पोर अंशपोषकवर्तितकार विद्यान्म दोनी-नी ही कुमारिकप्रसङ्के मतका गण्यन किया है । जलके जन्ममें दिग्ग नाम च्योनकर, जन्मकोरितं मनुंहरि, अवरसामो ब्रह्माक्षः पौर कुमारिकके नाम साक साक चकृत हुए हैं । इस प्रकार विद्यान्ममें ‘ब्रह्मार्थेन-बाद’ नामक महाराजाय वर्तितत पर्यंतमाइका गण्यन किया है ।

पवित्र दिनको बात लको है, कि पचमवचक पिठकेन वाचकमें गुञ्जरातें पाटा इत्यदि जेनाचाव’ सन्नवादि-निरचित न्यायविन्दुद्विप्यन नामक एक जैनन्याय पद्य संघट किया है जमनेतराचारमें जन्मकोरितंरचित न्याय विन्दुकी को टोका बिचो है, एक टीकाका मत गण्यन केरनेके लिये ही सन्नवादोने ‘न्यायविन्दुद्विप्यन’ प्रका-शित किया । पिठकेन वाचकमें जैनशास्त्रमें दिग्गकाया

है, कि सन्नवादी एत्त कोरयताम् पर्याय् इत्त इत्तमें विद्यमान है ।

जमी, हम लोग जैनशास्त्रानुसार देखते हैं कि सन्न-वादोके पदके प्रतीकार, प्रतीकारके पदके जन्मकोरितं, जलके पदके प्रयोगव्याख्याय’ और प्रयोगव्यक्ति-पदके रिक्त-शानाचाव’ होठे हैं । पदके जिमी प्रत्यका प्रया-उ-के कानिनिमित्तार, इत्तमें उचका इत्तमनुजिवाइ जो कर टोका द्विप्योका सन्नवा, बहुत, बोड़े, जन्ममें नही को चकता । जिन समयकी जात कृष्ण हैं, उत जन्मव सुत्रायक नही बा पचका पात्र बनके जेका इत्तक-पयारकी सुविधा मो लको । इस विद्याके एक प्रत्यक के तैयार हो जाने पर वह जन्मव चमका प्रसार होमे पोर जिध जन्मदायके जलको टोका द्विप्यको करनीमें जन्म के जन्म इत्त भवे क्यति है । जता सन्नवादीके जो वर्ष पदके हम लोग दिग्ग नामका जोगा को-कार कर चुकते हैं । इसके पदके जैनदेशीय प्राचोन ही इत्तजानुसार मान्यम् हुआ है कि दिग्ग, जन्मचावके प्रथ पचक पोर बहुतकु री वा री यतान्दोके जिनको प्रमय विद्यमान है । जमी जैनपञ्च बोधमताका ही-व्यवर्तन करता है ।

उपर्युक्तका ज्ञान-नुवा है, कि विद्यान्म-पारमेश्वरीने इकोव्यातालीमें पचकक-पौर, जन्मजन्मदके मय तत्रा-प्रत्य-का चन्द्रोत्तकिया है । अचन्द्रोत्तकी ही पचमयती नामक जन्मजन्मको पारमोमाबाकी टीका-लिखी है । जन्मरां ममममइ इयो यतान्दोके बहुत-पदके कानिर्भूत हुए है, इत्तमें जन्मके लको । अतिशयर-कीनयोके-इत्तकार तरन्मन्मदी पडावकोके मनुष्यार जन्मवादीयक्यपत्त-क-पमममममइरुपि इत्त-वीरममममके-कुछ पदके पर्याय् इत्त-के-के पदके पडावमिबिजल-रूप । अतिशयके मतके, उचके पदके ही जन्मने-पारमोमाबाको रचना-को । इस समयममइकी पारमोमासामे विभिन्न-धार्मिक-मममम-अमीमिने न्यायमान्यकर-काव्यायन-मुनिवा-मममममममो-येका आता है । सुतरां मममममम रली यतान्दोके बहुत-पदके-पारमिर्भूत हुए है ।

पवित्र जेनाचाव’ ईम-चन्द्रमें पाव्यायनके पौर-चितने नाम प्रकाशित किये हैं—

“वात्स्यायनो महानागः कौटिल्यवचनकारणः ।

इतिहः पश्चिम्बानी विष्णुप्रतोऽङ्गु करच यः ॥”

(समिधानवि०)

इस चन्द्रकी उक्ति द्वारा वात्स्यायनको हम लोग मनुष्य यंत्र के उद्देश्यो से ही मान सकते हैं, किन्तु पाश्चात्य और देसीय संस्कृतानुशासो पुराविद्गण हम-चन्द्रके उक्त बचन पर विश्वास नहीं करते। क्योंकि वे लोग वात्स्यायनका प्रतीक यथाशक्ति ही स्वीकार करते हैं। उनकी बुद्धि पहले ही खण्डित हुई है। अब यह देवना चाहिये कि हमचन्द्रकी उक्ति प्रामाण्य है वा नहीं।

उसी यथाशक्ति से सबभूते ‘महानाग-विरचित काम-शास्त्र’ का उद्देश्य किया है। फिर सुप्रसिद्ध शङ्कराचार्य, उद्देशनाचार्य और वाचस्पतिमिश्र पश्चिमत्वामीका नाम दे कर वात्स्यायनका न्यायभाष्य उद्धृत कर गये हैं। मङ्गलने विद्यप्रकाश समिधानमें लिखा है—

“महानागोऽथमातङ्गो वात्स्यायनमुनावपि ।” इत्यादि उदाहरण द्वारा वात्स्यायनका दूसरा नाम जो महानाग और पश्चिमत्वामी था, वह प्रमायित होता है। अब प्रश्न उठता है कि कामसूत्रके रचयिता वात्स्यायन और न्यायभाष्यकार वात्स्यायन दोनों एक व्यक्ति थे वा नहीं? न्यायभाष्य और कामसूत्रका भाव अन्वेषण करनेसे यदि दोनोंको एक ही मनुष्यकी रचना मान लें तो शक्य नहीं होगा।

अभी वात्स्यायनके भिन्न भिन्न नाम, पाटलिपुत्र नगर-के कामसूत्रसंघ, चाचक्यकी तर्कविद्याविहारद-वाल्मीकी और बौद्ध तथा जैनग्रन्थानुसार ई०स०के बहुत पहले वात्स्यायन और चाचकारके भाषिर्भाव इत्यादिको पर्याप्तोचना करनेसे मात्स्य-होता है कि वात्स्यायन और चाचकार दोनों एक ही व्यक्ति थे।

वेदोक्तिसूत्रके भाष्यकार प्रयत्नपादने कई जगह बौद्धमतका निराकरण किया है। किन्तु वात्स्यायनने नहीं भी बौद्ध-प्रसङ्गका जिक्र नहीं किया। यदि उनके समयमें बौद्धमतका विशेष प्रचार होता, तो पश्चात् प्राण्यभाष्यकारिकोंके जैसा वे भी बौद्धमतका खण्डन करने विना न रहते। इसके ज्ञात होता है कि वात्स्या-

यनके समयमें बौद्धमतका विशेषरूपसे प्रचार नहीं था। इस सिद्धान्तसे भी वात्स्यायनको अति प्राचीनकालके मनुष्य मान सकते हैं।

विभिन्न समयके नैयायिकग्रन्थोंका पाठ कर अभी हम लोग न्यायदर्शनको कई एक स्तरोंमें विभक्त कर सकते हैं।

१म सूत्रयुग। २य भाष्ययुग। ३य संघर्षयुग। ४थ समयन वा व्याख्यानयुग। ५म नय न्यायका भाषिर्भाव।

१म युगमें अर्थात् सूत्रयुगमें गौतमका मूलग्रन्थ प्रकाशित हुआ। पहले उनके मतानुवर्तियोंकेवल शिष्यपरम्परा-दाय ही सूत्रोपेक्षा करते थे। उस समय केवल उनके शिष्योंमें ही शिष्यपरम्परानुसार सूत्र पद्योत वा भाष्योचित होता था। उस समय मूलग्रन्थ नैयायिकोंके अज्ञान था, लिपिवह नहीं होता था। पीछे कई यथाशक्ति वीत जाने पर शिष्यपरम्परासे मध्य प्रकृत पाठ और व्याख्या ले कर बहो गड़बड़ी उठी। उसी समय श्याय-मूल लिपिवह करनेका प्रयोजन हुआ था। पार्श्वनाथ, महावीर आदि धर्मवीरोंके मतानुसारो नैयायिकग्रन्थ श्यायसूत्रका अर्थ ले कर अपना अपना स्वार्थोन्मत्त, यहां तक कि वेदविरुद्ध मत प्रकाशित करने लगे। इससे ब्राह्मण-धर्मावलम्बी नैयायिकोंके हृदय पर आघात पहुंचा। उसी समय श्यायसूत्रकी व्याख्या करके जनसाधारणको प्रकृत सूत्रका अर्थ समझानेका प्रयोजन पड़ा। इस समय भाष्ययुगका परिवर्तन हुआ। वात्स्यायनने इस युगमें सूर्यस्वरूप प्रादुर्भूत हो कर अपनी पसाधारण युक्ति और विद्याप्रभावसे भाष्य प्रकाशित किया। उनके सुविचारपूर्व प्रमापशास्त्रको पालीवना करनेसे विस्मित होना पड़ता है, उनकी सुविचारपूर्वकी पर्याप्तोचना करनेसे उन्हें हम लोग भारतके परिष्कृत कह सकते हैं। ई०स०के पूर्वसे २वीं यथाशक्तिके पहले तक भाष्ययुग था अर्थात् इस समय हिन्दू नैयायिकग्रन्थ स्वाधोनभावसे श्यायशास्त्रकी पालीवना करते थे।

सम्भ्राट्, अशोकके प्राधान्यनामके साथ साथ बौद्धधर्म भी विशेष प्रवल हो उठा। हिन्दूदर्शनिकग्रन्थ सुप्र-प्राय होने लगे। इसी समयसे बौद्धग्रन्थ-वैज्ञानिक और

१५८ ई०के निकटवर्ती किसी समयमें महावादीने 'न्यायविन्दुटिप्पण' प्रकाशित कर धर्मोत्तराचार्य का मत खण्डन किया। इसके कुछ समय बीछे पू० शंतादो- में दिगम्बराचार्य विद्यानन्दवाचकेगरीने समस्तभद्रका स्थापनासमय स्थापन और कुमारिका मत खण्डन करने- के लिये जैनश्लोकवास्तिकाका प्रचार किया। उन्होंने 'प्रमाणपरीक्षा' नामक न्याय-ग्रन्थमें दिङ्नागका मत विशेषरूपसे खण्डन किया है। उनका यह न्यायग्रन्थ दिगम्बर समाजमें विशेष भादृत होता है।

विद्यानन्दके समयमें भारताकाशमें हम लोगोंने शङ्कराचार्यरूप वैदिक सूर्यका विकास देखा। इनकी प्रभासे बौद्ध, जैन और दूसरे दूसरे दार्शनिक नष्ट होन प्रस हो गये। वेदान्तकी गौरवप्रभा समस्त भारतमें प्रकाशित हुई। शङ्कराचार्य महात्मा शङ्कराचार्यने उपरोक्त उपपद प्रभृति दार्शनिकोंके नाम या मत उद्धृत तथा समाधारण उपनिषदीय ज्ञानवत्तसे सभी दर्शनोका मत खण्डन किया। पहले ही कहा जा चुका है कि उनके अभ्युदयकालमें बौद्ध, जैन और सोमा- सक मत ही भारतवर्षमें प्रचल था। इस समयके नैया- यिक और वैशेषिकगण बौद्ध तथा जैन समाजमें मानो मिल गये थे अर्थात् इस समय बौद्ध और जैनोके मध्य कितने ही नैयायिक और वैशेषिक दर्शनवित् आविर्भूत हुए थे। मालूम पड़ता है, कि इसी कारण शङ्कराचार्य- ने बौद्धों और जैनोके साथ नैयायिकों तथा वैशेषिकोंको घृणादृष्टिसे देखा है। न्याय और वैशेषिकमें अति निकट सम्बन्ध है। न्यायदर्शनमें प्रकृत अभिन्नता लाभ करनेमें वैशेषिकदर्शन भी पड़ना होता था, यह न्याय- भाष्यकार वात्स्यायनकी उक्तिसे ही जाना जाता है। शङ्कराचार्यने वैशेषिककी अर्थवैनाशिक वा अर्थबौद्ध बतलाया है। सम्भवतः शङ्कराचार्यके शारीरकभाष्यादि प्रचार होनेसे नैयायिक और वैशेषिकगण विच्छिन्न हो गये थे। मालूम पड़ता है कि शङ्कराचार्यका तीव्र प्रतिवाद देख कर हिन्दू नैयायिकगण वैशेषिकको अ- हंसा करने लग गये। वैशेषिकके विच्छिन्न होने पर न्यायदर्शनकी भी अवनतिका स्रष्टापात हुआ। दिगम्बर पदधर माणिक्यनन्दोंने ५८५ सम्वत् अर्थात् १२७ ई०के

कुछ पत्रों प्रमाण-परीक्षा के ध्याख्यास्वरूप परीक्षासुख नामक एक विस्तृत न्यायग्रन्थकी रचना की। इन ग्रन्थमें समस्तभद्र, प्रकण्ड और विद्यानन्दका मत आलो- चित हुआ है। उनके बाद प्रसिद्ध जैन कवि और नैयायिक प्रमाणनका अभ्युदय हुआ। उनोंने प्रमेय- कमलमार्सण्ड नामक परीक्षासुखको एक टीका लिखी है। इस ग्रन्थमें जैन न्यायमतकी समाप्तिवादी और उपकरण, दिङ्नाग, तथोत्तर, धर्मशक्ति, भर्तृहरि, शबरस्वामी, प्रभाकर और कुमारिका आदिका मत जगह जगह पर खण्डित है। एतद्विषय उनके ग्रन्थमें ब्रह्माद्वैत वाद भी निराकृत हुआ है।

बादमें ७वीं और ८वीं शताब्दीके बीच किसी ख्यातनामा हिन्दू नैयायिक वा हिन्दू न्यायग्रन्थका सम्बन्ध नहीं मिलता। ७वीं शताब्दीमें वाणभट्टने ईश्वरकारिभिः इत्यादिकल्पमें हिन्दू नैयायिकोंका उल्लेख किया है। अवभूतिके मानतोस्माध्वमे भी जाना जाता है कि ८वीं शताब्दीमें न्यायशास्त्रकी विशेष प्रवृत्ति थी। इस समय विख्यात श्रीहाचार्य कमलशौलने आविर्भूत हो कर जैन और हिन्दूमतखण्डन करने के लिये 'तर्कसंग्रह' नामक बौद्धमतपूर्ण एक न्यायग्रन्थ प्रकाशित किया। तर्कसंग्रहके पहले ही कमलशौलने लिखा है—

“धर्मतत्त्वफलवम्बन्धव्यवस्थादिववाधयम् ।
 गुणद्रव्यक्रियाजातिसमवायाद्यपदिभिः ॥
 शून्यमागोपिताकाशशब्दप्रत्ययगोचरम् ।
 स्पष्टलक्षणसंयुक्तप्रमाद्वितीयनिश्चितम् ॥
 अनीयसपि नांशेन विधीयुषा परारम्भम् ।
 असंक्रान्तिमनाद्यन्तं प्रतिविम्बादिविभिमम् ॥
 सर्वप्रपंचसन्दोहनिर्मुक्तमगतं परैः ।
 सन्तन्त्रश्रुतिनःसंगो जगद्विद्विभित्तया ॥
 अनन्तकल्पसत्येयसत्तमीभूतमहादयः ।
 यः प्रतीक्ष्य समुत्पादं जगाद वदतां परः ॥
 तं सर्वैर्वा प्रणम्यायं कियते तर्कसंग्रहः ॥”

कमलशौलने अपने तर्कसंग्रहमें ईश्वरकारित्ववाद, कल्पितकल्पित आत्मवाद, औपनिषद्कल्पित आत्मवाद और ब्रह्माद्वैतवाद आदिका खण्डन कर स्वतःप्रामाण्य- वाद संस्थापन किया है।

८वीं प्रतापदेवि मित्रादिब्रह्मवाचार्थानि प्रयाप्त
पाद रचित भवेति च लक्ष्मणस्यै च पर शोभनतो नामक
इति चौर कल्पदायीके रचना कर प्राचीन मत च का
पिन किया। १३वीं समयमें समर्पण वा श्याम्बाद्रुगका सूत्र
पात हुआ। कथाइने पहले पदपदाथं लोकार किया
चौर प्रयाप्तपादनि विषय भाष्य द्वारा लये समझया।
अभी मित्राचार्यनि इत्य, गुण कर्म सासाध्य, विधीय
चौर कर्मवाद इल च पदाथंके पसामा 'धर्मा' नामक
एक चौर चतिरिक्त पदाथं लोकार किया। हिन्दूनी या
बिकीनि ईश्वरकारणवाद चर्चात् जयतुष्टदा ईश्वरका
निरूपण किया था। बारम्बारयमभाष्य, उद्योतकराचार्यके
वार्तिक धादि प्राचीन न्याय पन्थीके समका कपीट
प्रमाण मिलता है। बौद्ध भेदाधिकीनि ईश्वरकारणवाद
का अर्थन कर ईश्वरको बड़ा देनेका चेष्टा थी। १४
औनेने भी 'वाचस्पतीभाष्य, प्रमाणसीर्षण', प्रमाणपरीक्षा
प्रमाणकतुल्य प्रसिद्ध-भात'क प्रसिद्धकमनसात'क,
न्यायवाक्यार, धर्मस प्रश्न, तज्ज्ञान सूत्र, अग्नीमिहारा,
ग्रन्थकोनिबिन्धन्यदिमपामाथ शास्त्रकतुल्य धादि
कर्मनि कल्पुष्टदा ईश्वरवादका अर्थन किया। मित्रा
दिब्र न्यायाचार्यके समयमें प्रथममें ईश्वरवाद प्रचार करने
की चेष्टा करने पर भी उनका उत्प्रेरक निय न हुआ।
उनके बाद ही श्रीनाथायं 'धर्मयदेवसुरिने 'बादमहा'क'
नामक न्यायदण्ड लिख कर अंतमता का अर्थन किया।
पौंडे मशरक देववेमने ८८० बन्धुमें 'नवब्रह्म' नामक
एक न्यायपन्थकी रचना कर एक शास्त्रको पालीबना
थी। १५वीं बाद ब्रह्मस्य'अदोकात्तु सुप्रसिद्ध प्राच्यपति-
मिन्धका पण्डित्य हुआ। उनका प्रकृत पाणिनि का
के कर मतसेट था। हिन्दु उनके 'न्यायसुवीनिकम्य'के
प्रकाशित हो जानेके उनके पाणिनिवाक्यके विषय
में कोई मोक्षमात्र नहो रहता। ब्रह्म न्यायसुवीनिकम्य
के हीन मानमें किया कि उनकी यह पण्य ८८८ शकमें
कमात्र किया।

“न्यायसुवीनिकम्योपचारवारी इतिना हरे।

वीरवत्तमिभिरन वर वरह (५१५) ११३१ ई”

उनको न्यायवार्तिकतात्पर्यटोकाके प्रारम्भमें
लिखा है—

“इत्यस्मिन् विधिपि सुतर्षे इत्यारह्मिन्वचन कर्मणात्तम् ।
करोतकरपरीमानविकरतीनां समुदायत् ॥”

यद्यपि उनकी उद्योतकरका ईश्वरकारणवादकी
संज्ञाणा करनेके लिये जो न्यायशास्त्रिक तत्पर्यटोका
प्रकाशित थी। एक समयमें ईश्वरसाक्षात्कार विधिवरूपसे
कीर्तित है। उनके कुछ समय बाद प्रसिद्ध नैयायिक
उद्योतनाथायं पाणिनीय हुए। उद्योतनाथायं रचित
अप्यचार्यलिखे योपनि प्रश्नकरणाका काक किया है—

“प्राग्मत्तत्तमिनेधतीतेषु कथात्पयः ।

नयेभूरवचने हुगेवां कथापन्थीम् ॥”

उक्त श्लोकके मात्तुम होता है कि प्राच्यपतिमिन्धके
८ वर्ष पौंडे पत्रत् ८०१ शकमें कदवालाचार्यने पन्थको
रचना की थी। प्राच्यपतिमिन्ध निम्निक मतावकम्बिनीका
मत निरास कर ईश्वरवाद चौर प्राज्ञवादके प्रचारमें
विधिवरूपसे यत्ननाम नहो हुए, इस कारण कदवालाचार्यने
'न्यायवार्तिकतात्पर्यपरिच्छि', कुतुमाच्छि, बोधचिन्ता,
प्राज्ञतत्त्वनिबन्ध, विद्यापत्नी धादि पन्थ लिख कर
ममत्त बौद्धादिनिम्निक मतोंका विधिवरूपसे अर्थन
किया। उनके पाणिनिवाक्यके हिन्दूधर्माक्रमें पुन अधिनक
न्यायसुमका पाणिनिन हुआ ऐसा कहनेमें भी कोई
पचु जि नही। उन्होंने ही पुन हिन्दुकीके मन्थ न्याय-
माहात्म्य कायन किया चौर वे जो पञ्चाशत्त पाण्डित्य
तथा तर्कशास्त्रके प्रमाणके बोझका मूकच्छेद करनेमें
बपर हुए। १६वीं उद्योतनाथायंके समय इतिवत्कार्त्तमें
इन्द्राके धर्मयत्त मूरुट्ट याममें श्रीधराचार्यने पाण्डु-
हास राजाके आश्रममें प्रगुष्टपादपदाथके प्रतिपक्षरूप
न्यायकन्दकी रचना की। न्यायकन्दकोके योपनि किया
है, 'ब्राह्मिकइयोत्तानपप्रतयकाके न्यायकन्दको रचिता'
चर्चात् ८११ शकाम्में न्यायकन्दको रची गई।

इस न्यायकन्दकीके जाना जाता है कि ८०० वर्ष पत्र
भी एक योपनि न्याय चौर भेदविषय शास्त्रकी विधिवरूपसे
पाकीबना होता हो। इसके बाद मा सब धर्म न्यायचार
मूलक नामक एक छोटा मन्थेवत्तपूत्र न्यायपन्थकी रचना
की। पौंडे १२वीं प्रतापदेवि प्राग्मत्तमें पानक नामक
खिलो कर्मप्रोत्त नैयायिकका नाम मिलता है। हिन्दु
दुःखका विषय है कि इनके बनाये हुए लिखो धर्मका

पनुसन्धान नहीं पाते। इस समय नरचन्द्रसूरि नामक किसी जैनाचार्य ने न्यायकन्दलोपिप्यनकी रचना कर फिरसे जैनमत स्थापनकी चेष्टा की। उनका अनुकरण कर विश्वसेन नामक एक दूसरे जैनने प्रायः १२४२ मध्यतम 'प्रमाणप्रकाश' नामक एक जैन न्यायग्रन्थका प्रचार किया। इस समय विजयसंगणिक नामक एक और जैन-पण्डितने भा-भवं चरचित न्यायसारको टोका लिख कर ईश्वरकरणवादको उड़ा देनेको चेष्टा की। १२५२ ई०में सारङ्गके पुत्र राघवभट्टने न्यायसारविचार नामक न्यायसारकी एक दूसरी टोका कर हिन्दू-नैयायिकमत संस्थापन किया। बादमें रामदेवमिश्रके पुत्र वरदाशने न्यायदोषिका तार्किकरत्ना आदि कई एक न्यायग्रन्थोंकी रचना की। इनमें माधव चार्यने मधु-दर्शनसंग्रहमें तार्किकरत्नाके वचन उद्धृत किये हैं। पीछे जयन्तभट्टने १२६६ ई०के लगभग व्यायकलिका और न्यायमञ्जरी नामक दो न्यायग्रन्थ लिखे। १२२६ शक पर्यात् १३०४ ई०में विख्यात जैनाचार्य जिनप्रभसूरि पञ्चदशनी नामक एक दार्शनिक ग्रन्थकी रचना कर ईश्वरकरणवाद खण्डन करनेमें यत्नवान् हुए। तदनन्तर तिलकसूरि और पीछे जिनप्रभके उपदेशानुसार उनके दो शिष्य, इन तीनोंने तीन न्यायकन्दलोपिप्यका प्रणयन की। शोषोक्त दोके नाम थे रत्नशेखरसूरि और राजशेखरसूरि। राजशेखरसूरिने न्यायकन्दलोपिप्यका लेखी है, कि "पहले प्रयत्नपादने वैशेषिकसूत्रका भाष्य प्रकाशित किया। पीछे ग्योस शिवाचार्यने ग्योसमती नामक उसकी शृति, उसके बाद शोषराचार्यने न्यायकन्दली नामक सन्दर्भ, पीछे उदयनाचार्यने किरणवली और अन्तमें शोषराचार्यने लीलावतीको रचना की। शोषोक्त चार ग्रन्थ जनसाधारणके सहजबोध्य नहीं होनेके कारण मैं यह न्यायकन्दलोपिप्यका लिख रहा हूँ।" उनके ग्रन्थमें न्यायवैशेषिककी अनेक बातें रहने पर भी उन्होंने प्रच्छन्नभावसे पूर्वतन जैन-नैयायिकोंके मतका समर्थन किया है। वे प्रकाशरूपसे यद्यपि ईश्वरावादका निराकरण नहीं करते थे, तो भी उनका ग्रन्थ पढ़नेसे मालूम होता है कि वे एक कहर निरोधरवादी थे। सुप्रसिद्ध उदयनाचार्यके समयसे ही

भारतवासी बौद्ध नैयायिकोंका सम्पूर्ण पक्षःपतन हुआ था। राजशेखरके बादसे ही जैनदार्शनिकोंकी भी अवनतिका सूत्रपात हुआ है। राजशेखरके कुछ पहले केशरमिश्रको तर्कभाषा रची गई। इन्हींके बाद नव्य न्यायका आविर्भाव हुआ।

१४वीं शताब्दीके प्रारम्भमें सुप्रसिद्ध गङ्गेशोपाध्याय प्रादुर्भूत हुए। उन्होंने असाधारण तर्कबुद्धिके प्रभावसे 'तत्त्वचिन्तामणि' प्रकाशित कर नैयायिकोंके मध्य युगान्तर उपस्थित किया। प्राचीन नैयायिकोंने केवल सिद्धिके उद्देशसे ही वाग्मता दिखाई है। उदयनके समयसे जटिल तर्कसमूहकी आलोचना तो होती थी, पर उनका लक्ष्य भ्रष्ट नहीं हुआ। वे मूल पदार्थतत्त्वकी आलोचनामें व्याप्त थे, हवा भाङ्गस्वरमें प्रवृत्त नहीं हुए। इस समय गङ्गेशने प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान और शब्द इस चार खण्डात्मक तत्त्वचिन्तामणि नामक एक विस्तृत प्रमाणग्रन्थका प्रचार किया। पूर्वतन नैयायिकोंके १६ पदार्थ स्वीकार करने पर भी इन्होंने केवल 'प्रमाण' स्वीकार किया। गौतम और वात्स्यायनादि प्रवर्तित न्यायदर्शनमें आत्मतत्त्व, देहतत्त्व, मुक्तितत्त्व, ईश्वरतत्त्व आदि दर्शनप्रतिपाद्य विषय वर्णित हुए हैं। नव्यन्यायके आविर्भावसे न्यायशास्त्रका दार्शनिकतत्त्व सोप होने पर भा गथा। नव्यनैयायिकोंका प्रधान उद्देश था अपवर्ग। किन्तु प्राचीनोंने जिस पण्यका अवलम्बन किया है, नव्य लोग वेसा नहीं करते। नव्यन्यायमें कहीं कहीं मूलपदार्थतत्त्वकी प्रति संक्षिप्त आलोचना रहने पर भी वह उल्लेखयोग्य नहीं है। गङ्गेशजी चिन्तामणिमें ईश्वरानुमान अपूर्ववाद इत्यादि खान भिन्न-पध्यात्मतत्त्वकी आलोचना नितान्त अल्प है। यहाँ तक कि गङ्गेशने बोध बोधमें गौतमका भी मत खण्डन किया है। उनके ग्रन्थमें केवल तर्कका भाङ्गस्वर देखा जाता है। इस तर्कके तूफानमें पड़ कर नव्यनैयायिक-सीम प्राचीन न्यायशास्त्रसे दूर हट गये हैं। नव्यनैयायिकोंने केवल वाक्य ले कर विचार, लक्षणसमूह और विशेषण पदका खण्डन, विशेषणान्तरप्रतिपत्ति उसका समर्थन इत्यादि वाक्यालकी घटा विस्तार को है। उन्होंने धीशक्तिकी पराकाष्ठा दिखा कर केवल तर्कमार्गका

हृद्योका, असिद्धग्रन्थरहस्यटीका, आख्यातवादटिप्पनी,
उदाहरणलक्षणहृद्योका, उपाधिदूषकताबोलहृद्योका,
कूटघटितलक्षणहृद्योका, केवलान्वयतिरेकी ग्रन्थरहस्य-
टीका, केवलान्वयिग्रन्थरहस्यटीका, चतुर्दशलक्षणी,
चित्ररूपविचारदोषिका, तर्कग्रन्थहृद्योका, तर्करहस्य-
टीका, द्वितीयमिथ्यलक्षणहृद्योका, द्वितीय द्रव्यवर्ति
लक्षणहृद्योका, द्वितीय प्रगल्भलक्षणहृद्योका, द्वितीय-
मिथ्यलक्षणहृद्योका, पक्षत'टीका, पक्षलक्षणी हृद्य-
टीका, परामर्श पूर्वपक्षग्रन्थहृद्योका, परामर्श रहस्य-
टीका, पुच्छलक्षणहृद्योका, पूर्वपक्षग्रन्थविवृति,
प्रतिज्ञालक्षणहृद्योका, प्रथमचक्रवर्ति लक्षणहृद्य-
टीका, प्रथममिथ्यलक्षण हृद्योका, बाधसिद्धान्तग्रन्थ-
हृद्योका, निरूपविशेषण, विरुद्धग्रन्थरहस्यटीका, विरुद्ध-
पूर्वपक्षग्रन्थ हृद्योका, विशेषनिरूपितहृद्योका,
विशेषपक्षसिद्धरहस्यटीका, वशासिद्धरहस्यटीका, वशाप्र-
सुगमरहस्य, व्याप्तिवाद, शक्तिवाद, सद्गतिवाद, सप्रति-
पक्षग्रन्थरहस्य, सप्रतिपक्षसिद्धान्त, सवाभिचार ग्रन्थ-
रहस्य, सामान्यनिरूपितरहस्य, सामान्यलक्षणरहस्य,
सामान्याभावरहस्य, स्वप्रकाशवादाद्य, हेत्वाभास
इत्यादि । इसके सिवा और भी कितने कौटुम्बिक लिखे हैं ।

कृपादाम—नववादटिप्पनी, तत्त्वचिन्तामणिदोषोत्ति-
की प्रसारिणी नामक टीका ।

कृपाभट्ट—पञ्चलक्षणोटीका, सिंहरवाप्रटीका ।

कृपामित्र आचार्य—अनुमितिपरामर्श, गादाधरो-
टीका, तत्त्वचिन्तामणिदोषितिप्रकाश, हृद्यतर्करङ्गिणी,
तर्कप्रतिबन्धकरहस्य, लघुतर्कसुधा, तर्कसुधाप्रकाश,
नवधर्मादाटीका, लघुन्यायसुधा, पदार्थखण्डनटिप्पनी-
व्याख्या, पदार्थ परिज्ञान, बोधबुद्धिप्रतिबन्धकताविचार,
भवानन्दोपदेश, वादसंग्रह, वादसुधाकर, वायुप्रत्यक्ष-
तावाद, शक्तिवादटीका, सामग्रीपदार्थ, सिद्धान्तरहस्य ।
(इसके प्रस्तावा कई एक कौटुम्बिक ।)

कृपामित्र—चिन्तामणि ।

केशवभट्ट—न्यायचन्द्रिका, न्यायतरङ्गिणी ।

केशवभट्ट (भनन्तके पुत्र)—तर्कभाषाकी तर्क-
दोषिका नामक टीका ।

कौण्डभट्ट (भट्टोजी दोक्षितके भ्रातृपुत्र)—तर्क-
प्रदीप, तर्करत्न, न्यायपदार्थदोषिका ।

कौण्डिन्यदोक्षित—तर्कभाषाप्रकाशिका ।

गदाधर—तर्कदोषिकाटीका ।

गङ्गाधर—न्यायचन्द्रिका, सामग्रीवाद ।

गङ्गाधर (मदाशिवके पुत्र)—तर्कचन्द्रिका ।

गङ्गारामभट्ट—न्यायकृतूहल ।

गङ्गाराम जठो (नारायणके पुत्र)—तर्कामृतचक्र
और उच्चकी टीका, टिमकरोखण्डन ।

गङ्गेश दोक्षित—तर्कभाषाटीका ।

गणेश दोक्षित (भावा विश्वनाथ दोक्षितके पुत्र
और विज्ञानभिक्षुके गिष्य)—तर्कभाषाकी तत्त्व
प्रबोधिनी नामक टीका ।

गदाधरभट्टाचार्य—कुसुमाञ्जलिध्यास्या, गादाधरो
नामक (तत्त्वचिन्तामणिदोषिति और तत्त्वचिन्तामस्या-
लोककी टीका) सुविस्तोर्ष न्यायग्रन्थ । इनके बनाये
हुए कितने खसरे पाये जाते हैं जिनमेंसे निम्नलिखित
उल्लेखयोग्य हैं,—

अतएवसमुच्चयिरहस्य, अनुकरणविचार, अनुप-
संहारिग्रन्थरहस्य, अनुपसंहारिवाद, अनुमाननिरूपण,
अनुमितिटिप्पनी, अनुमितितत्त्वाद, अनुमितिमानस-
वादाद्य, अनुमितिरहस्य, अनुमितिसंग्रह, अन्वया-
ध्यातिवाद, अन्वयवाटटीका, अन्वयाध्यातिरेकी,
अपूर्ववाद, अवच्छेदकतानिरूपित, अवच्छेदकता
वाद, अवयवग्रन्थरहस्य, अवयवनिरूपण, अष्टादश-
वाद, अनाधारपवाद, असिद्धग्रन्थरहस्य, आकाश-
वाद, आध्यातवाद वा प्राक्कालविचार, आकाश-
विवेकदोषितिटीका, आलोकटिप्पनी, उत्पत्ति-
वाद, उदाहरणलक्षणटीका, उपनयलक्षणटीका,
उपसर्गविचार, उपाधिवाद, उपाधिसिद्धान्तग्रन्थटीका,
कारकवाद, केवलान्वयतिरेकिरहस्य, केवलान्वयिरहस्य,
चतुर्दशलक्षणी, चित्ररूपवाद, तदादिसर्वनामविचार,
तर्कग्रन्थरहस्य, तर्कवाद, तात्पर्यज्ञानकारणताविचार-
रहस्य, तादात्म्यवाद, त्वत्वादिभावप्रत्ययविचार, द्वितीय-
प्रगल्भलक्षणटीका, द्वितीयलक्षणटीका, द्वितीयादि-
न्युत्पत्तिवाद, धर्मितावच्छेदकप्रस्तासम्बन्धितावच्छे-
दकवाद, नवधर्मादाटीका, नवधर्मसिद्धान्तविचार,
नवधर्मतावच्छेदकवादाद्य, नव्यमतरहस्य, नव्यमत-

विचार, निर्धारकविचार, पक्षतावाद चोर पक्षताद्वय, पक्षतावादार्थ, पक्षत्रयको पक्षवादटीका, परामर्श रक्षक, परामर्शवादात्, पूर्वपक्षत्रयटीका पूर्वपक्ष रक्षक, पूर्वपक्षवादि पूर्वविद्यालयपक्षता, प्रतिज्ञासूचक टीका, प्रत्यक्षकसिद्धात्मनश्च, प्रथमप्रत्यक्षकपटीका, प्रथमसूचकविचरक प्रत्यक्ष, प्रथममात्रवाद, प्रामाण्यवादटीका, प्रामाण्यशास्त्रस्य वाचकस्वरक्षक वाचतावाद, वाचनुविवाद वाचनुस्यपदात्, सुविवाद, मूयोर्न्यनवाद, मङ्गलवाद, सुविवाद सुविवादात्, सौख्यवाद, स्वकीयवादात्स्वरक्षक, सत्यवाद, मङ्गलवादात् विज्ञानारजतावाद विज्ञानोन्नेतिज्ञानवादात् वाचनुस्यपदात् विधिवाद, विधिस्वरूपवादात्, विद्ययुग्परक्षक विद्ययुक्त्वात्पक्षटीका विद्ययुक्तिसिद्धान्तोका, गतिरोचवाद, विरोचिषय, विगिद्धमैगिद्धात्प्रानवादात्, विगिद्धमैगिद्धात्विचिषात्, विरोचप्रानपदात्, विरोचविचिषाटीका विरोचप्रान्ति विषयनावाद, हतिवाद स्थि-
 त्वात्प्रथमविचिषात् ' स्थितिप्रथमविचिषात्प्रान, व्याप्यक्षयोपयोका, वृत्तिनिष्पन्न, व्याप्यक्षकटीका, व्याप्तिवाद, व्याप्तानुभवोका व्युत्पत्तिवाद, व्युत्पत्ति वादात् यज्ञिवाद, यन्त्रपरिष्कार, यन्त्राधिक-
 रक्षक सययययनावाद सययवाद, सययवादात्, मङ्गलवाद, सङ्गठनमितिवाद, सञ्चितपक्षत्रय सप्रति-
 पक्षयत्, पक्षानिपक्षपूर्वपक्षटीका सप्रतिपक्षवाद-
 पक्ष सप्रतिपक्षवाट तर्कनामयज्ञिवाद सञ्च-
 मिचारय चरक्षक सञ्चमिचारवाद, सञ्चमिचारनामाभ्य निरक्षि सञ्चमिचारविद्यालयपक्षटीका, सञ्चकारवाद
 सञ्चकारिच चरक्षक, साङ्गठनवात् कारकच चरक्षक वा कारकवाट, कारकवासाकारकानुपन कारिचिरोचय च, कामपोवाद कामपोवादात्, कामान्विचिषय चरक्षक, कामान्वय, कामान्वयव्यवस्थापन, कामान्वयकक्ष-
 टीका, कामान्वादादटीका, कामान्वात्प्रानवाट, सिद्ध-
 वादात्प्रक्षयो, सिद्धवादी सिद्धान्तप्रचरक्षक, सिद्धान्त-
 सययकोट, सिद्धान्तवादि, सङ्गठनपक्षटीका, सञ्चामास-
 निष्पन्न, सञ्चामासकामान्वयकक्ष इत्यादि ।

शुभानन्द विद्याधारीय (मङ्गलमते गिया)—
 बालनरक्षिषैकदोषितिटीका, नारायणमङ्गलविचिषय,
 श्रद्धाकोटविचिषय ।

शुभानन्द—तर्कभाषाटीका ।
 शुभपण्डित—मनोवन्द्यटीका चोर शुभपण्डितोय
 नवरत्नायमसविचार ।

शुभानन्दार्थ तर्क (महात्मनोपान्यास)—तत्त्वचिन्ता
 मन्त्रिणी 'रक्षितक' नामक टीका, तत्त्वचिन्तामन्त्रि-
 णीपतिपति तर्कतर्कनिष्पन्न, श्यावसिद्धान्तस्य,
 पदाक्षरवाट ।

शुभानन्तावाय—चतुर्विधवाद, चतुर्मितिमान-
 स्यविचार, चत्वारमात्रवाद, चालनत्वातिविधिवाद,
 ईश्वरवाद, ईश्वरसूचकवाद, एतत्त्वसिद्धिवाद कारकता
 वाट प्रानकारकतावाद, इन्द्रसूचकवाद, नव्यमतेवाद,
 परामर्शवादात् वाचनुविवाद, रामचन्द्रवाद, वादवि-
 चिषय, वादपक्षिका, विधिवाद, गियाविद्यावाद, प्रमाति-
 वाट वाङ्मवाद । (इत्येते शिवा चोर भो कोटे कोटे
 चत्)

शुभोक्तान्त (नेपोदस्ये शुभ)—श्यावमदीय ।
 शुभोक्तान्तमिय—तत्त्वचिन्तामन्त्रिचार ।
 शुभोक्तान्तमोनी—श्यावशुभान्तात्विचिषय वा श्याव-
 विचार ।

शुभोक्तान्तवृत्त (मन्वनायके शुभ)—तर्कभाषावाच
 प्रकाशिका ।

शुभोक्तान्त श्यावत्—मायुरोक्तोक्तो श्यावत् नामक
 टीका । उक्त टीकात् शङ्गीभूत शनिक चरैरपि शानि
 च्, श्याव—चतुर्मितिचिन्तय, चरिद्धपूर्वपक्ष, चरिद्ध
 चिन्तात्, उपनिषुर्वपक्ष, उपनिषिद्ध, कूटचरितकल्पत्वे,
 कूटाचरितसूचक, शिवात्मको द्वितीययस्य, द्वितीयमिय,
 द्वितीयमिचयच, पक्षतापक्षपक्ष, पक्षतासिद्धान्त, यक्ष-
 कक्षको, परामर्शपूर्वपक्ष, शुष्कसूचक, प्रतिज्ञा, प्रथम
 पक्षवती, प्रथममिय, वाचपूर्वपक्ष, वाचविद्यात्,
 प्रामाण्यनिचिषय, सङ्गठनवाटिका चिन्तय ।

शुभोक्तान्तमिच (पक्षमङ्गले शुभ)—तर्कभाषाप्रथम,
 श्यावकोचिनी नामक तर्कच पक्षको टीका ।

शुभोक्तान्तवृत्त—श्यावचक्षुकोचिनी नामक तर्क
 च पक्षको टीका ।

शुभोक्तान्त—नादापरी टीका ।
 शुरोक्तान्त चर्कश्रीम—भाषाचक्षुकोचिनी नामक

तर्कभाषाटीका, तर्कसंग्रहटीका, मुक्तावली और 'गौरीकान्तीय' नामक नवग्रन्थसमूहविचार ।

गौरीनाथ—तर्कपञ्चव ।

चक्रधर—न्यायमञ्जरियन्मह ।

चतुर्भुजपण्डित—तत्त्वचिन्तामणिदोषितिविस्तार ।

चन्द्रनारायण आचार्य—कुसुमाञ्जलिटीका, गादाधरी यानुगम, गदाधरके अनुमानखण्डकी टीका, गीतमसूत्र-वृत्ति, जागदीशक्रीडटीका, जागदीशचतुर्दशमलक्षणी-पत्रिका, तत्त्वचिन्तामणिटिप्पणी, तर्कसंग्रहटीका, न्यायक्रीडपत्र ।

चन्द्रभट्ट—तर्कपरिभाषा ।

चिन्नभट्ट (विष्णुदेवाराधके पुत्र, १४वीं शताब्दी)—तर्कभाषाप्रकाशिका, निरुक्तिविवरण, चिन्नभट्टीय ।

जगदानन्द—न्यायमीमांसा ।

जगदीश तर्कालङ्कार भट्टाचार्य (भवानन्दके शिष्य १६४८ ई०के पहले)—तत्त्वचिन्तामणिदोषितिप्रकाशिका, तर्कदीपिकाव्याख्या, तर्कान्त, तर्कालङ्कारटीका, न्याय-लीलावतीप्रकाशदीधितिटीका, शब्दशक्तिप्रकाशिका । इनके वनाथे हुए और भो कितने खसरे मिलते हैं, यथा—

अमुमितिरेहस्य, अवच्छेदकत्वनिरुक्ति, अवयवसंग्रह-रहस्य, आख्यातवाद, भासतिविचार, उदाहरणलक्षण-दोषितिटीका, उपनयलक्षणदोषितिटीका, उपाधिप्रथ-रहस्य, उपाधिवादटीका, केषलव्यतिरेकरहस्य, केवलान्वयि ग्रन्थदोषितिटीका, वेदलान्वयिग्रन्थरहस्य, चतुर्दश-लक्षणी, तर्कसंग्रहस्य, तृतीयचक्रवर्तिलक्षणदोषिति-टीका, तृतीयप्रगल्भलक्षणदोषितिटीका, द्वितीयचक्रवर्तिलक्षणदोषितिटीका, द्वितीयलक्षणदोषितिटीका, पञ्चता-टिप्पणी, पञ्चतापूर्वपञ्चप्रथदोषितिटीका, पञ्चलक्षणी, परामर्शपूर्वपञ्चटीका, परामर्शरहस्य, परामर्शहेतुता-विचार, पुच्छलक्षणटीका, पूर्वपञ्चरहस्य, प्रतिज्ञालक्षण-दोषितिटीका, प्रथमचक्रवर्तिलक्षणटीका, प्रथमस्वलक्षण-टीका, प्रामाण्यवाद, वाधप्रथरहस्य, भावरहस्यनामाश्र, भूयोदर्शन, विरुद्धप्रथरहस्य, विशेषनिरुक्ति, विशेष-लक्षणटीका, विशेषव्याप्तिरहस्य, विषयताव्याप्तिवादाय, वराधिकरणधर्मावच्छिन्नाभावटीका, व्याप्तिप्रहोपायरहस्य, वराप्तिपञ्चकटीका, वराप्तिवाद, वराप्तिप्रगुगमरहस्य,

सङ्ख्यनुमितिवाद, सप्रतिपक्षप्रथरहस्य, सप्रतिपक्षपूर्व-पक्षप्रथटीका, सप्रतिपक्षसिद्धान्तप्रथटीका, सप्रतिपक्ष-प्रथरहस्य, सप्रतिपक्षसामान्यनिरुक्ति, सप्रतिपक्ष-सिद्धान्तप्रथटीका, सामान्यनिरुक्तिरहस्य, सामान्य-निरुक्तिटीका, सामान्यलक्षणटीका सामान्यलक्षण और सामान्यभावरहस्य, सिद्धान्तप्रतिपक्ष, सिद्धान्तलक्षण-रहस्य, सिद्धान्तलक्षणटीका, हेत्वाभास इत्यादि ।

जगन्नाथकर्मपञ्चानन—'जगन्नाथीय' न्याय ।

जगन्नाथपण्डित—नञ्वादविवेक ।

जयदेव (पञ्चधर्मिय)—तत्त्वचिन्तामणि-शालोक, (चिन्तामणिप्रकाश, मखालोक वा शालोक नामसे भी प्रसिद्ध है), दृश्यपदार्थी, न्यायपदार्थमान्ना, न्यायनीका-वतीविवेक ।

जयदेव (नृसिंहके पुत्र)—न्यायमञ्जरोसार ।

जयनारायणदोषित—तर्कमञ्जरो ।

जयराम न्यायपञ्चानन भट्टाचार्य (रामभट्टके शिष्य)—तत्त्वचिन्तामणिदोषितिटीका, न्यायकुसुमाञ्जलिटीका न्यायसिद्धान्तमान्ना, पदार्थमणिमान्ना । इसके प्रनाथ और भो कितने खसरे मिलते हैं ।

जयसिंहसूरि—न्यायतात्पर्यदीपिका ।

जानकोनाथ—न्यायसिद्धान्तमञ्जरो ।

तात्त्विकनारायण—गुरुदोषिका ।

तिग्मन—ग्रन्थशाख्यातिवाद, सामान्यनिरुक्तिक्रीडा ।

त्रिलोचनदेव—न्यायपञ्चानन-न्यायकुसुमाञ्जलिव्याख्या ।

त्रिलोचनाचार्य—न्यायसङ्घेत ।

वराहकभट्ट—वराहक-भट्टीय ।

दिनकर—दिनकरो वा न्यायसिद्धान्तमुक्तावलीप्रकाश, भवानन्दटीका ।

दुर्गादत्त सन्निध—न्यायदोषिनो ।

दुलारभट्टाचार्य—गादाधरीक्रीडटीका ।

देवदास—न्यायरत्नप्रकरण ।

देवनाथ—तत्त्वचिन्तामणि-शालोकपरिशिष्ट ।

धर्मराजभट्ट—न्यायरत्न नामक न्यायसिद्धान्त दीप-टीका ।

धर्मराजदोषित (त्रिवेदीनारायणके पुत्र)—तत्त्व-चिन्तामणि प्रकाशदीप्ति, तर्कचूडामणि (तत्त्वचिन्ता-

सर्वकारकी डोका, श्यावश्यावामचिटीका, धर्मशत्रु
दोषितोय ।

नरनि जमाफी—प्रशासिका, न्यायविद्यान्तमुक्ता-
वकीली प्रमा नामक डोका ।

नसीममह—पदायै दीपिका ।

नारायण नाम मोम—प्रतिव्योतिप्रदानकारणवाद, प्राति-
पदिकक प्रावाद ।

नारायणतीर्थ—न्यायकुसुमाञ्जलिचारिकाव्याख्या ।

निबिराम—न्यायमारस पद्यडोका ।

नीलचन्द्रमह—तर्क स पद्यदोषिकाप्रथम ।

नीलचन्द्रश्याव—गादाचरीडोका, कायदीपीडोका,
तत्त्वचिन्तामचिदोषितोका ।

नुर्मि रूपदानम (सोविन्दपुर)—न्यायविद्यासामञ्जरी
टीका ।

पद्मामिरामश्याव—तर्क स पद्यनिबन्ध, न्यायसम्बुध,
प्रकाशिका, प्रमा ।

प्रगल्भाचार्य (सूरदा नाम हीमहर, नरपतिसे पुत्र)—
तत्त्वचिन्तामचिटीका और शीदपंथ नामक खखनखल
कापडोका ।

बलमहेश्वर—प्रमाचमञ्जरीटीका ।

बलमहेश (विष्णुदाससे पुत्र)—तर्क सायाप्रका-
शिका, यज्ञिवादडोका ।

बालकृष्ण—न्यायबोधिनी नामक तर्क भाषाटीका ।

बालकृष्ण—न्यायविद्यान्तमुक्तावनीप्रकाश ।

मदीरचमैक (रामचन्द्रसे पुत्र और जयदेवसे पीत्र)—

द्वैत्यव्याप्तिका, न्यायकुसुमाञ्जलिप्रकाशिका ।

भवनाथ—पद्यचन्द्रकापडोका ।

भवानन्दसिद्धान्तवादीय (विद्यानिवाससे पिता)—
तत्त्वचिन्तामचिद्व्याख्या, भवानन्दो वा भूकान्तप्रकाशिका
नामक तत्त्वचिन्तामचिदोषितिको टीका, मन्दाबंकार
सम्बन्धी ।

भवानीमहर—प्रमाकामताविचार ।

भालकरमह—तर्क परिमामाहंथ (तर्क भाषाकी
टीका)

भविष्यकर्मिण्य—कारकचन्द्रमञ्जु, न्यायप्रकाश ।

भद्रप्रामाथ तर्क बामोम—मञ्जुप्रामाकी वा भावुरी,

तत्त्वचिन्तामचिटीका, तत्त्वचिन्तामचिदोषितोका, तत्त्व-
चिन्तामचि पायोचडोका, विद्यान्तरहस्य । रथसे सिवा
पौर मो कितने खरसे ई को २००से कम नहीं होयि ।

भद्रुद्धन—तर्क स प्रमाप्यडोका, तत्त्वचिन्तामचि-
पायोचकण्टकोदार ।

महादेवमह—सुभावकीबिरथ ।

महादेवमहद्विद्वन्वर (दिनकर नामसे प्रसिद्ध)—इर्षानि
पित्तसे सद्योमथे दिनचर्री पादिथी रचन्य को ।

महाशिवसुखदासवर (सुकुन्दसे पुत्र)—न्याय
कोशुम, भवामीप्रकाश (भवान्दीकी डोका), मितमा-
चिथी नामक न्यायप्रति ।

महेश्वर—तत्त्वचिन्तामचिपायोचदपंथ ।

महेश्वर—तत्त्वचिन्तामचिटीका, तत्त्वचिन्तामचि
दोषितोका ।

माचबमिथ—पनुमानाकोकदीपिका ।

माचबदेव—तर्क भाषासारसम्बन्धी । श्यावकार, प्रमा
चादिप्रकाशिका ।

माचबपदाभिराम—तर्क स पद्यश्यावनिबन्ध ।

सुकुन्दमह माङ्गलिक (चमत्तमहसे पुत्र)—ईश्वरवाद,
तर्क स पद्यचन्द्रिका नामक तर्क स चक्रकी डोका, तर्क-
स्यततरङ्गिणी ।

सुकुन्ददास—न्यायसु खड्गति ।

सुरारिमह—तर्क भाषाटीका ।

सोहनपण्डित—तर्क कीसुदीपिका ।

सङ्गपति जगन्नाथ—तत्त्वचिन्तामचिप्रमा नामक तत्त्व-
चिन्तामचिथी डोका ।

सहस्रमूर्ति वादीनाथ—तत्त्वचिन्तामचिटीका ।

सनिबन्ध—तत्त्वचिन्तामचिदोषितिकाव्याख्या ।

सनीयपण्डित—न्यायचक्रसे ।

सङ्गमह—न्यायपरिभाषा ।

यादवपण्डित वा यादवव्यास (कृषि उडे पुत्र)—
पनुमानसम्बन्धीकार, न्यायविद्यासामञ्जरीकार ।

शुद्धेश न्यायकारहार महाचार्य—रघुदेवो वा भूकान्त
दीपिका नामक तत्त्वचिन्तामचिथी व्याख्या ।

रघुनाथवर्धन—न्यायरत्न नामक महाभारतसे पद्य-
कादकी डोका ।

कभी भी यूरोपीय पण्डितोंके मतसे न्यायशास्त्रके अन्तर्भूत नहीं हो सकते। सुक्तिमार्गका सोपान निरूपण ही भारतीय प्राचीन न्यायदर्शनका प्रधान आलोच्य विषय है, किन्तु यूरोपीय पण्डितोंके मतसे वह Philosophy proper or metaphysics अर्थात् साधारणतः दर्शनशास्त्र कहनेसे जो समझा जाता है, उसीका प्रतिपाद्य विषय है। हम लोगोंके देशमें न्यायदर्शन जिस प्रकार पहुँचानेके मध्य दर्शनविशेष है, यूरोपीय न्यायदर्शन वा लाजिक उस प्रकार दर्शनशास्त्रके अंतर्गत नहीं है। यूरोपीय न्यायदर्शन विज्ञानकी एक शाखा (Science) विशेष है और पाश्चात्य न्यायकी विज्ञानके अन्तर्भूत मान कर ही उसीके अनुसार लाजिककी संज्ञा (Definition) लिखी गई है।

किसी किसी पण्डितने न्यायको चिन्ताका न्यायशास्त्रविशेष धरलाया है (Science of the laws of thought as thought)। किसी किसीका कहना है कि लाजिक वा न्याय युक्तिप्रयोजकशास्त्र (Science as well as the art of reasoning) है, फिर अन्य पण्डितोंके मतसे लाजिक कहनेसे साधारणतः प्रमाणका नियोजक समझा जाता है (Science of proof or evidence)।

सुतरा भारतीय न्यायदर्शनका जो अर्थ प्रमाणके अंतर्गत है अर्थात् जिसकी अर्थमें प्रमाणकी नियमावली एवं प्रयोगप्रणाली वर्णित है, जो भारतीय न्यायशास्त्रका मुख्य विषय है, वही यूरोपीय न्यायदर्शन वा लाजिकका आलोच्य विषय है।

प्रमाणके ऊपर सभी विषयोंका सत्यासत्य निर्भर करता है। सत्यनिर्णय ही जब सब प्रकारकी चिन्तावली वा कार्यप्रणालीका मुख्य उद्देश्य है, तब पहले प्रमाणका याथार्थ्य अथवाथार्थ्यका निर्धारण करना आवश्यक है। सुतरा लाजिकमें प्रधानतः प्रमाण किसे कहते हैं, प्रमाणका उद्देश्य क्या है, निर्दोष प्रमाणा स्वरूप क्या है, हेतुभास (Fallacies) संशोधनका उपाय क्या है, सत्यका निर्धारण करनेमें कौसी प्रणालीसे चिन्ताका प्रयोग करना आवश्यक है, ये सब विषय पुष्कलपुष्करूपसे आलोचित हुए हैं।

ग्रीक-पण्डित अरिष्टल ही पाश्चात्य न्यायके उद्भवकर्ता हैं। अरिष्टलके बहुत पहलनेसे न्यायका अर्थः प्रचलन रहने पर भी अरिष्टलने ही पहले पहल न्यायको पृथक् शास्त्ररूपमें प्रवर्तित किया। अरिष्टलने पहले न्यायको नियमावली दर्शनशास्त्रमें प्रयुक्त हीतो थी। न्यायशास्त्र नामसे कोई पृथक् शास्त्र नहीं था।

दार्शनिक सक्लेटिस सबसे पहले न्यायप्रचलित नियमावलीका बहुत कुछ कर गए हैं। सक्लेटिसके जन्मदर्शनके प्रामाण्य विषय भी न्यायानुमत प्रक्रियासे माधित हुए हैं। तर्कशास्त्रका संज्ञाप्रकरण (Definition of notion) सक्लेटिसमें प्रवर्तित हुआ है। ध्यात्मसिद्धान्त (Synthetic reasoning or induction)का सक्लेटिसने प्रचार किया है। सक्लेटिसके परवर्ती दार्शनिकगण सक्लेटिसका पदानुसरण कर गये हैं। दार्शनिक चिन्ताओंको शास्त्ररूपमें लिपिबद्ध करनेमें चिन्ताकी पद्धति वा क्रम (Method) की आवश्यकता है और चिन्ताका क्रम भी न्यायानुगत प्रमाणके ऊपर निर्भर करता है। सुतरा दर्शनशास्त्र जब व्यक्तित्व चिन्ता मात्र न हो कर शास्त्रविशेष ही जाता है, तब साथ साथ न्यायानुगत प्रमाणप्रणालीका भी (Logical method) उत्कर्ष साधित हुआ करता है। सक्लेटिसकी मृत्युके बाद दर्शनशास्त्रके अभ्युदयके साथ साथ तर्कशास्त्रकी उत्पत्ति हुई थी। अभी तर्कशास्त्र कहनेसे जो समझा जाता है, उस समय लाजिक कहनेसे भी वही समझा जाता था। उस समय लाजिकका दूसरा नाम था Dialectic वा तर्कशास्त्र। प्रोटोके दर्शनमें भी इसी प्रकार Dialecticका आधिपत्य देखनेमें आता है। Dialectics-शैक हम लोगोंके देशीय न्यायदर्शनके जैसा है। Dialectics-इस प्रमाणमें प्रयोगप्रणालीके सिवा और भी दर्शनके अनेक साधारण विषय वर्णित हैं। वस्तुतः अभी Metaphysics कहनेसे जो समझा जाता है, उस समय Dialectics कहनेसे भी वही समझा जाता था।

सक्लेटिसके परवर्ती प्रोटोके संसर्गमयिक दार्शनिकोंके मध्य अन्तिस्तेनिस (Antisthenes) लाजिकका शक्तिवर्धन किया। आन्तिस्तेनिस

बिनिबन्धा दार्शनिकमत वर्तमान Nominalism का नामवादी है। आनटिबिनिबन्धे मतानुसार बहुमात्र न ज्ञानावयव है और जमी सदा बहुषी सत्ता है तथा बुद्धि (reason) न ज्ञानी परिवर्तन (Transposition of names) है मिका और कुब मो नहीं है। हूतरा आनटिबिनिबन्धे मतेने जात्रिक पद्व्यास्तका समझानीय है। ग्रीके डोरक-दयानर्मे (Stoic philosophy) तर्कका मो कुब पाबिपल देबनेमें पाता है। सत्ताके पचका न्यायानुगत पद्वानिप्यव हो डोरक दार्शनिकके मतानुसार तर्कशास्त्रका प्रतिपाद्य विषय है और सत्ताका निर्यामक है (Ascertainment of the criterion of truth) यह पत्ता सने मतानुसार जात्राविषयके ऊपर निर्भर नहीं करता है, यह सांसिद्धिक वा सात्तर बर्तविषय (Subjective or a portion) है। डोरक-दयानर्मे तर्कशास्त्रकी सक्ति यही पर्यवसित होती है।

एपिक्कुरियन (Epicurean) दार्शनिकके मतानुसार तर्कशास्त्र सत्ताके बन्धके उपायसकप ब्रह्मविज्ञानके सहायकसाधारणविषयकेमें परिमणित होता है। ऊपरि उक्त दार्शनिक मतोंके जोकोविभागमें जात्रिकका सन्धेकर रने पर मो यकार्थमें तर्कशास्त्रको बोझी हो सक्ति हुई हो। पारिष्टिकके पक्षसे तर्क 'जात्रिक' इत्यर्थशास्त्रके केषा परिगणित नहीं हुआ। दार्शनिक पारिष्टिकने जो तत्पूर्ववर्ती Dialectic को परिवर्द्धित कर सके जात्रिक वा न्यायशास्त्रकेमें प्रवर्द्धित किया।

पारिष्टिक (Organon) नामक ग्रन्थमें पारिष्टिकने अपने न्याय वा जात्रिकको पचतारका की। इस ग्रन्थमें केवल तर्कके पचतारके विषय ही जानोचित नहीं हुए, दार्शनिकशास्त्रके पचतारके अतिरिक्तके भी मीमांसाकी भी पचतारका की गई है। पारिष्टिकमें Metaphysics और न्यायशास्त्रका अटिक चर्चितप देवनेमें पाता है। हूतरा पारिष्टिकने वर्तमान तर्कशास्त्रका मूल पण्य होने पर भी यह चर्चितप तर्कशास्त्र नहीं है।

पारिष्टिक नामक ग्रन्थमें पारिष्टिकने प्रथमतः चत्ता वा नामप्रकारके मन्वन्धमें (Determination of the categories) जाओचना की है। इन्द्रियप्राप्त बहुमात्र

ही स ज्ञानावयव है। पचाय मात्रका भी एक एक बर्तन वा गुण ही कर एक एक न ज्ञानका पारोप किया गया है। आ मत्र गुण बिबो न किसी पदार्थमात्रके ही साधारण बर्तन है पारिष्टिकने सन साधारण बर्तन गुणों को ले कर एक एक जो योविमाय किया है।

पारिष्टिकने दृष्टीका जोकोविभाग साधारणता दय प्रतज्ञाके गडे है। यथा—द्रव्यत्व (Substance), मित्य वा परिमात्र (Quantity), बर्तन वा गुण (Quality) सम्बन्ध (Relation), स्थान (Space) काल (Time), पचत्तान (Position), पचिचार्तिक वा पचिहार (Possession), (इन्द्रिय और गुणके पचत्तान सम्बन्धको पचिचार्तिक कहते हैं) कार्यकारकगुण (Action), जिन दृष्टके ऊपर पचाय ओर गुण वा पदार्थको कार्यकारी सतता रहती है, यह गुण (Passion)। पारिष्टिकने पारिष्टिकने प्रथम प्रथममें इस प्रकार पदार्थका जोकोविभाग निर्योत हुआ है।

पारिष्टिकने द्वितीय प्रथममें भाव और भावाके सम्बन्धके विषयमें सविस्तर भाओचना है। भावा किस परिमात्रके भावप्रकाशमें समक है, भावमान हो भावा द्वारा ब्रह्मविन किया जा सक्ता है वा नहीं भाव और भावामें विरोध किस प्रकार सक्ता है, सम्बन्धमान किस प्रकार भावामें प्रकाशित होता है, (Logical propositions) के सब विषय पुढातुपुढकामें मोर्मावित हुए हैं।

पारिष्टिकने तृतीय प्रथममें जिनमें मार्मिमें विभक्त हुआ है, सनेमें भावीका विरोधपचाय (Analytic Books) कहते हैं। चिन्ताप्रधानीका जम किस प्रकार है किस विषयके सिद्धान्तमें उपयुक्त होनेके द्विक प्रकार बुद्धि प्रयोग करना होता है, यही इस प ज्ञाना प्रतिपाद्य विषय है। यत्राचरक बुद्धि (Reasoning) ले कर सुपुढकका यह प य किया गया है।

पचानिष्टिकके प्रथम भागमें निगमनगुणकबुद्धि (Syllogism or Deductive reasoning) का विषय विवृत हुआ है। निगमनककबुद्धि (Syllogistic reasoning) मिति द्विक प्रकार है, निगमनगुणक बुद्धिको प्रयोगप्रधानी केको है इत्यादि इस भावके साओप्य विषय है।

उक्त एपान्थिस्टिक ग्रन्थका द्वितीय भाग कई एक भागोंमें विभक्त है जिनमेंसे प्रथम दो भागोंमें स्वतन्त्र-युक्ति प्रणालीके सम्बन्धमें (Apodictic arguments) कुछ लिखा है। अवशिष्ट आठ भागोंमें प्रचलितयुक्ति वा वादसम्बन्धमें पर्यालोचित हुआ है। अन्तके एक प्रबन्धमें (Essay on the Sophistical Elements) भ्रमात्मक युक्ति वा हेत्वाभास (Fallacies)-की आलोचना है।

पारमेननके उपरि-उक्त ग्रन्थमंशेष सारोद्धारमें यह सङ्ग्रहमें जाना जा सकता है कि आरिष्टलके समयमें तर्क-शास्त्रको अवस्था कैसी थी और वर्तमान समयमें उसकी कैसी उत्पत्ति हुई है। सामान्य अभिनिवेश-पूर्वक देखनेमें ही ज्ञात होता है कि आरिष्टलके समय में उद्भावित तर्कशास्त्र (Formal or Deductive Logic) ने बहुत कम उत्पत्ति की है। 'फारमल लॉजिक' की आरिष्टल जिस अवस्थामें रख गये थे, सामान्य परिवर्तन छोड़ देनेमें यह अब भी प्रायः उसी अवस्थामें है। निगमनमूलक-न्याय (Deductive Logic) की प्रयोग-प्रणाली आरिष्टलके निर्दिष्ट पथमें ही आज तक चली आ रही है। आरिष्टलका 'डिडकटिभ लॉजिक' वर्तमान कालमें दार्शनिक काण्ट (Kant) और हिल्लटन-प्रवर्तित फारमल लॉजिकमें परिणत हुआ है। आरिष्टलके न्याय वा लॉजिकको दार्शनिकभित्ति अस्तित्ववाद (Realism)के ऊपर प्रतिष्ठित है। आरिष्टलने जगत्का अस्तित्व स्वीकार नहीं किया। उनके मतसे वास्तवजगत् और अन्तर्जगत्का ऐक्य ही सत्यका द्योतक है। अन्तर्जगत्में विरोधगतः (Contradiction) जो अनुभव किया नहीं जाता, वाह्यजगत्में भी उसका अस्तित्व असम्भव है। सुतर्ग दोनोंका अभाव ही (Absence of Contradiction) सत्यके स्वरूपकी सूचना करता है। आरिष्टलके मतमें सत्य कहनेसे चिन्ताकी सङ्गति (Inner consistency)का बोध नहीं होता; वाह्यजगत्के साथ ऐक्यका बोध होता है (Correspondance with external realities), सुतरां आरिष्टलका 'डिडकटिभ लॉजिक' वर्तमान 'फारमल-लॉजिक' नहीं है।

इसी शताब्दीमें निव्वाटोनिज्म (Neo-Platonism)

नामक दार्शनिक मतका प्रचार हुआ। निव्वाटोनिस्टोंके मतानुसार ज्ञानमार्गका अवलम्बन करनेमें सत्यके प्रकृत तत्त्वका उद्घाटन किया नहीं जाता, आत्माकी अन्तर्-ज्योतिमें ही प्रकृतज्ञानका सम्भव है (Inner mystical subjective exaltation), आत्माकी ऐसी उन्मेषित अवस्थाको निव्वाटोनिज्म दार्शनिक ज्ञानस्य दशा (Ecstasy or rapture) कह गये हैं। निव्वाटोनिज्म पण्डितों द्वारा भी लाजिककी कोई उत्पत्ति साधित नहीं हुई। वे लोग भी दार्शनिकप्रवर आरिष्टलका मत अनुसरण कर गये। निव्वाटोनिज्म पण्डित प्लोटिनस (Plotinus) आरिष्टल उक्त पारमेननकी उपक्रमणिका (Introduction) लिख गये हैं। तत्कालीन पण्डितोंने भी आरिष्टलके दार्शनिक ग्रन्थोंकी टीका रची है।

द्विी शताब्दीके प्राक्कालमें ख्रिष्टधर्मावलम्बी महा-जन लोग भी (Church fathers) आरिष्टलके न्याय-मतका ही अनुसरण कर गये हैं। इसी समयमें अरब-देशीय पण्डितों और यहूदीज्ञातिकी विद्वन्मण्डलोंमें भी आरिष्टलका दर्शन विशेषरूपमें पाटत हुआ। आरिष्टलके मतके अनुवर्ती अरबदेशीय पण्डितोंके मध्य आभिसेब (Avicenna) और आभिरोस (Avicenes) इन दो पण्डितोंका नाम सर्वाधिक विख्यात है।

यूरोपमें मध्ययुग (Middle Ages)में जो दार्शनिक मतसमूहका आविर्भाव हुआ, उसे साधारणतः स्कालाटिक फिलॉसॉफी (Scholastic philosophy) कहते हैं। स्कालाटिक-दर्शन एक नूतन दार्शनिक मत नहीं है। मध्ययुगमें ख्रिष्टधर्मका प्रभाव अप्रतिहत था और आरिष्टलका प्रभाव भी उस समय सम्पूर्णरूपसे तिरोहित नहीं हुआ था। स्कालाटिकदर्शन इन दोनोंके संघर्षसे उत्पन्न हुआ था। स्कालाटिक दर्शनका विशेष लक्षण यह है कि उसका अधिकांश भाग ही ज्ञान और भावके समन्वयमें व्यथित हुआ है (Reconciliation of Reason and Faith)। ख्रिष्टधर्मके साथ दार्शनिक मतका सामञ्जस्य प्रतिपादन ही स्कालाटिकदर्शनका लक्ष्योद्देश्य विषय था। आरिष्टलके दर्शनका इस समय सर्वाधिक प्रादुर्भाव हुआ। पहले बहुतसे पण्डितोंने आरिष्टलकी टीका प्रस्तुत की है। उक्त महात्माके लॉजिकको इस

समय विनोद चर्चा हुई थी। परिवाराइ डी परने (Ab-lard 1049-1142 A D) पारिष्टलके सात्रिकको सामान्य धर्म को विद्वत्प्रवृत्तियोंमें प्रचारित हुआ था। पारिष्टलको पदार्थविज्ञान प्रकाशो (The Cat gories) और 'द्वि इष्टामिटेसिग'में सात्रिकके धर्म को प्रयोग सामान्य प्रचार हुआ था। पश्चात् पश्चिमी सामान्य विचार्य विविधय (Boethius) और आस्टिन (Augustine) के धर्मसे प्राप्त होता है। १२वीं शताब्दीके महाभागमें सात्रिकके पश्चात् पश्चिमी प्रचार हुआ। इसमें पश्चात् १३वीं शताब्दी तक पारिष्टलके सात्रिकके मूलधर्मको धारिणनके पश्चिमात्मोचना हुई थी। इस समय पारिष्टलका तिलसिष्टिक वा बन्धोत्पन्न दायिकानुक्ति (Syllogistic reasoning) कुछ उदय दगामें थी। पारिष्टलको मयोजनमूलक सुक्तिगोंमें (Syllogistic doctrine) मोरास्टिन (Sorites) नामक तर्कविशेषका उल्लेख और विचार्य है। महा युगमें गौडोनिजस (Goclenius) नामक पश्चिमी विषय प्रचारके मोरास्टिन (Sorites) वा सुक्तिवैच'का उल्लेख किया है। इससे चिन्ता सात्रिकका क्रम वा प्रथाओं एक प्रकार रूपसे पर भी महायुगमें पारिष्टलके सात्रिकको दाय निरु मितिका उद्गमन हुआ था।

परिष्टलका न्यायमत सत्यवाद (Realism) का उदय प्रतिष्ठित है। परिष्टल का उद्गमनका पश्चिमात्मोकारणकारते हैं और मनुष्य का उद्गमनके व्यापारकी धारणा करनेको प्रति है नर भी व्यापार करती है। सुनरी को मानसराज्यमें पश्यन समझा जाता है, कल्पन में भी उदय पश्चिमात्मो है (Contraction of things constitutes contraction of thoughts) सात्रिक मानसराज्यके व्यापार का उद्गमनके उद्गमन हुआ है। परिष्टलके मतानुसार सत्यवा ज्ञान (Criterion of truth) केवल मानसिक सत्यता पश्यन (Subjective consistency or inconsistency) नहीं है पश्यन व्यापार पश्यन पश्चिमात्मो वा सत्यताविषय है (Objective consistency—external reality)। परिष्टलका यह सत्यवाद (Realism) महायुगमें महापश्चिमात्मोके समय नामवाद (Nominalism) का उदय प्रतिष्ठित हुआ।

यह सत्य हुआ। नामवाद पश्यनके साधारणतः समझा जाता है कि नाम को सम्बन्धय है। नामस्यतीत पश्यन चिन्ती पश्यनको सत्ता निर्णय नहीं करता। नाममें ही पश्यनको सत्ता पश्यनविषय कोने है। चिन्ती पश्यन नाम का निर्णय करनेमें इन्द्रियगत पश्यन (Sensory-perception) का उद्गमन किया जाता है। इससे निम्न इन्द्रियके प्रयोगका और चिन्ती पदार्थमें पश्चिमात्मो निर्णय किया नहीं जाता। जैसे उदय सत्यविषय चिन्ती न चिन्ती एक निर्दिष्ट उदयको प्रतिष्ठित मनमें उदय हुआ करती है—यही प्रतिष्ठित, जैसे धाम, नाम उदय इत्यादि चिन्ती न चिन्ती एक उदयको ही चिन्ती। उदय पश्यनके ऐसा उदय को पश्यन महा जाता को धाम भी नहीं है, नाम भी नहीं है पश्यन भी नहीं है पश्यन निर्दिष्ट चिन्ती इन्द्रियगोचर उदयको प्रतिष्ठित नहीं है। 'मनुष्य' वह सत्य मनमें पश्यनके साधारणतः मनमें चिन्ती प्रतिष्ठितका उदय होता है। मनुष्य नामको कोई निर्दिष्ट प्रतिष्ठित नहीं है। मनुष्य पश्यनके ही साधारणतः धाम, धाम या पश्यन चिन्ती न चिन्ती निर्दिष्ट मनुष्य की प्रतिष्ठित मानसपदमें उदय कोने है। यह प्रतिष्ठित एक निर्दिष्ट उदयको है वह या तो 'दीर्घ' है वा उदय है वा मनुष्यसाधारणको है। तर्क गेरा, माना पश्यन साधारणको सत्यता है। साधारणतः धाम धाम वा पश्यन पश्यनके जैसे चिन्ती एक निर्दिष्ट साधारणविषय प्रतिष्ठितका मनमें उदय होता है, जैसे ही मनुष्य इस सत्यके पश्यनके ही कोई प्रतिष्ठित नहीं को मनुष्यमानको ही प्रतिष्ठित उदय कर गिना जा सके। पश्यन पदार्थके सम्बन्धमें भी चिन्ती पश्यन है। नाम केवल इन्द्रियगोचर प्रतिष्ठितको मनमें उदय कर देता है। नामके साथ इन्द्रियगत मानसिक प्रतिष्ठितका पश्यन (Through experience) एक ऐसा सत्य है कि नाम उदय-रित होने पर तत्तः पश्यनका मनमें पश्यन का जाता है (Association of ideas)। इसी धाम चिन्तीको नामवाद (Nominalism) कहते हैं। महायुगमें धाम नामवाद (Nominalism) और पश्चिमात्मोवाद (Realism)के सम्बन्धमें विविध धारोचना चिन्ती थी। पश्यनमान चिन्ती भी यह प्रतिष्ठितता गिना

नहीं है। अभयपक्षको समर्थनकारो युक्तिगत प्रदर्शित हुई है। प्रफ़र्नो एट्टेगोय एम्पिरिकल दार्शनिक मत समर्थक (Empirical School) इस, जनट्रिपार्टि-मिल प्रभृति नामवाट्टी पीणाकके लोग फ़र्मेट्टेगोय ट्रेण्डेलेनबर्ग (Trendelenburg) मतानुवर्ती एम्पिरि-यण शैलीके मतके समर्थक हैं। मध्ययुगके स्कॉलस्टिक काल (Scholastic Period) का अधिकांश वे ही तनु-भेदने कर व्ययित हुआ है। नासवादके धार्मिक प्रभावसे लाजिक चिन्ताप्रणातीका नियामक न ही क-एद्विकश्टागान्तों परित्त हुआ था। लाजिकका व्यवहारगत अंग ही (Formal or Linguistic aspect) प्रबल हो उठा था। स्कॉल्टिक वा मध्ययुग-के दार्शनिक मतोंका प्राथमिक अन्वयविरोध, ही इसके अधःपतनका मूल है। बाइब्लोके ऐम्पिरिक प्रत्या-देय (Revelation)के साथ युक्तिका सामञ्जस्य विधान करना एक प्रकार असाध्यसाधन ही उठा। अधिकांश पण्डितोंने ही समझ बाकि इस प्रकार सामञ्जस्यविधान एक तरह अमभव है और इस प्रकार अस्यायो तथा असार भित्तिके ऊपर प्रतिष्ठित दार्शनिक मत भी अस्यायो और मारहीन है।

तद्विषय एक और लाटिनदर्शनशास्त्र तथा साहित्यके चर्चा भी स्कॉल्टिसिजमके अधःपतनका अन्यतम कारण है। पहले ही कहा जा चुका है कि मध्ययुगके दार्शनिक चर्चा एक प्रकारसे वाट वा तर्कविस्तारको उपाय-स्वरूप हुई थी। प्रैटी और अरिष्टल आदिका दार्शनिक मत भिन्न भिन्न भाषामें आधिकरूपसे अनुवादित हो कर विकृतभावमें वर्णित और शिक्षित होता था। सुद्रायन्त्रके उद्घावनके साथ प्रैटी और अरिष्टलकी पुस्तक ग्रीक भाषामें सुद्धित हो कर पढ़ी जाने लगीं।

धर्मसंस्कार (The Reformation) और प्रोटे-स्टैण्ट (Protestants) मतके अभ्युदयको भी अवनतिका अन्व कारण कह सकते हैं। याजक-सम्प्रदाय (Church)के प्रभावका ज्ञान होनेके साथ साथ स्वाधीन चिन्ताका प्रसार बढ़ने लगा। सुतरां बुक्ति और विज्ञान-के सामञ्जस्यविधानको चेष्टा याजकोंके एकदृग्दर्शित्वके ऊपर निर्भर न कर स्वाधीनचिन्ताके अथवर्ती हो लय-प्राप्त हुई। प्राकृतिक विज्ञानकी उत्पत्ति भी इस स्वाधीन

चिन्ताका फल है और यह भी स्कॉल्टिसिजमके अधःपतनका दूसरा कारण है।

स्कॉल्टिसिजमके विकट जी आन्दोलन बना था, इन्डियन डेगोव लार्ड रेगन (Lord Bacon) उन्हे अन्यतम पाया है। वेकनका अर्थमानकानके 'इण्डि-विज' लाजिकके सृष्टिकर्ता हैं। अने गोथम् आ-गेनन का नयतन्त्र नामक ग्रन्थमें (Novum Organum) उन्होंने अने मतका प्रचार किया है। वेकन आरिष्टल-यण अन्वयमतको अन्वयप्रका परिपोषण नहीं मानते। वेकनके मतानुसार आरिष्टल-प्रयत्नित बुक्ति वा सिद्ध-गिज्ञम् (Syllogism) सन्धान्यवेषण (Scientific in-vestigation) के अनुकूल नहीं है, यह केवल वाद वा तर्कके अनुकूल (Suitable for disputation) है। मध्ययुगके आरिष्टलके तर्कशास्त्र का अंश पादर प्रोता था, वेकनने केवल उसी प्रकार इसे अनिर्दिष्ट प्रोटासोन्-टि चतुर्षु देखा है। वेकनके नयतन्त्रमें निगमन अंग न्यायके अपेक्षाकृत उचित हो आनि (Inductive) भागने अधिकतर प्राधान्य लाभ किया है। न्यायशास्त्र वा लाजिकका इस प्रकार आसूल परिवर्तन दार्शनिक भित्ति (Underlying philosophical basis)के परिवर्तनके साथ संघटित हुआ है। वेकनके पहले दार्शनिकगण अन्तर्जागतको ही दर्शनको भित्ति और ल'ताभूमि मान गये हैं। वेकन : समर्थन प्राकृतिक विज्ञानकी उत्पत्तिके साथ साथ जनसाधारणको इष्टि वद्विर्जागतको और प्राकट्ट हुई थी। सुतरां वद्विर्जागत ही दर्शनको भित्तिभूमि ही कर खडा था। वद्विर्जागत ही अन्तर्जागतके नियामकके जैसा स्वीकृत हुआ था (Experience became the criterion of truth)। वेकनने स्वयं पथप्रदर्शन भिन्न लाजिकका सामान्य ही उत्पत्तिसाधन किया है। निगमनमूलक न्यायशास्त्रमें जैसा सुतर्कका उल्लेख है और तत्समूह-निराशका प्रक-रण प्रकटित हुआ है, वेकन वैसा ही कौसो प्रणाली-का अन्वयन करनेसे आनि (Induction) अन्व प्रसाद-के पाथने सुक्तिनाज कर नके, उन उपायोंका निर्देश कर गये है। वे ही उपाय व्याप्तिसूत्र (Canons of In-duction) कहलाते हैं। इसके सिवा वेकन द्वारा तर्कशास्त्रकी और कौई उत्पत्ति, साधित नहीं हुई।

वर्तन लक्षणासोका एव निर्देय कर गये हैं और उक्तका अनुसरण करके तत्परवर्ती जगत, पाठ मिट एव हीन प्रकृति परिचयोंमें वर्तमान आसिमुत्तक तर्क शास्त्र (Inductive Logic) का प्रथम विधा है और निगमनके प्रथमो मो (Deducive Logic) व्याप्तिके सिद्धि के अन्तर्गत विधा है ।

इसके अन्तर्गत विधा यूरोपके पन्थाय्य देवोंने मो प्राचीन प्रोसटर्गन और मध्ययुगके फ्लोरिडक दर्शनके विद्वत् चार्नेसकेन बनाया । फ्लोरिडकोय दार्शनिक डेकार्ट (Descartes) प्राचीन दय न मतीके प्रति भीतद्वह हो कर निर्दामैतिकमतका प्रचार किया । तदनुगत डिकार्नेसके विद्वत् शिष्य (Discourse de la Methode) का चिन्ताप्रवाहो नामक पुस्तकमें ये प्रथमे दार्शनिक मतीको निषिद्ध कर गये हैं । डेकार्ट पन्थाय्य मतीका स्थापित विद्वत् शिष्य श्वार कर लक्ष मन्थानुसन्धानके प्रवाहोनिर्घर्षमें प्रवृत्त हुए । चर्चितकादित का समय है । यह प्रथम पक्षके पक्ष हो उक्तके मतीमें उदित हुआ । बहु चिन्ताके बाद ही इन विद्वान्तमें उपनीत हुए डिस्कार्नेसकी (Cogito ergo sum) श्रुति कथने के ही ही शोचता है, परन्तु मैं है इन शक्तिमें प्रथम करनेका उपाय नहीं । कारण प्रथम करना मो बहु अनुभवसाधित है । इसी अनुभवही महायताने पन्थाय्य विषयोंका लक्षापन्न निर्णय करना होता है । इनके अन्तर्गत पन्थाय्य विषयमें असाधारणका क्रम प्रसार निर्वाह करना होता, डेकार्टने उक्त विषयमें मोड्ड (Methods) प्रथमो जो पत्र निर्देय किया है, वह प्रथमो पत्र है—आत्मगत अनुभव और अन्तःप्रमाण ही सर्वथा स्पष्ट है (Subjective clearness and distinctness) । जब कोई विषय स्पष्ट और निःसंशय रूप (Subjective Certainty or intuition) में रहता है तब वह आत्मनिष्ठ विषय प्रथमो डेकार्टके मतके अन्तर्गत वास्तविकत्व हीनका परिचय है ।

उपरि उक्त विवरणके सम्मुख होता कि डेकार्टके दार्शनिकमतमें उक्तके आश्रितके अन्तर्गत परिभाषण प्रभाव विस्तार किया था । स्पष्टज्ञान (Distinctness and clearness)को लक्ष्यका अन्तर्गत मान कर उक्त न

प्रमादकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें कहा है कि परलक्षण ही (Indistinctness of thought) प्रमादका कारण है । यूरोपी जगत् आश्रितके सम्बन्धमें कहते हैं— “बहुप्रकारके विषयोंकी प्रत्याभवा न कर निष्कर्षित चार विषयके परलक्षण करनेसे ही आश्रितका अर्थ स्पष्ट साधित होता है । ये चार विषय ये हैं—१.म, वह तब स्पष्टत प्रतीयमान न हो, तब तब किञ्चो विषयको उक्त मत मानो । परन्तु मार्गके समय इस बात पर लक्ष्य रखना होगा कि किञ्चो अर्थका विषय विषयान्तके अन्तर्निहित न रहे । दूसरा, किञ्चो दुर्बल विषयके विद्वान्तमें उपनीत होते समय उक्त विषयको निश्चिन्त रूपमें विभाग करना होगा और प्रत्येक विभागको विषय रूपमें परीक्षा करनी होगी । ऐसा करनेसे मोमार्थ विषय का विभाग प्रथम हो जायगा । तीसरा, किञ्चो विषयके विद्वान्तमें उपनीत होते समय चिन्ताप्रवाहोका इस प्रकार प्रयोग करना चाहिये, कि जो अन्तर्निष्ठ और प्रत्यक्ष है उक्तके कारण कर धीरे धीरे दुर्बल विषयमें प्रथमताम करना होगा । चौथा—प्रथमो मोमार्थ विषय का आन्तर्गत और समाशोचना करके यह देख लेना चाहिये कि कोई प्रयोगयोग्य विषय कोङ्क तो नहीं दिया गया है । डेकार्टके मतानुसार उपरिल्लख चार विषयोंके प्रति लक्ष्य रखनेसे ही आश्रितका अर्थ स्पष्ट होता है । डेकार्टके अन्तर्गत काटैलियन श्रुतिके आश्रित (La Logique) नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ । डेकार्टके परवर्ती मल्लान्तर्गत चार्नेस दार्शनिकशास्त्रका उपाय मतको पोषकता कर गए हैं ।

विनोबा । डेकार्टके परवर्ती दार्शनिकोंमें दिव्योत्राका (Spinoza) नाम विषय उक्तके अन्तर्गत है । दिव्योत्राका दार्शनिक मत बहुत कुछ इन दिव्य अर्थके अन्तर्गत विस्तार लक्ष्य है । प्रथमताममें आश्रितका कोई अन्तर्निष्ठताम का प्रकृतित प्रमादका परिचय न नहीं करनेसे ही दिव्योत्राके दार्शनिक मतमें उक्त समयके प्रकृतित आश्रितके अन्तर्गत परिभाषण में अन्तर्निष्ठताम किया रहनेमें अर्थ नही । यूरोपीय आश्रित प्रमादका विषयान्तर्गत विषय है और अर्थ ही प्रमाद-विषय है । अन्तर्गत नही है, इस विषयमें

मतभेद उपस्थित होनेसे ही लॉजिकका प्रकारभेद हुआ करता है। स्पिनोजाके मतसे मानसिक प्रतिरूपिता वा आइडिया (Idea)के साथ वस्तु (Object)का ऐक्य ही सत्यप्रत्यक्ष है। विदुषज्ञान (Intuition) द्वारा ही प्रत्यक्ष सत्योपगच्छि हुआ करती है। स्पिनोजाके मतसे ज्ञान तीन प्रकारका है—त्रान्सेन्डान्तिक वा प्रत्यक्षज्ञान (Imaginatio), परोक्षज्ञान (Ratio) अर्थात् जो ज्ञान प्रत्यागके ऊपर निर्भर करता है और विदुषज्ञान (Intellectus)। इनमेंसे परोक्षज्ञान ही (Ratio or immediate knowledge) लाजिकका विवेच्य विषय है; उपरि-उक्त साधारण दर्शनकी कुछ बातोंकी छोड़ कर स्पिनोजा लाजिकके सम्बन्धमें और कुछ भी लिपिवद्ध नहीं कर गए हैं।

लाक। यूरोप-सहादेशकी कथा छोड़ देनेसे स्पिनोजाके आविर्भाव कालमें इङ्ग्लैंडमें भी दार्शनिक युगान्तर उपस्थित हुआ। इङ्ग्लैंड देसिय दार्शनिक ज्ञान लाक (John Locke)ने वैकन-प्रवर्तित दार्शनिकप्रणालीकी मनसूत्र घटित विषयमें (Psychological problems) प्रयोग किया है। पहले दार्शनिकोंकी प्रवर्तित प्रणालीका परित्याग कर दार्शनिक-प्रवर वैकनने अभिन्नतासापेक्ष दार्शनिक अनुसन्धान-प्रथाका उद्गाहन किया (The method of philosophical inquiry based upon observation and experiments upon experience) तत्परवर्ती दार्शनिक लाक उन प्रयोगोंका कार्यतः दार्शनिक अनुसन्धानमें प्रयोग कर गये हैं। वैकनकी कथा छोड़ देनेसे लाक ही वक्तमान समयेके इङ्ग्लैंड देसिय एम्पिरिकल दर्शनके सृष्टिकर्ता (Empirical school) माने जाते हैं। तत्परदर्शित पन्थानुसरण करने ही ह्यूम (Hume), मिल (Mill), बेन (Bain) आदिके प्राधुनिक दार्शनिकमतने सृष्ट हो कर प्रतिष्ठा लाभ की है। लाकके परवर्ती अन्वय दार्शनिकमत, परोक्षभावमें लाकके दर्शनसे निकले हैं। लाकके प्रवर्तित मतका खण्डन करनेके लिये दार्शनिक रीड (Reid) प्रवर्तित स्कॉटिश दर्शन (Scottish school)की सृष्टि हुई है। जर्मन देसिय दार्शनिकप्रघर काएटन क्रिटिकल दर्शन (Critical

Philosophy)का उद्भव भी इसी कारण हुआ है। लाक-प्रवर्तित पन्थानुगामी डेभिड ह्यूमको नास्तिकताका खण्डन करनेके लिये ही दोनो दर्शनोंका अन्वय-तान हुआ है। प्रत्यक्षज्ञान-ही सभी ज्ञानोंका मूल है। ऐसा कोई ज्ञान रह नहीं सकता जो प्रत्यक्षमूलक न हो (Nihil est Intellectu, quod non fuerit in sensu) यही लाक प्रवर्तित दर्शनका मूलसूत्र है। लाकका यही दार्शनिक मत वर्तमान एम्पिरिकल लाजिक (Empirical Logic)का मूल है।

लिवनिज। जर्मन दार्शनिक लिवनिज (Leibnitz) अनेक विषयोंमें लाकके विरुद्धवादी थे। उन्होंने ही पहले ज्ञानतत्त्व (Theory of knowledge) के विषयमें लाकके विरुद्ध मानसिक सांख्यिकज्ञान अर्थात् जो वस्तु वा विषय आपसे आप मनसे उत्पन्न हुआ है, बाह्य-विषयसे सृष्ट होत नहीं हुआ, (Doctrine of innate ideas) इस मतका पक्ष समर्थन किया है। लिवनिज अपना साधारण दार्शनिक मत "मानडोलोजिज" नामक ग्रन्थमें सन्निविष्ट कर गये हैं। उनका साधारण दार्शनिकमत लिपिवद्ध करनेकी गुंजाइश न रहनेसे नीचे उसका केवल सार दिया जाता है। दार्शनिकमतके विषयमें लिवनिजने सम्पूर्णरूपसे स्पिनोजाके विपरीत पन्थ और मतका अवलम्बन किया है। स्पिनोजा जिस प्रकार समस्त जागतिक व्यापारको एक (One) का विकास और जगतमें जो कुछ नानात्वज्ञापकके जैसा मालूम पड़ता है उसे, समुद्रतरङ्ग जिन तरह समुद्रकी है, उसी तरह एक ही महापदार्थका अंश बतला गये हैं, लिवनिजने उसी प्रकार दिखला दिया है कि बहु (Many)की समष्टिसे ही एकको सृष्टि है। जगतमें जो कुछ एकत्वबोधक मालूम पड़ता है, वह बहुकी समष्टिसे उत्पन्न हुआ है। इन नानात्वज्ञापकपदार्थोंका लिवनिजने 'मनाड' (Monad) नाम रखा है। साधारणतः परमाणु वा आटम (Atom) कहनेसे जो समझा जाता है, लिवनिज कथित 'मनाड' ठीक उस प्रकार नहीं है। मनाड इन्द्रियका अंगोचर है, लुप्तपदार्थ विशिष्ट (Metaphysical points) मनाड नाना अवस्थापक्ष है, कितने अचेतन हैं। लिवनिजने इन सबको

निद्रावर्गमें सुप्तचेतन्य (Sleeping monad) बतलाया है। चिंतने पर्यवेतन है, जैसे हवादि; चिंतने सचेतन है जैसे व्यक्त्यादि और चिंतने सम्यक् चेतन है, जैसे आत्मा (Soul) प्रकृति। इन सब मनाइ के समावेशमें ही जगत्को उत्पत्ति हुई है। एक एक मनाइ एक दुर्गको तरह के स्वयं ममत्त जगत् प्रतिरि-
प्यित हुआ है और एक बिजायावत्या त्रिब प्रकार मनुष्य है, बट मनाइ भी उसी प्रकार उत्पन्न है। पहले जो निर्दिष्ट नियमवशसे मनाइया गया अन्त्यात्म्य वोग भावित हुआ है उसे निश्चित पुन प्रतिष्ठित सामन्धर्य (Pre-established Harmony) कहते हैं।

पूर्वोक्त म सिद्ध विवरणमें ही निश्चितार्थ दार्शनिक मतवाचित्तुत्तु, पामास दिशा गया है। निश्चितार्थ ही शब्दों की तरफ ही एक ही शब्दों का बर्णन कर कारिणको पावग्न बना पथीदार नहीं को। निश्चितार्थ मते परपट्ट और पविष्टज्ञानसे ही अमको उत्पत्ति हुई है और एक पविष्टज्ञान तत्र तत्र विद्युत्ज्ञानमें परिचित नहीं होगा तब तक अमका निराकरण नहीं होया। न्यायानुगत समी पथी (Logical roles)का अनुसरण नहीं करने से अमनिवारक पलम्ब है। यथा एक एक अमप्रमाद बतमान रहेगा, तब तक कारिणकी पावग्नकता स्वीकार करने ही पड़ेगी। निश्चितार्थ प्रमापके सम्बन्ध में ही नियमोकी पावग्नकता स्वीकार की है। उन ही नियमोंके एकका भास है अन्त्याविरोध (The Principle of contradiction) और दूसरेका पर्याप्तबुद्धि (The Principle of sufficient reason)। इसके पलाया भी चिंतने कारिणके लक्षात्बुद्धि (Doctrine of probability) नामक एक और एक याज्ञित ही इसके निये निश्चितार्थ विरोध परिश्रेत हा। ये सब उपरुक्त एकका सूत्रवान कर न लई है।

निश्चितार्थ बाट तन्मानुषीयों दार्शनिक विधिपन एवम् (Christian Wolf), ने पाषाण तर्कशास्त्रको अर्थके पर्याप्तोचना की। लॉजिक त्रिकत्रयिया राधा नगिर (Philosophia Rationis) नामक कारिण के सम्बन्धमें परिश्रेत करेया को है। एवम् अन्त्यापके पन्त्या अदकम्बन कर धारावाहिकरूपमें कारिणके

पाथीय विषय निविष्ट कर गए हैं। एवम् मते कारिणके तर्कदयन (Ontology) और मनस्तरण (Psychology) इन दो शास्त्रीय ऊपर प्रतिष्ठित होने पर भी एक एकका पदही पाथीय है। कारण, यद्यपि कारिणके स्वीकृत विषय (Data-Specially the axioms) जग दोनों शास्त्रोंके ऊपर निर्भर है तो भी उक्त दोनों शास्त्र कारिणको प्रभावोका अदकम्बन करते ही शास्त्ररूपमें परिचित हुए हैं। एवम् ही अनुमानबुद्धि (Theoretical) और सिद्धान्तबुद्धि (Practical) इन दो पथी कारिणको विमल किया है। इनमेंसे सजा प्रकरण (Notion) सजादयका पथीयव्यवस्था निरा करण करणपट्ट (Judgment) और अनुमान (Inference) प्रमापके परतुत्तु है तथा यथोक्त पथी पुनतप्रयत्न, तरबनिष यमपानो हवादि विषयोंमें कारिणकी पावग्नकता पाथीयित हुई है। एवम् ही कारिणियन दृष्टमथे माप निश्चितार्थ मतेका समन्वय साधन किया है। निश्चितार्थ मतेमें पथीयव्यथा पविरोध ही मलको सूचना करता है (Absence of contradiction is the criterion of truth)। एवम् कारिणियन यथोक्त मतानुषीयों को कर कहते हैं, कि सचन विरोध मान होनेसे ही मलको प्रतिष्ठा नहीं होती। मलका माननप्रकरणका लम्ब प्य होना पावग्नक है (The criterion of conceivability)।

सिद्धान्तत्र महयोगों लार्थनिश्चितार्थ विधिपन टर्मोपि यप (Christian Thomesias) का नाम उल्लेखयोग है। टर्मोपि यममें परिश्रेत और कारिणियन इन दोनोंका मजबूती मत अदकम्बन किया है। निश्चितार्थ मन्-
कालवर्षों दार्थनिक सामन्धर्य (Lambert) ने धार शीतल का लूलन तन्म (Noves Ur, adon) नामक एक पुनतबुद्धी रचना को है।

इसके बाद ही दार्थनिकप्रवर इमानुयेन काण्ट (Immanuel Kant) का पाथीयार्थ हुआ। काण्टको यदि बर्तमान दार्थनिक प्रगत का एवम् कहें, तो कोई काण्टन नहीं। काण्टने मय दार्थनिक जगत्में एक नून तर उद्युत्त हुआ। जगत् न दिये कारिणियन दार्थनिक मताका कृपाकारिण ही कर दिवनिष्ठ अर्थात्

मनाडोलोजिमें परिणत हुआ था। इङ्गलैण्डमें जाक-प्रवर्त्तित इम्पिरिकल दश न (Empirical philosophy) दार्शनिक ह्यूम प्रवर्त्तित अज्ञेयवादमें (Scepticism) परिणत हुआ था। काण्टके समयमें इन दोनों दशनोंका विरोध प्रभूत परिमाणमें स्पष्टोक्त हो उठा था। काण्टने स्वयं कहा है, ह्यूमके अज्ञेयवादने ही उनके दार्शनिक मतका परिवर्तन किया है (It was Hume's scepticism that roused me from my dogmatic slumder)। काण्टने वाट्सियन दर्शनका इनेटिवि-थीरी (Innate theory of ideas) सम्पूर्ण रूपसे समर्थन नहीं किया। उन्होंने मध्यपथका अवलम्बन किया है। काण्टने अपने इस मतको इनेटिविथीरी (Innate theory) न कह कर 'इनेट'के बदलेमें 'आप्रियराई' शब्दका व्यवहार किया है। दोनों शब्दके सम्बन्धमें व्यवहारगत क्या पार्थक्य है? काण्टके दार्शनिक मतका यथासंघर्षमें विवरण नीचे दिया जाता है।

काण्ट वाद्यजगत्का अस्तित्व अस्वीकार नहीं करते। पर हाँ, साधारणतः वाद्यजगत्के सम्बन्धमें हम लोगोंकी जैसा धारणा है, काण्टके मतमें वाद्यजगत् वैसा नहीं है। वाद्यजगत्, कहनेसे जिन सब जागतिक वस्तुकी प्रतिज्ञति हम लोगोंके मानसपट पर पतित होती है, काण्ट कहते हैं, कि वाद्यजगत् ठीक उस प्रकार नहीं है। दर्पण पर पतित छायाकी तरह वाद्यजगत् मानसप्रतिज्ञतिके अरूप नहीं है। साधारणतः वाद्यजगत् कहनेसे हम लोग जो समझते हैं, वह हम लोगोंका मनःप्रसूत है। वाद्यजगत्का अस्तित्व है, इसके सिवा वाद्यजगत्का स्वरूप जाननेकी हम लोगोंमें क्षमता नहीं है। काण्टके मतसे सूर्यालोक जब काँचको कलम (Prism)के भीतर हो कर जाता है, तब वह जिस तरह मोड़, पीत, लोहितादि सात भिन्न भिन्न वर्णोंमें विभक्त होता है। वाद्यजगत् भी उसी तरह जब हम लोगोंके मनोमध्य प्रवेश करता है, तब मानसिक धर्मानुसारसे स्वतन्त्र प्रवस्था प्राप्त होती है और इस भिन्नावस्थापन्न मानसप्रतिज्ञतिको ही हम लोग साधारणतः वाद्यजगत् कहते हैं। काँच-कलमके भीतर हो कर देखनेसे जिस प्रकार प्रकृत सूर्यालोक कोसा है,

नहीं जान सकते, उसी प्रकार हम लोगोंके मानसिक धर्मवशसे प्रकृत वाद्यजगत् कोसा है, वह हम लोग नहीं जान सकते हैं। वाद्यवस्तुका यह प्रकृत स्वरूप जिसे हम लोग नहीं जानते, काण्टने उसे वस्तुमत्ता (Thing-in-itself) कहा है। अभी प्रश्न यह उठ सकता है कि यदि वाद्यवस्तु अज्ञात और अज्ञेय पदार्थ हो हुई, तो देश (Space) और काल (Time)का कोना स्वरूप है? काण्ट कहते हैं, कि देश और कालका वाद्य अस्तित्व नहीं है, यह मनका धर्म वा गुणविशेष है। यदि कोई मनुष्य नील और लोहित काचविशिष्ट चश्मेका व्यवहार करे, तो उसकी आँखोंमें जिस प्रकार सभी वस्तु इन्हीं दो रंगोंमें रंगो हुई दोख पड़ती है, उसी प्रकार वाद्यवस्तु भी हम लोगोंके मानसिक-जगत्में प्रवेशलाभ करते समय देश और काल ये दो मानसिक धर्माक्रान्त हो देश और कालसे संश्लिष्ट हैं, ऐसा मानूँ पड़ता है। देश और काल इन दो मानस-धर्मोंका दार्शनिक काण्टने "अनुभूतिका आकार" नाम रखा है। इसके सिवा और भी कितने ज्ञान वाद्य-मनुष्ये गृहीत हुए हैं। जैसे, एकत्व (Unity), बहुत्व (Plurality), समवाय (Totality), कार्यकारण-सम्बन्ध (Causality) इत्यादि। काण्टका कहना है कि ये सब ज्ञान वाद्यमनुष्ये गृहीत नहीं है, ये सब मानसिकधर्म विशेष हैं। काण्ट इन सबको बोधका आकार विभाग (Categories of the understanding) बतला गये हैं।

वाद्यजगत्के प्रकृत स्वरूपत्व सम्बन्धमें काण्टने जिस प्रकार अज्ञेयवादका अवलम्बन किया है, ईश्वर और आत्माके सम्बन्धमें भी उनका मत उसी प्रकार है। ये दो तत्त्व ध्यानगम्य नहीं हैं, उसे वे साफ साफ निर्देश कर गये हैं। पर हाँ, ईश्वर और आत्माके अस्तित्वको काण्ट अस्वीकार नहीं करते। उन्होंने तत्प्रणोत (Critique of Practical Reason) नामक ग्रन्थमें इन दोनोंका अस्तित्व स्वीकार और प्रतिपन्न करनेकी चेष्टा की है। किस प्रकार उक्त सिद्धान्तमें वे उपनीत हुए हैं, वर्तमान प्रस्तावमें यह आलोच्य नहीं है। अतः हम लौकिक सम्बन्धमें जो लक्ष्य मतका उल्लेख करेंगे।

पहले जो कहा जा चुका है कि काण्टने बोधगति को बोधमहिमा याकार (Forms of the under standing) और बोधमहिमा विषय (Matter of the understanding) इन दो भागोंमें विभक्त किया है। दी कहते हैं कि साहित्य बोधमहिमा याकार वा प्रक्रिया (Forms of thought) से कर सफ़र रहैगा, बोधमहिमा विषय (Matter of thought) साहित्यका प्रतिपाद्य विषय नहीं है। काण्टके पाठार (Form) और विषय (Matter) इस दार्शनिक खेतीविभागसे ही पारमत्त साहित्य (Formal Logic)की सृष्टि हुई है। काण्ट जो पारमत्त साहित्यका स्रष्टा बन गये हैं। बर्तमानकालमें हैमिल्टन और मानसेल (Hamilton and Mansel)से बड़ी परिचित हो कर बर्तमान पारमत्त साहित्यमें परिचय हुआ है।

जर्मन दैर्मै जाबि (Jacobi), क्रियेवैटर (Kraewitter), हफ़र (Hoffbauer), क्रुप (Krup) आदि दार्शनिकसभ काण्टके मतका अनुसरण कर गये हैं।

काण्टके समकालीन तदीय प्रतिपक्षप्रस्तावकभी दार्शनिकोंमें फ़िकटे (Fichte) दार्शनिकजगतमें सुविख्यात हैं। हम यहाँ पर इनके दार्शनिक मतका उल्लेख नहीं करेंगे। इनका कहना जो पूर्वोक्त होता कि फ़िकटे समस्त प्रमत्त और वास्तविक व्यापारको आत्माका विद्यमान (Manifestation of the Ego) कहना गये हैं। फ़िकटेके मतमें ज्ञानका याकार और विषय (Form and matter of thought) यह काण्ट निर्दिष्ट खेतीविभाग कहत नहीं है। यत जन्मे मतमें पारमत्तसाहित्य नामका एक एकक साहित्य नहीं हो सकता।

तत्परवर्ती स्रष्टा दार्शनिक शेल्लिंग (Schelling)ने फ़िकटेका मतानुसरण किया है। जन्मे मतका विधीयकपक्ष उल्लेख करनेमें उनमें टॉनका उल्लेख करना होता है। किन्तु यह वर्तमान प्रत्यक्ष उल्लेखों नहीं है। शेल्लिंग मतमें सभी एकमात्र निर्गुण (Absolute) के विद्यमान हैं। गुण निर्गुणके निष्पत्ता है, किन्तु निर्गुण गुणके नहीं निष्पत्ता

है, यह स्वयं निर्गुण ही कर से गुणका आधार है। यह निर्गुण (Absolute) शैवि के मतमें ज्ञानसम्बन्ध (known by intellectual intuition) है।

शैवि के प्रवर्तित निर्गुण (Absolute)का अर्थ है इस विषयको मोर्माणा करना वर्तमान समय में कहा हो चुका है। शैवि समकालीन मत इतनी बार प्रवर्तित हुआ है, कि उसने प्रकृत मतका निर्धारण करना प्रयास प्रस्तावनाचरण को गया है। शैविज वर्तमान दार्शनिकसभ पहले कहते हैं मतको सुशुद्ध और मार मान मानते हैं।

जब सभी वस्तु निर्गुणको विवर्ण हैं, तब विषय (Matter) और याकार (Form) इस प्रकार पारस्परिक नहीं रह सकता। प्राकृति और तत्त्वित पदार्थ प्रकृतिक सम्बन्धविषय हैं; एकके अभावमें अन्धका अस्तित्व प्रकृतिक है। पदार्थके रहनेसे ही प्राकृति रहने और प्राकृतिक रहनेसे ही पदार्थका अस्तित्व प्रकृतिक ही है। इस प्रकार प्रकृतिकसम्बन्धविषय दोनों वस्तुओंका परस्पर स्नातन्त्र्य स्रष्टन करना प्रकृतिक है। सुतरां शैवि के मतानुसार शैविक पारमत्त साहित्य (Formal Logic) नामका कोई एकक गान्न नहीं रह सकता। साहित्यके उपादानमें ज्ञान सहायक गान्न जोर्मै याकारगत वा पारमत्त (Formal) और विषयगत वा मीटेरियल (Material) दोनों का ही होना आवश्यक है।

फ़िकटे और शैवि के मतका अनुसरण कर स्रष्टा दार्शनिक हेगल (Hegel)ने भी कहा है कि काण्ट प्रवर्तित ज्ञानका याकार और ज्ञानका विषय (The form and content of thought) इस प्रकार एक खेतीविभाग नहीं हो सकता। जैमसका कहना है कि विषय और विषय (Form and Content) मात्र और वस्तु (Thought and Being) दोनों का एक ही साहित्यकी मुक्तमिति है। हेगल अपने दार्शनिक मतको 'साहित्य' नामसे परिचित कर गये हैं। हेगलके दार्शनिक मतको याकारगत दार्शनिक वा मेटाफ़िजिकल साहित्य (Metaphysical Logic) कहते हैं। Metaphysical Logic कहते हैं याकारण साहित्यकी तरह तब का इतिहास नियामकयाशैविय सभम्भा

नहीं जाता। हेगलका दर्शन और लौकिक ये दोनों एक ही पदार्थ हैं। हेगलका कहना है कि यह विश्वचर-चर और तत्संश्लेष समस्त व्यापार है कि क्रमशः विकास लाभ करने एक अवस्थामें दूसरी अवस्थामें लाया जाता है। यह विकासप्रणाली धारावाहिक है, इसमें कोई व्यवच्छेद नहीं है। जिस प्रणालीके अनुसार यह जागतिक क्रमविकास साधित होता है, उस प्रणालीको युक्तिमूलक प्रणाली वा 'डाइलेक्टिकल मेथड' (Dialectical method) कहते हैं। केवल मानसिक जगत्में इस डाइलेक्टिकल प्रणालीका प्रभाव निवृद्ध नहीं है, केवल अन्तर्जगत्का विकास हो इस प्रणालीके अनुसार साधित नहीं होता, जड़जगत्का विकास भी इसी नियमका सापेक्ष है। नियम सन्धिपतः इन दो विरोधी दोनों वस्तुओं वा भावोंके समन्वयमें तृतीय वस्तु वा भावका विकास है। इसके एकका नाम पूर्वपक्ष वा थिसिस (Thesis) और इसके विरोधिभाव वा वस्तुका नाम उत्तरपक्ष वा आण्टिथिसिस (Antithesis) है तथा इस परस्परविरोधी वस्तु वा दोनों भावोंके संयोगसे मिलित तृतीय वस्तुका नाम समन्वय वा सिन्थिसिस (Synthesis) है। जगत्की प्रत्येक दृश्यमान वस्तु इसी नियमके अधीन है। अस्तित्व (Being) और अनस्तित्व (Not-Being) इन दो विरोधीभावोंके सम्मिलनसे विकासकी उत्पत्ति हुई है। जागतिक समी व्यापार ही यज्ञे विकासमन्त्र है। (A process of becoming)। जिस अन्तर्निहित ज्ञानशक्तिके प्रभावसे (Indwelling Reason) यह क्रमोन्नति साधित होती है, अर्थात् इस क्रमोन्नतिमें जिस शक्ति का विकास है, वही शक्ति हेगलके मतसे अन्तर्मुखी (Immanent) है। इस अन्तर्निहित शक्तिके प्रभावसे जगत्की प्रकृति या किस वाह्यशक्तिको सहायताके बिना अपने नियमके अनुसार आपसे आप प्रभावित हुई है। किस प्रकार सम्यक् रूप निर्गुण अवस्था (Simple being) से इस गुणमय जगत्का विकास हुआ है, हेगल अपने दर्शनमें उस सम्बन्धमें विशेषरूपसे प्रतिपन्न कर गये हैं। विस्तार ही ज्ञानिके भयसे यथासंक्षेप विवरण दिया जाता है।

हेगलका दार्शनिक मत साधारणतः तीन भागोंमें

विभक्त हो सकता है। प्रथमभागमें धातु और अन्तर्जगत्के किस किस स्तरमें किस किस भावना विकास हुआ है, उसकी आलोचना है (The development of those pure universal notions or thought-determinations which underlie and form the foundation of all natural and spiritual life, the logical evolution of the absolute)। इस अंशकी हेगल 'लौकिक वा' भावप्रकाशप्रणाली कह गये हैं। द्वितीय अंशमें वहिर्जगत्की विकासप्रणालीका वर्णन है, इस अंशकी हेगलने प्रकृतितत्त्व (the philosophy of nature) नामसे उल्लेख किया है। तृतीय अंशमें अध्यात्मजगत् किस प्रकार विकास लाभ करके धर्म, राजनीति, शिल्प-नीति आदिमें परिणत हुआ है, उसका उल्लेख है। इस अंशका अध्यात्मतत्त्व (The philosophy of the spirit) नाम रखा गया है। यद्यपि, पर यह कहना जरूरी है कि हेगलको यह क्रमविकासप्रणालीको एक मीमांसा वा लक्ष्यस्थल है, निर्गुणभावका विकास ही लक्ष्यस्थल है। किस शुद्धभाव (Pure Idea) जड़जगत् और अन्तर्जगत् (Nature and spirit) इन दो विभागोंमें विभक्त हो कर पुनर्मिलित हो निर्गुणभाव (The absolute Idea) में परिणत होता है, समस्त दर्शनमें हेगलने इसे प्रतिपन्न करनेको चेष्टा की है। भाव और वस्तुका ऐक्य ही (The unity of thought and being) इस निर्गुणभाव (Absolute Idea) का स्वरूप है। यह अन्तर्जगत्में हम लोगके 'समाधिज्ञान, जीवब्रह्मैक्यवहाव वा ज्ञेय और ज्ञाताके अभेदज्ञानरूप चरमावस्थाके साथ मिश्रता जुगता है।

हेगलके दर्शनके अन्यान्य अंशोंका उल्लेख न कर उपस्थित प्रस्तावोपयोगी उनके दर्शनके प्रथम भागका अर्थात् जिस अंशका उन्होंने लौकिक नाम रखा है, उन्हीं अंशका उल्लेख किया जायगा। पहली ही कक्षा जा चुका है कि हेगलके तदीय लौकिकमें पदार्थविभाग-प्रणाली (The development of notion or categories)-का क्रमनिर्देश किया है। आरिष्टल, उल्फ और काण्टसे हेगलने यह पदार्थविभाग ग्रहण किया है,

विद्युत् चारिटरल प्रकृति दार्शनिकोनि विच प्रकार पदाय विमानको (Categories) चक्षयमे लिया है और विच प्रकार पदाय विमानका विचारय रूप है उसे नहीं दिख गावा है। उचने एयो प्रमाका अवस्थान नहीं बिबा है। विच प्रकार डारलैक्टिक प्रकाक्रमये (Dialectical method) माय वा पदायमे क्रमविकायकाम लिया है, उचने उचका अवायव विवरण लिया है।

उचने अपने आक्रियको साधारणतः तीन भागोमे विभक्त किया है। प्रथमायवा नाम है सृष्टितत्त्व (The Doctrine of Being)। Being और Nothing इन दो विरोधात्मक भागो मे प्रयोज्ये Becoming वा विकासको उत्पत्ति होती है। दोसे उचने प्रकृता (State, thereeness), स्वतंत्र (Individuality), गुण (Quantity), अणु (Quantity) और परिमाप (Measure) आदि भागोको उत्पत्ति के सम्बन्धमे विस्तृत पालोचना की है।

द्वितीयायवा नाम है अस्तित्व (The Doctrine of Essence)। समी पदार्थको सत्ता का (Essence) है। विच प्रकार Essence का विकासकाम होता है। (Essence and its manifestation), सत्ता (Essence) और विचार (appearance) में का सम्बन्ध है; एकै विवा समत्त्व (Identity), अद्वय (Diversity), विरोध (Contrariety), असङ्गत (Contradiction) आदि तथा अस्तित्व (Actuality) परवादि भागो का विचार वर्णित है।

तृतीयायवा नाम भाववाद (The Doctrine of notion) है। इस च यमे प्रथमतः भाव वा Notion का अर्थ क्या है, एहीका उचने है। दोसे उचने Notion को तीन भागोमे विभक्त किया है। (१) भावविचार वा भाव (Subjective notion), (२) बाह्य-भाव अर्थात् यह भावविचार भाव विच प्रकार बाह्यप्रगतिमे प्रतिबिम्बित रूप है (Objective notion) और (३) आरडिवा (idea) आरडिवा उपरि-उक्त दोनो भागो अर्थात् Subjective और Objective भागोका सम्मेलन (synthesis) है।

भावाको विविध विधा है। उचका अर्थना है कि Subjective notion-के अन्वयिकायसे साधारण वा सार्वभौमिक (Universality), विशेष वा विधेय-भाव (Particularity) और एकल (Singularity) इन भागोको उत्पत्ति हुई है (They are the moments of the subjective notion)। दोसे वाक्य (Judgment) और बुद्धि (Syllogism) का अर्थय होसा है, उच विषयमे पालोचना की है। एकलमे मात्र सार्वभौमिक विच प्रकार अन्वयित है, इस तत्त्वका निर्माण को (Judgment, का अर्थय है (The Judgment enunciates the identity of the singular with the universal the self diremption of notion)। विच प्रकार सार्वभौमिक भाव (Universal notion) विशेष भावको अवायतासे (Through the particular) एकलमूलक भावसे अणु (Singular notion) सम्बन्धित होता है, इन सबका प्रथम को (Syllogism) का अर्थय है। एक, अणु और विशेष भागोका सम्मेलन साधन (Commidiation of universal and singular through particular) बुद्धियवाहीका मूल है।

तदनन्तर Objective notionके सम्बन्धमे पालोचना की गई है। Objective notion अर्थमे कोई भाव-विच भाव अन्वयता नहीं जाता है। Objective notion अर्थमे बाह्यप्रगति का बोध होता है। अर्थय बाह्यप्रगति अर्थमे Objective notion का बोध नहीं होता। अर्थय और भावप्रगति परवात् बाह्यप्रगति को अर्थमे अन्वयित भाव अन्वयता उचय होता है, एहीको उचने Objective notion कहा है। (Objective notion is not a outward being as such, but an outward being complete within itself and intelligently conditioned)।

अनुगत भावको उत्पत्ति का क्रम (Development of the objective notion) निम्नलिखितरूपमे विविध विचार किया गया है। उचने अर्थमे बाह्यप्रगति वा अर्थय निर्देश (Mechanism) इस क्रमोक्ति का प्रथम पद है। दो अर्थमे विविध अणु अर्थय अर्थमे तीसरी अणु वा अर्थय द्वारा अर्थय होती है और अर्थय अर्थय अणु अणु-

आदि उचने (Subjective notion)-के अन्वयित

वा बोध होता है, तब पूर्वोक्त दोनों-वस्तुओंके इस प्रकार संयोगकी वास्तव संयोग वा Mechanism कहते हैं। हेगलका कहना है, कि यह वास्तव-संयोगप्रधानी वा Mechanism दृष्टिप्रणालीका आदिम वा सर्वापेक्षा निम्नतर है।

हेगल कहते हैं कि रासायनिक आसक्ति (Chemism or Chemical affinity) इस क्रमोन्नतिप्रणालीका द्वितीय सोपान है। जिस शक्ति द्वारा दो स्वतन्त्र वस्तु एक दूसरेके प्रति आकृष्ट हो कर एक स्वतन्त्र नूतन वस्तुकी सृष्टि करती है, वही शक्ति इस जागतिक विकासप्रणालीकी द्वितीय स्तर है। इस अवस्थामें दो स्वतन्त्र वस्तु यद्यपि एकत्र हो कर नूतन और पृथक् गुणसम्पन्न अपर वस्तुकी सृष्टि करती हैं, तो भी पूर्वोक्त दोनों वस्तुओंका अस्तित्व हमेशाके लिये लोप नहीं होता। वैज्ञानिक प्रक्रियाके मतसे अधिकांश जगत् वस्तु दोनों वस्तुओंको पूर्वावस्थामें वा सकृदपि पर भी, जब दोनों वस्तु योगिक अवस्थामें रहती हैं, तब परस्परला स्यात्कार (Indifference) परिहार करके जिस पदार्थका उद्भव करती हैं, वही पदार्थ सम्पूर्ण नूतन और भिन्न धर्माक्रान्त है। हेगलके मतानुसार यह रासायनिक शक्ति (Chemism) वाद्यगति (Mechanism)की अपेक्षा उच्चस्तरमें अवस्थित है।

टेलिओलोजी (Teleology) इस क्रमोन्नति प्रणालीका तृतीय वा सर्वोच्च सोपान है। टेलिओलोजी कहनेसे साधारणतः निमित्त कारण (Final cause) का बोध होता है। जागतिक विकासके जिस स्तरमें हेतु (End) का उद्देश्य देखनेमें आता है अर्थात् यह पदार्थसमूहके प्रति दृष्टिपात करनेसे किस उद्देश्यसे उसकी सृष्टि हुई है और अन्त परिणति ही क्या होगी, यह समझनेमें आता है, तब वही अवस्था Teleological Stage वा नैमित्तिक स्तर कहलाती है। उद्भिद और प्राणी जगत्में (Organic Stage) इस नैमित्तिक कारणका विषय अत्यन्त सुस्पष्ट है। किसी जीव-शरीरके प्रति दृष्टिपात करनेसे देखा जाता है कि उसके कोई अंश अतिरिक्त नहीं है और निरर्थक सृष्टि नहीं हुआ है, प्रत्येक अणुका एक निर्दिष्ट कार्य है और

वह कार्य प्रत्येकमें स्वतन्त्र नहीं है, एक कार्य दूसरेके ऊपर निर्भर करता है, एकके अन्तर्भव होनेसे दूसरेका अर्थ अन्वयान्त नहीं होता। देखनेमें मान्य होता है कि शरीरके सभी अणुप्रत्यणु मिल कर व्यवहारकारके अंगोदारोंकी तरह हैं, किसी एक विगेष उद्देश्य-साधनमें नियोजित हुए हैं। उद्भिद और प्राणियजगत्के प्रति दृष्टिपात करनेसे ही प्रतीत होगा कि शरीरव्यवस्था-रूप उद्देश्य ही शारीरिक सभी प्रक्रियाओंको नियन्त्रित करता है।

इसके अनावा सृष्टिका जो अन्य महत्तर उद्देश्य इनके द्वारा साधित हुआ है, हेगलने उसे दूसरी जगह निर्दिष्ट किया है। जो प्रथम ज्ञानस्त्रोत सृष्टिप्रणालीके मध्य ही कर प्रवाहित होता है और समस्त सृष्टि प्रणाली जिस उद्देश्यका लक्ष्य करके धावित होती है, हेगलके मतानुसार 'निरञ्जनज्ञान' वा 'ब्रह्म' (The absolute Idea) प्राप्ति ही एतत् समुदयका लक्ष्यलक्ष्य है।

(१) 'हमत्तोर्ग'को भावामें Absolute शब्दका यद्यर्थ प्रतिशब्द नहीं मिलता, तब 'निरञ्जन' वा 'तत्-स्वरूप' कहनेसे बहुत कुछ हेगलके Absolute शब्दका आभास प्राप्त हो जाता है। हेगलके मतसे Absolute आध्यात्मिक नहीं है और न बड़ हो है; वस्तुतः जिसमें जड़जगत् और आध्यात्मिक जगत्के विकास लाभ किया है, वही परमपदार्थ है। Neither subjective nor objective notion, but the notion that immanent in the object, releases it into its complete independency, but equally retains it into unity with itself)। जड़जगत्के Absolute-का स्वर कई भागोंमें सन्निविष्ट है, हेगलने उसका उल्लेख किया है। प्रथम स्तर जीवजगत् (Life) है। जीव-जगत्में ज्ञान और जड़का एकतावस्थान देखनेमें आता है। जिस अन्तर्गत उद्देश्यके अवधारणा ही कर (The End that pervades life) प्राणियजगत् चलता है, वह अन्तर्गत है। लेकिन यह ज्ञान वर्तमान स्तरमें अतीतभावसे कार्य करता है तत्परवर्ती स्तरमें ज्ञान अतीतभावमें कार्यकारी नहीं है, इस स्तरमें आत्मज्ञान (Self-consciousness)का विकास हुआ है। यदि

वा प्रधान पद वा पूर्वपक्ष, व्याप्तिस लक्ष युक्तिप्रणालीका अवलम्बन करके निर्णीत हुआ है। सुतरां इण्डक्शन (व्याप्ति) युक्तिप्रणालीकी सहायताके बिना डिडक्लिभ (निगमन) युक्तिप्रणालीका प्रयोग असम्भव है। जेम्स (Jevons) आदि पण्डित वर्ग विपरोत मतावलम्बो हैं जेम्सका कहना है कि युक्तिप्रणाली मूलतः डिडक्लिभ (Deductive) है। इण्डक्शन अन्तर प्रकार भेद मात्र है। डिडक्लिभ युक्तिप्रणालीकी विपरोत दिक्से देखनेसे ही इण्डक्लिभ युक्तिप्रणालीमें उपनीत हो जाता है (Induction is inverse deduction)।

उपरि-उक्त दोनों मतोंका संघर्ष अब भी दूर नहीं हुआ है। दोनों मतोंके अन्तर्निहित दार्शनिक तत्त्वका सामञ्जस्य जब तक नहीं होगा, तब तक स्थिर सिद्धान्तमें उपनीत होना असम्भव है।

लाजिककी उत्पत्ति — लाजिककी उत्पत्तिका निरूपण करनेमें यूरोपीय पण्डितोंका कहना है कि मानसिक उत्पत्तिके जिस स्तरमें अनुमान (Inference) का विकास है, लाजिककी उत्पत्ति भी उसी स्तरमें है। न्यायदर्शनके मतसे प्रत्यक्ष (Perception) जिस प्रकार चारों प्रमाणोंमें अन्यतर है, यूरोपीय विद्वान् लोग प्रत्यक्षको उस प्रकार प्रमाणके मध्य नहीं गिनते। उनके मतसे जो प्रत्यक्ष वा इन्द्रियग्राह्य है उसका फिर प्रमाण क्या, प्रत्यक्ष स्वभावतः ही स्वतःसिद्ध है। इसी कारण मनस्त्व (Psychology)के प्रत्यक्षमूलक ज्ञानको लाजिकके अधिकारसे बाहर माना है। प्रत्यक्ष और अनुमानको भीमा इतनी बुझा दिया है कि कब प्रत्यक्षसे अनुमानमें पदार्थ किया जाता है, उसका निर्णय करना कठिन है। अनेक समय जो सम्पूर्ण प्रत्यक्षज्ञान समझा जाता है, उसके मध्य बहुतसे अनुमान अन्तर्निहित हैं। मनस्त्वविदोंने इस अर्थकी अनुमानको अज्ञातसारयुक्ति (Unconscious Reasoning) बतलाया है। अज्ञातसारमूलक युक्ति लाजिककी सीमाभक्त नहीं है। प्रत्यक्ष में अप्रत्यक्षका अनुमान जब स्पष्टतर होता है, जब अनुमानक्रिया ज्ञातसारसे साधित होती है, उसी समय लाजिककी विकाशावस्था है। पण्डितोंके मतसे युक्ति (Reasoning) बुद्धि (Thought or Intellect) की सर्वोच्चविकाश है।

लाजिककी दार्शनिक मिति। — लाजिक प्रमाणका नियामकशास्त्र है। प्रमाणका सरयासत्य किसके ऊपर निर्भर करता है, उसका निर्धारण कर सकनेसे ही लाजिकका मूलतत्त्व बोधगम्य होगा। प्रमाणका सत्यासत्य किस प्रकार है, इस विषयमें बहुत मतभेद है, यह पहले ही लिखा जा चुका है। मिन प्रभृति दार्शनिकोंका कहना है कि वाद्य और अन्तर्जगतका सामञ्जस्य ही सर्यका प्रकृत स्वरूप है (Correspondence of thought with the external realities) तथा प्रमाणका याथार्थ्य अयाथार्थ्य इसी हिसाबसे निर्धारित करना होगा।

हेमिलटन प्रभृति दार्शनिकगण कहते हैं कि प्रमाणके याथार्थ्य अयाथार्थ्यका निरूपण करनेमें वाद्यजगतके साथ सामञ्जस्यकी कुछ भी आवश्यकता नहीं, शब्द प्रमाणकी सङ्गति असङ्गति (Inner consistency or inconsistency) देखनेसे ही काम चल जायगा। हेमिलटनके मतानुसार विरोधाभाव ही (Absence of contradiction) सङ्गति और विरोध (Contradiction) असङ्गति-ज्ञापक है।

हेकार्टे प्रभृति पण्डितोंका कहना है कि परिस्पष्ट भाव ही (Distinctness and clearness) सत्यका लक्षण है। इस प्रकार भिन्न भिन्न मतोंके मध्य एक पक्षमें मिल, वेन प्रभृति पण्डितोंका मत, दूसरे पक्षमें हेमिलटन माननेल प्रभृति पण्डितोंका मत समधिक प्रचलित है तथा मेटोरियल और फारमल दोनों प्रकारके लाजिकके लक्षणकी सूचना करता है। दर्शन और लाजिक अन्योन्यसाहाय्यसे उद्घटित होता है तथा लाजिककी मूलभित्ति अर्थात् सत्यका लक्षण दर्शनके ऊपर प्रतिष्ठित है। इसी कारण अन्तर्निहित दार्शनिकतत्त्वका परिवर्तन साधित होने पर लाजिक भी भिन्नरूपधारण करके भिन्न लक्षणाक्रान्त होता है।

लाजिक और भाषा। — भाव और भाषाका सम्बन्ध इतना घनिष्ट है कि सांख्यशास्त्रोक्त पञ्च और अन्वकी तरह एक दूसरेके बिना चल नहीं सकता। सभी प्रकारको चिन्तावलो भाषाकी सहायतासे साधित होती है। अतः भाषाके अदम्य भावज्ञापक और भ्रमप्रमादपूर्ण होने पर तत्संश्लेष भाव भी भ्रमवर्जित नहीं हो सकता।

एही कारण प्रयोगे काजिके प्रयोगमें ही मावापरि-
च्छेद करिबिट हुआ है। इसमें मावाको मिश्रमिश्रकर्म
'विश्लेषण करके (Analytic) मावा और भावके
पक्षीय सम्बन्धके विषयमें पालोचना भी गई है।
प्रत्येक मानसिक भाव मावाकी सहायतासे प्रकाशित
होता है। अतः वाक्यविश्लेषण करनेमें एक शब्द
मनोभाव सूचित होता है। इस मनोभावप्रापक वाक्य
समष्टिको (A complete sentence) काजिकमें एक एक
प्रतिष्ठा करी गई है। प्रतिष्ठाका विघेयत्व करनेमें देखा
जाता है कि शब्दसमष्टि को कर एक एक प्रतिष्ठा पवित्र
हुई है। एहीसे काजिकके प्रथमाध्यायमें नाम प्रकार
का शब्दसमष्टिके सम्बन्धमें पालोचना है।

नामकरण — नामका प्रकृत अर्थ ही है। इस
विषयमें मिश्र मिश्र शब्दोंके द्वारा लोकोका मत भिन्न
मिश्र है।

नामवादी (Nominalist) मिश्रके मतमें नाम तत्-
त्व छट पदार्थका साहायिक चिह्नमात्र (Symbol) है।
परमात्मसंघे (Through association) किसी एक
नाम का शब्दका स्मरण करनेसे ही तत्त्व छट पदार्थ
मनमें उदित होता है।

इं मिश्रके मतमें पण्डितवर्ग मिश्र सत्तावस्थो है
इसके अन्तर्गत मतको भाववाद या कल्पियपुत्रुपानिजम
(Conceptualism) कहते हैं। इं मिश्रके मतका अर्थना
है कि जिस तरह व्यक्तित्व प्रकृतित किसे व्यक्तित्व
शब्दके साथ लक्ष्य है, उही प्रकार कावित्वावक शब्दके
साथ कावित्व भाव (Concept) लक्ष्य है। एक
वातमें भाववादी नामाव्य भाव (General idea or
concept) का अर्थित्व जोहार करते हैं नामवाद
केका नहीं करते।

अपरि लक्ष्य सत्तय जोड़ कर भी एक और शब्दको
मत के लिये यथावत (Realism) कहते हैं। पारिष्टिक
और सख्युय (Scholastic period) के अन्तर्गत पण्डित
एही मतके अन्तर्गत थे। इसका अर्थना है कि द्रव्य
सम्बन्धका मिश्र मिश्र शब्द जोड़ कर कावित्व नामक एक
स्वतन्त्र गुणका अर्थित्व है। जैसे — पदमें मिश्र मिश्र
गुण रक्षकता है। किन्तु लक्ष्यसत्तय रक्षके अर्थित्व कर

कर एक साधारण गुण है इस गुणके लक्ष्य रक्षनेमें यह
पण्डितवर्ग नहीं होता। यथाही पण्डितवर्ग Essence
कह कर गुणका स्वतन्त्र अस्तित्व (Reality) स्वीकार
करते हैं। जैसे — मनुष्यत्व योत्व, वृक्षत्व इत्यादि। एही
से इन्हें Realist कहा गया है। मिश्रके मतानुसार
गुणसमष्टि जोड़ कर Essence नामक कोई एक स्वतन्त्र
गुण नहीं है।

ऐसे नामको शब्दों विभायप्रवाहो निर्दिष्ट हुई
है। यह नाम एकलवाचक, बहुलवाचक और समष्टि-
वाचक (Collective names) के अर्थसे तीन श्रेणियों
में विभक्त हुआ है।

शब्दोंमें इन्हें द्वितीय प्रकारमें व्यक्तित्ववाचक (Con-
crete) और अतिवाचक (Abstract) अर्थसे नाम
दो प्रकारका है।

द्वितीय प्रकारमें नाम अर्थवाचक (Connotative)
और अर्थवाचक अर्थात् गुणवाचक नहीं (Non Con-
notative) इत्यादि अर्थसे दो श्रेणियोंमें विभक्त है।
जब नाम द्वारा अर्थ एक नाम का गुणका प्रकाश हो,
उसे Non-connotative वा अर्थवाचक नाम कहते
हैं। राम कहनेसे राम-नामके अर्थित्वका ही बोध होता
है और किसीका भी नहीं। अतः कहनेमें अर्थ एक
गुणविशेषका ही बोध हुआ, इससे सिवा अन्य किसी
तत्त्वका सम्मान नहीं लाया गया, ऐसे नामको अर्थ-
वाचक वा Non connotative और जिससे गुण तथा
द्रव्य दोनोंको ही प्रतीति होती है उसे Connotative
वा अर्थवाचक नाम कहते हैं।

चतुर्थ प्रकारमें (Fourth principal division)
Positive वा भावप्रापक और Negative वा अभाव
प्रापक अर्थसे नाम दो प्रकारका है, जैसे मनुष्य,
पदसुख इव अर्थ इत्यादि।

पञ्चम प्रकारमें सम्बन्धमय (Relative) और
सम्बन्धनिरपेक्ष (Absolute or non-relative) इन दो
प्रकारका विवरण है। जो दोनों नाम परस्पर चाकाका
सुख हैं अर्थ सम्बन्धमय नाम कहते हैं, जैसे पिता
कहनेसे ही पुत्रको और राजा कहनेसे प्रजापतिको सुखना
करता है, इत्यादि।

नामका श्रेणीविभाग सञ्चयमें कक्षा गया। अभी नामका अर्थ विचार सञ्चयमें कक्षा जाता है।

दार्शनिकप्रवर अरिष्टलने द्रव्य, गुण, परिमाण इत्यादि दश पदार्थ विभाग करके निर्देश किया है। नाम इन दश श्रेणियोंमेंसे किसी न किसीके पन्तगत होगा। मिलने पूर्वोक्त दश प्रकारका श्रेणीविभाग करके अर्थनिर्धारणकी प्रयोजकता दिखलाते हुए स्वयंमत स्थापन किया है। मानसिक चिन्ताप्रणालीका विश्लेषण कर मिलने निम्नलिखित श्रेणीविभाग निर्देश किया है।

(१) मानसिक भाव अर्थात् वाह्यवस्तुओंके मनके ऊपर क्रिया (Feelings or states of consciousness)

(२) मन वा आत्मा—(The mind which experiences those feelings)

(३) समस्त बाह्यवस्तु (The Bodies or external objects) अर्थात् जो सब वस्तु हम लोगोंके मानसिक भावोंकी जनयिता।

(४) पूर्वोपर्यञ्चान (Succession) समानाधिकरण ज्ञान (Co-existence) सादृश्य और असादृश्य ज्ञान (Likeness and unlikeness)

जागतिक समस्तपदार्थ इन चार श्रेणियोंमेंसे किसी न किसीके पन्तगत होंगे हों।

साजिककी प्रतिज्ञा (Logical propositions)—पहले कक्षा जा चुका है कि एक सम्पूर्णमानसिक भाव ज्ञापक समाष्टको प्रतिज्ञा (Proposition) कहते हैं। कर्ता, विधेयपद और योजक पदभेदसे प्रत्येक प्रतिज्ञाके तीन पद हैं। जिसके सम्बन्धमें कुछ उक्त वा विहित कृपा करता है उस व्यक्ति वा वस्तुको कर्तृपद (Subject), जो उक्त वा विहित हो उसे विधेयपद (Predicate) और जिस पदकी सहायतासे वस्तुपद एवं विधेय पदके मध्य सम्बन्ध स्थापित हो, उसकी योजकपद (Copula) कहते हैं। पीछे भावज्ञापक (Affirmity) और अभावज्ञापक (Negative), सरल (Simple) योगिक (Complex), सर्वभौमिक (Universal), विशेष (Particular), अनिर्दिष्ट (Indefinite) और व्यक्तिकीचक (Singular) इन कई श्रेणियोंमें विभक्त कृपा है। बादमें प्रतिज्ञाके अर्थविचारके सम्बन्धमें

(Import of propositions) आशोचना मन्त्रिविष्ट हुई है। सभी प्रतिज्ञावांकी अर्थसम्बन्धमें नामान्न देखे जाते हैं। किन्तु किसी मतमें प्रतिज्ञा केवल दो मानसिक भाव वा प्रतिकृतिके मध्य सम्बन्धकी सूचना करती है (Expression of a relation between two ideas)। फिर दूसरेका मत है कि दो नामके अर्थका सम्बन्ध स्थापन ही प्रतिज्ञाका मूल है (Expression of a relation between the meanings of two names)। दार्शनिक हब्स (Hobbes) का कहना है कि कर्तृपद (Subject) और विधेयपद (Predicate) जो एक ही बातके दो भिन्न भिन्न नाम हैं उन्हें प्रदर्शन करना ही प्रत्येक प्रतिज्ञाका उद्देश्य है। जैसे सभी मनुष्य प्राणिविशेष हैं; यों पर प्रत्येक मनुष्यकी ही प्राणी कक्षा गया है। मनुष्य और प्राणी ये दो शब्द एक ही वस्तुके नामान्तरमात्र हैं। हब्सका मत एकदेशदर्शी और अनेकार्थम भ्रान्तिविजृम्भित है, इसीसे मिन प्रभृति पुरापुर नामवादियोंका मत इससे स्वतन्त्र है। इस विषयमें मतभेद देखा जाता है। इन श्रेणियोंके दार्शनिकोंका कहना है कि कोई वस्तु किसी एक निर्दिष्ट श्रेणीके पन्तगत है वा नहीं (In referring something to or excluding something from, a class) इसका निर्देश करना ही प्रतिज्ञाका उद्देश्य है। जैसे, राम मरणशून्य है, ऐसा कहनेसे समझा जाता है कि मरणशून्य पदार्थ वा जीव नामकी जो श्रेणी है, राम उसी श्रेणीगत व्यक्तिविशेष है। इसीसे प्राणिप्राणी जन्तु नहीं है, यह कहनेसे समझा जाता है, कि समस्त 'प्राणिप्राणी जन्तु' से कर जो श्रेणी गठित हुई है, इसीसे उस श्रेणीके पन्तर्निविष्ट नहीं (excluded) है, यह अन्य श्रेणीका है। इस प्रकार साजिककी समस्त प्रतिज्ञा एक श्रेणी दूसरी श्रेणीकी पन्तर्निविष्ट है, यही सूचना करती है, जाति (Genus) श्रेणी (Species) इन दोनोंका पार्थक्य (Differentium) अर्थात्, अद्ययुगके स्कानाष्टिक पण्डितोंके प्रवर्तित श्रेणी विभागसे प्रतिज्ञाके ऐसे अर्थनिर्देशका सूत्रपात कृपा है। आरिष्टल प्रवर्तित सूत्र (Dictum de omni et nullo) अर्थात् एक श्रेणीके सम्बन्धमें जो विहित हो

नक्षिता है, उन से बोधन प्रत्येक वस्तुके सम्बन्धमें वह प्रत्येक को मन्वत है, यही समुद्रयज्ञा मूल है ।

दार्शनिक सिद्ध तत्परि उक्त मतको समीचीन नहीं मानते। उनका मत है कि कर्तृपद (Subject) और विधियपद (Predicate) बिना एक बिना एक सम्बन्धकी सुचना करता है और पक्ष एवं सम्बन्ध से कर ही प्रतिज्ञाको कल्पित है। वे सम्बन्ध सिद्धके मतसे सामान्यतः पक्ष है—योग्यपर्य (Sequence) सामानाधिकरण्या वा समावस्थान (Co-existence), पक्षित्वमात्र (Simple existence) आवर्णकारण (Causation) और सादृश्य (Resemblance) ।

प्रतिज्ञाको आधाररूप दो भावोंमें विभक्त कर सकते हैं—वाचकप्रतिज्ञा (Verbal proposition) और वास्तव प्रतिज्ञा (Real proposition) जिस प्रतिज्ञाका विधियपद (Predicate) कर्तृपदका पक्ष वा पक्षोंमें प्रथम प्रकाश करता है कर्तृपद कर्तृपदको पक्ष प्रकाश करता है तदतिरिक्त पक्ष प्रकाश नहीं करता, ऐसी प्रतिज्ञाको वाचक वा Verbal प्रतिज्ञा कहते हैं। मनुष्य बुद्धि याको शीघ्र है, यहाँ पर 'बुद्धियाकी शीघ्र' यह विधियपद मनुष्य पक्षमें जो समझा जाता है, तदपेक्षा किसी पतिरिक्त पक्षका प्रकाश नहीं करता। उदाहरण यहाँ पर उपरि उक्त प्रतिज्ञावाचक प्रतिज्ञा है। जिस प्रतिज्ञामें विधियपद कर्तृपदके पतिरिक्त पक्ष प्रकाश करता है, वेको प्रतिज्ञाको वास्तवप्रतिज्ञा (Real proposition) कहते हैं। जैसे 'सूर्यपद जगत्का केन्द्रबल है' यहाँ पर 'सूर्य' इस कर्तृपदके पक्षको प्रतीति होनेसे पक्षप्रकाश का केन्द्रबल इस विधियपदका पक्ष तदन्तर्निहित है, ऐसा समझा नहीं जाता, विधियपद मनुष्य नूतन तत्त्व प्रकाश करता है। इसीसे इन प्रतिज्ञाको वाचक प्रतिज्ञा कहते हैं। वाचक प्रतिज्ञाका नामान्तर पक्षवाचक प्रतिज्ञा (Explicative) और वास्तव प्रतिज्ञा (Real proposition) का नामान्तर पक्षबोधक प्रतिज्ञा (Applicative proposition) है। प्रतिज्ञाका पक्षविचार करनेमें विधियपदका विरहपक्ष पाचय्य है और विधियपदके साथ कर्तृपदका सम्बन्ध विरोधित होनेसे ही प्रतिज्ञाका पक्ष निर्धारित हुआ ।

उदाहरण । Definition—समी वस्तुपक्षी लक्षणगणको जिस नियमसे जानित हुई है, जिस प्रकार लक्षणपरमणको निर्दिष्ट है, जिस प्रकार वस्तुको कक्षा निर्देश (Define) की जाती है या नहीं की जाती है रक्षादि विषय रक्ष प्रकरके ही पक्षोचित हुए हैं। यहाँ पर यह कक्ष देना पाचय्यक है कि स पक्ष और पक्षको डिक्रिनेयन (Definition) उक्त वस्तुके समान्यलक्षण नहीं है, अधिकतर उपलब्ध नामके समान्य लक्षण हो प्रतिज्ञाके लक्षण व्यवहृत हुआ। स प्राप्तकरके सम्बन्धमें सिद्ध सिद्ध तर्कवाच्यो का सिद्ध सिद्ध मत है।

दार्शनिक परिच्छेदके प्रस्तावनार किसे पदार्थका स ज्ञानिर्देश करनेमें वह पदार्थ जिस जाति (Genus)के अन्तर्गत है, उस जातिका और तदपेक्षा जो सब पतिरिक्त गुण के उस पदार्थके विद्यमान हैं, उनका उल्लेख करनेसे जो पदार्थ का स ज्ञानिर्देश किया गया (Definition per genus at differentias)। पतिरिक्त एक तदनुपपत्ती मध्यवृत्तके पक्षिर्देश्य दार्शनिक मत्वादि (Realist) है; उपरि उक्त स प्राप्तकरके उक्त दार्शनिक मत कथ्यत है ।

सिद्ध प्रकृति नामवादी (Nominalist) दार्शनिकतत्त्व उक्त मतको समीचीन नहीं मानते। सिद्धका कहना है कि प्राचीन पण्डितोंके मन्थने पराजति (Summum genus) कक्षित नहीं की जाती। उनका मत है हम कोवीक सरल समीचीन (Elementary feeling) अन्तोत और समी पदार्थ स पक्ष द्वारा निर्देश किये जा सकते हैं। समस्त स पक्ष सिद्धके मतने नामका बचन पक्ष प्रकाश करती है (Enumerates the connotation of the term to be defined); एक नामका स्मरण होनेसे ही तत्पिहित जिन सब गुणवैषे वह नामधिय पदार्थ सूचित होता है, वे गुण स्मरण या जाते हैं और उन गुणों के निर्देश करनेके लिये ही सिद्धने 'स पक्ष' ऐसा पाच्य प्रदान की है। सिद्धका कहना है कि जो वस्तु कोई सूचना नहीं करती, ऐसी वस्तु स पक्ष द्वारा निर्देश नहीं की जा सकती। राम कहनेके लिये पक्षको प्रतीति नहीं होती; राम मन्त्र एक वस्तु निर्देशका

चिह्नमात्र ही घोर वक्ष चिह्न केवल वस्तुनिर्देशको सङ्ग-
यता करता है। अतः राम शब्द संज्ञा द्वारा निर्देश्य
नहीं है।

यदि कोई नाम वा शब्द तन्निहित समस्त पथोंका
प्रकाश न कर पथोंसमात्र प्रकाशित करे, तो वहाँका
उक्त नाम वा शब्दको संज्ञाको असम्पूर्ण संज्ञा कहते हैं
(Imperfect definition) । इसके विषय क्रिसो वस्तु-
के समवायी गुणोंका उल्लेख न कर असमवायी गुण
(Accidents) द्वारा उक्त वस्तुका निर्देश करनेसे, उक्त
वस्तुकी संज्ञा असम्पूर्ण हुई। इस प्रकार असम्पूर्ण-
संज्ञा संज्ञापदवाच्य न हो कर वर्णनाशब्दवाच्य
(Description) हुआ है।

लेखकके उद्देश्यानुसार उपरि उक्त वर्णना भो
(Description) कभी कभी संज्ञापदवाच्य हुआ करता
है। विज्ञानशास्त्रमें अधिकांश संज्ञा इसी ढङ्गावसे
रची गई हैं। लेखकने जिस गुण वा धर्मके ऊपर लक्ष्य
रख कर वस्तुओंका अणोविभाग निर्देश किया है, वह
गुण वस्तुका समधिक विशिष्ट गुण नहीं भी हो सकता
है, किन्तु लेखकके उद्देश्यानुसार गुणकी विशेष सार्थ-
कता है। इस प्रकार उक्त निर्देश्य प्रणालीकी वर्णना
(Description) न बाह कर वैज्ञानिक संज्ञा (Scien-
tific definition) कहते हैं। प्राणीतत्त्वविद् कुभियर
(Cuvier) ने मनुष्यको "दृढस्तविशिष्ट स्तन्यपायी" जोष
संज्ञित किया है। उक्त संज्ञाकी वर्तमान प्रयोजनी-
यता रहने पर भी संज्ञापदवाच्य नहीं हो सकता। किन्तु
कुभियरका उद्देश्य अन्य प्रकारका है। उन्होंने जिस
प्रणाली (Principle) के अनुसार प्राणियोंका अणो-
विभाग निर्देश किया है, उसीके अनुसार उपरि उक्त
संज्ञाकी सार्थकता है। समस्त वैज्ञानिक संज्ञा इसी
प्रकार प्रणालीका अवलम्बन कर अर्धित है।

नामप्रकरणसे ले कर संज्ञाप्रकरण तक भाषा और
भावका है। सम्बन्धनिराकरण चिन्ताप्रणालीका याथाार्थ्य
साधन करनेमें भाषामें किस प्रकार संस्कारको आवश्यक-
कता, नामप्रकरण, संज्ञानिर्देशप्रणाली, भाषाके अर्थ-
निर्देशका सामञ्जस्यविधान इत्यादि प्रस्तावोंकी अवता-
रणा की गई है। उपरि उक्त विषय तर्कशास्त्रके भित्ति-

स्वरूप है। इसके अनन्तर तर्कशास्त्रके मूल उद्देश्यसाधक
"प्रमाण" नामक अर्थको पथतारणा की गई है।

अनुमान (Reasoning) ।—पहले कहा जा चुका
है कि न्यायशास्त्रोक्त प्रमाण चतुष्टयके अनन्तर अनुमान
एक प्रमाणविशेष है। यूरोपीय पण्डितगण श्रेय तोमको
अर्थात् प्रत्यक्ष, उपमिति और शब्दको प्रमाणात्ता स्वरूप
नहीं मानते।

जिस प्रणालीका अवलम्बन कर किसी ज्ञातपूर्व
विषयके ज्ञानसे किनो अज्ञात वा अदृष्टपूर्व विषयके
सिद्धान्त पर पहुँचता है। ऐसी युक्तिप्रवाहको अनु-
मान (Reasoning or Inference in general)
कहते हैं। कोई विषय सिद्ध वा प्रामाणित हुआ, यह
वाक्य कहनेसे साधारणतः हम लोग क्या समझते हैं ?
साधारणतः इस अर्थसे यह बोध होता है कि प्रामाण्य
विषयका सत्त्वासाथ जिस विषयके ऊपर निर्भर करता
है, वह विषय हम लोगोंको ज्ञात था और उस ज्ञात
विषयसे अज्ञातविषय निरूपित हुआ है।

अनुमान नाना अणोमें विभक्त है।—प्रधानतः निग-
मनयुक्ति (Deductive Reasoning) और व्याप्ति-
मूलकयुक्ति (Inductive reasoning) उपरि उक्त अणो
विभाग छोड़ कर एक और प्रकारकी अनुमानका उल्लेख
है। किन्तु यद्यार्थमें इस अणोका अनुमान यद्यार्थ अनु-
मान (Inference) नहीं है, केवल शब्दविपर्ययहेतु
(Transposition of terms) यद्यार्थ अनुमान जैसा
बोध होता है। ऐसे अनुमानका नाम है साक्षात् अनुमान
वा इमिडियेट इनफरेन्स (Immediate Inference)
जैसे, सभी मनुष्य मरणशील हैं, इस वाक्यके बदलेमें
यदि कोई मनुष्य अमर नहीं है, इस पदका व्यवहार
किया जाय, तो किसी नूतन सिद्धान्त पर नहीं पहुँचते,
केवल एक ही वातकी वाक्यन्तरमें पुनरावृत्ति की
गई है।

यूरोपीय दार्शनिकोंने तर्कशास्त्रकी प्रतिप्राप्तिको
साधारणतः चार भागोंमें विभक्त किया है और यथाक्रम
उनको A, B, C, D नाम रखा है। इनमेंसे A सार्व-
भौमिक सम्मतिज्ञापक है, यथा—सभी मनुष्य मरण-
शील हैं, यहाँ पर मरण पद सभी मनुष्योंके सम्बन्ध-

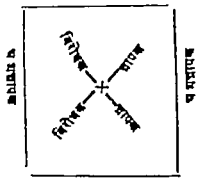
में विहित क्या है। E प्रतिष्ठा साबंभौमिक सम-
मतिज्ञापक है परंतु बिंदो जगह विशेषपदके साथ
कहलं पदको एकत्रावस्थिति नहीं है, यद्यो ज्ञापन करता
E प्रतिष्ठाका उद्देश्य है। अथे कोरे भी बहुत सम्पूर्ण
नहीं है, यहाँ पर सम्पूर्ण पद प्रत्येक बहुतसे मरुद्वयमें
ही प्रत्याहार किया गया है। पाँचवक सम्मतिज्ञापक
घोर पाँचवक सममतिज्ञापकको यथाक्रम I और O
कहते हैं; अथे चिंतने कोव सम्पूर्ण है (I), चिंतने
कोव सम्पूर्ण नहीं है (O)।

चित्र द्वारा साक्षात् अनुमान (Immediate In-
ference)-का अध्ययन यद्यत्तमें ही प्रदर्शित हो सकता
है। जैसे, जैसे 'क' को 'ख' है; सुतरां चिंतने क ख
है, घोर चिंतने ख क नहीं है, ये दोनों ही अनुमान
सिद्ध हो सकते हैं। निम्नलिखित उदाहरण प्रत्येक पद
की व्याप्ति (Extension) दिखावाये गई है। क घोर क
नामधारी चिंतनी बहुत है

ये यथाक्रम क घोर क
उदाहरण द्वारा दर्शाये
हैं। सविधितचिंतने देखा
जायगा कि क नामधारी
चिंतनी बहुत है ये क
नामधारी बहुतोंके पद
में है। सुतरां क पादमाधारी ऐसी कोरे बहुत नहीं
है जो ख न हो। किन्तु क उदाहरण जो प म क उदाहरण
एक उदाहरण है उदाहरण क जो क है; सुतरां
चिंतनेको क क है; घोर क उदाहरण जो प म क उदाहरण
सहिम्न है, उदाहरण क क नहीं है, यतः दोनों
अनुमान सिद्ध हुए।

कह पद घोर विशेषपदका जिन प्रकार स्थान वि-
षय द्वारा अनुमान साधित होता है, यह साधारणतः
तीन प्रकारका है—(१) सामान्य घोर विशेष विप-
र्यय (Simple conversion and conversion per
accidents), (२) विपरीतावस्थान (Tran position)
घोर (३) विपरीतावस्थान (Obversion)। इन सब
अनुमानों को प्रक्रियाका कक्षों विस्तार ही जानिये मयके
नहीं किया गया। निम्नलिखित चिंतने प्रतिष्ठाको का
परस्पर अध्ययन निरूपित होमा।

A बेपरोक्षज्ञापक E



I पाँचवक बेपरोक्षज्ञापक O

चित्र द्वारा प्रमाण किया जा सकता है कि दोनों
ही बेपरोक्षज्ञापक प्रतिष्ठाके मध्य दोनों ही सिद्धा
को सकते हैं, किन्तु दोनों ही सम्बन्ध नहीं हो सकते।
पाँचवक बेपरोक्षज्ञापक दोनों प्रतिष्ठाके मध्य दोनों ही
मध्य हो सकते हैं, किन्तु दोनों सिद्धा नहीं हो सकते।
दोनों परस्पर विशेषज्ञापक ही प्रतिष्ठाके मध्य सम्ब-
धनका दोनों सिद्धा नहीं हो सकते। एकके सिद्धा
कोनेके दूसरा सम्बन्ध मध्य होमा। य यज्ञापक दोनों
प्रतिष्ठाके मध्य साबंभौमिक प्रतिष्ठा (Universal
proposition) विशेष प्रतिष्ठा (Particular propo-
sition)-का मध्य प्रतिपादन करता है। किन्तु विशेष
प्रतिष्ठाका मध्य प्रतिपादन कोनेके साबंभौमिक प्रतिष्ठाका
मध्य प्रतिपादन नहीं होता। विशेष प्रतिष्ठाके सिद्धा प्रति-
पादन होने पर साबंभौमिक प्रतिष्ठा भी सिद्धा प्रतिपादन
होती है किन्तु साबंभौमिक प्रतिष्ठाके सिद्धा प्रतिपादन
होने पर विशेष प्रतिष्ठा सिद्धा प्रतिपादन नहीं होती।

उपरि उक्त साक्षात् अनुमान (Immediate Inference)
के द्वारा अनुमान प्रमाणन दो विधियोंमें विभक्त
है—निगमनमूलक अनुमान (Deductive Reasoning)
घोर व्याप्तिमूलक अनुमान (Inductive Reasoning)।

विश्वविश्वविधि: विश्वविधि या निगमन-प्रमाणोंमें
पुष्टिका प्रथम भोजन (First premiss or datum)
साबंभौमिक ज्ञापन (Universality) कहते हैं उदा-
हरण साबंभौमिकज्ञापक प्रतिष्ठाको विशेषण करके पुष्टिप्रदाह
प्रकार काम करता है। उदाहरणमें साधन परिचय

जगह यही प्रणाली प्रचलित है। जैसे ज्यामिति-शास्त्रमें कितनी ही संचा स्वतःसिद्ध विषय हैं और स्वीकृत विषयमें प्रथम सोपानस्वरूप मान कर विशेषण प्रणाली-क्रमसे अन्यान्य तत्त्व प्रमाणित हुए हैं। जागतोय जो सब कार्य-कलाप साक्षात्कार द्वारा मीमांसित होनेको नहीं है, यहाँ पर निगमन (Deduction) युक्तिका आश्रय ग्रहण करना ही होगा। ज्योतिषशास्त्रके अनेक विषय इसी प्रकार उपाय प्रचलितमें निर्णीत हुए हैं। नक्षत्र और ग्रह जगतके सभी तत्त्व हम लोगोके इन्द्रियायत्त नहीं हैं, किन्तु ग्रह जगतके अनेक तत्त्व ज्योतिर्विद्द द्वारा निर्णीत हुए हैं। इस प्रकार किसी तत्त्वकी सूचना देखनेसे उस तत्त्वके प्रमाणोक्त होनेको उपाय और कुछ नहीं है, केवल अपरापर ज्ञात और मीमांसित घटनाके साथ उक्त तत्त्वकी सङ्गति (Consistency) है वा नहीं तथा अपरापर व्यापकतर तत्त्व (Higher principles)से उक्त तत्त्वमें 'पहुँचता है' (Deduce) वा नहीं, इसका निराकरण है। निगमनयुक्ति (Deductive Reasoning)के जो कई प्रकारके भेद हैं, उनमें अन्योन्य सञ्चयान्त्रिक युक्ति (Syllogism or Ratiocination) विशेष उल्लेख योग्य है। नीचे उक्त प्रकारकी युक्तिका स्थूल मर्म दिया गया है।

अन्योन्यसञ्चयान्त्रिक युक्ति (Syllogism) और उक्तरूप अनुमानसे प्रतिज्ञाद्वय वा दो स्वीकृत विषयके संयोगसे तृतीय विषयके सिद्धान्त पर उपनीत होना पड़ता है। प्रथमोक्त प्रतिज्ञाद्वय वा स्वीकृत विषय दोनोंको प्रेमिस (Premiss) कहते हैं। इनमेंसे जिसे प्रतिज्ञा वा वाक्यमें प्रधानपद (Major term) वा जिसे (हम लोगोके न्यायशास्त्रानुसार) हेतुपद रहता है उस प्रतिज्ञाको प्रधान वाक्य वा मेजरप्रेमिस (Major premiss) और जिस प्रतिज्ञामें अप्रधानपद (Minor term) वा हम लोगोके न्यायशास्त्रमें साध्यपदका उल्लेख है उस प्रतिज्ञाको अप्रधान वाक्य (Minor premiss) कहते हैं। जिस पदके सहयोगसे (Mediation) हेतु और साध्यके मध्य सम्बन्ध सूचित हो कर सिद्धान्त पर पहुँच जाता है, उस पदको मध्यपद वा लिङ्गपद (Middle term) कहते हैं। प्रतिज्ञाद्वय (Premisses)

की सहायतासे जिसे सिद्धान्त पर उपनीत हो जाता है उसे सिद्धान्तवाक्य वा निगमन (Conclusion) कहते हैं। सिलजिस्मका उदाहरण नीचे दिया जाता है।

(१) प्रत्येक मनुष्य ही मरणशील है।

(२) राम मनुष्योपाधिविशिष्ट है।

(३) अतएव राम मरणशील है।

उपरि उक्त दृष्टान्तमें सर्व प्रथमोक्त प्रतिज्ञा प्रधान वाक्य (Major premiss) वा न्यायशास्त्रोक्त प्रतिज्ञा है, द्वितीय प्रतिज्ञा "राम मनुष्योपाधिविशिष्ट" अप्रधान वाक्य (Minor premiss) वा न्यायशास्त्रोक्त उदाहरण है और तृतीय प्रतिज्ञा "राम मरणशील" सिद्धान्त वाक्य (Conclusion) वा न्यायशास्त्रोक्त निगमन है। मरणशील, राम और मनुष्य ये तीन पद (Term) यथाक्रमसे प्रधानपद (Major term) अप्रधानपद (Minor term) और मध्यपद (Middle term), अथवा न्यायशास्त्रोक्त हेतु, साध्य और लिङ्गपदवाच्य है।

मध्यपद वा लिङ्गपद (Middle term)के अत्र स्थानभेदसे अनुमानके चार अवयवगत भेद हुए हैं जिनका यूरोपीय न्यायशास्त्रविदोंने सामान्यतः "अवयव" (Figure) नाम रखा है। लेकिन प्रथम अवयवोक्त (First figure) अनुमान ही समधिक प्रचलित है, दूसरोंकी प्रथमावयवमें परिणत किया जा सकता है।

प्रथम अवयवोक्त अनुमानमें (First figure) मध्यपद प्रधान वाक्यका कर्तृपदस्वरूप और अप्रधान वाक्यका विधेय पदस्वरूप विवृत रूप करता है।

यथा—

सभी क ही ख हैं	कोई भी क ख	कोई भी क ख
सभी ग ही क हैं	नहीं है।	नहीं है।
अतएव सभी	सभी ग क हैं	कितने ग क हैं।
ग ख हैं	अतएव कोई भी	अतएव कितने
	ग ख नहीं है	ग ख नहीं हैं।

द्वितीय अवयवमें (Second figure) मध्य वा लिङ्गपद प्रधान (प्रतिज्ञा) और अप्रधान (उदाहरण) वाक्यका विधेय पदस्वरूप व्यवहृत हुआ करता है। यथा—

बोर्डे को क व नही है
 वमो म क है
 .. बोर्डे मी क व नही है

विषयवाचक बोर्डे मी मनुष्य
 सुखी नही है, धार्मिक
 मात्र हो सुखी है
 धार्मिक मनुष्य विषया
 वाचक नही है।

द्वितीय चक्रवर्त (Third figure) में मध्यपद
 प्रधान और उपप्रधान दोनों प्रतिज्ञावाची कर्तृपदस्वरूप
 व्यवहृत हुआ करता है।
 वमी क व है
 समो क व है
 अतएव बितने ही म क है

मनुमन्त्रिका मात्र ही बुद्धि-
 वाची है।
 मनुमन्त्रिका मात्र ही पतङ्ग
 नियम है।
 अतएव बितने ही पतङ्ग बुद्धि-
 वाची होती है।

यहाँ पर देखा जाता है, कि प्रधान और उपप्रधान
 दोनों वाचीके व्यापकत्वसूचक वा वाचकभौमिक (Uni-
 versal) प्रतिज्ञा होने पर भी सिद्धान्तवाचक सार्व-
 भौमिकवाचक नहीं है, विषयवचनवाचक (Particular)
 है, व्याप्तिवचनके अन्तर्गत सब सिद्धान्त निर्देश करता है।
 प्रथम प्रतिज्ञामें मनुमन्त्रिका मात्र ही बुद्धिवाची है, यहाँ
 पर कर्तृपद और विषयपदका क्रान्तिविषय करके हम
 सोच नहीं कर सकते कि बुद्धिवाचको जो मनु-
 मन्त्रिका है। कारण मनुमन्त्रिका नहीं है, ऐसे बितने
 बुद्धिवाची जीव हैं। द्वितीय प्रतिज्ञामें भी 'पतङ्गमात्र' ही
 मनुमन्त्रिकावाचक नियम है, ऐसा निर्देश करना भी सङ्गत
 नहीं है। इस प्रकार सिद्धान्तवाचकका सार्वभौमिक
 (Universality) निर्देश करनेसे सिद्धान्त प्रति-
 व्याप्तिहीनबुद्ध हो जाता है।

चतुर्थ चक्रवर्त (Fourth figure) विविध अनु-
 मासमें मध्यपदको उपबन्धित केक व्यवहारवर्षविशिष्ट
 अनुमानके विपरीत है। यहाँ पर मध्यपद प्रधान प्रतिज्ञा-
 के विषयवचन और उपप्रधान प्रतिज्ञाके कर्तृपदस्वरूप
 व्यवहृत हुआ करता है। यथा—
 वमी क व है। समो मनुष्य बुद्धिमानो है।
 वमी क व है। सभी बुद्धिवाचको जीव मन्त्रिक
 , बितने म क है। विविध है।
 बितने मन्त्रिकवर्षविशिष्ट जीव
 मनुष्य नामधारी है।

उपरिष्ठ चार प्रकारके अनुमानके ही देखा जायगा
 कि दो प्रधान और उपप्रधान वाचकवर्षके मध्य एक प्रतिज्ञा-
 वाचक व्यापक (Universal) प्रतिज्ञा होना आवश्यक
 है। दो विषयवचनवाचकके किसे विषयान्तर पर पड़ने
 नहीं सकते। कारण प्रतिज्ञावर्षके मध्य पदकी भी
 व्याप्ति नहीं रहनेसे अनुमान असम्भव है। एकल वा
 विषयवचनवचक प्रतिज्ञावर्षके बोर्डे अनुमान ही सकता
 है वा नही इस विषयमें मतभेद है। मिसके मतसे इस
 प्रकारका अनुमान सार्थ है, बैन (Alexander Bain)
 और बन्ध्याय व्यापकवाचकविदोके मतसे यह प्रकारका
 अनुमान पलाय है (Bain's Logic, i 159)

दो निरीक्षणवाचक (Negative) प्रतिज्ञावर्षके भी
 किमी प्रकारका सिद्धान्त नहीं हो सकता। कारण, इस
 प्रकार व्यापकवाचक मात्र नहीं रह सकता, सुतरां
 अनुमान असम्भव है।

तद्विषय मध्यपद (Middle term) की प्रतिज्ञाका
 (Promises) अन्तर्गत एकमें मी एक बार समप्रमाणमें
 व्याप्त होना (Distributed) आवश्यक है। मध्यपद-
 को महाव्यतासे ही अनुमान साधित होता है, इसीसे
 मध्यपदको समस्त व्याप्तिवाचक रहना आवश्यक है।

मैजोर, माइनर और मीडल टर्म्स (Major, Minor and Middle terms) में निम्न पदका तीनों उपबन्धित और
 अनुमान देना आवश्यक है।

इस सब नियमों का शाब्दिकम होमिसे भी अनुमान
 सब दोषान्वित होता है, यह दुष्प्रमाण (Fallacies)
 प्रसङ्गमें लिखा गया है।

उपरिष्ठ निम्नोका आन्वय करके प्रत्येक चक्रवर्त-
 के (Figure) अन्तर्गत जिन सब बुद्धियों की सङ्गति
 साधित हुई है, उन्हें विध अनुमान (Valid moods)
 कहते हैं। तदनुसार बितनी बुद्धियों का बारबारा देखा
 है (Barbara, Celarent) नामधरक हुआ है।
 (J. von's Logic on Syllogism)

हमिल्टन (Sir William Hamilton) विषयवचन-
 का नियम (Quantification of the predicates)
 नामक मतकी अवधारणा कर कहते हैं कि इससे द्वारा
 विषयवचनके व्यापक निम्नोको आवश्यकता निराकरण
 होनी।

अरिष्टलन कर्तृक प्रवर्ति त व्यामिश्रानबोध त मत्र जो (Dictum de omni et nullo) अन्योन्यसंश्रयात्मिक युक्तिका भित्तिस्वरूप है । इस सूत्रका अर्थ इस प्रकार है, सभी श्रेणी (Class) के सम्बन्धमें जो विहित हो सकता है उस श्रेणीके अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्तिके सम्बन्धमें ही वह विहित है । अतः देखा जाता है कि सिलजिस्म (Syllogism) की प्रधान प्रतिज्ञा (Universal proposition) है । अप्रधान प्रतिज्ञा (minor premiss) प्रधान प्रतिज्ञाका अन्तर्निहितत्व सूचना करता है अर्थात् प्रधान प्रतिज्ञाका कर्तृपद जिस श्रेणी (Class) को सूचना करता है । अप्रधान प्रतिज्ञा का कर्तृपद उस श्रेणीके अन्तर्गत व्यक्ति है यही बोध करता है, सुतरां प्रधान प्रतिज्ञाके कर्तृपदके सम्बन्धमें जो विहित हुआ है, अप्रधान प्रतिज्ञाके कर्तृपद उक्त कर्तृपदके अन्तर्गत होनेसे उक्त विशेषपद प्रयोज्य है । सिद्धान्त वा निगमन इसकी केवल सूचना करता है ।

मिथ उपरि उक्त सूत्र (Dictum) को समानोचना की जगह कह गए हैं कि उक्त सूत्र सदोप है और किसी न तन तत्त्वको अवतारणा नहीं करता । श्रेणीके सम्बन्धमें जो विहित है, वह श्रेणीके अन्तर्गत प्रत्येक पदार्थके सम्बन्धमें विहित है, यह उक्ति एक ही अर्थको सूचना करती है । (Truism) समगुणविशिष्ट पदार्थ ले कर एक एक श्रेणी गठित हुई है, अतः श्रेणी व्यक्ति समष्टिके सिवा और कुछ नहीं है । इस प्रकार श्रेणियों में जो गुण है, श्रेणीके अन्तर्गत प्रत्येक पदार्थमें वही गुण है, ऐसा कहनेसे कोई लाभ नहीं । कारण, श्रेणीके अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्तिमें गुण है ऐसा कहनेसे ही श्रेणीमें वह गुण है, ऐसा कहा जाता है । पदार्थसमष्टिके सिवा श्रेणी नामका कोई स्वतन्त्र पदार्थ नहीं है । (Mill's Logic, Book 11 ch. 2. p. 114.)

उपरि उक्त सूत्रको समानोचनाका अवलम्बन कर मिथने अन्योन्यसंश्रयात्मिका युक्ति (Syllogism) को समानोचना की है ।

मिथका कहना है, कि इस प्रकारका अनुमान किसी नूतनतत्त्वको अवतारणा नहीं करता । केवल प्रातविषयको पुनरावृत्ति की जाती है । सिद्धान्तपद इस

जगह एक नूतन तथ्य नहीं है । मनुष्यमात्रकी ही मरणशील कष्ट कर प्रथम राम मनुष्य इस पदकी अवतारणा की जाती है, तब राम मरणशील है यह सिद्धान्तपद मनुष्यमात्रमें ही मरणशील इस प्रतिज्ञाके अर्थ अन्तर्निहित है ऐसा समझा जाता है । सुतरां सिद्धान्तपद मिथके मतानुसार प्रधान प्रतिज्ञामें निहित है, विशेष करके निर्देश करना पुनरावृत्तिमात्र है । प्रत्येक अन्योन्यसंश्रयात्मिका युक्ति ही उनके मतमें "हस्ताकारमें अनुमान" (Petitio Principii or argument in a circle) दोषयुक्त है । (Mill's Logic, BK. 11, chap. 3.) मिथको उक्त समानोचनाको अनेक पण्डित नहीं मानते । उनके मतमें मिथको समानोचना नामवादा (Nominalism) के ऊपर प्रतिष्ठित है । सुतरां जो नामवादाके याघार्थको स्वीकार नहीं करते वे उक्त समानोचनाकी सारवत्ताको भी नहीं मानते । वे कहते हैं, कि एक व्याप्ति (Universal element) नहीं रहनेसे अनुमान ही ही नहीं सकता । वे लोग मिथके विशेषसे विशेष अनुमान (Reasoning from particular to particular) को स्वीकार नहीं करते । Bosserquet's Logic देखो ।

मिथने अरिष्टलनके सूत्र (Dictum) के बदलेमें निज मतोपयोगी एक सूत्रको रचना की है । यह सूत्र ठीक इस लीगोंके दोगेय न्यायके निम्नलिखिते प्राण अनुमानके स्वरूप हैं । मिथने भी कहा है कि जो चिह्न एक दूसरे चिह्नको सूचना करता है, वह चिह्न हिताय चिह्नोक्त वस्तुको भी सूचना करता है (Nota notae est nota rei ipsius, whatever is a mark of any mark, is a mark of that which this last is a mark of) । बोन (Bain) के मतमें उपरि उक्त सूत्र अनेक जगह सुविधा होने पर भी अनुमानको विशेष सहायता नहीं करता, कारण उपरि उक्त सूत्रमें व्याप्ति-प्राणका कोई आभास पाया नहीं जाता । (Bain's Logic 1. 157.) इसके सिवा बोनने दूसरी आपत्तिकी अवतारणा की है । किसी विशेष विषयमें एक व्यापक नियमके प्रयोगसे ही निगमन अनुमानकी (Deductive reasoning) आवश्यकता (The application of

a general principle to a special case) रूप लक्ष्य मिलने शुरू द्वारा साधित नहीं होता ।

द्वितीय सिद्धांत (Syllogism) में अनुमान का कोई एक पद का लोपान (Step) प्रत्यक्ष रहने से उन प्रकारके अनुमानको प्रत्यक्षानुमान (Epicheirema or suppressed syllogism) कहते हैं ।

दो या दोसे अधिक विचारविस्तार का पाठ्य से कर जो सुविचार्यो (Train of reasoning) योजन श्रुति है, उसे सुक्तिवृत्त (Sorites) कहते हैं । इस प्रकार प्रथम विचारविस्तार निदान पद द्वितीय सिद्धांतके प्रथम वा प्रथम प्रतिष्ठा स्वरूप व्यवहृत कृपा करता है ।

पहले जो शिक्षा का सुधा है कि अनुमानके प्रकृत स्वरूपके सम्बन्धमें मिलने साथ ज्ञानविद्वादी दार्शनिकों (Intuitionist and philosophers) तथा जर्मनदार्शनिक दार्शनिकोंका मतमैद है । मिलनका मत दार्शनिकसम्प्रदायका मत है (Empirical School) और मिलन का दार्शनिकमतके मुख्यार्थ है । मिलने मतका उदाहरण तब ज्ञानमें जन्म है दार्शनिक ज्ञानका वाचस्पत्य है ।

जर्मन-दार्शनिकोंका कहना है कि ज्ञान लोकोको बोधयति प्रकृतियोग्यः व्यापक (Reason is universal in its nature) है जर्मन लोकोकी प्राग्विकव्यक्ति व्यापकत्वके विधेयत्व (From the universal to the particular) को और उपर कर लेते हैं । जर्मन लोकोका प्राग्विकव्यक्ति (Experience) उपरिष्ठुत को कर विधेय प्राग्विक वरिष्ठ होता है । बोधमें त्रिप प्रकार जन्मदा मन्वित्युत्पन्न निमित्त है, प्राग्विकव्यक्ति (Reason) विचार्य लो लक्ष्य प्रकार है । एकके मतने प्राग्विकव्यक्ति विच्छेदक मूलक (Disjunctive) है [Caird's Introduction to the critical philosophy of Kant—On the nature of reason (Vernunft) and conceptual elements in knowledge] ।

मिलने और उपरिष्ठुत दार्शनिकों (The Empirical School) का मत उपरिष्ठुत दोनो मतका सम्बन्ध

निरीत है । मिलनका कहना है कि ज्ञान लोकोको प्राग्विकव्यक्ति विधेय होने पर व्यापकता प्रामुख्यो (From the particular to the universal) प्राग्विक (Experience) साधकत्वमूलक (associative) है, व्यापक (The universal element in knowledge) विधेय विधेय कल्पने रहित है (derived from experience) । जब विधेय विधेय कल्पना लोकोके इन्द्रियबोधर होती है, तब देखा जाता है कि चिंतनो कल्पनामें सुबद्धा सामान्यता है परंतु उन कल्पनामें प्रकृतके मूल गुण वर्तमान है । इसीसे यह गुण एक व्यापक मूल है । इस प्रकार समुदाय व्यापक-पदार्थका प्राग्विक इन्द्रियप्राग्विक है, व्यापकत्वमूलक (Inductive reasoning) द्वारा व्यापकपदार्थके प्राग्विक लोप होता है ।

उपरिष्ठुत दोनो मतोंमेंके बीच मत विचार्य सुधि शुरू है इसका निर्धारण करनेमें दोनो दार्शनिकों पासो बना करने होती है । किन्तु वर्तमान विधेयत्व प्राग्विक नहीं होनेके कारण उपरिष्ठुत स्वरूपका विधा यथा है ।

उपरिष्ठुत वा व्यापकत्व सुधि (Inductive reasoning)।—पहले कहा जा चुका है कि मिलने मतमें प्राग्विक (Knowledge) स्वभावतः व्यापकत्व (Inductive) है, यह विधेयके व्यापकको और दोड़ता है । प्रकृत अनुमान लो (Inferenc) लक्ष्य मतमें व्यापकत्व (Inductive) है । सिद्धांतके व्यापक-प्रतिष्ठा, मिलन कहते हैं कि व्यापकत्वमूलक द्वारा निराकृत पूर्व है । सुनरा मिलने मतमें निगमनमूलक सुधि (Deductive reasoning) लक्ष्य पहिले साधित व्यापक (Induction) है उपर निर्भर करती है ।

दास निरूपण के लक्षण (Dacon) में जो तत्त्वचिंतन 'नूतनतन्त्र' (Novam Organum) पुस्तकमें इच्छुत ज्ञान वा व्यापकत्व सुधिप्रकाशको प्राग्विकता की है । लक्ष्य पहिले परिच्छिन्नके व्यापकता लक्ष्य करने पर भी है इसको इनको प्रभावता स्वीकार नहीं करते के लक्षण बाद मिलने मतमें लक्ष्य प्राथमिक व्यापकता प्रभाव प्रतिपादन किया है ।

सामान्य प्रतिष्ठाके निर्देश और प्रतिपादन करनेके उपायको मिलने 'इण्डक्शन' वा व्याप्ति कहा है। जितनी विशेष घटना देख कर पौछे यदि उसी प्रकारको एक घटना संघटित हो, तो हम लोग कहते हैं कि यहाँ भी फल वैसा ही होगा। पर्यायरूपसे विषय खा कर मृत्युमुखमें पतित होना इसे यदि कोई भ्रमिचरि-रूपसे लक्ष्य करे अर्थात् यदि देखे कि राम, हरि, यदु, गोपाल तथा और दूसरोंने विषय खा लिया है और वे मृत्युमुखमें पतित हुए हैं, तो किसी दूसरने वही विषय खाया है ऐसा जान सकने पर वह सहजमें कह सकेगा कि यह व्यक्ति भी मृत्युमुखमें पतित होगा। इस प्रकार विशेष घटनासे साधारण ज्ञानमें उपस्थित होनेका नाम इण्डक्शन वा व्याप्ति (Induction) है। विषय खानेसे राम, यदु और हरि मर गए हैं, अतएव गोपाल भी मरेगा तथा जो कोई विषय खाया वह भी मरेगा, इत्यादि घटना के संस्थानुसारके ऊपर अनुमानके लिए निर्भर करना प्रकृत व्याप्तिमूलक अनुमानका स्वरूप नहीं है। केवल घटनापरुखा देख कर अनुमान करनेको बेकन (Bacon) संस्थासूचक व्याप्ति वा इण्डक्शन (Induction per enumerationem simplicem) कहते हैं। इस प्रकार अनुमान पदार्थ इण्डक्शन वा व्याप्तिपदवाच्य नहीं है। प्रत्येक ग्रहके पर्यवेक्षणके बाद यदि कहा जाय कि ग्रहमात्र ही सूर्यके आलोकसे आलोकित होता है, तो इस प्रकार सिद्धान्त 'इण्डक्शन' द्वारा स्थिरकृत हुआ है, ऐसा दिखानेसे भी यथार्थमें कोई अनुमान-क्रिया साधित नहीं होता। कारण, प्रत्येक अनुमान ज्ञान विषयसे अज्ञात विषयमें ले जाता है (A process from the known to the unknown)। वर्तमान-स्थानमें "ग्रहमात्र ही सूर्यके आलोकसे आलोकित होता है" यह सिद्धान्त एक अभिनव सिद्धान्त नहीं है वा अभिनव वस्तुके सम्बन्धमें भी आरोपित नहीं किया गया है, सभी यहाँका पर्यवेक्षण करके उक्त सिद्धान्त पर पहुँच गया है, अतएव उक्त सिद्धान्त पदार्थके अनुमान नहीं है। (Not an inference properly so called)।

प्रकृत व्याप्तिका स्वरूप कैसा है, मिला तत्प्रणीत ज्ञानिक ग्रन्थमें इसकी सविस्तृत पालीचना कर गए हैं।

यहाँ पर उनका मत संक्षेपमें लिखा जाता है। मिलाका कहना है कि स्वाभाविक नियमका भ्रमिचरि-चारित्र्य ही (Uniformity of nature) व्याप्तिही भित्ति है। प्राकृतिक कार्यावली एक ही प्रक्रियाके अनुसार साधित होती है। नियमका भ्रमिचरि लक्षण यह है कि जगत्में जो घटना हो चुकी है वा हो रही है, ठीक उस प्रकार घटना परम्पराका समवाय है। वह घटना होगी ही और जितनी बार यह घटनासमवाय संघटित होगी उतनी बार घटनाका संघटन भी भ्रमिचरिभावो है। मनुष्य मरणशील है, इस सिद्धान्त पर हम लोग क्यों विश्वास करते? थोड़ा गौर कर देखनेसे ही व्याप्तिका याथार्थ्य स्थिरकृत होगा। आज तक जितने मनुष्योंने हम लोगोंके सौ दो सौ वर्ष पहले जन्मग्रहण किया है, सभी मर चुके हैं। वर्तमान समयमें जिन्होंने जन्म लिया है उनमेंसे भी कितने मरे हैं, कोई देश क्यों न हो, दो सौ वर्षके व्यक्ति जीवित नहीं रह सकते। आज तक किसीका भी अमर हो कर रहना नहीं देखा गया है। इन सब विषयोंसे स्थिर किया जाता है कि मरण मानवजीवनका भ्रमिचरि धर्म-विशेष है और उसका संघटन जीवनमें भ्रमिचरिभावो है। सुतरां जो सब मनुष्य वर्तमान समयमें जीवित हैं और जो भविष्यमें जन्मग्रहण करेंगे, सभी मरेगे; इस प्रकारका सिद्धान्त भ्रमिचरि नहीं है। यहाँ पर आज तक जितने मनुष्योंने जन्मग्रहण किया है सभी मर चुके हैं, अतएव सभी मरेगे, ऐसा सिद्धान्त नहीं किया जाता। कारण, पुराकालमें जिन्होंने जन्म लिया है वे ही मरे हैं ऐसा कह कर जो वर्तमान हैं तथा जन्म लेगे वे भी मरेगे, इस प्रकारका सिद्धान्त भ्रमिचरि है। क्योंकि जिन्होंने पहले जन्मग्रहण किया है, वे मरे हैं, अतएव जो भविष्यमें जन्मग्रहण करेंगे, वे भी मरेगे ऐसा कोई नियम नहीं है। भविष्यकालमें मानव अमर हो सकते हैं, क्योंकि भविष्यात् जब दृष्टिके परदारमें है, तब उस समयकी बात किस प्रकार कही जा सकती है किन्तु अनुमानका यथार्थ तथा यही है। आज तक मानवजीवनका लक्ष्य करके देखा गया है कि मृत्यु उनका भ्रमिचरि धर्म है। प्रकृतिका कार्य-भ्रमि-

निर्धारि है, अब तक बर्तमान जटनाबनमाय रहैमा, तब तक बिबाधक बन्द नहीं होगा। सुतरां त्रिष जटनासमवायमें अद्भुत सङ्घटित होतौ है, बह अब तक रहैमा, तब तक अद्भुत होती नै रहैगी। अह सूर्य उदय होमि ऐना अ्यो बिम्बाध करतै । बहुकालधै सूर्य उदय होतै या रहै है, एउं निधै अन्त मो उदय होमि एउ प्रकार बिम्बाध करतै है। अ्योचि त्रिष जटनापरम्परा संयोगधै मूर्त्योदय संघटित होता है, बह जटना पर म्यरा चात्र मो बिम्बमान है एधो आरभ सूर्योदय होमा।

उपरोक्त प्रस्तावधै देखा जायमा कि स्वाभि पनु मानको प्रयोत्रमोय पद्म नहो है। पतौत ना बर्तमान समयमें होता है, पतएव अविपरत्वाकमें होगा एउ अन्तधै अपर निर्भर करके एउ प्रकार त्रिष बिम्बान पर पद्म बतै है, बह बिम्बान निर्दोष नहो है। एउ प्रकार का अनुमान आधिकार्य निर्देय नहो करता।

एधे कहा जा चुका है, कि स्वाभाविक नियमका पम्पबिचारित्व (Uniformity of Nature) आधिकार्य ह्युक्तिधै मिलि है। सुतरां स्वाभाविक नियमको अति अमर्योनाता केषी है तथा स्वाभाविक नियमबनो (Laws of Nature) किधै करतै है, ऐ नव विषय माकूम होमि पर एउ अनुमानकी स्वकपो लम्बि होतौ।

इसमाकधै पम्पबिचारित्व मग्ध्यमें धारणा है कि स्वभावधै जो एउ बार हो चुका है अही पर्यायकमधै होता है। किन्तु स्वभाव यद्यार्थं कुमानबद्ध नहय अेचिद्वारोह ननु नहो है। एउ बर्ष परमर्तो बर्षधै ठीक अनुकूप नहो है। एउ नव में त्रिष त्रिष दिन कीरि जटना घटौ है, हूकरे नहै उयो दिन एउ प्रकारकी जटना बटेसी, ऐमा कीरि एवमाध निर्दिष्ट नियम नहो है। पर हा, स्वाभाविक कितनो जटना बिबहुत नियम बिबहमो नहो है। रात्रि, दिन, अस्त पौर लंब अर पर्यायकमधै या पौर जा रहतै है। यद्यार्थं देखनेधै माकूम पड़ेगा कि अेचिद्वारधै नाब नियमका पम्पबिचर जो ब्रह्मविद्या स्वर्ण्य है। ब्रह्मविधै एउ अेचिद्वारधै नवा अनुमानधै उददान एउकूप अतिअमरौ।

द्विय (Uniformity) का निर्वाचन करना होगा। प्राकृतिक नियमबनोका स्वल्प कैसा है, बह दो एउ पदोय अनुमान द्वारा स्पष्टोक्त हो जायगा। एव्या बिबध अईगताम्यो पक्षधै पम्पबिचारको समझती है कि मनुष्यमान की अन्वयबर्षधै होतै है, अ्योकि उन्मो अन्वयबर्ष स्पष्टीत पम्प बिधी बर्षधै मनुष्यको एउ समय तक नहो देखा या। उनधै निबद्ध एउ प्रकारे पम्पबिचारका पम्पबिचारित्व रहने पर मो बिम्बानको निर्दोष नहो कर सक्ते। कारण, मनुष्यमान की अन्वय बर्षधै नहो होतै, ऐ बहुतोके नकर पारतै है। पत-जानना होमा कि बिबान यथावय प्रतिपक्ष नहो बिबा गया। कुछ दिन पक्षधै यूरोपियनीको धारणा यो कि ए नमान जो अते है, पम्पबर्षबिगिष्ट एउ अमो उन्मि नवनगोकर नहो ह्यु है। बिम्बान उनको पम्पबिचार द्वारा समर्थित होमि पर मो परवर्ती जटना द्वारा पम्पान् पम्पान्य बर्षबिगिष्ट एउधै पम्पबिचार द्वारा प्रमाचित होता है कि बिबान निर्दोष नहो है। किन्तु यदि कहा जाय, कि एउ आतिथा मनुष्य ऐना है बिबधा मर्त्येक अन्वयदेधै मोधै पम्पबिचार है, तो एउ बात अत्यन्त पौर पम्पबिचार-की प्रतीत होती है। एउ प्रकारका पम्प याव जितान् अुक्तिधै नहो है। कारण, पम्पबर्षधै अेचिद्वार इतना पम्पबिचार है कि उन्मि अनुमानका बिधेय अवाकात नहो पद्म बतौ। अन्वयबर्षको अयउ अेचिद्वार का होमा उतना बिबमपकर नहो है। किन्तु अन्वय-का अन्वयधै मोधै होना बिबहुत पम्पबिचार है। एयो कि, बर्षधै बिबधाकी पम्पया एताद्वय प्राकृतिकत पम्पबिचार बिबध है पौर एरोरविद्या (Physiology)को नियमबनो मो अह बिम्बानका पम्पबर्ष नहो करतौ।

एउ प्रकार देखा जाता है कि बिधी अगह एउ बिधयधै हो एउ मोन अिर्णिय अनुमानन पद्म ब सक्ती है पौर दूधरो अगह बह पम्पबिचारमाधिक होमि पर मो अनुमान यथावय पम्पबिचार नहो बिद्या जा बहता। अह अनुमानका प्रकृत एउकूप जान नहमने बिधयको मोमार्थ पर पद्म ब सक्ती है।

इसमाकका आतिअमर्यादिय (Uniformity) अहने है आतिअमर्यादिय नामक कीरि धारणर्य नियम अमर्यो

नहीं जाता। स्वभावके भिन्न भिन्न वापार जो विभिन्न नियमवशसे माधित होते हैं, वही नियम-समष्टि स्वभाव को वरतिका मराहिय है (The uniformity in question is not properly uniformity but uniformities, Vide Mill's Logic, p. 206)। इन प्रकार नियमोंमें (Uniformities) जो नियम अन्य नियमोंके अन्तर्भूत नहों किये जाते वे नियम अत्यन्त साधारण हैं और जिन नियमोंके खोज करानेमें अन्त्यान्य नियम प्रतिपन्न किये जा सकते, ऐसे नियमोंको प्राकृतिक नियमावली (Laws of Nature) कहते हैं। (Mill's Logic) ज्योतिरिन्दू केपलर (Kepler) ने ग्रहोंकी गतिका पर्यवेक्षण करते समय तीन नियमोंको अवतारणा की है, उन तीनों नियमों (Kepler's Laws)की उस अन्तम मूल (Ultimate) नियममें गिनती होनेसे वे प्राकृतिक मूल नियम (Laws of Nature) समझे जाते हैं। इसके अनन्तर बहुत खोजके बाद यह स्थिर हुआ कि वे तीनों नियम प्राकृतिक आदि नियम नहीं है, गतिके नियम (Laws of Motion) के अन्तर्गत नियमत्रयमात्र हैं।

प्राकृतिक नियमावली साधारणतः दो भागोंमें विभक्त है, कार्यकारण सम्बन्ध (The Law of Causation) और समावस्थान सम्बन्ध (The Law of Co-existence)। मिल्ने तदोय इण्डकाटम लाजिकके भित्तिभागको कार्यकारणमूलक नियम (the Laws of Causation) के ऊपर सन्निविष्ट किया है। प्रभिज्ञतावादी दार्शनिक-गण (Empirical or Experimental School) कार्यकारण ज्ञानको साधारणः पौर्वापर्य मतवाद (Succession Theory) कहते हैं। अज्ञेयवादो ह्यूम (David Hume)के यह मत प्रवर्तित हुआ है। ह्यूमका कहना है, कि हम लोगीका कार्यकारणज्ञान पौर्वापर्य ज्ञानके सिवा और कुछ भी नहीं है। पूर्ववर्ती घटना (Antecedent, event or cause) केवल परवर्ती घटना (Consequent or effect)को सूचना करती है इससे सिवा कारण किस प्रकार क्रियाका उपादन करता है, उसे जाननेकी क्षमता हम लोगीमें नहीं है। इन सब पूर्ववर्ती घटनाओंमेंसे कौन प्रकृत कारण (Real cause)

है, इस विषय में मिल्ने कहा है कि अश्वभिधारी अनन्त माधेय (Not conditioned by others) पूर्ववर्ती घटना हो कारण पदवाच्य है (Cause may be defined to be the antecedent, or the concurrence of antecedents, on which the effect is invariably and unconditionally consequent)। पूर्ववर्ती सभी घटनाओंमेंसे एक ही घटना कारण होगी, सो नहीं, दो तीन घटनाके सहयोगसे क्रिया सम्पन्न होने पर सबोंको समष्टिको (Collective) कारण समझना होगा, किमोको अलग करनेमें काम नहीं चलेगा। बन्दूकके गड्ढका कारण बन्दूक निहित बारूद है, अग्नि-संयोग, बन्दूक और इन सबका संयोगकर्ता धूम कोहरे एक नहीं है, किन्तु इन सबका एकत्र संयोग है। इस प्रकार कार्यकारण सम्बन्धको जगह प्रकृत व्याप्तिसमूलक अनुमानक्रिया साधित होती है। एक कार्यकारण सम्बन्धका निर्णय कर सकनेसे वहाँ पर अनुमान निर्देश होगा, कारण कार्यकारण-सम्बन्ध अश्वभिधारी है।

किसी घटनाका कारण निर्देश करनेमें किस प्रकार पूर्ववर्ती अवान्तर घटनाओंको छोड़ कर प्रकृत कारण निर्देश किया जा सकता है, इस विषयमें चार नियम दिये गये हैं जिन्हें व्याप्ति सूत्र (Canons of Inductive or four Experimental methods) कहते हैं। विस्तार हो जानेके भयसे इन सबका विवरण न देकर केवल अनुमान अंगका यत्किञ्चित् आभास दिया जाता है। इसके बाद तर्कशास्त्रमें दूसरे कौन कौन विषय सन्निविष्ट हैं उन्हें उल्लेख मात्र किया जायगा।

व्याप्तिके सूत्र चार हैं—(१) सामान्यसम्बन्धनिर्देश प्रणाली (Method of agreement), (२) पार्थक्य-सम्बन्ध निर्देशप्रणाली (Method of difference), (३) कार्यकारणके साहचर्य सम्बन्ध निर्देशप्रणाली (Method of concomitant variation) और (४) अवशिष्ट विषयको सम्बन्धनिर्देशप्रणाली (Method of Residues)। Mill's Logic देखो।

तर्कान्यमें सन्निविष्ट अन्त्यान्य विषयोंमें अनुमान-सिद्धान्त प्रणाली (The theory of Hypothesis), सम्भाव्ययुक्ति (Calculation of chance), साहज्य

ज्ञान (Analogy) जिस प्रकार धातुमात्रको मराहता करता है उस विषयका कारणोंपर ज्ञानका समान— (Of the Evidence of the Law of Universal causation) समानत्वनामक नियमावली और इन सब नियमोंका वायव्यकारणत्वात्के ऊपर अनिभरत्व (Of Uniformities of Co-existence not dependent on causation) तथा प्रक्रियिके अभावपर नियमावलीका सिद्धि का उल्लेख है । येनूँ व्याप्तिमूलक धनमान विषय विषय विषयके अथवा निर्भर करता है उसका भी उल्लेख है । धरणावलीका वर्णनात्मक इयान और वर्णन (Observation and Description) दार्शनिक भाषाको आवश्यकता और उसमें प्रति बड़ा रसा प्रयोजन है (Requirement of a Philosophical Language) अर्थोक्तिभाषाकी आवश्यकता और तत्त्वज्ञानकी (Classification as subsidiary to Induction) सिद्धिका उल्लेख है ।

बाद इत्यादि (Fallacies) आलोचित हुआ है । इत्यादिनामक लक्षणको नाम है, जितने प्रकारका इत्यादिनाम है । (Classification of fallacies) सामान्यज्ञान मूलक इत्यादिनाम (Fallacies of simple inspection) ; अनिभरतामूलक इत्यादिनाम (Fallacies of Observation) सामान्यज्ञानोद्धत इत्यादिनाम (Fallacies of generalisation) नियममूलक इत्यादिनाम (Fallacies of Ratiocination) और अस्पष्ट ज्ञानमूलक इत्यादिनाम (Fallacies of Confusion) इत्यादि विषयोंका उल्लेख है ।

इसके अन्तर्गत न्यायानुगत नियमावलीका प्रयोग दिख लाया गया है । अन्तर्गत नैतिकज्ञान (Moral Science) समाज विज्ञान (Social Science) आदि विभिन्न शास्त्रोंको आलोचना दिख प्रकार न्यायानुगत पहचिन्ना अनुसरण करने के अन्तर्गत आलोचना इन्हीं मध्य पक्ष विष्ट है । इसी कारण उक्त दार्शनिकोंके चार पक्षों का पहचिनियों का उल्लेख किया है—अनुभवज्ञानमूलक न्याय (Chemical or experimental method) अर्थन विज्ञानमूलक न्याय (Geometrical or Abstract method) नियममूलक नियमनप्रधाना (Concrete Deductive method or physical method)

विपरीत नियमनप्रधानी (Inverse deductive method) इत्यादि ।

० बुद्धिमूलक इत्यादि विधियों । जिन सब इत्यादियों में माना प्रकारको बुद्धि प्रदर्शित हुई है उन्हें उद्देश्य कहाते हैं । यह न्याय का उद्देश्य है । इन्हीं लौकिक न्याय कहते हैं । इस लौकिक न्यायमें विज्ञानके नाम, अथवा और प्रमाण लिये जाते हैं ।

१ अज्ञानवाच्योपस्थापना ।

अज्ञान वाच्य और अज्ञान धर्मविधियों, तत्त्वमय न्याय । अज्ञानमूलकज्ञान इत्यादि अज्ञानके अन्तर्गत यह न्याय हुआ करता है अर्थात् अज्ञान उक्त हुआ था, इसी कोच यह ज्ञान था रहा था । ऐसे अज्ञानमें यह अज्ञान ज्ञानके अर्थ पर फिर पड़ा जिसके अर्थ कह गया । ऐसे अज्ञानमें अज्ञान वाच्य और अज्ञान धर्म अज्ञानकारण इन्हीं अज्ञानवाच्योपस्थापना कहते हैं । जहाँ पर ऐसे अज्ञानमें कोई विधि उप विज्ञान की तरह अनिष्टको मूलक करती है, जहाँ पर यह न्यायका इत्यादि हो सकता है ।

२ अज्ञानमूलकज्ञानोपस्थापना ।

अज्ञानमूलक जिनके अर्थ मूलको हुआ है अज्ञाने अज्ञान नामकरण, तत्त्वमय न्याय । जिसके अर्थ अज्ञान मूलको हुआ है अज्ञाने अज्ञान नामकरण मूलको हो सकता है । अतएव अज्ञानमूलक नामकरण मूलको अज्ञानोपस्थापना है । अज्ञाने अज्ञान नामकरण मूलको अज्ञानोपस्थापना है । अतएव यह कि भाषाकारोंके निर्देशोंकी अज्ञान ही इस न्यायका उद्देश्य दिवा जा सकता है ।

१ 'परिचरन्तु प्रविष्ट न च तदानीं' इति श्लोकः । जहाँ पर परिचर प्रविष्ट अज्ञाने अज्ञानोपस्थापना हो, जहाँ पर यह श्लोक हुआ करता है । अज्ञानोपस्थापना

० न। वाच्यनाम उल्लेखका अर्थ अज्ञान नामक कहते हैं, इति प्रविष्टिनामक उल्लेख—Grotius Aristotle Hamilton's Logic, Maine's Logic, Bates Logic, Verbeke's Empirical Logic, Ven's Logic, Sabane's Logic, etc. Logic Bradley's Logic, Fowler's Logic, Jevons's & Whately's Logic &c.

प्रवाह है, 'अधिन्तु न दोषाय' अधिक होनेमें दोषावह नहीं। ऐसे स्थान पर इस न्यायका उदाहरण दिया जा सकता है। जैसे, किसी एक पुजामें दश हजार जप करने होंगे, किन्तु वहाँ पर १२ हजार जप हो गये है, इस न्यायके अनुसार वह दोषावह नहीं होगा।

४। अश्वारोपन्यायः।

अवस्तुमें वस्तुके आरोपकी अश्वरोप कहते हैं। वेदान्तके मतमें सच्चिदानन्द, अद्वय ब्रह्म ही ए० मात वस्तु है। ब्रह्मातिरिक्त सभी पदार्थ ही अवस्तु है। ब्रह्ममें मियामभूत इस जगत्का आरोप करनेमें अश्वारोप हुआ है। जैसे रज्जुमें सर्पका और शुकिकामें रजनका आरोप, जिसप्रकार रज्जु, और शुकिकाका याथार्थ्य-ज्ञान होनेमें मियामभूत सर्पका ज्ञान दूर होता है, वही प्रकार ब्रह्मका स्वरूप ज्ञान मकनेमें मियामभूत जगत्का ज्ञान जाता रहता है। जिन अज्ञानवगतः ब्रह्ममें जगत्स्वरूपकी भ्रान्ति होती थी, उस अज्ञानकी निवृत्ति होनेसे जगत्स्वरूप मियाम ज्ञानकी भी निवृत्ति हुआ करती है। जहाँ पर किसी वस्तुमें अवस्तुका आरोप होगा, वहाँ पर इस न्यायका उदाहरण दिया जा सकता है। वेदान्त दर्शनमें इस न्यायका उदाहरण देवनेमें आता है।

५। अनारम्भोऽपि परगृहे सूखी सर्पवत्।

गृहादिका निर्माण न कर सर्पको तरह परगृहमें सुखी हों, जाता है। वृद्धे बड़े कष्टमें गृहादिका निर्माण करते हैं, किन्तु सर्प उसमें प्रवेग कर सुखमें वास करते हैं। इसका लक्ष्य यह है कि सुसुप्त व्यक्तिकी रहनेके लिये गृहादिका प्राडम्बर नहीं करना चाहिये।

६। अन्धकूपपतनन्यायः।

अन्धका कूपपतन, तद्विषयक न्याय। कोई अन्धा साधुसे उपदिष्ट हो कर राहमें जा रहा था। किन्तु थोड़ी दूर जानेके बाद ही वह एक कुएँमें गिर पड़ा। अन्धा साधुका उपदेश लेकर जा रहा था सही, लेकिन अन्धता वशतः वह उपदेशके अनुसार चल न सका, कुएँसे जानेके कारण वह कूपमें गिर पड़ा था। वेदादिशास्त्रमें धर्मपथ निर्दिष्ट हुआ है, किन्तु हम लोग विषयान्ध हो कर शास्त्रनिर्दिष्ट पथसे विच्युत हो कूपपतनकी तरह

नरकमें पतित होते हैं। तात्पर्य यह कि साधुने प्रकृत पथका निर्देश कर दिया था सही, लेकिन अन्धका अन्धकी राह देखना न चह्छा न हुआ और अन्धकी भी वह बात सुन कर जाना उचित न था। साधुने अनधिकारीको उपदेश दिया था जिसका फल हितकर न हो कर फलित न हुआ। यदि वे अन्धको उपदेश न दे कर साधुपथिकी उपदेश देते, तो उनका उपदेश सफल होता। इस प्रकार अज्ञान्यक्ति मनुष्यदेगके रहते हुए भी अपथमें जाते और पतित होते हैं। अज्ञानी मनुष्यदेग देना भी साधुका कर्तव्य नहीं है और देनेसे भी उनका फल नहीं होता।

७। अन्धगजन्यायः।

अन्धगर्भक निर्दिष्टित गज यथान्, हस्तो तत्तन्व न्याय। कुछ अन्धमनुष्यांनि एक प्राक्खनेसे पूछा था, 'हाथों कैसा होता है, उसका स्वरूप यदि छुपा गतला दे, तो बड़ा उपकार मानेंगे।' इस पर उस प्राटमाने उन्हें गजगाना ले जा का हाथीका एक एक अक्षय्य स्पर्ग कराया और कहा, यो हाथी है। उन अन्धोंने हाथीका एक एक अक्ष स्पर्ग किया। उनमेंसे जिन जिनने जो जो अक्ष स्पर्ग किया था, उसने उमी उमी अक्षकी हाथी मान लिया। इस प्रकार हाथीके स्वरूपका निर्णय करके वे सबके सब घर लौटे। एक दिन हाथीका स्वरूप ले कर उनमें विवाद छिडा। जिसने हाथीका पट स्पर्ग किया था, उसने कहा, हाथी स्तम्भाकार होता है; जिसने गुण्डका स्पर्ग किया था उसने हाथीका धाकार सर्पसा, जिसने उदर स्पर्ग किया उसने टाकसा; जिसने पुच्छ स्पर्ग किया उसने गोलाङ्गुलसा, जिसने कर्ण स्पर्ग किया था उसने हाथीका धाकार सूपसा बतलाया। इस प्रकार वे सब अपने अपने अनुमानका समर्थन करते हुए आपसमें झगडने लगे। इसी प्रकार जो ईश्वरके स्वरूपसे अवगत नहीं वे अन्ध अज्ञानकी तरह मामान्यज्ञानसे ईश्वरका निर्णय करनेमें आपसमें झगडते हैं। किन्तु कोई भी स्वरूपनिर्णय करनेमें समर्थ नहीं होते। यहाँ इस न्यायका उदाहरण है।

८। अन्धगोलङ्गुलन्यायः।

अथ चर्चयन् च यज्ञोत्तमो मोक्षार्थम्, तद्विषयकं श्यावः ।
एव च श्यावः पत्नीं कुटुम्बके यथा वा रक्षति वा । अथवा
यतः न च एव चोरः चण्डालं वा वा रक्षति मोक्षार्थम् ।
गया विभो कुटुम्बके तेषां च यथावत् देख कर रने पूजा
'भार्ये । तुम कहां जाओगी ? इसपर अर्थने पदमं मनको
सब बात कह दो । यह कुछ शोभा, 'य च तुम्हें' बिकता
करनेको छोड़े ब्रह्मचर्य नहीं, मैं एक गाय का रीता च
रनीको पूज्य पकड़ लेना, यह तुम्हें गहर तब पकड़ना
दिनी ।' अर्थने कुटुम्बके उपदेशानुसार मातृको पूज्य
पकड़ो और सब मान अर्थशास्त्रने मानने लगो । हमने
अर्थने पमांठ देग पत्नीको बात तो सूर रई करनू कचे
बड़ी निमित्त छडागो पकड़ो । इस न्यायका तात्पर्य यह
है, कि मूर्खका उपदेश अर्थात् पक्ष च न करना चाहिये,
पक्ष करनेके लक्ष अर्थको केना विपत्ति मिलनी पड़ेगी ।
यह अथवा मोक्षार्थम् पकड़ कर बड़ी सुविधममें पकड़ गया
था, इस कारण हमका मोक्षार्थम् न्याय नाम पकड़ा है ।

८ । अथ चर्चयन् च ।

अथ चर्चयन् च यज्ञोत्तमः चण्डालः, तत्पुत्रं श्यावः । एक समय
एव चर्चय (मोरें या पत्नी) दयात् विभो अर्थ- वाच
पर गिरा । अर्थने इने पकड़ लिया । हम पर अर्थने
एव चर्चय पकड़ा है, इस प्रकार प्रवाद हो गया । यदि
चर्चय विभो चण्डाल करनूका काम जोता है, तो कहां पर
इस न्यायका उदाहरण हो सकता है । 'पञ्चाङ्गपञ्चोप
श्याव और हम श्यावने प्रमोद यह है कि कहां पर उदात्त
पनिष्ठ होना, व । पर 'पञ्चाङ्गपञ्चोप' श्याव और कहां
चण्डाल काम होगा कहां अथचर्चय श्याव होना ।

९ । अथपरम्परायाः ।

अथपरम्परा—अथममृततत्पुत्रं श्यावः । एक अर्थ-
ने दूसरे अर्थको उपदेश दिया । कबने फिर तोनरे अर्थ-
को भी इस प्रकार उपदेश दिया था । अथपरम्परा।ने
प्रदत्त उपदेश जिस प्रकार प्रमाणरूपमें नहीं गिना जाता
उहा प्रकार पञ्चाङ्ग उपदेशमूत्र भी प्रमत्तित नहीं
माना जा सकता है ।

अथचर्चयन् च—अथचर्चय अर्थने यदि एव अथवा गह
मं गिर प्राय, तो समा एव पक्ष कर मूर्खमें गिर भाग्य,
कोर भी कानी पाईका विचार नहीं करता ।

११ । अथचर्चयन् चण्डालं विनिपाता पदे पदे इति
श्यावः ।

अथचर्चय अथचर्चो पर पदमें विपत्ति छडागो पकड़ो
है । एक अथवा यदि दूसरे अर्थका अर्थचर्चयन ही, तो
प्रतिपदमें विपत्तिको सम्भावना रहती है । कहां पर
दोनोंको ही विपत्ति छडागो पकड़, कहां पर यह न्याय
हुपा करता है ।

१२ । अथपुत्रश्यावः ।

अथ और पुत्र तत्पुत्रं श्यावः । एक अथवा और एव
त बड़ा पादमो वा । इन दोनोंमें पड़ेना कोई मो
कार्य नहीं कर सकता, किन्तु यदि दोनों मिश्र कर
कार्य करे, तो समो काम सम्यक् हो पकते हैं । न गढ़ा
यदि अर्थके अर्थ पर चर्च जाय, तो दोनोंके सयोगसे
मारोने मारो काम जावित हो सकता है । मांज्यद्वयं न
मं इन न्यायका उदाहरण इस प्रकार लिखा है—

प्रकृति और पुरुषके सयोगसे सृष्टि हुपा करती है
प्रकृतिको पुरुषा कोई कार्य करनेको अधिक नहीं है,
यह पुरुषन हीमने सृष्टि किया करती है । पुरुष जब
प्रकृतिसे मिलन हो जाता है, तब फिर सृष्टि नहीं जाती ।
इसका और भी एक उदाहरण इसप्रकार है । एक मर्दा
पुरुषके विद्वान् नामक एक पण्डित और प्रकृति नामक
एक अर्थदात्री थी । मर्दापुरुषने एक दिन पण्डितानसे कहा,
'मैंने पत्नी से साराका सार तुम्हें दिया ।' दूसरे दिन
अर्थदात्रीको भी उसीने इस प्रकार पात्रा देा । वोने
अर्थचर्चय प्रमुखा इस प्रकार पादेग या कर, 'मैं न गढ़ा
हूँ, बिना प्रकार के साराका कर्षण करता हूँ' इस
तरह बिकता करने लगा । अर्थदात्रीको भी इसी प्रकार
बिकता कर रहुं थी । इसी समय काकताकीव श्यावने
दोनोंका मिलन हो जानेके तथा एक दूसरेके विपक्षमें
पक्षगत हो कर दोनोंने एक तरकीब निकाली । पण्डित-
दास अर्थदात्रीके अर्थ पर चर्चयना और इस प्रकार
परस्परको सहायताके दोनों प्रमुखी पात्रागुपार मना
पुरुष । य कारणे समो काम करने लगे ।

१३ । अथचर्चयन् च ।

अथचर्चय तत्पुत्रं श्यावः । जिस प्रकार रज्जुबिलन
सर्वका पश्चात् रज्जुमें बंध का अर्थ होनेसे पौंके अर्थ-

नाम होने पर सर्वज्ञानका उच्छेद ही केवल रज्जुमात्र रहती है, उसी प्रकार वस्तुविषयत्व अवस्तुका पर्याप्त सच्चिदानन्द ब्रह्मवस्तुमें प्रज्ञानादि जगत्प्रपञ्च जो भ्रम है उसका नाम होनेसे वयाद् ब्रह्ममात्रकी पश्यन्ति होती है, इसीकी प्रवचन व्याय कहते हैं। "वयादो नाम रज्जुविषयस्य सर्वस्य रज्जुमात्रत्ववत्, वस्तुविषयस्य अवस्तुनः प्रज्ञानादेः प्रवचन्य वस्तुमात्रत्वम् ।" (वेदान्तसार)

वेदान्तसारमें इस व्यायका उल्लेख लक्षण निर्दिष्ट हुआ है इस व्यायका तात्पर्य है कि अधिकरणमें भ्रान्तिरूपमें प्रतीयमान वस्तुके यथा—व्यापुमें भ्रान्तिरूपमें प्रतीयमान पुरुषके स्वाग्नादि अतिरिक्त द्वारा जो प्रभाव नियत है, उसे प्रवचन कहते हैं। इसे चार भी कुछ कहा कहते हैं। एक प्रकारकी वस्तुके अन्य प्रकार की होनेसे यह विषयत्व है। दुग्ध दधि होता है, यह दुग्ध का विकार जानना योग्य, रज्जु सर्पकारण प्रतीत होता है, यह विषयत्व है। जगत् ब्रह्मका विचार जाता है। यह दृश्य जगत् इन्द्रजान मराणा है। तास्विक मत्तागुण्य पर्याप्त मिया है। ब्रह्ममें जगत्स्वरूपमें प्रभाव नियत ही प्रवचन है। यथायथं जगत् मूल नहीं है, ब्रह्म ही एक मात्र सत्य है। ब्रह्ममें प्रतीत जो यह जगत् है उभयका प्रभाव नियत पर्याप्त नाथ है, यह तीन प्रकारमें दूर होता है। यथा—योग, यौक्तिक और प्रत्यक्ष। नील नीति 'मानाम्नि 'केश्वर' यह नहीं है, यह नहीं है, नद तिरिक्त और कुछ भी नहीं है इत्यादि श्रुतिमें कहा गया है इसे श्रोत्रवाच कहते हैं। कानादि प्रभावमें जिस प्रकार कटकादि प्रभावका बोध होता है, उसी प्रकार निखिल कारण ब्रह्मातिचरकमें निखिल-प्रवृत्तका प्रभाव हुआ करता है, यह योनिवाच है और रज्जुमें सर्पका भ्रम होनेसे यह रज्जु नहीं सर्प है, इस प्रकार उपदेश द्वारा जिस तरह भ्रमके तिरोहित होनेसे रज्जुका ज्ञान जाता रहता है, उसी प्रकार तत्त्वमस्यादि वाक्यजनित में चैतन्यस्वरूप है इस प्रकार बोध होनेसे प्रत्यक्षरूप ब्रह्मात्मनियत होता है, इसकी प्रत्यक्षवाच कहते हैं।

१४। अपराङ्गकान्यायः।
अपराङ्गकान्ति काया तत्सुख्य न्याय । जितना ही

दिन टमना जाता है, उसी ही काया वदना जानी है। इसी प्रकार वायुवाता वायु प्रितना ही जिय होता है, उसीकी उमका मुदि जाती है।

१५। अपमारिताग्निभूतनन्यायः।
भूतममें अग्नि हटाने जाने पर भी जिन प्रकार कुछ काल तक भूतममें अग्निका प्रकाश रह जाता है, उसी प्रकार भनी धर्ममें विद्यमान होने पर कुछ काल तक उसकी भनीप्रा रहती है।

१६। प्रवचनं तु गच्छत्तं मोदरोऽपि विमुञ्चति, इति न्यायः।

मोदरो भी यदि पत्न्याय प्यतमें पाया, तो मोदरो भी उमका परिचाय कर देता है। इस व्यायका तात्पर्य यह है कि पत्न्यायापारी पालीय भी परिचाय करने योग्य है।

१७। परस्परोदमन्यायः।

परस्पर रोदन, तत्पुत्र न्याय। परस्पर रोदन परस्परमें जिस प्रकार रोड़े फल नहीं होता, उसी प्रकार निष्कल कार्यः इस उदाहरण उदाहरण दिया जा सकता है कि जिस कार्यमें कोई फल नहीं है, वह कार्य परिचायके योग्य है।

१८। चर्कमधुन्यायः।

चर्कमें मधुनभर, तत्सुख्य न्याय। चर्कमें पर्याप्त चर्कब्रह्ममें यदि मधुन भर ली, तो पर्याप्त ही निष्प्रयोजन है। चर्कमें इसका फल, तत्सुख्य न्याय प्रसार भी है, 'चर्क' में पर्याप्त चर्कमें कौनसे मधु मिला जानेसे दूर देश जाना बेकार है, जो कार्य सुखजनक सिद्ध हो जाय, उसमें लिए प्रभाव करनेका प्रयोजन ही क्या।

"अर्थ (वय) केन्द्रानु निर्देश विनये वर्तते ब्रह्मेव ।

इत्यस्य अर्थस्य केन्द्रों का निर्देश मूलमात्रवेव न" (हरिकौमुदी)

पत्न्यायाससाध्य कायं न पण्डितोऽपि कर्माभो यत्न नशं करना चाहिए। समझें कि "मनको नारदमें प्रमानकी कजावट ।" वहाँ पर यह इस व्यायका विषय हो सकता है।

१९। अर्धप्रतीयन्यायः।

अर्धप्रतीय—तत्सुख्य न्याय। एक वृत्त ब्राह्मण दुर-

वेदार्थमें पढ़ जानेसे प्रति वाटमें घरको मायकी बेचने से जाया करते थे। गारुडके मावको उमर पूरने पर वह ब्राह्मण बन्ना करते थे कि वह गाय बहुत लिनकी है। सुती गाय समझ कर गारुड भीट जाते थे। ब्राह्मण प्रति वाटमें माय से आते थे, किन्तु खरोददार उनकी बात सुन कर चले जाते थे। इस प्रकार माय किमोके हाथ ल गिबो। एक दिन किसी ब्राह्मणने गोस्वामोके पा घर बन्ना, 'महाशय! पाय प्रति वाटमें गारु से आते हैं और फिर से आते हैं, बेचते नहीं, हमका क्या कारण?' ब्राह्मणने जवाब दिया, 'मनुष्यको पबिह उमर होने पर योग उसको प्राचीन समझ कर करते और पबिह दे कर पश्य करते हैं, बड़े मोच कर में गोको उमर पबिह दिनको बतजाता है, इस पर कोई माहक नहीं परो होता, सोट जाता है। यही कारण है कि मैं प्रति वाट में ही से कर पर बापिस आता हूँ।' ब्राह्मणने उसका मनोभाव समझ कर बन्ना, बाप फिर कसो नहीं इस यायको उमर पबिह दिनको बतावेगे, पबिह यही है कि यह हाथको बिपाई गारु है पबिह पूष देतो है, ऐसा कहनेसे जो योग इस पर लडू हो आंकी और खरीद लेगे।'

ब्राह्मण पपने मन जो मन सोचने लगे 'मिने पबने रहे इत्या मतनावा है, पब खिन पकार तद्वो लडू।' पबने उबोने जय फिर बिवा भि यह माय पास्वोय-मि पास्वा इह पुष्य है बनो है मरोराममें तद्वो जो पबतो है। पतपव रहे बईअरता बतना मबना हू। इस प्रकार ब्राह्मणके लज्जनिवार निर कर चुकी पर किसी गारुडने पा कर गोका ज्ञान पूजा। इस बार ब्राह्मणने बन्ना, 'मिरो यह गाय पईअरतो और पई तद्वो है।' ब्राह्मणको विषयानभिष्ट समझ कर गारुड ने माय खरीद की। जहाँ पर बादो और प्रतिवाटियों का मत कुछ पश्य किया जाता है और कुछ नको पश्य किया जाता है जहाँ पर दस श्यायका पदाहण्य होता।

२०। पई अत्रति पलिङ्गो श्याया।
 पलिङ्ग श्यायि पईअ पलिङ्गान करमिं तत्पुन्य श्याय।
 यदि समो बसुधोके नामको लभानना हो और जहाँ पर
 Vol. XII, 116

यदि पईअ परिश्रम करनेसे विपदने उदार-हो आय, तो पलिङ्गगय बसेा हो करते हैं, जहाँको रखनेको योगिय नहीं करते।

"बईयासे तसुगमने बई १२अति पलिङ्ग।" (पापन)
 २१। पयोबननिशान्याया।

पयोबननिशा पयोबननममन, तत्पुन्य श्याय। पयोबननने कामसे जिस प्रकार यथाभिकपति कामा पोर मीरम पा कर पयन्न जानेकी इच्छा नहीं होती, उसो प्रकार यथेद प्राप्त होने पर पयोबननमें फिर जानेका पभिसाय नहीं होता ऐसी जगहमें यह श्याय हुआ करता है।

२२। पयमबोडुश्याय।

पयम प्रदर, सोडु-टेका, तत्पुन्य श्याय। कईको पपिया देना कठिन है और छिमेको पपिया प्यर पोर भो कठिन है। जहाँ पर जिनको पपिया जिनका बेपय्य रहेना नहीं पर यह श्याय होगा। पयम और सोडु, पयमसे सोडुकी निपयता हो इस श्यायका लक्ष्य है। जहाँ पर जिनकी पपिया भो लडू है, उनका निपय कर्षित होता, जहाँ पर 'पाय-बिडक श्याय' होता है। पायाच से इच्छा लडू है पतपव जहाँ पर जो लडू तदुईअ होगा जहाँ पर पयमबोडु श्याय न हो कर पायाबिडक श्याय होगा।

२३। पसाधारण्येन श्ययदेयो मवस्योति श्याय।

पसाधारण्य द्वारा श्ययदेय होता है, तत्पुन्य श्याय। यदा—योगमनभोत श्यायदय नमि प्रमावादि सोखर पदाय निर्वोत पुप है। बधयि इस द्यंगलसे योग्य पदायोका निरूपण हो प्रतिपाद्य विषय है, तो भो इसमें प्रमाच विधेयकपने टिखनावा मया है, इस कारण सोलह पदायके मख पय्य बिधोका मो नाम न हो कर श्याय दय न यही नाम हुआ है, पय्य मनो पदाय पसाधारण्य काने कर्षित पुप है। इस प्रकार जहाँ पर प्रमावाक्य में निर्यं कामा जहाँ पर यह श्य न होता है।

२४। पसाधनाशुचिनाः बन्धाय मरनवत्।

जो सुत्रिका धय-शुच भा अनुपयोगो है, उसको बिन्धा करनने मरमक समान होना पड़ता है। राजा

भरत सूत्राग्रय हो कर भी हरिणीकी चिन्तामे शाकट हो सुक्त न हो सके थे।

२५। अस्नेहदोषन्यायः।

अस्नेहदोष—तत्तुल्य न्याय। जिस प्रकार स्नेह-शून्य शीप थोड़े समयमें हो बुत जाता है, उसी प्रकार जहां शोष अनिष्ट होनेकी सम्भावना है, वहां पर यह न्याय हुआ करता है।

२६। पहिकुण्डलन्यायः।

पहिकुण्डल—सर्पबन्ध तत्तुल्य न्याय। सर्पोंकी कुण्डलाकृति वैष्टन जिस प्रकार स्वाभाविक है, उसी प्रकार जहां पर किसी स्वभावबिह्वविषयका कथन हो वहां पर यह न्याय होता है।

२७। अहिनकुलन्यायः।

अहि और नकुल, तत्तुल्यन्याय। सर्प और निवल जिस प्रकार स्वाभाविक शत्रु हैं, उसी प्रकार जहां पर स्वाभाविक विवादका विषय कहा जाता है, वहां पर यह न्याय होता है। यथा—काकीनूक।

२८। अहिनित्वयनोवत्।

सर्प निर्माकौ तरह स्नेह नहीं करना चाहिये। सर्पके निर्माक (के'बुल) छोड़ देने पर भी वह समता-प्रयुक्त स्थानको छोड़ नहीं सकता। किसी अहिनुगिडक (संपेरिया)ने उस के'बुलका अनुसरण करके उसे पकड़ा था। तात्पर्य यह कि किसी वस्तु पर स्नेह, समता नहीं रखनी चाहिये और बहुकालीपभुक्ता प्रकृति-को हीय जान कर छोड़ देना चाहिये।

२९। आकाशपरिच्छिन्नत्व न्याय।

आकाश जिस प्रकार अपरिच्छिन्न है, उसी प्रकार जहां पर अपरिच्छिन्न वस्तुका वर्णन होता है, वहां पर यह न्याय हुआ करता है।

३०। आदावन्ते वा इति न्यायः।

यह काय पहले प्रथवा पोछे करो, जहां पर इस प्रकारके कार्यको पहले वा पोछे करनेमें कार्यको सिद्ध होता है, वहां पर यह न्याय हुआ करता है।

३१। आभाणकन्यायः।

लौकिक प्रवाद तत्तुल्य न्याय। लौकप्रसिद्ध कथन-को आभाणक कहते हैं, यथा—इस ग्रामके अचुक बट

वृक्ष पर भूत रहता है, ऐसा लोकप्रवाद है। इस प्रकार जनप्रवादमूलक विषय जहां पर कहा जाता है, वहां पर यह न्याय होता है।

३२। आम्बधनन्याय।

आम्बधन, तत्तुल्य न्याय। किसी काननमें बहुतसे वृक्ष हैं जिनमेंसे आम्बधनकी संख्या ही अधिक है। कानन-में दूसरे दूसरे वृक्ष भी हैं, पर आम्बधनको संख्या अधिक रहनेसे वनका नाम आम्बधन पड़ा है। इस प्रकार प्रधानरूपमें ज. विषय वर्णित होगा, इस न्यायके अनुसार उसका निर्देश होगा।

३३। आयुष्टमिति न्यायः।

वृत्त हो एक मात्र आयु है अर्थात् वही खानेसे आयुको वृद्धि होता है। इस प्रकार जहां मङ्गल हो, ऐसे विषयके कहे जानेसे यह न्याय हुआ करता है।

३४। इयुकारवन्नेकचित्तस्य समाधिष्ठानिः।

एकाग्र रह सकनेमें इयुकारकी तरह समाधिष्ठुत होना नहीं पड़ता। इयुकार जिस प्रकार एकाग्रसमय-में ममोपवर्त्ती राजाकी भो देख न सके थे, उसी प्रकार समाधिष्ठुत पुरुष भी एकाग्रताकालमें जगत् नहीं देख सकते हैं।

३५। उत्पाटितदन्तनागन्यायः।

उत्पाटित दन्तनाग अर्थात् सर्प, तत्तुल्य न्याय। जिस प्रकार सर्पके दाँत तोड़ देनेसे उसमें और कोई क्षमता नहीं रहती, केवल गर्जन मात्र रहता है, उसी प्रकार जिम्के कार्यमें कोई क्षमता नहीं है अथवा गर्जन है। ऐसे स्थान पर यह न्याय हुआ करता है। प्रवाद भी है कि दाँत उखाड़ा हुआ सर्प। लोग यह भी कहा करते हैं तुम्हारे विपदांत तोड़ दिये गये, अर्थात् तुममें और कोई क्षमता न रही, छोन ली गई।

३६। उदकनिमज्जनन्यायः।

जलमें डूबना, तत्तुल्य न्याय। उदकनिमज्जन एक प्रकारको विद्या है। पापीने पाप किया है वा नहीं, इसको सत्यता और असत्यता जाननेके लिये पापी जलमें डुबोया जाता है और उसे कहा जाता है कि तुम जलके अन्दर रहो। इधर मैं तोर छोड़ता हूँ, जब तक यह तोर लौट न आवे तब तक तुम उसी जलमें रहना। तोर

धानिके पहिले यदि तुम्हाला कोर्टे पाहू दोष पडे, तो तुम दोषी घोर दंड न दोष पडे तो निर्दोषी समझि जाओगे। जहा पर न्यायासक्त विषय कथित होमा वहां पर दंड न्याय होता है।

१०। उपयन् उपयन् प्रथो विहरोति हि धर्मिण मिति न्यायः।

उपगत घोर दोषगत धर्म धर्मिको विहृत करदा है तत्पुत्र न्यायः। पर्यात् जहां पर धर्मोत्त पूर्व धर्मका अपकृत होमेने न्याय धर्मको उत्पत्ति होती है, वहां पर दंड न्याय हुआ करता है।

१०। उपमासाहर् भौत्तमिति न्यायः।

उपमासमे मिथा खंड हे मिथावृत्ति होगजनत है, लको, पर उपमासमे भो होय होता है उसमे मिथाका होय कम है। इन प्रकार जहां पर चलिज होयकर विषय परम होयकर विषय उपदिष्ट होगा, वहां पर दंड न्याय होता है।

११। धर्मयत्तः पापारम्भ न्यायः।

होने घोर को बन्धन रह्य है, जिन घोर जाली लको घोर न कर्त्तव्यी। इन प्रकार जहां पर नमी एक दुष्ट हो, वहां दंड न्याय होगा।

१०। उपपद्यति न्यायः।

महभूमिनि हृष्टि होमेने जिन प्रकार कोर्टे धन नहीं होता लको प्रकार जिन कार्यमें कोर्टे धन नहीं वहां पर दंड न्याय हुआ करता है।

११। लुक्कपुत्रमपचन्यायः।

खंड जिन प्रकार कांडा जाता है खाते समय तो यह कांडा बहुत चुपके देता है पर जब पीटके पन्टर चला जाता तर्काविविध मात्र लुक्क होता है, लको प्रकार जहां बहुत खट चला कर कोर्टा सुख प्राप्त हो, वहां पर दंड न्याय होता है। मानव पबिहितकर लुक्क जिसे बहुत खट उठाते है।

१२। श्लुमामोक्ष विभक्तोऽर्चय मन्त्रेण नाशना- योन इति न्यायः।

जब मरव पन्ने जायें जिन को शत्रु तो मन्त्रयन्ने जातेको क्या करदा? मन्त्रमन्त्रन्याय साह इव न्यायका बाध्य है।

१३। एकदीप्रविलतमनश्चतुर्भ्रमति इति न्यायः।

एक दीपका विहृत पनश्चतुर्भ्रम करता है, तल ल्या न्यायः। ऐसे स्थान पर दंड न्याय हुआ करता है।

१४। एक सर्पिषसतोऽपर मन्थरत इति न्यायः।

एक घोर मन्थान करने जाय घोर दुष्टरो घोर मह जो, तत्पुत्र न्यायः। जिन प्रकार खानिने मन्थ करतको एक घोर दुष्टते समय दूसरो घोर पातको नरमोक्षे मन्थ हो जाता है, लको प्रकार एक अपकार करनेमें नाक साथ एक अपकार भी करमा पड़ता है; ऐसे को स्थान पर दंड न्याय हुआ करता है। उदयनाचार्यने लुसुमाक्षानि घोर बोधविह्वारमे इन न्यायका उदाहरण दिया है।

१५। एकदाक्षतापक्षाना मन्थुर्भेकाव प्रतिपाद कल्पमिति न्यायः।

एक दाक्षतापक्ष वाच्य मिन लर जिन प्रकार एक पर्यात् प्रतिपादक होता है लको प्रकार जहां पर मिन करवाई काम किया जाता है वहां पर दंड न्याय होगा।

१६। एक सम्बन्धिज्ञानमपरमन्थिरमारक मिति न्यायः।

जिन प्रकार कावीका दग्ग होमेने उपर मन्थको माहृतका स्मारक होता है, लको प्रकार जहां पर एक मन्थकोका ज्ञान होमेने उपर मन्थकोका ज्ञान होता है वहां पर दंड न्याय हुआ करता है।

१७। यथाकिमि प्रतिज्ञा वि प्रतिज्ञात न साचये- दिति न्यायः।

किसी प्रतिज्ञा प्रतिज्ञात कल्या साचन नहीं कर सकनी। प्रतिज्ञादिपक्ष पर्यात् प्रतिज्ञा हेत, उदा- हरक, नियमन घोर उपनत्र यको पांच कार्य माचन करते है। प्रतिज्ञामाहमे पर्यात्तिध चमन्धर है, यद्य कारक हेलादिबो पक्ष मित्रिध लिये पाक्याक है, ऐसा जहां होता है वहां दंड न्याय हुआ करता है।

१८। एकामतिरि परिहरतो हितोया चापचते इति न्यायः।

एक विदुषे उच्चार काम करनेः दूसरी विदुष पा लुको होतो है। जहां पर एक दुष्टमे उच्चार मिन जाय पर दूसरा दुष्ट उपमित ही जाये, वहां पर दंड न्याय होता है।

“एकस्य दुःखस्य न यावदन्ते तावद्विशीर्षं समुत्थितं मे ।”
यही उदाहरण है ।

४८। शोषाधिक्राकागभेदश्यायः ।

शोषाधिक्राकागभेद, तत्तुल्याश्याय । जैसे एक आकाश उपाधिभेदमें अनेक है, यथा—बटाकाश, पटाकाश इत्यादि । किन्तु इन सब उपाधियोंके तिरोहित हो जानेमें केवल एक आकाश बच जाता है । इस प्रकार जहाँ पर एक वस्तु प्राधारभेदमें अनेक होती है, वहाँ पर यह श्याय होता है ।

“घटमहत आकाशे नीरुमाने यथा पुनः ।

घटो नीयेन नाकाश तद्द्रव् जीवो नभोऽसः ॥” (श्रुति)

एक ही चैतन्य सब जीवोंमें विराजमान है । वही एक अखण्ड चैतन्य ब्रह्म है । यह अनन्त ब्रह्मचैतन्य उपाधि भेदसे अर्थात् प्राधार द्वैतादि भेदमें विभिन्न हो कर अनेक हुआ करते हैं । वस्तुतः वह अभिन्न है, विभिन्न नहीं । उपाधिमें अन्तर्हित होनेमें ही वे एक हैं अनेक नहीं ।

५०। कण्ठचासीकरन्यायः ।

कण्ठस्थित सुवर्ण भूषण, तत्तुल्य श्याय । सुवर्ण-हार तो गलेमें है, पर भ्रमवश हार खी गया है इस ख्यालसे चारों ओर उसकी तलाश करते हैं । इस प्रकार जहाँ वस्तु है, अथवा भ्रमवशतः नष्ट हो गई है, यह समझ कर दुःखानुभव होता है, पीछे भ्रम मालूम हो जाने पर सुख होता है, वहाँ पर यह श्याय हुआ करता है । इसका उदाहरण वेदान्तमें इस प्रकार लिखा है—
स्वतःसिद्ध ब्रह्मात्मक जीव जो अज्ञानवशतः स्वयं सुख दुःख शून्य जान कर अज्ञानवशतः दुःख भोग करता है, पीछे जब तत्त्वमसि प्रकृति वाक्यज आत्मसाक्षात्कार होता है, तब भ्रमवशतः जो दुःख था, वह तिरोहित हो जाता है ।

५१। कदम्बगोलक श्यायः ।

गोलाकार कदम्बपुष्प जिस प्रकार अपने समस्त अवयवोंमें एककालीन पुष्पोद्गम होता है, उसी प्रकार जहाँ पर समस्त प्रदेर्गोंमें एककालीन कार्य प्रवृत्ति होती है, वहाँ यह श्याय हुआ करता है । कदम्बगोलकमें सभी पुष्प एक ही समय निकलते हैं ।

५२। कफोनिगुहणश्यायः ।

कफोनीमें गुह नतीं रफने पर भी गुह है ऐसा समझ कर उनी चाटना, तत्तुल्य श्याय । जहाँ पर वस्तु नहीं है अथवा उभ वस्तुकी प्रवागामे काम ठान दिया जाता है, वहाँ पर यह श्याय होता है ।

५३। करकट्टणश्यायः ।

वस्तुण यह शब्द कदनेमें ही करभूषणका बोध होता है । कर यह शब्द निःप्रयोजन है, किन्तु करकट्टण यह शब्द कदनेमें करमन्गन कट्टण समझा जायगा, तत्तुल्य श्याय । इस प्रकार जहाँ पर कद जायगा, वहाँ पर यह श्याय होता है ।

५४। काकतालीयनश्यायः ।

काकगमनकालमें तालपतन तत्तुल्यश्याय । एक तालफलके ऊपरमें किसी काकके उड़ते समय यदि ताड़ गिर जाय, तो लोग अनुमान करेगे कि कौवेने ही ताड़ गिराया है । किन्तु यथार्थमें यह नहीं है, तालका पतनसमय होनेमें ही वह गिरा है । कोई एक पथिक लुधामे कातर ही तालवृक्षके नीचे बैठ कर कुछ मोच रखा था, इसी बीचमें ऊपरसे एक ताल गिरा और उसने उसीसे अपना भूखकी निवृत्त करना चाहा । उस वृक्ष पर पकतालके ऊपर पहने एक काक बैठा था, वह काक उसी समय उड़ गया, वाद एक ताल नीचे गिरा । इससे पथिकका अमोह मिट चुका । पथिकने ‘काक और ताल’का व्यापार देख कर समझा, कि काकके उड़नेमें ही ताल गिरा है, किन्तु यथार्थमें काक अपना किसी कारणवश उड़ गया है और पतनकाल उपस्थित होनेसे ताल गिरा है । तालपतनके प्रति काकगमन कारण नहीं होने पर भी आपाततः कारण समझा गया । इसीको काक-तालीयन्याय कहते हैं ।

जहाँ पर इस प्रकारकी घटना होती है, वहाँ पर यह श्याय हुआ करता है । अतर्कित भावमें इष्ट वा अनिष्ट होनेसे ही यह श्याय होता है ।

“यस्तथा मेलनं यत्र लामो मे यश्च सुष्ठुवः ।

“तदेतत् काकतालीयनवितर्कितवम्भश्च ॥”

(चन्द्रालोक ।

५५। काकदध्युपघातकनश्यायः ।

आकषे वक्रिको रथा करो, इम प्रकार एक धाटमोरो
 कपदेय दिया गया, 'आरथ्यो टवि रथ्व 'म' वक्रने यत्र
 समाना यथा कि आउते वक्रिको रथ करो, किमन यत्रो
 नहो को कोरी बन्य वक्रि नट करे, समोको निवारक
 करना होया। काक यत्र सजवायद है वहाँ पर पैना
 होया, वहाँ पर यह न्याय हुआ करता है।

१६। आकटकायवेधनायायः ।

आकडे दया है नर नहीं धोर से मय दना यात्र है
 वा क्यद यह पर्वोपक वैसे निष्पत्त है वैसे ही
 वहाँ बिसका पर्वोपक निष्पत्त होता है, वहाँ यह न्याय
 हुआ करता है।

१७। आकमोम युनश्चित् काल तदपि पुनर्म
 मिति यथाय ।

एकतो कौएडा मास, दूसरे कुत्तेका कुका धर
 धोर पति दुर्गम, तनु कान्याय। वहाँ पर धनि
 निश्चित धोर पति तुच्छ बन्य मो पुनर्म भीतो है, वहाँ
 यह न्याय होता है।

१८। आकारावधोवकनयाय ।

आकका एक वदु जिन प्रकार धयोवनामुमरा कमय
 वदुगीककमे मकार होता है, कसो प्रकार वहाँ एक
 पदाव'को समयककमे सम्बन्धबिभवा होती है वहाँ यह
 न्याय हुआ करता है।

१९। आरवगुपवदम'वाय ।

आरवगुप कायमे मंजमित होता है तनुपु न्याय ।
 "आरवगुप'का काय गुचमागमने" आरव'का गुच सजा
 तीव काय'प्रवर्तक होता है, यथा—'गुप'का लपाट
 लजातोप पदमे हुआ करता है। एना कयद यह न्याय
 होता है।

२०। आरमितुः कर्दव्यायाय ।

जी काव' कथति है, वे जो कर्ता है, तनुपु न्याय ।
 काय कय नहीं करमे पर मो दूसरे द्वारा करामेले एक
 ग्याणके अनुसार समजा पद ल मिम होता है वंके
 हुद मो राजाको वेग्यादि करता है पर हा जोल
 राजाको होती है। वंकेमन मतमे पुनव क ई क य'
 नहीं करता हुके जो करजा है, यथाच पुनवका अर्थ
 कपदेय हुआ करता है।

२१। आरि'क आरकमनयय'वाय' ।

वहाँ पर काय द्वारा आरकका ज्ञान होता है, वहाँ
 पर यह न्याय हुआ करता है। जैसे—'पुम द्वारा वक्रिका
 ज्ञान उच द्वारा वीकका ज्ञान इत्यादि।

२२। कुयकायावकनयायः ।

सप'कचे धनमित्थ क्यति यदि नरोमे पदु कर कुय
 ना कामका पवकनयन करे, तो यह जिन प्रकार कमे
 पदमे निष्पत्त होता है कसो प्रकार प्रयत्नवृद्धिद निरा-
 क्त होमे पर पुन'कनुकिका पवकनयन नरनिधे कद
 निष्पत्त होता है। ऐसे काल पर यह न्याय होता है।

२३। कूपकान'वाय' ।

जो मनुक कूप बनन करता है उसमे धरीरमे कर्दम
 मय जाता है, पीछे जब कूपमे लय निबसता है, तब
 लय बनके कद कर्दम दूर हो जाता है। इसी प्रकार
 निवहावश्चित् ईश्वरमेद बुद्धि । पचात् मनवानु
 कामकपकारी है, क्यप्यो है इस तरह हम सोतोकी
 को निवृत्ति है धोर यह मेद बुद्धिबलित को होव है, कद
 मन्वानु'को कपानना करते करते ही धर'तवोव हो
 जाता है, तब तुच्छय होव मो निराकृत होता है। ऐसे
 कयद पर यह न्याय हुआ करता है।

२४। कूपमच्छ'वाय' ।

समुद्रकित मच्छ'कने एक दिन बिपी कूपमच्छ'कके
 बिबरमे प्रवेश किया। कूपमच्छ'कने उडे दिख कर
 पूछा 'तुम कहकि पा रहे हो ?' मे समुद्रके पा रहा
 है समुद्रमच्छ'कने कहाव दिया। इस पर कूपमच्छ'कने
 पुनः उसमे पूछा 'समुद्र क'सा होता है ?' कथावमे
 समुद्रमच्छ'कने कहा 'बहुत लम्बा शीका ।' कूपमच्छ'कने
 फिरमे कहा, 'इस कूपमे क'सा ?' समुद्रमच्छ'कने
 उत्तर दिया, 'समुद्रमे बड़ा धोर कुछ भी नहीं होता,
 लसुद्र धरो मरिचोका पति है ।' यह सुन कर कूप-
 मच्छ'क बोला, 'तुम सिध्या कह रही हो कूपमे बड़ा
 कोरी भी नहीं है ।' यह सुन समुद्रमच्छ'क मन ही
 मन कथको व तो उकामि बना। कूपमच्छ'क समुद्रको
 न ज्ञान कर धोर कथकी महिमामि पवपत न हो कर
 जिन प्रकार उपहसनीय हुआ ना, कसो प्रकार जो दूसरे
 के सिधान्तको न ज्ञान कर उसमे लपर होयातोप

करने हैं, वो भी उते प्रकार उपलभ्यमान होते हैं ।
तेरे ही न्यान पर यः न्याय हुआ करता है ।

६५ । ज्ञानव्यवधिकान्यायः ।

कृपणो गत्यन्त गभोर लोने पर नियम प्रकार गन्त-
वटिका द्वारा उभने महजमें जन निकाला जाता है,
उसी प्रकार शास्त्रार्थ यद्यपि प्रत्यक्षदुर्बोध है, तो भी वह
उपदेशपरम्परा द्वारा महज ही जाना है । इसी न्यान
पर यह न्याय होता है ।

६६ । जूनर्जन्यायः ।

कूर्तं (कच्छप) जिस प्रकार अपने पक्षका प्रोक्ता-
पूर्वक प्रकृत्य और विचार कर सकता है, उसी प्रकार
जहाँ पर जो प्रकृत्यपूर्वक प्रति और नय करते हैं, यहाँ
पर यह न्याय होता है ।

‘‘यथा कदरते चान् कर्षोऽङ्ग नौर चर्षणः ।’’ (गीता)

६७ । कर्तृ कार्यं किं सुहर्तृप्रश्नेन इति न्यायः ।

कार्य अनुष्ठान होने पर सुहर्तृप्रश्न अर्थात् समय
संज्ञा है वा दुरा, इस प्रकारको विद्याया निकलने है ।
जहाँ पर कार्य करके उसके फलफलको जिज्ञासा की
जाती है, वहाँ पर यह न्याय होता है ।

६८ । कदमिहितो भावः दृश्यवत् प्रकाशते इति
न्यायः ।

भाववान्यमें कृत् प्रत्यय होनेसे वह दृश्यवत् प्रका-
शित होता है, इसी प्रकार जहाँ भावविहित प्रत्यय
दृश्यवत् हो, वहाँ यह न्याय होता है ।

६९ । कौमुतिकन्यायः ।

जहाँ पर दुर्बोध और दुःसाध्य विषय महजमें हृद-
प्रम हो जाय, वहाँ सुबोध और सुसाध्य विषय अना-
यास समझा जाता है । इसका तात्पर्य यह कि
जो भार दुर्बल भी वहन कर सकता है वह भार बल-
वान् अवश्य ही महन कर सकेगा । ऐसे स्थान पर यह
न्याय हुआ करता है ।

७० । कौपयानन्यायः ।

किसी एक मनुष्यने भूठो वाम कछो है वा नहीं,
उसका निश्चय करनेके लिये उसे कौपयान दिख्य कराना
होता है । दिख्यके नियमानुसार पूर्वदिन उपवास करके
दूसरे दिन दिख्यकालमें उसे जलपान करनेको दिया

गया । शंभु पञ्चनि जनयान करनेसे कृपणको वह
कालके लिये मृत हुआ है, लेकिन शास्त्रनिर्दिष्ट
परिणत जलपान करके उसे प्रत्यक्ष दृष्ट हुआ ।
इस प्रकार वे पदार्थ विन्दुरे प्रति भविष्यमाण ही का
गणितो निन्द्यो हो । निन्द्ये समय वह मृत तो हुआ,
पर निन्द्याकाल पापभोगके समय कृपणोपाकादि जोर
नरक लोका और तब बहुत कष्ट भुगवना पड़ेगा । ऐसे
स्थान पर यह न्याय हुआ करता है ।

७१ । क्रिया हि विदुष्यते न मनु, रति न्यायः ।

क्रियाका विदुष्यता नो वस्तुता विदुष्य नहीं
होता, तन्मय न्याय । इच्छा रहने पर सभी मनुष्य
कार्य कर सकते हैं, वही भी कर सकते और बुद्ध भी ।
करना वा नहीं करना और करनाकरना इसमें अन्तर
है क्रियाया ही विदुष्य होता है । यद्यपि नहीं ।
वेदान्तदृष्टान्तमें तारीखभाषाके इसका उदाहरण इस
प्रकार दिया गया है ।

नाभिक प्रथमा वैदिक क्रम क्रिया भी जाता है
प्रथमा समझा प्रथमा भी को जा सकता है, लेकिन
यसका विदुष्य वा प्रथमा नहीं को जा सकता । जैसे,
अतिरात्रमें पौहजो प्रथम करी प्रथमा नाभिरात्रमें । यहाँ
पर पौहजो प्रथम करनी लीगे, इसका विदुष्य नहीं
लीगा । किन्तु अतिरात्र वा नाभिरात्रमें इसी क्रियाया
विदुष्य हुआ करता है । यह द्वारा रत्र द्वारा वा प्रथम
किस किम्पे प्रथमसे जा सकते हो, यहाँ पर भी यस्तुता
विदुष्य नहीं होता है, क्रियाया ही विदुष्य होता है ।
ऐसे ही न्यान पर यह न्याय हुआ करता है ।

७२ । खने कपोतन्यायः ।

हृद, युवा और शिशुकांत जिस प्रकार एक ही काम
में खन पर पतित होते हैं, उसी प्रकार जहाँ सद्यप्यार्थ
एक कालमें अन्वयविगिट हों, वहाँ यह न्याय होता है ।

७३ । गजभुक्तकपित्थन्यायः ।

इस्ती जिस प्रकार कपित्थ (कैथ) खाता है अर्थात्
उसके भीतरका निर्म गूदा खा लेता है और ऊपरका
भाग ठीक वैसा ही रहता है, उसी प्रकार जहाँ जिसका
भीतरी भाग शूय होता जा रहा है और बाहरके सब
ठीक है, वहाँ यह न्याय होता है ।

७१। गच्छन्निवापवाहस्याया।

मेकमेव शुभ्रमेव यदि एक नदीमं गिर जाय तो ममी एक एक कर नदीमं गिर जायगी। इन प्रकार टमके मध्य एक मोड़क करता है। येन ममी पच्छा दुग मोये बिना उसे कर जानती है। इसको बोध ज्ञानमें मेद्वियाधदान मो कहते हैं। ऐसे ज्ञान पर यह न्याय हुआ करता है।

७२। गतानुवर्तिव्याय।

कुछ ज्ञान तयं कचे पछेको बिजानी रण मज्जेमि सुखको जगामे मय। ज्ञान कर सुखने पर जब लखेने तय कचे किए पछे चपने चपने जाबने निचे तब मान म पड़ा कि पचा एक नुपरी है इतना गया है। इन प्रकारकी घटना एक दिन नहीं, कई दिन हो गई। एक दिन किसी कुछ ज्ञानचने पयना एकजानके किए पछे पर एक है उरुण हो और पाय ज्ञान करनी लगे गये। उन ज्ञानचको देखानेकी सब जाई पयने चपने पछेके लपर ईट रव ज्ञान करती चरी गये। इस पर लखने इनका उवशम करके कहा कि समो मनुष्य गतानुवर्तिक धर्मात् देखा देको काम करते हैं, बहुत यथायोग्य कोई मो विवेचना नहीं करती। यदि सुखसे काम लेते, तो सब कोई इन प्रकार एक-या बिज न देते। इसो प्रकार माय ममी मनुष्य गच्छन्निवापवाह (मेद्वियाधदान) धरवा धम्मजरम्मरा श्वायवे म सागाम्बुपमं पतित होति है। ऐसे ही ज्ञान पर यह न्याय हुआ करता है।

७३। सुद्धिनिश्चयाया।

बाह्यको निश्चयान करानिमें त्रिस प्रकार लसको बिज्ञा पर मुकु चित उर मोम बिज्ञाग जाता है। इस ज्ञान पर निश्च भोजन कराना ही प्रयोजन है, सुद्धीय प्रमोमनमात्र है। एक बाह्य कदमो यवा जान कर लखे नही प्यता वा। पान्दिको लखे कहा गया कि यह दया जानो, तुम्हें मिठारी हुआ। इस प्रमोमनमें पक कर कदमने उन कदमो दबाको वा निदा त्रिलखे लसका रोम जाता रहा। इस प्रकार कम उमूह पति दुखर होमे पर जा गाम्भं निर्दिष्ट हुआ है, कि पसुब व्रत करनेके पचय लर्गं होना। इन लर्गं-जाम्भाधि इत्यादि पति दुखर होमे पर जा उमे कर जानत है। बहिन बधामर लसय प्रथाभत कर- मोकके निय लभ

कर्मका विज्ञान किया है। ऐसे ही ज्ञान पर यह न्याय होता है। मकमासतत्त्वमें इस न्यायका विषय सिद्धा है।

७४। गोबलोबद्धस्याया।

बलोबद्ध पक्षी उषमका बोध होता है, पचय गो दण्डपूर्वक लोबद्ध इन शब्दके प्रयोगसे और भी यीध उषमका बोध होता है। वहां एक शब्द प्रयोगसे चर्य का बोध होने पर भी और मो शीघ्र चर्यबोध हो, ऐसे शब्द प्रयोगसे यह न्याय हुआ करता है।

७५। चङ्कटोपमातस्याय।

चङ्कटोके समीप प्रमात ललुप्य न्याय। पार होने के लिए पैसा देनेके लखे औरवचिक नियत हो कर मानी का रुके थे, जब वे चङ्कटोके समीप पाये तब सधैरा हो गया। इन औरवचिको विषय हो कर जाना मो पड़ा और पार होनेका पैसा भी देना पड़ा। ऐसे ज्ञान पर यह न्याय होता है।

७६। बुधाचरण्याया।

बुधाचर्यमें हुन लग कर बगैके कुछ पक्ष खट जानसे लसमें पचरने बिज निश्चत मये हैं, पयात् दास इस तरह खाटा गया है कि बह ठोक पचरके जेसा हो गया है। हुन बांसको पचरके जेसा खाटता नहीं देनात् बंधा होता है। इस प्रकार कहा पयायमें प्रकृत जाय देनात् पयायका निष्पादन करे, वहां यह न्याय होता है।

७७। चतुर्वेदविद्याया।

बिडी एक दाताने प्रकार बिद्या कि चतुर्वेद ज्ञानकोहीमें पवेष्ट सुवपसुद्रा दान कदगा। यह सम्बाद पा कर कोई मूढ़ दाताक पास जा कर बोला 'मैं चतुर्वेद सम्बन्ध कपने जानता हूँ, सुकि दान दोनिए।' उन मूढ़को धन तो मिला नहीं पाय पाय लसको च मो भी लुकाई गई। इसो प्रकार जो मचिदा शब्दपय प्रसममिय ज्ञानमें बहुत पचगत न हो कर 'मैं ज्ञान जानता हूँ' ऐसा कहता है, उनको योन पुन आतो और साब साब नह उवशस बाध मो हो जाता है। वहां पर ऐसी घटना होे, वहा पर इस न्यायका प्रयोग होता है।

७८। चर्यचर्यवाहस्याया।

अध्याका फूल कपड़े में बन्धे रहनेमें दूधरे दिन उभे किंक देने पर भी त्रिम तरह उभमें सुगन्ध रह जाता है, उसी प्रकार विषयभोगके हेतु चित्तमें एक संस्कार होता है। विषयसंसर्ग नहीं रहनेपर भी त्रिम प्रकार कपड़े में सुगन्ध रह जाती, उसी प्रकार चित्तमें उभ विषयका संस्कार सूक्ष्म भावमें रहता है। ऐसे ध्यान पर इस न्यायका प्रयोग होता है।

८२। चान्नीयध्यायः।

चान्नीमें कोई वस्तु रख कर यदि उभे घुमाये, तो त्रिम प्रकार धनमोकें छेदने समो वस्तु गिर जाता है, उसी प्रकार किसी पदार्थ पर अवस्थित वस्तुका इस प्रकार घटन होनेमें यह ध्याय होता है।

८३। चिन्तामणिं परित्यज्य काचमणिग्रहणध्यायः।

चिन्तामणिका परित्याग कर काचमणिका ग्रहण, तत्तुल्यन्याय। जहाँ पर उत्तम वस्तुका परित्याग कर तुच्छ वस्तुका ग्रहण किया जाता है, यहाँ यह न्याय होता है।

“जन्मेद् वक्ष्यतां नीतं भवमोगोपरिष्पया।

काचमूल्येन विकीतो हन्त निगतामणिर्मया ॥”

(शान्तिः)

यह इस न्यायका उदाहरण हो सकता है।

८४। चौरापरधेन माण्डव्यटण्डन्यायः।

एक चोरके अपराधमें माण्डव्य ऋषिका शूलारोषणरूप दण्ड पुराणप्रसिद्ध है। किसी चोरने चौरा धी, उसकी लिए माण्डव्य ऋषिको शूल हुआ, यह पुराणशास्त्रमें लिखा है। इस प्रकार जहाँ पर अपराध करे कोई चौर दण्ड पार्वे कोई, वहाँ यह न्याय होता है।

८५। हिनहस्तवदा।

हिन हस्ताका दृष्टान्त अनुसरणीय है। एक मुनिने अन्य मुनिके आश्रममें जा कर बिना उनमें कहे सुनि फल मूल ले लिया। मुनिने उसे चोर समझ कर दण्ड देने चाहा। इस पर उसने बड़ी विनतो की और ‘इस पापमें छुटकारा पानेके लिए कोई रास्ता बतला देनेको कछा। मुनिने इसके आग्रहचिन्तमें षाय काट डालनेको अनुमति दी। उस चोर मुनिने उसी समय वैसा ही किया। इस आख्यानका उद्देश्य यह है कि भक्तोंके करना उचित

नहीं है, करनेमें प्रयत्नित करना पड़ता है। ऐसे ध्यान पर यह न्याय होता है। (शान्तिः ४ अ०)

८६। जन्तुस्त्रिकानायायः।

तृत्रिकाकी त्रिम प्रकार कटमाटिमें त्रिम कर जन्तु किंक देनेमें प्रयत्नित होता है और उभ तृत्रिकामें कटम ध डालनेमें वर त्रिम प्रकार देनेमें लगती है, उसी प्रकार जोय त्रेहादि त्रिममें त्रिम तृत्रिका होने पर संशयमागरमें निमित्त होता है सो त्रेहादिमें प्रयत्न होनेमें मोक्ष पाया है।

८७। ज्ञानमघ्ननयायः।

ज्ञान लाने, ऐसा करनेमें त्रिम प्रकार जन्तुके साथ तृत्रिका जन्तुका भी नया जाता है उसी प्रकार एक ही त्रिममें प्रयत्नित धारादिकी भी प्रयाति होता है, ऐसे ही ध्यान पर यह न्याय हुआ करता है।

८८। तत्तुल्यमघ्ननयायः।

तत्तुल्यमघ्नन एक प्रकारका दिव्यमिट है। इसे ध्यान ध्यानमें धावन पढ़ना कहते हैं। किसी चीजके धारो जनि पर मन्त्र पढ़ा हुआ धावन त्रिम त्रिम पर मन्त्र ही उसी पानेका दो। धावन पानेमें उनमें त्रिमने धारो की जोगा धनके सुवसे रर निकलने लगेगा। इस प्रकार जहाँ मन्त्र पण्डित हो, वहाँ यह न्याय होता है।

८९। तत्तुल्यनयायः।

तत्तुल्यनयाय पर्यात् ध्यान करना, जो त्रिम निरन्तर भावध ध्यान करता है, उसे वही मिलता है। यही श्रोत उपदेश ही तत्तुल्यन नामन प्रसिद्ध है। इस न्यायके अनुसार जो ब्रह्मज्ञान होता, उसे धारो एतदर्थ प्राप्त होगा। इस तत्तुल्यनयाय त्रिम त्रिम विषयकी चिन्त की जायगे, वही विषय प्राप्त होगा। वेदान्तदर्शनके ४।१।१६ सूत्रमें इस न्यायका विषय लिखा है।

९०। तमपरशुग्रहणन्यायः।

जहाँ पर सथाभिसन्धका मोक्ष शोर मिथ्याभिसन्धका बन्ध कहा जाता है, वहाँ इस न्यायका प्रयोग होता है। इसने चोरी को है वा नहीं, इस प्रकारका मन्त्र होने पर न्यायाधीशकी चाहिए कि वे एक परशुकी उत्सर्ग कर उसे ग्रहण करावे। यदि उस मनुष्यका त्रिम

परपुत्रपुत्रके ज्ञान न करी, तो सबे विद्याय पौर यदि सब प्रकृत नही, तो सबे ज्यो समझना चाहिये । इस प्रकार सुविधिययने प्रयोक्त्र 'पत्रं ज्ञानं' यद्यो वाक्य सम्य पौर बन्ध प्रयोक्त्र 'पत्रं ज्ञानं' यह वाक्य सम्य है पौरा किर कृष्ण । आन्त्याय उपनिषदमें यह श्याय प्रदर्शित कृपा है ।

८१ । तत्रमायकोहरणश्यावः ।

तत्रपरपुत्रपुत्र श्याय मो यह श्याय को मकता है । तत्रमायक पदक भी एक प्रकारका दिग्बन्धिय है । तेजादि छेव पदार्थको गरम कर उसमें सुवर्णमायक कास देना पड़ता है । यह तत्र तेजादिने मायक दिग्बन्धनेमें यदि जाव न करी, तो निर्द्वय पौर तदि जल जाय तो सबे दोवो समझना चाहिये । इस ज्ञानको भी ज्ञानमिसम्बन्ध मोच पौर निग्बन्धमिसम्बन्ध बन्ध समझना होता ।

८२ । तद्विस्मरथे भोकोवत् ।

तत्पञ्चान विस्मृत होने पर भोकोथे दृष्टान्ते दुःखो होना पड़ता है । किसी राजाने एक भोकराजकथाको ब्रह्म किया । सोमोंमें वात पड़ी ठहरी कि जब दिग्बन्धिये भोकराका राजाको छोड़ कर मान जायगो । एक दिन राजाने भूब्रह्मने ज्योत्पार्थ भोकराकाको जल दिखाया । इस पर पूब शर्तके अनुसार भोकराका राजाके पासके बसी गई । राजाको जोसे पवनी भूल सुको पौर तं बड़े सुखी हुए । इस प्रकारकी विस्मृतिथे ज्ञान पर यह श्याय होता है । कांकरद्वयने प्रकृतिवृत्त प्रसङ्गमें यह श्याय वर्णित है ।

८३ । तुक्तु तुर्कन इति श्यायः ।

तुर्कन तुष्ट रहे, तत्पुत्रय श्याय । जहां पर प्रतिवादी हाथ कल पत्र तुष्ट होने पर भो वादी प्रोक्तिवाद द्वारा उसे स्कोकार कर के वहां रह श्यायका प्रयोग होता है ।

८४ । प्रवजसोवागम्याः ।

यद्य पौर जलोका (जौक) तत्पुत्रय श्याव । जिन प्रकार जलोका सब तत्र एक ज्येका पाकय न के सीनो । तत्र तत्र पूर्वायित ज्येको नही छोड़ना ज्यो प्रकार ज्ञाना भूषा शरीरके भाव एक देवका 'पत्रमस्यन

विद्ये विना पूर्वायित देवको नही छोड़तो है । इसी प्रकार जहां विना एक पत्रमस्यन प्रपूर्वायनस्यन परिकल्प नही ज्ञाना वहां यह श्याय कृपा करता है ।

८५ । ज्यकारपिमचिन्त्याव ।

ज्य पारि पौर मकि हल मोमनि पन्थि ज्ययय होतो है । किन्तु तार्थ पत्रात् ज्यमे ज्ययय मकिने प्रति ज्येकी हो जायता है । इसी प्रकार पारि पौर मचिन्त्याव भो ज्ञानना चाहिये । पता जहां पर जावका कारवमान बहून है पत्रात् ज्ञान तावच्छेदक पौर ज्ञानचतानच्छेदक पत्रेक है वहां पर यह श्याय होता है ।

८६ । दण्डपत्रमयाव ।

पत्र टप ज्ञाने पर बसका पत्रल तथा रचना, किन्तु पाकति पूर्वकत् हो रहतो है । इस प्रकार बिच बहुकी टाठ होने पर उसको प्रकृत पूर्व-मे बनी रहतो है, पत्रके पूर्वाकार द्वारा प्रवस्थानसात्रका मोच होता है, वहां वच श्याय होता है ।

८७ । दण्डोत्रमयाव ।

मौत्र दण्ड होने पर बिच प्रकार उसमें पत्रुर ज्ययय करनेको मकि नहीं रहतो ज्यो प्रकार सुदयको पत्रि भोकराकयत हो जीवका संसार है । जब यह पत्रिबोब श्याय हो जाता है तब किर दण्डोत्रमयावदुकार जोब का संकार नही हो मकता । कांकरद्वयने यह श्यायका विषय किया है ।

८८ । दण्डपत्रमयाव ।

एक वर्माविच्छेदय घटलादिप्रति प्रति जिन तरह दण्ड, पत्र, सुल पादिका भो कारवत्त है उसी तरह जहां बस एक वर्माविच्छेदके प्रति बहुतीका कारवत्त रहे, वहां यह श्याय होता है ।

८९ । ज्योत्पुत्रमयावः ।

पित्रकम मन्त्र दण्डका एक भाग यदि कुंठिने छा लिया हो, तो ज्ञानना चाहिये कि उसने पित्रक भो जाव है तत्पुत्रय श्याव । बिना दण्डकन एक दण्डमें एक कपूय पद्यात् पित्रक बांध रथा वा । कुछ दिन बाद उसने देखा कि दण्डका कुछ भाग कुंठिने छा गया है । इस पर उसन मन ही मन यह किर किया कि जब कुंठिने दण्डका एक भाग छा लिया है, तब निश्चय ही उसने

पिष्टक खागा जोगा, हममें जग भी मन्दे न नरे ।
क्याकि दण्ड पिष्टककी अपे न, वदुस नर नठिन है । जब
दण्ड खानेको उममें गति नरे, तब उममें सुकोमन अयुष-
को पढ़ने न खा कर दी खाया जोगा, यह सम्भव नरी ।
इस प्रकार किसी दुःखकारक कार्यको निदि देव कर
किसीसुमाध्य कार्यको निदिका अनुभव करनेको जो
लोग दण्डापूपन्याय कहते हैं ।

१००। दशमनायः ।

किसी समय दश गृह्य दिगन्तर गये । राशमें
उन्हे एक नदी मिली जिसे मन्तरण भिन्न पार होनेका
और कोई उपाय न था । वे दूर्गो युक्ति करके नदी तैर
कर पार कर गये । दूसरे दिनारे जा कर उन्हेनी मोचा
कि हम लोगोंमें सभ मौजूद है अथवा कोई नक्षत्रशु-
से ग्रस्त हुआ है, यह जाननेक निचे उन्हेनी आपसमें एक
एक कर गणना की । किन्तु गिननेवाता अपनेको नही
गिनता था जिससे एकको संख्या कम हो जाता था ।
इस पर उन्हे मन्देह हुआ कि हममेंसे एक व्यक्ति
अवश्य नष्ट हो गया है । इस कारण वे सर्वके सब अनेक
प्रकारके शोक ताप करने लगे । इसी समय एक विज्ञ-
पथिक उसो रास्ते हो कर गुजर रहा था । उन लोगोंके
करुण विलापसे निनान्त व्यथित हो मुसाफिरने उन्हे
विलापका कारण पूछा । इस पर उन्हेनी आद्योपान्त सब
हाल कह सुनाया । मुसाफिरने जब उनको गणना को,
तब ठीक दशो निकले । बाद उनने उन लोगोंसे कहा,
'तुम लोग फिरसे गिनो, दशों है, एक भी नष्ट
नहीं हुआ है।' इस पर वे पूर्ववत् गणना करने
लगे । नौ तककी गिनतो हो चुने पर पथिकने
गिननेवालेसे कहा कि, तुम हो दश हो । इस उपदेश
से उनका शोक मोह सब दूर हुआ । इस प्रकार जहां
साधुके उपदेशसे भ्रम दूर हो कर भ्रमजन्य सुख और
दुःखादिका श्रेय होता है, वहां यह न्याय हुआ करता
है । वेदान्त दर्शनमें यह न्यय दिखलाया गया है ।
यथा—अज्ञानोहितजोव तत्त्वमस्यादि मन्वाक्य सुननेसे
उसकी मनुष्यत्वादि भ्रान्ति दूर हो जाता है । तत्त्व-
मस्यादि मन्वाक्य भी श्रियकी मनुष्यभ्रान्ति दूर करने
में अज्ञानोहितकार उत्पादन करता है । उपदेशाब्जक तत्त्व-

मन्यादि महावाक्यजिज्ञासु श्रियके सममें अज्ञानकारा-
हृति उत्पन्न करता है, हमने धीरे धीरे उसकी 'मैं मनुष्य
हूँ' यह विशिष्ट भ्रान्तिवृत्ति विदूरित वा निवृत्त
होती है । ऐसा होनेसे उसका यह विरमिद प्रहय-
भाव अर्थात् ब्रह्मभाव स्थिरकृत होता है, यही उसका
सौच है ।

१०१। देवदत्तापुत्रन्यायः ।

देवदत्ताका पुत्र, तत्तु न्याय । पुत्रके प्रति माता
और पिता दोनोंका सम्बन्ध है । जहां पर माताका प्रधान
कहा जाय, वहा 'देवदत्तापुत्र' और जहां पिताप्रधान्य
कहा जाय वहां देवदत्त, ऐसा होगा । अतएव जहां
जिसका प्राधान्य समझा जाय, समान सम्बन्ध रहने पर
भी उसका निर्देश होगा ।

१०२। घटारोहणन्यायः ।

घटारोहण अर्थात् तुलागेहण एक प्रकारका दिव्य
है, तत्तु न्याय । हममें शास्त्रानुसार तुला पर घेठने-
से यदि वृद्धि हो, तो शुद्ध और यदि समान भार हो, तो
वत् अशुद्ध माना जाता है । इस प्रकार जहां मत्याभि-
सन्धो शुद्धि और मित्याभिसन्धको प्रवृद्धि होती है, वहां
पर यह न्याय होता है ।

१०३। धर्माधर्मग्रहणनायः ।

धर्माधर्मग्रहण भी एक प्रकारका दिव्य है । इस
दिव्यके नियमानुसार यदि धर्मसूक्ति ग्रहण की जाय,
तो विशुद्ध और अधर्मसूक्ति ग्रहण की जाय तो उसे
अशुद्ध जानना चाहिये । अतएव जहां पर जो सत्य
और असत्य देखनेमें आवे, वहा यह न्याय होता है ।

१०४। कालानियमः वामदेववत् ।

तत्त्वज्ञानका कालानियम नहीं है अर्थात् एक काल-
में तत्त्वज्ञान होगा ऐसा कोई निर्दिष्ट नियम नहीं है ।
वामदेव सुनिकी तरह शीघ्र और इन्द्रको तरह विलम्ब
भी हो सकता है, ऐसा जहा होगा वहां यह न्याय
होता है ।

१०५। नष्टाश्वदग्धरथन्यायः ।

एक दिन दो मनुष्य रथ पर चढ़ कर वनभ्रमणको
निकले थे । देवकान्तवे उम वनमें आग लग जानेसे एक
का रथ और दूसरेका श्व विनष्ट हुआ था । इस प्रकार

एक मनुष्य मरण्य घोर वृद्धरा दास्यय जो वनमें वनम पक्षम रहने लगा। एक दिन देवतु ज्ञेनेमें मुन काग की गई। घाट परकार बुद्धि उरखे दीकीनि स्थिर किया कि एकत्र रहने दूरीका परम जोग कर हम लोग अपने मन्त्राभ्यासको पहुँच सकते हैं। इस ग्यायने पशु-मार निष्काय शुद्ध धर्मरूप एसे प्रानागत संवीकता कर के यदि मनुष्य चले, तो निश्चय ही वे मन्त्राभ्य परमो मरको वा सुकेंगे।

१९६। नहि करकदुवर्णमादासांयिवा इति न्यायः ।

करकदुवर्ण वस्तुभा जो गोरु के यह दिग्गिने जिन तरह पारधीको बदरत नहीं कोतो लमो तरह प्रकथ प्रमाथमें स्थिर पशुनामादिको पापप्रकृता ही क्या ? दिने स्थान पर यह न्याय होता है।

१९७। नहि त्रिपुत्रो विपुत्रः कथ्यत इति न्यायः ।

त्रिपुत्र कहनेमें त्रिलको व्यावकृतावगत विपुत्रत्व पावने पाप समझा जाता है, त्रिपुत्र विपुत्र कहनेमें त्रिपुत्रका बोध नहीं होता। इस प्रकार कहा होगा वहाँ यह न्याय होता है।

१९८। नहि दृष्टे पशुपपत्र नाम इति न्यायः ।

कहाँ पर प्रकथ प्रमाथ पाया जायगा, वहाँ पर पश्य प्रमाथका पश्येयच निश्चय है दिने जो ज्ञान पर यह न्याय होता है।

१९९। नहि निन्द्या निन्द्य निन्दितु प्रवृत्ता ति किन्तु विधिय स्तोत्रमिति न्यायः ।

निन्द्या निन्द्याको निन्द्या करनेमें प्रवृत्ति होता है, किन्तु वही नहीं, पर नच विवेकका पक्ष (पश्य ना) भी करता है। निन्द्याघाट इतर वस्तुके प्राक्कथके विधि ही निन्द्या प्रवृत्ति ल होता है। किन्तु निन्द्याके विवेक नहीं इस प्रकार कहा होगा, वहाँ यह न्याय हुआ करता है।

२००। नारिकेलकामुनायायः ।

नारिकेल कलमें भातर जिन तरह कलका मघार होता है और यह कलमघार जिन प्रकार छोरे नहीं काम करता, वही प्रकार कहा पतकिंभावमें लका प्राप्त होती है वहाँ यह न्याय हुआ करता है। पतकिं प्रकृति भी है कि लकी नारिकेलकामुनायको

तरह पातो घोर मनुष्य कथिचो तरह जातो है।

२०१। निम्बवापकायन्यायः ।

मन्त्रोच्चा प्रमाण प्रमारत जिन घोर कथता है, लक्ष श्रेष्ठा करने पर भी जिन वक्ता समझो गिनको मोटा नहीं कहते लमो प्रकार ज्ञानांतोथ न क्यारके कथने परमेश्वरविषयमें व्यावकृताव विस्तृतविपवाहको समने पश्य स्थानमें लोटाके विधि पतिगय पश्य करने पर भी वह निश्चय होता है; दिने ही ज्ञान पर यह न्याय होता है।

२०२। मृपनापितपुत्रन्यायः ।

प्रघाट है कि किमो राजाके एक भापिन लक्ष था। राजाने एक दिन लये एक पक्षता उपवान् बालक पाने कहा। भापितने पात्रा पाते जो सारी नगरमें उपवान् बालक दूटा, पर पवने लक्षके वदुटर किपीको द्य बान् ल पाया। पता लमने पवने लक्षके दो राजा के पाम ना कर कहा 'गवन् ! दिने तरर गवर् लक्षक टाम्वा, पर पवने लक्षके वदु चर किमोको सुदर ल पाया। भापिनपुत्र निहायन कुदर वा पता राजा लने देल चर वदुन विगडे घोर ल विमने कह्य 'वदा तुम मेरा लपदान कर रही हो ? भापितने पवने गरीमें मयदा लान हाथ जोड़ कर कहा, 'ममो मुक्ति देना मान्म पका कि जिन लमें भी मेरे हम लक्षके सेना उपवान् छोरे नहीं है हम लो सुदरनाके विषयमें कोर में क्या कह्य। हमो विरायम पामें पायके पाम रवि जाया है। राजान ममाथ कि भापिन केकेके वगो-भुल वा कर सुदरको लो सुदर बतना रहा है। यह प्रमाथ कर लक्षके लक्ष प्राण बिवा। रागातिगदवगत-भापिनको जिन प्रकार पति कुदरमें लो सर्वात्मत बुद्धि हुई वा लमो प्रकार मन्दबुद्धिदिने पामालांश म व्याह कथता है सर्वोत्तम इतिहास देवताका परिग्याण करके मा सुदर देवताके प्रति विधिय मरि करनी है लने जो ज्ञान पर हम न्यायका प्रमाण होता है।

२०३। पशुपदकामुनायायः ।

पशु (कौचर) प्रमाण करके पशुका पशुके प्रमाण नहीं करना जो लये है। कौचरको ल भी कर विषय कौचर ल लगे, वही करना पशु है। इस

प्रकार अन्याय करके उसके निवारणकी चेष्टाको अपेक्षा अन्याय कार्य नहीं करना ही अच्छा है; ऐसी ही जगह पर यह न्याय होता है।

११४। पञ्जरचालनन्यायः।

दश पक्षी यदि एक पञ्जरमें रहें और वे एकत्र मिल कर जिस प्रकार पञ्जरके तिर्यक् और ऊर्ध्वनयनरूप क्रियादि करनेमें समर्थ होते हैं, उसी प्रकार पञ्चज्ञानिन्द्रिय और पञ्चकर्मेन्द्रिय एक प्राणरूप क्रिया उत्पादन करके देहचालन करती है।

११५। पञ्जरमुक्तपक्षिन्यायः।

पञ्जरस्थित पक्षी जिस प्रकार अपने अभीष्ट देग जाने में समर्थ होते हैं उसी प्रकार जो वन्धनने मुक्त हो कर ऊर्ध्व या काशमें अवस्थान करनेमें समर्थ होते हैं। तैन्मतमें यह न्याय प्रदर्शित हुआ है।

११६। पतन्तमनुधावतो बद्धोऽपि गतः इति न्यायः।

किसी एक बद्धेनियेने जानने बहुतसो चिड़िया फंस गईं। उनमेंमें कुछ तो बंध गईं और कुछ जाल ले कर उड़ीं। उड़ते उड़ते चिड़ियोंतो पकड़ने ही प्राणमें उन बद्धेनियेने कुछ दूर तक उनका पीछा किया, पर व्यर्थ हुआ। बंध जा जानमें बंध गईं वो वे भी जान ले कर भागो। इस प्रकार जो ध्रुव वस्तुकी रक्षा न कर अध्रुवको आगा पर जाते हैं उनके ध्रुव और अध्रुव दोनों ही नष्ट होते हैं; ऐसी ही स्थान पर यह न्याय होता है।

११७। पापापेष्टमानायाः।

रूईमें ईंट कठिन है, ईंटसे भी पत्थर कठिन होता है, इस प्रकार जहाँ एकने बट कर एक है, वहाँ इस न्यायका प्रयोग होता है।

११८। विगाश्वदनार्थोपदेशोऽपि।

किसी आचार्यने एक शिष्यको घरखर्चमें ले जा कर तत्त्वका उपदेश दिया था। उस उपदेशको सुन कर एक विगाश्व मुक्त हो गया। तत्त्वोपदेश अन्यायमें उपदिष्ट हुआ था महीं, लेकिन विगाश्व उमें सुन कर मुक्त हो गया था। तात्पर्य यह है कि तत्त्वोपदेश प्रसङ्गकामसे प्राप्त होने पर भी ज्ञान ही सकता है। (सांख्यद० ४ अ०)

११९। पितापुत्रवदुभयोर्दृष्टत्वात्।

पिता और पुत्र दोनोंमें कोई भी किसीकी जानना नहीं था, परन्तु उपदेश वा कर जाना था। एक ब्राह्मण अपने गर्भिणी स्त्रीकी घरमें छोड़ देगाक्षर गया। बहुत दिनके बाद जब वह घर लौटा, तब पुत्रको पहचान न सका, पुत्रने भी पिताको नहीं पहचाना। ग्रीष्मे स्त्रीके उपदेशमें एकने दूसरेकी पहचान लिया। तात्पर्य यह कि सुदृढके उपदेशमें भी ज्ञान होता है।

(सांख्यदर्शन ४ अ०)

१२०। विटपेवणन्यायः।

विट वस्तुका उपेय औषा निरर्थक है, वैसा ही निष्फल कार्यात्मको जगह यह न्याय दृष्टा करता है।

१२१। पुत्रलिप्तया देव भगवत्या भर्ताऽपि नष्ट इति न्यायः।

पुत्र लाभ करनेके लिए देवताको प्रार्थना करते करते स्वामी भी गिनट दृष्टा। मसन है—'पूत मांगे गईं भतार खो आईं।' इस प्रकार किसी मन्त्रन कार्य का अनुष्ठान करते करते जब उसका मूल तक भी नष्ट हो जाय, तब इस न्यायका प्रयोग होता है।

१२२। प्रापाणकन्यायः।

जिस प्रकार शर्करा आदि वस्तुके योगसे एक पद्भुत प्रति समित वस्तु बनतो है, उसी प्रकार जहाँ बहुसाधन द्वारा एक चिक्वरूप वस्तु होती है, वहाँ यह न्याय होता है। जहाँ विभाव और अनुभावादि द्वारा शृङ्गारदिरसकी अभिव्यक्ति होती है, वहाँ भी यह न्याय दृष्टा करता है।

१२३। प्रदोपन्यायः।

जिस प्रकार रैल, सूत और अन्निके संयोगसे दोप प्रखलित हो कर प्रकाशमान होता है, उसी प्रकार सत्त्व, रज और तम ये तीन गुण परस्पर विरोधी होने पर भी परस्पर मिल कर देहधारणरूप कार्य करते हैं। सांख्यदर्शनमें न्याय प्रदर्शित हुआ है।

"प्रदोपवचनार्थतो बुक्तिः।" (-सांख्यका०)

१२४। प्रयाजनमनुद्दिश्य न मन्दोऽपि प्रवर्त्तते इति न्यायः।

कोई प्रयोजन नहीं रहने पर सूद व्यक्ति भी कार्यमें प्रवर्त्तित नहीं होते। इस प्रकार प्रयोजनवशतः

उससे सभी प्रभोट लाभ करता है। ऐसे ही स्थानपर यह नयाय होता है।

१३६। मन्त्रोन्मज्जननयायः।

जो तैरना नहीं जानता जो ऐसा मनुष्य यदि नदीमें गिर जाय तो वह जिस तरह एक बार निमज्जित और एक बार उन्मज्जित होता है, उसी तरह दुष्टवादोंके स्वपक्ष समर्थनके लिए यत्नवान् होने पर भी वह प्रबन्ध युक्ति न पा कर सन्तरणानभिन्नकी तरह क्षीय पाता है। ऐसे ही स्थान पर यह न्याय होता है।

१३७। मण्डिमन्त्रन्यायः।

मणि और मन्त्रकी अग्निके दाहके प्रति जिस प्रकार साक्षात् प्रतिबन्धकता है, इसमें जिस प्रकार प्रमाणापेक्षा नहीं करता, उसी प्रकार जिनकी कामिनीजिज्ञासा है, उनके ज्ञानमात्रकी प्रतिबन्धकता है, इसमें भी किसी युक्तिही अपेक्षा नहीं करता है। ऐसे स्थान पर इस नयायका प्रयोग होता है।

१३८। मण्डूकतोलननयायः।

कोई एक कपट वणिक द्रव्य बेचते समय एक मण्डूक (बैंग)को पलड़े पर रख कर उससे तौलने लगा। मण्डूक उछल कर भाग गया, उसी समय वणिककी कपटता सबकी मालूम ही गई। इस प्रकार कार्य करते समय जहाँ कपटताका प्रकाश हो जाय, वहाँ यह न्याय होता है।

१३९। मरणहरं व्याधिरिति न्यायः।

मरणसे व्याधि श्रेय है, तत्तुल्यन्यायः। शत्रुत्व दुःखजनक विषय उपस्थित होने पर उसकी अपेक्षा दुःख ही प्रार्थनोप है। ऐसे स्थान पर यह न्याय होता है।

१४०। सुष्मादिषीकोद्धरणन्यायः।

सुष्म लक्षणविशेष, इषोका गर्भस्यलक्षण उसका उद्धरण, तत्तुल्य नयाय। सुष्मसे इषोका निकाल लेने पर जिस प्रकार उसकी क्षति नहीं होती, उसी प्रकार जहाँ जिस वस्तुका गर्भस्थित उखाड़ लिया जाय और उसको कोई क्षति न हो, वहाँ यह नयाय होता है।

१४१। यत्कृतकं तदनिव्यमिति नयायः।

जो कृतक अर्थात् कार्य है, वह अनित्य है, तत्तुल्य

नयाय। कार्यमात्र ही अनित्य है, इस प्रकार जहाँ हीगा, वहाँ यह नयाय होता है।

१४२। यत्परः शब्दः शब्दार्थः इति नयायः।

जहाँ जो प्रस्तुत विषय है उसमें उसीका प्रामाण्य अधिक है अत्र इतर विषयमें प्रामाण्य ही भी सकता और नहीं भी हो सकता। सांख्यदर्शनमें विज्ञानभिक्षुने भाष्यमें नयाय द्वारा कहा है, कि सांख्यदर्शनमें प्रधान यर्णनोय दुःखनिवृत्ति है। इस दुःखनिवृत्तिके विषयमें यही दर्शन अत्र दर्शनको अपेक्षा अधिक प्रामाण्य है, किन्तु ईश्वरार्थमें यह दर्शन दुर्बल है। क्योंकि ईश्वर इस दर्शनका प्रधान विषय नहीं है, किन्तु वेदान्तादि दर्शनमें ब्रह्मविषयका ही अधिक प्रमाण है। जहाँ ऐसा होगा, वहाँ यह नयाय होता है।

१४३। यत्रोभयोः समो दोषः न तत्रैकोऽनुयोज्य इति नयायः।

जहाँ पर दोनोंका दोष और परिहार समान है, वहाँ पर कोई भी पक्ष पार्थनुयोज्य अर्थात् प्रज्ञेय नहीं है।

“यत्रोभयोः समो दोषः परिहारश्च यः समः।

नैकः पार्थनुयोज्यः स्यात् तादृशविचारणे ॥”

वेदान्तदर्शनमें यह नयाय प्रदर्शित हुआ है, जहाँ पर दोष और दोषका परिहार दोनों ही समान हैं वहाँ कोई पक्ष अवलम्बनोप नहीं है।

१४४। यादृशं सुखं तादृशं चपेटमिति नयायः।

जैसा सुख वैसी चपेट अर्थात् जहाँ पर तुल्यरूप परिहार होगा वहाँ यह नयाय होता है।

१४५। यादृशं यत्सुखादयो वलिरिति नयायः।

जैसा यत् वैसी ही उसको वलि, जहाँ तुल्यरूप उपहार होगा, वहाँ यह नयाय होता है।

१४६। येन उपक्रम्यते उपसंज्ञियते स वाक्यायः इति नयायः।

जिससे उपक्रम और उपसंज्ञार हो वही वाक्यार्थ, तत्तुल्य नयाय। जैसे, गिरि अग्निमान् ऐसा कहनेसे इस प्रतिज्ञा वाक्य द्वारा पर्वतका ही उपक्रम किया जाता है और क्यों वज्जिमान् नहीं है, इस कारण वज्जिमान् है। इस निगमनवाक्यसे भी पर्वतका बोध होता है। यहाँ पर

उपक्रम पौर उपरुत्तारमें वर्धत जो भावार्थं वृषा, पेशा ही ज्ञान पर यह न्याय होता है।

१४०। योत्रव्याप्त्यायां भावार्थं महत्त्वमन्यायाः।

योत्रव्याप्त्या भावार्थं महत्त्वमन (महत्त्वमन्यायाति नियत, उरुत्तार महत्त्वमन, पयवा महत्त्व योत्रवृषववे ज्ञेया मन्यन) तत्तुष्टा न्याय। यदि पश्य जनागव हो, तो महत्त्वमन करके जनागव धनाबाध पार हो चकता है। खिन्न नदी यदि योत्रव्याप्त्या हो, तो महत्त्वमन करके पार होना अनस्यन है, इस प्रकार जहाँ ज्ञेया, जहाँ यह न्याय होता है।

१४१। उरुत्तारव्यायाः।

जहाँ पर निराकाङ्क्ष भावार्थं पाकाङ्क्ष उरुत्तारित करके एक भावार्थं विद्या जाय, जहाँ पर यह न्याय होता है। यथा—पटोर्दक्षि, यह पट है इस भावार्थं किसी प्रकारकी पाकाङ्क्षा नहीं है। इस निराकाङ्क्ष भावार्थं पाकाङ्क्षा उरुत्तारित करके पचात् वेसा पट, ऐसी पाकाङ्क्षा निराकाक्ष कर उपमें एक वाक्यता को गई पचात् उरुत्तार पट। जहाँ पेशा कक्षा जायगा जहाँ वह न्याय होता है।

१४८। उरुत्तारव्यायाः।

उरुत्तारव्यायाः, तत्तुष्टा न्यायः।

नव विस्तारिणि कानि कानिपि 'उरुत्तारव्यायाः' (अप्यवस्थ))

पट्टाङ्कोरुत्तारं उरुत्तार दिवनेने मनुष्यको उरुत्तार स्वम होता है, किन्तु जब पट्टाङ्कोरुत्तारं यह पच्छमे तरङ्ग दिना जाय, तब फिर उरुत्तारव्याया नको रहता। इस प्रकार हम सोमोके पञ्चानके पट्टाङ्कोरुत्तारके ज्ञानमें अगत्त्वम होता है। जब जबच मनन पौर निदिध्यासन द्वारा पञ्चान-लाक्ष चका जायगा, प्राणासोच उरुत्तारित होया, तब फिर ज्ञानमें अगत्त्वम नको रहिगा। वेदान्तदर्शनमें यह न्याय प्रदर्शित हुआ है। ध्यान्तिको जगत्तुष्टा न्याय का प्रयोग होता है।

१४०। राजपुत्रव्यायाः।

जिसे समय कुछ पौर एक राजपुत्रको उरुत्तार से मने पौर एक स्वाधेके जहाँ केव ज्ञान। व्याजमन्त्रमें पाक्षे दोबे आदिने 'मै श्यावपुत्र इ' ऐसी राजपुत्रको धारणा हो गई। पीछे समक्षे जिसे पाक्षीयने जब राजपुत्रके

उरुत्तार जन्मउत्तारतुष्टा न्याया, तब राजपुत्रको ध्यात् ध्यान्तिको दूर दूर पौर स्वस्वका बोध हुआ। इस प्रकार जहाँ ज्ञान्ति हो कर भावार्थं पपनोदन होता है वहाँ पर यह न्याय होता है। वेदान्तदर्शनमें यह न्याय प्रदर्शित हुआ है। हम सोमोको ज्ञानमें उरुत्तार ध्यान्तिको होती है, किन्तु तत्त्वमज्जादिके भावार्थमें उरुत्तार पपनोदन हो कर 'पञ्च ज्ञान' यही ज्ञान परिचित है। उसी ज्ञान हम श्यावका नियम है। संक्षेपदर्शनके तत्त्वमें पञ्चायमें 'राजपुत्रव्याया तत्त्वोपदेश्यात्' इस धर्ममें यह उरुत्तार दिवनेमें पाता है।

१४१। राजपुत्रव्यायाः।

जाना जब जिसे मनमें जाति है, तब उरुत्तार दिवनेके दिवने सोमोको मीक काम जाती है, ऐसी ज्ञानमें किन्तु ज्ञान उरुत्तारित हो चकती है। किन्तु ये सब मनुष्य रक्षियोंके पीड़नमयके ज्ञेयोपदेश्यमार्थमें परिचित रहते हैं। इस प्रकार जहाँ उरुत्तारव्यायाके कार्य निरुत्तार होता है, वहाँ हम न्यायका प्रयोग विद्या जाता है।

१४२। उरुत्तारव्यायाः जि मस्तुतिविरिति न्यायः।

उरुत्तार पौर प्रमाच द्वारा मस्तुति विद्या होती है इस प्रकार जहाँ उरुत्तार पौर प्रमाचके मस्तुती विरि हुआ करतो है, जहाँ वह न्याय होता है।

१४३। मत्तान्तुन्यायाः।

मत्ता बीटनिये, उरुत्तार मनुनिये म तत्तुष्टा न्याय। मत्ता (मकड़ा) जिस प्रकार स्वयं पयमी देखने मत्ता निर्माच करतो है पौर निज दिवने ही उरुत्तार करतो है, उसी प्रकार ज्ञान इस जगत्तुष्टा ज्ञान करती है पौर प ज्ञानके समय ज्ञानमें हो यह जगत्तुष्टा ज्ञान हो जाता है। ऐसी ज्ञान पर यह न्याय होता है।

१४४। सोदुत्तारव्यायाः।

जिन प्रकार मनुष्य द्वारा सोदुत्तार निर्माच होता है, उसी प्रकार उरुत्तार पौर उरुत्तारव्याया जोनिसे जहाँ यह न्याय होता है।

१४५। सोदुत्तारव्यायाः।

सोदुत्तार पौर मनुष्यको सोमोको निरुत्तार है, किन्तु मनुष्यको सोदुत्तार निर्माचमार्थके ही उरुत्तार निर्माच करता है, इस प्रकार मनुष्य निर्माच जोनि पर ही प्रकृतमन्त्रिकानमें

कार्य प्रवर्तक होता है। सांख्यदर्शनमें यह न्याय प्रदर्शित हुआ है।

१५६। वरगोष्ठीन्यायः।

गोष्ठी अर्थात् वर और वधूपक्षके परस्पर आलापसे एक मत हो कर जिस प्रकार वरलाभरूप कार्य सम्पन्न किया जाता है, उसी प्रकार जहां एकमत्य हो कर कोई एक कार्य साधन किया जाता है, वहां यह न्याय होता है। गोष्ठी वर और वधू पक्षके आलापसे एकमत्य हो कर वरलाभ होता है, इसीसे इस न्यायका नाम वर-गोष्ठी न्याय पड़ा है।

१५७। वरघाताय कन्यावरणमिति न्यायः।

विवाह करना जरूरी है अथवा विधकन्यासे विवाह करनेसे न्यथ्य हो सकतो है, अतः विधकन्यासे विवाह नहीं करना ही न्याय है। जहां अभीष्ट वस्तु लाभ करनेमें अनिष्टान्तरकी सम्भावना हो, वहां अभीष्ट वस्तुका लाभ नहीं करना ही अच्छा है। ऐसे स्थान पर ही यह न्याय होता है।

१५८। वल्लिभूमन्यायः।

धूमरूप कार्य देखनेसे जिस प्रकार कारणरूप कार्यका अनुमान होता है, उसी प्रकार कार्यदर्शनमें कारणके अनुमान-स्थल ही यह न्याय होता है।

१५९। विल्वखट्टान्यायः।

खट्टाट अर्थात् जिसके सिरके बाल झड़ गये हों। खट्टाट मनुष्य ध्रुवमें प्रत्यन्त क्लिन्न हो कर छायाके लिये एक विल्वखट्टके नीचे बैठा हुआ था। इसी समय एक वन्य उसके सिर पर गिरा जिससे उसका सिर चूर चूर हो गया। इस प्रकार जहां अभीष्ट प्राप्तिको आशासे जा कर अनिष्ट लाभ होता है, वहां इस न्यायका प्रयोग होता है।

१६०। विशेष्ये विशेषणं तत्रापि च विशेषणमिति न्यायः।

विशेष्यमें विशेषण, उसमें भी विशेषण तत्तुल्य न्याय। जैसे, भूतल घटवत् और जलवत्, यहां पर भूतलमें घट विशेषण है और यह विशेषण भूतलोंमें प्रदत्त हुआ है, इस प्रकार विशेषण वृष रौतिसे जहां भासमान होगा, वहां यह न्याय होता है।

१६१। विपक्षणन्यायः।

पापीने पाप किया है वा नहीं, यह जाननेके लिये विपक्षणरूप दिव्य करना होता है। नियमपूर्वक पापीको विप खिलानेसे यदि उसने यथार्थमें पाप न किया हो, तो उसे अनिष्ट नहीं होगा और यदि अनिष्ट ही जाय, तो उसे पापी समझना चाहिये। इस प्रकार जहां सत्याभिसन्धका मोक्ष और मिथ्याभिसन्धका बन्ध हो, वहां यह न्याय होता है।

१६२। विपक्षन्यायः।

अन्य वृक्षकी बात तो दूर रहे, यदि विपक्ष भी वर्धित किया जाय, तो उसे भी काटना उचित नहीं है। उद्यो प्रकार निज अर्जित वस्तुका स्वयं नाश नहीं करना चाहिये, ऐसे ही स्थान पर यह न्याय होता है। 'विपक्षोऽपि संबद्धं स्वयं हेतुमसाम्प्रतम्।' (कुमार २००)

१६३। वीचित्ररङ्गन्यायः।

नदीकी तरह जिस प्रकार एकके घाट दूसरी उत्पन्न होती है, उसी प्रकार जहां परम्पराक्रमसे कार्योत्पत्ति हो, वहां यह न्याय होता है।

'वीचित्ररङ्गनाथेन तदुपेतिसु कीर्तिता।' (भाषापरि०)

नैयायिकोंके मतसे ककारादिवर्ण वीचित्ररङ्ग न्यायके अनुसार उत्पन्न होते हैं।

१६४। वीजाङ्कुरन्यायः।

बीजसे अङ्कुर अथवा अङ्कुरसे बीज, बिना बीजके अङ्कुरोत्पत्ति नहीं होती और अङ्कुरके नहीं होने पर बीज भी नहीं होता, सुतरां अङ्कुरके प्रति बीज कारण है वा बीजके प्रति अङ्कुर कारण है, इसका कुछ स्थिर नहीं किया जाता तथा वीजाङ्कुरप्रवाह अनादि है यह स्वेकार करना होगा। इस प्रकार जहां होगा, वहां पर यह न्याय होता है। ब्रह्मान्तदर्शनके शारीरक भाष्यमें यह न्याय प्रदर्शित हुआ है।

१६५। वृक्षप्रक्रमन्यायः।

कोई एक आदमी एक पेड़ पर चढ़ा था। नीचे दो आदमी खड़े थे। एकने उसे एक शाखा और दूसरने कोई और शाखा हिलानेकी कहा। वृक्ष पर चढ़ा हुआ आदमी उनके परस्पर विश्वादीवाक्यसे कुछ भी कर न सका। इधर एक तीसरे आदमीने जब पकड़ कर संतुष्टा वृक्ष हिला दिया जिससे सभी शाखाएँ

दिनमें लगी। इन प्रकार जहाँ यमी बस्तुपुत्र का पवि
रोधार्य हो जहाँ पर यह नाश होता है ।

१११। इन्द्रकुमारीवाक्यनायाः ।

एक दिन इन्द्रने एक इन्द्र कुमारीने भर मानमें लो
कथा। इन पर बहने प्राईनाकी को, भेरे बिनके पनेत्र
पुत्र को, बहु चौर को, हुत को तथा में कापलगतमें
भोजन करके, यमी वर सुखे कोत्रिने ।' यह लो कुमारी
की विवाह लगे हुआ था विवाहादि लगे कोनेके पुत्र
घोर बनादि तथा को सवता। बिन्नु तम कुमारीने
एक ही वरने पति, पुत्र, गो, धान्य घोर हिरण्य प्राप्त
बिया। इन प्रकार कथायना द्वारा एक मोक्षप्राप्त
तपसाप्राप्त करनेके तदनुभूतवित्तगमादि लक्ष्यको
कोने है, लगे प्रकार जहाँ एक बाक्य दाग नामा पर
का प्रतिपादन हो जहाँ यह भाग्य होता है। यहाँ
मात्रमें यह भाग्य पर्यवर्तित हुआ है ।

११०। इन्द्रमिह्रमो मुचमपि बिनटमिति नायाः ।

बिन्ने एक बचिहने मुचमपि बचामके सिधे व्यवसाय
पारथ्य बिया था। उधके बिन्ने लोकरने पन्थाना
व्यवहार करके समका मूलधन लक्ष में लक्ष कर लिहा।
इस प्रकार जहाँ होता है यहाँ एक नाशका प्रयोग
बिया जाता है ।

११८। वानियमसङ्गनादानव्यं चोचवत् ।

प्राप्तवाचक प्रतादिका परिप्राप्त करनेके लोचदृष्टान्त
में प्राप्तपद प्रयोग लक्ष हो जाता है। तापय' यह कि
हुवा मतपरक करनेके वापयना लपय कोने है घोर
हुवा परिप्राप्तने लो चमई होता है ।

११८। इन्द्रवैनायायः ।

इन्द्रवैनायाय त्रिय प्रकार समय विधेयका घोर
बन्धा दाग समयका प्राप्त होता है लगे प्रकार जहाँ
मिच मिच वर' जाना जाता है यहाँ एक भाग्य
होता है ।

१००। इतरमभिरननायाः ।

लो लगेको एक वृद्ध द्वारा बिह्र करनेके एक लो
वार में मिट लगे, देवा प्राप्त पकता है बिन्नु लो लगे
प्रत्येक एक मिच मिच समयके मिटा गया है पर बाक्य
को लक्षणावदन' लक्षणा अनुमान लगे होता है । इस

प्रकार जहाँ बहने काय' एक दृष्टिके वाट कोने पर लो
एक समयमें हुए है देवा प्राप्त पकता है यहाँ यह भाग्य
होता है । मात्स्य' ममें यह भाग्य पर्यवर्तित हुआ है ।

१०१। गानिपप्यतो कोद्रवायननायाः ।

गानि तलम धान्यविधेय 'च घोर कोद्रव पत्रम,
तलम बानके रदने पत्रम धानका पाना, तल पत्र भाग्य
जहाँ तलम मनुके रदने पत्रम मनुका विधम बिधा
काय यहाँ यह भाग्य होता है ।

१०२। गिरीधेतेन लसिका क्रम' इति नायाः ।

मप्यक वेहन कारके मानिकाम्य', तत्सुप्य नायाः ।
जहाँ पन्थापनमाय काय' में बहु परिपम लयना हो,
यहाँ यह भाग्य होता है ।

१०३। इन्द्रमरत्तनायाः ।

त्रिय प्रकार घटादिका म्यामगुण भाग को कर रत्त-
गुण होता है, लगे प्रकार जहाँ पूर्व' गुणका भाग को
को कर पत्र गुणका कमायेय हो, यहाँ यह भाग्य
होता है ।

१०४। म्यामगुणकनायाः ।

बिन्ने पादमेंने एक कुला पाना या घोर बह लगे
म्यामक (माना) नामके पुकारा करता था, त्रिय दिन
लगे पपने लोको चिकित्सा मन होता था लगे दिन बहु
कम कुनेको तरह तरहकी गान्को देता था । लगे लगे
कुनेको पपना भार' ममक कर बहुत गुणमा जाती थी ।
म्यामके प्रति मानो देता यथाका परिप्राप्त तथा था
यहाँ कमको प्याई कोचका कारक लक्ष रदने पर लो
नामका पेश लुन कर बहु कोचान्तिता जाती थी । इन
प्रकार जहाँ ज्ञाना, लगे वह भाग्य होता है ।

१०५। या २ र्यमप कुर्वोति नायाः ।

लो काय लक्ष करना होय लगे पात्र लो बाध
करना होता लगे लगे कर क्षानता बाहिये । इन प्रकार
जहाँ पर लक्ष्य कार्य पक्षी बिधा आय यहाँ एक
भाग्य होता है ।

10- वाक्य २०५। पूर्वोक्तं वाच्यं इन्द्रम् ।
नं इन्द्रो एते वृत्त इन्द्रो एते वा इन्द्रो ॥

१०५। इन्द्रवैनायायः । गानिपप्यतो म्याम' ।
लोचानाम् पर' विधेय इन्द्रो नामा द्वारा म्याम पपने

की तरह सुखी और दुःखी होता है । किसी प्रादमोने एक श्येनगावक पाला था । कुछ दिन बाद उसने सोचा कि इसे वृथा कष्ट क्यों दूँ, छोड़ देना ही अच्छा है । इस लिये पिञ्जरमेंसे निकाल उठे उड़ा दिया । श्येन वन्धनमुक्त हो कर सुखी हुआ और पालकके विच्छेदसे दुःखी भी हुआ । तात्पर्य यह कि संभारमें निरवच्छिन्न सुख नहीं है ।

१७७ । सन्दर्भपतितनयायः ।

सन्दर्भ (संलभो) जिस प्रकार मध्यस्थित पदार्थ ग्रहण कर सकता है । उसी प्रकार पूर्वोत्तर पदार्थके मध्यस्थित पदार्थके ग्रहणको जगह यह नयाय होता है ।

१७८ । सन्निहितादपि व्यवहितं साकाङ्क्षं वनोय इति नयायः ।

सन्निहितसे व्यवहित पद यदि आकङ्क्षायुक्त हो, तो वह वलवान् होता है तत्तुल्य नयाय । शब्दबोधकी योग्यताके कारण साकाङ्क्षपदको अर्थात् स्वार्थान्वयबोधकी प्रयोजकता है इस नियमसे उसके आसक्तिप्रसक्तानादर करके अन्वययोग्य पदार्थवाचक शब्दका व्यवहितत्व रहने पर भी जहाँ अन्वय होता है, वहाँ इस नयायका प्रयोग किया जाता है ।

१७९ । सन्निहिते बुद्धिरन्तरङ्गमिति न्यायः ।

सन्निहित और विप्रकृष्ट इन दोनोंमें यदि दोनोंके अन्वयकी सम्भावना हो, तो सन्निहितमें आसक्ति वशतः अन्वय होता है, विप्रकृष्टका अन्वय नहीं होता । ऐसे स्थान पर यह नयाय होता है ।

१८० । समुद्रवृष्टिन्यायः ।

समुद्रमें वर्षा होनेसे जिस प्रकार उसका कोई उपकार नहीं होता, उसी प्रकार जहाँ निष्फल कार्य होता है, वहाँ इस नयायका प्रयोग करते हैं ।

१८१ । समूहालम्बननयायः ।

जहाँ उपस्थित पदार्थोंके मध्य विशेषण और विशेष्य भाव द्वारा अन्वयकी सम्भावना हो, वहाँ उपस्थित पदार्थके समूहका अवलम्बन करके अन्वयका बोध होगा, जैसे घट, पट इत्यादिकी जगह घट और पट दोनों ही विशेष्यपद हैं । इस विशेष्यपदका अवलम्बन करके अन्वयका बोध होगा । ऐसे स्थान पर यह नयाय होता है ।

१८२ । सम्भवत्येकवाक्यत्वे वाक्यभेदो न चिद्यते इति नयायः ।

एक वाक्यकी सम्भावना होनेसे वाक्यभेद अभिलपणोपय नहीं है, जहाँ पर ऐसा होगा, वहाँ यह नयाय होता है ।

१८३ । सत्रं विशेषणं सावधारणमिति नयायः ।

विशेषण मात्र हो सावधारण है, जैसे—'श्वेत शङ्ख' यहाँ पर शङ्ख श्वेतवर्ण हो है, इस प्रकार जहाँ सावधारण वाच्यबोध होगा, वहाँ यह नयाय होता है ।

१८४ । सर्वापेक्षानयायः ।

बहुतसे मनुष्योंको निमन्त्रण दिया गया, उनमेंसे अभी केवल एक आया है, उसे जिस प्रकार भोजन नहीं दिया जाता है, सर्वोंको अपेक्षा करने पड़ती है, उसी प्रकार जहाँ ऐसी घटना होगी, वहाँ यह नयाय होता है ।

१८५ । सविशेषणो हि विधिनियेधो विशेषणमुपसंक्रामतः सति विशेष्ये वाधे इति नयायः ।

विशेष्यपदके वाधित होने पर विशेषणके साथ वस्तुमान विधि और नियम विशेषणमें उपसंक्रान्त होती है, तत्तुल्य नयाय । जैसे—'घटाकाशमानय नानाकाश' घटाकाश लाभो, अनानाकाश लानेको जरूरत नहीं । यहाँ पर विशेष्यपद आकाशसे वाधप्रयुक्त आनयन और निवारण यह विधि है और नियम होनेसे घटादिरूपमें विशेषण उपसंक्रान्त हुआ अर्थात् घट लाभो, यही बोध हुआ । इस प्रकार जहाँ होता है वहाँ इस नयायका प्रयोग करते हैं ।

१८६ साक्षात् प्रकृतौ विकारलय इति न्यायः ।

साक्षात् प्रकृतिमें विकारका लय होता है, तत्तुल्य न्याय । जिस प्रकार घटादिका साक्षात् प्रकृति कपानादिमें लय होता है, परमाणुमें नहीं होता, उसी प्रकार जहाँ पर विकारका स्वीय प्रकृतिमें लय होगा, वहाँ यह नयाय होता है ।

१८७ । सावकाशनिरवकाशयोर्मध्ये निरवकाशो वलीयान् इति नयायः ।

सावकाश और निरवकाशविधितो जगह निरवकाश विधि हो बलवान् है, तत्तुल्यनयाय । जिसके अनेक विषय अर्थात् स्थान हैं, वह सावकाश विधि और जिसके

३० वन एक नियम है, वही निरवकाश विधि है। यदि वहाँ पर वे दो विधियाँ समान रहें, तो वहाँ निरवकाश विधिही प्रभावता होगी। अर्थात् इस प्रकार निरवकाश विधिही प्रभावता होती है वही पर यह न्याय होता है।

१८८। पि हायसोहनन्यायः।

जिह्व विष प्रकार एक सूयका यह करके पापी वृद्धि वृद्धि पोषिको घोर संकटा है उसी प्रकार वहाँ पापी घोर पीछे दीनोंका सम्बन्ध जो, वही यह न्याय होता है।

१८९। धूबोबटाच न्यायः।

पत्यायासघाष्प धूबो निर्मापके बाद बटाच निर्माच। एक दिन किसी पादमीने एक कामकारके वहाँ जा कर वही बटाच बनामि कहा। उसी कीच एक सूयका पादमी मो वहाँ पहुँच मयद उसने लुचोके जिसे प्रायना थी। कामकारके पक्षे सुची बना कर पीछे बटाच बना आका। इस प्रकार वहाँ सायाघास साध्य निगटा कर यह सायाघासया काम किया जाता है वहाँ यह न्याय होता है।

१९०। सुन्दीपसुन्दन्यायः।

सुन्द घोर उपहन्द नामक प्रबल पराक्रान्त दो पसुर है। वे दोनों भाई परस्पर विवाद करके मर चुके। इस प्रकार वहाँ परस्पर विवाद होता है, वहाँ इस न्याय का प्रयोग करती है।

१९१। सुस्यारिकाभ्यायः।

सूत्र द्वारा माटिका होती है। सत माटोका उपदान होनेसे सुस्यारी माटो इस मासिघासा हाय निर्देय होती है। इस प्रकार वहाँ उपदानका भाविस प्राकल्प निर्देय होता है, वहाँ यह न्याय होता है।

१९२। शोपानावरोहणन्यायः।

प्रासाठके अथर जानेको इच्छा होने पर जिस प्रकार शोपान पर चढ़ कर जाना पड़ता है अर्थात् एक एक शोपान पार कर क्रमशः प्रासाठके अथर चढ़ते हैं, उसी प्रकार ब्रह्म जाननेमें पक्षे एक एक शोपान पार करनेसे ब्रह्मको ज्ञान सकते हैं। अर्थात् घोर घोर बरारक पादि उत्पन्न होता है घोर उससे काय ही वाय अज्ञान भी दूरको

जाता है। ज्ञानम सम्पूष अज्ञान तिरोहित होनेसे ब्रह्म मासात्कार होते हैं। ऐसे ही ज्ञान पर यह न्याय होता है।

१९३। शोपानावरोहणन्यायः।

जिस प्रकार शोपान पर चढ़ा घोर उत्तरा जाता है उसी प्रकार वहाँ शोपा वहाँ यह न्याय होता है।

१९४। स्वविरलपुत्रन्यायः।

ब्रह्मपुत्रपतित अगुड़ जिस तरह उत्पन्नकाल पर पतित नहीं होता उसी तरह उत्पन्नकाल पर पतित नहीं होनेसे यह न्याय होता है।

१९५। सुभानिबलनन्यायः।

सूत्रका ब्रह्मपुत्रपतित उत्पन्न निबलन। सूत्र प्रोक्षित करनेमें उत्पन्नी इन्द्राक्षे सिप पुन पुन। अर द्वारा उत्ती लन घोर सासन कर जिस प्रकार निबलन सिवा जाता है, उसी प्रकार वहाँ अपना पक्ष समर्थितपक्षकी इच्छता से सिप लकाकरक घोर बुद्धि पादि हाय पुन पुन समर्थन सिवा काय, वहाँ यह न्याय होता है।

१९६। सुसाकम्पतीन्यायः।

निवाहके बाद कर घोर मरुको पक्ष्यती दिवानी होती है। यह पक्ष्यतो बहुत दूरमें पवस्वित है, इसीसे पक्ष्यत यूप्य है। पति दूरलके आरक रहे जगत् देख नहीं सकते। किन्तु यहू सि निर्देय पूरक मनुष्य पक्षे समर्थिको, पीछे उससे समोपवर्ती पक्ष्यतिको बतसाते हैं घोर उससे ज्ञानम पक्ष्यतोका ज्ञान मो होता है, इस प्रकार वहाँ पतिसूत्र घोर बुद्धिसेय वस्तु जाननेसे जिसे घोर घोर उत्पन्ना बोध होता है, वहाँ यह न्याय होता है।

१९७। सामिष्टयन्यायः।

समी धरक प्रसुक्त धमिप्रायातुनार धार्य मभ्यारन करके प्रसाठसामसे अपनेको कामबान् समझते हैं। इस प्रकार वहाँ परस्परक उपकार्य घोर उपकारक भावका बोध होता है, वहाँ यह न्यायका प्रयोग किया जाता है।

कितने ही लौकिक न्यायके उत्पन्न सिद्धे मये। इससे सिवा घोर भी बहुतसे लौकिक न्याय हैं। विस्तार को जानेसे मण्डे उत्पन्न विवरक नहीं किया गया किन्तु प्रादि ज्ञानसे तासिका दी जाती है।

१ अन्यातपनन्याय, २ अत्यन्तं बलवन्तोऽपि वीर-
जानपदा इति न्याय, ३ अदग्धदहनन्याय, ४ अनधीते
सहाभाष्ये इति न्याय, ५ अनन्तरस्य विधिवी भवति
प्रतिषेधो वा इति न्याय, ६ अन्ते या मतिः सा गतिरिति
न्याय, ७ अन्ते रण्डाविधाहचोदादेव कुतो न स इति
न्याय, ८ अन्वदर्शनन्याय, ९ अनप्रभुक्तन्याय, १० अंश-
भक्षणन्याय, ११ अभाण्डनाभन्याय, १२ अर्धवैशस
न्याय, १३ अथस्यापिचितानपेक्षितयोरिति न्याय, १४
अखतरोगमं न्याय, १५ अश्वभ्यन्वनाय, १६ अहित्रिपुत्र-
न्याय, १७ अहिमुक्त कौवत्तं न्याय, १८ आपादवात-
न्याय, १९ इक्षुरसन्याय, २० इक्षुविकारन्याय, २१
इच्छेयमानयोः समभिव्यहारे इपरमाणस्यैव प्राधान्य-
मिति न्याय, २२ इषुवेगचयन्याय, २३ उपजनिप्र-
माननिमित्तोऽप्यपवादो जातनिमित्तमपि उत्सर्गं व घत
इति न्याय, २४ उपजोव्योपजोवकन्याय, २५ उट्टनगुड-
न्याय, २६ एकत्र निर्णेतः शास्त्रार्थः अथत्वापि तथा
इति न्याय, २७ कण्टकन्याय, २८ करिष्वंहितन्याय,
२९ कांश्यभोजन्याय, ३० कामनागोचरत्वेन शब्दबोध
एव शब्दसाधनताऽन्वय इति न्याय, ३१ कालनाशे कार्य
नाशन्याय, ३२ किमज्ञानस्य दुष्करमिति न्याय, ३३
कौटम्बज्ञान्याय, ३४ कुक्कुटध्वनिन्याय, ३५ कुम्भोधान-
न्याय, ३६ कृपन्याय, ३७ कृताकृतप्रसङ्गो यो विधिः स
निश्च इति न्याय, ३८ कोपपात्तन्याय, ३९ कौण्डिनन्याय
४० कौन्तेयराधियन्याय, ४१ खलमेव त्रीन्याय, ४२ खादक-
घातकन्याय, ४३ गजघटान्याय, ४४ गणपतिन्याय, ४५
गर्दभारामगणनान्याय, ४६ गलेपादुक्कन्याय, ४७ गुणोप-
संहारन्याय, ४८ गोक्षीरं श्वदन्तैर्घृतमिति न्याय,
४९ गोमयपायसन्याय, ५० गोमहिषादिन्याय, ५१
घटप्रदोपन्याय, ५२ चक्रभ्रमणन्याय, ५३ चर्मतप्तो
मिहवीं हन्तीति न्याय, ५४ चितामृतन्याय, ५५ चित्र-
पटन्याय, ५६ चित्राङ्गनान्याय, ५७ चित्राननन्याय,
५८ जलसञ्चने न्याय, ५९ जामात्रयं क्लृप्तस्य स्याद्वैरिति
व्युपकारकत्वमिति न्याय, ६० ज्ञानधर्मिण्यभ्रान्तप्रकारे
तु-विपर्यय इति न्याय, ६१ ज्ञानादेर्निष्कार्यं वदुत्कर्षो-
ऽप्यङ्गीकार्यं इति न्याय, ६२ ज्योतिन्याय, ६३ तत्तादृश-
वगम्यत इति न्याय, ६४ तदभिन्नत्वमिति न्याय, ६५

तदागमेऽपि दृश्यते इति न्याय, ६६ तमः प्रकाशन्याय,
६७ तरतमभावापन्नमिति न्याय, ६८ तामसं परिवर्जये-
दिति न्याय, ६९ तानसवपन्याय, ७० तिर्यग्धिकरण-
न्याय, ७१ तुनोषमनन्याय, ७२ त्यज्जेकं कुलस्यार्थं
इति न्याय, ७३ त्याज्या दुम्नाटिनौ इति न्याय, ७४ दग्धा-
रसनन्याय, ७५ दग्धेभ्यनवद्विन्याय, ७६ दन्तवर्ष-
मारणन्याय, ७७ दक्षिण्यसि प्रत्यक्षो च्चर इति न्याय,
७८ दन्तपरोचान्याय, ७९ दानश्यालकटन्याय, ८० दाह-
कदाद्य न्याय, ८१ दुर्बलैरपि बाध्यन्ते पुत्रपैः पार्थि-
वाञ्चितैरिति न्याय, ८२ देवताधिकरण न्याय, ८३ देव-
दत्तदन्तृहतन्याय, ८४ देइती दीपन्याय, ८५ देहाधो-
मुखत्वन्याय, ८६ धर्मकल्पेनान्याय, ८७ धर्मिकल्पना
न्याय, ८८ धान्यवत्तन्याय, ८९ नहि प्रत्यभिप्रायान्तेण-
चर्यसिद्धिरिति न्याय, ९० नहि भिक्षुको भिक्षुकमिति
न्याय, ९१ नहि विवाहानन्तरं वरपरोक्षा क्रियते इति
न्याय, ९२ नहि शब्दमगार्थे नान्वेति इति न्याय, ९३
नहि सुतोऽप्यमिधारा स्वशमेव छेत्तमाहित-
व्यापारा भवतीति न्याय, ९४ नागोष्टपति न्याय,
९५ नाज्ञातविशेषणा विशिष्टबुद्धिः विशिष्यं संक्रामंतीति
न्याय, ९६ नीरचोरन्याय, ९७ नोनेन्दोवरन्याय, ९८
नीनाधिकन्याय, ९९ पटन्याय, १०० पदमप्यविका-
भावात् स्मारकात् न विगिपत इति न्याय, १०१ परिघ-
न्याय, १०२ पर्वताधित्वकान्याय, १०३ पशं तोपन्यका-
न्याय, १०४ पिण्डं हित्वा करं क्रीडतीति न्याय, १०५
पुरस्तादपवादा अनन्तरान् विधोन् वाधते नितैरान्ति
न्याय, १०६ पुटनगुनन्याय, १०७ पूर्वमपवादा निवि-
गन्ते पथादुत्सर्गा इति न्याय, १०८ पूर्वोत् परवलीयत्व
न्याय, १०९ प्रकल्प्यापवादविषयं पथादुत्सर्गोऽभिनि-
विशते इति न्याय, ११० प्रकाशाशयन्याय, १११ प्रकृति-
प्रचयार्थयोः प्रचयार्थस्य प्राधान्यमिति न्याय, ११२
प्रधानमज्ञनिवर्हण न्याय, ११३ प्रमाणवन्त्यदृष्टानि
कल्पानि चुरह् न्यपोति न्याय, ११४ प्रसङ्गवर्धनन्याय,
११५ बहुच्छिद्रघटप्रदोपन्याय, ११६ बहुराजकपुरन्याय,
११७ ब्राह्मणव्यिष्टन्याय, ११८ भक्षितेऽपि लशने न शाक्तो
व्याधिरिति न्याय, ११९ भामतीन्याय, १२० भाषप्रधान-
माख्यातमिति न्याय, १२१ भ्वादिन्याय, १२२ भूलिङ्ग-

पक्षिनाय, १२३ मूर्धोद्योगनाय १२४ मेरुवनाय १२५
 अमरनाय, १२६ मन्त्रिणायाय, १२७ मण्डपपुत्रि
 नाय, १२८ मन्त्रकण्ठकनाय, १२९ मन्त्रायामनाय
 १३० मन्त्रिणो प्रसन्नोत्पत्तिनाय, १३१ मन्त्रनाय,
 १३२ मन्त्रवेन अद्यान्वयनाय, १३३ मूर्धवेननाय,
 १३४ म्यासिहतास्त्रनाय १३५ अयमयेन मन्त्रनाय-
 यत् इति श्याय, १३६ अयमनायनाय १३७ अतमार-
 नाय १३८ यत् आरयति स अरयेत् इति नाय, १३९
 यत् कुर्वति स कुर्वति इति नाय १४० यत्पाया नृपति
 याइन् तत्ताइयवनायति इति नाय, १४१ यदर्थं प्रवृत्तिः
 तद्वत् प्रतिपत्ति इति नाय १४२ यद्विवाहतीतना
 मिति नाय १४३ यथाप्राप्त अयमप्यथा स्वात्। सम्यक्
 च वेद स इति नाय, १४४ यावच्छिदाप्यावच्छिरोऽप्यवा
 इति नाय, १४५ येन साग्राणे न ओ विचिरारभ्यति स तत्र
 वाहको भवति इति नाय १४६ यद्यद्व्यवसाय, १४७
 यद्विद्वत्प्राज्ञिनाय, १४८ राजस तामसश्चैति नाय, १४९
 राममाहितनाय १५० यद्विद्योमिमप्यवतीति नाय, १५१
 रत्नाभवयनाय, १५२ रोगिनाय १५३ नाइन्मोक्ष
 मिति नाय, १५४ लोकास्त्रिनाय, १५५ लक्ष्यव्यवनाय
 १५६ विद्विदिषो मति विद्विदिषो विद्विष च लक्ष्य-
 मित इति नाय १५७ विषे य वि शृणुते वक्षिन्तिनाय, १५८
 विपरीत अभावमिति नाय १५९ विषादप्रवृत्त
 वृत्तनाय, १६० विविद्वत्तो इति नाय, १६१ विविद्वत्
 नो विद्वामिति नाय, १६२ वृत्तिवैशम्भनाय, १६३ वेयो
 षण्णु तदाइ इति नाय १६४ व्यञ्जकव्यवनाय, १६५
 व्याधीचोरनाय, १६६ वृत्तव्यवनाय मन्त्रव्यवमिति
 नाय, १६७ वृत्तव्यवनाय, १६८ वृत्ति मन्त्रकारिणीति
 नाय १६९ यथोदत्त नाय, १७० व्याप्यव्यवनाय,
 १७१ व्याप्योपानाहा यथैवैव पूर्योवेतिव्याय १७२
 ग लुपीनाय, १७३ यद्युक्तायामनाय १७४ यद्विद्वत्
 वद्वत् नाय, १७५ यतिवैश न जागतीति नाय, १७६
 यत्साध्यायवैशत्तं चर्मैति नाय, १७७ यथात्प्रवृत्त-
 मितिनाय, १७८ यद्युक्तेनाय, १७९ यत्तत्रनि-
 यतिनाय, १८० यद्युक्तायामनाय, १८१ यद्युक्ताय
 नाय, १८२ यथाप्राप्तनाय, १८३ यथावत्प्रवृत्तमिव

नाय, १८४ यद्विद्वत्प्रवृत्तनाय, १८५ यद्विद्वत्प्रवृत्त
 नाय १८६ यद्विद्वत्प्रवृत्तनाय, १८७ यद्विद्वत्प्रवृत्त
 इति नाय, १८८ यद्विद्वत्प्रवृत्तनाय, १८९ यद्विद्वत्प्रवृत्त-
 यद्युक्तामिति नाय, १९० यद्युक्तायामनाय ।
 श्री रामदयासुमित्र १ गुणाविरचित लौकिकनाय
 स यद्विद्वत्प्रवृत्त नायमनुक्ता विवरण निष्ठा १ ।
 व्याप्यता (स • पु •) नाय अरनिनामा, दो यद्योधि
 विवाहका निष्ठा य कर्तव्यता, २ साय अरनिनामा ।
 व्याप्यकोकिल (स • पु •) एक वीर्याचार्य ।
 व्याप्यता (स • य •) व्याय तनिम । १ व्याप्यता, २
 यमं धोर मोति? यनुमा, इमान्धि । २ ठेक ठेक ।
 व्याप्यता (स • स्त्री •) नाय भावे तल डाव । नायथा
 भाव, उपपन्नता ।
 व्याप्यदेव—अरतप्रवीत सङ्गीतप्रवृत्तकार यन्त्रे डोका-
 कार ।
 व्याप्यदेव (स • स्त्री •) १ विद्यानाम, पदावत । २
 विद्यासम्प्रदाय चर्म ।
 व्याप्यव (स • पु •) व्याप्योपित 'व्या' समधि यत् यमा'
 चान्त' । १ सोमोभाशास्त्र । २ यथारथका व्याप्यव्यात-
 मार्ग उचित रोति ।
 व्याप्यपता (स • स्त्री •) व्याप्यरथ भाव तन्म डाव ।
 १ व्याप्यवान् कां, २ व्याप्यता नाम । २ व्याप्योपिता,
 नायो वीरिका भाव ।
 व्याप्यवत् (स • स्त्री •) व्याय विद्यतिऽप्य मणुप, मण
 व । नायवृत्त नाय पर चलनिनामा ।
 व्याप्यवर्त्ती (स • स्त्री •) व्याय वृत्त-निनि । नाय पर
 चलनिनामा ।
 व्याप्यवर्गीय (स • पु •) व्यायसन्निधा नामक एक चल
 हार यन्त्रे प्रविता विद्यानिधि सुत्र ।
 व्याप्यवान् (स्त्री • पु •) विवेको, नायो ।
 व्याप्यविहित (स • स्त्री •) नायिन विहितः । व्याप्यवृत्तार
 हत लो नाययुक्क विद्या नाय ।
 व्याप्यवृत्त (स • स्त्री •) व्याप्योपित वृत्तम् । १ व्याप्य
 विद्विताचार । (स्त्री •) २ व्याप्यविद्विताचारो ।
 व्याप्यविद्वत् (स • स्त्री •) प्रवृत्त प्रमायके विरोधो ।
 व्याप्यव्याप्यी (स • पु •) यथावत्प्रवृत्तं यमं प्रवृत्तानां
 व्यापि ।

हय, ककुद्, हृदादि मुखे, इन सब स्थानों में न्यास करना होता है। न्यासके सभी स्थानों पर प्रणवादि नमोऽन्त कर प्रयोग करनेका विधान है।

यथा—प्रां अं नमो लनाटे, प्रां प्रां नमो मुखवृत्तं, इं ईं चक्षुषोः, उं जं कणयोः, ऋं ॠं नमोः, लं लं गण्डयोः, एं ओडे, ऐं अघरे, औं अघोदन्ते, औं ऊर्ध्वदन्ते, अं अन्नरन्ध्रे, पः सुखे । कं दक्षबाहु मूले, खं कुपरे, गं मणिबन्धे, घं अङ्गुलिमूले, ङं अङ्गुल्यधे ओं चं छं लं भं जं वामबाहुमूलसंध्यप्रेषु, इत्यादि । इन प्रकार पञ्चागहर्णका विन्यास कर न्यास किया जाता है ।

“ओमाहन्तो नमोऽन्तो वा सत्रि दुर्विन्दुवर्जितः ।

पंचाशद् वर्णविन्यासः कमाडुको मनीषिभिः ॥”

संहारमाहकान्यासः—इस न्यासमें संहारमाहका देवीका ध्यान करना होता है।

ध्यान—“अः सजं हरिणपोतसृदंगठक

विद्याः कर्गैर्विरतं दधती त्रिनेत्रां ।

अर्द्धेन्दुमौलिमरुगामरविन्दरागां

वर्णेश्वरीं प्रणमत स्तनभारनपाम् ॥”

जो अपने चारों हाथमें अक्षमाला, हरिणशावक, नटङ्कटङ्क और विद्या धारण की हुई है और जो त्रिनयनी है, अर्द्धचन्द्र जिनके मौलिदेश पर विराजमान है तथा जो अर्धविन्दुस्थानिनी है, उन्हीं वर्णेश्वरी स्तनभारविनता देवीकी प्रणाम करता है । इस प्रकार संहारमाहका ध्यान करके ‘हृदादि मुखे चं नमः हृदादि उदरे इं नमः’ इत्यादि रूपमें न्यास करते हैं । यह माहका षण्णं चार प्रकारका है—केवल, विन्दुयुक्त, विसर्गयुक्त और विन्दु तथा विसर्ग उभययुक्त । इस केवल माहकान्यासमें विद्या, विन्दु और विसर्ग उभययुक्त न्यास में मक्ति, विसर्गयुक्त न्यासमें पुत्र और विन्दुयुक्त न्यासमें वित्त लाभ होता है ।

“वदुर्भा मातृका प्रोक्ता केवला विन्दुसंयुता ।

सविसर्गा चोभया च रहस्यं शृणु कथ्यते ॥

विद्याकर्षी केवला च मोभया मक्तिदायिनी ।

पुत्रदा सविसर्गा च विन्दुर्विसर्गदायिनी ॥”

विशुद्धेश्वर तन्त्रमें लिखा है, कि वाक्सिद्धि कामनामें वाग्धीज (ऐं), श्रीसिद्धिकी कामनामें ओवोज

(औं), नव सिद्धिकी कामनामें नमः और लोकवर्गीकरणमें कामवोज (क्लौं) आदिमें योग करके न्यास करे । यह (अं) आदिमें योग करके न्यास करनेमें सभी मन्त्र प्रसन्न होते हैं । नवरत्नेश्वरग्रन्थमें ओविद्याके विषयमें लिखा है, कि आदिमें वाग्वोज (ऐं) और अन्तमें नमः योग करके अर्थात् ‘ऐं अं नमः’ ऐं अं नमः’ इत्यादि पञ्चागहर्ण द्वारा न्यास करनेमें अष्टिमादि अष्टसिद्धि लाभ होती है । यामलमें लिखा है, कि भूतशुद्धि और माहका न्यास किये बिना जो पूजा की जाती है वह निष्फल होती है । अतएव सभी देवपूजामें माहकान्यास अवश्य विधीय है । गौतमोद्यतन्त्रमें सामान्य न्यासका अङ्ग नियम इस प्रकार लिखा है—मन हो मन पुष्प द्वारा अथवा अनामिका और अङ्गुष्ठ द्वारा न्यास करे, इसका विपरीत करनेसे निष्फल होता है । साधारण न्यासमें यह नियम है, श्यामादि विद्याविषयमें माहकान्यासमें और कुछ विशेष है ।

पठन्याः—‘प्रां आध रशक्तये नमः’ इस प्रकार प्रकान्त, कूर्म, अनन्त, पृथिवी, चौरसमुद्र, खेतद्वीप, मणिमण्डप, कल्पवृक्ष, मणिवेदिना और रत्नसिंहासन ये सब स्थान करने होते हैं यह न्यास हृदयमें करना होता है । पीछे दक्षिणस्कन्धमें धर्म, वामस्कन्धमें ज्ञान, वाम ऊरुमें वैराग्य, दक्षिण ऊरुमें ऐश्वर्य, मुखमें अधर्म, दक्षिणपाश्वर्गमें अज्ञान, नाभिमें अवेराग्य और वामपाश्वर्गमें अनेश्वर्य इन सबका न्यास किया जाता है । सभी जगह प्रणवादि नमोऽन्तका प्रयोग होगा ।

“अतोऽशुभमयोर्विद्वान् प्रादक्षिण्येन साधकः ।

धर्मं ज्ञानं च वैराग्यमैश्वर्यं क्रमशः सुधीः ।

मुखपार्श्वे नाभिपार्श्वे स्वधर्मादीन् प्रहृत्ययेत् ॥”

फिरसे हृदयमें न्यास करना होगा, औं अनन्ताय नमः, इस प्रकार पद्म, अं हादशकलात्मक सूर्यमण्डल, उं षोडशकलात्मक सोममण्डल, मं द्वादशकलात्मक वाङ्मण्डल, सं मन्त्र, रं रजसु, तं तमसः, धां धात्मन्, अं अन्तरात्मन्, पं परमात्मन्, ऊं ज्ञानात्मन्, अन्तमें नमः शब्दका योग करके न्यास करना होता है । सारदातिलकमें इस न्यासका विषय इस प्रकार लिखा है—

अथ्यादिन्यास—

“अद्वैतपरमुखात्सुखत्वात् वा। कालात्तराणां मनु ।
 संघातमपि सुखात्वात् न तत्र चरित्तरिणोः ।
 सुखत्वात्तराणां चान्न ग्राहयत् परिशीलितं ।
 तत्रैवां मन्त्रतत्त्वात् कारणात्कल्प उपरते ३ ।

अर्चनों के पक्ष में महादेव के सुख में मन्त्र अन्वय करके
 तपस्या द्वारा मन्त्र सिद्ध किया है कि वही मन्त्र के अर्थ
 होते हैं । अर्चि की मन्त्र के पादि पुत्र हैं, इस कारण
 उनका मन्त्रकर्म नगम करना चाहिए । मन्त्र प्रकारक
 मन्त्रतत्त्व को जो पाण्डुराटन बिद्य रक्षित हैं उनका नाम
 छन्द है । मन्मो छन्द पञ्च पौर पदपरिहित है, यत्. छन्द
 का सुखमें. नगम करनेका विधान है । मन्त्र प्रकारके
 अनुष्ठानों को जो सर्व कार्यों में ग्रहण करती हैं, वे देवता हैं ।
 यत्. छन्दप्रति उनका नाम किया जाता है । अर्चि पौर
 छन्दको बिना कर्म नगम करनेके कुछ मो फल प्राप्त
 नहीं होता । तन्मात्रकर्म निष्ठा है कि मन्त्रक पर अर्चि
 सुखमें छन्द छन्दमें देवता, सुखदेवमें जोर. गन्धर्पमें
 मन्त्रि पौर मन्त्रकर्म लेनक नगम करे । जोके मन्मोक
 नगम करना होता है । शास्त्राचार्यकर्ममें किया है कि
 जो मनुष्य पागमोक विधानके प्रतिदिन न्यास करते हैं
 उनका मन्त्र सिद्ध होता है-पौर यत्. कि देवकोकको
 मन्त्रि है । जो न्यास करके मन्त्रका अर्थ मन्त्रि हैं उनके
 सब निष्ठा मन्त्रि रक्षित हैं । पञ्चानता मनुष्य जो न्यासादि
 सिद्धि बिना मन्त्र अर्थ हैं उनके मन्मो काम निष्फल
 होते हैं ।

पञ्चन्यासका पञ्च निविषम—तीन, दो, एक पञ्च,
 तीन पौर दो पञ्च नि द्वारा छन्दवादि पञ्चकर्म न्यास करे ।
 राक्षसभङ्गन आत्मनक्षत्रक वचनमें निष्ठा है कि मन्त्रमा,
 प. मित्रा पौर तर्जना पञ्चलि द्वारा छन्दकर्म, मन्त्रमा
 पौर तर्जना पञ्च लि द्वारा मन्त्रकर्म, पञ्चद्वारा सिद्धा
 स्थानमें, सर्वाङ्गुलि दायां कवचकं तत्र मा मन्त्रमा पौर
 परामिका द्वारा जैत्रम तत्रा तर्जना पौर मन्त्रमा द्वारा
 करतल पर न्यास करना होता है । त्रिस दिवताका ग्राह
 करना होता है, तम देवताके यदि दो नैत्र जो तो
 तर्जनी पौर मन्त्रमा द्वारा जैत्रम न्यास करामिका विधान
 है । छन्दवाच नाम, त्रिभि स्थावा यिष्यति कवट इत्यादि
 पूर्वविषयमें छन्दवादि पञ्चकर्म न्यास करे । अर्चि पर

पञ्चाङ्ग न्यास कदा गवा है अर्चि पर जैत्रको छोड़ कर
 दूसरी पञ्चाङ्गमें न्यास करे । विष्णुके विषयमें पञ्चुठपीन
 परतद्वय माहा द्वारा छन्द पौर मन्त्रकर्म न्यास करे
 तथा पञ्चुठ मन्त्रगत सुदि द्वारा सिद्धा, तमव चक्षुको
 सर्वाङ्गुलि द्वारा कवच तर्जना पौर मन्त्रमा दायां नित्र
 में न्यास करके पञ्चुठ पौर तर्जना द्वारा करतल पर
 अर्चि करनी चाहिये । अर्चि पर पञ्चसम्ब निदिष्ट नहीं
 हुआ है, अर्चि पर नित्रता नामके पादि यत्. द्वारा पञ्च-
 न्यास करना होता है । इन ३ विषयमें मन्त्रमा मन्त्रमें निष्ठा
 है, कि सन्मो दिवतायैत्र नामके पादि पञ्चर द्वारा पञ्च-
 न्यास किया जा सकता है ।

इन प्रकार न्यासादि करके दिवताका सुखापरम
 प्य न पौर पूत्रनादि करनेका विधान है ।
 (उत्तरकार पागमन पूजाप)
 यह जो मांडका प्रकृति आर्चिक विषय निष्ठा मया
 पञ्च समी पूजामें किया जाता है, यह पञ्चके दो निष्ठा
 का युवा है । मांडकाश्याम पौर भूतद्विद नको करामे
 पूजादि निष्फल होती हैं ।

“मन्त्रमात्रात्कर्मक को मन्त्रमात्र प्रकर्ममनुम् ।
 सर्वविषये च नान्याः स्वाद् इत्याहोर्मुं अर्चयेवा ३”
 (उत्तरकार)
 यह न्यास नित्र मिष देवताके विषयमें मिष मिष
 प्रकारका है । विष्णुके मयके कुल विवरण नहीं सिद्धा
 गवा, किन्तु जोके न मन्त्राद दिव गये हैं,—

विष्णुविषयमें न्यास वेद्यककोश्यादि मूर्तिपञ्चर,
 रत्न, मूर्तिपञ्चर, दगाइ पञ्चाङ्ग ; मित्रविषयमें यी
 कर्णादि, ईयागादि पञ्चमूर्ति, मन्त्र मूर्ति, सोलक,
 सुमवादि पौर भूतप पञ्चपूजाविषयमें पदगान, जो-
 निष्ठाविषयमें अग्निप्यादि नवमायात्तक यौड, तत्त्व,
 पञ्चदमो, जोङ्गी, म हार स्त्रिनि, अर्चि मार योङ्गा
 त्रिणि पञ्च, तत्त्व, योगिनी राशि, त्रिपुत्रा योङ्गमन्त्रिया
 काभरति, अर्चिस्त्रिनि, प्रकटयोगिनी पाञ्चक । तारा
 विषयमें न्यास कट्ट, पञ्च कोकवाक है (उत्तरकार) इन
 सब न्यासोंको प्रयात्तो तन्त्रनारमें विरुद्ध रूपमें निष्ठा
 है । अन्त्यात्त न कदा विदम्ब रही छन्दमें देको ।

न्यासप्रकार (म ० पु ०) पञ्च पञ्चर विषये कोर्दे राम मन्त्राङ्ग
 विधा प्राद ।

न्यासिक (सं० त्रि०) न्यासेन चरति पर्यादित्वात् घन् (पा ४।४।१०) न्यासकारी, धरोहर रखनेवाला, जो किमोकी यातो रखे । नियां पिप्त्वात् डोप ।

न्यासिन् (सं० त्रि०) नि-अम-णिनि । १ त्यागी । २ स न्यासी ।

न्युद्ध (सं० पु०) नि-उद्ध घञ्, एवोदरादित्वात् साधुः । ऋग्भेद । गीतिमें उदात्त अनुदात्तरूप सोनह घोकार है जिनमेंसे तोन प्रुत और तीरह अर्द्धीकार है । २ सम्यक् । ३ मनोज्ञ ।

न्युज (सं० स्त्री०) न्युञ्जति अधोमुखो भवति नि उञ्ज घञ् । १ कर्मरङ्गफल, कमरख । २ आदादि पाठ-भेद । ३ दर्भमय मुकु । ४ कुग । ५ स्त्रुक, एक यज्ञपात्र । ६ व्यथा, कष्ट । ७ रोगो. जोसारी । (त्रि०) न्युञ्जति अधोमुखो भवतीति । ८ कुञ्ज, कुवटा । ९ अधोमुख चौंधा । १० रोगभुग्न, रोगसे जिसको कमर टेढ़ो हो गई हो ।

न्युज्जवद् (सं० पु०) न्युज्जः खद्गः । कुञ्ज खद्ग, टेढो तलवार । इसका पर्याय कटीतल है ।

न्युराय—युक्त पद्देगरे पागरा विभ गान्तर्गत ईटा तटसोम-का एक ग्रम । यह तहसीलके दरमे ४ मोन उत्तर पूर्वमें अवस्थित है । यहां एक सुन्दर मन्दिर है ।

न्यूगोनो - प्रगान्तमहास गरम्य पूर्व-होपपुञ्जके अन्तर्गत एक द्वीप । इसका दूसरा नाम तानापूया है । यहांका ओथेनष्टनेनि गिरिस्थं १३०० फुट ऊंचा है । इसका उत्तर-पश्चिम उपहोप भाग ओलन्दाजों और दक्षिण-पूर्व भाग ब्रिटिश गवर्मेण्टके अधिकारमें है । यहां प्रसिद्ध पपूया-जाति रहती है । यह अफ्रिकाको नियो और मेथोरोजातिसे बहुत कुछ मिलती जुलती है । इनके मद्द-प्रद्व और मस्तकादि देखनेसे वे पलिनेसोय शाखा-भुक्त-से मालूम पड़ते हैं । यहांकी फ्लाई नटोके तोर-वासिगण गहरे पीले, खूब लम्बे चौड़े और बलिष्ठ तथा पूर्व उपहोपके अधिवासी हरापन लिए कुछ पीले होते हैं । अप उपर जातियां पपूयामलयेशमभूत हैं ।

हड उपमागरके निकटवर्ती ग्रामवासिगण युद्धविद्या में निपुण, अमशील, नाविकविद्यापारदर्शी, मिट्टीके अच्छे अच्छे चरतन और खिलौने आदि बनानेमें पटु हैं ।

मोगनधि चन्द्रवाम, कोई-तापु और कोयरोजाति यहां-को पाटिम अधिवासी हैं ।

न्यूजीनीके दक्षिण पूर्व प्रायः तीन सौ मोनके मध्य पचोस विभिन्न भाषाएं देखनेमें आती हैं । इसमें सहजमें जाना जा सकता है, कि यहाँ बहुत मो अमभ्य-जातियोंका वास है । यहां तब कि कोई कोई जाति व्रया हो मनुष्योंको मारतो और उनके प्रांर खानो है । इसी कारण यहां वणि-रुग्ण बनायास पपनो जिन्दगी खो बैठते हैं । यहां पत्ता, मकली और फनादि अधिक परिमाणमें मिलते हैं उनमेंमें ईत्र, कुम्हड़ा, तरबूत, आम, खोरा सुपारि, म गु और जारियन प्रथम हैं ।

न्यू-पायर्नैण्ड, न्यूहिन इडल न्यू-डानिडोनिया मानिकोना और ताना पाटि इस होपपुञ्जके अन्तर्गत हैं । न्यूजीनी-इड—पहरेजाधिकृत एक उपनिवेश, दक्षिण गोलार्धके प्रगान्तमहासागरमें एक होपपुञ्ज । इसमें बड़े बड़े होप और इसके दक्षिणमें एक छोटा होप है । यहांके रहनेवाले इन दो बड़े होपोंमेंसे उत्तरम्य होपको एडिनोमलक और दक्षिणम्यको टवेल्-पोनाम्बु कहते हैं जो कुकके सुशाना द्वारा एक टूपरसे प्रथक् किये जाते हैं । किन्तु उपनिवेश स्थापनकारी उत्तमोय होपको न्यूअलटर, दक्षिणोय बड़े होपको न्यूमानटर और छोटेको नूनिनटर कहते हैं ।

यह द्वीपपुञ्ज अक्षां ३४° २५' से ४०° १०' दक्षिण और देशां १६६° २६' से १७८° ३६' पूर्वमें अवस्थित है । जनसंख्या ८५००० और भूपरिमाण १०४४७१ बर्गमोल है । यहांको प्रायश्वा इङ्गलैण्डको प्रायश्वासे बहुत कुछ अंशोंमें मिलती जुलती है । जाड़ेमें खूब बंढ पड़ती है और इसके सिवा अन्यम्य ऋतुओंमें भी जाड़ा मालूम होता है । वर्षा प्रायः सब समय हुआ करती है, किन्तु शीत और बसन्त ऋतुमें कुछ अधिक होती है ।

जिस समय यूरोपीयगण इन देशमें पाये थे, उस समय यहकि अधिवासी तारो (Caladium esculentum) और कुमेरा नामक मोठे बालू (Kumera or Sweet potato convolvulus potato) को खेती करते थे । फलोंमें सफेदा (Areca Sapida) ही सर्वात्कष्ट है । यहांके प्रधिकाग स्थान अङ्गलसे भरे हुए हैं जिनमें

भाषा प्रचारक बड़े बड़े उच्च देखनेमें पाते हैं। यहांकी प्रधान बयान क्वार गीज़, पास्, यक्षयम चाटि है, बिन्दु पास्की जो खेतों पवित्रतर होने के पोर यह दूसरे क्षेत्रोंमें देखा जाता है। पक्षी पक्षय यहाँके पाय पक्षियों केबल कुछ जो देखे जाते हैं, लेकिन बतलमान समयमें यूरोपवाणियक वाय, सोके, मीढ़ मुकर प्रकृति पक्ष पात्रित पक्ष जाते हैं।

अभिन्न द्रव्य यहाँ तकने पवित्र नहीं मिलते। १८५२ ई०को क्वारमच्छमने घनेको खानका पता लगा था। तब, कोइ पोर जायनेको छा। मो बहो बहो दे रि-मि-मिं पाते हैं।

मध्य भाषा (Malay language) को यहाँके पवित्रावियोंको भाषा एक प्रादिभाषाके जो तत्पक्ष है के बिन्दु एक लोगोंको भाषाने दूसरो दूसरो भाषाए भी मिली हुई हैं। अब कमान कुछही पक्षे पक्ष न्यूजीलैंडका पवित्रार विद्या या हम नमक यहाँके सोय यहाँके जप्याहिन यथादिसे जोवन-निर्वाक करके पीर पहाड़के छपर छोटे छोटे घर बना कर रहने में।

यहाँके पवित्रावियों न्यूरोफ उपनिषद्गलानकारो पोर आनीय प्रादिम लिबावियों हैं। आनीय पवित्रावियों एक लोगोंको मिनरी कहते हैं जो दोषकाव पवित्र पोर चन्द्र मन्मन्निष्ठ होते हैं। माघन विभागकी यहाँ एक कमीठी जायम है। उसमें एक यवर्न रहते हैं जिनको देगवे तनकाइ मिलतो है। देगवी देखमात्र व्यवहारिका यमा द्वारा होती है जिसमें वैतालिष्ठ मेम्बर पोर पक्षी प्रतिनिधि रहते हैं। संस्वर पक्षेक सातवें वर्षमें पोर प्रतिनिधि प्रबन्ध तोसरे वर्ष में बहसे जाते हैं। इसको देख देख गवर्नरके ही पक्षीन रहतो हैं। यहाँ म्गुलिचबसेडोको भी व्यवस्था है। मित्राविभाषका मो सुप्रबन्ध है। यहाँ यनेक प्राइमरी मिडिल पोर हाई स्कूल हैं तथा चार प्रविष्ट प्रहर्गमें बाबेज मो हैं जहाँ न्यूके नव प्रचारकी शिक्षा पाते हैं।

जिसो किमोका कहना है, कि मोसकको यताम्दोने श्रीनवादिबोने न्यूजीलैंडका पता लगाया। बिन्दु एक विषयका कोई सन्तोषप्रसन्न प्रभाव नहीं मिलता। श्रीलन्दाक नाविक जार्ज मासमानने १६५२ ई में यहाँ

था चार पक्षी पक्ष न्यूजीलैंडका नाम जनयाचारपत्र में कहाया।

न्यूटनपादत्रक—एक विख्यात दार्शनिक पोर ज्योतिःशास्त्रज्ञ पण्डित। इङ्ग्लैण्डमें बिन्दुकोनन प्रदेशके कोइटरबर्गजिल्लेमें जन्मभूँके उत्तमवर्ष नामक एक छोटेसे गाँवमें १६४२ ई०को २५वें दिसम्बरको न्यूटन का जन्म हुआ था। इनके मातापिता दोनों ही पाश्चोत्तरमन्दाकिनवर्गके उत्पन्न हुए थे। ये न्यूटनवर्ग पक्षी बिन्दुकोनन प्रदेशके कुइटरि नगरमें नाम करते थे। बाइ उत्तमवर्ग की तालुइदारो पा कर ये सोय यहाँ पा कर रहने लगे। इनके पिताने इन्हें ख्याती शिष्य पक्ष-कायको अध्यापके साथ विवाह किया था। न्यूटन जिन समय माताके गर्भमें थे, उसो समय २२वें पिताकी मृत्यु हो गई थी। इस प्रकार मोक्षसागरमें निमग्न हो जनकी माताने पक्षमर्गमें ही पुत्र प्रसव किया। वे अपने माता पिताको एक जो मलान थे। न्यूटनको परिवारके मरख पांचलोपयोगी पाप नरहनेके कारण उनको विधवा माता नामदेवके चर्चदोत्रक (Booster)के साथ पुनः विवाह करनेको बाध्य हुई। २५सम १०ल वर्षके बाइक न्यूटनमें मातामहीके तत्त्वविधानमें रच कर विद्या विद्या धारण को। बाइक वर्षको बचने में यन्मात्रके व्याकरण विद्या न्ययमें मर्तो होने पर मो विद्याध्यायको कोई विधेय लक्षित दिखानिमें समर्थ न हुए। इन समय उन्होंने यन्त्र-विद्या (Mechanic) पक्षीको इच्छा प्रकट की पोर यथासाध्य कोयमके मात्र वायवोक्-यन्त्र (Windmill), जलघड़ी (Water clock) तथा शङ्खुयन्त्र (Sundial) बनाये। इन सब विषयोंमें विग्रेय वारदक्षिणा शिक्षानि पर मो विद्याचर्चामें ही दूसरे दूसरे न्यूटनको पक्षी हीन थे। जोवनको शिक्षक कुछारने विद्या है कि इनके उपरिष्ठा ए न बाइकने एक दिन उनकी उपेक्षा कर इनके पैरमें एक ज्ञात मारी। इस पर रकीने ऐसो प्रतिज्ञा को कि, "अब तक उसको विद्याका पक्षिमाम पूर न कर दूगा तब तक बिसीने बातकोत न कहूंगा।" उनकी इस पान्क्तिक इच्छाने विद्वान्-जगत्का सर्वाच्च धामन दिनाका था। १६९६ ई०में इनके दितोय पिता 'रीमरक' कारनावास सिम्ब'की मृत्यु हो' पर इनके माताके मात्र

पुनः उनयवर् लोट आना पडा। इस समय आप माताके आदेशसे विद्या-शिक्षा का परित्याग कर खेतोवार। तथा उद्यानादिसे उत्कर्ष-साधनमें यत्नवान् हुए और इन सब कार्योंके अनिच्छक होने पर भी आप उन्हें कानिकी बाध्य हुए। जब फ़टवारमें न्यूटन माथियोंके भाय ग्रन्थाम-ई उत्पन्न द्रव्योंको विक्रय करनेके लिये जाते थे, तब वे किसी स्थान पर कलकारखाना देख उठर जाते तथा उसके चक्राटिको गति विशेष रूपसे देखते थे। नगरमें प्रवेश कर वे अपने मित्र एक ओपध-विक्रीताके घर पर जा उनसे पुस्तकालयको पुस्तके पढ़ते थे। इस तरह पुराने ग्रन्थपाठसे वे ऐसा आनन्द अनुभव करते थे कि उनके सथी जब तक द्रव्यादि विक्रय कर उन्हें नहीं पुकारते तब तक वे पाठसे उठते नहीं थे। उनकी विद्याभ्यासमें एकान्त अनुरक्ति देख कर उनके मामा 'रेभरेण्ड डब्लिउ असकाफ'-ने उन्हें फिर विद्यालयमें भेजनेका विचार किया। १७ वर्षको अवस्थामें ये कैम्ब्रिजके अन्तर्गत त्रिनिति कानिजमें पाठाभ्यासके लिये भेज दिये गये।

यहां उन्होंने १६६० ई०में प्रथम प्रवेशिका (Matriculation) परोना पास की। १६६१ ई०में आपने प्रवैत-निक 'सब-सिजर' (Sub sizar) हो विद्यालयमें विद्या-शिक्षा देनेको अनुमति पाई तथा १६६४ ई०में आप शिक्षित श्रेणोभुक्त हुए और १६६५ ई०में आपको 'बो-ए०'-की उपाधि मिला।

उन कई वर्षोंमें इनको कोई विशेष उन्नति नहीं देखो गई। जब इनको अवस्था २४ वर्षकी हुई, तब उन्होंने ज्ञानकी परा हाठा दिवा कर बोजगणितके अन्तर्गत द्विाट उपाया (Binomial theorem) विज्ञान गणितके परमाणुकी गति अनुधावनके हेतु नियमावली (Principles of flexion) तैयार की और गतिके नियम (Law of force) व्याख्याकालमें प्रदग्णके यहां तक कि चन्द्रका भी सूर्याभिसुख आकर्षण है यह उनके अन्तःकरणमें सङ्गसा जाग उठा। उन्होंने कई एक अर्थोंमें उक्त विषय प्रतिपादन करनेमें यत्न किया था और उत्तम पत्थरकी छविवीको और चाकटि टेबल ममक्षा था कि जिन प्रकार समग्र प्रदग्ण परस्पर आकर्षणशील

हैं, उसी प्रकार पृथिवी भी चाकटिगणितके अधीन है।

१६६४-६५ ई०में न्यूटन त्रिनिति कानिजर पाईग सदस्य (Law-fellowship) होनेके लिये 'राइट उभ-डेन' साइवके प्रतिद्वन्द्वी हुए थे, किन्तु दोनोंके सम्यक्-ज्ञानवान् होने पर भी उनके पञ्चापक 'डा० थ्यारो' मि० उभडेन ही पूर्वतन तथा बयोष्टह विवेचनाने सदस्य रूपमें नाये। १६६७ ई०में वे लुनियरसदस्य और 'एम० ए०'की उपाधि पा कर दूसरे वर्षमें लिनियर सदस्य नियुक्त हुए। १६६८ ई०में उन्होंने लुकासा (Lucasian) के अध्यापक हो थ्यारो साइवका पद अधिहार किया।

गणितशास्त्रमें प्रवेश कर उन्होंने पहले 'देकार्टे' (Descartes) लिखित ज्यामिति अध्ययन का और उक्त अध्यापकके प्रवर्तित ज्यामितिके साथ बोजगणितकी संयोजनाका प्रश्नास किया। इसके बाद उन्होंने 'वानिन'रचित Arithmetica Infinitorum नामक गणितग्रन्थ पढ़ा। इसके भी पढ़नेसे उन्हें विशेष लाभ हुआ था। यह पार्लोचना करते समय उसके उपरूपमें वे द्विपदप्रतिपाद्य गणित गणनाके उपाय उद्घाटन करनेमें सूरतम हुए।

न्यूटनने परमाणुकी प्रवहनगोलगत गणनाका पहला उपाय १६६५ ई०में कल्पना किया और उसके प्रतिपाद-नार्थ दूसरे वर्ष "Analysis per Equationes Numero Terminorum Inhibitae" नामका एक छोटा लेख भी लिखा। इसमें किसी तरहको भूल हो सकती है, इस भयके कारण उन्होंने पहले उक्त लिपि किसीको भी न दिखाई और अन्तमें उसे अपने हितैवि-बन्धु डा० थ्यारो साइवको दिया। थ्यारो साइवने इनको अनुमति ले कर उक्त हस्तलिखित प्रबन्ध मि० कलिनको दिखाया। इन्होंने इसे अपनी पुस्तकमें लिख लिया और १७१२ ई०में इसका प्रथम मुद्राकरण हुआ।

१६६५-६६ ई०में जब इङ्गलैण्डमें महामारी फैली थी, तब आप कैम्ब्रिज छोड़ कर लनयपमें आ बसे थे। यहाँ आ कर आपने पहले सब वस्तुओंकी स्वाभाविक-शक्ति और पृथिवीको उपरिस्थ वस्तुसमूहका भू-केन्द्र (Centre of Earth)की ओर स्वाभाविक आकर्षणकी चिन्ता प्रारम्भ की थी और यह भी अनुमान किया था

ई०में ये उक्त सभाके सदस्य निर्वाचित हुए और १६८८ ई०में शिक्षाविभागके प्रतिनिधि हो पार्लियामेण्ट सभा-सभाका आसन ग्रहण किया। इसके कुछ दिन बाद ये वार्षिक ६०० पौण्ड खेतन पर टकशासके प्रधानाध्यक्षके पद पर नियुक्त हुए। १६८८ ई०में ये पेरिस (Paris) नगरको 'रायल एंडेडिमो-आफ्-मायेन्स' सभाके फारन एसोसियेट और १७०३ ई०में रायल-सोसायटीके प्रेसिडेंट हो कर मृत्यु पर्यन्त उक्त पद पर सम्मानके साथ अधिष्ठित रहे। १७०५ ई०में इङ्गलैण्डकी महारानी एनी (Queen Ann) ने इन्हें 'नाइट'की उपाधि दी। १७२२ ई०में इन्होंने मूल और वातरोगके आक्रान्त हो कर कोनिटनगरमें १७२७ ई०की ८५ वर्षकी उम्रमें मानवलोला मध्यरण की। इन्होंने कुल बारह पुस्तकोंकी रचना की जिनमेंसे प्रिन्सिपियो, अप्टिकम्, एनालिसिस पर इकोपेपनिम न्यूमेरी टरमिनोरम इन्फिनीटम, एमथड आफ् एनकशन, एनालिसिस, वाइ इन्फिनिट सीरोज और वाइवलके संस्कारक ये सब ग्रन्थ प्रधान हैं। इन्होंने जो सब छोटी छोटी प्रशस्ति-पत्रो रायल-सोसायटीमें अर्पण की थीं, वे सब उक्त सोसायटीकी कार्य-विवरणी (Transactions) के ७ प्रसे १११ भागमें सन्निविष्ट हैं।

न्यून (स० त्रि०) न्यूनयति नि-ऊन परिहाणे वच् ।
१ गच्छा, नीच, क्षुद्र । २ ऊन, ऊम, शोद्धा ।

न्यूनतर (स० त्रि०) प्रचलित परिमाणका ह्राम, चलते हुए वजनके कम ।

न्यूनता (स० स्त्री०) न्यूनस्य भावः, तनू, टाप ।
१ क्षुद्रता, छोनता । २ अल्पता, कमो ।

न्यूनपञ्चाशद्वाव (स० पु०) न्यूनपञ्चाशतः ऊनपञ्चाशदा-
युनां भावो यत्र । ऊनपञ्चाशद्वावः पागल ।

न्यूनाङ्ग (स० स्त्री०) १ होनाङ्ग, जो अङ्ग किसीका होन
हो । २ खञ्ज, लङ्काङ्ग ।

न्यूनेन्द्रिय (स० त्रि०) जो एक न एक इन्द्रियका
होन हो ।

न्यूफाउण्डलैण्ड—ग्रेटब्रिटेनके अधिष्ठात एक द्वीप । यह
अटलाण्टिक महासागरमें अक्षा० ४६° ४०' से ५१° ३०'
७०' और देशा० ५२° २५' से ५८° १५' पश्चिममें अवस्थित

है। १००० ई०के पहिले नार्वे देशवासियोंने इस
देशका प्रथम आविष्कार किया। बाद १४८७ ई०में
जानकाबट (John Cabot)ने इसका फिर पता
लगाया। इस स्थानमें उपनिवेश स्थापनके लिए सर
जार्ज कालवर्ट (Sir George Calvert) कहे बार
चेष्टा कर प्रकृतकार्य हुए। अन्तमें १६२३ ई०में इस
द्वीपके दक्षिण पूर्वांशमें एक उपनिवेश स्थापित हुआ।
धीरे धीरे दूसरे दूसरे उपनिवेश भी स्थापित हुए हैं।

इस द्वीपका क्षेत्रफल ६०००० वर्गमील है। यहःके
अधियासियोंमें अधिकांश मस्प्रोजीवो हैं और बहुत
थोड़े मनुष्य खेतोवारी करते हैं। सभी खृष्टधर्माव-
लम्बो हैं—कुछ प्रोटेस्टेंट (Protestant) और कुछ
रोमन कैथलिक (Roman Catholic) हैं। अष्ट
लाण्टिकके मध्य अवस्थित और अधिकांश समय तक
वर्षके ठके रहनेके कारण यहाँको घोषमसृष्ट अत्यन्त सनी-
रस होती है। इसी समय दिन और रात अत्यन्त सुख
करक है। मस्प्रति यहाँके देशवासियोंने क्षपिकार्यमें
विशेष ध्यान दिया है। गेहूँ, उरद, जौ, चाम्, आदि
यहाँ प्रचुर परिमाणमें होते हैं। स्थानीय गवर्मेण्ट
नाना दिगोंमें नाना प्रकारके गपोंके बोजोंको चाम-
टनी करतो है। किन्तु मछली पकड़ना ही होप-
वासियों को प्रधान उपजोविका है। तैल और चमड़ेके
लिए मकर (Seals) और तैल प्रसृत करनेके लिए
कड (Cod) मछली भी पकड़ी जाती है। बहुतसंख्यक
लोग इस व्यवसाय द्वारा जोवनयात्रा निर्वाह करते हैं।
यहाँसे प्रचुर सामन (Salmon) मछली अमेरिका
आदि स्थानोंमें भेजी जाती है।

यहाँको राजधानी सेण्टजान्स (St. Johns) है
जो द्वीपके दक्षिण-पूर्वांशमें अक्षा० ४७° ३३' ८०' और
देशा० ५२° ४३' पू०के मध्य अवस्थित है। यहाँ पानी और
गैसको कले हैं और एक वाणिज्यगृह (Custom-
house) भी बनाया गया है।

उक्त द्वीपको दक्षिण पूर्वकी तीरभूमि बहुत बड़ी
है। किमी समुद्रकी ऐसी विस्तृत तीरभूमि देखनेमें नहीं
आती। यह विशाल तीरभूमि (Great Bank) ६०
मील चौड़ी है।

एक मानसवर्ता, स्वव्यापक तथा चोर काय-
 निर्वाहक तथा दारा यथाका मानसकाय चमता है ।
 श्योक्तम् (म० वि०) नियत घोडो यत्न । नियत काम
 बुद्ध ।
 श्योचमी (म० वि०) दाम्नी ।
 श्योदावर (वि० श्लो०) निवृत्त रथी ।
 श्योव्रज (म० वि०) नि वृत्त चरित्र प्राप्ति युक्त । पार्श्व
 मूल्य, कुटिल ।
 श्योतना (वि० श्लो०) १ बिजो रोति रस्य या पानम्
 वसव पादिमे मन्दिस्तत कोनेके निय इष्ट मित्र, वस्तु
 वाश्रय या श्लो बुलाता, निमन्त्रित करता । २ शून्यको
 पर्वत यहाँ भावन करमेके निय बुलाता ।
 श्योतनी (वि० श्लो०) वृक्ष ज्ञाना योगी को विवाह
 पादि मङ्गल पंचमों पर होता है ।
 श्योतवरी (वि० पु०) निमन्त्रित मनुष्य, लोभमें पाया
 दूषा पादमे ।
 श्योता (वि० पु०) १ बिजो रोति, रस्य, पानम्, वसव
 पादिमे मन्दिस्तत कोनेके निय इष्ट मित्र, वस्तु-वाश्रय
 पानिका वाज्ञान निमन्त्रय बुलाता । २ शून्य कोठार
 करनेको मङ्गल पर्वत पान पर शून्यके निय बुलाता ।
 ३ वृक्ष शून्य को शून्यको पर्वत यहाँ करारा श्राव या
 शून्यके पर्वत श्राव, दावत । ४ वृक्ष में ट या चम
 को पर्वत इष्टमित्र मन्त्रको इत्यादिके यहाँके बिजो यम
 या पद्य ५११ में मन्दिस्तत चरित्रा भोता या कर
 चमके यहाँ भेजा जाता है ।
 श्योरा (वि० पु०) वृक्ष दामोका सुपक, निवर ।
 श्योना (वि० पु०) शैरवा रेली ।
 श्योको (वि० श्लो०) शियो, श्योती पादिसे ममान इष्ट
 योगको प० बिना श्रममें पीठक लमीको पानोके साथ
 करते हैं ।
 श्योक्तानिम् (५० श्लो०) श्योक्तानिमात्र, मन्दिमाता,
 ना चक्षुष्येति इति । १ शिव, महादेव । २ शराब्धि,
 मानाविष्ट । ३ दाम ।
 श्योक्तमन्त्र—श्याक चर्मोवर्द्धि भनोति । चर्मावर्त्त
 त्रय विदारके महाशरीर पर श्लुष्य दृग्, तत्र श्योके
 दोरे भनोतिसे श्याक चर्मो कथाका व्याह । एते मध

वे मित्रमिहव्यट तापय दृग् । यद्यो मित्रमिहव्यट श्यामी
 चन का निराशुद्धीता नामने प्रमिय दृग् । निराश्रम
 नांका ताप एते भो चर्मोवर्द्धि (५११ ई० में) चर्म
 पचना उत्तराधिकारी बनाया । एष पर श्याकम मच
 व्यटको बहुत दुःख हुआ क्योंकि नि श्रावण पर चर्मोका
 दावापत्रिक या । कुछ वर्ष तत्र श्याकाका मापन श्राव
 पद्य कर चर्मोके कुछ पर्वते म पद्य कर निये चोर
 चर्मोके एक दन विना रथो । किन्तु वे व्यट पना
 शरव कामप्यव पचवा बुद्धिमार्गदर् नहीं थे; चर्मके
 दोनों मन्त्रो दुर्मेनकुलो ली चोर दुर्मेनकुलोके हाथमें
 विधिय चमता थी । निराशुद्धीनामे देखा कि तत्र तत्र
 इनका विनाय नहीं बिबा जाया तथा तत्र निरापहकी
 लभ्यावना नहीं । इस समय श्याकममन्त्रव्यट चोर दुर्मेन
 कुलो लोना एक नाथ सुश्रीदाशान्ते रहते थे चोर
 दुर्मेनकुलो हाथमें शासनकर्ताके प्रतिनिधि पदपुत्रो
 कर । चर्मोवर्द्धि श्योका कि माचवानताके साथ एन
 दोनों मन्त्रिषोको कामसे चमन कर मन्त्रमें ही मङ्गल
 है । पीठे श्याकमने वनका पमियाय समक थाका जा
 कर लावोमता कायम कर ली । निराशुद्धीना एन समयमें
 सुपचाय बैठे न रथे चोर चर्मके हाथसे चर्मोको चर्मावर्त्त
 के निय कुछ घातकीको नियुक्त किया । इन चर्मोके
 थाका जा कर दीपकर रातको दुर्मेनकुलोको श्राव
 थाका चोर ११३ दिन बाद सुश्रीदाशान्ते शहरमें दिग्
 दशके कोनेनकुलोको भी हत्या की । श्याकम चोर
 चर्मके धार्द्र शैवट पद्यकर महाशरीर पानके निये सह
 रथे थे । किन्तु इस समय दोनों मित्र गए चोर निराशु
 द्धीनाके बिचय बह्यग्न्य रहने लगे । किन्तु निराशुद्धी
 वृक्षे शीर धि नगनि चर्मोके चर्मावर्त्त शोका भाव्योको
 चमपुर् भेज ही दिया ।
 श्योक्तानिमात्र—श्योक्तानिमे एक शिनापति । १५०१ ई०
 में श्योक्तानिमे एक लीवरी बार भारतवर्ष पर पाक
 मच किया तत्र समय में शिनापति वन कर वन देगध
 थाप । कोचिनमें पदु क कर चर्मोके दिया, कि चर्मके
 श्याका श्योक्तानिमे श्याक महाशरीर कर रथे हैं । चर्म
 १५०१ श्याकमे चर्म शिने चोरा चर्मावर्त्त पद्यकर चर्मा
 विष्ट है । किन्तु श्याक श्याक श्याक श्याक श्याक श्याक

उद्दोम हो कर न्वेभार्के विरुद्ध युद्धजहाज भेजा। कीचिन-
के राजाने उन्हें छिप रहनेकी मलाह दी, किन्तु न्वेभा
वैसे कायुरुप नहीं थे। ज्यों ही विपक्षके लड़ाज सामने
होने लगे, त्यों ही उन्होंने एक एक कर उनके सौ
जहाजों पर इस प्रकार आक्रमण किया कि वे चत्राव-
का कीर्ति उपाय न देख सन्धिसूचक पताका उठानेकी

वाध्य हुए। न्वेभाने उनके साथ ऐसा उदार व्यवहार
किया था, कि मामगे-राजने उन्हें कालिकट देखनेका
निमन्त्रण किया, किन्तु आगहवा ही जानेके कारण
उन्होंने निमन्त्रण स्वीकार न किया और अपने
जहाज पर मान असयाय लाट कर स्वदेशको चल
दिये।

प

प—पकार, पञ्चमवर्गका प्रथम वर्ण, व्यञ्जनवर्णका
इकीमवां अक्षर। इसका उच्चारण श्रोत्रसे होता है,
इसलिये शिञ्जामें इसे श्रोत्रवर्ण कहा गया है। इसके
उच्चारणमें दोनो श्रोत्र मिलते हैं, इसलिये यह स्पर्श-
वर्ण है। इसके उच्चारणमें शिञ्जाके अनुसार विवार,
श्वास, घोष और अल्पप्राण नामक प्रयत्न लगते हैं। प के
पेछि रहनेसे विसर्गके स्थानमें उपाधानीय वर्ण होता
है। वर्णाभिधानतन्त्रमें इसके वाचक शब्द ये हैं,—
सुरप्रियता, तीक्ष्णा, लोहित, पञ्चम, रमा, गुह्यकर्त्ता,
निधि, श्रेय, कालरात्रि, सुरारिहा, तपन पालन, पाता,
देवदेव, निरञ्जन, सावित्री, पातिनी, पान, वोरतन्त्र,
धनुर्वर, दक्षपार्श्व, सेनानी, मरीचि, पवन, शनि,
सखीय, लघिनी, कुम्भ, अनलरेखा, मूला, द्वितीया
इन्द्राणी, लौलाची, मन और आत्मक।

इस वर्णका स्वरूप—

यह 'प' अक्षर अव्यय और चतुर्वर्गप्रद है। इसको
प्रभा शरत्कालीन चन्द्रमा-सी है। यह वर्ण पञ्चदेवमय
और परमकुण्डली, पञ्चप्राणमय, सर्वदात्रिशक्तिमन्वित,
द्विगुणावहित, आत्मादितस्वसंयुत एवं महामोहप्रद
है। (कामधेनुतन्त्र ५)

इस वर्णमें शम्भु, ब्रह्मा और योगवती अवस्थान
करती हैं।

इसका उत्पत्तिप्रकार—

“कुरेकपद्यास्त मूर्धगे दन्तगस्तथा।

स्तवर्गलघानोप्युयासुपुष्पमानसंमथान् ॥” (प्रवचनसार)

इसका ध्यान—

“विचित्रवर्णनां देवी द्विगुणां पञ्चलक्षणाम्।

रक्तचन्दनलिताङ्गीं पद्ममालाविभूषिताम् ॥

मणिरत्नादिभेद्युर हारभूषितविप्रदाम्।

चतुर्वर्गप्रदां नित्यां निरगानन्दमयीं पराम् ॥

एवं ध्यात्वा पद्मरन्तु तन्मन्त्रं दशधा जपेत् ॥”

मातृकाग्यासमें इस वर्णका दक्षिण पाश्वर्कमें न्यास
किया जाता है। जाव्यादिमें इसवर्णका प्रथम प्रयोग
करनेमें सुख होता है।

‘सुखमग्मरणयत्नेशदुःखं पवर्गीः’ (वृत्तरत्ना० टीका)

प (म० पु०) पातप्रति वेगीन वृत्तादीन पत-कर्त्तरि ङ।

१ पथन, हवा। पतति वृत्तात् ङ। २ पर्ण, पत्र, पत्ता।

पोयते इति पा ङ। ३ पान। ४ पातन। ५ अन्त।

६ पाता, वह जो पालन करता हो। पाति रचति पा-

क, इसी व्युत्पत्तिसे पाता यह अर्थ हुआ। यह किसी

शब्दके बाद प्रयुक्त हुआ करता है। यथा—गोप, नृप

इत्यादि।

“राजस्नातकयोश्चैव स्नातको वृषभानभाक् ।”

(मनु २।१११)

मुम्बोच म्पाकरचरिं एह चतुष्पदमि निवा गया गया है। पसुवादि। सुवासियो का महोत्त है।

"मः एवादि से सुवादिनामवादिमोनिचीपुमो।"

(वचिचल्लम)

पक्ष (वि० पु०) पक्ष, पर हैना वह पक्षयव त्रिमने विहिया, पतिङ्गे पाटि चधमि चरुते हैं।

पैलुङ्गे (वि० स्त्री०) पैलुङ्गे देवो।

पया (वि० पु०) वह पशयं त्रिदे जिना कर इवाका भी का विभी पोर मे जाने हैं विजना हैना। यह मित्र मित्र बलुचो का तथा मित्र मित्र पाकार पोर पाकतिवा बनाया जाता है। इनके जिनामिने वायु चन कर घरीर-मि जयती है। छोटे बड़े त्रिमने प्रकारके पशयमि वायुमि गति उत्पन्न की जाती है, समवे जिये केवल 'पया' मन्त्रने काम चन बढता है। पक्षके पाकारका जोमिने कारण पयवा पयसे पक्षमे बनये कारके कारण इसका नाम पक्षा पड़ा है।

पयाकुची (वि० पु०) वह कुची को पया कोचमिने किरी नियन किया गया हो।

पक्षाज (वि० पु०) पक्षाज देवो।

पक्षायोग (वि० पु०) पक्षके अणरका गिनाकः।

पक्षी (वि० पु०) १ पक्षी, विहिया। २ पक्षी। ३ वह पतको पतको इनको पक्षिओ को माचुके निरे पर जाती है। ४ मन्त्रके वह बसो को चरुताच पयमे देवो होतो है पोर जिने इरकीके डिलोमि चोटका देते हैं। ५ पक्षी पति गा। ६ एक प्रकारका जल कपड़ा को मरुके नाममे पहाडोमि पुना जाता है। (स्त्री०) ७ छोटा पक्षा।

पक्षुका (वि० पु०) मनुष्यके घरीरमे खरिसे पावका वह भाग जहाँ हाथ जुड़ा रहता है, खरिसे पोर हाँदका जोड़ पक्षोर।

पक्षुरा (वि० पु०) पक्षुरा देवो।

पक्षिक (वि० पु०) पक्षिक देवो।

पक्ष (वि० वि०) १ पक्ष, लपका। २ मन्त्र विजाम। (पु०) ३ पाणमको पोर निलचट ककर पादिमे दोमि जाना पक्ष मरु। इनको लक्ष्मी बहुत मजबूत होमै।

के पोर मजामोमि जयतो है। इवका जियना भी बहुत पक्का होता है। लक्ष्मीमे एक प्रकारका रग भी बहुत भरते हैं। ३ एक प्रकारका जलज को निचरपुनके पाता है।

पक्षत (वि० स्त्री०) १ पक्षि पतिो। २ भोजनके समय भोजन करनेवालीको पक्षि। ३ ममा, ममात्र। ४ सुखाकोके करपेजा एक पीकार को दो मरुड होवे बनाया जाता है। इस पीकारको मे कोकोको तरु खान खान पर माडू देते हैं। इनके अघरी डिलो पर तामिसे बिनाकेक सुन इमनिये क मा दिने प्राते हैं त्रिममि तामा को ना रहै। ५ भोज।

पक्षना (वि० वि०) पक्षु, ल गहा।

पक्षा (वि० वि०) १ पक्षु, ल गहा। २ पक्ष, बोकाय।

पक्षावत (वि० पु०) पायताना, मोडवारी।

पक्षात्र (वि० पु०) एक प्रकारको मन्त्रो।

पक्षी (वि० स्त्री०) एक प्रकारका छोटा को भागव जेतमि जगता है।

पक्षी (वि० स्त्री०) मही जिने मतो पयमि बिनाके इर मात होत जाम पर हाजरी है।

पक्ष (वि० पु०) १ पाँचको मरुगा वा पक्षु। २ पाँच या पक्षिक मनुष्योका मरुदाय ममात्र मम जाधारण जमता भोज। ३ पाँच वा पक्षिक मनुष्योका ममात्र को विमा अमरुठ या सामनेका निबटानव जिये एकज को ग्याय करनेवाको ममा। ४ इनाम। ५ मरु को पीरदारोच दारके सुठममे होरा प्रकरी पटापतट सुकटममे प्रकरी मदायताके जिये निवत हो।

पक्षुरा (वि० स्त्री०) एक प्रकारको व टाई त्रिममि पित-को जयमके पाँच मागामिसे एक भाग जमोदारको टिटा जाता है।

पक्षीव (वि० पु०) पाँच कोमकी कम्पार्ड पोर कोफाई के बोचमे बनी हुई कामोका पक्षिक मूमि, कामी।

पक्षीवो (वि० स्त्री०) काटीकी पक्षिका।

पक्षीनिया (वि० पु०) एक प्रकारका भेना मरीज कपड़ा।

पक्षनाथ (वि० पु०) बदरामाव दारकामाव, लक्ष्मा, रमाम पोर योगाव

पंचनामा (फा० पु०) वरु कापन जिम पर पंच लोनों
 ने अपना निर्णय या फौसना लिखा हो ।
 पंचपात (हि० पु०) पंचोली नामका पौधा, पंचपनहो ।
 पंचवीरिया (हि० पु०) सुमनमानोंके पांचों पीरोंकी पूजा
 करनीवाला ।
 पंचभर्तारौ (हि० स्त्री०) द्रोपदी ।
 पंचमेल (हि० वि०) १ जिसमें पांच प्रकारकी चीजें
 मिली हों । २ साधारण । ३ जिममें सब प्रकारकी
 चीजें मिली हों, मिना जुला डेर ।
 पंचरंगा (हि० वि०) १ पांच रंगका । २ तरह तरहके
 रंगोंका रंग विरंगका ।
 पंचलडा (हि० वि०) पांच लडोंका ।
 पंचलडी (हि० स्त्री०) गलेसे पहननेकी पांच लडोंकी
 माला ।
 पंचलरो (हि० स्त्री०) पचलडी देखो ।
 पंचहजारी (फा० पु०) १ पांच हजारीकी सेनाका अधि-
 पति । २ एक पदवी जो सुगलसाम्राज्यमें बड़े बड़े
 लोगोंकी मिलती थी ।
 पंचानवे (हि० वि०) १ नब्बे और पांच, पांच कम मी ।
 (पु०) २ नब्बेसे पांच अधिकको संख्या या पद्द जो
 इस प्रकार लिखा जाता है,—८५ ।
 पंचाक्षर (हि० पु०) पञ्चाक्षर देखो ।
 पंचायत (हि० स्त्री०) १ किसी विवाद, झगड़े या और
 किसी मामले पर विचार करनेके लिये अधिकारियों या
 चुने हुए लोगोंका समाल । २ एक साथ बहुतसे लोगोंकी
 रकबद । ३ बहुतसे लोगोंका एकत्र हो कर किसी
 मामले या झगड़े पर विचार, पंचोंका वाद-विवाद ।
 पंचायती (हि० वि०) १ पंचायतका क्रिया हुआ, पञ्चा-
 यतका । २ पञ्चायत सम्बन्धी । ३ बहुतसे लोगोंका
 मिला जुला, सामिकी, जो कई लोगोंका हो । ४ सर्व-
 साधारणका, सब पक्षोंका ।
 पंचालिस (हि० वि०) पैंतालीस देखो ।
 पंचो (हि० पु०) गुप्तो दण्डके खेलमें दण्डसे गुप्तों-
 की मार कर दूर फेंकनेका एक ढंग । इसमें गुप्तोंकी
 बाएँ हाथमें लकाल कर दखने हाथसे मारते हैं ।
 पंचोली (हि० स्त्री०) १ पश्चिम भारत, मध्यप्रदेश, बखई

और बंगालमें मिननेवाला एक पौधा । इसके पत्तों पीर
 डंठलोंमें एक प्रकारका सुगन्धित तेल निकलता है । इस
 तेलका व्यवहार यूरोपके देशोंमें बहुत होता है । इसकी
 खीरी पानके भोटोंमें की जाती है । पौधे दो दो फुटके
 फामले पर लगाए जाते हैं । जो पौधे एक बार लगाये
 जाते हैं उनमें दो बार छः छः महीने पर फसल काटी
 जाती है । जब दूसरी फसल कट जाती है, तब पौधे
 खोद कर फेंक दिये जाते हैं । डंठल छूष जाने पर
 उन्हें बड़े बड़े गड्ढोंमें बांधते और विक्रीके लिये भिज डेते
 हैं । डंठलोंसे भवके द्वारा तेल निकाला जाता है । इस
 सेर लकड़ीसे करीब १२से १५ सेर तक तेल निकलता
 है । यूरोपमें इस तेलका व्यवहार सुगन्ध द्रव्यकी भाँति
 होता है । इसे पंचपा । और पंचपनहो भी कहते हैं ।
 (पु०) २ यह उपाधि जो बंगपरम्परासे चली आती
 हो । प्राचीन कालमें किसी नगर या ग्राममें व्यवस्था
 रखने और छोटे मोटे झगड़ोंको निवृत्तानेके लिये पांच
 प्रतिष्ठित कुलके लोग चुन लिये जाते थे जो पञ्च कह-
 लाते थे ।

पंछा (हि० पु०) १ पानीको तरहका एक स्राव जो
 प्राणियोंके शरीरसे या पेट पोषोंके अंगोंसे चोट लगने
 पर या यों हो निकलता है । २ झाने, फफोले, चोचक
 आदिके मोतर भरा हुआ पा ।

पंछाना (हि० पु०) १ फफोला । २ फफोलेका पानो ।

पंछो (हि० पु०) बछी, चिलिया ।

पंजड़ो (हि० स्त्री०) चोसरके एक दाँवका नाम ।

पंजना (हि० स्त्री०) धातुके धरतनमें टाँके आदि द्वारा
 जोड़ लगाना, भतना, भाल लगाना ।

पंजरना (हि० स्त्री०) पंजना देखो ।

पंजरी (हि० स्त्री०) अर्थी, टि। ठो ।

पंजहजारी (फा० पु०) ए. . २५ धि जो सुमनमान राजाओं
 के समयमें सरदारों और दरवारियोंकी मिलती थी ।
 ऐसे लोग या ती पांच हजार सेना रख सकते थे अथवा
 पांच हजार सेनाके नायक बनाये जाते थे ।

पंजा (फा० पु०) १ पाँचका समूह, गाहो । २ हाथ या
 पैरको पाँचों अंगलियोंको समूह साधारणतः हथेली-
 के सहित हाथकी और तलबेकी अगले भागके सहित

पंजर (हि० वि०) १ जो मंथ्यामें टग खीर गाँव हो।
 (पु०) २ टग खीर गाँवकी मंथ्या या पंज, १५।
 पंजरहता (हि० वि०) जो पंजरहने काय या हो।
 पंधना (हि० क्रि०) धूमना, लपना।
 पंध (च० पु०) १ एक गज विपत्ति दारा यामो ऊपर
 खीटा या चट्टाया जामा है। चमना एक खीरमें दुधकी
 खेर पदवाया जाया है। २ विपत्तिका। ३ एक प्रकार-
 का रमना पदवीको गुना। ४ समी मंथीको इधरका ही
 भाग टका रहता है।
 पंधा (का० पु०) एक प्रकारका पीला रंग जो कम रंगमें
 काम जाता है। इसकी समुक्त प्रयोगों इस प्रकार है—
 ४ कर्ताज मोटा रमनाकी युगलाकी १। ५ छोटा पंधक-
 ३ मेकावमें मिलाते हैं। कम की भाँसे पर चने ६ मीर
 कपलते हुए पानोमें मिला दिये हैं। पंधी इस जलमें
 जलती भी मिते चोर एक घंटे तक हाथमें गुलाने हैं।
 यह रंग कसा होता है, पर गति कमतीको जगह एकम-
 चीर मिलाया जाय तो रंग पका होता है।
 पंधर (हि० स्त्री०) पंधरी देखो।
 पंधना (हि० क्रि०) १ लोना। २ साँध लेना, पना
 लगाना।
 पंधरि (हि० स्त्री०) प्रवेगदार या गुरु, एक फलक या
 घा जिसमें लो कर किमी मजानमें जाय, खोटा।
 पंधरिया (हि० पु०) १ दायाँप, दरवान। २ मन्नासके
 जन्म लेने पर या किसी चोर मद्रन पधमर पर दरवाजे
 पर बैठ कर मद्रन-गाँव गानेवाला याचक।
 पंधरो (हि० स्त्री०) पंधरी देखो। २ वाटयाल, लडाऊ,
 पंधरी।
 पंधाडा (हि० पु०) १ कम्पित चाम्याल, कदाना,
 टाम्बान। २ पद्धाई हुई घास, बासका चतक। ३ एक
 प्रकारका गीत।
 पंधार (हि० पु०) राजपूतोंकी पर जाति।
 पंधा (हि० वि०) परमा देखो।
 (हि० वि० क्रि०) छटाना, दूर करना, फेंकना।
 पंधारना (हि० स्त्री०) लोहारोंकी एक धोजार जिसमें
 पंधारो (हि० स्त्री०) लोहारोंकी एक धोजार जिसमें
 लोहमें छेद कायते हैं।
 पंधरा (हि० पु०) एक बाजार लडा पंधारियोंकी

पंधा (हि० वि०) पुनी पल बलिका जो चकरो, पंधरा पाँ-
 दगामें लडा चकरो मित लडा पूरी प्रथमा है।
 पंधावार (हि० पु०) पंधाका दिन।
 पंधारी (हि० स्त्री०) पंधरी देखो।
 पंधकी (हि० स्त्री०) पंधा देखो।
 पंधीरो (हि० स्त्री०) पंधा देखो।
 पंधरा (हि० पु०) एक रमना। यदि कोई कोई पंधरा या
 लकरी है। इसमें एक मगल, एक भाग खीर मगल
 होता है।
 पंधरी (हि० स्त्री०) पंधरी देखो।
 पंधरु (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारका जिला या भाग, पंधर
 या लडा। २ एक प्रकारका एक एक भाग या एक भाग
 गुणना जिसमें सादगार है। ३ हीन गुण साहि लंड
 सिफावनेको जिला या भाग। ४ एक प्रकारका लोहार।
 पंधरुवार (हि० स्त्री०) पंधरुका दिन।
 पंधरुज (हि० क्रि०) १ एक प्रकारका कामना, पंधरु।
 २ पना लगाना, लंड निगाहरना। ३ कुछ काममें सेक
 रगना, मित खरना, लोहारना। ४ निरपहार करना,
 कायमें करना। ५ पंधार करना, मग कर लेना या
 मिलाया। ६ पंधरु कायना या लोहार कायना।
 पंधरु कामना। ७ कुछ कामें दूधकी खीर विविध भास
 पावे पर रीकना जोकना। ८ किसी काममें पंधरु मगुमें
 मग ११ पंधरु पंधरुमें पंधार करना। ९ लोहनी,
 धनने प धो। १० किसी काममें लुके हुए पंधरु की जामा।
 पंधरी—गदि गुण परिपक्वमें पंधरी मो लो मंधरुमें लगे
 एकल मीने।
 पंधरुमा (हि० स्त्री०) पंधरुनेका काम किसी मंधरुमें
 पंधरा, पंधरु करना।
 पंधरुना (हि० क्रि०) १ किसी काममें लुका या खरना,
 पानना। २ पंधरुने का काम करना, पंधरु करना।
 पंधरा (हि० क्रि०) १ पंधरायका पंधरु जामा, लुका
 न रहना। २ मित लेना, मोकना, विधना, गुना। ३
 कामना ठहराना, मोटा पटना। ४ लोह फुँगी पाँ-
 का हम पंधरुवामें पंधरुवा, कि लगेमें मधाट या जाय,
 पेशमे भरना। ५ वामरमें मोटियाका मव घरीको पंधर
 करके पंधरु चरमें या जामा।

पक्ष्वा (वि० पु०) जोड़ा ।
 पक्ष्वाण (वि० पु०) पक्ष पक्षियों वस्तु जो धोमें तल कर बनाई जाती है ।
 पक्ष्वाणा (वि० लि०) १ पक्षिकों का नाम करना, पक्षिकों में प्रकृत करना । २ पक्ष पर तैयार करना ।
 पक्षानु (वि० पु०) पूर्ण पक्ष उत्तर ब्रह्मण, पक्षानाम पक्षानाम तथा ब्रह्मणमि मिनमनाना पक्ष पक्षारथा भांस । पक्षो भर्तुंके निरे इत्तु पाये बनती है । इत्तुके जाता तथा पक्षको कहियेके डोकरे भी बनते हैं ।
 पक्षार्थ (वि० श्लो) १ पक्षानेकी जिज्ञासा भा भाव । २ पक्षानिधो मन्त्रपुरो ।
 पक्षाना (वि० लि०) १ पक्ष पादिको पुष्ट पक्ष तैयार करना । २ पक्ष या गामीके द्वारा मक्षाना या तैयार करना । ३ माता पुरो करना सोडा पूरा करना । ४ जोके पु सो पाक पादिको दय पक्षारथि पक्ष पागा वि इत्तुमें पक्ष या मवाद या आय ।
 पक्षार (स० पु०) पक्षरथि काः । पक्षरथिपक्ष, 'प' पक्षर ।
 पक्षारथि (ल० लि०) जिम्मेका पादिके 'प' पक्षर हो ।
 पक्षारान (स० लि०) जिम्मेका पक्षिके 'प' पक्षर हो ।
 पक्षान (वि० पु०) १ पक्षरथा भाव । २ पक्ष मवाद ।
 पक्षि—जातिविशेष ; पाक्षिकारके मद्राचल पक्षर केवको तापुबने इत्तुका भास पाचिक है । मद्राचलका नाम करकेके कारण के निरुद्ध लम्बि जाती है । इत्तुमें जो विद्याकपक्षानके निरुद्धकर्तो पक्षानमें नाम करती है कि आतोय काय पक्षानके विशेष पक्षपाता है ।
 पक्षु—सर्वविशेष मन्त्रपुरेके इत्तुनामके कथ्यका निवता । मन्त्रपुरके मत्तमान रात्रर्षिमपक्ष पक्षिको पक्षुनामके मजात वतनाते है । जो इत्तुयां वस नात्तुनाम पुरोहितार्थे करती है कि साधारणतः 'नरको कक्षनातो है । ये कियो मन्त्रके मत्तको पक्षोभूत करके पाचल पर विद्यतो है पक्षर उचि वृधु करकेके निप विचिके पक्षुपार पूजा करतो है ।
 पक्षुमती—तेलरुदेमके तियागी इत्तुका का एक भेट । ये मोम रुद्धके वन्द्यारथि है । इत्तुके पाचार विचार तथा वृत्त पक्षिकोय पाचार विचारके निवमीके बक्षो निवता है ।

पक्षिनी—एक स्वमयकोल जाति । मन्त्रपुर पक्षर तैलरु देयमे इत्तुका नाम है । (पक्षो यताम्बोर्मे रात्रपुदयोके पक्षारथारके ममाके काम पर ये मोम कहां तर्था चमि गडे । ममीके ये कियो काम मगध धर वना का नहीं रहति । तैलरुदेमनामके इत्तुको इत्तुकेके कियो कियो पक्षिके मन्त्ररुपय इत्तुके कथापक्षानिमे उत्पन्न हुए हैं ।
 पक्षोरथ मन्त्रुपदेमके मक्षरथीय एक राजा । पक्षो यताम्बोर्मे के शासन करती थ । इत्तुकी प्रवर्तित सुद्रा मो विवती पाई मरे है ।
 पक्षोडा (वि० पु०) सो वा विवने पक्षा का पुष्पाई हुई विसल या वीडोको बड़ी ।
 पक्षोकी (स० खी०) पक्षोका देवो ।
 पक्षो (स० खी०) इत्तुहृत्त, पाक्षर नामके वेड़ ।
 पक्ष (स० पु० खो०) पक्षिके म्वादिकरुत्तमानमिति पक्ष जिप पक्ष, मक्षर' तस्य काय काक्षरम्वा कोनाकक्ष म्बो का मल । मक्षरकाय, पाक्षरथीका भासकाम ।
 पक्षोड (स० पु०) वरिमरुत्त, पक्षोडा ।
 पक्षर (वि० पु०) मद्रिका, मद्राव ।
 पक्षारि (वि० पु०) कासी ।
 पक्षा (वि० वि०) १ पक्ष या फल को पुष्ट हो कर मक्षरके योग्य हो गया हो को कक्षा न हो, पक्षा कृपा । २ जो पक्षमा पुरो काकु या पौडताको पक्षुच मया हो, पुष्ट । ३ जिम्मेके पूर्णता या गई हो, जिम्मेके कक्षर न हो, पूरा । ४ जो पक्ष पर कक्षा या मन्त्ररुत्त हो मया हो । ५ जिम्मेके मन्त्रार या पक्षोचनकी प्रक्षिवा पुरो को गई हो, काय पक्षर पुष्पका, तैयार । ६ पक्षुमवमात निपुत्र, दय, कथिपार, तक्षरथीकार । ७ पक्ष पर मकाया या तैयार कियो कृपा पक्ष पर पक्षा कृपा । ८ जो कथ्यका या निपुत्र कथिके द्वारा बना हो । ९ जिम्मेके पक्षाम हो, जो मय मया है । १० किर इत्तु निवपत, न इत्तुकेनामा । ११ इत्तु, मन्त्ररुत्त टिकाल । १२ जिम्मेका मान प्रामाचिक हो, उक्तकायो । १३ मयाचिक ममाचोके पुष्ट, जिम्मेके मून या कक्षरके कारण वदलना न पक्षु या को पक्षुका न हो मरे, कोक म्भा कृपा मया तुता ।
 पक्षारत (वि० खी०) इत्तुका, मन्त्ररुत्त, निवप, पौडार्थ ।

पक्वुर (हि० वि०) पक्का, पुरता ।

पक्वान—भंगरेजाधिकृत बछ्पराज्यके अन्तर्गत तेना-
मेरिम प्रदेशके मोमान्तमें प्रवाहित एक नदी । यह ४०
कोम बह कर विक्टोरिया पेश्वके निकट गङ्गोपसागरमें
गिरी है ।

पक्वौड (म० पु०) वृक्षविशेष, पखोडा नामका एक
पेड़ । पर्याय—पञ्चकन्य, वर्द्धन, पक्वरकक । गुण—दृष्टिके
अञ्जनके विषयमें प्रयुक्त, कटु, और जीणोज्वरनाशक ।

पक्वथ (म० त्रि०) पच-तथ्य । १ पाकयोग्य । २ जठ
रान्नि द्वारा जीर्ण करणाय ।

पक्ति (स० स्त्री०) पचते परिणम्यते इति भाषि क्तिन् । १
गौरव २ पाक ।

पक्तिशूल (स० स्त्री०) पक्ती भुक्तस्यान्नादिकस्य परिणामे
जायते पत्शूल रोगविशेषः । परिणामशून । पर्याय—
पाकज, परिणामज ।

पक्व (स० त्रि०) पचतीति पच-पाके ढव् । १ पाककर्ता,
पाक करनेवाला । (पु०) २ अग्नि, आग ।

पक्व (स० स्त्री०) पचतेऽनेन पच-त्र (गृध्रवीपचिवचीति ।
उ० ४।१६६) गार्हपत्य अग्नि ।

पक्वितम (स० त्रि०) पाकेन निवृत्तं पच् क्वित्, मम् ।
(इतिः क्वित् । पा ३।३।८८) 'क्वित्तेमं नित्यं' इति मम ।
सुपन्न प्रभृति व्याकरणे 'डिधत्स्त्रिभृति' इस सूत्रके
अनुसार- 'त्रिमक्' प्रत्यय द्वारा यह पद सिद्ध हुआ है ।

'प्राकिम, पाक निवृत्त, जो पाक द्वारा सुपन्न हो ।

पक्व (स० पु०) पच वाहुलकात् खल् । १ राजभेद ।
२ पाक ।

पक्वथन (म० त्रि०) पक्वथ-पस्त्वथ इति । पाकयुक्त ।

पक्वप्रणाली—भारतकी दक्षिणी सीमा कुमारिकासे काली-
मियर अन्तरोपतक तथा सिंहाल द्वीपके मध्यवर्ती जो
संसुद्र विभाग है वही पक्वप्रणाली कहता है । भोल-
न्दाजें शासनकर्ता पक्वके नामानुसार ही इस प्रणाली-
का नामकरण हुआ है । इसीसे मध्यखलमें भारत और
सिंहालद्वीपके मध्य कितनी ही द्वीपावली देखी जाती
है । वहाँ भारतवासीका 'रामेश्वर सेतुवन्ध' और
यूरोपियनोंका 'एडामस ब्रिज' है । प्रवाद है कि
खुदासे लौटते-सेमथ औरामचन्द्रने अपने निर्मित सेतुका

खण्डिखण्ड कर डाला, यही छोटे छोटे द्वीप अमक
एक एक खण्ड है । इस प्रणालीके मध्यस्थित रामेश्वर
द्वीपपुञ्ज और उनके परस्परके आभ्यन्तरिक संसुद्र देख
कर अनुमान किया जाता है कि एक समय सिंहाल-
द्वीप भारतके साथ मलग्न था । इस प्रणाली की कर
जहाजादि हमेशा आ जा नहीं सकती ।

पक्व (स० स्त्री०) पच्यते इम पच क्त, (पचो यः । पा ८।२।५८)
इति निष्ठा तस्य वत् । स्वयतण्ड, लादि, भक्तप्रभृति,
भात आदि । अन्नमाकका विविधविध इस प्रकार निखा
है—

पूर्वाभाभिमुखी भूत्वा उत्तरागामुखेन वा ।

पचेदन्नञ्च मन्वादे सागर्हं च विवर्जयेत् ष

अग्न्यागामिमुखे पक्त्वा अमृतान्न निषेध च ।

पूर्वमुखी धर्मदाम शोभदानिध दक्षिणे ॥

श्रीदामश्चेत्तरमुखी पतिकामश्च पश्चिमे ।

ऐशाद्व्याभिमुखे पक्त्वा दक्षिणे जायते नरः ॥”

(नारदसू० ४२ प०)

पूर्व वा उत्तरकी ओर मुख करके मध्याह्नकालमें
अन्नपाक करना चाहिए, सायंकालमें नहीं । अग्नि की
में अन्नपाक करनेसे वह अमृत तुल्य होता है । धर्मार्थी
की पूर्वमुख, धनार्थीकी उत्तरमुख और पतिकामकी
पश्चिममुखमें पाक करना चाहिये । ऐशानाभिमुखमें पाक
करनेसे दरिद्र होता है ।

“यदा तु सायसे पात्रे पक्वमन्नाति वै द्विजः ।

स पाणिष्ठोऽपि भुंक्तेऽन्नं रौरवे रिपच्यते ॥”

ब्राह्मणकी लोहपात्रमें पक्व वस्तु खानो नहीं चाहिये,
खानेसे रौरवनरक होता है ।

“तामे पक्त्वा चक्षुर्हानिमर्गो भवति वै क्षत्रं ।

स्वर्णपात्रे तु यत् पक्वं अमृतं तदपि स्मृतं ॥”

ताम्रपात्रमें पाक करनेसे चक्षुकी हानि होती है,
मणिमयपात्र तथा स्वर्णपात्रमें पाक करनेसे वह अमृत-
तुल्य होता है ।

मत्स्यसूक्तके मतसे वातुल, कनिष्ठा भगिनो और अक्ष-
गोत्रके हाथका पक्वान्न खाना निषेध है ।

“वातुलेन तु यत् पक्वं भगिना च कनिष्ठया ।

अक्षगोत्रेण यत् पक्वं शौगिनं तदपि स्मृतम् ॥”

पक्षधर चोर खिचोके पक्ष तथा पक्षपातरि जो पक्ष पक्ष रहता है वह निष्पक्ष है। बहुवचन कष्टम्, गिरीय वच, दृष्टवाच शास्त्रिणि चोर शास्त्रको लक्ष्मीं पक्ष किया हुआ पक्ष भाग नहीं काटिये। पक्षौर स्त्रीका पक्ष तथा त्रि-व मत्तान न हुई हो पैसो स्त्रीका पक्ष। भी दृष्टको है लक्ष्मी धरि मी मोक्षन करना मना है। अक्षयपक्षमे पक्ष पक्ष करिनि मीस, पक्ष वा ८ दिनमें लक्ष्मी परिवर्तन करना काटिये। पाक्षी समय पाक्षपात्र का तीन भाग लक्ष्मी भर दे। मोक्षक, कष्टुपक्ष, मन्थाक्ष चोर हृतम वृत्त पक्ष पुनः पुनः धामिनि कोरि दोष नहीं।

‘‘मोक्षक वृत्तपक्षक मन्थाक्ष’’ पुनर्नवृत्तम् ।

पुनः पुन भो नमै न पुनःपक्ष न दुष्प्रति ७

(दाक्षसूत्र २० परब्र)

पक्ष (न० लि०) पक्ष-अ, लक्ष्य व । १ परिपत्त पक्षा । २ निष्पक्षः । ३ सुदृष्ट, परिपुष्ट । ४ परिपत्तबुद्धि । ५ त्रिणा शोभुष पक्षान्तरिणाम् ।

पक्षकाम् (म० पु०) पक्ष करति वैदनाम्बितम्बल परिचम वति निष्पष्टतत्त्वमादिमिरित द्वा-क्षिण ततशुच । निष्पष्टक, तीम वीङ्ग । इमको पक्षियो को पक्ष कर कोङ्गे पक्षिनि मगानि लें पक्ष कामि है (लि०) पक्ष काविति पक्षप्रदादिष । २ पाक्षकर्ता, पक्षानिवासा ।

पक्षकंठ (म० लि०) १ शुककोमकुल त्रिमको बाण पक्ष गण को । (१०) शुकदि शक्ति शान ।

पक्षगात्र (म० लि०) अतगात्र त्रिमको पक्षक पक्ष शुकोत्पन्नमन्वित हो ।

पक्षान (न० स्त्री०) पक्षव्य भागः तन्म टाप । पक्ष-बन्धा, पक्ष त्रिमना भाग पक्षायन ।

पक्षमास (म० स्त्री०) पक्ष मास । १ पाक्षि-अ मास पक्ष किया हुआ मास । इमको शुक-इतवर वन चोर कोरि मईन है २ इतवर वना है ।

पक्षमान (म० लि०) पक्षमान पक्षाका हुआ निव किया हुआ ।

पक्षरव (म० पु०) पक्षरव शुकानेः रवः । मय मदिरा पक्षरि (म० स्त्री०) पक्षर पक्षादिवादि, पक्षा पक्ष काति निष्पक्षमिन् । १ काक्षिक, काक्षी । २ पक्षरव, पक्षाका हुआ पक्षी ।

पक्षग (स० पु०) पक्षग प्रयोदरादिवात् सायुं । अक्ष-कातिभेद, एक पक्षगर्भ लोच काति । पय य-मुखा, पुत्रश्च चोर पक्षग ।

पक्षगच्छीपक्षीकति (स० पु०) पक्षगच्छ लपमा-यक्ष, तादृशी लक्ष्मीर्भव । राजकदम्ब ।

पक्षातोमार (म० पु०) सुश्रुतोश्च पामातोमार मित्र पक्ष प्रकार पतोमारोम, एक प्रकारका पतोमार, पामातोमारका कनटा । पामातोमारमि मन्त्रे सात्र पक्ष गिरतो है पक्षातोमारमि नहीं । अतिवार वेको ।

पक्षाप (म० स्त्री०) पक्षमक्ष । अतवाप लक्ष्मीनादि पक्षा हुआ पक्ष । २ को, पक्षो प्रादिर्ष सात्र पाग पर पक्षा करवर्गाई हुई क्षानिको चोत्र ।

‘‘क्षाय पररव वक्षान्म वक्षस्तुल्यमुपपदे ३’’

(शिवितर)

शुद्ध पक्षादि पाक्ष करके देवपूजा चोर ब्राह्मणादि को रक्षा नहीं करा सकता किन्तु ब्राह्मणादि तोनों कर देवताको पक्षाप बड़ा सकता है ।

‘‘शिवु नो सु कर्तव्यं पाक्षोवमेव व ।’’

शुक्लानामि पक्षायां शूरानां वक्षान्मे ३-३-३

पक्षपात्रपक्षीपाक्षरव कर्तव्यम् ३ (शिवितर)

शुद्धपक्षमे पुनीक्षमे न वा लिखा है कसमे बोध होता है कि शुद्ध भी ब्राह्मण द्वारा पाक्ष करा कर लक्ष्मी न व क्षमे दे सकता है । किन्तु प्रकार शुद्धपक्षमे उपोक्षण का जवह करव्यक करके कय कय द्वारा होमादि कर्त सम्पन्न होता है कसो प्रकार ब्राह्मण द्वारा पक्षाक भी दिवोर्हो गये निवेदन किया जा सकता है ।

‘‘क्षान्म वक्षान्म पक्षान्म पक्षान्मिन् उपपदे ।’’

इति सर्वं पाक्षविषयम् । (शिवितर)

इस मन्त्रके अनुसार शुद्ध भी ब्राह्मण द्वारा पक्ष पाक्ष करके मेनेष्ये दे सकता है । किन्तु पैसा स्वयंकार देखने में नहीं जाता। ब्राह्मण शुद्धपक्षमे शुद्धपक्षक कष्टुपक्ष, पायस दक्षिण, मोक्षन कर कर्तते हैं चोर शुद्ध भी इमे दिवोर्हो गये बड़ा मन्त्रता है ।

‘‘अनुपवरादि ठेकेन शरभं दक्षिणकरः ।’’

इतिरेवामि योग्यानि धृत्वेहृत्पक्षमिन् ३’’

(शिवितर)

पक्काशय (सं० पु०) पक्कव्य भामादेराशय आधानम् ।
पाकाशय, नाभिका अधोभाग । यह वास्तवमें अन्त्रका
हो एत भाग है । यूकके साथ मिल कर खाया हुआ
भोजन अन्त्रको नली द्वारा नीचे उतरता है और भामा-
शयमें जाता है । यह भामाशय मशकके आकारकी घेना-
सा होता है । इसी घेनीमें भा कर भोजन एकट्ठा होता
है और भामाशयके अन्तरससे मिल कर तथा मांसके
आकुञ्चन प्रसारण द्वारा मथा जा कर टोला और पतला
होता है । जब भोजन अन्तरससे संयुक्त हो कर टोला
हो जाता है, तब पक्काशयका दरवाजा खुल जाता है
और भामाशय वही तेजीसे उसको उस और धका देता
है । पक्काशय यद्यार्थमें छोटी आंतके ही प्रारम्भका बारह
अङ्गुल तकका भाग है जिसके तन्तुओंमें एक विशेष
प्रकारकी कीटाकार ग्रन्थियां होती हैं । इसमें यकृतसे
भा कर पित्तरस और क्लोममें भा कर क्लोमरस भोजनके
साथ मिलता है । क्लोमरसमें तीन विशेष पाचक पदार्थ
होते हैं । ये पदार्थ भामाशयसे कुछ विज्ञोपित हो कर
आये हुए द्रव्यका और सूक्ष्म अणुओंमें विज्ञोपण करते
हैं जिससे वह सुल कर श्लेष्ममयी कलाओंमें हो कर
सिद्धमें जाने लायक हो जाता है । पित्तरसके साथ मिलने-
से क्लोमरसमें तीव्रता आती है और वसा या चिकनाई
पचती है ।

पक्काता—नूरपुरके निकटवर्ती एक जनपद ।

नूरपुर देखो ।

पक्ष (सं० पु०) पक्ष्यते परिगृह्यते देवपितृकार्याय यः
पक्ष्यते चन्द्रस्य पक्षदशानां कलानामापूर्णां चयो वा
येन. पक्ष-वक्ष. यद्वा पक्ष स (एधि पण्योर्दकौ च । उण्
३।६८) कथान्तादेगः । १ पक्षदश अहोरात्र, पन्द्रह पन्द्रह
दिनोंके दो विभाग, पन्द्रह दिनका समय, पाख । पक्ष
दो है, शुक्र और कृष्ण । शुक्रप्रतिपदासे ले कर पूर्णिमा
तक शुक्रपक्ष और कृष्ण प्रतिपदासे अमावस्या तक कृष्ण
पक्ष कहलाता है । पक्षभेदसे तिथिको व्यवस्था इस
प्रकार स्थिर करनी होती है—

“शुक्रपक्षे तिथिर्मास्य यस्यामस्तुदितो रविः ।

कृष्णपक्षे तिथिर्मास्य यस्यामस्तुमेतो रविः ॥”

(तिथितत्त्व)

जिस तिथिमें सूर्य उदय होते है, शुक्रपक्षमें वह
तिथि और जिसमें सूर्य अस्त होते है, कृष्णपक्षमें वह
तिथि ग्राह्य है ।

२ पक्षोंका अवयवविधिप, चिह्नियोंका डेना, पंख,
पर । पर्याय—गह्वर छद, पत्र, पतव, तनुरूह । १ गह-
व, तोरमें लगा हुआ पर । इसका पर्याय वाज है । ४
महाय. समूह । केग गह्वर वाद पक्ष गह्वर रहनेमें यह
समूहार्थ बोधक होता है यथा—केगपक्ष । ५ महा-
कालशिव, कालोपाधिमें पक्ष पुनर्निविष्ट है, इसीमें
पक्षगह्वरसे महादेवका बोध होता है ।

“शत्रुः संवत्सरो मासः पक्षः संवत्सरा समापनः ॥”

(भरत ११।१०।१३८)

६ किमी स्थान वा पदार्थके दो दोनों छोर या किनारे
जो अगले और पिछलेमें भिन्न हो, किमी विशेष स्थिति-
से दहने और बाएं पहनेवाने भाग, पार्श्व आर, तरफ ।
'घोर' तरफ आदिमें पक्ष गह्वरमें यह विशेषता है कि
यह वस्तुके ही दो अङ्गोंको सूचित करता है, वस्तुमें
पृथक् दिक्भावको नहीं । ७ किमी विषयके दो या
अधिक परस्पर भिन्न अङ्गोंमेंसे एक किमी प्रसङ्ग सम्बन्ध-
में विचार करनेको पक्ष अलग बातोंमेंसे एक, पक्ष ।
८ किसी विषय पर दो या अधिक परस्पर भिन्न मतों-
मेंसे एक, वह बात जिसे कोई सिद्ध करना चाहता हो
और जो किसी दूसरेको वातके विरुद्ध हो । ९ दो या
अधिक बातोंमेंसे किमी एकके सम्बन्धमें ऐसी स्थिति
जिससे उसको होनेको इच्छा, प्रयत्न आदि सूचित हो,
अनुकूलमत या प्रवृत्ति । १० भगड़ा या विवाद करने-
वानोंमेंसे किसीको अनुकूल स्थिति । ११ निमित्त, सम्बन्ध,
लगाव । १२ वह वस्तु जिसमें साध्यकी प्रतिष्ठा करते हैं ।
जैसे—'पर्वत वज्रिमान् है ।' यहाँ पर्वत पक्ष है जिसमें
साध्य वज्रिमान्को प्रतिष्ठा को गई है । (न्याय)
१३ किसीको घोरसे सहनेवालोंका दल, फौज, सेना,
बल । १४ सजातोयहम्, सहायकों या सवर्गोंका दल,
साथ रहनेवाला समूह । १५ सखा, सहायक, मायी ।
१६ वादिप्रतिवादि कर्तृक दण्डित प्रतिपत्त, वादियों
प्रतिवादियोंके पक्ष अलग समूह । १७ गह्वर, चर । १८
शुक्रपक्ष, कृष्णपक्ष । १९ राजकुल, राजाका

काको । २० विष्णु पयो, चिह्निका । २१ नमय शक्ति
पहननेका कदा ।

पसक (म० पु०) पस इव प्रतिज्ञति । इवे इतिङ्गौ । का
शिक्षे इति कम् । १ पसहार । २ पार्श्वहार । ३ पार्श्व
मात्र । ४ सहाय ।

पसकम् (म० लि०) १ को पसको मन्वायनामे चमता
को । (पु०) २ पयो, चिह्निका । ३ पर्वत ।

पसकम् (म० पु०) पसिचिह्निय. एक चिह्निका नाम ।
पसकपत्र (म० लो०) पसकपत्र पसकम् । साक्षात्पत्रम्,
विमोक्षो महायना मिला ।

पसकपत्र (स० लि०) पसकपत्रकारो पस विमोक्षो ।
पसकपत्रम् (स० लि०) पस-पत्र-विमोक्षः पसकपत्र
कारो ।

पसकपत्र (म० पु०) पसकपत्र देवादेव्यः ज्ञानः विभाग
यकमान् यद वा । ज्ञानामन्वित ज्ञानतोयविमोक्ष पस
ज्ञानतोय । २ भागत् देखो ।

पसक (म० लि०) पस ज्ञान ज्ञान-क । पसकामत्र ।
पसकम् (म० लि०) पसक देखो ।

पसक (स० पु०) पसे यकपसे चरताति चर-ट । १
चन्द्रमा । २ पसककारिणः ।

पसकपत्र (स० लि०) पस चिन्तित पसकपत्रम् लिपि ।
इन्द्र ।

पसक (स० पु०) पसे यकपसे प्रायते जन-क । १ चन्द्रमा ।
(लि०) २ पसकामत्र ।

पसकपत्रम् (म० पु०) पसे यकपसे जन्म सत्पतिपत्रम् ।
१ चन्द्रमा । (लि०) २ पसकामत्र ।

पसता (स० लो०) पसकपत्र भावः, तस्य ततो राप् । ग्या-
योञ्च अनुमावेच्छामास यमानाविहारि साध्यवस्तु निप-
यामास, अनुमिच्छाविरहविमिच्छाविहारमास । अङ्को पसता
अनुमिति को कारण है ।

पसति (स० ली०) पसकपत्र मूत्र (पसकपत्रः । का १।१।१२)
इति पसति । १ प्रतिपत्तिविधि । २ पसकपत्र, जैमिन्को
जङ्ग ।

पसक (स० लो०) पस भावि छ । पसकमता, पसता ।
पसक (स० लो०) पसे पार्श्व कित्त हारम् । पार्श्व
हार, चिह्नकोका दरवाजा ।

पसक (म० पु०) पसताति वा, छ पस । पसकपत्र ।
१ चन्द्रमा । २ पसकपत्र, जिनः । ३ पयो चिह्निका ।
(लि०) ४ पसकपत्रकर्ता तरकदार ।

पसकपत्र—तत्पत्रिकायां विमोक्षो इति प्रथिता अठवे रक्षा नाम-
सिन् । क इव देखो ।

पसकपत्रम्—१ प्रथित मन्वायिञ्च पट्टेच्छा मन्वायि
पा-भावे पुत्र । इन्वोमे तत्पत्रिकायां नामक पसकपत्र
पसकपत्रिका इति । २ पयो प्रतिमात्रं अन्वोमे इन्वोमे
मन्वायिपत्रिकायां इति पसकपत्रिका इति ।

पसकपत्रिका (म० लो०) क मिका पसकपत्रिका ।

पसकपत्रिका (म० पु०) पसे पन्वायिमात्रिकायां पातः पसिचि-
ह्निय । १ पन्वायिमात्रिकायां पसकपत्रिकायां पसकपत्रिका, विना
कचित्त पसकपत्रिकायां पसकपत्रिकायां अनुमिच्छा प्रकृति या
किति, तरकदारो । २ पसकपत्रिका । पसकपत्रिका मन्वायि
पातः पसकपत्रिका । ३ पसकपत्रिका पसकपत्रिकायां पसक
कामिने लक्ष्मि पर भद्रम् कर्मणि है ।

पसकपत्रिका (स० लि०) पसकपत्रिका विमोक्षः पन्वाय
कपसे पसकपत्रिका मन्वायि ।

पसकपत्रिका (म० लो०) पसकपत्रिका सहायकारिका
मात्र, पसकपत्रिका-तन्व टाप । सहायता मयद ।

पसकपत्रिका (स० लि०) पसकपत्रिका विमोक्षेण इति । पन्वाय-
पसकपत्रिका मन्वायि मन्वायि विना कचित्त पसकपत्रिका विचारये
विमोक्ष अनुमिच्छा प्रकृति चोनिवासा तरकदार ।

पसकपत्रिका (लि० लि०) पसकपत्रिका देखो ।

पसकपत्रिका (म० पु०) पसकपत्रिका पसकपत्रिका । पार्श्व
हार चिह्नकोका दरवाजा ।

पसकपत्रिका (स० पु०) पसकपत्रिका का जैमा ।

पसकपत्रिका (स० लि०) पसकपत्रिका, पसकपत्रिका,
तरकदार ।

पसकपत्रिका (स० लो०) पसकपत्रिका पसकपत्रिका पसकपत्रिका-
मिद ।

पसकपत्रिका (स० पु०) पसकपत्रिका पसकपत्रिका पसकपत्रिका ।
कचित्तपत्रिका माग जाबीका कोस ।

पसकपत्रिका (म० पु०) पसकपत्रिका ।

पसकपत्रिका (स० लो०) पसकपत्रिका मूत्रम् । १ पसकपत्रिका
पर । २ प्रतिपदा तिथि ।

पक्षयाति (सं० पु०) त्रिभुजको ।

पक्षरचना (सं० स्त्री०) पक्षगटन, पक्षपञ्चकम्, किष्कीका
पक्ष साधनके लिये रचा हुआ आयोजन, चक्र ।

पक्षरूप (सं० पु०) महादेव, शिव ।

पक्षवृक्षितम् (सं० पु०) नृत्यकालमें हाथका अवस्थान
भेद ।

पक्षवृत् (सं० त्रि०) पक्षः विद्यतेऽप्य मत्तुप् मस्य व ।

१ पक्षविशिष्ट, जिगके पर ही । २ उच्चकुम्भोद्भव, जो उच्च
कुम्भसे घेटा हुआ हो । (पु०) ३ पर्वत, पहाड़ ।

पक्षवृत् (सं० पु०) वातव्याधिविशेष, पक्षाघात ।

पक्षवृत्ति (सं० स्त्री०) हादगौ तिथिभेद, वह हादगौ
तिथि जो सूयो दयसे ले कर सूर्यादय तक रहे ।

पक्षवाद (सं० पु०) १ एक पक्षकी उक्ति । २ पक्षमम-
यन ।

पक्षवान् (हि० वि०) १ पक्षवाला, परवाला । २ उच्च
कुम्भ उत्पन्न । (पु०) ३ पक्षत । पुराणोंमें लिखा

है कि पक्षले पर्वतोंके पंख होते थे और वे उड़ते थे ।
पौष्टि इन्द्रने उनके पर काट लिये ।

पक्षवाहन (सं० पु०) पक्षी वाहनमिव यस्य । पक्षी,
चिड़िया ।

पक्षयाहु (सं० पु०) कुमारिवत्पण्डवर्णित भरतकुण्ड-
के अन्तर्गत जनपदविशेष ।

पक्षविन्दु (सं० पु०) बद्धपक्षी ।

पक्षगम् (सं० त्रि०) पक्ष वारार्थे गम् । पक्षपक्षे, प्रति
पक्षमें ।

पक्षम् (सं० स्त्री०) पक्षतोति (पक्षिचिभ्यां इत्थं । पा
४.२।२८) इति असुन् सुट्च । गर्तु ।

पक्षमन्थि (सं० पु०) पक्षयोः मन्थि । पर्वमन्थिनाल ।

पक्षमुन्दर (सं० पु०) पक्षे देहाङ्गे कुम्भसे सुन्दरः । लोभ्र ।

पक्षहत (सं० त्रि०) १ पक्ष द्वारा ग्राहत । २ एक और
पक्षाघात ।

पक्षहोम (सं० पु०) पक्षव्यापकी होम । पक्षपर्यन्त
कर्त्तव्य होमभेद ।

पक्षाघात (सं० पु०) पक्षस्य आघातं विनाशनं यस्मात्
यत्र वा । वातरोगविशेष । भावप्रकाशमें इसका लक्षण
इस प्रकार है—

''शरीरवादे' नतो वायुः शिरास्नायु विरोधे च ।

पक्षवन्तम' दन्ति मन्विषमभान् विमोक्षयन् ॥

कृतस्नोर्द्वैकायसतस्य स्यादभ्रम्यो विन्दनः ।

एषामवात' तं वेनिदम्ये पक्षवषं विदः ॥ (भावप्र०)

वायु कुपित हो कर शरीरका अर्धो ग यक्षण करतो
है और उसकी एक शिरा तथा स्नायु समूहकी गोपण
एवं मन्विषमभान्पूर्यक मसूककी गिथिन करके टेहके
वाम या दक्षिणभागमें एक पक्षकी अर्धात् ग्राह्य, पायव,
ऊरु और जहाटिकी नष्ट कर डालती है । इस रोगमें
शरीरका अर्धभाग किमो घामका नहीं रहता । इस
अङ्गमें सामान्यरूपमें स्वर्गज्ञानादि रहता है । इसीकी
एकान्न वात वा पक्षवध अथवा पक्षाघात कहते हैं । -

पक्षाघातका माध्यासाध्य लक्षण—पक्षाघात पित्त-
संश्लेष वायु कर्त्तक होने पर गात्रत्राह, सन्ताप, अन्तर्दह
और मूर्च्छा तथा कफसंश्लेष वायुकर्त्तक होने पर शीत
बोध, देहका गुरुत्व और गीथ होता है ।

किमो वायुकर्त्तक पक्षाघात होने पर कृच्छ्रसाध्य और
अन्य दोष अर्थात् पित्त और कफका संश्लेष रहनेमें वह
साध्य समझा जाता है । धातुक्षय जन्य पक्षाघात पमाध्य
है । गर्भिणो, सूतिकाग्रस्त बालक, बृद्ध, शोण और
जिमके रक्तका क्षय हुआ हो, उनके पक्षाघातरोगको
पमाध्य समझना चाहिये । इस रोगमें यदि रोगीकी
दृष्टका अतुभय न हो तो उसे भी प्रसाधा जानना
होगा ।

भावप्रकाशके मतमें इसकी चिकित्सा इस प्रकार है—
मापादिक्वाथ अर्थात् उरद, कीचकी फली, भिलावकी जड़,
प्रउस और जटामांसी मत्र मिना कर २ तोला, जल
आध मेर, शेष पाच पाय, इसका भलीभांति काढ़ा
बना कर इसमें एक माशा शींग और एक माशा मैथुन
डाल दे । इसके पीनेसे पक्षाघात प्रगमित होता है ।

ग्रन्थिकादितैल—तैल ७४ सेर, कर्कशार्थ पीपल,
चोता, पीपलमूल, सीठ, रा-ना और सैन्धव सबकी
मिक्का कर एक सेर । कर्कशार्थ उरद १६ सेर, जल
१ मन २४ सेर, शेष १६ सेर । इस तैलकी यथाविधानसे
पाक कर सेवन करनेसे पक्षाघात रोग जाता रहता है ।

ईसापादिमेक- तैल ४ सेर, कर्कशार्थ उरद, कीचकी

जसोका बोझ, धतोम, पक्षीको जङ्ग, रामना यतमूली
 घोर मोक्षय मज सिन्हा कर एक निर कल्याणं उरट १६
 धिर जल १ मन १४ धेर शोच १६ धिर, पङ्कम १६ धिर
 जल १ मन २४ धेर, शोच १२ धिर । यथानियम दस
 विसको पा कर स्वयंकार करनेसे पक्षाघात न गरा हो
 जाता है । (भावप्र० २ भाग)

दुष्प्रतर्पे इमन्ना लयक इम प्रकार लिखा है—जग
 बानु भवधु हां बाहु नामने परिहित है । यह बाहु
 लय कृपित होती है, तब माता प्रकारके राग उत्पन्न होती
 है । बाहु बलवत् कृपित हो कर पक्षा कर्ण हो । तिर्यग्
 गामिनी धमनादि मध्य प्रवेश करती है, तब लय एक
 पार्श्वे पङ्कम सन्निवृत्तको विप्रिट कर जाता है ।
 इससे शरीरका एक पक्ष नाग हो जाता है, इसीसे इम
 को पक्षाघात कहते हैं । बाहु लय न पार्श्वित हो कर
 शरीरका समस्त भा एक पक्ष पक्षमन्त्र घोर निवृत्त हो
 जाने पर रोगी कसो लयक घुली पर गिर पड़ता है, या
 प्राक्काग जाता है । पक्षाघात के लक्षण बाहुत्रय हीन पर
 लय पक्षाघात हो जाता है । लय बाहुके माध मदि पित्त
 वा क्लेशा सिन्हा हो, तो यह सङ्क्रमे पारोक्ष्य हो जाता
 है । अथत्रय पक्षाघातको पक्षाघात ममभन्ना काश्चिद ।

(इच्छुप निदानस्थान १ अ०)

यह पक्षाघातरोग पाल्याधिष्ठा एक मद् है । बाहु
 कृपित हो कर लो सब राग उत्पन्न करती है, लसीको
 मातव्याधि कहते है । पक्षाघातरोगमें रासोका शरीर
 श्वाण लक्षी होने पर तथा शरीरमें शीतला रहने पर रासो
 यदि प्रकृतिल पर उपकरवाविमिट हो, तो लसको
 चिह्नका विवेक है । प्रकृतता रुनिश्चयेद द्वारा पक्ष्यमन
 करा कर रोगीको सुशोचन करा लेना काश्चिद । पीछे
 अनुवाहन होर पास्तोपलका प्रयोग करना काश्चिद । पक्ष
 में पाक्षेपक रोमके विधानाहमपर चिं लता विवेक है ।
 कुछ दिन तक मदि विशिष्टपक्षमें धुंकिविला कर ई आठ
 तो रोम पक्ष्य पारोक्ष्य हो सकता है । (इच्छुप)

एनोपेकीके मनमें पक्षाघात वा पाक्षिक पक्षगता
 वाच विभिन्न कारणोंसे उत्पन्न होती है—(१) पक्षमें लो-
 राई होनेसे लोच घोर काशिकरत्नके लक्ष्णात्ममें रक्त
 श्वाभ, (२) द्विपक्षरिवा वा लक्ष्णात्काहमीयका परि-

शाम (३) गिण्डकायका नावां द्रुक् पक्षगता, (४) विना
 बन्ना, (५) शवबुक् पक्षगताको शिवायका । जिमा
 बरदादि विभिन्न साक्षीक पक्षगताका विषय पाल्य
 कृतानुसार यथास्वाभने लिखा जायगा ।

शरीरका पक्षाघात अनुसुखमाधमें पक्षाघात होने पर लने
 पाक्षिकपक्ष (Hemiplegia) कहते हैं । पङ्कमको माया
 में इसका पर्याय है (Paralytic Stroke) । पङ्कम शोच
 मन्नाके उपर एक लो सुद्धन् पक्ष (Medulla oblon-
 gata) कोठामें उत्पन्न है, लक्ष्ण मन्नाएक शुभलानु
 तिर्यग् माधमें प्रवेश करती है । समस्त लक्ष्णा शरीर यदि
 कोई वैधानिक पोड़ा रहने, तो विपरोत पक्षमें पक्ष
 गता दोष पड़ता है । लक्ष्ण यदि लक्ष्णात्ममें कोई परि-
 बन्ना न हो तो शोच पक्ष प्रोद्धित है, इसी पक्षमें पक्ष
 गता होती है । फिर यह भी देखा जाता है कि Cor-
 pus Striatum पक्षका पक्ष्यकारिककोय (Internal
 Capsule) के उपर रक्तशुद्ध वा पक्ष कोई परिवर्तन
 होय यह, तो लक्ष्ण पक्षगता एक लक्ष्णिका मन्ना
 शोच मन्नाके पक्ष पक्ष हन होनेसे लोचों Optic thala-
 mas) के लक्ष्णाको लोचकार पास्तोपल मन्ना पास्तोपल
 हो जाता है जो तब स्वयंशक्ति हो जाता होती है ।
 मन्नाएक घोर मन्नाका वैधानिक पोड़ा-निवृत्तन इसी
 रोमको उत्पन्न है । किन्तु पक्ष्यान्ध्याधिनि मन्नाएक
 द्विपक्षाका माधकार होने पर ही यह रोम हो सकता है ।
 यथा—यसो कोशिया विहिरिया पानि । उपद शरीर
 मो इको पीडा वा एक शरीर कारक है ।

अथ—मन्नाएक मन्ना शोच पक्षकी कोमलता
 पक्षका पक्ष्यान्ध्याधिनि मन्नाएक (clot) टिपार्क
 पङ्कममें पोड़ा पारम्भ होनेसे लोच की लोच शान रहता है ।
 किन्तु पक्षिक रक्तशुद्ध होनेसे रोमो ज्ञानशुद्ध हो जाता
 है । रोमके पक्ष्यमन्नाको लोच तारतम्यानुसार लोचो
 शरीरमें जो सब स्थिति स्थिति लक्ष्ण देसे ज्ञान है पक्षी
 लक्ष्णी पालोचना को मदि । सङ्क्रममें पक्षीकपक्ष (Ho-
 miplegia with consciousness) होनेसे रोमो ज्ञान
 वा परिबन्नाके पक्षमें लक्ष्णाका पक्षगता अनुभव करता
 है जो लक्ष्णाके लोच को कर पङ्कम एक पक्ष्य लक्ष्ण
 घोर पक्षकी पक्ष्य कर जानती है । शान्त्युक्त पक्ष्यका

अर्द्धाङ्गक्षिप (Hemiplegia without consciousness) होनेसे कितने ही पौर्विक लक्षण दोष पड़ते हैं, यथा—घाव्यको अस्थिता, स्थानिक अवशता, सुखके एक पार्श्वको आकृष्टता, स्मरणशक्तिका ह्रास और बीच बीच में वमन, पाछे रोग प्रकृत होने पर पक्षिप और अचेतन्य हुआ करता है। इसके सिवा चार भी कितने साधारण लक्षण हैं जिनसे रोग सङ्गममें पहचाना जा सकता है।

अर्द्धाङ्गक्षिप रोग पूर्ण और असम्पूर्णके भेदसे दो प्रकारका है। मस्तिष्क मध्य अधिक्त रक्तस्त्राव होनेसे उसमें दृष्ट मालूम पड़ता है। यदि मस्तिष्कके दक्षिण पार्श्वमें रक्तस्त्राव हो, तो वाम पार्श्व शान्तमन्वन भावमें अवश होते देखा जाता है और मस्तिष्क तथा दोनों चक्षु धीरे धीरे दक्षिणको घोर आकृष्ट होते हैं। वाम भागका ऊर्ध्व अक्षिपक्षव किञ्चित् पवनत, वामहस्त और पद तथा सुखका वाम पार्श्व अवश, जिह्वा वर्धित करनेसे अवशङ्ग हो और वक्त्र और वक्ष तथा उदरको वामपार्श्वस्थ पेशियां सामान्य भावमें चौण और अवश मालूम पड़ती हैं। हस्त मस्तिष्कके निकटवर्ती होनेसे अवशता अधिक परिमाणमें और पद दूरवर्ती होनेसे वह परिच्छालन अल्पमात्रमें हुआ करता है। सुतरां अधिकांश जगह पदका पक्षाघात रोग पड़ने आराम ही जाता है। उदर और वक्षको पेशी ही अवशता अधिक हो दूर हो जाती है। मस्तिष्क अथवा उसकी मात्रिकाके (Meninges) मध्य अधिक्त रक्तस्त्राव होनेसे हस्त पदको अवशताके साथ दृढता वक्तमान रहती है। मस्तिष्कको शीमलताके हेतु इस रोगमें हस्तपदको पेशियोंको शिथिलता देखा जाता है, किन्तु कोमलता चतस्थान क्रमशः सद्बुचित अथवा उसके मध्य घाव्यक उत्पन्न होनेसे उक्त पेशियां दृढ हो जाती हैं। इस पौढामें चतुर्थे और षष्ठे स्नायु तथा पञ्चम स्नायुका चालक अग्र (Motor) कभी कभी आक्रान्त हुआ करता है। किसी किसी स्थानमें चक्षुपक्षव संयुक्त पेशी भी सामान्य भावमें अवश हो जाती है। पौढित अङ्गके पार्श्वदेशमें स्पर्श और तापका अनुभव नहीं होता। पञ्चम और नवम स्नायुके आक्रान्त होनेके कारण रोगी साफ साफ नहीं बोल सकता। पौढित मांसपेशियोंमें प्रत्यावर्त्तनिक क्रिया

हुआ करता है और फलकालि (Petella) को प्रति-क्षिप क्रिया वर्धित और गुदक-मन्थिका प्रक्षेपण भी दोष पड़ता है। पेशियां एकवारगी जयमान नहीं होती। पौढाको तरुणावस्थामें पेशियां वैद्युतिक स्रोत द्वारा स्वाभाविक अथवा अधिक्त परिमाणमें सद्बुचित होते हैं किन्तु रोग पुरातन होने पर उक्त सद्बुचन अति सामान्य परिस्फुट हुआ करता है। चलते समय रोगी सुद्व-भागको घोर कुष्ठ भुक्त कर चलता है। पौढितकन्ध उच्च और हस्त वक्षके पार्श्वमें घान्दो न करके पद कुष्ठ गोलाकार भावमें (Circumduction) मञ्चालन करता है। पैरको उंगलियां भूमिगी घोर भुकी रहती हैं। दक्षिण पार्श्वको अवशतामें कोमलता पड़च जाती है। मस्तिष्क क्रियाके व्यतिक्रम हेतु जो पौढा उत्पन्न होती है उसमें अर्थात् गुल्मवायु (Hysteria), अपस्मार (Embleptic) और ताण्डवरोग (chorea) आदिमें सुख आक्रान्त नहीं होता। गुल्मवायुरोगजनित पौढामें रोगी अपने हाथको पश्चिमको घोर निक्षिप और पवनत करके पौढित पद ही चित कर चलता है। मस्तीके वैधानिक पौढावटित अर्द्धाङ्गक्षिप रोगमें रोगीको ज्ञान-रहता है और सुख आक्रान्त नहीं होता। अर्द्धाङ्गक्षिपका यान्त्रिकविकार होनेसे रोग आरोग्य नहीं होता, अन्यान्य प्रकारके रोग आरोग्य हो जाते हैं।

चिकित्सा। तरुण अवस्थामें मस्तिष्क कांचा करके रोगीको शयनावस्थामें रखे। यदि पौढित अङ्गकी पेशिया दृढ रहे, तो रक्तक्षेपण या शीवाके ऊपर आर्द्र कपि करना विधेय है। पौढे कालामेन ५ ग्रैन और वेष्टर प्रायल १ ग्रिस अथवा बुंद क्रोटन प्रायलको चोगीके साथ मिला कर सेवन करावे। अनन्तर पौढागो ओडाइड पांच ग्रैन मात्रामें ३४ घंटेके पौढे देना आवश्यक है। यदि अभी मांसपेशियां शिथिल हो जाय, तो शोषामें विलिष्ट तथा बलकारक औषधको व्यवस्था करे। रोग पुरातन हो जाने पर पौढित अङ्गमें फलानिलका बन्धन, मर्दन और वैद्युतिक स्रोत संलग्न करना विधेय है। तरुणावस्थामें अथवा शिरःपौढामें वैद्युतिक स्रोतको संलग्न रहना उचित नहीं। टिंजरटोल, लाइकर-टिकनिया और अन्यान्य बलकारक औषध देनी चाहिये।

यदि यह मास्कुम को ज्ञाय कि हम प्रकारका पक्षाघात रोगमय रोगीके पक्षी चर्मरोगीय दवा या तो पोटाओ पोडाइडका व्यवहार करना चाहिये। मस्त्राको पोडाइडे कारन यदि पर्याप्त हो तो ही प्रामद और बेसे शोभा बिगिये लप गयो है। मस्त्राकर्म रोगीकिस जोनेसे टिन्टिया फन्टावक नहीं है। गुम्फवायु चादि रोग चहित पोडाइडे बडिट धीवधन प्रभाग करे।

पक्षाघात रोगके साथ निम्नलिखे पक्षाघात रोगका विभिन्न नाम द्वा जाता है। मानसिक पक्षनिके परि वर्तनमें ओ पक्षयताया लक्षण उपस्थित होता है, कवे चिन्ताबन्धको पक्षयता (General paralysis of the insane) कहते हैं। समय वायुमूलमें पक्षवा लसको ह्युमावा (Portio Dura) में काई परिवर्तन होनेसे सुबकी प्रमपेचिया पक्षय हो जाती है। इस रोगको Bell's palsy or Facial paralysis कहते हैं। पक्षनिक Paralysis agitans, P diphtheria P Duchenne's, P Glos-salio Laryng al. P infantile P Landry's और Scruener's laryngin चादि पक्षाघात रोगमें ओ धीवधादि प्राय एक हो हैं। पर ही, रोगीके पक्षा लक्षण परस्पर अलग हैं।

हम प्राश्नमें निम्ना है कि यह पक्षाघात रोग महा पातकके कारण हुआ करता है। पूर्व कथनें ओ सय पाः किये जाते हैं, मनुष्य ल पापाना मान कर गुल कर प्रम वेता व तव महापातकके चिह्नकल्प ये मय व्यभिचारी हुआ करता है। इस प्रकार महापातकत्र बिह्न भात प्राम तन रहता है। पक्षाघात और कुशाहिरोग महापातकक है।

निम्नलिखे पक्ष घात चादि महापातकत्र रोग जाती हैं, लके प्राश्नकिस करता है ता है। महापातकरोगी यदि प्राय चित्त न करे, तो कवे किसी हर्मकर्म में परिहार नहीं रहता और बिना प्राश्नकिस किंय यदि इस रोगके लक्षण पक्षु है, वाय तो प्रायचित्त किंय बिना लक्षणा टण्डन, बरन वा पयोचादि कुछ भी नहीं होया। इस वाय का प्रायचित्त करके लक्षके दाहादि भाय करने कोसे। महापातकमें प्रायचित्त पराकर्मत है। यदि यह न कर यके तो पक्षयैयु दानक्य प्रायचित्त बिधि है। इस

पक्षयैयुका मूल्य १२ व० है। इस पक्षाघात रोगका प्राय चित्त करने समय प्र यचित्तको व्यवस्था लेने कोने है। पक्षयैयुपत्रमें इन प्रकार विधा रचना चाहिये।

“ब्रह्मचर्ययोग्यैस्तु किये तदाश्रय नयकर्मनायकको मय मय कियेविना वा पक्षयैयुहस्तन एतन्पक्षयैयुको रोग कर प्रायचित्त कार्यविधि सिद्ध मयम्।”

प्रामिन्तके मयमय विवरणके किसे वा विषय देखो।

पक्षादि (स० पु०) पक्ष चादि क्त। पादिनि लक्षण मय मयमें दे। यथा—पक्ष, लक्ष तुप कुण्ड पक्ष, लक्ष निम्ना बनिच, बिच पक्षि पक्षि पक्षा कुण्ड, सोरक, मरक लक्षक, मरक, मयक, पक्षिपक्ष, रोमन् कोमन् चपिन्, मयक लोमक, योर्प विमान पाष, वि लक्ष, पक्षुय सुबक क मय कुण्ड विच, चित्त मयक, वष्ट, लक्ष, पक्षक क इल पक्षाहियो क लक्ष मय, मयक होता है। (पाक्षी)

पक्षाघात—पक्षाघातमें पक्षयैयु विधादमन पक्षयैयु।

पक्षा (स० पु०) पक्षस्य पक्षो यत् कानि। १ पक्षाघात प्रोच मा। पर्याय—पक्षहयो, पक्षे शु अक्षेपयै, पक्षा मयक। पक्षलक्षमें मया नहीं कानो चाहिये, करनेसे निम्नक होता है।

“पक्षाये विच्छेदय पाषः पाषण्डे परं कुम्। (श्लोकेत्पल)

२ पक्षका पक्षयैयु।

पक्षात्तर (स० श्लो०) पक्षत्पक्ष पक्षात्तर। १ पक्ष पक्ष, दूधरी तरफ। २ मयात्तर।

पक्षाभास (स० पु०) १ श्लोभास, बिद्यालामास। २ मिथ्या पक्षयैयु।

पक्षाभिज्ञा (स० श्लो०) कुमायुचर मायमें दे, कुमायुको पक्षयैयु मायक।

पक्षाक्षु (स० पु०) पक्षो विद्यते यत् पक्ष पक्षमें पाक्षु, पक्षो चिह्निय।

पक्षाभसर (स० पु०) पक्षक्य पक्षयैयुपक्षय वत्। पूचि मा, पक्षाघात।

पक्षाहार (स० श्लो०) ओ एक पक्षके मय पक्ष बार मोक्ष करती हो।

पक्षिषी (स० वि०) १ पक्षयाद्य। (श्लो०) २ चिह्निया,

मादा चिह्निषा । ३ पूर्णिमा । ४ दो दिन और एक रातका समय । ५ यनकार्पासी, जङ्गली कपाम ।

पश्चिमी—एक अत्यन्त प्राचीन और प्रसिद्ध तीर्थक्षेत्र ।

यह दक्षिणप्रदेशके मन्दाज नगरमें १८ कोमादक्षिण मसूरी तीरवर्ती मद्रस और चिह्नलपटके मध्यस्थानमें अवस्थित है । इसका वर्तमान नाम है तिरुकट्ट कुनरम् (तिरु-कज्जक, नरम्) अर्थात् पवित्र चीनीका पर्वत । यह पवित्र भूमि एक समय हिन्दू और बौद्ध मन्दाचार्योंके मध्य बहूत प्रसिद्ध हो उठी थी । तारनाथके भारतीय बौद्ध धर्मके इतिहास नामक तिब्बतीय ग्रन्थमें यह स्थान बौद्धोंका अति पवित्र पश्चिमद्वारा नामसे उल्लिखित हुआ है । वर्तमान समयमें भी यहाँके मन्दिरमें गिय और शक्तिमूर्त्ति प्रतिष्ठित हैं तथा उन सब देवदेवियोंको पूजा प्रचलित देखी जाती है । किन्तु उक्त मन्दिरमें जैन-प्रादुर्भावके समयकी उल्लोख्य शिलालिपि भी देखी जाती है । निरुद्धकृष्णम् देखो ।

यहाँके स्थान पुराणसे जाना जाता है कि चारों वेदने किसी समय देवादिदेव मन्दादेवके पास जा कर प्रणति-पृथक् अपने चिरम्यागो वासके लिये निर्दिष्ट स्थान मांगा और वहाँ रह कर जिससे वे उनके चरणको पूजा कर सकें इस प्रकार मनोभिप्राय भी प्रकट किया । उनको प्रार्थनासे मत्त हो कर शिवजीने उन्हें पर्वत-कारमें रूपान्तरित करके परस्पर संलग्न कर रखा और उस पर्वतश्रेणीमेंसे एक पर अपना वासस्थान चुन लिया । यहाँकी शिवमूर्त्ति "वेदगिरीश्वर" वा वेद-पर्वतके अधिष्ठातृदेवताके रूपमें पूजित होती है । प्रवाद है कि इस पर्वतके जिन स्थान पर मन्दादेवने एक कोठी रुद्रकी रंजमें पराम्ना किया था, वहाँ उनकी विजयघोषणाके लिये एक मन्दिरका निर्माण किया गया । वह मन्दिर अति प्राचीन और बड़ा है । पूर्वोक्त युद्ध और मन्दिर स्थापनके बादमें यह ग्राम "रुद्रहृदय" नामसे प्रसिद्ध हुआ है ।

उपरिउक्त दो मन्दिरोंको छोड़ कर गिरिश्रेणीके पददेशमें एक और मन्दिर है जो यहाँके अन्यान्य मन्दिरोंसे बड़ा है । इसके चार गोपुर देखे जाते हैं । मन्दिराभ्यन्तरेमें शिवकी सर्वाङ्गिनी शक्तिदेवी है । देवीकी

मूर्त्ति कालक्रमसे जयपात्र होती आ रही है । चैत्र-मासमें देवीके अभिषेकके समय यहाँ बहुतमें लोग एकत्र होते हैं ।

१५वीं शताब्दी तक इस स्थानके माहात्म्यके विषयमें कुछ भी मालूम नहीं । पाँडे परिवार तत्स्वरन नामक किसी उपामकके उद्यम तथा बकृतामें जनसाधारण शिव-महिमासे विमोहित हुए ही और क्रमशः उहाँको चेटामें तिरुकट्ट कुण्डम् नवीन प्राकार धारण कर दक्षिणभारतमें काञ्चीपुरके सट्टम तीर्थमालामें विभूषित हुआ है ।

स्थलपुराणके मतमें—जहाँ देवराज इन्द्रने आ कर महादेवकी उपासना की थी, यह स्थान आज भी इन्द्र-तीर्थ नामसे मगहर है । प्रवाद है कि इन्द्र शिवपूजाके उद्देश्यसे प्रति बारहवें वर्ष अपने वस्त्रको धराधाम पर भोजते हैं । उस समय वस्त्र पहले पर्वतके ऊपर मन्दिरके शिखर पर आ कर गिरता है । पाँडे वह तीन बार मन्दिरस्थ देवमूर्त्तिको प्रदक्षिण कर पर्वतमें धितोत हो जाता है । बारहवें वर्षके अन्तमें विग्रहका यह शक्त अभिषेक साधारण शक्तोत्सवके प्रकार और नैसर्गिक माना जाता है । प्रति बारहवें वर्ष इस स्थानसे दो शक्त निकलते हैं । शक्त निकलनेके दो तीन दिन पहले जन मैना और फेन युक्त हो जाता है और सुहृद्गुहः गर्जन सुनाई देता है । इस समय नगरवासिगण पुष्करिणीके किनारे आ कर सहाय्यदृष्टिसे शक्तके उत्थानको अपेक्षा करते हैं । यथासमय शक्त उल्लिखित होने पर लोग महासमारोहसे उसे नाते और एक रौप्यपात्रमें रखते हैं तथा नगरप्रदक्षिणके बाद पर्वत निम्नस्थ मन्दिरमें पूर्वोत्थित शक्तके पास रख देते हैं ।

इसके सिवा और भी आश्चर्यका विषय है कि यहाँ प्रति दोपहरको अर्थात् १२।से १ बजेके भीतर दो सफेद चोलों आ कर भोजन करते हैं । उक्त दोनों पक्षियोंको आहार देनेके लिये एक पंढा नियुक्त रहता है । वह पंढा दोनों पक्षियोंके आनेके पहले ही पर्वत-शिखर पर चढ़ जाता और चावल तथा चोना टेकर भोजन प्रस्तुत करता है । वहाँ पक्षियोंके आनेके लिये कुछ घो भी मौजूद रहता है । दोनों पक्षी यथासमय

अथैत पर पतरति धोर मन्दिरा त्रा कर विद्यमूर्तिं को
 पमितान्तपुत्रं च पश्चिरे पाम भोजन करने ज्ञाते हैं ।
 भोजन कर सुखने पर पस्तिपुत्र हो वे अस्मानको लोट
 जाते हैं । ठीके बह पडा उपस्थित स्वस्तिदीर्घ मध्य
 पश्चिमुख प्रसाद विनयक मरते हैं । यह सल चटना
 बहूतोंमें पवनो पानोमें देखी है । इसी कारण इस
 पर्वतका निरुद्ध हृद्यम् नाम पडा है । प्रवाद है कि
 उन्न दोनों पयो पडले अदि से, ठीके किमो पापके कारण
 से इस पर्वतको प्राप्त हुए हैं ।

शङ्खतीर्थमें प्रतिदिन सुबह धोर शामकी रमान कर
 पर्वत पर अमर देवमूर्तिदर्शन धोर नतत लनका
 ध्यान तथा चण्य पाहार करनिसे थोड़े ही समयके मध्य
 कुछ, पसाधात, लम्बाद धोर चन्दाय नामा रोग लपयस
 होते देखे जाते हैं । बहूतों मनुष्य रोगमुक्त होनेको
 पामाये यहाँ पाया करते हैं । चन्दाय तीर्थके लक्ष्य
 में भी चलेक तरहको कि बटलिया प्रचलित हैं । ये सब
 पत्नीविक्रम घटना लन कर समुद्रके धोमन्दाग्रगण को
 इस निवारकेपुत्रिने १६६१ ई०को यहाँ पाये धोर
 पर्वत पर लयगाम पहित कर गये हैं ।

- पश्चिन् (म० पु० धो०) पयो विद्यते यम् पक् इति ।
 विद्वद्म, चिद्विद्या । यो वैद्यो ।
- पश्चति (म० पु०) पश्चिर्वा पतिः १ तत् । २ पश्चिरात्र ।
 ३ मध्यति ।
- पश्चिगत (म० पु०) पतत्रण्वर ।
- पश्चिपानीगामिका (म० श्री०) पश्चिर्वा पानीपय्य
 पानाम् अथवा प्राणिका । पयोका अन्वधानस्यान, यद्
 अग्रे अर्वा चिद्विद्या या कर पानो पोतो है ।
- पश्चिपुत्र (म० पु०) पश्चिरेण चटायु ।
- पश्चिप्रवर (म० पु०) पश्चिरेण, गच्छ ।
- पश्चिप्रगता (म० श्री०) पश्चित् धोर प्रगत ।
- पश्चिरात्र (म० पु०) पश्चिर्वा रात्रा, टच्छमपानात् ।
 गच्छ ५ चान्द्र ।
- पश्चिन् (म० पु०) पश्चिन्मामी, चान्द्रायन । इक्षीने
 नोनमन्त्रका प्राण प्रवयन चिदा ।
- पश्चिन्पराति (म० पु०) इरनामप्यात् प्राणिकाया
 बिन्दय, पश्चिरात्र नाम ।

पश्चिगाना (म० धो०) पश्चिर्वा गाना इत्यम् । नात्र,
 चामना । इत्या पर्वत कुनायिका है ।
 पश्चिपि (म० पु०) पयो मि इ इव, पयवा पश्चिपु मि इ
 श्रेष्ठः । पश्चिरात्र, गच्छ ।
 पश्चिन्पामिन् (म० पु०) पश्चिर्वा मामी । गच्छ ।
 पयो (म० पु० धो०) पयो विद्यते यम् पय-पनि । विद्व
 ह्म, चिद्विद्या । पर्वत-य-यग विद्वत्, विद्वत्, विद्वत्स
 विद्यायन् यकुलि, गकुलि, यकुल, यकुल इव पत
 तिन पश्चिन् पतत, पतत्, पतस्य, पतत्र, मयोक्तम्,
 नात्रिन्, विद्विर् वि विद्विर्, पतसि नोद्विद्वत्, गच्छत्
 िच्छत्, ममलक्ष्म भाकुपरक, चान्द्रायि, पतत्र, पयो-
 रम चक्षत् पुत्र, सरक्ष, विपतिपु, पतवाह धोर
 यम् ।

पश्चि को उत्पत्तिका विषय पश्चिपुराक्षमें इध प्रकार
 लिखा है—

'अत्रत्य मार्वा इक्षी वीर्यवती महारणे ।
 चमतिथ त्रापुत्र प्रसूती अक्षिणरामौ ' (अतिमनु०)
 चक्षत्रो भार्या इक्षी को, रमो इक्षीनेमि पडले
 पक्ष त्रापु धोर अस्थिति नामक दो पदा प्रसव द्विये ।
 तथा दोये पयो जातिको उत्पत्ति है । दूसरी अमत्र
 लिखा है—अनवर अमचर धोर मांसायो पयो कोष
 वमाये लपय हुए हैं । मध्यपुराण धोर विष्णुपुराणमें
 लिखा है—यथा म्रोनो, माया, यधो, सुपोषा धोर
 यथ ये च तास्यका अन्दा धो । इनमेंसे यथाये गमसे
 यथायो धोर लक्ष्मण, इक्षीनाथ गमसे म्रनवच,
 मातोऽ गमसे मात धोर कुहरपक्षिणच, यधोये गमसे यध,
 कपोत धोर दाशासत जामीव पयो, सुपोषीक ममंमि
 जाम, म्रय गमंम धोर चक्ष तथा यक्षिके ममंमि च य,
 मारक कारण धोर मातारण्य लपय हुए हैं ।

भावप्रकाशक मनेमि को अब पदा कुलचर है, ये
 लक्ष्म धोर मनु तथा चमूयदेमत्र पदा मनकारक
 रिण्य धोर गुर होये हैं । पश्चिर्वा पश्चिर्वा विद्विन्
 रिण्य पुत्रिणाक, महारण्य चाकुनायक गुर धोर
 चक्षत् यक्षरक्षेक गुर माना गया है । (नावपराय)
 पयो पश्यत् कोव है । श्रेय इम नोनेकि दो पाव
 होते हैं, चंय ही लन दो मंमि है चक्षिरे है गच्छ

भाग आकाशमें उड़कर उधर उड़ सकते हैं। इनके मुखविवरमें ली कर चौड़ाग्रभाग तब काठिन अस्थिके संलग्न चक्षु युक्त है। चक्षुके ऊपर भागमें दो छोटे छोटे नासाच्छिद्र हैं। उदरके अघोदेशमें केवल दो पैर हैं, इन्होंने वे वृक्षादिकी शाखा, सृत्तिका, पर्वत और गृह्यादिको छतके ऊपर खड़े हो कर जिधर तिधर इच्छानुसार गमनागमन कर सकते हैं। दोनों पैरके मध्यस्थानमें गांठ रहती है। प्रत्येक पैरमें चारसे पांच अङ्गुल और उनके अग्रभागमें टेढ़े किन्तु तेज नाखून होते हैं। ये दोनों पैर समय समय पर दायके भी काम करते हैं। विशेषतः बाज, शिकरे (Hawks) आदि पक्षियोंके लिए ये विशेष उपयोगी हैं। दोनों पैरके पश्चाद्भागमें मलत्याग वा जननेन्द्रिय-विवर और उसके भी पश्चाद्भागमें पुच्छ रहता है। पुच्छ कीर डेनेम साधारणतः बड़े बड़े पर जन्मते हैं तथा समूचा शरीर पश्चिम सरीखे कोमल छोटे छोटे परोंसे ढका रहता है। इनके ऊपरके पर इतने चिकने होते हैं कि उन पर जरा भी पानी नहीं ठहरता। यही कारण है कि उनके मध्य खुले मैदानमें जब वृष्टि होती है तब इनका शरीर भीग कर भारी नहीं होता। अतः इस समय यदि कोई उन्हें पकड़ने जाय, तो वे सहजमें उड़ सकते हैं।

पक्षीमात्र ही खेचर हैं, क्योंकि ऐसा एक भी पक्षी नहीं जो कुछ भी उड़ना नहीं जानता हो, लेकिन जो काम उड़ सकते (अर्थात् जो हमेशा जमान पर चला करते हैं) और जो अन्याय पक्षीकी अपेक्षा भारहीन हैं, वे ही स्थलचर कहलाते हैं—जैसे सारसके सट्टे पक्षी, उड़पक्षी, कुक्कुट प्रभृति। एतद्विना स्थलचर होने पर भी जो मनुष्य पक्षी स्वतः ही जलमें विचरण करना पसन्द करते और जलसे साधारणतः खाद्यवस्तु संग्रह किया करते हैं, वे जलचर पदवाच्य हैं। जैसे, बक, पक्षु, आदि।

प्राणितत्त्वज्ञानि जलचर पक्षियोंके मध्य कुछ सामान्य लक्षण निर्देश करते हुए इनको जातिका निर्णय किया है। उन सब लक्षणोंमें उल्लूलाभ्यन्तरस्थ एक प्रकारका वृक्षसूत्र ही प्रधान है जिसको समायतासे वे आसानीसे पानासंसार प्रकृति हैं। इसीसे इनका एक

और नाम रखा गया है, जालपाद। वह जाल (सूत्र-त्वक्) उनके पदों परीभागस्थ तीन उंगलियों में परस्पर संलग्न है। इनके दोनों पैर एक पश्चाद्भागमें स्थापित हैं। जातिभेदने इन पक्षुमानका तारतम्य देखा जाता है। उल्लू, इनका पक्षुलोके पद अकमर पुच्छसूत्रमें संलग्न रहते हैं। इस कारण जब वे जमान पर बैठते हैं, तब खड़े जैसे मालूम पड़ते हैं। इस श्रेणीमें हम शीतप्रधान देवज पक्षु, इन और २५ विमज्जादि, ३५ गगन-भेडादि, ४४ गगन-कौटादि, ५ गाङ्ग-चिह्लादि और ६४ जंसादि हैं।

शकुनशास्त्रविदोंने पक्षिवर्गको इस प्रकार आठ वर्गोंमें विभक्त किया है—

१म शाखाचारी (Passeres) अर्थात् जो सर्वदा वृक्षों की शाखा पर विचरण करते हैं, यथा—चटक, काक, नोलकण्ठ टुट्टुनी, श्यामा आदि।

२य काण्डचारी (Scansores) अर्थात् जो वृक्ष-काण्ड पर विचरण करते हैं,—जैसे, दावाघाट (कठफोड़ा), टोकान, काकातूंग, नूरो टोया आदि।

३य द्रुतचारी (Cursores) अर्थात् जो पृथ्वी पर बहुत फुर्तीसे पैर रख कर चलते हैं, जैसे—गाहमरग, कशोवारौ, उड़पक्षी आदि।

४थं जलचारी (Grallatores) अर्थात् जो जलमें विचरण करते हैं,—जैसे, बक, सारस, पण्डूक आदि।

५म तरपदी (Natatores) अर्थात् जो पद द्वारा तैरते हैं,—जैसे, हंस, पेंडुइन।

६ठ घण्टकपदी (Basores) अर्थात् जो पक्षी नष्ट द्वारा भूमि विदारण करते हैं—जैसे, कुक्कुट, मयूर, मोनास, तोतर आदि।

७म काजोतक (Columbae) अर्थात् पारावत और उसीके समान पक्षी, जैसे पायरा, घूघू इत्यादि।

८म आखेटक (Raptore) अर्थात् जो सब पक्षी आखेट वा शिकार करके अथवा मान-भक्षण द्वारा जीविका निर्वाह करते हैं,—जैसे, पंचक, बाज, शिकरा, चीन, गोभ, हल्लिहा, शकुनि इत्यादि।

प्राणितत्त्वज्ञानि पक्षीजातियों के अन्तर्गतिक गठन और अन्तर्दक वंशस्यकी आस्थापना करके इनके मध्य

कुछ जातिगत पक्षीय वनवासियों हैं। उन्हीं नामाजातियों पक्षियों मध्य पश्चिमिभार पाय कबूती विशेषता कर रहे पक्षीय जातियों विभाग किया है। पक्षिजाति में शरीरतन्त्रको पानोचना करनेमें विज्ञानविद् पक्षितन्त्रक मर्यादा पदतन्त्र सुकृष्ट और सुजाति पक्षिका पक्षर ममाथेय और विभिन्नता दिखा कर जिन सिद्धान्त पर पक्षी हैं उनका विवरण महत्वपूर्ण नहीं है। शरीर-तन्त्रक मर्यादा यदि इस विषयमें पानोचना करे तो वे बहुत कुछ समझ नहीं हैं। काश्चित्को जो मध्य विषय करनेमें सक्षम हो सक्ता है, कभीका कहीं पर लक्ष्य दिया गया।

प्रथमतः पक्षिजातिका कोई विभाग निर्देश करनेमें उन्का नामाङ्कन प्रजातिसुधारणके लक्ष्य करना उचित है। अने कुछ पक्षियोंको पूरा शरीरका पक्षीय नई और कुछको छोटे है। जिनमेंसे करम पक्ष मन्त्रि और जिनमेंसे मध्य मन्त्रि हैं। जिसको भी सुजाति सरल और कभी नहीं है। इस प्रकार छोटे छोटे तन्त्रिक पक्षु वर्गी हो कर शुरुवातमें निर्देश दिया है कि जिन मध्य पक्षियों के कनेको मोक्षित-प्रगणालि पक्षु किसे मध्य मन्त्रि पक्षीय पक्षी छोटे है तथा उदाहरण कि कुछ पक्षी हैं, वे जो गेट्टी के भी (Group) कुछ और अप्टेरिगिड (Apterygidae) गणाने प्रस्तावित है। जिनकी उदाहरण के भी नहीं है वे दिनरनिधि (Dinorathidae) और कसुयारिवादि (Casuarjidae) गणाने मध्य पक्षीय रूप हैं। जिनको प्रमत्तलक्षिक कृषी और पक्षुकि से नवादिप्रमत्तलक्षिक है तथा जिनको बहुपक्षि विज्ञान (एम्पदपक्षीको निम्न प्रालम्ब पक्षि) में या कर मिळ गई है और उदाहरणप्रदेश परिच्छेद है, उस गणाना नाम रिडो (Riidae) है अमेरिका देशीय उदुपक्षी (Ostrich) इसी गणाने प्रस्तावित है। जिन मध्य पक्षियोंको बहु-पक्षि करम और उदाहरण-प्रदेश तन्त्रिकी उपर्यादि को मन्त्रि म मन्त्रि है इसी गणाने (Struthionidae) पक्षिका और पश्चिम्य क्वाकनाको उदुपक्षी विभि जा सक्षम हैं। लघु प्रकार जिन मध्य पक्षियोंको नामाङ्कन कादि पक्षानामें प्रस्तावित हो तथा तासुसम्बन्धि पक्ष-

मत् पक्षिने मध्यभागमें और गलेका तन्त्रिक बोनाकार पक्षि-विभि हो तो उन कनेको पक्षियोंको कैरिनिटो (Carrinatoo) कहते हैं।

किर जिन मध्य पक्षियोंको नामाङ्कनकादि पक्षानाम में पक्षीय और गलेको तन्त्रिक करम कादि तासु और मध्य भागकादि पक्षु पक्षिकी मध्य प्रथित है तथा जिनका तासु पक्षुयुक्त कसुयुक्त सरल और नामा पक्षुयुक्त रूप है वे सब पक्षी Carrinatoo पक्षी-के प्रस्तावित होने पर भी उनके मध्य विभि गणाना और विभि नाम देवे प्राति हैं। उदाहरणरूपक उन्मेंसे एकका विषय नीचे लिखा जाता है। कर्षी जोमार पक्षी (Plover) इस लीमेंसे दिग्गम है तोतर कहते हैं। विज्ञानविद्ने इसे Carrinatoo पक्षी सुकृष्ट करके भी इनके मध्य कार्सीरिना (Cursorina) और कार्सीरिना (Charadrinoe or Charadriomor phoe) नामक दो पक्षुयुक्त गणाना निर्देश की है और दिग्गम तथा पक्षुयुक्त मरेदि इस जाति में पक्षियों में पक्षुयुक्त मध्य पक्षुयुक्त दिग्गम कर कनेके एक एकका विभि नाम रखा है। तोतर पक्षीको प्रमत्तलक्षिक या शरीर Indian courler, Double bounded, Large Swallow and Small Swallow एवं जिम्नोक्ष शरीरमें Grey Golden, Large sand, Small sand, Kentushi ring, Indian ringed और Lesser ringed पादि जातियों का सजाये दिखी जाती है। एतद्विषय चीन मध्य, सुकृष्ट, पारावत चय पादि पक्षी जाति में मध्य पक्षुयुक्त जातियत विभाग और नामाङ्कनकादि उचित होता है। कपोत और बाक प्रथि लक्ष्य देखो।

इसके बाद कनेके कुरोटी और तन्त्रिक पक्षि तथा मर्यादादि को उत्पत्ति और लक्षिक प्रगणामें जैसे शरीर पक्षीयता को है उसका लक्ष्य करना विषयगत है। किंच प्रकार प्रजातुके मध्य मन्त्रि शक्त पक्षुमें परिचल होता है, वह किंच प्रकार मध्य पक्षु परिचल होता है और प्रमत्तलक्षिक उनसे पक्षुयुक्त शरीर कादि पक्षुयुक्त पक्षुयुक्त होता है, मध्यपक्षी लक्षीका शक्त पक्षुयुक्त दिना जाता है।

पक्षुयुक्त पक्षी एक समयमें पक्षुयुक्त नहीं हैं।

अतु और कानभेदसे ये घोंसने बनाते और मन्तान उत्पादन करते हैं। एकमर देखा जाता है कि काक, चोल, शालिख प्रभृति विभिन्न श्रेणीके पक्षिगण विभिन्न समयमें अण्डे देते हैं। उन अण्डोंकी बाहरी प्राकृतिमें इनकी जातिगन पृथक्ता जानी जाती है। साधारणतः अण्डोंकी एक और क्रीणाकार और दूसरी और गोला-वार होती है। क्रीणाकार अंग ही पहले प्रसव पथ ही कर बाहर निकलता है और साथ साथ मोटे गोल अंगके लिये पथ परिष्कार कर देता है। इसी प्रकार नमो पक्षी अण्डे प्रसव करते हैं, मो नक्षी, कहीं कहीं इनका बेलचण्य देखा जाता है। एतद्भिन्न विभिन्न जातीय पक्षीको अण्डावरक कठिन त्वक्के ऊपर विभिन्न प्रकारका रंग देखा जाता है। विज्ञानविदोंका कहना है कि जरायुमें प्रसवकारमें अनिके समय बह बहोंके एक प्रकारके रंगोंन पदार्थमें लिप्त हो-बाहर निकलता है। बादमें देखा जाता है कि अण्डोंके ऊपर भिन्न भिन्न रंगोंके भिन्न भिन्न दाग पड़े हैं। ये सब दाग उन पर समान भावसे नहीं पड़ते। पितामाताके दुर्बल होने पर अण्डेको बड़त् प्राकृतिक कारण गर्भधारणमें अटक जानेसे तथा भोजन अथवा अत्यन्त उत्तेजित होनेसे भी डिम्बके ऊपर रंगको अवपता वयस जितनी अधिक होगी, उनके ऊपरका रंगीन दाग भी उतना हो उच्चतर तर होता है। जो मादा दो वा दोसे अधिक अण्डे देती हैं उनके प्रथम अण्डों पर रंगकी अधिकता और परवर्ती अण्डों पर रंगकी अवपता लक्षित होती है। इन सब अण्डोंमें यदि कुछ अन्तर पड़ जाय, तो भी वे एक जातिके ममके जाते हैं। चडाई नामक एक प्रकारकी चिड़िया (Passer montanus) है जो पूरे ६ अण्डे एक साथ देती है, ये सब अण्डे भिन्न भिन्न तरंगके होते हैं। अन्तिम अण्डा बिलकुल सफेद होता है। इस और कुकट मादा प्रायः १५ अण्डे देती है। इसके प्रथम प्रसव अण्डेकी अपेक्षा शेष अण्डे अपेक्षाकृत छोटे देखे जाते हैं।

इसके बाद उन्होंने डिम्बके आवरणक कठिन त्वक्की मच्छता सादृश्य आदि देख कर इनका जातिगत पार्थक्य निर्देश किया है। उनका कहना है कि उत्तर

अफ्रीकाके लघुपक्षीका डिम्ब कृद्धि-दन्तके सदृश मच्छता और उत्तमागा अन्तरीपके निकटवर्ती स्थानजात लघु-पक्षीका डिम्ब लघुखुरा और वमन्तकी तरह व्रणचिह्न-युक्त होता है। ये दो सादृश्यगत विभिन्नता रहने पर भी उनको जातिगत कोई पृथक्ता देखी नहीं जाती। इसी कारण उन्होंने इस पक्षी (Ratitae)-की श्रेणीभुक्त करने विभिन्न शाखाओंमें विभक्त किया है। अण्डेकी आकृति-की भिन्न भिन्न तरहसे आलोचना करके भी उन्होंने इनकी पृथक्ता स्वीकार की है। पेचक (Strigidae) जातीय पक्षीका डिम्ब प्रायः गोल होता है। जिन सब पक्षियोंका डिम्ब न्यूनाकार गोल न हो कर कुछ लम्बा हो गया है, उनमेंसे कुछ Lunicolae और कुछ Alcidae शाखाभुक्त है। फिर यनकुकट (Pterocleidae) जातीय पक्षियोंका अण्डा ननकी तरह बहुत कुछ गोल होता है। इसके सिवा शकुनविदीने डिम्बका प्राकृति-गत वैषम्य दिखा कर इनका विभिन्न जातित्व निरूपण किया है। दाँडकाक (Corvus Corax) और गिन्नेमट (The gull-mot) एक प्राकृतिक होने पर भी दोनों पक्षियोंके डिम्बमें बहुत अन्तर देखनेमें आता है। डिम्ब की प्राकृतिमें १से १० इस प्रकार प्रभेद है। कादा-खोचा (Snipe or Scolopax gallinago) और ब्लाक-बर्ड, Black Bird or Turdus merula) पक्षीके डिम्बमें भी इसी प्रकार असादृश्य देखा जाता है। कादा-खोचा और Partridge (Perdix cinerea) पक्षीका डिम्ब समानाकृतिका होने पर भी इनमें विशेषता यह है कि कादाखोचा केवल चार अण्डे प्रसव करती है, किन्तु पैटिज चिड़िया साधारणतः १२से कम प्रसव नहीं करती।

अण्डाप्रसव होनेकी राख ही वे गरमो देना आरम्भ करते हैं। जो बारह अण्डे पारतो वे भी प्रथमसे ही गरमो देती हैं। कोई कोई शाखाचारी (Passeres) जातीय चिड़िया डिम्ब फोड़नेके लिए १०।११ तक उसे सेवती है, अन्यान्य जातियोंके मध्य कोई १३; कोई २१ और कोई २८ दिन तक गरमो पहुँचानेके लिए अण्डेको छेनेसे छिपाये रहती है। फिर जलचर और शिकारी पक्षियोंका डिम्ब फूटनेमें एक माससे अधिक समय लगता है। इसका

द्विग्न पुरुषोंमें प्रायः एक समाज समय लगता है।
 द्विग्नमें घरमें पढ़ाया वर बच्चा निकालना किराने माशा
 पकोवा काम है। एक आतिका पैसा भी पत्नी है जिस
 में एकमात्र सुखमें खपर बच भाग छोड़ा जाता है। उद्ग
 पकोगव बासुमय खान बा महीबो छोड़ कर उसीमें
 द्विग्न पारते हैं और पीछे लन पन्नोंकी महीबे टक देते
 हैं। निर्व पन्ना पारना को माशावा काम है, लनको
 देवरीय कर बरता है। दिनके समय में मिहीरे ठरें हुए
 पन्ने छपके लतापवे लताप होतें हैं। शाम को माशा
 का कर पन्नेको देवती है। कुछ पलो पिन हैं जो खब
 पन्ने भेजना नहीं जानती। इन जोनोंके देगको कोयल
 और पमीरिका मकाहीपको २१८४८ (Coabira)
 दोनों को दूरीके लोनछेमें पन्ने देतो है।

द्विग्न मीरनेके चार दिन बाद को पन्नापु लोवे दिन-
 के शीप भाग और दोषमें दिनके पारथये द्विग्नके बोच
 का कुपुन और खार क्पात्तरित होने लगना है पन्नेर
 शायबको करोडोको मठन। दुसरात इना समय होता
 है। पन्ने यह ताल पराबसे याकुा को कर ल्पात्तरिये
 परिचत होता है, पीछे छोरे पीरे बच करोडो मजभूत
 और पुदुपुद विपुपुन माकूम पड़ती है। यह करोडो
 मो कुछ दिन बाद कोचवत् स्वच्छ पन्नेर क्पात्तरित
 होती है। इन प्रकार मजगः पाबबकलानुभार मरमो
 देनिके बाद द्विग्नके मोतरमें पन्नेको मठन-मचाली किस
 प्रकार निष्पादित होनी है बच खदजमें हो समझा का
 मकता है। द्विग्नमें शायबके निहलने पर और ठमकी
 गाबब लानके गिर खने पर पीव प टनो दोष पड़तो
 है। द्विग्न इस समय मो मरमो पानिके निव ठन शायब
 को पिता वा माताः केमि लोचि रजना पड़ता है। मजगः
 हो चार दिन बाद ठनके मराममें मूष्य मूष्य नाम निब
 लने देके जाते हैं।

समो कोनोंके मरोरके मोतर माना मेकोओ पन्ने
 है—पन्नापु मन्निनावरक करोडो पीर लछको क्पात्तरि
 क्पात्तरिपन्नापु पन्नापु वच और लदरवरक
 लम्बमान बुझाव्य प्रभृति। पन्ने पीछे कर बच शायब
 काइर निबधता है तब इन पन्नेमसुधके क्पात्तरिमाव वा
 ल्पको तरक सामाव्य च म म्मा क्पात्तरि दाव पड़ता है।

पिता माताके यज्ञमें पादितको कर मधा लपुपुन चारा
 वा कर वन शायब छोरे पीरे पुट पीरे लगता है।
 मजगः लानये मे मन्निना कर कन्वर द्विग्न म्पा
 मय लन मांसवेगके मूष्य मूष्यमूष्य तिशापके
 पदावका कुछ च म डेल पीर पुपुधः दोषाचार परमें
 तथा कुछ प म पुट, वच पीर लदरल छोटे छोटे परमें
 परिचत होता है।

पन्नेको पापिके क्पात्तरिमाव परिचतनके
 कारण लहन मके गभे पीर पुपुध मानमें मांसवेगोकी
 पन्नेकता देवो जाती है।

इनमे बुझाव्य (Sternum) बहुत दूर तक पीरो
 रजनेके कारण लदरनेगमें मावारपना वेगोको मन्नेपता
 देवा जाती है। केव लुह मांसवेगके छप छपपन्नेर
 मे पीरो पापिकेदक मिजनेके लुपके वा कर पुमपु म्मे
 पीररिब पन्नेरारको पावरक बिधा है। इन मरकी
 म्मिब परिपुटि को पन्नेरारके पामानमागमें बिदरक
 का प्रदान करव है बिब प्रदा पन्नेरार परने डनी
 को लक पीर निम्न कर के मापु मानमें गमन करते हैं,
 लमका पदना कारण यह है कि मापु गुदलको पन्नेर
 पकोका गुदल बहुत कम है पीर दूसरा लनको पन्नेर
 जित पीरोक बाव पन्नेरारके म्पाव्य (Scapulo-cora
 cord)के मध जो कर पापकेमें पन्नेर रजनेके कारण
 वच मन्नेरारके म्मि म्मि म्मि है। इमी पीरोके रजनेके
 पन्नेर क्पात्तरिको तरक पन्नेर डेने पापानोनेके लताता
 पो लैनाता है। इनके निम्नपट पीर र्ममिया मरार
 को पन्नेर पतको जाता है पीर लपरी भाग मरारानु-
 याया मोटा होता है। यको कारण है कि पन्नेरार पन्ने-
 कोनाममें लसरो माशा पर पीर रव कर मो मकते हैं।

करोडोंके गत क मधा हो मन्निपुका चबलान है।
 इनमें म शिकट पन्नेरार म्मि म्मि म्मि म्मि म्मि म्मि
 म्मि (पन्नापु वचके पन्नेरारके) गतके मध निबधत
 रदनी है। ये गिराव मन्निपुके मिचापके म्मि
 मय पीरो गतके म्मि म्मि म्मि पन्नेर म्मि म्मि म्मि
 भावके द्विग्न करके मध मधा वा कर मयन करत है।
 म्मि म्मि म्मि रदा म्मि र्म पुट को कर हो लनप
 पन्नेरारके परिचतित जाता है। इनके लय म्मि

मस्तिष्कका संयंत्र रहने पर भी दोनों चक्षु-गोलक विभिन्न स्थिति आवरकके मध्य स्थिति विष्ट हैं। इससे मित्रा मस्तिष्कके मध्यमें जोड़ी एक और भी आधार है। इस कोपके मध्य पृष्ठ वंशावलीको काशेरक रज्जुको मध्यनली प्रवेश करने पृष्ठिकी प्राप्ति हुई है। इसका मध्यभाग जालवत् मस्तिष्कावरक भिन्नो और अन्यान्व छोटी छोटी गिराओंसे शाच्छाटित है। यही गिराओं परस्परको सहायतासे इन्द्रियज्ञान उत्पन्न करते हैं।

पक्षिजातिके चक्षुको गठनप्रणाली गोधिक, कूर्म, कुम्भीर आदि सरोसृपजातिके साथ बहुत कुछ मिलती जुगती है। इनका पक्षिप्रणव कन्दार-रज्जु द्वारा पूर्ण मावामें चक्षुस्यन्दनकारी सूत्रसूत्र समूहमें निवृत्त है। यही कारण है कि वे चक्षुपल्लवको सहजमें उठाते और बन्द कर सकते हैं। इसका चक्षुगोलक चार मन्तकपेशो और दो वक्रभावापन्न मांसपेशीयो सहायतासे इच्छानुसार विभिन्न और परिवर्तित होता है। चक्षुगोलक-योजकत्वक (Conjunctive) के अन्वयहित बहिर्दृग्में अवस्थित कठिन घनत्वक (Sclerotic) के सामने अङ्गुरोयकको तरङ्ग गोलाकार सूत्र्य आंशुक श्रेण्य पश्चि-क्षा पात (plate) है। चक्षुमणिके पात्रवर्ती तारका-मण्डल सूत्र्य सूत्र्य मांसपेशो द्वारा प्रापसमें समान्तर-भाष्य संयोजित होता है। पक्षिजातिके चक्षुके सम्मुख भागका घनत्वक Sclerotic) उपास्थिविष्टित (Oarullaginous) है। पक्षिमांसको ही अक्षणेन्द्रिय वर्त्तमान रहने पर भी उनमेंसे सभी सुन नहीं सकते कुछ जाति के पक्षी ऐसे हैं जो दूरके आखर और भाषा अच्छो तरह सुन सकते और उमे याद रखते हैं। फिर कुछ पक्षी ऐसे हैं जो कुछ भी नहीं सुनते। उनके अक्षयणविवरस्थ यर्णपट्ट ऐसे छोटे छोटे परोंसे आहत हैं, कि उनके मध्य ही कर कोई शब्द सहजमें प्रवेश नहीं कर सकता। कूर्म, कुम्भीर आदि सरोसृप जातियोंके साथ पक्षिजातिके अक्षणेन्द्रियका कोई पार्थक्य देखा नहीं जाता।

सरोसृप और सर्प शब्द देखो।

पक्षीको जिह्वा के साथ सरोसृपजातिके विशेष समानता है। कुछ पक्षियोंको जिह्वा तीराकार सूत्र्य और मूलदेश कण्टकयुक्त है और कुछ पक्षी ऐसे हैं जिनके

कुम्भीरको तरह जिह्वा नहीं होती। Totipalmaris और Balaeniceps जातीय पक्षीको जिह्वा छोटी और गोल होती है Rapaces जातीय पक्षीको जिह्वा मोटी और किनारेमें कटी होती है Picidae चोंचोको जिह्वा-मूलास्थि विस्तृत करनेके कारण उनको जिह्वा भी बड़ी और चौड़ी होती है तथा प्रकृत जिह्वायभाग तीरके फलकके जंभा और कण्टकमय होता है।

जिनको किनो पक्षीके अन्वको उपरिस्थ अक्षयणको प्रसारणशाल है। छोटे और बड़ेके भेदमें अन्व दो प्रकारका है। सभी पक्षियोंमें हृत् अन्व अस्थिप्रतिनालामें मिला हुआ है। यह स्थान अन्यावरक भिन्नो द्वारा परिवर्तित है। अक्षिकांग पक्षिकी पाकागयके अधोभागान्तक निकटस्थ अन्व वा अन्व द्वारा और हृद्द्वारा एक दूरके सम्मुखवर्ती है। Alectoromorphae और Actomorphae जातियोंमें ईश्वर और शिकरा (Hawk) आदि पक्षियोंके गनेको नाली बड़ी ही कर कण्ठनालान्त्य पक्षियोंके खाद्याधारमें परिणत हुआ है, किन्तु पारायतादिक गनेको नालीमें दो छेद होते हैं। जो सब पक्षी केवलमात्र मटर गेहू आदि खा कर जीवनधारण करते हैं उनके पाकागयको भिक्षियों विशेष परिपुष्ट होता है और साथ साथ उनको श्लैषिक भिक्षीका त्वक चट्ट कर मोटा और कठिन तथा खाद्य परिपाकके उपयोगो ही जाता है। कोई कोई पक्षी भी पचा सकता है, वैसे पक्षियोंका पाकागय प्रन्तरचूर्णकारो पदार्थमें गठित है। पशुओंके जंभा पक्षिजातिके भी दादशाङ्गुलान्तके सन्धिस्थानके छिद्रमुखमें लोम है। पक्षियोंको अस्थि-पूतिनालीका पचाद् प्रदेश सन्धिविष्टित कोपयुक्त है।

इन सब गिराओंको सहायतासे खाद्यसमूह कण्ठनाली ही कर पाकागयमें लाया जाता है और वहां परिपाक ही कर भिन्न भिन्न गिरा और धमनोके योगसे वह रस पहले रक्षाशयमें और जोड़ी हृत्पृष्ठमें प्रेरित हुआ करता है। पक्षिजातिका पुसफुस और शरीर सम्पूर्णिकी कोशिका नाही ही रक्तप्रवाहका मूलयन्त्र है जिन दो शोषोंके कुचनण हृत्कोपमें रक्त अन्यान्य धमनियोंमें विच्छिन्न होता है, वे कोप परस्पर भिन्न और मध्यमें पतने परतके समान अस्थिपातद्वारा विभक्त हैं। पक्षियोंका

बहुतेहनीशोव मिडोपटलवत् जोमि पर मो वड हड़ है
 और वसडे चतुर्दिक्कय वायुकोपडे बहिर्देशका पाष्क-
 नव है ।

पाक्षारो परिपुष्टिडे त्रिम प्रकार गोरोमि रखादिका
 मन्नासन होता है, उसो प्रकार उन्न शिरा मन्त्रभोव
 कावंप्रधानीसे लगेडे स्वासप्रवास और भाग्य प्रसारके
 मन्त्रका उद्धान देखा जाता है । कितने पक्षी ऐसे हैं
 जो केवल कर्त्तव्यरत होनते हैं । जैसे—काक पिचर
 मारम खादि । फिर कितने ऐसे मो हैं जो गीतकी तरह
 लयवुत्त सुमित स्वर उत्पन्न करतें हैं । इन पक्षियोंके
 मध्य हम लोको के देगडे पयोडा, मोयल, मैना ख्याम
 मन्त्रिण और इन्की चण्डा Nightingale तथा दक्षिण
 अमेरिकाके चण्डापक्षी (Bell-bird) खादि देखे जाते
 हैं । कुछ पक्षी गीत गा सकतें हैं और कुछ नहीं इनका
 कारण ज्ञानके निचे प्राचिनत्वविदो ने जो गोमोर पक्षी
 बनाओ है, उनका बहुत कुछ पय समझयोव है ।
 इनका कहना है कि त्रिम यत्र शिरापो को चडावतासे
 वायु पुष्पपुष्पके मन्त्रमें ध्वनित हो कर सामट और
 कृतिमधुरकर उद्भित होता है उसको प्रधानो हम
 प्रकार है—पक्षीकी डाक या तर्कत ध्वनि कण्ठमन्त्रीसे
 नहीं निकलता बर कण्ठमन्त्रीको निम्नस्व स्वासनको,
 स्वासनको और वायुनकीडे व योग्ययान तथा वेचकमात्र
 वायुनकीडे ध्वनि पुट हो कर कण्ठमन्त्रीसे प्रकाश पाती
 है । *Habitas* और *Cathartidae* (अमेरिका देगोय
 यत्र) चकोडे क्वचकमात्र कण्ठमन्त्रकरक ध्यास और
 वायुनकीडे शब्द निकलता है । हम लोको के हिन्दुके
 नायक पक्षिभिरको पाष्ककारक गठनप्रधानो मो लगे
 तरह है । काक प्रथमि पक्षियोंकी स्वररूपकिते मन्त्र
 प्रधानीयत होमि पर मो के गान नहीं कर सकतें । कण्ठ
 मन्त्रीके पाष्ककारक हिन्दुसुखमें यत्र वृगठित होय है ।
 उन्न कोपक ठका हिन्दुसुखमें व लम्ब है । इसके ठोक
 पाष्क देगमें वायुनसियां विभिन्न और ग्रेस कर टकोको
 मन्त्रेधानमें परिवरित हैं । वहां पर पावरकभी एक
 वायुनकी सुखरीके भीतर हो कर बनो गई है । इस
 पावरकका चपभाग सरल और लुप्तमन्त्रिण-मिडो-
 निर्मित है, किन्तु इसका चपभाग लम्बम लुप्तमन्त्रिण

पाष्कारमें परिपत हो कर टकोके मात्र मिल गया है ।
 इससे हमरो और वायुनकीसुखके पाष्ककारक बिन्न बन
 पाष्कारमें परिपत हो कर वायुनको मन्त्राके बहिर्देशां म
 मि पाष्क स्पष्ट करतें हैं । इसके पष्ककारमें स्थिति
 म्दायक व्युत्पत्तनु सञ्चित है) कर श्रेष्ठि व मिडोके उत्पन्न
 करतें हैं । श्रेष्ठिपक्षिको और मन्त्रिणमिडोके पष्क
 कारकी का मन्त्र मन्त्रित होता है हमने मन्त्र हो कर पुष्प-
 पुष्पकी वायु बहिर्देशमन्त्राणमें इसके स्थितिस्वायक पाष्क
 देगको स्थानित और चतुरचन (Vibrating) करतें हैं ।
 इसा प्रकार कण्ठमन्त्रीके मन्त्र हो कर सुमित गीति-
 धर निकलता है । स्थितिस्वायक पाष्क देगमें कितान
 और वायुपक्षारिकी स्वासनकीसुखकी उद्भिके पतुसार
 सरका तारतम्य रूपा करता है । उन्न मन्त्रोत्पादक
 टोना यत्रमें मांसपेयीके सङ्कोचकेतु शब्दका तारतम्य
 होमिके कारण बड़ पयो वाद्य और चन्तरके सेइसे दो
 प्रकारकी हैं । *Alectoromorphae*, *Obenomorphae*
 और *Dysporomorphae* खादि पक्षिकाणिकीके पष्ककार
 पेयी नहीं है । *Ooacomorphae* खाद्यासुक्त पक्षीके
 शब्दकोड़ा पान्तरिक मन्त्रुक्त पेयी है । बड़ पेयी
 स्वासनको और टकोके निकटसे ले कर वायुनकी-वचय
 तक विस्तृत है । तोतापक्षीके तोन कोड़ा पान्तरिक
 पेयी है किन्तु लगेके पष्ककार-पावरक (*Beptom*)
 नहीं है ।

पक्षियोंको मूलचर्मिने विभिन्नाकार बहुतसे उत्प-
 ण्य है । मूलकोवर्क मन्त्रांशकित समय पाष्क वर्त्तो
 याशरार सुखा टोना भावो (*Lobes*)में इनका पष्क
 कोप स्थापित है । गीतको प्रथमतासे बड़ पष्ककोप
 मात्र सङ्कुचित होता है और पोष्ककी पक्षिकतामि
 पर्यात् वेगक लोहमाममें उसको उद्भि देखा जातो है ।
 यही कारण है कि ये पोष्ककारमें पक्षिक मन्त्राण
 उत्पन्न करतों हैं ।

पक्षियोंके त्रिम कपावडे पर निकलते हैं जातिसेइके
 लगेके मन्त्र मी स्थापित देखा जाता है । मन्त्रक, मन्त्रा
 दिव्यदि (बस और उदरभाग) पुष्क और परइय
 खादि विभिन्न स्थानो के पक्ष परचर स्वतन्त्र हैं । बस
 जातिके मन्त्रे पर वनमि लोमल लोने है कि दूसरे बिजो

पक्षीमें बड़े बड़े पर नहीं निकलते । इस कारण बकशा गला विगेष आटरकी वस्तु और मूल्यवान् है । मयूरके पुच्छ और कण्ठके पर सुन्दर तथा नानावर्णोंमें रंगे होते तथा डैनेके पर भी हम जातिके डैनेके परको तरह क्रमके लिए विगेष आटते हैं । काकातुषा जातीय पक्षीको चूड़ामें और पारावताटिके पैरोमें पर होते हैं । पक्षिजातिमात्रमें जो परको विभिन्नता देखो जाती है । परकी उत्पत्ति और वृद्धि शरीरकी पुष्टिमें माधित होती है । प्रत्येक परकी जड़में गोशुष्क गूदेकी तरह रज्जु-मिश्रित मामका अस्तित्व देखा जाता है ।

पक्षिगावकके गात्रमें पक्षी जो पर निकलते हैं वे कुछ दिन बाद झड़ जाते हैं और फिर नये पर निकल आते हैं । परिणामतः जो वर्ष भरमें एक बार अपने पुरातन और वृष्टि आटिसे नष्ट परका त्याग करते हैं और नववस्त्रपरिधानवत् उनके अङ्गमें नये पर निकल आते हैं । साधारणतः जिस ऋतुमें जो पक्षी मस्तान उत्पादन करते हैं ठोक उसके अथवाहित बाद ही उस पक्षीका पक्षत्याग हुआ करता है । इसके अलावा और भी दो एक समयमें किसी किसी पक्षीको पुच्छका परिव्याग करते देखा जाता है । पक्षिगण पुरातन परांको त्याग कर नये परो की क्यों धारण करते हैं तथा चतुष्पटियोंकी लोमका त्याग और सर्पजातिकी केंचुलीका त्याग क्यों होता है इसको अच्छी तरह आलोचना न कर स क्षेपमें केवल इतना ही कह देते हैं कि उनके डैनेके परके ऊपर उनके आकाशमार्गमें गमनागमन और जीविकाजन होता है, इसी कारण उन्हें नूतन पक्षको आवश्यकता होती है । इस प्रकार उनके डैनेके नष्ट पर यदि परिवर्तित नहीं होते, तो वे उड़ नहीं सकते, यहाँ तक कि वे जड़वत् अकर्मण्य हो कर हिंस्रजन्तुमें खाये जाते अथवा विनष्ट हो जाते ।

सभी पक्षी एकवारमें पर नहीं छोड़ते । पर छोड़नेका समय आनेमें ही वे डैनेके दोनों छोरोंके एक एक परकी छोड़ते हैं । क्रमशः उन दोनोंकी जगह जब नूतन पर निकल आते हैं तब पुनः वे दूसरे परकी इसी प्रकार छोड़ते हैं । ऐसा करनेसे उन्हें उड़नेमें किसी प्रकारकी तकलीफ नहीं होती । अधिकांश श्रेणियोंके पक्षि-

गावकगण प्रायः वर्ष भरमें प्रथम बार पर नहीं छोड़ते; किन्तु Gallinae नामक श्रेणीके पक्षिगावकगण बहुत अल्पवयमें ही उड़ते हैं, इस कारण ये पूर्णवयस्य पातेक पहले ही एक बार पर छोड़नेमें बाध्य होते हैं । हम श्रेणी (Anatidae)के मध्य पूर्वोक्त प्रयाका विगेष बेल-क्षय्य है । ये एक ही समयमें डैनेके पर छोड़ते हैं और प्रायः एक ऋतुकालमें उन्हें उड़नेकी क्षमता नहीं रहती । Anatinae और Fuligulinae नामक श्रेणियोंके नरके पर जब झड़ जाते हैं, तब वे अश्वत्थ टेरनेमें लगते हैं । नूतन परके निकलने पर वे फिरसे आकाशमें उड़ सकते हैं, किन्तु इनमें मध्य Micropterus canerens आकाश-संगण जब इस प्रकार पर छोड़ते हैं, तब वे आकाशमें उड़ नहीं सकते । टर्मिगन नामक (Tarmigan = Lagopus mutus), एक प्रकारका पक्षी है जो मस्तानोत्पादक ऋतु (Breeding Season) के बाद यद्यपि नर मादा दोनों ही पक्ष त्याग करके नूतन पर धारण करते हैं, तो भी गीतमें अपनी रक्षा निये आंतकालमें नूतन पर धारण करते हैं और गीतकालमें बात जानें पर फिर से तृतीय बार गीतवस्त्रका त्याग करके वसन्तऋतुमें विगिष्टवर्णयुक्त पक्षावरणमें अपनेको ढँक लेते हैं । यह परिवर्तन केवलमात्र उनके देहमरम्भमें ही हुआ करता है । पुच्छ वा डैनेके पर वे त्याग नहीं करते । एक श्रेणी वा जातिगत किसी किसी विभिन्न आकाशकी पक्षीकी वर्ष भरमें दो बार पर छोड़ते देखा जाता है । जिस श्रेणीमें Garden Warbler (Sylvia salicaria) वर्ष भरमें दो बार पक्ष त्याग करता है, उसे श्रेणीमें Black-cap (S atricapilla) नामक पक्षिगण वर्षके अन्दर केवल एक बार पर छोड़ा करते हैं । Emberizidae श्रेणीके पक्षी भी इसी नियम का पतिपालन करते हैं और Motacillidae जातिके मध्य भरतपक्षी (Alaudidae) वर्ष भरमें एक बार और वापिट नामक पक्षी (Rapids = Authinae) वर्ष भरमें दो बार पर परिवर्तन करते हैं, किन्तु कोई भी डैने वा पूछके पर नहीं छोड़ते । शाखाचारी पक्षियोंकी भी कभी कभी पक्षका त्याग करते देखा जाता है । वे ममथानुसार कभी पुच्छ, कभी गात्रके इसी प्रकार सभी स्थानोंके पर बदला करते हैं ।

पक्षिजाति के प्राचीन प्रतिहासको पालोचना करने से देखा जाता है कि एक समय हम भूमध्य में माना आदि के पक्षियों का साम था। कालक्रमान्तरमे उनके चलायन कुछ आतियां तथा विनोद को गई है, हमका निरूपण करना बड़ा ही ठठिन है। भारतमहासागररूप मरिनास (Marinthus) होवेमि एक समय डाडो (Dodo) नामक एक आति के पक्षोका साह था। बिगत गताष्ट्रो में कोई कोई मकुलमास्त्रविद् इन पक्षोको पवनो पंथोके सिल कर सपको प्रतिष्ठतिको चतना गये है। किन्तु वर्तमान गताष्ट्रोमें इन पक्षोको मजीवताका विश्वास मो नशो है। सतिज्ञानिष्ठित प्रस्तरोमृत पक्षिको को शिकन लभके पूर्व सप्तास्यको पालोचना को सा सक्तो है। इसी प्रकार कई गताष्ट्रो पक्षिको को नश पक्षिकुल कुटिलकामके अवनतमे पड़ कर पृथोके मध्य प्रोहित हुए है पोर चमी भिनको प्रस्तरोमृत पक्षिको को कर एक मो समोच पक्षो मिमनेको मभावनना गयो है है पक्षिमक्षिकम योचोके को सक्त है मकुलमास्त्र विदोने भूमयमे उत्तोमित प्राचीन पक्षो आतियोको प्र रोमृत पक्षिके उनको योचोका निवासन विना है।

सु. इङ्ग्लैण्डको अनेकठिकट उपत्यकामे भिन मश पक्षिकोको पक्षि पाई गई है, उनको भिगोय पालोचना करके प्राक्विदनि उन्हे Amblonyx, Argosomus, Brontornum, Gallatx, Ornithopus, Pitypterna, Tridentipos पाई योचियेमि विमल विवा है। कोई कोई इनको कुछ पक्षियोंको शरोधप्रातिको पक्षि समझते है। Brontornum योचोके पक्षोकी प्राकति बहुत बको है। इनके पक्षिङ्ग १३६ इंच है यो एक एक पादपेयशा अवनमान ८ फुट है। वमि रियाके भिन पक्ष मे पक्षोको कुछ प्रस्तरोमृत पक्षि पोर पक्ष स लय है, उनके पुच्छको कायीच-परिक्रमि मरोधपक्षो तरह शीय गठि घीं पोर एक एक यांत्रिके दो दो करके पर गिन्धी हुए हैं। इस आति के पक्षोको चमीन Archaeopteryx योचोके पक्षीन रमा है। इवचिन युग (Eocene period) में हम लोग कितने पक्षिकोके इत्तान्तरमे पशगत हैं। हम समयके एक इवत्तुबाय पक्षो (Gastornis parisiensis)को पक्षि पाई गई

है। हम पक्षोको प्राकति उद्ग पक्षोकी तरह बड़ी है। हमके पाद अङ्ग (Vulture)को तरह एक प्रकारके पक्षोका प्रकार था। बड़ पक्षो एसेन नामक पक्षोको पक्षोका जोटा था किन्तु दोनो को Lithothrix योचो सुझ है।

कामिउदन नामक अमानमे जहां पूर्वोक्त पक्षिजाति को पक्षि मो, यहा एक पोर Desornis आतोय उवत्तुपक्षोको करोडो पाई गई है। हम पक्षीके (Odontopteryx tollepous) इत्तमूलमें दन्त है। इवचिन युगमें पोर मो पक्षिक पक्षिकोकी प्रोहितपक्षि पाई गई है। किन्तु इनके मशर पक्षिकोय पक्षोजाति वर्तमानकालमें देखा जाता है, शिकन Agnaptorus योचोको मप्या लोप हो गई है। हम समयम प्राचिन पक्षोकाके योमि ग (Wyoming) मशरमें भिन मश पक्षिकोको प्रस्तरोमृत पक्षि पाई जाती है उनमेंके एक मरीचुगको पक्षिका बजन प्रायः बालोम इशार पो ह है। टर्सियारि सतिज्ञानिष्ठित (Tertiary deposits) हिमाचय पक्षिके मिमन्तरमें उद्गपक्षो Struthio पोर I haeton योचोके उद्गवाकार पक्षोको पक्षि पाई गई है। उत्तर पक्षोकाके टर्सियारि युगके मिमन्तरमें Uinornis योचोके एक प्रकारके पक्षोको पक्षि पाई गई है, यह जालि भा पक्ष बिनकुल लोप हो गई। यहां मावचिन युगको यो पक्ष पक्षि पाई जाती है, हम मश आतियोके पक्षो पक्षोकाके प्राय मो मिमते है। इसके परन्तों द्विचिन युग मना आतोय पक्षिकोका सतिज्ञानोपित पक्षि पाई जाती है।

एवशिष्य पक्षोकोदेयके सुहायमन्तरमें माना आतोय पक्षिको का अज्ञान पाया गया है। यहा एक प्रकारके उद्गवाकार पक्षिजाति (Grus primigenia)को पक्षि पोर एक पक्षि (Snowy Owl Nyctea scandiaca) पोर Willow grouse (Lagopus albus) पक्षोका निदयन है। माकटाहोपका उद्गवाकार चम (Cygneus falconeri) पोर इक्षिक पक्षोकाके उत्तर प्रदेश के Orus पोर Rhea नामक पक्षो उवत्तुपक्षो है, योचोके दोनो पक्षिजाति सुझ हो गई है। Rhea नामक पक्षो बड़ पक्षोको तरह शीङ्ग सक्तता था।

डेनमार्कके एक स्थानसे (Caperally-Tetrao urogallus और Great Auk or Garefowl-Alcar impennis) दो पक्षिजातिकी अक्षप्रस्तरोभूत अस्थि पाई गई है। अभी उस जातिके पक्षी इस देशमें नहीं मिलते। इङ्गलैण्डके अन्तर्गत नारफोक प्रदेशमें और इलार्डहोपमें कई एक (Pelecanus) श्रेणिके पक्षियों की अस्थि पाई जाने है। उनकी आकृति वर्तमान P. onocrotalus-की अपेक्षा बड़ी है। मडागास्कर होपके दक्षिणांगसे कितनी Struthio श्रेणियों को पक्षिजातिकी अस्थि पाई गई है उनमेंसे हिनोयर माह्व (M. Is. Geoffroy St. Hilaire) ने १८५१ ई०में AEpyornis maximus श्रेणिके एक पक्षीका अंडा पैरो शहरमें भेज दिया था। न्यूजीलैण्डहोपमें भी नाना जातीय वृहदाकार पक्षीको अस्थि पाई जाती है। इस होपमें सेवरी उपनिवेश स्थापित होनेके पहले उस देशके वासियोंने अनेक पक्षियोंको मार कर खा डाला है। यहाँको Harpagornis श्रेणीभुक्त शिकारी पक्षी इतने बड़े होते हैं, कि वे Dinornis श्रेणिके पक्षीको पकड़ सकते हैं। पहले आस्ट्रेलिया होपमें ये पक्षी अधिक संख्यामें पाये जाते थे, किन्तु अभी उनकी संख्या बिलकुल गायब हो गई है। प्रसिद्ध एमन पक्षिगण भी इसी श्रेणिके माने जाते हैं। ये उड़पक्षीको तरह नहीं उड़ सकते, किन्तु दौड़नेमें बड़े तेज हैं।

पहले ही कहा जा चुका है कि कुछ जातिके पक्षीगत दो शताब्दिके मध्य कालके अन्त स्त्रोतमें लुप्त हो गये हैं। मरोसस हीपमें जो दोदो (Dildus impetus) पक्षीकी कथाका उल्लेख किया है, वह १६८१ ई०में 'बार्क' कासल' नामक जहाजके मालिम वेंजामिन हेरो इस जातिके जीवित पक्षीका देख कर लिख गये हैं। उनके लिखित कागजादि आज भी इङ्गलैण्डके जादुघरमें रक्षित हैं। इस होपके दक्षिणस्थ बोर्वा रावनियन, मैसकारिंग नाम आदि होपोंमें ऐसे अनेक पक्षियोंकी निदर्शनास्थि पाई गई है जिनका वंश इस स सारसे बिलकुल लुप्त हो गया है। उक्त हीपोंके पूर्व और अक्षस्थित रड्डिगो नामक हीपमें एक और प्रकार (Pezophaps solitaria)की पक्षिजातिका

वास था। ये दादोंमें मय्युर्ण भिन्न थे। १६८१-८७ ई०में एक निर्वासित इटलिन उड़पक्षीको प्रतिष्ठितिको अद्वित कर गये हैं। पोछे १८६८ ई०में Edward Newton नामक किसी यूरोपवासीने इसका अस्थि पा कर उसकी पूर्वास्तित्वका स्वीकार किया है। अभी इस पक्षिजातिका चिह्नमात्र भी नहीं है। इससे अनाथा मारिमसहोपमें एक और प्रकारका तोता पक्षी (Lophopsittacus mauritianus) था। उनकाटर्न हर्माजून १६०१ ई०में जब मारिमसहोप भ्रमण करते करते पहुँचे, तब उन्होंने इस जातिके पक्षीको जीवित देखा था। मारिमस और मसकारागनिश आदि हीपोंमें और भी कितने तोते, उभू आदि नाना जातीय पक्षियोंको अस्थिका निदर्शन पाया गया है। प्राणि-तत्त्वविदोंने उनसे स्वतन्त्र पास्या प्रदान की है। यहा Aphanapteryx जातीय एक प्रकारका पक्षी था जिसको चोंच बहुत लम्बी थी। रावनियन और रड्डिगोहोपमें एक समय नाना जातीय पक्षियोंका वास था। धीरे धीरे वे सब पक्षी लुप्त हो जा रहे हैं। प्रायः ४० वर्ष पहले Starling (Fregilupus varius) नामक पक्षी जीवित था। एतद्विषय एक प्रकारका छोटा पक्षक (Athena murivora), बड़ा तोता (Acropsittacus iodericauus) इस प्रकारका घूँघू और एक जातिका वज्र (Ardea megacephala) Miserythrus liguati नामक नाना जातीय पक्षी जो एक समय उक्त होपमें जीवित थे वह हम लोग भ्रमण कारियोंकी तालिकासे जानते हैं। फरासो-अधिकृत गोआडेनोप और मार्टिनिक होपमें छः विभिन्न श्रेणियोंके पक्षी (Psittaci) ५०१६० वर्ष पहले जीवित थे, किन्तु उनमेंसे आज एक भी देखनेमें नहीं आता। लाब्रेडर देशोय वृहदाकार हंस (Somateria labradora) प्रायः सत्तर वर्ष पहले शोभमन्त्रतुमें सेण्टलारेन्स और लाब्रेडरके मैदानमें विचरण करते थे। जब ठंड अधिक पड़ती थी, तब वे इस स्थानको छोड़ कर नभा-स्कोशिया, न्यूज़ीलैण्ड आदि दक्षिणदिक्स्थ उष्ण-प्रधान देशोंमें भाग जाते थे। शृगालादि मांसभुक्त चतुष्पद प्राणीसे वे अपने अंडोंकी रक्षा करनेके लिए पर्वत-मय छोटे छोटे हीपोंमें अण्डादि प्रसव करते थे। हिंस

५। हथिवपियन—अर्थात् वर्षाँरी राज्य छोड कर समस्त अफ्रिका, केपमाड होप मडागारकर, मिन्दिनिम, मकोडा, अरब आदि स्थान। इसके मध्य—(क) Libyan, (ख) Guinean, (ग) Cafirarian, (घ) Mosambican, (ङ) Madagascarian,

इण्डियन—अर्थात् भारतवर्ष और तन्त्रिकटवर्ती सिंहल, सुमात्रा, मलका, फर्मोसा, जेनान, कोचोन, चीन, ब्रह्म, श्याम आदि देगजात। फिर इसके मध्य भी कितने स्वतन्त्र शाक वा Sub region हैं:—(क) Himalo-chinese, (ख) Indian अर्थात् भारतवर्ष के अन्तर्गत राजपूताना, मानव, छोडानागपुर, सिंहल आदि स्थान। (ग) Malayan अर्थात् क्लिन्पादन होपपुञ्ज, मलय उब-होप, बोर्नियो, सुमात्रा, जावा, वानो आदि होप।

प्राणितत्त्वविदोंने जो ऋश्रेणीविभाग किये हैं, उनको आलोचना करनेसे देखा जाता है, कि उन ऋहोंके एक एक भाग (Region) में जितने पक्षियोंको श्रेणी वा थाक है, वे प्रायः एक दूसरेके समान हैं और उन सब पक्षियोंकी श्रेणी वा थाकमें इतनी विभिन्नता है कि उसको विस्तृत आलोचना करना बिलकुल असम्भव है। पहिले जो लिखा जा चुका है कि चील (Kites) जातिका पक्षी स्थानभेदसे विभिन्न प्रकारका है। उन नाना-स्थानाजात एक जातिके पक्षियोंका आकारगत बल-क्षय्य देख कर उन्हें विभिन्न थाकके अन्तर्गत करके विशेष विशेष संज्ञाओंसे अभिहित किया गया है,— जिस प्रकार Casuarius श्रेणी वा जातिगत पक्षिगण विभिन्न स्थानवासो हैं और उस उस स्थानके जलवायु-सेवी हो कर विभिन्न आकार धारण करते हैं, उसी प्रकार उनके नाममें भी प्रथकता देखो जातो है—

पक्षिजाति

स्थान

C. galeatus	..	Ceram
C. Papuanus	...	Northern New guinea
C. Westermanni	...	Jobie Island
C. Unimpendiculatus	...	New guinea
C. Picticollis	...	South New guinea
C. beccarii	...	Wokun, Aru Island
C. Bicarunculatus	...	Aru Island

C. australis	...	North Australia
C. Bennetti	...	New Britain

इस प्रकार देखा जाता है कि प्रत्येक पक्षिजातिका एक प्रथक, पथक, नाम है। विस्तार ही जानिके भयसे उन पथका उल्लेख नहीं किया गया। ऋतु परिवर्तनके भाव हो मात्र अनेक पक्षियोंका वास-परिवर्तन दृष्टा करता है। कुछ जातिके पक्षी ऐसे हैं जो एक ऋतुको पसन्द करते हैं और जब एक देगमें उस ऋतुका परिवर्तन हो कर एक दूसरी ऋतुका आगमन होता है, तब वे उस स्थानको छोड कर अपने अभ्यस्त ऋतु युक्त स्थानमें फिर चले जाते हैं। कोकिल आदि पक्षिगण वसन्तप्रिय हैं। जब इस देगमें वसन्तका आगमन होता है, तब कोकिल जातिका भी अभ्युदय होता है। फिर जब वसन्तकाल चला जाता है और शीतऋतु आतो है, तब उक्त पक्षियोंका वास भी बदल जाता है अर्थात् कोकिल पक्षी इस देगको छोड कर वसन्तप्रिय स्थानको चले जाते हैं। इसी प्रकार चील जातिमें एक बेलक्षय्य देखा जाता है। शीत-शीतमासि ऋतुमें इस जातिके पक्षी हम लोगके देशमें अनेक देखे जाते हैं, किन्तु वर्षाके आरम्भ होते ही इनको संख्या धीरे धीरे कम होने लगती है। इसका कारण यह है कि चीलजातिके पक्षी वर्षाकालके पक्षपातो नहीं हैं। हम लोगके देगमें प्रवाद है कि रावणका चूल्हा हमेशा जलता रहता है, पोछे वर्षाकालमें वह आग बुझ जातो है, इसी आशुद्धासे विशु भगवान् चीलोंको अपनी रक्षा करनेका आदेग देते हैं, यही कारण है कि चील पक्षी वर्षाके आरम्भ होते ही उसी देगमें चले जाते हैं। उत्तरी अमेरिकाके शोर (Shore) नामक पक्षी कभी कभी इङ्गलैण्ड और नौरवेके पश्चिम कून्धमें आते देखे जाते हैं। अत्यन्त शीतप्रधान देगमें (High Northern latitudes) इनकी मादा सन्तानोत्पादन करती है। उत्तर-देगमें इनके चले जानिका यही कारण है। इस समय उत्तर अष्टनाण्टिक महासागरमें हवा जोरोसे बहती है। उस पश्चिमो वायुसे कितने पक्षी अपने अभीष्ट पथमें जानि नहीं पाते और वायुके भीरसे वे जिधर तिधर जा लगते हैं। एतद्विन्म कुछ श्रेणीके पक्षी ऐसे हैं जो

ई वन मीतवानमें दिखाई देते हैं। बाग मिनो पात्रि पक्षीको इसी संशोधनकालमें मिली है। मरुत् २ नाममें ध्यामक शक्येकममूर मोहित होने अवता है तब नामा जातिके पक्षी या कर वात्यादि गण्य जाति हैं। इनमेंसे बहुत नामक एक प्रकारका छोटा पक्षी है जो वे वन मानको मउ करनेके लिए जाता है। इस समयके सिवा के किसी पक्षी समझमें दिखाई नहीं पड़ती। बहुत एक देशमें भी इसी प्रकार Swallow, Nightingale, Cuckoo, Corn-crake, Song-thrush, Red breast आदि पक्षी भी बहुतों विभिन्नतासे पशुभार खान परि मत्तन करते हैं। कोई कोई पशुमान करते हैं कि कब कब पक्षीमें प्राणव्यानुभार जो वे खानपरिवर्तन करते हैं सो नहीं, समयतः कम समय तक सब खानामें खाएकके उपयोको खायादि नहीं मिलनेके कारण वे खानपरिवर्तन करनेको बाध्य होते हैं।

शूलिनो चरहोय, मिसक, सानकता आदि ८ पशुभूमि पक्ष जातिके पक्षीका बास है किमके यरोर पर इनमें सुन्दर और उच्चक इति तथा इन प्राण (मत्त) रहते हैं कि उनके देखनेके जो यह पक्षक को शर करना होमा दि के समो पक्षीके के राजा हैं। यदुनमाकविरो ने इन पक्षीको शाखाचारो (Passer) को सुक बिबा है। इस पक्षीको चरहोपवाभी 'पुराणमति', चरहोपवाको 'मातृशुद्धेयता' और मन्मथको 'पुराणदेवता' कहते हैं। प्राचीनमान बलिष्ठगण जब पक्षी पक्ष इन हापने पाते, तो लकोमि पक्षीके प्राकृतियत सीन्दपके प्राकृत जो कर इनका Birds of Paradise पक्षी सुखपवा का मन्दपयो नाम रखा। दोपवासिनो का विद्याम है, कि इन जातिके पक्षिमण अर्थात्मानमें मत्तपुरोमें प्राते हैं और कुछ खाक यहाँ ठहर कर जब इस जो प्राते तब यह दुका पापमन प्राप्त कर के पुन स्वर्गको जाने प्राते हैं। किन्तु मनुष्य जन्ममें रह कर उनका यरोर मारा प्राता हो जाता है। इस कारण के कारण लठ कर जमोन पर मिरपड़ने पक्ष (बिलड) को प्राते हैं। इन पक्षियों की वस्त्र विभिन्नतासे तथा क्लेमें पक्षी पुच्छ पादिसे पक्ष का सुन्दरताके इनके मध्य विभिन्न य विधो को प्रति हुई है। पक्षी कायोका विद्याम का, कि

दोपवाको जो मर मनु पक्षी यूरोपीय पक्षियोंके हाथ बंदी से वे पयने इच्छानुसार लगे पेर काट जाते से। इन पक्षियोंमें जो पक्षीके जैसे पक्षी विभिन्न पक्षी बड़े (Paradisaea apoda) होते, जो कुछ छोटे (Paradisaea minor) होते के तथा राजमन्मथपक्षी (Ciccinnurus regius) और काकबन्ध के मन्दपयो (P rubra) Paradisaeidae familyके प्रकृत हैं एवं जिन सब पक्षियोंको पक्ष पक्षिजात मन्मथ करद बन्धको (Seleucides alba) होती, वे Eymachadai familyके प्रकृत माने गए हैं। इनमेंसे जिनकोके पुच्छके पर रस्सीके समान (Bemioptera wallacei) होते हैं।

मात्रिकगण ससुद्रपक्षी जो कर चकते समय मन्मथानगर लक्षमें जो पक्षीके पक्षियोंके दृशंन करते हैं किन्तु के किम दिग्दर्शक रहनेवाले हैं, इनका पाक तक मी निषय नहीं हुआ। उन पक्षीकेमि तिमिपक्षी (Prion Desolatus) मटनपक्षी (OEstrolata-Lessoni) और Black night Hawk प्रकृति पक्षी ही लक्षययोग्य है।

प्राकृतिकविरो ने विविध यवपक्षाके साब पक्षीको की इनको गठनक पाकक्यानुभार प्राय ३३० प्रवाण जातिवा का यो विद्येमि विभिन्न बिबा है।

- पक्षीन्द्र (घ० पु०) पक्षिपु यन्द्रः योः १ पक्षिकेत, गदङ्क। २ अट्टाङ्क।
- बन्धोच्छर (घ० पु०) पक्षिकार ईश्वरः। गदङ्क।
- पक्षेडि (घ० वि०) १ पाक्षिक एक पक्षमें होनेवाला। (पु०) २ पाक्षिक भाव, बह यत्र को प्रति पक्ष बिबा जाय।
- पक्षु (घ० वि०) पक्ष म्नु (धामकताकाविपक्षपरिष्कृत्य)। सुखपोष। पानकता, पोषिताला।
- पक्ष (दि० पु०) पक्षको बिलो करीमो।
- पक्षकोप (घ० पु०) सुदुर्लभ मित्ररोयमंद पक्षको बिलो या पक्षकाका एक रोग।
- पक्षपात (घ० पु०) पक्षपात मिकरोमंद। पक्षपक्ष रोग।
- पक्षम् (घ० जो०) पक्षति परिव्यहति पातपनापादि-कामनेन एक रस्सीमिन्। १ पक्षिकेस मन्मथकदककोम पक्षको बिलो, बरीमो। २ पक्षादिका बिल। ३ सुता

पञ्चतो है। सुब्रह्मन्तं होमि पर मो ये लौघ हिन्दूक
 लोहारमें सबबादि करनी है और बचे ये अपना कर्त्तव्य
 कार्य समझते हैं। पाश्चिमान्तके टाग्वारा पञ्चमीं ये
 हिन्दूका साह देते हैं। तारबाङ्ग, सतारा पूर्वा भासापुर
 सौत्रापुर चादि प्राचिन्त्यायके प्रधान प्रधान नगरोंमें इनका
 बाध है। इनका दूसरा नाम मित्रो मो है।

पञ्चावली (हि० श्लो०) मृदङ्गमे छोटा एक प्रकारका
 बाजा।

पञ्चावली (हि० पु०) नक्षत्रों पञ्चावली बजाता हो।

पञ्चिका (हि० पु०) मंत्रज्ञान, बखेड़ा मयामिनाका।

पञ्चको (हि० श्लो०) पञ्चरी देखो।

पञ्चका (हि० पु०) सुब्रह्मन्तका पात्र, बाँधका नक्षत्र नाम
 जो किनारे वा बगलमें पड़ता है।

पञ्चक (हि० पु०) पचो, चिह्निया।

पञ्चक (हि० पु०) गाय वा मी सका नक्षत्र पाना जो
 बसा कर्म पर छ दिन तक ठहरे दिया जाता है। इसमें
 सोठ, हाङ्ग, इन्दी, ईरैका धोर उदका पाटा होता है।

पञ्चोवा (हि० पु०) पञ्च पर।

पञ्चोडा (हि० पु०) १ कौना, पर। २ मन्त्रोका पर।

पञ्चोड़ा (हि० पु०) पञ्चोरा देखो।

पञ्चोखा (स० पु०) पञ्चोखु छ एक वेङ्गका नाम।

पञ्चोरा (हि० पु०) पञ्च धोर सुब्रह्मन्तको सन्धि करि
 परको शब्द।

पण (हि० पु०) १ पैर, पाँव। २ मन्त्र करमें एक
 क्षान्ति दूसरे क्षान पर पर रखनेको सिखाको समामि
 छत्र, पान। ३ जिप क्षानमे पैर ठठाया जाय धार जिप
 क्षान पर रखा जाय, सोमो ब कोबको दूरो, क्षम,
 फाल।

पण्डको (हि० श्लो०) लङ्घ वा योक्षाममें नक्षत्र पतला
 राधा जो मोयो के पक्षमें बहते बन गया हो।

पण्डो (हि० श्लो०) लङ्घ, पाय, बीरा, साधा।

पणतरो (हि० श्लो०) झूता।

पणदाभो (हि० श्लो०) १ झूता। २ चण्डाल।

पणना (हि० श्लो०) १ रक्षक माय परिपण्डु का कर मित्रना,
 धरवत या मारिमें इन प्रदा। पञ्चना कि धरवत या धोरा
 चारों धार बिपट चार घुम जाय। २ पण्यक पणुरज

धोना बिपेधि घेमें चूबता, मग्न होना। ३ रस चादि-
 के माघ पीतपीत जागा घनता।

पणनिय (हि० श्लो०) झूतो।

पणना (हि० पु०) एक पाम्बूबज्र जो परमें पड़ता,
 जाता है। इसे चारि धोर पणना या बोङ्गधर धो-
 कबते हैं।

पणरना (हि० पु०) धोम चादोधि नजामोका-पुत्र,
 धोहार। यह धोहार नजामी करके समय महुा बनाये-
 के क्षाममें पाता है।

पणरो (हि० श्लो०) इच्छी देखो।

पणना (हि० पु०) नागक देखो।

पणरा (हि० पु०) पण बाधनेको रक्षको निराय, पण-
 पण (हि० पु०) सुपण, पणका।

पणना-१ लक्ष नक्षत्रके मी मन्त्रिज्ञ बिसेखा एक लक्ष
 विभाग। इसमें पणना, बैल धोर क्षीकपदोङ्ग नामके तीन
 महर बगति हैं।

२ लक्ष लक्षविभागका एक सदर १ पण पञ्चा० १०
 ५१ २१ २० ७० धोर देगा० ८५ ७८ ८१ ८३ ८५
 पू के मन्त्र बखलिता है। भूपरिमात्र ५५२ बग मोक्ष
 धोर लक्ष पञ्चा करोब साठ हजार है।

३ लक्षदेयके पणतयत एक प्राचीन नगर। यह
 पञ्चा० ११ १० ७० धोर देगा० ८५ ११ पू ३५५
 बतो नदीक बाए किनारे पणलिता है। जन० पञ्चा
 हजारसे ऊपर है। वर्त्तमान राजधानोउ दक्षिन्त्यामें
 माय १ कोस तक प्राचीन पणनाका ज सावरीय पञ्चा है।
 इसक कोष पणनागामे बाधोबिच्छिन नामक निरिमाणा
 रक्षनेक क्षाप्य महा किनारे देवका द्रव्य देवर्तमें बहुत
 मनासम बगता वा। बैलम मन्दिगादिके लोपे शिखर
 कोङ्क कर कोरे मो नगरको रोबता नहीं था। अथवा
 जिन साधन विमिय पणतोचना करके देवा है कि
 इस पणपरिमार सुद्ध नगरमें एक समक इमार मन्दिर
 शोमा पाति है। समा मन्दिर हिन्दू धोर बोधधमक धार
 जाय ब रहे। पणोरप धौमन भ्रमक बिषो बोधने नक्ष
 यको बोधमत फल या, तब लक्षोके मतामुधारा जोहोने
 धरतुनक मन्दिगादिके पणुधरचर्म धरौ बहुतके मन्दिर
 बनवाये। ४को मतान्वोके मिय माममें लक्ष नगर राज

धनीके रूपसे गिना-जाने लगा। यहाँको गिनानिधि देखनेसे मालूम पड़ता है कि ८५७-८४८से ले कर १२वें शताब्दी तक यह नगर विशेष चतुर दगामे था। इरावती नदीके किनारे ब्रह्मको पूर्वतन राजधानीके उत्तर प्राचीन पयान नगर अवस्थित है। १२८५ ई०में कुवनाई खाँके राजत्वकालमें मुगलसेनाने आ कर इस नगरको तहस नहस कर डाला।

पगाना (हि० पु०) १ पागनका काम कराना। २ असुरज करना, मरना करना।

पगार—मध्यप्रदेशके होशङ्गवादा जिलान्तर्गत एक छोटा राज्य। यह महादेवपर्वतके ऊपर बसा हुआ है। पर्वत पर जो मन्दिर है उसीके पङ्गामें एक यहाँके सरदार है।

पगार (हि० पु०) १ पैरोंसे कुचली हुई मटो की चढ़वा गागा। २ वह पानी या नदी जिसे पैदल चल कर पार कर सके, पायाव। ३ ऐसी वस्तु जिसे पैरोंसे कुचल सके। ४ वेतन, सम्पत्ति।

पगाह (फा० स्त्री०) श्रावण आरम्भ करनेका समय, भोर, नाहका।

पगुरना (हि० स्त्री०) १ पगुर करना, लुगाली करना। २ लज्ज कर जाना उकार जाना, से जाना।

पगा (हि० पु०) पीतल या ताँबा गलानेकी घाँघा, पागा।

पगो—गुजरातवासी भोजजातिकी एक शाखा। ये लोग पद-विह्वका अनुसरण करके चौर और खेतीमें बहुत दूरसे भी पकड़ सकता है।

पघा (हि० पु०) वह रस्वा जो गायों बोलों आदि-कीपायोंके गलेमें बाँधा जाता है। टीरकी बाँधनेकी छोटी बन्धी।

पघाल (हि० पु०) एक प्रकारका बहुत कड़ा नीरा।

पघिनना (हि० स्त्री०) पिघलना देखो।

पघया (हि० पु०) गाँवों आदिमें घूम घूम कर माल बेचनेवाला व्यापारी।

पङ् (सं० पु० क्लो०) पङ्घते व्याप्यते क्लियते वा अनिन पच-ध्वज, कुत्वह। १ कर्दम कोचड़, कोच। २ पानीके साथ मिला हुआ पोतने योग्य पदार्थ, लेप। ३ प्राप।

पङ्ककर्वट (सं० पु०) पङ्केषु कर्वटा, मनोहरः। जलसुक्तं पङ्क, पानीके साथ मिला हुआ पोतने योग्य पदार्थ। पङ्ककीर (सं० पु०) पङ्कप्रियः कीरः पक्षिविशेषः। कीर-टिक पक्षी, टिटिहरी नामकी विड़िया।

पङ्ककीड़ (सं० पु०) पङ्के पङ्केन वा क्लोडति पङ्क क्लोड-पच। १ मूकर, सूपर। (त्रि०) २ कर्दमखेसक, कीचड़में खेलनेवाला।

पङ्कक्लोनक (सं० पु०) पङ्कक्लोड स्वार्थे कन्। मूकर, सूपर।

पङ्कगड़क (सं० पु०) पङ्के स्थितो गड़कः। मत्स्यविशेष, एक प्रकारकी छोटी मछली।

पङ्कगति (सं० स्त्री०) पङ्के गतिर्यस्य। पङ्कगडक मत्स्य, एक प्रकारकी छोटी मछली।

पङ्कपाह (सं० पु०) पङ्के स्थितो पाहः। जसजन्मुर्भेद, मगर।

पङ्कज (सं० क्लो०) पङ्के पङ्काहा जायते पङ्कजन कर्त्तृ-नि-ह। १ पद्म, कमल। (त्रि०) २ कीचड़में उगना होने-वाला।

पङ्कजम्बु (सं० स्त्री०) पङ्के जन्म यस्य। पद्म, कमल।

पङ्कजजम्बु (सं० पु०) पङ्कजे जन्म उपपत्तिस्थानं यस्य। १ ब्रह्मा, पद्मयोनि।

पङ्कजराग (सं० पु०) पद्मरागम्भि।

पङ्कजवाटिका (सं० स्त्री०) तैरह भस्वरीका एक वर्ण-वृक्ष। इसके प्रत्येक चरणमें एक भगण, एक नगण, दो जगण और अन्तमें एक सधु होता है। इसका दूसरा नाम एकावली और कंजावली भी है।

पङ्कजात (सं० पु०) १ शृङ्गाराजस्युप। १ पद्म, कमल।

पङ्कजावली (सं० स्त्री०) १ शब्दोभेद। २ पद्मसमुह।

पङ्कजासम (सं० पु०) ब्रह्मा।

पङ्कजित् (सं० पु०) गरुडके एक पुत्रका नाम।

पङ्कजिनी (सं० स्त्री०) पङ्कजानि सन्ध्यास्थान् इति इनि (पुष्करादिप्रो देखो। पा ५।२।१५) १ पद्माकर, कमलाकर।

२ कमलिनी, कमलहृत्। ३ पद्मसमुह, कमलका ढेर।

पङ्कण (सं० पु०) मांसादिनिमित्तके पापाचारकर्मणि कपः कलहो यस्य सः, प्रयोदरादित्वात् साधुः। पङ्कण, शवरासय, चाण्डालका घर।

पहृदिश शरीर (स० पु०) र दानवभेद, एक दानवका नाम । २ कर्दमास्य दिव, कोचकृषि भरा कृपा शरीर । पहृदिभाङ्ग (स० पु०) क्षुमापानुवरभेद, कार्तिकीयके एक पशुवरका नाम ।

पहृभूम (स० पु०) नरकभेद, कौमिदोके एक नरकका नाम ।

पहृपयंते (स० स्त्री०) सौपाट्टयतिवा, लोपीचन्दन ।

पहृप्रमा (स० स्त्री०) पहृप्र प्रमा प्रमायो यस्या । कर्दमबुद्ध नरकविशेष, लोचकृषे भरे रूप एक नरकका नाम ।

पहृमण्डूक (स० पु०) पहृ मण्डूक इव । १ मण्डूक, बीघा । २ मण्डूक, बीघे बीघ, सुतही ।

पहृरह (स० स्त्री०) पहरे रीहतीति पहृरह-हित् । पशु, कर्मण ।

पहृत्ता—दिवावशोवर्षित मङ्गभूमक एक नदी । यह विश्वपुराणे दो कोष उत्तरे प्रकाशित है ।

पहृत् (स० स्त्री०) पहृ विपरीत्य, पहृ मत्प मस्य न । कर्दमबुद्ध कोचकृषे भरा ।

पहृत्वारि (स० स्त्री०) कार्ष्णिक् कासो ।

पहृत्वास (स० पु०) पहरे वासो यस्य । १ कर्दम, किकडा । २ मङ्गलादि, मङ्गली पादि ।

पहृत्पञ्चि (स० स्त्री०) पहरे स्थिता वा शक्ति । १ जन शक्तिभेद, तासुम कोनेवाकी बीघ, सुतही । २ मण्डूक, बीघा ।

पहृत्पूरव (स० पु०) पहरे पूरव इव । मण्डूक, बीघा । २ पदपञ्च ।

पहृत्तार (स० पु०) पहृत्तारति पहं माव्य कर्तते इति पावत् पहृत्तार इत्यमरे षच् । १ कर्मण इत्यविशेष, एक श्रेष्ठ को मङ्गलके कोचकृषि होता है । २ य दोषिभे स्त्री पीर बुद्ध दो पञ्चम कार्तिका कोनी है । ३ मीमांस सेवार । ४ श्रेष्ठ, सुत । ५ लोपान, पीड़ी । ६ बीघ । ७ कर्मण सुकर्म, पि पाडा ।

पहृत्त (स० स्त्री०) पहृत्तस्तरिमन् पहृत्तस्य (अथवा-पहृत्तस्तरिमन् इत्येवम् । ग ३।१।१००) कर्दम, जिनमें कोचकृषि, कोचकृषात् । पर्याय—नरकवाच पहृत्त, कर्दमाश्रित ।

पहृत्त (स० स्त्री०) पहरे भावने इति जन-व (यमयो कर्ते । पा ३।१।१००) इति कर्मणां पशुच । पशु, कर्मण ।

पहृत्त (स० स्त्री०) पहरे रीहतीति पहृत्त इव ततो मर्मणां पशुच । २ पशु कर्मण । (पु०) २ सारकपवी ।

पहृत्तय (स० स्त्री०) पहरे घेते यो-यच्, ततः मर्मणां पशुच । १ पहृत्तयो, पहरे ररनेवासा । कर्मो०) २ कर्मोवा, बीघ ।

पहृत्ति (स० स्त्री०) पश्चते कश्चोद्धवति कश्चोविसिद्धिंति यावत् पश्चि—कश्चि कश्चि-जिन्, कश्चित्वाद्, म् वा पश्चति विप्यारवति पश्च विप्यारे विच् । १ कश्चोत्त कश्चोत्त विमेष, कश्चो, पीतो, कतार, काहन । २ पशुच—कोका पाशि, पावति, केशी, बीघि, वासो, वावनी पशु, य वि, यरवि कश्चति विप्योको पाशि, पशो, कोचिका ३ पश्चात्तरपश्च इत्येवियेव, एक कश्च इति जिनके मर्मोव कश्चमि पांच पांच पश्च कर्त्तुं एक मर्मव चौर पश्चमि दो शुभ होती है । भाष्यमर्मि विद्या है—

“मर्मवा वाचिपशुम्का इती वाचोऽऽहृत् ।” (३।१।१०१)

मर्मवाचि पांशि चौर पाचवे प्रवतो वाचन पुई है । १ वाचोत्तरपाचोद्धोविमेष, एक न कश्चोत्त जिनके मर्मोव कश्चमि पांच पांच पश्च होती है । २ पशुच कश्च इत्येव पशुच । ३ गौरव । ४ भीममि पश्च वाच कश्च कश्च वाचिवाकी को कश्चो । इत्यु वाचोत्तर पशुवार पश्चति पाचिसे पाच पश्चि मर्म कश्च मर्मोव कश्चमि वा विमेष है ।

“म कश्चोत्तर पश्चिमे वाचोद्धोमि पुचोऽहृत् । म मूर्त्तौर्वाचिपशुम वाचिर्वाचवा कश्चिनि । पश्चतपश्चन कश्चिर्वाचोत्तरवाचिपशुम् । वाचवाच्यवाचि मर्मोवपश्च इव मर्मोवम् । कश्चात्तरपश्च कश्च कश्चात्तरपश्च । इत्येव कश्चिपशुम कश्चोऽहृत् ।”

(३।१।१०१)

पश्चि, कश्चात्, मीघ पीर लुक् कश्चिमे वाच वाच, एक वाचन पर कश्चोत्त, एक वाच पाणा, कर्मणा कर्मण, कश्चात्तरपश्चि कश्चोविसिद्धि है । कश्च दोष कश्चोत्तर कश्चोत्तरका

है। एक पंक्तिमें बैठ कर यदि एक दूमेरेकी स्पर्श न करे अथवा भस्म और अग्निव्यवधान रहे, तो पंक्ति साहचर्य दीप नहीं लगता।

“एक पंक्तियुगिष्ठा ये न स्थिति परस्परम् । मस्मना कपमर्यादान तेपां संकरो भवेत् ॥

अग्निना भस्मना चैव पङ्क्तिः पङ्क्तिविधये ।

सैन्यां दश दत्त योदाश्रीको श्रेणी । कुलो न ब्राह्मणोको श्रेणी ।

पङ्क्तिगणक (सं० पु०) पङ्क्ति एकपङ्क्ति गणक

पङ्क्तिगणक (सं० त्रि०) श्रेणी, पांती।

पङ्क्तिगणक (सं० त्रि०) पङ्क्ति-गणक प्रभूत-तद्भावे चिद्व ।

पङ्क्तिगणक (सं० पु०) पङ्क्तिः टगसंख्यिका श्रेया यस्य ।

पङ्क्तिगणक (सं० पु०) पङ्क्तिः श्रेणीवद्धः सन् चतुर्षु पङ्क्ति-चर ट। कुररपक्षे।

पङ्क्तिगणक (सं० त्रि०) किसी कलङ्क, दीप मादिके पारण जातिकी श्रेणीसे बाहर किंवा दुष्प्रा, विरुदरोमे निवाना

पङ्क्तिगणक (सं० पु०) पंक्ति एकपंक्ति भोजने दूषयति

पङ्क्तिगणक (सं० पु०) आदकाले भोजनार्थसुपविष्टानां

ब्रतस्नानानां ब्राह्मणानां पंक्ति श्रेणी दूषयति यः, पंक्ति-दूष कर्त्तरि गृह्णते । अवाङ्मोय, आदभोजनानहं

ब्राह्मण, ऐसा ब्राह्मण जिसके साथ पंक्तिमें बैठकर भोजन नहीं करे, कहते हैं। पशुपुराणके स्वर्गखण्ड ३५ अध्याय-

में लिखा है—जिसके, भ्रूणहृद्, यज्ञारोगी, पशुपालक, निराङ्गुलि, आमप्रेष्य, वेदोपिक, गायन, सर्वविक्रयी,

अगारदाही, गरद, कुण्डाशी, मोमविक्रयी, सामुद्रिक, राजदूत, तैलिक, कूटकारक, पिताके साथ विवादवागे,

अभिग्रह, स्नान, शिल्पोपजीवी, मित्रद्रोही, पारदारिक, परिहृत्ति, दुश्कर्मा, गुरुतल्पग, कुशोलव, देवलक, नचलो-

पजीवी, श्वदष्ट, श्वसहमासो और जिसके चर्मा उपपत्ति

ज्ञात जाता हो, ये सब ब्राह्मण सुपाङ्क्तिय हैं।

जिस आदमें गुरुतल्पग और दुश्कर्मा भोजन करता है,

उस आदमें पितृगण भोजन नहीं करते और वह आद निष्कृत होता है। जो ब्राह्मण शूद्रोंको उपदेश देते हैं, उन्हें भी आदमें विनाना नहीं चाहिये।

(पद्मपुराण ३५ अ०)

मनुसंहितामें पंक्तिदृषकका विषय इस प्रकार लिखा —

क्षीयता, नास्तिकता, ब्रह्मचारोका अनध्ययन, चर्म-

रोग, यतक्रीडा, यद्ययाजन, त्रिकिसा, प्रतिमापरिचर्या,

देषन ब्राह्मणका कार्य, मांमविक्रय, वाणिज्य, याम वा

राजाका सरकारो कार्य, कुञ्जित, महारोग, ज्यावदन्त,

गुरुके प्रतिकृताचार, योम और स्मार्त्त पन्निपरित्याग

एवं कुशीद, यच्चारोग, छाग, गो प्रभृति पशुपानन, पञ्च-

महायज्ञ नहीं करना, ब्रह्माह्वेय, परिचिति, साधोरगडे

लिये उत्कृष्ट धनादिका उपभोग, नक्तन वा गायनादिदृष्टि,

स्त्रोमस्यर्क द्वारा ब्रह्मचर्यहानि, अमवर्णा-विवाह, शूद्रा-

विवाह और जिसको जायाका उपपत्ति है, वेतन ले कर

वेदपठाना, शूद्रको पठाना, निष्ठस्वाक्य, जारजदीप,

पिता माता और गुरुजनका अकारण परित्याग, पतितके

साथ अध्ययनादि और कन्यादानादि द्वारा सम्बन्ध,

प्राणनाशके लिये विष प्रदान, मोमविक्रय, मसुद्रयात्रा,

स्तुतिवादादि द्वारा जोविकां, तिलके लिये तिलादि बोज

पेवण, तुलामान वा लोप्यादिविषय, यतक्रीडा नहीं

जानने पर, भी अर्घ दे कर द्रमरे द्वारा क्रीडा, मद्यपान,

पापयोग, छद्मवेश, इक्षु आदिका रमविक्रय, धतुरु और

शरनिर्माण, ज्येष्ठभगिनोका विवाह हुए विना कनिष्ठा

भगिनोका पाणिग्रहण, मित्रद्रोह, अपस्मार, गण्डमाला,

श्वेतकुष्ठ, लज्जा और शन्यरोग, वेदनिका, हस्ती, गो,

अश्व और उड़का टमन वा पालन, नचवादिको गणना,

सेतुमेदादि द्वारा प्रवहमान स्त्रोतका अवरोध, वासुविद्या,

दीव्यकार्य, वेतनभोगो हो कर हचरोपण, क्षीडा दिखाने

के लिये कुङ्कुर पालन, श्येनपक्षीके क्रयविक्रयादि द्वारा

जीविकानिर्वाह, कन्यकागमन, हिंसा, शूद्रसेवा, नाना-जातोय क्रीडा-याजकता, आचारहानता, धर्मवापुर्धर्म-निस्वाह, स्वयं-कृपि द्वारा जीविकानिर्वाह, धर्मांध-हृष्टा-स्थकुटेह, साधुओंको निन्दा, परपूर्वा अर्थात् एक बार विवाह हो चुका है ऐसी स्त्रीका फिरसे-चापि-

-सक्यः) धनसम्पन्नं करीयं यत्कथंन शीरं ब्राह्मणनिन्दिता
 यातिः जिनं ब्राह्मणोके उपरीक्ष्य क्रीडै दीव्यं वै, वे पति
 ...प्रविशते श्योष्यः वै चर्षात् वै एव पतिमिं बौद्धं कर
 मोने नतीं करं सज्जति। चतएव इयं प्रकारके ब्राह्मण
 -पपाद्योत्र वा पञ्चिभूयकं कथंनति है। यायमिं इन सव
 -तीं ब्राह्मणो को भोजनं करानेति नच न्यायं निष्यव्यं होता
 है। (मनु १. ७०)

— पुंजिभूयक-विषय ईमादि ब्राह्मण्यमिं विधीय
 क्यो निवा है।

०५ छिप्यकन- (स० पु०) पञ्च-आधीपयपे मोनना
 कोपिपुत्राणि-—वैश्विभ्याविशारदानं ब्राह्मणानां श्रेयो
 पुनन्ति प वयति मा पञ्चि पाबि-क्यु। १ श्रेयोपवित
 कनन, नच ब्राह्मण जिषयो यज्ञादिमिं सुनागा, भोजन
 कराना शीरं दानं देना श्रेष्ठं माना मया है।

०६ पुण्यपुराणमिं निष्का है—

"इमे हि मनुजभेष्यः। तिष्ठताः वंजितराजान्।
 निवाविद्वजस्यकाशा मयाय नच" एव हि ४
 महाकरपरायैव विद्वतां वंजितराजान्।
 मत्प्रापिप्रोर्षकं नचः भोजिनो दण्डपरा ४
 ५ पुण्यपुराणनिष्कमी व नचैवस्थीयुः ४। ५ वा।
 ६ वेदविद्यामन्त्रादी विराः वंजित पुनत्पुण्ड ४"

(पुण्यपुराण स्वर्ग ० १२ म)। ययति

वेदमिदं ब्राह्मणं, जो पटाचारपरायण है, जो पिता

—शोर माताके नयोमृत है कोत्रिय शोर जो कस्तुभानमिं
 नमं पत्नीमिं उपगतं रहति है, कश्चनं परायण, वेदादि
 पारंग शोर ज्ञातक से नच ब्राह्मण पञ्चिको पवित करती
 है। सद्गवादी नमं योक्त, कश्चनं निरत, तोष छावी,
 -पञ्चोको, उपपन्न चान्, इमा जितेन्द्रिय, भूतोके
 पितकारक, एते ब्राह्मणो को इमं देमिं पचय पञ्च
 माम होता है शोर से ही पञ्चिपवन कथंनति है। जिन
 के किमी प्रकारका दोषाभात नहीं है, पचाय पडती
 -पञ्चिभूयकको अगह जिन सव दीपो का कश्च विद्या
 मया है, वे ही दीपयजित ब्राह्मण पञ्चिपवन है। १

०७ पञ्चानिष्यक, नच ब्राह्मण जो पञ्चानिभूयक ही।

पञ्चिभूयक (स० जि०) श्रेयोवद, पतिमिं नगा दृषा

०८ कृतार्थ, नचा, इया।

पञ्च तिरय (स० पु०) पञ्च सिपु, द्यगु दिपु गतो रवो
 यज। राजा दगय।

'जनेश्वरान् महाशय' पुण वंजितको वती।
 तस्यामयी रावणश्च सर्वभूत-प्रेमसिग इ'

(पुण्यपुराण वागाकच्छ०) (पु० ८. १०४)

पञ्च तिरायम, (स० जि०) ब्राह्मणोष वंजित्यज्ञादि
 द्वारा चप्यव यज।

पञ्चिब्राह्मण (स० जि०) ज्ञातिभूत, प वयति निष्काना
 दृषा।

पञ्चिभोजन (स० पु०) प जिभूतानि भीजानि यज। १
 संभूतय, वसू। २ पारश्ववत्तय शरगा। ३, कर्षिका
 वृष, कर्षिकार।

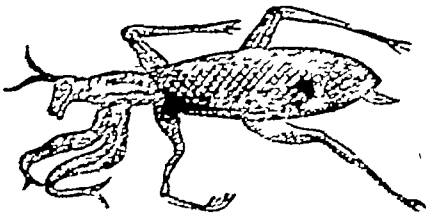
पण्डो—ब्रह्मपाम पाकं मयदेयकापी ज्ञातिविधीय। शङ्ख महो-
 के पूर्वीं जिनारे बौद्धो प्रदेगाको कर्षेपुत्रकोनदोके जिनारे
 तोन धामोमिं से पचिक म न्यामिं पावे जाति है। यज्जि
 नययोगी ज्ञातिके शोग भी पण्डिको वही प यके वतनति
 है। इनका कथना है, कि दोनों ही ज्ञाति एत्र पिताकी
 दो समानमिं उत्पय हुई है—एक पुत्रका म श पण्डो शीर
 पूरवेका म श नययोगी कथंनति है। इन दो ज्ञातिमिंको
 भावा पाचारव्यवहार शीर रीतिनीति प्राशः एक-नो है।
 ये शीर पण्डिको ब्रह्मने शानक योद्धव वतनति है। दोनीं
 ज्ञातिमिं एक वतना ही है कि नययोगी शोग मस्तक
 के पदभागमिं कृदा वांभति है शीर पण्डो शीय मस्तकके
 पञ्चाङ्गममिं।

शगतज्ञो उत्पत्तिके विषयमिं इन शोको के मय्य एक
 पाश्य मय्य प्रचलित है। इनके पूर्व पुत्रयो से व यमिं
 शोकोकोपा नामक एक राजा हुए। वे विधेय चमता
 वान् थे। इनका विवाह बिसो एव टिककन्यामिं दृषा
 या। एक समय इन पञ्च त प्रदेशमिं प्राग जयो। देव
 न्यायोकी मन्नाइमिं पवतवाधिमच पस्तुप्रीरय्य भमतन
 विहमिं कतर पावे शीर तमोके वे निग्यप्रदेयमिं रहने लगी
 है। इनका कथना है, कि पण्डेके भगो जीवकन्तु जात
 शीर कर सकती थी। एक दिन सकने निच कर देन
 न्याये ममिं पानिको मीगा, इस पर दिवकानामिं मग
 वान्को वच कर जोयोको वान् कि करण कर को।
 तमोके जीव पुत्रः ज्ञानानित कश्च योष कर प्रकाय कर

नहीं मकते। पचने और खोजिं यज्ञो दो इनके कुल-देवता हैं।

पहले इन लीगो में नरइत्या प्रचलित थी। अभी अंगरेज गवर्नमेंट के कठोर शासनसे वह बोभल व्यापार बंद कर दिया गया है। इनमें कोई पर्व नहीं होता। केवल धानकी कटनीके समय ये लीग विगिय पामोट प्रमोट करते हैं। वनयोगो लीग शयदेइको गाह देते हैं, जन्मते नहीं।

पद्मपाल (टिड्डी)—पतङ्ग जातिविशेष, टिड्डो। प्राकृतत्वविद्भिर्निहन्ते (Orthoptera) अर्थात् प्रकृत होनेके उपरिभागस्य कठिन आच्छादनयुक्त और मम्फनशौल (Saltatoria) वतनाया है। उन्हींमें Gryllidae और Locustidae नामक दो जाति गतसंज्ञाका निर्देश कर पुनः इनके मध्य अनेक श्रेणियोंका विभाग किया है। इनके पद्याक्षागके पौर माधारणतः शरीरकी अपेक्षा बड़े होते हैं। इन्हीं पौरोंके ऊपर शरीरका कुल भार देकर ये उड़नेके कृत होते हैं। किन्तु सामनेके पौर अपेक्षाकृत छोटे होते हैं। मस्तकके सामने सूतकी तरह बहुत बारीक कड़े बाल रहते हैं उन्हींमें इनका अर्गञ्जान होता है। अन्यान्य पतङ्गोंकी तरह इनकी देहयष्टि भी तीन भागोंमें विभक्त है, यथा—मस्तक, वृच और उटर। शुबफाम्य भी तीन श्रेणियोंमें आवद्ध है। इनके होनेके पीछे भी अधिक चौड़े होते हैं और इनके ऊपरमें जो कठिन टकस्य (Elytra) होते हैं, उन्हींके परस्पर संघर्षणमें पुरुषजाति एक प्रकारका अस्फुट शब्द करती है। यह शब्द पीठ पर जो श्रित्य है उन्हींसे उत्पन्न होता है। मरके आकारसे सादाके आकारमें बहुत फर्क पड़ा।



पद्मपाल ।

विभिन्न देशोंमें इस पद्मपाल जातिका विभिन्न नाम देखा जाता है। विहारमें टिड्डी, या पद्मपाल, उड़ासामें

मिण्टकी, पारसमें जरद और जरद-उल-बहा, राजपूमें फरिदी, फ्रान्समें Sauterelle, जर्मनमें Heuabrecke, ग्रीसमें Opheomachez, फ्रिड्रुमें चारगोन, चारवे, इटलीमें Locusta, अङ्ग्रेजीमें locust, चीनगुंजीमें Logosta, स्पेनमें Langosta, पारसमें माइग मनख, मलख-इ-इनाल, मलख-इ-इराम, मलख-इ-दरियारि पादि अनेक नाम पाए जाते हैं।

स्यान, वर्ण और प्राकृतिक तारतम्यानुसार इनमें भी श्रेणिविभाग हुए हैं।

(१) इटलीमें एड्रेगका सब्ज रंगका पद्मपाल (Acrida viridi-sima) प्रायः दो इंच लम्बा होता है।

(२) पद्मपाल श्रेणीके मध्य Gryllus migratorius माधारणतः बड़े होते हैं। ये अनेक समय एक एक जिला नष्ट कर डालते हैं।

(३) उड़ीसाको मिण्टको प्रायः १ इंच लम्बी होती है।

(४) Phymatea punctata देखनेमें बड़े हो सुन्दर होते हैं। इनके पीछेका तल्लभाग लाल और वल्ल-भाग जरद तथा ब्रौञ्च रंगका होता है। इस जातिके छोटे छोटे कौट भी वृक्षके विगिय हानिकारक हैं।

(५) अफ्रिका और एशियाके दक्षिणार्धमें Acrydium (Oedipoda) migratorium देखनेमें सब रंगके होनेका कठिन आवरक स्वच्छ, पांशु और सफेद तथा पौर लालपन लिए पौले रंगके होते हैं। ये शून्य-मार्गमें प्रायः १८ मील उड़ सकते हैं।

(६) मिनाई प्रदेशका Gryllus gregarius।

(७) A. peregrinum लाल और पौले रंगके होते और रानोगच्छ तथा भारतके अन्यान्य स्थानोंमें कभी कभी देखे जाते हैं।

(८) Acrydium lineole वागदाटक के बाजारमें खानेके लिए विकते हैं।

(९) Oedipoda migratoria फ्रान्सको राजधानी पेरिसमें ले कर पारसकी राजधानी इस्फाहन तक और मध्य अफ्रिकासे ले कर तातार तकके सभी स्थानोंमें या कर कभी कभी फसलकी बर्ही हानि पहुंचाते हैं।

अष्ट्रेलिया हावमें जो सब पद्मपाल देखे जाते हैं, वे

Telligonias जातिके हैं। ये शिवक तृप्तके ऊपर ब्रह्मते
 पौर पत्नीदि जाति हैं। जातिमिदके कोरि मन्त्र, कोरि
 नारंगी रंगका पौर कोरि जाना जेना है। इनके ज्ञान-
 बन्तृत्त्व लक्ष्यविशिष्ट पर सुन्दर वस्त्रवस्तुपथे रंगीमें रंगे
 होते हैं।

पद्मपालका उद्भव विरममिद है। जिन समय
 रत्नका एक ज्ञान बादनको पदाके समान उदभूत कर
 बलता है उस समय साक्षात्में पद्मकार ना हो जाता है
 पौर मायके वीर्य, वीर्य तथा ज्योतिर्मि पत्तियां नहीं रह
 पातीं। जिन जिन प्रदेमोके हो कर ये उत्पत्ति हैं, उनको
 पसलको गट करके जाति हैं। शास्त्रमें दुर्मिष पौर मातो
 भय जैसा देवज्ञत निहाइय प्रत्यय है, वेला हो पद्म-
 पाल-पलन मी दुर्लभ पौर देवप्रदित लपद्रवतमूहका
 निर्दयन है। दुर्मि पथे बाब रत्नका समासन मी कृपा
 करता है। इतिहासमें इनके भूरि भूरि प्रमाण लिखे हैं।
 पद्मपाल भाषामि इस जातिका पतञ्ज 'यद्यन्' नामके प्रसिद्ध
 है। पतिवृद्धि, पनाग्रह, भूमिरन्व लक्षणावन जिय
 प्रकार दुर्मिषादि फलवचका पूर्वलक्ष्य है, पद्मपालका
 धामसन मी उच्चो प्रकार जानना चाहिये। पद्मपाल पौर
 भूमिष पारिका लपद्रव रूपके पद्मपालको लुपना
 करता है। हिन्दूशास्त्रमें लिखा है—

"नष्टिद्विरावृत्तिः कथया भूमिका जया।

प्रजाह्वयस्य सननः वैश्यास्तथा स्मृतः ॥"

(कर्मण्य ३३ ३१-३४)

प्रजाभारतमें लिखा है कि यज्ञन दत्तके कारकारके
 जिय प्रकार पीढ़ी वा पीढ़ीको काट जाकते हैं, पशु नके
 हुतीप्य वाचके मी यज्ञपीका बंधो हो गया हुई था।

(विष्णुपर्व ३३।४)

प्राचोन समयमें मी यज्ञको का लपद्रव पदंजन
 विदित था, यद्यमें पद्मके लक्षो। रामायणमें भी वाच-
 के साथ यज्ञनको तुलना की गई है। इनके प्रकाश
 बाह्यमें मी ईसात्रयके बहुत पक्षके पद्मपालके मीपव
 लपद्रवकी कथा किबो है। १८०५ ई०में अमेरिकाके
 जामो राष्कमें पद्मपालका लपद्रव दूर करकेके पमिप्रायके
 ज्ञानको ईश्वरको स्वरूपित करनेकी पात्रा हुई थी।
 पद्मपालकी ज्ञ ब्रह्मि दुर्मिषाके है। जिस ज्ञान हो

कर पद्मपाल उत्पत्ति हैं, यहां जाना सु रत्नका कोड़ा
 देवा जाता है। दिनके समय ये सब कोड़े बहुत छोटे
 होक पड़ते हैं। रातको ये चानके पीठो पर बड़ जाति
 पौर सिरको जमोनेमें काट गिराते हैं। इसो प्रकारके
 लक्ष कोड़ोंको पचक कर देखा गया है कि ८०० दिनके
 बाद ही उनका वाकार बड़ा हो जाता पौर तब होक
 बड़े पति'मि के दिखनेमें लगते हैं। मादा सुने मी शानमें
 यहू बना कर पछि देतो हैं। जिन ज्योतको इससे मही
 पनय कर हो गई है, उही ज्ञान ज्ञानमें वे प्राय' पछि
 दिना पसन्द करतो हैं। प्रत्येक यहूमें प्राय' २०।१० पछि
 रहते हैं। राग निव परिदृष्टयका कथना है कि ये योनि
 ज्ञानमें 'पर्यात् पगद्यने पद्मभरमावर्म' पछि हो जमोन
 के पन्दर रहतो हैं। बचलज्ञानमें उन पछोके बहुत ज्ञान
 पर सावधकाड़े शहर निवचन पाति हैं। प्रथमके बाद
 मादाके उदरके रातको तरह पक्ष प्रकारकी श्रेष्ठा निव
 लता है। जमोने के पछो को बचाके रहतो हैं। पछे
 के पुरने पर कोड़े जमोनेके शहर निवचनते हैं। वीर्य
 लक्षे पूर्वाङ्ग जनिमें प्राया डेढ़ दो मान जयते है। जिस
 ज्योतिर्मि गिद्धकी ज्योतो होती है उस ज्योतमें पद्मपालके
 पछोके अचिब कोड़ों निवचनते हैं किन्तु मरुकीके
 ज्योतमें २।३के अचिब कोड़े जमो मी निवचनते नहीं
 देखे जाति। ये जमो प्रकाशकी पसल, कथो पौर
 लक्षो पतिबा, पीढ़ीकी सुखी जाल पौर नक्षत्री, जामज,
 बर्ह, पद्मोने बध, वहां तक कि शिको ली पीठ पर देह
 कर लक्षके शरीर परको पशम मी प्हा जाकते हैं। तमाजू,
 कथा पल, भूतपयो, शसुर पादि इनके विधीय लपादेव
 हैं। साथ बिबी, के न, लूपर तथा नाशा जातिके पयो
 इनके विषय यद्म हैं। पछे या कोड़े पानेके ही के
 उही समय निवच जाति हैं। इनके पछो को यदि नट
 करना चाहें, तो पासागोसे कर सकते हैं। इससे मही
 को उष्ठा देनिसे पचना जमोन पर मिश्रीका वीर्य सिद्धक
 देनिसे प्रायः सभो पछे नट हो जाति हैं। पद्मपालके
 पात्रमपथके ज्योतकी रक्षा करनेके पौर मो जितने लपाय
 है जिनका लक्षे प करना निष्परोक्षण है।

पति प्राचोनज्ञानमें हो पद्मको चाहि पापाक ज्ञानि
 योके मन्त्र पद्मपाल काद्यपदायमें प्यनज्ञत होला वा

रहा है। यहूदी लोग केवल माद. पङ्कपाल खाते हैं। वे लोग इसे शुद्ध और भगवत्प्रेरित मानते हैं। बुसायके मुसलमान भी एन जातिका पङ्कपाल खाते हैं। अरब-वासी लक्षणमें सिद्ध कर मक्खन वा चर्विके माय अथवा आगमें जला कर इसे खाते हैं। मरकोवासी भी पङ्कपाल को भुन कर खाते हैं। यहाँके बाजारमें भुना हुआ पङ्कपाल विक्रता है। अफ्रिका, रूस, अमेरिका, पर्थिया, इथियोपिया, ब्रह्म और आराकान आदि देशवासियोंमें से कोई जनाकर, कोई भुन कर कोई मसाले आदि डाल कर इसे खाते हैं। पङ्कपाल विग्रहपतः पर्वतको चन्द्राशो और रंगमनानो मे रहते हैं।

पङ्क (सं० पु०) खञ्जित गतिवैकल्यं प्राप्नोतीति खञ्ज गतिवैकल्ये बाहुलजात् कु । ततः स्वस्य पत्वे जस्य गादेशः नुम् च (बाहुलकात् कु. खजयोःपगो नुमागमश्च । उष् १।३०) १ शनैश्चर, शनियह । २ परिव्राट्, परिव्राजक ।

‘मिसार्थं गमनं यस्य विष्णुः करणाय च ।

योजनान्न परं याति सर्वे पङ्क रेव सः ॥’

(चिन्तामणि)

३ वातव्याधिविशेष, वातरोगका एक भेद । वैद्यक-का मत है कि कमरमें रहनेवालो वायु जाँघोंको नसोंको पकड़ कर सिकोड़ देता है जिससे रागोंके पोर सिकुड़ जाते हैं और वह चल फिर नहीं सकता । खञ्ज देखो । (त्रि०) ४ खञ्ज, लंगड़ा । इसका पर्याय थाण और जङ्घाहीन है ।

पङ्क (सं० पु०) १ सहादिखण्डवर्णित एक सोम-वंशीय राजा । ये सरस्वतीभक्त थे तथा अङ्गिन् (अश्विन्) राजाके औरससे उत्पन्न हुए थे । विख्यात इनका गोत्र था । अङ्गिहोन रहनेके कारण इनका पङ्क नाम पड़ा था । ऋष्यशृङ्गके परामर्शसे इन्होंने अनेकों सत्कार्य करके आरण्याक नामक एक पुत्र प्राप्त किया था ।

(सत्यद्रि० १।३२ अ०)

२ चन्द्रवंशीय एक राजा, कामराजके पुत्र ।

पङ्क (सं० त्रि०) पङ्क स्वार्थं कन् । पङ्क, लंगड़ा । पङ्कगति (सं० स्त्री०) वणिक छन्दोंका एक दोष । जब किसी वर्णिक छन्दमें लघुको जगह गुरु और गुरुकी

जगह लघु आ जाता है, तब यह दोष माना जाता है । पङ्कग्राह (सं० पु०) १ मकर नामक जन्तु, मगर । २ मकरराशि ।

पङ्कता (सं० स्त्री०) पङ्कीर्भाव, पङ्क-तन्-टाप्, पङ्कत्व, लंगड़ापन ।

पङ्कत्वहारिणो (सं० स्त्री०) पङ्कत्वं हरति पङ्कत्व-ह-णिनि द्विग्यां डोप् । गिसुद्धीचुप, चंगोनी ।

पङ्कल (सं० पु०) १ शुकवर्ण अथ, सफेद रंगका घोड़ा । २ परण्डवच, अंडोंका पेड़ । (त्रि०) ३ पङ्क, लंगड़ा ।

पङ्कल्यहारिणी (सं० स्त्री०) निवनेन पङ्कल्यं पङ्कत्वं हरति ह-णिनि । गिसुद्धीचुप, चंगोनी ।

पच (सं० त्रि०) पचति यः पच्-पच् (अन्दिप्रद्विपचदिभ्यो स्युगिन्त्यचः । पा ३।१।३४।) पाककर्त्ता, रसोई बनाने-वाला ।

पचक (हि० पु०) काश्मीरज्जात एक प्रकारके गुन्मको जड़ *Coccyphus, Aucklandia* । स्थानभेदसे इसके विभिन्न नाम देखे जाते हैं, यथा—संस्कृत और बङ्गना कुठ और कुड़, अरब-कुठ-र हिन्दि, कुठ-र-परवी, याके-*Kust Kustus*, हिन्दी—पचक, कुठ, उल्लेत, नाटिन *Costus Arabica*, मलय पचा, सिंहला, गडुमहनेल, सिरियभाषामें—कुठा, तेलगु—चङ्गला प्रभृति । इसके पेड़ माधारणतः ४५ हाथ लम्बे होते हैं । आश्विन कार्तिकमासमें इसकी जड़ खंड खंड कर बड़े बड़े शहरोंमें भेजी जाती है । चीनवासो धूप धुने लो जगड इसको जड़को जनाति और सुगन्धसे विमोहित हो जाते हैं । वे लोग इसमें कामोद्दीपक गुण बतलाते हैं ।

पचकना (हि० स्त्री०) पिनकना देखो ।

पचकव्याज (हि० पु०) पचकव्याज देखो ।

पचखना (हि० वि०) जिसमें पांच खंडवा मंजिल हों ।

पचगुना (हि० वि०) पच गुणा, पांच गुना, पांच बार अधिक ।

पचग्रह (हि० पु०) मंगल, बुध, गुरु, शुक और शनिको समूह ।

पचड़ा (हि० पु०) प्रपञ्च, बखेड़ा, भूभाट । २ लावनी या खयालकी टङ्गका एक प्रकारका गात । इसमें पांच पांच चरणोंके टुकड़े होते हैं ।

पञ्चत (स० पु०) पञ्चतीति पञ्च-घटञ् (बहुवचिन्निर्दि-
 क्तप्रसिद्धिनिर्दिहोऽपञ्च । ३३० श। ११०) १. घृण । २. चम्पि ।
 ३. इन्द्र । (वि०) ४. पञ्चपहा ।
 पञ्चतद्युक्तता (स० स्त्री०) पञ्चत युक्तत इत्यस्मिन् पञ्चां
 क्रियायां मयूरप्य मन्त्राङ्गात् समाम् । पाठ करो
 मन्त्रं करो, ऐसो आदिगण्डिया ।
 पञ्चति (स० पु०) पञ्च धातुस्यैव प्रथित् । पञ्च धातु
 का सञ्चय ।
 पञ्चतिवध (स० स्त्री०) ईष्यन् पञ्चतीति तिङ्शक्त्यात्
 कञ्चय । ईष्यन् पञ्चकञ्चर्त्तं बहुत कञ्च ऐसा पाठ
 करनीवासा ।
 पञ्चतुरा (वि० पु०) एक प्रकारका वाजा ।
 पञ्चतीकिया (वि० पु०) पांच तोखिका वाट ।
 पञ्चत् (स० सि०) पञ्चति यः पञ्च-मयः । पाठकञ्चर्त्तौ,
 रडोई करनीवासा ।
 पञ्चपुष्ट (स० पु०) पञ्चत् पुष्ट यञ् । पुष्टं मञ्चिष्ठय ।
 पञ्चत्त (स० सि०) पञ्चत् पाठो माधु यत् । पाठविपचर्त्तौ
 माधु ।
 पञ्चन (स० स्त्री०) पञ्चते इति पञ्च-माथे इमुट् । १. पाठ-
 पञ्चानेको क्रिया या भावः । २. पञ्चनी शो क्रिया वा भावः ।
 ३. चम्पि । (सि०) ४. पाठकञ्चर्त्तौ, पञ्चानेवासा ।
 पञ्चना (वि० स्त्री०) १. सुकृ पदादीनां समादिभिं परि-
 षत्त शो कर गरीरिभिं लपदि शोभ्य शोना, इत्रम शोना ।
 २. मथैर मन्त्रिभ्य आदिवा मन्त्रता, सुष्यता या चौच
 शोना, बहुत ईरान शोना । ३. षय शोना, सनाम या
 मष्ट शोना । ४. दूसरैका भाव इव प्रकार पचनें जाबमं
 या आना नि विर शायिष न हो मजे इत्रम शोना ।
 ५. चतुश्चित उपायमे प्राप्त क्रिय ह्यु धन या पदाय का
 काममें धाना । ६. एक पदायैका दूसरै पदाब्रह्मं पञ्चको
 तरङ्ग शोना, षयना ।
 पञ्चनानार (स० पु०) पाठगाथा, रडोईवर, वाकरचो-
 षाना ।
 पञ्चनानि (स० पु०) ङाडरानि, पेटको घाग को आदि
 ह्यु पदाय का पञ्चाना है ।
 पञ्चनिका (स० स्त्री०) कङ्गाहो ।
 पञ्चनी (स० स्त्री०) सुकृममांर्त्तौदिक् पञ्चतेऽनया पञ्च

कावे न्युः क्रियां होय । वनबीजपूरक, बिहारो
 मोरु ।
 पञ्चनय (स० पु०) पञ्चने योग्य इत्रम जोनि धायक ।
 पञ्चनो—वादा क्रिमेका एक घामः । यह वादा नगरमे
 ८ मोन वनारमें पञ्चनित है । यहा ७ रिन्दु मन्त्रि पौर
 १ मसञ्चिद है ।
 पञ्चनी (स० स्त्री०) सोदनामैन् पञ्चति पञ्च-मय, विरां
 होय । पाठकञ्चर्त्तौ पञ्चनीवासी ।
 पञ्चपव (स० पु०) पञ्चप्रकारः पञ्च प्रकारे दिव्य वा
 पञ्चम पाठ लुः यंमादेरपि पञ्चो वा । मरादेव, विच ।
 पञ्चपय (वि० स्त्री०) १. पञ्चपय मन्त्रं जानिको क्रिया या
 भावः । २. षोचय ।
 पञ्चपया (वि० स्त्री०) १. पञ्चपयका मोत्रम त्रिसका पानो
 प्रच्छा तरपने सुखा या जना न हो ।
 पञ्चपयाना (वि० स्त्री०) १. कियो पदाय का प्रपरतमे
 आदाः मोका जना । २. षोचय शोना ।
 पञ्चपन (वि० स्त्री०) १. पञ्चन पौर पांच, पांच कन माठ ।
 (पु०) २. पञ्चस पौर पांचको न कजा ३३ ।
 पञ्चपनवां (वि० वि०) त्रो गिननेमें शोचनके बाह पञ्चपन
 का अयय पञ्च ।
 पञ्चपञ्चय (वि० पु०) पञ्चपञ्च हैचो ।
 पञ्चप्रकृष्ट (स० स्त्री०) पञ्च प्रकृष्ट इत्युच्यते यन्मो क्रियायां
 मयूरप्य शोऽङ्गात् समाम् । पाठकञ्चर्त्तौ देनाय विद्योग-
 क्रिया पाठ करो शिदम करो ऐसा आदेय ।
 पञ्चमान (स० स्त्री०) पञ्चतेऽसौ इति पञ्च-माथञ् (लः)
 षयुञ्चान्तौ । १। २। ३। ४। ५। ६। ७। ८। ९। १०। ११। १२। १३। १४। १५। १६। १७। १८। १९। २०। २१। २२। २३। २४। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१। ३२। ३३। ३४। ३५। ३६। ३७। ३८। ३९। ४०। ४१। ४२। ४३। ४४। ४५। ४६। ४७। ४८। ४९। ५०। ५१। ५२। ५३। ५४। ५५। ५६। ५७। ५८। ५९। ६०। ६१। ६२। ६३। ६४। ६५। ६६। ६७। ६८। ६९। ७०। ७१। ७२। ७३। ७४। ७५। ७६। ७७। ७८। ७९। ८०। ८१। ८२। ८३। ८४। ८५। ८६। ८७। ८८। ८९। ९०। ९१। ९२। ९३। ९४। ९५। ९६। ९७। ९८। ९९। १००।
 पञ्चमेक (वि० वि०) त्रिचनें कही या सबमोच हो ।
 पञ्चम्यका (स० स्त्री०) पञ्च पञ्चं पञ्चति पञ्चो कञ्च,
 तता सुमु (पञ्चां टाय, दाबहर्त्तु, दाबहमदी ।
 पञ्चम्या—बिहारः इजाराबाग जिनात्मसंत मोरीडाह लय
 बिनामका एक घाम । यह पञ्चा० २३ १३ ३०
 पौर दिया० २६ १६ ५० मोरीडाह ईकंष्टेयमने ३
 मोनको दूरी पर पञ्चनित है । जलमंषया तील इजारा
 धे लपर है । यदीने एव कते पदाङ्कम ऊपर प्रायः
 १०१२९ कडा जमीनक वन्दरिने चनेड ताव्यनिसंत

पात्र और कुठार आदि युद्धास्त्रके सामान पाये गये हैं।
 पचरंग (हि० पु०) चीकू पूरनेकी सामग्रो मेंदहीना
 चूरा, चकोर, बुझा, इन्दी और सुरवालीके बीज। इस
 सामग्रोमें सब जगह ये बीज 'बोज' नहीं होतीं, कुछ
 बीजोंकी जगह दूसरी बीजों भी काममें लाये जाते हैं।
 पचरंगा (हि० वि०) १ जिसमें भिन्न भिन्न पांच रंग हों,
 पांच रंगका। २ जो पांच रंगोंमें रंगा हुआ हो तथा जो
 पांच रंगोंके सतीसे बना हुआ हो। ३ जिसमें बहुतसे
 रंग हों, कई रंगोंमें रंगा हुआ। (पु०) ४ नमपह आदि-
 की पूजाके लिए पुरा जामेखाना शोक। इस चोकके खाने
 या कौंठे पचरंगके पांच रंगोंके भरि जाते हैं।

पचरा (हि० पु०) दरहा रेली।
 पचरान—अयोध्या प्रदेशके गोग्गा महामीलके अन्तर्गत
 एक ग्राम। यह जिलेके सदरसे ८ कोस उत्तर अ-
 स्थित है। इसके पास ५० फुट ऊंचा एक स्तूप है जिसके
 ऊपर एक मन्दिरमें पृथ्वीनाथका निह प्रतिष्ठित है।
 १८६० ई०में राजा मानसिंहने स्तूपके ऊपर जो लज्जल
 था उसे काटने अंग्रय एक विग्रह पाया था और मन्दिर
 निर्माण कर इसमें उनको प्रतिष्ठा की थी। संभवतः यही
 स्थान प्राचीन समयमें पञ्चारण्य नामसे प्रसिद्ध था।
 दूसरे स्तूपके ऊपर पृथ्वीनाथका मन्दिर स्थापित है।
 इसकी चारों ओरोंकी गठन देखने हीमें यह बौद्धस्तूप-
 का मालूम होता है।

पचलही (हि० स्त्री०) एक आभूषण जो मासिकी
 तरह होता और जिसमें पांच छड़ियां रहती हैं। यह
 गलेमें पहना जाता है और इसकी अन्तिम लकीं प्रायः
 नाम तक पहुँचती है। कभी कभी प्रत्येक लकीके
 और कभी कभी केवल अन्तिमके लकीों बीच एक
 लुगनु लगा रहता है। इसके टाने सोने, मोती अथवा
 अन्य रत्नके होते हैं।

पंचलक्षणा (सं० स्त्री०) पंच लक्षणमित्युच्यते यस्या क्रिया
 मयूरश्च भ्रुकुण्डित्वात् समासः। स्वर्ण पाक करो ऐसा
 श्लोक।

पंचलोमा (हि० पु०) १ यह जिसमें पांच प्रकारके नमक
 मिले हों। २ पंचलक्षण श्लोक।

पचवाई (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी देसी शराब जो
 चावल, जौ, ज्वार आदिसे तैयार की जाती है।

पचहत्तर (हि० वि०) १ सत्तर और पांच, सत्तरके पांच
 अधिक। (पु०) २ यह संख्या जो सत्तर और पांचके
 जोड़में बनी हो, ७५।

पचहत्तरवा (हि० वि०) जिसका अर्थ कममें पच-
 हत्तर पर हो, गिननेमें पचहत्तरके अर्थ पर पहनेवाला।
 पचहरा (हि० वि०) १ पांच चार मोड़ा या लपेटा हुआ,
 पांच परती या नहींखाना, पांच आहसियोंवाला। २
 पांच बार किया हुआ।

पचा (सं० स्त्री०) पच्यते इति पचेयित्वाद्दृ, तत्पटात्।
 १ पाक, पकानेकी क्रिया या भाव। २ पाककर्त्री, पकाने-
 वाली।

पचाह—बम्बई प्रान्तके रायगढ़के निकटवर्ती एक ग्राम।
 यहाँ शिवाजीने रसदमंगल करनेके लिए एक किला
 बनवाया था। यहाँका रामस्वामोका मन्दिर प्रसिद्ध है।
 पचादि (सं० पु०) पच आदि र्वत्। पाणिन्युक्त गणसेद।
 यथा—पच, वच, षप, षट्, चन, पत, मटट, भपट,
 षवट, चरट, गरट, तरट, चोरट, गाहट, चुरट, देवट,
 दीपट, रज, मट, जप, सेव, मेप, कोप, मेध, नर्त्त,
 व्रण, धर्म, दन्भ, टर्प, जार, भर चोर चपच। इन
 पचादि धातुओंके उत्तर पच् प्रत्यय होता है, अच् प्रत्यय-
 के कारण इन्हे पचादिगण कहते हैं।

पचामक (हि० पु०) एक पची जिसका शरीर एक
 बालिश सखा होता है। इसके डेने और गर्दन काटो
 होती है। दक्षिण भारत और बङ्गाल इसके स्थायी
 आवासस्थान हैं पर अफगानिस्तान और वनूचिस्तानमें
 भी यह पाया जाता है।

पचाना (हि० क्रि०) १ पकाना, पांच पर गलाना। २
 खार्ई हुई वस्तुको लठारामिकी सहायतासे रसादिमें परि-
 णत कर शरीरमें लगाने योग्य बनाना, हजम करना,
 जीर्ण करना। ३ अवैद्य उपायसे हस्तगत वस्तुको अपने
 काममें ला कर लाभ उठाना। ४ पराए मालकी अपना
 कर लेना, हजम कर लेना। ५ खय करना, समाप्त या
 नष्ट करना। ६ अत्यधिक बरिन्धम ले कर या लेश दे
 कर शरीर मस्तिष्क आदिकी गलाना या सुखाना। ७
 एक पदार्थका दूसरे पदार्थको अपने आपमें पूर्ण रूपसे
 लीन कर लेना, खपाना।

पंचार (हि० पु०) बाँस या लकड़ोंका बड़ा झोटा खंडा जो ऊपर बाँधे घोर होता है घोर बीक्रेके छेदकी तरह लकड़े छेदके दोनों घोर हुआ रहता है ।

पंचारना (हि० जि०) लकड़ारना, किसी कामके करने के पहले लकड़ोंके बीच बसकी चोखवा करना जिसके सिद्ध बड़ किया जानीबासा हो ।

पंचार (हि० पु०) पंचमेको ज्ञिया या माय ।

पंचार (हि० जि०) १ चाबीम घोर टप, माडके टप बस । (पु०) २ चाबीम घोर टपकी लक्या या पट्ट, २० ।

पंचारना (हि० जि०) गिनतीमें पंचारको अग्रह पर पढ़नेबासा ।

पंचार (हि० पु०) एक ही प्रकारको पंचार बीजीका समूह ।

पंचारो (हि० जि०) १ लकड़के पाँच बस, ८०के ५ पवित्र, बरयो घोर पाँच । (पु०) २ बड़ पट्ट या लक्या जो बरयो घोर पाँचके जोड़के बनी हो, बरयो घोर पाँचके योगकी लकड़प म ल्या, ८२ ।

पंचारोना (हि० जि०) जो लकड़में पंचारोके स्वान पर हो, गिनतीमें पंचारोको अग्रह पर पढ़नीबासा ।

पंचि (ल० पु०) पंचमोति पंच-रत्न (बनेपल्लवः इत् । इत् ३११०) १ पत्थि, पत्थ । २ पाचन, पंचानिबी ज्ञिया या माय ।

पंचि (हि० जि०) पंचो जिया हुआ, बैठाया हुआ, भड़ा हुआ ।

पंचो (हि० ली०) रचो रोखो ।

पंचोघ (हि० जि०) १ पाँच छपर बीच, तीसके पाँच बस, पाँच घोर बोल । (पु०) २ पाँच घोर बीक्रेके योग-फलकप पट्ट या खंडका बड़ लक्या या बड़ जो बीन घोर पाँचके जोड़के बनी, २५ ।

पंचोघना (हि० जि०) जो लकड़में पंचोघके स्वान पर पढ़े, पंचमामें पंचोघके स्वान पर पढ़नीबासा ।

पंचोबी (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारका किस जो मोघर को बिलत पर बिता जाता है । इनको मोट्टिका घोर बाल भी लकड़ोको तरह होती है । इनका बिलत रहता है कि इनमें पाँचको अग्रह ज्ञान कोड़िका होती है जो बड़कड़ा कर कि जो जाती है । (हि० ली०) २ घोर बीक्रेके

लक्याके अनुसार टाँच निबध होता है । २ एक ही प्रकारको पंचोघ लकड़ोका समूह । ३ किसीकी चायुके पहले पंचोघ बर । ४ एक बिदिब गधना जिनका मेकड़ा पंचोघ गाड़ियों परबोत् १२१११ माना जाता है । घाम अमरुट पादि नस्ते परबोको खरोट बिदामें रचो का व्यवहार किया जाता है ।

पंचुका (हि० पु०) पिचकारी ।

पंचेतिम (ल० पु०) पंचमती पंच-पुनिमम् (पंच एतिमम् । उन् ३११०) १ मूबं । २ पत्थि पाग । (सि०) १ लो चापके चाप पका हो ।

पंचेमुक्त (स० पु०) पंचकोटलाकोम्, पंचो बाहुलकाटा दिव्यम् । मूट, पाचक बड़ जो कोटमादि पात्र लके ।

पंचोतर (हि० जि०) किसी लक्याके पाँच पवित्र, पाँच छपर ।

पंचोतरघो (हि० जि०) एक जो पाँच, लो घोर पाँचका बड़ या लक्या १०२ ।

पंचोतरा (हि० पु०) लक्यापकके पुराविलकर एक-जिप । रहने लके हावअनि बरपको मिचजिप/के बरयो चादि भिदि लकड़के पोके पाँच मिकता है ।

पंचोमी—बृहस्पतेरभे बरयो गिनिका एक पाय । यह बरयोके ८ कोट हकिचपुनमें पंचमिल है । बर्ना या प्राचोन मरुताकेय घोर ल्पुप बमूहका परबोचोचना करनेके पूर्व बीक्रेके बनेक निदगन पाके जाने है । हावक हकिके समय बर्नाके अन्त ल्पुपके पुन जानेके मारुतबर्नाके मक राजकोबी बरचिन ताव्यपुत्रा ग्राहर भूदे वी । ये लक लक्यामि दिव्यभे बड़ ल्यान प्राचोन 'पंचमूमिदि लोसा प्रतोत होता है ।

पंचोषा (हि० पु०) किसी बपके पर खोड रूप चुनकिने लीके ८ या १२ दिन पबल लके चाम्पे लुका रहना । ऐसा करनेके ज्ञापने मलय लमया ल्यान पर जो प्रक था जाती है कि छूट जाती है ।

पंचोर (हि० पु०) घामका प्रबान, घामका लुनिवा, बर-वाट, घरगना ।

पंचोती (हि० ली०) १ चामका भरनार भरगना । २ मज्ज भात तथा इन्धनेके बरिबतनाके मिलनेबासा एक प्रकाश का पिक । बरके पलोके पंच प्रकारका रिन निबाना

जाता है जो विनाशतो उसे न आदिमें पड़ता है।
 पचीवर (हिं० वि०) पाँच तह या परत किया हुआ,
 पाँच परतका।
 पचड (हिं० पु०) पचवर देखो।
 पचर (हिं० स्त्री०) लकड़ी या बामको फटो, काठका
 पेवन्द। इसे चारपाई, चौबट आदि लकड़ीको वनी
 चौकीमें मान या जोड़ने के लिये उसमें छूटे हुए
 दरारमें ठोकते हैं। छिट्टो भरनेके लिए इसका एक
 मिरा दूरसे कुछ पत्तल किया जाता है, लेकिन जब
 इससे दो लकड़ियोंको जोड़नेका काम लेना होता है,
 तब इसे उतार खटान नहीं बनाते, एक फटो वा गुल्लो
 बना लेते हैं।
 पचो (हिं० स्त्री०) १ किसी वस्तुके फौले हुए तल पर
 दूसरो वस्तुके टुकड़े इस प्रकार खोद कर बैठाना कि वे
 उस वस्तुके तलके मोलमें हो जाय और देखने या
 छूनेमें उभरे या गड़े हुए न मानूँ वही तथा दरज या
 सीम न दिखाई पड़नेके कारण आधार वस्तुके ही अंग
 जान पड़े। २ किसी धातुके बने हुए पदार्थ वा किसी
 अन्य धातुके पत्रका जडाव।
 पचो गारी (हिं० स्त्री०) पचो करनेकी क्रिया या भाव।
 पचोसे—गुजरातो ब्राह्मण समुदायका एक भेद। पचीम
 ग्राम इन्हें जाविकारके लिए मिले थे, इसीमें ये लोग
 पचोसे कहाये।
 पच्छकट (स० पु०) आलकी, मभीलो जड जो रंगारङ्गेके
 काममें आती है।
 पच्छघात (हिं० पु०) पक्षाघात देखो।
 पच्छम (हिं० पु०) पश्चिम देखो।
 पच्छिम (हिं० पु०) १ पश्चिम देखो। (वि०) २ पिछला,
 पीछेका।
 पच्छिर्ध (हिं० पु०) पश्चिम देखो।
 पच्छो (हिं० पु०) पची देखो।
 पच्छस् (स० अर्थ०) वीष्मार्थ पादं पादमिति पक्षावः।
 ततः शस्। पद पदमें, चरण चरणमें।
 पच्य (स० त्रि०) पच कामणि यत्। पाकाइँ, पकानि-
 योग्य।
 पच्यमान (स० त्रि०) पच्यतेऽसौ पच कामणि शानच।
 जो पकाया जा रहा हो।

पछटना (हिं० क्रि०) १ लड़नेमें पटका जाना। २
 पिछटना देखो।
 पछताना (हिं० क्रि०) किसी क्रिये हुए अनुचित कार्य-
 के मन्त्रमन्त्रमें पीछेमें दुःखों होना, पछात्ताप करना, पछ-
 तावा करना।
 पछताव (हिं० पु०) पछतावा देखो।
 पछतावा (हिं० पु०) पछात्ताप, अनुताप, अपने क्रियेको
 बुरा समझनेमें होनेवाला रंज।
 पछवत (हिं० स्त्री०) यह चीज जो फलनके अन्तमें
 छोड़े जाय।
 पछवाँ (हिं० वि०) १ पश्चिम दिशाको, पश्चिमदिशा-
 सम्बन्धी, पच्छिमो। (स्त्री०) २ अंगियाका वह भाग
 जो पीठको तरफ मोटोके पीछे रहता है।
 पछाँइ (हिं० पु०) पश्चिम पड़नेवाला प्रदेश, पश्चिमको
 ओरका देश।
 पछाँइया (हिं० वि०) पश्चिम प्रदेशका, पछाँइका।
 पछाड (हिं० स्त्री०) मूर्च्छित हो कर गिरना, पश्चिम
 शोक आदिके कारण अचेत हो कर गिरना।
 पछाडना (हिं० क्रि०) १ दृष्टीको लडाईमें पटकना,
 गिराना। २ धीनेके लिए कपड़ेको जोर जोरसे पट-
 कना।
 पछाडो (हिं० स्त्री०) पिछाडो देखो।
 पछाया (हिं० पु०) किसी वस्तुके पीछेका भाग, पिछाही।
 पछारना (हिं० क्रि०) कपड़ेको पानीसे साफ करना,
 धोना।
 पछावरि (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका पकवान।
 पछाही (हिं० वि०) पश्चिम प्रदेशका, पछाँइका।
 पछिआना (हिं० क्रि०) पीछे पीछे चलना, पीछा करना।
 पछिताना (हिं० क्रि०) पछताना देखो।
 पछिताव (हिं० पु०) पछतावा देखो।
 पछिनाव (हिं० पु०) पछाँइका एक रोग।
 पछियाना (हिं० क्रि०) पछिआना देखो।
 पछियाव (हिं० पु०) पश्चिमकी हवा।
 पछिलना (हिं० क्रि०) पिछटना देखो।
 पछिला (हिं० वि०) पिछला देखो।
 पछिवाँ (हिं० वि०) १ पश्चिमधी। (स्त्री०) २ पश्चिम-
 को हवा।

पुष्पा (हि० वि०) १ पवित्रको । (स्त्री०) २ पवित्रम को रत्ना ।
 पुत्रा (हि० पु०) ३ कृषि या वारणा ११११ पञ्चमनेका पर गङ्गा ।
 पुत्रेण—बन्धु प्रदेवके काठियावाड़के पञ्चगौत मोक्षेण हाह विभास्य एव सुदुराण्य । कुलागच्छे नवान् पौर कोणजे मायकावाङ्मो यद्दक्षि पश्चिमि कर दिया करते हैं ; यथा नाग ब्राह्मण का नाम पश्चि इ ।
 पुत्रो (हि० स्त्री०) १ मन्वानके पोखेका भाग काका पित्रवाहा ; २ सरके पोखेको टोमार ।
 पुत्रेका (हि० पु०) पोखा ।
 पुत्रेणा (हि० स्त्री०) पारी बड़ भाला पोखे कोङ्गा ।
 पुत्रेणा (हि० पु०) १ काशमें पङ्कनेका स्त्रियोका एक प्रकारका चढ़ा जिनमें ऊपरें बूढ़ दागकी पत्रि होती है । २ पोखेको मटिका । (हि०) ३ पित्रना ।
 पुत्रेणे (हि० स्त्री०) बडेका देखो ।
 पुत्रेण (हि० स्त्री०) पुत्र यादिसमें बछ हर माय करना, पटकाता ।
 पुत्रेणा (हि० स्त्री०) बकोङ्गा देखो ।
 पुत्रेणा—पुत्रेणापदेयके इरकोई जिनाकागौत एक पर गना । यद्दक्षि पश्चिमिपत्र पञ्चवार जातिके हैं ।
 पुत्रेणा (हि० पु०) पित्रोय देखो ।
 पुत्रेण (हि० स्त्री०) एक प्रकारका घरगत ।
 पुत्रेणुवरि—एक हिन्दू-कवि । इन्हीं हिन्दुनेकपुत्र कोमीमें वारणसीमी नामक पुस्तक बनाई ।
 पुत्रेणुवरि—हिन्दुके एक कवि । ये जतिके कावत्य पोर हिन्दुनेकपुत्रके नामो है । इन्हीं पुत्रमपुत्रयोतिप नामक पुत्र बनाया है ।
 पुत्रेणुवरि—एक हिन्दु-कवि । ये हिन्दुनेकपुत्रके इन्नेवामी से तथा इनका जन्म स० १८०२में हुआ था । इनका बनाया मङ्गलिया नामक पुत्र भाषासाहित्यमें उत्तम है । इनको चतुको उपमा अनुते पद, अनुवास, वञ्चम आदि प्रय पाके योग्य है । इन्हीं नवविषयकर्मन को बनाया है ।
 पुत्र (हि० पु०) १ पुत्री का उपक्रमको स्त्रिया । २ भ्रतरा ।

पुत्र (का० पु०) एक प्रकारका पदर जो पोसापन या इरापन लिये पहिंद होता है पौर जिन पर लकामो होती है ।
 पुत्राया (का० पु०) रूट पञ्चामिका मङ्गा पार्वा ।
 पुत्रेण (हि० पु०) जेन मतका एक मत ।
 पुत्रेणा (हि० पु०) जिन के मरने पर लम्बे चरन्वियों से मोक्ष प्रकाय मातमपुंगो ।
 पुत्रेणा (हि० पु०) दुष्ट, पापी ।
 पुत्र (स० पु०) पुत्रागत, पञ्चम जतरि इ । गुरु । गुरु-पुत्रके जन्मपञ्च करता है, इन्हीं पुत्रेण कहते हैं ।
 "नादनेत्येव तुगनाधीत् वाहुरात्मनः इति" ।
 पुत्रेण (हि० पु०) गौर टयो ।
 पुत्रेणा (स० स्त्री०) १ साम्राज्यमदे, एक जन्म जिन के प्रत्येक चरचमें १६ मासके इस नियमसे होती है— प्रथम पादमें प्रथम ४ लघु फिर १२ गुण द्वितीयपादमें प्रथम ४ लघु, पोखे १ गुण लघुके बाद दो लघु फिर एक गुण पोखे दो लघु पोर दो लघु ; तृतीय चरचमें प्रथम गुण पोखे ६ लघु १ गुण, २ लघु पोर २ गुण चतुर्थ चरच तृतीय चरचके जैसा होता है । २ लघु पश्चिमा कोट, घटा ।
 पुत्र (स० स्त्री०) १ इन्विकचपाकबुद्ध । २ पाप द्वारा कोष । (पु०) ३ पश्चिमाका नामानार ।
 पुत्रेणुवरि (स० पु०) प्रसिद्ध स्त्रीका इन्द्र पोर पत्रि ।
 पुत्रेण (स० स्त्री०) पश्चिमाकाका, पश्चिमाकाके लपप ।
 पुत्र (स० पु०) बन्धु देखो ।
 पुत्रेण (स० स्त्री०) पश्चिमे इति भावो लघु । १ पञ्च-संशान्वित पश्चिमा लघु । २ पञ्चवाचिकत माक, मङ्गलयाक । ३ अतिहा आदि वाच लघु जिनमें द्वितीय लघु कायका पारम्भ निमित्त है । ४ पाँच सौकेका भात्र । ५ बह जिनके पाँच पञ्चयन को । ६ पापपत यममें निवारि हुई पाठ बसुर जिनमेंके प्रकोषक पाँच
 ० "अन्विकचोरसर्वे रोगाः प्राचीना भवन्ति ।
 ईयमे तुलकाप्याका इत्ये वस्तारिणकेके" (सिन्धुपाथि)

पांच भोट किये गये हैं। वे पाठ वसुएँ ये हैं—
लाभ, मन, उपाय, देश, अवस्था, विशुद्धि, दोषा, कारिक
और वन। (त्रि०) ७ पञ्च, पांच। ८ पञ्चांगयुक्त।
९ पञ्चभृतियुक्त। १० पञ्चमुनाश्वित।

पञ्चकन्या (सं० स्त्री०) पुराणानुसार पांच स्त्रियां जो सदा
कन्या ही रहें अर्थात् विवाह आदि करने पर भी जिन
का कन्यात्व नष्ट नहीं हुआ। अहल्या, द्रौपदी, कन्तो,
तारा और मंदादरो ये पांच कन्याएँ कही गई हैं।

पञ्चकपाल (सं० स्त्री०) पञ्चसु कपालेषु संस्कृतः पुरो-
डाशः (संस्कृतं मथाः। पा ४।२।१६) इत्यन् (ततो द्विगो
लुङ्गनपर्ये। पा ४।२।८८) इत्यणो लुक्। १ यश्चिविशेष।
पञ्चानां कपालानां समाहारः परनिपातः। २ कपालपञ्चक
वद् पुरोडाश जो पांच कपालोंमें पृथक्, पृथक्, कपाला
जाय।

पञ्चकर्ण (सं० स्त्री०) उत्तम लोह द्वारा पञ्चचिह्नित
कर्ण।

पञ्चकर्ण्ट (सं० पुं०) महाभारतके अनुसार एक देश।
यह देश पश्चिम दिशामें था जिसे नकुलने राजसूययज्ञके
समय जीता था।

पञ्चकर्मन् (सं० स्त्री०) पञ्चानां कर्माणां समाहारः। १
वैद्योक्त कर्मपञ्चकभेद, चिकित्साकी पांच क्रियायें—
वसन, विरचन, नस्य, निरुहवस्ति और अनुवासन।
कुछ लोग निरुहवस्ति और अनुवस्तिके स्थानमें स्नेहन
और वस्तिकरण मानते हैं।

“वसनं रेचनं नस्यं निरुहस्वानुवासनम्।

पञ्चकर्मदमन्यश्च कर उक्षेपणार्दिहम् ॥” (शब्दचन्द्रिका)

२ भाषापरिच्छेदोक्त पञ्चकर्म, वैशेषिककी अनुसार
पांच प्रकारकी कर्म—उत्प्रेषण, अवक्षेपण, आकुञ्चन,
प्रसारण और गमन।

“उत्प्रेषणं ततोऽवक्षेपणमाकुञ्चनं तथा।

प्रसारणञ्च गमनं कर्मथेतानि पञ्च च ॥”

(भाषापरिच्छेद ६ अ)

पञ्चकर्मन्द्रिय (सं० स्त्री०) हस्त, पाद, पायु, उपस्थ
और जिह्वा। इन्हीं ५ इन्द्रियकी पञ्चकर्मन्द्रिय कहते हैं।
पञ्चकर्मस—बम्बई प्रदेशवासो शूद्रजातिभेद। पहने
इनकी सामाजिक अवस्था अत्यन्त हीन थी। खेत

जीतना, दूध दुहना और दूध बेचना इनका व्यवसाय
था। सभी ये लोग पूर्वं व्यवसायकी छोड़ कर महा
जनो अथवा सरकारी नौकरी करने लगे हैं तथा समाज-
में उन्नति लाभ करके अपनेको राजपूत वंशीय क्षत्रिय
सन्तान बतलाते हैं।

पञ्चकल्याण (सं० पुं०) बड़ घोड़ा जिमका सिर और
आगे पर सफेद हों और शेष शरीर नाल, काला या
और किसी रंगका हो। ऐसा घोड़ा शुभफल देनेवाला
माना जाता है।

पञ्चकवल (सं० पुं०) पांच ग्राम प्रख जो स्मृतिके अनु-
सार खानिके पहले कुत्ते, पतित, कौटो, रोगी, क्रीए
आदिके सिधे अन्न निकाल दिया जाता है। यह
कृत्य बनिवेशदेवका अन्न माना गया है, प्रपाशन, प्रग
राशन।

पञ्चकपाय (सं० पुं०) पञ्चविधः कपायः अथवा पञ्चानां
वृक्षाणां कपायः, वदकनरसः। पांच प्रकारका कपाय
द्रव्य, तन्त्रके अनुसार इन पांच वृक्षोंका कपाय—जामुन,
सेमर, खिरंटी, मौलसिरो और बिर। यह पञ्चकपाय
भगवती दुर्गाका प्रत्यन्त प्रीतिकर है।

“वाम्बुशास्त्रलिवाढशालं बकुलं वदं तथा।

कपायाः पांच विधेषा देव्याः प्रीतिकराः शुभाः ॥”

(दुर्गेस्वप०)

पञ्चकाम (सं० पुं०) पञ्च कामाः कर्मधारयः, संज्ञात्वात्
न द्विगुः। पञ्चप्रकारकाम। तन्त्रके अनुसार पांच काम-
देव जिनके नाम ये हैं—काम, मन्मथ, कन्दर्प, मकर-
ध्वज और मीनकेतु।

“पांचकामा इमे देवि। नामानि शृणु पावेति।

काममन्मथकन्दर्पमकरध्वजसंज्ञकाः ॥

मीनकेतुर्देवानि पांचमः परिच्छिन्त ॥” (तन्त्रसार)

पञ्चकारण—(सं० पुं०) जैनशास्त्रके अनुसार पांच कारण
जिनसे किसी कार्यको उत्पत्ति होती है। उनके नाम ये
हैं—काल, स्वभाव, नियति, पुरुष और कर्म।

पञ्चकीर (सं० पुं०) जलकुक्षम।

पञ्चकुल—प्राचीन हिन्दूराजाओंकी अवर्तित एक नगर-
सुरक्षिणो मभा। पांच मन्त्र्य द्वारा मभाके सभी काम
चलाये जाते थे। ये पांच व्यक्ति पांच सम्भ्रान्तवंशसे निर्वा

चित्त होते थे। बोरे बोरे वह ममा पञ्चकुल बचनानि
नमो। चात्र मो किमो विद्यो विविध कावच्यम गमि
पञ्च उपाधि पञ्चम गये 'पञ्चोत्तो' नामनि परिचय हो
गई है।

पञ्चस्य (म० पु०) पञ्च विस्तृत स्युष मायापञ्चवा
द्विच यत् । १ पञ्चोत्तुञ्च पञ्चोत्तुञ्च पदम् । (श्लो०)
पञ्च प्रसिद्धि इत्ये काव्यं सहादिचम् । २ पञ्चि प्रसूति
पञ्च प्रकार कायं, ईश्वर या महादेवके पांच प्रकारके
कर्म ।

“नविमन्तु ह्यप्यस्मिन् संहरिवात्पुण्यावक ।
इत्ये वचनिक नभंरवानपे त ह्ये पिचम्युत्त”
(विष्णुपञ्चि)

पञ्चि, स्थिति अथ, विधान और अनुपपन्न यद्यो पांच
कायं है, इत्येका नाम पञ्चस्य है। त्रिनमि ये पांच
कर्म हैं, उन महादेवको नमस्कार करता है।

पञ्चस्य (म० पु०) दीप्यकोटमेव, सुशुभति अनुभार एक
बीड़ेका नाम ।

पञ्चकोट—मानभूमि किमेव पञ्चमत्त एक गिरिदेवो ।
एव वराकरये १० मीच दक्षिण-पश्चिमि पश्चिमि है।
इसके दक्षिण-पूर्व पादमुनमि पञ्चमे पञ्च दुर्ग था। एक
कमय इस स्थानको गिनतो राजधान्यादमि होती थी।
समीमे एक प्राचीन कीर्तियां अथवाकमिपुष्पमि परि
चयन हो गई है। इस पञ्चतलक राजवासका पञ्चकोट
नाम लीं पढ़ा इस विषयमि बहुत बहुत तरनो बार्ति
कहते हैं। किमी विधीका कथना है कि कश्चि राजा
पांच विभिन्न सामन्त राजापीके अथवा कश्चि करते थे।
धिर कोई अनुमान करत है कि 'कोट' पांच स्थान
प्राचीर द्वारा रचित रहनेके कारण इस स्थानका नाम
'पञ्चकोट' पड़ा है। स्थानवासी इस स्थानको "पञ्चकोटके
पञ्चम गमि पञ्चेत वा पञ्चेत कहते हैं।

दुर्ग के उत्तर उच्चतमिगिरिमाका विद्यमान है तथा
पश्चिम, दक्षिण और पूर्वकी ओर एकके बाद दूसरा हम
क्रममे ३ ऊर्ध्वम प्राचीर हैं और उनके भीतरकी ओर
कमानवत्तन पञ्चतका कश्चिन्मि भूमिभाग एक स्थान
प्राचीरको तरह दृष्टायमान हो कर दुर्गकी रक्षा करता
है। प्राचीर प्राचीरके अन्तर्गतमे गहरो घोर चौड़े खाई

बनी हुई है जो पञ्चतमात्रय खोतमात्रमे मात्र एक
प्रकार न योजित है कि उसमि दृष्टानुसार एक एक
मकते हैं। प्रात्र तत्र मो उन नामापीमि कर्म कमा
है। पञ्चमे प्राचीरमि पनेको दार है। समो प्राचीर
मात्रय ओ गत है नको उसका प्रमाण देते हैं। समो
एकका मो दार देखनेमि नको जाता। दुर्गके चारों ओर
एकर काट कर जो चार इस्तू दार रचित है, प्रात्र भी
उनमेमे कितने दिवारें पढ़ी हैं। दुर्गके बाहरमि जो
प्राचीर या उनको लम्बाई पांच मील थी। कश्चि लोरी-
का कथना है कि दुर्गके चारों ओरका पञ्चतमाका
परिवेष्टित स्थान प्रायः १२ मील था।

कश्चि पनेक प्राचीर अथवास्थानमे दोब पड़ते हैं।
कितने करों या मण्डिरके चारों ओर खाई रहनेमे तथा
कुछ समे कश्चिमे प्रागत होनेमे उनमे भीतर चनेमि कड़ी
दिवलें लगीमि पड़ते हैं। सुठर सुठर ईंठि तथा मठो
को पुतामिवाके प्राय समी स्थानमि देखो जाती हैं।
पञ्चतमात्रमि प्रायः ३५५ सुठरी ल चारों पर दुर्गके
ठीक नाममे बहुतमे इस्तू तथा अकट काटकाइ कुछ
मण्डिर हैं। इन मण्डिरमे शुभाशुभा मन्दिर और
कश्चि महामन्त्रय लोकेयोम्य है। राजा शुभावमे
नाम पर मण्डिरका नाम पड़ा है। पञ्चमे पाददेयमि
पनेक सुन्दर मन्दिर और बड़े बड़े मन्थानीके अथवाक-
येव मन्त्र थात है। ये सब सुदृढ़ विस्तृत अथवाक
कादि प्रात्र लो चर्चके अन्तर्गत हो गयीर कश्चिमे
परिचय हो गये हैं। दुर्गमन्थाने प्रासादमि ओ चरकका
ओर पञ्चरुसी पुष्पाका है यह देखनेमि कड़ा की सुन्दर
धमता है। कायोपुरमे गङ्गा नीममपि मि च दिवके इह
प्रवितामय शुभाशुभारावच सिद्धि पञ्चमे पञ्चकोट
कोड़ के मरकतमि जा कर रपमि गमि थे, मीक्षि नीममपि
पितामे पुणः कासीपुरमि स्थानपरिचयन किया।

यहाके 'हारबाध के उत्तर कश्चि पञ्चमि कोरित
को मिलापत्तक है उसमि 'बोबीरकमिरी' नामका लक्ष्मण
देखा जाता है। ये नवविष्णुपुर, वांजुङ्गा, चोतना, धादि
स्थानमि स्थान करत है। यह सब दिव कर अनुमान
किया जाता है कि सम्राट पञ्चवरेगाइ जब दिल्लीके
सिंहासन पर और राजा मानसिंह अथवाके प्रतिनिधितमि

प्रतिष्ठित थे, उस समय पथवा उससे कुछ पहलेसे ही पञ्चकोटकी शीष्टि उड़े थी। पञ्चकोटके पूर्वतन राजवंशको उत्पत्ति और राजपट्टाभिषेक सम्बन्धमें इस प्रकार एक वंश इतिहास पाया जाता है।

कागोपुरके अन्तर्नाल नामक किसी राजाने स्वोकी साथ कर जगन्नाथपुरोको यात्रा की। राहमें गभवती राजाने अर्कवर्नमें एक पुत्र प्रभव किया। तोर्ययात्रामें विलम्ब होनेसे फल नहीं होगा, इस भयसे राजा और रानो दोनों ही इच्छा नहीं रहते हुए भी उस पुत्रको वहीं छोड़ ठाकुरहारको और चल दिए। इस समय अर्कवर्नमें कपिला गाय भ्रमण कर रही थी। दयापरवश ही वह उस गिशुका भरण-पोषण करने लगी। एक समय एक टन शिकारो वहाँ आया और गिशुकी जीवित देख उसे पावापुर ले गया। यहाँ जब वह गिशु बड़ा हुआ, तब देवशामिणीने उसे माँझी वा दलपति बनाया। क्रमशः राजाके अभावमें चौरासों पर गनोंके राजपद पर बड़ी अभिषिक्त भिया गया। अन्य वंशावलीमें लिखा है, कि राजा और रानोने प-इच्छामें पुत्रका परित्याग न किया। यात्रा कालमें वह गिशु हाथोको पीठ परसे गिर पड़ा था। उन दोनोंने पुत्रको मरा जान नहीं छोड़ दिया। पुरुनियोके दक्षिणागम्य कपिला पहाड़ पर कपिला गाय रहती थी। उसने दूध पिला कर उस पुत्रको जीवित रखा था। पीछे अष्टदशलमे पांच राजाधोने उसे गोमुखीराज नामक पञ्चकोटमें प्रतिष्ठित किया। कोई कोई कहते हैं, कि ये राजपूतवंशोय थे। उत्तर-पश्चिम प्रदेशसे पहले मानभूममें और पीछे जयकी आशामें प्रणोदित हो उन्होंने इस स्थानमें आ कर राज्य संस्थापन किया।

बादशाहनामामें लिखा है, कि पञ्चकोटके जमोदार राजा वीरनारायण सखाट् शाहजहानके राजत्वकालमें नाम को सप्तसदरके पट पर अभिषिक्त हुए। उनके राजत्वके छठे वर्ष (१०४२-४३ हिजरी)में वीरनारायणका प्राण शीत हुआ। नवाब अलीवर्दी खानके राजत्वकाल में राजा गरुडनारायण राज्य करते थे। १०७० ई० पञ्चमथ नारायणके शासन कालमें अलिदा परगना इन हाथ लगी।

यहाँकी वीही जातिके मध्य भद्रायनीकी पूजा और उत्सव प्रचलित है। भाद्रमासको मंक्रान्तिमें पूजा होनेके कारण यह उत्सव भाद्र कहलाता है। पूजाके बाद प्रतिमा जलमग्न की जाती है। प्रवाद है, कि पञ्चकोटके किसी राजाके एक अनीकसामान्यरूपमयसा और दयागोल कन्या थी। यहाँके अधिवासिगण उनके दयागुण पर सुग्ध हो उन्हें भूमण्डन पर अयतोर्णा साक्षात् दशाद्वैयी समझते थे। यह कन्या चौटी घाटि निकट जातिकी दरिद्रता देख दुःखिन होती और समय समय पर उन्हें पञ्चु भन दिशा करती थीं। बाद यह थोड़ी ही उमरमें कुटिल क लकें गालमें फँस गई। कागो पुरके पार्श्ववर्ती ग्रामशामिगण उनके वियोग पर यह ही गोस्मन्तम हुए और उनकी पूजा तथा उपासना करने लगे। भाद्रमें करवाको सूर्य होनेके कारण यह उत्सव भाद्र कहलाता है। कोई कोई कहते हैं कि भाद्र उत्सव मध्यमें पहले पञ्च होकर राजभवनमें जनसाधारणमें प्रचारित हुआ। कन्या भद्रायनीको सूर्यसे नितान्त व्यकुल हो रागो स्वयं एक प्रतिमूर्ति का निर्माण कर उसकी पूजा करने लगीं। धीरे धीरे वह पूजा पढ़ति थोड़ी घाटि जातियोंके मध्य फैल गई।

पञ्चकोण (मं० को०) १ पञ्चकोणालक नैत्रविगेष पांच कोनेवाला खेत। २ तन्त्रज्ञ यन्त्रविगेष, तन्त्रतन्त्रनुसार एक यन्त्रका नाम। ३ लग्नाधि नक्षत्र पञ्चमक स्थान, कुण्डलीमें लग्नेसे पांचवां और नवां स्थान। (वि०) ४ पञ्चकोणयुक्त, जिसमें पांच कोने हों, पंचकोना।

पञ्चकोल (सं० को०) पावनविगेष। पोपल, विपरी-मूल, चई, चितकमूल और मोठ इन पांच प्रकारके द्रव्योंको समभाग करके मिनानेसे पाचन बनता है। वैद्यकमें इन्हे वाचन रुचिकर तथा गुल्म और उद्वेग रोगनाशक माना है।

पञ्चकोलघृत (सं० को०) चरकोक घृतोपधमेद। प्रस्तुत प्रणाली—गायका घी ५४ सेर, चूनेके लिये विपरीमूल, चई, चितक, नागर प्रत्येक एक पल, दूध ५४ सेर। यद्यनियमसे घृत पाक कर सेवन करनेसे गुल्मरोग जाता रहता है।

पञ्चकोप (सं० पु०) पञ्चवर्ति कोवाचेति, संज्ञात्वात्

कर्मधारय' । वैशाखमसमित्येवोपपद्यते उपनिषद् चौर
 वैशाखे चतुस्रार शरोर न चटित करनिवासी पांच कोय
 दिनने नाम ये हैं - पञ्चमयकोव, माषमयकोव मने-
 मयकोव विज्ञानमयकोव चौर पालन्दमयकोव । इन्में
 स्थूल शरीरको पञ्चमयकोव पाँचों कर्मन्द्रियो घटित
 प्राचरी माषमयकोव पचो ज्ञानेन्द्रिययोके घटित मन
 को मशोमयकोव, पाँचों शान्तिन्द्रियोके घटित बुद्धिको
 विज्ञानमयकोव तथा बहू नारायण वा पविष्टाम्बुको
 पालन्दमयकोव कहति हैं । पञ्चमिको स्थूल शरीर, ब्रह्मरी
 को सूक्ष्म शरीर चौर तोमरे, सोके तथा पाँचमेंको कारण
 शरीर कहती हैं ।

पञ्चश्लोकी (स० श्लो०) पञ्चानां श्लोकानां समाहारः ।
 आशुके सम्बन्धित दोर्य चौर विष्णुसिंहसुत १ श्लोम स्थान,
 पांच श्लोकको सम्बन्धित पोर चोडाईके शोध कपो बूई
 कायोको पवित्र भूमि । जामोमें पापकार्य करनिने पञ्च
 श्लोकोमें विनष्ट होता है । पञ्चश्लोकीगत पाप पञ्चमय-
 में नाश होता है ।

'वातवर्षा इव पाप व कर्मोश्च विनश्यति ॥'

पञ्चश्लोकी इव वाप सम्बन्धित विवृणक्ति इ' (काशीच०)
 पञ्चश्लोकी (स० पु०) योगमास्त्रानुसार चविद्या, चस्त्रिता
 राग इव चौर चमिनियैग नामक पांच प्रकारके श्लोम ।

पञ्चकारणक (स० पु०) पञ्चाशो कारणां कथाः । कार
 पञ्चक, पञ्चसूत्रक ।

'कारेणु प चमि श्लोकाः प चकाराणिमेवम् ।

वाचपञ्चवशादुच्यते षोडशमके इति ॥

स्वान् पञ्चकवन् पञ्च कर्मोपेव चकारान्मू म'

(गार्गी०)

आप कवच, मेथ्व मासुह, बिहू, चौर सोवर्ष
 लवन इव प च वचको प चकार कहति हैं ।

पञ्चकट (स० श्लो०) पञ्चानां पट्टानां समाहारः । प च
 कटका समाहार, सन्धिलन ।

पञ्चपट्टा (स० श्लो०) १ पांच तदिवीका समुह—य वा
 यमुना, गरवती, खिरया चौर भूतपावा । इवे प चनद
 मो कहति हैं ; २ कायोका एक प्रसिद्ध स्थान जहां
 महाशिव साक विरया चौर भूतपावा तदिवी मिमो चीं ।
 ये दोनों तदिवी पच पट्ट कर सुत्र चो गई हैं ।

पञ्चपट्टा—बम्बई प्रदेशके पञ्चगत कोरहापुर जिनमें
 प्रचारित एक नदी । इनके किनारेके नामरखाना चौर
 बिड़ वा शेरुड पासमें बहुतने प्राचीन मन्दिरोंका सम्भाव
 शिव देखनेमें आता है ।

पञ्चनकावाट—पुष्पाक्षेत्र नाराचमोहामके पञ्चगत एक
 पवित्र तीर्थ । वेणुवचम प्रचारक रामानन्दने यहां एक
 कर धपना पचमिष्ट शोचन विताया वा । जहां से एसी
 के बड़ा मन्त्रन करनीका एक मन्दिर आ । पचो केवल-
 मान पञ्चको शेषो देवी जाता है ।

पञ्चमठ—ठण्डोमके पञ्चमठ एक परमना । इसमें कुल
 १० हाटे कोटे गहर कहति हैं । भूपरिमाण ३२३ वर्ग-
 मोल है । पञ्चके पञ्चिवासिनच प्राहुई जातिको गिचको
 शास्त्रोमें कथक ब्रूय है । ज्ञानिवाच' हो वनवी एक मान
 उपजीविका है ।

पञ्चवच (स० पु०) पञ्चानां वचो यमः । ज्ञेयश्लोक पञ्च-
 विधेय, वैश्व शास्त्रानुसार इन पांच पोपधियो का
 नच विदारीगन्धा, उचता एविपर्वी, निदिशिका चौर
 भुङ्गुध्याप्य ।

पञ्चवचि—बम्बई प्रदेशके मत्तारा जिनान्तक एक
 प्वाश्वानिवाच । मद्वादि पर्वतको जो शाखा महान-
 चामिन्धके बाई चौर विस्तृत है नवी शाखाके ऊपर
 एक आश्वानिवाच बसा हुआ है । यह नसुप्रुष्टके
 ३३०० फुट ऊंचा है ।

पञ्चनन (स० श्लो०) नौजगचितोक्त पञ्चवच'हुय राशि,
 नौजगचितके चतुस्रार नच राशि त्रिमें पांच नच
 हो ।

पञ्चगवचन (स० त्रि०) पञ्चानां वचन इत्यम् । पञ्चवच'ज्ञा
 न्वित गवचनव्यामी ।

पञ्चनव्य (स० श्लो०) नौविचार गव्य पञ्चगुचित गर्ध ।
 नो सव्यन्तो पञ्च प्रकार इत्ये मायरे प्राड जोमे वासे
 पांच इत्ये—सूच, दशो, ची तावर चौर गुंमोसूच । पञ्च
 धवको मन्त्ररूच क शोचन करके सिना चारिये । मोद
 कादि भस्वप्रत्य पायसादि मोष्यरूच, मकटादि बान,
 श्या पासन सुपसूच चौर ककवा चपडरच करनेके
 जो पाप होता है, नच पञ्चनव्य वान करनेके जाता
 रहता है ।

“मक्ष्य भोज्यावहरणं यानशय्यासनस्य च ।

पद्ममूलफलानां च पञ्चगव्यं विशेषतः ॥”

(मनु ११।१६५)

पञ्चगव्यका परिमाण—दूध, घी और गोमूत्र एक एक पल, गोबर दो तोला और दही ३ तोला इन सबको मिलानेसे पञ्चगव्य तैयार होता है। गौतमीयतन्त्रमें इसका भाग इस प्रकार लिखा है—

“पलमात्रं दुग्धभागं गोमूत्रं तावदित्यते ।

सृतं च पलमात्रं स्यात् गोमयं तोलकत्रयम् ॥

दधि प्रसृतमात्रं स्यात् पञ्चगव्यमिदं स्मृतम् ।

अथवा पञ्चगव्यानां समानो भाग इत्येते ॥”

(गौतमीयतन्त्र)

फिर दूसरी जगह परिमाणका विषय इस प्रकार लिखा है—

गोशकृद्द्विगुणं मूत्रं पयः स्याच्च चतुर्गुणम् ।

घृतं तद्विगुणं प्रोक्तं पञ्चगव्ये तथा दधि ॥”

(गौतमीयतन्त्र)

जितना गोमय होगा, उसका दूना मूत्र, चौगुना दुग्ध तथा घृत और दधि इमका दूना होना चाहिये।

पञ्चगव्यपात्रफल—पञ्चगव्य द्वारा पवित्र होनेसे अन्न भेषका फल प्राप्त होता है। यह पञ्चगव्य परम भेष्य है। सोम्य सुहृत्तं पञ्चगव्य पान करनेसे यावज्जीवन पाप विनष्ट हाति है।

“पञ्चगव्येन पूतन्तु वाग्भिमेषफलं लभेत् ।

पव्यन्तु परम भेष्यं गङ्गादन्त्यत्र विद्यते ॥

सौम्ये सुहृत्तं संयुक्ते पञ्चगव्यन्तु यः पिबेत् ।

यावज्जीवकृतात् पापात् तत्तक्षणदेव मुच्यते ॥”

(ब्राह्मपुराण)

गरुडपुराणमें पञ्चगव्यके विषयमें और भी एक विशेषता देखी जाती है। पञ्चगव्य लेनेमें काञ्चनवर्णा गामोका दुग्ध, श्वेतवर्णा गामोका गोमय, ताम्रवर्णाका मूत्र, नीलवर्णाका घृत और कृष्णवर्णा गामोका दधि तथा उरुके साथ कुशोदक लेनेसे पञ्चगव्य बनता है। इसका परिमाण—गोमूत्र ८ माशा, गोमय ४ माशा, दुग्ध १२ माशा, दधि १८ माशा और घृत ५ माशा इन पाँचों द्रव्योंको मिलानेसे पञ्चगव्य बनता है।

“पयः काञ्चनवर्णायाः श्वेतवर्णायाश्च गोमयम् ।

गोमूत्रं ताम्रवर्णायाः नीलवर्णाभ्रं घृतं ॥

दधि स्यात् कृष्णवर्णाया दमोदकममापुतम् ।

गोमूत्रमावकाशयन्ती गोमयः चतुष्टयम् ॥

धीरस्य द्वादश प्रोक्ता दमस्तु दस उच्यते ।

घृतरस मापकाः पंच पञ्चगव्यं मज्जवद्दम् ॥”

(गारुडपु० प्रायश्चित्तप्र०)

हिमाद्रिके वनवृक्षमें पञ्चगव्यका विद्यत विवरण लिखा है। यह प्राय सभी पूजाओंमें होम और यज्ञमें व्यवहृत हुआ करता है। ताम्रबाव वा पलाशपत्रमें पञ्चगव्य मिला कर ‘भापोदित्ठा’ इत्यादि वैदिक मन्त्रमें पृत करके खान करना होता है। गायत्री द्वारा गोमूत्र, ‘गन्धहारिणि’ मन्त्रमें गोमय, ‘भाष्यायन्नेति’ मन्त्रमें दुग्ध, ‘दधिक्रावन्’ मन्त्रसे दधि, ‘सिञ्जोऽमाति’ मन्त्रसे घृत और ‘दिवस्येति’ मन्त्रसे कुशोदक योधन करके लेना होता है। पञ्चगव्यघृत (म० क्ली०) पकघृतोपधमेष्ट, आयुर्वेदके अनुसार बनाया हुआ एक घृत की अपरमार (सिरगी) और उन्मादमें दिया जाता है। यह घृत स्वल्प और हृदके भेदमें दो प्रकारका है।

स्वल्पपञ्चगव्यघृत—इसकी प्रसृत प्रणाली—गव्यघृत ५४ सेर, गोमयरस ५४ सेर, अन्नगव्यदधि ५४ सेर, गव्यदुग्ध ५४ सेर और गोमूत्र ५४ सेर, पाकार्थं जल १६ सेर। यह घृत एक दिनमें पाक करना होता है। इससे पान करनेसे अपरमार और ग्रहोन्माद जाता रहता है।

हृत्पञ्चगव्यघृत—प्रसृत प्रणाली—गव्यघृत ५४ सेर, कार्थकं लिये दशमूल, त्रिफला, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, कुटजकी छान्द, अपरुका मूल, नीलहृत्, कुटकी, डूबर की जड़, कुट, दुरालभा प्रत्येक २ पल, जल ६४ सेर, शोष १६ सेर; कल्कार्यं कञ्जिका, अकथन, त्रिकटु, निसोयकं जड़, क्षिप्पनका बीज, गणपिप्पली, शरहरका फल, मूर्धासूल, दन्तोमूल, चिरायता, चितामूल, श्यामानता, अनन्तमूल, रक्तरोडा, गन्धलण, नैनाफल प्रत्येक २ तोला; गोमयरस ५४ सेर, गोमूत्र ५५ सेर, गव्यदुग्ध ५४ सेर, अन्नगव्यदधि ५४ सेर। यथाविधान इस घृतकी पाक कर सेवन करनेसे अपरमार और ग्रहोन्माद दूर होता है। (म पञ्च १० ० अपरमारविचार, चक्रदत्त, चक्र चिकि० ३५ अ०)

पञ्चमो—ए वरुचि प्रदेयते यत्नात् एव धाम । यदा
१००१ ई० में राजेश्वरी मूर्तिमान्नी सुमनसिनामोको परास्त
किया जा । यदा एव सुन्दर मन्दिर है ।

२ ब्रह्मोपाधि यत्नात् एव भवत् । वरुचि यथा २०
२० १० ७ वीर श्याम ०२ १० ३० पू० संभव यत्
स्मित है ।

पञ्चमोत्त (स ० पु०) श्रीमहाभक्तके दयामन्त्रके पत्त-
गत पांच प्रतिष्ठ प्रकाश । इनके नाम ये हैं—वीरगोत्र,
भाषागोत्र, युगभक्तो भ्रमरगोत्र और मरिचोगोत्र ।

पञ्चगु (स ० वि०) पञ्चमिः शोभिः शोता विष्णुसमाप्तः
इह तस्य सुम् । योकारस्य इत्यम् । पञ्चमोदारा शोता ।
पञ्चगुत्त (स ० पु०) पञ्चगुत्तित सुम् यत्नात् । १
मन्त्र २००१, २००२, २००३ और २००४ ये पांच गुण । (पु०)
पञ्चगुत्ता यत्नात् २००१ । २ पुनो पुनोये पांच गुण है,
इसमें पुनोका पञ्चगुत्त नाम पडा है । १ पञ्च द्वारा
गुत्तित, तब जो पांचमि गुत्ता किया गया जो । ४ पञ्च-
प्रकार, पांच तरह ।

पञ्चगुत्त (स ० पु०) पञ्चानामिन्द्रियाणां वाचका गुम् यत्त
या पञ्चानां पराङ्मानां गायत्र यत्त १ पाचोदरान्
जिनमें पञ्चेन्द्रियका मोपन प्रधान माना गया है । २
ब्रह्मण, ब्रह्मण । ब्रह्मणके दो डाक दो वीर वीर मत्तक
विधि रहते हैं इन प्रकार तब पञ्चगुत्त कहते हैं ।

पञ्चगुत्तिका (स ० स्त्री०) स्तुत्या, यत्तवत्त ।

पञ्चगुत्तौत्त (स ० वि०) पञ्चदारा सत्य ।

पञ्चमोद (स ० पु०) ब्राह्मणोत्त एव विभाग । धार
पत्त कायब्रह्म, गौड, सिद्ध और लक्ष्म इत पांचयुक्ती
को भी धार पञ्चमोद विभाग कहित हुआ है । सुवर्षेय
के ब्राह्मण यत्तमें दो 'धादि मोद' बतलाते हैं । वेदिक
कृषिमें भरलानी-नोरकामी ब्राह्मणगण जो मारस्तक कह
जाते हैं । वे शास्त्रिक नारस्तक ब्राह्मण यत्तोपपत्तमें
कायब्रह्म गौड चादि यत्ताने बत गत । धीरे धीरे
बर्षा उनको मत्तान् बतलति कायब्रह्मकादि कहलाने
लगे । मारस्तक, कायब्रह्म चादि नाम देयवाको है ।
रत्नमालाके पञ्चाशिकाकेमें किया है—

“भाषना इत्था मोदा व वनोद्वारा इतिहाः ।”
“भाषना इत्था येव वरिष्ठुत्तितमत्तक ।
देवे देवविवाह एव विलापिता वती ।” (पदा० २१:१५)

पञ्चमोद वीर पञ्चमोदके ये दय प्रचारके ब्राह्मण
कथितसत्य है । वीके जो जिन देवमें बत गये वनेमें
कसी देवका पाचारक्यवहार यत्तमत्तक कर किया ।

पञ्चमोदके देवी ।

राजतरङ्गिणीमें पञ्चमोद नामक विस्तृत बतपदका
उल्लेख है । काश्मीरके राजा यदादिजने पञ्चमोदके
राजाको जोता था । हरिमियरचित कुलाचारकारिज-
में महाराज यदादिवर पञ्चमोदकादिव उदादिसे कथा
नित हुए हैं (१) । इसमें यत्तमान किया जाता है कि पञ्च
गौड नामक एक विस्तृत राज्य था । कूर्म वीर सिंह
युगधर्म निवा है, कि सूर्येय शोध यावत्तके पुत्र यत्त
ने गौडदेवमें यावत्तो मन्त्री बहाई (२) । रामचन्द्रको
पत्न्युके बाद जब यद्योया मन्त्री बनगुत्त जो गई, तब
इसने यावत्ती मन्त्रीमें लक्षका राजपाठ प्रतिष्ठित हुएपत्त ।
यत्तमान यद्योया प्रदेशका मोदका निवा तथा उनके
निवृत्तवर्ती कुल स्वानेको भी वर गौडदेव यत्तवित
जा ग । निवृत्त यत्तमें जितोपदेवमें निवा है, “यत्त गौड
विषय जोशाम्नी नाम मन्त्री ।” रितोपदेव-रत्तना-
कायमें प्रयागके पञ्चमत्त कुल जनपद गौडविषय कह-
जाते हैं । राहुकूटराज गोविन्द प्रभूतवर्षके ७३० शकमें
राकोर्य ताज्यायानने जाना जाता है, कि राहुकूटमद्योय
राजा कुम्बने यत्ताराको परास्त कर गौड पर पञ्चकार

- (१) विरचोचके कर्मेव वरुचि ईका ।
- (२) “भावस्तेभ्य महादेवा व दक्षस्य वरुचिभरत्त ।
निर्मिता येव ध्यवतिर्गौडदेवे शिरोत्तमाः ।”
(कुर्म वीर सिंहपुराण)

७ रामायण इत्तारायत्त १००० बर्ष ।
१० कर्मेववर्षके ब्राह्मणकृषिमें गौड नामक एक
कथि मन्त्री नाम है । यदा इषी या एषी कथलकीका
कथा हुआ एव पूर्व मन्दिर है । Oeningham's
Arch. Surv. B. Vol. XI 70.

‡ शक्येय कोड उद्ये मन्त्री मन्त्री कोशक एवम् और कोशक
। एवम् कथ्यती है । वरुचिभरुचि १३ कोड वरुचिभरुचि
कियारे कथरिचन है । Arch. Surv of India by A
Fabrur Vol. I. 140

जमाया । फिर ७५० मरुके लक्ष्मीर्ण एक दृमरि ताम्र-
शासनमें क्षमराजको अवन्तिपति रत्ननाया है । इसमें
प्रिया नरचन्द्रमूर्तिके सम्भोगवाच्यमें मालधराव्य उदया-
दित्य भो गौड़ेश उपाधिसे भूषित हुए हैं । इससे यह
जाना जाता है, कि मानवराज्यके कृतने अंग एक समय
गोड़ देग कहलाते थे । सुमलमान पतिहासिकोंने
खान्देश और उहोनाके मध्यवर्ती एक विस्तोर्ण विभाग-
का गोण्डवाना नामसे उल्लेख किया है । इस प्रदेशका
अधिक्रांश पृथ्वीराज रायगामे गोड़ नामसे अभिहित हुआ
है । राष्ट्रकूटराज गोविन्ददेवके ७२० शकमें लक्ष्मीर्ण ताम्र-
शासनमें इस गोड़देशका सर्वप्रथम उल्लेख देखनेमें आता
है । विलफोर्ड साहब इस स्थानकी 'पश्चिम गोड़' नामसे
उल्लेख कर गए हैं । पुरावित् कनिंङ्गम् साहबके मत-
से वितुल, छिन्दवाडा, शिवना और मण्डना इन चार
जिल्लाकी लै कर यह गोड़देश संगठित हुआ है ।

ऊपरमें जो सब प्रमाण दिते गये हैं उनसे यह स्थिर
किया जाता है कि विन्ध्यगिरिके उत्तर कुर्नेलमें लै
कर बङ्गदेशकी पूर्वी सीमा तकके विभिन्न स्थान गोड़
नामसे प्रसिद्ध थे । मारम्बत, मान्यकुल, मिथिला, गोड़
और लखन यह पाँच जनपद लै पूर्वोक्त किमो ल किमा
एक गौड़में शामिल थे अथवा उनके अंग समके जाते थे ।
इस कारण पञ्चगोड़ कहनेसे सत्त पञ्चजनपदवासो ब्राह्मण
विशेषका बोध होता था । इस प्रकार एक समय समय
आर्यावर्तके अधोश्वरका बोध करनेके लिये एक पंचगौड़
श्वर शब्दका व्यवहार होता था । साधवाचार्यके चण्डी-
संगलमें सन्नाट् प्रकवर पंचगौड़ेश्वर नामसे अभिहित
हुए हैं । पहले ही लिखा जा चुका है कि महाराज
आदिशूर्ने भो पंचगौड़ेश्वरकी उपाधि पादे थी । पहले
की आर्यावर्तके सन्नाट् होते थे, वे ही इस अर्द्धजनक
रुपात्रप्रद्वानमें अपनेको सम्मानित समझते थे । बहुपर-
वर्त्तीकान्तमें भौ विद्यापतिके पृथपोपक मिथिलाराज
शिवसिंह, कृतवामके आश्रयदर्ता गौहाधिप और
सुलतान हुसेन साह आदि इस समुच्च उपाधिसे भूषित
रहे ।

पञ्चग्रामो (स० श्लो०) पंचानां ग्रामाणां समाहारः,
स्त्रियां ङीष् । पंचग्रामके समुच्च ।

“पञ्चमीनि उदय माप्सु पद वः यत्र मन्त्रिणि ।
पंचग्रामो वृष्टिः प्रोभाद्दशमाम्प्रथवा पुनः ॥”

(भाट० २।२।७)

पञ्चचक्र (स० श्लो०) पञ्चविधं चक्रं । तन्वगाम्प्यानुसार
पाँच प्रकारके चक्र जिनके नाम ये हैं—राजचक्र, महा-
चक्र, देवचक्र, शीरषण्ण और पशुचक्र । जो शीरभाषमें
यजन करते हैं, उन्हें पंचचक्रमें पूजा करनी चाहिए ।
“चक्रं पंचविधं प्रोक्तं तत्र शक्तिं प्रपूजयेत् ।
राजचक्रं महाचक्रं देवचक्रं शृतीषण्णम् ॥
शीरचक्रं चतुर्धनं पशुचक्रं पंचमम् ।
पंचचक्रे वनेद्विषो शीरश्च कुलसुन्दरि ॥”

(प्राणतोषिणी)

पञ्चत्वारिंशत् (स० त्रि०) पंचत्वारिंशत् संध्याका
पूरण, पैतालीमथा ।

पञ्चत्वारिंशत् (स० स्त्री०) पैतानोस ।

पञ्चवामर (स० श्लो०) कन्दो वगेव, कन्दका नाम ।
इसके प्रत्येक चरण, १६ अक्षर रहते हैं जिनमेंसे २२,
६या, ६टा, ६वा, १०वा, १२वां और १६वां अक्षर गुरु
तथा श्रेय अक्षर लघु होते हैं ।

पञ्चचित्तम् (स० पु०) पंच चित्तयः प्रस्तारा यस्मिन् ।
अग्निभेद ।

पञ्चचार (स० पु०) पंच चौभागि यय्य । १ मञ्जुवीका
नामान्तर । २ मञ्जुबोध ।

पञ्चचटा (स० स्त्री०) पंचमख्यकाः चूडा शिरोरत्नानि
यस्याः । अम्बरोविशेष ।

“उर्वशी मेनका रम्भा पंचचूडा निडोतमा ॥”

(रामा० ६।२।७१)

पञ्चकल—एक पवित्र क्षेत्र और ब्राह्मणोंका पवित्र आश्रम ।
रामचन्द्रको रावणकी मार कर जब अयोध्या लौटे, तब
उन्होंने राक्षसहत्याजनित पापक्षयके लिए यहाँके इत्या-
हरण सगोवरके किनारे कुछ काल तक वास किया था ।

पञ्चजटा (स० स्त्री०) पंचमूल ।

पञ्चजन (स० पु०) पञ्चभिभू तैर्जन्यतेसो पंच-जन
कर्मणि घञ्, (जनिष्योश्च । पा ७।१।३५) इति न
वृद्धिः । १ पुरुष । पंचभूत द्वारा पुरुष उत्पन्न होते हैं,
इसीके पंचजन कहनेसे पुरुषका बोध होता है ।

वदन्नाथकविद्या शिवरात्रौ भोजनकालिना ।

५५ अथ वज्रनाक्षत्रेण पुरे तस्मिन्निर्दिष्टं ना ३' (भास्कर० १)

२ मनुष्यमन्त्रस्यो प्राचादि मनुष्य, शीत शौर शरीरसि

मन्त्रस्य रत्ननिर्दिष्टं प्राचं प्रादि । १ मनुष्यतुल्य देवादि,

गन्धर्व, पितारदेव पक्षुर शौर राक्षस । ३ मनुष्यमिदं

त्र प्राचादि, प्राचात्र, अवित्र, अशुद्ध, शूद्र शौर निपाट । ५

८ रत्नविशेष । वज्राहको पत्नी कृतिषि गर्भसि दमना अश्व

वृषा वा । ६ एक पक्षुर शौ पातामसि वदता वा । यह

शोच्यव्यवच्छेदे शुद्ध च दीपनाचार्य च पुत्रको पुत्रा सि

मया वा । ७ अश्ववन्त् इमे मार कार शुद्धे पुत्रको वृद्धा

वाये वे । इतो पक्षुरशौ पक्षिसे पक्षत्रय गृह्य वना या

त्रिषि मगवान् अश्ववन्त् वनाया कारते यि । ७ राजा

मगशे एक पुत्रका नाम । हरिष्यशैमि शिवा के कि

मशारात्र चकरके तपोवन्मन्त्रवा यो मरियो शौ, वृद्धो

मरियोका नाम शिबिनो शौर कोटोका मरतो वा । शि

ब्रमगा विद्वन् राजा शौर परिवर्तनसिद्धी दुष्टिता यौ ।

शौर् अविमि दोनौ मरिविषयो पर वनक शो कर अर्क पर

मरिनेको वृद्धा । इस पर शिबिनोनि एक व मगश पुत्रक

निये शौर मरतोनि प्रभुतरीय यानो पत्निक पुत्रोश्च निमि

प्रोप ना को । शोच 'तपशु वृद्ध चर वन निव । तदनु

मगर शैमिनोके मगरसे शौरमसे चक्रमन्त्रा नामक एक

पुत्र वृषा । यद्यो चक्रमन्त्रा मरिष्यसि व चक्रम नामसे पसिठ

द्वय । मरतोके गर्भसे बाठ इमार पुत्र उत्पन्न द्वय । इन

मथ पुत्रसि व चक्रम शौ राक्षा वसि । व चक्रमके पुत्र यद्य

मान् शौर च यमान्के पुत्र दिक्षोप द्वय । (हरिष्य १५५०)

८ प्रजापतिमिदं, एक प्रजापतिका नाम । ८ पांच या पांच

प्रकारके कर्मीका समूह ।

पञ्चजनकप (न० ७०) पापरोशौ म ज्ञामेद ।

पञ्चजनी (य० ६३) प चानां वनानां ममाचारं ततो

डोप । १ पांच मनुष्योंको मन्त्रनी, व चायत । २ विद्व

व्यवस्था ।

पञ्चजनी (न० ५०) प चसु अशुभु स्यादतः दिक् -स य्यो

न प्राचासिनि समाना व चक्रमे दित व चक्रम न १५५

वनपुत्रवन्नाथसिद्धि का । वा ३१(१५) १ मरुत् भ ३ १-३८

करनिवाला । २ मरु, अविमिता, अश्विन वनामेकावा । ३

एक मनुष्योंका नावक वा धनु । (त्रि०) ७ व चक्रमि-

त्रयस्योप ।

पञ्चत्रय (न० ५०) एक प्रमिद गृह त्रिषि शौचत्रय वनाया

रते यि । यह पञ्चजन राक्षसकी वृद्धोका वना-

वृषा वा ।

पञ्चजारसमुद्र (न० ५०) पञ्चदशोत्त गुह्योपधमिद ।

यद्य सुनिश्चारीगमे जितकर है ।

पञ्चज्ञान (न० ५०) १ प चानां पदार्थानां ज्ञान यत्र ।

२ बुद्ध । ३ पाद्यपदार्थानामिन्द्र ।

पञ्चत (न० ५०) १ पपरिमात्रस्य प चतु ति । प चस वया

वृत्त वग ।

पञ्चत (न० ७०) प चानां तस्यां समाहारः । प चतत्र

वा ममाहार ।

पञ्चतल (न० ७०) प चानां तस्यां समाहारः । १

प तभूत पुत्रो जन तत्र, बाहु शौर प्राचाय । २

प चमकार, मय मीम मन्त्र, सुद्रा शौर मेषुन ।

मय मांठ तथा मन्त्र वृत्ता मेषुमेव च ।

प चतस्रसि चैकि मितान्तुषिदेषे ३

मरार चक हैरि देवनायामि बुद्धंयम् ।

(वैश्वानर १५)

मद्यादि च चमकार निर्वाचनसिद्धि व्याख्या है । वद्य

प चमकार शिवतापात्र भी दुर्लभ है । प चतस्रसि वीरन

मनुष्योंकी कल्पिसे मियि मन्त्रो होतो । १ मूचमना ६७० ।

"५२ चतस्रसि वीरानां क्वो विद्विरे वासत ।"

(वज्रशा)

नेत्रश्रीरि निचे सुवत्सल मन्त्रतल, मनस्यतल दिन

तत्र शौर ध्यानतल वद्यो प चतस्र है ।

"उत्सवज्ञानमिद्र शोच वैश्वे मनु वसत ।

उत्सवसे मन्त्रतल मनस्यतल वृत्तसि ।

वैश्वतल मन्त्रतल वचनास वापके ।

(त्रिषिचतस्र १२५०)

वैश्वकीके निचे यद्यो प चतस्रज्ञान तस्रज्ञान है ।

यद्य प चतस्रज्ञान निष्कल्पित प्रचारसे प्राप्त किया जाता

है । पञ्चमे शुद्धतल गृहमन्त्र प्रदान करे इससे मरिने

वर्णिकान्द्रु सिरेवियत प्रज्ञानि तद्योम होगा वाद इन

मन्त्रप्रमाणसे इत्येवताका मारि उपपन्न होता है । इह-

देव शि मना मन्त्र वर्णमय है । इन मन्त्रवर्णसे ईश्वर

का उपपन्न होवे निश्चित है, पाँच मन्त्रो मन्त्र तत्र मन्त्रसे

‘मं स्वयं देवतास्वरूप ह’ इत्यादि रूपमें चिन्ता करे । तदनन्तर उस मन्त्रमें ध्यान करे । मन्त्रध्यान करते करते सब प्रकारकी सिद्धियाँ लाभ होती हैं । यह पंचतत्त्व सिद्धि तब तक मनुष्य विष्णुरूप हो जाती है और कटापि यमसन्दिग्ध नहीं जाती ।

पंचभूत पंचतत्त्व है । तन्त्रमें इस प्रकार लिखा है— पञ्चतत्त्वका उदय स्थिर करके शान्तिकादि पट्टकर्म करने होते हैं । शान्तिकार्यमें जलतत्त्व, वशीकरणमें वज्र-तत्त्व, स्तम्भनमें पृथ्वीतत्त्व, विह्वेदमें आकाशतत्त्व, उच्चा-टनमें वायुतत्त्व और मारणमें वज्रितत्त्व प्रशस्त है । पंच-तत्त्वमें उदय-निर्णय करके शान्तिकादि कार्य करने होते हैं, इसीसे पंचतत्त्वोदयका विषय अति महत्त्वमें लिखा गया । भूमितत्त्वका उदय होनेसे दोनों नासा-पुटमें दण्डाकारमें श्वास निकलता है, जलतत्त्व और अग्नि-तत्त्वके उदयकालमें नासिकाके ऊर्ध्वभाग ही कर श्वास प्रवाहित होता है । वायुतत्त्व उदयके समय वक्रभाव-में तथा आकाशतत्त्वके उदय होनेसे नासिकाके अधभाग ही कर श्वास निकलता करता है । इन सब श्वास निर्ग-मन द्वारा किम ममग किम तत्त्वका उदय होता है उसका स्थिर करना होगा । पृथ्वा-तत्त्वके उदयमें स्तम्भन और वशीकरण, वज्रतत्त्वके उदयमें शान्ति और पुष्टिकर्म, वायुतत्त्वके उदयमें मारणादि कर्म तथा आकाशतत्त्व-के उदयके समय विषादि नाशकार्य प्रशस्त है ।

पञ्चतत्त्वक मण्डल—जिम तत्त्वके उदयमें जो सब कार्य कहे गये हैं, उस तत्त्वका मण्डल निर्माण कर कार्य-साधन करना होता है । आकाशतत्त्वमें ६ विन्दुयुक्त मण्डल, वायुतत्त्वमें स्वस्तिशोषित त्रिकोणाकार मण्डल, अग्नि-तत्त्वमें अर्धचन्द्राकृति, जलतत्त्वमें पद्माकार और पृथ्वीतत्त्वमें मक्ष्म चतुर्भुज मण्डल करके कार्य करना होता है । (तन्त्रधार) तत्त्व देखो ।

पञ्चतन्त्र (म० को०) नीतिशास्त्र विशेष, विष्णुगर्भ-विरचित एक संस्कृत ग्रन्थ । राजा सुदर्शनके पुत्रको धर्म और नीतिविषयमें ज्ञान देनेके लिए हो उन्हीं पर्वी शताब्दीमें यह ग्रन्थ बनाया । इन्हीं शताब्दीके प्रथम भागमें नौशिरवानके राजत्वक समय यह ग्रन्थ पहिली भाषामें और पीछे पर्वी शताब्दीके मध्य भागमें अबदुल्लाविन

सुस्ताफा कर्णिक अरबी भाषामें अनुवादित हुआ । पीछे यह उर्दूमें तथा तुर्कभाषामें ‘रमायुन् नाता’ नामसे भाषान्तरित हुआ । इसके बाद इसका निम्न निम्न कर्णिक श्लोक भाषामें और पीछे हिन्दू, आरामिइक, इटाली स्पेन और जर्मनभाषामें अनुवाद किया गया । १३वीं शताब्दीको हिन्दूके अनुकरणमें कपूराराजाके कहने-में यह ग्रन्थ लैटिन भाषामें अनुवादित हुआ था । १६वीं शताब्दीको अरबों नामें ; पीछे १६४४ और १७०८ ई०को फरामो भाषामें तथा इनसे धीरे धीरे यूरोपकी समस्त वर्तमान भाषामें यह ग्रन्थ अनुवादित हो कर ‘पिस्स-का गल्प’ (Pissava's fables) नामसे प्रसिद्ध हुआ । तामिल और कर्णाटो पञ्चति दक्षिणात्य भाषाओंमें भी इसका अनुवाद देखा जाता है । विभिन्न स्थानोंसे प्राप्त पञ्चतन्त्र ग्रन्थका कुछ पाठान्तर देखनेमें आता है । संस्कृत और कर्णाटोमें जो पंचतन्त्र लिखा गया है उसमें पढ़नेसे मालूम होता है कि गङ्गानदीके किनारे पाटलीपुत्र नगरमें राजभवन था, किन्तु ग्रन्थ किसी किसी ग्रन्थमें दक्षिणात्यके महिलारोप्य नगरमें इस राजभवनकी कथा लिखी है । इसीसे धर्म-ग्रन्थ वादल छूट कर और जोई भी ग्रन्थ पंचतन्त्रको अपेक्षा जगत्में विस्तृत और ख्यातिनाभ न कर सका ।

पञ्चतन्त्रमात्र (म० को०) पंचगुणितं शब्दादिभूत सूक्ष्मा-त्मकं तन्त्रमात्रम् । सूक्ष्मपंच महाभूत, शब्द स्पर्श, रूप, रस और गन्ध तन्त्रमात्र ही पंचतन्त्रमात्र है । इसी पंचतन्त्रमात्र-से पञ्चमहाभूतकी उत्पत्ति हुई है । सांख्यके मतमें— प्रकृतिसे महत् (बुद्धि), महत्से अहङ्कार, अहङ्कारसे एका-दश इन्द्रिय और पंचतन्त्रमात्रकी उत्पत्ति हुई है । यह पंचतन्त्रमात्र प्रकृतिविकृति अर्थात् प्रकृतिकी विकृति है । शब्दतन्त्रमात्रसे आकाश है, इसी कारण आकाशके गुण शब्द है, शब्द और स्पर्श तन्त्रमात्रसे वायु है, इसीसे वायु-के दो गुण हैं, शब्द और स्पर्श, शब्द, स्पर्श और रूप-तन्त्रमात्र तेज है, इसीसे तेजके तीन गुण माने गये हैं, शब्द, स्पर्श और रूप, शब्द, स्पर्श, रूप और रस तन्त्रमात्रसे जल-की उत्पत्ति हुई है, इस कारण जलमें ४ गुण हैं, यथा— शब्द, स्पर्श, रूप और रस । गन्धतन्त्रमात्र पृथिवी है, इसी-से पृथ्वीके पाँच गुण हैं, शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध ।

इस प्रकार पञ्चतपमात्रमें पञ्चसहस्रभूतकी उत्पत्ति हुई । फिर जब पञ्चसहस्रभूत लोग हो आता है तब पाषाण यन्त्रतन्मात्रमें, बाहु स्वयंत्तन्मात्रमें, तैल यन्त्रतन्मात्रमें, जल यन्त्रतन्मात्रमें और दुग्धा यन्त्रतन्मात्रमें तीन भी आती है । इसी प्रकार सभों भूतोंकी सृष्टि और जब दुग्धा बनता है, जब तब प्रकृतिही सृष्टि रहती, तब तब इसी प्रकार उत्पत्ति और जल दुग्धा करेगा । जब प्रलयकाल उपकृत होगा तब पञ्चतन्मात्र मुक्तिमें और पुनः प्रकृत में लोग हो जायगी । (शिवतन्त्रप्रबो.)

पञ्चतप (स० पु०) पञ्चमिस्तीर्थस्त्रिभिः पश्चिमागुटव सुवर्णतपसि तपःपञ्च । यद् अथ पश्चिमागुटव तपस्या करती है ।

पञ्चतप (स० त्रि०) पञ्चगण्डिभिः पञ्चमिस्तीर्थप्रदत्तं स्तपसि यं पञ्च तपःपञ्चम् । पश्चिमागुटव और मुख्य पञ्च पञ्चसहस्र तपसी । चारों ओर पश्चिम प्रवृत्तित कर के पीछेबाहमें भी सुवर्ण मंदिरमें बैठ कर तपस्या करती है तन्वीकी पञ्चतपः कहती है ।

"तेजस्विभ्यो तेजस्वी वर्णाग्नये पञ्चते ।

पञ्चतपः पञ्चतपःपञ्चतपो मातृदेवताम् ॥"

(सिद्धग० श्रृ०)

पञ्चतपा (त्रि० पु०) पञ्चतपः देवी । पञ्चतप (स० त्रि०) पञ्च पञ्चयथा वस्य पञ्चयवे तपय । पञ्चपञ्च, पञ्चस ह्यः पञ्चका पञ्चते । पञ्चतप (स० पु०) पञ्चसहस्र मन्दार, पश्चिमागुट, चक्रान, अक्षयज्य और हरिचन्द्रन ।

पञ्चतः (स० त्रि०) पञ्चानां भूतानां भावाः तन्त्र तपः । मरुत, मोन, विनाय । मरुत कोमिने पञ्चसूत अक्षयमें पञ्च स्थान करता है, इसीसे पञ्चता यन्त्रमें आहुतिया भीष होता है ।

"इह त्वत्पत्न्यै तपःपञ्चतपः मानसा दे ।

मातर इवपीन पञ्चतपः पञ्चतपः ॥"

(जागवत ५५५२)

२ पञ्चमास, पञ्चका भावः ।

"चान्ते इदे इदे वासो मासि क्वचित् पञ्चतपः ॥"

(अथ० ५१३१)

पञ्चतान (स० पु०) पञ्चतानकाया पञ्च मित् । इह मेट्मं पञ्चते

तुल्य चिर एक, चिर युगात् पौर चक्रमं शून्य होता है । पञ्चतानिखर (स० पु०) यद्वा ज्ञातिका पञ्च राग ।

पञ्चतिल (स० त्रि०) पञ्चसुतित तिल । पञ्चविध तिल इत्य, पांच सड़ूई सोपविषोंका समूह—निषोय अथवा कारी, सेंड, कुट और चिरायता । पञ्चतिलका खाया खर में दिया जाता है । मातृप्रक्राममें पञ्चतिल पी है—नीमको मड़को क्षाम, परबनकी अड़ पड़ूसा, कण्डकारि और गिलोय । यह पञ्चतिल अथवा धनिरित्त विषयों और कुछ पादि रक्त दोषके रोगों पर भी पनता है ।

पञ्चतिलसूत (स० त्रि०) सूतीवपभेदः । प्रस्तुत प्रचाना—सूत ५३ घेर; क्षाबाहं नीमको क्षाम, परबनको अड़ कण्डकारि, गुल च, पड़ूमेको क्षाम, प्रबेक १० पञ्च; पाषाणं वल ६५ घेर, मिय १६ घेर; अक्षयज्य मिश्रित त्रिकला ५१ घेर । पीके यवानियम सूत पाक करके शिवन करनेसे कुछ, सुष्टतप और ८० प्रकारकी शातन स्याधि निरुद्ध होता है । (वेदवरा० उष्योगारि०)

पञ्चतिलसूतगुणुत्तु (स० पु०) पीपमभेदः । प्रस्तुत प्रचाना—सूत ५३ घेर; क्षाबाहं नीमको क्षाम, गुल च, पड़ूमेकी क्षाम, परबनको पत्तिया, कण्डकारो प्रबेक १० पञ्च । शयपाईनोवद गुमा ल ५ पञ्च; पाषाणं वल ६५ घेर, मिय ८ मी, काड़ेकी क्षाम कर जब यह तप रहे तसो समय तममें पीठमोका गुणुत्तु मिखा दे । बाद पीमें हम क्षायं बनकी पाक करना होगा । अक्षयज्य पञ्चमन, मिड्ड, देवदाह, मन्त्रपिप्यको, यम चार साचिधार, सेंड, हर्षी, सौक, चर्च कुट, ज्योति बतते, मिर्च, इन्द्रयव, बीरा, बितामूल, कुटको, मितावा, बच पिपासामूल, मांज्जठा, पत्तीस, मिक्कला, बलघबाना प्रबेक ५ ताका । यवानियम सूतपाक करके शिवन करनेसे कुछ भाङ्गात्रय, भवन्दर, गण्डमाका सुवर्ण, मिड पादि रोग जाते रहती है । (वेदवरा० उष्योगारि०)

पञ्चतीर्थ (स० त्रि०) पञ्चानां तीर्थानां समाहारः । तीर्थ-पञ्च । यह पञ्चतीर्थ क्षाम क्षाममें भिन्न प्रकारका है । बघा—आयोस्वित पञ्चतीर्थ ।

"इतन्वापीपुत्रसूत पञ्चतेतं ततोऽपर्वदेव ।

ताःकेच ततोऽपर्वदेव महाकाशेरेत तप ।

ततः पुनर्देवद्वयमित्येषा पञ्चतीर्थिका ॥"

(कापी० १००३०)

ज्ञानवाणी, नन्दिकेश, तारकेश, महाकालेश्वर और दण्डणालि यही पंचतीर्थ हैं। पुरुषोत्तम स्थानमें माकण्डेश्वर, कृष्ण, रोहिणीय, नजामसुद्र और इन्द्रयुक्त्र मरोवर यही पंचतीर्थ हैं। पुरुषोत्तममें पंचतीर्थ करनेसे पुनर्जन्म नहीं होता।

“मार्कण्डेये वटे कृष्णे रोहिण्ये महोदधी ।

इन्द्रयुक्त्रस्यः स्नात्वा पुनर्जन्म न विद्यते ॥” (तीर्थतरङ्ग)

पृथ्वी पर जितने तीर्थ हैं उनमें स्नान करनेसे जो पुण्य लिखा है, एक एक पंचतीर्थमें स्नान करनेसे वही पुण्य प्राप्त होता है।

“पृथिव्यां यानि तीर्थानि सर्वाण्येवानिपेचनात् ।

तत्पञ्चतीर्थस्नानेन समं नास्त्यत्र सदायः ॥”

(बाराहपुराण)

एकादशीमें विश्वान्ति, द्वादशीमें शौकर, त्रयोदशीमें नैमिष, चतुर्दशीमें प्रयाग तथा कार्तिकमासमें पुष्कर तीर्थमें स्नान करनेसे अक्षय फल प्राप्त होता है।

पञ्चतण्ड (स० श्लो०) कुश, काश, शर, दर्भ और इक्षु यही पञ्चतण्ड ।

“कुशः काशः शरो दर्भ इक्षु इवैव तृणोद्भवम् ।

पञ्चतण्डमिदं ह्येवं तण्डजं पञ्चमूलकम् ॥”

(परिभाषाप्र०)

भावप्रकाशकी मतसे पञ्चतण्ड यह है—शालि, इक्षु, कुश, काश और शर ।

पञ्चत्रिंश (स० त्रि०) ३५ संख्याका पूरण, पैंतौसवां ।

पञ्चत्रिंशत् (स० त्रि०) ३५, पैंतौस ।

पञ्चत्रिंशति (स० स्त्री०) ३५की संख्या ।

पञ्चत्व (स० श्लो०) पंचानां नित्यादि भूतानां भावः ।

१ मरण, शरीर संचटित करनेवाले पांचों भूतोंका अलग अलग अवस्थान । २ पंचका भाव, पाचका भाव ।

पञ्चथ (स० त्रि०) पंचानां पूरणः, (यद् च छन्दसि । पा

५।२।५०) इति वेदे घट्ट । पंचसंख्याका पूरण, पांचवां ।

पञ्चथू (स० पु०) कौकिल, कौयल ।

पञ्चदश (स० पु०) देशभेद, एक देशका नाम ।

पञ्चदश (स० त्रि०) पंचदशानां पूरणः, पूरणे घट्ट, पंचा-

धिका दश यत्र वा । १ पंचदश संख्याका पूरण, पन्द्र-

हवां । (पु०) २ पन्द्रहकी संख्या । ३ तिथि ।

पञ्चदशकचम् (स० पञ्च०) पंचः पञ्चदश । पंचः १० वार, पन्द्रह वार ।

पञ्चदशधा (स० षष्ठी०) पंचदश प्रकारे धात्वात् । पंचदश प्रकार, पन्द्रह तरहका ।

पञ्चदशन् (स० त्रि०) पंचाधिका दशः पंचाधिक दशम षया, पन्द्रह ।

पञ्चदशा (स० पु०) पंचदश-पञ्चदशः १५ दिन ।

पञ्चदशाधिक (स० त्रि०) पंचदश दिन मध्य अमभेद १४, १५ दिनमें होनेवाला व्रत ।

पञ्चदशिन (स० त्रि०) पंचदश परिमाणस्य परिमाणार्थं णिनि । पंचदश परिमाणयुक्त, पन्द्रहवां ।

पञ्चदशो (स० स्त्री०) पंचदशानां पूरणो-उट् ष्विगं डीप । १ पूर्णमा, पूर्णमासो । २ मावस्था । ३ वेदान्त-का एक प्रसिद्ध ग्रन्थ ।

पञ्चदोष (स० त्रि०) पंचसु भवयंत्रेषु दोषः शरीरस्य स्मृतिशास्त्रोक्तलक्षणपंचम्यलं । शरीर पंचावयव-लक्षणविशेष । शरीरके पांच स्थान जिनके दोष होते हैं, वे सूक्ष्मज्ञानाक्रान्ति हैं ।

“वाहू नेत्रद्वयं पुण्ड्रं तु नाभे तयं च च ।

स्तनयोः स्तरञ्चैव पञ्चवहीपैः प्रवस्यते ॥” (सामुद्रिक)

वाहू, नेत्र, कुक्षि, नाभ और वक्ष दोष होनेसे शुभ जनक समझा जाता है ।

पञ्चदेव (स० पु०) पञ्चदेवता देवो ।

पञ्चदेवता (स० स्त्री०) पंचदेवता; संज्ञात्वात् कर्म-धारयः । पांच प्रधान देवता जिनको उपासना आज कल हिन्दुधर्ममें प्रचलित है—शिव, गणेश, देवी, रुद्र और केशव । सभी पूजामें इस पंचदेवताको पूजा करने होती है । पंचदेवताको पूजा क्रिये बिना अन्य किसी देवताको पूजा नहीं करनी चाहिए ।

“आदित्यं गणनाथञ्च देवीं रुद्रञ्च केशवम् ।

पञ्चदेवतामित्युक्तं सर्वकर्मसु पूजयेत् ॥” (आहिकृतस्य)

सम देवताधर्ममें वद्यपि तीन वर्गिक हैं पर सबका ध्यान भोग पूजन पौराणिक तथा तान्त्रिकपद्धतिके अनुसार होता है । इन देवताधर्मोंमें प्रत्येकके अनेक विग्रह हैं जिनके अनुसार अनेक नाम रूपोंसे उपासना होती है । कुछ लोग तो पांचों देवताओंकी उपासना समान

भावसे करती है और कुछ लोग किसी विधिप मध्यस्थसे
पलागत हो कर इसी विधिप देवताकी उपासना करते
हैं। बिन्दुके उपासक वैष्णव, शिवके उपासक शैव,
मूलके रूप मन्त्र और और मन्त्रपरिचर उपासक मायपद
कहलाते हैं।

पञ्चप्राविड़—इतिहासके अन्तमें पाँच विभिन्न जगत् ।
राजा शक्तिशुद्धि राजलक्षणमें उक्त पञ्च उपासक
(८४-५३ मन्त्र) दक्षिण भारतमें विधिप प्रसिद्ध हो
गये हैं। पार्श्वनाथके जिन प्रकार एक समय 'पञ्चोदर
नामक एक विभिन्नब्राह्मणमन्त्र नामक पञ्च या उसी
प्रकार लक्ष्मणसे प्राप्तपञ्च भी पञ्चप्राविड़ नामक
एक स्वतन्त्रमन्त्रमें गठित हुए। विष्णुविधि दक्षिण
भारतमें इतिहास, पञ्च, कर्कट महागङ्गा और गुर्जर
नामक पञ्च जगत् पञ्चप्राविड़के अन्तमें उपासके
रूप भोजन पर पञ्च कहे हैं। पञ्चपुराणमें लिखा है—
'कर्कटपर तैलना गुर्जर गङ्गाधिया ।

आम्रवृक्ष हाथेका पञ्च दिग्दर्शनकारिणः ॥'

दक्षिणादि पाँच उपासक और उनमें दक्षिणादि
मन्त्र पञ्चान्त विष्णु पञ्च आलोचने शोभास्वात मानी गये
हैं। इन पाँच मन्त्रों का माया नामिक विष्णु, कर्कट
महागङ्गा और गुर्जरतोके मोदसे उक्त है। पञ्चपुराण
शक्तिशुद्धि 'पञ्चमिनाधिपति उपासिसे विमुक्ति मे ।
पञ्च (स० पञ्च०) पञ्चप्रा (संवत्ता विधानका पा
'प्रशुद्ध) पञ्चप्रा ।

पञ्चप्रा—कडोराधारी मन्त्रक तर्कसम्यदाय पर
मार्गमात्रके लक्ष्मि शरीरमें उक्त है कर चर्मलया
करना जो इनका प्रधानकारण है। इनमेंसे कोई कोई
अपने शरीरके चर्ममें तमस शीत आग्निमें धाम बना कर
तपस्या और होम करते तथा अतिव्रत कृपादि भोग
दिया करते हैं। इनका पञ्चप्रा नाम पञ्चमेका यज्ञ
कारण है। इनमेंसे कुछ मातृ देवि हैं जो चारों ओर
बोलावो हुने पञ्चदिग्गज कर उनमें बौद्धमें बैठते और
अपदि करते हैं।

पञ्च (स० त्रि०) पञ्च पञ्च । १ कर्कटविशेष, पाँच ।

पञ्चपञ्चमन्त्र—पञ्चप्रा गिवाभ्य इन्द्रिय मन्त्र
ब्रह्मवि, महापद प. महाभूत, महाकाय, महासक, पुण्य

मन्त्र पाद पाद, वग, इन्द्रिय, वाय । २ पञ्च
संख्यासुक्त, विष्णुके पाँचप्रा पदना हो ।

पञ्चप्रा (स० पु०) पञ्च मन्त्रा मन्त्र १ मन्त्री कायो ।
२ मन्त्र उक्त । ३ व्याप पाद । पिन पञ्च जन्मके
पञ्च मन्त्र होती हैं लक्ष्मीके पञ्चमन्त्र कहते हैं । अतः
पञ्चमन्त्र देवि हैं जिनका नाम मन्त्रोदय माना गया है ।
"मन्त्रोदय मन्त्रा कर्कट शूर्पभक्षकपद ॥" (मन्त्रि)
मन्त्र, मन्त्रको गोधा, खड़ी और मूल ये पञ्च
मन्त्र हैं ।

"मन्त्राः पञ्चमन्त्राः सेवतोपञ्चमन्त्रमन्त्राः ।

मन्त्रपद मन्त्रोदयके सिद्धपञ्चमन्त्रोदय ॥"

(भावार्थ ३१०५)

शिव, शोभा, कर्कट, पञ्चक और मन्त्र इन पञ्च
मन्त्रोंका नाम व्याख्या का उक्तता है ।

पञ्चप्रा (स० पु०) पञ्च पञ्च मन्त्रा मन्त्रा कर्कट उपासके
उक्त । १ पञ्चमन्त्रोदय देविशिव, पञ्चाव प्रदेश कहा पाँच
मन्त्रोंका उक्त है । इच्छा नामाकार ब्राह्मीक और मन्त्र
दिय है । मतलब, व्याप, रावो, वनाय और मन्त्रक वही
पाँच मन्त्रों जिनमें पञ्चाव नाम पञ्चाई, मूलतान पञ्च
के दक्षिण भागमें था कर चिन्मन्त्रोंमें मिल गये हैं ।

पञ्चाव देवि ।

"यत्र पञ्चमन्त्रे प्रायु हुत्तरे विष्णुधर्ममे ॥"

(पञ्चप्रा० ३१३६)

चिन्मन्त्रके उत्तरमेंमें एक जगत् और भी उक्त
मन्त्रोंका उक्त देखा जाता है । ये सात मन्त्रों का
चिन्म नामके प्रसिद्ध है । पञ्चप्रा देवि ।

(पञ्च०) पञ्चाना मन्त्रा मन्त्राकार । २ पाँच
मन्त्रोंका मन्त्राकार । अतएव, व्याप रावो वनाय
और मन्त्रक ये पाँच मन्त्रों । ३ आलोचित मन्त्रोदय पञ्च
मन्त्रों । आलोचपञ्चमें इन पञ्चमन्त्रोंका विवरण
इन प्रकार लिखा है—भूतगणा सब प्रकारके पाप हूँ
करनेमें तमस है । इससे प्रायः पञ्चमे अमन्त्र पञ्चात्
पवित्र मन्त्रमन्त्र अमन्त्र अमन्त्र सर्वपापकारिणो भूत
पापा पाद विरवा वाकर मित्र पर है । पाँच पञ्चमन्त्र
भगीरथानोत भागोरयो वसुधा और सरस्वती ये तानो
मन्त्रों का कर मिली हैं । अमन्त्रमें ये पाँच मन्त्रों

हाग चण्डत प्रथम अंश, कुण्ड द्वारा मध्यम
 श्रेण और मयूर द्वारा जानना होगा कि कुण्डप्रथम यत्र
 मया तथा श्रेण और देवक द्वारा यह निरूपण करना
 चाहिए कि कुण्डतन धामके मध्य है। काच द्वारा यह
 जाना जाता है, कि किसी पाकोवने कथि पाया है मयूर
 द्वारा कुण्डतन दूसरे धाममें पड़ चुका गया है रिमा शिर
 करना चाहिए। इत्यादि प्रकारके कुण्डतनुको मयूर
 यचना भी जाती है।

इस पक्षधर्मों कि मयूर, मित्र है। श्रेणका मिस
 मयूर, मयूरका मिस पिङ्गल, कुण्डतका मयूर और पिङ्गल,
 काचका मयूर पिङ्गलका मयूर और कुण्डत तथा काच
 को कुण्डत श्रेणके पाङ्ग, श्रेण के काच कुण्डतके
 मयूर पिङ्गल, श्रेण और कुण्डत काचके मयूर माने
 गए हैं।

रवि और मङ्गलवार तथा शुक्र और शनिपक्षमें १३१
 पक्षी, शनिवार शुक्रपक्षमें मयूर, शनिपक्षमें काच शुक्र
 वार शुक्रपक्षमें मयूर और शनिपक्षमें कुण्डत उदयवन्त
 वार शुक्रपक्षमें काच और शनिपक्षमें पिङ्गल, सोम और
 बुधवार शुक्रपक्षमें पिङ्गल और शनिपक्षमें कुण्डत पक्षि-
 पति हुआ करता है। इसीका नाम दिनपक्षी है। इस
 दिनपक्षी द्वारा मयूर प्रथम निरूपण किया जाता है।
 शुक्रपक्षके दिन शनि वारमें जिस पक्षीके बाद जिस
 पक्षीका उदय होता है, शनिपक्षकी रातको उस वारमें
 उस पक्षीके बाद तभी पक्षीका उदय हुआ करता है।
 शुक्रपक्षके दिन जिस वारमें जिस पक्षीके बाद जिस
 पक्षीका उदय होता है, शनिपक्षकी रातको भी उस
 वारमें उस पक्षीके बाद तभी पक्षीका उदय होता है।
 शुक्रपक्षके दिन पक्षमें जिस पक्षीका उदय होता है
 उसके एक एक पक्षीके बाद एक एक पक्षीका उदय
 होता। परन्तु अभी पक्षी ज्ञानमें उदय हुआ करते हैं।

शुक्रपक्षके दिन और शनिपक्षकी रातको रवि और
 मङ्गलवारके सुप्रादयमें पहले श्रेण, पीछे क्रमशः पिङ्ग-
 लादि पक्षीका उदय हुआ करता है। इन पक्षियोंकी
 वाच्य, लम्बा, तल्प, हृद और शन से पांच पक्षकाट
 है। इन सब पक्षकाटों और लम्बादिको पक्षी तरु

जान कर देवत्र मयूरका उत्तर करे। पक्षीयों द्वारा
 सभी प्रयोगों मयूरना को जा सकती है।

(धिरिचम वरणी)

इस गिरीश पक्षधर्म अनावा कालिंकोश पक्ष
 पक्षो मो देवनिर्गमि पक्षी है। इसे पारिभाष पक्षधर्मो मो
 कहते हैं। कालिंकर पक्ष मङ्गलदेवके सोम वर सुनिर्वा
 के निरुद्ध को कथितान् प्रकाशित किया था।

“मयूरम सुखम सर्वं प्रददात्यन्यत्र”

मूलभाषावतिशान् रक्षणं च महार्थम्

वास्तुविशेषज्ञानम् ३३२२ मूला गद्याना।

प्रयत्नान् रक्षणं प्रोक्तं यैः पक्षधर्मम् ३३ (१८७१)

कालिंकोश पांच पक्षो ये हैं—मेरुपक्ष, चकोर,
 काच, कुण्डत और मयूर। श्रेण, पीत पक्ष, श्याम
 और शुकल क्रमशः इन पांचके बंधे हैं। इस पक्षधर्मो
 द्वारा भी सभी पक्षधर्म जाने जा सकते हैं।

पक्षधर्म (स ० पक्षी ०) पक्षधर्मकी संख्या, ५५।

पक्षधर्मयत् (स ० पक्षो ०) पक्षधर्म पक्षधर्मयत्। पांच
 पक्षधर्म पक्षधर्म यत् का पूरण पक्षधर्मयत्।

पक्षधर्म (स ० म ०) भाग पक्ष।

पक्षधर्म (स ० पक्षी ०) पक्षधर्म पक्षधर्म परिभाषमय्या
 श्रित। पक्षधर्मपक्षीको निरूपित।

पक्षधर्म (स ० म ०) पक्षधर्मपक्ष, एक पक्ष।

पक्षधर्म (स ० पक्षी ०) गौरको नामकी घोषा।

पक्षधर्म—उत्तर पक्षिम भारतके यमुनातटके शक्ति पक्षधर्म
 कर्त्तों पांच धाम (कर्मके नाम से हैं—पांचपक्ष (पानो
 पक्ष), सोमपक्ष, इन्द्रपक्ष, शनिपक्ष और बुधपक्ष), ये
 पक्षधर्म कुण्डतके पक्षधर्मको हाग किसे हैं।

पक्षधर्म (स ० पक्षी ०) पक्षधर्म पादा पक्षधर्म पक्षधर्मोप ततो
 उदयपक्षधर्म। १ पक्षधर्म २ कुण्डतपक्षधर्म मयोर्मेव।

पक्षधर्मपक्ष—पक्षधर्मको समा। इसका दूसरा नाम
 सोमपक्षधर्मपक्ष है। सोमपक्षधर्म पक्षधर्म काच
 कुण्डत मियादिपक्षको परिभाषा कर पाये, तब प्रायः
 ६७० ई०में अपने राजधानीके राजाने इस प्रकारकी
 उठी समा को थी।

पक्षधर्म (स ० पक्षी ०) पक्षधर्म पक्षधर्मपक्षधर्म; ततो पक्ष,
 कालिंकोश गौरकोपक्ष, गौरको नामकी घोषा।

काई प्रदेगके समतलसेलके निखटवर्ती एक छोटा पहाड़। यह सुप्रसिद्ध है ११४० फुट और लम्बसमतलसेलके ८४० फुट चौड़ा है। इस विरिन्दा पर केवल एक बाटिका है जो पांच सुसम्मान महापुरुषोंके नाम पर लक्ष्मण की हुई है। पांच पोंरोंका भावाम जोनिसे कारक इस पवतका नाम पञ्चपीर पडा है। सर्वप्राचीन महात्माका नाम का बहाउद्दौन प्रचारिका। ये सुसन्तानवासी ये पीर लोप इन्को बहाउद्दौन कडा करती से। निखटवर्ती हिन्दू पश्चिमामियोंका कहना है, कि यह स्थान पहले 'पञ्चपाच्छ' नामसे प्रसिद्ध था, वोकि सुसन्तानो के पश्चिमाममें पामिसे बह लम्बोको जोति' प्रकाशित करता है।

पञ्चपीर—सुसन्तानो के पांच महात्मा का पीर। सुसन्तान भाग लोप पञ्चपीरके माथेके लिए जैसे लक्ष्मणादि करती है, निम्न ओकीके हिन्दुधर्ममें मो जैसे को पञ्चपीरकी पूजा प्रशंसित देखो जाती है। जब छोटे छोटे बच्चों के मिर पचवा पीर किसी पहाड़में दद होता है, तो उनके मातापिता पञ्चपीरकी पूजा, जल पचवा पिरने, क्लिसेकी पादि मोय दे कर लम्बे पूज करतें हैं। जन लोगो का विश्वास है कि ऐसा करदिसे उनको पोका बहुत बन्द जाती रहतो है। वहीं सुसन्तान सुहा पीर कचो निखट हिन्दूका पुरोहित इनको पुरोहितारै करतें हैं।

पञ्चपुत्रिका—विज्ञा प्रकाशवर्त एक पञ्चपाम। यहां पाठ पावन पीर चमकेका पदबन्धन कोरि से लक्षता है।

पञ्चपुर—पट्टिपानारायणके पन्नागत एक प्राचीन नगर। इनका सर्वमान नाम पञ्चौर है। १०१० ई०में पानुविहनीके लक्ष्मण पर पञ्चुचमिका इस प्रकार पद बतनाया है—कलीकरी ५० पञ्चप्रह लक्ष्मणपदिमें ममरा है बहदि १८ पञ्चप्रह पीर दूर जामिसे पञ्चौर नगर मिलता है। यहां प्राचीन ब्राह्मणधर्मके चमके निदमंन पाये गये हैं। बिल सुसन्तान प्रादुर्भावमें से बिलक्षण मठ को मर है। पात्र मी यहां एक सुप्रसिद्धोके किलारै कितनि प्राचीन हिन्दुधर्मके निमित्त स्तूप ऐकनेमें पामे है। इस सुप्रसिद्धोका जन पवित्र पीर पुष्पावट नामक कर बहुत से लोग थाक भी यहां स्नान करतें पाते हैं। यह

प्राचीन हिन्दुधर्मके लपर सुसन्तानोमें जो मसजिद बनाई है उसके माथेका पट्टादिमें पञ्चपुर नाम जोडा हुआ है। यहां तीन शिवालिपियां हैं जिनमेंसे सबसे पुरानो दूट फूट गई है।

पञ्चपुरालोप (स० ति०) प्राश्चिनाई पञ्चपायापचमय शिपुसिद।

पञ्चपुत्र (५० जो०) पञ्चगुचित पुत्र। शिवोपरायके पनुकारके पांच पुत्र जो देवतापी को मिले हैं—चम्पा, पाम, शमी कमल और ललित।

“चम्पा चम्पुश्रीपरमरौरुप पञ्चक ॥”

(रीधेपुराण १०० म०)

पञ्चमोप (स० पु०) पञ्च प्रदोपा यत्। १ पचदोपबुध धारतो। २ पचमदोपबुध धातुमय प्रदीप।

पञ्चमक स० ली) पच विपवा शब्दादवा प्रका मानक रूप यम्। १ न मारकपवन। भावजनमें इसका विषय यो लिखा है—

एक समय राजा पुरन्धर रथ पर (अत्रदिह पर) बटु कर जहां पचमय पांच सातु (शब्दादिविषय) है, जसो जन (भक्तनोय देम)में गये से पचात् पुरन्धरने स सारतें प्रवेस किया था। इनका शासन (अर्थ लोकोत्कृष्णाप-मिधान) बहुत बडा था। ये जिन रथ पर मवार हुए से, वह रथ बड़ा हो विचित्र था। रथमें पञ्चमक पुतमानो पांच जोड़े (जामेन्द्रिय) से। ये पांचो जोड़े ही दण्डो (पञ्चमा पीर ममता) में निबह से। रथमें पञ्च ठो (पाप पीर पुण्ड) पच एक (प्रधान), ध्वजा तीन (मन्त्र रत्न पीर तम) बन्धन पांच (प्राकादि पचपात्र), पच एक (मन) सारवि पच (बुद्धि), रथीका लप शेषन क्लम पच (अरुप) पीर बुधवन्धनद्वान लो (मोक पीर मोह) तथा विषय पांच (पांच कर्मेन्द्रिय) से। इन प्रकार पुरन्धर पचवाकारोके शेषमें रथ पर बैठे हुए से। इनके पादमें कर्णमय कवच (रथो गुण) पीर दृढटेय पर पचय मूष था। एकदम यथात् पच दारोपाच मल उनका शिवापनि हो धर इनके लक्ष गया था। राजा पुरन्धर परबय (स मारजन) में बन्धन कर चतुर्था (मोमाथमिनिवेद पीर रथदेपादि) पचय कर से विचारको बाहर निखसी। विचारके से बड़े मिल से।

इस अनुरक्तिमे ममोपवृत्तिं नो धर्मपत्ने (विवेकतुष्टि-ने उद्धे) परिव्याग कर दिया था। यद्यपि धर्मपत्न स्थानको-अयोग्य थीं, तो भी राजा उद्धे छोड़ चले गए थे। धर्मपत्नीके साथ रहनेमें स्वच्छानुसार कार्य करना कठिन हो जाता है इन कारण उद्धे परिव्याग कर राजाने कार्य का पत्र सुगम कर लिया था। बाद उद्धेने अरण्यप्रदेशमें यगच्छरूपमें आसुरो वृत्ति का अवलम्बन कर निमित्त वाण (राग-दि) द्वारा वहां जितने वनचारी (भजनोय विषय) थे गवों (आत्मोय श्री भो-को मार डाला। इस प्रकार पुरञ्जयने मिनागमें अनेक पशुश्रीको हत्या को अर्थात् वे संसारजैवमें विचरण कर विवेक बुद्धिहीन हो वा लाटे। घर या कर वे नाना प्रकारके कामोपभोग करने लगे। इस प्रकार संसार-रण्यमें विचरण करते करते उनको नवीन वयस मुञ्ज-को तरह वीत गई। अन्तमें पुरञ्जयने संसारारण्यमें विचरण कर देहका परिव्याग किया। पीछे उद्धेने फिर-से जन्म लिया, इसी प्रकार वे अनियत जन्मग्रहण करने लगे। मागवन ४र्थ स्कन्धके २५, २६, २७, २८, २९ अध्यायमें इनका विषय विस्तृत रूपसे लिखा है।

इस संसारारण्यका विषय जो निम्ना गथा उभका तात्पर्य यह कि पुरञ्जय शब्दका अर्थ पुरुष अर्थात् जोव है। वे पुर अर्थात् देहको प्रकटित करते हैं, इसीसे उनका नाम पुरञ्जय पडा। यह पुर एक प्रकारका नदी, अनेक प्रकारका है। इस पुरुषदे मखा देखर हैं जो अर्थात् है। पुरुष पुरमात्रका अवलम्बन करते हैं, पर यही संसारारण्य है। पुरुष प्रकृतिको मायामें विमोहित हो कर अपना स्वरूप नहीं पहचानना और बारम्बार जन्म और मृत्युमुखमें पतित होता है।

विशेष पुरञ्जय षष्ठमें देखो।

२ छतराष्ट्रप्रदत्त पांच ग्राम। पञ्चपय देखो।

पञ्चप्राण (स० पु०) पञ्च च ते प्राणाय। देहस्थित वायु-पञ्चक। शरीरके मध्य जो वायु रहती है, उसे प्राण कहते हैं। यह प्राण पांच है—प्राण, अपान, समान, उदान और व्यान।

“प्राणोऽगान, धमानश्चोदानश्चानौ च वायवः ॥” (अवर,

यह पंचप्राण सारे शरीरमें फैले हुए हैं जिनमें

हृदयदेशमें प्राणनामक वायु गुह्यदेशमें अपानवायु, नाभिदेशमें समानवायु कण्ठदेशमें उदानवायु और सारे शरीरमें व्यानवायु अवस्थान करता है।

“हृदि प्र णो गुह्यगानः अपानो नाभिस्थितः।

उदानः कण्ठदेशे च श्वानः सर्वशरीरगः ॥” (तर्कामृत)

वेदान्तके मतसे—इस पंचप्राण में मध्य ऊर्ध्वगमन-गोल नासाप्रस्थायो वायुका नाम प्राण, अधोगमनगोल-वायुके आदिस्थानमें स्थायी वायुका नाम अपान, सभी नाडियोंमें गमनगोल ममस्त शरीरस्थित वायुका नाम व्यान है। ऊर्ध्वगमनगोल कण्ठस्थित उत्क्रमण वायुको उदान और जो वायु भुक्त अनुपानादि को समीकरण है अर्थात् रम रुधिर शूल पुगोपादि करती है उसे समान वायु कहते हैं। इसके मलावा कोई कोई (सांख्यमत-वचनो) कहा करते हैं कि नाग, कूर्म, ऊकर, देवदत्त और धनञ्जय नामक और भी पंचवायु है। इनमें उद्धारणकारी वायुको नाग, उन्मूलनकारी वायुको कूर्म, लुधाजनक वायु को ऊकर, जृम्भनकारी वायुको देवदत्त और पोषण-कर वायुको धनञ्जय कहते हैं। किन्तु वेदान्तिक आचार्य्य प्राणादि पंचवायुमें इस नागादि पंचवायुका अन्तर्भाव करके प्राणादि पंचवायु ही कहा करते हैं। यह मिलितपंचवायु आकाशादि पंचभूतके रजः अंगने उत्पन्न होती है।

यह पंचप्राण पंचकर्मद्विधसे साय मिल कर प्राण-मय कोष कहलाता है। वेदान्तदर्शनके मतसे प्राणको ५ वृत्तियां हैं, यथा—प्राण, अपान, समान, उदान और व्यान। प्राणवृत्तिका नाम प्राण है इसका काम उच्छ्वासा-संदि है। श्वागवृत्तिका नाम अपान है, इसका काम मज्जमूत्रत्याग प्रवृत्ति। जो उक्त दोनोंकी सम्बिध्यलमें वृत्ति-मान है, उभका नाम ध्यान है, इसका काम वोर्यवत् कार्य-निर्वाह और जो सारे शरीरमें समवृत्ति है, उभका नाम समान है। इस समान वायु द्वारा भुक्तान्न रसरसादि भाव प्राप्त हो कर सारे अङ्गोंमें लाया जाता है।

(वेदान्त १० २।४।१२)

पञ्चप्राणाद (स० पु०) प्रसोदन्ति मनांसि अन्न, प्र-सद अधिकरणे घञ्, उपसर्गस्य दीर्घत्वम् । १ पंचचूडाम्बित

प्रामाद बह प्रामाद त्रिमूर्ति पांच गिहार हों । ३ दीन-
ग्रहविशेष त्रिमूर्ति प वारण सो कहते हैं ।

"वन्देवहसिन् १५५ व क्यमावर्त्तवुत्तम् ।

कारिन्ना हेरेमि मूलगणे वनेद्विभू ३" (मन्त्रिपु०)

पञ्चवन्ध (म० पु०) पञ्चमः बन्ध भागो यत् । तत्रसूत्र्याया
पञ्चमाय वन्ध ।

पञ्चवन्धा (म० खो०) बौद्धाचार्य पांच पञ्चवन्धो वन्धा
त्रिमूर्ति नाम ये हैं वन्धा पतिवन्धा, मागवन्धा, राज
वन्धा और महावन्धा ।

पञ्चरात्र (म० पु०) पञ्च भावा अत्रा वन्ध । १ काम
देव । कामदेवके पांच नाम हैं ।

"इत्येव शीघ्रं वाच तासं मोहवामिषम् ।

कामाहन् व कामराज शार्वाः पञ्चश्रीणिताः ह्"

द्रव्य, शीघ्र, मायक, मोहन और उग्रमादन यको
पञ्च नाम हैं । कामदेवके पांच पुत्रवाचोत्रे नाम ये हैं—

वसन्त, भगोक्ष पाञ्च, नवमहाका और भीमोत्पल ।

"अरविन्दमयीक व पूर व नरवन्धि ।

मोहोपारम्भक व वैरे पञ्चवाचदन चायथा ३"

(गण्डवन्द्युव)

(वि०) २ पञ्चवाचविशिट, त्रिमूर्ति पांच वाच हों ।

पञ्चवाह (म० पु०) पञ्चवाहको वन्ध मन्त्र देत ।

पञ्चवन्ध (म० वनो०) त्रयविपदभेद ।

पञ्चवन्ध (म० पु०) पञ्चव पञ्चमेरेपु मन्त्रः शुभ पुष्पित
त्वात् । १ चण्मेट, त्रिय चण्मेरे पांच वन्ध पुष्पविह
हों, वने पञ्चमन्त्र कहते हैं । २ पञ्चमन्त्रिद्वय बौद्धधर्म
एक बौध्दविषय त्रिमूर्ति गिन्धोय पितृपापकृ, मोहा,
चिरायता और वीठ हैं ।

पञ्चमूल (म० वनो०) पञ्चानां मूलानां अमाहारा बौध्दित्
त आप्रमुक्त्वात् पञ्च च तानि मूलानि चेति वसंधारवा ।

चिति, वय, वेद मन्त्र और वशेय यह मूलपञ्चक
(अन्तः पञ्चमूलान्त) है । इस पञ्चमूलके म मियक
तथा विप्रिययमे इस अन्तःकी छटि और माय होता है ।

मन्त्र व चैयमं इस पञ्चमूलका विषय निपा जाता है ।

"मन्त्रासारं वसंधिदिवा वृत्तिभेदतः ।

वेकप्रकारहृत्तदेवा वैकप्रिया इत ।

विष्णुवन्देवैतौतिरावैतीशोवेवैवैवैवैवै ।

वैकप्रकारहृत्तदेवा वैकप्रिया इत ।

"मूलादिहृत्तदेवा वैकप्रिया इत ।" (मन्त्रादि १ प०)

छटिमेंदेवे त्रेण प्रकाशके पञ्चहार त्रयक होते हैं ।

इस तीन प्रकाशके पञ्चहारीमेंसे वैकारिक पञ्चहारके
वैकारिक दम देखाता तैत्रय पञ्चहारीमें समस्त
हृत्तियां चो। मूलादिहृत्त पञ्चहारीमें पञ्चमूल त्रयक होता
है । इस मन्त्र पञ्चहार दो पञ्चमूलका कारण है ।

शायबमह पूत पञ्चमै आना जाता है, कि नैकार
पञ्चहार क्षात्त्रिक, त त्रय पञ्चहारका नाम शायब और
मूलादि पञ्चहार को त्रयमय पञ्चहार पदनाथ्य है । इसी
मूलादिमें पञ्चमूलका उत्पत्ति हुई है ।

शोक्यदय मके मन्त्र पञ्चवन्धाके पञ्चमूलका मूल रूप
है । प्रकृतिमें मयान् (बुद्धि), मन्त्रमें पञ्चहृत्त, पञ्चहार
के पञ्चतन्त्रात् और इय पञ्चतन्त्रात्के पञ्चमूलका
उत्पत्ति होती है । मन्त्रतन्त्रात्के प मन्त्र, इसो प्रकार
अमं रूप एक और मन्त्रतन्त्रात्के यन्त्रात्के मायु, त्रि
अत्त और प्रयोगको उत्पत्ति आना जाता है । इसी प्रकार
पञ्चमूलका उत्पत्ति होती है और मन्त्रतन्त्रात्के यह
पञ्चमूलका तन्त्रात्के नाम ही जाता है ।

बौद्धाचार्य मतानुसार पञ्च पाञ्चाके पाञ्चाय पाञ्चायके मायु,
मायुके चन्द्रि, चन्द्रिके त्रय पां त्रयके छटिको इत
प्रकार पञ्चमूल त्रयक हुआ है ।

वैकारिकका कारण है, कि चिन्हादिमूलमन्त्र
हृत्तपदायके पञ्चमूल है । चिति, अत्त, त्रय, मन्त्र और
व्योम यह पञ्चमूल तथा चान्द्र, दिक्, देह और मन्त्र
को भी हृत्त पदाय है ।

त्रिमूर्ति मन्त्र है, तने प्रयोग कहते हैं । मायु और
अन्तर्निर्म ओ मन्त्र मान्य होता है, वह प्रयोगको ही
है । इसके विना प्रयोग और मा त्रै ही हुए हैं वया—

मन्त्रतन्त्र नामा आतो व द्यवन्त्र, पञ्चविधसत्त्व और
पाञ्चमूलतन्त्र, प्रयोगको हृत्त और त्रिमूर्ति मन्त्र लहों
है, इसीसे मन्त्रतन्त्र कहनेमें प्रयोगको मोच होता है ।

पञ्च मन्त्रतन्त्र प्रयोगका लक्षण है । पावाणादिमें मन्त्र
मान्य लहों होता, किन्तु वह पञ्चाय भेदम रिपा
जाता है तत्र तन्त्रमें एक प्रकारको मन्त्र निबन्धना है ।

कोई कोई कहते हैं कि हृत्तपदादि अमावसा १ मन्त्र

हीन है ; उसे भस्म करतें समय पाकज गन्ध उत्पन्न होते हैं । पाकज गन्धादि भी पृथिवी भिन्न और किसी भी पदार्थमें नहीं रहती । कारणमें जो गुण नहीं है, कार्यमें वह गुण कभी भी नहीं रह सकता । पाषाणमें गन्ध ही, इसीलिए पाषाणभस्ममें गन्धानुभूति हुई । वायुमें गन्ध नहीं है किन्तु पुष्पादिपत्रग जव वायुके साथ मिला जाता है, तब वायुसे गन्ध निकलती है । इसीसे वायुको गन्धवह कहते हैं ; पर यह गन्धवान् नहीं है ।

नाना जातीय रूप पृथिवी भिन्न और किसीमें नहीं है, इसीसे नानाजातीय रूपवत्त्व पृथ्वीका लक्षण है । जल और तेजमें रूप है सही, पर वह मरुद है । पार्थिववाग्धत्तः! जलमें वर्णभेद देखा जाता है और अग्निका भी पार्थिवग ले कर विभिन्न रूप हुआ करता है । नाना जातीय रूप केवल पृथिवीमें हो है ।

पृथिवी रस केवल पार्थिव पदार्थमें वर्तमान है; इसीसे पृथिवीरसवत्त्व पृथिवीका लक्षण है । जलका स्वाभाविक रस मधुर है । कषाय, लवण आदि रस पार्थिववाग्धत्त उत्पन्न होते हैं । पाकजस्पर्श पृथिवी भिन्न और किसीमें भी नहीं है, इसीलिए पाकज स्पर्शवत्त्व पृथ्वीका लक्षण है । पार्थिव घटगरावादिका ही आभावस्थामें एक प्रकारका स्पर्श रहता है, पछि अग्निमें पाक होने पर एक और प्रकारका स्पर्श ही जाता है । अग्निमें पाक होनेके बाद कठिनत्व स्पर्श होता है, अथवा जल वायु वा विशुद्ध तेजका स्पर्श रहता है, यह विभिन्न नहीं होता । इससे देखा जाता है, कि पाकज स्पर्श केवल पृथ्वीमें ही है, पृथ्वीका स्पर्श लण घा शीत नहीं है । किन्तु लणशीतस्पर्श जो देखा जाता है वह जलीयांश और अग्नि योगसे हुआ करता है ।

पृथिवीमें कुल १४ गुण हैं, यथा—रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, संख्या, परिमिति, पृथक्ता, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, वेग, गुरुत्व और नैमित्तिक द्रवत्व । इनमेंसे रूप, रस, गन्ध और स्पर्श ये चार विशेष गुण हैं । यह पृथिवी दो प्रकारकी है, नित्य और अनित्य । पार्थिव परमाणु नित्य और दूसरे सभी पृथिवी अनित्य है । इसी नित्य पृथ्वी अर्थात् पार्थिव परमाणुसे इस सुविशाल पृथिवीको सृष्टि हुई है । परमाणुके अवयव नहीं

है । इस पार्थिवपरमाणुमें भी गन्ध तथा जो सब गुण उल्लिखित हुए हैं, वे सभी गुण हैं, किन्तु वे अनुभूत नहीं होते । मूल पृथिवीमें गुण नहीं रहने पर स्थूल पृथिवीमें गुण नहीं रह सकता । स्थूल पृथिवीकी घाटि और अन्त अवस्था परमाणु है ।

अनित्य पृथिवी तीन भागमें विभक्त है—देह, इन्द्रिय और विषय । यह पार्थिव देह चार प्रकारकी है—जरायुज, अण्डज, स्वेदज और उद्भिज्ज । मनुष्यादिको देह जरायुज, पक्षीको अण्डज, सूँ, खटमन आदिको स्वेदज और लतागुदमादिको देह उद्भिज्ज है । इन चार प्रकारकी देहोंमें पूर्वीक दो प्रकारकी देह योजित और शेष दो अयोजित है । प्राणेंद्रिय ही पार्थिवेंद्रिय है । जिस इन्द्रिय द्वारा गन्ध मालूम को जाती है, वही प्राणेंद्रिय है । नासिकाका नाम प्राणेंद्रिय नहीं है । इन्द्रियका अविष्टानस्थान नासिका पर्यन्त है । जो देह नहीं है, इन्द्रिय भी नहीं है, अथवा पृथिवी है, वही विषय है ।

जल यह द्वितीय भूत है । इसके भी अपने गुण हैं यथा—शुक्लरूप भाववत्त्व, मधुर रसभाववत्त्व, शीतल स्पर्शवत्त्व, स्नेहवत्त्व और सांसिद्धिक द्रवत्ववत्त्व । जलमें शुक्लरूपके सिवा और कोई रूप नहीं है । पृथिवीमें नाना प्रकारके रूप हैं, इसीसे शुक्लरूपमात्र-विशिष्ट कहनेसे केवल जलका ही बोध होता है । इसीसे शुक्लरूपमात्र-वत्त्व जलका लक्षण है । जलमें केवल मधुर रस है और कोई रस नहीं । पृथिवीमें पृथिवी रस है, केवल मधुर-रस पृथिवीमें नहीं है । सुतरां मधुर रसमात्र-विशिष्ट कहनेसे जलका ही बोध होता है । इसीसे मधुर रसमात्र-वत्त्व जलका लक्षण है । शीतलस्पर्श केवल जलमें है और किसीमें भी नहीं ; पृथिवी आदिमें जो स्पर्श है, वह शीतल नहीं है, इसीसे शीतल स्पर्शमात्र जलका लक्षण है । स्नेहवत्त्व और मरुणता जलका लक्षण है, स्नेह और किसीमें भी नहीं है । घृतादिमें जो स्नेह है वह जलका है, इसीसे स्नेहविशिष्ट कहनेसे जलका ही बोध होता है । जलमें एक और गुण सांसिद्धिक द्रवत्व और स्वाभाविक तरलता है । जलमें कुल १४ गुण हैं । नित्य और अनित्यके भेदसे जल दो प्रकारका है ।

तेज यह तृतीय भूत है । तेजका लक्षण है—लण

वयस्य बरत भास्वर मुक्कण्डपयस्य चौर नैमित्तिक प्रयत्न
वत्त । त्रिभुवे वयस्य स्वर्ग, भास्वर दृग्गण चौर नैमित्तिक
इत्यत्र है, वही तीत्र है । तीत्रमें कुल ११ गुण हैं । तीत्र
दो प्रकारका है निम्न चौर चक्रिय । परमाण्डप्य पीत्र
निम्न चौर सत्र चक्रिय है ।

गहत्, यह चतुर्भूत है । वातुमें घषाकण चतुर्भूत
गोत स्वयं कत्व चौर तिर्यग्गमनकत्व गुण है । वातुमें
न द्युप है, न रस चौर न गन्ध संवत्न स्वयं है । तिर्यक्-
ममन वायुके लक्षण चौर स्वर्गादि द्वारा चतुर्भूत है ।
यह वायु भी दो प्रकारको है, निम्न चौर चक्रिय । पर-
माण्डप्य तीत्र निम्न चौर सत्र चक्रिय है ।

पाकाय प जम भूत है । जो गन्धका पाण्य है वह
पाकाय है । गन्धका पाकाय चौर कोई नहीं है किन्तु
पाकाय है । गन्ध चौर किसी भी रूपमें नहीं रहता,
किन्तु पाकायमें रहता है । विवेक विवरण तत्तत् स्थानमें
रहो ।

पञ्च चौर ब्रह्मण्डलं मतने—पाकाय जो भूत
मनुष्यका उपागन है । एक पाकायमें कमरा पन्थ समी
भूतोंको उन्मूलि हुई है । यह जगत् प चतुर्भूतक है
मनुष्य दम दम पट्टकवगने जाला योनिधोमें भ्रमण
करते हैं । जोष प चतुर्भूतक द्वैज चारण करणा है । जब
इस भोवदेशका चक्रघान होता है, तब मनुष्य पट्टक ही
कर मनुष्य पत्रकवक्रियिष्ट मनुष्यद्वैज ही पञ्चभौतिक
द्वैजका परिचाय करणा है । प जमभूत प चतुर्भूतमें
मील हो जाता है । मातापित्रक भी शरीर रहता है
यह रमात्त या मरुमात्त हो जाता है । उष्ण शरीर गन्ध
में एकादय चन्द्रिय प चतुर्भूतक चौर मनुष्य वही सत्रदय
है । (७०१२०) ब्रह्मण्डलं मतने वयस्यभूत प चोद्यत
है । प चोद्यकव पाकायादि प चतुर्भूतके मन्त्र प्रत्येक भूत
का दो अमान भागमें विभक्त करणमें जो इस भाग में है
है तबमें प्रवेक्षक प चतुर्भूतके प्रयोज्य प्राकृतिक प च भाग
को समान चार च शोभे विभक्त करत है, फिर जब
प्रयोज्य चार च श तब चतुर्भूत द्वैजोद्यके भागको परिधाय
कर इतर चार भूतमें द्वैजोद्यके भागमें मात मिल जाता
है तब उद्योद्यत होता है । प चतुर्भूत प जमभूत कवमि
ममान होमें या का चतुर्भूत प चतुर्भूत पाकायादिवा

व्यवहार होता है । इन प्रकार पञ्चीकृत प चतुर्भूतके भू-
पादि लोच चौर ब्रह्माण्ड तथा चतुर्भूतके क्वत्त शरीर तथा
चक्रके भोगोपबुद्ध चक्रवामादि चक्रिय वृत्त हैं । (ब्रह्मण्डलं)

पञ्चीकरणधरो ।

ब्रह्मण्डलतक चौर निर्वाणतन्त्रमें टेका जाता है, कि
प चतुर्भूतके खटि चोतो है । बाणमें प्रत्येकवास उपस्थित
होने पर सभी भूत पञ्चके प्रयोज्य अन्तमें; जब तेजमें, तीत्र
वातुमें चौर वातु पाकायमें मील हो जाता है ।

“मही संश्रिते ह्येते तीर्थं संश्रितं रवौ ।

एवैव संश्रिते मानी वातुर्नमि धीवरे ।

पञ्चकल्पान्तरं चक्रियस्व तत्र विद्यते ॥”

(ब्रह्मण्डलं चौर निर्वाणतन्त्र)

ब्रह्मण्डलतकमें प चतुर्भूतमें एक एक भूतके पयि
पादि पांच पांच करके गुण बिकी हैं । उष्ण-चक्रिय मांस,
गन्ध माही चौर लवण, ये पांच प्रक्रियोके गुण मनुष्य, भूत,
यज्ञ, शनिष्ठा चौर शोचित कलके गुण ज्ञान, निद्रा, पुष्टा,
स्वास्ति चौर चातक्य तिलके गुण । धारण, पानन, लेप,
सहोप चौर प्रकर ये पांच वायुके गुण तथा काम, क्रोध
लोभ, लज्जा चौर मोह ये पांच पाकायके गुण हैं ।

प चतुर्भूत मभो मचक्रोंको एक एक भूत मान कर
ये सब मचक्र धर्ये जाते हैं । चक्रिणा, रैवतो चक्रिणा,
चक्रुराधा, चक्रवत् चक्रिणित चौर उत्तरावाङ्गा इन सब
मचक्रोंको पञ्ची कहते हैं । इमो प्रकार पूर्ववाङ्गा, परशेवा,
मृत्वा, चार्दा रीङ्गिचो चौर उत्तरभाद्रपद ये सब मचक्र
बल ; मरुचो कृत्तिका पुष्पा मघा, पूर्ववाङ्गा चौर पूर्व
चक्रुनी, पूर्वभाद्रपद तथा स्वाति ये सब तीत्र तथा
विशाखा उत्तरचक्रुनी, चक्रा, चित्रा, पुनर्वसु चौर
चक्रिनी ये सब मचक्र वायु नामने सुकृते जाते हैं ।

(उत्तरचक्रुरेव)

पञ्चभूत (म० श्लो०) वेद्यलोक पांच प्रकारके वृत्त
देवताइस यमा, मद्र (सिद्धि), ताक्षोमयत चौर
निगिन्दा ।

पञ्चभूत—ब्रह्मर्षि प्रदेशक काठियावाड़ विभागाके गार्हपत्याहु
के चतुर्भूतके वृत्त नामलाराध्य । यह चक्रिणादि १२
भोग उत्तर-पुनर्वसु चक्रिणित है । भूपरिमाण ०८८ वर्ग-
मात्र है ।

पञ्चम (मं० वि०) पंचाना प्रणः (प्राण उत्, तन, नास्र
 िति इत् ।) १ पंचनंत्र्याका प्रण, पांचशं । २ रुचिर,
 सुन्दर । ३ पञ्च निपुण । (पु०) पंचना स्वराणां प्रणः ।
 ४ तन्त्रीश्रुतीयित स्वरविशेष. मान स्वरोक्तिं पाचशं
 स्वर । इसका उत्पत्तिग्राम —

“बाहुः स्फुटगतो नाभेहो एतच्छृणुद्रेमु ।
 निचरन् पंचनंत्र्यानां प्राण्या पंचम उच्यते ॥” (भारत)

नाभिद्वेगमे व यु निम्न कर वल्ल, हृदय, षण्ड
 और मूर्धा इन पांचों स्थानमें विचरण करती है, पञ्चम
 ग्यान प्राप्तिके कारण इसे पञ्चम परती है ।

“शान्तेऽतानः मन्मथन उदान उदान एव च ।
 एतेषा समवायेन ज्ञानते पञ्चमः स्वर ॥”

(मगीनदामोदर)

प्राण हृदय, ममान उदान और ग्यान इस पञ्च-
 वायु-मैत्रिमें पञ्चमस्वरकी उत्पत्ति हुई है ' मन्मथनशान्ति
 से उठे स्वरका वर्ण ब्राह्मण, रंग श्याम देवता मन्मथेय,
 रूप इन्द्रके समान घर ग्यान कौचशीव लिखा है ।
 यमलो, निर्मलो और कीमली नामकी इसकी तीन
 मूर्च्छनाये मानो गई हैं । इसके कूटतान १२० हैं, प्रत्येक
 तन ४० परसे कुल ४८०० तान हैं । यह स्वर विष्णु वा
 शीतल स्वरके अनुरूप माना गया है । ५ रागभेद,
 एक राग जो छ प्रधान रागोंमें तोमरा है । कोई इसे
 हिंडोल रागका पुत्र और कोई भैरवका पुत्र वतलाते
 हैं । कुछ लोग इसे ललित और वमन्ते शोभने बना
 हुआ मानते हैं और कुछ लोग हिंडोल गांधार तथा मने-
 हरके मेलमें । सोमेश्वरके मतानुसार इसके गानिका
 समय शरदऋतु और प्रातःकाल है । विभाषा, भृगुना,
 कर्णाटो, वडहमिका, मालवी, पटमञ्जरी नामकी
 दसको छः रागिनिद्या हैं, पर कश्चिनाय त्रिवेणी, स्तम्भ-
 तीर्था, आभीरो, ककुभ, धरारी और साथोगेकी इसकी
 रागिनिया वतलाते हैं । कुछ लोग इसे शोडव जातिरा
 राग मानते हैं और ऋषभ कोमल पञ्चम तथा गान्धार
 स्वरोकी इसमें वर्जित वतलाते हैं । इसमें न, स्त्री
 प्रमङ्ग ।

पञ्चम—१ दानिणात्यवासो लिङ्गायतीकी शास्त्राभेद ।

लिङ्गायत् देखी ।

२ जैनीके ८४ गच्छांमिने एक ।

पञ्चम—हिन्दूके एक प्राचीन कवि । ये जातिके बन्दी
 और बुद्धेन लखनके रचनियाने थे । इनका जन्म संवत्
 १०३५में हुआ था । पश्चात् महाराज हर्षवर्मान बुद्धेनाके
 दरबारमें ये रहते थे ।

पञ्चमकवि—हिन्दुधर्मका एक उद्भव । भाद्रमानमें मर्मपि
 नक्षत्रके उद्देगने यह उद्भव मनाया जाता है ।

पञ्चमवि—२ बुद्धेनलखनपुर्यामी एक गायक कवि । ये
 पञ्चमगढ़के राजा गुमानमिन्द्रको सभामें विद्वान्मान थे ।
 इनका जन्म १८५४ ई०में हुआ था ।

२ रायवर्तुको जिसेके टनमऊ नगरवासी एक गायक
 कवि । ये १८६७ ई०में विद्यमान थे ।

पञ्चमकार (मं० क्०) पञ्चमण्डकं मकारं तत्त्वं यत् ।
 मय्यादि मकारपञ्चक, मय, नाग, मय्य, मुद्रा और
 मैथुन ।

“गयं मां तथा मरुते मुद्रा मयुनेव च ।
 पञ्चमस्वरमिदं देवि निर्वाणमुपिहेतवे ।
 मकारपञ्चकं देवि देवानामपि दुर्लभम् ॥”

(पुनमाचन० १०८३)

यह मयादि पञ्चमकार निर्वाणमुक्तिका कारण और
 देवताओंको दुर्लभ है ।

महामायुषीकी पञ्चमुद्रा द्वारा श्रद्धिकाकी पूजा
 करने चाहिये । निम्नलिखित नियमसे यदि उनकी
 पूजा न की जाय, तो देवता और पण्डितगण उनकी
 निन्दा करते हैं । इस कारण कायमनोवाक्यमें पंचनस्त्र-
 पर शोना चाहिये ।

“मर्थमां सैरुतामस्त्येषु श्रामिर्मधुनैरपि ।
 त्वाभिः सार्द्धं महाभाषुत्स्वयेज्जगदभिक्षाम् ॥
 अन्वथा च महानिन्दा नीयते पण्डितैः सुतैः ।
 धायेन मनवा वाचा तस्मात्स्वपरो भवेत् ॥”

(कामाख्यातं ५ प०)

इस पंचमकारके मध्य मयादि प्रसिद्ध है । जो सुरा
 मधो कामीमें वतलाई गई है, वही ही सुराग्यान अय-
 स्तर है । शूद्रोंके खाने योग्य जो सब मांस कह गये
 हैं, वही मांस है, जिन सब मत्स्यभोजनका विधान है,
 वही मत्स्य है । पृथुका, तण्डुल, गोधूम और चणकादि

कव सुने जाते हैं, तब उन्हें सुना कहते हैं। पांचवां मोक्ष है। यहो पञ्चमकार है।

मन्त्रादिनी व्युत्पत्ति—मायावलादि प्रगमन, मोक्ष-माम निष्पन्न थीर पदविध दु पादि नष्ट होते हैं, एमो से मध्य नाम पड़ा है। माङ्गल्यजनन, सम्मिदानन्दवान धोर सत्र देवताओंका मिय है। इतोनिव नाम नाम रखा गया है। बिना पञ्चमकारके इपादि हवा है। पञ्चम कार मित्र मित्रि मो दुर्लभ है। पञ्चमकारका मोचन कर पशुपान करना चाहिए।

पञ्चमकारके मन्त्र मध्य प्रथम है, किन्तु ममो धर्म शान्तिमें मध्यपानकी विधिय निन्दा धोर प्रायश्चित्त विधान है। पतयव पञ्चमकारानुष्ठानके यदि मध्यपान किया जाय, तो प्रायश्चित्त नहीं होता, सो भी ? प्रायतोविधौ मि इतकी मोमांवा इस प्रकार बिलो है। जो ईश्वर मन्त्रादि पान करते हैं। उन्हींके लिये यह विधि है। किन्तु पञ्चमकार योजन करके धामिने प्रायश्चित्त करना नहीं पड़ता तब पञ्चमकारानुष्ठान नहीं करनेमें कार्यो भिदि नहीं होती। पञ्चमकारके मोचनका नियम पाच तोविधोमि इस प्रकार लिखा है—

पहली चपने कामाममिं पट कोचके पन्तगत मिक्कोन बिन्दु मित्र कर धोर वाङ्मयमिं चतुरस्रजल पद्मिन कर धामान्याध्वं जन्मिं धम्भुचक करे। पीछे 'पापार यत्रये नम।' इस मन्त्रके पूजा कर 'नमः' इस मन्त्रके प्रथमक बादमें मन्त्रोपरि स व्यापन करके 'म वञ्चि मन्त्रनाय इगवकांमने नमः' इस मन्त्रके पूजन करके बाद 'पठ' इस मन्त्रके चतुर्थको प्रथमित करे। तत्प न्तर सम चतुर्थमें सुरा भर कर रह बत्त धोर मन्त्रादि विविध भूपवने भुवित करके उने दिना ममभ्र व्यावित करे। म वञ्चिमन्त्रनाय ददवकांमने नमः' इस मन्त्रके पाचारपूजा, 'पञ्चमन्त्रनाय इगवकांमने नमः' इस मन्त्रके कथनपूजा 'यो सोममन्त्रनाय वोइगवकांमने नमः' म मन्त्रके पूजा करे। बादमें यह इन मन्त्रके मन्त्र मन्त्राङ्कन, 'हूँ' यह मन्त्र धोर चतुष्पदन सुद्रा दाया पीचक, 'नमः' यह मन्त्रके धम्भुचक पीछे भुनमन्त्रके तोन बार मन्त्र पाचार करके 'दा' इस मन्त्रके कथन पुन्य कानने बाद 'इमो' इस मन्त्रके त्रिकोचमन्त्रन

बनाये। पीछे 'बसौ' इस मन्त्रके तथा 'ओ ओ परम ध्यामिनि परमाकारानुष्ठानादिनि चन्द्रमूर्त्तयिभ्यस्तुतिप पात्र विद्य विद्य आहा।' इस मन्त्रके घट पत्रक कर दया बाह जप करे। बादमें 'दि ओ ओ पातन्धे मरया विपद्हे सुपादिहे शोमहि तकोभ्यं' धोरपर पकोदयात्। यह मायवी जप करके मध्यका प्रायश्चित्तन करना होगा।

प्रायश्चित्तोचनका मन्त्र—

'इहमेव वं नम इवमध्वमममं ध्रुव ।
धरोरुवर्षां प्रप्रयवी ठेव से वायवाभ्वर्हं ह
पूर्वपण्डकाम्पूने वदनाभवकनये ।
अपलीकमने वैरि कव वागाधुिप्रपयन्सु ह'

इत्यादि मन्त्रके घट पञ्चक कर तीन बार पढ़ने होते हैं। तदनन्तर 'धो वां धो' दु धं धो यः प्रप्रमावविमो चिनाये सुपादिहे' नमः' यह मन्त्र तोन बार पढ़ना होता है। पीछे 'धो' धो धो' धुं धी' धी धाः शत प्रायश्चित्तो-चिताये सुवदिष्ये' नमः' इस मन्त्रका दग बार जप करके इन्द्रमाय विमोचन करनेका रिवाज है। तद्गयात् 'धे' धो' धो' धां धा' धूँ' धूँ' धा' धा' कथ्यताय विमो चय चक्षत यात्रक आहा।' यह मन्त्र दस बार जप करके हाथगाय विमोचन करना होता है। 'धो' धम, धुचिमन्त्रदुचुरन्तरीच सञ्जीता भेदिचनमिनिधूँ' रोमनत् सुमहरनमूतमदु ध्योमपदवा गोला कतजा यद्रिवा कर्त उवत्' यह मन्त्र द्रव्यके ऊपर तोन बार पढ़ना होता है। इसके बाद इत्यके मन्त्र 'पानन्धे' रव धोः 'पानन्धे-मैरतोहा ध्यान करना पड़ता है। ध्यान धोर इनकी पूजा करके यद्रिचक्ष निवचना होता है। इस चक्षमें मिय धोर मद्रिक्ता समायोम स्थिर करके मध्य चक्षतहृदय है, धेना समभता होता है। पीछे धेनुमुद्रा चक्षतोकरक करके 'म' यह बलनवीच धोर मुनमन्त्र ८ बार जप करके मध्यकी देवताहृदय मानना चाहिए। धेना धामिने मध्य मोचित होता है।

मोक्षमोचन—'य पतयिणु म्पवने नचं'क ध्याना लमोसा कुचरोवरिहा धन्वीकपु विपु बिजमोपयनिा भुध नाति विद्या' इस मन्त्रके यान मोचन करना होता है। मोक्षमन्त्र—

“ओं प्रथमक यमामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।
सर्वान्कृणोतु बन्धानां कृत्स्नो मुक्षीममतात् ॥”

—द्राशोधन—

“ओं तद्विभोः रम्म'पद' सदा पश्यन्ति सुतयः
दित्रीव चक्षुगन्तम् ।
ओं तद्विप्रनमो विप्रः शोभायता ।
स समिन्धते विप्रो गत् परम' पदं ॥”

मैशूनशक्ति—

“ओं निष्पुंगानि क्रमयन्तु स्वशा रुपाणि पि'सतु ।
आसिञ्चन्तु प्रचायतिर्वाता गर्भं दधातु ते ॥
गर्भं देहि विनीवाली गर्भं दे' सरस्वती ।
गर्भं दे अश्विनौ देवायधत्तां पुंस्वरत्नौ ॥”

इसी मन्त्रमें मैशून शोधन करना पड़ता है । इस प्रकार पञ्चमकारका शोधन किए बिना सेवन करनेमें पट पटमें विप्र हुआ करता है । (प्राणतोषिणी)

पञ्चमर्दी—मध्यप्रदेशके होसैङ्गावाट जिलान्तर्गत एक अधि
त्यका । इसके चारों ओर चौरादेव, जाटपहाड और धृतगढ़ गिरिमाला विराजित है । यहाँ समतलनेत्रमें २५०० फुटकी ऊँचाई पर मोहागपुर नगर बसा हुआ है जहाँ अनेक प्राचीन सुदृश्य मन्दिर सुशोभित हैं । यहाँके सरदार काकुर्वंशके हैं और महादेवपर्वतके भोपाश्रीके प्रधान शक्ति ही मन्दिरादिकी देखरेख करते हैं ।

पञ्चमर्दीको ग्राम्यपञ्चायत । सभी जिस प्रकार बड़े बड़े ग्रामोंमें पंचायतमें नाना विषयकी मीमांसा होती है, पूर्वकालमें उनी प्रकार इसी पंचमर्दीनीमें ग्रामके सभी विवाहोंकी मीमांसा और सभी प्रकारके विचार कार्य सम्पन्न होते थे । गुप्तसम्वाट, २य चन्द्रगुप्तकी माञ्चिकी गिलालिपिमें (८३ गुप्तसम्बत्में) सबसे पहली इस 'पंचमर्दीली' शब्द का उल्लेख देखा जाता है ।

पञ्चमनगर—मध्यप्रदेशके दामो जिलान्तर्गत एक ग्राम । यह अक्षा० २४' ३०" और देशा० ७८' १३' पू०के मध्य अवस्थित है । यहाँ बटिया कागज तैयार होता है ।

पञ्चमय (स० त्रि०) पंचमयट । पंचम भागीय । पञ्चमवत् (स० त्रि०) पंचम मतुव, सस्य वः । पंच संख्या-युक्त ।

पञ्चमहल—इसमें प्रदेशके सफारीय विभागका एक जिला । यह अक्षा० २२' १५"मे २३' ११" स० और देशा० ७३' २५"से ७४' २८" पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण १६०६ वर्ग मील है । यहाँ बहुतसी छोटी छोटी नदियां हैं जो प्रायः शीतके सत्तापमें सूख जाती हैं । सभी नदियोंमेंमें माफोनदी बहती है जो जिलेके उत्तर पश्चिम दिशामें बह गई है । जिलेके मोधहा (मोध्रा) उपविभागमें श्रीरवाटा नामक एक झर है । इसका जल कभी भी नहीं सूखता । इसके अनावा यहाँ प्रायः ७५० इंचे बड़े अनाशय और अमंशय रूप हैं ।

जिलेके टल्लिण-पश्चिम कोनेमें पाषाणक नामक एक पहाड है । इसका गिखरदेश यहाँके समतलक्षेत्रमें प्रायः ७५०० फुट ऊँचा है । पूर्व समयमें पहाडके गिखर पर एक जिला था । १८०२ ई०में तुषरके राजगण इस प्रदेशके तथा पाया दुर्गके अधोस्वर थे । पोछे चौहान राजाशोनि दुर्गकी अपने टखनमें कर लिया । १४१२ ई०में सुमनमानो'ने इस स्थान पर आक्रमण किया मही, लेकिन छत कार्य' न हो सके और भाग गए । १७६१-१७७० ई०के मध्य सिन्दियाराजने इस प्रदेश पर अधिकार जमाया और १८०३ ई० तक उहाँके वंशधर यहाँ राज्य करते रहे । उसी सालके अन्तमें कानून विडि'टनने उसे चटाई कर अपने गलेमें कर लिया । १८०४ ई०में अङ्ग्रेजों'ने पुनः यहाँका शासनभार सिन्दियाके राजाके हाथ में दे दिया । पोछे १८५३ ई०में अङ्ग्रेजों'ने फिरसे इसका शासनभार अपने हाथमें ले लिया ।

चम्पानर नगरका इतिहास ही यहाँका प्राचीन इतिहास समझा जाता है । उक्त नगरका अर्धसावशेष-मात्र देखनेमें आता है । ३५०-११०० ई० तक यहाँ अनेक-हलवाहाके तुषार राजाशोनि और पोछे १४८४ ई० तक चौहान राजाशोनि राज्य किया । इसी समयमें ले कर १५३६ ई० तक चम्पानरनगर गुजरातकी राजधानीके रूपमें गिना जाता था ।

१५३५ ई०में हुमायुन् इस नगर पर आक्रमण और अर्ध कर दूसरे वर्ष अहमदाबादमें राजधानी ठठा कर ले गए । यहाँके नायकहा अधिवासिगण चम्पानरके प्राचीन अधिप'सर्वोके वंशधर हैं ।

त्रिमूर्ति ५ महर पोर १८८ पास सपने है । जनन व्या
 टारि साकने ऊपर है त्रिमूर्ति मे कडे पोरे ८० बिन्दु
 ५ सुबनमाल पोर मीपमें पश्यान्व ज्ञानियां है । वरिहांग
 कागोको भाया गुजरातो है । त्रिसेवी प्रवाल १५८ लुन
 बरो, चना, गेहूँ बाजरा धान पोर तिल है । त्रिमूर्ति
 १११ बनेमीन बनविभाज है । पडने यशो तरण तरणके
 हरिच, हय्यो मया ध्यात्र पाए ज्ञानि है । पभा लनको
 न व्या बहुत काम हो गई है । बनविभागेने ११ ब० जो
 चामदतो है । गुजरातको पयिचा हम त्रिमूर्ति प्यागे भी
 पथिक दिखनेमें पातो है । पहाड़ पर जोई, रंगि पोर
 पहरणको ग्याग है । हम त्रिसेवे पमात्र मनुष्यके पूज
 दिवदाव पोर तेलहन चमात्र गुजरात भेरी जाती है पोर
 वरावे तमाकू लमच कारियक चातुको वनी चोमि
 तथा कणकेकी चामदतो होतो है ।

१८४१ ई० में टिक्कोम कसन लट हो जानेके पोर
 १८०१ ई में चलाउष्टिके कायक यहाँ भायो पचाल पड़ा
 वा । त्रिसेवी पावडवा एक प्रकार चण्डो है । तापगि
 माच ८१ है । विद्यामिचामी यह त्रिबा पटम है । त्रिम
 र्ति काई रङ्गक, मिडिल स्कूल पोर प्राइमरी स्कूल है इन
 प्रकार स्कूलोंकी ५ व्या लन १२४ है । स्कूलके पमात्रा
 एक चण्डात्र पोर मात बिजिआलय मो है ।

पद्मशापालक (म० धो०) मनुस्मृतिके अनुसार वाच
 महापातक जिनके नाम ये हैं—ब्रह्महत्या, सुराणन,
 चोरो, गुहकी कोये धमिचार पोर इन पातकोंके करमे
 बानोंके नाचन करे । ब्राह्मण यदि एक मरा कोना
 चुपाये तो वह क्षीयपद्व्याय होता । स्तेय मन्त्रके चोरो
 का हाँ कोच होता है, चिन्तु परचण्डमें विमिरदण्डके
 डोलन रहनेके कारण यहाँ देना पयं होमा, चौथेमात्र
 को महापातक नहीं होता ।

‘मद्रत्या ह्यतान् लव्यं पुत्रे नवानना ।

नरणि नानकनवापुः संवर्गैर्यानि ते। बहवः’ इति

को मर पाए करती है, वकीको महापातको कहते
 है । मशापानकोबा नमार् भी महापातक है वकीमें
 धर्मदूषक वनबा व लग होइ देना कारिय ।

बहन ८८१ ।

पद्मशापक (म० पु०) पद्मशक्ति को महापात्रक । गृहण

कठक प्रतिदिन कर्त्तव्य टैब जो। पेशादि पत्रप पक,
 पान क्यत्र त्रिनहा नियम करमा गृहलोके लिए पाय
 ग्यक है । गृहव्य प्रतिदिन पचसुनाप्रतिन प्रो पया
 मुडान करती है, यह पचपत्र दारा विनट हो ग है ।
 हम पचपत्रका विषय मगरात् मनुमें हम प्रकाश कर्या
 है— ‘ १ चण्डा पचपत्रक पुत्रोयेरमुपायः ।

वपरी चोरकुमारक मरत नानु बाहदन् ४
 ताका कपल बर्ताके निष्कण्ये मशागतिन, ।
 पचनसुता महापना बन्ध एरवेरिवा ४
 बरशाव मद्रवठ दिवुवहापु गर्वम् ।
 दोनो देरो बरिर्माँर इवराट्टिविरुवम् ४”

(मनु १।१५ ००)

चुडवा, चाँता, ठंको, झाङ्गू पोर जनपातक बिना
 गृहपत्रका काम नहीं चलता, पचप ये मर एक एक
 सुता पयान् प्राणियकके व्याज है । चुडकेमें पाग देनेने
 रमोई बनतो है, बिन्तु लम जनने दूय चडकेमें त्रिमूर्ति
 कोड़े मारी हैं, लनको धमार नहीं । चण्डको पयान्
 पोवको पादिबे भी पनेका श्रौव मरती है । चुको पादि
 बधव्याज दारा प्रो पाप लत्यक होता है, लम पापने
 निष्कति पानेके लिए महाविद्योने गृहव्यत्रे लिए पति
 दिन प चमहापात्रका विधान करदिय है । चण्डयन
 पञ्चापनका नाम ब्रह्मपत्र पचादि वा नहउ दारा
 विरुकोकको तपव देनेका नाम विरुवत्र होमका नाम
 देवपत्र, पचपदपादिबा पचादि पनलदय बलिबा
 नाम मनुपत्र पोर पतिवि मिषाका नाम मनुपपत्र है ।
 गरि रहने प्रो गृहव्य हम पद्मशापकका एक दिन
 भी पतिप्याग नहीं करती, वे नियमाकन्यां काम करती
 दूय भा पचसुना प पन निर लरी दानि । नैवता, पतिवि,
 पोष्यमर् विरुवक पोर बाबा इन पंचोको प्रो मनुप
 पत्र पचपत्र दारा पचानि लकी देते, ये नितामलम्याम
 विमिष्ट होने दूय भी जाविन महा है पयान् लनका
 श्रौवन निष्कल है । बिना बिना पद्मशापाने यह प च
 महापत्र चदुन, दूत मद्रुन, ब्राह्मदुन पोर मासिन हम
 पांच नामे न पमिहित दूया है । ब्राह्मपत्र वाचपयका
 लम पदत होमका नाम दूत, मनुपत्रका नाम ब्रह्म,
 मारदुन वा ब्रह्मकोकी पचमाका नाम ब्रह्मदुन पोर

पितृपूजा नाम प्रागित है। (मनु ३ अ०) तैत्तिरीय आरण्यकमें इस पञ्चमहायज्ञका विधान इस प्रकार लिखा है -

पच वा एते महायज्ञाः सतति प्रायश्चते । देवयज्ञं पितृयज्ञः
मनुष्ययज्ञः मृतयज्ञः ब्रह्मयज्ञः इति ।" (तैत्तिरीय धार०)

इस पञ्चयज्ञके मध्य वेदपाठ और वेदाध्यापन ब्राह्मणयज्ञ कहलाता है। इस ब्रह्मयज्ञका अनुष्ठान करनेमें तत्त्वज्ञान होता है। तत्त्वज्ञान होनेसे सब प्रकारके दुःख जाती रहते हैं। गृहस्थ यदि आहार न करे, तो भी उसे पञ्चयज्ञानुष्ठान कर्त्तव्य है, मानिक ब्राह्मणको वैश्वदेव और निरग्निक मनुष्योंको होम करना चाहिए। इस प्रकार होम समाप्त करके विश्वदेव, सप्तो भूतहृन्द और पितृलोकके उद्देश्यसे वन्दितान करनेका विधान है। पीछे देवता और पितरों के उद्देश्यसे बलि दे कर यदि मन लग्न न उभा हो वा इच्छा बनी हो रहे, तो निम्नलिखित मन्त्रसे वलिप्रदान करना चाहिए।

“देवा मनुष्याः पशवो वयमि मिदाः मगभोरगैरयसप ।
प्रेताः विशाचास्तवः समस्ता ये ज्ञानमिच्छन्ति मया प्रदराम् ॥
पिपोलिकाः कीटपतंगकाया सुभुजिताः कर्मनिबन्धनाः ।
प्रयान्तु ते त्वसिमिदं मयापं तेष्वो विष्टं सुपिनो मवन्द ॥
भूतानि सर्वाणि तथाप्रमेतदहञ्चविष्णुर्नगतोऽन्यदस्ति ।
तस्माद्देहं भूतनिकायभूतसमै प्रयच्छ मि भवःय तेषाम् ॥
येषा न माता न पिता न वन्द्युर्न वापसिद्धिर्न तथाप्रमस्ति ।
तद्भुक्ष्येऽनं भुवि दत्तमेतत् प्रयाणु त्वत्तिं मुदिना भवस्तु ॥”
(आहिकृतच)

गृहस्थ दोपहर दिनको चतुस्रपयमें पवित्र भूभाग पर बैठ कर सप्तो जोवोंके उद्देश्यसे इस प्रकार मन्त्रपाठ करे—देवगण, दैत्यगण, पशुजिगण, यक्षसिद्धमर्गण, प्रेतपिशाचगण, वृक्षगण, कीटपतङ्गपिपोलिकाहृन्द और समस्त अन्नभोजनाभिलाषो जीवहृन्दके उद्देश्यसे होम अन्नदान करता हूँ, अतएव भोजन करके वे त्वमि लाभ करें। जो निराश्रय हैं, जिनके पिता, माता, भ्राता और बन्धु कोई भी नहीं है, इस भूतल पर उनको त्वमिके लिये मैं अन्न दान करता हूँ, ये त्वमि लाभ करें, इत्यादि। इस प्रकार भूतमसृष्टके उद्देश्यसे बलि देनेके बाद गृहस्थ स्वयं भोजन करे। इत्यादिरूपसे पञ्चमहायज्ञका अनुष्ठान

करना हरएकका मुख्य कर्त्तव्य है। जो इस महायज्ञका अनुष्ठान नहीं करते वे प्राणिकों और नरकमें जाते हैं।

पञ्चमहायज्ञाधि (सं० पु०) वैश्वकगान्धर्व अनुमार ये पांच यज्ञे गीर्ग—पर्ग, यन्मा, कद्र, प्रमेष्ट और उन्माद ।

पञ्चमहायज्ञ (सं० पु०) योगगान्धर्व अनुमार ये पांच याचरग—पर्गमा, सन्मता, पानेय, ब्राह्मण्य और अपरिग्रहो इत्ये पतञ्जलिजीने 'यम' माना है। इन जातियों के लिए इसका प्रण जैनगान्धर्वे पावश्यक बननाया गया है।

पञ्चमहायज्ञ (सं० पु०) पांच प्रकारके वाजि जिनके एक माय वज्रवाणिजा अधिकार प्राचीनकालमें राजाओं मणराजाओंकी ही प्राप्त था। इसमें ये पांच वाजिसाने गण है—मौग, खंजडो, शत, भेरी और जयघण्टा ।

पञ्चमहिष (सं० स्त्री०) पञ्चगव्यत् महिषके मृत्यादि पञ्चक, सृष्टिके अनुमार भैरवमें प्राप्त पांच पदार्थ—मूत्र, गोबर, दूध और घी ।

पञ्चमार (सं० पु०) १ वन्देयके पुत्रका नाम। २ पांच प्रकारके काम। ३ एक जैनधर्मसंस्कारक। ये महावीरके शिष्य थे। महावीरके मरण बाद इन्होंने ही उमका पट प्राप्त किया था।

पञ्चमापिक (सं० त्रि०) पञ्चमापाः प्रमाणमस्य टर्न पुरंपदशब्दिः। स्वर्णमापपञ्चकमित दण्डादि, पांच मापके तीसको मजा।

पञ्चमास्य (सं० पु०) पञ्चमी रागः स्वरो वा प्रास्यो यस्य । १ कोकिन, कोयल। पञ्चसु मासेषु भवः यत्। (त्रि०) २ पञ्चमासभव, पांच महीनका।

पञ्चमिन् (सं० त्रि०) पञ्चयुक्त।

पञ्चमी (सं० स्त्री०) पञ्चानां पाण्डवानानियम् अथवा पञ्चपतेन मनोति सेवास्रहादिभिर्वा भ्राति या पञ्चमो-क्षिप। १ पाण्डव-पत्नी, द्रौपदी। पञ्चानां पूरणो षट्, ततो मट्, स्त्रियां ङोप्। २ गारिश्वला। ३ तिथि-विशेष, शुक्ल या कृष्णपक्षको पांचवां तिथि। पञ्चिकाके सङ्केतसे शुक्लपक्षको पञ्चमी होनेसे ५ संख्या और कृष्णपक्षको पञ्चमी होनेसे २० संख्या लिखो जाती है।

अत आदिके लिए चतुर्थीयुक्ता पञ्चमी तिथि याहर मानो गई है।

“आ च यत्पूर्वमुक्ता प्राणा उपस्थाने ।
वक्ष्ये च प्रकल्पना यत्पूर्वविरिणा विभो ॥”

(विमित्तल)

पायादुमासको वृक्षाप यमोर्धे मनसा धोर घट्टनाम-
पूजा करनी होती है । माघ मासको वृक्षाप यमोका
नाम योप यमो है । इस दिन लक्ष्मी धोर सरलतीकी
पूजा की जाती है । नामाङ्कयमो भाँर धोरयमो रको ।

माघमासको वृक्षाप यमोर्धे दिन को व्रत किया जाता
है वसेप यमोव्रत कहते हैं । यह व्रत ६ वर्ष तक करना
होता है, यमोर्धे इसका दूसरा नाम यदप यमोव्रत भी
है । यदपे माघमासको वृक्षाप यमोर्धे इस व्रतका
पारम्भ करके प्रति शुक्राप यमोको प्रतीक नियमसे पूजा
योग्य कदादि यमप करनी, होती है । इस प्रकार ६ वर्ष
तक यत्पूर्वविरिणा धोर इसका उपायन होता है । इस
प यमो व्रतका विषय, वृक्षापुराचर्ये इस प्रकार लिखा है—

‘कोरोके च पुत्रा इत्ये कर्मोपमर्षिके इतिम् ।
ब्रह्मण्ये परिब्रह्मण्ये भारो मुनिवत्सम् ॥
भार उवाच । केनोवायेन रोके कर्मोर्धे इत्ये मदैर ।
लोनामन्युन कति कर्मोर्धे य यत्पूर्वविरिणा
मुत्ता उद्वेगन रोके बारवस्य महात्मनः ।
केरोकेन वनको कर्मो रूरे रोके पुनामने ॥
इति वत्पूर्वविरिणा वत्पूर्वविरिणा वत्पूर्वविरिणा ।
वत्पूर्वविरिणा वत्पूर्वविरिणा वत्पूर्वविरिणा ॥
रोकेवाच । अति धोरयमो नाम वरा वरमर्धुर्धेम् ॥
वत्पूर्वविरिणा वत्पूर्वविरिणा वत्पूर्वविरिणा ॥”

(वृक्षाप)

यह समय योरोकेवत्पूर्वविरिणा लक्ष्मी धोर नारायण मोक्ष
रूप है । ठकी समय नारद कर्षी यत्पूर्वविरिणा धोर लक्ष्मी
कोर्धे, ‘मगधम् । उवा कोन सा उवाच है जलसे नारो
रुको धोर यत्पूर्वविरिणा मोभाग्धको हो ।’ इस धोर लक्ष्मी
मगधामुके इयारागुवार नारदके कर्षा वा ‘योप यमो
नामक एक परमदुर्लभ व्रत है । इस प यमोको धोर धोर
नारायणका विधि तथा भक्तिपूर्वक पूजा करना चाहिए ।
जो को भक्तिपूर्वक इस व्रतका यत्पूर्वविरिणा करती है, वे
लक्ष्मीरूप है । इसका विधान इस प्रकार है—
माघमासको विषुव शुक्राप यमोर्धे इस व्रतका पारम्भ

है धोर ६ वर्ष तक किया जाता है । इनके सर्वविध
प्रकर्म हो कर्षी तक प यमोर्धे दिन लक्ष्मी याना नियम
है । योर्धे दो वर्ष तक वृक्षापय, बादमें एक वर्ष तक
यम धोर लक्ष्मी यमोर्धे उपायन विधि है । ६ वर्ष पूरा
हो जाने पर व्रतव्रतिका विधानानुसार इस व्रतको
प्रतिष्ठा को जानो है । यको व्रत नारियोका एकमात्र
भोमाग्धवर्धक है ।’ व्रतमाका धोर योर्धे माग्धे व्रतवत्पूर्वविरिणा
इस व्रतका विषय विवरण लिखा है ।

यत्पूर्वविरिणा यं यमो व्रतका को विवरण लिखा है,
वह इस प्रकार है—यामप भाद्र याम्निध धोरकार्तिक
माघमें वृक्षाप यमोको व्रत करके यथाविधान पूजा करनी
चाहिये । माग्ध, तयक, कासोय, मन्थिभद्र, पिरावत,
पुतराष्ट, कर्षाटल धोर यमपय, इनकी पूजा करके
वत्पूर्वविरिणा करना होता है । इस प्रकार वत्पूर्वविरिणा
करनेमें याम्निध यम धोर यम्निध पादिकी प्राप्ति
होती है । (भक्तिपुराण ११५ अ०)

यदपे वृक्षापुराचर्ये प यमो व्रतका विषय को लिखा
गया है भक्तिपुराचर्ये भी उक्त व्रतका उल्लेख है । इस
व्रतको यदप यमोव्रत कहते हैं, व्रतको को कथा है,
यदप भक्तिपुराचर्ये है । वृक्षापुराचर्ये व्रतका विषय
जैसा लिखा गया है, भक्तिपुराचर्ये भी उक्त वैसे
हो है ।

प यमो विधिको उक्त योर्धे भूयालमाय, यदप,
यत्पूर्वविरिणा, याम्निध, शुकी धोर वत्पूर्वविरिणा निकट
माननीय होता है ।

“भूयालमायो मद्रुम” इत्याथ इयायमेते विदुषी इतेन ॥
यानी शुकी वत्पूर्वविरिणा वत्पूर्वविरिणा वत्पूर्वविरिणा ॥”
(योरोके)

५ मन्दात्र विद्याविषय । तन्मन्दात्रेण इत विद्याका
विषय इत प्रकार लिखा है—

“यानव इयम इत लक्ष्मीरुप वत्पूर्वविरिणा ।
वत्पूर्वविरिणा रोके यमोर्धे यमोर्धेम् ।
यदिता वत्पूर्वविरिणा विद्या वैकोपयत्पूर्वविरिणा ॥
(वत्पूर्वविरिणा)

प यमो विद्याका विषय लिखा जाता है यथा—
क, प, र, ल, जो रकोका नाम यानवकूट है ।

कामराजमन्त्रका प्रथमकूट यह है—ह, स, क, ल, ज्ञी । यह मन्त्र परमदुर्लभ है । ह, झ, ङ, ल, ज्ञी' इसका नाम संप्रावती मन्त्र है, इने द्वितीय कामराजकूट कहते हैं । क, ह, प, ल, ज्ञी' का नाम मधुमती मन्त्र और ह, क, ल, स, ज्ञी' का नाम शक्तिकूट है । कुलीञ्जोगमें लिखा है, कि पहले वाग्भवकूट और मध्यमें कामराजकूटत्रय इस पञ्चमीकूटमें पंचमोविद्या होगी । यह पञ्चमोविद्या त्रिशुण्णत्री मीभास्यप्रदा है ।

इस पञ्चमोविद्याके विषयमें महादेवने स्वयं कहा था, 'हे देवि ! अति दुर्लभ शक्तिकूट मैं कहता हूँ, ध्यान दे कर सुनो । पहले वाग्भवकूट और पीछे कामराजकूटत्रय योग करनेमें जो मन्त्र होता है, उसका नाम शक्ति-कूट है । अथवा म, ह, क, ल, ज्ञी' इसका नाम शक्ति-कूट है । वाग्भवकूट और शक्तिकूट यह कूटत्रयात्मिका विद्या शतनागिनी, त्रिडिप्रदा और सर्वदोषविचर्जिता है । वाग्भवकूट चार प्रकारका और शक्तिकूट दो प्रकारका है, अतएव पंचमोविद्या आठ प्रकारकी हुई । यामलमें लिखा है, कि पंचमोविद्या दो प्रकारकी है । उसके शायकूटत्रय और पंच पंचाक्षर है । कामराज विद्याका मध्यकूटपहल और कामराजविद्याका शक्ति-कूट चतुरक्षर है । वाग्भवकूट चार प्रकारका होनेके कारण उक्त विद्या भी चार प्रकारकी है । यामलमें और भी लिखा है, कि क, ह, स, ल, ज्ञी' यह कूट परमदुर्लभ है । तत्त्वबीधमें क, ह, स, ल, ज्ञी' यह मन्त्र लिखा है । तन्त्रसारमें क, ह, स, ल, ज्ञी' इस कूटकी परमदुर्लभ वतलाया है । उक्त विद्या भी पूर्ववत् ८ प्रकारकी और अन्य विद्या ४ प्रकारकी है, सुतरां कुल पंचमोविद्या ३६ प्रकारकी हैं ।' श्लोकमें लिखा है, कि महादेवने भगवतीसे कहा है, 'देवि ! पूर्वोक्त विद्यासमूहका प्राणमन्त्र सुनो । ओ, ज्ञी, ङ, स, इस मन्त्रकी वाग्भवकूटके आदिमें योग करके ७ बार जप करो । पंचमोविद्याके विशेष इस वाग्भवकूटके आदिमें श्री, ज्ञी, हं, स, शक्तिकूटके अन्तमें हं सः ज्ञीं श्रीं और कामराजमन्त्रके प्रथमकूटके आदिमें क्लीं, मध्यकूटके आदिमें श्रीं और तृतीयकूटके आदिमें ज्ञीं यह बीज योग करके जप करनेसे सर्वकाम सिद्ध होता है । (तन्त्रसार)

५ रागिणीविशेष । यह रागिणी दमन्तरागकी श्रीं मानो जाती है ।

'वन्ती पञ्चमी शैली शशी रूपमञ्जरी ।

रागिण्य ऋगुराजस्य रघुस्तस्य प्रिया इमाः ॥' (संगीत०)

वमन्तरागिणीका ध्यान—

'संगीतोग्रीपु गतिभारं समाश्रित्या गायनमप्रसार्यः ।

शर्वांगिणी नूपुरयादपदगं ना पञ्चमी पञ्चमोदनेत्रीम्' (संगीतदर्पण)

६ नदीविशेष । ७ व्याकरणमें ऋषाटान् वाः । ८

एक प्रकारकी ईंट जो एक पुरुषको मन्त्रार्थके पादके भागके बराबर होती हो और यज्ञमें वेदा वनानिमें काम आती हो ।

पञ्चमोत्रत (मं० क्ली०) पंचम्यां माघशुक्लपंचमीमारभ्य पहलवर्षं यावत् प्रतिमासोयशुफलपंचम्यां क्विया वृत्तव्यं ततं नियमविशेषः । गित्याकि करने योग्य त्रतविशेष । यह माघमासकी शुक्लपंचमामि आरम्भ करके ६ वर्ष तक प्रति मासको शुक्लपंचमोकी किया जाता है । पञ्चमो शब्द देखो ।

पञ्चमुख (मं० पु०) पंचं विस्तृतं मुखं यस्य । १ सिंह । पंच मुखानि यस्य । २ शिव, महादेव ।

'शिवस्तत्र स्थित माधात् स्वर्गापहर- शुभः ।

स तु पञ्चमुखः ह्यतो लोके मर्षार्थ-साधकः ॥

पञ्चमप्रारम्भो रघ्नात् तेन पञ्चमुखः स्मृतः ।

परिचमे तु मुखे सद्यो वामदेवस्तथं तरे ॥

पूर्वे तत्पुरुषे विशादघो-ञ्चापि दक्षिणे ।

ईशानः पञ्चमो मध्ये सर्वे प्रागुपरि स्थितः ।

एते पञ्चमुखा वत्स पापघ्ना प्रहनाशनाः ॥'

(देवीपुराण)

महादेवके पांच मुख हैं, इसीसे उनका पंचमुख नाम पडा है । इन पांचों मुखमेंसे पश्चिम मुखका नाम सद्योजात, मध्यका वामदेव, पूर्व औरका तत्पुरुष, दक्षिण औरका अधीर और सबसे ऊपर मध्यभागमें जो मुख है उसका नाम ईशान है । यह पंचवदन पाप और ग्रहनाशक है । इस पंचमुखके मध्य सद्योजात शुक्ल, वामदेव पीतवर्ण, तत्पुरुष रक्त, अधीर कृष्णवर्ण और ईशान नानावर्णात्मक है । यह पंचवक्त्रा शिव कामद, कामरूपी और ज्ञानस्वरूप है ।

मोक्षविधिः । यह नीलोत्कटमरेया, बंधप्रसारो, कचूर, मोगा, चुकचुई मोनमे बनतो है । इसमें स्वल्पपंचमूल त्रिगुणिते नृत्तिका-दशमूल बनता है । २ मूलपंचक, पांच मूर्त्तीका समाहार ।

पञ्चमूर्त्ती (सं० रत्नी०) पंचानां मूलानां समाहारः (त्रिगु० । पा ४।१।२) इति डीप् । स्वल्पपंचमूल-पाचन ।

पञ्चमूर्त्ती (सं० पत्नी०) १ पाचनभेद । पंचमूर्त्ती, बला, बेलमोठ, धनिया, नीलोत्पल और कचूर इन सब द्रव्योंका बाटा पोनेधे वातातिमार नष्ट होता है । २ चक्रटतोक्त पाचनभेद, स्वल्प और हृत्की भेदमे यह दो प्रकारका है ।

स्वल्पपञ्चमूर्त्ती—गालपर्णी, पिठवन, वृहती, बगदकारो, मोक्षर, बला, बेलमोठ, गुलच्च, मोथा, मोठ, चायनाटि, चिरायता, वाला, कृत्जकी छाल और इन्द्र-यव जल मिला कर २ तोना, जल ३२ तोना, गोष ८ तोना । इसमे सब प्रकारके अतीमार, ज्वर और बमि-त्ति उच्छ्रव नष्ट होते हैं ।

द्रव्य पञ्चमूर्त्ती—विन्ध, ज्योनाक (सोनापाठा), गांधारो, पट्टार, गनियारो, मोठ, पाणिफलपत्र, मोथा, चारसक, टाटिमपत्र, विजयन्दकी जड़, वाला, गुलंच, चायनाटि, बेलमोठ, बराला चा, कृत्जकी छाल, इन्द्र-यव, धनिया, धवका फूल, कुल मिला कर २ तोना ; जल ३२ तोना, गोष ८ तोना ; प्रक्षेप अतीमका चूर्ण २ मागा, ईराचूर्ण २ मागा । इसके सेवन करनेसे सब प्रकारके अतीमार रोग जाते रहते हैं ।

पौष्टिकसे स्वल्प पंचमूर्त्ती और वातश्लेष्मप्रक्षोभिते धृत्पंचमूर्त्तीदि व्यवहृत्ये है ।

पञ्चमेग (सं० पु०) फणित ज्योतिषके अनुसार पाचवें घर-का नवमासो ।

पञ्चयत्ना (सं० स्त्री०) त पंचभेद, एक नौके नाम ।

पञ्चमूर्त्ती (सं० पु०) पंचविधाः द्रव्याः । गृह्यस्यकर्त्तव्य पंध प्रसारका द्रव्यादि । पञ्चमूर्त्तीः पञ्चमेग ।

पञ्चमूर्त्ती (सं० पु०) पञ्चयत्ना यत् । १ दिवस, दिन ।

“विधानां रत्नीनां प्रदृश्यन्तव्यापनचतुष्टये ।

नाडीनां शब्दे प्रत्ये दिवस यत्नसंज्ञिते ॥”

(आरिस्तच)

शास्त्रोंमें पांच पहरका दिन और तीन पहरकी रात मानी गई है । रातके पहले चार दण्ड और पहिले चार दण्ड दिनमें लिए गए हैं । २ तदभिमानो देवताभेद ।

“विभावसोरमृतोवा व्यूटं रोचिप-मातपम् ।

पञ्चयामोऽथ भूतानि येन ज्ञापति कर्मम् ॥”

(भागवत ६।१।२५)

पञ्चयुग (सं० की०) पंचभिः पंचभिः युगम् । इन्द्रादि पांच पांच शर्ष द्वारा हादश वर्षात्मक पष्टिमवत्सर ।

पञ्चरत्न (सं० पु०) पञ्चप्रोड्वृत्त, पञ्चोडेका पेठ ।

पञ्चरत्न (सं० स्त्री०) पञ्चानां रत्नानां समाहारः, वा पंचविधं पंचगुणितं रत्नं । १ पांच प्रकारके रत्न । कुछ लोग सोना, हीरा, नीलम, लाल और मोतोकी पञ्चरत्न मानते हैं और कुछ लोग मोती, मृगा, वैक्रान्त, हीरा और पद्माकी ।

“कनकं हीरकं नीलं पद्मरागञ्च मौक्तिकम् ।

पंचरत्नमिदं प्रोक्तमृषिभिः पूर्वदर्शिभिः ॥

रत्नानांचाप्यभावे तु स्वर्णं कर्षार्द्धमेव वा ।

सुवर्णस्याप्यभावे तु लाज्यं श्रेयं विचक्षणैः ॥” हेमाद्रि)

इस पंचरत्नके अभावमें कर्पाई परिमाण सुवर्ण और उसके अभावमें घाञ्च ग्रहणीय है, यही पण्डितोंका मत है । विधानपारिजातके मतमें पञ्चरत्न नीलक, वज्रक, पद्मराग, मौक्तिक और प्रवाल है ।

“नीलकं वज्रकञ्चेति पद्मरागश्च मौक्तिकम् ।

प्रवालं चेति विज्ञेयं पञ्चरत्नं मनीषिभिः ॥”

(विधानपारि०)

हेमाद्रिकव्रतखण्डमें लिखा है—

“सुवर्णं रजतं मुक्ता राजावर्त्तं प्रवालकम् ।

रत्नपंचकमभ्यातम्” (हेमाद्रिव्रत०)

सुवर्ण, रजत, मुक्ता, राजावर्त्त और प्रवाल यही पञ्चरत्न है । पञ्चरत्नानोव उपदेशकत्वात् यत् । २ नीति-मर्गं कवितापंचक ।

“नाग. पोतस्तपा द्वयं हान्तिशक्यो यथाकम्म् ।

पंचरत्नमिदं प्रोक्तं विदुषाऽपि सुदुर्लभम् ॥” (काण्व०)

३ कामरूपके अन्तर्गत 'योगोमुक्ता' के सन्निकटस्थ नदीतीरवर्त्ती एक पर्यत । (फली०) ४ पञ्चचूड़ ऐश्वर्य-विशेष ।

पञ्चरात्रम् (स० पु०) पञ्च पञ्चवर्षा रम्मयो यन्त्र । पित्रादि
पञ्चवर्ष रम्मिष्यस्युः । सूर्यको विरचने पित्रान्ति पांच
वर्षं च, इतोपि पञ्चरात्रम् यन्त्रे सूर्यका बोध होता है
ह्यान्दोष उपाधिपदुर्गं यत्र प्रतिपादित हुआ है । यथा—
सूर्यरश्मिं पित्रान्, सुवह, नील, पीत और भोजित ये
पांच वर्षं है ।

पञ्चरात्रलोह (स० वृ०) वर्षलोह ।
पञ्चरात्र (स० वृ०) पञ्चविष्टोर्षो रमो वषाम् । १
पामलको, पावना । २ इरोतको इह ।
पञ्चरात्रादिह्यात्र (स० वृ०) रात्रा, गुण च परत्त,
अथ चौर परत्तमूकका काठा । यह पामनातनागत्र
माता मया है ।

पञ्चरात्रियन्त्र (स० पु०) पञ्चोक्तता, परवन्को सता ।
पञ्चरात्र (स० वृ०) पञ्चानां रात्रोर्षा समाहार अमात्रे
यन्त्र । १ रात्रिप सत्र, पांच रात्रोका समष्ट ।

“विद्यते पञ्चरात्र वा दशरात्रमथवा च ।
(चक्राणि)

२ पञ्चरात्रमात्र पञ्चोक्ततागमेद, एक पञ्च जो
पांच रात्रमें होता था । ३ वैश्वानरागमेद वैश्वान
धर्मका एक प्रसिद्ध यन्त्र । इस मापका नाम पञ्चरात्र
पङ्क्तिका कारण आरभ्य पञ्चरात्रमें इस प्रकार लिखा है—
‘रात्रपञ्च कान्वचन इव पञ्चवैपि सन्तम् ।

तेदेह पञ्चरात्रपञ्च प्रवर्गित मनीषिणः ॥’ (११२ व०)
रात्रका धर्म अतिगर्भवचन है, यह ज्ञान पांच
प्रकारका है, इतोपि इसका नाम पञ्चरात्र पड़ा है ।

पञ्चरात्रमतावच्छेदयोग्य पञ्चरात्र वा मागवत नाम
यि प्रसिद्ध है ।

पञ्चरात्रमत पति प्राचीन है । इदानींका विद्वान् है,
कि पञ्चरात्र वा मातृवतमतमें जो पादि वैश्वधर्म
लिखता है । बाह्यदेवानि चतुर्ष्वह, प्रेम और भक्ति इस
मतका प्रधान लक्षण है ।

महाभारतमें मोक्षधर्ममें नान्य योग पाशुपात,
वेद पादिके माय पञ्चरात्रमतका उल्लेख मिलता है ।

(मोक्षधर्म ३-१० व०)

भारतमें लिखा है “पुराकालमें उपरिचर (ब्रह्म) नामक
इतिहासिकपरायण परम धार्मिक एक राजा रहते थे ।

वही राजा मन्वसे पञ्चमे सूर्यसुवर्णनिःसृजन पञ्चरात्रगायत्रका
पञ्चमस्यन करती हुए विश्वको धरणा करके यन्त्रमें
वितरितकी पूजा करते थे । पञ्चरात्रगायत्रका पञ्च
मस्यन कर निरूपणार्थ चौर में मिलित यज्ञोप मनी
कायं किया करते थे । उनके मन्वसे पञ्चरात्रवित् प्रधान
प्रधान योषियमय गायत्रनिर्दिष्ट भोव्यद्रथ प्रीतिपूर्वक
मन्वसे पञ्चमे भोजन करते थे । (मोक्षधर्म ३३६ व०)

पञ्चरात्रको वर्णित चौर मुख्य विषयके शब्दधर्म
महाभारतमें दूसरे अरण्य निष्ठा है—“कुद पाञ्चवको
महाईमें एक महाभौर चतुर्ग युद्ध को पढ़े, तब महाभौर
मनुष्यदुर्गमें लके को वैश्वान्तिक धर्म (गोताधर्म)का
उपदेश दिया था वह मन्वको विदित है । वह धर्म
पति दुस्यवेत्त है, मुद्र स्वस्ति लसे नहीं जान सकते ।
सःकुममें मगवान् नागायकमें लम धामवेदस्यन वैशा
लिक धर्मको छति श्री, तभीमें वे इन्ने बारक क्रिये हुए
हैं । पञ्चमे धर्म परायण महाभौर सुचिह्निते अथ सासुदेव
चौर मोक्षके सामने गारटकी धर्मविषय पूजा, तब
लक्ष्मी लगे को कथा या लक्ष्मी वैश्वान्तिके
निष्कट धर्मन लिखा ।

‘सद्वा नागायकके वैश्वानुभार अथ लक्ष्मी सुवर्ण
निष्कटि, तब लक्ष्मी पामलगत धर्मका पञ्चममन कर
देवी और वितरितको पाराधना से तो । जोहि किन्त
नामक महर्षिगत धर्म धर्मके चतुर्वर्षी हुए । बादमें
वैश्वान्त नामक महर्षियोंने किन्तमें वह धर्म ले कर
चन्द्रको प्रदान किया । इसमें बाद वह धर्म पञ्चार्थित
हो गया । फिर ब्रह्मदेव नागायकके चतुर्ष्वे द्वितीय बार लक्ष्मी
ले कर चन्द्रमासे वह धर्म पञ्चव क्रिया चौर इन्द्रको
दे दिया । इन्द्रके नामविष्णोमें लसे प्राप्त किया । जोहि
वह सनातन धर्म नागायकके मायाप्रमाणने पुनः निरो-
दित हो गया । पञ्चम ब्रह्मण नागायकके बान्धने लक्ष्मीय
बार लक्ष्मी हो कर विरने लम धर्मका पात्रिका क्रिया ।
महर्षि सुवर्ण तपस्या निष्कट चौर लमगुणके प्रमाण
द्वारा नागायकने वह धर्म पा कर प्रति जिन तीन बार
करके धर्मका पाठ करते लगे । लम धर्मका त्रिमोक्ष
नाम पङ्क्तिका यथा धारण है । तदनन्तर बाहुने सुवर्णसे,
जोहि महर्षि लक्ष्मी बाहुने चौर यन्त्रमें मनुष्यने महर्षियोंने

इसे पाया । वृद्धमें वह फिरसे नारायणमें विकीत हो गया । इस बार ब्रह्मानि नारायणके कर्णमें पुनः जन्म ले कर आरख्यक वेदके साथ सरक्ष्य उस ओट धर्मको प्राप्त किया । पं छे उन्हींने स्वरोचित्र मनुको, स्वरोचित्र मनुने अपने लडके गन्धर्वको और गन्धर्वने पुनः टिक्पाल सुवर्णाभकी प्रदान किया । तैतयुगमें वह धर्म अन्तर्हित हुआ था । इस बार ब्रह्मानि जब नारायणको नाभिकामे जन्म लिया, तब नारायणने उसे ब्रह्माकी, ब्रह्मानि मनतृकुमारकी, मनतृकुमारने प्रजापति वोरणी वोरणने अपने लडके रोभ्यकी और रोभ्यने टिक्पालि कुक्षिकी वह धर्म अर्पण किया । अन्तमें वह धर्म पुनः अन्तर्हित हो गया ।

इसके बाद ब्रह्मानि अण्डमे जन्म ले कर नारायणने सुवर्णमें पुनः उस धर्मको पाया । पौंड्रि ब्रह्मानि वहिर्पदोंकी, वहिर्पदानि ज्येष्ठ नासक एक मामवेदवारदशी ब्राह्मणकी और ज्येष्ठने महाराज अत्रिकम्पारकी यह धर्म सिखलाया था । अन्तमें वह सनातनधर्म तिरोहित हो गया । पश्चात् ब्रह्मानि जब सतत बार नारायणकी नाभिसे जन्म लिया, तब नारायणने उनके मानने यह धर्म गाया । पौंड्रि ब्रह्मानि टक्का, टक्कने अपने बडे लडके आदित्यकी, आदित्यने विवस्वान्की, विवस्वान्ने मनुकी और मनुने पुन इक्ष्वाकुकी वह धर्म अर्पण किया । तभी से ले कर आज तक वही धर्म चला आ रहा है । प्रलयकाल उपस्थित होने पर वह पुनः भगवान्में लीन हो जायगा । हरिगीता (भगवद्गीता)-के यतिधर्म प्रसङ्गमें वह धर्म कौत्तित हुआ है । देवर्षि नारदने नारायणसे वह ऐकान्तिक धर्म प्राप्त किया । वह सनातन सत्य धर्म जो सवे आदि, दुर्ज्ञेय और दुर्नुष्टेय है । किन्तु सन्ध्याम भ्रमावलम्बो ही उसका प्रतिपालन किया करते हैं । ऐकान्तिक धर्म और अहिंसाधर्म युक्त सत्कर्मके प्रभावसे नारायण प्रसन्न होते हैं । उस महात्माकी कोई तो केवल अनिरुद्धमूर्त्तिमें, कोई अनिरुद्ध और प्रयुञ्ज-मूर्त्तिमें तथा कोई अनिरुद्ध, प्रयुञ्ज, महर्षण और वासुदेव मूर्त्तिमें उपासना किया करते हैं । ये समतापरिशून्य, परिपूर्ण और आत्मस्वरूप हैं । इन्होंने प्रथिव्यादि पञ्चभूतके गुणोंकी अतिक्रम किया है । ये मन और

पद्म इन्द्रियरूप हैं । ये त्रिलोकके नियन्ता, सृष्टिकर्ता, अकर्ता, कार्य और कारण हैं । ये ही इन्द्रानुमार जगत्की पाय कोटा किया करते हैं ।'

(मोक्षधर्म उ०८ अध्याय)

मोक्षधर्मके अन्वयान्तमें लिखा है,—

“नरनारायणने नारदकी समीपन करके कहा, 'देवर्षे ! मनुने श्वेतद्वीपमें भगवान् नारायणकी जो अनिरुद्ध मूर्त्तिमें देखा है, हमरको बात तो दूर रहे, प्रजापति ब्रह्माकी भी आज तक उनके दर्शन नहीं हुए हैं । तब उनके निवान्त सक्त हो, इसी कारण उन्हींने तुम्हें अपनी मूर्त्ति दिखाना है । ये परमात्मा कर्ण तरो-निगमन है, यहाँ हम दोनोंको छोड़ तीसरे नहीं जा सकते । वो स्वयं जगं विराजित है, वहाँको प्रभा महत्स सयं रत्नान मसुञ्जन है । उसी विष्णुपतिने चमागुण उपपन्न हुआ था जिस चमागुणने पृथ्वी भूषित है । रस उन्हीं तर्षनी महिनकर द्वेषतामे उत्पन्न हो कर मत्तनमे आश्रय किये हुए है । सूर्यरूपात्मक तेज लाभ करके प्रभाजाल फैला रहे हैं वायु उन्हीं पुरुषोत्तमसे समुत्पन्न स्वर्गगुण मान करके वह रहते हैं । शशके उन्हींमें निजान कर आकाशमें आश्रय लेनेमें आकाश अन्य वस्तु द्वारा अनाहत रहता है । सर्व भूतगत मन उनसे समुत्पन्न हो कर चन्द्रमाको आश्रय किये हुए उन्हें प्रकाशमानो कर रहा है । तमोनामक दिवाकर मभी लोकोके द्वारस्वरूप है । मुसुत्तु व्यक्तिकण सबसे पहले उस सूर्यमण्डलमें प्रवेग करते हैं । पौंड्रि वे आदित्यमें द्रव्यदेह, षट्शय और परमाणुस्वरूप हो कर उस सूर्यमण्डलके मध्य नारायणमें, नारायणमें निष्क्रान्त हो कर अनिरुद्धमें, पौंड्रि मनःस्वरूप हो कर मधुञ्जमें, प्रयुञ्जमें निर्गत हो कर जौरुञ्जक महर्षणमें और अन्तको सङ्घर्षसे त्रिगुणहोन हो कर निर्गुणात्मक सवेके अधिष्ठानभूत जेवज्ञ वासुदेवमें प्रवेग किया करते हैं ।' (आदिपर्व मोक्षधर्म ३ ५ अ०)

महाभारतके श्रेष्ठधर्मकोत्तनप्रसङ्गमें वासुदेव सखन्धोय जो सब कथार्थ लिखे हैं, वे ही पञ्चरात्रके प्रतिवाद्य विषय हैं । वासुदेवकी परब्रह्मरूपमें स्वीकार करना ही पञ्चरात्रका उद्देश्य है ।

पद्मरात्रि के प्रति प्राचीनतमो व्यापनाई किए महा-भारतमें जो जो व्याख्यायिताये बर्णित हुए हैं, मुग विद्वान् उन्हें स्वीकार नहीं करते। महाभारतमें पद्मरात्रिका मूला नाम साख्त नाम बतलाया है (१)। बहुत उपरिचर इसी साख्त विधि (२) पद्मवार वर्णानुष्ठान करते हैं। फिर महाभारतमें ही विद्या है कि रथस्यमें चतुर्भुजो सुख्य दिव्य बासुदेवो लस बभूव प्रदाम विद्या धा (३)। रामानुजप्रथामीन 'साख्त-मूर्धता नामक एक पद्मरात्रपदिका उल्लेख किया है। रामवतमें श्रीकृष्ण साख्तम (१।१२।११) धीर साख्त पुत्र्य '१८।१९' नामसे परिचित हुए हैं। भागवतमें लिखा है, कि साख्तमय यादवा को एक शाखा (१।१३।१३ अ।१८) है, जो लोच बासुदेवको पर-ब्रह्म समझ कर लनको धरणा करते हैं। भागवतमें साख्तमय चतुर्भुज को वरिष्ठो विद्येय उपामना लिको है यह पद्मरात्रयाश्रातुसोदित है। इन सब प्रमाणोंसे ज्ञात होता है कि चतुर्भुजचन्द्रमयीकृतने जो हम पद्य राम वा भागवत-मतका प्रचार किया होया। श्रीकृष्ण के पनुरक्त साख्तोंमें जो सबसे पहली वह धर्ममत पद्य विद्या धा इस कारण महाभारतादिमें इसे साख्तधर्म बतलाया है। बासुदेवको मयवान् समझ कर मताबलव्यग्य लनको पूजा करते हैं इस कारण से भागवत कहताते हैं पतञ्जलिसे महाभारतमें लमहा

पामाम पाया जाता है। पाद्मरात्रमय नाम देवकी नारायण समझते हैं। इसीसे पद्मरात्रयाश्रया नारायणता शास्त्रके अध्या मानते हैं।

डाक्टर मन्नारकर विद्या है—' बामुदेव साख्त वयोय एक प्रसिद्ध राजा हैं। मन्वन्त जनको मूल्य ही बाद वे साखता व निष्ठ देवसक्यम प्रकृत हुए जो 'मि धीर लसो उपामनासे विद्येय मत निबन्धा होना। धीरे धीरे साख्तोंसे मूले मूले भारतवासियों ने यह मत पश्य लिया। पद्मते अब इस मतको खटि हुई, तब यह वना प्रसिद्ध न था। धीरे धीरे यह धारपत्र की कर पद्मरात्रयाश्रमें परिचित हुआ। इस समय जना स हितादि रथे गये। इस बासुदेव धर्म में परवर्ति-कालको विष्णु नारायण गोविन्द धीर कृष्णके नाम पावे पाए लोने जना प्रचारक प्राधुनिक धर्मधर्म बर्णको खटि हुई।"

पाद्मरात्रमत धेदुमूला है ना नहीं, यह से कर एक समय धीर पान्दीनम यन रथा था। गह्वराचार्य ने धीरमयासे पद्य। तबो धेदुदेवय बतला कर लस-का उल्लेख इस प्रजा किया है।

"भागवत (७।१।११)-गय समझते हैं कि महाभान् बासुदेव एक है जो निरकाल, ज्ञानवतु धीर परमायं तत्व हैं। वे धर्मके चार प्रकारमें विभक्त करके प्रति-ष्ठित हैं। बासुदेवमूला मद्रूपबधुध, मद्रूपबधुध धीर अनिदधुध य चार प्रकार मद्रूप बधुधके लक्षण हैं। बासुदेवका मूला नाम परमात्मा, सद्रूपका अधि, मद्रूपका मन धीर अनिदधुधका मूला नाम पद्मरात्र है। इन चार प्रकारके मद्रूपमें बासुदेवमूला ही परा प्रकृति वा मूलकारण है, मद्रूपके पादि बर्णोंसे मद्रूपय हुए हैं। लक्ष्मी मद्रूपकादि लसो पराप्रकृतिवा कार्य हैं। जो बर्णोंके धीय काल तब बायमनोवाक्यने मयमद्रूप ममल, पूजाद्रुवादि पाहरन पूजा, पटाधरादि मयलको जय धीर योगमात्रमें रम रहनेसे निष्पाप होता है। भागवतमय को कहते हैं कि नारायण प्रकृतिसे चतुरिभ, परमात्मा नामसे प्रकृत धीर महात्मा हैं जो श्रुतिबद्धक लको है तथा वे जो धर्मको धर्मत प्रचारों वा मद्रूप भाषिमें प्रकृतित बतलाने हैं। सो भागवतमतका यह

- (१) "ततो हि पालये बर्णे भ्याम् शोडानवविदा।"
(१२।१३।१३)
"कुर्वितो दुर्कारण वापतेर्पांरिंते वरा।"
(१२।१३।१३)
- (२) "बालत विनिमलधाय मद्रूपं चतुर्भुजं चतुर्भुजं।
पद्मरात्रक द्वैव लक्ष्म्येय विनामस्य॥"
(१।१३।१३)
- (३) "धर्मैव महात्तमं च तत्त्वं धर्मोत्तमं।
वर्षितो हस्तितासु ब्रह्माविविद्विगिता॥"
(१२।१३।१३)
- "बभूवोऽप्यथैव दुर्गायववर्षिते।
मर्तुंने विमलके च लीला जगदा रवः।" (१२।१३।१४)

अंग निराकारणोय नही' है अर्थात् श्रुतिमङ्गल है ; केवल परमात्मा 'एक प्रकारके होते और अनिक प्रकारके भी होते' इत्यादि श्रुतिमें परमात्माके बहुभावमें अवग्यान कहा गया है । 'निरन्तर अनन्यचित्त हो कर अभिगमनादिरूप आराधनामें तत्पर होना होगा' यह अंग भी विरुद्ध नहीं है । क्यों कि श्रुति-स्मृति दोनोंमें ही ईश्वरप्रणिधानका विधान है । वे लोग कहते हैं, 'वासुदेवमें सङ्कर्षणका, सङ्कर्षणमें प्रद्युम्नका और प्रद्युम्नसे अनिरुद्धका जन्म होता है ।' इस अंगके निराकरणके लिए यह वेदान्तमूल कहा गया । मूलका अर्थ यह है 'अनित्यत्वादि दोष प्रयुक्त होता है, इस कारण वासुदेवमें जन्म परमात्मामें सङ्कर्षणमंजक जीवको उत्पत्ति अभभव है ।' जीवकी यदि उत्पत्तिमान् मान लें, तो उसमें अनित्यत्वादि दोष रहैगा ही । जीव यदि अनित्य अर्थात् नश्वरस्वभावका हो, तो हमें भगवत्प्राप्तिरूप मोक्ष ही ही नहीं मकता । कारणके विनाशमें कार्यका विनाश अवश्यभावो है; प्राचार्य व्यासने जीवकी उत्पत्ति (२३३७) सूत्रमें यह निषेध नहीं किया है । अतएव भागवतो'की यह कल्पना असङ्गत है ।

वह कल्पना जो असङ्गत है, उसके लिए हेतु भी है । क्यों कि लोक-मध्य देवदत्तादि भी कर्त्तामें दातादि कारणकी उत्पत्ति दृष्टिगोचर नहीं होती । अथच भागवतो'ने वर्णन किया है, कि सङ्कर्षण नामक कर्त्ता, प्रद्युम्न नामक कारण मनको उत्पादन करत है । फिर कोई कर्त्ता जन्मा प्रद्युम्न (मनु)-से अनिरुद्ध (अहङ्कार)-की उत्पत्ति अतलति है । भागवतो'की इन सब कथाओंकी इस लोग विना दृष्टान्तके ग्रहण और मान नहीं सकते । उस तत्त्वका अवबोधक श्रुतिवाक्य भी नहीं है ।

भागवतो'का ऐसा अभिप्राय हो सकता है कि उक्त सङ्कर्षणादि जीवभावान्वित नहीं है । ये सभी ईश्वर हैं, सभी ज्ञानशक्ति और ऐश्वर्यशक्ति, बल, वीर्य तथा तेजसमयत्र हैं, सभी वासुदेव हैं, सभी निर्दोष, निरक्षित और निरवयव हैं । सुतरां उनके सम्बन्धमें उत्पत्ति-अभभव-दोष नहीं है, यह पहली ही कहा

जा चुका है । उक्त अभिप्राय रहने में उत्पत्ति-अभभव-दोष या जाता है, सो क्यों ? कारण यों है—वासुदेव, सङ्कर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध वे परस्पर भिन्न हैं, एकात्मक नहीं हैं, अथच सभी समधर्मों और ईश्वर हैं ; इस प्रकार अभिप्रेत होनेसे अनेक ईश्वर स्वीकार किए जा सकते हैं । किन्तु अनेक ईश्वर स्वीकार करना व्यर्थ है । क्यों कि एक ईश्वर स्वीकार करनेमें ही कार्य सिद्धि हो सकती है । फिर भगवान् वासुदेव एक अर्थात् अद्वितीय और परमायतत्त्व हैं, इस प्रकार प्रतिज्ञा करनेमें मिद्वान्तात्मिदोष नगता है । ये चतुष्टय ही भगवान्के ही हैं तथा वे सभी समधर्मों हैं, ऐसा होने पर भी उत्पत्ति-अभभव-दोष रह जाता है । कारण लोटा बटा नहीं होनेसे वासुदेवमें सङ्कर्षणका, सङ्कर्षणमें प्रद्युम्नका और प्रद्युम्नसे अनिरुद्धका जन्म नहीं हो सकता । कार्य कारणके मध्य अविशय अर्थात् लोटा बटा रहना ही नियम है, जैसे मछी और घटा । अविशय नहीं रहनेमें कोन कार्य और कोन कारण है, उसका निर्देश नहीं किया जा सकता । फिर भी देखो, पञ्चरात्र-मिद्वान्तीगण वासुदेवादिका ज्ञानैश्वर्यादि तारतम्यकृत भेद नहीं मानते, बल्कि चारों व्यूहोंको अन्तमें वासुदेव मानते हैं । भगवान्के व्यूह चार ही मंश्यामें पर्याप्त हैं, सो नहीं । ब्रह्मादि सूक्ष्म पर्यन्त समस्त जगत् भगवान् व्यूह है, यह श्रुति और स्मृतिमें दिखलाया गया है ।

भागवतो' (पंचरात्रादि)-के शास्त्रमें गुण, गुणिभाव आदि नाना विरुद्ध कल्पनायें देखी जाती हैं । स्वयं ही गुण और स्वयं हो गुणो हैं, यह अवश्य ही विरुद्ध है । भागवतो'का कहना है कि ज्ञानशक्ति, ऐश्वर्यशक्ति, बल, वीर्य, तेज ये सब गुण हैं और प्रद्युम्नादि भिन्न होने पर भी आत्मा भगवान् वासुदेव है और भी उनके शास्त्रमें वे दर्शान्दा भी की गई हैं । यथा—

"शाखिल्यने चारों षोडशमें परम अर्थः न पा कर अन्तमें यह शास्त्र प्राप्त किया था इत्यादि । इन सब कारणोंसे भागवतो'की उक्त कल्पना असङ्गत और असिद्ध है ।" (१)

(१) आनन्दगिरिके शंकरदिग्विजयके ८वें प्रकरणमें पञ्चरात्र निराकरण प्रसंग है ।

शङ्कराचार्यने पञ्चांगमनका उद्धार कर कमका को व्यवहन किया है पञ्चरात्र मतावलम्बो रामानुज पौर मन्त्राचारो पालि इषी पद्यमोचोन मानने है। परम ब्रह्मचर रामानुजाचार्यने एषी श्रीमाधमें पूर्वपद्यमे श्रीमा उपरोक्त शङ्कराचार्यको सुत्रियोंका उद्धार कर जिन प्रकार कमका निराकरण किया है, उसमे पद्यमे पञ्चांगमनके सम्बन्धमें बहुत कुछ जाना जा सकता है। रामानुजका मत लोके उद्धृत किया गया है—

'अपिचादि शास्त्रकी तरह मयबहुत्र परममन्त्रमवाहन पञ्चांगशास्त्रका सो कोई कोई अनुतिमुनक पद्य शङ्कराचार्यने प्रामाण्य निराकृत हुआ है। उक्त पञ्चांगशास्त्रमें पद्य भागवन प्रकिया दी हुई है कि परम कारण ब्रह्मब्रह्म वासुदेवते महर्षय नामक जीवको उत्पत्ति महर्षयने प्रयुक्त नामक मनकी उत्पत्ति पौर मनने अनिदयम एक पञ्चद्वारकी उत्पत्ति हुई है। किन्तु यहाँ जीवकी उत्पत्ति नहीं बतलाई जा सकता। क्योंकि यह नृतिविद्वद्व चर्चातु अनुतिमुनक है। ज्ञान मन्त्रक जीव कमी लगे जनमता पौर न कमी मता ही है' इन बातें द्वारा सभी नृतिविधि जीवको पना दित्य चर्चातु उलपितादिब बधा है। महर्षयने प्रयुक्तम एक मन की उत्पत्ति बतलाई गई है यहाँ पर कर्ता जीवने कारण मनका उत्पत्तिमभव नहीं। कारण परमात्मने जो प्राण मन पौर सभी इन्द्रिय उत्पन्न हुई है, नृतिमें भी यही कहा है। परतएव यदि जीव महर्षयके कारण मनकी उत्पत्ति कई, तो परमात्मने भी उत्पत्ति बन बाटे नृतिमें नाम बिरोध होता है। परतएव यह शास्त्र नृतिविद्वद्व चर्चाका प्रतिपादन करता है। इय कारण इनका प्रामाण्य प्रतिपिन्न होता है। वां गन्ध द्वारा वे पद्यका वेपरोक्त अर्थमा करने कहते हैं, कि ब्रह्मविद्यानादि सङ्घर्ष, प्रयुक्त पौर अनिद्वद्व इनका परब्रह्मभाव विषयमाग रहनेके लक्षितपादक शास्त्रका प्रामाण्य प्रतिपिन्न नहीं हो सकता चर्चातु से महर्षयनादि आचार्य जीवको तरह अनिद्वद्व नहीं है, ये सभी ईश्वर हैं, सभी ज्ञान ऐश्वर्य, शक्ति, बल, वीर्य पौर ईश्वर चादि ऐश्वर्यधर्मसे युक्त हैं, परतएव ब्रह्म नादि-शास्त्रका मत परमालिप्त नहीं है। 'जीवोत्पत्तिविद्वद्व

अभिहित हुआ है जो मानवतप्रक्रियामे अनिद्वद्व है यह सभी को उक्ति हो सकती है। मानवतप्रक्रिया इस प्रकार है कि जो स्वाधितब्रह्मचर वासुदेवात्म्य परममन्त्र से श्रीमा अनिद्वद्व है, वे अपने इच्छानुसार स्वाधित पौर मन स्वर्णोपतानयता चार प्रकारमें पद्यमान करती हैं। पौष्कररक्षितामें इस प्रकार किया है कि ज्ञानगत ब्रह्मचोसे कर्तव्यताहेतु स्वयं प्रा द्वारा यहाँ चतु रात्म्य उपासित होता है, यही आत्म है।' यह चतुरात्म्य उपासना जो वासुदेवात्म्य परममन्त्रको ही उपासना मानी गई है वह सात्वतस चितामें मो उक्त हुआ है। वासुदेवात्म्य परममन्त्र, सङ्घर्ष, पाद गुण्य मय मुख्य अङ्क पौर विमय से मय मन्द मित्र है पौर पश्चिमात्पुनार मन्त्रोसे ज्ञानमूत्र क कम द्वारा चर्चित हो कर सम्बन्धयमे लब्ध हुआ करता है। विमवाचर्षने अङ्कमानि पौर अङ्कान्ने वासुदेवात्म्य सुख परममन्त्र प्राप्त हुआ करता है। विमय चर्चातु ज्ञान पादि प्राप्ताभावमनुक, सुख चर्चातु शिवमन्त्र पाद, गुण्यविषय, अङ्क चर्चातु वासुदेव, महर्षय, प्रयुक्त एव अनिद्वद्व रूप चतुर्ष्व है। पौष्करस चितामें किया है 'इस शास्त्रने ज्ञानमूत्रक कम द्वारा वासुदेवात्म्य पद्यमन्त्र ब्रह्म प्राप्त हुआ करता है।' परतएव महर्षयनादिका भी परब्रह्मत्व किहू हुआ कारण वे श्रीव इच्छानुसार विद्वद्व कारण करते हैं। लक्ष्यविषय न कर वे बहुकपो म उक्त भेरी हैं, यह नृतिविद्व पौर मन्त्रागतब्रह्म है। इस कारण वेच्छाज्ञान विद्वद्व कारण कारणेक हीतु तद मिवातक शास्त्रका प्रामाण्य प्रतिपिन्न नहीं है। सम शास्त्रमें महर्षय, प्रयुक्त पौर अनिद्वद्व से तोम जीव, मन पौर पञ्चद्वार मन्त्रके पश्चिमाता हैं। इमीने इन्ने जीवनादि मन्त्रो जो अभिहित किया गया है इसमें बिरोध नहीं है। जिन प्रकार पाकाय पौर प्राणादि मन्त्र द्वारा परब्रह्मका अभिधान हुआ करता है चर्चातु जिन प्रकार पाकाय पौर प्राण परब्रह्मने स्वक्य नहीं होने पर भी पाकाय पौर प्राण परब्रह्म माने जाती है वसो प्रकार जीव, मन पौर पञ्चद्वारचर्चाके पश्चिमाता महर्षय, प्रयुक्त पौर अनिद्वद्वकपमें अभिहित हुए हैं।

शास्त्रने जीवोत्पत्ति प्रतिपिन्न हुई है, कारण परम

संज्ञितानि लिखा है, कि चैतनारहित, केवल परप्रयोजन-साधक. प्रथम नित्य, सर्वदा विक्रमयायुक्त, त्रिगुण और कर्मियोंका क्षेत्र यही प्रकृतिका रूप है। इसने माय माय पुरुषका सम्बन्ध व्यामिरूपमें है, यह सम्बन्ध घनादि और अनन्त है, यह परमार्थ सत्य है। इन प्रकार सभी संज्ञितानोंमें जोषही नित्य माना है, इस कारण उपासी उत्पत्ति पञ्चरात्रके मतमें प्रतिषिद्ध हुई है। जिसको उत्पत्ति होती है उसका विनाश अवश्यभावो है। जोषको उत्पत्ति स्वीकार करनेसे उसका विनाश भी स्वीकार करना होगा। जोष जब नित्य है, तब नित्यत्व स्थिरा-कृत होने पर उत्पत्ति आप ही आप प्रतिषिद्ध होगी। पहले परमसंज्ञिताने लिखा है, कि प्रकृतिका रूप मन्वत विक्रमयायुक्त है, उत्पत्ति विनाश आदि जो है उन्हे सततविक्रियाई मध्य अन्तनिविष्ट जानना होगा। अतएव सद्धर्षणादि जोषरूपमें उत्पन्न होती है, यह जो दोष शहराचार्यने लगाया था सो निराकृत हुआ।

कोई कोई कहते हैं, कि 'शाण्डिल्य सःङ्गवेदमें पराशक्ति न पा कर पञ्चरात्रशास्त्र अध्ययन करते हैं, इसमें वेदको निन्दा हुई। क्योंकि वे वेदमें पराशक्ति लाभ नहीं कर सकते, अतएव यह पञ्चरात्रशास्त्र वेदविरुद्ध है।' जो वेदविरुद्ध है, वह कभी भी ग्रहणीय नहीं है। इस कारण यह शास्त्र प्रामाण्य नहीं है। इसमें उत्तरमें ये लोग कहते हैं, कि नारद और शाण्डिल्य ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और इतिहास पुराण आदि ये सभी विद्यास्थान होनेके कारण मन्वविद और अत्मविद थे। शाण्डिल्य वेदान्तवेद्य वासुदेवाख्य परब्रह्म-तत्त्वम अगत हुए हैं। वेदका अर्थ प्रत्यन्त दुर्ज्ञेय है, इसीसे सुखावबोधके लिए इस शास्त्रका आरम्भ हुआ है परमसंज्ञिताने इस प्रकार लिखा है,—

'हे भगवन् । मैंने साङ्गोपाङ्ग सभी वेद विस्ताररूपसे अध्ययन किए हैं और वाक्ययुक्त वेदाह आदि भी सुने हैं, किन्तु इनमेंसे जिससे सिद्धि लाभ हो, ऐसा श्रेय पथ विनाशप्रयुक्त कहा भी देखनेमें नहीं आता।' फिर भी लिखा है, 'निखिल विद्यावित् भगवान्ने हारभक्तिके प्रति दया दिखला कर सभी वेदान्तोंका यथासार संग्रह कर डाला है। अतएव उन निखिल ज्ञेयके विरोधस्वरूप

जो दृष्टान्त, तद्वैकतान और अनन्त ज्ञानानन्दादि अपरिमित स-दृगुणमागम वेदान्त वेद पञ्चरात्र है, उन्को अपरिमित वास्तव्य भोगेभ्य वास्तव्य और ओदायमानो भगवान् पत्वा इत्य वासुदेवने चातुर्येण और चातुरा-यस्य मयामि अवस्थित भक्तोको धर्म अर्थ, काम और मोक्षान्य पुरुषार्थ चतुष्टयमें उन्मुख देल गया स्वस्वरूप, स्वभिन्निरूप स्वस्वरूपप्रदक्षिणे प्रागधन और आराधने किं फलने ये मयश्चत्पद, अपरिमित वास्तव्यमन्वित अगम यजु आदि चारों वेदोंको सर रके निष्ठ दुरव-गाह समझ कर स्वयं उम वेद मष्टायका यथायथ अर्थ ज्ञापन पञ्चरात्र नामक शास्त्र प्रणयन किया है, यह स्पष्टरूपसे प्रतीत होता है। परन्तु, दृष्टव्य दृष्टव्य व्याख्या-गणन क्रिया एक विरुद्धांगके मूलचतुष्टयकी प्रथमांश ससम्भ कर उसकी जो व्याख्या की है, वह सूत्राचरके अननुगुण और सूत्रकारका अभिप्रेत नहीं है। सूत्रकारने वेदान्ताभिधायि सूत्रोंका प्रणयन कर वेदोप-हृत्करणके निमित्त जो लक्ष्णोंको भारतसंज्ञितानों रचना की है, उसके मात्रधन-रत्नोखको जगह ज्ञानकाण्ड-में कहा है, कि श्रेष्ठ, ब्रह्मचारा, वानप्रस्थ और भिक्षुक, इनमेंसे यदि कोई व्यक्ति सिद्धि अवनयन करने को इच्छा करे, तो पहले उसे किसी देवताको उपासना करने चाहिये इसीसे आरम्भ करके अतिमहत् प्रवन्ध द्वारा उन्हीं पञ्चरात्र-शास्त्रों प्रकृति भी प्रति-पादनका है। इस प्रकार लिखा है कि 'यह शास्त्र अति-विस्तृत भारताख्य नमो मतिरूप मन्वन्-दण्ड द्वारा दक्षिणे-ष्टत और नवनीतका तद्वत् उद्धृत हुआ है। जिस प्रकार द्विपदों-मध्य ब्राह्मण, निखिल वेदमें आरम्भ और ओषधयामि अमृत अष्ट है, उसी प्रकार सभी शास्त्रानि चतुर्वेदमन्वित और पञ्चरात्रानुगम्यित यही शास्त्र अष्ट मान गया है। यह सहोपनिषद् है, यह परम-श्रेय है, यही परब्रह्म है और यही ऋग्वेद, यजु, साम और आङ्गिरस द्वारा सम्बलित अनुत्तम हित है।' अथवा यही अनुशासन प्रमाणरूपमें गण्य होगा। यहाँ सांख्य-योग शब्द द्वारा ज्ञानयोग और कर्मयोग निर्दिष्ट हुआ है।

वेदव्याहने भीष्मपर्वमें भी कहा है—'सात्वतविधि-

पवनाभरणारो सङ्घर्ष द्वारा जो शक्ति प्रदुष्ट है
ब्राह्मण अग्नि, वैश्व और अतिसन्धु शक्ति जो उदा
साधनको अर्चना, सेवा और पूजा करने का शक्ति ।

पतयत्र त्रिकोनि साखनगाम्यको इस प्रकार मुरि
प्रय ना और खेहता प्रतिगाम्य को है जो वेदविद्वत्का
मयमात् सादरायको किम प्रकार वेदमन्त्रिय पर
ब्रह्मस्यदप पासुदेव रचनात्पर साखनगाम्यका पमा-
माया कहेंगे ?

धिर भी लको कहा है 'हे मुनि ! सांख्य योग
पञ्चरात्र वेद और पाशुपत इन सबका ही अन्तर्गत्त जपर
पादर है । शाश्वतमायमें ही शाश्वति प्रतिविष्ट रूप
है पतयत्र यह समस्त समान है ना लदा ? समस्त मा
तको नि आरोग्यको अत्यन्त प्रवर्तमाना को है । वे सब
कदा एक निष्ठ हैं पञ्चका प्रवर्तनित । इस पञ्चका कला
यह है कि - सांख्य योग, पाशुपत, वेद और पञ्चरात्र वे
सब का एकत्वप्रतिपादनकारी हैं पञ्चका प्रवक्
प्रवक्, तत्त्वके प्रतिपादयिता ? पञ्चका वे ही एकत्वप्रव
प्रतिपादन करे गे, क्या बड़ा तत्त्व है ? जिस समय प्र-क
प्रवक् तत्त्वको प्रतिपादयिता कोगी तम समय इ-ध
परस्पर निरन्तर पञ्चको प्रतिगमनपरता और वस्तु
निष्ठप्रकारमात्रके हेतु एव ही प्रमात्र स्वाचार्य होना ।
बहु प्रमत्त ही क्या है ? इसका उत्तर निम्नलिखित है
शक्तवै । इन सब प्रामो की नागामत समस्तो निरन्तर
ब्रह्मा अग्नि है । इत्यादि रूपने पारम्पर्य कर अ-पत्त
धिरस्वर्गार्थ और पश्यतस्तत्तत् सांख्ययोग तथा पाशुपतका
पी विश्व प्रतिपादन कर वेदका प्रविष्टत्व स्थापन
किया है । स्वयं नाशय निश्चिन पञ्च तत्त्वने लक्ष
है ही प्रामो वस्तु ही प्र साह चिन्ता है और तत्त्व
तत्त्वामिहित तत्त्वोके यह विश्वब्रह्मनाशय - इत्यादि
बाध्य द्वारा ब्रह्मालम्बता अनुभवानकारो मयो एव
माम न रायक को लक्षा है, बसो प्रवर्तमाना । पत
एव वेदान्तवेद्य पाशुपतमूत्र स्वयं एव । इन
पञ्चरात्रके ब्रह्मा है और वह तत्त्व ही तत्त्वकूप तथा
तदुपातनाभिवाचक है । इसीसे तम तत्त्वमें इतर तत्त्वका
बाधारण्य है । यदि कोई भी उदात्त नदा कर
पञ्चका ।

तमो तत्त्वने निष्ठा है, कि नाश्व, योग, वेद और
पारम्पर्य के परस्पर प्रमो प्रमो के एव ही पञ्चका प्रति
पादन करती हैं, इन कारण ठसका पञ्चरात्र नाम रखा
गया है ।

पञ्चरात्र पञ्चि प्रतिपत्त, धीमोत्पयमन्त्रिमादि
यम और वेदोक्त अमरत्वकूप पञ्चोकारक पारम्पर्य
इत्यादि नामना तत्त्वमसुदायके ब्रह्माध्यकल योगको ब्रह्मो
पासना प्रवर्तता और अमन्त्रो तदाराधनाकूपताका पमि
दान कर जो एवमात्र ब्रह्मत्वकूपका प्रतिपादन किया
है इस पञ्चरात्रतन्त्रमें ही पञ्चरात्र नाशुपतने स्वयं ही
इम मसुदायके विगहकूपसे प्रतिपत्त किया है । पतयत्र
साध्य योग पञ्चरात्र, वेद और पाशुपत के पात्रप्रमात्र
है एक हेतु द्वारा अणुप्रक करना उचित नहीं । तत्त्व
प्रतिपत्त अणुप्रमात्रको ही प्रवोकार करना विधिय है ।

शान्तात्मनः शीघ्रोत्तमूत्रमायको टोकां सुदृग्ना
चार्येन मन्त्रो प्राकीयना द्वारा ब्राह्मपुराणादि नागा
शास्त्रोऽ ममावादि उद्भूत करके पञ्चरात्रगात्रके प्राधान्य
स्थापना विद्या भी है ।

पञ्चरात्रमन्त्र अणुवेदके वाचसपेय शास्त्रात्मनार
संस्कार किया करते हैं । इनमेंसे त्रिकोत्र पञ्चवन
शास्त्रात्मनार संस्कारादि सम्बन्ध होते हैं । पञ्चरात्रोका
हता है कि स नार बन्धने सुविधान करके पांच
उपाय हैं । १ म आयमनावाक्य म यत करके देवमन्दि
रामियोग, प्रातःपुन्य और प्रविपातपूजक मयवहात्त-
धना । २ म भगवद्गाराहनाके विद्य पुण्यचयन और पुण्या
अ मदान, ३ म भगवत्पूजा । ४ म मासवतगात्रपुन
न्यन पार ममन तथा ५ म तन्म्या पूजा ध्यान और
पारम्पर्य एव भगवान्के ऊपर सम्पूर्ण चित्तार्पण । इस
प्रकार लिखयोग और आनयोग द्वारा सासुदेवत्वाम होती
है तथा तन्के साधिध्यानामके साथ भगवत्त्व परमेष्ठ-
न के निर्वान सुनिश्चाम करते हैं ।

नारदीय पञ्चरात्रमें - १ ब्राह्म २ शैव, ३ कोमार,
४ वासिष्ठ, ५ कापिल ६ शीतमोय और ७ नारदीय इन
नात प्रकारके पञ्चरात्रोका उल्लेख है ।

ब्रह्मवेत्तपुराणके मतमें—पञ्चरात्र ५ है १ वासिष्ठ
२ नारदीय, ३ कापिल, ४ शीतमोय और ५ परमहंस

रीय पञ्चरात्र । (ब्रह्मवै० जन्मख० १३२ अ०) रामा-
नुजके श्रीभाष्यमें मात्वतसंहिता, पौष्करसंहिता और
परमसंहिता इन तीन पञ्चरात्रशास्त्रोंका प्रमाण
मिलता है ।

ग्रान्थगिनिक शङ्करविजयमें पञ्चरात्रागमदोषित
माधवकी उक्ति और पञ्चरात्रागम नामक स्वतन्त्र ग्रन्थ
धारा जाता है । पञ्चरात्रमातावत्सव्या वैष्णवगण गोता,
भागवत, शाण्डिल्यमुख और उपरोक्त ग्रन्थोंको प्रथमा
धर्म ग्रन्थ मानते हैं ।

एतद्विन्न ह्यग्रीषे, पृथु, ध्रुव आदि कई एक पञ्च-
रात्र नामक ग्रन्थ पाये जाते हैं ।

ह्यग्रीषेके मतानुसार पञ्चरात्र २५ है । यथा—
१ ह्यग्रीषे, २ त्रैलोक्यमोहन, ३ वैभवं, ४ पौष्कर,
५ नारदीय, ६ प्रह्लाद, ७ गार्ग्य, ८ गान्धर्व, ९ श्रीमन्त्र
(लक्ष्मी), १० शाण्डिल्य, ११ ईश्वरसंहिता, १२ मात्वत,
१३ वाशिष्ठ, १४ गौतम, १५ नारायणीय, १६ ज्ञान १७
स्वायम्भुव, १८ कापिल, १९ गारुड, २० आत्रेय, २१
नारसिंह, २२ ध्यानन्द, २३ अरुण, २४ बोधायन और
२५ विश्वाश्रि ।

ये २५ पञ्चरात्र छोड़ कर शिवोक्त और विष्णुोक्त
भागवत, पद्मपुराण, वाराहपुराण, सामान्यसंहिता,
व्यानसंहिता और परमसंहिता ये भी भागवतोंके शास्त्र
समके जाते हैं ।

उपरोक्त २५ पञ्चरात्रोंके मध्य श्री वा लक्ष्मोसंहिता
(३३५० श्लोक), ज्ञानानृतसार (१४५० श्लोक), परम-
संहिता वा परकागम (१२५०० श्लोक), पौष्करसंहिता
(६३५०), पद्मसंहिता (१०००) और ब्रह्मसंहिता
(४५००) ये छः नारदीय पञ्चरात्रके भी अन्तर्गत
लिए गये हैं ।

* 'तन्त्र' भागवतपूर्वक शिवोक्त विष्णुमापितम् ।

पद्मोद्भवपुराणहि वाराहं च तथा परम् ॥

इमे भागवतानाम् तथा सामान्यसंहिता ।

व्यासोक्ता संहिता चैव तथा परमसंहिता ॥

यदप्यत् मुनिभिर्गीतं एतेष्वेवाधितं हि तत् ॥”

(ह्यशीर्षप०)

† Dr. R. G. Bhandarkar's Report of the Sans

crit Mas

पञ्चरात्रिक (सं० पु०) पञ्चरात्रमुपामनासाधनतयाऽस्त्वय्य
टन् । विष्णु ।

पञ्चरात्रिक (सं० पु०) पञ्च रागयो यत्र रूप । लीला-
वती-उक्त पञ्चरात्रिके अधिकारभेदमें गणितभेद गणितमें
एक प्रकारका हिमाव जिनमें चार ज्ञात रागियोंके
द्वारा पाँचवीं प्रज्ञात रागिका पना लगाया जाता है ।

पञ्चोक्त (सं० पु०) श्लोत्रशास्त्रके अनुसार एक तान ।

पञ्चोद्दिष्टो (सं० स्त्री०) चानज, पित्तल, कफज, तिट्ठी
पञ्च और रक्तप रोग ।

पञ्चल (सं० पु०) शकरकन्द ।

पञ्चलक्षण (सं० स्त्री०) सर्गादौनि पञ्चविधानि लज्ज-
णानि यत्र । पुराणके पाँच लक्षण जो ये हैं—मृष्टिको
उत्पत्ति, प्रलय, देवताओंकी उत्पत्ति और वंशपरम्परा,
मन्वन्तर, मनुके वंशका विस्तार ।

पञ्चलक्षण (सं० स्त्री०) पञ्चाना लक्षणानां समाहारः वा
पञ्चगुणितं लक्षणं । वैश्वकके अनुसार पाँच प्रकारके
लक्षण—तांच, मंधा, सामुद्र, विट् और मंचर । इसका
गुण—मधुर, विस्मृतकृत्, सिग्ध, वनापह, वीर्यकर,
उष्ण, दोषन, तीक्ष्ण, कफ और पित्तवर्द्धक ।

पञ्चलाङ्गनक (सं० स्त्री०) मुक्ताटिविभूषिततटगव्यप
युक्तानि सारटासुनिर्मितानि पञ्चलाङ्गनकानि यस्मिन् ।
महादानभेद । सत्यपुराणमें दस दानका विषय इस
प्रकार लिखा है—

“अथातः सत्त्ववह्यामिं महादानमनुत्तमम् ।

पञ्चलाङ्गलकं नाम महापातकनाशनम् ॥

पुण्यां त्रिषिं समाश्राय युगादिग्रहणादिकम् ।

भूमिदानं ततो दद्यात् पञ्चलाङ्गलकान्वितम् ॥”

((२५७ अ०))

जो सब महादान कहें गये हैं, उनमें पञ्चलाङ्गलक
एक है । यह दान महापातक नाशक माना गया है ।
शुभ तिथिको पुण्यकालमें संयतचित्त हो यह दान करना
होता है । इस दानमें पाँच लाङ्गल (लज्ज) और दस ह्यप
भूमिके साथ विशुद्ध ध्राष्टणकी दान करनेका विधान
है । वे पाँचो हल उत्तम सारयुक्त काष्ठके बने हों तथा
ह्यप उत्तमरूपसे स्वर्णादि द्वारा विभूषित हों । इस दान-
से अग्निपुण्य प्राप्त होता तथा महापातकजन्यपाप जाते

रक्षति है । मन्त्रपुराणके २६० अध्यायमें धोर ईसाक्षि
दानप्रवर्तने इसका विन्दित विवरण मिला है ।

पञ्चलिङ्गकोष—मन्त्राक्षप्रदेशके अज्ञाया सिद्धान्तगत एक
नगर । यह नैवृत्य नोमात्मवर्षी मन्त्रमन्त्रोच्चारण पर्यन्तके
मन्त्र बसा हुआ है । यहाँको एक मुद्यामें ५ लिङ्गमूर्तियाँ
स्थापित हुई हैं ।

पञ्चलिङ्गानाम—मन्त्राक्षके अर्धम सिद्धान्तगत एक ग्राम ।
यह तुङ्गभद्रानदीके उत्तर आईननगरमें २३ मील उत्तर
पश्चिममें अवस्थित है । यहाँके पञ्चलिङ्गानाम मन्दिरमें
एक प्राचीन सिद्धान्तियि उल्लेख है ।

पञ्चलीङ्गानाम (म० पु०) पञ्च व र्ति लोचवाक्याह ति
स ज्ञात्वात् अमं धारक । पञ्चयज्ञाद्यहविना र्काणि
देवप चक । विनायक दुर्गा यामु खेच द्वागौ पञ्चिनो
सुमार ये प च देवता पञ्चलीङ्गानाम अच्यवर्ति है ।

‘विनायकं तथा दुर्गा वासुधावाद्येव च ।

अद्वितीयं इवम्’ पञ्चलीङ्गवाक्याह प्रसूतये ॥”

(विनायकवि०)

पञ्चलीङ्ग (म० श्लो०) पञ्च विद्योर्षी लोहम् । १ सोराङ्ग
श्रीह । प चतुश्चित लीहम् । २ पांच प्रकारका लोहा ;
सुवर्ण, रजत ताम्ब, सोनब और रङ्ग इन पांच वास्तुओं
को पञ्चलीङ्ग कहते हैं ।

पञ्चलीङ्ग (म० श्लो०) पञ्चानां लोहकानां वास्तुनां मन्त्र-
धारः । पांच वास्तुएँ—लोहा चाँदी, ताम्बा सोना और
रंगा ।

‘इवम् रवर्तं ताम्बं ब्रह्मदेव विनोहकम् ।

धातुगणमस्तु च तत्पञ्चः पञ्चलीङ्गम् ॥”

(ताम्बि० व० ३२)

चामटके मतमें सुवर्ण, रजत, ताम्ब, जसु और
अप्यावस यही पञ्चवास्तु पञ्चलीङ्ग हैं ।

पञ्चलीङ्ग (म० श्लो०) पांच प्रकारका लोहा—सुवर्ण, सोन,
सुवर्ण, काकनीह, विण्डकोह और लोहकोह ।

पञ्चलङ्ग—भारतवर्षको मन्त्रप्रदेशवासी स्वर्णधार जाति ।

पञ्चलङ्ग (म० पु०) पञ्चलङ्गाधिपत्यम् । १ दिव्य यज्ञादेश ।

‘विनायकविन्दोर्षीं सिद्धिजननदरं पञ्चलङ्गं विनेत्रम् ॥”

(विवर्धन)

इसके मन्त्रादिशा विषय कानिष्ठापुराणमें इस प्रकार
लिखा है—

“सर्वज्ञानो स्वरात्मन्तु शीर्षो देवाः पवित्रुध ।

अध्वरुत्सयाः कार्कषया उपारये नाभिरङ्गिना ॥

पुनिः पञ्चलङ्गैरीत्यैव पञ्चलङ्गवद्वयं कीर्तिं तम् ।

अनात् पञ्चलङ्गवन्दोद्धारगौरववैठका ॥

आवत्स्यु मरैत् छेवं पञ्चलङ्गाः वक्ष्यन्ति न ।

एकैकेन सर्वेकं वक्ष्यं सर्वेकं पूजयेत् ॥”

(कानिष्ठापुर० पृ० म०)

महादेवके लक्ष्य, सन्दीह, माट, मोरव और प्रामाद
के पांच मन्त्र हैं, इन पांच मन्त्र द्वारा एक एक मन्त्रको
पूजा करनेकी रीति है पञ्चमा अथवा प्रामादमन्त्रके भी
पूजा कर सकते हैं । पांच मन्त्रमें प्रामाद नामक मन्त्र
योंह है । महादेवको प्रसन्नता लाभ करनेके कारण इस
मन्त्रका नाम प्रामाद पड़ा है तथा महादेवके पानन्द
प्रद होनेके कारण लक्ष्यमन्त्र, सनके पश्चिमाप पूर्यके
कारण सन्दीहमन्त्र, भावयंके होनेके कारण माट और
सुव होनेके कारण मोरवमन्त्र नाम पड़ा है । महादेवके
पांच सुयो के नाम ये हैं—सर्वाज्ञान, वामदेव तत्पुत्रप
पथोर और ईयान् । इन पांचो सुक्तोंमें मन्त्रोच्चारण
निसके लक्ष्यकलहम् । वामदेव पीतवर्ण पञ्चव बोम्ब
थोर मनोरम पथोर लोचवर्ण भवजनक थोर दन्त
विमलः तत्पुत्रप रङ्गवर्ण देवमूर्ति थोर मनोरम तथा
ईयान् ध्यानवर्ण थोर लिल्य विवर्ण है । महादेवको
पञ्चमूर्ति का लक्ष्य इसो प्रकार है । दक्षिण थोरके ५
हाथोंमें यज्ञात्मन यज्ञि विद्युत्, पहाड़ वर थोर पश्य
तथा वाम थोरके २ हाथोंमें पञ्चमूर्त नात्रयू, सुवर्ण,
अमरु थोर लयल नामक पांच द्रुष्टव वर्णमान हैं ।
पूर्वोक्त सर्वमदादि मन्त्र द्वारा महादेवको पूजा करनेके
सब प्रकारकी सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं थोर इस पञ्चलङ्ग
विषयपूर्वार्थे भाषा लोहा, रोद्रो लाली अन्विकारिको
अन्वयमविनी लक्ष्यमूलदमनो थोर मनोवर्धिनो इस पञ्च
देवीको पूजा करनेकी रीति है । २ लि० । १ पञ्चमूर्त
वद्राघ । यज्ञ पञ्चमूर्त वद्राघ धारण करनेके सब प्रकारके
पाप क्षति रहती हैं ।

“अथर्ववेदः स्यात्तः तद्विहितमिह नादतः ।
 अथर्ववेदनाभेदः ०५५५५ न भक्षणम् ॥
 मुच्यते अथर्ववेदः पञ्चवर्णवत्प्रधारणात् ॥”

(तिगिरा)

पञ्चवर्णम सं० पु०) श्रावणविधिष । प्रकृत पणाना
 गन्धक, पारद, मङ्गलिकी त्वोई, मिच और विष इन सब
 वस्तुओंको धतूरीके पत्तोंके रसमें एक दिन भिगी कर
 सुखा लेते हैं, पीके २ रत्नागे गोले बनाने हैं । इसका
 अनुपान अदरकका रस है । इसका ज्वेन करनेमें पान्ति-
 प्रातिकव्वर जाना रता है । भावप्रः संपञ्जारतना)
 पञ्चवट (सं० पु०) पञ्चो विस्तीर्णो वटः । १ उष्णकट ।
 इसका पर्याय जोटङ्ग मन्त्रतो योग वालुयज्ञोपवीतक
 है । (वि०) पञ्च पञ्चवट यत् । २ पञ्चवटो वन ।
 पञ्चवटो (सं० स्तो०) पंचाना वटाना समाहारः, तस्यो
 डोषः । १ पांच प्रकारका वृक्षः अश्वत्थ, विह्व वट, धातो
 और अगोक ।

इस पञ्चवटोकी यत्पूर्वक पांच प्रौर लगाना
 चाहिए । इनमेंसे अश्वत्थको पूर्वको और, विह्वकी
 उत्तर, वटको पश्चिम, आमलकीको दक्षिण और प्रमोद
 की अग्निशोणमें स्थापन कर पांच वर्ष बाद उसको
 प्रतिष्ठा करनी चाहिए । जो इस प्रकार पंचवटोको
 स्थापना करते हैं, उनके अनन्त फल लाभ होते हैं । इस
 पञ्चवटोके मध्यस्थलमें चार हाथ परिमित वेदी बनानो
 पड़ती है । यह पञ्चवटो सामान्य पंचवटी है । इसमें
 अलावा वृहत् पंचवटो भी है । वृहत्पञ्चवटो स्थापनका
 नियम इस प्रकार है - चारों और चार विह्ववृक्ष और
 मध्यभागमें एक विह्व, चारों कोनमें ४ वटवृक्ष, २५
 अगोक वृक्ष लाकारमें और दिक्त्रिदिकमें एक एक तथा
 चारों और अश्वत्थवृक्ष लगाना पड़ता है । इस नियम-
 से जो वृक्ष लगाया जाता है उसको वृहत्पंचवटो कहते
 हैं । नियमपूर्वक जो इस वृहत्पंचवटोको स्थापना
 करता है, वह मात्रात् इन्द्रतुल्य है और इस लोकमें
 मन्त्राभिद्धि तथा परलोके परमर्गति प्राप्त होने है
 प्रतिष्ठाविधिः अनुसार इसको प्रतिष्ठा करनी होती है ।
 वृहत्पञ्चवटोके मध्यस्थलमें भी वेदिका बनाना पड़ती है ।

२ दण्डकारण्यस्य वनविशेष । रामचन्द्रजो वनवासके

समय इसी अरण्यमें रहे थे । यह स्थान गोदावरीके
 किनारे नामिकाव पाम है । लक्षणमें जहाँ सर्प मत्सा-
 की नाक काटी थी, वहाँ रामचन्द्रजोका बनाया हुआ
 एक मन्दिर आज भी भानावृष्टामें पडा है । मीता-इरण्य
 यहीं हुआ था । नागिन देवी ।

पञ्चाटन (सं० पु०) मिश्र, मण्डपिष ।

पञ्चवटशो-वटशोनाश्रयिषे अचगत तार्थभेद । यहा वटशो-
 नाश्रय मन्दिरके पाप में योगवटशो, ध्यानवटशो, वृहद्वटशो,
 प्रादिवटशो और भविष्यवटशो नामक और भी पांच
 मन्दिर हैं जो पंचवटशो नामसे प्रसिद्ध हैं । वटशोनाश्रयमें
 नरतिष्ठसूक्ति, योगवटशोमें वृहदेव सूक्ति, ध्यान-
 वटशोमें वृहद्वटशो और कपिलेश्वर सूक्ति, वृहद्वटशोमें
 गीतम सुक्ति नामने प्रतिष्ठित विष्णुसूक्ति और शुभानो-
 म् प्रादिवटशोमें धोषलोतोवर्चो योयोमठमें भविष्य
 वटशो मन्दिर वर्तमान है । गेदोक्ष टोनी मन्दिरोंमें
 विष्णु, गेरुड और भगवतोको मूर्ति विराजमान है ।
 पञ्चवर्ग (सं० पु०) पंचवर्गा प्रकारा यत् । १ पंचपहरणा-
 न्वित यागभेद, पांच पहरमें होनेवाला एक यज्ञ ।
 पंचानां चारणा वर्गाः । २ चारपंचक, पांच प्रकारके
 चर ।

‘हस्तं चाष्टविधं कर्णं पञ्चवर्णं च तत्स्वतः ।

अनुरागागाराणो च प्रचारं मण्डलस्य च ॥”

(मनु ७.२५४)

घ्राय, व्यय, कर्मचारियांके आचरण प्रभृति अष्ट-
 विध राजकर्मके प्रात और पंचविध चार अर्थात् काप-
 टिक, उदात्थित, गृहपतिश्रयज्ञन, वं देहिक व्यञ्जन और
 तापसव्यञ्जन इनके प्रति राजाको दृष्टि रखना कर्त्तव्य
 है । पंचाना वर्गाणां समाहारः, डोषः । २ पंचवर्गी । ४
 क्षेत्रक्षीरादिपंचक । यह पंचवर्गी बलानघनको क्रिया-
 विशेष है ।

पञ्चवर्ण (सं० स्तो०) पंचवर्णा यस्य । १ पंचवर्णान्वित
 तण्डुलचूर्ण । चावलकी चूर कर उसमें पांच रंग
 मिलानेसे पंचवर्ण बनता है ।

‘रजासि पञ्चवर्णानि मण्डलार्थं हि कारयेत् ।

शाहितण्डुलचूर्णेन शुक्लं वा यवसम्भवम् ॥

रन्तं कुण्डलमिन्दुमौरिवादिबभ्रुवन् ।
दरिद्राबोधव पीन इतमीभयम् वरिषिम् ॥
इवम् इत्युक्तैस्तु कुण्डलैरेवापि वा ।
इति विरपत्राया पीनदुःखनिमित्तम् ॥”

(हेमादि प्रपञ्च)

मण्डलके निमित्त प चबर्कका चुच खरे समेतो
महामण्डक पण्डलमन्त्रादि स्तम्भे प चबर्कके चुर द्वारा
मण्डल बन है । तन्मन्त्र वा यन्मन्त्र करके समे मण्डक
बर्क चुच पीर तण्डलचुचमें कुछ म, मिश्र चौर
मौरकादि द्वारा राबबर्क, तण्डलचुचमें हरितामसिन्दु
करके पीनबर्क टण्डलका (छप्पद्रव्य) मिश्रित करके
छप्पद्रव्य पीर पीत तथा छप्पद्रव्यमिश्रित सिन्धुपत्रोद्य
हरित वक्रो पचबर्क है । पृथा प्रतिष्ठा चादि कार्यामि इस
प चबर्कका चुच विधिप यावत्प्रव है । ५ पचबर्क पांच
बर्क पद्योय च म जाठ चौर विन्दु । ६ या मायको ।
७ बनसिद, पच ब्रह्मन्त्रा नाम । ८ पचैतसिद पच
पशाङ्कना नाम ।

पञ्चमनक (म० पु०) भुस्तूररुच, प्रसूरीना, पिङ्ग ।
पञ्चमनंशुद्धिका (म० स्त्री०) पञ्चमनंका चय ।
पञ्चमनं रेको ।

पञ्चमवेन (म० पु०) पयोङ्गुष्ठ ।
पञ्चमवेनक (स० लि०) पञ्चमवेन्यायो । १ पञ्चमवे
कुच । २ पांच बर्कका पुराना ।
पञ्चमन—मरिचुरावामो बहुरैको एक ज्ञाति ।

पञ्चमनराज रेको ।

पञ्चमनक (म० स्त्री०) पचाना यह इतानी समाहार ।
बदकसप पच । बट, गुजर, पीन पात्रा पीर है त वा
विरिषको ज्ञान कारी बट, पीपल, वण्डूमर, पाङ्क
पीर है तथा झाङ्कली तथा कोरै बट, गुजर, पाकर परिस
पीर पीपलको झाङ्कली पचबर्कके बहुरै है । पुच—
जिन, पीनपीय पीर ज्वलनायक बस, ब्याप, शीतोन्न
विषय, शोथ पिल, बख पीर पञ्चनायक, स्तम्भकर
पीर प्रमाशिवोन्न ।

पञ्चबाघ (म० पु०) १ कामदेवके पांच बाघ जिनके नाम
दे हैं—इवक, मोवय तापल, मोहन पीर लघादन ।
कामदेवके पांच पुत्रबार्हिक नाम—कमल, पयोक

बाघ, नमसकिष्ठा पीर लोकोपय । २ कामदेव मदय ।
पञ्चबातीय (म० स्त्री०) राजमन्त्राद्य कामगुण यज्ञ प्रति
पठने कर्त्तव्य प चाग्निमाय प्रोमकर्मसिद । यज्ञ पञ्च
बातोय राजमन्त्रयज्ञका कर्म म्य पञ्च है । यह कामगु
मासको शुक्लप्रतिपदके चारथ करना पड़ता है ।

पञ्चबाघ (म० पु०) तण्ड, चानय सुमिर, धन पीर
वैरी का यज्ञ ।

पञ्चबाघ (म० पु०) शरीरके मध्य प्रतिष्ठित प्राच यपान,
नमान, लटान पीर ध्यान चादि बाघ ।

पञ्चबाघि (म स्त्री०) कौप, नादेठ, चान्तरीच ताङ्गाग
पीर मासुद्र बल ।

पञ्चबाघिंश (म० लि०) पञ्चसु नयासु मय । पञ्चाघं
प्राच काघं जो पांच वर्षमें होता है । जेधे—बोहा २१
पञ्चवर्ष्यापी मशोन्मक मन्त्रात्ता यमोक्त गतिष्ठित पञ्च
वर्ष्यापी बौध्दका वा मजापरिपद् ।

पञ्चबाघिन् (म० लि०) पञ्चबाघा जिन पांच पात्रना ठा
कर ले जा सके ।

पञ्चविंश (स० लि०) २२ स पद्यापुष्ट ।

पञ्चविंश— सामन्त भगत ज्ञान भवेद । पचोम य यो
संविभक्त ज्ञेयिने वारक इतका नाम पचविंशनाद्याच
पडा है । २ स्त्रीमभेद । श्रेष्ठ म मय रेको ।

पञ्चविंशक (म० लि०) १ पचविंश मध्यमोद्य, पचोम
नयका । २ पचोस नय का पुराना ।

पञ्चविंशति (म० स्त्री०) पचविंशका विंशति । पचोस
को स पद्या ।

पञ्चविंशतितम (स० लि०) पचोसवा ।

पञ्चविंशतिस (म० लि०) पचोस ।

पञ्चविंश (म० लि०) पञ्चविंश यज्ञ । पांच प्रहार ।

पञ्चविंशप्रकृति (स० स्त्री०) पचविंश प्रकृति । १ पांच
मकाका रात्राङ्क । तथा कामो, चमास्य राङ्क, दुम,
पच पीर दण्ड । २ पचभूत । पञ्चभूत रेको ।

पञ्चविंशिय (म० लि०) पचमकार, पांच तरङ्कका ।

पञ्चविन्दुपद्यत (म० स्त्री०) मूलको एक ज्ञाति ।

पञ्चविप (म० वयो०) ताम्य हरिताय, सर्वगमन कर
पीर पीर बन्धनाय म्यकर पीर लघुमाजक नामा
प्रकारके रहने पर भी ये मय प्रबानतम तथा पीपवाचं
सं पांचिक प्रयोन्नोद्य है ।

पञ्चविम्बिकायोग (मं० स्तो०) अष्टमार्गमूलकाय, कारवेणपत्रकाय और तिल, कचिमूलाका काय और पोपरका चूर्ण वेलमोठ, कचूरका काय तथा वेलमोठ कचूर और कटफलका काय । यह पञ्चयोग विम्बिकारोगमें उपकारो है ।

पञ्चबीज (मं० स्तो०) पांच प्रकारका बीज, जैसे—ककटो खैरा, अनार, कमल और अलकुशोका बीज । अन्धविध-रायमरसो, गमानो, जीरा, तिल और पोस्ता । पञ्चवीरगोष्ठ (मं० पु०) पञ्चवीरोंके बैठनेका स्थान, वृद्धस्थान जहां युधिष्ठिरादि पांचों भाई बैठ कर मन्त्रणा करते थे ।

पञ्चवृद्धीन्द्रिय (मं० स्तो०) इन्द्रियादि ज्ञानपञ्चक, यथा,—स्वर्ग, रसन, ज्ञान, दर्शन और श्रोत्र ।

पञ्चवृत्त (मं० स्तो०) पांच वृत्त, मन्दार, पारिजान, मन्तान, कल्पवृत्त और हरिचन्दन नामक स्वर्गस्य पांच वृत्तोंके नाम ।

पञ्चवृत्ति (मं० स्तो०) पञ्चगुणिता वृत्तिः । पातञ्जलोक्त पाच प्रकारकी मनोवृत्ति । चित्तको परिणामो वृत्तिया ५ प्रकारकी है । इन वृत्तियोंमें कुछ क्लिष्ट और कुछ अक्लिष्ट हैं । जिस वृत्ति द्वारा चित्त क्लिष्ट होता है उसे क्लिष्टवृत्ति कहते हैं, जिसमें क्लेश न रहे, वह अक्लिष्टवृत्ति है । वृत्ति पाच प्रकारकी है, यथा—प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति । प्रत्यक्ष अनुमान और आप्तवाक्यको प्रमाणवृत्ति कहते हैं । इस प्रमाण द्वारा मभी स्वरूप जानी जाती हैं । एक वस्तु भ्रमवश यदि अन्य वस्तु समझो जाय, तो उसे विपर्यय कहते हैं, जैसे शक्तिमें रजतज्ञान । वस्तुके स्वरूपकी अपेक्षा न कर केवल शब्दजन्य ज्ञानानुसार जो एक प्रकारका बोध होता है, उसीको विकल्पवृत्ति कहते हैं, जैसे देवदत्तका कम्बल । यहा पर देवदत्तके स्वरूप जो चैतन्य है उसकी अपेक्षा न कर देवदत्त और कम्बलमें जो भेद ज्ञान होता है, वही विकल्पवृत्ति है । जिस अवस्थामें चित्तमें अभाव उपलब्ध होता है, उसका नाम निद्रा है । पहले प्रमाण द्वारा जो जो विषय अनुभूत हुए हैं, कालान्तरमें असंस्कार द्वारा उन विषयोंका बुझने जो आरोप होता है, उसे स्मृति कहते हैं ।

अभ्यास और वैराग्य द्वारा यह पञ्चवृत्ति निकट होती है । (पातञ्जलदर्शन)

पञ्चगत (मं० स्तो०) पञ्चाधिकं गतं । १ पांच मीको संख्या । २ एक मी पांचको संख्या ।

“सत्रियायामगुप्तार्थांश्चैवे पञ्चगतं दमः ॥”

(मनु ८३८४)

पञ्चगततम (मं० त्रि०) ५००, पांच मी ।

पञ्चगतिकावृत्ति (मं० स्तो०) श्लोपधमेद । प्रसृत प्रणाली नीलोत्पलपत्र १००, निस्तुपयव १००, मानती-फूल १००, पोपरका चावल १०० इन सबको पोम कर वत्तो बनाते हैं । इसमें तिमिरादिरोग जाति रहते हैं ।

त्रिकुट, उत्पल, हरीतकी, कट, रमाञ्जन आदिकी वत्तीके अञ्जनमें प्रबुद्ध, पटल, काँच, तिमिर, अर्म और अशुपात निवारित होते हैं ।

पञ्चगव्द (मं० पु०) १ पांच महानमृचक वाजं जो महान कार्यमें वजाये जाते हैं—तन्वी, ताल, भाँक, नगारा और तुरही । २ पञ्चमहायज्ञ देखो । ३ पांच प्रकारका ध्वनि—वेदध्वनि, वन्दोध्वनि, जयध्वनि, गद्गध्वनि और निगानध्वनि । ४ व्याकरणके अनुमान मूक, दार्त्तिक, भाँय, कोप और महाकवियोंके प्रयोग ।

पञ्चगर (मं० पु०) पञ्चगरा यस्य । १ कन्दर्प, कामदेव । २ पञ्चगुणिताः गराः । ३ पञ्चवाण, कामदेवके पांच वाण ।

“सम्मोहोन्मादनी च शोषणस्तापनस्तथा ।

स्तम्भनश्चेति कामस्य पञ्चवाणा प्रकीर्ति ताः ॥”

(ब्रह्मवैवर्तपु० कृष्णज० ३२ अ०)

पञ्चगर (मं० पु०) श्लोपधमेद । प्रसृत प्रणाली—पारद और गन्धकको गिसुलमूलके रसमें पृथक् पृथक् २६ बार भावना दे कर कञ्जली बनावे । पीछे उसे बालुशायनमें पाक करे । इसको मात्रा २ रत्ती और अनुपान पान है । मांस, मद्य, प्रायस, महिषदुग्ध आदि पय्य है । इसकी सेवन करनेमें निश्चय ही वीर्यकी वृद्धि होती है । पञ्चशलाकाचक्र—ज्योतिषोक्त चक्रभेद ।

सप्तशलाकाचक्र देखो ।

पञ्चगव्द (मं० अथ०) पञ्च पञ्च वारार्थे शब्द । पञ्च पञ्च, पाँच पाँच ।

पञ्चमस्कन्ध (स = ख०) पञ्चमानी मन्थानां समाहारः । यथा
पञ्चम, भाग, मुग, तिच जो घोर मन्दि सरसी । कोरे
कोरे मन्दि सरसीको जगक परदको मते हैं ।

(दुर्गेपवपयस्ति)

पञ्चगाथा (स = पु०) पञ्च शाखा इन पञ्चकवयो यज्ञ ।
१. जल, काय । पञ्चानां शाखानां समाहारः । (वृको०)
२ पञ्चगाथाशा समाहार, पञ्चगाथा । ३ पञ्चगाथाविमिष्ट,
विममि पांच कल्पिं को ।

पञ्चगाथीय—गरतुक्कानमि पशुष्टेय प्राचोन पामभेद ।
प्राग्निन पञ्चथा क्वात्ति कामाममं विद्याया नचतपुत्र
पमावच्छाने यज्ञ यज्ञ पारम्ब विद्या जाता था । मन्त्रका
व्यभिच निवे दस पञ्चमं बहूत सो गोषोको इत्या को
कानो यो । पञ्चमं प्राकृति देनेके निवे १० सङ्कटकोन
पम कावच्छानम घोर तोन वर्षा की करि एक कल्पियोंको
पारम्बकता जतो यो । पञ्च प्रमाविहित पूजा घोर
कर्मके बाद कन्न इयमकक कोरु दिवे काने ध । पोषि
वदने यदापोष्य प्रकियातुवार प्राकृति देनेके बाद प्रति
दिन तीन तीन करके गामीको दिवोद्वये करि देते ध ।
पौनर्वे दिन दो घोर पञ्चात् पांच गो-इत्या करके यज्ञ
समाप्त करमे, ये । मन्त्रकानमि पांच दिन तक यज्ञ यज्ञ होता
था, इधोके इत्यथा नाम पञ्चमारदोय पड़ा है । कामभेद-
के अन्तर्गत तान्त्रिक-ब्राह्मणमं निचा है, कि दस कर्ममि
मन्त्रके परकतो दवे विनिचयके को मो पामम्बक है ।
तक पञ्चके मतके—यज्ञस कर्ममि प्राग्निममानकी इत्यथा
मयमी वा पञ्चमीको यज्ञात्थ करना होता है घोर पर-
कतो यज्ञे क्वात्ति कामामको पञ्चको यज्ञातुहान विवि-
भिन्न है । मन्त्रके इयाव्याममि जगता जाता है कि पञ्चके
पञ्चक मजापतिमि स्वय दस यज्ञका पशुहान विद्या था ।
तैत्तिरीय ब्राह्मणमं निचा है कि जो वनशाकी घोर
कामोन होना चाहते लम्बे प चमारदोय यज्ञातुहान द्वारा
देव पूजा करनी चाहिये ।

पञ्चमिष्ट (स = पु०) पञ्च निष्ठीयां विद्या भैरवादियंज ।
१ मि ३ । २ सुनिविधिये । लक्ष्मणाश्रमे पाप एक प्रदान
प्रापायं ध । वामनपुराणमं लिखा है कि वमके पञ्चिमा
नामक एक स्त्री को विवके गम मे प चयिष्णुमनि लप्यक
हुए ध । महाभारतके प्राणिपर्वमं लिखा है, कि एक

समय कविष्णुयुव प चयिष्णु नामक एक मन्त्रिं सारी
पुत्रो पर पर्यटन करती हुए विविना नगरोमि पदुं थे । ये
समस्त सन्धावधर्मका यथावर्तित्व जाननेमि समर्थ,
निहन्त्र, चयन्दिस्वचित्त कल्पियोंके मन्त्र चहितोय,
कामनापिष्णुय घोर मनुष्योंके मन्त्र मायत सुचनम क्या
पनमि प्रमिष्णो ध । लम्बे देवनेमि मानुम पड़ता था
कि धीवमतावस्तमी जिन्हे कविष्णु कहते हैं मानो धि
हो प चयिष्णु नाम प्राणक कर समी मनुष्योंके इदयमि
विस्मय कत्यादन करती हैं । ये महात्मा प्राचुरिके प्रदान
मिष्णु घोर चिरकोरो धि तथा इत्यामि सङ्कट कर्पं तक
माणस यज्ञका पशुहान विद्या था ।

भगवान् माकंष्टेयने पचगिष्णुका हलान्त इय
पचार कहा है—एक समय कविष्णुनातावस्तमी चस स्य
मन्त्रिं एक साथ बंठे हुए ध । इधो बीच ब्रह्मपञ्चपरा
यज्ञ पञ्चमयादि पञ्चकोयामिन्न श्रमदमादिगुक्वान्ति पञ्च
मिष्णु मन्त्रिं कहां यापहुं थे घोर कनादि पनन्त पर-
माकं विषय तक समागत कल्पियोंमि पूजा । उस समय
महामति प्राचुरि मो कपकित थे । लम्बो ने प चयिष्णुको
मिष्णुके इयुक्त समन्त्र कर लम्बे पपना मिष्णु बना
लिया । महात्मा प्राचुरि पाल्कजान साभरु लिये कविष्णुके
मिष्णु की शरीर घोर शरीरीय विषय लम्बे पञ्चको तरक
ज्ञान गये धि । कविष्णुकी कृपासे चका ने चाप्यपोन ज्ञान
कर चाकतत्वको माचात्कार किया था । प्राचुरिके
कविष्णु नामक एक मन्त्रिंको यो । प चयिष्णु कर्णिके
मिष्णु मे अतएव पुत्रमाभमि कविष्णुका स्थापयान करती
धे । दस कारक दम्बे ब्रह्मनिष्ठ बुद्धि घोर कविष्णुका
पुत्रक साम हुआ था । कविष्णुका स्थापयान करनेमे धे
'कविष्णुयुव' कहनामि करी । (महाभारत १२।२।१८ व०)

ईश्वर ज्ञापक) सर्व्व्यकारिकांमि निचा है—कविष्णु-
मि प्राचुरिको घोर प्राचुरिमि प चयिष्णुको माचपमायका
वपदेय दिया । इमो पञ्चमिष्णुके जो सर्व्व्ययास्त मथा
रित हुआ । पांच देवो ।

पञ्चमिर—पञ्चगा-मोम,नाचर्तो विष्णुपुत्रयव तको पात्र
कित एक सपत्न्यामूमि । यह कातुक नयने लनर
पुर्वमं पचन्वित है । यहाँ प्राचोन कविष्णु नगर क्या
हुया था । २५० विजयोका याहुवनादी कातुक नगर

जीत कर वहाँके राजा बन गये और उन्होंने पंचगिरि नगरमें अपने नाम पर मिका बनाया। यहाँ पहले परि-
जक नामक स्थानमें एक दुर्ग अवस्थित था।

पञ्चगौल—बुद्धप्रोक्त धर्मप्रकरण वा आचारमंद।

पञ्चगौष (स० पु०) पंचगोर्षाणि अस्य । १ सर्पभेद । २
चोनेटेशस्य मञ्जुष्यो पर्यायका प्राचोन नाम । इसके पांच
शिखर होनेके कारण लोग इसे पहले पञ्चगौष कहा
करते थे। प्रवाद है, कि प्रत्येक शिखर पूर्व समयमें
होरा, सोता, पन्ना आदि धातुश्रेणोंसे मण्डित था।

(स्वस्म्यपुराण)

पञ्चशुक्ल (स० पु०) पञ्चसु शुक्लः । क्रीटभेद, एक प्रकार
का कौड़ा। यह सौम्य द्यौज्जातिका है। इसके फाटनेमें
कफज्वररोग होता है। श्रेष्ठ देवी।

पञ्चशूराण (स० की०) पंच शूराणा यत्र । पांच प्रकार का
शूराण या कन्द—अत्यन्तपर्णी, काण्डमूल, मालाकन्द,
सूरन, सफेद सूरन।

पञ्चशैरीपक (स० क्लो०) शिरोप वृक्षस्य इदम् शैरीपकं,
पञ्चसंयुक्तं शैरीपकम् । सिरीसृष्टके पांच अंग जो
श्रीपधके काममें आते हैं—जड़, छाल, पत्ते, फूल और
फल।

पञ्चगौल (स० पु०) १ नैमिके दक्षिणस्थित पर्वतभेद ।
(मार्कण्डेयपुराण ५१, अ०) २ राजशुक्ल चारों ओर अव-
स्थित वैभार, विपुल, रत्नकूट, गिरिव्रज और सृष्ट्यावन
नामक पांच शैल। बौद्ध, जैन और हिन्दू इन तीनों म्प
द यंत्र निकट यह पञ्चगौल महातीर्थरूपमें गिना जाता
है। महाभारतके मतमें—वैभार, विपुल, ऋषिगिरि,
चैत्यक और गिरिव्रज इन पांचोंको ले कर पञ्चगौल हुआ
है। (महाभारतसप्तमः)

रामायणके मतमें इस पञ्चगौलके मध्य गिरिव्रजनगर
अवस्थित है।

“पञ्चानां शैलमुखानां मध्ये मालेव कोभते ॥”

(रामा० आदि० ३२ सर्ग)

पञ्चशवास—महाशवास, ऊर्ध्वशवास, क्षिप्रशवास, सुद्रशवास
और तमकशवास।

पञ्चप (स० त्रि०) पंचवा पञ्चा परिमाण येषां तै ।
जिसका परिमाण पांच या छः हो। यह शब्द बहुवच-
नान्त है।

पञ्चपट (स० त्रि०) पञ्चपटः ।

पञ्चपट्ट (स० स्त्री०) पंचपट्टी संख्या ।

पञ्चपटितम (स० त्रि०) पंचपट्टिका ।

पञ्चसत्र (स० क्लो०) जनपदभेदः ।

पञ्चसन्धि (स० स्त्री०) आकरणमें सन्धिके पांच भेद—
स्वरसन्धि, व्यञ्जनसन्धि, विभक्तिसन्धि, स्वादिप्तिसन्धि और
प्रकृतिसन्धि ।

पञ्चसप्त (स० त्रि०) पञ्चसप्तः ।

पञ्चसप्तति (स० स्त्री०) पञ्चसप्ततिका संख्या जो इस
प्रकार लिखी जाती है, ७५ ।

पञ्चसप्ततितम (स० त्रि०) पञ्चसप्ततितमः ।

पञ्चसप्तमन् (स० त्रि०) पांच गुना मात्र, पंचसप्तमः ।

पञ्चसप्तविंश (स० स्त्री०) शोधध्वनिशय, एक प्रकार का
टवा जो लक्षण्यणके विचित्र मण्डलविगिट, मयांकार
और पञ्च प्रत्ययप्रमाण दोष होता है।

‘नगदः कपिलदिग्धे सर्षपा पंचसप्तविंश ॥’

(मृग्युतचिकित्सा ३ अ०)

पञ्चसारपानक (स० पु० क्लो०) पानोद्यविशेष । ट्राक्षा,
सधुक, खजूर, कामर्य और पक्षुपक इन पांच द्रव्यों-
के बराबर बराबर भागको मिला कर पानक बनानेमें
पंचसारपानक होता है।

वैद्यक द्रव्यगुणके मतमें फ्रांसोरा, सधु, खजूर,
सूटोका और फानसेका फल, इन सब द्रव्योंका जल
जमा कर उसमें मिर्च, शर्करा और आद्रकादि मिलाते
हैं, पोछे भलाभाति छान लेनेसे पानक तैयार होता है।
इसका गुण—सृष्ट, गुण, धातुकर, पित्त, लज्जा, अम
और दाहनाशक है। (द्रव्यगुण)

पञ्चसिद्धान्त (स० क्लो०) ब्रह्ममूर्धसोमायुक्त पञ्च-
ज्योतिष सिद्धान्त ।

पञ्चसिद्धोपधि (स० पु०) पञ्च सिद्धोपधयो यत्र कपः ।
वैद्यकमें पांच शोधधियां जिनके नाम ये हैं—तैलकन्द,
सुधाकन्द, क्रीडकन्द, रुदन्तो और सर्षप ।

पञ्चसुगन्धक (स० क्लो०) पञ्च सुगन्धा यत्र, कपः । पांच
सुगन्ध द्रव्य—लौंग, शीतलचीनी, भगर, जायफल,
कपूर अथवा कपूर, शीतलचीनी, लौंग, सुपारी और
जायफल ।

पञ्चसुगन्धिक (स० श्लो०) पञ्चसुगन्धिक ।

ब्रह्मसूत्र (स० श्लो०) सूत्रा पाणिन्यन्तान् षड्गुणिता
सूत्रा । पश्चि प्रचारका प्राणिवचनान् । षड्ब्रह्मोक्ति
मन्त्रे इतिदिन पांच प्रचारमे प्राणिविभा शोनी है, रती
मे इमका नाम पञ्चसूत्रा पडा है ।

वचन मा परब्रह्मन् ब्रह्मोपिब्रह्मपरम् ।

पञ्चमी बोरङ्गमात्रं वचने वाच्यं वादयन् ॥”

(छुके ल)

ब्रह्मका कथाना, पाडा पादि योगना, म्हाइ, नेना,
सूत्रना पोर पानोका सहा रकना यही पांच षड्ब्रह्मोक्ती
पञ्चसूत्रा है । प्रतिदिन हम पञ्चसूत्रासे पसव्य पाणि
ब्रह्मा शोतो है । रती पंच प्रचारजी विभाके कि
शोयो को निगुनिसे निसे पञ्च मशाययो का विधान
किया गया है । पञ्चसुगन्धिक सेको ।

पञ्चसूत्र (स० पु०) पाञ्चार्थे शोकात्परममन पोर
मात्र तथा ब्रह्मगतुको उत्पत्तिका कारण वतप्रमेने
निसे शोका माप्यकारोने हिन्दुमात्रोका पञ्चसुगन्धिक
भाषार पर पोर मो पांच सुगमप पञ्चसूत्रा ब्रह्म
किया है । यको पञ्चसूत्र है । कप, रम, मन्थ स्यो
पौर मन्थ इन पांच सुगोके से मसे त्रिस प्रकार पञ्चसुग-
का उत्पत्ति हुआ करती है, तथा प्रकार शौडोक मतसे
मा पांच ब्रह्मसूत्र वा विभिन्न सुगसमष्टिने मानन
जातिका उद्भव हुआ है । किन्तु विन्दुपी के माप
पाञ्चसूत्रस्यसे पोर किमो मो पयसे इनका माह्य
नहीं देखा जाता । ब्रह्मसूत्रा पोर पञ्चसूत्र देको ।

शौडोके मतमे कप बेटना म प्रा सन्ध्या पोर
विज्ञान से पांच लक्ष्य है—सुगर्भी ममटिका नाम
सूत्र है । शोडमत पञ्च कासेमे इन पांचो को पनु
मूति पोर प्रकट ज्ञानका भरण वाच्यक है । हमो
कह्यमे सद्यपि से पञ्चसूत्र शास्त्रक मन्थ मटिकामन्थसे
मन्थमेगित हुए हैं तो मो उगका मने पञ्चक करनेसे
निसे बचावप्रम थाक्या को गई है । शौडोने पञ्च-
सूत्रको को एक तानिका ही है बच इव प्रचार है—

१ । कपसूत्र—पञ्चसूत्रा वा ब्रह्मभावात् ।

विनि २४, तत्र पोर मन्थपादि चार मूत्र । ब्रह्म,
ब्रह्म नासिका, विज्ञा पोर लक्ष् (देव) से पांच

इतिव; पाञ्चनि गन्ध, मन्थ, म्हाइ पोर इत्यादि से पांच
पदाक पञ्चसुगन्धिक । शो पोर सुगव से दो विद
तमात्र; वेगना शोविनेन्द्रिय पोर पाचार से तोन मूल
धयन्वा ; पञ्चसूत्राचन पोर बाह्यसुगुनि वड मनोमान-
जापल २ । प्रकान सवाक पोर व्यन्तरीवदेवको चित्तप्रमा
दरता, स्थितिस्थापकता, समताकारक, समष्टिकरण
म्हावित्क, शय पोर परिवलनगोचता पादि इन सातो
विभिन्नगुणो से परिचित हैं । उच प्रकार कुल २८ सुग
मने मये हैं ।

२ । बेटनासूत्र—कपसूत्रमे ही बेटनासूत्रको
उत्पत्ति शोतो है । वड बेटनासूत्र पांच शान्तिन्द्रियो
पोर मन्थ मेटके का प्रचारका शोता है विभिन्न प्रबोका
५ बनि, यद्विद स्युङ्गसूत्रता से तोन तोन मेट शोती है ।
३ । सञ्जासूत्र—इसे अतुमितिप्रमात्र मी कहते
हैं । इन्द्रिय पोर यत्न कारकसे पनुसार इसके का मेट
है । बेटना शोने पर शो स प्रा शोनी है ।

४ । पञ्चसूत्र—एक साधारणता ५१ सञ्जापी
से विभक्त है । किन्तु इनमे प्रबोका यत्नका भावा
पव नही हैं । इनमे किमि पूरवर्षित तीन मागोके
यत्नकाल पोर मानसप्रापक है । पूर्वोक्त कप, बेटना
पोर म प्रा ये तोमो भाङ्गमायके चरममन्थ पर गठित
है पोर म स्थायतकाळ मानविक धारण को महायता
से उत्पन्न हुआ है । इसके ५० शोकोके नाम ये हैं—
१ पय २ बेटना ३ म प्रा, ४ चेतता ५ मनविचार,
६ मूति ७ शोविनेन्द्रिय, ८ एकाग्रता ९ वितर्क १०
विचार, ११ शोव शो यन्थाय शक्तिको को उत्पत्तिने
महायता करता है १२ पश्चिमोक १३ प्रीति, १४ दृष्ट
१५ मन्थप्रता, १६ निद्रा, १७ मित् वा मन्थ १८ शोड,
१९ मन्थ, २० नाम २१ पञ्चोम २२ चरता २३ अतु
ताप, २४ शो (कथा) २५ यज्ञोक्त २६ शोय २७
शोय २८ विचिकित्सा, २९ यथा ३० इति ३१ ३२
यागोर पोर मानम प्रतिधि ३३ ३५ यागोर पोर मानम
मनुज, ३४ ३५ यागोर पीर मानम मूदता ३६-३८
यागोर पोर मानम कर्मक्षता ३९ ४० यागोर पोर
मानम प्राङ्गता ४१-४२ यागोरिक पोर मानविक उद्या
तना ४३ ४४ यागोर पोर मानम पाय, ४५ अयथा, ४६

सुदिता, ४८ ईर्ष्या, ४९, सात्त्वय, ५० कार्काश्य, ५१
श्रीदत्त और ५२ मान वा अभिमान ।

५। चित्त, आत्मा और विज्ञानको समष्टिसे ही इस
पञ्चमस्कन्धकी उत्पत्ति है । हिन्दुशास्त्रोंमें कहे हुए
चित्त आत्मा और विज्ञान इसके अन्तर्भूत है । इस
स्कन्धके चेतनाके धर्माधर्म भेदमें ४८ भेद किये गये
हैं । बौद्धदर्शनोक्ति मतानुसार विज्ञानस्कन्धके जय होनेसे
ही निर्वाण होता है ।

ऊपरमें लिखित अभिव्यक्तियोंसे जाना जाता है, कि
मनुष्यमात्रकी ही शारीरिक और मानसिक गठन तथा
मानसशक्तिगुणादि विज्ञानको प्रक्रियाके ऊपर निर्भर
है ; किन्तु इनमेंसे कोई भी स्थायी नहीं है । रूपरन्ध्रात्
जनित पदार्थादि फेनकी तरह क्रमशः संचित हो कर
पौछे रूपान्तरित वा लोप हो जाते हैं । वेदनाजनित
पदार्थादि जन्तुदृष्टिको तरह लणस्थायी हैं । मंज्ञा-
प्रकरणमें अनुमितिमें सूर्यरश्मिमें अनियमित मरीचिका-
की तरह अनुमान है, चतुर्थ अर्थात् संस्कारसे मानसिक
और नैतिक पूर्वानुरागका उद्भव हुआ करता है, किन्तु
वे आसक्तिर्य कटनोस्तम्भकी तरह प्रस्थायी और सार-
वत्ताहीन है तथा पंचम वा विज्ञान जो जन्म है, वह
छाया वा इन्द्रजालिक मायाको तरह भ्रमदृश्य समझा
जाता है ।

बौद्धोक्ति त्रिपिटक ग्रन्थमें इसका विषय साफ साफ
लिखा है । उक्त ग्रन्थ पढ़नेसे जाना जाता है, कि ज्ञान
विशिष्ट जीवान्तर्गत यह पंचस्कन्ध वा गुण आत्मासे
विनकुल स्वतन्त्र है । मनुष्यको देह परिवर्तनशाल है ।
जीवदेहस्य इन्द्रियोक्ति साथ वाह्यजगत्के पदार्थोंके स्पर्श-
हेतु जीवित देहके परिवर्तनके साथ साथ इस पंच-
गुणका परिवर्तन भी जीवदेहमें हुआ करता है, बौद्धो-
के पंचस्कन्धका मर्म इतना कठिन और दुर्बोध्य है कि
सुदूरविस्तृत इस बौद्धधर्मके अन्तर्गत पंचस्कन्धकी
विभिन्न धर्मावलम्बियोंमेंसे कोई भी तत्प्रतिष्ठित धर्म-
मतया मूल धर्म नहीं मानते । सूत्रपिटकमें गौतमकी
प्रथम उक्तिसे लिखा है—“हे भिच्छुगण ! आचार्य लोग
(यमण और ब्राह्मण) आत्माको पंचस्कन्ध मानते हैं,
किन्तु जो स्वल्पज्ञानी हैं अर्थात् जो धार्मिकका साथ

नहीं करते अथवा धर्मगत नहीं मोखते, वे ही रूप,
वेदना मंज्ञा, संस्कार, चेतना आदि एक एक गुणकी
स्थिति, भ्रुति और व्याप्तिके कारण आत्माका अनुरूप
मानते हैं । इसके बाद पंचेन्द्रिय मन, अविद्या और
गुण इन सबमें 'मैं कौन हूँ' इस प्रकार एक ज्ञानकी
उपलब्धि होती है । म्यग और अविद्याजानिन वेदनामें
कामासक्त अज्ञानी व्यक्तियोंमें 'मैं कौन हूँ' इस प्रकार
एक धारणा पर पहुँच जाने हैं मही, किन्तु ही भिच्छुगण ।
जो टोचित आचार्यके ज्ञानवान् ग्रिण्य है, वे ही पंच-
न्द्रियकी सहायतासे अविद्याको दूर करके ज्ञान मार्ग-
पर चढ़ सकते हैं । अविद्यारूप अन्धकार उनके अन्त-
करणसे दूर हो जाने पर तथा ज्ञानके विनाश होने पर
'मैं कौन हूँ' ऐसा जो अनुमान है, वह उनके हृदयमें
स्थान नहीं पाता ।

बौद्धगण पंचस्कन्धातिरिक्त आत्माको स्वीकार नहीं
करते । इसीसे जोव वा आत्माका पूर्वोक्तरूप अस्तित्व
उनके प्रचारित धर्ममतके विरुद्ध है । यही कारण है
कि बौद्धशास्त्रमें स्वकीय दृष्टि और आत्मावाद नामक दो
शब्द कल्पित हुए हैं । मत् और ज्ञानो बौद्धमात्र ही ही
वह परिवर्जनोय है, कारण दोनों ही मोदवशसे मानव
की कुपथ पर विचरण करते हैं । कामाचार, अनन्तत्व
और ध्वंसका विरुद्धवाद, व्रतादि क्रियाकलापको कार्य-
में आस्था और उपादान आदि विषय उनके समययोगी
का और जन्म, मरण, जरा, शोक, परिवेदना, दुःख
दौर्भाग्य तथा हताश आदिका एकमात्र कारण है ।
एतद्दिन नागार्जुनकृत साध्यमिकसूत्रमें भी पंचस्कन्ध-
की कथा विशेषरूपसे लिखी है । स्वयं नागार्जुन वा
नागसेनने पञ्चावके अन्तर्गत शाकलाधिपति श्रीकराज
मिनान्द्रकी पंचस्कन्द समझाते समय कहा था, कि
जिस प्रकार चक्र, चक्रदण्ड रज्जू और काष्ठादि से कर
एक यान तैयार होता है और इसके सिवा कोई द्रव्य
रथ वा यानकी समष्टि नहीं हो सकता, केवल शब्दमात्र
ही उसका भाव प्राप्त करता है और रथकी आकृति
तथा गठनके अनुमान द्वारा मानमन्त्रमें बहान करता है,
उसी प्रकार मनुष्यमात्र ही इस पंचस्कन्धके गुण द्वारा
कार्यकारी ही कर सभी द्रव्य अनुमिति और ज्ञान द्वारा

दृष्टव्यं पञ्चस्य विधा कर्ता है। अथ नृपदेवस्य कथा
 या हि त्रिम प्रचार ईश्वर लाष्ट वा रज्जु बन्ध, बन्ध
 धात्रिका एव एक पञ्चस्य सञ्चलनाय नरस्य सो मरणा
 समया लाष्टरञ्जिते मन्वन्तस्ये रथाटिका पत्तिल
 श्लोकार करना पड़ता है उसी प्रकार स्य दिशान
 शिरसा न सा घोरा चेतनाते एतत् चोमिने जोरदेहका
 कल्पित घोरा पासाका विद्याया रूप्य उरता है। जो कुत्र
 जो समी शीर्षेनि घोटा मद्गत क न्नी शोकाभाका पत्तिल
 श्लोकार विद्या है।

पञ्चस्यसिद्धिर्वाचक—दुष्टदेवस्यो एव उपाधि ।
 दृष्टव्यं न (म० पु०) घो, मी, चरको मखा घो। मोम ।
 पञ्चस्यस्य (प० श्री०) पञ्चस्योत्पत्ति यत्र । १ तोरुमेष्ट ।
 न याममेष्ट । मन्वन्ति पञ्चस्यस्ये हजार वर्षे नृप यत्र
 पञ्चस्योत्पत्ति विद्या का ।

पञ्चस्यस्य (म० श्री०) पञ्चस्यस्य यत्र । प्रथम पतिशाम
 नै चरुण श्लोतिपत्त्यमेल । इम पञ्चस्ये ० चरुणा है
 त्रिमं विपरिह मन्वन्ति विपरिह, पञ्चस्य मन्वन्ति
 ज्ञान, सुल्लुप्य, रिष्टस्योत्पत्तिघोरा घोरा मन्वन्ति पञ्चस्यस्य
 यादि निरूपित रूप है।

“पञ्चस्यस्यसिद्धिर्वाचक मन्वन्ति दिशानचरुणम् ।
 दिशिदुष्टस्यस्य च स्वरा च यमि श्रुत्यम् ॥
 (पञ्चस्यस्य)

आत्म लक्ष्मि शुभाशुभ विषयको गणना करनेमें
 पञ्चस्ये पापुन पना करना पानस्य है। पञ्चस्ये स्युत्पा
 तिव्यं नियो विना शुभाशुभ गणना निरूप्य है। आत्म
 मनुपादा मन्वन्ति इत्थं शुभाशुभ का पल कोल
 मेरीना। इसविधि मन्वन्ति पञ्चस्ये स्युत्पात्त करना
 चाहे। अथममयमे कर २० वर्षे तक रिष्टस्य
 रचता है इम मयय पापुन पना न कर रिष्टस्यना
 करनी होती है। इत सब रिष्टस्यनादिना विषय पञ्च
 स्यस्ये विमेष्यपसे विद्या है। मन्वन्ति सञ्चलनाय नरस्य
 घोरा विद्या ही ज्ञाने मन्वन्ति नरस्ये दिव्यनाया गथा ।
 य इ च, ए यो इत पांच स्वर्गोंको प्रचार बना कर पञ्च
 गन्ना हुई है, इसीमे इनका नाम पञ्चस्वरा पडा है।

(अष्टाश्लोकिय न चरुणा)
 इत प्रकार स्थाटिका विषय करना होता है।

प्रथमः पञ्चस्यस्यसिद्धिर्वाचक पञ्चस्योत्पत्ति विद्या का
 माथे मन्वन्ति, य, वा हा वाहि मन्वन्ति मन्वन्ति चर्कोको
 रन्ते। ५ स्वर्गों मे विद्या इ म, न मन्वन्ति चरुणादि
 च चरुणात्त मन्वन्ति चर्कोको मन्वन्ति विमन्वन्ति मन्वन्ति
 पन करे। इ म, न ये तोम मन्वन्ति मन्वन्ति पानिमे प्रातः
 मन्वन्ति मन्वन्ति इम चरुणात्त तोमो चर्कोकोट दिने गये।
 यदि ये तोमो चर्कोको विमन्वन्ति मन्वन्ति यदिमे रचे नो ग
 न क ये तोम पञ्च पञ्च चरुणात्त तोमो है। यदि विमन्वन्ति
 तो मन्वन्ति पानिमे मन्वन्ति चर्कोको तो पञ्च मन्वन्ति
 पानिमे तो पञ्च रचेना करे चर्कोको पञ्च चरुणात्त तोमो ।
 इम पञ्चस्यस्यसिद्धिर्वाचक पञ्चस्ये मन्वन्ति य का हा हा
 हा भा वा ये ० चर्कोको, विमन्वन्ति पञ्चस्ये मन्वन्ति र वि, वि
 दि नि वि मि मन्वन्ति पञ्चस्ये मन्वन्ति न गु सु, तु, पु
 ए पु। पञ्चस्ये पञ्चस्ये मन्वन्ति ए डे, डे डे न मे घोरा
 चरुणात्त पञ्चस्ये मन्वन्ति ए चो ठो लो को को को चर्कोको
 रचे। इसमे पांच प्रकार के स्वरा निरूपित होम है। अथ
 नाम । यदि पञ्च जहा पञ्चस्ये नृप मन्वन्ति स्वरात्त
 को पञ्च करके गणना करनी होती है। इम पञ्चस्वरा
 के पांच नाम है यथा—प्रथम स्वराका नाम उदित
 दिनेय स्वराका नाम मन्वन्ति, द्यतोड वा मन्वन्ति चरुणात्त
 मन्वन्ति घोरा पञ्चस्वराका नाम पञ्च है। इसमें घोरा भी
 पांच नामान्त है अथ नाम पांच न विषय घोरा हिन्दु ।
 इन पांच स्वर्गोंके मन्वन्ति पञ्चस्वरा स्वरा मन्वन्ति मिय सि ह
 घोरा उदित, इकार स्वराके मन्वन्ति चरुणात्त मिय न घोरा
 चर्कोको, उकार स्वराके मन्वन्ति चरुणात्त घोरा मन्वन्ति पञ्च
 स्वराके मन्वन्ति मन्वन्ति घोरा चरुणात्त मन्वन्ति मन्वन्ति
 है। रागिनिच ए इमो प्रकार चरुणात्त होता है। रागि-
 निचय चरुणात्त स्वरा मन्वन्ति रागि घोरा रागिदि मन्वन्ति
 उदिते पञ्चस्ये चर्कोको मन्वन्ति चरुणात्त मन्वन्ति रागिना
 पञ्चस्ये मन्वन्ति चरुणात्त मन्वन्ति चरुणात्त मन्वन्ति चरुणात्त
 चरुणात्त मन्वन्ति चरुणात्त मन्वन्ति चरुणात्त मन्वन्ति चरुणात्त
 घोरा मन्वन्ति चरुणात्त मन्वन्ति चरुणात्त मन्वन्ति चरुणात्त
 चरुणात्त मन्वन्ति चरुणात्त मन्वन्ति चरुणात्त मन्वन्ति चरुणात्त
 चरुणात्त मन्वन्ति चरुणात्त मन्वन्ति चरुणात्त मन्वन्ति चरुणात्त

इम पञ्चस्वराके पांच नाम घोरा भी है यथा—प्रथम
 चरुणात्त इम प्रकार यथाक्रम सुभा सुभा, इम घोरा
 चरुणात्त इम चरुणात्त सुभा सुभा चरुणात्त मन्वन्ति चरुणात्त
 जाता है।

उक्त एटितादि पञ्चस्वरको जानादि पञ्च स्वयं जान कर नामके आदि अक्षरके अनुसार स्वरनिश्चित करके फलका निरूपण करना होता है। जिस वारमें जिस नामका आदि अक्षर होगा, उस वारमें जो स्वर रहेगा, वही उस व्यक्ति के सम्बन्ध में उचित स्वर समझा जायगा। एतद् एक स्वरके नोचे २ भाग १२ दिन करके रख देनेसे इस प्रकार पञ्चस्वरके नोचे स्थापित मासादिमें एक वर्ष पूरा होगा।

कार्तिकके शेष ६ दिनमें धारम्भ करके मास स्थापन करना होता है। अक्षरके कार्तिकके शेष ८ दिन, अग्रहायण, वीष और माघमासके तीन दिन; ईस्वरमें माघके २७ दिन, फाल्गुन और चैत्रके १५ दिन; उस्वरमें चैत्रके १५ दिन, वैशाख और ज्येष्ठके २७ दिन; एस्वरमें ज्येष्ठके तीन दिन, आषाढ, श्रावण और भाद्र-के ८ दिन; श्रोस्वरमें भाद्रके २ दिन, आश्विन और कार्तिकके २१ दिन, इस प्रकार प्रति स्वरमें ७२ दिन करके पञ्चस्वरमें समस्त वर्ष पूर्ण होगी। तिथियोग करनेमें अस्वरमें नन्दा, इस्वरमें भद्रा, उस्वरमें जया, एस्वरमें रिक्ता और श्रोस्वरमें पूर्णातिथि होगी। प्रत्येक स्वरकी तिथिका अङ्क पृथक् पृथक् योग करनेमें अस्वरमें ८१, इस्वरमें ८७, श्रोस्वरमें ८३, एस्वरमें ८८, श्रोस्वरमें १०५ अङ्क होंगे। यही सब अङ्क स्वराङ्क हैं। इनके द्वारा सन्धु वर्षका पड़ने निर्णय कर पीछे वार, तिथि, मास, आदिका विषय स्थिर करना होगा। इस पञ्चस्वराके सन्धु समशून्य गणनानुसार धायुवर्ष स्थिर कर लेना होगा।

वयसके अङ्क, स्वराङ्क और राशिके अङ्कको एक साथ जोड़ कर पूरे भाग देनेसे अवशिष्टाङ्क द्वारा नन्दादि तिथि निर्णीत होगी अर्थात् १ प्रवगिष्ट रहनेमें नन्दा होगी, इत्यादि। वयस, राशि, स्वराङ्कको एक साथ जोड़ कर ईसे भाग देनेसे अवशिष्टाङ्क द्वारा नन्दादि तिथि के मध्य किस तिथिमें सन्धु होगी, सो मालूम हो जायगा। वयस, राशि और स्वरके अङ्कको एकत्र योग कर ७से भाग देनेसे जो अवशिष्ट बचेगा, उस अङ्क द्वारा वार जाना जायगा। यदि गणित तिथिमें वारका मिलान न हो, तो तिथि अथवा वारमें १ योग वा वियोग करनेसे

जिससे तिथि वार मिल जाय इस प्रकार कर लेना चाहिये। अटसो तिथिमें एक योग वा वियोग करना नहीं होगी। पञ्चस्वरार्थ समशून्य होनेमें उमो अथ सन्धु होगी ऐसा ज्ञानना चाहिये। समशून्य देखो।

पञ्चस्वरोदय (मं० पु०) पञ्चानां स्वराणामुदयो यत्र । उद्योतिदभेदः ।

‘मात्र १२ राशि पूर्वमेन्द्र एव पंचस्वरोदयात् ।

राजा राजा उदाया च त्रिहासुस्तुम्भौ च न ॥’

(गृहपुराण)

गृहपुराणमें इस पञ्चस्वरोदयका विषय निम्न है। पाँच घर काट कर उन घरोंमें पाँच वर्ण विन्यास करके गणना करनी होती है इसीमें इसका नाम पञ्चस्वरोदय पडा है।

पाँच घरोंमें आ, इ, ऊ, ए, ओ ये पाँच स्वर लिखने होती हैं। विशेष विवरण गृहपुराणमें देखें।

पञ्चस्वेद (मं० पु०) वैश्वक्के अनुसार नोद्रस्वेद, वालुकास्वेद, वाय्वस्वेद, घृत्स्वेद और ज्वलास्वेद । पञ्चरस (मं० कां०) कार्त्तवीर्य स्थानभेद ।

पञ्चशिक्षा (मं० स्त्री०) अक्षरा, यमना, छुद्रा, गम्भीरा और महाशिक्षा प्रभृति ।

पञ्चशेव (मं० पु०) वैश्वस्वन मनुके एक पुत्रका नाम । (इतिरांश ० अ०)

पञ्चहृत्माश (मं० फला०) तोरुभेद ।

पञ्चहृद्दोग (मं० फला०) वानज, पित्तज, वाकज, विदोपज और क्षमिज रोप होनेसे उषे पञ्चहृद्दोग कहते हैं ।

पञ्चमांग (मं० पु०) पञ्च च ते अंगाद्येति वृत्ता संख्यावश-नस्य पूरणाद्येत्वस्वाकारेण पञ्चमस्य । पञ्चमार्थं क्रमघा० । त्रिंशदंगाम्बक रागिका पञ्चम अंश । नीलकण्ठीक तागिकमें लिखा है, कि रागिका फलाफल जाननेमें किस रागिका अधिपति कौन यह है वह जानना आवश्यक है। चित्र, होरा, द्वाकान, चतुर्थांग पञ्चमांग आदि में किम अंशका अधिपति कौन यह है यह जानना विवेक है। यहा पर पञ्चमांग चक्र टिया जाता है, इसमें किम किस अंशका अधिपति कौन यह है, वह सहज-में मालूम हो जायगा ।

यद्वा पञ्चाङ्गफलं सुनन्ति गङ्गास्नानका फलं मिलता है ।
पञ्चिना देवो ।

“तिविवारद्वयं नक्षत्रं योगः करणमेव च ।

पञ्चागस्य फलं प्रत्या गङ्गास्नानफलं लभेत ॥”

(ज्योतिष)

(पु०) पञ्च अङ्गानि यस्य । ४ कमल, कच्छप, कछुपा ।
५ अश्विगण, एक प्रकारका घोड़ा । पर्याय पञ्चभद्र,
पुष्पिततुङ्गम । ६ प्रणामविशेष ।

बाहुभ्यां चैव जानुभ्यां किरणा वचना दृशा ।

पञ्चागाङ्ग्यं प्रणामं स्यात् पञ्चासु प्रवराधिभो ॥”

(तन्त्रसार)

बाहु, जानु, मस्तक, वाक्य और दृष्टि इन पञ्चाङ्ग
द्वारा जो प्रणाम किया जाता है, उसे पञ्चाङ्ग-प्रणाम
कहते हैं । ७ राजनीति, राजाओंकी पञ्चमिष्टि ।

‘ वृष्टायाः साधनोपाया विभागो देशकालयोः ।

विनिगतं प्रतीकारः मिदिः पञ्चाग इत्यन्ते ॥”

(कामन्दक)

सहाय, साधन, उपाय, देश और कालका विभाग
तथा विपद्-प्रनोकार इन पाँचोंको पञ्चाङ्ग कहते हैं ।
यहो पञ्चाङ्गमिष्टि है । ८ आगमादिपञ्चकयुक्त भोग ।

‘ वागमी दीर्घं कालश्च निदिष्टोऽन्वयोज्जितः ।

प्रत्यर्धिविधानञ्च पञ्चानागो भोग इत्यन्ते ॥”

(कालायन)

आगम, दीर्घकाल, निश्चिद्र, अन्वयोज्जित और
प्रत्यर्धिविधान यहो प्रकारके भोग हैं । ९ पाच अङ्ग
या पाँच अङ्गोंसे युक्त वस्तु ।

पञ्चाङ्गयुत (सं० पु०) पञ्चसंख्यकानि अङ्गानि गुमानि
यस्य । कच्छप, कछुपा ।

पञ्चाङ्गपत्र (सं० श्लो०) पञ्चिका । पञ्चाङ्ग देखो ।

पञ्चाङ्गशुद्धि (सं० श्लो०) पञ्चाङ्गस्य शुद्धिः । पञ्चाङ्ग-
विषयक शुद्धिः, निधि, वर, नक्षत्र, योग और करण
यहो पञ्चाङ्गविषयक शुद्धि है ।

पञ्चाङ्गाधिप्रहीन (सं० श्लो०) बुद्धदेवको एक उपाधि ।

पञ्चाङ्गिकपञ्चगण (सं० पु०) पाँच प्रकारका पचमुल,
स्वल्प, महत्, लघु, वज्रो और कण्टक इन पाँचोंकी जड़ ।
पञ्चमूल देखो ।

पञ्चाङ्गो (सं० श्लो०) करिना अटिअनदाम, वह
रक्षा जो छायाकी कर्ममें बंधा रहता है ।

पञ्चाङ्गुरि (सं० श्लो०) १ पञ्च अङ्गुलीविमिष्ट, जिममें
पाँच उँगलियाँ हों । (स्त्री०) २ उल्ल, हाथ ।

पञ्चाङ्गुल (सं० पु०) पाँच अङ्गुलियुक्त पञ्चाणि यस्य
२ एरण्डवृक्ष, अण्डा, अण्ड । ३ त्रिजपत्र, त्रिजपत्ता । वि०
३ पञ्चाङ्गुलपरिमाणयुक्त, जो परिमाणमें पाँच अङ्गुल-
का हो ।

पञ्चाङ्गुलि (सं० श्लो०) पाँच अङ्गुलियुक्त जिममें पाँच
उँगलियाँ हों ।

पञ्च अङ्गुली (सं० श्लो०) तक्रासंज्ञक, एक प्रकारका त्रिल ।

पञ्चात्र (सं० श्लो०) अत्रात् । पुणोपाधिप वह, वक्रकोका
मून, विष्टा, टङ्का, दूध और घो ।

पञ्चाञ्जन (सं० श्लो०) पञ्चाञ्जन, स्त्रीपञ्चन, मोक्षारा-
ञ्जन कर्पूर और मान इन पाँच द्रव्यों द्वारा जो अञ्जन
प्रस्तुत होता है उसे पञ्चाञ्जन कहते हैं ।

पञ्चात्प (सं० पु०) पञ्चभिर्गन्धसुयेरातप्यते इति शाब्दतप
प्रव । तपस्याविशेष, एक प्रकारकी तपस्या जो चारों
ओर-प्रागजना पर योष ऋतुमें धूपमें बैठ कर की
जाती है । यह तपस्या बहुत दुःसाध्य है ।

पञ्चात्मक (सं० पु०) पञ्च प्राकाशादय आत्मः स्वरूपं वा
यस्य । आकाशादि पञ्चभूत स्वरूप, जो सब वस्तु पञ्च-
भूतोत्पन्न हैं वे मभा पञ्चात्मक है ।

पञ्चात्मन् (सं० पु०) गौराखित पञ्चशु, प्राण, अपान,
महान, उदान और आन । श्रुति आदिमें प्राणको जो
आत्मा बतनाया है । प्राण पञ्चाङ्ग है, इस कारण पञ्चा-
त्मन् शब्दसे पञ्चप्राणका बोध होता है ।

पञ्चान—विहार विभागके राजगृह पर्वतमालाके दक्षिण
और प्रवाहित एक नदी । अभी यह नदी प्रायः सूखी
पड़ी हुई है । वर्षाकालमें पहाड़से जो पानी निकलता
है, वह इसी नदी हो कर गङ्गामें गिरता है ।

पञ्चानन (सं० पु०) पञ्च धानानि यस्य । १ शिव,
महादेव । पञ्चं विस्तृतं धाननं यस्य । २ सिंह । ३
ज्योतिषोक्त सिंहराशि । ४ रुद्राक्षविशेष, एक प्रकारका
रुद्राक्ष जिमके पङ्कनसे मङ्गल होता है । ५ सङ्गीतमें
स्वरसाधनकी एक प्रणाली ।

सा १ प म प । १ ग म प च । ग म प ध नि । म प ध नि धा ।

पञ्चरोरी—सा नि ध प म । नि च प म ग । च प म य रे । प म ग रे सा ।

(त्रि०) ३ त्रिसुधे पांच सुधु चो, प च सुधो ।

पञ्चाननगुदिका (स० श्लो०) चौपचमोद । प्रसृत प्रचामी—
यत्र पारा ३ तोला यत्र गन्धक ३ तोला इत दोनोमि
कच्छरी बना कर लसे १ पल परिमित ताम्बपात्रके
चारों ओर नीप दे । पोखे कम ताम्बपात्रको सुवाक्य
पीर प चमकक द्वारा पाककहित करके गजपुरमें पाक
करे । इस प्रकार प्रसृत ताम्बपूष १ पल, पारद, गन्धक,
पुरटण्य शीघ्र, यमागो पञ्च, शतपुष्पा त्रिफट्ट, त्रिफला,
निषोदका मूत्र, चण्ड दन्तोमूत्र पपाङ्गमूल, बीरा
हृत्पथीया प्रत्येक १ पल मात्र, पञ्चिक चित्तक, कुनोम
प्रत्येक पाच पल । इन सब प्रयोगों परदरकके रसमें
कुनो कर १ मासिकी गोनी बनावे । इससे पञ्चपित्त
पादि रोगों की शान्ति होती है । पण्य दूध पीर मांसका
धिरवा । इसमें सुधुद्रव्यकी बिलकर व्रतमावा है ।

पञ्चाननहृत (स० श्लो०) चौपचमोद । हृत या तैल ७४
शिर ह्याचार्य शान्तिच २ पञ्च, पुनर्च २ पल पाकाच
कम ७४ शिर, शिप ७२ शिर । पाक सिद्ध होने पर इरो
तकी, चितामूल यवचार संभव पीर कोठकी पञ्चवी
तरह कपड़ेमें डाल कर प्रत्येक दो तोला काढ़ेमें डाल
दे । सो काने पीर तैल लगानिसे काममें आता है । यह
शुद्ध पादि जोड़ाका शान्तिकारक है । अंधाममें गो
मूत्र पीर मात तथा पित्तकी अधिकतामें पुनर्विच
भीय है ।

पञ्चाननमाहाचार्य—द्वितीय राक्षसीवराचोय नामक एक
पश्चिमान चन्दके प्रथिता ।

पञ्चाननरस (स० श्लो०) रसोपचमोद । प्रसृत प्रचामी—
पारा, तृतिवा गन्धक जयपारक, पोपर इन सबसे बरा
बर बराबर भागकी पोस कर लसे घूबरके दूधके साथ
कोटे । इसका पशुपान पाकसेका रस है । इससे शिवन
करनेसे शुष्मरोग जाता रहता है ।

पञ्चविध—विप ३ भाग, मिर्च ३ भाग, विट्ठुल १
भाग, गन्धक १ भाग, ताम्र १२ भाग, रश्मि पञ्चजनके

दूधके साथ पोस कर एक रसोको मोक्षो बनाते हैं ।
पशुपान पचका नाम कर देना होता है ।

पञ्चविध प्रसृत प्रचामी—पारा इरिताम, तृतिवा
शोधाता थडू म पीर गन्धक इनके समभागकी करीबके
रसमें एक दिन तक पोस कर लसे ताम्बपात्रमें रस दे ।
पोखे कम ताम्बपात्रको ठक कर इससे ऊपर बाधू रख
कर पाक करे । असोमति पाक को ज्ञानी पर लसे
तुलसीपत्रके रसमें तीन पहर तक घोट कर तीन रसोको
गोनी बनावे । इसका पशुपान तुलसीका रस पीर
मिच है । इससे शैबलसे विपम त्रिदोष पीर टाडगुड मय
प्रकारके च्चर ज्ञानि रहते हैं । चातुमत ज्वरमें पोपरचूष
पीर मधु पशुपान है तथा पच चौनीके साथ पूष, भात
पीर मू गको वाल ।

पञ्चविध प्रसृत प्रचामी—पारा पीर गन्धकको
पांसके रसमें घोट कर द्राक्षा, यष्टिमधु पीर कजूर
इनसे प्रत्येकके काढ़ेमें एक एक दिन मावना सेते
पीर त २ रसोकी गोनी बनाते हैं । पशुपान पांसके
का चूष पीर चोमो है । इससे शैबलसे प्रद्वीपकी
शान्ति होती है ।

पञ्चाननरससौत्र (स० श्लो०) चौपचमोद । प्रसृत
प्रचामी—आरित पीर सुरित सोड ५ पल, सुभुध
५ पल, पञ्च २५ पल पारद २३ पल, गन्धक २३ पल,
ह्याचार्य त्रिफला प्रत्येक १ पञ्च कम १० शिर, शिप
१ शिर १ पल । इन कायमें सोड पञ्च, सुभुधको पाक
करे । हृत १२ पल, शतमूलोका रस ३२ पल पीर दुग्ध
१२ पल इसे जोड़े का महीके बरतनमें सोडदर्दी द्वारा
धोमो पांसमें पाक करे । पांसक पाकमें विट्ठुल, सीठ,
बनिया, गुनचरस, जोरा, पचसोक, निषोद, हलोमूल,
त्रिफला, इलायचो पीर मोषा इन धक्को पञ्चो तरह
पीस कर पर्येकमात्र डाल दे । पोखे कम पीर गन्धकको
कच्छरी करके कुछ गरम रहते ही मिना देना कर्त्तव्य
है । हाइमें पीपचकी नोसे कतार कर उच्छे बरतनमें रख
दे । हृत पीर महुके साथ लसे मिना कर मुल च नोट
पीर परपत्रमूलके काढ़ेके साथ शिप है । पीपच शिवन
करनेमें पचके विरिपचादि द्वारा सुधुको घोष मिना उचित
है । इससे पायवात, मन्थिवात, बडोगुल, कुचिपुल
पादि उच्छटरोग दूर हो जाते हैं ।

पञ्चाननवट्टी (स० स्त्री०) श्लोषधविशेष । प्रस्तुत प्रणाली—
रसमिन्दुर, अश्व, शोष, ताम्र, चौर गन्धक प्रत्येक एक
तोला, भिलायां ५ तोला इत्थं ८ तोले श्लोषके रसमें एक
दिन तक घांट कर एक मासिकी गोली बनाते हैं। अनु-
पान छम है। इसका सेवन करनेसे मत्र प्रकारके अर्श
और कुष्ठरोग नाश होती है। यह श्लोषध स्वयं शङ्कर-
कथित है।

अन्यविध प्रस्तुत प्रणाली—पारा, गन्धक, ताम्र, अश्व,
शुभ्रानु और जयपालबीज, इनके समान भागीकी चीके
साथ प'स कर बरका प्रांठीकी बराबर गोली बनाते हैं।
इसके सेवनसे शीघ्र और पाण्डुरोगकी शान्ति होती है।

पञ्चाननी (स० स्त्री०) शिवकी पत्नी, दुर्गा।

पञ्चानन्तरीयकर्म—माटहत्या, पिटहत्या, अर्हत्नाग,
किमा बुद्धका रक्तपात और याज्ञकसम्प्रदायके मध्य
विवातमघटन आदि पंचमहापाप हैं। ऐसे पापोंकी
सुक्ति नहीं है।

पञ्चानन्द—हिन्दूके उपास्य श्वाभ्य देवतामिद। बङ्गाल और
महिषुर प्रदेशमें कैवर्त्त, वाइतो, जलिया, चण्डाल आदि
जातिगणके मध्य इस देवताकी उपासना अधिक प्रच-
लित है। बहुत-से स्थानोंमें उच्चश्रेणीकी हिन्दू-महिना-
गण अपनी अपनी मनोरथ-सिद्धिके लिए इस देवताको
पूजा किया करते हैं। लक्षके नोचे, मैदानमें वा भरो-
वरके किनारे इनकी पूजा होती है। कहीं इनको
मूर्त्ति बना कर अथवा कहीं कलस बैठा कर पूजन
किया जाता है। किसी मो प्राचीन हिन्दूशास्त्रमें इस
पञ्चागन्धकी उपासना-कथा नहीं लिखी है। महिषुरके
समुष्य इत्थं महादेव समझते हैं और इनकी साहाय्य-
शोधणके लिए पञ्चानन्द साहाय्य नामक एक अप्राचीन
संस्कृत ग्रन्थकी दुहाई देते हैं। नेपालके वीरगण क्षेत्र
पालकी पूजा करते हैं। इस क्षेत्रपालके साथ पञ्चानन्द-
का बहुत कुछ सादृश्य देखा जाता है।

पञ्चानन्द (स० पु०) तस्त्रोरके निकटवर्त्ती तैरुवैष्ट
श्यामख शिवलिङ्गभेद। पञ्चानन्दसाहाय्यमें इसका
विस्तृत विवरण लिखा है।

पञ्चानुगान (स० स्त्री०) सामभेद।

पञ्चावग्राम—कलकत्तेके उपकाण्डस्य ५५ ग्राम। ये सब

ग्राम १७५७ ई०में अङ्गरेज वर्णिकके माध मोरजाकरको
नी मन्त्रि दुर्गे, उसी मन्त्रि-गर्तके अनुमार इष्ट-इण्डिया
कम्पनीको मिले थे। अभी ये २४ परगनेके अन्तर्भूक्त
हो गये हैं।

पञ्चापरस. (स० स्त्री०) रामायण और पुराणोंके अनु-
सार दक्षिणमें प'पा नामक तालाब। इस तालाब पर
गातकर्ण सुनि तपस्या करते थे। इनके तपसे भय खा
दूर इन्द्रने इनका तप भङ्ग करना चाहा और इस
उद्देश्यसे उल्लानि पांच अयराट्टे भेजे थे। रामायणमें
गातकर्णकी जगह माण्डकर्ण लिखा है। रामचन्द्रजीने
स्वयं इस तालाबकी टैप्रा था। (रामायण ३।१।११)

पञ्चासमण्डल (स० स्त्री०) सर्वतोभद्रमण्डलान्तर्गत
पंचपद्मात्मक मण्डलभेद। पृथिवी पर चोकीण मण्डल
बना कर उसमें दृष्ट कीष्ट अद्वित करना चाहिए। इस
प्रकार अद्वित क्षेत्रके मध्य चारखरोंमें चार और बीचमें
एक पद्म अद्वित करना होता है। यह पंचासमण्डल
दोला और देव-पूजाकार्यमें श्रावणक है। (तन्त्रसार)

पञ्चाभिशा—बोद्धके मतमें ५ ऐश्वरिक गुणशास्त्री।

पञ्चाभिषेक—नेपालवासो निवारी बौद्धोंमें से जो 'वाड़ा'
होना चाहते हैं, उन्हे पूर्वपर कई एक संस्कारोंका
पालन करना होता है। गुरुको सूचना देनेके बाद,
उनको समति ले कर गुरुदेव आगोर्वादी उपहारग्रहण
करते हैं और शिष्यकी भलाईके लिए पढ़ने पहल
'कलसो-पूजा' तथा इन बाद 'कलसी'-का अभिषेक
करना होता है। इसे 'दूसल' कहते हैं। इस दिन
निकाटवर्त्ती विहारमें, चार और नायक-वाड़ा ला कर
गुरुदेव शिष्यकी मङ्गल कामनाके निमित्त उसके सस्तक
पर शान्तिजल देते और सब कोई मन्त्र-पाठ करते हैं।
तोसरे दिन 'प्रथव्याव्रत'-को समाप्ति होती है और बाद-
में 'पञ्चाभिषेक'-की। इस दिन गुरु और चार नायक
मिल कर कलसीके जलको ग्रहमें ले शिष्यके माथेके
ऊपर गिराते हैं। इसके बाद नायक उसे ऊपरमें बैठते
और गुरुमण्डल पूजाके बाद गुरुदेव उसको 'बोबर'
और 'निवास' दान देते हैं। इसी समय उसका पहला
नाम बदल कर दूसरा नाम रखा जाता है। शिष्य मो
धीरे धीरे अपने इस नूतन 'वाड़ा' धर्मग्रहणके लिए

संसारवेदाय प्राप्त करता और इस कथने विषय सम्पत्तिमें कोई सम्पत्ति नहीं रहता है।

पद्मासुरा (म० ग्मो०) पंच महा म प्रस्तात् कर्मकारण । पद्मरत्नापंचकः । बुधा, विजया, त्रिस्तया निगुण्यो और ज्ञानो तुल्यो इति पांच दम्पतीको पद्मरा स्ता कहते हैं। (राश्रमन)

पद्मासुरादिपाम (म० पु०) प्राक्तोविष्णुः पंच प्रकारेण योगमेव प्रायतोविष्णोर्न त्रिं दृष्ट पांच प्रकारेण योग । यथा—जैतो, हस्तोग, धेतो मन्ध और पान्धन यज्ञो पांच प्रकारेण योग मन्ध योगिने श्रेष्ठ है । जो इस पंचा मराका योगानुष्ठान करते वे पद्मर होतें हैं । हमीसे इनका नाम पद्मारादियोग पडा है । यह योग पद्मरान्ध कर प्रतिदिन मन्त्रपूजक श्रीकृष्णदेवीकी मन्त्र-नामादिक पाठ करना चाहिये ।

पद्मासुरा (म० श्री०) पञ्चानां पद्मनामा ममाधार । १ एक प्रकारका नादिक विष द्रव्य जो दधि दुग्ध, घृत, मधु और चामो मिश्रण कर बनाया जाता है ।

“दुग्धं घृतैश्चैव दधि घृतैश्च मधु ।

पद्मनाम्नामेव लेखेनैव सर्ववैशुः (श्रीमत्तन्त्र)

यामें कौनों चीको पद्मनाम (विनामा) चाहिये किन्तु इसमें विष्णुजिज्ञा निगूढ दिन सोना पाषाणक है । उद्योतिव्यस्तमं लिखा है—पद्मनामका ममाधारमं रवि उद्योति और उद्योतारको रिला भिन्न त्रिपिम्, वैश्वतो, परिमो, पुनर्बन्ध, पुष्पा ग्याति मुक्ता मवा, पद्मनामा यद्वा और सत्तपना तो मत्तमं पुद्दप और खोको मत्तपद्मिने पद्मनाम दान करना होता है । इसमें नेचपुका और महात्मान पाणि भी जाने हैं । २ वैद्यकमें पांच गुणकारी औषधि—मिथोत्र, गोपक, तुलसी, नेचपुका और मनावरी ।

पद्मासुरादी (म० का०) औषधिविषय । प्रमुत्त इवाची—कथक ८ भागा पात्र ३ भागा लोहा २ भागा लोहा ३ भागा इन सब द्रव्योंको मिला कर लोहेके कर तममें ठीक कर और वैश्वो लक्ष्मीके पातमें मन्त्रमें है । घाट पाँठोंको मार और श्रेष्ठ लज्ज वने किन्हे वनो पर जान देते हैं । इनके मन्त्रको माता २ रत्नादि ले कर ८ रत्नी लक्ष्मी मन्त्र ही है । इसका पद्मनाम को को

मधु है । इस औषधका मुख्य कारमें मन्त्र प्रचारको पदयो पदवि पगा कटि पत्नीवार लज्ज उद्योति चय वनिपवित नेत्ररोग घमृति ज्ञाने रहते हैं । यह इत्य और पातये है । (वैद्यक० मन्त्रवि०)

मैयवदावावमीके मन्त्र—गन्ध ८ तोला पात्र ४ तोला, लोहा ४ तोला, पद्मरत्न १ तोला और लंका पात्र तोला इन पांच द्रव्यों को पदमे पद पांच मिला कर लोहेके बरतनमें घोमना चाहिये । घाट एक दूधने लोहपात्र (कडाही पाणि)—३ रत्न कर घीमे पातये पाठ करते और किन्हे वनो पर जान कर मन्त्री पाँटो बनाते हैं । हमीको पद्मनामपाँटो कहते हैं । इसमें मैयवकी माता २ रत्नी तथा पद्मनाम को और मधु है । प्रतिदिन मैयव माता ब्रह्मा मर ८ ना १० रत्नी मन्त्रको मन्त्रना करनी होती है । एक सप्ताह तक मन्त्र करमें लाना प्रकारको पदयो पदवि मन्त्र पनेक दिनका पत्नीवार और नेत्ररोग पादि ज्ञाने रहते हैं । रोपातोमार वा चिरोजितानोमारमें गन्धकदा परिभाष उक्त परिभाषमें पापा कम कर देना चाहिये ।

पद्मासुरादिपत्र (म० पु०) पद्मके मन्त्रपुद्दिका विष्णु-विष्णु चौदोंको ताकतको ब्रह्मनिम्नको एक प्रकारको औषध । घट का जपलो भ्रमरी, मुक्ता और घन ये पांच प्रकारके पद्म कभी लोहेके लिये लपकारो है ।

पद्मासुरादय (म० पु०) कुक्कुटानि पद्मद्वयान् एव विधीय । कुक्कुटो मूग, परहर उरट और मटर इन पांच फीजा का त्रुम बनामने पद्मनामपात्र होता है । गुण—मन्त्री पन, पाचन, वायुप्रकार मधु पदनिमासक हलकर लज्ज लघु और पद्ममन्त्रमासक । (वैद्यक०)

पद्मासुरा (म० पु०) औषधविषय । प्रमुत्त इवाची— पात्र १ भाग, गन्धक ८ भाग, लोहागा ३ भाग विष ४ भाग मिर्च १ भाग इन सब द्रव्योंको घटकर मन्त्रमें पात्र कर पांच रत्नाको मिला बनाते हैं । इस औषधका पद्मनाम विधिमें पात्र कभी रीतमें मन्त्रकार लिखा जा सकता है । यह जपदोष बलाहक नाशक, पौन लक्ष्मीके मन्त्र मन्त्रोद, मन्त्रक मन्त्रोद नाशक मन्त्र, मन्त्रनाशक और लज्ज रीतिमें मन्त्र है ।

(वैद्यक० मन्त्रवि०)

भैषज्यरत्नावलीके मतसे षड्ध पारा १ तोला, गन्धक १ तोला, सोहागोक्षी खोई ३ तोला, विप ३ तोला, मिर्च ३ तोला इन सबकी चूर्ण कर जमकी साथ अच्छे तरह पीसते हैं। पेछे एक रत्तीकी गोली बना कर सेवन करते हैं। इसका अनुपात अदरकका रस है। इससे शोथ घाटि नाना रोग उपगम होती है।

अन्यप्रकार—गोधित पाग १ तोला, गन्धक २ तोला, अदरक २ तोला, मिर्च १० भाग और विप १ तोला इन्हे नीचूके रसमें पोस कर उरदके बराबर गोली बनाते हैं। इसका अनुपात बड़ेहो फलकी छालका चूर्ण और मधु है। इसमें वातकाग नष्ट होता है।

पञ्चासृतलौहमण्डूर (सं० पु०) श्लेष्मविशेष। प्रसून प्रणाली लोहा, ताँबा, गन्धक, अदरक, पारा, त्रिकटु, त्रिफला, मोथा, विहङ्ग, चीता, चिरायता, टैबटाक, दाहहल्दी, हजदी, कुट, यमानी, जोरा, क्षुण्णजीरा, कपूर, धनिया, चव्य प्रत्येकका चूर्ण १ तोला, कुल मिना कर जितना चूर्ण हो, उसका आधा गोधितमण्डूर, मण्डूर चूर्णका ४ गुण गी-मूत्र, ८ गुण पुनर्वाका काय इन सबकी एक साथ पाक कर पासन्न पाकमें लोहादि चूर्णको डाल दे और अच्छे तरह मिना कर उतार ले। शोथ हो जाने पर उसमें एक पल मधु डाल दे। इसकी मात्रा रोगीकी अवस्थाके अनुसार होती। इससे ग्रहणो, कमला और शोथ आदि रोग जाते रहते हैं।

पञ्चान्नाय (सं० पु०) पंचसंख्यकः आन्नायः। महादेवके पञ्चवक्त्रविनिर्गत तन्त्रशास्त्रविशेष। महादेवने पूर्व-मुहमें जिस तन्त्रका विषय कहा है, वह पूर्वान्नाय है। इस प्रकार पाँचों तन्त्रके नाम ये हैं—पूर्वान्नाय, शब्द रूप, दक्षिण कर्णरूप, पश्चिम प्रश्नान्नाय, उत्तर उत्तरात्मक और ऊर्ध्व ऊर्ध्वान्नाय तत्त्वबोध वा वैवलानुभव-त्मक।

“पूर्वान्नायः शब्दरूपः दक्षिणः कर्णरूपकः।

पश्चिम प्रश्नरूपः स्यात् उत्तरश्रोत्रस्तथा।

ऊर्ध्वान्नायः तत्त्वबोधवैवलानुभवः ॥”

(भैरवतन्त्र)

महादेवने स्वयं कहा था, कि हमारे ५ मुहोंसे यह

तन्त्र निकला था, इसलिए हमका नाम पञ्चान्नाय पड़ा है।

“गम पञ्चमुत्सृज्यश्न पञ्चाम्नायाः समुद्गताः ॥”

(कुलार्णवतन्त्र)

पञ्चान्न (सं० स्त्री०) अमन्ति रमानि प्राप्रुवतीति अम-रक, दोषचोपधयो इति आम्नाः वृक्षाः (अमितम्बो-दोषदय। ४७ २।१६) पंचानां आम्नाणां अमत्त्यादीनां समाहारः। वृक्षविशेषका समाहार, अमत्त्य आदि कई एक वृक्ष।

एक अमत्त्य, एक पियुमट (नीम), एक न्यग्रोध (बरगट), दश प्रकारके फूल, दो मातुलङ्ग ये सब वृक्ष पंचान्न है। जो यह पंचान्न लगाते हैं, उन्हें नरक भुगतना नहीं पड़ता।

तिथितत्त्वके मतसे पीपर १, नीम १, चम्पा २, जेगर १, ताड़ ७ और नारियल ८ यही पंचान्न है।

पञ्चासृत् (सं० स्त्री०) पञ्चानामाम्नानां कौलादीनां समाहारः। अमनपंचक, वैद्यकमें ये पाँच अमन या खट्टे पदार्थ—अमनवेद, इमलो, जँभोरो नोवू, कागजी नोवू और बिजौरा। मतान्तरमें—वेर, अमार, विषावलि, अमलवेद और बिजौरा नोवू। अधिक प्यास लगने पर पंचाम्लका लेप मुहमें देनेसे प्यास बुझ जाती है।

“कोलदाहिम्बवृक्षाम्पूर्णाकाशुद्धिकारम्।

पञ्चाम्लको मुखे लेपः सदा वृणां निवृत्तति ॥”

(सारकौमुदी)

पञ्चायत—भारतवर्षको सर्वव्यापी ग्राम्यविचारसभा। किसी जाति वा किसी विशिष्ट समाजके मध्य किसी प्रकारका गोलमाल उपस्थित होने पर ग्रामस्थ गण्यमान्य व्यक्तियोंकी मध्यस्थ बना कर एक सभा गठित होती है। उनके पास विवाद वा मनोमालिन्यकी प्रकृत घटनाकी दोनों पक्षके लोग सुनाते हैं। इस प्रकार व्यक्ति-समष्टिके विचारको ही पंचायतका विचार कहते हैं। पाँच व्यक्ति ले कर सभा गठित होती है, इसीसे इसका नाम पंचायत पड़ा है। प्रायः देखा जाता है, कि सभी देशोंमें निम्नश्रेणीके व्यक्तियोंके मध्य जब कोई विवाद खड़ा होता है, तब पंचायतसे ही उसका निवटारा होता है। एलफिन्टन साहबने स्वीकार किया है, कि

‘राजकीय शासनपञ्चायतोंसे प्रजा त्रिन कर विषयमें मध्यवर्द्धपसे विचार पानेको प्रामा नही करते, एक पात्र व चायत ही उभर हम पञ्चायतको पूरा करते है।’ अब त्रिभुज पत्रिदर मन्त्रीके शासनकर्ता निरुद्ध रूप (१९१८-१९२०) के समय उन्होंने हिन्दू, पामो पौर सुमनसार्थक विचारके लिए प्रबोद्ध सम्प्रदायमें ५ पञ्चियों को चुन कर न्यायतशासनविधि अनुकरण पर प चायतनी स यत्न की वे। एतद्विषय प्रसारक प्रह्लाद-मार्थके समय कालिदास प्रदीपमें पंचपापीमें इस प्रकार पनीको का विचारकायं रात्रिपूर्वाक जाय भोग का पको, निहित पत्रगिट सभी कायं चायतनी को ही करनी होती है। इस समय दीवानो पदाकर्तमें हयको को करनीके अधिकार से कर जो सामना चलता था, पञ्च प चायत सम्रा को उभरवा खुलान विचार करती थी। व्यवसायी व्यवस्थितके ही पचवा उभर चायत सम्प्रदायको ही की पांच पादमी चुन लिए जाते थे। सामरिक विभागका विचारकायं करदारो को प चायत द्वारा नियुक्त होता था। प चायत द्वारा नियुक्त हुषदमेंके कानशादि राजदरवासे कागजान्दिके मध्य गिने जाते थे। चात्र मो सभी स्थानी में निगमनेके मध्य प चायतका विचारकायं दृष्टिगोचर होता है। समा किसी स्थल में टानमें पचवा पचादिके तने बैठतो है। इस प्रकारको प चायतमें किमल पांच को पादमी बैठने है मो नही, उनमें पांचवे अधिक व्यक्ति भी ललित होते हैं। विचारके पक्ष बाधो पौर प्रतिवादी दोनों पक्षको ही प चायत तथा उभयपक्षीय माथा पौर राजा नीव समर्थित पञ्चियोंको मिष्टाक विधाना होता है। उसके बाद प चायतके विचारमें जो नि प होता है उसे दोनों पक्ष पानेको बाध्य है। वर्तमान पञ्चजे शासनकारणमें त्रिभु प्रसार जूरीको प्रया तथा प्रजातन्त्र शासनपञ्चायी प्रचलित है, उन्को प्रसार इन देशमें प चायत-प्रथा भी प्रचलित देको जाती है। इस नीतिके देशमें प्राचीनकारणमें भी प चायत प्रथा प्रचलित थी, तात्कालिकशास्त्रिके समयका प्रमाण मिलता है।

पञ्चपञ्चकी दिखी।

इस नीतिके दिग्गं यह भी दिखता जाता है कि

जहां मुनिमण्डितो नहीं है, वहां घाट राधा, पुष्प रिषो, पालिका प्रबन्ध यहाँ तक कि चोखादार चादिका नियोग भी हमो प चायत द्वारा होता है।

पञ्चायतना (स म्पौ) पञ्चातानुपाध्य देवकपालामायत नामा मसाधार। प च कपाल देवताका मसाधार। एक प्रकारको टोचा। तत्कालमें हमका विषय हम प्रकार निष्ठा है,—प चायतनी दोषांमें यत्कि विष्णु गिर, सूर्य पौर गनेग इन प च देवतापंचके ५ यत्न बना कर उनमें गति, विष्णु गिर सूर्य पौर गणेश इन प च देवतापंचको पूजादि करने शानो है। हमीसे हम का नाम प चायतनी टोचा पड़ा है। हममें विजोपता यह है कि गुण यदि इस प चदेवताके मध्य गतिही प्रधान समझें, तो हमके यत्नको मध्यम्यममें चिञ्जत कर पूजा करे पौर उभ यत्नके ईगानकोचमें विष्णु पत्निकोचमें गिर, गैर्कतकोचमें गणेश तथा बायुकोचमें सूर्यका यत्न बना कर इन सबको पूजा विधेय है। यदि मध्यम्यममें विष्णुकी पचंगाकी प्राण तो ईगानकोचमें गिर पत्निकोचमें गणेश, गैर्कतकोचमें सूर्य पौर बायुकोचमें पत्निका यत्न चिञ्जत कर पूजा करे। यदि मध्य भागमें शहरको पूजा करने हो तो ईगानकोचमें विष्णु, पत्निकोचमें सूर्य, गैर्कतकोचमें गणेश पौर बायुकोचमें पावतौको पूजा; यदि मध्यमें सूर्यको पूजा करने हो, तो ईगानकोचमें गिर पत्निकोचमें गणेश गैर्कतकोचमें विष्णु पौर बायुकोचमें मवानीचको पूजा; यदि मध्य भागमें गणेशकी पूजा करनी हो तो ईगानकोचमें विष्णु पत्निकोचमें गिर गैर्कतकोचमें सूर्य पौर बायुकोचमें पावतौचको पूजा करने की है। इन सब स्थाना को जोड़ कर पञ्चय पूजा करनेमें पद्यम होता है पैसा गणेशविमर्षको तत्कमें निष्ठा है। रामा चलचन्द्रिका पौर गौतमावतन्त्रके मतने—मध्यम्यममें विष्णु, पत्निकोचमें गणेश ईगानकोचमें सूर्य, बायुकोचमें पाव तो पौर गैर्कतकोचमें महाशिवको पूजा विधेय है। किमो किमोके मतने ईगानाधिकोण विभागमें विष्णु होता है। मन्त्रादि द्वारा पचवा करण पञ्चमें पूजा करने कोतो है। नृचाके बाद २ बार मन्त्रजय पौर मन्त्रप्रसार करके जय ममान करना पड़ता है। पाठ

देवताको पूजाके बाद अन्नदेवताः पूजा, पीके पीठस्थान प्राणप्रतिष्ठा, आवाहन आदि कर्म पूजा करना विधि है। प्रतिष्ठित यन्त्रादिस्थलमें देवताकी पुष्पाञ्जलि दे कर अन्नदेवताकी पूजा करनी होती है। ग्यामा, भैरवी, तारा, छिन्नमस्ता, मञ्जुषीप और नन्दमन्त्र इन सबकी पंचायतनीट्टे जा पण्डितोंका अभिमत नही है।

(तन्द्रसार)

पञ्चायुध (सं० पु०) विष्णुका एक नाम।

पञ्चारी (सं० स्त्री०) पञ्चजल्यसंख्यासङ्केतोति ऋगतो अण् (कर्मण्यण् । आ० २।१४) ततो गौराटित्वात् डीप् । शारिऋद्धता, चौमरकी विद्यत।

पञ्चाचिन् (सं० पु०) पञ्च अचिः यस्य । बुधग्रह।

पञ्चाल (सं० पु०) पञ्च विस्तारवचने कालन् । तमिषि वि- विष्टिसृष्टिऋषीति । टण् १।१६७) १ देशविशेष । विष्णु-पुत्राणामे पञ्चाल नामकी इस प्रकार व्युत्पत्ति लिखी है— महाराज हर्यश्चके ५ पुत्र थे, सुहल, सञ्जय, हृहटिपु, प्रवीर और कम्पियय। पिता अपने पुत्रोंको देख कर कहा करने थे कि ये पाँचों मेरे अधीन '५' देगो को रजा भलीभाति कर सकते हैं। इसीसे वे सब देग पञ्चाल नामसे प्रसिद्ध हुए।

महाभारतमें लिखा है, कि नीलराजकी पाँचवीं लीढ़ीमें हर्यश्च नामक राजा हुए। महाराज हर्यश्च अपने भाइसे लड़ कर अपनी मसुराल मधुपुरी चले गये और मसुर मधुनी महायतासे उन्हीने अयोध्याके पश्चिमके देगो पर अधिकार कर लिया। जब लोगोंने आ कर उनसे अयोध्याके राजाके याक्रप्रणकी बात कही, तब उन्होंने पाँच पुत्रोंकी और देख कर कहा, ये पाँचों हमारे राज्यकी रक्षाके लिए शलम् (पञ्चालम्) हैं। तभीसे उनके अधिष्ठित देगका नाम पञ्चाल पड़ा।

हरिश्चन्द्रने हर्यश्चकी जगह वाञ्छाम् ऐसा नाम लिखा है। उनके सुहल, सञ्जय, हृहटिपु, यधीनर और क्षमिलाश्व नामके पाँच महावीर्यशाली अमृततुल्य पुत्र थे। उन्हीं पाँचपुत्रोंसे इस प्रदेशका पञ्चाल नाम पड़ा था।

तन्मसारमें लिखा है—

“कुरुक्षेत्रात् पश्चिमेषु तथा चोत्तरभागतः ।

इन्द्रप्रस्थानदेशानि इत्यथोत्तरपट्टये ॥

पञ्चालदेशो दक्षिणि नोऽप्यन्येषुभूयतः ॥”

(हरिश्चन्द्र)

दुर्गनेत्रके पश्चिम और इन्द्रप्रस्थके उत्तर दोम योजन विस्तृत भूभाग पञ्चालदेग कहलाता था।

वर्त्तमान अयोध्याप्रदेश और दिल्लीनगरके उत्तर-पश्चिमस्थ गङ्गानदीके उभयतीरवर्ती ग्यान इसी राज्यके अन्तर्गत थे। पर महाभारतमें हिमालयके अन्तर्गत भी कर चंवल तक फैले हुए गङ्गाके उभय पार्श्वस्थ देगका ही वर्णन पञ्चालके अन्तर्गत आया है। अति प्राचीन वैदिक ग्रन्थादिमें भी पञ्चालराज्य और वहाँके अधिपति राजाओंका उल्लेख देखनेमें आता है। रामायणमें लिखा है—

“ने हस्तिनापुरे गंगा तीर्त्वा प्रत्यमुखा ययुः ।

पञ्चालदेशमाशय मध्येन कुरुजाड्रलम् ॥”

(राम० २।६८।१३)

इसमें अच्छी तरह अनुमान किया जाता है, कि वर्त्तमान दिल्ली नगरके उत्तर और पश्चिमवर्ती ग्यान-समुद्र पञ्चालराज्यके अन्तर्भूक्त था। महाभारतके आदि-पर्वमें लिखा है,—

पञ्चालराज उपतने अपने लहके द्रुपदकी शास्त्राध्ययनके लिए महामुनि भरद्वाजके आश्रममें भेजा था। यश द्रोणाचार्यके साथ द्रुपदने खेल धूप तथा पढ़ने लिखनेमें बड़े चैनमें दिन बिताते थे। पिताके मरने पर द्रुपद पञ्चालके राजा हुए। एक समय द्रोण जब द्रुपदके समीप पहुँचे, तो दार्भिक पञ्चालराजसे उनसे सब-कुछेला तथा उपहास किया। इस पर क्रुष्ट हो कर द्रोणने पञ्चपाण्डवकी सहायतासे कृत्वावतोंके राजा द्रुपदकी निर्जित और कैद कर लिया था। अन्तमें उन्होंने उनके राज्यको दो भागोंमें बाँट कर उत्तरभाग तो आपने ग्रहण किया और दक्षिणभाग द्रुपदके हाथ रहने दिया।

भागीरथीके उत्तरतीरस्थ कृत्वावतोंनगरीसमन्वित स्थान उत्तर पञ्चाल और द्रुपदाधिष्ठित भागीरथीके

* महाभारतके यह नगरी अहिच्छेत्र वा अहिच्छत्र नामसे प्रसिद्ध था। अहिच्छत्र शब्द देखो।

धुम्ब नामक एक राजस रहता था। मुङ्गीपुर पाटनके अधिपति शाकवन्धि गालिवाहनके पुत्र गोहिलवंशोय राजा रसालुने उम राजसका नाश किया था।

ग्रानन्दपुरके राजाश्रौंकी प्रतिष्ठाप्रकाशक अनेक कविता और दोहा प्रचलित है जिनसे कितने ऐतिहासिक आभास पाये जाते हैं। लेकिन उनमें सन् तारीख आदिकी गड़बड़ो ढीख पड़ती है। कनकके पुत्र अनन्तरायने पंचालके अन्तर्गत अनन्त वा ग्रानन्दपुर नगर बसाया। इनके अश्वमेधने ११२० सस्वत् तक यज्ञ का शासन किया था। ग्रेप वंशधर अमरसिंहके अधि कारकालमें दिल्लीपति सल्तुत तुगलक और गुजरातके सुलतानोंको उपर्युपरि चढाईमें पंचालराज्य ध्वंसप्राय हो गया। क्रमशः चारों ओर बनाकीर्ण हो जानेसे काठोके सरदारोंने १६६४ सभ्यत्वेमें प्राचीन ध्वंसप्राप्त नगरके ग्रेप एग्यर्यका उपभोग करनेके लिये इस वन्यभूमि पर अपना दखल जमाया।

वसुवन्धुके शिष्य स्थिरमती स्वविर इसी देवपञ्चाल नगरमें रहते थे। तारानाथकृत ग्रन्थमें मगधराजवंशगवलोके वर्णनमें लिखा है, कि गम्भीरपन्न नामक किसी बौद्धराजाने पञ्चालनगरमें आ कर राज्य स्थापन किया और ४० वर्ष तक वे इसी नगरमें रहे। कहना नहीं पड़ेगा, कि यही नगर बौद्धप्रभावापन्न ग्रानन्दपुर है। परिव्राजक यूनानसुवहने समयमें यहाँके १० सङ्घारामोंमें प्रायः हजार यति सम्मतोय शाखाका हीनयान मत सोखते थे।

पञ्चाल—दक्षिणाल्यवासो एक परियमो जाति। ये लोग हमेशा एक जगह वाम नहीं करते। जब जहा ये रहते हैं, तब वहाँ अपने रहनेके लिये एक घासकी भोपड़ो बना लेते हैं। इनके नामको उत्पत्तिके विषयमें लोगोंका कहना है, कि उनको पाँच 'चाल' अर्थात् साना, रूपा, लोहा, ताँबा और पोतल, इस पंचधातुने उनको जोषिका बनता है, इससे उनका पंचाल नाम पड़ा है। खान भेदसे ये लोग कछाँ कछाँ रंगम और पत्थरके भी काम करते हैं। ये लोग जनेक पहनते हैं *।

दक्षिणाल्य ब्राह्मणोंके साथ इनका हमेशा वैरिभाव होते देखा जाता है। ब्राह्मणगण दक्षिणमार्गी और पंचालगण वाममार्गी है। कुछ प्रगंमि बौद्धाचारो हो जानेसे इन हो शिष्यमंथ्या बहुत थोडो है। आज भी ये लोग छिप कर बुद्धकी पूजा करते हैं, किन्तु टिखलानेके लिये हिन्दू देवदेवोंका पूजन करते हैं। कोई कोई अनुमान करते हैं, कि ये लोग पहले पंचगोत्र मान कर चमते थे। शायद इसी कारण धीरे धीरे ये लोग अग्रभ्रगमें 'पंचाल' कहलाने लगे हैं। इनका कहना है कि स्वजातिके मध्व बुद्धदेवको पूजाके लिए इनके स्वन्त पुरोहित हैं। एत द्वित्र कोङ्कण, कर्णाट और दक्षिण पंचालोंके मध्व बौद्ध धर्मविषयक पनेक ग्रन्थ हैं। किन्तु पुरा आदि म्यानोंके पंचालगण प्राचीन ग्रन्थादिकी कथाओंको जरा भी नहीं मानते। ये लोग अपनेकी विश्वकर्मोंके वंशज वतनाते हैं।

पञ्च लक (सं० पु०) अग्नि प्रकृति कोटविशेष।
पञ्चालचण्ड (सं० पु०) एक आचार्यका नाम।
पञ्चालपदवृत्ति (सं० पु०) छन्दोविशेष, एक वर्ष षष्ठका नाम।

पञ्चालर—गन्दाजप्रदे के चित्तूर जिलावासो बढई जाति। पाँच योगियोंमें विभक्त होनेके कारण ये लोग पञ्चालर कहलाते हैं। ये लोग अपनेकी विश्वब्राह्मण वतनाते हैं और जनेक पहननेके वाट आचार्यको उपाधि धारण करते हैं। यथायथं ये लोग ब्राह्मणोंकी अपवित्र भान विदेशीय समझ कर उनकी घृणा करते हैं। इन लोगोंको धारणा है कि पहले पाँच वेद थे, पोछे वेदग्राम आदि अन्यान्य ऋषियोंने तोड़ ताड़ कर चार वेद कायम किये।

धर्मार्थ क्रिया काण्ड, विवाह आदि कार्य ये लोग अपनेसे हो कर लेते हैं। स्वजातिमेंसे हो किसीको अपना 'गुरु' बनाते हैं। वहाँ मनुष्य मभो शुभ कार्योंमें उपस्थित हो कर कार्य कराता है। वहाँके पुरोहित ब्राह्मणगण ऐसे आचार पर असन्तुष्ट हो कर उनका विवाह-पण्डाल तोड़ फोड़ डालनेकी चेष्टा करते हैं। इस पञ्चालरगण भो विश्वब्राह्मणके अनुष्ठेय 'पण्डाल'-प्रचारको विवाहके समय विशेषरूपसे सम्पादन करनेको

* वस्तुसूत्रके अधिकार ले कर वीरशैवों और वीरवैष्णवोंमें एक समय विवाद खडा हुआ था। इसी मुखवसरमें पंचालोंने वपनीत धारण किया।

कीर्तिगण करतें हैं। इस विवादको वे कर लोनों मध्य
 लयके मध्य प्रथम विवाह हुआ करता है। कई बार
 देखा गया है, कि इस प्रकार लक्ष्मी भगवतने वे पदान्त
 तक भी पहुँच गये हैं और पञ्चिको विष्णुश्राद्धको भी
 ही जीत चुके हैं।

पञ्चाननयन किम प्रकार काममागिं को ही समयमें
 हुए इसके उत्तरमें जो कथित हैं कि चेरराज परिमलके
 समयमें वेदव्यास नामक कोई ब्राह्मण राजदरबारमें
 पाये और राजदरबारके विभिन्न मतकामादि करानेके लिए
 राजासे प्रार्थना की। इस पर राजासे जवाब दिया कि
 पञ्चालागव (विष्णुश्राद्ध) इस विषयमें विशेष
 कार्य देव हैं, इस कारण आपकी प्रार्थना में स्वीकार
 नहीं कर सकता। राजाको यह सुने बाद उस व्यास पुनः
 दरबारमें पहुँचे। राजपुत्रने भी पूछा मा कतर दिया।
 इसके बाद व्यासने राजाके एक सुनरी लक्ष्मीके पास जा
 कर पूनः तन राजा और पञ्चिको के सम्बन्धमें पत्रक
 तरहकी झूठी बातों से उनका जान मर दिया। इस
 प्रकार राजपुत्रके मनकी पयना और खों कर बर
 व्यासने पुनः जतने पर पर बरय करानेके लिये भी उनसे
 जोकारता है ना। कुछ दिन बाद जब राज-पुत्र सि हा
 सन पर बैठे तब पयना पूनः प्रतिज्ञाके पालनमें विधेय
 ब्रह्मवाज हुए। किन्तु वे पञ्चालीका हल पञ्चिकारमें
 खुल न कर सक। दोनोंके बीच सुलभ कराना तथा
 श्रियाकलापादिका बंट देना जो उनका उद्देश्य था।
 पञ्चाननयन इस प्रस्ताव पर मन्थत न हुए। इस पर
 राजानु लक्ष्मीका भगाया। पक्षे राज्य मारमें मारा
 पञ्चालि फँस गई। प्रभारमें अब देखा कि पञ्चिकोकी
 भर्तृकार्य करनका पूरा पञ्चिकार नहीं दिया गया
 तब लक्ष्मीने शिनी-बारी सब छोड़ दी। इस प्रकार चारी
 और इनलक्ष मंच गई। व्यासको सम्बन्धमें राजाने
 जनबाकारवने यह वीनया कर दी, कि जो राजपुत्रका
 पञ्चनयन कर गे वे दक्षिणचारा और जो पञ्चालीका
 पञ्चाननयन कर गे, वे पामाचारा समझ जाय गी।

पञ्चालीके प्रान्त इस प्रकार पयमानलुचक चारि
 हुन कर निकटवर्ती राजापीन उनके लक्ष्मीके पक्ष
 चारय किया। चरानि लक्ष्मीका और पयसर का कर

पामान्य या पञ्चिकार कर दिया। व्यास भी हल
 समय कामोचामको भाग मये। पूर्वार्ध उपान्यास की
 दक्षिणचारी और काममागिको उत्पत्तिका एकमात्र
 कारण है।

पञ्चालि (स० श्लो०) पञ्चालि देवी।

पञ्चालिक (स० श्लो०) ग्राम्य पञ्चायत। नेपालको
 प्राचीन शिवालिपिमें इस पञ्चालिकका उल्लेख है।

पञ्चालिका (स० श्लो०) पञ्चायत प्रपञ्चायत पञ्चालि-
 म्युक्त तत टापू आर्ये कनू कापि पत हल्व व। पञ्चालि-
 कत मुत्तनी, मुत्तकी मुत्तिया।

पञ्चाली (स० श्लो०) पञ्चाल गौरादिलात् श्लो०। १
 पञ्चालिकत मुत्तलिका, मुत्तकी मुत्तिया। २ गीतिकायिप,
 एक प्रकारका गीत। ३ पञ्चाली, श्लोपदी। ४ अरि-
 नृत्तना, चौमरको शिमत।

पञ्चालीश्वर—दूताके चमत्कन एक प्राचीन शिवमन्दिर।
 यमो यह लक्ष्मी मन्दिर भग्नावस्थामें पड़ा है।

पञ्चायत (स० श्लो०) पञ्च विद्वानुराध्यायमायतति
 वेदति पान्च-यत् । १ उल्लेख, बालकका यज्ञोपवीत
 विशेष बहू जनेल जा लडको का बिसेी श्रोहार पर
 माताकी तरह पहनाया जाता है। पञ्चाली बडाना
 मसाहार, शिवातनात् मातु। २ पञ्चबटी।

पञ्चालय (स० श्लो०) पांच भावोंमें विभक्त यज्ञोप चर
 पाण्य प्रथति।

पञ्चानर्त्तन (स० श्लो०) पञ्चाल पाञ्चल शब्दमन्-
 स्वरत्न। पञ्चाल शब्दित पर प्रथति।

पञ्चालर्षि (स० श्लो०) पञ्चालत यज्ञमन्त्रोप।

पञ्चालयन (स० श्लो०) पञ्च प्रतिज्ञा(दो)नयनका यज्ञ।
 प्रतिज्ञा, वेद, बडाचरय उपनयन और नियमनामक
 पञ्चवयपञ्चक न्यायनामक। न्यायके यज्ञो पांच भवयन हैं।

पञ्चालय (स० श्लो०) पञ्चस मूर्तिपु करारयेपु पञ्चस्था
 यज्ञ। यज्ञ मीतदेह। देहावसान क्षण पर पञ्चमूर्त
 ययने पयने कारवमें लोन की जाता है।

पञ्चालिक (स० श्लो०) शिकोका हकी, हूँ, स। मृत
 और मल यज्ञो पांच हूँ व।

पञ्चाली (स० श्लो०) पञ्च पययका पञ्चालायाजककाता
 बडोपना श्लो०। १, कई कथाएवपरिमित उपपन्नित

स्त्री गवो, वृष गाय जिसका बहुरा केवल ढाई वर्ष का हुआ हो।

पञ्चाग (स० त्रि०) पचासवां।

पञ्चाशक (स० त्रि०) पंचाश स्वार्य कन्। पचाम, साठ से दशकम।

पञ्चाशत् (स० त्रि०) पंचदशतः परिमाणस्य (पंक्ति विंशतित्रिंशदिनि। पा ५।१।५८) इति निपातनात् साधु। १ संख्याविशेष, पचास। २ पंचाशसंख्यायुक्त, जिसमें पचासकी संख्या हो।

पञ्चाशत्तम (स० त्रि०) पंचाशत् तमप। पंचाशत् संख्याका पूरण, पचासवां।

पञ्चाशति (स० त्रि०) पचासी।

पञ्चाशत्क (स० त्रि०) पंचाशत्सम्बन्धाय, पचासवा।

पञ्चाशद्भाग (स० पु०) ५० भाग।

पञ्चाशिका (स० स्त्री०) पञ्चाशिन् स्वार्य-क, टाप्, टाप् अत इत्व। १ पंचाश अधिक शत वा सद्वस्तुयुक्त। २ यह पुस्तक जिसमें पचास श्लोक वा कविता आदि हो।

पञ्चाशिन् (स० त्रि०) पंचाशत्-डिनि। पंचाशत् अधिक अत और सद्वस्त्र संख्या।

पञ्चाशौत (स० त्रि०) पचासीवां।

पञ्चाशौति (स० स्त्री०) पंचाशिका अशौतिः। पचासकी संख्या।

पञ्चाशौतितम (स० त्रि०) पंचाशौति तमप। पचासौवां।

पञ्चास्य (स० पु०) पंचं विद्वत् आस्यं यस्य। १ ति० ३। पंचानि आस्यानि यस्य। २ शिव, महादेव। (त्रि० ३ पंचमुखविशिष्ट, पाच मुखवाला।

पञ्चाङ्ग (स० पु०) १ पंचदिनव्यापे यज्ञाय कार्यं, एक यज्ञका नाम जो पांच दिनमें होता था। २ मोमयागके अन्तर्गत वह छाया जो सूर्याके पांच दिनोंमें किया जाता है। (त्रि०) ३ पांच दिनमें होनेवाला।

पञ्चाहिक (स० त्रि०) पांच दिनमें होनेवाला।

पञ्चिका (स० स्त्री०) पुस्तकादिका विभाग वा खण्ड, पांच अध्यायों वा खण्डोंका समूह।

पञ्चिन् (स० त्रि०) पंचपरिमाणस्य, डिनि। पंच परिमाणयुक्त।

पञ्चीकरण (स० स्त्री०) पंचभूता- भागविशेषण मियाकरणम्। अपंचतात्वक वस्तुका पंचात्मकतामप्युपदन पंचभूतोंका विभागविशेष। वेदान्तकारमें पंचीकरणका विषय इस प्रकार लिखा है—भूतोंको यह स्थूलत्विति पञ्चीकरण द्वारा होता है जो निम्नलिखित प्रकारमें होता है। पंचों भूतोंको पहले दो समान भागों में विभक्त करते हैं, फिर प्रत्येकके प्रथमाहिकका चार भागों में बांटते हैं। पुनः इन सब बीसों भागोंको ले कर अलग रखते हैं। अन्तमें एक एक भूतके द्वितीयार्द्ध में इन बीस भागोंमेंसे चार भाग फिरसे इस प्रकार रखते हैं कि जिस भूतका द्वितीयार्द्ध हो उसमें अतिरिक्त गेप चार भूतोंका एक एक भाग उसमें आ जाय, इसको पंचीकरण कहते हैं। इस विषयमें श्रुति प्रमाण है। प्रत्येक पंचभूतको समान दो भागोंमें बांट कर पीछे प्रत्येक पञ्चभूतके प्रथम भागको चार अंशोंमें करते हैं। बाटमें अपर पंचभूतके प्रत्येक प्रथमार्धमें ठन चार अंशोंका एकार्ध कर योग करनेसे पंचोक्त होता है। श्रुतिमें पञ्चीकरणका साफ साफ उल्लेख नहीं रहने पर भी त्रिवृत्करण श्रुति द्वारा यह सिद्ध हुआ है। सभी भूत पंचोक्त हो कर आकाशादि पृथक् पृथक् नामसे व्यवहृत हुआ करते हैं। भूतोंका इस प्रकार पञ्चाकरणकालमें आकाशसे शब्दगुण, वायुमें शब्द और रस, अग्निमें शब्द, स्पश और रूप, जलमें शब्द, स्पर्श, रूप और रस तथा पृथिवीमें शब्द, स्पर्श, रूप, गन्ध और रस अभिव्यक्त होता है।

इस प्रकार पंचोक्त पंचभूतमें परस्पर ऊपमें विद्यमान जो भूतोंके, भुवलाके, अगलोकके, मह, जन, तप और सत्यलोक हैं तथा नीचेमें विद्यमान जो अतल, वितल, सुतल, रसातल, तलातल, महातल और पाताल लोक, ब्रह्माण्ड, चतुर्विधस्यूल गरीर और इनके भागोपयुक्त भवनानादि हैं, वे सबके सब उत्पन्न हुए हैं। पंचोक्त पंचभूत जो इनकी उत्पत्तिकारण हैं (वेदान्तशा) देवोभागवतमें पंचीकरणका विषय इस प्रकार लिखा है—

ज्ञान और क्रियासंयुक्त निखिल कर्मके घनोभूत होने पर वह जोह्वार मल्लका वाद्य होता है। तत्त्वदर्शी-महोदयोंने इस जोह्वाररूप मायाबीजको ही अखिल

ब्रह्माण्डजा पाटि तत्र माना है। इस ब्रह्माण्डनाथ
 मायाशेषव्य पाटि तत्रने प्रथम शक्त्याव्यक्तव्य
 पञ्चोक्त पाठाय इत्यत्र होता है। इस पाठायने
 व्यर्थात्त इ वायु, वायुने कृपाम्बक तत्र तत्रने रमान्ब
 त्रन पौर बनने तथगुणान्बक एवो उत्यत्र बोती है।
 इस पञ्चोक्त पञ्चमूर्ति वशावस्तुत्र उत्यत्र होता है
 जो निरुदेह नामने परिमित है। यह निरुदेह सब
 पाथाव्यक्त है पौर इसा का परमाणु जो लूणा देह कहती
 है। यह पञ्चोक्त पञ्चमूर्त पञ्चोक्त हो कर तन्म
 उत्याव्यक्त करता है। इस पञ्चोक्त भूतय वक्त्रा काय
 विराट देह है, वक्त्रो व मीशर हो लूणादेह कहजातो है।
 इस पञ्चोक्त पञ्चमूर्तियत प्रथमत्र लूणाव्य हारा ओष
 पौर लूणादि पञ्चमूर्तिवक्त्रो उत्याव्यक्त होता है। फिर
 इन ज्ञानेन्द्रियाभिम प्रथमत्र लूणाव्य मिल कर एक
 पञ्चाकार्य होता है। पञ्चोक्त पञ्चमूर्तियने प्रत्येकके
 रजो प मयि बाह, पानि पाट पाहु पौर उत्यत्र नामने
 पञ्चमूर्तिव्याव्यक्त उत्याव्यक्त होता है। इनमिने प्रथमत्रका
 रजो प मयि कर वाच, ध्यान, ममान, लदान पौर
 ल्यान यह प व वाहु उत्यत्र होता है। इस पञ्चा
 पञ्चोक्त पञ्चमूर्तिये जो मनी उत्यत्र वृत्त है।

(देवीनां काश्चिदं)

श्रुतिमं त्रिदशरथका विषय लिखा है। त्रिदश-
 रथमि प वाकरवका उपमयि जाता है। इत्येवरा-
 चार्यै पञ्चोक्तव्य वार्ति कर्म इनका विषय वक्त्रा वक्त्रा
 कर लिखा है।

पञ्चोक्त (म त्रि०) चिन्ता पञ्चोक्तव्य वृत्ता हो।

पञ्चोक्त (स० पु०) पञ्चमूर्तिव्य निरुदेहा। पञ्चोक्त-
 माध्य भोमनेह।

“रातो विरातां पञ्चमूर्तिव्येन च।” (भारव्यम्)

पञ्चोक्त (म० वि०) पञ्चमूर्तिव्यो देवता वय्य। इत्यादि
 पञ्चोक्तव्ये वक्त्रेव्यने देव वयिः प्रथमि।

पञ्चोक्त (म० जी०) पञ्चमूर्तिव्यो ज्ञानेन्द्रियाणां सम-
 वाट। ओष लूणा, नेत्र रजसा पौर वाच के पांच
 ज्ञानेन्द्रिय। इनके मिश्र पांच मूर्तिव्य है, वक्त्रा—
 बाह, पानि, वाहु पाट पौर उत्यत्र। इन्द्रिय व्वाव्यक्त है,
 पांच ज्ञानेन्द्रिय, पांच मूर्तिव्य पौर एक मन।

पञ्चो (म० पु०) पञ्चमूर्तिव्ये वय्य। ज्ञानदेव चिन्ता
 पांच वृत्त या मर है।

पञ्चोक्त (म० जी०) पञ्चमूर्तिव्ये उपमयि म। उपमयि
 पञ्चमूर्तिव्ये पञ्चमूर्तिव्ये उपमयि। मनना वक्त्र, वक्त्रो,
 विद्यावृत्तियो पौर निरुदेहि ये पांच वय्य पञ्चोक्तव्य वक्त्र
 नाते है।

पञ्चोक्त (म० जी०) विषय, मिश्र, विषयो, विषयो
 मून पौर वक्त्र नामने पांच पञ्चोक्त। (उत्यत्र०)
 मयि विषयोके मयि पञ्चोक्त विषयो विषयोमूक्त,
 वक्त्रा विषय पौर वक्त्रो नामने पञ्चोक्त वक्त्रा।

पञ्चोक्त (म० पु०) पञ्चमूर्तिव्ये मन्नात्यां वक्त्र-
 धारया। पाथाव्यक्तव्य मरीरकित पञ्चमूर्तिव्ये मरीरके
 मोतर भोत्रन पञ्चमूर्तिव्यो पांच पञ्चमूर्तिव्ये वय्य।

पञ्चोक्त (म० पु०) पञ्चमूर्तिव्ये पौरन। १ पञ्चा
 कृति पांच पांच भागने विषय पौरन पांच उत्यत्रोके
 पांच भागने वक्त्रा वक्त्रा वक्त्रा। २ पञ्चमूर्तिव्ये
 नाम।

पञ्चमूर्तिव्ये—वक्त्रे वक्त्रेकी शोभापुरवानी एक ज्ञानि।
 ये लोम वक्त्रे, मन्नात्यां पौर लोमलोमने लोमने लोमने
 मनी पौरि। पञ्चमूर्तिव्ये वक्त्रे पौर लोमलोमने
 वक्त्रा वक्त्रा पञ्चमूर्तिव्ये है। विद्या पञ्चमूर्तिव्ये लोमने
 पौर वक्त्रो होता है। इनका पञ्चमूर्तिव्ये मरीरके तर-
 का है। जो पञ्चमूर्तिव्ये वक्त्रे वक्त्रे वक्त्रे वक्त्रे वक्त्रे
 इन लोमने एक उत्यत्र होता है। ये लोम पापलने
 जो विद्यावक्त्रो वक्त्रे है। ये वक्त्रे लोमने लोमने लोमने
 मन्नात्यावक्त्रे है, किन्तु लोमने लोमने लोमने पञ्चमूर्तिव्ये।

पञ्चमूर्तिव्ये (म० जी०) पञ्चमूर्तिव्ये वक्त्रे वक्त्रे वक्त्रे वक्त्रे वक्त्रे,
 वक्त्रे वक्त्रे। १ वक्त्रे वक्त्रे वक्त्रे वक्त्रे वक्त्रे वक्त्रे,
 मरीरके पञ्चमूर्तिव्ये। २ मरीरके वक्त्रे वक्त्रे भाग जो
 पञ्चमूर्तिव्ये लोमने वक्त्रे पौर वक्त्रे लोमने वक्त्रे
 या पाथाव्यक्त वक्त्रे वक्त्रे वक्त्रे पौर लोमने लोमने
 वक्त्रे वक्त्रे वक्त्रे वक्त्रे वक्त्रे लोमने होता है। वक्त्रे
 वा ठर वा वक्त्रे लोमने लोमने माथावक्त्रे वक्त्रे
 वक्त्रे वक्त्रे वक्त्रे वक्त्रे वक्त्रे वक्त्रे वक्त्रे वक्त्रे
 वक्त्रे, वक्त्रे। पञ्चमूर्तिव्ये वक्त्रे वक्त्रे। ३ पञ्चो
 पाटिका वक्त्रे वक्त्रे, वक्त्रे। ४ वक्त्रे, मरीर। पाथा

शरीरमें रुद्ध रहती है, इसलिए पंजर शब्दसे शरीरका बोध होता है। ५ कलियुग । ६ गायका एक संस्कार ७ कोलकन्द ।

पञ्जरक (मं० पु०) खांचा, भावा, वंत या लचोने डण्डलो आदिका बुना हुआ बडा टोकरा ।

पञ्जराखिट (मं० पु०) पञ्जरणिव शब्द ग अखेटो मृगया यस्मात् । मछली पकहनेका यन्त्रविशेष, टापा ।

पञ्जल (मं० पु०) पंज-अलच्, कोलकन्द ।

पञ्जाव—भारतवर्षके उत्तर पश्चिम सीमान्तमें अवस्थित एक देश । प्राचीन ग्रन्थादिमें यह स्थान पञ्चनद नामसे प्रसिद्ध है । मैलम, चनाव, रावी, व्यान्ना, शतलज नामक पांच नदियां इस जनपदके मध्य प्रवाहित हो कर सिन्धु नदीमें गिरती हैं । इसजनमाम ऐतिहासकीने पंचनदीके कारण पंचनद प्रदेशका नाम सजातीय भाषामें पंज अर्थात् पंच और आव (अप्) अर्थात् जल इस अर्थमें 'पञ्जाव' नाम रखा है ।

पहले पंचनद और काश्मीर दो स्वतन्त्र जनपद थे । पञ्जावकेशरीर गणजित्मिंइके इन्द्रियदयमें उक्त दो जनपद तथा पाख्ववर्ती अनेक भूभाग पञ्जावके मोमाभुक्त हुए थे । वर्त्तमान अंग्रेजी शासनमें काश्मीर प्रदेशमें स्वतन्त्रभावमें अंगरेज गवर्नरट कर्तृत्वाधीन रहनेसे उसका शासनकार्यादि निर्वाह होता है । किन्तु देगीग सरदारोंके अधीन पञ्जावके अवशिष्ट छोटे छोटे राज्य पञ्जावके छोटे लाटके अधीन हैं । छोटे छोटे सामन्त राज्योंको ले कर सारा पञ्जावप्रदेश भारतवर्षका दशांश हीगा शर जनसंख्या भी प्रायः भारतवर्षकी एक दशांश हीगी । इसके उत्तरमें काश्मीरराज्य, खात और चीनका सामन्तराज्य ; पूर्वमें दिल्लीसन्निहित उमुनानदी, युक्तप्रदेश और चीनसाम्राज्य ; दक्षिणमें सिन्धुप्रदेश, शतद्रुनदी और राजपूताना तथा पश्चिममें अफगानिस्तान और बेलुचिस्तानराज्य है । इसकी राजधानी लाहौर है, किन्तु मुगलराजत्वकी राजधानी दिल्लीनगरका इतिहास ही उल्लेखयोग्य विषय है । यह

पञ्जाव कडनेमें एकमात्र शतद्रु, विपाशा, वितस्ता, चन्द्रभागा और इरावती-परिवेष्टित भूखण्डका ही बोध होता है । किन्तु वर्त्तमान बन्दोबस्तमें सिन्धुसागर दीघाव, सिन्धु और सुलेमान पहाड़के मध्यस्थित डेरा-जात विभाग और शतद्रु तथा यमुनाके मध्यवर्ती मर-हिनदकी उपत्यका भूमि तक इसकी सीमामें मन्निविष्ट हुई है । पहले लिखा जा चुका है, कि पञ्जावका कुछ अंश अंग्रेजोंके अधीन और कुछ सामन्तराजाओंके कर्तृत्वाधीन है । सारा पञ्जाव प्रदेग अंगरेजोंके अधीन ३२ जिल्लाओंमें और देशस्थ सामन्तराजाओंके अधीन ३४ छोटे छोटे राज्योंमें विभक्त है । इन सब राज्योंमें से पटियाला और बहावलपुर सबसे बडा तथा चम्बा मन्दी, सुखेत, नाहन, विनासपुर, वमहर, नालगढ़ आदि हिमालय पर्वतस्थ २० सामन्तराज्य सभारों और दरकुटीका सामन्तराज्य सबसे छोटा है ।

यहाकी पर्वतमाला साधारणतः ४ भागोंमें विभक्त है । उत्तरपूर्वांशमें हिमालयपर्वत संलग्न गिवालिक, बरा, लाचा, पौरपञ्जाल आदि पर्वतमाला, दक्षिणपूर्वांशमें गुरगाँव और दिल्ली जिला तक विस्तृत अर-वली पर्वतश्रेणोंको विस्तृत शाखा ; पश्चिम ओरके दक्षिणांशमें सुलेमान पहाड़ और उत्तरपश्चिमागमें काश्मीर देशमें विस्तृत हिमालयश्रेणो, सिमला और इजारा पर्वतश्रेणी सुफितकी, लवणपर्वत और पेशावर पर्वतमाला है । इन सब पहाड़ोंसे असंख्य नदिया निकली हैं जिनमेंसे विपाशा, यमुना, इरावती, चन्द्रभागा, पुष्प, वितस्ता, शतद्रु, सिन्धु आदि प्रधान प्रधान दिया दक्षिणकी ओर बहती हुई सिन्धुनदमें मिल कर अरब सागरमें गिरती हैं । इन सब नदियोंमें शीतकालमें बहुत कम जल रहता है । जब गरमी अधिक पड़ती है, तब हिमालयके शिखर परकी बरफ-राशि गल कर प्रवल स्त्रोतसे नदीमें पा मिलती है । इस समय नदीका जल इतना बढ़ जाता है, कि नदीके उभय तीरवर्ती बहुत दूर तकके स्थान बह जाते हैं । वर्षा ऋतुके बाद ही शीतका प्रादुर्भाव दोष पड़ता है और साथ साथ जलस्त्रोतको घोरघोरबहनेमें लगता है जिस जल घट जाता है, तब समीनेको अथर मछलीभा हुआ

मान्य पड़ता है। यह अत्यन्त बड़े ज़मीनकी ज़ात बना देता है और यह इतनी उपजाऊ होती है कि ज़पको को उप खेतमें मार देनेकी बख़्तर नहीं रहती।

पश्चात्तर्क ज़ार्गि और पर्वतासीय भूमि पर भी पूर्व-मि वसुना नदी और पश्चिममें मुनेमान पहाड़का मध्या-वर्ती स्थान समतल है और अधिमिधुनके सिद्धे उत्तरी क्षेत्र को हट नदी तक गई है। परबको पर्वतको ल को मांछा और धरु राख्ये परबको नीं बोनीबट और कशाता पर्वतमात्रानि पश्चात्तर्क दक्षिणार्धको समतल बना रखा है। दिक्के उत्तर पश्चिमांशमें रोहतक और हिमालयके दक्षिणमें हिमालय और शीर्षके मध्य भागमें हिमालयके कालू पट्टीमें से वार साहोरके दक्षिण तक विस्तृत भूभाग तथा उत्तर पश्चिममें परबको पर्वतके तटदेशमें से कर मो क्रांति राज्यके पश्चिम तक विस्तृत भूभाग प्राप्त समतल है। हिमालय और परबकोका शान् देस विमा समतल है कि पश्चिम से पूर्व बढ़त मुश्किलमें दो पंचवा तौन पुत्रके पश्चिम लखा स्थान शेष पड़ता है।

प्रायः सभी समतल क्षेत्रों पर यह ज़म आनेमें असम पड़ती लगती है। पहाड़का शिखार जोड़ कर कहीं मो बड़ा पत्तर नगर नदी घाता। परबको लक्ष विहने बाबूके लक्ष तमाम पक्षि मारि है। वहां कबो भा प्रजन मछो नहीं पाई जातो, तमाम ब लुका मछ पट्टी ज़मीन पाच्छाटिन मान्य पड़ती है। जाल के तारतम्भानुसार उच्च पहाड़का सुबासुच निर्दिष्ट रूप का करता है। कितना बन्दमाया और सिन्धु नदीके मध्याभासमें जो मुहूर्त 'बन' भूमि नगर घातो है वह दक्षिणमें राप्रुननेको मछभूमि तक विस्तृत है। जहां कश्मिर ज़पायके नदी पारिवा ज़म शीघ्र कर रखा जाता है कहांको ज़मीनके ज़वर नमक पड़ जाता है। पिसी ज़मीनको 'रे' कहते हैं। १ है उत्तरी ज़मीनको माय ६का नष्ट हो जाती है। त्रिभ ज़मीनमें १ नदी निबलता पश्चात्तर्क स्थान बासुबाह्य नदी है वह स्थान ज़मीन कर्षण रहता है। किन्तु ज़ीनेके शब्द ज़मि जलको ज़क़रत पड़ती है। पश्चिमके पश्चिम सीमावर्ती सीधेके क्षेत्रों पर नदी है, तो मो वहां

मन्को सन्को घास ज़मनेके कारण ज़मीन पोखि कुछ ठहरा हो जाती है। यह स्थान 'बाड़' नामसे परिच्य है। यहाँ पक्षधर मछोको पाहि बरा करती है। इस स्थानमें ज़मीनके ल.से कहीं तो बस गहराईमें और कहीं पश्चिम गहराईमें ज़म मिमता है। नदी वा पर्व-तादिके निकट पश्चिम १ से २० फुट मोथे और मधूर कर्तो स्थानमें प्रायः १५० से २ फुट मोथेमें ज़म प या जाता है। यह ज़म प्राय मध्याह्न होता है ज़वोने ज़मू और योश्चिआदिके लिये विशेष उपकारो नती है।

पूर्वार्ध विभागमध्य देखा जाता है, कि हिमालय पर्वतके उत्तरिक सामन्तराज्यादि हिमालयिक पर्वत श्रेणी और पूर्व पश्चिमदिग्ग्य समतल भूमि पर ठाकुरा शो और शायत पाटि पार्श्वीय राजपूत सिगाठ, ब्राह्मण, कुनीत टायि सुजर, पठान, शैलुको पाटि पटाही ज़ातिवोका नाम देखा जाता है। पर्वतवासी ज़ातिवोके कुछ पवनेको सुसलमान पीर कुछ बिन्दू ज़तलाते हैं।

पश्चिमदिग्ग्य सुधमादिपरिहृत 'बाड़' नामक स्थान में क्षमज्योत्स एक ज़ाति रहती है। ये ज़ोम वहां ज़वामलदेवके ज़वर पवने पवने ज़र्ट, गाथ देल, मिके बहरे पाटिको चारा करती है। इस क्षमज्ये टरपाटि मय को ज़मि पर से बन्ध्याय्य दन्धाच्छादिन सेममें मारि है। ज़ेदि ज़र्ट नई नई ज़तुपोमि नये मछे सुधमाटि खाना पमन्द करती है, ज़ेवे को प्रखेले करणमें ज़मा ज़तः को उत्तरे ज़पयोगी नये नये कश्चिआदि उत्पन्न हुए करती है। पश्चिमांशकर्तो इस भूमि पर एकमात्र भूजलताम नगर प्रतिष्ठित है।

पश्चात्तर्क पश्चिमीय सिन्धु गतक, पाटि नदियधि विन्धक को कर लोपासमें परिवर्त हो गया है। इस राज्यका पूर्वी म नदी द्वारा और पश्चिमीय पर्वत द्वारा विभक्त है। इनके मध्य विन्धक ज़ानिधे लोनांका ज़ान है। उत्तर पश्चिम मोमात्तपदेश को लक्षपर्वतके ज़िन है जहां पिकावर राजकपठो भूजल, कोशट पीर बच् पाटि कई पक्ष ज़िने हैं। राजकपिण्डो ज़िन्धे ज़मर्त ज़वारा, मूरो पार कट्टा तटमाल को प्रभाव है। इस पार्श्वीय पक्षी पिकावर और शायतिकादि मिया

और कोई नगर नहीं है। डिगाइम्माडन खाँ छोड़ कर मध्य-एशिया और काबुल आदि स्थानोंका वाणिज्यद्वय एकमात्र पैगावर हो कर भारतवर्ष में लाया जाता है। यहाँ कई चीर रेशमके बस्तु प्रसृत हो पर दूर दूर देशोंमें भेजी जाती हैं। म्यानो। अश्वि मिश्रीकी जीविका खेतोंके ऊपर ही निर्भर है और पार्वतीप्रगण गो-सेपाटिका पालन कर अपना गुजारा करते हैं।

यहाँक जङ्गलमें खजूर, पोपल, बट आदि तरह तरहके पेड़ और बाघ नोलगाय हरिण, गोसेपाटि नाना जंतु तथा विभिन्न वनस्पति देखे जाते हैं।

यहाँ सुमलमानोंके मध्य पठान, शेख, वेलुचो वा अफगान, सेगट, काश्मीरो और पाँके सुगल लोग बस गये। हिन्दुओंके मध्य ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि अनेकों ही पूर्वकालमें सुमलमान धर्ममें दोलित हुए हैं। हिन्दुधर्म राजपूत और जाटराजपूतकी संख्या ही अधिक है। जाटराजपूतमें जो इस्लाम-धर्ममें दोलित हुए हैं, वे सुमलमान जाट नामसे प्रसिद्ध हैं। एतद्भिन्न सुसलमानोंके मध्य अराइन, अवान, जुलाहा, गुजर, कुहरा, मोचो, कुम्भोर, तथाँन, तेलो, मिरापो, नाई, नोहारमच्छ, कम्भय, भीनवरमेव, घोवो, फकीर, ख्वाजा, मनिगार, दुगट, बर्कला, सुक्षा चणाननो और बकर आदि कई एक विभिन्न श्रेणिके लोग देखे जाते हैं। गतदृके पूर्वांगमें टिम्बा, छिमार, काङ्गडा रोहतक, जलन्धर, अमृतसर, लाहार आदि स्थानोंमें अधिकांश मनुष्य हिन्दू-मतानुयायी हैं। उधर रावल पिण्डो, कोशट और पैगावरप्रदेशके अधिवासीयोंके मध्य सुमलमानोंका अनुकरण देखा जाता है। सभी अधिवासी मिस्र कहलाते हैं। ये लोग शुभ नानकके शिष्य हैं। युद्धविद्या और साहस इनका एक अद्वितीय गुण है। ऐसी अनेक ऐतिहासिक कहानियाँ सुनी गई हैं जिनमें सिखनैचके अमित तेज, अतुल साहस और युद्धकौशलने उन्हें वीरवत्ताको चरमसौमा तक पहुँचा दिया है। साधारणतः ये लोग मूर्ख होते हैं। स्वयं महाराज रणजित्किंभो लिखना पढ़ना नहीं जानते थे। उनके बहुत बोरोंकी कहानी किसी भारतवर्षीमें क्वी नहीं है। सिख, नानक, रणजित् शब्द देखो।

हिन्दू लोग प्रधानतः मिस्र, जैन, ब्राह्मण, क्षत्रिय, बनिधा, हिन्दुजाट आदि उच्च श्रेणियोंमें हैं तथा हिन्दू सिखोंको निम्नश्रेणियोंमें चमार, कुहरा, अरोरा, तथाँन, फिनशा, कुम्भार, घराठ गुजर, नाई, पकोर, गोनार, लाहार, पुनन, रथो आदि विभिन्न जातियाँ देखी जाती हैं। काङ्गडा जिलेके कुल उपविभागमें तथा तिब्बत-सामाजिक श्रोति राज्यों बोधधर्मावलम्बियोंकी संख्या अधिक है। एतद्भिन्न यथा पारसी और विभिन्न सम्प्रदाय ईसाई रहते हैं।

पञ्जाबका सामाजिकगठन देखनेसे दो स्पष्ट चित्र दिवाड़े देते हैं। यहाँके पूर्वांगवर्ती और हिमालय-पर्वतके पादागवर्ती स्थानोंमें जनाय अस्मायसे पदचान कर आपसमें पृथक्ता निर्देग की जाती है। कायिक परिश्रमाजित् वृत्ति द्वारा सामान्य शक्तिगण जिन प्रकार वंशाव्यापार हैं, जमाँटारीके मध्य भो जो राजकीय शासनार्थि कार्यमें व्यापृत रहते हैं, वे भो उन्ही प्रकार पदसर्वाटा प्राप्त करते हैं। प्रायः अधिकांश मनुष्योंका जातीय स्वभाय परम्परासे चला आ रहा है। इनके मध्य अस्मरण वा अस्मायदायिक विवाह अचलित नहीं है। पश्चिमांगवर्ती टाय स्थानों और हिन्दुदेशमें जो सब जाते हैं वे प्रकृत एक जाति नहीं हैं। सम्प्रदाय और सामाजिक क्रियाकलापके भेदमें ये लोग भिन्न भिन्न श्रेणियोंमें विभक्त हो गये हैं।

यथा यदि कोई अपचित कर्मानुष्ठान अथवा गर्हित दृश्याका व्यवसाय करे, तो उसको जातीयता हानि होती है और उसे समाजमें शूणित तथा अपदस्य होना पड़ता है। इसीसे इस प्रकारका काय उनके मध्य शिल्पकुल निषिद्ध है। स्वजाति विवाहमें इनके मध्य कोई रोक-टोक नहीं है। एकमात्र धनरत्न ही उनका अन्तर्गुण है। जिसको सामाजिक अवस्था जिनकी तन्त्र है, वह वेसा ही घर पा कर विवाह करता है। धनो व्यक्ति कभी भांगरोधके साथ विवाह सम्बन्ध स्थिर नहीं करता। यहाँ जानीयताका विधिप समादर नहीं है। पूर्वजित् दोनों स्थानोंका सामाजिक गठनको अपेक्षा लक्षण-पर्वत और हिन्दुनदके पार्श्ववर्ती स्थानोंका सामाजिक चित्र मध्यम प्रकारका है। धर्ममतके वैपस्यके कारण

हो इतना मध्य पृथक्ता न दृष्टि है कि मो नहीं ।
 पञ्चाक्षरं पूजाकर्तुं सुमन्मानो न इत्यन्तमधर्मका
 प्रहार करके मायाशास्त्रिकाको जड़ यद्यपि मज्जुत मो
 कर ता तो भा इत्यन्तमधर्मसि दौष्टित पुत्रैतन हिन्दुको
 सि पदमे नाम, सधारा काति पोर इत्यसि पञ्चवातिका
 पञ्चमनामने रथा का है । समस्त पञ्चाक्षर प्रदेगसि जा न
 मत मन्दापयत पाय खेचोगत पदतिर पनुपाय ता
 पूर्वकृत पाचार उरवहारके मयवर्ती हो कर से गर्म
 मोवनका पालन करति पारइ है । इतका कारण यह
 है कि पूजा मयवर्ती व्याजिगय मयदा जिन प्रकार उत्तर
 पश्चिमाक्षरवामो भरणीय हिन्दुवर्णको पोर पाचार
 मयवर्णका पनुचरण करति हैं, उक्त उद्यो पवार मयुत
 पदमेने हो पयितामयवर्ती प जाओ मय सुमन्मानो व
 नाय नाम कर उनको प्रवर्धे यनुसार मयो विपदा को
 मयन करति मय गये हैं । सुमन्मान मनुष्याको पदवि
 मय मयवर्ती हो सुमन्मान धर्मसि पय कर्म हैं ।

पञ्चाक्षर १५० नगर पोर ३३६०० यम मयति है ।
 अनसंख्या काई करीकृये उपर है । १५५५ पन्नाया
 १ निवा, २ पञ्चतहर ३ पाञ्चौर, ४ मूलतान ५
 पन्नाया, ६ रावरापिपत्ता, ७ अन्तमर, - सिमालकोट,
 १० सुविद्याना ११ किराजपुर १२ मिजला, १३ पाग
 पत, १४ पाठला, १५ रिबारा, १६ कन्थान १७ गुज
 रामबाबा, १८ डिरागात्री का, १९ डिरा इस्माइल का
 २ जोविपारपुर पर श्रीराम पादि स्थान राजधानीसि
 निमि प्राति है । विमानय पयैतक उपर विमान
 (गणकर जनरलका मोबायाम) मुरो (रावरापिपत्ता
 ब्रिमेसि), धर्मशाला (काँडा पयैत पर) पोर इत
 बोसो (गुजराणपुरसि) पादि स्थान पोमन्माससि रगत
 के विच विधिय विनकारो पोर मन्तारम है ।

पश्चिमविधानसि पश्चिमाय खेतो धारो करके पवनो
 काविका निर्वाह करवे हैं । पति प्राचानकासन पयैत
 दो तान इकाय पयै पक्षे जिन प्रकार सरलमानसि खेतो
 चलनो हो, पात्र भी उद्यो प्रकार पयै रही है । यहाँ
 साधारणतः दो प्रकारको खेतो होतो है, मयनसि रथा
 पोर मयुतकासन पयैतक मान । मान, ईश, वृत्, मयई,
 प्यार, मोरा पादिको खेतो मयोरक पयैतत है ;

तमाज्ञा, सरद पोर धार मयौ रथी मयसि गिनी जातो
 है । उत्तर पश्चिम भारतसि जिन मय पन्नाको खेतो
 होतो है यहाँ भी मयौ मय पन्नाय पयत्राये जाति हैं ।
 खेतो काँडा कर पयठति, बाधिष्य, मसीमोवि, मय
 धारमोवि प्रकतिर काये मो अनसाधारणसि देखे जाते
 हैं । पयैतक मयमण पोर साधारण मयुय पय
 यथादिका पालन करत हैं । मय भी मयै जनती है, तय
 कयै मयै होमे पर सि मयत्रासि मय कासन हैं । मय
 मयैतके पश्चिम मयपदेगसि तरक तरइके मय है ;
 उनका पश्चिमाय मानमसाप्रापति पयोन है । हिन्दु
 मयसि मय मयमोगो है पोर हिन्दो कतिप्र उरक रथा
 कर्ता है ।

वाधिष्यादिको सुविधाय निधे यहाँ पयैतक मय
 काटो मयै हैं । मय दोपाय पश्चिम यमुना सरहिन्द
 पोर मयत नदीको काँडसि मय मयय मय रइता है ।
 उत्तर यतइ इतिन गतइ, मयमामाको मय,
 मयपुर ब्रिमेसि तोन मय, हिन्दुनदीको मय पोर
 मयपरागङ्गको मय ये मय मयै सेकादिनि मयमिष्य
 के मय काटो मयै यो । इयके पयामा पन्नाया,
 सुविद्याना, अन्तमर, पयुतमर, पाञ्चौर, मूलतान, मय,
 पयामर पादि प्राचान प्राचान स्थानसि ऐक्यक हो जानेसे
 वाधिष्यको विधिय सुविधा हो मयै है । ये मय ऐक्यक
 दिको हो कर उत्तरपश्चिम प्रदेग, अन्तमता पोर राज
 मूताना होते मय करपा तया मयई मयइके मय
 मिय मये है । पात्र भी यहाँ मय धारा वाधिष्यपय
 पयुतके किराये मये जाते है ।

पञ्चाक्षर मयैतके कविजात इयसि निमिष मयरादि,
 वृत् सै मयवमयक पोर तयै मयपय मय्याय पयमयुकादि
 को मयान स्थानोसि रयतनो तया कपासके कपड़े, काँडे,
 मयको पोर पयरावर मयइयसि इयसि मिय मित्र
 देमोवि यहाँ पयमदना होतो है । पतइक यहाँ होमे
 मय पयैतोको मय, मान, अन्तम पयैतकायंमुय काँप
 निमित्त इय्यादि मयपयादि तया मयइका काम
 होता है । कतिप्र पयैतसि एकमास मयैतकमय
 हो मयान है । मयपयो, पासायाग, मयपयंत,
 श्रीराम, मयपुर पोर काँडाइ ब्रिमेसि काका मयक पाया

जाता है। उत्तर और पश्चिम सोमान्तवर्ती पथ छो कर इस देशमें चरम, तरह तरहके रंग, लागनके पगम, रेशम, सुपाने और फन, काठ, लोम तथा गान आदि द्रव्योंका व्यवसाय होता है।

यहां माघारणतः ग्रीष्मका प्रकीर्ण अधिक देखा जाता है। ग्रीष्मकालमें भी कुछ कुछ जाड़ा मानसू पड़ता है। अक्तवर्ग मासमें दिन ही गमगे रहने पर भी रात को खूब जाड़ा पड़ता है। इसके बाद क्रमशः जाड़ेको वृद्धि हो कर जनवरी मासमें तुषारराशि पतित होती है। पार्वत्य प्रदेशोंमें दिसम्बर मासके मध्यभागसे ले कर जनवरीके मध्य तक तूफान और तुषार पतन देखा जाता है। अत्यन्त ग्रीष्माधिक्यमें यहाँ ८०के अधिक उन्नाप लक्षित नहीं होता।

पञ्चावरे सोमान्तवर्ती ३६ सामन्तराजाओंके अधिकांशभूत मभो स्थान यहाँके नेफ्टिरेण्ट गवर्नरके अधीन है। उक्त ३६ राज्योंमें पटियाला, बहवलपुर, भिन्द और नामा नामक जनपद ही अछ तथा छोटे छोटे ग्रासनाधीन है। चम्बा भूभाग अमृतसरके कमिश्नरके और मालकीटला, कालमिया तथा २२ हिमालय पर्वतस्थित राज्य अम्बालाके कमिश्नरके अधीन है। कपूरथला, मन्दी और सुखित जलन्धरके पतोटी दिक्की तथा लाहौर और दुजाना आदि स्थान हिन्धारके कमिश्नरके अधीन है। पूर्वाक्ष सामन्तराज्योंमेंसे कुछ तो समतल क्षेत्रके ऊपर और कुछ पहाड़के ऊपर बसे हुए हैं। उक्त राज्योंके परिमाण और नाम नीचे दिये जाते हैं।

समतलक्षेत्र पर पटियाला (५८८७ वर्गमाल), नामा (८२८), कपूरथला (६२०), भिन्द (१२३२, फरोदकोट (६१२), मालकाटला (१६४), कालमिया (१७८), दुजाना (११४), पतोटी (४८), लोहाच (२८५) और बहवलपुर (१५००) तथा पार्वत्य प्रदेश पर मन्दी (१०००), चम्बा (३१८०), नाहन (१०७७), विलसपुर (४४८), वसाहर (३३२०) लालगढ़ (२५२), सुखित (४७४), उडन्यस (११६), वाघन (१२४), जव्वल (२८८), भञ्जी (८६), कुम्हारसाई (८०), मईलोल (४८), वाघत (३६), बलसन (५१), लुठार (७), धामौ (२६), तरोक

(६७), मांयो (१६), कुनदियर (८), कोजा (४), मङ्गल (१२), रवई (३), धरकोटी (५), दाधी (१) आदि।

इन सब सामन्तराज्योंमें बहवलपुराधिपति अंगरेजोंके साथ सन्धिपूर्वमें आवद्ध हैं तथा दूसरे दूसरे राजगण गवर्नर जनरलमें प्रायः मनटकी शर्तके अनुसार आवद्ध हो कर उन सब स्थानोंका भोग कर रहे हैं। पटियाला, भिन्द और मालकीटला राज्यके सामन्त राजगण अपने भुक्तराज्योंके करस्वरूप अंगरेजोंको युद्धविषयके समय प्रवारीको सैन्य दे कर सहायता पहुचानेमें बाध्य हैं। दूसरे दूसरे राजाओंको करमें रूपये देने पड़ते हैं। पटियाला, भिन्द और नामा राज्यके राजव श्रधरगण 'फुलकिया' वंशीय हैं। यदि कोई राजव श्रधरगण पुर्वाधिके अभावमें लोप होना हो, तो पूर्व मनटकी शर्तके अनुसार वे निकटवर्ती समीप तथा अपनी सर्गाटीके समकक्ष किसी सामन्तराजक पुत्रको गोद ले सकते हैं। अन्य वंशीय जो पुत्र पीपरापुररुमें सिंहासन पर बैठते हैं उन्हें नहराना स्वरूप अंगरेज गवर्नेरके कुछ रुपये देने पड़ते हैं।

पूर्वाधिकृत तीन राज्योंके फुलकिया वंशीय सरदारगण तथा फरोदकोटके राजा जो अंगरेजोंके साथ नियमपूर्वमें आवद्ध हैं, उनमें शत यह है कि वे अपने अपने राज्यके मध्य न्याय विचार करेंगे तथा प्रजावर्गकी भलाईकी और विवेक लक्ष्य रखेंगे। जिससे उनके राज्यमें सतोदाह, दानविक्रय और शिशुकन्या इत्यादि जघन्यकार्य होने न पावे, इस विषयमें वे यत्नपर होंगे। यदि अंगरेजों पर कोई शत्रु आक्रमण करे, तो वे सैन्य और रसदमें उन्हें सहाय देंगे। जब कभी अङ्गरेज सरकार उनके राज्य छो कर रेलपथ वा सरकारा (Imperial) रास्ता ले जाना चाहेगा, तभी उक्त राजगण बिना मुख्यके जमोन छोड़ देनेकी बाध्य होंगे। इधर अंगरेजोंने भी उक्त राज्योंका भाग करनेका पूरा अधिकार दे दिया है। केवलमात्र पटियाला, नामा, भिन्द, फरोदकोट और बहवलपुर आदि सामन्तराजगण दोषा व्यक्तिकी फौसा दे सकते हैं, किन्तु दूसरे दूसरे राजाओंको ऐसी क्षमता नहीं है।

बहबलपुर साधकोटका, पतौदो लोहाक पीर
 दुजाना चादि व्याक्ति सामन्ताराज्यम सुमनमान बंभोय
 हैं। पटियाला भिन्द नामा कपुरधमा छरोटकोट पीर
 ककभियाके राजगण सिक्क शमभूत तथा पबगिह भयो
 राजगण हिन्दू हैं। बहबलके नवाब दाहटपुवव गोद
 सुमनमान लो मी अछे तथा बहबल खाँसे क मबर हैं।
 मानकोटकाके नवाबगण पबगण जामिके हैं। मारत-
 कपईके इनका शुभागमन सुगणो के पञ्च नयम दुधा या
 पीर सुगणव शको पञ्चनिके बाट को इनके नपयो
 व्याधोन्ता जामिन की दो। पतौदो पीर दुजानाके मरणा-
 मय पछगणजातिमभूत पीर लोहाकके नवाब सुगण
 न गोय हैं। एक समय इनके आई खेकको पच्छो
 मजाधना पदु खाई हो। इनके पदुईराराजके मनक हो
 इनो पीर मो कूठ मय्यास दो है।

यहाँके सिध मरदारगण प्रचलन जाटवभोय है।
 पटियाला चादि पुष्पिवा राजा मो क पूव पुवव चौबरो
 पुक १६१७ ई-में परकोइका विचार। १८वीं शताब्दी
 में सुगलसाम्राज्य विभुय होनेके समय तथा पारस
 पबगण पीर मजाराहोयगणक उपदुपरि पाकमयमे
 मारतवर्षमें विधिय पगानि कौन गई। जोक समे समय
 चौबरोपुवके क शबरो न न्यु हाँकनी इच्छामे सिध
 सप्यशासका निहल्य धरक क्रिया। कपुरधमाके राजा
 कमान खातिभुज हैं पीर यगमि हके क शबर इमे पर मा
 बिगत शताब्दीके मयभाममें सिक्क-सरदार बुय पी।
 पतौदकोके राजा तुगाइ काटवभोय हैं। मन्दाट बाबर
 को मजाधना करनेके कारक मे विधिय माननीय हो गये
 पीर लक मयाहाको प्राप्त हुए। लोचमि हने कालमा
 शक्य रहा। पर्वतकामो पागाम्य मरदारगण थपनेको
 राजपुत तथा पति प्राचौम सम्भ्याक राजपुतको मरतान
 बतका कर पचना क मयविचय देते हैं।

१ मलका इतिहास।

पञ्जाब का पचनट प्रदेश भैटिक पाबोका लोका-
 सेय है। ककभंवितामि जो यम सिधुवा चञ्चैय है
 बहूतो का बिष्वास है कि बह इयो पचनट प्रदेशमें प्रजा
 बित है। उक्त चादि पयामि प हमतो पञ्जो, पतिममा
 पयम्बता, पसिन्को (Akenness), पायवा, पार्मेहिदा

कुमा (Kophen वा काडुप नदी), कुमियो, कसु
 गडा, गोमतो गीरो, काहने, छटामा इयदतो, पबन्थो
 मबतुवा, मिड्ड, बिपाट (बिपाया), धमुना, रबा,
 जितधरा बोरपडो, शिफा यमुदो, शर्वचबतो श्वेतवाबरो
 श्वेतो धरय मरकतो, निम्बु (Indus), सुवासु सुसोमा,
 सुमखा, मोता जरीयु पोवा वा यम्बावतो इन धर
 नदियो का को उच्छेय है कि यमो कर्त्तमान पञ्जाव
 प्रदेशके पन्तर्मत हैं। मारंगणमें निरखन विरम देवी।
 मरुमरितावचित ब्रह्मर्षिदेग एक समय इसी पञ्जाव
 प्रदेशके पन्तर्मत था। जिस कुहसेमने मजासमर की कर
 मजाभारतकी उपपत्ति है बह कुहसेम इयो प्रदेशके
 पन्तर्मर्त्तो है।

मजाभारतमें जो मद्र, बाजिक, पारह पीर सेम्बर
 राजका सञ्चैय है कि सब राजा इमी पञ्जान प्रदेशके
 पन्तर्मत व्यानविशिषमें राज्य करते थे। यमो केसे पञ्जाव
 मद्रिगके मय्य पटियाला भिन्द नामा चादि देयोय
 सामन्ताराजायो के पचोन विभिन्न जनपद देखि जानि है
 मजाभारतके समयमें मो इन पञ्जाव प्रदेशमें मद्र, पारह,
 बनानी चादि केसे को विमिय जनपद थे।

पचनटके लोमो बी रोति भोतिंके सम्बन्धमें मजा
 मारतके जनपदमें इन प्रकार है—“मद्रदेयमें पिता
 पुत्र माता, यन्तू गधुर, मासुक, कामाता, बुडिता,
 खाता, तथा बन्धुबान्धव टाचदामी समी मिय कर
 मपयान करते थे। शिखी इच्छाउमार परपुदपके साथ
 सञ्चयाम करती थीं। सत, मञ्जो, गोमार्स चादि ठनका
 काय पदाई का। मरीमें चुर को कर मे यमो रोति, लभी
 इ मत पीर धमबन्ध प्रलाय करते थे। गम्भारके शीष
 पीर मद्रको को मज्जति नहो यो। मद्रदेयो कामनिर्या
 निव लर कयनकाइत, उदरपरायण पीर धरुपि होती
 थीं। बाधिक् ठनका पयल श्रिय था। ठनका कदना
 या कि में पति का धुमको कोइ मो मबतो पर बाधिक्
 को ठमी नहो कोइ पछतो है।”

मजाभारतमें मद्रनेयका जो परिचय है पात्र मो
 पञ्जाबके पथिम पाव मप्रदेशमें वैसा हो व्यपहार देवा
 काता है। मजाभारतमें जयप्रयके पुबका नाम तक
 पाया जाता है। उधके बादने किलक बुददेके पञ्चुन्य

तक किसने कब तक राज्य किया, उसका विवरण नहीं मिलता।

साकिटनराज अलेक्सन्दरने आगमनकालमें यह प्रदेश तक्षशिला, पुष्, चान्द्रगीम* आदि राजाओंके अधीन नाना श'शोंमें विभक्त था। तक्षशिला राजाके अलेक्सन्दरकी अधीनता खोजार करने पर भी पुरुराजने बड़ी धीरता और साहससे साकिटन वीरकी गतिको रोक रक्खा था। अन्तमें वे यद्यपि परास्त भी हो गये, तो भी अलेक्सन्दरने उनके धीरत्वको शूरि प्रग'ना को थी और उन्हें अपना सखा बना लिया था।

पुष् देखो।

उनके परवर्त्तिकालमें सुगममेन, अमिब्रंकेत, मिलिन्द (Menander), क्रनिष्क, नीरमानगाह प्रभृति मद्र और शक-राजाओंका उल्लेख मिलता है।

सम्भ्राट् अशोकके राजत्वकालमें यहां बौद्धधर्मका यथेष्ट प्रचार हुआ था। पेशावरके अन्तर्गत युसुफ्जाई उपत्यकामें प्राप्त अशोककी उत्कीर्ण शिलालिपि ही इसका प्रमाण है। सातवीं शताब्दीमें जब चीनपरिव्राजक यूएनचुअङ्ग इस देशमें आए थे, तब वे ध्वंसावशेष बहुत-सो बौद्धकीर्तियोंका उल्लेख कर गये हैं। बौद्ध प्रभावके अवसान होने पर दिल्ली समय यहां हिन्दू-धर्मको पुनःप्रतिष्ठा हुई थी, ऐसा जाना जाता है। ब्राह्मणधर्मके विस्तार और सुसलमानोंके अभ्युदयमें बहुतसे बौद्ध-मन्दिर सहाराम समजिद तथा ब्राह्मणोंके देवमन्दिरमें रूपान्तरित प्रथवा पुनर्निर्मित हुए हैं। सातवीं शताब्दीसे ही पञ्जाब प्रदेशमें सुसलमानोंका आगमन हुआ। फिरिफ्हा पढ़नेसे ज्ञाना जाता है कि ६८२ ई०में कर्मानमें एक टन सुसलमानने पञ्जाब आ कर लाहौरके हिन्दू-राजामें कुछ जमान कर ले ली थी। बाद लगभग ८७५ ई०में महम्मूदके पिता सुगसानराज सवक्तगीनने सिन्धु-नद पार कर इस प्रदेशमें सुसलमानोंकी गोष्टी जमाई।

लाहौरके अधिपति जयपालने पढ़ने निडर हो कर इनका विक्रमादरण किया। पौछे गजनीके सुनतान सवक्तगीन द्वारा भेजे हुए दूतको इन्होंने कोद कर किया। इस पर गजनीपतिने अपमानित और क्रोध हो कर इनके विरुद्ध युद्धयात्रा कर दो। इस युद्धमें जयपाल पराजित हो कर अपने राजधानी चली आये और पञ्चत्वकी प्राप्ति हुए। इनके मरने पर इनका लड़का अनङ्गपाल यत्नपूर्वक स्वदेशको विदेशियोंके आक्रमणसे रक्षा करनेमें समर्थ हुए थे। इसके बाद १०२२ ई०में द्वितीय जयपालके राजत्वकालमें सवक्तगीनके पुत्र गजनीपति महम्मूदने काश्मीरसे आ कर अनायास लाहौर पर टखल जमाया। हिन्दू राज भाग कर अजमेर चले गये। १०४५ ई०में मोदूदके नेतृत्वमें हिन्दूसेना लाहौर पर चढ़ आई और कः मास अवरोधके बाद अक्षतकार्य ही राजधानी छोड़ कर वहांसे नी दे ग्यारह ही गई। अलविक्रणीने लिखा है, "यहीं पर हिन्दूराजाओंका राज्याधिष्ठान लीप ही गया। ऐसा छोड़े वंशधर न था जो प्रदीपको जला सकता।" गजनीपतिके लाहौर पर टखल जमानेके समय पहिले पहिल यहां एक शासन-कार्या नियुक्त हुए, किन्तु इन्होंने शेष मसाठद ईरान और तुरान नानक देशस्थित अपने अधिकृत देशोंको शत्रुके हाथ सौंप कर बारहवीं शताब्दीके आरम्भमें इरावती नदीके किनारे अपना राज्य वसाया। उक्त शताब्दी (लगभग ११८३ ई०)में द्वितीय राजवंशके प्रतिष्ठाता महम्मदगोरी लाहौरके दिल्ली नगरमें राजधानी उठा लाये। पठानराजाओंके समयमें पञ्जाब-प्रदेशका शासनभार राजप्रतिनिधि द्वारा परिचालित होता था। इस समय आगरा और दिल्ली नगरो ही अफगानवासी सुसलमान राजाओंकी राजधानी थी और लाहौरनगरमें उनके वंशीयगणने आधिपत्य जमाया था। लगभग १२४५ ई०में चङ्गोज खॉ और १३८८में तैमूरशाह इस प्रदेश पर आक्रमण कर इसे लूट ले गये थे। इसके बाद रावलपिण्डोमें गहर-जातिका अभ्युत्थान और एकेमान पहाड़ तथा सिन्धुनदीके मध्यवर्ती स्थानमें अफगान वा वंशीयगणका वस आना ही एक ऐतिहासिक घटना हुई।

* प्राक इतिहासमें Sandrakouptos नामके वर्णित है। पाश्चात्त युगदिनेने इनको मगध का चन्द्रगुप्त बतलाया है, किन्तु जैन तथा बौद्ध ग्रन्थोंमें प्रचीन जाना जाता है, कि चन्द्रगुप्त अनेकप्रकारके आनेसे बहुत पहले ही राज्य करते थे।

१२२७ ई०में आञ्जोरराज दोगल खाँ सोदोत्रे चाम
 खाब करमे पर सुगलसम्पाट वावर मादरतमें पाये धोर
 लकोने सारे पञ्चांगमे से कर कश्चिन्द तकहा खान
 चपने पचिचारमें कर निवा। इसके ने कर्ष वाद जिर
 रकोने पञ्चगानिद्वानके वा कर पातोपतको सङ्गाईमें
 पञ्चगानी सेनाको परास्त कर सिन्धोले सि दामन पर
 सुगल-सम्पाध्य स्थापन किया। इनके समयमें आञ्जोर
 दिको धोर पाया। ये तोमो नगर राजधानीके रूपमें
 गिने जाते थे। शोशाङ्गको सङ्गाईके समय पञ्चाङ्ग
 राज्यने दुर्गस्थमें सुगलो को रचा को को। जिस समय
 सुमरराज चक्रवर्ती घोडो पर थे, उधो समय सिध
 जातिको पञ्चदश राज्यमें तुतो बोन रही थी। धोर धोर
 रकोने सुमरराजको पञ्चोगतको उपेक्षा कर पञ्चाङ्ग
 प्रदेशमें आचोलराज्य विस्तार किया।

१२वीं शताब्दीके अन्तमें आञ्जोरमें बामा नामकेने
 जय प्राप्त किया। उन्हींके शिष्य "सिध" नामके प्रसिद्ध
 हैं। यह सिधजाति इतनी प्रबल हो उठो की कि
 पञ्चाङ्गदेशमें उन समय इनका सामन्ता करतीवाना गौर
 न था। मिन्कोके इवें गुप्त रामदासने सखाट पञ्चवर्षके
 सिधसर्वके प्रसारके लिये पञ्चतपर नामक काम पाया
 था। यहाँ इन्हींके पुष्करिणो खुदवा कर एक मन्दिर
 बनवाना छुट किया, जिन्को काम पूरा होने मो न पाया
 था कि इनको मृत्यु हो गई। बाद इनके लक्ष्मी तथा
 मिन्को गुप्त कर्णमन्त्रने एक मन्दिरका गठनकार्य सम्पन्न
 किया। मिन्कोके इस ऐश्वर्यको देख कर सुगलराजगण
 जन सर धोर लोके जनके बिरोधी हो गये। आञ्जोरके
 सुगलशासनकर्त्ता मिन्कोजातिके साथ सङ्गाई ठान दो
 धोर अर्जुनमन्त्रकी बन्धो तथा काराग्रह किया।

अपनर सेतो।

इस पर्याचार पर सिधमण्ड बड़े हो उठो जित हो उठे
 थे निरोह धोर प्रजास्यमें रह न पने राजाको धामाती
 लक्ष्मण कर देय सरमें उत्यात मपानि म्नी। पञ्चुम्भनर
 पुत्र इरयोविन्दको पचना नेता बना कर से गुप्त-प्रथा-
 परिशोध सेनेके लिये पचसर दूध। सुगलशासनकर्त्ता
 सिन्कोके ऐसी चपकामि देख आञ्जोरके निजाल मगाया।
 पञ्चस्वप्रदेशमें आ कर मो मिन्कोने अपने गुह-गिष्ठा

न कोडो पोर न के पूर्वकृत पर्याचारको कथा विस्तृत
 हो कर सुगलशासनमें गठना करनेको हो मुसे। अन्तमें
 १६०२ ई०में इरयोविन्दके पोद गुप्तयोविन्द (ये नामक
 में दयम थे)-से हो इनके धर्म धोर बुद्ध-शास्त्रने जन-
 साधारणमें प्रतिपत्ति लाभ की थी। पञ्चके विश्वेश्वरको
 म राजा बहुत कम रचनेके कारण गुप्तयोविन्द पराजित
 दूध धोर लको माता तथा पुत्रकल्याणक गुप्तुमि समुल
 गट को गई। १०२८ ई०में गुप्तयोविन्द अत्र पचिप
 प्रभेगेने लक्ष्मीर धाममें गुप्तकपथे सुसलशासनो द्वारा मार
 दिय गए तब मिन्कोमण्डराज धोर मो चित्र की उठे तथा
 लकोने प्रतिदिन साडे प्रवृत्तित हो कर योविन्दके शिष्य
 न टाके पञ्चोन पञ्चाङ्गके पूर्वाग्रहकर्त्ता जानो पर बामा
 शोन दिया। उभयत सिन्कोके ऐश्वे लोबानकमें पड़ कर
 किन्की सुहा पवने दुर्गम लीवकको छो डैठे थे, उसकी
 शपार नहीं। किन्कोने मन्त्रिद्वे तोड़ फोड़ कर भूमि
 घात कर हो गई थी धोर बामक शानिका छो-मुदय
 पादि जकारो सुमरशासन इस लोबानकमें पड़ कर मरने-
 मृत हो गये थे। अन्तमें मन्त्र को पच मृत देख गाडो
 गई थी उन्हें निजाल कर योदक, कुत्तों, गोध पादिको
 किया दिव गये। मन्त्रिन्दमें सुगलशासनकर्त्ताको पञ्चा-
 जित करने को वीमल पर्याचार चक्र रचा वा उसको
 शिव सीमा महानपुर तक पड़ च गई थी। लोके बर्हा
 के सुगलनेमाने जय उलका सामन्ता किया तब सिन्को
 जातिके सुधियाना धोर पाबल प्रदेगमें पात्रव किया।
 दूसरो बारके पाञ्चमण्डमें सिन्को भोग इबर आञ्जोर धोर
 उबर दिक्को तलके आनीमें लूट पाठ तथा सुसलशासन-
 दन्ता करने माय गये।

सिन्कोके ऐश्वे च चरण पर लूट तो कर मण्डा
 ब्रह्मादुर्गशाङ्ग लको दमन करनेके लिये दाकिचायने
 लोटे। किन्को वावर नामक दुर्गमें मिन्कोके सुगलदेश्वर
 कर्णुच चक्रदय कोने पर मो बन्धा पञ्चवरीको साथ
 ने पहाडकी धोर मय गये। ब्रह्मादुर्गशाङ्गकी लखुके
 बाद सिन्कोने पुनः सेना म पञ्च करके राज्यादिमें लूट
 पाठ मचाना पारम्भ कर दिया। १०१६ ई०में सखाट
 वर्ष लपियरने पादेगने आञ्जोरके शासनकर्त्ता पञ्चकुल
 समक कोने कई बार सिन्को पर पाञ्चमण्ड किया धोर

प्याखिर वंदाकी युद्धमें परास्त कर दिल्ली भेज दिया। यहीं पर वंदा और अन्यान्य सिखसरदारोंकी मृत्यु हुई।

१७३८ ई०में नादिरशाहने दलबलके साथ पञ्जाब पर आक्रमण किया और कर्णाल नगरके समीप मुगल सेनाको परास्त कर दिल्लीकी राजधानी लूटो। इसके बाद सिखगण पुनश्चाहसे सैन्यसंग्रह कर मुगलसेनाके विरुद्ध अग्रसर हुए। इस वार भी वे मुगलोंसे पराजित और विपस्त हुए। किन्तु कई वार परास्त होने पर सिखगण जरा भी विचलित न हुए। १७६८ ई०की पानीपतके युद्धमें जब महाराष्ट्रीयगण अहमदशाहसे परास्त हुए, तब सिखगण भी बलहीन हो पड़े। स्वदेश लौटते समय अहमदशाहने अमृतसरकी तबस नहस कर डाला। इतना ही नहीं, उन्हीं मन्दिर भी तोड़ फोड़ डाला, पुष्करिणीको भरवा दिया और पोछे गो-इत्यादिके उस पवित्र स्थानमें चारा और रक्त लगा दिया। अहमदशाहके बली जानी पर सिखगण इस अत्याचारका प्रतिशोध लेनेके लिये पुनः अग्रसर हुए। इस वारके युद्धमें सिखोंने अपनी खोई हुई स्वाधीनता पुनः प्राप्त की।

उसी समय नानक प्रवर्तित शान्तिमय धर्मका बहुत कुछ परिवर्तन हुआ। धीरे धीरे सिखगण शान्तिमय जीवनका विमर्जन कर एक एक घोड़-टल वा 'मिशम' धर्मार्थदलमें विभक्त हो पड़े। किन्तु सबको पवित्र अमृतसर नगरमें आ कर मिलना पड़ता था। मुगलराज दुरानीको पञ्जाब राज्य दे देने पर भी सिखोंने १७६३ ई०से पञ्जाबके पूर्वाश्रयस्थानों पर आधिपत्य फेला लिया था। १८०८ ई०में अफगान राज्यमें विप्लव उपस्थित होने पर भी सिख-सरदार रणजितसिंहका अभ्युत्थान हुआ। १७८८ ई०में काबुलके दुरानीवंशीय शासनकर्त्ता जमालशाहने रणजितकी लाहौरका शासनभार अर्पण किया। धीरे धीरे अपने बाहुबलसे पञ्जाबदेशमें इस प्रदेशके अधिकांश स्थानों पर अपना प्रभाव फेलाना चाहा। इसी उद्देश्यसे उन्हीं १८०८ ई०में शतद्रुनदीके वामकूलस्थित अन्यान्य सिखसरदारोंके अधिकृत राज्यों पर धावा बोल दिया। बहाके सामन्त राजाओंने उत्तर-पश्चिम प्रदेशमें अङ्गरेजोंका आश्रय ग्रहण किया। इस समय रणजितने अङ्गरेजोंके साथ

मिलता कर भी और शतद्रुनदीके वामकूलवर्ती राज्यों पर जो आक्रमण करना चाहा था उसे कुछ कालके लिये रोक दिया। उसी समय अङ्गरेजोंने शतद्रुनदीके उत्तरस्थित स्थानों पर अपना अधिकार जमाया। १८१८ ई०में रणजितने मुलतान पर आक्रमण किया और उसे अपने दरबलमें कर लिया, पीछे सिन्धुनदी पार कर पेगावर, डेर, जात और काश्मीर जाता। इस प्रकार उन्हीं वर्ष मान पञ्जावप्रदेश और काश्मीरके अधिकारभक्त सामन्त-राज्यों पर अपना पूरा अधिकार जमाया। रणजितके जीते जो सिखबल उन्नतिकी चरमसेमा तक पहुँच गया था। १८३८ ई०में रणजितने मरने पर उनके लड़के खड्गसिंह लाहौरके सिंहासन पर बैठे। किन्तु दूमरे ही वर्ष विपयोगसे उनही मृत्यु हो गई।

रणजितसिंह और खड्गसिंह देवों।

खड्गसिंहकी मृत्युके बाद पञ्जाबमें अराजकताका सूत्रपात हुआ। उद्यत सिखसेना अङ्गरेजों राज्य पर चढ़ाई करनेका स्वयं करनी लगी। तदनुसार उन्हीं ६०००० सैन्य और १२५ कमालने कर शतद्रुनदी पर मुटकी नगरमें (१८४५ ई० १८ दिसम्बर) अङ्गरेजों पर आक्रमण कर ही दिया। इसके तीन दिन बाद फिरोज शहरमें लड़ाई हुई। इसके बाद सोत्रावन नगरके समीप सिख और अङ्गरेजों सेनामें प्रथम बार युद्ध हुआ। इसी युद्धमें सिखगण अच्छी तरह परास्त हो कर सन्धि करनेकी बाध्य हुए। सन्धिके अनुसार लाहौर नगर अङ्गरेजोंके हाथ लगा। इतना ही नहीं, लाहौरके दरवारमें जो सन्धि हुई उसके अनुसार अङ्गरेजोंने शतद्रुनदी और विपाशा नदीके मध्यवर्ती स्थानोंको वृष्टिशकवर्षके अधिकारभक्त कर लिया। युद्धके खर्चमें रुपये देनेको जो बात थी उसके लिए सिखोंने हजार और काश्मीर तथा विपाशा और सिन्धुके मध्यवर्ती सामन्तराज्य अङ्गरेजोंको अर्पण किए। महाराज गुलाबसिंहके हाथ अङ्गरेज बहादुरने काश्मीरका शासनभार सौंपा। किन्तु काश्मीरके इस प्रकार दूसरेके हाथ चले जानेसे बर्साबड़ी हलचल मच गई। लाहौर दरवारके अध्याय, लालसिंहकी प्रेरणाने सिखसरदार प्रतिद्वंद्वी हो गए। अन्तमें लालसिंहकी पदच्युति हुई।

घोर किराये की शक्ति को यहाँ । तदनुसार नागरिक दलीयानि इन्हीं राजदरबारवासीयों के लिये रामबाण का मार पट्टेयन ऐतिहासिक घोर परिणामक सभा (Council of rosency)-के ऊपर रखा गया ।

इस समय विश्व भोग हज़मंग हो गये; किन्तु इनको धन खरप हो जलजो हुई पाग न सुझे तो । किन्तो एक कामाव्य बातची क्लृप्त कर के पयना पाखीय प्रणाम करनी लगे । यन्मते १८७८ ई०को पट्टेयुग दोहान मूल्यवाक्यो कलत्रनामि विद्रोही को कर कल्लो नि दो पट्टेयन सेनापति को मार डला । घोरि धारि चारो घोरी विश्व मीना मुनतात नगरमें एकवित्त हुई माय माय सीमासन्धर्मी मामलो मे भी धा कर लनहा माय दिया । दोहे पट्टेयन सेनापति विग (Gou ral Whala) इन बलके माय विश्व टनने पा सिधे । कर्मि ह धार मिरसि इन्हे लयोमने पञ्चमानपति यमीर दोष्ट मरकम" मे लिखजातिको महायनाके विर सेना मोक हो । १८७८ ई०में पट्टेयन सेनापति काई मक मगदू को पार कर गये । रामनगरके निवट मिरसि इन्हे सार बनकी सुठ-मे हू हो गई । इस बुद्धमें पराया हो कर सिद्धोनि पयनो पोठ दिखारि । बादमें १८८१ ई०को १९वीं जन शरीको परिचयननावा रथसेवमें सिद्ध-सेना प्रबल प्रताप मे मिय-नौरवकी रथा वरनेमें समर्थ हुई या । इस बुद्ध में पट्टेयनको चतियस्त डीना पड़ा था । विनियननावा के विप्लार-दुदधे दो लोन-िन बाद घोरसि हूके युद्धे टनके विता कर्मि ह ६००० पयवान पयारोहोके काप मिन गए । १९वीं फरबरी को काई मकने मुकुरातक मुदमें पून पराभवके पल्लु हा प्रतिशोध लिवा । सिद्धोनि पराजित होये पर पट्टेयनो सेनामें पियावरमें यमीर दोष्ट मरकम" पर चढ़ाई कर दो । यमीर किन्तो तस ह प्राच से कर भारी ।

१८७८ ई०को २८वीं माचको महाराज दलीयानि ह बिज सन्धिलुद्धमें पावर हुए मे लमका समे इस प्रकार है—(१) महाराज दलीय राज्यास क्लृप्त परिचकारको कोट्टे देवे । (२) ब्रह्मिा राजकोय सम्पति पारि कावगो लने हट रहियाय जन्मगो मुदके पर्यंतका पट्टेयन मरम"पुदके निकट लाडो-रात्रके करको बाकनमें

मे खेगो । (३) महाराज रथिजित्ने यावसुत्राठनसुरक मे को कोडिगूर वाया दे कमे लाहोरके महाराज हट योपुदको महाराजोका दे देवे । (४) महाराज दलीय चि ह सपरिवारके मरचपोयनके निप साधित्व लप हयवे पविने । (५) महाराजको पट्टेयन गवर्नीपुद माय घोर सम्भवको निवाहसे दिखिते । वन्देगविह रेखो ।

पञ्जाब पट्टेयनके बाद लगा । १८७८ ई०के पारम्भ में इमः। गामनकाय विचारः समा द्वारा परिपालित होता था । पक्षि इमि पट्टेयनो गामनानुसार विनिध किनेमि विभक्त कर एक चोफकमियरर बाव रखा गया । निपाही विद्रोहके बाद ही यह प्रदेश छोटे भाटके घातनाचीन हुआ ।

१८५० ई०को दिवो लहरमें सिपाही विद्रोहका सुव्यात हुआ । पञ्जाब प्रदेशमें सम्बन्धित देगोय सेनापति के साथ पनलाय भाव दिफारि देता था । १२वीं मईको सब दिवोको मयानक इत्याहा मन्दाद लाहोर पदुचा तर मण्डलामो (Sir R. Montgomery) माहवने महिन्तुताका पवनमन्त्र परबं मियागमोहमें ३००० सेनात्र पन्नादि खोन सिधे । किरोअरुवरके पञ्जागार सुराहत होनेके बाद १५वीं मईको निपाहीयक रूपटतः विद्रोहो हो कठे । लमो मासको २१वीं तारोयको १५ ल० देगोय पशतिवण पट्टेयनो के बिदहाचारो हा बहुरता को इन्हा करक पाव"म्वसुममें माग गये । लने घोर लको लकम्यरके निपाहियेनि विद्रोहो हो कर दिवोने विद्रोहिकीका साथ दिया । जुलाई घोर भगदत मामके मजधे पियावर भोजन विद्याककोट, मुदि घोर माहोरके दक्षिण दरारतो तथा मगदू, मुदोके मघाचकी ल्मानो को सेनामें पट्टेयनो के बिदह पल्ल धारक बिवा । परिधाका, भिन्द भाभा बपुरकका पाटि सामन्तराजापि नि इस दाहक विद्रुहको समय पट्टेयनो को विनिय सहा यता ली हा । इस लपकारके प्रभुपकाराव्युप पट्टेयन-राजने भी लन्दे बाको पुस्कार दिया था ।

निपाहीपुदके देखो ।

निपाहोविद्रुहको बादमे ही पञ्जाबके नागिय घोर लाहडाप"की सचतिता पारम्भ हुआ । प्रबल वपेमें ही पञ्चतसरेके मुकुरातक तस रीकपत्र चनाया गया घोर

वही दो पावको नहर काटो गई । ८७३ ई०में महाराजकी उग्रह पुत्र सिंम भाव वेत्तम यहाँ पधारि थे । ८७७ ई०में यहाँके सामन्ताराजगण दिल्लीको सफागभासे एकत्र हुए थे । सफाग न युद्धकालमें यह स्थान युद्धके सरञ्जामादिके केन्द्रस्थलरूपमें गिना जाने लगा था । पटियाला, बन्नवलपुर, भिन्द, नाभा, कप्रथला, फरीदकोट और नाहन आदि स्थानोंके सामन्ताराज्योंने सफागनयुद्धमें विगेष सहायता की थी । १८७४-१८८० ई० तक यहाँ जलाभावके कारण भारी अकाल पडा था जिससे लोगोंको जान गई थी । युद्धविघ्नके कारण पश्चिमदिशका वाणिज्य बन्द हो गया जिसमें प्रजाके कष्टकपारावार न था । किन्तु कोहाटमें पेगावर तक जो रेलपथ खोला गया उसीमें काम करके बहुतेने अपना जान बचाई थी । रूझावसान वाट ही सरहिन्दकी नहर काटो गई । इसमें पञ्जादके अनेक स्थानोंका जनकट दूर हो गया ।

विद्याशिक्षाकी और यहाँ विशेष ध्यान दिया जाता है । लाहौरमें एक विश्वविद्यालय है जो १८८२ ई०में स्थापित हुआ है । इस विश्वविद्यालयको विज्ञान, शिल्प, कला, डाक्टरी, कानून, इन्जिनियरिंग परोक्षोतीर्ण कालोंको खिताब देनेका भी अधिकार है । पञ्जाव भरमें ४० हाई स्कूल, नारमल स्कूल, २०० मिडिल स्कूल, प्राय मरी स्कूल, इंजिनिग स्कूल और १२ शिल्पकलाके स्कूल हैं । इनके सिवा कुछ ऐसे भी कानिज और स्कूल हैं जिनमें सरकारसे कुछ भी सहायता नहीं ली जाती है, जैसे, लाहौरमें सुसज्जमान सम्प्रदायसे १८८२ ई०में स्थापित इस्लामिया कालिज, अमृतसरमें सितोंसे १८८७ ई०में स्थापित खालसा कालिज । १८८८ ई०में आर्य समाजकी धोरसे लाहौरमें एक स्कूल खोना गया जिसका नाम दयानन्दएल्लोवैटिक स्कूल है । १८६० ई०के अक्षरमासमें मेडिकल कालिज स्थापित हुआ है जहाँ व्यवसाय-सम्बन्धी विषयोंमें उच्च शिक्षा दी जाती है । फिलहाल पञ्जावकी हर हालतमें उन्नति होती जा रही है ।

पञ्जिका (स० स्त्री०) पञ्ज-इन् । १ सुखनालिका, नरो । २ पञ्जिका, पञ्चांग ।

पञ्जिका (स० स्त्री०) पञ्जि-स्वार्थ कन् टाप । १ तुलनालिका, रुईकी नरो । २ व्याख्यानग्रन्थ, टीका-विगेष ।

‘टीका निरन्तरव्यपगा पञ्जिका पदमञ्जिका ॥’

(हेमचन्द्र)

जिसमें निरन्तर व्याख्यान हो, उसे टीका और जिसमें निरन्तर पदभञ्जन हो, उसे पञ्जिका कहते हैं । ३ पाणिनीय सुबर्णतमिड । ४ निधिवाटाटि पञ्चाङ्गयुक्त पत्रिका, पञ्चांग । वर्षके वार्षिकमें ज्योतिषीके पञ्जिका सुनने चाहिये, इसके सुननेमें अशुभ जाता रहता है ।

‘वारो हरति दुःस्वप्नं नक्षत्रं पापनाशनं ।

निधिगवति गंगाया योगः सागरसङ्गम ।

करणं सतीर्षानि धूयन्ते दिनपञ्जिका ॥’ (देवद०)

दिनपञ्जिका सुननेमें वारफनमें दुःस्वप्ननाश, नक्षत्रसे पपनाग, तिथिमें गंगातुल्यफल, योगमें सागरसङ्गम सङ्गम और कारणमें मघ तोर्षाका फल होता है । ज्योतिस्तत्त्वज्ञन वराहपुराणमें लिखा है, कि वार और नक्षत्र ये दुःस्वप्न और पापनाशक हैं, तिथि आयुष्करो, योग बुद्धि-वर्धक, चन्द्र सौभाग्यप्रद आदि । जो प्रतिदिन पञ्जिका श्रवण करते हैं उन्हें ये सब फल प्राप्त होती हैं ।

‘दुःस्वप्ननाशको वारो नक्षत्रं पापनाशनम् ।

तिथि आयुष्करी प्रोक्ता योगो बुद्धिवर्धकः ॥

चन्द्रः करोति सौभाग्यमंशकः शुभदायकः ।

करणं ह्रमते लक्ष्मीं यः श्रुणोति दिने दिने ॥’

(उद्योतित्तस्वप्रवचन)

पञ्जिकामें तिथि, वार, नक्षत्र, कारण और योग आदि दैनन्दिन विषय लिखे हुए हैं ।

विरपञ्जिका—शकाब्दानुसार वारगणना होती है । जिस शकाब्दमें जिस मासके जिस दिवसका वार जानना होगा उस शकाब्दको अद्धमंख्यामें शकाब्दका चतुर्थांश जोड कर उसमें फिर मिन्त्रलिखित मासाद् और उस मासको दिनसंख्या तथा अतिरिक्त दो जोडते हैं । इस प्रकार जो योगफल होगा उसको सातसे भाग दे कर जो बचेगा, उससे वार जाना जाता है । एक अवशिष्ट रहनेसे रविवार, दोसे शनिवार इत्यादि । मासाद् यथा—

मासाह
वैशाख
ज्येष्ठ
श्रावण
भाद्रपद
आश्विन
कार्तिक
पुष्य
मगश
पुष्य
शुक्र

यदि गण्डका चतुर्थांश पूजाह न हो कर मन्वाह हो तो कम मन्वाहके बदनमें १ मासना होता है। फिर जिस प्रकालका चतुर्थांश मन्वाह न हो उस गण्डाहके शेषमाहके १ घोर पाश्चिमाहके २ मासाह केने होत है। इस गण्डाहमें यदि नही मिले, तो उसमेंसे एक निष्काश लेनी पर पचकर मिल आयगा, इनका एक बटाकरच मेषे दिया जाता है—

उदाहरण—१०८८ गण्डाहमें ११ घंटे कीम नार होया। यहाँ गण्डाह १०८८ है जिसमें इसका चतुर्थांश २७२, मासाह ६, दिनाह ११ घोर पश्चिमाह २ लोडुमिसे २२८८ हुआ। इसमें कर सातसे माग देते हैं, तब शेष ६ बच रहता है। पतएव यह माहूम हुआ कि यह दिन शुक्रवार होया।

समको जमद भी इसी तरह किया जाता है। इस प्रकार नारको मचना करके तिथिकी मचना करना होता है। तिथिमचना इस प्रकार है—ब्रह्माहको मन्वाहको १८से भाग दे कर जो बच रहे उसे ११से गुणा करते हैं। यह हम घण्टमें निरुनन्विकित मासाह, दिनस प्ना घोर पश्चिमाह ६ जोड़ कर १०से भाग देने पर जो बचेना उस घण्टमें जो तिथि होती, वही दिनमें वह तिथि जानने होता है। इसी निरुनन्विकित तिथि दिखर की जाती है। मासाह यथा—

मासाह
वैशाख
ज्येष्ठ
श्रावण
भाद्रपद
आश्विन
कार्तिक
पुष्य
मगश
पुष्य
शुक्र

यसो मचनासे यदि जोक न मिले, तो मासके प्रथममें होमिसे १ बाद घोर शिबमें होमिसे १ जोड़ देना पड़ता है।

नक्षत्रमचना—तिथि मचनाके अनुसार उस दिनको तिथि फिर नरके उसमें निरुनन्विकित मासाह जोड़ देते हैं। यदि वह जोनचल २८से पश्चिम हो, तो उसमेंसे २०

बाद दे कर जो बच रहे उसो पश्चिमे अनुसार नक्षत्र फिर लिखा जाता है। इसमें यदि जोक न मिले, तो मासका पूजाहके होमि पर १ घोर घोर मीपाहके होम पर १ बाग लेनी से मिल आयगा। बिन्दु उस दिनकी जो मन्वा होयो यदि इनको पश्चिमा उस दिनको तिथिका पश्चिम पश्चि हो, तो कम मासका मासाह न जोड़ कर उससे पूर्व मासका मासाह जोड़ना होता है।

मासाह
वैशाख
ज्येष्ठ
श्रावण
भाद्रपद
आश्विन
कार्तिक
पुष्य
मगश
पुष्य
शुक्र

पश्चिमना।—पूर्व नियमके अनुसार नक्षत्र फिर नरके उसे इति गुणा कर ८से भाग देते हैं। पश्चिमको रहता है उसमें १ जोड़ कर जो योगफल हो उसी मन्वाके अनुसार राशि होती; १ होमिसे शेष २ होमिसे उप इत्यादि। इसका एक उदाहरण मेषे दिया जाता है। १०८८ गण्डाहको १८में घेतके जिसका त्रय हुआ है उसकी क्या राशि है १ घंटे प्रथ पर पूर्व नियमसे नक्षत्र मचनामें २१ मन्वा पर्याप्त पश्चिमा नक्षत्र होता है। पीछे उस सन्वाको धरे गुणा करमिसे ८२ तथा ८२को ८से भाग देनेसे भागफल १० हुआ घोर पश्चिम २ रहा। उस १० मन्वामें १ जोड़मिसे ११ हुआ। ११ मन्वामें ह्यधराशि फिर हुई। जिससे तिथि वार घोर नक्षत्र पादिका विवरण जाना जाता है उसीका नाम पश्चिमा है। सूर्यसिखात् पादि मन्वानुसार पश्चिमाकी गचना को जाती है। पात्र कम बहुतसे पश्चिमाको का प्रचार देखा जाता है। दिनपश्चिमाका मतसे भी पश्चिमागचना हुआ करता है। इसे पश्चिमागचना कहते हैं। वार, तिथि नक्षत्र योग घोर करण इन पश्चिमाकी मचना रहतो है, इसीसे इसका पश्चिमागचना नाम पड़ा है। इस पश्चिमागचनाका विवरण बहुत संवेरमें लिखा गया है।

दिनपश्चिमाके मतसे पश्चिमा गचना—
इह गण्डाहमें जिस वर्षको पश्चिमागचना करनी होयो, उस वर्षमें ११२१ घटा देनेसे जो बच रहिगा, उसे पश्चिमागचना होता है। इस पश्चिमागचनाको १८८१

गुणा करके उसमें ४२०० जोड़ दें। योगफलको ६००० से भाग देनेसे जो नब्बाह्न होता है, उसका नाम तिथि-दिन है। पहले इसी प्रकार तिथि-दिन स्थिर करना होगा।

शुद्धपिण्डकी ८३३में गुणा कर, गुणनफलमें १५१०० जोड़ कर २०००० हजारमें भाग दें। इस प्रकार भाग देने में जो लब्धि होगी, वही नक्षत्रदिन और भोगदिन है। शुद्धपिण्डको १२में गुणा करके उसमें १२ और पूर्वांश स्वतन्त्रसे जो तिथिदिन हुआ है उसे एकत्र जोड़ कर ३०में भाग दें। भाग देनेमें जो शेष बचेगा वह उस वर्षकी प्रथम तिथि है। यदि शून्य अवशिष्ट रहे, तो ३० अमावस्या प्रथम तिथि होगी। शुद्धपिण्डकी १०में गुणा कर ११ जोड़ दें और पूर्वांश मतसे जो नक्षत्रदिन और योगदिन हुआ है उस अङ्क को उसमें घटा कर २७में भाग दें। भागमें जो अवशिष्ट रहेगा, वह अङ्क उस वर्षका प्रथम नक्षत्र होगा। यदि शून्य रहे, तो २७ नक्षत्र होता है। यही प्रथम नक्षत्र है।

शुद्धपिण्डकी ७७७८५५१२७ इस प्रत्येक अङ्कमें गुणा करके पृथक् पृथक् स्थानों रखते हैं। उसमें बाद शेषको अर्थात् २७ प्रति शुद्धपिण्डाङ्कका ६०में भाग देनेमें जो लब्धि होगी उसे ५१ प्रति शुद्धपिण्डमें जोड़ देते हैं। अब इस योगफलमें ६०से भाग और ५ प्रति शुद्धपिण्डाङ्कका योग देना होता है। फिर इसे ६०से भाग और ८ प्रति शुद्धपिण्डाङ्कका योग पोछे पुनः इसे ६०से भाग और ७ प्रति शुद्धपिण्डाङ्कका योग विधेय है। तदनन्तर इसे ६०में भाग और ८ प्रति शुद्धपिण्डाङ्कका योग देना होता है। पीछे उसे भी ६०से भाग करके भागफलमें ७ प्रति शुद्धपिण्डाङ्कको जोड़ते हैं।

तिथि-दिनकी दो स्थानोंमें रख कर एक स्थानके तिथि-दिनको ३०से भाग दें कर दूसरे स्थानके तिथि-दिनके साथ योग करते हैं। यह योगाई और पूर्व कथित नियमानुसार जो अङ्क हुआ है उसे यथाक्रम ०११५८ त्रैपाङ्कके साथ योग करना होता है। योग करके जो नमष्टि होगी उसके प्रथमाङ्कको ६०में गुणा करके द्वितीय अङ्कके साथ जोड़ देते हैं। पीछे उसे १६८५से भाग देने पर, जो अवशिष्ट रहेगा उसे ६०से

भाग करके लब्धाङ्ककी वाई और रखनेमें जो होता है, वही तिथिकेन्द्र है। १६८५में भाग देनेमें जो भागफल होता है उसका नाम है तिथिकेन्द्रभ्रम।

शुद्धपिण्डकी पूर्वांशरूपमें यथाक्रम ११८१४८२१में गुणा करके पूर्वांश रातिसे ६० द्वारा भाग करते हैं और और भागफलको ४८११८१ प्रतिशुद्धपिण्डाङ्कमें योग करके योगफलमेंसे ३२११५१२४ घटाने होते हैं; बाद में पूर्वांश तिथिकेन्द्रभ्रमको ३२में गुणा करके उसे ६ में भाग देते हैं और भागफल तथा अवशिष्टको पूर्वाङ्क (३२११५१२४ घटानेमें जो बच रहता है, उस अङ्क) में घटाते हैं। पीछे पहलेके जैसा तिथिदिनको दो स्थानमें रख कर एक स्थानके तिथिदिनको ३०से भाग देते और भागफलको दूसरे स्थानके तिथिदिनके साथ जोड़ कर पूर्वाङ्कमें जोड़ते हैं। इन प्रकार गणना करनेमें वार, तिथि और तिथिकेन्द्रपलाटि स्थिर हो जाते हैं। शुद्धपिण्डको १५००में भाग देने पर जो भागफल होता है, उसे तिथि वारादिके पलके साथ योग करते हैं और वाराङ्कको ७में भाग देने पर जो भागशेष रह जाता है वही वार है तथा उसमें पहले यदि प्रथम तिथिको पृथक् करके रखें, तो वे तिथि वारादि होंगे। शुद्धपिण्डको पहलेके जैसा यथाक्रम ७७७८५५१२७ ३५१२में गुणा कर पूर्ववत् शेषको ६०से भाग देते हैं। भागफल जो होता है उसे यथाक्रम ३४, ३, ५३, ४५, ०, ७ प्रति शुद्धपिण्डाङ्कमें योग करना होता है। नक्षत्रदिनकी दो स्थानमें रख कर एक स्थानके नक्षत्रदिनको १२००में भाग दें कर उसमें अन्य स्थानके नक्षत्रदिनको जोड़ देते हैं। अब योगफलको पूर्वाङ्कमें घटाते हैं और उसमें ०३५१२७ योग करके प्रथमाङ्कको ६०में गुणा और द्वितीयाङ्कको उसके साथ योग करते हैं। पीछे उस योगफलको १६३५में भाग करके जो भागशेष रह जाता है उसे पुनः ६०में भाग दें कर भागफलकी वाई और रखते हैं, इसका नाम नक्षत्रकेन्द्र है। इस नक्षत्रकेन्द्रको १६३५ से भाग देनेमें जो भागफल हुआ था, उसका नाम नक्षत्रकेन्द्रभ्रम है।

शुद्धपिण्डको पहलेके जैसा यथाक्रम ११३२५११८१ १४३११२में गुणा करके पूर्ववत् ६०से भाग देते हैं,

दीर्घ भागफलकी यथाक्रम ११, १७, २८, २९, १९, १ पुरित चन्द्रविच्छादमें जोड़ते हैं। मध्य दिनकी दो स्थानमें रख कर एक स्थानके मध्य दिनकी १२००से भाग करके बड़े चन्द्र स्थानके मध्यदिनमें जोड़ देते हैं। योगफल जो होता है, उसे पूर्वाह्नमें घटा देते हैं। इस प्रकार मध्यमके जो चक्र रहता है, उनमें ३१७५१२। ८५ योग करते हैं। पूर्वोक्त मध्यमके १८से गुणा करके उनमें ६०का भाग देते हैं। भागफल जो होता है तथा चक्रगिह जो रह जाता है, उसे पूर्वाह्नमें (३१७० ५१२१५ योग करनेके बाद जो चन्द्र गुणा है उस चन्द्रमें) योग करके हैं। इसमें बार, दण्ड, पल पादि निश्चय पाते हैं। बारको ७५ भाग देने पर जो शेष रहैगा वह बार दिन होगा जो (८७६१५७७ मध्यमकी दण्ड करके रहना होगा, यही मध्यम धारादि है।

चन्द्रविच्छादको पूरा चक्र यथाक्रम ०३१११७११५७ १८८८से गुणा करके पूरा नियमातुकार ६०से भाग देते हैं। भागफल जो होते हैं उन्हें १८, ५३, २६, १६, २९, ७ पुरित चन्द्रविच्छादमें योग करते हैं। पाँचै योपदिनकी दो स्थानों में रख कर एक स्थानमें योगदिनकी ६००से भाग धोर दूसरे स्थानके योगदिनके साथ योग करते हैं। दीर्घ उस चक्रकी पूर्वाह्नमें घटा देते हैं। उनमें यदि ०१८१८८ योग करे तो वह कुम्हार होगा। इस कुम्हारको ६०से गुणा करनेसे कुम्हारफलमें इससे बाद में घटावो जोड़ देते हैं। यह इस योगफलको १०५२से भाग देनेसे जो चक्रगिह रहैगा उसे पुनः ६०से भाग देते हैं। भागफल जो होगा उसे बार धोर रहनेसे योग-केंद्र जागा। फिर इस योगफलमें १०६२का भाग देनेसे जो भागफल होगा, उसका नाम योगकेंद्र मध्य है।

चन्द्रविच्छादको पक्षसेके यथाक्रमने जैसे ११६६।१० २८।१० १८से गुणा करके पूर्व नियमातुकार ६०से भाग देते हैं। पाँचै मध्य चक्रके जो १०, २८, १०, ३६, १ पुरित चन्द्र विच्छादमें योग करना होता है। बादमें योगदिनकी दो स्थानोंमें रख कर एक स्थानके योगदिनकी ६००से भाग दे कर उसे चन्द्रस्थानके योगदिनके साथ योग धोर उस पूर्वाह्नमें वियोग करना होगा। पूर्वोक्त योग-

केंद्रमध्यको ११०से गुणा करके उसे ६०से भाग दे कर पूर्वाह्नमें वियोग करना होता है। ऐसा करनेसे बार, दण्ड, पल पादि होते हैं। बारको ७५का भाग देनेसे शेष जो रहेगा, वह बार होगा। इसमें पक्षसे प्रथमयोगकी दण्ड करके रहना होगा ऐसा होनेसे जो योग धारादि होते हैं।

सुमेरु पर्वत धोर यज्ञको मध्यमल सुमिसे ऊपर जो कर उत्तर-दक्षिणमें विस्तृत जो एक रेखा कल्पित हुई है, उसका नाम मध्य रेखा है। उस मध्य रेखासे चपला दीय अतने चोत्रनके धनर पर रहैगा उस चोत्रनकी दायरे गुणा करके १२से भाग देते हैं। भागफल जो होता है वह पल है। वह पल यदि ६०से चक्रिक हो, तो उसे ६०से भाग करके जो दण्डपत्रनादि होते उन्हें मध्यरेखाके पूर्वोद्गममें जो मत्र तिथिधारादि, मध्यधारादि, योगधारादि धोर मेषधारादि मत्र हुए हैं उनमें मध्य जोड़ना होता है।

विषुवदिनके धारादि मध्य धोर किन्द्रध्रुवकी दो स्थानोंमें दण्ड करके उन धाराध्रुव धोर किन्द्रध्रुवके साथ प्रतिदिनके धाराध्रुवसेवाह धोर किन्द्रध्रुवसेवाहका योग करते हैं। योगफल प्रतिदिनका शुभधाराध्रुव धोर शुभकिन्द्रध्रुव होगा। उस शुभकिन्द्रध्रुव से पदार्थ घण्टा पक्ष करके उसे एक स्थानमें रखते हैं। बादमें चण्डा चक्र स्थापित चण्डासे अतना चक्रिक होयो उसका नाम धनमोक्ष है धोर स्थापित चण्डासे अतना काम जोयो उसका नाम धनमोक्ष है। किन्द्रका पाठ जो चक्रगिह रहैगा उसे मोक्ष दाता गुणा करके पठितकथकी शक्ति करना होगा तथा धनमोक्षक पर स्थापित चण्डाके पक्षसे भाग योग तथा चक्रमोक्षक पर स्थापित चण्डा से पक्षसे साथ वियोग करना होता है।

उस चण्डाकी धारादि ध्रुवचण्डाके पाठ योग करनेसे जो प्रतिदिनकी तिथि धारि दण्डानि होयो। वह दण्डादि यदि ६० दण्डसे चक्रिक हो, तो उसे ६०से भाग करके लब्धाह्वारमें जोड़ना होता है। चक्रगिह दण्डादि रहैगा। इसमें प्रथम राशि तिथि होयो, इसी प्रकार बार दिवसमें तिथिका अतिक्रान्त गुणा करता है। एक दिनमें यदि बार मध्य न हो पदार्थ रविधारे

बाद मङ्गलवार हो, तो जानना होगा कि सोमवारकी वह तिथि ५० दण्ड है तथा मङ्गलवार दिनमें लब्ध दण्ड है। दोनों दिनमें यदि एक ही वार लब्ध हो, तो प्रथम लब्ध दण्ड तक एक तिथि तथा द्वितीय लब्धदण्ड तक एक और तिथि होगी। इससे जाना जाता है, कि यह दिन व्रतस्पर्श होगा। यह व्रतस्पर्श गणनास्थलमें परलब्ध दण्डसे पूर्व लब्धदण्ड बाद देनेसे स्थिर किया जाता है।

केन्द्र यदि अपने अपने भ्रमसे अधिक हो अर्थात् तिथिकेन्द्र यदि २८५, नक्षत्रकेन्द्र २७१५ तथा योगकेन्द्र यदि २८१२२ संख्यासे अधिक हो, तो उसे अपने अपने केन्द्रमें घाट दे कर तिथि वारादि दण्डमें ३२ बाद, नक्षत्र वारादिके दण्डमें १८ योग और योग वारादिके दण्डमें ११०का वियोग करना होता है। ऐसा करनेसे शुद्ध वारादि होंगे। तिथिकेन्द्रका भ्रम २८५, नक्षत्रकेन्द्रका भ्रम २७१५ और योगकेन्द्रका भ्रम २८१२२ है।

तिथिकी अष्टसंख्या जितनी होगी उसे द्विगुण करके यदि तिथिमानके पूर्वाह्निमें करण करनेकी आवश्यकता हो, तो द्विगुणाद्धमें २ बाद और तिथिमानके परार्द्ध होने पर १ बाद देना होता है। अवशिष्ट अद्धमें ७ बाद दो कर भाग देनेसे जो अवशिष्ट रहेगा उसीका वव, वालव इत्यादि क्रमसे करण जानना होगा।

अब्दपिण्डकी १००७से गुणा करके ८००का भाग दो, लब्धाद्ध वार, दण्ड इत्यादि होगा फिर अब्दपिण्डकी ७से गुणा करके ३००से भाग दो और भागफलको पलमें जोड़ दो। उससे माघ ४४४८५१३ इस क्षेपाङ्गकी जोड़ी और योगफलको ७से भाग दो, इस प्रकार जो अवशिष्ट रहेगा, वह विपुत्रसंक्रान्तिका वारादि होगा। इसमें पूर्व नियमसे दिगान्तरसंस्कार और चराक्षसंस्कार करनेसे ही विपुत्रसंक्रान्तिका शुद्ध वारादि होगा। इसी समय सूर्य रेखादिमें जाते हैं। सूर्यके रेखादिमें जाने से वैशाखमास हुआ। उस वैशाखसे आरम्भ कर पुनः चैत्र तक गणना करनेसे एक वर्षकी गणना हुई। रेखादिके क्षेपवारादि अद्ध इस प्रकार हैं।

- मेघक्षेपवारादि -- ४४४८५१३,
- वृषक्षेपवारादि -- २५६४८८,
- मिथुनक्षेपवारादि--६१२२२८,
- कर्कटक्षेपवारादि-- ३१३,
- सिंहक्षेपवारादि--६१२८१०,
- कन्याक्षेपवारादि--२१२८१२०,
- तुलाक्षेपवारादि--४५५५१०,
- वृश्चिकक्षेपवारादि--६४७५५१,
- धनुःक्षेपवारादि ११६५५२,
- मकरक्षेपवारादि--२३६११,
- कुम्भक्षेपवारादि ४१३२४,
- मौलक्षेपवारादि-- ५५३३८।

विपुत्रसंक्रान्तिके शुद्ध वारादिमें इस वृषादिके क्षेपाङ्गका योग करनेसे उस समय सूर्य वृष मिथुन इत्यादि राशिमें गमन करते हैं अर्थात् मासके शेषमें उस उस वारमें उस उस समय संक्रमण होता है। कौन मास कितने दिनोंमें शेष होगा उसका विवरण नीचे दिया जाता है—

दिन, दण्ड, पल,	दिन, दण्ड, पल
वैशाख ३०। ५६। ४८	कार्तिक २८। ५२। ५१
ज्येष्ठ ३१। २५। ३८	अग्रहायण २८। २८। १
श्रावण ३१। ३८। ३५	पौष २८। १८। ८
श्रावण ३१। २७। ५७	माघ २८। २७। २३
भाद्र ३१। ०। २०	फाल्गुन २८। ५०। ४
पश्चिम ३०। २५। ४०	चैत्र ३०। ३२। ३

सृष्टलग्ननामि ३ ५१५१३२ पनका एक संवत्सर, पर सूक्त गणनामें ३६५१५३१३१२४ अनुपनका वत्सर होता है। किम प्रणालीसे पञ्चिका तैयार होती है, उसीका साधारणभावमें दिखाना उचित है। जो पञ्चिका बनाते हैं, उन्हें मूलग्रन्थ अवश्य देखना चाहिये।

वार, तिथि, नक्षत्र, योग और करण यही पांच पञ्चिकाके प्रधान विषय हैं। इन सब गणनाओं द्वारा स्थिर हो जाने पर राशि, राशिमें ग्रहोंका अवस्थान, संक्रान्ति, व्रतस्पर्श, ग्रहण आदि गणना वहीं सब नियमोंके अनुसार हुआ करते हैं। (दिनचक्रका०)

आज कल अनेक पञ्चिकाएं छपती हैं जिनमें पञ्चिकाके

मसी विषय धोर तदामुनद्विज नामा प्रकारको गच माये रहती है। कार, तिथि मचर ओप, मरुच पचम, मरुहस्यय, पञ्चिका पचम्याम पचरुपुट. यमायम दिन की ताभिका आनाम्याम पचर धोर लपको पचम्या मयिहोके मचर पादिकी मचमयि परिस्पुटभावीं मचिहोमित होतो है। पचसे मच सुशयम्य मही धा, मच कायमे पञ्चिका मिसो मतो डी। लम समय मर तिथि मचरयोग, मरुच धोर मयिचरुमि पचोकी पच म्याम पचोकी मचर धोर पचममर ममना रहती की।

दिनपञ्चिकाधि मतये पञ्चिकायमनाका विषय मंवेपि निष्ठा का मुका। इन पञ्चिकायमनामि पचसे पचद्विषय धोर तिथि दिन पानयन, योके मचरदिन धोर योगदिन, मरुमि प्रथम तिथि प्रथम मचर धोर प्रथम योग तिथिमापादि मचरकेम मचरमारादि, योगकेम, योग-मारादि प्रतिदिनमको तिथि मचर, योगका किति-टप्य धोर मरादि साधन, मचम्यानयन योगानयन, मरुच धोर ल मरुमि मरुमामे इन सबकी गचना करने से पञ्चिका प्ररुण होती है।

पञ्चिकाकारक (म० पु०) पञ्चि करोतीति क-मू. १। १ काटकजाति। २ पञ्चिकाकार, कैमच करोतीति। पञ्चो (म० श्री०) पञ्चि वाडरुप्याट डोप. १ सुम मालिका, मी। २ पञ्चिका, पचाइ। मका कुमपञ्चो। २यमि मय धोर प मका विवरुच विरोपमपमे मचित है। पञ्चोकर (च० पु०) पञ्चो पञ्चिका करोतीति क-२। कावलजाति।

पट (म० पु० लो०) पटवकनिन पट पेटमि मजये-क। १ मक, मपका। इनका पर्याय सुचेमक है। २ विजपट मागमका मच दुबका जिप पर विज लींवा वा उतारा माय। द्विचोपुराजमि पटका विषय इस प्रकार लिखा है। को देवोका पट बनाता है उसे निदियाम होता है। मूनम मरुच पर पट बनाम्य होता है। मच पट मरुहस्ययमरुच समान मरुमिमिध धोर पम्य तथा केय विहीन होना मावमक है। पटमि यदि कोई बिद रहै, तो बनानेवासीका ममरुण होता है।

मरुका विमल मरुच मको कोकोमि द्वेकक इयम्य धोर पायामके मच मरुच तथा मरुमिध मीन प धमि

राचमोका पायाम म्याम है। मूनम मरु विषय दिन दिन मर पचमना पाडिय। इवतुम दिताके ३१मि पञ्चा-मि इमका विवरुच विस्तृतमपदि लिखा है। (पु०) १ विवाद, विरोकोका विह। ३ मूच्य मरुयाम १ मरुयम मपाम। १ कोई पाटु मरुनेवाको मरु परा, विच। ३ मरुको, पाटु पाणिना मच विमना दुबका या पको जिम पर कोई विम या केम्य खुदा हुपा हो। ८ मच पित को मगमच-मरुकिमायम पादि मरुमिसे उम-माम मरुमियोको मिलता है। ८ मरुच म्याम। १० मरुच के पादिमा बना हुपा मच मरुच को माय या मरुमि-के मरुच म्मल दिया जाता है।

पट (वि० पु०) १ साधारण दरमामि विवाह। २ मि डाधन। ३ जिमो मरुका मरुमदेय को चिपटा धोर धोरम हो, चिपटो धोर धोरम मरुममि। ३ पाकसीके मरुवासेके विवाह को मरुमामिसे खुषी धोर मरुच होती है। १ टाम। १ कुमोका एक पच। मरुमि पचममाम मपमे दोनीं डायको जोडको पांकोको मरुच इमलिये मरुता है कि मच मरुमि कि मरो पांको पर मरुच मारा मायमा धोर मिम मरुतोके मरुच मरुच दोनीं धोर मरुमि मरुमी धोर मीच मरु लीं उठा मीता धोर गिरा मरुचि मरु देता है। मच पच धोर मो मरु मरुमामि विदा जाता है। ३ जिमो इनको कोटी मरुच गिरने से मरुमामि मावाच टप। (वि०) ८ मीमि मिति जिममि पेट मरुमिको धोर को धोर पोट पायामको धोर पितका मरुका मीमा। (मि० वि०) ८ मीम, मरुच, धोरम।

पटरन (वि० श्री०) पटवाजातिको मी, पटवार जाति की मी।

पटव (स० पु०) पटम मरुमि मरुपति मरुममि इति के म। १ मरुचि मरु मीमा। २ मरुती मरुका।

पटवम (वि० श्री०) १ पटवमको मिया या माच। २ मरुच, मरुमा। ३ कोटा मरुका, मरुको।

पटवना (वि० म्रि०) १ मरुमि मरुच मरुचामि मरुमिमी धोर मीम देना, जिमो मरुचको मरुमिसे मरुच मीमको धोर गिरना। २ जिमो मरुच वा मीम मरुचको मरुच मरुच मरुमि मीमे मिरना। पटवना धोर मरुचमामि मरुच

इतना ही है, कि जहाँ ऊपरसे नीचेकी ओर भौंका देने या नीर करनेका भाव प्रधान है, वहाँ पटकना और जहाँ वगलसे भौंका दे कर किसी खड़ी या ऊपर रखी चीजको गिरावे, वहाँ टकलना वा गिराना कहेंगे। २ कुशुओंमें प्रतिस्पर्द्धाकी पछाडना, गिरा देना या दे मारना। ३ पट शब्दके साथ किसी चीजका टक या फट जाना। ४ गह्वर, चने, धान आदिका गोमंथ जलमें भोग कर फिर सुख बार सिद्धना। ५ सूजन बैठना या पचकना।

पटकनिया (हि० स्त्री०) १ पटकनेकी क्रिया या भाव, पटकान। २ भूमि पर गिर कर लोटने या पछाडने खानिकी क्रिया या अवस्था, लोटनिया, पछाड।

पटकनी (हि० स्त्री०) १ पटकनेकी क्रिया या भाव। २ भूमि पर गिर कर लोटने या पछाडने खानिकी क्रिया या अवस्था। ३ पटके जानिकी क्रिया या भाव।

पटकरो (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी वेन।

पटना (हि० पुं०) १ कमर बांधनेका रुमान या दुपट्टा, कमरबंद, कमरपेच। २ सुन्दरता बढ़ानेके लिये दोषारमे लोडो हई पटो या बंद।

पटकान (हि० स्त्री०) १ पटकनेकी क्रिया या भाव। २ भूमि पर गिर कर लोटने या पछाडने खानिकी क्रिया या अवस्था। ३ पटके जानिकी क्रिया या अवस्था।

पटकार (सं० पुं०) पट गोमनयस्त्र चित्र वा करीति कल्पना। १ कपडा बुनवाना, जुनाहा। २ चित्रपट बनानेवाला, चित्रकार।

पटकुटो (सं० स्त्री०) पटस्य पटनिर्मिता वा कुटो। कपडे का घेर, सिमा, तंत्र। पर्याय—केणिका, गुणालयनिका।

पटचर (सं० स्त्री०) भूतपूर्व पटत्-भूतपूर्व चरट् वा पटद्वित्यक्त शब्द चरतीति पटत्-चट-पच्। १ शीर्षवक्ष, पुगना कपडा। २ चौर, चीर। ३ महाभारत और पुराणमें वर्णित एक प्राचीन जनपट। महाभारतके टीकाकार नोलकशुके मतमें यह देश प्राचीन चीन है। लेकिन महाभारत समाप्तमें महादेवका दिग्विजय प्रकरण पढ़नेसे जान पड़ता है, कि इसका स्थान मत्स्यदेशके दक्षिण चिटिके निकट है।

पटहो (हि० स्त्री०) पटरी देखो।

पटव् (सं० घञ्०) १ अथक्तातुकरण शब्दमें दे। (स्त्री०) २ पट।

पटव् (सं० पुं०) पटद्वि पट्टिन इव कायति कौ-क। चौर, चीर।

पटव्करुन्व (सं० स्त्री०) पटव्करुन्व कन्या स्त्रीवत्त्वं। चीरकी गुट्टी।

पटतर (हि० पुं०) १ सगता, तुल्यता, समानता, तर-धरो। २ माट्टयकथन, उपमा, तगबोह।

पटतरना (हि० क्रि०) बराबर ठहराना, उपमा देना।

पटतारना (हि० क्रि०) १ खाड़ा, भाना आदि शब्दोंकी किसी पर चानाके लिए पकड़ना या खींचना, संभालना। २ अममनल भूमि में समतल करना, पटतारना।

पटतान (हि० पुं०) मृदङ्गका एक ताल। यह ताल १ दीर्घ या २ छत्र मात्राओंका होता है। इसमें एक ताल और एक खाली रहता है।

पटद (सं० पुं०) कापीसृज, कपाम।

पटधरो (हि० वि०) १ जो कपडे पहने हो। (पुं०) २ तीशाखानेका अधिकारी, तीशाखानेका मुख्य अधिकारी।

पटना (हि० स्त्री०) १ समतल या चौरम होना। २ मकान कुण आदिके ऊपर कच्ची या पकी छत बनना। ३ सींचा जाना, मेराब होना। ४ किसी स्थानमें किसी वस्तुकी इतनी अधिकता होना कि उसमें शून्य स्थान न दिखाई पड़े, परिपूर्ण होना। ५ मकानकी दूरी में जिल या कोठा उठाया जाना। ६ खरोट, चिकी, लेन देन आदिमें उभय पक्षका मूल्य, सूट, शर्तों आदि पर सहमत हो जाना, तै हो जाना, बैठ जाना। ७ मन मिलना, बनना। ८ ऐसी मित्रता होना जिसका कारण मनोका मिल जाना हो। ९ कृणका देना, सुकता हो जाना, पाई पाई अटा हो जाना।

पटना—१ विहारका एक प्रादेशिक विभाग। यह अक्षां २४° १७' से २७° ११' उ० तथा देशां ८३° १६' से ८६° ४४' पूर्वके मध्य अवस्थित है। इसके उत्तरमें नेपाल, पूर्वमें भागलपुर और मुङ्गेर जिला, दक्षिणमें लोहरडडा और हजारीबाग तथा पश्चिममें सोर्जापुर, गाजोपुर और गोरखपुर है। पटना, गया, शाहाबाद, दरभंगा, मुजफ्फरपुर, सारण और चम्पारण आदि जिलोंकी ली कर पटना विभाग सङ्गठित हुआ है। जनसंख्या

प्रायः १५५१४८८० है। इसमें ३५ गडर घोर १४१६८
घाम लगते हैं। घटना गडर को सब गडराम बता है।
यह बाबिन्ध तडा गिन्धकार्य का एत प्रकाश व्याज है।

२ तल विभागका एक त्रिणा। यह घण ० ३४
५० मे २१ ४४ ४० घोर देगा ८४ ४२ मे ८६ ४ ५
मे मध्य घणमित है। भूपरिमाण २००१ वर्गमीण
है। इस त्रिनेत्र उत्तरमें गङ्गातला परमें सुन्दर
दक्षिणमें गंगा घोर घणिसमें मोननशो है।

घटना त्रिनेत्रा घणिसांग ममतल भूमि है, केवल
दक्षिणघणमें छोटे छोटे गण्डय तला पहाड देलनेमें घामे
है। गङ्गातटवर्ती प्रदेश पखत उर्दरा २। इन सब
जमीनमें मनी पकाएके मध्य क्यय कोते हैं। इस
त्रिनेत्र दक्षिणपूर्वामें रात्रगडगोलयोको रे। इस
पलतकोको लो लोई लोई लोई १००० फुट है जो
छोटे छोटे लने जङ्गीने पाच्छादित है। योइ घम के
प्राचोन आरकतिल रङ्गीके आरक रात्रगडगोलयोको
प्रगतलविदोके लिखट मसचिङ्ग लिखत है। इस
गोलकोपोके उत्तर एक घोर पहाड है त्रिने जलि कम्
साइरमें मोन ममपकारो एतलपुन गडरिल जमीनका
बतलाया है। रात्रगडगोलयोको त्रिनेत्र उत्तर पल
बल है। रात्रगड गयो।

घटना त्रिनेत्र मज प्रकाशित लड नदियमें गङ्गा
घोर मोन लडो प्रकाश है। एतदृष्टताते पुनपुन नामका
एक घोर लडो बनेखयोय है।

घटना त्रिनेत्रमें वल जङ्गल, जङ्गाम्मि घोर मोघ -
रल भूमि लडी है। प्राय मनी जमीन पाबाद होतो
है। कतिन पहाडोंमें एतलिनानोपयोगी मस्तर गिना
जुत नामक सेलज पनाय, गडर घोर घणिस पलघ
को प्रकाश है।

आरकतलपुर्व मथा रात्रगडगोल पर मान्, भिङ्गव,
मगाल घोर लोकेरयो राय देलनेमें घामा है।

घटना त्रिना घिनहामज प्रगतलविदोके घणमें
विमिय पादरबाय है। कछत हैं कि ई० मलत्रे का
गतान्दो पक्षी मोतमके पदमामाघिङ्ग रात्रा घज्रातमडु
नि घटना गडर बनावा घोर तम मलय लड घाटलिपल
नाममें प्रसिद्ध का। घटना त्रिनेत्र दक्षिणोर्धमें मुनल

मानीका व्यापित विचार लवर घणमित है। इसके
पलावा इस त्रिनेत्र मोनभवलजामो फाडिवाल घोर
पुनपुन ग दारा लपित ल परनेत्र लानीका निदेश पाया
जाता है। एतभिन्ध देलो।

घटना त्रिना दो प्रसिद्ध ऐतिहासिक घटनाका घेज
है। १०११ ई०पी घ गरीजर्ज मलय कप लबाज मोर
कामिमटा विवाद लडु लडु। तल घटना कौठाके
पखल पलम पाकय घणमें सिपाखियों द्वारा घटना
गडर पर घणिसा कर घेठे। इस पर गथाक लडु
विगतो घोर मोन्य मल कर लकान घटना गडरमें पैग
हाना लला पङ्गीजोको लकीको लोठामे बल लला। पोत्रे
इस लोनेमें कामिमराजारकी लोठोके घट्टीन कर्म
खारिगल तथा सुन्दरने के माकय मो लयो गये। इस
घटनाक बल गङ्गीघा घोर लडु पानाका लडुको पराजय
के बाद ललाघने पङ्गीज सिनापलि लेत्रर पाङ्गमको
कडला मिला कि यलि हमारे विरुद्ध विवाद घोर लडुता
की लायगा तो हम एलिम माकय तथा घटनाके पख्याएय
पङ्गीज कर्म खारियोंके निर लडुता डालने। लडुलनार
मलय नामक सिनापलिने मथापतामे ललाघने लडु लाय
करके की दिखला दिवा। यको घटना इतिहासमें
घटना लख्याकण लडुलातो है। प्राय १० पङ्गीजो
को घट्टेके लिखटवर्तीभूमि के लो गरी यो। इनका
स्मृतिनिङ्ग घाड लो घट्टेमें विद्यमान है।

मूलरो ऐतिहासिक घटना लो परनेत्र लिखटवर्ती
दानापुरता मलर। १८५० ई मे ०, ८ घोर ४०
लडर मेला दानापुरमें लडुतो गो। मिलाकल मायड
माडकका लल निपाडकोके लल मूल विग्गाम लडुलके
कारण लडु पखलखाम लडुनेलो लडु लडा गया।
पोत्रे घटना विभागक ल मथः टेकरसाइर लला पख्याएय
पङ्गीजोको पराजनामे मिलाकल ल लडुने लडु निरल
खला लला। एा ललको मथा लोहाव निपलम लुरे
लडु लल यड ललका कि लाल ऐतिहासिकेला ललो
मलय विदोको लो लर पख मल्य निप ललो लरे। लल
निप लिय मने लडुतो ने गङ्गा घोर लोलाके लोला लो।
पर ललको ललो पर लोको लरलमें ललो घोर लामरके
ललो लुलारे लामि ललो लिसमें घणिसांग लडुलको

सुमत्तमान शासनकर्ताओं का चञ्चलसातुन नामक एक विख्यात राजप्रभाव था। १८१२ ई. तक भी इसका धर्मभावशेष देखा गया था।

वाणिज्य—महर्षि मध्य मारुफगञ्ज, मनसूरगञ्ज, किला, मिरचारीगञ्ज, सजाराजगञ्ज, माटकपुर, अलावकपुर, गुलजारवाग और कर्णलगञ्ज ये सब स्थान व्यवसायिक प्रधान अड्डे हैं। इन सब स्थानों में मारुफगञ्ज बाजार की सबसे बड़ा है। इस प्रदेशके सभी प्रकारके तैलवीजको इस बाजारमें आयादनो होती है। जनपदकी सुविधा रहनेके कारण निहारके उत्तर भाग और उत्तर-पश्चिम प्रदेशमें बड़े पण्यद्रव्य मारुफगञ्ज, कर्णलग ज और गुलजारवागके बाजारमें आते हैं। मनसूरगञ्जका बाजार मारुफगञ्जके बाजारमें बड़ा नहीं होने पर भी शाहाबाद, थारा और पटना जिलोंमें उत्पन्न गन्धादि गाड़ों पर लाद कर यहाँ लाये जाते हैं। पटनामें प्रधानतः कपासद्रव्य, तेलवाज, सज्जीमद्यो, खडो, लवण, चीनी, गेहूँ, दाल, चावल और अन्यान्य गन्धादि को आयादनो होती है।

ऐतिहासिक विवरण पाटलिपुत्र मन्दिमें देखो।

पटना—मध्यप्रदेशके सम्बलपुर जिलान्तर्गत एक सुदूर राज्य। यह पश्चात् २० ए. में २१° ४' ३०" और देशात् ८२° ४१' में ८३° ४०' पू. के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २३८८ वर्ग मील और जनसंख्या ढाई लाखमें ऊपर है। इसके उत्तर और पश्चिममें षडसम्बर और खडियार सामन्तराज्य तथा दक्षिण और पूर्वमें कलहन्टी और सोनपुर राज्य हैं। यह राज्य तरङ्गायित समतल है, बीच बीचमें पहाड़ हैं। इसका उत्तरी भाग उच्च गिरि-माहावेष्टित है। यहाँक महाराज अपनेका मैनपुरीके निकटवर्ती गडसम्बरके राजपूत राजवंशीय बतलाते हैं। उक्त राजवंशके शेष राजा जिताम्बरसिंह दिक्षा-पतिके विरुद्ध खडो हुए और मारे गये। उनको स्त्री इस पटना राज्यमें भगवाई। यहाँ उनके एक पुत्रने जन्मग्रहण किया जिसका नाम रामदेव रखा गया। उस समय यह राज्य आठ गढ़ोंमें विभक्त था। कोलागढ़के सरदारने रामदेवकी गोद लिया और पोछे उगौकी अपनी राज्य प्रदान किया। उस समय ऐसा नियम था कि

आठ गढ़ोंके प्रत्येक सामन्त एक एक दिन करके समस्त राज्यका शासन कर सकते थे। जब रामदेवकी बारी आई तब उन्होंने शेष सामन्तोंको मारवा कर आठों गढ़ पर अधिकार जमाया और मजाराजकी उपाधि ग्रहण की। पोछे रामदेव एकलकी राजकन्याशा पान्तिग्रहण करके और भी शक्तिशाली हो उठे।

रामदेवमें प्रवृत्त १८वीं पीढ़ीमें वैजन्तदेवने जन्म लिया। ये स्वयं विद्वान् थे और पण्डितोंका विवेक आदर करते थे। इसीने मितने ही मन्त्रत प्रत्यक्ष रचना कर अपने विद्यावत्ता दिखलाई है। इनके समयमें पटना राज्य भी वरत विस्तृत था। उत्तरमें फुलभार और माझगढ़, पूर्वमें नाङ्गपुर, थामटा और विन्धानवगढ़ तथा पश्चिममें खडियार राज्य यहाँ तक कि मझानदीके वाम कूलवर्ती भूभाग, राइराखोल और रतनपुर तकके साथ पटना राज्यके अन्तर्गत थे। फुलभार दुर्भेद्यदुर्ग बनाया गया वैजन्तके पोत्र राजा नरसिंहदेवने अपने अधिकारभुक्त श्रोत्रमदीके उत्तरकूलवर्ती समस्त राज्य अपने छोटे भाई बतगामदेवको अर्पण किया। इसी अलरामदेवने सम्बलपुर नगर जमाया। पोछे नाना स्थान इसके अधिकारभुक्त हो जानेसे धीरे धीरे सम्बलपुर ही सर्वप्रधान गिना जा लगया। इसी समयमें पटनाके अधःपतनका सुदपात हुआ। नरसिंहदेवके बाद कई पीढ़ों तक दूसरे गढ़के सरदार लोग पटनाराजकी प्रधानता स्वीकार करते थे। धीरे धीरे शेष सभी गढ़ोंसे पटना नितान्त हतथो हो गया है।

यहाँ धान, उरद, मरसों, ईख और कपासकी खेती होती। पटना शहरके चारों ओर प्रायः ३६ मील तक विस्तृत वन है जहाँ तरह तरहके पेड़ पाये जाते हैं। इस वनमें बड़े बड़े बाघ, भालू, चीते और मड़िय मिलते हैं।

१८०२ ई. में पटनाराजकी मृत्युके बाद ब्रिटिश-गवर्नेण्ट उनके नाबालिग पुत्रको अभिभावक नियुक्त हुई। ब्रिटिश-गवर्नेण्टके यत्ने इस राज्यकी यथेष्ट उन्नति हुई। १८०८ ई. में महाराजके मरनेके बाद उनके भतीजे रामचन्द्र सिंह गढ़ों पर बैठे। इन्होंने १८०२ ई. में जन्मग्रहण किया था और राजकुमार कालीजमें

पटना विधाना बांसा बा । १८८१ ई०में एकोनि राज
प्रसादने मोतर मोनोमे पपनो लोको मार डाका पोर
पाय मी उमो मसय मर गये । उनने कोरे सन्तान न
हो, हम कारन गवर्नेरको पोरने उनको पाचा मान-
दमर बन मि क राष्ठाधिकारी बहराये गये । गव
मंयने उनको देखीय करनेके लिए एक दोबान
नियुक्त किया । राष्ठाको धामरनो २० ०००, ६०को
है । पहाँ दो मिडिय स्कुल पोर १० प्राधररी स्कुल है ।
यहाँ दातय चिकित्सालय मी खुला है ।

पटनासाह (Patna 'saal)—गवा जिलेके पन्तमंत
एक काल । यह बहनधाममे ४ मोन पूर कहाँ मोन
नदीका बाँध (Anicut) पूर पोर पश्चिम व्याहको विमिष
करता है, कहाँ पूरखाल (Eastern Canal)के पटना
खाल निकलो है । इसको लम्बाई ७८ मोन है करीब है ।
पटनिया (वि० वि०) १ बह बसु को पटना नगर का
प्रदेशमें बनी जो । २ पटना नगर या प्रदेशमे सम्बन्ध
रखनेवाला ।

पटनो (वि० लो०) १ कोठेके लोचेका कमरा, पटौना ।
२ कमीदारोका बह पय को निचित कगाम पर सदाके
लिये बन्धोबन्ध कर दिया गया जो । ३ खेत ठठनेको
बह पहलिये जिनमें कमान पोर बिलान या पलामोके पत्रि
कार सदाके लिये निचित कर दिये जाते हैं । ४ कोरे
चोख रकनेको दो यू टिपोंके मझरे लामाई हुई पटरो ।
पटपट (वि० दलो०) १ हडको बसुके गिरनेमे लपक शब्द
को बार बार पारलित । (लि० वि०) २ लामातार पट
धन करता हुआ 'पटपट' धामाके साथ ।

पटपटाना (वि० लि) १ मूय प्याय का भरदो गरमोके
मारे बहुत खट पाना, बुरा ज्ञान बोलना । २ बिडो मसुके
पटपट धन निकलना । ३ पचापय ३रना खिद करना
मोख करना । ४ बिडो चोखको बनी '। पोट कर पट
पट' शब्द लपक करना ।

पटपट (वि० वि०) १ समतक, बहावर, पौरम । (पु०)
२ नदीके पासपासको लड़ भूमि जो बरसातके दिनमें
प्रायः सदा डूबो रहती है । इसमें किबन रकौको कितो
को ज्ञातो है । ३ ईना जलन जहाँ पाय पैर पोर पानी
तक न हो, पञ्चम उजाड़ स्थान ।

पटबंयक (वि० पु०) एक प्रकारका रेशम । इसमें महा
अन या रेशमदार रेशम रकौ हुई सम्पत्तिके नाममेंसे खुद
बनेके बाद को कुछ बच जाता है उसे मुकलपमें मिलवा
करता जाता है । इस प्रकार बह भाग लप परिशोध हो
जाता है तब सम्पत्ति उनके बादविध व्यामो को भोटा
दिती है ।

पटवैगार (वि० पु०) खपोत, लुलुगु ।

पटवैकर—बन्धई प्रदेशके पन्तमंत मतारा, पाठन पोर
गोसापुरकाभी एक जाति । प्रायः लो मो बर्ष पटवैके ये
लोग शायः कलकत्तमें मुजरतने कल ल्पानिमें पा कर बस
गये । इनके मन्ध बडाडू कुताए, पीवर धानगर पोर
मिरामकर नामक कारे एक पदविवाँ पोर भारदाब,
काखप, गोतम पोर नारदिक पाटि चार गात्र देखे जाते
हैं । एक पदको पोर समबोध होनेसे विवाह नहीं होता ।
ये लोग देखनेमें कलकत्तेकोसे हिन्दू मरोये कोते हैं । पुत्रप
पिर पर सिन्ध पोर लुडा रहता है, सिबिन दाङ्गे समो
सुकुवा केते हैं । साधारणता ये लोग बरमें मुजरतो पोर
बाइमें मराठो माया कोरते हैं । निरामियामो कोमि पर
मो से लोग किबन पूजोकरवमें एक दिन भेङ्केका मांस
खाते है पतिबांग जो मधपायो है । मुख्य कुरता डोयो,
भूता पादि पकनेमें पोर सिन्ध्या मराठो रमचोकी तरफ
बैधभूया करतो है तथा मांसमे निन्दूर लगातो है । इनमें
से प्रायः ममी सबन, सङ्गिन्ध, कर्मठ पोर पातिधेयो
कोते हैं । ईशमको पड़े दामको पञ्चमव्या पोर आभुलक
पाटि बाँजनेके लिये लामाबर्षमें ईशम रंवाला जो इनका
जातीक बरबसाय है । ये इन सब इन्धोको से कर
निकलवर्षी ल्पानिमें बेचनेके लिये निकलती है । ये
प्योत्र ल्पानोप समी ईब देबियोँ पोर ब्राह्मणोकी
लजाय देबदेबियोँको पूजा करती है । तुनभापुर
को कमदव्पादेवो जो इनको कुलदेवो है । पामक
ब्राह्मण जो इनका पीरोचित्य करती हैं । जो ब्राह्मण इनके
बर्षोपदेका है से 'गोपालनाब' नामसे पूजित कोते हैं ।
विबवानविवाह पोर बहुविवाह इनमें प्रचलित है । ये
लोग शवदाह करते हैं । सामाजिक विवाह विमव्याद
को कजातीय पचायतसे जो निरपत्ति हुआ करतो है ।
पटवैगार—१ बन्धई प्रदेशका सुसन्तान-जाति । ईशमका

फुंदना, धागा आदि बनाना ही इनका प्रधान व्यवसाय है। ये लोग पहले हिन्दू थे। पोंडि चौरङ्गने राजत्वकालमें इसनाथ धर्ममें दाखिल हुए। सा गौर पुरुषोत्तम) वैशम्पूपा प्रायः पटवेकारों-ना होता है। फल इतना ही है, कि ये लोग टाढ़ी रखते हैं तथा सूय परिष्कार और परिच्छन्न रहते हैं। आचार व्यवहार प्रयः साधारण सुमनमान मरौला होता है। ये लोग सभ्य यथवा निम्न श्रेणी में सुमनमानोंमें विवाह आदि करते हैं। सभी इनको शास्त्रामुक्त मुत्ता सम्प्रदायी सुमनमान हैं। काजोको सभी खातिर करते हैं। विवाह और सन्तुष्टि काजो आ कर याजकता करते हैं। इस जातिका हीट्टे भी सुमनमान कलमा नहीं पढ़ता। हिन्दूधर्मके उपर इनको पूरा श्रद्धा है। हिन्दू देव देवियोंको पूजा, हिन्दूके पर्वमें योगदान और हिन्दू-उपवासआदि पारण आदि विषयोंमें इनका मन्थ है।

२ उक्त जातिको प्राचीन हिन्दूशाखा। रेशमका फुंदना आदि बनाना इनका भी व्यवसाय है। साधन-कोटवासी पटवेगारोंका कहना है कि ये लोग भी एक ही समय गुजरात से यहाँ आ कर बस गए हैं। प्रति दो वर्षमें बहीदासे एक भाट (घटक) आ कर इनको यंश-तालिका निख जाते हैं। लिप्यायतोंके ऊपर इनके उनको श्रद्धा नहीं है। ये लोग गिखा रखते और जनेऊ पहनते हैं। तुलसीपत्रमें इनकी विशेष भक्ति है, ग्रामके नामसे हा इन्हें पढ़वो प्राप्त होती है और उस ग्रामके नामसे हा इनकी विभिन्न शाखायें जानी जा सकती हैं। इनके मध्य भर्तारगडगण काश्यपगोत्रमें कठवशाखा-सम्भूत है। इसी प्रकार टाजोगण पारिखगोत्रमें टाजो शाखा, जालनापूकरगण गोकुल गोत्रमें रूपसतःशाखा, बलवर्गीकारगण गोकुलगोत्रमें गभवशाखा और मानजोगण गोत्रगोत्रमें मोनेकतरशाखाम्भूत है। इनके मध्य एक गोत्रमें विवाह प्रचलित होने पर भी पात्र पात्रोका विभिन्न शाख भुक्त होना जरूरी है। रझारो जाति-नाथ इनका आचारगत कोई बेलचख नहीं देखा जाता। खाद्यादि राति नाति और परिच्छन्न दोनोंका ही एकसा है, रेशम रंगाना इनका जातिगत व्यवसाय होने पर भी इनमेंसे किसी किसीने रेशमी वस्त्र बुनना शोखा है।

ये लोग अपने ही क्षत्रियसम्भूत वतनाते हैं, अन्य किसी जाति को ये अपनी समश्रीयोंमें लाना नहीं चाहते। प्रजाति दोष कर अन्य किमीके साथका ये लोग प्रस्तादि प्रहण नहीं करते हैं। इस प्रकार सामाजिक हृदयता रहते भी लोगोंमें बहुत तन्त्रायश्रेणीभुक्त क्रिया है। तुलजापुरका प्रस्थापक जो इनकी उपास्य देया है। इनका कहना है कि यह पारंगामने एरोंको निःश्रयिय कर दाना, उच्च शिक्षाजट्टेनी प्रायग दे कर उनको रखा जो यो उक्त प्रस्थापक उक्तके संगमसम्भूत है। प्रस्थापक छोड़ कर पण्डरपुरकी विठोषा स्त्रियोंकी पूजा करनेके लिये ये लोग मोनापुर भाया करते हैं। प्रत्येक सन्तुष्टि वर सट्टे ताके रूपमें लक्ष्मणेशो प्रवधान करती है। लक्ष्मणेशोका पूजायें ये लोग उन्में दूध और गुह चढ़ाते हैं। किन्तु इसी श्रेणी नटनेका इन्में अधिार नहीं है। हिन्दूगणके ये लोग उपशम और पारंगानि करते हैं। गिडचतुर्षी और आषाढसामको शक्या एकादशी इनकी पुण्यतिथि है। गडगाचार्यको से अपना गुरु मानते हैं। इनके मिथा इनके एक और भी गुरु या धर्मापदेशा हैं जो जातिके भाट हैं। गिण-गण इनकी खातिर करते और नेटमें रूपसे पैसे देते हैं। ये लोग भविष्यत्वाको बात पर विश्वास करते और विवाहादि कायमें इनका परामर्श ले कर शुभ-दिनका निर्णय करते हैं।

बालकोंका प्रसे १० वर्षके भन्तर जनेऊ होता है। अन्यान्य सभी क्रियाकलाप रङ्गनाके जैसे होते हैं। इनके मध्य शाल्यविवाह प्रचलित है। स्त्रियां जब विधवा होती हैं, तब वे जेवल एक बार विवाह कर सकते हैं। किन्तु ए स्वामी जावित रहते वे अन्य स्वामी ग्रहण नहीं कर सकतीं। पुरुषोंके मध्य बहुविवाह देखा जाता है। विवाहकालमें पहले वर और कन्या दोनोंको एक गल चने ऊपर आमने सामने बैठते हैं और सामनेमें एक फेद चाटर बिछा देते हैं। पोंडि पुरोहित और सम वेत भद्रनीरगण आ कर वर और कन्याको धान्यसे आशीर्वाद देते हैं। पोंडि कन्याकर्ता कन्यादान करता है। इस समय नवग्रह-पूजा करनी होती है। विवाह ही जानी पर कन्याका पिता जब यौतुक देता है, तब

उपहित बभ्रुवाश्रय घोर कटु मरण भी यथासाचा योक्तुं शक्य है। हर कथाको भी कर कब घर पत्र बना है तब कर्ण २ मन्त्रवापोंके माघ स्वासोकी मोक्षन कराना पड़ता है।

ये लोग शयनाभ करते हैं। जो तस्करादिबहारी है वह एक बड़की घोर ५ घंटेके क्राश्राव्यादि मन्त्रसे रचना है। दाढ़के बाट उमो स्थान पर भी पिण्डदान करते हैं। जो घर ५ घंटे तक घर लाच नहीं छोडते तोमरे दिन मुख्याभिषेक पवित्रागो बना या कर उल दक्षिणोंको बुर करने प्रकर्म कि कर देता है। प्यारकी दिन कन्युधोंको भोजन देना होता है। अनागोचरमें ये लोग चण्डिक रहते हैं, इस कारण तेरहवें दिन कोई कथा नहीं करी। सामाजिक विवाहको लिप्यन्ति पञ्चयतये होती है।

बैरागम त्रिणावासियोंके मन्त्र चोचरो, माघकवाङ्क पवार, मिरोककर, मातपुत्र घोर तस्कराच पादि उवा विद्या देखी जाती है। ये लोग पापघर्षमें भोजन पीर पुत्रकन्धादिबा पादानप्रदान करते हैं। तेरहवें क्राश्राव्य इनके पुरादिन होती है। समो चण्डिको चण्डिय बतकति है। पुत्रको बमर घुम कर्णोंको छोडनेके ही समका लय नवन होता है। इस समय पुरोहित यथाविहित होम और मन्त्रपाठ करते हैं। मन्त्रको माघ, मघ घोर घुम पागका मुखमात्र ही व्यवहार करते हैं।

विवाहके पहले एक दिन 'मोन्दन' श्रुत्य भी ग है। पोषे किमोदयने ब्राह्मण घोर त्रानिहुत्तुम्बको मोक्षण करते हैं। इन दिन शामको उपविष्ट कुटुम्बगण कर घोर कथाको पामरक देरमन्त्रमें से त्रानि है। यहाँ कथाका पिता करकी पूजा करता है घोर कथाकी माता करके दोनों पंरी पर प्रकल्पनाको है। पोषे पिता पंरीको रगड़ना घोर चण्डिके घंघरदिन उल पोषे जाकता है। तदनन्तर उपविष्ट म्यन्त्रिको को पात्र घोर लयपो दे कर विदा करना होता है। भूपरी दिन इस कर्ममें नभैरे चयवा गोपुनो कर्ममें त्रिणावाङ्कमन्त्रको जाता है। त्रिणावाङ्क इमरे दिन कथाकर्ता कर यात्रिकीको एक मोक्ष देता है। इममें विधवाविवाह घोर बहुविवाह प्रचलित है। ये लोग शयनाभ करते हैं और

१० दिन तक श्रुतामोच मानते हैं। खड्कोषा, महा लक्ष्मी जन्मना इनकी उगायक देवता है। बैरागमके पट वेगार रोगके निवाह कर्षिका मो व्यवसाय करते हैं।

भारवाह त्रिणावासियोंके माघ रक्का पनेक विषयोंमें साङ्ग है। ये लोग चण्डि वा चण्डिय कर्षिकाकी हैं। भरहाक, लमदम्बि ब्राह्मण कात्यायन बरुमोक्ष चण्डिघ घोर त्रिणासिय पादि इनके रोग देखे जाते हैं। पाषाणमासको शुद्धयतिपट्टको कर्षकी पत्रके लघुपर मङ्को विद्या कर उममें पात्र प्रदासको योज बोते घोर उल पत्रको यत्रदेवताके समाने रखते हैं। कर्ष मानको शुद्धाष्टमोमें द्वागदेवताको एक ब्राह्मणति दो जाती है। दशमोके दिन सब उस पञ्चयतये को पत्र निष्कर्मकी है तब श्रियां उक्के सी कर बड़ा भूमधामने गायी बजातो कुरी नदो चयवा किमो मङ्के प्रकर्म उक्के कि कर देतो है। दोकपूर्वमाके समय रमचियां एक बांध कर मन्दिर जातो घोर बर्षा न मो जो घर देवाच'ना करते हैं। इन लोगोंमें विराय विवाह निजिह है।

पटमाच (स ५०) प्रोचकसावन यन्त्रमेद प्राचीनकाल का एक यन्त्र त्रिमये पाँचको देखनेमें सहायता मिलती थी।

पटमेदन (स ० ली०) पटमेदन, नगर।

पटम (द्वि० ति०) यह त्रिमको पाँचि मूलमें पटपटा का बैठ गई थी, जो मूलके मारी चयवा हो मघा हो।

पटमखण्ड (न लो०) समूय त्रानिको एक द्वा र्थिको को विडोल रागकी छो है। इतुसत्ते मतके इयका करघाम रम यकार है—२ च ति वा र ग म प। इयका मानमसय १ दण्डमें १० दण्ड तक है। कोरे कोरे इके योरागको गनिना मानते हैं। इसका गान समय एक पहर दिनके बाद है।

पटमखण्ड (स ० पु०) पटमाका बखाला सखण्ड। पटकुटो, बखरखण्ड, त नू खेता।

पटमय (स ० ली०) पट-मय, १ बरुमय १ त नू। २ माटो, लख गा।

पटर (स ति०) पट काङ्ककाल परन्तु का पट कालि राक। १ गतिमोक्ष। २ ब्रह्मदाश्रय।

पटरक (स ० पु०) पटर-प्याक कन्। शुद्धकण, पटर, मोदपट्टे।

पट्टरा (टि० पु०) १ तरा, पत्ता, काठके ऐसे भारी टुकड़ोंकी जिसके चारों पहल बराबर या करीब करीब बराबर हों अथवा जिसका घेरा गोल हो, 'कुंटा' कहते हैं। कम चौड़ पर मोटे लम्बे टुकड़ोंकी 'घसा' या 'बली' कहते हैं। जो बहुत ही पतली बली है वह छड कहलाती है। २ धोचोका पाट। ३ हंगा, पाटा।

पट्टरानो (छि० स्त्री०) किमी राजाकी विवाहिता रानियोंमें सर्वप्रधान, राजाकी सवमे बडी या मुख्य रानी।

पट्टरी (नि० स्त्री०) १ काठका पतला और लम्बीतरा तरा। २ लिखनेकी तर्ती, पट्टिया। ३ नरिया जमानिका चौड़ा खपड़ा। ४ वे रास्ती जो नहरके दोनों किनारों हो कर गये हो। ५ एक प्रकारकी पट्टीदार चौड़ी चूड़ो जो हाथमें पहनो जातो है और जिस पर नटागो बनो होती है। ६ जन्तर, चौकी, तावाज। ७ उद्यानमें ब्यारियोंके इधर उधरके तंग रास्ती जिसके दोनों ओर सुन्दरताके लिये वाम लगा दो जातो है, रक्षिण। ८ सुन्दर या सुपुल्ले तारोंसे बना हुआ बड़ फौता जिसे दाढ़ो, लहंगे या किमी कपड़ेकी कोर पर लगाया जाता है। ९ सड़कके दोनों किनारोंका बड़ कुफ ऊंचा और कम चौड़ा भाग जो पैदल चलनेवालोंके लिये होता है।

पट्टल (सं० स्त्री०) पट्टं विस्तृतं लाति पट्ट-ल-त्, या पट्ट-तीति पट्ट-कलच् (कृपादि-न्यसिचत्)। वण् १। १०८। १ छप्पर, छान, छत। २ नेत्ररोग, मोतियाबिन्द नामक आँवका रोग, पिटारा। ३ परिच्छद, लाव-लशकर, लवाजमा। ४ पिटक, पुस्तकका भाग या अङ्गविभेद। ५ तिलक, टोका। ६ समूह, ढेर, अचार। ७ दृष्टिका आवरण, आवरक पर्दे। माधवकरके निदानमें लिखा है, कि चक्षुमें ४ पट्टल है, प्रथम बाह्यपट्टलस और रक्षात्रय, द्वितीय माधवसंश्रय, तृतीय मंदसंश्रित तथा चतुर्थ कालकाम्बिसंश्रित।

सुश्रुतके मतसे पट्टल पांच है—बाह्यपट्टल अथवा प्रथम पट्टल, यह तेज और जलायित है। द्वितीय मांसायित, तृतीय मंद-आयित, चतुर्थ अस्त्रि-आयित और पंचम दृष्टिमण्डलायित।

सुश्रुतमें लिखा है, कि दृष्टि पक्षभ्रनके गुणमें उत्पन्न रहते हैं। इसका बाह्यपट्टल अश्रयतेजसे आश्रय है। दोष-समूह विगुण हो कर मभी गिरावोंके अश्रुतर गमन करता है और मभी रूप पद्याभासमें दृष्ट भंग है। विगुणितदोष तत्र द्वितीय पट्टल रहता है तत्र दृष्टि विकृति होना है। दोषके तृतीय पट्टलमें रहनेमें मभी वस्तु विकृतभासमें दिखाई देता है और चतुर्थ पट्टलमें रहनेमें तिमिररोग होना है। (सुश्रुत उपासना ८ अ०)

भाषपकाश्रफ मतमें प्रथम पट्टलमें दोषका संसार होनेमें कभी अस्पष्ट, कभी स्पष्टभासमें दिखाई पटना है। प्रथम पट्टल गण्यते चतुर्थ पट्टल यमभक्ता नाहित, यात्र पट्टल नहीं। दृष्टिके अश्रुतरास्य पट्टलमें दोष संज्ञित हो कर पर्यायक्रममें एक एक पट्टल प्राप्त होता है। दोषके द्वितीय पट्टलाश्रित होनेमें नाना प्रकारका दृष्टिविभ्रम होता है, दृग्स्थित वस्तु निरुद्धमें और निकटस्थ वस्तु दूरमें दिखाई देता है। अष्ट कोशिश करने पर भी सूईका छेद देखनेमें नहीं आता।

तृतीय पट्टलमें दोष अधिष्ठित होनेमें ऊपरका और दिखाई देता और नीचेकी ओर कटभो नहीं। ऊपर की ओर स्थूलकाय पट्टाये घन्यायुतकी तरह मालूम पड़ते हैं और एक वस्तु नाना रूपोंमें दिखाई पड़ती है। कुपित दोषके बाह्यपट्टलमें रहनेमें दृष्टिरंध होता है जिसे कोई तिमिर और कोई लिङ्गनाम कहते हैं।

अन्यान्य विवरण नेत्ररोगमें देयो।

पाठयति दोष्यते यः, पट्ट-पलच् । (पु० स्त्री०) ८ अर्थ, पुस्तक। ९ हृत्, पेड़। १० कासमट्टं हन्त, कर्मोदा। ११ कार्पासहृत्त, कपास। १२ पट्टलहृत्त, पर-वलकी लता। १३ आवरण, पर्दा। १४ परत, तह, तबक। १५ पार्श्व, पहल। १६ लकड़ो आटिका औरस टुकड़ा। पट्टरा, तपता।

पट्टलक (सं० पु०) १ रागि, स्तूप, समूह, ढेर। २ आवरण, पर्दा, भिलमिनो, बुरका। ३ कोई छोटा समूहक।

पट्टलप्रान्त (सं० स्त्री०) पट्टलस्य कृदिसः प्रान्तं। गृह-चालिकाका अन्तभाग, छप्परका सिरा या किनारा। पर्याय—बलीक, नौत्र।

पटनी (स० स्त्री०) पटन-शब्द । अर्थात्, काम, कृत ।
 पटव (स० पु०) अन्नपदमेव, एक देवका नाम ।
 पटवई—साक्षिकाश्रमिणी महाप्राज्ञेय ब्राह्मण्येयोमेव ।
 वल्के मध्य चारोत्त, शालिग्रह महाशाल गीतम, आश्रय
 पादि चार गोक सेवे प्राते हैं । साक्षिक गिमागिपिमें
 यह व म पटवई भी नामसे उल्लिखित है ।
 पटव (वि० पु०) १ वह श्री ईशम या शुभमे गजने गृयता
 हो, पटवार । २ मार्गो रंगका एक प्रकारका देस । यह
 बेल मज्जकून धोर निरु चमनेबाधा होता है ।
 पटकाय (स० पु०) एक प्रकारका प्राचीन राजा जो
 भ्रांभरि पाकाका जाता था और जिससे तान लिया
 जाता था ।
 पटवानी (वि० स्त्री) १ पारनेका नाम दूमरिसे कराना ।
 २ पाण्डवित कराना कृत बनवाना । ३ गत्त पादिभो
 पूर्ण कर पाप पापको जमोलेके बराबर कराना, सरवा
 देना । ४ पानीसे तर कराना । ५ टास टिकवा देना,
 चुकवा देना । ६ माल करना, मिठाना, दूर कर देना ।
 पटवाप (स० पु०) पट उपाये प्रासुर्येय दोगते यज्ञ ।
 पटवप-अन्न । अन्नपदक त वू खेमा ।
 पटवारगरी (वि० स्त्री०) १ पटवारोका नाम । २ पट
 वारोका पद ।
 पटवारी (वि० पु०) १ वह छोटा ब्रम चारी जो गांवकी
 लमीन पीः लवक अमानका विमाह किलाव रखता
 हो । (स्त्री०) २ अर्थात् पटवारीको दामो ।
 पटवाप (स० पु०) पटव्य पटनिर्मितो वा नाम । १
 अन्नपदक, तन्वू खेमा । २ गारो, लक्ष्मी । पट नाम
 र्थि सुरभि करीति-पट वाच पच । ३ अन्नपुगमिठकरच
 अन्वमेव, यह मनु जिनमे अन्न सुगंधित किया जाय ।
 हृदयुक्त जितामे वसका प्रभुत प्रथाको इन प्रकार लिखो
 है—अन्न चोर चयोरपवके समान भागमें लनका पर्येक
 भाग छोडी इलायवो खान कर उमे पूर्ण करनी है । पीछे
 उने म्गकपूर्वमें प्रबोधित करनेके कर यह मन्त्रद्वय प्रभुत
 होता है, इमोका नाम पटवाप है ।
 पटवासक (स० पु०) पटो वाप्यतिर्गनेति पट वाच-अन्न,
 तता काये कन् । पटवापपूर्व, अन्न वसाभिकाको सुग-
 न्धियो का पूर्ण । इयका नामात्तर पिठान श्री ।

पटवैद्यन् (स० स्त्री०) पटनिर्मित नेत्रम् । अन्नपदक,
 त वू खेमा ।
 पटव्य (स० स्त्री०) पटवै कितं बद्ध यन् । (तस्मै स्त्री ।
 वा १११५) पटु विवसर्त्तं कितं चर ।
 पटसम (वि० पु०) १ एक प्रविष्ट दोषा क्रिमिसे ईमिसे रसो,
 थोरे, टाट धोर बल्ल बनाए जाते हैं । वह नाम लय
 बाहुवाने प्रायः समो देगोमें लयय होता है । किसे
 कैवरव गट टवर्त्तं बंधो । २ पटमनके ईमि, पाट कूट ।
 पटसामो (वि० पु०) बारबाइ प्रासाको सुसाईको एक
 खाति जो ईयमो बल्ल पुनसो है ।
 पटव मिठा (स० स्त्री०) सम्पूर्ण खातिको एक रागिनी ।
 इममें मव शुद्ध कर मगनी है । यह रागि १० टवर्त्तमे ००
 लक्ष्म तकसे बीचमें गाई जाती है ।
 पटव (स० पु० स्त्री०) पटेल इत्यने कति पट इन् ल वा
 पटत् मन्व अज्ञानि पटव-इ निपातनात् साङ्ग । १
 पाण्डववाप्य पु दुमो लगाडा । २ बड़ा डोच । ३ समा
 रथ । ४ वि म न ।
 पटवपीवक (स० पु०) वह मनुष्य जो काल मजा कर
 जोपका करता है ।
 पटवता (स० स्त्री०) पटवका भाव या ध्व ल ।
 पटवमन्व (स० स्त्री०) जो पासवामिनीको एकत्रित
 करनेके निचे डोक मजाता फिरता है ।
 पटवत (वि० स्त्री०) १ जो ईशमसे छोरे बनाता जो ईशम
 से छोरेमें महता गू बनिकाता । (पु०) २ ईशम या सुनके
 छोरेमें गजने गू बनिकाती एक खाति, पटवा ।
 पटवति (वि० स्त्री०) १ पटवारको स्त्री । २ पटवार
 खातिको स्त्री ।
 पटा (वि० पु०) १ एक प्रकारको मोड़ेकी छोरी जो दो
 हाथ लम्बी धोर किर्षी पाकाको होती है । इयसे तन
 बारनी काट धोर मचाव पीछे प्राते हैं । २ पटाई । ३
 चौड़ा लघोर, बारो । ४ नेतदेन, मोहा । ५ अमामको
 सुहरो । ६ पञ्चकारण, सगट पटा ।
 पटाई (वि० स्त्री०) १ पटनीको क्रिया या भाव सि चाई
 पादवायो । २ सि चाईको मज्जहूरो । ३ पाटनेकी क्रिया
 वा भाव । ४ पाटनेकी मज्जहूरो ।
 पटाक (स० पु०) पटति मन्वतोति पट वाच निपातनात्
 साङ्ग । पञ्चिभिष, एक चिकित्साका नाम ।

पटाक (हि० पु०) किमो छोटी चोजके गिरनेका शब्द ।
 पटाका (मं० स्त्री०) पटाक-टापू । पताका, भंडा ।
 पटाका (हि० पु०) १ पट या पटाक शब्द । २ पट या
 पटाक शब्द करने कूटनेवालो एक प्रकारको घातग
 वाजो । ३ पटाकेकी ध्वनि कोडे या पटाकेकी आवाज ।
 ४ तनाचा, दण्ड, चपत ।

पटात्रेप (मं० पु०) रङ्गभूमिमें नाटकके प्रति गर्भाङ्गमें
 दृश्य परिवर्तनके लिये जो निर्दिष्ट चित्रपट रचना है,
 उमका नाम लेपण है ।

पटान्ना (हि० पु०) पटाका देनी ।

पटाना (हि० क्रि०) १ पटानेका काम कराना, गटे
 आटिको भर कर आम पामको जमीनके बराबर कराना ।
 २ छतको पोट कर बराबर कराना । ३ कृत बनवाना,
 पाटन बनवाना । ४ वेचनेवानेको किमो मूल्य पर मोटा
 टिकेके लिये राजो कर लेना । ५ ऋण चुका देना, घटा
 कर देना ।

पटापट (हि० क्रि० वि०) १ निरन्तर पटपट शब्द करते
 हुए, लगातार बार बार 'पटध्वनि'के साथ । (स्त्री०)
 २ निरन्तर पटपट शब्दकी आवृत्ति ।

पटापटो (हि० स्त्री०) वह वस्तु जिगमें अनेक रंगोंके फूल
 पत्ते कड़े हों, वह वस्तु जो कई रंगसे रंगो लड़े हो ।
 पटार (हि० स्त्री०) १ पिंजडा । २ मञ्जूषा, पेटो,
 पिटारा । ३ रेगमनी रस्सी या निवार । ४ कनखजूरा ।
 पटालुका (मं० स्त्री०) पट इस अलतोति पट-वाहुलकात्
 एक ततटापू । जलौका, जोक ।

पटाष (हि० पु०) १ पाटनेकी क्रिया । २ पटा हुआ
 स्थान । ३ पाटनेका भाव । ४ लकड़ीका वह मज
 बूत तख्ता जिसे दरवाजेके ऊपरी भाग पर रख कर
 उसके उपर दीवार उठाते हैं, भरेठा । ५ दीवारोंके
 आधार पर पाट कर बनाया हुआ ऊंचा स्थान, पाटन ।

पटि (सं० स्त्री०) पट इक् । १ पटमेद, कोई छोटा
 वस्त्र या वस्त्रखंड । २ कुम्भिका, जलकुंभी ।

पटिका (सं० स्त्री०) पटि स्वार्थि कन्, ततटापू । १ पटि,
 वस्त्र, कपड़ा । २ यवनिका, पर्दा ।

पटिमन् (सं० पु०) पटोर्भावः पटु एपीदरादित्वात् इम-
 निच्, (पा ५।१।१२२) पटुल ।

पटिया (हि० स्त्री०) १ चिपटा चोरम गिनाखंड, फलक ।
 २ काठका छोटा तपता, खाट या पलंगकी पट्टी, पाटो ।
 ३ पट्टी, माग । ४ मंकरा चोर लम्बा जूत । ५ निपटने-
 की पट्टी, तपती । ६ रिंगा, पाटा । ७ कम्बल या टाट-
 की एक पट्टी ।

पटियाला—१ पञ्चाव गवर्ने गटके अधीन एक बड़ा टिगोय
 राज्य । यह अक्षा० २८° २३' से ३०° ५५' तक और
 देशा० ७४° ४०' से ७६° ५६' पू०के मध्य अवस्थित है ।
 यह राज्य दो भागोंमें विभक्त है जिनमेंसे बड़ा भाग
 गतद्वन्द्वके दक्षिण भागमें अवस्थित है और दूसरा भाग
 पहाड़से परिपूर्ण तथा गिमला तक विस्तृत है ।
 भूपरिमाण ५५१२ वर्ग मील है । इसमें १४ शहर और
 ३५८० ग्राम लगते हैं । जनसंख्या पन्द्रह लाखमें
 ऊपर है ।

इस राज्यमें गिमलेके निकट स्नेटकी खान और
 सुवाघके निकट सोमेकी खान है । प्रतिमासमें प्रायः
 ४० टन सोमा खानमें निकाला जाता है । इसके
 अलावा यहाँ मार्बल और तंबाकी भी खान है ।

पटियालाके वर्तमान राजा फुलके हितोयपुत्र रामके
 वंशोद्भव और सिधु जाट सम्राट्यके गिखधर्मावलम्बी हैं ।
 अधिकार जाटोंकी तरफ सिधुवंशधर अपनेको राजपूत
 तथा जगलमौर नगरके स्थापयिता जयगालके वंशधर
 बतलाते हैं । जयगालके पुत्र सिधु और सिधुके पुत्र
 चौधर थे । इन्होंने पानीपतकी लड़ाईमें बाबरकी सहा-
 यता दी थी । इस उपकारमें बाबरने इनके लहके
 रवियामके ऊपर एक जिलेका राजस्व वसूल करनेका
 भार सौंपा था । फुल इन्हींके वंशधर थे । मन्नाट्
 गाह जनान्ने प्रदेशें चौधरी वा ग्रामका मंडल-पद
 प्रदान किया था ।

राजा फुल ही पटियाला, भिन्द और नाभा राजवंश-
 के आदि पुरुष हैं । रामके पुत्र और फुलके प्रपौत्र आला-
 सिंहने मन्नाट्के सेनापतित्वमें नवाब सैयद-आसद-
 अली खाँकी कर्णालके युद्धमें परास्त किया था । उन्हींके
 यत्नसे पटियालामें एक दुर्ग बनाया गया । उन्हींने
 १७६२ ई०में अहमदशाह दुरानीसे परास्त हो कर उनकी
 अधीनता स्वीकार कर ली और उनसे राजाकी उपाधि

मान की। यह मान्यता दुर्भाग्यवश भारतवर्ष में थोड़ी, तब चान्चालि इन्ने पार्लियन्ट प्रत्येक सुपुनमान मानन-कलाकी प्राबल्य किया चोर मार छाया। यह मरद गाहने लव कुनो बार भारतवर्ष पर चढ़ाई को तब चान्चालि इन्ने कुछ बचये के कर लनका पयराय चमा कर दिया। चान्चालि इन्ने पार्लियन्टकाराण्यका स म्वापन कर के १०६५ ई०में इस बराधामकी छोड़ मग्नकामकी विधारे।

चान्चालि इन्ने लताराबिहारी चमरमि इन्ने पञ्चम माह दुयामेने 'राजा इ राजसीन बहादुर'की लपारि पाई। १००२ ई०में मरहटोने इस राज्य पर पाह-मक बरमिबा भाव दिगुकावा चीर लमी समय चमर मि इन्ने मारि विद्रोहो को मये। १००२ ई०में लनकी सङ्घु हुई। १००३ ई०में पटियाला राज्यमें घोरता दुर्मिच चीर पराजयता छेमी। राजाके दोबानके यज्जे यह चोरतर निपट वूर हुई।

१००३ ई०में लताराम भोव द्वारा दिन्नोबिजयके बाद च मरिमीने लतार भारतमें एका ब्रह्म नाम किया। इस समय रचत्रित्ति इन्ने पटियाला राज्यको पपनी पकोन लानकी बिप्रा की। जित्ना च मरिमीने पटि-याला राज्यको महायता देमिबा लवन दि कर रचत्रित्ति ने मप्रि कर ली।

१०१३ ई०में लव गुर्पा चीर पट्टेअबे होन लभारि दिहो, तब पटियालाके राजानि च मरिमीकी लामो मदद पट्टे चारि यो। इस प्राल्पकारके लिए इन्ने कुछ लगीर मिमी। १०३३ ई०में अब मिमीने मन्ट्रुनको पार कर च मरिमीको राज पर पाहमच किया, लन समय पटियालाके महायत्रनि च मरिमीका पच निदा या। १०३० ई०के मरदमें राजानि लन चीर सेनाके च मरिमी को महायता को यो। इस कारण पन्थाव्य पुरन्धार के जिवा इन्ने भन्धुभर राज्यका लमाल बिभाव मिना। १०५२ ई०में मरिमी इन्ने पुन मरिमी इ राजा हुए। इन्नेके समयमें १०५२ ई०को मरिमी लहा बाटा मरिमी को जिनमें १ लघोड़ २१ लाप इपये चरि हुए यी। यि बड़े बहायता यि चीर प्रताको मन्तारिने लिए पनेक भाव कर मय है। १०७० ई०में इन्नेके एक मरिमी

००००, २० लाहोर विम्विद्यालयमें टान लिए ये चीर बहादुर दुर्मिच च पट्टि मनुगुमहा ललाके लिए १० लाप इपये मरिमी १०३३ पकोन रण छेके यी। १०७१ ई०को इन्नेके मन्थाताके-लाप लार्पुबुनने पटियाला पधार कर 'मन्थेकासिअ' कोना या। १०७१ ई० में इन्ने को-मी० एम० चारि०के लपारि मिमी यी। १०८१को चाप इस बराधामकी छोड़ सुरधमकी जा लने। लव समय लनके लङ्घ राजेन्द्रमि इ लेवल पार चरि यी। इन्नेके लाहाबिग लन तब चान्चालि चार मिनको (Council of Regency)ने लतार मरिमीने च १० मी० एम० चारि०के पकोन राज्य काये लनाया। १०८० ई०में रामिन्द्रमि इन्ने राज्यका कुन भाग पपनी हाव यी निदा। इन्नेके १०९० ई० तब सुबाबपने राजराय लनाया। येसे लमी मान लनको सङ्घु हुई। बादमें लनके लङ्घि मूयिन्द्रमि इ राजगुो पर बैठे। ये को बरमान महा राजा है। इन्नेकी लपारि में O I E. G O S L, G C D L है। ये छटिये मयम प्युरो १०० चगा रोहीने महायता दिनिने भाष्य है। इन्ने मरिमीको पोसे १० मनामे तोप मिमती है। राज्यको पामदनी एव बरोड़ने लपाटा है। नेव्य स प्या २०५० पगारीयो, ६०० पटाजि, १०८ बमाल चोर २३८ मीनन्दा है। मिचाबिभागमें यह जिना बरुल पोके पङ्ग ल्पा है। कुछ दिन इव महायत्राका इन चोर प्यान पाहण हुपा है। पमी यहा एक गिण्य लन, २१केरेयकी ८३ मार मरी चोर १२८ लुमिप्युरोप्युन है। मिचाबिभागमें प्रति मय ८३३०१ इपये ल्यप होमि है। लङ्घनके पन्थाव्य राज्यमरम १३ पन्थाव्य चोर चिकिजापय है। इनमेंके १० पन्थाव्यमें रोतिपके रनेके बिपे पट्टो म्यप्या को मरि है। इस चोर राज्यकी पोसे कारििक ८०००६ व० पच होमि है। यहाका मरद चोर मेदो इन्नेके पन्थाव्य लने लयीय है। १८०६ ई० में लन ई लिए एक इनिम सङ्घु लनुना है। लव मिना कर राज्य की पाबबहा लगण्यव है। कारििक छटियाल २३ मे १० इप है।

२ पटियाला राज्यके लमंछु निरागतकी एक लव मीन। यह पन्थाव्य ३८ मे ३३ १० व० चोर है।

७६° १०' से ७६° ३६' पू०के मध्य अवस्थित है। मृपरि-
माण २७३ वर्गमील और जनसंख्या १०१२२४ है।
इसमें पटियाला और मनोर नामके दो शहर तथा
१८७ ग्राम लगते हैं।

३ पटियाला राज्यको राजधानी। यह अक्षा० ३० २०'
उ० और देशा० ७६° २८' पू०के मध्य अवस्थित है। जन-
संख्या पचास हजारसे ऊपर है। राजधानीके लक्ष्मिखयोग्य
स्थान ये सब हैं, महेन्द्रकालिज, राजेन्द्र विष्टोरिया डाय-
मण्डल सुवली लाइब्रेरी, राजेन्द्र अस्पताल, मोतीबाग,
विक्टोरिया मेमोरियल टीनभवन। यहां हानमें लो
स्युनिवर्सिटी स्थापित हुई है।

पटियाली—युक्तप्रदेशके पटा जिलान्तर्गत अन्धोगञ्ज तह-
सीनका एक प्राचीन पुर। यह पटा नगरसे २० मील
उत्तर पश्चिम गङ्गाके किनारे अवस्थित है। वर्तमान
पटियाली नगर प्राचीन नगरके ध्वंसावशेषके ऊपर अव-
स्थित है। महाभारतके समयमें भी यह नगर विद्यमान
था। शाहबुद्दीन खोरीने यहां एक दुर्ग बनाया था
जिसका भग्नावशेष आज भी देखनेमें आता है। रोहि-
लाओंके समय यह एक मन्दिरशाली नगरमें गिना
जाता था। किन्तु अभी यह सामान्य ग्राममें परिणत हो
गया है। अहलेजीने १८५७-५८ ई०में यहां विद्रोहियों-
को परास्त किया था।

पटिष्ठ (सं० त्रि०) अयमेप्रामतिशयेन पटुः पटु इष्टन्
(अतिकायेने तमविष्टनौ । " ५।३।५५) अतिशय पटु,
बहुत होशियार।

पटो (सं० स्त्री०) पट-इन्, बाहुलकात् ङीप् । १ वस्त्र-
भेद, कपड़ेका पतला लम्बा टुकड़ा, पट्टो। २ यत्र-
निका, पर्दा। ३ नाटकका पर्दा। ४ पटका, कमर-
बन्द।

पटौमा (हि० पु०) क्षीपियोंका वह तख्ता जिस पर वे
झापते समय कपड़ेको विछा लेते हैं।

पटौयम् (सं० त्रि०) अयमेप्रामतिशयेन पटुः, पट-इय-
सुन्। अतिशय पटु, बहुत चालाक।

पटौर (सं० स्त्री०) पटतीति पट-गतौ ईरन् । १ मूलक,
मूली। २ केदार। ३ ऊँचाई। ४ वारिद, मेघ,
आदक। ५ वेणुसार, वंशलीचन। ६ चन्दन। ७ खुदिर,

कल्या। ८ तटर, पेट। ९ कन्दर्प। १० कलोक
वृक्ष। ११ वटवृक्ष। १२ हरणोथ। १३ चालती।
१४ मन्थिवाट।

पटौलना (हि० क्रि०) १ किसीको उनटो सोधो वार्ति
समझा बुझा कर अपने अनुकूल करना, टंग पर लाना।
२ परास्त करना, नीचा दिखाना। ३ सफलतापूर्वक
किसी कामको समाप्त करना, पूर्ण करना, अन्तम
करना। ४ ठगना कपना। ५ मारना, पीटना। ६
अर्जित करना, प्राप्त करना, कमाना।

पटु (सं० त्रि०) पाटयतीति पट-गतौ णिच्, तत उ,
पटाटिगद्य। (टलिक पाटोति । उग १।१८) १ टच, निपुण,
कुशल। २ निरोग, रोगरहित, स्वस्थ। ३ चतुर,
चालाक, होशियार। ४ मधुर, सुन्दर, मनोरम। ५
तोच्छ, तेज, तोखा। ६ फुट, प्रकाशित, दृशक। ७
निहुर, अत्यन्त बठोर हृदयवान्। ८ धूर्त, छनिया,
मकार, फरेवी। ९ उग्र, प्रचण्ड। (षलो०) १०
छत्रा, खुमी। ११ लक्षण, नमक। १२ पशुलवण,
पांगा नमक। १३ पटोल, परवल। १४ पटोलपत्र,
परवलका पत्ता। १५ कांडीरलता, चिटपिटा नामको
वन। १६ शारवक, करिन्दा। १७ चोगक नामक गन्ध-
द्रव्य। १८ शिशु। १९ चोम-कपर्ण, चोमका कपूर। २०
जीरक, जीरा। २१ वचा, वच। २२ छिकिणी, नक-
छिकनी।

पटु—श्रीकण्ठचरितके रचयिता महर्षे समसामयिक एक
कवि।

पटुश्या (हि० पु०) पटुवा देशो।

पटुक (सं० पु०) पटु-स्वाथ कन्। पटोल, परवल।

पटुकल्प (सं० त्रि०) ईषदूनः पटुः पटु-कल्पप्। ईष-
दून पटु, कुछ कम पटु, जो पूर्ण कुशल या चालाक
न हो।

पटुका (हि० पु०) १ पटका देखो। २ चादर, गलेमें
डालनेका वस्त्र। ३ धागेदार चारखाना।

पटुकोट्टई—१ मन्दाज प्रदेशके तखौर जिलेके अन्तर्गत
एक उपविभाग। भूपरिमाण ८०८ वर्ग मील है।

२ उक्त तहसीलका सदर। यह तखौरसे २७ मील
दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। यहां ७वीं शताब्दीके

नायकव घोष राजा विजयराजवशा बलादा द्रुपा एक
हिना है ।

पट्टुआतोय (स० लि०) पट्टुपचार , पट्टुआतोय_ । पट्टु,
पचार ।

पट्टुजा (स० स्त्री०) पट्टोर्माव पट्टु, तत्र टापु । १ दसवा
चतुर्गर्ग जामाको । २ पट्टु, जोनेका मात्र प्रमेयता ।

पट्टुगुणक (स० स्त्री०) नववन्द्य, एक नाम ।

पट्टुहवक (स० स्त्री०) पट्टु, नवव तत्पुत्र एक ततः
वन् । नववन्द्य, एक प्रकारको नाम ।

पट्टुप्रय (स० स्त्री०) नववप्रय विदु, मोम्बव धोर
सोवच नवव ।

पट्टुत्व (स० स्त्री०) पट्टु, भावै त्व । पट्टु, तत्, दृष्टता ।

पट्टुपत्रक स० स्त्री०) सत्रवपत्रक ।

पट्टुपत्रिका (स० स्त्री०) पट्टु, पत्रे यन्त्रा, कप टापि
पत्र इव । १ पट्टु, कपुद्रुपा, कोटि शि वका योधा । २
चोरिका विपत्रककर ।

पट्टुपत्रिका (स० स्त्री०) पट्टु, पत्रे यन्त्रा, कप टापु,
पत्र इव । चोरिकोवृद्ध, एक प्रकारको कटेवरो ।

पट्टुपर्वी (स० स्त्री०) पट्टु, पत्रे डोव (पादवर्गवर्गपुत्र
क्येति । त ३१ । १४) स्वर्गचारी नवानामो कटेवरी ।

पट्टुपिदिनिका (स० स्त्री०) कपुभोरध जामा जोरा ।

पट्टुमात् (स० पु०) पट्टुप्रव गोव एक राजा । हिमो
किसी सुराचमि इनका नाम पट्टुमात् धोर पट्टुमायि
मिलता है ।

पट्टुमित्र (स० पु०) राजपुत्रमेद ।

पट्टुप्य (स० लि०) पट्टुका पट्टु, । पट्टु, प्यप, २ । प्रति
म्य पट्टु, कपुत्र जामाक ।

पट्टुसिद्धा (स० स्त्री०) नामवकोमेद ।

पट्टुकी (हि० स्त्री०) १ साठको वर पट्टो जो भूमीके
रवमि पर रखी जाती है । २ वर मन्त्रा चिपटा बडा
को गाड़ी या कपुकेमि बड़ा रचना है । ३ सोको,
पीकी ।

पट्टुवा—एक जाति । जे कोम पपमि को ब्राह्मक वचमि
मानते हैं, परन्तु यह मत सर्वव्यपत नहीं है । इनको
बिदिय कितो गुजरात तथा राजपूतानेमि है । जे सदैवधे
यज्ञोपवीत धारण करति वही पावे है । पान पानमि द्रव

हैं धोर वैश्वक मन्त्राको हैं । इनका विवरण प्लन्द
पुराचमि लिखा है । १ गमो वस्त्री पर कसोदा काढ़ता
धोर १ गमो डोरिमि गङ्गोको योग इनको सुष्य
त्रोविधा है ।

पट्टुवा (हि० पु०) १ पट्टसन कूट । २ वरिम् । ३
गुनके मिर पर बँबा द्रुपा क डा त्रिमि एकक कर मीमी
योग गुन कोवति है । ३ द्रव, तोता ।

पट्टुय (स० पु०) राजममेद ।

पट्टुस (स० पु०) राजमेद ।

पट्टुत्तम (स० स्त्री०) मोम्बव नमत्र ।

पट्टुवाक (हि० पु०) १ वर को पटा खेपता जो पट्टे
नकनेवाला । २ एक खिलोना जो हिनामिसे पटा खिलता
है । ३ व्यभिचारो धोर भूतपुत्रप । ३ कुकटा परन्तु
चतुरा स्तो हिताम धोरत ।

पट्टेर (हि० स्त्री०) सरकपट्टेको आतिका एक प्रकारकी
वास जो पामीन होती है । इसकी पतिहा प्राक् एक
वच बोको धोर चार पाँच पुत्र तक लम्बी होती है ।

इस पतिवोसे चटाइवां पादि वगार्द जानो हैं । इसमि
बाजरेको बालकी तरह बाल लगतो है त्रिमसे दानोका
पाटा सि बनेमिसे हरिद्र निनामी खाते हैं । वे पचमि
यं वमेलो, मधुर मोतक, रजपित्त नाशक धोर मूत्र
शक, रज तथा स्तनोमि पूरको द्रव करमेवानो मानी
जाति है ।

पट्टेरक (स० स्त्री०) सुपाकव्यप, मोबा ।

पट्टेरा (हि० पु०) १ पट्टेका देवी । २ पट्टेका देवो ।

पट्टेज (हि० पु०) १ घामका प्रथम गाँवका सुबिया,
गाँवका धोररी । २ एक प्रकारको कपाधि । इस कपाधिसे
मोत्र मध्य धोर दक्षिण भारतमि पावे जाते हैं ।

पट्टेजना (हि० स्त्री०) परीकना देवी ।

पट्टेजा (हि० पु०) १ वर नाव त्रिमका मध्यमम पटा
को । वर सोके पाटिको पैमो जो नाव पर पार उतारते
हैं । २ एक नाम त्रिमकी चटाइवां बनाने है । ३ कुँवा ।
४ दिन, पट्टिका । ५ कुकटोका एक वि च त्रिमसे मोषि पके
द्रुप कोइको बिल बिवा जाता है । माप दायसे कोके
को तरदन पर कवाई जमा कर हमकी दाहिने बगल
बकल सेवे धोर दाहिने बाजमे हमकी दाहिनी धोरका

जाधिया पकड़ कर स्वयं पीछे हटते हुए उसे अपनी ओर खींचते हैं, जिससे वह चित हो जाता है ।

पटेली (हि० स्त्री०) छोटी पटोला नाव ।

पटेश्वर—वर्षाई प्रदेशके सतारा जिलान्तर्गत एक नगर ।

यह सतारामें ६ मील दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है । यहांके पटेश्वर नामक पहाड़की चोटी पर ५ गुहाएँ हैं । इन गुहाओं तथा इनमें संलग्न वाटिकादिके सिवा यहाँ और भी कई एक मन्दिर हैं । मन्दिर और गुहामें महादेवकी निद्रासूक्ति प्रतिष्ठित है ।

पटैत (हि० पु०) पटैवाज, पटा खेनने या लडनेवाला ।

पटैला (हि० पु०) १ लकड़ोका बना हुआ चिपटा लंडा जो किवाड़ोंकी बन्द करनेके लिये दो किवाड़ोंके मध्य आड़े बल लगाया जाता है । इसे एक और सरकानेसे किवाड़ बन्द होते और दूसरी ओर सरकानेसे खुलते हैं, लंडा, धोंड़ा । २ पटैला देखो ।

पटौल (स० स्त्री०) पटस्य कृदिसः उटे टण्णाटी जायते यत्, जन-ड । छत्राक, जलववूल ।

पटोर (हि० पु०) १ पटोल । २ कोई रेशमी कपड़ा ।

पटोरो (हि० स्त्री०) १ रेशमी साड़ी या धोती । २ रेशमी किनारेकी धोती ।

पटोल (स० स्त्री०) पट गतो पट-भ्रोलच् (कपिगडि ग०श्रुति । उ० १।६०) १ वस्त्रभेद, एक प्रकारका रेशमी कपड़ा जो प्राचीनकालमें गुजरातमें बनता था । २ स्त्रनाम प्रसिद्ध लतिकाफल, परवलकी लता । (*Trichosanthes dioica*) । पर्याय—कुलक, तिक्तक, पटु, कर्कशफल, कुलज, वाजिमान, लताफल, राजफल, वर-तिक्त, भ्रन्तफल, कटुफल, कटुक, कर्कशच्छटु, राजनामा, भ्रन्तफल, पाण्डु, पाण्डुफल, वोजगभे, नागफल, कुष्ठारि, कासमर्दन, पञ्जर, भाजोफल, ज्योत्स्नी, कच्छुष्ठी । गुण—कटु, तिक्त, उष्ण, सारक, पित्त, कफ, कण्डुति, भ्रष्टक, ज्वर और दाहनाशक । (राजनि०) भावप्रकाशके मतसे इसका गुण—पाचन, हृद्य, वृष्य, क्षुधु, अग्निदोषक, स्निग्ध, कामदोष और क्षिप्तिनाशक । परवलकी जड़ विरेचनकर और पत्तियां पित्तनाशक तथा तिक्त होती हैं । (भावप्रकाश)

यह लता सारे उत्तरीय भारतवर्षमें पञ्जाबसे ले

कर बङ्गाल आसाम तक होगी है । पूर्वमें पानके भोटों पर परवलकी बेलें चढाई जाती हैं । फल चार पांच अंगुल लम्बे और टोनां सिमेंको और पतले या बुकोने होते हैं । फलोंके भीतर गूदेके बीच गोम बीजांकी कई पत्तियां होती हैं । स्थानभेदसे इसके नाममें विभिन्नता देखी जाती है, जैसे—हिन्दोमें परवल, बङ्गालमें पटोल, उडोमामें पटल, गुजराती—पोटल, तामिल—कम्बु, पुडुलान्द, तेलगु—कम्बु पोटला, मलश—पटोलम् ।

इस लताकी पत्तियां, फल और जड़ औषधके काममें आते हैं । पित्तकी अधिकता और ज्वरमें पत्तियां विशेष उपकारो है । इनमें धोयंकर, लघु सुखरोचक, तिक्त और पुष्टिकर गुण माना गया है । परवलकी कच्चे फलका गुण शीतल और रोचक है । कच्चे फलको क्लिब कर उसका रस अथवा औषधके अनुपानरूपमें व्यव-हृत होना है । सुश्रुतके मतमें इसको जड़के कन्दका गुण विरेचक है । पित्ताधिक्य ज्वरमें इसकी पत्ती और धनियेकी ममभागकी मिह कर खुलानेसे ज्वर नाश होता तथा दन्त प्राफ उतरना है । सुराशरमें रख कर कच्चे परवलमें जो निर्यास निकलता है वह रेचक औषधमें गिना जाता है । आयुर्वेद शास्त्रके मतसे उदरो और कुष्ठरीग चिकित्सामें पटोल विशेष उपकारी है । परवलका मुरवा खानेमें बड़ा उमदा लगता है ।

पटोलक (स० पु०) पटोल इव कायति प्रकाशते इति कौ-क । शक्ति, सोपी, सुतहो ।

पटोलपत्र (स० स्त्री०) १ बसोशाकभेद, एक प्रकारको पौधे । २ परवलके पत्ते ।

पटोलादि (स० पु०) सुश्रुतीक गणभेद । पटोलपत्र, चन्दन, सुर्वा, गुडूची, आकनादि और कटुकोंके मेलकी पटोलादिगण कहते हैं । इसका गुण—पित्त, कफ और अर्शचिनाशक, व्रणका हितकर तथा वमन, कण्डु और विषनाशक है ।

भैषज्यरत्नावलीके मतसे—पटोलपत्र, गुणध, मोथा, अडूसको छाल, सुरालभा, चिरायता, नोमको छाल, कटकी और पित्तपापड़ कुल निष्ठा कर दो तोलिकी आध मन जलमें मिह करते हैं । जब जल आध पाव रश्च जाता है, तब उसे उतार लेते हैं । इस काढ़ेको पीनेसे

पट्ट वस्त्र प्रथमतः पौर पट्ट ब्रह्मण्यं यथा हो जाता है। त्रिम्बोक्तं चरित्रं वद विधेयं तदकारो जे।

पटोलादिब्रह्मण्य (म० पु०) पटोलापत्र, षट्को मन्मूलो, त्रिपुला गुणवत् मधु मिना कर २ तोला जल पात्र मन् मीय पात्रपात्र । १५ काष्ठको पोमिषे दाहयुक्त पौष्टिक भातरत्न पञ्चा हो जाता है।

(वैशम्पायना० ब्राह्मण्यविवार)

पटोलापट्ट (य० श्लो०) षट्कोलात्तुल्यं हृतमेदं । हृत ७४ घेर, छायायं पटोलापत्र, षट्को, दाहहरिद्रा, मोमको ज्ञान, पट्टमको ज्ञान त्रिपुला दुःखानामा विलपायक कुमर प्रको १ पत्र, पात्रना २ घेर कूटप्रको ज्ञान मोषा, घट्टिमधु रश्मिपट्टन पौर पोषा कुन मिना कर १ घेर । यवानियम हृतपात्र कर जेवन करनिने चतु- शोम पौर पञ्चान्ध रोम प्रथमित् जति हैं।

पटोलाष्टा (म० श्लो०) आदुपटोला, मज्जेद फूलको सुरई या तारीई। गुण—आदु पित्तत्र, वृषिक्रम, अरुण, कन्- कर होयन पौर पात्रन।

पटोली (य० श्लो०) पटोला जालित्यात् षट्कोय । ज्योत्स्नो सुरई।

पटोली (हि० पु०) मझाह, मीमो।

पटोली (हि० पु०) १ पटाहुवा स्नान। २ पटावक लार्थका ज्ञान। ३ बह कमरा त्रिषके अरव कोई पौर कमरा हो। ४ पटन बह।

पट (य० श्लो०) पट-भतो ज बह्मण्यं । १ नमर। (पु०) २ पित्त-व पात्र, मिना, पद्विना । ३ ब्रह्मण्यका बन्धन, काव पर बर्षनिषा पतना कपडा। पटो। ४ राजादिका माननाकार, पटो। ५ पात्र, पात्रा पटो। ६ ठाल। ७ ब्रह्मण्यका पतना। ८ पुत्रता। ९ कोषिय रोगम। १० लोहित कोषिय ब्रह्मण्योदि, जाल रोगो पतना।

राजमण्य मन्त्राव पर बिराटपत्रक को पट्ट धारण करति हैं, तद्वत्ता विषय इहर्षोर्षात्तार्त्त इह प्रकार निष्ठा है—
“बाधार्त्तनि पात्रका निष्कल्पितकय मन्त्रव ततकाया है। त्रिष पट्टका मध्य पात्र व गुण विस्तृत होता है, बह राजा बर्षि निष र्धमजनक इ। ब्राह्मण्य विस्तृत दोनव राजमण्यका, ६ पट्टन विस्तृत बर्षिने बुधरात्र का पौर व पट्टन विस्तृत दोनवै वैश्वामिना र्धम ज्ञाना

है। दो पट्ट, व विस्तृत पट्ट प्रासादपट्ट कहलाता है। यथा पांच प्रकारका पट्ट है। समो पट्ट विस्तारका दूना पौर पार्थ विस्तारका पात्रा होना चाहिये। पट्टमिषावृत्त पट्ट वृत्तिके निवे त्रिगिषावृत्त पट्ट बुधरात्र पौर राजमण्योके निवे तथा एकगिषा पट्ट मिलावृत्तिके निवे र्धमजनक है। गिषाहोम प्रासादपट्ट मो राजापा का र्धमद माना गया है। यदि पट्टका पत्र बाधार्त्तनिषे पत्राया का कपे, तो मूर्ति पत्रिको वृद्धि पौर अत्र जेतो तथा ब्रह्मा सुखसम्पद् नाम करतो है। पट्टमध्य मध्य मनुष्यक बर्षिने र्धम्य विनट होता है। त्रिषका मध्येग म्बुटित हो बह परित्यक्त है। त्रिष पट्टने त्रिषो प्रकारका पट्टन विष्ट नरहे, राजापौके निवे बहो र्धमजनकपट्ट है (हररविना ७८ व०) १० राजसिंहासन। ११ ब्रह्मण्य, पौराहा। १२ गात्र भेद, एक प्रकारका भाग। १३ पटो तपना, निष्कर्मको पट्टिया। १४ तथि पादि वातुषोका बह विपटो पटो विन पर राजकाय पात्रा या दान पादिको मण्ड कोटो जातो हो। १५ बर्षो बगुना विपटा या चौरस तन भाग। १६ पाट पट्टन। (त्रि०) १७ सुक्त, प्रथान। पट्ट (म० पु०) पट्ट एक दन्तवै कोवै कन्। १ पट्ट, निष्कर्म को पट्टो या पट्टिया, तन्मो। २ त म्बुट वा विनपट्ट। ३ ताम्बुट पर खुदा हुई राजाया या पन्थ विपय। ४ पट्टन, कमरबन्द। ५ बह रोगो बरत्र त्रिषका पतना बन्दी काय। ६ हृष विधिय पट्ट वेडका नाम।

पट्ट (म० श्लो०) पट्टान् कोष यात् प्रायते जनक । ब्रह्मणेद उररका कपडा।

पट्टकण्ठ—ब्रह्मण्ये म्बुटिके मोनापुर त्रिषात्तार्त्त एक माधोम नमर। इमका माधोम नाम विष्टुलोचक वा पट्ट विष्टु लोचक है। यह पत्रा १२ इ० व० तथा देना- ०५ इ० पु० ४ मध्य मानमना नदाह बाए बिनारे बदासोनि व कोषको दूना पर चर्षिकत है। जनर्षिया इन्नारवे लपर है। पट्टा-वनेक प्रथान मन्दिर पौर यिनापत्रक लम्बाय है। प्राचारपरिवेष्टित व बहक मूर्तिके मध्य व बहो पौर ६ कोटो मन्दिर हैं। बहो मन्दिरों को गठन पौर कावकाय द्वाविकु देमर्ष लैका प्रतीन होता है। पट्टाव लवधि बहो मन्दिरमें विष्टुपात्रकी मूर्ति बर्षिताठन है। अन्मन्दिरादि ६ लैका इह मन्दिरक चारो पौर पात्र मा विनता विभिन्न

देव-देवियों को मूर्ति छोटी छोटी गुहाके मध्य मन्दिरेट देखी जाती है। विरूपाक्षके सम्मुख मन्दिरमें तीन पक्षके ऊपर लक्ष्मोदेवो बैठे हुई है जिनके दोनों हाथ मिरके ऊपर और शृगडमें कलसो है। प्राचीरके गात्रमें जो चतुष्कोणाकृति स्तम्भ बाहर निकाला हुआ है उसके गात्रमें स्त्रीमूर्ति खादित है। उन मूर्तियोंका केशविन्याम देखनेमें कौङ्कणस्थ देवदामो रमणियाका स्थान्त था जाता है। इसके ऊपर भाग पर कूर्त्तिसुखोंके चित्र अङ्कित हैं। गभेपाठके द्वार सामने और भो कितनो स्तो मूर्तिया शोभा दे रही है। बाहरको दोवार पर विष्णु और शिवका नाना प्रकारकी मूर्ति खुदो हुई देखनेमें आती है। ये सब मन्दिर चालुक्य आदि राजाओंके समयमें बने हुए हैं। कुल १२ मिनान्तिपि उल्लोण है। अन्यान्य मन्दिराके मध्य मन्दिक्कालुन, मंग्रामेश्वर, चन्द्रेश्वर, वेणुगुडी, गोलोकनाथ, आदिकेश्वर, विजयेश्वर, पापविनाशन वा पापनाथ आदि देवमूर्तिया प्रतिष्ठित देखा जाता है। पापविनाशन आदि दो एक शिव-मन्दिरके द्वारदेगके ऊपर भाग पर राम, रावण खुर, दूषण, मृग नखा, लक्ष्मण, सीता, जटायु शिवनाग आदिके चित्र अङ्कित हैं। मंग्रामेश्वरके मन्दिरमें उल्लोण सिन्धराज २५ चातुन्दाका शिलालिपिसे जाना जा सकता है कि वे पाचम चालुक्यराज श्य तेलका अधिकार स्वीकार करते थे। ये स्वयं, स्त्री दिमालदेवो तथा पुत्र २५ आदी ताना किशुवोलनको विजयेश्वर शिव पूजाके खर्च वर्षके लिए बहुत-सो जमोन दान कर गए हैं। पट्ट किशुवोलनमें इनको राजधानो थो।

पट्टदेवी (स० स्त्री०) पट्टे सिंहासने स्थिता, तदर्धा वा देवी। मन्नादेवा, राजाको प्रधान स्त्री, पटरानी।

पट्टदोल (स० स्त्री०) कपड़ेका बना हुआ झूल या पालना।

पट्टन (स० स्त्री०) पट्टन्ति गच्छन्ति वाणिज्ये यत्र। पट्ट गतो वाङ्गलकात् तनप। १ पत्तन, नगर। २ बड़ा नगर।

पट्टना (स० स्त्री०) पट्टम गौरादित्वात् डोषः। पत्तन, नगर।

पट्टमङ्गलम्—मदुरा जिलेके अन्तर्गत एक नगर जो राम नादसे १२ कोस उत्तरपूर्वमें अवस्थित है। यहाँ पाण्डुरा राजाओंका निर्मित शिव-मन्दिर है।

पट्टमहिषो (स० स्त्री०) राजाको प्रधान स्त्री, पटरानी। पट्टरङ्ग (स० स्त्री०) पट्टं वस्त्रं रज्यतेऽनेन पट्टरन्ज-घञ्। पत्तरङ्ग, बक्कम।

पट्टरञ्जक (स० स्त्री०) पट्टानां वस्त्रानां रञ्जकं ततः कन्। पत्तरङ्ग, बक्कम।

पट्टराज (स० पु०) महाराष्ट्रके एक ब्राह्मणोंकी उपधि जो पुजारोंका काम करते हैं।

पट्टराज्ञो (स० स्त्री०) पट्टार्थं राज्ञो, पटरानी।

पट्टना (स० स्त्री०) १ जमोणविभाग, जिना। २ मध्य दाय।

पट्टवन्धोत्सव—दाक्षिणात्यवामा हिन्दुराजाओंके राज्याभिषेक समयका एक उत्सव। गायत्र अभिषेककालमें उनकी कमरमें पट्टवन्धनो दा जाती होग, इसीसे ऐसा नाम पडा है। चालुक्यवंशीय राजा विक्रमवर्षको गिलगनिदिमें इस उत्सवका कथा लिखी है। उत्सव पल्लवमें राजगण अनेक भूमिदान करते थे।

पट्टगाक (स० पु०) गाकभेद, पट्टया नामका भाग जो रक्षापित्त-नागक, विष्टभो और वातवर्देक माना जाता है।

पट्टशाली—धारवाड प्रदेशवासी तत्सुवाय जाति। ईशमके वस्त्रादि बुननेके कारण इनका यह नाम पडा है। इनके किमी प्रकारको पट्टो नहीं है, एकमात्र नाम ही इनका जातिसंज्ञानिर्देशक है। वर्णोंके उत्तरम्य वामवमूर्ति, वैष्णवोंके निकटवर्ती पार्श्वतो और वीरभद्रकी मूर्ति ही इनकी प्रधान उपास्य है। लभावतः ये लक्ष्मण और सबल, माधारणतः लिङ्गा यतोंके जैसे होते हैं और खूब परिष्कार परिष्कृत रहते हैं। इनका आख्यादि उच्चश्रेणीके हिन्दूके जैसा होता है। सभी निरामिषभोजी हैं, मछली मांस वा शराब कोई छूता तक भी नहीं। वैश्रभूषा भी साधारण हिन्दू मरोखा है। पुरुष स्त्रीको तरह कानमें कनेठी और हाथमें कंकण पहनते हैं। स्त्रियाँ कान, ठंगनी, नाक और पैरको ठंगनीमें कनेठीको तरह आभूषण और हाथमें कंकण तथा गलेमें हार पहनती

* कनाड़ीभाषामें 'पट्ट' शब्दका अर्थ रेशम और मराठी भाषामें 'शाडी'का अर्थ तन्सुवाय या ताँती है।

है। राजापुरव दोना की 'मिच्छा' धारण करती है। अपना सुनना जो इनका आतोय व्यवसाय है। प्रतिदिन सुबह से ले कर शाम तक ये परिश्रम करते हैं। चिन्तन एवं निमि से मोक्ष कारी काम का प्रवर्तन करते हैं। राजा पौ पर इनको उतना श्रमा नहीं है। इसीसे राजाओंके उपाय देवताका भी वे जग विषय मान्य नहीं करती। वे जग बहुर सिद्धायत हैं। विवाह तथा वसादि कार्य में वे सिद्धायन पुरोहितको बुला कर अपने काम करती हैं। पितृपरिष्कार नामक इनके एक साधारण मुख है जिसका नाम निवाम राजक प्रवर्तन सुनताम पुरम है।

मोक्षक सिद्धा मोक्षविद्या धाटिमें इनका बहुत विद्याय है। नक्षत्रक कर्म करने पर इनको जाको खाट कर तथा मुखमें च होकर निम दिया जाता था तब याता तथा कालपुत्र होने का इनाम कराया जाता है। पाँच दिन तक मरुत्कारमें प्रयोग रहता है। पाँचवें दिन धाँरे या कर पठा मूर्तिका स्थापना करती है। गर्मिनी माताको चम मूर्तिका पूजा करने होती है। पक्षि उपायत पाँच मन्त्रापोको चमि निमि होती है। छठे दिन सिद्धायन पुरोहित या कर जमोन पर चामकके चरको पानोमें घोसता और तमाके पाठ रखा मुक्त एक चित्र अर्पित करता है। पक्षि उष पर २ पान १ सुपारी और २ पनी रस कर जातमिच्छको सुनता है। अनन्तर वह पुरोहित जातमिच्छक पिता का माता के हाथ हाथमें एक सिद्ध रथ उभे पातो मनु पूष और इरीके जो धार सुनता है। पक्षि उषक ऊपर १२० बार अर्पित सुनको नदीय कर रहता है। सुत समित सिद्धको रिशमक करवत धात्रत कर मिच्छके गर्भमें बाँध दिया जाता है। बाद पुरोहित तीन बार मिच्छक गरीर में घुपना पौर लया कर पामाबंद करता और उभे माताको मोदने सुता देता है। माता भी पुरोहितको प्रशाम करती है। निरक्षरें दिन जातमिच्छको पोना या कर सुवका नामकरण करती है, इसीके उभे एक कुतरा इनाम देवा जाता है।

विवाहके प्रथम दिन वर और कन्या दोनों को हा इन्को धोर लेक बना कर इनाम कराते हैं। पक्षि सिद्धा

यत पुरोहित मनुवाभन धोर बाभोय कुटुम्ब एक साथ भोजन करते हैं। रम भोजनता नाम है परिपानद उता पर्यात् कर या कन्यको मनुककामना धोर मन्वाक मोक्ष। दूसरे दिन देवकावाट उता' (पद्यात् देवताके चहुँइवने दल मोक्षकाय) सम्पादन होता है। विवाहपरिमिं जातिकुटुम्ब एकत्र हो कर विवाहमामां उपस्थित होते और जामिक समय उभे पान सुपारी मिलता है। पाँच उषका सिद्धा जो कन्या का मार पक्षक रहती है व 'पदमिच्छे' धोर जो दो पुत्रव करहे माचपयमें निमुक्त रहती है व इमुमिच्छ कक्षकति है। इस दिन जाति मोजन 'मन्त्र' का भी निमन्त्रण दिया जाता है। कने पाँच बार पान धोर सुपारी उपभोजन में देतो होती है। विवाहके बाद तीसरे दिन कन्याका पिता वरक हाथमें कपड़ा थापन, लनपाय धादि देता है। पक्षि वर और कन्या दोनों को उषासन पर बिठा कर सिद्धायन पुरोहित धायोनादेमें उभके धिर पर धान पौसता है साथ साथ मन्त्र पढ़ कर कन्याक वक्षिमें मनुकसुख बाँधता है। बादमें रोयना प्रसा कर दोनों का जो वरन सिद्धा जाता है। यको विवाहका मिय काय है। त्रा उष इसी धोर सुवप वर तथा कन्याको परिषदां निमुक्त रहती है व मा उपभुक्त वाहाक उपहार पाती है।

सिद्धायताको तरह से जग मन्त्रको जमाने माकु देते हैं। जग और कन्य दोनों में कक्षक पाँच दिन तक प्रयाच रहता है। जिनांन पाठकम भी तीन दिन प्रयाचनिति प्रचलित है। बाबाविवाह धोर विवाहविवाहमें कारी रोड टोक नहीं है। सामाजिक गोनमाक उपस्थित होने पर पाम्य मन्वायत द्वारा समन्या निन्देता जाता है।

पट्टासुत्कार—जातिविषय। रिशमक बाँड़े तथा रिशमके मूर्तार्थ प्रस्तुत करके इनका आतिथत व्यवसाय है। पहा (१० पु०) १ बिभी व्यावर सम्पत्ति विषयना धूमिके चवमोनाका पाँचकारवत श्री व्यामोको धोरस पनामो, सिद्धादेदार का उकेदारको दिया प्राय।

मात्रिक चपनी सम्पत्तिका त्रिस कामके सिद्धे धोर जिन गर्ती पर देता है तथा जिनके विषय पाचरक

करनेसे उसे अपनी वस्तु वापस ले लेनेका अधिकार होता है वो शर्त इसमें लिख दी जाती है। साथ ही उसकी सम्पत्तिसे लाभ उठानेके बदले असामोसे वह वार्षिक या मासिक धन या लाभभाग उसे देने को जो प्रतिज्ञा कराता है उसका भो इसमें निर्दिष्ट कर दिया जाता है। पट्टा साधारणतः दो प्रकारका है, मियादो या मुहती पट्टा और इस्तमरारी पट्टा। मियादो पट्टेके द्वारा मालिक कुछ निश्चित समय तकके लिये प्रजाको अपनी चोजमें लाभ उठानेका अधिकार देता है और उतना समय जब बोट जाता है, तब मालिकको उसे वे देखल कर देनेका अधिकार होता है। इस्तमरारी पट्टेके द्वारा मालिक प्रजा को हमेशाके लिये अपनी वस्तुके उपभोगका अधिकार देता है। प्रजा यदि चाहे, तो उस जमान को दूसरेके हाथ बेच भी सकती है इसमें मालिक कुछ भी छेड़ छाड़ नहीं कर सकता। जमींदारोंका अधिकार जिम पट्टेके द्वारा निश्चित समय तकके लिये दूसरेको दिया जाता है उसे ठेकेदारी वा मुस्ताजिरी पट्टा कहते हैं। प्रजा जिस पट्टेके द्वारा अपने मालिकसे प्राप्त अधिकार या उसका अंश विशेष दूसरोंको देता है उसे गिकमो पट्टा कहते हैं। पट्टेको शर्तोंका खोजात सूचक जो कागज प्रजाको औरसे लिखकर मालिक या जमींदारको दिया जाता है उसे कबूलियत कहते हैं। पट्टे पर मालिकका और कबूलियत पर प्रजाका हस्ताक्षर अवश्य होना चाहिये।

२ चूड़ियाके बीचमें पहननेका एक गहना। ३ पोड़ा। ४ कोई अधिकारपत्र, सनद। ५ जुर्ना, विज्ञियाके गलेमें पहनाई जानिको चमड़े या बाँनान आदिको बन्दी। ६ एक प्रकारका गहना जो घोड़ोंके मस्तक पर पहनाया जाता है। ७ चमड़ेका कमरबन्द, पट्टो। ८ कन्या पक्षक नाई, घोवा, कहार आदिका वह नेग जो विवाहमें वरपक्षसे उन्हें दिलवाया जाता है। देहातके हिन्दुओंमें यह रीति है कि नाई, घोवा, कहार, भंगो आदिको मजदूरीमेंसे उतना अंश नहो देते जितना पड़तेसे भविष्यवाहिता कन्याके हिस्से पड़ता है। जब कन्याका विवाह हो जाता है, तब सारी रकम इकट्ठी कर वरके पितासे उन्हें दिलवाई जाती है। ९ एक प्रकारकी

तलवार जो महाराष्ट्रदेशमें काममें लाई जाती है। १० कामदार जूतियों परका वह कपडा जिस पर काम बना होता है। ११ घोड़ेके मुँह परका लम्बा सफेद निशान। यह निशान नथुनोंमें ले कर मथ्ये तक होता है। १२ पुरुषके निराल जो पोछेका और गिरे और बराबर कटे होते हैं। १३ वह वृत्ताकार पट्टो जिसमें चपरास टंकी रहती है। १४ चपरास।

पट्टाचार्य (म० पु०) दक्षिणदेशमें बसनेवाले प्राचीन पण्डितोंको उपाधि।

पट्टाभिरामशास्त्री—सहजवासी एक विख्यात पण्डित।

इन्होंने कई एक नाययत्नियोंको रचना की।

न्याय शब्द देखो।

पट्टार (स० पु०) एक प्राचीन देश।

पट्टारक (स० त्रि०) पट्टारदेशे भवः धूमादिवात् बुन् ।

पट्टार-देशभव, पट्टारमें उत्पन्न।

पट्टार्हा (म० स्त्री०) पट्टे नृपासने अर्हा योग्या। पट्टारानो।

पट्टिका (स० स्त्री०) पट्टिरिव कायति के-क, स्त्रिया टाप् ।

१ पट्टिकाख्य लोभ, पठानो लोभ। २ वितस्ति प्रमाण वस्त्र, एक वित्ता लम्बा कपड़ा। ३ छोटी तख्ती, पटिया। ४ छोटा ताम्बट या चित्रपट। ५ कपड़ेको छोटी पट्टी। ६ रेशमका फोता।

पट्टिकाख्य (स० पु०) पट्टिका आख्या यस्य। रक्तलोभ, पठानो लोभ।

पट्टिकार (स० त्रि०) पट्टकस्त्रवयनकारी, रेशमकी कपड़े बुननेवाला।

पट्टिकालोभ (स० पु०) पट्टिका एव लोभः। रक्तलोभ, पठानो लोभ। पर्याय—रक्तसूत, वरकलोभ, हृहदल, जोर्णबुध, हृहदलक, शोणपत्र, अक्षिभेषज, शारव, खेतलोभ, गालव, हृहदलक, पट्टो, लाचारसाद, बल्लक, स्थूलबल्लक, जोर्णपत्र, हृहदलक। इसका गुण—कषाय, शोथल, वात, कफ, अस्त्र और विषनाशक तथा चक्षुका हितकर है। लोभकीके मध्य वरकलोभक अष्ट है। इसमें ग्राही, लघु, पित्तरक्त, पित्तातिसार और शोथनाशक गुण माना गया है। (भावप्र०)

पट्टिकावापक (स० पु०) वह जो लोभ वपन करता है।

पट्टिकावाचक (म० पु०) वह जो रोगका फोटा
मुला है।

पट्टिकापुच्छ—मि हलहोपवासो कोयवातिर्षो एव
शाखा। ये भोग ममिमीद्वेषोभी लयानना करत हैं,
ममव समय पर नरवलि भो देते हैं। ये भोग सुतदेव
दाह करत हैं और पोषि उन मरमरागिभो गोभोको
तरह बना कर जमीनमें गाड़ देते हैं। मो-मांस भी ये
भोग खाते हैं।

पट्टि (म० पु०) पट्टिका लोभ, पडा, भो लोच।

पट्टि (म० पु०) पट्टी विघर्त, प्य पट्ट घसवर्ष इलप, ।
पुतिवपुष्य पवकू।

पट्टिमोत्र (म० पु०) पट्टिकाभोत्र पडाभी लोच।

पट्टिमोत्रक (म० पु०) पट्टिकोत्र लार्थ कम्। पट्टिका
भोत्र, पडाभो लोच।

पट्टिय (म० पु०) पट्ट गतो बाहुषकात् टिगम्। पश्य
विमेष, यह लक्ष्यकारक जमा होता है। चाम्बेय पनु
बैट, बेमन्दागोय पनुबैट और शुद्धनोति इन तीन
पन्थोंमें इस पश्य का लक्षण देखनेमें आता है।

“पट्टिय तु प्रणय-स्वाय द्विवा-स्तोत्रगणः।

इत्यमरकानुस्येठि-सङ्ग्रहोद-३” (शंशुभाषय)

पट्टिय पश्य लक्ष्यका लघोदर है अर्थात् इनका आकार
पत्रक जैसा होता है। इनको लम्बाईको तीन भाग
हैं। उत्तम ३ हाव मध्यम ३३ हाव और पचम ३ हाव
लम्बा होता है। सुठियार्थे खरर बलानेवालेको कसार्थे
बचावके लिये लाईको एक आन्ध बनो ज्योती है। खर
इसमें टीना और और पल्लव लोच्छा जाता है। यह प्राचीन
आमका पश्य है। पात्र कम त्रिभे पटा कहते हैं, यह
इसके बसत लम्बाईमें कम होता है और सत्र बाति
दोनोंमें समान है।

पट्टियो (म० पु०) १ यह जो पट्टिय बांधता हो। २ यह
जो पट्टियके लुकाई करता हो।

पट्टि (म० पु०) पट्ट-टिगम्। पश्यमें, पट्टिय, पटा।

पट्टी (म० स्तो०) पट्ट बाहुलकात् लोप। १ पट्टिकाभोत्र
पडाभीलोच। २ कसार्थमुखा एक लक्षणा जो पनकीमें
समाहा आता है। ३ तलपारक, तोमड़ा। ४ पश्यबसा
कल बस्यम रन्तु, लोकेको तग।

पट्टे (दि० स्त्री) १ लक्ष्यको वह लम्बातरो चोरम और
चिपटो पट्टरो जिन पर प्राचीन कालमें विद्याविद्योको
पाठ दिया जाता था और पर पारश्विक कामोको
लियना सिखाया जाता है, पाटो, पट्टिया, तथती। २
लक्ष्यको वह बला जो पाटके ठीकेको लम्बाईमें समारि
जातो है पाट। ३ बाणु, कामय या लपकेको पत्ती।
४ लपकेको वह बस्य जो घाम या पश्य बिभो ल्भानमें
बांधो जातो है। ५ यह उपदेय जो नपदेगव ल्भार्थ
माघनके लिये दे बह बानिबानो गिचा। ६ उपदेय,
गिचा, सिफाबन। ७ उपदेयका पतना, चिपटा और लम्बा
टुकड़ा। ८ पाठ लक्ष्य। ९ मांगके दोनों चोरके लोचोनि
एव बेठाके हुए बाल जो पसेके टिकाई पकृत हैं, पाटो
पट्टिया। १० पट्टि, पांती कतार। ११ लुतो या खनी
लपकेको पत्ती बिभे मर्दों चोर बकाबटके बचनेके लिये
टीगोमें बांधते हैं। यह पार पांच पशुम लोका और
प्रायः पांच हाव लम्बा होता है। इसके एक सिरे पर
मत्रभूत लपकेको एक चोर पनको पत्ती टको रहती
है जिसे नपट्टिनेके बाद लपको चोर कम खर बांध
देते हैं। बहुतसे भोग पिये हैं जो इन्हे बंधस जाड़में
बांधते हैं, पर सेना और सुनिवर्ष सिपाहिया जो इन्हे
समा लपट्टो म बांधना पकृत है। १२ एक प्रकारकी
मिठाई जिसमें चागनीमें पश्य दोनि लोचो पना, तिस
मिना कर जमाते चोर खिर कसक चिपटे पनसे चोर
आकार टुकड़े काट लिये जाते हैं। १३ ठाकर चोरको
बांधो का पाता। १४ मन्की लुतो हुई पट्टिया जिनके
कोकनेमें टाट लियार होमे हैं। १५ लपकेका चोर या
बिहारी। १६ यह तथना या नावके बोधो बांध रहता
है। १७ लक्ष्यको लक्ष्य बला जो लत या लालनक
ठाममें लम्बाई जाता है। १८ बिडी बमोदारीका, लतना
भाग जो एक पट्टीकारक पत्रिचारमें है, लोचका एक
भाग। १९ हिन्सा भाग, विनाय, पटा। २० यह पति
रिक्त कर जो कर्मोदार बिबो विमिय प्रयोचनके लिये
प्राच्यक धन पकट लक्ष्यके लिये समामियो पर
जमाता है, निम, पचबाव। २१ लोकेको यह दोड़ जिनमें
यह बहुत दूर तक लोचा चौकता बना बाघ, लकी चोर
कीही करपट।

पट्टी—१ युक्त प्रदेशके पतापगट जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २५° ३८' में २६° ४' ३०" और रेखा० ८१° ५६' में ८२° २७' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४६७ वर्गमील और जनसंख्या लगभग तीन लाखकी है। इसमें ८०२ ग्राम लगते हैं। शहर एक भी नहीं है। इस तहसीलमें माई और गोमती नामकी दो नदो बह गई हैं। तहसीलका उत्तरी भाग दक्षिण भागमें उपजाऊ है। जिन भूको अफेना यहां ऊँचको खेती बहुत होती है।

२ पञ्जाबके लाहौर जिलान्तर्गत कसूर तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० ३१° १७' ३०" और रेखा० ७४° ५२' पू०, लाहौर शहरमें ३८ मील दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः ८१८० है। ७वीं शताब्दीमें प्रसिद्ध चीनपरिव्राजक यूएनचुवङ्ग चीनपती नामसे इस नगरका उल्लेख कर गये हैं।

वार्तेश साहबने लिखा है, कि यह नगर मस्जिद अकबरके समयमें बसाया गया था। किन्तु अकबरके पहले हुमायूँने यह परगना अपने नौकर जौहरकी टान किया था। अबुलफजल इस स्थानको पट्टी-द्वैतपुर नामसे उल्लेख कर गये हैं। यहां जो बड़ो बडो कब्र है उन्हे स्थानीय अधिवासिण 'नोगज' या नोगज कहा करते हैं। उनका विश्वास है, कि वृहदाकार राक्षस सदृश मनुष्यगण उक्त कब्रमें गाढे गये हैं। उत्तर-पश्चिम भारतमें इस प्रकारकी अनेक कब्रें देखी जाती हैं। उन्हीं देख कर अनुमान किया जाता है, कि राजनोपति महसूदके समयमें जो सब गाजो सेना मारो गई थीं, उन्हींकी कब्रोंके ऊपर अकबरके समयमें स्तम्भ खड़ा किया गया था।

यूएनचुवङ्गके वर्णनानुसार चानपती जिलेकी परिधि ३३३ मील थी। शकरराज कनिष्कके समयमें भी इस नगरका उल्लेख पाया जाता है। उक्त राजाने चीन प्रति-धियोंके रहनेके लिये यह स्थान पसन्द किया था। चीन-परिव्राजकने लिखा है, कि भारतवर्षमें पहले अमरुद फल नहीं था। चीनवासिण हो उक्त फल इस देशमें लाये थे।

नगरके चारों ओर प्राचीरपरिवेष्टित और समी

गृवादि इटकनिर्मित हैं। नगरमें २०० गज उत्तर पूर्वमें एक प्राचीन किला है जो अभी पुलिस और पथिकोंके विश्रामावासमें परिणत हो गया। यहांके अधिवासी साधारणतः वलिष्ट हैं। अधिकांश मनुष्योंमें मेसिक-वृत्तिका अचलमयन क्रिया है। ३ जमीनका एक परि-माणभेद, जमीनको एक माप। ४ गन्नाभेद, एक प्रकारका गन्ना।

पट्टीकाठ—मन्दाज प्रदेशके कोचीन जिलान्तर्गत एक पाचोन ग्राम। यह द्विचरमें ४ कोम दूरमें अवस्थित है। यहांके निकटवर्ती वनमें अनेक देवमन्दिर देखे जाते हैं।

पट्टीकोण्डा—१ मन्दाज प्रदेशके कर्नूल जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० १५° ०' में १५° ५०' ३०" और रेखा० ७७° २१' में ७८° १' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ११,३४ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १,४३,०३३ है। इसमें १०४ ग्राम लगते हैं, शहर एक भी नहीं है। १८०६-७८में यहां भारी अकाल पडा था। तुङ्गभद्रा और हिन्दी नामकी दो नदो इस उपविभागमें बहती हैं।

२ उक्त उपविभागका एक मठ। यह अक्षा० १५° २४' ३०" और रेखा० ७७° २१' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या चार हजारमें ऊपर है। यहां १८२५ ई०में अङ्गरेज सेनापति मर टामस मनरोकी प्रोगेमें मृत्यु हुई थी। उनके स्मरणार्थ यहां कूप और टोल्ले बनाये गये हैं।

पट्टीदार (मं० पु०) १ वह व्यक्ति जिसका किसी सम्पत्तिमें हिस्सा हो, हिस्सेदार। २ वह व्यक्ति जो किसी विषयमें दूसरेके बराबर अधिकार रखना हो, बराबरका अधिकारी। ३ संयुक्त सम्पत्तिके प्रशंसिगणका स्वामी, पट्टीदारके मालिकोंमेंसे एक। ४ हिस्सा बटानेके लिये झगड़ा करनीका अधिकार रखनेवाला।

पट्टीदारो (हिं० स्त्री०) १ पट्टी होनेका भाव, बहुतसे हिस्से होना। २ वह जमींदारी जिनके बहुतसे मालिक होने पर भी जो अधिभक्त सम्पत्ति समझो जाती हो, भाईचारा।

पट्टीदारी जमींदारीमें अनेक विभाग और उपविभाग होती हैं। प्रधान विभाग थोक और उपके अन्तर्गत उप-

विभाग पड़ो बहनाता है। प्रत्येक पड़ोका मानिक पयसि हिन्दुकी जमोनका अतन्त्र व्यवस्था करता और सरकारो कर देता है। परन्तु जिनो एक पड़ामि मास गुजारो बाकी रप जमि पर बह सारो मापदाटमे वसुन को आ सकतो है। प्रायः प्रत्येक दोकमे एक एक नगर दार होता है। जिन पड़ोदारोको सारो जमोन हिन्दु-दासोमे बँट गई हो जमे पूर्व पड़ोदारो पोर जिनमे कुछ जमोन तो जमन बँट दी गई हो पोर कुछ सरकारी कर तथा गाँवको व्यवस्थाका कार्य देनेके लिये मासिमे जो पयस नग जो गई जा सके पूर्व पड़ोदारो कहते है। पूर्व पड़ोदारोमे बह जमो पयस को दुई जमोनका मुनाफा सरकारी कर देके लिये पूरा नही पड़ता, तब पड़ोदारोके मिर पर पय्यापो कर लगा कर वह पूरा किया जाता है। १ पड़ोदारोके भाव बस्मि-दारो।

पट्टीवार (वि० लि० वि०) १ इन प्रकार जिनमे हर पड़ोका दिनमा पयस पयस पा जाय। (वि०) २ जो पड़ो भेदको ब्याजमे रख कर तेपार किया गया हो। पड़ोय (म० पु०) १ महादेव मिन। २ परमनेह।

बहिप देवो।

बहोवाम्—मन्दाज प्रदेशके तखोर जिनालगत एक ग्राम। यह कुम्भकोषके १३ मोन दक्षिण-पश्चिममे पयसित है। यहाँ एक प्राचीन शिव मन्दिर के जिनके गावसि शिवालयके देना जाता है।

बहु (वि० पु०) १ एक जमो वस्त्र को पड़ोके रूपमे मुना जाता है। इस प्रकार का बपड़ा काश्मीर, पञ्जाब आदि पहाडो प्रदेशोमे तैयार होता है। यह वस्त्र गरम होता है पर जम इसका मोटा पोर कहा जाता है। २ शरीदार एक प्रकारका चारपाणा। ३ एक तोता, सुवा।

बहु बोट—१ मन्दाज प्रदेशके तखोर जिनालगत एक उपविभाग। यह पचा० ८ १८ मे १० ३५' ४०" तथा देवा० ७८ ५४' मे ७८ ११' पू० मे मध्य पयसित है। भूपरिमात्र ८०६ वर्गमोस पोर जनसंख्या लगभग १८१८८३ है। इसमे १ महरा पोर ७८२ ग्राम जामे है। शिवा-मिथामे यह ताडुड बहुत पोखि पड़ा हुआ है।

२ उत्र ताडुडका एक गहर। यह पचा० १० २६' ४०" पोर देगा० ७८ १८ पू० मे मध्य पयसित है। जनसंख्या मात हजारके लख है। नगरके चारों पोर एक आश्चर्यविशित प्राचीन शिवमन्दिर पोर तत्सम लम्ब एक शिवालिपि है। नगरके उपरुच्छकर्तो महान् बसुत्रम् नामक ब्याजमे एक शिव मन्दिर है। यहाँ एक प्राचीन दुर्ग का भव साक्षिय देखनेमे पाता है। १८१५ ई०मे फरामोस ऊपर चढ़नेवाँको लखड उजलवमे तखोरवाज सरकोडीमे प्राचीन दुर्ग पर एक नूतन दुर्ग बनवाया। इस दुर्गके पयसकार एक फलक है जिनमे शोभापाटके पयसपतन पोर चढ़नेवाँको लखको बात लिखी है। गहरमे ताँबेके बरतन, चटारें पोर मोटे लपके प्रसुत होते हैं।

बहु भूह—दक्षिणचालुक्यासो एक कवि। प्रसन्नराजावलो नामक लनका काव्य पढ़नेके मानुस जाता है कि कबमे राजा सि हम्पुके चतुरोधमे १३६८ यवर्गे लख पयसके रचना को। शिवाभूषण पयस प्राज्ञावधे। राज-प्रासादमे रहनेके लिये लख महनीपयसके ३० घोस दूर काजावलोपुरी म मक ब्याज भिखा था।

बहु ५—मन्दाज प्रदेशके कड़ापा जिनालगत एक ग्राम। यहाँ इन्द्रनाथ ब्यामोका एक प्राचीन मन्दिर है। जागीरा बिरासत है, कि बलिबुधके चारभमे लख इन्द्रमे इस मन्दिरको बनवाया था। शिव को कहते हैं कि इस स्थानके माहात्म्यके मन्त्रमे विश्वत विहरण महापठपुराचमे लिखा है। इसके शिवा यहाँ हो पोर भी प्राचीन मन्दिर देखे जाते हैं। गदाधर ब्यामोके मन्दिरके दक्षिणपयमे जो दो मन्दिर पोर एक मन्त्रप बने हुए हैं मवाद है कि वे शीत राजपयके कोलिं स्तूप हैं।

पय पचाड (वि० पु०) इरतोका पय पे च। यह पय लख समय पित करके लिये काममे लाया जाता है जिस समय जोड़ कुकनिदा टेक कर ७८ पड़ा हो पोर इस कारक जमे पित करके लिये कठिनाई पड़तो ही। इसमे लखके एक हाथ पर जोरके पाय सारो जातो है पोर माथ ही जमो जायको इस जोरके यहाँपा जाता है कि यह लखड कर पित हो जाता है। यदि पाय दाहिने

हाथ पर मारो जाय, तो बाड़े जांच और यदि बाएँ हाथ पर मारो जाय तो दाहिनी नाँव खोचनी पड़ेगी।
पट्टवैठक (हि० पु०) कुश्तीका एक पैंच। इसमें जोड़का एक हाथ प्रानो जांचमें दबा कर और अपना एक हाथ उसको जांचमें डाल कर अपने ऊँतका बल देते हुए उसे चिन कर फेंक दिया जाता है।

पट्टेगाम—मन्द्राज प्रदेशके गोदावरी त्रिलान्तर्गत एक ग्राम। यह गोदावरी नदीके गर्भव्य एक छोटे द्वीपमें पहाड़के ऊपर अवस्थित है। यहाँ प्राचीन चार मन्दिरोंमें चार शिलालिपि हैं। स्थानमाहात्म्य रचनेके कारण दक्षिणात्य वामियोंके मध्य यह स्थान प्रसिद्ध तीर्थस्थानके रूपमें गिना जाता है।

पट्टेत (हि० पु०) १ पट्टे। २ वेवकूप। ३ वह कव-तर जो विनाकुल लाल, काला वा नोना ही और जिमके गलेमें सफेद कंठा हो।

पट्टेवाध्याय (स० पु०) वह जो दानपट्ट वा दानविषयक पद्या लिखता है।

पट्टोलिका (स० स्त्री०) पट्टपट्टाख्य चलति प्राप्नोतीति उल्ल-गती खुन्, टापि इत्वं। भूमिके करग्रहणका व्यवस्थापक, पट्टा।

पट्टा (हि० पु०) १ तरुण, जवान। २ मनुष्य पशु आदि चर जीवोंका वह बच्चा जिसमें यौवनका आगमन हो चुका हो, नवयुवक, उदंत। चौपाइयोंमें घोड़े, पक्षियोंमें कबूतर तथा छल्लू और सरोसुपोमें सांपके यौवनोन्मुख बच्चेको पट्टा कहते हैं। ३ दलदार या मोटापत्ता। ४ स्नायु, मोटी नस। ५ कुश्तीवाज, लड़ाका। ६ पैडूके नाँचे कमर और जाँवके जोड़का वह स्थान जहाँ कून्से गिल्टियाँ मालूम होती हैं। ७ एक प्रकारका चोड़ा गोटा जो सुनहला और रूपहला दोनों प्रकारका होता है। ८ अतलस, सासनपेट आदिकी पट्टो पर बेल बुन कर बनाई हुई गोटा।

पट्टापट्टाड (हि० वि०) खूब छटपुष्ट और बलवती।
पट्टो (हि० स्त्री०) पठिया देखो।
पठ (हि० स्त्री०) वह बवान बकरी जो व्याई न हो, पाठ।

पठक (न० पु०) पठनीति पठ खुन्, । पाठक, पढ़नेवाला।

पठहगा (म० स्त्री०) पाठकी व्यवस्था, पठनेका समय।
पठन (म० स्त्री०) अध्ययन, पाठ, पठना।

पठनीय (म० त्रि०) पठ-पनीयम्। पढ़ने योग्य।
पठमञ्जरो (म० स्त्री०) शौरागकी चतुर्धरागिणी।

इसका व्यासांग गृह पञ्चम है और गान समय एक टिमकी बात है। इसका ध्यान वा लक्षण—
“मियो मनी गान्त्रितोर्णपुष्पा सत्रं वदन्ती वपुगतिमुग्धा।
शार्दाम्यमाना प्रियया न सख्यः विभूषणैः पठमञ्जरीगम् ॥”
(उ० गीतदासो)

पठान—महम्मदोय धर्मावम्बी एक प्रधान जाति।

‘पठान’ शब्दको उत्पत्तिके मध्यस्थमें अनेक मतमें दे है। डाक्टर बेल्लू (Dr. Bellew) साहब कहते हैं, कि पठान शब्दकी उत्पत्तिका निर्णय करनेमें अति प्राचीनमें इसका अनुसन्धान करना होता है। पठान शब्द अरबी वा पारसी शब्द नहीं है, यह अफगान-देशीय ‘पुख्टाना’ शब्दका हिन्दी अपभ्रंश मात्र है। पुख्टुगुलवा नामके स्थानके लोगोंको पुख्टन और वहाँकी प्रचलित भाषाको पुख्टा वा पुख्टो कहते हैं। पुख्टो शब्दका प्रकृत अर्थ क्या है, ठीक ठीक मालूम नहीं। पर पुख्ट शब्दका अर्थ शैल वा छोटा पहाड़ है, इसका फारसी प्रतिशब्द ‘पुपट्ट’ है।

इसाजन्मके चार सौ वर्ष पहले ग्रीक ऐतिहासिक हेरोदोतस उक्त स्थानकी पाकटिया वा पाकटियाका (Paetya, Paetyaca) नामसे उल्लेख कर गये हैं। अफगानिस्तानके पूर्वांशमें चलित ख अक्षरके उच्चारण-काक्षमें पश्चिमांशके अधिवासो ‘प’का व्यवहार किया करते हैं जिससे पुख्टुन शब्दका उच्चारण पुष्टुन होता है। आफ्रिदो पुख्टु और हेरोदोतस-कदित पाकटिया (Paetya) शब्द एक है और एक स्थानके अधिवासियोंके लिये प्रयुक्त हुआ है।

आधुनिक वंशविदोंका कहना है, कि साल (Saul) के पिता कैस वा कियोस (Kais or Kiobs)के वंशसे पठान लोग उत्पन्न हुए हैं। पैगम्बर महम्मदने कैसके कायसे खुश हो कर उन्हें पठानको उपाधि दी और

धरणी पश्चात् मन्तव्यता तन्मन्त्रज्ञान चमयैव पर चरने-
को धरमावा । इत्येते पशुधारा वनको सन्तान मन्तव्यता
गन्ध 'पठान' कहलानि लगे । फिर वहुदूरी मोर्मोहा
कहना है कि पशुधारा गन्धका पर्व विषयमान है ।
सेलिज कुच मोम इम दिवालयको समीचीन नहीं माननी ।
गन्धकार देवका एकाद्य पद्य है । पशुधारे लोग
हुमा वा आधुन नामक स्थानके पश्चिमदिशि को उक्त
देवमि उरकृत पञ्च मन्त्रके चारुण पद्यके देवगामो
कहते हैं । पनेक मन्त्रके समकामवर्ती वीच धिनि-
ज्ञानिकमय 'पय गन्धानि' वा 'पयगन्धि' मन्त्रका
पद्यकार कर लये हैं । कोई कोई समझते हैं, कि
पयगन्धि पौर चममान वा पशुधारा एक ही मन्त्र है ।
कोई कोई हिन्दो मन्त्र पठने पठान मन्त्रको उल्लिखि
कतमाते हैं ।

ब्रह्मगणितके मन्त्र लिखकके कि उक्त पाणिप
वासस्थान निरिवा देगमे था । इनके पूर्वपुत्रपत्नी अब उक्त
नासर (Nebuchadnezzar) ने कौन कर पश्य तदा
मिदियाणैयके विभिन्न लानोंमें निश्चित द्विया तर से
बहते कोरे कोरे चार देग तक लेग गये । यहाँके पवि
वामो इन्के बनि-पशुधारा वा सेनो इत्यादि चर्मात् पद्य
गान वा इत्यादि मन्त्रान कहते हैं । एम्पूनाका कहना
है कि इत्यादिओंको जो वन जाति के वृक्षों को वे प से
पसारिक नामक स्थानको भाग परी और पनिरकेदिय हा
वर्तमान समयमें इजारा प्रदेश नामके प्रसिद्ध है जो पौर
प्रदेशका एक प समान है । तबकाल ईजानो नामक
पन्थमें लिखा है कि पौरदेयमें स यवोवयय राजलकाधर्म
ऐनि-इत्यादि नामक एक जातिके लोग रहते हैं जिनमेंसे
पश्चिमदिशि कानिउयकायमें जगा रहता था । पयवर्ष
पाद्य कहते हैं, कि वे पशुदेव मन्त्र हैं, बहुदियों के
पाचार मन्त्रकारके पाय इनका पाचार मन्त्रकार बहुत
कुच मिश्रता लुप्तता था । विपटने कथने कि ये पाचि
इत्यादि मन्त्रके सके इतरदेवको रंगाना, देवीके मने
बलिदान देना चम दिव्याकारियों को इत्यादि करना,
सामयिक भूमिदान पाचि पनेक पाचार मन्त्रकार दोना
है जातिके मन्त्र प्रकृत हैं ।

पशुधारे पश्चिम हीमाञ्चल पठानके मन्त्र ही समान

व्यय पति उक्त है । बन्धु विद्यो को अपेक्षा पठानो के मन्त्र
एक यो योके लोगो का समावेश देना जाता है पश्चात्
विभिन्न चर्माका समावेश लगे है । उद्यद, तुर्गि पौर
पश्चात् मने पौ पठानो के मन्त्रमें पाने पर मो इनके
माय विष्णुकुल स प्रिष्ट नहीं हो मन्त्रों । पनेक विष्टकुल
पठान नहीं कोने पर मो ये मन्त्रकुलके संभवमें पनेको
पठान कतमाते हैं । पठानो को मन्त्रके यो योके मन्त्र मिश्र
मिन्न मन्त्रदाय हैं । प्रत्येक मन्त्रदायके सरदारका नाम
है मन्त्रिक वा मासिक । पनेक जातिके मोतर एक एक
गाथा है जिनमें यो यो वा प्रवाण ग कहते हैं । इम
यो योके मन्त्रिकका नाम यो है जिनके ऊपर समस्त
गानाओंका मन्त्रिकभाव हो वा रहता है । कजातिके
ऊपर प्रभुत काय ल रहने पर मा लवे उतनी समता नहीं
है । मुश्कियवका मार पौर पश्चात् जातिके माय सम्भि
यतका प्रभाव उनोके हाथ है । जिरगा नामक
मासिकोंको प्रतिष्ठित एक ममा है जिनके हाथ मन्त्र
चमता रहतो है । व यवाचक मन्त्रमें यो यो वा लाई वह
मन्त्र भोड़ कर एक एक जाति वा मन्त्रदायका नामकरण
हुवा करता है । मुश्क, 'जारी' मन्त्रका पर्व है चरानि
वा वय पौर चरको 'यिन' मन्त्रका ममा वा सम्प्रदाय
काचक । य नाम ममा समस्त यवाचकके मन्त्रज्ञान नहीं
कोते । एउ नामके मन्त्र जाति पार सम्प्रदायका भा वाच
जाता है । व नव नाम इम प्रकार मिश्रित हो गये हैं
कि वे देविकमन्त्र नाम द्वारा सम्प्रदायिक मन्त्रकारोंमें कसो
कसो क्षमन पड़ जाते हैं । पनेक जातियोंमें प्राचीन पूर्व
पुर्वीक नामका परिचय कर पनेकाज्ञान प्राकृतिक पूर्व-
पुर्वीक नाम पर पनेक सम्प्रदायका नाम रख लिया है ।
इस प्रकार एक जातिके मन्त्र विभिन्न सम्प्रदायको सहि
हुई है । पनेका चर्माकारके मन्त्रके हिन्दुओंको
उल्लिखकमें सामान्य प्रदेशके पठानोंको पनेको समान
है । जो सब हिन्दु इनके पक्षान समान के कर कानिचय
करते हैं उन्हें ये लोग कई पयपासुवक हिन्दुको नाम
से पुकारते हैं । जिन मन्त्र हिन्दुओंमें सुसंभवानो धर्म
पद्यक किया है वे भी इनो नामके पुकारे जाते हैं ।

गत कोदमन्त्रानों इन प्रदेशके पठान निष्कलित
विभागोंमें विभक्त किये गए हैं ।

आफ्रिटी, बगरजाई, बड्गाम, बरक, बुगारवल, टाऊटजाई, टिलजाक, दुरानो, गिलजाई घोरगस्ति, घोरो, काजर, काजिलवाम, खुलिज, खुटक, लोदो, खेजमाद, चक्कटजाई, राजिना, तरिन, धमुंज, उत्तरियानी, बराजजाई, वाजिरो, याकुजजाई और यूमुकजाई ।

आफ्रिटीपठान—ऐतिहासिक हेरोडोटस आफ्रिटी पठानोंका 'अफरिटो' नाम रक्ता है। उन्होंने पाठियाली वा पठानोंको ४ खण्डोंमें विभक्त किया है—अफरिटो वा आफ्रिटीगवगिहि वा खुटक, टाटिको वा टादि और गन्धारो। आफ्रिटिदेगको प्राचीन सोमा उत्तर दक्षिणमें मुफेतपर्वत और उसके उत्तर तथा दक्षिणमें कुरम और काबुल नदीके मध्यमें समस्त प्रदेश, पूर्व पश्चिममें पेगावर पर्वतश्रेणीसे सिन्धुनदी त्रिस स्थान पर काबुल और कुरम नदियोंके मध्य मिला है, वही तक विस्तृत है। आफ्रिटि देगके प्राचीन अधिवासिगण गान्तिप्रिय परिश्रमो और जावविंवा-निरत थे। वर्तमान आफ्रिटियोंको देवनेसे वे जिरोह बौद्ध वा अग्नि उग्रमर्फीको मन्तान सन्तानि मरोखे नहीं मान्ते पड़ते। वर्तमान आफ्रिटिगण धर्मत-सुमलमान चीने पर भी उनके किसी प्रकारका धर्म-जीवन है, ऐसा प्रतीत नहीं होता। सुमलमानो धर्म का प्रकृतत्व क्या है उसे आफ्रिटिगण कुछ भी नहीं जानते। ये लोग सम्पूर्ण निरक्षर होते हैं, किसीकी ग्रामनाथान रहना नहीं चाहते। इनकी जनसंख्या तीन लाखमें कुछ कम है। अधिकांश चीरो और डकैतो करके अपना गुजारा चलाते हैं। इनका चरित्र इतना नीच है, कि इन पर जरा भी विश्वास नहीं किया जा सकता। इनके स्वजाति पठान लोग भी इन्हे विश्वास-घातक नज़्हा करते हैं। ये लोग धृत्त, सन्दिग्धचित्त और व्यावृत्त चिन्सक होते हैं। नरहत्या और दम्युवृत्ति इनके जीवनका प्रधान अवलम्बन है।

बड्गाम पठान शकवंगोडूत है, लुर्मांतके अन्तर्गत गुर्देज प्रदेशमें इनका आदि निवास था। ये लोग चौदहवीं शताब्दीमें गिलजाइयोंसे उत्प्लोडित हो कर कुरमनदीके किनारे आ कर रहने लगे। गिलजाई लोग

लुकमानके वंगोडूत हैं। उत्तर-पश्चिमके अन्तर्गत फरबा-वाटमें इस जातिके अनेक पठानोंने उपनिवेश स्थापित किया है।

बुनारवल पठान—पेगावर उत्तरपश्चिममें बुनार देगके ये लोग अधिवासो है।

टाऊटजाई पठान—फाजुलनदीके वामकूनेमें वार-नदीके मध्य तक इन लोगोंका वामभूमि है।

टिलजाक पठान शकव जनसंभूत है। पठानोंके प्रागमनके पहले पेगावा उपत्यका इनको प्राचामभूमि थी। पूर्वा और दूठां शताब्दीमें जाट और काठियोंके नाश के बाद पञ्जाबमें आ कर बस गये। धीरे धीरे वे इतने समतागालो हो उठे कि सिन्धुनदीके पूर्व उपकूल तक इनकी समता फल गई। १२वां शताब्दीमें यूमुकजाई और समन्द पठानोंने इन्हे सिन्धुनदीके पार चक्रपावलीका मार भगाया। शक्ति हत अधिकार ले कर जब टीनोंमें कुछ काल तक विवाद चलता रहा, तब बादशाह जहांगीरने हिन्दुस्थान और दक्षिणात्यके विभिन्न स्थानोंमें उन्हे बसा दिया।

दुरानो पठान—दुरानो शब्द सम्भवतः दुर्-द-दौरान (अर्थात् उम समयकी सबसे बड़ी मुक्ता घघथा दुर्-द दुरान अर्थात् सर्वात्कृष्ट मुक्ता) शब्दसे उत्पन्न हुआ है। अहमदशाह अकबरके विहामनारोहणके समय वंशानु-क्रमिक नियमानुसार उन्हींके पत्नी दाहिने कानमें मुक्ता-का कुंडल पहना था। उसी समयसे उक्त नामको सृष्टि हुई है। दुरानो पठान माधुरणतः निम्नलिखित सम्प्रदायोंमें विभक्त है—मदोजाई, पपनजाई, बराक-जाई, डालकाजाई, आचाकजाई, नूरजाई, ईशाकजाई और खागवानो। अन्धारमें इनका आदिम वासस्थान था। पड़ली शताब्दीमें इन्हींके हिलमण्ड और धरगन्धाव नदीके तीरवर्ती हजारों प्रदेश तक विस्तृति लाभ को थी। काबुल और जलालाबाद तक समस्त अफगानिस्तानमें ये लोग छोटे छोटे टलोंमें विभक्त हो कर भिन्न भिन्न स्थानोंमें वाम करते हैं। इन दली बरदारोंने युद्धक्षेत्रमें सहायता दे कर पुरस्कारस्वरूप जागोर पाई है। स्थानीय अधि-वासिगण इनके अधिन कृपिकार्य करते हैं।

गिलजाई पठान सुर्कोवशमसंभूत हैं। गिलजाई

यष्ट तुर्बो 'विजयो' शब्दे उत्पद्य कृपा है, विजयचो
 शब्दका अर्थ है तनवाधारो। ये शोभ चोर प्रदेयके
 निवाचन्य गिरिमायामें रहते थे। यज्ञ यज्ञात्ता इनका
 प्रतिफल वाचसाय वा। यहाँ हम जानिके काण
 ये शोभ पारमिर्कालि नाम मिल गये।— विजयार्द्रि
 शब्दका अर्थ शोभ उच्चारण गाविको है। यह
 मूढ गन्तवोनि श्रव भारतवर्ष पर आक्रमण किया जा
 तह से शोभ उनसे भाव पाये थे। ये हैं जन्मान्नाश
 ने से कर विनाश-र विजयार्द्रि तर्कसे समस्त प्रदेयो
 पर इनोने पश्चिमार अम निवा। पाठको शतशुभे
 शान्तिमें ये विद्वोको जो कर वेसमान्नाम परणर
 के पक्षीन शब्दधारमें प्रतिष्ठित कृप चोर पोके लक्ष्मी
 पारण्य देय तह खाता शोभ निवा। पलतर पाण्वाति
 पति शान्तिमात्र इन लोनीको उपनि देय लाये। प्रथ
 निज कि बदलो है, नि धार सुमेनके वितानि पपनो
 अन्धाका धर्मनट किया जा' हम काण्ड शोभ बुधिनके
 पुत्रको गिनयो पर्यात् चोर पुत्र लक्ष्जा करते थे। लको
 गिनार्द्रि शब्दको उत्पत्ति हुई है।

गिनार्द्रि पठान साक्षात्कृत अन्धाय्य ज्ञानिष्ठाके
 म स्वरमें पाता नहीं चाहते चोर उनका आचार व्यक्तवा
 शी पञ्चमानिस्तामके अन्धाय्य ज्ञानोप पश्चिमामिष्ठाके
 पाचार-व्यवहारके प्रविभक्तुम मिल है। गिनार्द्रि शब्दके
 मरुत शोर्न शोर्न अन्धाय्य पाममें या कर कृपिषाय'
 पञ्चनमन्युर' का अर्थ गया है। शिष्टु हम आतिने
 पश्चिमाय मनुष्य भाग अानिष्ठा धूम धूम कर शोभन
 वाजा निबाध करते हैं। कृपिष्ठाका गिनार्द्रि शोभ
 पञ्चनमन्युर' शोर्न चोर पपनो तथा अन्धाय्य
 ज्ञानिने म्रथ पञ्चनमन्युर' भ्रमणर किया करते हैं।
 ये शोभ शिष्टमेमें बड़े सुन्दर होते हैं। देवको गठन
 चोर बनकोयके मरुतमें ये शोभ पञ्चमानिस्तामको
 अन्धाय्य ज्ञानिष्ठाके किमो पाममें अम नहीं हैं। ये
 अन्धाय्य प्रतिदि का-परायण होती चोर सुदेशाममें
 नृग मको तरह व्यवहार करते हैं। ये शोभ
 म के शोभ पगमके मोटा मकोका तथा अन्धाय्य पपनोने
 प्रस्तुत करते हैं। गिनार्द्रि ज्ञानिष्ठा पत्नी
 अर्द्धि म्रथ पयिया, मरुतवर्ष चोर पञ्चमानिस्ताममें

मरु अण्ड व्यवसाय करते हैं। इनमें निवासी नाम,
 परतो चोर सुमेयान रीन ये शोभ व्यवसायशोभो हैं।
 इसोने एक पौमिन्द लवानो वा लोवानो अर्थमें हैं।

चोरगणित पठान—चोरगणित शब्द चिरमिष्ठ वा
 अन्धाय्य शब्दका अर्थ है। पठानक यथे पादिपुत्रप
 वेसके लताए पुत्रका नाम चिरमिष्ठ वा चरगण्य था।
 शब्द शब्द गिरिमिष्ठ वा चिरमिष्ठ शब्दका अन्धाय्य मरुत
 है अिष्ठाका अर्थ शोभ है "मरुत अन्धाय्य शोभो" इनमें
 अन्धाय्य शिष्टा आता है कि तुर्कियामके अन्धाय्यने से
 शोभ पाये हैं।

शोरो पठान—शोरोके पूर्व अर्थात् शोरो शिष्टमे इनका
 अन्धाय्य नाम अान था, इन काण्ड अन्ध उक्त पाण्वा
 मिष्ठाके हैं।

काण्ड पठान—इलोवाअन्धका अन्धाय्य है, कि काण्ड
 पठान शब्द शब्दशून्य हैं चोर रावणविष्ठा तथा भारतके
 अन्धाय्य अन्धाय्य पश्चिमो गौडर अन्धाय्य शोचरोने एक
 म शोभ हैं। पञ्चमानिस्तामके अन्धाय्य अन्धाय्य अन्धाय्य
 काण्ड अन्धाय्य शोभ पर्यात् चरगण्यक अन्धाय्य म्रुत
 दानोंके व अज्ञात थे; उक्त अन्धाय्य अन्धाय्य पठान शोभ जो
 शब्दशून्य म अज्ञात मानी मरुत हैं शो एक अन्धाय्य शोभ
 है। क मरुत अन्धाय्य अन्धाय्य अन्धाय्य अन्धाय्य
 चोर अन्धाय्य। ये दानों नाम म्रुत चोर अन्धाय्य शब्दके
 अन्धाय्य शब्दके यह मरुत काण्ड अन्धाय्य है। पोके य
 दानों नाम अन्धाय्य शो कर यदालम मरुतशोभ चोर
 अन्धाय्य पाण्वावान हुए हैं। अन्धाय्य अन्धाय्य अन्धाय्य
 चोर अन्धाय्य तह पपनो शब्दक ना किया था, तह अन्ध
 मरुत शोभ मी अन्धाय्य मरुत हैं।

काञ्चिन्नाम पठान—अन्धाय्य अन्धाय्य अन्धाय्य
 अन्धाय्य अन्धाय्य अन्धाय्य पादि नाम अान था। एक समय
 इनमें पश्चिमाय पारण्यविपतिने अन्धाय्य शोभ अन्धाय्य-
 म्रुत थे। ये शोभ अन्धाय्य ज्ञानिष्ठा है। नादिराजने अन्ध
 भारत पर आक्रमण किया, तह काञ्चिन्नाम पठान अन्धाय्य
 शोभ अन्धाय्य म्रुत थे।

सुगण अन्धाय्य अन्धाय्य अन्धाय्य अन्धाय्य अन्धाय्य
 नाम अन्धाय्य थे। अन्धाय्य चोर अन्धाय्य अन्धाय्य अन्धाय्य
 शोभ अन्धाय्य अन्धाय्य अन्धाय्य अन्धाय्य अन्धाय्य नाम

टोपी मिर पर धारण करनेके कारण ये लोग काजिल-वास कहलाते थे। पारस्यदेशीय सोफी राजवंशके प्रतिष्ठाताने इस प्रथाका प्रचार किया, सिया सम्राट्-का यह एक विशेष चिह्न है।

खुलोल पठान—खुं वर गिरिभङ्गटके मरमुखस्य वारा-नटोके वामतौरवर्ती प्रदेश इनका वासस्थान था। ये लोग अभी चार सम्राट्-सिंहासनों विभक्त हैं—माटुजाई, वारोजाई, ईशाकजाई और तिनारजाई। इनमेंसे वारोजाई सम्राट्-का सबसे घमताशाली है।

खटक पठान—खटकके वंशोद्भव होनेके कारण इनका यह नाम पडा है। खटकके दो पुत्र थे तुर्कमान और बुलाक। बुलाकने वंशधरोंको बुलाको कहते हैं। तुर्कमानके पुत्र तराईने इतने पतिपत्ति लाभ की, कि दो प्रधान सम्राट्-सिंहासनों 'तरिन्' और 'तरकाई' उन्हींके नामसे पुकारे जाते हैं। खटक पठान साधारणतः सुन्नी और ब्राह्मण हैं। अन्यान्य पठान जातियोंसे इनको आकृति और आचारमें बहुत अन्तर पड़ता है। ये लोग सातिशय युद्धप्रिय होते और निकटवर्ती अन्यान्य जातियोंसे सर्वदा युद्धविग्रहोंके क्रिय करतें हैं। कुछ व्यवसाय और कुछ कृषिकार्यसे अपना गुजारा चलाते हैं। सोयत और बुनार प्रदेशके लवण व्यवसायको खटक पठानोंका एक प्रकारका खास व्यवसाय कह सकते हैं। ये लोग सभी सुन्नी-सम्राट्-सिंहासनोंके हैं।

लोटी पठान—दिल्लीके लोटोवंशीय पठान बादशाह धर्मशेखोंके अन्तर्गत थे। लोटी पठान प्रधानतः व्यवसायजीवी हैं और भारतवर्ष, अफगानिस्तान तथा मध्य एशिया इन कई एक प्रदेशोंमें व्यवसाय कार्य करते हैं। शरत्कालके पहले ये लोग बुखारा और कन्दहारसे पण्डित, मेष, उदक, गवार्दिपशु लाते और स्त्रीपुत्र परिवार सहित गजनोंके पूर्वस्थित प्रान्तोंमें ममागम होते हैं तथा वहांसे काकर तथा बजोरो देश होते हुए सुलेमान पर्वतश्रेणियोंको पार कर डेरा-इस्माइल खां जिलेमें आते हैं। यहाँ स्त्री-पुत्रादि तथा पशुादिको रख कर पण्डितोंके जंटेकी पोठ पर लादते और सुलतान, राजपुताना, लाहौर, अहमदसर, दिल्ली, कानपुर, काशी और पटना तक उन्हें बचने चले जाते हैं। वसन्तकाल आने पर

सभी इकट्ठे हो पूर्वपथ होते हुए गजनों और खिलान्त-गिजजाईके निकटवर्ती स्वदेश लौटते हैं। शोषा-रक्षमें भारतसे लाये हुए पण्डितोंको ले कर वे अफगानिस्तान और मध्यएशियाके अनेक स्थानोंमें चले जाते हैं।

महम्मदजाई—टीनतजाई जातिके मध्य यहाँ सम्प्रदाय सबसे बड़ा है। भूदानका वर्तमान नवाब वंश इसी सम्प्रदायका है।

रोहिला पठान—पूर्वोक्त पाख्तुनखवा नामक प्रदेशको विदेशिगण 'रो' कहते हैं। 'रो' शब्दमें पर्वत और रोहिलामें पर्वतवासियोंका बोध होता है। वर्तमान रोहिलखण्डका नाम सम्पूर्ण आधुनिक है। १७०७ ई०में बादशाह औरंगजेबकी मृत्युके बाद जब बरेली वासी हिन्दुओंके मध्य विवाद खटा हुआ, तब रोहिला पठानोंके मरदार अली महम्मद खाने इस प्रदेश पर आक्रमण किया। १७४४ ई०में कुमायुनके अन्तमोर तकका स्थान उनके अधिकारमें आ गया। दो वर्ष पीछे वे बादशाह महम्मद शाहसे परास्त हुए। बादमें हाफिज रहमत खाने समय धारण हेष्टिस रोहिलोंके संस्वर्णमें आ गये। रोहिलोंके मतसे वे इजिप्ट देशीय कोम-जाति सम्भूत हैं। फेरसे विताहित हो कर उन्होंने अन्यान्य देशोंमें आश्रय लिया है। रोहिला पठान बड़े साहसी और अत्यन्त कलहप्रिय होते हैं।

तरिन् पठान—जातीय प्रवाद है, कि प्रायः तीन चार सौ वर्ष पहले यूसुफजाई और सोमन्द जातीय पठान लोग तर्क तथा भ्रष्टासन नदोंके किनारे आ कर वास करने लगे। उक्त स्थानसे और भी नीचे तरिन्-जातीय पठान रहते थे। उनको कथित जमोन अशु वर धो और उसमें जलसिद्धिका कोई उपाय न था। इसीसे तरिनोंने क्रमशः मन्दार और सोमन्द पठानोंको जमोन छोड़ लो है।

उसुरियानोपठान—ये लोग उसुरियानोंके पुत्र इनरके वंशोद्भूत हैं। इनर गिराणोसम्राट्-सिंहास्य एक रमणोंका पाणिग्रहण करके उसी स्थानमें बस गये। प्रायः एक शताब्दी पहले व्यवसाय और पशुपालन ही इनके जीवनका प्रधान अवलम्बन था। पीछे मुसलमानोंके साथ विवाद उपस्थित हो जाने पर जब पश्चिमकी ओर जाने

धर्मको सुविधा न रह गई, तब इन लोगोंने ध्यवभाव करना बिल्कुल छोड़ दिया। धर्मो के लिये धितो-कारो करके धपना गुजारा करते हैं। सुमेमान पर्वतके पूर्वी किनारे इनका नामस्थान है। इनके मध्य धोर मो पनेक मध्यदाव है जिन्होंने पचमदकारे धोर मयनकारे यशो लो मप्रदाय प्रदान हैं। वे लोग निरीह धोर शान्तिविय होती हैं। बहुतरे मरकारो पुत्रिम संव्यविमामर्षी मोकरो करते हैं। ये अवधि मय सुषोसभ्यदायसुख हैं।

काजिनो पठान—खटकोरो धूरोमूत करके सुमेमान पर्वतको धोर बम मये। ये लोग मोकाजातीय पठानी को एक ओरो धिमिय हैं। मोका पठान प्रया रात्रपुर्तो को एक भाषा माने जाने हैं। पाठ पाँच ठा ठा शताब्दो पक्षे इनोंने खटकोर पारलमक कर कोडाट उपलब्धवाये धाम तक धपना पधिकार येका लिया। ये लोय जमतामाको प्साधोन जाति हैं, पधिक्राय एक जगह बास नहीं करते नागा खानोमें ब्रूम फिर धर पधो लोकिबा निरीह करते हैं। इनकी पाहति धोर धाधार-ध्ववधारमें पन्थान्य पठानीमें बहुत पन्तर पकता है।

धसुखकारे पठान—धोवत दुगार, कन्धकार धोर राबिजारे उपलब्धामें इनका धाम है।

धमनोका करेध लोर धाधार धवद्वार।—धोमान्तवासी धोर पन्थावधि कतिपय खानाके पधिकारो प्रदान पठान पन्थान धमन्य हैं। ये लोय पति निर्दय, प्रतिधि सा परावय तथा धमचिद्व होती हैं। धर्म धोर सखखान्तिता बिने रहते हैं वे लोय आचन तक धी नहीं। धपमान विद्यानघातक होती हैं, यह प्रवाद पन्थान्य जातिके मध्य प्रचलित है। इनके, कक्षे त्रिध बिमो प्रकारे ध्या न को, ये शत्रुका विनाय धर ही जानते। लो लुख जो, इनमें तीन पन्थो प्रया प्रचलित हैं—(१) शत्रुके मरवा-गत धोमें धर इनकी रथा धमय धरलो धोमो (२) पतिद-करने धर धरको प्रतिधि वा लेना पन्थय कर्तव्य है तथा (३) पालिय सखार पक्षधनीय है। पतिन प्रवाद है, कि पठान एक मुञ्जर्तमें दैध धोर एक मूह नमें दानव है। धोमान्तवासी पठान लो कर्हि शताब्दीके धपनी काधोनताधी पचधुधामावधि रखा करते धा

रके हैं, यह इनकी धोरल्लधधुध पालतिवे ही देधीप्यमान है। वे लोय लोधाधार धोर धोरधन होती तथा सुवयो धोरधैधधुध धोमो है। देखनेवे ही वे पात्रकधवाधोन मान म होती हैं। धोमान्तदेधवित पठान बड़े बड़े बाक रखते हैं। इनका पधनधवा डोका पाशामा लोमो चरबन, धावकनोमनिर्मित कोट, कन्धन वा लोमो प्रकाशका रेशमो धपकृ है। पठान लियार् मी ठोका पाशामा पधनतो हैं। धो-धुधय दोनो जो पखला पपरिन्धार रहते हैं।

भारतवर्षीय पठान बहुत लुख मन्थ है। इनमेंसे जिनमें धितो धारो करके धपनो लोकिबा जलाने है। जिनको धमोल्लखधधि मधन्धमें पठान धिमिय ध्यान धिते है। इनमेंसे पधिक्राय विवाद ध्या से धर जो धोना है। इनकातिमें जो इनकी विधाधयादा चलतो है। भारतवर्षीय पठानो के मधन्धमें यह यथायथ नहीं धोमि धर-धो धोमान्त प्रदेशके पठानोके धियधर्म ठोका है। इनके मन्थ ललराधि धारप्रया मधन्धनेय धियमाधु धार न जो धर जातीय धियमानुसार धुधा धरतो है। धमो दो एक लो धिधित बग है वे मधन्धनेय धारैणके धनुधार जलते हैं। इनमें विभिध जातिवे मन्थ मिध मिध धया प्रचलित है। रोहितधुधुधके पठान ही मन्धोका धिधित है जिनमेंसे पधिक्राय ध गरीध धममेंप्यडे पधीन राजन्ध पुत्रिम धोर पन्थान्य विभागोंके लक्ष धावमें निरुध है।

धदान-धधपध लोर धिय।

पठान-राधधकी जध इन देशमें कङ्क मजधुन धो,गई, तब लकोने ध्यपतिकार्यको धोर ध्यान दिया। पक्षे पधन लकोने जवविधधुधक धधमर धोर दिधीमें दो मधन्धिन धनवाड़े। धुधकाधर्म धमेधा धिध रहनेके धारण लो पहालिकारि प्रलुतधायमें निरुध धिधोको ना न सके धि। लनका लध धभाव धिधितके धार। जो धूरा धुधाका। धनेक लोन मन्दिरोको पठानोमें मधन्धमें धरिधत धिया। दिधीके निखट लो मधन्धिन लो लनके धाय पधमरको मधन्धिनको सुलना नहीं जो सधतो। दिधीको मधन्धिन यथाधि धमी मन्धा जलाने है, लो लो धनका द्धध धतीय धुधर है। यह

मसजिद एक पहाडकी ढालवों जमीन पर बनी हुई है। इसके सामने पहने एक ढ़द था। मसजिदके स्तम्भ हिन्दू मन्दिरके जेमे बने हुए थे।

कन्नोजमें अभी जो मसजिद है वह पहले जैन मन्दिर था, इसमें कोई मन्दिर नहीं। मसजिदकी छत और गुम्बज जैनमन्दिरके जेमे है। बचन इसका बहिर्भाग सुसज्जानी प्रधानुमार बना हुआ है। इस मसजिदमें जो गुम्बज है वह बहुत बड़ा और चढ़िया है। मध्यस्थनके गुम्बजका परिमाण चौड़ाईमें २२ फुट और ऊँचाईमें ५३ फुट है। गुम्बज किस तरह बनाया जाता है वह पठान लोग अच्छी तरह जानते थे, किन्तु ये ज्ञानिक ज्ञान उतना नहीं रहनेके कारण उन्होंने हिन्दू गिल्दियों पर इसका कुल भार सौंप दिया था।

कुतबमिनार पठानोंकी एक और कीर्ति है इसके तल्लप्रदेशका घेरा ४८ फुट ४ इंच है। १७८४ ई०में इसकी ऊँचाई २४२ फुट थी। इसमें ४ बरामदे हैं। पहला बरामदा ८ फुट ऊँचे पर दूसरा १४८ फुट, तीसरा १८८ फुट और चौथा २१४ फुट ऊँचे पर अवस्थित है। इसमें सिवा चारों और विस्तर कारुकार्य हैं। इसकी त्रितल्लका ऊपरी भाग सफेद पत्थर गा बना हुआ है और निचला भाग लाल बालुकापत्थरका।

कुतबमिनारसे ४७० फुट उत्तरमें अलाउद्दीनने एक दूसरा स्तम्भ बनवाना शुरू किया था, पर राजधानी दूसरी जगह चली जानेके कारण उसका निर्माणकार्य पूरा होने न पाया, अधूरा ही रह गया। इसकी ऊँचाई केवल ४० फुट मात्र हुई थी।

यहाँ एक और विस्मयजनक लोहस्तम्भ है जिसकी ऊँचाई २३ फुट २ इंच है। यह स्तम्भ बहुत पुराना है। इसमें जो खोदित लिपि है उसमें कोई तारीख लिखी न रहनेके कारण इसके निर्माणकालका पता नहीं चलता। कोई इसे ३रो और कोई ४थो शताब्दीका बना हुआ मानते हैं। जो कुछ ही, बाह्यकीके सिन्धुदेशमें पराजित होनेके बाद विजयस्तम्भ स्वरूप यह स्तम्भ निर्मित हुआ है।

अजमेरकी मसजिदकी कथा जो ऊपर कही जा चुकी है वह १२०० ई०में आरम्भ हो कर अकलतमयके

शासनकालमें शेष हुई। किंवदन्ती है, कि इस मसजिद का निर्माण ढाई दिनमें शेष हुआ, लेकिन जाय पहला है कि जैनमन्दिरका भग्नावशेष अलग करनेमें ढाई दिन लगे होंगे, इसीसे इस प्रकारकी किंवदन्ति प्रचलित है। मसजिदका गुम्बज ही इसका मोन्दर्य है। इसमें जो सब खोदित गिनालिपि हैं, वह बहुत बढ़िया हैं।

अनाउद्दीनकी मृत्युके बाद पठान-स्वपति-विद्याको विभ्रता परिचलित हुई। पहले पठान लोग अपने घरों, मसजिदों आदिमें तरह तरहका तबाने दिया करते थे और निर्माणकार्यमें हिन्दुश्रमि सम्पूर्ण सहायता लेते थे। किन्तु तुगलकशाहके समयमें पठान लोग बिना हिन्दुको सहायताके मसजिदादि बनाने लगे। इन सब मसजिदों और अट्टालिकाओंमें विशेषता यह कि उनमें इतने चित्रादि नहीं होते थे।

समाधिगृह बनानेमें पठानोंने जो निपुणता दिखलाई उसका शेष शेरशाहके समयसे हुआ। शाहाबादमें शेरशाहका समाधिमन्दिर है जिसका चित्र ६४१ पक्षमें दिया गया है।

पंजा सुन्दर समाधिमन्दिर भारतवर्षमें बहुत काम देखनेमें आता है।

भारतमें पठान शासन।

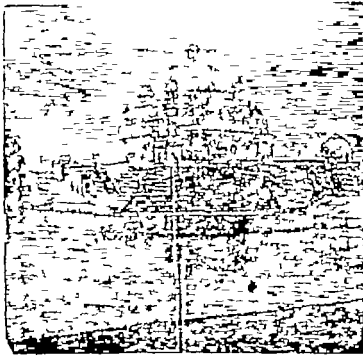
एक समय पठानोंने सारे भारतवर्ष पर अपना अधिकार जमा लिया था। सुगनोंके प्रभावमें भारतीय पठानोंका गौरवरति घटितमिल हुआ।

भारतवर्ष और बङ्गदेश देखो।

नीचे दिल्ली में पठान राजाओं और बङ्गके शासनकर्त्ताओं तथा स्वाधीन पठान राजाओंको वंशतालिका दी गई है।

पठान-शासनकर्त्तृगण।

- १। महम्मद-इ-बख्तियार खिलजी १२८८-१२०५ ई०
- २। महम्मद इ-बिरान् १२०५-१२०८ ,,
- ३। अलोमर्दान १२०८-१२११ ,,
- ४। सुनतान गयासुद्दीन १२११-१२२७ ,,
- ५। नसिरुद्दीन १२२७-१२२८ ,,
- ६। अलाउद्दीन १२२८ ,,
- ७। सैफुद्दीन आइबक १२२३ ,,
- ८। इब्नु-उद्दीन अमुलतने तुमिल-सुघाद खां १२३३-१२४५



देरगाहा कवाबिमस्जिद ।

- ८। कमरुद्दीन तिमुर खाँ १२५३-१२८० ई०
- ९०। इल्तियाज-उद्दीन मुजफ्फर सुप्रिय खाँ
(सुलतान मुयिउद्दीन) १२८०-१२८८ ई
- ९१। अलाउद्दीन मंगलम मालिकजामी
१२८८-१२९८ ई०
- ९२। इब्नुद्दीन बलबन १२९८ ई०
- ९३। महुम्मद परसलन तातार खाँ १२९८ -
- ९४। सुप्रिय (सुलतान मयिउद्दीन) १२०८ "
- ९५। गामिउद्दीन मजफ्फद
(बगवा खाँ) १२२२
- ९६। इबन उद्दीन शेकाउम गाह १२८१-१२८६ ई०
- ९७। गमरुद्दीन यमुन मुजफ्फर खिराजगाह
१३०२-१३२२
- ९८। गवाउद्दीन बहादुरगाह १-१३१२ ई०
- ९८। कटर खाँ १३१६-१३४८ ई०
- २०। बहगाम खाँ १३१२-१३१८ ई०
- २१। यज्जोम लक-मुज्ज १३२४-१३२८ ई०

बहके खाचीन पठान-सुलतानमघ ।

- १। यज्जुद्दीन यमुन मुजफ्फर सुबारकगाह
१३२८-१३४८
- २। यनाउद्दीन यमुन मुजफ्फर यज्जोयाह
१३२८-१३४५
- ३। इल्तियाज-उद्दीन यमुन मुजफ्फर गज्जोयाह
१३४०-१३४२
- ४। यमरुद्दीन यमुन मुजफ्फर इमियसगाह
१३३८-१३५०
- ५। यमुन मज्जहिद मिहन्दरगाह १३३०-१३८८
- ६। यवाउद्दीन यमुन मुजफ्फर पात्रमगाह
१३८८-१३८९
- ७। शेकउद्दीन यमुन मज्जहिद जामजामगाह
१३८६-१४००
- ८। यमरुद्दीन १४०१-१४०२

इमिय खाहीरग ।

- ८। गामिरउद्दीन यमुन मुजफ्फर मज्जमुदगाह
१४४०-१४४७
(१४१ इमिय देलो)

दिल्लीके पठानराजवंश ।

फ़तुव-उद्दौन् एबक
(१२०६से १२१० ई० तक)

अराम

कन्या

पति—ग़मसुद्दीन् प्रमत्तग़ा
(१२१०-१२४५)

नासिर-उद्दौन् मसूद उमन कुल

रुक्न उद्दौन् फ़िरोज़
(१२३५-१२३६)

सुनताना रजिया
(१०-१-१२०८)

मुदज्ज-उद्दौन् बहरामशाह
(१-३८-१२४१)

अला-उद्दौन् समाउद
(१२४१-१२४६)

नासिर उद्दौन् मसूद
(१-४६-१२५१)

ग्यास-उद्दौन् यलखन
(१-६५-१२८०)

मसूद

सुघरा खाँ

के खुसक

मुदज्ज-उद्दौन् कैकोवाट (१२८०-१२८०)

खिलजी-वंश ।

जमान उद्दौन् फ़िरोज़शाह
(१२८०-१२८५)

अन-उद्दौन् मसूदशाह
(१२८५-१२९५)

खान-ई खानान्

अकैलोखाँ

कादिरखाँ
(१२८५-१२८६)

खिजिरखाँ

मादोखाँ

सुवारक कुतब-उद्दौन्
(१२९६-१३००)

माय उद्दौन्

तुगलक वंश :

ग़ाज़ावेग वा ग्यास-उद्दौन् तुगलकशाह
(१३२०-१३२५)

महम्मदखान तुगलक
(१३२४-१३५१)

मिर्षागालार रजष

फ़िरोज़शाह (१३५६-१३८८)

नासिर-उद्दौन् मसूदशाह
(१३८८-१३८९)

जाफरखाँ

फ़तख़ाँ

हुमायूँ सिकन्दरशाह
(१३८९ ई० सिर्फ ४५ दिन)

अबूबकर (१३८८-१३८८)

ग्यास-उद्दौन् तुगलकशाह
(१३८८-१३८८)

मसूदशाह
(१३८९-१४१२)

लोदी-वंश ।

(तैमुर द्वारा दिल्ली पर आक्रमण)

दीलतखाँ लोदी (१४१२-१४१४)

सैयद-वंश

- मैसद खिज़िर खाँ (१४१३ १४२१)
- सेसद मुबारकशाह (१४२१ १४३३)
- महम्मदबिन् खरोट (१४३३ १४४३)
- पन्ना-सहोत्र (धाममशाह) (१४४३ १४५०)

खोदी-वंश

- बडोसमीटी (१४५० १४८८)
- मिहन्दरमोदी निजाम खाँ (१४८८ १५१०)
- इब्नाबिसमोदी (१५१०-१५३०)

- १०। बरतुद्दीन यमुन मुअज़िद बाबू-क-शाह
१४५८-१४७४
- ११। यमसुद्दीन यमुन मुअज़िद यमुनशाह
१४७४-१४८१
- १२। मिहन्दरशाह (२४) १४८१
- १३। जनाबतुद्दीन यमुन मुअज़िद क़रीशाह
१४८१ १४८७

दुदेनी-वंश ।

- १४। पन्नासहोत्र यमुन मुअज़िद दुदेनीशाह
१४८३-१५२० वा-२२
- १५। तामिबद्दीन यमुन मुअज़िद अमरतशाह
१५२१ १५३२
- १६। पन्नासहोत्र यमुन मुअज़िद ख़िरोजशाह (३४)
१५३२
- १७। मयासुद्दीन यमुन मुअज़िद महमूदशाह (३४)
१५३२ १५३७

गुल-वंश ।

- १८। शिरशाह सुत १५३७ १५४५
- १९। महम्मद खाँ १५४५ १५५३
- २०। बडापुरशाह १५५३ १५६१
- २१। जनाबशाह खोर लकठ सुत } १५६१ १५६९
- २२। जवाहिरुद्दीन }

ब-पानी-वंश ।

- २३। इजरात-ब-पाना मोला सुलेमान १५६९ १५७२
- २४। बदाज़िद १५७२
- २५। दाऊद १५७२ १५७६

पठानकोट—विषाया और इरातको अदोके मजबूत मानने
-धरमिगत एक प्राचीन दुग । बकुलीका यमुमान है कि
धरमनेके नाम पर ही इस दुगका नामकरण हुआ है ।

बिन्दु बिन्दुकोसे मतमें पठानिशा (भरपुरके राजव शाही
उपाधि)के इसका नाम पठानकोट पड़ा है । यह
प्राचीन दुग धर्मो भग्नावस्थामें पड़ा है । यहाँ बिन्दु
खोर मुमनमानको धर्मो मुद्राप धारि गरी है ।

पठानिन (हि खो०) बडाही देखो ।
पठानो (हि० खो०) १ पठान जालिखी मन्त्रो, पठान
रमो । २ पठान जालिखी खरिजगत विमियता रजपात-
विमियता यादि पठानिसे मुय पठानपन । ३ पठान खोमि
का भाव । (वि०) ४ पठानोका । ५ जिनका पठान
या पठानिसे सम्बन्ध हो पठानिनि सम्बन्ध रखनीवाला ।
पठानोखोष (हि० पु०) एक अङ्गुली पिकु जिनका काठ
खोर फुल खोपख तथा पन खोर खिखन रग बनमिसे
काममें धारि है । यह रोपा नखो अत्रा। किबन अङ्गुली
धर्ममें पाया जाता है । इसको कालको ठगानर्मिसे एक
प्रकारका योग रन निरकता है । यह रग कपड़ा
र नखेके काममें आग जाता है । बिजोर कुमाक खोर
गढ़वालके अङ्गुलीमें धरमि उय बकुतायनने पाये जाते
हैं । बमके पर रग पठा खानि खोर पखोर बनानिमें
मो धरमो काक धरमरन खोती है ।

विशेष विवरण पश्चिमोत्तर धरममें देखो ।

पठान (हि० पु०) एक पडाहो जालि ।
पठानन (हि० पु०) न देगवाइक दूत ।
पठाननि (हि० खो०) १ बिषोखो कखो खारि बखु
या बन्द य पखु खानिसे निखे मित्रता । २ खिखो मित्रने
से कखो कुक से कर जाना ।
पठानर (हि० पु०) एक प्रकारका धाम ।
पठि (म० बसो०) पठ-बन् (बरवतुम्भ इत्) उय ८:१(१०)
पठन पाठ ।
पठित (म० खि०) पठ-क । १ खचित, ज्ञातपाठ, जिसे
पढ़ चुके हो । २ विधित पढ़ाकिया ।

पठितव्य (स० त्रि०) पठ-तव्य । पठनेके योग्य ।
 पठिताङ्ग (स० लो०) मेषलाभित ।
 पठिति (स० स्त्री०) शब्दालङ्कारभेद ।
 पठियर (हि० स्त्री०) वह ब्रह्मी या पठिया जो कुएँ के मुँह पर बीचोबीच रख दी जाती है । पानी निकालने-वाला उसी पर पैर रख कर पानी निकालता है । इस पर खड़े हो कर पानी निकालनेमें चढ़के कुएँ को दीवार से टकरानेका भय नहीं रहता ।
 पठिया (हि० स्त्री०) घोषनप्राप्त स्त्री जवान और तगड़ी औरत ।
 पठोर (हि० स्त्री०) १ जवान पर बिना व्याई बकरी । २ जवान पर बिना व्याई मुर्गी ।
 पठोनी (हि० स्त्री०) १ किसीकी कुछ ठे कर कहीं भेजनेकी क्रिया या भाव । २ किसीकी कोई चीज ले कर कहीं जानेकी क्रिया या भाव ।
 पठ्यमान (स० त्रि०) पठ-मानच् । जो पढा जाना हो ।
 पठकृतो (हि० पु०) १ दीवारको पानीसे बचानेके लिये लगाया जानेवाला छपर या टट्टी । २ कमरे आदिके बीचमें तख्ते या लट्टे आदि ठहरा कर बनाई हुई पाटन जिस पर चीज भ्रमवाध रखते हैं, टाँड ।
 पडता (हि० पु०) १ किसी वस्तुको खरोट या तीयारीका दाम । २ सामान्य दर, औसत, सरदर, शरह । ३ दर, शरह । ४ भू-करकी दर, लगानको शरह ।
 पडताल (हि० स्त्री०) १ किसी वस्तुकी सूझ छानबोन, गौरके साथ किसी चीजकी जांच । २ ग्राम अथवा नगरके पटवारी द्वारा खेतीको एक विशेष प्रकारकी जांच । यह जांच खरोफ, रब्बो और फसल जायद नामक तीनों कार्योंके लिए अलग अलग तीन बार होती है । खेतमें कौन-सो चीज बोई गई है, किसने बोई है, खेत सोंचा गया है या नहीं आदि बातें इस जांचमें लिखी जाती हैं । ग्रामका पटवारी हर एक पडतालके बाद जिसवार एक नकशा बनाता है । इस नकशेसे मालके अधिकारियोंको यह मालूम होता है, कि इस वर्ष कौन-सो चीज कितने वाघेमें बोई गई है, उसकी क्या अवस्था है और कितनी उपजगी आदि । ३ मार ।
 पडतालना (हि० क्ति०) अनुसन्धान करना, छान बोन करना ।

पडती (हि० स्त्री०) भूमि जिस पर कुछ कालसे खेतों न की गई हो । मानके कागजातमें पडतीके दो भेद किए जाते हैं—पडती जटोद और पडती कटोम । जो भूमि केवल एक सालसे न जोती गई हो उसे पडती जटोद और जो एकसे अधिक सालोंसे न जोती बोई गई हो उसे पडती कटोम कहते हैं ।
 पडना (हि० क्ति०) १ पतित होना, गिरना । 'गिरना' और 'पडना'के अर्थोंमें फर्क यह है, कि पडनी क्रियाका विशेष लक्ष्य गति व्यापार पर और दूमरोका प्राप्ति या स्थिति पर होता है, अर्थात् पडनी क्रिया वस्तुका किसी स्थानमें चलना या रवाना होना और दूमरो उसका किसी स्थान पर पहुँचना या ठहरना सूचित करती है । २ विछाया जाना, डाला जाना । ३ अनिष्ट या अशुभ-निय वस्तु या अवस्था प्राप्त होना । ४ हस्तक्षेप करना, देखल देना । ५ प्रविष्ट होना, दाखिल होना । ६ विधामके लिये सीना या लेटना । ७ डेरा डालना, पडाव करना, ठहरना । ८ मार्गमें मिलना, रास्तेमें मिलना । ९ आय, प्राप्ति आदिको प्राप्त होना, पडता होना । १० प्राप्त होना, मिलना । ११ पडता खाना । १२ खाट पर पडना, बोमार होना । १३ जांच या विचार करने पर ठहरना, पाया जाना । १४ प्रसङ्गमें आना, उपस्थित होना, संयोगवश होना । १५ उत्पन्न होना, पैदा होना । १६ स्थित होना । १७ मथुन करना, सम्भोग करना । यह केवल पशुओंके लिये व्यवहृत होता है । १८ देगान्तर या अवस्थान्तर होना । १९ प्रयन्त इच्छा होना, धुन होना ।
 पडपड (हि० स्त्री०) १ निरन्तर पडपड शब्द होना । २ पडपट देखो । (पु०) ३ मूलधन, पूंजी ।
 पडपडाना (हि० क्ति०) १ पडपड शब्द होना । २ मिर्च, सीठ आदि कडवें पदार्थोंके स्पर्शसे जोभ पर जलन-सी मालूम होना, चरपराना ।
 पडपडाहट (हि० स्त्री०) पडपडानेकी क्रिया या भाव, चरपराहट ।
 पडपूत -- त्रिवाङ्गुके अगस्त्येश्वर तालुकके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम । यह त्रिवाङ्गुडनगरसे ३८ मील दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है । यहाँ बहुतसे प्राचीन मन्दिर हैं जिनमें शिवलिंगिपि उल्लेख हैं ।

पटपोता (वि० पु०) प्रयोज्य पोतिका पुत्र पुत्रका पोता ।
 पट्टबेरू—उत्तरा प्राकृत जिनेके पत्नर तासुके पत्न
 गंत एक निष्पन्न स्तर । कोरि कपति है, कि यही पर
 कुबलरकी राजधानी थी । प्रायः १६ मील लंबे पत्नर
 प्रानाट, देवमन्दिर घोर हस्त पादिके सम्भावयेव पट्टे है
 जिनेके नगरको प्राचीन महारिका उपेत परिचय सिद्धता
 है । प्रानाट है, कि कुनोम कुचोन पुत्र पट्टोपट्टेने उर
 नगरको विध्वस्त घोर प्रतप्त नवगुप्त कर डाला था,
 तमाये इसी पत्रव्या सुधरो नहीं है । पट्टबेरू नामक
 बडाक नूतन पामने बहुत कम लोग रहते है । इसी
 पामने रसुका घोर रामलामोड मन्दिरने यिनालिपि
 दिनी जाता है । १३६८ ई०में उन्कोय गिजातिपिने
 'पट्टबेरू का बन्दो है ।
 पट्टम (वि० पु०) खेमे पादि बलामेके कामन पामेयाना
 एक प्रकारका मोटी सुनो लवण ।
 पट्टका (वि० स्त्री०) अनेक पत्रको प्रथम तिथि ।
 पट्टकाना (वि० लि०) पट्टनेका काम कुचरैके कराना,
 गिरवाना ।
 पट्टनी (वि० स्त्री०) बीमाय या जीठ मामने कोरि
 कानिवासी एक प्रकारकी रूख ।
 पट्टारन (वि० स्त्री०) व वादर रेखी ।
 पट्टाका (वि० पु०) ब्याज रेखी ।
 पट्टाना (वि० लि०) सुकाना, गिराना ।
 पट्टापट्ट (वि० लि० लि०) प्याण्ट रेखी ।
 पट्टाव (वि० पु०) १ लामोसमुद्रका यात्रा बीषमे पत्र
 स्त्रान । २ नर स्त्रान ब्रह्म यामो ठहरते हो, बहो,
 डिक्कान ।
 पट्टागो (म० स्त्री०) पनापण्ड, बाकडा पिङ्ग ।
 पट्टिया (वि० स्त्री०) मेसका प्राहा बन्धा ।
 पट्टिबाना (वि० लि०) १ मेसका मेसेवे म लोग जो
 जाना, मे साना । २ मे सको मेसुनार्थ मे देके समोप
 पट्टु चाना ।
 पट्टुवा (वि० स्त्री०) अनेक पत्रका प्रथम तिथि, पट्टका
 प्रतिपदा ।
 पट्टेव (वि० पु०) पट्टक रेखी ।
 पट्टोरा (वि० पु०) पत्रक रेखी ।

पट्टोम (वि० पु०) १ प्रतिवेग बिभोको समोपके धर ।
 २ बिना स्थानको समोपवर्ती स्थान ।
 पट्टु मा (वि० पु०) प्रतिबानो, प्रतिवेगो पट्टोमने रहने
 बाना ।
 पट्टोमो (वि० पु०) पट्टोपी रेखी ।
 पट्टुपति (म० पु०) असुरभेद एक राक्षसका नाम ।
 पट्टुभोग (म० स्त्री०) १ पाटकम्पन । ० पाटकम्पनयोम्य
 रण्यु ।
 पट्टुत (वि० स्त्री०) १ पट्टनेको छिया या भाव । २ मण्ड,
 बाट्ट ।
 पट्टना (वि० लि०) १ जिनेको पुष्टकका सेक पादिको उर
 प्रकार देखना कि समने बिखो बात मान्युम हो नाय ।
 २ मण्ड करमे बचना, उधारन करना । ३ बिना मीस
 के पट्टपडे स्थित मण्डोको सु इमे बोलना । ४ नया पाठ
 प्राप्त करना, नया मन्त्र सीना । ५ पत्रक रचनेके सिधे
 बिनी विपदका बार बार उधारन करना । ६ मन्त्र
 पूजना प्राप्त करना । ७ यिथा प्राप्त करना, प्रथमन
 करना । ८ ताति मना पादिका मनुष्योके सिधारे हुए
 शब्द उधारन करना । ९ एक प्रकारको मन्त्रो ।
 पट्टिना रेखी ।
 पट्टको (वि० पु०) एक प्रकारका पान ।
 पट्टनी पट्टो (वि० स्त्री०) कनरतने एक प्रकारका अभ्यास
 जिनेमे पादको टोका या पन्थ कोरि का को पील उरुस
 कर लायो जाती है । इसके दो गेट है—एकमे सामनेकी
 घोर घोर दूधरेमे पट्टिको घोर उरुसते है उरुसनेबानो
 के पन्थ सके धनुभार टोका को का चारि रहती है ।
 पट्टकाना (वि० लि०) १ बिनेमे पट्टनेको छिया
 कराना व बनाना । २ बिनाके वार दिवाको यिथा
 दिवाना ।
 पट्टुवेया (वि० पु०) १ यिथारो पट्टनेबाना ।
 पट्टाई (वि० स्त्री०) १ बिधाभ्यान पत्रकन डन, पट्टने
 का काम । २ नर बन का पट्टनेके बदनमे दिवा जाय । ३
 पट्टनेका भाव । ४ पद्यापन पाठन पोती । ५ पट्टने
 का भाव । ६ पद्यापन मोका पट्टनेका उग । ७ नर
 बन को पट्टनेके बदनमे दिवा जाय ।
 पट्टाना (वि० लि०) १ पद्यापन करना, दिवा देना । २

मिथाना, ममभाना । ३ कोई कला या हुनर मिथाना ।
४ तोते, मैं ना घाटि पल्लियोंकी मोलना मिथाना ।

पट्टिना (हि० पु०) तालाव और मसुद्धमें पाई जानेवाली
एक प्रकारको विन मेहरकी मछली । यह मछली प्रायः
सभी मछलियोंमें अधिक दिन तक जीतो है और डील-
डोलवाली होती है । कोई कोई पट्टिना दो मनमें
अधिक भारी होता है । यह मांसायी है । इसके मारे
शरीरके मांसमें बारीक बारीक कांटे होते हैं जिन्हें टात
कहते हैं । वैद्यकमें इसे कफपित्तकारक, बलदायक
निद्राजनक, कोष्ठ और रक्तोप उत्पन्न करनेवाला लिखा
है । इसके और भी नाम हैं, जैसे पाठीन महसूट्ट,
बोटालक, बदानक पट्टिना और पट्टिना ।

पट्टैया (हि० पु०) पाठक, पट्टेवाला ।

पण (स० पु०) पण्येऽनेम पण व्यवहारो ऋप् । (नित्यं
पण परिणामे । पा ३।३।६६) । १ कर्षपरिमित तन्त्र,
किसीके मतमें ११ और किसीके मतमें २० मासेके बराबर
तांबेका टुकड़ा । इसका व्यवहार प्राचीनकालमें सिक्के
को भांति किया जाता था । २ निर्देश, वेतन, तनखाना ।
३ श्रुति, नोकरो । ४ द्यूत, जुबा । ५ खर, बाजो । ६
मूल्य, कोसत । ७ अगोति-वराटक, अस्मो कौडी । ८
धन, सम्पत्ति, जायदाद । ९ कार्यापण । १० प्रतिज्ञा, शर्त,
कौलकरार । ११ वह वस्तु जिसके देनेका करार या
शर्त हो । १२ शुक, फोम १३ व्यवहार, व्यापार,
व्यवसाय । १४ स्तुति प्रशंसा । १५ प्राचीन कालकी
एक विशेष माप जो एक मुट्ठी अनाजके बराबर होती थी ।
१६ शीण्डक, कलवार । १७ गृह, घर । १८ विष्णु ।
विवाहादिमें कन्याकर्त्ता वरकर्त्ताको अथवा वरकर्त्ता
कन्याकर्त्ताको जो रूपया देता है, उसे भो पण कहते हैं ।
(त्रि०) २० क्रयविक्रयादिकारक, खरीदने वेचनेवाला ।
पणशब्द (स० पु०) पणस्य विक्रयादेश्यं न्ययत् । इट्ट,
हाट, बाजार ।

पणधा (स० स्त्रो०) पणधान्या लण, एक प्रकारको धास ।

पणन (स० स्त्रो०) पण व्यवहारो ल्युट् । १ विक्रय, वेचनेकी
क्रिया या भाव । २ खरीदनेकी क्रिया या भाव । ३
व्यापार या व्यवहार करनेकी क्रिया या भाव । ४ शर्त
रूपाने या बाजी बंदनेकी क्रिया या भाव ।

पणनोय (स० त्रि०) १ धन दे कर जिसमें काम लिया
जा सके । २ जिसे खरीदा या बेचा जा सके ।

पणपर (स० स्त्रो०) लग्नस्थानमें हितोय, पञ्चम, षष्ठम
और एकादश स्थान, कुण्डलोमें लग्नमें २रा, ५वा और
११वा घर ।

पणव (स० पु०) पणं स्तुतिं वातीति पण वा-क । १ एक
प्रकारका वाद्ययन्त्र, छोटा नगाडा । २ छोटा ढोल ।
३ एक वर्णवृत्त । इसके प्रत्येक चरणमें एक भंगण, एक
नगण, एक यगण और अन्तमें एक गुरु होता है ।
इसमें ६६-१६ मात्राएं होती हैं, इस कारण यह चौपाई-
के भी वर्तमान प्राता है ।

पणवन्ध (स० पु०) पणस्य बन्ध । खर, बाजो बंदना,
शर्त लगाना ।

पणथा (स० स्त्रो०) पणव टाप् । पणव, छोटा नगाडा या
छोटा ढोल ।

पणवानक (स० पु०) नगाडा, धौंस ।

पणविन् (स० पु०) महादेव, शिव ।

पणग (स० पु०) कण्टालुफलवृक्ष । (*Artocarpus integrifolia*) कटहलका पेड़ । भिन्न भिन्न
स्थानमें यह भिन्न भिन्न नामसे पुकारा जाता है, जैसे—
हिन्दी—कटहल, महाराष्ट्र—फणसु, कर्णाट—हलसिन,
तैलङ्ग—उत्पनस, तामिल—विष्णा । इसके फलका गुण—
मधुर, पिच्छिल, गुरु, हृद्य, वलवायुवृद्धिकर, अम, दाह
और शोषण, रुचिकर, याचक और दुर्जर । बोजका-
गुण—ईपत्तु कषाय, मधुर, वातल, गुरु और त्वग्दोष
नाशक । कच्चे कटहलफलका गुण—नोरस और हृद्य ।
मध्यपक्षका गुण—दोषन, रुचिकर और लवणादियुक्त ।
पक्वफलका गुण—रक्तवर्द्धक, मधुर, शीतल, दुर्जर,
वातपित्तनाशक, शोष, शुक्र और बलकर । मज्जाका गुण—
शुक्ल, त्रिदोषनाशक, गुल्मरोगमें विशेष हितकर । इस-
का क्वाथ मास ग्रन्थिशोफमें हितकर तथा कीमल पल्लव
चमरोगमें हितकर है । कटहल देखो ।

पणस (स० पु०) पणायते इति पण-भसच् (अत्यविचमीति ।
उण् ३।१।१०) पण्य द्रव्य, क्रय विक्रयकी वस्तु, सोदा ।

पणसुन्दरा (स० स्त्रो०) बाजारो स्त्रो, रंड़ी, वैष्णा ।

पणखी (स० स्त्रो०) पण्येन धनेन लभ्या स्त्रो । वैष्णा,
रंड़ी ।

पत्नीत्यर्थ—सौहार्द के लिये एक पवित्र तोर्म । योद्धक
 कुलामग्न्य उपनिषद्गत पत्नी नामक परवना के
 ओर नाटक प्रवृत्तकी चर्चितका पर ही पत्नीत्यर्थ पत्र-
 म्यत है । एक एक इच्छक नाम है । प्रति बाह्यी
 भाग्ये पत्नी मनुष्य परा का तर्कके लिये पति है ।
 पत्नीत्या (म० स्त्री०) पर्यंत लब्धा चरुता । चरुता,
 रत्न ।

पत्नीया (म० स्त्री०) पत्नीयते चरुताइत्यत इति पत्र
 अथवा स्तुति के लिये भाव ततो भाषि पद्य तत
 टाए । १ स्तुति प्र. मा । २ च. त, तुपा । ३ कर्त्तव्यप्र
 पद्य अथवा, भा पार, वाचमाय ।

पत्नीयत (म० स्त्री०) पत्नीयत इत पत्र स्थापि पाठः
 ततः त (प्रा. प. अ. अ. अ. अ. वा । वा ३१३१) १
 स्तुति प्र. मा. ही प्र. मा. की गई है । २ अथवा, त्रिभुक्त
 अथवा (कथा मया हो । ३ स्तुति को प्रतीक मया ही
 पत्नीयत् म० स्त्री०) पत्नीयत पत्नीय भा पत्नीय । अथवा,
 वाटक, काकी ।

पत्नीयत् (म० स्त्री०) पत्नीयत् स्थापि कम् । वाटक
 कीकी ।

पत्नीयत्—सुप्रसिद्धि पाठः । त्रिभुक्तार्थ एक तथमा ।
 इसमें तत्पर पत्नीयती भा टाविय अथवा तदी पूर्व-
 पत्नीयते विस्तृत है । इसका मूलार्थमात्र ३४१ अगमोन
 है । यहाँ मन् योका विस्तृत अथवा हीता है ।

२ अथवा तथमात्वा अथवा भा प्रदान मया । यह
 पत्नी २६ ३६ ३८ ३९ तत्वा दिग्मा ८८ ९४ ३८
 ५०० अथवा पत्नीयत है । यहाँ तान अथवा अथवा अथवा
 हिन्दू देवमन्दि है ।

पत्नी (म० स्त्री०) पत्र अथवा इत् । पत्नीयत्तिका
 अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा ।

पत्नीय (म० स्त्री०) पत्र ।

पत्नीयार्थ (म० स्त्री०) अथवा अथवा ।

पत्नीयत् (म० स्त्री०) पत्नीयत् इति पत्र अथवा पत्नीयत्
 मद्य । १ अथवा, २ अथवा, ३ अथवा । ४ अथवा ।
 (अ) अथवा । ६ अथवा ।

पत्नीयत् (म० स्त्री०) पत्नीयत् इति पत्र अथवा । १ अथवा
 अथवा अथवा अथवा अथवा । २ अथवा अथवा अथवा

अथवा अथवा । ४ अथवा अथवा अथवा अथवा ।
 अथवा (म० स्त्री०) अथवा अथवा अथवा अथवा ।
 अथवा (म० स्त्री०) अथवा अथवा अथवा अथवा ।
 अथवा । १ अथवा अथवा अथवा । २ अथवा अथवा । (पु०) ।
 अथवा ।

पत्नीयत्तिका—अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा ।
 अथवा । अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा । अथवा अथवा
 अथवा अथवा । अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा ।
 अथवा अथवा ।

पत्नीयत्तिका—अथवा अथवा अथवा अथवा । अथवा अथवा
 अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा । अथवा अथवा
 अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा ।

पत्नीयत् (म० स्त्री०) अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा ।
 अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा । १ अथवा अथवा
 अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा ।

पत्नीयत् (म० स्त्री०) अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा ।
 अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा ।

पत्नीयत् (म० स्त्री०) अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा ।
 अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा ।

पत्नीयत्तिका—अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा ।
 अथवा । अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा । अथवा अथवा
 अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा । अथवा अथवा
 अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा ।

पत्नीयत्तिका—अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा ।
 अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा । अथवा अथवा अथवा
 अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा । अथवा अथवा
 अथवा अथवा अथवा अथवा अथवा ।

घे। भारतवर्षके नाना स्थान सिन्धु और चीन प्रादि देशोके व्यापारो इस बन्दरमें लंगर डाल कर बहुमूल्य द्रव्यादि खरोदते थे।

पण्डा (मं० प्लो०) पण्ड टाप । १ तोच्छ बुदि । २ शास्त्रज्ञान । ३ वेदोच्चना बुदि ।

पण्डापूर्व (मं० क्लो०) पण्डं निष्कन पपूर्वं षट्ठं । १ फलपाधनयोग्य फलानुपहित धर्माधर्मात्मक षट्ठं । मोमासा शास्त्रानुसार वह धर्माधर्मात्मक षट्ठं जो अपने कर्मका फल देनेमें प्रयत्न्य हो । मोमानाका मत है, कि प्रत्येक कर्मके करने हो चाहे वह प्रथम हो वा धर्म एक षट्ठं उत्पन्न होता है । इस षट्ठंमें अपने कर्मके शुभाशुभ फल देनेको योग्यना भोतो है परन्तु कितने कर्मोंके शुभाशुभ फल तो भिन्नते हैं और उनके फलोंके मिलनेका वर्णन अर्थशास्त्र वाक्यामि है, पर कितने ऐसे भी हैं जिनका फल नही मिलता । सोमामर्कोंका मत है, कि सन्ध्यावन्दनादिका अनुष्ठान नहीं करनेसे दूरष्टं उत्पन्न होता है । इसके अनुष्ठानमें किसी प्रकारका शुभाष्टं नहीं होता, किन्तु पापक्षय होता है, इसीसे इसको फलानुपहित धर्माधर्मात्मक षट्ठं कहते हैं । २ फलका अप्रतिपादक षट्ठंभेद । नैयायिक लोग इस प्रकारक षट्ठंको नहीं मानते ।

पण्डारस—नोच वा शूद्रथोषीका हिन्दूसंन्यासो । ये लोग दक्षिण भारत और सिंहालद्वीपमें निम्नथोषीके हिन्दुओंका पौरोहित्य करते हैं । इनमें कितने वैष्णव और शैव हैं । सिंहालद्वीपके नागतस्वोरण देवमन्दिरमें और महिसुरके अन्तर्गत चेर नामक स्थानके शिवमन्दिरमें ये लोग पुजारोका काम करते हैं ।

पण्डारदेव—विजयनगरके राजा । १४१४ ई०में विजयरायके मरने पर ये सिंहासन पर अधिरूढ़ हुए । राजपद पानेके साथ ही इनका राज्यवृद्धिको और ध्यान दोड़ा । नाना आयोजनके बाद १४४३ ई०में इन्होंने तुङ्ग भद्रानदो पार कर सागर और वाजापुर पर आक्रमण किया । यहा मुहल और तुङ्गभद्रा नदोके मध्यस्थलमें हिन्दू और मुसलमानोंके बीच तीन वार युद्ध हुआ * ।

* छुरासान राजदूत अवदुल रज्जाक (१४४२-४३ ई०में) जब भारतवर्ष पधारे, तब वे इस युद्ध तथा विजयनगरके

युद्धमें दो सुसन्मान सेनापति बन्दे हो कर राजाके समीप भेज दिये गए थे । १४५० ई०में पण्डारदेवको मृत्यु हुई ।

पण्डित (मं० पु०) पण्डा वेदोच्चना तत्त्वविपश्चिणो वा बुदिः सा ज्ञाताऽप्य, इत्यच् । / तदप्य संज्ञानं आकाशिय इत्यच् । पा ५।२ ३६, वा पण्डिते तत्त्वज्ञानं प्राप्यतेऽस्मात् गत्यर्थे क । १ शास्त्रज्ञ, वह जो शास्त्रके गार्थ तात्पर्यमें प्रथमतः है ।

‘ निवेदते प्रशस्तानि निदिनानि न येनै ।

खान्तिश्च धृष्ट्याग एतत् पण्डितवक्षणम् ॥ ”

(निन्तामणि)

जो प्रगल्भ कार्योका अनुष्ठान करते हैं और निन्दित विषयोंकी सेवा नहीं करते तब जो अनास्तिक और अज्ञावान् हैं, वही पण्डित कहनाते हैं । महाभारतमें लिखा है—

“ पठकाः पाठकारैश्च ये चान्ये इत्यनित्यकाः ।

सर्वे व्यसनिनो मूर्खा यः किंवायान् स पण्डितः ॥ ”

(भारत वनपर्व)

पठक और पाठक, जो मर्बदा शास्त्रकी पालोचना करते तथा जो क्रियावान् हैं उन्हें पण्डित और जो व्यसनमग्न हैं उन्हें मूर्ख कहते हैं । गीतममें लिखा है—

“ विद्याविनयसम्पन्ने ब्रह्मणे गति हस्तिनि ।

शुनि चैव स्वयंके न पण्डिताः समदर्शिनाः ॥ ”

(गीता ५।१७)

विद्याविनयसम्पन्न ब्राह्मण, गो, हस्ती, कुक्कुर, चण्डाल प्रादि सभी जीवोंमें पण्डितगण समदर्शी होते हैं । जो कोई वस्तु परिदृश्यमान होगी, उसे ही जो ब्रह्मभावसे देखते हैं, वही पण्डित हैं । जिन्होंने अविद्याद्वारा आत्मनस्त्वका माप्तात्कार किया है, वे ही पण्डित पदवाच्य हैं ।

पण्डित शब्दके पर्याय—विद्वान्, विपश्चित्, दोषघ्न, मत्, सुधी, कोविद, बूध, धीर, नमोच्च, प्राज्ञ, संस्था-
अतुल ऐदर्व्य और हिन्दूधर्मके अविचलित प्रतापको देते कर अपने रोजनागचेमें इसका उल्लेख कर गये हैं । W Manfor-
ने एक पुस्तिकाका अनुवाद कर India in the fifteenth century नामक एक ग्रन्थ प्रकाशित किया ।

नाम्, कवि श्रीमान्, धरि, ज्ञानो, ज्ञाति मन्त्रवर्ध
विषयवत् दूरदर्शी दोषार्थो, विगारण, कथो, विप्रथ,
दूरदृष्ट, शिटी इव इव विद्याग, प्रथिन, ज्ञाति, विप्र,
मेवाभो धीर विप्रव ।

२ महादेव । (वि) १ कुग्राम प्रयोग, चतुर । ४
न स्तुत भाषाया विद्यान ।

पञ्चितक (न० पु०) १ धृतराष्ट्र एक पुत्रका नाम ।
पञ्चित शार्ङ्गकम् । २ पञ्चित मन्दाब ।

पञ्चितप्राणोय (स० वि०) १ मातृ-प्राणमेट । २ महा
मात्रमेट ।

पञ्चितता (स० श्लो०) पञ्चित-भावे तन्, शिवां टाय ।
पञ्चितत्व पाण्डित्य ।

पञ्चितमालिक (स० वि०) जो अपनेको पञ्चित कल्पना
कर परिमाण करता है मूर्ख ।

पञ्चितमालिक (स० वि०) पाषाण पञ्चित मन्वते
पञ्चित मन-रति । मूर्ख ।

पञ्चितव्यस्य (स० वि०) पाषाण पञ्चितव्यस्यते यः
पञ्चित मन व्यस्य सुम् (काश्यपने कश्च) प १।१।२२)
अपनेको विद्यान् मानसिवाला मूर्ख ।

पञ्चितव्यसमान (स० वि०) पञ्चताभिमानो, मूर्ख ।

पञ्चितराज (स० पु०) पञ्चितानां राजा टव यमा
भावा । पञ्चितबेट ।

पञ्चितसुर—नरसि वचस्पृषि प्रथेता ।
पञ्चिता (स० वि०) विदुषो ।

पञ्चितारण (वि० श्लो०) परिहारी केको ।
पञ्चितार्थ (वि० श्लो०) विद्वत्ता पाण्डित्य ।

पञ्चिताल (वि० वि०) पञ्चतीर्थे जगथा ।
पञ्चितानो (वि० श्लो०) १ पञ्चितकी श्लो । २ ब्राह्मणी ।

पञ्चितिमन (स० पु०) पञ्चितत्व भावा इन्द्रादित्यात्
इमलिच् । पाण्डित्य ।

पञ्च (स० वि०) १ पौषापन शिवे मठतैका । २ पौषा ।
३ श्वेत लविद ।

पञ्चुपा—ब्रह्मण प्रदेयमि इष नामके तीन पास हैं, पहला
मानव जिनमें, दूसरा ब्रह्मको जिनमें धीर तोसरा मान
भूम जिनमें ।

मि पिङ्गुपा या बड़ा पै जो धीर ब्रह्मको जिनमें पञ्चुपा
पासको पिङ्गु या छोटा पै जो जन्ते हैं । मासकत्र
जिनमें पञ्चुपा चचा २१ ८ ० धीर शशा० ८८
१० पू० तथा ब्रह्मको पञ्चुपा चचा २२ २ १०
धीर शशा० ८८ १० पू० मन्त्र चमन्वित है । बड़ा
पै जो अपने जन्मार्थ है जोर छोटे पै जो मन्त्र कीर मीन
जन्म मनुष्योंका नाम है । एक समय ये दोनों स्थान
बड़े को मनुष्यमानो थे, पर अपने यहाँको पूर्वजो विश्व
कुल जाता रही । पहली यहाँ ब्रह्मणका राजधानी हो ।
दुस्रियात मोक्ष नगरका अपना इसकी प्रतिपत्ति जिनकी
चर्म नाम न बी । पर मो तहाँ प्राचीन कीर्ति योंकि
यथेष्ट भस्मावधेय दिव्यनिर्मि पाति हैं । ब्रह्मको जिनमें
जो पञ्च या पास है उसीका मन्त्रिम विवरण यहाँ पर
दिया जाता है । १०५ १०५ मन्त्र यह ज्ञान च मन्त्रोंके
अर्थो तथा बर्हमानरात्रके जर्मोडारोमुत्र ब्रह्म वा ।
यहाँके प्राचीन दुर्गको बार्द पात्र भी विद्यमान है ।
प्राचीन मन्त्रिय तथा बड़े बड़े सुदृष्ट पाट पादिका
मन्त्रावधेय दिव्यनिर्मि १५ म् होता है कि यह
एक समय अतिमनुष्यमानो नगर था । १८वीं शताब्दी
के पारसमें भी यहाँका आगजका कारबार नियोग
प्रतिह था । 'पिङ्गु' आगजको कहा पास म सुसह
मानोंके सुखसे सुनी जाती है । कहते हैं कि पञ्चुपा
का आनन हीच आलस्यायी धीर पलना होता था ।
सोग नियोगत इसो आननको आसमें पाति है ।

पञ्चुपाके पञ्चिगामी प्रथानतः सुसममान हैं, जिन्को
च क्या प्राय नहींके प्रथान है । यहाँके प्रथो सुसल
मान अपनेको प्राय नहींकी जिनमें नामक एक धीरके व ध
वर मनकाति हैं ।

पारि-र-पञ्चधरीके बिबा लपके मो प्राचीन जिनकी
सुसलमानो इतिहासमें छोटे पञ्चुपाका नाम नहीं
लिखता ।

इसकी नामोत्पत्तिके विषयमें इस प्रकार प्रथमान
बिबा जाता है,—गोक्षुको प्राचीनतम राजधानी पञ्च
बर्हनिमे अब पादिगुरी व मन्त्र पाकराच द्वारा भगाये
गये तब गुरुगौरव लुपतिवच लुपितराठमें पा कर
राज्य आनी बनी । पञ्चमत चर्चोमि की पूर्वतन पोष्युके

नामानुसार नव राजधानीका नाम 'पौण्ड्र' वा 'पुण्ड्र' रखा । उसी पौण्ड्रका अपभ्रंशरूप पण्डुशा वा पण्डु पुंडी हुआ है । यहाँ जो पहले शूर पीछे मेनराजगण राज्य करते थे, वह प्राचीन कुलाचार्यग्रन्थ 'शौर वर्तमान पण्डुशासे टाई कोमकी दूरी पर रणपुर, बमाल द्विगी आदिके नाम देखनेमें ही सङ्गमें अनुमित होता है । पाल, सेन और शूरराजों ने देखा ।

यहाँ पेंडोका मन्दिर नामक स्तूप, एक भूत प्राचीन मसजिद और मफीउद्दीन समाधि मन्दिर ही प्राचीन कीर्तियोंमें प्रधान हैं । इल-स्ट्रेट्जने ने ये सब प्रायः आध्र घण्टेके पथ पर अवस्थित हैं । उक्त भूत-मसजिदके सिवा अभी कुतुबशाही नामकी एक और मसजिद विद्यमान है । कहते हैं, कि ११४० हिजरीमें (१७२७-२८ ई०में) सुवर्गीय शजाहानके पुत्र फतेखाने इस मसजिदका निर्माण किया ।

अब मालदह जिनके पण्डुशाका मंजिम विवरण दिया जाता है,—इसे लोग कहते पण्डुशा भी कहते हैं । यह अभी बङ्गालकी राजधानी गौड नगरीके ध्वंसावशेषसे १० कोम और मालदह नगरसे ३ कोम दूर उत्तरपूर्वमें अवस्थित है । गौडकी तरफ यह उतना विख्यात तो नहीं है, पर एक समय सुसलमान शासकोंकी यहा राजधानी होनेके कारण इसके अनेक ऐतिहासिक विवरण मिलते हैं । दुर्गप्रामादाटिका भग्नावशेष अब भी देखनेमें आता है । मालदह जिनका यह अर्थ तथा इसके पार्श्ववर्ती दिनाजपुर जिलेके भूभाग महास्थानगढ़ प्रभृति स्थान ऐतिहासिक अनुसन्धितके निकट बड़े ही प्रयोजनीय हैं । दुर्गका विषय है, कि अंगरेजी मानचित्रमें गौड अङ्गलका स्थान तो निर्दिष्ट है, पर पण्डुशाका स्थान निर्दिष्ट नहीं है । पूर्वीक हुगली जिलेमें जो पण्डुशा है उसके माथ इस पण्डुशा नगरीका कोई गोलमाल न जाय, इस कारण डा० कनिंङम इसका नाम 'हजरत पण्डुशा' रख गये हैं ।

पण्डुशाके नामके सम्बन्धमें कनिंङम साहब कह गये हैं, कि हिन्दू लोगोंने पाण्डवके संशयसे इसका नाम 'पाण्डवीय' पीछे 'पण्डुशा' रखा है, किन्तु इस

प्रदेगमें 'पाण्डुशा' नामक एक प्रकारका जलचर पक्षी अधिक संख्यामें पाया जाता है, गायट इसी मूलसे पण्डुशा नाम पड़ा होगा । कनिंङमने यहाँ पर एक अद्भुत नामतत्त्व प्रकाशित किया है, किन्तु अनेक ऐतिहासिकोंने अभी यही विद्वाना भिगा है, कि यह 'पौण्ड्रवर्देन' नामका ही अपभ्रंश है । महाभारतीय कालमें पौण्ड्र राज्य विख्यात है । ब्रह्मगुप्त पौण्ड्र-वर्देनका विषय प्रभाव था । डा० कनिंङमने महा-स्थानगढ़के ऐतिहासिकतत्त्व विचारके समयमें पौण्ड्र-वर्देन नाम ले कर यह शूर अद्भुत युक्तिकी अवतारणा की है । वहाँ पर उन्होंने कहा है, कि पुण्ड्र नामक ताम्रवर्ण इन्तुकी प्रचुरतामें इस पण्डुशाका नाम पौण्ड्र पड़ा है । जो कुछ ही, ये सब तर्क 'पौण्ड्र-वर्देन' शब्दमें मीमांसित योग्य ।

सुसलमानो प्राचीन इतिहासमें सुसलमान अलाउद्दीन खलीजाहके राजत्वकालमें पण्डुशाका उल्लेख देखा जाता है । इन्होंने ही फकीर जलालउद्दीन ताब्रेजीका समाधि मन्दिर बनवाया । अलाउद्दीन खलीजाहके राजत्वमें मो वर्ष पहले (६४१ हिजरी वा १२४४ ई० में) फकीर जलाल उद्दीनको मृत्यु हुई । सुतरां उस समय भी पण्डुशाको प्रतिष्ठि थी, ऐसा कहना होगा । इस हिमायमें अन्ततः १२४४ ई०में भी पण्डुशाका अस्तित्व पाया जाता है । उसके बाद इलियस शाहके राजत्वकालमें इसका द्वितीय बार उल्लेख देखा जाता है । तुगलक वर्गीय फिरोज शाहके आक्रमण पर इलियस शाह पण्डुशाका परित्याग कर एकडाला नामक स्थानकी भग गये । फिरोज शाह एकडालामें घेरा डाल कर पण्डुशा का कर ही लौटे थे । पीछे ७५६ हिजरी (१३५८ ई०) में सिकन्दर शाह कर्छक पण्डुशा फिर-से स्थायी राजधानीरूपमें परिगृहीत हुआ । इस समय उनमें पण्डुशाकी विख्यात अटीना मसजिद बनाई । तदनन्तर जलालउद्दीन और अल्लाउद्दीन राजत्वकालमें भी पण्डुशा ही राजधानी थी । किन्तु प्रथम महम्मदके राज्यारोहणके माथ माथ पण्डुशासे राजधानी उठा कर पुनः गौडुशा लाई गई । इसी समयमें पण्डुशाकी भूगण्डना आरम्भ हुई है ।

यहांकी शारदाई समजिद, कुतुबशाहकी समजिद
मोना समजिद, एकमावी-समजिद यहीना समजिद
निहन्दाकी कन्न धोर मत्तारिम हर विगोप प्रन्त्र ई ।

विदेव विराय घोसुवईर मयई बयो ।

पण्डक (स ० पु ०) १ आनरोमकुत्र, वन जिनै प्रात रोम
दुपा हो । २ पण्ड, ल यश ।

विषवींशक पूर्वादि मयसपुरी व वन्दुकाः ।
(माधुच्छेव गुण)

माय काममें श्रीराम हरनेने को सत्ताय जयम
मिनी के बह पण्डक रोनी है । ३ योश लपु मक ।
इन्दुरपुर-१ इयईक प्रदेगके योनापुर त्रिभिका एक
तामुक । यह पचा १० २८ से १० ३६ क तथा
देगा ०३ ६ से ०३ ११ पूरे मय पवस्थित है ।
भूपरिमात्र ३०८ बय मीन धोर जलम म्या कापके कौरी
है । ४ ममें २ शहर धोर ८२ याम जलने है । यहाँकी
प्रधान मनी भीमा धोर मान है । मन्पापु यका है ।

२ तम तामुकका एक शहर । यह पचा १० ३१
४० तथा देगा ०३ २६ पू मीमादीर दक्षिण दिशा
पवस्थित है । जलम म्या प्राय ३०३० है । यहाँकाममें
अथ मदीहा जल यत्र बड़ पाता है तर याम पामर
मदी कामेके पण्डपुर मय देवनेके बहन मुन्दर कगता
है । लहो ममें करके ऊपर विन्दुका धोर मारन मन्दिर
तथा धनूरवर्षी तोरभूममें पम मय योपालावन के धोर
कम योपालके ऊपर बहो तो मारुशक्ति इय मिय
कहीं शारदाविद्यारिषो मयसपुरी मया उम्यानि धोर
कहीं कन्न धोर मन्मिपुत्र विद्याजिन है । इन मयने
मयरको भीमा धोर भी बड़ जाता है । दक्षिणाममें
यहाँका यथामाहाय्य मय प्रविष्ट है । विन्दुका मया
पूर्वीर जिन मया मयायाम विन्दुका धोर कुडमगा
पादिहा तोरमाहाय्य तथा विन्दुपुमें मयमयि
पादि विजिन है तमी मयार मयिगाममें पाय म्भु
चमके विन्दुके मय मय मय मय इम मयमय
दक्षिणामका मयातय मयमने है । विन्दुपुमें यत्र
मयि धोर विन्दुकादि मनी काय यहाँ मीन है ।
यहाँ तक कि मयकाममें भीमा यहाँ भी कन्नमदीर
ऊपर विन्दुका पडित हो कर कामेके विन्दुके है । ५ को

कारण पण्डपुरमें मयो मयप यनेक तोरपासिदीका
मयायम दुपा करता है ।

दक्षिणामयामो मयमय मय पण्डपुरके विठोवादि
का पयितर मयय करती है । तम विपयमुर्त
विन्दुमयामका एक मेट है । मयके मयारमयमें यहाँ
विठोवाका मन्दिर मयिठिन है मयके विन्दुके मयम
पण्डरिषेन मयमने पयिष्ट है । योमाय पापाइ
धोर ययहाययमयमें मयार मीन कन्नारमि से कर क्क
मयय तम मयुय पवयित यामि है । प्रति मयमको यका
एकाम यो यहाँ मय टम कन्नार ययिदीका मयायम
होता है ।

पण्डपुर मय यमि योहाका मयमयाम था ।
विन्दुमयके मयार धोर ययिदक विन्दुके मय मय
पण्डपुरका योहाकिकार मय हो गया है । मयमुचमें
विठोवाका प्रतिमुर्त देवनेने के कुडिमी मूर्ति मी
मयम मयुतो है । पण्डपुरमें पात्र मी ०३ धर जेन
मय करती है । तमका मय है कि विठोवा मयिदके
एक तोरपाइ है । तम ८३ यहाँके ८ यहाँके ययवि
विन्दुमय है । ये मीन देवमन्दिरके मयमने मयुमोत
धोर मयय करती है । यहाँके बहके मयमय मयुमय
मयमय य योमुय है । ये मीन ययिदीकी मयय करके
देवमुर्तियामि धोर यमके दिव दुप ययहायि
मयय करती है । मयिष्ट विन्दुमय मयमयम पण्डरिषेनको
मय मयमय मयने है । यमने तथा यमके मुक
मयमने मयमो मयमनमीना यहाँ धर मय कोयो ।

पण्डपुर मी मयमय है यो ।

१६२८ ई में तोतापुरके मीमयमय पण्डमय यमि
यहाँ मयमो कामो यो । १०८४ ईमें मियका मयनाय
मयय मय विन्दुकाकाय मयमाका कुड दुपा । मयो मय
मया कन्नमयम धोर दक्षिणामयके मयायययको
विषया यमी मयुमाईकी यहाँ मयमय करक राजकाय-
की ययमोयका करम है । मय कन्नमय है यो ।

१८२३ ईमें मियका मयमययको मयारमयि मया
मयमयि मयुमा यामकी विठोवा मन्दिरके मयमने
मयमयने मया दिवे मय है । १८२० ईमें यहाँ
पण्डुरनेके मय मयमाका एक मुक दुपा था ।

१८४७ ई०में टस्युसरदार रघुजी अडग्रिया जनरल गेलमे पकडे गये ओर पण्डरपुर भेज दिये गये । इन्की बात प्रायः १० वर्ष तक उन्हीं धनागार घाटि लूटा । १८७७ ई०में वासुदेय बलवन्त फडके नामक कोरे विख्यात टस्युसरदार पण्डरपुर जाति समय अङ्गरेजीके पञ्चेमें पड गये थे । यन्नामे प्रतिवर्ष 'बूका' नामक गन्धद्रव्य, उरद, धूप, कुसुमफूलके तेल, कुड्डुम, नम्य गादि द्रव्योंकी नाना स्थानोमें रफतनो होतो छे ।

पण्य (स० लि०) पण्ये इति पण य. निघातनात् साधुः (अथयपण्य-वयोर्गन्धेति । वा ३।१।३१) १ पणित्य, वैचरि योग्य । २ खरोटने योग्य । ३ व्यापार्य, व्यवहार करने योग्य । ४ स्तोत्र्य, प्रशंसा करने योग्य । (पु०) सोटा, माल ५ व्यापार, व्यवसाय । ६ हट्ट, हाट बाजार । ७ दूकान ।

पण्यता (स० स्त्री०) पण्यस्य भावः पण्य-तन-टाप् । पण्यका भाव पण्यविषयता ।

पण्यदातो (स० स्त्री०) धन ले कर सेवा करनेवाली स्त्री, कौडी, मजदूरनी, बांटी ।

पण्यपति (स० पु०) पण्येन लब्धः यः पतिः । १ भारो व्यापारी, बहुत बड़ा रोजगारी । २ बहुत बड़ा माइकार, नगरसेठ ।

पण्यपरिणोता (स० स्त्री०) १ सूर्यदे कर विवाहका स्त्री । २ राजाघोषि भोगबलानके लिये रक्षिता स्त्री-विशेष ।

पण्यफन (स० पु०) व्यापारमें प्राप्त लाभ सुनफा, नफा ।

पण्यभूमि (स० स्त्री०) सड़ स्थान जहां माल या चीदा जमा किया जाता हो, कोठी, गोदाम, गोला ।

पण्यसूर्य (स० स्त्री०) वह सूर्य जिनके पण्यद्रव्य खरीटना होता है ।

पण्ययोपित् (स० स्त्री०) पण्यस्त्री, कुलटा, बेध्या, रंड़ी ।

पण्यविक्रयगाम्ना (स० स्त्री०) पण्यका विक्रयगृह, दूकान ।

पण्यक्रियन् (स० पु०) वणिक, सोदागर ।

पण्यविलासिनी (स० स्त्री०) पण्यस्त्री, बेध्या, रडो ।

पण्यवीथिका (स० स्त्री०) पण्यानां विक्रयस्थानः वीथिका गृहं । क्रय-विक्रयका स्थान, बाजार, हाट । पण्यवीथी (स० स्त्री०) पण्यानां वीथी विक्रयगृहं । क्रयविक्रय स्थान, हाट बाजार ।

पण्यगाम्ना (स० स्त्री०) पण्यानां विक्रयस्थाना गाम्ना । विक्रयगृह, दूकान ।

पण्यस्त्री (स० स्त्री०) पण्य सूर्येन लभ्या या स्त्री, या पण्ये द्वादिस्थले स्थिता स्त्री । बेध्या, रडो ।

पण्य (स० स्त्री०) मालकगनी ।

पण्यजाना (स० स्त्री०) बेध्या रडो ।

पण्यजोष (स० पु०) पण्येः, क्रयविक्रयद्रव्येराचीवति प्राप्ति या जीव-क । क्रयविक्रयिक, वणिक, सोदागर ।

पण्यजोषक (स० का०) पण्येः क्रयविक्रयद्रव्येराचीवति तिष्ठतीति, पण्यजोषस्तत, स्वाद्ये कन् अभिधानात् क्लीबत्वात् वा पण्यजोषैः वणिग्भिः कार्गति गच्छावति कै-क । हट्ट हाट, बाजार ।

पण्यस्था (स० पु०-स्त्री०) पण्य पन्थयति स्वगुणेन या अन्ध अन् टाप । तणविगीय कंगनी नामका धानः पण्य - कड्डु, नोपला, पण्यध, पण्यध । गुण-समवाये तिल, चार, मारक ;

पण्यहन-युक्त प्रदेशके उदात्र जिनान्तगत एक ग्राम । यह तहसीलको सदरमें ५ मील दक्षिणमें अवस्थित है । यहां भरराजाघोषका बनाश रूप एक दुर्ग था जिसका अभी मिक भग्नावशेष देखनेमें आता है । उक्त दुर्गके गिखर पर अचलेश्वर महादेवकी लिङ्गसूर्ति प्रतिष्ठित है । यहाँकी फत्तौर महम्मदगाइकी दरगाह जनसाधारणमें प्रसिद्ध है ।

पतंगा (हि० पु०) एक प्रकारका चगला जिसे पतंगवा भी कहते हैं ।

पतंग (हि० पु०) १ पतङ्ग देखो । २ भारत तथा कटक प्रान्तमें अधिकतामें खेनवाना एक प्रकारका वृक्ष । ग्रीष्म ऋतुमें अर्थात् वेशाख ज्येष्ठमासमें जमीनकी अच्छी तरह जोत कर इसके बीज बो दिये जाते हैं । प्रायः बीस वर्षमें जब इसका पेड़ चान्नीम फुट जंचा होता है तब काट लिया जाता है । इसकी लकड़ीको कोटे छोटे टुकड़ोंमें काट कर प्रायः दो पहर तक

पानीमें उभाठते हैं जिसमें एक प्रकार का बहुत शक्तिशाली रंग निक्षेपका है। पानी यह रंग बहुत बिजला या धोर पवित्र परिभाष्य भारतवर्ष के ब्रिटेनमें भेजा जाता था। पान्गु सबसे बिभावती मछली १५ पैरार जलित् लता लक्ष्मि इसकी मांग घट गई है। पान्गु कन्ध कई प्रकार के बिभावती नाम रंग भी 'पतंग' के नामसे भी बिजले हैं। कुछ लोग इसे 'मालचन्दन' की समझते हैं पान्गु यह बात ठीक नहीं है। इसकी बहन भी बहन है। (सी०) इ इवार्थि अरर त्तत्तानैडा एए बिजोगा। यह बासबा लोनिरी; ठहिये पर एक धोर बोलोना कागत्र धोर अभी अभी बरोक कपड़ा मड कर बनाया जाता है, मुझो निन गो रमडा टाया दो लोनिरीने बनाया जाता है। एठ बिजबुल मोषो रखो आती है, पर दूनरेको लबा कर सिधराहणर कर देते हैं। सोबो लोमोवा नाम ठहटा धोर सिधराहणरका नाम कर्मिय या कौव है। ठहटेइ पब विरेको पुडका धोर दूनरेको मुडटा बहते हैं। पुवनेने पर एए बी तिबोला नामक मड लेते हैं। कमरवे दोनी विरेको दुम्मे बहते हैं। ठहटे पर कागत्रका दो खोटा बोखोर बकतिया मडो खीतो है। पब लब ल्याल पर बहा ठहटा धोर कर्मिय एक दूनरेको काटन है दूनरो पुडका को धोर कुछ निवित पतर पर। इनीमें सुराल करके बगल पकल्ल बब डोरा बाधा जाता है जिसमें पतंगो या परने खी डोरोका बिवा बाध कर पतंग बड़ाया जाता है। ठहवि दिरेनेमें पतंगे धारी पारनीका मम्हाई बराबर आल पकरो है पर सुडे धोर कुम्मेका एन्स कुम्मे धोर पुडका क पत्तारवे पवित्र डाला है। जिन डारोनि पतंग बड़ाते हैं वह लबा, धान, रोख धादि कई प्रकार की खीतो है। बर्नके प्रम विवेक टहिये पर डोरा लपेटा रहने के लक्षमें सोबो मेट है—पब बरबो धोर दूनरा पीता। बिस्तारमेंदेवे पतंग कई प्रकारको खीतो है। बहुत बड़ी पतंगको तुष्टल कहते हैं। बनाबटका रोप बापुको प्रवरना धादि काश्मीरि पतंगर पतंग कापुमि बहल पर नै भवतो है। एरी रोडुनि लिये पुडकाके प्रपके को पब बन्ता व भी खीतो है जिसे पुडका की कहते हैं। भारतवर्ष में निम्न को बहकानेके विषे पतंग लड़ाते हैं,

पतंगु पायगव निरीमि इसका कुछ धारशाक्ति लगेग भी खिदा नामे लया है।
 पतंगुरी (दि० प्लो०) विगुल सुगुलधो। यवार्दि।
 पतंगवाज (दि० पु०) १ तब जिमका प्रवात कार्य एतम लड़काना जो। २ पतंग लडा कर मनोरञ्जन करने वाला पतंगवा खीबोन।
 पतंगशात्रो (दि० प्लो०) १ पतंग लडानेकी कला। २ पतंग लडानेकी क्रिया या मात्र पतंग लडाना।
 पतंग (दि० पु०) १ पतङ्ग फलित गा। २ परदार कोडे को ज्ञानिषा एठ विवेग खोडा जो प्रायः धारो पतंग लखनी पतियाँ पर बहता है ३ स्थानिय बिनपारो। ४ दीपबन्धो खीतका मर पतंग खो लखवर लपेमे पतंग को आता है फूल, गुल।
 पतंग (म० वि०) पतंगति पति पत्त। १ पुट। (प्लो) २ पतंगकर्ता।
 पतंग (दि० प्लो०) १ लडा प बह। २ पतङ्गा इत्यत।
 पतर (दि० प्लो०) पत पत्ती।
 पतङ्ग (म० पु०) पतंगयोक्त प्पति वा बसु।
 पतङ्गुध (म० पु०) पतङ्गिरीय श्री विदिवा।
 पतङ्गोचल (दि० पु०) पब जा प्रायः पने कार्य खरता जिरे जिमसे पतंगो वा दूनरेको बैदस्यता था।
 पतंग। म० पु० पत लप्यति। म० गच्छति ता पतंग पतिय गच्छति प। पतङ्ग। १ पत्ती बिडिया। पियाँ कार्तिवत्तु ड'प। २ पतङ्गक रड पतंगति पक्षगिरीके पक।
 पतङ्ग। म० पु० पतति गच्छतीति पति पतङ्ग। (पते १५५ । डव १११८) १ पतल विडिया। २ गुर्ग। ३ पतङ्गतिगुलवम पतिगा। इसका मराठे पत्रिवुल धार्तिक कारण इतका सिलता पत्रिविगित ज्ञानधरार्थी का जानो है। पत्रिवि देह मयो ज्ञाप माथा रहता पब भावार्थि विभक्त है - १ कड टावग (Crusca) २ अलाबग (Alab) ३ इषियटनग वा मत धादि (Myrtapoda) ४ पतङ्गवम (Hem) धोर ५ काठवम (Vernic) ६ पत्रिविगित पतंगोवाय ही कोटजातिके पतंगति है। इन्हा ठहयति धोर पतंगको पतङ्गि एब को पछाडका है। पाटलिफ मेट धोर

अवस्थाके परिवर्तनसे इनके नामोंमें विभिन्नता देखी जाती है। वृषिक, केनो प्राटि कीट बहुप्रत्यिविगिट होने पर भी वे कोटत्रोणीके अन्तर्गत हैं।

विशेष विवरण कीट और पतङ्गालम् देखो।

जिन सब कोटोंके तीन ग्रन्थि हैं, वे पतङ्ग कहलाते हैं। पतङ्गके मध्य फिर तीन विभाग देखे जाते हैं, १म, पूर्ण परिवर्त्तक (Metabola) अर्थात् जो जन्ममें ही हमीगा टैड परिवर्त्तन करते हैं—जैसे हाँस, टंग, ममक, मछिका और प्रजापति। २य, ईपत परिवर्त्तक (Hemimetabola) अर्थात् जो जन्ममें जो बचन कम टैड-परिवर्त्तन करते हैं, जैसे फर्तिगा, टिड्डो, वल्मीक। ३य, अपरिवर्त्तक (Ametabola) अर्थात् जो अंडेमें निकलनेके बाद कभी टैडाइयवकी बदलते ही नहीं। जैसे पिपोलिकादि।

मक्खो, मधुमक्खो आदि नाना जातीय छोटे छोटे पक्षयुक्त कीट हैं, ऐसा कि पक्षयुक्त पिपोलिकाकी भी पतङ्ग कहते हैं। किन्तु साधारणतः पतङ्ग शब्दमें अन्य प्राणिकोंका बोध न हो कर एक मात्र फर्तिगीका ही बोध होता है। प्रजापति पतङ्गत्रोणीके अन्तर्भूक्त होने पर भी अभी विगिट अभिधान प्राप्त हुआ है। प्रजापति शब्द देखो।

ग्रीष्मप्रधान देशोंमें अधिक उष्णताके समय पतङ्गका उपद्रव देखा जाता है। इस समय मक्खोकी तरह छोटे छोटे कोडोंको उत्पत्ति अधिक संख्यामें देखी जाती है। ये कीड़े मनुष्यको विरक्त किया करते हैं।

हेमन्तकालमें गङ्गा फर्तिगीकी तरह 'श्यामा कीड़ा' नामक एक जातिका छोटा पतङ्ग उत्पन्न होता है। ये रातको आ कर प्रदोषों पर गिर पड़ते और अपने प्राण गंवाते हैं। अफ्रिकादेशमें एक प्रकारका पतङ्ग (Tsetse-fly) पाया जाता है जिसके डंसनेसे गाय, घोड़े, भैंस आदि मर जाती है। Quassia Simaruba नामक एक प्रकारके तिक्त वृक्ष-पत्रके साथ चीनो पोस कर उसे बरतनमें रख देनेसे पतङ्गादि आ कर उसमें गिर पड़ते और नष्ट हो जाते हैं। इटली देशमें *Brigreon viscosum* नामक एक प्रकारका छोटा गुल्म पाया जाता है जिसे इटलीके लोग दूधमें डुबी कर भरमें लटकवा देते हैं। पतङ्गगण उड़ कर उस पात्र पर

बैठनेसे मर जाते हैं। साधारणतः वे वृक्षादिकी पत्तियाँ खा कर जीवनधारण करते हैं। कहीं कहीं इन्हें सडा जूषा मांस खानेकी दिया जाता है। उधर चीन, ब्राह्म आदि देशवासिगण पतङ्गकी रींध कर खाते हैं। गाटा कहीं वृक्षवृत्त पर, कहीं मट्टीके नेचि अंडे देते हैं, प्रभवके बाद गर्भिणी मर जाती है। पीछे जगदीश्वरकी कृपासे सृष्टिके उत्साह द्वारा वह अंडा फुट जाता और बच्चा बाहर निकल आता है।

४ गलभ, टिड्डो। ५ गालिप्रभेट, एक प्रकारका धान, जड़हन। ६ सन। ७ पारट, पारा। ८ अष्टन-भेट, एक प्रकारका चन्दन। ९ शर, वाण। १० अग्नि, भाग। ११ अग, घोड़ा। १२ मछिकादि, मक्खो। १३ शीर्ष परदार कीड़ा जो भाग देखनेसे दो पक्ष जाता है। १४ पिगाव। १५ कृष्णका एक नाम। १६ प्रजापतिके पत्र का नाम। १७ पर्वतभेद, एक पहाड़का नाम। १८ ग्रामका नाम। १९ ब्रह्मोपवामो नातिभेट। २० तार्क्ष्यकी स्त्रोका नाम। २० नौका, नाव। २२ शरीर, देश। २३ जनमधुक्त हृत्त, जन मधुषा। २४ अैनिके एक देवता जो वाणव्यन्तर नामक देवगणके अन्तर्गत है। २५ एक गन्धर्वका नाम। २६ चिनगारो।

पतङ्गकवच—इंद्र, विल, पुष्करिणी आदिमें मिलनेवाला एक प्रकारका कीट। इसको साधारण आकृति पतङ्गकी जैसी होती और देश पतङ्गके कवचकी तरह दृढ़ कवचमें आवृत रहती है। अंगरेजीमें इसे *Entromostraca* कहते हैं। ट्रिलोब (Trilobites), कालिगस (Calegus) आदि जनजकीट इसी त्रोणीके अन्तर्गत हैं।

पतङ्गम (सं० पु० स्तो०) पतन उत्प्लवन मन् गच्छति गम खच्च, सुम्व। १ पची, चिडिया, पखेड़। क्रियां जानित्वात् डीप। २ गलभ, टिड्डो।

पतङ्गर (सं० पु०) पतङ्ग पतनेन उत्प्लवनेन गमनं अस्त्यर्थे क। उत्प्लवन द्वारा गतियुक्त।

पतङ्गवृत्त (सं० त्रि०) पतङ्गस्य हृत्तं इव वृत्तं यस्य। १ पतङ्गकी तरह आचारविशिष्ट। (क्ली०) २ पतङ्गका आचरण।

पतङ्गा (स० खो०) १ पत्र, चोड़ा । २ मटोविधिप, एक मटोका नाम ।

पतङ्गिका (स० खी०) पतङ्ग अर्थात् स हाथी का कन्, स्त्रियां टाप्, पत इत्थ । मनुमन्त्रिकाविशेष मनु मन्त्रिकाया एक मेट । इसका पर्याय पुत्रिका है ।

पतङ्गिन् (स० पु०) पतङ्ग उत्पन्नजन गणमनसम्बन्ध इति । जग, पत्नी चित्रिया, पक्षिः ।

पतङ्गश्च (स० पु०) पञ्चरात्र मन्दर ।

पतञ्जली (हि० खी०) एक प्रकारका पोसा ।

पतम्बु (हि० खी०) १ बह चतु विधमें पिङ्गोकी पत्तियां मड़ जाती हैं, गिधिर चतु, माघ पौर पाशुन मास । इन चतुमें बाहु पक्षत कर्मो पौर मरटिबी हो जाती है । इन कारण वसुपौके रम पौर विम्बताका गोपच होता है पौर के पश्यत् कर्मो हो जाती है । हथोकी पत्तियां इचताके कारण लृण कर मड़ जाती है पौर के ठूडे हो जाती है । छटिका धोमल पौर शोमा रम चतुमें बहुत बट जाती है बह के मन्वीन हो जाती है । बंधकके पनुपार इस चतुमें कफका मक्षय होता है पौर पाचकात्मि प्रथम रकतो है । इस समय किन्च पौर मारी पाहार सरन्ताये पचता है । सुप्तके मतमें माघ पौर पाशुन ही पतम्बुके मन्वीन हैं, पर अन्य पनेत्र बंधक धर्ममें पूम पौर माघकी पतम्बु माना है । शैबिन महात्ममें माघ पौर पाशुन ही पतम्बु माने गये हैं । २ पचनतिकात्, खारी पौर तवाहीका समय ।

पतम्बर (हि० खी०) पतम्बु देखो ।

पतम्बु (स० पु०) मोक्ष प्रसक्त चपिमेः । इतका दूबरा नाम मान्य मो है । शतपथ ब्राह्मणमें इनका कर्म का थाया है ।

पतञ्जिका (स० खो०) पत चमिमल यद्, चिह्नपति पौडपति स्वारोपिन गरीक्षित, एबोदरादित्यात् पाशुः । चतुर्था, चतुपथी होरो कमानकी लीन चिह्न ।

पतञ्जिन् (स० पु०) पतन् पञ्जिन् मध्यतया पत्तिम्, गन्ध्यादित्यात् साशुः । १ योमयाज्यपथेऽ सुनिमेऽ पातञ्जकर्मणकर्ता । एतन्पर्यन्त देखो ।

२ पाञ्जिके महाभाष्यपरिभा ।

महाभाष्यपतञ्जिकी यथावाच्ये शीर्षि है श्वन मस्तत हो नहो म सारथी बिमो मो भावामे पिसा विचारमूलक सुविद्यूत व्याकरण पन्थ दिखनेमें नहो पाता । किम मयव धोर दिस लक्ष्यये यव महा पन्थ रथा गथा, यव मे कर बहुत दिनये पापल्य पौर देगोय स स्ततविदोह मन्थ बादाशुवाद चला था रहा है । किमोके मतमें पतञ्जिका महाभाष्य को यथाश्रीमें, बिमोके मतमें पूर्वो यथाश्रीमें पौर फिर बिमोके मतमें २रो यथाश्रीमें रथा गथा ।

एव किमका मत समोचोम है, बहो देवना चाहिये । पौरे कहते हैं, कि पाणिनिका मत निराम कर निजमत प्रापन करनेके बिदे कात्यायनने वात्सिंठकी रचना की पौर पाणिनिको वात्सिंठकारके प्राक्तमपने कर्माके लिये तया अनमाधारकमें विद्युत् व्याकरणज्ञान पौर पाणिनोय मतका प्रचार करके लक्ष्यमें ही पतञ्जिकी महाभाष्य बनाया, — डाक्टर गेह्ल्ट करनी इन मतका बहुत कुछ प्रचार किया है ।

किन्तु महाभाष्य श्वन वात्सिंठकी समाक्षोपनाके क्षेमा मतीत नहो होता । वात्सिंठ पाणिनिसतका परिशिष्ट पौर वृत्तिसरूप है । पाणिनिका आ मत कात्यायनने समर्थमें पाव या तन्मात्रप्रवर्धित व्याकरणके बिदे हुआ वा कात्यायनने तन्मात्रोम भाषाको लक्ष्योकी करनेके लिये लम लम स्वानको समाक्षोपना को है । पतञ्जिकी फिर पाणिनिसत पौर कात्यायनके वात्सिंठको विद्यूतमानमें समझनेके लिये जो महा भाष्यकी रचना की है । वात्सिंठ पौर महाभाष्यका लक्ष्य एक हा है दोनोंका जो लक्ष्य सामयिक भाषा के साथ कामचर्य करके पाणिनिके मतका प्रकाश करना है । पञ्जिन स स्तत भाषाका पतुनत करनेके लिये ही पतञ्जिक कर्मो बहो क्षातावन्त मतकी समाक्षोपना पौर यपना मत प्रकाशित करनेमें बाध्य हुए हैं । इसीमें बहो जरा सूत्र वा वात्सिंठमें प्रमाण है, वहाँ बहो पतञ्जिकी पुरा करनीकी चेष्टा को है । वात्सिंठिकी स स्तत भाषाको प्रकृतिया है किम वैज्ञानिक लयादानमें स स्तत भाषा लटित हुई है, कसका प्रथमं करनेमें ही पतञ्जिका भाष्य इतना विस्तृत हो गया

है। इस महाभाष्यमें यदि प्रविष्ट होना चाहे, तो संस्कृतशास्त्रमें प्रवक्तृज्ञानका भीना प्रयोजन है। इसीसे इस महाभाष्यका दूसरा नाम फणिभाष्य वा महाभाष्य पडा है। महाभाष्यसे भारतजातीय, सोनाग, कृष्ण-वाहन, वाडव, वीर्यभगवत्, वारिकाकार व्याघ्रभूति और इलोकवात्सिककार कातर यत घाटि वैशाकरणो का उल्लेख है। सुतरा उक्त वैशाकरणगण पतञ्जलिके पूर्ववर्ती हैं, इसमें सन्देह नहीं।

महाभाष्यसे पतञ्जलिका इति सामान्य परिचय पाया जाता है। (प्रथम-आयके ३७ पाठके ३७ आङ्गिकमें) उक्तने गौणिका पुत्र और (प्रथम-आयके प्रथमपाठके प्रथम आङ्गिकमें) गोनर्दीय नामसे श्रवणा परिचय दिया है। हेमचन्द्रको अभिधान-चिन्तामणि और विक्रान्त-जैप अभिधानमें पतञ्जलिका दूसरा नाम गोनर्दीय और 'चूर्णकित्' लिखा है। गण्डर्वत्वावलोमें पतञ्जलिका दूसरा नाम है 'वरकचि'। किन्तु इस नामके ऊपर कोई आख्यायान नहीं है। कारण कालायनका भी दूसरा नाम वरकचि है, किन्तु पतञ्जलिका दूसरा नाम जो वरकचि है उसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। काशिका- (१।१।७५)-के पूर्वदेगव्यापे उदाहरणरूप 'गोनर्दीय' शब्द व्यवहृत हुआ है। पुराणमें भी भारतकी पूर्व-विभाग-वर्णनामें गोनर्दीय देगका उल्लेख मिलना है।

डाक्टर भण्डारकरका कहना है, कि श्रयोधरा प्रदेशके मध्य जो गण्डा जिला है और उस जिलेके मध्य इसी नामका जो एक नगर है, वही प्राचीन गोनर्दीय है। यहाँ पर भाष्यकार पतञ्जलिका जन्म हुआ था।

महाभाष्यमें एक जगह लिखा है कि 'पुष्यमितने यज्ञ किया। याजकोंने उनका याजन किया।' इसके सिवा और भी दो एक जगह पुष्यमितके नाम और पुष्य-मितकी सभाका उल्लेख है। इससे पुराविद्वगण अनुमान करते हैं, कि पतञ्जलि पुष्यमितकी यज्ञभूमिमें उपस्थित थे। विष्णु, मत्स्य आदि पुराणोंमें जाना जाता है, कि सौर्यवंशीय श्रेय राजा हृषद्वयकी मार कर उनके सेनापति (सुहृषंशीय) पुष्यमितने पाटलिपुत्रके सिंहासन पर अधिकार जमाया था। महाभाष्यमें भी लिखा है, 'सौर्यनि हिरण्यके लोभसे देवपूजा प्रकल्पित को है।'

फिर एक दूसरी जगह लङ् उदाहरणके स्वरूप पतञ्जलिने लिखा है, 'यवनेने सारित (श्रयोधरा) पर आक्रमण किया है। उक्तने माध्वमिकी पर भी आक्रमण किया है।' इस पर डाक्टर गोलडट कर और भण्डारकर कहते हैं, कि जिस समय श्रेय यवनेने श्रयोधरा प्रदेश पर चढ़ाई की थी, उस समय पतञ्जलि विद्यमान थे। श्रेयके ऐतिहासिक द्वापरेने लिखा है,—'मिनान्द्रस' (Menandros) ने यमुना तक आक्रमण किया था। पालिग्रन्थमें ये मीनराज मिलिन्द नामसे परिचित थे और पञ्चनदके यन्तर्गत शाकल नामके स्थानमें इनकी राजधानी थी। पुराविद्वोंने श्रेयो धिया किया है, 'पुष्यमितके पस फालमें ही मिलिन्द राज्य करते थे। पतञ्जलिने इस मिलिन्दके श्रयोधराक्रमणकी कथाका उल्लेख किया है।

मन्त्रैर्द्धनि वाक्पटोप नामक ग्रन्थमें लिखा है, 'संज्ञेय या सत्यक-भावमें नवाविद्यापरिग्राहक वैशाकरणोको महायतने तथा 'मंश्रह' नाम करके उस तीर्थदेगो गुरु पतञ्जलिने समस्त न्यायबीजकी महाभाष्यमें निबद्ध किया था। किन्तु जो शास्त्र गभोरताप्रयुक्त समाध है और पितको बुद्धि परिपक्व नहीं हुई है, ऐसे मनुष्य केवल ऊपर हो ऊपर वह चर्चने, ऐसा निश्चय कर शुक्तनर्कानुसार, मंश्रहप्रियवैजि, सोभर और हर्षलने उस श्रायें (महाभाष्य) श्रयकी खण्ड खण्ड कर डाला था। उस समय उनके शिष्योंने प्राप्त पतञ्जलि-प्रणेत उस आगमका एक ग्रन्थ केवल दक्षिणात्योके मध्य था। पीछे भाष्यानुरागिनेने पक्षतमें उस आगमको पाया और फिर चन्द्राचार्यदिने उस आगमकी ले कर अनेक खण्डोंमें विभक्त कर डाला। पीछे प्रसिद्ध न्यायशास्त्रवित् स्वदग्नज्ञ हमारे गुरुने इस आगमका मंश्रह प्रणयन किया।'।

राजतरङ्गिणीमें भी लिखा है कि अभिमन्यु जब काश्मीरके सिंहासन पर बैठे, उस समय चन्द्राचार्य नादिने भिन्न देशोंमें आगम वा गुरु-मुखसे विद्यालाभ कर महाभाष्यका प्रचार किया था।

अभिमन्युके समयमें महाभाष्य प्रचारित होने पर भी फिर कुछ समय बाद महाभाष्यका पठन पाठन बन्द हो गया। कारण राजतरङ्गिणीमें लिखा है, कि 'दो

यथाशक्तौ शम्भोः राज्ञः अयादिरयमि विद्विष्य मङ्गलाय
 का उदारः करः किरः पथिने शम्भोः कसका प्रथारः विधा ।

ओ कुङ्कुमो, पञ्च यङ्ग अमृत्यु महायस्य विदुः न
 होमा । सुदुःखस्यै प्रमादये कर्मैः योरः कागोषामने
 केयटयोः माध्वप्रदोपः नामकः डोः । श्मेतः यङ्ग मरः माध्व
 सुद्विजः कृपाः १ ।

केयटः कुङ्कुमः करः धीपः नारायणः मुनिः इः रासः कृपा
 मन्ः, कृपायः, गिरः रामेन्द्रः, मरः श्रोतोः मदाग्निः प्रभृति
 रचितः कुङ्कुमः डोकायः पाईः यईः १ । केयटः केः माध्वप्रदोपः
 केः अवरः भोः पनः श्मेतः पञ्चमः मरः, ईश्वरः रामेन्द्रः, नागोयः
 नारायणः मोक्षः कृष्णः दोषिः नः, पञ्चः कोपाध्यायः रामः
 पन्धः परवतोः योरः इतिरामः पाईः कुङ्कुमः शक्तिगोमे
 टिप्योः लोकीः रचनाः कोः १ । नागोयः मङ्गलायः प्रदोपः
 शोतः अवरः, किरः मेः शनाः नागः यगुः नैः 'कायाः नाम
 कोः एकः सुन्दरः इतिः लिखोः १ ।

पतन् (स० वि०) पत-गाट्, बाहुनकात् पति वा । १
 पतनकर्त्ता मोक्षिणी धोरः ज्ञाने वा प्रमिवाणा । २ उक्ता
 कृपा । (सु०) १ पथो विद्विषा ।

पतन्पतन् (स० पु०) कृत्वा कृपा दत्त ।
 पतन्प्रवर्ध (स० पु०) काश्चिन् एकः इकारका रण्योः ।
 पतन् (स० लो०) पत-पतो पतन् । १ बाहजः, सवारी ।
 २ पञ्च, पञ्च कला ।

पतन्नि (स० पु०) पतति उ-पतताति पत-पतिन् (पते
 क्तिन् क्व श्चि०) पथा, चिः कृपा, पथिः ।
 पतन्निक्षिप्त (स० पु०) पतन्नां क्षिप्तः पञ्च । गङ्गाभ्र
 विष्णु ।

पतन्नि (स० पु०) पतन् पन्धः इति । पथो,
 चिः कृपा ।

पतन्निराज (स० पु०) पतन्निर्वा शत्रा, उक्त्वा समाप्तः ।
 पथिराजः, मङ्ग ।

पतन्प्रवर्ध (स० पु०) पतन् सुकारिभ्यः क्तुन्त्वात् अकारदि
 ष्यङ्गात् इति पतन् प्रव-पञ्च । १ प्रतिपाद्यः पोषदानः । २
 मङ्गलः कर्मकृतुः सित्तमं भिष्यारो भिष्याय-येति १ । भिष्या
 पञ्च कायाः ।

पतन्प्रवर्ध (स० पु०) पतन् पथा म-कथं सत्वात् । श्लो
 पथो, बाजः नामकः पथोः ।

पतन् (स० लो०) पत भावः कृत्वा । १ गिरने वा मोक्षे
 पामिनी क्रिया या भावः, गिरणा । २ मोक्षे ज्ञाने घ सने
 वा केशनेको क्रिया या भावः । ३ पवननि पथोगति
 तः हो, अवायः । ४ नायः कृत्वा । ५ पापः करनेसे को
 पतन् उपाः करणा १, इतोये पतन् शब्दसे पापका को
 होता १ । मोक्षः कार्यः शब्दसे निश्चित १ कर्मका नतो
 करणा तथा निश्चित कार्य करणा योरः यथाशक्तम् इन्द्रिय-
 मयमः नहोः कर्मा, इतोः मङ्गलः कार्योये पतन् कृपा करता
 १ । कारकः रचनेने कार्यः कृपा १ । निश्चित कार्यका
 पतन्कानः पाटिः कारकः रचनेने कार्यका को पतन्
 होता १ उधे कोर्ने नहोः रोः मङ्गला । १ शक्ति
 जातिष्णुत् । २ उक्त्वा क्रिया या भावः कृत्वा, कृत्वा ।
 ३ शिपोः लक्षणका पथा । (क्रि०) ८ विरता कृपा
 या विरन्तामा । १० उक्ता कृपा या उक्त्वाका ।

लोकाभिन्मम मपतन् श्वादिभिः सा करनेवासी
 स्तोः का पञ्चमः पतन् होता १ ।

पतन्मोक्ष (स० क्रि०) जिमका पतन् निश्चितः को,
 जिना निरे न रङ्गः पथिः ।

पतन्ना (वि० पु०) मोनिका तटः भागः, मोनिका जिनारा ।
 पतन्नारा (वि० पु०) परनामा नाभदानः मोरो ।
 पतन्मोक्ष (स० क्रि०) पतः पथियरः । १ जिमका गिरणा
 पञ्चवा पथागतः होता सत्यमः को पतिता मोनिकाका
 गिरनेवाका । लो० २ वङ्गः पापः जिमके करनेसे जाति-
 से क्तुन् होता पञ्च पतिता करनेवाका पाप ।

पतन्मोक्षुत् (स० क्रि०) को जिमको धोरः प्रवृत्तः को,
 जिमका पतन् पथोगति या जिनागः निश्चितः पतन्
 जाता हो ।

पतन्मोक्षः (स० लो०) पतन्मोक्षः पथियरः ।
 पतन्मोक्षो (वि० पु०) १ प्रतिष्ठा, भावः, इत्यतः । २ नायः
 पथिः ।

पतन्मोक्षः (स० पु०) पतन्मोक्षः कर्म पथिः पथिः पतन्
 १ पन्धः । २ पथो, चिः कृपा । ३ पतन्मोक्षः कति मा ।

पतन्मोक्षः (स० वि०) पति-पथिः कृत्वा । पतन्मोक्षः पिरने
 वाका । इमका पर्यायः पापका १ ।

पतन्मोक्षः (स० क्रि०) पतिः बाहुनकात् कृत्वा, न पि
 कोः । पतन्मोक्षः, गिरनेवाका ।

पतयिष्णुक (सं० त्रि०) इतस्ततः पतनशील, जो इधर उधर गिरता हो।

पत्र (म० त्रि०) पत-वाङ्मसकात् अत्रन् । गन्ता, जानि-वाला।

पतरा (हिं० पु०) १ वह पत्तन जिसमें तंबोली लोग पान रखनेके टोकरे या डल्लियामें बिकारते हैं। २ सरसोंका साग, सरसोंका पत्ता। (वि०) ३ पतला देणो।

पतराई (हिं० स्त्री०) सूझता, पतलापन।

पतरिंग (हिं० पु०) एक पक्षी जिसका सारा शरीर हरा और बीच पतली तथा प्रायः दो शंशुल लम्बो होती है। इस प्रकारका पक्षी मकडियोंको पकड़ कर खाता है। इसको गिनतों गनिशाले पक्षियोंमें की जाती है।

पतरो (हिं० स्त्री०) पतल देखो।

पतरु (म० त्रि०) पत वाङ्मसकात् अत्र । पतनशील, गिरनेवाला।

पतला (हिं० वि०) १ कृग, जो मोटा न हो। २ जिसकी टिहवा घेरा कम हो, जो स्थूल या मोटा न हो। ३ जिसका दल मोटा न हो, भीना, हलका। ४ अधिक तरल, गाढ़का चकटा। ५ अशक्त, असमर्थ, कमजोर, हीन।

पतलाई (हिं० स्त्री०) पतलापन, पतला होनेका भाव।

पतलापन (हिं० पु०) पतला होनेका भाव।

पतली (हिं० स्त्री०) द्यूत, जुभा।

पतलून (हिं० पु०) वह पाजामा जिसमें मियानो नहीं लगाई जाते और पायंचा मोधा गिरता है।

पतली (हिं० स्त्री०) १ सरकण्डा, सरपत। २ सरक डेको पताई, सरपतकी पताई।

पतवर (हिं० त्रि० वि०) पंक्तिक्रमसे, बराबर बराबर।

पतवा (हिं० पु०) एक प्रकारका मचान जिस पर बैठ कर शिकार खेलते हैं। यह मचान लकड़ीका बनाया जाता है और चार हाथ ऊंचा तथा सतमा ही चौड़ा होता है। लम्बा इतना होता है कि द्वादसी बैठ कर निशाना मार सकें। इसके चारों ओर पतली पतली लकड़ियोंकी टट्टियां लगे रहती हैं जिनमें निशाना मारनेके लिये एक एक वित्ता ऊंचे और चौड़े सुराख बने रहते हैं। टट्टियोंके ऊपर हरी हरी पत्तियों समेत

टट्टनिया रख दी जाती है जिसमें घाघ आदि शिकारियोंकी न टिख सकें।

पतवार (हिं० स्त्री०) नावका एक विशेष और मुख्य भाग जो पौष्टिकी और होता है। इसीके द्वारा नाव मोहो या घुमाई जातो है। प्रायः आधा भाग इसका जनके नीचे और आधा जनके ऊपर रहता है। जो भाग जनके ऊपर रहता है उसमें एक चिपटा डंडा बड़ा रहता है। इन डंडे पर एक मझाह बेटा रहता है। पतवारको घुमानेके लिए वह डंडा मुठियोंका काम देता है। यह डंडा जिस ओर घुमाया जाता है उसमें विपरोत ओर नाव घूम जातो है, कन्दर, घतवान।

पतवारो (हिं० स्त्री०) १ कलका खेत। २ पतवार देखो। पतवाल (हिं० स्त्री०) पतवार देखो।

पतवाम (हिं० स्त्री०) पक्षियाका घस्टा, चिककम।

पतम (म० पु०) पततीति पत-घसध् (अलविचमीति । उण् ३।१३) १ पक्षी, चिडिया। २ चन्द्र, चन्द्रमा। ३ पतङ्ग, फतिंगा।

पतखाहा (हिं० पु०) अग्नि, भाग।

पता (हिं० पु०) १ किमी खुल या व्यक्तिके स्थानका ज्ञान करानेवालो खुल, नाम या लक्षण आदि, किसीका स्थान सूचित करनेवालो बात जसमें उसको पा सकें। २ अनुसन्धान, खोज, सुराग, टोह। ३ गूठ तत्व, रहस्य, मेट। ४ चिह्नोको पोट पर लिखा हुई पतेकी इवारत। ५ अभिज्ञता, ज्ञानकारी, खबर।

पताई (हिं० स्त्री०) किसी लक्ष्य या पोषिमें वे पत्तियों जो सूख कर भड़ गई हों, भाड़ी हुई पत्तियोंका ढेर।

पताकरा (हिं० पु०) बड़ा ल, आसाम और पश्चिमो घाट में होनेवाला एक लक्ष। इसको लकड़ी सफेद रंगको और मजबूत होती है तथा घर बनानेमें इसका बहुत उपयोग किया जाता है। इसमें फल खाये जाते हैं।

पताकांश (म० पु०) पताका भांडा।

पताका (सं० स्त्री०) पत्यते प्रायते कस्यचित् भेदोऽनया, पत-आक प्रत्ययेन साधुः (ब्राह्मण्यन । उण् ४।१४) १ ध्वजा, निशान, भांडा। पर्याय—वैजयन्ती, केतन, ध्वज, पताका, जयन्ती, वैजयन्तिका, कदली, कन्दूली, केतु, कदलिका, व्योममण्डल, चिह्न। इन सब शब्दोंमें केतन

धीर अत्र मन्द् पताकाके उच्चारणे उपन्यस्त होते है । 'वाकारचत' अत्र वा सोमा प्रकट करके विदे पताका का उच्चारण होता है । उक्तवाचके पुत्रममे सो सोम पताका कही जाने या चकते है । ईसादिभिः टानय उ मि पताकाका विषय को चिन्ता है वह इस प्रकार है—

द्विस्रुम अस्मिन् ओ पताका देणे होमी, उमका परिभाष ० अत्र १० पञ्चम विद्ययत धीर उ उ १० अत्र होना चाहिये । न मत्र पताकापीको मिन्दु अर्धूर, पूत्र, भुवर मेववचिस, पंडु धीर अत्र इन पाठ प्रकारके बर्णमि पूर्वोद्धिमये सवित्रि करना चाहिये ऐसी पताका उपन्यस्त मानो गई है । लोकापावादिभे उद्ग्रेष के को पताका पढ़ानो होगो वह उमके बर्ण तथा पत्रके चतुमार होगो चाहिये । जो मत्र अत्र अत्र विभोका कार होना है, उसे पताका धीर को चतुष्कोपाकार होता है उमि अत्र कहते हैं । १ सोभाय । २ तीर अकारमि उग्नियोका एक विमोय व्याम वा किति । ४ अत्र अर्धकी म'प्या । १ पिण्डके ८ प्रवर्धिमि उभा । इनके द्वारा विभी निश्चित गुद्गन्ध अर्धके अन्द् अथवा अर्धोका ज्ञान ज्ञाना जाता है । उदाहरण प्रभार द्वारा यह मान्य हुआ कि उभाप्रायिके कुल १४ अन्द्मेव होते हैं धीर मेव प्रत्यय द्वारा यह भी ज्ञान गया कि इनमि ० अन्द् १ गुद् धीर १ अत्रु अर्धके होते । यह यह ज्ञानता रहा कि ये नाती अन्द् विष विष ज्ञानके होते । पताका की विभाषे यह मान्य होगा, कि १३वें १३वें १४वें, २८वें ३१वें, ३२वें, ३३वें ज्ञानके अन्द् १ गुद् धीर १ अत्रुके होते । ४ यह उभा विधमि पताका परनाई हुई होता है । ० नाटकेमि वह अत्र अर्ध किमो पात्रके विन्तागत मान या विषयका समझन या पोषण धाम न्युक्त भावसे हो । अर्ध एक पात्र एक विषयमें कोई बात सोच रहा हो धीर दूसरा पात्र या कर दूसरे अन्द्ममें कोई बात कहे पर लक्षको बातसे प्रथम पात्र के चिन्तागत विषयका मेक या पोषण होता हो, अर्ध यह अज्ञान माना जाता है ।

पताकाङ्क (म० पु०) पताकास्थान देवी ।
पताकाङ्क (म० पु०) पताकाका उच्चारण, अर्धका उच्चारण ।
पताकाज्ञान (म० अ०) नाटकाङ्गमेव । नाटकेमि मन्द्

पताकाज्ञान अविधेयित करना होता है । नाटकेमि अन्तमरूपसे ज्ञानकी विवेचना कर पर्याय एसे ज्ञान में पताका अविधेयित करने होगो अर्ध अर्धमत्रा समतकारिक विधेयकपये बढ़ें । इसका लक्षण इस प्रकार है,—

अन्द् अविधेय एक अर्थ वा विषयको ज्ञान विन्ता को आती है, तब यदि धामन्युक्त भाव द्वारा पतचित्तमानमें या कर वह अर्ध अमर्धित या उपस्थित हो, तो पताका ज्ञान होता है । उदाहरण उदाहरण दिया जाता है— रामचन्द्रको मन ही मन विन्ता कर रही हैं, 'सीताविरह मेरे किये एकमात्र दुःख है ।' ऐसे समयमें दुर्मुखने या कर निवेदन किया, 'दिन उपस्थित' । अर्ध पर रामको उच्छ्वा यो कि सीताविरह न हो । पर दुर्मुख अर्ध 'उपस्थित' ऐसा कहनेसे रामको दुःख ही सीताविरह उपस्थित हुआ, यही सुचित होता है । पतयय यह ज्ञान पताकाज्ञान हुआ । राम, सीताका विरह न हो, इस प्रकारको विन्ता कर रही थी, धामन्युक्त भावसे सीताका विरह उपस्थित हुआ, यही सुचित होता है । नाटकेमि ऐसे ज्ञान पर पताकाज्ञान होता है ।

यह पताकाज्ञान उ प्रकारका है जिनका लक्षण यथा- अमर्धे नीचे दिया जाता है ।

- १। पतचित्तमापके परम प्रीतिकरी अर्ध सम्यक्त काम हो, अर्ध प्रथम पताकास्थान होता है ।
- २। वाक्यके अन्तमे अत्र धीर नामा प्रकार अन्द्मयुक्त होमे पर विधेय पताकाज्ञान होता है ।
- ३। अत्र अत्र कावकी सूचना धीर अत्र प्रकृतता अत्रु होनेसे उतीय पताकाज्ञान होता है ।
- ४। उदाहरण अत्र अत्र अन्तमन्त्रया तथा प्रकाशक राधिको होनेसे अत्रु पताकास्थान होता है ।

इस मन्त्रका उदाहरण विस्तारके अर्थमें नहीं दिया गया । अत्रिअत्रुअर्थके अत्रे अत्रिअत्रेमि इनके उदाहरण विधि गये है ।

पताकिङ्क (म० अ०) पताकास्थान प्रीतिदिखायुक्त । १ पताकाङ्क, अत्रमि पताका हो । २ पताका अत्रक, अत्र अत्रादा, अर्धके अत्रमिजाता ।
पताकिङ्क (म० अ०) पताका विधमि अत्र, पताका इमि ।
१ अत्रवृत्तिक, पताकाधारी, अत्र अत्रमिजाता ।

२. रिष्टारिष्टबोधक चक्रविशेष । यह चक्र तम रिष्ट-
को गणना करनी होती है, मन्दां का तम राशि का
को, तब तक पताका प्रकृति रिष्ट देखने को है । यह
चक्र बनानेमें पहले ऊर्ध्वभागमें तीन चार विष्टे तुला की
नीन रेखाकी कल्पना करना होती है । यदि चक्र
रेखाओंकी काटनेके बिन्दु रिष्टि भागमें रेखाके चक्र
की ओर खींचना होती है । इस प्रकार चक्र बनाने
करनेमें पताकीका बोध जाना जायगा । उदाहरण पूर्व
के प्रवस्थान द्वारा रिष्ट का उदाहरण दिया है । पतावि-
षुक्रममें चक्रकी समवापन करनेमें ऊर्ध्वभाग में निम्न
को निपरागि मानते हैं । यदि चक्रकी पताविषु क्रम
रेखाओंकी क्रमगत रूप सिद्ध करके कर्कट, मिं, तुला,
तुला पाटि रागिनी कापना करते हैं । इस प्रकार रेखाके
प्रवस्थापन करना होता है । माघ, एकाद, तुला, कुम्भ,
मिं, हृदिक, मकर, कर्कट और धर्म क्रमगत ४५
राशिकाही (४५ राशि) चक्र प्रवस्थापन साधित करते हैं ।

पञ्चसराके मतमें पताकाविषु चार प्रकारका है ।
सेपाटि द्वादश रागियोंकी जो रागि मन्दां योगी, उ-
रागिको सम्यक् रागि और दक्षिण तथा पामादिक विष्ट
रागि उसमें विष्ट प्रथा करते हैं । वेध भो दक्षिणपति
ग्रह द्वारा होता है और विष्ट रागिके मन्दां ग्यान्मा
वर्ष, मास और दिन परिमित कालमें पताका विष्ट
रिष्ट होगा, वह जाना जायता है । यदि चक्र पाप
ग्रह कर्तृक विष्ट हो, तो विष्टरागिको मन्दां ग्या
द्वेषमें और यदि मन्दां ग्या विष्ट हो, तो मासपरम
द्वेष होता है । इन प्रकार विष्ट शुभग्रहके प्रवस्थापन
दिनादि परिमित कालमें जानकी सत्य होती है ।

यदि मन्दां पापवर्ष चक्रवा प्रवृत्ति निम्न पाप
ग्रहने दृष्ट हो तो विष्टरागिके परिमित कालको दिन-
संख्यामें जानकको प्रवृत्ति सत्य होती है । इस पताकी
वेधमें किम रागिके साथ किम रागिका वेध है वह नीचे
कहा जाता है,—धनु और नोनरागिके साथ कर्कट
रागिका वेध, मिंके साथ हृदिक और कुम्भरागिका,
कन्याके साथ मकर और तुलाभा, तुलाके साथ मोन
और कन्याका, हृदिकके साथ कुम्भ और मिंरागिका,
धनुके साथ मकर और कर्कटका, मकरके साथ धनु और

पताका मन्दां पाप मिं, धनु और मोनका, धनुके
साथ तुलाका और कुम्भका तथा मिंके साथ मकर,
कर्कट और तुला रागिका साथ प्रवृत्ति होता है ।

यदि तम रागिके वेधारे जो मन्दां प्रवृत्ति विष्ट
हो, उन मन्दां एही ओर मन्दां मन्दां ग्या वेध कापना
जाता है । कर्कट रागिका १८, मिंका १०, कन्याकी
१२, तुलाकी २४, कुम्भकी १०, धनुकी ३८ मकरकी
२०, कुम्भकी १०, रागिका २८, मकरकी १४, धनुकी १०
और मिंका १८ मन्दां मन्दां ग्या है । उदाहरण
साथ पताविषुक्रम—पताविषुक्रममें तीन चक्रों और
तीन पता रेखा जोड़ कर समवापन करनेके साथ वेध
करते हैं । उदाहरण—१०१२३४५६७८९१०१११२१३१४
करके किम रागिके वेधे करते हैं । मन्दां शुभ-
द्वेषमें वेध होने पर प्रवस्थापनका नाम और पापद्वेषमें
वेध होने पर प्रवृत्ति होता है । नीचे एक चक्र दिना
दिया है ।

	मिं	तुला	धनु	मिं
कर्कट ४				४ मां
मिं ८				३ कुम्भ
कन्या १२				१४ मकर
	तुला २०	विष्ट ६	धनु १०	

पताका प्रवस्थापनका नाम दिवाराके मन्दां
ग्याके और यामादिकपति स्थिर करना होगा । विष्ट
नेप दो दण्ड, चक्रके पाटि और नेप दण्ड, मन्दां नेप
दण्ड, तुला और प्रवस्थापनके प्रथम दो दण्ड और रागिका
प्रथम दण्ड यामादिकपतिका समदण्ड है । रागिके ४
दण्ड मिं भो समथ प्रवृत्ति नहीं ।

पताविषुक्रममें मन्दां, मन्दां, याम और दक्षिण ये ४
प्रकारके वेध प्रवृत्ति करे हैं । सेपाटि द्वादश रागि-
के मन्दां किम रागिके याम वेध है वह नीचे निम्ना
जाता है । कर्कट, मिं और कन्या इन तीन रागियों-
के याम वेध नहीं है, केवल दक्षिण, मन्दां और मन्दां
वेध है । मकर, कुम्भ और मोन इनके दक्षिण वेध-

मित्र पन्थ तोन बंध हैं। तुहा हविज पोर बनु इनके मम्मुक बंध नहीं है। पन्थ तोन प्रभारकी बंध हैं। मिय वय पोर मित्रुन इन तीन रागिगीके काम हविज मम्मुक पोर मन्थ वही चार पकारके बंध जोते है। हय कुथ मित्र पोर हविज ये हयमन्थके बंधव्याम मानि यके हैं तथा इन सब रागिगीके ८५३३ पद हैं। इन सब बन्धोंको परम्परा म कुथ का ८१११।१६ १० इन सब पदपरिमित दिन का मान का बर्षमें बालकका पताकि रिट होमा। यदि हयराजिपति यह पृथ बलवान् हो, तो ८५३३ हयराजि निमके निमो एक दिनमें बालकका बिलाय होमा।

हिमी हिमके मतानुसार बिजलवर्षमें पापपदके रदमें पताकि-रिट होता है। किन्तु यह रिट प्राय नाशक न हो कर पोड़ाटावन है। उय रिटका निम्न निम्नित रूपसे निरूपण करना होता है—

बेधे हय कुथ, मित्र पोर हविज ये चार रागि हयकी बंधव्याम हैं। इन चार रागिगीमेंसे हिमी एक रागिमें बर्ष कीरे पापपद रके ता मतभेदसे पताकि रिट हुआ करता है। मिय वय पोर मित्रुन ये तीन रागि चार प्रकारको बंधवुक्त हैं। यतयव इनके विरुद्धिचारव्यम पर चार प्रकारकी बंधव्याम हवि करके रिटका निरूपण करना होता है पोर जिस जिस रागिमें नाम का मम्मुक बंध नहीं है उनका रिट इन प्रकार निरूपण करना होमा। मि र, मन्था पोर तुन्हा इन रागिगीके वाम बीच मित्र पन्थ तोन बीच हैं। अर्द्ध यनु पोर मान बहो त न रागि अर्द्ध रागिगे मेवव्याम हैं। इनमेंसे हिमी एक रागिमें यदि हयराजिपति पापपद रके, तो १११०।११।११३ १५१८ परिमित दिन, मान का बर्षमें बालकका रिट फिर करना होमा। मन्थ, कुथ पोर मीच रागिगीके हविज बंध नहीं है तथा तुन्हा हविज पोर बनु रागिगे मम्मुक बंध है। यतयव इनका रिट बिचार व बंधव्याम ले कर करना होमा। (उपेक्षितव्य, बहुरररा)

पताकीका विषय मन्थमें लिखा गया। इनका विषय विवरण यदि जानना हो, तो पदबद्ध ज्योतिष्य, होमिवा, बहुरममुकावने, ज्योति-नारस पद पादि ज्योतिष्यके देखो।

हेतुपताकीका विवरण हेतुपताकी ग्रन्थमें लिखा है। हेतुपताकी द्वारा बर्षाजिपति यह पादि मानि जाते हैं। हेतुपताको मन्थनामें एक एक पद एक बय का परिचित होता है। जिस बर्षका परिचित का पद है उन बर्ष में उनी पदकी दया होता है।

पताकिनी (म • जो) १ एम डेको। २ मेना अजिनी।
३ प्रवेहे ब हट-केनपा-मर्गुदिन।

रवरासी-कोटुलर-कुन एन पताकिनी ३" (१५ ५८२)

यतायत (म • जि •) यत यह सुक यनु निपातनात् भासु।
१ पतिशय पताकावुक्त जिसमें बहूतये अहे ही। (जो •)
२ कर्तुको बुरी पताकाका य-पुष्ट मन्थ।

पतागी (हि • जो •) एक प्रकारको मार।

पतारी (हि • रद •) उत्तर भारतके प्रमायोंके जिनारे नियमिमाना बलवको जानिका एक बलपदा। अतुथ यनुसार यह पदमें रद क व्यामने परिवर्तन करता रहता है। मीच इसका विचार करते हैं।

पताम (हि • पु •) पताम देको।

पतामपरिचना (हि • पु •) एक पोधा जो पोपर्थ काम में जाता है। यह बहुत बड़ा नहीं होता। पोथिके नीचे पतको ह ही निजलतो है पोर हमो ह डोमें फल जगति है। बैचकसे यनुसार यह कहूँका समाना, मधुर मोतन बालकारक, प्यास जागो राजिपति, अथ पाण्डु गेव इन पोर विपका मायक तथा पुनप्रदाबह है। पयोव—मूत्रासमको विना, ताना विवामको, तामसको सुप्यजना पयना पयना, बहुरगिका बहू कोरी, मूत्राको पादि।

पतामकुम्हड़ा (हि • पु •) एक प्रकारका जमनो पोधा। इसका बीच यकरकन्दको कनाकी तरह जमोन पर जेवतो है पोर यकरकन्द को ही तरह इसकी मन्थीन बट फूटते हैं। क हीका परमान एक पा नहीं होता, कोरी होटा पोर कोर बहुत बड़ा होता है। यह दवाके काममें जाता है।

पताम-तो (हि • पु •) यह दवा जिसके टांका सुबाक मूत्रिको पोर हो। येना दवाकी पीी ममम्मा जाता है।
पतावर (हि • पु •) पिकके लिये दूध पत्तो।

पतासी (हिं स्त्री०) बटइयोका एक चोन्नार, ज्योती
सखानो ।

पति (सं० पुं०) पति रचतेति पा-रचणे उति । १ मूल ।
२ गति । ३ पाणिग्रहीता, दू-पा, जोहर, त्यागिंद, स्त्री
विशेषका विवाहित पुरुष त्रिमका उभ स्त्रीमे व्याप्त रूपा
नो । संस्कृत पर्याय-धन, प्रिय, भर्ता, कान्त, प्राणनाथ, गुरु,
हृदयेश, जीवितेश, जामाता, सखीसख, नर्मजीन, रसगुरु
स्वामी रमण वर, परिपेता श्रीर गृही । विधिपूर्वक जो
पाणिग्रहण करता है उसीको पति कहते हैं । पति चार
प्रकारका होना है—पत्न्यून, उच्छिन्न, छुट और गठ ।
इनके लक्षणदि रमणसूत्रोमें लिखे हैं । एक नाम प्रहारेके
लक्षण नायक शब्दमें देखो ।

स्त्रियार्थे पति हो देवता है । मयंटा पत्न्यापिच-
से ही पतिकी सेवा करना उनका गुरुसाव धर्म है ।

ब्रह्मवैवर्त्तपुराणमें प्रकृतित्वण्डके ४३वें अध्यायमें
स्त्रियार्थे पतिके प्रति व्यवहारका विषय विस्तृत रूपमें
लिखा है । पतिव्रता शब्द देखो ।

“भार्याया भरणादुत्तरी पालनाय पतिः स्यूतः ॥”

(भारत १।४१८८ श्लोक)

४ अधिपति, किमी चसुका मालिक । पद्यार्थ—
स्वामी, ईश्वर, ईगिता, अधिभु, नायक, नेता, प्रभु, परि-
वृष्ट और अधित ।

“प्राप्त्याधिपतिं कुर्यात् दत्तमायपतिं तथा ।

विंशतीशपतेःशब्द सहस्रगतिमेव च ॥”

(मद्र ७।११५)

५ प्रतिष्ठा, मर्यादा, इज्जत, लज्जा, माख । ६ पाशु
पतदगनेके श्रुतपार सृष्टि, स्थिति और संहारका वज्र
कारण जिसमें निरतिगय ज्ञानशक्ति और क्रियाशक्ति हो
तथा ऐश्वर्यसे जिसका नित्य सम्बन्ध हो, शिव या
ईश्वर ।

पतिघाना (हिं० क्रि०) विश्राम करना, मानना ।

पतिंवरा (सं० स्त्री०) पतिं हृणीते या सा ह घञ् ततो
सुम्, (सहाय मृद्वृजीति । पा ३।२।४६) १ स्वयंवरा ।
जो स्त्री स्वयं पतिकी वरण करती है, उसे पतिंवरा
कहते हैं । सविप-रमणिषा पूर्व समय प्रायः इसी प्रकार
विवाह करती थी । दमयन्ती, इन्दुमती प्रभृतिनी स्वयं

पतिधरण क्रिया या । २ ऊगाऊगा, काका जोरा ।

पतिक (हिं० पुं०) कार्यापण नामक एर प्राचीन मित्रा ।
पतिकामा (सं० द्वि०) पति-पभिलाविणो, स्वामीकी
चाहनेवाली ।

पतिघातिनो (सं० स्त्री०) पतिं हन्ति हन्-णिनि । १
पतिनाशिनो स्त्री, स्वामीकी मारनेयानो श्रीरत । २
पतिनाशक हस्तरेखाविणप । स्त्रियार्थे शब्दमें एक
प्रकारको रखा होता है जिसके रहनेमें उनके पति का
घनाग होता है । कर्कटलग्नमें या कर्कटव्य चन्द्रमें
घोर मद्रनके तोमवे पंगमें जिन स्त्री का जन्म होता है,
यही स्त्री पतिघातिनो होती है । (बृहस्पतः) जिन
स्त्रीके पत्न्यमूलमें ने पर एक रेखा कनिष्ठाङ्गुलिसुल
तक चली गई हो, जिनको शशिं नाम, नाकके ऊपर
शाला तिलवा और जिनका धलधरम शस्युक्त तथा
शिक्षार हो, ऐसी स्त्री पतिघातिनो समझी जाती है ।

(रंगा शशुदिर)

पतिघ्न (सं० द्वि०) पतिं हन्ति पति हन्-टक् (लघणे
नायाशब्दकृ । पा ३।२।५२) पतिनाशसूचक लक्षणभेद ।
स्त्रियार्थे उोप । पतिघ्नो, स्त्रियार्थको पतिनाशसूचक हन्-
रेखा । स्त्री पतिघातिनो होगी या नहीं, विवाहके पहले
ही इसकी परीक्षा करना चाहिए । प्रायश्चानयनगुहा
सूत्रमें इसका विषय इस प्रकार लिखा है,—विवाहमें
पहले जैत प्रभृति पाठ स्थानोमें मष्टा संशुद्ध कर उसे
घनग अलग आठ भागोंमें रखे । याद अभिमन्त्र-पूर्वक
कुमारीकी उनमेंसे एक भाग छुनी कहे । यदि वह कुमारी
शमगानकी मिष्टीको छू ले, तो उसे पतिघातिनो समझना
होगा ।

पतिजिया (हिं० स्त्री०) जीयापोता नामक हृत्त ।

पतिन (सं० द्वि०) पतिन भ्रष्टो भवति स्वधर्मात् शास्त्र
विहितकर्मणः, सदाचारादिभ्यो वा यः, पत-कृत्-रि
क्त । १ चलित, गया हुआ । २ गलित, गिरा हुआ,
ऊपरसे नीचे प्राया हुआ । ३ आचार, नीति या धर्मसे
गिरा हुआ नोतिभ्रष्ट, पाचारव्युत्त । ४ जातिव्युत्त,
जातिसे निकाला हुआ जाति या समाजसे स्वारिज । ५
स्वधर्म अत, अतिपातकी, नरकगमनसूचक कर्म- ।

“रक्षकं च समुत्थय रक्षकं कर्मायवेत् ।
अनायकं च विद्विष्यत् । धीमतां वरिषीणि तः ॥”

(मन्व० पु०)

आ मनुष्य समाजकालमें पतित विपत्तिक लय
खिल नहीं होने पर भी पतना कम छोड़ दूसरे प्रसंगों का
पान्थय होता है । पतित लोग उसीको पतित कहते हैं ।
मन्वपुराणमें लिखा है कि जो ब्राह्मण पंडाकारि
प्राण्य स्वो गमनं कर्तुं कर्म पयको त्याता पौर
पञ्चानपूर्वकं कर्मने तेल टेल करता है वह पतित पौर
प्राण्यपूर्वकं कर्मने उन्ने समान होता है ।

यद्विजलपुत्रं ब्रह्मपुत्र्यमि लिखा है कि पाग
नवनेशाना विष उनेशाना, पापक कुरुदि पौर
श्रीवधमता विष, यस्मि कर्म, उद्व्यन यादिभि मर जनि
नाका पतित माना जाना है । पतित व्यक्तिका दाह
कर्मवेदिद्विधा पतितमद्य, याह, यथा तत्र कि उपर
निय चांशु भी बहाना पञ्चम्य है । पतितता म मर्ग,
कर्मके पाप मोक्षण, यवन का बातवात करनीशाना भी
पतित होता है ।

बराहपुराणमें लिखा है, कि जो पतितके माप
बैठ कर खाते, सोते पौर बातवात करते, वे पतित
होत हैं । किन्तु पतितभयति प्रायचित्त करके यह जो
नकता है । यह व्याह अब तक प्रायचित्त नहीं
कर लेता तब तक उन्ने वैदिककर्ममें पश्चिपार नहीं
रहता पौर पन्थमें वह नरकगामा होता है । पतितके
प नमके आ पतित होत कर्मक उद्व्यादि काव होत हैं ।

पतितभ्रातृ ह्येव्यथाय है कर्म माताय पतित
होत पर उन्ने ज्ञान नहीं करता पश्चिपय ।

“वसिष्ठ प्रवक्ष्यामि न पु मता कथावन ।
अनेकाचारो यो वेन भाटा वरीवरी ॥

(मन्व०पुत्रय)

युद्ध यदि पतित है, तो उन्ने परिश्रम कर सकेते
है पर माताको जाना भा नहीं । क्योंकि माता मम
पारण्य पौर पोषण दाता करके रहे । पन्थपुराण
में लिखा है—ब्रह्मण कण्ठ गोशाना पौर पञ्चगतवा
रुने उद्दये मयामे पित्रु देनिने कचार हा मरता
है । ब्रह्मपुराणमें भा ५५५ का मर्मण किया है । पतितोंके

उद्दये एक वर्षके बाद गयायाद्यादिका यगुष्टान
करना होता है ।

श्रीमाट्टि पौर प्रायचित्तविषेक मभूतिमें लिखा है—
एक वर्षके बाद मायायवनि दे कर पतितका याहादि
हो यज्ञता है । मायायवनि देणो ।

कोई कोई कथने है कि प्रायचित्त करनेमें रिता या
पाप नाम होगा पर इसका कोई प्रमाण नहीं है किन्तु
पन्थपातोनी जगद प्रमाण है कि पुनर् प्रायचित्तमें
पिताका पप नाम होता है ।

पतितका उदक विषय—इमाट्टि लिखा है कि यदि
कोई व्यक्ति पतितके प्रति दया प्रियुमा कर उदर
क्षतिपावन करना चाहे तो उन्ने एक लामोको मुला ३४
कुच पयं दे वह लक्ष्मा यादित “तुम मृष्य मे पर
तिल माधो पौर जनपूर्व” एक भद्र को भी कर दिये
सुंइ वठ कामपाव द्वारा उन्ने कि वा तथा बाबा
पातकीका निर्दोष पौर पात करो” उपापरकम व्यक्ति
को यह बात तुल कर यदि कोई दापो पयं दे कर
दया पावण्य को तो पतितको दयि पातो है । इस
प्रकारका कार्य मृताक दिन करना होता है । मदन-
रहमें लिखा है कि जो पाकपातो हैं उनके सम्भ्रममें
यह विधान कहा गया है । कि वे किशोका कहना है
कि उपनयनक्रममें सभी पतितविषयीने यह नियम
लानु है । (निर्म०दिगु ५ परि)

पतितका विषय प्रायचित्तविष कर्म इस प ६११ लिखा
है ब्रह्मण सुराप मुक्तमपनामा पौः माट्टिक
पौर निन्दित कमाभ्याने प्रभूति पतित हैं । मायायवता
किशोनि महापातक का पतितपातकका कमागुष्टान किया
है, व जो पतित हैं ।

पतित उधारण (वि० वि०) १ पतितोंको गति प्री-
नाला । (पु०) २ मनुष्य ईश्वर पतित जीके उधारणे
निय पवतार नर्नकाना ईश्वर । ३ ईश्वर परमात्मा ।
पतितता (म० क्को०) १ पतित होतका माप जाति
या चरुन श्यत होतिका माप । २ पवनिमता । ३ पय
मता मोचता ।

पतितपत्र (म० पु) पतित होतका माप ।
पतितपावन (म० वि०) १ पतितको युद्ध करनेशाना

पतिव्रतको पवित्र करनेवाला । (पु०) २ ईश्वर । ३ सगुण ईश्वर ।

पतिव्रत (स० वि०) पतिव्रत दशम रहनेवाला, जाति-च्युत हो कर जो वर विधानवाला ।

पतिव्रत (स० क्लो०) पतिव्रत पतिव्रत गिरने वाला ।

पतिव्रतविवाह (स० वि०) १ सावित्री परिभ्रष्ट, जिसका उपनयन संस्कार न हुआ हो या विधिपूर्वक न हुआ हो । २ प्रथम तीन प्रकार के व्रतोंमें एक ।

पतिव्रत (स० वि०) भूषित, पृथ्वी पर गिरा हुआ पतिव्रत (स० क्लो०) पतिव्रतः त्व । १ स्वामित्व स्वामी, प्रभु या मालिक होनेका भाव । २ पाणिप्रादकता, पाणिप्रादक या पति होनेका भाव ।

पतिव्रत (स० क्लो०) यौवन ।

पतिव्रता (स० स्त्री०) पातिव्रत देवता यस्याः । पतिव्रता, जिस स्त्रीका पतिव्रत उपास्य एकमात्र पति हो ।

पतिव्रता (स० स्त्री०) पतिव्रत देवता यस्याः । पतिव्रता स्त्री ।

पतिव्रत (स० स्त्री०) पतिव्रत देवता यस्याः । पतिव्रत देवता स्त्री, वह स्त्री जो अपने पतिके प्रति वेष करती है ।

पतिव्रत (स० पु०) पतिव्रतः । १ स्वामीका धर्म । २ पतिके प्रति स्त्रीका धर्म ।

पतिव्रतव्रत (स० वि०) पतिव्रतव्रत कृत व्याका भक्तिपूर्वक पालनकरनेवाला, पतिव्रता ।

पतिव्रत (स० वि०) पतिको न चाहनेवाला ।

पतिव्रत (स० वि०) स्वामि-पयानुवर्ति, पति का पदानुसरण करनेवाला ।

पतिव्रता (हि० क्लो०) विश्राम करना, प्रतीत करना, मध मानना ।

पतिव्रत—हिन्दू एक कवि । स० १७०२में इनका जन्म हुआ था । इनका वनापथ व्रजाधर्म पाये जाते हैं ।

पतिव्रत (स० स्त्री०) पतिव्रत देवता स्त्री, पतिके वेष करनेवाला स्त्री ।

पतिव्रत (स० पु०) पतिव्रतः स्त्रीकः स्वर्गादिः मध्य-

पदलोपी कर्मधा० । १ पतिके साथ धर्माचरण द्वारा प्राप्य स्वर्गादि लोक पतिव्रता स्त्रीको मिलनेवाला वह स्वर्ग जिममें उसका पति रहता है । मनुमें लिखा है, कि जो स्त्री कायमनोयाच्यमें संयत रह कर पतिको पशुहत्या नहीं करता और नारीधर्ममें आना जीवन विताता है, उसे हम लोहमें परमकीर्ति और परमलोकमें गति दोनों देते हैं । (पु० ५।१६।१—१६६) २ पतिके स्त्रीप ।

पतिव्रता (हि० वि०) सोमाच्यवती, मधवा ।

पतिव्रता (स० स्त्री०) पतिव्रत यस्याः, पतिव्रत निपातनात् वत्, तुग गमच, ततो डीप् । समर्थाका, मधवा स्त्री ।

पतिव्रत (स० पु०) पतिव्रत विद्वन्नाभे विद्वत्पु० । १ पतिप्रापक, मङ्गलदेव । २ जो पति प्राप्त करावे, पति लाभ करानेवाला ।

पतिव्रत (स० पु०) पतिव्रत निपातपूर्वक पशुराग, पतिव्रत ।

पतिव्रता (स० स्त्री०) पतिव्रतमिथ धर्माथ कामेषु कायवाङ्-मनाभिः सदोपास्याः । साध्वी स्त्री, स्वामीके प्रति एकान्त प्रभुरक्ता स्त्री । पर्याय—सुचारिता, मती, साध्वी, एकपत्नी ।

पतिव्रता स्त्रीका सङ्क्षण—

धार्तरिं मुदिता हृष्टे प्रीयते मलिना कृया ।

मृत निपत या पत्नो वा स्त्रीत्या पतिव्रता ॥”

(शुद्धितत्त्व)

जो स्त्री स्वामीके दुःखसे दुःखी और सुखसे सुखी होती है तथा स्वामीके विदेग चले जाने पर मालिना और कृया तथा मरने पर अनुसृता होता है, उसको पतिव्रता जानना चाहिये ।

मनुमें लिखा है, कि विवाहकालमें जो सम्प्रदान किया जाता है, उसीसे स्त्रीके ऊपर स्वामी का सम्पूर्ण स्वामित्व रहता है । उसी समयमें स्त्रीका स्त्रिय स्वामीपरतन्त्रता ही एक मात्र विधेय है । पतिव्रता स्त्रीका आज्ञाय पतिकी आज्ञाका अनुसरण करना चाहिये । कोई ऐसा बात न करनी चाहिये, जो पतिको अप्रिय हो । पति कितना ही दुःखी, दुःखी, दुराचार और पातको स्त्री न हो, पतिव्रताको सदा सर्वदा उसे अपनी देवता

मानना चाहिये । जो ब्राह्मे पतिशो परिग्रह ही उरकी मन्त्रुके बाद भी वे पतिव्रताके लिये एकतपस्य हैं । पतिकी मन्त्रुके पश्चात् पतिव्रता स्त्रीको एक मूल पादि या कर पूर्ण ब्रह्मचर्यमें रहना चाहिये ।

जो मन्त्र विद्यार्थि पतिव्रतब्रत का उद्वहृत कर पर पुत्रपादि फल करती हैं, वे रम लोचने तिमिरिता जाती हैं और मरनेके बाद गृहयाम्योनिमें प्रान गेती हैं तथा तरह तरहके पाप रोनाके पाज्जात्त ही कर कष्ट भोगती हैं । (मनु २ प. ०) वाग्भट्टकथ्यम चित्तार्थे लिखा है, कि पतिव्रता स्त्रीको समी कर्वायिं त्वामीषी गवायति नी शोभा चाहिये । पतिके विद्वेग होने की मगामें उभे मृदुार काम परिधान, क्रीडा, मिर तमायिमें या मृन्नेय कर जाना पादि फाय त्वाय देना चाहिये । (याज्ञवल्क्य १ म)

ब्रह्मके बर्णपुराणके श्रीकृष्णशर्मकथने पतिव्रता स्त्रीब्रतला विषय इन प्रकार लिखा है । यतो स्त्री प्रति दिन मञ्जिमात्मने पतिपाणोटकका विचन करे । मन्त्रुषु ब्रत पूजा तपस्या योर पाराधनात्काम कर पतिवैशामें वन रहना ही पतिव्रताके लिये एकमात्र चम है । मन्त्र पतिको नारायणके भी श्रेष्ठ मममि । पतिव्रता स्त्री त्वामीषे कस्य पर ममान मन्त्रुतर न करे । त्वामी यदि श्राद्धमें या कर उभे दृष्टमी दे तो भी क्रोध न करे, भूषण्यम पर त्वामीको तन्वान भोजन करावे और निद्रा भङ्ग नपादि न करे । पुत्रको अपेसा पतिको भोगुना पश्चिच प्यार करे । पति उभे मन्त्र पापोंके कृपा देना है । कृपको पर त्रिनमि तीर्थ है वे मन्त्र तीर्थ तथा देवनाके तत्र यतोऽ पादतन्मने यकश्चिच है । मन्त्र नारायण दिव मन्त्र मुनिगण पादि स्त्रीने भय पायिं हैं । पतिव्रताके पदनेकुं मन्त्रुया पतिव्र जाती है । यतोको नमस्कार कर्तनेने समी पाप माय हो श्रापि है ।

पतिव्रता स्त्री यदि चाहे तो मन्त्र भ्रममें तोना भीर्वाजा नाय कर मकती है । यतोके पति और पुत्र सर्वदा तिगद्वरवने कर्मे कर्तों भी कर नहीं । जो पतिव्रता कला मन्त्र करती है वे बतौर सुव्रती ही ममभी जाती हैं तथा कथाके पिता भी कौशलमुख होत है ।

पतिव्रता स्त्रीको प्रतिदिन श्यामाक्षा पूजन करना चाहिये शिवाका विधान इन प्रकार है—यज्ञो दर्शरे वड
Vol XII 16"

कर रात्रिपासना पतिव्रता करे, पति त्वामीको प्रथम पोर स्नान करावे म्महाकार्य करे । तन्मन्त्र काम करके श्रोतवस्त्र चन्दन पोर शुद्ध पुत्रपादि पश्य कर पश्ये पतिकी मन्त्रुगत ब्रह्मके ज्ञान करावे दोही मन्त्र पढ़ना कर परे ही दे । काममें यावन पर बिठानपाट में चन्दन मनेमें माना पोर गातमें मन्त्रुवेदन पादि दे कर मन्त्रिपूर्वक पतिकी प्रयास करे ।

प्री मनाः काम्नाय शान्ताय सर्वदेवायवाय त्वाका मन्त्रने पाय, पश्य, पुष्य, चन्दन, मेषेय सुवाचित नान पोर त म्मनादि दे कर पूजा करनी होती है । बादमें यतो तिन्मनिजिन स्नानका पाठ करे ।

“मी मन्नाः शान्ताय शान्ताय सर्वदेवायवदन्विन ।
मन् यथाय शान्तान सर्वदेवाववाय न ॥
यतो ब्रह्मवक्त्राय पश्यायववाय न ।
मन्त्रवाय न पूज्याय इवायाय न न ॥
चन्द्रमन्नादिदेवाय न सुवस्तारवाय न ॥
शान्तायान पनीना बलानन्दपणिन ॥
पतिव्रता पतिरिन्नु पतिरेव पश्येकरा ।
पतिव्रत निशुकाशान ब्रह्मकर तपाऽस्तुते ॥
कल्पन मन्त्रुः ॥ ३ । शान्ताय वदन्मन्त्रुः ॥
पनीवको वर्वाययो दर्माशोरे उपवव न ॥
देर श्रेष्ठ मन्त्रुर्भ सुववापी वरुका कृन्तु ॥
वास्तवना न वरता मन्त्रुना न पुत्र पुत्र ॥
वतिव्रता कष्ट मन्त्रुया देलाके मन्त्रुयाय न ।
मुनीयाच्य वृष्ठाच्य पनीविय वृण पुत्र ॥
वतिव्रताको कर्त्ता श्रीः कर्मणः इवावद ॥
इर श्रेष्ठ मन्त्रुर्भ वा श्रेष्ठेति वतिव्रता ।
मोऽउको वारि मीरी वा कथन सर्वशक्तिवृ ॥
मन्त्रुको लभने पुत्र पितो लभने चव ।
देवी न मन्त्रुने रोषात् इयो मुष्ने व वनात् ॥
वतिव्रता न मन्त्रुवा न तीर्थस्वाचन कमेत् ।
कन्चन सर्वशक्ति मन्त्रुयाच्य मन्त्रुवद ॥
इर मन्त्रुया मन्त्रुवद मुष्टु चै वा मन्त्रुवद ।
कथ वतिव्रतावर्त्तो म्निर्नि कृन्तौ मन्त्रु ॥”

(ब्रह्मवेवाजो श्रीः शान्तारवदन्मन्त्रु ८० ४०)

और भी दूसरे दूसरे पुराणमें पतिव्रत पतिव्रताके नाम

पतोत्तर (वि० रत्नो०) १ बह चोपवि ओ बिबो घृच पोषि या ट्टरका पत्ता या कुल पादिना श्री, साम पातयो ट्टरार, पारिविदे । २ पत्तरमा ।

पतोत्तरी (वि० श्री०) १ नोचर देवे ।

पतोत्ता (वि० पु०) १ टाता, पत्ता का बना पात । २ एक प्रकारका बनना ओ सम म समयेदि छोटा पौर बिमविपाये बड़ा होता है । इसका पर पुत्र बनेदे, बिहना, मरम पौर बमकेना होता है । टोपियो पादि का बनाये प्रयाः इसोच पर काममें जाये जाती है, पत पा ।

पतोती (वि० श्री०) १ पत्तीका बना छोटा जाना बोजी । २ एक पत्ता का रोना, छोटा टोना ।

पतोता (वि० पु०) १ पतोता देकी ।

पतोद (वि० प्यो०) १ वनेद देकी ।

पतोड (वि० प्यो०) १ पुनबपू देकी रत्नो ।

पतोष्ठा—पयोष्ठा प्रदेसके मोतापुर जिलेका एक गांव । यहांके १ मीच उत्तर बिम कुन्तान नगरके समोय तक एक सुविकसित प्राचीन नगरका प्रवेशद्वार तथा मन्दिरादिका एक वास्तव्य देवमंदिरे पाता है ।

पतोदा—१ पच्छिमके बसोन्कर एक नामनगरम् । यह पत्ता २८ १३' न २८ ३३' पौर देमा ७६ ४ ३' मि ७६ ५२ पु०के मध्य परकीत है । मूर्ध्निमात्र ५२ वर्गमील पौर जनन म्या २१८१३ है । इसमें ३वो नामका एक नगर पौर ४० पात बनती है । मध्ययुद्ध युग तावतून बना था वहांके वस्तीमान नगर है । वे बनूको न गठे है इनके पूर्वद्वार परैवतपर यमि होतकर को किताये बिबर कुद बिवा या बिमके निदे काहे मिकने १८०६में बनको यहा मूकमयि दान दो मो । यहां एक बसन्तान, प्राईमो लका तथा चार कायपाट टाकाय है । यहांको कुल आय ७११११ ६० है ।

२ एक गाजाका बहरा । यह पत्ता २८ २०' ३०' पौर देमा ७६ ४८ पु०के मध्य परकीत है । जनन म म्या ४१०१ है । यह मल्ल-बंदीय विपत्रीके शासन कालमें बनावटा गया है । यहां एम्पेटोके नगरका निवास मान टेर गाणके चनेर काचिब है ।

पतोदु (वि० शि०) १ पतेन वर्जित गच्छति अर बिन,

ततः पादव्य पदानेय । पाद द्वारा मत्ता, प रवे बनती जाना ।

पता (म० पु०) १ पतकनेन पतवावृत्ततात् अर्थ मत् । २ पाद पर, पाद । ३ पत्र देकी ।

पताङ्ग (म० श्री०) १ पताङ्ग पयोटादिकात् नापु । २ एकपन्द, पतन नामक लडकी बसम (Cacaolipnia = (p)an) । इसे हिन्दोमें पतम, मैकडूमें चोखनुकडू पौर लम्बवमें बसमो कहती है । सरङ्गन पणों पताङ्ग, रक्तभात मुङ्गडू, पताय्य पाङ्ग मायाय्य एकक, मोरित रङ्गात रोमकाठ, कुचन्द पारकाठ, बरड । पुन -कटू, घच, दण्य मोन नापयितकार, बिन्दोर, लमाट पौर भूतनामक है । (पु०) २ मुङ्गाव, भीमराव । ३ क्षीमराव । ४ माविधाम्यदे, एक प्रकारका जान ।

पततम् (म० पद्य०) १ पत-तम् । पादवे ।

पतन (म० श्री०) १ पतति लब्धति बना यस्मिन् । पत-तम् (पतिता) दम् । मत् ११५०) १ नगर । २ पदङ्ग । पतन—आरन देकी ।

पतनवबिन्ध (म० पु०) १ पतनय नगरवे चरिक् । नगर चरिक् । पणोय—अभावो ।

पतना—वृत्तल प्रदेसके माहाभार विनामनंत भवुका धर्मिका एक प्राचीन नगर जिले मधर कासीय हिन्दू शाके प्रतिष्ठित वतवारी है ।

पतनचिचरि (म० पु०) १ पतनय चरिचरि । रावभट । पतनोरम्—बन्धके परेयवालो चरिब मतोच एक चैको के कायक या समोकोको । बन्धके पौर कचाटक प्रदेस में चार प्रकारके मर्दीकोको प्रभु सिधे जाती है । कायक-प्रभु हमनपुत्र, भूचयपु पौर पतनप्रभु । इन चार चैचिठोके प्रभु का कायकोई कोच पतनप्रभुयके को यमिको चैचि पौर बिदद चरिचयवमान वतवारी है ।

पतदपुराचके मन्नादिययमि विद्या है कि परमे से एम पशरीके नामने चरिचि सि । बिब प्रवार जनका पतनप्रभु नाम पका एक विचरमि मन्नादिययमि जो विद्या है वह एक प्रकार है—

"मन्नाके मानवपुत्र कश्यप के कायके हुन सु२ सु१के पुत्र चैचरचमयु, मद्रक ममि टिकोर टिकोके पुत्र रडू (पुके पुत्र बर बरहन दमाय ददाबहन नाम मनुपन

कुश, तत्पुत्र अतिथि, तत्पुत्र निपथ, तत्पुत्र नभः, तत्पुत्र पुंडरीक, तत्पुत्र क्षेमधन्वा, तत्पुत्र देवानोक, तत्पुत्र दामो, तत्पुत्र दल, तत्पुत्र गौल, तत्पुत्र उमाम, तत्पुत्र ब्रजनाभ, तत्पुत्र खुंडन, तत्पुत्र पुषित, तत्पुत्र विश्वपस, तत्पुत्र ब्राह्मण्य, तत्पुत्र ऋग्गुणनाभ, तत्पुत्र कोशल्य, तत्पुत्र नोम, तत्पुत्र ब्रह्मिष्ठ, तत्पुत्र पुष्य, तत्पुत्र सुदर्शन और सुदर्शनके पुत्र अनिवर्ण हुए। अनिवर्णके एक पुत्र थे जिनका नाम था अश्वपति। पहले राजा अश्वपतिके कोई पुत्र न था। पाँके उन्हीने भरद्वाज आदि वारह ऋषियोंको स्व स्व टक्षिणा दे कर पुत्रेष्टयज्ञ किया जिससे उन्हें अनुज प्रभृति १२ पुत्र हुए। इन १२ पुत्रोंके गोत्र १२ ऋषियोंके नाम पर रखे गए और इन वारह ऋषियोंको आराध्यमानि इन वारह राजपुत्रोंको कुलदेवी मानो गईं। एक समय राजा अश्वपति पुत्रोंके साथ पेंठन नगरमें तीर्थयात्रा करनेको गये। वहाँ उन्होंने गान्धर्विके अनुसार तुलापुरुषादि अनेक सत्कर्मोंका अनुष्ठान किया। भृगुऋषि राजदर्शनके लिये वहाँ पहुँचे। किन्तु घटनाक्रमसे सुनिको देख कर अश्वपति न उठे और न पाद अर्घ्य द्वारा उनको पूजा ही की। इस पर ऋषि बड़े विगड़े और राजाको इस प्रकार शाप दे चले, "तूने राजैश्वर्यसे मदीयत्त ही कर मेरी श्रवमानना की है, इस कारण तेरा राज्य और वंशनाश होगा।" राजा अश्वपतिने अपना अपराध समझ कर ऋषिके पैर पकड़े और कातरभावसे कहा, "प्रभो! मैं दानादि आर्घ्यने अन्वयमन्त्र था, इसी कारण यह अपराध हुआ है, क्षमया क्षमा कीजिये।" राजाके कातर वचन सुन कर सुनिबर संतुष्ट हुए और बोले, "मेरा शाप तो वृथा ही नहीं सकता, तब तुम्हारा वंश रहेगा सही, लेकिन वे राज्यहीन हो कर नि शोयं होंगे और लिपिकावृत्तिका अदलबदल कर गे। इस पंठन पत्तनमें मैंने क्रोधवश शाप दिया है, इस कारण ये प्रसिद्ध पाठारोयगण 'पत्तन' नामसे प्रसिद्ध होंगे और इन पत्तनवंशधरोकी उपाधिमें 'प्रभु' पदशुद्ध रहेगा (१)।" इतना कह कर भृगुसुनि चले गये।

वत्तमान सूर्यवंशीय पत्तनप्रभुगण अश्वपतिके उक्त १२ पुत्रोंको ही अपने आदिपुरुष मानते हैं। सद्यादि खण्डानुसार उक्त १२ जनोंके नाम, गोत्र और कुल देवीका परिचय तथा प्रत्येकके वंशमें अभी जो पदवो चलते हैं, वह नीचे लिखो गई है—

क्र. सं.	नाम	गोत्र	कुलदेवी	देवीका स्थान	पदवा	वंश
१	अनुज	भरद्वाज	प्रभावती	महिम्	राणि	
२	दिवक	पूतसाज	कानिका	मंवं	प्रधान	
३	सुशु	ब्रह्मिष्ठ	चण्डिका	टरोन	नीठरि	
४	ऋतुपर्ण	काश्यप	महानक्षी	फोनापुर	नवनागर	
५	जय	हारित	योगेश्वरी	योगेश्वरी	पत्ताराव	
६	सुब्रह्म	हरविष्णु	दत्तायी	विसवा	पुरनर	
७	सीवाम	ब्रह्मजनार्दन	कासावी	काचोपुर	ब्रह्माण्डकर	
८	समान	मोषल	पञ्चरोरा	कालुंशाम	दिगाई	
९	कोण्डल	कोण्डल्य	चमिका	गुनरान	नायक	
१०	मण्डुका	मण्डुका	महीश्वरी	सुधरं	मनकर	
११	कौशिक	कौशिक	दुर्गा	कलकला	नीलकर	
१२	मार्तण्ड	विश्वामित्र	त्वरिता	भगोचतुलजा	श्वररश्मर	

मायादेवः शिवः शक्तिः कात्यायनः सत

इसके निवा एक श्रेणिके और भी पत्तनीप्रभु हैं जो अपनेको चन्द्रवंशीय क्षत्रिय कामपतिकी मन्तान बतलाते हैं। स्कन्दपुराणके सद्यादिखण्डमें कामपतिका परिचय इस प्रकार है—

कश्यप, तत्पुत्र अत्रि, अत्रिकी आखसे चन्द्रमा, चन्द्रमाके पुत्र बुध, बुधके पुत्ररवा, तत्पुत्र नहुष, तत्पुत्र ययाति, ययातिके पुत्र आयु, आयुके त्रयू, त्रयूके वाम, वामके कुश, कुशके भानु, भानुके सोम, सोमके शिरा,

अथप्रभृति तेषां व लिपिकाजीवनं भवेत् ।
पैठने पत्तने शप्त्वा गया कोषवगात् किञ्च ॥
पाठारीयाः प्रसिद्धास्ते पत्तनाद्या मधन्तु वः ।
प्रभूत्तरपद तेषां पत्तनप्रमवाश्च ये ॥

(१) "तं चेच्छरणमात्रो वंशहृदिर्भविष्यति ।
त्वदंशजाश्च राजानो नि.गोर्वा राज्यहीनतः ॥

शिशुभिः सुश्रावितकर्मभिः धनपुत्र माङ्गल्य, कामराज पुत्र
 रविः पञ्चम रविः षष्ठमं सप्तमं त्रिंशत् सप्तमं त्रिंशत् तपु
 षोक्षि पुत्रादिकर्मभिः इन्दुमुपाज, दुष्ट, दुर्मन्त्रा, बर्मा, काम
 षोक्षि रश्मिपुत्र रश्मि इतरे व गर्भं निमिराज,
 निमिराजो पुत्र कामकायन इतरे व गर्भं बन्धनाम
 बन्धनामके पुत्र इन्दुम दन इन्दुम इतरे कामराज, काम-
 पाक्षि व गर्भं सन्निव सन्निवके पुत्र पमय पमयके
 पुत्र कामो पोर कामीके व गर्भं कामपतिने जगद्विजय
 विद्या । पञ्चमे कामपतिने चोदं सन्नात न ही । उन्मि
 श्रादिपौत्रो मन्त्राके पुत्रे शिष्य विद्या जिवने चमके पनेच
 पुत्र चण्डक दृष्ट ।

नोषि कामपतिषी व मधारा, उतरे मोक्ष पोर कुच
 देवोषि काम दिवे जति है—

पुत्र पुत्रप ।	कुचदेवो ।	गोत्र ।
१ दशराज	शेरीमरो	पद्माच ।
२ काम ०	सशाकपी	व्यवन ।
३ पुत्रु	एकबीरा	गीतस ।
४ शोचर	कालिका	कौण्डिन्य ।
५ इन्द्र	पद्मावतो	बोलन्य ।
६ चम्पक	कुमारिका	चम्पक ।
७ मोक्षराज	कगदम्बा	समिष्ठ ।
८ विद्युत्पति	मरुत्वतो	निम्बामित्र ।
९ सुरध	उमा	शृगु ।
१० रज्जु	वायोधरो	पति ।
११ मामध	बागोधरो	पति ।
१२ शैल	मलिता	मरुहाज ।
१३ शोपति ०	च विद्या	चारित ।
१४ शेष	रेणुका	देवराज ।
१५ लज्जुल	सहाजानी	भूचक्र ।
१६ दमन	तामसी	चङ्गिण ।
१७ शैल	इन्द्रापो	गर्ग ।
१८ यदु	पद्मावतो	बोलन्य ।
१९ वीर्य ०	मोक्षराज	पाण्डत ।
२० कञ्जल	कोक्षाम्बा	मिदधि ।
२१ मधय	चम्बा	उदयिचन्द्र ।
२२ वारुधि	बागोधरो	चैवस्वत ।

२३ रश्मि	रक्षापी	शृङ्ग ।
२४ प्रदीप	सहादिरो	कृपाङ्ग ।
२५ दानराज	मजिरो	मार्तङ्ग ।
२६ शिशिराज	तामसी	शामर ।
२७ सारङ्ग	साहजन्दा	हाण्ड ।
२८ बन्धक ०	नीला	पूतिमाच ।
२९ देवराज	उचक्षेभ्य	आम्बोम ।
३० मन्त्रोद्धर	साहज	गण्ड ।
३१ द्वापाल ०	मोक्षिनी	वैद्यक ।
३२ काममानो	भोमा	गर्ग ।
३३ मयुध्वज	भद्र	बैतन ।
३४ शूरसेन	अग्निपा	अमदधि ।
३५ शृङ्गि	यागीमरो	भाद्रु ।
३६ भागव	बर्माको	गानामि ।
३७ मयुध	कराणा	दुन्दुभि ।
३८ सत्कर्म	पातमाविनो	दुविष ।
३९ चैत्रराज	चम्पकतो	शोप ।
४० अमराज	दुगा	कुमार ।
४१ रिपुनाग	ईश्वरी	कुमर ।
४२ शालत	तोरेश्वरी	मित्र ।
४३ दानराज	पञ्च सुबो	म दन ।
४४ नाकमणि ०	प टना	बन्धकान्ध ।
४५ जगन्नाथ	ख रना	रोमकर्म ।
४६ पाचनाथ	मन्त्रामाविनो	सूर्य ।
४७ विदम	शुष्मा	सुकुमार ।
४८ म प्रयना	साङ्गिणो	मायन ।
४९ पार्थिव ०	काम्यायनो	मार्तिभरत ।
५० द्रुण	रदनरा	धात्रेविष ।
५१ बाहु ०	नाडिमा	सुदन ।
५२ सुरवा	व चक्षी	पार्थिव ।
५३ बाहुदेव	नयिपो	पगस्था ।
५४ पतिवार	मोक्षिनी	शासनिक ।
५५ सुदेष्य	सुबन्धा	पात्रेभ्य ।
५६ दक्षरथ	मेरुो	मोमय ।
५७ सुरध ०	मामिनो	सहाय ।
५८ पादिराज	जातिका	उपमयु ।

५८ महाराज	मीमिनी	गांडिन्य ।	कामपतिके		वर्तमान	कुलदेवोके	
६० अरिसेठ	दलिनो	विभाडक ।	पुत्रके नाम	गोत्र	वंशधरको	जहां	
६१ प्रोतिमान्	देव्यनागिनो	धार्मिक ।			उपाधि	मन्दिर है	
६२ चित्ररथ	शिलादिवो	ब्रह्मर्षि ।	१ ग्राम	च्यवनमार्गध	रणजित्	एकवीरा	कानो
६३ सङ्मज्जित्	प्रभावतो	सात्विक ।	२ पृथु	गीतम	गोरक्षकर	बज्रो	भागडो
६४ सीमन्त	वगना	जनार्दन ।	३ ब्रह्म	गाण्डिन्य	राव	वज्रिणो	वज्रवाह
६५ गज *	भामिनो	विमल ।	४ औपति	देशदत्त	जयाकर	योगेश्वरो	योगाई
६६ महीधर	अमरा	ताता ।	५ पुण्डरीक	मार्त्तण्ड	धाराधर	तारादेवो	काशी
६७ श्वेत *	विवरेपा	रारण ।	६ वज्रटंडू	जामदग्नि	तनपडे	योगेश्वरी	योगेश्वरो
६८ सुलेत्र	शक्ति	उग्र ।	७ औपाल	नानाभि	कीर्त्तिकर	कनका	कनरी
६९ स्वर्णोवाह	मीमेश्वरी	प्रेम ।	८ शास्मली	सुह्रन	अजिह्व	चण्डेश्वरी	ठाना
७० ओधर	महामारो	भाषण ।	९ पाथिव	चनाक्ष	धैर्यवान्	चण्डिका	दभोली
७१ महार्थिदान्	तुलना	मीमर्षि ।	१० वासुकि	भार्गव	मेनजित्	वज्रिणी	वज्रवाह
७२ प्रजापाल	लालनिका	नभाः ।	११ सुरथ	उपमन्यु	विजयकर	जातिका	काशी
७३ सुविदान्	पद्मगेश्वरी	वायु ।	१२ गज	महेन्द्र	त्रिलोककर	वज्रिणो	वज्रवाह
७ कामट	त्रिपुरा	वामक ।	१३ आनन्द	पुलस्त्य	प्रभाकर	जीवेश्वरो	जोवदान
७५ वेदवाद	अन्तभैरवी	प्रयाण ।	१४ श्वेत	गर्ग	वज्रकर	एकवीरा	कालो
			१५ अंश	वैशम्पायन	आनन्दकर	हरदेवी	सूरत (१)

सच्चाद्विखण्डमें जो ७५ धाराश्रे वणिंत है, वर्त्तमानकालमें चन्द्रवंशीय पत्तनोप्रभुके मध्य इसको अधिकांश धारा हो नहीं है; जान पड़ता है, कि वे लोग भिन्न-भिन्न जगो वा जातिके हो गए होंगे। दमनको सन्तान दमन-प्रभु नामसे मशहूर है, किन्तु वे लोग पत्तनोप्रभुके साथ किसी प्रकारका सम्बन्ध नहीं रखते। अभी पत्तनोप्रभुके मध्य कामपतिके वंशमें केवल १५ धाराओंका परिचय मिलता है जो दूधरे कालमें दिया गया है।

सच्चाद्विखण्डके अतिरिक्त कोसुभविल्लामणि, विश्वाख्यान, जनार्दन, गणेशका प्रभुचरित्र, ज्ञानेश्वरो, मेनोर-सैतन-दे-सुजाका महिम् 'इतिहास' (१) आदि ग्रन्थोंमें इस जातिका उल्लेख देखनेमें आता है। विश्वाख्यान ग्रन्थमें लिखा है, कि यादववंशीय राजा रामराज १२८८ ई०में जब पैठनके निकट सुसलमानीमें परास्त हुए, तब उनके पुत्र विश्वदेव कोङ्कण देशको भाग गये। उनके साथ सूर्यवंशीय और चन्द्रवंशीय प्रभु समाख्यान भी

* चिह्नित पुरुषोंकी वारा आज भी देखी जाती है, किन्तु गोत्र और कुलदेवीका अधिकांश जगह परिवर्तन हुआ है।

अपरिवार आए थे। उन प्रभुओंके नाम ये हैं, यथा—
सूर्यवंशमें भरद्वाज गोत्रमें विक्रम राणे और मधु-पूदन प्रधान; पूतमाक्षगोत्रमें भीम, श्यामराय, शिव और औपत्त्राव प्रधान; वशिष्ठगोत्रमें विक्रमसेन, केशव-राव, गोदाल, भीम, नारायण, विश्वनाथ, त्रिभुक्कराव, शिवदास और दामोदर कोठारे; काश्यपगोत्रमें काशेश्वर, क्षणाराव, गोविन्दराव, चन्द्र, महादेव, भास्कर, त्रिभुक्कर, नारायण और केशव नयनकर; हारित गोत्रमें सेनजित्, औपत्, राम और शहर पनतेराव; वृद्धविष्णु गोत्रमें मान्धाता, त्रिभुक्कर, दामोदर, सुरदास, शिवराम और केशव धुरन्धर, ब्रह्मजनार्दन गोत्रमें सङ्म-

(१) Senhor Caitan De Souza's Mabn Historie

(१) History of the Pattana Prabhus, p. 6. Table II,

बिना, गविय त्रिभुवनराज, गिव ध्यामराज, पद्माकर चौर
 कर्षे ब्रह्माण्डकर; सोलसगोत्रमें सुप्रखरीत्र, दादा गिव,
 मोविन्दराज चौर दिवराज देगाई; कोण्डिनगोत्रमें धनराज
 कोर्ति, देव, मोम, गिव चौर मोविन्दराज नायक;
 साङ्ख्यगोत्रमें वासुदेव मोविन्द नारायण, ध्याम मोम,
 जीपतराज, माण्डर चौर नरहरि मानकर; कोण्डि
 गोत्रमें सुमन्त, किम्व, कण्ड, त्रिभुवन शोपाण, भीम,
 सुदाय चौर रघुनाथ वैठकर, विद्यामित्र गोत्रमें कण-
 वन्त दामोदर, मोरघ, दिवराज चौर भीम क्यवर
 कर।

चन्द्र धर्म—अचनमान्त गोत्रमें दामोदर, गिव
 भीम, रघुविजय; मोतमगोत्रमें प्रभुमदन चौर भीम चो-
 रकर, शाण्ड्यगोत्रमें वासुदेव शोपति चौर कण्ड-
 राज; देवदत्तगोत्रमें केशव चौर दामोदर जवाकर;
 मातृशुभगोत्रमें नारायण, लक्ष्मीचर चौर भीमबाराज;
 कामदन्दिगोत्रमें नारायण चौर जेयवतनवड़े नाग्यदि
 गोत्रमें सुरदास चौर भरदास कोर्तिकर; सुदसगोत्रमें
 शोपाण चण्डेकर; चनाचगोत्रमें सुमन्त, तिवस चौर रघु
 नाथ धैयवान्; भार्गवगोत्रमें रामदेवकचौम, साण्ड्य
 गोत्रमें केशवराज चौर सुमन्त त्रिभुवनकर; पोषरत्न-
 गोत्रमें रामप्रभाकर; नर्मगोत्रमें धर्मसेन क्यवर,
 वेदव्यायनगोत्रमें कण्डो कर पानन्दकर चौर उपमन्तु
 गोत्रमें नारायण क्यवरकर।

राजा विश्वदेवके पात्रयमें प्रभुगण क्य राजकीय
 पद पर नियुक्त होनि ली। विश्वदेवके प्रदत्त ताव्यमान
 के आना जाता है, कि प्रभुगण कोइय प्रदेयके नामा
 आनामें महाशामन का शासनकालके रूपमें नियुक्त है।
 उनमेंमें बिषी बिषीने तो राजपर लक्ष हो वा लिया
 बा। इनमेंमें महिमके प्रभुराजाकेका विवरण कोसुम
 चिन्तामणि चौर पोत्तुगोत्रके निमित्त महिमत्र इति
 शक्तिमें पावा जाता है।

पोत्तुगोत्रके पामनकास लक्ष प्रभुगण नाकपेटे,
 बवाई, महिम चौर क्यई नगरके निवटबर्षी कोटे
 होवोका मानन करते है। ११२२ ईमें पोत्तुगोत्रके
 इस आन पर चर्चकार जमाया। इस समय प्रभुगण
 अपना श्लाघिकार को बँडे। पोत्तुगोत्रके होराज चौर

उत्पीड़नके यहाँका हिन्दूनमात्र न ग ल ग था गया था।
 पोत्तुगोत्रके निवट शक्तिविकार था नहीं के ब्राह्मण
 को पकड़ पकड़ कर पोटेने चौर गडो बुमाने है। राज
 न शोय बिनाको मो राजमें या सेनेके के उने पकड़ कर
 ने जाते चौर मोच मोकरोंके जैसा काम करती है।
 इस प्रकार के हिन्दूनमात्रको उचकालमेंमें बिनाके मो
 मान अपमानको चौर ध्यान मनो देते है। पोत्तुगोत्र
 शासनकर्तापनि प्रभुको को कार्यप्रमत्त चौर चतुर समझ
 कर उनमेंमें बिने बिनेको पाम चौर नगरके उच राज-
 कीय पटी पर नियुक्त किया था। उनमेंमें ये सब कार्य
 पदकको रचना नको रहने पर मो पोतगोत्र राज
 सुवर्षके उत्पीड़न चौर सबके के कार्यपदक करनेको
 बाध्य होते है। पोत्तुगोत्रनच उच हिन्दू समाज
 ऊपर जितना ही पत्ताचार करते है ब्राह्मणादि हिन्दू
 मय कतना को समझते है कि प्रभु कस चारिपके परा
 मयने हो येना पन्थाय चौर उत्पीड़न का रहा है। इस
 बिधायन पर चौर चौर सभी ब्राह्मण प्रभुके ऊपर
 पत्तन विरक्त हुए चौर प्रभुनाग मोच जाति है उनके
 साथ कोई मो सम्बन्ध रखना ब्राह्मणको उचित नहो
 है। पना मत तमाम प्रकाय करने ली। अब लक्ष
 प्रभुको का राजकीय प्रभाव रहा, लक्ष लक्ष ब्राह्मण शोच
 उनका कुछ भी पनिठ कर न सक। मिशाकोके पम्पु,
 देवकाके महाराष्ट्र ब्राह्मणके प्रभुपके सर्वनाम
 करनेको सिद्धा को थी। किन्तु हिन्दूकुनतिलक्ष मिशाके
 ने ब्राह्मणको का मय पामिपय समझ कर प्रभुको का
 पनिठ करनेमें उच मना किया। इतना ही नहीं,
 मिशाकेने प्रभुको को अपने नेनापतिके पद पर नियुक्त कर
 जमानित किया था। मिशाकेके इतिहासमें इस सब
 प्रभु केनापतिको को कार्यपदता चौर बीवँवसाका
 यष्टि परिचय मिलता है। मशाके राजाराम चौर
 ताराबाईके समयमें भी प्रभुको को समाजमें होय करने
 के लिये ब्राह्मणके ने कोई क्यर उहा न रही को, पर
 इस समय भी उनका यह प्रदत्त निष्कल गया था। इस
 प्रकार होनी जातिके बीच बिधेय मात्र बनने लगा।
 महाराष्ट्र राजाको के नाक पिटा करने पर भी बिदेय
 बलि न भुझ सकी। प्रभुकेने महाराष्ट्रपति साहुके

पाम यह प्रभियोग दिया कि ब्राह्मण लोग उनके कुल-
 विवरणमूलक मन्त्रादिवाक्यमें तथा दृष्य दृश्य पुराणों में
 पाशुनिक प्रयोग प्रदत्त कर उन्हें समानमें डूबे उनमें
 की चेष्टा कर रहे हैं। जानकी बाजीरावके पाम भी यह
 तानिक की गई। उन्होंने मातृको धर्मकी खबर दी।
 गिवात्री की तरह मातृ भी प्रभुओं की बहुत चाहते थे।
 उन्होंने राजा दी, कि प्रभुयोग उद्योगमें किम प्रकार
 ज्ञानिगेचित मन्त्रादि करत आ रहे हैं, जान भी उमी
 प्रकार करेगी। उन्होंने खड और मातृकी यामके
 ब्राह्मणोंकी हुकूम दिया कि वे विजयपुरके राजाओं के
 समयमें निव प्रसार पोरोटिवादि करन करने पाते हैं,
 आज भी उमी प्रसार करेगी। मातृके ऐन पाटिग करने
 पर भी उनमें प्रतिनिधि नगरीवन राव पंडितने उनके
 आदिगका दवा रखा। इमी समय एम मम्पनिगामी
 प्रभुने बहुश्रवणके निकट विद्विषिनायक नामक एक
 गणित-तन्त्रिकी प्रतिका की। उस प्रतिठारके उपनयन
 प्रभुओंके साथ चित्पावन और पपरापा ब्राह्मणोंका
 विवाद उपस्थित हुआ। विन्यावनो ने पपनेकी वचन
 के प्रथम ब्राह्मण वतना कर प्रतिठारकार्यमें वनी जाना
 चाहा। किन्तु प्रभु लोगोने चेउननिवापो वेदमूर्ति
 राजकीचित्तामणि धर्माधिकारी प्रभुतनी बुना कर
 विनायकका अभियेकादि सम्पन्न किया। उस पर
 वसई-निवासी ब्राह्मणगण बहुत विगड और उन्होंने
 वनके सुवेदार राज्या गहरजा केगवके पाम जा कर
 इस प्रकार मिया अभियोग किया, 'प्रभुगण राजा विष्व
 देवके अनुवर्ती राजपूत जत्रिय-सन्तान नही है, वे जेमे
 तैमे ब्राह्मणकी बुना कर धर्म कर्म करत हैं। उनके
 विजोचिन अधिकार नहीं रहने पर भी वे यज्ञसुव पध-
 नते और गायत्री उच्चारण करत हैं। उनके प्रधान पुरो-
 हित वेदमूर्ति विग्रनाय नामक एक ब्राह्मणमें प्रभुओं-
 के उत्पत्तिमन्त्रमें एक मिया गल्प लिखा है। उस
 गल्पमें उहोंने यह सावित करनिकी चेष्टा की है कि
 पत्न वा पाठारोय प्रभुगण सूर्यवंशीय अश्वपति और
 चन्द्रवंशीय कामपतिकी सन्तान है।' सुवेदारमें उन्होंने
 यह भी अनुगोष किया कि, 'इस लीगोंका मत न के कर
 आप पञ्चकलस, सोनार, भण्डारी और अन्यान्य नीच-

योगीके धर्मो नामो तो बुना कर प्रभुकी जातिका अिय
 जान सकते हैं।' इमके विषय उहोंने समाजघ्युत कुछ
 प्रभुओंकी बुना कर उनमें यह कहवाया कि प्रभुओंके
 मध्य बहुविवाह और विधवाविवाह प्रचलित है।

सुवेदारमें तदनुसार प्रभुओंके विरुद्ध पैगवा जाना
 जो बाजीरावके निकट एत अभियोग भेजा। १७४७ ई-
 में पैगवाने चेउन अन्तर्गत प्रय क नगर और यामके
 प्रधान प्रधान ब्राह्मण और राजकर्मचारियोंकी यह
 हुकूम दिया कि, 'कोई भी ब्राह्मण प्रभुओंके मन्त्रादि
 ज्ञान नहीं कर सकता, करनेमें उन्हें दण्ड मिलेगा।
 प्रभु लोग गायत्री उच्चारण नहीं कर सकते और न यज्ञ
 सूत्र भी पढ़न सकते हैं।' पैगवाके आदेशमें प्रभुओंका
 ब्राह्मण-पुराहित बन्द हुआ। इस समय ब्राह्मण वे-
 दारने पाटिगमें सैकड़ों प्रभु-मत्तान निरुद्धीत, लाष्टि
 और स्युसुखमें पतित हुई थीं। जिन प्रभुके घरमें
 उपनयन वा विवाह उपस्थित होता था, उनके कटका
 परिमोमान रहती थी। प्रचुर अर्थदांड दे सकते
 पर धनो लोग कटमें रजा पाते थे किन्तु जो गरीब थे
 वे फिर समाजमें सुख नहीं दिख सकते थे। प्रभु
 लोगोंने इस प्रकार पांच वर्ष तक ब्राह्मणोंके हाथमें
 टारुण नियह भोग किया। पोंछे पटि प्रदेशके सुवे-
 दार रामनो महादेवने प्रभुगणोंके करुण पाषेठनमें
 विचलित हो पैगवाको यह जताया कि "प्रभुगण प्रकृत
 जत्रियमन्तान होने पर भी उन लोगोंके प्रति कोई
 सुविचार नहीं होता है, वरन् वे विगोपरूपमें उत्प्लित
 होते हैं। शहराचाय स्वामीने पपने समन्ति-पत्रमें
 इन जातिकी जत्रिय वतनाया है।" इत्यादि।

इसके कई वर्ष बाद प्रभुओंके विपक्षगणने पूना
 जा कर पैगवाके निकट प्रभु जातिकी गिकायत की।
 पैगवाके आदेशमें प्रधान धर्माधिकारी रामगाप्तोने वसई
 और महिनवापो सभो महाराष्ट्रोंकी यह सूचना दी कि,
 'कोई भी ब्राह्मण प्रभुओंके घरमें किसी प्रकारका कर्मा-
 नुष्ठान नहीं कर सकता, यदि करेगी, तो वह ब्राह्मण-
 जातिका विरुद्ध कर्म समझा जायगा।'

इस समय सुद्धरके शहराचाय स्वामी वसई नगर
 पहुँचे। ऐसे सुयोगमें प्रभुओंने वहाँ जा कर उनकी

यात्र को । बादमें जन्मीने मन्नादिपुत्र, कृष्णपतिव्रत, कोमापुरके गङ्गापायं स्वामोका कथतिपत्र, विष्णु-
नेत्रना ताम्बागवत पादि उपखित किया एव इसे
दिग्भर जनकी क्राति धीर पविचार निर्णय करनेको
प्रावर्णा थी । गङ्गापायं स्वामोके प्रभुसमाज
को मोक्षलाय पत्रका सुन कर धीर जनके कृष्ण मन्त्र
पर पानोचना कर लम्बे चलन सहित वो बतनाया धीर
ऐसा ही सम्प्रतिपत्र दिया । इस समय स्वामोकोने
प्रभुको को पूजाधिकार देनेके लिये पैगवाको मी पदु
रोचके माय निक्ष मैत्रा । तम समय भाधोरार (२५)
पूर्वामे पैगवा पद पर पविष्यत थे । जनकी मभामे जब
गङ्गापायं को लिये पढ़ी गई तब लम्बे में बसाई
निवाधो ब्राह्मणो को लम्बे समय मभामे निराल
आमिका बहुमत दिवा । बतना ही नहीं प्रभुगण जिसके
पूब मत् निर्भिन्नता अपने अपने कामका पावन कर
लके उसकी मी अनुमति दे दो ।

मन्त्रियराना पङ्कनबोन पैगवाके शब्दमे लतने
सम्भूत न थे । लम्बे पुत्रा पूर्वाके समाधिवाधो राम-
भाओ धीर प्रभुपक्षोय जनशाममाओको अपने घर
तुनाया धीर प्रभुआतिरि मन्त्रमे लनका पभिमाय
आगना चाहा । राममाओने, प्रभुको के पत्रियल
मन्त्रमे दुर्लभ पक्षे जितना पानोचना हुई थी,
मध पङ्कनबौधको सब सुनाई धीर प्रभु लोग को प्रकृत
पत्रिय हैं, अब भो कता दिया । प्रभुपांठ प्रति दुर्लभ
कारको लला सुन कर नाना पङ्कनबोन को विचलित
हुए थे धीर मन्त्रमे लन्के प्रति ब्राह्मण लोग फिर
कितने प्रकारका पन्धाकार न कर मध, दसको मो
झोवना कर दो । दलने दिनेके बाद ब्राह्मण धीर
प्रभुका विवाह मान्त हुआ ।

प्रभु लोग लहर दिन्तु है । बसाई पादि म्यानेके
ब्राह्मणेने पक्षिय लन्के प्रति पक्षे पन्धाकार किया था
तो मो लन्के हृदयके ब्राह्मण मन्त्रिका अप मो आम न
हुया । है आत माओय कियागानुमार पत्रियोचित समो
न म्यानेका पावन करते हैं । प्रभुकोके मन्त्र विवाह,
मर्माचान, पुमवर्ण, मोदलोवतन, ज्ञातकमं नामकरण,
निष्कामच, लक्षणावन, खुदाकरण, उपनयन वा मोषी

सम्बन्ध, समारम्भन धीर पन्थोदि दे सब न म्प्यार
प्रधान हैं ।

प्रभुकोके मन्त्र पाठविवाह बादकोय है । कन्या
धीर बरका एक गौत्र होनेके विवाह नहीं होता ।
मानक १०५ है १ धीर कन्या इसे ८ वर्षके मोतर व्याधो
जातो है । पूर्व ज्ञानमें दलने मन्त्र दो प्रदर्शा विनाए
प्रखणित रवने पर भो पमी ईधम माप्य विवाह हो
प्रखणित दिया जाता है ।

एक मोनेके विवाहमें बहुत खर्च पर्व होने हैं
तथा बतना पनुष्ठान धीर क्शिमे आतिने देका नधा
जाता । पाठ अब पमन्तु हो जाता है, तब कन्यापथोय
पुरोहित जा कर पक्ष लक्षणाके निश्चय दल बातको
पर्या करते हैं । बरकाका पभिमत होने पर वर धीर
कन्याको कोहो मिलाई जाता है । दोनीतो कोहीके
मिल जाने पर तथा देना पावना म्थिर हो जाने पर
निर्दि धीर लम्ब म्थिर किया जाता है । त्रिविधिय
वा लम्बयलका निर्णयकार्य वरके वरमें पाठ को पत्र
रातको सम्पन्न होता है ।

विवाहक दो मन्त्र पदने निमन्त्रक दिया जाता
है । पक्षे आति-कुटुम्ब छोपुपव टोनी पक्षका ही
निमन्त्रक होता है । अब विवाह किन्त एक मयाए
रह जाता है तब कन्याका माता अपने मृदुरे धीर
गौहरको माय लं बरको माता धीर जनकी प्राति
कुटुम्बिको निमन्त्र करने पाता है । विवाहक चार
दिन पक्षमें बरका माता कन्याको माताको 'अल कुल
दान होमा' यह कहना मन्त्रतो है । दूसरे दिन पक्षी
माता एक बालकको मन्त्र कर कन्याको लाने भिगतो
है । कन्या नाना पलदार धीर महामुन्द बपुनके
विभूयित को पावनको वा गाऊं पर चत्र कर माय हो
पहरका बरके वर पातो है । यहाँ बरको माता पादि
रमणिया कन्याके पाम आतो धीर उसे गोष्ठने विना हर
नीके वतारता है । पक्षे कन्याको पक्के पक्के पन्-
द्वारों धीर बस्ती ने मन्त्र आति कुटुम्बरमणिको क
पाम दिवान ले आतो है । दिग्ने सुनेने माय हो
जातो है । पक्षे लम्बे दिन मन्त्राने छष्ट कन्या पित्त-
नय जनी पातो है । दूसरे दिन वर भा कन्याको

तरह सज्ज कर कन्याके घर जाता है। कन्यापक्षमे वर भी रक्खट्ट वैशभूपा पा कर अपने घर चला आता है। दूसरे दिन आहार और व्यवहारोपयोगी पदार्थ संगृहीत होते और विवाहमण्डप बनाया जाता है।

विवाहके दो एक दिन पहले पावहरिद्रा छीनी है। पांच सधवा क्रियां मिल कर श्रीखलोमें हलदी कूटती है। पीछे एक छोटी चौकीके ऊपर वरको बिठा एक सधवा स्त्री हलदी तेल आदिकी मिला कर वरके कपालमें लगाते है। बादमें वी पांचो स्त्रियां हलदी मिश्रित कुछ धानिया और गुड भापसमें खातीं हैं। दूसरो जगह वरामटे पर एक चौकी रखी जाती है और उसके चारो कोर्नमें चार कलसी रख कर उन्हें सूसेलेपेट देतो है। तदनन्तर वर वहा आता और चौकी पर बैठता है। इस समय वाद्यक लोग बाजा बजाते और वालिकाएं गान करती हैं। गान शेष हो जाने पर जिस वालिकाने पहले पहल शरीरमें हलदी लगाई थी, वही वरको स्नान करातो है। स्नानके बाद वर नया कपडा पहनता और गलेमें माला डाल लेता है। बादमें वालिकाएं उसको धारतो उतारतो है। कन्याके घरमें भी ठोक उसी तरह होता है। प्रभोसे वर-कन्याकी 'नवदेव' अर्थात् विवाहके देवतामें गिनतो होतो है और वे दोनों विवाहके चार दिन श्रेय नहीं होने पर घरसे बाहर नहीं निकलते है। इस दिन अपराह्नकालमें गणेश, विवाहमण्डप, वरुणदेवता, पिढगण और नवग्रहकी पूजा होती है तथा कुम्हडे और गूलरको बलि दो जातो है। कुम्हडाबलिके उत्सवका नाम है "कहल्यामुहूर्त"। इस समय वरके भगिनीपति वा कोई विवाहित आत्मीय कुम्हडेकी तलवारसे दो खण्ड कर डालते हैं। जो कुम्हडेकी काटिंगा उसके कन्धे पर गाल रहता है और पीछेमें उसकी स्त्री खड़ी रहती है। इसी भावमें वे दोनों विवाहमण्डपमें पहुँचते हैं। इस समय एक सधवा आतो है और दम्पतिके गालके छोर ले कर गाँठ बाँध देती है। उसी समय पुरोहित उसके हाथमें तलवार देता है और वह एक ही धारमें कुम्हडेकी दो खंडोंमें काट डालता है। स्त्री कुम्हडेमें हलदी लगा कर पुनः पीछे आ खड़ी होती है। उसका स्नामी दो धारमें

कुम्हडेकी चार खंड कर डालता है, बादमें स्त्री उसकी धारतो उतारती है।

गूलरबलिका नाम लड्डुधर वा 'उत्तर चामन्दण' है, यह उत्तर भी कुम्हडेबलिके जैसा समान होता है। इसमें तलवारसे गूलरको ग्राह्य काटो जातो है। जो यह काम करता है वह स्त्री समेत गालका जोड़ा वा उसी तरहका अन्य बर्तिया कपडा उगहारमें पाता है।

इस दिन मन्थ्राके बाद वरपक्षको कुछ आत्मीय गान करती हुई नाना प्रकारके मिष्टान्न, विलोनि और तेज पत्रादिसे माथ कन्याके घर पहुँचती है। कन्याकी बहन या कर वरकी बहनको वरण करती और पत्तापुर ले जाती है। गहा वरको बहन कन्याकी पगने पाम बिठा कर उसका जूडा बांधतो और अच्छे अच्छे कपड़े पहना कर गलेमें फूलकी माला डाल देतो है। बादमें उसको धारतो ली जातो है। पीछे कन्या कुछ मिष्टान्न मुखमें दे कर विलोनेकी हाथमें लेनी और माना तथा आत्मीयोंके पाम या कर उसे दिघातो है। तदनन्तर वर पक्षवानी तल्लकी सामग्री ले कर चले आते हैं। उस दिन कन्यापक्षमे भी उसी प्रकार वरके घर उपडाराटि भेजे जाते हैं। कन्याकी जिस प्रकार वरपक्षमे भलहार विलोनि पादि मिलते हैं उसी प्रकार कन्यापक्षसे वरको उत्कट पोशाकके साथ कुर्मी, भलमारी, डेस्क, पुस्तक, शतरंजका पाशा, जूता, छाता और चाय पीनेके लिये चाँदीके बरतन आदि मिलते है।

विवाहके दिन प्रधान अनुष्ठान ११ हैं - फलदान, तेल-उत्सर्ग, चौर, स्नान, पटपचालन, गूलरको पूजा, वर-यात्रा, विवाह, निमन्वित व्यक्तियोंका आवाहन, विदाई और वरगृहमें पुनरागमन।

विवाहके दिन बहुत सवरे वरपक्षीय कोई रमणी शक्ति कुट्टुबकी स्त्रियोंको बुला लातो है। एक वज्र दिनकी निम्नलिखित स्त्रियां, पुरोहित ठाकुर, वरका कोई विवाहिता भ्राता, शून्य (वस्त्र भलहार फलमूलादिको माथ पर रख कर) और वाद्यकर लोग बाजा बजाते हुए कन्याके घर पहुँचते हैं। कन्याको कोई आत्मीय या कर वरको बहनको वरण करतो और उसे घरके भीतर ले जातो है। विवाहमण्डपमें वरका भाई पुरोहितको सहायतासे

नवपति पौर बहबकी पूजा करता है । इस समय उसे बन्धाकी बह्मालाहार देना होता है । अथा उस समय बह्मालाहारको पहन कर विताये पाप या ब्रैठनी है । बादमें अन्धाके पिता पौर बरके भाईसे उत्तरोपरमें एक एक हमनो पौर कुछ सुपादिवां भांष हो जाते हैं । इस क्षे चमत्कार अन्धाको लक्षण बह्मालाहारने विभुपिन कर विवाहमन्त्रपदमें से जाते हैं पौर उसको मोटमें कुछ पत्र दि कर एक सवना करके करते हैं । इस समय भगवतोय दो एक रमबियां पतरदान गुन्नापय पौर एक टोकी पाल में कर चमत्पुरके मन्त्र अन्धापकोय रमबियोंको हम्नो मगातो हैं गिर पर केसर, चन्दन पौर गुलाबजल छिड़कतो हैं तथा धान, सुपारो पौर मारियन धानेको देतो हैं । इसमें बाद उपक्षित समो रमबियोंके बोध मारियन बितरक छिया जाता है । बरपचवानेके चले धानि पर अन्धाकी माता नामा अन्धकारोसे विभुपिता की पामीय रमबियों पौर नौकरोंके साथ बरके गर थाती हैं ।

इस समय वर या कर रमबियोंके बोध बढ़ा जाता है । अन्धाको बहन बरके पानी जत्र दि कतो हुई पाती है पौर बरके दोनी चात्रोमें हन्दी मवा देतो है । बादमें वर पौर अन्धा दोनोके पचमें दो दो सवना धानके भागोर्वांष करते हैं । इस समय बरकी बहन सुनहको पाकडा एक रैमसो जपडा बरको देतो है ।

अन्धाकी माता या कर वर पौर बरको माताका पेर थोतो है, इस समय चार सवनाथो थो एक एक बलन दिया जाता है । इसके बाद वी बरको बहन छियके एक पत्रमें हम्नो जाती पौर बरके चात्रमें दि देती है । अन्धा की माता बरको अन्न बटोनेमें मर कर पूष देनि जातो है तब वर उस हन्दीको खावने सुखमें कवा देता है । इस समय बरके अपरापर पामीय हन्दी ले कर पामीय-ब्रमोद करते हैं । दीखे तीन बजे दिनको दोनो पचमेंसे चार चार बरके मन्त्रुय आबिचामन्दिरेमें तिल छम्नं करने जाते हैं ।

बरायमा करनेके पक्षी अन्धापचबाहि बरके चरमें उमके पेर कोनि धानि हैं । बरको एक थोकी पर बिठा कर अन्धाका पितादूबने छत्रकी पेर थीस पौर पोखे बसाज

दि दीखे लेते हैं । इससे सिवा में बरके अन्धापमें चन्दन लगा कर उ गरीमें धोमिकी चँगुठो पहना कर पौर गुनाबत्रन तथा हतर दे कर चले पाते हैं । पेर कोनेके बाट दोगो को चरमें गूलरको बलि जोतो है । दीखे महा ममारोइसे बारात निकलती है । बरको साथ सन्धे छामि कुट्टम्ब सुवय-मरगी मन्धे घब जाते हैं । राकमें अमहुब निवारबाधे बोध बीबने मारियन जाठने जाते हैं । बर थोड़े पर चत्र कर सवने पानी बनता है । पचने भात्रमें एक लक्षवार रहतो थो, धमी समर्थ बरकेमें सुगी रहती है ।

जब बारात अन्धाके दरवाजे पहुचती है तब अन्धाकी मोमी पा कर बर व करती है पौर समो कोडा चार बिधि कर जाती है । अन्धमें अन्धाका पिता बरके सुखमें एक मिठाई दि देता पौर उने चपनी गोम्में बिडा कर विवाचनमामे ले धाना है । ज्योतिवी अन्धपत्र से कर विवाहका डीव समय बह देते हैं अन्धा पौर बरपथीय दोनो सुरोक्षित मन्त्र लक्षारक करती हैं ।

हर अन्धाकी माता या कर पक्षी बरको पाद अन्धा करती, दीखे अन्धाका रमांकेकेके साथ छने पन्ध. पुर से जाती है । बादमें बरको विवाह भंदो प। काया जाता है ।

विवाचमें से मन्त्र प्रदान अनुष्ठान हैं—मनुषान, पदभीतकरक, सात्राचमि, सुबर्तनाम, दामधामपो बिखन मन्त्रपूजा, अन्धादान, जपत्र पत्रपरोमनन पौर बरअन्धामीष । विवाहके पञ्चके मन्त्र जिर कुछ विधेयवक है—माहाकापूजाके साथ सुख लक्षमारपूजा पौर आद्यकीके मन्त्राष्टक पाठ पादि ।

अन्धादानदि मूत्र विवाहकाय तथा निम्नलिखित अक्षियोंको पाह-अभ्यर्चना दीव जानेके बाद बर लवी रातको धपने कर बसा जाता है । विवाहके समय प्रबन्ध निम्नलिखित अक्षिके बपाल पर अन्धनका तिखक लगाते पौर प्रवेकको दो दो मारियन देते हैं । जब बर धपने चरके सामने पहुचता है तब दो मूत्र बर पौर अन्धाको चपनो चपनो बादमें से कर नाच गान करते हैं । दीखे अन्धाको पानी बरके बरके चरमें जाते हैं । प्रवेय-बाचमें बरको बहन दरवाजे पर कुछ

पुरस्कार पाने के लिये गृहो रहती है। नाटमें वरकन्या दोनों को देवस्थानमें जाती है। जब स्त्रोकी लोजाचार-विधि प्रेष हो जाती है, तब वरके मातापिता उमके कानमें नववट्टका नूतन नाम कइ देते हैं। तदनुसार वर भी वधुकी नाम अथवा नाम कइ देता है। यह सब हो जानेके बाद निमन्त्रित व्यक्ति दूध और गरवत पो रर अपने अपने राइ लेते हैं। कन्या बालिकाओंके साथ और दर बान्नीके साथ रात्रियापन करता है।

इसके बाद भी चार दिन तक उत्सव रहता है। विवाहके बाद अर्थात् कन्याको उमर धारण वर्ष होनेके प्रथमे 'वट्टनाट' वा शुनवस्त्रपरिधान होता है। वरका पिता शुभ दिन दिखा कर कन्याको नूतन वस्त्र और खाद्य नामयो भोज देता है। पुरोहित कन्याके वर आ कर बधारीति पूजा करके कन्याको वर माही और चीनी पहनने कहते हैं। इस समय मितया नाना प्रकारके श्राद्ध प्रमोद करता है।

पौछे 'पदरमाट' नामक उत्सव स्थिर होता है। इस दिन वधु घूंघट काट कर बयस्था स्त्रियोंके जैसा कपडा पहनती है।

शुभराती नहीं होने तक कन्या पतिके साथ रात्रिवास करने नहीं पाती, तबतक उसे पिट्टगृहमें ही रहना पड़ता है। तदनुसार ही जाने पर कन्याको माता कौनिक स्त्रो-आचारके बाद उसे ससुराल भोज देतो है। यहां उसका ससुर उमें किसी पृथक् घरमें रहने देता है। चार दिन तक कन्याको माता और अपरापर रमणियां आ कर प्रथाके अनुसार उसे स्नानादि करा जाता है। पाचवें दिन पतिपत्नीका प्रथम मिलनोत्सव और गर्भाधानकार्य सम्पन्न होता है। इस दिन पुरोहितके साथ और भी दश ब्राह्मण आ कर गणपति और सम्राटकाको पूजा, नवग्रहहोम तथा भुवनेश्वरका भावाहन करते हैं। स्त्रियां दम्पतिओ रमणाय वैशभूपामें सजा कर नृत्य गीतादि नाना प्रकारके श्राद्ध प्रमोद करती हैं।

स्त्रोके गर्भ रह जाने पर पांचवें महोत्समें पञ्चमृत-होता है। उमो समयसे गर्भिणीको उमके इच्छानुसार खाने और पहननेको दिया जाता है। प्रसवके बाद हो नवजातशिशुको गरम जलमें घों डालते हैं। पौछे धाई

शिशुको नाटो काटतो है और फिर तथा नाचकी कुछ ऊपर खींच कर ठोक कर देतो है। गृहस्थामो जन्म-कामकी निम्न रहते हैं। ४० दिन तक प्रसूति मृतिका-गृहमें रहती है। इतने दिनोंके बीच उमें टंटा जल पीने नहीं दिया जाता। लोहेको दूध कर जलमें उमें दूधो रखते हैं और वहीं नन प्रसूतिको पीनेके लिये दिया जाता है।

जन्मदिन प्रथमा उमके बादके दिन शिशुका पिता पुरोहित, ज्योतिषी और दो एक बन्धुवाग्धुके साथ पुत्रमुख देखने आता है। ज्योतिषी गृहस्थालीमें जन्मका समय जान कर एक झोटेके ऊपर खडामें थोड़ा धनाते है और शिशुके शभाशुभकी गणना करके कहते हैं। तदनुसार पिता शुभनगमें पुत्रमुखदर्शन और जातकर्म करता है।

यदि शिशुके जन्मलग्नमें कोई दोष रहे, तो पिता पुत्र-मुख नहीं देखते, बल्कि उमके कन्यागके लिये ब्राह्मणोंको दान देते और स्वस्थायनादि कराते हैं। जन्मोत्सवके उपलक्षमें नर्तकी आ कर नाच गान करती है। मिष्टान्न बाँटा जाता है। पुरोहित और ज्योतिषी उपयुक्त विदार्थ पा कर अपने घर जाते हैं।

तीसरे दिन प्रसूति और शिशुको स्नान कराया जाता है। इस दिन प्रसूति शिशुको प्रथम स्नानदान कराती है। पांचवों रातको पटोपूजा होती है। इस दिन धावो शिशुको अपना गाटमें ले कर रात भर जगो रहतो है। दशवें दिन प्रसूति और शिशुको स्नान करा कर तथा वस्त्र पहननेको दिया जाता है। इस दिन सभी घरोंमें गोबर और जल सींचते हैं। प्रसूतिके सभी गृहस्थ भी पञ्चागथ्य पो कर परिशुद्ध होते हैं। इधर शिशुका पिता और पिट्टगृहवासो सभी सगोष्ठी यज्ञोपवीत बदलते और पञ्चागथ्य खाते हैं।

ग्यारहवें, बारहवें या तीरहवें दिन कुछ सधवा स्त्रियां आ कर हिंडोने पर पुत्र हो कुनातो दुई उसका नाम-कारण करती हैं। ४०वें दिन प्रसूति भासुरवरका परि त्याग करती और स्नान करके शुद्ध हो जाती है। इस दिन नवीन कचिकी चूड़ो पहननी पहतो है और चूड़ी-वालिको इस उपलक्षमें कुछ पुरस्कार भी मिलता है।

पेड़ों तो भई वा प चने मामत मिष्ट पिच्छरुमि नाया जाता, इधे १२ मानदे भोतर कच बंधे घोर डोकापडक होता दांत बिचमनि पर एक दिन दशोदुगम नामक बन्धन बड़ो धूमधामने मनाया जाता, पीछे पुद्गाकरण घोर चारदि दस वर्षके भोतर मोचो बन्धन या उपनयन घोर बिबाह होता है।

बिबाहको तरह मोचोबन्धन भी इनका एक प्रधान म रुकार है। बालकका पिता ज्योतिषी द्वारा जन्मकोठी दिखा कर धर्मदिन निश्चर करता घोर तमने उपनयनका पाकोत्रण होने लगता है। मोचो घोरिने एक समाह पहले शुभदिनमें एक छटाक इष्टी, मिन्दूर, चनिपा, जल घोर सूना इन सब चीजोंको बाजारदे खरीद लाति घोर कुलदेवताके सामने रखति हैं। दो तीन दिन बाद परिवारका दो तीन बालक दानिका एक पाचकरके साथ से पाकोत्र कुटुम्बक का जाता है घोर मोचोके दिन सर्वाको उपनित होनेके छिन्ने निम्नप्रकार कर पाती हैं। इन समय एक माण्डप बनाया जाता है। दूसरे दिन बालकके शरीरमें इष्टी समाई जाती घोर बिबाहके पहले की मर धनुष्ठान करने होती हैं, बड़ी धनुष्ठान इष्ट उपनयनप्रकार उपनयनमें भी बिधे जाति है। इन दिन दो पहरको निमग्नित सविद्यापी घोर उस बालक को मोत्र दिया जाता है। भात्रके पहले सभी समिर्षों के पात्रके चार चार पत्र से कर बालक घोर उसको माताऽपाममें दिया जाता है। सभी पत्रको बालक खाता है। इन दिन रातको पुषपमोत्र होता है। दूसरे दिन सबै मण्डपक जाती घोर साय विद्या जाता है घोर सबके बीचमें दो चादा रखा जाता है। बालक घोर बालिका उस चौका पर जाकर बैठती है। इस तरह नीतवाद्य होने लगता है घोर कुछ उपवा पा कर होनाका प्रसवे समिर्षक करती हैं। बादमें बरच करके खो जाती हैं। मण्डपके एक पात्रमें लहा लीया रहता है, लहा चौकाक ऊपर बालक या कर बैठता है घोर इनका मामा तब दोनो सामने खड़ी रहतो है। पहले मामा बालकके दाहिने बाजकी पनामिर्षामें एक सोनेको प मुठो पहना दिते हैं, पीछे केपीदे तामनेके बालिका मुच्छा काट जानते हैं। बालक

को दोनो लम बासको से कर एक कटोरिमें जो घुघये भरा रहता है, रक्क देतो है। बादमें गाई मिषा खीर कर छिरके सभी बानों को मुक्क देता है। इसके बाद उपवा छिया बालकको खान करातो घोर बरण करतो हैं। तदनन्तर बालकका मामा पयति मालिको एक सकेद कपड़ेसे ठक कर गोदमें पठा छेति घोर बरामदे पर जाति हैं। यहाँ बरच होनेके बाद कसे पुजाष्टरमें छे पाति हैं। इसके कुछ समय बाद बालक पाठ उपनीत पत्रक पवित्राहित बालकोंके साथ एकत्र मोत्रण करता है। मोत्रण कर चुकनेके बाद रूचि हो कर घोर धन छार पड़न कर बालक देवष्टरमें पिताकी बगल पून मुकी हो बैठ जाता है। धममुक्कतमें ज्योतिषी पुगे हित घोर दूसरे दूसरे ब्राह्मणक स्नात-पाठ करति हैं। ज्योतिषीके बजनानुसार लोक समयमें सभी निष्ठाक होती है। पुरोहित कत्तरसुख करक कपड़ेको खींच कर एक डूनि हैं। इस समय बालक जौरीके बाजा बजाता है घोर पम्मायतनक करतकजनि करति हुए चढ़े होती हैं। पुरोहित बामकम्पडे दाहिने घोर यक्षमुख घोर मन्त्रकणन मुच्छकपके साथ लक्ष्मणको हान बंध लेते हैं। बालक इस समय लठ कर पिताको प्रणाम करता घोर इनको गोद पर जा बैठता है। पाचार्य काममें बापको मन्त्र तब देति हैं। उपनित छिर्वा जिसके माबकोका कोई पत्रक चुनने न पाति, उसके बिधे मुख्य लोम लहा खामे प्लोवपाठ करति हैं। पीछे पाकोत्र मनुगक बालकको लख, रोप्य या त्रुडो हुई प गूठी पहना इपडे दे कर पामोर्षाक करति हैं। बादमें पुरोहित होम करति हैं उस भस्मिको ज्वाला कसके कम पाह दिन तब रहती है। पांच दिन तब बिद्योको मो कर्य लगी कर चकता घोर न बह चरते बाहर हो निश्चन चकता है। उपनयनके बान मन्थात्रकालमें बालक मिषाको म्ठीको घोर दण्ड जाकमें से कर दिहोके पात्रक कड़ा होता घोर मिषा मांगता है। पाकोत्र कुटुम्ब जो घुघय दोनों को मिषा दिते हैं। इस दिन आतिकुटुम्बका मोत्र होता है। रातके टनने बालक 'बागो जाता है यह कब कर मामाके कर चला पाता है। उसके पाकोत्र कुटुम्ब भी कुछ समय

वाद ही मामाके घर पहुँच जाते हैं। यहाँ सब कोई चोनी-मिथित पोछा और नारियल खा कर बालकको साय लिए आते हैं। दूसरे दिन ब्राह्मणभोज हो कर भीखो-उत्सव शेष होता है।

सत्य काल उपस्थित होने पर गो-पूजा, गो लाङ्गुल वृष्ट, जलपान, आचायको गोदान, गातापाठ, सत्युक वाट सन व्यक्तिके सुखमें गङ्गाजल, तुलसीपत्र और एक खण्ड सुवर्ण प्रदान, सत्युक दिन सतके पुत्र वा अति निकट प्राण्योका केशमु डन और श्वेतवस्त्र परिधान सतको विधवा रमणीका अलङ्कारादिमाचन, आत्मोय स्वजन एकत्र हो खाट पर शव ले कर (रामनाम करते हुए) श्मशानक्षेत्रमें गमन, श्मशानमें करौय सुधाग्नि-प्रभृति, अन्त्येष्टिक्रिया, २० दिन प्रेतके उद्देश्यसे कीलके पत्तेमें दुग्ध और जलप्रदान आदि कार्य सम्पन्न होते हैं। जो सुधाग्नि करता है, वह दस दिन घरसे बाहर नही निकलता। इतने दिनोंके मध्य परिवारस्य कोई भी रन्ध नादि नहीं करता, बेलन आत्तनाद और शोकप्रकाश करता है। आत्मोय दुष्टभ्र उसके घर खाद्यपदार्थ भेज देते हैं और आ कर खिना भी जाते हैं। ११वें दिनमें आद्याधिकारी किना धर्मशालामें जा कर पुरोहितको सहायतासे यथारोति आह और दानादि सम्पन्न करते हैं। १३वें दिन भी प्रेतात्माको सुधा लक्षणा दूर करनेके लिये तिलतर्पण किया जाता है।

यदि किसी व्यक्तिका अति दूर देशमें देहान्त हो जाय अथवा किसीको भी भार्या पतिको छोड़ उसके कुलमें कालिमा लगा कर चला जाय, तो उसके भी उद्देश्यसे यथारोति श्मशान जा कर अन्त्येष्टिक्रिया और आहृदि करने होते हैं। ऐसी हालतमें वह पति पत्नीका फिर कभी सुख नहीं देखता।

अभी सभी प्रभुगण प्रायः शव देखे जाते हैं। शङ्करिमठके गङ्गाचायको हो वे लोग अपना सर्व-प्रधान धर्मगुरु मानते हैं और वचनसे ही संस्कृत स्तोत्र पाठ और देवपूजा करना सिखते हैं। अधिकांश प्रभुके घरमें गणपति, महादेवका वाणलङ्घ और शालग्राम गिन्ना रइता है तथा प्रतिदिन उनकी पूजा को जाते हैं।

सभी प्रभुगण हिन्दूधर्मका पालन करते हैं। इसको

सिवा उनके कई एक विशेष पर्व हैं, यथा—चेवशुक्ल प्रतिपदको ध्वजदान, रामनवमी, हनुमान्पूर्णिमा, अजयतृतीया, कदलीपूर्णिमा, आषाढी शुक्ल एकादशी, नागपञ्चमी और नारिकेल-पूर्णिमा, कृष्णको जम्भःष्टमी, हरिताल तृतीय, गणेशचतुर्थी, महापञ्चमी, गोर्यष्टमी, वामनहादशी, भगन्तचतुर्दशी, महानव्या, दशहरा, कोजागरा, पूर्णिमा, दिवाली, यमहिनीय, तुलसी-एकादशी, दोपसंक्रान्ति, होना वा दालपूर्णिमा।

प्रभुओंके मध्य किसी प्रकारको पञ्चायत नहीं होता है।

पत्तर (हि० पु०) १ धातुका ऐसा चिपटा लम्बोतरा टुकड़ा जो पीट कर तैयार किया गया हो और पत्ते-का तरह पतला होने पर भी कड़ा हो तथा जिसको तह या परत को जा सके, धातुका चादर। २ पत्तल देखो।

पत्तरङ्ग (सं० क्त०) पटरङ्ग शृणो० साधुः। १ रक्तचन्दन, वक्त्रम। पङ्क दलो।

पत्तल (हि० स्त्र०) १ पत्तिका सोंकासे जोड़ कर बना हुआ एक पत्र। इससे थालोका काम लिया जाता है। पत्तल प्रायः वरगद, महुए या पलास आदिक पत्तोंका बनाई जातो है। इससे बनावट गोल हाता है। व्यास-का लम्बाई एक हाथसे कुछ कम या अधिक होती है। हिन्दुओंके यहाँ बड़े बड़े भाजोंमें इस पर भोजन परसा जाता है। अन्य अवसरों पर भी इसका थालोके स्थान पर उपयोग किया जाता है। जङ्गली मनुष्य तो सदा इसीमें खाना खाते हैं। २ पत्तल भर दाल चावल या पूरा लड्डू भादि, परोसा। ३ पत्तलमें परसा हुई भोजन-सामग्री।

पत्तलक—अन्ध्रवंशीय एक राजा।

पत्तसू (सं० अर्थ०) रश्मिसंज्ञक पाद द्वारा।

पत्ता (हि० पु०) १ पेड़ या पौधेके शरीरका वह हिस्से रंगका फैला हुआ अवयव जो काण्ड वा टहन्यासे निकलता है, पत्र, पर्ण, छदन। विशेष विवरण 'त्र' शब्दमें देखो।

२ एक प्रकारका गहना जो कानमें पहना जाता है।

३ धातुका चादर, पत्तर। ४ मोटे कागजका गोल या चौकोर खण्ड। (वि०) ५ बहुत हलका।

पत्ति (सं० पु०) पत्यते विपक्षसेना प्रति पद्गा 'गच्छ-

मेति एट ति (परिचयिका शिष्ट) वन ३।१२२) १ एटा
 तिष्ठ, पेटव विपाही । २ बीर बोहा बडापुर । (श्री०)
 एट-भावे जिन् । ३ मति, चान । ४ प्राचीन क्षत्रिय
 सेनाका सभने कोटा विभाग । इममें १ बह १ हाडी, १
 कोडे और १ पेटव होती है । बिनी बिनीके मतमें
 पेटवकी संख्या ३३ होती है ।

पतिव्रत (म० पु०) पति-व्रत । १ एटाति, पेटव विपाही ।
 २ प्राचीनक्षत्रियों सेनाका एक विशेष विभाग । इममें
 १० कोडे, १० हाडी १० बह और १० प्याडे होती हैं ।
 ३ लघुवृक्ष विभागका प्रथम । (वि०) ४ पेटव वनमें
 गणा ।

पतिव्रत (म० पु०) एटातिव्रत, पेटव सेना ।
 पतिव्रतव्रत (वि० जि०) पति गणवनीति वन-व्रत । पति
 गणवित्ता प्राचीन सेनामें एक विशेष अधिकारी जिसका
 कर्तव्य पेटव सेनाकेकी व्यवस्था करना तथा वन-
 व्यवस्था करना होता था ।

पतिव्रत (म० जि०) पत्नी मिलित निम्न मतों का जिन् ।
 पाट द्वारा समनयोग पेटव सेनाकेनामा ।
 परितस वनि (म० श्री०) परतीना ल इति ३-२३ ।
 पतिव्रतवृक्ष, सेनावृक्ष ।

पत्नी (वि० स्त्री०) १ छोटा पत्ता । २ माया, विष्णु । ३
 मूलकी पत्तकी टस । ४ मांग । ५ पत्नीके पाचारका
 लक्षणी, वातु पादिका कटा क्पा कीई टुकड़ा जो प्राय
 बिनी क्षत्रियों केहने भगाने वा लटखाने पाटिने काम
 में प्रयास है पत्नी ।

पत्नीदार (वि० पु०) मामीदार, हिस्सेदार ।
 पत्नी (म० पु०) गती वाहुनकादूर तख च दिव ।
 १ शास्त्रिणाक, शान्ति नामक भाग । २ जनपिपयो,
 जनपेय, ३ पट्टाट्टव पाकड़ या पेट । यमोडव,
 समीका पेट । ४ कुचन्दन । ५ पतङ्गकी लक्षणी ।
 ६ मातृयमन ।

पत्नी (वि० पु०) पत्नी हैकी ।
 पत्नी (वि० पु०) १ हट्टोके लक्ष्ण पत्नी या पत्नी
 विशेष विवरण प्रकर कर्ममें देवो ।

१ लक्ष्णकी मापवृत्त कर्मकाका पत्नी, मोलका पत्नी ।
 २ रत्न, लक्ष्ण, बीर, लाम, पत्नी आदि । ३ हट्टोपत्नी,

बिनीकी, घोडा । ५ बिन्नुल मही बुद्ध लक्ष्णी पत्नी । ६
 पत्नीको तरङ्ग कडोर, भारी चयवा इटने मन्त्री पादिके
 पत्नीय वस्तु ।

पत्नीकला (वि० पु०) पत्नीको वस्तुके क्रममें
 बाहुट चुलगासेके लिये चक्राच पत्नी लगा रहता था ।
 तोडदार या पत्नीदार वस्तुके चांददार वस्तु ।

पत्नीकल (वि० पु०) सेनाकल, लोका ।
 पत्नीकला (वि० पु०) १ एक प्रकारकी चाम त्रिलकी टुक
 दिनां नरम पौर मतको होती है । २ एक प्रकारका
 लिय जो पत्नी पाटता है । ३ एक पत्नीकी सभनी की
 मामुद्रिक चक्राचके चिट्टी रहती है । ४ लक्ष्ण
 मन्त्रीकूस । (वि०) ५ जो घरकी चारदीवारीमें बाहर
 न लिखता हो ।

पत्नीकूर (वि० पु०) एक प्रकारका पोवा ।
 पत्नीकूड़ (वि० पु०) वृक्षकूट पत्नी ।
 पत्नीकूड़ा (वि० पु०) पत्नी तोडनेका पिया करकेनाका,
 स गतराग ।

पत्नीकात्र (वि० पु०) १ बह जो पत्नी कि कर विधी-
 की मारता हो । २ बह जो प्राय पत्नी या टीका कि का
 करे । ३ बह जिसे पत्नी कि कनेका चम्पान हो टिक-
 बाह ।

पत्नीकाजी (वि० श्री०) पत्नी कि कनेकी लिया, पत्नी
 कि काई, टिकवाहो ।

पत्नी (वि० पु०) परवर देवो ।

पत्नी (म० स्त्री०) पत्नीके सम्बन्धी यथा इति लक्ष्णारादेगा
 लोप च (पत्नीके) लक्ष्ण लोके । वा ३।१।२२) वेदविधाना
 मुमाः कडा विशादिता पत्नी । जो पत्नी शास्त्रानुसार
 प्याहो जाता है लक्ष्ण पत्नी कहते हैं । पर्याय—पति
 पत्नीके, सभक्षिमीको, माया, जाया, दारा सभक्षिमीको,
 धर्मचारिका दारा पत्नीके, सभक्षी पत्नी, पत्नी, मधु,
 मति, परिधन कडा, लक्ष्ण ।

“पत्नीके पर पु वा लक्ष्णसेऽनुवर्तिनी ।
 पदापमनम नतिन वदि नार्थं लक्ष्णगा इ”
 (लक्ष्णदिया ।)

पत्नीकितानं लिका है कि पत्नी को पत्नीकेकी
 लक्ष्ण है । यदि पत्नी पुत्रकी मयवर्तिनी हो, तो गाह

स्वास्थ्यमभ्युत्तनीय है। पत्नी वशमें रहनेमें उसकी साथ धर्म, अर्थ और काम इस त्रिवर्गका फल लाभ होता है। पत्नी यदि स्वेच्छाचारिणी हो और उसे यदि निवारण न किया जाय, तो वह व्याधिकी तरह क्लेशदायिका होती है। जो पत्नी स्वामीकी अनुकूला, वाक्य दीपरीहिता, कार्यदक्षा, सती, मिष्टभाषिणी और पतिभक्तिमती है वह साक्षात् देवीके सदृश है। जिसकी पत्नी वशवर्त्तिनी नहीं है उसे दम्भी लोकमें नरकवास होता है। पत्नी और पतिका परस्पर अशुराग रचना स्वर्गमें भी दुर्लभ है। गृहस्वास्थ्यमें वास कवल सुखके लिये है, किन्तु पत्नी ही इस गाह खसुखकी जड़ है। जो स्त्री विनोता है और पतिका मनोगत भाव समझ कर चलती है वहाँ स्त्री पत्नीगद्दवाच्य है। जिस पत्नीमें उक्त गुण नहीं है उसमें केवल दुःख भोग होता है।

निन्दिता पत्नी जीविके समान है; अलङ्कार वस्त्र प्रभृति द्वारा उत्तमरूपसे परिपालित होने पर भी वह हमेशा पुरुषके रक्त चूसता है और एक दण्ड भी स्वच्छन्दम रहने नहीं देता। जब तक पति और पत्नीको उमर थोड़ा रहता है, तब तक पत्नी सब दा गङ्गायुक्त रहती है। जो पत्नी सब दा द्रष्टृचित्ता है, गृहीपकरण द्रव्यसमूहक अवस्थान और परिमाण विषयसे जानकार है तथा अनवरत पतिके प्रातिकर कार्य करती है, वहाँ पत्नी प्रकृत पत्नी है। ये सब गुण जिसमें नहीं हैं, वह कवल शरारतयकारिणी जरा है। पुरुषको प्रथम विवाहिता जो स्त्री है, वहाँ स्त्री धर्म पत्नी है। अपर विवाहिता पत्नी कामपत्नी माना गई है। इन सब पत्नियोंसे दृष्टफल होता है, अदृष्टफल धर्म भादि कृष्ण भी नहीं होता। (दशवर्षिता ४ थ०)

मनुमें लिखा है—पतिकी पत्नीके प्रति नियत सद्व्यवहार करना चाहिये। जो श्रेष्ठदिकी कामना करती है, विविध सरकार्यकालमें ही अथवा नित्य ही, अशन, वसन और भूषणादि द्वारा स्त्रियोंका आमोद विधान करना उनका कर्त्तव्य है। जिस परिवारके मध्य पति और पत्नी दोनों एक दूसरेके ऊपर नित्य सन्तुष्ट रहते हैं, निश्चय ही उस कुलका कल्याण होता है। वस्त्र और आभरण भादि द्वारा कान्तिमती नहीं होने पर नारीका

पुरुष पर प्रेम नहीं ही मङ्गला और जब तक स्वामी पर प्रेम नहीं होता, तब तक सुसन्तान ही ही नहीं मङ्गली। पत्नी यदि भूषणादि द्वारा मनोहरभावमें सुसज्जित रहै, तो सभी घर शोभा पाते हैं अन्यथा वे शोभाहीन ही जाते हैं जिस कुलमें नारियाँका मन्त्रक ममादर है, वहाँ देवता भी प्रसन्न रहते हैं और जहाँ स्त्रियोंकी पूजा नहीं है, उस परिवारके यागादि क्रियाक्रम निष्फल होते हैं। जिस परिवारमें स्त्रियाँ मन्त्र दुःखित रहती हैं, वह परिवार बहुत जल्द नाश ही जाता है। स्त्रियाँ जिस परिवारमें अमृतकृत हो कर अभिमम्पात देती हैं, वह परिवार अभिचारहतकी तरह विनष्ट ही जाता है। (मनु ३ थ०)

पत्नीध्व (स० स्त्री०) पत्नी भावे त्व। पत्नीका भाव वा धर्म।

पत्नीमन्त्र (स० पु०) एक वैदिक मन्त्र।

पत्नीयूप (स० पु०) यज्ञमें देवपत्नियोंके लिए निश्चित स्थान।

पत्नीवत् (स० त्रि०) स्त्रीकी तरह, स्त्रीके जैसा।

पत्नीव्रत (स० पु०) अपनी विवाहिता स्त्रीके प्रतिरिक्त और क्रमों स्त्रीसे गमन न करनेका सदृश्य या नियम। पत्नीशाला (स० स्त्री०) पत्न्याः शाला। यज्ञकालमें पत्नीके लिये निर्मित गृहभेद, यज्ञमें वह घर जो पत्नीके लिये बनाया जाता है। यह यज्ञशालाके पश्चिम ओर होता है।

पत्नीसंयाज (स० पु०) वैदिक कर्मभेद।

पत्नीसंयाजन (स० स्त्री०) पत्नीसंयाजरूप वैदिक कर्मविशेष, विवाहके पश्चात् होनेवाला एक वैदिक कर्म।

पत्नीसंहनन (स० स्त्री०) पत्न्याः संहननं इत्यत्। भिखला द्वारा पति-प्रक्षाल यज्ञदीक्षाके लिये यजमान और पत्नीका वस्त्रभेद।

पत्न्याट (स० पु०) अत्यन्त घट-आधारे घञ् आटा, पत्न्याः आटः। पत्नीगृह, स्त्रीका घर।

पत्न्यन् (स० त्रि०) १ शोभन गमन-शाधन। २ वायुगमन सदृश गतिविशिष्ट। ३ वायु द्वारा अन्तरीक्षमें गमन-शोभ। ४ पतननिमित्त दृष्टि।

पत्य (स० स्त्री०) पतिका भाव, जैसे सैनापत्य।

पत्यारा (हि० पु०) पतिभारा देखो।

पत्थारी (वि० श्लो०) पंक्ति कतार ।
 पत्थीरा (वि० पु०) एक पत्थान जो कच्छ में पत्थी की
 पोट्टी में लपेट कर सो या तिनमें लकड़ियों में तैयार होता है,
 एक प्रकारका विभव ।

पत्र (स० श्लो०) पत्रित इत्यात् पत्र-इत् (सर्वनाम्-इत्) ।
 कच्छ (अ० १२८) । इत्याद्ययवविभोय, पत्ता । पर्याय—
 पत्ताय इदम, दक्ष, पत्र, इद पत्र, इदम, इदं
 कच्छं, पत्र ।

पत्र के दोषको भी मोटी लम कोतो है वह पोषि भी
 और टहलाने से सुको होता है । यह लम पत्तीका और
 कलरोत्तर पत्तीको भीतो आतो है । । इस लमके दोनों
 पोर पत्तीका पत्तीको नये निश्चलतो है । ये पत्तीको पोर
 पाङ्गी लमे को पत्तीका कर्षा कोतो है । लमों लमोंका
 यह ज्ञान करे पाङ्गादनने ठका कोता है । कच्छके
 पत्तीको पोर पोट्टीके पत्तीका पत्तीका भाग जो कच्छा पत्तीका
 कुछ कुछ गावदुम कोता है पर कुछके पत्तीका विन्तुल
 मोल मो कोति है । नया निश्चला इधा पत्ता करापल
 निवे इद लम कोता है । इस पत्तीका लमे कोपल
 करती है । कुछ पत्तीके पत्तीके प्रति नये पत्तीका लमे
 भद्र ज्ञानि है । इस समय के पायः कच्छं कीज कोते है ।
 इन दो पत्तीका पत्तीके पत्तीका पत्तीका लमे समय पत्ता करा
 को कोता है । पत्ता इध या पोषिके निवे कने कामका
 पत्र है । कच्छके लमे को पाङ्गा मिनता है वह कमीट
 द्वारा मिनता है । निरिन्द्रिय पाङ्गाका वेन्द्रिय द्रव्य
 में परिचरितल कर देना पत्तीके कोता काम है । कुछ
 पत्तीके पत्तीके हावका मो काम देते है । इनके द्वारा
 पोषि कच्छुमें कच्छुके लमे कोङ्को पत्तीके कर कच्छा कीज
 चुसती है ।

विष्णुके चहुँमुखे पत्र निवेदन करनेसे प्रमोद पुष्प प्राप्त
 कोते है । इन सब पत्तीका विषय मारुति चपुराचमें
 इस प्रकार लिखा है—पथामामंका पत्र भृङ्गारकपत्र
 पदिर ममो, पूषा कुम, दमनक, विन्तुल पोर तुम्बी
 पत्र (पुष्पके घाब) विष्णुके विभोय दीतिकर है । जो
 पुष्पके लम इन सब पत्तीका द्वारा विष्णुको चर्चला करते
 है, वे ममो प्रकारके पत्तीके लम कोति है और पत्तीके वि
 विष्णुकीका ज्ञाने है । पूषं पत्रको पत्तीका पर लम पत्तीके
 लमकनक है ।

शामिकापुराचमें लिखा है—पथामामंका पत्र भृङ्गा
 रघपत्र, पत्तीकीपत्र, कनाइक, पदिर, कच्छु लमक
 कच्छु, कच्छुपुर, कुम, कूर्पाङ्गुर, ममो पामनक पोर
 पाम की सब यथाक्रमसे देको मतवतोके पत्तीके मनि
 कर है तथा इन सबको पत्तीका विन्तुल पत्र पत्तीके ।
 (काठिकापुर १८ म०)

मारयाचको तुष्कोपत्र पोर गिब तपापुता पाटिकी
 विन्तुलको पत्तीका पोर कोरे कच्छु प्रिय लमो है । विष्णु
 पुत्रलमें तथा शान्तिवृत्तलयन समो लमोंमें विष्णुकी
 तुष्कोपत्र प्रधान करनेसे ममो प्रकारके विज्ञ ज्ञाने रहते
 है । मनि पुत्रलमें भी विभवपत्र इको प्रकार के उ मना
 गया है ।

२ त्रिपत्र विभवपत्ता । पर्याय—त्रिपत्र तमापत्र,
 पत्रक इदम, दक्ष पत्ताय, पशुक वाप, तापन,
 सुकुमारक कच्छ तमानक, राम, मोगल वमन, तमान,
 सुरनिगद्य । सुष—इदु तिष्ठ, कच्छ, कच्छ, वात्, विष,
 कच्छि पोर कच्छ तिदोपत्तायक ।

३ कच्छ । ४ गजपत्र । ५ पाचपत्र । पत्तीके
 पत्तीके शान्तिवृत्तय कच्छं निश्चोत्ति पत्र करके इत् ।
 ६ निश्चलाकार, चातुमय पत्तीका इत् । पत्तीके व्यानात्
 व्यानात्तर समाचारोऽनेन । ७ पत्ती विष्णु । पत्र
 द्वारा कच्छा एक व्याने कच्छुके व्याने मना जाता है ।

कच्छविष्णु पत्रकोमदीमें पत्र निश्चला पत्तीका पोर
 पत्तीका पत्तीका विषय विन्तुलपत्तीमें लिखा है । यज्ञ पर
 कच्छु सत्तीके लिखा जाता है—

पत्रको निष्प कर र ना देना चाहिये । जो पत्र
 सुषं द्वारा र गाया जाता है वह उत्तम, शीघ्र द्वारा
 कोनेके लमके पोर कच्छा द्वारा कोनेके प्रथम कोता है ।
 पत्र हाव का पत्र लमका पत्र उत्तम, कच्छुप्रमाथ
 लमके पोर सुष्टि इत् प्रमाथ पत्तीका पत्र मना गया
 है । पत्रकच्छा विषय इस प्रकार लिखा है—पत्रको
 तीन पत्तीका ममोके करके सुष्णता कोता है । इन तीन
 ममोके दो मम कोङ्ग कर ममो ममो मम या पत्तीके
 ल कुछ कच्छं निश्चला चाहिये ।

पत्तीका पत्तीका पत्तीका—राजा अपने कच्छुके कच्छुके
 पत्तीका पत्तीका पत्तीका । कच्छुके मम या पत्तीके

पदयुक्त पत्र प्रस्तुत करने दो पाण्डितों के साथ दो वा तीन टिन तक विचार करके लेसा स्वरूप होगा, वैसे ही पत्र पुस्तकमें लिखे और सामान्य पत्रमें लिख कर छिपके राजाको सुनावे। पीछे राजलेखक राजाके आशानुसार शुभपत्र लिखे।

लिखतप्रकार - पत्रके पहिले मङ्गलार्थ अष्टग, मध्यमें विन्दु और समाह्न लिखना चाहिये। तदनन्तर स्वस्ति शब्दका प्रयोग और ओ-शब्द पूर्वक संस्कृत वा चर्चित भाषामें कुशल लिख कर शुभवार्त्ता लिखनी चाहिये।

कीर्त्ति और प्रीतियुक्त पत्र, पाछे 'किमधिकमित्यादि' लिख कर श्रेय करना चाहिये। इसके बाद पत्रव्यप्रेरण श्लोक और मस्यादिका अद्द लिखना होता है। इस प्रकार पत्र लिखनेकी विधि जान कर जो पत्र लिखते हैं, वे स्वदेश और विदेशमें कीर्त्तिलाभ करते हैं। जो शास्त्र नियमको जाने बिना राजपत्र लिखते हैं, वे मन्त्रीके साथ महत् शय्य पाते हैं।

पत्र लेनेका नियम—राजपत्र, गुरु, ब्राह्मण, यति, संन्यासी और स्वामी इनके पत्रको आदर पूर्वक मस्तक पर धारण करना चाहिये। मन्त्रीके पत्रको मनाट-देशमें, भार्या, पुत्र और मित्र इनके पत्रको हृदयमें और प्रवीरके पत्रको कण्ठदेशमें धारण करना होता है। इससे सिवा अन्य लोगोंके पत्रधारणमें कोई विशेष नियम नहीं है।

पत्रपाठका नियम—पहले पत्रको पकड़ कर नमस्कार करना चाहिये। पीछे राजाके समीप टक्षिण और फौला कर दो बार मन ही मन पढ़ लेना चाहिये, तीसरी बार परिस्पुट भावसे राजाको पढ़ कर सुना देना उचित है। गोपनीय पत्रको निर्जन स्थानमें और शुभपत्रको राजाके आशानुसार सभामें पढ़ सकते हैं। पाठकको इस प्रकार पत्रार्थ सुन कर राजसमीपमें राजाशाका प्रतिपासन करना चाहिये।

पत्र चिह्नका नियम—ऊर्ध्वदेशमें छः अङ्गुल स्थान छोड़ कर वक्षुल चन्द्रविम्बके समान कसूरी और कुङ्कुम द्वारा चिह्न करके राजाको पत्र देना होता है। इसी प्रकार मन्त्रीका पत्र कुङ्कुम द्वारा, पण्डित और गुरुका चन्दन द्वारा, स्वामीका सिन्दूर द्वारा, भार्याका

अलङ्कक द्वारा, पिता, पुत्र और संन्यासीका पत्र चन्दन द्वारा, 'यतयोका कुङ्कुम द्वारा और भृत्यका पत्र रत्नचन्दन द्वारा चिह्नित करना चाहिये। किञ्च गद्दुको जो पत्र दिया जाता है उसे रत्न द्वारा पत्रचिह्नित करते हैं। मधो पत्रोंके ऊर्ध्वदेशमें सुवक्षुल चिह्न करना आवश्यक है।

राजपत्रके कोनेमें छेद नहीं करना चाहिये। राजपत्रादिमें राजाको महाराजाधिराज, दानगौण्ड, मन्त्रित और कन्वहचक्ररूप इत्यादि यथायोग्य पदव्यास विधेय है। इसी प्रकार मन्त्रीके पत्रमें गुणानुसार प्रवर, प्राज्ञ और सञ्चरितादिका उल्लेख, पाण्डितके पत्रमें पद-तलमें संख्यापूर्वक प्रणाम, याम्त्रार्थनिपुण इत्यादि; गुरुके पत्रमें चरणमें प्रणतिपूषेक सांख्यसिद्धान्तनिपुणादि; स्वामिपत्रमें सनमस्कार प्राणप्रियादि पद; भार्याके पत्रमें माधो और सञ्चरितादि तथा प्राणप्रिया प्रभृति पद; पुत्रके पत्रमें आशीर्वादपूर्वक प्राणपुत्र इत्यादि; पितृपत्रमें प्रभुचय नमस्कार और सञ्चरितादि; संन्यासिणिके पत्रमें सकलवाञ्छाविनिर्मुक्त सवशास्त्रार्थपारग इस प्रकार पदविन्यास करना होता है।

गुरुके पत्रमें ६ श्रीशब्द, स्वामीके पत्रमें ५, भृत्यके पत्रमें २, शत्रुके पत्रमें ४, मित्रके पत्रमें ३, पुत्र और भार्याके पत्रमें १ श्रीशब्दका प्रयोग करना चाहिये।

(परचिह्नित पत्रकीमुद्रा)

पत्र शब्दसे पहले साधारणतः हृज पत्रका ही बोध होता है, पीछे उस परशै लिखित वस्तुका। वर्त्तमान समयमें जो मनोभाव कागज पर लिख कर पत्रके मध्य सन्निवेशित होता है, वही एक समय तालपत्र वा भोजपत्र पर लिख कर व्यवहृत होता था। पूर्व समयमें हृज पत्रादि पर लिखा जाता था, इस कारण इस प्रकार लिखित मनोभाव 'पत्र' वा 'चिट्ठी' नामसे चला आ रहा है।

पूर्व समयमें जब हम लोगोंके देशमें कागजका प्रचार नहीं था, तब भोजपत्र, कटनीपत्र अथवा तालपत्र पर चिट्ठी लिख कर अपने आत्मीय स्वजनोंको मनोभाव जताते थे। आज भी पत्तियामस्य ~~पत्र~~ कागजको पाठशास्त्रमें बालकगण पहले तालपत्रके उपर ~~व्य~~

माता निवृत्ता होकर हैं। जो कि इच्छाकर भरण हो जाने पर अदानीपत्रके ऊपर 'येन' आदि पाठ (जिहो कर्मिणीया या महाकर्मो पादि) लिखा करते हैं। पूर्व बरकत होने पर कर्तात् अथ पञ्चम विधयन्त्रमं इच्छयेत् करमें समय हो जाती है। तब से आगमके ऊपर लिखना पारम्भ करते हैं। पत्नी प्राय उच्यपवादिहै ऊपर निवृत्त-प्रवासी ठठ गई है। विवन्मय्य उच्योसा देगसे प्रेरित हो एक नामपत्र पर लिखित 'विहो (प्राया पत्र) और प्रायोग पञ्चादिको मन्त्र लिख कर जाना देगोमि मित्रो जानो है। विवाहादि कार्य लिख जो जाने पर द्यम टिममें शुभसकर्म विवाहव्यन हूय करमेके विहो मय याच मनुष्योके नामनि एक पत्रानत्र पर विवाहके पात्र और पत्नी तथा बरकता और कन्या अर्था एव विवाहके दक्षत मन्त्र और दिन' लिखित कर अिन कामत्र पर लिखा जाता है। उभे भो पत्र अहते हैं। वरप देगीमें त्रिस प्रकार विवाहका Contract लिख कर रक्खो होतो है। हम लोगोमें भो वसी प्रकार प्रायोग कुरुम्बाके नामनि उस पत्र पर चन्दन और बपसेका आप दे दिया जाता है। हमके बाद इच्छो दे कर दोनों पत्रवासे यह श्लोकार करते हैं, कि हम दोनों इस सम्बन्धके आपनमें रामो हैं। ओही देखो।

पत्रक (स० श्लो०) पत्र कर्त्तव्यं मनु तद्विधं वार्यति मा खे च । १ इच्छा पत्र, पत्ता । २ पत्रकको, पत्नीको लड़ो । ३ शिवपत्र, शिवपत्ता । ४ शान्ति मात्र शान्ति धाम । ५ पत्तापत्र, डाकका पैड़ ।

पत्रकत्व (स० श्लो०) १ पत्रका कथन सम्बन्धाला दिया हुआ पत्ता का चुर । शिव पत्र जाने पर गरम पत्रकामि सम्बन्धो इहिके लिये जो कुछ दिया जाता है, उभे पत्रकत्व कहते हैं। २ महासुमन्धित तैल, सुसुन्दर मिल ।

पत्रकाहता (स० श्लो०) पत्रकायां पाहता यन्म । १ पत्रकत्व, पत्नीके हिकमिधे कोनिकाका एक प्रकारका मन्त्र । २ पिच्छोका ।

पत्रकच्छ (स० पु०) पत्रो यत्र-प्राय साधक हच्छे । अन्वयमेव, एक मत्र त्रिवर्षे पत्तोका काड़ा या कर रखा जाता है।

पत्रगुह (स० पु०) पत्राणि गुह्यानि यन्म । स्थुभो उच्य मित, तिपरा, बूहर ।

पत्रतना (स० श्लो०) पत्रमेव धनं तस्या पत्रं वाङ्मनात् तथा च । सातसा उच्य, धि कृष्ण ।

पत्रह (स० श्लो०) पत्रमभ्यती पञ्च-आदि यत्र, यत्र म्यादित्वात् साधु । पत्राङ्ग रक्षचन्दन, मन्त्र ।

पत्रकारिका (स० श्लो०) मौक्तिक लिपामेद ।

पत्रदिदक (सं० त्रि०) पत्रच्छेदकवाचो, उभे काठमिचाना ।

पत्रच्छेप (स० त्रि०) लिखपत्र जिसके उभे अटे हों।

पत्र (स० पु०) शिवपत्र, शिवपत्ता ।

पत्रभाषण (स० पु०) पटोम शेर तालपत्रोत्र पाधक, बहु मय भो परबत और ताकुडे पत्तामि सुपाई भाव ।

पत्रभ्रष्टार (स० पु०) पत्रं तु भ्रष्टारक्यत् मन्दापत्र । पुरोहीउच्य ।

पत्रका (स० स्त्री०) पत्रः पत्नी जोवनमिच यत्र । शरपत्र रचना ।

पत्रतण्डुली (स० स्त्री०) पत्रेणु तण्डुलकत् विद्यति यन्नाः पत्रं पादित्वाद्यत्, ततो गौरादि त्वात् डीप । यवतित्रा कता ।

पत्रतद (स० पु०) पत्रप्रधानपत्र । विदुषदिरुच्य, दुर्गन्ध शेर ।

पत्रतालक (स० श्लो०) स यपत्र करिताम ।

पत्रदारक (स० पु०) पत्रकत् दारयति इच्छावि रति इ- विन् कृष्ण । प्रकथ, करीमका पैड़ ।

पत्रदुम (स० पु०) ताकडव ताकडा पैड़ ।

पत्रनाडिका (स० श्लो०) पत्रक नाडिका । पत्रधिरा, पत्नीको मस ।

पत्रनामक (स० श्लो०) शिवपत्र, शिवपत्ता ।

पत्रपरय (स० पु०) पत्रे चातुनिमित्तपत्राकारि परशु- रिच, तण्डुलकत्वात् तथाच । कर्त्तार प्रकृतिवा यन्म भेद, घोमार कोदार पादिना एक घोकार, छिनो ।

पत्रपा (स० श्लो०) यत्रतद्व्यमिति यत्र-त्रय यत् निपात नादकारकोप । यत्रपत्ता, कन्या ।

पत्रपाक (स० पु०) पत्रकत् पत्रते वाप्यतेऽथो पत्र-यत् यत्र । पायता कुरिका, कन्या कुरा या अटार ।

पत्रपासो (स० श्लो०) पत्रपास-हाय । १ कर्त्तना,

काँची, कतरनी । २ वाणका पिछला भाग ।
 पत्रपाद्या (सं० स्त्री०) पागानां ममूहः पाश्या, पत्राणां
 पाश्या । स्वर्णादिरचित ललाटभूषण, टीका, निलक ।
 पत्रपिशाचिन्दा (सं० स्त्री०) पत्रैः पत्रेण वा पिशाचीव,
 इवार्थे कन् । १ जननी, जलधारणसाधन यन्त्रभेद ।
 पर्याय—वर्षार, वारिदा, मूर्द्धखील । २ मस्तक पर
 पत्रागपत्रकन्यन ।

पत्रपुष्प (सं० पु०) पत्रं पुष्पमिव यस्य । १ रक्ततुलसी,
 लाल तुलसी । २ एक विशेष प्रकारकी तुलसी जिसकी
 पत्तियां छोटी छोटी होती हैं । ३ लघु उपहार, छोटी
 मंटी ।

पत्रपुष्पक (सं० पु०) पत्रपुष्प इव कायते कौ-क । भूर्ज-
 पत्र, भोजपत्र ।

पत्रपुष्पा (सं० स्त्री०) पत्रपुष्प टाप । १ तुलसी । २ छोटी
 पत्तीयं तुलसी ।

पत्रवन्ध (सं० पु०) पत्राणां वन्धो बन्धनं यस्मिन् । पुष्प-
 रचना, पत्र पुष्पादिकी सजावट ।

पत्रवन्ध (सं० पु०) पत्रवत् बन्धतेऽस्मिन् बन्ध-अधि-
 कर्णो घञ् । तुलावट, निपणो, डाँड, बन्धी ।

पत्रभङ्ग (सं० पु०) पत्राणा निखितपत्राकृतीनां भङ्गो
 विचित्रता यत्र । १ स्तन और कपोलादिमें कस्तूरि
 कादि रचित पत्रावली, वे चित्र या रेखाएँ जो सोन्दर्य-
 हादिके लिये लक्ष्यां कस्तूरी केसर आदिके लेप अथवा
 गुनहले रूपहले पत्ररहित टुकड़ोंसे भाल, कपोल, स्तन
 प्रादि पर बनाता है । पर्याय—पत्रलेखा, पत्रवल्ली, पत्र-
 लता, पत्राङ्गुली, पत्राङ्गुलि, पत्रभङ्गि, पत्रभङ्गी, पत्रक,
 पत्रावली । २ पत्रभङ्ग बनानेकी क्रिया ।

पत्रभङ्गा (सं० स्त्री०) पत्रभङ्ग देखी ।

पत्रभङ्ग (सं० पु०) एक प्रकारका पोषा ।

पत्रमञ्जरी (सं० स्त्री०) पत्राणां मञ्जरी १ पत्रका
 अग्रभाग, पत्तिका अगला हिस्सा । २ पत्राकार मञ्जरी-
 युक्त तिलकभेद, एक प्रकारका तिलक जो पत्रयुक्त
 मञ्जरीके आकारका होता है ।

पत्रमाला (सं० पु०) पत्राणां माला यत्र । वीतसहज,
 वीतका पेड़ ।

पत्रमाला (सं० स्त्री०) पत्राणां माला । पत्रमसूह, पत्ती-
 की माला ।

पत्रमूल (सं० स्त्री०) पत्रानां मूलं । पत्रका मूल, पत्त-
 की जड़ ।

पत्रयौवन (सं० स्त्री०) पत्राणां यौवनं यत्र । पत्रव,
 नया पत्ता, कौवन ।

पत्ररचना (सं० स्त्री०) पत्रभङ्ग ।

पत्ररथ (सं० पु० स्त्री०) पत्रं पत्नी रथो यानमत्रि यस्य ।
 पत्नी, चिडिया ।

पत्ररेखा (सं० स्त्री०) पत्ररचना देखी ।

पत्रल (सं० स्त्री०) १ पत्रलदुग्ध, पत्रला दूध । २ दुग्ध,
 पत्रला दही ।

पत्रलता (सं० स्त्री०) पत्राकारा लता यत्र । १ पत्राकार
 तिलकभेद । २ पत्रप्रधानलता, वह लता जिसमें प्रायः
 पत्ता ही पत्ता हो ।

पत्रलक्षण (सं० पुल०) पत्रविशिष्टेण पक्षं लक्षणं ।
 सुदृशोक्त लक्षणभेद, एक प्रकारका नमक । यह एरण्ड,
 मोखा, अहम, करंज, अमिलनाम और चीतिके हरे
 पत्तोंसे निकाला जाता है । इन सब पत्तोंको खनमें कूट
 कर घों या तिलके किसी बरतनमें रखते और ऊपरसे
 गोबर लीप कर आगमें जलाते हैं । यह नमक वात-
 रोगोंमें लाभकारक होता है ।

पत्रलेखा (सं० स्त्री०) पत्राणां कस्तूरिकादिरचित-
 पत्राकृतीनां लेखा रचना । पत्रभङ्ग, साठी ।

पत्रवर्ण (सं० पु०) मगवर्णहज ।

पत्रवल्गरो (सं० स्त्री०) पत्रयुक्ता वल्गरोष । १ तिलक-
 भेद । २ पत्रभङ्ग ।

पत्रवल्ली (सं० स्त्री०) पत्राणां रचितपत्राकृतोनां बन्धी
 लतेव । १ पत्रभङ्ग । २ रुद्रजटा । ३ पत्रागो लता । ४
 पर्णलता । ५ पान ।

पत्रवाज (सं० पु०) १ पत्तो, चिडिया । २ वाण, तीर ।

पत्रवाह (सं० पु०) पत्रेन पचच्छेदेन उच्छ्रते इति वह-
 घञ् । १ वाण, तीर । २ पत्नी, चिडिया । ३ हरकारा,
 चिट्ठीरमा । (ति०) पत्रं लिपिं वहतीति वह-अण् ।
 ४ लिपिवाहक ।

पत्रवाहक (सं० पु०) पत्रवहनकारो, पत्र ले जानेवाला,
 चिट्ठीरमा, हरकारा ।

पत्रविशेषक (सं० स्त्री०) पत्रमिव विशेषो यत्र कर्णं ।
 १ तिलक । २ पत्रभङ्ग, साठी ।

पत्रविषय (स० स्त्री०) पत्नीति निवृत्तपतिव्याया विषय ।
 पत्रविषय (स० स्त्री०) पत्रविषय उपविषयः । पत्राचार
 उपविषयमेव, पत्रविषयव्याय पत्रविषयः ।
 पत्रविषय (स० पु०) पत्रविषय बोधेति बोधे कर्म वि धम ।
 १ ताडयत्, तरयो । २ करणयुक्त नामका कालमे पत्रगते
 का मङ्गला ।
 पत्रव्यवहार (स० पु०) विद्यो निपत्ये पीर कत्तर पाति
 रङ्गनीची विद्या या भाव, कर्तव्यतावत ।
 पत्रव्यवहार (स० पु०) माधोमकालको एक पत्रार्थे जाति ।
 पत्रव्यवहार (स० पु०) पत्रव्यवहारः शब्द शब्दपाणिनादि
 लात् कर्मभाः । मन्व्यव्यवहारः बह योहा विमर्श
 पत्रोका साय बना कर श्यावा जाता को ।
 पत्रविषय (स० स्त्री०) पत्रविषय विषय । १ पत्रमङ्ग साठो ।
 २ पत्रपत्रि पत्नीची माता । ३ पत्रमंडो, पत्रोची
 मस ।
 पत्रविषय (स० स्त्री०) पत्रं मङ्ग विषय यस्या डोय ।
 मृदिबन्धुविषया, मृमाकागो नामको मग ।
 पत्रविषय (स० स्त्री०) पत्रार्थ बोधीन । १ इवलोवता,
 मुसाकागी । २ पत्रपत्रि, पत्रावली ।
 पत्रविषय (स० पु०) पत्र विषय यत् । विषयपत्र, वैम
 का पत्रा । यह पत्रा मन्वादिष पीर दुर्माका पत्रव्यव
 प्रोतिवर्त है इलोके पत्रोति बोधे माना गया है ।
 पत्रसुन्दर (स० पु०) पत्र सुन्दर यत् । मन्मापत्रात
 कृष्णविषय ।
 पत्रविषय (स० पु०) पत्रार्थे मृदि विषय । कण्टक बोटा ।
 पत्रविषय (स० पु०) पत्रोयु, विमर्श विमर्शने टिमे । विमर्श
 पुर्विक ।
 पत्रा (वि० पु०) १ तिबिषय, मन्वो पत्रांग । २ पत्रा,
 मन्वो पत्राहा ।
 पत्रावली (स० स्त्री०) पत्रविषय यस्या यत् । १ विषयपत्र,
 विषयपत्रा । २ तामोयपत्र ।
 पत्रावली—कामव्यवहारे कर्मगत बोधोठके दक्षिण यव
 म्बित एक नदी ।
 पत्रावली (स० स्त्री०) पत्रविषय यत् यत् । १ पत्रव्यवहार,
 काव्यव्यवहार । २ पत्रव्यवहार कर्तव्य जाण्यविषय मन्वम
 ३ मन्वपत्र, मीत्रपत्र । ४ पत्रव्यवहार, कर्मव्यवहार ।

पत्रावली (स० पु०) पत्रविषय । प्रमुत्त प्रभावो—पत्रम
 पीर खैरबी लकड़ो, पत्रस पीर विषयव्यवहारी काल,
 व्यामाकता, पत्रमन्वम बवापुत्रको बोको, पामको
 गुन्धीका गूदा, दाहकदिप्रा, पिपावता पत्रोमका पत्र,
 पीरा, मोह, रमाकर्म, कचूट, सुद्वलक, कुहम कर्म
 प्रथीक एक पत्र । इन सब प्रयोगो मनीमोति मूर कर
 किसे एक वरतमने रखते हैं । पीरि कर्ममें झाया २०
 एक, धरका मूल १६ एक जोनो १२३ मीर, मनु ६ मीर,
 मन् १२८ मीर काल कर एक मास तब एक बोडते हैं ।
 बाट पाव पत्र करके दिन भरमें धरन करनेसे अंत
 पीर रक्षकप्रत तदा तत्स पुत्र बेटना कर पाण्डु पादि
 रीग यच्छो को जाते हैं ।
 पत्रावली (स० स्त्री०) पत्र पत्रविषय यत् । पत्रमङ्ग
 माठो ।
 पत्रावली (स० स्त्री०) पत्र लेखनपत्रमप्येतिमेव पत्र-
 मङ्ग करके म्पुट । मसो, कामी म्पुटो ।
 पत्रावली (स० स्त्री०) पत्रावली । १ पियन्मीमन्,
 विपरास्य । २ पत्रतश्च पत्राव पर जोमिवाको एक
 कास । ३ पत्रव्यवहारीय एक पत्रावली सुयन्मित धाम ।
 ४ पत्रावलीवन्दन । ५ पत्रमपत्र इतिताम । ६ तामोय
 पत्र ।
 पत्रावली (स० स्त्री०) १ पत्रम, मन्वम । २ माव्यवन्दन ।
 पत्रावली (स० स्त्री०) पत्रो यत् यस्या । बुद्धिवा पत्र-
 मोमीका याम ।
 पत्रावली (स० स्त्री०) पत्रार्थे पामोति । १ पत्रावली ।
 २ पत्रयथो ।
 पत्रावली (स० पु०) पत्र पत्रविषय यत् । १ कासासु । २
 रक्षुदम ।
 पत्रावली (स० स्त्री०) पत्रार्थे पत्रावलीनां पत्रवि-
 य विविध रचना यस्या । १ नैरिषय मेक । २ पत्रयथो ।
 पत्रावली (स० स्त्री०) पत्रावली बाहुलकात् डोय । १
 पत्रमङ्ग माठो । २ पत्रोको पत्रि । ३ मयदुर्गासन्धा
 दालक मनुमिहित यवपुत्रकुल मवाप्यव्यवहार । पीर
 कुरको मनुमि मिना कर मी पोपमके पत्रोमि रक्ष मन्वदुर्गा-
 को दाग करना होता है ।

“अपारां निधि संघे तु पत्रे चाश्वत्थसंज्ञके ।
कमारः पत्रावली देयं मधुना यवघूर्णकम् ॥”

(कैवटपत्रम्)

पत्रिका (स० स्त्री०) पत्रो एव, स्वार्थं कन्, ततो ह्रस्वः ।
१ पत्रो, चिट्टो, खत । २ कोड़े छोटा लेख या लिपि । ३
कोड़े सामयिक पत्र, समाचारपत्र, अखबार । प्रगप्त
पत्रं विद्यते ग्रस्याः, पत्र-ठन् । ४ कटनी आदि नव-
पत्रिका । ५ कपूर्भेद एक प्रकारका कपूर ।

पत्रिकाख्य (स० पु०) पत्रिका आख्या यस्य । १ कपूर-
भेद, एक प्रकारका कपूर, पानकपूर । २ पत्रिका-
नामक ।

पत्रिन् (स० पु०) पत्रं पत्रो विद्यते यस्य । पत्र-इनि ।
१ वाण, तौर । २ पत्रो, चिट्टिया । ३ श्लेन, वाज । ४
रथो । ५ पर्वत, पहाड । ६ वृक्ष, पेड । ७ तान, ताड । ८
श्वेतनिषिहीवृक्ष । ९ गङ्गापत्रो । (त्रि०) १० पत्रविशिष्ट,
जिसमें पत्रे हों ।

पत्रिणो (स० स्त्री०) पत्रिन् स्त्रियां ङोप् । नषाङ्, र-
पञ्चव, कोपल ।

पत्रिवाह (स० पु०) पत्रवाहक, हरकारा, चिट्टोरसा ।
पत्रो (स० स्त्री०) पत्र-स्त्रियां ङोप् । १ लिपि, पत्र,
चिट्टो । २ दमनकवृक्ष, दीनेका पेड़ । ३ महासुगन्धित
तेल । ४ गङ्गापत्रो । ५ दुरालभा । ६ खदिरवृक्ष । ७
तालवृक्ष । ८ जातोपत्रो । ९ महाविजपत्र ।

पत्रो (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका गहना जिसे हाथमें
पहनते हैं, इसे जहानगरो भी कहते हैं ।

पत्रोपस्कार (स० पु०) पत्रमेव उपस्कार उपकरणं यस्य ।
कासमदं वृक्ष, फसौंदो ।

पत्रोर्ण (स० स्त्री०) पत्रजा कर्णा माघनत्वेनास्यस्य
अशं आदित्वादच् । १ धौतकौपिया, रेशमी कपड़ा ।
(पु०) पत्रेषु कर्णा यस्य । २ श्योनाकवृक्ष ।

पत्र (स० पु०) पत्रस्य हितं यत् । श्योनाकवृक्ष ।

पत्नन् (स० पु०) पत भावे मनिन् । १ पतन, नाश । २
पतनसाधन ।

पत्नन् (स० पु०) पतत्वन्न पत आधारे वनिप् । मार्ग,
रास्ता ।

पत्नल (स० स्त्री०) पतति गच्छति अस्मिन् पत-सरन्

रस्य लस्य (पतेरस्य लः । उण् ३।७४) पत्न्या, मार्ग, रास्ता ।
पत्सुनम (स० अश्व्यः) पत्सु तम् । पाटमे ।

पथ (स० पु०) पथति गच्छति पथ-वजर्थे अधिकार-
क । १ पथ, मार्ग, राह । २ गवहार या कार्य
आदिनी रीति विधान ।

पथ (हिं० पु०) पथ, रोगके निचे उपयुक्त द्रव्यका
आहार ।

पथक (स० पु०) पथे कुगनः, पथ कन् । १ मार्गकुगल,
पथ जानने या बतलानेवाला । २ प्रान्त, मार्ग,
रास्ता । ३ कपिसत्राद्या ।

पथकल्पना (स० स्त्री०) इन्द्रजाल, जादूका खेन ।

पथगामो (हिं० पु०) पथिक, रास्ता चलनेवाला ।

पथत् (स० पु०) पथति प-गट् । १ गमनकर्त्ता, वह
जो जाना हो । २ पथ, रास्ता, राह ।

पथचारी (हिं० पु०) रास्ता चलनेवाला ।

पथदयंक (स० पु०) राह दिखानेवाला, रास्ता बत-
लानेवाला ।

पथनार (हिं० स्त्री०) १ गोबर? उपने बनाना या थापना,
पायना । २ पोटेने या मारनेको क्रिया ।

पथप्रदयंक (स० पु०) मार्गदर्शक, रास्ता दिखानेवाला ।

पथरकला (हिं० पु०) एक प्रकारकी बन्दूक या कडावान
जो चकमक पत्थरके द्वारा अग्नि उत्पन्न करके चलाई
जागे थो, वह बन्दूक जिसको कल वा घोड़ेमें पथरो
लगे रहते हो । इस प्रकारको बन्दूकका व्यवहार पहले
होता था, अब नहीं होता है ।

पथरचटा (हिं० पु०) १ पाषाणभेद या पत्थानभेद नाम-
की शोपधि । २ एक प्रकारकी छोटी मछली जो भारत
और लद्दाकी नदियोंमें पाई जाती है । यह मछली एक
वालिष्ठ लम्बी होती है ।

पथरना (हिं० स्त्री०) शौजारोंको पत्थर पर रगड़ कर
तेज करना ।

पथराना (हिं० स्त्री०) १ सूख कर पत्थरको तरह कड़ा
हो जाना । २ नोरस और कठोर हो जाना । ३ सूख्य हो
जाना, जड़ हो जाना, सजीव न रहना ।

पथरिया—मध्यप्रदेशके दमोह जिलान्तर्गत एक ग्राम ।
यह अक्षां २३° ५३' ३०" और देशां ७८° १८' ५०" के

मध्य प्रकटित है। यहाँ सरकारी विद्यालय, पोषण-लय और छात्रावास है।

पथरी (हि. खी.) रोडवेज मुख्यालय। इस रोडवेज में एक नाम है पथरी।

सुपुत्रों में इस रोडवेज विषय हम प्रकार लिखा है - पथरी का प्रकार है। यहाँ की जनता पाषाण है। खेती, बाघ, पिल और गुरावे यह रोडवेज होता है। पथरी की स्थिति को रोसा बिना और यह बलि देग में पाषाण की है तब यह रोग होता है। यह रोग जोने के बलिदेग में पोड़ा पर्वण, मुद्रा छप्प बलि, गिरा मुद्रा और लपकाने बिदना, क्वर, देहकी चरसकता और मुद्रा में बहरी सो गन्ध होती है। ये सब पूर्व लक्षण होने पर कारकमें देहि बिदना, मुद्रा का बर्षदीय और मापता तथा पाषाणता होती है। रोम उपस्थित होने पर पैदाव बिदना में मध्य नामि, बलि बिदनी और लपकाने में बिदनी न बिदनी ज्ञान पर बिदना पथरी होते है। बाबल कन्दन, सनारक, पाशादिनी पृष्ठ पर ममन वा पथरीय दारा मो बिदना होता है। पति बेबनने रोसा बलि हो कर पथरीमायके बलिमुक्तमें पथरीय करके पथरीय माय रोबती है बिदने मुद्रा प्रतिहत हो कर भेटकरक वा मुक्ति बिदनाके तरह पोड़ा उत्पन्न होती है यह पथरीय मुद्रा और मोतल हो जाता है। रोसा जन्म पथरीय रोसा, रिनाक, हड्डी कुञ्जटाण्ड वा मधुकरुषको तरह बर्षबिगिष्ट हो जाती है।

रोसा पित्तबुद्ध होनेसे यह स हत और पूर्वोक्तपथ में हडिमात्र हो कर बलिमुक्तमें बहिदान पूर्व क स्त्रीत मानेको रोबती है। इसमें मुद्रा प्रतिहत हो कर उत्पत्ता हाथ और पाक होनेसे मध्य कन्दन तथा बलि कण्ड बाहुबुद्ध होती है। पित्तप्रसारी रक्तबुद्ध और पोताम तथा कण्ड बर्षको हो जाती है।

रोसा बाहुबुद्ध हो कर स हत और पूर्वोक्तपथ में बहिदान होती है। यह बाहुबुद्ध रोसा बलिमुक्तमें पथरीय करके मधुकरुषको राबता है बिदने मोक्ष बिदना उत्पन्न होती है। रोसी कर भेटकरके पथरीय कारक हो जाता है तब यह दमपेयक नामि और म्रिपुदेगममन तथा मन्कार अर्थ करता है। रोसा करके रोसी पतिपथी हो जाता

है। वाहुबुद्ध-पथरी-ज्ञानमयक पथरी स्वरूपमें, बिदम और कदम्बपुष्पको तरह पथरीयुक्त होती है। दिवालय, धमन वा पतिरिक्त पाषाण तथा मोतल, रिनाक और मधुकरुष प्रथम स्थितिमें मिय मान्यम वृद्धता है, इस कारण पूर्वोक्त तीन प्रकारको पथरी विदितता बाबलको ही होती है। पथरी प्रसारी और वलिदेगका परिमाण पथरी तथा पथरीमें मोक्ष हडि न होनेसे प्रबुद्ध पथरी बलिदेगमें मुद्रा में लिखाने जाती है।

मध्यक मोनेको हडिबन्ध पथरीय प्रसारी है। मेषुन के परिभाषाते वा पतिरिक्त मेषुन दाग बलिहृत हल निरस्त न हो कर पथरीय हो कर बहने लगता है। पोषी वाहुबुद्धक नष्ट हल नम स्थानसे प्रसारीत हो कर म्रिपु और मुद्रा द्वारा मध्य बलिहृत होता तथा पोषी हल जाता है। इससे मुद्रामात्र प्राप्त हो कर मुद्रा छप्प, बलिदेगना और दोनों सुखीका उत्पन्न होता है। यह ज्ञान दाबनेसे पथरी मिय जाती है।

मध्यक लिखता और मन्त्रनामक मेषुन पथरीको विक्रितमात्र है। मुद्राकार और मन्त्रायक ज्ञान पाषाण ज्ञान है। मिय प्रकार मदी सायको और मन्त्र बहल करत है पथरीयगत मुद्राबहा मद्रियां भी लगे प्रकार बलिहृत मध्य मुद्रा बहल करती है। जो सब मद्रिकी सामा मन्त्रे मन्त्रे मुद्रा बहल करती है इनके मुद्रा पथरीय मूष्य रहनेसे कारण देखनेमें नहीं पाते। ज्ञापत् वा हडिबन्धकामें मुद्रा करित हो कर मुद्रामयकी परिपूर्ण कर देता है। बिना पथरीय मुद्राको कर्षक मध्य हडि हो कर पथरीसे मिय प्रकार पथरी रोसि करक वा कर पथरीको मर देता है लगे प्रकार बलिदेग भी मूष्य द्वारा मर जाता है। इस प्रकार नातपिन वा कण्ड कर मन्त्रे मन्त्रे मिय कर बलिहृत मन्त्रे करता है, तब पथरी रोस उत्पन्न होता है।

मिय प्रकार मन्त्रे हडिमें निर्मल जन्म रहनेसे भी मन्त्रायक पथरी से दानि कोषक मन्त्रे जाता है, लगे प्रकार बलिहृत मन्त्रे पथरी करक मन्त्रे है। पाषाणायक बाहु पथरी और रोसाको बलिहृत। मिय प्रकार मन्त्रे न हत हो कर मन्त्रे हडिमें परिहत हो जाता है, लगे प्रकार बलिहृत मन्त्रे लिखित रोसा बाहु भी उत्पत्ता द्वारा मन्त्रे हो कर पथरी उत्पन्न

करती है। वायुके मरुत रहनेसे वस्तिदेशमें सूत्रसञ्चारित होता है, इसका विपरोत होनेसे नाना प्रकारके विकार उपस्थित होते हैं। सूत्राघात घाटि सर्वोकी उत्पत्ति वस्तिदेशसे बतलाई गई है।

(सुश्रुत निदानध्या० ४ अ०)

भावप्रकाशमें लिखा है, कि पथरी रोग चार प्रकार का होता है, वातज, पित्तज, कफज और शुकज। इन चार प्रकारको पथरियोंके मध्य वातजादि त्रिविध ज्ञेया-यित है। शुकज पथरी केवल शुकसे होती है। उपयुक्त चिकित्सा नहीं होने पर यह रोग कृतान्तकी तरह प्राण-हारक हो जाता है। किसी किसीका कहना है, कि शुकशमरो भी ज्ञेयायित होती है।

पथरीका निदान—जब वायु, वस्तिस्थित शुकके साथ मूत्रकी और पित्तके माय कफकी सुखा देती है, तब गो पित्तसंज्ञित प्रकार गोरौचना उत्पन्न होती है, उसी प्रकार पथरी रोग होता है। सभी प्रकारको पथरी त्रैदोषिक है। इनमेंसे दोषको प्रधानताके अनुसार वात-जादि भेदसे नामकरण हुआ करता है।

पथरीका पूर्वलक्षण—पथरी होनेसे पहले वस्ति-देशमें घाघसान, वस्तिके निकटस्थ चतुःपार्श्वमें प्रत्यन्त वेदना, छागमूत्रकी तरह मूत्रमें गन्ध, मूत्रकृच्छ्र, ज्वर और अरुचि होती है।

इसका सामान्य लक्षण—यह रोग उत्पन्न होनेसे नाभि, सेवनी और सूत्राशयके ऊपरी भागमें वेदना होती है। पथरीसे जब मूत्रहार बन्द हो जाता है तब विच्छिन्न धारामें मूत्र निकलता है। मूत्ररन्ध्रसे पथरीके छट जानी पर बिना क्लेशके गामेदकको तरह किञ्चित् लोहितवर्ण स्वच्छ मूत्र निकलने लगता है। यदि पथरी सञ्चरणके हेतु मूत्रबहा स्नातमें क्षत हो जाय, तो रक्तसंयुक्त मूत्र निकलता है और कुन्यन करनेसे प्रत्यन्त वेदना होती है।

वातोद्यमण अशमरोका लक्षण—वाजज पथरीसे पीडित व्यक्ति मार्त्तनादके साथ दाँत पीसता है और उसके गिशन तथा नाभिदेशमें वोड़ा होता है। मूत्रत्याग-के समय गन्दके साथ मल त्याग होता है और पोछे बुँद बुँदमें मूत्र निकलता है। यह वातज पथरी श्यामवर्ण भ्रूण और कण्ठक परिवर्तित होती है।

पित्तज पथरी रोगमें—मूत्राशयमें दाह और अग्नि द्वारा दग्ध होता है, ऐसा मालूम पड़ता है। यह भिन्नावर्णके बोजके सदृश होती तथा इसका वर्ण रक्त, पीत या कृष्णवर्ण होता है।

शुक्रशमरो रोगमें—रोगीका सूत्राशय शीतल, गुरु और सुई चुभाने से वेदना होती है। यह पथरी बङ्गो, चिकनी, भफेद वा कुछ पिङ्गलवर्ण होती है।

यह तीनों प्रकारको अशमरो प्रायः बचपनमें ही उत्पन्न होती है। बचपनमें मूत्राशय छोटा और अल्प-मांसविशिष्ट होता है। इससे शुकक्रियाके बाद पथरी सहजमें आकर्षण और ग्रहणकी जा सकती है।

शुक्राशमरो—शुकवेग रोगनेसे वयःप्राप्त व्यक्तियोंको यह रोग होता है। भानकीके शुकवेग धारण करनेसे अहितकी सम्भावना नहीं है। जब कामवेगवयतः स्वस्थानव्युत् शुक स्वल्पित न हो कर वायु कर्तृक शिथ्य और मुष्कहयके मध्यगत वस्तिमुखमें धृत और शोषित हो जाता है, तब शुक्राशमरो होती है। इस शुकज पथरीमें सूत्राशयमें वेदना और बहुत कष्टसे मूत्र निकलता है तथा दोना मुष्क सूज जाते हैं। इसके उत्पन्न होनेसे ही शुक गिरने लगता है। शिथ्य और मुष्कको दवानेसे पथरी भातर घुम जाती है।

शर्करा और सिकतारोग पथरीका अवस्थान्तर मात्र है। पथरी जब वायु कर्तृक भिन्न अर्थात् चोनी-कणके सदृश होती, तब उसे शर्करा और इसी प्रकार जब चालुकाकण-सी होती है, तब उसे सिकता कहते हैं। शर्करा और सिकता इन दोनोंमें प्रभेद यह है, कि शर्कराको अपेक्षा सिकताका रणसमूह सूक्ष्म होता है। वायु कर्तृक प्रभिन्न शर्करा और सिकतारोगमें यदि वायु स्वपथगामिनो हो, तो मूत्रके साथ वे रण निकल पाते हैं और वायुके विपथगामो होनेसे वे निकलने नहीं पाते तथा सूत्रस्नातके साथ संलग्न होनेसे दुर्बलता, शरीरकी अवमज्जा, क्षयता, कुचिगूल, अरुचि, पाण्डु, पिपासा, हृद्रोग और वमि आदि उपद्रव होते हैं। पथरीमें यदि रोगीको नाभि और मुष्कहयमें शीथ तथा सूत्ररोध हो जाय, तो रोगीका जीवन्माश होता है।

इसकी चिकित्सा—वातजन्य पथरीके पूर्व लक्षण

उपस्थित कोमिने स्निहादि वात विच्छिन्ना करानो जेतो
 है। कष्ट, मन्दिारो, पापाचर्मदो कोविन्धन, बद्ध
 मोक्षर और गन्धारो इनके बाढ़ेमें हिङ्गु, दन्धार और
 वैश्वबूषं काष्ठ कर पान करनिसे पथरो रोम प्रयमित
 होता है। यह अग्निप्रदोषक और पचक है। इसका
 नाम शष्पादिब्रवाय है।

इलायची, पीपर, खटिमस, पापाचर्मदो, रङ्गुल,
 मोक्षर, पञ्चम और मरिचका मूल, इनके बाढ़ेमें १ पा
 ३ भागा गिणावतु ज्ञान कर पान करनिसे यह रोग प्रय
 मित होता है। इसका नाम है एलादिज्ञान। बद्ध
 ज्ञानके बाढ़ेमें मोठपुष्पं गोक्षर, दन्धार और पुराना
 गुड़ ज्ञान कर पान करनिसे श्लेष्मज पथरी निवृत्त होती
 है। इसका नाम बद्धादिब्रवाय है। पापाचर्मदोष
 हत मो हत रोगमें विद्योप फलप्रद है।

पित्तत्रय पथरी। कुणाद्यहृत दारा कर यवागू
 ज्ञान, दुग्ध या बिनी प्रकारका पाकारोष द्रव्य पाच कर
 शेषन करनिसे पित्तज पथरी और पित्ताम्लरो मो पथरी
 ही जाती है।

श्लेष्मज अम्ली। बद्धाहत और बद्धाबिन्धका
 शेषन करनिसे श्लेष्मान्ध पथरी पारोष्य हो जाती है।

शुक्लाम्लीरोग। ८ तीखा पुराने को बड़का रस,
 १२ भागा बद्धार और ३ भागा गुड़ इन सबको एकत्र
 मिला कर पान करनिसे शुक्लाम्लीरोगो जालो रहती है।
 यमो बद्ध पोष्य प्रादा कईमात्रां ही व्यथहत होती है।
 तिल, पपामासं बद्धो पञ्चाय, वर और धलकोठ
 इनका ज्ञान पान तथा श्वेतुष क्लतक और लोकोत्पल
 इनके समान मात्राके पुष्पं गुड़ मिला कर अत्रयत्रको
 साव पान करनिसे पथरी मूलके नाब बाहर निकल जाती
 है। पापाचर्मदो, मोक्षर, मरिचमूल इवर्ती, खट्ट
 कारी और कोविन्धाय मूल इनके समान मात्राके पुष्पं
 को सूखे पोष कर दक्षिण भाग पान करनिसे पथरोरोग
 नष्ट होती है। कूटजपुष्पं दक्षिण भाग पान करके
 वा दक्षिणे साव यानिसे मो यह पथरो दूर हो जाती है।

औरिखा और पयथा नारियलके फूलको सूख पाच
 पोष कर पान करनिसे जोड़े हो दिमो को अन्दर पथरो
 नष्ट हो जाती है। गोक्षर बद्धाहत और कक्षुरका ज्ञान

मनुके माघ पान करनिसे तथा पुराने को बड़का रस
 हिङ्गु, धोर उपचार एकत्र कर शेषन करनिसे पथरो
 पारोष्य हो जाती है। पुनर्थावा मोक्ष, इरिद्रा, मोक्षर,
 प्रियङ्गु, प्रवाल और लघुपुष्प इन सब द्रव्योंको दुग्ध
 पाचकर और पचकत इक्षुरत दारा मर्दन करके शेषन
 करनिसे पथरी नष्ट हो जाती है।

बद्धाहतको ज्ञान, पापाचर्मदो मीठ और मोक्षर
 इनके बाढ़ेमें दन्धार और चीमो ज्ञान कर पान करनि
 से मो उपचार होता है। इससे विना व्यथवहामूलाय
 हत, बद्धारैश और कुणाद्यहृतका ध्वजदार करनिसे
 पथररो बद्ध जन्म, पारोष्य हो जाती है। वरकव्य
 यथाच, ताकमुनी, चाय इक्षुवाजिका, इक्षुमूल कुय और
 सुगन्धवाका इन्हें मनु और कोकोके साव यानिसे यह रोग
 जाता रहता है। बद्धाद्यदुष्कं, बद्धाद्यदुष्कं, कुन्ध्याय
 हत द्राव्य पञ्चमूलायहृत और पुनर्थावादि सेक पथरो
 रोगमें विद्योप फलप्रद है। (नाशक्याच अरुणरोयानि)
 इन सब औषधियोंका विवरण शरीरके अर्थमें देलो।

श्वेन्द्रारस पथकी पथरी-बिच्छिन्नामे पापाचर्मय
 रक त्रिभिन्नमरस, मोक्षनागक और अम्लरोनागक से
 सब पोषयिणी मिली है। मैदण्यरसायनोके अम्लरो
 रोयाधिकारमें बद्धपादि ज्ञान उद्धृतबद्धादि कुन्ध्याय
 हत, बद्धाहत, पापाचर्मिक और यानन्दयोग पादि
 पोषयिणी बतलाई गई हैं। इन सब औषधो का विवरण
 शरीरके अर्थमें देखो।

यह पथरोरोग महापातकसे दूषा करता है।
 जिसको यह रोग होता है, उसे प्रायश्चित्त करना चाहिये।
 यदि कोई ब्राह्मि पथरोरोगमें अल्पसुखमें पतित हो तो
 जलका प्रायश्चित्त क्रिये बिना दहन, बहन और अग्नि
 कार्यादि कुछ भी नहीं होगा।

“मूलरूपमूलपीडाया अतीक्षारमगर्तरी।
 इरिद्रा मरुत्तकाया महापातोद्विनायकः ॥
 इनेवकारकोरिभ्र महापातोद्विनायाः एषाः ॥”

(शारीरसाधन)

पथरोरोग जनिसे ही पापयान्तिके शिथ प्रायश्चित्त
 पथरक अन्तर्ग्य है। पापयान्तिके ही जनिसे रोगका प्रयमन

पवित्रम् (स० पु०) पवि प्रातस्तुषो हुम् । अदिरुच्य, मर्षेद खेर ।

पवित्र (स० पु०) पव पाचारे इति । मार्ग, पव, राश्या । पव कर्त्ता त्रिष प्रक्षारका शोभा चाङ्घ्रिये उच का विषय देवोपुष्टयार्थे इव प्रक्षार विधा है । देव मार्ग ३० धनु पामपव २० धनु, सोमापव १० धनु चोर राश पव १० धनुका शोभा चाङ्घ्रिये । शो राश चन्ति हैं, जगति मिथ, कण्ड, हस्तकुता चौर सौकुमार्यादि नष्ट जाति हैं । त्रिष अमरुषि शरोरुसे तत्रलोच मान्मुम पङ्के, ऐसा पयगमक इन्द्रिययोग्य चोर चातु, वन मिधा चौर पम्नि हृदिधारक होता है ।

पवित्र (स० सि०) पवाभिष्ट, राश जाननेवाला ।
 पवित्र (स० सि०) पवित्रमुद्र ।
 पवित्र (स० पु०) पन्वान गच्छति रश् चतुर्त् । १ बह्मदे । २ मार्ग रश्च ।
 पवित्र (स० सि०) पवति यच्छाति पवयतो रश्च, (निषिञ्चयव । इव १५२८) इति निपातनात् साङ् । १ पवित्र, राश चतनेवाका । २ भारवाङ्क, बोध उमेनि-वाका । ३ प्राङ्गुलक । ४ गिहुर, कडोर ।

पवित्र (स० पु०) रद्भमेद ।
 पवित्र (स० सि०) पवित्रेति यो ह ।
 पवित्र (स० सि०) पवित्रेति छान् । पयसे चन्-स्थित, जो राशमें मिले ।

पवी (वि० पु०) पविन् ईश्वो ।
 पवी (स० सि०) १ पव सव्यम् । २ सन्प्रदाय सव्यम् ।
 पवी (वि० पु०) हैडे पावनेवाका, कुम्हार ।
 पवी (स० सि०) पवी मार्ग तिष्ठति स्वा-शित् । पवुत्-पमाङ्क बेंदेकरम् । मार्गमें बर्त्मान्, जो मार्गमें हो ।
 पवी (वि० पु०) पव क्षान कर्त्ता उपमे पापि जाते हैं, जोवर पावनेको क्षमक ।

पव (स० पु०) पवोऽनपितः पयिन् यत्, चर्त्तवार्त्तान्वासाः १५-हेते । वा इ ३८२९) १ इति विविध्यादि, बद्रिया वकात्र । २ इतिधारक मोक्षद्रव्यपेद, वर इनका चौर कन्दो पवनेवाका वाया जो रोमोधि सिधे क्षाप्रदायक जो पवीच—अरुच, हित, पान्थोप, चातुप । ३ वैश्व, वि पा वमक । पविचातुः दिवादिवात् यत् । ४ इरोतका

उच छोटी इका पङ् । ५ तपु, नोय माक । ६ इति, मङ्क, लक्ष्याप ।

पवकरो (स० जो०) रज्जव गावि, एत प्रक्षारका लाक धान ।

पवका (स० जो०) शिविका, मिसी ।

पवकारिन् (स० पु०) पवित्र धार्य, हाठी ।

पवमात्रन (स० वनो०) पवा मीत्रन । इतिमोत्रन, नामदायक पादार ।

पवपाय (स० पु०) तपु, नोय माक, चोईका साग ।

पवपा (स० स्त्रो०) पवा टाप । १ इरोतको, इङ् । २ प्येर्त्तव । ३ निर्मित । ४ पवपाककोटको वन-केकङ् । ५ गहा । ६ पार्श्वेन्द्रका एक मेद । एवसे चोर कर्त्तै पवान्तर मेद है ।

पवशा (स० पु०) पाचनमेद । इरोतको, देवदाह, वध, मोवा कचूर, पतोप इन सब इश्वोका जाय । एच जावके सेवन करनेसे पासातोषार प्रयमित होता है ।

पव्यविध—इरोतको, मण्डिता, पिठवम पङ्क, कचूर, पतोप चोर देवदाह इन सब इश्वोका जाय सेवन करनेसे गुल्मरोगोको पम्नि मटौत्र होती है ।

पव्यादिहाय (स० पु०) भावप्रकाशक जावोपधमेद, वेचकमे एक प्रक्षारका पाचक ओ निषेधा शुङ्गुच, इन्दी, चिरायति चौर मोम पादिको नाना कर उपमें शुङ्गु मिष्ठानेमे बनता है । इन जावको मासिचारन्व में दिमिसे भू कचूर, पपु चौर गिरगूल पादि प्रयमित होती है । (भावप्रकाश पिठोरोमा०)

पव्यादिगुम्बु (स० पु०) चोयवमेद, एक प्रक्षारक दवा ।

पव्यादिमेव (स० पु०) प्रसेपोवविमोव । प्रसुत प्रवाली—इरोतको, कडवरक, श्वेतनवैप, हरिद्रा सोमराशो, चैत्र्य तथा विङ्गु इन्दी कडवर मार्गोको मो-पुङ्गवे पोमते हैं । बाद यरारमें लभका प्रसुप देमिसे कुम्हरीग प्रयमित होता है ।

पव्यादिमोह (स० जो०) चोयवमिय । प्रसुत प्रवाली—कचूर, तिल चौर शुङ्गुवे नमान भागको दूधसे पोच कर मियन करनेसे परिचामगूल प्रयमित होता है । शम्बूक मन्मपुङ्गुको पाथ तोका गरम बनसे नाप पोमके मो

परिणामशून्य जाता रहता है। नीह, हरीतकी, पिप्पली
मीर कचूरका चूर्ण इनके बराबर बराबर भागोंकी आध
तोला वी और मधुके साथ सेवन करनेसे परिणामशून्य
बहुत जल्द आराम हो जाता है।

(सावप्र० परिणामशून्यचिकित्सा)

पथ्यापथ्य (स० क्लो०) चूर्णोपधर्म। प्रसृत प्रणाली
हरीतकी, कचूर और यवाकीक्षा बराबर बराबर भाग ले
कर उसे पाध तोला तक, उष्ण जल या काँजोके साथ
सेवन करनेसे आसवात, शीथ, मन्दाग्नि, प्रतिश्याय,
ज्वर, हृदय, खरभद और अरुचि नष्ट होती है।

पथ्यापथ्य (स० क्लो०) पथ्य रोगिणां हितकरं अपथ्यं
अशुभकरं द्वयोः समाहारः। रोगके हित और अहित
कारक द्रव्य। रोगमें जो वस्तु हितकर है, उसे पथ्य और
जो अहितकर है, उसे अपथ्य कहते हैं। जिस रोगमें जो
अपथ्य है, उसका सेवन करनेसे उस रोगको वृद्धि होती है
पार जो पथ्य है, उसका सेवन करनेसे वह रोग जाता
रहता है। इसका विषय पथ्यापथ्यविनिययमें विस्तार
रूपसे लिखा है, पर यहाँ अथन्त संचिष्ट भावमें दिया
जाता है।

नवज्वरसे पथ्य—वसन, अष्टाह लङ्घन, यवागु, खेदन,
कटु और तिक्तारसका सेवन।

नवज्वरसे अपथ्य—स्नान, विरेचन, सुरतकीक्षा,
कषाय, व्यायाम, अभ्यञ्जन, दिवानिद्रा, दुग्ध, घृत,
वेदक, आमिष, तक्र, सुरा, खादु, गुरु और द्रवद्रव्य,
अन्न, प्रवात, क्षमण और कोप।

मध्यज्वरसे पथ्य—पुरातन यष्टिक, पुरातनशाल, वातार्जु,
सोहिञ्जन, कारवेज, वंत्ताय, आपादफल, पटाल,
कर्काटक, मूलकपोतिक, मूंग, मसूर, चना और
जूनयो आदिका जूस, सोनापात्र, अमृता, वास्टक,
सुपक्व अङ्गूर, कपित्थ, अनार और वैकङ्कत फल, लघु
तथा सात्स्य भेषज।

पुराने ज्वरसे पथ्य—विरेचन, छेदन, अञ्जन, नस्य,
धूम, अनुवासन, गिरावेध, संशमन, अभ्यङ्ग, अक्वगाहव
गिधिरौपचार, एण और कुलिङ्ग प्रसृतिका मांस, गाय
और बकरीका दूध तथा वी, हरीतकी, पर्वतनिर्झरजल,
रंझोका तेल, लालचन्दन, त्र्योम्बका और मियाजिङ्गन।

अतीसाररोगसे पथ्य—वसन, लङ्घन, निद्रा,
पुराना चावल, लाजमण्ड, मसूरका जून, सब प्रकारकी
छोटी मछली, शूद्रो, तेल, छागघृत तथा दुग्ध, गोदधि
और तक, गाय अथवा बकरीके दूध या दहीसे निमाना
दूधा मखन, नवरम्भापुष्य और फल, मधु जम्बूफल,
नीम, शालुक, कपित्थ, मोलसिरी, विष्य, तिन्दुक, अनार,
तिनक, गजपिप्पली, चाङ्गेरा, विजया, अरुणा, खाद-
फल, अफीम, जीरा, गिरामसिका, सब प्रकारके कषाय-
रस, दोषन, लघु पत्र और पान।

अतीसारसे अपथ्य—खेद, अञ्जन, रुधिरमोक्षण,
अशुपान, स्नान, वेश्याय, जागरण, धूम, नस्य, अभ्यञ्जन,
सब प्रकारके वेगधारण, रुच, अमात्म्य अशन, विर-
द्याय, गोधूम, कलाय, जो, वास्वूक, काकमावा (मकोय),
निप्पाव, कन्द, मधुगिद्यु, रसान, पूग, कुम्भाण्ड, पलावु,
वदर, गुरु पत्र और पान, ताम्बूल, इक्षु, गुड, मधु,
अङ्गूर, अन्वतेतसफल, लहसुन, धात्री, दुटाम्बु, मस्तु,
गृहवारि, नारियल, स्नेहन, सब प्रकारके पत्रगाक,
पुनर्णवा, इर्षाक, लवण और अस्त।

ग्रहणा रोगसे पथ्य—निद्रा, छेदन, लङ्घन, पुराना
चावल, लाजमण्ड, मसूर तथा मुहादिका जून, नि.गेपो-
दृत्सार गव्यदधि, गो वा कागीके दुग्धका नवनात,
बकरीका घी, तिलतक, सुरा, म चिक, शालुक, मोल-
सिरी, अनार, कलका फूल और फल, तक्षणविद्व, लवा
(यटेर) और खरगाग पादिक मासका जूस, सब तरहकी
छोटी मछलियां और सर्व कषायरस।

ग्रहणा रोगसे अपथ्य—रक्तस्त्राव, जागरण, अभ्यु-
पान, स्नान, वेगविधारण, अञ्जन, खेदन, धूमपान, अम,
विरहभोजन, आतप, गोधूम, निप्पाव, कलाय, जो,
आद्रक, कुम्भाण्ड, तुम्बो. कन्द ताम्बूल, इक्षु, वदर, पूग
फल, दुग्ध, गुड, मसु, नारिकेल, पुनर्णवा, सब प्रकारके
साग, दुटाम्बु, अङ्गूर, अस्त, लवणरस, गुरु अन्न और
पान तथा सब प्रकारके पूष।

अग्नि रोगसे पथ्य—विरेचन, लेपन, रक्तमोक्षण, चार,
अग्निकम, अक्षकर्म, पुरातनकोहितशानि, जो, कुलथो,
नेबले आदिका मांस, पटाल, मोल, नवनोत, तक्र,
सर्पपतेल और वातनाशक अन्नपान।

अंगो गेगर्षि पञ्च—प्रातः पामिव मन्त्र, विष्वाङ्क
द्वि, विट्क कलाय निपाय विद्वन्, तुभो, पञ्चा धाम,
पातय जलपान समन संक्षिप्तम्, जनेनन पूर्व चोर
नो इवा, वैगोच चोर इहमान ।

अस्मिन्माद्य चोर पञ्चोर्षादिने पद्य—इने गिम्ब
प्रकृतिर्नि पदमि जमन वैतिवर्षी सुदुरेचन, नातिवर्षी
व्येदन, नाभा प्रजापति व्यापान, पुरातन सुह चोर कौचित
गानि, नात्रमप्य, सुरा, पञ्च पाटिका मांय मञ्च तरङ्ग
को छोटी मन्त्रो, शाविष्वाङ्क वेत्ताय, लहसुन, उय
कुम्भाप्य नबोन कटभौकन पटोक नात्ताङ्क, धनार
भो, पञ्चवेत्तम, नात्र, लभनोत सुन, तन्त्र, तुपोटक,
पान्याङ्क कटुतेन, लभनाङ्क, यमानो मिर्च, मिर्ची
अनिवा कोश, दको पान, कटु चोर तिन्त्रन ।

अस्मिन्माद्य चोर पञ्चोर्षादिना पद्य—विरेचन,
विष्ठा, मूल रीय भावकेगारक, पतिरिवागतन पद्य
मान जगत्क, विदमागत, रक्षुतिमन्त्र मान, जल
पान विट्क मन्त्राङ्क, कुर्षिका चोर पदानञ्च
ताङ्कको गरी स्निहन सुहचारि, विहव पागाय विट्को
चो सुवद्रथै ।

अस्मिन्माद्य चोर पञ्चोर्षादिना पद्य—विरेचन,
विष्ठा, मूल रीय भावकेगारक, पतिरिवागतन पद्य
मान जगत्क, विदमागत, रक्षुतिमन्त्र मान, जल
पान विट्क मन्त्राङ्क, कुर्षिका चोर पदानञ्च
ताङ्कको गरी स्निहन सुहचारि, विहव पागाय विट्को
चो सुवद्रथै ।

अस्मिन्माद्य चोर पञ्चोर्षादिना पद्य—विरेचन,
विष्ठा, मूल रीय भावकेगारक, पतिरिवागतन पद्य
मान जगत्क, विदमागत, रक्षुतिमन्त्र मान, जल
पान विट्क मन्त्राङ्क, कुर्षिका चोर पदानञ्च
ताङ्कको गरी स्निहन सुहचारि, विहव पागाय विट्को
चो सुवद्रथै ।

अस्मिन्माद्य चोर पञ्चोर्षादिना पद्य—विरेचन,
विष्ठा, मूल रीय भावकेगारक, पतिरिवागतन पद्य
मान जगत्क, विदमागत, रक्षुतिमन्त्र मान, जल
पान विट्क मन्त्राङ्क, कुर्षिका चोर पदानञ्च
ताङ्कको गरी स्निहन सुहचारि, विहव पागाय विट्को
चो सुवद्रथै ।

विगिर, पंदेह चन्दन, मनोऽनङ्कन विविध अवा, चोम
पञ्च, सुगोतोपवन विपङ्क, वराङ्कानिङ्कन चोर विम
बासुक ।

अस्मिन्माद्य चोर पञ्चोर्षादिना पद्य—विरेचन,
विष्ठा, मूल रीय भावकेगारक, पतिरिवागतन पद्य
मान जगत्क, विदमागत, रक्षुतिमन्त्र मान, जल
पान विट्क मन्त्राङ्क, कुर्षिका चोर पदानञ्च
ताङ्कको गरी स्निहन सुहचारि, विहव पागाय विट्को
चो सुवद्रथै ।

अस्मिन्माद्य चोर पञ्चोर्षादिना पद्य—विरेचन,
विष्ठा, मूल रीय भावकेगारक, पतिरिवागतन पद्य
मान जगत्क, विदमागत, रक्षुतिमन्त्र मान, जल
पान विट्क मन्त्राङ्क, कुर्षिका चोर पदानञ्च
ताङ्कको गरी स्निहन सुहचारि, विहव पागाय विट्को
चो सुवद्रथै ।

अस्मिन्माद्य चोर पञ्चोर्षादिना पद्य—विरेचन,
विष्ठा, मूल रीय भावकेगारक, पतिरिवागतन पद्य
मान जगत्क, विदमागत, रक्षुतिमन्त्र मान, जल
पान विट्क मन्त्राङ्क, कुर्षिका चोर पदानञ्च
ताङ्कको गरी स्निहन सुहचारि, विहव पागाय विट्को
चो सुवद्रथै ।

अस्मिन्माद्य चोर पञ्चोर्षादिना पद्य—विरेचन,
विष्ठा, मूल रीय भावकेगारक, पतिरिवागतन पद्य
मान जगत्क, विदमागत, रक्षुतिमन्त्र मान, जल
पान विट्क मन्त्राङ्क, कुर्षिका चोर पदानञ्च
ताङ्कको गरी स्निहन सुहचारि, विहव पागाय विट्को
चो सुवद्रथै ।

अस्मिन्माद्य चोर पञ्चोर्षादिना पद्य—विरेचन,
विष्ठा, मूल रीय भावकेगारक, पतिरिवागतन पद्य
मान जगत्क, विदमागत, रक्षुतिमन्त्र मान, जल
पान विट्क मन्त्राङ्क, कुर्षिका चोर पदानञ्च
ताङ्कको गरी स्निहन सुहचारि, विहव पागाय विट्को
चो सुवद्रथै ।

अस्मिन्माद्य चोर पञ्चोर्षादिना पद्य—विरेचन,
विष्ठा, मूल रीय भावकेगारक, पतिरिवागतन पद्य
मान जगत्क, विदमागत, रक्षुतिमन्त्र मान, जल
पान विट्क मन्त्राङ्क, कुर्षिका चोर पदानञ्च
ताङ्कको गरी स्निहन सुहचारि, विहव पागाय विट्को
चो सुवद्रथै ।

विरचन, निद्रा, म्लिग्ध और लघु भ्रम, लवण, जोर्ण कुलत्थ, गोधूम, गालि और जौ, एणादिमांस, पक्क कपित्थ, लहसुन, पटोल, कचिसून, क्यथुनगी, मदिरा, उष्णोदक, साञ्जिक, सुरभिजन, वातश्लेष्मनाशक, अन्नपान, शीताम्बुमेक, महमा ताम, विस्त्रापन, भण, क्रोध, हर्ष, प्रियोद्देग, दग्ध और सिक्त मृदाघ्राण तथा नाभिका लक्ष्णे पीडन ।

हिकारोगमें अथवा -वात, मूल, उद्धार और काम इनके सक्तु वेगधारण, रज, अम्ल, पातप, विरुहभोजन, विष्टम्भी, विदाही, रुच और कफजनक द्रव्य, निष्पाव, पिष्टक, माप, ग्रानूप, शान्तिज, दन्तकाष्ठ, वस्ति, मत्स्य, मर्षप, अन्न, तुम्बो, कन्द, तेल, भृष्ट, गुरु और शीतान्नपान ।

स्वर्मेदमें पथ्य—स्वेद, वस्ति, धूमपान, विरेचक, कवलग्रह, नस्य, भालागिरावेध, जो, लोहितगानि, हंसाटवी, सुरा, गोशुण्डक, साकमाची, जावन्तो, कविमूला, अद्भुर, पथ्या, मातुलङ्ग, लहसुन, लवणाटक, ताम्बूल, मिच और घी ।

स्वर्मेदमें अथवा—कच्ची जिर्मन्दी, वकुल, गालुक, जाम्बर, तिन्दुफ, कपाय, वस्ति, क्षत्र और प्रजल्पन ।

हृदि (हर्दी) में पथ्य—विरचग, लक्षन, स्नान, मृजा, लाजमाण्ड, पुरातन यष्टिक, गालि, सुद और कनाय, गेहूं, जो, मधु, सुरा, वेलाय, कुशुम्बुक, नारिकेल, हरोतकी, अनार, भोजपुर, जायफल, वास, गुड़, करिकेशर, कस्तूरिका, चन्दन, चन्द्रकिरण, हित और मनःप्रोतिकर, भक्ष तथा स्वमनाऽमुकूनरूप, रस, गन्ध, शब्द और स्पर्श ।

हृदि (हर्दी) में अथवा—नस्य, वस्ति, स्वेद, स्निहपान, रक्तसाध, दन्तकाष्ठ, द्रवाण, भोति, उद्देग, रन्धा, श्लिम्बो, कोपवते, मधुक, चित्र, सुस्मैल, मर्षप, टेवदानी, ध्यायाम, हृत्तिका शोह गञ्जन ।

हृत्तामें पथ्य—शोधन, वमन, निद्रा, स्नान, कवलधारण, टोपदग्ध इरिद्रा द्वारा जिह्वाके अधःगिराहयका दाह, चीद्रा, शालि, लाजमाण्ड, प्रदमण्ड, कर्पूर, मृग, मसुर और चनेका रस, रन्धापुष्प, तेलकूच, अद्भुर, कण्ठि, कोल, मल्लिका, कुष्माण्ड, अनार, धात्रो, ककटो

जम्बोर, कारमर्द, बोजपुर, गोदुग्ध, तिक्त और मधुर द्रव्य, नागकेशर, इलायची, जायफल, पथ्या, कुशुम्बुक, टद्वन, शिगिरानिन्, चन्दनार्द्र, प्रियानिङ्गन, रत्नाभरणधारण और हिमासुलेपन ।

हृत्तामें अथवा—स्नेह, अन्नन, स्वेद, धूमपान, ध्यायाम, नस्य, पातप, दन्तकाष्ठ, गुरुपथ्य, अन्न, लवण, कपाय, कटु, स्त्री, खुराव पानो और तोष्यवस्तु ।

मूर्च्छामें पथ्य—मेक, पवगाह, मणि, हार, शीत, व्यजनानिन्, शात तथा गुन्धयुक्त पान, धारागृह, चन्द्रकिरण, धूम, अञ्जन, लावण, रत्नमोच, दाह, नखान्तपोडा, दगनीपटंग, विरचन, कर्द्वन, लक्षन, क्रोध, भण, दुःखकराशय्या, विचित्र और मगोहर तथा, श्याय, शतधोत, सपिः, तिक्त वस्तु, लाजमण्ड, मृगका जूष, गन्धपथ्य, गुड़, पुराना कुष्माण्ड, पटोल, सोहिञ्जन, हरोतकी, अनार, नारियल, मधुकपुष्प, तुपोदक, लघुभक्ष, लालचन्दन, कर्पूरजन, अत्युच्चगन्ध, अद्भुतदगन्, चकटगात और वाद्य, अम, स्मृति तथा चिन्तन ।

मूर्च्छामें अथवा—ताम्बूल, पत्रगाक, व्यवाय, स्वेदन, कटु, हृत्ता तथा निद्राका वेगरोध और तप्त ।

मदात्ययमें पथ्य—स शोधन, संशमन, स्वपन, लक्षन, अम, एणादिका मांस, द्रव्य मद्य, पथ्य, गुड़, पटोल, अनार, धात्रो, नारियल, पुरातन सपिः, कपूर, शिगिरानिन्, धारागृह, मित्रमण्ड, चोमाखर, प्रियानिङ्गन, चद्धतगोतवादित्र, शोताम्बु, चन्दन और स्नान ।

मदात्ययमें अथवा—स्वेद, अञ्जन, धूमपान, दन्तवर्षण और ताम्बूल ।

दाहरीगमें पथ्य—गालिधान्य, मृग, मसूर, चना, जो, लाजमण्ड, लाजगन्धू, गुड़, शतधोत, घृत, दुग्ध, नवनोत, कुष्माण्ड, ककटो, सोहिञ्जन, पनस, स्वादु, अनार, पटोल, अद्भुर, धात्रोफल, सष प्रकारके तिक्त श्रेक, अभ्यङ्ग, अथगाहन, उत्तमगय्या, शीतलकानन, विचित्रकथा, गात, शिगिर, मोठो बोली, चशोर, चन्दनलेप, शीताम्बु, शिगिरानिन्, धारागृह, प्रियास्यसं, चन्द्रकिरण, स्नान, मणि और मधुररस ।

दाहमें अथवा—विरुह अन्नपान, क्रोध, केगधारण, शायो और घोड़ेको सवारो, पन्ना, चार, पित्तकर द्रव्य,

व्यायाम ध्याप्य, तत्र, ताम्बु मधु ध्याप्य, तिष्ठ धोर ध्याप्य ।

वातरोगेने पद्य—पम्बु मर्मन, वृद्धि खेच र्वेद पक्वभाजन म वाहन, म गमन, वातवर्जन चर्मन कर्म, उपनाह मूत्रध्या, छान ध्यातन, शिरोवृद्धि नरन ध्यातप मन्तव्य, इ इम र्वि, कुचिका तैम, कषा मर्या स्वाधु, पक्व धोर नवकरम कुनबीका रम, सुटा द्यायादिका मांस, पटीन, वाताङ्ग धनार, पक्व ताम, कम्बीर, बन्ध तथा मन्त्रवैद्य धिया ।

वातरोगेने पद्य—विन्ना प्रजापत, बेगवारच, वृद्धि, यम, धनगन धना कषाय, मूत्र, कर्षोरकर्म, कर्मिच, ध्याप्य निव्याबोज, मासुक, वाततान, पक्व-शाक, विद्वध धक, चार, सुच्छपवन, चतक र्मुति चोक्त, कषाय कटु धोर तिष्ठरस वराधाय इत्यम्बवान, चक मच ध्या धोर टन्तव्येक ।

शूलरोगेने पद्य—वृद्धि, र्वेद, कहन दाहु, वृद्धि, वृद्धि मित्रा रैचन, पाचन, तमसेर पटीन मोक्षिजन, वाताङ्ग, पक्व धाम धगूर कथित, इचक विद्याम, शास्त्रिधपम वास्तूक, मासुद, सोवर्चक, वृद्धि विम, विष्णु, कश्चुन लक्क, रैकोका तेल, सुरमिजन, तसासु कम्बीररम धोर कुड ।

शूलरोगेने पद्य—विद्वध धपयान, कामरच, विषमा-यन, चक, तिष्ठ, कषाय, शीतल शुब वादायम मेधुन मध, कहन लक्क, कटु बेगरोच मोक्ष धोर लोच ।

शूलरोगेने पद्य—र्वेद विरेक, बमन, लहन वृद्धि पुरातन रज्यासि, काङ्क धम धोर पक्वोका कूप, मू म धोर कुसोका रम, पटीन, कटुकोषक, पुराना कुम्भाण्ड रघक, धनार सन्धाकषाक, नमसुचक, रैकोका तेल, र्वेदन, पक्कूर, तक, पुराना गुड, मीठ, कश्चुन इरी-तबी, कुण्ड, कुटम्बुध पाङ्क, धोवार मधु, वादधो ल, कस्तुरिका, चकन धोर ताम्बु ।

शूलरोगेने पद्य—दध्या, वृद्धि, मूत्र, वाहु, गुड काप, चहार, यम, ध्याध, विद्या धोर धनुषीमचारच पूषित कक, कषाड, विद्वध, कषय शुब तिष्ठ, पक्व, चार मन्त्र इलाकाध धोर रज्युति ।

शूलरोगेने पद्य—वाहुध्या धर्मिने धम्यक, विद्वध,

वृद्धि, र्वेद धवमाड कश्चरवृद्धि धोर वीक धित कषय धोनेने पवगाड, वृद्धिविधि विरेचन, रवेधमन धोनेने कटु, विरेक, वृद्धि चार, यवाक तीक्ष्ण कषय, पुरातन मोक्षिमासि, मायका दूध, मन्तन धोर टको म यका रम, गुड पुराना कुम्भाण्डध्या पटीन मन्त्राङ्क गोसुरक, कुमारो, गुमान, कर्तूर, नारि यन धोर ताङ्को खोपन ताङ्को गरो, शीतपान शीतगन धोर इमबाहुका ।

शूलरोगेने पद्य—मध, यम, सुरा, यत्रवाजि यान, विद्वधमोक्षण ताम्बुल मन्त्र धवध धोर पाङ्क, वृद्धि, तिष्ठ, सर्वप, बेगरोच कषाय, चतितोष्ण, विराही, कष धोर धक ।

धमरोगेने पद्य—वृद्धि विरेक बमन, लहन, र्वेद, पक्वगाड, वाग्नेयम, लो, कुनवी पुराना चाक, धारा पुरातन कुम्भाण्ड, वाहन यात्र, पाङ्क, यक्कूक धिध धोर धमममाकषेक ।

धमरोगेने पद्य—मूत्र धोर शुकला बेधधारच, पक्व विद्वधी, कष धोर गुण पयपान तथा विद्वध पाथ यन ।

प्रमेहने पद्य—लहन, बमन, विरेचन, प्रोक्षतन, यमन दीपन मीवार, मव श्रामार, गोभूम मासि, कषम, मूत्र पादिका कूप काक, पुरातन सुरा, मधु तथा धोङ्घार कश्चुन, मोक्षिजन, पत्तूर, गोक्षरक, मूषिधपरी, शाक मन्दापत, तिष्ठना, कथित, लम्बू, कषाय, दाबी धोर चोङ्को सवारो, चतितधमच, रवि विचन धोर व्यायाम ।

प्रमेहने पद्य—मूत्रवेग, धूमयान, खेद, रक्त-मोचक, दिवानिद्रा, नवाध र्वि धान्प मांस निव्याध, पिटाध, मीहुन मोधोचक सुरा, यङ्क, तैक, धोर, वृत्त, गुड तुलो ताङ्को नरी, विद्वधजन, कुम्भाण्ड, रङ्क, कटु पक्व, मच धोर धमिधन्दी ।

शूलरोगेने पद्य—पक्ष पक्षी कर्तन मास मासने विरेचन, प्रमेह तौन दिनने लब्ध, कश्च महीनेने रक्त-मोचक धर्मिधे पुरातन यथादि मासिक, काङ्का मिय, पायाकषण बेजाप, पटीन, इहतीक्ष्ण, काक माधो, मीम, कश्चुन, विद्वधोचिधा, गुणका, मेध-

शुद्ध, भिनावां, पका ताड, खटिर, चित्रक, नागपुष्प, गाय, गदहो, उंठनो, घाडो पो मं सका सूत्र, कस्तूरिका, गन्धसार, तिक्त, वसु और चारकर्म ।

कुष्ठरोगमें अपथ्य—वापकमे, कृतघ्नभाव, गुरु-निन्दा, गुरुधर्षण, विरुद्ध पानाशन, दिवानिद्रा, चण्डा-शताप, विषमाशन, खेद, मेशुन, वेगरोध, इक्षु, व्यागम, अन्न, तिल, माप, द्रव, गुरु और नवाश भोजन, विटाही, विटम्भीमूलक, आमुप, मांस, दधि, दुग्ध, मद्य और गुड़ ।

सुखरोगमें पथ्य—खेद, विरेक, वमन, गण्डूप, प्रतिमारण, कवल, रक्तमोक्षण नस्य, धूम, गस्त और अग्नि-कर्म, लण्वाच्य, जौ, मूंग, कुनयी, जाङ्गलरस, पटोल, वान्तमूलक, कर्पूरनोर, ताम्बूल तमाम्बु, खटिर छत, कटु और तिक्त ।

सुखरोगमें अपथ्य—इन्तकाठ, ज्ञान, अन्न, मत्स्य, आनूपमांस, दधि, चीर, गुड, मांस, रुचात्र, कठिना-शन, अधोमुख शयन, गुरु, अभिव्यन्दकारक और दिवा-निन्दा ।

कर्णरोगमें पथ्य—खेद, विरेक, वमन, नस्य, धूम, शिरावेधन, गेहूं, शालि, मूंग, जौ, हरिणादि, ब्रह्म-चर्या और अभाष्य ।

कर्णरोगमें अपथ्य—विरुद्धापान, वेगविरोध, प्रजल्पन, दन्तकाष्ठ, शिरस्त्रान, व्यवाय, श्लेष्मन, गुरु द्रव्य, कण्डू-यन और तुपार ।

नासारोगमें पथ्य—निर्वीत-निलयास्थिति, प्रगाढ़ो-ष्णोय धारण, गण्डूप, लङ्घन, नष्ट, धूम, मर्दो, शिरा-वेध, कटुचर्णका नासान्ध्र हो कर तीन बार प्रवे-शन खेद, खेड, गिरामङ्ग, पुरातन यव और शालि, कुलथो और मूंग हा जूस, कटु, अन्न, लवण, सिग्ध, उष्ण और लघु भोजन ।

नासारोगमें अपथ्य—विरुद्धास, दिवानिद्रा, अभि-यन्दी, गुरु ज्ञान, क्रोध, शक्त, मूल, अशुजलका वेगधारण, शोक, द्रव और भूशय्या ।

नेत्ररोगमें पथ्य—आश्रयितन, लङ्घन, अञ्जन, खेद, विरेक, प्रतिमारण, प्ररूप, नस्य, रक्तमोक्षण, शस्त्रक्रिया, लेपन, आन्यपान, सेका, मनोनिर्हृति, अशुद्धिपूजा, मूंग,

जौ, नीहित धान्य, कुनयो, रप, प्याज, लहसुन, पटोल, वार्त्तिकु, मोक्षिञ्जन, नवमूलक, पुनर्णवा, काकमाची, पङ्कू, चन्दन, तिक्त और लघु ।

नेत्ररोगमें अपथ्य—क्रोध, शोक, मेशुन, अशु, वायु, विष्टा, सूत्र, निद्रा और वमि आटिका वेगधारण, सूक्ष्मदर्शन दन्तविधर्षण, ज्ञान, निगाभोजन, आतप, प्रजल्पन, कर्दन, पखपान, मधु, पुत्र, टवि, पव-शक, पिष्टाक, मत्स्य, सुरा, अजाङ्गल-मांस, ताम्बूल, अन्न, लवण, विटाही, तीक्ष्ण, कटु, उष्ण और गुरु अन्नपान ।

शिररोगमें पथ्य—खेद, नम्र, धूमपान, विरेक, लेप, कर्दि, लङ्घन, गोर्षवस्ति, शालि, दुग्ध, पटोल, पङ्कूर, वान्तूक, आस्र धावो अनार, मातुलङ्ग, तैल, तक्र, नारियन, कुष्ठ, भङ्गराज, मोथा, उगोर और गन्ध सार ।

शिररोगमें अपथ्य—लज्ज, ऊर्ध्व, सूत्र, वायु, निद्रा, विष्टा आटिका वेगधारण, अञ्जन, खराव पानी, विरु-द्धास, दन्तकाष्ठ और दिवानिद्रा ।

गर्भिणीका पथ्य—शालि, यष्टिक, मूंग, गेहूं, लाजगङ्ग, नवनौत, घी, चोर, मधु, शर्करा, पनम, कदनो, धावो, पङ्कूर, अन्न, खादु, शीतल, कस्तूरी, चन्दन, माला, कर्पूर, प्रतुलपन, चन्द्रिक, स्नान, अभ्यङ्ग, सृदुशय्या, हिमानिल, मन्तर्षण, प्रियवास, मनोरमविहार और भोजन ।

गर्भिणीका अपथ्य—खेद, वमन, चार, कनह, विष-माशन, नक्तमेश्वर, चौर्य, अप्रियदर्शने, प्रति व्यवाय, आशय, भार, अकान जागरण, स्वप्न, शोक, क्रोध, भय, उद्वेग, अह, वैशविधारण, उपवाम, अश्वगमन, तीक्ष्ण उष्ण, गुरु और विटम्भीभोजन, नक्त, निरशन, मद्य, आमिष, उत्तानशन और स्त्रियोको अनोषित वसु ।

प्रसूता स्त्रोका पथ्य—लङ्घन, सृदुस्वेद, विशोधन, अभ्यञ्जन, तैलपान, कटु, तिक्त, उष्ण, सेवन, दीपन, पाचन, मद्य, कुलथो, लहसुन, वार्त्तिकु, वालमूलक, पटोल, ताम्बूल, अनार, ७ दिनके बाद किञ्चित् हंघण और १२ दिन बाद आमिष

प्रसूतिका अपथ्य—अन्न, नस्य, चुक्ति, मेशुन,

चन्द्रसेवा, पिण्डालोक, स्नायु, गुरुदक और अन्न, पिष्टक, दधि, चीर तथा घृत ।

श्रीषण्णतुमें पथ्य—चन्दन, गीतवात, छाया, अम्बु, कृष्णायन, प्रसून और प्रियभोजन ।

श्रीषण्णतुमें अपथ्य—कटु, तिक्त, उष्ण, क्षार, अन्न, रौद्र, भ्रमण, अग्निसेवा, उन्मिद्रता, भास्कर-तप्त तीयस्नान, अतिपान, दधि, तक्र और तैल ।

वर्षामें पथ्य—लक्षण, अन्न, मिष्ट, मार, प्रिय, दिनोद, गुण, उष्ण, वन्य, अम्यङ्ग, उदरान, अग्निसेवा, ताम्रापान और दधि ।

वर्षामें अपथ्य—पूर्व पवन, हृष्टि, धर्म, हिम, यम, नदीतीर, दिवानिद्रा, रुच और नित्य मैद्युन ।

शरत्कालमें पथ्य—गीतरसांबुपान, तरुच्छाया-चन्दन, इन्दुसेवा, गुह, मूंग, मसूर, गायका दूध, ईश और शाश्वोदन ।

शरत्कालमें अपथ्य—लक्षण, अन्न, तीक्ष्ण, कटु, पिष्ट, अतप्तो, विटाहो, सुरा, नाल, दधि, तक्र, तैल, क्रोध, उपवास, आतप और मैद्युन ।

हिमशतुमें पथ्य—तप्तजन, उपनाह, पथ, अन्न-पान, घृत, स्त्रीसेवा, वज्रिसेवा, गुरु और यथेष्ट भोजन ।

हिमशतुमें अपथ्य—दिवानिद्रा, कुभोजन, पमो जन, लहान, पुरातनाश, लघुपाकी द्रव्य, गैत्य और शीत जलावगाहन ।

शिशिरमें पथ्य—स्त्री और वज्रिसेवा, मत्स्य-अज-मांस, दधि, दुग्ध और घृत ।

शिशिरमें अपथ्य—तीक्ष्ण, उष्ण, कटु, अन्न, कषाय और तिक्त, सासुद्रक, आर्द्रभोजन, दिवानिद्रा, चन्दन, चन्द्रसेवा, ठंठे पानीसे स्नान आदि । (पथ्यापथ्यविनिश्चय)

मग्न, मगन्दर, उपदंश, शुकदोष, विसर्प, विस्फोट, मसूर, सुद्वरोग आदि रोगोंका इसी प्रकार पथ्यापथ्य लिखा है । विम्वारके मयसे यहां उन सब रोगोंका विषय नहीं लिखा गया ।

जो सब वस्तु हितजनक हैं, वह पथ्य और जो अहितकर हैं, वह अपथ्य है । पथ्यापथ्यका विचार करके और ऋतु विशेषमें जो हितजनक है, उसे सेवन करनेमें शरीर सुख्य और सबल रहता है ।

पथ्यापथ्य (सं० फलो०) मायावृत्त भेद । इसके प्रति-पाटमें आठ आठ अक्षर होने हैं ।

इसके प्रथम चरणमें १,२,१,०वां वर्ण गुरु और शेष वर्ण लघु ; द्वितीय चरणमें १,०,१,० वां गुरु और अन्यवर्ण लघु; तृतीय चरणमें १,०,३,१,० वां वर्ण गुरु और अन्य वर्ण लघु ; चतुर्थ चरणमें १,०,३,१,० वां वर्ण गुरु और अन्यवर्ण लघु होते हैं ।

पद (सं० पु०) पठ्यते गच्छन्त्यनेन पद-क्रिय । १ पाद, चरण । कोई कोई कहते हैं कि पद शब्द नहीं है, पाद शब्द है, पर यहां पाद शब्दको जगह पद आदेश हो कर 'पद' ऐसा शब्द दृष्टा है, लेकिन यह सद्गत नहीं है ।

पद (सं० ली०) पद अच् (नन्दप्रद्विपनादिभ्यो म्युणि-भ्यः । पा ३।१।२।३४) १ व्यवसाय, काम । २ त्राण, रक्षा । ३ स्थान, जगह । ४ चिह्न, निशान । ५ पाद, पैर, पांव । ६ वस्तु, चीज । ७ शब्द, आवाज । ८ प्रदेश । ९ पादचिह्न, पैरका निशान । १० श्लोकका पाद, श्लोक या किसी छन्दका चतुर्थीय । ११ किरण । १२ पुराणानुसार दामने नित्य जूते, छाते, कपड़े, शंशूडो, कसण्डसु, आसन, वस्त्र और भोजनका समूह, जैसा ५ ब्राह्मणोंकी पददान मिला है । १३ छः अङ्गुलका एक पद । १४ ऋत्वा यजुर्वेदका पद-पाठ । १५ सुप्रतिष्ठन्तव्य वाक्य, जिस वाक्यके अन्तमें सुप और तिङ्विभक्ति रहती है, उसे पद कहते हैं ।

यह पद तीन प्रकारका है—वाच्य, लक्ष्य और व्यङ्ग्य । अविधा शक्ति द्वारा अर्थबोध होनेसे वाच्यपद, लक्षण द्वारा अर्थबोध होनेसे लक्ष्य पद और व्यञ्जना द्वारा अर्थविगति होनेसे व्यङ्ग्यपद होता है । योग्यता, आकाङ्क्षा और आसक्तियुक्त पदसमूह वाक्य कहल ता है । वाक्योच्य ही महावाक्य है ।

विभक्तियुक्त शब्द और धातुकी पद कहते हैं । पद ही वाक्यमें व्यवहृत होता है, शब्द और धातुका व्यवहार नहीं होता । पद दो प्रकारका है, नाम और क्रिया । शब्द और धातुके उत्तर जब प्रत्यय लगता है, तब उसे पद और धातुकी प्रत्ययान्त कहते हैं । प्रत्ययान्त होने पर भी वे शब्द वाङ्धातु ही रहते हैं । तदुत्तर विभक्तियोग

ध्वस्तोत्तमे पद नहीं जोते पौर पद नहीं जोतेने मे
 भास्वसि ध्वस्तोत्तमे नहीं जोते ।

शब्दके उत्तर विभक्ति जोड़नेके नाम-पद पौर
 शत्रुके उत्तर विभक्ति जोड़नेके सिद्धापन होता है ।
 प्रातिपदिक पौर शत्रुका एक एक पद है, पर विभक्ति
 कुछ पर्याप्त पद नहीं जोतेने पर्यंतोच नहीं जोता 'क'
 शत्रुका पद है अरना, किन्तु शत्रुपदमें इसका ध्वस्
 चर नहीं जोता । दो वा दोमे पवित्र पद मिन कर अब
 पूर्व पर्यंतप्रकाशित करता है, तब उस पदसमष्टिको भाष्य
 कहते हैं । यह पद पंच प्रकारका है—दिगिपद, सर्व
 नाम विधेयक प्रत्यय पौर ज्ञिया ।

निराधिकारिक मतमे—पर्यंतोचद्वय विभक्तिपदिक जोतेने
 उभे पद कहते हैं ।

१६ बोध्यात्के अनुभार निवृत्तस्थान, दर्शा । १०
 मोच, निर्वाच । १८ ईश्वरप्रतिष्ठास्यो योन, मन्त्रन ।
 पदक (स० पु०) पदं वेति क-पद-उत्तु (क्यापिन्तो उत ।
 वा इतर। ११) १ पदश्रुता वेदमन्त्रपदविभाजक पदके
 पदमेता, वह जो वेदोंका पदपाठ करनेमें प्रबोध हो ।
 २ योयप्रबोधक श्रुतिमेद । ३ एनामप्यात कच्छभूपच,
 एक पद्याका मन्त्रा त्रिसं विनो देवताके पदोंके चिह्न
 पहिल जोते है पौर ओ प्राडा बालभोवा रसाके निचे
 पदनाया जाता है । (क्री०) ४ पूजन पादिदि निचे विनी
 देवताके पदोंके बनाये हुए चिह्न ।

ब्रह्मवेत्तपुराणमें लिपा है, कि जोने वादो वा पत्थर
 पर थोड़ाका पदचिह्न प्रयुक्त करके पूजा करनेको जोते
 है । पदचिह्नको पूजा करनेके मन्त्र पकारको निश्चिदा
 नाम जोते है । सुबर्षादिमें पदचिह्न पहिल करके दक्षिण
 पदाङ्गुलमूर्तमें वज्र, मन्त्राङ्गुलिमें मूर्तमें कमल, पय
 के पक्षादिकमें ध्वज, अग्निहोम मने वज्र, पार्ष्णिमन्त्रमें
 पद्भुज, पद्भुजपदमें मन्त्र पौर सामाङ्गुलम मने पाथ
 कल्प मे सब चिह्न दीने जोते है । (१११३० वागा १११०)
 ३ बीने वादो वा किसी पौर शत्रुका बना हुआ सिद्धे
 को तरङ्गका मोल वा थोडोकर टुकड़ा । यह किसी ध्वस्त
 पदका अनमम हको कीर्त विगोच पन्था या पद्भुज
 दर्श करनेके उपनयन दिया जाता है । इस पर प्रायः
 दाता पौर पशुतोताका नाम तथा दिचे कामिका चारक

पौर ममय पादि पहिल रहता है । यह मन्त्र सासुनक
 पौर योग्यताका परिचायक होता है ।

पदकार (स० पु०) पदविभाजक करोति क-पच । वेदका ।
 मन्त्रपदविभाजक पदचकर्ता ।

पदकम (स० पु०) वेदम श्रुता पदविभाजककम ।
 पदकमक (स० क्री०) पद कमच तो वेदबोने वा सुनु ।

१ पद पौर कमचैता । २ तदुपेन्वाप्येता ।

पदग (स० पु०) पदार्था मच्छुनोति यम-क । १ पदातिव,
 वेदम चरनेवासा, प्यादा । (त्रि०) २ पद द्वारा मन्त्र-
 कर्ता ।

पदमति (स० क्री०) पदप्य यति । पदचकार ।
 पदमोच (स० क्री०) पदानां गोच । मारहाआदि पदका
 मोच, मारहाज पादि चार श्रुतिवीका मोच ।

पदचतुर्दश (स० पु०) शब्दोन्मेष, विपमश्रुतीका एक
 सेट । इनके प्रथम चरकेने ८, द्वितीमें १२, तीसरीमें १६
 पौर चौथीमें २० बर्ष जोते हैं । चरमें गुण, श्रुतिका निबन्ध
 नहीं जोता । इसके चयैक, प्रत्यायोङ्, म लरो, कचको
 पौर पमृतपारा मे पाँच पद्यान्तर सेट जोते हैं ।

पदचर (स० पु०) द्रुदत्त, प्यादा ।
 पदचारो (स० त्रि०) पदेष चरनेवाका ।

पदचिह्न (स० पु०) वह चिह्न श्री चरनेके समय पैरिसे
 कामेन पर बन जाता है ।

पदच्छेद (स० पु०) चरि पौर समापय्यक विनी वाच्य
 के प्रबोध पदको व्याकरणके नियमोंके अनुकार पसगा
 पकन करनेको सिद्धा ।

पदच्छुत (स० त्रि०) जो चपने पद या प्नामके चट गया
 को चपने स्थानके हटा या गिरा हुआ ।

पदच्छ्रुति (स० क्री०) चपने पदके चटने वा गिरनेकी
 चरसगा ।

पदच (स० पु०) १ पेरको च मसिया । २ शूद्र । (त्रि०) ३
 जो पेरके इत्यच हो ।

पदज्जात (स० क्री०) पदानां जात । चाप्यात नाम
 निपात पौर उपपदैरूप पदसम च ।

पदक (स० त्रि०) पद ज्ञानाति ज्ञा-क । मार्गज्ञ, पद
 ज्ञाननेवाका ।

पदकच (स० पु०) श्रुतिमेद ।

फल कावे ज्ञानि हैं और सबों सबों फलहीर भीम उनको
 मायाए बना कर हमेंसे पकवते हैं ; यह फल घराए
 मनानेके निम्ने निम्नाएत मो भोगा जाता है । हम घड़ु को
 लकड़ीके छूँयाँ और चाराघड़ी कामान बनाते ज्ञानि हैं ।
 ज्ञानि हैं कि गर्भ न रहना हो तो हमको लकड़ी घिस
 कर पोषिगे गर्भ रह जाता है जो यन् गर्भ मिर आता
 है तो मिर ही जाता है ।

विशेष विवरण पदमकाठमें हैकी

- पदमकाठ (वि० पु०) ११५५ दली ।
- पदमचम (वि० पु०) ११५६ बीनी ।
- पदमल (वि० स्त्री०) स्त्री ।
- पदमनाम (वि० पु०) १ विन्दु । २ सुन ।
- पदमाहर (वि० पु०) अक्षरघण्ट, ताकात्र ।
- पदमाका (स० स्त्री०) पदार्थ माका । १ पदार्थनी ।
 २ मोहननीमाकाका ।
- पदमक (स० पु०) पदका लक्षणा ।
- पदमती (स० स्त्री०) पदमनाम लक्ष्मीको लक्ष्मीसाम्य ।
 जो है, अक्षरनाम लक्ष्मी मन्दि मतवारी निम्ने मट मट
 भाषन सुबोम धरमा की है ।
- पदकोटि (वि० पु०) गज ज्ञानो ।
- पदयोत्रता (स० स्त्री०) कविताके निम्ने पदोका ओङ्कार
 पद बनानेके निम्ने शब्दोंको निम्नाका ।
- पदपपन (स० वि०) १ पदगतितोत्र । २ पदपुत्रण ।
- पदर (वि० पु०) १ पदप्रकारका पद । २ ओङ्कार
 के पदकेका स्मान ।
- पदरथी (स० पु०) पादुका, लुटाल अना ।
- पदरजन एक प्राचीन जनपद । राजा देको ।
- पदरिपु (वि० पु०) कथन, काट ।
- पदल -टाँसबादबासो मोहवाकिकी एक गाँवा । हमको
 पदको, पदाम बा देगाई पादि ईई एक जातोह उपा
 बिर्ता है । वह ओकोके गोठोंको घर्मेपदेम देना और
 भाइका काम करना को बनका पदाम कथनसाय है ।
 हम ज्ञानिने लयन एक सिक्कानि देखो ज्ञानो है जो
 पादर ही तन्नुबावका काम करता है ।
- पदबाध (स० पु०) प्राचीन कालका एक प्रकारका
 दोष ।

- पदबाहा (वि० वि०) पदनेहा काम दूनरीके कराना ।
- पदवाय (स० वि०) पदप्रमाण, राज निम्नामिकाका ।
- पदवि (स० स्त्री०) पदनि कम्पनेइतया पद गयी पद 'पद्य
 टिप्पामक' इति पवि । १ पदति, पदिपाटी, तरीका ।
 २ पद्य राधा । ३ उपनाम उगावि । ४ बह प्रतिष्ठा
 या मानपूजन पद जो राज्य प्रबन्धा इतिसो म अना पादि
 का औरने किमो योग्य वदिकको सिक्कता है, उपावि,
 गिनाक । ५ निवोग ।
- पदविषय (स० पु०) पदस्य विषय । पदव्याम ।
- पदविषय (स० पु०) पदेन विषयको यत्न । १ ममान,
 ममानाक्य ।
- पदविच्छेद (स० पु०) पदस्य विच्छेदः । पदका विच्छेद
 पदका विग लोचन ।
- पदविदु (स० वि०) पद जित विदु-ज्ञान । पदविता,
 पदवि ।
- पदवा (स० स्त्री०) पदको पदे होव । १ पदा राज,
 राधा । २ पदति परिपाटी तरीका । ३ पद उपावि,
 कितान । ४ पौडटा, दरजा । ५ भिच्छोपुप ।
- पदभोग (स० स्त्री०) लक्ष्मीका पदुमस्थान ।
- पदवृत्ति (स० स्त्री०) पदपद्यका मध्यच्छेद ।
- पदव्याख्यान (स० स्त्री०) पदस्य व्याख्यान यत्न । १
 शिदमकाका विभाषक पदभेद । तत्र व्याख्यानपद
 तत्र प्रबो वा खनयनादिजादक । (वि०) २ पद
 व्याख्यान पदको व्याख्या वा तत्र भव ।
- पदगम (स० चय०) कर्मस्य पद पदम् ।
- पदयोधि (स० स्त्री०) पदार्थ योधि । पदयोधि, पद
 यधि ।
- पदप्लव (स० स्त्री०) पदो व पदोवको व तयो
 ममाहारः, (अन्त विन्दुके । पा ३)३३०० इति
 निव तुनातु निव । पद और ज्ञानुना ममाहार ।
- पदमघाट (स० पु०) पदम घाटक प्रबन्धको या टोका-
 का बह जो शब्द या पद म पद करता हो ।
- पदमहिता (स० स्त्री०) पदम योजना ।
- पदमकातु (स० स्त्री०) गीतका प्रसरणभेद ।
- पदमन्त्रि (स० पु०) तु निमङ्गको पदम योजना ।
- पदममूक (स० पु०) १ पदर्थको । २ कविताकार,
 पदपाठ ।

द्वयं नमस्त्वये ममोदये पदार्थं मो नामा प्रकारका है। जिसो द्योमर्त्तं च पदार्थं जिसोमें सात धोर जिसोमें भोज्य पदार्थं माने गये है। यद्युमात्र ही पदार्थं पदवाच्य है। गोनमादि स्वयिनेमि तप्यप्रमाणने कामनिष्ठ बलुनिबन्धको परमि कई एक चं बियोगि विमल बिद्या है। जिसो जिसो द्योमर्त्तं पदार्थं ही न तथा मो निष्कपित हुई है उभजा विषय बहुत म लेपमें लीये सिखा जाता है। पदार्थं तत्त्व वा मत्त्व एक ही पदार्थंको जिसो द्योमर्त्तं पदार्थं धोर जिसोमें तत्त्व बतनाया है। प्राकृतिक नैवाचित्योक्त मतने पदार्थं ७ प्रकारका है।

“इत्थं पुनस्तथा कर्म सामान्य परिचयक ।

व्यवहारतया भावः पदार्थां पदार्थोपनिष्ठा १”

(भाव ५१० २)

द्रव्य, गुण कर्म, सामान्य विषय नमस्त्वय धोर पमात्र यज्ञो सात पदार्थं है। नाम नैवाचित्यकोनि पदार्थं को ७ सामीने विमल कर पबिन पदार्थंको इन मात पदार्थोनि मन्त्र निबिष्ट किया है। नैवाचित्यद्वयं न-
 च्छत्तं कवाट सत्र पदार्थोको नहीं मानते। पमात्र मिय पूर्वीक च पदार्थं ही इनका परिमत्त है। वे पमात्र को द्रव्य पदार्थं नहीं लोकारते। परवर्ती नैवाचित्यो नी पदपदार्थंको मात्र पदार्थं बतनाया है। ईश्वर मात्र पदार्थं लोकार करमिने पमात्रको उपलब्धि नहीं होतो, इनीने पमात्रको एक धोर द्रव्य पदार्थंमें लोकार कर लनीने सत्र पदार्थं निर्देय किये है।

इन मात पदार्थंमें चतुर्विध धोर कोई पदार्थं ही नहीं है। इनीके मन्त्र तावत् पदार्थं पदार्थं हीना। कोई कोई इन मात पदार्थोच मिय तमः पदार्थकार को एक धोर द्रव्य पदार्थं बतनाते हैं। किन्तु पदार्थका दृष्टि कान्य पदार्थं नहीं है क्योंकि पानोबका पमात्र ही पदार्थकार है। इनके मिया पदार्थकार पदार्थंमें धोर कोई प्रमाण नहीं है। किन्तु कोई कहते हैं “नील तमसवति पर्यात् नीलवर्णं पदार्थकार चकता है, इन प्रकार मो व्यवहार दूषा करता है यह प्रमाणक है। सच पूछिये तो पदार्थकार एक पदार्थं ही ही नहीं बरता क्योंकि पमात्र पदार्थंमें नीलगुण धोर चकतक्रिया बन्ध नहीं है। यही पदार्थोका ज्ञान को

नक्षता है धोर चर्कें निर्देय तथा प्रमाणनिष्ठ कर मक्षते हैं, इन कारण ममो पदार्थं समय वाच्य धोर प्रमेयवर्त्तमें निर्देय किये जाते हैं।

पदमे जिन मात पदार्थोना जिक्र किया, उनका विषय इस प्रकार है—

द्रव्यपदार्थं ८ है। पदा—द्रव्यो जल तेज वायु पाकाय ज्ञान दिग् धामा धोर मनः।

गुणपदार्थं २४ है; रसा—रस रस गन्ध व्यर्थं न च्छ्या परिमाण, प्रयत्नत्व न योग, विभाग परत, परतत्व बुद्धि लज्ज, दुःख, इच्छा ह्येय, यत्न, शुद्धत्व स्निग्ध स स्थाय धर्म धोर पदमः।

नील वीतादि कर्मका नाम रूप है। यह रूप कर्म भेदमें कई प्रकारका है। तर्कान्तर पदार्थं मतये च्छक, नील वीत, रत्न, हरित, कविम धोर विभ वे मात प्रकारक रूप है। जिन बलुके रूप नहीं है, वह इन्द्रियोधर नहीं होतो। इनीके रूप ही द्योमर्त्तका कारण है।

रस च प्रकारका है, कटु, कषाय, तिक्त, पक्क कषय धोर मधुर। मन्त्र दो है, मोम धोर पकोरम। स्पर्श तीन प्रकारका है—उष्ण श्रोत धोर अनुष्णश्रोत। स च्छ्या एकल हिल धोर त्रिकालिक भेदने नामा प्रकार की है। च च्छ्या लोकार नहीं करमिने जिसो प्रकारको नक्षता नहीं कर सकते। क्योंकि इस प्रकारकी नक्षता स कमापदार्थक चकतकर्मने ही होतो है। परिमाण चार प्रकारका है—स्खल लूण शीघ्र चार उपल। जिनका चकतकर्मन करके घट पटमें द्रव्य है, पना व्यवहार दूषा करता है उनको एकवत्त्व कहते हैं। अमिश्रित वस्तु इयं मिलन धोर मक्षिष्ठ वस्तुवर्त्तं बियोगको पदा क्रम च योग धोर विभाग कहते हैं। परल धोर पद-
 रत्व प्रत्येक दैगिक धोर कालिक भेदमें ही प्रकारका है—द गिच वात धोर दैगिक परतत्व। द गिच परतत्वमें पनुच नगरने पनुच नगर दूर है, इस दूरत्वका ज्ञान होता है धोर दैगिक परतत्वमें पनुच स्थानमें पनुच स्थान निकट है यह समझा जाता है। इस प्रकार कालिक वात धोर परतत्व कदाक्रम ल्य हत्व धोर कनि हत्व व्यवहारके उपयोगी है। बुद्धि मन्त्र ज्ञानका बोध होता है। ज्ञान ही प्रकारका है जिनमेंसे

यथार्थ ज्ञान प्रसा और अथयार्थ ज्ञान अप्रसापटयाच्य है। निश्चय और संग्रहके भेदों भा ज्ञानको दो भागोंमें विभक्त कर सकते हैं। संग्रह नाना कारणोंमें हुआ करता है। सुख और दुःख यथाक्रम धर्म और अधर्म द्वारा उत्पन्न होता है। सुख सभी प्राणियोंका अभिप्रेत है और दुःख अनभिप्रेत। आनन्द भी नम काराटिकी भेदमें सुख और कोशादि दुःख नाना प्रकार का है। अभिनाय भी हो इच्छा प्रकृति हैं। सुख और दुःखाभावमें जो इच्छा है, वह उन सब पदार्थोंका ज्ञान होनेसे होता है। जिस विषयमें दुःख होने से सम्भावना रहती है, उस विषयमें द्वेष उत्पन्न होता है और यदि उस विषयमें किसी प्रकारकी इष्टमिदिकी सम्भावना न रहे, तो भी द्वेष उपजता है। यत्न तीन प्रकारका है—प्रवृत्ति, निवृत्ति और जीवन्योगि। जिस विषयमें जिसकी चिकीर्षा रहती है। उस विषयमें उसकी प्रवृत्ति होती है और जैसे जिस विषयमें द्वेष रहता है, वह उस विषयमें निवृत्त होता है। इसीसे प्रवृत्ति और निवृत्तिका यथाक्रम चिकीर्षा और द्वेष कारण है। जिस यत्नसे रत्नमें प्राणी जीवित रहता है, उसे जीवनशानियत्न कहते हैं। जीवनशानियत्न नहीं रहनेसे प्राणी क्षण काल भी जीवित नहीं रह सकता। इसी यत्न द्वारा प्राणियोंके श्वास प्रश्वासादि निर्वाहित होते हैं। गुरुत्व पतनका कारण है। जिससे गुरुत्व नहीं है, वह पतित नहीं होता, जैसे तेजः प्रभृति। द्रवत्व क्षरणका हेतु है, यह स्वाभाविक और नैमित्तिकके भेदमें दो प्रकारका है। जलका द्रवत्व स्वाभाविक और पृथिव्यादिका द्रवत्व निमित्ताधीन हुआ करता है। जलोय जिस गुणका सहाय होता है और जिसके द्वारा शक्त प्रभृति चूर्ण वस्तु पिण्डाकृत होते हैं, उसे स्नेह कहते हैं। स्नेह उल्कृष्ट और अपकृष्टके भेदसे दो प्रकारका है। उल्कृष्ट स्नेह अग्निज्वलनका और अपकृष्ट स्नेह अग्नि निर्वाणका कारण है। यथा—तैलान्तर्बर्त्ता जलोय भागका उल्कृष्ट स्नेह रत्नमें चक्की द्वारा अग्नि प्रवृत्तित होता है और अन्यान्य जलका अपकृष्ट स्नेह रहनेसे उसमें द्वारा अग्नि निर्वापित होती है। संस्कार तीन प्रकारका है, वेग,

स्थितिस्थापक और भावना। वेग क्रियादि द्वारा उत्पन्न तथा करता है। दृष्ट धर्म और अधर्म है तथा सुभादृष्ट पृथ्यादि पटयाच्य है। यत्न गन्तव्यज्ञान और यागादि द्वारा उत्पन्न होता है। पापधर्ममें अशुभादृष्ट होता है। गन्त दो प्रकारका है, ध्वनि और वर्ण। उदगादि द्वारा जो गन्त उत्पन्न होता है, उसे ध्वनि और अगलादिमें जो गन्त उत्पन्न होता है, उसे वर्ण कहते हैं। गुण पदार्थ द्रव्यमात्रमें रहता है और क्रियामें नहीं। ये २४ गुण क्षिति प्रभृति द्रव्य पदार्थ हैं।

कर्म—क्रियाको कर्म कहते हैं। यह कर्म पदार्थ उत्प्रेषण, अश्लेषण, आकृषण, प्रसारण और गमनके भेदमें पांच प्रकारका है। ऊर्ध्वपक्षेपको उत्प्रेषण, विन्दित वस्तुओंके मद्धोच करनेको आकृषण और मद्धुवित वस्तुओंके विन्दित करनेको प्रसारण कहते हैं। अमग्न, ऊर्ध्वज्वलन, तिर्यग्गमन आदिके गमनमें दो प्रवृत्तियों योग, यत्न स्वतन्त्र क्रिया नहीं है। पृथिव्ये, जल, तेज, वायु और मन इन पांच द्रव्योंमें क्रिया रहती है।

जाति पदार्थनित्य है और पनेक वस्तुओंमें रहता है। जैसे भटत्व जाति सभी घटमें है। पर अगर घटके भेदमें जाति दो प्रकारकी है। जो जाति अधिक स्थानमें रहती है, उसे पञ्जाति और जो अल्पस्थानमें रहती है, उसे अल्प जाति कहते हैं। परतानामक जाति द्रव्य, गुण और कर्म इन तीनोंमें है, इसीसे उसका परजाति नाम पडा है। घटत्व और नोपत्व प्रादि जो जाति हैं, वह अल्प जाति हैं।

विशेष पदार्थ नित्य है, आकाश और परमाणु प्रादि एक एक नित्य द्रव्यमें एक एक विशेष पदार्थ है। यदि विशेष पदार्थ न रहता, तो कभी भी परमाणुओंकी परस्पर विभिन्नरूपताका निश्चय नहीं किया जा सकता। जिस प्रकार अवयवी वस्तुहयके परस्परको अवयवगत विभिन्नता देख कर विभिन्नरूपताका निश्चय किया जाता है, उसी प्रकार परमाणु प्रादिके क्षण अवयव नहीं है, तब किस प्रकार उनको विभिन्नताका निश्चय किया जा सकता? किन्तु विशेष पदार्थ भोकार करनेसे इस प्रकारका सन्देह नहीं रहता। कारण वेसा हीनेसे इस

परमात्मने नो विभोव के बहु पद परमात्मने नहीं के
 अतः यह परमात् पद परमात्मने मिय के पौर
 पद्य परमात्मने नो विभोव के बहु पद परमात्मने
 नहीं के । इस कारण पद परमात् पद परमात्पदे
 प्रकथ है । इसी रीतिसे जितने परमात् हैं नबीकी पर
 पद विभिन्नता निरूपित होती है ।

समवाय—द्रव्यके साथ गुण और कर्मका द्रव्य,
 गुण और कर्मके मात्र आत्मिका ; निम्न द्रव्यके साथ
 विशेष पदार्थका पौर पदपदके साथ पदबीजा जो
 समन्वय है उसे समवाय कहते हैं ।

यही पद पदार्थ है । इनके यथाथा परमावपदाव
 को से कर उन्नपदाव कल्पित हुआ है । परमाव दो
 प्रकारका है, स सर्वाभाव पौर पदोपशामाव । एहके
 प्रुप्राय मिय है, प्रुप्राय एह नहीं है, सोचनोमिं उतका
 भेद के बन्नादि कर्मके का परमाव प्रतीयमान होता है,
 कचे स सर्वाभाव कहते हैं ; पदोपशामाव परमाव
 पौर प्राक्मावके भेदसे स सर्वाभाव तीन प्रकारका है ।
 जिह कर्तुको जिहसे उत्पत्ति होगे, कस कर्तुका लक्षमें
 पदके को परमाव रहता है, उध प्रायमाव कहते हैं ।
 प्रायमावको उत्पत्ति नहीं है, किन्तु विनाय है । विनाय
 को ध्व स कहते हैं ; निरव स सर्वाभावके ही पदवत्ता
 मात्र है ।

गीतमने नोबहु पदाव कोकार किये हैं । यथा—
 प्रमाव, प्रमिष्ठ, सशय, प्रबोधन इत्यादि विहाय,
 पदपद, तर्क निर्वच बाद कथा, वितण्डा, सूत्रा
 माध, छन्द, काति पौर नियमकान । गीतमने मतमें
 इनके पदाका पौर कोई पदाव नहीं है । जितने
 पदाव हैं वे समी इन्को सोचइके अन्तर्गत जिसे मने
 हैं । परन्तु नो याविज्ञानि कथाद पौर गीतमने मतको
 न मान कर यात पदाव विर लिखे हैं ।

आव और वैदिकिकरवर्तन कर्म केको ।
 रामानुजने पदने द्यनमें तीन प्रकारका पदाव
 वतकाया है, चित् चचित् पौर ईश्वर । चित् औद्यय
 काय है, मोक्षा, पदच्युति, पदरिच्छिन्न, निर्मल
 ज्ञानरूपपौर निम्न है ; परमाहिकर्मक्य पविद्याद्वैत
 भयवहारावना पौर तत्पद्मात्रादि बीजका अभाव ।

ईशापदी सो भागीमि विमल कर पुन लभे सो भाग
 करनीसे जितना सूक्ष्म होता है जोव उतना सो सूक्ष्म है ।

चचित् मोक्ष पौर इत्य पदार्थ है चचित्तन स्वक्य
 कदात्मक, जगत् पौर भोग्यत्वविचारान्पदकादि अभाव
 याको है । यह चचित् पदाव तीन प्रकारका है—
 मोक्ष, भोग्यकरव पौर भोग्यवतन । जिहहा भोग
 किया जाता है उसे भोग्य ; जिहके हाग भोग किया
 जाता है, अने भोगोपकरव पौर जिहमें भोग किया
 जाता है उसे भोग्यायतन कहते हैं ।

ईश्वर मनेके नियामव तथा हरिपदवाच्य है । ये
 कर्मके कर्ता हैं, उपादान हैं, मन्त्रं च परतयासो हैं पौर
 पदरिच्छिन्न ज्ञान, पदकर्म तथा बोधोदि मन्थक हैं ।
 चित् पौर चचित् समो बहु कर्म भरीर स्वक्य हैं ।
 सुखीतन कासुदेव पादि इन्कोमिं स छाप है । इस
 दशमके मतमें प्रुबोद्ध तीन पदार्थोंक चतिरिन्न पौर
 कोई भी पदाव नहीं है ।

यैवदगंनक मतने सो पदाव तीन प्रकारका है,
 पति, पद्य पौर पाय । पतिपदाव मगवान् मिथ है पौर
 पद्यपदाव ओषाम्ना । पागपदाव मन्थ, कर्म माया
 पौर शीघ्रकर्मके भेदमें पार प्रकारका है । आभाविक
 पद्यचिको मन्थ भर्मावर्तको कर्म, प्रणयावर्तमें समो
 पदाव जिहमें लीग को जाति है पौर एहविज्ञानमें जिहमें
 उत्पन्न होती है उसे भावा कहते हैं । इसी पागमनक
 को 'स कथ कहते हैं ।

याद ताके मन्थ पदाव का तत्त्वके विषयमें परंग
 मतमेंद हैं । किछीके मतमें तत्त्व दो है, जीव पौर
 पदोव । जीव बोधालक है पौर पदोव पदोबालक ।
 किछीके मतमें पद्यतत्त्व, किछीके मतमें पद्यतत्त्व पौर
 किछीके मतमें नवतत्त्व औद्धत हुआ है ।

चाण्डदयंनके मतमें—प्रकृति, प्रकृतिविकृति, विकृति
 पौर अनुभव ही चार प्रकारके पदाव हैं । मूळ प्रकृति
 पौर मन्थदादि प्रकृति, योद्धयविकृति तथा अनुभव
 पद्य है । चौथके मतमें पद्यके यथाथा पौर कोद पदाव
 नहीं है । पातककर्मवर्तनमें मो से यह पदाव हैं पौर
 इनके चतिरिन्न, ईश्वर पद्यक पदाव मनि मय है ।

वेदान्तदर्शनमें केवल दो पदार्थ हैं, आत्मा और अनात्मा । अनात्मा साया पदवाच्य है ।

विशेष विवरण वेदान्त सारमें देखो ।

वैद्यकके मतमें पदार्थ पांच हैं—रस, गुण, वीर्य,

विपाक और शक्ति ।

“द्रव्ये रसो गुणो वीर्यं विपाकः शक्ति रेष च ।

पदार्थाः पञ्च तिष्ठन्ति स्वं स्वं कुर्वन्ति कर्म च ॥”

(भाष्यप्रकाश)

२ पुराणानुसार धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष । ३

पदका अर्थ, शब्दका विषय । ४ वस्तु, चीज ।

पदार्थवाद (सं० पु०) वह वाद या सिद्धान्त जिममें पदार्थ, विशेषतः भौतिक पदार्थोंको ही सब कुछ माना जाता हो और आत्मा अथवा ईश्वरका अस्तित्व स्वीकार न होता हो ।

पदार्थवादी (सं० पु०) वह जो आत्मा या ईश्वर आदि-का अस्तित्व न मान कर केवल भौतिक पदार्थोंको ही सब कुछ मानता हो ।

पदार्थविज्ञान (सं० पु०) वह विद्या जिममें द्वारा भौतिक पदार्थों और व्यापारोंका ज्ञान हो, विज्ञान-शास्त्र ।

पदार्थविद्या (सं० स्त्री०) जिम शास्त्रमें पदार्थके गुणागुणका विचार कर उसके कार्यादि वर्णित हुए हैं उसे पदार्थ-विद्या वा Natural Philosophy कहते हैं । जागतिक पदार्थोंका विषय जाननेमें पहिले पदार्थ क्या है, इसका जानना आवश्यक है । पदार्थ शब्दका अर्थ है, पदका अर्थ । पदकी अर्थ सङ्गनिर्द्देशोंसे जो ज्ञान उपलब्ध होता है, उसीको पदार्थ कह सकते हैं । द्रव्य गुण या कर्म प्रभृति सभी पदके अर्थ द्वारा प्रकाश किये जाते हैं । सुतरां वे सभी पदार्थ पदवाच्य हैं । शुद्ध वस्तु या द्रव्य अर्थमें भी शब्दका प्रचार देखा जाता है । इस अर्थमें पदार्थ दो प्रकारका है, चित् और अचित् अर्थात् चेतन और अचेतन ।

जिस पदार्थमें चैतन्य है वह चित् वा चेतन और जिसमें चैतन्य नहीं है वही अचित् अर्थात् अचेतन पदार्थ है । एकमात्र परमात्मा ही चिच्छय, विशुद्ध और चैतन्य स्वरूप है । जीवोंका आत्मा चैतन्यमय है सही, पर वह जड़मय देहधारी है । सुतरां वह जड़ और चित् यद्वा

जड़मयभावावन्त है । फिर मिट्टी, प्रत्यर आदि जो सब वस्तु चेतनहोनें हैं उन्हें अचेतन वा जड़पदार्थ कहते हैं । वृक्षादि उद्भिज्जकों 'उद्भिद्' रूपमें थोड़े थोड़े स्वल्प पदार्थ मानते हैं ।

वस्तु, रचना, नामिका, त्वक् और वर्ण इन पांच ज्ञानेन्द्रिय द्वारा रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्द आदि प्रत्यक्ष ज्ञानसे अनुभूति होती है । इन सब प्रत्यक्ष ज्ञानके कारणस्वरूप चैतन्यग्रन्थ पदार्थका नाम जड़-पदार्थ है । मूल, मिश्र और यौगिकभेदसे पदार्थ तीन प्रकारका है ।

रसायनिकीके मतमें जड़पदार्थको विश्लिष्ट करनेमें जो दो वा दोसे अधिक प्रत्य प्रकाशके जड़पदार्थ पाये नहीं जाते, वही मूल जड़पदार्थ है । रसायनशास्त्रियों के मतमें स्वर्ण, सोप, लोह, तास्र पारद और गन्धक आदि द्रव्य ही मूलपदार्थ हैं । क्योंकि इन सब पदार्थोंको विश्लिष्ट करनेमें तत्तत् द्रव्यजात पदार्थ छँड़ कर अन्य प्रकारका कोई भी द्रव्य निकाला नहीं जा सकता । चिति, अप् और वायु विश्लेषणयोग्य है, क्योंकि इन सब द्रव्योंसे अन्यविध पदार्थ निकाला जाते हैं । यूरोपवासी जड़विज्ञानविदगण तेजको स्वतन्त्र पदार्थ नहीं मानते । व्याम शब्दमें शून्य आकाश पदार्थका ही बोध होता है, किन्तु उसका अर्थ शून्य वा नभोमण्डल नहीं है ।

दो अथवा दोसे अधिक मूलपदार्थ एक दूसरेके साथ रासायनिक प्रक्रियायोगमें संयुक्त हो कर जो भिन्न धर्मोक्तान्त पदार्थ उत्पादन करते हैं उसका नाम यौगिक पदार्थ है । फिर जहाँ दो वा दोसे अधिक भिन्नजातीय द्रव्य एक दूसरेके साथ रासायनिक संयोगमें संयुक्त न हो कर आपसमें संयुक्त अथवा मिला जाते हैं, वहाँ इस प्रकारके मिलनसे जो द्रव्य उत्पन्न होता है उसे मिश्र पदार्थ कहते हैं । मिश्रपदार्थमें उनके उपादानभूत पदार्थके अनेक गुण रहते हैं, किन्तु यौगिक पदार्थके गुणके साथ उनके उपादानभूत मूलपदार्थके गुणका थोड़ा सादृश्य नहीं देखा जाता । जलयौगिक पदार्थ है । क्योंकि अम्लजन और जलजन (Hydrogen and Oxygen) वायु इसको उपादान है । दो फेंके रासायनिक संयोगसे जल ही उत्पत्ति है । इसके गुणके साथ उनके गुणका कोई सादृश्य नहीं देखा जाता । वायु

राशि मिश्र पदार्थ के क्वथिक वायुराशित प्रदान
 उपादान पर्यवस्यते है। चम्पनन और वनस्पतजन
 (Oxygen and Nitrogen) दोनों वायु रासा
 यनिक ल योगसे मज्जु न हो कर चम्पन मिश्री है।
 सुतरां वायुराशिमें समयगुणका परिमल पुनः पुनः
 रूपमें प्रकृष्टीकृत होता है।

पदार्थके सत्त्वतम पदका परमाणु कहते है। इन
 सुक्ष्म परमाणुसमष्टिः योगसे समी कण्डु पदार्थको
 उत्पत्ति हुई है। वैश्वियिक टम प्रकारसे मयसे पठने
 इन मतका प्रचार बिबा। है कहते है 'त्रिसते स्वर
 पञ्चयन नहीं है, पञ्चव जिन परम्परासे समी प्रवयन है
 और वायु प्रकृष्टपदार्थका मेष योमासकूप है, उभेको
 नाम परमाणु है। समी परमाणु पाठ्यपं पार विह
 यं च गुणमस्य है।' परमाणुमेंका नाम नहीं है।

अथ, परमाणु और वैश्वियिक क्वथी।

कठिन तरल और वायुवोय (Solid liquid and
 Gas)के सेटने अथ वस्तुको प्रवसा तीन प्रकारको है
 कठिन पदार्थमें अणु वस्तुके अणुओंका इक सभ्य
 रचना है किन्तु तरल और वायुवोय अणुमें अणु विरल
 बिनियोगप्रयत्नः प्रकृष्टमें विस्तृत हो जात है। रट
 कादि कठिन द्रव्य है चन तरल और कठिन तथा तरल
 वस्तुमें तापः योगसे आ वायवाय द्रव्य उत्पन्न होता है
 उभे वायु कहते है। वायुराशिवा वायुनाय मान
 आभासिक है और अताव वायु पादाना वायुनाय
 मान नैमित्तिक।

अणुपदार्थमात्र ही प्रयोजन के निघोटे, स्थानव्यापक
 और मुक्तिविमिष्ट है। सुतरां प्रथितनय निघोटे, स्थान
 व्यापकत और मुक्तत्व अणुके से कहे एक स्वाभाविक
 धर्म है। अणुपदार्थमात्रमें ही उ मय गुण पाये जात है।
 सुक्ष्म, सुस पामाच, मुक्त मिय वा योगिक कठिन,
 तरल यादि वायुताय पदार्थमें इन प्रकारके गुण नहीं है
 पञ्च अणु पदार्थ है इन पदार्थका परिमल पञ्चयन है।
 का गुण यह कठिन द्रव्यमें देखा जाता है वह कठिन द्रव्य
 का पमाधारक वा वैश्विय धर्म है और पूर्वोक्त गुण वि नच
 माभाषन सभी द्रव्योंमें अचिन होने है इन कारण यह

कठिनादि अणुद्रव्यका माधारण धर्म है। विमात्र्यता
 और मात्तरता गुण परमाणुका धर्म नहीं है, किन्तु
 परमाणु समष्टिके संयुक्त पदार्थमात्रके ही कठिन तरल
 और वायुवोय समी प्रवसाओंमें उक्त दो गुण कथित
 होते है। सुतरां ये दो अणुके स्वाभाविक धर्म नहीं होने
 पर भी कठिन, और तरल वायुवोय माधारण धर्म है।
 स्थानव्यापकत्व अणुके विभाज्यत्व और मात्तरत्व से सब
 अणु पदार्थ के माधारण गुणोंमें प्रधान है। स्थानावरोधकत्व
 और मुक्तत्व स्थानव्यापकत्व गुणनापिच है। यदि धमी
 द्रव्यस्थानव्यापक न होते तो वे स्थानावरोधक नहीं हो
 सकते और न इनके माधारणको कोई मुक्ति हो रहती।
 सैतन्य गुणत्व और निघोटेत्व से दोनों ही गुण अणुके
 अणु द्वारा कथित होता है। फिर वायुवोयता, प्रचार
 योग्यता स्थितिस्वायकता और विमात्र्यता यादि गुण
 मात्तरता गुण-भाषिय है।

अणुपदार्थ मात्र ही अणु स्थानमें स्थिति हो कर
 रहता है। जिन गुणके कारण अणु पदार्थ समी स्थानोंमें
 व्यापित रहते है, उनका नाम है स्थानव्यापकता। इसी
 स्थानव्यापकता गुणसे समी अणुद्रव्य तीन और विस्तृत
 हो कर स्थानको परिभार करते है। इन प्रकार विस्तृत
 रट उर अणु वस्तु जिन स्थानको परिभार करतो है,
 उसे वायुता कहते है। जिन सब गुणोंसे समी अणुद्रव्य
 पण्डि अपने परिभार स्थानमें अन्य द्रव्यको परिभारिता
 धनरोध उत्पन्न करते है उनका नाम स्थानावरोधकता
 है। श्रेमे निघो अणुपुत्र विषकारीका सुख बट कर यदि
 उनका पर्यन्त दशाया जाय, तो विषकारीके मोतर पर्यन्त
 प्रविष्ट नहीं होता है क्योंकि पर्यन्त और अणु एक
 समयमें एक स्थान पर नहीं रह सकता। यह स्थानावरो-
 धकत्व गुणपरमाणुनिघर्षण है। अणुद्रव्यके परमाणु
 को पायनसे म लम्ब रहते है जो नहीं, उनके मय सुख सुख
 प्रवसाय का प्रसार रहता है। अणुवस्तुको परमाणु
 स्थानावरोधक है मने वैश्विय उनके प्रसारण प्रवसाय
 का प्राप्त तथा उर्वि दृष्टा करनी है और एकके पर
 माणुपाक प्रसारण प्रवसाय मयमें अन्यत्र परमाणु समी
 कामा प्रविष्ट होते मान म प्रकृति है, वैश्विय माभासिकमें
 होता नहीं है।

जिस गुणके कारण जड़ वस्तु आकार वा मूर्त्ति धारण करती है, उसका नाम मूर्त्तत्व है। जड़-पदार्थ मात्र ही माकार और मूर्त्तपदार्थ हैं। ये स्थान पर फेने हुए रहते हैं, इस कारण इनके आद्यतन और आकृति । जिन्हें चैतन्य नहीं है, उमें हम लोग अचेतन वा जड़ पदार्थ कहते हैं। शक्ति सम्पन्न नहीं होनेसे जड़ पदार्थ स्थान्दित नहीं होता—शक्ती तरह प्रतीयमान होता है।

जड़पदार्थरूप शक्ती ऊपर जब शक्ति नृत्य करती है, तभी यह जगत्कार्य हुआ करता है। शब्द जड़पदार्थसे कोई कार्य नहीं होता। सभी जड़पदार्थ आपसे आप नहीं चल सकते और चालित होने पर आपसे स्थिर भी नहीं हो सकते, इसीसे इनकी निश्चिष्ट गुण सम्पन्न कहते हैं। इस प्रकार पदार्थादिको विभाव्यता, सान्तरता, आकुच-नोद्यत्व, प्रभारणोद्यत्व, स्थितिव्यापकता, कठिनत्व, कठोरत्व कोसलत्व, भङ्गावणता, घातमहत्व, तान्तवता और भारमहत्व आदि ये सब विभिन्न गुण किसी न किसी द्रव्यमें देखा जाता है। पदार्थादिको आणविक शक्तिके सम्बन्धमें आणविक आकर्षण, संघति, संगति, क्रमिक आकर्षण बहिःप्रवाह और अन्तःप्रवाह गुणादि एवं द्रव्यादिका रासायनिक विश्लेषण और नक्षमन आदि पदार्थविद्यामें सोमांसित हुए हैं। एतद्भिन्न सध्या तर्पण, द्रव्यादि का भाव, वायु, शब्द, आलोक जल, ताडित, गति वा वेग, अयस्कान्त और अयः-दर्पणो शक्तिका विषयमें भी इस पदार्थविद्यामें विविध रूपमें आलाचित हुआ है। स्वभावजात द्रव्य मात्रको क्विस्त्वार आलोचनाको ही वैज्ञानिक भाषामें Physic कहते हैं। जिस अर्थमें पदार्थविद्याका तत्त्व अथगत होता है, उसे पदार्थविद्या कहते हैं।

पदार्पण (स० पु०) १ किसी स्थानमें पैर रखने या जानिको क्रिया । इस शब्दका प्रयोग केवल प्रतिष्ठित वस्तुओंके सम्बन्धमें ही होता है।

पदानिक (स० पु०) पदस्य चरणस्थालिकमिव । चरणो-पदिभाग ।

पदावनत (स० त्रि०) १ जो पैरों पर झुका हो । २ जो प्रणाम करता हो । ३ नन्द, विनीत ।

पदावली (स० स्त्री०) पदानां आवली । १ पद-श्रेणी,

पदममूह, वाक्यांकी श्रेणी । २ भजनार्था संश्रुति । पदवृत्ति (स० स्त्री०) पदको आवृत्ति ।

पटाश्रित (स० त्रि०) १ जिसने पैरों पर आश्रय लिया हो, शरणमें आया हुआ । २ जो आश्रयमें रहता हो ।

पदाम (स० स्त्री०) मामभेद ।

पदाम (हि० स्त्री०) १ पादनेका भाष । २ पादनेकी प्रवृत्ति ।

पदामन (स० स्त्री०) पदः पादस्य वा आसनं । पादपीठ, वह जिस पर पैर रखा जाय ।

पदामा (हि० पु०) जिसकी पादनेकी इच्छा या प्रवृत्ति हो ।

पदि (स० पु०) पद कर्मणि इन् । गन्तव्य, जाने लायक ।

पदिक (स० पु०) पादेन चरतीति पाद-ठन् (पर्णादि-पः-ठन् । पा ४१४२०) ततः पादस्य पदाट्ठेम् । पदाति सैन्य, पैदल सेना ।

पदिका (स० स्त्री०) रत्नसज्जालुका, लाल रंगका लज्जान् ।

पदिन्याय (स० पु०) जैमिनिसूत्रोक्त न्यायभेद ।

पदिहोम (स० पु०) पदि पादस्थाने होमः अनुक्रममासः । श्रुतिविहित होमभेद ।

पदुम (हि० पु०) १ घोड़ोंका एक चिह्न या लक्षण जो भारवीके पास होता है । भारतवासी इसे टोप नहीं मानते, पर ईरानके लोग मानते हैं । २ पद्म देखो ।

पदुमिनो (हि० स्त्री०) पदिनी श्रेणी ।

पदेन्द्राभ (स० पु०) विष्किःपत्तिविशेष ।

पदोष्ठा (हि० पु०) १ जो बहुत पादना हो, अधिक पादने-वाला । २ डरपोक, कायर ।

पदोदक (स० पु०) १ वह जल जिससे पैर धोया गया हो । २ चरणामृत ।

पदोपहत (स० त्रि०) पादेन उपहतः पादस्य पदादेशः । पाद द्वारा उपहत ।

पदोक (हि० पु०) वरमामें मिलनेवाला एक वृक्ष, इसकी लकड़ी मजबूत और कुछ सालो लिए सफेद रंगकी होती है ।

पद्म (स० पु०) पद्भ्यां गच्छतीति पद-गम-ड । पदातिक, पादधारो ।

पद्मोव (स० पु०) पादस्य घोषः, पादशब्दस्य पदादेशः । पादशब्द ।

पद् (वि० पु०) पयोडा बंधी ।

पद्मिका (म० पु०) पद्म मादक जन्तु । इसकी प्रत्येक चरणमें १६ मायाएं होती हैं और चरनेमें प्रयत्न होता है ।

पद्मकी (वि० स्त्री०) पद्मिका बंधी ।

पद्मिनी (म० स्त्री०) पद्मवर्णा बलि गच्छतीति इन्-निष्ठा (विन्वादिभिरिति । आ० १।१।३५) इति पाठस्य पदादेशः, ततो ङीप् । १ बर्णं पद्म राशः । २ पत्ति कर्तारः । ३ पद्मार्थं बोधय पद्म नदं पुस्तकं त्रिमूर्तिं त्रिमूर्तिं पूजयती पुस्तकं वा पद्मं या तापय समभ्या जाय । ४ पद्मो उपनामसिद्धे जीवे, काङ्क जोय पादि । ५ प्रथमो, राति तरोष्ठा, उग्र । ६ पाचार पद्म नदं पद्म त्रिमूर्तिं त्रिमूर्तिं प्रथमो प्रथम या चार्थं प्रथमो त्रिमूर्तिं चो । ७ चार्थं प्रथमो, विविविचाल । ८ रोति रश्मि रिवाज परिपारी ।

पद्मि (वि० पु०) पद्म दशा बंधी ।

पद्मिनी (म० स्त्री०) पादपद्म त्रिम पादपद्म पद्मिका । पादकी गोलपत्ता ।

पद्मी (वि० स्त्री०) छिन्नमें छिन्नी लक्ष्मीका जीतनी पर टांग लेनेके लिये ज्ञानेश्वरने लक्ष्मीकी पीठ पर चढ़ना ।

पद्म (म० पु० पु०) पद्मिनी इति पद्म गती मन् (अतिरिक्त इन्-उत्तरादि । उन् १।१।३८) इत्यनासप्यात् कोमक इत्यं चौर तज्यात् पुष्पविशेषः, अमन । पद्मिनी-नमिनी, चरविन्द, मञ्जोत्पल, मङ्गलपद्म अमन, गतपद्म कृष्ण मञ्ज, पद्मोद्भव, तामरम धारम मरनोद्भव विजयमूल राजेश्व पुष्कर पद्मोद्भव, पद्मत्र पद्मात्र पद्मत्र मरवित्र औषधम औषधं, इन्द्रियमय जनप्राप्त पद्म मन्, मत्तोका मालिक मत्त पद्म न, पुद्म ।

माधारचता यज्ञे औहित यज्ञे चौर प्रथित रत्न चार बर्षके पद्म इस सोमोई मयनोचर होती हैं । मञ्जोत्पल रश्मि पर भी इनके मन्त्र प्राकृतिका मन्त्र चर्च देखा जाता है । प्राकृतिके मन्त्रमन्त्रके कारण पद्मो ४ पद्मिक नाम पड़े हैं । इस सोमोई देशमें पद्मके पद्मिक पद्माय मन्त्र रश्मि पर भी वे किस किस कालिक हैं इसका मन्त्रने लिख प लक्ष्मी को चढ़ता । यज्ञे, रत्न चौर मोमोत्पलके विभिन्न मन्त्रान्ने मञ्जो पद्माय मन्त्र अल्प मन्त्रमें लिखे गये हैं । श्राव बंधी ।

मिथ मिथ स्वानामिं पद्मके विभिन्न नाम देखे जाते हैं ।
 हिन्दू—अमन बह्मल—पद्म पद्म; उक्षोमा—पद्म,
 विश्वीर—वेद्येन्द्रा उल्लापिमायेमर्ष—अग्नि ।
 पद्माच—पद्माय कचकादको, सिन्धु—इत्यन दक्षिणमें—
 उद्भवैवका पुद्म, बर्षके—हमन काङ्क; नपाडी—
 तत्ररिमिवा तत्ररिः । आन्देय—दुष्मजिनामन्त्र
 पूना मन्त्रस्य तामिल—गिबहू-तामरके पद्मच ।
 तिलपु—एवा तामरके मन्त्र—तमर मित्रापुर—
 मित्त, अर्ध—ग दुष्मा चरक—मासुडेर, उल्लालोत्तु
 चार; पारम्पनासुकर, लोसुत्तु, वैवलोसुत्तर; प मीत्रो—
 The Sacred lotus (Pythagorean or Egyptian
 Bean) विद्यानामन्त्रि—Nclumbium Speciosum
 or Nymphaea Asiatica

माधारचता पुष्करिका म्नेस चौर छोटे छोटे प्रथा गयी तथा लक्ष्मी पादिमें पद्म उल्लाप जाता है । पद्म कता है या सुष्ठम वा सुष्ठ रसका निचय करना कठिन है । पुष्करिकोके मन्त्रस्य लक्ष्मी (काचकु)में पद्म निजकता है । पहले यज्ञे चौरमें चौरपद्म चौर मन्त्र गठित होता है । यज्ञे चर्च को पद्म परिचरित हो चर करती चौर लक्ष्मी है । चरक का चरक लक्ष्मीकोकेके कोई पद्ममें चौर कोई पुष्पमें परिचरत जाती है । त्रिम दृष्टमें पद्म या पुष्प निजकता है यह बहुत कोमल चौर कष्टक बुद्ध होता है जो नाम कचता है । पद्मको अङ्गने पद्म वा पुष्पको नाम जोड़ कर पद्म चौर प्रचारका कठक निजकता है भी नाकको पद्मका छोटा यज्ञे, कष्टक चौर चौर कोमल जाता है । इस कठकको म्नेवात् कहते हैं । यह नाममें सुष्ठि चौर सुष्पाद होता है । इन्द्रो चौर इ च प्रकृति प्राचिनक तत्र त्रिमूर्ति पद्मचरने जाते हैं, तत्र चैवम म्नेवात् तोड चर जाती हैं ।

पद्मको पद्मिनी बुद्ध मान होता है । इसका जलपुष्ट माग शोवाचरी तरह कोमल चौर चरकका माग चिह्नका होता है । इसीके अतिरिक्त मानवप्रोक्षणको 'पद्मके जनविद्युत्पद्म' इस प्रकार उपमा दिया करते हैं पद्मात्पुष्पपद्म पर त्रिम प्रचार जनविद्युत्पुष्प चर लक्ष्मी रहता, मानवप्रोक्षण मा लक्ष्मी प्रचार कचक्यायी चौर मन्त्र है । चरकमें कामार चौर शिवालयके पद्मके

प्रदेशों में निरंतर दृष्टिगत तब मात्र भारतवर्ष में क्रमशः उत्पन्न होता है। इसमें अनायास यूरप, अमेरिका, अफ्रीका और अस्ट्रेलियाद्वीपमें भी नाना जातियों पशु पाये जाते हैं। प्रायः श्रीमच्छतु-ये पट्टम या पुष्प निर्गम होता है और पुष्प गर्भस्थानमें प्रतीक किञ्चत्क स्थानके मध्य जो बीज होता है वह साधारणतः वर्षापिण्डमें परिपक्व होने लगता है। कच्चा बीज खाने में ठीक वादायकी तरह सादा लगता है, प्रथम ही बीज मोमनकी खोईकी तरह भूत कर खाया जाता है। मृत्त बीजमें गतिमन्त्र-वृत्तको सुन्दर माना प्रसूत होता है। प्रत्येक फलमें १८-२० बीज रहते हैं।

पट्टमको नान वा डंठलमें एक प्रकारका जरायु श्वेत वर्णका सूक्ष्म सूत्र निकलता है। इस सूत्रमें चिट्टे-देवमन्दिरादिमें प्रदाय वाननेक लिए एक प्रकारका पनोता प्रसूत होता है। व शीतलतमें उक्त सूत्र द्वारा निर्मित वृत्रसे चक्र दूर रहता है। पशु-बीज वान को तरह बागीक प्रग रमता है जिस किञ्चत्क कर्तते है। उसमें धारकता शक्ति है और वह प्रभावत शीतल होता है। अङ्गिक प्रदाय प्रगसे रक्तस्राव और रक्त साक्षिप्य रोगमें (Menorrhagia) यह विषय उपकारी है। बीजका भक्षण करनेमें वमनेच्छा निवारित होती है। वान-वानिकाकी प्रभाव वन्द ही जानी पर यह सूत्रकारक और गौत्रकारक औषधरूपमें श्रेष्ठ हत जाता है। गात्रचर्म के दाहसमन्वित पक्षर उषरमें शीतकी पद्मपत्र पर सुलानिष गात्रदाह उपगम होता है। कहीं कहीं देवमन्दिरादिमें पशुपत्र पर नैवेद्यादि लगवा जाता है। साधारण मनुष्य पट्टमपत्र पर भोजन करते हैं। पद्मकी नान और पत्रसे दूधकी तरह एक प्रकारकी रस निकलती है जो उदररोगप्रयोगमें अमोघ औषध है। पुष्पके टलमें धारकता शक्ति है। डाक्टर इमरसनके मतमें इसकी लडकी पोस का टट्टरोग श्रवण अन्त्यान्व चर्मरोग प्रलेप देनेसे त्वक्रोम विमुक्त होता है। इस लताके रसको वसन्तरोगम शरार पर लगानेसे गात्रकी उबाला निवारित हो कर श्रेष्ठ इतना शीतल हा जाता है, कि गात्रचर्म पर अधिक परिमाणमें गोटी निकलने नहीं पाता। गात्रकण्डू, विषय

आदि सभी प्रकारके सम्प्लोटकरोममें यह प्रलेप हितकर है।

Nelumbium Speciosum जातीय उष्णदेशीय पौधा-की प्राकृति शक्ति शीतल है। इसका धृण वादायकी तरह नानाकार पाटलवर्ण, सिद्धोन्वर्ण वा लोहिताम ज्वेतवर्ण होता है। इसमें कोई विषय गन्ध वा स्वाद नहीं है। इसका एक दात्र सुपारीको तरह कठिन और काला तथा प्राकृति गोल वा डिम्ब-मो जाती है। इसका सफेद गुटा सुस्वादु और तैनाक्त होता है, पदार्थगत्व और भौषज्यत्वसे मन्वर्थमें इसके दान, नास और जडका गुण शुद्धोष्ण (Nymphaea Lotus) के समान है। डाक्टर एण्डरसन (Civil Surgeon J. Anderson M. B. Bynn, N. W. P.) ने लिखा है, कि इसका दात्र सायद्योगी औषधमें एक वल-रज औषध है। चानो और जन्म माय अल्प मात्रा में (1/2 Drachm) पान करनेसे च्चर्म गौत्र-कारक होता है। अधिक उष्णमें प्रयोग करनेसे सूत्र-कुच्छ दूर हो जाता है और प्रसोना निकलने लगता है। शीतपट्ट (Solar fever) तथा दाह्युक्त च्चर्ममें इसकी जड, नान पत्र और पुष्प विषय उपकारी है। पशु पुष्पमें मधुमक्खी द्वारा आहत जो मधु छत्तेमें पाया जाता है, उसे लवण माय घम-र शीतकी पत्र पर लगानेसे चक्षुरोग जाता रहता है। इसके अन्तर्विशिष्ट लडके अंशको लोठा तिल तैलमें सिद्ध कर मस्तक पर मालिश करनेसे चक्षु और मस्तिष्कका प्रदाह नष्ट हो जाता है। कभी कभी जडकी चरकर उसकी रसको मिलानेसे हो काम चन सकता है। सपेदंष्ट व्यक्तिको इसका गर्भकेशर कालो मिचके माय पोम कर खिलानेसे तथा वज्रिय चतस्थान पर प्रलेप देनेसे विष वहुत जवद दूर होता है।

भारतवर्षमें इसको जड और मृणाल खाते हैं। आश्विनमासमें पत्र लगे हुए उठतकी तोड़ रखते हैं और जब तब उपका पत्तियां सज नईं जातों, तब तक उसे छते तक भी नहीं। वादमें उसे खण्ड खण्ड कर भूतते हैं अथवा अन्त्यान्व समालेप साथ चटनी बनाते हैं। सिन्धु और बम्बईप्रदेशके नाना स्थानवासी इसको जड

पट्टम (*Nymphaea aculeata* or *Isaborneliya*) पाया जाता है। इसकी सुमधुर गन्धरी इजिप्टवासीगण इतने प्रसन्न होते हैं, कि वह प्राचीनकालमें उन्हें ही इस पट्टमकी पवित्र मसजद कर प्रस्फुटिमें खोद रखा है। उत्तर अमेरिकाके फ्लोरिडामें ले कर कैरोलिना तक विस्तृत स्थानोंमें एक प्रकारका मीगन्धयुक्त पद्म (*N. Odorata*) नत्पन्न होता है जिसका रंग लाल है। यह पूर्व लिखित पट्टमके जैसा गुणविशिष्ट माना गया है।

डेमेरारा नामक स्थानमें *Victoria regia* नामक एक प्रकारका बड़ा पट्टम पाया जाता है। इस पट्टमका व्यास १५ इंच और पत्रका व्यास ६॥ फुट होता है। पत्तीकी आकृति थालीकी तरह गोल होती है और चारों ओरका किनारा थालीके जैसा ३-५ इंच नरक ऊपर उठा रहता है। अन्यत्र पत्तीकी तरह इसका विचला भाग कटा नहीं होता। ऊपरी भाग सफेद, सब्ज और चिकना होने पर भी भीतरकी पौठ लाल और कण्टकयुक्त होती है। इस पट्टम पर पञ्चराशिकी तरह अनेक ऊंची नीची शिराएँ पत्रके तल भाग पर देखी जाती हैं। पत्र और पुष्पको लाल तथा पत्रका तलदेश कण्टकाकोण है। यह पुष्प लाल रंगीका तथा असंख्य पत्तीका होता है। उत्तर और पूर्व अफ्रेलिया द्वीपगणमें एक प्रकारका बड़ा नील पद्म पाया जाता है। ऐसे प्रस्फुटित पट्टमका वयस प्रायः १२ इंच देखा गया है। बीज और विकसित पुष्पको लालमें रेशी नहीं रहनेसे वह वहाँके आदिम अधिवासियोंका एक उपादिय खाद्य पदार्थ समझा जाता है। थलावा इसके छोटा रक्तकमल (*Nymphaea rosea*) और चीन, रूप तथा खासिया पर्वत पर हाफलाउन सुद्राकी तरह एक प्रकारका सुद्र पट्टम (*Nymphaea Pygmaea*) उत्पन्न होते देखा जाता है।

पहले जिम पीन वा जरट वर्णके पट्टमकी कथाका उल्लेख किया है, वह अक्सर भारतवर्षमें नहीं मिलता, उत्तर अमेरिका, माडगिरिया, उत्तर जर्मनी, लापलैण्ड, नौरवे, स्काटलैण्ड आदि स्थानोंमें मिलता है। *Nymphal lutea* or *yellow water-lily*, *N. pumila Dwarf yellow waterlily* और फिला डेलफिया तथा

कनाडा नामक स्थानमें *N. advena* नामका फुल लक्षणाक्त घग्घवा सिष्ट टोनी प्रकारके जनमें उगते देखा गया है।

हिन्दू और बौद्ध गान्धर्वमें पद्मकी विगेष सुख्याति देवनेमें प्राती है। बौद्धगान्धर्वमें पद्म 'पद्मपत्ति' नामसे उल्लेख किया गया है। अस्तिककी आकृति पट्टम-मा है। एतद्विन्न पट्टमके ऊपर टण्डा रमान वा उपविष्ट हिन्दू और बौद्ध ज्ञाथानो तथा चीन ट्रेगीय देवदेवोकी मूर्ति कल्पित और चित्रित होता देखी जाती है।

साधारणतः जो तीन प्रकारके पट्टम देखे जाते हैं उनमेंसे श्वेत पद्म पुण्डरीक, लाल पट्टम कीकण्ट और नीलोत्पल इन्दोवर नामसे प्रसिद्ध है।

समग्र वृक्ष पट्टमनी, फल कर्मिकर, पुष्पस्थित मधु-मकरन्द, पत्र और पुष्प डंठल लाल, जलमध्यस्थ नामक स्थान, पुष्पका गर्भस्थ सूक्ष्म सूक्ष्म सूत्रविशिष्ट स्थान किञ्चलक, उमके ऊपरका भाग बीजकोष, उसके पार्श्व-सूक्ष्म सूत्र पट्टमके शर, उमके ऊपरके छोटे छोटे सफेद बीजरी तरहका पट्टम पुष्परेणु, वा किञ्चलक कङ्कालाता है कविगण पट्टमके माथ नर नारी अथवा देव-देवोके चक्षु और सुवकी उपमा देते हैं।

वैद्यके मतमें पट्टम कषाय, मधुर, शीतल, पित्त, कफ और अस्त्रनाशक, पट्टमबीज वमननाशक, पट्टम पत्रकी शय्याशीतल और टाहनाशक तथा पट्टमपुष्पगुद-भ्रंशहर माना गया है।

२ पट्टमक, हाथीके मस्तक या सृङ्ग पर बने हुए चित्र विचित्र चित्र। ३ व्यूहविगेष, मेनाका पट्टम व्यूह।

"यतश्च भयमाशङ्कते ततो विस्तारयेद्बलं।

पद्मेनैव ध्यूहेन निविशेत सदा स्वयं।"

(सु ७।१८८)

४ निधिभेद, कुशिरकी नौ निधियोंमेंसे एक निधि। ५ संख्याविशेष, गणितमें सोलहवें स्थानकी संख्या। ६ तत् संख्यात्, वह जिधमें उतनी संख्या है। ७ पुष्कर मूल। ८ पट्टमकाशीपधि, कुट नामकी शीपधि, ९ बौद्धके मतसे नवतभेद, वहाँके अनुसार एक नक्षत्र का नाम। १० बीमक, सीमा। ११ कल्पविशेष,

पुराणानुसार एक कर्मका नाम । ११ शरीर स्थित पद्मकर्म, तत्रैव यमुना शरीरके मोतरी मानका पर स्थित कर्मन जो मोतीके रगका घोर बहुत हो प्रकाशमान माना जाता है । 'इति क' इति है । ११ यथायमं पद्म मन्दं तत्रैव चो जगत् प्राय' पद्ममंथरका जो जोड़ होता है । १४ टायरि । १४ नागविशेष एक नागका नाम । १५ पद्मानगराजक । १७ इत्येव । १८ मोनक प्रकारके रतिर विधीर्मे एक । "इत्याम् इव जगामिन्द्र नारी पद्यामोरी ।

शेदुगठ बसाइएर वसीडं पद्मसंज्ञकः ३" (रतिम०)

१८ नरकमिद पुराणानुसार एक नरकका नाम । २० बाहुके एक विन्दु का नाम । इत्येति ८०८ते ८८० ई० तक राजा किया था । इति ममका तामसुत्रा परि मरि है । २१ एक प्राचीन नगर । २२ मपमिद । २३ कम्पूहोयके दक्षिण-पश्चिमी अवस्थित एक भूभाग । २४ मारकाइ राजके एक राजा । इतिमि उडोमा घोर निजमान सुने वनाथन मदेय कोना था । २५ मद्राका पुत्र मद्र । इत्ये देका । २६ एक राजा ; कम्पूहय के पात्रत सुनिजोमं इति का कथा कृपा था । २७ कुमारानुचामद, कालि कपक एक यमुवरका नाम । २८ कैनाक यमुना नगरके नई कर्मकर्ताका नाम । २९ काशमोरके एक राजमन्त्री ; इतिमि पद्मकवामा का मन्दिर घोर पद्मपुर नगर कावन किया था । ३० सामुद्रिकके यमुनार परैरका एक नियेव साकार का चिह्न । यह चिह्न साम्यद्वय माना जाता है । ३१ किशो श्मशके वातके मानका नाम । ३२ किष्कि एक पाहुनका नाम । ३३ एक प्रकारका यामुवक का कर्म में पहना जाता है । ३४ मरार परका नर्थेद दान । ३५ शीपक फल पर बने हुए चिह्न बिबिन्न चिह्न । ३६ एक शी सुरोपर बना हुआ एक जो गिष्काका पाठ हाथ जोड़ा कर । ३७ एक पुराणका नाम । पुराण देका । ३८ एक नर्थेद । इतिमे प्रमक कर्णमें एक नरक, एक शगक घोर कर्मने लघु गुण वासे है ।

पद्मक (म० व०) पद्ममिब आठतीति पद्म केक पद्म मनिह्रितामव स्त्रान् तपोव । नत्रनुलकित पुम्या कार विन्दुबमुह । २ पद्मकाठ । इति का गुण—गुणर,

तिर; योतन वातन, लघु विगर्, दाह, विष्णो, कुत्र- संस, पद्म घोर पित्तनामक, गम व व्याप, दक्षिण, कति, मय पाण्डकायायक । ३ कुठापधि, टट नामका योपधि । पद्मघाणे कम् । ४ पद्म मन्दायै । ५ म्नायतन- मट । ६ क्सेतकुठ क्तिन् कोड़ । ७ मेनाका पद्ममूह । पद्मकण्डक (म० पु) सुदुरामदे, एक प्रकारका रोग । पद्मकन्द (म० पु०) पद्मक कन्द । १ कर्मकन्द, कर्मन- की त्रक, सुरार ; पवा—मान्क, पद्ममूक, कटाइए मासुक, कलाकूक । गुण—कट, विहृष्यो । माय- प्रकामके मतने इह का गुण—शोतन ह्वय, पित्त, दग् रज्जदोषनामक गुण, न याहा । २ कर्मकण्डिकेय पापी में रज्जोपायो एक प्रकारको चिहिया ।

पद्मकर (स० पु०) पद्म करे यका । पद्मकवत् विष्णु, पद्मपाधि ।

पद्मकरघोर (क० पु०) पुण्ड्रद्विधेय ।

पद्मकण्डक (म० पु० शो०) कर्मकाय पद्ममोह ।

पद्मकिकि का । स० शो० । १ पद्मकाकरमें मज्जित पना मन्थतीका मन्थ माव । २ कर्मकण्डिके का ।

पद्मकल्प (म० पु०) कर्मभेद, विगत भेव कल्प ।

पद्मकाद्युत (स० शो) पद्मकलोह पद्ममभेद ।

पद्मकाठ (म० शो०) पद्ममिब गन्धवत् काठ । चापधि- विमय इवनामव्यात सुमन्थ काठ । पपाय—पद्मक, योतन, योत, साम्य, योतक, कित्त, घुम, शिदरत्र रज्ज याटकापुपवैशम म्पुमूह । गुण—योतक, तिह, रज्जविलनायक, मोह दाह क्क, भ्राति, कुठ विन्शोट घोर गालिहारक । रिशे (१४९९ पद्म मयमें देका ।

पद्मकाण्डक (म० शो०) पद्मकाण्ड, पद्म नामक का इव ।

पद्मकण्डक (म० पु०) पद्ममंथर, कर्मकका कर्मर ।

पद्मकिन् (म० पु) पद्मक विन्दुनाममन्थक इति मूत्रं ह्वय, मात्रपमका पिड ।

पद्मकोट (स० पु०) कर्ममज्जितिकाभेद, एक प्रकार का कर्कराका कोड़ा ।

पद्मकूट (म० व०) ; प्राचीन जगत्भेद, एक प्राचीन दिन जहा नुमांका कासाद बनाया गया था ।

पद्मकृत (म० पु०) १ मन्थकाभेद, पुराणानुसार मन्थके एक पुत्रका नाम

पद्मकेतु (स० पु०) केतुभेद, बृहस्पतिताके अनुसार एक पुच्छल तारा जो मृगशिराके आकाशका होता है। यह केतु पश्चिमकी ओर एक हो रातके लिए दिखलाई पड़ता है।

पद्मकेसर (स० पु० स्त्री०) पद्मस्य केसरः। किञ्चलक, कमलका केसर। गुण—मनसंघाहक, शीतल, दाहनाशक और अर्शका स्त्रावनाशक।

पद्मकोप (स० पु०) पद्मस्य कोपः। १ पद्मका कोप, कमलका संपुट। २ कमलके बीचका छत्ता जिसमें बीज होते हैं।

पद्मक्षेत्र (स० स्त्री०) लड़ीसाके अन्तर्गत चार पवित्र क्षेत्रोंमेंसे एक।

पद्मखण्ड (स० स्त्री०) १, पद्मपरिवेष्टित स्थान। २ पद्म समूह।

पद्मगन्ध (स० त्रि०) पद्मस्यैव गन्धो यस्य। १ पद्म-तुल्य गन्धयुक्त, जिसमें कमल-सौ गन्ध हो। (स्त्री०) २ पद्मकाष्ठ, पद्मनामका वृक्ष।

पद्मगन्धि (स० पु०) पद्माख या पद्मनामका वृक्ष।

पद्मगर्भ (स० पु०) पद्मगर्भः कुक्षिरिव यस्य विष्णुनामिकमर्षीतत्वात् तथात्वं। १ ब्रह्मा। २ विष्णु। ३ सूर्य। ४ बुद्ध। ५ एक बोधिसत्व। ६ कमलका भीतरी भाग। ७ शिव, महादेव।

पद्मगिरि—नेपाल राज्यके काठमाण्डू नगरसे दक्षिण पश्चिम में अवस्थित गिरिभेद। इस पर्वतके ऊपर स्वयम्भुनाथका मन्दिर है। पद्मगिरिपुराणमें इसका माहात्म्य वर्णित है।

पद्मगुण (स० स्त्री०) पद्मगुणयति प्रासनत्वेन गुणक, टापू। लक्ष्मी।

पद्मगुप्त—मालवराज वाकपतिकी रमाके एक राजकवि। इन्होंने नवसाहस्राब्द-चरितकी रचना की। इस ग्रन्थमें मालवका बहुत कुछ ऐतिहासिक विवरण भी वर्णित है। परमार-राजवंश देखो।

पद्मग्राम—विन्ध्य प्रदेशके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। पद्मगृहा (स० स्त्री०) पद्ममालया, लक्ष्मीका एक नाम। पद्मचारटी (स० स्त्री०) १ स्थलकमलिनी, स्थलपद्म। २ नवनीतखोटी।

पद्मवारिणी (स० स्त्री०) पद्ममिव चरतीति चरन्निजि स्त्रियं डोप। १ उत्तरापथ प्रसिद्ध स्वनामख्यात मत्तमिद, स्थल-कमलिनी, गेंटा। पर्वग—प्रच्छया, अतिचरा, पद्मा, चारटी। २ भार्गो, चरद्वी। ३ शमोष्ठक। ४ हरिद्रा, हलदी। ५ लाक्षा, लावण। ६ इडि, तरकी।

पद्मज (स० पु०) पद्ममात् विष्णुनामिकमन्वात् जायते जनः। ब्रह्मा, चतुर्मुख।

पद्मजस्तु (स० पु०) पद्मस्य तन्तुः। मृगान, कमलकी नाल।

पद्मोर्ध्व (स० स्त्री०) पुष्करमूल।

पद्मदर्शन (स० पु०) १ श्रोत्राक्ष, लोहवान। २ सर्जरस। पद्मवातु यक्षणापुण्डरीक नामक बौद्धग्रन्थवर्णित दोष-भेद। अरनेमि नामक एक राजा यहां रहते थे।

पद्मनन्दी—१ प्रसिद्ध दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्दका नामान्तर। कुन्दकुन्दार्थ देखो। २ रावणपाण्डुशाय टोकाके रचयिता।

पद्मनाहिका (स० स्त्री०) स्थलपद्मिनो।

पद्मनाभ (स० पु०) पद्मनाभो यस्य, अच् समासान्तः (अच् प्रथमव्ययपूर्वात् सामञ्जेः। पा ५।४।७५) ब्रह्मा-त्वत्तिकारिणी भूतपद्मस्य नामिजातत्वादस्य तथात्वं। १ विष्णु। शयनकालमें पद्मनाभ विष्णुका नाम लेनेसे अशेष फल प्राप्त होता है।

“अथैवे चिन्तयेद्विष्णुं भोजने च जनार्दनं।

शयने पद्मनाभश्च विवाहे च प्रजापतिं ॥”

(बृहन्नन्दिकेश्वर पु०)

२ महादेव। पद्ममिव वक्तुं लाकृतिः नामिधंस्य। ३ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम। ४ नागविशेष, एक सर्वेका नाम। ५ उत्सर्पिणीका जिनभेद, जैनेके अनुसार भावो उत्सर्पिणिके पहले अहेतका नाम। ६ स्वप्ननास्त्रविशेष। ७ शत्रुके फोंके हुए अस्त्रको निकल करनेका एक मन्त्र या युक्ति। ८ मार्गशीर्षमें एकादश मास।

पद्मनाभ—१ मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत भीमलिपत्तन जिलेका एक प्राचीन ग्राम। यह मन्दा० १७° ५८' ०" और देशा० ८३° २०' ०" के मध्य विजयनगरसे १० मीलकी दूरी पर अवस्थित है। पद्मनाभ या विष्णुका पवित्र-

द्विज होनेके कारण यह स्थान प्रसिद्ध है। यहाँके विष्णु-
माहात्म्यमें लिखा है, कि यहाँके निरिगिच्छर पर पानि
भूत को कर शोच्यन्ति वनवासो पाण्डनेति कथा वा,
“मै पपना गङ्ग धोर पक्ष यहाँ कोइ जाता ज तुम
मोम इनको पूजा करना। रतना यह कर मनवान्
गिच्छरदेम पर यह यह एक कर बने गये। लक्ष्मी से
नामातुकार इस निरि धोर निरुटवर्ती नगरका पद्म
नाम नाम पड़ा है।

यहाँतके गिच्छर पर पति प्राचीन यज्ञ-यज्ञ प्रतिष्ठित
है धोर प्राचीन मन्दिरका भू धारणय मो देखनेमें जाता
है। इनके पास जो विजयरामराजने एक मन्दिर बनवा
दिया है। मन्दिरके लपर जामिके लिये १२८० मोड़िया
कयो हुई हैं। निरि गिच्छर परसे मो सुविपनन मन्दर,
धागापक्ष, वि वाचन धोर विजयनगरका छत्र भवन
गोचर होता है। यहाँतके पक्षाद्यमें कुन्तिमाधव जामोका
मन्दिर, सुख ब्राह्मण धोर योक्कीं शूद्रके मन्थान
है। इसके पास जो पुत्रसुखिका मोदोहनी नामको
एक छोटी खोतखतो बर गई है। विजयरामराज धनेक
नमक तक पद्मनाभमें रड़े है। १८८३ ई०को १० मी
जूनको लनके लाम प कोके शिनाका जोलर बुध हुआ।
बुधमें विजयरामराजको पक्ष, हुई।

पद्मनाभ दासिवायवालोका एक परिवर तीव है।
रामातुजकामो, भीपण्डने पारि इध तीयमें जाये है।
२ शिवाङ्कड़ राज्यके पन्थगत एक पति पुत्राकाल
धोर प्राचीन नगर। वनवासानी विष्णुका चित्र होनेके
कारण यह स्थान वनवासयन नामसे प्रसिद्ध है।
ब्रह्माण्ड कथपुराणके पन्थगत वनवासयन प्राकार्यमें इस
स्थानका पोपाचिक आस्थान बरित है।

पद्मनाभ—१ माण्डराचार्यभूत एक प्राचीन ज्योतिर्विद्।
इन्का बनाया हुआ भोजयचित “पद्मनाभकोश” नामसे
प्रसिद्ध है।

- १ इयङ्गुमारचरितोत्तरपोठिकाके रचयिता।
- २ माहाविन्धीय आचारण यह होपिकाके रचयिता।
- ३ कालोनकाके विषय, रामासिद्धबाबायके प्रथिता।
- ४ इयङ्गुमारदोह महाकाव्यके रचयिता।
- ५ अक्षयदेवके पुत्र, एक विद्वान् ज्योतिर्विद्।

पद्मनाभरचित निम्नलिखित ग्रन्थ पाये जाते हैं—
नाम दो नामक करचक्रुद्वयोका, यहपचप्यवा
बिहार प्रानप्रदोय, ब्रह्मव्यथाधिकार। इस ग्रन्थमें
ग्रन्थकारने नाम दोकात्र नामसे पपना परिचय दिया है।
सुवनदोय वा यहमान प्रशाम, निजानयन, लम्प्या, लम्ब-
हार प्रदी।

० एक प्रसिद्ध नैद्याविक। इनके पिताका नाम
बलमङ्गलमाताका विजयको धोर आताका योवईनमिच
तथा विजयनाथ वा। इन्होंने विरवावसीमाप्यर, तख
विष्णामिषयीका तखयकाधिकारोका राधाशमुका
चार धोर वावादादरुसा नामको वसकी टोका धोर
१६३८ सम्पत्में बीरमद्वैय लम्प्यो रचय्य की।

पद्मनाभदत्त—एक प्रसिद्ध नैयायकार। इन्होंने सुपद्म-
न्याकरच, सुपद्मपञ्चिका, प्रयोगदोषिका लकादिहृति,
पातुकोधुको, यक्ष सुकप्रति, परिमाया, सोपानचरित,
आनन्दलहरोटीका कल्याचार-चन्द्रिका धोर मूर्ति
प्रयोग नामक सङ्गत पमिधान बनाये हैं। इन्होंने
परिमायामें अपने पूर्वपुत्रयोका इस प्रकार परिचय
दिया है—

यहाँशास्त्रविभारद पररचित, कनके पुत्र अविमा-
प्याकैतलवित् म्बाबदम म्बाबदपथे पुत्र पाचिनीबाबै
तलवित् पुत्रै, कुचैठके पुत्र भीमोमायाप्यारन
कदाटिख कवादिजके पुत्र माँवयाप्यविभारद नथियर
(यचपति), नथियरके पुत्र रचमभूरीकार मानुदत्त
मानुदत्तके पुत्र विदयाप्याकैतलवित् कलापुत्र, कलापुत्र-
के पुत्र स्मृतिमाप्यारतलवित् श्रीदत्त, श्रीदत्तके पुत्र
बैदानिक मनदत्त, मयदत्तके पुत्र आथाक आरकारक
दामोदर, दामोदरके पुत्र पद्मनाभ।

पद्मनाभदोषित—एक विद्वान् रसायन। इनके पिताका
नाम वा सोपाक, पितामहका भारादय धोर सुकका
गितिबद्ध। इन्होंने आत्मायनसुबपति, प्रतिहाइपथ
धोर प्रयोगदोषकी रचय्य की।

- पद्मनाभवीर (व० डी०) पद्मनाभरचित भोजयचित।
- पद्मनाभि (व० पु०) पद्म नामो यक्ष, लमायालविधेर
निम्नलात् न पथ; पद्मनाभ, विष्णु।
- पद्मनाल (व० डी०) पद्मपक्ष नाक। यवाक, वमलकी
नाथ।

पञ्चनिधि (स० स्त्री०) कुचेरको नौ निधियोंमेंसे एक निधि का नाम ।

पञ्चनिधेक्षण (स० त्रि०) पद्ममण्डप चक्षुयुक्त, कमलके समान नीलवाला ।

पञ्चनिमोलन (स० पु०) प्रस्फुटित पद्मका मञ्जीवन ।
पञ्चनेत्र (स० पु०) बुद्धविशेष बौद्धोंके अनुसार एक बुद्धका नाम किनका खवतार अभी होने को है । २ एक प्रकारका पत्ती ।

पञ्चगण्डत—नागरसर्वस्व नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता ।

पञ्चपत्र (स० स्त्री०) पद्मस्य पत्रमिश्र, पद्मपत्रमाट्टयादस्य तथात्वं । १ पुष्करमूल पुष्करमूल । पद्मस्य पत्र । २ कमलपत्र ।

पञ्चपर्ण (स० स्त्री०) पद्मस्य पर्णं पत्रं । पद्मपत्र, पुष्करमूल ।

पञ्चपलाशलोचन (स० पु०) पद्मस्य पलाशे पत्रे लोचने यस्य । विष्णु ।

पञ्चपाणि (स० पु०) पद्मं पाणौ यस्य । १ भद्रा । २ बुद्धमूर्त्तिभेद श्रृंग बोधिसत्व । श्रुतिभेदे देवपुत्र । नेपालके प्रौराणिक ग्रन्थमें पद्मपाणिके कुछ नामान्तर ये हैं—

कमलो, पद्महस्त, पद्मकर, कमलपाणि, कमलहस्त, कमलाकर आर्यावलोकिदेवर, आर्यावलोकेवर, लोकनाथ ।

तिब्बतमें ये 'चिनरीमी' (श्रवणोक्तिदेवर) 'जुगचिग सल' (एकादशमुख), 'वग्तोङ्ग' (मन्त्ररचक), 'चकन पञ्चकर्पा' (पञ्चपाणि) इत्यादि नामोंसे तथा चीनदेशमें 'कनरसे उतै' और 'कन्-श-यिन्' (परमकारुणिक) इत्यादि नामोंसे पुकारे जाते हैं । बौद्धसमाजमें पञ्चपाणिको उपासना और धारणाविशेष प्रचलित है । नेपालमें विशेषतः तिब्बतमें बौद्धगण दूसरे सभी बौद्धदेवदेवियोंसे पञ्चपाणिकी पूजा और उनके प्रति अधिक भक्ति दिखाते हैं । तिब्बतवासियोंका कहना है कि पञ्चपाणि ही शाक्यमुनिके प्रकृत प्रतिनिधि हैं । बोधिसत्वके निर्वाणलाभ करने पर लोग कहने लगे— 'अब जोधोंके प्रति कौन दया करेगी ? वादमें पञ्चपाणि बोधिसत्वरूपमें आविर्भूत हुए । उन्होंने बुद्धमार्गको रक्षा,

अपने मतका प्रचार और सब जीवों पर दया करनेके लिये श्राव्हील्लग कर दिया । उन्होंने प्रतिज्ञा कर ली कि जब तक मैं ब्रह्म बुद्ध आविर्भूत न होंगे, तब तक वे निर्वाणलाभ करके सुखावतोपाम जानेकी चेष्टा नहीं करेंगे । बौद्ध लोग आपद् विपद्में पञ्चपाणिकी स्मरण किया करते हैं ।

पञ्चपाणिकी नानामूर्त्ति कल्पित हुई हैं, कहीं एकादशमुख, अष्टहस्त और कहीं कुछ । एकादशमुख चूहाकारमें याक थाकमें विभक्त रहता है । प्रत्येक थाकका वर्ण भिन्न भिन्न है । कण्ठके निकट जो तीन मुख हैं वे भेद हैं, पीछेके तीन मुख पीले, बाद तीन लाल, दगवा मुख नोना प्रौर ग्यारहवा मुख लाल है । तिब्बतमें इसी प्रकारकी मूर्त्ति देखी जाती है । जापानमें ये ११ मुख बहुत छोटे मुकुटाकारमें हैं, उनके मध्यमें दो पूर्ण मूर्त्ति देखी जाती हैं । ऊपरकी मूर्त्ति खड़ी और नीचेकी बेंठी है ।

नेपाल और तिब्बतमें दो हाथवाले पञ्चपाणि देखे जाते हैं, एकके हाथमें श्वेतपद्म है । शेषिधर देखो ।

तिब्बतवासियोंका विश्वास है, कि पञ्चपाणिकी ज्योतिर्विकीर्ण हो कर कभी कभी दलईनामाके रूपमें अवतारण होता है । ३ सूर्य । ४ पञ्चरत्नक ।

पञ्चपाद—शङ्कराचार्यके एक प्रधा शिष्य । माधवाचार्यको शङ्करविजयमें लिखा है—समन्दन नामक एक शिष्य शङ्कराचार्यके बड़े हो भक्त और आत्मानुवर्त्ति थे । शङ्कर उन्हें अपने पास रख कर सर्वद परमात्मतत्त्वका उपदेश दिया करने थे और स्वरचित भाष्यमसूहकी उन्हें तीन बार पढा चुके थे । एक दिन शङ्करने गङ्गाके दूसरे किनारेसे उन्हें बुलाया । उनकी खला गुदभक्ति देख कर पार छीत समय गङ्गा उनके पद पदमें पञ्चमसूह विकसित करने लगी । समन्दन उन कमलजुसुमीके ऊपर पर रखते हुए किनारे पहुँचे । उनकी भक्तिकी तुलना नहीं है यह कह कर शङ्कराचार्यने उन्हें आश्रित किया और उनका पञ्चपाद नाम रखा । पञ्चपाद हमेशा गुरुके पास हो रहते थे । उन्होंने कापालिकके काराल कवलसे गुरुका उद्धार किया था ।

मोरपुराणके ३८३ वीर ३.३३ पञ्चाशतमे वीर पद्मपुराणका
 चारु वीर पद्म पञ्चेतसस्वित् नामने वरि १ इव
 ५ । मन्वन्तारं देवो ।

पद्मपुराण पनेव व दानिक प्रयोगो रचना कर गए
 है तिसमेंसे सुरगुराचार्यद्वारा मनुशक्ति केको टोका,
 पात्नानामनिरेक, वञ्जगदिका वीर प्रपञ्चसार नामक
 ग्रन्थ धारु जाते हैं । वञ्जगदके चतुर्वर्तो गियोसे को
 दृग्प्रामाणिको 'तीर्थ' वीर 'वाचम' गाथा लिखनी है ।

वञ्जगदाचार्य (म ० पु ०) वाचार्यमेद । १२१११ देणे ।
 पद्मपुर—१ आञ्जोररात्र सुकल्पिते मन्वीका वसादा वृषा
 एक नगर । १२१११ वरुण नाम नाम पामपुर है । वञ्ज
 काञ्जोरको राजधानी सीलपरी ३ कोन वचिच-पूब
 केवत नदोके किनारे बरक्षित है । पाम मो यशो
 चनेक स-पर्वोका नाम है । आङ्गान् सेत्र व लिकेयह
 म्लान पविष्ट है । २ राधातम्वर्चित यमुना तीरक एक
 पुष्यस्थान ।

पद्मपुराण (म ० स्तो ०) प्यामयवोत पटा-म मरापुराच-
 के चक्षुर्मत मरापुराचमेद । कारदोयुगाच्चर्म रम्यपुराच
 का विषय एक प्रका विद्या है—प्रथम वृष्टि-वृष्टि है ।
 पद्ममें पद्मे वृष्ट्यादिकाम नामा व्याख्यात पौर इति
 दामादि द्वारा धर्म विपार पुञ्जराशास्य ज्ञानोक्त
 विद्या, विद्याडादिकके एक टाल कोतल, कर्माविचार,
 तारकाव्याज, मोमावन्त्य, कालकेयादिदेवक, पद्मेका
 पचन पौर हाल धी मत्र विषय वर्णित है । द्वितीय भूमि
 पण्ड—इसके प्रथममें विज्ञ-माय पादिकी पूजा, गिच
 धर्मकेका जलमस्त्रको कवा सुकेश वृष्ट पौर के कवा
 प्रमोष्याज व्रिगुणु-व्याख्या न, महुषकादा वद्यानिचरित
 सुवतोर्निकद्वय वृष्ट पायाय कवा प्रमोषकन्दरीका
 कवा, वृष्टदेवकव्याप्त, कामोदान्याज, विद्ययुक्त,
 कुम्भकर्ममात्र, सिदाक्याज, मूयगोनकम भाट वि पत्र
 विषय प्रदर्शित हुए हैं ।

तृतीय धर्मपण्ड—इसमें ब्रह्मावृष्टादेवित, नभूमन्कोक
 सन्धान, तामोय्य न, लर्म होयति कवन, सुवयेजादि
 तीर्थको कवा, कानिन्दोपुष्पकवन, कामोदाहस्त्य नद्या
 लेका प्रयागवाशास्य कवाकमपुरांधवे धर्मबानिकद्वय,
 व्याजनेविनिदमात्र, मनुज मन्वन्व्याज, मन्वन्व्याज से कर
 विषय वर्णित है ।

वसोय धर्मपण्ड—इसमें ब्रह्मावृष्टादेवित, नभूमन्कोक
 सन्धान, तामोय्य न, लर्म होयति कवन, सुवयेजादि
 तीर्थको कवा, कानिन्दोपुष्पकवन, कामोदाहस्त्य नद्या
 लेका प्रयागवाशास्य कवाकमपुरांधवे धर्मबानिकद्वय,
 व्याजनेविनिदमात्र, मनुज मन्वन्व्याज, मन्वन्व्याज से कर
 विषय वर्णित है ।

चतुर्थ पाताकण्ड पद्मे रामका घञ्जमेव पौर
 राक्षसिमे १, चतुर्थपदिका पापनन, पोक्षमात्र यको
 लार्, पद्ममे कोददेव वचकर्षा, तामोदाकवा, नगद्याय
 कवन सुखावनवाशास्य, निष्कानामाकवन माचन
 एतामवाहस्त्य एतामदा । वन क्रावराहमन्वाट यस
 पौर ब्रह्मायको कवा, राधदूतम व द, वृष्ट्याक, गिन
 मधुसमायो, टकोष्यास्य न, मन्वन्व्याज, विह
 माशास्य, देवरातमुतास्य, गीतमाप्याज, गिहगोता
 कालान्वाकवमठका मरदाकालमभिति से सब विषय
 वर्णित है ।

पद्मम उक्तपण्ड—प्रथम मोरोके प्रति दिरका
 पञ्चमवाश, त्रयम्बरकावा, योमेवादिवा कर्षण,
 सारकवा, गङ्गा, प्रयाग पौर कामोका पापिपुष्पक,
 पामागिदाहमवाहस्त्य मत्र द-दगावत, चतुर्भिर्मेका
 ददोका माशास्यकवन विष्णुधर्म समाप्यान विष्णुनाम
 सङ्कत, कानि-कृततमाशास्य, माधवनामक, ज दूदोव
 पौर तीर्थ माशास्य कपु रतोका माशास्य कृति क
 त्यतिवचन देवमोदि पाकवाण, यामामाकक
 कर्षण मञ्ज्याय न, याम-मामवत वा मञ्ज्या एन्द्र
 मञ्ज्या माशास्य, चतुर्भोगी कवा मन्वन्व्यामिधान,
 विद्यादेभ्युक्तवचन, मन्व्यादि पञ्चमवाकवा, रामनाम-
 गत पौर लकाशास्य, उत्तरवृष्टमें बरी मत्र वर्णित
 हुए हैं ।

पद्मपुराणके पाँच कण्डमें विमल है । ये पद्म
 पण्ड पद्मपुराण ओ मङ्गलपूव व जवन करी है, उक्त
 केपावट नाम जोना है इः पद्मपुराणमें १६ हजार
 श्लोक है । प्रतात गतो ।

दिग्दर्शन जिनके मो रम नामके दा पुराण है
 जिनमेंसे एक रचितेनविचरित है । उन करिच यकार
 विमलेतने व्वा शनाम्नाम इन पद्मपुराणका उक्त वृष्टिया
 है । जलोर्दे चनेक पौराधिक पाष्पाविद्या इम पद्म
 पुराणमें देका जातो है । मन्वन्व्याज जीन नाम एक
 इहत् पद्मपुराण मानत है इन पुराणके सुनावना पादि
 कुञ्ज कवाप्याज हिन्दु पद्मपुराणमें मा दीये जाते हैं ।
 पद्मपुराण (म ० पु ०) पद्ममेव पण्ड यस्य । १ कविद्वार
 जय, कर्मरका पीठः । २ विद्यावृष्टो, एक प्रकारको
 विद्या । ३ पापिपुष्पकवृष्टः ।

पद्यरथ (न० पु०) राजपुत्रमैट ।

पद्यरथ (न० पु०) पद्यरथेय राजो यस्य । रत्नवर्षं सविभिसेय ।

पद्यरथी नाम कुकीको जो पद्यरथ कहति है । पुत्री कर्ममें विद्वत् विवरण देखी । 'पद्यरथमत' नाम रत्नगायत्रि-में लिखा है—

जो लोकाधी भन्नाईके लिए पुराकाकमें अब दन्दिने पद्यरथी मारना जान, तब लक्ष्मि त्रिमने पद्यका बिन्दुमात्र मो रत्न धर्मो पर गिरने न पावे, इस ध्यानमें लक्ष्मिदेवको प्राण लिखा । बिन्दु टगामनको देख कर मूर्धं कर मने पौर नर रत्न विधिद हो कर वि बनदेग में रावण मन्नारदीमें पतित हुआ । रातको उस नदीके दोनों किनारे तथा मध्यमें बह बहिर पयोताम्बिन्त् कर्मन बना । कधीन एक आतीव तीव्र प्रहारके पद्य रामको उत्पत्ति हुई ।

पद्यरथमिहरका इहवत्स हितके मतमें—श्रीमन्त्रिक, कुबचिन्द पौर स्याटिकमें पद्यरथमन्त्रिको उत्पत्ति हुई है । इनमेंसे श्रीमन्त्रिकजात पद्यरथ श्रमर, पद्मन, पद्य पौर कम्पुसके जेना शोचिमाता : कुबचिन्दजात पद्यरथ कदुबक बुध मन्द्युतिमन्त्रिक पौर वातुविक तथा स्याटिक जात पद्यरथ विविध वर्णबुध स्युतिमान् पौर विद्युत् होता है ।

रावणके मतमें पद्यरथ एक जातिका ज्ञान पर मो वर्णमेंदर पद्यरथ पर तोन प्रकारका है, सुगन्धि कुबचिन्द पौर पद्यरथ । पद्यरथ देखनेमें पद्यरथके जेना कपोतको तरह प्रभावुक्त, कोकिल नारक का चकोर पक्षीके पक्षमें जेना पौर नमकक बुध होता है । जोन म्बिक देखनेमें ईश्वर मील, गाढ़ रत्नवर्ण, काचारर, विडम्बण पौर कुट्टमके जेना चामावुध है । कुबचिन्द देखनेमें मयारक, लोभ, मिन्दूर, गुच्छा, बन्धु पौर लि शकके जेना पतितर पौर पौतवक बुध जाता है ।

पद्यरथके मतमें लि डल, काकपुर, पद्म पौर तुम्बर नामक ज्ञानमें पद्यरथ पाया जाता है । इनमेंसे वि दन में पतितरवर्ण, काकपुरमें पौतवर्ण, कर्ममें तावनासु बन्धुवर्ण पौर तुम्बरमें हरिन्त् ज्ञायाको तरहक पद्यरथ म्रियता है ।

मताम्बरमें—वि दनमें जो रत्नवर्षका पद्यरथ म्रियता है वही उत्तम पद्यरथ है । काकपुरोत्पन्न पौन वर्णको कुबचिन्द कहते हैं । तुम्बरमें जो मोन ज्ञाया वर्ण मन्त्रि पाई जातो है, वही मोनवर्ण है । इनमेंसे वि बनदेगोइव पद्यरथ कलम्, मन्त्रियत्र मन्त्रम पौर तुम्बुबदेगोइव पराम ही निष्ठक माना गया है ।

बुद्धिबन्धनमें लिखा है—रावणमन्ना नामक ज्ञान में जो कुबचिन्द उत्पन्नता है यह सूक्ष्म ज्ञान पौर परिष्कार प्रभावुक्त होता है । पद्यरथमें एक पौर प्रहारका पद्यरथ म्रियता है जो रावणमन्नाजात पद्यरथके जेना वर्णबुध नहीं होता । पौर उत्तमा मूर्धमो उत्तमे कर्म है । इसी प्रकार स्याटिकाकार तुम्बर रत्न गोइव पद्यरथ भी कर्म दामका है, बिन्दु देखनेमें सुन्दर होता है ।

जो न पद्यरथ उत्पन्न आतिथा है पौर जो न विज्ञा तोय है, इसका निर्णय करनेको व्यवस्था बुद्धिबन्धनमें एक प्रकार लिखा है—

कषोटी पर प्रिमनेमें त्रिम जो जोमा बसुने पद्यरथ परि म्बिक मी नष्ट नहीं होता, वही ब्राह्मपद्यरथ है । त्रिम में ऐसा गुण नको है उसे विज्ञातोय नमभन्ना चाहिये । जोरक जो चाहे माचिक, ज्ञानतोय ही पद्यरथको घटा कर रक्षनेमें पद्यरथ एक दूधरेमें बिमनेसे यदि कीर्ण टाग न पड़े, तो लकीको आतिपद्यरथ ज्ञानका चाहिये । फिर भी, जगमें छोटे छोटे बिन्दु का जो देखनेमें ज्ञाना चमकोना न हो, इनमेंसे जिसको दोन्नि कर्म ही जाती हो, उ यथांमि प्राण्य करनेसे त्रिमके पार्थमें ज्ञानो चामा विचारि दकता जो वही विज्ञाति पद्यरथ है । इसके चमका दो मन्त्रि से कर नमन करनेमें त्रिमका नमन भातो होता । यह उत्तम पौर त्रिमका कर्म होगा यह निष्ठक पद्यरथ नमन्ना जाता है ।

पद्यरथ रव्यामन्त्रिक पद्यरथमें न प्रकारके दोष, उ प्रकारके गुण पौर १५ प्रकारको ज्ञायाके विपद्यका नमन कर गये हैं ।

देखनेमें पद्यरथको तरहका, ऐसा विज्ञातीय पद्य रथ पांच प्रकारका है—कल्पपुरोदम्ब, वि बनकोत्त तुम्बुकोत्त, सुखमानोय पौर चापवर्ण । कल्पपुरोदम्ब के अवर तुम्बके जेना टाग रहता है तुम्बरमें कुब बुध

तास्त्रभाव श्रीर मिहलीत्येनं कालो आभा सचित्तो ह्येती
है। इसी प्रकार सुज्ञानाना चौर शोपणिकरं भो वै जाय-
वोधक चिह्न देखा जाता है। बुद्धी और माणिक्य देखो।
पद्मरागमय (सं० त्रि०) पद्मरागमयत्। पद्मरागविगिष्ट।
पद्मराज (सं० पु०) राजभेद, एक राजाका नाम।

पद्मराजगणि—ज्ञानतिलकगणिकं गुरु चौर पुण्यसागरकी
शिष्य। इन्होंने १६६० सस्वत्में गौतमकुलकवृत्तिकी
रचना की।

पद्मरेखा (सं० स्त्री०) पद्माकारा रेखा। हस्तस्थित पद्माकार
रेखाभेद, सामुद्रिकके अनुसार हस्तेको एक प्रकार-
की प्राकृतिक रेखा जो बहुत भाग्यवान् होनेका लक्षण
मानी जाती है।

पद्मरेणु (सं० पु०) पद्मरेसर।

पद्मलाञ्छन (सं० पु०) पद्मं विण्य कमलं वा लाञ्छनं
यस्य। १ ब्रह्मा। २ सूर्य। ३ कुबेर। ४ नृप ५ बुध।
(स्त्री०) ६ नारा। ७ लक्ष्मी। ८ सरस्वती। (त्रि०) ९ पद्म-
रेखायुक्त।

पद्मनेत्रा (सं० स्त्री०) काश्मीरराजकन्याभेद।

पद्मवत् (सं० त्रि०) पद्मं विद्यतेऽस्य, पद्म-मनुष्य, मय्य व।
१ पद्मयुक्त। (पु०) २ स्थलकमलिनो, गेडा।

पद्मवर्ण (सं० पु०) पुगणानुसार यदुके एक पुत्रका
नाम।

पद्मवर्णक (सं० स्त्री०) पद्मस्यैव वर्णो यस्य कप्। १
पुंकरभूल। २ कमलतुल्य वर्णयुक्त। ३ पद्मकाष्ठ।

पद्मवासा (सं० स्त्री०) पद्मे वासो यस्यः। पद्मालया
लक्ष्मी।

पद्मविजय—एक प्रसिद्ध जैनशक्ति। ने यशोविजयगणिके
सतीर्थ थे। इन्होंने ज्ञानविन्दु प्रकाशकी रचना की है।

पद्मवीज (सं० स्त्री०) पद्ममय बीजं। कमलबीज, कमल-
गट्टा। प्रतीय—पद्माज, गालो इय, कन्दनो, भेण्डा,
श्लोच्चादनी, कोच्चा, श्यामा, पद्मपर्कटी। गुण—कटु,
खादु, पिक्त, कटि, टाह और रक्तदोषनाशक, पाचन
तथा रुचिधारक।

भाष्यप्रयोगे मनसि इमन्ता गुण—हिम, खादु,
वपाय, तिक्त, गुरु, विष्टम्नि, बलकर, रुज और गर्भ
संस्थापक।

पद्मवीजाम (सं० स्त्री०) पद्मबीजमय आभा इव आभा
यम्। मय्य वफल, मखाना।

पद्मवृत्त (सं० स्त्री०) पद्मकाष्ठ।

पद्मवृत्तपदविष्कामिन्—भाषी वृद्धभेद।

पद्मवृत्त (सं० पु०) १ समाधिभेद, एक प्रकारकी
समाधि। २ प्राचीनकालमें युद्धके समय जिसो वस्तु
या वस्तुकी रक्षाके लिये सेनाकी रक्षकको एक विशेष
स्थिति। ३ ममें सारी सेना कमलके पाकारकी हो
जाती थी।

पद्मगयिनी (सं० स्त्री०) जलचर पत्तभेद, पानीमें
रहनेवाली एक चिड़िया।

पद्मगाली—ब्रह्मदे प्रदेशवासी गाला जातिको एक शाखा।
शाली देखो।

पद्मयो (सं० पु०) एक बोधिमत्स्यका नाम।

पद्मपण्ड (सं० स्त्री०) पद्ममसुद्ध, कमलका टेर।

पद्ममामन (सं० पु०) पद्मममं आमनं यस्य। १
ब्रह्मा। (त्रि०) २ जिसके पद्मसुव्य पासन है।

पद्ममश्व (सं० पु०) पद्मं विष्णुनाभिकमलं मश्व
उत्पत्तिस्थानं यम्। १ ब्रह्मा। २ एक विध्यात
वाह पंडित।

पद्मसुन्दर—एक विख्यात कैनपण्डित। ये पद्ममेरुके
शिष्य और आनन्दमेरुके प्रशिष्य थे। हर्षकीर्तिक
धनुषपाठसे जाना जाता है, कि पद्मसुन्दर तपागच्छके
नामपुरोयशास्त्राभुक्त थे। इन्होंने दिल्लीशहर अकबरकी
राममें एक विख्यात पण्डितकी परास्त किया था। इस
पर मन्त्राटने प्रसन्न हो कर इन्हें एक ग्राम, वस्त्र और
सुवासन पारितोषिकमें दिये थे। इन्होंने संस्कृत भाषा-
में १६१९ सस्वत्को 'शयमल्लाभ्युदय महाकाव्य' और
१६२२ सस्वत्को 'पार्श्वनाथकाव्य' तथा प्राकृतिभाषामें
'जम्बू स्वामिकथानक'की रचना की।

पद्मसरस् (सं० स्त्री०) काश्मीरस्थ ज्वालभेद।

पद्मसागरगणि—एक जैनाचार्य, विमलसागरगणिके शिष्य।
इन्होंने १६८७ सस्वत्में उत्तराध्ययन 'बृहत्प्राकृतिकाकी
रचना की।

पद्मसूत्र (सं० स्त्री०) पद्मका सूत्र या माला।

पद्मसरि—बृहत्प्राकृतिका एक जैनाचार्य। भासंडरचित

विश्वरूपशरीरानां तन्वत्पद्मे जी टोका एको वी, पद्म
स रतिं तमीका स योपन विद्या या ।

पद्मस्तुति (स० श्लो०) १ पद्म । २ दुर्गा ।

पद्मस्तुति (स० पु०) पद्मस्तुतिस्तुतिस्तुतिस्तुति, वर
स्तुतिस्तुतिस्तुतिस्तुतिस्तुति भी बना हो ।

पद्मस्तुति (स० पु०) प्राचीन कालको सम्बन्धे नापति को
एक प्रकारकी स्तुति ।

पद्मस्तुति (स० पु०) विष्णु ।

पद्म (स० श्लो०) पद्मं नामस्वच्छं नाल्पद्वयं, पद्मं
आदित्यं च, टाप च । १ लक्ष्मी । २ लवङ्ग, शीत । ३
पद्मचारिणो मता । ४ पद्मो, मगसादेवो । मन्वा रेकी ।
५ पद्मिनामक, गी देवा इव । ६ पद्मं मातृभेद ।
७ कुमुदपुत्र, कुमुदका पुत्र । ८ पद्मवराज-कन्या ।
कल्पितकाले साव दलका विनाश हुआ था । विनाशके
बाद यमिन्द्रदेव नवविवाहिता देवोंके साथ तिष्ठत दोपति
रहने लगे थे । अश्विपुत्रादिके १०में पद्मावली दलका
पूरा हाल लिखा है । अश्वि देवों । ९ बहुदेयमें
प्रभावित मन्वाको पूर्वो माता । १० मताको देवो एकादशो
तिष्ठति । ११ अनामक नामको नाम । १२ मन्दिता,
मन्दी ।

पद्माकर (स० पु०) पद्मस्तुति पाकर १ पद्मस्तुति
अनामक मन्वा नामका या भोव जिघंसे अमल पद्मा
वति ही । पद्माकर—तद्गान, आचार, मरुतो मरु
धरीजिनो मरुधर तद्गान, तद्गान, मरुधर, मरु
२ हिन्दोके एक मन्दि कविता नाम ।

पद्माकरदेव—मरुपतिविश्वव नामक ज्योतिःशस्त्रके रच
यिता ।

पद्माकर मन्—१ निम्बोके सम्प्रदायके एक मन्त । २
अमलमन्त्रे गिष्णु पीर खरचमन्त्रे गुह्ये ।

२ हिन्दोके एक कवि । पाप बाँटा कुन्दकण्ठके
बागो मातृमन्त्रके पुत्र है । स० १८२८में पापका अना
हुताका । पाप पक्षके पाप नाकर श्नुनाक पाप
पैदाबाई यहाँ रहते थे । पाप एक कविपक्षके मन्त्रक हो
कर पाप मातृमन्त्रके पापको एक-बाध रूपसे धारितोविकर्म

दिये । मुनं यद्यपि पाप जयपुर मये पीर मन्वा मन्वा
अमल जिघंसे नाम अमलपीर नामक पद्म बनाया ।
रस पद्मको बना कर पापनी जयपुरके राजासे बहुत
वन पाया । वृद्धावस्थामें पापनी गङ्गादेवन बनिया था ।
उसी समयका बनाया पापका गङ्गादेवो नामक स्तुति
पद्म विष्णु पादरचोव है ।

पद्माच (स० श्लो०) पद्मस्तुति पद्मो ममापि पद्म समा-
नाम्नः । १ पद्ममन्त्र, अमलमन्त्र । पद्मे इव पद्म-
स्तुति-मन्त्रे पवित्रो यथा । २ पद्ममन्त्र, अमलके समान
पवित्र । ३ विष्णु ।

पद्माचल—मरुतके पश्चिम उपसृष्टिरियत गोक्षेत्रके निजद
मूर्तीएक पवित्र विरि । मन्वा पद्ममन्त्रिधर नामक
शिव पीर धर्मरामो नामक उनको प्रतिष्ठा एक मन्दिर
है । पद्माचलमातापद्मे रसका वीरान्तक पापयान
वर्चित है ।

पद्माच (स० पु०) पद्म पद्माचल अति मन्त्रति अट
मती-पद्म । १ अमल, पद्मक । (श्लो०) २
अमल कुंठे पात्र । ३ मन्वामाताके पुत्र ।

पद्माचाम (स० पु०) विष्णु ।

पद्मानन्द—पद्मानन्दयतके रचयिता ।

पद्मानन्द (स० श्लो०) पद्मस्तुति, अमलके पत्नी ।

पद्माचल (स० पु०) मन्वा ।

पद्माचला (स० श्लो०) पद्ममेव पाचलो नासद्वान
यथा । १ लक्ष्मी । २ लवङ्ग । ३ गङ्गा ।

पद्माचला (स० श्लो०) पद्मस्तुति मन्त्र, मन्वा वल
स मन्वा होवः । १ मन्वादेवी । २ मन्वाविष्णु,
पद्मानदी । ३ पद्मचारिका, गी देवा इव । ४ मन्दि
कवि जयदेवकी पत्नी । ५ पद्मा मन्वाका माधान
नाम । ६ पद्मा मन्वाका प्राचीन नाम । ७ एक मातृक
अमलका नाम । ८ मन्वाके अन्तर्गत १०, ८ पीर १७
के विनामके १२ माताए होतो हैं पीर अमलकी दो गुह्य
होते हैं । ८ मन्वाका अन्तर्गत मन्वा नाम, अमल ।

८ मन्वाका पुत्र अमलको एक पद्मरका नाम । १०
मुनिधरको एक रात्रीका नाम ।

पद्माचला—१ वीरान्तक जयदेवके । विष्णु, मन्वा आदि
पुराणोंमें विद्या है— पद्माचला, कान्तिपुरा पीर मन्वाके

नवनाग राज्य करेगा ।' यह पद्मावती नगरी कहों है ? इसके उत्तरमें भवभूतिने मानतो माधवने लिखा है—'जहां पाग और सिन्धुनदी बहती है, जहां पद्मावतीके उच्च सौधमन्दिरावलीको चूड़ा गगनस्पर्श करती है, वहां लवणको चक्षुन तरङ्गिणी प्रवाहित होती है ।' विश्वेश्वरकालाके मध्यमें अवस्थित वत्तमान नरवारकानलपुर दुर्गके पार्श्वमें आज भी सिन्धु, पारा, लवण व नूननदी तथा मधुवार वा मधुमती नामक स्रोतस्वती बहती है । इससे यह सहजमें अनुमान किया जाता है, कि वत्तमान नरवर ही पूर्वकालमें पद्मावती नामसे प्रसिद्ध था ।

२ सिंहलराजकन्या । चित्तोरके राजा रत्नसेन उसे हर लाये थे और उनसे विवाह कर लिया था । गजनी-निवामी हुमेनने पारसी भाषामें किन्दा पद्मावत् नामक एक ग्रन्थमें उक्त उपाख्यानकी प्रथम वर्णना की है । राव गाविन्द सुंगीने १६५२ ई०में 'तुल्यत् उलव' नामसे उक्त उपाख्यानको पारसी भाषामें प्रकाशित किया । उक्त पद्मावतीका उपाख्यान जे वार उत्कलके राजकवि उपेन्द्रभञ्जने तथा प्रायः २५० वर्ष पहले आराकानके प्रसिद्ध सुसलमान कवि आलीयलने बङ्गालमें पद्मावतीकाव्यकी रचना की ।

चित्तोरका पद्मिनी-उपाख्यान ही विज्ञतभावसे इस पद्मावती काव्यमें वर्णित है । चित्तोर्राधव पद्मावतीके कवि द्वारा रत्नसेन नामसे विदित हैं । उपाख्यान विद्वत होने पर भी इस काव्यकी शेषमें गलतहोनेका पराजय प्रमङ्ग है । कवि आलीयलने आराकानराजके अमात्य मागन ठाकुरके आदेशसे पद्मावतीको रचना की । वह ग्रन्थ यद्यपि सुसलमान कविसे बनाया गया है और उसमें सुसलमानो भाव अवश्य है, तो भी हिन्दू समाजका आचार व्यवहार और प्रकृत पारिवारिक चित्र अत्यन्त सुन्दर अद्वित हुथा है । अन्य पट्टनेसे ग्रन्थकारकी संस्कृता भिन्नताका यथेष्ट परिचय पाया जाता है ।

पद्मावतीप्रिय (स० पु०) पद्मावत्याः प्रियः स्वामी । १ शरत्कारुके मुनि । २ जयदेव ।

पद्मासन (स० क्ली०) पद्ममिव पद्माकारेण वदं नामनं । १ योगासनविशेष । गोरक्षसंहितामें इस पद्मासनका विषय

इस प्रकार लिखा है—वाम ऊरुके ऊपर दक्षिण ऊरु रखते हैं आंग ऊतों पर अङ्गुष्ठ रख कर नासिकाके अग्रभागको देखते हैं । यह पद्मासन आधिना एक है ।

२ पूजाके निमित्त धातुमय पद्माकर धासन । पद्मं विष्णुनामिज्जमनं धामनं यन्म्य । ३ ब्रह्मः, रामदासन । ४ गिव । ५ गूर्य । ६ स्नान साय प्रसन्न करनेका एक धासन ।

पद्मासनडड (स० पु०) एक प्रकारका डड जो पालसी मार कर मार चुटने जमीन पर टेक कर किया जाता है । इससे टम मधता है और चुटने मजबूत होती है ।

पद्माद्या (स० स्त्री०) पट्टमस्य आद्या आख्या यस्याः । १ पट्टमचा रणोपता, गदा । २ लवण, लोण ।

पाशन् (स० पु०) पट्टभाति मन्वादिभ्यन्, पुष्करादित्वादिना । १ पद्मभुजद्वय । २ पद्मधारा विष्णु । त्रिणु शङ्ख चक्रगटापद्मधारा है इमीन उक्त पाशन् कहते हैं । (वि०) ३ पट्टमधारिनाथ । ४ पट्टमसमूह ।

पाशना (स० स्त्री०) पाशन् स्त्रिया डोप, । १ पद्मलता । पयाय—ननिनी, विजनी, सृष्ट्यादिना, कमनिनी, पद्मजिनी, मराजनी, नात्ताकनी, नात्ताकिनी, आरावान्दनी, अम्माजनी, पुष्कारणी, अन्धादिना, अजिनी ।

इससे गुण—नपुंर, तिक्त, कषाय, शीतल, पित्त, क्रिमिदाप, धमि, स्वन और सन्तापनाशक है । पद्मस्य गन्ध इव गन्धो विद्यते शरीरे यस्याः । २ कौकशाखक पनुसार स्वर्थाका चार जातियोंमेंसे सर्वोत्तम जाति । कहते हैं, कि इस जातिकी स्त्री अत्यन्त कोमलाङ्गी, सुगन्धा, रूपवती और पतिव्रता होती है । ३ सरोवर, तालाव । ४ पट्टम, कमल । ५ सृष्टाल, कमलकी नाल । ६ हास्तना, माटा हाथी ।

पद्मिनी—भामसेनकी प्रधान महिला (पटरानी) और हमोरशङ्ककी जन्मा । १२०५ ई०म लक्ष्मणसिंह मेवारके सिंहासन पर बैठे । नाबालिग होनेके कारण उनके चचा भामसिंह राजकाय की देखभाल करते थे । इसी भामसिंहने भारतप्रसिद्ध पद्मिनीका पाण्डिग्रहण किया था ।

रूपक गुण—ऐसा राजी मज्जुत कम देखी गई है । इस सौन्दर्यमयी अलोकसाभाव्या रमणीको लक्ष्य कर

देमोय कोर बिदेमोय बिजने दो बरि काय निज
 कर पतिहा नाम कर गए हैं । रद्वयनी देना । राम
 पूतपाटपथ पात्र मो उनको रद्वयन नमनो बर कर
 मन्मोहन धरि वा उनको कोति गाणा गा ता कर
 नभ साधाचको मुख किया करते हैं ।

पद्मिनाको रूप दो राजपूतजातिके पनबका चारक
 बा । सुनतान पनाउद्गोमि पद्मिनाको पानिको पातानि
 दो विलोरमि बिरा डाला ता । बहुत दिन तक छेरे रकनेके
 बाद लकने बर प्रचार कर दिया कि पद्मिनाको पा
 सेमिने दो वे भारतवष बाहु कर लने मांगी । परन्तु
 कोरबेता राजपूतोंने यह सुन कर पतिहा को कि नर तक
 एक मो राजपूत जाता सामता रहैवा, तब तक कोई भ
 सुनमान बिजोको रामो पर डाय नही रल मरता । प्र
 पनाउद्गोमिने देखा कि इनका छेरे ग्न मित्र कानिका नदी
 है तब लकानि सामनि डको रूपना भेजा, 'मै उम पद्म
 पना सुन्दरीका पतिह्यापारी विर' एक बा । इ पसे
 देख कर देय मोट जाऊता । भौमसि इ इम प्रस्ताव पर
 पद्यत हो गये । पून पनाउद्गोमिने डूक घेना से कर
 बिलोरमि प्रवेय किया । भौमसेनने पतिबिज लखारम
 एक मो बर कर कठा न रको । यहाँ तक कि
 वे पनाउद्गोमि बिदाई कामने उनक नाय दुमै तक
 पाये वे । पून पनाउद्गोमिने बिजनी खुदा जातीमि
 राजपूतोंको सुभा किया । भौमसेन पनाउद्गोमि माय
 मिष्टानाप कर हो रहि छे, कि इतने एक दस
 मकरक वदनमेना गुम लानेमि निजन कर पनाउद्ग
 भौमसि इ पर दूर पड़ा पोर लके कट कर किया ।
 पनाउद्गोमिने यह सोच बा कर दो, कि जइ तक पद्मिना
 नमिमिने तो तब तक भौमसि इका नगी उ ड मरत ।

इस दावक मवाको सुन कर बिलोरमि मन्मोहन
 मच गई । बाद कुयिमता पद्मिनामि पतिह लहाके
 निर एक नई लहाइ दूट निगानी । लकने बरा
 लहाका बरना भेजा, जम पावममपेग कर । का
 तैवार है सपिन १५५५ पहा पावयी पवराप रका
 केना पड़या । इस दा मरवा मर पाय- विर तद
 हमारे साथ जाना बाहता है, जिसके उनको मयादाम
 कोई बानि न पडुके, इसका मो पापको मन्मोहन

करना होगा । हमारो जो बिरपडिना है वे भी हमारे
 माय दिजो तक कामिने तैवार है । इन सब मद्रमदि
 नापोंको मयाग कोर सपानरचामि जिसके कुछ मूटि
 न हो तया निमने कोई इन सब सुमहाकापाके
 निकटवर्ती हो कर पनापुरविबिहा मन्मिचार न करे,
 इनका मो पाप हा लकित प्रक्य करना होया पोर
 पन्तिम बिदाई मेनेके निचे पापको भौमसेनके साथ
 हमारा सुभाकत करारो होयो । पनाउद्गोमि पद्मिनाके
 उक्त प्रस्तावों पर सहमत हो गये ।

पाँचै निम्न १८ दिनमें सात मो पावरकपुत्र विबिहा
 म गई गई । पुने हुए मात मो समस्त राजपूत वीर
 उन मित्रिहायोन जा ब ठे । पाव्यादित विबिहाप
 थारे भीर यवनविबिरके पम्पकार पडु री । पाव लप्टे
 क निर भौमसेनको प्रावप्रियतमाये मन्मनेका प्रादेश
 हुआ । पात्रा पति हो भौमसेन यवनविबिरमें रामोके
 सुभाकत करन पाये । यहाँ पडु बने हो उनको
 कुट भेनापातपानि बहुत क्षिप कर लके विबिहामि
 बिहा किया पोर मगरको पोर यात्रा कर दो ।
 पद्मिनाको मकरियाँ पन्तिम बिदाई से कर कोट रको
 है, देना समस्त यवनमिने कोई भी इक न पोवा ।
 अब पाय लप्ट कौत गया पोर सामने
 पनाउद्गोमि पावबहुना हो ठे । यह दे अ
 मके पोर पने पाखापोंको हुकूम दे दिया कि वे सब
 मावकाप आ पना विबिरक भीतर है जनना पावरक
 बतार डाला । जिन्तु पावरक लहार सेमि पर लकानि को
 देका वनम एक पार तो न राखने पोर सुमरो पोर
 मवाक वन पा कर लकके प्रदयमे लान लिया । विबिहा
 म निजक कर राजपूत कोरमच बरनों पर टूट पड़े ।
 इनका दुर्गमि वनपार हुके हुआ । राजपूतोंके मन्म बर तक
 एक भा जाता रहा, तब तक लकानि सुलसमान लैजिकों
 का पना यत राजपूतोंका पोखा करनेका मोका न दिया ।
 इस प्रकार पनाउद्गोमिका यामा पर जानो फिर गया ।
 यथर भौमसेन इन राजमें एक चीके पर बहार हो
 निरापन्व । वतार दुर्गमि मच म किया । पाँचै प्रथम
 लकानि या कर दुन पर पाका कोल दिया । राजपूत
 कोरमच पावपवक दुन को रखा कराने लगी । यह हमक

पद्मिनीके चचा गोरेने और उनके वारह वर्षके भतीजे ब्राह्मणने असामान्य वोरता दिखलाई थी।

पठानके वार वार आक्रमणमें ही चित्तौर ध्वंस-प्राय होता गया। एक एक राजपूतवीर बहुसंख्यक यवनसेनाको मार कर समरशायी होते गये। क्रमशः भीमसिंहकी मालूम हो गयी कि वे अब प्राणप्रियतमा पद्मिनी और चिरसुखके आवास चित्तौरनगरकी रक्षा दिनों-दिवसमें नहीं कर सकते। उन्होंने फिर स्वप्नमें देखा, कि चित्तौरकी पवित्रात्मेदेवी नितान्त क्षुधारु र हो चारह राजपूतोंका शोणित चाहती है। तदनुसार एक एक कर ग्यारह राजपूतोंने जन्मभूमिमें लिए रणस्थलमें आत्मोत्सर्ग किया। अब भीमसिंह स्थिर न रह सके। राजवंशका पिण्डलोप होनेकी आशङ्कासे अन्तमें वे स्वयं आत्मोत्सर्ग करनेकी परमर हए। राजपूत महिजाणण जङ्गलतका अनुष्ठान करनेके लिये अग्रसर हुईं। राजस्थानको प्रफुल्लकमन्दिनी पद्मिनीने मदाँने लिये पवि-चरणको चूमती हुईं ज्वलन्त चितामें देह विमर्जन करके निर्मल सनोत्सर्ग और राजपूतकुल गौरवको रक्षा की। राजपूत-महिलायोंने भी पद्मिनीका अनुसरण किया। भीमसिंह भी निश्चल मनसे सैकड़ों वैरिहृदय को विटोर्ण कर आत्मोय स्वजनोंके साथ अनन्तशय्या पर सो रहे। चित्तौर वीरगुण्य हुआ और अलाउद्दीनके हाथ लगा। किन्तु जिस पद्मिनीके लिए अनाउद्दीन इतने दिनमें लालायित थे, जिस पद्मिनीके लिए कितने खून-खराबो हुई, वह पद्मिनी अलाउद्दीनके हाथ न लगी। जहाँ पद्मिनीने अपना शरीर विसर्जन किया था, उस स्थानको अलाउद्दीनन जा कर देखा, कि उस समय भी तमगाच्छन्न गह्वरसे धूमराग्नि निकल रही थी। तभीसे वह गह्वर एक पवित्र स्थानमें गिना जा रहा है।

पद्मिनीकण्ठक (सं० पु०) पद्मिनीकण्ठक इव आकृति-विप्लवतस्य। क्षुद्ररोगविशेष भावप्रकाशमें लिखा है—जिस रोगमें गोल्लाकार पाण्डुवर्ण कण्डूयुक्त अथच पद्मनालने काटिकी तरह कण्ठक द्वारा पण्डित मगडल उदित होता है, उसे पद्मिनीकण्ठक कहते हैं। इस रोगमें नोमके काढेसे वमन और नोम द्वारा छूत पाक कर मधुके साथ उमका सेवन विधेय है। छूतकी प्रसूत

प्रणाली—गण्डूयुक्त ५४ सेर; कस्तूरार्थ निम्बपत्र और अमलतासपत दोनों मिला कर ५१ सेर, निम्बपत्रका काथ ५६ सेर। यथानियम इस छूतका पाक कर दो तोला परिमाणमें सेवन करनेसे ही पद्मिनीकण्ठक रोग पाराम हो जाता है। (भावप्र० क्षुद्ररोग०)

सुन्दरके मतमें पद्मके कण्ठककी तरह गोल्लाकार और उमका मगडल पाण्डुवर्ण, ऐसे वृणकी पद्मिनीकण्ठक कहते हैं। यह वायु और कफ द्वारा उत्पन्न होता है। पद्मिनीकान्त (सं० पु०) पद्मिन्त्याः कात्सः। सूर्य। पद्मिनीवल्लभ (सं० पु०) पद्मिन्त्याः वल्लभः। सूर्य। पद्मी (हि० पु०) १ पद्मयुक्तदेग। २ पद्मधात्री, विष्णु। ३ पद्मसमूह। ४ चोर्दीके अनुमार एक लोकका नाम। ५ उक्त लोकमें रहनेवाले एक बुद्धका नाम जिनका अवतार अभी इस म मारमें होनेको है। ६ गज, हाथी।

पद्मेश—एक हिन्दोः कवि। मन्वत् १८०३में इनका जन्म हुआ था। इनको कविना सुन्दर होती थी।

पद्मेशय (सं० पु०) पद्मेशोतिशोः अथ। (अधिधरणे शेषे) पा ३।२।१५, अथवा सवासिधिवि पा ३।३।१८ इति चतुक्। विष्णु।

पद्मोत्तम (सं० पु०) कुसुमभयपुष्पवत्। कुसुम फूलका पेड़। पद्मोत्तर (सं० पु०) पद्मादुत्तर, वर्णता श्रेष्ठः। १ कुसुम, कुसुम। २ कुसुमधीज, कुसुमका बीज। ३ एक बुद्धका नाम।

पद्मोत्तरात्मज (सं० पु०) पद्मोत्तरस्य अत्मजः पुत्रः जिन-चक्रवर्त्तौविशेष।

पद्मोद्भव (सं० पु०) पद्म उद्भव उत्पत्तिस्थानस्य। ब्रह्मा।

पद्मोद्भवा (सं० स्त्री०) पद्मोद्भव टाप। मनसादेवी।

पद्य (सं० स्त्री०) १ जातिविशेष (सहादि २।५।८)। पद्य चरणमहंतीति पद्ययत्। २ कविकृति, श्लोक। ३ नृत्ति-मधुके शब्दविन्यासमें रचित कविता वा काव्य। तुलसीदासके रामायण तथा महाभारत आदि ग्रन्थोंकी जो भाषा है, वह गद्यमें ही लिखी गई है। इस लोग जिस भाषामें हमेशा बोल-चाल किया करते हैं, वह गद्य है। विशेष विवरण गद्य शब्दमें देखो।

पादलक्षणरहित पदममूहनी गद्य कहते हैं। किन्तु पादलक्षणयुक्त छन्दमात्र समन्वित पादसन्निवेश पद्य कहलाता है। काव्य देखो।

पद्य का नाम विभिन्न शब्दों में पद्यार्थि लिखि प्राति है। इत्यादिवाच्य कथन धीर वाच्यविन्यास इत्यादि में तथा साहित्यिक कथन विनियोग में लिखा है। कदाचि पद्योंको भाषा पद्य वा कथ्य है, किन्तु उद्यत्वा इत्ये धोर भाषादि कथ्य है। तत्परवर्ती पुराणपुराण—सामायिक पद्यवा महाभारतः ममयमे—वेदकी भाषा विहित हो कर वा धर्मादीयता नाम कर वाच्यरूप मूलतः धारण देतो गई हो। उक्त प्राचीन समयके हिन्दु धर्म मन्त्र जो सब पद्य लिखि हुए हैं उक्त समो पद्योंकी रचना पद्य है। अथवा प्राचीन हिन्दुगण की कवि भाषमें पद्यार्थि को रचना करती से सो नहीं। होमर, भर्तृहरि, पौदिर, पतञ्जलि, लघुशिल्प, मिमंसा, जैनपर बद्धमन्त्र आदि सुदूरवासी पाषाण कविमन्त्र को पद्य लिख कर प्रकृतमें लिखि हो गये हैं। इन सब पद्यार्थिमें लिखि वाच्यवाच्य नाम भाषा शब्दोपयोग धोर पद्यार्थि रचना देखनेके समझत होना पड़ता है। Ballad, Drama, Epic, Lyric, Ode आदि कई प्रकारके पद्योंका नाम उक्त सब पद्योंमें देखा जाता है।

पुराणार्थि रथे कविने पद्यके कालिदास, भारवि, मन्त्र, भरवि, मन्त्र, माघ, दण्डी, शूद्र, विद्या, दण्ड, धर्मोदर, भट्टनाथ, सोम्य आदि पुराणनामा कविओंकी बनाई हुई कविताको प्रकृतमें पद्यमन्त्र धोर पद्यमन्त्रका पद्यमन्त्र है। इनके बाद कविये गीतागीता का परिभाषा हुआ। उक्त कविने हुए मीत-गोविन्द नामक पद्यमें 'प्रकृतपद्योपि कवि' 'कविप्रकृतपद्यता-परिशीलन धोर 'सरगरीकालमम् मम शिरसि सुकृतम्' आदि कविनायक समाह्वयमें कौपी है उसकी तुलना नहीं हो जा सकती। कवीदास, ज्ञानदास, गोविन्ददास, कालदास, कविराज, लोचनदास आदि कवि कवियोंके पद्य मन्त्रोदर धोर प्रकृतपद्यार्थि हैं। पद्य कथ्य कथ्य कविने ही पद्यकथी इतनी समीरम है, कि उक्तके रचनः पद्यादिवाच्य पाठ करनेमें पद्य, करण सुकृत होता है। वर्तमान कवियोंमें गणेश्वर, महेश्वर, दत्तने, वाच्य कथ्यमें मूलकथ्य परिवर्तन कि. है। उक्त पद्यार्थिमें 'मिथ्यामन्त्र' तथा 'मिथ्यामन्त्र' नामक शब्दों में मिथ्या धोर होमर आदि कवीको कवियों के आचार पर कविता

लिख कर पद्य नाम कथ्या है। मोत जोर पादि आचारकथः पद्य भाषामें लिखि प्राति हैं। इससे पद्यार्थि मन्त्रनाशयक ही कथा देवविषयकरकथना पद्यमें हो सिद्धी देतो आतो है।

पद्यकी भाषादि धोर इत्यादिसे विवरण, कवि, पाषाणकी धोर कथ्य कथि-इत पद्यादि उदाहरण कथी सब शब्दोंमें तथा पद्यकारों को प्रीयकोमें विनियोगमें पातोहित हुए हैं।

कथ्यमन्त्रोमें पद्यका कथ्य इस प्रकार लिखा है—
 "यत् कथ्यते पद्यं कृतं कथितं हि वा।
 इत्युक्तं कथ्यं कथं कथितं हि वा।"
 (कथ्यो०)

आर करकथित कथ्य पद्य है। पद्य पद्य दो प्रकार का है कति धोर कृत। जिसके पद्यर नाम हैं कथि कृत धोर को भाषानुसार होता है कथि कति कथ्य है। प्रकृत पद्यार्थि धोर विषयकथ्य के मन्त्रे कृत मी तोर प्रकारका है। कथ्य पद्य पद्य समान हैं कथि समकथ्य, जिसके प्रकृत धोर कथ्य पाद तथा कथ्य धोर 'सुतु' पाद समान हैं कथि पद्यार्थि धोर जिसके पद्यार्थि विषय हैं कथि विषयकथ्य कथ्य है। इत्यादि पद्यमन्त्र को पद्य है।

५ गद्य। पद्य-यत् (पद्यरिक्तं कथं। वा ३। ५। ५०)
 ६ कति कथ्य कथ्य, कथ्य कथ्य को सुधा न ही।
 (पु०) पद्यार्थि कथ्य पद्य-यत्। ६ शूद्र। शूद्रने कथ्यके पद्य के कथ्य पद्य (कथ्य है, कथ्यके पद्य शब्दके शूद्रका बोध होता है।

"कथ्योदरं सुकथ्योदरं कथ्योदरं कथ्योदरं।"
 कथ्य पद्यर कथ्य कथ्यः पद्यार्थि कथ्योदरं कथ्योदरं।
 (पद्यकथ्य १। १। १२)

पद्यमय (स० शि०) पद्य-कथ्य मयत्। पद्यकथ्य।
 पद्या (स० कथ्यो०) पद्या कथ्य पद्या पाद शरीरावकात् कथ्य, कथ्य पद्यार्थ्य पद्या। (पद्यकथ्यार्थ्य) पद्य ६। १। १२) १ कथ्य, कथ्य। २ पद्या कथ्य, कथ्य। ३ कथ्य कथ्य।

पद्याकथ्य (स० शि०) को पद्यमय को, को कथ्योदर को।
 पद्य (स० पु०) पद्यार्थ्यकथ्यकथ्य पद्य-कथ्य कथ्य (कथ्यकथ्य

ज्योति । उण् २।१३। १ याम । २ यामभ्य । ३ भूकोक,
४ देगभेद ।

पट्टय . सं० पु०) पट्ट रथ इव गम्य । पट्टगामी, पाट-
चारो ।

पट्ट (सं० पु०) पथते गम्यतेऽस्मिन्ननेन वा पट्ट गतो
(सर्वनिष्ठावतिवति । उण् १।५३) इति निपातनात्
सिद्धं । १ भूकोक । २ रथ । ३ पत्न्य ।

पट्टन् (सं० पु०) पथते गम्यते यत्र पट्ट गतो वतिप.
(स्वाभ्दिपूर्वति उण् ४।१२) पत्ना, राह ।

पट्टरना (हि० क्लि०) किसो बडे, प्रतिष्ठित या पूज्यका
प्रागमन ।

पट्टराना (हि० क्लो०) १ आदर पूर्वक ले जाना । २
किसोको आदरपूर्वक ले जा कर बैठाने हो क्रिया या
भाव, पट्टरानेकी क्रिया ।

पट्टराना (हि० क्लि०) १ गमन करना, जाना, चला जाना ।
२ आ पट्टुं चा । ३ गमन, करना, चलना । ४ आदरपूर्वक
बैठाना, प्रतिष्ठित करना । इम शब्दका प्रयोग केवल
बडे या प्रतिष्ठितके काने अथवा जानिके मन्वथमे आद-
रार्थ होता है ।

पट्टंग (हि० पु०) सर्प, सर्प ।

पट्ट (हि० पु०) १ प्रतिष्ठा, महत्त्व, श्रेष्ठ । २ आयुके
चार भागोमेंसे एक । साधारणतः लोग आयुके चार
भाग अथवा अवस्थाएं मानते हैं, पहलो बाल्यावस्था,
दूसरो युवावस्था, तीसरो प्राज्ञावस्था और चौथा वृद्धा-
वस्था ।

पट्टकटा (हि० पु०) वह मनुष्य जो खेतोंमें इधर उधर
पानी ले जाता या सौं चला है ।

पट्टकपट्टा (हि० पु०) वह गोला कपड़ा जो शरीरके
किसी अंग पर चोट लगने या कटने या क्लिन्न आदि
पर बांधा जाता है ।

पट्टकाल (हि० पु०) अति बडाके कारण प्रकाल ।

पट्टककडो (हि० क्लो०) पनकीवा देखो ।

पट्टकडी (हि० क्लो०) वह छाटा खरन जिसमें प्रायः
बुद्ध या टूटे हुए दांतवाले लोग खानेके लिये पान
सूटते हैं ।

पनकीवा (हि० पु०) एक प्रकारका जनपद, जनकीवा ।
पनखट (हि० पु०) जुनाहीको बह लचीना धुनकी जिस
पर उमके सामने जुना हुआ कपडा फेला रहता है ।

पनगाचा (हि० पु०) पानोमे भगा या मोंचा हुआ खेन ।

पनगोटी (हि० स्त्री०) गोतिग गोतना ।

पनघट (हि० पु०) पानो भरने का घाट, यह घाट जहाँ
मे लोग पानो भरते हैं ।

पनघ (हि० स्त्री०) प्रत्यंचा, धनुषकी डोरो ।

पनचकी (हि० स्त्री०) एक प्रकारको चको जो पानाके
जोरमें चलता है । नदी या नहर आदिके किनारे
जहाँ पानो का वेग कुछ अधिक होता है उमो जगह लोग
कोई चको या दूसरो कल लगा देते हैं । उम चको
वा कलका सम्बन्ध एक ठेमे बड़े चक्रके साथ होता
है जो बहते हुए जलमें प्रायः बाधा डूबा रहता है । जब
वहावके कारण बह चक्र घूमता है, तब उमके साथ
सम्बन्ध करनेके कारण बह चको या कल चलने लगती
है । सभी काम पानाके बहावके द्वारा ही होता है ।

पनचो (हि० स्त्री०) गेहोके खेतमें खेतनेके लिये पतनो
लकड़ो या गेडो ।

पनचारा (हि० पु०) बड़ बरतन जिस का पेट चौड़ा
और सुँह बहुत छोटा हो ।

पनडुब्बा (हि० पु०) १ वह जो पानीमें गोता लगाता
हो, गोताखोर । ये लोग प्रायः कूर्प या तालाबमें गोता
लगा कर गिरो हुँदे चाज टूँदते अथवा समुद्र आदिमें
गोते लगा कर सोप और मोनो आदि निकालते हैं । २
पानोमें गोता लगा कर महलियां पकड़नेवाला चिड़ियां ।
३ जलागर्धोमें रहनेवाला एक प्रकारका कल्पित भूत ।
इसके विषयमें लोगोका विश्वास है, कि वह नहानेवाले
मनुष्योंको पकड़ कर डूबा देता है । ४ सुरगावो ।

पनडुब्बा (हि० स्त्री०) १ पानीमें डूबकी मार कर मह
लियां पकड़नेवालो चिड़िया । २ पानोके पन्डर डूब कर
चलनेवाली एक प्रकारको नाव । इसका आविष्कार अभी
हालमें पायात्व देशोंमें हुआ है, सब मेरिन । ३ सुरगावो ।

पनपना (हि० क्लि०) १ पुनः अद्भुत या प्रकृतित होना,
पानो मिलनेके कारण फिरसे बरा हो जाना । २ रोग-
सुक्त होनेके उपरान्त स्वस्थ तथा दृष्ट पुष्ट होना ।

पनरोती—दक्षिण आर्काटका एक नगर और रेलस्टेशन। यह अक्षा० ११° ४६' ४०" उ० और देशा० ७८° ३५' १६" पू० के मध्य अवस्थित है। यहां एक विस्तृत वाणिज्य स्थान है।

पनलगवा (हि० पु०) खेतमें पानी सींचने या लगाने-वाला मनुष्य, पनकटा।

पनलोहा (हि० पु०) ऋतुके अनुसार रंग बदलनेवाला एक पत्ती।

पनवा (हि० पु०) हमें आदिमें लगे हुई बीचवाली चौकी जो पानके आकारकी होती है, टिकड़ा, पान।

पनवाड़ी (हि० स्त्री०) १ वह खेत जिसमें पान पैदा हो, बरेजा। (पु०) २ वह जो पान बेचना हो, तमोली।

पनवारा (हि० पु०) १ पत्तों को बनो हुई पतल जिस पर रख कर लोग भोजन करते हैं। २ एक पतल भर भाजन जो एक मनुष्यके खाने भरका हो। ३ एक प्रकारका सर्प।

पनवारी (हि० स्त्री०) पनवाड़ी देखो।

पनवेल—कोलाहा जिलेके अन्तर्गत एक प्रधान नगर। पहले यह धाना जिलेके अन्तर्गत था। यह अक्षा० १८° ५८' ५०" उ० और देशा० ७३° ८' १०" पू० के मध्य धाना शहरसे १० कोस दक्षिण पूर्वमें अवस्थित है। जनसंख्या दश हजारसे ऊपर है। यहां भिन्न भिन्न प्रकारके शस्त्रोंका वाणिज्य होता है। १५०० ई०से यूरोपीयगण यहांके बन्दरमें वाणिज्यार्थ आया करते थे। यहां सब-जजकी अदालत, डाकघर आदि है।

पनस (सं० पु०) पनायते स्तूयतेऽनेन देवः मनुष्यादिवर्ति, पन-असच् (अत्यविचमितीति । उण् ३।११०) १ फलवृक्षविशेष, कटहलका पेड़। पर्याय—कण्टकिकफल, महासज्जा, फ्लिन, फलवृक्षक, स्यूल, कण्टफल, मूलफलद, अमुष्पफलद, पूतफल, चम्पकोप, चम्पालू, कण्टकौफल, रसाल, नृदङ्गफल, पानस।

इसके फलका गुण—मधुर, सुपिच्छिल, गुरु, हृद्य, घल और वीर्यवर्द्धक, अम, दाह तथा शोथनाशक, रुचिकारक, श्राद्धी, भित्तूर्जर है। बीजगुण—ईषद, कषाय, मधुर, वातल, गुरु, रुचिकर। भावप्रकाशके मतसे पक्ष-

पनसका गुण—गोतम, खिद्य, पित्त और वायुनाशक, तर्पण, हृण्ण, च्वादु, मांसल, अम्ल, वलर, शुक्रवर्द्धक, रक्षापित्त, जत और क्षयनाशक। अषकफल—विष्टभी, वातल, गुरु, दाहजनक, पनर, मधु, गुरु, मूलशोधक। पनसको मज्जा—उत्तर, वातपित्त और कफनाशक। गुन्म और अग्निमान्द्यरोगमें पनस विशेष निपिद्ध है। कटहल देखो। २ रामदलका एक बन्दर। ३ विधोपणके चार मन्त्रियामें एक।

पनसखिया (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारका फूल। २ इस फूलका वृक्ष।

पनसतालिका (सं० स्त्री०) पनस टोर्षत्वमे स्तूयं यत्तलं, तद्वत् फलमस्यस्याः, ठन्। कण्टकिकफल, कटहल।

पनसनालका (सं० पु०) कटहल।

पनसजा (हि० स्त्री०) वह स्थान जहां पर राह चलती-को पानी पिलाया जाता हो, पननाल, प्याज।

पनसाखा (हि० पु०) एक प्रकारको मंगोल जिसमें तीन या पांच बत्तियां साथ चलती है। इसमें बांसके एक लम्बे छंडे पर लोहेका एक पंजा बंधा रहता है जिसको पांचों शाखाओंको कपड़ा लपेट कर और तेलसे चुपड़ कर मशालको भांति जलाते हैं।

पनसारी (हि० पु०) पानोसे किसी स्थानको सराओर करनेको क्रिया या भाव, भरपूर सिंचाई।

पनसारी (हि० पु०) पंसारी देखो।

पनमाल (हि० स्त्री०) १ वह स्थाग जहां सर्वसाधारणको पानी पिलाया जाता है, पौसरा। २ पानोको गहराई नापनेका उपकरण। ३ पानोका गहराई नापनेकी क्रिया या भाव।

पनसिका (सं० स्त्री०) पनसवत् कण्टकमयाकृतिर्विद्यते यस्याः पनस-ठन्-टाप्। क्षुद्ररोगविशेष, कानमें होनेवाला एक प्रकारकी फुंसो जो कटहलके कांटेकी तरह नोकदार होती है।

चिकित्सकका प्रथमतः पनसिका रोगमें खेदका प्रयोग करना चाहिए। पौष्टि मनःशिला, कुट, हरिद्रा, हरिताल और देवदार इन सबको पीस कर प्रलेप दे। यदि वे सब फुंसियां पक जाय, तो शस्त्रपात

आने प्रथमी तरह बिदिखा करे । (नववधवा)

सुपुतके मतमें—एक रोग वायु पौर सूँध्याने लयक होता है । रम आतिडे इय कर्षे' पौर दृष्टके पारो' पौर केन आते हैं । यह रम पञ्चम पातनाप्रद माना गया है । (सुपुन पुराणे)

पनमी (वि० स्त्री०) १ कटहलका पत्र । २ पनबिका ।

पनसुइया (वि० स्त्री०) एक प्रकारकी छोटी नाव ।

रम पर एक जो खेतीवाला दो झाड़ू बना सकता है ।

पनसू (वि० पु०) एक प्रकारका बाघ ।

पनवैरो (वि० स्त्री०) पंहेटी रीको ।

पनवीरे (वि० स्त्री०) पनसुइया रीको ।

पनसु (म० वि०) पनस्युत । प्रथमा या तारीक इमनिका इच्छुक जिये प्रथम गित होनेको इच्छा को ।

पनइका (वि० पु०) यह काँड़ी जिनमें तमोनी पाप 'अथवा हाव भीनेके बिसे पानी रहने हैं ।

पनवप (वि० पु०) १ पानी भरनिका ओकर, पनसरा ।

२ यह पचरो जिनमें जोकार गवनि होने पादिके लिए पानी रहने हैं ।

पनका (वि० पु०) १ कपड़े वा लोहार पादिको बीकाई ।

२ मूत्र पावय या तापक, मम, मेट । ३ यह जो पोरि का पना लमाना जा । ४ यह पुन्यार जो पुराई कुरे अणु छोटा वा निका देनिके बिसे दिया जाव ।

पनदाग (वि० पु०) यह जो पानी भरनिका काम करता को पनभा ।

पनइवान—पयोआपदेगर्भ लनाइ जिनको पूर्वो तप सोपक, २ कोन एक मगर पौर पनइवान परनेमा महर । यह लनाइ महरने १२ कोन टलियेमें पववित्त है । यहाँ कई पन दासोम हिन्दू-देवानप हैं । एक लुनइवान पोरके मयालनाइ यहाँ बय मरमें दो बार मैला लमता है जिनमें बार पौर इकारडे बरोह मनुष्य पववित्त होमें हैं ।

पनदिया (वि० स्त्री०) पनी रीको ।

पनदियाइ (वि० पु०) यदइ लपानइ-पइर, यिर पर पनने कने पइरा वि भाष लङ्काय, कुलीको बर्षी ।

पनहो (वि० स्त्री०) पनाइक, कृता ।

पना (वि० पु०) एक प्रकारका मारत जो पाम इमनो कादि है । बने बनाए जाता है । यह मारत लम्बे पके

दोनों प्रकारके कर्मोंमें तैयार किया जाता है । एक पन का रम वा मूः या धा हो पनक कर लिया जाता है पौर कथेका मूः पनक कानिक पकने लगे मूः या उबाला जाता है । बादमें लम्बो खुन ममल कर मोठा मिखा देते हैं । लवइ, कपूर पौर लमी कमी लवक तथा लान मिषे भी पनेमें मिखाईं प्रातो है पौर वी क, जोरे पादिका बघार दिया जाता है । वे पकके पनुताइ पना इविधारक लम्बाय लम्बईक पार इन्द्रियाको टमि देनिका माना गया है ।

पनाती (वि० पु०) पुन पचया कन्याका मानो, पौने पचया मारीका लङ्का ।

पनार—पूँचिया जिनमें प्रवाहित एक लगे । यह मरी निवाणके निरुलो है ।

पनारा (वि० पु०) पनायक रीको ।

पनाना—इम्बई परदेसके कोरहापुर राज्यके पनामंत एक गिरिदुग । यह काइहापुर नगरसे ६ कोस उत्तर-पदिम में अवस्थित है । दुग मन्मनाय पचकामि रहने पर भा इमः पन्थलर भागमें पञ्चलख मुमन्थिस्तु म्य कर्षिको पानोचना १२नेके पनेक बय राय हैं । ११वीं मनाको में जोकराज मिनाकार १४४६ क ४६ दुग बनाया गया है । यह राजाके नामानुसार पुर्बके लपरो मग पर एक लवा म्पन इच्छापमान देखा जाता है । यहाँ बहुत मो विगिगुह प हैं जिनमेंसे पच्छिम पविव नामक मुहा पन लको पूर्वो मोमा पर अवस्थित है । इनके द्वार पादि मन्मनाय कोम पर मो लमका जाइकाय' जमनाविवाके गुणको इच्छक है । मोकराजको बुकाके मन्मनाय पर मुमनयाग राजावेने हा कड़े कड़े पन्थरलाना निर्मित हुए है । मोइहमेंके प्राइपनेके लो लव गिरिदुगार्थे ध्यानियो कामनिर्मि परे लन हो गईं दो ।

पनाका (वि० पु०) पनाक रीको ।

पनामना (वि० स्त्री०) पावक करमा, पौनना, परबिद्य करना ।

पनामा—पनाण रीको ।

पनाइ (प० स्त्री०) १ यह, मकर या कर्षके बसा पानो जिहा वा भाव, भाव बनाव । २ रसा पानिका लान, बनावका जिहान, मरु, पाक ।

पनिह (हि० पु०) जुलाही का एक वैचौनुमा भोजन
जिस पर ताना फीमा कर पाई को जातो है, कंडाल।

पनिख (हि० पु०) पनिह देखो।

पनिघट (हि० पु०) पनघट देखो।

पनिचम्बनपुरुषोत्तमस्तु—एक ग्रन्थकार इन्हीने धर्म-
प्रदीप नामक एक ग्रन्थको रचना की।

पनिही (हि० स्त्री०) पण्डरीकहृत्, पुंडरिया।

पनिया (हि० पु०) १ पानीके सम्बन्धका। २ पानोमें
उत्पन्न। ३ जिसमें पानी मिला हो। ४ पानोमें रहने-
वाला।

पनिया—युक्तप्रदेशके गोरखपुर जिलान्तर्गत एक नगर।
पैना देखो।

पनियाला—१ पञ्जाब प्रदेशके डेराइस्माइल खां जिलान्तर्गत
एक ग्राम। यह अक्षा० ३२° १४' ३०" उ० और देशा०
७०° ५५' १५" पू०के मध्य डेराइस्माइल खां नगरसे १६
कोस दूर आगो उपत्यकाके प्रवेशपथ पर अवस्थित है।

२ युक्तप्रदेशके गृहारनपुर जिलेके भगवानपुर पर-
गनेके अन्तर्गत एक गण्डग्राम। यहां शोलानटीके
किमार विस्तोर्ण आम्बवन नयनगोचर होता है।

पनियाना (हि० पु०) एक प्रकारका फल।

पनियासोत (हि० वि०) जिसमें पानोका सोता
निकला हो।

पनिषा (हि० पु०) पनुषा देखो।

पनिष्टम (सं० त्रि०) पन-कर्मणि इत्सुन्, अतिशयेन पनिः
तमप्। सुतप्रतम।

पनिष्ठ (सं० त्रि०) अतिशयेन पनिता इत्सुन्, लणोत्तपः।
स्रोद्धतम।

पनिसिगा (हि० पु०) जलपीपल देखो।

पनिस्यद (सं० त्रि०) स्पन्द-यद्, लुक्-अथ अभ्यासे निगा-
गसः। अत्यन्त स्पन्दमान।

पनिहा (हि० वि०) १ पानोमें रहनेवाला। २ जिसमें
पानो मिला हो, पनमे ल। ३ पानो सम्बन्धो।

पनिहार (हि० पु०) पनहरा देखो।

पनीर (फा० पु०) १ फाड़ कर जमाया हुआ दूध, छेना।
दूधको फाड़ कर यह बनाया जाता है। पोछे नमक
और भिच मिला कर छेनीको सार्वमें भरा जाता है जिस-

से उसकी चकतियां बन जातो हैं। २ यह दही जिसका
पानी निचोड़ लिया गया हो।

पनीरो (हि० स्त्री०) १ फूल पत्तोंके बने छोटे पोथे जो
दूमरो जगह ले आ कर रोपनेके लिये लगाये गये हों,
फूल पत्तोंके बहिन। २ गलगल नोष्को फाँकोंके ऊपर-
का गूदा। ३ यह क्षारो जिसमें पनारी जमाई गई हो,
बहिनको क्षारी।

पनीला (हि० वि०) जिसमें पानी हो, पानो मिला
हुषा।

पनु (सं० स्त्री०) पन-च। स्तुति, प्रशंसा, तारीफ।

पनुषा (हि० पु०) एक प्रकारका शरवत। यह शुकके
कक्षासे पाग निकाल लेनेके पीछे उसे धो कर तैयार
किया जाता है। पाग निकाल लेनेके बाद कक्षामें
तोन चार घड़े पानो छोड़ देते हैं। फिर कक्षाके
उसमें अच्छी तरह धो कर बाँधी देर तक उसे गरमाते
हैं। उबलना शुरू होने पर प्रायः शरवत तैयार समझा
जाता है।

पनीयो (हि० स्त्री०) पानो मिला कर पीके हुए रोटी,
मोटा रोटी।

पनीरी (हि० स्त्री०) १ पनीरी देखो। २ पान सेवने-
वाला, तंबोली।

पनेहड़ी (हि० स्त्री०) पनहडा देखो।

पनेहरा (हि० पु०) पनहरा देखो।

पनेला (हि० पु०) एक प्रकारका गाढ़ा, चिकना और
चमकोला कपड़ा जो प्रायः गरम कपड़ोंके नीचे अन्दर
देनेके काममें आता है। जिस पीछेके रेशे यह कपड़ा
बुना जाता है वह क्लिपाइन होपपुष्पमे होता है।
इस होपपुष्पकी राजधानी मनीला है। सम्भवतः वहाँसे
चालान किये जानेके कारण पहले रेशेका और फिर
उससे बुने जानेवाले कपड़ेका मनीला नाम पड़ा है।

पनीषा (हि० पु०) एक पकवान जो पानके पत्तोंको
बेसन या चौरोटिमें लपेट कर धो या तेलमें तलनेसे
बनता है।

पनीटो (हि० स्त्री०) पान रखनेकी पिटारी, पानदान,
बेलहरा।

पन्तोनीभट्ट—समयकल्पतदके रचयिता। ये लक्ष्मणभट्टके
पुत्र थे।

पञ्च—महाराष्ट्रदेशमें पन्नाब वा सचिव प्रभृति राजकीय काम चारोको उपाधि ।

पञ्चक (स० लि०) पाँच जातः जन् । पञ्चगत पञ्चोत्पन्न ।

पञ्चविज्ञाबद्ध—पश्चिम मानवादि पन्नामंत एक ठाकुरगत बन्धनित ।

पञ्चप्रतिनिधि—राजाके प्रतिनिधि अर्थात् पञ्च उपाधिधारी काम चारी (Viceroys) महाराष्ट्रके राजाकोके नमस्कारमें जो व्यक्ति राजाके प्रतिनिधि हो कर काम करते थे, उनको महाराजको पाञ्चा मी पञ्चप्रतिनिधि हुई है । इस पञ्चप्रतिनिधिमें प्रथम पञ्च कालीतिर्या हाविषा/स्य प्रदेशमें स्थितमें पातो है । सतारा तासुबके पन्नामंत माहसी नामक स्थानमें खोपतराम पञ्चप्रतिनिधिपतिष्ठित भूमीदार खोर बिम्बेश्वर यादव प्रभेक सुन्दर मन्दिर है ।

पञ्चबिन्दा (स० को०) चपरिखर पञ्च, सफरो नको ।

पञ्ची—ब्रह्मदेशवासी सुमनसमान-चन्द्रहाय । ये हीम युगान प्रदेशके इस देशमें पा कर बस गये हैं । १८६०-१८७१ ई०के मध्य इन्हीं तस्विय नामक स्थानमें चपला धारिपञ्च विस्तार किया था । ब्रह्मदेशमें ये हीम पञ्चकुल नामके प्रसिद्ध हैं ।

पन्दर (स० पु०) विरिभेद एक पहाड़का नाम ।

पन्दाई—अन्धकारकेसममें प्रबहित एक नको । यह कोमेश्वर पर्वतके निकल कर रामनगर राज्यके मध्य जोती हुई मियालकोमात्ममें छोरो नगर तक चको चारै है खोर पक्षी पञ्चमसुखी खोर पीछे दक्षिण-पूर्वको खोर बहते हुई म्हाप्रखरके एक कोष पूर्व खोरभू नदोमें पा गिरी है ।

पन्दाविषा—१ मध्यप्रदेशके बिजानपुर जिलेकी मुहोको तहकोके पन्नामंत एक कोठी कर्मोदारी । यहाँके मामल-राज राजकोके कहपासि है । महुमन्त्रके पीछे राजासि तौन मनाम्ने पन्नाके इस पक्षके पूर्व मुहको यहाँका बनिवार कलें दान किया था । इसमें हुन निना कर ३३२ नाम काममें है । भूपरिमात्र ४८६ वर्गमोड है ।

२ मुहोकी तहसीलका प्रधान ग्राम । यहाँ सम्पत्तिके बनिचारी कर्मोदारा प्राचाद है ।

पन्दीब—दण्डका जिलेके पन्नामंत एक ग्राम । यहाँ राजा

गिरासि इकी पुष्करियोकी बन्धनमें एक सोमोको काम है खोर दूधरो जगद तिरहुतके मध्य सुहवत् नोबकोमेका अन्धकारके दिखनमें पाता है ।

पन्नाबा—मध्यप्रदेशके बीमा जिलेको बाण्डोवा तहसील के पन्नामंत एक ग्राम । यह बाण्डोवा नगरके ३ कोस दक्षिण-पश्चिममें पन्ना० २१ ३२ स० खोर दिशा० ०६ १६ पूर्वके मध्य पञ्चस्थित है ।

पञ्च (स० लि०) पञ्चक । १ खल, गिरा हुआ । २ ग्रन्थित । (हु०) पन सुतो पन न (हु० हु० हु० वि हु०भीवि) इन ३।१०) १ पञ्चोमन, २ गता, सर इति रूप लक्षणा ।

पञ्चई (दि० वि०) पञ्चके र नका, जिनका र म पञ्चोका मा को ।

पञ्चक (स० पु०) एक पञ्चोवमन पतित या गच्छन्तीति गम क पञ्चान गच्छन्तीति वा । १ कर्ष संव । २ पञ्चैरिमे नको चक्षता, इकोमे इसका पञ्चक कहति है । २ बौध्द-विशेष, एक बूटो । ३ पञ्चकण्ड, पदम ।

पञ्चकैसर (स० पु०) नागकैसर पुष्प ।

पञ्चमगायक (स० पु०) पञ्चम गाय जन् । बहड़ ।

पञ्चमय (स० लि०) पञ्चम मयट्, चर्पणहुस धाँवीका समूह ।

पञ्चशरि (स० पु०) पञ्चमगायक । बहड़ ।

पञ्चगायक (स० पु०) पञ्चम यव पञ्चातीति पञ्चकहु । गहड़ ।

पञ्चगी (स० स्तो०) पञ्चम जातो कोप । १ पञ्चगण्डो, नागिन साँबिन । २ मनसापिबी ।

पञ्चहा (स० स्तो०) पदि नया पञ्हा । चर्मपादुका, जूता ।

पञ्चदुहो (स० स्तो०) पदीचरचवीन दुहो । चर्मपादुका, जूता ।

पञ्चा (दि० पु०) १ उज्ज्वल हरिद्रावर्ण सचिबिबिक, पिरोमिबी ज्ञातिवा नरे र नका एक रत्न जो प्रायः स्थैर्य खोर धोनादको सामेनि निश्चयता है । इसके सच्छत नाम हैं—सरकत माहकण, पञ्चनम, हरि श्वधि, राजमोड, मन्हाङ्गिन, रोचिधिय खोपण, बहड़ो कोच, बुधराय गहड़ गरुवारि । पञ्चाका चर्म मध्यपञ्चोके पञ्च सङ्ग किये, नाबन्धुन खोर सुनिर्मक होता है । इसका चम्पनाम नूया म पञ्चकृष्णि परिपूरित क्षाना

जाता है। किन्तु यह लक्षण ममो पत्रोंमें नहीं रहता।

पत्रोंकी उत्पत्ति प्रोर प्राणिक मन्त्रममें गरुड-पुगणके ७२वें अध्यायमें इस प्रकार लिखा है,—

सर्वा भ्रूपति वासुकि दैत्यगतिना पित्त प्रहण कर-
के जत्र आकाशपथ हो क जा रह्ये, तत्र पलोन्ड गरुड
उन्ने प्रहार वा ग्राम करनेकी उद्यत हथा। वासुकिने
उसो समय उस पित्तनागको तुलकदेशके पादपोडन्वरा
वा प्रत्यन्त पर्वत नानिकावन-गन्धीक्षत उपत्यका प्रदेश-
में फेंक दिया। इस पित्त गिरते ही तत्समोपस्थ
पृथिवीके समुद्रतोरधर्ती स्या-समुद्र मरकत मणि
आकारमें पनट गया। (गर्हपु०)

डाक्टर रामदास मंनका कथना है, 'कि पित्तका वण
मल्ल होनेके कारण पत्रावा रंग भी पन्न है। इस
रूपमा । उपलक्षण करके रूपकप्रिय पाराणिकीने प्रसुर-
व पित्तमें पत्राका उल्लेख हुआ है, ऐसा उक्त ग है और
तुलकदेशग समुद्रतोरधर्ती पवत तथा उपत्यका पर
उमका आकर है, यह भी निर्णय किया है।

पत्रागुण—जो सर्वा विष भ्रापत्र वा मन्त्रति नि।
रित न हो, पत्रमे उमफा विष प्रवग्य दूर होता है।
यह निमल, गुरु, कान्तियुक्त पित्तकारक, हरिहर्ण और
रञ्जक होता है। पत्रा धारण करनेमें ममो पत्र जय
होते हैं। रणतत्त्व-विगारट प्रगिटतीं क मतन पत्रा धन
धान्यादि हृदिके विषयमें, युद्धमें और विपरीत नाग करने
में अति प्रयुक्त है।

पत्रेका दोष—रूज वा अस्त्रिध पत्रा धारण करनेमें
पेटा, विस्कोट पत्रा धारण करनेमें गन्ताघात हारा
मृत्यु, पाषाणखण्डयुक्त पत्रा धरण करनेमें डटनाग,
संलिन पत्रा धारण करनेमें नाना व्याधिको उत्पत्ति,
कैकेरीना पत्रा धारण करनेमें पुत्रनाग, कान्तिहीन पत्रा
धारण करनेमें जन्तु प्रोर वल्लिभय तथा विरुहवर्ण युक्त
पत्रा धारण करनेमें मृत्युका डर होता है।

पत्रेकी छाया पत्रेमें आठ प्रकारकी छाया देखी
जाती है। यथा—मूरुपुच्छके सदृश, नोमकण्ठ पत्रेके
सदृश, हरिहर्ण पत्रेके सदृश, नवदूर्वाटनके सदृश,
श्रीवल्गव सदृश, खड्को शृङ्गे सदृश, शुकुमिशुडे सदृश
और शिरीषकुशुमके सदृश। उक्त आठ प्रकारकी छाया
युक्त पत्रा ही सर्वश्रेष्ठ है।

पत्रेकी परीचा—रणतत्त्व विगारटका कथना है,
कि पत्रा कृत्रिम है वा प्रकृत्रिम, इसकी यदि परीचा
करनी हो तो इसे पत्रा या विसे । विपनेमें इत्रिम
पत्रा टूट जायगा, केतिक जो प्रकृत्रिम पत्रा है वह
कितना हो क्यों न घिसा जाय तो भी नहीं टूटता।
दूसरी परीचा—तोष्यय नीदमनाका द्वारा प्रहित
करके चूर्ण लेवन करनेमें प्रकृत्रिम पत्रा उच्च्वन हो
जायगा और कृत्रिम पत्रा मलिन । सोमव तत्र विमनेमें
पूत हाको तरह वर्ण विगिट कृत्रिम पत्रेको टोमि नट
हो जातो है। वजन हाया भी कृत्रिम पत्रेका निर्णय
किया जाता है।

पत्रेका गूण—एक खण्ड पत्राग और गरुड खण्ड
पत्रा लोममें समान होने पर पत्रागनी पत्रा पत्रेका
मूल्य अधिक होगा।

प्रारिधान—यूरोपक गुरल और अल्टाई पर्वत
पर सर्वोत्कृष्ट पत्रा पाया गया है। १८३० ई०में पदले
पहल यूरोल पर्वतके उत्तरीभागमें पत्रा पाया गया था।
इसके बाद यहाँ अनेक उत्कृष्ट पत्रा आविष्कृत हुआ।
पट्टिशामें भी अनेक दृश्य और उत्कृष्ट पत्रे पाये
गये हैं।

एशिया महादेशमें साइबेरियाके उपरान तथा
ब्रह्मदेशमें कई जगह पत्रेकी खोज है। अयाज्याके सम्राट्-
ने महाभायो विकटोरियाको जो पत्रा दिया है, वह ब्रह्म-
देशमें पाया गया था।

अफ्रिका महादेशके मिस्सिडेस प्रदेशमें पत्रा मिलता
है। सहारा पर्वत और पुरक नदीको पत्रेकी खान
सर्वत्र प्रसिद्ध है।

अमेरिका महादेशमें ही सभी सर्वोत्कृष्ट पत्रेकी
प्राप्तिको हाती है। स्पेनवासियों द्वारा पैरु-जयके
वादमें यहाँ पत्रा प्रसुर परिमाणमें आविष्कृत हुआ है।

प्राचीनकालके मनुष्य पत्रेकी अच्छी तरह जानते
थे और उसका यथेष्ट व्यवहार करते थे, इधमें जरा भी
सन्देह नहीं। भिन्न भिन्न देशोंमें यह विभिन्न नामसे
प्रचलित है। अति प्राचीन संस्कृत ग्रन्थोंमें मरकतका
उल्लेख मिलता है। पत्रे और हरकुलेनियमके मूगर्भसे
पत्रेका प्रसिद्धार पाया गया है। जिन, आइसिडोरस

नेत्रों, श्वेतमंजुसुर आदि प्राचीन पुराविद्वान् एव एकाका
 लक्ष्य कर गये हैं। पारसके शीघ्र पश्चात् मन्विषो
 पोषिचा पत्रिका विविध पादर करते थे। हिन्दू लोग
 प्रति प्राचीनवाससे इनका उद्वेग करती था रक्षि है।
 पेल्लुवा पोर सुन्दर सुन्दर प्रकीर्ति यह एक प्रपुर परि
 माचमि भववृत्त होता है। रचयितृवि च सर्वात्मक
 एतन्। अने हुए कर्के पडना करती थे।

पद्मेशी कोशरी—कर्मिको छोड कर सुन्दर सुन्दर
 कृति बनाई जा सकता है। श्यामनेशके तुम्हारे
 मन्दिरमें से कुछ छ वा एक देवमूर्ति है। उठते हैं
 कि वह मूर्ति एक एतन्की बना हुई है।

प्रसिद्ध पद्मा।—विष्णुके सुगत मन्वाड, जहांमोर
 एक पगुडी को जो एक दोस एना काट कर बनाई गई
 थी सोर जिसमें जात तथा दो छोटे छोटे पत्ते कर्के हुए
 हैं। यह पगुडी माहसुजानि इदरिण्डा वस्यतीको
 उपचारमें दे दी थी। पक्षि मन्वर अनरत्न लाड पाठ
 लेखने लगे शरीर दिवा। यह पद्मा कुमारा इदुनक
 याव है। इकांपति हर्षे निखट तान इष्ट लम्बा दो
 इष्ट सोडा पोर इष्ट भर सोडा एक एना का जिसका
 मन् पत सुन्दर तथा जिसमें बहुत कम दाग थे। साम्म
 पद्मा है, कि यही पद्मा १८५१ ई०में म्वापुगोके पति
 महामोनेम प्रदर्शित हुआ था।

पद्मिवाच राजकोषमें २००० अरबका पौर धूब
 पान-इमनमायरेक पान १ पौर (माय डेड पान)-का
 एक पद्मा है। यह पक्षी म्वापुगोका नामसे निष्काका
 गया। पीछे डम पित्राव धूब पान-इमनमायरेमि
 रथे लोटा इसका म्वापु दो पक्ष है पौर यह लक्ष्य
 वर्षानिदिष्ट है।

अंधकर्म पद्मा मातल मधुररसवुज, रचिचारक
 पुष्टिचर, मायैर्येक पौर प्रेतवाजा, पञ्चपित्त, क्कर,
 अमन म्वाच, मन्वाभि, बवानोट, पाखुरोम पौर विविध
 रूपसे विपका लाय करनीवाला सामा गया है।

२ पुम्पक पादिवा छठ, पद्मा, नरक। ३ भेड़ोड
 आनका बड जोडा माय कर्षिका अण काटा जाता है।
 ४ देमा कृतिव एक अपरा मानका नाम बिबे पान मी
 म्वापु है।

पद्मा—विष्णुव शीघ्रन एक राजपूतमन्वी, राधा संयाम
 नि हर्षे सिद्ध पुत्र उदयनि हर्षो धाम्नी। राधा म धाम-
 मि हर्षे मरने पर चित्तोरमें मारो गोप्तमास उपरिक्त हुआ।
 पत्नमें नरदातोने उदयनि हर्षो नामाभिषेक राजधाय
 बनानेके लिये उदवारामक प्रायापयत नगरीरको चित्तोर
 मि कामन पर परिष्ठित किया। वि हासन पर बैठनेके
 कुछ समय बाद जो नगरीरको दुराकाङ्क्षाहित प्रत्य हो
 लडे। लक्ष्मिने अपने समग्र प्रतिहर्षिहर्षीको आनात्मगत
 कामिका म कल्प किया। उदयनि हर्षो पवला उच समय
 किशन का वर्षको को। इस लक्ष्मि हर्षेका विनाय कामि-
 के सिधे नगरीर लया हो गये। एक रातको उदय-
 नि हर्षे का पौ नर मो रक्षि थे। धाम्नी पद्मा लन। मिरा
 हने बैठो मो। इसी समय पद्मपुरमें शोर पान
 नाट लुगई पडा। भव पोर विस्मयसे एनाका हृदय
 कांपने लया। ठोड लगे समय दन्वापुरचारो नायित
 राजकुमारका लूटा लडाने पाया पौर एनाके शब्दा कि
 नगरीरमें धाम्नी तुलत राधा निकमजितको मार डाला है।
 इस इन्काकाच्छको कडा सुन कर एना ताड गई कि
 शिवन इलाके नगरीरको जिहासा निरुत्त न होमो, बड
 अपने प्रवान प्रतिहर्षा उदयनि हर्षका भा लून करने
 पवय पावेसा। पक्ष लय काळ मो बड विनल्य न कर
 लको पौर राजकुमारको बचानेका लपाय सापने लयी।
 लघने यहमप्राण पुष्यररिण्डाके मध्य निहित राज
 कुमारको रथ कर लपरने कुछ निर्माप विवधवत्त विद्या
 दिया पौर नायितके हाथमें बडे समयक कर बधुत लेकी
 ये दुर्गके बाहर निरुत्त जानको लडा। नायितने विना
 सिधै लक्ष्मि वितर्कके ही लघो समय एनाके लपदेयका प्रति-
 पालन किया। इकर एनाने राजकुमारके बदलीमें अपने
 पुत्रको लक्ष्मी म्वाका पर सुखा दिया पौर पाप पूर्वकत्
 मिराहर्षमें बैठ गई। इसी बीच नगरीर आनात्मक
 यमको तरफ लस लरने या बनका पौर 'उदयनि ह
 र्षा है', धाम्नी पूजा। उदर मारै धाम्नीके सु डने एक
 शब्द मो न निकला। लघने राजकुमारकी म्वाकाको पौर
 ल गकोका प्रगारा किया पौर लुग य नगरीरक तोप्य
 हरिशावातके निर पुत्रका हृदयविदारक अपने पांशो-
 धे देखा। पुत्रयोक्से लसका हृदय विदोष होने लना

लेकिन डरके सारे बड़ फूट फूट कर रो भा नहीं सकतो श्री, कि शायद यह रहस्य खुल भी न जाय। तदनन्तर धैर्य धारण कर पन्नाने धर्म पोंछ लिया और अपने पुत्रकी श्रद्धेष्टिक्रिया करनेके बहाने उदयसिंहकी तलाशमें चली गई। इस प्रकार पन्नाने अपने पुत्रकी निष्ठापर कर उदयसिंहकी जान बचा ली। अन्तःपुरचारिणी सहिष्णुताकी इस अनोखी आख्यानके विषयमें कुछ भी खबर न थी। संग्रामसिंहका वंशलोच हुआ, यह समझ कर वे विनाप करने लगे। इधर चिहौर भी पश्चिम प्रान्तप्रवाहिनी वीरानदीके किनारे उदयसिंहकी ले जा कर बह नापित पन्नाकी प्रतीक्षा कर रहा था। बयानमय पन्ना वहां पहुंच गई और देवनाराज सिंह-रावके यहां आश्रय ग्रहण करनेकी इच्छासे वैदोनी कुमारके साथ बहसि चल दिये। लेकिन वहां अब उनका मनोरथ सफल न हुआ, तब वे डूंगरपुरकी रवाना हुए। वहां भी आश्रय न पा कर वे सबके सब रावल ऐंगरणा नामक किमी सामन्तराजकी शरणमें पहुंचे। राजाने आश्रय देनेकी बात तो दूर रहे तुरत उन्हें राज्यमें निकल जानेकी बाध्य किया। अन्तमें पन्ना दुर्भेद्य वनमय प्रदेश समूहको पार कर क्षमनसौरमें पहुंची और वहांके ग्रामनकर्ता आशा-माहके हाथ राजकुमारको अर्पण कर आप वहांसे रवाना हो गईं। इस प्रकार पन्नाने अति विश्वस्त भावसे अपने कर्तव्यकर्मका पालन किया। जो रमणो अपने पुत्रका जीवन उत्सर्ग कर इस प्रकार न्यस्त विषयको रक्षा कर सकी थी, वह रमणो सामान्या नहीं। उसका यह प्रहृत पापकल्याण सर्वथा अनुकरणीय है।

पन्ना (पर्णा) — १ मध्यभारतकी बुन्देलखण्ड एजिन्सोके अन्तगत एक मनद राज्य। यह अक्षा० २३' ४८' से २४' ५३' उ० और देशा० ७८' ४५' से ८१' ३' पू०के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तरमें अंग्रेजाधिकृत बाँदा और घरखारो राज्य; पू०में कोठी, सहाल, नागोद और अजयगढ आदि छोटे छोटे राज्य, दक्षिणमें दमोड़ और जव्वलपुर जिला तथा पश्चिममें छलपुर और अजयगढ़का सामन्तराज्य है। भूपरिमाण २५८६ वर्ग मील और जनसंख्या १८२८८६ है जिनमेंसे अधिकांश हिन्दू ही हैं।

यहांका आदिमें अधिक स्थान विन्ध्य-प्रधिव्यकाभूमिसे ऊपर अवस्थित और जङ्गलमें परिपूर्ण है।

औरक-खानके लिये यह स्थान विरप्रसिद्ध है। पश्चिमी दम खानमें प्रचुर औरक मिलता था और उमी समयमें पन्ना एक मन्दिरशाली नगरमें परिणत हुआ। आजकल यहां पहलके जैसा स्वच्छ वण होन औरक (Diamond of the first water, of completely colourless) नहीं मिलता। अगर मिलता भी है, तो सुझाफनकी तरह सफेद, हरिताम, पीताम, मोहताम और हल्कावण का। पगगल साहबने यहांसे प्राप्त औरक-जातीय प्रस्तरके साधारणतः चार नाम बतलाये हैं,— १ 'मोतोचल' परिष्कार तथा उच्चवर्ण, २ 'माबिक' हरिताम, ३ 'पन्न' कमता नोबूके जैसा रंगविशिष्ट और ४ 'गोदपत' लक्ष्मवर्ण विशिष्ट। यहां जोड़की भी खान है।

महाराज कृतमाहके समय पन्ना उद्योगको परममोसा तत्र पहुंच गया था। इतनाही और बुन्देलखण्ड के ही। उनसे समयमें भूखनविपाठी, प्रतापशाही, शिवनाथ कवि, प्राणनाथी-सम्प्रदायके प्रवर्तक प्राणनाथ, निबाल, पुष्पवत्स, विजयाभिनन्दन आदि प्रसिद्ध हिन्दी-कवि यहां रह कर अपने अपने कवित्वका परिचय देते थे।

छवसालने अपने बड़े बेटे उदयशाहको पन्ना (पर्णा) राज्य दिया। उदयशाह यहां उत्तम राजधानी बसा कर रहने लगे। उनके राजत्वकालमें मानकवि विद्यमान थे। उदयशाहके सभासिंह या सभाशाह और एधोसिंह नामक दो पुत्र थे। पिताके मरने पर सभाशाह राजगद्दी पर बैठे। उनके समयमें रतनकवि तथा करणभट्ट नामक दो हिन्दी-कवियोंने राज-सभाको उज्वल कर दिया था।

सभासिंहके तीन पुत्र थे,—उमानसिंह, हिन्दूपत और कैतसिंह। हिन्दूपतने बड़े भाई उमानसिंहकी गुमभावसे मार कर और छोटे भाई कैतकी वन्दे कर पितृराज्यको अधिकार किया। हिन्दूपत थे तो पर्याचारी, पर साहित्यकी ओर उनका विशेष प्रेम था। मोहनभट्ट रूपशाही और करण ब्राह्मण आदि हिन्दी-कविगण उनकी सभाकी सुशोभित करते थे। महाराज हिन्दूपतके तीन पुत्र थे, ज्येष्ठ सरमंदसिंह (हितोच

मन्दिर हैं जिनमेंसे बलदेवका मन्दिर हो प्रधान है। नूतन प्राभाटके एक कमरेमें सेजके ऊपर मुख्यवान जरीका कपड़ा बिछाया हुआ है और उसीके ऊपर प्राणनाथका ग्रन्थ रक्षित है। प्राणनाथ जातिके जन्मदिन है। उर्दोंने हिन्दू और मुसलमानोंका धर्मग्रन्थ पढ़ कर दोनों धर्मावलम्बियोंकी एक मतमें जानी गयी चेष्टा की थी और इस कारण उर्दोंने नवीन मतका प्रचार किया था। उनके मतावलम्बी उक्त गृहको बहुत पवित्र मानते हैं।

पन्नागार (स० पु०) गौतमप्रवर्तक ऋषिभेद ।

पक्षि—मनवार उपकुलवानो एक जाति। खेतीवारी और टासत्व इनकी प्रधान उपजीविका है।

पक्षिक (हि० पु०) पक्षि देखो।

पक्षिगाए—जातिविशेष । ये लोग चमड़ेके ऊपर सुन-हनीका काम करते हैं।

पन्नियार—मध्यभारतके ग्वालियर राज्यके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २६° ६' १२" उ० तथा देशा० ७८° २' २" पू०के मध्य ग्वालियर दुर्गमें ६ कोस दक्षिण पश्चिममें अवस्थित है। १८४३ ई०को २८वीं दिसम्बरको यहां अंग्रेजोंसेनाके साथ महाराष्ट्र सेनाका भौषण युद्ध हुआ था। मैजर जीनरल श्री आगरा नगरसे सर झूम गफ-परिचालित अंग्रेजवाहिनोंके साथ मिलनेके लिये चांदपुरके निकट सिन्धुनदी पार कर गये और जब वे दो कोस आगे बढ़े तब मङ्गलेश्वर ग्रामके निकट मराठी सेनाने उन पर आक्रमण कर दिया। अंग्रेजोंने पन्नियार भा कर छावनी डाली और उपर्युक्त परिचालित तथा पूर्वयुद्धमें नष्ट कमानादिका उद्धार कर मराठी सेनाको पन्नियारसे मार भगाया।

पक्षिक (स० पु० क्लो०) पादो निष्कस्य, एकदेशिस० बाहुलकात् पदादेशः। निष्कका चतुर्थ भाग। जहाँ पदादेश नहीं होगा, वहाँ पादनिष्क ऐसा पद होगा।

पन्नौ (हि० क्लो०) १ वह कागज या चमड़ा जिस पर सोने या चांदीका लेप किया हुआ रहता है, सुनहला या रूपहला कागज। २ रांगे या पीतलके कागजकी तरह पतले पत्तर जिन्हें सुन्दरता तथा शोभाके लिए छोटे छोटे टुकड़ोंमें काट कर दूसरो यस्तुओं पर चिपकाते हैं। ३ एक लम्बी घास जिसे प्रायः ऊपर छाने

काममें लाते हैं। ४ बाहुद को एक तोल जो आठ सेरके बराबर होती है। (पु०) ५ पठानोंको एक जाति। पन्नोमाज (हि० पु०) वह मनुष्य जिसका व्यवसाय पन्नो बनाना हो पन्नो बनानेवाला।

पन्नोमाजी (हि० क्लो०) पन्नो बनानेका काम, पन्नो बनानेका घंघा या पैसा।

पन्नू (हि० पु०) एक पुष्पवृक्ष, एक फूलका पौधा। पन्नू (स० त्रि०) पन्नस्तो अथवाटित्वात् यत् स्तुत्य, प्रशंसाके योग्य।

पन्नूस् (स० त्रि०) पन्नस्तुत् युगागमः। १ स्तोता, प्रशंसा करनेवाला। २ स्तुत्य, प्रशंसाके योग्य।

पन्नारी (हि० क्लो०) मन्मोले कदका एक जंगली पेड़। यह पेड़ मटा बरा रहता है। मध्यप्रदेशमें यह अधिकतासे पाया जाता है। इसकी लकड़ो टिकाऊ और चमकदार होती है। उससे गाड़ियां, कुर्तियां और नौके बनते हैं।

पन्हारा (हि० क्लो०) एक लक्षणान्य जो गेहूँके खेतोंमें प्रापसे प्राप होता है।

पन्हैया (हि० क्लो०) पन्ही देखो।

पपटा (हि० पु०) १ पण्डा देखो। २ छिपकली।

पपटा (हि० पु०) १ लकड़ोका रूखा करकरा और पतला छिनका, चिप्पट। २ रोटोका छिनका।

पपडिया (हि० वि०) पपडोमन्वन्वी, जिसमें पपडो हो, पपडोदार।

पपडियाकत्या (हि० पु०) खेतसार, मफेट कत्या। यह कत्या साधारण कत्येसे अच्छा समझा जाता है और खानेमें अधिक स्वादु होता है। वैद्यकमें इसको कडवा, कपैला और चरपरा तथा व्रण, कफ, रुधिरदोष, सुखरोग, खुजली, विष, कृमि, कोढ़ और ग्रह तथा भूतको वाधामें लाभदायक लिखा है।

पपडियाना (हि० क्लि०) १ किसी चीजको परतका सूख कर सिकुड़ जाना। २ अत्यन्त सूख जाना, तंग न रह जाना।

पपडो (हि० क्लो०) १ किसी वस्तुकी ऊपरी परतको तरो या चिकनाईके अभावके कारण कड़ी और सिकुड़ कर जगह जगहसे झटक गई हो और नाचको धर

तथा खिन्व तस्मिं पदम मालूम होतो वो । २ चत्वारि
 अपर महादक्षिं सूत्र नामिणे बना हुआ पावरक या परत,
 पुररु । १ हृषबी ह्रासबी अपरो परत त्रिषमिं
 सूत्रमे धोर विटवनेके कारण अत्र ह्रष द्रररं धी
 पड़ो हो । ३ छोटा पापड़ । १ बोरुन पकड़ो या पन्व
 कोई मिटाई जिसकी तरह नमाई गई वो ।

पपड़ीका (हि० वि०) त्रिषमिं पपड़ो जो, पपड़ीदार ।

पुपगो (हि० खो०) पञ्चमके भाग, बरोमी ।

पपरिवाक्या (हि० खी०) राक्षिवाक्या बोलो ।

पपरो (हि० खो०) १ एक पीथा त्रिषमिं कड़ु इवामि
 काममें पातो है । २ बपड़ी देखो ।

पपका (हि० पु०) चामको पनबका ज्ञानि पड़ु बाने
 कासा एक बीड़ा । २ एक प्रकारका पुन जो जो, गेड़
 पादिमें हुए कर सनका धार या जाता है धोर वैवल
 अपरका बिलका कोंका को रहने देता है ।

पवि (घ० पु०) पाति लोख, विवति ब, पा-कि, विल्व ।
 (अ. द्यामवववव विविनी अ. ५ । घ ३१, ३०१)
 १ चन्द्रमा । (हि०) २ पानबर्ता, पानिका सा ।

पपो (घ० पु०) पाति लोख पा-रघरे एक विल्व
 (गपो विट्टे ५ । व ३, १५८) १ लुप्यं । २ चन्द्रमा ।

पपोडा (हि० पु०) १ कोड़े कामेकासा एक पपो । यह
 मधुस धोर बर्ता कटुमें चबकर चामके दरपुं पर बैठ
 कर कड़े मीठे चरके मान करता है । इसका दूधरा
 नाम है चातक । देगम हकी यह कई रूप, रस धोर
 पाकारका होता है । उत्तर भारतमें इसकी पाकति प्रायः
 म्यासा पचोड बपवर धोर इसका कासा या मटम सा
 होता है । दक्षिण भारतका पपोडा पाकतिमें द्रष्टे
 कुछ बड़ा धोर रसमें विभक्तिविध होता है । धन्याय
 काममें धोर मो कई प्रकारके पपोडे पासे जाते हैं आ
 कदाचित् उत्तर धोर दक्षिणके पपोडे को क कर समाने
 हैं । मादा पपोडेका र गुरुप माया सब अमल एक हो
 सा होता है । बच पको पिड़ुके नीचे प्रायः बहुत कम
 उतरता है धोर उस पर मो इस प्रकार बिय कर बीडा
 रहता है कि मनुष्यकी हडि कदाचित् धी उस पर पड़तो
 है । इसको बोको बहुत ही मीठी होती है धोर लक्ष्मि
 कई बपरीका समानैय होता है । कोई कोई कहते

हैं, कि इसकी बोकोमें कोयलकी बोकोमें मो पति
 मिठाव है । हिन्दो-कविमें भाग रखा है कि यह
 पपगो बोकोमें 'वो बड़ा ?' 'वी बड़ा ?' पदात्
 'त्रियतम बड़ा है ?' बोलता है । वाक्यमें धाम नेने
 में इसको समसय बोकोमें इस वाक्यके उदाहरण समान
 हो भ्रानि निवृत्तनी ज्ञान पड़तो है । कहते हैं, कि यह
 पको वैवल बर्ताकी बूदका जो बल वाता है । यदि
 यह प्याचके मर मो जाय तो मो मदे, तामात्र पादिके
 अर्धुं चोच नहीं बूधोता । जब पाकाम मिय धान
 रहता है उस समस यह पपगो चोचको बराबर धोने
 पाकागुली धोर एक ब्यान्वे टक मवावे रहता है, जि
 कदाचित् कोई बूद उसके सु बने पड़ जाय । बहुतनि
 तो यहाँ तक भाग रखा है, कि यह बलक स्वाता मव
 में जोनिभावा बर्ताका जो अल पाता है धोर यदि यह
 मधुस न चरके, तो धास भर प्यावा ही रह जाता है ।
 इसको बोको कामोहोपक मानो मई है । इसके पटल
 नियम, मंत्र पर धन्य प्रेम धोर इसको बोकाको
 कामोहोपकताकी से कर स स्तल तथा भावाके कविमें
 बिलनी हो पच्छी पच्छी उजिवां की हैं । यद्यपि
 इसको बोको चरने माइ तब जगातार सुगाई पड़तो
 रहतो है, परन्तु कविमें इसका मन्त्र केवल बपाने
 बहोपतिमें हो बिया है ।

मध्यममें इसके मांघको मधु कयाय, मधु, मोतल
 मधु, पित्त धोर रजसा नाम तथा यमिनको हडि चरने
 कासा बिया है । २ सितारक कः तारासिंके एक जो
 कोड़ेका होता है । ३ पाकहाके पापका बीड़ा त्रिं
 मांकाके रात्रामि कर बिया वा । ४ परेग देवो ।

पपोता (हि० पु०) एक प्रसिध हृष जो पञ्चसर बरोपा
 में कनाया जाता है । इसका पिड़ु ताड़का तरह सधा
 बहुत है धोर प्रायः बिना कालियाका होता है । यह
 २० पुडके लगमन क बा होता है । इसको पतिपा
 च डोकी पतिपीको तरह कडाबदार होतो है । ह्राप
 का र न चरके होता है । इसका फल पञ्चतर म को
 तप धोर कोई कोई मोल मो होता है । फसल अपर
 मोटा हरा हिलका होता है । गूदा कया जोमिका
 समाने चरके धोर एक जामि पर पोसा होता है । फसल

ठोस बोचर्म बोज़ हाते है। बाज और गूदिके बोच एक बहुत पतली भिन्नो होती है जो बोज-वोय या बोजाधार-का काम देती है। कच्चा पार पका दोनों तरहका फल खानेके काममें आता है। कच्चे फलको अकसर तरकारी वनाते है। पका फल मोठा होता है और खरब जिका तरह यों हो या शकर आदिके साथ खाया जाता है। इसके गूदे, छान, फल और पत्तेमेंसे भी एक प्रकारका लसदार दूध निकलता है जिसमें भाज्य द्रव्यों विशेषतः मासके गलानिका गुण माना जाता है। इसमें इसके मासके साथ प्रायः पकाते है। कहते है, कि यदि मास घोड़ा देर तक इसके पत्तेमें लपेटा रखा रहे, तो मो वज बहुत कुछ गल जाता है। इसके अधक फलसे दूध जमा कर 'पपेन' नामकी एक औषध भोजनाई गई है। यह औषध मन्दाग्निमें उपकारक मानो जाती है। फल भी पाचनगुणविशिष्ट समझा जाता है और अधिकतर इसी गुणके लिए उसे खाते है।

दक्षिण अमेरिकासे पपतिको उत्पत्ति हुई है। अन्यन्ध देशोंमें वहासे गया है। भारतमें पुर्तगालिया-के संसर्गसे, आया और कुछ ही वरसीम भारतके प्राध-काशमें फैल कर चीन पहुंच गया। इस समय विपु-वत रेखाके समोपस्थ सभी देशोंमें इसका वृंच 'अधिकता-से पाए जाते है। भारतवर्षमें इसका भेद दिखाई पड़ते है। एकाक फल अधिक बड़ा और मोठा होता है, दूसरेका छोटा और कम मोठा। प्रथम प्रकारका पपोता प्रायः आसामके गोहाटी और छोटानागपुर विभागके हजाराबाग स्थानोंमें होता है। वैद्यकय इसको मधुर, स्निग्ध, वातनाशक, वीर्य और कफका बर्दान-वाला, हृदयका हितकर और उन्माद तथा वर्षा रोगिका नाशक लिखा है।

पपु (स० पु०) पाति रक्षति पा कु हित्वञ्च (कश्चेति । उ० १।२३) १ पालक । (स्त्री०) २ धात्री ।
 पपुक्षेप्य (स० त्रि०) सम्पर्काङ्गं, सम्पर्कयोग्य ।
 पपुर् (स० त्रि०) पृ-क्ति हित्वं । पूरणशील ।
 पपुया (द्वि० पु०) १ सोटी । २ एक प्रकारकी सोटी जिसे लडुके आमकी अंकुरित गुठलीकी विस कर बनाते है। ३ आमका नया पौधा, पभोला ।

पपोउन (द्वि० स्त्री०) एक पौधा जिमके पत्ते बांधनेसे फाड़ पकता है। इसका फल मकीयका तरह होता है।

पपाटा (द्वि० पु०) श्रावक ऊपरका चमड़ेका पर्दा । यह छेनेकोटि तराता है और इनके गिरनेसे प्राय बन्द होती है तथा उठनेमें खुलता है, पनक ।

पपारना (द्वि० स्त्री०) अपना बाड़े ठंडना और उनका भराव या पुटता देखना ।

पपालना (द्वि० स्त्री०) पपोनेका चुभलाना, चवाना या सुंघ चलाना ।

पपता (द्वि० स्त्री०) धाम मकली, गुंगवहरी ।

पपि (स० त्रि०) प्र पूरणेति, हित्वं । पूरणशील ।

पफक (स० पु०) गोवप्रवृत्तक ऋतुभेद ।

पड्डे (द्वि० स्त्री०) मोनाकी जातिका एक पखेड़ । इसकी बला बहुत मोठी होता है।

पवालक (अ० स्त्री०) १ सर्वसाधारण, जनता, आम-नाग । (वि०) २ सर्वसाधारण सम्बन्धी, सार्वजनिक ।

पवालकवर्क (अ० पु०) १ निर्माण-सम्बन्धी वे कार्य जो सर्वसाधारणके लाभके लिए सरकारको औरसे किये जायेंगे, पुस नहर आदि बनानेका कार्य । २ इंजा नियराका मुहकमा ।

पाव (द्वि० पु०) पवि देखो ।

पभोसा—पलाइवाद जिलेके अन्तर्गत और यमुनाके दक्षिण तिनारम अर्थास्थित एक प्राचीन ग्राम । यह प्रयागसे ३२ मांल दक्षिण-पश्चिम अवस्थित है । इसका प्राचीन नाम पभोस है ।

प्राचीन कीर्तियों दुर्गसे ३ मील उत्तर-पश्चिममें प्रसिद्ध पभोसागौले अवस्थित है । इस गौलेके शिवर पर एक कालिम गुहा है । जसमें एक प्रवेश-द्वार और दो भरोखे है । गुहाके दक्षिणभागमें किसी साधुके चहश्यसे प्रस्तरशय्या और प्रस्तरका उपाधान है । इसके गावमें गुहाचरमें उल्काण १० शिलालिपियां है । गुहाकी पश्चिमी दीवारमें मीर्यों के समयके अक्षरमें उल्काण ३ शिलालिपि देखे जाते है । उन शिलालिपियोंसे जाना जाता है, कि प्रापादकेनने उक्त गुहाका निर्माण किया । गुहाके प्रवेशद्वारके वाम ऊर्ध्वभागमें लिपियोंको ७ पंक्ति है जिनमें प्रापादकेनका परिचय और उनका निर्माणका

लिखा है। पापादेनेन वैश्वर-न शीय योषान धोर
 योषानोके पुत्र राज्ञ तप्यपन्मिभसके मातुम ये। पताह
 है, कि इस गुणमें मात रचना है। यूपनपुत्रः, सुपन
 पादि योमपरिवात्रक मो बुद्धम कल मयेदमन यो ०५
 कर्त्तन कर मये है। कल योम रिवात्रकी हो कलम-
 ने आना जाता है कि ममाट्ट योकेने य १२० फुट
 ल वा एक स्तूप बनवाया था। किन्तु यमा उम पाषाण
 बोद्धकीति का कुछ मो लिप्यन नरा पया जाता
 १८२३ ई०में गिरिगिर पर केनतोके दर पद्यमन य
 का एक मन्दिर बनाया गया है। गिरिके पाददेमन
 यमीय देवकृष्ण नामक एक नरोबदु धोर एक छोटा
 हिन्दूदेवालय देखा जाता है।

पमरा (हि० स्त्री०) मनुष्यो नामक गन्धद्रव्य ।
 पमरा (हि० पु०) १ मजिदुबदर चरित्रो मो एक गाया
 ममरा पवार । २ बलमदक, बकड इ चको ।।
 पमर—१ कर्षोदो मापार्थ एक कवि । याप कवितायुवा
 कर्त्त, पुराणकवि, मुकविजन मगामनमोत्त नरक,
 कुम्भनोत्त य क सराज शवादि कपायिथि भूयित थे।
 यावारयता ये पद्यमुद्रव्य नामके श्री मन्दि थे। पदके
 कलाको-निवित पञ्चको भाषाध्यय दिनतो नरो कोतो
 की इकेने हो मरग पदके कलको मापार्थ पुस्तकको
 रचना कर बनाई माय का गौरव बढ़ाया। अपने
 पाविपुराचमें इकान का यना परिषद दिया है बर
 इस प्रकार है—

विहीमपुत्रके पन्तगत विद्वान्पुः पप्रारमें बह
 कोत्रमें मानक समयाको उत्पन्न हुए। इनके पुत्र याम-
 मानकः, पमिमानके पुत्र कोमरवा क मरवाके पुत्र
 कनिरामदेव शय थे। यमिमानके केलधर्म पद्वय किरा
 का। यमिरामके पुत्र कवितायुवाक य पम्य य। इकेने
 पञ्च मकने कर्मपद- विद्या था। श्रीकाचित त चातुष्य
 परिषेयरोके कलाकेने इकेने कर्मक (प्रधातो) भावार्थ
 पञ्जरचना पारम्भ का। इनको कविता-न सुष्ठु हो कर
 राजाके चके धर्मपुरका मामन प्रदान किया। ये ८५३ मय
 (८७१ ई०) में पदने पान्तिगाय पके पम्यभारत का
 विद्वान्पुत्रविषय, पतङ्गिन लङ्कपुराण, वाण्य नाचपुराण,
 परमाणम पद्विन् काव्यकव्य प्रकाशिन कर विख्यात हुए।

२ एक दूमरे ईम-कवि। ये पमिनक पपनामके
 प्रसिद्ध थे। ये लण्डी भाषामें राधवपाण्डीय भादि
 कुछ काबार लिख कर प्रसिद्ध हुए। ये १००१ मकके कुछ
 पदने विख्यात थे।

पम्या (म० स्त्री०) पति रक्षति मङ्गप्रादोन् वा सुङ्गामन्वो
 निय तन्नात् मातुः (यमरिवात्पाठकन यमा कल्पः । उच
 ३।०८) । इतिवच्य मनीषेद, दक्षिण देवको एक नदी
 पार यमीउ ममोरक एक नाम तथा नगर कनिका पञ्चक
 रामायण धोर महाभारतमें इस प्रकार पाया है—पम्या
 नदीन जगा युधा कयामुक् पर्वत है। ये दोनी कर्वा है
 इसका ठोक ठोच लिख नही युपा है। किमवल नादवने
 किया ये, कि पम्या नदी कयामुक् पर तथे लिखन कर
 तुङ्गभद्रा नदीमें मिल मरे है। रामायणके रतना पता तो
 धोर जगता है, कि मयय धोर कयामुक् दोनो पर्वत प्राय
 का पाम थे। कतुमान्ने कय मूकथे मलयगिरि पर जा
 कर रामके मियनेका उल्लास सुपोकेने कहा था। यात्र
 कलकाद्वार राष्मके एक नदीका नाम पम्ये है जो
 पश्चिम घाटके निकलतो है। इस नदीको कर्वावादि
 'जनसकव कहते हैं। पस्तु यको नदी पम्यानदी जान
 पड़ता है धोर कयामुक् पवत मो नही हो सकता है।

पम्य देवको ।
 पम्य तोय—नौबंमेट । बह केहरो कनिकेको तुङ्गभद्रा
 नदीके दक्षिणी किन रे कान्यानगरमें कपस्थित है।
 पम्यापति देवको ।

पम्य पति—गिबनिदुमेट । एक विजयनगर राज्यके पन्त
 मत कान्या नगरमें पबस्थित है। पम्यापतिके मन्दिरको
 कोरे कोरे विद्यापदेवका मन्दिर कहते हैं।

पम्यापुर—एक प्रयाग नगर बिम्बापक एक पमय हरी
 नगरको नोमाक पन्तगत था। यहाँ प्राञ्चान पम्यापुर
 नगरका दुम धोर कसके जपरके पन्थादिवा भ साभयेय
 टिकामें पाना है।

पमर—भारतकानिचोके मम्य दाभरमचिटीकी एक
 प्रकारको विवाहप्रथा। इस प्रकारके विवाहमें स्त्रीके
 कपय स्थानीका कोई पवित्रार नही रहता। नाम
 मातका विवाह करके यामी पमोट कानको चका
 जाता है। इसकीने गर्भजात पुत्रगाय कबी पिताके

द्वान्नाति हैं । उस पुत्र और कन्याके ऊपर उक्त रमणीका
एतन्नात्र अधिकार रहता है ।

पम्वाङ्—सन्दाजप्रदेशके त्रिवाङ्कुड राज्यमें प्रवाहित एक
नदी । यह पश्चिमघाट पर्वतसे निकल कर अरुणभी
नदीमें जा गिरी है ।

पमान (त्रि० पु०) एक प्रकारका गेहूँ जो बड़ा और
चड़िया होता है, कठिया गेहूँ ।

पयःजन्दा (स० स्त्री०) पयः करटे यस्याः । चौरविदारी,
श्रुतम्हडा ।

पयःकुण्ड (स० स्त्री०) पयभण्ड, दूध या जल रखनेका
घडा ।

पयःपयोष्ठी (स० स्त्री०) पयःप्रचुरा पयोष्ठी, मध्यपदलो०
कर्मधा० । नदीभेद, एक नदीका नाम ।

पयःगान (स० स्त्री०) दुग्धगान ।

पयःपुर (स० पु०) पुष्करिणी वा झर, छोटा तालाब ।

पयःपानिनी (स० स्त्री०) १ बालक । २ उगीर ।

पयःपेटी (स० स्त्री०) नारिकेल, नारियल ।

पयःपसाद (स० पु०) निर्मलीवोज ।

पयःफोने (स० स्त्री०) पयो दुग्धमिश्र फेनं यस्यां गौरादि-
त्वात् डोए । एक प्रकारका छोटा ब्रज, दुग्धफेनो ।

पयश्चय (स० पु०) पयसं चयः समूहः । जलसमूह ।

पयस् (स० स्त्री०) पयस्ते गीयते वा पय गतौ पाने वा
श्रुतम् । १ जन, पानो । २ दुग्ध, दूध । ३ पत्र, अनाज ।
४ रात्रि, रात ।

पयःपाल्य (स० स्त्री०) तक्र, मट्टा ।

पयस्य (स० त्रि०) पयसो दुग्धस्य विकारः, तत्र क्विप्तं
वा पयसयत् । १ पयोविकार, दूधसे निकला या बना
हवा । २ पयोहित । (पु०) ३ पयः पिवतीति यत् । ३
विडाल । ४ दूधसे निकली या प्राप्त वस्तु, दुग्धविकार,
जैसे घी, मट्टा, दही आदि ।

पयस्या (स० स्त्री०) पयस्य-टाप । १ दुग्धिका । २ चौर-
काशीली । ३ प्रकंपुष्पिका । ४ कुटुम्बिनो क्षुप । ५
आसिन्ना, पनार । ६ स्वर्णचौरि ।

पयस्त्रत् (स० त्रि०) पयस् प्रस्यर्थे मतुप, मस्य वः,
सान्त्वत्, न पदकार्यं । जलविशिष्ट ।

पयस्त्रती (स० स्त्री०) नदी ।

पयस्त्रल (स० त्रि०) पयोऽस्त्रस्य वलत्, साम्प्रत्वात् न
पदकार्यं । १ जलयुक्त । (पु०) २ छाग ।

पयस्वान् (हि० वि०) पानीवाला ।

पयस्त्रिन् (स० त्रि०) पयोऽस्त्रस्य त्रिनि न पदकार्यं ।

१ पयोविशिष्ट, पानीवाला । (स्त्री०) २ नदी । ३ घेतु ।

४ रात्रि । ५ काकोली । ६ चौरकाकोली । ७ दुग्धफेनो ।

८ चौरविदारो । ९ छागो, बकरी । १० जीबन्ती । ११

गायत्रोस्वरूपा महादेवी ।

पयस्त्रिनी (स० स्त्री०) पयस्त्रिन् देशो ।

पयस्त्री (हि० वि०) पानीवाला, जिसमें पानी हो ।

पयहारी (हि० पु०) वरुण तपस्वी या साधु जो वधन दूध
पी कर रह जाता हो ।

पया (स० स्त्री०) शुरुही, कचर ।

पयाटा (हि० पु०) प्यादा देखो ।

पयान (हि० पु०) गमन, यात्रा, जाना ।

पयार (हि० पु०) पयाल देखो ।

पयाल (हि० पु०) धान, कोदी, आदिके सूखे उठन
जिनके दाने भाङ्ग दिए गए हों, पुराल ।

पयोगट (स० पु०) पयसो गट इव । १ घनोपल, घोला ।
२ हीप ।

पयोगल (स० पु०) पयो गलति यस्मात् गल अयादानि कां ।
१ घनोपल, घोला । २ हीप ।

पयोगर (स० पु०) पयसो दुग्धस्य ग्रहः, आधारे-प्रचं ।
यज्ञीय पात्रभेद ।

पयोधन (स० पु०) पयसा घना निविद्धः । पर्वत, घोला ।

पयोज्ञ (स० पु०) पय, कमल ।

पयोज्ञमा (स० पु०) १ बादल, मेघ । २ सुस्तक, मोघा ।

पयोद (स० पु०) पयो ददाति दाक । १ मेघ, बादल । २
सुस्तक, मोघा । ३ उद्यदुत्पु पुत्रभेद, एक यदुवशी

राजा । (स्त्री०) ४ कुमाराशुचर मातृकामेद, कुमारकी
अनुचरी एक मातृका ।

पयोदम (हि० पु०) दूधमात ।

पयोदा (स० स्त्री०) कुमाराशुचर मातृकामेद, कुमारकी
अनुचरी एक मातृका ।

पयोदेव (स० पु०) वरुण ।

पयोधर (स० पु०) धरतीति धरः घृ-प्रचं, पयसो दुग्धस्य

अल्पव्य वा घटाः १ श्रीलून । २ मीव । ३ सुप्राह सोपा ।
 ४ खोयकार । ५ नासिकेय, नासिकय । ६ खीव । ७ तद्वाग
 तासाव । ८ पायका पायन । ९ मदार, पकोषा । १० पय
 प्रकारको सव्य । ११ पयैत पकाह । १२ खीरे दुग्धसुत ।
 १३ दीहा टण्डका १४को भेट । १५ समुद्र । १६ अण्यय
 अण्डका २०को भेट ।

पयोधरा—नदीभेट, एक लीका नाम । यह बम्बईपट्टेभेटे
 'पहमदनगर त्रिभुक्ति अक्षय सुन्दरुव पायः' उत्तरमें प्रवा
 हित है । अभी यह नदी पधरा नामने प्रसिद्ध है ।

पयोधम् (म० पु०) पयो दधानि च-पयुम् । १ पण्ड ।
 २ अनाधार ।

पयोधा (दि० पु०) पयोधम् दोखी ।
 पयोधारा (म० स्त्री०) पयसी अनामी धारा । १ अणधारा ।
 पयसा धारा पय । २ नदीभेट ।

पयोधि (म० पु०) पयमि धीयन्तेऽस्मिन् या त्रि (६००)
 विश्वरूपेण । पा १।२।३ । समुद्र ।

पयोधिक (म० स्त्री०) पयोधी समुद्रे जायति अनामि
 इति है च । मण्डुह्येण ।

पयोनिधि (म० पु०) पयमि निधीयन्तेऽस्मिन् धान्वादि
 अक्षिवादी चि । समुद्र ।

पयोमुच (म० स्त्री) दूधपीता दूधमु हा ।

पयोमुच (म० स्त्री०) पयो मुचति मुच क्षि । १
 अण्डमुच, मीव । २ सुप्राह, मासा ।

पयोऽमृतगीर्ण (म० स्त्री०) गीर्णभेट ।

पयोर् (म० पु०) पयो लून रातोति रा अ । अटि
 खीवका पय ।

पयोक्षता (म० स्त्री०) खीरबिगारे, दूधबिगारीकट ।

पयोकाह (म० पु०) १ मीव हाहन । २ सुप्राह, सोपा,
 पयोहव (म० स्त्री०) लवडाहित, अणपरिबधित ।

पयोहन (म० पु०) पयोसातजानमाथी हन । पयोमात्र
 -मान रूप हनविधिय । -

१ 'पुष्पे' सिधे' धनावाप पुनवप-वगदिय ।
 २ श्रीहरप्रियाव शरीरकरात्रनकापि वा ३

(वतनपुत्राव १५५ च)

करना चाहिये । इस व्रतमें खेवल अन्न ही खर रहना
 होता है । यह व्रत दो प्रकारका है, माघपौसाव्रत और
 काष्ठ । २ यज्ञोपविन व्रतभेट । इन व्रतका द्विपय भाग
 व्रतमें इन प्रकार लिखा है—आज्जन्मानमेत दुग्धपचमें
 प्रतिपत्तये मे खर सगोदयो तक पथात् १२ दिन इस
 व्रतका अनुष्ठान करना होता है । प्रातःकालको प्रात
 कृत्वादि करके समाहित चित्तमे भगवान् शुकुणयो यथा
 विधान पूजा करनी चाहिये । इस व्रतमें शिवन पयापान
 करन रहना होता है इसीने इसका नाम पयोहन पडा
 है । इन व्रतानुष्ठानके समय किसी प्रकारका चमदा
 माग का पय किसी प्रकारका निविड काम करना मना
 है । इस व्रतमें श्रीहरपथको पूजा जो प्रधान है । व्रत
 समाप्त हो जाने पर ब्राह्मणभोजन और मृगयोगोतादि
 उक्तन करना होता है । यह व्रत सभी वर्णां और व्रतमि
 खेष्ट है । इस व्रतमें निम्नलिखित मन्त्रमे प्राथना करनी
 होती है -

“१२ देव्यादिवाहैव वरावाः स्वानभिच्छता ।
 ब्रह्मार्थिभ नमस्तुभ्य वन्द्याम मे वराधय इ”

माघव्रतके पार १ पञ्चावमें इन व्रतका विधीय विव-
 रण लिखा है ।

पयोव्य—नदीभेट । यह तापो नदीमें मिली है ।
 (सावीन ७।१४)

पयोयी (म० स्त्री) विद्यापथके दक्षिण दिगामें प्रवा
 हित एक नदी । राजनिघण्टुके मतमें इस नदीका व्रत
 दक्षिणर पवित्र तथा पाप और मय प्रकारका धामस-
 नायाह मुच तथा और कानिपद तथा लघु माना गया
 है । इसका वर्तमान नाम पायमुनि है ।

पयाध्वीजाना (म० स्त्री०) पयोधरो जाना यव्या पृपी
 बरादित्वात् माह । मरन्को मनी ।

पयैतु (दि० पद्य०) पय अण्ड जो खिको बाण्डके सग
 व्रतमें कुछ पयका विहित सुचित करकेवाका दूधरा बाध
 कइनेके पइने लावाजाता है वर तोमी ।

पयैता (म० पु०) १ पयो विद्विषा । २ एक प्रकारका
 अथादार नाव जो आम्पारको धोनामें चलती है ।

पय (म० स्त्री०) पु मार्के कर्त्तरि वा पय (नदीर ।
 पा १।२।१०) १ शिवन । २ मोच । ३ मडा । ४ मडा ।

५ विष्णु । ६ ब्रह्मा तो आयु । ७ ब्रह्म । ८ शिव । (त्रि०)
८ चोष्ण, भागि बड़ा दृष्टा । १० दूर, जो परे हो । ११
अन्ध, दूर । १२ उत्तर । १३ नैयायिकोंके मतमें द्रव्य,
गुण और कर्मवृत्तिमत्ता, व्यापकसमाख्य ।

सामान्य दो प्रकारका है, पर और अपर । द्रव्य,
गुण और कर्म इन तीनोंमें जो वृत्ति अर्थात् मत्ता, उसे परजात कहते हैं । परभिन्ना जाति का नाम अपरजा-
जाति है । भाषा देखो ।

पर (हि० अर्थ०) १ पद्यात्, पोछे । २ एक शब्द जो
किसी अक्षरके साथ उसमें अन्यथा स्थिति सूचित करने
वाला वाक्य कहनेके पहले क्राया जाता है, परन्तु,
किन्तु, लेकिन । (फा० पु०) ३ चिह्निका डैना और
उस परके राएँ, पल, पंख ।

परःक्षण (स० त्रि०) परः क्षणात् परस्करादित्वात्
सुट् । क्त से भिन्न ।

परःगत (स० त्रि०) गतात् परः । गताधिक संख्या,
सौंसे ज्यादा ।

परःखस (स० अर्थ०) खो टिनात् परमः परः खः

परः सहस्रात् परस्करादित्वात् सुट् । परदिन, परसी ।

परःपटि (स० स्त्री०) परः पट्टेः निपातनात् सुटागमः ।
१ साठसे अधिककी संख्या । (त्रि०) २ जिसमें उतनी
संख्या हो ।

परःसहस्र (स० त्रि०) सहस्रात् परः निपातनात् सुटा-
गमः । सहस्राधिक संख्या ।

परङ्गे (हि० स्त्री०) दोएके आकारका पर उससे बड़ा
सिद्धोका एक वरतन, पारा, सराव ।

परसवी (स० स्त्री०) उर्ध्वाः परः । उपमदुर्भेद ।

परक (स० पु०) केशराज ।

परङ्गे—मन्द्राज प्रदेशके त्रिवाङ्गुड राज्यके अन्तर्गत
एक नगर । यह अगस्त्येश्वरसे ५॥ मील की दूरी पर
अवस्थित है । यहांके मन्दिनादिमें तामिलग्रन्थ और
तुलु अक्षरमें लिखित १३ शिलालिपिया पाई जाती हैं ।

परकटा (हि० त्रि०) जिमके पर या पंख कटे हो ।

परकना (हि० क्ति०) १ परचना, हिलना मिलना । २
अभ्यास पढ़ना, चसका लगना ।

परकर्मन् (स० क्ति०) परका कार्य, दूसरेका काम ।

परकर्मनिरत (स० त्रि०) परकार्यमें निपुण ।

परकलत्र (स० क्ति०) परस्त्री, दूसरेको धीरत ।

परकलत्राभिगमन (स० क्ति०) परस्त्री-गमन, दूसरेकी
ओरतके साथ मेलन ।

परकाज्ञा (हि० त्रि०) दूसरेका कार्य साधन करने
वाला, परीपकारी ।

परकान (हि० पु०) तोपका कान या मूठ, तोपका वह
स्थान जहाँ अज्ञक रखो जाता है या बन्नी दो जाती है ।

परकाना (हि० क्ति०) १ परचाना, हिलाना, मिलाना ।
२ कोई लाभ पदार्थका या कोई बात को-रोक टोक
काने के कर उसको और प्रवृत्त करना, धकक म्बोलना,
चमका लगना ।

परकायपवेग (स० पु०) अपनी आत्माको दूसरेके
शरीरमें डालनेको क्रिया जो योगको एक सिद्धि समझी
जाती है ।

परकार (फा० पु०) हस्त या मोर्चाई खींचनेका भाजाग ।
यह पिक्ले सिरा पर परस्पर जुड़ी हुई दो शलाकाओं-
के रूपका होता है ।

परकार्य (स० क्ति०) अन्यका कार्य, दूसरेका काम ।

परकान (हि० पु०) परकार देखो ।

परकाना (हि० पु०) १ मोड़ी, जीना । २ चौखट, देहली,
दहलोज । ३ खण्ड, टुकड़ा । ४ शौशिका टुकड़ा । ५
अग्निक्षण, चिनगारी ।

परकान (हि० पु०) प्रकाश देखो ।

परकोय (स० त्रि०) पराया, दूसरेका, बेगाना ।

परकीया (स० स्त्री०) परकोय-टाप् । नायिकाभेद ।

गुणभावमें जो पर-पुरुष पर प्रेम रखती है, उसे परकीया
कहते हैं । यह दो प्रकारकी है, परोढ़ा और कन्यका ।
कन्यकागण पितादिकी पक्षीन रहती हैं, इसीसे वे पर-
कीया हैं ।

गुणा, विदग्धा, लक्षिता, कुलटा, अनुग्रहाना और
सुदिता आदि नायिका परकीयाके अन्तगत हैं । गुणा-
नायिका तीन प्रकारकी है, हस्तसुरतगोपना, वात्सल्य-
मानसुरतगोपना और वर्त्तमानसुरतगोपना । विदग्धा
दो प्रकारकी है, वाग्विदग्धा और क्रियाविदग्धा ।

परकृति (स० स्त्री०) १ अन्यके कर्तव्यका चरिता

स्नान दूधरेको कृति का बनन । २ दूधरेको कृति
दूधरेका विद्या बुधा नाम । ३ बमको नाम में टा पर
स्वर विरह माकोको कृति ।

परकेश्वरी—बोधन गीत एक रागा । अन्तर्गत गीत रागा
इतिहासके माननेमें इनका नामोकेब है । मन्थनना
के ही मधुराशकी बोधराशयो बर्मा है ।

परकेश्वरीचतुर्वेदीमङ्गल—बापेरी मदीरे तोरवर्गी एक
धाम । बोरबोल नामक बिसे बुधराजन एक धाम
१५० ब्राह्मणोंको दान दिया था ।

परकेश्वरीवर्मा—बोधन गीत एक रागा । बाई हट्टे
बोर रसिन्द्रेक, बोरि पूब पातुख व माव २५ कुवा-
पुङ्ग बाई मानती है ।

परकोटा (वि० पु०) १ बिदा नङ्ग या स्नानको रचाके
बिदे चारों ओर उम्हारे हुई बाजार । २ दाना धारि-
को रोक्नेके बिदे बड़ा बिदा बुधा धुम, बाध कर ।

परजम (म० पु०) परवर्ति जम ।

परजावन (म० पु०) महाभारतके एक घोडा । महा
भारतको लड़ाईमें बं बुरको चारके लड़े थे ।

परजातिष्ठा (ब० स्तो०) योजनाजिष्ठा ष्ठा ।

परसुहा (ब० स्तो०) वेदादिने निश्चन छोटा बावता ।

परसेह (ब० स्तो०) एक शिरम जम्पादि । १ परजना,
परारि स्तो । २ पराबा खेत । ३ सुधरेका मरार ।

परश (वि० स्तो०) १ सुच दोष खिर करनेके लिये पक्षी
तरह दिख भास, बाध परीया । २ बाई बलु भना
है वा सुटे, यह ज्ञान लेनेका यज्ञि पदधान ।

परशना (वि० जि०) १ सुच दोष खिर करनेके निर
पक्षी तरह देखना भाङना, पर्या करना, बाध
करना । २ महा पोर सुग पदधानता, भीत बलु क वा
है बड़ ताड़ना । ३ प्रतोया करना, हलालार करना,
प्रावण देखना ।

परशनामा (वि० जि०) परशना देखो ।

परशनेवा (वि० पु०) परशनेशाका, बाधनेवाका ।

परबाई (वि० स्तो०) १ परशनेका नाम । २ परशनेको
मङ्गलपूरी ।

परशाना (वि० जि०) १ परशनेका नाम दूधरेके कराना,

परीया कराना ज चवाना । २ बाई बलु देते वा मौपते
धमय ठने दिन कर वा ठमट धमट कर निखा देना,
मङ्गलवाता म मजवाता ।

परशाम—मठुर, त्रिलोक धलगत एक प्राचीन धाम । यह
धामा नवर्षि २२ मोन पोर मङ्गुशि १४ मोसको दूरी
पर एक निः शक्तिशालु पके खपर पवस्थित है ।

यहां प्रवाहवाकि सायक लिये मासमासमें प्रति
शिवारका सोला लगता है । वर्षमानकायमें इस धाम
को बाई विगिय ठकेबपोर लटका लड़ा रहने पर भी
यहां गज राजाओंके समयकी चमत्क प्रस्तरमूर्ति
पाई जाता है । इनमें एक मधुपराको मूर्ति है जिसकी
ऊर्ध्व ७ फुट है । यह मूर्ति यमी मन्थावस्त्रामें
रहने पर भी इनका पूब खार मठन पोर मङ्गलता ज्ञान
भा ल्याको त्यों बना है । इसमें परिष्कटादि श्रतम्भ हैं ।
परशनी गज राणापके माननकायमें ल्यादित मूर्ति के
परिष्कटके मिक है । गनेमें एक प्रहारकी मासा लटक
रहा है । इनके गनमें दो निचि लोदित है बहो पाडर
को चोख है । उनको पकर मन्थाट्, पयोबके समग्रको
निविडे जये मान्युय होती है । यह मूर्ति शरी मत्तान्दी
को मनी हुई है एना ज्ञान पड़ता है । मूर्तिके दो ज्ञान
दूट ज्ञानमें बर बिसेको मूर्ति है, इसका पता नहीं
पलता ।

परशुगो (वि० स्तो०) पशुदी देखो ।

परशुवा (वि० पु०) परशनेवाका ।

परगोव—१ शश्वैप्रदेयके पुना जिज्ञानामत एक धाम ।
यह पाटमधि ११ मोन उत्तर पश्चिममें पवस्थित है ।
यहां तुषारि देवाका एक मन्दिर है । देवाको मूर्ति
तुषारापुरके यहाँ लाई गई थी ।

२ बाणा त्रिलोक धलगत एक धाम । इसकी
भीम। पर मठ म पोर लोको मूर्ति रचित है ।

परत (वि० पु०) यग अदम, डम ।

परगत (म० जि०) पर गत द्वितीयापितातोतेति २
तत् । परमाम धपरमत ।

परमना (का० पु०) एक म्भुभाग त्रिलोक धलगत बङ्गलसे
धाम थी । आज बस एक तहशोक धलगत है

परगनी होती है। बड़े परगने कई तर्पों या टर्पोंमें बँटे होते हैं।

परगनी (हिं स्त्री०) परगहनी देखो।

परगहनी (हिं स्त्री०) सुनारोका एक सोनार जो ननोंके आकारका होता है और जिसमें बरछोको तरह डालो लगे होते हैं। इस ननोंमें तेल टिक कर उगमें चादो या सोनेको गुलिया टालते हैं, परगनी।

परगाछा (हिं० पुं०) एक प्रकारका पौधा। यह गरम देशोंमें दूसरे पेड़ों पर उगता है, इसको पत्तियाँ लम्बो और खड्डो नखीको होते हैं। इसमें सुन्दर तथा अद्भुत वर्ण और आकृतिके फूल लाते हैं। एक ही फूलमें गर्भकोश और परागकेशर दोनों होते हैं। परगाछेकी जातिसे बहुतसे पौधे जमीन पर भी होते हैं। लौंग इसी फूलोंको सुन्दरताके लिये धमोचामें लगाते हैं। ऐसे पौधे दूसरे पेड़ोंका डालियों पर उगते तो हैं, परमत्र परिपुष्ट नहीं होते परगाछेकी कोई टहनो या गाँठ भी बीजका काम देतो है। उसमें भी नया पौधा अंकुर फोड कर निकल पाता है। परगाछेको संस्कृतमें षटाक्ष और हिन्दुमें बाटा भी कहते हैं।

परगाछो (हिं स्त्री०) अमरवेन, आकागवौर।

परगामिन् (सं० त्रि०) परं वाच्यं गच्छति लिङ्गेन समत्वात्, पर, गम णिनि। वाच्यलिङ्ग शब्द।

परगामना (हिं० क्ति०) प्रकाशित होना वा करना।

परगुण (सं० त्रि०) उपकारो।

परग्रन्थि (सं० पुं०) परेण ग्रन्थियत्र। पर्वोषधि, उँगलीकी गिरह।

परघनी (हिं० स्त्री०) परगहनी देखो।

परचंड (हिं० वि०) प्रचण्ड देखो।

परचक्र (सं० क्ति०) परस्य शत्रोश्चक्रं। १ शत्रुकी राजा प्रसृति। २ शत्रुराज्यमें उत्पन्न इतिभेद। ३ विपक्ष राजा।

परचक्रकाम (सं० पुं०) १ परराज्यपिपासु, वह जो दूसरेका राज्य लेना चाहता हो। २ नेपालराज २य जयदेवका एक नाम।

परचना (हिं० क्ति०) १ घनिष्ठता प्राप्त करना, हिलना, मिलना। २ चसका लगाना, धड़क खुलना जो वात दो

एक बार अपने अनुकूल ही गई हो या जिस बातकी दो एक बार भी गोक टोक मनमाना करने पाए हों उसकी हीर प्रवृत्त रहना।

परचर (हिं० पुं०) बंध प्रालिके खाँदी जिनेमें पाई जानेवाली बेलकी एक जाति।

परचा (फा० पुं०) १ चिड़ा, खुल, पुरजा। २ पंगोचामें आनेवाला प्रयत्न। ३ भागजका टुकड़ा, चिट, भागज। ४ परिचय, जानकारी। ५ प्रमाण, सबूत। ६ पंगोच, परच, जांच। ७ जगन्नाथजीके मन्दिरका बड़ प्रधान पुनार। जो मन्दिरका घासदानी और खर्चका प्रबन्ध करता तथा पूजा सेवा आदिकी देख रेख रचना है।

परचाना (हिं० क्ति०) १ प्राप्तियेन करना, हिलाना, मिलाना, किमादि इसना प्रथिफ लगाव पैदा करना कि उसमें व्यवहार करनेमें काई संकोच या खटका न रहे। २ धड़क खुलना, चनका लगाना, टेव डालना।

परचार (हिं० पुं०) प्रचर देखो।

परचारना (हिं० क्ति०) प्रचारना देखो।

परचित्तज्ञान (सं० क्ति०) परचित्तस्य ज्ञानं। दूसरेका मनोभाव जानना।

परचित्तपर्यायज्ञान (सं० पुं०) अपने चित्तमें दूसरेके चित्तका भाव जानना।

परचून (हिं० पुं०) भाटा, चावल, दाल, नमक, मसाला आदि भोजनका फुटकर समान।

परचनी (हिं० पुं०) १ परचनवाला, भाटा, दाल, नमक आदि बेचनेवाला वनिया। (स्त्री०) २ परचून या परचनीका काम या भाव।

परचै (हिं० पुं०) परिचय देखो।

परच्छन्द (सं० त्रि०) परस्य छन्दो यत्र। १ पराधीन। परस्य छन्दः इत्यत्र। २ परामिलाप।

परच्छन्दवत् (सं० त्रि०) परच्छन्दः विद्यतेऽस्य मतुप, सम्यक् व। परच्छन्दयुक्त।

परछत्ती (हिं० स्त्री०) १ घर या कोठरीके भीतर दीवारसे लगा कर कुछ दूर तक बनाई हुई पटन जिस पर सामान रखते हैं, टाँड, पाटा। २ हलका छपर जो दोवारों पर रख दिया जाता है, फस आदिकी छाजन।

परमहंसांको 'तत्त्वमसि' इत्यादि महावाक्यवशात् भव
अभयं कर सर्वदा ध्यामन्नात्मना अनुगीतव्यं कर्तव्यं
उचितं है। 'मोक्ष मिथोऽहं' इत्यादि वाक्य कथं कर
हन्ते तत्त्वज्ञानात्मन्भवना परिणय देना चाहिये।

उक्त चार प्रकारको उपायबोधको अन्वेषणक्रिया भी
एक ही गन्तव्य है। निश्चयनिश्चयमें परमहंसकी विषयमें
को सिखा है, वह एक प्रकार है—

परमहंसांका देशावसान होने पर उनका शरीर
न बना कर जसोनेमें गाड़ देना चाहिये। किन्तु
वायुमहितादि मत्तने परमहंस मिला पन्था तोन प्रकारके
मन्वासीको पकड़े जसोनेमें गाड़ कर पोछे दाह करना
चाहिये। किन्तु परमहंसको अतदेहकी जसोनेमें गाड़
सकते हैं। उनको अन्वेषणमें योगीय गन्तव्य होता और न
अन्यक्रिया ही होता है।

साधारणतः परमहंस मन्वाभो जो इस लीलाके मयन-
मोक्षर होवे है, सोय तोन प्रकारके मन्वासी बहुत
कम नजर पावे हैं। प्रधानतः परमहंस ही प्रकार
का है हन्तो और अचभूत। किन्तु हन्तका त्याग कर
परमहंससायम अचभूतत्व सिद्ध है, ये दृष्टपरमहंस
और को अचभूत-सिद्धिवा अनुष्ठान कर मयमें परमहंस
ही गये हैं, वे अचभूत-परमहंस कहलाते हैं। वहां ही
प्रकारके परमहंस न केवल प्रवचनको उपासना किया करते
हैं। साहचर्यका अहंता है, कि परमहंसोंका ज्ञान ही
एकमात्र दृष्ट है। यद्यपि वे हीय अंतर्धारके उपासक
और तत्त्वज्ञानक अचभूतको हैं, तो भी प्रवचन पढ़ने पर
कोई कोई देशप्रतिमुक्तिको वचन करती हैं, किन्तु
उन्हे नमस्कार नहीं करते। इनके मध्यमो कोई कोई
हरापान किया करते हैं। मत्ताचभूत दो प्रकारका है,
पूषं और अपूषं। पूषंमत्ताचभूतको परमहंस और
अपूषंको परिजातक कहते हैं।

महाविश्वरूपत्वक अष्टमोक्षासमें सिखा है—

एकवचि महाप्रकृ ह वाऽऽ विवादन।

निष्कमो निरहङ्कारः स्वभावैव स एव च ॥”

मिथ एक प्रकार महात्मक एकच कर पदमेंको ध्याम
क्षेप समसि। तन्मते अत्र उक्तिवत् महात्मक अच-
देय देनेको व्ययव्या है। किन्तु मन्वासी लोग सधरा

अर एक प्रकार परम-प्रतिपादक निम्नलिखित मन्वाका
मन्वशा मन्व एकच किया करते हैं।

‘मैम् साद्र संव’ परमहंसः परमात्मा देवता।

विष्णवः पश्चिमात्मन्स्वरुः शीघ्रं ब्रह्म ॥”

यो। मैं नहीं हूँ न, परमहंस, परमात्मादेवता हूँ,
मैं वहां ज्ञानमय सच्चिदानन्दरूप परमहंस हूँ।

इस मन्वको एक गायत्री मा है विधवा अन्वाच
कर अप करना होता है। वह गायत्री यों है—“यो
हं माय विद्महे परमहंसो वासो देवता प्रचो
इवात्मा।” यः। जिसने हं ममें ज्ञान ही, परमहंसको
पिता करे, वहां हम सोमोंको प्रदान कीजिये।

आवाचोपनिषद्में मन्वसंज्ञः, पाश्चि, श्वेतकेतुः,
दुर्वास, ऋधु, निदाघ, मङ्गल, दत्तात्रेय और वैशतक
आदि परमहंस नामके बर्चित हुए हैं। ये लोग अन्व
किन्तु, अन्वज्ञाचारों और अन्वत्त नहीं होते हुए भी
अन्वत्तनपु पाचरक करते हैं। (मावाक-६) परमहंस-
का किन्तु अन्वत्तक ही उपासित, आवाचोपनिषद्, अन्व
स हिता, मारदपद्मगत परमहंस अच हिता, निश्चयनिश्चय
आदि अन्वमें सिखा है।

१ परमात्मा। २ तत्प्रतिपादक अचभूतहंस।

परमा (सं० अं०) अन्व, अन्व।
परमा (वि० अं०) ध्याम, अन्व, अचभूतता।
परमाच्य (सं० अं०) परमा आत्मा मन्व। परमाच्य।
परमाटा (वि० पु०) १ अन्वत्तम एक तात्। २ एक
प्रकारका अन्वत्ता अन्वत्ता और अन्वत्त अचभूत। पर
माटा आहूँनियामें एक स्थान है। प्राचीनकालमें अन्व-
से जिसे अन्वत्ता अन्वत्ता होता था उसने एक प्रकारका
अचभूत बनता था। अच अचभूतका ताना अन्वत्ता
और अन्वत्ता अन्वत्ता जाता था। अन्वत्ता परमाटा कहते
थे। किन्तु अन्व परमाटा अन्वत्ता ही बनता है।

परमाच्य (सं० पु०) परमा अन्वत्तमका अच्य। अन्व
अचभूत परमाच्यपुत्र अन्वत्तमत्तसिद्धि अन्वत्त अन्वत्त
और अन्वत्ता अन्वत्तामत्त अन्वत्ता अन्वत्त, तन्वत्त और अन्वत्त
आर अन्वत्ता अन्वत्ता अन्वत्ता अन्वत्ता अन्वत्ता अन्वत्ता

३ इव अन्वत्तम अन्वत्त, अन्वत्त, परमात्मा इत्यादि
है। इव अन्वत्तम अन्वत्त अन्वत्ता अन्वत्ता है।

नहीं हो सकती। यह परमाणु नित्य और निरव्यय है। परमाणुमें सूक्ष्म और कोड़े पदार्थ ही नहीं है।

“नित्यानित्या न सा द्वेषा निरया स्यात्पुनरुत्पत्त्या।

अनित्या नृ तदन्या स्यात् मैवावयवयोगिनी ॥”

(माध्वरि०)

परमाणु नित्य और अनित्य है। इनमेंसे अनुसन्धाना नित्य और सभी अनित्य है। यह अवयवयोगिनी है। गवाक्षमार्ग ही कर सूर्यकिरण पड़नेसे उसमें जो छोटे छोटे रजःकण देखनेमें आते हैं, उनमें कण्डों भागका नाम परमाणु है।

“कालान्तरं ते मानो यत् सूक्ष्मं दृश्यते रजः।

भास्वस्तस्य च पृथे यः परमाणुः स उच्यते ॥”

(तर्काम्बु)

भाग करते करते जिम्का फिर विभाग नहीं हो सकता, वही परमाणु है। परमाणु प्रत्यक्ष नहीं होता, परमाणुद्वय संयुक्त हो कर द्रवणुक और द्रवणुका होनेसे तब प्रत्यक्ष होता है। सावयव द्रव्यके अवयवोंको विभाग करते करते जहाँ विभागका श्रेय होगी, जिम्का फिर विभाग नहीं किया जायगा अथवा जो फिर विभक्त नहीं हो सकता, उसका नाम परमाणु है। यह परमाणु चार प्रकारका है—भौम, जलौय, तैजस और वायवीय। जब जगत् सृष्ट होता है, तब प्रथमतः गूढकारणमें वायवीय परमाणुमें क्रिया उत्पन्न होती है, यह क्रिया वायवीय परमाणुको परस्पर संयुक्त करती है। इस प्रकार संयुक्त होनेसे द्रवणुक उत्पन्न होता है। क्रमशः त्रणुक, चतुरणुक इस प्रकार वायुको उत्पत्ति दृष्टा करती है। इसी प्रणालीमें क्रमशः अग्नि, जल और पृथ्वी आदिकी सृष्टि होती है। प्रलयकालमें इस प्रकार-परमाणुके विभक्त होनेसे ही सभी भूतोंका नाश होता है, केवल परमाणु मात्र रह जाता है। ऐसी अवस्था को प्रलय कहते हैं। परमाणु परिमाणका कारणत्व नहीं है।

वैज्ञानिक दर्शनमें जो परमाणु नामसे व्यवहृत होता है, सांख्यदर्शनके मतमें वह तन्मात्रके जैसा अनुमित होता है। यह तन्मात्र वा परमाणु स्थूल भूतपञ्चक और भौतिक-जगत्का उपादान-कारण है। सांख्यका

तन्मात्र शब्द भौतिक है, तत् + मात्र अर्थान् केवल या शरीर। वैशेषिक लोग निम्न प्रकार परिभाषित परमाणुका जलौय परमाणु और तैजस परमाणुका जलौय विभेद नामोंसे व्यवहार करते हैं। उसी प्रकार भौत्याचार्य भी मन्व-तन्मात्र समस्तमात्र आदि विभेद विभेद नामोंकी काममें लाते हैं। तन्मात्र शब्दका तत् तत् वा वात् शब्द भौतिक है, परम + तन् अर्थान् अति सूक्ष्म। परिमाणु जलौय प्रकारका है, जल, मन्मथ और मन्थ। इसका प्रथम दृष्टान्तौषक और जलौय द्रवणुका है। प्रथम परिणाम और मन्थ परिणाम यदि यत्परोनाम्नि ही उठे, तो उसे जाननेके लिये उस अणु और मन्थ शब्दों परसे एक परम शब्दका प्रयोग होता है। इसीसे यत्परोनाम्नि सूक्ष्म यत्पुका नाम परमाणु है, इसी प्रकार द्रवणु परिणामका नाम परमद्रवणु है। परमाणुका द्रवणु नाम है परिमण्डल और सन्धानु। कालान्तरमें यह मन्थभूत नामसे परिभाषित होता है।

परमाणु और तन्मात्र शब्दों दो अनुमित पदार्थ हैं, परमाणुका अनुमान द्रव प्रकार है—सूक्ष्म वस्तुमात्र ही विभाज्य है जो विभाज्य है, उसका अंग रूपा करता है। वस्तु विभाज्य होनेसे उसे पदार्थ, पदक, अंशोंमें व्यवहित होने देखा जाता है। यह भी देखा जाता है, कि प्रत्येक विभक्त अंग प्रत्येक विभक्त ल्यको अंगेष्टा सूक्ष्माकार धारण करता है, इस प्रकार जहाँ सूक्ष्मताया श्रेय होगी, वहाँ विभाज्य और अवयवशून्य वस्तु ही परमाणु है।

वैशेषिकोंके मतमें—सांख्य जिस प्रकार अतीत और अनन्त है, परमाणु भी उसी प्रकार अगमनोय, अतीत और अनन्त है। महाप्रलयमें यह, नष्टव तारका, मागर, शेष आदि समस्त विश्व विध्वस्त होने पर उनके परमाणु आकाशगर्भमें निहित वा स्थिर रहते हैं। वैज्ञानिक दर्शनमें मतमें परमाणुमें जगत् उत्पन्न दृष्टा है। कणाद सृष्टिप्रक्रियाको जगत् कहते हैं, कि सभी परमाणु प्रलयावस्थामें निश्चल रहते हैं। जब सृष्टिका आरम्भ होता है, तब वे सब परमाणु जीवात्माके प्रभावसे संचल हो जाते हैं। वे जहाँ हो संचल होते हैं, वहाँ ही संयुक्त होने लगते हैं। पाँचे द्रवणुक, त्रणुक आदि रूपोंमें समुद्रय

सङ्क्रमण इत्यत्र होता है। हम मनमें निद्रि, मगो, मनु
टादिबिगिष्ट के समा विच्छेदनाय प्रयत्न है। जिस हेतु
नामयव है उसा हेतु हमका वाप्यत है उत्पत्ति पोर
प्रवच दीनी हो है। वायमान हो सकारण है बिना
ह रवके कोई कार्य नहीं होत, परमात्मागि है। जगत्
का कारण है। वापादका सङ्गता है कि चिंत अत्र सज
पोर बाहु धी पार भूत मावयव है। सुनरी परमात्मा मा
पार प्रकाशका है। जिस ज्ञानमें यह प्रविश्यादि परम
विभागेमें विभक्त होती है चर्चात्परम स हो प्राता है
उभो ज्ञानका नाम प्रवच है। प्रवचनमें परम प्रवचय
प्रवच परमात्मा ही रहता है, उम समय फिर प्रवचनी
नहीं रहता। अटिज्ञानमें हमो परमात्मा हे जगत्को
उत्पत्ति होती है। जिस समय टी परमात्मा हे इच्छा न
उत्पन्न होता है उभो समय परमात्मागिष्ट अर्थात् सुव-
विशेष को अर्थात् नामने प्रविष्ट है नच प्रवच यथादि
सुवचिरीय उत्पन्न करता है। सैव परमात्मा उ प्रवच
सुव है—पारिमात्रिक्य (परिमच्छन—परमात्मा) परमात्मा
का परिमाण है। इच्छात्ममें प्रवच पारिमात्रिका नहीं उत्पन्न
होता। इच्छात्मका परिमाण प्रवच पोर प्रवच है। इच्छात्मादि
ज्ञानमें ज्ञान मृतोत्पत्ति होती है। (वेद्योपिच्छर)

विद्वान्प्रमाणमें परमात्मा ज्ञान नाम निराकृत हुआ है।
मगवान् मद्राजाय परमात्मा हे जगत्को अटि वृद्धि है
यह ज्ञानर मनो करने। चर्चात्तिकापद हे हम मनकी
आत्म भावित किया है। यही पर बहुत मन्दिमें हम
विषयकी वागोचना को आतो है। मगवान् मद्राजाय-
का कहना है, कि परमात्मा गि वा तो प्रवृत्तिवभावा
है वा निवृत्तिवभावा, वा जगत्प्रवचान प्रवच प्रमुमव
व्यमान चर्चात्तु निवृत्तिवभावा। वेद्योपिच्छर ही हम पार
प्रकारमें यह प्रकार प्रवच की स्वीकार करना योग
किन्तु हम पार प्रकाशमें विज्ञो मो प्रवचका उत्पन्न
नहीं होता। प्रवृत्तिवभावा होनेमें प्रवच ही ही नहीं
सकता पोर फिर निवृत्ति वभावा होनेमें अटि मा नहीं
हो सकता। यथावा पर प्रवृत्ति पोर निवृत्ति के दोनों
रह नहीं सकता। निवृत्तिवभावा होनेमें ऐतिहासिक प्रवृत्ति
निवृत्ति तो हो सकती है, पर तत्पक्षके निमित्त हमो है
चर्चात्तु ज्ञान, अटि पोर ईश्वरीयका, निवृत्त तथा नियत

संज्ञित है। सुनरी उच पक्षमें भी निवृत्ति-प्रवृत्ति
को निवृत्ति-प्रवृत्ति ही वाच्यता हो सकती है। अटिवादि
कारण नियमको प्रवृत्तव्य प्रवच प्रवच कहनेमें
हो निवृत्ति प्रवृत्तिवभावा वाप्यत होती है। प्रवच पर
मात्मा कारणवाद नव दा प्रवृत्त है। भावव्य प्रवचका विव
विभागा हो परमात्मा है। वेद्योपिच्छरको यह ज्ञानका
निवृत्त प्रवृत्त है क्योंकि उमका कहना है, कि अर्थात्
मात्मा परमात्मा निवृत्त है पोर ही जो मृतमोतिव प्रवच
के कारण है। अर्थात् प्रवचमें ही परमात्मा प्रवृत्त
पोर निवृत्त हम दोनका प्रवरोक्त वाया जाता है
प्रवच वेद्योपिच्छर परमात्मा परम कारणप्रिया अज्ञ
पोर प्रवृत्त यको प्रवचका होता है, किन्तु यह उमके
प्रविभागेके विवरोक्त है। अर्थात् प्रवचमें उममें ही प्रवृत्त
पोर प्रवृत्तव्य रहता है नच कोमिमें अटि होता
ह। यह प्रवच जगत् देना जाता है कि अर्थात्प्रवृत्त
हमो सकारणप्रिया अज्ञ पोर प्रवृत्त है। वेद्योपिच्छर
परमात्मा ही अर्थात्प्रवच है। जिस हेतु अर्थात्प्रवच है
हमो हेतु उमका कारण (मूल) है पोर परमात्मा उच
कारणका प्रिया अज्ञ तथा निवृत्त है, यह सङ्क्रममें
प्रतीत होता है। वेद्योपिच्छरमें ही प्रवृत्त निवृत्तता
साधने किसे प्रवृत्तिया च' यह मूल कहा है, नच उमके
मनमें प्रवृत्त निवृत्तता वा उनीव कारण है। यदि प्रवृत्त
निवृत्तताप्रवच अज्ञ प्रवृत्तियागन्धको देसो व्याख्या सप्रत
हो कि अज्ञानम् न्य ज्ञान्य (अज्ञान्य)का मूलकारण
प्रवृत्तके द्वारा प्रवृत्त नच होता प्रवृत्त नच प्रवृत्तव्य
है तो हमो कारण उमका नाम प्रवृत्तिया है। यह प्रवृत्तिया
प्रवृत्त-निवृत्तताका प्रवृत्तम हेतु है। प्रवृत्तिया च' इस मूल
का प्रवृत्त अज्ञित प्रकार होनेमें इच्छात्तु पोर निवृत्त हो
सकता है। प्रवृत्तिया परमात्माप्रवृत्तको निवृत्तता व्यापन
करनेमें समर्थ है' एसो व्याख्या करनेमें भी निवृत्तप्रवृत्तमें
प्रवृत्त निवृत्तप्रवृत्त नहीं होमा। कारण यह है, कि विनमर
वस्तु उमो टी कारणोंमें नच जाती है। प्रवृत्त प्रकारमें
नच नहीं होती, एसा कोई नियम ही नहीं है। यदि
प्रवृत्त गन्धके प्रवृत्त प्रवचन म मूल को अज्ञान्यकारण उत्पन्न
करता है, एसा प्रवृत्त है, तो उच नियमके विनाशकी
विधि तो हो सकती है, पर नियमवर्जित

सामान्यात्मक कारणकी विरोध अवस्था उपस्थित होने पर प्रारम्भ कहा जाय, तो घट-जाटिन्वयविनाशका घट का घनोभूत अवस्थाके दिनागति भी विनाशका होना सङ्गत नहीं हो सकता। अतएव परमाणुके सन्दर्भमें वैशेषिकका जो गूढ अभिप्राय था, वह अभिप्राय रूपादि स्वीकार करनेसे जो विपर्यन्त हुआ है। इसमें परमाणु कारणवाद अयुक्त है अर्थात् परमाणु ही जो परम कारण है, मो नहीं। मन्वादि ऋषियोंने प्रथम कारणवादसे किनो किनी अंशको बेटिका और मन्वाद्यंतादि अंशको उपजावनार्थ माना है। किन्तु परमाणु कारण गूढका कोई भी अंश किमी भी स्वीकारे सङ्गत नहीं आता है। इस कारण वेदवादीके निजट परमाणुवाद अत्यन्त आदर्शनीय है।

वेदान्तदर्शन, वैशेषिकदर्शन और अन्य गूढमें विभक्त विवरण देखो।

परमाणुवाद (मं० पु०) न्याय और वैशेषिकका यह सिद्धान्त कि परमाणुओंसे जगत्की सृष्टि हुई है।

परमाणु देखो।

परमाणुवादो (मं० पु०) परमाणुओंसे योगसे सृष्टिकी उत्पत्ति माननेवाला।

परमाणुवाद (मं० पु०) परमाणुसङ्घ' अथ, ततः कप । ईश्वर, विष्णु । परमाणु द्वारा जगत्की सृष्टि होती है, इसीसे परमाणु ईश्वरका अंग माना गया है।

परमात्मक (मं० वि०) परमात्मन् स्वार्थ-कन, परमात्मा-रूप ।

मात्मन् (मं० पु०) परमः केवल आत्मा । परब्रह्म, ईश्वर । पर्याय—आपोऽन्योति, चिदात्मा ।

“परमात्मा पर ब्रह्म निष्कणः प्रकृतेः परः ।

कारणं कारणानाञ्च श्रीकृष्णो भगवान् स्वयं ॥”

(ब्रह्मसूत्रं प्र० २३ अ०)

परमात्मा-विषयमें दर्शनसमय हमें नतभेद देखा जाता है। उपनिषद् और दर्शनसमूहमें यह जिन भावमें आलोचित हुआ है, वही वहाँ पर अन्वेषमें लिखा जाता है।

परमात्माका विषय कहनेमें पहले आत्माके विषयको पर्यालोचना करना आवश्यक है।

उपनिषदादि प्राचीन ग्रन्थोंमें केवलमात्र 'आत्म'

शब्द द्वारा ही विभिन्न आत्माका विषय वर्णित हुआ है।

दार्शनिक लोग प्रधानतः जीवात्मा और परमात्मा यह दो आत्माकी स्वीकार करते हैं। कई जगत् वेदाङ्गिकों-ने केवल 'आत्मा' शब्द द्वारा परमात्माकी ही ममभानेकी चेष्टा की है। परमात्मा ही वैदिकान्तिकी परब्रह्म है।

जीवात्माकी ज्ञान विना परमात्माका स्वरूप जानना कठिन है। इस कारण पहले जीवात्माका स्वरूप ही लिखा जाता है।

सदानन्द योगीश्वरने वेदान्तसारमें लिखा है, 'कौन कौन व्यक्ति जिस किस वस्तुकी जीवात्मा मानते है वह कहते है—

मूढ व्यक्ति युतिका प्रमाण दिखा कर कहते है, "आत्मा ही पुत्र हो कर जन्म लेतो है, अपनेमें जैसे प्रीति है पुत्रमें भी वैसे प्रीति होती है।" फिर उनका कहना है कि पुत्रकी पुष्टि होनेसे हमारी पुष्टि होगी अथवा पुत्रके नष्ट होनेसे हम भी नष्ट होंगे। इस प्रकार 'पुत्र ही आत्मा है' ऐसा वे कहते हैं।

कोई कोई चार्वाक 'पद्मरसका विकार पुत्रप ही आत्मा है' इस युतिका प्रमाण दे कर स्थूलशरीर को ही जीवात्मा मानते है। उनका कहना है, कि पुत्रको फंक देने पर भी वह पट्टेस टुकड़ेमें आते देखा जाता है। किन्तु सभी यह ममभते है कि 'मैं स्थूल हूँ मैं हूँ हूँ' इत्यादि। फिर किमी चार्वाकका कहना है, 'मैं अन्य हूँ, मैं अधि हूँ, इत्यादि सभी ममभते हैं।' फिर इन्द्रियोंके अभावसे शरीर प्रचल हो जाता है। इस-के सिवा 'वे सब इन्द्रिया प्रजापतिके निरुद्ध गईं यों इत्यादि युतिप्रमाण भी है। इस युतिके यत्ने इन्द्रिय-गण ही आत्मा है।'

फिर कोई चार्वाक 'शरीरादिसे भिन्न प्राणमय अन्त रात्मा है' इस युतिप्रमाण द्वारा और 'प्राणके अभावसे इन्द्रियोंकी क्रियाका अभाव होता है' इस युक्ति द्वारा प्राणको ही आत्मा कहते हैं।

कोई चार्वाक मनकी ही आत्मा बतलाते है। वे यह युतिप्रमाण देते है, "शरीर इन्द्रिय और प्राणसे भिन्न मनोमय अन्तरात्मा है।" इससे सिवा यह भी युक्ति देते हैं, कि मनके लुप्त (निस्तब्ध) होने पर प्राणादिका भी अन्तः

होता है। वे शीघ्र, 'मि सट्टवविगिट इ, मि विक्ख
विगिट इ' इत्यादि, ऐसा समझते हैं।

बौद्ध लोग विज्ञान वा बुद्धि को धाम्मा मानते हैं।
उनको बुद्धि या 'वृत्तान्ति' यथावत् प्रकृत्या प्रमाय
होता है, इत्यादि।

प्रमाय प्रमायत्वमी मोमांसवो पोर नै वायिबोका
कहना है, 'गरीरादिभि मिग पानन्दमय पन्नामा है'
इस अतिप्रमाय द्वारा पोर 'सुपुत्तिक्काममि पञ्चानतावय
बुद्धिवा सी मय होता है' पोर 'मि पय न, मि जानो इ'
इत्यादि अतुल्य द्वारा प्रमाय को प्रामा है।

किर चार्थोत्तिमि कोरि म्भुम गरीरको, कोरि इन्द्रिय
गन्धको कोरि प्राक्को कोरि 'मि पय इ मि जानो इ'
इत्यादि अतुल्य द्वारा प्रमायको को धाम्मा कहते हैं।

कुमारिभ्य मतावन्तमी मोमांसवो मते प्रमाय
द्वारा उपहित चैतन्य को धाम्मा है। वे यतिप्रमाय इस
प्रकार देते हैं, प्रमाय अतुल्य पानन्दमय को धाम्मा
है। 'उनकी बुद्धि ही है 'सुपुत्तिक्काममि जय समो बील हो
जाते हैं, तब प्रमायोपहित चैतन्यका प्रकाश होता है।'

किमीकिमी बोद्धके मते गृह्य को धाम्मा है। वे यह
अतिप्रमाय देते हैं 'यद्य जगत् पच्छे पयत् वा' पोर बुद्धि
इस प्रकार देते हैं 'सुपुत्तिक्काममि सर्वाका प्रमाय जाता है।
उनका अनुभव है कि 'धुव सिक्काममि मीरा प्रमाय बुधा
वा, सुवुत्तिमे वञ्चित वाक्किमावको हो वन प्रकार उप-
बन्धि बुधा करतो है।'

इस प्रकार विभिन्न मतावन्तियोंका निर्दिष्ट पुत्र वा
इन्द्रिय वा प्राक् पदमा मम बुद्धि, प्रज्ञान वा प्रज्ञान
द्वारा उपहित चैतन्य प्रमाय गृह्यता इतिमि कोरि भी
कोवामा नहीं है। वे धाम्मिकी मतेमि पुमादिभि से कर
गृह्य तब लोके को प्रकाशक निरु, मुह मुह मुह पोर
वतावन्तप्र मन्तव चैतन्य है, वको जो जीवात्मा है।

मास्तिबोका कहना है, कि लूत्त गरीर को प्रायः
है। इन्धे प्रतिरिक्क पय कोरि भी धाम्मा नहीं है।
सिक्कि यद्य धाम्मावाक प्रतिरिक्क भ्राता है। लभी इय मी-
मि धाम्मावाक निन्दित पोर वञ्चित बुधा है। सर्वदा-
न्तिवन्ध प्रबोद्धवने धाम्माका वञ्चित लोकार नहीं
करते।

रामानुज-व्यक्त मते धाम्मा पितृ पोर ईश्वरको धाम्मा
कोवामा पौर परमात्मा माना है। इस मते 'चित्' जोव
जाय, भावा अपरिच्छिन्न, निर्मल, अतुल्य, नित्य पौर
अनादि कर्म रूप वञ्चित, मगवदाराधना पौर तत्-
पदमाव्यादि जीवका प्रमाय है। ईश्वर अतुल्य, अत-
यामो पौर अपरिच्छिन्न ज्ञान, ईश्वर्य पौर योग्यदिगुण
धानो है। परमात्माके उद्य जीवका भेद, अमेद पौर
भेदाभेद पको तोन है। 'तच्छमसि श्रेतत्रेनो' इत्यादि
युक्तिमि जीवात्मा पौर परमात्माके गरीरात्ममात्ममि विधो
विधाने अमेद वतनावा है, अतः इन्धे द्वारा अमेद
प्रतीत नहीं होता। जो जीवात्मा पौर परमात्माको एक
मानते हैं, वे नितान्त मूढ हैं। वे तिमि अज्ञ ईश्वरको
निगु व वतनावा है, अतः तात्पर्य यह कि वे प्राज्ञत
अनको तरङ्ग रागदोषादि मुक्तसम्पन्न नहीं हैं। रामानुज
मि मागे(क सुत्रका पिमा मत सस्थापन कर स चित्रमाय
मि एक मायवत्वा प्रवचन किया है।

पूर्व प्रवचनके मतेमि—जोवात्मा पौर परमात्मा ये
ही हैं।

लकुलोगव्यपगतद्वय मतेमि—परमात्मा वञ्चित महा
दिन को परमेश्वर है पौर जोव पयु अद्य कर वञ्चित
पुत्र है यही परमेश्वर परमात्मा पौर जोव जीवात्मा
पयवाच्य है।

जो वदय मते मतेमि मिल हो परमेश्वर वा परमात्मा
है पौर जोवमय पयु। यही पयु जीवात्मा पयवाच्य है।
लकुलोगव्यपगतद्वय मतावन्तमी परमात्माके कर्मदिको
निर्दिष्ट अतुल्य नहीं मानते। उनका कहना है कि
जोवमय अंश कर्म करते हैं परमेश्वर तब वेसा जो
पत्त देते हैं।

प्रतिष्ठाद्वय मतेमि जोवात्मा पौर परमात्माके
कोरि भेद नहीं माना है। इनका कहना है, कि जीवात्मा
को परमात्मा है पौर परमात्मा को जीवात्मा। सिक्कि
को परमेश्वर भेदप्र न बुधा करता है, वह अतुल्य है।
जोवात्माके माय परमात्माका जो अमेद है वह अतु-
ल्य-निरु है। इस दृश्यके मतेमि अतुल्यता उपय
होनेके जोवात्मा पौर परमात्माका अमेद प्राप्त बुधा
करता है। इस मतेमि परमात्मा अतः प्रचाममान है

अर्थात् आपने आप प्रकाश पाते हैं। कोई कोई इस म' पर आपत्ति करते हुए कहते हैं, कि जीवात्मा और परमात्माका यदि भेद कल्पित हो और परमात्मा स्वतः प्रकाशमान हो, तो जीवात्मा भी स्वतः प्रकाशमान क्यों न होना ? इस प्रकार आपत्तिको हीं माना करते हुए उन्होंने जीवात्मा और परमात्माका भेद इस मतमें संस्थापित किया है।

रमेश्वरदर्शनके मतमें भी महेश्वरको परमेश्वर और जीवात्माको परमात्मा माना है।

वेदेषि हर्गनः मतमें आत्मा दो प्रकारकी है, जीवात्मा और परमात्मा। जिसके चैतन्य है, उसे आत्मा कहते हैं। यदि आत्माकी स्वकार न करे, तो किमो इन्द्रिय द्वारा कहे भी कार्य नहीं होता। मनुष्य, कोट, पत्तल आदि सभी जीवात्मा पदवाच्य हैं। परमात्मा एकमात्र परमेश्वर है। न्यायदर्शनमें भी यह मत समर्थित हुआ है।

अभी उपनिषद् और वेदान्तशास्त्रमें इसका विषय जिस प्रकार पर्यालोचित हुआ है, उसी पर थोड़ा विचार करना आवश्यक है। आत्मापनिषत् कहते हैं कि पुरुष तीन प्रकारका है, बाह्यात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा।

त्वक्, अस्थि, मज्जा, लोम, अङ्गुलि, अङ्गुष्ठ, पृष्ठवग, नख, गुल्फ, उदर, नाभि, मेरु, कटा, ऊरु, कपोल, भ्रू, ललाट, वाह्य, पाश्व, शिर, धमनो, नेत्रद्वय कर्णद्वय तथा जिसकी उत्पत्ति और विनाश है, वही बाह्यात्मा है।

पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश, इच्छा, हँस, सुख, दुःख, काम, माद और विकल्पनादि एवं स्मृति, निद्रा, उदात्त, अनुदात्त, क्रम, दीर्घ, प्लुत, स्पृहलित, गर्जित, स्फुटित, सुदित, नृत्य, गीत, वादित और प्रलयपर्यन्त, जो व्यवण करता है, जो प्राण करता है, जो आस्वादन लेता है, जो समझता है, जो ममभक्त वृक्ष कर काम करता है, वही अन्तरात्मा है।

जो अन्नय और उपासनाके योग्य है, प्राणायाम, प्रत्याहार, समाधि, योग, अनुमान और जो अध्यात्म-चिन्ताका विषय है, वही परमात्मा है।

रामपूत्र तापनीयक मतसे आत्मा, अन्तरात्मा, परमात्मा और ज्ञानात्मा यही चार प्रकारकी आत्मा है।

टोपिकाकार नारायणके मतमें आत्मा तिस्र, परमात्मा जोव, परमात्मा ईश्वर और ज्ञानात्मा ब्रह्म अर्थात् ये चार विन्दु, नाद, शक्ति और गान्तात्मक हैं।

यह दर्शनक उपनिषद्में परमात्माका विषय इस प्रकार लिखा है—आत्मा, परमात्मा या ब्रह्म ये सब एक ही अर्थमें शब्दजन्य होते हैं। आत्माकी भर्त्सना उपासना करो, आत्माका अन्वेषण करनेसे सर्वोपा अन्वेषण किया जायगा। आत्मतत्त्व सर्वोपा प्रपेक्षा थोड़ा है, इसीसे उमका अन्वेषण विधिय है। आत्मज्ञाननाभ-के लिये मैं ही ब्रह्म हूँ, ऐसा समझना होता है।

‘आत्मा सभी भूतोंमें निगूढ भावमें रहती है’ इत्यादि ब्राह्मणवाक्य परमात्माका ही जीवत्व प्रकाश करता है। वाक्पाणि प्रकृति सभी इन्द्रिय सुखदुःखादि कर्मफल हैं और इन्द्रियविषयता सभी देवता हैं, यही तक कि ब्रह्मादि स्वस्व पर्यन्त समस्त प्राणी परमात्मामें उत्पन्न होते हैं। यह जो स्यावरं जड़मादि समस्त जगत् है, अग्निस्फुलिङ्गको तरह जिसमें रात दिन निकलता है, जिसमें विलोम होता है और व्यक्तिकालमें जल-विम्ब-वत् जिसमें जा कर रहता है, वही आत्मा है। इस आत्माकी मसाके बनमें ही प्राणको सत्ता है, नहीं तो प्राण किमी भी ज्ञानमें आत्मनाभ नहीं कर सकता। जो सर्वज्ञ हैं, विशेषरूपमें सर्वविद्, प्रसन्न और सब प्रकारके मङ्गलमणोंमें रहित हैं, जिस अक्षरपुरुषों गामन-से सूर्य और चन्द्र रात दिन चलते हैं, जो अन्तर्गमि-रूपमें सभी भूतोंमें रह कर सभी भूतोंको बहान करते हुए भी स्वयं उनके अंतमें हैं, वे ही जन्ममरणदि शून्य सर्वव्यापी आत्मा हैं और सभी संसारके विधायक सेतु-स्वरूप हैं। उसी आत्मामें सभी संसारको वशीभूत कर रखा है और जो सर्वोके ईश्वर तथा नियन्ता हैं, जो सब प्रकारके पाप, ताप, लरा और मृत्युविहोत हैं, उन्होंने ही तेजको सृष्टि की है। इस जगत्प्रणालीकी सृष्टिके पहले एकमात्र आत्मा ही थी। उसी आत्मामें सभी उत्पन्न हुए हैं। (बृहदारण्यक)

कोई कोई कहते हैं “एवमेवात्मादात्मनः” इस श्रुतिमें भी संसारो आत्मा (जीवात्मा)-में ही समस्त भूतोंको उत्पत्ति बतलाई गई है। जो ऐसा कहते हैं,

तनका मत सर्वज्ञ है। क्योंकि श्रुतिमें ही निष्ठा है 'य एव' इत्युक्तं पाश्चात् तदा पाश्चात् शब्द परमात्मा को बोध हुआ है, अतएव वहाँ पाश्चात् परमात्मा है। वही परमात्मा मनु लप्य हुआ है।

- यदि कहो कि पाश्चात् शब्द का परम परमात्मा यह विषय कहा जो व परम शक्ति को कहा होय होता है। इससे उत्तरमें श्रुतिमें कहा है, 'सर्वे तदा समूह' जो व (जीवात्मा) तन मय अर्थात् सुखमि ज्ञानमि ज्ञाना का ? अब कह सो नहीं का, एकमात्र परमा ही जो ही श्रुतिमें ही निष्ठा है 'य एव' इत्युक्तं पाश्चात्परिमन् मिति' इत्यादिप्रकार जो पाश्चात् है तनमें वन मय निर्मित था। इन्हीं ज्ञानना बोधा कि जो व (जीवात्मा) ज्ञानो मो अपने ऊपर गयन नहीं कर सकता। अर्थात् पाश्चात् शब्दका परम परमा को कहना होया। जो व सुश्रुतिवाक्यमें परमात्मापै साव मिल जाता है। अतिवाक्योको परावोचना करनेसे यह मात्र मात्र प्रतीत होता है कि वहाँ पाश्चात् शब्दका परम परमात्मा है इसमें सुख ही शब्द नहीं।

स सारी जो व (जीवात्मा) में विचित्र विचलन मात्र को छिद्र, स्थिति और स चार करनेको प्रति नहीं है। अज्ञानिवाको अर्थ निष्ठा है, 'अज्ञाने तु वाचि अज्ञानावस्थामि' के अर्थ। तन्त्र अज्ञाना विषय अज्ञान अज्ञानताका है। इन्हीं अर्थ निष्ठा है, कि अज्ञान (परमात्मा) अज्ञान-भोक्तृत्वादिप्रकृत, निष्ठा अज्ञान प्रान रूप और परमात्मा है। कोई कोई इस पर पावलि करती हुए कहते हैं, कि अज्ञान अब हीवही परमात्मा लक्ष्य है तथा जो व अज्ञानो धर्मो परमात्मा निष्ठा है तत्र 'परम अज्ञानि' में ही सर्वशक्तिमान अज्ञान, ऐसा कहना या इनो मात्रमें परमात्मा करना किही ज्ञानतये जो वका कहन नहीं हो सकता। इस प्रकारको परमात्मा कहन नहीं है। कारण श्रुतिमें जाना जाता है कि 'परमात्मानि' प्रथमतः द्विपदशतुल्यवादिना निर्माण कर वनके परमात्मा प्रथम विद्या, वे प्रथमक वस्तुके परमात्मा रूप हुए। 'परमात्मा धर्मो वस्तुको छिद्र और नाम कारण कर अर्थ तनमें रहने लगे, इत्यादि सर्वशक्त्यापै मन्त्रवाच्य वन अज्ञान कहने लगे हैं। परमात्मानि इन

सर्वोको छिद्र करके और पाप तनमें प्रविष्ट को कर जो व नाम प्रथम विद्या है। परमात्मानि पाश्चात्तहि परमात्मानि जो व लप्यने प्रविष्ट हो कर नाम (मत्ता) और परमात्मानि का उपाय विद्या है।

अब प्रायः सभी श्रुतिमें अज्ञानको परमात्मा कहनाया है, 'सर्वभूतानामात्मा' यन मो परमात्मा शब्दमें अज्ञानको ही उल्लेख किया है और श्रुतिमें अज्ञान नाम अज्ञान परमात्मानि अतिरिक्त म सारी परमात्माके परमात्माके सुवना को है, तत्र 'परम अज्ञानि' में अज्ञान रूप वन लक्ष्य परमात्माको उपायना करना परमात्मा नहीं है। ऐसे उत्तर पर कोई कोई पावलि करती हैं, कि जो व और अज्ञान अर्थात् जो व परमात्मा परमात्माका एकत्व को यदि प्रकृत या छात्र है, तो परमात्मानो मो पारिवाहिक सुख दुःखादिका भोग करना होता है यह बात भा परमात्मा लोकार कहली पड़ेगा। ऐसा होनेसे अज्ञानाभोग प्रथम मनी मात्र निरवका हो आते हैं। अतिरिक्त सुख दुःखादि द्वारा जो व परमात्मा निष्ठा नहीं होनेसे अज्ञान-अविषय मनुष्यवच रहते हैं। इस विषय पर कोई कोई कहते हैं, कि परमात्मा सर्वभूतोंमें प्रवेश करती मय परमात्मा निष्ठाकार रूप परिव्याव कर विज्ञानावस्था कारण कर प्रोचरमानो मात्र जाते और यह जो व परमात्मा परमात्माके निष्ठा और अज्ञान तनमें ही प्रतीतवान होती हैं। अज्ञानमें अज्ञान करनेको 'मात्र अज्ञान' अर्थात् 'मै अज्ञानि' यह ज्ञान नहीं होता और पारिवाहिक परमात्माके निष्ठा करनेसे जो परमात्माको उपायना को आने से अज्ञान होनेसे उपायना नहीं हो सकता।

श्रुतिमें 'मिति मिति' अर्थात् यह अज्ञान नहीं है, यह अज्ञान नहीं है, यह अज्ञान कर मनी परमात्माके पोषाधिक विषय अज्ञान परिव्यावृत्त व परमात्माका लक्ष्य निष्ठा हुआ है। (इत्यादिपरमात्मा)

अतिरिक्त अज्ञान परमात्माका विषय अज्ञानि रूप है वहाँ व प्रथम मनी प्रथम अज्ञानावस्था मनी मने हैं, इसकारण इनका विषय और अज्ञान पाश्चात्तन नहीं हुआ। अज्ञान है।

इत्यादिप्रकारमें निष्ठा है कि अज्ञानावस्थामें अज्ञानके अज्ञान और अज्ञानावस्था जो व नामक पाश्चात् है,

इसे भी जीवात्मा कह सकते हैं। यह जीवात्मा आकाशादिको तान ब्रह्मने उत्पन्न हुआ है अथवा ब्रह्मको तरङ्ग नित्य है, इस प्रकार मंग्य हो सकता है। कारण एतदर्थ प्रतिपदक विभिन्न श्रुति देवनेमें आते हैं। किमी किमी श्रुतिमें अग्निस्फुलिङ्गका दृष्टान्त दे कर कहा है, कि जीवात्मा परब्रह्म (परमात्मा) से उत्पन्न हुआ है। फिर अन्य श्रुतिका कहना है, कि अविज्ञत परब्रह्म ही खसटशरीरमें प्रविष्ट है और जीवभावसे विराजित है तथा अतिमें जाना जाता है कि एक विज्ञानमें सभी विज्ञान होते हैं। सभी वस्तु ब्रह्मप्रभाव नहीं होनेते एक विज्ञानमें सभी विज्ञान नहीं हो सकते। अविज्ञत परमात्मा ही जो शरीरमें जीवभावसे विराजित है, इसका जाननेका आई उपाय नहीं है। क्योंकि परमात्मा और जीवात्मा सम लक्षण के हैं। परमात्मा निष्पाप, निष्क्रिय निधर्मक हैं। जो व उसके सम्पूर्ण विपरोत है। विभाग रहनेमें ही जीवका विकारत्व (जन्ममरण) जाना जाता है। आकाशादि जो कुछ विभक्त वस्तु हैं वे सभी विकार अर्थात् जन्म-पटार्थ हैं। जो व पुण्यपापकारी, सुबदुःखभोगी और प्रति शरीरमें विभक्त है, इसीसे जीवकी भी जगदुत्पत्ति कालमें उत्पत्ति हुई थी, ऐसा कहना ही सङ्गत है। फिर भी देखो, जैसे अग्निसे छोटे विस्फुलिङ्ग निकलते हैं, वैसे परमात्मासे भी जीवात्मा उत्पन्न होता है, फिर प्रलयकालमें उसीमें लीन हो जाते हैं। इस प्रकार अर्थ प्रतिपादकश्रुति द्वारा यह जाना जाता है, कि भीगात्मा अर्थात् जीवात्माको सृष्टि उपदिष्ट हुई है। फिर सैकड़ों श्रुतियोंसे जाना जाता है, कि जिस प्रकार प्रदीप पावकमें पावकरूपी सङ्घन महसू स्फुलिङ्ग जन्म लेते हैं, उसी प्रकार एक परमात्मासे परमात्मममानरूपो विविध पदा उत्पन्न होते और फिर उसी परमात्मामें लीन हो जाते हैं। इस श्रुतिमें ममानरूपी यह शब्द रहनेसे जीवात्माकी उत्पत्ति और विनाश कहा गया है, ऐसा समझना होगा। स्फुलिङ्ग अग्नि समानरूपी हैं, जीवात्मा भी परमात्मा समानरूपी है अर्थात् दोनों ही चेतन हैं, सुतरां समानरूपी हैं। इन सब श्रुतिप्रश्रुति द्वारा परब्रह्म (परमात्मा) से जीव (जीवात्मा)की उत्पत्ति मानी गई है।

परमात्मा नित्य और निशुंग हैं। जिस प्रकार पद्म-पत्र पर जल रहनेसे भी वह जलमें लीन नहीं होता, उसी प्रकार गुणातीत परमात्मा भी कर्मफलमें लीन नहीं ज्ञाते। जो कर्मात्मा अर्थात् कर्माद्य जीव है, उन्हींका बन्धन और मोक्ष हुआ करता है। जन्ममें सृष्ट प्रतिविम्ब जिस प्रकार विम्बभूत सूर्यका आभास (प्रतिविम्ब) है, उसी प्रकार जो व भी परमात्माका आभास है, ऐसा जानना होगा। जिस हेतु आभास है, उन्ही हेतु जो व साक्षात् परमात्मा नहीं है, पदार्थान्तर भी नहीं है।

विस्फुलिङ्ग जिस प्रकार अग्निका अंग है, जो व (जीवात्मा) भी उसी प्रकार परमात्माका अंग है। परमात्मा साकार है या निराकार? इसमें उत्तरमें वेदान्तने कहा है, कि परमात्मा निराकार या रूपादि रहित है। कारण, इस परमात्मप्रतिपादक श्रुतिनिश्चयने यही अर्थ प्रमथन किया है। वे स्थूल नहीं हैं, सूक्ष्म नहीं हैं, इन्द्र वा दीर्घ भी नहीं हैं, अशब्द, अस्पर्श, अरूप और अश्रय है, प्रसिद्ध आकाश नाम और रूपके निर्वाहक है, नाम और रूप जिनके भीतर हैं वे ही परमात्मा हैं। वे दिव्य, मूर्त्तिहीन पुरुष, अर्थात् पूर्ण हैं। सुतरां बाहर और भीतर विराजमान हैं, वे अज (अन्तरहित) हैं, वे अपूर्व, अनपर, अनन्तर और अबाह्य हैं। श्रुतिने यह भी कहा है, कि परमात्मा निवि शेष, एकाकार और केवल-चैतन्य हैं। जैसे, लक्षण-खुसू अन्तर, अबाह्य, सम्पूर्ण और रसघन है, उसी प्रकार परमात्मा भी अनन्तर, अबाह्य, पूर्ण और चैतन्य घन (केवल चैतन्य) हैं। इसमें यही कहा गया, कि परमात्माके अन्तर्बाह्य नहीं है, चैतन्य भिन्न अन्यरूप वा आकार नहीं है। निरवच्छिन्न चैतन्य ही परमात्माका सार्वकालिक रूप है।

श्रुतिसे जाना जाता है, कि परमात्माके दो रूप हैं, मूर्त्ति और अमूर्त्ति। परमार्थ कल्पमें वे अरूप हैं और उपाधिके अनुसार उनका आरोपित रूपमूर्त्त और अमूर्त्त है। मूर्त्त मूर्त्तिमान अर्थात् स्थूल है और अमूर्त्त तद्रहित अर्थात् सूक्ष्म। पृथिवी, जल और तेज ये भूतत्रय ब्रह्मके मूर्त्तरूप हैं और वायु तथा आकाश ये दोनों

परमार्थरूप। मूर्त रूप मर्त्यं पश्चात् सत्त्वगोसु च धीर
परमार्थरूप पश्यते पश्चात् चक्रिणागो।

श्रुतिप्रोक्तं परमात्माके चतुरिख जोष पर्याय
श्रीब्रह्माका विषय उक्तिश्चिन्तिते धीर पश्येत्तत्रोपक श्रुति
प्रोक्तं च। महात्मनि गङ्गाचार्यं परमात्मनिरिख प्रथम
श्रीब्रह्माका चरित्तुल्य श्रीकार नही करनी। (वेदाङ्कवर्षेण)

गङ्गाचार्यके परममूर्तमे निष्ठा चै—जो सुख
स्वप्न, ज्ञान धीर तोषं नही है, जिनके प्रया ज्ञान
रूप गुण धीर नही है वे ही परमात्मा है। जिनके
हिंसो प्रकारका पापार नही है, जिनकी ज्योतिनि
ज्योतिष्मात् ही कर स्यादि ज्योतिष्कण्य प्रकाश पाते
हैं, जिनके स्यादि कोई भी प्रकाशित नही कर सकते
धीर जिनके यह चक्रिण ब्रह्माण्ड तोसि पाता है वही
परमात्मा है। जिस प्रकार प्रताप शीतलियुक्त पत्तार धीर
बाह्यमें प्रदीप्त ही कर पानीक प्रदान करता है वही
प्रकार परमात्मा बाह्य धीर चम्पनारमें प्रमो जगतको
प्रकाशित करती धीर स्वयं प्रकाशित होती है। पर
मात्मा भिन्न इस पदना ब्रह्माण्डके प्रकाशक धीर कोई
भी नही है। परमात्मा जगत्के चतुरार र पञ्च
परमात्मा भिन्न धीर कुछ मो नही है। जिस प्रकार
महामुनिमें सरोविका धीनिवे ज्वलन जलज्ञान होता है,
जिन्तु यह जल जिस प्रकार सिप्या है, वही प्रकार पर
मात्माभिव जो कुछ है वे सभी सिप्या है। कम लोग
जो कुछ देखते धीर सुनते हैं, वही परमात्माका स्वप्न
है, परमात्मा भिन्न धीर कुछ मो नही है। तत्त्वज्ञान
कोतिने जो उन अधिदानन्दमय अध्यय परमात्माका लाभ
होता है। तत्त्वज्ञान भिन्न परमात्माप्रसिका काहे कवाय
नही। जिसके ज्ञानधर्म मोहासित कृपा है वे ही पर
मात्माको देख सकते हैं। जिस प्रकार सुवच की
धर्मिनि उत्तम करनिवे उसका मन निवृत्त जानि पर बह
उद्दीप्त ही कर ज्ञान प्रकाश पाता है, वही प्रकार जोष
के स्वप्नमनादि द्वारा ज्ञानात्मि उद्दीप्त ही कर पञ्चान
रूप मयके विनाग हीनि पर ही बह ज्ञान प्रकाशित
होता है। वही प्रमय जोष परमात्मरूप प्राप्त करता
है। (नामकोष)

परमात्मतत्त्वनिर्णय पति दुःख है, ज्योकि श्रुति
नि कथा च 'यतो वाचो निवर्त्तंते चाम्य मनवां सङ्'
पश्चात् वाच कर्षा का नही सकता धीर मनके प्राय

कोट पाता है, इस कारण वाचदे परमात्माका निर्णय
नही किया जा सकता।

मनोपियेनि श्रुतिमन्त्रका जोसा 'धर्मं ममम्' है,
परमात्मनिर्णयमें भी वहीसा ही पक्षधारण किया है।
श्रीब्रह्म धीर ज्ञान पर्यत होनी।

परमाचार्य—सुषुप्तजनपदतिष्ठे रचयिता।
परमाद्देत (म० पु०) परम पश्येत् ब्रह्म। १ सर्वमेव
रहित परमात्मा। २ निष्पु।

'ब्रह्म इत्यमरनाम ब्रह्मस्ते शान्वाचक।
ब्रह्मस्ते परमाद्देत ब्रह्मते उर्येततम ॥' (गङ्गुपुत्र)
परमात्म (म० पु०) परमा सर्वोक्तुष्ट पानम्। मय
पानम्दीम ठक्क ट पानम्दीमक परमात्मा। परमात्म ही
परमात्मा है। "परमानन्दमात्र १" (गीता) कवित्वपदादि
में प्रकाश की परम पानम्स्वरूप माना है।

परमात्म—इस नामके बिक्रिने स सुख प्रत्यक्षारीक नाम
पाये जाते हैं। यथा—

- १ परमरूपमाकादि रचयिता।
- २ ज्ञानमस्पर्श नागत्र दर्पणवित खण्डनमन्त्र
कायके टोकाकार।
- ३ मन्वरुमारिपो नामक धर्मके रचयिता।
- ४ वेदश्रुतिटोकाक प्रथिता।
- ५ वेदान्तसारटोकाकवर्ती।
- ६ सांख्यतरङ्गटोकाक प्रथिता।

७ एक जैन धर्मकार इन्होंने मग प्रयोग कर्म
विराय नामक धर्मको एक म स्तन गेवा प्रचयन को
है। ये पद पदम पदम कर्मगुरु जेका इस प्रकार
परिचय दे गये हैं—उद्दीपि मङ्गलानुर चतन गिब
गान्तिवृर धीर परमयदेववृर, परमयदेववृरके शिष्य
परमात्म। लोग इन्हे यमोदेव कहा करते हैं।

८ एक चण्डिय राजा। इन्होंने सनात परधरगाह
के महारप्रदेशका शासनभार पाया था।

९ वेकोदलके पुत्र। इन्होंने प्रयसाधिकरनामा
नामक एक धर्मको रचना की है।

परमात्मसूत्र—एक सिप्यात पवित्रत, विद्यामन्त्र ब्रह्मोन्म
सरस्वतोव गिष्य। इन्होंने प्रयोगशास्त्रो, ब्रह्मसूत्रविषय
रच धीर स्युतिमन्त्रोपि नामक तीन पत्र बनाये हैं।

परमात्म चक्रवर्ती—१ नाथपञ्चागर्गव्यापिका नामक
काम्यपञ्चागको टोकाके रचयिता। इन्होंने इस पञ्चमें
ईशान नामक पदने गुरुका परिचय दिया है।

२ सर्वात्मन्दके पुत्र श्रीर द्वैवानन्द तथा भयानन्दके भ्राता । इन्होंने मन्त्रिसम्भवटीका नामक एक टीका प्रणयन की है ।

परमानन्ददाम—ब्रह्मगामी एक हिन्दी-कवि । छगानन्द व्यासदेवकृत रागसागरोद्भव रागकल्पद्रुम नामक ग्रन्थ-इनका नामोर्ध्व ख देखा जाता है ।

परमानन्ददाम—चौबेत्तन्यसम्प्रदायी वैष्णव कवि कर्ण प्रूरुषा प्रकृत नाम परमानन्ददाम था । गोरगढ़ महाप्रभु इन्हें पुरोदास कला करती थी । इनका जन्म १५४६ संवत्का हुआ था । इनके पिताका नाम था गिवाणन्द सेन जो गौराष्ट्रदेवके एक परमभक्त थे । परमानन्द ने उच्च ज्ञान शोधपथकी थी, उन्नी समय के अपने पिताके साथ महाप्रभुके दर्शन करनेके लिये चले गये थे । महाप्रभुने कृपा दरसा कर अपने चौबेत्तन्यसम्प्रदाय-द्रष्टा बालकके मुखमें टिया था । परमानन्दने गोरगढ़-देवका पठाङ्गुल चाट करके अपूर्व कवित्वशक्ति प्राप्त की । चैतन्यचरितामृतग्रन्थमें लिखा है, कि इस समय महाप्रभुने परमानन्दसे छगान्दीनाका वर्णन करने कहा । कहते हैं, कि बालक परमानन्दने प्रभुका आदेश पाते ही शार्याच्छन्दमें एक श्लाकका रचना कर महाप्रभुको सुनाया था ।

इनके बनाये हुए अनेक संस्कृत ग्रन्थ वैष्णवमार्गमें प्रचलित हैं, यथा—प्रायोगतक, चैतन्यचरितामृत-महाकाव्य, चैतन्यचन्द्रोदयनाटक, चान्दहन्दावन-चरित्र, छगान्दीनाहृदयटीका, गोरगणीहृदयटीका और अलङ्कारकौस्तुभ ।

परमानन्ददेव—संस्कृतखमामा नामक ग्रन्थके प्रणेता ।

परमानन्दनाथ—भुवनेश्वरोपदेति नामक ग्रन्थके रचयिता ।

परमानन्दवाठक—कूर्पूरस्तवदापिका नामक ग्रन्थके प्रणेता ।

परमानन्दमहाचार्य—महाभारत टीकाके प्रणेता ।

परमानन्दमिश्र—१ योगवागिष्ठसारोद्धारके रचयिता । २ तन्नामक मेलकी प्रकृति । मेल देवी ।

परमानन्दयोगीन्द्र—परमानन्दलहरोस्तावकके रचयिता ।

परमानन्दराय—चन्द्रदीप देखो ।

परमानन्दनङ्गापुराणिक—एक हिन्दी-कवि । बुन्देलखण्डके अन्तर्गत प्रजयगढमें १८३० ई०में इनका जन्म हुआ था । नायक-नायिकाका प्रणयवर्तित 'नखसिख' नामक ग्रन्थ इन्होंने बनाया हुआ है ।

परमाश्रु (सं० की०) परमां देयविलप्रियत्वात् श्रेष्ठं ग्रथं । पद्यम, शौर । ग्रन्थदेवताः शौर गितरीका अत्यन्त प्रियः । इसमें इसकी परमाश्रु प्रकृत हैं । इसकी प्रकृत प्रणाली भाष्यकागमें इस प्रकार लिखा है,—

—यद्ग्रन्थं चाथा एक ज्ञाय, तत्र उभयं छ-आश्रु तन्त्रु, न डाव दे । पद्य उभयं छत शौर गकारा मिथानिसे परमाश्रु लेखार होता है । मुद्रा—दुर्जर, यत्र शौर धातुपुष्टिकर, मुद्रा, अट्टमो, यिषा, रत्नपत अग्नि शौर चायुमाश्रु

परमायु (सं० की०) परमं आयुषं । सर्गादिफल-साधन आयुषो मेट ।

परमायु (सं० की०) विपुलादेयोका पूजायु मुद्रामेट ।

तत्त्वशास्त्रे इस मुद्राका विषय इस प्रकार लिखा है— दोनी शरीरों में मध्यमाकी मध्यमममें रख कर दोनी शरीर अन्तिराष्टयकी मध्यमादय द्वारा चानक करते हैं और दोनी तन्त्रुमोको दग्गाकारमें करके मध्यमादयके ऊपर भाग पर रखनेसे यह मुद्रा बनती है । यह परमायु नाम संज्ञामकारिका है । इस मुद्रामें विपुला-देविका अर्चन परमा होता है ।

विपुलाय पूजायुमें एक शौर प्रकारकी परमायु लिखी है जिसे शान्तिमुद्रा भी कहते हैं । इसका प्रचार यों है— दोनी मध्यमाका वक्र कर उभयके ऊपर तर्जनी रखनी होती है । बाहि पनामिका शौर अन्तिराको मध्यगत करके पद्मपुष्ट द्वारा परिषाइन करनेसे यह मुद्रा होती है । परमायु (सं० की०) परमायुषं देवी ।

परमायुष (सं० पु०) परमं आयुषं च, एषोदरादित्वात् अक्ष ममागतः । अमन्वृत्त, विजयमानका पैठ ।

परम युम (सं० की०) परमं आयुः कर्मधा० । प्रोक्षित-काल । "शतपूर्वं पुरुषः" (ऋषि) मानवकी परमायु सौ वर्ष है । शब्दमालामें परमायुकाल इस प्रकार निर्दिष्ट हुआ है,—१२० वर्ष ५ दिन मानवका परमायुकाल शौर हाथीका भी उतना हो, ३२ वर्ष अश्वका, १२ वर्ष सुकुरवा, २५ वर्ष मुर शौर करभका, २४ वर्ष ह्य शौर मधिका, च्छग शौर शूकरका परमायुकाल तब तक माना गया है जब तक उनके छः दाँत न निकलें । ज्योतिःशास्त्रमें लिखा है—

"अज्ञानादायुः सर्वं विकलं कीर्तितञ्च तत् । तस्मादानयनं तस्य शुद्धार्थमभिधायते ॥" (कलिउद्योति०)

मानवका जोचितभाव यदि न जाना जा सके, तो सभी विषय होते हैं, इस कारण सबसे पहले धारणा परिष्कार जानना आवश्यक है। मनुष्य या शिक्षित पौर पारिवर्तक सभी कार्य परमात्मे कर्तव्य निरूप करते हैं।

मनुष्यको परमात्मे सत्त्व चार प्रकारसे जो जाती है यथा—प्राज्ञ, विप्रज्ञातु निर्मर्षी चौर क्षोणात्तु। जिनका सम्बन्ध नान्य है उससे मिले प गात्रको गयना इसी प्रकार मूल यत्नान् जोमिने रिष्कारगुणवत्ता, चन्द्र यत्नान् जोमिने निर्मर्षात्तु चौर जिनके तोनी ने दुर्भंज से उसकी शोकायुक्तता को जाती है। यह गुणवा करमिने

वर्षोको लक्ष्मण चौर नीच राशि नर्मात्तु चौर नीचांगना ज्ञानता पावका है। प प्रायः वयः द गानवत द्वादि पपनी पयने नर्मोप्य गुणवत्त चहृ द्वा वि व धाणुपनव पद्दको गुणा करमिने जो पद्दम प्या जोमो तने ६०से भाग देना होता, पौके भावकनको १२० से भाग देनेसे को उत्तर भागका चहृ तन दवष्टा द्वादिगुणैय मोया।

पवर्षिष्ठादको १२से गुणा करके उसे १२०० द्वारा भाग देनेसे को उत्तर भागका चहृ तन भाग होगा। पण विप्रज्ञाको १०से गुणा करनेसे को गुणवत्तव चोगा उसे १२०० से भाग हो चहृ तन भावकन दिन होगा। भावावधिष्ठ पद्दको ६०से गुणा करके १२०० द्वारा भाग देनेसे को उत्तर भागका चहृ तन पणमः, इको नियमसे बचना करमिने ऽन चौर विषय जाना जाता है।

यदि समझा मन सबसे अधिक हो, तो मन्म स्पुग्गी रागिष्ठा पद्द जितना होमा, उतने भवना पद्द मन्म इच्छ पात्रुवर्षिष्ठाके साथ योम करी उससे पात्रुको चर्षुदि जाने कायतो।

य य चना चौर विप्रज्ञा पवर्षिष्ठाको १२ से गुणा करके उसे तीन भागमें रचना होता है। प्रथमतः विप्रज्ञाके पद्दको ६०से भाग हो चौर भावकनको लक्षा है चहृ तने कोइ हो। भावावधिष्ठ पद्दको एक भागमें रक्ष देना जाता है, पौके तन योग्य लक्ष्मणके पद्दको ६ से भाग देकर भावकनको प माहृ ने साथ कोइ देना जाता। पवर्षिष्ठादको लक्षादको चारै चौर रचना होता है। पौके तन योत्रव प माहृ को १०से भाग देनेसे को लक्ष्मण चोगा तब लक्ष्मण पवर्षिष्ठा को रक्षेया चहृ तन क्षापित लक्ष्मणको चारै चौर वादिने उस

१० लक्ष्मणको मो लक्ष्मण नाम भागमें रको। तन लक्ष्मण द्वारा लक्ष्मण नाम, दिन दण्ड चौर एक पादि जामि कापणे। तन भावादिचो मन्म इच्छाकुके भावादिचे साथ जोटनेसे मन्म इच्छा वयः, भाग, दिन दण्ड चौर एक चोगा तथा पूर्व पादि नतदक्ष चौर लक्ष्मणको दशात्तुका वयः, म म दिन, दण्ड चौर पक्षादि ममो योग कानेने जितना वयः भाग दिन चौर दण्ड पक्षादि चोगा, उतनी ग प्याः प गाद्यम लक्ष्मणुमार परमात्तु चोगो।

शुभात्तुके मतसे मनुष्यक विचारना—प्रथमतः प्रथम त्रिम रागिष्ठे जिन प श्रादिने रक्षते हैं, तन उस रागिष्ठे चौर चय, चना तथा विप्रज्ञाको पृथक् पृथक् स्थानमें रको। पौके एक एक पदस्पुग्गी रागिष्ठे पद्द को ३०से गुणा करके गुणवत्तवको उस पद स्पुग्गी प गये साथ जोइ हो। पौके तन योत्रव पद्दको ३० से भाग कर पवर्षिष्ठ पद्दको १०से गुणा करे। पवर्षिष्ठ गुणवत्तवको उससे बाटके विप्रज्ञादके साथ योग करनेसे जो पद्दम प्या चोगो, लकोका नाम तन पक्षवा प नायुपन है। इस प्रकार प्रत्येक पदस्पुग्गी चौर लक्ष्मणकुके रागिष्ठे, प ग, चना चौर विप्रज्ञादको रक्षी प्रकारको प्रकिया करनेसे जो पद्दम प्या चोगी चहृ तन उस पद चौर लक्ष्मण प गाद्युपन चगा। विप्रज्ञागुणवत्ता कानेने निर्मर्षात्तु गन्धको जवह को पात्रुपक्ष निश्चानमे का विषय विक्षा बया है उससे चणुमार पात्रु पक्ष निश्चान करके को पद्द चोगा उसे तीनसे भाग हो चौर भावकन के स्थानमें रको। पौके चमके एक पद्दको २०से भाग दे कर को भावकन हो लक्ष्मणके विषये पद्दने विदोग करे। पवर्षिष्ठको लक्षा विप्रज्ञा पवर्षिष्ठ रक्षेको उतना दिन चौर दण्ड विप्रज्ञा विप्रज्ञातु चोगा। चन्द्रका पात्रुपक्ष से चर को पद्द बनीया चहृ तने गुणा करे चौर गुणवत्तवको १२ से भाग हो। पवर्षिष्ठ भावकनमें लक्ष्मण-विप्रज्ञादिना जितना प ग रक्षेमा, उतना दिन चौर दण्डादि चन्द्र पक्ष विप्रज्ञातु चोगा।

मन्म चौर इच्छादिना पात्रुपक्ष पक्ष कर लक्ष्मणके साथ ही, भावकन जितनी लक्षा विप्रज्ञा चोना, उतना दिन चौर इच्छादि मन्म तब इच्छादिना तन विप्रज्ञातु चोगा। उतना पात्रुपक्ष पक्ष कर लक्ष्मणके

भाग करनेमें जितनी ज्ञान-विद्ययादि भागफलमें आविगी, उतना दिन और दण्डादि बुधकी प्रदत्त आयु समझो। शुक्र-राश्यायुःफल गुण-फलके उभे ही गुणा करनेसे गुणफल निकला होगा, उसे २००० भाग देनेसे भागफलमें जितनी ज्ञान-विद्ययादि भागों उतना दिन और दण्डादि प्रदत्त आयु होगा। शनि-राश्यायुःफल गुण-फल करके उभे भाग देनेसे जितनी ज्ञान-विद्ययादि भागफल होगी, उतना दिन और दण्डादि शनिप्रदत्त आयु होता है। निर्णयितुं योगी।

परमायु-रानिसे विषयकी इस प्रकार गणना की जाती है। जातव्यक्तिका लग्नकण्ड स्थिर जन्म उमरकी राशिसे पायी ३००० गुणा करो। गुणफल ही होगा उसे गंगादि सात्र जोड़ लो। यदि उभे गुणफलकी ६००० गुणा करके गुणफलकी पाचवर्षी शताब्दी साध जोड़ दो, योगफल ही होगा उसे एक स्थानमें रदो। यदि पूर्व प्रणालीके अनुसार एक एक राशि उभे आयु दिया कर उसे एक साथित एक हजार गुणा करो। इस गुणफल को २२६०००० भाग देनेसे ही दण्डादि भागफल हीगा उसे अपने अपने प्रदत्त आयुके अनुसार राशिमें विभोग करो, विभोगफल ही होगा उहीके परमायु समझो। यदि जन्ममें पापग्रह रहे, तो इसी प्रकार स्थिर करना होगा। यदि पापग्रहद्वय लग्नमें किमो शुभग्रहकी दृष्टि पडती हो, तो अपने अपने राशिमें प्रदत्त आयुमेंसे उक्त भागफलका भाग विभोग कर आयु स्थिर करो। दो वा तीन शुभग्रह लग्नमें रहनेसे उनके मध्य जो एक शुभफल पटान करेगा, उस नक्षत्र भागफल द्वारा प्र-प्रदत्त आयुकी गुणा करके पक्षिके जैसा कार्य करना होगा है। लग्नमें यदि दो वा तीन पापग्रह रहें, तो उनसे मध्य जो एक बनवान रहूंगा उसके भागफल द्वारा प्रदत्त आयुकी गुणा करके पक्षिके जैसा कार्य करना होगा है। लग्नमें यदि पापग्रह रहे और वह पापग्रह यदि लग्नाधिपति हो, तो आयुर्हानिकी गणना नहीं करनेकी होगी।

इस प्रकार समस्त ग्रहों और लग्नोंकी आयुकी प्रथक-प्रथक गणना कर एकत्र योग करनेसे जितनी वत्सरादि होगी, उतना ही जातव्यक्तिकी परमायु समझो।

आयुकी गणना करके जिसकी जितना वर्ष परमायु

होगी, उभे अङ्कको दो स्थानमें रदो। पीछे एक अङ्कको २००० भाग दे कर जितना होगा उसमें उमरका २२६००० भाग विभोग करनेसे ही अयुर्दण्ड रहेगा उसे स्थापित द्वितीय अङ्कमें विभोग करो। पाप विभोगफल ही होगा वही प्रकृतपरमायु है। जो यदि पलाशी, स्वधर्मानुरक्त, सज्जुलवान, जियेन्द्रिय, दिव्य योग देवार्थनारत है, उहीको इस प्रकार प्रकृतपरमायु प्राप्त होगी।

जो मध्यमवयु पापी, लुब्ध, पाप, दैव और वायुप्रण-निन्दक है तथा उन्मुखा और गुह्यदेशमें प मल रहने से, वे माण मनुष्य उक्तव्यक्तिकी निर्दिष्ट आयु न पा कर गहान सत्यसुखमें पतित रहने से।

जातव्यक्तिकी योगन आयुका विषय इस प्रकार विचार है। जिसके जन्मकालमें लग्न-धृतिप्रद वर्ष-वर्ष-वर्ष ही पर केन्द्रस्थित शुभग्रहसे देखा जाय पर अग्नि-द्वीप हीन लाभ करेगा है। जन्मकालमें शुभग्रह केन्द्र-स्थित या परनिवृत्तित्व तथा चन्द्र उभे अष्टादशत गीर्धमे दृष्टि लग्नाधिपति या उन्नयान् को पर लग्नस्थित हो, तो जातव्यक्तिकी आयु ६० वर्ष की होती है जिसके जन्म-कालमें वृहस्पति लग्नमें रहे और लग्न वा चन्द्रमें ऐन्द्र-प्रथम प्रथम, चतुर्थ, सप्तम या नवम स्थानमें शुभग्रह-तथा इन सब शुभग्रहोंके प्रति दृष्टन स्थानस्थित पापग्रह-की दृष्टि न पडती, तो उभे मनुष्यकी ८० वर्षकी पर-मायु होती है। जन्मकालमें मूलराशि हीमें शुभग्रह और तुल्य स्थानमें वृहस्पति रहनेसे यदि लग्नाधिपति बन-वान् हो, तो जातव्यक्तिकी परमायु ८० वर्षकी समझनी चाहिये। जिसके जन्मकालमें बुधग्रह बनवान् हो पर ऐन्द्र-ग्रहात् लग्नमें चतुर्थ, सप्तम वा दशम स्थानमें रहे और पटम स्थानमें यदि पापग्रह न रहे, तो वह व्यक्ति ३० वर्ष तक जीता है। उभे पटम स्थानमें शुभग्रहकी दृष्टि पडनेसे उसकी परमायु ४० वर्ष की होगी है। जन्मकाल में वृहस्पतिके अपने क्षेत्र वा द्रोणाक्षमें रहनेसे जात-व्यक्तिकी २० वर्ष परमायु होगी। जिसके जन्मकालमें चन्द्रमा अपने क्षेत्र वा लग्नमें रहे और सप्तम स्थानमें शुभ-ग्रह ही, तो उमरको ६० वर्षकी परमायु होती है। जन्म-कालमें पञ्चम या नवममें शुभग्रहके रहनेसे यदि वृहस्पति ककटमें रहे, तो जातव्यक्तिकी परमायु ८० वर्ष होगी।

यदि इच्छिष्य जन्ममन्त्र को पौर तन जन्ममन्त्रमें उच्यते इति एते ही ८० वर्ष उमकी परमायु मानो जातो है । जिसके जन्मकासमें पट्टमाचिपति लक्ष्मणान पौर जन्माचिपति अष्टमस्नानमें रहे तथा उम लक्षाचिपतिके प्रति पाप पक्षकी इच्छि पड़ती हो, तो उसको परमायु २४ वर्ष होगी ऐसा जानना चाहिये । जन्मजातमें लक्षाचिपति पौर पट्टमाचिपति ये दोनों पक्ष यदि अष्टम स्नानमें रहे तो जातव्यज्ञिकी परमायु २० वर्ष की होगी । जिसके जन्मकासमें कोई पापपक्ष पौर उच्यति ये दोनों यदि लक्ष्मणान को तथा उम पक्षके प्रति यदि चन्द्रको इच्छि पड़तो हो तो उम व्यज्ञिकी परमायु २३ वर्ष की होती है । जन्मजातमें शुक्र पौर उच्यति यदि चन्द्रजानमें पञ्चात् लक्ष्मण, चतुर्द्ध, जन्ममें वा उममें रहे, तो जातव्यज्ञिको को सो वर्ष परमायु होगी । जन्मजातमें कर्कटमें उच्यति पौर चन्द्रजान शुक्र रहनेमें जातव्यज्ञिकी सो वर्ष की पायु होगी । जिसके जन्मजातमें लक्ष्मण लक्ष्मण स्नानमें चन्द्रमा रहने है उसको सो पायु सो वर्ष की मानो गई है । लक्ष्म, चतुर्द्ध, पञ्चम मसम, लक्ष्मण वा शुक्र स्नानमें यदि कोई पाप पक्ष न रहे पौर चतुर्द्ध वा मीन जन्म मन्त्र हो तथा चन्द्रजानमें उच्यति वा शुक्र रहे एक क्षणमें अष्टम पौर लक्ष्मणमें शुभपक्षकी इच्छि पड़तो हो, तो उसको सो सो वर्ष की परमायु होगी है । लक्ष्म पौर चन्द्रमें अष्टमस्नानमें यदि कोई पाप पक्ष न रहे तथा उच्यति पौर शुक्र लक्ष्मण हो, तो उस व्यज्ञिकी परमायु २६ वर्ष होगी । जन्मजातमें उच्यति पौर शुक्र चन्द्रजानमें तथा पञ्चाश्रममें चन्द्र रहे, तो जातव्यज्ञिको २२ वर्ष परमायु होती है । जन्मजातमें मोनक्ष्ममें शुक्र, अष्टम स्नानमें चन्द्र पौर चन्द्रमें उच्यतिके रहनेमें तथा चन्द्रके प्रति शुभपक्षकी इच्छि पड़नेमें जात व्यज्ञिकी सो वर्ष पर

मायु जोतो है । इत्यादि प्रकारसे परमायुका विषय स्थिर करना होता है । जिसमें लिखा है, कि ज्योतिर्विदुषः स्त्रिय चित्त को पक्षकी लक्षणन विचार कर उसकी प्रति इच्छि रहने ही रूप पाहुयोंका उच्छेद देते है इत्यादि । यको परमायुसंज्ञका विषय है जो मनुस्मृतमें कहा गया । विमेष विवरण उच्छेदात्त पौर प्रीतकासहारा आदि ज्यो तय ज्योतिं ति वा है ।

ज्योतिर्भूतं वीमर्षिपादिको परमायुसंज्ञमनुस्मृतमें उक्त प्रकार लिखा है । मनुष्य पौर वाह्याको परमायु १० वर्ष ३ दिन अथवा पौर जाता देहा परमायु १६ वर्ष, सो पौर सन्धिवा परमायु २४ वर्ष, पक्ष पौर गदमको परमायु २६ वर्ष, कुम्भको परमायु १२ वर्ष पौर पञ्चकी परमायु ३८ वर्ष है ० ।

एन सबके जन्मसमयके लक्ष्मण पौर अष्टमस्नान द्वारा उक्त पाहुण लक्षाको पञ्चाशकी पशुमार पाहुणें वस्त्रादि स्त्रिय करके उच्छेद ज्योति पादिको अपनो अपनो निष्पित पाहु इहा गुणा करा । जोकि उक्त गुणनपक्षकी १२० दि मास हो । मासफल जो हांग, वही उक्त ज्योति पादिको परमायु है ।

अथराचर मानवादि जितने वय तद ज्योति है, उलो की परमायु माना गया है । किन्तु १२० वर्ष यहाँ तक कि १६४ वर्ष की मो मानवका नाम सुना जाता है, किन्तु ऐसा बहुत कम है । योगक्षमके किसी किसीने तीन चार सो वर्ष तक जीवकरका का है, ऐसा सो सुना जाता है ।

● चन्द्रवाहनसमुपना इच्छिका इवाज्ञापयन्तः १० ।
 गाः शशोर्ध्विभिरास्योत्तुषः (शशोत्तुषः) १० ।
 न वायुं वरन एवा इच्छिका विवायुदेवां पशुनु
 निश्च इवायुना च विद्वत् वेदां सुखयुर्नैव ३० (ज्योतिष)

